NAVNEET JAN-DEC 1975 G.K.U.

111286

S.N. 2699

29.6.80

962

5

85

32

~~RT 0944~~

गुरुकुल कांगड़ी

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

नवरी १९७५

17/11/75

नयी उमंग, नयी तरंग

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी—१००% सूती कपड़ों के लिए!

CENTURY

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.कं.
लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५

ADROIT-874

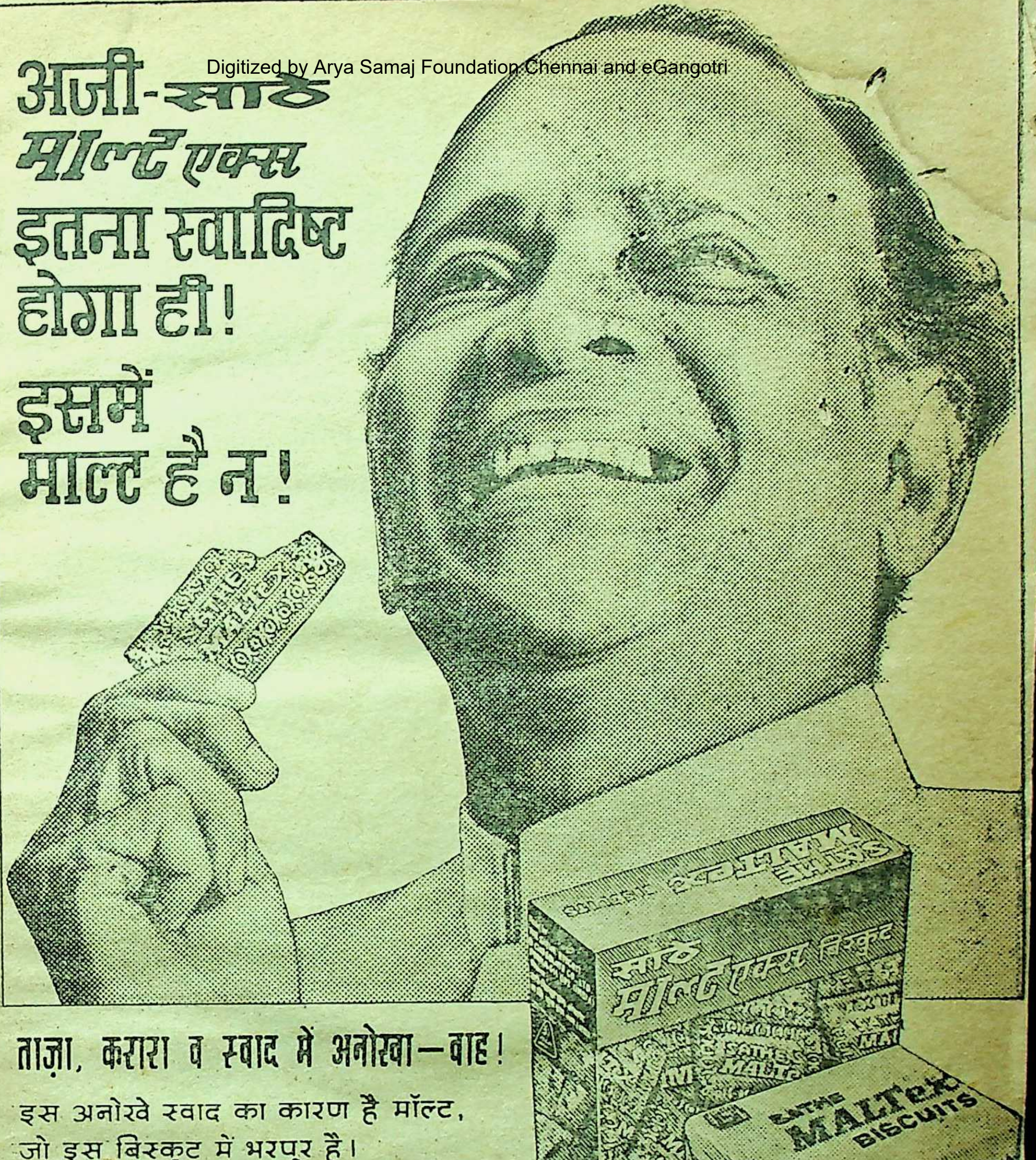
अजी-साठे
माल्टेक्स
इतना स्वादिष्ट
होगा ही!
इसमें
माल्ट है न!
साठे माल्टेक्स बिस्कुट
SATHE MALTex BISCUITS
SATHE MALTex BISCUITS

ताज़ा, करारा व स्वाद में अनोखा—वाह!

इस अनोखे स्वाद का कारण है मॉल्ट,
जो इस बिस्कुट में भरपूर है।
पचने में हलका व पोषक सत्वों से भरपूर
यह बिस्कुट चाहे जितने भी खायें,
और खाने को जी चाहता है।
इसलिये कि इसमे मॉल्ट है!

IS:1011
ISI
आई. एस. आई मुहर वाले
माल्टेक्स का मतलब है अच्छी
किस्म की गारंटी वाले बिस्कुट

साठे
बिस्कुट

heros' SBC 53A HIN

नया रूपा

उजली चमाचम चमकती धुलाई
के लिए
धुलाई साबुन

★

कुसुम प्रॉडक्ट्स लिमिटेड

९, बिपलाबी त्रैलोक्य महाराज सरानी
(ब्रेबोर्न रोड) कलकत्ता–७००००१

111286

111286

सर्दी बंद

कैम्फर
थायमॉल
मेन्थॉल
टर्पेन्टाइन
एक दो
सर्दी को
फेंक दो
यूकेलिप्टस
नटमेग

रबेक्स की ६ अकसीर
दवाओं का कमाल!

Rubex
FOR COLDS PAINS & ACHES
COLDS ACHES AND PAINS
Rubex
रबेक्स
CHEMICAL WORKS CO LTD

सर्दी-ज़ुकाम का जोरदार इलाज— खास फार्मूले से बना रबेक्स सर्दी-ज़ुकाम से जल्द आराम देता है... बंद नाक खोलता है, छाती में जमा बलगम दूर करता है और शरीर में स्फूर्तिभरी गर्माहट लाता है.

२० और ६५ ग्राम की शीशी व ६ ग्राम की डिब्बी में मिलता है.

मुफ्त बॉल पेन* २० ग्राम की शीशी खरीदने पर...
*स्टॉक रहने तक ही मिलेगा.

everest/921a/ACW-hn

दि न्यू स्वदेशी
शुगर मिल्स लिमिटेड,
नरकटिया गंज,
जि. चंपारन, बिहार

उत्पादन :

शुद्ध दानेदार चीनी
पावर और औद्योगिक
अल्कोहल

अलाहाबाद
कैनिंग कंपनी

बमरौनी (इलाहाबाद),
उत्तर प्रदेश

उत्पादन :

डिब्बाबंद फल और सब्जी

मैक्फरलेन पेन्ट्स
कलकत्ता

उत्पादन :

उम्दा पेन्ट्स, वार्निश
वैलामॉयड रूफिंग कंपाउंड
क्रोम और पिग्मेंट

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिये, हर प्रसंग पर उपलब्ध है।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेड मार्क देख लें

पुलगांव
काटन मिल्स

द स्वस्तिक टेक्सटाइल्स मिल्स लि.

टेरीन ब्लेन्डेड फैब्रिक्स, टेरीन, आर्टसिल्क
और सूती वस्त्रों के अग्रगण्य प्रोसेसर्स

★

स्क्रीन प्रिंटिंग हमारी विशेषता

★

रजिस्टर्ड आफिस :
सायन ट्राम्बे रोड;
चेम्बूर; बंबई–४०००७१

टे. नं. ५ २३७६१–२-३-४

प्रोसेसिंग एजेंट्स :
मेसर्स यमुना टेक्सटाइल्स
५३५, चन्द्र चौक, एम. जे. मार्केट,
छठा माला, बंबई–२

टे. नं. ३१००६४

बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखवाने की अनोखी दवा

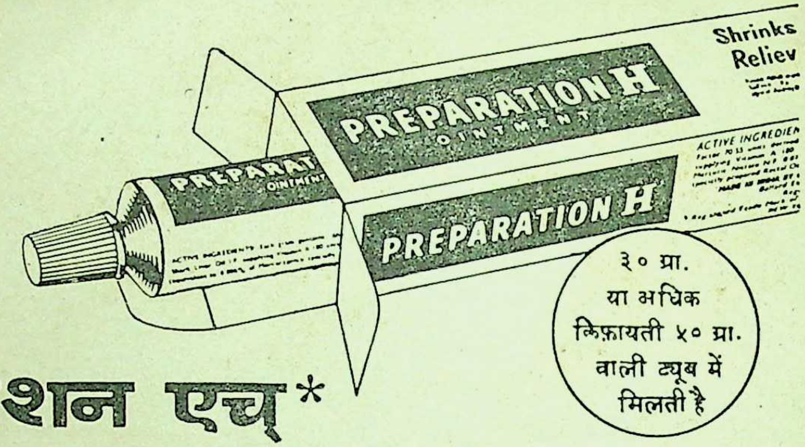
Shrinks
Reliev
PREPARATION H
OINTMENT
ACTIVE INGREDIEN
PREPARATION H
३० ग्रा.
या अधिक
किफ़ायती ४० ग्रा.
वाली ट्यूब में
मिलती है

प्रेपरेशन एच्*

अमरीकी डाक्टरों की आज़मायी हुई

- इससे खुजली मिनटों में रुक जाती है
- दर्द से फ़ौरन राहत मिलती है
- यह बवासीर के बहुत ही बिगड़े रोगों को छोड़ कर, बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने में मदद देती है
- इससे चिकनाहट मिलती है और शौच भी कष्टरहित होता है

मुफ़्त ! बवासीर के बारे में जानकारी देनेवाली मुफ़्त पुस्तिका के लिए (लिफ़ाफ़े में २५ पैसे के डाक-टिकट साथ में भेजकर) आज ही इस पते पर लिखिए : डिपार्टमेंट **PH-83** पो. ऑ. बॉक्स १०१३३, बम्बई–४०० ००१

*Regd. User of TM : Geoffrey Manners & Co. Ltd.
743 PH-92 Hin

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भारत का सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप, स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

बादशाही साजशृंगार के लिए

खटाऊ

वॉयल्स

1874-1974 Khatau THROUGH 100 YEARS

दि खटाऊ मकनजी
स्पिनिंग एण्ड वीविंग कं. लि.
प्रधान कार्यालय : लक्ष्मी बिल्डिंग, पेलार्ड इस्टेट,
बम्बई - ४०० ००१.
मिल्स : हेन्स रोड, भायखला, बम्बई - ४०० ०२७.
थोक दुकान : मुलजी जेठा मार्केट,
बम्बई - ४०० ००२.

KMS-38/T/PREM ASSOCIATES/HIN

यांत्रिक प्रगति का
अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

D F

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
थाना (बंबई)

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.

इंडियन टूल मैन्युफैक्चरर्स
लिमिटेड

ग्रिडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)

एशियन सायकल टायर
व ट्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि.

क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रस्काट रोड, बंबई–१

एक और बेजोड़

सफोला

पकाने का सहृदय तेल

★

उत्पादक

द बॉम्बे आइल इंडस्ट्रीज प्रा. लि.

कन्मूर हाउस
२८१/२८७, नरसी नाथा स्ट्रीट,
बंबई–४००००९

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चरर्स लि.

१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई—४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स;
कटर्स; टैप्स; टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

* डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स
* डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

ITT

प्रिसिशन का प्रतीक

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक व
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गद्दियां व कवर बनाने के लिए मुलायम और बहुरंगी • क्रोशेसेटों के लिए सुंदर और चमकदार • बसन्त में लचीले और नमीसोख

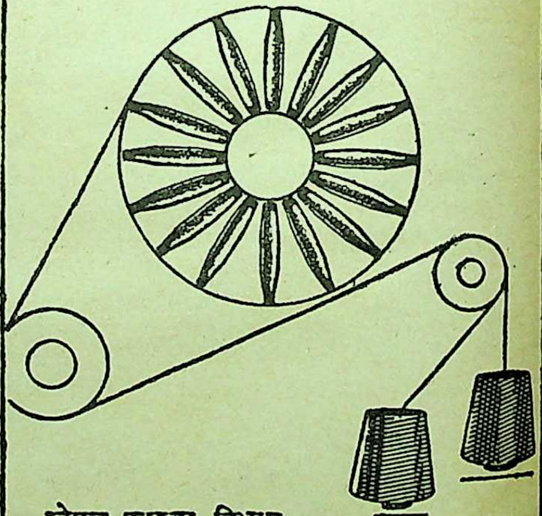

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता-७०० ००१

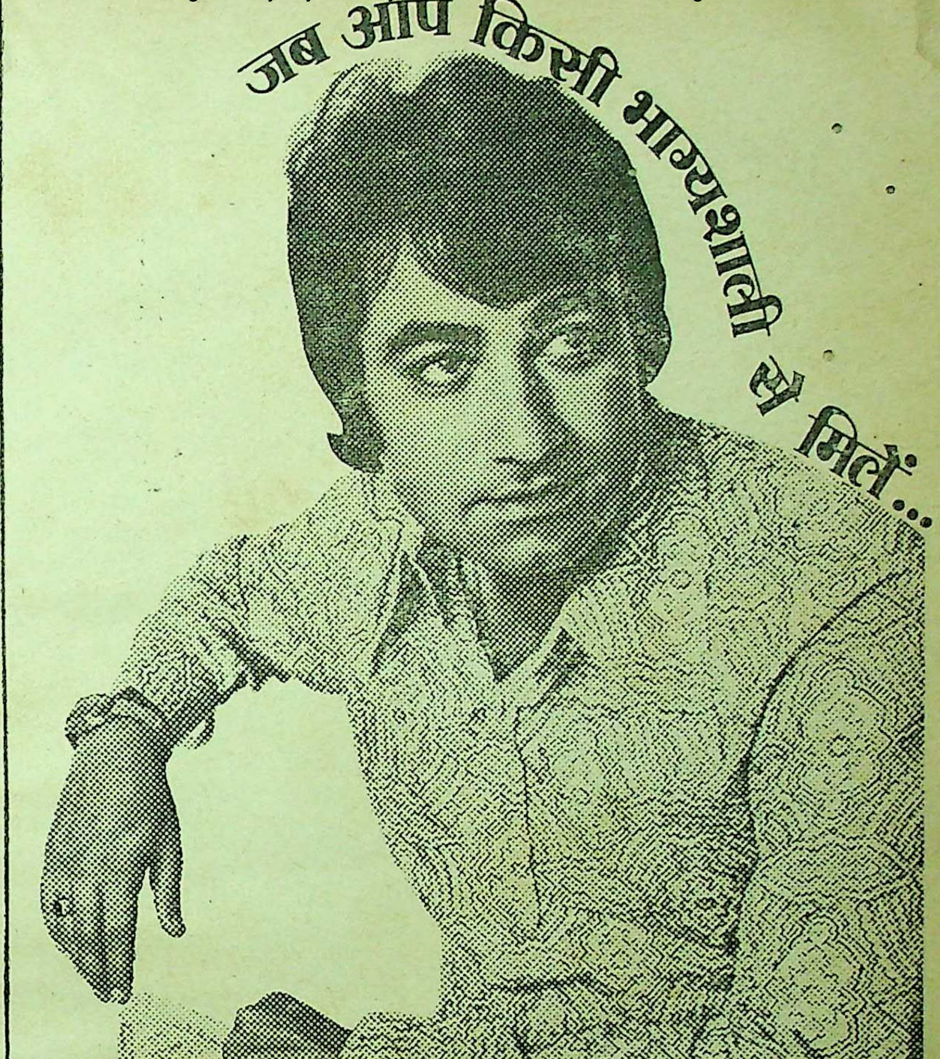
जब आप किसी भाग्यशाली से मिलें...

...तो उसके कपड़ों पर ज़रूर ग़ौर करें!

MAFATLAL GROUP

सचमुच, मफतलाल ग्रुप के कपड़े अनुपम होते हैं!

AIYARS. M. 459 HN

लिंक चेन

❋

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

❋

सभी उद्योगों व वाहनों
में उपयुक्त

❋

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

❋

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप : बंबई-७८

दि इंडियन स्मेल्टिंग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय
लालबहादुर शास्त्री मार्ग,
भांडप, बंबई ७८ एन० बी०
केबल : 'लकी' भांडुप
फोन : ५८२४२१

सेमिस रोलिंग विभाग
नानफेरस शीत, स्ट्रिप और फाइल, नानफेरस प्लेट और सर्कल

एलाय और कास्टिंग विभाग : एंटिफ्रिक्शन बेयरिंग मैटल्स गन-मैटल्स और ब्रोन्जेन्स, ब्रेजिंग सोल्डर्स और टिन सोल्डर्स, फाइन जिंक डाइकास्टिंग एलाय्स 'इस्माक३,' अल्यमिनियम बेस्ट डाइकास्टिंग एलाय्स, ब्रास और ब्रोन्ज राड्स सालिड कोर्ड, फिनिश्ड कास्टिंग रफ और मशीन्ड।

हाय, फ़्रेम टूट गया

घबराइए नहीं, अभी जुड़ा जाता है—फ़ेविकोल से!

देखा फ़ेविकोल का कमाल!

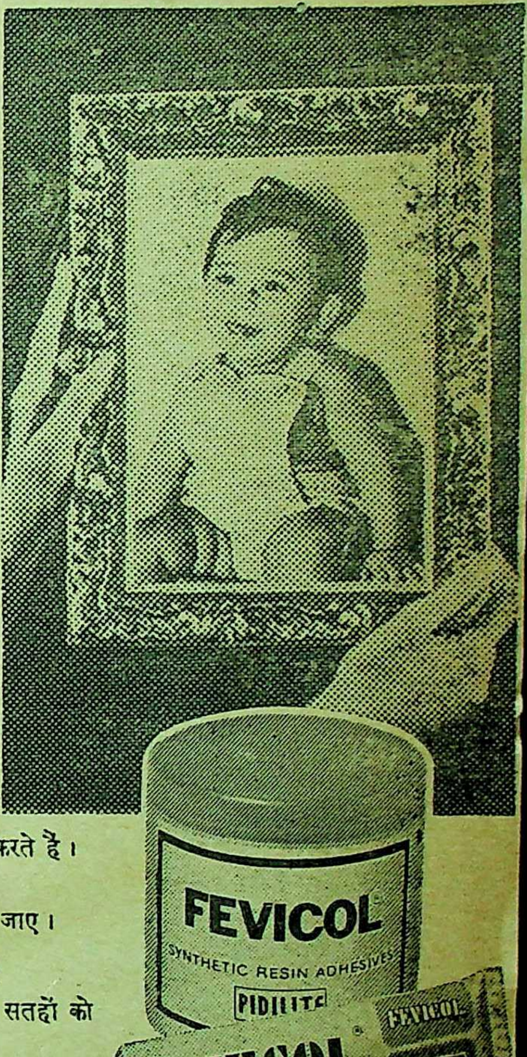
FEVICOL
SYNTHETIC RESIN ADHESIVES
PIDILITE
FEVICOL
FEVICOL
PIDILITE

फ़्रेम बनाने वाले लगभग सभी कारीगर फ़ेविकोल इस्तेमाल करते हैं। आप भी घरेलू इस्तेमाल के लिए फ़ेविकोल ला रखिए—ट्यूब या छोटा प्लास्टिक जार! पता नहीं कब जरूरत पड़ जाए।

कागज़ हो या थर्मोकोल। लकड़ी या कोई भी दूसरी सतह; मतलब ये कि फ़ेविकोल सिन्थेटिक एड्हॅसिव सभी तरह की सतहों को जल्द और मज़बूत जोड़ता है ... और हर बार, साफ़ और बढ़िया काम।

चिपकाने और जोड़ने के लिए सर्वोत्तम

फ़ेविकोल®

कारीगरों की पहली पसन्द!

वितरक: पारेख एजेन्सीज़, पोस्ट बॉक्स नं. ११०८४, बम्बई ४०० ०२०
अहमदाबाद • कलकत्ता • दिल्ली •
निर्माता: पिडिलाइट इन्डस्ट्रीज़ प्रायवेट लिमिटेड, बम्बई ४०० ०२०

फ़ेविकोल का ट्यूब या प्लास्टिक का डब्बा घर और ऑफ़िस में ज़रूर रखिए!

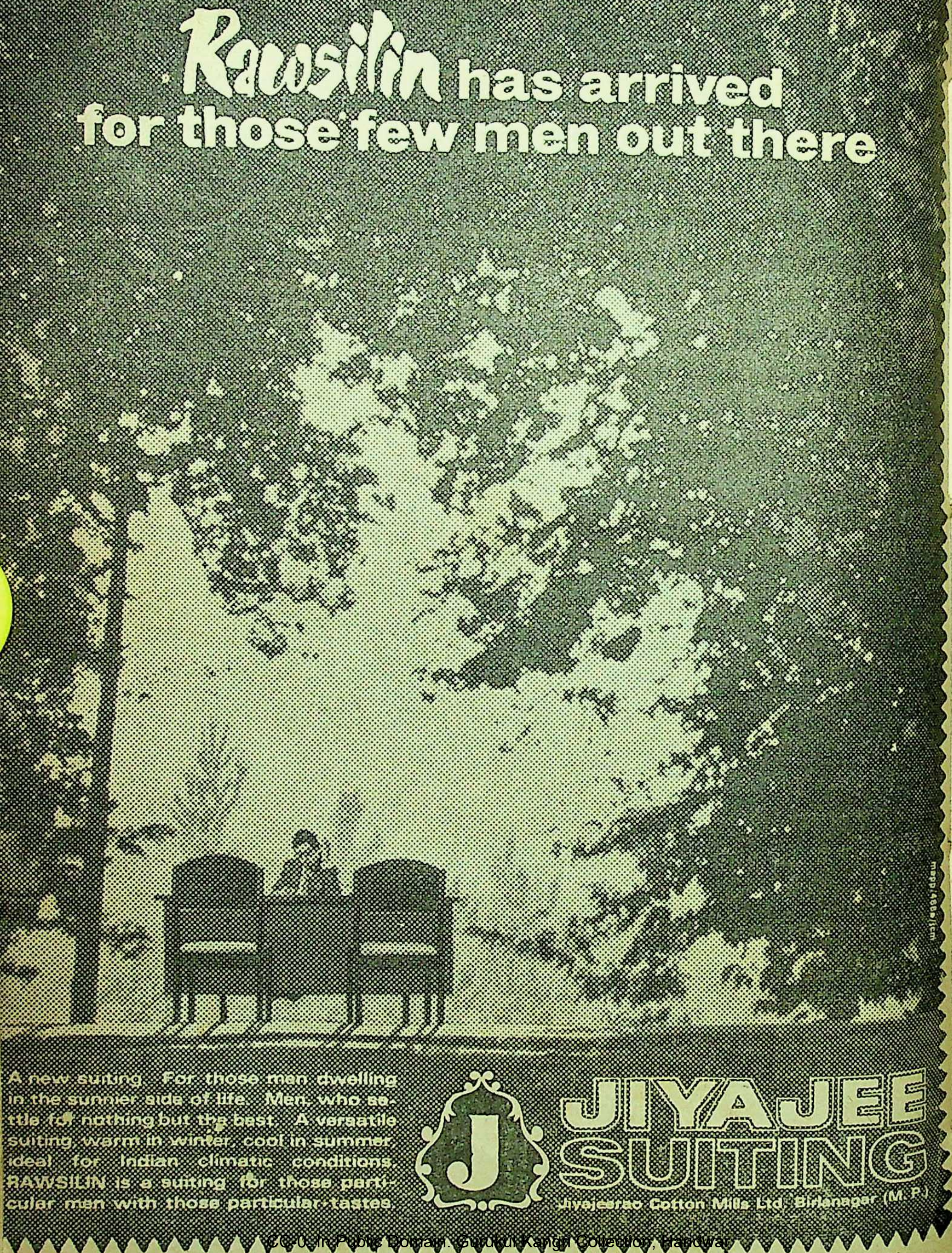

Rawsilin has arrived for those few men out there

A new suiting. For those men dwelling in the sunnier side of life. Men, who settle for nothing but the best. A versatile suiting warm in winter, cool in summer, ideal for Indian climatic conditions. RAWSILIN is a suiting for those particular men with those particular tastes.

JIYAJEE SUITING

Jiyajeerao Cotton Mills Ltd. Birlanagar (M.P.)

नवनीत

वर्ष २४ : अंक १

इस अंक में

जनवरी १९७५

पत्र-वृष्टि १७ संपादक की डाक से
तस्करी की जड़ें २१ प्रेमशंकर झा
गुनार मीर्डाल और नयी पुस्तक २५ जेरी फाक्स
नयी पीढ़ी : पुरानी पीढ़ी २९ रामनाथ 'सुमन'
जीवन-समुद्र ३३ डब्ल्यू. टयूडर पोल
एक वर्ष और ३४ टी. एल. वासवानी
संगीत का संमोहन ३५ विश्वरंजन वर्मा
सूर्योपासना ३६ धीरेंद्रकुमार दीक्षित
संपादकाचार्य पद्मसिंह शर्मा ४१ वेंकटलाल ओझा
वाक्यदीप ४४ हसीदी गुरु
बचपन की दोस्ती ४५ अमृत राय, बनारसीदास चतुर्वेदी
विमलेश्वरी देवी ४८ सतीश जायसवाल
कांग्रेस के प्रथम अध्यक्ष ५२ सुरेश सिन्हा
स्मृति के अंकुर ५७ त्रिवेदी, तलवार, कौशिक, सलूजा
विज्ञान-बिंदु ६० केजिता
'जी चाहता है गाता ही रहूं' ६५ सुशीला कशालकर

संचालक **श्रीगोपाल नेवटिया**
संपादक **नारायण दत्त**
सहसंपादक **सुरेश सिन्हा**
व्यापार-व्यवस्थापक **महेंद्र मेहता**
प्रबंध-संचालक **हरिप्रसाद नेवटिया**
उपसंपादक **गिरिजाशंकर त्रिवेदी**
उपसंपादक **डा. विष्णु भटनागर**
प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
सज्जा : **ठाकोर राणा**

बिस्मार्क की जल-समाधि ६९ विश्वास
इंग्लैंड के प्रस्तर-दैत्य ७६ डा. पद्मा उपाध्याय
मेरे जख्म (उर्दू कहानी) ८० अतिया परवीन
अलंघ्य पर्वतों के पार ८७ ओम्प्रकाश पांडेय
प्रयोगशाला का ज़ासूस ९१ रमाकांत
मिट्टी का सेब ९७ रमेशदत्त शर्मा
उसका हिस्सा (हिंदी कहानी) १०८ केशव दुबे
कविताएं ११६ गुप्त, राजित, त्रिपाठी
क्रास (रुमानियन कहानी) ११७ रानी मेरी
कविताएं १२४ 'रंग', आब्दीन
हंसने में कितना सुख १२५ सुरजीत
तीन प्रसंग १२७ सुखबीर
जलपरी (एक परीकथा) १२८ हान्स क्रिश्चन एंडरसन
पर्वत-पुत्र भोटिया १५० जगदीशचंद्र पंत
पुस्तकास्वादन १५७ विश्वनाथ, हरमन चौहान

★

आवरण-चित्र : रसिक रावल

चित्रसज्जा : ओके, शेणै, सतीश चव्हाण, भटनागर, राणा

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिन्दी डाइजेस्ट), ३४१ ताडदेव, बंबई-३४
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग, ३३५ बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष : २४ रु.; दो वर्ष : ४६ रु.; तीन वर्ष : ६६ रु.।
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष : ४५ रु.; दो वर्ष : ७५ रु.; तीन वर्ष : १०५ रु.।
(हवाई डाक से) एक वर्ष : ७५ रु.; दो वर्ष : १३५ रु.; तीन वर्ष : १९५ रु.।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

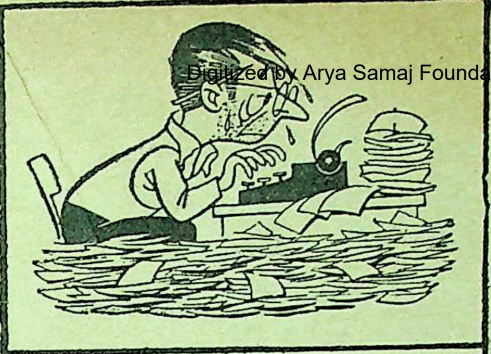

पत्र-वृष्टि

दीपावली अंक सुंदर बना है। ऊपर का स्त्री-प्रधान चित्र खूब ध्यान खींचता है। इस अंक में मेरा भी लेख है। (धन्यवाद ।) **नवनीत** के प्रति मेरे मन में आकर्षण और आदर दोनों हैं। इस अंक में आपने 'गांधी के शब्द' चुनकर दिये हैं। क्या वे किसी खास उद्देश्य से इस अंक में दिये गये हैं ? आप विदेशी लेखकों की रचनाओं को भी **नवनीत** में स्थान देते हैं, यह प्रशंसनीय है।

—काका कालेलकर, राजघाट, नयी दिल्ली

०००

दीपावली अंक वर्धा से लौटकर मिला। धन्यवाद। मैं **नवनीत** का उसके जन्मदिन से ही नियमित पाठक रहा हूं। उसने अपना स्टैंडर्ड सुदृढ़ रखा है और संपुष्ट सांस्कृतिक विचारों को संजोया है। संचालक और संपादक को बधाई। **—हृषीकेश शर्मा, इंदौर**

०००

दीपावली विशेषांक मिला। इसमें कई लेख ऐसे हैं, जिनकी सामग्री कम से कम मेरे लिए तो नयी है। हिंदी साहित्य की अभिवृद्धि में **नवनीत** का योगदान चर्चा का विषय बन गया है। अपने इन सत्प्रयासों के लिए हार्दिक बधाई स्वीकारें।

—प्रकाशवीर शास्त्री, नयी दिल्ली

०००

दीपावली अंक दुर्लभ पठनीय सामग्री से संपन्न है। मौलिक के समान अनूदित सामग्री भी उपादेय है। विशेष लेखों में 'क्या निराश हुआ जाये ?', 'जीवनानंद की सहज साधना', 'पंचतंत्र की पृथ्वी परिक्रमा', 'डाक-टिकटों की करामातें' विशेष प्रेरणाप्रद लगे। पुस्तक-सार 'सागरपंछी' काफी मनोरंजक है। परिचर्चा 'विज्ञान-शिक्षा की भूमिका' और बचपन की दोस्ती' नये स्तंभ हैं। अनूदित लेखों में 'पुश्किन और भारत' 'कला के क्षण''‘सिंधु घाटी की सभ्यता''बड़े ज्ञानवर्धक हैं। वैज्ञानिक लेखों में 'ब्रह्मांड कैसा था पहले' नयी दिशा में प्रकाश डालता है। **नवनीत** उत्तरोत्तर उन्नति कर रहा है, प्रसन्नता की बात है। **—व्योहार राजेंद्रसिंह, जबलपुर**

०००

आपने इस अंक के लिए अच्छे लेखों का चुनाव किया है, इसके लिए बधाई। आशा है, ऐसे विशेषांक हर साल निकालते रहेंगे।

—डा. मोतीचंद्र, बंबई

* डाक्टर साहब का १७ दिसंबर १९७४ को देहांत हो गया। नवनीत-परिवार की श्रद्धांजलि। **—संपादक**

०००

दीपावली विशेषांक सदा की तरह संग्रह-

णीय है। बहुत कुछ पढ़ गया। सामग्री के चयन में एक दृष्टि है। मात्र रोचकता और मनोरंजकता का ही ध्यान नहीं रखा गया, चिंतन को दिशा देने वाली सामग्री भी है। साहित्यिक सार भी दृष्टि से ओझल नहीं हुआ। एक-दो रचनाओं की ओर संकेत करना समग्रता के प्रति अन्याय होगा।

–विष्णु प्रभाकर, दिल्ली

०००

दीपावली का **नवनीत** आद्योपांत पढ़ गया। बहुत ही अच्छी सामग्री आपने इसमें संजोयी है। कहां-कहां से आप क्या-क्या इकट्ठा कर लेते हैं! विविधता का भी पूरा ध्यान रहता है। 'मां' और 'डाक्टर और हत्यारा' कहानियां छोटी हैं, पर बहुत पैनी हैं। डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी का यह वाक्य बहुत अच्छा लगा–'बुराई में रस लेना बुरी बात है, अच्छाई को उतना ही रस लेकर उजागर न करना और भी बुरी बात है।' इस विशेषांक ने डायरी के लिए बहुत कुछ सामग्री दी है। सुसंपादन के लिए आप और आपके सहयोगी बधाई के पात्र हैं।

–रामेश्वरदयाल दुबे, वर्धा

०००

विशेषांक जैसे ही मिला, पढ़ने का लोभ संवरण न कर सका और आद्योपांत पढ़ गया। उसकी किन-किन रचनाओं का उल्लेख करूं? कह सकता हूं कि आपने सामग्री के चयन में खूब सूझ-बूझ दिखायी है और सभी रुचियों का ध्यान रखा है। लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि आपने भरती की एक भी चीज नहीं दी है। ज्ञान-विज्ञान के ऐसे दीप जलाये हैं, जो सबको प्रकाश देते हैं। बधाई स्वीकार करें।

–यशपाल जैन, नयी दिल्ली

०००

दीपावली अंक में मेरी कविता का संपादन क्यों कर दिया गया? 'बांध लें बिखरे हुए हम दर्द अपने एक में' के 'हम दर्द' को 'हमदर्द' और 'एक' को 'अंक' कर दिया गया। इस परिवर्तन से मुझे कष्ट हुआ; क्योंकि मेरे मूलभाव को क्षति पहुंची है।

अंक बहुत अच्छा निकला है। काफी पढ़ गया हूं। सामग्री में वैविध्य और सामयिक प्रासंगिकता है। बधाई।

–रामदरश मिश्र, नयी दिल्ली

* प्रूफ-वाचन में हुई इस भूल के लिए हमें अफसोस है। **–संपादक**

०००

विशेषांक में शिवानी के संस्मरणात्मक लेख ने मेरे हृदय को झकझोर दिया। उनके शब्द-चित्र ने जिस व्यक्तित्व की छाप मेरे हृदय-पटल पर अंकित की, वह मेरे लिए स्मरणीय बन गया। उस अनदेखे व्यक्तित्व को मेरे कवि ने यों गीतबद्ध कर दिया है:

शब्द-चित्र में रूप तुम्हारा,
सबसे अलग नजर आता है।
ऐसा कुछ लगता है जैसे,
तुमसे युग-युग का नाता है।
अनदेखा व्यक्तित्व तुम्हारा,
रूपायित हो उठा नयन में।
तोड़ अपरिचय की दीवारें,

आ बैठे हो अंतर्मन में।
सहज हृदय-संवाद हो रहा,
बिन बोले ही बोल रहे हो।
जीवन-रामायण के पन्ने
धीरे-धीरे खोल रहे हो।
चुंबकीय व्यक्तित्व तुम्हारा,
जादू-सा कुछ कर जाता है।
शब्द-चित्र में रूप तुम्हारा,
सबसे अलग नजर आता है।
एक साथ जोगी-भोगी थे,
अनासक्तिमय मन पाया था।
दुख के कांटों पर चलकर ही
द्वार तुम्हारे सुख आया था।
अनुरागी अंतर की भाषा,
पढ़कर भी, कितने पढ़ पाये ?
सुख-सुविधा के संगी-साथी,
दुर्दिन में भी काम न आये !
नेह निभाते रहे अंत तक,
यही सोच मन अकुलाता है।
शब्द-चित्र में रूप तुम्हारा,
सबसे अलग नजर आता है।
पकी निबौरी में भी तुमने
अंगूरों का रस पाया था।
स्नेह-सिक्त आत्मीय भाव से
दुश्मन को भी अपनाया था।
चारित्रिक गरिमा की महिमा,
शब्द-शब्द से फूट रही है
क्षमा, दया, ममता की मणियां,
सारी दुनिया लूट रही है।
एक अपूर्व प्रभा-मंडल में,
तेजस्वी मुख मुसकाता है।
शब्द-चित्र में रूप तुम्हारा,
सबसे अलग नजर आता है।

—नर्मदाप्रसाद खरे, जबलपुर

०००

अपनी सजधज एवं स्वाद में निराला दीपावली अंक पढ़ा। मेरे लिए इस अंक की अनुपम वस्तु रही शिवानी की 'बांधीश ना आर मायार डोरे'। 'बचपन की दोस्ती' स्तंभ में श्री सूर्यनारायण व्यास का 'अल्लारखी' पढ़कर कुछ अजीब लगा। आज से कोई सात-आठ वर्ष पूर्व एक संस्मरण-पुस्तिका में स्व. निरालाजी का संस्मरण पढ़ा था, जिसमें उन्होंने भी अपनी बहन को इस्मान्डी, अल्लारखी आदि कहकर चिढ़ाने की बात लिखी थी। निरालाजी ने अपनी बहन के चिढ़ाने के नामों का जो श्लोक बनाया था, वह भी वहीं पढ़ा था। श्लोक इस प्रकार है :

इस्मांडी रामरसमीढं अल्लारख्खी हरसदम्।
तोताजूठनखानी च एभिः दीदी चिढ़ावनी।।

अब यह संयोग के सिवा और क्या हो सकता है कि व्यासजी भी अपनी बहन को ठीक उन्हीं नामों से चिढ़ाते रहे हैं, जिन नामों से निरालाजी ने अपनी बहन को चिढ़ाया था। **—प्रेमाचार्य शास्त्री, दिल्ली**

०००

बुक स्टालों पर कई बार अन्य बहुत-से लेखकों के साथ शिवानी के उपन्यास भी देखे थे; किंतु उनके मुखपृष्ठ आदि को देखकर कभी उन्हें अन्य उपन्यासों से अधिक महत्त्व नहीं दिया था, न ही उन्हें पढ़ने का

विचार ही किया। कल जब दीपावली अंक में 'बांधीश ना आर मायार डोरे' अनजाने में ही पढ़ गयी, तो लेखिका का नाम पढ़कर चौंक पड़ी। लगा कि मैंने इतनी अच्छी लेखिका के प्रति बिना जाने ही इतनी गलत धारणा बनाकर उसके प्रति अन्याय किया। लेखिका से मेरी क्षमायाचना।

—गौरी सक्सेना, लखनऊ

०००

दीपावली अंक देखकर उसके विलंब से प्रकाशित होने के कारण मुझे जो गुस्सा आ रहा था, शांत हुआ। 'जीवनानंद की सफल साधना' तथा 'ब्रह्मांड कैसा था पहले' शीर्षक लेख बहुत पसंद आये। इतने सुंदर और चुनिंदा सामग्री के प्रकाशन के लिए नवनीत-परिवार को जितनी बधाई दी जाये, कम ही होगी। **—निरंकार सिंह, वाराणसी**

दीपावली अंक में छपे अपने लेख 'नेपाली कला-प्रतिभा की चीन को देन' में (पृष्ठ १५०, कालम १, पंक्ति १२) मैंने काठमांडू का पुराना नाम 'कीर्तिपुर' लिख दिया है, जो कि 'कांतिपुर' है।

—दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ, वाराणसी

०००

दीपावली अंक में श्री रमेशदत्त शर्मा का लेख 'रेडीमेड बच्चे' बहुत सुंदर बन पड़ा है। इस विषय पर और भी जानकारी दी जा सकती है, जो पाठकों का ज्ञानवर्धन और मनोरंजन कर सकेगी। एक चिकित्सक की हैसियत से मैं श्री रमेशदत्तजी को धन्यवाद देता हूं। पृष्ठ २५० से आगे की सामग्री का उल्लेख नहीं किया है। कारण समझ में नहीं आया। **—डा. संतोष अग्रवाल,**

पो. गुल्लू, जि. रायपुर, म. प्र.

★

मुझे याद है, विनोबा ने बापू के निधन के बाद सेवाग्राम में सर्व सेवा संघ की जो पहली सभा हुई, उसमें बिलकुल प्रारंभ में यह कहा था—'मैं जो कह रहा हूं वे बापू के वचन नहीं हैं।' इसके बाद उन्होंने जो वाक्य कहा उसे सुनकर तो हम सब चौंक ही गये थे। दूसरा जो वाक्य उन्होंने कहा, 'जो विचार मैं व्यक्त कर रहा हूं, वे बापू के नहीं हैं, बापू के बाप के नहीं हैं।' सब लोगों को बड़ा विचित्र मालूम हुआ, किंतु तत्काल उन्होंने स्वर में एक तीव्रता लाकर कहा—'मकान मेरा, कारखाना मेरा, बैंक में रखा रुपया मेरा, लड़का मेरा, पत्नी मेरी और विचार बापू के ? अगर विचार बापू के हैं तो वे मेरे किसी काम के नहीं हैं, जिस तरह बैंक में रखा किसी और का रुपया मेरे किसी काम का नहीं। अगर मैंने बापू के विचार को अपना नहीं बना लिया, अगर वे विचार हमारे जीवन की सांस नहीं बन गये और अगर हम उनके अनुसार जीने और मरने के लिए तैयार नहीं, तो हमें बापू का नाम तक लेने का अधिकार नहीं है।' जो व्यक्ति शाश्वत सत्यों को इस प्रकार अपना बना लेता है, वह स्वयं सत्यमूर्ति और धर्ममूर्ति बन जाता है। विनोबा एक ऐसी ही धर्ममूर्ति हैं।

—भवानीप्रसाद मिश्र ('सर्वोदय' में)

★

तस्करी की जड़ें

प्रेमशंकर झा

यह मान लेना कठिन है कि वैयक्तिक स्वतंत्रता के बुनियादी अधिकार को स्थगित करने का सरकारी फैसला महज तस्करी को देश से मिटाने की इच्छा से प्रेरित है, जिसकी सुध उसे बहुत देर से आयी है। उसने हाल में मीसा में (जो कि किसी भी पुलिस अधिकारी को इसका अधिकार देता है कि वह जिसे चाहे उसकी पीठ पर 'तस्कर' की चिट चिपकाकर उसे अनिश्चित काल के लिए जेल में बंद कर दे) जो संशोधन किये हैं, उनका अर्थ इतना गंभीर है कि वैसा मान लेना सरासर भोलापन होगा।

अधिक संभव यह है कि सी. बी. आइ., केंद्रीय राजस्व जासूसी विभाग और अन्य सूत्रों के जरिये यह पता लग जाने से कि तस्कर-व्यापारी केंद्र और राज्यों के राजनैतिक और अफसरी ढांचे से किस गहराई से जुड़े हुए हैं, सरकार इस परिणाम पर पहुंची है कि झाड़-बुहारकर घर की गंदगी साफ करना असंभव है; इसलिए उसने ऐसा शस्त्र उपयोग करना पसंद किया है, जिससे तस्करों की जबान पर ताला पड़ जाये और राजनीतिज्ञ और अफसर सफा बचे रहें तथा साथ ही, तस्करी के माल का देश में आना बंद हो सके।

अफसोस की बात यह है कि इस कठोर कदम के बावजूद तस्करी के माल का आना कुछ ही समय के लिए थमेगा। कारण, उद्योग में लंबे गतिरोध और कीमतों में बेतहाशा बढ़ती की तरह तस्करी भी इस बात का लक्षण मात्र है कि अर्थतंत्र बीमार है। वह तब तक चलती रहेगी, जब तक बीमारी की जड़ें नहीं काट दी जायेंगी। उसका मूल कारण है लोगों की आमदनी में भयंकर विषमता, जो मुट्ठी-भर लोगों को संपन्न देशों के जीवन-मूल्यों और जीवन-शैली को अपनाने की छूट दे देता है, जब कि आबादी के बहुत बड़े हिस्से को दिन में दो जून भरपेट भोजन मिलने का भी कोई भरोसा नहीं।

आय में ऐसा अत्यंत विषम बंटवारा केवल हमारे देश की खूबी नहीं है। यह अर्थशास्त्र की विदित बात है कि ऐसी विषमता धनी देशों की अपेक्षा गरीब देशों में ज्यादा उभरकर दिखती है। परंतु ये विषमताएं मूलतः सामंतवादी और ऐतिहासिक हैं। इस देश में आजादी आने से पहले, जमींदारों और देशी राजाओं के अलावा धनिक वर्ग में आते थे सिविल सर्विस के लोग, विदेशी फर्मों की भारतीय शाखाओं के प्रबंधक-अफसर (जो कि ज्यादातर विदेशी ही होते थे), वकील और डाक्टर जिनकी संख्या बढ़ती जा रही थी और व्यापारी जिन्होंने दूसरे महायुद्ध में चोर-बाजारी में भरपूर कमाई की थी।

111286

आजादी आने के बाद सरकार ने आय की विषमता के इन ऐतिहासिक कारणों को मिटाने के कुछ कदम उठाये। उसने जमींदारी का उन्मूलन किया, राजाओं को उनकी आय के एक हिस्से से वंचित कर दिया, सिविल सर्विस वालों की तनख्वाहें घटा दीं और आयकर की दरें बढ़ा दीं।

लेकिन 'पुराने धनिकों' को 'नीचे खींचकर दूसरों के बराबर लाने' का काम असल में किया है निरंतर बढ़ती हुई महंगाई ने। सभी स्तरों के वेतनभोगी कर्मचारी चढ़ती कीमतों और उत्तरोत्तर वृद्धिशील आयकर के शिकंजे में फंस गये हैं। आज निजी व्यवसाय-उद्योग के उच्चतम व्यवस्थापक भी, जिनका वेतन कहने को ५,००० रु. माहवार है, २,५०० रु. से ज्यादा हाथ में नहीं पाते, जो १९५१ की कीमतों के हिसाब से बमुश्किल से ७०० रु. होते हैं। उन्हें मिलने वाली दूसरी सुविधाओं समेत यह वेतन आराम की जिंदगी जीने के लिए अब भी काफी है; मगर इसके बल पर ५०० करोड़ रुपये सालाना की तस्करी जिंदा नहीं रह सकती।

तस्करी से लाये गये माल की बढ़ती हुई वर्तमान मांग किसी और ही स्रोत से उपजी है। वह है नवधनिक वर्ग जिसे सरकार की आर्थिक नीतियों ने जन्म दिया है। सरकार की करनीति देश के सेल्फ एम्प्लाय्ड तबके के बड़े हिस्से को छूने में स्पष्ट ही असफल रही है। उदाहरण के लिए १९६९-७० में समूचे देश में १,७०० से कम लोगों ने अपनी करयोग्य आय १ लाख रुपये से ज्यादा घोषित की, जब कि शायद बंबई में ही इतनी संख्या तो ऐसे डाक्टरों की होगी, जो इस आय-वर्ग में आते हैं।

मगर 'ब्लैक' के पैसे का बड़ा भाग धंधा-पेशा करने वाले लोग नहीं, बल्कि उद्योग और वाणिज्य में लगे सेल्फ-एम्प्लाय्ड लोग पैदा कर रहे हैं। सरकार की आर्थिक नीतियों और पिछले दस वर्ष की महंगाई का लाभ असल में इसी वर्ग को मिला है। पूंजी-विनियोजन पर सरकारी लाइसेंस-नीति के कारण लगे बंधनों ने उद्योग के बजाय वाणिज्य में पैसा लगाने को बढ़ावा दिया है; और बड़े पूंजी विनियोजकों के विरुद्ध और तथाकथित छोटे उद्योगों के हक में सरकारी रुझान ने एक प्रकार के अविकसित पूंजीवाद को जन्म दिया है, जो कि कर-संबंधी नियंत्रण से बच निकलता है। (छोटे उत्पादकों द्वारा वनस्पति घी की होल सेल चोरबाजारी की जाने की बात हाल में जो सामने आयी है, वह इसका प्रमाण है।)

सेल्फ-एम्प्लाय्ड लोग कीमतें बढ़ाकर और अपनी आय का बड़ा हिस्सा छिपाकर मुद्रास्फीति से अपना बचाव कर सकते हैं, जैसा कि वेतनभोगी वर्ग नहीं कर सकता। परिणामतः मुद्रास्फीति के कारण पैसा गरीबों से निकलकर अमीरों के पास पहुंच रहा है, विलास-सामग्री की मांग तेजी से बढ़ रही है। यह विलास-सामग्री, जिसमें सोना और हीरे-जवाहरात शामिल हैं, तस्करों द्वारा मुहैया की जाती है।

दरअसल आज आय की विषमता इतनी

ज्यादा है कि दीपावली पर सिर्फ एक ही दिन में बंबई में केक की एक दुकान से ३५ व्यक्तियों ने एक-एक हजार रुपये से ज्यादा के केक खरीदे, जबकि हर पांच भारतीयों में से दो को ४० रुपये माहवार से भी कम पर गुजारा करना पड़ता है।

चूंकि तस्करी को आय की उग्र विषमता ने जिला रखा है, इसलिए तस्करी का उन्मूलन न सही, नियंत्रण तो आय की इस विषमता को घटाने से ही होगा। और चूंकि विशाल एवं पनपती-फूलती समानांतर अर्थ-व्यवस्था का अस्तित्व इस विषमता का कारण है, इसलिए इस समानांतर अर्थ-व्यवस्था को नष्ट करने और सेल्फ-एम्पलायड लोगों की विशाल फौज को दृढ़तापूर्वक आयकर के घेरे में लाने से ही तस्करी नष्ट की जा सकेगी।

चूंकि समानांतर अर्थ-व्यवस्था में घूम रहा ज्यादातर पैसा चोरबाजारी में कमाया हुआ है और चूंकि खुद चोरबाजार मूल्य-नियंत्रण की उपज है, इसलिए सर्वोत्तम उपाय यह है कि जहां भी संभव हो, मूल्य-नियंत्रण हटा दिया जाये।

पर यही काफी नहीं। जहां मूल्य-नियंत्रण व्यापारी को अवैध रूप से पैसा कमाने देता है, वहीं उत्पादन-कर की ऊंची दरें उत्पादकों को अपने उत्पादन का एक हिस्सा चोरबाजार में भेज देने और उसकी पूरी आय जेब में डाल लेने का प्रलोभन देता है। इसलिए दूसरा बहुत जरूरी सुधार यह है कि उत्पादन-कर की दरों में तीव्र कटौती की जाये। बल्कि अब तो वक्त आ गया है कि सरकार मांग और सप्लाई के समीकरण को कीमतों के तंत्र पर छोड़ देने का फैसला करे और उत्पादन-करों को उनका मूल कार्य करने दे। यह मूल कार्य है—मांग की मात्रा का नियमन करना, निर्यात के लिए सरप्लस तैयार करना, और पूंजी-विनियोजन का रुख वांछनीय वस्तुओं एवं इलाकों की ओर मोड़ना।

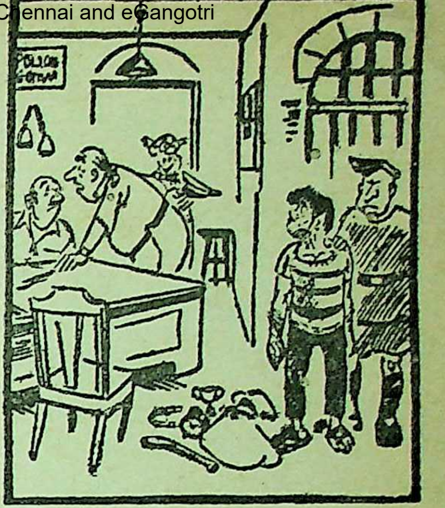

'यह तो बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों और ऊंचे अफसरों का नाम ले रहा है!'

[लक्ष्मण : टाइम्स ऑफ़ इंडिया]

कर-व्यवस्था में सुधार की भी बहुत समय से आवश्यकता है। इसके पक्ष में बहुत प्रबल युक्तियां हैं कि बचत (जिसकी व्याख्या है—बैंक-डिपाजिट और शेयरों में वृद्धि) को कर से सर्वथा मुक्त कर दिया जाये। यह चीज सेल्फ-एम्प्लायड लोगों में अपनी आय छिपाने की प्रवृत्ति को काफी हद तक घटा

देगी (क्योंकि उन्हें आकस्मिक क्षतियों से बचाव के लिए चोरी-छिपे पैसा रखने की आवश्यकता न रह जायेगी); और बड़ी-बड़ी रकमें समानांतर अर्थ-व्यवस्था से निकलकर बैंकों में वापस आ जायेंगी।

परंतु ये सुधार सचमुच असरकारक बनें, इसके लिए जरूरी है कि कर के निमित्त आय कूतने की समूची व्यवस्था का सुधार किया जाये। वांछू समिति ने आय कूतने के 'फंक्शनल सिस्टम' की सिफारिश की थी, जिसमें करदाता के आय-पत्रक की जांच अनेक लोग करते हैं, और उनमें से प्रत्येक एक सीमित पहलू को देखता है। जिन आयकर-जिलों में यह विधि आजमायी गयी है, वहां कर-संग्रह में तीव्र वृद्धि देखी गयी है। परंतु यह तो समस्त संभावित टैक्सदाताओं को पकड़ में लाने और कम कर कूते जाने के खतरे को घटाने की दिशा में पहला कदम है।

यह फौरन आवश्यक है कि सेल्फ-एम्प्लायड लोगों के तमाम तबकों की आय के ऐसे सर्वेक्षण किये जायें, जो केवल कर के आंकड़ों पर आधारित न हों। इससे औसत आय और कर-अदायगी में अनुज्ञेय अंतर के पैमाने तय करने में मदद मिलेगी। इसी तरह यह भी आवश्यक है कि सेल्फ-एम्प्लायड लोगों की आय कूतने के ऐसे व्यावहारिक नियम बनाये जायें, जो उदाहरणतः जमा स्टाक, दुकान-दफ्तर आदि का आकार-विस्तार, निजी मकान, कार आदि का होना जैसी बातों पर आधारित हों।

और अंततः, कर-नियमों में मौजूद वे खामियां पाटनी पड़ेंगी, जिनसे बेनामी जायदाद रखना संभव हो जाता है; और उन कानूनों को बदलना पड़ेगा, जो कर अधिकारियों द्वारा किये गये आकलन के विरुद्ध अपील करने के अयथार्थवादी अधिकार करदाता को देते हैं।

इस प्रकार के बुनियादी आर्थिक सुधारों के बिना महज डंडे के इस्तेमाल से बहुत हुआ तो तस्करी थोड़े समय के लिए रुक जायेगी। क्योंकि तस्करी में इतना कुछ दांव पर चढ़ा हुआ है कि कानून लागू करने के लिए सरकार जो भी मशीनरी कायम करेगी, उसे तस्कर लोग भ्रष्ट कर ही देंगे। आजकल तटकर-विभाग जिस हद तक भ्रष्टाचार से ग्रस्त है, वह इसका उदाहरण है। यह आश्चर्य की बात नहीं कि हमारी नौसेना भी तस्करी-विरोधी कार्रवाइयों में अपने को बहुत ज्यादा उलझाने में झिझक रही है; उसे भय है कि कहीं उसके अफसर और सैनिक भी प्रलोभन के शिकार न हो जायें।

('टाइम्स आफ इंडिया' से साभार)

★

वे महाशय पुलिस-इंस्पेक्टर के पास पहुंचे और कहने लगे—'आजकल आये दिन मुझे धमकी-भरे पत्र मिलते हैं। मैं चाहता हूं, आप इस सिलसिले में कोई जरूरी कार्रवाई करें।'

इंस्पेक्टर बोला—'सचमुच! यह तो अपराध है। कौन भेज रहा है आपको ये धमकी-भरे पत्र?' उत्तर मिला—'कमबख्त इन्कम-टैक्स वाले।'

—हरजीत

★

● जेरी फाक्स

गुनार मीर्डाल और उनकी नयी पुस्तक

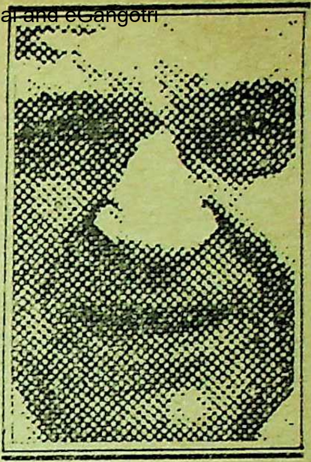

मुद्दत से प्रो. गुनार मीर्डाल मूर्ति-भंजक से माने जाते रहे हैं। वे अपने समकालीन नवक्लासिकी अर्थशास्त्रियों के चातुर्य-भरे उद्गारों के निंदक भले न हों, पर उनके आलोचक तो हैं ही। उनकी शिकायत है कि ये लोग सरासर परंपरावादी हैं और बहुत ही आत्मपरितुष्ट होकर यह मान बैठे हैं कि विश्व का अर्थतंत्र 'अंततः अपने आप दुरुस्त हो जायेगा, बशर्ते हम उसे चालू रहने दें।'

सन १९७४ के अर्थशास्त्र के नोबेल-पुरस्कार से संमानित प्रो. मीर्डाल का कहना है कि अर्थशास्त्रियों की यह आम प्रवृत्ति है कि वे तथ्यों को अपने समय के फैशनेबल सिद्धांतों के अनुरूप काटते-तराशते हैं; वैज्ञानिक मानदंडों का समुचित मान नहीं करते; और शोध की कमी को छिपाने के लिए शास्त्रीय शब्दाडंबर रचते हैं।

उनकी नवीनतम पुस्तक 'एगेन्स्ट द स्ट्रीम' (मैकमिलन द्वारा प्रकाशित), जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, रूढ़िवादी अर्थशास्त्रियों के तौर-तरीकों की छीछालेदर करती है। साथ ही इसमें लेखक ने अपने विचारों की व्याप्ति और दिशा का भी निरूपण करने का यत्न किया है। अतः इस पुस्तक का प्रकाशन एक तरह से विशेष घटना है।

स्वीडन के मूर्धन्य बुद्धिजीवियों में एक होने के अलावा, प्रो. मीर्डाल कई वर्षों से सारस्वत जगत् के सर्वाधिक जाने-माने और सबसे विशिष्ट अर्थशास्त्री के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अब उनकी उम्र ७५ वर्ष की है और उनका दीर्घ कार्य-जीवन सिद्धियों और सफलताओं से भरा है।

उनकी प्रारंभिक पुस्तक 'द पोलिटिकल एलिमेंट इन द डेवलपमेंट आफ इकनामिक थीयरी' (१९२९) आज भी मास्टरपीस मानी जाती है। उसके बाद उन्होंने गरीबी की समस्या पर जो विशाल ग्रंथ लिखे हैं, उनसे तो उनका नाम अध्यापकों, शोधकर्ताओं और राजनीतिज्ञों की जबान पर चढ़ गया है।

इस लेखन-कार्य के अलावा, वे विकासशील देशों की हालत के विषय में शोधकार्य को बढ़ावा देने के लिए अथक परिश्रम करते रहे हैं और इस बात के प्रमुख हिमायती हैं कि इन देशों के प्रति धनी देश ठोस और मानवीय नीतियां अपनायें। यह बात भी उल्लेखनीय है कि विकास की समस्याओं से वास्ता रखने वाली दो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सफल अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं—यूरोपीय आर्थिक आयोग और दक्षिण अमरीकी आर्थिक आयोग—की स्थापना में उन्होंने विशेष सहायता दी है।

'एगेन्स्ट द स्ट्रीम' में विकास-समस्याओं का जो विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, वह मन को उदास कर देने वाला है, जो कि शायद अपरिहार्य है। प्रो. मीर्डाल की सर्वाधिक चिंता का विषय तो गरीबी और अभावग्रस्तता है; मगर उन्होंने दिखाया है कि ये चीजें कभी केवल गरीब देशों तक सीमित नहीं रहीं; उलटे, विश्व के धनी इलाके अब भी समाज-कल्याण-संबंधी कठिनाइयों से ग्रस्त हैं।

मीर्डाल समझाते हैं—'आजकल इस बात पर तो लगभग सब सहमत हैं कि जीवन-स्तर ऊंचा उठना ही चाहिये; मगर इस ध्येय की सिद्धि के लिए वैयक्तिक उपभोग बढ़ाने की इच्छा से परहेज करने को कोई वर्ग तैयार नहीं और व्यक्ति भी इने-गिने ही तैयार हैं।' इस प्रकार धनी देश भी 'स्वार्थों का टकराव' से बरी नहीं है, जो उनमें गंदी बस्तियों को जन्म देती हैं, जिनमें बहिष्कृत जनों का एक हिस्सा फिजूलखर्ची के कूड़े-कबाड़ के रूप म फेंक दिया जाता है।'

मगर विकासशील देशों की त्रासदी तो और भी भीषण है। पश्चिम यूरोप तथा संयुक्त राज्य अमरीका में अभावग्रस्त लोग विरोध व्यक्त कर सकते हैं और करते भी हैं, इस हद तक भी कि सामाजिक शांति को खतरा पैदा हो जाये। परंतु तीसरी दुनिया में 'जनता सामान्यतः इतनी जानकार और जागरूक नहीं है कि अपने हितों को जानती हो; और इतनी संघटित तो वह है ही नहीं कि अपने हितों के लिए कारगर ढंग से खड़ी हो सके।'

किंतु विकासशील देशों को निरंतर यह जो भारी विदेशी सहायता दी जा रही है?

प्रो. मीर्डाल बताते हैं कि अव्वल तो विदेशी सहायता की मात्रा जितनी देखने में लगती है, उससे वस्तुतः बहुत कम है। इसलिए कि उसका एक हिस्सा उसी देश या संघटन से मिले पिछले कर्ज का ब्याज चुकाने में खर्च हो जाता है, अथवा लाइसेन्सों और पेटेंटों के शुल्क तथा 'इतर व्ययों' के रूप में लौटा देना पड़ता है। परिणामतः बहुत बार तो यह पैसा विकासशील देश तक पहुंच ही नहीं पाता, हालांकि सहायता के तलपट में रकमें दिखायी जाती हैं।

इसके अलावा, जो रकमें सहायता पाने वाले देश तक पहुंच भी जायें, उसका बहुत बड़ा हिस्सा—आप चौंक उठें इतना बड़ा हिस्सा—नौकरशाहों द्वारा उड़ा लिया जाता है, या शस्त्रास्त्र खरीदने में खर्च हो जाता है।

अंततः प्रो. मीर्डाल ने कर्ज देने वाले देशों पर यह भी आक्षेप लगाया है कि वे खुल्लमखुल्ला या छिपे समर्थन द्वारा अनेक अल्पतंत्रीय सरकारों को टिकाये हुए हैं, जो सामाजिक कल्याण की कीमत पर राजनैतिक स्थिरता को कायम रखे हुए हैं। वे लिखते हैं—'तरजीह उन देशों को मिलनी चाहिये, जो सुधार करने के लिए प्रयत्नवान हैं।'

अंतरराष्ट्रीय व्यापार तो और भी अस्पृहणीय तथ्य प्रस्तुत करता है। विश्व की ज्यादातर प्राकृतिक साधन-संपत्ति विकासशील देशों में स्थित है। विश्व की दो तिहाई आबादी भी उन्हीं में बसती है। तथापि इस साधन-संपत्ति का ज्यादातर उपयोग हो रहा है मानव-जाति के उस एक तिहाई भाग के लिए, जो कि विकसित देशों में बसता है। इससे कई भयंकर विसंगतियां पैदा होती हैं। उदाहरण के लिए, यूरोप और संयुक्त राज्य अमरीका विकासशील देशों से मंगवाया हुआ मछली-चूर्ण अपने मवेशियों को खिलाते हैं, जबकि खुद उन विकासशील देशों में प्रोटीन की भयंकर तंगी है।

तेल, तांबा, टिन तथा अन्य जरूरी व कीमती औद्योगिक कच्चे माल के मामले में भी ऐसी ही स्थिति है। विकसित देश सस्ते दाम पर यह कच्चा माल खरीद लेते हैं, पक्का माल तैयार करते हैं और महंगे तैयार माल के रूप में वापस भेजते हैं, जिन्हें संपन्न अल्पसंख्यक वर्ग ही खरीद सकता है।

जिन विकासशील देशों में औद्योगीकरण तेजी से हुआ है, उनमें भी आम जनता को कोई लाभ नहीं पहुंचा है। और यह औद्योगीकरण विदेशी उद्योगतंत्र के आयात से ही संभव हो पाया है, जो कि विदेशी तैयार माल के बराबर ही खर्चीला पड़ता है। परिणाम यह हुआ है कि पैसा विकासशील देशों से विकसित देशों में खिंच आता है और धनी-निर्धन देशों के बीच की खाई चौड़ी होती जाती है।

प्रो. मीर्डाल का तीव्र आक्षेप है कि अर्थशास्त्रियों ने इन जटिल समस्याओं की जांच-पड़ताल करने की चिंता नहीं की है, बल्कि विकास के किताबी माडलों का विवेचन-विश्लेषण करने में व्यस्त रहे हैं, जिनका तीसरी दुनिया की वास्तविकताओं से कोई संबंध नहीं है। ये माडल तो यूरोप और संयुक्त राज्य अमरीका के लिए भी गैरमौजूं सिद्ध होने लगे हैं, जहां शासन के नीति-निर्धारकों को अब मुद्रास्फीति और मंदी का हौवा अराजकता के दृश्यों से आतंकित कर रहा है।

पश्चिमी देश अपने जीवन-यापन के स्तर को ऊंचा तो बनाये रख पा रहे हैं, मगर अपव्यय, प्रदूषण और धरती के साधन-स्रोतों के अंधाधुंध दोहन की भयानक कीमत पर। और यह भी विवादास्पद तो है ही कि पश्चिम की बेमिसाल उपभोगक्षमता ने क्या सचमुच उसका 'जीवन-स्तर' सुधारा है।

परंतु यदि स्वयं अर्थशास्त्री, जो कि इन मामलों के बारे में सोचने के लिए विशेषतः प्रशिक्षित माने जाते हैं, अपने स्वीकृत मत-

वादों के कारण अथवा महज आत्मतुष्टि के कारण आंखें बंद कर लें, तो उन्हें आंखें खोलने के लिए कैसे तैयार किया जाये ?

इसके उत्तर में प्रो. मीर्डाल ने यूरोपीय प्रबोधकाल के आदर्शों का आश्रय लिया है—न्याय, समता, स्वाधीनता और मानवमात्र के भ्रातृत्व के आदर्शों का । बेशक विकासशील देशों को सहायता की सख्त और तुरंत जरूरत है; मगर उस सहायता के उपयोग के बारे में ऐसी शर्तें लगाना कि जिससे सहायता पाने वाले देश को दाता देश से खर्चीले हथियार और विलास-सामग्री खरीदकर उसके अर्थतंत्र को टिकाये रखना पड़े, सारी सहायता को निष्फल कर देना है।

मीर्डाल का कथन है—'सहायता के मूल में अधिक सीधी दलील होनी चाहिये कि वह जरूरतमंदों के साथ मानवीय एकता की भावना और उनके प्रति कारुण्य से प्रेरित है।' आर्थिक स्वार्थ की दलील तो निश्चय ही नहीं दी जानी चाहिये।

स्टाकहोम में हुए मानवीय पर्यावरण संबंधी राष्ट्रसंघीय संमेलन में प्रो. मीर्डाल ने जो भाषण दिया था (जो कि इस पुस्तक के अंत में जोड़ा गया है), उसकी अंतिम पंक्तियों में चिंतन के लिए और भी अधिक मसाला है। वे पंक्तियां यों हैं :

'हम सबको यह आशा बंधती है कि विकसित देशों में इस समय जो युवा पीढ़ी उग रही है, वह उनसे भिन्न आदर्शों से संपन्न होगी, जो आदर्श इस समय हमारी नीतियों को परिचालित कर रहे हैं। हम यह भी आशा करते हैं कि अविकसित देशों के दुःख-दर्द के लिए उनके पास ज्यादा बड़ा दिल होगा।'

यूरोप के सबसे प्रतिभावान अर्थशास्त्री के मुंह से ऐसे भावों का उद्गार अर्थशास्त्रियों के पेशे की सीमाओं का ही नहीं, अपितु इस परिज्ञान का भी सूचक है कि धनी देशों की निःस्वार्थ सहायता के बिना समस्या का सुलझाव सर्वथा असंभव है।

★

आभार

सन १९६० से बारह वर्ष तक 'नवनीत' का संपादन-कार्य सुचारु रूप से संपन्न करने के पश्चात् **श्री सत्यकामजी विद्यालंकार** अपने निःशुल्क परामर्श से 'नवनीत' को लाभान्वित करते रहे हैं। कुछ समय से वे वेदों के अंग्रेजी अनुवाद में संलग्न हैं। उनकी इच्छा का संमान करके इस अंक से परामर्शदाता के रूप में उनका नाम नहीं छप रहा है, तथापि उनका मार्गदर्शन तो 'नवनीत' को सदैव मिलता ही रहेगा। वे दीर्घायु हों और अपने प्रत्येक काम में यशस्वी हों, ऐसी नवनीत-परिवार की कामना है।

—**श्रीगोपाल नेवटिया**, संचालक : नवनीत

★

नयी पीढ़ी : पुरानी पीढ़ी

रामनाथ 'सुमन'

नयी पीढ़ी समाज-जीवन के यौवन का प्रतीक है। वह शुद्ध तत्काल से आलोडित है। यौवन जब आता है तो एक भूचाल की भांति आता है और सब-कुछ डगमग कर देता है। वह तूफानों से खेलना पसंद करता है, पहाड़ों से टकराना चाहता है, आंधियों की भांति अपने सामने से सब कुछ उड़ाता चलता है। एक नशा होता है और विद्रोह का स्वर इतना तीव्र होता है कि सीख की बातें उसे अच्छी नहीं लगतीं। वह कुछ नयी बात करना चाहता है, नये देवता गढ़ना चाहता है, नये मूल्य और नये प्रतिमान बनाना चाहता है। वे बनें या न बनें, पुरानी, युगजीर्ण परंपराओं को ढहा देना उसे अच्छा लगता है। भले रचना न कर पाये पर वह रचना के सपनों से भरा होता है, इसलिए पुरानों के प्रति उसमें तीव्र अस्वीकृति का भाव होता है।

नयी पीढ़ी में वही है जो उद्वेलित, आलोडित यौवन में होता है—तीक्ष्ण भावोद्वेग, तूफानी स्वर, विद्रोहदीप्त भंगिमा, प्राचीन का उपहास, उद्दाम और उद्दंड आचरण जो युगजीर्ण के प्रति विस्फोट एवं उपहास-भावना से संकुल है। तूफानी नदी की भांति कहीं नयी उपजाऊ मिट्टी डालने वाली, कहीं तटस्थ पादप-पुंजों, वनस्पतियों, ढूहों, कगारों और बस्तियों को ठोकरों से विनाश के गर्त में धकेलकर चलती हुई।

पुरानी पीढ़ी वार्धक्य की प्रतिनिधि है। वार्धक्य, जिसके पांव वर्तमान की भूमि पर होते हैं, परंतु सिर अतीत के अकाश में खोया रहता है। वह परंपराओं और प्रणालियों से बंधी कुछ स्थिर मूल्यों को पकड़े हुए, जीवन के संचित अनुभवों की गठरी लिये, एक-एक पग फूंक-फूंककर रखने वाली होती है। तीव्र परिवर्तनों के प्रति संशयी, कटती हुई जड़ों के प्रति चिंतातुर और मूल्यों के सातत्य के आलोक में नयी पीढ़ी की देखपरख करने वाली। वह फल्गू की हरहराती तूफानी धारा नहीं, मैदानों की शांत गंगा का अपेक्षाकृत स्थिर प्रवाह है। उसका वार्धक्य कोई काम करने के पहले सौ बार सोचता है और सोचता है इसलिए उसमें गत्यात्मकता बहुत कम है।

आज समाज में, साहित्य में, गृह-जीवन में, शाला में, राजनीति में, धर्म में, मतलब जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नयी और पुरानी पीढ़ी में टकराव है। नयी पीढ़ी पुराने के प्रति आक्रोश से भरी, अपनी असफलताओं के लिए उसे जिम्मेदार ठहराने वाली और उसके प्रति विमुख तथा विद्रोह-तत्पर है। पुरानी में नयी के प्रति असंतोष, खीज,

निराशा और शिकायतों का एक हुजूम है।

यह मानव-सभ्यता के सामने आज सबसे बड़ा सवाल है, क्योंकि यह सार्वत्रिक है। और इसने पुरानी एवं नयी दोनों पीढ़ियों को अस्वाभाविक, असहज मानसिक तनाव के वातावरण में जीने के लिए बाध्य किया है। लोग अपने में घुटकर, विखंडित होकर खोये–दिशाहारा मुसाफिर का-सा जीवन जी रहे हैं।

इस संघर्ष में उस नारी का लोप होता जा रहा है, जो गृह की लक्ष्मी थी–हृदय में मधुर गंध, देह में मातृत्व का गौरव भरे, गृह के अणु-अणु में व्याप्त। दीवारें जिसके हास्य से चमकती हैं; द्वार जिसके उदार हाथ से आतिथ्य के सत्कार की घोषणा करते हैं; तुलसी का चौरा जिसके अंचल-दीप से आलोकित है और पति का प्रकोष्ठ जिसके स्नेह-राग से रंजित है, घर में समायी, मिट्टी और पत्थर को सजीव करने वाली वह नारी आज कहां है ?

इसलिए आज पिता से पुत्र को, पुत्र को पिता से, पति को पत्नी से, पत्नी को पति से, सास को बहू से, बहू को सास से, मां को बेटी से, बेटी को मां से शिकायत ही शिकायत है। वे एक दूसरे को नकारते और तोड़ते हुए, न कि विकसित करते हुए चल रहे हैं। बातें बड़ी-बड़ी हैं, पर सुख और आनंद का मुखरित स्वर कहीं सुनाई नहीं पड़ता। पिता-पुत्र का प्रेमल संबंध, मां और संतान का स्नेह-मुखर स्वर, सास का हार्दिक आशीर्वचन, वधू की गृह-तन्मयता, और सबको मिलकर एक पूर्ण इकाई होने का बोध–सब बिखर गया है।

परंतु मैं पूछता हूं कि नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी का यह जो द्वंद्व है, क्या वह अनिवार्य है ? मैं समझता हूं कि वह न केवल अनिवार्य नहीं है, वरन अवैज्ञानिक भी है। काल-प्रवाह अनंत, अनवरुद्ध और अखंड है। अतीत, वर्तमान और भविष्य सब इसी काल के कल्पित खंड हैं। अतीत से ही वर्तमान उत्पन्न होता है और उसी की गोद में पलता है। फिर वह वर्तमान भी अतीत हो जाता है और भविष्य वर्तमान में प्रस्फुटित हो उठता है। जो था, उसी से वह पैदा हुआ जो आज है, और जो आज है उसी से वह आयेगा जो अनागत है।

इस प्रकार अतीत, वर्तमान और भविष्य कोई स्वतः पूर्ण या स्वतंत्र नहीं है। एक का अस्तित्व दूसरे पर निर्भर है। पुरानी पीढ़ी ही नयी पीढ़ी की जननी है–उसी ने उसे जन्म दिया, पाला-पोसा और संवर्द्धित किया है। पुरानी पीढ़ी से नयी पीढ़ी आती है और फिर वह नयी पीढ़ी ही पुरानी पीढ़ी का स्थान ले लेती है। इन सबमें प्रस्फुटित होकर और सबको लेकर ही जीवन-धारा की पूर्णता है। कोई भी अकेले पूर्ण नहीं, दोनों का जीवन और अस्तित्व परस्परावलंबी है।

मानसशास्त्र तो पुरानी एवं नयी पीढ़ी-जैसी कोई सर्वथा विलग और परिभाषित इकाई मानता ही नहीं। उसकी दृष्टि से पुरानी पीढ़ी में भी नवीन होता है, और

नयी पीढ़ी में भी प्राचीन हो सकता है—होता है।

व्यवहार और प्रत्यक्ष में भी दोनों का अस्तित्व एक दूसरे के सहयोग पर निर्भर है। सहअस्तित्व ही सत्य है, सहज है। सारी टकराहट और समस्त निषेध-प्रतिषेध केवल इसलिए है कि आज मानव सरल-सहज नहीं रह गया है। एक जीवन में हम अनेक जीवनों का बोझ ढोते हैं, एक पीढ़ी के सिर पर अनेक पीढ़ियों का बोझ है।

समाज-जीवन की सहज प्रक्रिया है—एक का दूसरे के लिए जीना। जीवन जीवन की सृष्टि करके मिट जाता है, अथवा अपने को हटा लेता है। पुराना अपनी थाती नवीन को सौंप देता है। नवीन प्राचीन की अभ्यर्थना करता और उसकी थाती को आशीर्वाद के रूप में ग्रहण करता है। पुरानी पीढ़ी के संचित अनुभव और नयी की क्रियाशक्ति दोनों के योग से भविष्य का निर्माण होता है।

इसीलिए भारतीय समाज-जीवन में कुटुंब की एक स्वयंपूर्ण इकाई थी, जिसका प्रत्येक सदस्य दूसरे के लिए जीता था और सब मिलकर परिपूर्णता की ओर उन्मुख थे। उसमें पिता का जीवंत अनुभव, पुत्र की कर्मचेष्टा, सास की अशीष और बहू की प्रेमप्रभा, मां की सर्वग्राही स्नेह-सुषमा और बहन का मृदुल एवं पवित्र बंधन मिलकर एक ऐसी सामाजिक इकाई बनाते थे, जो काल-संघर्षों से टक्कर लेती, अपने को बार-बार पुनर्जीवित करती जीवन की जययात्रा

पर बढ़ती ही जाती थी। कोई अपने लिए नहीं दूसरों के लिए, जो उनके अपने थे, जीता था और यह दूसरों के लिए जीना ही सच्ची संस्कृति है। आत्मदान ही उसका प्राण है। आज सब अपने-अपने लिए जीते हैं—दूसरों से कटे, अपनी दुनिया और अपने सपनों में खोये।

भारतीय समाज-जीवन के नेताओं ने नयी पीढ़ी बनाम पुरानी पीढ़ी को टकराहट से बचाने और उनमें सामंजस्य लाने के लिए एक और समाधान प्रस्तुत किया था। प्रौढ़ावस्था में पिता और माता वान प्रस्थाश्रम ग्रहण करके अपने अधिकार और उत्तरदायित्व पुत्र और बहू को सौंप देते थे और तब उनका अधिकांश समय गृह से संबद्ध रहकर भी तटस्थ जीवन की साधना में लगता। गृहमाता गृह की कुंजियां और भार बहू को संभला देती और अपना समय पति के साथ भजन-पूजन, सेवा-अर्चना और तीर्थाटन में व्यतीत करने लगती थी। इस प्रकार नयी पीढ़ी पुरानी पीढ़ी की स्वीकृति एवं आशीर्वाद-तले फूलती-फलती थी और

उसमें पुरानी के प्रति, आने वालों के प्रति कृतज्ञता का भाव पनप उठता था। संघर्ष के निराकरण और सहयोग का यह एक अच्छा उपाय था।

मतभेद तब भी होते थे; परंतु सहअस्तित्व और संपूर्ण कुटुंब की रक्षा एवं संवर्धन का भाव इतना प्रबल था कि मतभेद उग्र कटुता का रूप नहीं ले पाता था। सब लोग सहअस्तित्व के सत्य को समझते थे और यथासंभव उसका पालन करते थे। इस भावना और वातावरण का लोप हो जाने से आज अवांछनीय प्रतियोगिता और संघर्ष की स्थिति पैदा हो गयी है। फलत: जो घर आनंद और शांति के केंद्र थे, वे दु:ख और हाहाकार से भर गये हैं।

सहअस्तित्व की भावना के शिथिल हो जाने का भयावह परिणाम यह हुआ है कि संघर्ष पुरानी और नयी पीढ़ी के बीच ही सीमित नहीं रह गया है। वह पुरानी पीढ़ी बनाम नयी पीढ़ी की सीमा पारकर नयी पीढ़ी बनाम नयी पीढ़ी तक फैल गया है। अब संघर्ष पुरानी पीढ़ी की सास और नयी पीढ़ी की बहू, या पुरानी पीढ़ी के पिता और नयी पीढ़ी के पुत्र के बीच ही नहीं रहा है, उसने नयी पीढ़ी के पति और नयी पीढ़ी की पत्नी को भी अपने अंक में समेट लिया है। नयी पत्नी नये पति के अनुशासन और दबाव में क्यों रहे ? किस बात की कमी है उसमें ?

अनुशासनहीन विद्रोह में ऐसा ही होता है। विरोध वितंडा हो गया है, और नये दूषित वर्तुल बनते जाते हैं। एक अद्भुत दृश्य है यह, समाजवाद एवं सामूहिक हितों की प्रधानता का नारा लगाने वाले इस युग में जैसी घोर व्यक्तिवादी दृष्टि और आचरण हम देखते हैं, वैसा पहले कभी दिखाई नहीं पड़ा था।

साहित्य और शाला में भी यही क्रम है। पुरानी पीढ़ी की परोपदेशक-वृत्ति और नैतिक आदर्शों पर बल देने और नयी पीढ़ी की शुद्ध भौतिक भोगवादी दृष्टि में घोर विरोध है। यह विरोध भी एक दूसरे को न समझने के कारण है। जीवन में नैतिक और व्यावहारिक, आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार की शक्तियों के सामंजस्य के लिए स्थान है। दोनों के मिलने से जीवन की पूर्णता है।

इसलिए विरोध के इस सिलसिले को उलटना होगा। दोनों को समझना होगा कि दोनों के हित परस्पर संग्रथित हैं। दोनों एक दूसरे के सहयोग से विकसित हो सकते हैं। वे प्रतिद्वंद्वी नहीं, परस्पर पूरक हैं, पर भ्रमवश अपने को वैसा समझे हुए हैं। दोनों का अपना स्थान, अपना महत्त्व है और दोनों के मेल-जोल और सामंजस्य से ही समस्याएं हल की जा सकती हैं। सहअस्तित्व की भावना, न कि संघर्ष इस समस्या का समाधान है, इसी मार्ग पर चलकर दोनों का जीवन सार्थक होगा और सहअस्तित्व से वे एक दूसरे के लिए पूरक और उपयोगी बनेंगे।

—साधनासदन, ७७।१५६ लुकरगंज,
इलाहाबाद-१

★

नवनीत

जीवन-समुद्र

फिलस्तीन में दो समुद्र हैं। एक ताजे स्वच्छ जल से पूर्ण है, मछलियों से भरपूर और हरियाली से आवृत। उसका जल स्वास्थ्यवर्धक है, और यरदन नदी द्वारा हरमन पर्वत के आस-पास के पहाड़ों से लाकर उसमें उड़ेला जाता है। प्रभु यीशु के धर्मोपदेश-काल के अनेक सुखमय क्षण यहां बीते। यहां का वातावरण आज भी शांति और बल देता है।

यरदन यहां से बहकर दक्षिण में एक और समुद्र में गिरती है। उस सागर में मछलियां नहीं, उसके गिर्द हरियाली नहीं, पंछियों का कलरव नहीं, बच्चों की किलकारियां नहीं। वहां हवा दमघोंटू और डरावनी है। उसका जल न पशु-पक्षी पीते हैं, न मनुष्य।

दोनों में यह अंतर क्यों? गैलिली समुद्र, यरदन नदी से जितना जल भीतर आता है, उतना ही बाहर निकाल देता है, जमाखोरी नहीं करता। वह जीवन का समुद्र है। दूसरा समुद्र बाहर से आये सारे पानी को जमा कर लेता है और एक बूंद भी बांटता नहीं। गैलिली समुद्र देता है और जीता है। दूसरा समुद्र देता कुछ नहीं, इसलिए जीता भी नहीं। उसका नाम ठीक ही रखा गया है—मृत समुद्र।

—डब्ल्यू. ट्यूडर पोल

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

एक वर्ष और

टी. एल. वासवानी

एक वर्ष और बीत गया ! प्रभुकृपा और आशीर्वादों का एक वर्ष !

हाथ जोड़कर मैं दयामय के सिंहासन के समक्ष खड़ा हूं कि मुझे आशीर्वाद प्रदान करे।

बार-बार एक उदासी मुझे व्याप लेती है । फिर भी मुझे याद है कि तरुणाई में जब मैं गुरु के चरणों में बैठता था, उन्होंने मुझे सिखाया था कि दूर-निकट की हर चीज से, तारों से और हर धूलिकण से आनंद की धारा बह रही है—जीवन के आनंद की। क्योंकि जो कुछ भी अस्तित्व में है उसके केंद्र में, जिसे हम पाप और संघर्ष कहते हैं उसके भी केंद्र में, परमेश्वर है, उसकी दिव्य शांति है ।

अफसोस ! यह बात हम अक्सर भुला बैठते हैं और आपस में लड़ते हैं, राष्ट्र आपस में युद्ध करते हैं । हम प्रतिदिन इस महान सत्य को कि पूर्व और पश्चिम मानवता के साझे निर्माता हैं, स्रष्टा की सेवा में परस्पर सहयोगी हैं, अपने पांवों तले रौंदते हैं ।

धन्यवाद और कृतज्ञता-ज्ञापन के इस दिन मैं समस्त जीवों को सादर प्रणाम करता हूं और प्रत्येक पक्षी से और प्रत्येक पशु से, प्रत्येक मनुष्य से और देवलोक के प्रत्येक देवता से आशीर्वाद मांगता हूं।

और मैं उस प्रभु की बात सुनता हूं जिसकी वाणी कहती है : 'मामेकं शरणं व्रज' —आओ, मेरी शरण गहो। प्रभु यह बात अपने भक्तों से ही नहीं कहते, अपितु समस्त थके-हारों और दुखियारों से, बोझिल दिल वालों और टूटे दिल वालों से भी कहते हैं।

और पावनता और प्रेम के संगम उस प्रभु के मुख-कमल को निहारता हुआ मैं बोल उठता हूं—प्रभो ! मुझे आमूल बदल दो, शुद्ध हृदय का बना दो, धोकर बर्फ से भी उजला बना दो।

★

विश्वरंजन वर्मा

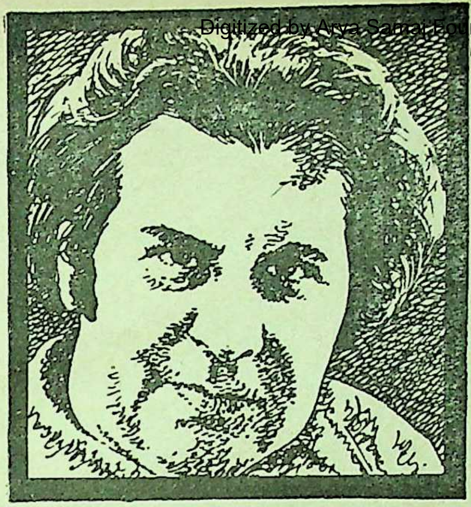

संगीत का संमोहन

मिकिस थियोडोराकिस इस समय यूरोप के सबसे प्रतिष्ठित स्वरस्रष्टाओं में गिने जाते हैं; साथ ही वे यूनान के प्रमुख क्रांतिकारियों में से भी एक हैं। यूनान की जिस सैनिक तानाशाही का चंद महीने पहले पतन हुआ, उसने थियोडोराकिस को तीन साल तक एक पहाड़ी गांव में नजरबंद रखा था। वहां एक दिन पुलिस का एक सिपाही पहरे पर नियुक्त हुआ, जो साम्यवादियों की धर-पकड़ में मुस्तैदी दिखा चुका था। थियोडोराकिस बतलाते हैं :

‘मैंने उसे गिलास-भर शराब दी और वह बड़ी भावना के साथ मेरा संगीत सुनता रहा। जब मैंने बजाना बंद किया, तो उसने मुझे बांहों में भर लिया और इसकी परवाह न करते हुए कि दूसरे पहरेदार सुन लेंगे, जोर से बोला—“उनकी हिम्मत कैसे हुई कि आपको इस गांव में बंद कर दें? आपने तो हमारे दिलों में संगीत का दरिया बहा दिया है।” फिर सीधे वह पुलिस-थाने में पहुंचा और अपने आला अफसर से बोला—“मैं मिकिस थियोडोराकिस के मकान पर पहरे पर था। उन्होंने मेरे लिए पियानो बजाया। अब मैं उन पर पहरा नहीं दे सकता।” उसे महीने-भर के लिए जेल में ठेल दिया गया। दो बच्चों का पिता था वह!’

* * *

सूर्योपासना

धीरेंद्रकुमार दीक्षित

शक्ति और ऊर्जा का प्रतीक सूर्य विश्व के विभिन्न देशों में प्राचीन काल से उपास्य-देव रहा है। केवल भारत में ही नहीं, बाहर भी अनेक राजवंश अपने को सूर्य का वंशज कहते रहे हैं। सूर्य के गूढ़ रहस्य को समझने तथा सौर शक्ति की गुत्थियां सुलझाने में ज्योतिषियों, खगोलविदों एवं तत्त्ववेत्ताओं ने अथक परिश्रम किया है।

सूर्योपासना का प्रारंभ कब कहां हुआ, यह विवाद का विषय है। कुछ इतिहासकारों का मत है कि सूर्य को देवता मानकर पूजने की परंपरा का प्रारंभ दजला-फुरात घाटी के काल्दियों ने किया और उसके बाद मिस्र में वह पनपी। मिस्र के राजा फिरऊनों (फेरो) के भव्य स्मारक एवं समाधियां, नील नदी के किनारे 'हीलिओपोलिस' एवं अन्य अनेक स्थानों पर निर्मित मंदिर मिस्र-वासियों की सूर्य-पूजा के उदाहरण हैं। मिस्रियों के अनेक सूर्य-देवता थे। वस्तुतः मिस्र का प्राचीन गौरव इन्हीं सूर्य-देवताओं पर केंद्रित था।

लगभग २००० ई. पू. में कांस्य-युग में पश्चिम यूरोप के विकट वनों के बाशिंदे सूर्य की उपासना करते थे। लंदन के दक्षिण-पश्चिम में सैलिस्बरी मैदान में स्थित 'स्टोन-हेंज' नामक स्थान सूर्योपासकों का केंद्र था, जहां वे सूर्योदय के समय पूर्वोन्मुख होकर प्रार्थना करते थे।

यूरोपीयों द्वारा अमरीका की खोज के बहुत पहले, मेक्सिको के 'मय' लोग भी सूर्योपासक थे। पेरू देश के 'इन्का' जाति के लोगों द्वारा विशाल नगरों में निर्मित सूर्य-मंदिरों का इतिहास इसका साक्षी है।

भारतवर्ष में सूर्योपासना इतिहास के प्रारंभ काल से ही प्रचलित है। वैदिक देवताओं में सूर्यदेव का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वेदों में सवितृ, आदित्य, विष्णु, मित्र प्रभृति अनेक नाम उसके हैं। प्राचीन आर्यों ने 'देवताओं के उज्ज्वल मुख' सूर्यदेव की विभिन्न प्रकार से वंदना-अभ्यर्थना की। अनेक सूक्त एवं फुटकल मंत्र सूर्य के देदीप्यमान तेज एवं महिमा की स्तुति में रचे गये। सूर्य ही नभ-मंडल का प्रथम नक्षत्र था, जो आर्ष आकर्षण का केंद्र बना।

वेदों में सूर्य को कुष्ठरोग तथा अंधेपन जैसी भयंकर बीमारियों के निवारण की शक्ति से युक्त माना गया है। उसे समस्त जीवन का स्रोत तथा धारक कहा गया है। उसकी किरणें अज्ञान व अंधकार का अपहरण करती हैं तथा लोगों के हृदयों को आनंद एवं ज्ञान से परिपूरित करती हैं।

यजुर्वेद के 'शतरुद्रिय' में आकाश-स्थित

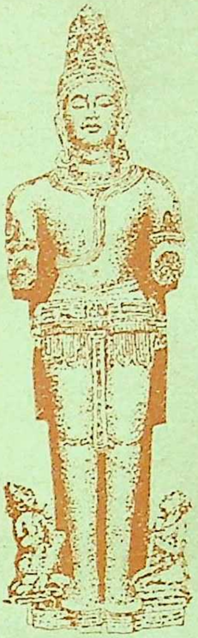

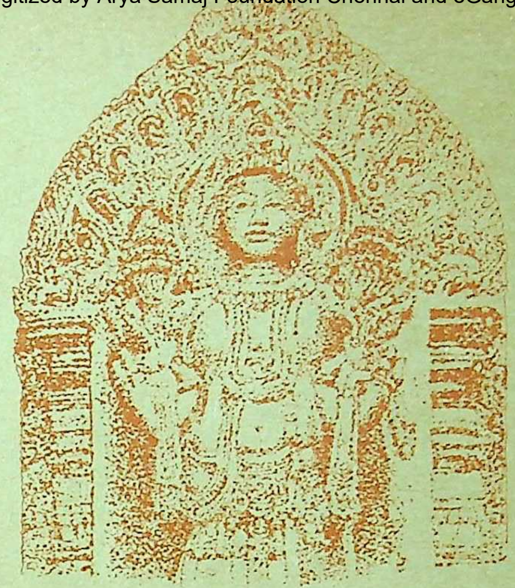

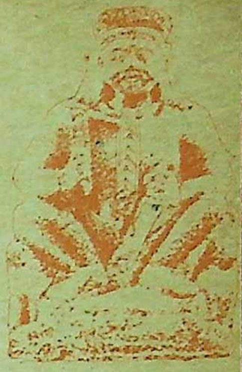

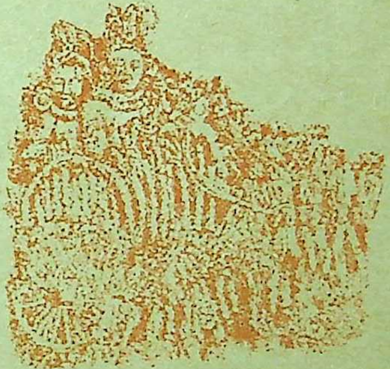

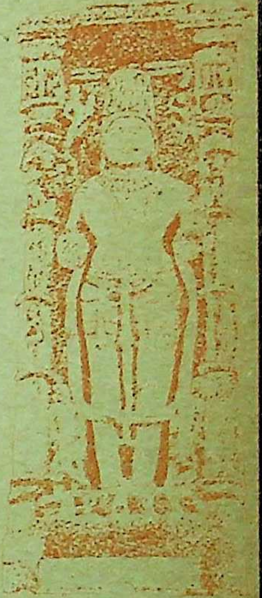

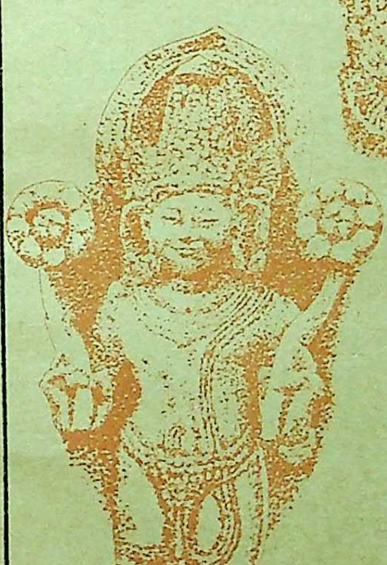

प्रथम पंक्ति (बायीं ओर से): १. मध्याह्न का सूर्य, कोणार्क; २. होय्सल शैली की एक सूर्यमूर्ति, ब्रिटिश म्यूजियम; ३. कुषाण-कालीन सूर्यमूर्ति, जिसकी वेश-भूषा में पश्चिम एशियाई प्रभाव स्पष्ट है, मथुरा संग्रहालय। मध्यपंक्ति : १. रथारूढ़ सूर्य, भाजा, महाराष्ट्र; २. मोढेरा (गुजरात) के सूर्य-मंदिर की सूर्यमूर्ति। सबसे नीचे : ग्वालियर (म.प्र.) से प्राप्त सूर्यमूर्ति, १० वीं सदी।

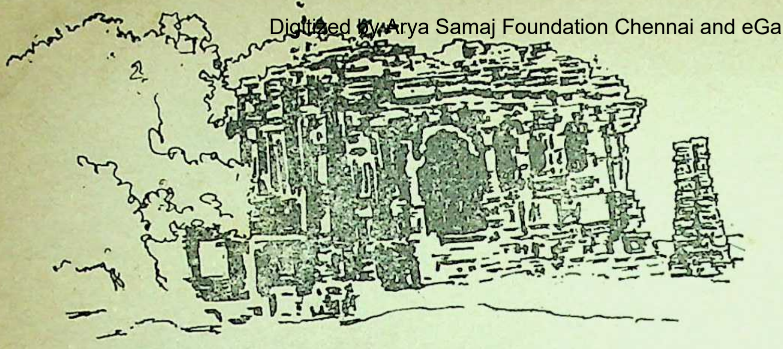

मोढेरा (गुजरात) का सूर्य-मंदिर।

दृश्य सूर्य-पिंड से शिव का सादृश्य व्यक्त किया गया है। वेदों का सार और मंत्रों में सर्वोपरि माने गये गायत्री मंत्र में सविता (सूर्य) से प्रार्थना की गयी है कि वह हमारी बुद्धि को सत्प्रेरणा दे। सूर्य के उदय एवं अस्त की बेला में प्रतिदिन 'गायत्री-अनुष्ठान' का विधान है।

सूर्य की उत्पत्ति के विषय में ऋग्वेद में अनेक मंत्र हैं। बताया गया है कि देवताओं ने महाप्रयत्न करके सूर्य को समुद्र की अथाह गहराइयों से ढूंढ़ निकाला और उसे अंतरिक्ष में स्थापित कर उसकी कक्षा निर्धारित की।

पौराणिक युग में हमें सूर्योपासना का चरमोत्कर्ष देखने को मिलता है। विभिन्न पुराणों में सूर्य की साजसज्जा तथा आभूषणों का सचित्र वर्णन है। वाल्मीकि-रामायण में सूर्य-वंदना के चुने हुए श्लोक हैं, जो 'आदित्यहृदय' कहलाते हैं। माना जाता है कि महर्षि अगस्त्य द्वारा उपदिष्ट इस स्तोत्र का जप करके ही युद्ध में राम रावण पर विजय पा सके। महाभारत में सूर्य को त्रिमूर्ति–ब्रह्मा, विष्णु और महेश–का साक्षात् साकार-स्वरूप बताया गया। विष्णु-पुराण में सूर्य को 'बौने कद के तथा चमकते हुए शरीर एवं ईषत्‌रक्त नेत्रों वाले' वर्णित किया गया है। बहुधा, सूर्य को सात सफेद घोड़ों द्वारा चालित तेजोमय रथ पर आसीन बताया गया है। उषःकाल व संध्याकाल के प्रतीक, लंगड़े अरुण उस रथ के सारथी हैं।

महाभारत में कथा आती है कि ज्येष्ठ पांडव धर्मराज युधिष्ठिर ने वनवास-काल में सूर्यदेव को प्रसन्न करके अक्षय-पात्र प्राप्त किया था। अपने भक्त राजा सत्राजित को सूर्य ने 'स्यमंतक मणि' प्रदान की थी, जो प्रतिदिन गुणवान सज्जनों को लाखों मन

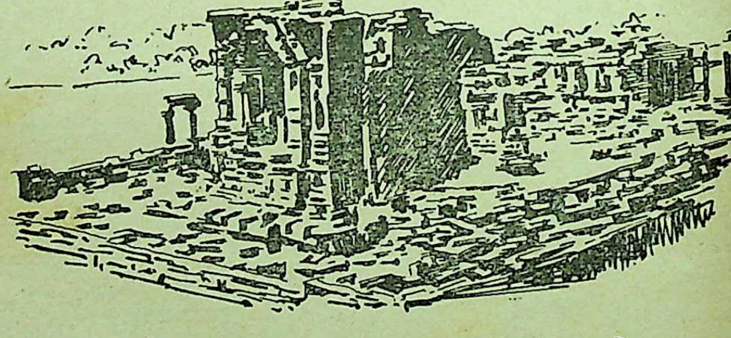

मातंडतीर्थ (कश्मीर) में सूर्य-मंदिर के अवशेष।

स्वर्ण देती थी व दुष्टों को मृत्यु एवं विनाश।

सिकंदर महान का डटकर मुकाबला करने वाले वीर योद्धा पुरु ने युद्धभूमि में जाने से पूर्व सूर्यदेव का आवाहन-पूजन आदि किया था। सातवीं शताब्दी में महाराज हर्ष के दरबारी कवि मयूर ने सूर्य की स्तुति में सौ श्लोकों का स्तोत्र रचा, जो 'मयूरशतक' नाम से प्रसिद्ध है। कहते हैं, इससे कवि का चक्षुरोग दूर हो गया। इस कथा का उल्लेख कांचीपुरम् के कुशलेश्वर मंदिर के एक शिलालेख में भी है।

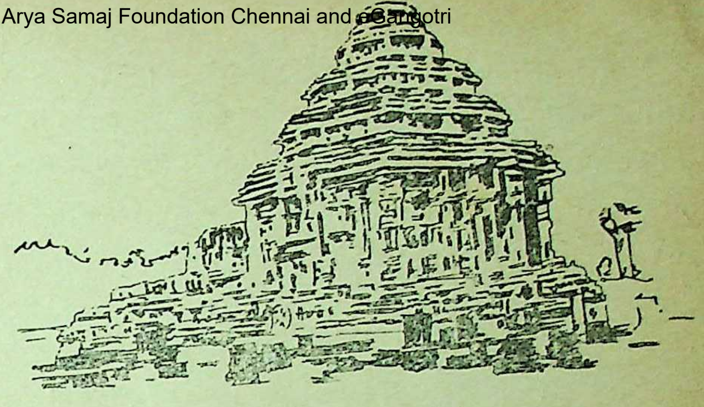

कोणार्क का सूर्य-मंदिर—भारतीय स्थापत्य का गौरव।

अद्वैत-मत के प्रतिष्ठापक भगवान आदि-शंकराचार्य को 'षण्मतस्थापनाचार्य' भी कहा जाता है। उन्होंने दैनिक पूजा में गणेश, विष्णु, शिव, शक्ति एवं अग्नि के साथ सूर्य की पूजा का विधान किया।

मकर-संक्रांति के दिन सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है; वह पर्व के रूप में मनाया जाता है। उस दिन सूर्योपासना का विशेष महत्त्व है। दक्षिण भारत में इस त्योहार के कुछ विशेष पहलू हैं। वहां फसल-कटाई की शुरूआत इसी समय होती है। इस कारण गांवों में उत्साह एवं आनंद का वातावरण होता है। रंग-बिरंगे ढंग से सजायी गयी गायों के विशाल जुलूस निकाले जाते हैं। इस अवसर पर नृत्य व संगीत की अनुपम छटा भी देखते ही बनती है।

तमिलनाडु में मकर-संक्रांति 'पोंगल' के नाम से विख्यात व लोकप्रिय है। इस दिन नये वस्त्र धारण किये जाते हैं। नयी फसल के ताजे कुटे चावल, दूध व गुड़ से खिचड़ीनुमा मीठा व्यंजन 'पोंगल' बनाया जाता है, जिसका आदान-प्रदान इष्ट-मित्रों व पड़ोसियों में होता है। काष्ठ-फलकों पर सूर्य की आकृतियां बनाकर उनकी पूजा की जाती है। नीरस वर्षा ऋतु एवं निस्तेज शीत ऋतु के पश्चात् संक्रांति ऋद्धि-सिद्धि व समृद्धि की अभिवृद्धि की आशाओं का नूतन संचार करती है। सूर्य अधिक प्रकाश व ऊष्मा देने लगता है, जिससे लोगों में ताजगी व उत्फुल्लता आ जाती है।

वैदिक काल से चली आयी इस सूर्योपासना के अतिरिक्त, हमारे यहां ऐसे लोगों की भी एक श्रेणी थी, जो 'सौर' कहलाते थे तथा केवल सूर्य के पूजक थे। ये लोग बिना सूर्य-दर्शन किये अन्न भी नहीं ग्रहण करते थे।

महान ज्योतिर्विद एवं दैवज्ञ वराहमिहिर ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ बृहत्संहिता में लिखा है

कि सूर्य-मंदिरों से संबंधित प्राण-प्रतिष्ठा एवं अन्य उपासना-विधि का प्रारंभ 'मग' लोगों से हुआ, जो सूर्य के विशेष पुरोहित माने जाते हैं। इन मगों को 'जरशब्द' (इसे कुछ विद्वान पारसी धर्म के प्रवर्तक जरथुस्त्र ही बताते हैं) का वंशज कहा गया है। इन्हें 'शाकद्वीपी ब्राह्मण' भी कहा जाता था। ये लोग अपनी कमर के चारों ओर 'अव्यंग' (मेखला) धारण करते थे। कहते हैं कि श्रीकृष्ण के पुत्र सांब ने अपने बनवाये सूर्य-मंदिर में पूजा करने शाकद्वीप से इन्हीं मग पुरोहितों को बुलाया था। ऐसा समझा जाता है कि सूर्योपासना की मूल पद्धति कालांतर में इन पुरोहितों द्वारा प्रचारित प्रणाली में घुल-मिल गयी और मग लोग भी हिंदू बना लिये गये।

द्वारका, गया, पुरी और कोणार्क आदि स्थल सूर्योपासना के धाम के रूप में प्रसिद्ध थे। देश के विभिन्न भागों में अनेक सूर्य-मंदिर बने। इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध एवं भव्य है उड़ीसा में कोणार्क का मंदिर, जिसे गंगवंश के राजा नरसिंह देव ने बनवाया। चंद्रभागा नदी के निकट समुद्र-तट पर स्थित इस ७०० वर्ष पुराने मंदिर का संपूर्ण ढांचा सात तीव्रगामी अश्वों द्वारा खींचे जा रहे सूर्य-रथ के रूप में परिकल्पित है। रथ में २.९४ मीटर व्यास के १२ विशाल और अति सुंदर पहिये हैं। यह मंदिर कलिंग-स्थापत्य शैली का अद्भुत रत्न है।

भारत में सबसे प्राचीन सूर्य-मंदिर शायद चिनाब के किनारे श्रीकृष्ण के पुत्र सांब द्वारा बनवाया गया था। पुराणों के अनुसार, कुष्ठरोग से पीड़ित सांब इस मंदिर-निर्माण के पश्चात् पूर्ण स्वस्थ हो गया था। दूसरा प्राचीन सूर्य-मंदिर था मुल्तान (अब पाकिस्तान) में। सातवीं सदी ई. के चीनी यात्री ह्यूनत्सांग के अनुसार, यहां सभी देशों से हजारों आदमी प्रार्थना करने के लिए आते थे। इसे ग्यारहवीं सदी के आरंभ में महमूद गजनवी के आक्रमण का शिकार होना पड़ा। बाद में औरंगजेब ने इस मंदिर के ध्वंसावशेष पूर्णतया नष्ट करा दिये।

कश्मीर में मार्तंड तीर्थ में स्थित मार्तंड-मंदिर के भव्य अवशेष इसका प्रमाण हैं कि कश्मीर कभी सूर्योपासना का जबर्दस्त केंद्र था। अवशेषों से अंदाज होता है कि यह मंदिर शिल्पकला का अति सुंदर नमूना रहा होगा। सिकंदर भुक्ती ने इसे नष्ट किया था, जिसका मर्मस्पर्शी वर्णन हमें कल्हण की राजतरंगिणी में मिलता है।

गुजरात राज्य में प्रभास से ३० किलोमीटर दूर मोढेरा में एक नष्टप्राय विशाल सूर्य-मंदिर है। इसकी दीवारों पर ऊंचे मध्य एशियाई जूते और कमरबंद पहने हुए सूर्य-देवता की आकृति है। आंध्र प्रदेश में अरसविल्ली नामक स्थान प्राचीन सूर्य-मंदिर के लिए विख्यात है। इस मंदिर में स्थित सूर्यमूर्ति अत्यंत मोहक है। सूर्यदेव अपनी पत्नियों—उषा व छाया—के बीच बैठे हुए हैं और उनके हाथ में कमल का फूल है। कमल ज्ञान का प्रतीक है और उषा तथा छाया

[शेष पृष्ठ ५९ पर]

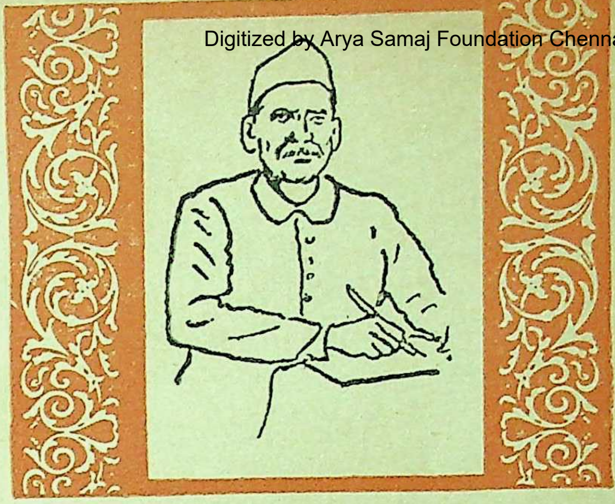

वेंकटलाल ओझा

संपादकाचार्य

पद्मसिंह शर्मा

संपादकाचार्य पंडित पद्मसिंह शर्मा हिंदी के उन उन्नायकों में से थे, जिन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के लिए अपने को होम दिया। वे संस्कृत, फारसी और उर्दू के भी विद्वान थे। हिंदी भाषा में आज जो ओज है, जो सजीवता है, उसके निर्माण में उनका बहुत बड़ा योगदान रहा है।

एक समय था, जब अपने को काव्य-मर्मज्ञ कहने वाले लोग बिहारी की सतसई को गंदी और भोंडी पुस्तक कहते नहीं अघाते थे। परंतु शर्माजी ने ही उस पर संजीवन-भाष्य लिखकर उस कलंक को धो बहाया। यह संजीवन-भाष्य एक वर्ष तक 'सरस्वती' में धारावाही रूप से निकला।

यह कहना गलत न होगा कि इस भाष्य द्वारा उन्होंने हिंदी में तुलनात्मक आलोचना की नींव डाली। उनकी भाष्य-शैली का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उसके अनुकरण पर आलोचकों ने आलोचना लिखनी आरंभ की। इस संजीवनी भाष्य में उनके अगाध पांडित्य का पूरा-पूरा दिग्दर्शन होता है। इसी भाष्य पर उन्हें सर्वप्रथम मंगलाप्रसाद पारितोषिक १९२२ में प्रदान किया गया।

संस्कृत के प्रकांड पंडित होते हुए भी वे सरल हिंदी के प्रबल समर्थक थे और हिंदुस्तानी अकादमी, प्रयाग में हिंदुस्तानी के संबंध में दिया गया उनका भाषण, जो बाद में पुस्तकाकार में प्रकाशित हुआ, हिंदी-उर्दू-हिंदुस्तानी को उनकी मूल्यवान देन है। भाषा की ओजस्विता और विचारों की निर्भीकता के लिए यह भाषण स्मरणीय रहेगा।

हिंदी की तरह संस्कृत में भी उनकी शैली ललित और सरल थी और उसकी प्रशंसा में स्वयं उनके गुरु और संस्कृत के महान पंडित काशीनाथ शास्त्री ने कहा था—'ऐसी सरल संस्कृत लिखना पद्मसिंह का ही काम है।'

उर्दू में भी उनकी तूती बोलती थी। महाकवि अकबर ने एक बार उन्हें लिखा—'मुझको आज तक इसकी दाद नहीं मिली थी। दाद एक तरफ, एक साहब ने मुझसे फरमाया था कि "मैं इस किते (पद) के मानी नहीं समझा।" वे साहब बहुत ही जीइल्म (विद्वान) और खुद साहिबे सखुन (कवि) थे। मैं खामोश हो रहा। खुदा ने आपके लिए यह बात रखी थी कि इसका मतलब समझिये और दाद दीजिये।

'..... खुदा जाने किसने-किसने किन-किन मवाके (अवसर) किन-किन अशआर (कविता) की दाद दी, लेकिन यह तफसीली नजर इस वज्द (भावना) और लज्जत के साथ गालिबन किसी ने नहीं की......'

शर्माजी उर्दू काव्य के मर्मज्ञ तो थे ही, उर्दू लिखने की भी उनकी अपनी शैली थी, जिसकी दाद देते 'जमाना' के संपादक दयानारायण निगम, ख्वाजा हसन निजामी प्रभृति नहीं अघाते थे।

गुरुकुल कांगड़ी से १९०४ में महात्मा मुंशीराम (बाद में स्वामी श्रद्धानंद) ने 'सत्यवादी' प्रकाशित किया, जिसके संपादक पं. रुद्रदत्त शर्मा थे। पद्मसिंहजी उनके सहकारी थे। यहीं से आपका प्रवेश पत्रकारिता में हुआ। आगे चलकर आपने अजमेर के 'परोपकारी' और 'अनाथ-रक्षक' का संपादन भी किया। परंतु सबसे अधिक काल (१९०९ से १९१७ तक) आप संपादक रहे महाविद्यालय ज्वालापुर के मुखपत्र 'भारतोदय' के। यहां अनेक भावी संपादकों ने आपके चरणों में बैठकर संपादन-कला का क-ख-ग सीखा। इसीलिए आपको लोग 'संपादकाचार्य' कहने लगे, जो उचित ही था।

उस युग में जब हिंदी भाषा, साहित्य और उसके लेखकों के प्रति कोई आदर की भावना जनमानस में नहीं थी, शर्माजी खोज-खोजकर नये लेखकों की चीजें पढ़ते और तुरंत उसकी दाद देने के लिए पत्र लिखते। इस तरह उनका आशीर्वाद पाकर कितने ही नवलेखक सिद्धहस्त लेखक बने। यदि उस समय शर्माजी का प्रोत्साहन उन्हें नहीं मिलता, तो संभव है बहुतों का लेखनोत्साह ठंडा पड़ जाता। इस तथ्य को अनेक लेखकों ने स्वीकार किया है।

हिंदी साहित्य संमेलन के मुजफ्फरपुर अधिवेशन (१९८५ विक्रमी) का उन्हें सभापति बनाया गया। उनका अध्यक्ष-भाषण उनकी गरिमा के अनुरूप था और आज भी उसे पढ़ें तो हिंदी के प्रति हमें अपने कर्तव्य का दिशाबोध होता है।

शर्माजी का स्वर्गवास ७ अप्रैल १९३२ को ५६ वर्ष की आयु में हो गया। यदि वे दीर्घजीवन पाते तो न जाने क्या-क्या लिखते और किन-किन नये लेखकों को प्रोत्साहित करते। प्रेमचंदजी ने 'हंस' में लिखा था—'शर्माजी जितने बड़े साहित्यसेवी थे, उससे कहीं बड़े मनुष्य थे।' उस समय 'विशाल भारत', 'सैनिक' और 'त्यागी' ने शर्माजी की स्मृति में विशेषांक प्रकाशित किये थे।

उनके संपूर्ण साहित्य का संकलन और विस्तृत जीवनी प्रकाशित करने की भी तब बात उठी थी। परंतु हमारी आरंभशूरता के कारण काम कुछ नहीं हुआ।

हां, १९५१ में श्री क्षेमचंद्र 'सुमन' और श्री फतहचंद शर्मा 'आराधक' के प्रयत्नों से आत्माराम एंड संस ने सिर्फ ३६ पृष्ठ की एक पुस्तक प्रकाशित कर इस ओर ध्यान दिलाया। उन्हीं दिनों श्रद्धेय पं. बनारसीदास चतुर्वेदी और पं. हरिशंकर शर्मा के संपादन में शर्माजी के पत्रों का संकलन प्रकाशित हुआ था। आज फिर इक्कीस वर्ष बाद मित्रों का ध्यान उस ओर गया और स्मृति-ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है। ठीक ही है, जागे तभी सवेरा। हिंदी लेखकों की नयी पीढ़ी को इससे पता चलेगा कि हिंदी के जिस राजपथ पर वे अपनी कारें भर्राटे से दौड़ा रहे हैं, उसका निर्माण किन लोगों के खून-पसीने से हुआ है। यह भी आवश्यक है कि शर्माजी के संपूर्ण साहित्य के प्रकाशन की व्यवस्था हो।

आज सारे देश के विश्वविद्यालयों में हिंदी के संबंध में शोधकार्य हो रहा है; किंतु आश्चर्य है अब तक किसी ने शर्माजी पर शोध नहीं की है। जिसने असंख्य लोगों को कीर्तिशाली बनाया, उसकी कीर्तिरक्षा की अवहेलना हम काफी कर चुके हैं। अब तो हमें अपने कर्तव्य के प्रति चेत जाना चाहिये।

–हिंदी समाचारपत्र संग्रहालय,
कसारट्टा, हैदराबाद-२

* * *

मैं तो कहता हूं, पुस्तक छपवाने से बड़ी मुसीबत और नहीं है। वही लोग अच्छे रहे जो इस छापे के युग से बहुत पहले ही मर गये। कहीं व्यासजी को अपने पुराण और महाभारत छपवाने पड़ते तो चीं बोल जाते, एकदम मर्त्यलोक छोड़कर भाग जाते। और कहीं दुर्वासाजी का प्रेस से काम पड़ जाता तो कष्ट-कंटक कट जाता। शाप देकर प्रेस वालों की सातकुली भस्म कर देते। कहीं दुर्वासाजी मिल जायें तो खयाल रखना। किसी तरह इन प्रेस वालों से उन्हें भिड़ा दिया जाये तो संसार का उद्धार हो जाये। पहले लोग हाथ से लिखते थे तो पुस्तक की कद्र जानते थे, पढ़ते थे, याद करते थे और आदर से रखते थे। आज के लोग पैसा फेंककर पुस्तक खरीदी, फाड़-तोड़कर अलग की ...... इसीलिए कुछ आता-जाता भी नहीं। ग्रंथ चुंबक ही रह जाते हैं। ज्यों-ज्यों प्रेस से काम पड़ता है मेरी तो यही धारणा दृढ़ होती जाती है कि वह युग अच्छा था, जब लोग श्रौत (कानों से काम लेने वाले) और स्मार्त (स्मृति से याद रखने वाले) होते थे। लिखना पढ़ना सब फिजूल है और यह प्रेस सिस्टम तो एकदम जहन्नुमी चीज है। **–आचार्य पद्मसिंह शर्मा**

(पं. हरदत्त शास्त्री को ८-१०-१९२९ को लिखे पत्र में)

★

वाक्यदीप

जो आदमी सोचता है कि मैं दूसरों के बिना जी सकता हूं, वह गलती पर है; जो आदमी सोचता है कि दूसरे मेरे बिना नहीं जी सकते, वह तो और भी गलती पर है।

जो यह मानता है कि पैसे से कुछ भी पाया जा सकता है, वह पैसा पाने के लिए कुछ भी कर सकता है।

वह अभागा है, जिसे कोई पसंद नहीं करता; मगर जिसे हर कोई पसंद करता है, उससे बचो।

मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी इच्छा का स्वामी और अपने अंतःकरण का दास हो।

दूसरों का विश्वास वही जीतता है, जिसे अपने पर विश्वास है।

अज्ञानियों के लिए बुढ़ापा पतझड़ है, ज्ञानियों के लिए फसल-कटाई का मौसम।

जो सर्वथा दोष-रहित मित्र ढूंढ़ता रहेगा, वह मित्र-रहित रह जायेगा।

परिधि से केंद्र को जाने वाली रेखाएं बनो, जो अंत में आपस में मिल जाती हैं; समानांतर रेखाएं न बनो जो कभी आपस में मिलती नहीं।

सिर्फ दो से डरो—भगवान से, और भगवान से न डरने वाले इंसान से।

—हसीदी गुरुओं की उक्तियां

* अमृत राय * बनारसीदास चतुर्वेदी *

बचपन की दोस्ती

मेरे बचपन की सबसे मीठी यादें अपने गांव लमही में बिताये गये दिनों की हैं। कुछ तो इसलिए भी कि वे यादें अधिकतर छुट्टियों के दिनों की हैं, क्योंकि तभी गांव जाने का सुयोग होता था।

छुट्टी के दिन मतलब अनंत अवकाश के दिन, जब न भूगोल पढ़ना है न इतिहास, और न गणित के वे जानमारू सवाल ही जो हरदम कांटे की तरह चुभते रहते हैं। सारे का सारा समय अपना है, पढ़ाई-जैसी कोई गलफांस नहीं। होगी जब होगी, छुट्टी बाद, अभी तो किताब-कापी का मुंह काला!

फिर क्या है, खेलो जी भरकर। गोली खेलो, गुल्ली-डंडा खेलो, कोइना खेलो, पाती डीलो खेलो—सबमें पल्लू मेरा सबसे पक्का दोस्त और साथी था। पल्लू का अच्छा, शिष्ट नाम भी मुझे मालूम था, बहुत बार याद रखने की भी कोशिश की, पर कभी याद नहीं रहा। आज भी याद नहीं है और अच्छा ही है कि याद नहीं है; क्योंकि मेरी सभी यादें पल्लू के साथ जुड़ी हुई हैं, उस दूसरे आदमी से जिसका कुछ और नाम था, उनका कोई नाता नहीं।

समय से बड़ा शत्रु आदमी का दूसरा कोई नहीं है—वह हर चीज को बड़ी बेदर्दी से तोड़-मरोड़ डालता है! वही पल्लू, जिसके बिना मैं अपने लमही के बचपन की कल्पना भी नहीं कर सकता, पास ही बनारस शहर में रहता है, कचहरी में काम करता है और कितनी ही बार मैं बनारस जाकर भी उससे मिले बिना लौट आता हूं। जो केवल उस समय की बात नहीं है जिसकी कमी का रोना आदमी हर समय रोया करता है, बल्कि उस समय की भी जो इस बीच बीत चुका है, चालीस लंबे-लंबे क्रूर वर्ष जिन्होंने मेरे बचपन की हत्या कर दी ......

...... लेकिन जो मरकर भी नहीं मरा और अब स्मृतियों के रूप में जीवित है और मैं बहुत बार अपने सपनों में फिर अपनी उसी बचपन की दुनिया में लौट जाता हूं, जहां मेरा वह बचपन का संगी मेरे पास है और हम दोनों साथ-साथ बंसवारी में घुसे हुए अपनी गुल्ली खोज रहे हैं, गर्मी की पूरी-पूरी दोपहर घनी-घनी अमराइयों की छाय:

में लू के गर्म-गर्म थपेड़ों को अपने उसी बचपन के जादू से मलयानिल के झोंकों में बदलकर चटाचट गोली की चोटें मार रहे हैं या ऊपर आम के उन्हीं नन्हे-नन्हे टिकोरों पर ढेलेबाजी कर रहे हैं और उन आमों की चौकीदारी करने वाली भगवंतिया की गालियां खा रहे हैं, पोखरे में बंसी डाले बैठे हैं और दो-चार छोटी-छोटी गिरइयां भी मिल गयीं तो हम दोनों ऐसे निहाल हैं कि पता नहीं कहां की दौलत हमें मिल गयी। फिर पल्लू—जो गांव के रिश्ते में मेरा भतीजा लगता है और मुझसे थोड़ा कमजोर भी पड़ता है, इसलिए मेरी धौंस मानने के लिए मजबूर है—जाकर अपने घर से थोड़ा नमक और मिर्च ले आता है, फिर हम दोनों उन मछलियों को भून-भानकर उनका भोग लगाते हैं और विमुग्ध आंखों से एक दूसरे को देखते हैं, ऐसी तो कोई चीज ही कभी नहीं खायी!

वह बचपन भी तो फिर कभी नहीं आया। गया तो गया। अब अगली बार सको तो बांधकर रख लेना!

—१८, हेस्टिंग्स रोड, इलाहाबाद-३

० ० ०

मेरे बालसखा

—बनारसीदास चतुर्वेदी

तिरासीवीं वर्ष की अपनी इस वय में मेरे पुराने साथी-संगी बहुत कम बचे हैं। जो दो-चार व्यक्ति विद्यमान हैं, वे या तो मेरे अग्रज हैं या अनुज। मेरे समवयस्क तो केवल स्व. संपतराय ही थे, जो सिविल सर्जन बनकर रिटायर हुए और जिन्होंने उत्तर प्रदेश-भर में रोगों के निदान तथा सर्जरी में कीर्ति प्राप्त की थी।

संपतराय का घर का नाम 'हुआ' था और हम सब उन्हें इसी नाम से पुकारते थे। कबड्डी में हम और वे विरोधी दलों में रहते थे। उनका दल पांडव कहलाता था और हम लोग थे कौरव! वे शायद भीम थे और मैं दुर्योधन! उनकी पार्टी अक्सर जीतती थी। कबड्डी में 'मरना' शब्द बैठ जाने के अर्थ में प्रयुक्त होता था। और अपनी पार्टी के किसी लड़के के बैठ जाने पर दूसरा 'मरे को मर जाने दो, घी की चुपड़ी खाने दो' कहकर चक्कर लगाता था।

संपतराय छरहरे बदन के थे और पास की इमली की ऊंची से ऊंची डाल पर चढ़ जाना उनके लिए आसान था। खतरे से वे कभी नहीं डरते थे। हिंदी मिडिल हम दोनों ने फर्स्ट डिविजन में सन १९०६ में पास किया था।

संपतरायजी के पिताजी मेरे कक्का के साथी थे—दोनों अल्प वेतन पाने वाले मुदर्रिस। इस प्रकार हम लोगों की मैत्री कौटुंबिक विरासत थी। अपने जीवन के अंत तक उन्होंने उसे निबाहा भी। मेरी और मेरे घर वालों की बीमारियों में वे निरंतर देख-भाल करते रहे।

गाली-गलौज करना और चाहे जिसे लनतरानियां सुनाना उनके स्वभाव का अंग ही बन गया था। इसमें घर वालों और बाहर

वालों में वे कोई भेद नहीं करते थे। वैसे तो चौबे लोगों में यह दुर्गुण प्रायः पाया जाता है, पर उनमें तो वह पराकाष्ठा को पहुंच गया था। वे कहते थे—'गाली का भी कोई अर्थ होता है ?'

पर चिकित्सा करते समय वे अत्यंत गंभीर हो जाते थे और सैकड़ों सफल आपरेशन उन्होंने किये थे।

अपना हंसी-मजाक का स्वभाव उन्होंने अंत तक कायम रखा। एक बार नैनीताल में वे हमें सुप्रसिद्ध नेत्रचिकित्सक डाक्टर मेहरे के यहां ले गये। डाक्टर मेहरे उनके छात्र रह चुके थे और उनका संमान भी करते थे। वहां कई उच्च पदाधिकारी भी बैठे हुए थे, जो रिटायर हो चुके थे। डाक्टर साहब ने अपने स्वाभाविक ढंग पर यू. पी. सरकार को बीसियों खरी-खोटी सुनायीं ! वे अफसर लोग दंग रह गये। अपनी जबान पर नियंत्रण उन्होंने सीखा ही नहीं था। किसी से ईर्ष्या या विद्वेष उनके स्वभाव में नहीं था और जिसकी निंदा करते थे, आध घंटे बाद उसकी तारीफ भी करने लगते थे ! चलते-फिरते-घूमते हुए मिनिट-मिनिट पर हंसी-मजाक करना उनका स्वभाव था।

उनका एक अंतिम मजाक मुझे याद आ रहा है। फीरोजाबाद के जैन कालेज वाले मेरा जन्म दिन मना रहे थे और मैं जब उनके मकान के पास से निकला, तो बोले—'ठहरो। मैं भी चलता हूं। हमारी-तुम्हारी वर्षगांठ आज साथ ही मनेगी ! ' उनकी उपस्थिति से कालेज के अध्यापक तथा छात्र बहुत प्रसन्न हुए और सबको उन्होंने खूब हंसाया भी।

भुवाली सेनेटोरियम में जहां कि उनके सुपुत्र सतीश डाक्टर थे, मुझे उनके अंतिम दर्शन हुए थे। उस दिन भी उन्होंने अपनी सहृदयता का परिचय दिया। मेरे साथ चाय पी, यद्यपि वे काफी अस्वस्थ थे, और मेरे कौटुंबिक हित की बातें भी करते रहे।

भाई संपतराय के स्वर्गवास को दस वर्ष से अधिक हो चुके हैं, पर अपने उन बालसखा की याद मुझे जीवनपर्यंत बनी रहेगी। उन जैसे परोपकारी तथा निःस्वार्थ व्यक्ति जो अपने चारों ओर निरंतर आनंद का वितरण कर सकें, अब दुष्प्राप्य हो गये हैं।

—फीरोजाबाद, जि. आगरा. उ. प्र.

★

केन्या की एक लोककथा

जब भगवान ने इंसानों को बनाया, तो गोरों का जो आदि पुरुष था, उसने भी भगवान की नकल करके इंसान गढ़ने की कोशिश की। वह इसमें सफल भी हो गया। उसने बहुत सारे इंसान गढ़ डाले, जो बाहर से तो हूबहू आदमी दिखते थे। मगर अंत में जब उसने उनके दिलों में धड़कन पैदा करने की कोशिश की, उसमें वह सफल नहीं हुआ। उसे हार मान लेनी पड़ी। इसीलिए अभी भी लोग कहते हैं, गोरा बहुत ताकतवर है, वह आदमी भी गढ़ सकता है। मगर काश, वह उनके दिलों में धड़कन पैदा कर सकता।

★

लोकमानस में प्रतिष्ठित एक कथा, एक देवता

सतीश जायसवाल

विमलेश्वरी देवी

दक्षिण-पूर्व रेल्वे पर नागपुर-हावड़ा मुख्य मार्ग के यात्री यदि चाहें तो डिब्बे की खिड़की से डोंगरगढ़ की बमलाई के दर्शन पा सकते हैं। स्थानीय बोल-चाल में विमलेश्वरी को बमलाई कहते हैं। लगभग हजार फुट ऊंची पहाड़ी पर चूने से पुता हुआ विमलेश्वरी का मंदिर और पीले-केसरिया ध्वज दूर से ही दिखाई पड़ने लगते हैं। डोंगरगढ़ की विमलेश्वरी आदिशक्ति दुर्गा का अवतार हैं।

बगलामुखी, विमलेश्वरी, बमलेश्वरी, बमलाई।

दो हजार बरस से ऊपर की एक कथा प्रचलित है। उन दिनों यहां कामाख्य अथवा डुंगराख्य का नगर-राज्य था। उस नगर में कामसेन का शासन था। कामसेन के दरबार में कामकंदला नामक एक अद्‌भुत राजनर्तकी थी, जिसके नृत्यकला की ख्याति उज्जयिनी में विक्रमादित्य के दरबार तक पहुंची हुई थी।

उन्हीं दिनों उज्जयिनी-दरबार में माधवानल नामक एक अद्वितीय गुणी संगीतज्ञ था। कामकंदला की ख्याति से आकर्षित होकर उसने महाराज विक्रमादित्य से दक्षिण-यात्रा की आज्ञा प्राप्त की। दक्षिण कोसल के जंगलों को पार करता हुआ वह कामाख्य के नगर-राज्य में पहुंचा।

जिस समय माधवानल कामसेन के महल में पहुंचा, उस समय वहां राजदरबार में कामकंदला का नृत्य चल रहा था और वाद्यवृंद की स्वर-लहरी बाहर द्वार तक पहुंच रही थी। माधवानल वहीं द्वार पर रुककर प्रतीक्षा करने लगा। लेकिन थोड़ी ही देर

में उन संगीत-स्वरों में कोई त्रुटि माधवानल को व्यग्र करने लगी। उसने सहज ही ध्यान केंद्रित किया और वह त्रुटि उसकी पकड़ में आ गयी। उस वाद्यवृंद में किसी एक मजीरे पर त्रुटिपूर्ण टकोर लगने से यह दोष उत्पन्न हो रहा था। संभवतः मजीरा-वादक के अंगूठे में चोट थी। लेकिन माधवानल को बहुत विस्मय हुआ कि इतने बड़े दरबार में, जिसमें कामकंदला जैसी नर्तकी हो, किसी का ध्यान इस दोष की ओर नहीं जा रहा है! उसे बड़ी निराशा हुई। उसने यह परिणाम निकाला कि यहां कोई कला का पारखी नहीं है; मैं व्यर्थ ही इतनी दूर चलकर आया। निराश होकर वह राजद्वार से ही उलटे पांव लौट पड़ा।

माधवानल का इस तरह आना और वापस लौट जाना देखकर द्वारपाल को बड़ा कुतूहल हुआ। उसने इसकी सूचना राजदरबार में दी और कामाख्य नगर छोड़ते हुए माधवानल को किसी तरह आग्रहपूर्वक दरबार में बुलवाया गया। वहां उसके आने और उलटे पांव लौट जाने का कारण पूछा गया। तब सारी बातों का रहस्योद्घाटन हुआ। कामसेन ने तुरंत वस्तुस्थिति की जांच करायी और उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही, जब यह पाया गया कि वाद्यवृंद में संमिलित अठारह मजीरा-वादकों में से एक के दायें हाथ में अंगूठा नहीं है।

माधवानल के इस गजब के पारखीपन से कामसेन इतना प्रभावित हुआ कि उसने अपने गले में पड़ा मुक्ताहार उतारकर तुरंत माधवानल के गले में डाल दिया। यह सब कामकंदला के सामने घटित हुआ और वह समझ गयी कि आज कला की परीक्षा है।

वनों से पुता मंदिर और पीछे केसरिया ध्वज दूर से दिखाई पड़ते हैं।

दूसरी सभा प्रारंभ हुई। कामकंदला का नृत्य प्रारंभ हुआ। आज उसने अपनी कला का सर्वस्व प्रस्तुत करने का निश्चय कर लिया था।

लेकिन नृत्य के प्रारंभ में ही एक व्यवधान उपस्थित हो गया। नर्तकी के कुचों पर मले गये गंधद्रव्यों के लेप से आकृष्ट होकर एक भौंरा उन पर मंडराने लगा। इससे नृत्यलीना कामकंदला की एकाग्रता में व्याघात पहुंचने लगा और लयभंग का भय भी उपस्थित हो गया। तब राजनर्तकी ने योग साधा और प्राणवायु का निरोध करके उसे कुचाग्रों से इस प्रकार प्रवाहित किया कि भौंरा फिर वहां नहीं टिक सका। कामकंदला नृत्य के साथ एकात्म हो गयी।

कला के प्रकर्ष के साथ इस असाधारण योगशक्ति-संयोग को देखकर माधवानल विभोर हो उठा। हर्षातिरेक में उसने

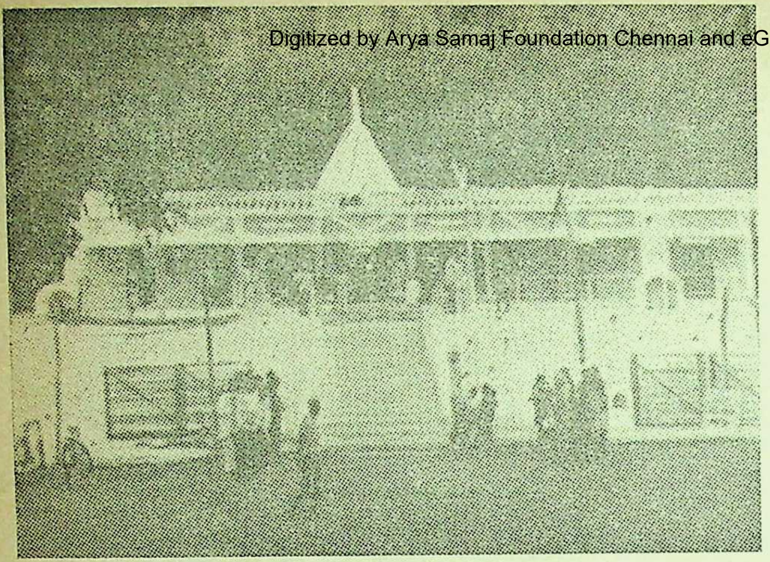

पहाड़ी के नीचे छोटी बमलाई

तत्काल अपने गले से मुक्ताहार निकालकर कामकंदला के गले में डाल दिया। कामसेन ने इसे अपना और अपने पुरस्कार का तिरस्कार समझा और क्रुद्ध होकर तत्काल माधवानल को अपने राज्य से निष्कासित कर दिया।

माधवानल चला तो गया, किंतु अपने साथ कामकंदला का चित्त भी लेता गया। राजनर्तकी को विरह व्यथित करने लगा। वह नृत्यविरत हो गयी। कामसेन ने इसे अपनी अवज्ञा समझा और क्रोधित होकर उसे नजरबंद करके उसकी गतिविधियों पर प्रतिबंध लगा दिया।

जब यह समाचार उज्जयिनी पहुंचा, तो माधवानल ने कामकंदला को कामसेन से मुक्त कराने के लिए महाराज विक्रमादित्य से अनुनय की। माधवानल महाराज को अत्यंत प्रिय था।

विक्रमादित्य ने पहले तो युक्ति से काम लेना चाहा। उन्होंने कामसेन के पास संदेश भिजवाया कि हमने कामकंदला के नृत्य की बड़ी ख्याति सुनी है और हम उसका नृत्य देखने के इच्छुक हैं। यदि कामसेन कुछ दिनों के लिए अपनी राजनर्तकी को उज्जयिनी भेज सकें, तो उज्जयिनी - दरबार में उसे उचित संमान प्राप्त होगा। किंतु कामसेन को यह प्रस्ताव वैमनस्यपूर्ण लगा। उसने उद्धत उत्तर भेजकर विक्रमादित्य से विग्रह मोल लिया।

विक्रमादित्य विशाल सेना के साथ कामाख्य के नगर-राज्य पहुंचे। छद्मवेश में वे टोह लेने नगर के भीतर पहुंचे। उन्होंने सोचा, किसी तरह कामकंदला की अनुरक्ति का स्वयं एक बार परीक्षण कर लें। इसी आशय से उन्होंने कामकंदला को यह झूठा समाचार दिया कि माधवानल तो तुम्हारे विरह में मर गया। कामकंदला इसे सच मान बैठी। उसे इतना गहरा आघात पहुंचा कि तत्काल उसके प्राण निकल गये। जब वही नहीं रही, तो युद्ध करना निरर्थक था। विक्रमादित्य खिन्न मन लौट आये और आकर यह सब उन्होंने माधवानल को लिख

भेजा। यह तो और भी घातक सिद्ध हुआ। जिस समय विक्रमादित्य की सेना वापसी की तैयारी में व्यस्त थी, माधवानल इस असार संसार को छोड़ चुका था।

विक्रमादित्य ने दो प्राणियों के घात का पातक अपने ऊपर माना और आदिशक्ति दुर्गा के चरणों में अपने प्राण की बलि देकर प्रायश्चित्त करने का निश्चय किया। इस भीष्म निश्चय ने आदिरूपा को द्रवित कर दिया। जिस समय विक्रमादित्य कामाख्य की पहाड़ी पर खड्ग लेकर अपना सिर काट देने के लिए उद्यत हुए थे, चैत्र का नवरात्र था। कहते हैं, ठीक उसी समय आद्याकाली वहां बगलामुखी रूप में सशरीर प्रकट हुईं। विक्रमादित्य को आत्मघात से रोककर देवी ने कामकंदला और माधवानल को जीवित कर दिया। यही बगलामुखी बाद में विमलेश्वरी, बमलेश्वरी, बमलाई कहलायी।

कामाख्य अथवा डुंगराख्य अब डोंगरगढ़ बन गया है। पहाड़ी के नीचे फैले हुए ध्वंसावशेषों में कामसेन की कचहरी बतायी जाती है, दायें हाथ पर कामकंदला का तालाब भी दिखाया जाता है।

कहा जाता है कि मूल विमलेश्वरी मंदिर की स्थापना विक्रमादित्य ने की थी। चैत्र नवरात्र में डोंगरगढ़ में एक विशाल रात्रि-मेला भरता है। अष्टमी की पूरी रात पहाड़ी पर दर्शनार्थियों का तांता लगा रहता है।

बमलाई दो हैं—छोटी बमलाई और बमलाई। पहाड़ी पर स्थित बमलाई के अतिरिक्त, बाद एक मंदिर नीचे भी बना है, जो पढ़ाई पढ़ने में असमर्थ हैं, उनके लिए।

डोंगरगढ़ के नवरात्र पर्व का सबसे प्रमुख अनुष्ठान अखंड ज्योति की स्थापना है। मनौतियां लेकर बाहर से आये हुए दर्शनार्थी अपने व्यय पर यहां ज्योति-कलश स्थापित करवाते हैं, जिनमें पूरे नौ दिन, नौ रात घी में डूबी बाती प्रज्ज्वलित रहती है। अष्टमी की रात्रि को विशाल हवन होता है और नवमी को ये ज्योति-कलश तालाब में विसर्जित किये जाते हैं। साथ-साथ जेंवारा भी विसर्जित किये जाते हैं। जेंवारा और भोजली छत्तीसगढ़ की अपनी विशिष्टता है।

नवरात्रि जैसे विशेष पर्वों पर मिट्टी के पात्र या बांसों की टोकरियों में गेहूं के दाने बोकर भोजली उगायी जाती है। ये कोपलें पूजी जाती हैं और इनका वहन पवित्र स्त्रियां करती हैं। ज्योति-कलश और जेंवारा विसर्जन के लिए पवित्र स्त्रियों को ओझा-पंडितों के संरक्षण में ले जाया जाता है। किसी कलशवाहिनी कुमारिका पर निम्न कोटि के स्थानीय ग्रामदेवता उतर आते हैं, तब अभिमंत्रित जल में भिगोये हुए कुशा के सोंटों से उस कुमारिका पर प्रहार करके उन्हें भगाया जाता है।

छत्तीसगढ़ के मूल निवासी आदिवासी थे। यहां सोलहवीं शताब्दी तक बलि-प्रथा प्रचलित रही। बाद में नागपुर के भोंसला शासकों का प्रभुत्व यहां स्थापित हुआ। तब छत्तीसगढ़ बाहर की दुनिया के संपर्क में आया और यहां की कहानियां भी बाहर फैलीं। **—हिंद प्रकाशन, बिलासपुर, म. प्र.**

★

कांग्रेस के प्रथम अध्यक्ष

* सुरेश सिन्हा *

स्थान था बंबई के ग्वालिया टैंक (वर्तमान नाम : अगस्त क्रांति मैदान) पर स्थित गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालेज, और दिन २८ दिसंबर १८८५। उस दिन भारतीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन आरंभ हुआ। सभापति थे उमेशचंद्र बंद्योपाध्याय, जो उस जमाने के फैशन के अनुसार अपना नाम Woomesh Chandra Bonnerjee लिखते थे। यही उमेशचंद्र बनर्जी १८९२ में दुबारा कांग्रेस के सभापति बने।

आज से कोई १३० वर्ष पूर्व २९ दिसंबर १८४४ को खिदिरपुर के सोनाई ग्राम के एक संभ्रांत ब्राह्मण परिवार में उमेशचंद्र का जन्म हुआ। घर में उन्हें पुकारने का नाम था 'मति'। लेकिन पढ़ने में उनकी जरा भी मति-गति नहीं थी। शरारत और चंचलता उनकी रग-रग में समायी हुई थी। मैट्रिक की परीक्षा सिर पर आ गयी थी; पढ़ाई को लेकर बुजुर्गों से कुछ कहा सुनी हो गयी और वे घर छोड़कर जा पहुंचे रानीगंज।

उन दिनों हाल में ही हावड़ा से रानीगंज तक की रेलगाड़ी चलनी शुरू हुई थी। लोगों के लिए रेल-यात्रा एक कौतुक था। लेकिन उमेशचंद्र केवल कौतुक के लिए यात्रा नहीं कर रहे थे। उन्होंने उस छोटी उम्र में ही रानीगंज में कोयले की एक खान में नौकरी की व्यवस्था कर ली थी।

लेकिन यह नौकरी उन्हें कुछ दिन भी नहीं करनी पड़ी। पिता गिरीशचंद्र ने तुरंत ही खोज-खबर ली और उन्हें बुलवा लिया। पढ़ाई-लिखाई से विरक्ति देख पिता ने उन्हें एक अंग्रेज एटर्नी डब्ल्यू. पी. डाउनिंग के यहां आर्टिकल्ड क्लर्क लगवा दिया। सालभर बाद उमेशचंद्र डब्ल्यू. एफ. गैलैंडर्स नामक दूसरे अंग्रेज एटर्नी के यहां काम करते लगे।

वकालत लगभग तीन पुश्तों से उस परिवार की बृत्ति थी। उमेशचंद्र के पितामह पीतांबर बंद्योपाध्याय सुप्रीम कोर्ट के अंग्रेज एटर्नी मेसर्स फैलियर बर्ड एंड कंपनी में 'मुत्सुद्दी' थे। उन दिनों अंग्रेज एटर्नी कानून के जानकार बंगाली मुत्सुद्दी के माध्यम से ही मुवक्किलों से बातचीत करते थे। इस काम में पीतांबर ने काफी धन अर्जित किया। बदमिजाजी के लिए भी वे मशहूर थे और लोग उन्हें 'राजा पीतांबर' कहा करते थे।

पीतांबर बंद्योपाध्याय ने तीन विवाह किये। गिरीशचंद्र उनकी दूसरी पत्नी के

पुत्र थे। वे भी एटर्नी बने और मेसर्स जज एंड बनर्जी में हिस्सेदार हुए। उनकी पत्नी सरस्वती देवी त्रिवेणी के विख्यात पंडित जगन्नाथ पंचानन के प्रपौत्र की पौत्री थीं। उमेशचंद्र उनके द्वितीय पुत्र थे।

पिता के कहने से उमेशचंद्र ने नौकरी कर तो ली; लेकिन काम-काज की ओर उनका खास ध्यान नहीं था। वे अक्सर आफिस से गायब हो जाते और मित्रों के साथ इधर-उधर अड्डेबाजी किया करते। एटार्नी गैलैंडर्स उन्हें पुत्रवत् स्नेह करते थे। इसलिए काम के प्रति उनकी लापरवाही देख एक दिन उन्होंने उमेशचंद्र को खूब फटकार सुनायी और धमकी दी कि मैं सारी बातें तुम्हारे पिता को बता दूंगा।

उस दिन से उमेशचंद्र के स्वभाव में आमूल परिवर्तन हो गया। उन्होंने मिसिलें तैयार करने में कड़ी मेहनत शुरू की। शिक्षा के प्रति भी उनके मन में अनुराग ने जन्म लिया। उन्होंने तय किया कि मैं विलायत जाकर कानून की उच्च शिक्षा पाऊंगा; और इसका अवसर उन्हें शीघ्र ही मिल भी गया।

बंबई के विख्यात दानी सर जमशेदजी जीजीभाई ने बंगाल, मद्रास, बंबई तीनों प्रदेशों से एक-एक युवक को छात्रवृत्ति देकर कानून-अध्ययन के लिए विलायत भेजने के निमित्त भारत सरकार को एक लाख रुपये दिये थे। योग्य शिक्षार्थी के चयन के लिए बंगाल सरकार द्वारा गठित समिति ने बारह प्रार्थियों में उमेशचंद्र को सर्वश्रेष्ठ माना।

समुद्र पार जाना हिंदू समाज की दृष्टि में तब अति [illegible] था। बालिग हो जाने तक अविवाहित रह जाना भी सामाजिक रूढ़ि के विरुद्ध था। इसीलिए पंद्रह वर्ष की उम्र में ही उमेशचंद्र की शादी बहूबाजार के नीलमणि मतिलाल की दस वर्षीया कन्या हेमांगिनी से कर दी गयी थी। ससुराल काफी धनी था। लेकिन युवक उमेशचंद्र के लिए अपनी महत्त्वाकांक्षा सर्वोपरि थी।

पिता की गैरजानकारी में ही वे विलायत रवाना हो गये, वहां मिडल टेम्पल में अपना नाम लिखाया और १८६७ में बैरिस्टर बन गये। अगले साल (१८६८) वे स्वदेश लौटे और कलकत्ता हाईकोर्ट में उन्होंने बैरिस्टरी शुरू की। उसी वर्ष उनके पिता का देहांत हो गया।

उन दिनों बंगाली बैरिस्टर इने-गिने

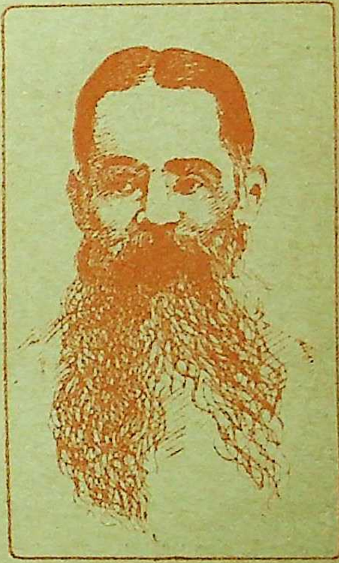

उमेशचंद्र बनर्जी

ही थे; और जो थे उन सबमें उमेशचंद्र जूनियर थे। फिर भी कुछ ही समय में उमेशचंद्र कठोर अध्यवसाय, असाधारण स्मरणशक्ति, कानूनी मुद्दों की गहरी पकड़, मामले की विशद प्रस्तुति और अत्यंत परिमार्जित तौर-तरीकों के बल पर सबसे आगे निकल गये। उस जमाने में उन्होंने १० हजार रुपये की आय का स्वप्न देखा था; मगर कल्पना से कहीं अधिक सफल हो गये। उनकी मासिक आय २०-३० हजार तक पहुंच गयी।

उन दिनों भारत सरकार के स्टैंडिंग काउंसिल के पद पर अंग्रेज ही नियुक्त हुआ करते थे। उमेशचंद्र प्रथम भारतीय थे जो इस पद पर नियुक्त हुए थे। सरकार ने तीन बार उनसे कलकत्ता हाईकोर्ट का न्यायाधीश बनने का प्रस्ताव किया। लेकिन उन्होंने अस्वीकार कर दिया। न्यायमूर्ति बनकर देश के सार्वजनिक जीवन से कट जाने की कल्पना उन्हें नापसंद थी।

देश के सार्वजनिक जीवन और राजनीति में उनकी अभिरुचि आरंभ से ही थी। बैरिस्टरी करने इंग्लैंड जाने से पूर्व ही उन्होंने 'बंगाली' नामक पत्र की स्थापना की थी, जो आगे चलकर सुरेंद्रनाथ बनर्जी के संपादकत्व में बहुत चमका। सन १८८० में वे कलकत्ता विश्वविद्यालय के फेलो बनाये गये और बंगाल की लेजिस्लेटिव कौन्सिल के लिए विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि चुने गये।

जब इल्बर्ट बिल (१८८३) को लेकर कलकत्ता और भारत के अन्य नगरों में अंग्रेजों ने अपनी बौखलाहट बहुत असंयत रूप से व्यक्त की, देश-भर में शिक्षित भारतीयों में उसकी उग्र प्रतिक्रिया हुई। उमेशचंद्र राजनीति में विशेष सक्रिय हो उठे। इन्हीं दिनों एक मजेदार बात हुई। ब्रान्सन नामक एक अंग्रेज बैरिस्टर ने भारतीयों की निंदा की थी। फलस्वरूप कलकत्ते के सारे एटार्नियों ने संमिलित रूप से उसका बहिष्कार कर दिया। ब्रान्सन के सारे मुकद्दमे उमेशचंद्र के हाथ में आ गये।

वायसराय लार्ड डफरिन के गुप्त समर्थन और भारत सरकार के निवृत्त सचिव एलन आक्टेवियन ह्यूम के प्रयत्न से दिसंबर १८८५ में बंबई में देश के विभिन्न प्रदेशों से प्रमुख भारतीय नेताओं का अधिवेशन जुटा और इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई। (वस्तुत: यह अधिवेशन पूना में होना था, मगर वहां हैजा फैल जाने से बंबई में हुआ।) २८ दिसंबर को १२ बजे मध्याह्न में कार्रवाई आरंभ हुई। ए. ओ. ह्यूम ने अध्यक्ष-पद के लिए उमेशचंद्र का नाम प्रस्तावित किया। अनुमोदन और समर्थन किया मद्रास के श्री एस. सुब्रह्मण्य अय्यर और बंबई के श्री काशीनाथ त्र्यंबक तेलंग ने।

सुरेंद्रनाथ बनर्जी जैसे धुरंधर वक्ता नहीं थे उमेशचंद्र। मगर बहुत सुलझे ढंग से अपने विचार प्रस्तुत करते थे। उस जमाने के उदारपंथी (लिबरल) नेताओं की भांति ब्रिटिश राज की नेकनीयती में उनकी भी

अटल निष्ठा थी। मगर साथ ही वे यह भी मानते थे कि यूरोप के समुन्नत प्रजातंत्रीय विचारों के अनुसार भारत का शासन हो, यह मांग करना राजभक्ति के विरुद्ध नहीं है। उनका मत था—'सरकार का आधार अधिक व्यापक किया जाना चाहिये और उसमें जनता को अपना समुचित और वैध हिस्सा मिलना चाहिये।'

अगले कई वर्षों तक उमेशचंद्र कांग्रेस के प्रमुख संचालक रहे, हालांकि अध्यक्ष हर साल बदलते रहे। कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन १८८६ में दादाभाई नवरोजी की अध्यक्षता में कलकत्ता में हुआ, जिसकी सफलता के लिए उन्होंने अथक परिश्रम किया। सन १८८७ के मद्रास अधिवेशन (अध्यक्ष : बदरुद्दीन तैयबजी) में उन्होंने भारत में मिलिटरी कालेज खोलने के प्रस्ताव पर बोलते हुए 'भारतीय' शब्द की परिभाषा की।

सन १८८८ में उमेशचंद्र स्वास्थ्य-लाभ करने इंग्लैंड गये और वहां क्रॉयडन में उन्होंने एक बंगला खरीदा। इंग्लैंड-प्रवास की उस अवधि में ब्रिटिश जनता को भारतीय समस्याओं से अवगत कराने के लिए उन्होंने दादाभाई नवरोजी की सहायता से एक राजनैतिक संघ का गठन किया। उन्हीं दिनों ह्यूम के संपादन में वहां से 'इंडिया' नामक एक पत्रिका प्रारंभ हुई। कहते हैं, प्रतिवर्ष इसका १०-१२ हजार रुपये का घाटा उमेशचंद्र ही पूरा करते थे।

कांग्रेस का चौथा अधिवेशन १८८८ में इलाहाबाद में हुआ। उसके अध्यक्ष-पद के लिए सर जार्ज यूल और स्वागताध्यक्ष-पद के लिए पंडित अयोध्यानाथ कुंजरू (डा. हृदयनाथ कुंजरू के पिता) को उन्हीं ने राजी किया था। सन १८९२ में जब फिर इलाहाबाद में कांग्रेस का वार्षिकोत्सव हुआ, वे स्वयं उसके अध्यक्ष निर्वाचित हुए। दो बार कांग्रेस की अध्यक्षता करने का सौभाग्य सर्वप्रथम उन्हीं को मिला। (बाद में तो दादाभाई नवरोजी ने तीन बार और जवाहर नेहरू ने चार बार यह संमान पाया।) उन आरंभिक वर्षों में उन्होंने कांग्रेस के लिए न केवल अपार परिश्रम किया, अपितु उसे विपुल धन भी दिया। बेशक उन पर तानाशाह होने का आरोप भी मढ़ा गया था।

वह समाज-सुधार आंदोलन का जमाना था। स्वयं प्रगतिशील विचारों के होते हुए भी उमेशचंद्र कांग्रेस को समाज-सुधार का मंच बनाने के पक्ष में नहीं थे। उनका कहना था—'क्या इतने मात्र से हम राजनैतिक सुधारों के लिए अयोग्य हो जाते हैं कि हमारी विधवाएं पुनर्विवाह नहीं करतीं और अन्य देशों की अपेक्षा हमारे यहां लड़कियां ज्यादा छोटी उम्र में ब्याह दी जाती हैं, हमारी बहू-बेटियां हमारे साथ बग्घियों में मित्रों के घर नहीं जातीं, या हम उन्हें आक्सफर्ड और कैम्ब्रिज नहीं भेजते?'

सन १९०२ में उमेशचंद्र स्थायी रूप से इंग्लैंड जा बसे और प्रीवी कौंसिल में वकालत करने लगे। और वह खूब जमी। वे ब्रिटिश पार्लमेंट के लिए चुनाव लड़ना चाहते

थे और इस उद्देश्य से उन्होंने वाल्टहैम्पस्लो नामक चुनाव-क्षेत्र में कार्य भी शुरू कर दिया था। लेकिन दुर्भाग्य से तभी वे 'ब्राइट्स' रोग से पीड़ित हो गये। २१ जुलाई १९०६ को क्रॉय्डन के अपने मकान में उन्होंने देहत्याग किया। उनकी अंतिम इच्छा के अनुसार उनका दाहसंस्कार किया गया। उनके भस्मावशेष की समाधि पर लगाये गये प्रस्तर-फलक पर लिखा हुआ है :

'हियर लाइज़ उमेशचंद्र बनर्जी—ए हिंदू ब्राह्मिन हू ऑन हिज वे टु हिज़ कंट्री फेल ए विक्टिम टु ब्राइट्स डिसीज़ !'

बाह्य रूप से उमेशचंद्र ने पूरी तरह पश्चिमी सभ्यता अपना ली थी। उनके बारे में कहा गया है—'वे वेश-भूषा और आदतों में अंग्रेज थे और अंग्रेजी ढंग से जीते थे। हाथ हिलाने के ढंग, सिगार सुलगाने की अदा सबमें वे आपादमस्तक अंग्रेज थे।'

मगर मन-प्राण से वे हिंदू थे और हिंदू संस्कारों में विश्वास करते थे। जब उनकी पत्नी हेमांगिनी देवी ने ईसाई धर्म अपनाया, उस समय उन्होंने एक पत्र में उन्हें लिखा था—'तुम्हारे धर्म-विश्वास में मैं हस्तक्षेप नहीं करना चाहता। यदि तुम ईसाई धर्म स्वीकार करना चाहती हो, तो कर सकती हो। लेकिन मेरा उस धर्म में विश्वास नहीं है। मैं अपना पैतृक धर्म नहीं छोड़ूंगा। मैं जानता हूं, हिंदू समाज में मेरा स्थान अति संकीर्ण है, तथापि अपने पिता-पितामह का धर्म—जिसमें विश्वास करके उन्होंने प्राण त्यागे—छोड़ने को मैं तैयार नहीं हूं।'

कुलीन ब्राह्मणवंश में जन्म लेने का गर्व भी उन्हें कम नहीं था। कांग्रेस की सदस्य-सूची में वे अपने को 'ब्राह्मण व्यवहारजीवी' लिखते थे। अपनी मां पर उनकी असीम श्रद्धा थी। कलकत्ता में बैरिस्टरी करते समय वे पार्क स्ट्रीट में रहते थे, लेकिन रोज शाम को दे स्ट्रीट जाकर मां को प्रणाम करते थे।

वैसी ही श्रद्धा उन्हें अपनी मातृभाषा पर थी। १८९३ में एक मुकद्दमे में बंगला में लिखे किसी दस्तावेज पर बहस हो रही थी। उस समय के अस्थायी एडवोकेट जनरल जे. टी. वुडराफ ने उन पर अभियोग लगाया कि वे बंगला भाषा भूल गये हैं। इस पर उमेशचंद्र ने कहा—'बंगला भाषा मैं कभी नहीं भूल सकता और अंग्रेजी की प्रशंसा भी मैं नहीं सुनना चाहता।' निदान वुडराफ को उनसे माफी मांगनी पड़ी।

उनकी अंत्येष्टि पर भाषण देते हुए दादाभाई नवरोजी ने कहा था :

'उनकी उक्तियां राजनेता के अनुरूप और दूरदर्शितापूर्ण होती थीं और अतिरंजनारहित भी। उनमें अनुचित भावोद्रेक नहीं होता था, उत्तरदायित्व से पराङ्मुखता भी नहीं होती थी......अपने पेशे में वे सफलता की चोटी पर जो पहुंच सके, वह उनके अध्यवसाय और धैर्य का फल था। इन गुणों जितने ही विशिष्ट थी उनकी निर्भयता और देशप्रेम।'

स्मृति के अंकुर

सन १९४२ के तूफानी दिन। परिवार के अनेक सदस्य जेल में थे। मां गंभीर रूप से रुग्ण पिताजी को देखने मद्रास गयी हुई थी, जहां सरकार की हिरासत में उनका इलाज हो रहा था। घर पर बस मैं और हमारी पुरानी नौकरानी दयावती थीं। एक दिन सवेरे ही पुलिस ने हमारा घर चारों ओर से घेर लिया और एस. पी. ने घर की तलाशी लेनी चाही। किसी ने उन्हें खबर दी थी कि हमने घर में कुछ आपत्तिजनक इश्तहार, बम आदि छिपा रखे हैं। कुछ दिन पहले मेरा भाई गिरफ्तार किया गया था और उसके विरुद्ध प्रमाण इकट्ठे किये जा रहे थे।

नौकरानी ने एस. पी. से जाकर कहा कि घर में सिर्फ एक लड़की है। इस पर उन्होंने कहा कि ठीक है इस हालत में हम घर में नहीं जायेंगे। तुम इस शहर में रहने वाले उनके किसी रिश्तेदार का पता दे दो, उन्हें बुलवा लिया जायेगा।

उन रिश्तेदार के आने में घंटा-भर लग गया। तब तक एस. पी. साहब घर के बाहर प्रतीक्षा करते रहे और उन्हें इस सज्जनता का किंचित मूल्य भी चुकाना पड़ा। क्योंकि तब तक मैंने इश्तहार जला दिये और एक साइक्लोस्टाइल मशीन गोशाला में गोबर के ढेर में छिपा दी। मेरे लिए ऐसा करना आपद्धर्म था।

नाम न मालूम होने पर भी मुझे जब-तब उस भद्र पुलिस-अफसर की याद आ जाती है। —कांति त्रिवेदी

बादशाही उम्र

पिछले वर्ष परिवार के साथ इलाहाबाद जाते हुए रास्ते में एक-दो दिन के लिए लखनऊ भी रुकना हुआ। वहां एक सुबह पत्नी और दोनों छोटे बच्चों के साथ चारबाग मार्केट में फल खरीद रहा था कि मेरे छोटे लड़के ने आव देखा न ताव सड़क के किनारे पर पेशाब करना शुरू कर दिया। तभी उधर से एक वयोवृद्ध सज्जन गुजरे।

पेशाब की धार उनके कपड़ों पर पड़ी और वे एकदम उछल पड़े। मेरे और मेरी पत्नी के चेहरे पर कई एक रंग आये और चले गये। जी चाहा, बच्चे को एक थप्पड़ लगायें।

हमें शर्मिंदा देखकर वे सज्जन बोले—'आप लोग क्यों हैरान हो रहे हैं ? यह तो बादशाही उम्र है, इसमें हर चीज माफ है। उन्होंने बच्चे को प्यार किया और हंसते हुए चल पड़े। **—कुलदीप तलवार, गाजियाबाद**

○○○

पानी और रेजगारी

जून महीने की एक उमस-भरी रात। बच्चे दो-तीन स्टेशन पहले से ही पानी मांग रहे थे। मध्य रेल्वे के बांदा स्टेशन पर मानिकपुर पैसेंजर काफी देर ठहरती है। सो मैं दोनों बच्चों को साथ लेकर पानी के लिए दौड़ पड़ी। लेकिन वाटरमैन पीने का पानी समाप्त करके जा रहा था। इसलिए न चाहते हुए भी कैंटीन वाले से पानी मांगा। उसने बड़ी तत्परता से गिलास भर दिया, जिसे एक बच्चा एक ही सांस में पी गया। मैंने साहस कर दूसरा मांगा...... फिर एक और, लेकिन कैंटीन वाले के चेहरे पर क्रोध या खीज का भाव न आया।

तभी एक जर्जर बूढ़ा देहाती आकर खड़ा हो गया। और बोला—'एक का नोट है, एक कप चाय मिल जायेगी बाबू ?' कैंटीन वाले ने चाय का प्याला उसके सामने रख दिया।

अब तक बच्चे तीन गिलास पानी पी चुके थे और गिलास खाली था। वह उसमें पानी भरते हुए बोला—'आप भी पियो बहनजी!' उसका यह स्निग्ध व्यवहार देखकर मेरा हृदय गद्गद हो उठा। आवश्यकता न होने पर भी उससे बिस्कुट का एक पैकेट खरीदा और उसकी कीमत रेजगारी में चुकायी, ताकि रेजगारी के अभाव में उसे किसी को निराश न करना पड़े।

—शीला सलूजा, शिवपुरी (म.प्र.)

○○○

हरिजन

मैं राजस्थान में एक छोटे-से गांव के सरकारी हाइस्कूल में अध्यापक नियुक्त होकर वहां नया ही आया था और वहां के लोगों से मैं और वे मुझसे अपरिचित ही थे।

एक दिन रास्ते में मुझे एक भाट मिला। उसने बड़ी विनम्रता से मेरा परिचय पूछा। मैंने कहा—'मैं तुम्हारे गांव के हाइस्कूल में अध्यापक हूं।' वह अपने व्यवसाय व आदत के अनुसार मेरी प्रशंसा के पुल बांधने लगा। फिर उसने मेरी 'जात' पूछी। मैंने कह दिया—'मैं हरिजन हूं।' यह सुनते ही वह विद्युत्-गति से मुझसे करीब पचास गज दूर हो गया। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि कहां तो वह मुझे सिर आंखों पर बैठा रहा था और कहां मेरे 'हरिजन' बन जाने पर मुझसे ऐसे दूर हो गया, जैसे कि मैं मनुष्य न होकर कोई खतरनाक जानवर होऊं। और इस देश में हम कानूनी और आर्थिक समानता की बातें करते हैं। **—देवप्रकाश कौशिक, कोठियां, भीलवाड़ा, राजस्थान,**

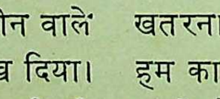

[पृष्ठ ४० का शेष]

अनंत व अंतरालहीन काल की द्योतक हैं।

महाबलिपुरम् में भी सूर्य की कई आकृतियां अंकित हैं। कुंभकोणम् के नागेश्वर मंदिर में सूर्य के लिए एक अलग मंदिर है। तंजाऊर का 'सूर्यनार् कोइल' दक्षिण भारत में सूर्योपासना के मुख्य केंद्रों में से एक है।

मथुरा-संग्रहालय में सूर्य की विभिन्न मुद्राओं को दरशाने वाली कई सुंदर मूर्तियां रखी हैं। ये मूर्तियां लाल पत्थर की हैं और इनका निर्माण-काल दूसरी सदी ई. है। हाल में भुवनेश्वर के समीप खंडगिरि गुफाओं से सूर्य की भव्य व आकर्षक मूर्तियां खोदकर निकाली गयी हैं। बोधगया में एक रेलिंग-स्तंभ पर सूर्य का उत्कीर्ण चित्र है, जिसमें सूर्य को चार घोड़ों के रथ पर सवार तथा पत्नियों-सहित दिखाया गया है। भाजा (महाराष्ट्र) की गुफा में एक उभरी हुई नक्काशी है। इसमें सूर्य को रथ चलाते हुए तथा रथ के पहियों को अंधकार के दैत्यों को कुचलते दिखाया गया है।

भारतीय शासकों ने सूर्योपासना को उदार संरक्षण प्रदान किया। कुषाण-वंश के शासक सूर्य के परम उपासक थे। आंध्र प्रदेश के चालुक्य-वंशी राजाओं का संरक्षक देवता सूर्य था। सम्राट् हर्ष ने बौद्ध धर्म अंगीकार कर लिया था; परंतु उसने अपने कुलदेवता सूर्य की उपासना का परित्याग नहीं किया। पांचाल राजाओं के सिक्के के पीछे की बाजू में सूर्य की आकृतियां अंकित हैं। एक पुर्तगाली यात्री के लेखों के अनुसार सम्राट् अकबर भी सूर्य का अनन्य उपासक था। वह दिन में चार बार सूर्य की पूजा करता था।

'सूर्य-नमस्कार' सूर्योपासना के अलावा स्वास्थ्यप्राप्ति का साधन भी है। सूर्य-किरणों का रोग-निवारण व स्वास्थ्य-संवर्धन में बड़ा महत्त्व है। 'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्' संस्कृत की बहुत प्रचलित उक्ति है। सूर्य के प्रकाश में स्थित अल्ट्रावायलेट किरणें मानव शरीर के लिए विटामिन डी का बहुत महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं।

हिंदुओं के लिए सूर्योपासना केवल एक पूजा-पद्धति नहीं, एक जीवित विश्वास है। प्रतिवर्ष सूर्य-ग्रहण के अवसर पर लाखों धर्मप्राण श्रद्धालु हिंदू दक्षिण में कुंभकोणम् तथा उत्तर में कुरुक्षेत्र-जैसे पवित्र तीर्थ-स्थानों पर सूर्योपासना के लिए एकत्रित होते हैं। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' अर्थात् अंधकार (अज्ञान) से मुझे प्रकाश (ज्ञान) की ओर ले चलो—यह प्रार्थना मानो सूर्योपासना का मूलाधार है।

—५९ प्रोफेसर्स कालोनी, विश्वेश्वरय्या रीजनल इंजीनियरिंग कालेज, नागपुर-११

★

* किसी भी नौकरी में मनुष्य का भविष्य नहीं होता; भविष्य उसके काम में होता है।

* जिस पर हम अविश्वास करते हैं, वह यदि हमें धोखा देता है, तो ठीक ही करता है। हमने भी तो उस पर विश्वास नहीं किया था।

—भूषण वनमाली

★

केजिता

विज्ञान-बिंदु

शरीरक्रिया-विज्ञानों का छब्बीसवां अंतरराष्ट्रीय संमेलन अक्टूबर १९७४ में नयी दिल्ली में हुआ। विश्व-भर के लगभग दो हज़ार डाक्टरों एवं वैज्ञानिकों ने इसमें भाग लिया। पूरे एक सप्ताह तक चले इस संमेलन में नोबेल पुरस्कृत एलन हॉज्किन, एंड्रू हक्सले तथा अमरीका में जा बसे भारतीय वैज्ञानिक डा. हरगोविंद खुराना जैसी अनेक हस्तियां शामिल हुईं।

भारत के राष्ट्रपति ने इसका उद्घाटन करते हुए कहा कि विकासशील देशों के गांवों में बसने वाले लाखों-करोड़ों इंसानों को चिकित्सा-सुविधाएं मुहैया कैसे करायी जा सकती हैं, इस पर विचार किया जाना चाहिये और इसके लिए रास्ते खोजे जाने चाहिये। प्रधान-मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी का कहना था कि धन और स्वास्थ्य में सब इंसान चाहे एक दूसरे की बराबरी न कर सकें, परंतु स्वास्थ्य-रक्षा के लिए आवश्यक बुनियादी साधन सबको समान रूप से उपलब्ध हों, यह बहुत जरूरी है। अंतरराष्ट्रीय शरीरक्रिया विज्ञान संघ के अध्यक्ष प्रो. जोटरमैन ने यह विश्वास प्रकट किया कि इस संमेलन में होने वाला विचार-विमर्श शरीरक्रिया-विज्ञान के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान देगा।

गोष्ठियों की शुरूआत स्वास्थ्य और परिवार-नियोजन के केंद्रीय मंत्री डाक्टर कर्णसिंह के स्वागत-भाषण से हुई। शरीरक्रिया-विज्ञानों के विभिन्न पक्षों, अनेक खोजों और बहुत-से सवालों-संभावनाओं पर प्रकाश डालने वाले ढेरों शोध-प्रबंध इन गोष्ठियों में पढ़े गये। कुछ झलकियां प्रस्तुत हैं।

चिकित्सा और संश्लिष्ट जीन

डा. हरगोविंद खुराना के नाम से हर प्रबुद्ध भारतीय परिचित है। प्रयोगशाला में मानव-जीन का सफलतापूर्वक संश्लेषण करने के लिए इन्हें कुछ वर्ष पूर्व नोबेल-पुरस्कार द्वारा संमानित किया जा चुका है। संमेलन का पहला वैज्ञानिक भाषण उन्होंने ही दिया। उन्होंने बताया कि अब सौ से लेकर दो सौ तक पालिन्यूक्लियोटाइड्स (जीवन की बुनियादी निर्माण-सामग्री) के डी. एन. ए. (डिआक्सीराइबो न्यूक्लिइक एसिड)

अणुओं का रासायनिक संश्लेषण प्रयोगशाला में संभव हो गया है। इस अनुसंधान का चिकित्साशास्त्र के लिए विशेष महत्त्व है। भविष्य में अनेक वंशानुगत रोगों (जैसे डायबिटीज आदि) का इलाज जेनेटिक इंजीनियरी द्वारा हो पाना व्यावहारिक दृष्टि से संभव होगा। खोजकार्य जारी है। अभी कई समस्याएं सुलझानी बाकी हैं।

शोधरत आणविक जीव-विज्ञानी के सामने एक बड़ा सवाल यह है कि डी. एन. ए. का अणु मानव-शरीर की कोशिका में प्रोटीन के संश्लेषण की शुरूआत और उसकी समाप्ति कैसे करता है? अब तक इतना तो ज्ञात हो चुका है कि डी. एन. ए. अणु-शृंखला का केवल १० प्रतिशत भाग ही आर. एन. ए. (राइबो न्यूक्लिइक एसिड) अणुओं के निर्माण में सक्रिय भाग लेता है। यही वह भाग होता है, जो न्यूक्लियस से बाहर आकर राइबोसोमों के साथ मिलकर प्रोटीनों का निर्माण करता है। इसका शेष भाग तो नियंत्रणकारी तत्त्वों से बना होता है, जो कोशिकाओं के नाभिकों (न्यूक्लियस) में जैव-रासायनिक अभिक्रियाओं को शुरू और खत्म करने के लिए जिम्मेदार है।

लगभग १५० वंशानुगत रोग ऐसे हैं, जो अब तक प्रायः लाइलाज माने जाते हैं। यदि अनुसंधान की मौजूदा रफ्तार कायम रही, तो कृत्रिम जीन के जरिये इन रोगों पर काबू पाने में मानव एक न एक दिन अवश्य सफल हो जायेगा। जहां तक कृत्रिम 'जीवन' के 'निर्माण' का प्रश्न है, वह अभी बहुत दूर की बात है। हां, जैनेटिक सामग्री पर कार्य करते-करते शायद एक दिन उस अवस्था तक भी पहुंचा जा सके।

आकाशवाणी के दिल्ली केंद्र पर डा. जी. पी. तलवार के साथ हुई चर्चा में डा. खुराना ने बताया कि मानव द्वारा जीनों में रद्दोबदल करके मूल मानव-स्वभाव में परिवर्तन किये जाने की संभावनाओं में बहुत वजन नहीं है। फिलहाल जो प्रयत्न किये जा रहे हैं, उनका उद्देश्य तो दोषयुक्त जीनों के स्थान पर स्वस्थ कृत्रिम जीनों को प्रतिस्थापित करना है। जीन किस प्रकार काम करते हैं, यह पता लगाने के बाद अब यह जानने के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं कि कार्यकर (फंक्शनल) जीनों का निर्माण किस प्रकार किया जाये। लक्ष्य यह है कि एक ऐसी संपूर्ण विधि विकसित की जा सके, जिसकी सहायता से निश्चित उद्देश्यों के लिए नियंत्रित जीन तैयार करने में मनुष्य सफल हो सके। यदि ये जीन आवश्यकतानुसार 'आन' और 'आफ' किये जा सकें, तो बड़ी अच्छी बात होगी।

भोजन और मस्तिष्क

आल इंडिया इंस्टिटयूट आफ मेडिकल सायन्सेज़ (नयी दिल्ली) की शोधकर्ता डा. वीटा बिजलानी और डा. गौतमी गोपीनाथ द्वारा पठित शोध-प्रबंध में कहा गया कि अल्पपोषण अथवा कुपोषण का विकासशील मस्तिष्क की संरचना पर कोई विशेष दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। इन शोधकर्ताओं ने अपने प्रयोगों के लिए चूहों को चुना था

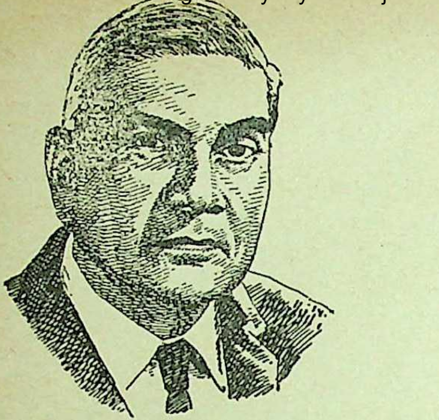

डा. रुस्तम जाल वकील

बंबई के सुविख्यात हृदयरोग-विशेषज्ञ, जिनका देहांत २० नवंबर १९७४ को हुआ। भारतीय बूटी 'सर्पगंधा' (राउवोल्फिया सर्पेंटिना) का रक्तचाप की दवा के रूप में उपयोग चिकित्साशास्त्र को उनकी चिरस्मरणीय देन है। उन्हें १९५७ में अमरीका का सर्वोच्च चिकित्सा-पुरस्कार लास्कर एवार्ड, १९५८ में 'पद्मभूषण' और १९७३ में धन्वंतरि पुरस्कार दिया गया।

और अनेक चूहों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर वे उपयुक्त परिणाम पर पहुंचे। डा. बिजलानी के अनुसार, यह तथ्य आयुर्विज्ञानियों के लिए ही नहीं, समस्त मानवजाति के लिए महत्त्वपूर्ण है।

परंतु इसी संस्था के निदेशक डा. रामलिंगस्वामी ने मस्तिष्क की संरचना पर तो नहीं, मगर उसकी विकास-गति का जो अध्ययन किया है, उसके अनुसार, बाल्यावस्था में कुपोषण का प्रभाव अत्यंत व्यापक होता है। विकासशील देशों के चार वर्ष की आयु तक के लगभग १० करोड़ बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। इसके कारण उनके मस्तिष्क-विकास की गति सामान्य से कम है। इसके अलावा कुपोषण के कारण ऐसे बच्चों की रोग-प्रतिरक्षात्मक व्यवस्था, (इम्यून मेकैनिज़्म) भी कमजोर और दूषित हो जाती है, जिससे बच्चे विभिन्न प्रकार के संक्रामक रोगों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील हो जाते हैं।

पिछले अनेक वर्षों के सतत प्रयोगों के पश्चात् डा. रामलिंगस्वामी इस नतीजे पर पहुंचे कि कुपोषण के परिणामस्वरूप कोशिकाओं का प्रचुरोद्भवन (प्रालिफरेशन) तथा उनका आवागमन दोनों ही कम हो जाते हैं। प्रोटीन के अभाव के कारण कोशिकाओं का विकास-काल लंबा होता जाता है। यह क्रिया समस्त शरीर में समान रूप से होती है।

विकास-प्रक्रिया के दौरान किसी भी निश्चित अवधि में कोशिकाओं के आकार के प्रसार के साथ-साथ उनकी संख्या में भी वृद्धि होती है, जो कि प्रोटीन के अभाव में हल्की पड़ जाती है। इस तरह कोशिका-विभाजन के कम हो जाने से शरीर के विभिन्न अंगों की कार्यक्षमता कम हो जाती है। यह समस्या अपने आपमें काफी व्यापक है। यदि गर्भिणी मां को गर्भावस्था में पर्याप्त प्रोटीनयुक्त भोजन न मिल पाये, तो गर्भ में भ्रूण का विकास भी सामान्य गति से और सही रूप में नहीं हो पाता। इस तरह मां-बाप का कुपोषण जन्म से पूर्व ही शिशु पर अपना रंग दिखाना शुरू कर देता है।

भय, हर्ष, चिंता आदि से कोई भी पूरी तरह मुक्त नहीं। मस्तिष्क के कुछ केंद्र-विशेष इन मानव-सुलभ प्रवृत्तियों के लिए उत्तरदायी हैं। लेनिनग्राद के इंस्टिटयूट आफ एक्सपेरिमेन्टल मेडिसन की प्रोफेसर मदाम एन. पी. बेकतेरेवा ने इन केंद्रों के नक्शे तैयार किये हैं। ग्राफ के विद्युत-संकेतों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि मस्तिष्क में उत्पन्न हर्ष-संवेग अधिक समय तक स्थिर नहीं रह पाते। उनके तुरंत बाद विषाद-संवेगों का वहां जन्म लेना अत्यंत आवश्यक है। मस्तिष्क के संतुलन-नियम के अनुसार ऐसा होता है और यही वजह है कि सुख-भ्रांति (युफोरिया) ज्यादा समय तक टिक नहीं पाती और यों सुख-दुःख की अनुभूति का क्रमिक चक्र कभी थम नहीं पाता।

मस्तिष्क के विद्युत-प्रक्रमों के 'पैटर्न' से और भी एक बात स्पष्ट हो जाती है कि हर्ष-संवेगों का जन्म सुगमता और शीघ्रता से स्वयं हो जाता है, जबकि विषाद-संवेगों के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्न आवश्यक है। क्या इससे यह आभास नहीं मिलता कि मन की सहज स्थिति आनंद की है?

प्रो. बेकतेरेवा ने यह भी कहा कि आज जब अनेक शल्यक्रियाओं के लिए मस्तिष्क में विद्युदग्र (इलेक्ट्रोड) फंसाकर तरह-तरह के उपचार-विधान अपनाये जाने लगे हैं, मनोभावों की प्रकृति आदि का अध्ययन और भी आवश्यक हो गया है, क्योंकि यह असंभव नहीं कि इन बाहरी विद्युदग्रों से मस्तिष्क के संवेग-केंद्र गड़बड़ा जायें।

मदाम बेकतेरेवा ने बताया कि यों तो दुःख की घड़ियां कभी न कभी हर व्यक्ति के जीवन में आती हैं, परंतु हर आदमी उनसे उतना असंतुलित नहीं हो जाता कि अपने ऊपर से पूरा नियंत्रण खो बैठे। जिन व्यक्तियों में उन्माद की ऐसी प्रवृत्ति पायी जाती है, उसका कारण हैं उनके मस्तिष्क में होने वाले जैव-रसायन परिवर्तन। इन्हीं परिवर्तनों के कारण व्यक्ति विषाद (डिप्रेशन) का शिकार हो जाता है और आत्महत्या पर भी उतारू हो सकता है। यदि प्रारंभिक अवस्था में इस स्थिति का पता लग जाये, तो दवाओं द्वारा इसका उपचार किया जा सकता है। एक साधारण मूत्र-परीक्षण द्वारा इस स्थिति का पता लगाया जा सकता है।

मदुरै मेडिकल कालेज के शरीरक्रिया-विभाग की प्राध्यापक डा. एस. पार्वती देवी

डा. आर. के. वालेस

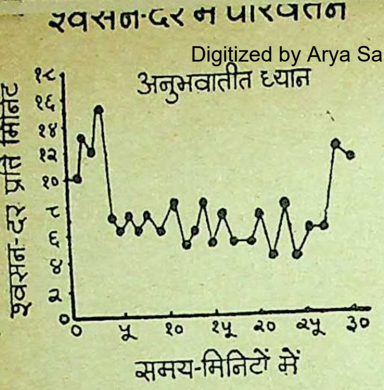

ने भी आत्महत्या की प्रवृत्ति वाले व्यक्तियों पर पिछले दो वर्ष में शोधकार्य किया है। उनका कहना है कि जो लोग विषाद के शिकार होते हैं, उनके रक्त-सीरम में सोडियम धातु की मात्रा सामान्य से अधिक पायी जाती है। आत्महत्या से ठीक पहले व्यक्ति के सामने असीम विषाद की एक घड़ी आती है और इसी दौरान सोडियम मात्रा में भी काफी उतराव-चढ़ाव होते देखे जाते हैं। आत्महत्या का पूर्वाभास सोडियम-मात्रा की जांच द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

डा. हरिहर सुब्रमण्यम् ने बताया कि विगत दो वर्षों में विषादग्रस्त और उन्माद-ग्रस्त दस-दस व्यक्तियों के रक्त-सीरम और मूत्र में सोडियम-मात्रा के अध्ययन से उक्त मत की पुष्टि हुई है।

ध्यान और शरीरक्रिया

अमरीकी वैज्ञानिक डा. आर. के. वालेस का विचार है कि मानव-चेतना की एक चौथी अवस्था भी है, जो अनुभवातीत ध्यान द्वारा प्राप्त की जा सकती है। इस अवस्था को वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध किया जा सकता है। डा. वालेस ने इस अनुभवातीत ध्यान (ट्रान्सेंडेंटल मेडिटेशन—टी. एम.) के शरीरक्रिया संबंधी प्रभावों पर कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय से डाक्टरेट हासिल की है।

डा. आर. के. वालेस का कहना है कि अनुभवातीत ध्यानावस्था के दौरान मनुष्य में आक्सिजन की खपत अपेक्षाकृत कम हो जाती है और उसके रक्त में लेक्टेट का जमाव भी घट जाता है। आक्सिजन संबंधी यह परिवर्तन श्वसन-पैटर्न में किसी प्रकार की कृत्रिम रद्दोबदल के कारण नहीं, अपितु एक सहज शरीरक्रियात्मक परिवर्तन के कारण होता है। इसका सबूत यह है कि इस अवस्था में रक्तीय आक्सिजन व कार्बन डाइ-आक्साइड के आंशिक दाब स्थिर रहते हैं।

इसी प्रकार लेक्टेट-सांद्रण में जो परिवर्तन अनुभवातीत ध्यान के दौरान होता है, उसका कारण है एक विशिष्ट जैव-रसायन अभिक्रिया। शरीरक्रिया-विज्ञानी यह मानते रहे हैं कि उच्च रक्त-दाब, मानसिक चिंता अथवा तनावों के कारण मनुष्य के रक्त में लेक्टेट का आधिक्य होता है। इसलिए यह नतीजा निकालना बहुत स्वाभाविक है कि ध्यान मनुष्य के मानसिक तनावों आदि को कम करने में सहायक है।

इन आंतरिक परिवर्तनों के अलावा यह भी प्रमाणित हुआ है कि ध्यानावस्था में बाह्य त्वचा की प्रतिरोधक-क्षमता बढ़ जाती है। इससे मनुष्य बाह्य संक्रमणों का अधिक मजबूती के साथ मुकाबला कर सकता है।

भारतीय विज्ञानी डा. जी. एस. चिन्ना द्वारा पढ़े गये निबंध में भी इन तथ्यों की पुष्टि की गयी थी।

★

'जी चाहता है गाता ही रहूं'

*** सुशीला कशालकर ***

देखा गया है कि अपने शरीर-सौष्ठव और स्वास्थ्य पर इतराने वाले कई महारथी जरा-सी खरोंच लग जाने से हिम्मत छोड़ बैठते हैं। दूसरी ओर ऐसे भी कुछ लोग होते हैं, जो शरीर और आत्मा को दो भिन्न वस्तुएं मानकर आत्मबल के द्वारा जीवन की सार्थकता साधते हैं।

मराठी के सुप्रसिद्ध नाटककार, लेखक एवं केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी के वर्तमान उपाध्यक्ष श्री पु. ल. देशपांडे ने इस दूसरे वर्ग के एक व्यक्ति का जिक्र अपने पत्र में किया था—'मैं कल हैदराबाद से वापस आया। वहां ...... नाम के गायक का सुमधुर गायन सुना और अपनी लिस्ट में एक नये कलाकार का नाम दर्ज कर लिया। दोनों पैरों से अपंग वह युवक हम सबकी चाल से अधिक तेजी से घुटनों के बल खिसकता है।'

बहुत समय बाद आज उस गायक से मुलाकात का सौभाग्य मुझे मिला। चिर-प्रसन्न, मुस्कराता चेहरा, सौम्य कलेवर, नाम मधुसूदन भावे।

वे केदार गा रहे थे। गले में स्वरों के सूक्ष्मातिसूक्ष्म सौंदर्य-स्थलों की प्रस्तुति और उनका प्रत्यक्षीकरण, कल्पना की उड़ान और राग की गहरी अनुभूति देखकर पूरी महफिल बार-बार 'वाह-वाह' कर उठती। उनके भजन और गीत तो हम सबको किसी दूसरे ही धरातल पर उठा ले गये। यानी शास्त्रीय और सुगम दोनों संगीत पक्षों में

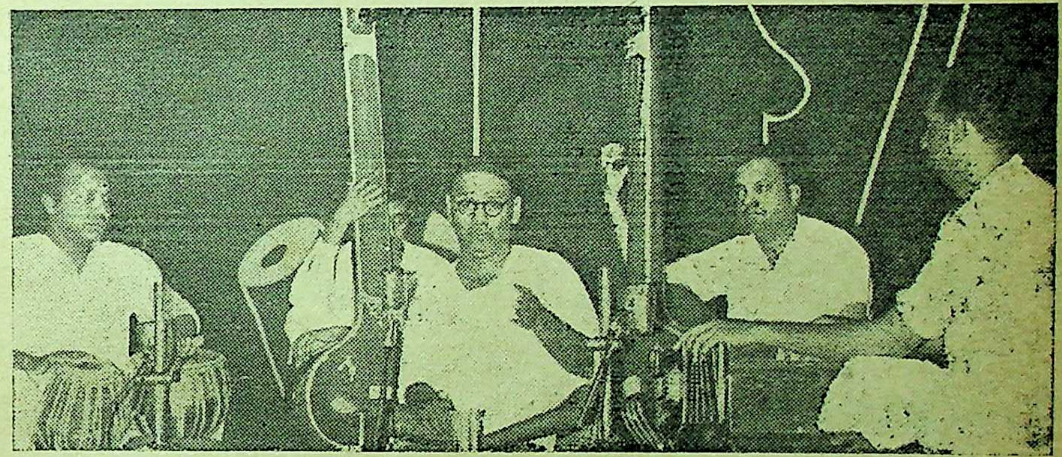

एक-सी गति थी उनकी।

बाद में बातचीत के दौरान देखा कि विचार भी उतने ही सुलझे और पैने हैं। सुगम संगीत क्या सचमुच सुगम है—इस प्रश्न के उत्तर में बोले :

'आज जमाना इन्स्टैंट कॉफी का है—पल-भर में तैयार। मेरे पास कई इस चाह से आते हैं कि चार दिन में आर्टिस्ट बनकर महफिलें झाड़ने लगें। भला बताइये, क्या आज हल्दी खाने से कोई गोरा हो जाता है? सच पूछिये तो सुगम संगीत शास्त्रीय संगीत से भी कठिन है। यहां तो आप दो साल स्वरों का चलन सीख लें, तो कुछ कर सकते हैं—कम से कम पाया तो बन ही जाता है। परंतु सुगम संगीत तो हवा में झूलता महल है। उसको पाना चाहें, तो शास्त्रीय संगीत की शरण लेनी ही पड़ेगी।'

जन-साधारण दिनों-दिन शास्त्रीय संगीत से मुंह क्यों मोड़ रहा है?

उनका कहना है—'जमाने के साथ हवा का रुख तो बदलता ही रहता है ...... वैसे किसी सीमा तक आज का गायक भी इसके लिए जिम्मेदार है। पीढ़ी-दर पीढ़ी किसी भी अमूर्त के प्रति आकर्षण टिकाये रखना आसान नहीं। सच कहूं तो "शास्त्र" और "संगीत" इन शब्दों के उलटफेर कुछ गलतफहमी छोड़ जाते हैं। संगीत कहां तक शास्त्र पर आधारित है और कहां तक वह कल्पना का बहलाव है—यह बहुत-कुछ निर्भर होता है कलाकार पर। कला जहां केवल रियाज तक सीमित रह जाती है, वहां गहराई नहीं दिखती; जहां संगीत के नाम पर केवल उसका व्याकरण दुहराया जाता है, वहां ऊब आ ही जाती है। वास्तव में संगीत दिल और दिमाग के समन्वित मंथन का नवनीत है। वह मात्र रियाज या शास्त्र-रटाई की वस्तु नहीं। और ऐसा संगीत कभी खत्म नहीं होता।'

श्री भावे अरसे तक हैदराबाद में रहे हैं, जो कि उत्तर और दक्षिण की संस्कृति का संगमस्थल है। सो सहज ही मैंने प्रश्न किया कि क्या कर्नाटक संगीत को किसी पहलू से पसंद करना या समझ पाना उत्तर भारतीयों के लिए संभव है?

बोले—'इन दोनों पद्धतियों में मैं समझता हूं, कहीं अंदर-अंदर शैव-वैष्णव वाली बात है। पर जहां "एकोऽहं बहुस्याम्" की कल्पना हो, वहां इस तरह की बातें बचकानी लगती हैं। कर्नाटक संगीत से जो भक्तिभाव और "सिन्सेरिटी" टपकती है, उसे हमें अवश्य अपनाना चाहिये। गायन की अपेक्षा उनकी वादन शैली हममें से बहुतों को भाती है और हमारे काफी नजदीक भी है। उनके कुछ रागों में तो मैंने स्वयं रचनाएं की हैं और उन्हें महफिलों में गाता भी हूं। आखिर स्वर तो एक ही हैं,

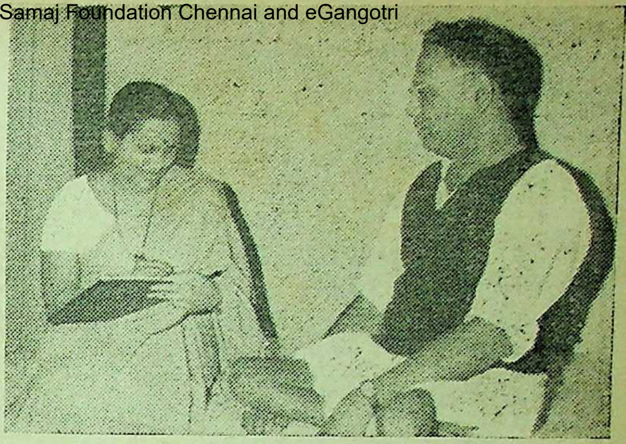

लेखिका गायक भावे के साथ

केवल उनके मुखौटे और आचरण का अंतर दूरी का भ्रम पैदा कर देता है।'

बाहरी विघ्नों और शारीरिक अक्षमताओं पर विजय पाने वालों में आत्म लाघा की सहज—और किसी हद तक क्षम्य—प्रवृत्ति होती है। मगर भावेजी को मैंने इस मामले में उलटा ही पाया। निजी जीवन के बारे में बहुत पूछने पर उन्होंने इतनी जानकारी दी:

३० जुलाई १९२६ को हैदराबाद के एक संभ्रांत परिवार में जन्म; ढाई साल की उम्र से ही तबला बजाने की बेहद ललक, अपने घर तबला-जोड़ी न होने से पड़ोसी के यहां से चुपचाप तबला उठा लाना और जी-भरकर पीटना; फिर उम्र के तीसरे वर्ष पोलियो का आक्रमण और दोनों पांवों से सदा के लिए लाचार।

मगर संगीत की साधना चलती रही। कुरेदने पर बताया—'हीराबाई बड़ोदेकर, माणिक वर्मा, भीमसेन जोशी आदि कई कलाकारों की तबले पर संगत भी की है।'

वादन से गायन की ओर आने की कथा यों है :

'यों तो मैं तबला-हारमोनियम दोनों पर संगत करता था; पर आंतरिक इच्छा गायक बनने की थी। असल में हारमोनियम इसीलिए सीखना पड़ा था। मुझे अपना बचपन याद आ रहा है, जब हारमोनियम बजाने की तमीज भी नहीं थी। रोज शाम को मेरे छोटे भाई दौड़ते-फांदते दूर खेलने निकल जाते, खिड़की पर बैठा-बैठा मैं फेरी वालों की तर्जें "चने जोर गरम, बाबू मैं लाया मजेदार" या "एक इकन्नी लाना और बरफ के गोले खाना" वगैरह हारमोनियम पर हूबहू बजा लेता। तब मैं मुश्किल से पांच साल का रहा हूंगा। छोटी-छोटी बातें भी क्या मजा ला देती हैं!'

मैंने उनकी गायन-शिक्षा की तफसील जाननी चाही तो बोले—'आज जो कुछ भी गाता हूं, केवल श्रवण, मनन और चिंतन के आधार पर ही। यों "स्टैंप" की दृष्टि से कहूं, तो कुछ दिन हैदराबाद के बाबूसिंहजी के पास और बाद में पूना के प्रसिद्ध गायक जगन्नाथ बुवा पुरोहित के पास जाता था।'

मगर भावे की गायकी में कहीं कुमार गंधर्व दिखाई दे जाते हैं, तो कहीं वसंत देशपांडे। बोले—'सीखना शब्द तो बड़ा ऊंचा

है, अपनी शारीरिक विवशताओं के मारे मैं हरदम तो उनके पास जा नहीं सकता; पर हां जहां तक केवल सुनकर गायकी उठायी जा सकती है, उठाने की कोशिश की है। कुमारजी तो मेरे दैवत हैं, मेरे आदर्श हैं; मुझे उनकी गायकी भाती है? वसंतराव मेरे परम मित्रों में से हैं।'

मैं कहे बिना न रह सकी—'यानी आप घराना-व्यवस्था में खास आस्था नहीं रखते। मैं अनुभव करती हूं कि यद्यपि घराने की गायकी विशिष्ट पद्धति प्रस्तुत करती है; पर क्या यह आवश्यक नहीं कि कलाकार उसमें अपना भी कुछ योगदान करे?'

कहने लगे—'गुरु-शिष्य-परंपरा में कुछ बातें बड़ी बेमिसाल थीं। जैसे, रियाज करने की खास पद्धति, अनुशासनबद्धता वगैरह। परंतु यदि शिष्य अपनी कोई पूंजी नहीं लगाता, तो वह केवल कार्बन-कापी ही रह जाती है। घराने की गायकी को आंखों पर पट्टी बांधकर ढोने के बजाय, कलाकार यदि गुरु-दक्षिणा के रूप में उसमें कुछ अपना भी इन्वेस्ट करे, तो उसका सौंदर्य बढ़ता है। गुरु की जरूरत केवल राह दिखाने-भर को है, उस पर चलकर नयी भूमियां खोज निकालने का काम तो शिष्य को ही करना पड़ेगा।'

वे सभी को अच्छा, कह रहे थे। मैंने पूछा—'क्या कभी आपको किसी चीज से नफरत हुई है?' हंस पड़े वे—'हां! यदि मैं जिंदगी में नफरत के लिए जगह ढूंढ़ना चाहूं, तो "ट्यूशन" नामक संज्ञा से है। एक से एक बेजोड़, बेमिसाल अनुभव इस क्रिया से मिलते रहते हैं। जो केवल डिग्री लटकाने-भर के लिए उस विषय को टटोलने में ही चतुराई समझते हैं, उन्हें तोते-जैसी पट्टी पढ़ाना उकताहट पैदा कर देता है।'

अपने गायक-जीवन के बारे में उन्होंने बताया—'रेडियो पर तो मैं जब करीब दस वर्ष का था तब से गा रहा हूं। सार्वजनिक रूप में सर्वप्रथम जबलपुर में तीन हजार के जनसमुदाय के बीच गाया था। सन तो मुझे याद नहीं, इतना याद है कि लोगों ने मेरी पीठ थपथपायी थी। उसके बाद से दिल्ली, अहमदाबाद, नागपुर और अन्य अनेक स्थानों पर गाता ही रहता हूं। हर स्थान की अपनी खासियत है, हर महफिल का अपना माहौल, अपनी शान है—इन सबके बीच गाने में मुझे विरला आनंद मिलता है।......जी चाहता है, बस गाता ही रहूं, स्वरों के प्रासाद में चक्कर लगाता रहूं, और नये-नये दालान खोलता रहूं।'

ऐसा है आत्मविश्वास और उत्साह उस व्यक्ति का, जो चल नहीं पाता, जिसने स्कूल की दहलीज भी नहीं लांघी, जिसने वैवाहिक जीवन का सुख-सकून नहीं पाया।

ऐसी बात भी नहीं कि मनुष्य के इन जन्मसिद्ध अधिकारों से वंचित होने का उन्हें अहसास न हो। ......

'मैं संगीत के सहारे इतना बड़ा दुःख भूले बैठा हूं।' क्या आत्मा की अपराजेयता इसी का नाम नहीं है?

—१५, पन्नालाल रोड, इलाहाबाद

★

बिस्मार्क की जल-समाधि

*** विश्वास ***

उस घटना को बीते तेंतीस वर्ष हो चुके हैं; परंतु आज भी यदि किसी ब्रिटिश नौसैनिक से पूछा जाये कि ब्रिटिश नौसेना के सर्वाधिक रोमांचकारी क्षण कौन-से थे, तो वह अनायास कहेगा—'बिस्मार्क का पीछा!' २३ मई १९४१ को प्रारंभ हुई यह समुद्री लड़ाई नौसेना के इतिहास में सबसे शानदार लड़ाई थी। उस दिन जर्मनी का सबसे शक्तिशाली जंगी जहाज 'बिस्मार्क' आर्कटिक सागर में नमूदार हुआ था। सारी ब्रिटिश नौसेना उसके पीछे लग गयी, तब कहीं चार दिन बाद 'बिस्मार्क' डूबा था... इन चार दिनों में ब्रिटिश नौसेना का गर्वोन्नत शीश झुका था, इन चार दिनों में जर्मनी का अपराजेय होने का भ्रम टूटा था।

स्वीडन के गुप्तचर विभाग के माध्यम से जब यह समाचार लंदन पहुंचा कि दो विशाल जर्मन लड़ाकू जहाज अटलांटिक में नार्वे की ओर बढ़ रहे हैं, तो ब्रिटिश नौसेना को यह अनुमान लगाते देर नहीं लगी कि उनमें से एक 'बिस्मार्क' है।

यूरोप का सबसे बड़ा जंगी जहाज 'बिस्मार्क' १९३९ में समुद्र में उतारा गया था। ८८० फुट लंबे तथा २२० फुट चौड़े इस जहाज में आठ १५-इंची तोपें और छह लड़ाकू विमान थे। उसकी दीवारें तेरह इंच मोटी चद्दर की बनी थीं। २,१०० नौसैनिकों वाला यह जहाज जब पहली बार समुद्र में उतरा था, तो विश्व का सबसे बड़ा और सबसे शक्तिशाली जंगी जहाज था। जर्मन इसे गर्व से देखते थे, दुश्मन प्रशंसा से।

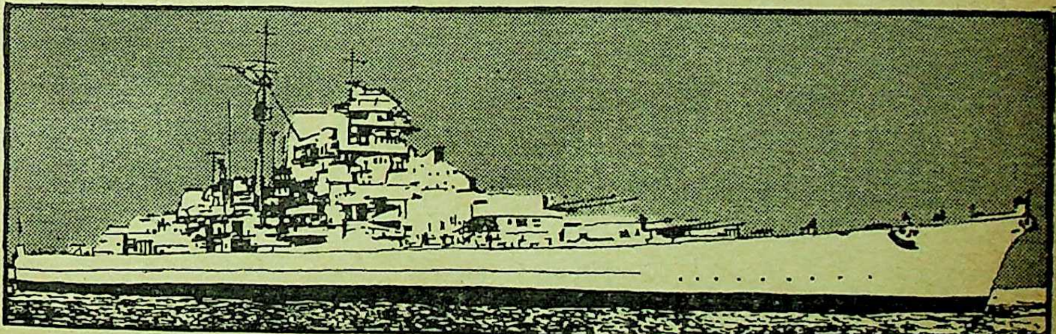

'बिस्मार्क'.....अपने समय का सबसे सुंदर, सबसे सशक्त युद्धपोत

'बिस्मार्क' के साथ दूसरा जहाज था 'प्रिंस यूजीन'। १४ हजार टन का यह जहाज 'बिस्मार्क' से सिर्फ आकार में छोटा था, शक्ति और मार में नहीं।

२ अप्रैल को दोनों लड़ाकू जहाजों को तैयार रहने का आदेश मिला। उन्हें अटलांटिक में मित्रराष्ट्रों के जहाजों पर हमला बोलना था। इस अभियान का कमांडर था ५१ वर्षीय एडमिरल गुंटर लुत्जेन्स–एक साहसी और दृढ़ निश्चयी अफसर। वह नाजी नहीं था, हिटलर को नाजी शैली में सलाम नहीं करता था, स्वस्तिक का निशान भी नहीं लगाता था। पर हिटलर को उसकी क्षमता और निष्ठा पर कभी संदेह नहीं हुआ।

१८ मई की सुबह एडमिरल लुत्जेन्स ने कूच का आदेश दिया। बिस्मार्क के कप्तान लिंडमन ने अपने साथियों को अभियान की सूचना दी। पूरा दिन और पूरी रात वे चलते ही रहे।

पर वे क्यों जा रहे हैं? कहां जा रहे हैं? इन प्रश्नों का उत्तर खोजना ब्रिटिश नौसेना के लिए जरूरी हो गया था। उसे इसका अंदाज था कि जर्मन-जंगी बेड़े से सबसे बड़ा खतरा अटलांटिक में ही है। इसलिए यह जरूरी था कि अटलांटिक में उसके प्रवेश के सारे मार्ग रोके जायें। इसके लिए जर्मन जहाजों को खोज-खोजकर उनका पीछा किया जाना जरूरी था। यह काम ओर्कने टापू में स्थित 'ब्रिटिश होम फ्लीट' के नायक एडमिरल सर जान टोवी को सौंपा गया।

नीली आंखों वाले, जन्मजात नेता ५६ वर्षीय टोवी की कमान में उस समय दो लड़ाकू जहाज 'किंग जार्ज पंचम' और 'प्रिंस आफ वेल्स', दो लड़ाकू क्रूजर 'हुड' तथा 'रिपल्स' तथा एक विमान-वाहक जहाज 'विक्टोरियस' थे। ब्रिटिश नौसेना का गौरव 'हुड' विश्व का सबसे विशाल लड़ाकू जहाज था–उसकी उम्र थी इक्कीस साल। 'प्रिंस आफ वेल्स' के दूध के दांत भी अभी नहीं टूटे थे। 'विक्टोरियस' तो और भी नया था। फिर भी एक के मुकाबले पांच कम नहीं होते। मगर 'बिस्मार्क' की बात कुछ और थी। उसकी तोपें ब्रिटेन के नवीनतम जंगी जहाज की तोपों से भी बड़ी थीं; वह ब्रिटेन के सबसे तेज जहाज से भी तीव्रगामी था।

एडमिरल टोवी को दोपहर में सूचना मिली–जर्मन जहाजों ने नार्वे की बर्जेन खाड़ी में लंगर डाला है। टोवी चाहता था उन पर टारपीडो से हमला कर दिया जाये। परंतु 'विक्टोरियस' के कप्तान बोवेल ने कहा कि मेरे उड़ाकू लड़ाके अभी पूरी तरह प्रशिक्षित नहीं हैं। सो टोवी को मन मारकर रह जाना पड़ा।

धीरे-धीरे शाम उतर आयी। समुद्र पर धुंध छाने लगी। टोवी के मन में रह-रह कर यह आशंका सिर उठा रही थी–निश्चय ही जर्मन जहाज अटलांटिक की तरफ बढ़ रहे हैं, जहां ब्रिटेन के कम से कम बारह मालवाहक जहाज हैं।

अटलांटिक के रास्तों की नाकाबंदी करने के लिए टोवी ने अपने बेड़े को दो

हिस्सों में बांटा—'हुड' और 'प्रिंस ऑफ 'वेल्स' को उत्तर की ओर 'किंग जार्ज पंचम', विक्टोरियस' और 'रिपल्स' को दक्षिण की चौकसी करने भेजा।

उधर बर्जेन खाड़ी में जर्मन जहाजों ने अपना रंग बदला ताकि दूर से वे ब्रिटिश जहाज ही लगें। 'प्रिंस यूजीन' की तेल-टंकी भरी गयी। लेकिन पता नहीं क्यों 'बिस्मार्क' ने अपनी टंकी भरना जरूरी नहीं समझा। हालांकि बाद में उसे इस भूल या लापरवाही की बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। पूरा दिन दोनों जहाज वहीं जमे रहे। नौसैनिकों को धूप में लेटने, पढ़ने, खेलने, अपने परिवारों को अंतिम पत्र लिखने की छुट्टी थी। शाम को ७.३० बजे लुत्जेन्स ने लंगर उठाने का आदेश दिया।

अगले दिन दोपहर तक टोवी अपनी किस्मत को कोसता रहा। समुद्र में इस कदर धुंध छायी थी कि टोही विमान भेजना असंभव हो गया था। तीसरे पहर उसे सूचना मिली—'चिड़ियां उड़ गयी हैं।' अब देरी का प्रश्न नहीं था। 'हुड' और उसके स्क्वाड्रन को पहले ही उत्तर की ओर भेजा जा चुका था। टोवी ने अपने स्क्वाड्रन को भी कूच के लिए तैयार रहने का आदेश दिया। उधर डेन्मार्क जलडमरूमध्य में क्रूजर 'नार्फोक' चौकसी कर ही रहा था। क्रूजर 'सफ्फोक' को भी उसकी सहायता के लिए भेज दिया गया।

जो धुंध टोवी के लिए सिरदर्द थी, वही लुत्जेन्स के लिए वरदान थी। धुंध के परदे में उसके दोनों जहाज सारा दिन चलते रहे। दूसरे दिन दोपहर तक उन्होंने २४ समुद्री मील प्रतिघंटे की अपनी गति धीमी नहीं की। अब वे डेन्मार्क जलडमरूमध्य की ओर बढ़ रहे थे।

२३ मई को तीसरे पहर धुंध छंटने लगी। 'सफ्फोक' पर कप्तान आर. एम. एलिस पिछले ३६ घंटे से दूरबीन लगाये 'कुछ' देखने की कोशिश कर रहा था। शाम को ७.२२ पर उसकी दूरबीन में अचानक दो जहाज उभरे। ये 'बिस्मार्क' और 'प्रिंस यूजीन' थे। धुंध के परदे में वे 'सफ्फोक' से १४,००० गज निकट तक आ पहुंचे थे। ४० हजार गज तक मार करने वाले उन जर्मन जहाजों के लिए यह दूरी कुछ भी न थी।

ठीक उसी समय 'प्रिंस यूजीन' के कप्तान ब्रिकमन ने एक नौसैनिक लेखक-कमांडर बुश के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा था—'यदि इस इलाके में अंग्रेज कहीं हैं, तो उस धुंध में ही हो सकते हैं।' उसने ठीक कहा था। 'सफ्फोक' उसी धुंध में था।

कप्तान एलिस ने तेजी से पीछे हटने का आदेश दिया। 'बिस्मार्क' का गोला किसी भी क्षण 'सफ्फोक' पर आकर गिर सकता था; परंतु नहीं गिरा। 'बिस्मार्क' और 'प्रिंस यूजीन' चुपचाप 'सफ्फोक' के पास से गुजरते हुए आगे बढ़ गये। धुंध के परदे में 'सफ्फोक' सुरक्षित रहा। जब दोनों जर्मन जहाज लगभग पंद्रह मील आगे बढ़ गये, तो 'सफ्फोक' ने उनका पीछा करना शुरू

किया। इस बीच कप्तान एलिस 'बिस्मार्क' को देखे जाने की सूचना वायरलेस से लगातार भेज रहा था।

'नार्फोक' को भी संदेश मिला। उसके कप्तान फिलिप्स ने संदेश मिलते ही अपनी दिशा बदल दी। वह शत्रु के निकट पहुंचना चाहता था; परंतु उतना कदापि नहीं, जितना कि असल में पहुंच गया। लगभग ८.३० पर जब 'नार्फोक' धुंध से बाहर निकला, तो उससे कुल छह मील दूरी पर 'बिस्मार्क' और 'प्रिंस यूजीन' थे। कप्तान फिलिप्स ने पीछे हटने का आदेश दिया। लेकिन बहुत देर हो चुकी थी। 'बिस्मार्क' की तोप गरजी। निशाना गलत नहीं था, किंतु 'नार्फोक' का भाग्य अच्छा था। वह कुहरे में छिप गया। कप्तान फिलिप्स ने भी वही किया, जो एलिस ने किया था। अब 'नार्फोक' और 'सफ्फोक' दोनों ही जर्मन जहाजों के पृष्ठभाग में थे।

इस बीच वाइस-एडमिरल हालैंड के नेतृत्व में 'हुड' और 'प्रिंस आफ वेल्स' छह विध्वंसकों के साथ जर्मन जहाजों का रास्ता काटने के लिए तेजी से आगे बढ़ रहे थे।

१९१८ में बना 'हुड' तब तक के युद्धपोतों में सबसे बड़ा था—लंबाई में 'बिस्मार्क' से भी बड़ा। परंतु उसका निर्माण छापामार जहाजों पर हमला करने के लिए किया गया था, लड़ाकू जहाजों पर हमला करने के लिए नहीं। इसीलिए उसके डेक पर और दोनों पार्श्वों में तोपों की संख्या कम थी। फिर भी ब्रिटिश नौसेना को 'हुड' पर गर्व था और अब ब्रिटिश नौसेना का गर्व जर्मन नौसेना के गर्व से टक्कर लेने जा रहा था।

उधर जहाजों की दौड़ जारी थी। सबसे आगे 'प्रिंस यूजीन' उसके पीछे 'बिस्मार्क' (जिसका राडार टूट चुका था) और उनसे १३ मील पीछे 'नार्फोक' और 'सफ्फोक'। लुत्जेन्स ब्रिटिश जहाजों को चकमा देना चाहता था। यह तो बाद में उसकी समझ में आया कि ब्रिटिश जहाजों के राडार उनसे कहीं अधिक शक्तिशाली हैं।

धीरे-धीरे रात गहराती गयी। हालैंड और लुत्जेन्स के बीच की दूरी कम होती जा रही थी।

'हुड' और 'प्रिंस आफ वेल्स' में युद्ध की तैयारियां शुरू हो गयीं। अधिकारियों और सैनिकों ने ब्रिटिश परंपरा के अनुसार धुली हुई बनियानें और मोजे पहने। कई सैनिक पत्नियों और प्रेमिकाओं को अंतिम पत्र लिखने बैठ गये।

आधी रात को यह अनुमान लगाया गया कि शत्रु करीब १०० मील दूर होगा। एडमिरल हालैंड ने जहाजों का रुख उत्तर की ओर किया। मगर इस बीच लुत्जेन्स थोड़ा पश्चिम की ओर मुड़ गया था। इसलिए हालैंड को अपने जहाजों को एक बार फिर दक्षिण की ओर मोड़ना पड़ा।

पंद्रह मिनिट बीत गये। 'नार्फोक' और 'सफ्फोक' से मिले संदेशों से पता चला कि दूरी कम होती जा रही है। अगले दिन सवेरे ४ बजे जर्मन जहाज २० मील उत्तर-पश्चिम की ओर थे और एक घंटे बाद

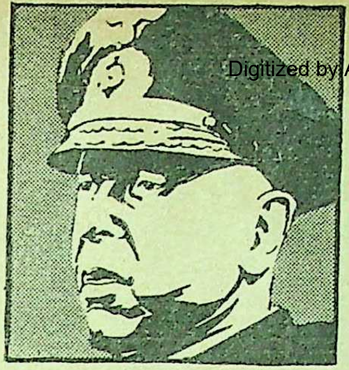

एडमिरल लुत्जेन्स

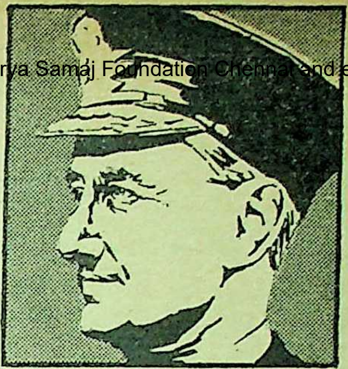

वाइस-एडमिरल हालैंड

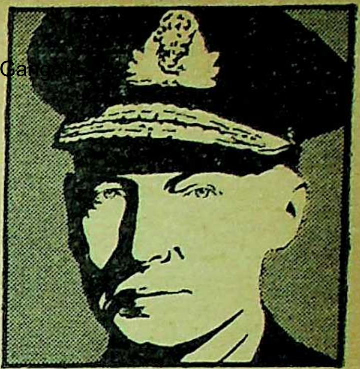

एडमिरल टोवी

सिर्फ १५ मील ।

इधर 'बिस्मार्क' और 'प्रिस यूजीन' को लगभग २० मील की दूरी पर चल रही तैयारियों का आभास भी न था । प्रातः ५ बजे के लगभग 'प्रिस यूजीन' को अपनी पेंदी में लगे जलमग्न श्रवण-यंत्र से दो बड़े जहाजों के प्रेपेलरों की आवाज सुनाई दी । किंतु राडार पर अभी कुछ संकेत नहीं था । और जब उन्हें दोनों ब्रिटिश जहाज दिखे, तो वे यह अनुमान नहीं लगा पाये कि वे 'हुड' और 'प्रिस आफ वेल्स' ही हैं । वे उन्हें कोई क्रूजर ही समझते रहे । अन्यथा शायद वे 'प्रिस यूजीन' को हटा लेते; क्योंकि जर्मन नौसेना का स्पष्ट आदेश था कि युद्ध-पोतों से मत भिड़ो ।

दो महान एडमिरल अब एक-दूसरे के आमने-सामने थे । लुत्जेन्स और हालैंड दोनों की कमान में तीन-तीन हजार नौसैनिक तैयार खड़े थे । वे एक-दूसरे को जानते भी न थे । आपस में उनकी कोई दुश्मनी भी न थी । अन्य परिस्थितियों में शायद वे साथ-साथ नाचते-गाते । परंतु समय और स्थान ने उन्हें एक-दूसरे का दुश्मन बना दिया था ।

दूरी कम होती गयी । २५ हजार गज । एडमिरल हालैंड की आवाज गूंजी—'एग्ज़िक्यूट !' कप्तान केइ ने जैसे प्रतिध्वनि की—'ओपन फायर !' और तोपखाने के अधिकारी ने आदेश दिया—'शूट' ! एक क्षण को मानो दुनिया सहमकर थम गयी । काला-पीला धुआं । कर्णभेदी आवाज ! १,६०० मील प्रतिघंटे की गति से भी तेजी से 'हुड' की तोपों ने चार गोले उगले । दुश्मन ने जवाब दिया ।

'हुड' के गोले 'प्रिंस यूजीन' के बहुत नजदीक गिर रहे थे । परंतु 'बिस्मार्क' और 'प्रिंस यूजीन' के गोलों की मार खतरनाक रूप से सही थी । दोनों 'हुड' पर निशाना मार रहे थे ।

पहले ही मिनिट में 'प्रिंस यूजीन' से एक गोला 'हुड' पर गिरा—बिलकुल बीचोबीच । अंग्रेजों ने भयपूर्वक और जर्मनों ने अविश्वासपूर्वक 'हुड' से एक आग उठती

देखी। जब वे लपटें दिखना बंद हुईं, तो गहरा धुआं छा गया। जब धुआं छंटा, तो दो टुकड़ों में बंटा 'हुड' पानी में बैठता जा रहा था। कुछ ही मिनिटों में 'हुड' नहीं रहा। 'हुड' के डेक पर तब १,५०० सैनिक थे। उनमें से कुल तीन जीवित बचे !

अब जर्मन जहाजों ने 'प्रिंस आफ वेल्स' पर निशाना साधा। कप्तान लीच ने उसका जवाब दिया। परंतु 'प्रिंस आफ वेल्स' को इस बीच इतनी अधिक क्षति पहुंच चुकी थी कि कप्तान लीच को पीछे हटने का फैसला करना पड़ा। 'बिस्मार्क' ने पीछा नहीं किया, यद्यपि उसके क्षतिग्रस्त होने का कोई संकेत नहीं था। लड़ाई शुरू होने के तीन मिनिट बाद उसकी चिमनी से उठा धुआं ही एकमात्र ऐसा संकेत था, जिससे किसी क्षति का अनुमान हो सकता था।

सारी लड़ाई केवल २१ मिनिट में खत्म हो गयी। फिर भी लड़ाई जारी थी। 'हुड' की समाप्ति के बाद 'बिस्मार्क' और भी खतरनाक हो गया था।

गोलों की आवाज थमने के छह घंटे के भीतर ही दो अतिरिक्त जंगी जहाज, एक जंगी क्रूजर, एक विमानवाही पोत, तीन क्रूजर तथा तीन विध्वंसक 'बिस्मार्क' को 'पाने' की दौड़ में शामिल हो गये।

'नार्फोक' और 'सफ्फोक' दोनों 'बिस्मार्क' के पृष्ठभाग में थे। तीन सौ मील पूर्व की ओर से सर जान टोवी दुश्मन की ओर दौड़ा चला आ रहा था। उसके साथ थे 'विक्टोरियस' और 'रिपल्स'।

दोपहर होते-होते धुंध गहरा गयी। दोनों क्रूजरों की दृष्टि से 'बिस्मार्क' ओझल हो गया। 'सफ्फोक' के कप्तान एलिस को लग रहा था कि 'बिस्मार्क' धुंध का लाभ उठाकर हमला कर सकता है और हुआ भी यही। 'बिस्मार्क' ने हमला बोला, पर 'एलिस' धुएं की दीवार बनाकर बच निकला। यह तो बाद में पता चला कि 'बिस्मार्क' की यह कार्रवाई 'प्रिंस यूजीन' को भाग निकलने का मौका देने के लिए थी, ताकि वह टंकी में तेल भरवा सके।

अभ तक तो 'बिस्मार्क' अंग्रेजों की निगाहों में था। लेकिन अगर रात के अंधेरे में वह भाग निकला तो ? इसलिए सर टोवी ने 'विक्टोरियस' के विमानों द्वारा उस पर आक्रमण का निर्णय किया—इस आशा में कि सकी चाल धीमी हो जाये।

अंधेरा घिरने से पहले ही 'विक्टोरियस' से नौ विमान उड़े। यह पहला अवसर था कि समुद्र में किसी जहाज पर विमानवाहक जहाज से हमला किया जा रहा था। लेकिन वे 'बिस्मार्क' को विशेष हानि नहीं पहुंचा पाये। २५ मई को सवेरे ३ बजे 'सफ्फोक' ने संदेश दिया—'दुश्मन से संबंध टूट गया है।' इसके ठीक साढ़े इकत्तीस घंटे बाद 'बिस्मार्क' फिर दिखाई दिया।

लेकिन इस बार उसे ('बिस्मार्क' को) किसी अंग्रेज ने नहीं, बल्कि अमरीकी ने देखा था। वह था अमरीकी सैनिक लियोनार्ड स्मिथ—उन सत्रह अमरीकी विमानचालकों में एक, जो मई में ब्रिटेन की तटीय

कमान में शामिल हुए थे। उनका काम प्रशिक्षण देने के साथ-साथ स्वयं अभ्यास करना भी था। (अभी हाल तक यह बात गुप्त रखी गयी थी, क्योंकि अमरीका उस समय तटस्थ था।) स्मिथ को 'बिस्मार्क' का पता लगाने का काम सौंपा गया था और उसने उसका पता लगा भी लिया।

जब 'बिस्मार्क' दिखा तो वह 'किंग जार्ज पंचम' से सौ मील दूर था। और शीघ्र ही वह जर्मन वायुसेना की संरक्षण-सीमा में आ जाता। इसलिए उसे फिर से लड़ने के लिए बाध्य करना हो, तो उसकी गति धीमी करना जरूरी था। यह काम 'आर्क रायल' के विमानों ने कर दिखाया। इन विमानों ने 'बिस्मार्क' पर १५ टारपीडो गिराये। १३ टारपीडो निशाना चूक गये। १४ वां भी कुछ विशेष असर नहीं डाल सका। परंतु पंद्रहवें ने 'बिस्मार्क' का भाग्यलेख बदल दिया। वह सीधा उसके इंजन-कक्ष पर जा गिरा; और इससे दोनों 'रडर' जकड़ गये। अब दिशा बदलना संभव न रहा। 'बिस्मार्क' फ्रांसीसी तट से दूर हटने लगा।

पर अब वह ठीक उसी तरफ जा रहा था, जिधर से टोवी के जहाज उसकी ओर बढ़ रहे थे। उसकी दिशा बदलने के लिंडमन के सारे प्रयास विफल गये। जकड़े हुए 'रडरों' ने 'बिस्मार्क' को असहाय बना दिया था। लिंडमन ने हिटलरको संदेश भेजा—'फ्यूहरर, हम आपमें विश्वास और जर्मनी की विजय में पूर्ण आस्था रखते हुए अंत तक लड़ रहे हैं।' हिटलर का जवाब आया—'जर्मन जनता की ओर से मेरे धन्यवाद। समूचा जर्मन तुम्हारे साथ है। अब भी जो कुछ संभव है, सब किया जायेगा।'

२७ मई को सवेरे ८ बजे 'नार्फोक' ने 'बिस्मार्क' को देखा। वह सिर्फ आठ मील दूर था। 'किंग जार्ज पंचम' और 'रोडने' को संदेश मिला। और ८.४७ पर 'रोडने' की १६-इंची तोपें गरजने लगीं। 'किंग जार्ज पंचम' की तोपों ने साथ दिया। वे 'हुड' की मौत का बदला लेना चाहते थे। दो मिनिट तक मौन रहने के बाद बिस्मार्क ने भी मुंह खोला। ८.५४ पर २० हजार गज की दूरी से 'नार्फोक' ने भी गोले बरसाने शुरू किये। उत्तर से 'डार्सेटशायर' आ पहुंचा।

गोले बरस रहे थे। दूरी कम हो रही थी। 'बिस्मार्क' चक्रव्यूह में फंस गया था।

सवेरे १० बजे तक 'बिस्मार्क' क्षत-विक्षत हो चुका था। तोपें मौन! गति लगभगस्थिर। धुआं! धुएं में उठती लपटें! 'बिस्मार्क' मर गया, लेकिन झुका नहीं।

अभी जल-समाधि शेष थी। जान टोवी लौट चुका था। यह काम 'डार्सेटशायर' ने किया। टारपीडो की मार से 'बिस्मार्क' कांपा। झंडा अभी लहरा रहा था। समूचा जहाज उलट गया। उसके २,००० नौसैनिकों में से कुल १०७ बच सके। इनमें से भी एक 'डार्सेटशायर' के डेक पर मर गया। उसे पूर्ण सैनिक संमान के साथ जल-समाधि दी गयी। विदाई में उसके एक साथी ने किसी ब्रिटिश नाविक के माउथ आर्गन पर एक जर्मन गीत बजाया—'एक था मेरा साथी।'

★

इंग्लैंड के प्रस्तर-दैत्य

डा. पद्मा उपाध्याय

अनादि काल से पाषाण मनुष्य का साथी और सहारा रहा है। आदिमानव का आहार शिकार पर निर्भर था और शिकार के लिए मनुष्य का पहला शस्त्र बना पत्थर। मोटे-मोटे पत्थर उठाकर वह शिकार को मार डालता। फिर उसने पत्थर के पैने और नुकीले, मारक और घातक शस्त्र बनाये। निवास के लिए पहाड़ों में बनी प्राकृतिक कंदराएं काम आयीं, जंगली पशुओं और दूसरे मनुष्यों के आक्रमण से बचाव के लिए कंदराओं के द्वार पत्थर के बड़े-बड़े ढोकों से ढंके जाने लगे—उसका पहला घर भी पत्थर की गुफा था, जिसका दरवाजा खुद पत्थर ही था। पहले तो वह पत्थर पर ही भोजन करता था, बाद में उसकी प्याले और रकाबियां तैयार करने लगा। शिलाएं बिस्तर बनीं। फिर जब आदिमानव के मन में कल्पना जगी, तो उसने पत्थर की नुकीली छुरी से कंदराओं की दीवारों पर कलाकृतियां उकेरनी आरंभ कीं।

कला और निर्माण का जोड़ ठीक बैठा। छुरी का स्थान छेनी ने ले लिया, फिर तो मनुष्य के पंख निकल आये। वह कंदराओं से निकलकर भवन बनाने में जुट गया। निर्माण का यह चक्र अनवरत घूमता रहा। अनवरत—घर, मंदिर, समाधियां, एक से एक अनोखी कृतियां सामने आयीं, जिनमें आधुनिक शिल्पकार को भी चकित करने का सामर्थ्य है।

पाषाण-कालीन मानव की ऐसी ही एक अद्‌भुत कृति है—इंग्लैंड के तीन प्रस्तर-दैत्य, जिनके निर्माण के रहस्य पुरातत्त्ववेत्ता अभी तक पूरी तरह नहीं खोज पाये हैं। मध्य युग में इन्हें जादूगर मरलिन की कृति माना गया। किसी का विचार था कि ये हेंस्गिट के विरुद्ध युद्ध में काम आये योद्धाओं की स्मृति में बनी समाधियां हैं। कुछ ने उन्हें रोमनों का मंदिर कहा, तो कुछ ने बोडीसिया की समाधि अथवा बौद्धपूजा का स्मारक। सत्रहवीं शताब्दी के अंग्रेज पुरातत्त्ववेत्ता जोन आब्रे ने इन दैत्यों की शृंखला ड्रूइड्स के साथ जोड़ी। यह धारणा सबसे अधिक मान्य हुई।

पहले-पहल इनकी खुदाई १९१९ में हुई। उसके बाद प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता पिगट और सर जोन मार्टिमर ने कुछ महत्त्वपूर्ण प्रयोग तथा अनुसंधान किये, जिनके परिणामस्वरूप इन प्रस्तर-दैत्यों के बारे में कुछ तथ्य प्रकाश में आये।

दैत्य नं. १ का निर्माण ईसा से लगभग २,००० वर्ष पूर्व प्रारंभ हुआ होगा। इनमें ३२० फुट आधार-भूमि के चारों ओर मेंड़

और उसके बाद खाई है। उत्तर-पूर्व की ओर प्रवेशद्वार का स्थान छोड़ा गया है। मेंड़ के भीतर ५६ पूजा-स्थलों का एक घेरा है। इनमें से कई में चिताएं जलाने के प्रमाण मिले हैं। दक्षिण-पूर्व की ओर भी श्मशान के चिह्न मिले हैं। पत्थर, अस्थियां तथा कब्रों में रखी गयी वस्तुएं यह प्रमाणित करती हैं कि उनका संबंध तीसरी सहस्राब्दी ईसा-पूर्व के अंतिम चरण की पाषण-युगीन संस्कृति के साथ है। द्वार के समीप बने अन्य स्मारक घरौंदे तथा बिना तराशा एकाकी खड़ा वह पत्थर भी, जिसे अठारहवीं शती से हीलस्टोन कहा जाता है, उसी युग में खड़े किये गये थे।

दैत्य नं. २ अपने आपमें अद्‌भुत है। यह अधूरा है और इसकी प्रारंभिक योजना का कोई अवशेष नहीं बचा है। इसके समीप प्राप्त मिट्टी के बरतनों के आधार पर इसका निर्माण-काल ईसा पूर्व १७०० से १६०० के बीच आंका जा सकता है। यहां ८० विशाल पत्थर हैं। इनमें से प्रत्येक का वजन लगभग चार टन है। संभव है इन्हें नदी के मार्ग से समुद्र-तट पर पहुंचाया गया हो, और उसके बाद इंग्लिश चैनल के रास्ते ब्रिटेन के तट पर ले जाकर खाड़ी की ऊपरी धारा के मार्ग से इस ठिकाने पर लाया गया हो। ये नीले तथा नील-हरित रंग के हैं और स्वाभाविक रूप से खंभों के आकार में हैं। इन्हें पेम्ब्रोकशायर और प्रेसली की पहाड़ियों से लाया गया था और बिना तराशे ही जड़ दिया गया था।

लगता है कि निर्माताओं ने पत्थरों के दोहरे घेरे के निर्माण की योजना बनायी थी, जिसका व्यास ७५ फुट होता। वह घेरा प्रस्तर-दैत्य-१ के मध्य में होता। घेरे के बीच एक प्रवेशद्वार होता, जिसके किनारों पर पत्थरों की एक पंक्ति होती तथा उसका रुख पूर्व की ओर होता। ग्रीष्म काल में उगते सूर्य की किरणें प्रस्तर-दैत्य की मेंड़ व खाई के बीच पड़तीं। कल्पना अद्‌भुत रूप से वैज्ञानिक थी। इस घेरे का तीन-चौथाई भाग तैयार कर लिया गया था। लंबे पत्थर जोड़े से इस्तेमाल किये गये थे और उनकी चूलें एक दूसरे में फंसी थीं। न जाने यह

दक्षिण इंग्लैंड सैलिसबरी के मैदान में स्थित प्रस्तर-दैत्य—स्टोनहेन्ज।

घेरा पूरा क्यों नहीं हो सका ।

दैत्य नं. ३ पहले दोनों से भिन्न है । यह दूसरी सहस्राब्दी ईसा पूर्व में प्रचलित बर्बर-यूरोपीय स्थापत्य से एकदम अलग जा पड़ता है । यह दैत्य मानव-सभ्यता के कई चरण लांघकर हमें बिना तराशे पत्थरों के युग से स्थापत्य के उस विकसित व नियोजित चरण पर ला खड़ा करता है, जहां पत्थरों का संयोजन बारीकी के साथ किया जाता था।

इसके निर्माण-क्रम में पहला चरण दूसरे प्रस्तर-दैत्य के पत्थरों को उतारने में आरंभ हुआ । नीले पत्थर उतार दिये गये और उन्हें सुविधानुसार किनारे से लगा दिया गया । खाली जगहों में रोड़ी भर दी गयी । अब नये स्मारक के लिए स्थान तैयार कर लिया गया । नये पत्थरों की आवश्यकता हुई जिसे बलुए पत्थर के ८० विशाल प्रस्तरखंडों से पूरा किया गया । इनमें से प्रत्येक तीस फुट लंबा व पचास टन से अधिक भारी था।

ये प्रस्तरखंड २४ मील दूर उत्तरी विल्टशायर के समीप एवबरी स्टोन सर्किल से लाये गये थे । ढुलाई से पहले उन्हें साधारण रूप से चिकना करने का प्रयास किया गया, परंतु वास्तविक कांट-छांट तो स्मारक के स्थान पर ही की गयी।

दूसरे चरण में घोड़े की नाल की शकल पर पांच घरौंदे बनाये गये। इनमें से प्रत्येक में तीन पत्थर हैं–दो खड़े और एक उन दोनों के सिरों पर टिका चौखट के रूप में। इसके चारों ओर पत्थरों का घेरा खड़ा किया गया है । इसके बाद नीलाभ पत्थर लाये गये । इनमें सबसे बड़े पत्थर को अंडाकार कोरा गया तथा दो महराबों के साथ मिलाकर नाल वाली आकृति के बीचों-बीच स्थापित किया गया। शेष पत्थर रेतीले-पत्थर के घेरे के बाहरी दो घेरों में काम आये । निर्माण यहीं रुक गया । गढ़े खुदे रह गये, वहां पत्थर नहीं लगाये जा सके और काल इन गढ़ों को अपनी मिट्टी से भरता रहा ।

नीलाभ पत्थरों के इस घेरे का निर्माण एकाएक कैसे रुक गया, यह एक अनबूझी पहेली है। संभव है कोई आकत्मिक विपत्ति आ गयी हो । निर्माण रुका अंतिम चरण की समाप्ति पर । अंडाकार कृति को तोड़ दिया गया और उसके अंश को नीलाभ पत्थरों के साथ मिलाकर सादी नाल की आकृति एवं एक घेरे का निर्माण किया गया। इसमें सीधे खड़े पत्थरों का प्रयोग किया गया है, किंतु ये बलुए पत्थर पहले की तरह कोरे संवारे नहीं जा सके ।

तीसरे प्रस्तर-दैत्य के बलुए पत्थर पर प्रागैतिहासिक-कालीन खुदाई के कुछ अंश मिले हैं । यह खुदाई उन्हीं औजारों से की गयी मालूम होती है, जिनसे पत्थरों को चिकना किया गया था । खुदाई के काम में अधिकांशतः पीतल और तांबे की कुल्हाड़ियों के फलके प्रदर्शित किये गये हैं । ये कुल्हाड़ियां किनारे काटने के काम आती होंगी । इस तरह की कुल्हाड़ियां द्वितीय सहस्राब्दी ईसा पूर्व के मध्य में वेसेक्स में इस्तेमाल की जाती थीं । उन्हीं में धातु की

मूठ वाली कटार का चित्र उत्कीर्ण है। कटार का प्रचलन एजियन देशों के धातुयुग में ही मिलता है, पश्चिमी यूरोप में नहीं।

प्रस्तर-दैत्यों के चारों ओर बनी कब्रें सामंतों तथा उनकी पत्नियों की हैं। उनके भीतर शवों के साथ सब तरह का सामान मिला है। योद्धाओं के शवों के साथ उस जमाने में तांबे व पीतल की कुल्हाड़ियां और कटारें और उनकी पत्नियों के शवों के साथ गले के हार व अन्य आभूषण दफनाने का रिवाज रहा होगा। सोने का प्रयोग अधिकतर शस्त्रों की मूठों पर, पेटी के पेच में, कवच के अलंकरण तथा महिलाओं के आभूषणों में हुआ है। गोमेद संभवतः केंद्रीय यूरोप से आया और वहीं से पीतल की पिनें तथा अन्य वस्तुएं भी आयीं।

इनमें एक कब्र बहुत विलक्षण है। यह प्रस्तर दैत्य के दक्षिण की ओर बुशबैरो नामक टीले के नीचे है। उसमें शव के साथ निम्न सामग्री दफनायी गयी थी—सोने के दो कवच, कमरबंद, दो बड़ी कटारें (एक तांबे की और दूसरी पीतल की), पीतल की एक कुल्हाड़ी, पीतल का ही शिरस्त्राण और एक गदा, जिसके सिरे पर पालिश किया हुआ पत्थर लगा है।

कब्र में एक राजदंड भी मिला है, जिसके दो सिरे हैं और उनमें दांते कटे हुए हैं। उसके बीच में तीन-चार टेढ़े-मेढ़े छल्ले हैं। यदि इसे आबनूस में जड़ दिया जाये, तो बहुत आकर्षक छड़ी बन सकती है। इस तरह का राजदंड केवल एक और स्थान पर मिला है—यूनान के मीकिनो राजवंश की कब्रों में। एक यूनानी कब्र में सोलहवीं शती ईसा पूर्व का एक हैलादिक मृत्पात्र भी मिला है। यह इस बात का महत्त्वपूर्ण प्रमाण है कि वैसेक्स और यूनान के बीच व्यापारिक संबंध था।

यह अनुमान सही प्रतीत होता है कि प्रस्तर दैत्य इंग्लैंड के सांस्कृतिक विकास के नहीं वरन् एक विकसित संस्कृति के साथ मीकिनी युग के यूनान तथा उसके पड़ोसी एजियन देशों की संस्कृति के साथ उसके संपर्क का परिणाम हैं।

इन प्रस्तर-दैत्यों का निर्माण वेसेक्स की बर्बर जाति के बूते से बाहर की बात थी। इसके निर्माण के लिए किसी विकसित जाति के कुशल संगतराशों की आवश्यकता हुई होगी और उन्हें पत्थर काटने, स्तंभ खड़े करने, चूल निकालने व चौखटें चढ़ाने आदि के लिए नियोजित निर्देश दिये गये होंगे।

कब्रों से प्राप्त वस्तुओं से यह सिद्ध होता है कि धातु युग में वेसेक्स का समाज वर्गों में विभक्त था और उसमें योद्धा वर्ग का बोलबाला रहा होगा—इलियड और ओडेसी के समाज की तरह बर्बर परंतु वीर एवं उदात्त।

प्रस्तर-दैत्यों का निर्माण करने वाला समाज निश्चय ही पराक्रमी समाज था। यह कहना अनुचित न होगा कि शिल्पकार के कौशल और शासक की सत्ता ने मिलकर ही प्रस्तर-दैत्यों जैसे विराट स्मारक का निर्माण किया होगा।

—आर्य कन्या डिग्री कालेज, खुर्जा, उ. प्र.

* * *

उर्दू कहानी:

मेरे ज़ख्म

• अतिया परवीन •

'यह नहीं हो सकता......मेरे लिए ऐसे हंगामे बहुत उठ चुके हैं। अब नाहीद भी मेरी तरह कुरबानी का जानवर नहीं बन सकती, जिसे लोग देखें, टटोलें और पसंद करें या नापसंद करें......'

अरूसा ने एक हश्र उठा दिया था।

भावज की एक न चली। अम्मा तो खैर हैरत में थीं ही। भाईजान की खामोशी उनके लाजवाब होने को साफ जाहिर कर रही थी।

'खूब रही! हम लड़कियां न हुईं, कमबख्त भेड़-बकरियां हो गयीं। न हो शादी बला से। मेरी तरह नाहीद भी अपने पैरों पर खड़ी होगी। मां या भाई या दुनिया के लिए वबाल नहीं बनेगी। सुना आप लोगों ने? अगर लड़के वालियां आयीं, तो खुदा की कसम, कुत्ते की तरह दुत्कार दूंगी।'

बिफरकर और हर एक को धमकाकर वह अपने कमरे में चली गयी। सफेद रंग का पर्स उठाकर मेज पर फेंका, जो मेज के बजाय फर्श पर जा पड़ा। उसने उठाने का कष्ट भी न किया। सैंडल खोलकर एक कोने में उछाल दिया। साड़ी उतारकर अलगनी पर डाल दी और बिस्तर पर गिरकर रजाई सीने तक खींच ली।

गुस्सा था कि किसी तरह कम ही नहीं हो रहा था। रह-रहकर जबड़े भिंच जाते-'कमबख्त बदनसीब!' उसने ओंठों में कहा। खुदा जाने किसे निशाना बनाया—अपने को, घरवालों को या उन लोगों को जो आज नाहीद को देखने आ रहे थे!

कई जगह बात चली थी और टूट गयी थी। पिछले हफ्ते से एक जगह फिर सिलसिला चला था; लेकिन वे लोग जिद कर रहे थे कि लड़की को देखेंगे। अम्मां, भाभी और भाईजान राजी हो गये थे। वह स्कूल से वापस आयी, तो घर में एक छोटा-मोटा हंगामा मचा हुआ था। भाभीजान और अम्मां की व्यस्तताएं। अल्लाह की पनाह! घर के कोने-कोने की सफाई हुई थी। पलंगों पर नये पलंगपोश पड़े थे। मेजों पर भाभी के दहेज के मेजपोश बहार दिखा रहे थे। अम्मां का पानदान चमकाया जाकर चौके पर धरा था। चौके पर भी बरसों की पुरानी और जमीन की रंगत की चादर भी बदल गयी थी। दो चादरों को बीच में जोड़कर जाजम बना ली गयी थी। किचन के सामने चौकी पर रखे नये बरतन जो किसी खास मौके पर ही निकलते थे, साफ-सुथरे जगमगा रहे थे। घर ही नया-नया-सा लग रहा था। बच्चे साफ कपड़े पहने थे। भाभी भी गुजरिया बनी थीं और अम्मां ने भी लांड़ी

की धुली शफ्फाफ साड़ी बांध रखी थी।

अरूसा बिलबिला ही तो उठी। क्या न बिलबिलाती? ऐसे कितने ही हंगामे वे देख चुके थे।

हंगामे खत्म हो जाते। चेहरे लटक जाते और वह कोनो-खुदरों में छिप-छिपकर रोया करती।

रोयी तो वह उस रोज भी बहुत थी, जब एक रोज कंघी करते हुए उसकी घनघोर घटाओं में एक सफेद बाल बिजली की तरह तड़पा था। कंघा उसके हाथ में फंसा रह गया।

उस पर जो बीती, सो बीती। अम्मां पर जैसे आसमान फट पड़ा – 'हाय अरूसा! तेरा नसीब कब खुलेगा!' उन्होंने फरियाद की थी और बहुत फुर्ती से मांग में लहराती यह बिजली तोड़कर कूड़े के ड्रम में यों फेंकी थी, मानो सांप मारकर फेंका हो। उनके चेहरे पर झुर्रियां में एकदम बढ़ती हो गयी थी।

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

अम्मां उसके भाग्य खुलने की दुआएं मांगते-मांगते थक गयीं, मगर उसकी मांग में चंदन न महका। उसकी शादी के इंतजार में भाईजान कई साल अपने अरमान दबाये बैठे रहे थे। पर कब तक? अल्लाह रखे, जवान-जहान थे। नौकरी लगी हुई थी। आखिर एक रोज फूलों से सजीधजी डोली चौखट पर आ लगी। घर में ढोल की थाप गूंजी। सुहाग के गीत लहराये।

भाईजान की सुहाग-रात! बहुत अच्छी बीती। बहुत बुरी बीती! कोई उसके दिल से पूछता! अपने वंचित होने का एहसास और भी बढ़ गया। मुहल्ले की लड़कियां जो उसके सामने गुड़ियों की शादी रचाती

अनुवाद : सुरजीत

थीं, गोश्त-पोस्त के गुड्डे-गुड़ियों को कंधे लगाकर घूमने लगीं। कमर और पेट पर से एक जरा जंपर खिसक जाने पर जो शर्म से लाल हो जाया करती थीं, चार के सामने बड़े ठस्से से जंपर कंधे तक खींचकर बच्चों को दूध पिलाने लगीं। और तो और खुद उसकी भाभी उससे उम्र में दस बरस छोटी थी। रिश्ता बड़ा, उम्र छोटी। उसकी कोख कुंवारी पड़ी रही और भाभी ने साल के अंदर बच्चे पैदा करने शुरू कर दिये।

गुड्डी कभी-कभी बड़े अचरज और हसरत से पूछती – 'अल्लाह फूफीजान! आप कब कीजियेगा शादी! सलो के कितने अच्छे फूफाजान हैं। जब आते हैं, ढेरों चीजें लाते हैं। मेरे फूफाजान कब आयेंगे...?'

वह खिसियाकर मुस्करा देती, तो गुड्डी फिर कहती–'ए लो! आपके बाल भी दादी अम्मां की तरह चांदी-चांदी होने लगे हैं। भला आप क्या दुलहिन बनेंगी अब?'

उसके दिल में एक नश्तर टूटता और अपनी नम आंखें छिपाने के लिए वह उठकर चली जाती।

भाभी की जब नयी-नयी शादी हुई थी, तो उन्होंने चाव में अपने एक रिश्ते के भाई से उसका रिश्ता ठहराया था। दूसरी शादी थी, उनकी। खैर से दो बच्चे भी थे। मगर आदमी कायदे के थे। चेहरा भला था। सर्विस अच्छी थी। अरूसा के दिल में बेले की कलियां चटकने लगीं।

घर में एक हंगामा जाग उठा था।

अम्मां कमरा बंद करवाकर उसके बदन पर उबटन भी मलवाने लगी थीं। उसका चेहरा दिनो-दिन चमक रहा था। हाथ-पांव नरम-नरम चिकने-चिकने निकल आये थे। अपने जिस्म की भीनी-भीनी महक से वह खुद मदहोश-सी हो जाया करती थी।

लेकिन!

यह सुनहरे सपने सत्य में न ढल सके। बहार उसके दरवाजे तक आयी और चौखट चूमकर वापस चली गयी।

अम्मां ने सीना कूट लिया। अब्बा ने सिर पकड़ लिया।

किसी ने लड़के वालों से जाकर शिकायत की थी कि लड़की में नुक्स है। भाभी खूब आड़े हाथों ली गयी थीं कि जानबूझकर जीती मक्खी खिला रही थीं। ठीक दस दिन बाद मुहल्ले की एक लड़की जाहिदा उस घर में दुलहिन बनकर जा उतरी और अरूसा उस चोट को दिल पर लिये महीनों बिलखती रही थी।

अम्मां को आये दिन दिल के दौरे पड़ने लगे। अरूसा की पहाड़-जैसी जवानी उन्हें सुरमे की तरह पीसे डाल रही थी। दूसरी मार रोज-रोज के हंगामे थे। लड़के वाले आते। घर-बार देखते। लड़की देखते। और जाने के बाद अस्वीकृति का घूंसा सीधा अम्मां के सीने पर लगा देते। अम्मां हिलकर रह जातीं।

आखिरी घूंसा उन्हें आज से चार बरस पहले लगा था।

अरूसा को घर के उस हंगामे में उस दिन की याद आ रही थी। याद का सांप

फन उठा-उठाकर उसके वजूद पर जहर उगल रहा था।

वह फिर किसी बिकाऊ माल की तरह साजी-संवारी गयी थी। मर्जी न होने पर भी, रग-रग में नफरत का उबाल आने पर भी, महज अम्मां की खातिर वह लड़के की बहन और मां के सामने जा बैठी थी। नहीं, बल्कि लड़के की मां-बहन उसी के कमरे में आ गयी थीं।

'कमरा तो खूब सलीके से संवारा है!' अम्मांजान ने चारों तरफ देखकर उसकी तारीफ की।

अरूसा के दिल में लड्डू फूटने लगे।

'अल्लाह! ले चलो हमें अपने घर...पूरा घर न दुलहिन बना दूं तब कहना...'

बनी-संवरी सिर ढांपे लजीली-शर्मीली अरूसा को दोनों ही मां-बेटी ने पसंद की नजर से देखा।

'हा! कित्ती प्यारी हैं ये ... हमारा भैया तो देखते ही लट्टू हो जायेगा ' लड़के की बहन ने कहा और मां मुस्करायीं।

'चुप री लड़की ... ' फिर उसकी बगल में बैठ गयीं—'शरमाओ न बीबी! आजकल कौन इतनी शर्म करता है। जरा सिर उठाओ। इधर-उधर देखो...'

इस तरह आंखें देखेंगी... उसने सोचा और धीरे-से फिर कटोरा-सी शफ्फाफ आंखें उठायीं और झुका दीं।

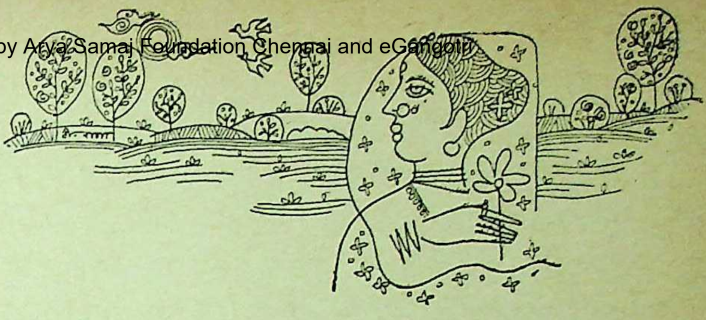

चित्र: ठाकोर राणा

'चश्मे-बद-दूर... इन झीलों में तो डूब मरने को जी चाहता है।' बहन फिर बोली और अरूसा अपनी मुस्कराहट न रोक सकी।

'हाय अम्मां! जब इनकी मुस्कराहट इतनी मोहिनी है तो हंसी जान ही ले लेगी और जब बोलेंगी, तब तो कुदरत झूल उठेगी।'

बहन की उस शायराना बात पर उसने मजा भी लिया और यह भी सोचा कि अब ये आवाज सुनना चाहती हैं।

'बैठ जाइये। आप खड़ी क्यों हैं?

उसकी आवाज बहुत प्यारी थी। उस वक्त जरा अदा और नजाकत ने चार चांद लगा दिये।

'अल्लाह! अल्लाह! जैसे किसी ने शीशे की सुराही में चांदी के घुंघरू बजा दिये हों ...'

इस बार अरूसा को खुलकर हंसी आ गयी। गुलाबी ओठों की ओट से चमकीले दांतों की कतार बिजली की लहरें मारने लगी।

'अरी मेरी बन्नो! तेरे दांत तो हाय......'

उसने सिसकारी भरी–'जी चाहता है, हीरे की इन कनियों तले गला रख दूं।'

जिसकी बहन इतनी हंसमुख है, वह भाई कैसा होगा ? अरूसा ने सोचा, उसके सोये हुए जज्बात फिर जाग उठे। लड़के की मां मुस्कराये जा रही थीं और बहन उत्साह-भरी नजरों से उसे देखे जा रही थी। भाभी का चेहरा खिल उठा था। अम्मां की खुशी छिपाये न छिप रही थी।

'अच्छा ! यह बताइये कुछ पका लेती हैं आप ? मेरे भैया को अच्छे खाने खाने का बड़ा शौक है !' बहन ने पूछा।

वह शरमाकर बोली–'जैसा-तैसा पका लेती हूं।'

'जैसा-तैसा !' भाभी ने झट उसकी बात काटी–'यों नहीं कहतीं। लोगों को हाथ चाटने पर मजबूर कर देती हैं, बहन !' वे लड़के की बहन से बोलीं–'इस लड़की की चूड़ियों का धोवन भी मजेदार होता है। खुदा की कसम, इस वक्त का जो नाश्ता आपके सामने आया था, सारा इसी के हाथ का बनाया हुआ था।'

'वाह ! तब तो मजा आ जायेगा।' बहन ने चटखारा भरा।

'बेटी कुछ सी-पिरो भी लेती हो ?' मां ने सहज-सहज पूछा–'मुझ मुरदार की तो अब सूई-धागे पर आंख ही नहीं जमती और सीमा का भरोसा कब तक, अल्लाह रखे। कल-कलां परायी हो जायेगी।'

'सिलाई, कटाई, कढ़ाई, बुनाई, अरे यह समझिये हरफन मौला है। यह मेजपोश, ये बेड कवर, ये सोफे के कुशन ...... मेरा यह ब्लाउज, अम्मा का यह पाजामा ...... यह सब अरूसा के हाथ के कारनामे हैं। पढ़ाई के साथ इन चीजों का भी शौक है इसे......'

भाभी कैसी बुजुर्ग बनी उसकी तारीफ कर रही थीं, मानो उससे दस साल बड़ी हों।

'अल्लाह ! फिर हमें आप दो-चार स्वेटर वगैरह के नमूने दिखाइये।' बहन के कहने पर अरूसा को समझने में देर न लगी कि इस तरह वे उसका कद-काठ और चाल-ढाल देखना चाहती हैं।

'मैं लाती हूं ......' भाभी झपटकर बढ़ीं, मगर लड़के की मां ने रोक दिया।

'बैठिये दुलहिन ...... बिटिया खुद ले आयेगी।'

अम्मां का चेहरा फक हो गया। भाभी की चहचहाहट दम तोड़ गयी और अरूसा को ऐसा लगा, बस कमरे की छत अब गिरी, तब गिरी।

'उठिये न ! मैं भी आपके साथ चलूंगी।' लड़के की बहन ने उसका हाथ पकड़ लिया।

वह दम साधकर उठ गयी। बड़ी बेबसी से मां और भाभी को देखा। चप्पल पहनी। फिर कदम बढ़ाया। एक पांव ठीक पड़ा। दूसरे में ऐसा लगा, अचानक कोई गढ़ा आ गया हो ...... फिर तीसरा पांव ठीक। चौथे में गढ़ा......

'अरे यह क्या बात ......' बहन ने मां की ओर देखा। मां का हंसता हुआ चेहरा एकदम संजीदा हो गया। न सिर्फ संजीदा,

बल्कि सख्त भी।

'लड़की के पांव में तो लंग है.. ...?' उन्होंने अरूसा के पैरों में नजर जमाकर कहा।

'लंग ......' बहन की शोखी रफू-चक्कर हो गयी।

'हां! बहन बस यही तो बदनसीबी है इसकी......सूरत-शक्ल, गुन-ढंग सब कुछ मगर......' अम्मां रुंधे स्वर में बोलीं।

'गुन-ढंग और शक्ल-सूरत इस ऐब को दूर तो नहीं कर सकते। माफ करना बहन... हमें अपने लड़के की किस्मत लंगड़ी नहीं करनी है।'

अल्लाह! कैसा कठोर स्वर था।

और यह आखिरी हंगामा भी कब्रिस्तान का सन्नाटा बन गया।

'बस भाभी......अब यह ढोंग खत्म!' अरूसा ने कपड़े नोच फेंके। गहने उतार-उतारकर जमीन पर दे मारे। अब अगर कोई ऐसा ड्रामा रचाया गया, तो अल्लाह की कसम, उस दूसरे सही-सलामत पांव पर कुल्हाड़ी दे मारूंगी ......'

'अरे! फिर क्या! यों ही बैठी रहेगी जिंदगी भर .....' अम्मां ने सिर पीट लिया।

'जी हां ...... मगर आपके या भाईजान के सिर पर नहीं, खुद अपने ऊपर। मेरे लिए अब किसी को फिक्र करने की जरूरत नहीं है।'

वह कूदती हुई नागिन की तरह बल खाती रही।

इंटरव्यू वह दे ही चुकी थी। दौड़-धूप करने और अपनी एक सहेली के पति की सिफारिश पर एक प्राइमरी स्कूल में मास्टरनी की जगह मिल गयी। बहरहाल तिनके का सहारा हो गया था।

उसने अपने सारे अरमान, सारे जज्बात थपककर सुला दिये। रंगीन कपड़े, गहने, साज-सिंगार आदि सब छोड़ दिये। सफेद या फीके-फीके रंग के लिबास और टुंड-मुंड हाथ कान!

जिंदगी की गाड़ी चली जा रही थी कि अचानक यह एहसास किसी नाग की तरह फुंकारकर सामने खड़ा हो गया। नाहीद भी अब जवान हो चुकी है।

वे पुराने दफन किये हंगामे फिर सिर उठा रहे हैं।

मैं अपनी तरह अपनी बहन को कुरबानी का जानवर नहीं बनने दूंगी!

नहीं, कभी नहीं, हर्गिज नहीं।

वह एकदम अपने बिस्तर से उठी। बाहर निकली और उसे बरामदे में कुछ लोगों की हाजिरी का एहसास हुआ।

दांत पीसकर वह पलटी और बरामदे की सीढ़ियों तक आयी। पर ठिठककर खड़ी हो गयी।

कई साल पहले के चेहरे थे। फिर भी परिचित थे।

फर्क केवल इतना हुआ था कि लड़के की चंचल बहन की गोद में एक प्यारा-सा गुड्डा किलकारियां मार रहा था और लड़के की मां के खिचड़ी बाल सफेद-बगुला हो गये थे।

तो आज ये लोग उसके बजाय उसकी छोटी बहन का रिश्ता मांगने आये है जालिम, संगदिल......बेहिस......!'

और ये अम्मां......भाभी......

उसने प्रलयंकारी नजरों से अम्मां को देखा। उफ ! कैसी बेबसी थी उनके चेहरे पर ! भाभी को देखा। कैसी खुशामद थी उनकी आंखों में !

वह फौरन पलट पड़ी।

नाहीद क्या इस सौदे पर खुश होगी ?

हर्गिज नहीं !

और मजा जब आयेगा, मैं खुद उसे यहां लाकर उसके मुंह से इन्कार कराऊंगी। हुंह ! मजाक बना रखा है !

नाहीद अपने कमरे में गुड़िया बनी बैठी थी। कैसी प्यारी ! कैसी हसीन ! कैसी मासूम !

'मेरी गुड़िया-सी बहन और ये लोग..,..' वह बड़े प्यार में नाहीद को गले लगाकर बोली – 'चलो उतारो ये सब कपड़े और मेक-अप......'

'क्यों आपा ?' नाहीद ने उसकी तरफ देखा।

'मेरी तरह तुम भी बिकाऊ माल बनना चाहती हो नाहीद ! अरे, ये वही लोग हैं, जो कुछ साल पहले मुझे ठुकराकर गये थे।'

'मुझे मालम है आपा......'

'फिर भी तुम......'

उसने नसीहतों का दफ्तर खोल दिया।

नाहीद चुपचाप सुनती रही। अपने जरी लगे दुपट्टे का आंचल उंगली में लपेटती-

खोलती रही। फिर एकदम बड़े अजीब स्वर और अजनबी आवाज में बोली–'मुझे यकीन है आपा, तुम्हारी तरह मेरी किस्मत लंगड़ी नहीं है। आखिर मेरे भी अरमान हैं, जज्बात हैं। तुम्हारी तरह मैं जोग नहीं ले सकती।'

अरूसा पर कमरे की छत आ गिरी। वह फटी-फटी आंखों से नाहीद को देखती रही– अपनी बहन को ! मासूम और गुड़िया-सी बहन को।

बाहर बरामदे में भाभी बिना थके बोल रही थीं–'अरे पूछिये न नाहीद का शौक ! पढ़ाई, लिखाई, बुनाई, सिलाई, कटाई क्या नहीं आता है उसे ! यह मेजपोश ! यह ट्रे-कवर, यह बेड-कवर, यह सोफे का कुशन, यह तकिये का गिलाफ, मेरा यह ब्लाउज, अम्मां का यह पाजामा सब उसी के हाथ के कारनामे हैं......'

★

अलंघ्य पर्वतों के पार

ओम्प्रकाश पांडेय

'इस कार्य में आपको सफलता नहीं मिलेगी; जिद में जान भी जायेगी और लोग आपकी हंसी उड़ायेंगे। सो यात्रा का विचार छोड़ दीजिये और धर्मोपदेश का काम कीजिये।' ओसाका (जापान) नगर के कोई जज साहब एक जापानी बौद्ध भिक्खु को समझा रहे थे, जो तिब्बत और मानसरोवर की यात्रा पर जाना चाहता था। भिक्खु का नाम था इकाई कावागुची।

उन दिनों, यानी १९ वीं शताब्दी के आखिरी सालों में तिब्बत सरकार ने विदेशियों के प्रवेश पर कड़ी रोक लगा रखी थी। किंतु कावागुची अपने निश्चय पर अटल थे।

२५ जून १८९७ को इकाई कावागुची ओसाका से इडजूमीमारू नामक जहाज द्वारा चल पड़े। विदाई के समय लोगों ने उन्हें अनेक बहुमूल्य वस्तुएं भेंट कीं, किंतु कावागुची ने कुछ भी नहीं लिया। हां, जिन मित्रों, भक्तों को नशा-सेवन की लत थी, उनसे उसे छोड़ने का वचन लिया।

सिंगापुर पहुंचकर वे फुसो वान होटल में ठहरे। इस होटल के मालिक कावागुची का बहुत आदर करते थे। प्रतिदिन स्नानघर में पानी गर्म होने पर सर्वप्रथम उन्हें ही नहाने का अवसर देते। एक दिन जब उन्हें नहाने के लिए बुलाया गया, तो वे धर्मग्रंथ का पारायण कर रहे थे, सो जा न सके। दुबारा बुलावा आया, किंतु तब भी उनका पारायण चल रहा था। तभी एक भीषण धमाका हुआ। सारा भवन हिल उठा। पता चला कि स्नानघर की पूरी मंजिल ढह गयी। धमाके के समय एक महिला स्नानघर में नहा रही थी, जो कावागुची के न जाने पर नहाने चली गयी थी। बेचारी बुरी तरह घायल हो गयी और अस्पताल जाकर मर गयी।

सिंगापुर से जहाज द्वारा पेनांग होते हुए कावागुची भारत आये। दार्जिलिंग में एक लामा से उन्होंने तिब्बती भाषा सीखी और छह-सात मास में ही उसमें धड़ल्ले से बोलने लगे। विदेशियों पर तिब्बत में घटी बर्बरताओं की अनेक घटनाएं कावागुची ने दार्जिलिंग में सुनीं। किंतु उनका उत्साह अकुंठित रहा।

उन दिनों दार्जिलिंग से तिब्बत जाने के तीन रास्ते थे—१. दार्जिलिंग से उत्तर-पूर्व की ओर सीधे न्यातोंग होकर; २. कंचनजंगा के पश्चिमी किनारे को पारकर बारोंगल से तिब्बत की सीमा पर बरोंग होकर; और ३. सिक्किम से सभ्यजोंग होकर ल्हासा को। इन तीनों रास्तों पर कड़ा पहरा था।

इसलिए कावागुची ने नेपाल या भूटान होकर जाने का निश्चय किया।

नेपाल पहुंचने पर कावागुची को अनेक गुप्त मार्गों का पता चला। न्यालम के गुप्तपथ से जाने से किरोंग का फाटक तो न मिलता, पर आगे जाकर पकड़े जाने का डर था। शारकोंग्या की राह से जाकर हेनरी के द्वार पर पकड़े जाने का डर था। अर्थात् इनमें से एक भी मार्ग निरापद न था। अंत में उन्होंने जंगतंग होकर मानसरोवर जाने वाले मार्ग से होकर जाने का निश्चय किया।

वहां से उत्तर-पूर्व की ओर चलने पर राह में उन्हें नागरयोन नाम की पहाड़ी मिली, जहां सुप्रसिद्ध बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन ने तपस्या की थी। टुक जी से आगे बढ़ने पर उन्हें चूमिकग्यास्य (सौ सोते) मिला। इसका संस्कृत नाम है मुक्तिनाथ और यह हिंदुओं का पवित्र तीर्थस्थान है। वह रात उन्होंने कालीगंगा के किनारे बितायी।

हसरंग पहुंचने पर कावागुची वहां के नगर-प्रधान के घर ठहरे। उसकी स्त्री मर चुकी थी। दो लड़कियां थीं—एक की आयु २३ वर्ष और दूसरी की १८ वर्ष थी। वहां वे जितने दिन रहे, प्रतिदिन सात से नौ घंटे तक धर्मग्रंथों का पाठ याद करते थे और छह घंटे सेराब ग्याल्टसन से पढ़ते थे। ये सेराब वहां के बौद्ध धर्माचार्य थे; साथ ही चिकित्सा-कार्य भी करते थे। कावागुची दिन में एक ही बार भोजन करते और रविवार को पीठ पर बोझ लादकर पहाड़ों पर तेजी से चढ़ने-उतरने का अभ्यास करते। इसका उनके फेफड़ों पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

धर्माचार्य सेराब तथा अन्य हसरंग-वासियों की तीव्र इच्छा थी कि कावागुची अपने आतिथेय की कनिष्ठ कन्या से विवाह करके वहीं बस जायें। कन्या भी उन्हें अपने प्रेमपाश में आबद्ध करने के लिए प्रयत्नशील रही। किंतु वे अपने पथ से न डिगे।

अब वे हसरंग से मालवा पहुंचे, और वहां से चलकर कालीगंगा के किनारे-किनारे उत्तर-पश्चिम की ओर पहाड़ पर चढ़ने लगे। वर्षा के कारण पहले दिन केवल ढाई मील चल पाये। दूसरे दिन सवेरे ७ बजे रवाना हुए। बहुत ही संकरा रास्ता, चारों ओर नुकीले पत्थर। पांच मील चलने के बाद चढ़ाई बहुत विकट हो गयी। हवा का दबाव भी कम था। छह मील से आगे न बढ़ सके। फिर डैंकर गांव में एक दिन विश्राम करके उत्तर की ओर चल पड़े। ५ मील चलने पर बर्फ की घाटी मिली।

पानी का कहीं नाम न था, न पैर रखने के लिए जमीन ही थी। केवल हाथ की लाठी का सहारा था। नीचे देखने से सिर चकराने लगता था। जरा-सा पैर फिसला कि हजारों फुट नीचे, मौत की गोद में! रेत आगे बढ़ने नहीं देती थी। प्यास से गला सूख रहा था।

किसी तरह सैंडा नामक गांव में पहुंचे। थकान के कारण तीन दिन तक हिल-डुल भी न सके। चौथे दिन फिर चलना शुरू किया। अज्ञात और भीषण पहाड़ी मार्ग। तिस पर पीठ पर ५५ पौंड का बोझ। रात

कहीं बर्फ पर कटती तो कहीं गुफा में। इस तरह तीन दिन चलकर कावागुची धौलागिरि की उत्तरी चोटी के उस पार पहुंचे। यहां तिब्बत की सीमा प्रारंभ हुई। इकाई कावागुची को स्वदेश से चले तीन वर्ष और सात दिन हो चुके थे।

मानसरोवर तक उन्हें सीधे उत्तर की ओर चलना था। अभी तक वे पहाड़ की जिस ओर चल रहे थे, उधर सूर्य-ताप काफी होने से बर्फ ५-६ इंच से अधिक न थी। परंतु अब जिधर से चलना पड़ा, उस ओर धूप बहुत कम पहुंचती थी। कावागुची के पैर बर्फ में कहीं-कहीं १४-१५ इंच तक धंस जाते थे। उनका तिब्बती जूता भी अब बिलकुल फट गया। चोट लगी और पैरों से रक्त बहने लगा। इस तरह तीन मील सीधा पथरीला रास्ता पार करना पड़ा।

अब उन्हें एक नदी पार करनी थी, जो १८० गज चौड़ी थी। उसमें उतरे तो उन्हें लगा कि जैसे आधा धड़ कटकर गिर पड़ा हो। बटुए से लौंग का तेल निकालकर मालिश की। इससे थोड़ा-सा आराम मिला, किंतु नदी में आधी दूर जाते ही पैर बिलकुल बेजान हो गये। शेष भाग लकड़ियों की सहायता से जैसे-तैसे पार किया। कमर तक पानी था, जिसका बहाव बहुत ही तेज था। उस पार पहुंचते ही शरीर काठ-जैसा हो गया। तनिक दूर चलने पर ही सांस लेने में कष्ट होने लगा—मितली आने लगी। दवा खायी तो मुंह से ढेर-सारा रक्त निकल पड़ा।

कावागुची वहीं लेट गये, न जाने कब तक सोते रहे। जब नींद टूटी, तो देखा कि बड़े-बड़े ओले गिर रहे हैं। चाहने पर भी न उठ सके। शरीर ऐसा जकड़ गया, जैसे गठिया हो गया हो। मगर कुछ देर बाद नाड़ी ठीक चलने लगी। सांस का कष्ट भी कम हो गया।

एक जगह बड़ी प्यास लगी। दूर पर एक छोटा गड्ढा दिखाई पड़ा। वहां जाने पर पानी तो मिला, पर गाढ़ा और गुलाबी रंग का, और उसमें अनगिनत कीड़े थे। किंतु प्यास तो बुझानी ही थी। लाचार, कपड़े से छानकर पानी पिया।

भोजनोपरांत ढाई मील चलने पर भयंकर तूफान उठा; तूफान का वेग इतना तेज था कि खड़े रहना ही मुश्किल।

तूफान थमने पर एक नदी पार करनी पड़ी। आधी पार की थी कि अचानक एक चट्टान से पैर फिसल गया और कावागुची पानी में गिर पड़े। सिर पर रखा सामान का बंडल दूर जा गिरा। फुर्ती से उन्होंने एक हाथ से उसे पकड़ा और दूसरे हाथ से तैरने लगे। १०० गज की दूरी पर नदी एक विशाल झील में मिलती थी; उसमें बह गये तो फिर निकलना असंभव ही था। नदी भी १८० गज से चौड़ी न थी और उसके बीच में बर्फ की चट्टानें थीं। भगवान बुद्ध का ध्यान करने और मृत्यु के लिए तैयार हो जाने के सिवा कोई मार्ग न था। परंतु तभी उनकी लाठी किसी कठोर वस्तु से टकरायी। खड़े होने पर मालूम हुआ पानी सिर्फ छाती तक है। उन्होंने देखा कि सामने का

तट केवल चालीस गज दूर रह गया है। यद्यपि वे बहुत थक गये थे, फिर भी नये उत्साह से आगे बढ़े। सामान का बंडल पानी में भीगकर मनों भारी हो गया था। उसे पानी से बाहर निकालने में भी काफी श्रम हुआ। अगले दिन सौभाग्य से तेज धूप निकली। उन्होंने कपड़ों और पुस्तकों को सुखाया।

उस दिन पांच मील चलने पर ही जोर से बर्फ गिरने लगी। लाचार वे एक तालाब के पास ठहर गये। आग के अभाव में चाय भी न बन सकी।

थोड़े से मुनक्के खाकर वे उत्तर-पश्चिम की ओर चले और एक नभस्पृशी पहाड़ पर चढ़ने लगे, जिसकी ऊंचाई २२,६५० फुट थी। ५ बजे शाम तक वे लगभग दस मील चढ़ गये। वहां पहुंचते ही जोरों से हिमपात होने लगा। जमीन पर १२ इंच बर्फ बिछ गयी। वे वहीं ओढ़कर बैठ गये। आधी रात के बाद सर्दी तेजी से बढ़ने लगी। लौंग के तेल मालिश से कुछ गर्मी तो आयी, किंतु शीत एकदम दूर न हुआ।

थोड़ी दूर चलने पर नदी मिली, जिसे तिब्बती गंगा कहते थे। साढ़े तीन मील चलने पर उसका उद्गम मिला। वहां से ९ मील आगे बढ़ने पर उत्तर-पश्चिम की ओर कैलाश पर्वत की चोटी दिखाई पड़ी। उसे देखकर कावागुची के मन में भक्ति का स्रोत उमड़ पड़ा और उन्होंने उसे एक सौ आठ बार प्रणाम किया।

दस मील और चलने पर वे ऐसे स्थान पर पहुंचे, जहां से मनरी शृंग दिखलाई पड़ता था। सदा हिमाच्छादित रहने वाली इस चोटी की ऊंचाई है २५,६०० फुट। इसके आगे १३ मील पर मानसरोवर झील दिखलाई पड़ी।

मानसरोवर समुद्र की सतह से १५,५०० फुट की ऊंचाई पर है। तिब्बत में इसे 'माप हाम यूमत्सी' कहते हैं। वहां यह लोकविश्वास प्रचलित है कि झील के बीचो-बीच एक पेड़ है, जिसके फल खाने से सब पाप-ताप दूर हो जाते हैं। देवता और मनुष्य दोनों ही उसकी खोज में लगे रहते हैं।

वहां से घुमाव के रास्ते से १० मील चलकर रकास ताल पड़ता है, जो अंडाकार है और मानसरोवर से छोटा है। दोनों तालों के बीच में एक पहाड़ है। कभी-कभी घनघोर वृष्टि होने से अथवा अन्य किसी कारण से दोनों तालाबों का जल फूट निकलता है और आपस में मिल जाता है। इसीलिए तिब्बती मानते हैं कि रकास ताल पति है और मानसरोवर पत्नी। हर दसवें-पंद्रहवें वर्ष पति पत्नी से मिलने जाता है।

कावागुची तिब्बत में तीन वर्ष रहे। उन्होंने अपनी इस यात्रा, तिब्बतियों के रहन-सहन और धर्म के संबंध में अपनी मातृभाषा जापानी में एक उत्कृष्ट पुस्तक लिखी है। तिब्बत से लौटकर उन्होंने कई वर्ष तक काशी में संस्कृत का अध्ययन किया। फिर वे स्वदेश लौट गये—धर्म प्रचार के लिए।.....

—लक्ष्मी यदुनंदन कालेज, कायमगंज,
फर्रुखाबाद

★

रमाकांत

प्रयोगशाला का जासूस

'आपने मेरे पास जो ओवरआल (काम के समय पहना जाने वाला लबादा) भेजा है, वह एक बैंहत्थे आदमी (बायें हाथ से काम करने वाला आदमी) का है। वह लकड़ी-चिराई का काम करता है। उसकी उम्र २१ से २५ वर्ष के बीच है। रंग श्वेत और कद पांच फुट दस इंच तथा वजन लगभग १६५ पौंड है। उसके बालों और बरौनियों का रंग हल्का भूरा है।'

यह सूचना अमरीका के शरलाक होम्स और अपराध-विज्ञान के एडिसन कहे जाने वाले डाक्टर एडवर्ड हाइनरिख ने पुलिस को भेजी थी, जिसके आधार पर एक भयंकर ट्रेन-डकैती और चार आदमियों की हत्या का रहस्य खुला था।

अपराध-स्थल पर मिली छोटी-मोटी चीजों–बाल, बटन, धागे, कपड़े के टुकड़े आदि–के रासायनिक परीक्षणों से अपराध और अपराधी के बारे में बहुत कुछ पता चल जाता है। हत्या के मामलों में मृतक के कपड़ों, रक्त, घाव, नाखूनों आदि की जांच से न सिर्फ मृत्यु के कारणों का, बल्कि अपराधी के बारे में भी बहुत कुछ मालूम हो जाता है।

विश्व प्रसिद्ध गुप्तचर संघटन स्काटलैंड यार्ड के एक भूतपूर्व अधीक्षक पीटर बेवरेज ने मृतक के हाथ के नाखूनों में लगे त्वचा के टुकड़ों के रासायनिक परीक्षण के सहारे हत्यारे का पता लगाकर प्रसिद्धि पायी थी। न्यायिक औषधि विज्ञान (फोरेंसिक सायंस) के नाम से अपराध-विज्ञान की यह शाखा एक सुविकसित स्वतंत्र विज्ञान बन गयी है।

डाक्टर एडवर्ड हाइनरिख इस विज्ञान के अग्रणी लोगों में थे। इस विज्ञान को उनकी देनों और अनेक रहस्यों को सुलझाने की दिशा में उनकी उपलब्धियों के कारण यदि पत्रकार उन्हें अपराध-विज्ञान का एडिसन कहते थे तो कोई आश्चर्य नहीं। कहा जाता है, वे मौन प्रमाण को मुखर बना देते थे। एक धागे का परीक्षण करके कब्र में दफन रहस्यों को अनावृत कर देते थे।

एक हत्यास्थल पर एक टैक्सी ड्राइवर को जाते और वहां से आते देखा गया था। उसे ही हत्यारा घोषित किया गया। लेकिन

डाक्टर हाइनरिख ने उसे निरपराध सिद्ध कर दिया। उनके निष्कर्ष का आधार थे वे दो बाल, जो मृतक के साथ पाये गये थे। निश्चय ही मृतक ने हत्यारे से हाथापाई की थी और वे बाल टूटकर उसके हाथ में रह गये थे। उनमें से कोई भी उस टैक्सी ड्राइवर का नहीं था।

इसी तरह एक दूसरे मामले में अभियुक्त ने अपनी पक्की 'एलिबी' पेश की कि हत्या के समय वह अमुक चर्च के पास था और वहां उसने सड़क की पटरी के एक फोटोग्राफर से फोटो भी खिचवायी थी। हत्या का समय दिन के तीन बजे निर्धारित किया गया था। डाक्टर हाइनरिख ने फोटो देखते ही बता दिया कि अभियुक्त झूठ बोल रहा है। हालांकि यह समझना बहुत सरल था, फिर भी यह डाक्टर हाइनरिख ही समझ सके थे—फोटो में धूप के कारण आसपास के दृश्य की छाया ऐसी नहीं थी जैसी तीन बजे हो सकती थी। छायाओं की लंबाई के अनुसार वे कम से कम पांच बजे शाम की हो सकती थी। और बाद में डाक्टर के कथन की पुष्टि भी हो गयी।

लेकिन डा. हाइनरिख का सबसे प्रसिद्ध केस ट्रेन-डकैती वाला ही केस था, जिसकी चर्चा लेख के आरंभ में की गयी है। इससे उनकी कार्यपद्धति पर भी काफी प्रकाश पड़ता है।

यह प्रसिद्ध डकैती कैलिफोर्निया के निकट दक्षिणी ओरेगन में पोर्टलैंड की ओर से सान फ्रांसिस्को जाने वाली ट्रेन पर हुई थी। बीच में उसे सिस्कियू नामक पहाड़ी प्रदेश से गुजरना पड़ता था। सिस्कियू के आगे ढलान थी, इसलिए वहां गति नियंत्रण के लिए ट्रेन में एक ब्रेकवान जोड़ा जाता था। उसी ढलान पर ट्रेन आध मील लंबी एक सुरंग से होकर गुजरती थी।

ट्रेन जब उस सुरंग से बाहर निकल रही थी, तभी दो आदमी ड्राइवर और फायरमैन पर पीछे से टूट पड़े। वे सुरंग में कहीं छिपे बैठे थे और ट्रेन की धीमी रफ्तार के कारण आसानी से इंजन पर चढ़ गये थे। ड्राइवर और फायरमैन की पीठ से उन्होंने बंदूकें सटा दीं और ट्रेन रोकने का हुक्म दिया। ट्रेन के रुकते ही वे उन्हें नीचे ले गये और सुरंग के मुहाने पर एक किनारे खड़ा कर दिया। बंदूकों के डर से ड्राइवर और फायरमैन दोनों डकैतों के हर हुक्म का पालन करते गये। उस वक्त आधी ट्रेन सुरंग के बाहर थी। डाक ले जाने वाला डिब्बा भी आधा बाहर निकल चुका था। उसके पीछे दो माल के डिब्बे और चार यात्री-डिब्बे थे।

विवश ड्राइवर और फायरमैन ने देखा कि एक आदमी एक बड़ा गट्ठर लिये लाइन के किनारे-किनारे दौड़ता हुआ ट्रेन की ओर जा रहा है। उस गट्ठर से बहुत-से तार नीचे लटक रहे थे। उसने उस गट्ठर को डाक ले जाने वाले डिब्बे के दरवाजे पर रखकर भीतर ठेल दिया और वहां से भाग खड़ा हुआ। कुछ क्षणों बाद एक भयानक विस्फोट हुआ और डाक का डिब्बा तेजी से

जलने लगा।

उसी समय एक और आदमी हाथ में लाल बत्ती लिये सुरंग से बाहर दौड़ता हुआ आया। वह ब्रेकमैन था। डकैतों ने उसे आदेश दिया कि डाक का डिब्बा ट्रेन से अलग कर दे।

ब्रेकमैन पलक झपकते ही सारा मामला भांप गया, पर उसे भी डकैतों के आदेश का पालन करना पड़ा। पूरी ट्रेन को खतरे से बचाने के लिए भी उस डिब्बे को अन्य डिब्बों से अलग करना जरूरी था। लेकिन वह जलते हुए डिब्बे को अलग नहीं कर सका। यह देख डकैतों ने उसे भी ड्राइवर और फायरमैन के साथ खड़े होने का हुक्म दिया। बेचारे ब्रेकमैन को हुक्म का पालन करना ही पड़ा। और फिर बंदूक गरज उठी और ब्रेकमैन ओवेन जान्सन वहीं ढेर हो गया। इसके बाद दो और फायर हुए तथा ड्राइवर और फायरमैन भी मर गये। डकैतों को डिब्बे में आग लगने की आशा नहीं थी शायद। और अपनी योजना गड़बड़ा जाने से भय के कारण वे शायद हत्यारे बन गये थे।

उधर आग की लपटों में डाक-डिब्बा भी भस्म हो गया और उसके साथ ही उस डिब्बे में चलने वाला क्लर्क एडविन भी। डकैतों ने मुख्य रूप से डाक के डिब्बे में ले जायी जाने वाली नकदी और चेकों वगैरह को लूटने की योजना बनायी थी, लेकिन डिब्बा जल जाने से उनकी योजना धरी रह गयी। और वे यात्रियों से जो कुछ लूट सकें, लूटकर चलते बने।

इस बीच ट्रेन के कंडक्टर को भी इस गोलमाल का पता चल गया था और उसने सुरंग के दूसरे मुहाने पर बनेटेलिफोन बूथ से निकट के एक स्टेशन ऐशलैंड को सूचना भेज दी। थोड़ी ही देर में पुलिस वहां पहुंच गयी।

खोज तुरंत शुरू हुई। डकैतों को नहीं मिलना था, नहीं मिले और न उनके मिलने की कोई उम्मीद ही नजर आयी। वे ऐसा कोई सुराग नहीं छोड़ गये थे, जिससे उन्हें पकड़ने में मदद मिलती। सुरंग के जिस ओर ट्रेन आधी बाहर निकली हुई थी, उस ओर थोड़ी दूर पर बैटरी के साथ जोड़े गये कुछ तार मिले जो ट्रेन तक गये थे। उन्हीं बैटरियों के जरिये ट्रेन में विस्फोट किया गया था। पास ही एक नीली ओवरआल भी पड़ी थी।

डकैत एक बंदूक भी फेंक गये थे। थोड़ी दूर पर कैनवास की एक खोल मिली। जो क्रिओसोट (लोहवान का तेल) में भीगी हुई थी। क्रिओसोट की यह खूबी होती है कि इससे कुत्तों की घ्राणशक्ति क्षीण हो जाती है। डकैतों ने क्रिओसोट में भीगे खोल शायद अपने जूतों पर इसीलिए चढ़ा लिये थे। भागते समय एक खोल किसी तरह वहीं निकल गयी थी।

इनमें से किसी भी चीज से डकैतों के बारे में कुछ पता नहीं लग सकता था। उधर से गुजरते हुए एक आदमी ने दो आदमियों को लाइन के आस-पास कुछ करते

देखा तो था, लेकिन उनकी ओवरआल के कारण उसने उन्हें रेल्वे का आदमी समझा और उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया था। जिन यात्रियों को लूटा गया था वे भी डकैतों के बारे में कुछ नहीं बता सके। डकैतों ने अपने चेहरे कपड़े से ढंक लिये थे। न पुलिस कुछ कर सकी, न जासूसी कुत्ते।

हारकर मामले को डाक्टर हाइनरिख के पास भेजा गया। बर्कले (कैलिफोर्निया) में अपनी निजी प्रयोगशाला में बैठे-बैठे डाक्टर ने सैकड़ों मील दूर घटी घटनाओं की कितनी ही रहस्यपूर्ण गुत्थियां सुलझा दी थीं। पूरे विवरण के साथ वह नीला ओवरआल भी उनके पास भेज दिया गया।

चार दिन बाद ही डाक्टर हाइनरिख ने पुलिस को अपनी रिपोर्ट भेज दी। रिपोर्ट में इतनी अधिक जानकारियां थीं, जितनी पुलिस तीन सप्ताह की खोज और दौड़-धूप के बाद भी नहीं पा सकी थी। उन्होंने न सिर्फ ओवरआल पहनने वाले की उम्र, रंग, ऊंचाई और बैंहत्थेपन की बात बतायी, बल्कि उसकी आदतों और अन्य बातों के बारे में भी लिखा था।

अपनी रिपोर्ट में उन्होंने लिखा—'उसकी बरौनियां हल्की भूरी हैं, हाथ-पांव छोटे-छोटे हैं। वह प्रशांत सागरीय उत्तर-पश्चिम इलाके में रह चुका है और तुनुकमिजाज है।'

पुलिस और शेरिफ को इस रिपोर्ट पर विश्वास नहीं हुआ। लेकिन रेल्वे कंपनी के अधिकारियों की राय कुछ और ही थी। उन्हें पहले भी डाक्टर हाइनरिख से काम पड़ चुका था और वे उनकी पद्धति और सफलताओं के बारे में काफी कुछ जानते थे। उन्होंने अब तक एकत्र कुछ अन्य तथ्यों के साथ अपना एक प्रतिनिधि उनके पास भेजा।

डाक्टर हाइनरिख ने अपने निष्कर्षों का विश्लेषण करते हुए जो बताया वे शरलक होम्स के तर्कों की तरह ही अकाट्य थे। उन्होंने कहा—'ओवरआल पर जमी मैल की तहें फरवृक्ष से निकलने वाले गोंद की थीं। लेकिन कैसा फरवृक्ष? दायीं जेब में धूल के कुछ कण मिले।

'खुर्दबीन से पता चला वे धूल के कण नहीं थे। १८२७ में डगलस नामक एक वनस्पति-शास्त्री ने एक खास किस्म के फरवृक्षों का पता लगाया था। उसकी पत्तियां बिलकुल सूई की तरह नुकीली होती हैं। वे कण उन्हीं पत्तियों की टूटी हुई नोकें थीं।

'यह वृक्ष अमरीका के उत्तर-पश्चिमी इलाके में ही मुख्य रूप से पाया जाता है। इससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि ओवरआल पहनने वाला आदमी प्रशांत महासागर के उत्तर-पश्चिम तटवर्ती इलाके में फरवृक्षों को काटने का काम करता होगा। जहां तक उसके बालों के रंग का सवाल है, एक बटन में उसका एक बाल फंसा हुआ मिला।'

'लेकिन आपने यह कैसे जाना कि वह बैंहत्था है?'

'उन कणों के दायीं जेब में मिलने से ही।'

'यह कैसे?'

'सीधे हाथ से पेड़ पर कुल्हाड़ी चलाने वाले के खड़े होने की मुद्रा ऐसी होती है कि उसका बायां भाग पेड़ की ओर पड़ता है। बायें हाथ से कुल्हाड़ी चलाने वाले का दायां हिस्सा पेड़ की ओर होता है। बायीं जेब में उन कणों के मिलने का अर्थ है कि वह कुल्हाड़ी बायीं ओर तानकर चलाता है। साथ ही ओवरआल की बायीं जेब ज्यादा इस्तेमाल की गयी है। बैंहत्था आदमी ही ऐसा करता है।

'उसके बैंहत्थे होने का एक और विश्वसनीय प्रमाण उस समय मिला जब मैं लंबाई का अनुमान लगा रहा था। लंबाई का हिसाब लगाना आसान था। कंधे के बक्सुए से लेकर पैंट के पांयचे तक की नाप लेने और उसमें जूते तथा सिर की अनुमानित ऊंचाई जोड़ देने से आदमी की लंबाई मालूम हो जाती है।

'कंधे से पैंट के पांयचे तक की लंबाई मैंने दोनों बगलों से नापी। बाएं कंधे के बक्सुए से पांयचे तक की लंबाई ठीक पौन इंच ज्यादा है। यही उसके बैंहत्थे होने का पक्का प्रमाण है। जो हाथ ज्यादा काम करता है, उस ओर का कंधा सदा कुछ ऊंचा रहता है, हालांकि सामान्य रूप से इसका पता नहीं चलता।'

ओवरआल पहनने वाला पेड़ काटने का ही काम करता है, इसे डाक्टर हाइनरिख ने उन सिलवटों से साबित किया जो पैंट के पांयचों से लेकर घुटने तक की ऊंचाई पर पड़ी थीं। लकड़ी काटने वाले घुटनों तक ऊंचे अपने रबड़ के बूटों में जिस तरह अपनी पैंट पैरों में लिपटाकर कस लेते हैं, उससे पैंट में स्थाई सिलवटें पड़ जाती हैं। ऐसी ही सिलवटें इस ओवरआल के पैंट पर भी पड़ी थीं।

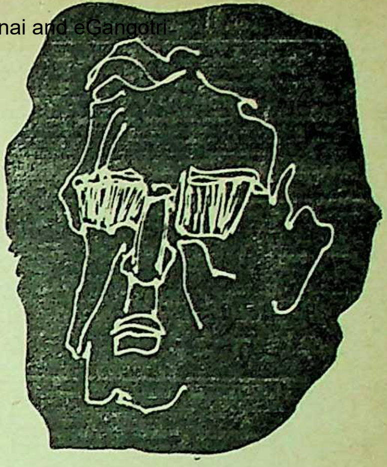

चित्र : सतीश चव्हाण

लेकिन वे उम्र और स्वभाव के बारे में कैसे जान सके?

आदमी के बाल उम्र के बारे में बहुत कुछ बता देते हैं। बालों में एक प्रकार की मज्जा होती है, जो भिन्न-भिन्न आयु समूहों में भिन्न-भिन्न होती है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ यह कड़ी पड़ती जाती है। ओवरआल के बटन में जो बाल उलझा मिला था, उसमें मज्जा का अनुपात २० से ऊपर और ३० से काफी कम आयु के व्यक्ति का था। अतः स्पष्ट था कि उसकी उम्र २१ से २५ वर्ष के बीच होगी। बालों के परीक्षण से ही उसके रंग का भी पता चला। नीग्रो के बालों को बीच से काटकर उसकी मोटाई देखी

जाये, तो वह वृत्ताकार होगा। रेड इंडियन के बाल सीधे और रूखे होते हैं। बटन में फंसा हुआ बाल इनमें से किसी श्रेणी में नहीं आता था, अतः निश्चय ही वह किसी श्वेत आदमी का बाल था।

उसके तुनुकमिजाज होने का पता नाखून के एक टुकड़े से मिला, जो काटते समय किसी तरह उसकी जेब में गिर पड़ा था। नाखून का वह टुकड़ा बहुत पतला था, अर्थात् नाखून को बहुत बढ़ने देना उसे पसंद नहीं था। ऐसा आदमी अपनी मर्जी के खिलाफ क्या छोटी से छोटी चीज भी पसंद कर सकता है?

तीन साल बाद फिलिपाइन स्थित अमरीकी सेना का एक सैनिक उस ट्रेन-डकैती के आरोप में पकड़ा गया। नाम था–ब्राइस। ओवरआल इसी आदमी का था। पर ब्राइस उसका असली नाम नहीं था। उसका असली नाम था राय डी'आट्रेमांट।

ओवरआल की ही एक जेब में डाक्टर हाइनरिख को एक कागज का टुकड़ा मिला। वह एक मनीआर्डर की रसीद थी। उसकी संख्या के आधार पर पता चला कि उसे ओरेगन से राय डी' आट्रेमांट ने लेकवुड, न्यू मैक्सिको में अपने भाई के नाम भेजा था। ओरेगन में उसके घर का पता लग गया और उसके पिता ने अपने तीन पुत्रों–राय, रे और ह्यू के लापता होने की बात बतायी। उसने राय की जो हुलिया बतायी, वह डाक्टर हाइनरिख की बतायी गयी हुलिया से लगभग हूबहू मिलती थी।

उसका पता उस समय लगा जब फिलीपाइन स्थित अमरीकी सेना का एक अधिकारी छुट्टी पर स्वदेश लौटा और एक डाकखाने में फरार लोगों की सूची और फोटो देखकर उसे ब्राइस नामक सैनिक की याद आयी। डकैती के बाद राय शिकागो चला गया था और नाम बदलकर सेना में भर्ती हो गया था।

मुकद्दमा शुरू होने के पहले रे और ह्यू भी पकड़ लिये गये। वे ओहियो के निकट एक कस्बे में रे और ह्यू गुडविन के नाम से एक इस्पात मिल में काम करते थे। अपने विरुद्ध जबर्दस्त प्रमाणों के सामने तीनों ने अपना जुर्म कबूल कर लिया। तीनों को आजीवन कारावास का दंड मिला। और यह सब उस केवल एक ओवरआल के कारण हुआ, जिसकी डाक्टर हाइनरिख ने जांच की थी।

–६२०९, ब्लाक व गली नं. १,
देवनगर, दिल्ली-१

★

अमरीकी नगरों में सड़कों पर होने वाली हिंसा और अपराधों की यथाशक्ति रोकथाम के लिए सोडियम की बत्तियां जलायी जाती हैं, जिससे बहुत तेज रोशनी होती है। दो कृषि-विज्ञानियों ने अब यह विचार प्रकट किया है कि यह तेज रोशनी सड़कों के किनारे लगे वृक्षों को नुक्सान पहुंचाती है। तेज रोशनी के कारण वृक्ष अधिक तेजी से बढ़ने लगते हैं और सर्दियों में भी बढ़ते चले जाते हैं, जिससे पाला उन्हें अधिक नुक्सान पहुंचाता है।

★

माटी का सेब

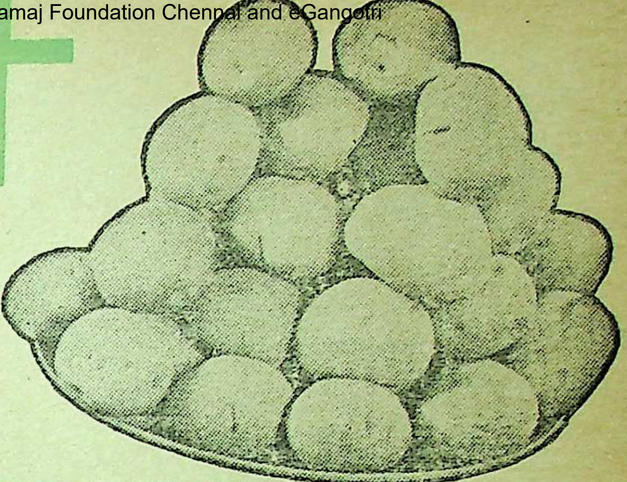

*** रमेशदत्त शर्मा ***

जी हां, मिट्टी का सेब......फ्रांसीसियों ने आलू को कभी इसी नाम से टेरा था–'पामे द टेरे'। यों अमरीका के पेरू और बोलीविया क्षेत्र में जन्मस्थान से निकलकर सन १५७० में आलू स्पेन पहुंचा और १५८६-८८ के आस-पास आयरलैंड आया। तब तक इधर की बाकी दुनिया इस गोल-मटोल लुभावनी सब्जी से बेखबर थी। १६ वीं-१७ वीं सदी में यूरोप में लोगों ने इसकी खेती न होने देने की भरसक कोशिश की। किसी ने कहा कि इसके खाने से कोढ़ हो जाता है, तो दूसरों ने बच्चों के सूखा रोग से लेकर गंडमाला और तपेदिक तक के लिए इसे दोषी ठहराया। जब कुछ लोगों को कोई और बहाना नहीं मिला तो यह कहकर ही आलू का बहिष्कार किया कि बाइबल में इसका उल्लेख नहीं है।

प्रशा के फ्रेडरिक महान को सन १७४४ में आलू की खेती शुरू करवाने के लिए आलू के बीज मुफ्त बंटवाने के अलावा किसानों को डर भी दिखाना पड़ा कि आलू बोओ, नहीं तो तुम्हारे नाक-कान कतर लिये जायेंगे! लगातार सात साल तक लड़ाई चलते रहने से वहां अन्न की कमी हो गयी थी, इसलिए भी आलू की खेती को बढ़ावा मिला। तो भी सन १७७४ में यह हाल था कि फ्रेडरिक द्वारा भेजे गये मनों आलू प्रशा के भूखे लोगों ने यह कहकर लौटा दिये–'इस चीज में न तो गंध है और न स्वाद।'

बेवकूफी की इस दौड़ में इंग्लैंड भी पीछे न था। वहां की पार्लमेंट की सदस्यता के लिए खड़े एक उम्मीदवार ने अपने चुनाव-प्रचार का नारा चुना था–'आलू की खेती नहीं चलेगी! पोंगापंथी नहीं चलेगी!'

फ्रांस में आलू का प्रचार करने का श्रेय मुख्यतः एन्तोन आगुस्ते पारमेंतिए को है। सात-साला लड़ाई के दौरान जब पारमेंतिए

विटामिन और खनिज पदार्थ आपके परिवार के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी हैं

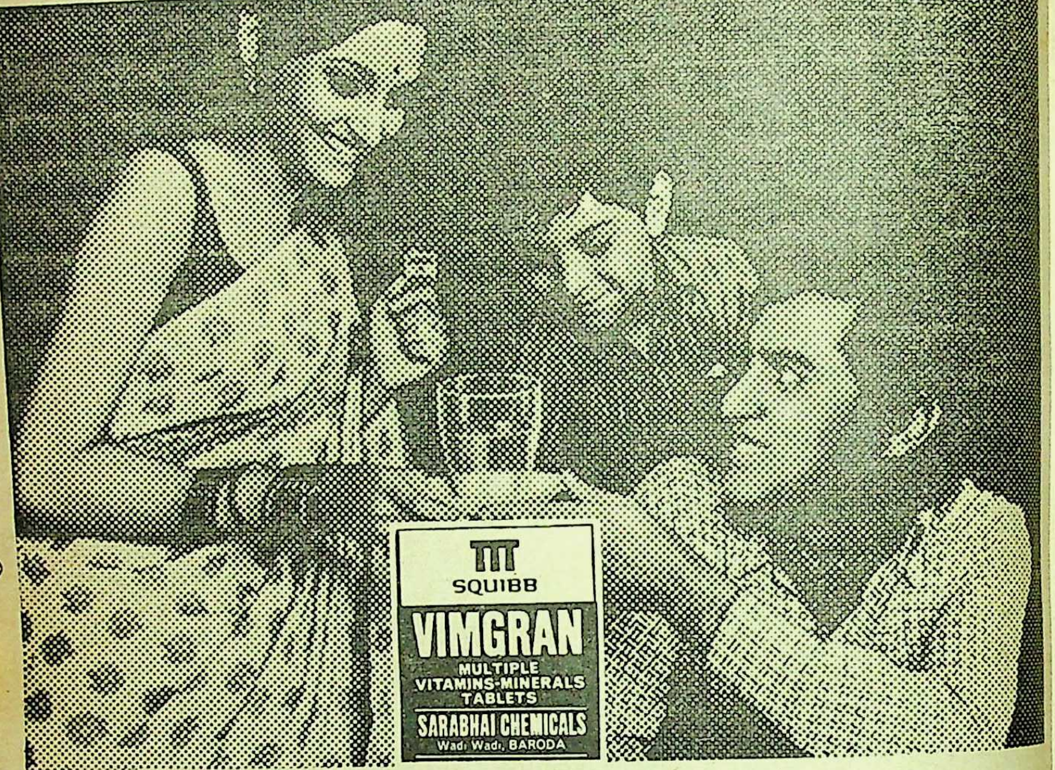
SQUIBB
VIMGRAN
MULTIPLE
VITAMINS-MINERALS
TABLETS
SARABHAI CHEMICALS
Wadi Wadi, BARODA

क्या उन्हें ये ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहे हैं?

विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी से आपके परिवार के लोगों का स्वास्थ्य गिर सकता है. थकान, ठंड और जुकाम, भूख की कमी, कमजोरी, चमड़ी तथा दाँतों के रोग अधिकतर जरूरी विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी के कारण होते हैं.

इन की कमी, भोजनों में भी रह सकती है. इस बात के विश्वास के लिये कि परिवार के सभी लोगों को ये जरूरी पोषकतत्व उचित मात्रा में मिलें, उन्हें रोज़ विमग्रान दीजिये.

विमग्रान में आवश्यक ११ विटामिन और ८ खनिजपदा मिले हैं. लोहा – खून बढ़ाने और फुर्ती लाने लिये, कैल्सियम– हड्डियों और दाँतों को मजबूत बना के लिये, विटामिन सी– ठंड और जुकाम रोकने शक्ति बढ़ाने के लिये, विटामिन ए–चमकदार आँ और स्वस्थ त्वचा के लिये, विटामिन बी१२–भू बढ़ाने के लिये तथा शरीर को स्वस्थ रखने के लि दूसरे जरूरी पोषक तत्व! आज से ही रोज लीजिये विमग्रान!

विमग्रान®

विविध विटामिन एवं खनिजयुक्त गोलियाँ
११ विटामिन + ८ खनिज पदार्थ

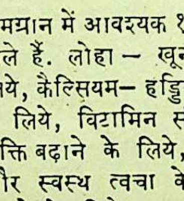

SQUIBB®
SARABHAI CHEMICALS PVT. LT

® ई. आर. स्क्विब एंड सन्स इन्कॉ. रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है जिसके अनु उपयोगकर्ता हैं–एस. सी. पी. एल.

केवल एक विमग्रान आपको दिन भर स्फूर्तियुक्त रखता है

Shilpi-HPMA 2A/74 H

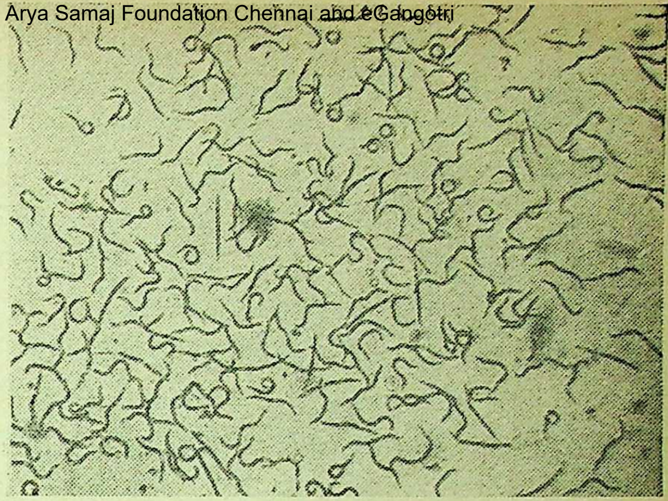

गोल्डन नेमाटोड के लार्वा सूक्ष्मदर्शी की आंखों से। इसका रंग सुनहरा होने के कारण ही इस कृमि के नाम में गोल्डन शब्द जुड़ गया है।

जर्मनी के कैदखाने में पड़ा था, उसे खाने के लिए आलू ही दिया गया था, जो उसे बहुत पसंद आया। कैद से छूटकर आने पर उसे सोलहवें लुई (१७५४-१७९३) ने थोड़ी जमीन दी, तो उसने उसमें आलू ही बोये। यह जमीन पहले एक तरह से बंजर पड़ी थी, मगर आलू बोते ही लहलहा उठी। पारमेंतिए ने एक और चाल चली। अपने आलू-खेत पर वह दिन में पहरेदार तैनात रखता था, मगर रात में जानबूझकर उन्हें हटा देता था। हुआ वही जो उसने सोचा था। रोज रात को लोग चुपचाप आते, आलू चुराते और घर जाकर कुछ का पकाकर स्वाद से खाते और कुछ को क्यारियों में बो देते।

एक दिन पारमेंतिए को एक और तरकीब सूझी। आलू के फूलों का एक गुलदस्ता राजा लुई को भेंट किया। एक फूल राजा ने अपने कोट में लगा लिया और बाकी रानी को दिये। शाम को जब रानी साहिबा घूमने निकलीं, तो आलू के फूल उनके बालों में शोभा पा रहे थे। फिर क्या था, चाटुकार दरबारियों ने भी राजा-रानी की नकल शुरू कर दी। इस तरह आलू फ्रांसवासियों के लिए 'मिट्टी का सेब' बना। पारमेंतिए जब परलोकवासी हुआ तो उसकी समाधि पर आलू के पौधे लगाये गये।

भारत में आलू लाने का श्रेय पुर्तगालियों को दिया जाता है। लेकिन हमारे देश ने आलू को ऐसा अपनाया कि अब इसकी खेती कोई ४ लाख हैक्टर में होती है और ४५ लाख टन आलू हर साल पैदा होता है, मैदानों से लेकर पहाड़ों तक। पहाड़ी क्षेत्रों में मेघालय की खासी पहाड़ियां, पश्चिम बंगाल में दार्जिलिंग, उत्तर प्रदेश में कुमाऊं, हिमाचल प्रदेश में शिमला और कुल्लू की सुरम्य घाटियां और तमिलनाडु में नीलगिरि की पहाड़ियां आलू के लिए प्रसिद्ध हैं।

नीलगिरि में आलू की खेती को विलायती आलू के साथ घुस आये एक कृमि से बड़ी हानि पहुंची, जिसे 'गोल्डन नेमाटोड' कहा जाता है। यह जड़ों में लगता है और

जमीन के भीतर ही भीतर मिट्टी में पनपता रहता है। खेत-दर-खेत फैलकर इस सूत्र-कृमि ने नीलगिरि की आलू की खेती एक तरह से मलियामेट ही कर दी थी। लेकिन पश्चिम जर्मनी के सहयोग से हाल में वहां चलायी गयी विकास-प्रायोजना में जर्मन और भारतीय वैज्ञानिकों ने मिलकर गोल्डन नेमाटोड का जवाब ढूंढ़ लिया। कीटनाशी रसायन 'डैसानिट' को बुआई से पहले मिट्टी में मिलाकर और बाद में फसल पर छिड़काव करके गोल्डन नेमाटोड को काबू में किया जा सका है और नीलगिरि के आलू-उत्पादक फिर मुनाफा कमाने लगे हैं।

दक्षिण में नीलगिरि, तो उत्तर में शिमला। दोनों ही ऐसे नयनाभिराम पर्व तीय स्थल हैं कि आंखें जुड़ा जायें। सीढ़ी दार खेती की शोभा देखते ही बनती है शिमला में ही केंद्रीय आलू-अनुसंधान संस्था का मुख्यालय है, जिसकी रजत जयंती ग वर्ष सितंबर में मनायी गयी।

यों हमारे आलू-अनुसंधान की कहा तो अंग्रेजों के जमाने से ही शुरू हो जात है; परंतु उन दिनों अनुसंधान-कार्य विदे किस्मों को भारत में उगाने और कीट व्याधियों तथा रोगों के नियंत्रण के तरी खोजने तक ही सीमित था। नीलगिरि क 'ग्रेट स्काट', शिमला की 'अप टू डेट' औ दार्जिलिंग की 'रेड राउंड' जैसी किस

ऊटी में आलू की दम तोड़ती खेती में नयी कृषि-विधियों ने जान डाल दी है।

उन दिनों बहुत चलती थीं। फिर 'फुलवा', 'गोला', 'साठा' आदि किस्में विदेशी किस्मों में से चुनकर निकाली गयीं। पटना शहर के आस-पास और बिहारशरीफ और फर्रुखाबाद में आलू के भंडारण के लिए देसी तरीकों में भी कुछ सुधार किया गया।

विदेशों से आने वाली नयी किस्में अपने साथ नयी समस्याएं लायीं—नये रोग और कीटव्याधियां। १९३२ में बाकायदा अनुसंधान शुरू हुआ और 'इम्पीरियल कौंसिल आफ एग्रिकल्चरल रिसर्च (अब इंडियन)' ने नीलगिरि में आलू के पौधे की शरीर-क्रिया और आनुवंशिकी पर अनुसंधान का एक कार्यक्रम शुरू किया। सन १९३५ में शिमला में आलू का प्रजनन-केंद्र स्थापित हुआ। फिर शिमला के पास ही कुफरी में आलू का रोगमुक्त बीज तैयार होने लगा। १९४३ में भुवाली में एक उपकेंद्र बनाया गया। इन दिनों आलू की देशी-विदेशी किस्में इकट्ठी की गयीं और संकरण तथा प्रजनन के द्वारा पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों के लिए कुछ 'चयन' निकाले गये।

सन १९३२ से १९४९ तक की अवधि में राज्यों के कृषि-विभागों और विश्वविद्यालयों में आलू की कृषि-क्रियाओं, भंडारण और कीट-नियंत्रण पर जो अनुसंधान हुए, उनका इतना असर जरूर हुआ कि किसान आलू की फसल में नाइट्रोजन-युक्त उर्वरक देने लगे और भंडार में रखे आलू को 'कंद-शलभ' से बचाने के लिए डी. डी. टी. और बी. एच. सी. का छिड़काव करने लगे।

फिर शुरू हुआ आलू-अनुसंधान का तीसरा चरण। अगस्त १९४९ में पटना में केंद्रीय आलू-अनुसंधान संस्थान की स्थापना हुई। शिमला, कुफरी और भुवाली के केंद्र भी इसके अधीन कर दिये गये। लेकिन पटना आलू के प्रजनन और बीज-संवर्धन के लिए उतना उपयोगी नहीं था। इसलिए सन १९५६ में संस्थान का मुख्य कार्यालय पटना से शिमला लाया गया। बाद के वर्षों में इसके क्षेत्रीय केंद्र गठित किये गये—जालंधर (पंजाब), राजगुरुनगर (महाराष्ट्र), बाबूगढ़ (उत्तर प्रदेश), उटकमंड (तमिलनाडु), शिलांग (मेघालय)। इनमें खास तौर से आलू की रोपाई, खाद और सिंचाई, खुदाई, भंडारण, रोग और कीटव्याधियों के नियंत्रण संबंधी परीक्षण होते हैं। परंतु अनुसंधान का मुख्य काम होता है शिमला में।

शिमला में संस्थान के चार विभाग हैं। एक विभाग आलू की आनुवंशिकी, प्रजनन और पौध-क्रिया में अनुसंधान का संचालन करता है। दूसरा शल्यक्रियाओं, मिट्टी-विज्ञान और जीवरसायन से संबंध रखता है; इसी में कृषि-इंजीनियरिंग व सांख्यिकी भी शामिल हैं। तीसरा विभाग पौधों के रोगविज्ञान का है, जिसमें फफूंद, विषाणु तथा जीवाणु से जन्य रोगों पर अनुसंधान होता है। कीटव्याधियों और कृमिजन्य रोगों पर खोजकार्य के लिए चौथा विभाग है। साथ ही पुस्तकालय है, सूचना और प्रकाशन विभाग है, तथा बीज-उत्पादन का

शिकाकाई, आमला, ब्राह्मी

सुन्दर बालों का सदियों पुराना रहस्य,

हेलीन कर्टिस के

टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू में

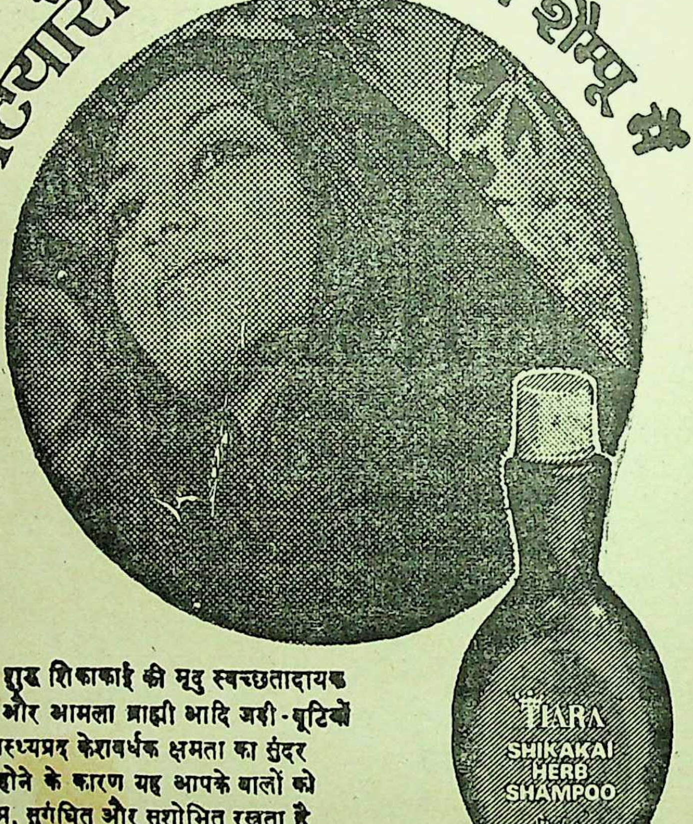

इस में शुद्ध शिकाकाई की मृदु स्वच्छतादायक सफ़ाई और आमला ब्राह्मी आदि जड़ी-बूटियों की स्वास्थ्यप्रद केशवर्धक क्षमता का सुंदर संगम होने के कारण यह आपके बालों को मुलायम, सुगंधित और सुशोभित रखता है और उनमें स्वाभाविक निखार ला देता है।

टियारा शिकाकाई हर्ब शैम्पू इस्तेमाल कीजिए और प्यार से अपने बालों की देखभाल कीजिए।

यह केवल शैम्पू ही नहीं है, एक संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन है।

दो साईज़ों में मिलता है
१५० मि.ली. तथा ७० मि.ली.
न टूटने वाले साफ़
प्लास्टिक की बोतल में

जे. के. हेलीन कर्टिस लि., बम्बई-४०० ००१ का एक उत्कृष्ट उत्पादन

विभाग है।

संस्थान के मातहत बीज-उत्पादन का काम कुफरी व फागू (हिमाचल प्रदेश), जालंधर (पंजाब) और दौराला तथा मुक्तेश्वर (उत्तर प्रदेश) में होता है। आम तौर पर रोग-मुक्त बीज-उत्पादन की प्रणाली इस संस्थान की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। आलू आदमी को ही नहीं कीटों, फफूंदों, विषाणुओं तथा जीवाणुओं को भी बहुत भाता है। फफूंदों में से फाइटो थोरा इनफेस्टांस नामक फफूंद तो इतना भयानक सिद्ध हुआ कि आयरलैंड में १८४५-४६ में आलू की तमाम खेती इससे चौपट हो गयी और भयानक अकाल पड़ गया।

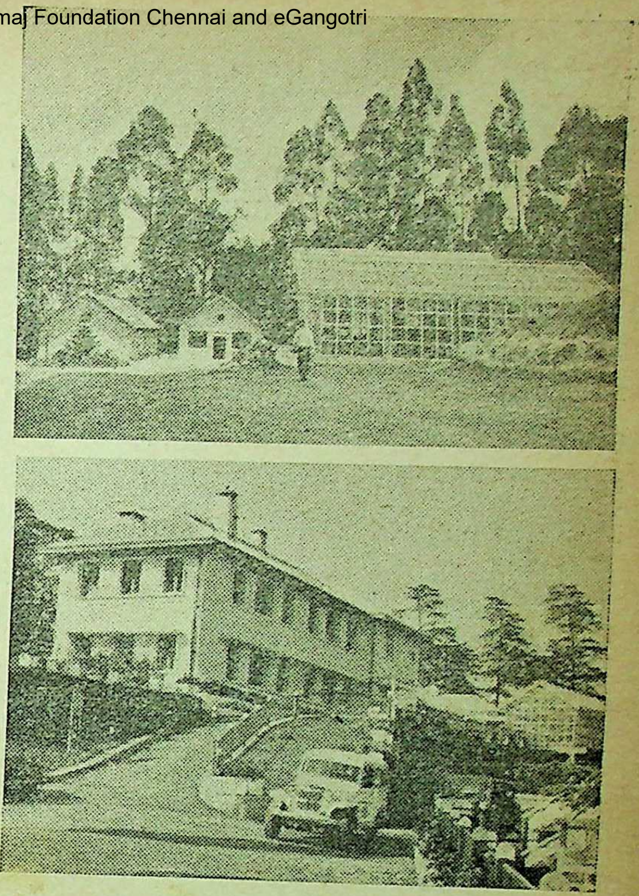

ऊपर : शिमला संस्थान की रोगविज्ञान-प्रयोगशालाएं, नीचे : संस्थान की मुख्य इमारत।

आलू की खेती सोलहवीं सदी के अंत में आयरलैंड में शुरू हुई और इस कदर लोकप्रिय हुई कि सिवा आलू के कोई कुछ उगाता ही नहीं था। पर उस साल यानी १८४५ में सारे यूरोप में आलू की फसल को एक बीमारी लग गयी, जिसे हमारे किसान पछेती अंगमारी या 'आफत' के नाम से जानते हैं। पौधों की पत्तियां काली पड़ गयीं और कंद सड़ गये। आयरलैंड पूरी तरह आलू पर निर्भर था; सो वहां कोई दस लाख लोग रोग और भुखमरी से मारे गये और लगभग उतने ही लोग दूसरे देशों में, खास तौर से अमरीका में जा बसे। कहते हैं, अमरीकी राष्ट्रपति केनेडी के पूर्वज भी इसी अकाल में आयरलैंड से अमेरिका आये थे।

आलू की बहुत-सी बीमारियां रोगी बीज से फसल-दर-फसल पनपती रहती हैं। इसलिए बीज के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले कंदों में किसी भी रोग के बीजाणु न हों, यह बहुत जरूरी है। जीवाणु और

फफूंद की बीमारी देखकर पहचानी जा सकती है; लेकिन विषाणु (वाइरस) बड़ा ही गुप्त रोगाणु है।

शिमला संस्थान के सुप्रसिद्ध विषाणु-विज्ञानी बी. बी. नगाइच के अनुसार, कोई ३० प्रकार के विषाणु और माइक्रोप्लाज्मा (एक नया खोजा गया जीव-वर्ग) आलू के चाहक हैं। इनमें से अपने देश में केवल १०-१२ का पता चला है। संक्रमण की तीव्रता, स्थान और किस्म के अनुसार इनके कारण ९५ प्रतिशत तक फसल की हानि हो सकती है। उग्र अवस्था में विषाणु-रोगों के लक्षण तने और पत्तियों पर भी प्रकट होते हैं। पत्तियों पर हल्के धब्बे, झुर्रियां या सिकुड़न पड़ जाती है, या पत्तियां मुड़ जाती हैं। पौधे छोटे और कमजोर रह जाते हैं। आलू भी छोटे आकार के होते हैं। लेकिन आलू को ऊपर से देखकर बताना बड़ा मुश्किल है कि उसके अंदर कौन-सा वाइरस छिपा है। विषाणु रोग मैदानों में खास-तौर से पनपते हैं।

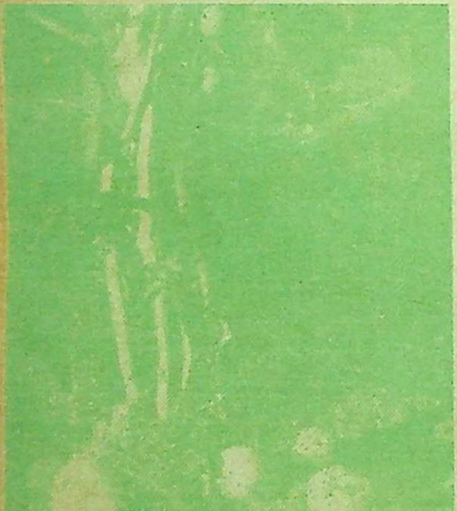

चमत्कारी पौधा 'सोलेनम ट्यूबरोसम'। इसकी देन आलू की तरह ही इसका इतिहास भी रोचक है।

वर्षों तक अनुसंधान करने के बाद पता चला कि एक प्रकार का माहू-कीट 'माइज़स परसिकी' ज्यादातर विषाणुओं का वाहक है। इसके जीवन-चक्र का अध्ययन करने पर पता चला कि इसकी तादाद दिसंबर के आखिर में ज्यादा होती है—प्रति १०० पत्तियों पर २० कीट तक। फिर मैदानों में आलू का विषाणु-मुक्त बीज तैयार करने की एक तरकीब सोची गयी। इसे बीज़-खेत विधि (सीड प्लाट तकनीक) कहा जाता है। सितंबर में बीज के लिए फसल बो दें और दिसंबर के आखिर में सारे तने और पत्तियां काटकर कम्पोस्ट बनाने के लिए गड्ढे में भर दें। अब माहू-कीट आयेंगे और खेत खाली देखकर वापस लौट जायेंगे। पत्तियां और तने काटने के दस दिन बाद आलू की खुदाई कर लेनी चाहिये। इस तरह से बनाये गये बीज से ३७ प्रतिशत अधिक पैदावार मिली है।

इस खोज ने आलू की खेती को एक नया मोड़ दिया। पहले ज्यादातर बीज का आलू ऊंचे पहाड़ों से—दार्जिलिंग, शिमला, भुवाली

या नीलगिरि से आयात था। यह पहाड़ी बीज 'सुप्तावस्था' में होने के कारण मैदानों में इसे तुरंत बोया नहीं जा सकता था। सुप्तावस्था तोड़ने के लिए पहले बीज को थायोयूरिया जैसे रसायनों में डुबोकर बोने की विधि विकसित की गयी। फिर बीज-खेत विधि चल निकली, तो मैदानों में जहां सिर्फ पटना और बिहारशरीफ से बीजू-आलू आता था, वहां पंजाब प्रमुख बीज-उत्पादक बन गया। शिमला संस्थान हर साल राज्य सरकारों और राष्ट्रीय बीज निगम को कोई १० हजार कुंतल 'प्रजनक बीज' देता है, जिससे फिर आगे बीज तैयार किया जाता है। अब किसान मैदानी बीज को तुरंत इस्तेमाल कर सकते हैं।

अनेक कीटनाशी और फफूंदनाशी रसायन भी आलू की फसल को स्वस्थ रखने में उपयोगी पाये गये हैं। माहू-कीटों के लिए १६ कि. ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से दानेदार थिमेट (बुआई के समय ८ किलो और मिट्टी चढ़ाते समय ८ किलो) इस्तेमाल करना उपयोगी है। फसल पर मेटासिस्टॉक्स या रोगर का छिड़काव करना भी विषाणु और माइकोप्लाज्मा का असर रोकने में लाभकारी है। फफूंद-रोगों में डाइथेन एम-४५, डाइफोलाटन-८०, ब्रेस्टन बोर्डो मिश्रण, फाइकोल-८ ई और डयूटर उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

आलू की रोगरोधी किस्म 'कुफरी ज्योति'।

इसके अलावा कुछ ऐसी किस्में भी विकसित की गयी हैं, जिनमें रोग नहीं लगता। इन रोगरोधी किस्मों में 'कुफरी ज्योति', 'कुफरी जीवन' और 'कुफरी नवीन' उत्तर पश्चिमी पहाड़ों के लिए विकसित की गयी हैं; 'कुफरी खासी गारो' और 'कुफरी नवीन' उत्तर पूर्वी पहाड़ों के लिए; तथा 'कुफरी ज्योति', 'कुफरी नवीन', 'कुफरी जीवन' और 'कुफरी अलंकार' मैदानों के लिए एवं 'कुफरी मुत्तु' नीलगिरि पहाड़ियों के लिए।

नयी किस्में तैयार करने के लिए आलू के पौधों को कंदों से नहीं, बल्कि 'बीज' से उगाना पड़ता है। एक-एक किस्म के लिए बीस हजार से एक लाख तक संकर पौधे उगाये जाते हैं। पूरे देश में चल रहे इस कार्य का समन्वय करने के लिए एक 'अखिल भारतीय समन्वित आलू प्रायोजना' चलायी जा रही है। पूरे देश को कृषि-जलवायु की दृष्टि से सात क्षेत्रों में बांटकर, हर क्षेत्र के लिए उपयागी किस्मों का विकास किया जा रहा है। इन परीक्षणों में ६० दिन में तैयार होने वाली 'कुफरी चंद्रमुखी' और 'कुफरी

आलू-युद्ध

सन १७७८ में आस्ट्रिया और जर्मनी के बीच एक लड़ाई छिड़ गयी थी जो 'कार्टोफेल क्रीग' या 'आलू-युद्ध' के नाम से मशहूर हुई। फ्रेडरिक महान ने आस्ट्रिया के बोहमिया प्रदेश पर आक्रमण किया और जर्मनी और आस्ट्रिया की सेनाएं कोनिग्राज के पास एल्बे पर आ डटीं। एक तो रसद की कमी पड़ रही थी, दूसरे आस्ट्रिया ने बहुत तगड़ा मोर्चा जमाया था; अत: फ्रेडरिक को अपनी विजय में शंका होने लगी। जन-युद्ध छोड़कर प्रशा और आस्ट्रिया दोनों की सेनाएं 'आलू-युद्ध' में जुट गयीं। अर्थात् दोनों सेनाओं ने एक-दूसरे देश की आलू तथा दूसरी अन्न सामग्री को सफाचट करना शुरू कर लिया। आखिरकार शांतिदूत बनकर जाड़ा आया और भयंकर युद्ध के कारण इतिहास को हंसाने का सामान छोड़कर दोनों सेनाएं अपने-अपने देश लौट गयीं। [कैम्ब्रिज माडर्न हिस्ट्री, भाग-६ पृष्ठ ७०६, १९०९]

जब क्रामवेल ने आयरलैंड पर चढ़ाई की तो आलुओं ने कुछ दूसरा ही गुल खिलाया था। मुख्य-मुख्य नगरों पर कब्जा जमा लेने के बाद, इस हमलावर ने गांवों की जनता को त्रस्त करने के लिए लूटमार मचाने वाले जत्थे भेजने शुरू किये। यहां आइरिश प्रजा की रक्षा के लिए आलू बड़े उपयोगी सिद्ध हुए, क्योंकि खेतों में खड़ी फसलें तो अंग्रेज सिपाहियों द्वारा चौपट कर दी गयीं, मगर जमीन में आलू दबे बचे रहे।

—स्वर्गीय प्रो. पंचानन महेश्वरी ('पौधे, राजनीति और इतिहास' में)

……

अलंकार' (अगेती) और ७०-८० दिन में तैयार होने वाली 'कुफरी सिंदूरी' और 'कुफरी शक्ति' (पिछेती) उम्दा सिद्ध हुए हैं।

इसकी भी कोशिश की जा रही है कि आलू का आकार न ज्यादा बड़ा हो और न बहुत छोटा, यानी वे मुर्गी के अंडे के बराबर हों। कृषि-विधियों का आलू के आकार पर असर पड़ता है। वैसे 'कुफरी चंद्रमुखी और 'कुफरी अलंकार' बड़े कंद-वाली किस्में हैं और इनमें सामान्यत: हर पौधे में ५ से ७ तक आलू लगते हैं। लेकिन उन्नत कृषि-विधियां अपनायी जायें, तो इन्हीं किस्मों में मध्यम आकार के १५ से २५ तक आलू लग सकते हैं। आलू प्रायोजना के समन्वयकर्ता डा. सिक्का के अनुसार, इसके लिए चार बातों का ध्यान रखना जरूरी है — बुआई से पहले अंकुरण हो, ताकि कई मोटे और मजबूत अंकुर फूटें; बीज के आकार के हिसाब से बिजाई की दूरी तय करना; उचित खाद देना; और समय पर आलू की खुदाई करना।

जो किसान पहले 'फुलवा' और 'साठा' के पीछे पागल थे, अब 'कुफरी चंद्रमुखी' और 'कुफरी ज्योति' के दीवाने हैं। परंतु शिमला

स्टेशन से चार किलोमीटर दूर केंद्रीय आलू-अनुसंधान संस्थान के लगभग २३० हैक्टर क्षेत्र में फैली परीक्षण-शालाओं और शिमला से ९ मील उत्तर में कुफरी में स्थित परीक्षण-खेतों में ऐसी सैकड़ों किस्में विकास के विविध चरणों में हैं, जो शिमला-संस्थान के निदेशक डा. मुख्तार सिंह के अनुसार, 'आने वाले दिनों में आलू की खेती की अगुआ बनेंगी।'

देश के दिगंत पर उभरते खाद्य-संकट का मुकाबला करने के लिए आलू की खेती का विस्तार करने की योजना हाल में बनायी गयी है। अभी तक कुल मिलाकर ५ लाख हैक्टर में आलू की खेती होती रही है, जिससे हमें कोई ४५ लाख टन आलू सालाना मिलता रहा है। पहाड़ों पर आलू की पैदावार ६०-७० कुंतल प्रति हैक्टर होती है, और मैदानों में १०० से १२५ कुंतल प्रति हैक्टर तक। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक डा. एम. एस. स्वामिनाथन् ने संकट-कालीन कार्यक्रम में यह कदम उठाया है कि १ लाख हैक्टर अधिक जमीन में आलू उगाये जायें। इसमें ५० हजार हैक्टर तो अकेले उत्तर प्रदेश में होंगे। जब जर्मनी में आलू की प्रतिव्यक्ति वार्षिक खपत १७४ किलो, ब्रिटेन में १०० किलो और अमेरिका में ४८ किलो हो सकती हैं, तो भारत में सिर्फ ४ किलो क्यों रहे? आलू भारतीय आहार का मुश्किल से २।। प्रतिशत है।

आहार की दृष्टि से १०० ग्राम आलू से कुल ८५ कैलोरी मिलती है—यानी मोटापा बढ़ाने का दोष आलू पर न्यायतः नहीं लगाया जा सकता। इसके अलावा आवश्यक एमिनो एसिड 'लाइसिन' आलू में अनाजों से अधिक मात्रा में होता है। इसमें चूना, फास्फोरस और लोहा जैसे खनिजों के अलावा विटामिन-सी भी होता है।

सोलेनेसी कुल के पौधे सोलेनम ट्यूबरोसम की जड़ में लगने वाला आलू वनस्पति-विज्ञान की दृष्टि से कंद नहीं, अपितु तना है। तने की तरह ही इसमें 'आंखें' जो होती हैं। इन्हीं आंखों से अंखुए फूटते हैं। लेकिन विज्ञान उसे चाहे कोई भी दर्जा दे, आलू ऐसा दिलदार है कि उधर काले-कलूटे बैंगन को गले लगाये है तो इधर गोरी-गोरी गोभी से गलबहियां डाले है। चाहे उसे उबालिये या भूनिये, परांठों में भरिये या आटे में गूंधिये, चिप्स बनाइये या सेव, हर हाल में आलू आपकी सेवा के लिए तत्पर रहता है।

शिमला संस्थान ने आलू-अनुसंधान के पचीस वर्ष पूरे कर लिये हैं और आलू की खेती के प्रसार में बहुमूल्य योगदान के लिए उसके विज्ञानी आलू-भक्तों की बधाई के पात्र हैं।

—के सी ४६ ए, अशोक विहार, दिल्ली-५२

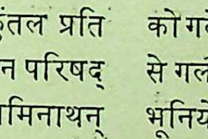

उसका हिस्सा

केशव दुबे

त्रिलोक आज फिर नाराज होकर स्टेशन की आखिरी बेंच पर जा बैठा था। हमेशा की तरह एक किनारे, हथेली से सिर टिकाकर, पैर पर पैर चढ़ाये। बहुत देर हो गयी। अभी झन्नाटे से सदर्न एक्सप्रेस निकल गयी। सूरज पुल पर से उतरता चला गया। घोंसलों को लौटती हुई चिड़ियां चोंच में दबाकर अंधेरे की चादर खींच लायीं। सिग्नल की बत्तियां जलाकर पोर्टर लौट आया। त्रिलोक वैसे ही बैठा रहा। टी-स्टाल वाले जगतलाला की आरती चाशनी के तार की तरह खिच रही थी—'हां ऽऽऽ ......कै तुम भले विराज्जेजी ऽऽऽ '

सामने वह खजराहा कुत्ता लंगड़ाता हुआ बार-बार डोल रहा था। उसकी इच्छा हुई खींचकर एक . मगर वह रुक गया। जरूर होटल से मार खाकर आया है। किसी छोकरे ने या बल्ले ने ही काम की खीज उतारी होगी। और वह दुम दबाकर त्रिलोक को ढूंढ़ता हुआ आ पहुंचा। किसी ख़ुशबू का एहसास था शायद जो उसे त्रिलोक की ओर खींच रहा था। ख़ुशबू—रोटी, प्याज या मसाले-भरे उसके हाथों की!

त्रिलोक जब भी गुस्से में होटल से निकलता है, नंगे पांव, बिना कमीज पहने, धारीदार पाजामे से हाथ रगड़ता हुआ सीधा स्टेशन चला आता है। ऐसे समय में तंदूर के पास बैठा बल्ले अपने थुलथुल शरीर को संभालता ही रह जाता है। मुंह बाये अर्धमिची आंखों से देखता और काले चीकट पसीने की धार पोंछता हुआ वह त्रिलोक को रोकने की कोशिश जरूर करता है—'ओए.... शुण भाई तिरलोकचंद ...... वो मटन-करी का......'

...... बल्ले जैसा ईमानदार नौकर मिलना मुश्किल है......उंह होगा! वह तो गुस्से में है! भाड़ में जाये होटल ......और भुगते बलवंत!

बलवंत मनाने नहीं आया अभी तक! 'डाउन' होगा आज तो अनवर मियां के साथ। त्रिलोक जैसा बेवकूफ भाई है ही होटल में खटने के लिए। मरे खपे और कमाकर ढेर लगाता जाये, बलवंत के उलीचने में कमी नहीं पड़नी चाहिये। खुद पिसता जाये, मगर ज़ुबान से एक भी लफ्ज न निकाले। बलवंत तक तो ठीक है, लेकिन

दूसरे भी उसका मजाक उड़ायें ? आज ही दोपहर को अनवर आया, ट्रक एक तरफ लगाकर पसीना पोंछता हुआ भीतर घुसा और शुरू कर दिया–'कहो जी ग्यानीजी, किरपा तो है..... किधर गया बलवंत का बच्चा .....खैर,फकीर का सुवाल है ज्जी...... आठ परौंठे, डबल सब्जी, दाल-फ्राई, अंडा-करी ...एक प्लेट मटन और हां......'

आगे की बात सुनकर त्रिलोक तिलमिला गया–'बलवंत के लिए खास सौंफ का अर्क लाया हूं। तू लेगा दो चम्मच ? पैसे ? बस.... यतीमों वाले खाते में डाल दे।'

उसकी इच्छा हुई कि कमबख्त को धक्के देकर निकाल दे। स्साला आगरा से माल चढ़ाकर बंबई तक धूल फांकता जायेगा, मगर यहां ऐसा हुक्म चलायेगा, जैसे इसका बाप यह 'शेरे पंजाब हिंदू होटल' खोल गया है! मगर वह ओंठ काटकर रह गया। बड़े भाई का दोस्त जो ठहरा! और एक अनवर ही तो नहीं है–सतनाम, हरचरन, मद्दी, बुआ......ऐसे जितने शोहदे मुफ्तखोर हैं, सब बलवंत के दोस्त हैं। इस अनवर को दाल-फ्राई चाहिये, भले ही उधर नकद ग्राहक बैठे टेबल पर गिलास बजाते रहें, प्याज कुतरते रहें; कालेज के छोकरों को देर हो जाये; बंगाली बाबू की घंटी बजती रहे...... मगर पहले अनवर की चाकरी जरूरी है।

और पीना......? छि: ! दिन में पचासों किस्म के आदमी आते हैं। उस दिन विनोद-भवन वाले की बड़ी लड़की सीधी भीतर घुस आयी थी–'त्रिलोक भैया, दही है क्या?' और तेज भभके से बुरी तरह घबराकर उलटे पांव लौट गयी थी। बदनामी सब पड़ी त्रिलोक के मत्थे......। वह तो शर्म से पानी-पानी हो गया था। ठीक है, जो मर्जी

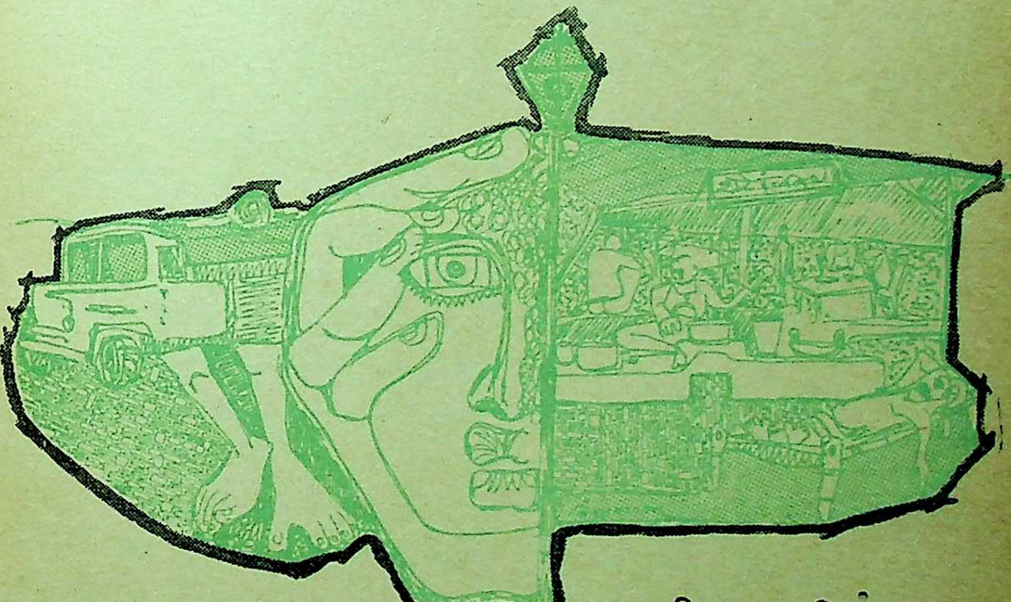

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

आये करो, मगर कोई वक्त भी तो होना चाहिये ! कोई भले ग्राहक भी रहने दोगे या शोहदों को ही पनाह देते रहोगे ?

बोले कौन ? उसने मां की नहीं सुनी, बाप इसके नाम चौखट पर सिर पटकता मर गया। बलवंत बरबाद होता रहा 'ड्राइवरी-लैन' के आदमियों के साथ ! अरे ये बंबई-आगरा रोड के ड्राइवर हुए हैं आज तक किसी के ? जिन्होंने अपनी जिंदगी को लपेटकर बिस्तर जैसा बांध लिया है और ढोये फिरते हैं, वे अब तुम्हारे मोह में फंसेंगे ? जिन्हें बीवी-बच्चों से, घर-बार से मोह नहीं वे इस गुमनाम कस्बे के बलवंत से यारी निभायेंगे ? जो समझाये वही बुरा बने !

ठीक है, मेन रोड कस्बे के बीच से जाती है। अच्छा होटल सामने पड़ता है, तो ड्राइवर रुकें क्यों नहीं ? आराम से खायें-पियें, एक ओर पड़ी चारपाइयों पर कमर सीधी करें और चलते बनें, गुरुचरन जैसे। एक वह भी तो है—अमृतसर से ट्रक दबाया, तीसरे-चौथे रोज बंबई। बस इधर रुकता है, खा-पीकर गीली मूछों पर तहमत का छोर रगड़ते हुए जोर से डकार लेता है और पगड़ी का सिरहाना बनाकर चारपाई पर गिर जाता है। सूनी-सूनी बुझी हुई आंखें, गमगीन चेहरा। चित लेटे-लेटे करवट बदलता रहता है और फटे बांस-सी बेसुरी तान छेड़ देता है :

हमन जाना कि दो जहां से गये,
ओए ! जिस घड़ी ऽऽ......

उसे गुरुचरन पसंद है। नकद पैसे देता है। होटल के कायदे के खिलाफ कोई टंटा नहीं। उसके लिए वह खुद सब्जी या मटन की पतीली में करछुल गहरा घुमाकर निकालता है कि जरा ज्यादा 'चीज' प्लेट में आ जाये। उसका यह उसूल है कि जैसे-जैसे ग्राहक का उधारी-खाता बढ़ता है, करछुल की गहराई कम होती जाती है और उस ग्राहक के हिस्से आती है, ऊपर तैरती तेज मिर्च-मसालों की सौगात ! ग्राहक ज्यादा से ज्यादा पानी पीकर, कम रोटी खाकर 'रब दी माया' को समझ जाता है।

सिर्फ गुरुचरन से नहीं पटती बलवंत की। वह बलवंत का दोस्त कैसा, जो बदमाश न हो ! 'गावदी है पूरा......', बलवंत उसके बारे में कहता।

सी ऽऽ......किसी कीड़े ने चटकारा लिया और त्रिलोक का विचार-क्रम टूट गया। ...... त्रिलोक नाराज होकर आया है, यहां इस बेंच पर अकेला बैठा है ...... बलवंत होश में नहीं......बलवंत नहीं आया? किसी को उसकी फिक्र नहीं ?

अंधेरे में एक आकृति उसे अपनी ओर बढ़ती दिखी। वीरजी थे, सूबेदार साब। उसके मकान में एक कमरे के किरायेदार – कालेज के एन. सी. सी. वाले उस्तादजी, अकेले बुजुर्ग आदमी......। वे आकर खड़े हुए, तो त्रिलोक मुंह फेरकर बैठ गया।

वीरजी ने उसकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—'चल त्रिलोक, गुस्सा नहीं करते। रात हो गयी है। उधर होटल में भीड़ मची है, नौकरों के भरोसे धंधा होता है

भला ? चल उठ जल्दी......'

त्रिलोक धीमी आवाज में बोला – 'भाईजी,आप मेरे बड़े हो ! आपके पैर पड़ता हूं, अभी कुछ मत बोलो।'

वीरजी रुके नहीं ...... 'आज फिर कहीं जा पड़ा है बलवंत ! तुम लोग इस कदर लड़ोगे, तो इतना अच्छा होटल बरबाद हो जायेगा। तुझे ही सब देखना है, कितना खून-पसीना एक करके बढ़ाया है तूने इसे...... सब मिट्टी में मिल जायेगा।'

वह झल्लाया–'बचा ही क्या है बरबाद होने को ? दिन-रात मेहनत करके कमाऊं मैं, और उड़ाये बलवंत ? उसे क्या फिक्र कि त्रिलोक जिंदा है, या मर गया। वह तो अपने यारों में, मटरगश्ती में मगन है। नौकर ईमानदार हैं और मैं भिड़ा रहता हूं, वरना कौए उड़ते भाईजी......कौए !'

त्रिलोक सांस लेने को रुका।

'ऐसे धंधा चला है कभी ? चार-पांच मुफ्तखोर दोस्तों ने न खाया, तो कुछ नहीं। ......बलवंत हमेशा आड़े आता है।' और दिन भर धमा-चौकड़ी अलग.....मैं तो जरखरीद गुलाम ठहरा उसका !

वीरजी ने उसके कंधे पर हाथ रखा– 'दुनिया जानती है, होटल तू चला रहा है। तू बाल-बच्चे वाला है। बलवंत ने शादी नहीं की, छुट्टा सांड जैसा घूमता है तो घूमने दो......आखिर तेरा बड़ा भाई है।'

'भाई-भाई-भाई ...... !' त्रिलोक रुंआसा हो गया–'सब उसकी तरफ बोलोगे। मैं सच कहता हूं वीरजी, अब उसके साथ मेरी नहीं पटेगी। मैं यहां से चला जाऊंगा।'

वीरजी ने कुछ सोचने के बाद अपना फैसला दिया–'क्यों नहीं तुम दोनों बंटवारा कर लेते हो ? बलवंत का हिस्सा अलग कर दो। ठोकर खायेगा तो पता चलेगा। इतना बड़ा होटल है, पार्टिशन कर लो। उसकी जो मर्जी आये करे, कमाये चाहे लुटाये। चल त्रिलोक उठ, कल बातें करेंगे। उठ, जल्दी ......चल।' वीरजी ने उसका हाथ पकड़कर खींचा।

त्रिलोक उनके साथ लौट आया। बगल की चारपाई पर पड़ा बलवंत खर्राटे भर रहा था। खजराहा कुत्ता टेबल के नीचे पहुंच चुका था। बल्ले हमेशा की तरह सिर्फ चड्डी पहने उकड़ूं बैठा भट्टी की राख गिरा रहा था। दूसरे छोकरे उसे घेरकर खड़े थे–'फिर क्या हुआ दादा ......'

बल्ले लोहे का सरिया जोर से नीचे पटकता हुआ कहने लगा–'फिर क्या बे, चारों ने उसे घेरा। मैंने किरपान अड़ा दी ...... निकाल तेरे पास माल-मत्ता है जो कुछ। ..... डाका डालने को कलेजा चाहिये इतना लंबा।' और त्रिलोक को सामने देखते ही वह भीगी बिल्ली जैसा दुबककर, पेट का पसीना पोंछने लगा सिट-पिटाया-सा बोला–'शुणो जी तिरलोक सिंग ......'

त्रिलोक ने हिकारत-भरी नजर उधर डाली–'चल-चल' कोयले डाल भट्टी में..... टेबल-फैन उठाकर नीचे लगा जल्दी...... कौन-कौन खा गया ? बंगाली आया था ?

और एस. टी. वाला ? ...... छोकरे प्लेटें नहीं उठायीं, जमाऊं झापड़ ? ......जल्दी कर आज सेकेंड शो देख आना ...... फूल वाला माला दे गया ?'

त्रिलोक ने झटपट स्टूल पर खड़े होकर गुरु नानक के फ्रेम-मढ़े चित्र पर फूल-माला चढ़ायी अगरबत्ती जलाकर खोंसी और हाथ जोड़कर आंखें मीच लीं।

उसके आते ही होटल में अफरा-तफरी-सी मच गयी। भट्टी की तेज ललौहीं आंच चमक उठी थी। प्लेटें, फर्श, टेबलें चमचमा उठी थीं। छोकरे मुस्तैद खड़े थे। ...... इनके भरोसे काम चला है कभी ? सबसे बदनाम कौम, होटल के छोकरे ...... खर्राटे मारता बलवंत ......

दूसरे दिन त्रिलोक अड़ा रहा, और तीसरे दिन भी। अब बलवंत का हिस्सा अलग होना ही चाहिये। पार्टीशन हो जाये, फिर फुरसत।

वीरजी ने बलवंत को बैठाकर धीरे-धीरे सब समझाया। बलवंत सुनता रहा चुपचाप। वीरजी ने काफी ऊंच-नीच समझाया और कहा—'अब बलवंत, अपना हिस्सा अलग कर ले।'

लोहे की नुकीली पत्ती से जूते में अटा कीचड़ पोंछता हुआ बलवंत बोला—'वीरजी हम दोनों भाई आपको बाप की जगह मानते हैं। आपको पता है, जब हमारा बाप मरा तो त्रिलोक कितना बड़ा था ! नौवीं में पढ़ता था। एक हाथ से हाफपैंट संभालता, दूसरे से नाक पोंछता घूमता रहता था, बस। यहां एक टपरा था और यह तंदूर। कभी मैंने भी आंच में तपाकर इस शरीर को बठ्ठर बनाया है। आज अगर सब कु त्रिलोक संभालता है—तो संभाले; मैं क्यों झंझट में पड़ूं। न मालूम क्यों जब देखो व मुझसे नाराज रहता है। मेरी जिंदगी त ऐसी लाइन पर लगी है कि मैं कुछ करने क नहीं, और मेरा है कौन इसके सिवा ......'

वीरजी ने टोक दिया—'तू चाहे जो क ले, मगर अब तेरा-उसका निबाह नहीं हो का। अभी तेरा लिहाज करता है, मुंह प कुछ नहीं कहता। जगहंसाई हो, उसके पू ही बंटवारा कर ले ......'

बलवंत उत्तेजित हो गया—'बंटवारा! कैसा बंटवारा ...... ? यह त्रिलोक बाणि कब से हो गया ? अरे, मौज-मस्ती पर ऐ सौ होटल कुरबान। पैसा जोड़कर करे क्या त्रिलोक ! अभी तो मैं जिंदा बैठा हूं.....! यह त्रिलोक का बच्चा ...... !'

एक झटके के साथ उसका मुंह खुला क खुला रह गया। सामने चट्टान की त अडिग खड़ा था त्रिलोक ! तने हुए चेह की एक-एक नस से झलकती सख्ती औ अवज्ञा ......। जिंदगी में शायद पहली बा इस तरह नजरें मिलाकर त्रिलोक उस सामने खड़ा हुआ था।

बलवंत के ओंठ थरथराकर रह गये—'ठी है, चाहे जैसा कर लो। कर लो बंटवारा मुझे क्या ! कोई इस छोकरे के भरोसे प हूं मैं ? खुद कमा खाऊंगा और पचास खिलाऊंगा।'

वह उलटे पांव बाहर निकल गया

तंदूर के अंदर रोटी जलने की गंध पर बल्ले चौंक पड़ा—'शुण भाई बलवंते ......' किंतु बलवंत तो जा चुका था।

दूसरे दिन सब तैयारी हो गयी। मिस्त्री को खबर भेज दी गयी थी। फिलहाल आधे ईंट की पतली दीवार खिंचेगी ..... सामने के शेड से बड़े हाल तक, पीछे वाले तीन-तीन कैबिन, दोनों के हिस्से में ..... फर्निचर, नौकर, सामान सबका बंटवारा . . . बलवंत आये और देख ले ..... ।

अनवर लौटती ट्रिप में आकर यहां रुका था। ट्रक छांह में खड़ा था। अनवर और बलवंत ट्रक के नीचे घुसे थे, वहीं खटर-पटर हो रही थी। वीरजी हाथ में कागज लिये वहां आये और बोले—'बलवंत! क्या कर रहा है, बाहर आकर ये देख ले .....'

'भाईजी, बोल्ट खुले हैं इधर ..... हुक्म करो!'

'ले, यह लिस्ट पढ़ ले बंटवारे की और पार्टिशन का नक्शा ..... आ जा, जरा .....'

'आप जो करें, सब मंजूर है। ..... बड़ा पाना किधर है अनवर, उधर कोने में दबा कर रख जरा ..,..!'

वीरजी चिढ़ गये—'अरे सुन तो ले भले आदमी ....!'

'यार बोल्ट स्लिप होता है . ... हां-हां वीरजी बोलो मैं सब सुन रहा हूं .....' बलवंत नीचे से बोला।

'तू निकलता है या मैं जाऊं?' वीरजी ने चेतावनी दी।

बलवंत बाहर निकल आया। गाढ़े तेल और कीट-सने हाथों को रद्दी कपड़े से पोंछता हुआ सामने खड़ा हो गया। चेहरे पर भी धूल-मिट्टी और तेल के दाग लगे थे। संकोच से बोला—'यह कागज कैसे छुऊं, मैला हो जायेगा।'

सामने चौखट से टिककर खड़ा था त्रिलोक। उससे नजर नहीं मिला पाया। बड़ी सावधानी से दो उंगलियों में कागज का कोना पकड़ा और त्रिलोक की ओर बढ़ा। गंदे चीकट हाथों से इतना साफ कागज पकड़े वह झेंप रहा था। बलवंत की आंखों में आंसू थे। धीरे से बोला—'तू मेरा भाई है न? एक बाप की पैदाइश है बस, इसीलिए न! इसके आगे तुझे कोई रिश्ता नहीं मालूम?' एक हाथ से आंसू पोंछते हुए बलवंत ने कागज उसकी आंखों के सामने झुलाया और फिर चिंदी-चिंदी करके हवा में उछाल दिया। त्रिलोक सामने से हट गया। बलवंत होटल में घुसा। टेबल पर रखी लोहे की छोटी-सी तिजोरी में हाथ डालकर कुछ नोट निकाले और गिनकर पचास रुपये जेब में रखकर बाकी वापस डाल दिये। और उसी तरह झटके से लौट आया।

'वीरजी .....' वह रुंधे स्वर में बोला—'पिताजी जिंदा थे और मैं लड़का था, तब मैंने क्लीनर का काम करके पचास रुपये बचाये थे अपने पसीने की कमाई के। और जब उन्होंने यहां टपरा डालकर यह होटल खोला था, मैंने अपने पचास रुपये इसमें लगाये थे। आज मैं अपना हिस्सा वापस ले

WONDERFUL! EXCELLENT!!
WHAT A SAREE!
IS IT IMPORTED?
NO! IT'S FROM
CENTURY ENKA'S
Enkalon YARN

Enkalon® NYLON YARN

Manufactured by

CENTURY ENKA

®Registered Trade Mark of AKZO N.V., Holland. Licensed user : CENTURY ENKA LTD.

JAISONS 2141

रहा हूं बस ..... बाकी पूरा होटल त्रिलोक का ..... बंटवारा पुख्ता हो गया।'

..... और बहुत-सी आश्चर्य-भरी आवाजों को पीछे छोड़ता, वह वहां से निकल गया। त्रिलोक, वीरजी, बल्ले, अनवर सब पुकारते रह गये।

वीरजी की आदत थी शाम को घूमने जाने की। आज जैसे ही कस्बे के आखिरी छोर पर पहुंचे, ठिठककर खड़े रह गये। बांबे-आगरा रोड पर सड़क के किनारे चार खंभे गाड़कर एक पुरानी एस्बेस्टस की शीट डाल ली थी बलवंत ने। एक कच्चा तंदूर तैयार हो गया था। तवा, परात, देगची, चम्मच, प्लेटें और थोड़ा-सा सामान करीने से जमा रखा था। कुछ मोमबत्तियां जल रही थीं और अंधेरे में तीन ट्रक साइड से लगे थे। ड्राइवर अपनी गद्दियां उठा लाये थे और क्लीनर तख्ते।

तंदूर के पास बैठा बलवंत अपनी मोटी, फटी, भद्दी आवाज में गा रहा था :

तेरियां मैं लख मन दी,
मेरी इक मन लएं ते जाणां
मेरी इक मन लएं......

सारे ग्राहक सड़क के किनारे धूल में इस बेफिक्री से लेटे थे, जैसे यह पथरीली जमीन और खुला आसमान उनके नाम 'रिजर्व' कर दिया गया हो। वीरजी को देखते ही बलवंत दौड़ा आया और उनके पैर छूकर बोला—'आशीर्वाद दो भाईजी .....'

फिर अचानक उसकी आवाज तीखी हो गयी—'एक अरज है मेरी ..... त्रिलोक से कहना, उसे एतराज न हो, तो अपने होटल का बोर्ड मुझे दे दे। ..... शेरे पंजाब हिंदू होटल का बोर्ड मैं लगाऊंगा यहां ..... और हां, उससे कहना, क्या करेगा उस बोर्ड का? कोई दूसरा बनवाकर टांग ले—ग्यानीजी का ढाबा ..... या ऐसा ही कुछ. ...!'

वीरजी ने देखा 'मालिक' इधर खड़ा था। उधर एक 'ग्राहक' तंदूर में से रोटियां निकाल रहा था गरमागरम, दूसरा प्याज छील रहा था।

—सतपुड़ा प्राजेक्ट, सारनी, बैतूल, म. प्र.

★

ग्रहण क्यों लगता है

एक बार एक आदिवासी क्षेत्र में अकाल पड़ा। लोगों ने मदद के लिए भगवान से प्रार्थना की। भगवान ने कर्ज से अनाज लाकर उनकी मदद की।

दूसरे साल फिर अकाल पड़ा। भगवान ने फिर कर्ज से अनाज लाकर मदद की। तीसरे साल फिर अकाल पड़ा। भगवान ने फिर अनाज लाकर उनकी मदद की।

देखते-देखते भगवान पर कर्जा बढ़ता गया। कहते हैं, एक दिन साहूकार ने अपने कर्ज की वसूली के लिए भगवान को पकड़ लिया। यह सब देखकर चांद और सूरज ने आंखें बंद कर लीं।

इसे ही ग्रहण लगना कहते हैं। **—रामनारायण उपाध्याय**

★

कांस्य हंसी

आसमान की ओर
समुद्र-फेन हंसी उड़ाते हैं
खिले कांस–
धरती से फूटते
हरे जल के फव्वारे !
दिशाओं के साथ
आंख-आंख पर
फिरती हैं तूलिकाएं
.....महाश्वेता !
क्षितिज की पीठ पर
पीठे की थापें
करती हैं हिलमिलकर बातें
सगुन की,
दिगंत में और कहां अपने को छापें।
सावन के अंधे को
नैन-जोत मिली
किंतु बरखा के अंत में।

–डा. जगदीश गुप्त
१०८/१, नागवासुकि, दारागंज, प्रयाग

यादों के जाल

सोनजुही खिली,
खिलखिलाता है साल !
महक उठी इतराकर,
महंदी की डाल !
वन, पलाश-परिजन को टेसू-अबीर लगा–
झूम रहे पीपल के पत्तों की ताल !
विहंसी फुलवारी–
आन मिले वासंती नायक !
सोच रहा, पास खड़ा
वक्रदृगी पतझर दुखदायक–
दो दिन के बाद, फिर अपनी है चाल !
उपवन में ऋतु-वसंत,
चुपके-से खेल गया फाग !
पौधों में फूलों के रंग भरे,
बिछुड़ों के हृदय-भरी आग !
फांसा कंदर्प ने यादों के जाल !

–बावरा जोगी राजित
स्टेट बैंक कालानी, जबलपुर

खामोश अक्षर

तुम मुझे पढ़ लो अगर कुछ पढ़ सको तो
क्योंकि मुझ पर धूल इतनी है
कि कोई पढ़ नहीं पाता
यह युगों की धूल मुझ पर चढ़ गयी है
यह समय की धूल मुझ पर पड़ गयी है
और मैं मासूम लिपि का चर्म ओढ़े
जागता हूं सभ्यता के द्वार पहरा दे रहा हूं
पढ़ न पाना तो चढ़ा देना–
जरा-सी धूल
फिर मैं मुंद जाऊंगा
क्योंकि अक्षर को नहीं अधिकार, बोले
और अपनी धूल अपने आप धो ले।

–राममनोहर त्रिपाठी–
५६४, न्यू मिल रोड, कुर्ला, बंबई-७०

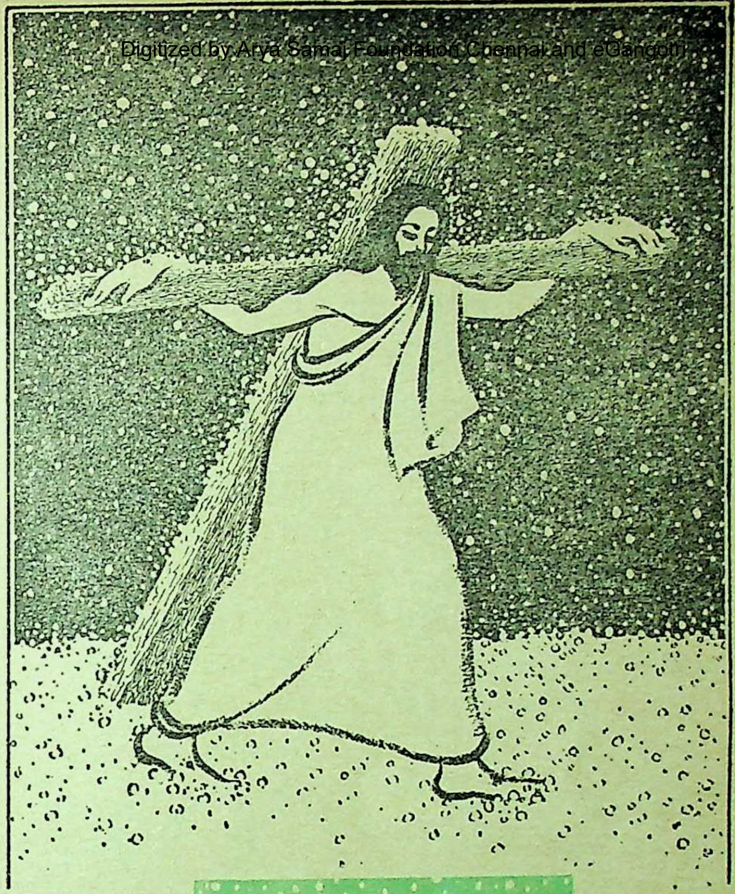

क्रास

रूमानिया की भूतपूर्व रानी मेरी

रात का समय था। तेज हवा के थपेड़ों के कारण भयानक शीत था। आकाश पर चमकते तारे बहुत छोटे लग रहे थे, मानो धरती पर पड़ रहे जाड़े के कारण वे ऊपर जा बैठे थे। बर्फ से ढंके खेत इतने उजले थे कि हल्का-सा प्रकाश फैला हुआ था। हवा के थपेड़ों से बचाव के लिए बादल इधर-उधर घूमते फिर रहे थे। अंधेरी निराशामय रात थी। ऐसी रातों में मृत आत्माएं धरती पर उतर आती हैं। हवा के झोंके थमने पर दूर से तोप के धमाके सुनाई देते, जिनमें युद्ध का स्वर छिपा था।

अनुवाद : कैलाश नलिन

उस अंधेरी रात में भी बर्फ के हल्के प्रकाश में सड़क दिखाई दे रही थी। वहीं सड़क के किनारे कुछ फौजी आग जलाकर बैठे हुए थे। हवा के साथ-साथ हिमपात भी आरंभ हो गया था। फौजी अपनी टोपियों से माथा व कान ढंके बैठे थे। उनके वस्त्र और टोपियां ठंड को रोक न पा रहे थे। कोई एक दर्जन फौजी रहे होंगे। तीन-चार तो घनी दाढ़ियों वाले अधेड़ उम्र के थे। एक युवा सिपाही फटे वस्त्र पहने कुछ बंदियों की निगरानी कर रहा था। बंदी निराश भाव से घुटनों में सिर दिये गिरती बर्फ तथा अपने पकड़ने वालों की घृणा व दयामिश्रित नजरों से आंख चुराये बठे थे। दस्ताने-रहित उनके हाथ बेहद खुरदरे थे। उनके शरीर भय, दु:ख व शीत से कांप रहे थे।

वह युवा फौजी अपनी बंदूक जमीन पर टिकाये झुका खड़ा था। उसकी आयु लगभग अठारह या उन्नीस वर्ष की थी। अपनी हरी आंखों में एक स्वप्निल भाव लिये वह रात के अंधेरे में घूर रहा था। उसकी रोएंदार टोपी में बर्फ की कई परतें जम गयी थीं। आंखों की पलकों पर जमी बर्फ को हटाने के लिए वह मुख पर बार-बार हाथ फेरता था।

'वासिली, आग बुझ रही है। यह न बीतने वाली रात समाप्त होने से पहले हम सब ठंड से अकड़कर मर जायेंगे।' एक अधेड़ फौजी बड़बड़ाया।

'काश! हम लोग राह न भटकते।' दूसरे ने कहा।

'हमने जान-बूझकर थोड़े ही यह गलती की है।' पहले ने कहा—'हम इन सुन्न पैरों से इन बंदियों को कहां तक ले जा सकते हैं? हमें तो रात से पहले गांव पहुंचना था...... पर पहुंच नहीं पाये। यदि हम सवेरा होने से पहले ठंड से ठिठुरकर मर जायें तो इसमें न हमारी गलती होगी और न भगवान की।'

'तब किसकी गलती है?' किसी ने प्रश्न किया।

'यह गलती युद्ध की है।' उत्तर मिला।

'युद्ध.....युद्ध......! युद्ध ग्रीष्म ऋतु में सूखा पड़ने जैसा है, या वह बाढ़ है जो तब आती है, जब पौधे छोटे-छोटे हों।'

'और फिर ऐसा युद्ध! भगवान बचाये।'

'यह शत्रु तो शैतान की तरह है।' दूसरे ने बुझते अंगारों को छेड़ते हुए कहा।

'इन्हें शैतान ही संभाले।' दूसरे ने आग में थूकते हुए कहा।

वासिली ने ठंड से सूजा अपना मुख उठाकर कहा—'मुझे तो इन कैदियों का दु:ख है।'

'दु:ख! तुम्हें इन विदेशी कुत्तों के लिए दु:ख है?' एक साथ कई स्वर चीख उठे।

'ये जवान हैं और अपने घरों से बहुत दूर हैं।' वासिली ने अपनी बात स्पष्ट की।

'और हम, हम कहां हैं?'

'हम तो अभी रूमानिया की धरती पर ही हैं।'

'यह इनकी गलती नहीं है।'

तभी हवा के तेज झोंकों के साथ तेजी से हिमपात होने लगा।

'यह रात तो भेड़ियों के लिए है।' एक ने कहा।

'यह रात शैतान या लाशों के लिए है।' दूसरे ने कहा।

'वासिली, अगर जलाने के लिए और लकड़ी न मिली तो हम ठंड से अकड़कर अवश्य मर जायेंगे।'

'इस मरुस्थल में भला लकड़ी कहां से मिलेगी?' उसने वैसे ही खड़े-खड़े उत्तर दिया।

'तुम्हारी टांगों में जवान खून है और रात भी कोई इतनी अंधेरी नहीं......।' एक फौजी ने कहा।

'बर्फ के कारण अंधेरा घना नहीं......।' दूसरा बोला।

'तुम जवान हो वासिली, क्या कहीं से लकड़ी नहीं ला सकते?'

'मैं यहां बंदियों पर पहरा दे रहा हूं।' वासिली ने विरोध करते हुए कहा।

'कोई कुत्ता भी उनका ध्यान रख सकता है। और फिर मैं तुम्हारा सेनापति हूं।' एक अधेड़ आयु के फौजी ने कहा।

'जैसी आपकी इच्छा।' कहकर वासिली ने कंधे पर बंदूक उठा ली और ऊबड़-खाबड़ बर्फ पर चल पड़ा। न उसे दिशा का ज्ञान था और न इस बात की परवाह कि किधर जा रहा हूं। उसे तो केवल लकड़ी चाहिये थी।

मैदान में न तो कोई झोंपड़ी थी, न कोई वृक्ष और न कोई पुराना कुआं। भला वह लकड़ी कहां से लाये? वह रात के अंधकार की विशालता में बढ़ता गया। उसके दिमाग में अंतस्तल से कुछ विचार स्वप्न-से उभरते रहे। उन उल्लास-भरे स्वप्नों का युद्ध से कोई संबंध न था। उसकी आंखों के आगे अपने हरे-भरे गांव का दृश्य था, जहां सूर्य अस्त हो रहा था और पशु चरागाह से वापस आ रहे थे। उनके पीछे वह एक प्यारी-सी धुन सीटी पर बजाता हुआ मजे से चला आ रहा था।

अनजाने में उसने अपने ओंठों से वह धुन बजानी चाही। पर बर्फ से फटे ओंठों से एक बेसुरी-सी आवाज निकलकर हवा में तैर गयी। सहसा अंधकार में वह किसी पत्थर से टकराकर गिर गया और उसकी आंखों से गांव का वह सुनहरा स्वप्न ओझल हो गया। वह रात में एक बार फिर अकेला हो गया, शीत से कांपता हुआ। कहीं दूर तोपों के गरजने की आवाज ने उसे वास्तविक जगत में लौटने पर मजबूर कर दिया।

'लकड़ी ..... लकड़ी ..... मुझे तो लकड़ी खोजनी है। इस उजाड़ मरुस्थल में मुझे लकड़ी कहां से मिलेगी? हे भगवान! यह कैसी रात है! हवा चाबुक की तरह लगती है और बर्फ सूई की तरह चुभती है। ऐसे में मैं लकड़ी कहां से लाऊं?' वह अपने सुस्त हाथों को मलता हुआ खड़ा था। राह भी दिखाई न देती थी। वह फिर अंधकार में अंधों की तरह चल पड़ा। एक बार फिर उसे गांव के शांत वातावरण का दृश्य दिखाई देने लगा। वृक्षों के पीछे से सहसा एक सुंदर लड़की का चेहरा उभरा और वही सीटी की धुन उसके ओठों से फूट निकली।

'मुझे लकड़ी जरूर खोजनी चाहिये..... लोग ठिठुर रहे होंगे। मैं रात-भर भटकना नहीं चाहता।' उसने अपने विचारों को अपने गांव से लौटाते हुए सोचा।

थकान से चूर वह धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था। उसके पांव ठंड से सुन्न हो रहे थे। सहसा चौंककर रुक गया वह। कुछ ही दूरी पर उसके सामने तीन ऊंची-चौड़ी आकृतियां बिलकुल पास-पास खड़ी थीं। रात के अंधकार में उभरती हुई तीन खोपड़ियां! उसका दिल तेजी से धड़कने लगा और हथेलियां पसीने से भीग गयीं। वह क्या था? रात भयानक रूप से सूनी थी। पर वह भयभीत क्यों हो गया था? भूत तो भूत होते हैं! शत्रु से तो कम ही खौफनाक होंगे। वह निर्णय न कर सका कि उस समय शत्रु का मिलना अधिक अच्छा था या उन भयानक आकृतियों का।

इच्छाशक्ति द्वारा उसने भय पर काबू पाया और उन निश्चल खड़ी आकृतियों की ओर बढ़ने लगा। .... तीन क्रास ..... तीन कब्रों पर बने वे लकड़ी के क्रास थे।

उसने हाथों से छाती पर क्रास का चिह्न बनाया और उन मृतकों के लिए प्रार्थना की। वह अचंभित खड़ा उन्हें घूर रहा था ..... पता नहीं वे फौजियों की कब्रें थीं, या स्त्रियों की, या बच्चों की, जो भूख व ठंड से मर गये थे। युद्ध में कई बच्चे भूख और ठंड से मृत्यु का ग्रास बने थे।

सहसा उसने गौर किया कि वे क्रास लकड़ी के बने हुए हैं—भारी लकड़ी के। क्या उसे लकड़ी लाने के लिए ही नहीं भेजा गया था? पर वह उन्हें हाथ लगाने में झिझक रहा था। वह मंत्रमुग्ध-सा खड़ा उन्हें घूर रहा था। न उन्हें छूने का साहस कर पा रहा था और न वहां से आगे बढ़ने का।

लालच ने उसके हृदय को जकड़ लिया। क्यों न वह एक क्रास उखाड़कर बुझती आग को जलाने के लिए ले जाये। आखिर जो मर गये, वे सदा के लिए समाप्त हो चुके हैं। उनकी निद्रा गहरी है। उनके सिरहाने क्या हो रहा है, इसका उन्हें कुछ भी ज्ञान न होगा। भगवान को धन्यवाद कि मृतक इतनी गहरी नींद सोते हैं, नहीं तो वह उनके सिरहाने से क्रास उखाड़ने की सोच भी न सकता था।

कुछ निकट जाकर उसने क्रास का स्पर्श किया और उसकी भावना में आकस्मिक परिवर्तन हुआ। नहीं-नहीं ऐसा करना धर्म के विरुद्ध है। जीवित मनुष्य से बढ़कर मुर्दों का मान होना चाहिये। इस काम को मनुष्य तथा भगवान दोनों ही घृणित समझेंगे। मृतक अपना बचाव नहीं कर सकते। वे कब्र के पास से गुजरने वाले की दया पर निर्भर होते हैं। कब्र तो गिरजे की एक सीढ़ी की तरह है। इस क्रास को नहीं छुआ जा सकता। न जाने किसने अपने चाहने वाले के लिए लगाया हो।

फिर प्रलोभन के स्वर उसकी आत्मा में गूंज उठे। मृतक तो मृतक हैं, जब कि वहां जिंदा आदमी ठंड से ठिठुर रहे हैं। वे बहादुर सिपाही अपने देश के लिए अपना

कर्तव्य निभा रहे हैं। उनकी खातिर मुर्दों से बिगाड़ मोल लेना कहीं अच्छा होगा। वे बहादुर सिपाही, देश के रक्षक ठंड से सुन्न हो जायेंगे। अगर मुर्दों की आवाज होती, तो वे अवश्य चिल्ला-चिल्लाकर क्रास उखाड़ने के लिए कहते।

वासिली ने झपटकर एक क्रास को पकड़ा और बर्फ से ढंकी धरती से उसे उखाड़ने का यत्न करने लगा। मगर क्रास, जैसे वह किसी जीवित प्राणी की तरह अपने पवित्र स्थान की रक्षा कर रहा हो। वासिली का खून खौलने लगा। वह उसके साथ लड़ने-मरने पर उतारू हो गया। लकड़ी का बेजान क्रास शत्रु बन गया, जिसे काबू में करना आवश्यक था।

उस उजाड़ मैदान में अद्‌भुत संघर्ष हो रहा था। वह क्रास से लड़ रहा था और हवा तेजी से बह रही थी। वह शक्तिहीन क्रास ठीक किसी प्राणी की तरह दृढ़ रहा। युवक बुरी तरह उससे जूझ रहा था। उसकी दोनों भुजाएं क्रास के गिर्द लिपटी थीं। वह पूरे जोर से क्रास को खींच रहा था; परंतु क्रास उसके आगे झुक नहीं रहा था। उसके चेहरे से पसीना पानी की तरह बह रहा था। उसने अपनी टोपी और बंदूक उतारकर फेंक दी और पूरी ताकत के साथ उससे लड़ने लगा।......सहसा क्रास गिर गया। लड़ने की चमक अभी भी युवक की आंखों में थी। वह धरती पर लेटा हांफ रहा था। परंतु वह विजेता था......क्रास उखड़ गया था। आग जलाने के लिए उसे लकड़ी मिल गयी थी......यानी सब कुछ ठीक था।

× × ×

आग लगभग बुझ चुकी थी। साथ ही सबकी बातें भी खत्म हो चुकी थीं। कैदी और फौजी बुझते अंगारों के पास कपड़ों की गठरी बने पड़े थे। अंधकार में वासिली के आने की आहट सुनाई दी। तभी वह किसी भारी चीज को घसीटता हुआ उनके पास आ गया। उल्लास-भरी चीख-सी उनके मुख से निकली और उसके स्वागत में अस्फुट स्वर में वे कुछ बोले। कुछ फौजी बुझते अंगारों से राख झाड़कर उन्हें जलाने का यत्न करने लगे।

वासिली कुछ न बोला। वह बड़ी कठिनाई से सांस ले पा रहा था। क्रास लेकर आते हुए उसे तेज हवा के साथ लड़ना पड़ा था। विशेष रूप से अपने अच्छे-बुरे विचारों के साथ संघर्ष करना पड़ा था। बिना कुछ कहे उसने फौजियों के आगे लकड़ी का क्रास पटक दिया। पहले एक फौजी ने उस लकड़ी को देखकर शाप देने-जैसे स्वर में कहा—'यह तो क्रास है......एक क्रास......क्रास।'

भावोद्वेग-भरे कई सैनिक विरोध में बोले। बंदियों ने भी फटी-फटी आंखों से देखा। वासिली चुप रहा। वह थकान से चूर-चूर होकर बर्फ पर एक ओर लुढ़क गया।

'क्रास? इसे क्रास लाने का दुःसाहस कैसे हुआ?' एक बूढ़ा फौजी चिल्लाया।

'पर यह तो लकड़ी है और हम ठंड से सुन्न हो रहे हैं।' एक ने बात काटी।

'लकड़ी है तो क्या हुआ, पर हम इसे जला नहीं सकते।'

'यह अपवित्र काम है।'

'भगवान हमें शाप देंगे।'

'और मृतक भी।'

'फिर भी ...... हमें ठंड लग रही है और मृतक तो मृतक हैं।'

'उन्हें हमारे ठिठुरकर मरने से क्या लाभ होगा?'

'हमें अपने देश की रक्षा करनी है।'

'कुछ तो शर्म करो। किसमें क्रास जलाने का साहस है?' वही पहला वृद्ध फौजी फिर बोला।

केवल बंदी और वासिली चुप थे। लज्जा, पश्चात्ताप और क्रोध की भावनाओं ने वासिली को दबोच लिया। वह और कर भी क्या सकता था?

बहस करते हुए फौजियों के स्वर हवा के साथ डूबते-उतराते रहे।

'इसे जलाने की मैं आज्ञा नहीं दूंगा। इससे अच्छा होगा कि हम सब ठंड से मर जायें।' उनके सेनापति ने गरजकर कहा। और वह अपनी बात पर दृढ़ रहा।

शीत से आधे अकड़े हुए मनुष्यों में धीरे-धीरे चुप्पी छाने लगी। भेड़ों की तरह घुटनों में सिर छुपाये शत्रु बुझती आग के पास खड़े थे। कुछ ही दूरी पर वासिली उसी क्रास पर सिर रखे पड़ा था। उसे नींद नहीं आ रही थी। शीत ने उसमें असाधारण रूप से तीक्ष्ण भावनाओं का संचार किया। वह जीवन की कटुताओं के विषय में सोचने लगा।

'यह युद्ध क्यों? यह कष्ट त्याग और यह शीत क्यों? भगवान स्वर्ग में ...... इतनी दूर क्यों हैं? क्या हैं ये धार्मिक चिह्न, भूत-प्रेतों का विश्वास और पक्षपातपूर्ण धर्म, जिनका न तो हमारे जीवन में कुछ अर्थ है और न लाभ। देशों में आपस में घृणा क्यों है? क्यों-क्यों?' वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा था।

वह उठ बैठा—'वह ..... वह सामने हल्का प्रकाश कैसा है? क्या दिन निकल आया?'

वह दूर से आते हुए उस प्रकाश को देखने लगा। वह प्रकाश फैल नहीं, अपितु चल रहा था। वह ज्योति उसके पास चली आ रही थी। उसके सभी साथी सो रहे थे। उसने प्रकाश में एक मानव आकृति को आते देखा, जिससे ज्योति फूट रही थी। न जाने सोये हुए क्यों नहीं उठे। वे बर्फ पर बढ़ते हुए प्रकाश-पुंज के पवित्र चरण भगवान के बेटे यीशु के थे। वासिली टोपी उतारकर, घुटने टेककर, सुन्न हाथ जोड़कर बैठ गया।

वह अपना सारा कष्ट, संघर्ष, सारे संदेह, आत्मा को दबोच लेने वाले सारे प्रश्न उस क्षण भूल गया। वह अंधकार में देखने वाला एक दर्शक था; एक खोया हुआ बच्चा, जिसके पास भगवान आये थे। एक अवर्णनीय उल्लास से उसका हृदय भर गया। क्योंकि प्रकाशमय पुरुष उसी की ओर आ रहा था—वासिली के पास, उस सिपाही के पास जिसने कब्र पर से क्रास चुराया था।

'परंतु भगवान के बेटे ने यह कंधे पर क्या उठा रखा है? काला-सा भारी तथा

बहुत बड़ा .....?'

.....क्रास.....यीशु भी कंधे पर क्रास उठाये आ रहा था। न जाने किस लिए। वह इतने हल्के कदमों से चल रहा था, मानो क्रास का उसके कंधों पर कुछ बोझ न हो। परंतु वासिली के कंधे अभी तक क्रास के बोझ को न भूले थे।

वह चमकती हुई आकृति उस युवा फौजी के पास रुकी नहीं। वासिली ने क्षण-भर के लिए उस देवदूत की दया-भरी दृष्टि देखी। उसके पास से गुजरती हुई वह पवित्र आत्मा सीधे फौजियों के घेरे की ओर बढ़ गयी। वहां वह रुकी। वासिली ने विस्फारित नेत्रों से देखा, भगवान के पुत्र ने अपने कंधे से क्रास उतारकर बुझी आग में फेंक दिया। सहसा क्रास को चमकते हुए शोलों ने घेर लिया। क्रास स्वयं एक प्रकाश की मशाल बन गया। यीशु ने अपना क्रास आग में डाल दिया था, ताकि ठंड से ठिठुरते सिपाहियों के प्राण बच जायें।

उसके बाद क्या हुआ इसकी वासिली को बहुत धुंधली-सी याद रही। वह कठिनाई से रेंगता हुआ जलते हुए पवित्र क्रास के पास आया और फिर मूर्च्छित हो गया।

सूर्य निकल आया। सोने वाले एक-एक करके जाग उठे। महान आश्चर्य! रात के बुझे हुए कोयलों में से चमकता हुआ तेज प्रकाश फूट रहा था। कोयलों की दहक इतनी जीवनदायक थी कि शीत बीते हुए भयानक स्वप्न की तरह लग रहा था।

प्रत्येक ने अनुभव किया कि कुछ अद्भुत बात उनके शरीर के साथ घटित हुई है। प्रत्येक की आत्मा से ऐसा उल्लास फूट रहा था, जिसे वह कह नहीं पा रहा था। यहां तक कि पीले पड़े बंदियों के नेत्रों में भी अनोखे हर्ष की छाया दिखाई दे रही थी।

सभी ने समझा कि वासिली ने अवश्य ही क्रास को आग में डाल दिया होगा। परंतु क्रास तो पास ही जमीन पर पड़ा था। उसी के पास ही हाथ जोड़े वासिली उगते सूर्य को देख रहा था।

'वासिली, तुम सूर्य में क्या देख रहे हो?' किसी ने पूछा।

वासिली प्रश्नकर्ता की ओर मुड़ा, उसकी आंखों में अलौकिक प्रकाश था। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। कोई भी उसके मन की बात न जानता था कि वह उगते सूर्य में क्या देख रहा था।

* * *

बौद्धदर्शन के तान्देई संप्रदाय का एक अध्येता जेन गुरु गासान के आश्रम में विद्यार्थी बनकर आया। कुछ वर्ष बाद जब वह अध्ययन समाप्त करके लौटने लगा गुरु गासान ने उसे सावधान किया—'तर्कबुद्धि से सत्य का अध्ययन करना प्रवचन का मसाला जुटाने के लिए उपयोगी है। किंतु यदि निरंतर मनन नहीं करोगे, तो संभव है कि तुम्हारे सत्य का प्रकाश बुझ जाये।'

★

तुम्हारे लिए

सारा जीवन गंवाया, तुम्हारे लिए
तुमको अपना बनाया, तुम्हारे लिए
भेंट कर तुमको गीतों की भागीरथी
आंसुओं से नहाया, तुम्हारे लिए
धूल-कण, जड़ दिये व्योम के भाल पर
स्वर्ग, धरती पै लाया तुम्हारे लिए
दर्द की दिल में दुनिया बसाये हुए
उम्र-भर मुस्कराया, तुम्हारे लिए
चाहे, मानो न मानो, तुम्हारी खुशी
'रंग' महफिल में आया, तुम्हारे लिए।

—बलबीर सिंह 'रंग'—

नगला कटीला, एटा. उ. प्र.

गजल

यह गंध भरी शाम, कहीं तुम तो नहीं हो?
संध्या शकुंतलाम[१], कहीं तुम तो नहीं हो?
यह कौन भर रहा है मेरी जिंदगी में रंग
शतरंग सुबहो-शाम, कहीं तुम तो नहीं हो?
बिजली-सी कौंधती है जिधर से गुजर गये
मचता है त्राहि माम् कहीं तुम तो नहीं हो?
घूंघट उठा लो चांदनी खेतों में खिल गयी
ओ सांवरी ललाम! कहीं तुम तो नहीं हो?
यह कौन आ रहा है कि नक्षत्र व्योम के
झुक-झुक करें प्रणाम, कहीं तुम तो नहीं हो?

—शेख जैनुल आब्दीन—

७, बी. फील्ड होस्टल, ओबरा, मिरजापुर, प्र. उ.

---

[१] शकुंतला में फारसी का शब्द 'लाम' जोड़कर शकुंतलाम बनाया गया है, जिसका अर्थ होता है शकुंतला की देह जैसी, शकुंतला की जुल्फ जैसी।

हंसने में कितना सुख

• सुरजीत •

ग्राहक : एक तो मेरी कमीज गुम कर दी और ऊपर से पैसे भी मांगते हो!

धोबी : साहब ! आपकी कमीज धोने के बाद गुम हुई थी।

०००

'क्या आप जानवरों के डाक्टर हैं ?'

'जी हां ! कहिये, क्या तकलीफ है ?'

०००

मां : पप्पू बेटा ! अगर हाथ-मुंह धो लोगे, तो ये दो बिस्कुट इनाम में मिलेंगे !

पप्पू : मैं नहा लेता हूं। आप पूरा पैकेट मुझे दे दीजिये।

०००

एक आदमी काजी के घर गया और कहने लगा—'मैं दो दिन से भूखा हूं। कुछ खाने को मिल जायेगा ?'

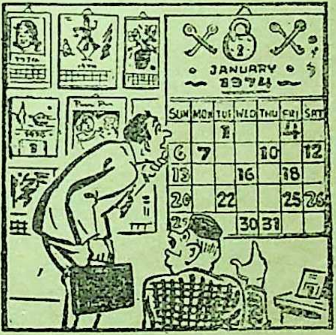
JANUARY
1974
SUN MON TUE WED THU FRI SAT
1 4
6 7 10 12
13 16 18
20 22 25 26
27 30 31

यह नये जमाने का कैलेंडर है। प्रत्येक महीने में हमने काम के दिन थोड़े-से ही रखे हैं। बाकी तारीखें हड़ताल, बंद, मोर्चे, घेराव, तालाबंदी आदि के लिए खाली छोड़ दी गयी हैं।

[गत नववर्ष-दिन पर रमेश बुच का कार्टून]

उत्तर मिला—'यह काजी का घर है। यहां कसम खा और चला जा।'

०००

न्यायाधीश : तुमने इस आदमी की जेब से बटुआ कैसे निकाला ?

अपराधी : हुजूर ! यह हुनर मुश्किल से सीखा है। सिखाने की मैं फीस लेता हूं।

०००

एक चोर किसी घर का ताला तोड़ रहा था। एकाएक उसने पीछे मुड़कर देखा, तो मकान-मालिक खड़ा हुआ देख रहा था। चोर घबरा गया। मगर मकान-मालिक ने उसे तसल्ली दी और कहा—'घबराओ मत ! मैं तुम्हारा आभारी हूं; क्योंकि ताले की चाबी कहीं खो गयी है।'

—सी-३४, सुदर्शन पार्क, नयी दिल्ली-१५

कपडों की उजली
धुलाई के लिये !

CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA
BERAR OIL INDUSTRIES, AKOLA.
चाँदनी साबुन
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

आओ – एक सौदा करें!

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो–

गोला
टॉफियां और मिठाइयां

Gola
SWEETS
MILK

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ. प्र.

तीन प्रसंग

सुखबीर द्वारा प्रस्तुत

चिली के विश्वप्रसिद्ध कवि पाब्लो नेरूदा उन दिनों राष्ट्रपति-पद के लिए चुनाव में खड़े हुए थे। उन्हीं दिनों यह भी अफवाह थी कि उस वर्ष के नोबेल-पुरस्कार के लिए उनका नाम पेश है।

किसी ने उनसे पूछा—'अगर आपको राष्ट्रपति-पद और नोबेल-पुरस्कार में से एक को चुनना हो, तो आप किसे चुनेंगे?'

'ऐसी काल्पनिक चीजों में से चुनाव करने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता।'

'लेकिन फर्ज कीजिये, अगर ये दोनों चीजें इसी समय आपके सामने इस मेज पर रख दी जायें, तो?'

'तो मैं यहां से उठकर दूसरी मेज के सामने बैठ जाऊंगा।'

०००

पाब्लो नेरूदा पेरिस में पुरानी कलात्मक वस्तुओं की एक दुकान में गये। वहां उन्हें एक टूटी हुई मूर्ति दिखाई दी, जो स्तालिन की-सी लगती थी। उन्होंने उसे खरीदना चाहा। परंतु खुद दुकानदार को वह मूर्ति बहुत पसंद थी और वह उसे बेचने के लिए तैयार न हुआ। फिर जब बातों के दौरान उसे पता चला कि नेरूदा (जिन्हें कि वह पहचान नहीं पाया था) चिली के रहने वाले हैं, तो उसने पूछा—'क्या आप वहां के महान कवि पाब्लो नेरूदा को जानते हैं? वे मेरे बहुत प्रिय कवि हैं।'

'हां, काफी अच्छी तरह।' नेरूदा ने कहा।

यह सुनकर दुकानदार बहुत खुश हुआ! बोला—'तब तो मैं इन्कार नहीं कर सकता। आप यह मूर्ति ले सकते हैं।'

०००

'अचानक आग लग जाये और आपको अपनी रचनाओं की रक्षा करनी पड़े, तो सबसे पहले आप किस रचना को बचायेंगे?' एक पत्रकार ने पाब्लो नेरूदा से पूछा।

'शायद किसी रचना को भी नहीं,' नेरूदा ने उत्तर दिया।

'क्यों भला?'

'इसलिए कि मुझे उनकी जरूरत नहीं है। उनके बजाय मैं किसी लड़की को बचाना पसंद करूंगा ..... या ढेर सारे जासूसी उपन्यासों को बचाऊंगा, जो कि मेरी अपनी लिखी पुस्तकों की अपेक्षा मेरा कहीं ज्यादा मनबहलाव करते हैं।'

★

देश पर पड़ोसी देश ने हमला कर दिया था। दुश्मन प्रतिदिन आगे बढ़ता आ रहा था और स्थिति नाजुक होती जा रही थी।

ऐसे में एक नेता अपने भाषण में जनता को हौसला देने के लिए बोले—'हम बड़ी बहादुरी से लड़ रहे हैं। अपने देश की एक इंच भी धरती हम दुश्मन के हाथ में नहीं जाने देंगे।'

श्रोताओं में से किसी ने टोका—'आजकल एक इंच कितने मील का होता है?'

★

जलपरी

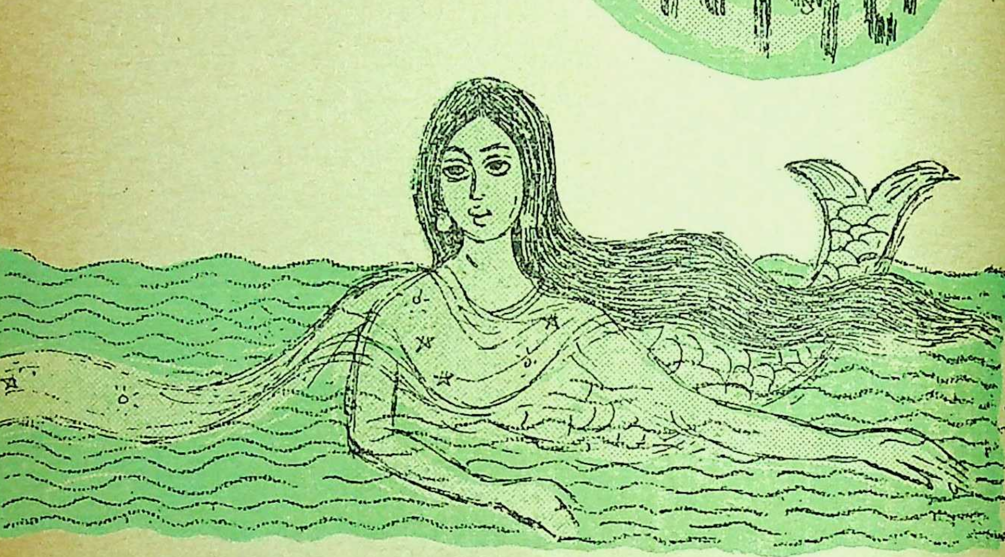

हान्स क्रिश्चन एंडरसन की एक परीकथा

हिंदी अनुवाद : सुखबीर

दूर समुद्र में, पानी का रंग नीलकमल-जैसा नीला है, और स्वच्छ कांच-जैसा निर्मल। लेकिन वहां गहराई भी बहुत है—इतनी कि कोई लंगर उसकी थाह नहीं ले सकता। वहीं रहते हैं समुद्री इंसान।

यह न सोचो कि नीचे सिर्फ सफेद रेतीली तली है। न-न, वहां बड़े गजब के पेड़ और पौधे उगते हैं। उनकी टहनियां और पत्तियां इतनी लचीली होती हैं कि पानी की हल्की-सी हलचल से भी हिल उठती हैं, जैसे जिंदा चीजें हों। छोटी और बड़ी मछलियां उनके बीच में इस तरह घूमती-फिरती हैं, जैसे ऊपर यहां पक्षी उड़ा करते हैं।

और जहां समुद्र सबसे ज्यादा गहरा है, वहां समुद्र के राजा का महल है। महल की दीवारें मूंगे की बनी हुई हैं, उसकी लंबी नोकदार खिड़कियां अंबर की, और छत है सीपियों की, जो समुद्र की लहरों से खुलती और मुंदती रहती हैं। बहुत ही सुंदर दिखती है छत; क्योंकि हर सीपी में एक चमचमाता मोती है, और हर एक मोती किसी रानी के मुकुट की शान बढ़ा सकता है।

समुद्र का राजा इधर कई वर्षों से विधुर था। उसकी मां उसका महल संभालती थी। वह बड़ी बुद्धिमान थी, मगर अपनी कुलीनता का उसे बहुत अभिमान था। इसीलिए उसने अपनी पूंछ में बारह मोती-सीप टांक रखे थे, जबकि बाकी कुलीनों को छह सीपों से ही संतोष करना पड़ता था। लेकिन वह अपनी नन्ही पोतियों यानी समुद्री राजकुमारियों से बड़ा प्यार करती थी और उसकी पोतियां थीं छह-सभी बड़ी सुंदर। मगर सबसे छोटी सबसे सुंदर थी। उसकी त्वचा गुलाब की पंखड़ी-जैसी साफ और मुलायम थी और उसकी आंखें बहुत गहरी झील-जैसी नीली थीं। मगर दूसरी जलपरियों की तरह उसके भी पांव नहीं थे। उसके धड़ का अंतिम हिस्सा मछली की दुम जैसा था।

दिन-भर वे राजकुमारियां समुद्र के नीचे अपने महल के विशाल कमरों में खेला करतीं। कमरों की दीवारों में जिंदा फूल खिलते थे। खिड़कियों में से मछलियां तैरती हुई अंदर आ जातीं, जैसे ऊपर यहां जब हम खिड़की खोलते हैं तो गौरैयां अंदर आ जाती हैं। मगर मछलियां उन राजकुमारियों के बिलकुल पास चली आतीं और उनके हाथों में से खाना चुगती थीं और उन्हें अपनी पीठ सहलाने देती थीं।

महल के बाहर बहुत बड़ा बगीचा था। उसमें गहरे नीले और चटक लाल रंग के पेड़ थे। उनके फल सोने की तरह चमचमाते थे, फूल अंगारों की तरह दमकते थे और टहनियां और पत्ते हरदम झूमते रहते थे। मिट्टी की जगह वहां महीन रेत थी, जलती गंधक की लपटों-जैसी नीली-नीली रेत। असल में नीचे सब कहीं अजीब-सी नीली रोशनी छायी रहती थी। और जब समुद्र शांत होता था, तो उसमें सूरज की झलक दिखाई देती थी और सूरज रोशनी बिखेरता हुआ बैंगनी रंग का फूल-सा लगता था।

हर नन्ही राजकुमारी को बाग में एक-एक क्यारी मिली हुई थी, जहां वह अपनी पसंद के पौधे लगा सकती थी। एक राजकुमारी ने ह्वेल मछली के आकार की क्यारी बनायी थी। दूसरी ने नन्ही जलपरी जैसी। मगर सबसे छोटी राजकुमारी ने सूरज जैसी गोल क्यारी बनायी थी और उसमें वह सिर्फ लाल फूल उगाती थी, जो सूरज की तरह चमकते थे।

यह सबसे छोटी राजकुमारी कुछ विचित्र-सी बच्ची थी—गुमसुम और हर दम विचारों में खोयी-सी। दूसरी राजकुमारियों ने डूबे जहाजों से सुंदर-सुंदर चीजें लाकर अपने बगीचे सजा रखे थे; मगर सबसे छोटी राजकुमारी को लगाव था सिर्फ लाल फूलों से जो सूरज जैसे दिखते थे, और संगमरमर की एक सुंदर मूर्ति से। यह मूर्ति एक सुंदर लड़के की थी और दूधिया संगमरमर में तराशी गयी थी। किसी टूटे जहाज से गिरकर नीचे पहुंची थी यह।

राजकुमारी ने मूर्ति के आस-पास चमकीले लाल रंग का बैद का पौधा लगाया था। पौधा खूब अच्छा उगा और उसकी

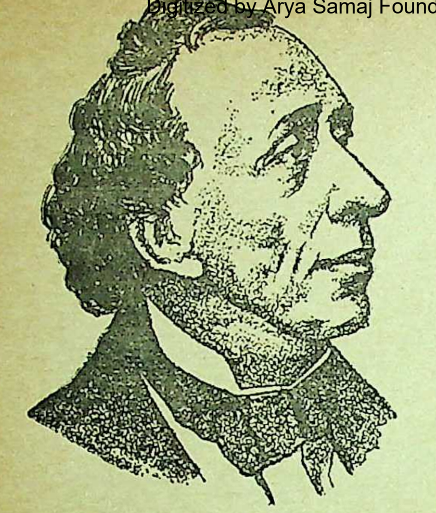

हान्स क्रिश्चन एंडरसन

डेन्मार्क का अप्रतिम परीकथा-लेखक जन्म : १८०५; मृत्यु : १८७५। अभाव और दु:खों से भरा बचपन। आरंभ में लेखन में घोर विफलता। प्रसिद्धि दिलाने वाली प्रथम रचना 'इंप्रोविजेटोरेन' छपी १८३५ में। उसी वर्ष प्रथम परीकथा-पुस्तक 'इवेन्टिट' का लेखन आरंभ किया। जलपरी ('मर्मेड') के अलावा कतिपय अन्य विश्वविख्यात कथाएं—थम्बेलिना, बदसूरत बतख, बादशाह के कपड़े, लाल जूते, दिया-सलाई बेचने वाली।

टहनियां मूर्ति के ऊपर से होती हुईं नीचे नीली रेत तक लटक आयी थीं।

नन्ही राजकुमारी को सबसे ज्यादा आनंद आता था बाहर की दुनिया के आदमियों के बारे में बातें सुनने में। वह हमेशा अपनी दादी से जहाजों, शहरों, इंसानों और जानवरों के बारे में सवाल पूछती रहती। उसे इस बात से बड़ा अचरज होता था कि धरती के फूलों में सुगंध होती है—जबकि समुद्र-तल के फूलों में कोई सुगंध नहीं होती थी—और धरती के जंगल हरे रंग के होते हैं और उनकी टहनियों पर 'मछलियां' बहुत साफ और सुरीली आवाजों में गाती हैं! असल में उसकी दादी पक्षियों को मछलियां कहा करती थी; नहीं तो ये राजकुमारियां उसकी बात समझ ही न पातीं। उन्होंने पक्षी तो कभी देखे थे नहीं।

दादी उनसे कहती—'ज्यों ही तुम पंद्रह साल की हो जाओगी, तुम्हें समुद्र के ऊपर जाने और चांदनी में चट्टानों पर बैठकर बड़े-बड़े जहाजों को आते-जाते देखने की छूट मिल जायेगी। तब तुम जंगल और शहर देख सकोगी।'

अगले वर्ष एक राजकुमारी पंद्रह साल की होने वाली थी। मगर बाकी सब तो एक-दूसरी से एक-एक साल छोटी थीं; इस तरह सबसे छोटी राजकुमारी को अभी पूरे पांच साल प्रतीक्षा करनी थी। मगर सबने एक दूसरे से वादा किया था कि पहले दिन वे जो सबसे दिलचस्प चीजें देखेंगी दूसरों को बतायेंगी। दादी ने तो उन्हें ज्यादा कुछ नहीं बताया था। कितनी सारी चीजों के बारे में वे जानने को तरस रही थीं!

और सबसे ज्यादा तरस रही थी, छोटी राजकुमारी, जिसे सबसे लंबा इंतजार करना था और जो गुमसुम और विचारों में खोयी रहती थी। कितनी ही रातों में वह खुली खिड़की के पास खड़ी हो जाती और गह

नीले पानी में से ऊपर झांकती रहती, जिसमें मछलियां अपनी पूंछ और पर नचाया करती थीं। वह चांद और तारों को देख सकती थी। हालांकि पानी में से वे पीले-से दिखाई देते थे, मगर ज्यादा बड़े भी लगते थे। अगर कभी उसे अपने और तारों के बीच में कोई काला बादल-सा गुजरता हुआ दिखाई देता, तो वह समझ जाती कि यह या तो कोई ह्वेल मछली है, या यात्रियों से भरा हुआ कोई जहाज है। बेशक उन यात्रियों को इसकी कल्पना भी नहीं होगी कि नीचे एक सुंदर नन्ही जलपरी उनके जहाज की पेंदी की ओर गोरे-गोरे हाथ फैलाये खड़ी है।

सबसे बड़ी राजकुमारी पंद्रह साल की हो गयी और उसे ऊपर जाने दिया गया। जब वह नीचे लौटी, तो उसके पास अपनी बहनों को सुनाने को सैकड़ों बातें थीं। उसने बताया कि सबसे अधिक मजा देता है शांत समुद्र के रेतीले तट पर लेटकर, पास के विशाल शहर को देखना, जिसकी रोशनियां सैकड़ों तारों की तरह टिमटिमाती हैं। वहां संगीत की धुनें, गाड़ियों का शोर और लोगों की आवाजें, गिरजों के मीनार देखने और बजती घंटियां सुनने में बहुत आनंद आता है।

सबसे छोटी राजकुमारी मानो ये सब बातें कानों से पी रही थी। फिर शाम को जब वह खुली खिड़की के पास जाकर खड़ी हुई और उसने गहरे नीले पानी में से ऊपर ताका, तो उसे शहर और उसके शोरगुल का खयाल आने लगा और फिर उसे ऐसा लगा कि गिरजे की घंटियों की आवाज उसके कानों में पहुंच रही है।

अगले साल दूसरी राजकुमारी को समुद्र के ऊपर जाने दिया गया। वह जब ऊपर आयी, तब सूरज डूबने को था और वह दृश्य उसे सबसे सुहावना लगा। नीचे लौटने पर उसने बताया कि सारा आसमान सुनहरा दिखता था। और बादल! उनकी सुंदरता का तो वर्णन नहीं किया जा सकता। बैंगनी और जामुनी रंग के बादल उसके सिर पर से सरपट उड़े जा रहे थे और उनसे भी तेजी से जंगली बतकों की एक कतार सफेद चूनरी की तरह पानी पर उड़ती चली गयी डूबते सूरज की ओर! वह भी उसी ओर तैरने लगी, मगर सूरज डूब गया, और समुद्र और बादल गुलाबी रोशनी को निगल गये।

इसके एक साल बाद तीसरी राजकुमारी ऊपर गयी। वह सबसे निडर थी। वह समुद्र में गिरने वाली एक चौड़ी नदी के अंदर तैरती हुई आगे बढ़ी। उसे अंगूरों की बेलों से ढंकी हुई सुंदर हरी-भरी पहाड़ियां, शानदार जंगलों में से सिर निकाले हुए ऊंचे महल और किले दिखाई दिये। उसने तमाम पक्षियों को गाते हुए सुना; और धूप उसे इतनी गर्म लगी कि अपने तपते हुए चेहरे को ठंडा करने के लिए उसे बार-बार समुद्र में डुबकी लगानी पड़ती थी। एक छोटी-सी खाड़ी में उसने मनुष्यों के छोटे-छोटे नंग-धड़ंग बच्चों को पानी में छप-छप करते देखा। वह उनके साथ खेलना चाहती थी; लेकिन वे बच्चे डरकर वहां से भाग गये और

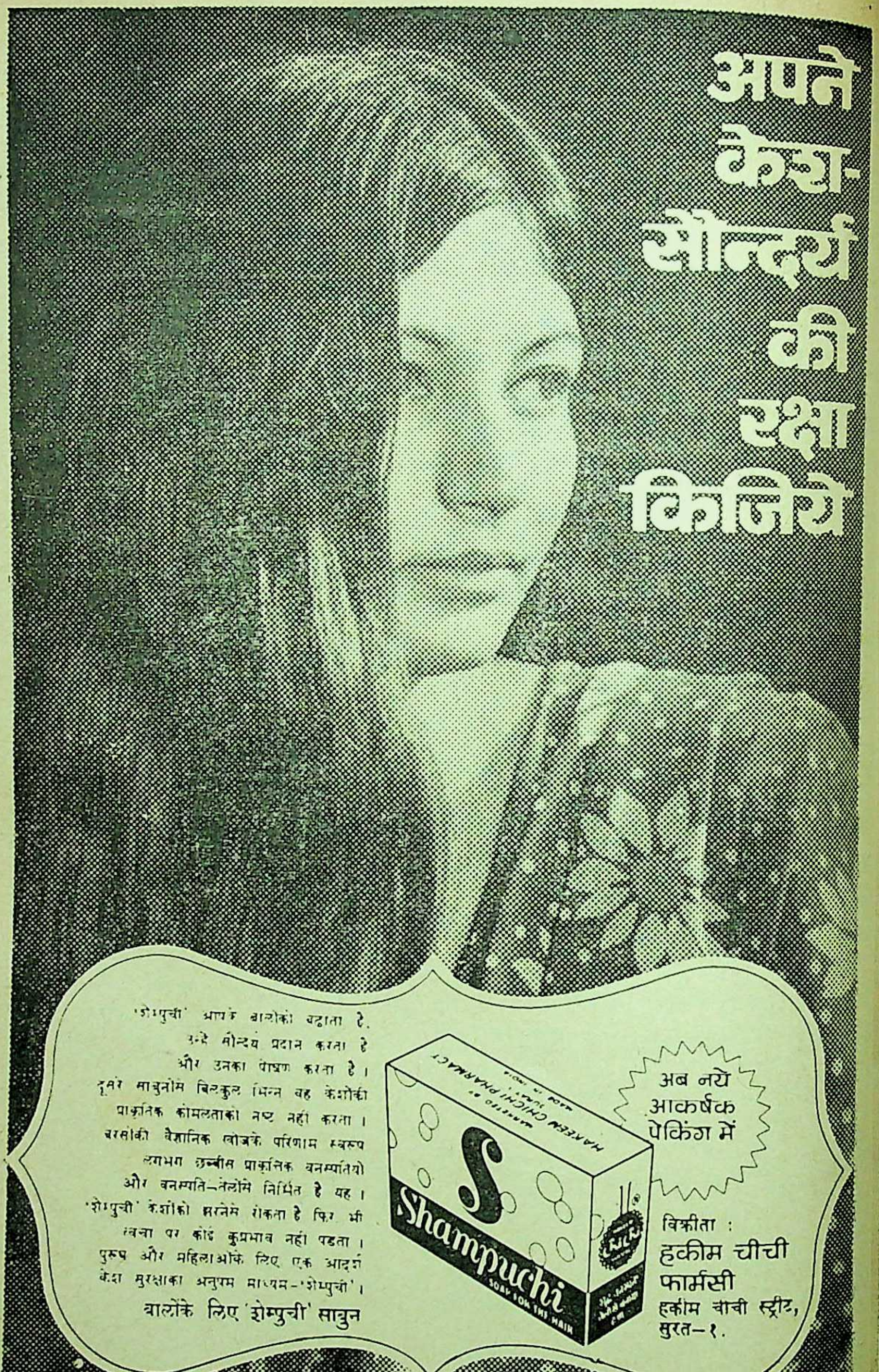
अपने केश-सौन्दर्य की रक्षा किजिये
MARKETED BY HAKEEM CHICHI PHARMACY SURAT MADE IN INDIA
S
Shampuchi
SOAP FOR THE HAIR
अब नये आकर्षक पेकिंग में

'शेम्पुची' आपके बालोंको बढाता है,
उन्हे सौन्दर्य प्रदान करता है
और उनका पोषण करता है।
दूसरे साबुनोंसे बिल्कुल भिन्न वह केशोंकी
प्राकृतिक कोमलताको नष्ट नहीं करता।
बरसोंकी वैज्ञानिक खोजके परिणाम स्वरूप
लगभग छब्बीस प्राकृतिक वनस्पतियो
और वनस्पति-तेलोंसे निर्मित है यह।
'शेम्पुची' केशोंको झरनेसे रोकता है फिर भी
त्वचा पर कोई कुप्रभाव नहीं पडता।
पुरुष और महिलाओंके लिए एक आदर्श
केश सुरक्षाका अनुपम माध्यम-'शेम्पुची'।

बालोंके लिए 'शेम्पुची' साबुन

विक्रीता :
हकीम चीची
फार्मसी
हकीम चीची स्ट्रीट,
सुरत-१.

avnit-2

एक छोटा-सा काला प्राणी निकल आया। यह कुत्ता था; और कुत्ता तो राजकुमारी ने पहले कभी देखा नहीं था। वह भौं-भौं भूंकने लगा। राजकुमारी डर गयी और समुद्र की ओर लौट पड़ी। मगर वे शानदार जंगल, हरे पहाड़ और प्यारे बच्चे जो बिना मछली की पूंछ के तैर सकते थे, उसे कभी न भूले।

चौथी बहन इतनी निडर नहीं थी। वह समुद्र के बीच में ही रही। उसने बताया कि समुद्र का वही हिस्सा सबसे सुंदर है—तुम चारों ओर मीलों दूर तक देख सकती हो और ऊपर आसमान कांच की घंटी जैसा लगता है। उसने आते-जाते जहाज भी देखे, मगर बहुत दूर से। शरारती सूंस पानी में कलाबाजियां खा रहे थे, ह्वेल मछलियां पानी के फव्वारे उछाल रही थीं।

अब पांचवीं बहन की बारी आयी। उसका जन्मदिन सर्दियों में पड़ा। सो उसे ऐसी चीजें देखने को मिलीं, जो दूसरी राजकुमारियों ने अपने-अपने पहले दिन नहीं देखी थीं। समुद्र बिलकुल हरा दिख रहा था और उसमें बर्फ की बड़ी-बड़ी चट्टानें तैर रही थीं। वे हीरों की तरह चमक रही थीं और अजीब-अजीब शक्लें थीं उनकी। वह उनमें से सबसे बड़ी चट्टान पर जा बैठी। उसके बाल हवा में लहराने लगे। जहाज वहां से बच-बचकर गुजर रहे थे। शाम ढलते-ढलते आसमान बादलों से भर गया। बिजली चमकने लगी, बादल गरजने लगे। काली-काली लहरें बर्फ की चट्टानों को ऊपर उछालने लगीं। सब जहाजों ने घबराहट में पाल चढ़ा लिये। लेकिन वह बड़े आराम से बर्फ की चट्टान पर बैठी रही और नीली बिजली को सुनहरे समुद्र में गोता लगाते देखती रही।

जब कोई राजकुमारी पहली बार ऊपर जाती थी, वहां की नवीनता और सुंदरता उसे मोह लेती थी। बाद में उनका ऊपर जाने का शौक खत्म हो जाता था। महीने-भर बाद तो वे कहने लगती थीं कि नीचे ही सबसे अच्छा है—कितना आराम है यहां अपने घर में!

अक्सर शाम को पांचों बहनें एक दूसरी की बांहों में बांह पिरोये, एक साथ तैरती हुई समुद्र के ऊपर पहुंचतीं। उनके गले बड़े ही सुरीले थे और जब तूफान आता और लगता कि जहाज डूबेंगे, वे तैरकर किसी जहाज के पास जातीं और बड़ी मीठी आवाज में लुभावने गीत गाकर मल्लाहों को बतातीं कि नीचे सब कुछ बहुत ही सुंदर है, बेखटके नीचे चले आओ। लेकिन मल्लाह उनकी बोली समझ नहीं पाते थे। यों भी समुद्र-तल में उन्हें कोई आनंद नजर नहीं आता था; क्योंकि जब कोई जहाज टूट जाता था तो वे मल्लाह डूब जाते थे और मुर्दे के रूप में ही सागर के राजा के महल में पहुंचते थे।

शाम को जब पांचों बहनें इस तरह समुद्र के ऊपर तैरतीं, उनकी नन्ही बहन उन्हें ताकती हुई अकेली नीचे रह जाती। वह शायद रो भी पड़ती; मगर जलपरियों की आंखें आंसू नहीं बहा सकतीं। इसलिए उसे और भी ज्यादा दुःख होता।

वह सोचती—'ओह ! किसी तरह पंद्रह साल की हो जाऊं मैं ! ऊपर की दुनिया और उसके लोग मुझे बहुत ही पसंद आयेंगे।'

आखिरकार वह पंद्रह साल की हो गयी।

उसकी दादी बोली—'लो, अब तुम भी हमारे हाथों से निकल जाओगी। आओ, तुम्हें मैं तुम्हारी बहनों-जैसे कपड़े पहनाऊं।' और दादी ने उसके बालों में सफेद कमलों का गजरा बांधा, जिनकी पखड़ियां कटे हुए मोती-जैसी थीं। फिर उसने आज्ञा दी कि नन्ही जलपरी की पूंछ में आठ सीपियां टांकी जायें, ताकि लोगों को पता लगे कि वह ऊंचे कुल की जलपरी है।

'पर वे तो चुभेंगी,' छोटी राजकुमारी ने कहा। दादी बोली—'हां, मगर सौंदर्य के लिए कुछ तो कीमत देनी ही पड़ती है।' नन्ही जलपरी की इच्छा हुई कि ये सब भारी गहने-गजरे उतारकर फेंक दे। खैर, वह 'अलविदा !' कहकर हल्के स्वच्छ बुलबुले की तरह तेजी से पानी में से ऊपर चली गयी।

ऊपर पहुंचकर जब उसने समुद्र से सिर निकाला, तो सूरज अभी-अभी डूबा था। बादलों में अभी भी गुलाबी और सुनहरी चमक थी और ऊपर हल्के गुलाबी आसमान में सांझ का तारा बहुत साफ और सुंदर चमक रहा था। हवा नरम और ताजी थी और समुद्र एकदम शांत था। तीन मस्तूलों वाला एक जहाज वहां खड़ा था। उसका सिर्फ एक ही पाल खुला था; क्योंकि हवा बिलकुल बंद थी और मल्लाह डेक पर आराम कर रहे थे। जहाज पर गाना-बजाना चल रहा था और जब अंधेरा हो गया तो जहाज पर रंग-बिरंगी सैकड़ों लालटेनें जला दी गयीं। ऐसा लगा, जैसे तमाम देशों के झंडे फहरा दिये गये हों।

जलपरी तैरकर जहाज की खिड़की के पास चली आयी और लहरों के साथ ऊपर-नीचे डोलते हुए उसने खिड़की के कांच में से भीतर का नजारा देखा। बहुत शानदार पोशाक पहने लोगों का झुंड उसे वहां दिखाई दिया। मगर सबसे सुंदर तो था बड़ी-बड़ी काली आंखों वाला राजकुमार। उम्र उसकी सोलह साल से ज्यादा नहीं रही होगी; और आज उसी का जन्मदिन मनाया जा रहा था।

राजकुमार डेक पर आया, जहां मल्लाह नाच रहे थे, गा रहे थे। फौरन एक सौ आकाशबाण छोड़े गये। इनसे इतना प्रकाश हो गया, जैसे दिन निकल आया हो। नन्ही जलपरी डर गयी और पानी में गोता लगा गयी। मगर जल्दी ही उसने पानी में से सिर निकाला। उसे लगा कि जैसे आसमान से तारे टूट-टूटकर गिर रहे हैं। ऐसी आतिशबाजी उसने पहले कभी नहीं देखी थी। जहाज पर इतनी ज्यादा रोशनी थी कि आदमी ही नहीं, जहाज की रस्सियां तक साफ-साफ दिखाई दे रही थीं। ओह! राजकुमार कितना सुंदर था ! वह सब मल्लाहों से हाथ मिला रहा था, हंस रहा था, मुस्करा रहा था। और जहाज से संगीत की मीठी धुनें निकलकर सुहावनी रात में

दूर-दूर तक फैल रही थी।

अब काफी देर हो गयी थी। मगर जलपरी जहाज और सुंदर राजकुमार पर से नजरें हटा नहीं पा रही थी। जहाज पर रंग-बिरंगी लालटेनें बुझा दी गयीं, आतिशबाजी बंद हो गयी। मगर समुद्र की गहराई में गड़गड़ाहट हो रही थी। फिर जहाज की रफ्तार तेज हो गयी। एक-एक करके उसके सभी पाल खोल दिये गये। लहरें बढ़ने लगीं, आसमान में बड़े-बड़े बादल घिरने लगे और बिजली चमकने लगी। हां, जोरदार तूफान आ गया था। जहाज बौखलाये हुए समुद्र में डोलने लगा। काले पहाड़ों-जैसी लहरें ऊंची ही ऊंची होती जा रही थीं। लगता था कि वे मस्तूल को तोड़ डालेंगी। मगर जहाज हंस की तरह दो लहरों के बीच के गढ़े में उतर जाता, फिर दूसरी लहर की चोटी पर चढ़ जाता। जलपरी सोच रही थी कि जहाज को इसमें मजा आ रहा होगा! मगर मल्लाह ऐसा बिलकुल नहीं सोचते थे।

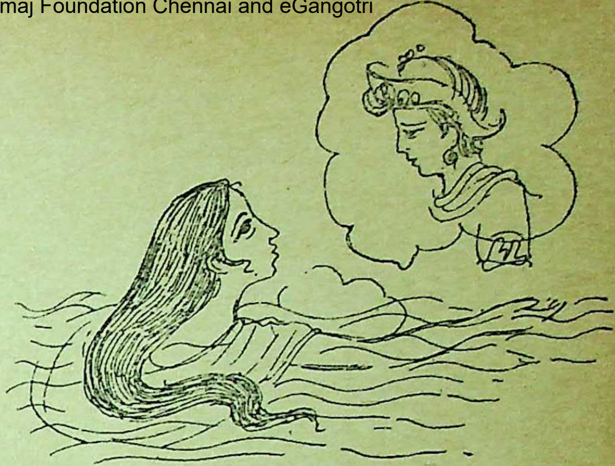

लहरों के जोरदार थपेड़ों से अंत में जहाज टूटने लगा। उसका मस्तूल बीचो-बीच से टूट गया। फिर जहाज एक करवट ढुलक गया और उसमें पानी तेजी से भरने लगा। अब जाकर जलपरी की समझ में आया कि लोग खतरे में हैं। उसे स्वयं भी जहाज के टूटे हुए शहतीरों से बच-बचकर तैरना पड़ रहा था। जहाज के सब लोग अपनी-अपनी जान बचाने में लगे हुए थे। जलपरी तो बस नौजवान राजकुमार को देखे जा रही थी। जब जहाज टुकड़े-टुकड़े हुआ, तो उसने उसे पानी में डूबकर ओझल होते देखा। एक क्षण तो उसे खुशी हुई कि राजकुमार अब नीचे उसे मिलेगा। फिर उसे याद आया कि मनुष्य पानी में जिंदा नहीं रह सकते। तब तो राजकुमार मर जायेगा! नहीं, मैं उसे मरने नहीं दूंगी।

जलपरी चारों ओर तैरते शहतीरों और तख्तों की परवाह न करते हुए आगे बढ़ी और उसने राजकुमार को पा लिया। राजकुमार अब तैर नहीं पा रहा था, उसके हाथ-पांव थक चले थे, उसकी सुंदर आंखें मुंद गयी थीं। अगर जलपरी ने उसे थाम न लिया होता, तो वह निश्चय ही डूब जाता। जलपरी ने उसका सिर पानी में से ऊंचा उठाया, फिर वह लहरों के साथ बहने लगी।

सुबह तक तूफान थम गया था। अब जहाज का छोटा-सा टुकड़ा भी वहां नहीं

था। लाल और दमकता हुआ सूरज पानी में से निकला। राजकुमार के गालों में जैसे प्राणों की झलक लौट आयी; वैसे उसकी आंखें तो अभी भी बंद ही थीं। जलपरी ने उसके सुंदर माथे को चूमा और उसके गीले बाल पीछे किये। उसे वह अपने बाग के संगमरमर के बुत जैसा लग रहा था। उसने उसे दुबारा चूमा और सोचने लगी, किसी तरह यह जी उठे!

अब उसे धरती दिखाई देने लगी थी। सामने नीले रंग के ऊंचे पहाड़ थे, जिनकी चोटियों पर चमकती हुई बर्फ ऐसी लगती थी, जैसे हंस उन पर बैठे हुए हों। नीचे तट पर बहुत सुंदर हरे-भरे जंगल थे, जिनके सामने एक मंदिर या मठ था। वह ठीक से पहचान नहीं पायी। खैर, कोई इमारत थी। वहां पर समुद्र में एक छोटी-सी खाड़ी थी, जिसका पानी शांत और गहरा था। जलपरी राजकुमार को लिये तैरकर खाड़ी के रेतीले तट पर पहुंची और बड़ी ही सावधानी से उसे रेत पर धूप में लिटा दिया।

तभी उस बड़ी सफेद इमारत में घंटियां बजीं। कई लड़कियां बाग में आ गयीं। सो जलपरी तैरकर दूर चली गयी और चट्टानों के पीछे झाग में छिपकर देखने लगी।

कुछ ही देर में एक लड़की राजकुमार के पास आयी। क्षण-भर को मानो वह डर गयी; फिर कई और लड़कियों को बुला लायी। तभी जलपरी ने देखा कि राजकुमार होश में आ गया और अपने सामने खड़े लोगों को देखकर मुस्कराया। लेकिन वह मुस्कान जलपरी के लिए नहीं थी। उसे क्या पता था कि जलपरी ने ही उसे बचाया है। जलपरी को इतना दु:ख हुआ कि जब लड़कियां राजकुमार को उस इमारत में ले गयीं, तो उसने दु:खी दिल से डुबकी लगायी और पिता के महल में लौट आयी।

अब वह पहले से भी ज्यादा गुमसुम और विचारों में खोयी-सी रहने लगी। उसकी बहनों ने पूछा कि क्यों री, पहली बार ऊपर जाने पर तुमने क्या कुछ देखा ? मगर वह कुछ न बोली।

कितने ही दिन सुबह और शाम को वह उस जगह जाती, जहां उसने राजकुमार को छोड़ा था। उसके देखते-देखते बागों में फल पके और तोड़ लिये गये, पहाड़ों पर बर्फ पिघली और नदियों में बह गयी। लेकिन राजकुमार उसे फिर नहीं दिखाई दिया। इससे जलपरी हर बार और ज्यादा उदास होकर लौटती। जब वह अपने बगीचे में संगमरमर की मूर्ति को बांहों में लपेटकर बैठती, तो बस तभी उसे थोड़ा-बहुत चैन मिलता था।

जब उससे और सहा नहीं गया, तो उसने अपनी एक बहन को सारी बात बतायी। फौरन बाकी सबको भी पता चल गया। मगर उन्होंने यह बात अपनी बहुत पक्की सहेलियों के सिवा और किसी को न बतायी। इन सहेलियों में से एक जलपरी उन्हें यह बता सकी कि वह राजकुमार कौन था। उसने भी जहाज पर राजकुमार के जन्मदिन की पार्टी देखी थी और वह जानती थी कि

राजकुमार कहां से आया था और उसका राज्य कहां था।

बाकी राजकुमारियां बोलीं—'आओ नन्ही बहन, ऊपर चलें।' और बांहों में बांहें डाले वे एक कतार में समुद्र में से ऊपर उठीं और ठीक उस राजकुमार के महल के सामने जा पहुंचीं।

महल चमकीले पीले पत्थर का बना हुआ था। उसमें संगमरमर की सीढ़ियां बनी हुई थीं, जो समुद्र के पानी को छूती थीं। ऊंचे-ऊंचे सुनहरे गुंबज थे। महल की विशाल शीशे की खिड़कियों में से कमरों के अंदर की शान देखी जा सकती थी। रेशम के परदे लटक रहे थे, दीवारों पर शानदार चित्र थे। सबसे बड़े कमरे के बीचो-बीच एक फव्वारा था।

अब तो नन्ही जलपरी को राजकुमार के निवास-स्थान का पता लग गया था। कई बार शाम या रात को वह उस जगह पर आती। साहस करके वह सीढ़ियों के निकट तक पहुंच जाती और वहां बैठकर चांदनी में राजकुमार को देखा करती।

अक्सर शाम को राजकुमार झंडियों से सजी सुंदर किश्ती में सैर को निकलता था। किश्ती में बाजे बज रहे होते थे। मशालों की रोशनी में मछली पकड़ते हुए मछुए राजकुमार के बारे में आपस में बड़ी अच्छी बातें कहते। जलपरी उन्हें सुनती और खुश होती कि मैंने इस अच्छे राजकुमार की जान बचायी। उसे याद आता कि किस प्रकार उसने राजकुमार का सिर अपने सीने से सटा लिया था और उसे चूमा था। मगर राजकुमार को इन सब बातों का पता नहीं था। उसे तो जलपरी के अस्तित्व का भी पता नहीं था।

धीरे-धीरे जलपरी को धरती के मनुष्य अच्छे लगने लगे और उनके साथ रहने की उसकी इच्छा होने लगी। उसे लगता कि उनकी दुनिया अपनी दुनिया से ज्यादा बड़ी है। मनुष्य जहाज में बैठकर समुद्र को पार कर सकते हैं और ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों पर चढ़ सकते हैं; उनके देश लंबे-चौड़े हैं, जिनमें खेत और जंगल हैं।

वह कितना कुछ पूछना चाहती थी, कितना कुछ जानना चाहती थी! लेकिन उसकी बहनें उसके सब सवालों के जवाब नहीं दे पाती थीं। सो वह अपनी दादी से तरह-तरह के प्रश्न पूछती। वह सवाल करती—'अगर मनुष्य पानी में न डूबें तो क्या हमेशा जिंदा रह सकते हैं? क्या वे भी हमारी तरह मरते हैं?'

दादी बताती—'हां, हमारी तरह उनकी भी मृत्यु होती है। उनकी उम्र तो हमसे भी छोटी होती है। हम तीन सौ साल तक जी, सकती हैं, फिर जब हमारी जिंदगी खत्म होती है, हम पानी पर झाग बन जाती हैं। हमारे कोई अमर आत्मा नहीं होती; हमें कभी दुबारा जीवन नहीं मिलता। लेकिन मनुष्यों के आत्मा होती है, जो हमेशा जीवित रहती है—शरीर के मिट्टी बन जाने के बाद भी। वह आत्मा स्वच्छ हवा में ऊपर चढ़ते-चढ़ते चमचमाते तारों तक पहुंच जाती है।

उस सुंदर लोक तक पहुंचना हमारे भाग्य में नहीं है।'

'हमारी भी वैसी आत्मा क्यों नहीं होती?' नन्ही जलपरी ने उदास होकर पूछा—'मैं तो मनुष्य बनने और स्वर्ग की दुनिया में रहने के लिए अपने तीन सौ के तीन सौ साल बड़ी खुशी से दे सकती हूं।'

'तुम इसकी चिंता क्यों करती हो ? ऊपर धरती के जीवों से यहां हम कहीं ज्यादा सुखी और अच्छे हैं।'

'तो क्या मुझे भी एक दिन मरना और झाग बनकर समुद्र पर इधर-उधर तैरना पड़ेगा ? तब मैं न लहरों का संगीत सुन सकूंगी, न सुंदर फूल और लाल सूरज को देख सकूंगी। क्या अमर आत्मा पाने का कोई तरीका नहीं ?'

दादी बोली—'नहीं। हां, अगर कोई मनुष्य तुमसे इतना प्यार करे कि अपने माता-पिता से भी ज्यादा तुम्हें चाहने लगे और विवाह में तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लेकर पुरोहित के सामने प्रतिज्ञा करे कि इस लोक और परलोक में वह तुम्हारे प्रति वफादार रहेगा, तब उसकी आत्मा छलककर तुम्हारे शरीर में प्रविष्ट होगी और तब तुम भी मनुष्यों जैसा सुख पा सकोगी। वह तुम्हें आत्मा देगा मगर उसके अंदर भी आत्मा बनी रहेगी। मगर यह सब तो कभी होने वाला नहीं। समुद्र में सबसे सुंदर चीज है तुम्हारी यह पूंछ। लेकिन जमीन के लोगों को वह भोंडी लगती है। वहां तो सुंदर कहलाने के लिए दो अनगढ़ बैसाखियां चाहिये, जिन्हें वे लोग टांगें कहते हैं।'

इस पर नन्ही जलपरी ने अपनी पूंछ पर नजर डाली और गहरी आह भरी।

दादी ने कहा—'बेटी, जो है उसमें हमें संतोष मानना चाहिये। आओ, अपनी तीन सौ साल की उम्र का आनंद लें और नाचें। उसके बाद कब्र में लंबी तानकर मजे से सोयें। आज रात को हम महल में नाच करायेंगी।'

उस रात को महल में ऐसी सजावट की गयी, जैसी धरती पर कभी देखने को नहीं मिलेगी। नाचघर की छत मोटे शीशे की थी। उस पर हरे और गुलाबी सीप जड़े थे, जिनमें से नीली रोशनी निकलकर नाचघर के भीतर-बाहर उजाला फैला रही थी। नाचघर के बीचो-बीच पानी की एक चौड़ी धारा बह रही थी, जिसमें जलपरियां और उनके पुरुष नाच-गा रहे थे। वैसी मीठी आवाज मनुष्यों की नहीं होती। मगर उन सबमें भी नन्ही जलपरी की आवाज सबसे मीठी थी, और वह नाचती भी सबसे बढ़िया थी। उस दिन सब लोग तालियां बजाते हुए उसका नाच देख रहे थे। यह देखकर नन्ही जलपरी क्षण-भर को खुश हुई। लेकिन

फिर उसे धरती की याद आने लगी। वह उस सुंदर राजकुमार को भूल नहीं सकती थी, न इस बात को हः कि राजकुमार की तरह उसके पास अमर आत्मा नहीं है। सो वह चुपचाप अपने पिता के महल में से बाहर निकल आयी और उदासी में डूबी अपने बाग में जाकर बैठ गयी।

इतने में उसे ऊपर तुरही बजने की आवाज पानी में से सुनाई दी और वह अपने मन में बोली—'ओह, जिसे मैं अपने माता-पिता से भी ज्यादा चाहती हूं, वह ऊपर किश्ती में जा रहा है। मैं उसे और अमर आत्मा को पाने के लिए कुछ भी करने को तैयार हूं। मैं समुद्री जादूगरनी के पास जाऊंगी! मुझे हमेशा उससे डर लगता रहा है। मगर शायद वह कोई उपाय बता सके।'

नन्ही जलपरी उठी और जादूगरनी के घर की ओर चल पड़ी, जो कि भयंकर भंवरों के उस पार था। पहले कभी वह वहां नहीं गयी थी। वहां न फूल थे, न समुद्री घास थी। वहां सिर्फ भूरी रेत बिछी थी भंवरों के किनारे तक। भंवरों में चक्की के पाटों की तरह पानी तेजी से घूमता था और हर चीज को खींचकर नीचे ले जाता था।

जादूगरनी के घर तक पहुंचने के लिए नन्ही जलपरी को इन भंवरों के बीच से होकर जाना पड़ा। फिर आगे दूर तक उबलता हुआ गर्म कीचड़ था। उसे उसमें से गुजरना था। कीचड़ के उस पार एक अजीब-से जंगल में जादूगरनी का घर था। उस जंगल के पेड़ एक साथ पेड़ भी थे और प्राणी भी। जैसे सौ-सौ फनों वाले सांप जमीन में उगे हुए हों। उनकी टहनियां सांपों-जैसी गोल और चिपचिपी थीं। जो भी पास आता, उसे ये टहनियां पकड़ लेतीं और भींचकर मार डालतीं।

जलपरी डर गयी। उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। लेकिन तभी उसे राजकुमार की याद आयी, अमर आत्मा की याद आयी। उसने अपने लंबे बालों का जूड़ा बांध लिया, जिससे वे वृक्षों की लपलपाती टहनियों की पकड़ में न आयें। फिर उसने अपनी बांहें छाती से सटा लीं और दुबककर मछली की तरह तेजी से आगे निकल गयी।

अब उसे रपटीली जमीन पर जादूगरनी का घर दिखाई दिया। उसके चारों ओर मोटे-मोटे समुद्री सांप रेंग रहे थे। जादूगरनी का घर जहाज टूटने से समुद्र में डूबे मनुष्यों की हड्डियों से बना हुआ था। जादूगरनी घर में बैठी थी, और अपने मुंह से एक बड़े-से मेंढक को खाना खिला रही थी, जैसे हम अपने पालतू पक्षियों को हाथ से दाना चुगाते हैं। उसकी गोद में कई मोटे-मोटे समुद्री सांप लेटे हुए थे।

जादूगरनी ने जलपरी को देखकर कहा—'नन्ही राजकुमारी, मुझे सब पता है कि तुम क्या चाहती हो। यह तुम्हारी बहुत बड़ी बेवकूफी है। लेकिन तुम तो बाज आने वाली नहीं हो और इससे तुम्हारी बड़ा अहित होने वाला है। तुम अपनी पूंछ की जगह दो टांगें चाहती हो, जिससे राजकुमार तुम्हें प्यार कर सके, और तुम उससे शादी करके अमर

मां की ममता की
नहीं समानता...

उसी तरह
अद्वितीय है

उषा

सिलाई मशीन

आपके परिवार को आपके स्नेह की आवश्यकता है…
अपना स्नेह और अधिक प्रकट करने के लिए
आपके लिए आवश्यक है—उषा सिलाई मशीन।

सिलाई के पैसे बचाइए व अनमोल समय भी, क्योंकि उषा सिलाई मशीनें।

- श्रेष्ठ इंजिनियरिंग द्वारा विधिपूर्वक बनाई जाती हैं, और इसलिए वे लम्बे समय तक चलती हैं और मरम्मत भी नहीं मांगती।
- आपके पास पहुंचने से पहले दो हजार बार जाँची और परखी जाती हैं।
- बिक्री के उपरान्त सर्विस के लिये हर जगह प्रबन्ध है।
- हाथ, पैर, और बिजली से चलने वाले कई मनपसंद मॉडलों में मिलती हैं।

मूल्य रु० २६५/- या अधिक

SHRIRAM

जब खरीदें उषा ही खरीदें

सिरपुर
उत्तम
कागज
के लिये

- ☐ बैंक पेपर
- ☐ बॉंड पेपर
- ☐ ग्लेज़्ड एअर मेल पेपर
- ☐ एज़्युरलेड पेपर
- ☐ सुपर वाइटलेड पेपर
- ☐ सुपर वाइट मैपलिथो पेपर
- ☐ क्रोमो पेपर
- ☐ एम. एफ. रैपिंग पेपर
- ☐ आर्ट पेपर
- ☐ क्रोमो बोर्ड
- ☐ आर्ट बोर्ड

दि सिरपुर पेपर मिल्स लि.
सिरपुर-कागजनगर, आन्ध्र प्रदेश

आत्मा को पा सको।' यह कहकर जादूगरनी ने इतने जोर से ठहाका मारा कि मेंढक और सारे सांप जमीन पर गिर पड़े।

जादूगरनी फिर बोली–'तुम ठीक समय पर आयी हो; क्योंकि कल सुबह सूरज निकलने के बाद तो मैं एक साल तक तुम्हारी मदद न कर सकती। अब मैं तुम्हें एक काढ़ा बनाकर दूंगी। तुम्हें सूरज निकलने से पहले तैरकर जमीन पर पहुंचना होगा और समुद्र के तट पर बैठकर यह काढ़ा पीना होगा। तब तुम्हारी पूंछ दो टुकड़ों में चिर जायेगी और सिकुड़कर वह चीज बन जायेगी, जिसे धरती के मनुष्य "सुंदर टांगें" कहते हैं। लेकिन याद रखो, बहुत दर्द होगा। ऐसा लगेगा, जैसे तुम्हें तेज तलवार से चीरा जा रहा हो। जो भी तुम्हें देखेगा, वह कहेगा कि तुम दुनिया की सबसे सुंदर बच्ची हो। तुम्हारी चाल ऐसी ही सुंदर बनी रहेगी–कोई नर्तकी भी ऐसी सुंदरता से नहीं चल सकेगी। लेकिन तुम्हें ऐसा लगेगा कि तुम चाकू की नोक पर चल रही हो। क्या यह सब सहने को तुम तैयार हो? अगर तैयार हो, तो मैं तुम्हारी मदद करूंगी।'

'हां, तैयार हूं', नन्ही जलपरी ने कांपती हुई आवाज में कहा।

'लेकिन यह मत भूलना कि मनुष्यों जैसी हो जाने के बाद तुम फिर दुबारा जलपरी नहीं बन सकोगी। न कभी अपनी बहनों के पास अपने पिता के महल में जा सकोगी। और अगर तुम राजकुमार का प्यार न पा सकी और उसने तुम्हारे साथ विवाह नहीं किया, तो तुम अमर आत्मा भी प्राप्त नहीं कर सकोगी।

'मैं इन सब बातों के लिए तैयार हूं', नन्ही जलपरी बोली। उसका चेहरा एकदम पीला पड़ गया था।

जादूगरनी ने कहा–'और तुम्हारी यह सब मदद मैं मुफ्त में नहीं कर रही हूं। तुम्हें इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी, और वह कीमत मामूली नहीं है। सारे समुद्र-लोक में सबसे मीठी आवाज तुम्हारी है। तुम सोच रही होगी कि उस आवाज से तुम राजकुमार को लुभाओगी। मगर वह आवाज तुम्हें अब मुझे दे देनी पड़ेगी। मुझे भी तो इस काढ़े को तलवार-जैसी तेज बनाने के लिए अपना खून, उसमें डालना पड़ रहा है!'

'अगर तुम मेरी आवाज ले लोगी, तो मेरे पास बचेगा ही क्या?'

जादूगरनी ने जवाब दिया–'तुम्हारा यह सुंदर शरीर, तुम्हारी सुंदर चाल और तुम्हारी चमकीली आंखें बची रहेंगी। इनसे तुम मनुष्य का दिल बड़ी आसानी से जीत लोगी। कहां गयी तुम्हारी सारी हिम्मत! लाओ, अपनी नन्ही जीभ निकालो। फीस के रूप में मैं उसे काटकर रखूंगी। उसके बाद ही तुम्हें काढ़ा मिलेगा।'

'तो ठीक है, काट लो।' जलपरी ने कहा।

जादूगरनी ने चूल्हे पर पतीली चढ़ा दी और नाखून से अपनी छाती खरोंचकर अपना काला खून उसमें टपकाया और तरह-तरह की चीजें डालकर उबालना शुरू किया। आखिरकार काढ़ा तैयार हुआ। वह पानी की

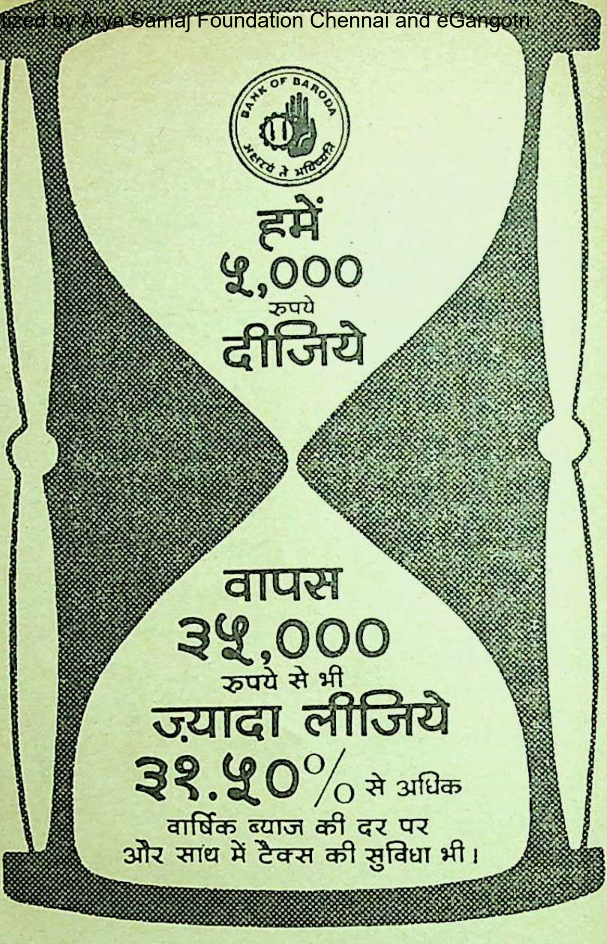

हमें
५,००० रुपये
दीजिये

वापस
३५,००० रुपये से भी
ज़्यादा लीजिये
३१.५०% से अधिक
वार्षिक ब्याज की दर पर
और साथ में टैक्स की सुविधा भी।

१,००० रु. या इससे अधिक हमारे पास जमा कीजिये...फिर देखिये यह रक़म किस प्रकार बढ़ती है...२० वर्षों में ७ गुनी से भी अधिक!

इस चार्ट को ध्यान से देखिये:

अवधि	वार्षिक ब्याज (लगभग)
६१ महीने	१३%
८४ महीने	१४%
१०८ महीने	१६%
१२० महीने	१७%
१४४ महीने	१९%
१८० महीने	२३%
२४० महीने	३१.५०%

३,००० रु. वार्षिक ब्याज की रक़म पर टैक्स से छूट. अधिक आमदनी वाले लोगों के लिये बहुत फ़ायदेमन्द.

अधिक जानकारी के लिये हमारी निकटतम शाखा के एजेन्ट से मिलिये.

चिर समृद्धि का सोपान
बैंक ऑफ़ बड़ौदा
(प्रमुख राष्ट्रीयकृत बैंक)
भारत तथा विदेशों—यू. के., केन्या, मॉरीशस, फ़िजी द्वीपसमूह, गियाना और यूनाइटेड अरब एमिरेट्स में कुल मिलाकर ८०० से भी अधिक शाखायें.

Shilpi-BOB-[illegible]/74 Hin

तरह साफ था। फिर जादूगरनी ने नन्ही जलपरी की जीभ काट ली। अब जलपरी न गा सकती थी, न बोल सकती थी।

जादूगरनी ने काढ़ा उसके हाथ में दे दिया और उससे कहा—'अगर रास्ते में पेड़ तुम्हें पकड़ने की कोशिश करें, तो उन पर एक बूंद काढ़ा टपका दो, उनके टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।'

जलपरी तेजी से दलदल और भंवरों में से निकल आयी। उसने अपने पिता के महल पर नजर डाली। अब महल की सब रोशनियां बुझ चुकी थीं। सब लोग सो गये थे। नन्ही जलपरी को उन सबको छोड़कर चले जाना था। उसे लगा कि दुःख से उसकी छाती फट जायेगी। वह चुपचाप बगीचे में गयी। उसने अपनी बहनों की क्यारियों में से एक-एक फूल तोड़ा और मुड़-मुड़कर महल को देखती हुई वह ऊपर आ गयी।

जब वह राजकुमार के किले की सीढ़ियों पर पहुंची, तो सूरज अभी निकला नहीं था। सुंदर चांदनी छिटकी हुई थी। उसने वह तेज काढ़ा एक घूंट में पी डाला। उसे लगा, जैसे दुधारी तलवार उसके गले में घोंप दी गयी हो। वह बेहोश हो गयी। फिर सूरज निकला और उसने उसे जगाया। नन्ही जलपरी के गले में बहुत दर्द हो रहा था। लेकिन वह सुंदर राजकुमार उसके सामने खड़ा था और अपनी चमकती हुई काली आंखों से उसे एकटक देख रहा था। नन्ही जलपरी की नजर अपनी पूंछ पर गयी। पूंछ गायब थी, और उसकी जगह दो बहुत ही सुंदर टांगें बन गयी थीं।

राजकुमार ने पूछा कि तुम कौन हो और कहां से आयी हो? नन्ही जलपरी बस उसे अपनी बड़ी-बड़ी नीली आंखों से देखती रही। अब वह बोल नहीं सकती थी न। राजकुमार ने उसका हाथ अपने हाथों में लिया और उसे अपने साथ महल में ले गया। जैसा कि जादूगरनी ने कहा था, हर बार जमीन पर पैर रखते समय नन्ही जलपरी को ऐसा लगता, जैसे वह चाकू की नोक पर चल रही हो। लेकिन उस दर्द को उसने सह लिया और बुलबुले की तरह चलती रही। राजकुमार उसकी चाल पर मुग्ध हो गया।

महल में उसे बहुत कीमती कपड़े पहनाये गये। सारे महल में कोई उसके बराबर सुंदर नहीं था। सुनहरे कपड़ों वाली सुंदर दासियों ने आकर दरबार में राजा, रानी और राजकुमार के सामने नाच शुरू किया। एक दासी ने बड़ा ही सुंदर गाना गाया। राजकुमार ने तालियां बजायीं और मुस्कराया। इस पर जलपरी को बहुत दुःख हुआ; क्योंकि अब वह तो गा नहीं सकती थी। वह उठी और अपनी बांहें फैलाकर पंजों के बल घिर्र-से घूम गयी और नाचने लगी। आज तक कोई इतना सुंदर नहीं नाचा था।

सब मुग्ध हो गये। सबसे ज्यादा मुग्ध हुआ राजकुमार, जो उसे 'नन्ही निराश्रिता' कहता था। वह नाचती रही, नाचती रही, हालांकि हर बार जमीन पर पैर रखते हुए उसे ऐसा लगता था, जैसे वह चाकू पर चल रही हो। राजकुमार ने उनसे कहा कि अब

से तुम हमेशा मेरे साथ रहा करो और मेरे कमरे के बाहर मखमल के गद्दे पर सोओ।

राजकुमार ने उसके लिए लड़कों जैसे कपड़े सिलवा दिये। वह उसे जंगलों में घुड़सवारी पर ले जाता। वह भी उसके साथ पहाड़ों की चढ़ाइयां चढ़ती। उसके पैरों में बहुत दर्द होता था और खून भी निकलने लगता था। फिर भी वह हंसती रहती थी। और पहाड़ पर चढ़ते-चढ़ते वे बादलों तक पहुंच जाते थे। रात को जब सब सो जाते, वह संगमरमर की चौड़ी सीढ़ियों पर आ बैठती और अपने दुखते पांवों को समुद्र के ठंडे पानी में डुबोकर बैठ जाती। तब उसे समुद्र के नीचे रहने वाले अपने रिश्तेदारों की याद आने लगती।

एक रात जब नन्ही जलपरी वहां बैठी थी, उसकी पांचों बहनें बांहों में बांहें डाले ऊपर आयीं और तैरने लगीं। उसने इशारे से उन्हें बुलाया। वे उसके पास आयीं और बताने लगीं कि उसके चले आने से सबको कितना दु:ख पहुंचा है। तब से वे रोज रात को उससे मिलने आतीं। एक रात को तो उसने अपनी बूढ़ी दादी और पिता को भी दूर तैरते देखा। लेकिन उसके पास तक आने का साहस उन्हें नहीं हुआ; वे दूर से ही बांहें फैलाकर उसे बुलाते रहे।

राजकुमार अब उसे बहुत चाहने लगा। वह उससे ऐसे प्यार करता, जैसे बच्चों से प्यार किया जाता है। जलपरी को अपनी रानी बनाने का खयाल उसके मन में कभी नहीं आया। लेकिन राजकुमार की रानी बनना जलपरी के लिए जरूरी था, नहीं तो वह अमर आत्मा नहीं पा सकती थी। एक दिन जब राजकुमार ने उसे बांहों में भरकर चूमा, तो जलपरी ने आंखों ही आंखों में उससे पूछा—'क्या आप सबसे ज्यादा प्यार मुझसे ही करते हैं?'

राजकुमार ने उत्तर दिया—'हां, तुम मुझे सबसे ज्यादा प्यारी लगती हो, क्योंकि तुम्हारा दिल सबसे कोमल है। यों भी तुम्हें देखकर मुझे एक लड़की की याद आती है, जिसे मैंने सिर्फ एक बार देखा था। मैं जहाज में जा रहा था, जहाज डूब गया। लहरों ने मुझे एक मंदिर के पास तट पर पटक दिया। मंदिर में बहुत-सी लड़कियां थीं। उनमें जो सबसे छोटी थी, उसने मुझे देखा और मेरी जान बचायी। अगर मैं किसी से प्यार कर सकता हूं, तो उसी से। लेकिन

तुम्हारा चेहरा उससे बहुत मिलता है । इसीलिए तुम मेरे लिए लगभग उसके समान हो । वह लड़की तो मंदिर की है, मुझे कभी मिलेगी नहीं; इसलिए किस्मत ने तुम्हें मेरे पास भेजा है । हम कभी अलग नहीं होंगे ।'

जलपरी सोच रही थी–'हाय, इसे क्या पता कि मैंने ही इसकी जान बचायी थी । मैंने ही इसे समुद्र के पार जंगल में उस मंदिर तक पहुंचाया था । मैंने झाग में छिपकर उस लड़की को भी देखा था, जिसे यह मुझसे भी ज्यादा प्यार करता है । यह कहता है कि वह लड़की मंदिर की है; वह कभी इसे नहीं मिलेगी । ठीक है, मैं पूरे दिल से इसे प्यार करूंगी, इसके लिए अपने प्राण भी दे दूंगी ।'

लेकिन कुछ दिन बाद नन्ही जलपरी ने सुना कि राजकुमार का विवाह किसी राजा की बेटी से होने वाला है । एक जहाज को सजाया जा रहा है, जिस पर चढ़कर राजकुमार उस राजकुमारी को देखने जायेगा; जलपरी को भी उसके साथ जाना है । जलपरी यह सब सुनकर हंस दी । राजकुमार ने उसे बताया–'माताजी और पिताजी कह रहे हैं, इसलिए मुझे जाना ही पड़ेगा । लेकिन वे चाहे कितना भी जोर दें, मैं उस राजकुमारी को अपनी पत्नी नहीं बनाऊंगा । मैं उससे प्यार नहीं कर सकता; अगर मुझे शादी करनी ही पड़े, तो मैं शादी करूंगा सिर्फ तुमसे–बोलती आंखों वाली अपनी इस गूंगी नन्ही निराश्रिता से ।' और उसने जलपरी के ओंठ चूम लिये ।

जलपरी भी राजकुमार के साथ जहाज में चल पड़ी और अगले दिन जहाज पड़ोसी राजा की राजधानी में पहुंचा । बड़ी धूमधाम से उनका स्वागत किया गया । रोज राजकुमार के लिए दावतें होतीं, नाच-गान होता; मगर राजकुमारी के दर्शन न होते । उन्हें बताया गया कि राजकुमारी विदेश में एक मंदिर के विद्यालय में पढ़ाई पूरी कर रही है । अंत में एक दिन राजकुमारी आ पहुंची । जलपरी ने उसे देखा और उसे मानना पड़ा कि ऐसी सुंदर लड़की मैंने आज तक नहीं देखी । उसका रंग चंपा के फूल जैसा था, उसकी नीली आंखें मुस्कान से भरी थीं ।

जब राजकुमार ने राजकुमारी को देखा, तो वह खुशी से चीख उठा–'ओह तुम ! वही जिसने मेरे प्राण बचाये थे, जब मैं समुद्र के किनारे अधमरा पड़ा था !' और उसने उसे बांहों में भर लिया और जलपरी से कहा–'मेरी नन्ही निराश्रिता, आज मेरी सबसे बड़ी इच्छा पूरी हुई । तुम्हें भी इससे खुशी होगी, क्योंकि तुम मुझे सबसे ज्यादा चाहती हो ।'

राजकुमार का राजकुमारी से विवाह हो गया और वह उसे लेकर जहाज में वापस अपने शहर को लौट पड़ा ।

जब सांझ हुई तो जहाज पर रंग-बिरंगी लालटेनें जलायी गयीं । मल्लाह नाचने-गाने लगे । नन्ही जलपरी को उस दिन की याद हो आयी, जब वह पहली बार समुद्र के ऊपर आयी थी और उसने ऐसा ही दृश्य देखा था । वह भी नाच में शामिल हो गयी और ऐसा सुंदर नाची कि सब 'वाह ! वाह !'

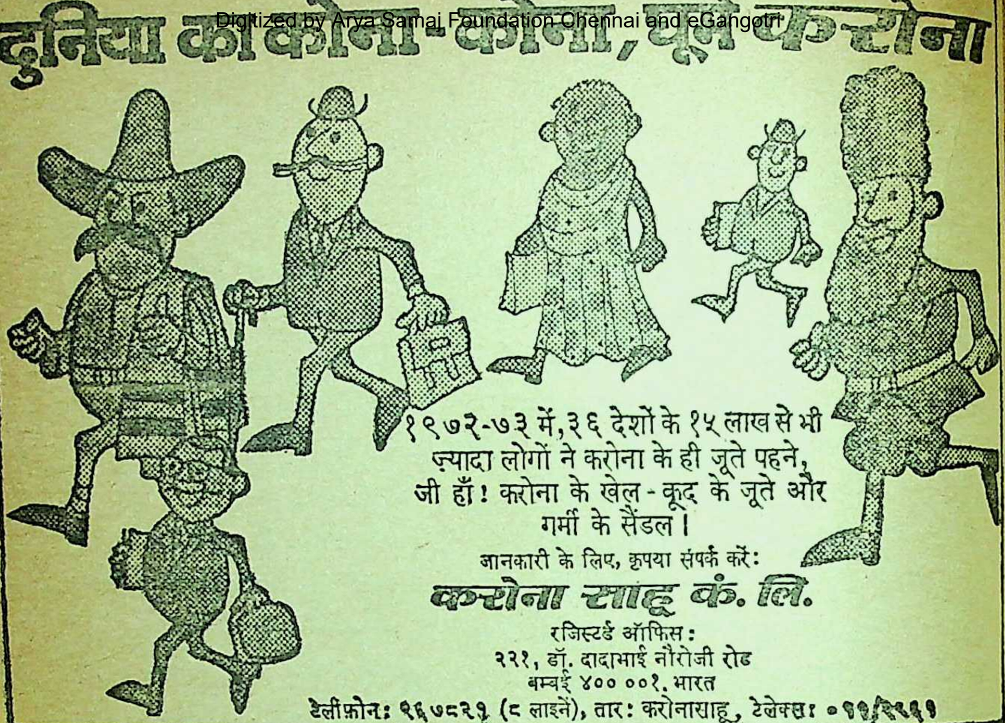
दुनिया का कोना-कोना, घूमे करोना

१९७२-७३ में, ३६ देशों के १५ लाख से भी
ज़्यादा लोगों ने करोना के ही जूते पहने,
जी हाँ! करोना के खेल-कूद के जूते और
गर्मी के सैंडल।

जानकारी के लिए, कृपया संपर्क करें:

करोना साहू कं. लि.

रजिस्टर्ड ऑफिस:
२२१, डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड
बम्बई ४०० ००१. भारत
टेलीफ़ोन: २६७८२१ (८ लाइनें), तार: करोनासाहू, टेलेक्स: ०११/२९९१

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

(भारत का सबसे बड़ा रेयान और सिंथेटिक फाइबर की बुनाई,
रंगाई और फिनिशिंग का कारखाना)

—: उत्पादन :—

नाना रंगों और डिजाइनों के रेयान और सिंथेटिक वस्त्र—पुरुष और स्त्रियां,
बूढ़े और बच्चे सभी के लिए बेजोड़ और ब या वैविध्य।

बिक्री और फुटकर दुकान :—

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

डॉ. ई. मोसेस रोड, महालक्ष्मी, बंबई ११.

टे. नं. ३९४०२१—२२

कर उठे। उसके पैर ऐसे दुख रहे थे, जैसे वह चाकुओं पर चल रही हो; लेकिन उसे कुछ पता नहीं लग रहा था, क्योंकि उसके दिल का दर्द और भी गहरा था। वह जानती थी कि यही अंतिम रात है, जब वह राजकुमार को देख सकेगी। यही अंतिम रात है, जिसमें वह उसके साथ हवा में सांस ले सकेगी, गहरे समुद्र और तारों-भरे आकाश को देख सकेगी। इसके बाद तो उसके लिए अंतहीन रात है, जिसमें न विचार होंगे, न सपने; क्योंकि वह अमर आत्मा को पा नहीं सकी और कभी पा सकेगी भी नहीं।

आधी रात के बाद भी नाच-गान चलता रहा, लोग आनंद मनाते रहे। नन्ही जलपरी हंसती रही, नाचती रही, जबकि उसके मन में तो मौत का विचार घूम रहा था। अंत में राजकुमार ने राजकुमारी को चूमा और वे दोनों सोने चले गये।

अब जहाज पर सन्नाटा था; सिर्फ कर्णधार जाग रहा था। जलपरी जहाज के डेक पर जंगले पर झुकी खड़ी थी और सूरज के निकलने की राह देख रही थी। वह जानती थी कि सूरज की पहली किरण उसकी जान ले लेगी।

तभी उसने समुद्र की सतह पर अपनी बहनों को देखा। उनके चेहरे भी उसी की तरह पीले थे। उनके लंबे-लंबे बाल गायब थे। जहाज के पास आकर वे बोलीं—'हमने अपने बाल जादूगरनी को दे दिये, जिससे तुम्हें कल सवेरे मरने से बचाने में वह हमारी मदद करे। देखो, उसने यह पैना चाकू दिया है। सूरज निकलने से पहले यह चाकू तुम राजकुमार के सीने में भोंक देना। जब उसका खून तुम्हारे पांवों को छुएगा, वे जुड़कर पूंछ बन जायेंगे। तब तुम फिर से जलपरी बन जाओगी और समुद्र के नीचे हमारे पास आ सकोगी और तीन सौ साल तक जी सकोगी, जिसके बाद तुम झाग बन जाओगी। जल्दी करो। सूरज निकलने से पहले या तो राजकुमार को मरना होगा, या तुम्हें। दादी बहुत दुःखी हैं, रोते-रोते उनके सारे बाल झड़ गये हैं। जल्दी करो, सूरज निकलने ही वाला है।' और वे गोता लगाकर नीचे चली गयीं।

नन्ही जलपरी राजकुमार के कमरे में गयी। राजकुमारी उसके सीने पर सिर रखे सो रही थी। उसने झुककर राजकुमार का माथा चूमा। फिर उसने आसमान की ओर देखा, जिसमें अब सवेरे की लाली छा रही थी। और फिर उसने अपने हाथ के चाकू की ओर देखा। तभी राजकुमार ने नींद में राजकुमारी का नाम लिया—उसके दिल में सिर्फ राजकुमारी थी। जलपरी के हाथ में चाकू कांपा और उसने उसे समुद्र में फेंक दिया। जहां वह पानी में गिरा, वहां खून की बूंद-सी उभरी। जलपरी ने आंसू-भरी आंखों से राजकुमार को अंतिम बार देखा और जहाज से समुद्र में छलांग लगा दी। उसका शरीर घुलकर झाग बनने लगा।

फिर समुद्र में से सूरज ऊपर उठा। उसकी नरम-नरम किरणें ठंडे झाग पर पड़ीं और नन्ही जलपरी को ऐसा नहीं लगा कि

मोहन राकेश का महत्वपूर्ण
अंतिम नाटक
पैर तले की जमीन
विशिष्ट साज-सज्जा के साथ
जनवरी, 1974 में प्रकाश्य

विशिष्ट नवीन प्रकाशन

भारतीय संस्कृति : कुछ विचार : डा० राधाकृष्णन्–भारत के धर्म और संस्कृति पर विद्वान लेखक की एक और रचना। 10.00

बकलम खुद : मोहन राकेश—नयी कहानी आन्दोलन से संबंधित लेखों का प्रथम संपूर्ण संग्रह। आलोचना साहित्य का आधार ग्रंथ। 15.00

काली आंधी : कमलेश्वर—अनेक वर्ष बाद प्रकाशित लेखक का मार्मिक उपन्यास जिस पर फिल्म भी बन रही है। 8.00

उसके बयान : कृष्ण बलदेव वैद—प्रख्यात कलाकार रामकुमार के रेखांकनों से युक्त लेखक की नवीन महत्वपूर्ण कृति। 10.00

मुझे माफ करना : दिनेशनन्दिनी डालमिया— प्रकाशन से पूर्व ही प्रशंसित लेखिका का महत्वपूर्ण उपन्यास। 12.00

मेरी प्रिय कहानियां : राम कुमार—इस लोकप्रिय कहानी माला में एक और महत्वपूर्ण हस्ताक्षर, लेखक की भूमिका सहित। 7.00

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट. दिल्ली-110006

वह मरी हुई है। उसने देखा कि सूरज चमक रहा है और ऊपर सैकड़ों सुंदर जीव मंडरा रहे हैं। कांच की तरह उनके आर-पार देखा जा सकता था। उनकी आवाजें मीठी रागिनियों जैसी थीं। मगर कोई आदमी उन्हें देख नहीं सकता था, उनकी आवाजें सुन नहीं सकता था। उनके पंख नहीं थे, फिर भी वे हवा में उड़ रही थीं। नन्ही जलपरी ने देखा कि उसका शरीर भी उन्हीं के जैसा है और वह झाग में से ऊपर उठ रही है।

'मैं कहां जा रही हूं...?' उसने पूछा। उसकी आवाज उन्हीं के जैसी हो गयी थी।

'हवा की बेटियों के पास आ रही हो।' उनमें से एक बोली–'तुम भी हवा की बेटी बन गयी हो। जलपरी की आत्मा नहीं होती, वह मनुष्य के प्रेम से ही पा सकती है। हवा की बेटियों की भी आत्मा नहीं होती; लेकिन अच्छे काम करके वे अपने लिए आत्मा गढ़ सकती हैं। हम अब गर्म देशों में जायेंगी, जहां इस समय बीमारी से भरी हवा है। वहां हम ठंडी हवा पहुंचायेंगी। हम हवा में फूलों की खुशबू फैलायेंगी, जिससे लोगों को आराम और स्वास्थ्य मिलेगा। इस तरह जब हम तीन सौ साल तक अच्छे काम करती रहेंगी, हमें अमर आत्मा प्राप्त हो जायेगी और मनुष्यों की तरह अनंत आनंद में हमारा भी हिस्सा होगा। प्यारी नन्ही जलपरी, तुमने भी इसके लिए बहुत प्रयत्न किया है, बहुत कष्ट सहा है; सो तुम हवा की बेटी बन गयी हो। अब तीन सौ साल तक अच्छे काम करके तुम भी अपने लिए अमर आत्मा गढ़ सकती हो।'

नन्ही जलपरी ने अपनी कांच-जैसी बांहें भगवान के बनाये सूरज की ओर फैला दीं और पहली बार उसकी आंखों में आंसू उमड़ आये।

जहाज पर फिर से चहल-पहल शुरू हो गयी थी और नन्ही जलपरी ने देखा कि राजकुमार और उसकी सुंदर वहू उसे ढूंढ़ रहे हैं। उदास आंखों से वे समुद्र के झाग को देख रहे थे, जैसे उन्हें पता हो कि नन्ही जलपरी लहरों में कूद पड़ी थी। उसने राजकुमार की वहू के बहुत पास जाकर उसका माथा चूम लिया और राजकुमार पर मुस्करायी; पर वे लोग उसे देख नहीं सके। फिर वह हवा की दूसरी बेटियों के साथ एक गुलाबी बादल पर चढ़ गयी, जो आकाश में तैर रहा था।

हवा की एक बेटी बोली–'तीन सौ साल घूमकर हम स्वर्ग में पहुंच जायेंगी।'

दूसरी बोल उठी–'इससे पहले भी पहुंच सकती हैं। तब तक हम बाल-बच्चों वाले मनुष्यों के घरों में जायेंगी। जिस दिन भी हमें कोई अच्छा बच्चा दिखाई देगा, जो अपने माता-पिता को सुखी बनाता है, हम मुस्करा देंगी और इससे हमारे तीन सौ साल में से एक साल कम हो जायेगा। लेकिन अगर हमें कोई दुष्ट और जिद्दी बच्चा दिखाई दे गया, तो दुःख से हमारे आंसू निकल आयेंगे, और प्रत्येक आंसू से हमारे तीन सौ सालों में एक दिन और जुड़ जायेगा।'

★

पर्वत-पुत्र भोटिया

जगदीशचंद्र पंत

कुमायूं के जिला पिठौरागढ़ के जोहार परगने के अंतर्गत तेजम तथा दारमा की धौलीगंगा के काली नदी से मिलनस्थल (जो धारचूला से साढ़े ग्यारह मील आगे उत्तर में है) के खेला नामक समीपवर्ती स्थान के उत्तर का तिब्बत की सीमा को छूने वाला समस्त भारतीय भूखंड भोट है। उत्तरकाशी जिले में जैलूखंगा गिरिद्वार के पास जाड़गंगा और भागीरथी की घाटी तथा चमोली जिले के माणा गिरिद्वार के पद तल में विष्णुगंगा की घाटी और चमोली के पूर्व की ओर नीति गिरिद्वार के पद दल में धौलीगंगा की घाटी गढ़वाली भोट कहलाती है। उत्तरकाशी और चमोली जिलों के इस भूखंड को प्राकृतिक संरचना के आधार पर अलकनंदा-उपत्यका भी कहा जाता है। संमिलित रूप से महाहिमालय के इस सारे भूखंड के लिए 'भोट' शब्द का प्रयोग किया जाता है और इस प्रदेश में निवास करने वाले बहुसंख्यक जन को भोटिया या भोटांतिक नाम से जाना जाता है।

सदियों से उत्तराखंड का महत्त्वपूर्ण व्यापार इन्हीं लोगों के हाथों में था। कृषियोग्य भूमि के अभाव और विषम जलवायु के कारण यहां खेती करना आसान नहीं है। साल में बस एक फसल होती है, जिसकी बुआई अप्रैल में होती है और कटाई सितंबर तक समाप्त कर ली जाती है। इसमें उवा (एक प्रकार का जौ), नपल (एक प्रकार का गेहूं), सरसों की पैदावार होती है। शेष अवधि में यह सारा भूभाग बर्फ की सफेद चादर ओढ़े रहता है। अतः प्राचीन काल से इस विषम भूभाग के निवासियों की जीविका का प्रधान साधन रहा है व्यापार।

प्राचीन काल में भोटांतिकों या भोटियों का व्यापार तिब्बत व भारत के प्रमुख नगरों तक ही नहीं, वरन एशिया के विभिन्न भागों तथा मिस्र व यूरोप तक फैला हुआ था। ये लोग तिब्बत से सुहागा, नमक, सोना, बहुमूल्य पत्थर, जड़ी-बूटियां, कच्ची ऊन व ऊन का बना सामान, घोड़े जोबा, भेड़-बकरियां, सुरागाय, चंवर एवं पशुओं की खाल आदि लाते थे और बदले में विलायती व भारतीय कपड़े, गेहूं, चावल, दाल, चीनी, गुड़, चाय, तंबाकू आदि का निर्यात करते थे।

तिब्बत के साथ के इस व्यापार में इन वीर पर्वत-पुत्रों को नाना प्रकार के संकटों का सामना करना पड़ता था। महाहिमालय का पूरा ही क्षेत्र दुर्गम रास्तों, झरनों, नदियों तथा हिमनदों के लिए प्रसिद्ध है। इससे भी विकट हैं वे दर्रे, जिन्हें पार करके ही तिब्बत के पठार में प्रवेश पाया जा सकता है। ये हैं ऊंटाधुरा दर्रा (१७,५९० फुट), लेमपिया (१८,१५० फुट), लिपु-

लेख (१६,७८० फुट), नीति (१६,६६२ फुट), माना (१८,६५० फुट), दारमा दर्रा (१८,५१० फुट)। साथ ही प्रकृति की उग्रता भी बहुधा इन्हें चुनौती देती थी। तिब्बत में ये लोग अपने व्यापारिक दांव-पेचों में इस तरह उलझ जाते कि सही समय पर स्वदेश लौटना मुश्किल हो जाता था। तब इन्हें गिरती बर्फ व बर्फीले तूफानों का सामना करते हुए अपने जानवरों के साथ बीहड़ रास्ते पार करने पड़ते थे, जिसमें कभी प्राणों पर भी बन आती थी।

वर्ष-भर में दो बार ये लोग तिब्बत की व्यापारिक यात्रा करते थे। पहली यात्रा जून में प्रारंभ होती थी और दूसरी सितंबर में। पहली की अपेक्षा दूसरी यात्रा अधिक संघर्षमय रहती थी। इनकी यात्रा आरंभ होने के पूर्व तिब्बती प्रशासन अपने एजेंट भेजता था, जिन्हें सरजिये कहा जाता था। ये सरजिये भोट-प्रदेश में यह देखते थे कि कहीं छूत आदि की बीमारी तो नहीं फैली हुई है। जब ये सरजिये हर प्रकार से आश्वस्त हो जाते, तभी भोटियों को, जो घाटों पर पहले से ही घाटों के खुलने की उतावली से प्रतीक्षा कर रहे होते, तिब्बत की ओर जाने की अनुमति मिल पाती थी।

यात्रा से पहली रात्रि को बड़े पैमाने पर जश्न मनाया जाता। औरतें अपने पति की सकुशल वापसी की मनौतियां मनातीं। जिस दिन यात्रा शुरू होती; उस दिन पूरा गांव व्यापारिक काफिले के पीछे मीलों दूर तक विदाई देने चल पड़ता। काफिले में घोड़े, चमरगाय व बकरियां मुख्य रूप से शामिल किये जाते। ढोल, नगाड़े, तुरही की झंकार के साथ काफिला आगे बढ़ता। विदाई के समय गृहिणियों के नेत्र अश्रुपूरित हो उठते और पुरुषों की मौन वेदना की रेखाएं उभर आतीं।

भोट-प्रदेश से तिब्बत की मंडियां काफी दूरी पर हैं और मानसरोवर प्रदेश में रक्षा का कोई प्रबंध न होने से भोटिये केवल ईश्वर के भरोसे, सामान से लदे हुए अपने जानवरों के साथ रात-दिन चलते रहते, तब कहीं व्यापारिक मंडियों तक पहुंच पाते थे। तिब्बती व्यापार-पद्धति भी अजीबो-गरीब थी। प्रायः व्यापार वस्तु-विनिमय के रूप में होता था। प्रत्येक भोट व्यापारी का आढ़तिया होता था, जो तिब्बत व चीन

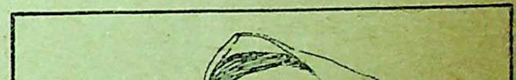

भोटिया महिला

जेनिथ

**औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।**

स्टील पाइप
स्टील कटर

**इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।**

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित औद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत

**जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.**

**दि अवध शुगर मिल्स लि.
हरगांव
जि. सीतापुर, उ. प्र.**

शुद्ध दानेदार चीनी और
उत्तम स्पिरिटों के निर्माता

* * *

**बरार आइल इंडस्ट्रीज
वनसदा पेठ·
अकोला (महाराष्ट्र)**

वनसदा ब्रांड वनस्पति
के निर्माता

* * *

**हरगांव आइल प्रॉडक्ट्स
सीतापुर, उ. प्र.**

मूंगफली के तेल
साल्वेंट एक्स्ट्रैक्टेड आइल
और तेल विमुक्त खली
के निर्माता

के व्यापारियों के साथ उनका व्यापारिक संबंध स्थापित करवाता था।

आढ़तिये के साथ भोट व्यापारी की पवित्र मित्रता होती। इस पवित्र गठबंधन का साक्षी होता था 'सरछू मुल्छू'। इसमें दोनों व्यापारी मित्र एक ही प्याले में एक-दूसरे की जूठी शराब पीते थे। 'सरछू मुल्छू' पर इन लोगों की गहरी आस्था थी। 'सरछू मुल्छू' शब्द की कहानी यह है कि मित्रता-स्थापन की इस रस्म में पी जाने वाली स्थानीय शराब (जांण) में 'सरछू' (सर=सोना, छू=पानी) अर्थात् सोने का पानी और 'मुल्छू' (मुल=चांदी, छू=पानी) अर्थात् चांदी का पानी मिला दिया जाता था। इस शराब को गंगाजल के समान पवित्र माना जाता और इसी से व्यापारिक मित्रता का श्रीगणेश होता। यही विश्वास भोट एवं तिब्बती व्यापारियों की मित्रता को स्थायी बनाये हुए था।

इस व्यापार की दूसरी अनोखी बात थी 'गमग्या'। यह एक व्यापारिक प्रतिज्ञा-पत्र होता था, जिसके बिना तिब्बत में किसी भी प्रकार का व्यापार संभव नहीं था। इसे एक प्रकार का व्यापारिक रुक्का ही समझिये। इसमें दोनों ओर के व्यापारियों की व्यापारिक शर्तें, मोहरें (जिसे थचिया कहते हैं) एवं दस्तखत होते थे। गमग्या तिब्बती व्यापारियों के पास न होकर भोटिया व्यापारियों के ही पास रहता था; क्योंकि तिब्बत पर भोटियों का व्यापारिक एकाधिकार था। 'गमग्या' हो जाने के बाद दोनों ओर के व्यापारी एक छोटा पत्थर तोड़कर एक-एक टुकड़ा अपने पास रख लेते थे, जिसे 'सिंगच्यांद' कहा जाता था।

ये सब क्रियाएं व्यापारिक छल-कपट से बचने के लिए की जाती थीं। 'सरछू-मुल्छू', 'गमग्या' व 'सिंगच्यांद' हो जाने के बाद दोनों पक्षों के बीच मित्रता पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती थी। गमग्या करने वाली पीढ़ी के कालकवलित हो जाने के बाद भी उस व्यापारिक प्रतिज्ञा-पत्र के आधार पर लंबे समय तक व्यापार चलता ही रहता।

गमग्या करने वालों के देहांत के बाद कालांतर में यदि एक व्यापारी को दूसरे व्यापारी की मित्रता पर शक हो जाये या गमग्या की चोरी हो गयी हो, तब दोनों पक्ष 'सिंगच्यांद' अर्थात् पत्थर के टूटे हुए टुकड़ों का मिलान करते। यदि वे टुकड़े ठीक से मिल जायें, तो आपसी भ्रम दूर हो जाता और फिर से व्यापार सुचारु रूप से चल पड़ता।

भोटिये आपस में गमग्या का क्रय-विक्रय भी कर लेते थे। उस हालत में गमग्या बेचने वाले व्यापारी की जगह उसके क्रेता व्यापारी से तिब्बती व्यापारी की मित्रता शुरू हो जाती थी। गमग्या पर पूरे खानदान का यहां तक कि ब्याही गयी लड़की तक का हक होता था। गमग्या एक प्रकार से संपत्ति थी।

कभी-कभी छोटा भोटिया व्यापारी भी बड़े-बड़े गमग्या कर लेता था। जब वह अपनी गरीबी के कारण तिब्बती व्यापारी

मित्र को पूरा सामान नहीं दे पाता था, तब अपना गमग्या किसी धनी भोटिया व्यापारी के हाथ बेच देता था। उसी दिन से उसे खरीदने वाला भोटिया तिब्बती व्यापारी के साथ अपना व्यापारिक संबंध जोड़ लेता था।

ज्ञानिमा जैसी बड़ी व्यापारिक मंडियों में सामान की खरीद-फरोख्त एक विचित्र व्यापारिक प्रणाली से की जाती थी, जो 'थुवा चित्सुंग' कहलाती थी। मंडियों में आये सामान के क्रेता मोल-भाव करने के पूर्व अपनी पसंद की वस्तुओं पर अपने नाम की मोहर (थचिया) लगा देते थे। जिस वस्तु पर थचिया लगा हो, उसका मोल-भाव दूसरा व्यापारी तब तक न करता, जब तक कि पहला क्रेता व्यापारी उस वस्तु के क्रय के बारे में अपना निर्णय न दे दे।

यह था तिब्बत के साथ भोटियों के व्यापार का स्वरूप, जिसमें दोनों ओर का व्यवहार सत्य व धर्म पर आधारित होता था। उसमें झूठ व फरेब नाम की कोई चीज नहीं थी। परंतु १९६२ के चीनी आक्रमण के आघात ने इस सुंदर परंपरा और अर्थ-तंत्र को ध्वस्त कर दिया। अब तो बीते वैभव की स्मृतिछाया ही रह गयी है। यदि परिस्थितियों में परिवर्तन नहीं हुआ, तो आने वाली पीढ़ियों के लिए ये सब इतिहास की बातें रह जायेंगी।

महाहिमालय तिब्बत के साथ सटा हुआ है, फलतः भोटियों का मुख्य व्यापार तिब्बत से ही होता रहा। तिब्बत से निरंतर संपर्क के कारण ये लोग तिब्बतियों से पूर्णतया घुलमिल गये थे। इनकी भाषा एवं वेश-भूषा पर भी तिब्बतियों की छाप पड़ गयी थी। इसी समानता को देखते हुए अनेक स्वदेशी व विदेशी लेखकों ने इनके बारे में अनेक नितांत भ्रांतिमूलक बातें लिख डाली हैं।

हमारे प्राचीन ग्रंथों में भोटिया लोगों के बारे में बहुत-कुछ लिखा मिलता है। फिर भी यह जाति आम भारतीयों के लिए अजूबा बनी हुई है। इसके सामाजार्थिक जीवन को गहराई से देखने से स्पष्ट हो जाता है कि मूलरूप में यह जाति हिंदू संस्कारों में फली-पनपी है। व्यापारिक कारणों से कई तिब्बती रस्मों को अपना लेने मात्र से यह तिब्बती नहीं हो जाती। परंतु तिब्बती रस्मों से यह लगाव भोट-तिब्बत व्यापार में दीर्घकाल तक महत्त्वपूर्ण कड़ी का काम करता रहा।

जैसे हिंदू धर्म का स्वरूप एक भौगोलिक क्षेत्र से दूसरे भौगोलिक क्षेत्र में तनिक भिन्न हो जाता है, उसी प्रकार भोटियों के भी धार्मिक-सांस्कृतिक रीति-रिवाजों में क्षेत्रीय अंतर हैं। विषम प्राकृतिक बनावट वाली दारमा घाटी के ब्यांस-चौंदास पट्टियों के रीति-रिवाज जोहार घाटी के भोटियों के रीति-रिवाज से भिन्न हैं। जोहार घाटी के भोटियों के रीति-रिवाज कुमायूं के लोगों से मिलते-जुलते हैं। इनका अभी भी दारमा के भोटियों से रोटी-बेटी का संबंध आमतौर पर नहीं होता।

दारमा घाटी की सांस्कृतिक भिन्नता को

देखते हुए शेरिंग ने लिखा है 'यह चौंदास है, भोटियों का देश, मगर देखने वाला फौरन जान जाता है कि यह भिन्न देश है। बिलकुल भिन्न लोग यहां बसते हैं, जिनके चेहरे, धर्म, वेश, परिवेश आदि सभी कुछ दक्षिणी प्रदेश की तुलना में सर्वथा भिन्न हैं।'

दारमा घाटी में शादी-ब्याह की वर्तमान दमघोंटू प्रथा की जगह पहले स्वच्छंद यौनविहार 'रांङ भांङ' की प्रथा थी। रांङ-भांङ को एक प्रकार का क्लब समझिये। इसमें कुंआरे लड़के-लड़कियां अपने स्वजनों के साथ रात-भर लोकगीत व लोकनृत्यों में डूबे रहते थे। बीच-बीच में स्थानीय शराब 'जांण' के भी दौर चलते थे, जो आमोद-प्रमोद को चरमबिंदु पर पहुंचाने में सहायक होते। लोकगीत व लोकनृत्यों के माध्यम से युवक और युवती निकट आते, परिचय धीरे-धीरे गहराता और शादी के पवित्र संबंध में परिणत हो जाता। स्वयंवर की यह प्रथा अब तो नहीं रही; फिर भी ढूंढ़ने पर इसके छुटपुट अवशेष आज भी मिल सकते हैं।

मृतक की आत्मा की शांति के लिए इनमें 'डुरिंग' संस्कार होता है। यह हमारे गरुड़-पुराण-वाचन जैसा होता है। इसका लिखित साहित्य तो नहीं है, परंतु बड़े-बूढ़ों को यह मुंहजबानी याद है। मृतक की आत्मा को चमरगाय में प्रवेश कराया जाता है। चमरगाय के अभाव में भेड़ भी काम दे सकती है। इस चमरगाय या भेड़ को गेरू से रंगा जाता है और बाद में गांव के लोग इसे स्थानीय तीर्थस्थान में पवित्र पानी पिलाने ले जाते हैं। इस जानवर का वैसा ही आदर-संमान किया जाता है, जैसा कि यदि वह व्यक्ति जीवित होता, तो उसका होता। मृतक के लिए साल-भर मातम मनाया जाता है। इस अवधि में शृंगार आदि करना वर्जित है यहां तक कि साल-भर तक दांत भी साफ नहीं किये जाते। पितरों का श्राद्ध भी होता है, जो कि साल में कभी भी अपनी सुविधा के अनुसार किया जा सकता है। श्राद्ध में वे सब चीजें चढ़ायी जाती हैं, जिनका शौक मृतक को था। इसमें प्रथम स्थान होता है शराब का।

जातकर्म भी अपनी सुविधा के अनुसार किसी भी दिन कर लिया जाता है। मगर प्रसूता को दसवें दिन से शुद्ध मान लिया जाता है। क्योंकि ऊंचाई वाले स्थानों में नीचे की घाटियों से ब्राह्मण ठीक समय पर पहुंच नहीं पाते, इसलिए प्रायः बच्चों का नामकरण संस्कार कई महीनों के बाद भी हो सकता है। पहले नाम प्रायः माहों के नाम पर रखे जाते थे।

प्रवासी प्रवृत्तियों में पलने व हिमालय के धुर दुर्गम स्थानों में रहने के कारण भोटिया गहरे ईश्वरभक्त हैं। प्राचीन काल से ही वे स्थानीय देवी-देवताओं व भूत-प्रेतों को श्रद्धा से पूजते आ रहे हैं, जिनमें मुख्य हैं भूमियां, छिपला, हरद्योल, भूम्याल आदि। भूम्याल देवता की पूजा पहले बैल की बलि तथा शराब के चढ़ावे से की जाती थी; पर अब वह प्रथा बंद हो गयी है।

भोटिया छोटी से छोटी मनौती के लिए

भी ईश्वर को बड़ी से बड़ी भेंट देने में नहीं हिचकता है। एक भोटिया जंगल में बकरियां चराने गया। संयोग से उसकी एक बकरी खो गयी। वह प्रार्थना करने लगा कि हे परमेश्वर यदि मेरी बकरी मिल गयी, तो मैं तेरे दरबार में जौल्या (एक साथ पैदा हुई दो बकरियां) काट दूंगा। उसकी यह बात सुनकर एक राहगीर पूछ बैठा—'तेरी तो एक बकरी खोयी है और उस एक के बदले में भला तू दो बकरियां क्यों काटना चाहता है?' भोटिये ने जवाब दिया—'भाई साहब! मैं देता थोड़े ही हूं, मैं तो परमेश्वर को ठगता हूं।' यह है भोटियों की सरलता का एक उदाहरण।

चीनी आक्रमण के बाद भारत-चीन का व्यापार तो समाप्त हुआ ही, साथ ही सदियों से चली आ रही भोट-तिब्बत व्यापार की मशाल भी बुझ गयी। व्यापारी भोटिया मजदूरपेशा बन गया है और अपनी पुरानी संस्कृति को, पुरानी परंपराओं, रीति-रिवाजों और तौर-तरीकों को तिलांजलि देकर शहरी और आधुनिक बनने का यत्न कर रहा है। आधुनिक होना बुरा नहीं, मगर अपनी जड़ें काट लेना बुद्धिमानी नहीं है।

—राजकीय महाविद्यालय, रानीखेत,
जिला अल्मोड़ा, उ. प्र.

★

फुग्गों-से फूलते नगर

क. विश्व के सबसे बड़े बारह नगर और उनकी आबादी इस प्रकार है :

१. न्यूयार्क (१६३ लाख); २. टोक्यो (१४९ लाख); ३. लंदन (१०५ लाख); ४. शंघाई (१०० लाख); ५. पेरिस (८४ लाख); ६. लास एंजल्स (८४ लाख); ७. ब्यूनोस एयर्स (८४ लाख); ८. ओसाका (७६ लाख); ९. मास्को (७१ लाख); १०. पीकिंग (७० लाख); ११. कलकत्ता (६९ लाख); १२. रायो डी जेनीरो (६८ लाख)।

ख. मगर आबादी जिन शहरों की सबसे तेजी से बढ़ रही है, उनमें से पहले बारह और १९८५ तक उनकी आबादी कितने प्रतिशत बढ़ चुकी होगी, उसका विवरण यों है :

१. बांडुंग (२४२%); २. लागोस (१८६%); ३. कराची (१६३%); ४. बोगोटा (१४६%); ५. बगदाद (१४५%); ६. बैंकाक (१३७%); ७. तेहरान (१३२%); ८. स्योल (१२४%); ९. लिमा (१२१%); १०. साओ पाउलो (११५%); ११. मेक्सिको सिटी (११३%); १२. बंबई (१०९%)।

अगर आप अपने भौगोलिक ज्ञान की परीक्षा करना चाहते हैं, तो बताइये ये नगर—खास कर ख वर्ग के कौन-से नगर—किस देश में हैं। फिर अपने उत्तरों की जांच किसी अच्छे एटलस से कर लीजिये।

★

* रूस-चीन विवाद
* पांचवां अरब-इस्रायल युद्ध?
* आजाद की पिस्तौल....
* कळप * अंधार पख

पुस्तकास्वादन

*** रूस-चीन विवाद * लेखक : गणेश मंत्री; पृष्ठसंख्या : १८८; मूल्य : २० रुपये। * पांचवां अरब-इस्रायल युद्ध ? * लेखक : डा. ओम नागपाल; पृष्ठसंख्या : २०८; मूल्य २० रुपये। दोनों के प्रकाशक : नवचेतन प्रकाशन, ५४ प्रिंस यशवंत रोड, इंदौर।**

सम-सामयिक विषयों का गंभीर विवेचन करने वाली पुस्तकें हिंदी में बहुत कम छपती हैं। इस दृष्टि से इंदौर के नवचेतन प्रकाशन का प्रयास निस्संदेह सराहनीय है। गणेश मंत्री की 'रूस-चीन विवाद' और डा. ओम नागपाल की 'पांचवां अरब-इस्राइल युद्ध ?' इसी प्रकाशन की नयी शृंखला की कड़ियां हैं।

बहुत पुरानी बात नहीं है जब अंतरराष्ट्रीय साम्यवाद को एक अविभाज्य वस्तु माना जाता था। परंतु हमारे देखते ही देखते उसमें दरार पड़ गयी। एक दूसरे को छोटा भाई, बड़ा भाई कहने वाले रूस और चीन में ठन गयी और विश्व के साम्यवादी आंदोलन के दो ध्रुव हो गये। इस तथ्य पर तरह-तरह की सैद्धांतिक व्याख्याओं को आवरण ओढ़ाये गये। परंतु सीमा के प्रश्न पर दो साम्यवादी देशों की लड़ाई साम्यवाद के अधिकृत व्याख्याकारों के लिए विकट पहेली बन गयी।

'रूस-चीन विवाद' इस विकट पहेली की गुत्थियां सुलझाने का एक सराहनीय प्रयास है। गणेश मंत्री ने इस इतिहास, भूगोल, संस्कृति, राजनीति और नेतृत्व की मानसिकता के संदर्भ में समूचे प्रश्न पर विचार किया है और किस प्रकार मास्को और पीकिंग के सूत्रधार सदियों से घृणा-प्यार का एक खेल खेलते चले आ रहे हैं, इसका रोचक विवरण ही नहीं, सटीक विश्लेषण भी प्रस्तुत किया है।

इसी प्रकाशन की दूसरी पुस्तक 'पांचवां अरब-इस्राइल युद्ध ?' पश्चिम एशिया में चल रहे एक और राजनैतिक खेल का खुलासा है। यों अरब राष्ट्रों और इस्राइल के बीच लड़ाई पिछले २७ वर्ष से चली है, परंतु अरब-यहूदी संघर्ष का सिलसिला

सदियों पुराना है; उसका रोचक विवरण इस पुस्तक में है।

लेखक ने इसमें अपने ढंग से समस्या का विश्लेषण भी किया है; परंतु उन निष्कर्षों से सहमत होना सहज नहीं। इस्रायल के जन्म में विश्व-जनमत की भूमिका के विषय में लेखक की मान्यता से एक सीमा तक सहमत हुआ जा सकता है। परंतु लेखक की यह धारणा कि अरबों और इस्रायलियों में सुलह-समझौता असंभव है, सहज ही गले नहीं उतरती। इस धारणा के समर्थन में पेश किये गये तर्क न तो पर्याप्त हैं, न ही सशक्त ही। वैसे लेखक ने स्वयं स्वीकार भी किया है "हर प्रकार की निष्पक्षता के प्रयत्न के उपरांत भी—मेरा एक पक्ष है"! लेखक का यह 'निष्पक्ष पक्ष' पूर्वाग्रह-सा लगता है।

शैली की नाटकीयता पुस्तक को रोचक बनाये रखती है। परंतु अक्सर महसूस होता है कि शैली तथ्यों पर हावी हो रही है। नाटकीयता तथ्यों की विश्वसनीयता को संदिग्ध बना देती है। काश दोनों पुस्तकों में प्रूफ की अशुद्धियां कुछ कम होतीं, मुद्रण का स्तर कुछ बेहतर होता और कीमत इतनी अधिक न होती।

०००

*** आजाद की पिस्तौल और उनके गद्दार साथी * लेखक : धर्मेंद्र गौड़; प्रकाशक : मौलिक साहित्य प्रकाशन, १६२ डी, कमलानगर, दिल्ली-७; पृष्ठसंख्या : ८६; मूल्य : ४ रुपये।**

कुछ अरसा पूर्व जब गुप्तचर-विभाग के एक भूतपूर्व अधिकारी श्री धर्मेंद्र गौड़ के क्रांतिकारियों संबंधी कुछ लेख पत्रों में प्रकाशित हुए, तो अच्छा-खासा धमाका हो गया था। श्री गौड़ ने इन लेखों में भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन के एक ऐसे अध्याय की चर्चा छेड़ी थी, जिससे देश की वर्तमान पीढ़ी की भी भावना जुड़ी हुई है। यह था चंद्रशेखर आजाद की शहादत का प्रसंग। श्री गौड़ ने अपने लेख में आजाद के साथी श्री यशपाल और श्री वीरभद्र तिवारी पर गद्दारी का आरोप लगाया था। वही लेख अब पुस्तक रूप में छपे हैं।

अपनी स्थापना की पुष्टि में लेखक ने कुछ सरकारी दस्तावेजों की चित्र प्रतियां भी छापी हैं। लेखक का गुप्तचर-विभाग से संबद्ध रहा होना और विभागीय फाइलों के हवाले आरोपों को काफी मजबूत आधार देते हैं। परंतु चित्र-प्रतिलिपियों की प्रामाणिकता की जांच अपेक्षित है। श्री यशपाल ने इन आरोपों को गलत बताया था। आज तो उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री बहुगुणा ने श्री यशपाल के एक पत्र के उत्तर में लिखा है कि जिन दस्तावेजों की चर्चा श्री गौड़ ने अपने लेख में की है, वे संबंधित विभाग में हैं ही नहीं।

फिर दस्तावेजों में लिखी बातों की सत्यता पर भी शंका उठायी जा सकती है। गरज यह कि सारे मामले की जांच आवश्यक है, ताकि सही तथ्य सामने आयें।

—विश्वनाथ

*** कळप * कवि : डा. नारायणसिंह भाटी; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य मंदिर, रातानाडा, जोधपुर; मूल्य : १० रुपये।**

*** अंधार-पख * कवि : नंद भारद्वाज; प्रकाशक : जनभाषा प्रकाशन, २५२ शिव रोड, रातानाडा, जोधपुर।**

'कळप' राजस्थानी भाषा में ड़ा. नारायणसिंह भाटी की नयी काव्यकृति है। जिसे बंबई की राजस्थानी ग्रैजुएट्स सर्विस एसोसियेशन ने १९७३ की सर्वश्रेष्ठ कृति के रूप में १ हजार रुपये का पुरस्कार दिया है।

संग्रह में अस्सी कविताएं (बिना शीर्षक) हैं। भाषा और कथ्य राजस्थान की सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़ा है। कवि का नैतिक संकट–चाहे वह व्यक्तिगत हो या आज के समाज का–बड़े अनूठे ढंग से इन कविताओं में उभरा है। प्रत्येक कविता में संघर्षशील जीवन और जनसामान्य की घुटन तथा कुंठाओं का तीखा और यथार्थ चित्रण है।

सांसारिक स्थितियों के बीच मीरां की तरह कष्टों से बोझिल होने पर कवि कई भावों में अपना दर्द व्यक्त करता है और कहता है कि 'आखी उमर जैर पियो म्हें इमरत की इधकाई'–उसने सारी उम्र विष पिया है, विष पी-पीकर अब उसे अमृत से वितृष्णा हो गयी है।

राजस्थानी भाषा में पहली बार राजस्थानी भाव-भूमिका का काव्य एक नये प्रयोग में सामने आया है। इसमें छंदों और अलंकारों की बड़ी सुंदर अभिव्यक्ति हुई है, और इसकी भाषा शैली मंजी हुई है। कवि ने सूक्तियों, कहावतों और मुहावरों का प्रयोग नये प्रकार से किया है। अधिकांश कविताएं गेयता को ध्यान में रखकर रची गयी हैं। निःसंदेह यह कृति राजस्थानी भाषा का विरोध करने वालों के लिए एक चुनौती और एक सशक्त प्रमाण है।

'अंधार-पख' में युवा कवि नंद भारद्वाज की पंद्रह नयी सशक्त राजस्थानी कविताएं हैं। कवि ने इनमें राजस्थान के ग्रामीण-अंचल – विशेषतः रेगिस्तानी क्षेत्र – की भीतरी परिस्थितियों को संजीदे रूप से सामने रखा है। आजादी आने के सत्ताईस वर्ष बाद भी राजनैतिक दृष्टि से उपेक्षित ग्राम-जीवन को बहुत ईमानदारी के साथ यथार्थ रूप में चित्रित किया गया है।

पुस्तक के शीर्षक की कविता 'अंधार-पख', 'मेह-अंधारी-रात', 'परींढे में पाणीनीं', 'सैंतीस घरांरौ गांव' और 'सुनसान गाथा' जैसी कविताएं बहुत सुंदर बन पड़ी हैं। इनमें भाषा और कथ्य का इतना सुंदर प्रयोग हुआ है कि ये कविताएं राजस्थानी काव्य में मील का पत्थर सिद्ध होंगी।

–हरमन चौहान

★

एक महाशय अपनी बीवी के गुण गिनाते हुए कह रहे थे–'मेरी बीवी की सबसे बड़ी खासियत यह है कि वह समय से दस वर्ष आगे है...... वह मेरा १९८४ तक का वेतन खर्च कर चुकी है।'

–सुजीत

★

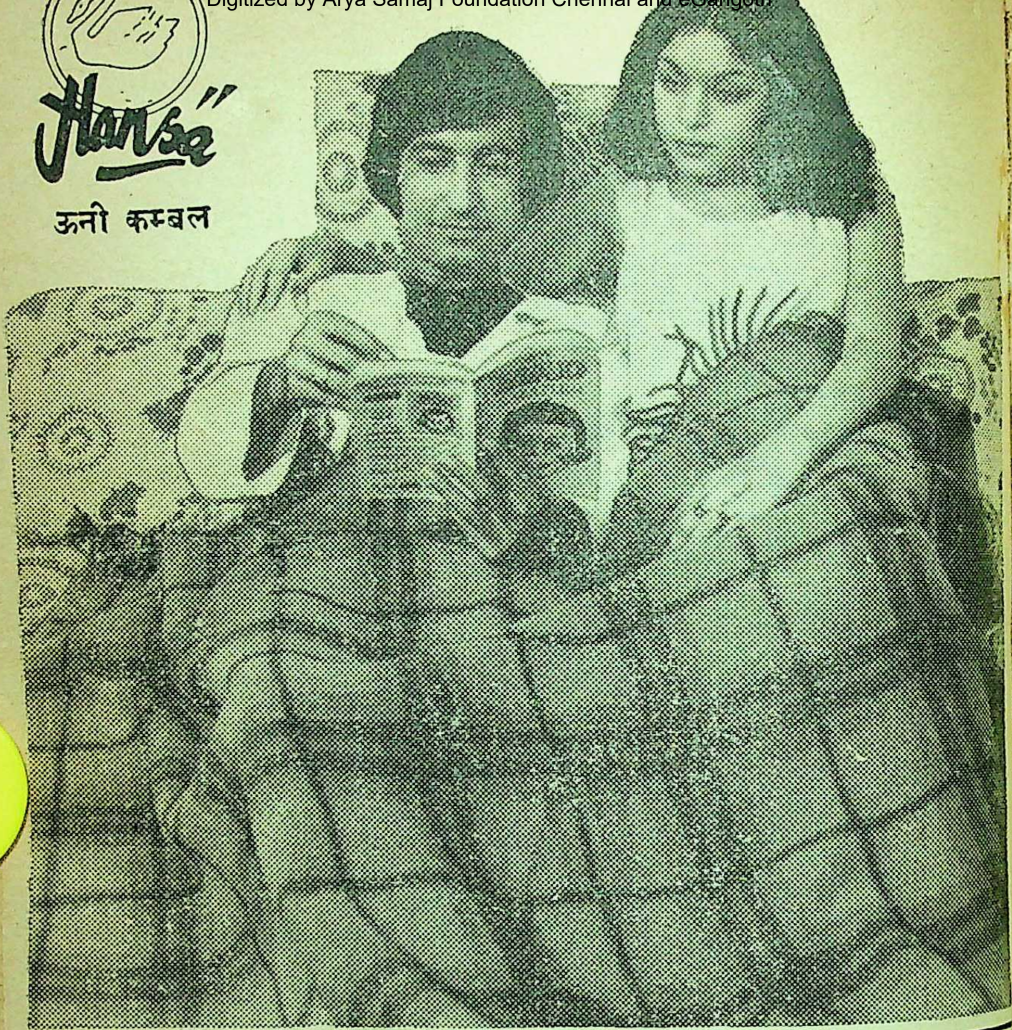

आपके रंगीन रात्रि जीवन का प्रारम्भ !

हंसा ऊनी कम्बल की
आरामदेह गरमाई में सर्दी के
मौसम का स्वागत कीजिए
हंसा - शानदार रंगों में
उत्तम कोटि के ऊनी कम्बल
और कीमत भी कम ।

अमृतसर स्वदेशी वूलन मिल्स
ामतीर्थ रोड, अमृतसर

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

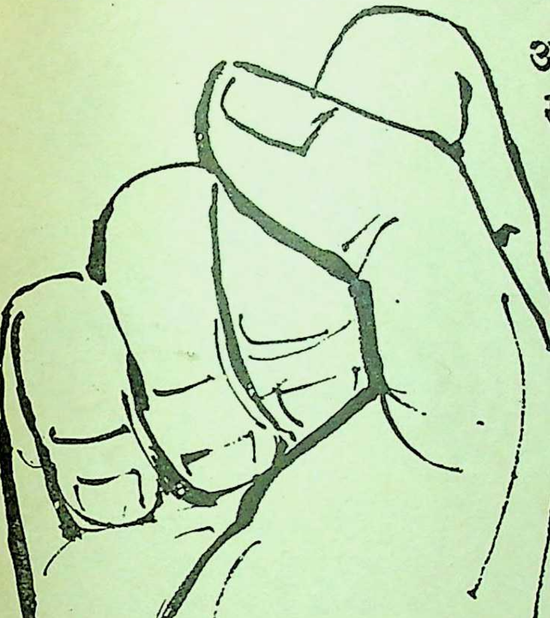

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही एकमात्र उद्देश्य है

ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

Sobhagya GR 74-2-Hin.

जरा ठहरिये!
गडबड वस्तु खाक
अपना पेट न बिगा

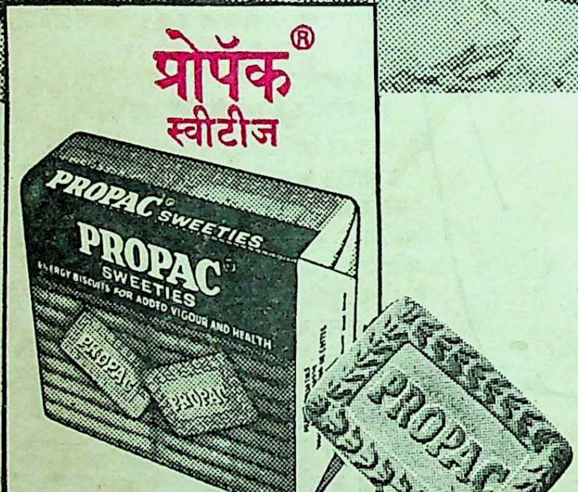
प्रोपॅक®
स्वीटीज
PROPAC® SWEETIES
PROPAC® SWEETIES
ENERGY BISCUITS FOR ADDED VIGOUR AND HEALTH
PROPAC
PROPAC

दफ़्तर में दिन भर काम और फिर थकाने वाले घरेलू धन्धे। इतने परिश्रम के बाद आपको प्रोटीन चाहिए। और प्रोटीन के लिए प्रोपॅक सबसे अच्छे हैं। प्रोटीन के लिए अच्छ पौष्टिक भोजन हो या फिर सबसे अच्छे प्रोपॅक बिस्किट!

साधारण बिस्किटों से
तीन गुने प्रोटीन
दस गुने विटामिन
और कई गुने कैल्शियम और आयर

हल्के आसानी से हजम हो जाने वाले प्रोपॅक बिस्किट स्फूर्तिदायक प्रोटीन, विटामिन, कैल्शियम और आइरन से भरपूर हैं।

कुरकुरे, स्वादिष्ट प्रोपॅक बिस्किट सुबह के नाश्ते, दोपहर की कॉफ़ी या शाम की चाय के साथ लीजिए।

PROPAC
PROPAC SALTIES

आपकी प्रिय
प्रोपॅक
साल्टीज
अब नए
किफ़ायती डिब्बों
में मिलती है

युनिकेम का उत्पाद

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

मार्च १९७५

14/3/75

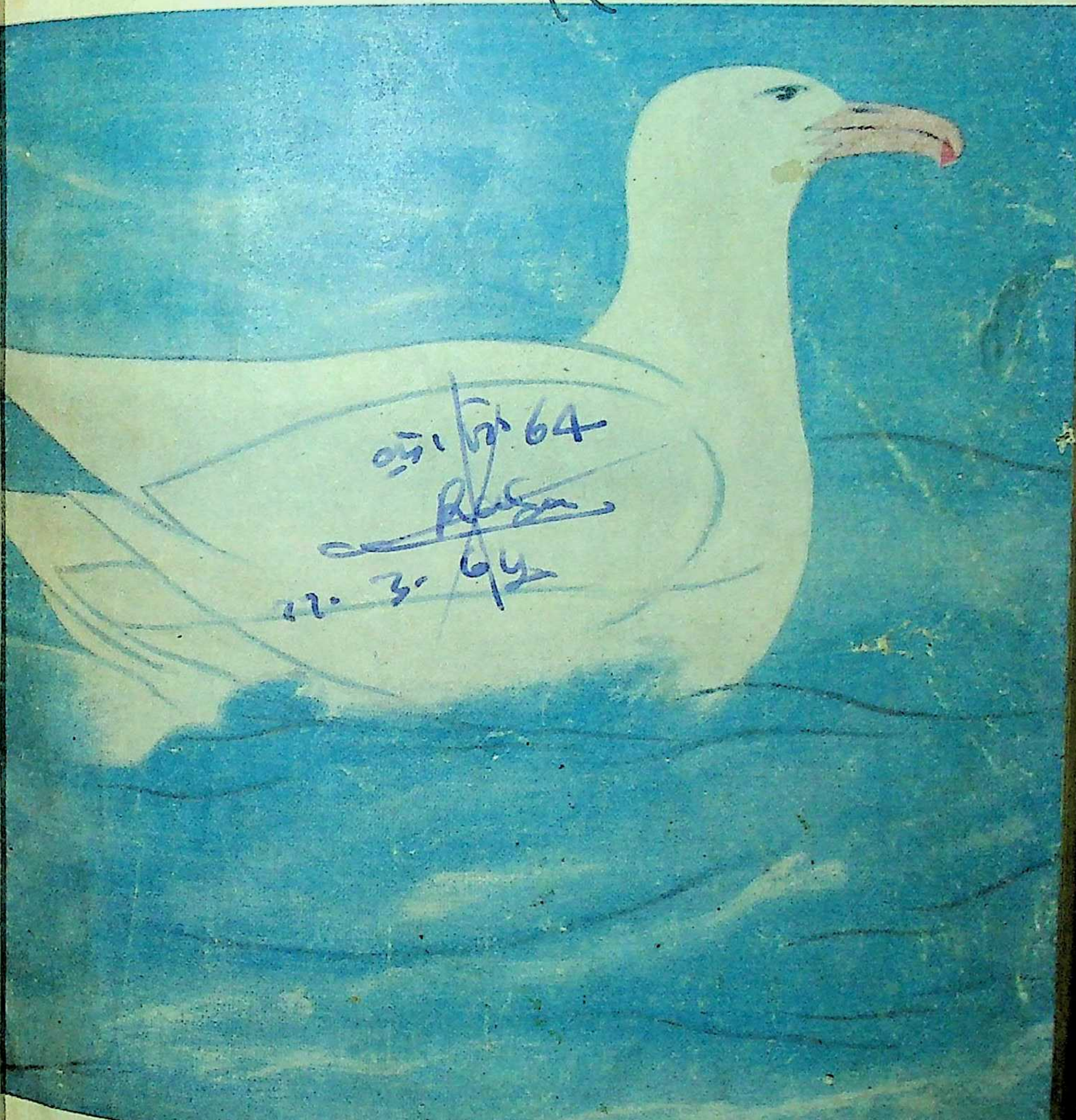

क्र। वि। 64

22. 3. ७५

नयी उमंग, नयी तरंग

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी - १००% सूती कपड़ों के लिए।

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.
लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५

ADROIT-87

क्या आपने इसकी व्यवस्था कर ली है?
आपने बच्चोंकी उच्च शिक्षाके
खर्चका आयोजन कर लिया है?
BANKING SYSTEM
BEGIN
ECONOMICS

जब आपके बच्चें उच्च शिक्षा पानेके योग्य हो पायेंगे तब उनकी शिक्षाका खर्च आप उठा सकेंगे?

देना बैंक में बचत खाता या मीयादी जमा खाता खोलकर अभीसे नियमित बचत कीजिये।

देना बैंककी अन्य ६ बचत योजनाएं-

नाबालिग बचत योजना • आवर्ती जमा योजना • मासिक बचत व वार्षिकी योजना • बहुप्रयोजनीय जमा योजना • मयादी प्रमाणपत्र बीमा संबद्ध बचत जमा योजना

देना बेंक

(गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया अंडरटेकिंग)
हेड ऑफिस : हॉर्निमेन सर्किल,
बम्बई ४००००१.

Ratan Batra/DB/H/238-C

१९७५

मां की ममता की नहीं समानता...

उसी तरह अद्वितीय है

उषा सिलाई मशीन

आपके परिवार को आपके स्नेह की आवश्यकता है—
अपना स्नेह और अधिक प्रकट करने के लिए
आपके लिए आवश्यक है—उषा सिलाई मशीन।

सिलाई के पैसे बचाइए व अनमोल समय भी, क्योंकि उषा सिलाई मशीन।

- श्रेष्ठ इंजिनियरिंग द्वारा विधिपूर्वक बनाई जाती है, और इसलिए ये वर्षों तक चलती हैं और मरम्मत भी नहीं मांगती।
- आपके पास पहुंचने से पहले दो हजार बार जांची और परखी जाती है।
- बिक्री के उपरान्त सर्विस के लिये हर जगह प्रबन्ध है।
- हाथ, पैर, और बिजली से चलने वाले कई आकर्षक मॉडलों में मिलती है।

मूल्य रु० २६५/- या अधिक

जय इंजीनियरिंग की कृति

आइये, शामिल हो जाइये

भारत के त्योहारों और मेलों में. दिवाली, दशहरा, होली, इस्टर, क्रिसमस, मोहर्रम, बैसाखी, रक्षा बन्धन, दुर्गापूजा, ओणम, ईद-उल-फितर, गणेश चतुर्थी में. बहुत लम्बी है यह सूची पर त्योहार सिर्फ यही नहीं और सिर्फ ऐसे भी नहीं. बड़ा अजीबोगरीब संसार है इन त्योहारों का. आप ने देखा है ?

* नावों की दौड़ से तीतर युद्ध तक
* आदिम अंचलों के मेले नज़र जहां नहीं जाती
* सौंदर्य और फैशन मेले, कुरुपता के मेले, मूर्खों का उत्सव..
* मौसमी पर्व
* धार्मिक परंपरा से जुड़े सांस्कृतिक त्योहार
* अंतरराष्ट्रीय व्यापार मेले
* बच्चों के मेले
* फिल्मी मेले

आइये, देखिये यह सब घर बैठे.
नवभारत टाइम्स वार्षिकांक
1975 में. केवल 5 रुपये में.
अपनी प्रति के लिये
अखबार वाले से कहें या
हमें लिखें. रजिस्टर्ड डाक
द्वारा मूल्य सात रुपये

नवभारत टाइम्स वार्षिकांक

टाइम्स
ऑफ
इंडिया
प्रकाशन

नवभारत टाइम्स
वार्षिकांक 1975

७ बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली ११०००१

HT-9C-

जियाजी

सूटिंग्स

रोबीले, हठीले पुरुषों की शान

मर्दाना बनावट और डिज़ाइन, पुरुषत्व को उजागर करने वाले
चेक और धारियां, रंगों और शेड्स की विविधता के लिए

J
JIYAJEE
FABRICS

जियाजीराव काटन मिल्स लिमिटेड, बिरलानगर (म. प्र.)

यांत्रिक प्रगति का
अनुपम प्रतीक

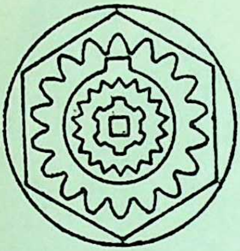

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाय ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
थाना (बंबई)

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिये, हर प्रसंग पर उपलब्ध है।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लि टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती
वस्त्र खरीदें तो यह
ट्रेड मार्क देख लें

पुलगांव
काटन मिल्स

आराम की ऊंचाइयां

बजाज बहार डीलक्स पंखों से

बिना आवाज़ चलनेवाले।
अधिकतम हवा देनेवाले।
नवीनतम डिज़ाइनों में।

यूनीवर्सल पंखा
ब्यूटी पंखा

बजाज इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
४५-४७ वीर नरिमन रोड, बम्बई-४०००२१
भारत भर में शाखाएँ

bajaj

heros' BE-201

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

(भारत का सबसे बड़ा रेयान और सिंथेटिक फाइबर की बुनाई, रंगाई और फिनिशिंग का कारखाना)

—: उत्पादन :—

नाना रंगों और डिजाइनों के रेयान और सिंथेटिक वस्त्र—पुरुष और स्त्रियां, बूढ़े और बच्चे सभी के लिए बेजोड़ और बढ़िया वैविध्य।

बिक्री और फुटकर दुकान :—

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

डॉ. ई. मोसेस रोड, महालक्ष्मी, बंबई ११.
टे. नं. ३९४०२१–२२

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भारत का सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप, स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

बीमेदारों के हित में लिए प्रकाशित

आप
अपने जीवन बीमा एजेंट का पता नोट कर लीजिए

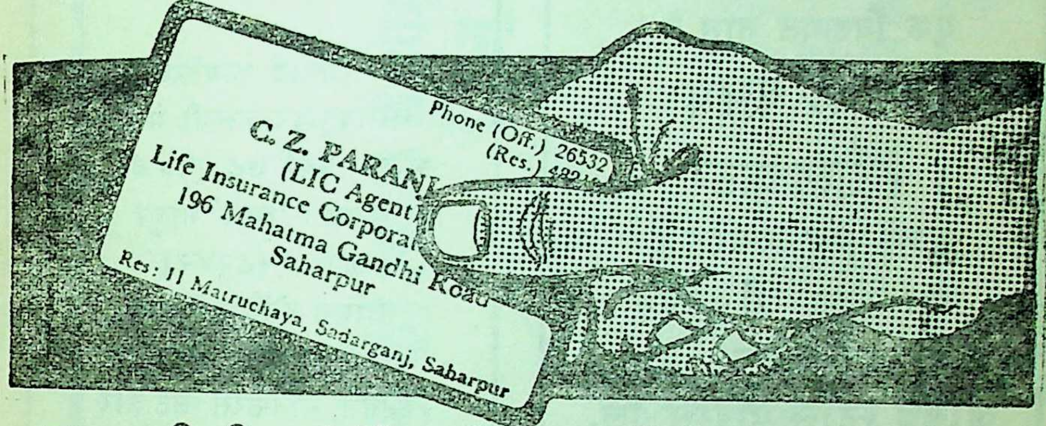
Phone (Off.) 26532
(Res.) 482

C. Z. PARAN
(LIC Agent
Life Insurance Corpora
196 Mahatma Gandhi Road
Saharpur
Res: 11 Matruchaya, Sadarganj, Saharpur

वह आपकी बीमा संबंधी सभी समस्याएँ हल कर सकता है।

जीवन बीमा एजेंट आपका मित्र है। पालिसी की अवधि पूरी होने तक आपकी सेवा करना उसका कर्तव्य है। उससे सहायता की अपेक्षा करना आपका अधिकार है।...अतः उससे सम्पर्क बनाये रखिए। जीवन बीमा निगम से पत्र व्यवहार करते समय उसकी सलाह लीजिए। यदि आप और बीमा कराना चाहते हों तो उससे मिलिए, वह अवश्य आपकी मदद करेगा।

बहुत-से दावों के निपटारे में इसलिए विलम्ब लगता है कि उससे संबंधित कागजातों की पूर्ति समय पर नहीं की जाती। इस बारे में क्या-क्या कदम उठाने होंगे इसकी पूरी जानकारी जीवन बीमा एजेंट आपको देगा। इसमें अपने वारिसों के नाम दर्ज करना, आयु का प्रमाण-पत्र भेजकर अपनी आयु प्रमाणित करा लेना, समय पर ही प्रीमियम अदा करना और अपने परिवर्तित पते की सूचना निगम के उस कार्यालय को देना जो आपकी पालिसी की सेवा करता है; आदि कई बातें सम्मिलित हैं।

जिस एजेंट से आपने पालिसी ली है उसी से सहायता लीजिए। उसकी तत्पर और तत्काल सेवा से आपकी पालिसी, नियमानुसार, अच्छी हालत में चालू रहेगी। आवश्यकता पड़ने पर निगम के निकटतम कार्यालय से सम्पर्क स्थापित कीजिए।

BADEUS/LIC/AS-6

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर
इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित औद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

दि इंडियन स्मेल्टिंग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय
लालबहादुर शास्त्री मार्ग,
भांडप, बंबई ७८ एन० बी०
केबल : **'लकी'** भांडुप
फोन : ५८२४२१

सेमिस रोलिंग विभाग
नानफेरस शीट, स्ट्रिप और फाइल, नानफेरस प्लेट और सर्कल

एलाय और कास्टिंग विभाग :
एंटिफ्रिक्शन बेयरिंग मैटल्स गनमैटल्स और ब्रोन्जेन्स, ब्रेजिंग सोल्डर्स और टिन सोल्डर्स, फाइन जिंक डाइकास्टिंग एलाय्स 'इस्माव ३,' अल्युमिनियम बेस्ट डाइकास्टिंग एलाय्स, ब्रास और ब्रोन्ज राड्स सालिड कोर्ड, फिनिश्ड कास्टिंग रफ और मशीन्ड।

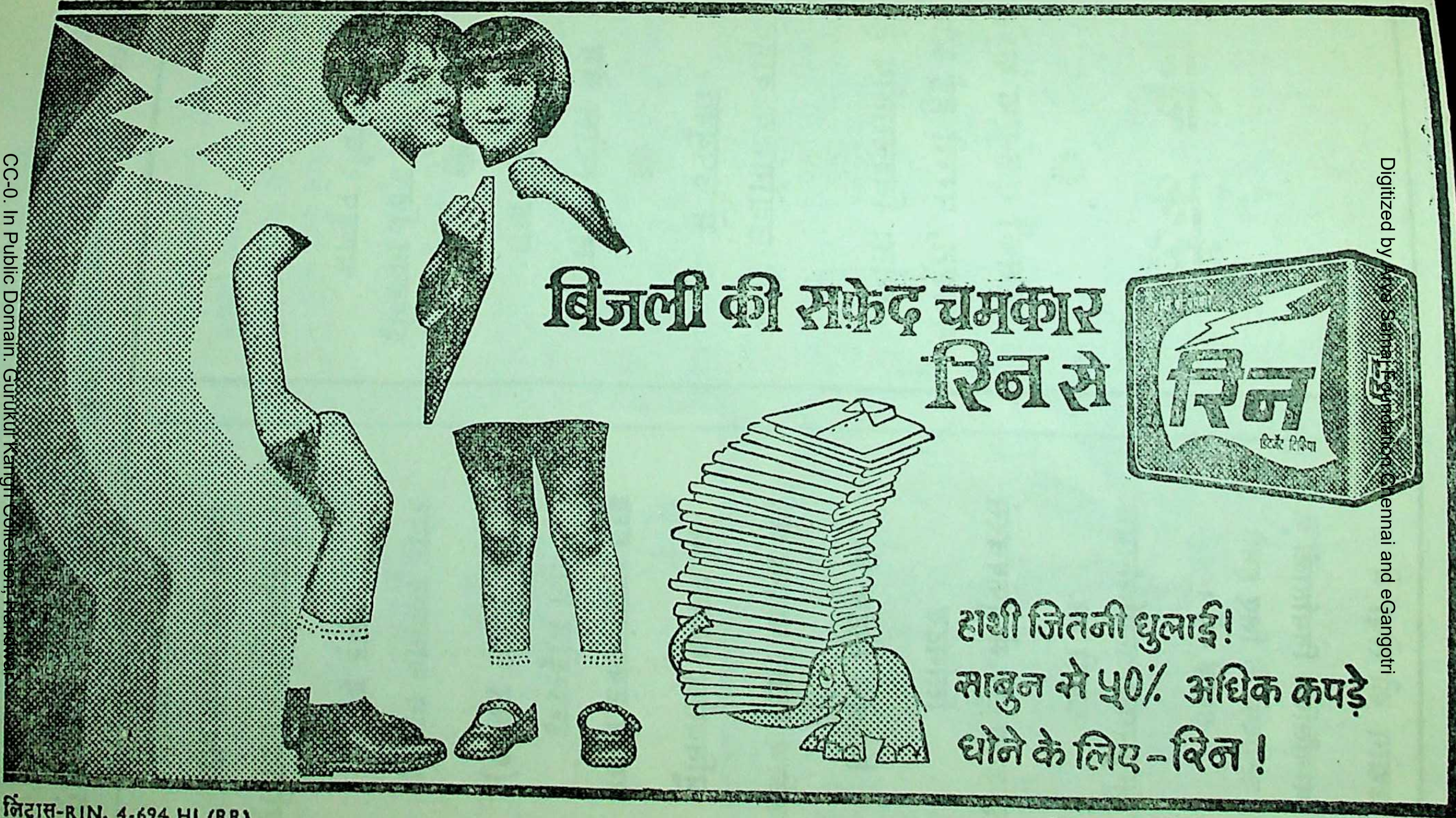
बिजली की सफ़ेद चमकार
रिन से
रिन
डिटर्जेंट टिकिया
हाथी जितनी धुलाई!
साबुन से ५0% अधिक कपड़े
धोने के लिए-रिन !

लिंटास-RIN, 4-694 HI (RR)

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

**हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.**

**इंडियन टूल मैन्युफैक्चरर्स
लिमिटेड**

ग्रिडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

**जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फलेक्स फायर होज)**

**एशियन सायकल टायर
व ट्यूब**

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि.

क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई-१

लिंक चेन

✻

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

✻

सभी उद्योगों व वाहनों
में उपयुक्त

✻

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

✻

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप : बंबई-७८

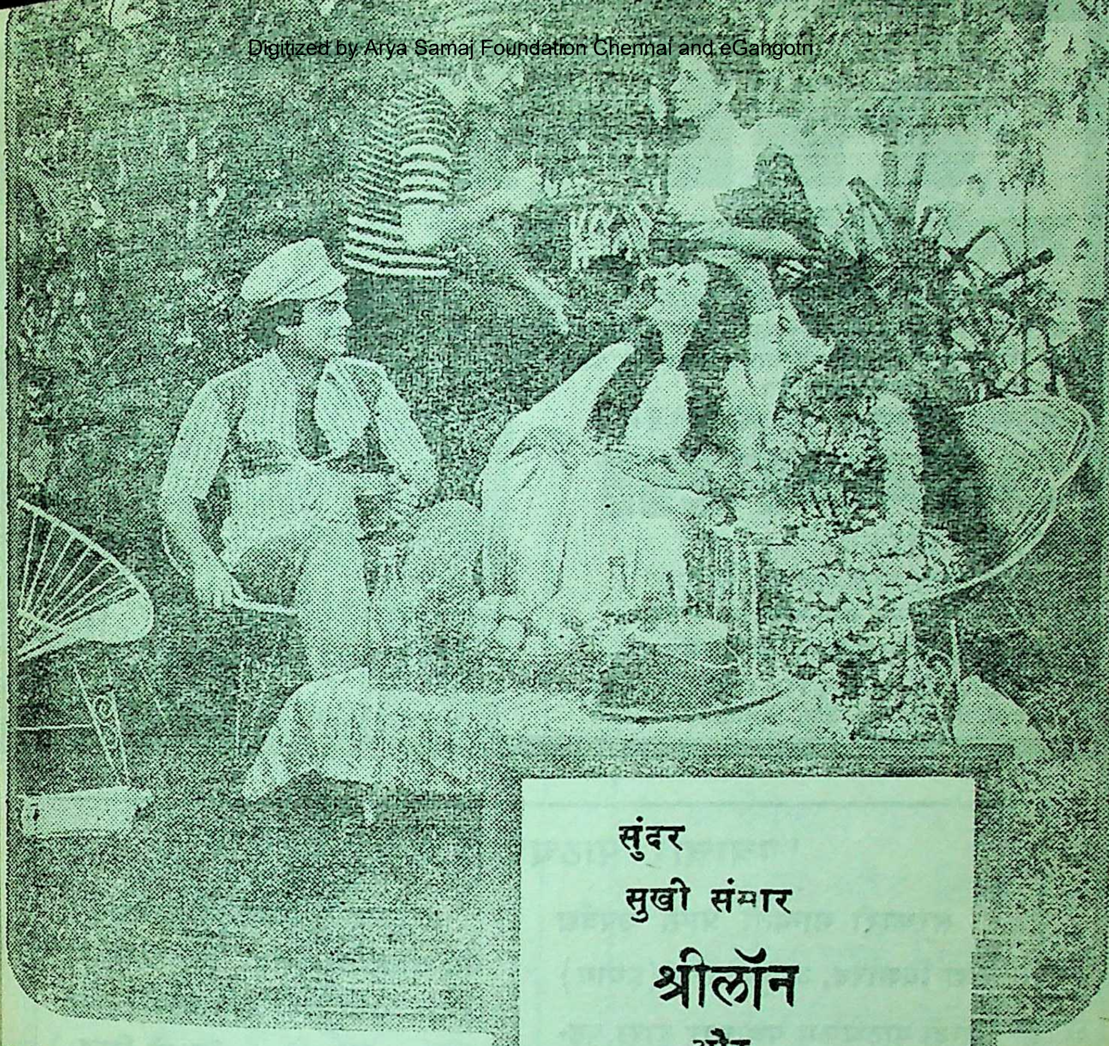

सुंदर

सुखी संसार

श्रीलॉन

और

श्रीस्टर

सुंदर वस्त्रों के लिए

सुंदर तंतु

श्रीलॉन नाइलॉन तंतु–सुरुचिसंपन्न स्त्रियों लिये सुंदर साड़ियां और लुभावने लिबास कपड़े जिससे तैयार होते हैं। श्रीस्टर पॉलि स्टर तंतु–आगे बढ़ते मर्दों के "पॉट" सूटिंग और शर्टिंग जिससे बनते इसलिए जब श्रीलॉन और श्रीस्टर मिलते उसका नतीजा होता है–आनंद-उल्लास, -मस्ती।

उत्पादक : श्री सिंथेटिक्स लिमिटेड, नौलखी, उज्जैन
विक्री कार्यालय : श्रीनिवास हाउस, एच. एम्. सोमानी मार्ग,
बंबई-४०० ००१. फोन : २६६०७४; २६८२४१.

JAISONS-3451

ताक़त

मर्द की शान मर्द की पहचा

इस ताक़त को बनाये रखने के लिए, सदाबहार चुस्ती, फुर्ती और नौजवानी की सी उमंग के लिए ओकासा स्वास्थ्यदायक टॉनिक टिकियाँ लीजिये। ओकासा टॉनिक टिकियों की अनोखी शक्ति से आपके शरीर और दिमाग को लगातार नयी ताक़त मिलती है।

ओकासा की टिकियों पर चांदी चढ़ी रहती है।

ओकासा

टॉनिक टिकियाँ

पुरुषों के लिए चांदी वाली

हार्मो-फ़ार्मा लिमिटेड लंदन-बर्लिन का उत्पादन

सभी बड़े-बड़े केमिस्टों के यहाँ मिलता है।

OKASA CO. PVT. LTD., 12A Gunbow
Street, P. B. No. 396, Bombay-400001

OKASA
THE 20TH CENTURY TONIC
RESTORATIVE
Manufactured by
OKASA CO. PVT. LTD. BOMBAY
FOR
HORMO-PHARMA LTD.
LONDON-BERLIN

"पत्राचार पाठ्यक्रमों द्वारा पढ़ें"

सरकारी मान्यता प्राप्त उपवैद्य वैद्य विशारद, आयुर्वेदरत्न (प्रयाग) हिन्दी पाठ्यक्रम पत्राचार द्वारा पढ़कर परीक्षा पास करें तथा रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टीशनर बनने हेतु सम्पर्क करें।

साहित्य सुधाकर, साहित्यरत्न / बी. ए. पास किसी भी विषय में हिन्दी पत्राचार पाठ्यक्रमों द्वारा एम. ए. (जबलपुर जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर, मेरठ, रांची, पूना, विक्कटेश्वर, शिवाजी विश्वविद्यालय) करने हेतु सम्पर्क करें।

भारतीय महाविद्यालय (रजि.)

चन्द्रनगर, दिल्ली--११००५१

DAM/7

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक व
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गाद्दियां व कवर बनाने के लिए मुलायम और बहुरंगी ● क्रोशेसेटों के लिए सुंदर और चमकदार ● वसन्त में लचीले और नमीसोख

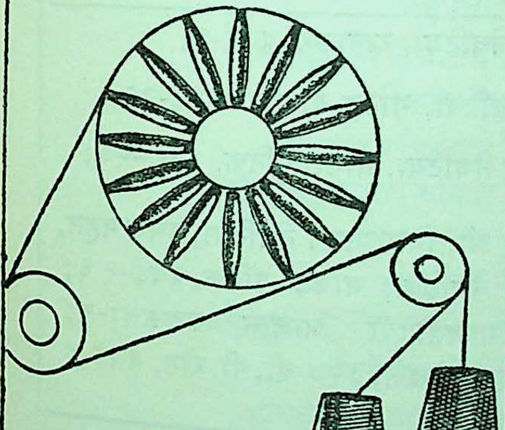

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता–७०० ००१

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चरर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई–४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स; कटर्स; टैप्स; टूलबिट्स और माइक्रोमीटर्स

* डॅगेलाय कार्बाइड टूल्स और टिप्स
* डॅगर-साके गियर हॉब्स और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

रजिस्ट्रेशन ऑफ न्यूजपेपर्स (सेण्ट्रल) नियम १९५६ के ८वें नियम के अंतर्गत "नवनीत हिंदी डाइजेस्ट" नामक मासिक-पत्र के स्वामित्व तथा अन्य विषयों के संबंध में प्रकाशित किया जाने वाला विवरण :

फॉर्म ४

१. प्रकाशन का स्थान :–	३४१, तारदेव, बंबई-३४.
२. प्रकाशन का अवधिक्रम	प्रत्येक मास
३. मुद्रक का नाम :–	श्री. हरिप्रसाद नेवटिया
राष्ट्रीयता :–	भारतीय
पता :–	३४१, तारदेव, बंबई-३४.
४. प्रकाशक का नाम :–	श्री. हरिप्रसाद नेवटिया निमित्त स्वत्वाधिकारी, नवनीत प्रकाशन लिमिटेड
राष्ट्रीयता :–	भारतीय
पता :—	३४१, तारदेव, बबई-३४.
५. संपादक का नाम :–	श्री. नारायण दत्त
राष्ट्रीयता :–	भारतीय
पता :–	३४१, तारदेव, बंबई-३४.
६. उन शेयर होल्डरों के नाम और पते, जिनके पास कुल पूंजी के १ प्रतिशत से अधिक शेयर हैं :–	श्री. एस. जी. नेवटिया, रत्नाकर, बंबई-६; श्री. ए. के. नेवटिया, माउंट यूनिक, बम्बई-२६; श्री. हरिप्रसाद नेवटिया, माउंट यूनिक, बंबई–२६;

श्री. कमलनयन नेवटिया, रत्नाकर, बंबई-६, श्री. विमलनयन नेवटिया, कमल महल, कारमाइकल रोड, बंबई-२६; प्रवीणकुमार नेवटिया, माउंट यूनिक, बंबई-२६; मालतीदेवी नेवटिया, रत्नाकर, बंबई-६; मालतीदेवी जालान कलकत्ता-९; सुधा नेवटिया, माउंट यूनिक, बंबई-२६; टी. एस्. गोखले, ३२४ वी. पी. रोड, बंबई-४.

मैं, हरिप्रसाद नेवटिया, यह घोषित करता हूं कि ऊपर दिये गये सब विवरण, जहां तक मैं जानता हूं तथा मेरा विश्वास है, सत्य हैं।

प्रकाशक के हस्ताक्षर (हरिप्रसाद नेवटिया)

नवनीत

वर्ष २४ : अंक ३

* इस अंक में *

मार्च १९७५

पत्र-वृष्टि १७ संपादक की डाक से
दक्षिण अफ्रीका : परिवर्तन का कगार २१ अवधनंदन
अशांति-क्षेत्र हिंद महासागर २६ जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी
सांस्कृतिक कीमिया ३३ जेकब क्लाट्स्किन
चिंतनिका ३४ विष्णु प्रभाकर
कलम और खड्ग का सिपाही ३६ विश्वनाथ
वाक्यदीप ४१ 'तालमुद' से
जापानी कहावतें ४२ अनिकेत
वित्तोरियो दि सिका ४४ सत्येंद्र शरत्
चतुर्वेदीजी से बातचीत ५२ लक्ष्मीशंकर व्यास
विज्ञान-बिंदु ५७ केजिता
आत्मकथ्य (कविता) ६२ अंचल
एक और महाभारत (कविता) ६३ कृष्ण भावुक
मिर्जा कामिल ६५ कन्हैयालाल कपूर
रक्त के वर्ग ६८ डा. अरुणकुमार मिश्र
नन्हे मुन्नों के लिए कविताएं ७४ डा. श्रीप्रसाद
हम देखते कैसे हैं ७८ डा. धनवंत किशोर गुप्त
हांगकांग में पहला दिन ८१ जार्ज मीकेश

संचालक **श्रीगोपाल नेवटिया**
संपादक **नारायण दत्त**
सहसंपादक **सुरेश सिन्हा**
व्यापार-व्यवस्थापक **महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक **हरिप्रसाद नेवटिया**
उपसंपादक **गिरिजाशंकर त्रिवेदी**
उपसंपादक **डा. विष्णु भटनागर**
प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
सज्जा : **ठाकोर राणा**

पशुप्रेमी अमरीकी ८४ शैलेश दत्त
तुमने बड़ी कृपा की भाई (कविता) ८५ कुमार शिव
दो प्रमाणपत्र संचार-विभाग को ८६ बालकवि बैरागी
सुझाव ८८ ....
पोप का गधा ९० अलफांसो दोदे
एम्परर अशोक ९७ मिनाज डी. मर्चेंट
एक पानी (हिंदी कहानी) १०० सुखबीर
नागछत्र के नीचे बुद्ध १०४ एम. सी. सुभद्राधीश दिस्कुल
दस्तक : एक सॉनेट १०८ विष्णु निवसरकर
स्मृति के अंकुर १०९ शर्मा, अय्यर, पुष्प
बच्चों के पास आने वाला स्कूल ११२ सुरजीत
कविताएं ११६ जायसवाल, जैन, 'अशोक'
हंसने में कितना सुख ११७ अनुराग शर्मा
गंवार (तेलुगु कहानी) १२० के. एन. वाइ. पतंजलि
रासायनिक ऊर्जा १२५ डा. जगदीश लूथरा
पत्रों के दर्पण में रसेल १२८ अरुण सेदवाल
आकाश में विज्ञापनबाजी १४८ हरपाल कौर
मां का ममत्व १५२ भागीरथ कानोड़िया
अरबों मन तेल जुटा है १५३ ....
उंगलियों के निशान १५४ डा. शिवनंदन कपूर
लद्दाख में कृषि-पराक्रम १५८ लेफ्टिनेंट कर्नल के. ए. पाटील

★

चित्रसज्जा : क्युमिंग्स, अबु, वसंत सरवंटे, ओके, शेणै, भटनागर, शरद कांबळी, गोस्वामी

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१ ताडदेव, बंबई-३४.
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग,
३३५ बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४. फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष : २४ रु.; दो वर्ष : ४६ रु.; तीन वर्ष : ६६ रु.।
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष : ४५ रु.; दो वर्ष : ७५ रु.; तीन वर्ष : १०५ रु.।
(हवाई डाक) एक वर्ष : ७५ रु.; दो वर्ष : १३५ रु.; तीन वर्ष : १९५ रु.।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

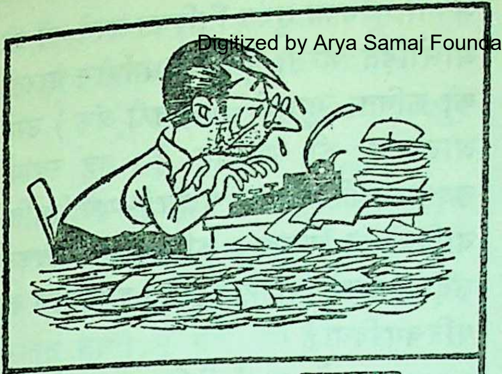

पत्र-दृष्टि

नवंबर १९७४ से फरवरी १९७५ तक हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में नागपुर के विश्व हिंदी संमेलन की धूम रही। पहले संमेलन-संबंधी सूचनाएं छपती रहीं, संमेलन के दौरान उसके समाचार छपते रहे, फिर उसकी उपलब्धियों-अनुपलब्धियों का मूल्यांकन चला और अब भी चल ही रहा है। यहां तक कि हिंदी को हिकारत की नजर से देखने और उसकी खिल्ली उड़ाने का कोई भी मौका हाथ से न जाने देने वाले अंग्रेजी अखबारों ने भी काफी स्थान संमेलन की खबरों को दिया। मगर **नवनीत** में संमेलन का नाम तक नहीं छपा। हिंदी और उसके बड़े से बड़े समाचार अगर आपके लिए इतने महत्त्वहीन हैं, तो अपनी पत्रिका के नाम में एक अक्षर बढ़ाकर **नवनीत अहिंदी डाइजेस्ट** कर लीजिये न!

–विश्वमित्र नारंग, नयी दिल्ली-९

ooo

'चीन अन्नाभाव से मुक्त' (फरवरी १९७५) विशेषत: पठनीय लेख था। चीन के आर्थिक विकास की प्राथमिकताएं तय करते हुए माओ ने १९५८ में कहा था– 'कृषि को हमें अपने अर्थतंत्र में पहली तरजीह देनी होगी ...... सबसे पहला स्थान है खेती का, फिर कृषि-आधारित उद्योगों का, उसके बाद हल्के उद्योगों का, और अंत में (प्रतिरक्षा की जरूरतें छोड़कर) भारी उद्योग का।'

अमरीकी पत्रिका 'टाइम' के अनुसार, सन १९७४ का वर्ष चीन के लिए आर्थिक दृष्टि से निराशाकारक रहा है; उस साल उसका विदेश-व्यापार ७५ करोड़ रुपये के घाटे का रहा। मगर अन्न के मामले में चीन आत्मनिर्भर है। यों वह विदेश से काफी अन्न खरीदता है; क्योंकि देश के दूर-दराज के हिस्सों से अनाज की ढुलाई बहुत महंगी पड़ती है। चीन में अन्नोत्पादन ४ प्रतिशत सालाना के हिसाब से बढ़ रहा है, जिसका आधा हिस्सा १.६ करोड़ सालाना की दर से बढ़ती आबादी का पेट भरने में खप जाता है।

चीनी अर्थतंत्र की एक नयी और बहुत बड़ी सफलता यह है कि वह पेट्रोल-आयातक से पेट्रोल-निर्यातक बन गया है। सन १९७४ में उसने ३.०५ करोड़ ब्रि. बैरल कच्चा पेट्रोल जापान को निर्यात करके ४४.२ करोड़ डालर कमाये। उसके कुल ज्ञात पेट्रोल खजाने २० अरब ब्रि. बैरल कूते गये हैं।

'टाइम' पत्रिका ने चीन की पिछले पचीस

वर्ष की आर्थिक दौड़ को दिखाने वाले ये महत्त्वपूर्ण आंकड़े दिये हैं (इनमें पहला अंक १९५० का है और दूसरा १९७४ का)–इस्पात ६ लाख टन से २ करोड़ ६० लाख टन; कच्चा पेट्रोल २ लाख टन से ७ करोड़ ९० लाख टन; सब किस्मों का अन्न ७.९० लाख टन से २६ करोड़ टन; कोयला ४ करोड़ २० लाख टन से ४२ करोड़ टन; कुल विदेशी व्यापार १ अरब २० लाख डालर से १७ अरब डालर। **–चंद्रिका सिन्हा, बंबई**

○○○

जीवन को इस हद तक गंभीर नहीं बना लेना चाहिये कि हंसी की खिलखिलाहट गले में ही दब जाये–यह है होली की मूल भावना। इसी भावना को लेकर होली के इस महीने में हमने हल्के-फुल्के ढंग से लिखे हुए लेखों की संख्या इस अंक में कुछ अधिक रखी है। हमें आशा है, राजनैतिक आंदोलनों और आर्थिक चिंताओं के वर्तमान दौर में पाठक इससे कुछ क्षण हंसकर तनावमुक्ति महसूस करेंगे। **–संपादक**

○○○

सही आंदोलन से बुद्धिजीवी वर्ग अलगाव नहीं रख सकता और न वह इस संबंध में अपनी भूमिका ही बिसरा सकता है। जब सही आंदोलन–जो बेहतर जीवन के लक्ष्य से जुड़ा होता है और राजनैतिक अथवा सत्ता के परिवर्तन को ही नहीं, जीवन के सभी अंगों को समेटना चाहता है–संपूर्ण परिवर्तन का आह्वान देता है, तब वह साहित्यकार को सारे वादों से ऊपर उठकर अपनी भूमिका तुरंत निश्चित करने को भी आलोड़ित करता है। श्री धर्मवीर भारती की कविता 'मुनादी' (फरवरी अंक) उसी आलोड़न की पहचान है। यह स्थायी उद्वेलन की सृष्टि में सक्षम है–यथास्थितिवादियों के विरुद्ध। कविता को अविकल उद्धृत करके आपने संतुलित दृष्टिकोण का परिचय दिया है।

–महेंद्र शर्मा, टिलिलागढ़, ओड़िसा

○○○

हर माह सोचता हूं आपको बधाई-पत्र लिखूं, लेकिन अनेक पाठकों के पत्रों में आपके लिए प्रशंसाएं पढ़कर तसल्ली कर लेता हूं। किंतु इस बार पत्र लिखने को एक प्रकार से विवश हो गया हूं। कारण है डा. धर्मवीर भारती की कविता 'मुनादी'। उसे पढ़कर मन को बेहद संतोष मिला। प्रसन्नता भी हुई कि दक्षिण में बैठे हुए साहित्यकार भी उतने ही जागरूक हैं, जितने उत्तर-पूर्व में। कदाचित दक्षिण वाले अधिक जागरूक हैं। इसका प्रमाण है 'मुनादी', जिसका प्रकाशन हैदराबाद की 'कल्पना' में हुआ और जिसे आपने **नवनीत** के फरवरी ७५ अंक में पूरा का पूरा उद्धृत किया। वास्तव में यह बात सराहनीय है कि अन्यत्र प्रकाशित श्रेष्ठ रचनाएं तलाशकर उन्हें **नवनीत** द्वारा लाखों पाठकों को लाभान्वित करते हैं।

चूंकि पत्र लिख ही दिया है अतः 'रामजन्म : एक अपूर्व चित्रण' का उल्लेख भी करने दें। इसमें रामजन्म का जो अनुपम चित्र प्रकाशित हुआ है, वह वास्तव में 'जीवन के

नग्न सत्य को उदघाटित करता है।' इस साहसपूर्ण प्रयोग के लिए भी बधाई।

—रामपाल कटारिया, जयपुर

०००

फरवरी अंक में भाई डा. जगदीश गुप्त का लेख 'रामजन्म : एक अपूर्व चित्रण' देखकर चमत्कृत हुआ। अपनी दक्षिण की विस्तृत यात्रा में मुझे उस द्वीप-महल के विषय में कुछ पता नहीं चला था। भारत के कलाकारों की कृतियां कितनी साहसपूर्ण, उदात्त एवं पवित्र रही हैं, इसका एक और प्रमाण मिला।

—संतकुमार टंडन 'रसिक', इलाहाबाद

[२]

डा. गुप्त ने जो सामग्री प्रस्तुत की है, वह निःसंदेह शोधपूर्ण है और एतदर्थ वे साधुवाद के पात्र हैं। परंतु रामजन्म और मार्कंडेय-जन्म जैसे प्रजनन-दृश्यों को देना न केवल कला का नग्न प्रदर्शन है, अपितु अश्लीलता को बढ़ावा देना भी है। डा. गुप्त के ये उद्गार (पृष्ठ ९६) हैं—'कला-पारखियों को यह दृश्य अवश्य रुचिकर प्रतीत होगा। रामकथा के सभी दृश्यों से, यहां तक कि रावण-वध वाले दृश्य से भी मुझे यह श्रेष्ठतर लगा।' इस तरह वे ऐसे चित्रों के प्रकाशन को भले समर्थन दें, किंतु इस बात को वे स्वयं भी नकार नहीं सकते कि कला कला के लिए नहीं, जीवन के लिए होती है। कला का लोकरंजक होना तो आवश्यक है ही, लोकरक्षक होना भी वांछनीय है। वह कला कला नहीं जो जन-जीवन को अधःपतन की ओर ले जाये।

आपसे तो मात्र यही निवेदन मुझे करना है कि ऐसे 'नंगे चित्र' **नवनीत** की गरिमा में वृद्धि कर सकेंगे, इसमें शंका है।

—डा. कन्हैयालाल जोशी, जयपुर

०००

'सूर्योपासना' (**नवनीत** जनवरी ७५) लेख के लिए श्री धीरेंद्रकुमार दीक्षित को धन्यवाद। किंतु इतना स्पष्टीकरण भी मेरी दृष्टि में आवश्यक है :

१. सूर्यसारथी अरुण को लेख में 'लंगड़ा' कहा गया है। किंतु पुराणों के अनुसार अरुण का कमर से नीचे का शरीर था ही नहीं। उसका जन्म प्रजापति कश्यप की एक पत्नी विनता से अंड-रूप में हुआ था, और वह गरुड का अग्रज था।

२. कमर में बांधे जाने वाले 'अव्यंग' को लेखक ने 'मेखला' कहा है। मेखला एक गहना है, जो कीमती धातु से बनता है, जबकि 'अव्यंग' पवित्र ऊन से बने वस्त्र का कमरबंद है और वह सासानी युग में ईरान में बनता था। मूर्तिशास्त्र में उसे 'वियंग' कहा गया है। सूर्यपूजा और सूर्यमूर्ति-विधान ईरान से हमारे देश में आया है। सूर्य की पूजा करने वाले अर्चक 'मगी' नाम से प्रख्यात थे, वे ही हमारे देश के 'मग' ब्राह्मण हैं। कृष्णपुत्र सांब द्वारा ये लोग ईरान से सूर्यपूजा के लिए सौराष्ट्र में बुलाये गये थे, ऐसी मान्यता है। अनुश्रुति के अनुसार कृष्णपुत्र सांब ने जिस चंद्रभागा नदी के किनारे प्रथम सूर्य-मंदिर बनवाया, वह

नदी कौन-सी थी, इसका निर्णय आज तक नहीं हो पाया है। भारत में चंद्रभागा नाम की अनेक नदियां हैं। श्रीकृष्ण का उत्तरकालीन जीवन सौराष्ट्र में बीता था और मग ब्राह्मण भी आज सौराष्ट्र में मिलते हैं; अत: संभवत: यह चंद्रभागा सौराष्ट्र की कोई नदी रही होगी।

३. गुजरात के सुविख्यात सूर्य-मंदिर मोढेरा को लेखक ने प्रभास से ३० किलोमीटर दूर बताया है, जो कि गलत है। यहां 'प्रभास' के स्थान पर 'अणहिलवाड पाटण' शब्द होना चाहिये।

—नरोत्तम पलाण, पोरबंदर

०००

दीपावली विशेषांक अपनी अनूठी शान के साथ प्राप्त हुआ था। लेखों का चयन बड़ी सुरुचि के साथ किया गया है। विषयों का वैविध्य भी लुभाने वाला है। संस्कृत-साहित्य का प्राध्यापक होने के कारण 'पंचतंत्र की पृथ्वी-परिक्रमा' वाला लेख चाव से पढ़ गया। इसके अलावा पंडित हजारीप्रसादजी द्विवेदी तथा पूज्य श्री काका कालेलकरजी के लेख बड़े प्रबोधक और संतर्पक लगे। कलाकार रोरिक की साधना का विवरण बहुत रोचक लगा। बहन शिवानीजी के संस्मरण दिल हिला देने वाले हैं— उनका विन्यास बड़ा मार्मिक बन पड़ा है। **नवनीत** की इस विशेषता का मैं बड़ा कायल हूं कि इसमें भरती का माल नहीं लिया जाता। बड़ी सूझबूझ से सामग्री को ठोकबजाकर स्वीकार किया जाता है। सुसंपादन के लिए बधाई।

पुनश्च : जनवरी के **नवनीत** में कांग्रेस के प्रथम सभापति श्री उमेशचंद्र बनर्जी का शब्दचित्र खूब सुंदर उठाया गया है। भाई रामनाथ सुमन का लेख 'नयी पीढ़ी-पुरानी पीढ़ी' खूब सुचिंतित और उद्बोधक है। उदीयमान-उद् वेलित मन के तरुणों को उसे अवश्य पढ़ना चाहिये। जीवन के सहअस्तित्व और समाधानपूर्ण मनोभावना के बोध के लिए इस प्रकार के लेख अनुभववृद्धों और धीर-गंभीर मनीषियों से लिखवाकर **नवनीत** में छापने का आयोजन कीजिये। मद्रास का साप्ताहिक 'स्वराज्य' ऐसी लेखमालाएं विविध समस्याओं पर बराबर छापता है। वे लेख बहुत उपादेय और प्रेरक होते हैं।

—शंकरदेव विद्यालंकार, पोरबंदर

०००

अगस्त १९७४ के **नवनीत** में पृष्ठ ४५ पर प्रकाशित रचनाओं का रचनाकार मैं हूं और श्री मूलचंद्र शर्मा, भरतपुर के पत्र (फरवरी, पत्रवृष्टि स्तंभ) में जिस मुक्तक का उल्लेख किया गया है, उसे मैं अपने चिंतन की दुर्लभ उपलब्धि मानता हूं। इसलिए उस सृजन का कोई और दावेदार है तो मेरा अनुरोध है कि वह स्वयं अपना पक्ष प्रस्तुत करे। **—धर्मेंद्र मुंधा,**

१४९ जोशी रोड, नयी दिल्ली-५

* श्री मुंधाजी का पता पत्र के साथ दिया गया है। संबद्ध पत्र-व्यवहार अब सीधे उन्हीं से किया जाये। **नवनीत** में अब इस विषय में और कुछ नहीं छपेगा। **—संपादक**

★

दक्षिण अफ्रीका : परिवर्तन का कगार

अवधनंदन

अफ्रीका महाद्वीप का दक्षिणी भाग यानी रंगभेद के आधार पर मुट्ठी-भर गोरों के हाथों बहुसंख्यक अश्वेतों के शोषण का दुर्ग। अफ्रीका महाद्वीप के दक्षिण पश्चिम में स्थित नांबिया से लेकर दक्षिण अफ्रीका गणतंत्र और रोडेशिया तक इस शोषण-दुर्ग का परकोटा फैला हुआ है। पश्चिम में अंगोला और पूर्व में मोजांबीक की पुर्तगाली बस्तियां अब तक इसकी मजबूत बुर्जियां थीं। परंतु गत वर्ष अप्रैल में हुई पुर्तगाली क्रांति के फलस्वरूप पूर्व और पश्चिम की ये दोनों बुर्जियां कमोबेश ध्वस्त हो गयी हैं और मोजांबीक और अंगोला स्वतंत्रता के द्वार पर पहुंच चुके हैं।

अब गोरे शोषण के तीन बचे हुए केंद्र यानी दक्षिण अफ्रीका गणतंत्र, उसके मातहत राष्ट्रसंघ-संरक्षित देश नांबिया और रोडेशिया की स्थिति क्या होगी ? यह प्रश्न न केवल अफ्रीकी राष्ट्रवादियों को वरन इन तीनों देशों के गोरे शासकों को भी परेशान कर रहा है।

सबसे अधिक चिंताग्रस्त हैं दक्षिण अफ्रीकी गणतंत्र के प्रधान-मंत्री जान वोर्स्टर, जिनका देश रंगभेद की क्रूर नीति के कारण कुछ ही महीनों पहले राष्ट्रसंघ से निष्कासित किया जा चुका है। अफ्रीका से धुर दक्षिणी छोर पर ४ लाख ७१ हजार ४४५ वर्गमील में फैला हुआ, २ करोड़ १४ लाख जनसंख्या का यह देश अपनी सोने-हीरे की खानों तथा हिटलरी शासन की याद दिलाने वाली अमानुषिक रंगभेद नीतियों के लिए समान रूप में प्रसिद्ध है।

वस्तुतः दक्षिण अफ्रीकी गणतंत्र में पूर्ण नागरिक अधिकार ३७।। लाख गोरों के लिए ही सुरक्षित हैं। १ करोड़ ७७ लाख अश्वेत, जिनमें ६ लाख २० हजार एशियाई भी हैं, दोयम दर्जे के नागरिक हैं। गोरों ने यहां के मूल निवासियों को उनके अपने ही देश में पूरी तरह से बेगाना बनाकर बांटुस्तान (अश्वेत-क्षेत्र) के बाड़े में धकेल दिया है।

नवस्वतंत्र अफ्रीकी राष्ट्रों के प्रहार से

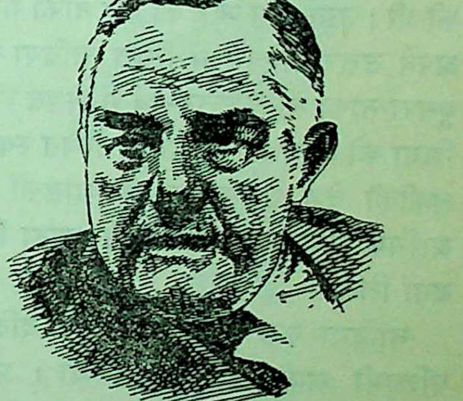

वोर्स्टर : परिवर्तन के लिए चिंतित

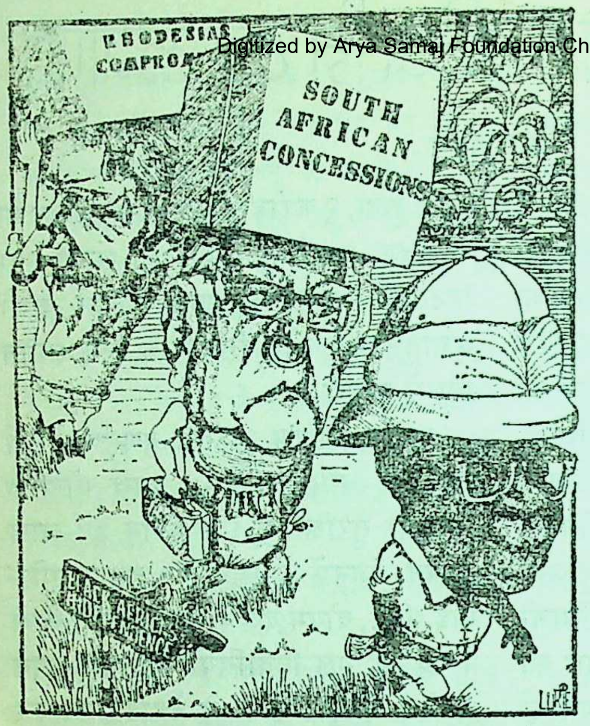

अश्वेत अफ्रीका : स्वातंत्र्य-यात्रा [व्यंग्यचित्र : लूरी]

अपनी रंगभेद व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए दक्षिण अफ्रीका ने खासी व्यूह-रचना की थी। उसने इस व्यूह का एक नाका माना अपने उत्तर-पश्चिम में स्थित नांबिया को, दूसरा नाका माना उत्तर-पूर्व में स्थित रोडेशिया को। इन दोनों के बीच स्थित स्वतंत्र अफ्रीकी देश बोत्सवाना के शासकों को आर्थिक सहायता देकर उसने अपना मित्र बना लिया।

नांबिया कुछ समय पहले तक दक्षिण-पश्चिमी अफ्रीका कहलाता था। प्रथम महायुद्ध के बाद निर्मित लीग ऑफ नेशन्स ने सन १९२० में ८ लाख २३ हजार १४५ वर्गमील का यह क्षेत्र दक्षिण अफ्रीका को देखरेख के लिए सौंपा था। इसकी करीब ७॥ लाख की आबादी में ९० हजार से कुछ अधिक गोरे हैं और बाकी यहां के मूल निवासी, जो अलग-अलग कबीलों में बंटे हुए हैं। कहने की जरूरत नहीं कि सत्ता, संपत्ति और संसाधन सभी कुछ गोरों के हाथों में हैं। दक्षिण अफ्रीका के रंगभेद-कानून भी यहां लागू होते हैं।

गोराशाही के व्यूह का उत्तर-पूर्वी नाका है रोडेशिया। १ लाख ५० हजार ८२० वर्गमील क्षेत्रफल का यह देश ११ नवंबर १९६५ तक ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त गवर्नर के अंतर्गत स्वशासित डोमिनियन था। लेकिन उस दिन प्रधान-मंत्री इयन स्मिथ ने स्वतंत्रता की इकतरफा घोषणा की और रोडेशिया ब्रिटेन से पूरी तरह स्वतंत्र हो गया। लेकिन यह स्वतंत्रता वहां के कुल २ लाख ६७ हजार गोरों की संपत्ति बन गयी है, और बाकी ५४ लाख ९० हजार अश्वेत मूल निवासियों के हिस्से में आयी है इन अल्पसंख्यक गोरों की गुलामी।

यह गुलामी किस तरह लादी गयी है, इसका एक निदर्शन है मार्च १९७० में वहां किया गया भूमि का वर्गीकरण। गोरे शासकों ने देश की समस्त कृषियोग्य भूमि

को तीन वर्गों में बांट दिया। ४ करोड ४९ लाख एकड़ भूमि गोरों के लिए सुरक्षित रखी गयी है। इतनी ही भूमि अफ्रीकी मूल निवासियों को दी गयी है। ६६ लाख एकड़ को वन-पशुओं के संरक्षण तथा राष्ट्रीय पार्कों आदि के लिए सुरक्षित कर दिया गया है। ऊपर से देखने पर गोरों और मूल निवासियों के मध्य भूमि का वितरण समान प्रतीत होता है; परंतु इन दोनों वर्गों की आबादी के अनुपात पर नजर डालें, तो भेद खुल जाता है।

रोडेशिया सरकार की इन शोषण-नीतियों और अश्वेतों को परतंत्र रखने की साजिश का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जमकर विरोध हुआ है। वस्तुतः जैसे ही रोडेशिया ने स्वतंत्रता की इकतरफा घोषणा की, वैसे ही राष्ट्रसंघ ने अपने सदस्य-राष्ट्रों को आदेश दिया कि वे उसके साथ सभी तरह के आर्थिक संबंध तोड़ लें। पुर्तगाल और दक्षिण अफ्रीका को छोड़कर सभी सदस्यों ने इसका पालन किया, कम से कम खुली अवज्ञा तो नहीं की। महीने-भर बाद अर्थात् १७ दिसंबर १९६५ को रोडेशिया को तेल देने पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया।

अपेक्षा यह की गयी थी कि इन दबावों के कारण रोडेशियाई सरकार अश्वेतों के साथ बातचीत के लिए बाध्य हो जायेगी। लेकिन उत्तर-पूर्व में मोजांबीक का पुर्तगाली उपनिवेश और दक्षिण में दक्षिण अफ्रीकी गणतंत्र जैसे मित्रों की सहायता के बूते पर रोडेशिया के गोरे शासक अपनी हठधर्मी पर अडे रहे।

इस बीच रोडेशिया के स्वतंत्रता-सैनिक शांतिपूर्ण उपायों से स्वतंत्रता-प्राप्ति की आस छोड बैठे। उन्होंने ज़िंबाब्वे आफ्रिकन नेशनल यूनियन (ज़ानु) और ज़िंबाब्वे आफ्रिकन पीपल्स यूनियन (ज़ापु) के नेतृत्व में वनों-पर्वतों से निकलकर गोरों पर एकाएक आक्रमण और वापस वनों-पर्वतों में छिप जाने की जानी-पहचानी छापामार तकनीक अपना ली। ऐसी स्थिति पैदा हो गयी कि रोडेशियाई गोरों को अपनी रक्षा के लिए दक्षिण अफ्रीका से करीब २,००० पुलिस सिपाही और दो स्क्वाड्रन हेलिकाप्टर उधार मंगाने पड़े।

इसके बावजूद, ज़ानु के अनुयायी सक्रिय छापामारों ने मोजांबीक के फ्रेलिमो छापा-

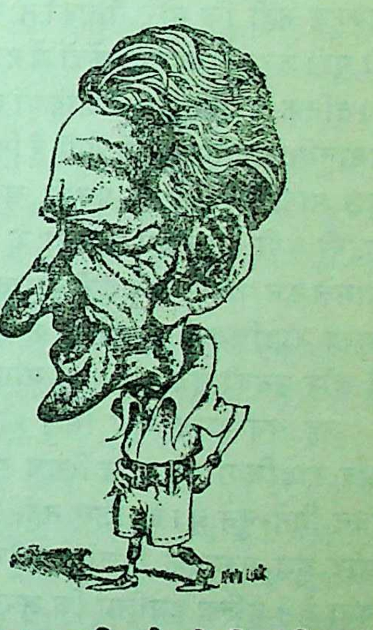

इयन स्मिथ : परिवर्तन के लिए विवश

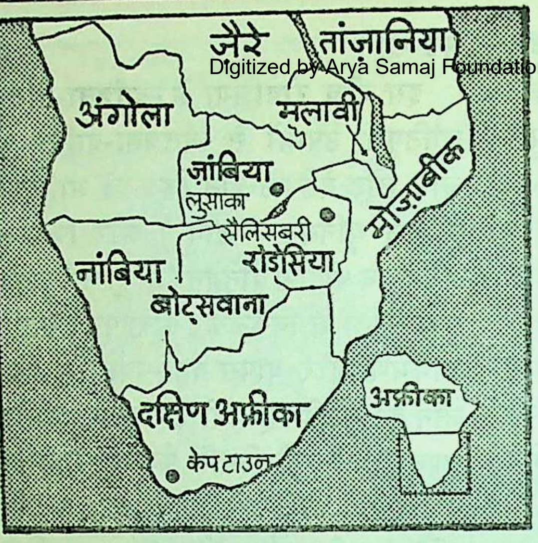

मारों की सहायता से ऐसी स्थिति ला दी कि रोडेशियाई सरकार को करीब ४० गांवों को 'सुरक्षित गांव' घोषित करके वहां की सारी व्यवस्था सेना को सौंपनी पड़ी। कोई ताज्जुब नहीं कि गोरे सैनिकों ने इन गांवों को पूरी तरह से यातना-केंद्रों में बदल दिया है। तनिक-से संदेह पर अफ्रीकियों को इतनी अमानुषिक यातनाएं दी गयी हैं कि हाल में कुछ पादरियों को भी इनकी खुली निंदा करनी पड़ी है। नृशंस यातना के १० ठोस मामले इन पादरियों ने करीब पांच सौ गण्यमान्य रोडेशियाई नागरिकों के सामने रखे हैं और उनकी पूरी जांच की मांग की है।

यह सब दमन व्यर्थ सिद्ध हो रहा है। अब रोडेशिया की इयन स्मिथ सरकार के दिन गिने-चुने हैं। इसलिए नहीं कि छापामार युद्ध एकाएक निर्णायक दौर में पहुंच गया है। बल्कि इसलिए कि अपने अफ्रीकी उपनिवेशों को स्वतंत्र कर देने के पुर्तगाली निर्णय से दक्षिणी अफ्रीका में समूचा शक्तिसंतुलन ही बदल गया है। अब रोडेशिया दक्षिण दिशा को छोड़कर, जिसमें उसकी सीमा दक्षिण अफ्रीका के साथ है, बाकी सब ओर से अश्वेत राष्ट्रों से घिर जायेगा। मोजांबीक के पूर्ण स्वतंत्र हो जाने के बाद अफ्रीकी राष्ट्रवादियों को तो पूर्व में एक सशक्त मित्र क्षेत्र मिल जायेगा, जबकि मोजांबीक के बेइरा और लोरेंसो मार्किस बंदरगाहों के उपयोग की सुविधा छिन जाने से रोडेशिया का समुद्र से संबंध पूरा टूट जायेगा।

खुद दक्षिण अफ्रीका के लिए भी परेशानी पैदा हो गयी है। उसे लगता है कि फ्रेलिमो-नियंत्रित स्वतंत्र मोजांबीक उसकी सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर देगा। दक्षिण अफ्रीका के अफ्रीकी राष्ट्रवादी मोजांबीक को अपनी तैयारी और कार्रवाई का केंद्र बना लेंगे। रूस के साथ फ्रेलिमो के अच्छे संबंधों को देखते हुए यह असंभव नहीं कि इन दक्षिण अफ्रीकी छापामारों को मोजांबीक के जरिये आधुनिकतम शस्त्रास्त्र मिलने लगें।

अभी दक्षिण अफ्रीका मोजांबीक के काबोराबासा बांध से बिजली काफी लेता है। साथ ही मोजांबीक से सस्ते अश्वेत मजदूर बड़ी संख्या में प्राप्त होते हैं। इसलिए दक्षिण अफ्रीकी प्रधान-मंत्री जान वोर्स्टर स्वतंत्र मोजांबीक से अच्छा संबंध बनाये रखने को

उत्सुक हैं और अनिवार्य 'त्याग' के लिए मन से तैयार हो गये हैं।

वोर्स्टर ने एक ओर नांबिया के ९० हजार गोरों से कहा है कि वे अपने देश के मूल निवासियों को स्वशासन के लिए तैयार करें; दूसरी ओर उन्होंने रोडेशिया को साफ-साफ बता दिया है कि वे बदली हुई परिस्थितियों में रोडेशिया की सुरक्षा की जिम्मेदारी नहीं ले सकते। वोर्स्टर ने एक ओर तो जांबिया के उदारपंथी राष्ट्रपति कैनेथ कौंडा से संपर्क साधा और दूसरी ओर इयन स्मिथ पर दबाव डाला कि वे अपने देश के अश्वेत राष्ट्रवादियों के साथ बहुसंख्यक शासन के मुद्दे पर बातचीत की तैयारी करें।

वोर्स्टर के दबाव के फलस्वरूप ही पिछले दिसंबर में रोडेशिया सरकार ने वर्षों से नजरबंद ज़ापु के नेता न्कोमो और ज़ानु के नेता सिथोले के साथ जांबिया की राजधानी लुसाका में बातचीत की। इसी दबाव के कारण इयन स्मिथ अफ्रीकी बहुसंख्यकों के नेताओं के साथ दो महीने में संविधान-वार्ता करने को सहमत हुए हैं और उन्होंने दोनों नेताओं को रिहा किया है।

वैसे तो अभी भी रोडेशिया की गुत्थी पूरी तरह सुलझी नहीं है। संविधान-वार्ता तभी संतोषप्रद मानी जायेगी, जब उससे रोडेशिया में बहुसंख्यकों के शासन की उत्तरोत्तर स्थापना का कार्यक्रम निष्पन्न हो। परंतु क्या स्मिथ और रोडेशियाई गोरे इसके लिए तैयार हैं? लुसाका संमेलन के बाद रोडेशिया के गोरे समाचारपत्रों की प्रतिक्रियाएं कोई बहुत उत्साहवर्धक नहीं हैं। गोरों के प्रवक्ताओं ने कहा भी है कि हम आत्मसमर्पण नहीं करेंगे, हमारे पास बंदूकें हैं।

बंदूकें लुटेरों को कुछ समय के लिए लूट की छूट दिला सकती हैं; मगर लूट को नैतिक नहीं बना सकतीं। रोडेशिया में बहुसंख्यकों का शासन यदि शांतिपूर्ण वार्ता से स्थापित नहीं हुआ, तो संघर्ष के जरिये होगा। और इस संघर्ष में स्मिथ की गोराशाही की रणनीतिक स्थिति पहले से कमजोर रहेगी।

इस सारे स्थिति-परिवर्तन में सबसे महत्त्वपूर्ण पहेली स्वयं दक्षिण अफ्रीकी गणतंत्र की है। क्या वोर्स्टर अफ्रीकी स्वतंत्रता की नयी बाढ़ में रंगभेद की जर्जर नाव को बचा पायेंगे? (अभी तो वे कूटनीति के जरिये इसका पूरा प्रयत्न कर रहे हैं।) और जो अक्सीरी दवा वे स्मिथ को पिला रहे हैं, उसे अपने आप पीने से कब तक बचते फिरेंगे?

यही कारण है कि दक्षिण अफ्रीका के अश्वेतों की आंखों में भी आशा की नयी चमक दौड़ गयी है। उन्हें संघर्ष की कठिन परीक्षा में से गुजरना पड़े; पर संघर्ष की यह मुहिम निर्णायक रहेगी।

बोत्सवाना और मलावी जैसे देश भी जो दक्षिण से मिलने वाली आर्थिक सहायता के कारण अभी कल तक उसकी रंगभेदवादी सरकार के मित्र थे, परिस्थिति बदलने के साथ अपना सुर बदलने लगे हैं। साथ ही वोर्स्टर से मांग की जा रही है कि नेल्सन मांदेला को भी रिहा कीजिये, जिन्हें आपने वर्षों से नजरबंद कर रखा है।

★

अशांति क्षेत्र हिंद महासागर

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

ब्रिटेन की सरकार ने अपनी प्रतिरक्षा-नीति के संबंध में ३ दिसंबर १९७४ को संसद के समक्ष जो वक्तव्य दिया, उसमें कुछ ऐसी बातें कही गयीं, जिनका हिंद महासागर से सीधा संबंध था। इनमें मुख्य बातें ये थीं :

१. ब्रिटेन सेंटो व सिएटो का सदस्य तो रहेगा, परंतु इन संधि-प्रतिष्ठानों के लिए कोई सेना निर्धारित नहीं करेगा। २. दक्षिण-पूर्व एशिया में सहायता के लिए पांच देशों के बीच में जो व्यवस्था हुई थी, उससे ब्रिटेन अपनी सेना हटा लेगा; केवल वायुसेना की कुछ टुकड़ियां रहने देगा। ३. ब्रुनेई में जो गोरखा बटालियन है, उसे वहां से हटा लेने का उसका विचार है। ४. मालद्वीप में स्थित गान टापू और मारीशस में जो अड्डा है, उससे ब्रिटेन हट जायेगा। ५. दक्षिण अफ्रीका की सरकार के साथ इस बात पर वार्ता करने का उसका इरादा है कि साइमन्सटाउन समझौता समाप्त कर दिया जाये।

इस वक्तव्य में केवल अमन के संबंध में कहा गया था कि वहां कोई परिवर्तन नहीं होगा। आप जानते हैं कि अमन में सुलतान के विरुद्ध जनता का विद्रोह चल रहा है। अन्य सारे प्रस्ताव हिंद महासागर में तनाव को दूर करने वाले हैं। अतः इस वक्तव्य में से यह आशा बंधी कि ब्रिटेन हिंद महासागर क्षेत्र से अपने अड्डे हटा लेना चाहता है।

लेकिन उसी वक्तव्य में एक बात और कही गयी, जिसने हिंद महासागर में वर्तमान स्थिति को और बिगाड़ दिया। वह कथन यह था—'हिंद महासागर में इन निर्णयों को कार्यान्वित करने के बाद और वहां पर सोवियत नौसेना की उपस्थिति को देखते हुए हमने निर्णय किया है कि हम संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार के इन प्रस्तावों को स्वीकार कर लें कि डीगो गार्सिया के द्वीप में हमारे साथ उन्हें जो सुविधाएं प्राप्त हैं और जो ब्रिटिश सरकार के साथ हुए एक वर्तमान समझौते के अंतर्गत हैं, उनमें तुलनात्मक दृष्टि से मामूली विकास कर लें। लेकिन नैमित्तिक उद्देश्यों के अतिरिक्त इन सुविधाओं का उपयोग दोनों सरकारों के संयुक्त निर्णय से होगा।'

समाचारपत्रों में एक और महत्त्वपूर्ण खबर यह छपी है कि अमरीका के प्रतिरक्षा-मंत्रालय की निगाहें फारस की खाड़ी पर हैं। पिछले वर्ष के अंत में सेंटो सैन्य-संघटन के अंतर्गत फारस की खाड़ी के करीब अमरीका, इंग्लैंड, फ्रांस, तुर्की, ईरान और पाकिस्तान की नौसेनाओं ने 'मिडलिंक-७४'

नाम का सैनिक अभ्यास भी किया। कहा जाता है कि अमरीकी विमानवाहक पोत 'कांस्टेलेशन', जिसके साथ एक पनडुब्बी थी और मिसाइल फेंकने में सक्षम एक जहाज भी था, काफी दिनों तक फारस की खाड़ी में रहा। उसका उद्देश्य था वहां के भूगोल से परिचित होना।

अमरीकी पत्रों के अनुसार, अमरीका के रक्षा-प्रतिष्ठान पेंटेगान ने फैसला कर लिया है कि यदि फिर अरब-इस्रायल युद्ध छिड़ा और अरब देशों ने अमरीका को पेट्रोल भेजने पर पुनः प्रतिबंध लगा दिया, तो अमरीकी नौसेना और उसकी कमांडो-इकाइयां फारस की खाड़ी में स्थित तेल-क्षेत्रों पर कब्जा कर लेंगी और तेल के मूल्यों को बढ़ने नहीं देंगी। स्पष्ट है कि यदि ऐसा हुआ तो यह संघर्ष केवल अरब देशों तक सीमित नहीं रहेगा। इस आशय के समाचार आने भी लगे हैं कि ऐसी स्थिति में सोवियत संघ अपनी पूर्वी यूरोप स्थित सेना हवाई जहाजों के द्वारा अरब देशों को भेज देगा, ताकि अमरीकी सेना का डटकर मुकाबला किया जा सके। यानी हिंद महासागर भावी युद्ध का एक प्रमुख अखाड़ा बन जायेगा।

अमरीकी राष्ट्रपति श्री फोर्ड तथा उनके विदेश-मंत्री डा. किसिंजर ने पत्रकारों के संग एक बातचीत में इस संभावना को स्वीकार किया कि यदि अरब देश तेल को फिर हथियार के रूप में काम में लाये, तो पश्चिमी राष्ट्र अपने आर्थिक ढांचे की रक्षा के लिए क्या करेंगे यह कहा नहीं जा सकता।

पिछले दिसंबर में नयी दिल्ली में ४१ हिंद महासागरीय देशों का एक संमेलन हुआ था और उसमें यह मांग की गयी थी कि हिंद महासागर से सारे विदेशी अड्डे हटाये जायें। संमेलन ने इन अड्डों को तनाव बढ़ाने वाला बताया। लोकसभा तथा राज्यसभा में भी विदेशी अड्डों का प्रश्न उठाया गया और विदेश-मंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण ने भारत-सरकार की स्थिति स्पष्ट करते हुए

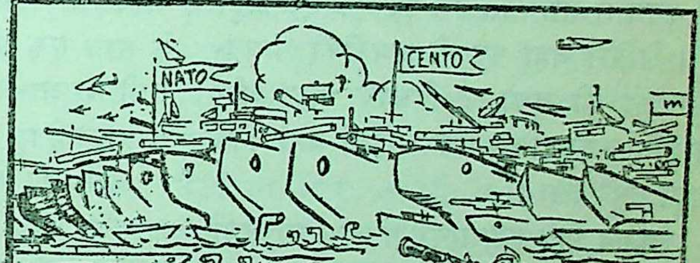
NATO
CENTO
Indian Ocean
IF THEY LISTEN TO REASON
WELL AND GOOD ... OR ELSE....

समझाने से मान जायें तो ठीक... वरना...

[लक्ष्मण : टाम्सइ ऑफ इंडिया]

कहा कि भारत की यह मांग है कि यथाशीघ्र ये अड्डे हिंद महासागर से हटाये जायें।

हिंद महासागरीय डीगो गार्सिया के अड्डे को पोलारिस पनडुब्बियों से लैस करने के सिलसिले में यह संकेत किया गया है कि यह सब भारत के विरुद्ध नहीं, अपितु हिंद महासागर में रूस की उपस्थिति के विरुद्ध है। परंतु रूस का कहना है कि गत एक वर्ष में जो ३३ रूसी जहाज हिंद महासागर में से गुजरे, उनमें से अधिकांश युद्धपोत नहीं थे। दिल्ली संमेलन में भी रूसी प्रतिनिधि श्री पोपोव ने कहा कि हिंद महासागर में कोई रूसी अड्डा नहीं है। हमारे रक्षामंत्री ने भी संमेलन में बताया कि भारत में सोवियत संघ को न कोई नौसैनिक सुविधा दी गयी है और न हमारे यहां उसका कोई अड्डा है। यह कहा जाता था कि सुमालिया व यमन में सोवियत संघ का एक-एक अड्डा है। लेकिन वहां पर भी अमरीकी संवाददाताओं को बुलाकर दिखाया गया और उन्होंने कबूल किया कि उन्होंने वहां कोई अड्डा नहीं देखा।

लेकिन हिंद महासागर में अन्य शक्तियों के अड्डे हैं। ब्रिटेन तो अपने अड्डे कम कर रहा है, जैसी कि उसने घोषणा की है; लेकिन अमरीका का प्रवेश बढ़ रहा है। अब भी उसके अनेक अड्डे इस सागर-क्षेत्र में विद्यमान हैं—इथियोपिथा के अस्मारा में; मोजांबीक के लोरेंसो मार्क्विस और नकाला में; न्यूजीलैंड के नार्थ केप और आस्ट्रेलिया पर्थ में; तथा मलेशिया के क्वालालंपुर में।

फ्रांस का एक हिंद महासागरी बेड़ा है, जिसका सेनापति अभी हाल तक मलागासे (मडागास्कर) में रहता आया है। फ्रांसीसी सुमालीलैंड की राजधानी जिबूती में इस बेड़े का एक बहुत बड़ा अड्डा है और हिंद महासागर के दक्षिण में रियूनियन, अम्स्टडँन, करगूलेन और क्रोजिट द्वीपों में अन्य अड्डे हैं।

ब्रिटेन जब अपनी सेनाएं हटा लेगा, तो भी उसका एक-एक अड्डा अमन के मसीरा में, हिंद महासागर के बीचो-बीच स्थित सीशेल द्वीप की राजधानी माही में और इसी द्वीपसमूह के दो अन्य द्वीप एलडब्रा और डिसरौचिस में बना रहेगा। मारीशस में उसका एक संचार-अड्डा है और मारीशस के साथ उसकी एक सुरक्षा-संधि भी है, जिसके फलस्वरूप वहां उसका एक नाविक अड्डा भी है। रूस का भी मारीशस के साथ एक समझौता है, जिसके अनुसार रूसी मछुआ-जहाज उस टापू में तेल, पानी ले सकते हैं।

चीन का कोई अड्डा नहीं है; लेकिन कराची और जंजीबार में उसे मनचाही सुविधाएं प्राप्त हैं। बेहरीन, जो कि तेल का एक बड़ा भंडार है, उसमें पहले ब्रिटेन का अड्डा था और ब्रिटेन के हटने के बाद अब अमरीका का अड्डा हो गया है। बेहरीन की सरकार ने अमरीकी अड्डे को हटाने को कहा है; परंतु अमरीका ने उसे माना नहीं है।

सवाल यह उठता है कि इतने अड्डे होने के बावजूद अमरीका ने डीगो गार्सिया को

क्यों चुना ? कारण स्पष्ट है । भौगोलिक दृष्टि से डीगो गार्सिया ऐसे स्थान पर है, जहां से उसकी मार अफ्रीका, एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया में सभी जगह पहुंच सकती है । यह भारत के दक्षिणी छोर से १,००० मील दक्षिण में और मारीशस से १,२०० मील उत्तर-पूर्व में है । इसे अब 'ब्रिटिश हिंद महासागरीय क्षेत्र' कहा जाता है। इस क्षेत्र का एक हिस्सा एलडब्रा अफ्रीका महाद्वीप से केवल ४०० मील पूर्व में है।

जब ब्रिटेन ने डीगो गार्सिया को मारीशस-सरकार से खरीदा, उसमें ३०० आदमी रहते थे । उन्हें वहां से हटाकर मारीशस भेजा गया । वैसे इस समय उसमें १,२०० कर्मचारी काम कर रहे हैं।

सन १९६६ के दिसंबर में अमरीका और ब्रिटेन के बीच इन द्वीपों के उपयोग के लिए एक समझौता हुआ था । उसमें यह व्यवस्था की गयी थी कि इनमें से एक द्वीप में एफ-१११ व सी-५ ए विमानों के लिए हवाई अड्डा बनेगा; मिसाइलों को ढूंढ़ने और उनकी गतिविधि की टोह लेने के लिए स्टेशन बनेगा; अमरीकी तथा ब्रिटिश नौसेना, वायुसेना और मिसाइल-शक्ति को सहायता देने के लिए आधुनिकतम संचार-व्यवस्था का प्रबंध होगा; और इन अड्डों पर कुल १० हजार आदमी काम करेंगे ।

मारीशस में इस समय भी ब्रिटेन की अणुशक्ति-चालित एवं पोलारिस नामक आणविक मिसाइलों से लैस पनडुब्बियां रेजोल्यूशन, रिनाउन, रिपल्स व रेवेंज ठहर सकती हैं । परंतु अब जो प्रबंध किया जा रहा है, उसके अनुसार अमरीका की पोसीडियन एवं ट्राइडेंट मिसाइलें भी यहां से ५,००० मील तक की मार कर सकेंगी।

यहां पर जो विमान रखे जायेंगे, उनकी टोह-उड़ानों का क्षेत्र कोचीन से लेकर सऊदी अरब तक होगा । यानी भारत के पश्चिमी सागर-तट की पूरी खोज-खबर ये विमान रख सकेंगे । भारत के नौसेनाध्यक्ष एडमिरल सुरेंद्रनाथ कोहली का यह कहना सही है कि डीगो गार्सिया में चाहे युद्धपोत काफी मात्रा में न भी हों, फिर भी वह तनाव का केंद्र बन जायेगा और सारे हिंद महासागर क्षेत्र में तनाव पैदा करता रहेगा।

पिछले दिनों अपने यहां आये सभी विदेशी राजनेताओं के साथ हुई वार्ता में भारत-सरकार ने हिंद महासागर को शांति-क्षेत्र बनाने तथा वहां से विदेशी सैनिक अड्डे हटाये जाने की मांग की है। संसद की विदेश-विभाग की सलाहकार-समिति के समक्ष विदेश-मंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण नेडीगोग ार्सिया संबंधी ब्रिटिश-अमरीकी निर्णय पर फिर से चिंता प्रकट की है। अमरीकी विदेश-मंत्री डा. किसिंजर से भी इस मुद्दे पर बातें हुई थीं, यद्यपि उन्होंने उसके बाद भी अपना निर्णय बदलना स्वीकार नहीं किया। जब से बंबई के निकट समुद्र में तेल मिलने के समाचार मिले हैं, यह अमरीकी अड्डा भारत के लिए और भी संकट का कारण बन गया है। मगर क्यों ?

हिंद महासागर संसार का तीसरा

विशालतम महासागर है। इसका जल-भंडार ६ करोड़ ९२ लाख २५ हजार २ सौ घनमील है। क्षेत्रफल है २,८३,५६,००० वर्गमील। पश्चिम में इसका छोर दक्षिण अफ्रीका का आशा प्रायद्वीप है, तो पूर्व में आस्ट्रेलिया का द्वीप-प्रांत टस्मानिया। इन दोनों स्थानों के बीच की लंबाई ६,६०० मील है। इसी प्रकार यदि कराची से लेकर दक्षिण ध्रुव तक की लंबाई नापी जाये, तो वह भी ६,६०० मील होती है।

राजनैतिक दृष्टि से हिंद महासागर और भी लंबा है। लाल सागर का (क्षेत्रफल १,६९,००० वर्गमील) यों तो अलग माना जाता है, परंतु है वह भी हिंद महासागर का ही हिस्सा—ठीक उसी प्रकार, जैसे कि अरब सागर, बंगाल की खाड़ी, अदन की खाड़ी, फारस की खाड़ी, कच्छ की खाड़ी, खंभात की खाड़ी, मन्नार की खाड़ी, मलक्का का मुहाना, पाक मुहाना, जावा का समुद्र या तिमोर का समुद्र हिंद महासागर के हिस्से हैं।

हिंद महासागर प्राचीन काल से एशिया और यूरोप के बीच में व्यापार का मार्ग रहा है; लेकिन जब २८ मई १९०१ को ईरान के शाह मुजफ्फरुद्दीन ने एक ब्रिटिश नागरिक विलियम नाक्स डी'आर्की को ईरान में तेल की खोज करने और उसे बेचने का साठ वर्ष का पट्टा दिया, तब से ब्रिटिश सरकार ईरान में ज्यादा दिलचस्पी लेने लगी और व्यावसायिक एवं सैनिक दृष्टि से हिंद महासागर का महत्त्व बढ़ गया। ब्रिटिश नौसेना अपने जहाजों के लिए ईरान से तेल खरीदने लगी।

सन १९०४ में मैसोपोटामिया आइ कंपनी की स्थापना हुई और १९२३ मे एक अमरीकी भूगर्भशास्त्री होल्ज ने सऊदी अरब से तेल निकालने का पट्टा लिया। सन १९२५ में होल्ज ने बेहरीन से तेल निकालने का पट्टा लिया। १९३४ में कुवैत में ते निकालने का काम एंग्लो ईरानियन तेल-कंपनी और अमरीकी गल्फ आइल कार्पो-रेशन के हाथ में आ गया और साथ ही सा उन देशों की राजनीति भी हिंद महासाग में दिलचस्पी लेने लगी। हाल में कतार औ अबू धाबी में भी तेल का भंडार निकला है और पश्चिमी देशों के साथ-साथ जापा भी इन देशों में तेल निकालने के काम साझेदार हो गया है।

हिंद महासागर के अन्य क्षेत्रों में भी ते है—जमीन में भी और समुद्र के नीचे भी। खंभात की खाड़ी और बंबई के तटव समुद्र में, बर्मा में और इंडोनेशिया में, मलेशिया के सरावाक में तेल है। सिंगापुर तेलकूप तो नहीं हैं, परंतु वहां ४५ लाख ट पेट्रोल तैयार करने की तेल-शोधशालाएं है

इन मौजूदा और संभावित तेल-भंडा के अलावा हिंद महासागर का महत्त्व इ लिए भी है कि उसके तल में बहुत खनि संपत्ति है। यह बात विशेषतः प्रकट हुई आ से दस वर्ष पूर्व चले एक अंतरराष्ट्रीय का क्रम के अंतर्गत अमरीका और रूस के अ षण-जहाजों द्वारा किये गये व्यापक खो

भा

कार्य से। क्लोरीन, सोडियम, मॅग्नीशियम, गंधक, कैलशियम, पोटैशियम, ब्रोमाइन, कार्बन, स्ट्रोन्शियम, बोरोन, सिलीकोन, फ्लुओरीन, आर्गन, नाइट्रोजन, लीथियम, रुबिडियम, फासफोरस, आयोडीन, बेरियम, इंडियम, जस्ता, लोहा, टीन, तांबा, अल्युमिनियम, निकल, मैंगनीज, युरेनियम, मोलिब्डिनम, सिलिनियम, आर्सेनिक, बैनेडियम, एन्टीमनी, कोबाल्ट, सीसियम, सीरियम, बिट्रियम, चांदी, लैंथोनम, क्रिप्टान, नियोन, कैडमियम, टंग्स्टन, एक्सीनोन, जर्मेनियम, क्रोमियम, सीसा, पारा, गैलम, बिस्मथ, नियोवियम, थीलियम, हीलियम, सोना, नमक, आदि अनेकों खनिज व तत्त्व यहां पाये जाते हैं। यह भी पता चला है कि समुद्र-तल पर यदि जंगल उगाये जायें तो वे भूमि पर स्थित जंगलों की अपेक्षा तेजी से बढ़ते हैं।

खनिजों के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों में भी हिंद महासागर बहुत ही समृद्ध है। बाङ्लादेश के तट पर बंगाल की खाड़ी में या अफ्रीका के तट पर एक-एक मछली दो-दो सौ पौंड के वजन की पायी जाती है। झींगी, झींगा, लाब्स्टर आदि खाद्य जलचरों और वांगर मछली (मैकेरेल) की यूरोप और अमरीका में बड़ी मांग है। इनके अतिरिक्त समुद्री खोज से यह पता लगा है कि समुद्र में घास बोयी जा सकती है।

प्राचीन मिस्र और रोम के लोग हिंद महासागर के रास्ते से भारत और चीन के साथ व्यापार करते थे। जब १४५३ में तुर्की ने कुस्तुनतुनिया जीतकर भूमध्य सागर के द्वार पर कब्जा करके इस व्यापार को रोक दिया, तो यूरोप वालों ने अफ्रीका की प्रदक्षिणा करके भारत पहुंचने का नया रास्ता ढूंढ़ा। सन १५१७ में तुर्की ने मिस्र को भी जीत लिया। पुर्तगाल, हालैंड, फ्रांस और इंग्लैंड इस होड़ में आये। धीरे-धीरे हिंद महासागर के क्षेत्र में ब्रिटेन ने एक तरफ अदन और दूसरी तरफ सिंगापुर लेकर दक्षिण-पूर्व एशिया के जलमार्ग को अपने लिए सुरक्षित कर दिया।

जब ब्रिटेन ने सन १९७१ से सिंगापुर और फारस की खाड़ी से अपनी सेनाएं हटाने की घोषणा की, तो यह प्रश्न उठा कि उससे हिंद महासागर में जो 'रिक्तता' हुई है, उसे कौन भरे? इसलिए यह कहना कि रूसी जहाजों के कारण इस क्षेत्र में अमरीका को खतरा हो गया है, कोई अर्थ नहीं रखता। जब से आर्थिक मजबूरी ने ब्रिटेन को इस बात के लिए बाध्य किया कि वह हिंद महासागर के अपने अड्डे समाप्त करे, अमरीका ने हिंद महासागर क्षेत्र में प्रवेश करने का और अधिक संकल्प किया।

हाल में यह भी चर्चा उठी है कि ब्रिटेन जब साइमन्सटाउन के अड्डे को छोड़ देगा, तब उत्तर अटलांटिक संधि (नाटो) देश यानी अमरीका, पश्चिम जर्मनी, फ्रांस आदि मिलकर उस अड्डे को अपना लेंगे। जब से पुर्तगाल की नयी सरकार ने यह घोषणा की है कि मोजांबीक को स्वतंत्रता दी जायेगी, यह निश्चित-सा हो गया है कि अमरीका के

जो अड्डे वहां पर स्थित हैं, उन्हें देर-सवेर हटना ही होगा। इसी तरह इथियोपिया में सम्राट हेली सेलासी के अपदस्थ हो जाने के बाद यह अनुमान लगाया गया है कि अस्मारा में जो अमरीकी अड्डा है, वह भी समाप्त करना पड़ेगा। मलगासे में जो फ्रांसीसी सेना का अड्डा था, उसने स्थानीय जनता में काफी रोष उत्पन्न किया और उस अड्डे को भी हटाने की मांग प्रबल हो उठी।

इसलिए जिन शक्तियों की दिलचस्पी हिंद महासागर में रहने की है, उन्होंने यह निर्णय किया कि उन क्षेत्रों से हटा जाये, जहां पर कोई स्थानीय जनता है और वह विरोध कर सकती है, तथा उनकी जगह हिंद महासागर के ऐसे खाली स्थानों को चुना जाये, जहां विदेशी शक्तियों के विरुद्ध कोई स्थानीय सरकार न हो। डीगो गार्सिया, एलडब्रा, क्रोजिट आदि द्वीप ऐसे स्थल हैं।

पश्चिम के जो देश संपन्न बने, उनकी संपन्नता का एक मूल कारण यह था कि उन्होंने एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमरीका के विपुल कच्चे माल को मिट्टी के मोल खरीदकर उससे सोना उगाया। आज एशिया और अफ्रीका के देश अपने कच्चे माल का—चाहे वह तेल हो, लोहा हो या अन्य कोई समान—अच्छा मूल्य मांग रहे हैं। इसलिए अब संसार के संपन्न देश अपनी अर्थ-व्यवस्था को पहले की ही भांति बनाये रखने के लिए यह सोच रहे हैं कि समुद्र-तल पर कब्जा किया जाये और वहां से जरूरत का माल निकाला जाये। ब्रिटेन के उत्तर में उत्तरी सागर में जब से तेल निकला है, उस इलाके पर कब्जे के लिए ब्रिटेन और डेन्मार्क में झगड़ा शुरू हो गया है।

हिंद महासागर में बड़ी शक्तियों का प्रवेश केवल व्यापार-मार्ग की रक्षा का प्रश्न नहीं है। सही बात तो यह है कि इस समय संसार के सारे व्यापार-मार्ग सभी के लिए सुरक्षित हैं। यदि सोवियत संघ अमरीका के व्यापारी जहाजों के लिए संकट पैदा करे तो उसका परिणाम महायुद्ध ही हो सकता है, जिसके लिए न रूस तैयार है न अमरीका, जैसा कि व्लादीवोस्तोक-वार्ता ने सिद्ध कर दिया है। यानी यह सब बहाना मात्र है।

असली कारण यही है कि हिंद महासागर और उसके तटवर्ती देशों में जो अपार संपदा भरी है, उस पर जिन देशों की आंख है, वे हिंद महासागर को शांति का क्षेत्र नहीं बनाना चाहते; बल्कि उस पर ऐसा कब्जा रखना चाहते हैं कि छोटे-मोटे देश आवाज भी न उठा सकें कि उनकी प्राकृतिक संपदा को विदेशी क्यों छीन रहे हैं।

भारत के लिए हिंद महासागर की सुरक्षा इसलिए विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है कि सबसे बड़ा संकट उसी के हितों को हो सकता है; क्योंकि उसका समुद्र-तट ५,६० किलोमीटर लंबा है और जैसा कि ए आस्ट्रेलियाई समर-विशेषज्ञ ने कहा है—'हिं महासागर की रक्षा का भार उस राष्ट्र प है, जिस राष्ट्र के नाम से यह महासागर जा जाता है।'

—५५ काकानगर, नयी दिल्ली-

★

नवनीत

सांस्कृतिक कीमिया

संस्कृति के महान कर्तव्यों में से एक है आवश्यकता को स्वतंत्रता में परिणत करना। उसका मिशन है मनुष्यों को अपने अनिवार्य कर्तव्यों का आनंद उठाने की शिक्षा देना, ताकि वे आंतरिक स्वतंत्रता की भावना के साथ उन्हें अंजाम दें, मानो ये कर्तव्य स्वयं उनकी इच्छा से प्रेरित हों। आदमी अपने हाथों की मशक्कत में आनंद पाये और उसे अभिशाप न महसूस करे। पत्थर तोड़ने और मकान चिनने वाला मजदूर अपने को मिलने वाली मजदूरी के अलावा पत्थर तोड़ने और मकान चिनने का भी आनंद अनुभव करे। तो यह है शिक्षा का उद्देश्य—हमारे भीतर आनंद की निष्पापता को बढ़ाना।

कला का कर्तव्य है जीवन को उसके तमाम दुख-दर्दों के समेत परोसना ताकि वह आनंदोपहार बन जाये,जैसे नाटक में न्यायपरायण व्यक्ति की बलिदानी मौत भी दर्शक को एक किस्म का आनंद देती है। उसी प्रकार, समस्त संस्कृति का कर्तव्य यह है—जहां तक उससे बन पड़े, दर्द को आनंद में, आवश्यकता को स्वतंत्रता में परिणत कर दे।

—जेकब क्लाट्स्किन

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

चिंतनिका

*** विष्णु प्रभाकर ***

जो मांगो वही देता है कल्पवृक्ष। कथा आती है कि नारदजी एक आदमी को अपने साथ स्वर्ग ले गये। वहां उन्होंने उसे कल्पवृक्ष के नीचे बैठा दिया और कहा—'मुझे कुछ काम है। अभी आता हूं। तब तक तुम आराम करो।' वह आदमी थक गया था। वहां बैठना-लेटना उसे अच्छा लगा। सोचने लगा—'काश ! इस समय मेरे कोई हाथ-पैर दबा सकता।'

बस तुरंत कई अप्सराएं वहां आ गयीं और उसकी सेवा करने लगीं। वह गद्‌गद हो उठा, लेकिन एक विचार मन में उठा—'मेरी पत्नी यह दृश्य देख ले, तो झाड़ू से मार-मारकर मेरा भुरकस निकाल दे।'

बस तुरंत झाड़ू लेकर उसकी पत्नी वहां हाजिर हो गयी और लगी तड़ातड़ उसे मारने। अप्सराएं भाग गयीं। आगे-आगे वह और पीछे-पीछे झाड़ू लिये उसकी पत्नी। स्वर्गवासियों के लिए यह एक अनोखा दृश्य था। तभी नारदजी ने आकर देखा और मुस्कराते हुए बोले—'मूर्ख ! सोचना ही था तो अच्छी बात सोची होती। कल्पवृक्ष तो जो मांगो वही देता है।'

यह कल्पवृक्ष बाहर कहीं नहीं, अपने भीतर है। अच्छा सोचने पर अच्छा मिलेगा, बुरा सोचने पर बुरा। जो हम करते-सोचते हैं, वही तो लौटकर आता है।

लेकिन यह अच्छा है क्या ? जो धर्म है वही अच्छा है। और धर्म क्या है ? तुलसीदासजी कहते हैं :

परहित सरिस धरम नहीं भाई।
परपीड़ा सम नहीं अधमाई॥

परहित यानी दूसरे का भला करना ही धर्म है। लेकिन शास्त्र कहते हैं—'जो धारण करता है वही धर्म है।'

तो क्या इन दोनों में अंतर है ? गहरे उतरकर देखें, तो अंतर कहीं नहीं है। धर्म किसे धारण करता है ? जीवन को। अर्थात् जीवन-पद्धति यानी मनुष्य के कर्तव्यों के समूह का नाम धर्म है। कर्तव्य अपने शरीर के प्रति, अपने मन के प्रति, अपने पड़ोसी के प्रति, अपने नगर, देश व विश्व के प्रति, यानी 'पर' के प्रति। तभी तुलसीदासजी ने कहा-'परहित सरिस धरम नहीं भाई।'

सो कल्पवृक्ष सबके पास है। बात केवल धर्म को समझने की है, अपने को 'पर' में, सबमें समो देने की है। इसी को कहते हैं 'मैं' को सर्वव्यापी बनाना। तभी तो सही अर्थों में धर्म जीवन को धारण करेगा, जैसे धरती जग को धारण करती है :

धरा हुई जो धारण करके यह जग सारा।

जब तुलसीदासजी कहते हैं **'कीरति भनिति भूति भल सोई, सुरसरि सम सब कहं हित होई'**, तब उनका अर्थ 'मैं' को

सर्वव्यापी बनाने से ही है। जब 'मैं' सर्वव्यापी बन जाता है, कल्पवृक्ष सही अर्थों में फलता है।

[२]

व्यवहार एक शब्द है। और शब्द अपने आपमें कुछ नहीं होता, जब तक हम उसे अर्थ न दें। बेकन कहते हैं—'व्यवहार पोशाक की तरह होना चाहिये, बहुत तंग नहीं बल्कि ऐसी कि जिससे हरकत और कसरत आसानी से हो सके।' इमर्सन सद्‌व्यवहार को वास्तविक शक्ति का परिचायक कहते हैं और संत तिरुवल्लुवर लोकरीति के अनुसार व्यवहार करने को बुद्धिमानी मानते हैं। विदुर कहते हैं कि जो जैसा है, उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये। और स्वामी रामदास मानते हैं—'जो आदर्श व्यवहार में न उतर सके वह व्यर्थ है।'

और भी अनेक व्याख्याएं हैं, लेकिन व्यवहार शब्द का ठीक-ठीक अर्थ अब भी स्पष्ट नहीं हुआ। एक कहानी सुनाता हूं। एक सज्जन ने स्वामी दयानंद सरस्वती के परम शिष्य श्री गुरुदत्त विद्यार्थी से कहा—'आप स्वामीजी का जीवन-चरित लिख डालिये।' विद्यार्थीजी ने उत्तर दिया—'वही तो कर रहा हूं।' उन सज्जन ने पूछा—'कब तक पूरा हो जायेगा?' विद्यार्थीजी बोले—'मैं उनका जीवन-चरित्र कोरे कागजों पर नहीं लिख रहा हूं, अपने स्वभाव में अंकित कर रहा हूं।'

इस कहानी का अर्थ समझ सकें, तो व्यवहार शब्द का असली अर्थ भी समझ सकेंगे। व्यवहार में लाना ही व्यवहार के अर्थ को समझना है। युधिष्ठिर की कहानी सर्वविदित है। 'क्रोध मत करो' इस वाक्यांश का अर्थ वे तभी समझ सके, जब उन्होंने क्रोध को जीत लिया। स्वामी रामदास ने तभी तो कहा था—'जो आदर्श व्यवहार में न उतर सके वह व्यर्थ है।'

एक कहानी और है :

नदी-किनारे एक साधु ध्यानमग्न बैठा था। पास ही धोबी कपड़े धो रहा था। दोपहर को खाना खाने घर जाते हुए उसने साधु से कहा—'अरे ओ गुमसुम, मैं अभी आता हूं। जरा मेरे गधे को देखते रहना।'

धोबी जब लौटा तो गधा वहां नहीं था। साधु से पूछा तो वे बोले ही नहीं। धोबी क्रुद्ध होकर गाली देने लगा। तब भी साधु न बोला तो उसे मारने लगा। मार पड़ते ही साधु का क्रोध भड़क उठा। दोनों में द्वंद्वयुद्ध आरंभ हो गया। ताकतवर धोबी ने निर्बल साधु को दे पटका। कराहकर साधु ने देवताओं को पुकारा—'मैं चिरकाल से मौन में आपकी आराधना कर रहा हूं। फिर भी आज आप लोगों ने मेरी सहायता नहीं की।'

उसी क्षण एक स्वर गूंजा—'देवता तो रक्षा के लिए आये हैं, परंतु वे यह नहीं पहचान पा रहे कि तुम दोनों में साधु कौन है और धोबी कौन है!'

यानी हम सहज सुखपूर्ण परिस्थिति में क्या कहते करते हैं, यह व्यवहार की कसौटी नहीं। व्यवहार की कसौटी यह है कि प्रतिकूल विषम क्षणों में हम अपने आदर्श को जी पाते हैं कि नहीं।

★

कलम और खड्ग का सिपाही

विश्वनाथ

पेरिस में युद्ध-मंत्रालय का एक कक्ष। १९४५ का वर्ष। जनरल द गोल ने उस आदमी को मिलने बुलाया था। तब तक न तो उसने जनरल को देखा था, और न शायद जनरल ने ही उसे। लेकिन दोनों परस्पर अपरिचित नहीं थे। हो भी नहीं सकते थे। जनरल द गोल ने बातचीत इस तरह शुरू की थी–'हां, तो पहले अतीत।' और उसने बताना शुरू किया था ......

'बहुत साधारण। मैं संघर्ष में शामिल हुआ। उसे हम सामाजिक न्याय का संघर्ष कह सकते हैं। या शायद यह कहना अधिक समीचीन होगा कि उद्देश्य था मनुष्य को एक अवसर देना......रोमां रोला के साथ फासीवाद के विरुद्ध विश्व-समिति का मैं अध्यक्ष था। जीद के साथ मैं हिटलर को विरोध-पत्र देने गया ...... फिर स्पेन में गृहयुद्ध हुआ। मैं वहां लड़ने गया।......फिर महायुद्ध हुआ। असली युद्ध। फिर पराजय, और दूसरे बहुतों की तरह मैं फ्रांस का हो गया......'

फ्रांस का हो जाने वाला यह व्यक्ति था–आंद्रे मालरो। और अपना यह विवरण उन्होंने अपनी बहुचर्चित आत्मकथा 'एंटी मेम्वार' में दिया है।

मालरो ने उस पहली मुलाकात में द गोल को जो कुछ बताया, बस वही उनका अतीत नहीं था। और अपने भविष्य की सही कल्पना तो शायद मालरो को स्वयं भी नहीं थी। मालरो का व्यक्तित्व अपने आपमें एक आश्चर्य है–इस शताब्दी का एक असाधारण जीवित व्यक्तित्व। पुरातत्त्वशास्त्री, विद्वान, उपन्यासकार, सिपाही, वक्ता, तत्त्वचिंतक, कलाकार, राजनीतिज्ञ और अपने आपको संस्कृति से अपरिचित बताने वाला फ्रांस का सांस्कृतिक मंत्री!

मालरो मात्र विचारक नहीं, सक्रिय कार्यकर्ता भी हैं। लगातार सिगरेट पीने वाले मालरो अपने ही किसी उपन्यास के नायक लगते हैं। उनके बारे में कहा गया है–'वह चाहे कितना ही बदल गया हो, लेकिन स्पेन की रिपब्लिकन वायुसेना का नेतृत्त्व करने वाला व्यक्ति, जिसने मई १९६१ में पेरिस पर पैराशूट आक्रमण की संभावना देखते हुए नागरिकों को संघटित और सशस्त्र किया था, जिसने जनरल द गोल के सांस्कृतिक मंत्री के रूप में घोषणा की थी कि संस्कृति मुक्त विश्व के सपनों की सबसे सशक्त संरक्षक है, एक घटना की तरह

यूरोप की चेतना में आया था और आज भी एक लेखक और एक घटना के रूप में यूरोप की चेतना में उसका स्थान है।'

इस सदी के सर्वाधिक मौलिक दिमागों में से एक माने जाने वाले मालरो ने आधुनिक इतिहास की अनेक महान घटनाओं को देखा है और प्रभावित किया है। प्रभावित इस अर्थ में कि वे शुरू से ही विद्रोही रहे—एक ऐसे विद्रोही जो विचार और कर्म दोनों स्तरों पर स्थापित व्यवस्था और मूल्यों से टक्कर लेते रहे। १९०१ में पेरिस के एक बुर्जुआ परिवार में जनमे मालरो ने पहला विद्रोह उस बुर्जुआ स्थिति के विरुद्ध किया, जिसमें जीवन को ऊंचा उठाने का कोई अवसर ही नहीं था।

मालरो मेधावी छात्र थे, इसका कोई प्रमाण नहीं है। परंतु उन्होंने संस्कृत और चीनी भाषाओं तथा पुरातत्त्व का अध्ययन किया था। यह तथ्य उनके मानसिक झुकाव का एक संकेत निश्चय ही देता है। वैसे, एक बार उन्होंने कहा था कि संस्कृत सबसे सरल भाषा है, 'क्योंकि न तो विद्यार्थी उसे समझता है और न अध्यापक ही'। लेकिन इसके बावजूद, बीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने शंकराचार्य पर एक निबंध लिखा और बाद में वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय ने उन्हें 'वाचस्पति' की उपाधि से भी विभूषित किया।

सन १९१९ से लेकर आज तक की मालरो-जीवनी रोमांचक उपन्यास की तरह रोचक है, घटना-प्रधान है। सबसे पहले तो मालरो को अलभ्य प्राचीन पोथियां एकत्र

पोर्ट्रेट : बी. एन. ओके

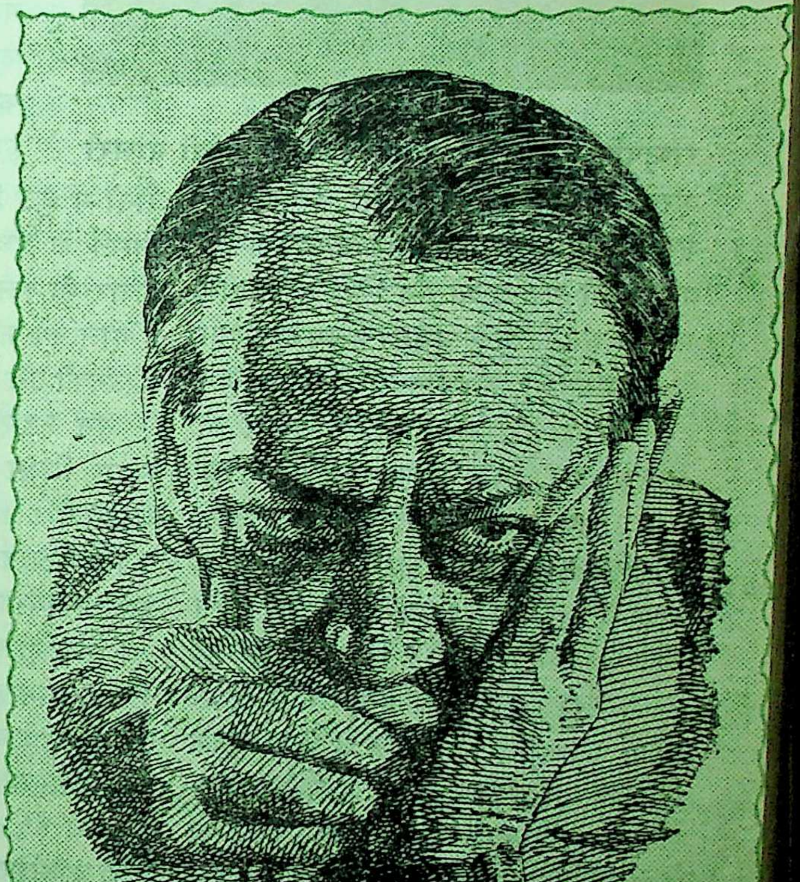

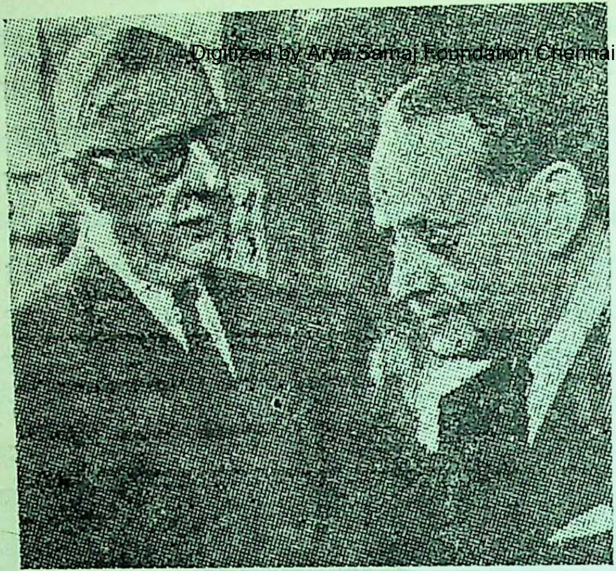

राष्ट्रपति द गोल (दायें) और संस्कृति-मंत्री मालरो

करने का शौक लगा। शायद इसी शौक ने उन्हें पुरातत्त्व का व्यसनी बनाया। अपनी युवा पत्नी क्लारा को संग लिये २२ वर्षीय मालरो कंबोडिया के जंगलों में ख्मेर सभ्यता के खंडहरों की छानबीन करने जा पहुंचे।

ख्मेर-खंडहरों की कला ने मालरो को चमत्कृत कर दिया। वे उस कला को 'सभ्य' संसार तक लाना चाहते थे। परंतु तभी 'कलात्मक वस्तुओं की चोरी' के आरोप में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। अदालत ने तीन वर्ष की सजा दी। क्लारा भागी हुई फ्रांस लौटी। तब फ्रांस के मूर्धन्य साहित्यकारों ने मालरो की रिहाई के लिए अपील निकाली। अनातोले फ्रांस ने कंबोडिया सरकार के नाम तार भेजा–'युवक कला का प्रेमी है, चोर नहीं।' ...... और सजा रद्द हो गयी।

यह घटना एक कलाप्रे के क्रांतिकारी बनने का कार बनी। मालरो औपनिवेशि शासन की क्रूरता और बर्बर के संपर्क में आये। जेल से रि होने पर सैगोन से एक उपनि वेशवाद-विरोधी पत्र निकाला

फिर वे १९२५ के आस-पा कैंटन में कम्युनिस्ट गतिविधि के संपर्क में आये और एक अ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी- कम्युनिस्टों और कोमितां का समझौता कराया। पर एक वर्ष बाद ही जब उ दोनों में युद्ध छिड़ गया, तो मालरो कम्यु निस्टों के प्रचार-निदेशक बने। असल में प्रचार की कला उन्हें खूब आती है। जनरल द गोल को फ्रांस का मसीहा घोषित करा में उनकी इस कला का विशेष हाथ रहा है

सन १९२६ में ही मालरो ने एक उप न्यास लिखा था–'द टेम्प्टेशन ऑफ़ ऑक्सिडेन्ट'। एक फ्रांसीसी और एक चीनी युवक की बातचीत है यह; गांधीवादी अहिं और मार्क्सवादी आतंकवाद का एक अजी सा सार। मालरो ने इसमें पश्चिम निंदा आत्माहीन, पागल, परपीड़ित, काम 'सभ्यता' के रूप में की है, जिसमें एक 'अनि वार्य विसंगति' है।

जब १९२८ में उनका उपन्यास 'द कां रर्स' प्रकाशित हुआ, तो सर्वत्र उसका स्वाग हुआ। क्रांतिकारी लेखक की इस कृति

ट्राट्स्की को भी प्रभावित किया। परंतु ट्राट्स्की ने यह भी कहा—'मालरो के सौंदर्य-बोध की लहर को मार्क्सवाद की एक खूराक की आवश्यकता है।' उनके परामर्श को अत्यंत आदरपूर्वक अस्वीकार करते हुए मालरो ने कहा था—'मैं सामूहिक क्रिया में ही नहीं, वैयक्तिक और सामूहिक क्रियाओं के संबंध में भी रुचि रखता हूं।'

शायद इसी रुचि ने मालरो को चीन में बांधे रखा था। उन्होंने च्यांग-काई-शेक के चीन में जो कुछ देखा-समझा उसका परिणाम है, इस सदी का एक महान उपन्यास—'मनुष्य का भाग्य'। इसमें उन्होंने च्यांग-काई-शेक के विरुद्ध हुए विद्रोह की कहानी लिखी है। व्यक्ति के रूप में कम्युनिस्टों का खुला समर्थन करते हुए भी वे रूस के इशारे पर अपने ही दल में हत्याएं कर देने वाले कम्युनिस्टों के कठोर संस्थागत अनुशासन को स्वीकार नहीं कर पाये। यह उपन्यास चीन की क्रांतिकारी मन:स्थिति का उत्कृष्ट अध्ययन है।

इन उपन्यासों के नायक मालरो के अपने चित्र हैं। ये नायक असंभव को चुनौती देते हैं और इस प्रक्रिया में अक्सर समाप्त हो जाते हैं। स्वयं मालरो का चरित्र सामाजिक न्याय के लिए संघर्षरत ऐसे नास्तिक के रूप में उभरता है, जिसे मृत्यु घेरे रहती है और जो फिर भी अमरत्व की आशा को नकारता रहता है।

मनुष्य, उसका दु:खांत भाग्य और मृत्यु से उसकी शानदार लड़ाई—यह मालरो की कृतियों का विषय रहा है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी लेखक मौरियक ने कहा था—'यह एक ऐसा युवक है, जो किशोरावस्था से ही समाज के विरुद्ध अपने हाथ में तलवार लिये घूम रहा है और जिसने चोट के लिए समाज का सर्वाधिक मर्मस्थल चुना हुआ है।'

अमरत्व की खोज १९३६ में मालरो को स्पेन ले गयी। स्पेनी गृहयुद्ध में वे वायुसेना के कमांडर बने। बमवर्षकों की इस स्क्वाड्रन ने उनके नेतत्व में ६५ उड़ानें भरीं।

इनके बीच मालरो ने 'मनुष्य की आशा' नामक उपन्यास भी लिखा। इसमें उन्होंने कहा है—'मनुष्य के भीतर आशा की बहुत बड़ी ताकत है, जिसे अंततः भविष्य के दावेदारों के संघटन से टकराना पड़ता है।' यह संघटन फासीवाद और साम्यवाद है, जिसके विरुद्ध सच्चे नायकों को निरंतर संघर्ष करते-करते मर जाना चाहिये।'

मालरो का यह **द्वितीय विश्वयुद्ध में सैनिक के वेश में**

कम्युनिस्ट-विरोध हिटलर-स्तालिन समझौते के समय पूर्णतया मुखर हो उठा। उन्होंने इसके बारे में लिखा–'मैं समझौते को समझ सकता हूं, रूसी दृष्टिकोण से यह गलत भी नहीं है। परंतु मैं इस बात से सहमत नहीं हो सकता कि इस तर्क के आधार पर स्तालिन को लाखों फ्रांसीसियों के खून का सौदा करने का अधिकार मिल जाता है।' इस समझौते के बाद मालरो 'फ्रांसवादी' हो गये।

वैसे मालरो अपने को 'स्वतंत्र मार्क्सवादी' कहते हैं; लेकिन सच यह है कि उनकी स्थिति हमेशा ही अनिश्चित-सी रही है। मार्क्स ने सदैव प्रगति की भाषा में बात की, बेहतर स्थिति के लिए स्थायी परिवर्तन के बारे में सोचा। परंतु मालरो के अनुसार मनुष्य की समस्या स्वयं मनुष्य के भीतर है। प्रत्येक मनुष्य को इस स्थिति से स्वयं उबरना होगा।

सन १९४० में मालरो फ्रांस के प्रतिरोध-आंदोलन के सक्रिय सदस्य बन गये। चीन और स्पेन में सीखी गेरिल्ला-लड़ाई ने उन्हें शीघ्र एक विश्वसनीय और सफल नेता बना दिया। इस दौरान वे दो बार घायल हुए और दो बार मौत के दरवाजे तक जाकर वापस लौटे। एक अमरीकी पत्र के शब्दों में, 'द्वितीय विश्वयुद्ध में मालरो अमरत्व और मृत्यु के बहुत निकट तक पहुंचे थे। वे दो बार गिरफ्तार हुए–एक बार तो प्राणदंड के लिए उन्हें नाजी सैनिक दस्ते के सामने खड़ा भी कर दिया गया था। मगर गोली नहीं चली। और फिर नाजियों को भी भागना पड़ा। मालरो बच गये।

फिर मालरो का परिचय जनरल द गोल से हुआ। यह १९४५ की बात है। जनरल द गोल ने उनसे मिलने के बाद कहा था-'आखिर मैंने एक मर्द देखा।' और जनरल के बारे में मालरो का कहना था–'द गोल उन व्यक्तियों में से हैं, जिनका मैं सर्वाधिक संमान करता हूं, और मनुष्यों की प्रशंसा करना मेरी आदत में नहीं है।' दोनों की इस भेंट के बारे में एक टिप्पणीकार ने कहा था–'मालरो ने जनरल के मौन की प्रशंसा की, और जनरल ने मालरो की मुखरता की।'

सच भी है। उस भेंट में बोलने का काम मालरो ने ही किया था। जनरल सिर्फ सुनते रहे थे। यह एक गहरी आपसी समझ और मैत्री की शुरूआत थी। फिर मालरो जनरल द गोल के सलाहकार बन गये। और इसके बाद फ्रांस के सांस्कृतिक मंत्री। यह तो कल के इतिहासकार ही बता सकेंगे कि जनरल को महिमा-मंडित करने में मालरो का कितना बड़ा हाथ था।

इतनी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका मालरो ने फ्रांस की कला और संस्कृति को नवजीवन देने में अदा की है। सांस्कृतिक मंत्री के रूप में अपने कार्य के बारे में उन्होंने एक बार कहा था:

'आधी शताब्दी में संस्कृति स्वतंत्र हो जायेगी, क्योंकि हमें आज या कल संस्कृति को अनिवार्य शिक्षा की तरह ही अपनाना

[शेष पृष्ठ ४३ पर]

वाक्यदीप

सृष्टि के आरंभ में एक ही आदमी इसलिए बनाया गया कि बाद में किसी को दूसरे से यह कहने का अधिकार न रहे कि मेरा पिता तुम्हारे पिता से श्रेष्ठ था।

बिन साथी-संगियों के एक ही आदमी क्यों बनाया गया ? इसलिए कि यह न कहा जा सके कि कुछ जातियां दूसरी जातियों से श्रेष्ठ हैं।

अगर दो आदमी एक साथ तुमसे मदद मांगें और उनमें से एक तुम्हारा दुश्मन हो, तो दुश्मन की मदद पहले करो।

जो गरीब को एक दमड़ी देता है, वह छह धन्यताओं का अधिकारी है; पर जो उससे (गरीब से) एक मीठा बोल बोलता है, वह ग्यारह धन्यताओं का अधिकारी है।

जो बिना ब्याज के कर्ज देता है, वह खैरात देने वाले से बढ़कर है; जो गरीबों के धंधे में पूंजी लगाता है, वह सबसे बढ़कर है।

बेहतर है कि आदमी जलती आग में अपने को झोंक दे, बजाय इसके कि अपने साथी को सबके सामने लज्जित करे।

रब्बी जरमिया का कथन है—जो सार्वजनिक कार्यों में अपने को लगाता है, वह धर्मशास्त्रों का अध्ययन करने वाले के बराबर है।

—'तालमुद' से

जापानी कहावतें

○ जो दो खरहों के पीछे धाय, सो एक को तजै और दूजा गंवाय।

○ जो सोना चुराय सो जेल को हवा खाय, जो मुल्क चुराय सो राजगद्दी पाय।

○ मनुख बोले, मोर के पंख सुंदर; पंछी बोले, देखो उसके पैर और सुनो उसका सुर।

○ चेरी-तले बैठी प्रेम-बौरायी को चूल्हे पर खौलती केतली की कहां सुध!

○ आशा का सुख उपभोग के सुख से बढ़कर।

○ झूठ के पैर नहीं होते, बदनाम पंख होते हैं।

○ अच्छे कारीगर को रोजी ढूंढ़ने दूर देश नहीं जाना पड़ता।

○ बाज के पीछे उड़ती गौरैया सोचती है, बाज मुझसे डरकर भाग रहा है।

○ सुख की खाली पेट से दोस्ती नहीं निभती।

○ गली का कुत्ता भी पहचान लेता है कंगाल का घर।

○ घर आये गरीब रिश्तेदार के चरण नहीं चूमे जाते।

○ मनहूस सूरत वाले को दुकानदारी नहीं करनी चाहिये।

○ किफायतशार बीवी तलाशने में जूतियां घिस जाने दो।

○ सौ भूत भले, न एक बुरी बहू।

○ चोर तो भाग गया, अब दीवार मुष्टियुद्ध!

○ ऊंघता मजदूर रोजगार गंवाय ऊंघता शेर अपनी खाल गंवाय।

○ मुर्गे के बजाय मुर्गी बांग दे तो द में अमन नहीं रहता।

○ घुड़सवार क्या जाने प्यादे की पीर

○ सांप का काटा रस्सी से खौफ खाय

○ सचबोली कुलटा चौकोर अंडे दुर्लभ।

○ एक बार देखना हजार बार सुनने बराबर।

○ सड़क-किनारे का पेड़ बादाम से ल खड़ा है, तो बादाम कड़वे ही होंगे।

○ मालिकों में अनबन तो उनके कुत्त में भी अनबन।

○ बारिश टूटी टपरिया पर ज्यादा जो से बरसती है।

○ आदमी के लिए उसका नाम और के लिए उसकी खाल बेशकीमती।

○ जब पानी ही नहीं, तो जहाज चलेंगे!

○ सयाने लोग कभी मूर्खों से जबान लड़ाते।

○ तेल चुक जाने पर चिराग बुझेगा ही

○ जिसका आरंभ है, उसका अंत होगा।

○ मेहमान से न पूछिये कि क्या मु

जिबह करूं?

- ० किराये की बिल्ली मूसे नहीं मारती।
- ० सांप को बांस की नली में रखो तो भी वह टेढ़ा ही चलेगा'।
- ० सूई के छेद में से सारा आकाश नहीं दिखता।

—अनिकेत

★

[पृष्ठ ४० का शेष]

होगा। कई लोगों की भविष्यवाणियों के विपरीत, मशीनीकरण ने हमें अब तक मशीन नहीं बनाया है—हां, हमें बहुत-सा खाली समय अवश्य मिल गया है। खाली समय की अपनी मांग होती है और इस मांग की पूर्ति के लिए हमें उसी तरह विचारों की फैक्टरियां बनानी पड़ेंगी, जैसे मशीनरी की फैक्टरियां हैं।.....हमारी सभ्यता खतरे में है। वह अपनी रक्षा कैसे करेगी? अतीत में यह कार्य धर्म ने किया, आज राज्य (शासन) को करना है।'

मालरो अब अंतरराष्ट्रीयतावादी नहीं रह गये हैं। १९४४ में कोरेज की पहाड़ियों में कम्युनिस्टों से लड़ते वक्त यह आदमी अंतरराष्ट्रीयता का लबादा उतारकर राष्ट्रवादी बन गया था। ठीक इसी तरह उनकी तरजीहों की सूची में सामाजिक न्याय का नंबर अब राष्ट्र के बाद आता है। १९६७ में उन्होंने एक पत्रकार से कहा था—'आज मैं सामाजिक न्याय को राष्ट्र के बाद स्थान देता हूं, क्योंकि मैं सोचता हूं कि यदि व्यक्ति राष्ट्र में आस्था नहीं रखेगा, तो सामाजिक न्याय जैसी कोई चीज नहीं रहेगी। मात्र भाषण रह जायेंगे ......'

शायद इसी प्रेरणा ने उन्हें बाङ्ला देश की आजादी की लड़ाई में शेख मुजीब के साथ कर दिया था। उन्होंने तब सशस्त्र लड़ाई में हिस्सा लेने की उत्सुकता दिखायी थी। उन दिनों उनका अध्ययन-कक्ष किसी कमांडर का कक्ष लगता था, और कमांडर की तरह वे बाङ्ला देश का नक्शा सामने फैलाये बैठे रहते थे। किंतु भारत ने बाङ्ला देश में प्रवेश की अनुमति नहीं दी। शायद हमारी प्रधान-मंत्री अपने पिता के मित्र को खतरे में नहीं पड़ने देना चाहती थीं। मगर इसके बाद उन्हें १९७२ का नेहरू शांति पुरस्कार प्रदान कर भारत ने इस महान राष्ट्रवादी तत्वचिंतक, लेखक एवं कलाप्रेमी को संमानित किया।

आंद्रे मालरो विद्रोही...... लेखक...... कलाकार ...... राजनेता। परंतु इन सबके पीछे उनका एक रूप और है—तत्त्वान्वेषी विचारक का। पता नहीं, आंद्रे मालरो तत्त्वचिंतक कहलाना पसंद करेंगे या नहीं; परंतु यह सच है कि आजीवन वे स्वयं अपने व्यक्तित्व की खोज करते रहे हैं। वे अपने जीवन का अर्थ खोजते रहे हैं—कंबोडिया के जंगलों में, शंघाई के चंडूखानों में, अरब के रेगिस्तानों में, स्पेन की लड़ाई में, नाजियों के जेलखाने में, ब्राजील के सभागृहों में, अपने लेखन में, अफ्रीकी कलाकृतियों में, बाङ्ला देश के मुक्ति-संग्राम में ...... कितनी लंबी खोज!

मालरो की खोजयात्रा अभी जारी है।

★

द्वितीय महायुद्धोत्तर फिल्म-शिल्प में नवचैतन्य भरने वाला

वित्तोरियो दि सिका

*** सत्येंद्र शरत्**

अमरीकी फिल्म-समीक्षक स्टैनली कॉफमैन से बात करते हुए वित्तोरियो दि सिका ने कहा था–'दि सिका दरअसल दो हैं। एक दि सिका वह था जिसने "शू शाइन", "बाइसिकल थीव्ज़" और "अम्बर्त्तो डी." जैसी फिल्में बनायी थीं; और दूसरा वह है जो "येस्टर डे, टु डे एंड टुमारो" और "मैरिज इटैलियन स्टाइल" जैसी फिल्में बना रहा है। पहले वर्ग की फिल्में मेरी "निजी" फिल्में थीं, जिनके द्वारा मैंने मानव-जाति के दर्द और एकाकीपन को समझने-समझाने का प्रयास किया था। मेरी बाद की फिल्में तो महज मनोरंजन करती हैं, कहतीं कुछ नहीं।'

बात स्पष्ट थी। दि सिका इस बात से दुःखी और आहत थे कि इधर उन्हें इस तरह की फिल्में बनाने के लिए पैसा और उपयुक्त वातावरण नहीं मिलता, जिनके निर्माण के लिए वे विख्यात थे–नव-यथार्थवादी फिल्में, जो आम आदमियों की कहानियां थीं और जो दि सिका ने १९४६ और १९५६ के बीच सड़कों व बाजारों से चुने हुए गैर-पेशेवर अभिनेताओं के साथ रोम, मिलान एवं नेपल्स के गली-मुहल्लों में बेहद सादगी व ईमानदारी के साथ फिलमायी थीं। ये वहीं फिल्में थीं, जिन्होंने समूचे सिने-संसार में हलचल मचा दी थी और दि सिका को अंतरराष्ट्रीय ख्याति वाला निर्देशक बना दिया था।

दि सिका और उनके समकालीन दूसरे इतालवी निर्देशक राबर्त्तो रोज़ेलिनी, ल्यूसिनो विस्कौंती, लुइजी ज़ाम्पा की फिल्मों से एक नया आंदोलन शुरू हो गया था–नव-यथार्थवाद (नियो-रियलिज़्म)। सारे संसार की फिल्म-निर्माण पद्धतियां इस आंदोलन से किसी न किसी रूप में, कम या ज्यादा अवश्य ही प्रभावित हुईं। भारत भी इस लहर से अछूता न बचा। १९५२ में प्रथम अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह में दिखायी गयी इन नव-यथार्थवादी इतालवी फिल्मों (रोज़ेलिनी की 'ओपन सिटी', दि सिका की 'बाइसिकल थीव्ज़' और 'मिरैकल इन मिलान', पीएत्रो जैरेमी की 'पाथ ऑफ़ होप', कुर्ज़ियो माल्पार्ते की 'फरबिडन क्राइस्ट') से प्रभावित होकर हमारे यहां बनी फिल्मों में उल्लेखनीय हैं–बिमल राय की 'दो बीघा

जमीन', राज कपूर की 'बूट पालिश', ख्वाजा अहमद अब्बास की 'मुन्ना', राजेंद्रसिंह बेदी की 'गर्म कोट', अग्रदूत की 'बावला' (बंगला) और दत्ता धर्माधिकारी की 'चिमनी पाखरं' (मराठी)।

निश्चय ही हमारी इन नव-यथार्थवादी फिल्मों पर सबसे अधिक प्रभाव था दि सिका और उनकी फिल्मों का। निर्देशक ए. आर. कारदार ने तो 'बाइसिकल थीव्ज़' के वितरणाधिकार खरीदकर स्व. महेश कौल की कमेंट्री के साथ उसे पूरे भारतवर्ष में रिलीज किया था।

क्या जादू था दि सिका की इन फिल्मों में, जिसने पचास वाले दशक के प्रथम चरण में सारे संसार को मंत्रमुग्ध कर दिया था? ये सभी फिल्में दि सिका तथा उनके पुराने मित्र एवं सहयोगी सीजर जावातीनी की संमिलित सृष्टि थीं। 'नव-यथार्थवाद' आंदोलन के सूत्रधार पटकथा-लेखक जावातीनी ने ही दि सिका की सभी फिल्मों की पटकथाएं लिखी हैं। कहानी की आवश्यकता के अनुसार सड़क और बाजार से चुने हुए गैरपेशेवर एक्टरों की मदद से, सड़कों और मकानों, स्कूलों और ट्रामों में शूट की गयी इन फिल्मों में न तो भव्य सेट थे, न भड़कीले नयी काट के कपड़े। फोटोग्राफी उदास और सपाट थी। इन्हें स्टूडियो में दुबारा डब भी नहीं किया गया था—लोकेशन पर रिकार्ड किया गया साउंड ही फाइनल ट्रैक में इस्तेमाल किया गया था। पार्श्व-संगीत बस नहीं के बराबर था। बहुत कम लागत में बनी इन फिल्मों में इस तरह के पालिश की गुंजाइश थी भी नहीं। (आप शायद विश्वास न करें, 'बाइ-

नव-यथार्थवाद की ताजगी से भरा 'बाइसिकल थीव्ज़'

सिकल थीव्ज़' लगभग ९५ हजार रुपये में बनी थी।)

किंतु तकनीकी दृष्टि से बेहद साधारण इन फिल्मों की सबसे बड़ी शक्ति थी इनकी भावनात्मक अपील। शायद इसी कारण संसार के सभी देशों के दर्शकों को ये अपनी लगीं। जैसे परदे पर प्रदर्शित सारी घटनाएं और पात्र उनके परिचित हों, उनके अपने हों। उन पात्रों के सुख से दर्शक सुखी हुए और उनके दुःख से विगलित होकर उन्होंने भी आंसू बहाये। यह विश्वजनीन अपील दि सिका की बहुत बड़ी सफलता थी।

जावातीनी और दि सिका का गठबंधन १९४२ में हुआ था। फिल्म थी दि सिका द्वारा निर्देशित 'द चिल्ड्रन आर वाचिंग अस'; किंतु इस जोड़ी को ख्याति मिली फिल्म 'शू शाइन' (१९४६) से। 'शू शाइन' में कहानी थी बूट-पालिश करने वाले दो भोले निर्दोष बच्चों की, जो समाज के छल के शिकार होकर अंत में एक दूसरे को और अपने आपको भी छलते हैं। युद्धोत्तर रोम के उदासीन और भावशून्य वातावरण में अपनी दोस्ती और सपनों को जीवित रखने को प्रयत्नशील ये बच्चे मानवीय दुर्बलताओं के कारण किस तरह एक दूसरे को तबाह कर देते हैं और चोरबाजारी के जुर्म में जेल भेज दिये जाते हैं, यह इस फिल्म में अत्यंत मार्मिकता से दिखाया गया था। भोलेपन की विकृति की यह विषादपूर्ण स्टडी बहुत सच्ची और मानवीय थी।

'बाइसिकल थीव्ज़' (१९४८) में एक बेकार मजदूर की कहानी थी। इस आदमी को दीवार पर पोस्टर चिपकाने की नौकरी इस शर्त पर मिलती है कि उसके पास अपनी साइकल होनी चाहिये। उसकी साइकल गिरवी रखी है। उसकी पत्नी बिस्तरों की चादरें (घर की प्रतिष्ठा की प्रतीक) गिरवी रखकर साइकल छुड़वाती है; किंतु नौकरी के पहले दिन ही साइकल चोरी चली जाती है। अगले दिन वह अपने दस वर्षीय बच्चे ब्रूनो और एक-दो मित्रों की मदद से साइकल की तलाश करता है, चोरबाजार भी जाता है। किंतु साइकल नहीं मिलती। दोस्त लौट जाते हैं। तभी वह अपनी साइकल के चोर को देख लेता है। उसका पीछा करते हुए वह चोर के मोहल्ले और उसके घर तक पहुंच जाता है; परंतु अकेला होने के कारण कुछ नहीं कर पाता। पुलिस भी उसकी मदद नहीं करती।

थक-हारकर वह बेटे के साथ फुटपाथ पर बैठ जाता है। तभी सड़क के उस पार एक आदमी अपनी साइकल बाहर रखकर दुकान के अंदर जाता है। बच्चे को ट्राम से घर जाने का आदेश देकर वह दुकान के बाहर रखी हुई साइकल उठाकर भागने की कोशिश करता है; किंतु पकड़ लिया जाता है। शोर सुनकर बच्चा लौट आता है और अपने पिता को पिटते हुए देखकर रोने लगता है। लोग पिता को छोड़ देते हैं—शायद बच्चे पर तरस खाकर। मार-पीट में पिता का हैट नीचे गिर गया है। बच्चा उसे उठाता है और उसकी धूल झाड़कर पिता को पकड़ा

देता है। और तब एक-दूसरे का हाथ पकड़ पिता-पुत्र, शर्म से गर्दन झुकाये, उस अवसाद-भरी शाम के अंधेरे में घर और आशा-रहित भविष्य की ओर लौटते हुए दिखाई देते हैं।

इस फिल्म की सबसे बड़ी शक्ति है वह सादगी, सरलता और निश्छलता, जिससे दि सिका ने इसे फिल्माया है। समूची फिल्म में कहीं भी कैमरे की उपस्थिति का आभास नहीं मिलता। अभिनेताओं का चुनाव बेजोड़ है। ब्रूनो की भूमिका में बालक एनाज़ियो स्तायोला ने अविस्मरणीय अभिनय किया है। पिता की असफलता, पीड़ा, हताशा और अपमान को अपने चेहरे पर मुखर करके वह उसे सौगुना उजागर कर देता है। साइकल की खोज के दौरान दि सिका ने वह रोम दिखाया है, जो प्राय: नजरों से छिपा रहता है—तंग टेढ़ी-मेढ़ी गलियां, चोरबाजार, वेश्यालय, भविष्य बतलाने वाले ढोंगियों के अड्डे, और गरीबी तथा अभाव से त्रस्त मुहल्ले, जो अपराधियों को जन्म और शरण देते हैं। किंतु इस सारे चित्रण में दि सिका की दृष्टि बहुत ही मानवीय है। उसम कहीं भी कटुता या तिक्तता नहीं है। वे किसी व्यक्ति को नहीं, बल्कि संपूर्ण समाज-व्यवस्था को ही अपराधी मानते हैं।

उनकी अगली फिल्म 'मिरेकल इन मिलान' (१९५०) जावातीनी की पुस्तक 'टोटो, द गुड वन' पर आधारित थी। इसमें यथार्थ और फंतासी का अद्भुत संमिश्रण था। इस फिल्म के अंत में, बेकार पड़ी जमीन पर बनी झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले मजदूर जो उस जमीन में तेल निकल आने के

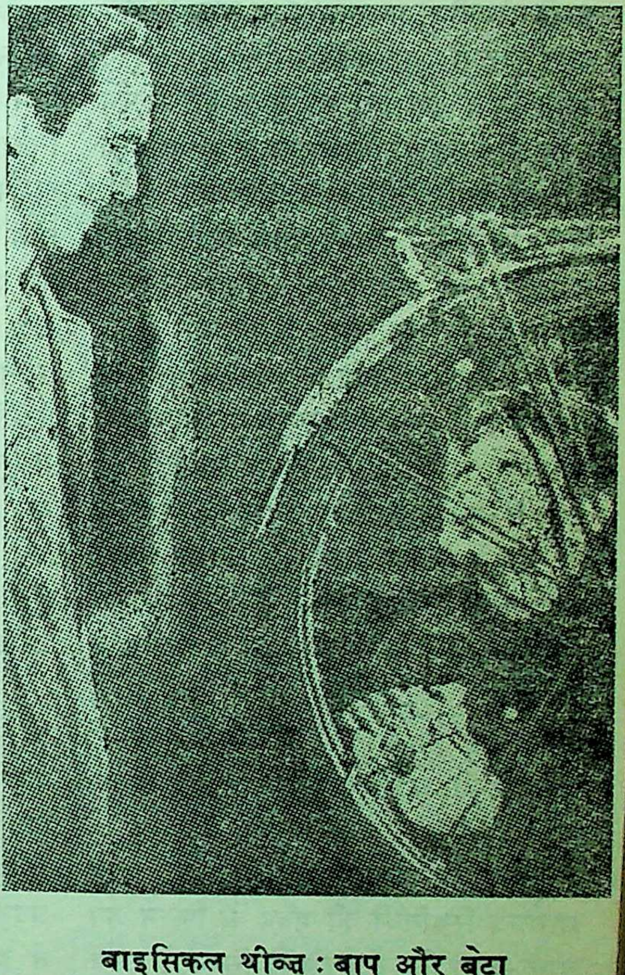

बाइसिकल थीव्ज : बाप और बेटा

कारण बेदखल कर दिये गये हैं, सड़क बुहारने की लंबी झाड़ुओं पर बैठकर, मिलान के कैथीड्रल पर से उड़कर ऊपर जाते हुए दिखाये गये थे। (धरती पर तो अब उनके लिए कोई जगह थी नहीं।)

सन १९५१ में दि सिका ने 'अम्बर्त्तो डी.' बनायी। वृद्धावस्था और उसके कारण उत्पन्न अकेलेपन का इसमें मर्मस्पर्शी चित्रण था। सत्तर वर्ष के अम्बर्त्तो डी. फरारी सरकारी नौकरी से अवकाश प्राप्त करने के बाद बहुत कष्ट से गुजर-बसर कर रहे हैं। उनकी पेंशन बहुत कम है। महीने के अंत में पैसे खत्म हो जाने पर वे अस्पताल में भर्ती हो जाते हैं, ताकि तीन-चार दिन वहां मुफ्त खाना मिल जाये। मगर उनमें कोई बीमारी न पाकर उन्हें अस्पताल से रुखसत कर दिया जाता है। वे घर लौटते हैं तो पाते हैं कि किराया-बाकी होने के कारण मकान-मालकिन ने उन्हें घर से निकाल दिया है। अपना प्यारा कुत्ता किसी को सौंपकर अम्बर्त्तो डी. तेजी से आती हुई लोकल ट्रेन के सामने आना ही चाहते हैं कि देखते हैं, उनका प्यारा कुत्ता जंजीर-समेत उनके पीछे-पीछे भागा आ रहा है। वे आत्महत्या का विचार छोड़ देते हैं और नये सिरे से जीवन-संघर्ष करने को तैयार हो जाते हैं। अंतिम दृश्य में अम्बर्त्तो डी. अपने कुत्ते के साथ गेंद खेलते हुए घर की ओर जाते दिखाई देते हैं।

बहुत ही साधारण-सी घटनाओं और सामान्य स्थितियों की मदद से फिल्म का ताना-बाना तैयार करके दि सिका ने इसमें मानवीय गुणों और मानवीय दुर्बलताओं का यथार्थवादी चित्रण किया है। अम्बर्त्तो डी. फरारी के चरित्र द्वारा वृद्धावस्था की समस्याएं निपट अकेलापन, थकान, निराशा और मृत्युभय और साथ ही एकाकी आदमी का साहस, वृद्धावस्था की गरिमा तथा समस्त निराशाओं के बावजूद जीवित रहने की अदम्य इच्छाशक्ति – अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत की गयी हैं।

दि सिका की अंतिम नव-यथार्थवादी फिल्म थी 'इल टेटो' ("छत")......घने बसे रोम शहर में एक नव-दंपति के अपने लिए निवासस्थान खोजने की कहानी। इटली का कानून है कि मकान चाहे कहीं पर भी बना हो, यदि उस पर छत है और सामने का दरवाजा है, तो उसके बाशिंदों को बेदखल नहीं किया जा सकता। सो ये पति-पत्नी अपने मित्रों की मदद से लोकल ट्रेन की पटरी के पास की खाली जगह पर रात-भर में एक कमरे की दीवारें खड़ी कर लेते हैं। अब बस छत और दरवाजे की समस्या है। उसे सुलझाने का प्रयास अभी चल ही रहा है कि सुबह हो जाती है और पुलिस आ धमकती है।

यह बात चौंका देने वाली है कि दि सिका की इन अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करने वाली नव-यथार्थवादी फिल्मों की इटली में विशेष कद्र नहीं हुई। इन फिल्मों से जो भी पैसा आया, वह विदेशों में इनके प्रदर्शन से आया। यही नहीं, इटली सरकार ने इनके प्रति अपनी अरुचि और नाराजी

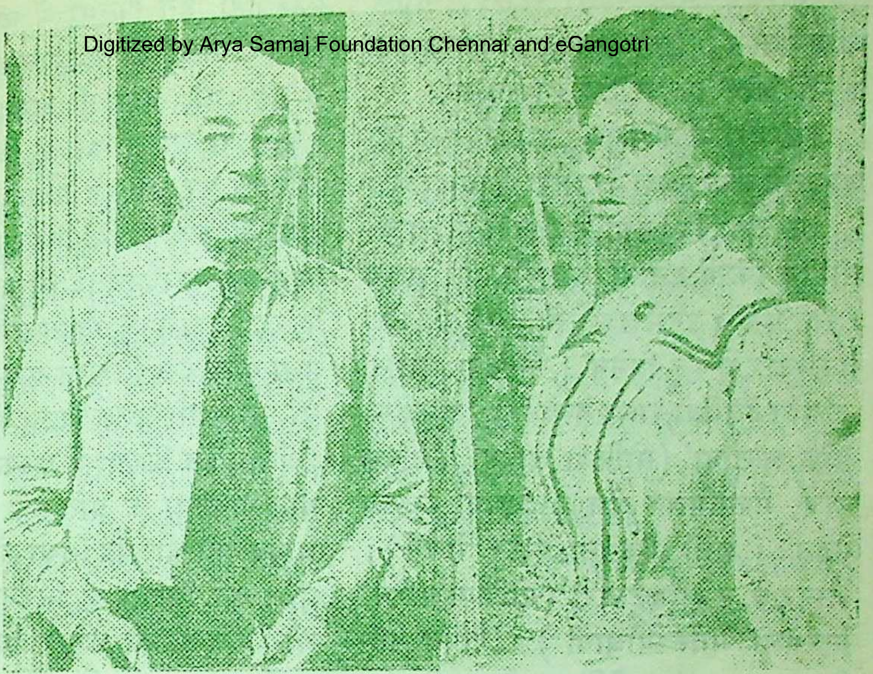

अपनी निर्देशित अंतिम फिल्म 'द वॉयेज' के सेट पर दि सिका (मृत्यु: १३ नवंबर १९७४) अपनी ही 'खोज' सोफिया लारेन के साथ। फोटो-सौजन्य: ट्वेंटिएथ सेंचुरी फाक्स, बंबई।

खुलेआम जाहिर की। इतालवी सिनेमा के डिक्टेटर गियोलियो आंद्रेयोत्ती ने दि सिका को एक खुले पत्र में लिखा था—'सर्जक कलाकारों से हम आशा रखते हैं कि वे अपने सामाजिक दायित्व को सदैव याद रखेंगे और अपने को देश की सामाजिक व्यवस्था की कमियों और बुराइयों के चित्रण तक ही सीमित न रखेंगे ...... यदि यह सत्य है कि देश की सामाजिक व्यवस्था में गहरे घुसी इन बुराइयों का सामना इन पर तीव्र प्रकाश डालकर ही किया जा सकता है, तो यह भी सत्य है कि दि सिका ने अपने देश का बहुत बड़ा अहित किया है, क्योंकि अब तक समूचे विश्व की यह धारणा बन गयी होगी कि बीसवीं शताब्दी के मध्य में भी इटली की यही दशा है, जो "अम्बर्त्तो डी." में दिखायी गयी है ......'

सरकारी नाराजी का परिणाम यह हुआ कि फाइनैंसर (जिनमें कि एंजेलो रिज़ोली प्रमुख थे) पीछे हट गये और दि सिका को विवश होकर व्यावसायिक और पलायनवादी सिनेमा की ओर झुकना पड़ा। नव-यथार्थवादी फिल्में बनाने से पहले वे इटली की रोमांटिक कामेडियों के लोकप्रिय अभिनेता थे। वे पुन: उसी तरह की व्यावसायिक फिल्मों में अभिनय करने लगे। १९५४ और १९६० के बीच उन्होंने अनेक इतालवी और अमरीकी फिल्मों में अभिनय किया, जो बाक्स-आफिस पर बहुत सफल रहीं। इनमें से कुछ थीं—'टाइम्स गॉन बाइ', 'ब्रेड, लव

एंड ड्रीम्ज़', 'मांटे कार्लो स्टोरी', 'गोल्ड ऑफ़ नेपल्स', 'हैलो एलिफ़ैंट', 'फ़ेयरवेल टु आर्म्स' और 'इट स्टार्टेड इन नेपल्स'।

इसी दौर में जन्म हुआ, उस दि सिका का जो उनके अपने शब्दों में 'दूसरा दि सिका' था।

इस 'दूसरे दि सिका' ने जितनी भी व्यावसायिक फिल्में बनायीं, वे रंगीन थीं, वाइड स्क्रीन में थीं। उनमें तकनीकी चमक थी, बड़े-बड़े स्टार थे–'टू विमेन' (सोफिया लारेन, जाँ पॉल बेलमेंडो, राल्फ वेलोनी); 'द कंडेम्ड ऑफ़ अल्टोना' (सोफिया लारेन, फ्रेडेरिक मार्च, मैक्सिमिलन शेल); 'वूमन टाइम्स सेवेन' (शर्ली मैक्लेन, पीटर सेलर्स); 'येस्टर डे, टुडे एंड टुमारो' (सोफिया लारेन, मारसेलो मास्त्रियोआनी); 'मैरिज इटैलियन स्टाइल' (सोफिया और मास्त्रियोआनी); 'सनफ्लावर' (सोफिया) आदि। ये सारी फिल्में बाक्स-आफिस पर बहुत सफल रहीं और इन्होंने अपने निर्माता, निर्देशक, स्टार, वितरक और प्रदर्शक सबको अंधाधुंध पैसा दिया। किंतु निर्देशक दि सिका को सदा यही महसूस हुआ–'ये वे फिल्में नहीं हैं, जिन्हें मैं बनाना चाहता था।'

क्या कमी थी इन फिल्मों में? लगभग सभी फिल्में सफल साहित्यिक कृतियों पर आधारित थीं–'टू विमेन' अल्बर्तो मोराविया के उपन्यास पर, 'द कंडेम्ड ऑफ अल्टोना' सार्त्र के इसी नाम के नाटक पर और 'मैरिज इटैलियन स्टाइल' नेपल्स के प्रसिद्ध नाटककार एडवर्डो डि फ़िलिप्पो के नाटक 'फिलोमेना मारतुरानो' पर। सिर्फ यही नहीं, इन फिल्मों में चमक-दमक जो दि सिका की नव-यथार्थवादी फि में नहीं थी; बहुत ही अच्छा अभिनय (सोफिया लारेन को 'टू विमेन' में अ अभिनय पर ऑस्कर प्रदान किया गया और सोफिया ने प्रेस-रिपोर्टरों से कहा 'मुझे यह पुरस्कार दि सिका की मेहनत कारण मिला है।'); दि सिका का कुशल, स हुआ और दक्ष निर्देशन था–यानी सब कु था, जो किसी सफल फिल्म में होना चाहि

बस, इन फिल्मों में धड़कती आत्मा न थी, मानवता के प्रति दर्द नहीं था–औ शायद यही चीज दि सिका को कष्ट पहुंचा थी। इन फिल्मों के निर्देशन से उन्हें प और प्रतिष्ठा की भरपूर प्राप्ति हुई; प उन्हें लगता रहा कि मैंने अपनी संवेद शीलता और पर दु:ख-कातरता खो दी है यही कारण था कि उन्होंने इन फिल्मों 'अपनी' नहीं कहा। जैसे, इनमें उनका 'अप कुछ नहीं हो।

दि सिका वास्तव में उन सबके कल कार थे, जो दलित हैं और अपमानित है निर्वासित और विस्थापित हैं; नौकरी औ निवास की तलाश में भटक रहे हैं; और बेदखल या बर्खास्त कर दिये गये हैं। जिन्हें संपन्न समाज के हाथों सिर्फ यातना पायी उन सब पर दि सिका ने अपनी फि में अपार स्नेह और सहानुभूति उड़ेली है एक बार बात चलने पर उन्होंने कहा था–'दीन-हीनों के पास तोप और टैंक न हैं, नहीं तो अपनी लड़ाई वे खुद लड़ लें

बहुत अच्छे निर्देशक होने के साथ-साथ दि सिका बहुत ही अच्छे अभिनता भी थे। जिन्होंने डेविड सेल्जनिक की फिल्म 'फेयरवेल टु आर्म्स' देखी हो, वे उसके लेफ्टिनेंट रेनाल्दी को कभी न भूल सकेंगे—युद्ध की विभीषिका देख उसका चेहरा तो हंसता रहता था, किंतु आंखें रोती थीं। इसी प्रकार 'हेलो एलिफेंट' के उस गरीब अध्यापक को भी भूल पाना असंभव है, जो अपनी बीमार बच्ची के जन्मदिन पर गलियों में एक सुंदर लावारिस कुत्ते के पिल्ले के पीछे भाग रहा है, ताकि उसे पकड़कर, नहला-धुलाकर, उसके गले में रिबन बांधकर उसे अपनी बच्ची को जन्मदिन की भेंट दे सके। इन दोनों भूमिकाओं को जीने वाले दि सिका को आप कभी नहीं भूल सकते।

१३ नवंबर १९७४ को ७३ वर्ष की आयु में वित्तोरियो दि सिका का पेरिस के एक अस्पताल में देहांत हो गया। इसे भाग्य की विडंबना ही कहा जायेगा कि उसी शाम उनकी नवीनतम फिल्म 'द वॉयेज' (भूमिका में, सोफिया लारेन और रिचर्ड बर्टन) का उद्घाटन और प्रथम प्रदर्शन था। अंतिम समय में उन्हीं की 'खोज' और उनकी बहुत बड़ी प्रशंसिका एवं मित्र सोफिया लारेन उनके पास उपस्थित थी।

—बी-२३७ ए, ग्रेटर कैलाश,
नयी दिल्ली—११००४८

★

ओह कलकत्ता !

बेरोजगारी? अंतरराष्ट्रीय श्रम दफ्तर के अनुसार कलकत्ता की श्रमिक-संख्या का १५ प्रतिशत बेरोजगार है। गरीबी? कलकत्ता की गंदी बस्तियों, फुटपाथों और मकानों में (जिनमें प्रति तीन परिवारों में से दो की आमदनी ३०० रु. माहवार से कम है) गरीबों की कुल तादाद डरावनी है। आयोजन और संघटन? हुगली नदी पर बस एक पुल है, जिसे रोज ५ लाख आदमी पार करते हैं। शहर के १२ लाख दैनिक यात्रियों के लिए कुल दो स्टेशन हैं। दैनिक सप्लाई के १० करोड़ गैलन पानी को शुद्ध करने के लिए पालता के वाटर वर्क्स में सदा २० टन फिटकरी की कमी रहती है। शहर का कूड़ा ढोने के लिए जरूरी २५० ट्रकों में से केवल ५० चलने की स्थिति में हैं और वे भी दशकों से औसतन १·६ फेरी लगाते हैं, फलतः शहर का ५० प्रतिशत कूड़ा भी साफ नहीं हो पाता। प्रतिवर्ष बरसात में १,१३२ मील जितनी गंदी नालियों का पानी कगार के ऊपर निकल आता है और शहर मानो गंदे पानी में तैरने लगता है। कलकत्ता नगर-निगम के ३३ हजार कर्मचारियों में से ३२ हजार तो पुराने समझौतों के अनुसार पुश्तैनी हैं। नगर-निगम के कर्मचारियों के ७० यूनियन हैं। निगम की आय के हर एक रुपये में से ७५ पैसे वेतनों में चले जाते हैं और नगर के रख-रखाव के लिए २५ पैसे बचते हैं।

—चंचल सरकार ('इंडियन एक्सप्रेस' में)

★

* लक्ष्मीशंकर व्यास *

चतुर्वेदीजी से बातचीत

हिंदी पत्रकारिता के संबंध में

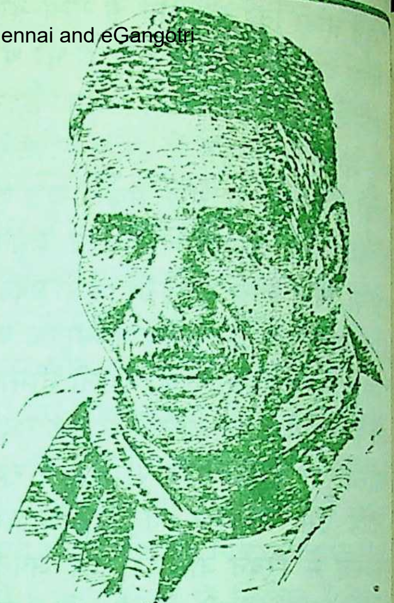

हिंदी पत्रकारों की लगभग तीन पीढ़ियों के आदरणीय एवं स्नेही अग्रज पंडित बनारसीदासजी चतुर्वेदी के दर्शनार्थ जब मैं ज्ञानपुर पहुंचा, तो वे मेरी प्रतीक्षा में ही थे। चुस्त पाजामा, लंबा कुरता तथा ऊपर से जवाहर जाकेट पहने वे अपने कमरे से मुस्कराते हुए आये। मेरे श्रद्धापूर्ण नमन के उत्तर में उनके सुदीर्घ बाहु उठे और मुझे उनका हार्दिक आशीर्वाद प्राप्त हुआ।

साढ़े तीन वर्ष ज्ञानपुर (जिला वाराणसी) में रहकर अब वे अपने जन्मस्थान फीरोजाबाद (जिला आगरा) जा रहे थे। यों तो इस अवधि में उनके दर्शन अनेक बार हुए थे, परंतु हिंदी पत्रकारिता संबंधी अपनी जिज्ञासाओं पर उनसे विचार-विनिमय का अवसर नहीं मिला था। फिर, चतुर्वेदीजी २४ दिसंबर १९७४ को अपने कर्मम जीवन के बयासी वर्ष पूर्ण करके तिरासी वर्ष में पदार्पण कर रहे थे। इसलिए ती के सिरमौर वाराणसी नगर से पचास मी दूर स्थित ज्ञानपुर की मेरी यह १५ नवंब की यात्रा वस्तुतः साहित्यिक तीर्थयात्रा थी

श्रद्धेय चतुर्वेदीजी ने सन १९१२ काशी से प्रकाशित होने वाले 'नवजीव साप्ताहिक में लिखना आरंभ किया और इ १९७५ में भी शहीदों के संस्मरण-लेख पत्रकारों को निर्देशन तथा हिंदी पत्रकारि की उन्नति में चिंतन और लेखन द्वारा सत संलग्न हैं। महात्मा गांधी, सी. एफ. ऐन्ड्र आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, संपादक चार्य पराडकरजी, श्री गणेशशंकर विद्यार्थ श्री रामानंद चट्टोपाध्याय, श्री सी. वा

चिंतामणि, संपादकाचार्य रुद्रदत्त शर्मा, पंडित पद्मसिंह शर्मा आदि से आपका अत्यंत घनिष्ठ संबंध रहा है। इस प्रकार आपने इस शताब्दी के प्रथम दशक से लेकर अब तक की साहित्यिक गतिविधियों तथा आंदोलनों को न केवल अतिनिकट से देखा है, अपितु उनमें महत्त्वपूर्ण योगदान भी किया है।

वस्तुतः चतुर्वेदीजी अपने आपमें एक संस्था हैं और पत्रकारिता के तो अद्भुत ज्ञानकोश। पत्रकारिता-संबंधी जितना बृहत् साहित्य तथा पत्रों का जितना विशाल संग्रह उनके पास है, वैसा भारत में शायद ही अन्यत्र सुलभ हो। प्रख्यात पत्रकार पुलित्ज़र की बृहत् जीवनी आपने हाल में अमरीका से मंगवायी थी। उसे दिखाते हुए उन्होंने कहा कि हिंदी में भी ऐसे ग्रंथों की रचना होनी चाहिये। जो बातें मैं उनसे पूछना-जानना चाहता था उनके लिए सहज ही भूमिका तैयार हो गयी। फिर पत्रकारिता के संबंध में उनके साथ जो बातचीत हुई, उसे यहां प्रस्तुत कर रहा हूं।

□ हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में आपका जो योगदान रहा है, उसके बारे में कुछ कहेंगे?

चतुर्वेदीजी : वह काम मेरा नहीं है। अपनी करनी का बखान करने से अधिक अगौरव की बात कोई हो नहीं सकती। मेरे भूतपूर्व सहायक श्री यशपाल जैन, जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी तथा धन्यकुमार जैन चाहें तो कुछ बतला सकते हैं। यदि श्री व्रजमोहन वर्मा जीवित होते, तो वे कुछ लिख सकते थे। फिर, मेरी सेवाएं इतनी महत्त्वपूर्ण हैं भी नहीं कि उनका लेखा-जोखा रखा जाये।

□ मगर आपको तो कई बार पत्रकारों के सभा-संमेलनों का प्रधान बनाया गया है!

चतुर्वेदीजी : हां, मैं कई बार पकड़ा गया था। उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के पत्रकार संघों का सभापतित्व मुझे करना पड़ा था और मथुरा के अखिल भारतीय हिंदी पत्रकार संमेलन का भी। तत्पश्चात् मद्रास में श्रमजीवी पत्रकार संघ के अधिवेशन में भी मुझे प्रधान बनना पड़ा था। मथुरा में हिंदी पत्रकार संमेलन का जो अधिवेशन हुआ था, वही अंतिम था।

□ अंतिम?

चतुर्वेदीजी : हां, उसके बाद किसी अधिवेशन की आवश्यकता ही नहीं समझी गयी। श्रमजीवी पत्रकार संघटन अधिक व्यापक था और अधिक व्यावहारिक भी। उसमें भारत की सभी भाषाओं के पत्रकारों का सहयोग था। शायद इसी वजह से हिंदी पत्रकारों ने अपने अलग संघटन को छोड़ दिया।

□ क्या यह उचित हुआ? क्या ऐसे कुछ विशिष्ट प्रश्न नहीं हैं, जिन पर हिंदी पत्रकार आपस में मिलकर विचार करें? क्या किसी न किसी रूप में उस संघटन को पुनः जीवित करने की आवश्यकता नहीं है?

चतुर्वेदीजी : अब मेरा खयाल है कि हिंदी पत्रकार अपने खास-खास प्रश्नों पर विचार करें, यह नितांत आवश्यक है। कार्य-विभाजन या क्षेत्र-विभाजन की दृष्टि से भी यह जरूरी हो गया है। पहले हिंदी साहित्य

संमेलनों के साथ पत्रकार संमेलन भी हुआ करते थे। उनसे कुछ चर्चा तो होती जाती थी; परंतु अब तो साहित्य संमेलन के अधिवेशन होते ही नहीं।

☐ फिर से शुरूआत कैसे की जाये ?

चतुर्वेदीजी : एक गश्ती चिट्ठी भेजकर इस विषय पर हिंदी पत्रकारों की संमति मंगवायी जा सकती है। अन्य क्षेत्रों की तरह इस क्षेत्र में भी मैं विकेंद्रीकरण की नीति का पक्षपाती हूं। केंद्रीय संस्थाएं अपनी जगह ठीक हैं; पर हमारा काम स्थानीय संस्थाओं के द्वारा–जिलेवार संघटनों की मार्फत–ज्यादा आगे बढ़ सकता है। लेकिन इसके लिए मिशनरी भावना की जरूरत है। बहुत वर्ष पहले अकस्मात् मुझे विलायत के श्रमजीवी पत्रकार संघटन के इतिहास की पुस्तक 'जेन्टीलमेन, द प्रेस' मिल गयी थी। वह हम लोगों के लिए बड़ी प्रेरणाप्रद सिद्ध हुई। उस विलायती संघटन में कई मिशनरी स्पिरिट के व्यक्तियों का जबर्दस्त हाथ था। जब तक हमारे प्रदेशों में ऐसे दो-तीन व्यक्ति नहीं निकलते, जो पत्रकारों के संघटन-कार्य को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लें, तब तक गाड़ी आगे नहीं चल सकती। परंतु जीवन-संघर्ष अब इतना उग्र हो गया है कि ऐसी निःस्वार्थ सेवा के क़ार्य को अपने हाथ में लेने के लिए किसी के पास वक्त ही नहीं।

☐ इसका व्यावहारिक उपाय क्या है ?

चतुर्वेदीजी : हमारे व्रज में एक कहावत है–नाइनें दूसरी स्त्रियों के तो महावर लगाती रहती हैं, पर उनके अपने पैर मैले रहते हैं। पत्रकार भी उन्हीं नाइनों की तरह हैं। वे दुनिया भर के सवालों पर नित्यप्रति लिखते रहते हैं, परंतु अपने प्रश्नों की प्रायः उपेक्षा ही करते हैं।

कम से कम इतना तो हम कर ही सकते हैं कि पत्रकारिता के विषय पर कुछ पत्रों के विशेषांक निकलवा दें। मैंने 'मधुकर' का एक पत्रकार-अंक निकाला था। फिर बंधुवर श्री रामनाथजी गुप्त ने काफी खर्च करके 'रामराज्य' का पत्रकार-अंक निकाला था। यदि कहीं से कुछ सहायता मिले, तो 'लोकराज' तथा 'लोकशिक्षक' अपने पत्रकार-अंक निकाल सकते हैं। दोनों के संपादक हमारे बंधु हैं। परंतु यह काम चतुर्वेदियों पर ही नहीं छोड़ दिया जाना चाहिये। हां, भोजन के विषय को हम लोग बखूबी ले सकते हैं। अभिनंदन-ग्रंथों का भी इसके लिए उपयोग किया जा सकता है।

☐ उदाहरणार्थ ?

चतुर्वेदीजी : मसलन एक अभिनंदन-ग्रंथ श्रद्धेय पंडित झाबरमल्लजी शर्मा को भेंट किया जा सकता है। वे हम सबके अग्रज हैं–सतासी वर्ष के हो चुके हैं और हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में उनका योगदान अत्यंत प्रशंसनीय रहा है। स्वर्गीय बालमुकुंद गुप्त विषयक दोनों ग्रंथ उन्हीं के परिश्रम के परिणाम थे। इसके अलावा शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी के स्मृतिग्रंथों में भी उन्होंने पूरा-पूरा सहयोग दिया था। उनका निजी संग्रहालय भी, जो अब जयपुर में है, बहुत उपयोगी है। बंधवर श्रीनारायणजी चतुर्वेदी

दुनिया किसी तरह चलती ही रहेगी और संकट भी आते ही रहेंगे। किंतु यदि हमारे बीच ऐसे आदमी होंगे जो जरा तटस्थ रहेंगे, जो व्यग्र और बहुत चिंतित होने से इन्कार करेंगे, जो ठंडे दिमाग वाले एवं जिज्ञासु होंगे और अपनी दृष्टि दीर्घतर अतीत और दीर्घतर भविष्य पर टिकाये रहेंगे, तो यह दुनिया अधिक अच्छी तरह चलेगी।

—वाल्टर लिप्मन, महान अमरीकी पत्रकार

(जन्म: २ सितंबर १८८९; मृत्यु: १४ दिसंबर १९७४)

भी इस संमान के पूर्ण अधिकारी हैं, यद्यपि वे अभिनंदन से प्रायः दूर ही भागते रहे हैं। उनका 'विनोद शर्मा अभिनंदन-ग्रंथ' अभिनंदनों पर करारा व्यंग्य था।

शोधग्रंथों से भी काम लिया जा सकता है। मेरे सुझाव पर एक सज्जन ने स्वाधीनता-संग्राम में हिंदी पत्रकारों के योगदान पर शोधग्रंथ तैयार किया था। कई शोधग्रंथ तो बड़े महत्त्वपूर्ण बन पड़े हैं। जैसे, बंधुवर मधुकर भट्ट का शोधग्रंथ, जो उन्होंने अपने प्रपितामह पंडित बालकृष्ण भट्ट पर तैयार किया है। श्री अमृत रायजी ने जो साहित्यिक श्राद्ध अपने पूज्य पिता स्वर्गीय प्रेमचंदजी का किया, वह तो हिंदी जगत् में अद्वितीय ही है। वैसा ही काम उनसे पहले भाई नवलकिशोर कर चुके हैं। नवलकिशोर, अमृत राय और मधुकर भट्ट अभिनंदनीय हैं।

□ इसका अनुकरण क्यों नहीं हो पा रहा है?

चतुर्वेदीजी: इसके लिए श्रद्धा और लगन चाहिये। भाई पद्मकांतजी मालवीय ने अपने पूज्य पिताजी स्वर्गीय कृष्णकांतजी मालवीय के संस्मरण इकट्ठे तो कर लिये थे, परंतु उन्हें वे पुस्तकाकार में छपवा न सके, जबकि पत्रकारिता उनका पुश्तैनी पेशा है। महामना मालवीयजी एक आदर्श पत्रकार थे। यह बड़े दुर्भाग्य की बात हुई कि स्वर्गीय हरिशंकर विद्यार्थी और भाई ओंकारजी शहीद गणेशशंकरजी के लिए कुछ विशेष कार्य नहीं कर सके। कीर्तिरक्षा के मिशन में अकेले भाई शंभुनाथ सक्सेना ने जो काम कर दिखाया, वह अद्भुत है। उन्होंने 'नर्मदा' के कई विशेषांक निकाले थे और उन पर सहस्रों रुपया खर्च कर दिया था।

□ क्या यह सब मूल्यवान सामग्री किसी एक जगह देखने को मिल सकती है?

चतुर्वेदीजी: हैदराबाद के भाई वेंकटलाल ओझा ने अवश्य ही बहुत उपयोगी कार्य किया है। उनका हिंदी समाचारपत्र संग्रहालय अब शोधकर्ताओं के लिए तीर्थतुल्य बन गया है। परंतु वे भी अकेले-अकेले ही इस पुण्यकार्य को करते रहे हैं। उत्तर भारत में

भी उसी प्रकार का एक संग्रहालय बन जाना चाहिये। हमारी राज्य सरकारें करोड़ों के बजट बनाया करती हैं, पर पचीस-तीस हजार इस कार्य के लिए खर्च नहीं कर सकतीं!

जबलपुर तथा काशी विश्वविद्यालय के पत्रकार-विद्यापीठों में राज्य सरकारें अच्छा पुस्तकालय कायम करवा सकती हैं; परंतु उन्हें इस बात का खयाल ही नहीं आता कि जनता को मानसिक भोजन देने वाले पत्रकारों को भी कुछ मानसिक भोजन चाहिये।

□ अंग्रेजी पत्रों में भी तो आप लिखते रहे हैं?

चतुर्वेदीजी : हां, स्वर्गीय सी. वाइ. चिंतामणि तथा स्वर्गीय कृष्णरामजी मेहता की कृपा से मैं सन १९१९ से ही 'लीडर' में लिखता रहा था। लेकिन उन दोनों के स्वर्गवास के बाद मुझे उन-जैसा प्रोत्साहन-दाता कोई मिला नहीं। मैं एक बात स्पष्ट कर दूं, हमें किसी भी भाषा से द्वेष नहीं करना है और अंग्रेजी तो हमारे लिए विश्वदर्शन की एक खिड़की है। इसके अलावा, पत्रकारिता एक अंतरराष्ट्रीय विषय है। हमारे लिए सी. पी. स्काट उतने ही पूजनीय हैं, जितने रामानंद चट्टोपाध्याय तथा महावीरप्रसाद द्विवेदी। एच. एच. डब्ल्यू. नेविन्सन को मैं संसार का सर्वश्रेष्ठ पत्रकार मानता रहा हूं। ए. जी. गार्डनर सर्वोत्तम रेखा-चित्रकार थे। और भला अपने के. ईश्वरदत्त को हम कैसे भूल सकते हैं? कई देशी-विदेशी पत्रकारों के रेखाचित्र मैंने भी प्रस्तुत किये थे।

□ नये हिंदी पत्रकारों के लिए आपका क्या संदेश है?

चतुर्वेदीजी : हम चौबे लोग तो संदेश (बंगाली मिठाई) खाने के शौकीन हैं, संदेश देने के नहीं। यह अप्रिय कार्य दूसरों का है। हां, अपने छुटभैयों से मैं एक प्रार्थना अवश्य करूंगा कि वे किसी विषय के विशेषज्ञ बनकर इस क्षेत्र में प्रवेश करें, तो उन्हें अपेक्षाकृत आसानी से सफलता मिल सकती है। आज का युग स्पेशलाइज़ेशन या विशेषज्ञता का है। मेरा यह निजी अनुभव है कि किसी एक विषय को अपना लेने से इस क्षेत्र में सफलता मिलना कठिन न होगा।

मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूं, जब कुछ नवयुवक वैसा ही कार्य अन्य प्रतिष्ठित पत्रकारों के लिए करेंगे, जो आपने श्रद्धेय पराडकरजी के लिए किया, अथवा भाई गौरीशंकर गुप्त ने त्रिमूर्ति—वाजपेयीजी, पराडकरजी तथा गर्देजी—के लिए किया।

मेरा तिरासीवां वर्ष प्रारंभ हो रहा है और मुझे इस बात का खेद है कि हिंदीभाषी प्रदेशों में एक भी ऐसा पत्रकार-विद्यालय नहीं बन पाया, जहां इस विषय का चार वर्ष का अध्ययन-क्रम हो और जहां का पुस्तकालय इस विषय के ग्रंथों से परिपूर्ण हो। बंधुवर पृथ्वीपाल सिंह ने मुझे लिखा था कि अंग्रेजी में इस विषय पर सैकड़ों ग्रंथ हैं। हमारे हिंदी-जगत् में पचासों पत्रकार हैं। क्या उनमें दो-तीन भी ऐसे न निकलेंगे जो हिंदी पत्रकारिता की उन्नति को अपने जीवन का लक्ष्य ही बना लें?

—व्यास-निवास,
के ३१/५१ कालभैरव, वाराणसी-१

★

केजिता

विज्ञान-बिंदु

मुअनजोदड़ो के काल में भारत गणित में काफी प्रगति कर चुका था। रूसी वैज्ञानिक डा. एलेग्जैंडर वोलोदारस्की ने इस संबंध में कुछ नये तथ्यों की ओर ध्यान खींचा है। डा. वोलोदारस्की सोवियत रूस के विज्ञान एवं तांत्रिकी इतिहास संस्थान से संबद्ध हैं और गणित के विशेषज्ञ हैं।

वे बताते हैं कि मुअनजोदड़ो एवं हड़प्पा की खुदाई के दौरान मिले सीप से बने एक ऐसे रूलर (लंबाई मापने का सामान्य उपकरण) से पता लगता है कि उस समय भी भारत दशमलव प्रणाली से परिचित था। यह रूलर सीप की एक पतली-सी चपटी पट्टी है, जिस पर ६.७ मिलिमीटर की दूरी पर चिह्न अंकित हैं। रूलर के लिए सीप का इस्तेमाल किया जाना भी ऊंचे वैज्ञानिक बोध का प्रतीक है। सीप एक ऐसा पदार्थ है, जिसमें ताप के बढ़ने-घटने से किसी प्रकार का विरूपण (सिकुड़न, प्रसारण अथवा ऐंठन) उत्पन्न नहीं होता। रूलर की प्रामाणिकता की दृष्टि से यह गुण बहुत ही अपेक्षित है।

पुरातत्त्वीय शोध से यह भी पता चला है कि उस युग में मंदिर अथवा भंडारगृह की समस्त सामग्री पर खुदाई के द्वारा नंबर डाल दिये जाते थे, जिससे उन्हें गिनने या पहचानने में भूल की गुंजाइश नहीं रह जाती थी। इसी प्रकार वहां मिले, शेल-प्रस्तर से बने तौलने के बाटों का आकार तत्कालीन भारतीयों के ज्यामितीय बोध का परिचायक है और उनके चिकनेपन से वहां के शिल्प की विकसित अवस्था का स्पष्ट आभास मिलता है। वहां से मिले बरतन और गहने आकार की दृष्टि से गोलाकार, बेलनाकार, शंक्वाकार एवं वर्गाकार हैं। इस प्रकार के विभिन्न ज्यामितीय आकारों का ज्ञान उस युग के आदमी को भी हो सकता है, इस बात से आज के अनेक वैज्ञानिकों को काफी आश्चर्य होता है।

डा. वोलोदारस्की का कहना है कि मध्ययुगीन भारत में गणित का जो विकास हुआ था, उसके बारे में काफी लिखित सामग्री आज हमें उपलब्ध है; परंतु सिंधु घाटी के सांस्कृतिक विकास की जानकारी से उस युग की वैज्ञानिक उपलब्धियों को बारीकी व

गहराई के साथ समझने में सहायता मिलेगी।

छद्म क्रांति

कल की 'हरित क्रांति' को आज क्या हो गया? प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक डा. नीलरत्न धर (निदेशक, शीला धर इंस्टिटयूट ऑफ़ सोशल सायंसेज़) का कहना है कि नोबेल पुरस्कार-विजेता डा. बोरलोग की 'हरित क्रांति' नाकामयाब हो चुकी है। उष्ण-कटिबंधीय देशों में उसकी असफलता का प्रमाण है भारत और फिलिपाइन्स में अन्नोत्पादन की मौजूदा बुरी स्थिति।

डा. धर का यह दावा है कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय स्थित उनके संस्थान में हुई नवीन खोज को यदि अपनाया जाये, तो भारत में अन्नोत्पादन की स्थिति सुधर सकती है। उनके अनुसार, बोरलोग-सिद्धांत की नाकामयाबी की एक बड़ी वजह यह रही है कि उसमें नाइट्रोजन-फास्फेट-पोटैशियम (एन. पी. के.) की भारी मात्राएं उर्वरक के रूप में जमीन में देने की व्यवस्था है, परंतु जैव पदार्थों को एकदम नजरअंदाज कर दिया गया है। उष्ण-कटिबंधीय देशों की मिट्टी में जैव पदार्थों का महत्त्व बहुत अधिक है।

डा. धर की देखरेख में एक नयी तकनीक का विकास किया गया है। उसके अनुसार, उष्ण-कटिबंधीय जमीन से दीर्घ समय तक अच्छी फसल पाने के लिए यह जरूरी है कि मिट्टी में बड़ी मात्रा में जैव पदार्थ खाद की शक्ल में मिलाये जायें। यदि साथ में कैल्शियम फास्फेट की काफी मात्रा भी मिली रहे तो और अच्छा। 'ह्यूमस (जैव पदार्थ) बड़ी मात्रा में दिये बिना, महज एन. पी. के. के सहारे जमीन से लगातार अच्छी फसल प्राप्त कर पाना उष्ण-कटिबंधीय भूमि में असंभव है', यह है डा. धर की तजवीज।

घेंघा—पूर्वी भारत में

उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों में, विशेषतया तराई-क्षेत्रों में घेंघा अथवा गलगंड (ग्वाइटर) बीमारी बड़ी ही आम चीज है। इस रोग में गले की थाय्राइड ग्रंथि बढ़कर बड़ी हो जाती है। यह बीमारी उसी क्षेत्र में विशेष रूप से क्यों है, इसका कारण अब तक ज्ञात नहीं था। अब वाराणसी के दो वैज्ञानिक बी. पी. सिंह तथा आर. पी. सिंह ने कुछ नये तथ्य सामने रखे हैं।

आयोडीन की कमी का इस रोग से गहरा संबंध विज्ञान को विदित है। इन शोधकर्ताओं के अनुसार, इस क्षेत्र में बहुत-सी नदियां बहती हैं और वे अपने साथ अनेक खनिजों को, जिनमें आयोडीन भी संमिलित है, अपने साथ बहा ले जाती हैं; इस प्रकार वहां की जमीन में आयोडीन की मात्रा अपेक्षाकृत कम हो जाती है।

एक अन्य कारण भी है, जो वैज्ञानिकों के अनुसार घेंघा के लिए जिम्मेदार कहा जा सकता है। किशोरावस्था में विशेषतः स्त्रियों की आंतरिक शारीरिक क्रियाएं भी कुछ इस प्रकार की होती हैं, जो घेंघा के प्रसार में सहायता करती हैं। इस अवस्था में यदि आयोडीन की पूरी मात्रा शरीर को न मिले, तो रोग की संभावना दो गुना बढ़ जाती है।

कामांध

काम मनुष्य को अंधा बना देता है—यह अलंकारोक्ति वैज्ञानिक धरातल पर भी अक्षरश: सत्य हो सकती है, इसका एक दिलचस्प उदाहरण अभी-अभी सामने आया है। अपसामान्य मनोविज्ञान के क्षेत्र में शोधरत एक वैज्ञानिक के लिखे एक प्रबंध (पेपर) में बताया गया है कि बाईस-तेईस वर्ष के एक भले-चंगे अविवाहित नवयुवक की नेत्रज्योति जाती रही। आंखों के डाक्टरों ने उसका उपचार किया, परंतु कोई लाभ न हुआ। विशेषज्ञों की सेवा ली गयी, परंतु सब बेकार रहा। नवयुवक निराश हो बैठा।

उधर उसके व्यवहार में कुछ अजीबोगरीब परिवर्तन दिखाई देने लगे। सो मानस-चिकित्सक की राय ली गयी और उसने अपनी खोज शुरू कर दी। जो नतीजा सामने आया, वह चौंका देने वाला था।

यह नवयुवक तीव्र एडिपस-इच्छा (अपनी मां से संभोग करने की लालसा) को अपने अंतरमन में संजोये हुए था। उसके मन का दूसरा भाग उसे इसके लिए लथाड़ा करता था और इससे वह नवयुवक तीव्र लज्जा अनुभव करता रहता था। इस संघर्ष के कारण वह अपराध-मनोग्रंथि (गिल्ट काम्पलेक्स)का बुरी तरह शिकार बन बैठा, नतीजा यह कि उसकी निगाह जाती रही।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह एक प्रकार की सजा है, जो उस व्यक्ति ने अपराध-भावना के कारण स्वयं अपने आपको दे दी। मनोविज्ञान की व्याख्या के अनुसार इस मामले में आंख पुरुष जननेंद्रिय की तथा ज्योतिहानि नपुसकीकरण की प्रतीक है। परंतु उस नवयुवक का चेतन मन इस सबसे बेखबर था। आहिस्ता-आहिस्ता उसे इस बात की अनुभूति करायी गयी, तब उसकी नेत्रज्योति उसे वापस मिलने लगी और उसके व्यवहार में उत्तेजना का आवेग कम होने लगा। आज वह युवक स्वस्थ और सामान्य है।

दिल के दौरे का पूर्वानुमान

शायराना अंदाज में दिल को दगाबाजी के लिए कोसने वाले साहब मर्जे इश्क के शिकार हो सकते हैं; मगर जिन बेचारों का दिल सचमुच ही दगा दे जाये, उनका तो बस खुदा ही मालिक है। दिल पर जोर नहीं, और वह कब दगा दे जाये इसका कोई भरोसा नहीं। मगर एक ताजा खबर के मुताबिक अब हालात कुछ बदल रहे हैं।

इस खबर के देने वाले हैं कलकत्ता विश्वविद्यालय में शरीरक्रिया-विज्ञान के प्रोफेसर डा. विजयकुमार चक्रवर्ती। इनका कहना है कि दिल के दौरे (मायोकार्डियल इन्फैक्शन) अचानक होते हैं, मगर उन्हें अकारण नहीं कहा जा सकता। इन कारणों में से कुछ की जानकारी हासिल की जा चुकी है। जीवन के बाहरी और भीतरी तनावों के कारण आदमी के रक्तसीरम में 'बीटा-लाइपो प्रोटीन' (बी. एल. पी.) नामक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है। बी. एल. पी. रक्त-प्रवाह के साथ शरीर में तैरता रहता है और इस प्रक्रिया के दौरान रक्तवाहिकाओं की दीवारों पर इसकी परत जमती

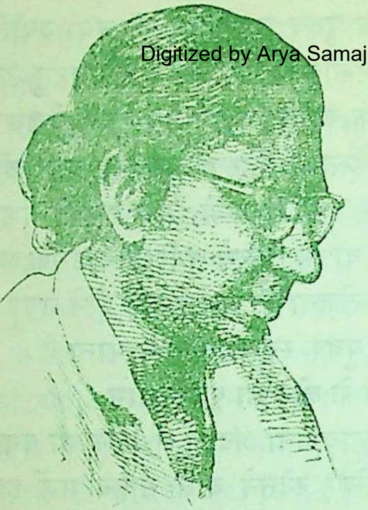

श्रीमती असीमा चटर्जी
विज्ञान कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष

रहती है। परिणामतः हृदय-धमनियों की कार्य-क्षमता निरंतर कम होती जाती है।

शोधकर्ताओं ने इस परिणाम पर पहुंचने से पहले कलकत्ता में १३१ लोगों का अध्ययन किया था, जिनकी मृत्यु मायोकार्डियल इन्फ्रैक्शन के कारण हुई थी।

हृदयाघात के प्रति संवेदनशील व्यक्तियों में बी. एल. पी. की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है। बी. एल. पी. अनुमापन के लिए तीस मिनिट का समय काफी है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य परियोजना के अंतर्गत इसका 'मास स्क्रीनिंग टेस्ट' अपनाया जा सकता है।

समाचार-दर्शन

ऊपर हमने जो पांच वैज्ञानिक समाचार प्रस्तुत किये हैं, इनका चयन हमने भारतीय विज्ञान कांग्रेस के बासठवें अधिवेशन के दौरान पढ़े गये प्रबंधों में से किया है। यह अधिवेशन पिछली जनवरी के प्रथम सप्ताह में दिल्ली विश्वविद्यालय में हुआ था। उद्घाटन किया था प्रधान-मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने और अध्यक्षता की थी कलकत्ता विश्वविद्यालय के रसायन-विभाग की अध्यक्षा एवं प्रसिद्ध पादप-रसायनज्ञ डा. (श्रीमती) असीमा चटर्जी ने। संयोग देखिये कि सन १९७५ को राष्ट्रसंघ ने 'महिला वर्ष' घोषित किया है और हमारे यहां विज्ञान कांग्रेस की अध्यक्षता करने का संमान पहली बार एक महिला विज्ञानी को इस वर्ष मिला है।

विज्ञान कांग्रेस का जन्म १९१४ में कलकत्ता में हुआ, जहां इसका पहला अधिवेशन सर आशुतोष मुखर्जी की अध्यक्षता में हुआ। उस प्रथम अधिवेशन में कुल १३५ वैज्ञानिकों ने भाग लिया और उसमें पैंतीस प्रबंध पढ़े गये थे। तब से अब तक विज्ञान कांग्रेस के अधिवेशन का आकार और रूप निरंतर बढ़ता बदलता रहा है। इस वर्ष तीन हजार से भी अधिक देशी-विदेशी विज्ञानी अधिवेशन में संमिलित हुए और इसकी विभिन्न विभागीय गोष्ठियों में एक हजार से भी अधिक प्रबंध पढ़े गये।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों के अतिरिक्त इस अधिवेशन में विज्ञान से संबद्ध अनेक आर्थिक-औद्योगिक समस्याओं पर भी चर्चाएं चलीं। उनमें से कुछ थीं—आयात प्रतिस्थापन, निर्यात-संवर्धन, भारत के ऊर्जा स्रोत, संदूषण एवं पशु-जीवन। वैचारिक स्तर पर भी यह अधिवेशन कुछ गर्म

ही रहा। अनेक विज्ञानी इन अधिवेशनों से संतुष्ट नहीं हैं। कुछ को ये 'विज्ञान-अधिवेशन' की अपेक्षा 'विज्ञान-मेले' प्रतीत होते हैं। इन लोगों का कहना है कि प्रतिवर्ष इस तरह मात्र प्रबंध पढ़ देने से कोई लाभ नहीं। हमारी 'राष्ट्रीय विज्ञान-नीति' और 'पोखरन परमाणु-परीक्षण' जैसे जीवंत एवं सामासिक विषयों पर खुलकर चर्चा की व्यवस्था इन अधिवेशनों में की जानी चाहिये, ताकि युवा वैज्ञानिकों को अपने विचार देश के वैज्ञानिकों के सामने रखने का अवसर मिले।

विज्ञान कांग्रेस अधिवेशन के स्वरूप को बदलने की आवश्यकता का जिक्र दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति डा. रामचरन मेहरोत्रा ने भी अपने स्वागत-भाषण में किया। उन्होंने सितंबर १९७४ में हुए ब्रिटिश विज्ञान कांग्रेस के अधिवेशन का जिक्र करते हुए कहा कि उसमें विज्ञान के प्रति विद्यार्थियों की दिनो-दिन कम होती हुई दिलचस्पी के बारे में बड़ी उपयोगी चर्चा हुई थी। उनका इशारा था कि वैसी चर्चाएं हमारे विज्ञान कांग्रेस अधिवेशनों में होनी चाहिये। (विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों की रुचि का विज्ञान से हटते जाना शिक्षा-जगत् में काफी चर्चा और चिंता का विषय बना हुआ है। **नवनीत** के नवंबर-दिसंबर १९७४ के अंकों में इस विषय में आपने एक परिचर्चा पढ़ी है।)

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के भूतपूर्व महानिदेशक डा. आत्माराम ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि भारत में यदि विज्ञान अधिक उपयोगी नहीं हो पा रहा है, तो इसके दो कारण मुख्य हैं। एक तो हम शोध के मामले में विदेशों से समय-समय पर चलने वाली 'फैशन वेव्स' में बहुत जल्दी बह जाते हैं; और दूसरे, हमारे यहां विज्ञान-शोध का 'सरकारीकरण' इस सीमा तक पहुंचता जा रहा है कि उससे सार्थक परिणामों की आशा नहीं की जा सकती। दफ्तरी माहौल में शोध संभव नहीं है। इसके लिए शैक्षणिक वातावरण की आवश्यकता है, जो विश्वविद्यालयों में आसानी से तैयार किया जा सकता है। अध्यक्ष डा. असीमा चटर्जी ने आंकड़ों और बहुत ही दिलचस्प तथ्यों का सहारा लेते हुए डा. आत्माराम के विचारों का पूरी तरह समर्थन किया और कहा कि उच्च शोध के लिए उपयुक्त स्थान विश्वविद्यालय ही हो सकते हैं।

अब स्पष्ट है कि आगे से विज्ञान कांग्रेस के अधिवेशनों के स्वरूप और कार्य-संचालन में कुछ बड़े परिवर्तन किये जायेंगे। मसलन जनवरी १९७६ में वाल्टेयर में होने वाले तिरसठवें अधिवेशन में डा. एम. एस. स्वामिनाथन् अपने अध्यक्षीय भाषण में एक 'जनरल' विषय प्रस्तुत करेंगे, जिसका शीर्षक होगा — 'विज्ञान और समेकित ग्रामीण विकास'। बाद में विभागीय बैठकों में उपर्युक्त विषय पर विस्तृत विचार-विमर्श होगा, ताकि एक सामाजिक एवं उपयोगी विषय के सभी पक्षों पर विचार किया जा सके। निश्चय ही इससे हमारे राष्ट्रीय जीवन का कुछ हित-साधन हो सकेगा।

* * *

आत्मकथ

–अंचल–

नींद-टूटी, स्वप्न-फूटी रात मेरी उम्र-भर
नित भटकती रह गयी अवरुद्ध अपने आपमें
एक क्षण सोये न विथकित पहरुए-सा प्रति दिवस
रह गया आजन्म सोता नैश श्रम के ताप में
तौल पाया मैं न अपनी ऊंघती अभिव्यक्ति को
सृष्टि के सीमांतवर्ती नभ-पथों के द्वार तक
गूंथ पाया मैं न अपनी अर्पिता अनुरक्ति को
काल के अंतर्जयी अक्षर अमर ओंकार तक
हो सकी रंध्रित न इतनी उमड़नों के बाद भी
लुब्ध मानस की कहीं कोई दिशा की वेणुकी
हो सकी छंदित न अब तक एक भी अनुगूंज तो
रह गयी मेरी गिरा घिरती-घुमड़ती रेणुकी
वृष्टि-भीगे, अक्षितिज लट के हठी सूर्यास्त-सा
पढ़ न पाता ज्योति-भक्षी लिपि लयी कल्पांत
देख पाता मैं न आकृति को बदलते आत्म में
लिख न पाता अग्निपुष्पित पंति गति-चक्रांत को
थम सकी वल्गा न अपने ही पराजित अश्व को
जो न टिक पाया किसी विश्वास के संमुख कभी
झील की तिरती ढली परछाइयों की भीड़ में
मंत्र मेरी प्रेरणा का कब ठहर पाया कभी

–साउथ सिविल लाइन, पचपेड़ी, जबल

एक और महाभारत

कृष्ण भावुक

महाभारत-विजय के बाद
छत्तीस वर्ष तक पांडवों ने राजसत्ता भोगी तो सही;
भारत-स्वातंत्र्य के बाद
हम सत्ताईस वर्ष तक भरपेट भोजन भी न जुटा सके।
मिला था किस मुनि का शाप
कि बनोगे तुम सब पांडवों के अवतार
हजार गुण, अपार तेज-बुद्धि-
धर्म-शिक्षा-शक्ति-संपन्न होकर भी लगातार
काटोगे अंतहीन वनवास, भटकोगे दिन-रात, द्वार-द्वार
दीन-हीन भिक्षुकों की तरह लाचार
फिर भी न पा सकोगे आवास-वस्त्र-आहार;
क्योंकि आज भी धृतराष्ट्र को पक्ष लेना है उस पीढ़ी का,
जो अंधेरे के बीज बोती और काली फसलें काटती है;
यदि कभी बंध भी जायेंगी ये अंधी कौरव-संतानें
किन्हीं क्रुद्ध गंधर्वों के पाशों में,
तो इन्हें हमीं से मुक्त करवायेंगे युधिष्ठिर—हमारे ही पक्ष के पहरेदार!
कि न चाहकर भी भीष्म पितामह लेंगे असत्य का ही पक्ष
और बेध सकेंगे हम भी असत्य और अन्याय से ही
भीष्म-द्रोण-कर्ण-दुर्योधन के वक्ष;
कि बस उन्हीं की तरह चुक जायेंगे
हमारे भी समस्त क्रिया-कलाप
लेते हुए प्रतिशोध, देते हुए शाप!
कि खाकर अंधकार दीपक काजल ही उगल सकते हैं,
जैसे उस महाभारत ने यह 'महाभारत' उगला है;
आज जिन्हें मिले हैं कुर्सियां और सिंहासन
शायद स्वर्ग के भी अधिकारी होंगे
वही सब दुर्योधन और दुःशासन;
और भोगेंगे हम नरक की यातना दारुण
युधिष्ठिर की तरह यहां-वहां
केवल एक झूठ के कारण
कि अच्छे-भले भारत को 'महाभारत' क्यों कहा!

[अनियतकालीन पत्रिका 'आधुनिक' से]

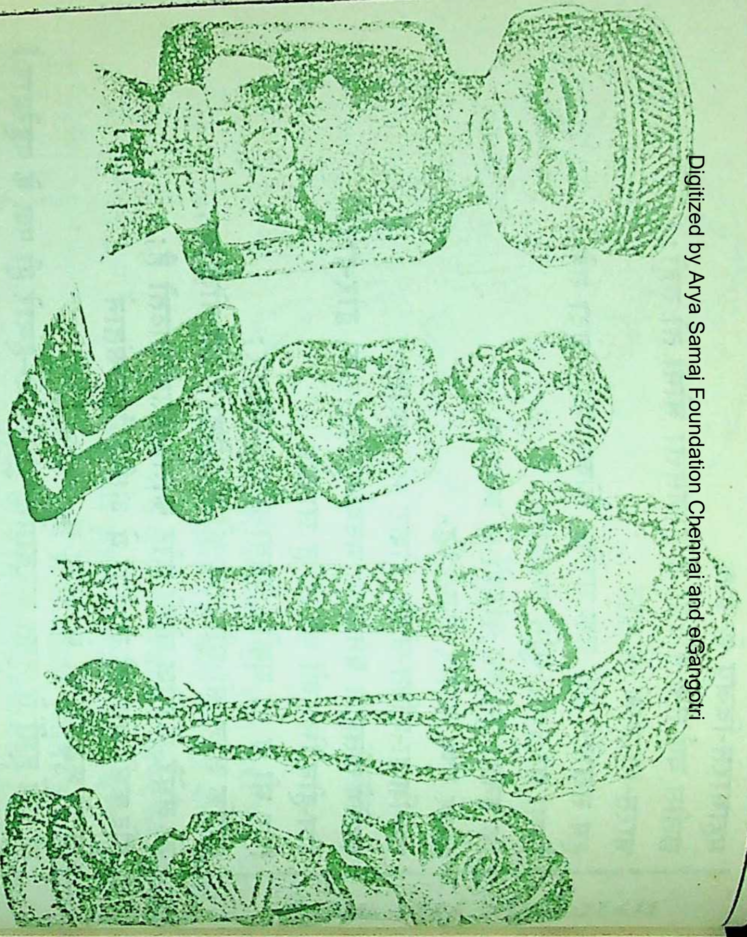

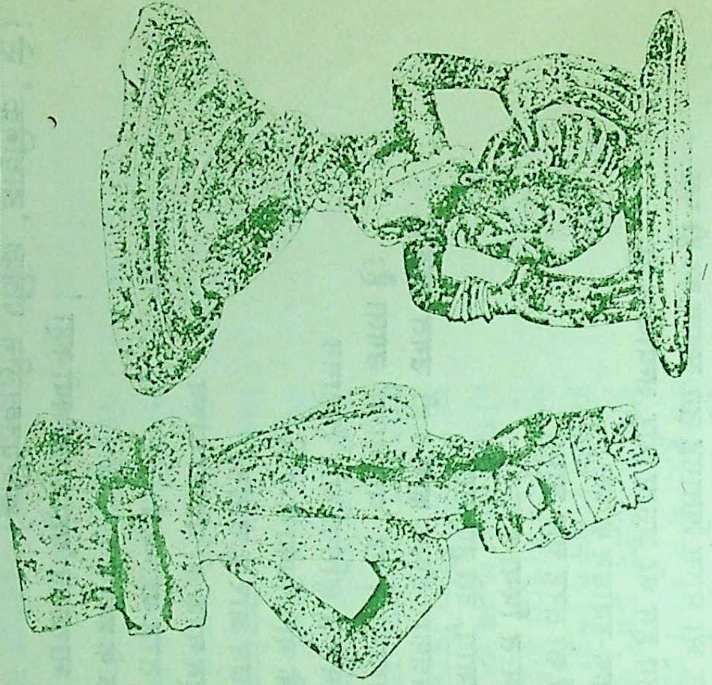

अफ्रीकी शिल्प के नमूने पिछली सदी के उत्तरार्ध में यूरोप पहुंचने लगे। केवल उनके तकनीकी कौशल पर तब लोगों का ध्यान गया था। किंतु क्यूबिज्म के उदय से कला-दृष्टि बदल गयी और अफ्रीकी कला की प्राणवंतता और 'आधुनिकता' सराही जाने लगी। जैरे (बेल्जियन कांगो) की चंद मूर्तियों की ये चित्रमय अनुकृतियां बी. एन. ओके ने प्रस्तुत की हैं।

मिर्जा कामिल

△ कन्हैयालाल कपूर △

मिर्जा कामिल उन लोगों में से हैं, जिन पर मौलाना हाली का यह मिसरा लागू होता है :

आलम में तुझसे लाख सही, तू मगर कहां।

वैसे देखने में वे भले-चंगे नजर आते हैं; लेकिन अपनी बातचीत में कुछ इस अंदाज से दूर की कौड़ी लाते हैं कि सुनने वाले भौंचक्के रह जाते हैं। कई बार उनकी विचित्र बातों से चुटकुलों का भ्रम होता है। लोग हंसते-हंसते बेहाल हो जाते हैं। मिर्जा पर तरह-तरह के फिकरे कसते हैं। लेकिन मिर्जा न परेशान होते हैं, न पशेमान (लज्जित)। बल्कि पहले से भी ज्यादा जोश के साथ अपनी काबिलीयत के जौहर दिखाने लगते हैं।

एक गोष्ठी में मोना लिसा का जिक्र चल रहा था। किसी ने मिर्जा की राय पूछी। उन्होंने चटखारे लेते हुए फरमाया—'अजी साहब ! क्या बात है मोना लिसा की ! यूनान की यह सुंदरतम नर्तकी तो सिकंदरे आजम की खास मंजूरेनजर थी। कहते हैं जब सिकंदर ने ईरान पर हमला किया, तो वह उसके साथ गयी थी। यह भी कहते हैं कि दारा को सिकंदर ने नहीं, मोना लिसा ने कत्ल किया था। मरने से पहले दारा ने मोना लिसा से मुखातिब होकर फारसी का एक शेर पढ़ा था, जिसका अर्थ उर्दू के एक शायर ने यों बयान किया है :

हमको तो बरबाद किया है
और किसे बरबाद करोगे ?

'ईरान से मोना लिसा मिस्र पहुंची। वहां उसकी मुलाकात क्लियोपाट्रा से हुई। क्लियोपाट्रा के महल में एंटनी ने उसे देखकर

कहा था—काश ! क्लियोपाट्रा के बजाय मुझे तुमसे मुहब्बत होती।'

मिर्जा साहब की राय जानने वाले ने कहा—'हुजूर ! मोना लिसा तो एक मशहूर तस्वीर का नाम है, जिसे लियोनार्दो द विंची का मास्टरपीस माना गया है।' मिर्जा ने हवास ठिकाने रखते हुए जवाब दिया—'हम गोश्त-पोस्त की मोना लिसा की बात कर रहे हैं ! यह मोना लिसा उस जमाने में हुई, जब तुम्हारा लियोनार्दो द विंची पैदा भी नहीं हुआ था। यह वही मोना लिसा है, जिसके बारे में कहा गया था कि अगर उसकी नाक जरा और तीखी होती तो वह आधी दुनिया को अपने प्रेम-जाल में गिरफ्तार कर सकती थी।'

'हमने तो उसका नाम पहली ही बार सुना है।'

'आइंदा याद रखियेगा।'

एक दूसरी महफिल में इस पर बहस हो रही थी कि कालिदास शेक्सपियर से बड़ा नाटककार है या नहीं ? मिर्जा ने बहस में भाग लेते हुए यह फतवा दिया—'कालिदास चौथी और शेक्सपियर सोलहवीं सदी में हुआ। लिहाजा कालिदास शेक्सपियर से बारह सदियां बड़ा नाटककार है। इसके अलावा हमें यह नुक्ता भी भूलना नहीं चाहिये कि शेक्सपियर ने अपने नाटकों के प्लाट कालिदास से चुराये हैं।'

किसी ने सवाल किया—'बतौर मिसाल ?'

'हैमलेट का प्लाट शकुंतला से चुराया गया है।'

'उन दोनों के प्लाट में कोई समान नहीं है।'

'है कैसे नहीं ! लगता है, आपने न हैम पढ़ा है न शकुंतला।'

'आप ही बताइये, इन दोनों के प्लाट कौन-सी चीज समान है ?'

'दोनों में एक हीरो है, जो हीरोइन प्रेम करता है।'

'यह बात तो आप हर नाटक के बा कह सकते हैं।'

'हरगिज नहीं। जार्ज बर्नार्ड शॉ नाटकों में न हीरो होता है न हीरोइ केवल जार्ज बर्नार्ड शॉ होता है।'

एक बार दो आदमियों में एक शेर बारे में झगड़ा हो गया। दोनों मिर्जा पास पहुंचे और उनकी राय मांगी। मिर्जा कहा—'शेर पढ़िये।' शेर पढ़ा गया। उन्हों दो-एक बार खुद पढ़ा और फरमाया— 'सचमुच बेनजीर शेर है:

दिल से तेरी निगाह जिगर तक उतर ग
दोनों को एक अदा में रज़ामंद कर गयी।

'मिर्जा साहब ! मैं कहता हूं यह शे गालिब का है। मेरे दोस्त की राय है, जौ का है। आपका क्या खयाल है ?'

'हजरात ! आप दोनों ही गलती पर हैं यह शेर गालिब का है न जौक का। द असल इसे तीन शायरों ने मिलकर कहा और वे थे—जनाब दिल शाहजहांपुरी, जना जिगर मुरादाबादी और मोहतरमा अ बदायूनी। सबूत इस बात का यह कि ती के तखल्लुस शेर में मौजूद हैं।'

इसी तरह की एक अन्य घटना उस दिन हुई, जब एक विद्यार्थी ने मिर्जा से फानी के इस शेर की व्याख्या करने के लिए कहा:

सुने जाते न थे तुमसे मेरे दिन रात के शिकवे
कफन सरकाओ मेरी बेज़बानी देखते जाओ।

मिर्जा ने बड़ी गंभीरता से कहा–'यह एक हास्यपूर्ण शेर है। आशिक अपनी महबूबा को डराने के लिए कफन में घुस जाता है। दो-एक मिनिट मुर्दे की तरह लेटे रहने के बाद चुप्पी की मोहर तोड़ता है और महबूबा की बेरुखी पर व्यंग्य करते हुए उसे कफन सरकाने का निमंत्रण देता है। जाहिर है, वह इस छेड़छाड़ से मजे ले रहा है। वरना अगर उसकी सचमुच मौत हो गयी होती तो वह एक शब्द भी न बोल सकता। शेर कहना तो दूर की बात रही।'

हालांकि मिर्जा ने कभी विदेश की यात्रा नहीं की, फिर भी जब कोई आदमी विदेश का जिक्र छेड़ता है, उसमें दखल देना वे अपना फर्ज समझते हैं। एक नवयुवक जो लंदन से लौटा था, हाईड पार्क के बारे में कुछ कह रहा था। मिर्जा ने उसकी बात काटते हुए कहा–'जी हां! हाईड पार्क इंग्लैंड की सबसे बड़ी खालों की मंडी है। वहां हर प्रकार के जंगली जानवरों की खाल मिल जाती है। हमें याद है, हमने वहां लोमड़ी की खाल दो पौंड में खरीदी थी।'

'लेकिन साहब! हाईड पार्क खालों की मंडी नहीं, एक पार्क का नाम है, जहां हर किसी को भाषण देने की पूरी आजादी है।'

'आपका अंदाज बिलकुल गलत है। अगर यह महज पार्क होता तो फिर उसका नाम हाईड पार्क रखने की क्या जरूरत थी?'

और कल शाम तो मिर्जा कामिल ने कमाल ही कर दिया। एक मिस्री सैलानी ने उनसे पूछा–'आप कभी मिस्र भी गये हैं?'

'जी हां! कई बार।'

'अहरामे-मिस्र भी देखे?'

'देखे', मिर्जा ने चौंककर कहा–'उन्हीं के यहां तो हमारा मुकाम रहा। वे हमारे जिगरी दोस्त हैं। मिस्र में उनसे बढ़कर मेहमान-नवाज रईस शायद ही होंगे।'

'और अबुलहौल?'

'ओह मौलाना अबुलहौल! उनसे एक कहवाखाने में मुलाकात हुई थी। बड़े दिलचस्प आदमी हैं। बहुत देर तक मिस्र और हिंदुस्तान के बारे में बातें करते रहे।'

अब मिस्री सैलानी के चौंकने की बारी थी–'लेकिन मिर्जा साहब, अहरामे-मिस्र तो मीनार है और अबुलहौल एक बुत का नाम है, जिसका चेहरा औरत का और धड़ शेर का है।'

मिर्जा साहब ने जरा भी न झेंपते हुए जवाब दिया–'देखिये साहब! जब हम मिस्र गये थे, तब तो अहरामे-मिस्र की गिनती रईसों में होती थी और अबुलहौल मौलाना कहलाते थे। अब अगर गर्दिशे-जमाना से वे मीनार और बुत में बदल गये हों तो हम कह नहीं सकते।'

मिस्री सैलानी ने गालिब का मिसरा ओंठों में दोहराया–'नातका सरबगरेबां कि इसे क्या कहिये......' और खामोश हो गया।

★

रक्त के वर्ग

डा. अरुणकुमार मिश्र

रक्त जीवन की सरिता है। मानव-शरीर में रक्त के अनेक काम हैं–सांस के रूप में भीतर ली गयी आक्सिजन को कोशिकाओं में पहुंचाना, भोजन का वितरण, बेकार वस्तुओं को उत्सर्जक अंगों (गुर्दा आदि) में जमा करना, शरीर के ताप का नियंत्रण, रोगों से रक्षा और हार्मोनों को आवश्यक स्थानों पर पहुंचाना। विशेष अवस्थाओं में रोगी को दूसरे आदमी का रक्त शिराओं द्वारा दिया जाता है। इस क्रिया को रक्ताधान (ब्लड-ट्रांसफ्यूजन) कहते हैं।

यह बात अब सर्वविदित है कि मानव-रक्त को उसके गुणों के आधार पर कई वर्गों में बांटा जा सकता है। इन्हें रक्त-व (ब्लड-ग्रुप) कहते हैं। किंतु वैज्ञानिकों को इस तथ्य का पता चला रक्ताधान में पैदा हुई झंझटों से।

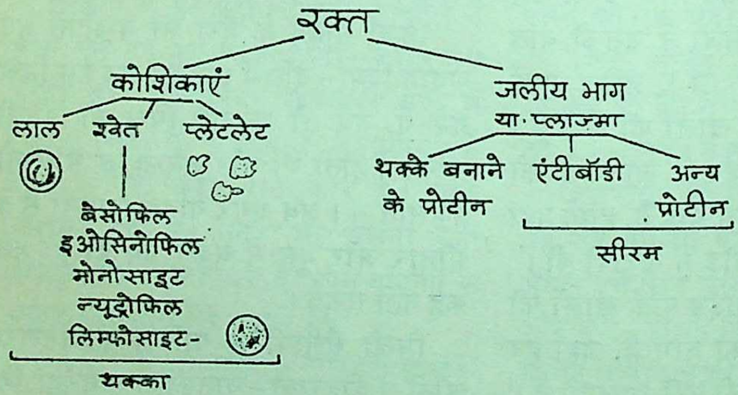
रक्त
कोशिकाएं
लाल
श्वेत
प्लेटलेट
बैसोफिल
इओसिनोफिल
मोनोसाइट
न्यूट्रोफिल
लिम्फोसाइट-
थक्का
जलीय भाग
या प्लाज्मा
थक्के बनाने के प्रोटीन
एंटीबॉडी
अन्य प्रोटीन
सीरम

चित्र-१ : रक्त के भाग

बेमेल वर्ग का रक्त देने से रोगी की मृत्यु हो सकती है। इसलिए रक्ताधान से पहले रक्त के दाता और ग्रहणकर्ता के रक्तों का मिलान करके यह देख लेना पड़ता है कि वे एक ही प्रकार के हों। इससे दोषों की संभावना कम हो जाती है।

स्वस्थ वयस्क मनुष्य के शरीर में करीब २० लिटर रक्त होता है। रक्त लाल, चिपचिपा द्रव है–स्वाद में जरा नमकीन। कभी-अभी उसका रंग गाढ़ा लाल या नीलापन लिये लाल भी हो सकता है। इसका तरल अंश 'प्लाज़्मा' कहलाता है, जिसमें अनेक प्रकार की वस्तुएं रहती हैं (चित्र-१)।

रक्त में तीन प्रकार की कोशि

काएं होती हैं—१. लाल कोशिकाएं, २. श्वेत कोशिकाएं, और ३. प्लेटलेट। लाल कोशिकाओं में हीमोग्लोबीन होता है, जो शरीर की अन्य कोशिकाओं को आक्सिजन पहुंचाता है। श्वेत कोशिकाएं रोगाणुओं से शरीर की रक्षा करती हैं। प्लेटलेट रक्त-वाहिनियों के कट जाने पर उस स्थान पर रक्त को जमाने (थक्के बनाने) का काम करते हैं, जिससे रक्तस्राव रुक जाता है। मानव-रक्त का वर्गीकरण लाल कोशिकाओं के आधार पर ही किया गया है।

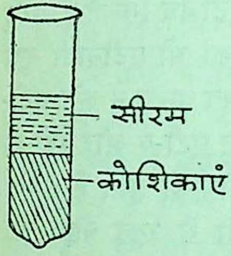

चित्र-२ : सेंट्रिफ्यूज ट्यूब में रक्त

प्रतिसीरम :

रक्त-ग्रुप का पता प्रतिसीरम की मदद से लगाया जाता है। प्राणियों के शरीर में रोगाणुओं का प्रतिरोध करने की जो स्वाभाविक क्षमता है, वह 'इम्युनिटी' कहलाती है। रोगाणु को और ऐसे किसी भी प्रोटीन को जो शरीर में रोग उत्पन्न कर दे, एंटीजेन (प्रतिजन) कहते हैं।

वर्ग	लाल कोशिकाओं में एग्लुटिनोजेन		सीरम में एग्लुटिनोजेन	
	ए	बी	एंटी-ए	एंटी-बी
ओ	नहीं	नहीं	हां	हां
ए	हां	नहीं	नहीं	हां
बी	नहीं	हां	हां	नहीं
एबी	हां	हां	नहीं	नहीं

चित्र-३ : मानव-रक्त के मुख्य वर्ग

मनुष्य के रक्त को इंजेक्शन द्वारा खरहे या घोड़े में प्रवेश कराया जाये, तो वह इन जानवरों के लिए एंटीजेन का काम करता है। इससे उनके शरीर में प्रतिरोधी प्रतिपिंड (एंटीबाडी) बनने लगते हैं। कुछ दिनों के बाद खरहे या घोड़े से कुछ रक्त बाहर निकालकर उसे जमने देकर फिर सेंट्रिफ्यूज-यंत्र में रखकर घुमाया जाता है। इससे रक्त-कोशिकाएं नीचे बैठ जाती हैं। अब ऊपर का साफ द्रव (चित्र-२) ढालकर अलग कर लिया जाता है। यही प्रतिसीरम है। सामान्य अवस्था में रक्त के जमने के बाद बचा जलीय भाग सीरम कह-

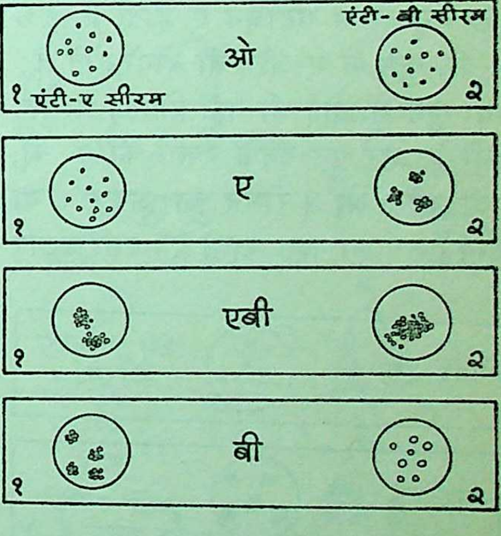

चित्र-४ : रक्त और सीरम की प्रतिक्रिया। समूहन पर ध्यान दें

लाता है। सीरम शब्द से ही सीरमशास्त्र (सीरोलाजी) शब्द बना है।

ओ-ए-बी सिस्टम :

लैंडस्टीनर ने १९०० में पता लगाया कि मनुष्यों के रक्त की चार किस्में होती हैं—ए, बी, एबी, और ओ (चित्र-३)। यह वर्गीकरण रक्त में कुछ रसायनों की उपस्थिति या अनुपस्थिति पर निर्भर है (चित्र-४)।

यदि एक आदमी का रक्त दूसरे आदमी के सीरम के साथ मिलाया जाये, तो लाल कोशिकाएं एक साथ जमा होने लगती हैं। यह क्रिया 'समूहन' कहलाती है। इसमें एक आदमी के एंटीजेन दूसरे के एंटीबाडी से प्रतिक्रिया करते हैं।

मानव-रक्त में दो तरह के एंटीजेन ए और बी, तथा उनके प्रतिरोधी एंटीबाडी एंटी-ए तथा एंटी-बी का पता चला है। कुछ मनुष्यों में एंटीजेन ए होता है, कुछ में बी, कुछ में ए और बी दोनों होते हैं; तथा कुछ में कोई भी नहीं होता। वस्तुतः इसी आधार पर इनके रक्तों को ए, बी, एबी और ओ (रोमन का अक्षर o या शून्य) वर्ग का कहा जाता है। इसी प्रकार ए रक्त वाले मनुष्यों के सीरम में एंटी-एंटीबाडी होता है तथा बी रक्त वालों में एंटी-ए एंटीबाडी होता है।

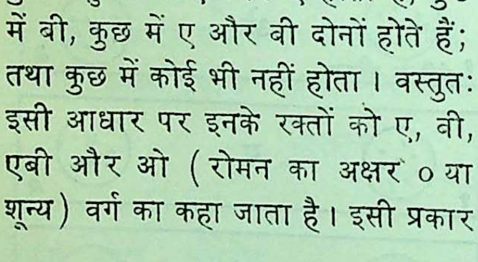

चित्र–५ : रक्त का आर-एच फैक्टर

ए वर्ग का रक्त बी रक्त वालों के शरी में, या बी वर्ग का रक्त ए वालों के शरी में दिये जाने पर रक्त-कोशिकाओं का समूहन इन्हीं प्रतिरोधी रसायनों के कारण हो है। स्लाइड पर भी इसका परीक्षण करके देखा जा सकता है। ऐसा समूहन अधिक देर तक हो, तो रक्त के ग्रहणकर्ता की मृ हो जाती है।

एबी प्रकार के रक्त वालों में ए और बी दोनों प्रकार के एंटीजेन मिलते हैं, परं उनमें किसी प्रकार का भी एंटीबाडी नहीं होता। ओ वर्ग के रक्त वालों में कोई एंटीजेन नहीं होता, परंतु एंटी-ए और एंटी-बी दोनों प्रकार के एंटीबाडी होते हैं। एबी वर्ग वाले अन्य सभी से रक्त ग्रहण कर सकते हैं, अतः वे सर्वग्रहणकर्ता (यूनिवर्सल एक्सेप्टर) कहलाते हैं। परंतु वे रक्त दे सकते हैं केवल अपने वर्ग वालों को।

ओ वर्ग वाले लोग किसी को भी अपना रक्त दे सकते हैं और सर्वदाता (यूनिवर्सल डॉनर) कहलाते हैं। किंतु वे केवल अपने ही वर्ग वालों का रक्त ग्रहण कर सकते हैं।

कुछ अन्य प्रकार के रक्त-वर्ग भी पता चले हैं।

आर-एच तत्त्व :

रीसस (Rhesus) जाति के बंदरों के रक्त को सूई द्वारा खरहों में पहुंचाकर बनाये गये सीरम से अधिकांश मनुष्यों के रक्त की

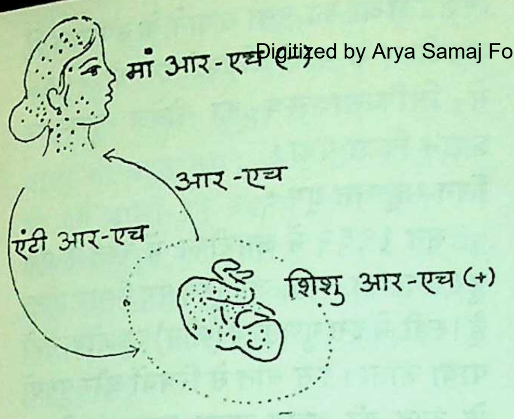
मां आर-एच (-)
आर-एच
एंटी आर-एच
शिशु आर-एच (+)

चित्र-६ : इरिथ्रोब्लास्टोसिस फिटैलिस

लाल कोशिकाओं का समूहन हो जाता है। (यह बात लैंडस्टीनर और वाइनर ने सन १९४० में पता लगायी।) समूहन करने वाले इस प्रतिजन को रीसस-फैक्टर या 'रीसस' शब्द के अंग्रेजी हिज्जे के प्रथम दो अक्षरों पर से संक्षेप में आर-एच फैक्टर कहते हैं। इस प्रतिक्रिया के आधार पर मनुष्यों को आर-एच पॉज़िटिव और आर-एच निगेटिव इन दो वर्गों में बांटा जाता है (चित्र-५)।

इसी के आधार पर विज्ञानियों ने इरिथ्रोब्लास्टोसिस नाम के एक विचित्र प्रकार के रक्तहीनता रोग का रहस्य सुलझाया है। इसमें गर्भस्थ शिशु के रक्त की कोशिकाएं माता के रक्त द्वारा नष्ट कर दी जाती हैं, जिससे मां और बच्चा दोनों की मृत्यु हो सकती है।

अब हमें यह ज्ञात है कि ऐसे शिशु आर-एच पॉज़िटिव पिता और आर-एच निगेटिव माता के मेल से उत्पन्न होते हैं (चित्र-६)। इसलिए आर-एच पॉज़िटिव पुरुष और आर-एच निगेटिव स्त्री की शादी ठीक नहीं।

होता यह है कि आर-एच पॉज़िटिव प्रकार का (अर्थात् आर-एच पॉज़िटिव पिता के शुक्र से जनमा) शिशु जब आर-एच निगेटिव मां के गर्भ में बढ़ रहा होता है, तब मां के रक्त में एंटी आर-एच एंटीबाडी का निर्माण होने लगता है। इस प्रकार के दो-एक बच्चों को तो मां किसी तरह जन देती है। मगर बार-बार इस प्रकार के बच्चे गर्भ में आयें, तो मां के रक्त में यह एंटीबाडी अधिक मात्रा में हो जाता है और गर्भस्थ शिशु के रक्त पर आक्रमण कर देता है। तब शिशु के रक्त की लाल कोशिकाओं का बड़ी मात्रा में समूहन होने लगता है और शिशु का रक्त नष्ट हो जाता है। उसे रक्तस्राव और अरक्तता होने लगती है। तब शिशु की

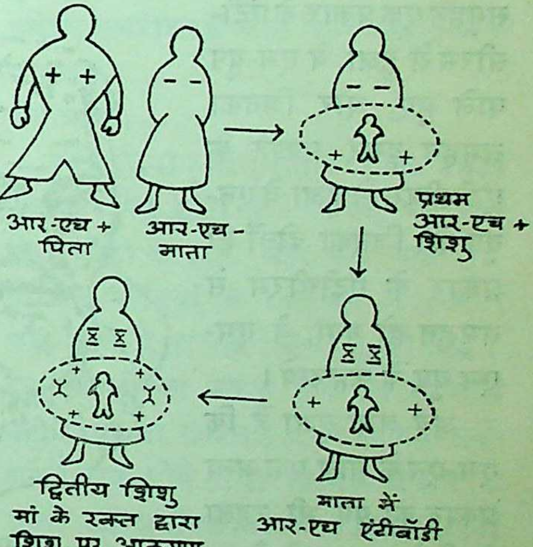
+ +
- -
आर-एच +
पिता
आर-एच -
माता
प्रथम
आर-एच +
शिशु
माता में
आर-एच एंटीबॉडी
द्वितीय शिशु
मां के रक्त द्वारा
शिशु पर आक्रमण

चित्र-७ : आर-एच फैक्टर की कार्यविधि

मृत्यु हो जाती है, या मां का गर्भपात हो जाता है। (चित्र-७)

सौभाग्य से अब गर्भस्थ शिशु के रक्त को बदलकर इस दुर्घटना को रोकने की डाक्टरी विधि निकल आयी है।

फैक्टर पी :

एक और तत्त्व है फैक्टरी-पी। लैंडस्टीनर और लेविन ने १९२७ में यह पता लगाया कि इस तत्त्व की दृष्टि से मनुष्य दो प्रकार के होते हैं—पी-पॉज़िटिव तथा पी-निगेटिव। पी-पॉज़िटिव वालों की संख्या अधिक है।

एम-एन ग्रुप :

इसका पता भी लैंडस्टीनर (१९२७) ने ही लगाया। खरहों को मानव-रक्त के इंजेक्शन लगाकर दो प्रकार के एंटीसीरम तैयार किये गये। जिन लोगों के रक्त का समूहन एक प्रकार के एंटी-सीरम से हुआ, वे एम-ग्रुप वाले हुए, और जिनका समूहन दूसरे प्रकार के एंटीसीरम से हुआ वे एन-ग्रुप के। जिनका दोनों ही प्रकार के एंटीसीरम से समूहन हो गया, वे एम-एन ग्रुप के कहलाये।

अब ज्ञात हुआ है कि एम-एन के साथ एक अन्य प्रकार का ग्रुप भी रहता है, जिसे एस कहते हैं।

मानव-रक्त की इन विशेषताओं का पता लगाने के उपलक्ष्य में अमरीका के कार्ल लैंडस्टीनर को १९३० में चिकित्साशास्त्र का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

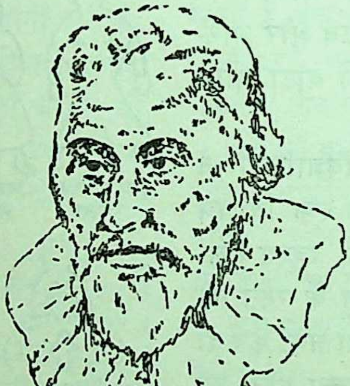

रक्त-संचरण सिद्धांत का प्रवर्तक विलियम हार्वे [१५७८-१६५७]

लिंग-सहलग्न ग्रुप :

सन १९६२ में अमरीका में रक्त के एक गुण का पता लगा, जो पुरुष पर निर्भर होता है। स्त्री में इस गुणतत्त्व (जीन) का जोड़ा नहीं पाया जाता। इस बात से स्त्रियों और पुरुषों के रक्त की अलग-अलग पहचान की जा सकती है। अपराध-निर्णय में यह चीज सहायक हो सकती है।

अन्य सिस्टम :

सन १९४५ के बाद मानव-रक्त के और भी कई वर्गों का पता लगा है। जैसे-ल्युथेरन, केल, लेविस, डफी, किड, लियरी जीआर और जोविस।

इस तरह अनेक प्रकार के रक्त-वर्गों के विभिन्न प्रकार के मिश्रण से प्रत्येक व्यक्ति का रक्त अपने आपमें अनोखा होता है। रक्त-ग्रुपों का अनेक जीनों द्वारा नियंत्रण होता है, जिसकी प्रक्रिया काफी जटिल है। आनुवंशिकीविद् इसकी व्याख्या करने में लगे हैं।

बीमारियां :

एचर्ड ने १९६५ में सर्वप्रथम यह सिद्ध किया

कि कुछ रोगों और रक्त-वर्गों में स्पष्ट संबंध है। आमाशय का कैंसर एबी वर्ग वालों को ज्यादा होता है, और ओ वर्ग वालों को बहुत कम। परंतु पेप्टिक अल्सर ओ वर्ग वालों को ज्यादा तथा एबी वर्ग वालों को बहुत कम होता है। फिर भी यह अभी तक अज्ञात है कि क्या रक्त के अनेक विकारों और अन्य रोगों का रक्त-वर्ग से कोई संबंध है।

अपराध-निर्णय :

एकरूप जुड़वा संतान (आइडेंटिकल ट्विन्स) को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति का रक्त अपने में विशिष्ट तथा खास प्रकार का होता है। इसलिए यदि अपराध-स्थल पर या उसके आस-पास अपराधी के रक्त की बूंदें गिर गयी हों, तो उसका रक्त-वर्ग पता लगाकर उसके जरिये अपराधी की शिनाख्त की जा सकती है। रक्त-वर्ग के विश्लेषण से ऐसे मामलों का भी निर्णय अदालतों में किया गया है कि असली बच्चा कौन है, बच्चे के असली माता-पिता कौन हैं, कहीं घटना-स्थल पर बकरे आदि का खून छिड़ककर डकैती का नकली मामला तो नहीं बनाया गया है, आदि।

नृतत्त्वशास्त्र में उपयोग :

किसी जन-समाज में विभिन्न रक्त-वर्गों के पारस्परिक अनुपात से विभिन्न मानव-जातियों एवं उपजातियों से उनका संबंध जाना जा सकता है।

हर्शफेल्ड ने इस प्रकार का जांच-कार्य १९१० में शुरू किया। मारैंट ने १९३० में पता लगाया कि ब्रिटेन में अंग्रेजी बोलने वालों और सेल्टिक बोलने वालों के रक्त-वर्ग में स्पष्ट अंतर है। सेल्टिकभाषियों में ओ वर्ग अधिक मिलता है, ए कम; अंग्रेजी-भाषियों में ए अधिक मिलता है, ओ कम। सेल्टिकभाषियों का रक्तवर्ग-अनुपात फ्रांस, स्पेन और उत्तर अफ्रीका के बास्क बोलने वालों से मिलता है। इस बात की पुष्टि पुरातत्त्व और मानव-शरीररचना की खोजों से भी होती है।

कौन-सी जाति किस स्थान से आकर, कब, कहां बस गयी—इसका निर्णय अनेक बार जनसंख्या में रक्त-वर्ग-अनुपात पर से हुआ है। उदाहरणार्थ, उत्तर-पश्चिम स्वीडन में बी वर्ग वालों का आधिक्य फिनलैंड से लोगों के वहां जाकर बसने के कारण संभव हुआ है; और दक्षिण-पश्चिम स्वीडन में दक्षिण अमरीका से आने वाले प्रवासियों के कारण।

शेष प्रश्न :

क्या जलवायु और वातावरण का प्रभाव रक्त-वर्ग पर होता है? विविध रक्त-वर्ग किन जीनों के द्वारा और कैसे बनते हैं? विभिन्न जातियों के रक्त-वर्ग में परस्पर कोई संबंध है या नहीं? अगर है, तो कैसा? इन सवालों का जवाब पूर्ण रूप से अभी नहीं दिया जा सकता। अभी व्यापक सर्वेक्षण करने होंगे तथा विभिन्न प्रकार के रक्तों की प्रयोगशाला में परीक्षा करनी होगी। तभी शायद कुछ ठीक बता पायें।

—बेला रोड, दरभंगा-८४६००४

* * *

डा. श्रीप्रसाद

नन्हे मुन्नों के लिए नन्ही कविताएं

नन्हा मुन्ना फुदकता हुआ आया और नाच-नाचकर गाने लगा :

घोड़े पर हो गये सवार
चले सैर को टिल्लू यार
मगर उन्हें कुछ रहा न ध्यान
कोड़ा मारा ऐसा तान
घोड़ा भागा सरपट चाल
बुरा हुआ टिल्लू का हाल
जैसे-जैसे कसी लगाम
वैसे-वैसे बिगड़ा काम
आगे जाकर आया खेत
जिसमें थी कुछ ज्यादा रेत
गिरे वहीं पर टिल्लू यार
कभी नहीं फिर हुए सवार ।।

टिल्लू यार गिर गये तो मुन्ने को दुःख होना चाहिये। लेकिन उसे खुशी हुई; क्योंकि वह जानता है कि टिल्लू यार सिर्फ काल्पनिक लड़का है।

टिल्लू घोड़े पर बैठता है, घोड़ा दौड़ता है। घोड़े के दौड़ने के साथ मुन्ने की कल्पना भी दौड़ती है। घोड़ा सरपट खेत के खेत पार करता चला जाता है। और वह सरपट इसलिए दौड़ रहा है कि नौसिखिये सवार टिल्लू ने उसे कोड़ा मार दिया है। अब भला घोड़ा कहां रुकने का !

अंत में वह टिल्लू को पटक देता है। पर घोड़े को इस बात का खयाल है कि टिल्लू छोटा बच्चा है, उसने अनजाने ही कोड़ा मारा है। इसलिए वह उसकी गलती नहीं मानता। फिर भी टिल्लू को सही बात सीखनी तो चाहिये। इसलिए वह उसे रेत-भरे खेत में पटक देता है। टिल्लू को कोई चोट नहीं लगती।

यही होना भी चाहिये था। यदि घोड़ा टिल्लू को कड़ी जमीन पर पटकता, तो टिल्लू को चोट लग जाती। यह चोट टिल्लू के साथ ही मुन्ने के दिल पर भी लगती और उसे मानसिक पीड़ा होती। वैसी स्थिति में मुन्ने को नाच-नाचकर गाने में किसी प्रकार का आनंद न आता।

शिशुगीत को अंग्रेजी में 'नर्सरी सॉन्ग' कहते हैं। इनकी रचना पालने के बच्चों से लेकर पांच-छह वर्ष तक के बच्चों के लिए उन्हीं की शब्दावली में होती है।

हमारे यहां जन्म से छह वर्ष तक की उम्र का बालक शिशु कहलाता है और उस उम्र के बच्चों के लिए ये गीत हैं। अतः शिशुगीत नाम सार्थक है। अंग्रेजी का 'नर्सरी सॉन्ग' शब्द यूरोप की पारिवारिक व्यवस्था की ओर संकेत करता है। वहां खाते-पीते परिवारों में बच्चों की परवरिश मुख्यतः आयाओं (नर्सों) की देखरेख में घर के एक खास कक्ष में होती थी, जिसे 'नर्सरी' कहते थे। आयाएं बच्चों को सुलाते समय कुछ मजेदार गीत गाती या गुनगुनाती रहती हैं। उसके आधार पर ऐसे गीत 'नर्सरी सॉन्ग' कहलाये।

शिशुगीतों की रचना में इस बात का सदा खयाल रखना पड़ता है कि इसके श्रोता छोटे बच्चे हैं, जो मीठे-मीठे शब्द सुनना चाहते हैं और बहुत आसान शब्दों की कविता चाहते हैं। कविता भी ऐसी कि जो उनके हंसी-खुशी-भरे जीवन की हो, पशु-पक्षियों, फूल-पत्तियों, पेड़-पौधों और चांद-तारों की हो, और ऐसी हो कि उन्हें हंसाये।

शिशुगीतों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है—स्वर-प्रधान और शब्द-प्रधान। स्वर-प्रधान शिशुगीत वे हैं, जिनमें स्वर या ध्वनियों का अधिक महत्त्व होता है और अर्थयुक्त शब्दों का कम से कम प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए यह गीत है:

चंदा मामा आरे आवऽ
बारे आवऽ
नदिया किनारे आवऽ
सोना के कटोरवा में
दूध-भात लेहले आवऽ
बचवा के मुंहवा में घुटुक......

ऐसे गीत माताओं या बड़ी-बूढ़ियों द्वारा बच्चों को—विशेष रूप से पालने के बच्चों को—खुश करने के लिए गाये जाते हैं। इसीलिए इन गीतों में स्वरों या धुन की प्रधानता रहती है। इससे भी पहले की अवस्था के गीत की कल्पना की जाये, तो वह मात्र स्वर या धुन होगी। जैसे—लला-ललाबी, लला-ललाबी (अंग्रेजी में), या ऊं ऊं ऊं, ऊं ऊं ऊं...... आदि।

शब्द-प्रधान शिशुगीत ढाई-तीन बरस से लेकर पांच-छह बरस की उम्र के बच्चों के लिए होते हैं। ये अनेक प्रकार के और अनेक स्तरों के हो सकते हैं, जैसा कि

विभिन्न उम्र के बच्चों को सिखाने के लिए होने चाहिये। इनके शब्द सार्थक होते हैं और कविता में एक भावपूर्ण वातावरण प्रस्तुत करते हैं। इस उम्र के बच्चों में तन्मयता और श्रवण-सामर्थ्य का दायरा भी छोटा-बड़ा होता है। इसी से ये गीत चार, छह, आठ और अधिक से अधिक बारह पंक्तियों के होते हैं। परंतु यह भाव-स्थिति पर निर्भर रहेगा। यानी तल्लीनता की दृष्टि से चार पंक्तियों के किसी गीत के बराबर कोई बारह पंक्तियों का गीत भी हो सकता है।

उम्र की सीमा भी कोई लक्ष्मण-रेखा नहीं है। एक शिशुगीत जो चार वर्ष के बालक को अच्छा लगता है, पांच या तीन बरस के बालक को भी अच्छा लग सकता है। इसके मूल में रुचि, संस्कार, बोध, प्रतिभा आदि कई कारण होते हैं। साधारणतया तीन बरस के बालकों को अच्छा लगने वाला एक शिशुगीत देखिये :

हरी मिर्च का किला बनाया,
धनिये का दरवाजा।
मिर्चे की झट तोप लगायी,
लड़े नकलची राजा।

छोटे बच्चे अधिक कल्पनाशील होते हैं। अपनी कल्पना के प्रभाव से ही वे असंगति में भी संगति खोज लेते हैं। उपर्युक्त गीत की संपूर्ण बनावट फंतासी जैसी या कल्पनाश्रित है। दूसरी विशेषता यह कि कविता की बनावट में अति परिचित पदार्थ या शब्द 'धनिया' और 'मिर्च' का व्यवहार किया गया है। इन शब्दों ने कविता में
कोटि की सरलता पैदा कर दी है।
को स्मृति का सहारा नहीं लेना पड़ता,
शब्दों को सहज भाव से पीता चला जाता

कहानियों और इधर-उधर सुनी
के आधार पर वह इस बात से भली
परिचित हो चुका है कि राजा लड़ाई
करते हैं। कविता को हृदयंगम
योग्य बनाने वाला यह दूसरा तथ्य
ऐसे में कविता अपनी संपूर्ण असंगतियों
बीच एक मनोरंजक सुसंगति बन जाती
यही उसकी सफलता है।

अब देखिये लगभग पांच-छह
बच्चों के शिशुगीत का एक नमूना :

सीटी देकर छुक-छुक करती
रेल चली जब दिल्ली से
टीटी चूहा झट जा पहुंचा
टिकट मांगने बिल्ली से।
लेकिन बिल्ली बिना टिकट थी
चूहे ने तब ली खिल्ली।
जुर्माना कर बोला–देखो,
ऐसी होती है बिल्ली।

इसमें विनोद-तत्त्व प्रमुख है।
यह है, शिशुगीत का मूल आधार
है। उनकी रचना बच्चों को ज्ञान,
या सीख देने के लिए नहीं, बल्कि
मनोरंजन के लिए होती है। (यह
बात है कि कोई चतुर गीतकार विनोद
चाशनी में नसीहत का चना भी मिला दे
उनमें ऐसी प्रसन्नता-भरी स्वप्न-जैसी
होनी चाहिये कि बच्चे उसमें डूब

दूसरी जरूरी बात यह कि वह गेय हो, बच्चे उसे आसानी से गा सकें। परंतु प्रत्येक शिशुगीत गेय हो, यह अनिवार्य नहीं। वह लयपूर्ण और नाटकीय भी हो सकता है, जिसे सुनते समय स्वरों का उतार-चढ़ाव स्पष्ट समझ में आये। जैसे :

मेरी जीजी आशा
लायी एक बताशा।
जभी बताशा फोड़ा
उसमें से निकला घोड़ा।
घोड़ा सरपट भागा
मैं भी चटपट जागा।
घोड़े को जा पकड़ा
मुंह लगाम से जकड़ा।
झटपट दौड़ लगायी
चढ़कर बीन बजायी।

पिछले दस वर्षों में हिंदी में अच्छे शिशुगीत काफी बड़ी संख्या में लिखे गये हैं। आवश्यकता है उनके सचित्र एवं सुंदर संस्करणों के प्रकाशन की। शिशुगीत अब बालकाव्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा बन चुके हैं और बच्चे उनके प्रति अधिक उत्सुक हो उठे हैं। अतः यह आवश्यक है कि घर-परिवार, समाज, सरकार शिशुगीतों को पोषण दें, ताकि बच्चे स्वस्थ वातावरण में उनका आनंद उठा सकें, उनसे लाभान्वित हो सकें।

जरा देखिये, अनुकूल वातावरण में इस गीत को सुनकर बच्चे कितने खुश होंगे और कितना हंसेंगे :

लड्डूमल, पेड़ा सरदार,
चले घूमने को बाजार।
बरफी रानी भी थीं साथ,
पकड़े थीं दोनों के हाथ।
मिले राह में खब्बूदास,
इन्हें देख हो गये उदास।
मुंह से लगी टपकने लार,
पर बेचारे थे लाचार।

हंसाने वाले ऐसे और भी अनेक शिशुगीत हिंदी में हैं। बच्चों तक ये अल्प मूल्य की पुस्तकों, पत्रिकाओं और रेडियो के जरिये पहुंचने चाहिये।

—के. ३४/५, चौखंबा, वाराणसी, उ. प्र.

* * *

बीबी की जिद थी कि पड़ोस की शादी में वे बिना सोने का हार पहने न जायेंगी। मजबूरन शौकत मियां को सराफ की दुकान में सेंध लगानी पड़ी और फिर दो साल के लिए बड़े घर की हवा भी खानी पड़ी। शौकत मियां जब घर लौटे, तो बीबी ने बताया कि पड़ोसी उन लोगों से मिलने में कतराते हैं। वजह पूछने पर बीबी ने बताया—"लोग कहते हैं कि हम मुजरिमों से मेलजोल नहीं रखना चाहते। शौकत मियां के पास हार के लिए पैसे नहीं थे तो चोरी करने की क्या जरूरत थी? हार उधार ले आते और फिर पैसे दबा लेते, जैसा हम सब लोग करते हैं।'

—डा. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

क्या यह अच्छा नहीं है कि बहुत-सी बातें हम इस कान से सुनकर उस कान से निकाल दें, बजाय इसके कि इस कान से सुनकर दिमाग में रोक लें और मुंह से बाहर निकालें।

* * *

हम देखते कैसे हैं

डा. धनवंत किशोर गुप्त

सामान्यतया यह कहा जाता है कि हम आंखों से देखते हैं। परंतु आंखें देखने की क्रिया का केवल एक छोटा-सा भाग संपादित करती हैं। देखने की क्रिया वस्तुतः अत्यंत जटिल है तथा अभी भी उसे भली भांति नहीं समझा जा सका है। नेत्रों के सामने रखी किसी वस्तु के रूप एवं आकार की पूर्णरूपेण अनुभूति होने को हम देखना कह सकते हैं। किसी वस्तु के रूप अथवा आकार की अनुभूति होने के लिए निम्नलिखित तीन प्रक्रियाएं आवश्यक हैं :

१. वस्तु के साथ प्रकाश की परस्पर क्रिया। किसी वस्तु को हम तब देख पाते हैं, जब या तो स्वयं वह वस्तु प्रकाश उत्सर्जित कर रही हो, जैसे सूर्य, तारे, मोमबत्ती की लौ, विद्युत-बल्ब इत्यादि करते हैं; अथवा वह वस्तु अपने ऊपर पड़ने वाले प्रकाश को हमारी आंखों की ओर परावर्तित कर दे, जैसे कि चंद्रमा सूर्य का प्रकाश हमारी ओर परावर्तित कर देता है और इसलिए हम उसे देख पाते हैं। बल्ब का प्रकाश पुस्तक के पृष्ठ से परावर्तित होकर लौटता है, इसलिए हमें पुस्तक दिखाई पड़ती है। अधिक प्रकाश परावर्तित करने वाली वस्तुएं चमकदार लगती हैं।

कुछ वस्तुएं किसी वर्ण-विशेष का प्रकाश अधिक परावर्तित करती हैं, इसलिए हमें वे उस रंग की दिखाई देती हैं। सफेद रंग के प्रकाश में से (जो कि वास्तव में सात रं का मिश्रण है) लाल फूल लाल रंग का प्रका अधिक परावर्तित करता है, जब कि उसकी पत्तियां हरा प्रकाश अधिक परावर्तित करती हैं। इसलिए वह फूल लाल तथा उसकी पत्तियां हरी दिखाई देती हैं।

२. आंखों पर पड़ने वाले प्रकाश को नेत्र-लेंस आंख के भीतर रेटीना अर्थात् दृष्टिपटल पर केंद्रित करता है, जिससे रेटीना पर वस्तु का प्रतिबिंब बन जाता है। इसके लिए हमें अपनी आंखों को समंजि करना अर्थात् फोकस करना पड़ता है। सामान्य विश्राम की अवस्था में आंखें दू की वस्तुएं देखने के अनुकूल स्थिति में होती हैं। निकट की वस्तुएं देखने के लि मांसपेशियां बल लगाकर नेत्रों को समंजि करती हैं।

कभी-कभी आप पुस्तक पढ़ते-पढ़ते कु सोच में डूब जाते हैं; तब पुस्तक के अक्ष धुंधले दिखाई पड़ने लगते हैं। इसका कार यह है कि जब आप पढ़ रहे थे, तब मां पेशियां नेत्रों को पुस्तक के पृष्ठ पर समंजि किये हुए थीं; परंतु जब विचारों में डूब ग तो नेत्रों की मांसपेशियां विश्राम की अवस्

में आ गयीं, जो कि दूर की वस्तुओं को देखने की स्थिति है; इसलिए निकट रखी पुस्तक के अक्षर आपको धुंधले लगने लगे।

हमारी आंखें बहुत कुछ कैमरे की भांति कार्य करती हैं। कैमरे में लेंस द्वारा वस्तु का प्रतिबिंब फिल्म पर बनता है; और नेत्रों में प्रतिबिंब रेटीना पर बनता है। आंखों की बनावट तथा कार्यविधि के विषय में अब बहुत कुछ ज्ञात है तथा चिकित्सक इस ज्ञान के आधार पर आंखों के अनेक दोषों को ठीक भी कर देता है।

३. आंखों से बने प्रतिबिंब की मस्तिष्क द्वारा व्याख्या देखने की क्रिया का अंतिम चरण है। किसी वस्तु की इंद्रियानुभूति में मस्तिष्क का योगदान सर्वाधिक होता है। मस्तिष्क की क्रियाएं अत्यंत जटिल हैं और उनके विषय में अभी हमारा ज्ञान अत्यंत कम है। शरीरक्रिया-विज्ञानी, मनोविज्ञानी तथा चिकित्सक वर्षों से इस विषय में अधिक ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

मनुष्य अपने पिछले अनुभवों से निरंतर कुछ न कुछ सीखता रहता है। किसी वस्तु को देखने पर मस्तिष्क में उसके विषय में जो अनुभूति होती है, वह हमारे पिछले अनुभवों से बहुत अधिक प्रभावित होती है। अलग-अलग परिस्थितियों में हम एक ही वस्तु को भिन्न रूपों में देखते हैं। इसका कारण भी हमारे पिछले अनुभव ही हैं।

मोमबत्ती के प्रकाश में नीला रंग काला दिखाई पड़ता है तथा फोटोग्राफर के डार्क रूम में लाल प्रकाश में लाल कागज तथा सफेद कागज में कोई अंतर नहीं प्रतीत होता—लाल कागज भी सफेद दिखाई पड़ता है। जिन वस्तुओं से कोई प्रकाश परावर्तित नहीं होता, उन्हें हम काला कहते हैं। मोमबत्ती का प्रकाश पीला होता है, जिसे नीली वस्तुएं अवशोषित कर लेती हैं। फलस्वरूप मोमबत्ती का प्रकाश नीली वस्तुओं द्वारा परावर्तित नहीं होता और अपने पहले के अनुभव के आधार पर हमें उनका रंग काला प्रतीत होता है।

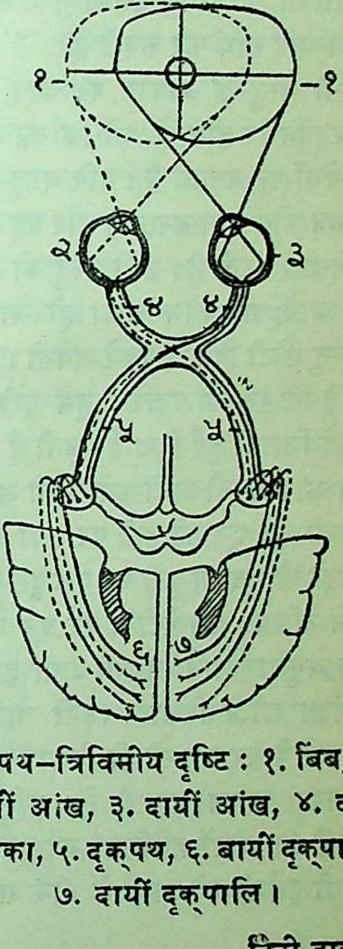

दृक्पथ–त्रिविमीय दृष्टि : १. बिब, २. बायीं आंख, ३. दायीं आंख, ४. दृक्तंत्रिका, ५. दृक्पथ, ६. बायीं दृक्पालि, ७. दायीं दृक्पालि।

इसी प्रकार हम उन वस्तुओं को 'सफेद रंग' की कहते हैं, जिन पर पड़ने वाले सभी रंगों के प्रकाश समान मात्रा में परावर्तित होते हैं। डार्क रूम में केवल लाल रंग का प्रकाश होता है। इस प्रकाश को लाल कागज भी उतना ही परावर्तित करता है जितना कि सफेद कागज। अत: यहां हमारा पुराना अनुभव लाल कागज के भी सफेद होने का भ्रम कराता है।

पिछला अनुभव किस प्रकार नये अनुभव को प्रभावित करता है, इसका एक सरल परीक्षण आप स्वयं कर सकते हैं।

किसी वस्तु के आकार का बोध उस कोण पर निर्भर होता है, जो कि वह वस्तु हमारे नेत्रों पर बनाती है। यदि वस्तु पास हो तो यह कोण बड़ा बनता है और वह वस्तु बड़ी दिखाई पड़ती है। उसी वस्तु को आप दूर ले जायें, तो कोण छोटा हो जायेगा और वस्तु छोटी दिखाई पड़ने लगेगी। यही कारण है कि रेल की पटरियां हमें दूरी पर आपस में मिलती हुई दिखाई पड़ती हैं।

अब आप अपनी दायीं हथेली को आंखों से लगभग एक फुट की दूरी पर तथा बायीं हथेली को दो फुट की दूरी पर एक दूसरे की बगल में रखिये। वैसे रेटीना पर बने प्रतिबिंब के अनुसार बायीं हथेली दायीं हथेली की अपेक्षा छोटी दिखाई पड़नी चाहिये, लेकिन हमें वे बराबर-सी ही दिखाई पड़ती हैं। इसका कारण यह है कि मस्तिष्क जानता है कि दोनों हथेलियां बराबर हैं। अब दायीं हथेली को बायीं के ठीक सामने ले आइये। देखिये बायीं हथेली छोटी दिखाई पड़ने लगी।

पुराणों के अनुसार शिवजी के तीन नेत्र हैं; कुछ राक्षसों के तो केवल एक नेत्र होता था। वास्तविक जगत में प्रत्येक मनुष्य की दो आंखें होती हैं। (कानों और अंधों की एक अथवा दोनों आंखें खराब होती हैं।) दो आंखें प्रकृति ने क्यों दी हैं? इसलिए कि किसी वस्तु को त्रिविमीय रूप में देखने के लिए दो आंखें आवश्यक हैं। जब कोई वस्तु दोनों आंखों में से प्रत्येक को थोड़ी भिन्न दिखाई पड़ती हैं, तो उसकी मिश्रित अनुभूति उस वस्तु के उभार का बोध कराती है।

सिनेमा में प्रत्येक वस्तु परदे पर चपटी दिखाई देती है; क्योंकि दोनों ही आंखों के रेटीना पर एक-सा प्रतिबिंब बनता है। इसके विपरीत वास्तविक जगत में हम वस्तुओं को दोनों आंखों से अलग-अलग देखते हैं। इसलिए दृश्य में गहराई दिखाई पड़ती है। आप प्रत्येक हाथ की तर्जनी उंगली को एक दूसरे के सामने रखिये और पहले एक आंख से तथा बाद में दोनों आंखों से देखते हुए उन्हें मिलाइये। अंतर स्पष्ट हो जायेगा।

व्यू-मास्टर की रीलों में प्रत्येक दृश्य के दो चित्र दो कैमरों से लिये जाते हैं। ये कैमरे नेत्रों के बीच की दूरी के बराबर दूरी पर रखे गये होते हैं। फिर इन चित्रों को देखने की व्यवस्था इस प्रकार की होती है कि एक आंख एक ही चित्र को देखती है। दोनों

[शेष पृष्ठ ८३ पर]

* जार्ज मीकेश *

हांगकांग में पहला दिन

मैं हांगकांग को रवाना हुआ। हवाई अड्डे की इमारत से बाहर निकलकर मैंने टैक्सी के लिए इधर-उधर नजर दौड़ायी। कोई टैक्सी दिखाई नहीं दी। तभी मैंने एक बहुत बड़ी कार को अपनी ओर आते हुए देखा। वह मेरे पास आकर रुक गयी। उसमें से एक चीनी आदमी निकलकर मेरे सामने आ खड़ा हुआ। उसने बहुत ही बढ़िया सूट पहन रखा था। उसने मुझसे पूछा–'आप कहां ठहरेंगे?'

'ग्लाउसेस्टर होटल', मैंने कहा।

'तो फिर आप टैक्सी ढूंढ़ने की तकलीफ न कीजिये। यह कार आपकी सेवा में खड़ी है।'

मैंने उससे पूछा–'क्या आप हवाई अड्डे के अधिकारी हैं?'

उसने सिर हिलाया और रहस्यमय ढंग से मुस्कराया।

तब मैंने पूछा–'क्या यह कार ग्लाउसेस्टर होटल की है?'

वह फिर उसी प्रकार मुस्कराया–'नहीं, यह मेरी अपनी कार है', उसने कहा–'यह आपकी सेवा में हाजिर है।'

उस समय मुझे एक पुरानी चीनी कहावत याद आयी–'आदमी बिना अनुभव के ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता।' सो मैं कार में बैठ गया। ज्यों ही कार चली, चीनी आदमी ने मुझसे पूछा–'क्या आप पहली बार हांगकांग पधारे हैं?'

'हां, पहली बार ही आया हूं।' मैंने कहा।

कुछ आगे जाने पर मैंने चीनी आदमी से कहा कि मैं अपने पैसों के बदले में हांगकांग के डालर लेना चाहता हूं। उसने अपने ड्राइवर को एक स्थान पर चलने को कहा और वहां मुझे अच्छी से अच्छी दर पर हांगकांग के डालर दिलवाये। हम फिर वापस कार में आकर बैठे।

मुझे अभी तक कुछ पता नहीं था कि यह आदमी कौन है, और क्यों मुझे अपनी कार में लिये जा रहा है। बातचीत के दौरान उसने मुझसे पूछा–'क्या आप भी कुछ सूट सिलवाना चाहते हैं, जैसे कि हांगकांग आने वाला हर आदमी सिलवाया करता है?' और उसने बताया कि वह खुद दर्जी है।

मैं जानता था कि हांगकांग में बढ़िया से बढ़िया

अंग्रेजी कपड़े बहुत सस्ते दामों में मिलते हैं। फिर शंघाई से आये सबसे बढ़िया दर्जी सूट इतना बढ़िया सीते हैं कि उनका जवाब नहीं। सबसे बढ़िया बात यह कि वे बहुत कम समय में सूट तैयार कर देते हैं। सुबह आठ बजे ग्राहक का माप लेकर जाते हैं, तो ग्यारह बजे पहली ट्रायल देते हैं, तीन बजे दूसरी ट्रायल, और शाम के पांच बजे सूट उसके हवाले कर देते हैं। मैं यह भी जानता था कि हांगकांग आने वाला हर आदमी–हां, हर एक आदमी–वहां से सूट सिलवाकर ले जाता है।

लेकिन मैं उन आदमियों में से नहीं हूं। सो, मैंने उस चीनी की बातों में ज्यादा दिलचस्पी नहीं दिखाई, हालांकि अब वह साफ शब्दों में कह रहा था–'मैंने आपको इस आशा से अपनी कार में बैठाया है कि आप मुझसे कुछ सूट सिलवाना पसंद करेंगे; क्योंकि आपने जिस किस्म का सूट पहन रखा है, उससे कहीं बढ़िया सूट मैं सी सकता हूं।'

इसके जवाब में मैंने एक चीनी कहावत दोहरायी–'आप किसी आदमी के कपड़े बदल सकते हैं; लेकिन उस आदमी को नहीं बदल सकते।' अंततः मैंने उससे कहा–'मैं इस बारे में सोचकर बताऊंगा।'

यह सब महज कौतूहल में हुआ।

वहां से मुझे किश्ती में बैठकर हांगकांग के द्वीप में पहुंचना था। उस चीनी ने जो पांच साल पहले शंघाई से शरणार्थी बनकर वहां आया था, मुझे किश्ती में बैठाया, अपना कार्ड दिया और अलविदा कहकर चला गया।

उसके चले जाने पर किश्ती में बैठे हुए एक और चीनी ने मुझसे पूछा–'क्या आपको किसी दर्जी की तलाश है? अगर हो तो मैं आपको एक बहुत बढ़िया दर्जी का पता बता सकता हूं।'

जब मैं हांगकांग की राजधानी विक्टोरिया में पहुंचा, तो मेरा सामान उठाने वाले कुली ने मुझे एक अच्छे दर्जी का पता बताने की तत्परता दिखायी। फिर होटल में लिफ्ट चलाने वाले ने और उसके बाद होटल के बैरे ने एक अच्छे दर्जी का पता बताना चाहा।

होटल के कमरे में एक जगह कुछ हिदायतें लिखी हुई दिखाई दीं। उनमें से एक यह थी–'परिचारिका को बुलाने के लिए एक बार घंटी बजाइये; बैरे को बुलाने के लिए दो बार; और दर्जी को बुलाने के लिए तीन बार।'

लेकिन मैंने देखा कि घंटी बजाने की जरूरत ही नहीं थी। बैरा बिना बुलाये ही आ गया और उसने पूछा–'क्या आपको किसी दर्जी की जरूरत है?'

मैंने नरमी से लेकिन दृढ़ता से 'नहीं' कहा, तो वह सिर झुकाकर चला गया।

पांच मिनिट के बाद दरवाजे पर दस्तक हुई। मैंने दरवाजा खोला तो सामने खड़े आदमी ने कहा–'मैं दर्जी हूं, क्या आप मुझसे सूट सिलवाना चाहेंगे?'

जवाब में मैंने एक चीनी कहावत दोह

रायी–'आदमी बीमारी का इलाज तो कर सकता है, लेकिन किस्मत का नहीं।' फिर मैंने कहा–'हां, मुझे दर्जी की वहुत सख्त जरूरत है।' और मैंने उसे उसी समय तीन सूट सीने का आर्डर दे दिया।

होटल में से निकलकर मैं शहर की सैर करने चल दिया और काफी देर तक कई इलाकों में घूमता रहा। अंततः जब होटल की ओर लौट चला, तो आधी रात से ज्यादा वक्त हो चुका था।

मैं एक अंधेरी-सी संकरी सड़क पर से गुजर रहा था कि मेरा पांव किसी चीज से टकराया और मैं गिरते-गिरते बचा।

मैंने ध्यान से देखा, तो वहां एक बूढ़ा आदमी सड़क पर सो रहा था। मैंने उससे माफी मांगी। तभी नींद में से उठते हुए वह बोल उठा–'क्या आपको किसी अच्छे दर्जी की जरूरत है?'

सुनकर मुझे बड़ा अजीब लगा। लेकिन मैं हंसा नहीं।

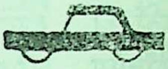

[पृष्ठ ८० का शेष]

चित्रों का संमिलित प्रभाव हमें गहराई की अनुभूति देता है। यदि व्यू-मास्टर में देखते समय आप एक आंख बंद कर लें, तो उसमें दिखने वाला दृश्य साधारण फोटो रह जायेगा।

कभी-कभी किसी साइन-बोर्ड के अक्षर, जिनमें प्रकाश तथा छाया का उचित चित्रण किया गया हो, उभरे हुए प्रतीत होते हैं। ऐसा क्यों होता है? हम अपने अनुभव के आधार पर जानते हैं कि वस्तुओं की छाया किस प्रकार पड़ती है। यदि छाया का चित्रण अत्यंत कुशलतापूर्वक हुआ हो, तो उसके द्वारा रेटीना पर बने प्रतिबिंब का अर्थ हमारा मस्तिष्क उभरे हुए अक्षरों के रूप में करता है।

आदमी की आंखों में ऐसे दोष होते हैं, जिनके कारण बाहर की वस्तुओं का प्रतिबिंब रेटीना पर नहीं बन पाता। यदि किसी प्रकार कृत्रिम उपकरणों की सहायता से बाह्य वस्तुओं का प्रतिबिंब सीधे मस्तिष्क को भेजा जा सके, तो अंधे भी देख सकेंगे।

आंख कैमरे की भांति होती है तथा रेटीना पर बना प्रतिबिंब ज्ञानतंतुओं की सहायता से विद्युत-संकेतों के रूप में मस्तिष्क तक पहुंचता है। टेलिविजन का कैमरा भी बहुत-कुछ इसी प्रकार कार्य करता है। इसके द्वारा बाह्य वस्तुओं का प्रतिबिंब विद्युत-संकेतों में बदल जाता है। अब तो विज्ञानी इस प्रकार की 'नकली आंख' बनाने की दिशा में प्रयोग कर रहे हैं, जो अंधों को भी देखने योग्य बना सकेगी? परंतु ये उपकरण अत्यंत महंगे होंगे, इसलिए तब भी हमारे गरीब देश में अंधों की संख्या बहुत अधिक रहेगी। इस समय दुनिया के समस्त अंधों में से एक तिहाई भारत में हैं।

–उपनिदेशक भौतिकी कक्ष,
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी-५

★

पशुप्रेमी अमरीकी

शैलेश दत्त

यों तो प्यार-दुलार के लिए घर पर जीव-जंतु सारे संसार में पाले जाते हैं। मगर अमरीका में यह शौक किस सीमा तक पहुंचा हुआ है और उससे कैसी रोचक और अरोचक समस्याएं उपजती हैं, इस विषय में अमरीकी समाचार साप्ताहिक 'टाइम' (२३ दिसंबर १९७४) ने सात पृष्ठों का एक सचित्र लेख छापा है। उसकी कतिपय दिलचस्प बातें यहां दी जा रही हैं :

* ६० प्रतिशत अमरीकी परिवारों में एक न एक जीव-जंतु पल रहा है। लगभग ५,००० किस्म के जीव-जंतु उस देश में पाले जा रहे हैं। इनमें कुत्ते, विल्लियां, विविध जातियों के पक्षी और कई किस्मों की मछलियां ही नहीं, कीड़े-मकोड़े, हिरन, घोड़े, ऊंट, हाथी, सांप, अजगर, भेड़िये, भालू, चीते, जग्वार और शेर तक हैं। इनमें से कई हानिकारक जीव घरों से छूटकर स्वतंत्र अवस्था में अपनी संतान बढ़ा रहे हैं। तरह-तरह के विषैले सांप, मगरमच्छ, नन्ही मगर खतरनाक पिरान्हा मछलियां व बगीचों को उजाड़ने में माहिर अर्जेंटाइनी मंक तोते इनमें से कुछ हैं।

* अमरीकी घरों में इस समय ३५ करोड़ मछलियां, २ करोड़ २० लाख पक्षी और ८० लाख घोड़े आश्रय पाये हुए हैं। उस देश में १ करोड़ कुत्ते-बिल्लियां प्रतिघंटा ३,००० के हिसाब से अपनी संतान बढ़ा रहे हैं, जब कि मानव-संतति वहां केवल ४१५ प्रतिघंटा के हिसाब से पैदा हो रही है।

* इन लाड़ले पशु-पक्षियों के लिए उनके पालनकर्ता सालाना १८ अरब ७५ करोड़ रुपये के खाद्य पदार्थ खरीदते हैं। शिशु-भोजनों पर वहां सालाना जितना खर्च किया जाता है, उससे यह छह गुना ज्यादा है और दुनिया की भूख-पीड़ित एक तिहाई आबादी को खिलाने के लिए पर्याप्त है। अमरीकी कृष-मंत्री श्री अर्ल बुत्ज़ ने यह बात कह दी कि अगर अमरीका अपने कुत्ते-बिल्लियों की आबादी ५० प्रतिशत कम कर दे तो विश्व के भूखे नर-नारियों को त्राण दे सकता है, इस पर पशुप्रेमियों ने बड़ा वावैला मचाया। वहां पशु-पक्षिओं के प्रिय भोजनों के निर्माता विज्ञापनबाजी पर प्रति वर्ष १२६।। करोड़ रुपये खर्च करते हैं!

* पशुप्रेम की भावना वहां इस कदर गहरी है कि पालतू पशुओं के प्रति क्रूरता की रोकथाम का कानून न्यूयार्क राज्य में १८६६ में ही बन गया, मगर इंसानी बच्चों के प्रति क्रूरता रोकने का कानून बनाने में और ४३ वर्ष लगे।

* शौकिया पाले जाने वाले कुत्ते, बिल्ली

व अन्य पशु-पक्षियों के लिए वहां ३० हजार डाक्टर, सर्जन और दंत-चिकित्सक हैं, जो दवा-दारू देने एवं नकली दांत लगाने से लेकर गर्भपात, वंध्याकरण तथा तरह-तरह के जटिल आपरेशन तक करते हैं। हाल में एक घरेलू बोआ सांप का ग्लाकोमा का आपरेशन वहां हुआ। कुत्ते-बिल्लियों के मानस-चिकित्सक भी वहां हैं।

* अमरीकी शहरों-कस्बों की सड़कों पर व बाग-बगीचों में कुत्ते प्रतिदिन ४० लाख टन मल और ४ करोड़ २० लाख क्वार्ट मूत्र विसर्जित करते हैं, जिसकी सफाई बहुत खर्चीली पड़ती है। इसके अलावा इनसे मनुष्यों में १०० किस्म के रोग फैलते हैं। न्यूयार्क नगर-निगम ने तो बगीचों में कुत्तों के लिए विशेष शौचालय भी बनवाये, मगर कुत्ते खुली जगह का आनंद उठाना छोड़ने को तैयार नहीं हुए।

* अमरीकी कांजी-हाउस लावारिस कुत्ते-बिल्ली आदि का खात्मा कराने में ७५ करोड़ रुपये सालाना खर्च करते हैं।

* अपने पालतू पशु या पक्षी के कारण पति-पत्नी में ईर्ष्या-द्वेष होकर तलाक की नौबत आना वहां आश्चर्य की बात नहीं।

* अपने पालतू पशु-पक्षी के लिए अनेक धनी अमरीकी बड़ी-बड़ी रकमें विरासत में छोड़ जाते हैं। एक तेल कंपनी की मालकिन एलीनर रिचली १०।। करोड़ की रकम और १८० एकड़ की जमीन व कोठी अपने ६५ कुत्तों के लिए छोड़ गयी।

तुमने बड़ी कृपा की भाई

तुमने बड़ी कृपा की भाई
मरुथल को नावें दे डालीं
तालाबों को ऊंट दे दिये।
हम अकाल को
आंगन का त्योहार समझकर
खुशी मनाते ... ढोल बजाते
पिचके चेहरों की तस्वीरें
अखबारों के मुखपृष्ठों पर
विज्ञापित करते, छपवाते
तुमने बड़ी कृपा की भाई
प्यासों को खाली लोटे
और तृप्त कंठ को घूंट दे दिये!
बाढ़ आ गयी
हमने ढहते हुए मकानों से
तुमको आवाजें दीं
तुमने उड़कर आसमान से
हमें दिलासा दिया
और झटपट सेना भेजी
सचमुच बड़ी कृपा की भाई
जल से घिरे हुए लोगों को
तुमने 'पैराशूट' दे दिये!

—कुमार शिव

४४, सराय कायस्थान, कोटा-६

* * *

दो प्रमाणपत्र संचार-विभाग को

बालकवि बैरागी

पूरे मनोबल और अपार धैर्य से मैं एक-एक तर्क को काट रहा था। मेरे उत्तर सधे हुए और सौम्य थे। बहस की शालीनता का मैं पूरा निर्वाह कर रहा था। दूसरे दर्जे के स्लीपर कोच में मैं एक कवि-संमेलनीय यात्रा के दौरान उन सभी सहयात्रियों से घिरा बैठा था, जिन्हें मेरे नाम, मेरे लेखन और मेरे जीवन में प्रशंसापूर्ण रुचि थी।

बहस तब शुरू हुई, जब मेरी खादी और मेरे 'कांग्रेस-कर्म' पर कुछ प्रश्न उठा दिये गये। चलते-चलाते बात 'समाजवाद' पर आ गयी। तब 'राष्ट्रीयकरण' जैसा मुद्दा बहस का केंद्र हो गया। फिर सहज ही बात 'वितरण' तक पहुंची। जब वितरण जैसी अहम व्यवस्था पर तर्क शुरू हुए, तो बहस को 'खाद्य' जैसी समस्या पर आना ही पड़ा। न जाने कैसे मेरे मुंह पर एक वाक्य आया—'वितरण और खास तौर पर खाद्य-वितरण जैसे सवालों पर आज का नेतृत्व शायद बहुत गंभीरता से कुछ ......'

और वाक्य पूरा होने से पहले ही पूरी बहस में बिलकुल खामोश एवं तटस्थ बैठी रहने वाली एक प्रौढ़ महिला तमककर मेरे सामने खड़ी हो गयीं। सारा वातावरण सन्नाटे से पुत गया। दूसरे भी कई यात्री उस खांचे में आ गये। उस महिला का सीधा निशाना मैं था। बोली—'ऐ नेताजी! देश को अनाज और खाना-दाना बांटना तो तुम्हारे बाप-दादों के भी बस के बाहर है। और कुछ नहीं तुम तो यह डाक ही समय पर बंटवा दो। बड़ा "वितरण-वितरण" मचा रखा है। ये देखो ......' और उसने अपने पर्स में से कई तार, चिट्ठियां, इनलैंड पत्र, पोस्टकार्ड और लिफाफे फर्श पर फेंक दिये।

मुसाफिरों ने उन बिखरे पत्रों को बटोरना शुरू किया। तब तक उसका पारा आसमान में चढ़ गया था। बिफरकर बोली—'डाक-चिट्ठी का सौ फीसदी राष्ट्रीयकरण है। यह तार देखो एक्सप्रेस है, बीस दिन में मिला। यह कार्ड घूम-फिरकर पंद्रह मील एक हफ्ते में पहुंचा। यह जवाबी तार की रसीद संभालो—आज तक यह तार उतरा ही नहीं। तुम्हें पता है, ये सब मेरे दामाद की मौत के समाचार वाली डाक थी। मैं वक्त पर अपनी बेटी के आंसू पोंछने भी नहीं जा सकी।'

मैंने खुद को अपराधी महसूस करते हुए उससे निवेदन किया—'दीदी! इस बार की दिल्ली-यात्रा में मैं संचार-मंत्रीजी से बात करूंगा।' मेरे इस आश्वासन पर वह बिजली की तरह टूट पड़ी। पूरी कड़वाहट मुंह पर लाकर, करीब-करीब मेरे मुंह पर थूकती हुई, घोर घृणा के साथ बोली—

'छंछार-मंत्रीजी छे वतन कलंगा, लफ्फाज! हिश्त।'

मेरे चेहरे की चौखट पर यह 'प्रमाण-पत्र' जैसा का तैसा लटक रहा है। भगवान जाने, कौन इस प्रमाण-पत्र को नीचे उतारेगा!

—मनासा, म. प्र.

०००

बंबई शहर में गोरेगांव उपनगर से फास्ट लोकल ट्रेन पकड़ें, तो ग्रांटरोड पहुंचने में सिर्फ ३५ मिनिट लगते हैं। मगर गोरेगांव से डाक में छोड़े गये एक पोस्टकार्ड ने ग्रांटरोड पहुंचने में ११॥ वर्ष लगाये, जिससे एक आदमी के सुखी दांपत्य की आशा पर पानी फिर गया।

यह आदमी अब ३४ वर्ष का है। १६ दिसंबर १९७४ को उसे एक पोस्टकार्ड मिला, जो उसकी संभावित वाग्दत्ता ने १३ जून १९६३ को लिखा था। यही नहीं, डाक-विभाग ने उसे वह पोस्टकार्ड देने के लिए २० पैसे भी वसूल किये।

लगभग बारह साल पहले इस आदमी की मुलाकात एक प्लेबैक-गायिका से हुई। दोनों में प्रेम हो गया। अक्सर उनमें मुलाकातें होती रहीं। फिर उस आदमी ने विवाह का प्रस्ताव करते हुए एक पोस्टकार्ड उस लड़की को लिखा।

मगर लड़की से उसे कोई उत्तर नहीं मिला। उसने सोचा कि शायद लड़की के माता-पिता इस प्रस्ताव के विरुद्ध हैं और वह लड़की से फिर नहीं मिला। लड़की ने भी उग्र प्रतिस्पर्धा के कारण प्लेबैक-गायिका बनने का इरादा छोड़ दिया।

मगर कल्पना कीजिये, सोमवार १६ दिसंबर १९७४ को लड़की का पोस्टकार्ड पाकर उस आदमी को कैसा जबर्दस्त धक्का लगा होगा! पोस्टकार्ड में लिखा था कि तुम्हारा पत्र मिल गया है। मगर मेरे माता-पिता से तुम्हारे यह कहने के बजाय कि वे मुझे लेकर लैमिंग्टन रोड पर तुम्हारे दफ्तर में आयें, यदि तुम्हारे माता-पिता गोरेगांव में हमारे घर आकर बाकायदा यह प्रस्ताव रखें तो अच्छा रहेगा।

अपने पोस्टकार्ड का कोई उत्तर न पाकर लड़की ने सोचा कि लड़के को उसमें दिलचस्पी नहीं रही है और उसने किसी दूसरे से विवाह कर लिया। अब वह कई बच्चों की मां है।

पोस्टकार्ड पर गोरेगांव डाकखाने की १५ जून १९६३ की मुहर है और गिरगांव डाकघर की १६ दिसंबर १९७४ की मुहर भी उस पर पड़ी है। कार्ड पर पता काफी स्पष्ट लिखा हुआ है।

वह आदमी अभी कुआंरा ही है। डाक-विभाग की 'कार्यदक्षता' की कृपा से सुखी दांपत्य का अवसर उसके हाथ से जाता रहा।

[**'इंडियन एक्सप्रेस' से**]

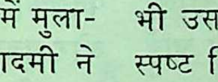

सुझाव

तीन धर्मोपदेशक थे – एक कैथलिक पादरी, दूसरा प्रोटेस्टेंट पादरी और तीसरा यहूदी रब्बी।

एक बार उन तीनों ने मिलकर परोपकार का कोई साझा सत्कार्य करने की योजना बनायी। इसके लिए पैसा चाहिये था। उन्होंने फैसला किया कि तीनों अपने-अपने धर्म के अनुयायियों को किसी दिन एक जगह एकत्र करें और उनसे दान मांगें।

एक इतवार को तीनों के बुलावे पर उनके अनुयायी काफी बड़ी संख्या में नियत स्थान पर जमा हुए।

कैथलिक पादरी ने उनके सामने अपना साझा उद्देश्य रखा। फिर दान देने की अपील करते हुए कहा–'ईश्वर की जेब खाली है, जबकि आप लोगों की जेबें भरी हुई हैं। ईश्वर को पैसे चाहिये। आखिर आप लोगों को ही उसके नाम पर अपनी जेबें खाली करनी होंगी। जिस हद तक भी आप चाहें खाली कीजिये। इसके बदले में ईश्वर अपने पवित्र चरणों में आपको स्थान देगा।......'

कैथलिक संप्रदाय का एक धनवान श्रोता पादरी की बातों से बहुत प्रभावित हुआ और उसने उठकर कहा–'सबसे पहले मैं यह सौभाग्य प्राप्त करना चाहता हूं। लेकिन यह कैसे पता लगे कि ईश्वर को कितने पैसों की जरूरत है? और हम किस हद तक अपनी जेबें खाली करें?......इस सिलसिले में मैं एक सुझाव पेश करना चाहता हूं–खासकर अपने बारे में।'

'क्या?' तीनों धर्मोपदेशकों ने दिलचस्पी से पूछा।

'मैं एक सीधी रेखा खींचकर उसके एक ओर खड़ा हो जाऊंगा, और अपनी जेबों से नोट निकालकर ऊपर उछालूंगा। जो नोट रेखा के दूसरी ओर चले जायें वे ईश्वर के होंगे, और जो इसी ओर रह जायें, जिस ओर कि मैं खड़ा हूंगा वे मेरे होंगे। इस प्रकार ईश्वर को जितने पैसे लेने होंगे, उतने के नोट वह रेखा के दूसरी ओर उड़ाकर गिरा देगा।'

'यह तो बहुत बढ़िया सुझाव है।' कैथलिक पादरी बोला, और अन्य दोनों धर्मोपदेशकों की राय जानने के लिए वह उनकी ओर मुड़ा।

तभी श्रोताओं में से एक और आदमी उठा, जो प्रोटेस्टेंट संप्रदाय का था। उसने कहा–'मैं भी एक सुझाव पेश करना चाहता हूं, जो पहले सुझाव से कहीं ज्यादा अच्छा साबित होगा।'

'वह क्या?' धर्मोपदेशकों के साथ ही साथ श्रोता भी बोल पड़े।

'सीधी रेखा के बजाय मैं एक दायरा खींचूंगा और उसके बीच में खड़ा होकर अपनी जेबों से नोट निकालकर ऊपर उछालूंगा। जो नोट दायरे के बाहर चले जायें वे ईश्वर के होंगे, जो दायरे में रह जायें वे मेरे। इस प्रकार ईश्वर के लिए नोट एक ही दिशा में नहीं, बल्कि चारों दिशाओं में जायेंगे। हवा का रुख चाहे किसी भी ओर क्यों न हो, कुछ नोट दायरे के बाहर अवश्य ही जायेंगे।'

'वहुत खूब!' प्रोटेस्टेंट पादरी ने उसकी बुद्धिमत्ता और ईमानदारी की सराहना की और इस बात पर गर्व महसूस किया कि सुझाव देने वाला आदमी उसके संप्रदाय का अनुयायी है। उसने शेष दोनों धर्मोपदेशकों की ओर मुड़कर पूछा—'क्यों साहवान, क्या खयाल है आप लोगों का?'

मगर इसके पहले कि वे दोनों कुछ कहें, श्रोताओं में से एक तीसरे व्यक्ति ने उठकर ऊंची आवाज में कहा—'इसमें धोखा है।'

यह आदमी यहूदी था। सबकी नजरें उस पर टिक गयीं।

'इसमें धोखा है', उसने दोहराया—'सीधी रेखा की तरह दायरा खींचने पर भी मुमकिन है ईश्वर को कुछ भी न मिले। दायरा इतना वड़ा भी तो खींचा जा सकता है कि एक भी नोट उसके बाहर न जा सके।'

'तो फिर?' वहुत-सी आवाजें गूंजीं। रब्बी ने दिलचस्पी से उसकी ओर देखा।

लोगों की उत्सुकता बढ़ाने के लिए यहूदी कुछ क्षण चुप रहा। फिर बोला—'इसलिए मैं एक सुझाव पेश करता हूं, जिसमें धोखे की कोई संभावना नहीं रहेगी।'

लोग उत्सुकता से उसका मुंह ताकने लगे। उसने कहा – 'मैं सीधी रेखा या दायरा खींचकर कोई सीमा नहीं बांधना चाहता; क्योंकि ईश्वर सभी सीमाओं से परे है। सो मैं किसी खुली जगह पर खड़ा होकर अपनी जेबों से नोट निकालूंगा और ऊपर उछालूंगा। स्वर्ग में बैठे ईश्वर को उनमें से जितने नोटों की जरूरत होगी, वे ऊपर उसके पास चले जायेंगे। वाकी नोट मेरे लिए नीचे गिर पड़ेंगे।'

सब लोगों ने खुश होकर तालियों से इस सुझाव का स्वागत किया और तीनों धर्मोपदेशकों को इस पर अमल करने को कहा।

★

नाई अपनी बुद्धिमानी के लिए छत्तीसा (प्रखर बुद्धि वाला) कहे जाते हैं। एक बार एक नाई अपने यजमान की लड़की के लिए वर की खोज में एक सेठ के यहां पहुंचा। सेठ ने उसे भोजन तो कराया, किंतु दूध पीने को नहीं दिया। वहीं एक हंडे में दूध रखा था। नाई दूध पीना चाहता था। उसने सेठ से कहा—'आज रास्ते में मुझे इतना बड़ा सांप मिला, जो उस दूध के हंडे तक लंबा होगा।'

सेठजी ने उसका संकेत समझकर उसे एक गिलास दूध मंगवाकर दिया। नाई ने कहा—'सेठजी, भला इसकी क्या जरूरत थी।' और उसने गिलास थाम लिया। —मे. गु.

★

पोप का गधा

अलफांसो दोदे

हमारे ग्रामीण अंचलों में कृषकों की भाषा में बात-बात पर आकर्षक मुहावरों और कहावतों का प्रयोग होता है। एक बार एक ऐसी ही कहावत ने मुझे उलझन में डाल दिया। गांव के किसान किसी ऊपर से सीधे-सादे लेकिन भीतर से दुष्ट आदमी के विषय में प्रायः कहते हैं–'भाई, उससे दस हाथ दूर रहना। पोप के गधे की तरह वह सात साल बाद भी बदला चुका लेगा।' कहावत ने एक रहस्यमय चित्र उभार दिया। कौन थे ये पोप? और कैसा था उनका गधा? मैं बड़ों-बूढ़ों से मिलता भटकता रहा और अंततः कहावत की तह तक पहुंच ही गया।

पोप की प्रभुता के युगों में जिन्होंने अविन्यान शहर नहीं देखा, समझिये जिंदगी में कुछ नहीं देखा। शान-शौकत, जिंदादिली, उत्साह और त्योहारों के मामले में अविन्यान का मुकाबला नहीं था। अलस सवेरे से गयी रात तक जुलूस निकलते रहते, यात्रियों से शहर भरा रहता, गलियों में पांवड़े बिछे होते, फूलों से शहर महकता रहता, पादरियों और कार्डिनलों की अपनी पताकाएं आकाश में फहराती रहतीं और पोप के निजी सैनिक लैटिन में गीत गाते रहते। गलियों-गलियारों, चौराहों और बाजारों में ठंसे लोगों की आवाजें शहद के छत्ते का भ्रम पैदा करतीं। कस्बे के जुलाहे, माली, दुकानदार, वादक और सुनार–सब काम में जुटे रहते। गिरजे की घंटियों की आवाजें दिशाओं को संगीत से भरती रहतीं। रोन नदी की धारा को छूकर शाम को जब ठंडी हवा चलती, तो लोग मस्ती से शराब पीते और नाचते। न गम था, न भूख थी और न युद्ध थे। सर्वत्र सुख-शांति थी।

पोप बोनीफेस के जमाने की बात है। ये पोप अत्यंत उदार एवं सबके लिए पितृवत् थे। जब मरे तो सारा शहर आंसुओं के सैलाब में डूब गया। उनकी आंखों से पवित्रता झरती थी और ओंठों से शांति। अविन्यान से थोड़ी ही दूरी पर उनका अपना मीठे अंगूरों का बगीचा था। हर रविवार को पोप इस बगीचे में आते, अपने गधे को लेकर रेशमी धूप में बैठते और अपने साथी कार्डिनलों और अनुचरों को अपने अंगूरों की शराब पिलाते। हीरे-सी चमकीली वह मधुर शराब अध्यात्म की गहराइयों तक पहुंचा देती थी। शाम को वादकों के वाद्यों से निकलती स्वरलहरी पर नाचता-झूमता गधा पोप को वापस अविन्यान के प्रासाद में ले आता। लोग उनकी शानदार सवारी देखने छज्जों और चौबारों पर उमड़

* अनुवाद : विष्णु निवसरकर *

पड़ते और आनंदविभोर होकर कहते—'आह! हमारे पावन धर्मपिता!'

अपने अंगूरों के बगीचे के बाद पोप को प्यार था अपने गधे से। हर शाम को वे गधे को देखने अस्तबल में जाते और एक बड़े सकोरे में शराब में भीगा दाना अपने हाथ से उसे देते। कई बार तो लोग पोप का मजाक भी करते। लेकिन स्वयं पोप ने इस बात की कभी परवाह न की। गधा था भी इसी काबिल।

वास्तव में वह आबनूसी काले रंग का शानदार खच्चर था। उसकी खाल में एक चमक थी, पीठ चौड़ी थी और गले में फीतों में पिरोयी घंटियां बजती थीं। कान सचेत रहते थे और आंखें मासूम और पानीदार थीं।...... सारा अविन्यान उसकी इज्जत करता था। इज्जत इसलिए कि एक तो वह पोप का गधा था, और फिर उसने कई लोगों की किस्मत के दरवाजे खोल दिये थे। इसी गधे के कारण तो आवारा तिस्ता वेदां जर्रे से आफताब बन गया था।

तिस्ता वेदां दर-दर की ठोकरें खाने वाला एक आवारा था। उसकी आवारागर्दी से तंग आकर उसके बाप ने उसे घर से निकाल दिया था। बाप सुनार था। आवारा बेटा किसी और घर में भले ही खप जाये, मगर सुनार के घर कैसे खप सकता है? तिस्ता गली-कूचों में ठोकरें खाने लगा और एक दिन अविन्यान में पोप के राजमहल के सामने आया। उसका दिमाग तो शैतान का कारखाना था ही, उसे एक कल्पना सूझी।

एक दिन जब पावन पोप बोनीफेस किले के बुर्जों के नीचे वाले मार्ग से अपने खच्चर पर बैठे गुजर रहे थे, तो तिस्ता हाथ जोड़े अबोध बालक की भांति सामने आया और

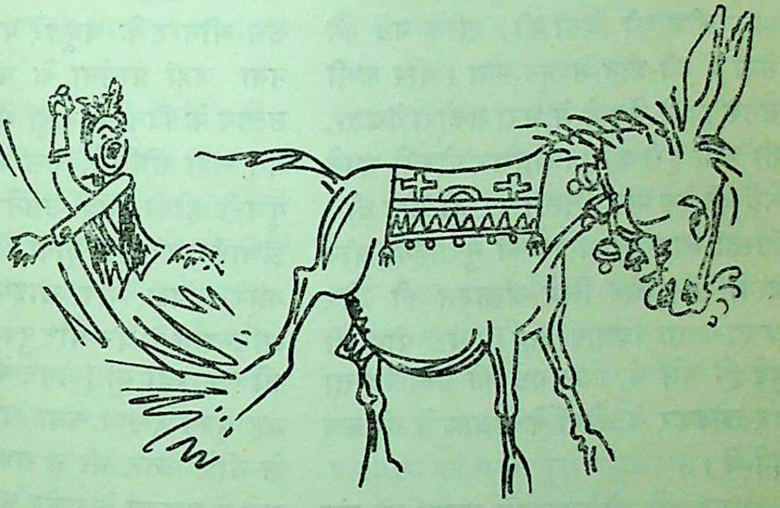

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

भर्राये गले से बोला—'ओह, परम पावन पिता! जरा सुनिये। मुझे अपनी सवारी का जानवर देखने दीजिये! ऐसा भोला, शानदार और स्वामिभक्त जानवर तो जर्मनी के सम्राट् तक के पास न होगा।' तिस्ता ने फिर अत्यंत भावुकता से खच्चर के चेहरे, गले और पांवों पर हाथ फिराया।

पोप ने देखा, तिस्ता की आंखों में असीम स्नेह और श्रद्धा के आंसू हैं। उन्होंने अभिभूत होकर सोचा—कैसा भोला-भाला युवक है, मेरे वाहन के प्रति भी इतनी श्रद्धा! परिणाम? दूसरे ही दिन तिस्ता के फटे कपड़ों का स्थान जरी की जाकिट ने लिया और उसे पोप के निजी आवास में आने-जाने की अनुमति मिल गयी। अब तक पोप के निजी महल में केवल सामंतों के बेटों या कार्डिनलों की ही पहुंच थी।

महल में पहुंचने पर तिस्ता ने न तो पूजा-पाठ की ओर ध्यान दिया, न किसी अन्य चीज की चिंता की; बल्कि गधे की सेवा में जी-जान से जुट गया। पोप कभी उसके हाथों में दाने से भरा सकोरा देखता, तो कभी हरी घास। आखिर पोप ने अपने गधे की देखभाल तिस्ता पर ही छोड़ दी। तिस्ता शाम को शराब की सुराहियां और दानों के सकोरे लिये अस्तबल की ओर आता-जाता दिखाई देता। इधर पोप भी बूढ़े हो चले थे, फिर गधे की सेवा तिस्ता पर छोड़कर वे लोगों के मजाक से भी बच गये थे।

मगर गधे को शाम को शराब की गंध मात्र मिलती थी। भुने दानों की भी सोंधी महक ही उस तक पहुंच पाती थी। शराब सकोरे में ढलकर उसके पास आने के बजाय छोटे प्यालों में से होती हुई तिस्ता और उसके आवारागर्द साथियों के हलक में उतरती थी। अभागा गधा गुलाबी शराब को दूर से देखता और सूंघता रहता था। इतना ही नहीं, जी-भर शराब पी लेने के बाद वे शैतान उसके कान उमेठते, दुम खींचते और पीठ पर चढ़ भी जाते। यों गधा चाहता तो अपनी एक ही दुलत्ती में उन्हें ध्रुवप्रदेश पहुंचा सकता था; लेकिन पोप का गधा ठहरा! क्षमा, संयम और अहिंसा में उसकी भी आस्था थी। नतीजा यह कि तिस्ता की क्रूरता और दुःसाहस बढ़ते गये।

एक रोज उसने गधे को किले के सबसे ऊंचे बुर्ज पर स्थित मीनार पर ले जाने की ठानी। घंटों तक बेचारे गधे को बुर्ज की ऊंचाइयों तक भटकाया गया, फिर उस मीनार के चबूतरे पर खड़ा कर दिया गया, जहां प्रार्थना के घंटे बजते थे और उत्सव के दिनों में जहां से पोप उपदेश देते थे। जरा सोचिये, उस भोले गधे पर क्या गुजरी होगी, जब उसने अपने को इतनी ऊंचाई पर पाया होगा! नीचे हजारों फुट गहरे खंदक और खाइयां थीं, फिर दूर अविन्यान के घर और दुकानें रंगीन बिंदुओं-सी लग रही थीं। नगर के हजारों लोगों ने यह दृश्य देखा। गधा चक्करदार सीढ़ियों से नीचे उतर भी न सकता था। भयातुर गधे ने प्रवचन के सफेद चबूतरे की चमक दे

चौंधियाती अपनी आंखें बंद कर लीं और रेंकना आरंभ किया। राजमहल की खिड़कियों के शीशे चटखने लगे।

पोप ने जब अपने गधे की करुण चीखें सुनीं, तो तुरंत भागते-भागते बाहर आये। चिल्लाये—'मेरे गधे को क्या हुआ? कौन उसे मार रहा है?'

तिस्ता पहले ही आंगन में हाजिर था। उसने रोना और अपने ही बाल नोचना शुरू किया। बोला—'हे पावन पिता, अब हमारा क्या होगा? आपका गधा मीनार पर घंटाघर के चबूतरे पर पहुंच गया—कैसा असगुन है?'

'अकेला पहुंच गया?'

'हां, परम पिता! देखिये न, प्रवचन की वेदी पर वह काले धब्बे-सा खड़ा है।'

गधे को भय तो लग ही रहा था, साथ ही उसके मन में भयानक क्रोध था। उसने सोचा, अगर बचकर नीचे पहुंचा तो इस शैतान को इसकी करनी का मजा चखाकर रहूंगा।

मामला गंभीर था। पोप चिंतित थे। आखिर तिस्ता और उसके साथी जान पर खेल गये। बड़ी-बड़ी रस्सियों, शहतीरों और तख्तों के सहारे बांधकर गधे को नीचे उतारा जा रहा था। हवा में गधे के पांव ऐसे हिल रहे थे कि नीचे से देखने वालों को लगा कि कोई कीड़ा मृत्यु-वेदना से छटपटा रहा है। घाटियों और खाइयों में लटके गधे के होश फाख्ता हो गये। किसी तरह उसे उतारकर मालिक के पास पहुंचाया गया। पोप गद्गद हो उठे। जब पोप के अस्तबल में उनके वाहन के पुनरागमन का उल्लास उमड़ रहा था, ठीक उसी समय तिस्ता शाही नाव से रोन नदी पार कर रहा था।

हर साल पोप की नगरी से युवकों का एक दल नेपल्स के दरबार में कूटनीति तथा दरबारी रस्म व रिवाज सीखने के लिए भेजा जाता था। स्वयं महारानी जेन इन युवकों की अभिभाविका होती थीं। तिस्ता का नेपल्स के दरबार में कदम रखना यों तो सपने की बात थी; लेकिन तिस्ता पोप के गधे की खातिर जान पर खेला था और पोप उसे पारितोषिक देने पर आमादा थे। परम पावन पिता की कृपा से क्या संभव नहीं है! ......लेकिन गधा उदासा था, उसने मन ही मन कहा—'लौटने दो, देखूंगा!'

गधे के पुराने सुख के दिन तो लौट आये थे, किंतु आत्मशांति समाप्त हो गयी थी। जब वह बाजारों में से गुजरता, तो बच्चे हंसते और बड़े-बुजुर्ग उस पुरानी घटना को याद करते। शायद पोप को भी अपने गधे पर अब उतना विश्वास न रहा था। रविवार की रात को अंगूरों के बगीचे से खुमारी में लौटते समय वे सोचते कि कहीं ऐसा न हो कि मैं सुबह घंटाघर के मीनार के चबूतरे पर जागूं।

लगभग सात साल बीत गये। तिस्ता नेपल्स के दरबार से लौटा। अभी उसके प्रशिक्षण का समय पूरा न हुआ था; लेकिन उसने नेपल्स में सुना कि पोप के प्रधान

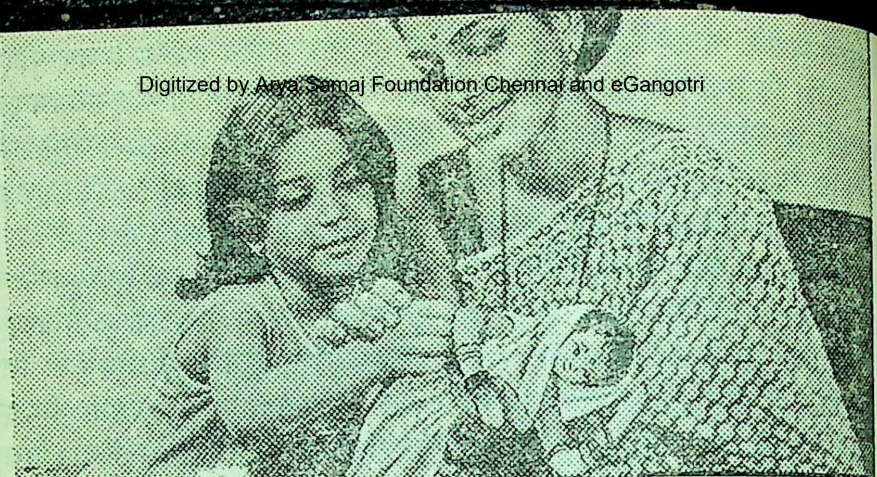

उसे फ़ोरहॅन्स की आदत भी सिखाइए

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने
और मसूढ़ों की मालिश करने से
मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

दाँतों के डाक्टर की राय में मसूढ़ों को मजबूत और स्वस्थ रखने का सर्वोत्तम उपाय है उनकी नियमित मालिश...और दाँतों को सड़ने से बचाने का सबसे बढ़िया तरीक़ा है दाँतों को हर रात और सवेरे व हर भोजन के बाद नियमित रूप से ब्रश करना ताकि सड़न पैदा करनेवाले सभी अन्न कण दाँतों में फँसे न रहें।

अपने बच्चे को दाँतों के डाक्टर द्वारा ख़ास तौर से बनाए गये फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से नियमित रूप से दाँतों को ब्रश करना और फ़ोरहॅन्स डबल एक्शन जूनियर टूथब्रश से मसूढ़ों की मालिश करना सिखाइए।

फ़ोरहॅन्स से दाँतों की देख-भाल सीखने में देर क्या, सबेर क्या

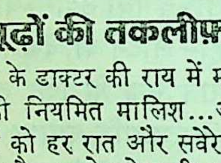

फ़ोरहॅन्स
दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका* मुफ़्त प्राप्त करने के लिए २५ पैसे के टिकट (डाक-ख़र्च के लिए) इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए : मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-४०० ००१

नाम.......................................उम्र· 06

पता.......................................

*कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए : हिन्दी, अंग्रेज़ी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़.

133F-162

प्रबंधक की एकाएक मृत्यु हो गयी है; सो वह नयी आशा से भागा-भागा अविन्यान आया। प्रधान प्रबंधक का पद बहुत ऊंचा होता है; लेकिन तिस्ता की महत्त्वाकांक्षाएं और भी ऊंची थीं।

तिस्ता ने जब महल में प्रवेश किया, तो पावन पिता उसे पहचान न सके। तिस्ता अब लंबा-चौड़ा आकर्षक मर्द बन गया था और पोप भी वृद्ध हो चुके थे। किंतु तिस्ता चिंतित नहीं हुआ। समीप जाकर धीरे-से बोला–'परम पिता, आपको स्मरण होगा, मैं तिस्ता वेदां हूं।'

'तिस्ता ?'

'जी हां, तिस्ता जो आपके गधे की परवरिश करता था, उसे ताजा धान और शराब देता था।'

'अरे हां! तिस्ता वेदां। कितना बड़ा हो गया है रे तू! बोल, कैसे आया ?'

'यों ही धर्मप्राण! ...... आपका वह जानवर कैसा है ? ठीक है न ? कितना अच्छा जानवर है! ...... परम पिता, मैंने नेपल्स में सुना कि आपके प्रधान प्रबंधक का स्थान रिक्त है ......'

'प्रधान प्रबंधक! क्यों ? तुम उस पद के लिए बहुत छोटे हो। तुम्हारी आयु क्या है?'

'मैं बाईस साल का परिश्रमी युवक हूं। आपके गधे से करीब पांच साल बड़ा हूं।..... ईश्वर के प्रतिनिधि पावन पिता, नेपल्स में रहते हुए भी मैं हमेशा आपके पवित्र वाहन का स्मरण करता रहा हूं। उसी की देखरेख के लिए मैं आपके प्रासाद में किसी बहाने टिक सकूं, तो अपने को कृतार्थ समझूंगा। ...... क्या मैं उसे देख सकता हूं ?'

'हां-हां बेटे!' पोप ने आध्यात्मिक तृप्ति के स्वर में तिस्ता से कहा–'और तुम उसके पास रहकर उसे संभाल सको, इसलिए मैं तुम्हें प्रधान प्रबंधक का कार्यभार शीघ्र दूंगा। अन्य पादरी और कार्डिनल शोरगुल अवश्य करेंगे; लेकिन अब मुझे इन बातों का अभ्यास हो गया है। चलो, हम अस्तबल चलते हैं और वहां से अंगूरों के बगीचे में जायेंगे।'

आनंद और कृतज्ञता के आंसुओं से भरी आंखें नीची किये तिस्ता ने अत्यंत विनम्रता से पोप की उंगलियां चूमीं।

तिस्ता बेचैन था उस उत्सव के दिन के लिए, जब उसे समारोहपूर्वक प्रधान प्रबंधक बनाया जाने वाला था। और गधा भी बदले की भावना से बेचैन होकर दिन-रात अस्तबल की दीवारों पर दुलत्तियां झाड़ने का अथक अभ्यास कर रहा था।

उत्सव की सुबह। महल के प्रांगण का वातावरण लैटिन के मंत्रों से मुखरित था। पादरी, बिशप और कार्डिनल अपनी उत्सव की पोशाकें पहने हुए थे। पोप के सैनिक आकर्षक वर्दियों में तने खड़े थे। वाद्यवृंद का संगीत हवा में तैरने लगा और आंगन के मंच पर परम पावन पोप ने आसन ग्रहण किया।

तभी मंच के ठीक सामने की सीढ़ियों से तिस्ता आता दिखाई दिया। उसके पीछे सिपाहियों और पादरियों की टुकड़ी थी।

तिस्ता की जरदोजी की उत्सव-पोशाक अत्यंत आकर्षक थी। उसकी छोटी टोपी में सुर्खाबों के पर लहरा रहे थे और उसके रेशमी बाल दोनों ओर झूमते जाते थे। तिस्ता के कुंदनवर्णी चेहरे पर छोटी सुनहरी दाढ़ी ऐसी लग रही थी, जैसे उसके सुनार पिता ने सोने के महीन तारों से उसे बनाया हो। अफवाहें तो यहां तक थीं कि स्वयं महारानी जेन ने तिस्ता की दाढ़ी को संवारकर आकार दिया है। कौन जाने यह सच था या झूठ, लेकिन इसमें शंका नहीं कि तिस्ता का व्यक्तित्व राजरानियों को लुभाने में समर्थ था। खैर!

जैसे ही तिस्ता आंगन के द्वार पर आया, अधिकारियों ने झुककर उसे संमान दिया। अब उसे विशाल मंच पर चढ़कर परम पावन पिता के हाथों से अपने पद के चिह्न लेने थे। ये चिह्न थे एक स्वर्णयष्टि तथा केसरिया कोट। मंच की सीढ़ियों के नीचे आकर तिस्ता मुस्कराया। ठीक सीढ़ियों के नीचे पोप का वाहन बंधा था। तिस्ता क्षण-भर वहां रुका। उसने तिरछी आंखों से पोप की ओर देखते हुए गधे को स्नेह से सहलाया। तिस्ता गधे के ठीक पीछे था।

'ले! .....सात साल से तेरे लिए मैं यह रखे हुए था!' गधे ने भयंकर दुलत्ती झाड़ी। तिस्ता का वहां नामोनिशान न बचा। आसमान में कुछ धूल और एक लकीर दिखाई दी—जैसे तीर चलने से बन जाती है। तिस्ता के नाम पर उसकी टोपी के सुर्खाब के गुलाबी पर हवा में तैर रहे थे। यही उसके अंतिम अवशेष थे।

यों गधे की दुलत्ती से किसी को इस हद तक नेस्तनावूद होते देखा-सुना तो नहीं गया; लेकिन यह कोई साधारण गधा नहीं था। धार्मिक वातावरण में पला प्राणी था और धर्मप्रवण लोगों के द्वेष तथा बदले की भावना से सभी परिचित हैं।

★

अदालत में किसी जानवर की चोरी का मुकद्दमा था, लेकिन आरोपी का गवाह नहीं आया था। वह गवाह को ढूंढ़ रहा था। एक आदमी ने उससे पूछा—'किसे खोज रहे हो?'

'मेरा गवाह नहीं आया।'

'तो इसमें घबराने की क्या बात है। मैं गवाही देने का ही काम करता हूं।' आरोपी उसे गवाही का मुद्दा समझा भी न पाया था कि पुकार हो गयी।

विपक्षी के वकील ने पूछा—"बताओ उसका रंग क्या था?'

'रंग! रंग की क्या बात है, इतना सुंदर रंग था कि बयान नहीं किया जा सकता।'

वकील ने फिर पूछा—'और कद?' गवाह ने कोई दो फुट जमीन से ऊंची अपने हाथ की हथेली करते हुए कहा—'इतना बड़ा।' वकील ने जज से कहा—'हुजूर देख लें, कहीं मुर्गा इतना बड़ा होता है!' गवाह ने दूसरे हाथ की हथेली अपने पहले हाथ के नीचे करते हुए कहा—'जनाब, दूसरा हाथ भी तो आने दीजिये।'

—गुरुप्रसाद अवस्थी

★

एम्परर अशोक

मिनाज डी. मर्चेंट

'भद्र पुरुषो और महिलाओ! मैं आपका कप्तान बोल रहा हूं। एंपरर अशोक पर आपका स्वागत। हमें आशा है, यह उड़ान आपको आनंददायक लगेगी। हम इंडियन स्टैंडर्ड टाइम के अनुसार १२·३० बजे अपने पहले पड़ाव बेरुत पहुंचेंगे। यदि किसी खिदमत की जरूरत हो तो अपनी सीट के ऊपर की घंटी दबा दीजिये।'

यात्री अपनी सीटों पर आराम से बैठ गये तो मैंने चारों ओर निगाह डाली। चंद व्यापारी, यूनिवर्सिटियों के चंद विद्यार्थी, विदेशी पर्यटक और चंद अधेड़ दंपति थे।

मैंने अपनी घड़ी देखी। सुबह के ७·३० बजे थे। मैं अभी उनींदा-सा था। सोचा, नाश्ता परोसा जाये इससे पहले जरा झपकी ले लूं। और मैं सो गया।

राजस्थानी लिबास में सजी हुई एयर होस्टेस ने मुझे जगाया। मीठी मुस्कान बिखेरते हुए पूछने लगी—'चाय कि कॉफी?'

मोहकता से जवाबी मुस्कान बिखेरते हुए मैं बोला—'दोनों ही नहीं। बल्कि नाश्ता।'

उत्तर मिला—'सर, नाश्ता तो नहीं मिलेगा। मुझे अफसोस है, नीचे का केटरिंग-विभाग अनिश्चित काल के लिए हड़ताल

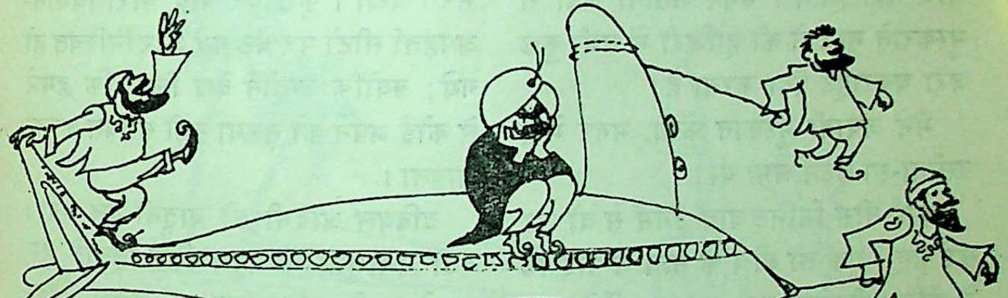

व्यंग्यचित्र : वसंत सरवटे

पर है।'

'तो काफी !' मैंने ऊबकर कहा।

तीन घंटे बाद हम लोग पेट्रोल-भराई के लिए बेरुत में उतरे। यहां जो लोग विमान में चढ़े, उनमें चार संड-मुस्टंडों का एक गुट था, जो कशीदा की हुई कमीजें पहने हुए थे।

जब वे मेरे पास से गुजरे, मैंने ऊपर नजर उठायी और उनमें से एक की आंखें मेरी आंखों से मिलीं। वह मुस्कराया, उसके दांतों पर सोना मढ़ा था।

उसका साथी, जो चालीस-एक साल का भारी-भरकम आदमी था और भूरी कश्मीरी ऊनी टोपी पहने था, गिटार की बड़ी-सी पेटी उठाये हुए था। वे पाकिस्तानी लगते थे–शायद कश्मीरी रहे हों।

मैं कोई नर्वस किस्म का आदमी नहीं हूं और गिटार की पेटी कोई खौफनाक चीज नहीं होती। मगर शैतानी अदा से मुस्कराते मुस्टंडों की हाजिरी में सभी कुछ जरा घबराहट पैदा करता है।

मैंने जवाबी मुस्कान फेंकी, मगर मेरा पसीना-सा छूटने लगा था।

कोई तीस मिनिट बाद उनमें से दो उठ खड़े हुए। एक तो बीच के मार्ग से पाइलट के कैबिन की ओर बढ़ा; दूसरा फुर्ती से चलकर पिछले छोर की ओर अपनी गिटार-पेटी समेत जा पहुंचा। वहां उसने गिटार-पेटी धीरे-धीरे खोली और उसमें से कोई यांत्रिक चीज निकाली, जिसे देखकर मशीनगन की बेचैन कर देने वाली याद आती थी। उसने घुमाकर उसका प्रदर्शन किया। तभी बाकी दो आदमी–झबरी मूंछ वाले–जाने कहां नमूदार हुए और बदसूरत-से रिवाल्व यात्रियों पर तानकर खड़े हो गये।

पहला आदमी पिस्तौल ताने कैबिन से निकला और सुन्न-से तथा काफी घबरा हुए यात्रियों को उसने टूटी-फूटी अंग्रेजी भाषण पिलाया।

'यह विमान हाइजैक किया जा र है,' उसने पिस्तौल हिलाकर धमकाते हु कहा–'बोलो नहीं, हिलो नहीं, तो चो नहीं लगेगी।' हमें डराते हुए वह मुस्कराया फिर अपनी घनी काली दाढ़ी हिलाते हुए कहने लगा–'अब हम कराची जायेंगे।

स्पष्ट ही विमान-कप्तान को विमान की दिशा बदलने को कह दिया गया था क्योंकि हमने विमान को दायीं ओर मुड़ते और हमारी नयी मंजिल की ओर उड़ान भरते देखा। कुछ देर बाद चारों विमान-अपहर्ता सीटों पर बैठ गये और निश्चित हो गये; क्योंकि उन्होंने देख लिया कि हममें से कोई अपने को सूरमा नहीं साबित करना चाहता।

दढ़ियल आदमी तो बातूनी बन गया। बड़ी दयालुता के साथ सिर हिलाते हुए उसने हमसे कहा–'अच्छा, अच्छा, हिंदुस्तानी ! हम आपका बुरा नहीं चाहते। मगर हम साबित करना चाहते हैं ......' और वह तन-सा गया।

मैं चकित था। उसकी बातों का सिर-पैर समझ में नहीं आता था। इतना ही पता चल सका कि हमारे विमान-अपहर्ता कुछ

साबित करना चाहते [illegible] थे कि वे अपनी अचूक निशानेबाजी नहीं साबित करना चाहें।

साढ़े चार घंटे बाद हम कराची हवाई-अड्डे पर सही-सलामत उतरे। सशस्त्र पुलिस ने विमान को घेर लिया। अपहर्ताओं में से दो चले गये सरकार के आदमियों से मिलने।

काफी देर तक मामला अधर में लटकता रहा। फिर एकाएक वे दो पाकिस्तानी वापस विमान पर आ गये। वे एकदम बदले हुए दिखाई दे रहे थे। उनके चेहरे मुस्कान में डूब रहे थे और उन्होंने विमान के सब कर्मचारियों से हाथ मिलाये, यात्रियों को हाथ हिलाकर विदा दी और [illegible] को चूम लिया। बड़ा भावपूर्ण क्षण था।

हमारे विमान ने उड़ान भरी और अंततः अगली सुबह हम लंदन पहुंचे। और तब हमें पता चला कि यह सब क्या माजरा था।

इन चार पाकिस्तानियों की नजर किसी भारतीय पाठ्य पुस्तक पर पड़ गयी थी, जिसमें बताया गया था कि कोई सम्राट् अशोक था, जो कभी किसी विदेशी से नहीं हारा। दिसंबर १९७१ के युद्ध की हार से खिसियाये हुए इन चार देशभक्त पाकिस्तानियों ने यह सिद्ध करने की ठान ली कि लेखक की बात गलत है—सम्राट् अशोक अजेय नहीं है। [**'फ्री प्रेस जर्नल' से**]

★

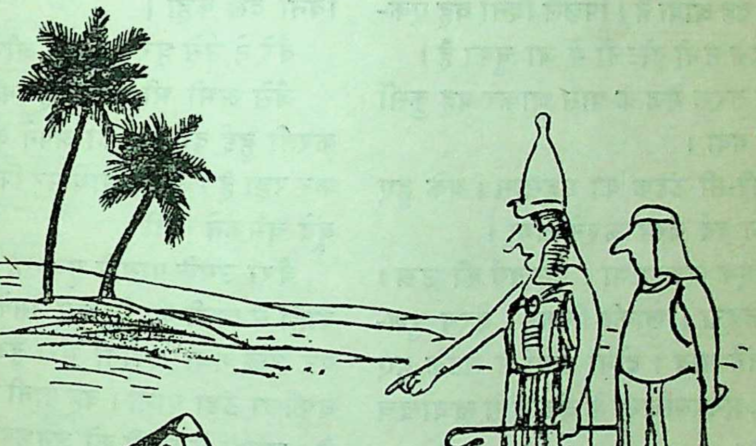

मैं ठीक ऐसा ही मकबरा चाहता हूं, मगर इससे बड़ा, इससे बहुत बड़ा, बहुत-बहुत बड़ा, बहुत-बहुत-बहुत-बहुत-बहुत-बहुत-बहुत बड़ा। समझे?

★

एक पानी

सुखबीर

दोपहर । जलती हुई । भांयँ-भांयँ करती हुई । वह ईरानी होटल के पास आकर रुका । एक नजर उसने होटल का जायजा लिया, और फिर अंदर चला गया।

यह इस इलाके का अंतिम होटल है, जिसमें वह आया है । पिछले दिनों वह एक-एक करके सभी होटलों में जा चुका है।

एक तरफ मेज के पास जाकर वह कुर्सी पर बैठ गया ।

हल्की-सी ठंडक का एहसास । थके हुए अंगों का दर्द जैसा ऊंत्रने लगा ।

वह एक लड़का था । दस वर्ष की उम्र । पीला चेहरा । खाकी निकर । बेरंग बुश-शर्ट । नंगे पांव । दोनों कंधों से लटके हुए दो थैले, अगरबत्तियों के बंडलों से खचाखच भरे हुए ।

वह रोज सड़कों पर अगरबत्तियां बेचता है। सुबह, दोपहर, शाम, रात।

वह बैरे का रास्ता देखने लगा । कितने लापरवाह हैं बैरे! उसने मन में कहा।

आखिर बैरा उसके पास आया । 'क्या मांगता है ?'

'एक पानी लाओ ।' उसने माथे पर से पसीना पोंछते हुए कहा ।

'और क्या मांगता है ?' बैरे ने पूछा।

'पहले पानी लाओ', उसने बैरे की ओर बिना देखे कहा ।

बैरे ने उसे घूरकर देखा और चला गया।

जैसे अभी भी वह बाहर की भांयँ-भांयँ करती हुई दोपहर को अपने अंदर अनुभव कर रहा है । उसके माथे पर फिर पसीने की बूंदें चमकने लगीं।

बैरा उसके पास से गुजरता हुआ लापरवाही से पानी का गिलास उसके सामने मेज पर रख गया । पौना भरा हुआ गिलास। बर्फीला ठंडा पानी। वह पानी को देख रहा है। आंखों से पानी को अनुभव कर रहा है।

आखिर उसने गिलास उठाकर अपने सूखे ओंठों से लगाया । दो घूंट भरकर एक बार गिलास की ओर देखा। ठंडा स्पर्श। उसकी आंखों में चमक आयी। फिर उसने गिलास मुंह से लगाकर खाली कर दिया।

गिलास मेज पर रखकर उसने कुर्सी से पीठ टेकी और सामने दीवार पर लगे चित्रों को देखने लगा। अफगान स्नो का विज्ञापन–बर्फ से ढंकी हुई पहाड़ की चोटी। ढलानों पर पिघलती हुई बर्फ। एक ठंडक। ......दूसरे चित्र में नदी के किनारे बैठी हुई एक स्त्री। लहरों में डुबोये हुए पांव। सिर पर सघन वृक्षों का झुरमुट। तीसरे चित्र में मैंगोला का विज्ञापन–एक स्त्री आम को मुंह लगाये पिये जा रही, पिये जा रही।

बैरे ने मेज पर से खाली गिलास उठाते हुए पूछा–'और क्या मांगता है?'

अब उसने मुंह उठाकर बैरे की ओर देखा। 'साला हरामी!' उसने मन में कहा। फिर मेज की ओर देखते हुए कहा–'एक पानी और लाओ।'

'और साथ में?' बैरे ने सख्त आवाज में पूछा।

'और ...... और एक स्लाइस लाओ।'

'एक ही?'

'हां, पहले एक लाओ। और पानी।'

बैरे ने उसे ऐसे देखा, जैसे वह कोई कुत्ते का पिल्ला हो–प्यासा और कुर्सी पर बैठा हुआ।

बैरे के जाने पर उसने जरा-सा मुड़कर बायीं ओर देखा। काउंटर पर होटल का ईरानी मालिक बैठा है। लाल-सुर्ख चेहरा। लाल-सुर्ख आंखें। लाल-सुर्ख गर्दन।

वह देर तक उसे देखता रहा।

पर ईरानी ने उसकी ओर न देखा। वह उसके पास वाली मेज की ओर देख रहा

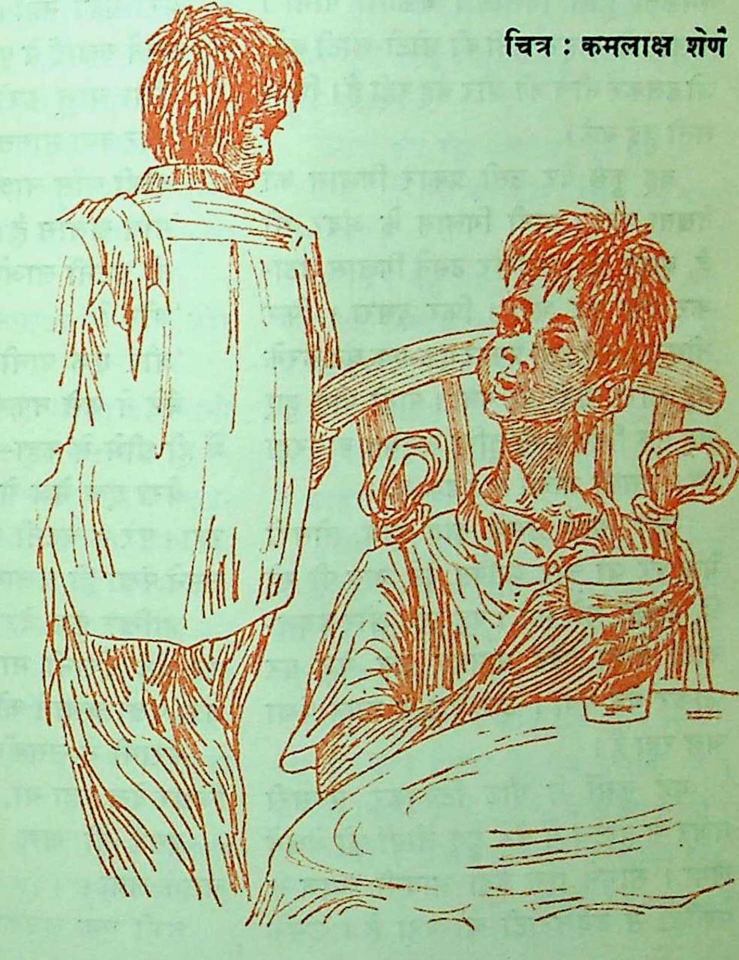

चित्र : कमलाक्ष शेणै

था। वहां एक पारसी स्त्री अपने सात बच्चों के साथ बैठी हुई है। सभी आइसक्रीम खा रहे हैं।

उसने भी एक बार उस मेज की ओर देखा, मगर झट उधर से नजर हटा ली।

बैरा एक प्लेट, जिसमें डबलरोटी का टुकड़ा पड़ा था, और पानी का गिलास मेज पर रख गया।

उसकी नजर पानी के गिलास पर है। चमकता हुआ गिलास। बर्फीला पानी। गिलास के बाहर पानी की छोटी-छोटी बूंदें, जो ढलकर नीचे की ओर बह रही हैं। पिघलती हुई बर्फ।

वह कुछ देर उसी प्रकार गिलास को देखता रहा। पानी गिलास के अंदर भी है, बाहर भी। आखिर उसने गिलास उठाकर एक घूंट भरा। फिर दूसरा। फिर तीसरा। और इसी प्रकार एक-एक घूंट करके वह सारा पानी पी गया। पानी पीते हुए वह एक विचित्र-सी तृप्ति अनुभव कर रहा था। उसकी आंखों में ठंडक थी।

उसी समय उसके दायें हाथ, तीसरी मेज पर जो चार व्यक्ति बैठे चाय पी रहे थे, उठकर चले गये। वह उठा और डबलरोटी वाली प्लेट उठाकर उस मेज पर जाकर बैठ गया। उस मेज के ऊपर पंखा चल रहा है।

वह कुर्सी से पीठ टिकाकर सरसरी नजर से होटल में बैठे हुए लोगों को देखने लगा। सामने एक बूढ़ा आदमी प्याज के पकौड़ों से डबलरोटी खा रहा है। उसके साथ वाली मेज पर एक लड़का और बैठ मुस्कराते हुए बातें कर रहे हैं। एक व्यक्ति बैठा हुआ एकटक बाहर जा रहा है—शायद भांयँ-भांयँ करती हर को।

अचानक उसका ध्यान ऊपर गया। बंद हो गया था।

जब बैरा उसके पास से गुजरा, तो उसे बुलाया।

बैरा रुका नहीं। जब वह वापस तो उसने रुखाई से पूछा—'क्या मांगता है

'पंखा चालू करो।'

'और क्या मांगता है?'

'थोड़ी सॉस लाओ।'

'सॉस खलास है।'

'तो चटनी लाओ।'

'और?'

'और एक पानी।'

बैरे ने उसे नफरत से देखा और में ही धीमे-से कहा—'साला चटनी का...

बैरा एक मेज से दूसरी मेज तक रहा। पर न चटनी लाया, न पानी, और उसने पंखा ही चलाया।

आखिर कुछ देर के बाद उसने पर बैठे ईरानी मालिक से कहा—' जरा पंखा चलाने को बोलो।'

ईरानी ने उसकी ओर देखा और जिधर देख रहा था, उधर ही देखने

दूसरे ही क्षण उसके सिर पर चलने लगा।

तभी एक लड़का उसके सामने

बैठ गया। खाकी कमीज। खाकी निकर। खाकी नजर।

बैरा फिर पास आया—'क्या मांगता है?'

'दस पैसे के समोसे लाओ ...... और एक चाय।'

बैरे ने कहा—'समोसा पचीस पैसे का दो है। एक का पंद्रह पैसा।'

लड़का शायद पहली बार होटल में आया है। वह सोचने लगा, जेब में पैंतीस पैसे हैं। दो समोसे लिये तो चाय नहीं पी सकूंगा। चाय का कप लेने पर पंद्रह पैसे बचेंगे। एक समोसे से क्या बनेगा?

आखिर वह चुपचाप उठकर चला गया।

जब बैरा वहां से फिर गुजरा, तो उसने कहा—'ऐ, चटनी लाओ, और पानी। सुना नहीं क्या?'

बैरे ने उसे फिर नफरत से देखा और ओंठों में गाली दी।

आखिर वह चटनी का प्याला और पानी का गिलास उसकी मेज पर रख गया।

उसने पानी के गिलास को हाथ में पकड़कर हल्का-सा घोंटा, जैसे उसकी ठंडक को अनुभव कर रहा हो, उसे अपने अंदर समो रहा हो। कुछ देर बाद उसने गिलास को ओंठों से लगाया। एक घूंट। दो घूंट। तीन घूंट।......उसकी आंखों में ठंडक भर गयी।

आखिर, वह एक-एक घूंट करके सारा पानी पी गया।

काउंटर पर बैठा ईरानी अब उसकी ओर एकटक देख रहा था। घूरती नजर।

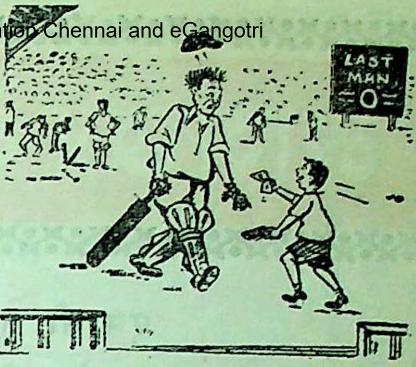

हस्ताक्षर वापस ले लीजिये !

लाल-सुर्ख आंखें। लाल-सुर्ख चेहरा। लाल-सुर्ख गर्दन।

ऊपर चल रहा पंखा बंद हो गया।

उसने ईरानी की ओर देखा। उसे डर-सा लगा।

आखिर वह दोनों कंधों से लटके हुए थैलों को ठीक करता हुआ उठा। प्लेट में से डबलरोटी का टुकड़ा उठाकर उसने थैले में रखा। काउंटर के पास जाकर उसने दस पैसे ईरानी के सामने रखे और होटल में से बाहर निकल गया।

होटल की सीढ़ियां उतरते समय पीछे से उसके कानों में आवाज आयी—'स्साला' दस पैसे का स्लाइस लिया और बीस पैसे का मुफ्त पानी पी गया!'

बाहर सड़क पर जाते हुए उसने सोचा, यह आखिरी होटल है, इस इलाके का। कल से किसी दूसरे इलाके में जाना होगा।

—बी १९, सन एंड सी, वरसोवा रोड, बंबई-४०००६१

* * *

नागछत्र के नीचे बुद्ध

एम. सी. सुभद्राधीश दिस्कुल

बोधप्राप्ति के बाद बुद्ध भगवान ने समाधि लगायी। तभी वर्षा होने लगी। परंतु सर्पों का राजा नाग मुचलिंद अपने बिल से निकल आया और उसने अपना फन फैलाकर बौछारों से भगवान की रक्षा की।

यह है नाग के फन के नीचे बैठे बुद्ध के प्रतिमा-निरूपण का उद्‌गम, जिसका विकास पहले पहल ईसा की दूसरी-चौथी सदी के मध्य दक्षिण-पूर्व भारत की अमरावती शिल्पकला में हुआ। शायद यह कथा उन लोगों की भावनात्मक आवश्यकता की तुष्टि के लिए प्रस्फुटित हुई, जो पहले नाग-पूजक थे। अब वे बौद्ध थे और इस विश्वास से उन्हें समाधान मिलता था कि नाग ने भगवान बुद्ध का रक्षण किया था।

थाइलैंड की द्वारावती कला में इस प्रसंग का रोचक निरूपण हुआ है। वहां की नागछत्र के नीचे बैठी बुद्ध-प्रतिमाओं पर श्रीलंका की कला का असर रहा होगा; क्योंकि ये दोनों देश थेरवादी बौद्ध हैं।

द्वारावती कला थाइलैंड के इतिहास के आद्यतम काल अर्थात् ७ वीं से ११ वीं सदी से संबंधित है। स्वर्गीय प्रो. प्येर द्युपों अपनी पुस्तक 'ला आर्कियोलाजी मोन द द्वारावती' में नागछत्र के नीचे बैठे बुद्ध की मूर्तियों के विषय में लिखते समय एक महत्त्वपूर्ण प्रतिमा का उल्लेख नहीं कर पाये, जो कि शायद उन मूर्तियों में सबसे प्राचीन है। यह मूर्ति चार वर्ष पहले उत्तर-पूर्व थाइलैंड के बुरिरम प्रांत में बान म्युएंग फाइ में खोजी गयी।

बान म्युएंग फाइ में द्वारावती संस्कृति के एक वृत्ताकार नगर के अवशेष हैं, जिसके चारों ओर खाइयों के तीन घेरे हैं। इस नगर में ईंट के बने एक स्मारक के नीचे से चोरों ने नागछत्र के नीचे बैठे बुद्ध की एक पाषाण-प्रतिमा खोद निकाली और उसे वे बैलगाड़ी से नखोन रातचासिमा (कोरात) प्रांत के अम्फोक हुआइ थैलाइंग में ले आये। सौभाग्य से वहां पुलिस ने प्रतिमा उनसे छीन ली और अब वह अम्फोक हुआइ थैलाइंग के वाट हिन दाद में रखी हुई है।

यह पाषाण-प्रतिमा खूब उभारदार तथा एक मीटर से कुछ ऊंची है और इसके नीचे की चूल ६० सेंटिमीटर लंबी है। नाग के सात सिरों में से केवल तीन शेष हैं

किंतु वे स्पष्ट ही द्वारावती शैली के लगते हैं। प्रत्येक नाग का चेहरा बंदर के चेहरे के जैसा है, जो कि द्वारावती कला की विशेषता है। प्रत्येक सिर पर एक ऊंचा खूंटा है। प्रत्येक नाग के धड़ का बीच का हिस्सा आड़ी समानांतर रेखाओं से सज्जित है और इस डिजाइन को दो किनारे की रेखाओं से आवद्ध किया गया है। नागों के सिर एक दूसरे पर टिके हुए हैं और उनका निचला भाग बुद्ध के धड़ के पीछे छिपा हुआ है।

बुद्ध की मुखाकृति इस मूर्ति को आरंभिक द्वारावती शैली की सिद्ध करती है। उस पर कोई थाइ प्रभाव परिलक्षित नहीं होता और वह मूल भारतीय रूप से बहुत मिलती-जुलती है। सिर पर का गुमटा गोलाकार है और कोई प्रभामंडल नहीं है।

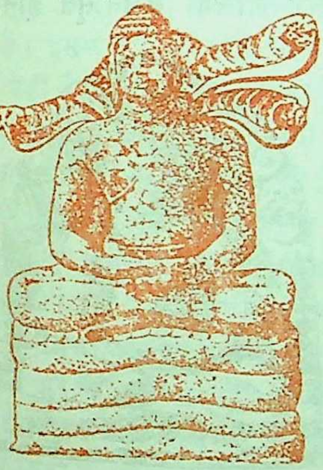

बेन म्युएंग फाइ में प्राप्त बुद्धमूर्ति—संभवतः द्वारावती शैली की ऐसी प्राचीनतम मूर्ति।

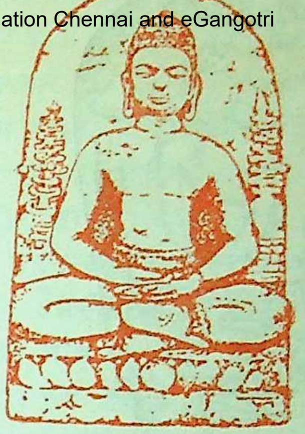

बैंकाक नेशनल म्यूज़ियम में रखी एक और प्रतिमा। बुद्ध इसमें बोधिवृक्ष के नीचे आसीन हैं, उनके दायें-बायें छोटे स्तूप हैं।

बालों के घुंघराले छल्ले दायीं ओर घूमते हुए हैं। अमरावती की बुद्ध-प्रतिमा का अनुकरण करते हुए वे आड़ी पंक्तियों में एक दूसरे पर जमाये हुए हैं। चेहरा चौड़ा है और धनुषाकार भौंहें नासिका-मूल पर जुड़ी हुई हैं। आंख की उपरली रेखा एकदम सीधी उकेरी गयी है और निचली रेखा अर्धवृत्ताकार है। नाक का निचला भाग ज्यादा चौड़ा है और ओंठ मोटे हैं।

चेहरा-मोहरा (रूप) द्वारावती की उस बुद्ध-प्रतिमा के समान है, जो बैंकाक के वाट बोवोर्न-निवेट के पश्चिमी लघु मंडप में स्थापित है और जिसे प्रो. द्युपों द्वारावती की प्राचीनतम मूर्तियों में से एक मानते हैं।

बान म्युएंग फाइ की इस बुद्ध-प्रतिमा का धड़ अपेक्षाकृत स्थूल है। चीवर शरीर से इस तरह एकाकार है कि कहीं चुन्नटें नहीं हैं, दायां कंधा अनावृत है। अधोवसन का उपरला भाग कमर तक दिखाया गया है। उत्तरीय की किनारी बायीं कटि पर

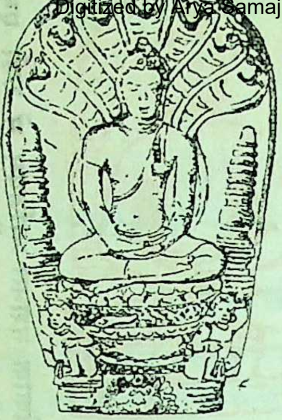

नागछत्र के नीचे आसीन बुद्ध के दोनों ओर स्तूप हैं, जिन्हें दो बौनों ने उठा रखा है।

दिखती है और घुटने का चक्कर काटकर अदृश्य हो गयी है। अधोवस्त्र की निचली किनारी टखने पर दिखाई देती है। बुद्ध ध्यानमुद्रा में पद्मासन में पैरों को कैंचीबद्ध किये आसीन हैं, जो कि अमरावती शैली की खास चीज है।

यह मूर्ति पूर्वी थाइलैंड के प्राचिनबुरी प्रांत में दोंग सि महापोत में मिली द्वारावती शैली की ही एक अन्य ध्यानस्थ बुद्ध-मूर्ति से बहुत मिलती-जुलती है, जो बैंकाक नेशनल म्यूजियम में है। मगर उस प्रतिमा में बुद्ध नागछत्र के नीचे नहीं, अपितु बोधिवृक्ष-तले समाधिस्थ हैं और उनकी अगल-बगल में दो छोटे स्तूप हैं।

बान म्युएंग फाइ की बुद्ध की प्रतिमा में नीचे नाग की तीन कुंडलियां बनी हैं। उपरली कुंडली पर केंचुली का स्पष्ट अंकन किया गया है। नाग की पूंछ प्रतिमा के बायीं ओर दिखायी गयी है। तीसरी कुंड के नीचे का हिस्सा मूल के ऊपर के आधा का सपाट भाग है।

बैंकाक नेशनल म्यूजियम में रखी इ शैली और प्रकार की तीन अन्य बुद्ध मूर्ति से इस मूर्ति की तुलना करने पर यह उन पुरानी सिद्ध होती है। ऐसा मानने के कारण हैं:

बैंकाक की मूर्तियों में से एक गोलाका में बनी है, वह लोपबुरी के वाट प्रा सि रत महाथट से प्राप्त हुई है। इसमें केवल बु का सिर और नाग का फन ही शेष है, भी टूटी-फूटी हालत में। इसलिए उसक ब्योरेवार अध्ययन संभव नहीं। बुद्ध के बा बायीं ओर घूमते हुए घुंघराले हैं। उस इस मूर्ति का भारत की गुप्तकालीन गुप्तोत्तर शैलियों से निःसृत होना औ

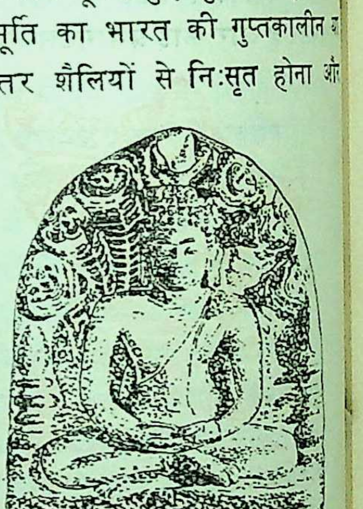

बैंकाक की इस बुद्ध-प्रतिमा में नागों के मुंह हूबहू बंदरों जैसे दिखाये गये हैं, जो द्वारावती शैली की विशेषता है।

इसका पहली प्रतिमा से परवर्ती होना प्रकट होता है। इसमें नागों की मुखाकृति भी बैंकाक म्यूजियम में रखी दूसरी मूर्ति से मेल खाती है।

यह दूसरी प्रतिमा प्राचिनबुरी से प्राप्त हुई थी। ७५ सेंटिमीटर ऊंची इस प्रतिमा को गहरा कोरा गया है। बुद्ध के सिर की रक्षा कर रहे नागराज के सात मुखों की आकृति बान म्युएंग फाइ की मूर्ति के सर्प-मुख से भिन्न है। नाग के सिरों के ऊपर के खूंटे छोटे हो गये हैं और उन पर छोटे छल्ले हैं। सांपों की शक्ल बंदरों से और भी अधिक मिलती है। सांप की प्रत्येक ग्रीवा अंग्रेजी के 'वी' अक्षर के आकार की रेखाओं से सजायी गयी है।

आराम से पालथी मारकर बैठे हुए बुद्ध की यह मूर्ति अमरावती शैली की याद दिलाती है। इसमें बुद्ध के नीचे सांप की कुंडलियां नहीं हैं, बल्कि सपाट चौकी है। यह प्रतिमा लगभग ९ वीं-१० वीं सदी की यानी द्वारावती शैली के मध्यकाल की है।

नागछत्र के नीचे बैठी बुद्ध-प्रतिमा का अंतिम उदाहरण अयुथ्या के वाट प्रदु सांग थोम में है, जो गहरी उभारदार कोरी गयी है। इसमें सप्तमुखी नाग बहुत शैलीकृत है। उनके सिरों पर के खूंटे सकेंद्री छल्लों से घिरे हुए हैं और उनकी आंखें मोटी सकेंद्री रेखाओं से घिरी हैं, जो मुखौटे का आभास कराती हैं। नाग का शरीर काफी विशाल और अलंकृत है।

बुद्ध के सिर पर के गुमट के ऊपर कमल की कली जैसा प्रभामंडल है। घुंघराले बाल इतने घिस गये हैं कि उनका खास अध्ययन नहीं किया जा सकता। गले पर तीन रेखाएं हैं, जो कि भारतीय सौंदर्य-धारणा की विशेषताओं में से एक है। शरीर छरहरा है। बायें कंधे पर उत्तरीय का छोटा-सा चुन्नटदार छोर लटका हुआ है और उसकी किनारी बायीं कलाई तथा बायीं जांघ पर नजर आ रही है। हाथ अपेक्षाकृत लंबे हैं, दायें हाथ की हथेली पर 'धर्मचक्र' अंकित है। बुद्ध के पीछे नाग का शरीर स्पष्टतः अंकित है।

बुद्ध के दोनों ओर दो स्तूप हैं, जिन्हें बौनी स्तंभधारिणियां थामे हुए हैं। ये स्तूप प्राचिनबुरी की मूर्ति के स्तूपों की अपेक्षा अधिक ऊंचे व नक्काशीदार हैं। बुद्ध के नीचे नाग की तीन कुंडलियां हैं, जो क्रम से छोटी होती गयी हैं और हर कुंडली पर परतें तथा मेरुदंड स्पष्ट प्रदर्शित हैं। पूंछ दायीं ओर दिखती है। इस प्रकार क्रमेण छोटी होती हुई कुंडलियां लोपबुरी काल की नागछत्र के नीचे आसीन बुद्ध प्रतिमाओं में भी बनती रहीं। कुंडलियों के नीचे काल या कीर्तिमुख का सिर है।

द्वारावती शैली की नागछत्र के नीचे आसीन अंतिम प्रतिमा का समय संभवतः १० वीं-११ वीं सदी है।

इन बातों से यह परिणाम निकलता है कि नागछत्र के नीचे आसीन बुद्ध की द्वारावती शैली की प्रतिमाओं में से बान म्युएंग फाइ की प्रतिमा प्राचीनतम है।

★

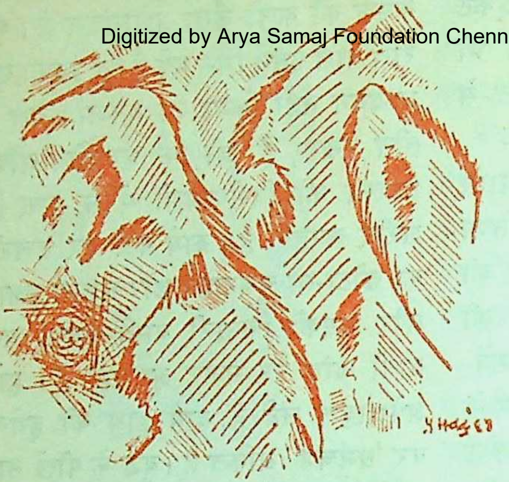

चित्र : प्रेमचंद्र गोस्वामी

विष्णु निवसरकर

दस्तक : एक सॉनेट

अलस सवेरे ही दस्तक की यह कैसी आवाज ?
मुंह-अंधियारे कौन आ गया जाने क्या है राज
प्याले लुढ़क रहे टेबल पर, ताशों के पत्ते बिखरे
राखदान के नीचे राजा, पहने टूटा ताज।

रूपगर्विता रानी झपकी पीकर कितने जाम
कमरे-भर में डटा खड़ा था ताशों का आवाम
शमशानों का समां बांधती थी सिगरेट की राख
कलमदान की चौखट से टिक जीता रहा गुलाम।

फिर से ठक-ठक ! 'अबे कौन है?' 'मैं हूं यार, सवेरा–
'रात उधर ऊसर के पीछे करता रैन बसेरा।
'भोर अरोरा द्वार खोलती जब सूरज के रथ का
'खोजा करता तब प्रमथ्यु मैं, परख-परखकर चेहरा।

'राजवंश मिट गये, अंधेरे के गुलाम अब जाग।
'बलिदानों के बिना मिली कब, किसे स्वर्ग की आग ?'

प्रोफेसर्स क्वार्टर्स, रुइया कालेज हॉस्टल, सायन कोलीवाडा, बंबई-२२

स्मृति के अंकुर

बाङ्गलादेश का निर्माण हो चुका था। पर अभी भी इलाहाबाद से कुछ मील दूर इरादतगंज में करीब दस हजार शरणार्थी ठहरे हुए थे। विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों की टोलियां प्राध्यापकों के साथ वहां जाकर सफाई आदि सेवाकार्य करती थीं और शरणार्थियों से उनकी समस्याएं पूछकर उनका समाधान करने का यत्न करती थीं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से मेरे पति भी छात्र स्वयंसेवकों को लेकर इरादतगंज कैंप में गये थे। उन लोगों का यह प्रयत्न था कि दान में आये वस्त्र आदि चीजें जो लोग वास्तव में जरूरतमंद हैं, उन्हें मिल सकें।

ऐसे ही एक दिन शाम को शरणार्थियों से बातचीत करके वे अपने कैंप-स्थल की ओर लौट रहे थे कि आठ-दस वर्ष की एक बंगाली बालिका पीछे-पीछे आयी और मेरे पति से बोली–'यह क्या बात है कि आप तो साफ धुले हुए कपड़े पहने हैं और हम यह गंदी-सी फ्राक !' उसकी मनस्विता से मेरे पति बहुत अधिक प्रभावित हुए, फिर भी विनोद के लिए बोले–'नहीं, तेरी फ्राक तो अच्छी है।' पर बच्ची को यह बात अच्छी नहीं लगी।

तब तक सब कैंप-स्थल तक आ गये थे। वहां पर बच्ची से कहा गया–'अच्छा, तुम अपने लिए एक फ्राक ले लो।' लेकिन बच्ची मचल गयी कि हम तो साड़ी लेंगे, फ्राक नहीं। जब उससे पूछा गया कि साड़ी का तुम क्या करोगी, तब बोली–'साड़ी मेरी मां भी पहनेगी और मेरी बड़ी बहन भी।' सबको मानना ही पड़ा और अपनी पसंद से सबसे अच्छी साड़ी लेकर वह खुशी से दमकती हुई चली गयी।

–सुमन शर्मा, इलाहाबाद

०००

असली चेहरा

बंबई तक की यात्रा थी। पास बैठे एक यात्री गरीबों पर होने वाले अत्याचारों पर धाराप्रवाह बोले चले जा रहे थे। काफी

SATHE MALTex
साठे माल्टेक्स बिस्कुट
SATHE MALTex BISCUITS

अजी-साठे
माल्टेक्स
इतना स्वादिष्ट
होगा ही!
इसमें
मॉल्ट है न!

ताज़ा, करारा व स्वाद में अनोखा—वाह!

इस अनोखे स्वाद का कारण है मॉल्ट,
जो इस बिस्कुट में भरपूर है।
पचने मे हलका व पोषक सत्वों से भरपूर
यह बिस्कुट चाहे जितने भी खायें,
और खाने को जी चाहता है।
इसलिये कि इसमे मॉल्ट है!

IS:1011 ISI आई. एस. आई मुहर वाले
माल्टेक्स का मतलब है अच्छी
किस्म की गारंटी वाले बिस्कुट

साठे बिस्कुट

देर के बाद गाड़ी किसी स्टेशन पर रुकी। वे सज्जन भी थैले से नाश्ता निकालकर खाने बैठे ! तभी हाथ में कटोरा लिये एक भिखारी वहां खिड़की के पास आया, और उनसे कुछ खाना मांगने लगा । उन सज्जन ने पहले तो बड़ी घृणा से उसकी तरफ देखा, फिर बोले–'हट, शर्म नहीं आती मांगकर खाते हुए ? कोई काम क्यों नहीं करता ?'

भिखारी ने बड़ी नम्रता से जवाब दिया–'मांगकर खाने में मुझे तो भी बहुत शर्म आती है । आप ही कोई काम दीजिये, मैं तो मेहनत-मजदूरी भी करने को तैयार हूं ।' इस पर वे और भड़क उठे–'चल-चल, बड़ा आया काम करने वाला ! पहले काम मांगते हो, फिर चोरी करते हो ! सब जानता हूं मैं तुम-जैसे लोगों के बारे में ।' और बची हुई पूड़ियां पास खड़े कुत्ते की ओर फेंककर वे बड़े इत्मीनान से अपना मुंह पोंछने लगे ।

भिखारी आंसू-भरी नजरों से कुत्ते को देख रहा था और मैं उस 'मुखौटाधारी' सज्जन के 'असली चेहरे' को देख रही थी।

–वर्षा अय्यर, रतलाम

○○○

कामचोर

काफी दिनों पहले की बात है । शाम को मैं बरामदे में कुर्सी डालकर बैठा था कि कानों से आवाज टकरायी–'बाबूजी, कुछ खाने को दे दो ।' मैंने नजर ऊपर उठायी, तो सामने अधेड़ उम्र का एक स्वस्थ व्यक्ति कंधे पर एक झोला लटकाये खड़ा था। थैले में से आरी और बंसुली बाहर झांक रही थी। मेरी प्रश्न-भरी नजर देखकर उसने कहा–'बाबूजी, बढ़ई हूं । दिन-भर कोई काम नहीं मिला, कुछ खाने को दे दीजिये ।'

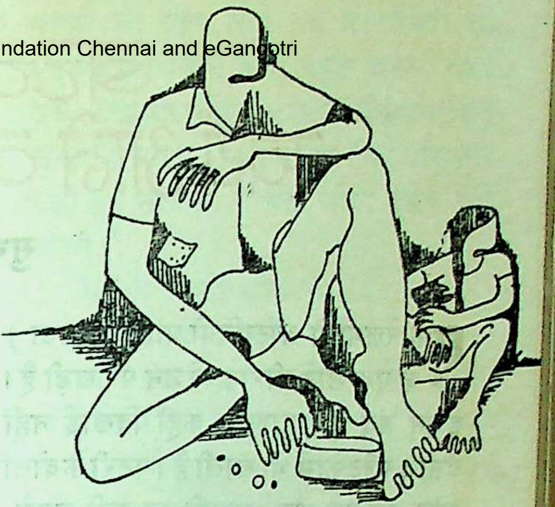

चित्र : शरद कांबळी

'क्या सचमुच तुम्हें, दिन-भर कोई काम नहीं मिला ?' मैंने पूछा । उसने कुछ कहने के बजाय न में सिर हिला दिया ।

मुझे याद आया घर में एक खाट टूटी हुई है, क्यों न उसे बनवा लिया जाये। मैंने उससे कहा–'तुम रुको, मैं तुम्हें काम देता हूं । घर में एक खाट टूटी है, उसे बना दो। तुम्हें पैसे दे दूंगा ।' इतना कहकर मैं अंदर गया। कुछ ही देर में जब मैं टूटी खाट लेकर बाहर आया तो देखा, वह वहां से नदारद था। मैंने आस-पास की गली में देखा, तो कहीं नहीं था। दूर सड़क पर दृष्टि दौड़ायी तो देखा, वह काफी तेज कदमों से चला जा रहा था ।

–रावेल पुष्प, रानीगंज

★

बच्चों के पास स्वयं आने वाला स्कूल

सुरजीत

एक रेलगाड़ी ओंटारियो प्रांत (कनाडा) के एक छोटे वीरान स्टेशन पर खड़ी है। इंजन बंद है। ड्राइवर कहीं दिखाई नहीं देता। प्लैटफार्म भी खाली है। पटरी के दोनों ओर दूर-दूर तक आबादी का कहीं नामो-निशान नहीं। सहसा कुछ बच्चे झाड़ियों में से निकलते हैं और गाड़ी के पास आकर रुक जाते हैं। उनके हाथों में पुस्तकें हैं। और भी बच्चे आ-आकर उनकी टोली में शामिल होते जाते हैं। नौ का घंटा बजता है और गाड़ी का दरवाजा खुल जाता है। बच्चे खुशी से चिल्लाते हुए गाड़ी के अंदर घुस जाते हैं।

वाह ! गाड़ी के अंदर तो सजे-सजाये क्लासरूम हैं, आरामदेह ड़ेस्क हैं। दीवार पर ब्लैक-बोर्ड टंगा है। चारों ओर तस्वीरें, नक्शे आदि हैं। कक्षा आरंभ होती है। अध्यापक पढ़ाने लगता है। बच्चे-बच्चियां बड़ी तन्मयता से पाठ सुनते हैं।

बच्चों के बीच कुछ बड़े भी उपस्थित हैं। वह देखिये, कोने में एक स्त्री और पुरुष बड़ी गंभीरता से पढ़ाई में मग्न हैं। पुरुष की आयु तीस और पैंतीस के बीच की होगी, स्त्री चालीस वर्ष की लगती है।

अध्यापक की पत्नी रेलगाड़ी के रसों घर में भोजन तैयार कर रही है। दोप को सब मिलकर भोजन खायेंगे। क्लासरू और रसोईघर के अतिरिक्त इस रेलगा में पुस्तकालय, अध्ययनकक्ष, भोजनक क्रीडाकक्ष और नहाने के छोटे-छोटे हौ भी हैं। पढ़ाई के बाद बच्चे कैरम और लू आदि खेलते हैं, हौजों में नहाते या अध्य यनकक्ष में बैठकर चटपटी किताबें पढ़ते है

यह स्कूल एक सप्ताह तक यहां रहेगा फिर गाड़ी छक-छक करती हुई अग मंजिल की ओर चल देगी। बच्चे औ अध्यापक बड़े प्यार से एक दूसरे को वि देंगे। ठीक इक्कीस दिन बाद यह चलत फिरता स्कूल फिर यहां हाजिर हो जायेगा

इस प्रकार के बहुत-से चलते-फि स्कूल कनाडा के शिक्षा और रेल्वे-विभा मिलकर चला रहे हैं। छात्रों से कोई फी नहीं ली जाती। गरीब छात्रों को पुस्त कापियां, पेंसिलें भी स्कूल की ओर से मु दी जाती हैं।

गाड़ियों में स्कूल बनाने का खयाल पहं पहल किसे और कैसे सूझा इसकी कहा यों है :

सन १९६२ में सोने की खानें पता लगने से ओंटारियो आबाद होने लगा था। टोलियों में लोग आते और झाड़ियों में थोड़ा-बहुत स्थान साफ करके झोपड़ी तैयार कर लेते। जगह-जगह खदानें बन गयीं, जिनमें मजदूर दिन-रात काम करते। बहुत-से लोग अपने बीवी-बच्चों को भी साथ लाये थे, ताकि घर के सब सदस्य मिलकर अधिक से अधिक कमा सकें।

ओंटारियो आबाद हो गया; किंतु विद्या की किरणों से वंचित ही रहा। खनिकों, मजदूरों, ठेकेदारों और व्यापारियों में से ज्यादातर अनपढ़ थे। दूर-दूर तक कोई स्कूल न था। लोग उसे 'अंधेरा ओंटारियो' कहते।

उन्हीं दिनों क्वीन्स विश्वविद्यालय के एक स्नातक जेम्स बी. मैक्डुगल ने अखबार में पढ़ा कि नार्थ-बे से उत्तर ध्रुव तक बच्चों के लिए केवल चार स्कूल हैं। अपने बीवी-बच्चों को साथ लिये वह ओंटारियो को रवाना हो गया। मार्ग बहुत खराब था। एक जगह डाकुओं ने उसे घेर लिया। किंतु जेम्स हिम्मत न हारा। बोला—'मेरे पास कुछ नहीं है। भाइयो, मैं यहां सोना ढूंढ़ने नहीं आया।'

'तो फिर क्यों आये हो?'

'तुम्हारे बच्चों को पढ़ाने।'

डाकू हंस पड़े, आपस में बोले—'छोड़ो, कोई सिरफिरा मालूम पड़ता है।'

जेम्स मैक्डुगल सचमुच सिरफिरा था। साल-छह महीने वह किसी बस्ती में रहता। रोज झुग्गी-झोंपड़ियों के बच्चों को बटोरकर उन्हें ककहरा और गणित सिखाता। जब वे कुछ पढ़-लिख जाते, तो वह दूसरी बस्ती की ओर चल देता।

जेम्स को बच्चों की अपेक्षा कहीं अधिक परिश्रम करना पड़ा उनके अभिभावकों

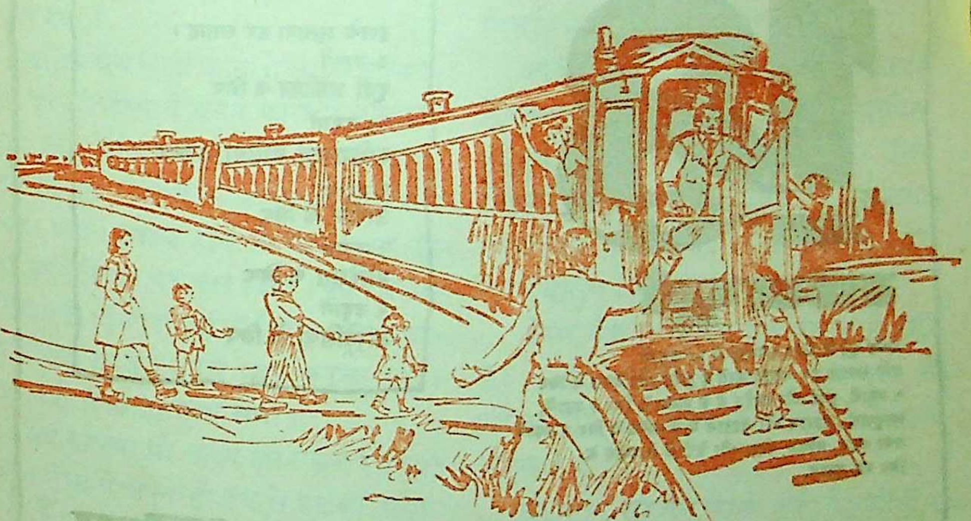

हमारी वापसी उड़ानें आप के लिये फिर से चालू!

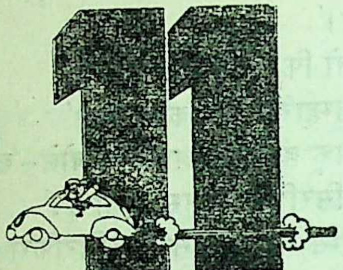

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में ११ उड़ानें
हमारे ७४७ विमान अब फिर से पहले की ही तरह उड़ानें भरने लगे हैं—सप्ताह में ८ बार लंदन के लिए, ४ बार फ्रैंकफर्ट के लिए, ५ बार रोम तथा ५ बार पेरिस के लिए और एक बार जिनेवा के लिए. हमारे ७०७ विमानों की उड़ानें भी शुरू हो गई हैं—सप्ताह में दो बार मॉस्को के लिए तथा एक-एक बार जिनेवा और लंदन के लिए.

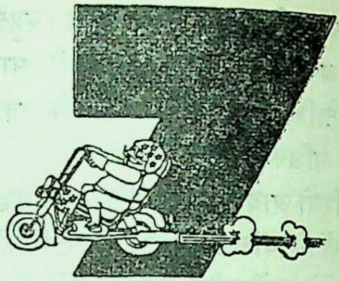

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
सप्ताह में हर रोज ७४७ विमान की उड़ान—मध्य पूर्व तथा यूरोप होते हुए. और हमारे एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत यात्रा करने पर किसी भी जगह जाकर वापस लौटने का किराया एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

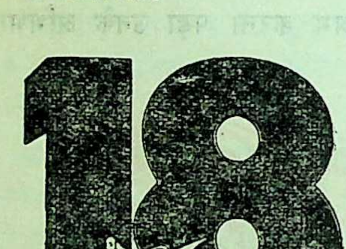

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में १८ उड़ानें
प्रति सप्ताह हम प्रस्तुत करते हैं कुवैत और बेरूत के लिए ५ उड़ानें, दुबई और बहरैन में से प्रत्येक के लिए ३ उड़ानें, आबूधाबी, दहरान और तेहरान में से प्रत्येक के लिए २ उड़ानें तथा अदन, मस्कत, दोहा और कैरो में से प्रत्येक के लिए एक उड़ान.

इसके अलावा हर सप्ताह :
३ उड़ानें
पूर्वी अफ्रीका के लिए
१० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए
६ उड़ानें
जापान के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए

एयर-इंडिया

पर। वे लोग धन-लोलुप हो गये थे और शिक्षा को व्यर्थ की चीज समझते थे। जेम्स उन्हें घंटों समझाता। कुछ तो इतने बिगड़ैल थे कि उलटा उसे फटकारते। लेकिन वह निराश नहीं हुआ। धीरे-धीरे बच्चों में शिक्षा के प्रति रुझान जागा और उसका उद्देश्य फलीभूत हुआ।

केवल पढ़ाने से तो जेम्स की गुजर-बसर हो नहीं सकती थी, सो वह शेष समय में किसी व्यापारी का हिसाब-किताब का काम कर देता, किसी की अर्जी या पत्र लिख देता। इस तरह जीवनयापन करता हुआ वह अपने उद्देश्य की ओर बढ़ता रहा। दोस्त उसके परिवार की आर्थिक दशा देखकर उसे उपदेश देते और घर लौटाने का प्रयत्न करते। पर वह अपने निश्चय पर डटा रहा। टोरोंटो जाकर उसने शिक्षा-विभाग से अपने इस शिक्षा-अभियान के लिए सरकारी सहायता मांगी; मगर इन्कार कर दिया गया।

अधिक श्रम करते रहने से स्वास्थ्य बिगड़ने पर भी जेम्स ने अपने काम में कोताही नहीं की। लेकिन ऐसा कब तक चलता? आखिर उसे टोरोंटो के अस्पताल में भरती किया गया। स्वस्थ होने के बाद तुरंत ही वह अपने मिशन पर चल दिया। वह शिक्षा-विभाग के अधिकारियों से मिला और लगातार आठ घंटे तक उनसे बहस करता रहा। तब कहीं सफलता हाथ लगी।

अब समस्या थी भवन और कर्मचारियों की। जेम्स ने अपने ही ढंग से इसका समाधान ढूंढ़ा। ओंटारियो में रेलमार्ग थे ही। जेम्स ने रेल-विभाग से निवेदन किया कि कुछ डिब्बे और एक इंजन शिक्षाकार्य के लिए सुरक्षित कर दिये जायें। कुछ बहस-मुबाहिसे के बाद रेल-विभाग तैयार हो गया। यही ओंटारियो का पहला चलता-फिरता विद्यालय था।

अब तो जेम्स ने खनिक-बस्तियों में शिक्षा-जागरण का शंखनाद कर ही दिया था। कारोबार और लेन-देन के कामों में वहां पढ़े-लिखों की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी थी। इसलिए लोग अपने बच्चों को पढ़ाने में रुचि लेने लगे और जेम्स का स्वप्न साकार हुआ।

चलते-फिरते विद्यालयों की सफलता का अंदाज एक घटना से आपको हो जायेगा। बारह वर्ष का एक रेड इंडियन बालक शिक्षा प्राप्त करने घर से निकला और आठ दिन बर्फ में पैदल चलकर एक चलते-फिरते विद्यालय में पहुंचा।

ओंटारियो में अब आधुनिक सुविधाओं से युक्त कई चलते-फिरते विद्यालय स्थापित हो गये हैं। हर विद्यालय में बैंक है। सभी विषयों की पढ़ाई की सुविधा है। इनका सारा खर्च कनाडा का शिक्षा-विभाग और रेल-विभाग मिलकर वहन करते हैं।

जेम्स मैक्डुगल अब इस संसार में नहीं है; मगर उसके तप और सूझ-बूझ से ओंटारियो अब अंधकार से बाहर निकल आया है।

—सी ३४, सुदर्शन पार्क, नयी दिल्ली-१५

★

मूल्यांकन

परीक्षा में था एक प्रश्न–
मार्क्स का करो मूल्यांकन।
एक विद्यार्थी ने लिखा उत्तर–
मैं क्या लिख सकता हूं इस पर
मार्क्स तो आपके हाथ में हैं सर।

–मिश्रीलाल जायसवाल
हनुमानगंज, कटनी, म. प्र.

खोज

जब से
कृषि-इंजीनियरों ने
खोज की सफलता के बारे में
मंत्रीजी को बताया है–
'हमने रबर-पाइपों व
कंप्रेसर की मदद से
एक सौ बीस भैंसों को
एक साथ दुहने का
स्वचलित यंत्र बनाया है'
तब से
मंत्रीजी के सुझाव रोज आते हैं–
'क्यों नहीं आप लोग
इसी तरह शोध कर
पूरे मतदाता-वर्ग से
पार्टी के पक्ष में
सैकड़ों वोट एक साथ दुहने का
यंत्र भी बनाते हैं!'

–राजेश कुमार जैन
३५२, राइट टाउन, जबलपुर

होली के छींटे

'मोटी मुर्गी' देखकर, बाबुन करी पुकार।
अफसर आज उड़ाइहैं, काल्हि हमारी बार ।।
मंत्री करै न चाकरी, अफसर करै न काम ।
दास अजूबा कह गये, पिसते क्लर्क तमाम ।।
काल मरे सो आज मर, आज मरे तो अब ।
इतनी महंगाई बढ़ी, तू फेर मरेगा कब ।।

– कुमार 'अशोक' –
२३६, कोतवाली, सुभाष टाकीज के पीछे, जबलपुर

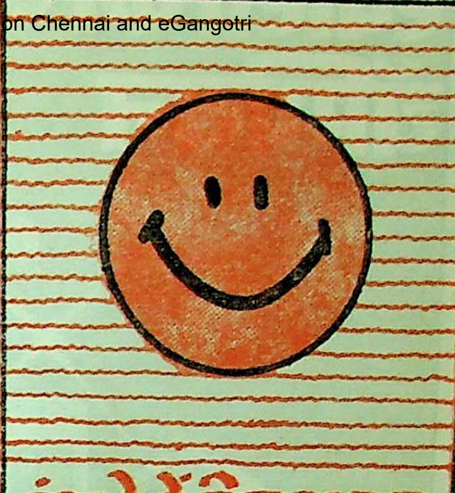

हंसने में कितना सुख

अनुराग शर्मा

एक नवविवाहित युवक ने, जिसे मकान की सख्त जरूरत थी, एक प्रकृतिप्रेमी वृद्ध से पूछा—'क्या आप बता सकते हैं कि मुझे मकान कहां मिल सकता है ?'

'मकान ! लड़के, तुम बहुत नाजुक होते जा रहे हो। खुली हवा में क्यों नहीं रहते ? प्रकृति माता तुम्हें तारों-जड़ा कंबल ओढ़ायेगी, आसमान तुम्हारी छत होगा......'

'साहब, बात यह है कि मैं इससे कुछ छोटी चीज चाहता हूं।'

०००

एक शख्स अपने दादा की पुरानी दीवार-घड़ी मरम्मत कराने के लिए शहर के भीड़-भरे सदर रास्ते से घड़ीसाज के यहां ले जा रहा था। घड़ी के कारण सामने का रास्ता उसे कम दिखाई दे रहा था और किसी स्त्री से उसकी टक्कर हो गयी। वह स्त्री गिर पड़ी, फिर अपनी बिखरी हुई चीजों को समेटकर उठते हुए झुंझलाकर बोली—'तुम भी और लोगों की तरह रिस्टवाच पहनकर क्यों नहीं निकलते ?'

०००

नीलाम हो रहा था। नीलाम करने वाले के पास एक पुर्जा आया। उसने उसे पढ़कर कहा—'सज्जनो, किसी का बटुआ खो गया है। उसमें पचास रुपये हैं। मिल जाये तो बटुए वाला दस रुपये दे रहा है।'

'ग्यारह !' पीछे से आवाज आयी।

०००

एक विदेशी : जब मैं हिंदुस्तान में था, तो छड़ियों को सांप समझ बैठता था।

दूसरा : कोई नुक्सान नहीं।

पहला : लेकिन मैं उन्हें मारने के लिए सांप उठा लिया करता था।

०००

'अगर चुनाव में आप चुन लिये गये तो क्या करेंगे ?'

'अरे यह पूछो कि अगर न चुना गया तो क्या करूंगा।'

०००

खासी का पछाड़नेवाला चॅम्पियन

Alembic

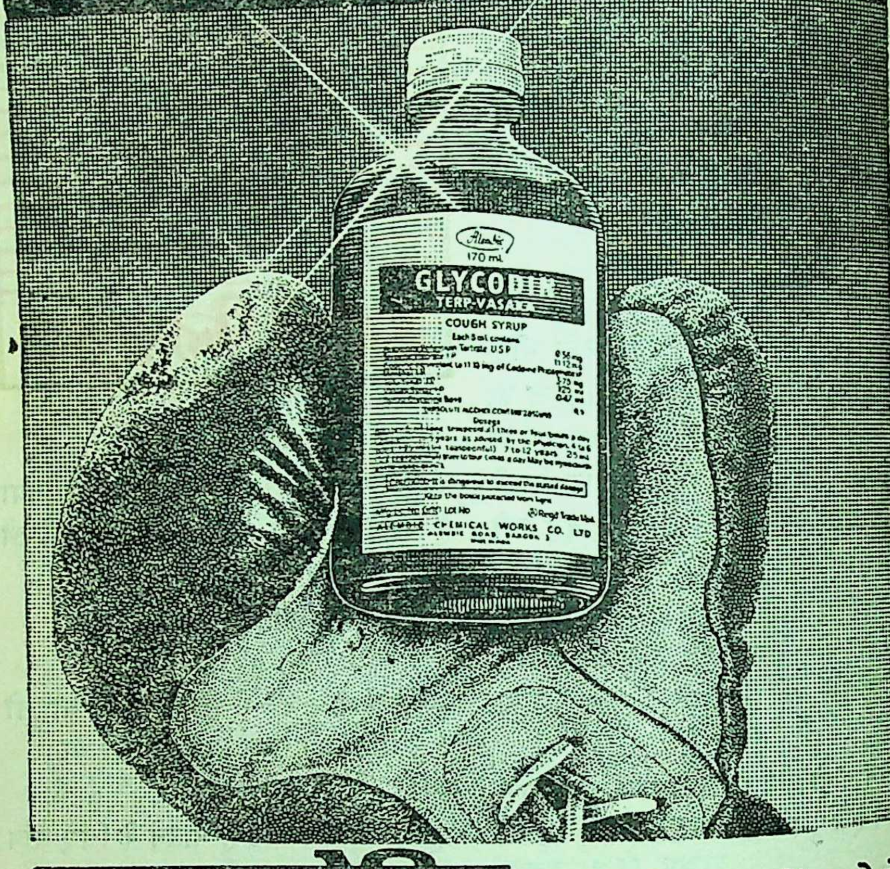
Alembic
170 ml
GLYCODIN
TERP-VASAKA
COUGH SYRUP
ALEMBIC CHEMICAL WORKS CO. LTD

ग्लायकोडिन वर्षों से लाखों लोगों की खाँसी पर पूरा काबू पाने में खाँसी के अन्य इलाजों से ज़्यादा असरकारक और जोरदार साबित हुआ है. □ ग्लायकोडिन दिमाग, गला, छाती और फेफड़ों जैसे खाँसी के चारों मोर्चों पर हमला कर खाँसी को मार भगाता है. ● तेज असर करनेवाला ● मधुर स्वादवाला ● किफ़ायती

ग्लायकोडिन — भारतभर में खाँसी का सबसे अधिक लोकप्रिय और विश्वसनीय इलाज.

everest/617/ACW Hin

एक रोज शाम को पति-पत्नी मोटर लेकर सैर को निकले । रास्ते में एक फकीर से युवक को लिफ्ट दी । थोड़ी ही देर बाद पति ने देखा कि उसकी घड़ी गायब है । उसने जेब से पिस्तौल निकाली और युवक के सीने पर तानकर बोला—'घड़ी रख दो।'

युवक ने चुपचाप घड़ी दे दी । उसे वहीं उतार दिया गया । कुछ आगे जाने पर पत्नी बोली—'तुम भी गजब की हिम्मत वाले हो ! चलते वक्त जब तुम घड़ी को टेबल पर ही भूल आये, तो मुझे फिक्र हुई थी कि टाइम कैसे देखेंगे ।'

०००

पहाड़ की कठिन चढ़ाई चढ़ते-चढ़ते मार्गदर्शक ने प्रवासी को चेतावनी दी—'यहां सावधान रहियेगा । जरा चूके कि गहरी घाटियों में जा गिरेंगे । अगर गिर ही जायें, तो गिरते-गिरते सीधी तरफ देखियेगा, हिमालय का बड़ा भव्य दृश्य देखने को मिलेगा ।'

०००

घुड़दौड़ की घोड़ी का शेखीबाज मालिक कह रहा था—'जी हां, एक बार बारह घोड़ों की दौड़ में मेरी घोड़ी भी दौड़ी । आस-पास के इलाके के बेहतरीन घोड़े थे वे । जैसी कि मुझे उम्मीद थी, मेरी घोड़ी आगे रही ; पर बीच में मैंने उसे धीमे पड़ते देखा । वहीं बच्चा जन दिया उसने !'

'अरे-अरे ! किस तरह हारी बेचारी !'

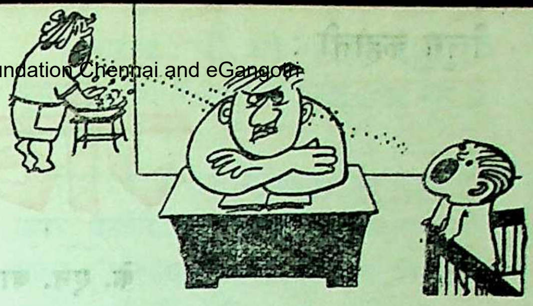

स्टीरियोफोनिक ध्वनि

'हारने की बात कौन कह रहा है ? हारने वाली तो वह थी ही नहीं ! बच्चा दिया, फिर भी अव्वल रही । और बच्चा दूसरे नंबर पर आया ।'

०००

पिछले साल एक आदमी ने सौ बरस की उम्र पूरी की । अखबारी संवाददाता आये और उसके दीर्घ जीवन का रहस्य पूछने लगे । बहुत देर विचार करने के बाद बूढ़ा बोला—'आज सौ वर्ष का हूं, इसका मुख्य कारण यह है कि मैं १८७४ में जनमा था ।'

०००

पिछले महीने चोरी से सुना गया वार्तालाप :

'क्या तुम दिसंबर में भी मुझसे उतना ही प्यार करोगे, जितना आज फरवरी में कर रहे हो ?'

'उससे भी अधिक, प्रिये ! दिसंबर में तो और भी ज्यादा दिन होते हैं ।'

—फिल्म कला केंद्र, मेवा परदेशी सदन,
गोकुलवाड़ी, खोपट, थाना (बंबई)

* * *

तेलुगु कहानी :

गंवार

के. एन. वाइ. पतंजलि

उम्र से ही नहीं, शरीर से भी वह मुझसे दुगुना है। अगर वह किसान ही है, तो उसके खेत के लिए आवश्यक सारी खाद उसके शरीर से जरूर मिल जायेगी।

लगता है, उसके शरीर पर ही नहीं, खोपड़ी के भीतर भी कीचड़ है। यदि उसकी खोपड़ी में थोड़ी-सी भी अक्ल होती, तो वह इस तरह का बरताव नहीं कर सकता था। जब मैंने उससे बड़ी शिष्टता से पूछा कि 'क्या मैं आपकी सीट पर बैठ जाऊं?' तो उसने मुंहफट ढंग से कह दिया—'नहीं, मुझे चुरुट पीना है ......'

इसे चुरुट पीने नहीं दूंगा। मैंने दृढ़तापूर्वक निश्चय कर लिया है।

बस अब तेज रफ्तार पकड़ चुकी है। हवा के झोंकों से उसके बाल लहरा रहे हैं, जिनमें से हल्की-सी बदबू निकल रही है। उसके कान हथेलियों के समान चौड़े हैं, और उनमें स्कूटर के पहियों के बराबर के छिद्र हैं, जिनमें मैले झूमक लटक रहे हैं।

असल में मुझे सवेरे से सिरदर्द हो रहा था। नींद से उठते ही यह सिरदर्द बेकाम की पत्नी और काम के मारे आ धमके मित्र की भांति मेरे सिर पर सवार हो गया।

फिर से मेरी नजर बगल में बैठे गंवार की तरफ गयी। खिड़की में से वह शायद पेड़-पौधों तथा फसल को देख रहा है बड़ी तल्लीनता से। मुझे लगा कि यदि उसकी दृष्टि उन पेड़-पौधों पर पड़ी, तो जरूर वे सबके सब सूख जायेंगे।

अभी भी वह चुरुट सुलगाने का उपक्रम नहीं कर रहा है। मैं इसी ताक में बैठा हूं कि वह चुरुट निकालकर सुलगाने का प्रयत्न करे कि मैं झट-से पहले अंग्रेजी में और बाद में तेलुगु में गाली दूं। पर उस कमबख्त गंवार का ध्यान चुरुट की तरफ जाता ही नहीं है तो मैं क्या करूं?

खिड़की के पास वाली सीट पर गंवार बड़े मजे से बैठा है। यह सीट अगर वह मुझे दे देता तो एक हाथ खिड़की के सींखचे पर और दूसरा हाथ अगली सीट की पीठ पर रखकर सिर टिका लेता—कम से कम सिरदर्द के मौके पर।

आखिर मैंने साहस करके उस पत्थर-दिल से पूछा कि वह कहां उतरेगा और कब मुझे खुशी के पहाड़ पर बैठा देगा। उसने घूरकर मुझे देखा और कहा—'सोडारम्!'

मैं मन ही मन बोल उठा—'भगवान!'

मैं तो लुट गया ।' जाहिर था कि यह गंवार मुझे अंत तक नहीं छोड़ेगा।

'तुम कहां के रहने वाले हो ?' गंवार ने मुझसे सवाल किया।

मैंने अपनी बायीं तरफ देखा कि करीब तीस वर्ष का एक युवक टेरिलीन के सूट में लिपटा हुआ किसी साप्ताहिक पत्रिका में दृष्टि दौड़ा रहा है।

'कहां जा रहे हो जी ?' गंवार ने फिर से सवाल किया।

धीमी आवाज में जवाब दिया—'वेस्ट-जर्मनी।'

गंवार की समझ में शायद नहीं आया। 'वह कहां है ?' आश्चर्य के साथ प्रश्न किया।

'चोडवरम् के आगे पड़ता है।'

'सोडारम् में बस खत्म हो जाती है और उससे आगे नहीं जाती।' उसने एक भोंडी हंसी फेंकी।

उसकी हंसी मुझे असह्य लगी और मैंने लापरवाही से जवाब दिया— 'तुम नहीं जानते, चोडवरम् में उतरकर वहां से पैदल जाया जा सकता है।' बस उसके मुंह पर ताला लग गया।

बस रुकी चिन्नापुरम् जंक्शन पर। दो-चार मुसाफिर बस से उतरे, पर छह-सात बस में आ धमके।

चित्र : विष्णु भटनागर

अनुवाद : पी. वी. नरसा रेड्डी

सिरदर्द धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है, ऊपर थकावट और ऊब और गंवार की बदबू। वास्तव में बौद्धिक लोग गंभीरता साधे रहते हैं, लेकिन जो आगे चलकर बौद्धिक बनने वाले होते हैं उन्हें (यानी मेरे जैसों को) शायद चिड़चिड़ाहट होना अनिवार्य होता है।

मेरी दृष्टि बगल वाली सीट पर बैठे भद्र पुरुष पर पड़ी। मन में सोचा कि उससे साप्ताहिक मांगूं तो अच्छा रहेगा। थोड़ी

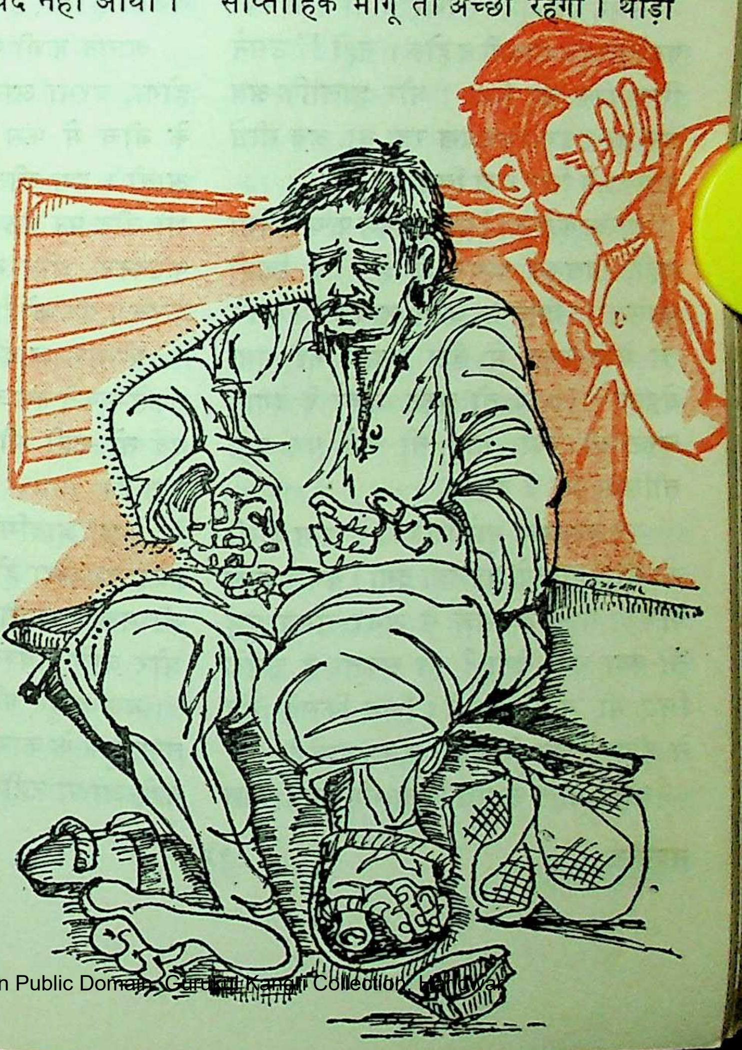

पशुपालक : अब्बू

देर पन्ने उलट-पुलटकर शायद सिरदर्द को भूल सकूं–'पत्रिका जरा देख सकता हूं ?' मैंने अपना हाथ उसकी तरफ बढ़ाया।

उसने मुझे घूरकर देखा, मानो मैं पत्रिका पढ़ने लायक आदमी न होऊं। 'नहीं !' उसने निस्संकोच कह दिया। और हालांकि अब तक वह इधर-उधर देख रहा था, अब सीधे पत्रिका में सिर गड़ा लिया।

टुच्चा कहीं का ! उसका दिल पत्थर-जैसा नहीं, बिलकुल पत्थर ही है। यह किसी कालेज का प्रिंसिपल बनने लायक है। इससे तो मेरी बगल में बैठा गंवार कई गुना बेहतर है। मांगूं तो चुरुट जरूर दे देगा। चुरुट ही क्यों, मांगूं तो कंधे पर पड़ा तौलिया भी दे देगा।

पर कमबख्त मुझे खिड़की के पास वाली जो सीट चाहिये, वह नहीं देगा। बगल वाले पत्रिका वाले बदमाश से अगर समय पूछूं तो क्या बता देगा ? हो सकता है उसके लिए भी 'नहीं' कह दे। किस-किसके मुंह से कैसा उत्तर मिलेगा, कौन जाने ?

बगल वाले से पूछे बिना भी समय जान सकता हूं बड़ी आसानी से। जब उसने हाथ नीचे रखा, घड़ी से देख लिया। ठीक एक बजा है।

धूप बहुत तेज है। चोडवरम् पहुंचने में और तीन घंटे बाकी हैं। तीन घंटे !!! वह भी दो कमीनों के बीच में ......! साथ में सिरदर्द ......! मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि परीक्षा के हॉल में पूरे तीन घंटे कागज पर कलम रखे बिना इत्मीनान से बैठना भी इतना मुश्किल नहीं होगा। इतना ही नहीं, कोई भी भोंडी तेलुगु फिल्म या नाटक बड़ी संजीदगी के साथ देखा जा सकता है। पर इन दोनों के बीच में ......?

शायद कभी मैंने बहुत बड़ा पाप किया होगा, वरना आज इन दो टुच्चे आदमियों के बीच में फंस जाने की नौबत ही नहीं आती। इस सीट को छोड़कर और किसी भी सीट पर बैठ सकता हूं। न सरकार, न कंडक्टर, और न ही मुसाफिर मुझे मना करते। पर कोई भी खाली सीट है नहीं।

बीमार आदमी की तरह जगह-जगह रुकते-रुकते बस चली जा रही है। पर सिरदर्द तो कहीं भी रुके बिना बढ़ता ही जा रहा है।

कुछ आदमियों को देखते ही चिड़चिड़ाहट पैदा हो जाती है, और मारने को जी मचल उठता है। मेरे दायीं और बायीं ओर वाले अवश्य इस वर्ग में आते हैं।

बस कछुए की चाल चल रही है। हवा तकल्लुफ के कारण गंवार को छोड़ मेरे पास नहीं आ पा रही है।

आगे वाली सीट पर दोनों हाथ रखकर सिर टिका लिया। धूल से लदे गंवार के पांव मोटी-मोटी चप्पलें खोंसे हुए हैं। पैरों के पीछे एक मैली थैली भी है।

पलकें मूंदते ही चक्कर आने की शंका होने लगी। आंख खोलकर नीचे देखने लगा। गंवार ने नीचे झुककर पैरों के बीच की थैली बाहर खींच ली। तमाम थैली में मूंगफली! उसने दोनों मुट्ठियों से मूंगफली बाहर निकालकर फिर थैली पैरों के पीछे कर दी।

घास छीलने या कुल्हाड़ी से लकड़ी चीरने लायक अपनी खुरदरी उंगलियों से अब वह मूंगफली के छिलके 'चिटुक ...... चिटुक ......' तोड़कर दाने निकालकर खा रहा था।

छिलके तोड़ने और जानवर की तरह चवड़-चबड़ चबाने की असह्य आवाजें पल-पल मुझमें दहशत भरने लगीं......।

बस तो आगे बढ़ती जा रही है, दूरी के साथ मेरी सहन-शक्ति भी कम होती जा रही है।

'चिटुक ...... चिटुक ......' आवाज। मेरे कानों पर नहीं, मेरे दिमाग पर नहीं, सीधे मेरी सहन-शक्ति पर हथौड़ियों की मार! बेहद दर्दनाक! मेरी बगल वाली सीट पर बैठे टेरिलीन-धारी का इस तरफ ध्यान ही नहीं गया।

लोग कितने बदतमीज हैं! बगल वाले के दुःख-दर्द से कोई वास्ता नहीं रखते। पढ़ने वाले क्या चाहते हैं, लिखने वाला नहीं जानता। बस में बैठे मुसाफिर किस हालत में हैं, यह जानने की तमीज कंडक्टर भी नहीं रखता। हॉरिबल्! खासकर ऐसी ऊबड़-खाबड़ रूट-बसों में सफर करना मेरे-जैसे नाजुक-मिजाज आदमियों के लिए नरकतुल्य है। असल में, बस में हर किसी बदतमीज को बैठाना नहीं चाहिये। अगर बैठ भी जाये, तो बस के अंदर गंदी चीजें चबाने की छूट नहीं देनी चाहिये। यदि कोई इस नियम की अवज्ञा करके चबाने की कोशिश करे, तो उसकी जेब में से सारे पैसे निकालकर उसे आधे रास्ते में बस से उतार देना चाहिये।

यदि मुझे सिर्फ एक दिन के लिए ही सही डिक्टेटरशिप दे दी जाये, तो सबसे पहले इस गंवार से शुरू करके तमाम बदतमीजों को मृत्युदंड दिलवा दूं। इतना ही नहीं, समाज के लिए हानिकारक कहानीकारों, भोंडे सिने-प्रोड्यूसरों तथा सुंदर लड़कियों के संगदिल बापों को भी इसी सेक्शन के मातहत ले जाऊं। खैर, यह सब पवन-चक्कियों से लड़ने की बात हुई। लेकिन इस वक्त तो मैं इस गंवार को मूंगफली खाने से रोकने में असमर्थ हूं।

सिरदर्द मेरे भेजे को कुतर-कुतरकर खा रहा है। गंवार मूंगफली चबाता ही जा रहा है। बगल की सीट पर बैठे टेरिलीन-धारी की घड़ी की सूइयां घूमती ही जा रही हैं।

बस कोत्तवलसा आ पहुंची। टेरिलीन-धारी उतर गया। उसकी जगह पर एक

बेलबाटम वाला युवक बैठ गया। गोरा-चिट्टा, नाजुक और पतला-सा। मेरी तरफ देखकर शिष्टता से एक मुस्कान फेंक दी।

गंवार ने पकौड़ियां खरीद लीं और गिलास-भर मट्ठा पी लिया। इन्डीसेंट, अन्हाइजिनिक! हर गंदी चीज को खरीदकर चबाना और निगलते जाना! कुल मिलाकर अब तक समाज खाने की अवस्था से आगे नहीं बढ़ा है।

कुछ मुसाफिर उतर गये। पर मेरे सिर पर सवार दर्द नहीं उतरा। थोड़ी देर के बाद बस आगे बढ़ी। सिरदर्द के साथ प्राणों को उखाड़ फेंकने वाली पकौड़ियां चबाने की गंदी आवाज। धीरे-धीरे पेट में ऐंठन शुरू हुई और बाद में मुंह में लार उबलने लगी।

नया लड़का जो बैठा है, वह बहुत अच्छा, सभ्य लग रहा है। उसने स्नेहपूर्वक मुस्कराकर सुपारी के टुकड़े मेरी तरफ बढ़ाये। तकल्लुफ के मारे मैंने एक टुकड़ा उठा लिया, मानो श्रीमान संपादक महोदय ने लेखकों से प्राप्त अनगिनत रचनाओं में से सिर्फ एक रचना को प्रकाशनार्थ स्वीकार कर लिया हो।

इतने अच्छे लड़के से कुछ इधर-उधर की बातें की जायें तो बड़ा मजा आये। पर मेरे शरीर में अब इतनी भी ताकत नहीं बची।

बस हिचकोले खाती जा रही है। पेट में ऐंठन ज्यादा होने लगी। असल में मुझे भोजन नहीं करना चाहिये था।

अब सोचने से कोई फायदा नहीं ...... फायदा नहीं......नहीं......कै आने का संकेत मिला ...... अब मुझसे रोकते न बना...... एकदम कै कर दी।

मेरे जूतों पर, गंवार के पांवों पर अधपचे चावल। मुझे लगा, गंवार आज मेरा खात्मा कर देगा......जरूर!

'अरे रे!' गंवार हड़बड़ा गया। अब घूंसों के वार ही बाकी रह गये।

'हिस्स!' बगल वाली सीट पर बैठा नाजुक लड़का नफरत-भरी नजरों से सीट खाली करके आगे जा खड़ा हो गया।

मैं पछताने लगा।

'छि: ! छि: ! आपने क्या कर दिया! इत्तिला देते तो हम बस रोक लेते...... सारा फ्लोर खराब कर दिया ......' कंडक्टर झुंझलाया।

शरीर ठंडा पड़ता जा रहा है और बेहोशी की अवस्था में पहुंच रहा है। दिल की धड़कन तेज होने लगी। मैं ढह पड़ा। आगे की सीट से मेरा सिर टकरा गया।

'अरे रे! ... बेचारा ... !' जरूर वह गंवार की आवाज होगी।

घास छीलने, लकड़ी चीरने और मूंगफली के छिलके तोड़ने के लिए बने खुरदरे हाथों ने मेरे सिर को बड़े प्रेम से पकड़कर धूल से भरी, मैली तथा बदबूदार गोद में ले लिया।

मेरे गर्म माथे को धीमे-से सहलाकर मेरी आंख धीरे-से बंद कर दी ... वे ही गंदी खुरदरी उंगलियां ... वे हाथ उसी गंवार के हैं जिन्हें मैंने अब तक असह्य और घृणित करार दिया था।

* * *

रासायनिक ऊर्जा

डा. जगदीश लूथरा

आज हर कोई ऊर्जा-संकट की बात कर रहा है। संसार के सभी राष्ट्र इस संकट से परेशान हैं और ऊर्जा के नये स्रोतों का पता लगाने में जुटे हैं। पिछले लेखों में तुमने परमाणु-ऊर्जा के बारे में जानकारी प्राप्त की। परंतु क्या तुमने कभी सोचा है कि लकड़ी (या ईंधन) जलाने से हमें ऊर्जा कैसे प्राप्त होती है? आज उस ऊर्जा के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त करें।

सबसे पहले इस बात पर विचार करें कि ऊर्जा है क्या ? वैज्ञानिक भाषा में कहें तो यह एक दशा है, जो किसी संकाय की स्थिति, चाल, तापमान या और गुण-धर्म में परिवर्तन ला सकती है। परंतु यह तो बड़ी हवाई-सी परिभाषा है। असल में ऊर्जा विज्ञान की मूलभूत संकल्पना है, जो कार्य करने की क्षमता के साथ जुड़ी हुई है।

बल (फोर्स) क्या है ? खींचना और धकेलना। यदि बल किसी वस्तु को कुछ दूरी तक सरका देता है, तो हम उसे यों कह सकते हैं—बल × दूरी = कार्य। जिसमें ऊर्जा है वही यह कार्य कर सकता है, यानी वही किसी चीज को खींच या धकेल सकता है। इसका उलटा भी सही है। अर्थात् किसी वस्तु पर कार्य किया जाये, तो उसमें ऊर्जा की वृद्धि हो जाती है। इस तरह ऊर्जा को कार्य के संदर्भ में समझा या नापा जा सकता है।

ऊर्जा के कई रूप हैं, जो एक दूसरे में बदले जा सकते हैं। ऊर्जा रासायनिक और न्यूक्लीय पदार्थों में या बड़े-बड़े बांधों के पीछे रोके गये पानी में संचित की जा सकती है। इन शांत या सुप्त अवस्थाओं में इसे स्थितिज ऊर्जा कहते हैं। यदि किसी पदार्थ में यह स्थितिज ऊर्जा काफी मात्रा में व्याप्त है और उसे आसानी से मुक्त किया जा सकता है, तो उस ऊर्जायुक्त पदार्थ को ईंधन कहते हैं।

ईंधन में संचित ऊर्जा से हम गर्मी प्राप्त करते हैं, कार, वायुयान इत्यादि चलाते हैं, यानों को अंतरिक्ष में ऊपर भेजते हैं। ये सब रासायनिक ऊर्जा की ही करामातें हैं। पेड़-पौधों और जीवधारियों में संचित रासायनिक ऊर्जा जीवन के मूलभूत कामों में उपयोग में लायी जाती है। बैटरी में संचित इस ऊर्जा की वजह से हम प्रकाश प्राप्त करते हैं, कार चालू करते हैं और बहुत-से इलेक्ट्रानिक उपकरणों को चला

पाते हैं।

रासायनिक ऊर्जा वह ऊर्जा है, जो अणुओं को आपस में जोड़ने वाले बलों पर निर्भर करती है। जब कोई रासायनिक क्रिया होती है, तो अणु में परमाणुओं की संख्या में हेर-फेर या पुनर्विन्यास होता है; उसके दौरान रासायनिक ऊर्जा में घटोतरी-बढ़ोतरी होती है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है–अणुओं के निर्माण में ऊर्जा की मुक्ति।

अब जरा देखें कि कोयले के जलने के दौरान ऊर्जा किस प्रकार प्राप्त होती है।

कोयला मुख्यत: कार्बन के परमाणुओं से बना होता है। वायु में व्याप्त आक्सिजन स्वतंत्र परमाणुओं के रूप में नहीं, बल्कि आक्सिजन के अणु के रूप में रहती है, जो कि दो आक्सिजन परमाणुओं का बना होता है। कोयला आक्सिजन के वातावरण में जलकर कार्बन डाईआक्साइड बनाता है। यह क्रिया दो चरणों में होती है। पहला चरण है, आक्सिजन के एक अणु का दो परमाणुओं में टूटना; दूसरा है, आक्सिजन के दो परमाणुओं का कार्बन के एक परमाणु से मिलकर कार्बन डाईआक्साइड का अणु बनना।

पहला चरण पूरा करने में हमें देनी पड़ती है। यह चरण सामान्य ताप पर नहीं होता, क्योंकि सामान्य ताप पर ऊष्मा इतनी नहीं होती कि आक्सि के अणु को तोड़ सके। यदि हम बाहर माचिस जलाकर या लकड़ी जलाकर ऊष्मा प्रदान करें, तो यह क्रिया शुरू जायेगी। परंतु हमें केवल क्रिया शुरू क के लिए ही ऊष्मा देने की जरूरत प है। यह सिलसिला शुरू हो जाने के दूसरे चरण (यानी कार्बन डाईआक्सा के निर्माण) में जो ऊर्जा निकलती है, आक्सिजन के अणु को तोड़ने वाली से इतनी ज्यादा होती है कि बाहर से ऊर्जा देने की जरूरत नहीं पड़ती।

इस तरह कोयले के जलने से संचित रासायनिक ऊर्जा ताप के हमारे सामने आती है। हालांकि इसका भाग अभिक्रिया को चालू रखने में हो जाता है। इस प्रक्रिया में इतनी निकलती है कि अणु और परमाणु प्र का उत्सर्जन करते हैं। हम जो कोयले निकलने वाली लपटें देखते हैं, वे असल कोयले के ढेर से बाहर निकलने अणु हैं, जो एक प्रकाश छोड़ते हैं। क्रिया एक बार हो जाये, तो तब चलती रहेगी, तक पूरा का कार्बन जल न

$$O_2 + \text{ऊर्जा} \rightleftharpoons 2\,O$$

आक्सिजन परमाणु + ऊर्जा ⇌ आक्सिजन अणु

$$C + 2\,O \rightleftharpoons CO_2 + \text{ऊर्जा}$$

कार्बन + आक्सिजन अणु ⇌ कार्बन डाईआक्साइड + ऊर्जा

या आक्सिजन खत्म न हो जाये।

$CH_4 + O_2 \rightleftharpoons CO_2 + H_2O +$ ऊर्जा

मीथेन + आक्सिजन ⇌ कार्बन डाईआक्साइड + जल + ऊर्जा

कोयले का जलना रासायनिक ऊर्जा के मुक्त होने का सबसे आसान ढंग है। मीथेन गैस या दूसरे हाइड्रो-कार्बनों का जलना भी इसी तरह का है। यहां पर भी प्रक्रम शुरू करने के लिए आरंभिक ऊष्मा की आवश्यकता होती है। यहां पर आक्सिजन के अणु को तोड़ने के अतिरिक्त हायड्रोकार्बन के अणु को भी तोड़ने के लिए शुरू में ऊर्जा देने की जरूरत पड़ती है। कार्बन आक्सिजन के साथ मिलकर कार्बन डाईआक्साइड बनाता है और हाइड्रोजन आक्सिजन से मिलकर पानी। मीथेन (और दूसरे हाइड्रोकार्बन) के जलने पर बहुत अधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है।

इसी तरह दूसरे अणु जो कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सिजन से बने होते हैं, जल सकते हैं। यानी उन्हें हवा में व्याप्त आक्सिजन की सहायता से कार्बन डाईआक्साइड और पानी में बदला जाता है। अल्कोहल, शक्कर इत्यादि को जलने के लिए बहुत कम आक्सिजन चाहिये, क्योंकि उनमें पहले से ही आक्सिजन विद्यमान रहता है।

रासायनिक अभिक्रियाएं, जिनमें ऊर्जा निकलती है, हमेशा कमजोर बंधन वाले अणुओं से शुरू होकर मजबूत बंधन वाले अणुओं पर खतम होती हैं। असल में देखा जाये तो कमजोर और मजबूत बंधनों की तीव्रता की कमी बाहर निकलने वाली ऊर्जा का मान बताती है।

कार्बन और हाइड्रोजन से बने अणु बड़े ही कमजोर बंधन वाले होते हैं और आसानी से तोड़े और पुनः जोड़े जा सकते हैं और लंबी शृंखला बना सकते हैं। इन गुणों के कारण ये अणु बड़े ही जटिल संरचना के हो सकते हैं। आक्सिजन से उन्हें मजबूत बंधनों वाले अणुओं में बदलने पर ये ऊर्जा प्रदान करते हैं। किसी बंधन को तोड़ने के लिए ऊर्जा के एक विशेष परिमाण की आवश्यकता पड़ती है, और बंधन बनने में इतनी ही ऊर्जा का लाभ होता है।

हमारी पृथ्वी पर इस तरह का वातावरण है कि अणु लगातार बनते और टूटते रहते हैं। यदि हमारी पृथ्वी पर भी सूर्य की तरह का तापमान होता, तो अणु बन ही न सकते; क्योंकि उनमें इतनी हलचल (तापीय विक्षोभन) होती कि वे आपस में मिलकर अणु न बना सकते। यदि हमारी पृथ्वी इतनी ठंडी होती कि अणु इकट्ठे होकर ठोस पिंड का रूप ले लेते तो उन्हें तोड़ने के लिए काफी ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती। हमारी पृथ्वी का तापमान ऐसा है कि कुछ अणु टूटते रहते हैं और बनते रहते हैं। सो यह क्रम चलता रहता है और हम ऊर्जा प्राप्त कर पाते हैं। **[क्रमशः]**

—१२ ए, अल्मोड़ा, अणुशक्ति नगर, बंबई

★

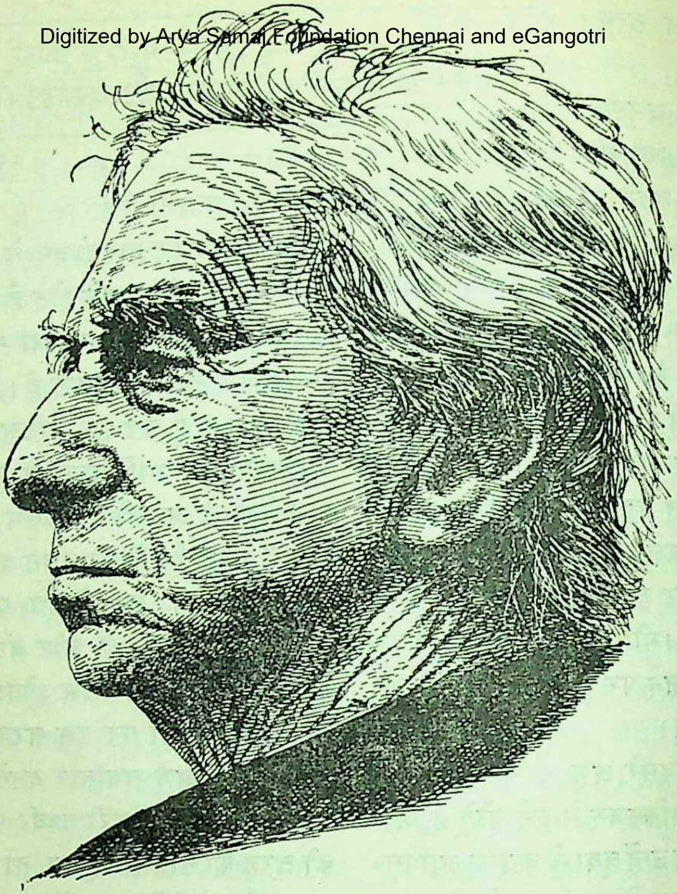

पत्रों के दर्पण में रसेल

बीसवीं शताब्दी के महान दार्शनिक बर्ट्रैंड रसेल (१८७२-१९७०) का व्यक्तित्व अत्यं प्रखर, विलक्षण एवं वैविध्यपूर्ण था। मौलिक दार्शनिक के अलावा वे गणितज्ञ शिक्षाविद्, साहित्यकार, राजनैतिक चिंतक, प्रगल्भ वक्ता एवं विश्वव्यापी परमाणु-अस् विरोधी आंदोलन के नेता भी थे। १९५० में उन्हें साहित्य का नोबेल पुरस्कार दिया ग था। उन्होंने इंग्लैंड, अमरीका एवं चीन में अध्यापन किया था। वे लीक से हटकर चलने वाले आदमी थे। उन्होंने चार विवाह किये और सेक्स एवं विवाह के मामलों में उन्होंने

अरुण सेदवाल द्वारा प्रस्तुत

स्वतंत्रता का समर्थन किया। उन्होंने सत्तर के लगभग ग्रंथ और कई सौ लेख लिखे।

विश्व-राजनीति में वे न्याय एवं शांति के समर्थक थे और [illegible] परमाण-अस्त्रों के घोर विरोधी। १९६२ में क्यूबा-संकट और भारत-चीन युद्ध को सीमित करने में भी उन्होंने हाथ बंटाया। वियतनाम में अमरीका की उपस्थिति के वे कट्टर विरोधी थे। अमरीका के वियतनाम-युद्ध-अपराधों की जांच करने के लिए स्थापित अंतरराष्ट्रीय ट्रिब्यूनल की उन्होंने अध्यक्षता की थी। अपने विभिन्न आंदोलनों के सिलसिले में वे गिरफ्तार भी हुए और झूठे प्रचार के शिकार भी। परंतु अन्याय का विरोध करने में वे जीवन-भर अग्रणी रहे। पूंजीवाद एवं साम्यवाद के वे समान रूप से विरोधी थे और गिल्ड-समाजवाद को इनका श्रेष्ठ विकल्प मानते थे। वे नास्तिक थे।

पत्र-लेखक के रूप में उनके व्यक्तित्व का एक रोचक पहलू उजागर होता है। वे अपने नाम आये प्रत्येक पत्र का शीघ्र उत्तर देते थे और इसमें तनिक भी विलंब हो जाये तो क्षमा-याचना भी करते थे। संसार के लगभग सभी देशों से उन्हें पत्र मिलते थे, जिनके लिखने वालों में प्रख्यात राजनीतिज्ञों (ख्रुश्चोव, केनेडी, नेहरू, चाउ एन-लाइ आदि), दार्शनिकों, प्राध्यापकों से लेकर सामान्य गृहणियों, किशोरों एवं बच्चों तक सभी वर्गों, वयों और स्तरों के लोग थे। पत्रों के विषय भी अनंत विविधता से भरे। कोई उनसे अपने दार्शनिक विचारों की व्याख्या करने का अनुरोध करता, तो कोई उनसे उनके जीवन की मामूली बातें भी पूछता—मसलन उनकी प्रिय पुस्तक, प्रिय व्यंजन, प्रिय गीत इत्यादि के बारे में। कुछ लोग उन्हें अपनी व्यक्तिगत समस्याएं लिखते और समाधान मांगते। उनके हस्ताक्षरित चित्रों की मांग भी बहुत होती थी।

इतने अधिक पत्रों का उत्तर व्यक्तिगत रूप से देने के लिए वे अपने अत्यंत व्यस्त कार्यक्रम में से समय कैसे निकाल लेते थे, यह उनकी दिनचर्या से प्रकट होता है। २६ मार्च १९६३ को बुडापेस्ट के एक सज्जन के पत्र के उत्तर में उन्होंने लिखा था—'सवेरे आठ से साढ़े ग्यारह बजे तक मैं पत्रों के उत्तर लिखता हूं और समाचारपत्र पढ़ता हूं। मुझे प्रतिदिन औसतन एक सौ पत्र प्राप्त होते हैं। साढ़े ग्यारह से एक बजे तक आगंतुकों से मिलता हूं। दोपहर के बाद दो से चार बजे तक पढ़ता हूं—प्रायः परमाणु-विज्ञान संबंधी सामग्री। संध्या के चार से सात तक लेखन-कार्य करता हूं या आगंतुकों से भेंट करता हूं। रात्रि के आठ से एक बजे तक पढ़ता या लिखता हूं।' इससे यह भी प्रकट होता है कि वृद्धावस्था में भी वे कितना परिश्रम किया करते थे। प्रशंसकों एवं आलोचकों दोनों के पत्रों के उत्तर वे एक-से धीरज से देते थे। उनका चिंतन स्पष्ट एवं तर्कपूर्ण होता था और अपने विचारों के प्रति वे अत्यंत निष्ठावान थे।

यहां दिये जा रहे चंद चुनिंदा पत्र उनकी प्रखर बुद्धि, सुस्पष्ट चिंतन एवं सारपूर्ण

अभिव्यक्ति के दर्शन कराते हैं। धर्म, दर्शन, राजनीति, शिक्षा, काम (सेक्स) आदि वि

विषयों पर इन पत्रों में अभिव्यक्त विचार उनके व्यक्तित्व को समझने में सहायक हैं, बात अलग है कि कोई उन विचारों से सहमत है या नहीं। अपनी बात को समझाने के लि वे कहीं-कहीं व्यंग्य का भी सहारा लेते हैं, परंतु सर्वत्र उनके उत्तर सहज एवं रोचक हैं।

धर्म

'......क्या आप अभी अपने को ईसाई कहेंगे? संक्षिप्त, स्वीकारात्मक या नकारात्मक उत्तर पर्याप्त होगा। ......'

२८ दिसंबर १९६१

प्रिय श्री सालोमन,

आपके पत्र के लिए धन्यवाद। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं ईसाई नहीं हूं और पंद्रह वर्ष की आयु के बाद कभी ईसाई नहीं रहा। अपने जीवन में मैंने यह दरशाने का पूरा प्रयत्न किया है कि मैं ईसाई नहीं हूं और क्यों नहीं हूं। मुझे आशा है, इस उत्तर से आप संतुष्ट हो जायेंगे। यह तो ऐसा प्रश्न नहीं है, जिसके बारे में कभी संदेह की गुंजाइश रही हो। **आपका—ब. र.**

× × ×

'...... मैं सोलह वर्ष का हूं और हाईस्कूल में अंतिम वर्ष का छात्र हूं। मैंने अभी-अभी आपकी पुस्तक 'मैं ईसाई क्यों नहीं हूं' पढ़कर समाप्त की है और उससे मैं अत्यंत प्रभावित हुआ हूं ...... पिछले सप्ताह मैं अपने प्रधानाध्यापक से बातचीत कर रहा था। उनका विश्वास है कि धर्म ही हमारे समाज की नैतिक आचरण-संहिता का कारण है। मैं उनसे सहमत नहीं हूं; क्योंकि उनकी बात का यह आशय निकलता है सभी नास्तिक अनैतिक हैं।......'

२७ अप्रैल १९

प्रिय श्री वॉकर,

...... यह कदाचित् सच है कि हमारी नैतिक आचरण-संहिता के जिम्मेदार है, या कम से कम एक नैति संहिता के लिए। इस नैतिक संहिता आधार बाइबल है; परंतु यह उस सम उन लोगों के द्वारा बनायी गयी थी ऐसी चीजों को दबाये रखना चाहते जिनसे वे बहुत भयभीत थे।

मैं सोचता हूं, किसी कट्टर ईसाई दृष्टि में सभी नास्तिक एवं ईसा में विश्व नहीं करने वाले अनैतिक समझे जा स हैं। परंतु स्वयं ईसाई भी दोषमुक्त नहीं वे कांगो में अत्याचार, ड्राइफस के दम अणु-युद्ध के समर्थन इत्यादि के दोषी रहे मैं ऐसी बातों की लंबी सूची बना स हूं, परंतु नैतिक दृष्टि से उनका भंडा करने के लिए इतना कहना ही पर्याप्त है।

आपका—ब.

× × ×

'...... एक बात से मैं हैरान हूं। कल दुनिया में जो विज्ञान के चमत्कार रहे हैं, वे प्राचीन धर्मशास्त्रियों की भवि

वाणियों से बहुत समानता रखते हैं। ......क्या प्राचीन लोग केवल अनुमान द्वारा ब्रह्मांड की सच्ची प्रकृति को जानने में सफल हो गये थे? ......'

२२ अक्टूबर १९६२

प्रिय श्री कर्टिस,

आपके पत्र के लिए बहुत धन्यवाद। मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि समकालीन घटनाएं धर्मग्रंथों की भविष्यवाणियों को सत्य साबित कर रही हैं, सिवा इसके कि यदि ऐसा साबित करने का दुराग्रह हो तो किसी भी बात को ऐसा समझा जा सकता है। मेरी अपनी धारणा के अनुसार तो धार्मिक ग्रंथ आदि-पुरुषों की क्वचित् ऐतिहासिक कपोल-कल्पना मात्र हैं, जो प्रायः जंगली किस्म की और कभी-कभी मनोरंजक हैं। **आपका—ब. र.**

× × ×

'आज मैं एक मित्र के साथ खाना खा रहा था। उसने बताया कि उसके पास तमाम प्रसिद्ध आपेरा-गायकों के स्वहस्ताक्षरित चित्र हैं। मैंने उससे कहा कि जीसस क्राइस्ट के स्वहस्ताक्षरित चित्र को छोड़कर (जिसे मेक्सिको के एक आस्थावादी उपदेशक से प्राप्त किया जा सकता है) मैं केवल बर्ट्रेंड रसेल के स्वहस्ताक्षरित चित्र को बहुत महत्त्वपूर्ण समझूंगा। ......'

२२ अक्टूबर १९५८

प्रिय श्री टॉड,

आपके अति सुरुचिपूर्ण पत्र के लिए धन्यवाद। ...... खेद है कि जीसस क्राइस्ट के हस्ताक्षर में नहीं भेज सकता। मुझे आशा है कि आपका काम मेरे हस्ताक्षरों से चल जायेगा, जो आप इस पत्र में नीचे पायेंगे।

आपका—ब. र.

× × ×

'आपकी "आत्मकथा" के लिए कृतज्ञ हूं। धन्यवाद। मैं ईश्वर को भी धन्यवाद देती हूं। ......'

६ मई १९६८

प्रिय कुमारी ब्रूश,

मुझे प्रसन्नता है कि आपको मेरी 'आत्मकथा' अच्छी लगी। परंतु यह बात रुचिकर नहीं लगी कि उसके लिए आपने ईश्वर को (भी) धन्यवाद दिया, क्योंकि इससे ऐसा लगता है कि ईश्वर ने मेरे 'कापी-राइट' का उल्लंघन किया है!

शुभेच्छाओं के साथ, **आपका—ब. र.**

× × ×

'...... क्या नास्तिक होते हुए भी आप क्रिस्मस का त्योहार मनाते हैं? ......

२९ दिसंबर १९६४

प्रिय कुमारी बेकर,

आपके पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मैं क्रिस्मस को कोई धार्मिक महत्त्व नहीं देता, बल्कि एक मजेदार परंपरा मानता हूं और धार्मिक महत्त्व न देते हुए भी उसे मनाने में कोई आपत्ति नहीं समझता। **आपका—ब. र.**

× × ×

दर्शन एवं शिक्षा

'...... (जापान की) सरकार ...... शिक्षा-संस्थाओं और अध्यापकों पर कुल-

SUPER
Surf
washes whitest of all
Net weight 750 gm

सुपर सर्फ़ से कपड़े सबसे सफ़ेद धुलते हैं... सबसे सफ़ेद!

सुपर सर्फ़ में आलीशान सफ़ाई की शक्ति है. यह छिपी मैल को भी निकाल बाहर करता है और आपके कपड़े इतने सफ़ेद धोता है कि लोग देखते रह जांय. तभी तो यह भारत का सबसे अधिक लोकप्रिय धुलाई का पाउडर है—सुपर सर्फ़!

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

लिंटास-SU. 180-77 HI (R)

पतियों एवं शिक्षा-मंत्री की शक्ति को बढ़ाना चाहती है और मार्क्सवाद को (पाठ्यक्रम में से) समाप्त कर देना चाहती है। हमारे विश्वविद्यालयों के अधिकांश अध्यापक एवं छात्र इसके विरुद्ध हैं। युद्ध (द्वितीय महायुद्ध) से पहले हम जापानियों को विचार एवं विश्वविद्यालयों में अध्ययन की स्वाधीनता पर नियंत्रण का अनुभव हो चुका था। यदि यह कानून संसद में पास हो गया, तो हममें से कुछ को (शिक्षण-संस्थाओं से) निकाल दिया जायेगा। ......'

१६ जनवरी १९६३

प्रिय डा. इवामात्सु,

...... विश्वविद्यालयों में मार्क्सवाद के अध्यापन एवं विचार-विनिमय पर प्रतिबंध लगाने एवं संकायों तथा अध्यापकों पर राजनैतिक नियंत्रण संबंधी सरकारी कानून के बारे में जानकर मुझे अत्यधिक क्षोभ हुआ।

मैं इसे जापान में सैनिक अधिनायकवाद के प्रारंभ का भयंकर संकेत समझता हूं और इस पर अपना विरोध प्रकट करना चाहता हूं। यदि आप इस पत्र को सार्वजनिक रूप से प्रकाशित करना चाहें, तो निस्संकोच ऐसा कर सकते हैं।

आगामी घटनाओं के बारे में मुझे अवश्य सूचित करें और यदि आपके विरुद्ध कोई कार्रवाई हो, जैसा कि आपने संकेत किया है, तो आप आश्वस्त रहें कि मैं इस मामले को सार्वजनिक रूप से इस देश में और अन्यत्र भी उठाऊंगा।

शुभेच्छाओं के साथ, **आपका—ब. र.**

× × ×

'आपकी पुस्तक "कान्क्वेस्ट आफ हैपीनेस" के अध्याय "सेन्स ऑफ़ सिन" में कहा गया है कि आपके विचार से झूठ बोलना हमेशा अनुचित नहीं होता। उसमें आपने एक लोमड़ी का उदाहरण दिया है, जिसके प्राण बचाने के लिए आपने झूठ बोलकर शिकारियों को गलत रास्ते पर लगा दिया। क्या ऐसी परिस्थिति में और कोई सही, सचाईपूर्ण विकल्प नहीं था? आप यह भी कह सकते थे, "हां, मैंने लोमड़ी को देखा है परंतु मैं उसकी दिशा नहीं बताऊंगा, क्योंकि उसे मारने में मैं तुम्हारा सहायक नहीं बनना चाहता।" इस उत्तर से शिकारी गलत रास्ते पर नहीं जायेंगे, साथ ही, जो वे करने जा रहे हैं, उस पर सोचने के लिए भी मजबूर होंगे।......'

२८ सितंबर १९६३

प्रिय श्री जेकब्सन,

...... मेरा उद्देश्य लोमड़ी को बचाना था। उसके लिए शिकारियों को गलत रास्ते पर लगाना ही सबसे प्रभावशाली उपाय था। अत्याचारी शासन में उत्पन्न होने वाली ऐसी अनेक स्थितियां हैं, जिनमें झूठ बोलना सराहनीय हो सकता है।

शुभेच्छाओं के साथ, **आपका—ब. र.**

× × ×

'मैंने आपकी पुस्तकें "मैरिज एंड मॉरल्स" तथा "अनपॉप्युलर एस्सेज" पढ़ी हैं। मैं पंद्रह वर्ष की हूं। यद्यपि कुछ वयस्क लोग

सोचते हैं कि मैं इतनी छोटी हूं कि आपकी पुस्तकों को समझ नहीं सकती, मुझे वे बड़ी विचारोत्तेजक, स्पष्ट एवं गागर में सागर जैसी लगती हैं। मैं आपसे चार प्रश्न करना चाहती हूं। पहला : जैसा कि आपने "मैरिज एंड मॉरल्स" में लिखा है, क्या आप अब भी नीग्रो को एक निकृष्ट जाति समझते हैं? दूसरा : पहले की तुलना में मेरी पीढ़ी में यौन-शिक्षा एवं यौन-दृष्टिकोण कैसे हैं? तीसरा : मैं लेखिका बनना चाहती हूं; लिखना सीखने का सर्वोत्तम उपाय क्या है?......चौथा : यदि मेरे पहले प्रश्न का उत्तर आप "नहीं" में दें, तो अमरीका में चल रहे नागरिक-अधिकार आंदोलन के संबंध में आप क्या सोचते हैं?......'

१७ मार्च १९६४

प्रिय कुमारी डोरहीम,

आपके रोचक पत्र के लिए धन्यवाद। आपके प्रश्नों के उत्तर ये हैं :

१. मैंने तो नीग्रो जाति को कभी भी निकृष्ट नहीं समझा। 'मैरिज एंड मॉरल्स' में जो कहा गया है, वह वातावरण संबंधी प्रभाव के बारे में है। इस पुस्तक के परवर्ती संस्करणों में से इस बात को निकाल दिया गया है; क्योंकि इसका अर्थ पूर्णत: स्पष्ट नहीं था।

२. आपकी पीढ़ी का यौन-दृष्टिकोण मेरी अपनी पीढ़ी की तुलना में अधिक स्वस्थ है। अभी भी पर्याप्त दिखावा एवं क्रूरता है, परंतु पिछले वक्त के मुकाबले कम है। यौन-स्वतंत्रता पर हमारा दृष्टिकोण अब अधिक बौद्धिक है, यद्यपि समलिंगी से
(होमोसेक्शुएलिटी) और यौन-असामा
ताओं को अब भी घृणा की दृष्टि से दे
जाता है, जो अनुचित है।

३. लिखना सीखने का सर्वोत्तम उपा
पर्याप्त मात्रा में पढ़ना और लिखना है।

४. अमरीका में चल रहे नागरि
अधिकार आंदोलन से मैं पूर्ण रूप से सहम
हूं और आशा करता हूं कि यह अधिक गति
शील और प्रभावशाली होगा।

आपका–ब्र.

× × ×

'...... १. क्या आपके विचार से यौ
शिक्षा आवश्यक है? २. यदि हां, तो किस
द्वारा दी जानी चाहिये—माता-पिता द्वारा
शिक्षक द्वारा? ३. वह किस आयु में आरं
होनी चाहिये? ४. क्या आप यौन-शिक्ष
के प्रचलित तरीकों को उचित समझते हैं
५. लड़के और लड़कियों के मिले-जुले स्कू
यौन-शिक्षा के लिए सहायक होते हैं
बाधक? ६. कहीं हम यौन (सेक्स) क
आवश्यकता से अधिक महत्त्व तो नहीं
रहे हैं?......'

१५ अगस्त १९५

प्रिय श्री डावेन,

...... मुझे स्वयं अपने बच्चों, अ
स्कूल (जो मैं कभी चलाता था) के बच्
के साथ और अपने मित्रों के बच्चों
साथ यौन-शिक्षा का पर्याप्त अनुभव है।
समझता हूं कि यौन-शिक्षा के मामले
वयस्कों के मानसिक अवरोध के अतिरि

और कोई मुश्किल नहीं है। आपके प्रश्नों के उत्तर मैं नीचे दे रहा हूं।

१. क्या यौन-शिक्षा आवश्यक है? निश्चय ही। उनके ही ऊपर छोड़ देने पर बच्चे यौन-ज्ञान दूसरे बच्चों से गंदी बातें सुनकर प्राप्त करते हैं, जो गलत एवं अश्लील होती हैं। यह यौन-ज्ञान प्राप्त करने का सर्वोत्तम तरीका नहीं है। माता-पिता स्वयं अपनी किशोरावस्था को प्रायः भूल जाते हैं और कल्पना कर लेते हैं कि कुछ नहीं बताने पर उनके बच्चे यौन-संबंधी बातों से अनभिज्ञ ही रहेंगे।

२. यौन-शिक्षा कौन दे? यदि माता-पिता काम (सेक्स) के मामलों में समझदारी बरत सकते हों, तो उनको देनी चाहिये। परंतु प्रायः माता-पिता ऐसा समझते हैं कि बच्चों को इस संसार में लाकर उन्होंने कोई शर्मनाक काम किया है। जब तक वे ऐसा समझते हैं, यौन-ज्ञान शिक्षक दें।

३. किस आयु से? यह बच्चे की बुद्धि पर निर्भर है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यौन-शिक्षा किशोरावस्था से पूर्व ही समाप्त हो जाये, क्योंकि छोटी आयु में बच्चे अपेक्षया कम भावुकता के साथ उसे ग्रहण कर सकते हैं।

४. मैं नहीं जानता कि क्या तरीके अपनाये जाते हैं। सही दृष्टिकोण यह है कि यौन-मामलों को उसी प्रकार से देखा जाये, जिस प्रकार अन्य बातें देखी जाती हैं। बच्चे जब जिज्ञासा करें, उनके प्रश्नों का उत्तर, जिस पूर्णता तक वे ग्रहण करना चाहें, देना चाहिये। मैं नहीं समझता कि बच्चों के ऊपर यौन-ज्ञान पहाड़े की पुस्तक की तरह थोपना चाहिये। मैं सोचता हूं कि यह सब उनकी जिज्ञासा के समाधान के रूप में होना चाहिये।

५. मेरे विचार से मिले-जुले स्कूल यौन-शिक्षा में सहायक हैं, बशर्ते माता-पिता और शिक्षक अपने व्यवहार से अत्यधिक शर्म का दिखावा समाप्त कर दें।

६. आप पूछते हैं कि क्या हम काम (सेक्स) को आवश्यकता से अधिक महत्त्व तो नहीं दे रहे? मेरा यह निश्चित विचार है कि जो दकियानूसी विचारों के हैं, वे ही इसे हौवा समझते हैं। वे इसे इतना महत्त्वपूर्ण बना देते हैं कि इसके लिए बच्चों की बुद्धि को कुंठित और उनकी भावनाओं को दूषित बना देने से भी नहीं चूकते, जिसके कारण अप्राकृतिक सीमा तक उनका मस्तिष्क यौन-ग्रस्त हो जाता है। यह परंपरागत तरीकों का अवश्यंभावी परिणाम है। जब स्वतंत्रता होती है, तो काम (सेक्स) अपने उचित स्थान पर रहता है और इसके बारे में पागलपन एवं मनोग्रस्तता (जैसी कि संत एन्टनी में थी) समाप्त हो जाती है।

आपका—ब. र.

× × ×

युद्ध एवं राजनीति

'...... हो सकता है यह बात आपके कानों तक भी पहुंची हो। "टॉप सीक्रेट" (अति गोपनीय) सूत्र से यह बेहूदा प्रचार

सिरपुर-
उत्तम
कागज
के लिये

☐ बैंक पेपर
☐ बौंड पेपर
☐ ग्लेज़्ड एअर मेल पेपर
☐ एज्युरलेड पेपर
☐ सुपर वाइटलेड पेपर
☐ सुपर वाइट मैपलिथो पेपर
☐ कोमो पेपर
☐ एम. एफ. रैपिंग पेपर
☐ आर्ट पेपर
☐ कोमो बोर्ड
☐ आर्ट बोर्ड

दि सिरपुर पेपर मिल्स लि.
सिरपुर-कागजनगर, आन्ध्र प्रदेश

आओ—एक सौदा क

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—
गोला
टॉफियां और मिठाइयां

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.

कि
हा
को

प्रिय

णि
है
नही
इस
बात
आप
किय
खोज
खोज
प्रेरि
मेरे
बारे
मिश्
गैर-
लिय
चाह

लिए
नेता
नही
प्रेमी
प्रबल
हो?
१९

किया जा रहा है कि नये अणुबम से कोई हानिकारक धूल नहीं गिरती और उससे कोई खतरा नहीं फैलता ......'

८ सितंबर १९६१

प्रिय श्री बार्थोलोम्यू,

...... मैंने इस प्रकार की सब टिप्पणियां सुनी हैं, जिनमें यह दावा किया जाता है कि नये अणुबम से कोई हानिकारक धूल नहीं गिरती। ये सब बातें कोरा झूठ हैं। इस विषय पर रेडियो पर मेरी श्री...... से बातचीत हुई थी, जो अमरीका के एक मुख्य आणविक अधिकारी हैं। उन्होंने यह दावा किया कि एक 'हानिरहित' अणुबम की खोज कर ली गयी है और यह भी कि यह खोज उन्होंने मानवीय सद्भावनाओं से प्रेरित होकर की है। मैंने कहा—'तो फिर मेरे विचार से आपने रूसियों को इसके बारे में बता दिया होगा?' उन्होंने भयमिश्रित स्वर में उत्तर दिया—'नहीं, वह तो गैर-कानूनी होगा!' क्या इसका यह अर्थ लिया जाये कि वे केवल रूसियों को बचाना चाहते थे, अमरीकियों को नहीं?

आपका—ब. र.

× × ×

'...... क्यूबा-संकट में पीछे हट जाने के लिए आपने ख्रुश्चोव की एक शांतिप्रेमी नेता के रूप में प्रशंसा की। क्या ऐसी बात नहीं कि उन्होंने यह कदम सच्चा शांतिप्रेमी होने के नाते नहीं, अपितु अमरीका की प्रबलतर शक्ति से डर के कारण उठाया हो? ......'

८ दिसंबर १९६२

प्रिय श्री अंजन,

...... ख्रुश्चोव ने क्यूबा-संकट को समाप्त करने का एकपक्षीय कदम इसलिए उठाया था कि उनमें उत्तरदायित्व की भावना केनेडी से अधिक थी। दोनों महाशक्तियां भिड़ने पर तुली हुई थीं और यदि ख्रुश्चोव भी केनेडी की तरह कठोर निश्चयात्मकता दिखाते, तो हम सभी आज जीवित नहीं होते।

आपका—ब. र.

× × ×

'...... मैं समझता हूं कि क्यूबा-संकट में अमरीका की कार्रवाई से आप नाराज हुए। क्या यह ठीक है? यदि कम्युनिस्टों को क्यूबा में मिसाइलों का अड्डा बना लेने दिया जाता, तो क्या आपकी दृष्टि में यह अधिक अच्छा होता! यदि आपका कोई पड़ोसी बार-बार आपके घर में आकर चीजें उठा ले जाये, तो आप क्या करेंगे? आप शायद थोड़ा-बहुत ले जाने दें, परंतु वह और अधिक ले जाना चाहे तो? क्या अपना सब-कुछ दे देना समझदारी है?'

१२ जनवरी १९६३

प्रिय श्री गॉस,

...... आपकी यह मिसाल कि कोई पड़ोसी बार-बार किसी के घर में घुसकर कुछ ले जाता रहे, एकदम भ्रमपूर्ण है। यदि मेरा ऐसा कोई पड़ोसी होता, तब भी मैं उसे और गली में रहने वाले तमाम लोगों को नष्ट नहीं करता। पर आपके राष्ट्रपति केनेडी का संकट के समय ऐसा ही धमकी-

पूर्ण रवैया होता है।

फिर, यह कहना तो एकदम बकवास है कि कम्युनिस्ट क्यूबा से कुछ चुरा ले गये हैं। क्यूबा की सरकार को अपने क्षेत्र में मिसाइल-अड्डा बनाने का उतना ही अधिकार है, जितना अमरीकी सरकार को तुर्की, जापान, इटली, इंग्लैंड या कम्युनिस्ट देशों के आस-पास किसी भी जगह अपने अड्डे बनाने का। आपका—ब. र.

× × ×

'.... मैंने आपको कुछ महीने पहले लिखा था कि युद्ध का मूल कारण पूंजीवाद है, परंतु उत्तर में आप इससे सहमत नहीं हुए थे। मैं समझता हूं कि अब आपने इस बुरी ताकत की भयंकर प्रकृति को पहचान लिया है। युद्ध को असंभव बनाने का एकमात्र उपाय यह है कि इस पद्धति को ही समाप्त कर दिया जाये, जो व्यक्तिगत लाभ के लिए श्रम के शोषण पर आधारित है। जब यह समाप्त हो जाये, तब हमारे सामने समाजवाद या साम्यवाद का रास्ता बचता है। इसलिए जितनी जल्दी हम रूस के साथ मिल जायें, मानव-जाति के हित में उतना ही अच्छा होगा। ......'

२६ मार्च १९६३

प्रिय श्री हारवुड,

...... मुझे आश्चर्य है कि पूंजीवाद के प्रति मेरी घृणा आपको नयी बात लगी, जबकि इसके विरोध में मैं १८९६ से लिखता आ रहा हूं। पूंजीवाद के प्रति मेरी नापसंदी लगभग उतनी ही है, जितनी कि साम्यवाद के प्रति। परंतु इन दोनों तुलना में कहीं बहुत अधिक घृणा मैं युद्ध से करता हूं। आशा है, आप मेरे को स्पष्ट समझ गये होंगे।

शुभेच्छाओं के साथ, आपका—

× × ×

सेक्स, प्रेम एवं विवाह

'...... मैं किसी से प्रेम करता उसका नाम केरोलिन है और वह सुंदरी बुद्धिमती है। मगर जैसा कि प्रायः हो है, वह मुझसे प्रेम नहीं करती। ...... मालूम होते ही मैंने कोई जहर प्राप्त की बात सोची। ...... मैं बीस वर्ष का मैंने ब्रायन्स्टन में अध्ययन किया, जहां मैं अनिच्छा और आलस्य के कारण पढ़ पाया। ...... इसके बाद मैंने ट्रीनि कालेज (केम्ब्रिज) में इतिहास के लिए छा वृत्ति प्राप्त करने का इरादा किया। ... और अब केरोलिन। ...... यदि मैं चाहूं आत्महत्या क्यों नहीं कर सकता? मैं वि विद्यालय में जाकर इतिहास क्यों प उससे मुझे क्या मिलेगा? ......'

१९ जुलाई १९

प्रिय महोदय

...... मैं आपकी कठिनाई को अ तरह समझ गया हूं। मेरा सुझाव है आप डन (कवि जॉन डन) की, 'तेरे ति स्कार से, ओ हत्यारी, मैं मर गया हूं.... (कविता) देखें और विचार करें कि ऐ कविता लिखने के बाद भी प्रेम में पा

कवि ने जीवित रहते हुए सेंट पाल (गिरजे) का डीन बनकर मृत्यु के विषय में अनेक उपदेश दिये।

निष्फल प्रेम एक भयंकर रोग की तरह है, जो दु:खदायी होता है; परंतु ऐसा जीवन-भर नहीं रहता। मैं इस बात को नैतिक रूप में लेकर आपके भविष्य के लिए विचारपूर्ण तरीके से कह रहा हूं।

मुझे आशा है कि आप ट्रीनिटी में जाकर इतिहास का अध्ययन करेंगे। वहां आपके लिए एक नये संसार का द्वार खुल सकता है और जैसा कि मैं आपके पत्र से समझता हूं, आप इस अवसर का भरपूर लाभ उठा सकते हैं। इस बीच शायद आप मुझे लिखना पसंद करें कि अपने अध्यापक के साथ आपकी केम्ब्रिज के लिए तैयारियां कैसी चल रही हैं।

शुभेच्छाओं के साथ, **आपका– ब. र.**

× × ×

'मैं आत्मरति के बारे में आपके विचार जानने का बहुत इच्छुक हूं। ...... मैं पहले आत्मरति किया करता था; इस बात से मैं मानसिक रूप से बहुत उद्विग्न हूं। ...... मैंने पढ़ा है कि आत्मरति करने वाले किशोर लड़के की आत्मग्लानि समझाने से दूर नहीं की जा सकती; मैं आत्महत्या करने की राह पर हूं। मेरी परेशानी में मदद की मेरी अंतिम आशा आप ही हैं। ......'

२४ दिसंबर १९६४

प्रिय महोदय,

आत्मरति के संबंध में–किशोरावस्था में प्राय: सभी ऐसा करते हैं। इसे पागलपन या हानिप्रद बताने का सिद्धांत, किशोरों को 'सही' रखने के लिए बूढ़ों के दिमाग की क्रूर उपज है। आपकी ग्लानि की भावना ठीक नहीं है; क्योंकि आत्मरति से किसी को कोई हानि नहीं होती। **आपका– ब. र.**

× × ×

'...... मैं तेईस वर्षों से विवाहित एवं ८ से २१ वर्ष तक के पांच बच्चों का पिता हूं। लगभग दो वर्ष पहले मेरी पत्नी ने समलिंगी काम-संबंध स्थापित कर लिया, जिन्हें वह आपकी पुस्तक "मैं ईसाई क्यों नहीं हूं" के आधार पर उचित ठहराती है।......आपके विचार से समलिंगी काम नैतिक दृष्टि से उचित ठहराये जाने योग्य है? ......'

२४ नवंबर १९५९

प्रिय महोदय,

समलिंगी काम के बारे में मेरा दृष्टिकोण यह है कि इसे सामान्य यौन-संबंधों से भिन्न नहीं समझना चाहिये। जब मैं कहता हूं कि यह केवल आपसी लोगों के बीच का मामला है, तो मैं पति, पत्नी एवं उनके बच्चों को भी आपसी लोग ही समझता हूं। प्राय: पारिवारिक कारणों से विवाहेतर सामान्य या समलिंगी संबंध अवांछनीय हो सकते हैं; परंतु यदि दोनों में से कोई एक किसी अन्य के साथ गंभीर एवं गहरे रूप से प्रेम करता हो, तो उनका विवाहित जीवन सुखी नहीं रह सकता। ऐसी हालत में विवाह-विच्छेद ही उचित रहता है। पर

पहलीबार सुनहरा अवसर !
बेशक, सिंगर की ओर से।

3 महीनों में अपनी
मेरिट*
सिलाई मशीन
का दाम चुकाइये

पर लिस्ट-प्राइस से एक पैसा भी ज़्यादा न दीजिये!

"कितना अद्भुत !"

सिंगर अब आपको किस्तों में खरीद की सुविधा देते हैं। बिना कुछ ज़्यादा लिये।

"सोचिये, मैं कितनी बचत कर लूंगी।"

अगर आप तीन महीनों में दा
चुकायें तो खुद ही देखिये कि
बचत कर लेती हैं। आपको
लिस्ट-प्राइस से ज़रा भी ज़्य
नहीं देना है। आपको आश्च
होगा कि कितनी जल्दी आप
मशीन की क़ीमत भर बचत क
लेती हैं। फिर उसके बाद तो
बचत ही बचत है।

"एक पैसा भी ज़्यादा नहीं।"

सामान्यतया किस्तों की खरीद में कुछ ज़्यादा देना पड़ता है। क्यों? असल में आपको यह सुविधा देने में कंपनी जितना खर्च वहन करती है, बस, उतना ही अतिरिक्त आपसे लेती है।
इतना तो उचित है। क्योंकि अपनी मेरिट सिलाई मशीन का दाम चुकाने के साथ ही आप बचत भी तो करती हैं। (दर्ज़ी का बिल नहीं आता।)

"अच्छा अवसर रहे न हरदम।"

सचमुच। ऐसा अनोखा प्रस्त
सिंगर कम समय तक ही च
पायेंगे। इसलिए जल्दी कीजि
इसका फ़ायदा उठाने वाले
भाग्यशाली लोगों में आप भी
शामिल हो जाइये। अपने पा
की सिंगर की दुकान या डील
से मिलिये।

सभी जानते हैं,
सारी दुनिया को हमने सिलाई सिखाई है।

सिंगर
सिंगर सोइंग मशीन कंपनी २०७, डी. एन. रोड, बम्बई ४०० ००१

* सिंगर कंपनी का ट्रेडमार्क

CHAITRA-SK

ऐसे मामलों में कोई नियम नहीं बनाये जा सकते।

आपका—ब. र.

× × ×

'...... कुछ सप्ताह पहले मैंने आपकी पुस्तक "मैरिज एंड मॉरल्स" पढ़ी। विवाह-पूर्व (यौन) संबंधों के बारे में क्या आप नीचे लिखी बातों से सहमत होंगे?

१. प्रेम हो जाये, तो यह कोई शर्म की या अनुचित बात नहीं है; परंतु यह ऐसा है जैसे क्रिस्मस उपहार को अक्टूबर में ही खोल लिया जाये।

२. कम आयु में प्रेम की भावनाओं एवं यौन-आकर्षण में भेद करना मुश्किल होता है। ......'

६ अप्रैल १९६४

प्रिय श्री डेविडॉफ

...... मैं आपकी लिखी दोनों बातों से पूर्णतया सहमत नहीं हूं। यौनेच्छा एक (शारीरिक) आवश्यकता है और इसे पूरा करने के लिए गहरी प्रेम-भावना जरूरी नहीं होती। यदि गर्भनिरोध के साधनों का ज्ञान हो तो सहज आकर्षण ही पर्याप्त होता है। प्रेम आसानी से नहीं होता, परंतु समय आने पर हो जाता है। ऐसी (यौन-संबंधी) बातों से दूर रहने से तो अनुभवहीनता के कारण बाद में मुश्किलें ही पैदा होती हैं।

आपका—ब. र.

'...... मिस्टर रसेल! आप जैसे वयोवृद्ध, संयत और तीक्ष्णबुद्धि आदमियों के साथ मेरे जैसी युवती, खुशमिजाज और मजबूत दांतों वाली लड़कियों के विवाह के बारे में आपका क्या खयाल है? ......'

२८ नवंबर १९६४

प्रिय कुमारी मरे,

आपके कृपापत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मैं पहले ही विवाहित एवं सुखी हूं। ...... शुभेच्छाओं के साथ,

आपका—ब. र.

× × ×

विविध

२३२, वुडस्टाक रोड, आक्सफोर्ड,
१० नवंबर १९६१

'प्रिय श्री बर्ट्रेंड रसेल,

आपने जो काम किये हैं, उनके लिए बहुत धन्यवाद! आप मुझे अच्छे लगते हैं। यदि आपका आक्सफर्ड आना हो तो आप मेरे साथ चाय पीजिये।

सप्रेम आपका—पॉल अल्टमेन
(मैं छः वर्ष का हूं)

२४ नवंबर १९६१

प्रिय पाल अल्टमेन,

तुम्हारे प्यारे पत्र के लिए बहुत धन्यवाद, जिसे प्राप्त कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई; क्योंकि इससे मुझे काम करते रहने के लिए प्रोत्साहन मिलता है। मेरी तुम्हारे साथ चाय पीने की इच्छा है, परंतु मेरे आक्सफर्ड आने की कोई संभावना नहीं है। यदि आऊंगा तो तुम्हें बता दूंगा।

सप्रेम एवं हार्दिक शुभकामनाओं के साथ,

—ब. र.

× × ×

'जिज्ञासा के लिए : आपको वृद्धावस्था कैसी लगती है और क्या कभी आप जासूसी उपन्यास पढ़ते हैं ?...'

९ फरवरी १९६३

प्रिय श्री लारसन,

आपके कृपापत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मैं अनेक जासूसी उपन्यास पढ़ता हूं और वृद्धावस्था को अन्य समय की तरह मानवीय गरिमा के लिए संघर्ष करने का समय मानता हूं। शुभेच्छाओं के साथ,

आपका—ब. र.

× × ×

'...मैं भटक रहा हूं—मात्र भटक रहा हूं। ...मैं अपना पर्याप्त समय पढ़ने और संगीत सुनने में बिताता हूं। ... इस प्रकार रहने में मुझे बहुत आनंद प्राप्त होता है, परंतु मैं यह भी जानता हूं कि ऐसा हमेशा नहीं चल सकता। मुझे कहीं काम-धाम अवश्य करना होगा। मैं अध्यापक बनना चाहता हूं, परंतु प्रवेश-परीक्षाओं से घृणा करता हूं। वाहियात प्रकार की जानकारी मुझे याद नहीं रहती—असल में मेरा ऐसा दिमाग ही नहीं है।

मैं क्या करूं? काम करूं? या कि अध्ययन करने लग जाऊं? या पढ़ते और पियानो बजाते हुए इन सबसे छिप जाऊं? ... मुझे काम करना पड़ेगा, परंतु शारीरिक श्रम मुझे उपयुक्त नहीं लगता; मैं दूसरों की तरह नहीं हूं। मुझे विचारों की दुनिया पसंद है। ...

८ अक्टूबर १९६२

प्रिय श्री ग्रास,

आपके पत्र से मुझे लगता है कि अपनी व्यक्तिगत दुनिया में बहुत हद खोये हुए और आत्मलिप्त हैं। मैं आ कहूंगा कि आप अपनी इच्छाओं को यथार्थवादी अभिव्यक्ति दें और निरो त्मक वातावरण में सोचना छोड़ दें।

वास्तविक समस्याओं के साथ कठोर मेहनत और गंभीर प्रयास करने लिए साहस की आवश्यकता होती है। आप अध्ययन करना चाहें तो वैसा इसके ऊपर विचार-जंजाल में न पड़े शारीरिक श्रम कोई महासंकट नहीं अपने को गंभीरता से न ले पाना पक्वता और हार की निशानी है। आशा है, आप इस पर विचार करेंगे।

आपका—

× × ×

'... यदि संभव हो तो अपना हस्ताक्षरित चित्र भेज दें। यह भी कि क्या किसी पुस्तक ने आपके जीवन विशेष रूप से प्रभावित किया था? बचपन के दिनों में जिन पुस्तकों को आपको आनंद मिला, उनके बारे में बतायें। ...'

८ दिसंबर १९

प्रिय श्री एलिसर,

बचपन में मैं लुई कैरोल एवं लीयर की पुस्तकों को पढ़कर आ होता था। ऐसी कोई पुस्तक नहीं, मुझे विशेष रूप से प्रभावित किया हो

मेरा हस्ताक्षरित चित्र संलग्न है।

आपका—ब. र.

× × ×

'... हमें यह जानकर संतोष मिला कि रेड हेकल (ह्विस्की) की जो पहली पेटी आपको भेजी गयी थी, अंततः काफी देर से आपके पास पहुंच गयी। यदि आपके पास ह्विस्की का अधिक स्टाक हो जाये, तो दूसरी पेटी को अपने खर्च पर वापस मंगवा लेने में हमें प्रसन्नता होगी।...'

८ जुलाई १९६०

प्रिय महोदय,

आपके २९ जून के रोचक पत्र के लिए धन्यवाद। आपने रेड हेकल का कुछ स्टाक वापस मंगा लेने के बारे में कृपापूर्वक लिखा है—यदि हमारे पास अधिक स्टाक हो जाये तो! परंतु यह ऐसी स्थिति है जिसे हम संभव नहीं मानते! अधिक माल को हम शीघ्र ही समाप्त कर देंगे!

आपका—ब. र.

× × ×

[रसेल ने यह पत्र अपनी मनपसंद ब्रांड की ह्विस्की 'रेड हेकल' के निर्माता को लिखा था।]

२ अगस्त १९६३

प्रिय महोदय,

मेरे लंदन वाले घर में कुछ दिन पहले चोर घुस गया था। उसे रेड हेकल की दो बोतलें मिलीं, जिन्हें उसने वहीं समाप्त कर दिया और उसके बाद आगे (माल की) खोज करना अनावश्यक समझकर छोड़ दिया! मैं इसके लिए रेड हेकल का आभार मानता हूं और आपके प्रति मेरी कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

क्या आप ऊपर लिखे नार्थ वेल्स के पते पर दो दर्जन रेड हेकल की बोतलें भेज देंगे?

आपका—ब. र.

× × ×

'...... १. रात में जब नींद नहीं आती, तब आपके मस्तिष्क में क्या विचार आते हैं? २. क्या आपको अपने व्यावसायिक कार्य-कलापों के बारे में कोई स्वप्न आते है? ३. क्या आपको किसी स्वप्न से कोई जीवनोपयोगी विचार प्राप्त हुए हैं?......'

१६ अक्टूबर १९५८

प्रिय महोदय,

आपके १३ अक्टूबर के पत्र के जवाब में आपके प्रश्नों के उत्तर निम्नलिखित हैं :

१. जब मैं नहीं सो पाता तो वैसा प्रायः इसलिए होता है कि मैं अपने वाहियात कामों के बारे सोच रहा होता हूं। तब मैं कविता पढ़कर ऐसे विचारों को भगाने का प्रयत्न करता हूं।

२. मुझे अपनी व्यावसायिक गतिविधियों से संबंधित कोई स्वप्न नहीं आते।

३. मुझे कभी ऐसा स्वप्न नहीं आया, जिससे मुझे अपने काम में किसी कठिनाई को हल करने में सहायता मिली हो; परंतु ऐसे स्वप्न आये हैं, जिनसे मेरे अचेतन के आत्मविभ्रम का उपचार हुआ है।

आपका—ब. र.

× × ×

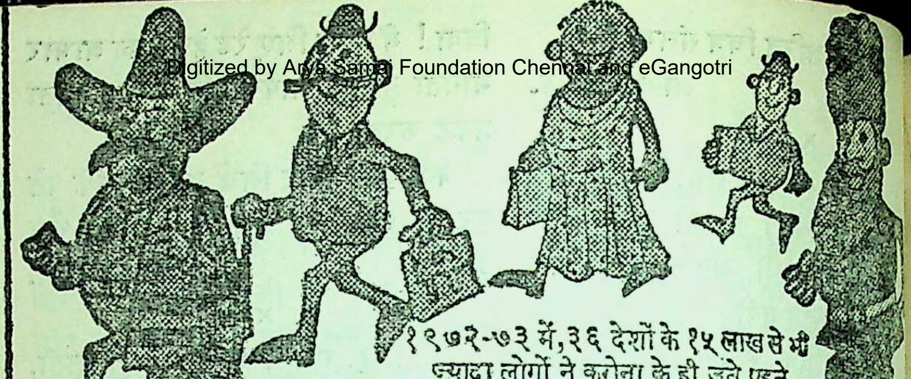

१९७२-७३ में, २६ देशों के १५ लाख से भी ज़्यादा लोगों ने करोना के ही जूते पहने, जी हाँ! करोना के खेल-कूद के जूते और गर्मी के सैंडल।

जानकारी के लिए, कृपया संपर्क करें:

करोना साहू कं. लि.

रजिस्टर्ड ऑफिस:
१२१, डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड
बम्बई ४०० ००१, भारत
टेलीफ़ोन: २६७८२१ (८ लाइनें), तार: करोनासाहू, टेलेक्स: ०११/२४११

बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने की अनोखी दवा

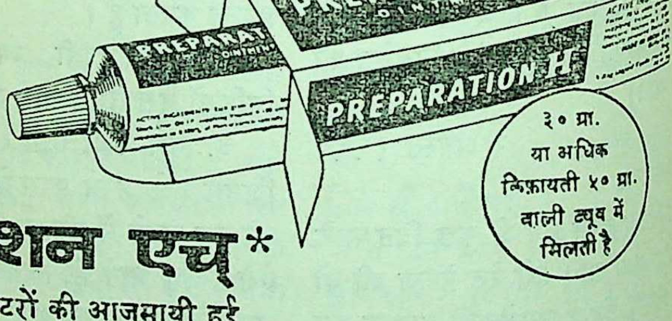

३० ग्रा.
या अधिक
किफ़ायती ५० ग्रा.
वाली ट्यूब में
मिलती है

प्रेपरेशन एच्*

अमरीकी डाक्टरों की आज़मायी हुई
- इससे खुजली मिनटों में रुक जाती है
- दर्द से फ़ौरन राहत मिलती है
- यह बवासीर के बहुत ही बिगड़े रोगों को छोड़ कर, बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने में मदद देती है
- इससे चिकनाहट मिलती है और शौच भी कष्टरहित होता है

मुफ़्त! बवासीर के बारे में जानकारी देनेवाली मुफ़्त पुस्तिका के लिए (लिफ़ाफ़े में २५ पैसे के डाक-टिकट साथ में भेजकर) आज ही इस पते पर लिखिए: डिपार्टमेंट PH-83 पो. ऑ. बॉक्स १०१३३, बम्बई-४०० ००१

*Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co: Ltd.
743 PH-92 H/a

'...... आप किस प्रकार के मूर्ख हैं, यह आपके तथाकथित दर्शन को पढ़कर आसानी से जाना जा सकता है। कुछ दिनों पहले मैंने एक स्विस-जर्मन समाचारपत्र में आपके ये विचार पढ़े–'मैं कोई लार्ड या दार्शनिक नहीं हूं, एक साधारण स्विस नागरिक हूं। ......'

३० अगस्त १९५८

प्रिय महोदय,

एक और प्रकार का मूर्ख भी होता है, जिसके बारे में आपने नहीं सोचा। वह समाचारपत्रों में जो कुछ पढ़ता है, उस पर विश्वास कर लेता है। जो उद्धरण आपने दिया है, वैसा मैंने कभी नहीं कहा।

आपका–ब. र.

× × ×

'...... अणुबम के मामले में आपके साहसपूर्ण विचारों के लिए मैं आपको बधाई देना चाहता हूं। ...... मैं एक अवकाशप्राप्त वृद्ध हूं और हॉबी के रूप में कुछ स्केच (रेखाचित्र) बनाता हूं। संलग्न स्केच पर आप अपने हस्ताक्षर कर देंगे, तो मैं अपने को बड़ा सौभाग्यवान समझूंगा... ।'

२ अक्टूबर १९६१

प्रिय श्री स्पेन्स,

मैंने स्केच पर हस्ताक्षर कर दिये हैं, परंतु मुझे आशा है कि आप नाक की बनावट पर पुनः विचार करेंगे।

आपका–ब. र.

× × ×

'.....मेरे लिखने का उद्देश्य स्वर्गीय श्री टी. एस. एलियट के बारे में आपसे एक-दो बातें पूछने की है। मैं जानता हूं कि वर्षों पहले वे हार्वर्ड में आपके छात्र थे और बाद में आपने लंदन में उनका कई लोगों से परिचय करवाया था।...... क्या आप उनसे संबंधित कोई घटना या बात बता सकते हैं? उनके सभी मित्र यह सोचते प्रतीत होते हैं कि वे अच्छाई और नैतिकता के स्तंभ थे, परंतु उनकी रचनाओं से वे आश्चर्यजनक रूप से संकीर्ण विचारों के एवं असहिष्णु प्रतीत होते हैं। ......'

९ मार्च १९६५

प्रिय श्री गोगिन,

एलियट के चरित्र के बारे में आपके अनुमान से मैं पूर्णतया सहमत हूं। एक ग्रैजुएट कक्षा को, जिसके वे सदस्य थे, पढ़ाते हुए १९१४ में मेरा उनसे परिचय हुआ। मैंने एक बार कहा था कि मैं हेराक्लिटस का प्रशंसक हूं, जिसके उत्तर में उन्होंने स्वप्निल आवाज में कहा–'हां, वह बिलकुल विलन जैसा है।' उन तीन महीनों में उन्होंने मुझसे बस इतनी ही बात की थी, परंतु इसके कारण वे मुझे याद रहे। प्रथम महायुद्ध के शुरू में लंदन में उनसे संयोगवश भेंट हो गयी थी। मैंने कहा–'हेलो! आप यहां क्या कर रहे हैं?' वे बोले–'मैं अभी बर्लिन से लौटा हूं।' मैंने कहा–'आप युद्ध के बारे में क्या सोचते हैं?' वे बोले– 'मैं नहीं जानता, इसके सिवा कि मैं शांतिवादी नहीं हूं।' मैंने कहा–'अच्छा! जब तक लोग मरते रहें, आपको परवाह नहीं कि वे क्यों मरते

OBM-1683 HIN

किताब जुड़ गई...मुन्ना ख़ुश!
किस सफ़ाई से हुआ ये काम—फ़ेविकोल से!
देखा आपने फ़ेविकोल का कमाल!

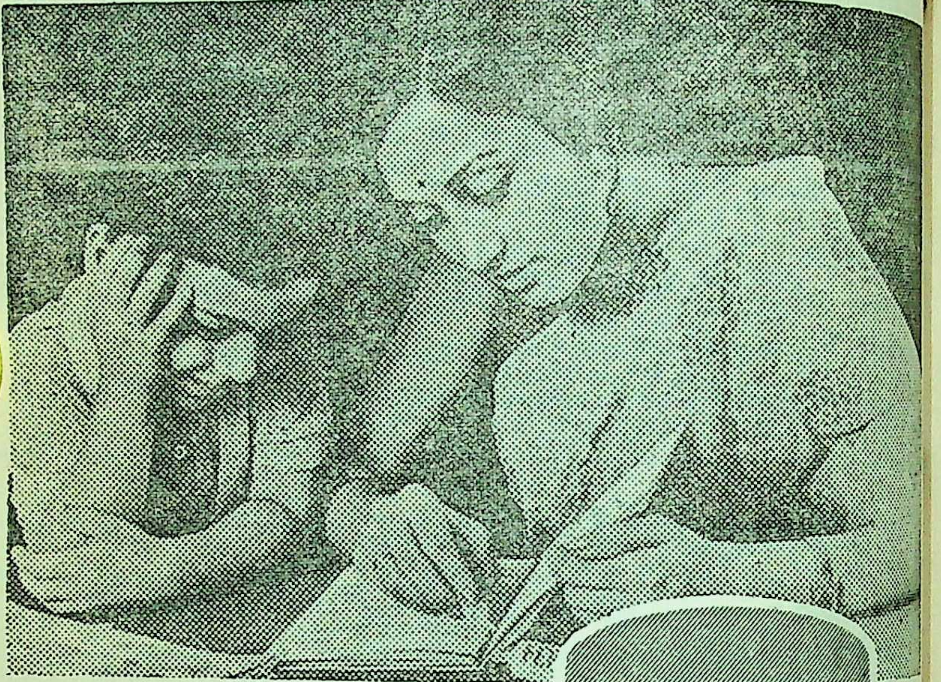

FEVICOL®
SYNTHETIC RESIN ADHESIVES
PIDILITE
FEVICOL
FEVICOL
PIDILITE

लगभग सभी जिल्दसाज़ फ़ेविकोल इस्तेमाल करते हैं। आप भी घरेलू इस्तेमाल के लिए फ़ेविकोल ला रखिए—ट्यूब या छोटा प्लास्टिक जार! पता नहीं कब ज़रूरत पड़ जाए।

कागज़ हो थर्मोकोल। लकड़ी हो या दूसरी कोई भी सतह। मतलब यें कि फ़ेविकोल सिन्थेटिक रेज़िन एड्हॅसिव सभी तरह की सतहों को जल्द और मजबूत जोड़ता है... और हर बार, साफ़ और बढ़िया काम!

चिपकाने और जोड़ने के लिए सर्वोत्तम

फ़ेविकोल®

कारीगरों का कारगर एड्हॅसिव!

वितरक: पारेख एजेन्सीज़, पोस्ट बॉक्स नं. ११०८४, बम्बई ४००
अहमदाबाद • कलकत्ता • दिल्ली
निर्माता: पिडिलाइट इन्डस्ट्रीज़ प्रायवेट लिमिटेड, बम्बई ४००

फ़ेविकोल का ट्यूब या प्लास्टिक का डब्बा घर और ऑफ़िस में ज़रूर रखिए!

हैं !'

आपका– ब. र.

× × ×

'...... मुझे यह जानने की बहुत इच्छा है कि (रवींद्रनाथ) ठाकुर जब आपके यहां तीन बार गये थे, उनके बारे में आपने व्यक्तिगत रूप से क्या अनुभव किया ? ......'

१६ फरवरी १९६३

प्रिय श्री चटर्जी,

...... मुझे उस भेंट की याद है, जिसके बारे में लॉवेज डिकिन्सन ने अस्पष्ट रूप से कुछ लिखा है। उससे एक बार पहले भी पहली बार, राबर्ट ट्रेवेलियन और लॉवेज डिकिन्सन उन्हें मेरे घर पर लाये थे। मैं स्वीकार करता हूं कि उनकी रहस्यमयता ने मुझे आकर्षित नहीं किया और मुझे अपना यह सोचना याद आता है कि वे अधिक प्रत्यक्षवादी होते तो अच्छा रहता। उनका आचरण कोमल एवं पलायनवादी किस्म का था, जिससे कोई सोच सकता था कि विचारों के प्रत्यक्ष अथवा सीधे आदान-प्रदान से वे दूर रहना चाहते हैं। उनकी तीव्रता उनके आत्मलीन होने के कारण कुंद हो गयी लगती थी। इसी कारण, उनके रहस्यवादी विचार-सिद्धांत सूक्तियों के रूप में थे, जिनके ऊपर बहस करना संभव नहीं था।

शुभेच्छाओं के साथ, **आपका–ब. र.**

× × ×

'आत्मकथा' के प्रकाशक को लिखे गये पत्र से :

'...... चूंकि मैं अपनी आत्मकथा को समाप्त करने के साथ ही नहीं मर सका, इसलिए उसके लिए और अध्याय भेज रहा हूं। यदि मैं सौ वर्ष तक जीवित रहा, तो और भेज दूंगा।'

–ब. र.

[इन पत्रों का अनुवाद करने की अनुमति देने के लिए मैं 'बर्ट्रेंड रसेल एस्टेट' का आभारी हूं। –अरुण सेदवाल]

★

कोशों में 'तीर्थ' शब्द के अनेक अर्थ दिये गये हैं। अमरकोश (३.३.८६) में कहा गया है–निपानागमयोस्तीर्थमृषिजुष्टे जले गुरौ। कोशों में दिये गये इन विभिन्न अर्थों का भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से विकास सरलता से दिखाया जा सकता है। 'तीर्थ' शब्द का मूल अर्थ नदी का वह घाट है, जहां से नदी के पार जाया जाता है। वहां विश्राम और स्नान का आकर्षण भी होता है। उसके पास ही प्राचीन समय में तपस्वी मुनियों-महात्माओं के आश्रम होते थे और क्रमशः देव-मंदिरों का निर्माण भी हुआ। इससे उस स्थान का आध्यात्मिक आकर्षण भी बढ़ा। अतएव तीर्थ केवल भौतिक नदी के पार जाने के स्थान न रहकर संसार सागर के पार जाने के साधन हो गये। वे पवित्रता और श्रद्धा की भावना के स्थान बन गये। इसी आधार पर अज्ञानांधकार को दूर करने वाले गुरु और आगमशास्त्रों को भी तीर्थ माना गया है। जैन धर्म के परमाचार्यों को 'तीर्थंकर' और एक ही गुरु के शिष्यों को 'सतीर्थ्य' इसी आधार पर कहा गया है।

–डा. मंगलदेव शास्त्री ('कल्पना' में)

★

आकाश में विज्ञापनबाजी

हरपाल कौर

अक्तूबर १९२२ की एक चमकीली दोपहर थी। न्यूयार्क के बाजारों में नित्य की भांति गहमा-गहमी थी। सहसा नीले आकाश पर गूंजदार आवाज के साथ एक बारीक-सी सफेद रेखा प्रकट होने लगी। रेखा लगभग एक मील लंबी थी, पर धरती पर से देखने वालों को दस-बारह फुट से अधिक लंबी नहीं लग रही थी। शीघ्र समानांतर कुछ दूरी पर एक दूसरी रेखा भी बनने लगी और बढ़ते-बढ़ते पहली रेखा के बराबर पहुंचकर समाप्त हो गयी।

राह चलते लोग आसमान में आंखें गड़ाकर खड़े हो गये। यातायात ठप पड़ गया। किसी की समझ में न आता था कि आखिर यह है क्या चीज? फिर लोगों ने देखा कि दोनों समानांतर रेखाओं को बीच से काटती हुई एक अन्य छोटी रेखा प्रकट हुई और अंग्रेजी भाषा का अक्षर 'एच' बन गया। हजारों लोगों ने तालियां बजायीं और हाथ हिला-हिलाकर उस नन्हे-से वायुयान के चालक की प्रशंसा की जो धुएं के द्वारा आकाश पर कोई रहस्यपूर्ण संदेश लिखने का प्रयत्न कर रहा था।

यह सफेद गाढ़ा धुआं वायुयान की दुम में से निकल रहा था और वायुमंडल के संपर्क में आते ही जम जाता था। यों लगता था, जैसे कोई दैत्याकार हाथ आकाश के नीले बोर्ड पर सफेद चाक से कुछ लिख रहा हो। कुछ क्षण बाद वायुयान हजारों-लाखों आदमियों के सामने आकाश में एक ऐसी इबारत छोड़कर जा चुका था, जो सूर्यास्त के बाद भी देर तक नजर आती रही। उस इबारत के शब्द थे :

'हैलो, काल वैंडरबिल्ट ७२००।'

थोड़ी देर बाद ही न्यूयार्क के वैंडरबिल्ट होटल के सामने लोगों का हुजूम यह कारनामा दिखाने वाले विमान-चालक को देखने के लिए आ जुटा था।

विमान-चालक था कैप्टन सायले टर्नर, जिसने प्रथम महायुद्ध में जर्मनों को खासी क्षति पहुंचायी थी। वह ब्रिटिश वायुसेना का सबसे निडर और अनुभवी विमान-चालक था और जब महायुद्ध समाप्त हुआ, तो अज्ञात कारणों के आधार पर उसे वायु-सेना से निकाल दिया गया।

उसने कुछ मित्रों के साथ एक प्रचार-संस्था बनायी, जिसका काम संसार में सबसे निराला और अनोखा था। संस्था के विमान-चालक आकाश पर धुएं की इबारत द्वारा बड़ी-बड़ी फर्मों के उत्पादनों का प्रचार करने लगे। देखते ही देखते वह तरीका इतना लोकप्रिय हुआ कि कैप्टन सायले की

मांग

संस्था अमरीका में आकाशीय-प्रचार की सबसे बड़ी संस्था बन गयी। आज संसार के बहुत-से देशों में उसकी शाखाएं हैं।

आकाश पर 'लिखने' का विचार सबसे पहले ब्रिटेन की रायल-एयर फोर्स के विमान-चालक मेजर जैक सेवेज के मस्तिष्क में आया था। उन दिनों प्रथम महायुद्ध जोरों पर था। जर्मन जासूस इतने चुस्त और बुद्धिमान थे कि ब्रिटिश जासूसों के सभी रेडियो-संदेश तुरंत पकड़ लेते और ब्रिटिश सेनाओं की हर गतिविधि का फौरन सूराग पा लेते थे। ब्रिटेन के लिए यह बहुत चिंताजनक बात थी। दूसरी ओर उसे जनता के लिए भी कई संदेश और आदेश जारी करने होते थे। जिन्हें रेडियो या अखबारों के द्वारा फैलाना सुरक्षा की दृष्टि से लाभकारी न था। संदेश-प्रेषण का कोई नया और सुरक्षित उपाय खोजना आवश्यक था।

मेजर सेवेज एक दिन एयर-फील्ड पर बैठा इन्हीं विचारों में खोया हुआ था। सहसा उसने देखा कि उड़ान भरने के लिए एक विमान रन-वे पर दौड़ा और उसने अपने पीछे जो धुआं छोड़ा, वह सख्त सर्दी के कारण हवा में रेखा के रूप में जम गया।

मेजर सेवेज खुशी से उछल पड़ा। उसके मस्तिष्क में एक विचार कौंध गया। अगले दिन उसने वायुसेना की प्रयोगशाला में जाकर वैज्ञानिकों को अपनी योजना बतायी और ऐसा रासायनिक पदार्थ बनाने की मांग की कि जिससे सफेद रंग का धुआं पैदा हो जो काफी देर तक हवा में विलीन न हो सके। वे शीघ्र ही वैसा रासायनिक पदार्थ बनाने लगे। मेजर सेवेज ने विमान उड़ाया और ब्रिटिश सेना के दो बिछुड़े हुए डिविजनों के लिए आकाश पर संदेश लिखा।

महायुद्ध के बाद मेजर और उसके साथ के कई विमान-चालकों ने इस 'आविष्कार' से लाभ उठाने की सोची। पहली बार डर्बी रेस के अवसर पर उसका प्रचार धुएं की इबारत द्वारा किया गया। बाद में सरकार ने इस धंधे को रोक दिया। पर मेजर के एक साथी कैप्टन टर्नर ने अमरीका पहुंचकर यह प्रदर्शन किया।

अमरीका में विज्ञापनबाजी के इस ढंग को बड़े-बड़े व्यावसायिक संस्थानों ने हाथों-हाथ लिया और कप्तान टर्नर की संस्था के पास धड़ाधड़ आर्डर आने लगे। सबसे पहले एक तंबाकू कंपनी ने उसकी सेवाएं प्राप्त कीं और 'लकी स्ट्राइक' नामक सिगरेट का विज्ञापन आकाश पर लगाया गया। एक विज्ञापन लिखने का पारिश्रमिक एक हजार डालर निश्चित किया गया और तीन वर्ष के समय में टर्नर की संस्था ने लगभग १८०० सौ विज्ञापन आकाश की छाती पर लिखकर अठारह-बीस लाख डालर कमा लिये। धीरे-धीरे यह कला अमरीका से निकलकर कनाडा और क्यूबा तक पहुंच गयी। बड़ी-बड़ी फिल्म-कंपनियों ने भी इससे यथोचित लाभ उठाया। एम. जी. एम. ने जब अपनी प्रसिद्ध फिल्म 'टेस्ट पाइलट' बनायी, तो हफ्तों तक 'टेस्ट-पाइलट' शब्द आकाश पर लिखे जाते रहे।

कपड़ों की उजली धुलाई के लिये !

AKOLA
CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA
BERAR OIL INDUSTRIES, AKOLA
चाँदनी
चाँदनी साबुन
CHANDNI SOAP
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

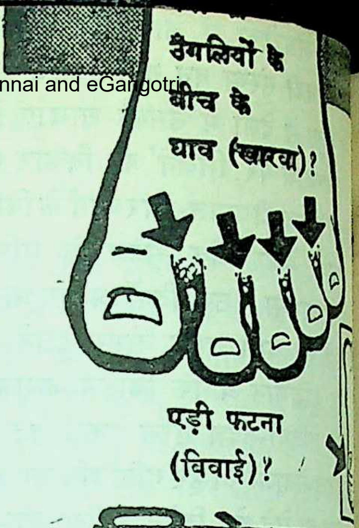
उँगलियों के
बीच के
घाव (खारवा)?
एड़ी फटना
(बिवाई)?

लिचेन्सा
इस्तेमाल कीजिये।

सफेद दाग का अचूक इलाज

'सफेद कुष्ट बूटी' रक्त के समस्त विकारों को तेजी से बाहर निकालकर बिलकुल शुद्ध रक्त शरीर में प्रवाहित करती है तथा सिर्फ सात दिनों में पुराने से पुराने सफेद दाग के स्थान पर भी शारीरिक चमड़े का प्राकृतिक रंग बदलने लगता है, जिससे गौरपूर्वक निरीक्षण करने पर भी रोग के नामोनिशान नहीं मिल पाते। साथ ही भविष्य में इस रोग के लौटने का भ नहीं रहता। सेवन-विधि बिलकुल सर है। प्रचारार्थ एक फायल दवा मुफ्त के लिए लिखें।

पता—सरयुग फार्मेसी
पो.—कतरी सराय (गया)

इसी प्रकार जनरल मोटर्स कंपनी ने शेवरलेट कार का विज्ञापन दिया। न्यूयार्क में जब नगरनिगम के चुनाव आरंभ हुए, तो यह आकाशीय प्रचार पराकाष्ठा पर पहुंच गया। आकाश का ऐसा कोई कोना न था, जहां उम्मीदवारों के नाम न लिखे गये हों।

दूसरा महायुद्ध आरंभ होते ही सरकार ने प्रचार का यह ढंग समाप्त कर दिया और यह धंधा करने वाली कंपनियों ने अपने विमान और उनके चालकों की सेवाएं अमरीकी और ब्रिटिश वायुसेनाओं को अर्पित कर दीं। महयुद्ध के दिनों में कई स्थानों पर जनता को संकट से अवगत कराने या सेना के विभिन्न विभागों को आवश्यक और महत्त्वपूर्ण ढंग के संदेश देने के लिए इस तरीके का कई बार उपयोग किया गया। परंतु जब जर्मन लड़ाकू विमानों ने ऐसे प्रचार-विमानों को गिराना आरंभ किया, तो यह सिलसिला बंद करना पड़ा।

महायुद्ध के बाद सरकार ने लोगों से बांड खरीदने की अपील की और 'बांड खरीदये' शब्द से आकाश भरा-भरा रहने लगा।

आकाश पर धूम्रलेख द्वारा प्रचार करने की कला अब यूरोप और अमरीका में उत्कर्ष पर है। पहले जब आकाश में बादल छा जाते या मौसम खराब हो जाता, तो विज्ञापन नहीं लिखे जा सकते थे। और न्यूयार्क का यह हाल था कि वर्ष के ३६५ दिनों में मुश्किल से सौ दिन ऐसे निकलते थे, जिनमें आकाश साफ और खुला मिलता। इसलिए वैज्ञानिकों की सेवाएं प्राप्त की गयीं और ऐसे रासायनिक पदार्थ तैयार कराये गये, जिनसे मेघाच्छन्न आकाश में भी शब्द लिखे जा सकें।

दूसरी मुसीबत तेज हवा की है। हवाओं के झक्कड़ धुएं के इन अक्षरों को उड़ाकर कहीं का कहीं ले जाते हैं। और प्रचार का उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है। इसका इलाज अभी तक खोजा नहीं जा सका है। फिर भी खुले हुए दिन में आकाश पर लिखा हुआ विज्ञापन मीलों दूर से दिखाई देता है और एक ही समय लाखों-करोड़ों नजरों के सामने से गुजरता है।

टोरोंटो में वार्षिक राष्ट्रीय प्रदर्शनी के अवसर पर एक विज्ञापन खासी ऊंचाई पर लिखा गया था। उसका हर अक्षर तीन-तीन मील लंबा और एक-एक मील चौड़ा था। यह विज्ञापन ऐसे धुएं से बनाया गया था कि सुबह से लेकर रात के खाने के समय तक उसका हर अक्षर पढ़ा जा सकता था।

आकाश में इबारत लिखना आसान काम नहीं है; क्योंकि इसमें अक्षर उल्टे लिखने पड़ते हैं। इसके लिए बड़े अभ्यास और कौशल की आवश्यकता है। विमान-चालक को आकाश के अदृश्य कागज पर मीलों लंबे-चौड़े उल्टे अक्षर लिखने में कितना परिश्रम करना पड़ता होगा, इसका अंदाज करना है तो कागज पर अपना नाम उल्टा लिखकर देखिये।

धूम्र-लेखन करने वाले विमान के काकपिट में स्याही के सैकड़ों गैलन वाले टैंक लगाये जाते हैं। इस स्याही के मुख्य घटक

हैं अरंडी का तेल और राब। जब उसे एक विशेष तापमान पर गर्म किया जाता है, तो गाढ़ा सफेद धुआं निकलने लगता है।

आकाशीय विज्ञापन कम से कम दस हजार और अधिक से अधिक सत्रह हजार फुट की ऊंचाई पर लिखे जाते हैं। अब तो स्याही इतनी उम्दा बनने लगी है कि उससे निकले हुए धुएं के शब्द पचास मील प्रति घंटा चलने वाली हवा का झोंका भी सहन कर लेते हैं।

★

मां का ममत्व

चंद्रशेखर आजाद को फरार अवस्था में, अपने गांव का एक परिचित आदमी हरिद्वार में मिल गया। आजाद ने उससे कहा कि तुम गांव जा रहे हो, मेरी मां से कह देना कि मैं तुम्हें मिला था और प्रसन्नतापूर्वक हूं। मां बहुत ही चिंतित होगी, क्योंकि बरसों से मैं घर नहीं जा सका हूं।

वह आदमी जब वापस गांव पहुंचा, तो सबसे पहले आजाद की मां से मिलने गया। उनके घर के इर्द-गिर्द पुलिस का पहरा पड़ा हुआ था। जब उस आदमी ने जाकर घर का दरवाजा खटखटाया, तो आजाद की मां ने सोचा कि पुलिस वाले दरवाजा खटखटा रहे हैं। अतः भीतर से ही बोली—'अरे मुओ, क्यों मुझ बुढ़िया को तंग कर रहे हो! कितनी बार तुम्हें कह चुकी कि चंद्रशेखर यहां नहीं है, कितनी बार तुम्हें घर की तलाशी दे चुकी। फिर भी तुम हो कि मुझे बार-बार तंग किये जा रहे हो।'

उस आदमी ने बाहर से अपना नाम बताया और बोला—'मां, मैं हूं।'

बुढ़िया अपने आंचल से ढंककर एक दीया लिये आयी, दरवाजा खोला और उसे भीतर ले गयी। जब उस आदमी ने आजाद से अपने मिलने की बात कही और उनकी कुशलता का समाचार बताया, बूढ़ी मां के आनंदाश्रु उमड़ आये। उसने पूछा—'बेटा, चंद्रशेखर के साथ तुम्हारा फिर भी मिलना होगा क्या?'

उसने बताया—'मां, मैं तो यहां दो दिन के लिए ही आया हूं। परसों फिरती जा रहा हूं। चंद्रशेखर से मेरी बात हो चुकी है, वे मुझे वहीं मिलेंगे।'

बुढ़िया ने कांपते हुए हाथों से अपनी पुरानी-सी ओढ़नी के पल्ले की गांठ खोली। उसमें से एक दुअन्नी निकाली और गद्गद कंठ से कांपती हुई वाणी में बोली—'मेरे चंद्रशेखर को कलाकंद खाने का बहुत शौक है। इस दुअन्नी का कलाकंद खरीदकर मेरे आंखों के तारे को यह कहकर तुम अपने हाथ से खिलाना कि यह तुम्हारी मां का भेजा हुआ है।'

—भागीरथ कानोड़िया

★

अरबों मन तेल जुटा है, अरब नाच रहे हैं

सन १९७३ के अरब-इस्रायल युद्ध के बाद अरब देशों ने पेट्रोल को हथियार बनाकर पश्चिम एशिया में राजनयिक पासा ही नहीं पलट दिया, साथ ही पेट्रोल-निर्यातक देशों के लिए अकल्पित समृद्धि के द्वार भी खोल दिये। इस नयी समृद्धि का सबसे बड़ा प्रतीक है सऊदी अरब। उसने गत वर्ष संसार के समस्त गैरसाम्यवादी देशों द्वारा खपाये गये पेट्रोल का पंचमांश निर्यात किया और २१६.७५ अरब रुपये की कमाई की।

सऊदी अरब के शाह फैसल ने इस आय का एक बड़ा हिस्सा अपनी प्रजा के लिए कल-कारखाने, बंदरगाह, स्कूल-अस्पताल खोलने की योजनाओं के लिए अलग रख दिये; १५ अरब रुपयों से अपनी छोटी मगर बढ़ती फौज के लिए आधुनिकतम शस्त्र खरीदे। अमरीकी समाचार-पत्रिका 'टाइम' के अनुसार, पिछले साल राबात संमेलन में तेल-उत्पादक अरब देशों ने इस्रायल से जूझते अरब देशों को जिन १६.५ अरब रुपयों की मदद का वचन दिया, उनका एक बड़ा हिस्सा शाह फैसल ने ही दिया था। इसके अलावा वे गत वर्ष मिस्र, सीरिया, जोर्डन और फिलस्तीन मुक्ति-संघटन के मुख्य आर्थिक मददगार रहे हैं। उन्होंने विभिन्न देशों को ९ अरब रुपये कर्ज व अनुदान में दिये और गरीब गैरअरब देशों को १.५ अरब रुपये की मदद का वचन दिया। फिर भी उनका खजाना भरा ही रहा।

पिछले साल तेल-निर्यातक देशों के पास लगभग ४५० अरब रुपये जमा हो गये। ये देश प्रतिदिन अपने खर्च की अपेक्षा १२३ करोड़ रुपये अधिक कमा रहे हैं। लंदन के 'इकोनामिस्ट' ने इसका रोचक हिसाब लगाया है कि ये देश मिलकर कौन-सी चीज अपनी कितने समय की आय से खरीद सकते हैं—दुनिया के तमाम बड़े स्टाक-एक्सचेंजों में दर्जसब कंपनियां १५.६ वर्षों की आय से; न्यूयार्क स्टाक-एक्सचेंज की तमाम कंपनियां ९.२ वर्ष की आय से; दुनिया के तमाम केंद्रीय बैंकों का तमाम सोना (१७० डालर प्रति औंस की दर से) ३.२ वर्ष की आय से; आइ. बी. एम. कंपनी के तमाम शेयर १८३ दिन की आय से; और राकफेलरों की संपत्ति ६ दिन की आय से।

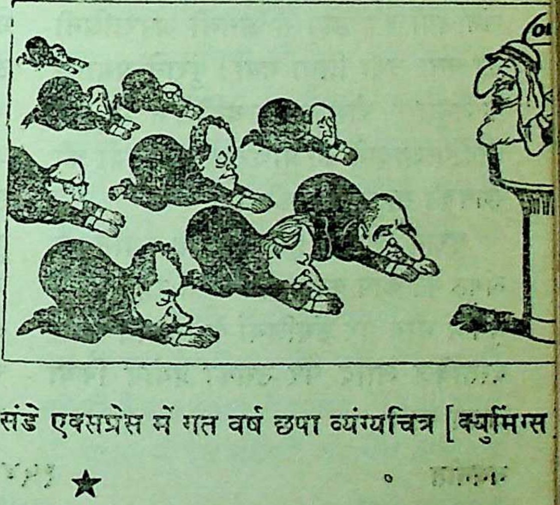

संडे एक्सप्रेस में गत वर्ष छपा व्यंग्यचित्र [क्युमिंग्स

★

उंगलियों के

आज अपराधों का पता लगाने में उंगलियों की छाप का बहुत महत्त्व है। चतुर अपराधी सावधान रहता है कि उसकी उंगलियों के निशान अपराध-स्थल पर छूट न पायें।

उंगलियों की छाप लेने का इतिहास बहुत पुराना है। दो हजार वर्ष पूर्व चीन में आदमी की पहचान के लिए उंगलियों की छाप ली जाती थी। एशिया में शताब्दियों तक उंगलियों और अंगूठे की छाप व्यापारिक व्यवहार, न्याय तथा अन्य दस्तावेजों के प्रसंग में प्रचलित रही। चीन की १२वीं शती की एक घटना प्रसिद्ध है। हत्या के एक प्रसंग में दो स्त्रियां पकड़ी गयीं। अंत में उंगलियों की छाप से असली अपराधिनी का पता लगा लिया गया। पुराने प्रमाणों के अनुसार, रोम के एक वकील ने भी एक निर्दोष आदमी की प्राणरक्षा उंगलियों की छाप की सहायता से की थी।

पुराने शासक हस्ताक्षर के स्थान पर अंगूठे की छाप का प्रयोग करते रहे। मध्ययुग में मोम पर उंगलियों के निशान लेकर दस्तावेज आदि पर उसका प्रयोग किया जाता था।

सर्वप्रथम १७ वीं शती में मार्सेलो मैलपिन्यी नामक इतालवी शरीर-विज्ञानी का ध्यान इस ओर गया। वह पहला यूरोपीय था, जिसने उंगलियों की रेखाओं की बनावट पर वैज्ञानिक रूप से विचार किया। उसके समकालीन नेहेमियाह ग्र्यू ने हाथ-पैरों के रोमकूपों का सूक्ष्म अध्ययन किया था। वह रायल सोसायटी का सचिव था। उसके बाद की दो शतियों के वैज्ञानिकों ने इन दोनों के कार्यों का सहारा लिया है। १८२३ में जान ई. पर्किजी ने, जो ब्रेसला में शरीर-रचनाशास्त्र का प्राध्यापक था, उंगलियों के निशान के स्थायित्व को स्वीकार करते हुए उनके वर्गीकरण के संबंध में सबसे पहला सुझाव दिया। इस विषय पर उसने एक शोधपत्र भी पढ़ा था।

विदेशों में इस विषय पर गूढ़ अध्ययन अवश्य होते रहे, किंतु उंगलियों के निशान के समुचित प्रयोग का सूत्रपात भारत से ही हुआ और यहीं इसे व्यवस्थित रूप मिला। १८५७ के विद्रोह के पश्चात् भारत की अंग्रेजी सरकार को अपने भारतीय कर्मचारियों को पेंशन देते समय एक कठिनाई महसूस होने लगी। उन दिनों ज्यादातर

निशान

*** डा. शिवनंदन कपूर ***

लोग अशिक्षित थे। कोई आदमी धोखा देकर दूसरे की पेंशन ले जाये, इस मामले में अधिकारियों को बहुत सजग रहना पड़ता था। ऐसी कुछ घटनाएं हो भी जाती थीं।

उस समय सर विलियम हर्शेल हुगली (बंगाल) में शासकीय अधिकारी थे। वे कई अनुबंधों में उंगलियों की छाप का सफल प्रयोग कर चुके थे। उसी युक्ति को उन्होंने यहां भी आजमाया। इससे पेंशन के काम में एक व्यवस्था आयी तथा जालसाजी का भय जाता रहा। हर्शेल ने इसके द्वारा अपराधों की रोकथाम की संभावना पर भी विचार किया।

अठारहवीं शती में टोक्यो का एक चिकित्सक हेनरी फाल्ड्स भी इसमें गहरी रुचि ले रहा था। वह मूलतः स्काटलैंड का निवासी था। उसने प्रत्येक मनुष्य की उंगलियों की रेखाओं की भिन्नता, उनके स्थायित्व आदि पर विस्तार से विचार करते हुए सन १८०० में एक लेख लिखा था, जिसकी पर्याप्त चर्चा हुई।

मार्क ट्वेन ने भी अपनी दो कहानियों में अपराधियों की शिनाख्त में उंगलियों की छाप के सफल उपयोग का चित्रण किया।

सन १८८० के अंतिम दिनों में सर फ्रांसिस गाल्टन व्यक्ति की पहचान की विधियों के संबंध में कार्य कर रहे थे। इस सिलसिले में उन्होंने हर्शेल की उंगलियों की छाप संबंधी सफलताओं पर विशेष विचार किया। उन्होंने 'फिंगर-प्रिंट डाइरेक्ट्री' नामक पुस्तक लिखकर हर्शेल को समर्पित की। उसके लिखने में उन्हें भारतीय कर्मचारियों की सहायता भी प्राप्त हुई। इसमें उंगलियों की छाप के वर्गीकरण तथा उसकी सार्थकता की ओर संकेत है। उन्होंने हुगली के उप-पंजीयक रामगति बंद्योपाध्याय की सहायता का भी उल्लेख किया है।

वास्तव में इस पुस्तक द्वारा सर फ्रांसिस गाल्टन ने उंगलियों की छाप संबंधी आधुनिक कार्य-प्रणाली का शिलान्यास किया। उन्होंने कई बुनियादी बातों पर विशेष ध्यान दिया—१. क्या उंगलियों की रेखाएं बदलती रहती हैं? २. क्या उंगलियों की छापों का वर्गीकरण संभव है?

बंगाल के ही दूसरे अधिकारी सर एडवर्ड रिचार्ड हेनरी ने हर्शेल और गाल्टन की खोजों में कुछ सुधार पेश किये। (कहा जाता है, असल में इन सुधारों का श्रेय अजीजुल

लिज्जत
पापड
देश में और परदेश में सब के मनपसंद

Lijjat PAPAD
REGD. TRADE MARK

श्री महिला गृह उद्योग लिज्जत पापड
(खादी एवं ग्रामोद्योग कमिशन द्वारा मान्य)

★ बम्बई-२ ★ बम्बई-४ ★ बांद्रा ★ कांदीवली
★ वडाला ★ मुलुंड ★ पुना-४ ★ वालोड ★ अमरावती
★ रामणीया (कच्छ) ★ हैद्राबाद ★ जबलपुर

हक नामक भारतीय कर्मचारी को है, जिसे ५,००० रु. का पुरस्कार भी दिया गया।)

सर एडवर्ड हेनरी ने इस संबंध में दो महत्त्वपूर्ण बातों की खोज की थी। एक तो यह कि प्रत्येक व्यक्ति की उंगलियों की छाप दूसरे सबसे भिन्न रहती है। दूसरे, उंगलियों की रेखाएं आजीवन ही नहीं, मृत्यु के बाद भी नहीं बदलतीं। उनकी पुस्तक 'उंगलियों की छाप के लाभ और वर्गीकरण' १८९७ में प्रकाशित हुई। उसी साल कलकत्ता में उंगलियों की छाप का सर्वप्रथम कार्यालय खोला गया।

कुछ वर्षों में सर एडवर्ड हेनरी के सिद्धांत को यूरोप के कई देशों ने व्यवहार में अपना लिया। हर्शेल और गाल्टन ने भी उनके काम की प्रशंसा की। सर एडवर्ड भारत में पुलिस-विभाग के सर्वोच्च अधिकारी थे। १९०१ में विश्वविख्यात स्काटलैंड यार्ड में असिस्टेंट कमिश्नर बना दिये गये। उसी वर्ष उनके प्रयत्नों से वहां भी उंगलियों के निशान का अलग विभाग खोला गया।

आज स्काटलैंड यार्ड में उंगलियों की छाप के [illegible] लाख सेट बाकायदा वर्गीकृत फाइलों में रखे हुए हैं। रात में पकड़े गये अपराधी का पूरा इतिहास सुबह तक पता लग जाता है और उसी दिन उसके संबंध में जांच शुरू हो जाती है।

सन १९०२ में ही इसका सफल परीक्षण कर लिया गया था। डर्बी डे पर ५४ व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया। उनकी उंगलियों के निशान लिये गये। उनमें २९ 'पुराने पापी' निकले। उसी वर्ष वसंत में एक अपराध में केंद्रीय फौजदारी अदालत में उंगलियों की छाप को भी प्रमाण में प्रस्तुत किया गया और अपराधी को सजा मिली।

सन १९०५ में हुई एक हत्या में इंस्पेक्टर कोलिंस ने अपराधी के अंगूठे के ११ विशेष बिंदुओं का पता लगाया। घटना-स्थल पर मिले निशान से उनका मेल होने पर अपराधी के बचने की संभावना समाप्त हो गयी।

उंगलियों के निशान के चार भेद निश्चित किये गये—शुक्ति या चाप, शंख चक्र तथा मिश्रित। कोई व्यक्ति या अपराधी उंगलियों की छाप देने से इन्कार न कर सके, इसके लिए १९२० में विशेष कानून बनाया गया, 'जिसे बंदियों का पहचान संबंधी कानून' कहते हैं।

अमरीका में सबसे पहले गिल्बर्ट टाम्सन ने इसका प्रयोग १८८२ में न्यू मेक्सिको में भू-सर्वेक्षण के मामलों में जालसाजी से बचाव के लिए किया। बाद में तो अमरीका में उंगलियों की छाप के लिए अलग विभाग ही खोल दिया गया। संसार का सबसे बड़ा उंगली-छाप संग्रहालय अमरीका में है। १९५४ में वहां १३ करोड़ ४ लाख उंगलियों की छापें पंजीकृत थीं। आज भी प्रतिदिन २० हजार आदमियों की उंगलियों की छाप ली जाती है। कई देशों में अस्पतालों में प्रसूता तथा बच्चे के हाथ-पैरों की उंगलियों की छाप ले ली जाती है। इससे बच्चों के बदले जाने की आशंका नहीं रहती।

—शुक्ला चाल, खंडवा, म. प्र.

★

लद्दाख में कृषि-पराक्रम

लेफ्टिनेंट कर्नल के. ए. पाटील

श्री जवाहरलाल नेहरू की यह तीव्र इच्छा थी कि लद्दाख में खेती और पशु-पालन में सुधार और प्रगति हो। परिणामस्वरूप १९६० में लेह में फील्ड रीसर्च लैबोरेटरी की स्थापना हुई और उसने अल्मोड़ा (उत्तर प्रदेश) की प्रसिद्ध विवेकानंद लैबोरेटरी के निर्माता और नेहरूजी के विज्ञानी मित्र डा. बोशी सेन की सलाह और मार्ग-निर्देशन में शोधकार्य आरंभ किया।

यह प्रयोगशाला ऊंचे स्थानों पर खेती और पशु-विज्ञान के क्षेत्र में शोध और विकास का महत्त्वपूर्ण काम कर रही है। प्रयोगों और परीक्षणों के जरिये यहां जुटायी गयी जानकारी विविध विस्तार-कार्यक्रमों द्वारा लद्दाख के किसानों को पहुंचायी जाती है। पिछले तेरह वर्षों में उसने अनेक उल्लेखनीय सफलताएं हासिल की हैं।

अभी कुछ साल पहले तक लद्दाखी किसान बंदगोभी, स्थानीय किस्म की मूली, शलजम, आलू और इनी-गिनी हरी सब्जियों के सिवा अन्य सब्जियां न उगाते थे, न खाना पसंद करते थे। कारण स्पष्ट था। अन्य सब्जियां उगाने का उन्हें ज्ञान नहीं था। फिर ऊंचाई, निम्न तापमान और हवा में अल्प नमी के कारण इन्हें यहां उपजाया जा सकेगा या नहीं, इस बारे में संदेह था।

फील्ड रीसर्च लैबोरेटरी ने आवश्यक शोध-कार्य किया और अलग-अलग जातियों और किस्मों की सब्जियों के बीज किसानों को बांटे। व्यापक प्रयोगों द्वारा उसने इन ऊंचाइयों पर तरह-तरह की सब्जियां उगाने के कृषि-विधान विकसित किये और उनमें सुधार किया। इन तरीकों का संबंध सही किस्म के बीज का चुनाव, बुआई, बीजों के बीच की दूरी, उपयुक्त खाद एवं उसके देने का समय व तरीका, सिंचाई, निराई, कीट-नियंत्रण, पाले व ठंड से बचाव, कटाई का वक्त और कार्यक्रम आदि से है।

इसका सुपरिणाम यह हुआ कि लद्दाख के मेहनती किसान आज टमाटर, प्याज, मटर, गांठगोभी, सुधरी किस्म के आलू, गाजर, फूलगोभी, मिर्च, कई किस्म की सेम, कई किस्म की मूलियां, चुकंदर आदि बोने-उगाने लगे हैं। यहां उगायी गयी सब्जियों का आकार देखकर आनंद और अचरज दोनों होते हैं। यहां औसत बंदगोभी का वजन ५ से ७ किलोग्राम, फूलगोभी का ३ से ५ कि. ग्रा., गांठगोभी का १ से १।। कि. ग्रा. होता है।

एक-एक प्याज व आलू का वजन ३००

४०० ग्राम ! और ३ से ५ किलोग्राम की तो एक मूली होती है !

प्रयोगशाला के प्रायोगिक खेत में उगायी गयी कुछ सब्जियों के वजन के कीर्तिमान देखिये :

बंदगोभी : १३·२ कि. ग्रा.
फूलगोभी : १२·६ कि. ग्रा.
मूली : १९·२ कि. ग्रा.
प्याज : १·३ कि. ग्रा.
आलू : १·२ कि. ग्रा.
गांठगोभी : ८ कि. ग्रा.
कद्दू : २७ कि. ग्रा.

माना जाता है कि सब्जियों की इतनी अच्छी बढ़वार का कारण यह है कि वातावरण की विरलता, नमी की कमी, पराबैंगनी किरणें आदि के प्रभाव से यहां पौधों के रोग और हानिकारी कीड़े कम पनपते हैं।

प्रयोगशाला ने फस्ल के मौसम के काफी आरंभ में ही पौधे तैयार करने के तरीके विकसित किये हैं। इससे इस ऊंची भूमि पर खेती का मौसम आरंभ होने के एक-डेढ़ महीने पूर्व ही सब्जियों की तथा दूसरी पौध तैयार हो जाती है। इस प्रकार मौसम में एक से ज्यादा फस्ल लेना संभव हो गया है, जिससे किसानों को आर्थिक लाभ होता है। यही नहीं, पकने के लिए अधिक समय लेने वाली ऐसी कई फस्लें जिन्हें यहां उगने की कल्पना भी पहले नहीं की जा सकती थी, नयी विधि की बदौलत अब उगायी जाने लगी हैं।

निम्न तापमान के कारण अब तक यहां मुर्गी-पालन और मछली की खेती असंभव समझी जाती थी। मगर प्रयोगशाला ने काफी प्रयोग-परीक्षण करके अर्ध-भूमिदोज दड़बे विकसित किये हैं, जिनमें बिजली द्वारा ताप और प्रकाश पहुंचाये बिना ही मुर्गियां उचित रूप से मोटी और मांसल बन जाती हैं और पर्याप्त अंडे देती हैं। इससे इस प्रदेश में मुर्गी-पालन को बहुत बढ़ावा मिला है।

प्रयोगशाला ने दुब्रुक इलाके के ताङत्से नामक स्थान में अपना केंद्र खोला है, ताकि वहां के किसान भी लाभान्वित हो सकें। इसी तरह भारत सरकार के भू-सर्वेक्षण विभाग के सहयोग से प्रयोगशाला ने छुमतङ में एक छोटा कृषि-विभाग खोला है। यहां भूमिगत ताप की सहायता से ग्लास-हाउसों में खेती की जा रही है। बाहर शून्य अंश शतांश से निचला तापमान होते हुए भी इन ग्लास-हाउसों में सब्जियां और

अन्य फस्लें (जिनमें कई तो गर्मी की फस्लें होती हैं) उगती देखकर सहज ही मन प्रफुल्लित हो उठता है।

भूमिगत ताप की मदद से ग्लास-हाउस को गर्म रखकर उनमें फस्लें उगाने के प्रयोगों की सफलता से आशा बंधती है कि आगे चलकर यहां के किसानों की खुशहाली बहुत बढ़ सकेगी।

प्रयोगशाला फस्ल के मौसम से १-१।। महीने पहले ही पौध तैयार करके किसानों को बेच देती है। उससे किसान एक ही मौसम में दो फस्लें तो उगा ही रहे हैं, इसके अलावा मौसम के काफी आरंभ में ही सब्जी उगाकर अच्छी कमाई भी कर रहे हैं; क्योंकि मौसम से जरा पहले बाजार में आ जाने वाली सब्जी के अच्छे दाम उठते हैं।

गेहूं की अधिक उपजाऊ तथा जल्दी पकने वाली सुधरी किस्मों की खेती के बारे में भी प्रयोगशाला ने परीक्षण किये हैं। उपज के तुलनात्मक आंकड़े काफी उत्साहवर्धक रहे हैं। स्थानीय किस्में जहां प्रति एकड़ ३०० कि. ग्रा. अनाज और १,००० कि. ग्रा. भूसी देती हैं, वहां प्रयोगशाला में उगायी गयी कुछ किस्मों ने प्रति एकड़ २,००० कि. ग्रा. अनाज और ५,५०० कि. ग्रा. भूसी दी है। सो वह दिन शायद बहुत दूर नहीं, जब लद्दाख के बहादुर किसान अपनी आवश्यकता का तमाम गेहूं खुद उपजाने के अलावा, कुछ गेहूं बाहर भी भेजने लगेंगे।

सामान्यत: माना जाता है कि मक्का ७,००० फुट से ज्यादा की ऊंचाई पर नहीं उग सकता। मगर प्रयोगशाला ने मक्का की खेती बड़ी सफलता के साथ की है। इससे लद्दाख में मनुष्यों, मवेशियों और मुर्गियों के लिए एक और अनाज अब सुलभ हो जायेगा।

हिसाब लगाया गया है कि प्रयोगशाला के इन सब सफल प्रयत्नों की बदौलत लद्दाखी किसानों ने अतिरिक्त उपज बेचकर सन १९७१ में ३.२८ लाख रु., १९७२ में ५.८२ लाख रु. और १९७३ में ६.२२ लाख रुपये कमाये।

इस तरह प्रयोगशाला ने लद्दाख के कृषि-विकास और आर्थिक उन्नति में काफी योगदान दिया है। उसने अनाज, दलहन व तिलहन की खेती, फलों की बागवानी, शीत-ऋतु की कृषि, कृषि-आश्रित लघु उद्योग, भेड़-बकरी-पालन, मुर्गी-पालन आलू की खेती के शोध और विकास के का और विस्तार करने का निर्णय कि है। निश्चय ही इससे लद्दाख के और भी अधिक कृषकों को लाभ पहुंचेगा।

['आकाशवाणी' से साभार]

☆

* सोलन से पूछा गया कि सरकार का सर्वोत्तम प्रकार कौन-सा है। उसने उलटकर सवाल किया—'किस राष्ट्र के लिए, किस जमाने के लिए ?' गरज यह कि हर राष्ट्र को, हर नेता को यह खोजना पड़ता है कि सरकार का सर्वोत्तम प्रकार कौन-सा है।

☆

ई १९७५

लियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही
एकमात्र उद्देश्य है

दि ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

Sobhagya 74-2-Hin.

वार्षिक मूल्य रु. २४) (मूल्य रु. २-५०

अन्य फस्लें (जिनमें कई तो गर्मी की फस्लें गेहूं खुद उग-

होती र भी भंजने

लि

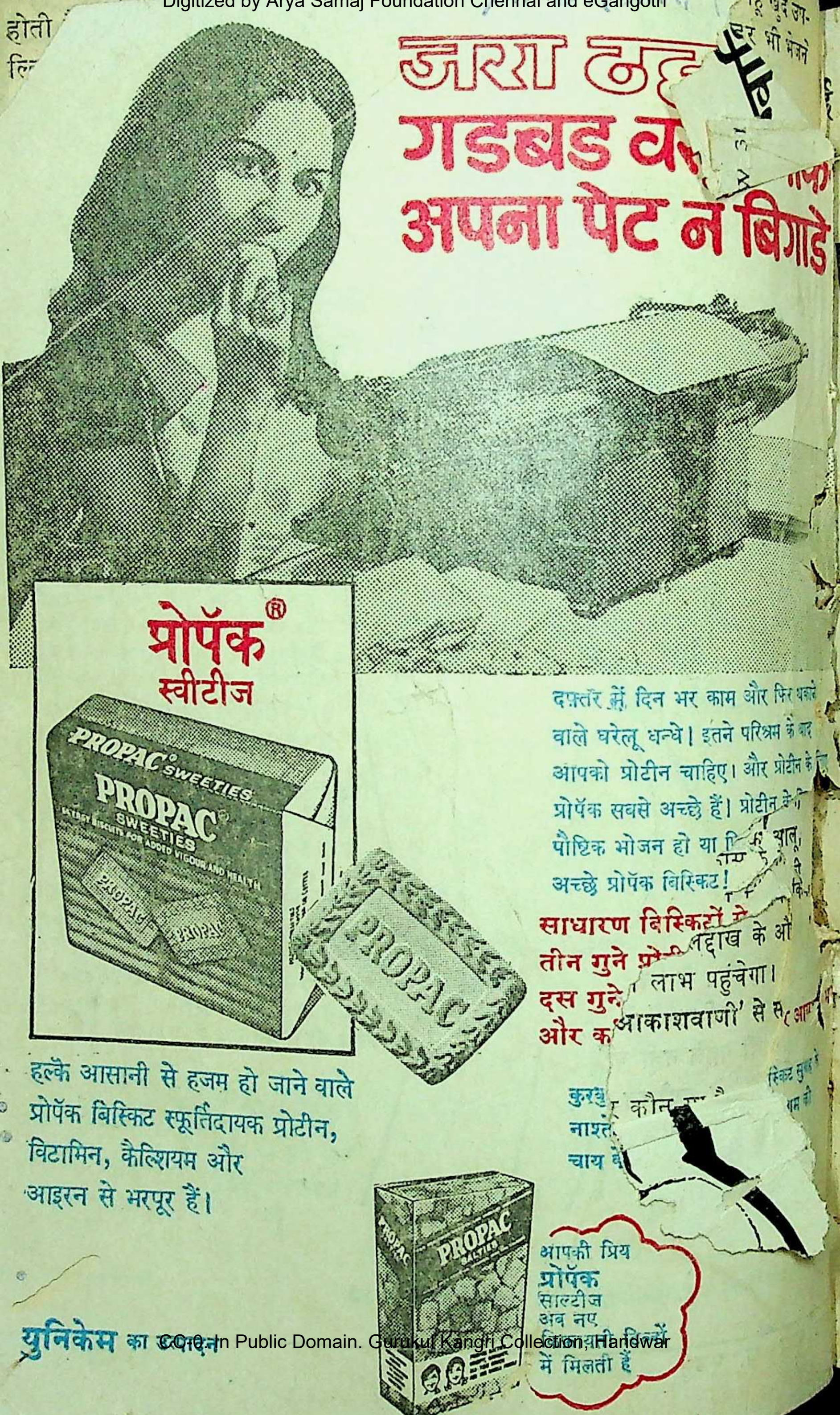

जरा ठह

गडबड व

अपना पेट न बिगाडें

प्रोपॅक®
स्वीटीज

दफ़्तर में दिन भर काम और फिर थकाने वाले घरेलू धन्धे। इतने परिश्रम के बाद आपको प्रोटीन चाहिए। और प्रोटीन के लिए प्रोपॅक सबसे अच्छे हैं। प्रोटीन के पौष्टिक भोजन हो या शाम अच्छे प्रोपॅक बिस्किट!

साधारण बिस्किटों से
तीन गुने प्रो
दस गुने
और क

हल्के आसानी से हजम हो जाने वाले प्रोपॅक बिस्किट स्फूर्तिदायक प्रोटीन, विटामिन, कैल्शियम और आइरन से भरपूर हैं।

कुरकु
नाश्ते
चाय के

आपकी प्रिय
प्रोपॅक
साल्टीज
अब नए
में मिलती हैं

युनिकेम का उत्पादन

PROPAC SWEETIES
PROPAC SWEETIES
ENERGY BISCUITS FOR ADDED VIGOUR AND HEALTH
PROPAC
PROPAC SALTIES

लद्दाख के औ
लाभ पहुंचेगा।
आकाशवाणी' से स

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

ई १९७५

9/5/75

नयी उमंग, नयी तरंग

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी – १००% सूती कपड़ों के लिए!

CENTURY

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.कं.
लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५

ADROIT-874

POND'S
VANISHING CREAM

आपके रूप के अनेक चहेते...
आपकी त्वचा के अनेक दुश्मन

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम को अपना साथी बनाइए.

[illegible], [illegible] और मौसम के तीखे प्रभाव से आपकी त[illegible]की रक्षा करती है पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम. आपके रूप को और भी सलोना बनाने के लिए इसमें एक खास पदार्थ ह्युमेक्टेंट मिला है जो आपकी त्वचा की नमी को सुरक्षित रखता है. तभी आपका मुखड़ा मोतीयारा दीखता है और तैलमुक्त भी.

इसे आप आदर्श पाउडर बेस के रूप में प्रयोग कर सकती हैं. घंटों-पहरों यह आपके सौंदर्य को अम्लान और मोहक बनाए रखती है. आप इसे संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन के रूप में भी प्रयोग कर सकती हैं

आप तो जानती ही हैं, आपकी त्वचा को भी उतना ही प्यार-दुलार चाहिए जितना कि आपको.

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम – आदर्श पाउडर बेस

चीज़ब्रो-पॉण्ड्स इन्कॉर्पोरेटेड (सीमित दायित्व सहित यू. एस. ए. में संस्थापित)

KORES

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं
की पूर्ति करने वाला भारत का
सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप,
स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

दुनिया का कोना-कोना, घूमे करोना

१९७२-७३ में, ३६ देशों के १५ लाख से भी
ज़्यादा लोगों ने करोना के ही जूते पहने,
जी हाँ! करोना के खेल-कूद के जूते और
गर्मी के सैंडल।

जानकारी के लिए, कृपया संपर्क करें:

करोना साहू कं. लि.

रजिस्टर्ड ऑफिस:
२२१, डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड
बम्बई ४०० ००१. भारत
टेलीफ़ोन: २६७८२१ (८ लाइनें), तार: करोनासाहू, टेलेक्स: ०११/२९६१

क्या आप अपने घर में कीड़े-मकोड़ों से परेशान हैं?

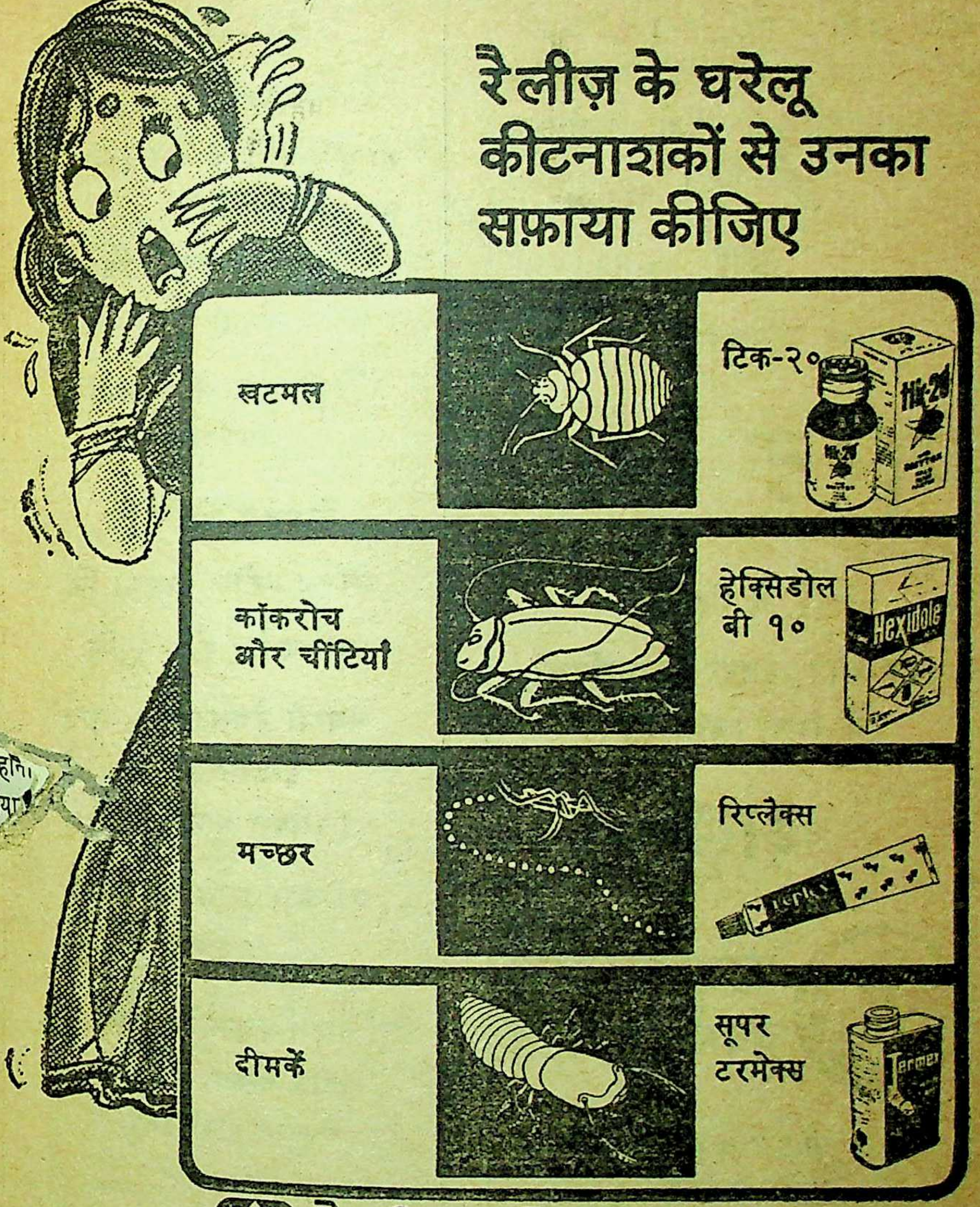

रैलीज़ के घरेलू कीटनाशकों से उनका सफ़ाया कीजिए

खटमल	टिक-२०
कॉकरोच और चींटियां	हेक्सिडोल बी १०
मच्छर	रिप्लैक्स
दीमकें	सूपर टरमेक्स

Tik-20
Hexidole
Replex
Termex

रैलीज़ इण्डिया लिमिटेड

वर्षों से प्रभावकारी कीट-नियंत्रण के लिए मशहूर

ADEUS/R-SP.1

प्रत्येक परिवार के लिए अनिवार्य
अपने खाद्य पदार्थ, अनाज, आटा, दाल, मसाले, मेवे आदि को कीड़ों से सुरक्षित रखने के लिए इस्तेमाल कीजिये।

झंडू
द्वारा विशेषतः निर्मित

पारद टिकियां

पारे से निर्मित
थोक और खुदरा व्यापारियों
के लिए नियामत

झंडू
फार्मास्यूटिकल
वर्क्स लिमिटेड

बंबई ४०००२५
सर्वत्र उपलब्ध

उद्योग की सेवा में
निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.

इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग
लिमिटेड

ग्रिंडवेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज़)

एशियन सायकल टायर
व ट्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि.
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई-१

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालोंने अपने आप क्या लिखा है :

'बारह साल की उम्र से ही मैने फ़ोरहॅन्स से दाँत साफ़ करने शुरू कर दिये थे। आज मैं बीस साल का होने जा रहा हूँ। पहली बार फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करते समय मेरे मसूढ़ों में कुछ तकलीफ़ थी। अब वह तकलीफ़ नहीं रही। पहले, रात के समय दाँतों को ब्रश करने की मेरी आदत नहीं थी। बाद में रोज रात को १० बजे पढ़ाई करते समय आपके विज्ञापन सुन-सुनकर मेरी यह 'नयी आदत' पड़ गयी है।'

(सही) एस. मित्तल,
बी.ई. (इलेक्ट्रिकल), पटियाला।

'...लगभग एक साल पहले मैंने देखा कि मेरे दाँत पीले पड़ने लगे हैं, हालांकि मैं सिगरेट नहीं पीता...मेरे पिताजी ने,... जो पिछले ३० साल से "फ़ोरहॅन्स" से ही दाँत साफ़ करते रहे हैं, मुझे दूसरे टूथपेस्ट के बजाय "फ़ोरहॅन्स" से दाँत साफ़ करने की सलाह दी। कमाल है! मेरे दाँत जितने साफ़ और अच्छे होने चाहिए, वैसे हो गये। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आपके आश्चर्यजनक टूथपेस्ट—**फ़ोरहॅन्स**—में वे सभी गुण हैं जिनका आप प्रचार करते हैं। इसका रहस्य यह है कि यह **दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है।**"

(सही) एस. एस. चटर्जी, एम.ए.
कोयम्बटूर।

Forhans
FOR

(इन पत्रों की फोटोस्टॅट कॉपी आप जैफ़्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं)

दाँतों की समुचित देखभाल के लिए रोज सवेरे और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट और फ़ोरहॅन्स डबल-एक्शन टूथब्रश इस्तेमाल कीजिए...और नियमित रूप से डाक्टर की सलाह भी लेते रहिए!

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका।

अपनी प्रति*प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

नाम: ______________ उम्र: ______

पता: ______________ 06

* कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़।

फ़ोरहॅन्स दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

129 F-182 HIN

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल,' तीसरी मंजिल, २४१ बैकवे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०००२१

तार : **SODACHEM**

फोन : २९२४०७–२९३२१४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

*** अपग्रेडेड इलमनाइट ***

(सिंथेटिक रॅटाइल ९०-९२ Tio_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

*** कास्टिक सोडा**
*** सोडियम बाइकार्बोनेट**
*** कैल्शियम क्लोराइट**
*** लिक्विड क्लोरीन**
*** सोडा एश**
*** अमोनियम बाइकार्बोनेट**
*** ट्रिक्लोरो एथिलीन**
*** हाइड्रोक्लोरिक एसिड**

*** साल्ट ***

आरोग्य सन्देश

एक लोकप्रिय सचित्र हिन्दी मासिक

इस पत्रिका का उद्देश्य स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सम्बन्धी बातों के प्रति जनता में चेतना पैदा करना है। यह पत्रिका कहानी, कविता, एकांकी, व्यंग, कार्टून, कथाचित्र आदि के माध्यम से व्यक्ति एवं समाज की स्वास्थ्य समस्याओं एवं सरकारी कार्यक्रम को प्रस्तुत करने के साथ-साथ शिक्षाप्रद एवं मनोरंजक है। स्वास्थ्य को महत्त्व देने वाले के लिए यह अत्यन्त उपयोगी है।

चन्दा	वार्षिक	3·00 रुपये
	एक प्रति	0·25 पैसे डाक खर्च सहित

कृपया अपना चन्दा निम्न पते पर अग्रिम भेजें :

निदेशक,
केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो,
कोटला मार्ग, नई दिल्ली-110001

davp 71/10

बादशाही साजश्रृंगार के लिए
खटाऊ
वॉयल्स

दि खटाऊ मकनजी
स्पिनिंग एण्ड वीविंग कं. लि.
प्रधान कार्यालय : लक्ष्मी बिल्डिंग, बेलार्ड इस्टेट,
बम्बई - ४०० ००१.
मिल्स : हेन्स रोड, भायखला, बम्बई - ४०० ०२७.
थोक दुकान : मूलजी जेठा मार्केट,
बम्बई - ४०० ००२.

KMS-38/T/PREM ASSOCIATES/HIN

बढ़ता बचपन
बलवान बने-
इनक्रिमिन* से

बचपन के दिन, फलने-फूलने, पढ़ने के दिन! इन दिनों बच्चों का शरीर फूल की तरह खिलता है- विकसित होता है, इन्हें इनक्रिमिन सिरप ज़रूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इनकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिन और लोहतत्वों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में, विशेष अमीनो एसिड, लायसिन भी शामिल है- जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता देता है।

वाह वाह!
क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ती जाये!

इनक्रिमिन* टॉनिक

अधिक आहार से अधिक बढ़ाये-
खाया पिया अंग लगाये!

डाक्टरों का विश्वासपात्र नाम
Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग * अमेरीकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क

175 ml
Incremin
syrup
VITAMINS B1, B6, B12
LYSINE
WITH IRON
TONIC APPETITE
STIMULANT
Incremin
syrup WITH DELICIOUS
CHERRY FLAVOUR
IS A FAVOURITE WITH
CHILDREN OF ALL AGES

ड्रॉप्स्—२ महीने से २ साल के बच्चों के लिये
सिरप—१४ साल तक के बच्चों के लिए

Sista's INC-363 D/75 Hin

दि न्यू स्वदेशी
शुगर मिल्स लिमिटेड.
नरकटियागंज,
जि. चंपारन, बिहार

उत्पादन :
शुद्ध दानेदार चीनी
पावर और औद्योगिक
अल्कोहल

अलाहाबाद
कैनिंग
बमरौली (इलाहाबाद)
उत्तर प्रदेश

उत्पादन :
डिब्बाबंद फल और सब्जी
मैक्फरलेन पेन्ट्स
कलकत्ता

उत्पादन :
उम्दा पेट्स, वार्निश
वैलामॉय्ड रूफिंग कंपाउंड
क्रोम और पिग्मेंट

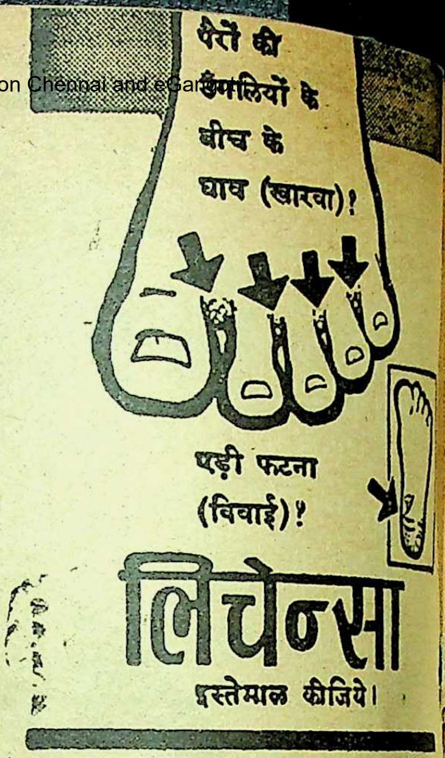
पैरों की
उंगलियों के
बीच के
घाव (खारवा)?
एड़ी फटना
(बिवाई)?
लिचेन्सा
इस्तेमाल कीजिये।

नॉक-११
अधिक संपृक्त ®
अति-तीव्र
खटमल
नाशक
पुनानिल केमो इण्डस्ट्रीज,
चिचवड, पूना-१९.

सरदर्द का मुक़ाबला सेरिडॉन से कीजिए.

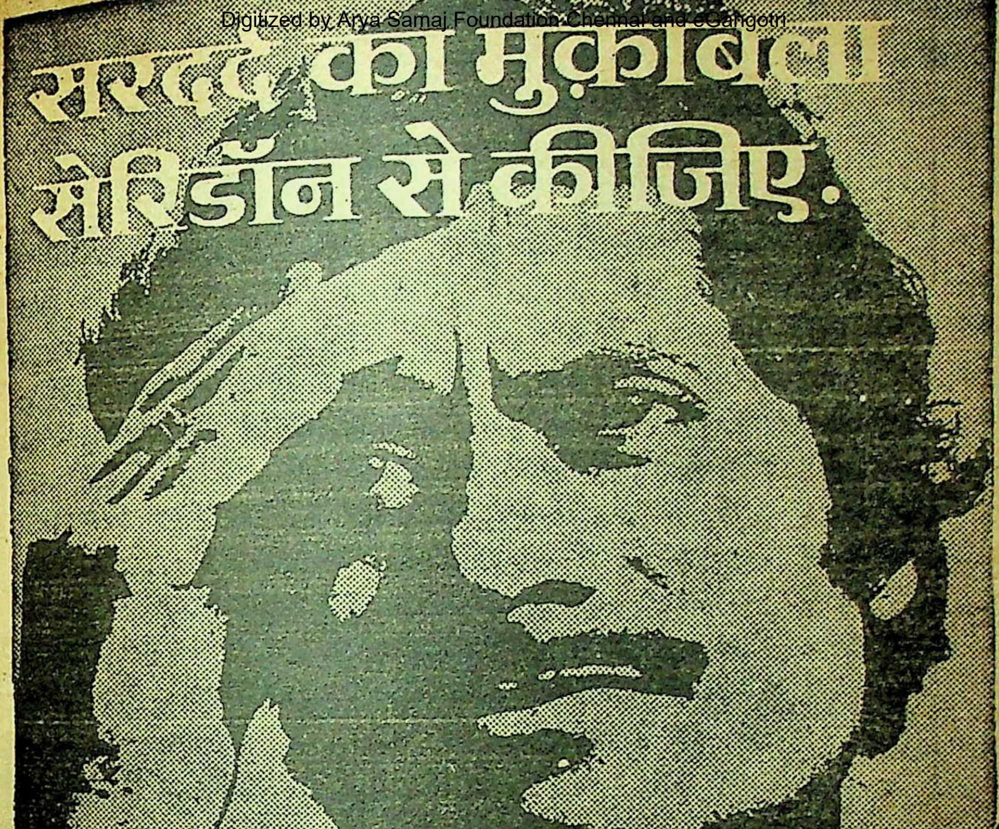

सिर्फ़ सेरिडॉन सरदर्द और शरीरदर्द से आपको आराम—बेहतर तौर पर आराम—देती है. इसका अनोखा नुसख़ा दर्द दूर करने के साथ-साथ आपका मन हल्का करता है और ताज़गी भी देता है. यह है रोश का अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान जो हमेशा आपकी सेवा में लगा है.

सिर्फ़ एक सेरीडॉन ट्रेडमार्क 'रोश' **से सभी तरह के सरदर्द ग़ायब**

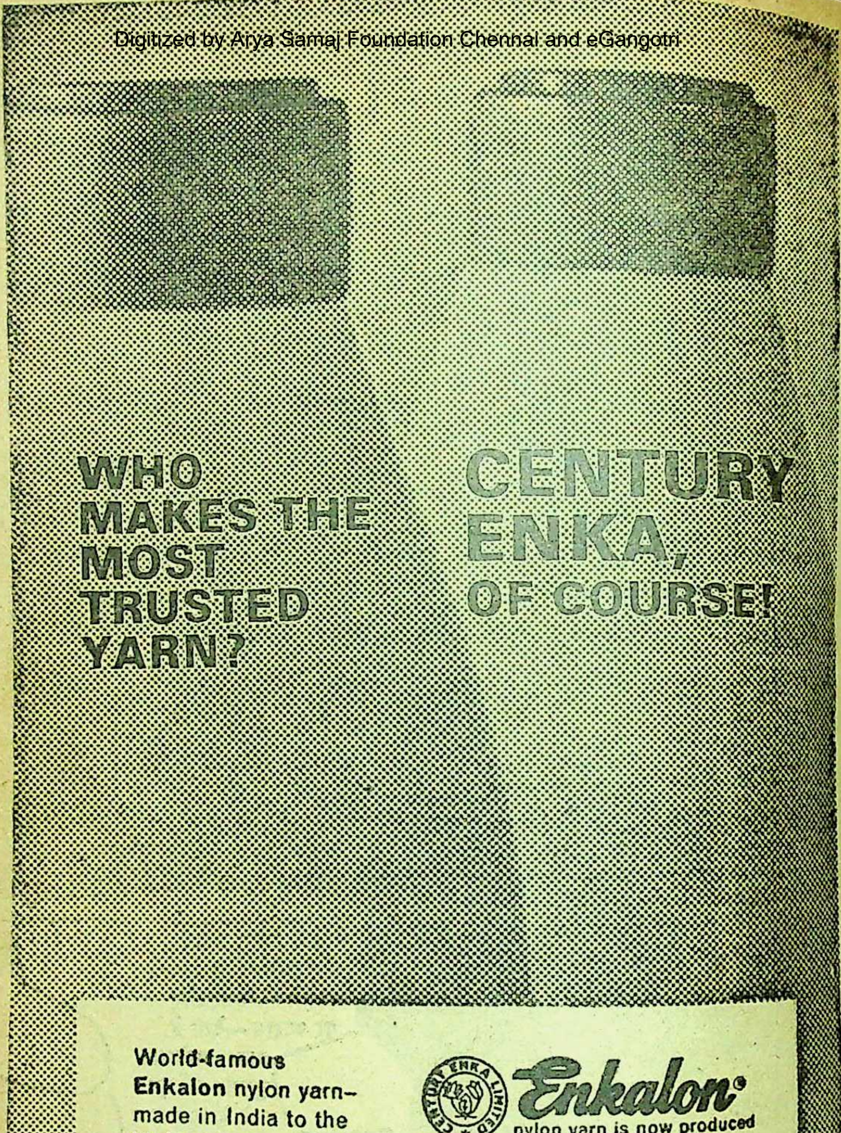

WHO MAKES THE MOST TRUSTED YARN?

CENTURY ENKA, OF COURSE!

World-famous **Enkalon** nylon yarn–made in India to the highest international standards by

Century Enka.

Fast, flawless, fabulous–for the exciting world of fashion.

CENTURY ENKA LIMITED

Enkalon®

nylon yarn is now produced in India

the quality yarn that weaves faultless fabrics

® Registered Trade Mark of AKZO N.V., Holland

Licensed users:

CENTURY ENKA LTD.

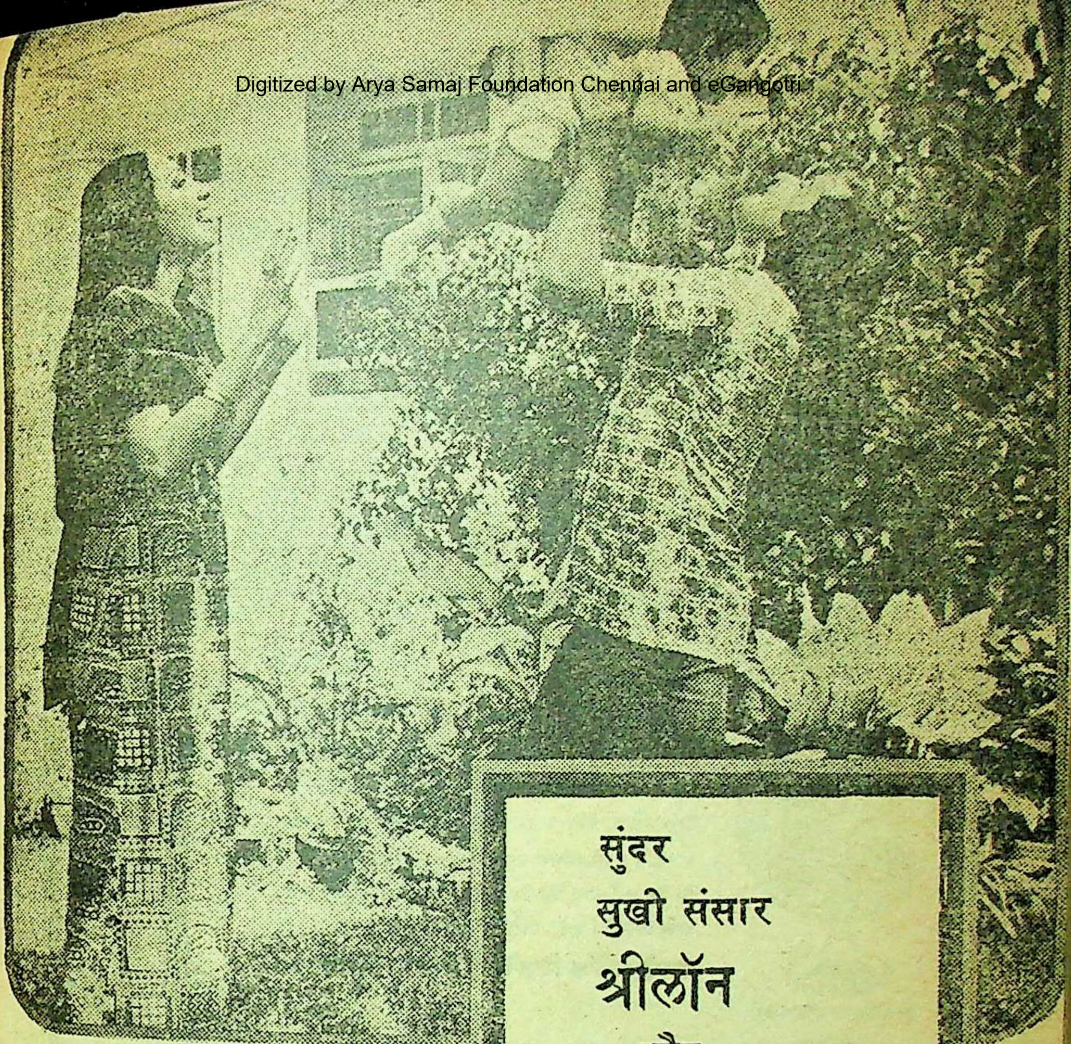

सुंदर
सुखी संसार
श्रीलॉन
और
श्रीस्टर
सुंदर वस्त्रों के लिए
सुंदर तंतु।

श्रीलॉन नाइलॉन तंतु—सुरुचिसंपन्न स्त्रियों के लिये सुंदर साड़ियां और लुभावने लिबास के कपड़े जिससे तैयार होते हैं।

श्रीस्टर पॉलिएस्टर तंतु—आगे बढ़ते मर्दों के लिए "पॉट" सूटिंग और शर्टिंग जिससे बनते हैं। इसलिए जब श्रीलॉन और श्रीस्टर मिलते हैं, उसका नतीजा होता है—आनंद-उल्लास, मौज-मस्ती।

उत्पादक : श्री सिंथेटिक्स लिमिटेड, नौलखी, उज्जैन
बिक्री कार्यालय : श्रीनिवास हाउस, एच. एम. सोमानी मार्ग,
बंबई-४००००१. फोन : २६६०७४; २६८२४१.

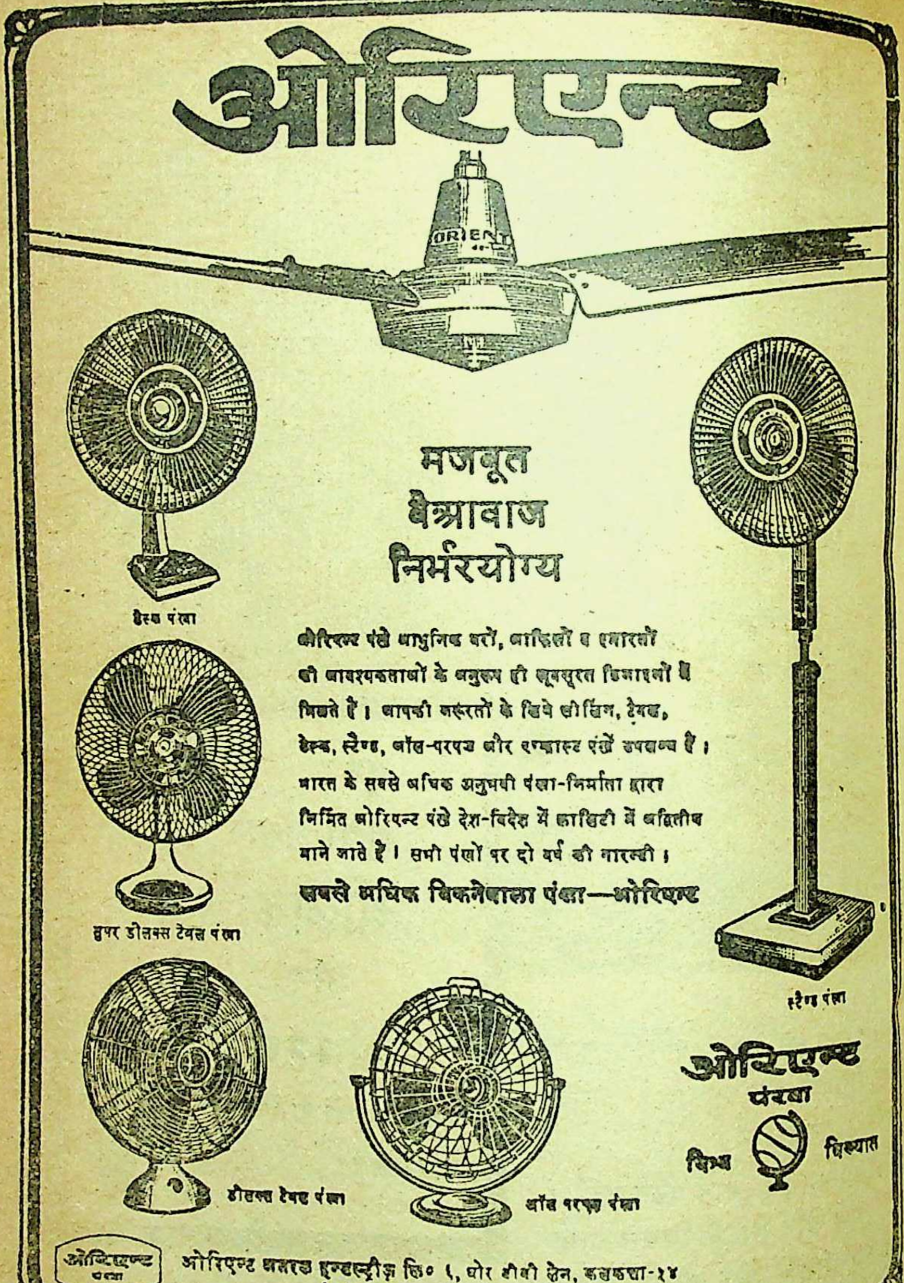

ओरियन्ट

मजबूत
बेआवाज
निर्भरयोग्य

ओरियन्ट पंखे आधुनिक घरों, आफिसों व इमारतों की आवश्यकताओं के अनुरूप ही खूबसूरत डिजाइनों में मिलते हैं। आपकी जरूरतों के लिये सीलिंग, टेबल, डेस्क, स्टैण्ड, ऑल-परपज और एग्जास्ट पंखे उपलब्ध हैं। भारत के सबसे अधिक अनुभवी पंखा-निर्माता द्वारा निर्मित ओरियन्ट पंखे देश-विदेश में क्वालिटी में अद्वितीय माने जाते हैं। सभी पंखों पर दो वर्ष की गारन्टी।

सबसे अधिक बिकनेवाला पंखा—ओरियन्ट

डेस्क पंखा

सुपर डीलक्स टेबल पंखा

स्टैण्ड पंखा

डीलक्स टेबल पंखा

ऑल परपज पंखा

ओरियन्ट
पंखा
विश्व विख्यात

ओरियन्ट पंखा

ओरियन्ट जनरल इन्डस्ट्रीज़ लि० ९, घोर बीबी लेन, कलकत्ता-५४
फैक्ट्री : कलकत्ता और फरीदाबाद

नवनीत

वर्ष २४ : अंक ५

मई १९७५

* इस अंक में *

पत्र-वृष्टि	१७	संपादक की डाक से
मौत के सामान का कारोबार	२०	प्रयाग नारायण
बलूच कबीलों के विरुद्ध......	२६	....
मूर्तिकार	३३	आस्कर वाइल्ड
दीर्घायुष्य का साधन	३४	डा. मंगलदेव शास्त्री
वाक्यदीप	३६	भद्रसेन
जीवन का अमृत	३७	अल्बर्ट श्वाइत्ज़र
तुमने कहा था (कविता)	४०	रामदरश मिश्र
आंतरिक अवकाश की ओर	४२	एडगर डी. मिशेल
तृतीय विश्व कप हॉकी	४४	केशव झा
युवा आक्रोश और शिक्षा सुधार	४९	डा. रामचरण मेहरोत्रा
रसूलनबाई	५३	गजेंद्र नारायण सिंह
रसूलनबाई को...	५७	हसन नईम
विज्ञान बिंदु	६०	केजिता
अपनी भाललिपि का लेखक	६५	कृष्णविहारी पांडेय
कृष्णविवर (मराठी विज्ञानकथा)	६८	डा. जयंत विष्णु नारळीकर
मधुमेह और भारतीय जड़ी-बूटियां	७५	डा. शशि भारत व्होरा
हिमालय की गोद में	७८	पृथ्वीपाल पांडेय
अवकाश और मानव जगत्	८२	डा. कुसुम अग्रवाल
पानी में मौत	८७	डा. शंकरराव पोतदार

संचालक	संपादक	सहसंपादक	व्यापार-व्यवस्थापक
श्रीगोपाल नेवटिया	**नारायण दत्त**	**सुरेश सिन्हा**	**महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक	उपसंपादक	उपसंपादक	प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
हरिप्रसाद नेवटिया	**गिरिजाशंकर त्रिवेदी**	**डा. विष्णु भटनागर**	सज्जा : **ठाकोर राणा**

सौर ऊर्जा ९० डा. जगदीश लूथरा
रहस्यमय मिनी ९४ जार्ज वोर्ट्स
वाट की डिक्शनरी ९७ आर. एस. चक्रवर्ती
अपने-अपने कारावास (हिंदी कहानी) १०० सरोज वाशिष्ठ
अच्युत ! (कविता) १०८ कन्हैयालाल सेठिया
वंशी के गान में (कविता) १०८ बाबूलाल शर्मा प्रेम
स्मृति के अंकुर १०९ 'रसिक', मेहरोत्रा, चुन्नीलाल महाराज, संतबख्श 'भारतीय', खुशहाल ठाकुर
हंसने में कितना सुख ११३ सुखबीर
नरक ११६ मिखाईल नईमी
गीत १२४ सुधांशु
एक अभियान १२५ पाल गैलिको
खीर १४६ कृष्णकुमार
शेर के जबड़े और ...... १४९ मेजर एच. विलियम्स
अंतरराष्ट्रीय जासूसी के चक्कर में १५२ शशिशेखर वेदक
आप साधारण नहीं हैं १५८ एडवर्ड बोक

* * *

आवरण-चित्र : जी. जी. गोखले

चित्रसज्जा : अबु, ओकें, शेणै, सत्यकाम राहुल, वाईरकर, भटनागर, सतीश चव्हाण, राणा।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिन्दी डाइजेस्ट), ३४१ ताडदेव, बंबई-३४.
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग, ३३५, बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष : २४ रु.; दो वर्ष : ४६ रु.; तीन वर्ष : ६६ रु.।
भारत में **नवनीत** का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

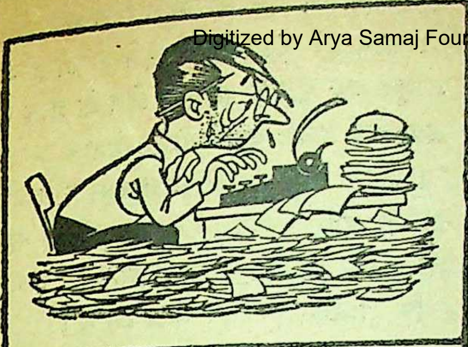

पत्र-दृष्टि

जब १९५२ में **नवनीत** का प्रकाशन आरंभ हुआ, तब विशेषत: तीन तत्त्वों ने पाठकों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित किया था—विषयों की विविधता, सरसता और सुंदर सज्जा। मैं समझता हूं, रचनाओं की उपयोगिता और प्रामाणिकता में ऊंचा स्तर बनाये रखते हुए भी **नवनीत** ऊपर बताये तीन विशिष्ट तत्त्वों की दृष्टि से अब पहले जैसा रुचिर नहीं है। लेख चाहे कितना ही सुलिखित क्यों न हो, यदि गंभीर लेखों का तांता लग जाये तो सामान्य पाठक जल्दी थक जाता है। प्रत्येक अंक के लेख-संयोजन में गुरु, लघु, गूढ़ और सरस विषयों का संयोजन अधिक योजना के साथ और सामान्य पाठक को दृष्टि में रखकर किया जाये, तो निश्चय ही आप अधिक पाठकों को आकृष्ट कर सकेंगे। अभी तो मैं समझता हूं, आपका ध्यान ज्ञान-विज्ञान पर अधिक है और मनोरंजन पर कम—जबकि आपके घोषणा वाक्य में ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन को समान महत्त्व दिया गया है। कागज-संबंधी कठिनाई का सज्जा पर दुष्प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। फिर भी मैं समझता हूं, आवरण चित्र और अंदर की चित्र - सज्जा एवं विन्यास पर थोड़ा अधिक ध्यान दिया जाये, तो पत्रिका को सुभग और चित्ताकर्षक बनाया जा सकता है। सज्जा को दोयम दर्जे की चीज मत समझिये। यह बात खासकर इसलिए कह रहा हूं कि आपकी प्रतिस्पर्धी पत्रिकाएं सज-धज और टीमटाम के कारण बुक स्टालों पर अधिक उभरकर दिखाई देने लगी हैं।

—शंकरशरन, रीवां, म. प्र.

०००

संस्कृत साहित्य का प्रत्येक विद्यार्थी जिनका चिरऋणी है, उन टीकाकार-प्रवर मल्लिनाथ सूरि पर डा. निगम शर्मा का लेख देकर **नवनीत** (अप्रैल अंक) ने मानो ऋषिऋण चुकाया है। लेखक ने बहुत प्रामाणिक जानकारी इतने सारपूर्ण ढंग से ग्रंथित की है कि महाकवि भारवि के ये शब्द सहसा याद आ जाते हैं—**'स्फुटता न पदैरपाकृता, न च न स्वीकृतमर्थगौरवम्।'** लेखक को धन्यवाद! भारतीय मनीषा के ऐसे अन्य मेरुशिखरों का भी परिचय **नवनीत** के माध्यम से पाठकों को मिलना चाहिये।

—नित्यानंद, बीकानेर

०००

नगेंद्रनाथ वसु और उनके विश्वकोष पर दो अलग लेखकों के दो लेख (फरवरी अंक

और अप्रैल अंक) देकर आपने संपादकीय जागरूकता का परिचय दिया है। विषय के साथ पूर्ण न्याय हो और साथ ही पाठक का लाभ हो—यह संकल्प तथाकथित 'पॉप्युलर' पत्रकारिता में प्राय: निभ नहीं पाता और आजकल तो पत्रकार प्राय: इस विषय में प्रयत्न ही नहीं करते। आजकल अधूरे लेखों के कच्चेपन को चटकीले शीर्षक और चित्रों की चमक-दमक से छिपाने की चेष्टा की जाती है। आप इस विषैली प्रवृत्ति से बचना चाहते हैं, यह प्रशंसा योग्य है। अंत में, श्री नगेंद्रनाथ वसु का चित्र कहीं से प्राप्त करके अवश्य छापें—भले इसमें समय लग जाये। जनता को अपने इस उपकर्ता का मुखदर्शन अवश्य मिलना चाहिये।

—सीतादेवी शर्मा, कनखल, उ. प्र.

०००

आप 'पत्रवृष्टि' स्तंभ के एकदम बाद जो सामयिक लेख देते हैं, वे प्राय: सुचिंतित और ऐसे विषयों पर होते हैं जिन पर हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में विस्तार से नहीं लिखा जाता। किंतु लेख प्राय: विदेशों और उनकी समस्याओं के बारे में होते हैं। क्या भारत की किसी एक समस्या पर एक अध्ययनपूर्ण लेख हर बार नहीं लिखवाया जा सकता? चाहे विषय कितना ही चर्चित क्यों न हो, तथ्यपूर्ण एवं तटस्थ विवेचनयुक्त लेखों की पाठकों को तलाश रहती है।

—के. एन. चिंतामणि, हैदराबाद-२

०००

इसमें संदेह नहीं कि आपके विशेषांक ही नहीं साधारण अंक भी बहुत दिलचस्प होते हैं। साथ ही जैसा कि डाइजेस्ट को होना चाहिये यह पाठक को हर क्षेत्र के ज्ञान में 'अपटुडेट' रखने का भगीरथ प्रयास करता है। यद्यपि आप किसी विचारधारा से बंधे नहीं हैं, आप पोंगापंथ को पास फटकने नहीं देते। यही आपकी पत्रकारिता की सफलता है कि आपका हर घर में प्रवेश है।

—मन्मथनाथ गुप्त, नयी दिल्ली-१३

०००

पिछले कुछ माह से आवरण-चित्रों की कलात्मकता ने विशेष रूप से आकर्षित किया है। अप्रैल के अंक में 'चीन माओ-युग का अंत' तथा 'मार्गरेट थैचर' समसामयिक तथा रुचिकर लेख हैं। इसी अंक की चारों कहानियां टुंडी लाट, समान सतहें, बुझती मोमबत्ती तथा भीतर की बात—सत्यता पर आधारित उच्चकोटि की रचनाएं हैं। लेखकों को बधाई। **—महेश्वर दयाल गौड़, बीकानेर**

०००

नवनीत का अप्रैल अंक मिला। 'नगेंद्रनाथ वसु और उनका विश्वकोष' लेख इस ओर हम, आप, सबका ध्यान आकर्षित करता है कि एक ओर नागपुर विश्व हिंदी संमेलन जहां हिंदी को प्रचारित और प्रसारित करने का अहं मुखौटा है, वहीं संत साहित्य-सेवी 'निराला' जैसा अभावों का जीवन जीता हुआ साहित्यिक पंडों के कारण इतिहास में नामोल्लेख से भी वंचित रह जाता है। वसुजी के स्तुत्य प्रयास के लिए सारा हिंदी जगत आभारी रहेगा। 'मार्गरेट

थैचर' के संदर्भ में पहले अन्य पत्र-पत्रिकाओं में भी पढ़ा था; किंतु यह लेख अपने आपमें पूर्ण है। 'पीढ़े और पीढ़ियां' ललित निबंध आकर्षक रहा।

—कालिकाप्रसाद त्रिपाठी, रीवां म. प्र.

०००

नवनीत के मार्च ७५ अंक के 'विज्ञान-बिंदु' स्तंभ में पृ. ५८ पर डा. धर की संस्था का नाम 'शीला धर इंस्टिटयूट आफ सोशल सायंसेज' छपा है जो कि गलत है। सही नाम 'शीला धर इंस्टिटयूट आफ सॉयल सायंसेज' (शीलाधर मृतिका गवेषणागार) है। **—शुकदेव प्रसाद, इलाहाबाद-२**

०००

सर्वश्री विश्वनाथ, सुरजीत, डा. कपूर और अरुण सेदवाल की रचनाएं ज्ञानवर्धक थीं। जापानी कहावतें पढ़ीं और गुनीं। कहावतों में जन-जीवन और संस्कृति झलकती है। 'पोप का गधा' मनोरंजक लगा। सॉनेट पसंद आया। हास्य-व्यंग्य कविताएं जरा हल्की लगीं। बालकवि बैरागी का प्रसंग गंभीर और मार्मिक लगा। डाक-विभाग सिरदर्द बन चुका है। समझ में नहीं आता कैसे उबरेंगे?

—संतकुमार टंडन 'रसिक' इलाहाबाद

०००

अप्रैल अंक के पृष्ठ ८४ पर छपी पंजाबी कहानी—'टुंडी लाट' के लेखक सोहनसिंह शीतल हैं, मोहनसिंह शीतल नहीं। हम क्षमाप्रार्थी हैं। **—संपादक**

★

अमरीकी लेखक-विचारक एरिक हाफर के जीवन की घटना है। एक बार उनके पास बिलकुल पैसे न रहे। कई दिन भूखे रहने के बाद वे काम की तलाश में निकल पड़े और सड़क के किनारे एक होटल के पास कुछ समय के लिए खड़े हो गये।

होटल-मालिक ने समझा कि वे कुछ पाने की आशा में खड़े हैं और उनसे पूछा—'क्या तुम भूखे हो? रोटी खाना चाहते हो?'

एरिक ने शिष्टता के साथ उत्तर दिया—'हां, मैं कई दिनों से भूखा हूं, और रोटी भी खाना चाहता हूं। पर यों ही नहीं, कुछ काम करके। आप मुझसे कुछ काम करा लीजिये और बदले में रोटी खिला दीजिये।' होटल-मालिक ने उनके स्वाभिमान को समझा और उन्हें तश्तरियां धोने का काम दिया। एरिक ने काम इतने मन से किया कि होटल-मालिक खुश हो गया और उसने उन्हें स्थायी नौकर रख लिया।

कुछ समय बाद होटल-मालिक को अपने दो नौकरों में से एक को निकालने की जरूरत पड़ी। वह एरिक से खुश था, सो उसने एरिक से पुराने दूसरे नौकर को नोटिस दे दिया। यह नौकर जब जाने लगा तो एरिक ने उसे रोक लिया और स्वयं नौकरी छोड़ दी। बाद में उसी नौकर ने बहुत कोशिश करके एरिक को जहाज पर माल लादने वाली मजदूर-टोली में काम दिलवाया।

—ऋषिकुमार श्रीवास्तव

★

मौत के सामान का अंतरराष्ट्रीय कारोबार

प्रयाग नारायण

अमरीका ने पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र-बिक्री पर लगा हुआ दस वर्ष पुराना प्रतिबंध हटा लिया है और पाकिस्तान ने करीब ५ करोड़ डालर के युद्धक-विमानों की मांग की है। फारस की खाड़ी के देशों में आधुनिकतम शस्त्रास्त्र खरीदने के लिए जबर्दस्त होड़ चल रही है। मिस्र को सोवियत संघ से मिलने वाले ५० मिग-२३ युद्धक बमवर्षकों में से पहला विमान मिल चुका है और इस बीच वह फ्रांस से २६.४ करोड़ डालर के ४४ मिराज युद्धकविमान और ब्रिटेन से २५ करोड़ डालर का हॉक प्रशिक्षक/आघात विमान कारखाना खरीदने की बात चला रहा है। कुवैत ब्रिटेन से टैंक और जमीन पर से हवा में मार करने वाले प्रक्षेपास्त्र तथा अमरीका से ए-४ स्काइहॉक लड़ाकू विमान मंगा रहा है। स्पेन अमरीका से एफ-४ मेच २, फेंटम लड़ाकू बमवर्षक खरीद रहा है। ईरान तो संसार का सबसे बड़ा, शस्त्रास्त्र आयातकर्ता बन गया है। उसने हाल में ही छह स्प्रूएंस विध्वंसकों की खरीद का सौदा किया है—प्रत्येक विध्वंसक की लागत ११ करोड़ डालर! नाटो के सदस्य देशों को वजन में हल्के, नयी किस्म के लड़ाकू जेट-विमान बेचने के लिए अमरीका, फ्रांस और स्वीडन के विमान-निर्माताओं में लगी हुई होड़ अब अपने चरम पर पहुंच चुकी है, इसमें सफल होने वाले को १५ अरब डालर के विमानों की बिक्री का मौका मिलेगा।

शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार की ये कुछ झलकियां मात्र हैं। वस्तुतः आज छोटे से छोटा देश अपनी सैन्यशक्ति को नवीनतम शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित रखने की होड़ कर रहा है। नवीनतम तथ्यों के अनुसार अब प्रति वर्ष १८ अरब डालर के अ-परमाणु शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय सौदे होते हैं, जबकि २३ साल पहले, १९५२ में सिर्फ ३० करोड़ डालर के सौदे होते थे। १९६४ से अब तक यानी करीब १० वर्षों में अ-परमाणु शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार में करीब ५५० प्रतिशत की वृद्धि हुई है। शस्त्रास्त्रों और सैन्यशक्ति पर हो रहे अनाप-शनाप खर्च की पूरी तस्वीर का यह एक पहलू मात्र है। अन्यथा १९७३ में ही दुनिया के विभिन्न देशों ने २४० अरब डालर अपनी सैन्यशक्ति के प्रशिक्षण, शस्त्र-सज्जा और रख-रखाव पर खर्च किये।

शस्त्रास्त्रों के व्यापार का एक पहलू और है। अभी कुछ वर्षों पहले तक शस्त्रास्त्र-निर्माता देश पुराने, काम म लाये हुए शस्त्रास्त्र ही निर्यात करते थे। परंतु अब स्थिति इतनी बदल गयी है कि आधुनिकतम, अत्यंत परिष्कृत शस्त्रास्त्र भी बिक्री के लिए अंतरराष्ट्रीय शस्त्र-मंडी में मौजूद हैं। इतना ही नहीं, कभी-कभी तो ये नवीनतम शस्त्रास्त्र-निर्माता देशों या उनके साथ सैन्य-संधियों में गुंथे देशों के सैन्य-शस्त्रागार में पहुंचने के पहले ही खरीदार देशों के पास पहुंच जाते हैं। उदाहरण के लिए मिस्र और सीरिया ने सोवियत संघ से जो मिग-२३ जेट विमान खरीदे हैं, वे अभी वारसा संधि के देशों को भी नहीं मिले हैं। इसी तरह से अमरीका अब तक उपलब्ध टैंकघातियों में से सर्वाधिक परिष्कृत, दूर से संचालित 'टॉव' के इस्रायल, दक्षिण वियतनाम, लेबनान और जोर्डन को निर्यात की छूट दिये हुए है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार में सबसे बड़े व्यापारी दो ही हैं—अमरीका और सोवियत संघ। इन दोनों के लिए ही अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र-व्यापार परस्पर तथा मित्र देशों में शक्ति-संतुलन बनाये रखने का एक कारगर उपाय है। उदाहरण के लिए दूर जाने की जरूरत नहीं। हमारे अपने क्षेत्र में यह प्रतिस्पर्धा स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। यूं ऐसे भी उदाहरणों की कमी नहीं, जब एक ही निर्यातकर्ता देश ने दो संघर्षरत देशों को शस्त्रास्त्र दिये हैं। पिछले वर्ष साइप्रस के प्रश्न पर हुए तुर्की-यूनान के युद्ध में दोनों पक्ष अमरीकी शस्त्रास्त्रों से लड़े। और अब तो अमरीका इस्रायल के साथ अरब देशों को भी शस्त्रास्त्र बेचने को आतुर है। कोई आश्चर्य नहीं कि यदि कभी पांचवां अरब-इस्रायल युद्ध हो, तो दोनों ओर से अमरीकी शस्त्रास्त्रों का ही उपयोग हो!

शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार में

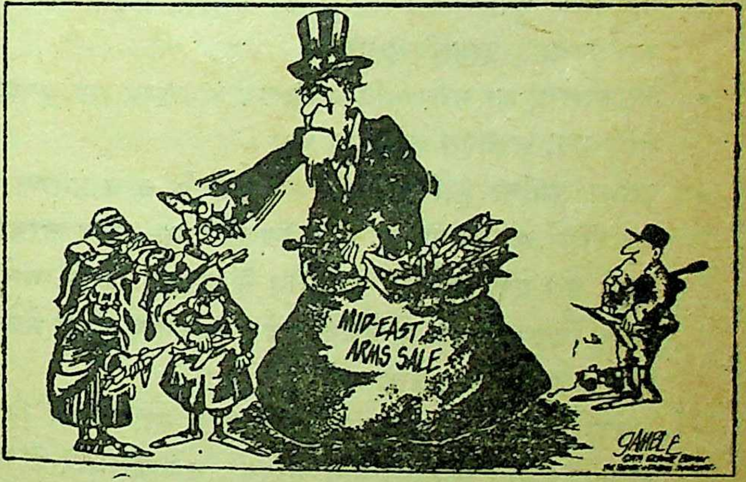

'......और एक आपके लिए, और एक आपके लिए, और एक आपके लिए......'
—गैम्बल, 'टाइम' में

अपने लेखकों से

श्रीसंपादकजी, कृपया मुझे बतायें कि नवनीत में आप कैसी रचनाएं लेते हैं? इस आशय के अनेक पत्र हमें प्रतिदिन मिलते हैं। नवनीत के कुछ अंक देखने से भी इस प्रश्न का उत्तर मिल जायेगा; फिर भी यदि आप हमसे ही जानना चाहें, तो हम कहेंगे कि निम्नलिखित ढंग की रचनाएं हमें नहीं चाहिये:

क. जो जीवन में अनास्था जगायें, देश के विभिन्न समुदायों में स्नेहसूत्र तोड़ें, व्यक्तिगत आक्षेप करें, सहज-स्वस्थ सुरुचि को ठेस पहुंचायें; या जो कैलेंडर देखकर पर्वों, जयंतियों और पुण्यतिथियों के उपलक्ष्य में लिखी गयी हों।

ख. आपके अन्यत्र प्रकाशित लेख का नया संस्करण, कश्मीरी कविता का वाया तमिल उल्था, अल्बर्तो मोराविया के 'रोम की औरत' का भारतीय रूपांतर 'कौशांबी की काभकन्या,' सर्वविदित हास्योक्तियों का श्रेय आपके जिला-महाकवि या तहसील-राजनेता को देने वाले विनोद-प्रसंग।

ग. इन विषयों से हमें परहेज है – वेदों में हृदय-प्रतिरोपण, कोसी कलां के जंगल में जिराफ और बबरशेर की मुठभेड़, कामायनी में क अक्षर का प्रयोग, महावानर पुराण में मिर्जापुर का उल्लेख, कड़वी लौकी के रस से सर्वरोगों का उपचार, इत्यादि-इत्यादि।

* लेखमालाएं या मास-भविष्य लिखने के आश्वासन कृपया हमें न दें। न एक साथ सवा सत्ताईस कविताएं भेजें।

* रचना पर्याप्त हाशिया और पंक्तियों के बीच पर्याप्त स्थान छोड़कर सधे अक्षरों में कागज के एक ओर लिखकर या टाइप करवाकर भेजें। भेजने से पहले उसे एक बार पूरे मनोयोग से अवश्य पढ़ लें, भले उस दिन के बजाय अगले दिन की डाक में भेजनी पड़े। कार्बन-कापी न भेजें। लेख के आरंभ या अंत में अपना पूरा डाक-पता दें।

* रचना के साथ टिकट लगा और पूरा पता लिखा लिफाफा अवश्य रखें; अन्यथा रचना लौटायी नहीं जायेगी, न उसके बारे में पत्र-व्यवहार होगा।

* रचनाएं किसी व्यक्ति के नाम पर नहीं, निम्नलिखित पते पर भेजें:

संपादक—नवनीत हिंदी डाइजेस्ट,
नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ताडदेव, बंबई—३४

अमरीका सबसे आगे है। 'व्यापार की स्वतंत्रता' के अपने आर्थिक दर्शन के अनुरूप वहां शस्त्रास्त्रों का निर्माण निजी कंपनियां करती हैं। परंतु शस्त्रास्त्रों की बिक्री और सौदों में सरकार की सहायता को कोई व्यापार में सरकार का अनुचित हस्तक्षेप नहीं मानता! अमरीका के रक्षाविभाग और वाणिज्य-विभाग के अधिकारी शस्त्रास्त्र-निर्माताओं का व्यापार बढ़ाने में यथासंभव सहायता करते हैं। पेरिस में हर दूसरे वर्ष होने वाले 'पेरिस एयर शो' में अमरीकी शस्त्रास्त्र-निर्माताओं के प्रतिनिधियों के साथ उपरोक्त विभागों के अधिकारी भी उनकी सहायता के लिए जाते हैं।

अमरीका ही नहीं, दूसरे पश्चिमी देशों में भी शस्त्रास्त्र-निर्माण-उद्योग निजी हाथों में है। किंतु वहां की सरकारें भी शस्त्रास्त्रों का निर्यात बढ़ाने के लिए भरसक प्रयत्न करती हैं। उदाहरण के लिए अभी कुछ अरसे पहले तक फ्रांस का वायुसेना अधिकारी जनरल ह्यूजे स दे ल'एस्टोयले शस्त्रास्त्रों के सौदे पटाने में सबसे आगे था। सादी पोशाक में एक देश से दूसरे देश की राजधानी में घूमते रहने वाले ल'एस्टोयले ने फ्रांसीसी शस्त्रास्त्र-विक्रेताओं के लिए अरबों डालर के सौदे किये।

यों अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र-व्यापार में विभिन्न देशों के दूतावासों से संबद्ध सैन्य सहायक या मिलिटरी अटैची की विशेष भूमिका रहती है। ये सैन्य सहायक संभावित ग्राहकों का पता लगाकर उनसे संपर्क साधते हैं। ब्रिटेन और फ्रांस के सैन्य सहायक तो अपने-अपने देशों के प्रतिरक्षा उद्योगों में बनने वाली सामग्री की परिचय-पत्रिकाएं भी अपने पास रखते हैं। परिचय-पत्रिकाएं ही क्यों, शस्त्रास्त्रों की चलती-फिरती प्रदर्शनियां भी दिखायी जाती हैं। ब्रिटेन ने तो एक पुराने जहाज में ही शस्त्रास्त्रों की प्रदर्शनी लगा रखी है। यह प्रदर्शनी संभावित ग्राहकों के बंदरगाहों पर जाकर ठहरती है और ग्राहक देशों के संबद्ध अधिकारी अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप शस्त्रास्त्रों का आर्डर दे देते हैं। फ्रांस, अमरीका का तरीका अलग है। वे स्वयं ग्राहकों के पास नहीं दौड़ते। ग्राहकों के वरिष्ठ अधिकारी फ्रांसीसी और अमरीकी शस्त्रास्त्र प्रदर्शनियां देखने को दौड़ते हैं।

शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार की मदद के लिए विक्रेता देशों की सरकारें ग्राहक देशों को ऋण की सुविधाएं भी देती हैं। फ्रांस ने तो शस्त्रास्त्र खरीदने वाले देशों को कम ब्याज पर दीर्घकालीन ऋण देने में दूसरे सभी पश्चिमी देशों को पीछे रख छोड़ा है। यों इस होड़ में सबसे आगे सोवियत संघ है। उसने फ्रांस के पुराने संरक्षित देश मोरक्को को हाल ही में ३ प्रतिशत ब्याज पर सत्रहवर्षीय दीर्घकालीन ऋण देकर अपने मिग विमानों का ग्राहक बना लिया।

वस्तुतः अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र व्यापार में दो ही प्रतिस्पर्धी हैं—अमरीका और सोवियत संघ। १९५० से अब तक अमरीका ने

दूसरे देशों को ८६ अरब डालर के शस्त्रास्त्र बेचे हैं। पिछले वर्ष उसने १३६ देशों को ८.३ अरब डालर के शस्त्रास्त्र निर्यात करने के लाइसेंस जारी किये। यदि प्रतिशत की दृष्टि से देखें, तो विश्व-भर में हुई शस्त्रास्त्रों की बिक्री में ४६ प्रतिशत हिस्सा अमरीका का था। सच तो यह है कि अमरीका के शस्त्रास्त्र-निर्माता प्रायः सभी प्रकार की आवश्यकताओं और मांगों को पूरा करने वाले शस्त्रास्त्र बनाते हैं। वे राइफलों से लेकर अतिस्वनिक जेट लड़ाकू विमान, वायु से वायु में मार करने वाले प्रक्षेपास्त्र, बख्तरबंद गाड़ियां, चिनूक हेलिकॉप्टर, विध्वंसक पोत तथा सी-१३० हरकुलिस विमानों तक अनगिनत युद्ध-सामग्री ज़ेरे जैसे नवस्वतंत्र देश से लेकर पश्चिम जर्मनी जैसे विकसित देश को निर्यात करते हैं।

इस कारोबार में दूसरे स्थान पर है सोवियत संघ। १९५० से अब तक उसने ३९ अरब डालर के शस्त्रास्त्र निर्यात किये हैं। १९७४ में उसने ५.५ अरब डालर के शस्त्रास्त्र बाहर भेजे। अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र व्यापार में सोवियत संघ १९५५ के बाद ही खुलकर सामने आया। मिस्र पर इस्रायल तथा ब्रिटेन-फ्रांस के संमिलित आक्रमण के बाद सोवियत संघ ने घोषणा की कि हर एक देश को अपनी प्रतिरक्षा के लिए दूसरे देश से शस्त्रास्त्र खरीदने का कानूनी अधिकार है। अन्य कोई देश उसे इस अधिकार से वंचित नहीं कर सकता।

शीतयुद्ध के देतांत में बदलते-बदलते सोवियत संघ ने एशिया-अफ्रीका के नवस्वतंत्र देशों में अपने शस्त्रास्त्रों के लिए अच्छा-खासा बाजार बना लिया। जून १९६७ के अरब-इस्रायल युद्ध के बाद तो उसने एक ही वर्ष में मिस्र को ३६ करोड़ डालर के शस्त्रास्त्र दिये। १९७१-७२ में सोवियत संघ ने पहले की बनिस्बत कम शस्त्रास्त्र बेचे; क्योंकि इस बीच पश्चिम एशिया में अमरीकियों का पलड़ा पहले से कुछ अधिक भारी हो चुका था। इधर भारत भी शस्त्रास्त्रों के मामले में आत्मनिर्भरता के कार्यक्रम पर अमल का प्रयास करने लगा था।

किंतु रणनीतिक दृष्टि से सोवियत शस्त्रास्त्रों के सबसे महत्त्वपूर्ण ग्राहक तो वारसा संधि के देश यानी पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देश हैं। इनके अतिरिक्त उत्तर कोरिया, उत्तर वियतनाम की साम्यवादी सरकारें तथा करीब एक दर्जन अन्य नवस्वतंत्र देश रूसी शस्त्रास्त्रों के पुख्ता ग्राहक हैं। वे सोवियत संघ से मिग विमानों से लेकर एके-४७ स्वचालित राइफलें और बख्तरबंद गाड़ियां आयात करते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि सोवियत संघ में शस्त्रास्त्र-निर्माण और निर्यात का सारा काम सरकार के हाथों में है।

वस्तुतः सोवियत संघ शस्त्रास्त्र-व्यापार को मात्र लागत और मुनाफे के नजरिये से देखता भी नहीं। वह इसे बहुत हद तक अपनी प्रतिरक्षा-नीतियों और अंतरराष्ट्रीय शक्ति-संतुलन बनाये रखने का एक

महत्त्वपूर्ण साधन मानता है। इसमें वह कई स्थानों पर सफल भी हुआ है और अन्यत्र असफल भी रहा है। उदाहरण के लिए १९६६ का ताशकंद समझौता तथा भूमध्य सागर में बंदरगाहों पर मिली सुविधाएं सोवियत शस्त्रास्त्र-नीति की ही उपलब्धियां थीं।

असफलता का एक प्रतीक इंडोनेशिया था, जहां २० करोड़ डालर के सोवियत शस्त्रास्त्र पहुंच चुकने के बाद भी साम्यवाद-विरोधी सैनिक विद्रोह हो गया। पश्चिम एशिया भी सोवियत विफलता का एक अन्य क्षेत्र है। वर्षों तक सोवियत संघ से शस्त्रास्त्र लेने वाले मिस्र ने सोवियत संघ से अति आधुनिक आक्रामक शस्त्रास्त्र मिलने में विलंब से चिढ़कर १५ हजार रूसी तकनीशियनों और सलाहकारों को स्वदेश लौटने का आदेश दे दिया था।

शस्त्रास्त्रों की मंडी में फ्रांस और ब्रिटेन के बीच विश्व का तीसरा प्रमुख विक्रेता बनने के लिए वर्षों से होड़ चलती रही है। पिछले वर्ष से फ्रांस निश्चित ही इस होड़ में सफल हो गया है। उसने ८० देशों को गत वर्ष ३ अरब डालर के शस्त्रास्त्र बेचे, ब्रिटेन सिर्फ १·५ अरब डालर के ही शस्त्रास्त्र बेच सका।

इन चार प्रमुख विक्रेताओं के अतिरिक्त इटली, पश्चिम जर्मनी, स्वीडन, कनाडा, इस्रायल आदि भी अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र-व्यापार में अपनी अलग हैसियत रखते हैं। इस दृष्टि से इस्रायल तो बिलकुल नया विक्रेता है। उसने हाल में ही अंतरराष्ट्रीय शस्त्रास्त्र-बाजार में प्रवेश किया है और गत वर्ष उसने ५ करोड़ डालर के शस्त्रास्त्र निर्यात किये।

शस्त्रास्त्रों के इस व्यापार का एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह भी है कि पिछले दस वर्षों में नवस्वतंत्र या विकासशील देशों में शस्त्रास्त्र खरीदने की होड़ लगातार बढ़ी है। अमरीका की 'आर्म्स कंट्रोल एंड डिसआर्मामेंट एजेंसी' के अनुसार १९६४ में विकसित एवं अर्ध-विकसित देशों ने डेढ़-डेढ़ अरब डालर के शस्त्रास्त्र आयात किये थे। १९७३ में विकसित देशों का शस्त्रास्त्र आयात थोड़ा कम हो गया, जबकि अर्धविकसित देशों ने ७·७ अरब डालर के शस्त्रास्त्र आयात किये। इसका एक बड़ा कारण तो यह है कि सोवियत संघ और पश्चिमी देशों के बीच तनाव घटने से संघर्ष-क्षेत्र इन अर्धविकसित देशों में केंद्रित हो गये। वियतनाम, कोरिया, कंबोदिया, लाओस, पश्चिम एशिया, अश्वेत अफ्रीका, भारत-पाकिस्तान में ही अधिकांश युद्ध लड़े गये। अभी भी अंतरराष्ट्रीय राजनीति जिस लीक पर चल रही है, उसे देखकर यह कहना गलत नहीं होगा कि अगले दस वर्षों में शस्त्रास्त्रों की सर्वाधिक खपत नवस्वतंत्र, अर्धविकसित देशों में ही रहेगी।

सबसे बड़ी विसंगित यह है कि शस्त्रास्त्रों पर पानी की तरह धन बहाने वाले ये देश दरिद्रता और अशिक्षा, रोग और पिछड़ेपन के भी केंद्र हैं। अकाल और महामारी से हजारों 'नागरिकों' की मृत्यु इन देशों में

[शेष पृष्ठ ३२ पर]

बलूच कबीलों के विरुद्ध सेना का दमन-चक्र

पाकिस्तान की आंतरिक राजनीति में बहुत कुछ उथल-पुथल चल रही है। एक ओर बलूचिस्तान और सरहदी सूबे में केंद्रीय सरकार के विरुद्ध असंतोष चरम बिंदु पर पहुंचकर खुले संघर्षों का रूप ले रहा है, तो दूसरी ओर प्रधान-मंत्री भुट्टो की सरकार अपने पूर्ववर्तियों की ही तरह विरोध के दमन का सहारा ले रही है। पाकिस्तान नेशनल एसेंबली में विरोधी दल के नेता तथा नेशनल अवामी पार्टी के संस्थापक अब्दुल वली खां तथा उनके साथियों को जेल के सीखचों में ठूंस दिया गया है, बादशाह खां गिरफ्तार कर लिये गये हैं और दोनों संघर्षग्रस्त सूबों को कमोबेश सेना के सुपुर्द कर दिया गया है। बलूचिस्तान में चल रही सैनिक कार्रवाई में तो पाकिस्तान को अपने पश्चिमी पड़ोसी ईरान के शाह का भी पूरा-पूरा समर्थन मिल रहा है—बलूचों के विरुद्ध मिली-जुली रणनीति निश्चित करने के लिए शाह ईरान और पाकिस्तान के प्रधान-मंत्री की आपसी भेंट भी हुई है। हम यहां **'गार्जियन'** के विशेष संवाददाता द्वारा बलूचिस्तान की यात्रा के बाद लिखा गया लेख प्रकाशित कर रहे हैं। इससे पाकिस्तान के धुर पश्चिमी सूबे की वास्तविक स्थिति की जानकारी मिलती है।

★

कोइटा की एक भीड़-भरी सड़क पर २ अगस्त १९७४ को स्थानीय पॉलीटेक्नीक के एक छात्र अब्दुल मजीद लंगों ने प्रधान-मंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो को बम से उड़ा देने की कोशिश में अपनी जान गंवा दी। उसी दिन कोइटा के इर्द-गिर्द कोहे गुरदार पहाड़ियों में बार-बार गोली चलने की आवाजें गूंजीं और शहर के दूर-दराज के मुहल्लों से हजारों लोग डर के मारे शहर के भीतरी हिस्सों में चले आये। उन्होंने बताया कि पख्तूनाबाद और शालदरा उपनगरों में पाकिस्तानी वायुसेना ने बमबारी की है। बमों के फटने की आवाज दस मील दूर शहर के केंद्र भाग में सुनाई दी थी।

यह घटना बलूचिस्तान की हालत का परिचय देती है। और लगभग १ लाख ३३ हजार वर्गमील फैलाव और तकरीबन २५ लाख बलूच और पख्तून कबाइलियों की आबादी वाला, पहाड़ों और रेगिस्तानों से भरा बलूचिस्तान प्रांत ईरान और अफगानिस्तान से सटा हुआ है। यह सीमा बहुत ही तरल अवस्था में है, क्योंकि उसके दोनों ओर एक ही नस्ल के लोग बसे हुए हैं। इसलिए वे दोनों देश बलूचिस्तान की घट-

नाओं को बहुत ध्यान से देख रहे हैं और पाकिस्तान अपने इस पश्चिमी प्रांत की समस्या को सुलझाने के प्रयत्न में ईरान से सक्रिय सहयोग पाने की कोशिश कर रहा है और अफगानिस्तान से विरोध मोल ले रहा रहा है।

असली हालात जानने के लिए मैंने पाकिस्तान की यात्रा की थी। कराची में मैं जिन लोगों से मिला, वे इस विषय में भावुकतापूर्ण मगर अनिश्चित-सी मनःस्थिति में थे। लाहौर में लोगों ने बलूचिस्तान के बारे में मेरे प्रश्नों का उत्तर चुप्पी से दिया। इस्लामाबाद में मैं चंद सरकारी अफसरों से मिला; उन्होंने 'कार्रवाई पर छाये निहायत गहरी चुप्पी के बादल' की ओर इशारा किया और सुझाव दिया कि कोइटा जाकर ही आप असलियत का कुछ पता पा सकेंगे।

कोइटा में मेरा संपर्क गुप्त राजनैतिक कार्यकर्ताओं से कराया गया, जो मेरे संग भीतरी इलाकों की यात्रा करने को तैयार हुए। सिबी के बाहर मेरी मुलाकात अठारह गेरिल्लों से हुई, जिनके साथ मैंने कभी पैदल तो कभी घोड़े या ऊंट की पीठ पर बैठकर बलूचिस्तान के भीतरी इलाकों के कस्बों व गांवों की ही नहीं, गेरिल्लों के गढ़ की भी यात्रा की। चार सप्ताह की इस यात्रा में हमने ४,००० मील तय किये।

बहुत सख्त सेंसरशिप के कारण पाकिस्तानी जनता को सरकारी अभियान के असली स्वरूप की बहुत कम जानकारी है। स्थलसेना ने मर्री और झलवां इलाकों के काफी बड़े हिस्से की नाकेबंदी कर दी है और उनकी कबाइली आबादी की रसद काट दी है। हालांकि श्री भुट्टो का कहना है कि सेना 'इस इलाके में एक डिविजन जितनी भी नहीं रही'; मगर उच्च सैनिक गुप्तचर स्रोतों से मिली गोपनीय जानकारी के अनुसार चार डिविजनें (१,००,००० सैनिक) इस अभियान पर भेजी गयी हैं।

पाकिस्तानी स्थल सेना के लड़ाकू दस्तों का मुख्य हिस्सा—१७ वीं, १८ वीं और ३३ वीं डिविजनें और १० वीं तथा ११ वीं डिविजन की एक-एक ब्रिगेड—इस समय कार्रवाई में संलग्न है, विशेषतः मर्री और झलवां इलाकों में। इस कार्रवाई की क्षेत्रीय कमान में चार जनरल हैं—मेजर जनरल हम्जा, मेजर जनरल इकबाल, मेजर जनरल अब्दुर्रहमान व लेफ्टिनट जनरल अजमतबख्श।

पाकिस्तान सरकार के श्वेतपत्र का कहना है—'किसी भी वक्त पाकिस्तानी वायुसेना का (यहां) बमबारी के लिए इस्तेमाल नहीं किया गया ...... किसी देहाती अड्डे या टोली पर हवाई हमला नहीं किया गया।' मगर तथ्य इस कथन का समर्थन नहीं करते।

मर्री इलाके में घूमते हुए मैंने उस प्रदेश के दक्षिणी भाग में भंबौर की पहाड़ियों में डोकताल की बस्ती में बम गिरने से बने गढ़े देखे और बमों के टुकड़े भी। जब पाकिस्तान की विरोधी पार्टियों के नेताओं ने लोरालाई इलाके का दौरा किया था, उन्हें भी बमबारी के सबूत दिखाये गये थे। बलू-

चिस्तान की नेशनल अवामी पार्टी के नेता खैरबख्श मर्री के भाई अली अहमद मर्री यह बता चुके हैं कि फ्रांसीसी मिराज विमानों से कबाइलियों पर गोलियां बरसायी गयी हैं। इस्लामाबाद स्थित फ्रांसीसी दूतावास ने इस बात को कबूल किया है कि मिराज विमान सामान्यत: गोली बरसाने के काम में नहीं आते, मगर पाकिस्तान सरकार की विशेष मांग पर मिराज विमानों में इसके लिए आवश्यक व्यवस्था की गयी थी।

एफ-८६ सेबरजेट विमानों के स्क्वाड्रन का भी गोली बरसाने के लिए उपयोग किया गया है, और उन यू-एच-१ हेलिकाप्टरों का भी जो कि १९७३ में पंजाब और सिंध की बाढ़ के समय अमरीका सरकार ने पाकिस्तानी वायुसेना को दिये थे। हवाई जहाजों से गोलियां कोइटा और मस्तंग शहरों की बाहरी बस्तियों और लोरालाई के दक्षिण चमलंग की पहाड़ियों में भी बरसायी गयी हैं।

पाकिस्तानी वायुसेना के विमान-चालक कोइटा के बाहर चंद मील दूर समुंग्ली के अड्डे पर रहते हैं, जहां बड़ी सख्त सुरक्षा-व्यवस्था है। कहते हैं, यहां पाकिस्तानी वायुसेना के ५०० से अधिक कर्मचारी स्थित हैं और स्क्वाड्रनों का तबादला एक-एक महीने के अंतर से होता रहता है। प्रत्येक विमान-चालक को प्रांतीय और केंद्रीय खजाने से १५० रु. का दैनिक भत्ता दिया जाता है। मगर 'बलूचिस्तान भत्ते' के बावजूद विमान-चालकों की घबराहट दूर नहीं हुई है। स्थलसेना के अफसरों की तरह उनमें भी पस्तहिम्मती फैलने लगी है। पाकिस्तानी वायुसेना के कर्मचारियों को सख्त ताकीद है कि वे अपनी वर्दी पहनकर समुंग्ली अड्डे के बाहर न जायें और नागरिकों के प्रतिशोध से अपनी रक्षा के लिए सदा अपने पास हथियार रखें।

यह चीज अब बहुत स्पष्ट हो गयी है कि ईरानी वायुसेना पाकिस्तानी वायुसेना के साथ मिलकर काम कर रही है। दिसंबर १९७३ और मई १९७४ के बीच ९ ईरानी हेलिकाप्टर और १८ वैमानिक गोली बरसाने के लिए भेजे गये थे। कहते हैं कि शाह ईरान ने इन्हें वापस बुला लिया; क्योंकि उनकी बतायी हुई मियाद यानी १५ मई १९७४ तक इस इलाके में कानून-व्यवस्था की स्थापना नहीं हो सकी।

मगर राजनयिक पर्यवेक्षकों का कहना है कि लीबिया जैसी उग्रपंथी अरब सरकारों के साथ पाकिस्तान के गहराते संबंधों के कारण शाह ईरान ने अपनी सेना इस इलाके से हटा ली। पाकिस्तानी संसद में कुछ सदस्यों ने ईरानी गोला-बारूद के टुकड़े भी पेश किये थे।

पाकिस्तानी सैनिक कार्रवाई दुतरफा है—१. गेरिल्लों पर चढ़ाई और २. चमलंग जैसे उन इलाकों की नाकेबंदी, जहां विद्रोही मर्री कबाइली अपने परिवारों के साथ चले गये हैं। इसने और 'पूरी सफाई' अभियान ने चमलंग की पहाड़ियों में ४०० कबाइलियों की और इस सारे इलाके में १,६५० लोगों

की जान ले ली है।

गेरिल्लों की एक टोली के साथ दौरा करते हुए मैंने मर्री इलाके को जनहीन पाया। दूर-दूर तक पहाड़ियां सूनी थीं और बस्तियां खाली। कई जगह कटाई के लिए तैयार फसलें अनछुई खड़ी थीं। दूसरे कई स्थानों पर फसलें तबाह कर दी गयी थीं। मवेशी और ऊंट लावारिस फिर रहे थे। मर्री कबीले के अधिकांश लोग या तो लोरालाई जिले की चमलंग पहाड़ियों में चले गये हैं या सिंध प्रांत में।

जब विरोधी पार्टियों के नेता मुसकसेल गये थे, वहां के मर्री कबाइलियों ने उन्हें सैनिक कार्रवाई की यह घटना सुनायी थी :

'दो पठान नौजवान जहीरखां और नादिर खां गांव के पास अपनी भेड़ें चरा रहे थे कि पाकिस्तानी फौज की एक टुकड़ी ने उन्हें पकड़ लिया। उनसे पूछा गया कि क्या तुम मर्री कबीले के हो ? उन्होंने नहीं में उत्तर दिया। इस पर उनसे कहा गया कि नजदीक के मर्री गांव का रास्ता दिखाओ। वे नहीं माने तो उनसे कहा गया कि जुर्माने के तौर पर अपनी राइफलें और भेड़ें सौंप दो। जब उन्होंने इससे भी इन्कार किया, तो उन्हें गोली मार दी गयी। एक तो फौरन मर गया। दूसरे ने अपने रिश्तेदारों के बीच दम तोड़ा, जो कि गोली की आवाज सुनकर दौड़ते हुए वहां पहुंचे थे।'

युद्ध की सबसे नाटकीय स्थिति देखने को मिलती है मर्री इलाके की कबाइली राजधानी काहान में, जिसकी २,५०० की आबादी में से सिर्फ चार आदमी अब वहां बाकी हैं।

पाकिस्तानी संसद के स्वतंत्र विरोधी दल के नेता शेरबाज मजारी को लोरालाई की जेल में कैद एक नौजवान विद्यार्थी ने बताया :

'अगस्त में पाकिस्तानी स्थलसेना के कमांडो-दस्ते ने रात को हमारी बस्ती को घेर लिया और सुबह हम पर धावा बोल दिया। उन्होंने बेकसूर नागरिकों पर अंधाधुंध गोलियां चलायीं और बड़ी तादाद में लोगों को घायल कर दिया। इस कार्रवाई में मेरी एक छोटी बहन मारी गयी और दूसरी घायल हो गयी। मैंने उनके निकट जाने की कोशिश की, मगर फौजियों ने मुझे पकड़े रखा।

'मेरे जोर देकर यह कहने पर भी कि मैं तो विद्यार्थी हूं, वे गांव में पकड़े गये दूसरे कई लोगों के साथ मुझे भी ले गये। सैनिकों ने हमारे घर की तमाम औरतों को जमा किया, उनके दुपट्टे उतरवाये और जला दिये। तब से मुझे अपने परिवार की कोई खबर नहीं है।'

जेल में और पूछताछ करने पर विरोधी दल के नेताओं को ६५ वर्ष के एक बूढ़े आदमी का पता चला, जिसे बिजली के झटके दिये गये थे। यंत्रणा के समय पैरों में बने घाव भी उसने उन्हें दिखाये। लोरालाई जेल में कम से कम दो और आदमियों ने बिजली के झटके दिये जाने की शिकायत की। एक और मर्री कबाइली ने रोते-रोते

बताया कि उसके दो बच्चे उसी की आंखों के सामने कत्ल कर दिये गये। ये सब शिकायतें संसद-सदस्यों के सामने की गयीं, जबकि जेल के अफसर चुपचाप सुन रहे थे।

लोरालाई की जेल जैसी जेलें कोइटा, सिबी, फोर्ट संदेमान, जोब, मस्तंग और खुजदर में भी हैं। सबसे ज्यादा कठोर परिस्थिति है कोहलू, सिबी और बरखान की फौजी छावनियों में, जिनमें एक-एक हजार से अधिक कबाइली कैदियों के लिए व्यवस्था है।

राजनैतिक नेताओं की हत्याएं आज की बलूची राजनीति का एक और लक्षण है। अब्दुस्समद अचकजई और हाजी मौलवी शम्सुद्दीन (दोनों प्रांतीय विधानसभा के सदस्य) के अलावा, पिछले साल कम से कम दो और प्रमुख राजनीतिज्ञ मारे जा चुके हैं।

सीदी, फोर्ट संदेमान, लोरालाई और खुजदर में माहौल भय और आतंक का है। कोइटा में शाम से सुबह तक अनधिकृत कर्फ्यू रहता है। फौजी ट्रकें गश्त लगाती रहती हैं और सड़कों पर नागरिकों की तलाशी ली जाती है। शहरी गेरिल्लों के रखे हुए बम जब-तब फूटते रहते हैं। बम प्रायः रेल-स्टेशनों, टेलिफोन-बूथों तथा कोइटा के ब्रूअरी रोड या होटल इमदाद जैसे केंद्रीय स्थानों पर रखे जाते हैं। २ अगस्त को श्री भुट्टो की सार्वजनिक सभा में कम से कम १५ बम फटे। २४ अगस्त को गेरिल्लों ने तीन तेलवाहकों में बम फोड़कर कोइटा में आग लगा दी थी।

केंद्रीय सरकार और कमजोर प्रांतीय सरकार के विरुद्ध इस आंदोलन की रीढ़ हैं कोई ६ या ८ हजार गेरिल्ले, जो अफगानिस्तान की सीमा पर चागई जिले से लेकर कराची से १५ मील दूर हाब दाम तक समूचे प्रांत में अपनी कार्रवाइयां कर रहे हैं।

'पाप्युलर फ्रंट फार आर्म्ड रेसिस्टेन्स' (पी. एफ. ए. आर.) नाम का इनका एक शिथिल संघटन है। इसका राजनैतिक गढ़ झलवां प्रदेश है, जहां से इसकी केंद्रीय कमान के बुलेटिन नियमित रूप से निकला करते हैं। ये पर्चे कोइटा व कराची में बड़े चाव से पढ़े जाते हैं, हालांकि पर्चे समेत पाये जाने पर गिरफ्तारी का डर रहता है।

पी. एफ. ए. आर. की केंद्रीय कमान का कहना है—'हम इस्लामाबाद की सरकार को अब कभी हमारे अधिकारों को किसी भी बहाने जूतों तले रौंदने नहीं देंगे।' पी. एफ. ए. आर. के एक पर्चे में कहा गया है—'अगर बलूचिस्तान पाकिस्तानी संघराज्य का समानाधिकार-संपन्न घटक है, तो हम यह चाहते हैं कि प्रत्येक स्तर पर हमारे साथ समानता का व्यवहार हो। अगर संविधान को निरा कागज नहीं बनकर रह जाना है, तो उसमें बहुत कुछ हेर-फेर होना जरूरी है।'

झलवां क्षेत्र में मेंगलों का वर्चस्व है। मगर मैंने देखा कि मुहम्मद हसनी, अचकजई, जहरी और बैजेंजो कबीले भी इस कार्रवाई में शरीक हैं और इनकी तादाद ४,५०० के करीब बतायी जाती है। ये सब जबर्दस्त लड़वैये हैं और सरेवान, कलात,

मकरान और लासबेला के इर्द-गिर्द लड़ रहे हैं। लासबेला का 'जाम' ही आजकल बलूचिस्तान का मुख्य मंत्री है।

गत २६ अक्टूबर को झलवां में आरंभ की गयी सैनिक कार्रवाई में इतनी सारी पाकिस्तानी फौज झोंक दी गयी, जैसा इस इलाके में पहले कभी नहीं हुआ था। कबाइली राजधानी वाद जैसी बस्तियां गये साल इस लड़ाई के आरंभिक दौर में ही सेना के प्रभाव में आ गयी थीं; मगर पाकिस्तानी सेना को सबसे उग्र प्रतिरोध का सामना झलवां में ही करना पड़ रहा है।

प्रतिरोध का दूसरा गढ़ है मर्री क्षेत्र, जहां गत २१ अगस्त को बड़े पैमाने पर सेना ने 'मॉप अप' कार्रवाई आरंभ की। जब मैं भंबौर की पहाड़ियों में था, पाकिस्तानी वायुसेना के सेबरजेट विमानों ने पर्चे गिराकर गेरिल्लों से हथियार डालने की मांग की। चूंकि बलूची भाषा लिखी नहीं जाती है, इसलिए इन पर्चों को गेरिल्ले पढ़ नहीं सके। अंत में हमें एक आदमी मिला जो पढ़कर उनका अनुवाद कर सका। मगर पर्चे में आम माफी के जो वादे थे, उन्हें सुनकर गेरिल्ले हंस दिये; क्योंकि सरकार और सेना की नीयत पर उन्हें शक है। सो आम माफी की घोषणाएं निष्फल रही हैं।

अलबत्ता सरकार द्वारा नियंत्रित अखबारों व टेलिविजन ने यह प्रचार किया है कि आम माफी के एलान के उत्तर में ५,५०१ गेरिल्लों ने आत्मसमर्पण किया है। मगर पहले तो सरकार यह कह रही थी कि ज्यादा से ज्यादा ४०० गेरिल्ले हैं, जो 'सूबे में गड़बड़ मचा रहे हैं।'

गेरिल्ले ३० से ५० तक की टोलियां बनाकर सारे इलाके में फैल गये हैं। इन गेरिल्लों का पांचवां हिस्सा अय्यूब खां के समय के सैनिकों का है, जो अपने सरदारों व नेताओं की रिहाई के लिए लड़ रहे हैं। मगर बाकी लोगों में नयी राजनैतिक चेतना जागती हुई दिखाई देती है। गेरिल्ले काफी मजबूत हालत में हैं और मजबूती से बोल रहे हैं। मर्री और झलवां इलाकों के बहुत बड़े हिस्सों में सेना कदम नहीं रख पा रही है।

सरकारी श्वेतपत्र में तो यही कहा गया है कि पिछले अठारह महीनों की सैनिक कार्रवाई में कुल १४२ सैनिक हताहत हुए हैं, मगर इस्लामाबाद में मैंने विश्वसनीय सूत्रों से सुना कि हताहत सैनिकों की संख्या २,१०० के करीब है।

पाकिस्तानी सरकार ने बार-बार यह आरोप लगाया है कि विद्रोहियों के पास बाहर से आये हथियार हैं; मगर गेरिल्ले ज्यादातर ब्रिटिश और जर्मन राइफलें उपयोग कर रहे हैं, जो कि उन्होंने पाकिस्तानी सैनिकों से छीनी हैं। भंबौर में मुझे पुराने ढर्रे का एक शस्त्र-कारखाना दिखाया गया, जिसमें पिछले तीस सालों में ३,००० बंदूकें बनी हैं। अभी भी यहां सालाना १०० बंदूकें बनती हैं। यहां खाली कारतूस भी फिर से भरे जाते हैं। कबाइलियों की अति सीमित शस्त्रसज्जा के स्रोतों में से एक यह कारखाना है।

गेरिल्लों के इस संग्राम का दूसरा साल अब पूरा होने को है। हालांकि सरकार ने एक-एक गेरिल्ला के हिसाब से दस-दस सैनिक यहां भेज दिये हैं, फिर भी पूर्वी बलूचिस्तान के प्रमुख अड्डों पर गेरिल्लों का कब्जा है। पाकिस्तानी वायुसेना के चालकों को कोइटा से दिन में तीन बार आक्रामक उड़ानें भरने की आज्ञा है, मगर गेरिल्लों को काबू में लाने में वायुसेना लगभग निष्फल रही है।

बलूचिस्तान को भेजी गयी सेना के अधिकांश जवान और अफसर पंजाबी हैं। इसलिए बलूच जनता का काफी बड़ा हिस्सा पंजाबियों से खफा हो गया है। न्यूजप्रिंट कोटा, ६० प्रतिशत विज्ञापन और सख्त सेंसर नियमों के जरिये सरकार ने बलूचिस्तान के प्रश्न पर प्रेस का मुंह बंद कर रखा है।

पाकिस्तान के भू-सर्वेक्षण विभाग ने चार तेलक्षेत्र खोजे हैं; सर्वेक्षण विभाग के ही बड़े अफसरों के अनुसार, ये तेलक्षेत्र कहां हैं यह बात 'राजनैतिक कारणों से' गुप्त रखी जा रही है। इनमें से दो तेलक्षेत्र पंजाब प्रांत के बलूची आबादी वाले डेरा गाजी खां जिले में हैं; एक गेरिल्लों और सेना के संघर्ष-क्षेत्र के निकट कच्ची में है; और चौथा मरी इलाके में भंबौर की पहाड़ियों में है। कई बलूची बुद्धिजीवियों का कहना है कि इन तेलक्षेत्रों का बेरोकटोक लाभ उठाने के लिए सरकार नरसंहार करा रही है। जो हो, बलूची प्रजा के नैतिक आक्रोश ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी है, जिसमें समूचा प्रांत भय और आतंक से ग्रस्त है।

* * *

[पृष्ठ २५ का शेष]

प्रायः घटने वाली घटना है। पौष्टिक आहार के अभाव में अधिकांश बच्चे रोग के साथ जन्म लेते हैं और अपनी क्षमता का पूर्ण विकास होने के पहले ही मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं। इन देशों में बहुलांश नागरिकों के लिए वृद्धावस्था पूर्णतया निराश्रित जीवन का पर्याय रहती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि समाज-कल्याण की अधिकांश योजनाओं का जिक्र मात्र चलने पर इन देशों के शासक सरकार के खाली खजाने की ओर इशारा कर देते हैं, परंतु साल दर साल उनकी सैनिक परेडों में नये-नये शस्त्रास्त्रों की चमक बढ़ती ही जाती है।

यह सचमुच ही एक निर्दयतापूर्ण स्थिति है। अनैतिक भी और विस्फोटक भी। यह निश्चित है कि शस्त्रास्त्रों के अंतरराष्ट्रीय व्यापार को पूर्णतया बंद नहीं किया जा सकता। यह भी सच है कि किसी भी सर्वप्रभुतासंपन्न देश को अपनी प्रतिरक्षा के लिए शस्त्रास्त्र खरीदने का उचित अधिकार है। परंतु प्रत्येक अधिकार की तरह प्रतिरक्षा-सज्जित रहने के अधिकार की भी अपनी सीमाएं हैं। देशवासियों को दारुण दरिद्रता में रखकर शस्त्रास्त्र खरीदने की होड़ में लगी कोई भी व्यवस्था अंततः राष्ट्रीय संमान की प्रहरी नहीं, वरन् क्रूर, अत्याचारी शासकों की रक्षा का उपाय रह जाती है।

* * *

नवनीत

मूर्तिकार

एक सांझ को उसके हृदय में यह इच्छा जागी कि 'क्षणिक आनंद' की मूर्ति बनाऊं। सो वह कांसे की तलाश में दुनिया में निकला; क्योंकि वह कांसे में ही सोच सकता था।

मगर सारी दुनिया में से कांसा गायब हो गया था; सारी दुनिया में कहीं भी कांसा दिखाई नहीं दे रहा था, सिवा 'शाश्वत शोक' की मूर्ति के कांसे के।

यह मूर्ति खुद उसी ने अपने हाथों गढ़ी थी और जीवन-भर जिस एक से प्यार किया था, उसकी समाधि पर स्थापित की थी–मनुष्य के अमर प्रेम के चिह्न के रूप में, मनुष्य के शाश्वत शोक के प्रतीक के रूप में। सारी दुनिया में अब इस मूर्ति के कांसे के सिवा कोई कांसा शेष नहीं था।

उसने अपने हाथों गढ़ी वह मूर्ति ली और एक विशाल भट्ठी में डालकर उसे गला दिया। और 'शाश्वत शोक' की मूर्ति के कांसे में से उसने 'क्षणिक आनंद' की मूर्ति गढ़ी।

–आस्कर वाइल्ड

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

दीर्घायुष्य का साधन

जीवन में यज्ञ की भावना

* डा. मंगलदेव शास्त्री *

मनुष्य का स्वरूप अपने अध्यवसाय पर निर्भर होता है–अथ खलु ऋतुमय: पुरुष: (छांदोग्य-उपनिषद् ३·१४·१)। इस वैदिक सिद्धांत की व्याख्या एक ऐतिहासिक कथा से की जाती है।

महिदास ऐतरेय नाम के एक बड़े विद्वान आचार्य हो गये हैं। इतरा अर्थात् शूद्रा पत्नी की संतान होने से वे ऐतरेय कहलाये। ऐतरेय-ब्राह्मण नामक सुप्रसिद्ध ब्राह्मण-ग्रंथ उन्हीं की कृति है। वे बड़े संयमी और अध्यवसायी थे। वे ११६ वर्ष की अवस्था तक जीवित रहे। उनकी इस दीर्घ आयु का क्या रहस्य था, यह छांदोग्य-उपनिषद् के निम्नस्थ स्थल में बताया गया है।

जीवन एक पवित्र यज्ञ है, यह भावना ही उनकी दीर्घायुता और उदात्त जीवन का रहस्य था। इसी का प्रतिपादन बड़े प्रभावोत्पादक शब्दों में उक्त उपनिषद् ने इस प्रकार किया है:

'पुरुषो वाव यज्ञ:। तस्य यानि चतुर्विंशतिवर्षाणि तत् प्रातः सवनम्।

चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। तदस्य वसवोऽन्वायत्ता: प्राणावाव वसवः। एते हीदं सर्वं वासयन्ति। तं चेदे- तस्मिन् वयसि किञ्चिदुपतपेत् स ब्रूयात्- "प्राणा वसवः। इदं मे प्रातःसवनं माध्यन्दिनं सवनमनुसन्तनुतेति। माहं प्राणानां वसूनां मध्ये यज्ञो विलोप्सीय" इति। उद्धैव तत एति, अगदो ह भवति।"

(छांदोग्य ३.१६·१-२)

अर्थात् निश्चय ही मनुष्य (यानी उसका जीवन) यज्ञ है। उसके (यानी जीवन के) जो आरंभ के २४ वर्ष हैं, वे प्रात:सवन हैं। गायत्री छंद में २४ अक्षर होते हैं और प्रात:सवन का संबंध गायत्री से है। उस प्रात:सवन से वसु नामक देवता संबद्ध हैं। प्राण ही वसु हैं; क्योंकि उन्हीं के आधार पर शरीर में सब कुछ रहता है। (यहां 'वसु' का संबंध 'वस्' धातु से है।)

इस २४ वर्ष की आयु के मध्य में यदि कोई रोग आदि उसे कष्ट पहुंचाये तो उसे इस प्रकार कहना चाहिये–'हे प्राणरू वसुओ! अभी तो मेरा यह (केवल) प्रातः सवन है। इसके अनंतर माध्यंदिन सवन को आप देवता-गण चलाइये। ऐसा न हो कि प्राण-स्वरूप वसुओं के मध्य ही यज्ञ-स्वरूप मैं

में विलुप्त हो जाऊं।' तब वह उस कष्ट से विमुक्त होकर नीरोग-स्वस्थ हो जाता है।

इसी प्रकार इस उपनिषद् में आगे चलकर आयुष्य के द्वितीय भाग को, जो कि ४४ वर्ष का माना गया है, माध्यंदिन सवन कहा है। माध्यंदिन सवन का संबंध त्रिष्टुप् छंद से है, जिसमें ४४ अक्षर होते हैं। इस सवन के देवता रुद्र कहलाते हैं। यहां भी प्राणों को ही रुद्र कहा गया है; क्योंकि मध्य आयु में प्राणों के वियोग से सब कोई रोते हैं। (यहां 'रुद्र' शब्द का संबंध 'रोदन' से है।)

इस काल में भी रोग आदि के उपस्थित होने पर मनुष्य को यही सोचना चाहिये कि अभी तो मेरे जीवन-यज्ञ का माध्यंदिन सवन ही है, अर्थात् मध्य काल ही है। एक सवन और शेष है। यज्ञपूर्ति के लिए मुझे उसे भी करना है। सो उसे रुद्र-रूपी प्राणों से प्रार्थना करके रोग आदि कष्ट को भगा देना चाहिये।

उपनिषद् के अनुसार, जीवन का तृतीय भाग ४८ वर्ष का है। वह जीवन-यज्ञ का तृतीय सवन है। इस सवन के जगती छंद में ४८ अक्षर होते हैं। उसके देवता-गण 'आदित्य' कहलाते हैं। यहां भी प्राणों को ही 'आदित्य' माना गया है; क्योंकि जीवन की इस अंतिम अवस्था में समस्त गुण, समस्त ज्ञान और अनुभव मनुष्य में संग्रहीत होने लगते हैं। (यहां 'आदित्य' शब्द का संबंध 'आदान' से है।)

इस अवस्था में भी रोग आदि के उपस्थित होने पर मनुष्य को यही सोचना चाहिये कि यह मेरे जीवन-यज्ञ का अंतिम सवन है। बिना किसी विघ्न के इसकी पूर्ति परमावश्यक है। इस प्रकार आदित्य-रूप प्राण उसकी प्रार्थना को अवश्य स्वीकार करते हैं और उसका जीवन-यज्ञ निर्विघ्न समाप्त होता है।

जीवन-यज्ञ की इसी पवित्र भावना से प्रेरित होकर विद्वान महिदास ऐतरेय ने रोग आदि को ललकारकर कहा था—**'स किं म एतदुपतपसि योऽहमनेन न प्रेष्यामीति'** (३.१६.७)। अर्थात्, अरे रोग! तू मुझे क्यों सता रहा है? मैं तेरी इस बाधा से मृत्यु को नहीं प्राप्त होऊंगा। इस प्रकार, 'स ह षोडशं वर्षशतमजीवत्' (३.१६.७)। अर्थात् वे महिदास ऐतरेय ११६ वर्ष तक जीवित रहे; और **'प्र ह षोडशं वर्षशतं जीवति य एवं वेद'** (३.१६.७) अर्थात् और भी जो कोई ऐसा जानता है, यानी ज्ञानपूर्वक आचरण करता है, वह ११६ वर्ष तक जीवित रहता है।

—संगल भवन, २४/६ शक्तिनगर, दिल्ली-७

★

एक प्रसिद्ध मुक्केबाज अपने प्रतिद्वंद्वी से लड़ते समय जितना भयानक समझा जाता था, उतना ही वह कोमल-हृदय था। लड़ने जाने से पहले वह अपने घर में मन ही मन प्रार्थना किया करता था। किसी ने उससे पूछा—'प्रार्थना में आप ईश्वर से क्या कहा करते हैं?'

'मैं कहता हूं—हे ईश्वर, देखना, मेरे प्रतिद्वंद्वी को मेरे घूंसों से सख्त चोट न लगे। और साथ ही, इस बात का भी खयाल रखना कि मेरी हार न हो।'

★

वाक्यदीप

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ।।

– आत्मविश्वास से अपने आपको ऊपर उठायें, अपने आपको धिक्कारें नहीं। क्योंकि आत्मविश्वासयुक्त आत्मा ही हमारा बंधु है, आत्मविश्वास रहित आत्मा ही हमारा शत्रु।

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन ।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ।। २, ४१ ।।

– हे कुरुनंदन ! निश्चयात्मिका (सुलझी हुई) बुद्धि एक ही प्रकार की होती है, और अस्थिर मति वालों की बुद्धियां (अनिश्चयात्मिका बुद्धि) अनेक भेदमयी अनेक होती हैं।

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य नायुक्तस्य भावना ।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तर कुतः सुखम् ।। २, ६६ ।।

– असमाहित अंतःकरण वाला निर्णय नहीं कर सकता और न उसको निष्ठा ही होती है, बिना निष्ठा के शांति कैसी ! और अशांत को सुख कहां ?

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ।। १६,२३ ।।

– जिस क्षेत्र का जो विषय है, उस क्षेत्रानुसारी विधि को छोड़कर जो मनमाने ढंग से चलता है, वह न तो सफलता को प्राप्त करता है और न ही सुख एवं मोक्ष को ।

प्रेषक : भद्रसेन
पो. साधु आश्रम, होश्यिारपुर (पंजाब)

जीवन का अमृत

अल्बर्ट श्वाइत्ज़र

अत्यंत गहरा चिंतन विनम्र होता है। उसे केवल इस बात की चिंता होती है कि जिस लौ को उसने जिला रखा है, वह अधिक से अधिक प्रखर और विशुद्ध ऊष्मा के साथ जले; उसे इस बात की चिंता नहीं होती कि उसकी दीप्ति कितने दूर तक जाती है।

*

सत्य का अपना कोई विशेष समय नहीं होता। उसका समय अभी है, हमेशा है, और सबसे अधिक तो तब है जब वह वर्तमान परिस्थितियों के सर्वथा प्रतिकूल प्रतीत होता है।

*

यथार्थ से सरोकार रखने वाले चिंतन को आकाश की ओर देखना होगा, पृथ्वी से परे देखना होगा, अपनी नजर पागलखाने की सीखचेदार खिड़की की ओर मोड़ने का साहस करना होगा। तारों की ओर देखो और पहचानो कि ब्रह्मांड में हमारी पृथ्वी कितनी छोटी है! पृथ्वी पर दृष्टि डालो और जानो कि उस पर मनुष्य कितना अल्प-सा है! मनुष्य जब पृथ्वी पर आया, उससे बहुत पहले से पृथ्वी मौजूद थी। ब्रह्मांड के इतिहास में बस एक सेकेंड से मनुष्य पृथ्वी पर है। कौन कह सकता है, शायद पृथ्वी फिर से मनुष्य के बिना ही सूर्य की प्रदक्षिणा करने लगे! इसलिए हमें मनुष्य को ब्रह्मांड का केंद्र नहीं मानना चाहिये। और हमें पागलखाने की सीखचेदार खिड़कियों पर अपनी नजर जमाये रखनी चाहिये, ताकि हमें यह भयंकर तथ्य स्मरण रहे कि मानसिक और आत्मिक जीवन भी नष्ट किया जा सकता है।

*

आज चिंतन की अवहेलना ही नहीं हो रही है, अपितु उस पर अविश्वास भी किया जा रहा है। हमारे जमाने की संघटित राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक संस्थाएं

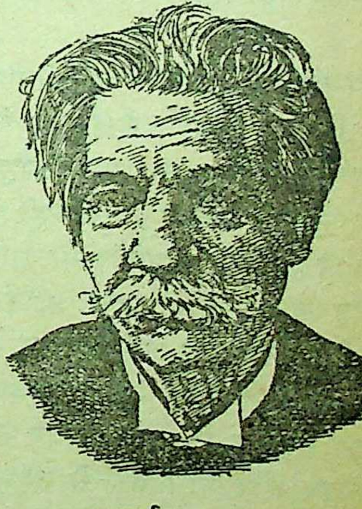

अल्बर्ट श्वाइत्ज़र

व्यक्ति-मानव को इस बात के लिए फुसलाने का प्रयत्न कर रही हैं कि वह स्वयं चिंतन करके अपनी आस्थाओं पर पहुंचने की चेष्टा न करे, बल्कि उन्होंने उसके लिए जो रेडीमेड आस्थाएं तैयार कर रखी हैं, उन्हें अपना ले। ऐसा हर आदमी जो स्वयं सोचता है और आत्मिक दृष्टि से स्वतंत्र है, उन्हें असुविधाजनक लगता है और अटपटा भी। उस आदमी के बारे में वे आश्वस्त नहीं हो सकतीं कि वह उनके संघटन में जैसा वे चाहती हैं वैसा घुलमिल जायेगा। आज समस्त संघटित संस्थाएं अपनी शक्ति के लिए अपने विचारों की तथा अपने अनुयायियों की आत्मिक गुणवत्ता पर उतना भरोसा नहीं रखतीं, जितना कि अपने सदस्यों की चरम कोटि की एकता और अनन्यता पर रखती हैं। उन्हें आत्मरक्षा और आक्रमण की प्रबलतम शक्ति इन्हीं में से मिलने की उम्मीद नजर आती है।

*

सच्चे-सार्थक आध्यात्मिक जीवन की पहली सीढ़ी है–सत्य में साहसपूर्ण निष्ठा और उस निष्ठा का खुला एलान। गहनतम धार्मिक अनुभूति चिंतन-विमुख नहीं होती, अपितु वही तो उससे निष्पाद्य होनी चाहिये— तभी वह सच्चा और गहरा आधार पा सकती है। जीवन के अर्थ के प्रति केवल सोचना भी अपने आपमें बहुत मूल्यवान है। यदि वैसा सोचना हमारे भीतर घर कर लें, तो अहंकार और वासनाओं से उद्भूत वे आदर्श, जो आज आम लोगों के बीच घास-फूस की तरह बहुतायत से उगे हुए हैं, अवश्य ही मुरझाकर मर जायेंगे।

*

अगर हम हर सांझ को तारों से मंडित अनंत आकाश को निहारने और उसका मनन करने के लिए महज तीन मिनिट भी दे सकें, अथवा किसी शवयात्रा में अरथी के पीछे चलते समय बेमतलब की बातचीत करने के बजाय जीवन और मरण की गुत्थी पर विचार करें, तो वह भी हमारी वर्तमान स्थिति को सुधारने में कितना सहायक होगा। मनुष्य अगर अनंत और सांत, अस्तित्व और विलय के बारे में सोचने लग जायें और इस प्रकार सही व गलत मानदंडों के बीच, असली मूल्यवान और असली मूल्यहीन वस्तुओं के बीच विवेक करना सीख जायें, तो जनमत को गढ़ने और चलाने वालों के अज्ञान और वासनाओं से उपजे आदर्शों का मनुष्यों पर कतई वर्चस्व न रह जायेगा।

पुराने जमाने के यहूदी धर्मगुरु सिखाया करते थे कि यदि समूची यहूदी जाति केवल एक बार भी एक साथ सबाथ व्रत का पालन कर ले, तो पृथ्वी पर ईश्वरीय राज्य स्थापित हो जायेगा। उससे भी कितनी अधिक सत्य है यह बात कि जीवन और जगत् के विषय में चिंतन की एक हल्की रेखा भी हमारे बीच उभर जाये, तो समस्त अन्याय, हिंसा एवं असत्य जो कि मानवजाति का विनाश कर रहे हैं, अपनी शक्ति गंवा बैठेंगे!

*

आचारशास्त्र जीवन-समादर (रेवरेन्स फॉर लाइफ़) के सिवा कुछ नहीं है। मुझे नैतिकता का अपना मूल सिद्धांत 'जीवन-समादर' से प्राप्त हुआ है; वह सिद्धांत यह है कि जीवन का पालन करना, उसकी सहायता और संवर्धन करना पुण्य है; जीवन को नष्ट, क्षतिग्रस्त और कुंठित करना पाप है।

*

अन्य जीवों के प्रति मेरा रुख क्या हो? स्वयं अपने जीवन के प्रति मेरा जो रुख है उसका अंग ही हो सकता है वह। यदि मैं विचारशील जीव हूं, तो मुझे अपने से भिन्न जीवों का भी अपने समान ही समादर करना चाहिये। क्योंकि तब मैं जानता हूंगा कि मेरे जितनी ही गहराई से वे भी अपनी वृद्धि और पूर्णता चाहते हैं।

इसलिए मैं यह देखता हूं—पाप वह है जो जीवन को विनष्ट, बाधित और कुंठित करता है। चाहे मैं भौतिक दृष्टि से सोचूं या आध्यात्मिक दृष्टि से, यही सत्य है। इसी तरह, जीवन की रक्षा या सहायता करना, जिस किसी भी जीवन को मैं प्रभावित कर सकता हूं, उसे उच्चतम विकास प्राप्त कराना—यह पुण्य है।

*

'जीवन-समादर' मुझे अपने सुख को अपनी मिल्कियत नहीं बनाने देता। जब मैं सर्वथा चितामुक्त होकर आनंद मनाना चाहता हूं, तब वह मेरे देखे या भांपे हुए दुःख-दर्द का खयाल मेरे सामने ले आता है। वह मुझे अपनी बेचैनी को देशनिकाला देने नहीं देता। जैसे तरंग का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता और वह सागर की अनवरत हलचल का हिस्सा-भर होता है, उसी तरह मेरी भी नियति यह है कि मैं अपने जीवन को अपने आपमें पूर्ण वस्तु न अनुभव करूं, अपितु अपने चारों ओर चल रहे अनुभव का एक अंश समझूं।

एक उद्वेगकारी सिद्धांत मेरे कानों में सदा फुसफुसाया करता है। वह कहता है, तुम सुखी हो। इसलिए बहुत बड़े त्याग की तुमसे मांग की जाती है। स्वास्थ्य, प्रतिभा, योग्यता, सफलता, सुखी बचपन, सामंजस्यपूर्ण घरेलू जीवन आदि के रूप में तुमने दूसरे लोगों से अधिक जो भी पाया है, उसे तुम्हें अपना सहज प्राप्य नहीं मानना चाहिये। तुम्हें उसकी कीमत चुकानी चाहिये। तुम्हें उसके बदले में दूसरे जीवों के लिए अपने जीवन का असाधारणतया महान बलिदान करना चाहिये।

जब सुखी लोग सच्ची नैतिकता की आवाज सुनने का साहस करते हैं, तो वह उनके लिए खतरनाक ही होती है। उसके भीतर दहक रही अतर्कबद्धता की आग उनके लिए कभी बुझ नहीं सकती। वह उन्हें सहज-सामान्य पथ से अलग खींच ले जाने के लिए और यह देखने के लिए कि क्या उन्हें साहस-यात्री (जिनकी संख्या दुनिया में इतनी कम है) बनाया जा सकता है, निरंतर उन्हें ललकारती रहती है।

* * *

तुमने कहा था

-रामदरश मिश्र

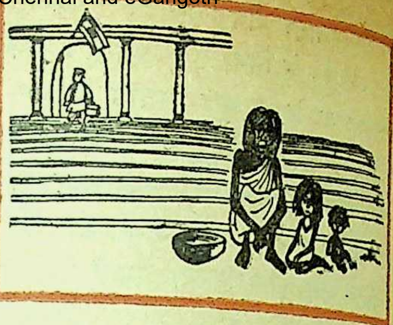

तुमने कहा था –
कि तुम हमारे लिए राजधानी जा रहे हो
वहां से हंसी-खुशी से महकते चेहरे लाओगे
हमने तुम्हारे राहखर्च के लिए
अपने उदास चेहरे बंधक रख दिये थे
तुमने कहा था–
कि तुम
हमारे फटे और कांपते शरीरों के लिए
स्निग्धता और ऊष्मा लाओगे
हमने अपने रहे-सहे कंबल
तुम्हारे दरिद्र शरीर पर ओढ़ा दिये थे
तुमने कहा था–
कि तुम मशीनों के कंधों पर लादकर
हमारे उदास खेतों के लिए
नयी हरियाली लाओगे
हमने अपने खेतों की मिट्टी
तुम्हारे साथ कर दी थी
तुमने कहा था–
कि तुम हमारी बिखरी पगडंडियों के लिए
एक सड़क लाओगे
जो देश के रक्त का बहाव
शहर और गांव के बीच
समानभाव से ढोती रहेगी
हमने सारी पगडंडियां
तुम्हारे नाम लिख दी थीं
तुमने कहा था–
कि तुम हमारे हाथों के लिए
छोटे-बड़े अनंत धूप-भरे दिन लाओगे
हमने खाली शामों से भरे अपने घायल हाथ
'साइज़' नापने के लिए
तुम्हारे टाट के झोले में डाल दिये थे
तुमने कहा था–
तुमने कहा था ......
लेकिन सुना है कि
राजधानी में पहुंचते ही
तुमने हमारे कंबल का झंडा बना लिया
और उस पर
हमारे उदास चेहरों की तस्वीर छापकर
चिल्लाने लगे–
सड़क पर ......
संसद में ......
सरकारी गिरोह ने
तुम्हारी योग्यता पहचान ली
और अपना मेम्बर बना लिया
तुम झंडे की छांह में लगातार मोटे होते गये
तुम्हारा चेहरा बड़ा होता गया

हमारे चेहरे छोटे होते गये
हमारे खेतों की मिट्टी पकाकर
तुम कारखानों की दीवार उगाते रहे
तुम विरोधियों से लड़ने के लिए
हमारे घायल हाथ भांजते रहे
हमारी पगडंडियों को बांधकर
चिकनी और चौड़ी होती हुई
शहर की फाहशा सड़कों के हाथ बेचते रहे
धीरे-धीरे तुमने
गिरोह के साथ
एक पत्थर का किला बना लिया
चारों ओर गहरी चौड़ी खाइयां
अंदर
गहरे अंधे कुएं
अदृश्य जालीदार तहखाने
तहखानों पर गांधी की मूर्तियां
पेचदार सीढ़ियां
सीढ़ियों के दोनों किनारे गमले में फूल
कमरे के अंदर कमरे, फिर कमरे
और दूर तक फैला हुआ
गांठदार काले रहस्य का एक सिलसिला
हर कमरे के द्वार पर सूर्य की तस्वीर
किले के मुख-द्वार पर
एक रेडियो चीखता है
एक अखबार पुकारता है—
समाजवाद ...... समाजवाद
और हम कब से सुन रहे हैं
कि तुम आ रहे हो ......
नहीं अब और इंतजार हम नहीं कर सकते
हमारे चेहरे वापस कर दो
हम बेपहचान हो गये हैं
हमारे कंबल वापस कर दो
हम निपट नंगे हो गये हैं
हमारे घायल हाथ वापस कर दो
हमारी टकराहट की आंच ठंडी पड़ गयी है
हमारी मिट्टी वापस कर दो
हमारे खेत सो गये हैं
हमारी पगडंडियां वापस कर दो
हमारी यात्राएं खो गयी हैं
तुमसे अब कोई उम्मीद नहीं
इन्हें वापस कर दो, वापस कर दो
हम मिलकर
खुद इनसे अपनी एक नयी पहचान बनायेंगे
नहीं, तुम वापस नहीं करोगे
वापस करने की आदत तुम भूल चुके हो
हमें खुद तुम्हारे किले को तोड़ना पड़ेगा ।

—ई ४/११, माडल टाउन, दिल्ली-९

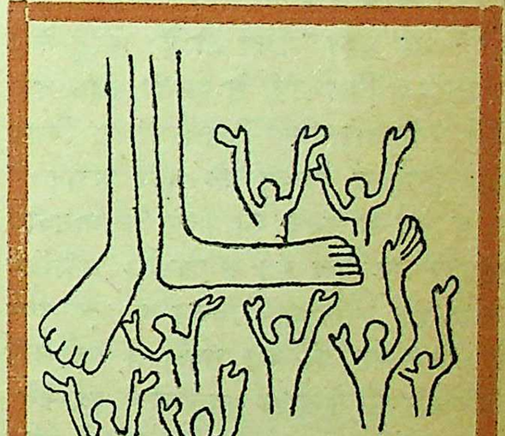

★

आंतरिक अवकाश की ओर

अमरीकी अंतरिक्षयात्री एडगर डी. मिशेल

फरवरी १९७१ में अपोलो-१४ अभियान के सदस्य के रूप में मुझे चंद्रमा पर चलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस चंद्रयात्रा के दौरान मैंने पृथ्वी पर स्थित चार व्यक्तियों को टेलिपैथी द्वारा संदेश भेजने का यत्न करके अतींद्रिय प्रत्यक्ष (एक्स्ट्रा सेन्सरी पर्सेप्शन) में एक परीक्षण किया।

तभी से लोग मुझसे पूछते रहे हैं कि किसी अंतरिक्षयात्री को अतींद्रिय (साइकिक) शोध में इतनी तीव्र दिलचस्पी क्यों हो? यह प्रश्न उचित ही है; परंतु मेरी वास्तविक दिलचस्पी से इसका संबंध नहीं है। मेरी वास्तविक दिलचस्पी का विषय है—चेतना के स्वरूप को और शरीर के साथ मन के संबंध को (जो कि मानवीय क्षमता का मूल है) समझना। अतींद्रिय शोध इस व्यापकतर विषय का एक तथ्य है। इसलिए यों कह सकते हैं कि मेरी दिलचस्पियों ने बाह्य अवकाश से बढ़-फैलकर आंतरिक अवकाश को अपने में समेट लिया है।

जब मैं चंद्रमा पर गया तब मैं भी उतना ही पक्का प्रयोगाश्रित वैज्ञानिक-इंजीनियर था, जितना कि मेरे अन्य सहकर्मी थे। ब्रह्मांड के प्रति तार्किकवस्तुनिष्ठ-प्रयोगाश्रयी दृष्टिकोण हृदयंगम करने में मैं एक चौथाई सदी गुजार चुका था। मगर अपोलो-१४ के दौरान मुझे विज्ञान और टेक्नोलाजी की कतिपय सीमाएं दिखाई दीं।

इसका आरंभ हुआ असीम आकाश में तैरते पृथ्वी ग्रह को निहारने के अत्यद्भुत अनुभव से—विशाल काले अवकाश में तैरते इस श्वेत-नीलमणि के गजब के सौंदर्य के दर्शन से। मैं धार्मिक अनुभूति जैसी तीव्र अनुभूति में से गुजरा, जिसमें दिव्यतत्त्व की उपस्थिति मुझे साक्षात्-सी प्रतीत हुई और मैंने जाना कि ब्रह्मांड में जीवन का अस्तित्व किसी अललटप प्रक्रिया पर निर्भर आकस्मिक घटना नहीं है। यह ज्ञान जो कि मुझे अपरोक्षतया अंतर्ज्ञान के रूप में प्राप्त हुआ, व्यवस्थित तर्क का विषय या तार्किक परिणाम नहीं था। यह ज्ञानेंद्रियों से प्राप्त सूचनाओं की निष्पत्ति भी नहीं था। यह बोधज्ञान व्यक्तिनिष्ठ (सब्जेक्टिव) था, किंतु सर्वांश में उतना ही सच्चा और प्रबल था, जितने कि वे वस्तुनिष्ठ तथ्य सच्चे और प्रबल थे, जिन पर हमारे यान का दिशा-निर्देशन कार्यक्रम और संचार-व्यवस्था

निर्भर थी। स्पष्ट ही, ब्रह्मांड का कोई अर्थ है, कोई दिशा है—दृश्यमान सृष्टि के पीछे कोई अदृश्य आयाम है, जो इसे एक बुद्धिसंगत व्यवस्था और जीवन को कोई उद्देश्य प्रदान करती है।

फिर मेरे विचार पृथ्वी पर के दैनिक जीवन की ओर मुड़े। इसके साथ ही मेरी आश्चर्य-भावना धीरे-धीरे लगभग पीड़ा में परिणत हो गयी। मैंने महसूस किया कि इस क्षण मनुष्य लड़ाइयां लड़ रहे हैं; हत्याएं और अन्य अपराध कर रहे हैं; झूठ बोल रहे हैं; धोखा दे रहे हैं और सत्ता एवं पद के लिए संघर्ष कर रहे हैं; जल एवं वायु को गंदला करके वातावरण को दूषित कर रहे हैं, प्राकृतिक संसाधनों का अपव्यय कर रहे हैं और धरती को उजाड़ रहे हैं; विषयासक्ति और लालच के वशीभूत हैं; असहिष्णुता, कठमुल्लापन और पूर्वग्रह तथा उन तमाम दोषों द्वारा जो कि मानव को मानव के प्रति अमानवीय बनाते हैं, एक दूसरे को क्लेश पहुंचा रहे हैं।

यह भी मुझे दुःखदायी रूप में स्पष्ट हुआ कि लाखों-करोड़ों मनुष्यों के गरीबी, बीमारी, दुःख-दैन्य और लगभग गुलामी की हालत भोगने का बहुत बड़ा कारण है—आर्थिक शोषण, राजनैतिक हुकूमत, धार्मिक एवं जातीय अत्याचार तथा वे सैकड़ों राक्षस, जो कि मनुष्य के अहंकार से उपजते हैं। टेक्नोलाजी के तमाम चमत्कारों के बावजूद विज्ञान मनुष्य की स्वार्थपरायणता से उत्पन्न इन समस्याओं से पार पाने में अब तक सफल नहीं हो सका है—शायद अपने वर्तमान स्वरूप में, वह सफल हो भी नहीं सकता।

संपूर्ण समस्या की विराटता चौंका देने वाली लगी। दुनिया इस संकटपूर्ण हालत में कैसे और क्यों पहुंची? उससे भी बड़ी बात, इसे ठीक करने के लिए क्या किया जाये? हमारी वस्तुनिष्ठ तर्क-बुद्धि के चरम विकास का (जिसका कि विज्ञान प्रतीक है) गठबंधन कैसे किया जाये?

जब मैं मनुष्य के सामने खड़ी चुनौती को आमूलाग्र देखता हूं, मुझे एक ही उत्तर नजर आता है—चेतना का रूपांतरण। वैश्विक समरसता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अपनी वर्तमान अहंकेंद्रित चेतना से ऊपर उठना होगा, अपने भीतर से आरंभ करके दूसरे मनुष्यों एवं अपने परिवेश के माध्यम से समस्त ब्रह्मांड के साथ अपने संबंध को समरस बनाना होगा। अन्यथा मनुष्य अधिकाधिक गहरी अव्यवस्था और संकट में उतरता हुआ अपने ही सिरजे हुए विनाश की ओर अग्रसर होता जायेगा।

चेतना की शोध में मेरी दिलचस्पी नौ वर्ष पूर्व जागी, जब मैंने पहली बार परामनोविज्ञान में झांककर देखा। मैं इस समूचे क्षेत्र के बारे में संशयी था और अज्ञानी भी। मगर सच कहूं तो मैं वस्तुतः ऐसी धारणाओं की खोज में था, जो जीवन के अर्थ की व्याख्या कर सकें—ऐसी सर्वांगीण धारणाएं जो धर्म, दर्शन और विज्ञान की

[शेष पृष्ठ ५८ पर]

बरसों के बाद......नौ लंबे बरसों के बाद भारत एक बार फिर हॉकी के क्षेत्र में अपना प्रभुत्व स्थापित करने में सफल हुआ है। इसी मार्च के पहले पखवाड़े में क्वालालंपुर में हुई तृतीय विश्व कप हॉकी प्रतियोगिता के फाइनल में भारत ने अपने पारंपरिक प्रतिद्वंद्वी पाकिस्तान को २-१ गोल से पराजित कर इस प्रतियोगिता में पहली बार सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया।

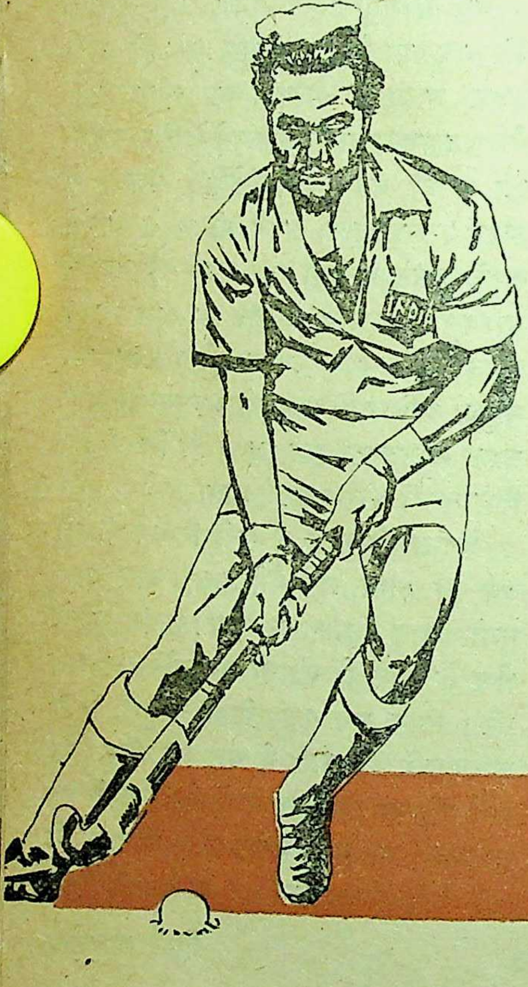

इस सफलता से खुशी होना स्वाभाविक है। होनी ही चाहिये ...... लेकिन इससे भी ज्यादा खुशी की बात यह है कि भारतीय टीम के प्रदर्शन में आश्चर्यजनक सुधार हुआ है। १९७१ में बार्सीलोना में हुई प्रथम विश्व कप हॉकी प्रतियोगिता में भारत को तृतीय स्थान मिला था; फिर द्वितीय प्रतियोगिता (एमस्तरडम-१९७३) में द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ और इस बार तीसरी प्रतियोगिता में प्रथम स्थान!

लेकिन सफलता की यह कहानी उतनी सपाट और सीधी नहीं है, जितनी ऊपर से दिखाई देती है।

आपको शायद याद होगा कि क्वालालंपुर में हुई यह प्रतियोगिता पहले बंबई में होने वाली थी, लेकिन हमारे हॉकी-अधिकारियों के आपसी झगड़ों के कारण यह अवसर हमारे हाथ से छिन गया। हमारे अधिकारी अपने निजी स्वार्थों के विषजाल में इस बुरी तरह फंसे रहे हैं कि उन्हें इस बात की कभी फिक्र ही नहीं रही कि देश में हॉकी के खेल और इसके खिलाड़ियों की क्या हालत हो रही है।

हमारे खिलाड़ियों को हमेशा अधिकारियों की गंदी और गलाजत-भरी राजनीति और पदलोलुपता का शिकार होना पड़ा है। स्थिति यहां तक खराब हो चुकी

तृतीय

है कि जब तक हमारी टीम रवाना नहीं हो गयी, तब तक ऐसा लग रहा था कि हम तृतीय विश्व कप प्रतियोगिता में भाग ही नहीं ले पायेंगे। तेहरान में हुई एशियाई खेल-प्रतियोगिताओं में हमारे हॉकी दल को कितनी उठा-पटक के बाद जाने दिया गया, यह सभी को मालूम है। वहां पाकिस्तान ने हमें बुरी तरह पराजित कर दिया।

इस बार भी स्थिति यह थी कि पद-लोलुप अधिकारी अपनी खींचातानी में लगे हुए थे। ऐसे वक्त में अगर खिलाड़ियों ने ही अल्टीमेटम न दे दिया होता, तो शायद हमारा दल क्वालालंपुर भी नहीं पहुंच पाता। ...... इसलिए कोई ताज्जुब नहीं कि इस विश्व कप हॉकी प्रतियोगिता में लीग के अंतर्गत खेले गये मैचों में भारत का प्रदर्शन निराशाजनक ही रहा। अर्जेंटीना के विरुद्ध १-२ से हार जाने के बाद तो लगने लगा था कि भारतीय दल शायद सेमी फाइनल में भी नहीं पहुंच पाये।

लेकिन इसके बाद जैसे चमत्कार ही हो गया। खिलाड़ियों के सामने जैसे जिंदगी और मौत का सवाल उठ खड़ा हुआ—उनकी अपनी दृढ़निश्चयता और सूझबूझ ने ही उन्हें सहारा दिया—और परिणाम हमारे सामने है। और इसके लिए खिलाड़ियों की जितनी प्रशंसा की जाये, कम है। हर तरह के विरोध, उपेक्षा और अपमान सहते हुए उन्होंने भारतीय हॉकी को एक बार फिर अपने उच्चतम शिखर पर पहुंचा दिया है—उन्होंने सचमुच सच्चे खिलाड़ी होने का सबूत दिया है।

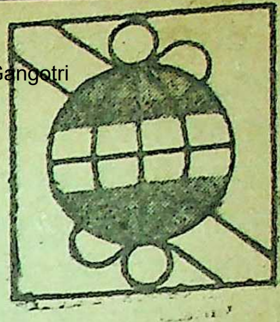

तृतीय विश्व कप प्रतियोगिता में भारत को 'बी' ग्रुप में रखा गया था। इस ग्रुप में भारत ने इंग्लैंड को मात्र २-१ से पराजित किया; आस्ट्रेलिया के विरुद्ध १-१ से बराबरी रही; घाना, जो कि प्रतियोगिता की सबसे कमजोर टीम थी, उसे हमने ७-० से पराजित किया, और चौथे मैच में अर्जेंटीना ने हमें २-१ से पराजित कर दिया। यही वह वक्त था, जब ऐसा लगने लगा था कि अगर हम पश्चिम जर्मनी से भी हार गये तो...... ! लेकिन जर्मनी के विरुद्ध भारतीय टीम सिर पर कफन बांधकर खेली। पहली बार टीम के खिलाड़ियों में शानदार ताल-मेल और सूझबूझ दिखाई दी—हमारी फारवर्ड पंक्ति, पहली बार, व्यक्तिगत खेल खेलने के बजाय दलगत हित के अनुरूप खेली और हमने जर्मनी को ३-१ से पराजित किया।

*** केशव झा ***

विश्व कप हॉकी

दूसरी ओर पाकिस्तान का प्रदर्शन इतना उत्साहजनक था कि लगता था, उन्हें पराजित कर पाना करीब-करीब नामुमकिन है। वैसे यह सही है कि शुरू के मैच में उनका खेल निराशाजनक ही रहा। पोलैंड और हालैंड के विरुद्ध उनके मैच क्रमशः २-२ और ३-३ से बराबर रहे; फिर उन्होंने न्यूजीलैंड को २-० से; स्पेन को ५-० से और मलयेशिया को २-१ से पराजित किया। सेमी फाइनल में उन्होंने जिस तरह जर्मनी को ५-१ से मात दी, उससे तो उनके हौसले और भी ज्यादा बुलंद थे; जबकि दूसरी ओर भारत मलयेशिया को बड़ी मुश्किल से ३-२ से पराजित कर पाया—वह भी अतिरिक्त समय में। हम फाइनल में पहुंच तो गये, लेकिन हॉकी-विशेषज्ञों की स्पष्ट धारणा थी कि भारत पाकिस्तान के मुकाबले टिक नहीं पायेगा—बल्कि मुमकिन है, भारत को इस बार अपनी सबसे बड़ी पराजय का मुंह देखना पड़े।

लेकिन......और यह लेकिन बहुत बड़ा है; क्योंकि हुआ वह जिसे किसी ने सोचा भी नहीं था। फाइनल मैच में भारत के खिलाड़ी इतने उत्साहपूर्वक और संपूर्ण मनोबल से खेले कि पाकिस्तानियों के पांव ही नहीं टिक पाये। वैसे पहला हमला पाकिस्तान की ओर से ही हुआ, पहले ही मिनिटों में; लेकिन उनके अपने खिलाड़ियों की वजह से ही भारत के विरुद्ध उनको मिला पहला और अंतिम पेनाल्टी कार्नर बेकार चला गया; फिर १७ वें मिनिट में खेल के रुख के विरुद्ध वे एक गोल कर सकने में भी सफल हो गये; कितु पाकिस्तान के गौरव का वह अंतिम क्षण था।

मध्यांतर तक पाकिस्तान १-० से आगे था। पहला गोल कर लेने पर पाकिस्तानी सुरक्षात्मक खेल पर उतर आये थे। शायद वे यह सोचकर आश्वस्त थे कि उनके द्वारा पहला गोल कर लेने के बाद भारत अब तक उनसे कभी जीत नहीं पाया—इसलिए इस बार भी नहीं जीत पायेगा।

मध्यांतर के बाद भारतीय दल का जो रूप देखने में आया, वह अद्‌भुत था। एक के बाद एक—हर मिनिट में—भारतीय खिलाड़ी पाकिस्तानी गोल पर आक्रमण करते रहे और उन्होंने गोल बराबर ही नहीं कर लिया; बल्कि दूसरा गोल भी बना लिया.....और उसके साथ ही पाकिस्तानी आशाएं ध्वस्त हो गयीं।

विशेषज्ञों की राय में यह मैच पूरी प्रतियोगिता का सर्वोत्तम मैच था। खेल की गति इतनी तेज थी कि बस देखते ही बनता था। भारतीय टीम इस दिन विश्वविजेता की तरह खेल रही थी। गेंद पर उनके नियंत्रण का इससे बेहतर और क्या सबूत हो सकता है कि पाकिस्तान को कुल मिलाकर एक ही पेनाल्टी कार्नर मिला, जबकि भारत को छह पेनाल्टी कार्नर मिले। पूरे मैच के दौरान ऐसे मौके भी आये, जब लगातार दस-दस मिनिट तक गेंद पाकिस्तानी क्षेत्र में ही रही।

भारत के खेल की प्रशंसा भूतपूर्व पाकिस्तानी ओलिंपिक खिलाड़ी तारिक न्याजी

तथा पाकिस्तानी टीम के व्यवस्थापक अनवर अहमद खां तक ने की और कहा कि भारतीय दल का प्रदर्शन निश्चित रूप से विश्व-विजेताओं के अनुरूप था। इतना साफ-सुथरा और खेल की भावना से भरपूर मैच मलयेशिया के दर्शकों ने शायद कभी देखा हो।

भारतीय खिलाड़ियों ने जहां कलात्मक और गतिमान खेल दिखाया, वहीं उनके शारीरिक पैंतरे भी देखने लायक थे; इनसाइड फारवर्ड, फुल बैक, हाफ और दोनों छोरों के फ़ारवर्ड खिलाड़ियों के बीच की सूझ-बूझ आश्चर्यजनक थी। इसी सूझ-बूझ और तालमेल के कारण वे निश्चित लंबे पास दे सके, गेंद को बराबर अपने कब्जे में बनाये रख सके और प्रतिद्वंद्वी दल की कमजोरियों का भी फायदा उठा सके।

आर. सी. जेंटल के कथनानुसार, इस दिन भारतीय खिलाड़ियों ने पाकिस्तानी खिलाड़ियों को ऐसा बना दिया कि वे नौसिखिये और बेकार दिखाई देने लगे। पृथीपाल सिंह के शब्दों में हमारी यह विजय 'दलगत भावना' की विजय थी।

इस उत्कृष्ट प्रदर्शन के बावजूद यह तथ्य नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि हमारे इस विश्वविजेता दल में कुछ कमजोरियां भी हैं। हमारी सबसे बड़ी कमजोरी है गोलरक्षक। हमारे दोनों ही गोलरक्षक—फर्नांडिस और अशोक दीवान अंतरराष्ट्रीय स्तर के गोलरक्षक सिद्ध नहीं हुए। मलयेशिया ने फर्नांडिस की भूल का लाभ उठाकर हमारे विरुद्ध गोल बनाया। फाइनल में पाकिस्तान भी स्कोर बराबर कर लेता, यदि अशोक दीवान को पार कर गयी गेंद ठीक गोल रेखा पर असलम शेर ने न रोक ली होती। अंतरराष्ट्रीय स्तर के दो गोलरक्षक अगले ओलिंपिक खेलों के लिए हमारी टीम की सबसे बड़ी जरूरत हैं।

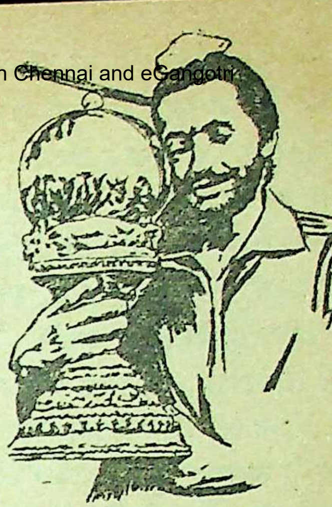

अजितपाल सिंह विश्व कप के साथ

हमारी दूसरी बड़ी कमजोरी रही पेनाल्टी कार्नरों को गोल में परिणत न कर पाने की। हमें पूरी प्रतियोगिता में लगभग ४० पेनाल्टी कार्नर मिले, जब कि हम मुश्किल से चार या पांच पर गोल बना सके। सुरजीत सिंह पेनाल्टी कार्नर से गोल बनाने में विशेषज्ञ माने जाते हैं, पर उनके अधिकांश शाट या तो 'अंडरकट' होकर ऊपर से निकल जाते हैं या वे गेंद सीधे गोलरक्षक के पैड पर मार देते हैं। उन्हें और अधिक अभ्यास कराया जाना जरूरी है।

इसी संबंध में एक बात और समझ में नहीं आयी कि असलम शेर को प्रारंभिक

मैचों में क्यों नहीं खेलाया गया—विशेषकर इस संदर्भ में कि असलम ने अभी कुछ माह पूर्व ही तेहरान के एशियाई खेलों में अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन से फाइनल में पाकिस्तान के विरुद्ध कम से कम चार निश्चित गोल बचाये थे। किंडो बहुत अच्छे फुलबैक हैं, पर उनके मुकाबले असलम पेनाल्टी कार्नर से गोल बनाने की भी अच्छी क्षमता के मालिक हैं।

चर्चा है कि भारतीय हॉकी की अंदरूनी राजनीति से असलम दुःखी होकर अवकाश ग्रहण करने की सोच रहे हैं। क्या इस राजनीति के चक्कर में हम अपने सर्वश्रेष्ठ फुलबैक की सेवाओं से वंचित हो जायेंगे? मैं तो यह कहूंगा कि अभी भी समय है और समय रहते संभल जाने में ही बुद्धिमानी है।

हमारी हाफ पंक्ति विश्व में सर्वश्रेष्ठ है और तीनों ही हाफ खिलाड़ियों ने पूरी प्रतियोगिता में बहुत अच्छा प्रदर्शन किया। फारवर्ड पंक्ति में दोनों आउट खिलाड़ी बहुत अच्छा खेले। इन-फारवर्डों में अशोककुमार प्रारंभ में कुछ गड़बड़ाने के बाद अपने फार्म में आ गये। नये सेंटर फारवर्ड पवार में गति तो है, पर उनका गेंद-नियंत्रण कमजोर है और सेंटर फारवर्ड के अनुरूप वे तेज शाट भी नहीं लगा पाते। हमारी फारवर्ड पंक्ति की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि उसमें गोलक्षेत्र में गेंद मिलने पर तुरंत तगड़ा शाट लगाने वाला कोई खिलाड़ी नहीं है। गोविंदा फारवर्ड पंक्ति की सबसे कमजोर कड़ी सिद्ध हुए। वे अशोक से भी अधिक समय तक गेंद अपने पास रखते थे और उनका गेंद-नियंत्रण भी अच्छा नहीं रहा।

लगातार बारिश ने इस प्रतियोगिता में काफी बाधा उपस्थित की। यूरोपीय टीमें इस तरह के मौसम की अभ्यस्त थीं। फिर भी इस बार एशियाई टीमें उन पर इस कदर हावी रहीं कि उनकी दाल न गल सकी। द्वितीय विश्व कप विजेता हालैंड का प्रदर्शन तो हैरानी के हद तक निराशाजनक रहा। उसे नौवां स्थान प्राप्त हुआ।

फिर भी इतना जरूर कहा जा सकता है कि अब विश्व की श्रेष्ठ टीमों के स्तर के बीच का फासला बहुत कम रह गया है। इस प्रतियोगिता की सबसे बड़ी खूबी यही रही कि कभी भी निश्चित रूप से यह कह पाना संभव नहीं था कि कौन-सी टीम किस टीम को पराजित करेगी। लेकिन यह तथ्य भी स्पष्ट रूप से उभरकर आया कि हॉकी खेलने का पारंपरिक भारतीय तरीका ही आधुनिक यूरोपीय तरीके से बेहतर है। यूरोपीय टीमें हिट करने और गेंद लेकर भागने की नीति में माहिर हैं, फिर भी भारतीय और पाकिस्तानी टीमों का छोटे-छोटे पास देते हुए गोल की ओर बढ़ना; शरीर की मार के बजाय शरीर की लोच का उपयोग करना निश्चित रूप से अभी भी ज्यादा कारगर और उपयोगी हैं—इसमें कोई संदेह नहीं है। अंत में यह कहना भी गलत नहीं होगा कि हॉकी में आक्रामक नीति ही सबसे ज्यादा फलदायी सिद्ध हो सकती है।

—जे ५।१, जलमंगल दीप, बांगड़ नगर,
गोरेगांव (पश्चिम), बंबई-६२

★

युवा आक्रोश और शिक्षा-सुधार

डा. रामचरण मेहरोत्रा

आज हमारा युवा-वर्ग असंतुष्ट है और क्रुद्ध भी । उसका असंतोष और आक्रोश अकारण नहीं है। इस परिस्थिति के मूल मुद्दों को समझने के लिए हमें अपने आस-पास की दुनिया को तो देखना ही होगा, साथ ही अपने घरेलू माहौल पर भी नजर डालनी होगी ।

युवा-आक्रोश के वर्तमान सिलसिले की शुरूआत बर्कले विश्वविद्यालय (कैलिफोर्निया, सं. रा. अमरीका) से मानी जा सकती है। लगभग दस-बारह वर्ष पूर्व सबसे पहले वहां छात्र-आंदोलन का एक झटका आया । फिर वहां से एक यात्रा शुरू हुई, जो लंदन स्कूल ऑफ़ इकानामिक्स, पेरिस और जर्मनी होती हुई दुनिया के अन्य विकसित देशों तक जा पहुंची। वहां छात्रों की मांग थी कि शिक्षा को आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप उपादेय बनाया जाये, शिक्षा-स्तर को ऊंचा उठाया जाये, उसके स्वरूप में ऐसा परिवर्तन किया जाये कि जीवन की संपूर्णता से उसका निश्चित एवं सुस्पष्ट संबंध हो ।

पश्चिम के समुन्नत देशों का शिक्षा-स्तर हमारे यहां के मुकाबले कहीं अधिक आधुनिक, ऊंचा और व्यावहारिक है। वहां के विद्यार्थियों के सामने जीविकोपार्जन की हमारे यहां जैसी विकट चिंताएं नहीं हैं । वहां की प्रयोगशालाएं अधुनातन उपस्करों से सुसज्जित हैं। शिक्षा-संबंधी लगभग सभी सुविधाएं वहां सर्वसुलभ हैं। फिर भी वहां आंदोलन की आवश्यकता क्यों महसूस हुई ?

आप जानते हैं कि आज की दुनिया में मानव की ज्ञानराशि विस्फोटक गति से बढ़ रही है। कुछ विशिष्ट विषयों में तो ज्ञान का द्विगुणन-काल (डबलिंग पीरियड) दस साल से भी कम रह गया है । विज्ञान और टेक्नोलाजी की इस धुआंधार रफ्तार ने जीवन-दर्शन और जीवन-मूल्यों को भी प्रभावित किया है। नतीजा यह हुआ है कि मानव-समाज की दो पीढ़ियों के बीच कालगत और मूल्यगत अंतर विशाल और विकट होते जा रहे हैं। यही वह 'पीढ़ियों की दरार,

प्रस्तोता : कृष्ण कुमार गुप्त

डा. रामचरण मेहरोत्रा

(जनरेशन गैप) है, जो आज की अनेक सामाजिक समस्याओं की जड़ है।

पश्चिम के छात्र-आंदोलन भी इसी स्थिति की देन थे। उन आंदोलनों का कुछ असर भी वहां हुआ। शिक्षा-जगत में कुछ हलचल हुई। शिक्षा-व्यवस्था और पाठ्यक्रम में कुछ परिवर्तन किये गये। उग्र छात्र कुछ गरम हुए। स्थिति बिगड़ने से बच गयी। वहां से यह हवा भारत की ओर चली।

पारस्परिक आदान-प्रदान विश्व के मानव-समाज में एक बहुत सहज प्रक्रिया है। आज के युग का तो वह विशेष लक्षण ही बन गया है। विभिन्न देश आपस में एक-दूसरे से प्रभावित होते हैं, एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। परंतु प्रभावित होना एक बात है, और हवा में बह जाना एकदम दूसरी। बह जाने में पांव जमीन से उखड़ जाते हैं। उस स्थिति में किसी बाह्य प्रभाव को रचा-पचाकर उपयोगी ढंग से अपना पाना संभव नहीं होता। गांधीजी ने स्वस् वैचारिक आदान-प्रदान का सूत्र हमें एक सूक्ति में दिया था–'मैं अपनी सब खिड़कियां खुली रखूंगा; मगर हवा में बह नहीं जाऊंगा।'

लेकिन अफसोस है, हम भारतीय कुछ जल्दी ही हवा में बह जाते हैं। इससे फायदे के बजाय नुक्सान ही हमारे पल्ले पड़ता है। कारण भी बहुत स्पष्ट है। राजनैतिक दृष्टि से स्वतंत्र हो जाने पर भी अधिकांश भारतीय वैचारिक स्तर पर आज भी परतंत्र और परमुखापेक्षी हैं, जो कि दुःख और दुर्भाग्य की बात है। तन आजाद और मन गुलाम! बड़ी खतरनाक है यह हालत। भारत का भला इसी में है कि वह पारस्परिकता एवं मौलिकता के बीच जल्दी से जल्दी संतुलन कायम करे।

यों छात्र-आंदोलन भारत के लिए निपट नयी चीज नहीं है। स्वातंत्र्य-प्राप्ति से पूर्व हमारे विद्यार्थियों ने ध्येयनिष्ठा लेकर अनुशासनपूर्वक देश के स्वातंत्र्य-संग्राम में बड़ा शानदार पार्ट अदा किया था। इतिहास इसका साक्षी है कि उनके प्रयत्न अकारथ नहीं गये। कारण, तब वे दिशाहीनता के शिकार नहीं थे।

आज के भारतीय छात्र-आंदोलन पश्चिम की नकल-भर हैं–यह कहना भी शायद ठीक नहीं होगा। वस्तुतः हमारे पाठ्यक्रम समकालीन पश्चिमी विश्वविद्यालयों से अधिक नहीं तो कई दशाब्दियां पीछे हैं। हमारी आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं से आज की

शिक्षा का कोई तालमेल भी नहीं रह जाता है। विद्यार्थी अच्छी तरह जानते हैं कि जो कुछ उन्हें पढ़ाया जा रहा है, वह उन्हें जीविकोपार्जन में सहायता देगा ही, इसकी कोई गारंटी नहीं है। ऐसी स्थिति में वे इस शिक्षा के प्रति आश्वस्त रहें, ऐसी आशा करना व्यर्थ है। जीवन के यथार्थ से कटी शिक्षा ज्यादा दिनों तक अपना महत्त्व बनाये रख भी नहीं सकती।

कहने को, स्वातंत्र्य आने के बाद हमारी शिक्षा-प्रणाली में कुछ सुधार हुए भी हैं। परंतु अधिकांशत: ये सुधार सतही हैं और पश्चिमी प्रभाव को लिये हुए हैं। इसलिए बावजूद इन सुधारों के शिक्षा का आंतरिक एवं सूक्ष्म स्वरूप अपरिवर्तित ही रहा है। प्रवृत्ति यह रही है कि अधिक से अधिक विद्यार्थियों को विश्वविद्यालयों में दाखिला मिल सके, अधिक से अधिक विद्यार्थी परीक्षाओं में पास हो सकें, भले इसके लिए शिक्षा के स्तर को नीचा ही क्यों न करना पड़े। कोई भी विकासेच्छुक देश अपने पिछड़ेपन को इन तरीकों से दूर नहीं कर सकता। उसके लिए तो विद्यार्थियों और शिक्षकों को कठोर परिश्रम करना पड़ता है।

परंतु इस स्थिति के लिए विद्यार्थियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। उनमें परिश्रम और लगन की भावना जगाने के लिए जो ठोस आधार चाहिये, वह उन्हें नहीं मिल सका है। मैकाले की पद्धति से पढ़े पुराने शिक्षक नये युग की आवश्यकताओं को उसी पुराने चश्मे से देखने को मजबूर हैं। उनकी ईमानदारी पर शक की कोई गुंजाइश नहीं; यह तो उनकी लाचारी है।

> **विद्यार्थी और अध्यापक दोनों के रूप में अपने अनुभव से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि विद्यार्थी के रूप में हम जितना सीखते हैं, उससे कहीं अधिक अध्यापक के रूप में सीखते हैं। जो विषय हम पढ़ा रहे हैं वह हमें पूरी तरह स्पष्ट नहीं है—इसका अंदाज हमें तब तक नहीं होता, जब तक कि हम कक्षा के सामने उस विषय का प्रतिपादन आरंभ नहीं करते। सो सीखता सिर्फ विद्यार्थी ही नहीं है, बहुधा उसी हद तक अध्यापक भी अनेक बातें सीखता है, जिन्हें जाना हुआ मान लिया था।**
>
> —स्व. बी. वेंकटेशाचार
>
> **(भूतपूर्व भौतिकी प्राध्यापक,**
> **मैसूर विश्वविद्यालय)**

दूसरा कटु सत्य यह है कि देश की अपरिपक्व राजनीति भी मौजूदा हालात के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है। किसी भी जनतंत्र में शासन-व्यवस्था, अर्थ-व्यवस्था एवं समाज-व्यवस्था को लेकर विभिन्न विचार-धाराओं का साथ-साथ मौजूद रहना उसके स्वास्थ्य का लक्षण होता है। परंतु शिक्षा के राष्ट्रीय स्वरूप के संबंध में गहरा मतभेद हो, तो यह अस्वाभाविक ही नहीं हानिकारक भी है। हमारे देश की राजनैतिक पार्टियां शिक्षा के राष्ट्रीय स्वरूप

के विषय में किसी सुनिश्चित और सर्वसंमत विचार पर नहीं पहुंच पायी है। उलटे, वे तो समय-समय पर शिक्षा-संस्थाओं को अपनी ताकत आजमाइश का अखाड़ा बनाती रही हैं। शिक्षा और उसके स्तर पर इसका क्या प्रभाव पड़ सकता है, यह आप बखूबी समझ सकते हैं।

निस्संदेह विद्यार्थी-आंदोलनों ने देश के शिक्षाशास्त्रियों का ध्यान इस ओर खींचा है कि मौजूदा शिक्षातंत्र का सही-सही मूल्यांकन किया जाये। साथ ही कुछ अनुत्तरदायित्वपूर्ण काम भी कुछ आंदोलनकारियों की ओर से हुए हैं। प्रश्नपत्रों में प्रश्नों की संख्या कम करने की मांग, परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने के लिए अनुचित तरीके अपनाने का प्रयत्न आदि ऐसी बातें हैं, जिनसे शिक्षा-संस्थाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा को धक्का लगा है।

इस सारे घटनाक्रम का दु:खद पहलू यह है कि इसका नुक्सान स्वयं विद्यार्थियों को उठाना पड़ रहा है। किशोरावस्था और यवावस्था मानव-जीवन का सबसे कीमती समय है। यह समय यदि जाया हो जाये, तो पूरे जीवन में उसका नुक्सान भुगतना पड़ता है। युवा-शक्ति की यह हानि समूचे समाज और राष्ट्र की हानि है।

ध्येयनिष्ठा, सही दृष्टिकोण और सहानुभूति के साथ यदि युवकों की समस्याओं पर विचार किया जा सके, तो कोई कारण नहीं कि हम वांछित तथा सही मार्ग न ढूं पायें। इसके लिए पहली शर्त यह है कि हम यह उत्तरदायित्व नयी पीढ़ी पर छोड़ें। उन्हें शक की निगाह से देखने की प्रवृत्ति शिक्षकों को छोड़नी पड़ेगी और समाज के अन्य वर्गों को उनका विश्वास भी प्राप्त करना होगा। पारस्परिक अविश्वास के रहते कोई भी व्यावहारिक सुधार हो सकेंगे, इसमें मुझे गहरा शक है।

★

डा. तेस्सितोरि की विनोदप्रियता अविस्मरणीय है। जब कभी वे विनोद की मनोभूमि में होते थे, तब हास्य का सागर लहराने लगता था। श्री जुगल सिंह खीची ने एक संस्मरण प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि एक दिन डा. तेस्सितोरि कहने लगे कि संस्कृत सीखने में लिंगभेद के मारे मैं तंग आ गया था। हिंदी या राजस्थानी में बोलते या लिखते समय लिंगभेद का भय-भूत अब भी मेरे पीछे पड़ा रहता है। प्रारंभ में मेरी धारणा थी कि अकारांत नाम पुल्लिग, आकारांत और ईकारांत स्त्रीलिंग होते हैं, अतएव मैं 'मेरा मूंछ और उसका मरोड़' कहा करता था और मेरे लिए मथुरा की तरह आगरा भी अच्छी थी। एक बार मेरे मुख से 'अमुक पुरुष की बहनोई आने वाली है' निकल गया था। मेरा नाम ईकारांत होने के कारण कलकत्ते का एक पोस्टमैन मेरे अर्दली से पूछ उठा था कि तेस्सितोरि कहां की रहने वाली है। अपनी मूंछ मरोड़ते हुए और हंसते हुए तेस्सितोरि ने कहा कि तब मुझे महाभारत के शिखंडी का नाम स्मरण हो आया।

—राधिकाप्रसाद त्रिपाठी

★

पुरबिया ठुमरी की यादगार

रसूलनबाई

गजेंद्र नारायण सिंह

बेगम अख्तर के आकस्मिक निधन से पहुंचे सदमे से संगीत-प्रेमी संसार अभी उबर भी न पाया था कि उसे पूरब अंग की ठुमरी की रससिद्ध गायिका रसूलनबाई के देहांत का दुःखद समाचार सुनना पड़ा। भाव-प्रवणता, विविधता तथा ठुमरी शैली की विशिष्ट तानों और मुरकियों की कुशलता रसूलनबाई के संगीत की विशेषता थी।

हिंदुस्तानी संगीत की महान परंपरा को संवारने, सजाने तथा संपन्न बनाने में गाने वाली तवायफों और बाइयों का भी अनूठा योगदान रहा है। इनमें गौहर, मलका, जानकी, विद्याधरी, हुस्ना, बड़ी मोती आदि अनेक उच्चकोटि की गायिकाएं हुईं; जिन्होंने अपूर्व प्रसिद्धि अर्जित की। एक जमाना था, जब महफिलों एवं जलसों में इनकी धूम मची रहती थी। संगीत की दुनिया में इनकी शान व इनकी प्रतिष्ठा किसी भी उस्ताद से कम नहीं थी। इन्हीं गायिकाओं की विशिष्ट परंपरा की उपज थीं रसूलनबाई, जो ठुमरी और टप्पा गाने में अपनी मिसाल आप थीं। उनकी नानी अपने जमाने की प्रसिद्ध गायिकाओं में से थीं। शायद यह गुण उन्हें अपनी नानी से ही मिला।

ठुमरी हमारे शास्त्रीय संगीत की एक भाववाही और सर्वोपभोग्य शैली है, जिसमें कोमल-कल्पना तथा स्वरों और शब्दों के सहारे संयोग या विप्रलंभ शृंगार की एक जीती-जागती तस्वीर उकेरी जाती है। ठुमरी के दो अंग हैं—पूरब अंग और पंजाबी अंग। इनमें भी अधिक लोकप्रियता और प्रचार पाया है पूरब अंग की ठुमरी ने ही, जो कि लखनऊ के नवाब सादिक अली खां की ईजाद मानी जाती है। पर लखनऊ में

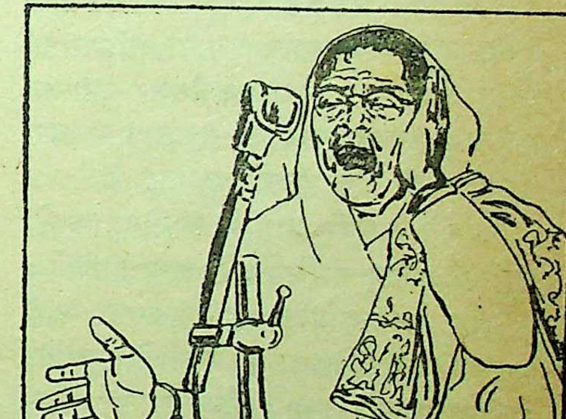

जनमने पर भी इसे पनपने, संवरने और चमकने का अधिक सुयोग मिला बनारस में, जिससे 'बनारसी ठुमरी' पूरब अंग की ठुमरी की खास चीज बन गयी। इस बनारसी ठुमरी में लखनवी ठुमरी की शहरी सजावट और कला की बारीकियां भी हैं, और लोक-संगीत का सहज सौरभ एवं ग्रामीण अल्हड़पन भी है। रसूलनबाई इसी बनारसी ठुमरी का एक कीर्तिस्तंभ थीं।

रसूलनबाई उन गुजरे दिनों की यादगार थीं, जब महफिलों और जलसों में आने वाले श्रोता रसज्ञ तथा संगीत की बारीकियों के जानकार होते थे और महज फैशन या औपचारिकतावश तालियां नहीं पीटते थे। घड़ी की सूइयां तक कार्यक्रम का संचालन नहीं करती थीं। कलाकार और श्रोता दोनों अपनी पूरी रात संगीत को समर्पित कर देने की तैयारी के साथ ही महफिल में आते थे। उन दिनों की संगीत की बैठकों की याद आने पर आज का गाना-बजाना यांत्रिक-सा लगता है। माइक के सामने बैठकर सुना जा सकता है, गाया नहीं जा सकता। अकबर इलाहाबादी ठीक ही तो फरमाते हैं :

'भरते हैं मेरी आह वे फ़ोनोगराफ़ में,
कहते हैं, फीस लीजिये और आह कीजिये।

चैन, आराम और भाव-निमग्नता—ये हैं पूरब की ठुमरी के प्रभाव। बोलों के बहलावे, भावात्मक स्वर-लगाव और सुकुमार अभिव्यंजना के सहारे ठुमरी अपना इंद्रजाल फैलाती है। रसूलनबाई के कंठ से पूरब की ठुमरी की ये तमाम खूबियां इस तरह पल्लवित-पुष्पित होती थीं, जैसे यह गान-शैली विशेषत: उन्हीं के लिए सिरजी गयी हो।

रसूलनबाई की आवाज मर्दानी जरूर कही जाती है, लेकिन उसमें भी गजब का सुरीलापन था। उनके गाये टप्पों को, खासकर तिलंग में 'मानराजी रखनावें', सिंधु काफी में 'ओ मियां जाने वाले' भूलना नामुमकिन है। ठुमरी और दादरा पर तो उनका सर्वाधिकार था। हालांकि वे पहले खयाल-गायिका थीं, लेकिन किन्हीं कारणों से उन्होंने मंच पर खयाल गाना छोड़ दिया।

ठुमरी प्रकृति से हल्की-फुल्की और चंचल मानी गयी है। लेकिन रसूलनबाई की ठुमरियों से शांति का अनुभव होता था। शांत भाव में खींच के बोलों की ठुमरी को वे एक व्यापकता दे गयीं। शृंगार-प्रधान ठुमरी शैली में भी वे सात्विकता घोल देती थीं। उनकी ठुमरियां अत्यंत लालित्यपूर्ण, हृदयग्राही, रसभीनी और अलंकृत हुआ करती थीं, साथ ही रागदारी की अनूठी सुगंध बिखेरने वाली भी। स्वरों के अनंत: असीम रूप और भावनाओं के कल्पना-युक्त प्रयोग द्वारा वे अपनी 'छोटी चीजों' की अदायगी से ऐसी मोहक फिजां तैयार कर देतीं कि श्रोता घंटों स्वरों के उस सरोवर में डूबते-उतराते रहते।

और टप्पा-गायन तो जैसे रसूलनबाई की निजी जागीर थी। बाज लोग टप्पा को मात्र अलंकार और तकनीकी विशेषताओं के प्रदर्शन का साधन मानते हैं। लेकिन जब रसूलन टप्पा गातीं, तो उसका

प्रभाव अलग ही होता था। सुनने वालों को कहीं भी ऐसा न लगता कि यह महज चमत्कारी गायन-विधा है, जिसका लक्ष्य तानों की फुलझड़ियां और मुरकियों का कमाल प्रदर्शित करना है। उनके टप्पों में भी संगीत की वह आत्मा हुआ करती थी, जो श्रोताओं के हृदय को स्पर्श करती थी। और इस टप्पे के अंदाज को जब वे अपनी ठुमरियों में पेश करतीं, तो गजब का समां बंध जाता था। अदाकारी का कौशल और स्वर का रुझान सुनने वालों को बरबस खींच लेता था।

कोई पंद्रह वर्ष पहले की बात है। एक सुहानी सुबह जब मेरी नींद खुली, तो दूर किसी पंडाल में लगे लाउडस्पीकर से आती हुई भैरवी की स्वर-लहरी कानों में भर गयी–**'फुल गेंदवा न मारो, लगत करेजवा में चोट'**। भैरवी की यह ठुमरी ऐसी सजी और मर्मस्पर्शी थी कि मैं अपने को रोक न सका और नित्य कर्म की भी चिंता न करके पंडाल की ओर खिंचा चला गया। रसूलनबाई रात-भर के जलसे का समापन कर रही थीं। उन्हें सुनने का यह मेरा पहला मौका था। पर अपने जादुई स्वरों के फूलगेंद से कलेजे में ऐसी चोट लगा गयीं कि अब तक घायल और सुखी हूं।

सूरज क्षितिज से काफी ऊंचा उठ आया था; लेकिन लोग थे कि छोड़ने का नाम ही नहीं लेते थे। तभी श्रोताओं में से किसी बेसुरे ने 'निर्गुण' की फरमाइश कर दी। बनारस की बाईजी–खास ठुमरी गाने वाली–और उस पर आग्रह निर्गुण सुनाने को। बड़ी बेतुकी फरमाइश थी। मगर हाजिर-जवाब गायिका ने यह कहकर श्रोता को चुप कर दिया कि 'तू कहत हौ तो विरहा भी सुना देइब।' एक अन्य श्रोता उनकी बड़ी ही प्रसिद्ध ठुमरी 'आंगन में मची शोर' की फरमाइश कर बैठे। लेकिन वह ठुमरी शाम के रागों में बंधी हुई है, इस कारण गायिका ने उसे प्रस्तुत करने में लाचारी जाहिर की। एक ठुमरी-गायिका द्वारा शास्त्रीय परंपरा का ऐसा निर्वाह आज के संगीतकारों के लिए अनुकरणीय है। आज के बड़े खयालिये तथा गायक-वादक तक राग-संगीत के नियम-कायदों के पालन में विशेष आस्था नहीं रखते और अन्वेषण एवं नवीनता की आड़ में अक्सर रागों के साथ खिलवाड़ करने से बाज नहीं आते।

मियां शोरी खानदान के उस्ताद शम्मू खां से तालीम पाकर रसूलनबाई छोटी वय में ही चर्चा का विषय बन गयीं। उनकी शिक्षा आशिक खां और नज्जू खां सारंगिये के चरणों में भी रहकर हुई थी। उन दिनों गवैयों की शिक्षा-दीक्षा में आम तौर से सारंगियों का बहुत बड़ा हाथ होता था। खासकर गाने वाली तवायफों को तो संगीत की शिक्षा सारंगी-नवाजों से ही मिलती थी और ये उस्ताद उनके गायन का अभिन्न अंग हुआ करते थे। हिंदुस्तानी संगीत के कई चोटी के कलाकार पहले सारंगी-वादक रहे थे, जिनमें उस्ताद बड़े गलाम अली खां, उस्ताद अब्दुल करीम खां, उस्ताद अमीर खां आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

रसूलनबाई के ७२ वर्षीय जीवन के अंतिम कुछ वर्ष अत्यंत कष्ट में गुजरे। जीविकोपार्जन के लिए उन्हें बनारस छोड़ अहमदाबाद जाना पड़ा, जहां संगीत के एक कालेज में वे ठुमरी-शिक्षिका नियुक्त हुईं। तब अहमदाबाद को ही उन्होंने अपना स्थायी निवास बना लिया। लेकिन दुर्भाग्य ने पीछा न छोड़ा। गांधी जन्म-शताब्दी के वर्ष वहां भड़के हिंदू-मुस्लिम दंगे की आग में उनका सब कुछ स्वाहा हो गया। बेघरबार होकर वे दिल्ली चली आयीं, जहां उनके शागिर्दों एवं प्रशंसकों ने उनकी भरपूर मदद की। लेकिन कुछ अर्से बाद पक्षाघात हो जाने से वे गाने के काबिल नहीं रहीं और १५ दिसंबर १९७४ की मनहूस सुबह में खुदा को प्यारी हो गयीं। उसके जीवन की अंतिम घड़ी इलाहाबाद के गुलाबवाड़ी में बीती।

ठुमरी की वह बानगी, टप्पा की वह कुशलता, चैती की कसक-भरी पुकार, वे रस-भरी कजरियां और होरी की अल्हादित करने वाली वह सुरमई स्वर-लहरी क्या फिर कभी सुनने को मिलेगी? अपनी कशिश-भरी आवाज से दुखते दिलों को राहत पहुंचाने वाली, विरही जनों को अपनी स्वर-सुधा से तृप्त करने वाली महफिल की वह दमकती शमां रसूलनबाई, बुझ गयी।

सो गये वो साज़े हंसी छेड़कर,
अब तो बस आवाज़ ही आवाज़ है।

और अब आवाज भी कैसी कि गायिका की अतुलनीय स्वर-साधना और संवेदनशीलता की सार्थकता में अपने सोज़ की पहचान दे गयी है। सुर की मार और भावनाओं की अभिव्यक्ति का नाम ही तो रसूलनबाई है। —११/बी, श्रीकृष्णपुरी, पटना-१

★

* मानव-मन बहुत निर्बल है; सत्य उसे रास नहीं आता। धर्म, नैतिकता, कवियों और कलाकारों को झूठ के आवरण में सत्य को उसके सामने पेश करना पड़ता है। प्रत्येक जाति के लोगों को ये झूठ रास आ चुके होते हैं। इन्हीं झूठों की बदौलत विभिन्न देश एक दूसरे को समझने में कठिनाई महसूस करते हैं। —रोमां रोलां

* साहसपूर्ण झूठ कायरता है। संसार में केवल एक ही वीरता है—संसार को उसके यथार्थ रूप में देखना और उससे प्यार करना। —रोमां रोलां

* ऐसा कोई झूठ नहीं, जिस पर बहुत-से लोग विश्वास न करते हों; ऐसा कोई मनुष्य नहीं, जो बहुत-से झूठों पर विश्वास न करता हो; और ऐसा एक भी मनुष्य नहीं जो केवल झूठों पर विश्वास करता हो। —जान स्ट्रिडबर्ग

* झूठ की ८६८ अलग-अलग किस्में हैं, लेकिन उनमें से सिर्फ एक किस्म के झूठ पर पूरी तरह पाबंदी लगायी गयी है—अपने पड़ोसी के खिलाफ तुम झूठी गवाही नहीं दोगे। —मार्क ट्वेन

* सबसे निर्दयतापूर्ण झूठ चुप रहकर बोले जाते हैं। —राबर्ट लुई स्टीवेन्सन

★

रसूलनबाई को...

रागिनी इस्मत-दरीदा[1], राग ख़ंजर-दर-दर-गुलू[2]
जितने सुर थे ताल में, दामन पकड़कर सो गये।
कौन इस आलम[3] में सुनता नग्म-ए ख़ूने रवां[4]
शाम के क़दमों पे कटकर सुब्ह का बाजू गिरा।
दोपहर का जिस्म झुलसा
वक़्त सहन-ओ-बाम[5] पर नंगा फिरा
कूच-ओ बाज़ार[6] से बू-ए-रिफाक़त[7] लौटकर आयी नहीं।
वो विलंबित हो कि ध्रुपद, सबसे मकतल[8] की फ़ुगां[9]।
बेनवा[10] की रूह आवारा हवा से पूछने चल पड़ी।
किस समय का राग गाऊं?
किन धुनों में ग़म कहूं?
किस कवि का पांव पकड़ूं?
किस कथा में जा छिपूं?
कौन आहों की लपक से, हड्डियों के सोज़[11] से
देखना है अब जलाता है दिये
क़ातिलों का हाथ पकड़े साज़ बैठे हैं अभी

– हसन नईम –

१. जिसका सतीत्व लूट लिया गया हो, २. जिसके गले पर छुरी रखी हो, ३. दशा, दुनिया, ४. बहते हुए रक्त का गीत, ५. आंगन और छत, ६. गलियां और बाजार, ७. मैत्री की गंध, ८. वधस्थल, ९. आर्तनाद, १०. बेआवाज, ११. जलन।

प्रस्तुतकर्ता : मेवाराम गुप्त 'हिन्दोस्तां हमारा' से

[पृष्ठ ४३ का शेष]

अपनी खोजों में मुझे नहीं मिली थीं।

लिहाजा मैंने अतींद्रिय प्रत्यक्ष, मनोगतिशास्त्र, माध्यमत्व तथा अन्य चीजों को देखने-परखने का प्रयत्न आरंभ किया। मुझे हैरत-सी हुई कि इन घटनाओं की सत्यता के बारे में मेरा संशय गायब होने लगा। प्रयोगसिद्ध तथ्यों के आधार पर ही मूल्यांकन करने का प्रशिक्षण पाया हुआ आदमी होने के कारण मैं अतींद्रिय शोध से प्राप्त साक्ष्यों से मुंह नहीं मोड़ सकता था। खुले दिमाग वाले हर आदमी को अब तक यह स्पष्ट हो चुका होगा कि मनुष्यों में ऐसी कुछ शक्तियां होती हैं, जो उसकी ज्ञात इंद्रियों से संबद्ध तो होती हैं मगर उन तक सीमित नहीं होतीं। आधुनिक विज्ञान का पेश किया हुआ मनुष्य का यह नक्शा (माडल) कि वह जैविक अणुओं का जटिल संघटन मात्र है, चेतना को समझने-समझाने के लिए अपर्याप्त है। मनुष्य निरे मांसपिंड से बहुत कुछ अधिक हैं। उनका ऐसा कोई आयाम है जो उन्हें व्यक्तिसत्ता से परे परमव्यक्ति की कोटि में पहुंचा देता है।

यह विचार हमें वापस धर्म और दर्शन पर ले जाता है। यह धार्मिक आस्थाओं के लिए एक ठोस कारण प्रस्तुत करता है—इस बात की व्याख्या का ठोस आधार कि समूचे इतिहास में मनुष्य यह दावा क्यों करते आये हैं कि भौतिक विश्व का कोई आध्यात्मिक आधार है। परंतु इस आधार को 'देखने' के लिए चेतना का रूपांतरण आवश्यक है।

इस परिवर्तन को लाने में सहायक होने के लिए हमें चेतना की समस्त अभिव्यक्तियों का अध्ययन करना आवश्यक है। पश्चिमी विज्ञान का मूल्यविमुक्त तार्किक-वस्तुनिष्ठ-प्रयोगाश्रयी मार्ग जो कि भौतिकवाद पर आश्रित है, सभ्यता पर हावी हो रहे और निरंतर गहराते हुए पृथ्वीव्यापी संकट से अकेले जूझ पाने में समर्थ नहीं है। अंतर्ज्ञानात्मक - आत्मनिष्ठ - अनुभवाश्रयी मार्ग, जो कि धर्म एवं पूर्वी परंपराओं का विशेष लक्षण है, मन और चेतना के अध्ययन में बहुत कुछ योगदान कर सकता है। 'नोएटिक्स' इन दोनों मार्गों के सर्वोत्तम तत्त्वों का उपयोग करना तथा एक सर्वस्वीकार्य मूल्यक्रम खोजना चाहता है, समस्या के सुलझाव तक पहुंचने में तथा बाह्य अवकाश में मैंने जो जाना-चीन्हा उसे जानने-चीन्हने, दूसरों की मदद करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है।

रहस्यात्मक (मिस्टिक) एवं धार्मिक अनुभवों की भांति अतींद्रिय (साइकिक) अनुभव भी मनुष्य को अधिक प्रबुद्ध बनाने में सहायक हो सकते हैं। बेशक अतींद्रिय विकास कोई सर्वौषध नहीं है। और न वह आध्यात्मिक विकास की गारंटी देता है। मगर वह वस्तुनिष्ठ चिंतन में सहायक है, क्योंकि वह उस अनुपलब्ध अनुभवात्मक तत्त्व की कुंजी बन सकता है, जिससे हम अपने प्रबोध का विकास कर सकते हैं। वह लोगों को इसका एहसास करने में महत्त्व-

पूर्ण हिस्सा बंटा सकता है कि निरंतर चल रहे सृष्टि रूप चमत्कार में वे भाग ले रहे हैं। मानव मन को समृद्ध बनाने, समाज का कायाकल्प करने और मानव-जाति को विकास द्वारा चेतना के उच्चतर स्तर पर पहुंचाने के महाकार्य में प्रकृति की सहायता कर पाने के जिस सूत्र की खोज दीर्घकाल से चल रही है, उसका यह महत्त्वपूर्ण घटक बन सकता है।

[एडगर डी. मिशेल 'इंस्टिटयूट ऑफ़ नोएटिक सायन्सेज़' (पालो आल्टो, कैलिफोर्निया, सं. रा. अमरीका) के संस्थापक तथा अध्यक्ष हैं। प्रस्तुत लेख उनकी नवप्रकाशित पुस्तक 'साइकिक एक्सप्लोरेशन' की भूमिका पर से तैयार किया गया है और "सैटर्डे रेव्यू" से साभार उद्धृत है।)

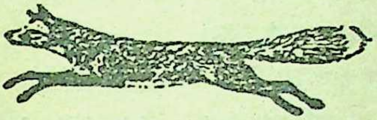

दो प्रसंग

पूना में दादाजी (साधु वास्वानी) द्वारा स्थापित संत मीरा स्कूल की इमारत बन रही थी। धन की आवश्यकता थी; एक सत्संगी चंदा एकत्र करने में मदद कर रहे थे। एक दिन वे दादाजी के पास आये तो उदास-से थे। दादाजी ने कारण पूछा, तो बोले–'मैंने आपको नौ हज़ार रुपये का नुक्सान करा दिया।' दादाजी के पूछने पर उन्होंने इसका खुलासा किया। बात यों हुई थी कि इन सज्जन के एक संपन्न मित्र लंदन से आये थे और उन्होंने अपनी चेकबुक इनके सामने रखकर कहा था कि स्कूल के लिए जितनी रकम चाहिये भर लो। इन्होंने एक हज़ार की रकम भर दी। इस पर उन मित्र ने कहा कि उन्हें तो उम्मीद थी कि कम से कम १० हज़ार की रकम भरी जायेगी।

दादाजी उन्हें समझाते हुए बोले–'इन चीजों में भी हमें लोभ से उबरना चाहिये।'

०००

एक आदमी दादाजी के सत्संग में आया करता था। दूसरों के दोष ढूंढ़ने में उसका मन रमता था। वह 'सत्य' की दुहाई देता था और दूसरों की असलियत उघाड़ने में कभी संकोच नहीं करता था। उसे दूसरे की आंख का तिल दिख जाता था, अपनी आंख में पड़ा शहतीर नहीं दिखता था। एक दिन उसने दादाजी से कहा–'मैं शैतान की उपस्थिति को सह नहीं सकता। मैं उसे हर जगह पकड़ लेता हूं, और दो-चार कोड़े लगा देता हूं।'

दादाजी मुस्कराये और बोले–'शैतान के साथ भी भाईचारा बरतो। अपने दिल के प्रेम से उसे वंचित मत करो। उसके दिल पर भारी बोझ है। उसका कुछ हिस्सा उठा लो और उसके उद्धार के लिए प्रयत्न करो।'

–जे. पी. वास्वानी

★

केजिता

विज्ञान-बिंदु

सूर्य की सक्रियता पर आज संदेह किया जाने लगा है। डर है कि अगर सूर्य की सक्रियता के कम होते जाने का सिलसिला शुरू हो गया, तो हमारे सौर मंडल पर जीव के अस्तित्व के लिए भी खतरा पैदा हो जायेगा। कुछ भारतीय वैज्ञानिक इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि सूर्य अब उतना सक्रिय नहीं रह गया है, जितना कि भूतकाल में था। इस निष्कर्ष का आधार है, चांद से लाये गये पदार्थ का विश्लेषण।

कोई दो वर्ष पूर्व भारतीय वैज्ञानिकों को लगभग एक ग्राम वजन का एक खनिज-टुकड़ा रूसी वैज्ञानिकों से प्राप्त हुआ था। यह टुकड़ा रूसी चंद्र-यान द्वारा चांद से पृथ्वी पर लाया गया था। भारतीय वैज्ञानिकों ने इसका विश्लेषण किया, जिसका परिणाम अभी हाल में घोषित हुआ है। इस सिलसिले में एक और तथ्य सामने आया है कि चांद पर एक नया खनिज (हर्सिनाइट) भी मौजूद है। इससे पूर्व चांद-नमूनों के जितने विश्लेषण हुए हैं, उनसे ऐसा कोई संकेत नहीं मिला था।

पिछले दिनों रूसी वैज्ञानिकों का ए उच्चस्तरीय दल भारत सरकार के निमं त्रण पर नयी दिल्ली आया था। भार सरकार की ओर से भारतीय राष्ट्री विज्ञान अकादमी ने इस अतिथि-दल से बातचीत की और दोनों देशों की ओर से आगामी कुछ वर्षों के लिए एक सामूहि कार्यक्रम तय किया गया। इसी अवसर पर चांद-नमूने के विश्लेषण के उक्त निष्क भारतीय वैज्ञानिकों ने रूसी वैज्ञानिकों को बाकायदा एक पुस्तिका के रूप में भेंट किये।

नींद, सुंदरी और दिल

गहरी नींद उत्तम शारीरिक-मानसि स्वास्थ्य की निशानी मानी जाती रही है। मगर गहरी नींद के कुछ खतरे भी हैं। ए अमरीकी हृद्रोग-विशेषज्ञ के अनुसार दि के दौरों की अधिकांश वारदातें गहरी नीं के समय होती देखी गयी हैं। मार्को द्वी (फ्लोरिडा, अमरीका) में पिछले दिनों हुए अमरीकी हृद्रोग-विशेषज्ञ-समिति के अधिवेशन में बोलते हुए डा. हेनरी मैं इन्टाश ने बताया कि सोते हुए सूअरों पर

मई

लंबे समय तक परीक्षण करने के पश्चात् वे इस अप्रत्याशित नतीजे पर पहुंचे हैं। परीक्षण के दौरान उन्होंने पहले सूअरों की कोरोनरी-सक्रियता को क्षति पहुंचाकर हृदय-गति के रुक जाने के लिए आवश्यक स्थिति पैदा की, फिर उनके मस्तिष्क की सक्रियता को मापा। उन्होंने पाया गहरी नींद–न कि हल्की नींद, जैसा कि अब तक माना जाता रहा है–दिल के दौरे के लिए अधिक अनुकूल पड़ती है। डाक्टर मैक्इन्टाश ने स्वीकार किया है कि नींद हृदय को प्रभावित कैसे करती है, यह बात अभी स्पष्ट नहीं हो सकी है।

दूसरी ओर बंबई के विख्यात हृद्रोग-विशेषज्ञ डा. के. के. दाते ने एक दिलचस्प जानकारी दी है। उन्होंने हृद्रोगों के लगभग तीन सौ मामलों का एक नये नजरिये से अध्ययन किया। ये सभी रोगी ऊंचे अफसर या एग्जिक्यूटिव थे, जिन्हें निजी सचिवों या सहायकों की सुविधाएं प्राप्त थीं। सर्वेक्षण से प्रकट हुआ कि उनमें से ८० प्रतिशत का अपने अधीनस्थ युवतियों (सचिवों अथवा टाइपिस्टों) के साथ सेक्स संबंध हुआ। डा. दाते के अनुसार दोनों की उम्र और शारीरिक अवस्था में अधिक अंतर के कारण पड़ने वाले गंभीर प्रभाव तथा इन नाजायज संबंधों का पत्नी को पता न लग जाये, उस भय से उत्पन्न तनाव इन मामलों में दिल के दौरों के लिए जिम्मेदार ठहराये जा सकते हैं।

सफाचट खोपड़ी, गहराते बाल

कम उम्र में ही सिर के बालों का उड़ जाना अब एक आम बात होती जा रही है। इसकी अक्सीरी दवाइयां भी धड़ाधड़ निकल रही हैं। परंतु उनके दावे सच नहीं सिद्ध हो रहे हैं। अभी हाल में 'न्यू साइंटिस्ट' में प्रकाशित एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार अब रूसी वैज्ञानिकों ने एक ऐसे रसायन का विकास किया है जो गंजेपन से निश्चित रूप से छुटकारा दिला सकता है।

इस नये रसायन का नाम रखा गया है 'माइवैल', जो कि इसके शोधकर्ता माइकेल ग्रिगोरिविच वोरोनकोव तथा वैलेरी मिखाइलोविच दियाकोव के नामों के प्रथम दो-दो अक्षरों (माइ+वैल) को मिलाकर बनाया गया है। इस नये रसायन का ठीक-ठीक संघटन तो अभी प्रकट नहीं किया गया है; परंतु यह सिलिकन नामक रासायनिक तत्त्व का एक सरल यौगिक है।

प्रयोगशाला में पशुओं पर किये गये परीक्षणों से यह प्रमाणित हुआ है कि इस यौगिक में बाल उगाने की अद्भुत क्षमता है।

कार सलामत, चोर की शामत

कारों की चोरी की वारदातें हमारे यहीं नहीं, अमरीका में भी निरंतर बढ़ती जा रही हैं। यही वजह है कि न्यूयार्क की एक फर्म ने ऐसे चोर-ताले का विकास किया है, जिसकी मदद से कार की चोरियों को कम किया जा सकता है।

यह ताला वस्तुतः एक ईंधन-स्विच है, जो आकार में अत्यंत छोटा है और कार में किसी भी गुप्त स्थान पर लगाया जा सकता है। ईंधन-स्विच टंकी से इंजन को पेट्रोल

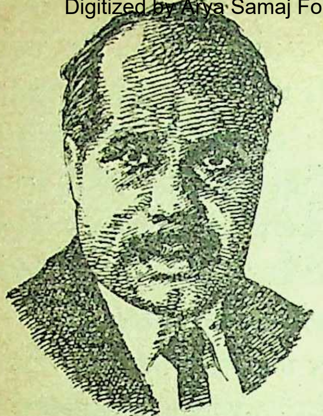

डा. के. एफ. किंग

की सप्लाई का नियंत्रण करता है। जब तक स्विच को खोला नहीं जायेगा, इंजन को पेट्रोल की सप्लाई बंद रहेगी। इस स्विच के बंद रहते चोर इंजन को स्टार्ट करके कार को लेकर चंपत तो जरूर हो सकेगा, मगर कुछ ही मिनिटों में उसे कार को बीच सड़क पर छोड़ देना पड़ेगा।

पित्ताश्मरी

पित्ताश्मरी (पित्ताशय की पथरी) की शुरूआत खाने-पीने की बदपरहेजी से होती है। यह रोग काफी कष्टदायी होता है; क्योंकि इससे पेट में जो पीड़ा होती है, वह काफी तेज और प्रायः असह्य होती है। एलोपैथी में पित्ताश्मरी के लिए कोई औषधीय उपचार नहीं है। इससे छुटकारा पाने का एकमात्र रास्ता है—आपरेशन।

अब पश्चिम जर्मनी के फ्रैंकफर्ट विश्वविद्यालय के डा. अल्रिक ल्यूशनर ने एक दवा का निर्माण किया है, जिसका लगातार एक वर्ष तक सेवन करने पर पथरी गलकर शरीर से बाहर निकल जाती है और आपरेशन की जरूरत नहीं रह जाती। यह दवा कैप्सूल की शक्ल में दी जाती है और ३० प्रतिशत से अधिक कोलेस्टेरिन-युक्त पथरियों पर असर कर सकती है। प्रयोगों के दौरान इसकी प्रभावकता ३० से ६० प्रतिशत के बीच पायी गयी है।

आविष्कारक ने इस दवा के अनेक फायदे बताये हैं। मगर फिलहाल यह उन्हीं मरीजों के लिए सुझायी जायेगी, जो आपरेशन से डरते हों तथा जो एक वर्ष तक यह महंगी दवा खरीद सकते हों।

प्राकृतिक गैस से प्रोटीन

मानव-शरीर के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थों के मुख्य पोषक तत्त्व हैं—जल, वसा, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लवण एवं विटामिन। इनमें से प्रोटीन कोशिकाओं की निर्माण-सामग्री है। प्रोटीन के अभाव में मनुष्य का शारीरिक विकास रुक जाता है। आज अधिकांश निर्धन देशों में व्याप्त कुपोषण का मुख्य कारण है वहां के भोजन में प्रोटीन की न्यूनता। इससे भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि विश्व की समस्त जनसंख्या को प्रोटीन की पूर्ति प्राकृतिक स्रोतों से करना आज मुमकिन नहीं लगता। इसलिए प्रोटीन के कृत्रिम निर्माण की दिशा में अनेक प्रयत्न हुए हैं।

अब इंग्लैंड में प्राकृतिक गैस से प्रोटीन का निर्माण किया गया है। प्राकृतिक गैस मुख्यतः मीथेन नामक गैस है, जो कि कार्बन और हाइड्रोजन का एक सरल यौगिक है।

पेट्रोल-उत्पादक संस्था शैलग्रुप की बोर्न स्थित प्रयोगशाला ने दस वर्ष प्रयत्न करके प्राकृतिक गैस से प्रोटीन-निर्माण की इस विधि का विकास किया है। बोर्न प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने बताया है कि यह प्रोटीन कोशिकीय है व पोषण-मान की दृष्टि से उम्दा मत्स्यचूर्ण का मुकाबला करती है।

हाइड्रो-कार्बनों से प्रोटीन तैयार करने की कुछ विधियों का विकास इससे पहले भी हुआ है; परंतु उपर्युक्त नवीनतम विधि में पहली बार सीधे प्राकृतिक गैस का इस्तेमाल हो सका है। इस कारण यह विधि अपेक्षाकृत सरल और कम खर्चीली है।

शल्य-दर्शन

आपके किसी निकट संबंधी का कोई बड़ा आपरेशन हो रहा है और आप आपरेशन-कक्ष के बाहर बैठे हैं। कितनी व्यग्रता और चिंता के क्षण होते हैं ये! अंदर क्या चल रहा है, इसकी जिज्ञासा अलग। अब एक ऐसी नयी व्यवस्था का विकास हुआ है, जिससे आप प्रतीक्षालय में बैठे-बैठे ही अंदर चल रहे आपरेशन व उसकी तमाम बारीकियों को टेलिविजन-स्क्रीन पर देख सकेंगे। इसके विकास का श्रेय है एक भारतीय वैज्ञानिक नरिंदर सिंह कपानी को। वस्तुतः श्री कपानी ने एक नयी विधा को जन्म दिया है। वह विधा है—तंतु प्रकाशिकी (फाइबर ऑप्टिक्स)।

इसके अंतर्गत लेजर बीम को यदि एक नम्य तंतु पर से गुजारा जाये, तो उससे आदमी के शरीर के अंदर के सभी अंगों एवं रचनाओं का प्रेक्षण व विश्लेषण संभव है। लेजर बीम का चाकू की भांति प्रयोग करके रक्तहीन सर्जरी की जा सकती है। इस पूरी यूनिट को टेलिविजन-स्क्रीन से जोड़कर अंदर चल रहे संपूर्ण आपरेशन को प्रदर्शित किया जा सकता है। इसमें काम में लाये जाने वाले नम्य तंतुओं का निर्माण कांच और क्वार्ट्ज़ से किया जाता है। ये दोनों पदार्थ उच्च श्रेणी के ऊष्मारोधी है।

छप्पन वर्षीय नरिंदर सिंह प्रकाशिकी के अधिकारी विद्वान हैं। बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न आविष्कारक होने के साथ-साथ वे कुशल व्यवसायी भी हैं। फाइबर ऑप्टिक्स की बात उनके दिमाग में आज से चौथाई सदी पूर्व आयी थी, जब वे लंदन के इंपीरियल कालेज के विद्यार्थी थे। तब से वे उस पर निरंतर कार्य करते रहे हैं। उन्होंने अब तक चिकित्सा और दूरसंचार की दुनिया

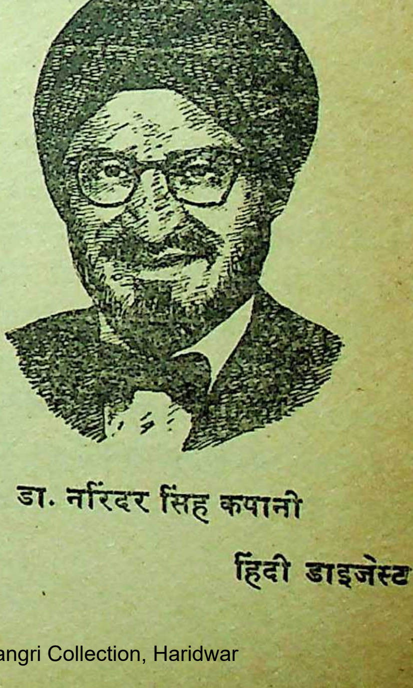

डा. नरिंदर सिंह कपानी

को अपने कई महत्त्वपूर्ण आविष्कार बेचे हैं। इनमें से एक उल्लेखनीय यह है कि यदि लेजर को संचार-माध्यम के रूप में अपनाया जायें, तो एक ही लाइन पर एक समय में ३०,००० चैनल्स प्राप्त किये जा सकते हैं और इस प्रकार टेलिफोन केबलों से छुटकारा पाया जा सकता है।

जंगल और जनमंगल

पर्यावरण का संदूषण, जनसंख्या का विस्फोट एवं अल्पपोषण या अन्नाभाव—ये आज संसार की तीन विकटतम समस्याएं हैं। अन्नाभाव के निवारण के लिए जो भी प्रयत्न विगत वर्षों में किये गये हैं, उनमें अत्यधिक महत्त्वपूर्ण रहा है अधिक उपज देने वाली किस्मों का विकास। परंतु विश्व खाद्य-कृषि संघटन का वन-विभाग काफी अध्ययन के पश्चात् अब इस निर्णय पर पहुंचा है कि अधिक उपज देने वाली किस्मों की खोज के बजाय यदि शीघ्र बढ़ने वाले वनों पर जोर दिया जाये, तो वह अधिक उपयोगी और व्यावहारिक रहेगा।

विश्व खाद्य-कृषि संघटन के सहायक महानिदेशक एवं वन-विभाग के अध्यक्ष डा. किंग ने हाल में भारत की यात्रा की। दिल्ली में उन्होंने बताया कि अन्नोत्पादन बढ़ाने के लिए दुनिया के सामने सिर्फ दो रास्ते हैं—१. प्रति एकड़ उपज की मात्रा बढ़ाना, और २. कृषिभूमि का क्षेत्रफल बढ़ाना। इनमें से दूसरे उपाय को काम में लाने का एक कारगर तरीका है मानव-निर्मित वनों का रोपण। इसके लिए हमें कम उपज देने वाले प्रकृति-निर्मित जंगलों को काटकर उनके स्थान पर नियोजित जंगल उगाने पड़ेंगे। इनमें समान दूरी पर एक ही प्रकार के पेड़ों को उगाया जायेगा और अंतरवर्ती स्थान का खेती के लिए उपयोग किया जायेगा।

डा. किंग का कहना है कि जंगल सिर्फ वन्य पशुओं के निवासस्थल नहीं हैं। आर्थिक और पारिस्थिक दृष्टि से मानव-जीवन के लिए वनों का जो महत्त्व है, उसे अभी पूरी तरह समझा नहीं जा सका है। भारतीय उपमहाद्वीप के तीनों ही राष्ट्र भारत, पाकिस्तान और बांङला देश लगभग समान रूप से सूखा और बाढ़ों के शिकार होते रहे हैं। इसके पीछे एक प्रमुख कारण है वनों का नष्ट किया जाना।

वन-विज्ञान और भूमि-साधनों के उपयोग की दिशा में उन्नत देशों में जो काम हुए हैं, उन्हें अपनाना भारत जैसे देश के लिए फिलहाल संभव नहीं है; परंतु इस दिशा में काम जरूर शुरू किया जाना चाहिये। इस बात पर डा. किंग ने विशेष रूप से बल दिया। नयी तकनीकों में प्रमुख हैं—अनुपयोगी वृक्षों को लेजर द्वारा पता लगाकर उन्हें उखाड़ फेंकना, पहाड़ी ढलानों पर इमारती लकड़ी के वनों का हेलिकाप्टरों की सहायता से रोपण और अनुरक्षण, तथा पेड़ की छाल और तनों को यांत्रिक विधियों से अलग करना आदि।

डा. किंग ने कहा है कि बढ़ते रेगिस्तानों को रोकने के लिए अलजीरिया, ईराक, ईरान और सहारा-क्षेत्र में वनरोपण के जो कार्य हुए हैं, उनसे भारत काफी कुछ सीख सकता है।

* * *

अपनी भाललिपि का लेखक

कृष्णविहारी पांडेय

द्वितीय विश्वयुद्ध में पराजय पाने वाला, परमाणुबम की प्रथम आहुति बनने वाला युद्ध-जर्जरित औद्योगिक व्यवस्था वाला जापान आज अपना पुनर्निर्माण करके समृद्धिशाली देशों की प्रथम पंक्ति में खड़ा हो गया है। तूफान, बाढ़ और भूकंप के अभ्यस्त जापान के अदम्य संकल्प, कार्यनिष्ठा और श्रमशीलता से प्रभावित होकर अमरीका के आर्थिक मामलों के सहायक सचिव फिलिप एच. ट्रेसाइज़ ने आज चार वर्ष पूर्व 'पेसिफिक कम्यूनिटी' पत्रिका में लिखा था—'जापान के निकट भविष्य के बारे में भी कोई भविष्यवाणी अविश्वसनीय ही होगी। उदाहरण के लिए जापान का कुल राष्ट्रीय उत्पादन १९७५ में ४४० अरब डालर तक पहुंच सकता है, जो आज इंग्लैंड, फ्रांस और पश्चिम जर्मनी के संमिलित कुल उत्पादन से भी अधिक है।'

जापान की इस औद्योगिक समृद्धि के बीच एक व्यक्तित्व विशेष रूप से उभरकर दिखता है, जिसका संपूर्ण जीवन जीवट, कौशल और संघर्षक्षमता की प्रेरक गाथा है। अभाव-भरे बचपन से जीवन प्रारंभ करके वह आज जापान का ही नहीं, विश्व का एक अत्यंत समृद्ध व्यक्ति बन गया है। वह व्यक्ति है मात्सुशिता औद्योगिक संस्थान का स्वामी तथा जापानी औद्योगिक प्रगति का ध्वजवाहक कोनोसुके मात्सुशिता। कोनोसुके की उपलब्धियां भौतिक समृद्धि तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि उसके व्यक्तित्व और कर्तृत्व में मानवीय मूल्यों के प्रति गहरी आस्था है और उनकी प्रतिष्ठा के लिए उसकी लगन प्रशंसनीय है।

कोनोसुके मात्सुशिता का प्रारंभिक जीवन चार्ल्स डिकन्स के उपन्यासों की याद दिलाता है। उनका जन्म २७ नवंबर १८९४ को वाकायामा प्रांत में एक किसान-परिवार में हुआ। जापान में देवदार को बहुत शुभ का प्रतीक माना जाता है। मात्सुशिता के घर पर देवदार की छाया थी। सचमुच वह उनके लिए शुभ सिद्ध हुआ, लेकिन उसके लिए कोनोसुके को आंसुओं और आग में से गुजरना पड़ा।

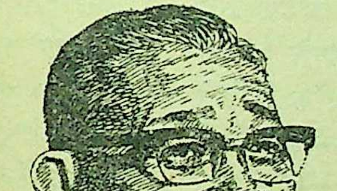

कोनोसुके मात्सुशिता

जापान में उस समय मेइजी युग की औद्योगिक नीति लंबे डग भर रही

थी, कृषि-आधारित अर्थ-व्यवस्था का आधुनिकीकरण हो रहा था। इस नवीनता से मुग्ध होकर कोनोसुके के पिता ने एक अविचारित व्यापारिक कदम उठाया और घर-जमीन सब कुछ गंवा दिया। अंततः उसे ओसाका जाकर नौकरी कर लेनी पड़ी। आठ-नौ वर्ष के कोनोसुके ने अनुभव किया कि भूख क्या होती है। सन १९७० में यह पूछे जाने पर कि आपके जीवन की सबसे पहली महत्त्वाकांक्षा क्या थी, तो करोड़पति कोनोसुके ने उत्तर दिया—'कि एक कैंडी खरीदकर खा सकूं।'

जापान में तीन के समूह को शुभ माना जाता है। कोनोसुके मात्सुशिता के बचपन में तीन अभाव थे—वे धनशून्य थे, उनकी विधिवत् शिक्षा नगण्य थी और उनका स्वास्थ्य दयनीय था। परंतु ये अभाव ही कोनोसुके की शक्ति बन गये। नौ साल की अवस्था में स्कूल छोड़कर और अपने किशोर मन के अनेक सपनों की बलि देकर उन्हें ओसाका में अंगीठियां बनाने वाले के यहां नौकरी करनी पड़ी। 'माइ वे ऑफ थिंकिंग एंड डूइंग' में उन्होंने लिखा है—'मेरे हाथों की त्वचा इस कदर फट जाती थी कि फर्श साफ करने के लिए गीला कपड़ा पकड़ने में बहुत तकलीफ होती थी। लेकिन जब पांच सेन का पहला वेतन मिला, तो मैं खुशी में अपने सारे कष्ट भूल गया।'

नौ वर्ष के इस बालक को मालिक के बच्चे को पीठ पर लादकर घुमाना पड़ता था। एक दिन अचानक बच्चा गिर गया और चीखने लगा। कोनोसुके ने उसे करने के लिए मिठाई खरीदी, जो एक सेन आयी। यह उसकी तीन दिन की मजदूरी थी।

अंगीठी वाले की नौकरी के बाद कोनोसुके एक साइकल आयातक के यहां नौकरी करने लगा। पहिया घुमाते-घुमाते वह थककर जरा ढीला पड़ता, तो सिर पर फोरमैन के हथौड़े की चोट पड़ती। जापान में विद्युत-युग का प्रारंभ था। पंद्रह वर्षीय दूरदर्शी बालक ने अब 'ओसाका इलेक्ट्रिक लाइट कंपनी' में नौकरी कर ली। औजारों की गाड़ी खींचने से प्रारंभ कर वह अपनी लगन और परिश्रम की बदौलत उसी कंपनी में निरीक्षक बन गया। कुछ समय बाद ७ मार्च १९१८ को उसने अपना छोटा-सा बिजली का कारखाना खोल लिया। अदम्य संकल्प के साथ उसने समृद्धि के द्वार पर दस्तक दी और अमित संभावनाओं से भरा प्रासाद जैसे उसके लिए खुल गया।

सन १९३५ में कोनोसुके मात्सुशिता के औद्योगिक संस्थान 'मात्सुशिता इलेक्ट्रिक इंडस्ट्रियल कंपनी' की विधिवत् स्थापना हुई। १९४५ में जापान की पराजय के समय इस संस्थान के ६० कारखाने थे और उनमें २० हजार लोग काम करते थे। आज उसके कारखानों की संख्या १०० हो गयी है, जिनमें ८० हजार से अधिक किस्म की मशीनी वस्तुएं बनती हैं। मात्सुशिता संस्थान जापान में साइकल, रेडियो, टेप रिकार्डर, टेलिविजन, रेफ्रिजरेटर, धुलाई की मशीनों का सबसे बड़ा निर्माता है।

इस संस्थान के उत्पादन और विक्रय का क्षेत्र आज उत्तर अमरीका, यूरोप, दक्षिण अमरीका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिण-पूर्व एशिया तक फैला है।

कोनोसुके मात्सुशिता का अपना व्यापारिक विचार-दर्शन है। ५ मई १९३२ को उन्होंने कहा था–'मैं प्रचुरता के बारे में सोचने लगा और इस परिणाम पर पहुंचा कि निर्माता का उद्देश्य संसार को ऐसी वस्तुओं से भर देना है, जो पानी के समान सस्ती और प्रभूत हों, जिससे सभी का जीवन बेहतर हो सके।' मात्सुशिता संस्थान का लक्ष्य है सुसंगठित औद्योगिक विकास के जरिये उचित न्यूनतम मूल्य पर लोगों को अच्छे स्तर की वस्तुएं प्राप्त कराना।

कोनोसुके मात्सुशिता के व्यापारिक दर्शन के अनुसार, लाभ व्यापार का चालक तत्त्व नहीं है। व्यापार की प्रेरणा है समाज को स्तरीय चीजें मुहैया करना–इन स्तरीय चीजों की कीमत केवल इतनी हो कि उससे उत्पादक सिर्फ उतना लाभ कमा सके, जिससे वह अपने व्यवसाय का विस्तार करके उत्पादन-वृद्धि द्वारा माल की कीमत घटा सके।

मानव कल्याण के लिए कोनोसुके मात्सुशिता का एक स्वप्न है, जिसे साकार करने के लिए उन्होंने 'पी. एच. पी.' (पीस, हैपीनेस, प्रॉस्पेरिटी) नामक संस्था की स्थापना की। इसका लक्ष्य है–सुख, शांति और समृद्धि। उन्हीं के शब्दों में–'मैं समाज के मनमानेपन से क्षुब्ध था और देश के पुनर्निर्माण के बारे में सोचने लगा। साथ ही मैं जीवन, युद्ध, समाज और मानव के अर्थ पर विचार करने के लिए विवश हुआ। मनुष्य आखिर है क्या ? शांति और सुख की इच्छा रखते हुए भी वह अनजाने ही दूसरों से लड़ने और उन्हें नष्ट करने में लगा रहता है। क्या यह हिंसा मनुष्य का वास्तविक स्वभाव है? निःसंदेह नहीं! इतिहास साक्षी है कि मनुष्य-जाति में आध्यात्मिक और बौद्धिक विकास की क्षमता है।

'काफी सोच और बहस के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि मनुष्य में अनंत समृद्धि, सुख और शांति का सृजन करने की शक्ति है और इस क्षमता को कारगर रूप से प्रकट किया जा सकता है। विज्ञान और ज्ञान ने मनुष्य को सुखी क्यों नहीं बनाया ? इसी प्रश्न के उत्तरस्वरूप मैंने पी. एच. पी. की स्थापना का निर्णय किया।'

उनका विश्वास है कि यह संस्था समृद्धि के माध्यम से सुख और शांति स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण मंच का कार्य कर रही है।

कोनोसुके मात्सुशिता की अंतिम कामना है–पूर्व और पश्चिम की मेधा की बहुमूल्य धरोहर का उपयोग। दुःखों के बारे में उन्होंने केवल सुना या पढ़ा नहीं है, बल्कि उन्हें स्वयं भोगा है। इसीलिए मानव-जाति के सुख के प्रति उनमें एक छटपटाहट है। अपने हाथों अपनी भाललिपि लिखने वाले इस जापानी धनपति की धीरता, परिश्रमशीलता और लोकहितैषणा किसी के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बन सकती है।

–शासकीय महाविद्यालय, दतिया, म.प्र.

★

मराठी विज्ञानकथा :

कृष्णविवर

डा. जयंत विष्णु नारळीकर

'यह कंप्यूटर का बच्चा तो बहुत सताता है ...' आवेश के साथ काफी ढालते हुए प्रकाश कह रहा था—'पिछले हफ्ते मैंने कम से कम पचास चक्कर काटे होंगे—पर उसका वही एक-सा उत्तर।'

'क्या कहता है कंप्यूटर?' संजय ने भोलेपन से पूछा। शुद्ध गणित का विद्यार्थी होने के कारण वह कंप्यूटर को हेय दृष्टि से देखता था। जैसे कोई चित्रकार घर रंगने वाले रंगसाज को देखता है, ठीक उसी तरह।

'कंप्यूटर कहता है कि मेरा मूल सिद्धांत गलत है। सच कहूं तो "प्रॉफ" का दिया डेटा कंप्यूटर के सुपुर्द करके मैं दिन-भर के लिए छुट्टी पर जाऊंगा और प्रोग्राम के अनुसार हाइकिंग पर जाऊंगा, ऐसा मैंने सोचा था; पर मैन प्रोपोज़ेस कंप्यूटर डिस्पोज़ेस—यही सही है।'

प्रकाश यर्किस वेधशाला से आये बृहस्पति ग्रह संबंधी कुछ नवीन डेटा को कंप्यूटर पर जांचकर देखने के लिए आया था।

'तेरी ही जोड़-बाकी कहीं गलत हो गयी होगी।' भौतिकी वालों की गणित कच्ची रहती है, यह गणित वालों का सामान्य विश्वास संजय ने व्यक्त किया।

'देख, गलती होगी तो मेरी नहीं, न्यूट और आइंस्टाइन की होनी चाहिये। ग्रहों गति उनके सिद्धांतों पर निश्चित की जा है, यह तेरे जैसे अल्पज्ञों को भी मालूम है पर कंप्यूटर कहता है कि यह नया डेटा उन सिद्धांतों में बैठता नहीं है। डेटा गलत नहीं है, प्रॉफ को इसका पूरा विश्वास है। फि गड़बड़ कहां है?' प्रकाश ने आपत्ति की।

'मैं बताऊं? तू बैठकर खगोलशास्त्र दशावतारों के नाम जपने शुरू कर दे। तु प्रेरणा मिलेगी।' संजय ने मजाक में सलाह दी—'बोल, न्यूटनाय नमः, हेलाय नमः, ह लाय नमः, एडम्साय नमः, एडिंग्टना नमः ......'

'एडम्स ... एडम्स ... लाख रुपये की बात कह दी तूने। धन्यवाद—बालादपि सुभाषितं ग्राह्यम्' ... संजय, की पीठ पर ए जोरदार धौल मारकर, कॉफी आधी ही छोड़कर प्रकाश वहां से चल पड़ा।

संजय देखता रह गया। इंस्टिटयूट बौरायेपन का इजारा गणित वालों ने रखा था। सो प्रकाश की विक्षिप्तता उ पसंद नहीं आयी।

'प्रॉफ' अर्थात् इंस्टिटयूट में खगोलशा

अनुवाद : गिरिजाशंकर त्रिवेदी

के प्राध्यापक रमेश अग्रवाल। ग्रहों और उपग्रहों के भ्रमण की गणित 'सेलेस्टियल मेकैनिक्स' में उन्होंने अंतरराष्ट्रीय ख्याति कमायी थी। इक्कीसवीं सदी के प्रारंभ में इस विषय पर शोधकार्य करने वाले विज्ञानी बहुत कम थे। इसलिए जब कोई जटिल प्रश्न उठता, तो उस विषय से संबंधित खगोल-शास्त्री अग्रवाल साहब के पास दौड़े आते। इसलिए बृहस्पति ग्रह के संबंध में नया उपलब्ध डेटा उनके पास भेजा गया था।

प्रकाश पावटे उनका अत्यंत प्रिय विद्यार्थी था। अभी-अभी आये हुए डेटा को सरसरी तौर पर निरीक्षण करके उन्होंने प्रकाश के पास जांच-पड़ताल के लिए भेज दिया था। 'निश्चित निष्कर्ष प्राप्त होने तक मुझसे मत मिलना,' यह अलग से कहने की आवश्यकता नहीं थी।

तो भी एक सप्ताह हो गया और प्रकाश अभी तक लौटा नहीं, इसका उन्हें आश्चर्य था। वे यह सोच ही रहे थे कि क्या मैंही जाकर उससे मिलूं, इतने में प्रकाश झपाटे से उनके कमरे में दाखिल हुआ और कंप्यूटर के उत्तरों का पूरा गट्ठा उनकी मेज पर डालकर धड़ाधड़ बोलने लग गया। पर उसका एक भी शब्द प्रोफेसर साहब नहीं समझ पा रहे थे। उन्होंने उसे इतना उत्तेजित कभी नहीं देखा था।

'शांत होओ! शांत होओ! मिनिट में बस एक ही वाक्य बोलो तो भी चलेगा......' सौम्य स्वर में वे बोले।

'सर! सन १८४६ के आस-पास युरेनस ग्रह की गति में अनियमितता देखकर एडम्स ने केवल तर्क और गणित के आधार पर युरेनस के पास मौजूद नया ग्रह नैपच्यून खोज निकाला था। मुझे पूरा विश्वास है, बृहस्पति के पास ग्रह जैसी ही कोई नयी वस्तु आ गयी है। कंप्यूटर के उत्तर निश्चित रूप से ऐसा कहते हैं।'

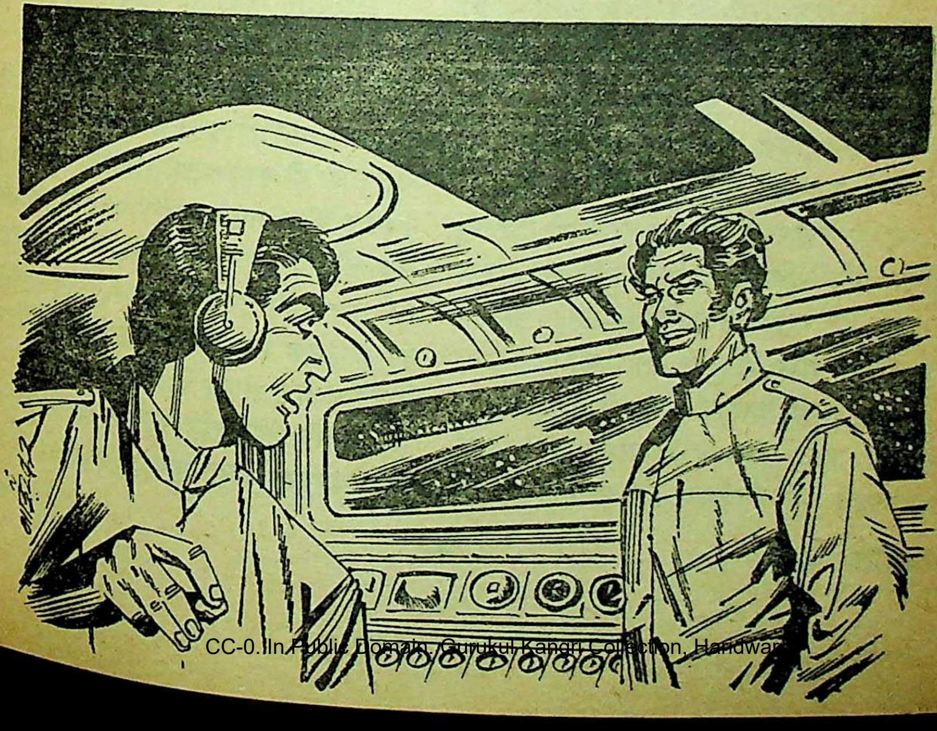

प्रमाण के बिना कोई बात नहीं कहनी चाहिये, यह बात प्रोफेसर साहब अपने विद्यार्थियों के मन में बैठा चुके थे। तो भी प्रकाश का कथन इतना अनपेक्षित था कि उन्होंने इसकी टोह स्वयं लगाने का निश्चय किया और अगले दस दिनों तक अनेक खगोलशास्त्रीय पद्धतियों का उपयोग करके इस निर्णय पर पहुंचे कि प्रकाश का कथन सही है।

लंदन से निकलने वाले वैज्ञानिक साप्ताहिक 'नेचर' में अग्रवाल और पावटे का संमिलित लेख प्रकाशित हुआ और खगोलज्ञों में जबर्दस्त खलबली मच गयी। बृहस्पति की गति में उत्पन्न अनियमितता उसके निकट आयी एक नवीन वस्तु के कारण है, यह उस लेख का सारांश था।

उस नवीन वस्तु का उन्होंने तात्कालिक 'क्ष' (×) नाम दिया और 'क्ष' का द्रव्यमान, वेग, बृहस्पति से उसकी दूरी आदि जानकारी प्रकाशित की। 'क्ष' क्या है?—इस संबंध में तरह-तरह के तर्क-वितर्क शुरू हो गये। कुछ का कहना था कि बृहस्पति और मंगल के दरम्यान घूमने वाले अनेक क्षुद्र ग्रहों (एस्टेरायड) में से कुछ के इकट्ठे होने से नया ग्रह बन गया होगा, अथवा सौरमंडल के बाहर से आया हुआ कोई धूमकेतु होगा, किसी-किसी का ऐसा तर्क था। गरज यह कि 'क्ष' को प्रत्यक्ष देखने के लिए संसार की वेधशालाओं में होड़ लग गयी।

परंतु उन्हें दिखाई कुछ भी नहीं दिया।

इस तरह तीन साल गुजर गये। जब खगोलज्ञों को निश्चय हो गया कि 'क्ष' दिखता तो नहीं है, मगर उसकी उपस्थिति अवश्य है, तो 'क्ष' की दिशा की ओर अंतरिक्षयान छोड़ने का फैसला हुआ। कारण, प्रश्न बहुत महत्त्व का था। शताब्दियों से चले आ रहे गुरुत्वाकर्षण-सिद्धांत का भविष्य उस पर निर्भर था। क्योंकि 'क्ष' की खोज भारतीय विज्ञानियों ने की थी, इसलिए निश्चय हुआ कि अंतरिक्षयान भारत के ही श्रीहरिकोटा अड्डे से उड़ान भरे, उसमें यात्री वैज्ञानिक के रूप में जाने का संमान प्रकाश पावटे को मिला। उसका एकमात्र सहप्रवासी अर्थात् यान का अमरीकन कैप्टन जान फॉकनर एक कुशल तंत्रज्ञ था। चूंकि यह विश्व अंतरिक्ष संघटन (वर्ल्ड स्पेस आर्गनाइजेशन) का भारत से बृहस्पति को जाने वाला दसवां यान था, इसलिए इसका नंबर था—WIJ-10। बृहस्पति की ओर प्रस्थान का उपयुक्त दिन निर्धारित करके WIJ-10 की उड़ान की तैयारी होने लगी।

इन तीन वर्षों में प्रकाश पावटे और संजय जोशी पी-एच. डी. करके अपने इंस्टिट्यूट में फेलो बन गये थे। संजय का विवाह हुए साल-भर हो चुका था, पर प्रकाश अभी तक छड़ा ही था। अलबत्ता दोनों की मित्रता पूर्ववत् थी। गपशप और आपसी छेड़छाड़ अब भी कायम थी। उड़ान के एक सप्ताह पूर्व संजय की नवजात कन्या का नामकरण था। उसके लिए एक बड़ा-सा 'टेडीबेयर' लेकर प्रकाश संजय के घर में घुसा।

'भाभी, क्या नाम रखा है बच्ची का?' टेडीबेयर आगे बढ़ाते हुए उसने पूछा।

'अनुपमा! हाथ में लेकर देखोगे उसे ?

'न-न भाई! दूर से ही ठीक! मुझे छोटे बच्चों को हाथ में लेते बहुत डर लगता है।'

'फिर दूर से ही बताओ। हमारी बिटिया किसके जैसी दिखती है?'

'तुम दोनों जैसी है', प्रकाश ने राजनयिक उत्तर दिया—'छोकरी स्वस्थ-सुंदर है, इसमें शक नहीं है। अठारह-बीस वर्ष तक ठहरो, फिर देखना कितने रोमियो इसके पीछे लगते हैं।'

'पर तुम्हीं ठहर जाओ न अठारह-बीस वर्ष—हम तुम्हें ही अपना दामाद बना लेंगे!' अनुपमा की मां ने वर की खोज शुरू कर दी। पर विवाह की बात निकले—चाहे वह अठारह दिन बाद की हो या अठारह साल बाद की—तो प्रकाश शरमा जाता था। वह हड़बड़ी में उसकी बात सुनकर भाग खड़ा हुआ।

'बेकार ही उस ब्रह्मचारी को डरा दिया तुमने ......' संजय ने पत्नी को झिड़का।

निश्चयानुसार WIJ-10 की यात्रा प्रारंभ हुई। यान पृथ्वी के अनेक स्टेशनों से संपर्क बनाये हुए था। संदेशों का आदान-प्रदान चल रहा था। परंतु बृहस्पति की कक्षा में आते ही परिस्थिति में फर्क पड़ गया। प्रकाश ने मिशन-कंट्रोल को निम्न संदेश भेजा :

'"क्ष" नजदीक आ गया है' ऐसा लगता है। पर अभी तक कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है। परंतु "क्ष" की दिशा की ओर अनेक वस्तुएं उल्काएं, क्षुद्रग्रह आदि तेजी से जाती दिखाई पड़ रही हैं। ...... "क्ष" चमक रहा होता तो कहता कि भगवद्गीता में दीये पर टूट पड़ने वाले पतिंगों का वर्णन ......'

डा. जयंत विष्णु नारळीकर

'बस-बस, कवि-कल्पना छोड़ो! आगे तुम क्या करने वाले हो, वह बताओ?' कंट्रोल ने टोका।

'अहा! अणु-विस्फोट देखकर ओपनहाइमर को गीता याद आयी थी। मुझे यहां जो दिख रहा है अथवा दिखाई नहीं दे रहा है, वह अणु-विस्फोट से भी विचित्र है। स्वीकृति मिले तो अधिक पास से देखना चाहता हूं।' प्रकाश ने संदेश दिया।

'स्वीकृति है; परंतु खतरा जान पड़ते ही तुरंत लौट पड़ो।'

'अवश्य ! मैं [illegible] की पूरी चिंता रखूंगा।' ये कंट्रोल के पास आये प्रकाश के अंतिम शब्द थे।

प्रकाश की सूचना पर जान ने 'क्ष' की दिशा में यान को मोड़ा। धीरे-धीरे उसका वेग बढ़ने लगा। 'अरे जरा धीरे-धीरे चलाओ। हमें बहुत नजदीक नहीं जाना है।' प्रकाश ने जान को सावधान किया।

'मैंने तो इंजन कब का बंद कर दिया है! रफ्तार क्यों बढ़ती जा रही है, समझ में नहीं आता।' यान के वेगमापक की ओर चिंतातुर नजरों से देखता हुआ जान बोला— 'उसका कांटा तो तेजी से आगे की ओर सरकता जा रहा है।'

प्रकाश के मस्तिष्क में प्रकाश कौंध गया। वह तुरंत यान में रखे कंप्यूटर की ओर लपका और अब तक काम में न आया प्रोग्राम एक दराज से निकालकर कंप्यूटर में भरा। उस पर लेबल लगा था—'कृष्णविवर'। यान की वेगवृद्धि की जानकारी पंच करके कंप्यूटर में डाली और क्षण-भर में उसमें से छपा हुआ उत्तर आया। उसे पढ़कर हड़बड़ी में प्रकाश जान के पास आया।

'जान, जान, "क्ष" क्या है, यह प्रश्न हल हो गया—पर मुझे लगता है कि हमारे हित की दृष्टि से बहुत देर हो गयी। "क्ष" कृष्णविवर है और हम तेजी से उसकी ओर दौड़ रहे हैं।'

कृष्णविवर अर्थात् अत्यधिक आकुंचन प्राप्त वस्तु। उसका गुरुत्वाकर्षण इतना प्रबल होता है कि उसमें से प्रकाश बाहर नहीं निकल सकता। इसीलिए यह 'क्ष' पृथ्वी पर की वेधशालाओं से अथवा पास से भी जान और प्रकाश को दिख नहीं रहा था। आइंस्टाइन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत के अनुसार विश्व में कृष्णविवर का अस्तित्व संभव है; परंतु अभी तक ऐसे कृष्णविवर खगोलज्ञों को मिले नहीं थे। इसीलिए 'क्ष' कृष्णविवर होगा; यह दलील थोड़े-से ही विज्ञानियों ने पेश की थी और ज्यादातर ने उसका स्वागत नहीं किया था।

'अब आगे क्या होगा?' उत्तर की लगभग कल्पना होते हुए भी जान ने प्रश्न किया।

'बहुत करके हम "क्ष" के मुख में गिरेंगे। आशा की एक धुंधली किरण है। हमारी यात्रा का मार्ग 'क्ष' के केंद्रबिंदु की ओर न होकर उसका चक्कर काटता हुआ है। अभी कंप्यूटर निश्चित बता नहीं सकता। उसे ऑबिट का और डेटा चाहिये। मैं उसे फिर चालू करके आता हूं, तब तक तुम कंट्रोल से संपर्क साधो।'

जान ने कंट्रोल को संदेश भेजने का प्रयत्न किया, पर कोई लाभ नहीं हुआ। कंट्रोल की ओर से जैसे अत्यंत वेग से बोले जा रहे हों ऐसे शब्द आ रहे थे; उनका कुछ भी अर्थ लग नहीं पाता था। इतने में ही प्रकाश वहां आया। उसका चेहरा एकदम सफेद पड़ गया था। 'जान, कंप्यूटर हमारी मृत्यु की भविष्यवाणी कर रहा है। वह बता रहा है कि हम "क्ष" के पास जाकर उसके लगभग दस लाख चक्कर काटकर फिर उसके अंदर गिर जायेंगे। कंट्रोल की क्या खबर है?'

जान ने परिस्थिति का अंदाज उसे कराया।

प्रकाश समझ गया कि कंट्रोल से संबंध टूट गया; अब सभी निर्णय हमें ही लेने होंगे।

'अभी भी आशा की कुछ गुंजाइश है। कृष्णविवर के चारों ओर जो अस्थिर गोलाकार मार्ग (अनस्टेबल सर्क्युलर ऑर्बिट) होता है, हम उसके पास जाने वाले हैं। उस मार्ग की अस्थिरता का फायदा उठाऊंगा। उचित समय पर एक राकेट फायर करेंगे तो हमारी ही निर्माण हुई अस्थिरता के कारण हमारे यान को बाहर फेंक दिया जाना शायद संभव है। वैसा हुआ तो ठीक, नहीं तो दुनिया से अपनी राम-राम। अब हमें कम्प्रेस्ड सूट में प्रवेश करना चाहिये।'

'कम्प्रेस्ड सूट की क्या आवश्यकता है?" जान ने भविष्य की चिंता में भरकर प्रश्न किया।

'अरे, ज्यों-ज्यों हम "क्ष" की ओर जायेंगे, वैसे-वैसे उसके गुरुत्वाकर्षण के ज्वार की शक्ति (टाइडल पावर) हमें अधिक अनुभव होगी। इस टाइडल पावर के कारण ही चंद्रमा का गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी पर समुद्र के ज्वार के समय मालूम पड़ता है। अब कल्पना करो कि "क्ष" की ओर जाते हुए तुम्हारा सिर "क्ष" के एकदम पास और पैर एकदम दूर हैं। "क्ष" के गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव तुम्हारे सिर पर जितना होगा, उतना पैरों पर नहीं होगा। इसका परिणाम क्या होगा?'

'मेरा शरीर सिर से पैर तक तनेगा।' जान का दिमाग अब चलने लगा था।

दिसंबर १९७४ के अंतिम सप्ताह में तळेगांव-दाभाडे (जिला-पूना) में नवां 'मराठी विज्ञान संमेलन' हुआ था। इस अवसर पर एक 'विज्ञान-रंजन कथा स्पर्धा' आयोजित की गयी थी और उसमें 'नारायण विनायक जगताप' के नाम से आयी 'कृष्णविवर' कहानी को पारितोषिक प्राप्त हुआ। इसके बाद यह कहानी मैंने लिखी है ऐसा सुखद रहस्योद्‍घाटन करने वाला डा. नारळीकर का पत्र मराठी विज्ञान परिषद् के मंत्री को मिला। प्रस्तुत कहानी मराठी विज्ञान परिषद् के सौजन्य से हम प्रकाशित कर रहे हैं।

—संपादक

'ठीक! और यह तनाव इतना विलक्षण होगा कि वह हमसे वर्दाश्त नहीं होगा। हम कम्प्रेस्ड अवस्था में रहेंगे, तो शायद वह परिणाम हमारे अवयवों को उतना अनभव नहीं होगा।' प्रकाश ने स्पष्ट किया। 'तुम अंतरिक्ष यान को स्वयंचलित अवस्था में रखो, तो कंप्यूटर उसे पृथ्वी की दिशा दिखायेगा। किस्मत जोरदार होगी तो अड्डे पर के लोग हमें सतर्क कर देंगे।'

सभी तैयारी करके कम्प्रेस्ड सूट में प्रवेश करने के पहले दोनों ने आकाश का दर्शन किया। तारा-समूह विशेष प्रकाश से चमक रहे हैं, ऐसा उन्हें लगा। यही क्या उनका संसार का अंतिम दर्शन होगा?

× × ×

श्रीहरिकोटा अड्डे पर जब WIJ-10 इन

अक्षरों वाला अंतरिक्षयान उतरा, तो वहां के टेक्नीशियनों को आश्चर्य का धक्का-सा लगा। इस नाम का यान किसी को भी स्मरण नहीं था। और तो और, उसके आगमन की पूर्व सूचना भी नहीं मिली थी। इस अनियंत्रित यान की बारीकी से जांच करके उन्होंने उसके अंदर के दोनों कुंभकर्णों को बाहर निकाला और उन्हें मैक्सिमम सिक्योरिटी मेडिकल सेक्शन को रवाना कर दिया। दोनों के नाम और चेहरे अड्डे के लोगों के लिए सर्वथा अपरिचित थे।

'अजी सब्र कीजिये—डाक्टर ने आपको हिलने-डुलने से मना किया है।' एम. एस. एम. एस. की परिचारिका अनुपमा प्रकाश से कह रही थी—'यहां के वैज्ञानिक शीघ्र ही आपसे मिलने आयेंगे। उन्हीं को सब कुछ बताइयेगा।'

'मुझे बस दो-एक मित्रों को फोन कर लेने दो। मैं सकुशल आ गया हूं, बस इतना बताना है। यह देखो, मेरी आटोमेटिक घड़ी बता रही है कि मुझे यहां से निकले तीन साल हुए। वे लोग चिंता कर रहे होंगे कि मैं कहां गायब हो गया, इसलिए ......'

'तीन वर्ष ?' अंदर आते-आते प्रकाश के शब्द सुनकर हवाई अड्डे के प्रमुख वैज्ञानिक डा. रामस्वामी बोल उठे—'तीन वर्ष पूर्व यहां से कोई भी यान मानव-यात्रियों को लेकर नहीं रवाना हुआ। पिछले पांच वर्षों से हम केवल स्वयंचलित यंत्रों वाले मानव-रहित यान भेज रहे हैं।'

'असंभव! अपने रेकार्ड जांच कर देखिये।' प्रकाश आश्चर्य से चीखा—'मेरी घड़ी के अनुसार तीन साल पंद्रह दिन पहले मैं और जान फाकनर वृहस्पति की ओर रवाना हुए थे। जान से पूछिये। नहीं तो प्रोफेसर रमेश अग्रवाल से संपर्क कीजिये। तब आपको विश्वास हो जायेगा।'

'जान अभी भी बेहोश है। पर तुम जिन प्रोफेसर अग्रवाल का जिक्र करते हो, वे हाल में ही रिटायर हुए हैं। देखता हूं कि क्या उनके घर का पता मिलता है।' रामस्वामी ने जानकारी दी।

प्रकाश का सिर चकराने लगा। जब वह WIJ-10 पर यात्रा पर निकला था, प्रोफेसर साहब ने हाल में ही चालीसी लांघी थी। उसने डरते-डरते पूछा—'इस समय कौन-सा सन चल रहा है?'

उत्तर के रूप में रामस्वामी ने उसके हाथ पर उस दिन का अखबार रख दिया। उस पर की तारीख देखकर प्रकाश को मूर्च्छा आ गयी।

वह बीस साल बाद पृथ्वी पर वापस लौटा था।

प्रकाश को होश में आने में दो सप्ताह लगे। उसका दिमाग फिर ठिकाने पर लाने में परिचारिका अनुपमा का बहुत बड़ा हाथ था। और उसके ब्रह्मचर्य की अब विकेट गिरेगी, इसके लक्षण दिखने लगे थे। उस प्रेम-प्रकरण में अवकाश-यात्रा का जिक्र बिलकुल मत करना, इस डाक्टरी ताकीद का पालन अनुपमा बड़ी सावधानी से कर रही थी।

[शेष पृष्ठ ९६ पर]

मधुमेह और भारतीय जड़ी-बूटियां

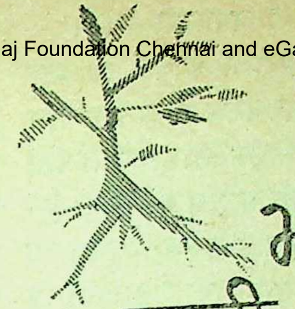

डा. शशि भारत व्होरा

क्या जड़ी-बूटियों के [illegible] से मधुमेह का उपचार संभव है? मधुमेहरोधी देशी द्रव्यों पर पिछली चार दशाब्दियों में हुए अनुसंधान के आधार पर हम बिना झिझक के कह सकते हैं कि हां।

मधुमेह से भारत की पहचान पुरानी है। इसके प्रारंभिक उल्लेख ईसा से छह शताब्दी पूर्व तक खोजे जा सकते हैं। सन २०० के आस-पास रचित 'चरक-संहिता' में बहुमूत्रता और मिठास-युक्त मूत्र को इस रोग का लक्षण बताया गया है। विद्वानों का मत है कि चरक-संहिता अग्निवेश संहिता का प्रति संस्कृत रूप है; और अग्निवेश-संहिता की बहुत-सी सामग्री ईसा से छह सौ वर्ष तक पुरानी है।

सुश्रुत संहिता (रचना-काल : सन ५००) में इस रोग का वर्णन मधुमेह नाम से किया गया है। अष्टांगहृदय, भावप्रकाश, माधवनिदान, शार्ङ्गसंहिता आदि में भी मधुमेह का वर्णन है।

मधुमेह का उपचार हमारे यहां ज्यादातर जड़ी-बूटयों से निर्मित आसवों और अरिष्टों पर आधारित रहा है। खनिजों से निर्मित भस्मों का भी प्रयोग हुआ, मगर कम। ये सभी मुंह से ली जाने वाली दवाइयां हैं। मधुमेह जैसे जीर्ण और हठीले रोग की चिकित्सा के लिए मुंह से दवा देना ही अधिक उपयुक्त है; क्योंकि इसमें रोगी को शारीरिक पीड़ा या असुविधा पहुंचाये बिना आवश्यकतानुसार लंबे समय तक उपचार जारी रखा जा सकता है। अतः मधुमेह संबंधी वर्तमान खोजों का लक्ष्य भी रक्त में शक्कर की मात्रा घटाने वाली मुखवर्ती औषधों का पता लगाना है। वानस्पतिक उत्पादन का अनुसंधान इस ध्यान से मेल खाता है।

मधुमेह के उपचार में प्रयुक्त जड़ी-बूटियों एवं वानस्पतिक पदार्थों से संबंधित जानकारी विशृंखल रूप में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी थी—कुछ आयुर्वेदाचार्यों के पास, कुछ हस्त-लिखित पोथियों में तथा कुछ मुद्रित किंतु अनुपलब्ध पुस्तकों में। बड़े परिश्रम से इन सबको जुटाकर क्रमबद्ध किया गया। फिर भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद, भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होम्योपैथी की केंद्रीय परिषद के तत्त्वावधान में राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा विभिन्न महाविद्यालयों के विज्ञानी इसकी जांच में जुट गये कि इन प्राचीन दवाओं के बारे में किये जाने वाले दावे कहां तक सच हैं। इस काम

में प्रयोगात्मक विधियां अपनायी गयीं।

वैसे अचूक मधुमेहरोधी औषध तो वही है जो रोगी में उपापचयन संबंधी तमाम गड़बड़ियों को दूर करके सामान्य स्थिति ला दे। किंतु प्राथमिक महत्त्व की चीज है—रक्त शर्करा का स्तर। इसलिए मधुमेह की दवा के रूप में वानस्पतिक उत्पादनों के मूल्यांकन के लिए यही पैमाना चुना गया।

जानवरों को वानस्पतिक संपाक खिलाने के बाद उनके शरीर में रक्तशर्करा-मान के परिवर्तनों का अध्ययन भी इन प्रयोगों में संमिलित था। ये प्रयोग सामान्य स्वस्थ जानवरों पर भी किये गये और रासायनिक, हारमोनल तथा शल्य विधियों द्वारा कृत्रिम रूप से मधुमेह-रोगी बनाये गये जानवरों पर भी किये गये। अधिकांश वैज्ञानिकों ने प्रयोगों के लिए खरगोशों को चुना। परंतु कुत्ते-बिल्ली, बंदर, चूहे और गिनीपिग भी इस्तेमाल किये गये।

काफी बड़ी तादाद में पौधों और खनिज-उत्पादनों पर विस्तृत अध्ययन हुए। कुछ के परिणाम आशाजनक निकले और कुछ प्रयोगों में आशातीत सफलता प्राप्त हुई। इनमें से कुछ का उल्लेख यहां किया जा रहा है।

करेले के संपाक और करेले के ताजे रस से प्रयोगाधीन जानवरों के रक्त-शर्करा के अनुपात में पर्याप्त कमी आयी। मधुमेह के रोगियों पर इनकी चिकित्सकीय जांच के भी अच्छे परिणाम सामने आये। इसके सक्रिय तत्त्व 'चरांतिन' का पता लगाने में और उसका पृथक्करण करने में भी विज्ञानी सफल रहे। करेले का यह सार-तत्त्व मधुमेह-रोधी प्रचलित दवा 'टालबुटेमाइड' से भी अधिक असरकारी माना जाता है।

अतः मधुमेह-रोधी शाकीय पदार्थों में करेले का स्थान सर्वोच्च है। यह सहज उपलब्ध है, सस्ता है, विष-रहित और हानि-रहित है। इसकी शिनाख्त की भी कोई समस्या नहीं। चूंकि यह सर्वाधिक असरकारी होने के साथ-साथ सस्ता व सहज-सुलभ है, इससे निर्मित दवाइयां मुफ्त चिकित्सा के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं, खासकर देहात में।

कुछ अन्य सामान्य सब्जियों—प्याज, लहसुन, पत्ता गोभी—में भी रक्त-शर्करा के स्तर को घटाने का गुण है। जामुन के बीजों की मधुमेह-रोधी शक्ति और क्रिया से तो हमारे ग्रामीण लोग काफी परिचित हैं। पिछले कुछ वर्षों में प्रयोगशालाओं और चिकित्सकीय संस्थानों में हुई जांचों से भी इसकी उपयोगिता की पुष्टि हुई है।

कुछ अन्य वानस्पतिक उत्पादनों में से जिनके उत्साहजनक परिणाम सामने आये हैं, वे हैं—गुरमार, सप्तरंगी, बिजसार, बड़, गूलर, तरवर, रतनजोत आदि। भारतीय चिकित्सा पद्धति में प्रचलित कुछ खनिज उत्पादनों की जांच-पड़ताल से भी अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं। ये पदार्थ हैं—शिलाजीत, जस्त-भस्म, त्रिभंग-भस्म आदि।

मगर किसी भी औषध के प्रयोगशालीय परीक्षण के आधार पर ही अंतिम निर्णय

पर नहीं पहुंचा जा सकता। चिकित्सालयों में वर्षों उपयोग करने के बाद ही यह तय किया जा सकता है कि औषध असरकारक भी है और हानिरहित भी। मधुमेह-रोधी औषध के रूप में भारतीय जड़ी-बूटियों और उनके उत्पादों की भैषज्य वैज्ञानिक और चिकित्सकीय जांच बड़े पैमाने पर अभी होनी है। मगर अब तक के प्रयोगों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस अनुसंधान से मधुमेह के रोगियों के लिए काफी लाभकर परिणाम निकलने की पूरी आशा है।

–इंस्टिटयूट ऑफ़ हिस्ट्री ऑफ़ मेडिसिन
एंड मेडीकल रिसर्च, तुगलकाबाद,
नयी दिल्ली-६२

★

पिछले वर्षों में इस बात का काफी प्रचार हुआ है कि तंबाकू मनुष्य के लिए हानिकारक है। परंतु धूम्रपान करने वालों की संख्या लगातार बढ़ी ही है। तंबाकू की प्रति एकड़ पैदावार भी पिछले वर्षों में ८०० किलोग्राम से बढ़कर १,३०० किलोग्राम हो गयी है। तंबाकू की एक ऐसी किस्म भी अब पैदा की जाने लगी है, जिस पर सूखे का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इससे भी आगे बढ़कर, निकोटीन की कम मात्रा वाली एक नयी किस्म की तंबाकू के विकास के लिए सफल प्रयोग किये गये हैं।

इस नयी तंबाकू के विकास में भारतीय कृषि-अनुसंधान परिषद् के वैज्ञानिकों का हाथ रहा है। इसके लिए उन्होंने जो विधि अपनायी उसे कृषि-विज्ञान में म्यूटेशन-ब्रीडिंग कहा जाता है।

डा. पटेल के अनुसार इसमें निकोटीन की मात्रा सिगरेट की सामान्य तंबाकू से लगभग एक तिहाई कम होगी। बताया गया है कि बीड़ी की तंबाकू में निकोटीन की मात्रा ५ प्रतिशत, पाइप की तंबाकू में ४ प्रतिशत और सिगरेट की तंबाकू में २ से लेकर ३ प्रतिशत तक होती है। परंतु सिगरेट के कागज के हानिकारक प्रभाव से निकोटीन-न्यूनता का लाभ समाप्त हो जाता है। हुक्के की तंबाकू में निकोटीन की मात्रा लगभग ५ प्रतिशत होती है; परंतु पानी में से गुजरते समय तंबाकू के धुएं की लगभग आधी निकोटीन पानी में रह जाती है। बीड़ी के धुएं में क्षारीय तत्त्वों की अधिकता रहती है; इसलिए बीड़ी कम हानिकारक समझी जाती है।

पिछले दिनों छपे आंकड़ों के अनुसार, हुक्के और खाने की तंबाकू का इस्तेमाल लगभग २५ प्रतिशत कम हुआ है; परंतु बीड़ी पीने वालों की संख्या में लगभग १ प्रतिशत और सिगरेट के शौकीनों की संख्या में ४-५ प्रतिशत वृद्धि हुई है।

भारत के अलावा रूस और अमरीका के वैज्ञानिकों ने भी तंबाकू की किस्म को सुधारने के लिए अनेक प्रयोग किये हैं। इस सिलसिले में यह नयी बात सामने आयी है कि नाइट्रोजनी उर्वरकों के प्रयोग से तंबाकू में निकोटीन की मात्रा बढ़ जाती है।

★

हिमालय की गोद में

पृथ्वीपाल पांडेय

हिमालय का रहस्यमय जीव यति जब तब मैदानी अखबारों में भी स्थान पा जाता है। उसका ताजातर समाचार 'युवती ने यति देखा' शीर्षक से १८ जुलाई १९७४ के अखबारों में छपा था। समाचार में बताया गया था कि एक १९ वर्षीय युवती यति को एकाएक देखकर बेहोश हो गयी। नेपाल के सोलोखोंबू जिले में नामचे बाजार के उत्तर-पूर्व खोनार नामक चरागाह में वह सुरागायें चरा रही थी। उसके देखते-देखते यति ने उसकी पांच सुरागायों को गला मरोड़कर मार डाला। युवती ने बताया कि यति चार-पांच फुट ऊंचा था, कमर के नीचे मोटे-मोटे काले बाल थे और कमर के ऊपर भूरे बाल। उंगलियां मोटी तथा मजबूत थीं और नाखून लंबे थे। पैरों के पंजे पीछे की ओर थे। पहले तो वह चार पैरों पर चला और फिर थोड़ा आगे चलकर दो पैरों पर भाग गया।

हिम-मानव के देखे जाने का यह पहला वाकया नहीं है। हिमालय की सुनसान बर्फीली घाटियों में यति कई बार देखे गये हैं। पहली घटना सन १८८७ की है। ब्रिटिश पर्वतारोही कर्नल बैडेल ने सिक्किम में १६ हजार फुट की ऊंचाई पर बड़े-बड़े पंजों के निशान देखे। कुछ समय बाद एक प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री हेनरी सियूस ने हिम-मानव की खोज शुरू की। एक दिन उसने भी बर्फ पर बड़े-बड़े पंजों के निशान देखे। कुछ और आगे बढ़ने पर उसे बड़े-बड़े बालों वाला एक लंबा और डरावना जीव दिखाई पड़ा। सियूस को देखते ही वह भाग खड़ा हुआ और बर्फीली पर्वत-शृंखलाओं में कहीं अदृश्य हो गया।

सन १९२१ में लेफ्टिनेंट कर्नल सी. के. हेवर्ड के नेतृत्व में पहला पर्वतारोही दल एवरेस्ट-विजय के लिए गया। दल के सदस्यों ने काफी ऊंचाई से देखा कि नीचे एक बर्फ-ढंकी घाटी में एक भीमकाय प्राणी चल रहा है, जिसका शरीर लंबे-लंबे बालों से ढंका हुआ है। तीन वर्ष बाद एक भारतीय विज्ञानी ए. एन. तोबाझी ने भी ऐसा ही प्राणी देखा।

कभी-कभी यति के कारण हिमालय की पहाड़ियों में रहने वाले लोगों को काफी क्षति उठानी पड़ती है। १९३५ की एक घटना है। हिमालय में १६ हजार फुट की ऊंचाई पर एक गांव क्यांग शू है। उसके निवासियों का मुख्य पेशा है भेड़ें पालना। एक दिन सवेरे-सवेरे उन्होंने कुत्तों को लगातार भौंकते सुना। यह सोचकर कि किसी ने हमारी भेड़ों पर हमला कर दिया है, वे दौड़े-दौड़े भेड़ों के पास गये। वहां उन्होंने एक हिम-मानव

को खड़े देखा। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। एक आदमी ने अपनी बंदूक से दो फायर किये, लेकिन हिम-मानव दो भेड़ों को मारकर भाग गया। उसे एक भी गोली न लगी। पहले तो वह चारों पैरों पर चला, लेकिन बाद में दो पैरों पर खड़ा होकर भागा और बर्फीली पहाड़ियों में खो गया। इस घटना से चारों ओर खलबली मच गयी।

सन १९४८ में भी ऐसा ही हुआ। नार्वे के दो विज्ञानी—थोरबर्ग तथा फ्रासिस्ट यूरेनियम की खोज में सिक्किम में घूम रहे थे। उन्होंने बर्फ पर कुछ पदचिह्न देखे। जिज्ञासावश वे उन चिह्नों के सहारे आगे बढ़े। कुछ दूर जाने पर उन्हें दो हिम-मानव या यति नजर आये। वैज्ञानिकों ने उन्हें मारने का प्रयत्न किया; परंतु हिम-मानव ने फ्रासिस्ट को जख्मी कर दिया। इसी बीच थोरबर्ग ने मौका पाकर गोली दाग दी। धमाका सुनकर हिम-मानव भाग खड़े हुए।

यति की खोज जारी रही। १९५५ में लंदन के प्रसिद्ध समाचारपत्र 'डेली मेल' ने यति की विस्तृत जानकारी पाने के लिए एक दल हिमालय पर भेजा, जिसमें एक पर्वतारोही, एक जीवविज्ञानी और एक फोटोग्राफर भी थे। दल ने काठमांडू की उत्तरी पहाड़ियों में भ्रमण किया। उसे यति तो कहीं न मिला, किंतु उसके द्वारा छोड़ी गयी सामग्री—जैसे वनस्पति, पत्तियां, बाल और चूहे की हड्डियां इत्यादि—मिली।

इसी तरह एक दल अमरीका ने भी सन १९५८ में हिमालय भेजा। उसके एक सदस्य प्रो. तेंबा ने एक रात को झरने के किनारे एक भीमकाय प्राणी को बैठे देखा। जैसे ही कोई मेंढ़क सामने आता उसे वह उंगलियों से पकड़कर मुंह में रख लेता। यह यति था। प्रो. तेंबा ने टार्च की तेज रोशनी उस पर फेंकी, तो वह उनकी ओर ही दौड़ता हुआ आया। वे बमुश्किल जान बचाकर भाग पाये। उसी वर्ष इतालवी पत्रकार गाडविन ने हिम-मानव के कुछ फोटो भी खींचे थे।

२५ मार्च १९७० की सुहानी रात। चांदनी बर्फ पर दमक रही थी। दूर तक हिमालय की ऊंची-ऊंची चोटियां सीना ताने खड़ी थीं। लगभग १२-१३ हजार फुट की ऊंचाई पर ब्रिटेन के कुछ पर्वतारोहियों का कैंप लगा था। अगले दिन उन्हें अन्नपूर्णा पर चढ़ना था और वे उसी के बारे में विचार-विनिमय में तल्लीन थे कि उन्हें पर्वत की श्वेत पृष्ठभूमि पर एक विचित्र आकृति दिखाई दी, जिसकी छाया काफी लंबी थी। साथ में आये शेरपाओं ने उन्हें इशारे से बताया कि यही यति यानी हिम-मानव है। अगले दिन सवेरे उन्होंने उसके पंजों के निशान के फोटो भी खींचे।

यति के बारे में नवीनतम जानकारी दी है ब्रिटेन के तीन जीव-विज्ञानी जे. ए. मीनेली, ई. डी. क्रोनिन और एच. बी. एमरी ने। सन १९७२ के दिसंबर में वे तीनों व्यक्ति हिमालय की काफी ऊंचाई पर यति की खोज कर रहे थे। उन्हें अपने कैंप के पास हिम-मानव के पैरों के निशान मिले। ये किसी

ज्ञात प्राणी के पदचिह्नों जैसे नहीं थे। इन विज्ञानियों का विचार है कि यति लाखों वर्ष पूर्व के भीमकाय बंदर जायन्टोपिथेकस का वंशज हो सकता है। यह उल्लेखनीय है कि जायन्टोपिथेकस के १ करोड़ २० लाख से ५ लाख वर्ष पुराने जीवाश्म हमारे देश में बिलासपुर में तथा चीन में क्यांगसी में मिले हैं। उस काल में मानव अपने विकास की पहली सीढ़ी पर था। यति के पदचिह्न निश्चय ही बंदर के पदचिह्नों जैसे होते हैं और आकार की दृष्टि से जायन्टोपिथेकस-जीवाश्म से मिलते हैं। मीनेली एवं उनके सहयोगियों की धारणा है कि आज से लगभग ५ लाख वर्ष पहले मानव पत्थर, हड्डी तथा लकड़ी के हथियारों और आग का प्रयोग सीख जाने के बाद अनेक प्राइमेंटों की तुलना में ताकतवर हो गया। अतः जायन्टोपिथेकस और प्राइमेंटों ने अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए ऐसे स्थानों की शरण ली, जो मानव की पहुंच से परे था और वहां के अनुकूल अपने को ढाल लिया।

इन विज्ञानियों का विश्वास है कि यति हिमालय के जंगलों में रहता होगा। वह बर्फ में नहीं रह सकता; क्योंकि ऐसे निर्जन भू-भाग में इतने बड़े स्तनपायी का जीवित रह सकना बड़ा कठिन है। पर्वत की ऊंचाई पर स्थित जंगलों से ही उसे पर्याप्त आहार मिल सकता है। यति लगभग १५० से १६५ सेंटिमीटर ऊंचा होता है। उसका शरीर लंबे और मोटे बालों से ढंका होता है, जिनका रंग ललछौंह भूरे से लेकर धूसर भूरे तक होता है। सिर भारी व ऊपर की ओर नुकीला, चपटा तथा बालरहित चेहरा, लंबे दांत, चौड़ा मुंह, बड़ी-बड़ी भुजाएं और पैर लंबे-यह है इसका हुलिया। वह अपने को मनुष्य से छिपाये रखने के लिए एक घाटी से दूसरी घाटी में विचरण करता है; इसलिए बहुत कम दिखाई देता है।

कुछ शेरपा दावा करते हैं कि यति को देखा है। वे बताते हैं कि उसका रंग ललछौंह भूरा और शरीर प्रायः लंबे बालों से ढंका होता है। उसकी आवाज चीख, गुर्राहट और कराह के मिश्रण जैसी होती है। धार्मिक लोगों का विश्वास हैं कि यति हिमालय में देवताओं का पहरेदार है। तिब्बती लामा यति को तीन वर्गों में रखते हैं—क. न्याल्मों : १३-१५ फुट ऊंचा, पूर्णतया मांसभक्षी; ख. रीमी: ६-८ फुट ऊंचा, सर्वभक्षी; और ग. राक्सी; ५ फुट तक ऊंचा, पूर्णतया शाकाहारी। संभवतः इस वर्गीकरण का आधार है, विभिन्न ऊंचाइयों पर उनका आवास।

कहते हैं कि यति बच्चों को बहुत प्यार करता है। बताया जाता है कि एक बार एक हिम-मानव पांच वर्ष की एक सुंदर बच्ची को उठा ले गया। उसे पांच वर्ष तक सुख-सुविधा से अपने पास रखा और पिता जैसा प्यार दिया। वह उसे खाने के लिए छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े तथा पत्तियां आदि देता और अपनी बोली में उससे मीठी-मीठी बातें करता। परिणाम यह हुआ कि लड़की उसी की बोली तथा आदतें सीख गयी। पांच

वर्ष बाद अचानक वह बीमार पड़ गयी और आठ दिनों तक उसने मुंह में कुछ भी न डाला। यति को बहुत दुःख हुआ और वह उसे वहीं छोड़ गया, जहां से उठाकर ले गया था। माता-पिता अपनी खोयी पुत्री सुरक्षित पाकर गद्गद हो गये, किंतु जब उन्होंने उसे चार पैरों पर चलते और पशु जैसे गुर्राते देखा, तो बड़े चिंतित हुए। आखिर एक वर्ष के सतत प्रयास के बाद कहीं वह बालिका मानव-आचरण सीख सकी।

जो भी हो, यह निश्चित है कि हिमालय की बर्फीली घाटियों में कोई रहस्यमय प्राणी रहता है। उसे यति या हिम-मानव कहें या और कुछ नाम दें। अब तक ज्ञात बातों के अनुसार, वह ४ से १० फुट तक लंबा होता है, उसके पैरों के पंजे की लंबाई लगभग १८ इंच होती है। हाथ काफी लंबे होते हैं। उंगलियां मोटी होती हैं और नाखून छेनी के समान तेज होते हैं। सीना चौड़ा और मजबूत होता है। चपटे चेहरे में आंखें छोटी जड़ी होती हैं। मुंह चौड़ा होता है। अधिकतर दो पैरों से चलती है, कभी-कभी चारों पैरों से भी। उसकी आवाज बड़ी विचित्र होती है। मांस, कीड़े-मकोड़े और वनस्पति उसके प्रिय आहार हैं। प्रतीक्षा कीजिये। संभव है, आगे चलकर और भी तथ्य सामने आये तथा रहस्य का परदा हट जाये।

—सूचना एवं प्रकाशन, गो. ब. पंत कृषि एवं प्रौ. वि. विद्यालय, पंतनगर, नैनीताल

★

सक्षम प्रकृति

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (नयी दिल्ली) के डा. जी. एस. वेंकटरामन के कथनानुसार संश्लेषित नाइट्रोजनी उर्वरकों में ३०-४० प्रतिशत तक की बचत नील-हरित शैवाल (एलगी) के प्रयोग द्वारा की जा सकती है। इन शैवालों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन के सीधे यौगिकीकरण की क्षमता विद्यमान है। मृदा को शैवाल द्वारा निवेशित किये जाने पर प्रति हेक्टर लागत ५-१० प्रतिशत अधिक आती है, परंतु इससे उपज-उपलब्धि ४०० से लेकर ६०० रुपये तक बढ़ जाती है। विभिन्न फसलों पर किये गये प्रयोगों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शैवाल के प्रयोग द्वारा बिना नाइट्रोजनी उर्वरकों के ही कई फसलें लगातार प्राप्त की जा सकती हैं।

जरा यहां 'नाइट्रोजन-यौगिकीकरण' को समझ लें। वायुमंडल में नाइट्रोजन गैस का अपार भंडार विद्यमान है। नाइट्रोजन की आवश्यकता उर्वरकों के लिए भी होती है। विभिन्न रासायनिक प्रक्रमों द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन गैस को उपयोगी रासायनिक पदार्थों (यौगिकों) में परिवर्तित करना पड़ता है। यह प्रक्रिया 'नाइट्रोजन यौगिकीकरण' कहलाती है। देश में इस समय रासायनिक उर्वरकों का सख्त अभाव है। ऐसे समय यह खोज उपादेय सिद्ध होगी।

★

अवकाश और मानव-जगत्

डा कुसुम अग्रवाल

दैनिक जीवन की भाग-दौड़, काम की व्यस्तता, पारिवारिक झंझटों और चिंताओं से अलग होकर आदमी अपने ढंग से कुछ समय बिता सके—यही अवकाश है। अवकाश स्फूर्ति देता है, मन में नया उत्साह भरता है, जिससे आदमी तरोताजा होकर फिर नये सिरे से काम में जुट जाता है। अवकाश के क्षण देश और काल की देन होते हैं। मानव-इतिहास के प्रारंभ में सर्वत्र अवकाश का आधिक्य था; लेकिन आज हमारा जीवन अवकाश और अनवकाश के बीच झूल रहा है। आज का मानव इस बात के लिए प्रयत्नशील है कि कम या ज्यादा जो भी अवकाश मिले, उसे कैसे अधिक सुंदर एवं उत्कृष्ट बनाया जा सके।

किसी देश के लोग अपने अवकाश का कैसे उपयोग करते हैं, यह अवकाश की काल-मर्यादा, आर्थिक परिस्थितियां, सामाजिक परंपराएं एवं रीति-रिवाज, भौतिक वातावरण, व्यक्तिगत मान्यताएं आदि अनेक बातों पर निर्भर रहता है। अवकाश के उपयोग के हजारों ढंग लोगों ने खोज निकाले हैं। यह दूसरी बात है कि किसी देश के वासी एक ढंग से अवकाश का आनंद उठाते हैं, तो किसी देश के किसी और ढंग से। नीचे प्रस्तुत है कुछ राष्ट्रों के निवासियों के अवकाश-कालीन जीवन की झांकी।

फ्रांस – सामान्य फ्रांसीसियों को वर्ष में प्राय: एक महीने का अवकाश मिलता है, लेकिन 'बाबू' वर्ग के कर्मचारियों को अब पांच सप्ताह का अवकाश मिलता है। इसे वे दो हिस्सों में विभाजित कर लेते हैं—तीन या चार सप्ताह का ग्रीष्मकालीन अवकाश, व एक या दो सप्ताह का शीतकालीन अवकाश। एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि ग्रीष्मकालीन अवकाश में १६ प्रतिशत लोग फ्रांस से बाहर (मुख्यत: स्पेन और इटली) चले जाते हैं, ४५ प्रतिशत समुद्र के किनारे चले जाते हैं, १०.५ प्रतिशत होटल में जाकर रहते हैं, १६ प्रतिशत व्यक्ति रमणीक स्थलों पर मकान किराये पर लेकर रहते हैं। ११ प्रतिशत लोग कैंप (मुख्यत: समुद्र के किनारे) लगाकर रहते हैं और ९.५ प्रतिशत अपने देहाती काटेज में जाकर रहते हैं।

वैसे, फ्रांसीसी सभ्यता का विशिष्ट लक्षण है कलाप्रेम, जो उसके निवासियों को प्राय: म्यूजियमों और कला-प्रदर्शनियों में खींच ले जाता है। फ्रांस की राजधानी पेरिस में व्यावसायिक कला-गैलरियों के अतिरिक्त ५० से भी अधिक संग्रहालय एवं प्रदर्शनियां एक साथ खुली रहती हैं। सन १९६६ में पिकासो के चित्रों की एक विशिष्ट प्रदर्शनी पेरिस में हुई थी और छह लाख से भी अधिक नागरिक उसे देखने गये थे। श्रेष्ठ भोजन में भी फ्रांसीसी परिवारों की अल्प-

धिक आसक्ति है। लेकिन हर १६ भोजनों में से एक भोजन वे घर के बाहर होटल आदि में ग्रहण करते हैं। इसके अतिरिक्त सॉकर (फुटबाल), टेनिस, तैरना, साइकल-सवारी आदि उनके प्रिय मनोरंजन हैं। पिकनिक और शहर के बाहर भ्रमण भी उन्हें बहुत प्रिय हैं।

चीन– यद्यपि आजकल वहां नागरिकों को यही सिखाया जाता है कि श्रम जीवन का परम मूल्यवान गुण है। फिर भी चीनी लोग जो भी अवकाश मिलता है, उसका अपने ढंग से उपयोग करते हैं। वे प्रायः घूमने-फिरने में रुचि रखते हैं। चीन की बड़ी दीवार उनका अतिप्रिय यात्रा-स्थल है। फिल्में, ओपेरा देखना भी उन्हें पसंद है, जो कि प्रायः क्रांति से संबंधित कथाओं पर आधारित होते हैं। टेबल टेनिस, सॉकर, बैडमिंटन आदि संघटित खेल खेलना भी उन्हें प्रिय है। त्योहार और उत्सव मनाने में उनका उत्साह देखते बनता है, विशेषतः वसंत के त्योहार में।

जापान – वैसे नववर्ष-दिन की छुट्टी ही वहां वैध सरकारी छुट्टी है; परंतु प्रायः सभी सरकारी और निजी संस्थाएं अपने कर्मचारियों को ३० दिसंबर से ५ जनवरी तक की छुट्टी देती हैं। वैसे तो वहां एक साल बाद छह दिन की और दस साल बाद दो या तीन सप्ताह की छुट्टी देने का नियम है; परंतु श्रमिक प्रायः वही छुट्टी लेते हैं, जो उनके लिए निर्धारित कर दी जाती है। बात यह है कि उन पर प्रायः काम का भार इतना अधिक रहता है कि वे छुट्टी लेना पसंद नहीं करते। गर्मी में दो या तीन दिनों की छुट्टी उन्हें मिलती है। अत्यधिक श्रम से थके होने के कारण वे प्रायः उसमें आराम करना ही पसंद करते हैं। लेकिन अब धीरे-धीरे वहां भी छुट्टी मनाने का शौक बढ़ता जा रहा है और लोग अवकाश-काल को थकान मिटाने का ही नहीं, आनंदोल्लास का भी साधन मानते हैं। एक बार जापानियों के निजी खर्चे का सर्वेक्षण किया गया। उससे उनकी कुछ मुख्य व प्रिय रुचियों का पता चला, जिनमें से कुछ का उनके अवकाशीय जीवन से गहरा संबंध है। वे ज्यादातर पैसा मदिरा व सिगार, पारिवारिक भ्रमण, रेडियो और टेलिविजन, पुस्तक व समाचारपत्र, जुआ आदि पर खर्च करते हैं। खेल-कूद, कैंपिंग, समद्र-यात्रा आदि उनकी गौण दिलचस्पियां हैं।

रूस–यहां लोगों को वर्ष में एक मास का अवकाश मिलता है; परंतु अवकाश के दिन भी अन्य दिनों की भांति उनके कार्यक्रम संघटित होते हैं। अवकाश के दिनों में प्रायः वे अपनी यूनियनों द्वारा आयोजित पायोनियर ग्रूप्स में एकत्र होते हैं। रूस में लगभग सभी स्त्री-पुरुष कोई नौकरी-धंधा करते हैं। अतः यह आवश्यक नहीं है कि जब पत्नी की छुट्टी हो, तभी पति की भी हो और अगर छुट्टियां एक साथ हों तो भी संभव है कि अलग-अलग यूनियनों द्वारा आयोजित पायोनियर ग्रूप में होने से उनके भ्रमण-स्थल भिन्न हों। वैसे रूस में नाग-

रिकों को पश्चिमी यूरोप के संपर्क से प्रायः बचाया जाता है और पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देशों की यात्रा की ही अनुमति प्रदान की जाती है। रही रूसियों के प्रिय मनोविनोदों की बात। तैरना लोकप्रिय नहीं है। वहां तालाब बहुत कम हैं, इसलिए बहुत कम रूसी तैरना जानते हैं। इसके बजाय अधिकांश लोग सूर्य की खुली धूप का आनंद लेना पसंद करते हैं या फिर नौका-विहार द्वारा धूप, पानी एवं प्रकृति-सौंदर्य का एक साथ आनंद लेते हैं। इसके अतिरिक्त मदिरा-पान, टेलिविजन, फिल्में या सांस्कृतिक कार्यक्रम देखना तथा वालीबाल, शतरंज, ताश खेलना उन्हें पसंद है। अब वहां सॉकर भी लोकप्रिय होता जा रहा है।

लोगों को घर बुलाकर उनका आतिथ्य करने में उन्हें आनंद आता है। परंतु प्रायः अतिथि उनके कारखाने या दफ्तर से ही संबंधित होते हैं। शीतकाल में यहां स्केटिंग का काफी प्रचलन है। स्केटिंग के लिए काफी स्थान भी हैं। क्रेमलिन के दक्षिण में मास्को नदी के किनारे गोर्की पार्क में डेढ़ मील का क्षेत्र स्केटिंग के लिए छोड़ दिया गया है। बहुत-से स्केटर सुबह ११ बजे से रात १० बजे तक वहां स्केटिंग करते रहते हैं।

इटली—लोगों को यहां साल में प्रायः एक माह का अवकाश मिलता है। इन दिनों में इनका मुख्य आकर्षण ओपेरा विदेश-भ्रमण एवं पौष्टिक तथा सुस्वाद भोजन की ओर रहता है। ओपेरा इटली के जीवन का विशेष अंग है, यहां तक कि टैक्सी ड्राइवरों को भी ओपेरा के सब गाने कंठस्थ होते हैं। ओपेरा टिकट प्रत्येक नागरिक की पहुंच के भीतर हो, इसका राज्य ने विशेष ध्यान रखा है। सबसे सस्ती सीट १.५० डालर की और सबसे महंगी ६ डालर की होती है। समुद्र-किनारे या पहाड़ी पर जाना भी वे बहुत पसंद करते हैं। और अच्छे खाने के भी शौकीन होते हैं। खाने के अंत में वे स्ट्रांग काफी पीते हैं। यूरोप में काफी का सर्वाधिक प्रचलन इटली में है। फिल्में देखना, सॉकर खेलना भी इन्हें भाता है।

आस्ट्रेलिया—यहां सरकारी व निजी, दोनों तरह के संस्थानों में कर्मचारियों को भी वर्ष में एक मास का अवकाश मिलता है। यहां तक कि नये कर्मचारियों को भी ३ सप्ताह का अवकाश अवश्य मिलता है। यहां सामान्य नागरिकों की औसत साप्ताहिक आय १३४ डालर होती है। यह देश बहुत विशाल है और यातायात बहुत महंगा है। विदेश जाना तो और भी व्ययसाध्य है। पड़ोसी देश न्यूजीलैंड जाने का किराया २३० डालर है। अतः प्रायः आस्ट्रेलियन घर पर ही रहकर अपने परिवार वालों के साथ अवकाश का आनंद उठाते हैं। वे खेलकूद के शौकीन होते हैं एवं शराब इनके जीवन का मुख्य अंग है। खेलों में इन्हें टेनिस एवं गोल्फ पसंद है। तैरना एवं नौका-विहार भी इन्हें भाता है। सिर्फ सिडनी में ही ३६ गोल्फ के मैदान, ३ घुड़दौड़-मैदान एवं ३४ समुद्र-तट (बीच) हैं।

ब्रिटेन—अंग्रेज बड़े अवकाश-प्रेमी होते हैं।

छुट्टी के दिन वे अपने मित्रों या संबंधियों के साथ गुजारते हैं। जिन्हें समुद्र का किनारा पसंद है, वे प्रायः स्पेन जाते हैं। लंदन की खुश्क सर्दी में ठिठुरने के बाद स्पेन की धूप उन्हें बहुत सुखद लगती है। १९७१ में २९ लाख अंग्रेजों ने स्पेन देखा। हॉबी के रूप में बागबानी करते हैं। विविध हस्तशिल्पों में अंग्रेज स्त्रियों की विशेष आसक्ति होती है। घूमना, नौका-विहार, मछली पकड़ना, गोल्फ खेलना पुरुषों के प्रिय मनोरंजन हैं। पुरुष प्रायः सॉकर और घुड़दौड़ में दांव लगाते हैं तथा स्त्रियां बिन्जों पर। नाटक देखना लोगों का आम शगल है। अकेले लंदन में लगभग १८० व्यावसायिक नाट्यगृह हैं।

पश्चिम जर्मनी – आम कर्मचारियों को साल में २१ से २८ दिन तक का अवकाश मिलता है और बड़े अफसरों को ६ सप्ताह का। अवकाश-काल में ४६ प्रतिशत परिवार विदेश भ्रमण की इच्छा रखते हैं। जो परिवार देश से बाहर नहीं जा पाते, वे समुद्र के किनारे या पहाड़ों पर चले जाते हैं, और वहां फ्लैट, काटेज या बंगला किराये पर लेकर रहते हैं। होटल या मोटल में रहना इन्हें पसंद नहीं। जर्मनी में ४०० यूथ हॉस्टल, कैंप लगाने लायक रमणीक स्थल, भ्रमणपथ १,४०० हैं। जर्मन जाति अपने को संस्कृति का ध्वजवाहक समझती है। जर्मनी के बहुत-से शहरों में संगीत की जबर्दस्त परंपरा है और प्रतिवर्ष उनमें संगीत-मेले होते हैं।

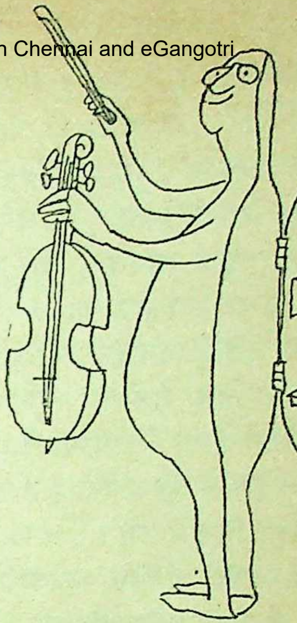

जर्मनों का मुख्य भोजन दोपहर का होता है। रात को ये बहुत हल्का खाना खाते हैं। प्रायः जर्मन कंपनियां ५० से ७० सेंट में बहुत अच्छा खाना देती हैं। टेलिविजन और सॉकर भी यहां दैनिक जीवन के मुख्य अंग हैं। जनसंख्या का सोलहवां अंश किसी न किसी स्पोर्ट्स क्लब का सदस्य है।

इस्रायल – इस्रायली गपशप, खाने-पीने व घूमने-फिरने के शौकीन हैं। ये पढ़ाकू भी बहुत होते हैं। इनके अवकाश का उपयोग प्रायः इन्हीं कार्यों में होता है। कुछ लोग छुट्टियों में यूनान या इटली चले जाते हैं, पर अधिकांश नागरिक इतना पैसा खर्च नहीं कर सकते, इसलिए अपने देश में ही घर पर रहते हैं या हॉस्टलों में चले जाते हैं।

मेक्सिको – मनोरंजन मेक्सिकी जीवन का मुख्य अंग है, अतः मेक्सिको में अवकाश-काल भी प्रायः मनोरंजन कार्यों में व्यतीत

होता है। बहुत से मेक्सिकी ग्रामों व नगर-चौकों में रविवार को निःशुल्क मनोरंजन कार्यक्रम होते हैं। फिल्में, सांडों की लड़ाई व सॉकर देखना अन्य जनप्रिय मनोविनोद हैं।

अमरीका—अवकाश-काल को अमरीकी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं और वर्ष में १०० अरब डालर अवकाश का आनंद लेने में ही खर्च कर देते हैं। त्योहार को छोड़कर बाकी छुट्टी के दिन घर पर गुजारने में उन्हें बड़ी कोफ्त होती है। प्रायः वे विदेश-भ्रमण या स्वदेश में ही दर्शनीय स्थानों के भ्रमण के लिए निकल जाते हैं। समुद्र के किनारे सूर्य-स्नान, कैंपिंग, नौकाविहार, तैरना, यहां के मुख्य शौक हैं। प्रायः सभी घरों में स्विमिंग पूल होता है। बेसबॉल, फुटबाल, सॉकर, गोल्फ आदि यहां के प्रिय खेल हैं। टी. वी. एवं फ़िल्मों का भी काफी प्रचलन है। किशोरों और युवकों का बहुत-सा फुरसत का समय 'डेटिंग' में खर्च होता है। बागबानी में बहुत-से लोग दिलचस्पी लेते हैं। दूर तक कार चलाना भी अवकाश-काल के उपयोग का अच्छा साधन है। बढ़िया भोजन, मदिरा और सिगार के तो ये लोग इतने प्रेमी हैं कि एक सर्वेक्षण के अनुसार ४६ प्रतिशत अमरीकियों का वजन उचित से अधिक है।

—७१४७ स्टयुवर्ट एंड ग्रे रोड अपार्टमेंट
२८ डाउनी, केलिफोर्निया-९०२४१

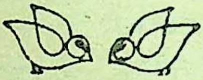

मोल-तोल

झगड़ू जब गांव से दिल्ली को रवाना हुए तो रिश्तेदारों ने उन्हें समझाया कि वहां हर चीज के दाम दुगुने करके बताये जाते हैं, इसलिए जो चीज भी खरीदो, होशियारी से खरीदना।

सो दिल्ली पहुंचकर झगड़ू को छतरी खरीदने की सूझी। उन्होंने दुकानदार से उसके दाम पूछे। जवाब मिला—'सोलह रुपये।'

'आठ लोगे?' झगड़ू ने गांव में मिली सीख पर अमल शुरू कर दिया।

'सुबह-सुबह बोहनी के वक्त कैसी बातें करते हो! चलो पंद्रह दो।'

'साढ़े-सात लोगे?'

'हद हो गयी चौधरी साब! चलो छोड़ो—न आपकी, न मेरी। चौदह निकालो और छाता लो।'

'सात लोगे!'

'मुफ्त में लोगे?' इस बार दुकानदार ने झल्लाकर कहा।

'तब दो छाते दोगे?' झगड़ू ने अपने उसी अंदाज में पूछा।

—नरेंद्र भारद्वाज

★

पानी में मौत

डा. शंकरराव पोतदार

क्रोध में कई बार हम किसी से कह बैठते हैं–'जा, चुल्लू भर पानी में डूब मर।' यह भी कहावत है–'उल्लू बसंत चुल्लू भर पानी में डूब मरता है।' चुल्लू भर पानी में कोई मरे या न मरे, मगर पानी में डूबकर मरने वालों की संख्या आश्चर्यजनक रूप से बड़ी है। अनुमान है कि प्रतिवर्ष दुनिया में डेढ़ लाख से भी अधिक मनुष्य इस प्रकार मृत्यु प्राप्त करते हैं–अकेले सं. रा. अमरीका में सात हजार। भारत के निश्चित आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। मगर पानी में होने वाली दुर्घटनाओं के विषय में जन-साधारण के अज्ञान तथा संभावित दुर्घटना-स्थलों पर प्रतिबंधक उपायों की व्यवस्था के अभाव को देखते हुए निश्चय ही यह संख्या काफी बड़ी होगी। खासकर समुद्र तथा नदियों के तटों पर बसे गांवों में प्रतिवर्ष आने वाले बाढ़-तूफान के कारण इस प्रकार की अपमृत्युओं की संख्या हैजे, पेचिश जैसी बीमारियों से होने वाली प्राणहानि से बाजी ले जाती है।

डूब मरने की दुर्घटनाएं क्यों और कैसे होती हैं, उनसे कैसे बचा जा सकता है, दुर्घटना के समय पर प्राणरक्षा के लिए क्या उपाय बरते जा सकते हैं–यह जानने के विषय में आम जनता काफी उदासीन लगती है। यही कारण है इन हादसों की संख्या इतनी ऊंची होने का। इसीलिए, डूबते समय मनुष्य के शरीर में होने वाले परिवर्तनों और डूबते आदमी को बचाने के उपायों की जानकारी हर नागरिक के लिए आवश्यक है।

'गीला' और 'सूखा' प्रकार

यों तो मनुष्य तैरना न जानने के कारण नदी-नहर की धार में बहकर, कीचड़-काई में पांव फंस जाने से या और किसी वजह से पानी में मौत का शिकार होता है। लेकिन यह तो बाहरी बात हुई। भीतरी तौर पर उसकी मौत नीचे बताये दो ढंगों से होती है:

१. साधारणतः फेफड़ों में पानी खींच लिया जाता है। पानी की वजह से फेफड़ों में हवा का शरीर से संबंध टूट जाता है, जिससे सांस घुटकर मनुष्य की मृत्यु होती है।

२. इसमें फेफड़ों में पानी दाखिल नहीं होता, शरीर के ठंडे पानी को छूने से ही सांस का रास्ता बंद हो जाता है। इस तरह अचानक सांस के रुकने से शरीर को आक्सिजन मिलना बंद हो जाता है और मृत्यु हो जाती है।

मृत्यु के समय पहले प्रकार में फेफड़े पानी से लबालब भरे होते हैं; दूसरे प्रकार

में वे पूर्णतः खाली होते हैं। इसी कारण पहले प्रकार को 'गीला' तथा दूसरे को 'सूखा' कहा जाता है। 'गीले' प्रकार में फेफड़ों में पानी भरने से शरीर को अधिक हानि पहुंचती है। इस कारण जब डूबे हुए मनुष्य को बचाने के प्रयत्न किये जा रहे हों, तब 'गीले' के बजाय 'सूखा' प्रकार में मनुष्य के होश में आने की अधिक संभावना होती है।

खारे व मीठे पानी का अंतर

गीले प्रकार की मृत्यु सागर के खारे पानी में भी हो सकती है, तालाब-झील-नदी आदि के मीठे पानी में भी। चाहे पानी खारा हो या मीठा उसका फेफड़ों में भर जाना ही मृत्यु का कारण होता है। परंतु शरीर के भीतर बहते हुए रक्त की अपेक्षा खारे पानी में क्षार की मात्रा बहुत अधिक होती है, जबकि मीठे पानी में क्षार बिलकुल नहीं होता। इस कारण शरीर की प्रतिक्रिया इन दोनों परिस्थितियों में अलग-अलग होती है।

प्रयोगशाला में कुत्तों पर किये गये प्रयोगों से पता चलता है कि मीठा पानी फेफड़ों से निकल रक्त में बहुत जल्दी दाखिल होता है। मीठे पानी में डूबने पर कुत्ते केवल दो मिनिट की अवधि में ही मर जाते हैं। इसके विपरीत खारे पानी में क्षार की अधिकता होने के कारण रक्त में से ही पानी का अंश फेफड़ों में खिंच आता है। इस तरह हृदय-गति कुछ अधिक काल जारी रहती है।

इस अंतर का महत्त्व यह है कि मीठे पानी में डूबते हुए आदमी को पानी से बाहर निकालकर उसे बचाने के प्रयत्न के लिए केवल दो मिनिट की अवधि मिलती है; जबकि खारे पानी में आठ-साढ़े आठ मिनिट का समय मिल जाता है। यानी मीठा पानी कितना ही रुचिकर क्यों न हो, डूबने वाले के लिए प्राणघातक विष ही सिद्ध होता है।

डूबने वाले की मरणानुभूति

डूबता हुआ मनुष्य मरने से पहले के कुछ मिनिटों में तीन निश्चित अवस्थाओं में से गुजरता है। पहले कुछ क्षण, ताजी हवा न मिलने से बेचैनी होती है और दिल की धड़कन तेज हो जाती है। दूसरी अवस्था में दम घुटने के लक्षण प्रकट होते हैं। ताजी हवा पाने के लिए हाथ-पैर मारे जाते हैं। फेफड़ों में हवा के बदले पानी खिंच आने से जोर की खांसी उठती है। फेफड़ों की हवा बाहर फेंकी जाती है और उसकी जगह पानी भरता जाता है। थोड़े ही समय में थकान से सुस्ती छा जाती है और मनुष्य तीसरी यानी बेहोशी की अवस्था में पहुंचता है। इस अवस्था में पहुंचने पर कोई हलचल नहीं होती और न ही मनुष्य बचने का कोई प्रयत्न करता है। इस अवस्था में भी यदि उसे पानी से बाहर निकालकर उसका प्रथमोपचार किया जाये, तो जान बच सकती है। परंतु इस दशा से गुजरने के पश्चात् प्राण बचाने के सारे प्रयत्न विफल होते हैं।

सुनकर आप चकित होंगे कि डूबकर मरने वाले के अंतिम क्षण बहुत ही शांत, निरामय तथा आनंदपूर्ण मनोदशा में गुजरते हैं। उसे मृत्यु से तनिक भी भय नहीं लगता; बल्कि जीवित रहने की अपेक्षा डूब

मरता ही उसे अधिक आनंददायी प्रतीत होता है। कहा जाता है कि सिद्ध पुरुष जलसमाधि लेकर अंत समय में 'ब्रह्मानंद' का अनुभव लेते हैं।

बचाव के उपाय :

आवश्यक है पानी में डूबते हुए को फौरन पानी के बाहर निकाला जाये और कृत्रिम श्वास का प्रयोग किया जाये। यह उपाय डूबे हुए व्यक्ति की सांस रुक जाने व हृदय का स्पंदन बंद होने के बीच के अल्पकाल में ही शुरू हो जाना चाहिये। हृदय की धड़कन बंद होने के पश्चात् हर प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध होता है। प्राण बचाने की योजना के लिए खारे पानी में साधारणतया पांच मिनिट की और मीठे पानी में दो मिनिट की अवधि मिलती है। इसलिए बचाव-कार्य जल्दबाजी में करना पड़ता है। इसीलिए यह भी सुझाव दिया जाता है कि डूबे हुए को बाहर निकालते समय पानी में ही कृत्रिम श्वास की क्रिया आरंभ कर दी जाये।

कृत्रिम रीति से श्वास शुरू करने के कई ढंग हैं। इनमें सबसे आसान और बाह्य साधनों के बिना काम में लाया जा सकने वाला उपाय है, जिसमें मुंह से मुंह लगाकर पीड़ित व्यक्ति के फेफड़ों में हवा फूंकी जाती है। डूबते हुए आदमी के प्राण बचाने का यह एक असरकारक उपाय है।

इस उपाय को अपनाने के पहले बेहोश व्यक्ति का मुंह खोलकर उसमें यदि घास-पात आदि हों, तो उंगलियों से साफ कर दिया जाता है। फिर उसके सिर को पीछे की ओर झुकाकर मुंह या नाक से हवा फूंककर उसके सीने को फुलाया जाता है और सांस लेने के समय की क्रिया का अनुकरण किया जाता है। इस प्रकार करते हुए अंत में जब पीड़ित व्यक्ति की सांस स्वयं चलने लगे, तब समझना चाहिये कि विषमावस्था पार हो चुकी है। इसके पश्चात् शेष उपाय प्रसंगानुसार काम में लाये जा सकते हैं।

निवारणोपाय :

रोगों की तरह इस मामले में भी चिकित्सा से रोकथाम भली। ये दुर्घटनाएं नदी, तालाब, झील के किनारे की बस्तियों में अधिक होती है। अतः खतरनाक स्थलों पर सूचना-फलक रहने चाहिये और प्राथमिक उपचार की व्यवस्था भी रहनी चाहिये। पानी के किनारे तीज-त्योहार और मेले-ठेले के समय विशेषतः लाइफ गार्ड नियुक्त किये जाने चाहिये। हर आदमी को तैरना सीखने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। स्कूल-कालेजों को इसमें विशेष यत्न करना चाहिये। इसके लिए अनुकूल ऋतु में 'तैरना सीखो' सप्ताह चलाना चाहिये।

यों भी पानी में उतरते समय हर आदमी को सावधानी बरतनी चाहिये। अपनी शक्ति से बाहर का साहस नहीं करना चाहिये। पानी की दुर्घटनाएं प्रायः अपने आपमें घातक नहीं होतीं; मगर तुरंत सहायता पहुंचाने वाला पास न होने से वे घातक बन जाती हैं। अतः जहां तक हो अकेले पानी में नहीं उतरना चाहिये।

—३-६-६८१, हिमायत नगर, हैदराबाद-२९

★

सौर ऊर्जा

भावी शक्ति का नया आधार

डा. जगदीश लूथरा

पिछले लेखों में तुमने रासायनिक ऊर्जा के बारे में पढ़ा था और हमने इस बात की भी चर्चा की थी कि ईंधन जलाने से ऊर्जा किस प्रकार प्राप्त होती है। हम अपने काम-काज में ज्यादातर लकड़ी, कोयला, गैस, तेल जैसी चीजों से ऊर्जा प्राप्त करते हैं। क्या तुमने कभी यह भी सोचा कि यह ईंधन हमें किस प्रकार प्राप्त हुआ ? शायद यह जानकर तुम्हें आश्चर्य हो कि खानों में मिलने वाले ये जीवाश्मी (फासिलीय) ईंधन हमें सूर्य की कृपा से मिले हैं। सूर्य की किरणें ही वे रासायनिक क्रियाएं चलाती हैं, जिनके फलस्वरूप प्राणियों और वनस्पतियों का 'मलबा' (कूड़ा-करकट) धीरे-धीरे ईंधन में बदल जाता है।

सूर्य की ऊर्जा से तुम भली भांति परिचित हो। यह ऊर्जा किरणों के रूप में हम तक पहुंचती है और इसका अनुभव हम प्रकाश या ताप के रूप में करते हैं। हमारी पृथ्वी के लिए ऊर्जा का सबसे बड़ा स्रोत सूर्य ही है। वह हमें इतनी ऊर्जा प्रदान करता है, जो इस धरती के तमाम देशों की बिजली-उत्पादन क्षमता से लाखों गुना ज्यादा है।

हालांकि पृथ्वी के चारों ओर हवा का एक मोटा खोल होने के कारण सूर्य की ऊर्जा हम तक पहुंचते-पहुंचते अपनी काफी ताकत खो चुकी होती है, फिर भी भूमध्य रेखा पर पृथ्वी की सतह पर लगभग १६,००० किलोजूल प्रतिवर्ग मीटर प्रतिदिन के हिसाब से सौर ऊर्जा पहुंचती है। अगर हम पृथ्वी के सारे क्षेत्रफल के आधार पर हिसाब करें, तो यह मात्रा इतनी अधिक है कि हमें इसे प्राप्त करने के लिए खरबों टन कोयला जलाना पड़ेगा। इसी बात को यों भी कहा जा सकता है कि दो हफ्तों ही में पृथ्वी पर सूर्य से इतनी ऊर्जा आ जाती है कि जितनी पृथ्वी के तमाम प्रारंभिक फासिलीय ईंधन जलने पर प्राप्त की जा सकती है।

पृथ्वी पर के जाने-पहचाने ऊर्जा-साधन बड़ी तेजी से खत्म हो रहे हैं। यदि वे इसी रफ्तार से कम होते रहे, तो अगली सदी तक ही ये भंडार चल पायेंगे। प्रश्न उठता है कि फिर हम अपनी जरूरत के लिए ऊर्जा कहां से प्राप्त करेंगे ? इसलिए ऊर्जा के अन्य स्रोतों की खोज जरूरी है। यह स्रोत जैसा कि तुमने अंदाजा लगा ही लिया होगा, सूर्य

ही हो सकता है, जिससे हमें ऊर्जा प्राप्त होती रही है, होती रहेगी। ऊर्जा का भंडार लाखों साल तक चुकने वाला नहीं है और न यह कोयले-पेट्रोल आदि दूसरे ऊर्जा-स्रोतों की तरह वातावरण को प्रदूषित करता है। सूर्य की ऊर्जा का रहस्य क्या है, इस पर हम फिर कभी चर्चा करेंगे। अभी तो इतना जानना ही काफी होगा कि सूर्य कुदरत का हाइड्रोजन बम है, जिसमें ऐसी ताप-न्यूक्लीय अभिक्रियाएं निरंतर होती रहती हैं, जिनके फलस्वरूप हमें ऊर्जा प्राप्त होती है।

सूर्य की ऊर्जा को अपने लिए उपयोग में आ सकने वाले रूप में बदलने में मनुष्य की दिलचस्पी नयी नहीं है। समय-समय पर इसकी चेष्टाएं होती रही हैं कि सौर ऊर्जा का इस्तेमाल किया जा सके। इंग्लैंड में सर बैसेमर ने १८६८ में ऐसी सौर भट्ठी का निर्माण किया था, जिसमें तांबे को पिघाला और जस्ते को उबाला जा सकता था। परंतु बाद में उन्होंने अपना ध्यान दूसरी तरह की भट्ठियों में लगाया और फौलाद बनाने की भट्ठी का निर्माण किया, जो आज भी उनके नाम से जानी जाती है। उन्हीं दिनों भारत में एक अंग्रेज अफसर अपने परिवार के लिए हर रोज सोलर कुकर में भरी दोपहर में खाना पकाता था। परंतु सौर ऊर्जा में विशेष रुचि पिछले कुछ सालों से ली जाने लगी है। इसकी विशेष वजह है 'ऊर्जा संकट'।

इस समय संसार की सबसे बड़ी सौर भट्ठी फ्रांस में ओडीलो के पास काम कर

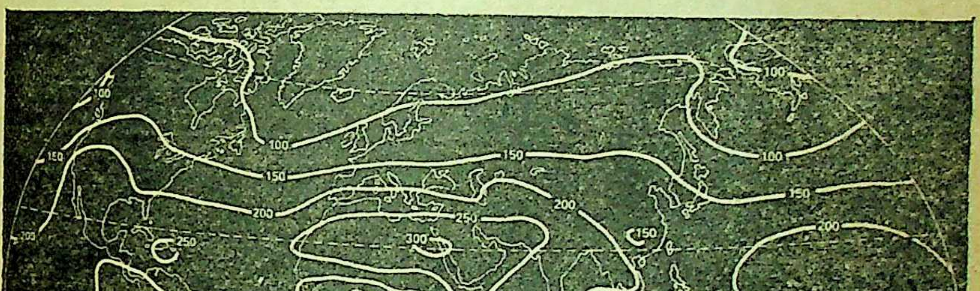

पृथ्वी की सतह पर क्षैतिज तल पहुंचने वाली सौर विकिरण की औसत सालाना तीव्रता (वाट / मीटर^2)

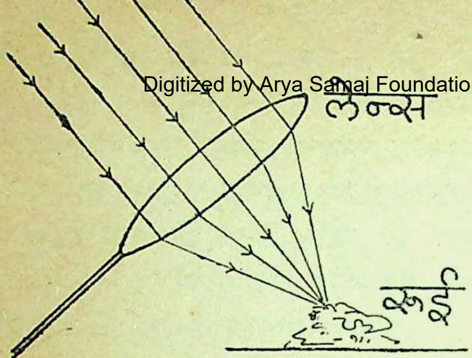

चित्र-२

रही है। इसका तापमान ३३०० अंश शतांश तक पहुंच जाता है, जो कि बहुत-से पदार्थों को गलाने के लिए काफी है। इसमें एक पराबोलीय दर्पण सूर्य की रोशनी को पकड़ता है और एक छोटे से क्षेत्र पर केंद्रित करता है। इस क्रिया को सांद्रण कह सकते हैं। और ऊर्जा को सांद्र करने का सबसे सरल उदाहरण है—लेन्स यानी आतशी शीशा की सहायता से कपास या फिल्म के छोटे टुकड़ों को जलाना (चित्र-२)।

हमें सूर्य से मुफ्त में इतनी सारी ऊर्जा मिल रही है; परंतु इसका उपयोग करने के लिए हमें इसे सांद्र करना पड़ेगा। सूर्य-किरणों में पराबैंगनी से लेकर अवरक्त किरणों तक सभी किरणें होती हैं। आज वैज्ञानिकों की मुख्य समस्या इसे पकड़ने और सांद्र करने की है। यों तो इस दिशा में काफी प्रगति हुई है; परंतु अभी बहुत अधिक कार्य करना होगा। सामान्य धातु के बने चपटे प्लेट-संग्राहकों की सहायता से ८० अंश शतांश का तापमान प्राप्त किया जा सकता है। इन संग्राहकों की सहायता से सूर्य की ऊर्जा ऐसे उपकरणों के लिए आसानी से काम में लायी जा सकती है, जिन्हें चलाने के लिए बहुत ऊंचे तापमान की जरूरत न हो। उदाहरणार्थ, पानी को या कमरे को गर्म करने के उपकरण।

यह हुआ सूर्य की ऊर्जा का सीधा उपयोग। अब जरा देखें कि हम इस ऊर्जा को बिजली में बदल सकते हैं या नहीं। क्योंकि सूर्य की ऊर्जा से हम सीधे तो मशीन नहीं चला सकते।

कोयले या परमाणु से जो शक्ति उत्पादित की जाती है, उसमें बनी भाप का तापमान ५५० अंश शतांश के करीब होता है। इसलिए यदि हमें सौर ऊर्जा से बिजली बनानी है, तो ५५० अंश शतांश का तापमान प्राप्त करना होगा। यह काम सामान्य प्लेट-संग्राहकों से संभव नहीं है। मगर वैज्ञानिकों ने विशेष प्रकार के संग्राहकों की सहायता से यह कार्य कर लिया है। बिजली बनाने के लिए ५५० अंश शतांश तापमान वाली भाप बनायी जाये और फिर उससे टरबाइन चलाकर बिजली पैदा की जाये, जैसा कि सामान्य बिजलीघरों में किया जाता है।

परंतु इस विधि में आने वाली सबसे बड़ी समस्या यह है कि रात में या जब सूर्य बादलों में छिपा हो तो इन स्टेशनों को कैसे चलाया जाये। इस समस्या का सीधा-सा हल यह है कि दिन के समय सूर्य-ताप को इकट्ठा कर लिया जाये और रात में उसका उपयोग किया जाये। मगर अभी तो इसके लिए कई

तकनीकी समस्याओं का हल खोज निकालना होगा।

इसके अतिरिक्त भी एक तरीका है, जिसमें विकिरण-ऊर्जा को बीच के भाप-इंजन वाले चरण से गुजरे बिना सीधे ही रासायनिक या विद्युत ऊर्जा में बदला जा सकता है। सामान्यत: इस कार्य के लिए सौर-ऊर्जा के उच्चत्तर ऊर्जा भाग का ही उपयोग किया जाता है। अवरक्त भाग का उपयोग इस कार्य के लिए नहीं किया जाता। यह विधि अभी काफी महंगी है और इसका उपयोग अंतरिक्ष-उड़ानों में शक्ति-स्रोत के रूप में आजकल होता है। विज्ञानी ऐसे-ऐसे नये तरीकों की खोज में लगे हुए हैं, जिनसे इनकी लागत में काफी कमी लायी जा सके।

आज विज्ञानियों का लक्ष्य यह है कि किस प्रकार इस ऊर्जा के लाभकारी भाग को इकट्ठा कर सांद्र करके या तो सीधे ही इसका उपयोग करें, फिर इसे दूसरी उपयोगी ऊर्जाओं में बदल सकें, ताकि सौर ऊर्जा का उपयोग सस्ते और सुंदर ढंग से हो सके।

(क्रमश:)

—१२ ए अल्मोड़ा, अणुशक्ति नगर,
बंबई—४००२०१

★

तितलियां यों ही मनमोहक होती हैं। मगर तितली-साम्राज्य में भी अगर सौंदर्य-स्पर्धा हो, तो प्रथम पुरस्कार की जो दावेदार होंगी, उनमें से एक है फ्लोरिडा (सं. रा. अमरीका) की काले-पीले रंग की जेब्रा तितली। जेब्रा तितलियां रात को झाड़ियों में डालियों से लटककर सोती हैं। एक डाली पर साठ-साठ तितलियां निशायापन करती हैं। सवेरा होते ही वे उड़ जाती हैं और दिन डूबते फिर वहीं आकर लटक जाती हैं। अलग-अलग किस्म की तितलियों में अलग-अलग गंध होती है और उनके नर-मादा परस्पर रंगों से एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं। अमरीकी प्राणिविज्ञानियों ने ६५० किस्म की तितलियां पहचानी हैं।

आस्ट्रिया के नवयुवक वैज्ञानिक डा. हटरर ने यह पता लगाया है कि तितलियां रंग कैसे पाती हैं। उन्होंने पहले कागज पर एक प्रकार का मसाला लगाकर नकली तितलियां बनायीं और विशेष प्रकार के रसायनों में उन्हें डुबाया। इस क्रिया से उनमें रंग आ गया। इन प्रयोगों द्वारा उन्होंने यह जानने का प्रयत्न किया कि प्रकृति तितलियों को कैसे रंगती है। उन्होंने अपने प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य तितलियों को अपनी इच्छा के अनुसार रंग सकता है; हरी तितलियों को लाल और लाल को नीली बना सकता है।

उनका कहना है कि तितलियों में प्यूपा की हालत में रंग आता है। वे भी इसी अवस्था में तितलियों का रंग-परिवर्तन करते हैं। नारंगी और काले रंग की एक तितली के प्यूपे में वे सूई से एक रंग-विहीन दवा अंदर छोड़ते हैं जिससे वह तितली काले रंग की बन जाती है।

—केशवदेव मिश्र 'कमल'

★

रहस्यमय मिनी

जार्ज बोर्ट्स

पहली बार जब मैंने मिनी के बारे में सुना, तो उसे मरे दस साल हो चुके थे। लेकिन उसका पति ट्रेसी गैरेट उसे अभी भी जिंदा रखे हुए था।

गांव में ट्रेसी गैरेट की छोटी-सी दुकान थी, जिसमें वह लोहे का छोटा-मोटा सामान बेचता था और साइकल, हलों और इस प्रकार की दूसरी चीजों की मरम्मत करता था। उसकी उम्र थी पचपन साल और वह हमेशा खुश दिखाई देता था। वैसे वह अभी तक अपनी मृत पत्नी को भूला नहीं था, जिसके साथ उसने बीस वर्ष बड़ा प्रेम-पूर्ण और सुखद दांपत्य-जीवन बिताया था।

उस गांव में आये मुझे कुछ ही समय हुआ था कि मैंने मिनी के बारे में कई रहस्यमय कहानियां सुनीं।

पहली कहानी का संबंध अनास्तासिया से था। शक्ल-सूरत से बहुत ही सादी लड़की थी वह और स्कूल के नौजवान हेडमास्टर हेनरी इवर्सन से प्यार करने लगी थी। परंतु इवर्सन के मन में उसके लिए कोई आकर्षण नहीं था।

एक दिन अनास्तासिया गांव से गायब हो गयी। तीन महीने बाद जब वह वापस लौटी, तो बड़ी ही सुंदर लड़की बन गयी थी। उसके बाल नये ढंग से कटे हुए थे; व नये फैशन के कपड़े पहने हुए थी। लोगों ने उसे देखा और आश्चर्यचकित रह गये। कि कुछ ही हफ्तों में हेनरी इवर्सन ने उस विवाह कर लिया।

मेरी पड़ोसिन ने बताया–'अनास्तासिया गांव से गायब होने के बाद न्यूयार्क च गयी थी। वहां वह सुंदरता-संबंधी शिक्ष देने वाले एक स्कूल में भर्ती हो गयी थी।... और इन सबके पीछे मिनी थी।'

'मिनी गैरेट?' मैंने पूछा।

'तो और कौन? कुल मिलाकर काफी खर्च आया होगा। और अब मिनी को गिरवी से छुड़ाने के लिए अनास्तासिया को काफी समय लगेगा।'

'गिरवी से?'

पड़ोसिन ने मेरी बात का जवाब नहीं दिया और मैं उलझन में पड़ा रह गया।

मिनी का रहस्य जानने के लिए मैं और भी उत्सुकता से पूछ-ताछ करने लगा। मुझे दूसरी भी कई मार्मिक कहानियों का पता लगा, और हर कहानी के साथ मिनी जुड़ी हुई थी। हर कहानी में कोई न कोई व्यक्ति किसी मुश्किल में फंस गया था, और मिनी ने उसे कुछ पैसे देकर उसकी मुश्किल हल गई

की थी। और हर कहानी के अंत में मैं सुनता–'मिनी फिर से गिरवी रखी गयी है।'

एक दिन मैं दवाफरोश की दुकान में गया तो एक नौजवान को दुकानदार से कहते सुना–'हां, सब ठीक हो गया। अब मैं अपना आखिरी साल पूरा कर लूंगा। सचमुच मिनी का देनदार हूं मैं।'

नौजवान के जाने पर मैंने दुकानदार से पूछा और उसने बताया कि यह नौजवान कालेज में पढ़ रहा था कि पिता का आर्थिक नुकसान हो जाने के कारण उसे पढ़ाई छोड़ देनी पड़ी; लेकिन अब मिनी की बदौलत वह फिर कालेज में दाखिल हो रहा है।

इससे आगे उसने कुछ न बताया और मिनी का रहस्य मेरे लिए रहस्य ही बना रहा। फिर कुछ ही समय में मुझे पता चला कि मिनी हर बार एक हजार डालर में गांव के किसी ऐसे व्यक्ति के पास गिरवी रखी जाती थी, जिस पर गांव वालों को भरोसा होता था। और जब तक वे एक हजार डालर अदा नहीं कर दिये जाते थे, वह गिरवी में ही रहती थी।

आखिर एक बार मैं खुद आर्थिक कठिनाइयों में फंस गया। लिखना मुझे रास नहीं आ रहा था। कमाई रुक गयी थी। मेरी बेटी का आपरेशन भी होना था, जिस पर काफी खर्च आता। मैं काफी बेचैन रहता।

एक दिन सुबह जब मैं काफी बनाने के लिए रसोई में गया, तो वहां मैंने ट्रेसी गैरेट को काम करते हुए पाया। वह गंदे पानी की नाली की मरम्मत कर रहा था। मैं कुछ नहीं बोला और वह चुपचाप काम में लगा रहा। काम खत्म होने पर उसने मेरी ओर देखा और कहा–'सुना है, आप कुछ कठिनाई में हैं।' इस पर मैंने उसे सारी हालत बतायी।

चित्र : सतीश चव्हाण

'लगता है अगर आपको कुछ समय के लिए थोड़ी-सी रकम मिल जाये, तो फिर से सब ठीक हो जायेगा।' वह बोला।

'हां।'

'तो फिर मिनी आपको मिलनी चाहिये।' उसने जेब से बटुआ निकाला और उसमें से हजार डालर का एक पुराना नोट निकाला, जिस पर मोटे अक्षरों में 'मिनी' लिखा हुआ था। नोट मेरी ओर बढ़ाते हुए उसने कहा–'आप यह "मिनी" लेकर बैंक जाइये और वहां से एक हजार डालर तक जितनी रकम चाहिये ले लीजिये। तब यह "मिनी" मेरे पास आ जायेगी।'

मैंने हैरानी से उसकी ओर देखा।

'आप कई महीनों से मिनी का रहस्य जानने की कोशिश कर रहे हैं न ?' वह कहता गया—'लीजिये, मैं आपको बताता हूं। मिनी मेरी पत्नी का नाम था। बहुत ही बढ़िया स्त्री थी वह। मरने से पहले वह मुझसे बोली—"ट्रेसी, मेरी अंत्येष्टि क्रिया पर ज्यादा खर्च किया जाये या कम, मेरी कब्र पर स्मारक बनाया जाये या नहीं, ईश्वर के लिए तो एक ही बात है। सो मैं चाहती हूं कि मुझे दफनाने पर कम से कम खर्च किया जाये। मेरी कब्र पर एक छोटा-सा, सादा-सा पत्थर लगा देना। और इस प्रकार जो रकम बचे, उसे बैंक में देकर एक हजार डालर का नया नोट लेना।" सो, यहीं है नोट।

फिर उसने कहा—'मेरी पत्नी को गांव के लोगों से बहुत प्यार था। वह चाहती कि मरने के बाद भी वह गांव के जरूरतमं लोगों की मदद करती रह सके। और आपको बताऊं कि मिनी आज तक कितनी बार गिरवी रखी गयी है, आप हैरान जायेंगे। अब आप इसे लेकर बैंक जाइये और अपनी चिंता दूर कीजिये।'

कुछ ही समय के बाद मैंने 'मिनी' वाप कर दी। उसके हफ्ते-भर बाद वह फि गिरवी रख दी गयी।

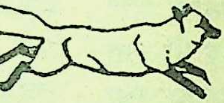

[पृष्ठ ७४ का शेष]

प्रकाश के ठीक होने पर रामस्वामी ने उसकी मुलाकात अग्रवाल साहब से करायी। सर्वप्रथम उन्होंने प्रकाश को सकुशल वापस आने और अनुरूप वधू प्राप्त करने के लिए बधाई दी। फिर कालातिपात का स्पष्टीकरण किया। यह सब कृष्णविवर के जबर्दस्त गुरुत्वाकर्षण का चमत्कार था। निद्रावस्था में कृष्णविवर के गिर्द चक्कर काटते समय उनके काल-मापन के अनुसार सेकेंडों की ही अवधि बीती थी। क्योंकि गुरुत्वाकर्षण ने उनकी कालगति को लगभग कम्प्रेस्ड कर डाला था। इसी अवधि में बाकी दुनिया वर्षों आगे निकल गयी थी। जान और प्रकाश की बीसी की जवानी अभी टिकी हुई थी। आइंस्टाइन की रिलेटिविटी के वे दोनों सजीव उदाहरण थे।

'ठीक, संजय कहां है ? मुझे देखकर उ अच्छा-खासा शॉक लगेगा।' हंसते-हंसते प्रकाश ने पूछा।

'संजय कौन ?' अनुपमा ने जिज्ञासा की।

'संजय जोशी मेरा घनिष्ठ मित्र है। ह दोनों एक ही इंस्टिटच्यूट में शोध कर रहे थे। उसकी और मेरी अक्सर बहसें...अरे! तु रोने क्यों लगीं ?'

'वे मेरे पिता थे। वे और मेरी मां विमान दुर्घटना में चल बसे और मैं अनाथ हो गयी।' सिसकते-सिसकते अनुपमा ने बताया।

अनुपमा की मां की दामाद की खो सफल हो गयी थी—कृष्णविवर की कृपा से।

★

वाट की डिक्शनरी

आर. एस. चक्रवर्ती

इक्कीस वर्षी जार्ज वाट ग्लासगो विश्वविद्यालय में चिकित्साशास्त्र की पढ़ाई पूरी करने के बाद नवंबर १८८३ में कलकत्ता पहुंचे, उन्हें भयंकर आघात लगा। उन्हें बुलाया गया था कलकत्ता के प्रेसिडेन्सी कालेज में वनस्पति-विज्ञान पढ़ाने। (उन दिनों और उससे पहले सदियों तक वनस्पति-विज्ञान के विकास और अध्ययन में मुख्यत: चिकित्साशास्त्र पढ़े हुए लोगों का हाथ रहता था।) मगर जब वे कलकत्ता विश्वविद्यालय के कार्यालय में हाजिर हुए, तो वहां उन्हें बताया गया कि वनस्पति-विज्ञान के प्राध्यापक का पद समाप्त कर दिया गया है; हां, यदि वे चाहें तो उसके एवज में उन्हें फौज में डाक्टर का काम मिल सकता है।

कहां विश्वविद्यालय की प्राध्यापकी, और कहां फौज में डाक्टरी! मगर विवेकी युवक वाट ने वह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। अपनी निराशा को मिटाने के लिए वे अवकाश के दिनों में सिक्किमी हिमालय और मणिपुर-बर्मा सीमा के प्रदेशों की विस्तृत यात्राएं करते और वहां की वृक्ष-वनस्पति का अध्ययन करते। उन्होंने आर्थिक महत्त्व की वनस्पति का विशेषत: अध्ययन किया। इस प्रकार उन्होंने वह विस्तृत जानकारी जुटायी, जिसके आधार पर उन्होंने एक दशक बाद, अवसर मिलने पर छह खंडों और ५,४०० पृष्ठों का अत्यंत महत्त्वपूर्ण विश्वकोश रचा। यह विश्वकोश है 'वाट्स डिक्शनरी ऑफ़ इकोनामिक प्राडक्ट्स ऑफ़ इंडिया', जो कि 'वाट्स डिक्शनरी ऑफ़ इंडिया' के नाम से ज्यादा मशहूर है। इस पुस्तक से हमारे देश की अपार प्राकृतिक साधन-संपत्ति के वैज्ञानिक सूची-निर्माण की नींव पड़ी।

सन १८८३ में बंगाल सरकार ने यह विचार किया कि १८८० की महान पेरिस-प्रदर्शनी की भांति भारत के आर्थिक उत्पादनों की एक प्रदर्शनी की जाये। इसके लिए जो प्रदर्श्य वस्तुएं जुटायी गयीं, उनकी

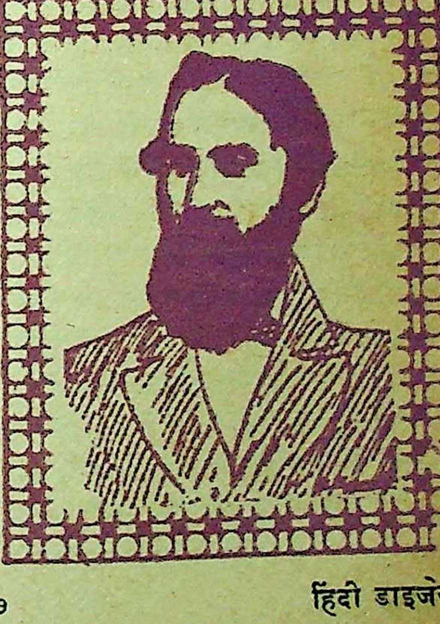

सूचियां बनवायी गयीं। मगर देखा गया कि उनमें वैज्ञानिक विवरण अपर्याप्त है और क्रम भी नहीं है। वैज्ञानिक ढर्रे पर सूची बनाने का काम जार्ज़ वाट को सौंपा गया।

सन १८८३-८४ की कलकत्ता प्रदर्शनी बहुत सफल रही। इससे सरकार को यह अनुभव हुआ कि देश के समस्त आर्थिक उत्पादनों का एक स्थायी संग्रहालय बनवाया जाये, तो वह बहुत उपयोगी होगा। उसने यह भी महसूस किया कि उसमें प्रदर्शित सभी वस्तुओं का विवरणात्मक एवं शिक्षाप्रद सूचीपत्र भी बहुत ही जरूरी है। वाट को यह काम हाथ में लेने को कहा गया।

वस्तुत: वाट ने एक सूचीपत्र पहले ही बना भी लिया था, जिसमें प्रत्येक वस्तु का वर्णन और उपलब्ध आंकड़े दिये गये थे। जानकारी के समस्त स्रोतों का लाभ उठाने के लिए पर्याप्त समय नहीं था, और वाट यह अनुभव करते थे कि उनका सूचीपत्र अधूरा है। इसलिए उन्होंने अपने सूचीपत्र की ३०० प्रतियां तैयार करवायीं और देशभर में अनेक सरकारी अफसरों के पास भेजकर उनसे यह आग्रह किया कि अपने क्षेत्र के उत्पादनों के विषय में या जिन उत्पादनों से आप परिचित हैं, उनके विषय में, यहां दिये गये वर्णन व विवरण में आप जो भी संशोधन और वृद्धि करना चाहें कृपया करके भेजें।

जैसा कि आप भी जानते हैं, उस जमाने में यानी १९ वीं सदी के नौवें दशक में इस प्रकार की वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारी जो लोग दे सकते थे, उनमें अधिकांश अंग्रेज अफसर थे; क्योंकि उन दिनों सरका के उच्च अधिकारियों में उन्हीं की बहु होती थी। वैसे, उत्तरदाताओं में का संख्या भारतीय अफसरों की भी थी–४० करीब। दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि जानकारी भेजने वालों में से लगभग ८ प्रतिशत व्यक्ति स्वयं वाट की तरह सरकारी या सैनिक डाक्टर थे। इस तरह पत्र-व्यवहार द्वारा जो जानकारी एकत्र हुई, उसके अलावा लगभग ४०० मुद्रित ग्रंथों की सहायता वाट ने अपनी डिक्शनरी के निर्मा में ली।

उन्होंने अपना काम १८८४ के आरंभ शुरू किया। पांच साल बाद डिक्शनरी का पहला खंड छपकर बाहर आया। इसके बाद अगले पांच खंड (वास्तव में आठ खं क्योंकि छठे खंड की चार जिल्दें थीं, जो औसत खंड के बराबर मोटी थीं) अगले पांच वर्षों में जल्दी-जल्दी एक के पीछे एक निकले। अनुक्रमणिका पृथक् खंड के रूप में सन १८९६ में छपी। डिक्शनरी में वर्णि आर्थिक महत्त्व के ३०,००० उत्पादों के भारतीय भाषाओं के नाम इसमें दिये गये थे। अंग्रेजी नामों के साथ-साथ इसमें आयुर्वेद तथा यूनानी की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण संस्कृत, फारसी और अरबी इन तीन क्लासिकी भाषाओं, हिंदी, बंगला आदि उत्त भारतीय भाषाओं एवं कन्नड आदि दक्षि भारतीय भाषाओं के अलावा भील, गोंड नागा, भोटिया, संथाल और अन्य अनेक जनजातियों की बोलियों में से भी पर्या

वाची दिये गये हैं।

'वाट्स डिक्शनरी' के पन्नों में कितनी व्यापक जानकारी दी गयी है, इसका अंदाज आपको कराने के लिए यहां कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं। गेहूं का विवरण पूरे १२० पृष्ठों में दिया गया है और आज लगभग ८२ वर्ष बाद भी वह पठनीय है। इसमें वाट लिखते हैं–'गेहूं की कृषिभूमि का विस्तार और विश्व के गेहूं-निर्यातक देशों में भारत का महत्त्व पिछले बीस वर्षों में तेजी से बढ़ा है। यूरोप और अमरीका में जब भी बहुत ही बढ़िया फसल होती है, फौरन भारत में गेहूं की खेती कम कर दी जाती है।...... यूरोप के साथ भारत को गेहूं-व्यापार से गेहूं की अंतरराष्ट्रीय दरों में प्रायः गिरावट आती है।'

लंबे अरसे तक अमरीका और अन्य देशों से गेहूं मंगवाते रहने के बाद इतिहास का यह हिस्सा पढ़कर हमें ताजगी-सी मिलती है।

कोयले से संबंधित १५ पृष्ठों में हमें यह बात पढ़ने को मिलती है–'स्त्रियां और बच्चे भी जमीन के नीचे काम करते हैं। स्त्रियां अपने दो-तीन माह के बच्चों को नीचे खान में ले जाती हैं और अपने साथ छोटी-सी खटिया ले जाती हैं; जब मां-बाप काम कर रहे हों, तब बच्चे उस पर खेलते रहते हैं। .... कुछ बातों में बाउरी कोयला-खनिक की आदतें पश्चिमी कोयला खनिकों जितनी ही दिलचस्प हैं। पीकर धुत होने में उसे बहुत आनंद आता है–खास करके छुट्टी के दिनों में–और सोमवार को काम पर जाने का उसका बिलकुल मन नहीं होता......उसे हर शाम को पैसा भुगतान किया जाता है और इस पैसे के लिए उसे रात के ८-९ बजे तक इंतजार करना पड़ता है। तब वह हंसता, खुशी मनाता हुआ घर जाता है और रात का लगभग आधा हिस्सा अपने साथियों के संग पीने व गाने में गुजार देता है।'

मगर उन्नीसवीं सदी के अंतिम और बीसवीं सदी के प्रथम दशक में विज्ञान और उद्योगतंत्र की इतनी अधिक प्रगति हो गयी कि वाट ने अपनी 'डिक्शनरी' में जितना लिखा था, उसमें काफी कुछ जोड़ना जरूरी है। यह काम वाट के ही सुपुर्द किया गया और उन्होंने सेवा से निवृत्त होने से पूर्व सन १९०८ में यह काम पूरा कर दिया। यह 'कमर्शियल प्रॉडक्ट्स ऑफ़ इंडिया' नाम से १,२०० पृष्ठों के बृहत् ग्रंथ के रूप में छपा, जो कि 'डिक्शनरी' का साथी ग्रंथ है।

श्री आई. एच. बर्किल ने वाट के बाद भारत सरकार के 'आर्थिक महत्त्व के उत्पादों के संवाददाता' (रिपोर्टर ऑन इकोनामिक प्रॉडक्ट्स) का पद संभाला था। बाद में वे शाही वनस्पति-उद्यान के अध्यक्ष होकर सिंगापुर चले गये। उन्होंने सन १९३५ में दो खंडों (२,४०० पृष्ठ) की ऐसी ही पुस्तक तैयार करके मलय की बहुमूल्य सेवा की।

इन दोनों की डिक्शनरियां मिलकर अफगानिस्तान से लेकर थाइलैंड और इंडोनेसिया तक फैले दक्षिण और दक्षिण पूर्व एशिया के विशाल भूभाग के समस्त आर्थिक महत्त्व के उत्पादों का परिचय प्रस्तुत करती हैं।

★

अपने-अपने कारावास

सरोज वाशिष्ठ की हिंदी कहानी

एक अनूठा नशा होता है किसी पत्रिका में अपना नाम छपा हुआ देखकर। अपने लिखे शब्दों को पढ़कर, देखकर वह नशा नहीं आता, जो अपना नाम पढ़कर, देखकर आता है। अक्षरों से ही शब्द बनते हैं, शब्दों से बनते हैं नाम। शब्द एक धुएं की लकीर की तरह मन में उठते हैं और हमेशा के लिए कागज पर अंकित हो जाते हैं—अमिट, अस्थायी, शाश्वत। है कोई और चीज इस दुनिया में इतनी स्थिर!

'आप किस नाम से लिखेंगी?'

'अपने ही नाम से।'

'पर आप एक सरकारी मुलाजिमा हैं, आपको डर नहीं लगता है?'

'डर? किस बात का? मैं कोई गलत काम करने जा रही हूं क्या? मैं तो केवल नाटकों की समीक्षा ही लिखूंगी।' और वैसे भी मेरा और भय का संबंध सदियों पहले टूट गया था, और कुछ रिश्ते ऐसे हैं जो टूटकर दुबारा जुड़ नहीं सकते हैं। काश, यही नियम जीवन के अन्य रिश्तों पर भी लागू हो सकता। हम क्यों बार-बार टूटकर फिर जुड़ जाते हैं? शायद इसीलिए कि इस दुनिया में हर काम सलीके से ही चलता है। यहां कभी-कभी पत्थरों को हीरे-मोती कहना पड़ता है और मजबूरन किसी बहेलिये को बागबां मानना पड़ता है। मजबूरी! इससे बड़ी सजा दुनिया में दूसरी और कोई नहीं है। इससे बचने का कोई तरीका नहीं है।

'आप से मिलिये। ऐसी बेबाक महिला से आपका पहले कभी परिचय न हुआ होगा।' यह तो केवल एक ही परिचय है मेरा। कोई बला कहकर परिचय करवाता है, कोई कहता है तूफान है, अंधेरी है, फलां है ......

यह सच है कि मेरे मन में जो भी आये जब भी आये, जब भी चाहे, जिसे चाहे कह देती हूं। पुरुषों में बैठकर 'डर्टी जोक्स' ऐसे सुना देती हूं, मानो गाजर का हलवा बनाने की विधि समझा रही हूं। अगर किसी के चेहरे गुलाबी होते हैं, तो जाहिर है पुरुषों के ही। मुझे तो यह कभी भी समझ में नहीं आया कि इन किस्सों को 'डर्टी जोक्स' नाम कैसे दिया गया। यह तो सिर्फ सूक्ष्मता और अक्सर धूर्तता की इन्तहा भर होते हैं, जिन्हें कुछ लोग समझ ही नहीं सकते।

पर मैं जानती हूं—सिर्फ मैं—कि मैं न तो बला हूं, न तूफान, न अंधेरी और न ही फलां। यह तो एक मुखौटा भर है—नहीं कई एक मुखौटे हैं—जब जैसी जरूरत हुई जाने-अनजाने पहन लिया। अगर ये मुखौटे मेरे पास न होते, तो शायद मैं अब तक कहीं दूर अंधेरे में

में लुप्त हो गयी होती, कभी कोई मुझे दुबारा ढूंढ़ ही न पाता। क्योंकि जो मैं चाहती हूं उसे पा नहीं सकती। क्या चाहती हूं, यह ठीक से नहीं जानती, या शायद बहुत कुछ चाहती हूं और उतना सब कुछ पा लेना नामुमकिन है। इस सब कुछ में भौतिक चीजें नहीं के बराबर हैं। दरअसल कुछ घाव हैं, जिन्हें मैं हर समय महसूस करती हूं, सुनती हूं पर भर नहीं सकती, चुप नहीं करा सकती। मुझे लगता है, मैं एक घेरे के बाहर खड़ी हूं, जिसके अंदर मेरा प्रवेश निषिद्ध है। पर मेरी उंगलियां हथौड़े-सी मजबूत हैं और इनसे मैं इस घेरे को तोड़ सकती हूं। तोड़ने की अनजानी कोशिशों में लगी भी रहती हूं। इनमें से कोशिश का एक जरिया मैंने खोज निकाला है। वह है लिखना–कुछ भी, कहीं भी, कैसा भी। कहा न मैंने एक अनूठा-सा नशा है, अपना नाम किसी पत्रिका में छपा देखकर मुझे लगता है मैंने इस घेरे को पूरा नहीं तो एक हिस्सा तो पार कर ही लिया है, या फिर थोड़ा-सा तोड़ दिया है।

अक्सर मुझे किसी प्रसिद्ध व्यक्ति से भेंट करने के लिए कहा जाता है। पिछले नौ वर्षों में मैं अनगिनत गायकों, नर्तकियों, लेखकों, नाटककारों से मिल चुकी हूं, उनसे बातें की हैं, उन पर लेख लिखे हैं। हर बार भयभीत-सी अंदर-ही-अंदर कांपती हुई मैं चंद प्रश्न लिखकर पहुंच जाती हूं अपनी

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

जियाजी

सूटिंग्स
रोबीले, हठीले पुरुषों की शान
मर्दाना बनावट और डिज़ाइन, पुरुषत्व को उजागर करने वाले
चेक और धारियां, रंगों और शेड्स की विविधता के लिए

J
JIYAJEE
FABRICS

जियाजीराव काटन मिल्स लिमिटेड, बिरलानगर (म. प्र.)

शार्टहैंड की कापी लेकर, और [illegible] मेरा डर कुछ ही पलों में धुल जाता है। इससे पहले कि मेरे सामने बैठा व्यक्ति संभल पाये, मैं उसे महसूस कर लेती हूं और सोचने-समझने से कहीं तेज अपनी लिखने की गति द्वारा उसे कागज पर उतार लेती हूं। गति ही मेरा दूसरा नाम है।

पिछले वर्ष जब मुझे बंबई जाना पड़ा था तो मैं अपने बच्चों से, अपने पति से, अपनी दुनिया से एक पल के लिए भी अलग नहीं होना चाहती थी। पर मेरे चाहने-भर से क्या होता है? मैं तो हर चीज दुनिया से अलग मांगती हूं और जब वह चीज मुझे नहीं मिलती, तो मैं बिखर जाती हूं। इस बार जब मैं बिखरी तो मुझे उस व्यक्ति ने, जिससे मुझे एक पत्रिका के लिए मिलना था, समेट लिया।

उसके लिए यह भेंट, लेख और पत्रिका का बड़ा नाम कुछ भी मानी नहीं रखता था। पिछले एक वर्ष में देश की तमाम छोटी-बड़ी पत्रिकाओं ने उसकी चर्चा दिल खोलकर की थी। कहानीकार था, इसलिए उसके पाठक उसे अपने बीच अक्सर पाते। मेरा लेख लिखना कोई विशेष घटना न थी, पर वह एक व्यंग्यकार, चित्रकार, नाटककार और एक नेक इंसान था। उससे बिना मिले ही मैंने अपने लेख की भूमिका लिख ली थी। उसे मेरा पत्र मिल चुका था, जिसमें मैंने उसे पहले ही लिख दिया था कि मैं उसका इंटरव्यू लेना चाहती हूं।

'आप यहां आ जाइये ...... मेरे दफ्तर में पांच बजे' फोन पर उसने कहा था।

पूछताछ करने पर पता चला कि उसका दफ्तर मेरे दफ्तर के इतने नजदीक था कि न बस की जरूरत थी न टैक्सी की। बस, एक मैदान-भर पार करना था। न जाने मैंने कहां पर कौन-सा मोड़ गलत ले लिया था कि मैं बंबई की पैदल चलती, उमड़ती हुई अथाह भीड़ में खो गयी थी। जब मैं पांच बजे आठवीं मंजिल पर उसके सजे-संवरे दफ्तर में पहुंची, तो मैं काफी विचलित थी। रिसेप्शन पर मैंने अपना नाम बताया, जहां पहले से ही मेरे बारे में सूचना दे दी गयी थी। मैं यह बता भी न पायी थी कि मैं किससे मिलना चाहती हूं कि एक नाजुक हाथ उठा, दो सुंदर ओंठ हिले, कुछ बुदबुदाये और मुझे बैठने को कहा। इससे पहले कि मैं कमरा पार कर सकूं, वह जल्दी-जल्दी बाहर आ गया था। वह मुझे अपनी कैबिन में ले गया। छोटी-सी कैबिन, चारों ओर शीशे की दीवारें। आस-पास की किसी भी कैबिन में झांक लो। कमरे में सहसा एक सहज-सी आत्मीयता भर गयी। उसने मेरे बारे में, मैंने उसके बारे में सवाल पूछे। चाय का दूसरा कप मेरी ओर सरकाते हुए धीमे-से उसने पूछा था—'आप इतनी यंग कैसे लगती हैं?'

वह मेरी सराहना नहीं कर रहा था। उसके चेहरे पर कुतूहल फैला हुआ था।

'आप झूठ बोल रही हैं। आप पैंतीलीस वर्ष की हो नहीं सकतीं। ये बच्चे जरूर आपके सोतेले बच्चे होंगे। यह कैसे हो

सकता है ? इसका रहस्य क्या है ?'

'मैं तेरह वर्ष की उम्र से ही प्रेम कर रही हूं। लव हैज केप्ट भी यंग। परहैप्सज़......'

यों ही कह दिया था मैंने। और कोई उत्तर सूझा न था। पर सोचती हूं कि कितनी अजीब बात है। मैं इतने वर्षों से एक ही आदमी से प्रेम कर रही हूं। अल्हड़पन में किये वादे अभी तक निभा रही हूं। ऐसा नहीं कि मेरे पति दोषरहित हैं। सबसे बड़ा संतापक दोष है हर बात में अत्युक्ति का प्रयोग। शुरू-शुरू में कहा करती थी कि ये जार्ज बर्नार्ड शा के भतीजे हैं। अतिशयोक्ति का शौक सीधे वहीं से पैतृक संपत्ति के रूप में प्राप्त किया है। समय बीतता गया और ऊंची आवाज में किये गये बड़े-छोटे दावे पूरे न हो पाये तो चिढ़-सी आने लगी। हर उतार-चढ़ाव को सफाई से संभालने में मैं धीरे-धीरे माहिर होती गयी। पर मेरे पति की वाचालता, और मर्यादा का उल्लंघन करके बातें करने का तरीका न बदला। मुझे बहुत-से एतराज हैं, पर प्रेम अभी भी है।

'चलिये सामोवार चलते हैं' ......यह गलियारानुमा रेस्तरां जिसकी दीवारों पर पतंगें लटक रही थीं, हमारा रान्देवू बन गया। हर शाम को पांच बजे हम वहां मिलते। सात बजे वह मुझे टैक्सी में बैठाकर घर छोड़ आता। मैं रोज कहती कि मैं स्वयं ही चली जाऊंगी; पर वह हर बार मना कर देता, मानो मैं नन्ही-सी बच्ची हूं, जो बंबई की भीड़ में खो जाऊंगी। चाय-काफी व टैक्सी का बिल मैं एक बार भी न चुका सकी। हर बार पर्स की ओर बढ़ा मेरा हाथ वह हवा में ही थाम लेता ...... 'आप मेरे मेहमान हैं।'

सात, आठ, नौ, दस और फिर रात के बारह भी बजने लगे। इस बीच हम क्या करते ? समुद्र-किनारे बैठ चार्ली चैपलन के बचपन से लेकर यासुनारी कावाबाता के एकाकी बुढ़ापे तक पहुंच जाते। बातें। बातें और बातें। हर दूसरे दिन मैं उसे याद दिलाती कि मुझे उसके बारे में लेख लिखकर भेजना है–जल्दी।

'जल्दी ? जल्दी क्या है ?' मुझे हर काम जल्दी ही करना पसंद है। पर उसे कोई जल्दी न थी और फिर उसने पूरी तरह से मेरा भार संभाल लिया था। मुझे किस दिन कितने बजे कहां पहुंचना है, क्या करना है वही निर्धारित करता। अजीब आदमी है। आधी-आधी रात तक हम अकेले घूमते रहते। पिक्चरें देखते, नाटक देखते। कई लोगों से मिलने जाते। पर उसने कभी कोई असंगत व्यवहार मेरे साथ नहीं किया। मेरा मन कई बार सवाल करता कि क्या उसका इतना विनम्र व शिष्ट होना उसका सामान्य रूप है ? आखिर कोई भी पुरुष किसी नारी पर इतना समय और धन क्यों बहाता है ? उसे मेरे साथ-साथ घूमने से क्या मिलता है ? इस जान-पहचान को वह इतना व्यापक और विस्तृत रूप क्यों दे रहा है ?

आखिर एक दिन मैंने जिद करके अपने लेख के लिए सामग्री एकत्र कर ही ली। वह बोलता रहा और मैं लिखती रही।

मैं

मेरा काम पूरा हो गया। मगर हमारा साथ न छूटा। हमें शायद एक-दूसरे की आदत-सी पड़ गयी थी। बंबई में मेरा आखिरी दिन भी उसी के साथ ही बीता था। मैं बेहद खुश थी। जो असहाय घड़ियां थीं, वे कितनी सहजता से बीत चुकी थीं। उसने मुझे फिल्म देखने का निमंत्रण दिया था। हाल में हम दोनों अपनी-अपनी पूरी शक्ति से बनावटी सहजनता से बैठे थे।

'मुझे डर था कि तुम नहीं आओगी।' उसके ओंठ मेरे बालों को छू रहे थे। मैं मानो झूले से लटकी शांत चित्त-सी उसकी मौजूदगी को मन ही मन पालने में झुला रही थी। मेरी आंखें परदे पर टिकी थीं और मैं अत्यंत निश्चलता की हालत में बैठी थी। उसका हाथ जो मेरे हाथ के एकदम नजदीक था, जल्दी से हिला और मेरे हाथ पर आकर रुक गया। मैंने कोई आपत्ति न की—चाहते हुए भी न कर सकी। मेरा हृदय एक तीखी पीड़ा से फैल गया, जैसे प्रसव के समय गर्भाशय। मैंने आंखें बंद कर लीं। उसका हाथ अब मेरी उंगलियों को महसूस कर रहा था, दबा रहा था, मसल रहा था। उसके तीखे नाखून मेरी हथेली में चुभ रहे थे। मुझे पता नहीं चल रहा था कि एकाएक जीवित हो उठी शिराएं मेरी उंगलियों की थीं या उसकी, क्योंकि हमारी उंगलियां एक दूसरे से बेतरह उलझी हुई थीं। एक फव्वारा-सा मेरे अंदर से फूट निकला था।

हम दोनों विवाहित थे, इसलिए यह सब निषिद्ध था। न तो इसकी इजाजत भगवान दे सकता है, न मैं। जब हम हाल से बाहर आये, तो उसका चेहरा एकदम खिंचा था। बहुत हिम्मत बांधकर उसने कहा—'आज रात तुम मेरे साथ ही बिता दो,' एक पल रुककर बोला—'चलो, कॉपर चिमनी चलते हैं।'

'नहीं, बहुत देर हो गयी है।'

उसकी आहत आंखें देखकर पल-भर के लिए मुझे लगा कि मैं अपना एक आवरण उतारने वाली हूं। एक मुखौटा उतारकर फेंकने वाली हूं—अभेद्यता वाला। इससे पहले कि वह मेरी कमजोरी को महसूस कर सके, मैंने टैक्सी-ड्राइवर को कफ परेड की ओर जाने का आदेश दे दिया। वह सदा की तरह मुझसे कुछ दूर पर बैठा था। चंद मिनिट में टैक्सी घर के बाहर खड़ी थी।

'थैंक्स फार आल यू डिड फार मी,' उसने धीमे-से मेरे हाथ दबा दिये।

अपने कमरे में मैंने एक अजीब अकेलापन में स्वयं को घिरा हुआ पाया। शीशे में मैंने अपना पैंतालीस वर्ष बूढ़ा चेहरा देखा। कल जब मैं अपने पति की बांहों में पहुंच जाऊंगी, तो बावजूद पचीस वर्षों के वे मुझे उतना ही उत्तेजित कर देंगे, जितना पहली बार छूने पर किया था। व्हिस्की से घुला-मिला अनुराग और एक प्रणय ध्वनि मेरे कानों से होकर पूरे शरीर में छा जायेगी। अंत में उनका हाथ मेरे शरीर के किसी भी अंग पर आकर अपना स्वामित्व जतलाता हुआ, रुक जायेगा। वे सो जायेंगे और मैं भी। या शायद मैं पत्थर की तरह जड़ बनी पड़ी रहूंगी।

मुन्नी बड़ी हुई, ससुराल गई
मगर ये तस्वीर उसकी याद दिलाती रहती है।

प्रत्येक १२० रोल फ़िल्म पर आप १२ बड़ी तस्वीरें (६x६ से.मी.) खींच सकते हैं। थोड़े से, अतिरिक्त खर्च में आप एक विशेष 'एवर-रेडी' लेदर केस, पोर्ट्रेट लेंस और फ़्लैशगन भी प्राप्त कर सकते हैं।

साफ़ चमकदार प्रिंट्स और एँलार्जमेंट्स के लिए आगफ़ा-गेवर्ट फ़ोटो पेपर के लिए ही आग्रह कीजिये।

आगफ़ा-गेवर्ट के सभी अधिकृत विक्रेताओं के यहाँ उपलब्ध।

एकमात्र वितरक : आगफ़ा-गेवर्ट इंडिया लिमिटेड, मर्चेंट चेंबर्स, ४१, न्यू मरीन लाइन्स, बम्बई-४०००२० शाखाएं : बम्बई ● नई दिल्ली ● कलकत्ता ● मद्रास ● फ़ोटोग्राफ़ी संबंधी उत्पादनों के निर्माता आगफ़ा-गेवर्ट एँटवर्प/लीवरकुसेन का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क। भारत में निर्माता : दि न्यू इंडिया इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड

एकाएक मेरी आंखों में आंसू उभर आये। बात कुछ भी नहीं थी। कुछ भी तो नहीं। एक अचानक हुई भेंट, एक छोटा-सा प्रसंग, एक उपकथा का एक अंश, अंधेरे में बिताये कुछ क्षण, जिन्हें कविता का नाम भी दिया जा सकता है। पर मैंने उन्हें अस्वीकृत कर दिया, निष्फल जानकर तिरस्कृत कर दिया। अब आगे क्या हो सकता है? कुछ भी नहीं। अगर हम कभी दुबारा मिले भी तो क्या होगा?

पर हम क्योंकर मिलेंगे? जिस काम से मुझे उससे मिलना था, वह तो बखूबी पूरा हो चुका था। एक बार फिर मेरा नाम एक पत्रिका में छप गया, हर बार की तरह खूब नशा चढ़ा।

और फिर दुबारा मुलाकात पर तो पहरे लगे हुए हैं, जिन्हें हटाना व तोड़ना मेरे बस का नहीं। मुझसे ज्यादा शक्तिशाली प्रतिनिधि मेरे रास्ते में खड़े हैं। सदियों से क्रूर शासन से पीड़ित, अतिनिर्दयता से शासित मेरा मन मुझे अपने लिए संतोष या अनुकूल सुख ढूंढ़ने की आज्ञा ही नहीं देता।

ऐसी भी तो औरतें हैं, जो इन पहरों को तोड़-फोड़कर अपने-अपने बंदीगृहों से भाग निकलती हैं, पूरे रेगिस्तान पार कर जाती हैं और कई वीरानों से गुजरकर एक नये क्षितिज पर पहुंच जाती हैं। पर मेरा दाय मुझे ऐसा करने से रोकता है। एक अजीब-सी दुर्बलता, एक गहन अनुयोग मेरे अंदर भरा हुआ है। मुझे अपनी ही बनायी दीवारों के अंदर रहना है। अपने न्यायालय में मैंने स्वयं को यही निर्णय सुनाया है। कारावास का दंड प्रलय-दिवस तक मुझे सहना है।

—ए १/२ एन. पी. एल. कालोनी, दिल्ली-६०

★

तीन पुरुष अपनी आवश्यकताएं बताने के लिए महान देवता वेंडी के पास पहुंचे। पहले ने कहा—'मुझे एक घोड़ा चाहिये।' दूसरे ने कहा—'मुझे कुत्ते चाहिये, ताकि डाभ के जंगल में शिकार पकड़ सकूं।' तीसरे ने कहा—'मुझे औरत चाहिये, ताकि मैं मजे से रह सकूं।' महान देवता वेंडी ने तीनों की इच्छा पूरी की; पहले को उसने एक घोड़ा दिया, दूसरे को कुछ कुत्ते दिये, और तीसरे को एक औरत दी।

तीनों पुरुष लौट चले। मगर वे अभी घर की राह में ही थे कि जोरदार बारिश शुरू हो गयी और उन्हें तीन दिन, तीन रात डाभ के जंगल में रुकना पड़ा। वहां न घोड़ा उनके खास काम आया, न कुत्ते विशेष उपयोगी सिद्ध हुए; मगर औरत ने तीनों के लिए खाना पकाया। तीनों पुरुष बोले—'ऐसा करें कि हम वेंडी भगवान के पास लौट चलें।' तीनों ही अब औरत चाहते थे। वेंडी भगवान ने घोड़े और कुत्तों को औरत बना दिया।

तीनों पुरुष घर लौट पड़े। मगर घोड़े से जो औरत बनी थी वह बड़ी पेटू निकली और जो कुत्ते से औरत बनी थी, वह बड़ी नीच निकली। मगर जो शुरू से औरत थी, वह बहुत भली थी—वही मनुष्य जाति की मां है। **(टोगोलैंड की एक लोककथा)**

★

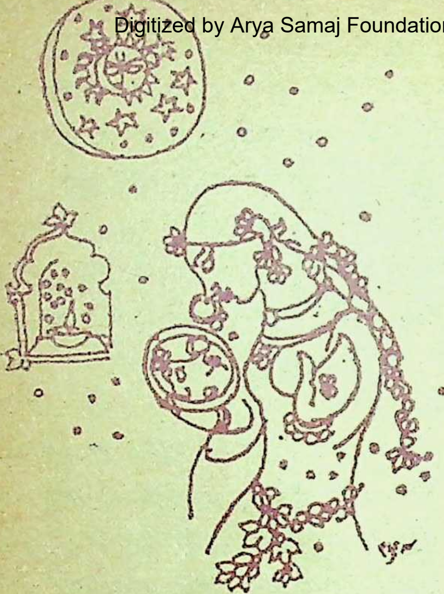

अच्चुत !

अच्युत ही
रचा सकते हैं
महारास,
बंधी हुई है
उनके ही स्थिर से
गोपिकाओं की च्युति
गूंजता है
रागिनियों के–
वैविध्य में
उनका ही एक ओंकार,
सुनो
तुम्हारे अपने भीतर भी
एकोहम् का अप्रतिहत नाद !

—कन्हैयालाल सेठिया
३, मैंगो लेन, कलकत्ता-१

वंशी के गान में

कुंज-कुंज, गैल-गैल
टेर रही बांसुरी
प्राणों पर जादू-सा
फेर रही बांसुरी।
भूल गयी सुधबुध सब
घाट और गेह की
छूट गयी लाज शरम
दृष्टि और देह की
नैन हुए दीवाने
देख रूप माधुरी।
रोम-रोम रोमांचित
अश्रु छलछला रहे
अधरों पर उमड़-घुमड़
प्रेमगीत आ रहे
सांस सांस नयी पुलक
नयी प्रीति से भरी।
सारे सुख सरगम के
भरे एक तान में
भाव छंद लीन हुए
वंशी के गान में
धुन सुन-सुन मर्म-भरी
बनी प्रिया बावरी–
कुंज-कुंज गैल-गैल
टेर रही बांसुरी।

—बाबूलाल शर्मा प्रेम
५५१/१९६ झ, गुरुद्वारा के पास
आलमबाग, लखनऊ-५

* * *

स्मृति के अंकुर

आवाज आयी–'बाबूजी-बाबूजी ।' दरवाजा खोला तो मलेरिया-उन्मूलन विभाग के दो कर्मचारी दवा छिड़कने के उपकरणों के साथ खड़े थे। 'अंदर आइये' कहकर मैंने उन्हें छिड़कने के लिए शौचालय तथा स्नानघर की ओर इशारा किया। तभी शौचालय में दवा छिड़क रहे व्यक्ति के इन शब्दों ने मुझे एकदम से चौंका दिया – 'संतकुमारजी, आजकल आप क्या कर रहे हैं?'

मैंने पलटकर उसके म्लान मुख-मंडल और दीन देहयष्टि पर दृष्टि गड़ा दी। काले रंग का, दुबला-पतला, लंबा, बीमार-सा सफेद किंतु निहायत गंदा पाजामा-कमीज पहने वह आदमी! मैं पहचानने के प्रयास में डूबा ही था कि उसने दुबारा प्रश्न कर दिया–'आप शिक्षा तो पूर्ण कर ही चुके होंगे, अब क्या कर रहे हैं?'

इस बार उसके स्वर ने अतीत की स्मृति की झांकी खोली। लगभग बीस बरस का अरसा हो चुका था। मैं चार-पांच वर्ष का बालक था। प्रतिदिन छत पर मुझे एक गुरुजी कोरी पाटी पर सरकंडे की कलम से अक्षरों का अभ्यास कराया करते थे। उन्हें पांच रुपये मासिक गुरु-दक्षिणा मिलती थी। वे जितनी तल्लीनता और स्नेह से पढ़ाते थे, उतनी ही ललक से मेरे लिए पतंग भी लूटकर देते थे।

मैंने शौचालय में लपककर अपने प्रथम गुरु के चरणों का स्पर्श किया। मेरे मुख से शब्द निकले–'गुरुजी, मैं राजकीय दीक्षा विद्यालय में छात्राध्यापकों को दीक्षा दे रहा हूं।' और मेरे नेत्रों से अश्रुओं के दो कण चू पड़े। मेरे आदिगुरु ने मुझे उठाकर अपने गद्गद हृदय से लगा लिया। तब से इन पंद्रह वर्षों में मेरे जीवन के कई चक्र बदले, पर मेरे आदिगुरु आजकल पता नहीं कहां और किस अवस्था में हैं।

–संतकुमार टंडन 'रसिक',
इलाहाबाद-३

○○○

जिम्मेदार कौन?

बांद्रा (बंबई) के प्लेटफार्म नं. १ पर गुमसुम विचारों में डूबा बोरीवली लोकल की प्रतीक्षा कर रहा था। तभी निहायत गंदे फटे कपड़े पहने लगभग पंद्रह साल का एक लड़का मेरे पास आकर कहने लगा–'बाबूसाहब कोई नौकरी दिलवाइये...... उसकी आंखों के गुलाबीपन से जाहिर था कि वह कई रातों से सोया नहीं है। उसे क्या मालूम था कि वह ऐसे आदमी से नौकरी मांग रहा है, जो खुद तीन-चार महीनों से बेकारी काट रहा है। मैंने उसे बताया कि मैं भी तुम्हारी ही तरह हूं और उसका ठौर-ठिकाना पूछा। उसने बड़ी लंबी दास्तान सुनायी–मां का गुजर जाना ...... पिता का दूसरी औरतों से अवैध संबंध ...... शराब ...... बचे-खुचे खाने पर बसर ...... कभी-कभी भूखे सो जाना ...... और फिर तंग आकर बड़ौदा से बंबई भाग आना ...... बेकारी ...... आदि-आदि। फिर वह रोते हुए बोला–'बाबूजी, काम मांगने पर भी लोग काम नहीं देते, उलटे दुत्कारते हैं। दादर स्टेशन पर मजदूरी करनी चाही, तो कुलियों ने करने नहीं दिया। और पुलिस वालों से कहकर पिटवाया भी। बाबूजी, अब मैं इस जिंदगी से छुटकारा चाहता हूं।'

तभी लोकल आ गयी। मेरा एक दोस्त उसी में था, उसने आवाज देकर मुझे बुलाया। मैंने उससे कहा तुम भी यह गाड़ी छोड़ दो, इस दुःखी लड़के को ढाढ़स बंधाकर अगली गाड़ी से चलेंगे। इस पर दोस्त बिग पड़ा–'तू तो अजीब सनकी है। ये साले रं सियार हैं; आवारा फिरते हैं, किस्से गढ़क सुनाते हैं। चल गाड़ी पकड़।' और मेरा हाथ पकड़कर डिब्बे में खींच लिया। गा चल पड़ी और कुछ ही पलों में एक झट के साथ खड़ी हो गयी। लोग आगे की ओ दौड़े जा रहे थे। मैंने उस बेंच पर नज़ डाली जिस पर बैठकर मैं उस लड़के से बा कर रहा था; वह वहां नहीं था। मैं उसी ओर झपटा जिधर और लोग जा र थे। पास जाकर देखा तो वह वही लड़का था, जो कुछ देर पहले मुझसे बातें कर र था। अब वह दुनिया से विदा हो चुका था।

कौन था उसकी मौत का जिम्मेदार–उसका पिता, समाज, सरकार या व स्वयं? कोई अपनी जिम्मेदारी माने या न माने, पर मेरा दिल आज भी यही कहता है कि उसकी मौत का जिम्मेदार मैं हूं–यानी हर इंसान। **–जगदीश मेहरोत्रा, बंब**

०००

मानवता की लौ

शाम के लगभग सात का समय था। मैं रुगनाथजी की पेढ़ी पर किसी काम से गया था। तभी उसके मुनीम छगनभाई के नाम फोन आया कि आपकी लड़की का एक्सिडेंट हो गया है और वह हरकिसनदा अस्पताल में है। वे सीधे अस्पताल पहुंचे। वहां वाइ. के. मोदी और एन. जी. पुजा नामक दो सज्जन लड़की की खाट के पा खड़े

खड़े थे। उन्होंने छगनभाई को बताया कि जिस समय दुर्घटना हुई वे दोनों उधर से गुजर रहे थे, उन्होंने घटना-स्थल पर पुलिस के पहुंचने से पहले ही बच्ची को अस्पताल में भरती करा दिया और बच्ची के होश में आने पर उससे उनका पता और टेलिफोन नंबर पूछकर उन्हें खबर की थी। दोनों सज्जन बारह बजे रात तक छगनभाई के साथ अस्पताल में रहे।

जिस गाड़ी से दुर्घटना हुई थी, उसके ड्राइवर ने स्वयं जाकर पुलिस-स्टेशन में रिपोर्ट दर्ज करायी थी। पुलिस-अधिकारी छगनभाई को ड्राइवर पर कानूनी कार्रवाई करने की सलाह दे रहा था। परंतु छगनभाई कुछ क्षण रुककर बोले—'आपकी बात ठीक हो सकती है कि कानून की दृष्टि में ड्राइवर अपराधी है; लेकिन यदि जेल-वेल हो गयी तो असल में सजा उसके बीवी-बच्चों को मिलेगी और इस भीषण महंगाई में वे बेसहारे हो जायेंगे। मैं नौकरीपेशा हूं और उनकी हालत जानता हूं। मेरी बच्ची बच गयी है, इसके लिए मैं ईश्वर का तथा आप सबका हृदय से आभारी हूं।' यह सुनकर वह ड्राइवर जो पास ही खड़ा था अपनी गीली आंखें पोंछने लगा।

उन दो नागरिकों का घायल बच्ची को अपनी जिम्मेदारी पर फौरन अस्पताल पहुंचाना, उस कार-ड्राइवर का स्वयं पुलिस थाने जाकर रिपोर्ट लिखवाना, श्री छगनभाई का ड्राइवर को क्षमा कर देना—ये सब बातें इसका सुंदर और आश्वासनदायक प्रमाण हैं कि मानवीय भाव आज भी लुप्त नहीं हुआ है। —**चुन्नीलाल महाराज,**
राजेंद्र आश्रम, झाबुआ (म. प्र.)

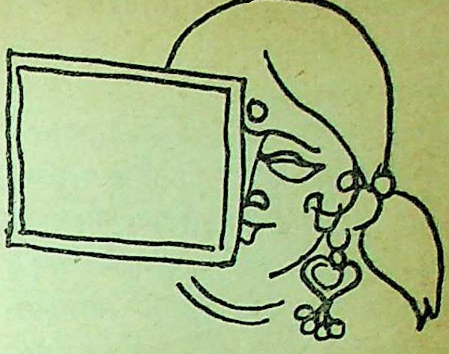

चित्र : सत्यकाम राहुल

०००

बेशर्मी की हद

दिसंबर १९७२। लखनऊ से एक कवि-संमेलन में भाग लेकर वापस आने के लिए चारबाग बस-स्टेशन पर बस का इंतजार कर रहा था। तभी लगभग चौदह-पंद्रह साल के लड़के ने 'मास्साब नमस्ते' कहकर मेरा ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। स्मृति पर जोर डालने पर भी मैं उसे पहचान नहीं पाया और बोला—'मुन्ने, तुम्हें मैंने पहचाना नहीं।' बालक उदास चेहरा लिये चट बोल उठा—'मास्साब, मैं आपको जानता हूं, आप इन्हौना में पढ़ाते थे। अब आप हैदरगढ़ (बाराबंकी) में पढ़ाते हैं।'

मैं उसकी कुशल पूछकर टिकटघर की ओर बढ़ा तो फिर सकुचाते हुए वह बोला—'मास्साब, मैं यहां आया था, पर मेरी जेब

कट गयी। कल से खाना भी नहीं खाया। कुछ रुपयों की जरूरत है......।' मैंने कहा–'चलो, खाना खा लो और मेरे साथ ही वापस चलना।' तब उसने बताया, साथ में उसकी मां भी है और वह उसे एक परिचित के घर ठहरा आया है। उसका कहना था कि वह एक सेठ का लड़का है। पर मेरे मन ने कहा कि जरूर यह लड़का मेरे पहचानने-भर का फायदा उठा रहा है। लेकिन उसकी मां के जिक्र और उसके उदास चेहरे के कारण करुणा-सी उमड़ी और सात रुपये निकालकर उसके हाथ पर रखते हुए मैंने कहा–'लो ये तुम्हारे नाश्ते और दो टिकटों के लिए हो जायेंगे।' रुपये लेकर वह 'घर पहुंचते ही लौटा दूंगा मास्साब!' कहता हुआ चला गया। महीनों बाद एक दिन पता लगवाया तो मालूम हुआ कि वह तो घर का काफी रुपया लेकर भागा हुआ है।

मन ग्लानि से भर उठा। ऐसे भी बालक हैं, जो मां के नाम पर झूठ बोलकर लोगों को ठगते फिरते हैं। क्या होगा इस देश का!

–संतबख्श 'भारतीय',
अहोरवा भवानी, रायबरेली, उ. प्र.

ooo

क्षम्य अपराध

सन १९६२ के दिसंबर में वार्षिक परीक्षा की तैयारी के लिए रात को एक निर्धन सहपाठी के घर जाया करता था। कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। एक रात मित्र ठिठुरने लग गया। उसके दांत आपस में टकराने मैंने अपना कंबल उसे ओढ़ा दिया। अब मेरा बुरा हाल था। मैं उठा और अपने हॉस्टल पहुंचा और एक सहपाठी कंबल चुरा लाया। चुराया हुआ वह सहपाठी को ओढ़ाकर अपना कंबल ओढ़ लिया।

झपकी-सी लग गयी। अचानक लगा मेरे स्वर्गीय पिताजी सामने खड़े हुए और उनके चेहरे पर नाराजगी का है। तभी सेंट्रल जेल के घंटे ने तीन बजने सूचना दी। मैं हड़बड़ाकर उठ बैठा अपना कंबल मित्र को ओढ़ाकर चुराया कंबल ले जाकर हॉस्टल में उसी विद्यार्थी डाल दिया, जिसका चुरा लाया था।

अगले दिन कक्षा में हमारे गुरुजी, हॉस्टल के अध्यक्ष भी थे, रात वाली का जिक्र करने लगे तो मैं भय से कांप कक्षा-समाप्ति पर मैंने उनसे मिलकर बात साफ-साफ बता दी। पर मुझे उस अपराध का मधुर फल लगभग माह बाद पंजाब भाषा-विभाग के निर्देशक के हाथों मानपत्र और दस रुपये सेविंग सर्टीफिकेट के रूप में मिला।

आज भी जब कभी भाषा-विभाग निर्देशक के साथ खिचवायी बचपन की देखता हूं, तो पिताजी के ये शब्द कानों गूंजने लगते हैं–'वह अपराध क्षमायोग्य है जो अपने स्वार्थ के लिए न किया गया हो।

–खुशहाल ठाकुर,

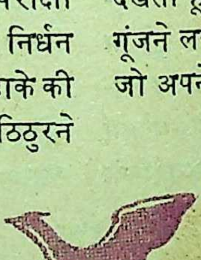

मास्टरजी ने विद्यार्थियों को दूध के फायदे समझाये और कहा–'कल घर से दूध के बारे में दो पृष्ठों का एक निबंध लिखकर लाना।'

अगले दिन उन्होंने विद्यार्थियों के निबंध देखे, तो एक विद्यार्थी ने सिर्फ आधा पृष्ठ लिखा था।

'बस, इतना छोटा निबंध लिखा है?' मास्टरजी ने पूछा।

उत्तर मिला–'यह निबंध कन्डेन्स्ड दूध के बारे में है मास्टरजी।'

०००

हवाई जहाज में आग लग गयी और वह कलाबाजी खाता हुआ नीचे आने लगा, तो एक यात्री ने जान बचाने के लिए उसमें से छलांग लगा दी।

खुशकिस्मती से नीचे घास का एक बहुत बड़ा ढेर था।

बदकिस्मती से घास पर कुछ कंटीली झाड़ियां पड़ी हुई थीं।

खुशकिस्मती से वह कंटीली झाड़ियों पर गिरने से बच गया।

बदकिस्मती से वह घास के ढेर पर गिरने के बजाय खेत में गिरा और......

०००

एक बहुत मोटी स्त्री ने एक ऐसे डाक्टर का पता लगाया, जो कि मुटापे का शर्तिया इलाज करता था। वह उससे मिलने गयी। जाते ही उसने घबरायी हुई आवाज में कहा–'डाक्टर साहब, अब आपका ही भरोसा है। मैं बहुत इलाज करा चुकी हूं और अब आपके पास आयी हूं।'

सामने बैठे आदमी ने उसे गौर से देखते हुए कहा–'मैं तीन बातों की ओर आपका ध्यान खींचना चाहता हूं। पहली बात कि आपको अपना वजन कम से कम पचास पौंड कम करना चाहिये; तब आपके शरीर में के खम और गोलाइयां नजर आने लगेंगी। दूसरी बात कि अगर आप इतना गहरा मेक-अप करना छोड़ दें, तो आपका चेहरा और भी सुंदर लगने लगेगा; यह मेक-अप आपके चेहरे पर नकाब की तरह लगता है।' फिर वह चुप हो गया।

'और तीसरी बात?' स्त्री ने उत्सुकता से पूछा।

'ओह हां! तीसरी बात यह कि मैं डाक्टर नहीं, चित्रकार हूं! डाक्टर साहब

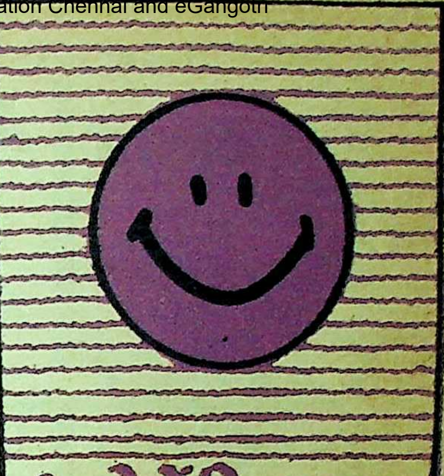

हंसते में खिलता सुमन

सुखबीर

आराम की ऊंचाइयां

बजाज बहार डीलक्स पंखों से

बिना आवाज़ चलनेवाले।
अधिकतम हवा देनेवाले।
नवीनतम डिज़ाइनों मे।

यूनीवर्सल पंखा
ब्यूटी पंखा

बजाज इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
४५-४७ वीर नरिमन रोड, बम्बई-४०००२३
भारत भर में शाखाएँ

heros' BE-201

पड़ोस के घर में रहते हैं।

०००

कान्वेंट में पढ़ने वाली दो छोटी लड़कियां साथ-साथ स्कूल जा रही थीं। उन्हें देर हो गयी थी।

एक ने कहा—'आओ, यहां खड़े होकर कुछ देर ईश्वर से प्रार्थना करें कि हम ठीक समय पर स्कूल पहुंच जायें।'

दूसरी बोली—'नहीं। आओ, दौड़ लगायें और दौड़ते हुए प्रार्थना करें कि हमें देर न हो।'

०००

एक बच्चे को दांतों से नाखून कुतरने की आदत थी। माता-पिता उससे यह आदत छुड़ाने में असमर्थ रहे। एक दिन उनके घर आया एक मेहमान बच्चे की इस आदत का जिक्र सुनकर बोला—'मैं छुड़ाये देता हूं यह आदत।' फिर उसने बच्चे को बुलाकर समझाया—'देखो बेटा, अगर तुमने दांतों से नाखून कुतरने की गंदी आदत न छोड़ी, तो एक दिन इतने ज्यादा मोटे हो जाओगे कि लोग तुम्हारा मजाक उड़ाने लगेंगे।' बच्चे के मन में ऐसा डर बैठा कि उसकी वह आदत छूट गयी।

दो-तीन साल बाद वह मेहमान फिर घर में आया, तो बच्चे ने हैरानी से उसे देखा और पूछा—'चाचाजी, आजकल क्या आप भी दांतों से नाखून काटने लगे हैं, जो इतने मोटे हो गये हैं?'

०००

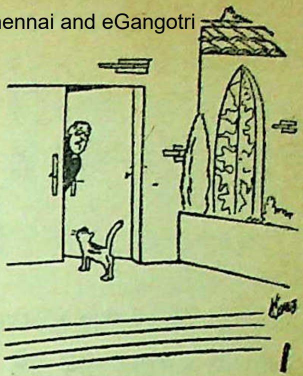

'अरे, तुम वापस आ गयी? मैं तो सोच रहा था कि तुमने अपना संप्रदाय बदल लिया।'

एक आदमी स्वास्थ्य-सुधार के लिए पहाड़ पर गया और वहां किसी होटल में कई दिन रहा। पहाड़ से वापस लौटते समय उसने होटल के मैनेजर से कहा—'डाक्टर ने मुझे यहां भेजते समय कहा था कि खूब खाना, खूब आराम करना और खूब वर्जिश करना। मैंने उसकी पहली दोनों बातों पर तो अमल किया, लेकिन वर्जिश एक दिन भी नहीं की। फिर भी देखिये, मेरी सेहत कितनी अच्छी बन गयी है! अच्छा, तो अब मैं इजाजत चाहता हूं।'

'जाने के पहले एक छोटी-सी वर्जिश जरूर करते जाइये,' मैनेजर ने कहा।

'हुक्म कीजिये।'

'जरा झुककर अपने सूटकेस को छूइये।'

उस आदमी ने झुकते हुए कहा—'लीजिये, छू लिया।'

'अब इसे खोलकर होटल के तौलिये, चादरें, चम्मच और दूसरा छोटा-मोटा सामान निकालकर दे जाइये।' **—बी१९, सन एंड सी, वरसोवा रोड, बंबई-४०००६१**

★

नरक

मिखाईल नईमी

सामंत पर डिक्री हो गयी। अदालत के निर्णय के अनुसार अब उसे अपना किराये का मकान, जिसमें वह पचपन बरस से लगातार रहता आ रहा था, तीन महीने के भीतर खाली कर देना था। इस मकान से उसे बहुत मोह था। मोह केवल इसलिए नहीं कि वह उसमें एक जमाने से रहता आ रहा था, वरन इसलिए भी कि उसकी प्रिय एवं विख्यात चित्रशाला भी, जिसके कारण उसने एक महान चित्रकार के रूप में दूर-दूर तक ख्याति प्राप्त की थी, इसी मकान में थी। अभी दो ही महीने की तो बात है कि उसने इसी मकान में अपना अस्सीवां जन्म-दिन मनाया था। और उसके साठ ही दिन बाद अब यह नौबत आ पहुंची कि उसे अपने जीवन की सांध्य-वेला में अपने उसी प्रिय मकान को न चाहते हुए भी छोड़ देना पड़ रहा था।

वह चित्रकला का पेशा छोड़ चुका था और अब जीवन के शेष दिन पूर्ण शांति से बिताना चाहता था। उसने बड़े ही यत्न से एक संग्रहालय तैयार किया था। उसमें उसके अपने बनाये प्रसिद्ध चित्रों के अतिरिक्त कई दुर्लभ पुस्तकों और पुरातत्त्व-संबंधी अनेक बहुमूल्य अवशेषों का संग्र था। यह संग्रहालय उसके जीवन की ए ऐसी अमूल्य निधि थी, जिसे वह किसी शर्त पर छोड़ने के लिए तैयार न था।

इस संग्रहालय की प्रत्येक वस्तु उसके जीवन का अंग बन चुकी थी। इस मकान के फर्श, छतें, दीवारें, खिड़कियां, दरवाजे जो वर्षों से उसके पैरों की आहट पहचानने के अभ्यस्त थे, जो उसकी अनोखी चित्रकला के प्रशंसकों के सैकड़ों-हजारों प्रशंसा-वाक्य सुन चुके थे, उसके जीवन के अभिन्न अंग थे।

यदि उसने विवाह किया होता और किसी दिन अचानक ही यमदूत उसकी पत्नी और बच्चों को उससे छीन ले जाते, तब भी शायद उसे इतना दुःख न होता, जितना इस मकान से विलग होते हुए हो रहा था।

और भी कितनी ही बातें थीं, जिनके कारण उसे मकान छोड़ना कष्टकर जान पड़ रहा था। सबसे पहली बात तो यह कि जेठ की जलती दुपहरियों में वह नये मकान की खोज में घूम कैसे सकेगा? घूम भी ले तो ऐसा बढ़िया मकान उसे कहां मिलेगा। और यदि मिल भी गया, तो अपनी वर्तमान आर्थिक स्थिति को देखते हुए वह उसका

भारी किराया दे कैसे सकेगा ?

वैसे, यदि सच कहा जाये तो उसकी ये सब चिंताएं काल्पनिक ही थीं। क्योंकि शहर में मकानों का मिलना कुछ भी कठिन नहीं था। अच्छा-खासा मकान काफी कम किराये में ही मिल सकता था। ठीक कारण तो वास्तव में कुछ और ही था। उस मकान को, जिसमें उसके मधुरतम दिन व्यतीत हुए थे, वह किसी भी तरह छोड़ना नहीं चाहता था और इसीलिए नये मकान का प्रश्न उसे भारी पड़ रहा था। उसके संग्रहालय में वर्षों से जो वस्तुएं जहां 'फिट' होकर पड़ी थीं, उन्हें वहां से उठाकर पेटियों में बंद करना उसे कसाई के काम से भी निष्ठुर जान पड़ रहा था।

जो भी हो, इन्हीं सब चिंताओं में डूबते-उतराते उसने अपने तीन महीने बिता दिये थे और आज अंतिम रात आ पहुंची थी। जब वह बिस्तर पर लेटा, दुनिया-भर की चिंताओं ने उसे आ घेरा। एक क्षण के लिए भी वह नहीं सो सका और किसी असंभव चमत्कार की प्रतीक्षा में रात-भर करवटें बदलता रहा। सोचता था, यदि रात ही रात में कोई भयंकर भूकंप आ जाये, मकान-मालिक की हृदयगति बंद हो जाये, देश-भर में कोई क्रांति फूट पड़े, या तीसरा महायुद्ध ही छिड़ जाये, तो अवश्य ही मकान छोड़ने

चित्र : कमलाक्ष शेणै

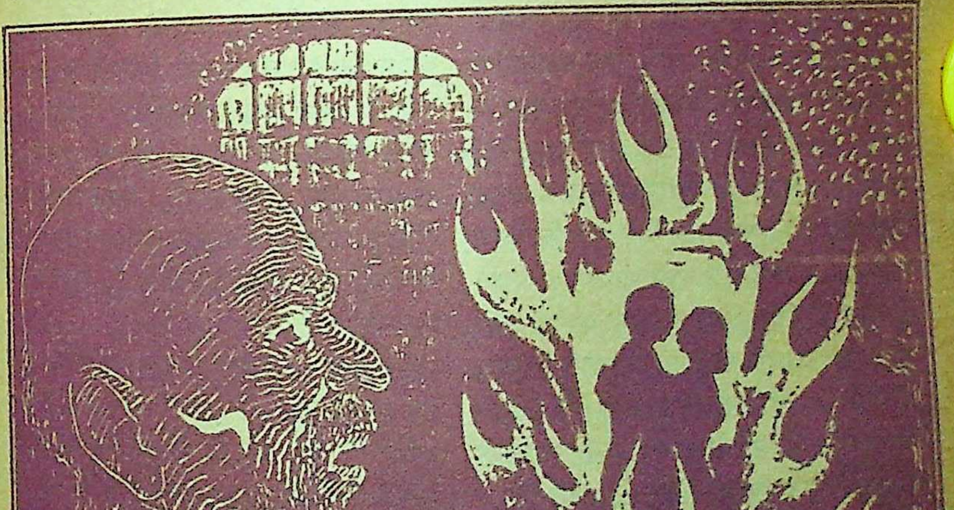

अनुवाद : श्रीनिधि सिद्धांतालंकार

की विपत्ति से वह सहज ही छूट सकता है।

किंतु वैसा कोई चमत्कार नहीं हुआ और पूर्वाकाश में उदित उषा ने शरारत-भरी मुस्कान के साथ उस अंतिम दिन के आ पहुंचने की सूचना दे डाली। किंतु आश्चर्य, उस सूचना का उस पर कोई प्रभाव न पड़ा। ऐसा लग रहा था, जैसे विदा होती रात उसे कोई सांत्वनापूर्ण सुझाव दे गयी थी, जिसने उसकी तीन महीने की गंभीर चिंता को पूर्ण निश्चिंतता में बदल डाला था। वह शायद उसे कोई ऐसी योजना बता गयी थी, जिसे वह बड़ी प्रसन्नता से क्रियात्मक रूप देने के लिए तैयार दिखाई पड़ रहा था।

योजना का जल्दी ही पता चल गया। बहुत साधारण ही थी वह। ठीक मध्यरात्रि में बिस्तर पर करवटें बदलते हुए उसे स्मरण आया कि दो राष्ट्रों में युद्ध छिड़ जाने पर जब दोनों राष्ट्रों के सुरक्षा-मंत्रालय अपने राजदूतों को एक-आध दिन की निश्चित अवधि में स्वदेश लौट आने का आदेश भेजते हैं, तब वे राजदूत अपने गुप्त कागज-पत्रों और फाइलों को विदेशी गुप्तचरों के हाथ में पड़ने से बचाने के लिए जला देते हैं और उनके बोझ से हलके होकर निश्चिंतता से ही अपने प्रिय दूतावास को छोड़ देते हैं।

यदि वह भी वैसा ही करे, तो क्या वह उसी निश्चिंतता से इस मकान को न छोड़ सकेगा? मकान मालिक के साथ उसका भी तो युद्ध ही छिड़ा हुआ है और उसके पास भी केवल एक ही दिन की अवधि शेष है। बहुत-सा फालतू सामान भी उसके मकान बहुत समय से इकट्ठा हुआ पड़ा है। यदि वह भी उन राजदूतों की तरह उस सामान को अग्नि की भेंट कर दे, तो वह क्या उनकी तरह हलका न हो जायेगा?

ऐसे मामलों में बहुत सोच-विचार करना चाहिये। साहस के साथ ही उठाना चाहिये। संशय में पड़ना काय है। विचार इस वेग से उसके मस्तिष्क घूमने लगा कि उसे अधिक सोचने का अ सर ही नहीं मिल सका। इससे पहले वह उसके परिणाम पर विचार कर सके, मकान के आंगन में अग्नि प्रज्वलित चुका था और अब केवल उसकी मिटाना ही शेष रह गया था। वह भी प्रारं हो गया। मकान में पड़ी कितनी ही वस्तु एक के बाद एक उसमें फेंकी जाने लगीं। वर्षों पड़े रहने के कारण पीले पड़े हुए पुराने समाचारपत्र, पत्रिकाएं, विज्ञापन-विज्ञप्तियां, अधूरे चित्र, टूटे हुए फ्रेम, फटी हुई कमीजें और टाइयां उसकी भूख मिटाने साधन बनने लगीं।

बढ़िया भोजन पाकर अग्निदेव प्रसन्न हो उठे और अपनी लपटों के दर्जनों हाथों से बड़े प्रेम से उन्हें उदरस्थ कर लगे। बहुत ही सुंदर दृश्य लगा सामने वह। अग्नि की धू-धू करती, धुआं छोड़ लपटों के नृत्य ने उसे मंत्रमुग्ध कर दिया। उसे लगा, जैसे यह नृत्य अद्भुत है, है। इसे चलते ही रहना चाहिये, मंद नहीं पड़ने देना चाहिये। वह उन्मत्त हो उठा

अग्नि को प्रज्वलित रखना ही उसका उद्देश्य हो उठा ।

वह उधर-उधर भागने लगा और मकान में रखी जो भी वस्तु उसके हाथ पड़ जाती, उसे ही आग में डालने लगा । पहले वह प्रत्येक वस्तु को ध्यान से देखता, उसकी हल्की-सी जांच करता और फिर यह कहता हुआ 'दोजखी ! तुमने काफी दिन तक मुझ पर बोझ डाले रखा है' उसे उछालकर आग के हवाले कर देता । और आश्चर्य कि ऐसा करते हुए उसका मुख विजयोल्लास से दीप्त हो उठता । ऐसा लगता, जैसे वह किसी सेना का सेनापति हो और अभी हाल में ही उसने किसी निर्णायक युद्ध में विजय प्राप्त की हो ।

सामंत का यश जब पूर्ण यौवन पर था, उन दिनों का कोई मित्र या प्रशंसक इस समय यहां मौजूद होता, तो अवश्य ही समझता कि उसका दिमाग खराब हो गया है या उसे हिस्टीरिया का दौरा पड़ा है । क्योंकि जिस तरह वह अपने लंबे-चौड़े संग्रहालय में इधर-उधर दौड़ता हुआ जिस किसी भी चीज को उठाकर आग में झोंकता फिर रहा था, उससे वह पागल के अलावा और कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था ।

आग में झोंकी जाती हुई वस्तुओं में वे बहुमूल्य प्राचीन वस्तुएं भी थीं, जिन्हें वह बहुत महत्त्व देता था; और उच्चस्तर के वे पुरस्कार-प्राप्त तैलचित्र भी थे, जिन्हें वह अपनी तूलिका की सर्वश्रेष्ठ रचनाएं मानता था; वे चित्र भी थे, जो संसार के अनेक महापुरुषों और महिलाओं ने उसकी अद्भुत कल्पना-शक्ति की प्रशंसा में उसके पास भेजे थे; वे अविस्मरणीय स्मृति-चिह्न भी थे, जो दीपक के प्रेमातुर पतंगों की तरह उसे हर समय घेर रखने वाली विवाहिता-अविवाहिता रमणियों द्वारा भेंट किये गये थे ।

ऐसा लग रहा था, जैसे ये सभी वस्तुएं इतने दीर्घ वर्षों तक उसका प्रेम पा चुकने के बाद अब उसके लिए धूल बन चुकी थीं, उसके हाथ-पैरों के लिए हथकड़ी-बेड़ी, जीवन का भार, और जितना ही जल्दी हो सके, वह उनसे छूट जाने का यत्न कर रहा था ।

उसकी चेष्टाओं से ऐसा लग रहा था, जैसे वह डर रहा हो कि उसके संग्रहालय के अंतिम पदार्थ के जल जाने से पहले कहीं आग ही न बुझ जाये; या यह अंतिम दिन ही कहीं इतना छोटा न पड़ जाये कि उसे सब वस्तुएं जला देने का अवसर ही न मिल सके । या कहीं अचानक उसका संकल्प ही न बदल जाये, जिससे उसे किसी वस्तु को बचा लेना पड़े । वह यह सोचकर शायद खूब प्रसन्न था कि इतना साहसपूर्ण कार्य प्रारंभ करके वह एक ही बार में मस्तिष्क पर बोझ बनकर पड़े हुए अपने अतीत से सदा के लिए मुक्त हो जायेगा ।

यह भी संभव है कि उसने यह काम शायद अपने आपको यह समझाने के लिए आरंभ किया हो । वह अब यह दिखा देगा कि जिन वस्तुओं के मोह में पड़कर इतने समय तक वह उन्हें अपने जीवन का अभिन्न अंग मानता आ रहा था और समझता था कि उनके

SATHE MALTEX
साठे माल्टएक्स बिस्कुट
SATHE MALTex BISCUITS
SATHE'S MALTex
SBC साठे बिस्कुट

साठे माल्टएक्स

इतने स्वादिष्ट हैं क्यों कि उनमें माल्ट है

ताज़ा, करारा व स्वाद में अनोखा

इस अनोखे स्वाद का कारण है मॉल्ट, जो इस बिस्कुट में भरपूर है। पचने में हलका यह बिस्कुट चाहे जितने भी खायें, और खाने को जी चाहता है। इसलिये कि इसमें मॉल्ट है!

उपहार में देने के लिए सुंदर पेकेट में और घर लेजाने के लिए खुला मिलता है।

IS:1011 ISI
आई. एस. आई मुहर वाले
माल्टएक्स का मतलब है अच्छी
किस्म की गारंटी वाले बिस्कुट

heros'-SBC-54A-HIN

बिना उसका जीवन 'नरक' बन जायेगा, उनका परित्याग वह कितने सहज भाव से कर सकता है और उनके बंधन से मुक्त होकर अपने शेष दिनों को कितने अधिक अच्छे ढंग से बिता सकता है।

तभी, हठात् उसकी दौड़धूप समाप्त हो गयी। वह अवाक् होकर आग के सामने खड़ा हो गया। ओंठ खुले, नेत्र विस्फारित, समूची देह निश्चल। आग की चंचल लपटें अब भी वही जादू-भरा नृत्य कर रही हैं। उसकी सर्प जिह्वाएं अब भी भेंट किये गये पदार्थों को चाट रही हैं। मगर जिसने उन्हें ये स्वादिष्ट पदार्थ दिये थे, वह बेचारा एक ही क्षण में अर्धांग के रोगी की तरह उनके सामने काठ-सा बनकर खड़ा हो गया था।

बात यह हुई थी कि अभी-अभी उसने फीके रिबन से बंधा कागजों का एक पुलिंदा आग में फेंका था। आग में रिबन जैसे ही जला, पुलिंदा एक साथ खुल गया और उसमें से निकलकर एक अप्रत्याशित फोटो उसके सामने खड़ा हो गया। इस फोटो ने ही उसे उस समय अभिभूत कर दिया था। फोटो में एक युवक और युवती का जोड़ा दिखाई पड़ रहा था, जो एक-दूसरे को आलिंगन में बांधकर खड़े थे। आश्चर्य यह था कि पुलिंदे में से खिसककर भी फोटो एकदम सीधा खड़ा था और आग की भूखी लपटों के बीच भी बहुत ही स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था।

युवक का मुख आत्मविश्वासपूर्ण पुरुषत्व, असीम कोमलता और प्रेम की गहरी विजय-भावना से उद्दीप्त था। युवती अत्यंत सुंदर थी और उसके मादक मुख पर दुर्निवार आसक्ति से भरा नारीत्व झलक रहा था। ऐसा लगता था जैसे अग्नि उस अनिंद्य सौंदर्य पर मुग्ध होकर स्वयं मंद पड़ गयी है और जान-बूझकर उस पर अपनी सर्वग्रासी दाहक शक्ति का प्रयोग नहीं कर रही है।

उन थोड़े-से भागते हुए क्षणों ने वृद्ध चित्रकार को किसी दुर्निवार संमोहन में बांधकर विस्मय और भय से भर दिया था। क्योंकि आग की लपटों में खड़ा हुआ वह फोटो किसी और का नहीं था, स्वयं उसका था। उसके आलिंगन-पाश में बंधी वह सुंदरी युवती उसके एक अभिन्न मित्र और पड़ोसी चित्रकार की पत्नी थी।

इस प्रेम-बंधन को तोड़ देने के उसने अनेक यत्न किये थे, किंतु वह किसी भी तरह सफल न हो सका था। उस युवती ने भी अपने को कितनी ही बार धिक्कारा था और अपने पातिव्रत्य को निष्कपट रखने का भरसक यत्न किया था। किंतु उसे भी सफलता न मिल सकी थी। किसी दुर्निवार आकर्षण से खिंचकर दोनों एक-दूसरे के निकट आते जा रहे थे और अंत में इस स्टूडियो को ही उनके अनेक प्रणय-प्रसंगों का साक्षी बन जाना पड़ा था। बाद में तो उन्हें अपनी इन चेष्टाओं में कोई पाप या अपराध भी नहीं दीखने लगा था। वे यह कहकर अपने को संतोष देते रहे थे कि प्रेम की अग्नि सब लज्जाओं और पापों को दग्ध कर देती है।

आओ – एक सौदा करें!

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—

गोला

टॉफियां और मिठाइयां

Cola
SWEETS
MILK

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.प्र.

कपड़ों की उजल
धुलाई के लिये

CHANDNI SOA
MADE IN INDIA
BERAR OIL INDUSTRIES AKOLA
चाँदनी

चाँदनी

साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

उनके यौवन की वे उन्मत्तताएं आज चार पीढ़ी पुरानी हो चुकी थीं और सामंत के मन में उनकी स्मृति इतनी धुंधली हो चुकी थी कि बड़ी कठिनाई से वह उसे पहचान पा रहा था। उसके हृदय की धड़कनों पर अब उसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ रहा था। उसे उस दंपति से बिछुड़े एक जमाना हो गया था। उसे यह भी पता न था कि वे लोग अब जीवित भी हैं या नहीं।

किंतु आज जब आग की निष्ठुर लपटें आंखों के सामने ही उस दुर्लभ सौंदर्य को नष्ट करने पर तुल गयी थीं, उसका मन एक साथ वेदनातुर हो उठा था। किसी शराबी की तरह उसका मस्तिष्क हवा में तैरने लगा था। उसका समूचा शरीर, जो किसी समय खूब सशक्त और गठा हुआ था, पत्ते की तरह कांप रहा था। उसे बहुत ही स्पष्ट अनुभव होने लगा कि उसकी 'किसी समय की' प्रियतमा के फोटो को जलाने वाली यह आग 'नरक' के सिवा कुछ नहीं है। और यह फोटो भी केवल चित्र न होकर दो पापिष्ठ प्रेमियों के पापपूर्ण रक्त-मांस-मज्जा का अवशेष है, जो चटख-चटखकर हवा को दुर्गंधित बना रहा है।

इस बीच आग की लपटें फोटो का बहुत-सा भाग भस्म कर चुकी थीं, एक-दूसरे को आलिंगन-पाश में बांधने वाली उनकी बांहों को खा चुकी थीं। उनके क्रोध में युवती के सुंदर केश भस्म हो चुके थे और अब उसके मादक कपोलों और स्वप्नों में डूबीं, प्रणय-प्रसन्नता और यौवन के माधुर्य से भरी आंखों पर झपटने की तैयारी कर रही थीं। नहीं-नहीं, उनका प्रणय चाहे पाप हो, पुण्य हो, कुछ भी हो, मगर उन्हें ऐसे अनुपम सौंदर्य को इस तरह नष्ट कर देने का तनिक भी अधिकार नहीं है।

पागल की तरह हठात् उसने अपना दायां हाथ लपटों में घुसेड़ दिया और दूसरे ही क्षण कराहकर पीछे खींच लिया। आधा हाथ जल चुका था। पीड़ा से चीख उठा वह, और देखते ही देखते मूर्च्छित होकर फर्श पर गिर पड़ा। तभी उसके फोन की घंटी टनटना उठी। वह जागा और रिसीवर कानों से लगाकर बैठ गया। कहीं दूर, बहुत दूर से किसी की कंपन-भरी, दर्द-भरी आवाज सुनाई पड़ रही थी :

'सामंत! मैं नरक में पड़ी हूं। तुम्हारे सिवा अब इससे मुझे कोई नहीं बचा सकता। क्या केवल दो मिनिट के लिए मुझे अपने पास आने की स्वीकृति दे सकोगे?'

वैसी ही कंपन-भरी, दर्द-भरी आवाज में सामंत ने उत्तर दिया–'अभी-अभी मैं नरक से निकला हूं। अब दुबारा वहां नहीं जाना चाहता। एक मिनिट के लिए भी नहीं।'

फोन में 'वही' बोल रही थी।

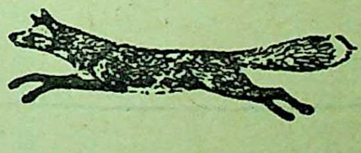

गीत

बहक गयी जूही बन फूल,
चमक गयी सुधियों के मेघों में
बिजली बन भूल।
तितली के पंखों-सी इच्छाएं
उड़-उड़कर फैल गयीं मन के आकाश।
पियराये पतझर के हाथों में,
सौंप गयीं अनजाने जीवन-मधुमास।
कसक रही मौसम की आंखों में
चुटकी-भर धूल।
प्रेमिल अनुबंधों-सी सरिताएं
बह-बहकर जीत गयी बैरिन बरसात।
मधुशीला मोती-सी आशाएं
खाकर क्यों बैठ गयीं जहर-भरी मात।
लगता है पवन कहीं उपवन में
बहता प्रतिकूल।
बहक गयी जूही बन फूल।

—सुधांशु—
वैदिक इंटर कालेज, दिव्यपुरी, डिबियापुर, इटावा

एक अभियान

पाल गैलिको
अनु: क्रांति त्रिवेदी

'मैं हेनरी के पिता को खोजकर ही रहूंगी।' मिसेस एडा हैरिस की इस घोषणा पर उसकी मित्र मिसेस बटरफील्ड चौंक गयी।

एडा हैरिस और वायलेट बटरफील्ड लंदन की मामूली कामकाजी स्त्रियां थीं। मिसेस हैरिस विभिन्न घरों की सफाई और झाड़-पोंछ का काम करती, जबकि मिसेस बटरफील्ड एक कुशल रसोईदारिन थी। काम के सिलसिले में दोनों का लंदन के अनेक संपन्न घरों में प्रवेश था। दोनों खूब मेहनती और खुशमिजाज थीं।

मिसेस हैरिस की उम्र साठ के करीब की होगी। कद की नाटी नाजुक-सी मिसेस हैरिस का मुखड़ा भोला और आकर्षक था। उसके उभरे लाल गाल सूखे सेब जैसे थे, पर लगते अच्छे थे। छोटी गोल आंखें सदा मुस्कराती-सी प्रतीत होती थीं। काम में मुस्तैद रहते हुए भी उसका मन सुखद कल्पनाओं का ताना-बाना बुनता रहता था। समय पड़ने पर वह साहस का भी परिचय देती थी। उसकी हिम्मत का सहारा लेकर डरपोक मिसेस बटरफील्ड अपना समय काट रही थी। विधवा होने के बाद से इसी तरह एक दूसरे को सहारा देकर परिश्रम से अर्जित धन से जीवनयापन कर रही थीं वे दोनों।

इस समय मिसेस एडा हैरिस के छोटे-से साफ-सुथरे कमरे में दोनों की संध्याकालीन बैठक जमी थी। एकाएक रोज की तरह ही बगल वाले क्वाटर से उस अनाथ नन्हें बालक के रोने की आवाज ने आकर उनके सुख में खलल डाल दी। एडा हैरिस ने कहा- इन निर्दयी पड़ोसियों से तंग आ गयी कितना मारते हैं उस बच्चे को। मैं तो पुलि को रिपोर्ट कर दूं, मगर सबूत कहां लाऊंगी। फिर वे उसे और ज्यादा येंगे। कल मैंने उसे एक केक का टु दिया, तो उनके सारे बच्चे उस पर पड़े।' उस दृश्य को याद कर मिसेस है सिहर उठीं—तभी ऐसा लगा मानो उस बच्चे को किसी ने एक जोरदार लगाया है। मिसेस हैरिस ने अपने कानों हाथ रख लिये—'इसीलिए तो कहती हूं, रीका जाकर इसके पिता को खोजना पड़ेगा।'

मिसेस बटरफील्ड का चेहरा सफेद गया—'एडा, तुम इस बेवकूफी-भरे काम लिए अमरीका नहीं जाओगी न?'

एडा ने गहरी सांस लेकर कहा-'जा सकती हूं। इतना पैसा इकट्ठा नहीं हु है। पर इस बच्चे की दशा मुझसे देखी न जाती है।'

[२]

उस मुहल्ले का प्रत्येक व्यक्ति नन्हे हेन की कहानी से परिचित था। १९५० जार्ज ब्राउन नाम का एक अमरीकी में नियुक्त हुआ, और यहीं उसने एक हो की परिचारिका पैंजी स्काट से शादी ली थी। उन्हीं का यह पुत्र था। जार्ज ब्रा जब अमरीका जाने लगा, तो पैंजी ने उ दूर जाना अस्वीकार कर दिया। अकेला चला गया, और उसने पैंजी

तलाक दे दिया। कुछ दिन बच्चे के लिए रुपये भेजता रहा, फिर बंद कर दिया। इधर पैंज़ी ने भी नया विवाह रचा डाला। उसके नये पति ने बच्चे को अलग रखने को कहा, तो उसने उसे गसेट-परिवार में रख दिया, और हर माह एक निश्चित रकम भेजने का वचन दिया। कुछ माह बाद वह मनीआर्डर आना बंद हो गया। फिर पैंज़ी स्काट या जार्ज ब्राउन का कोई पता नहीं लग सका। रुपये मिलने बंद होने के बाद से नन्हे हेनरी के प्रति गसेट-परिवार का व्यवहार बुरा ही होता गया। अब तो यह अवांछित बच्चा, अनेक यातनाओं का लक्ष्य बन गया था, और इसी चीज ने मिसेस हैरिस की रातों की नींद खत्म कर दी थी।

मिसेस हैरिस मधुर कल्पनाओं में काफी समय खोयी रहती थी, फिर भी वास्तविकता का उसे इतना ज्ञान था कि वह अपने लिए अमरीका की यात्रा को चंद्रलोक की यात्रा जैसा मानती थी। फिर भी उसके उदार मन में यह विश्वास था कि यदि वह किसी तरह अमरीका पहुंच सकी, तो जार्ज ब्राउन को उसकी एयर फोर्स की नौकरी के आधार पर खोज लेगी। उसने लंदन में नियुक्त जितने भी अमरीकी अफसर देखे थे, वे सब भी अपने बच्चों को बेहद प्यार करते थे, इसलिए उसकी कल्पना का जार्ज ब्राउन ऐसा पिता था, जो अपने बच्चे को पाने के लिए व्याकुल था। वह प्रायः ही अवकाश के समय बैठी स्वप्न देखा करती कि उसने नन्हे हेनरी को उसके पिता के पास पहुंचा दिया है। पिता-पुत्र के मिलन के क्षणों की कल्पना जाने कितनी बार उसे पुलकित कर चुकी थी।

यों तो एडा हैरिस कई घरों में काम करने जाती थी, लेकिन उसे इन सबमें शीवर-दंपति सबसे अधिक पसंद थे। यह निस्संतान अधेड़ दंपति आपस में ही मग्न रहते थे। मिसेस शीवर कुछ सिलविली किस्म की महिला थीं। एडा हैरिस अगर एक दिन को भी बीमार पड़ जाये, तो उनकी गृहस्थी अस्तव्यस्त हो जाती।

उस दिन सुबह-सुबह ही मि. शीवर समाचार सुना गये थे कि उनकी पदोन्नति हो गयी है और उन्हें न्यूयार्क जाना पड़ेगा। नयी जगह जाने की खबर ने, पदोन्नति की खुशी काफी कम कर दी थी। मिसेस शीवर परेशान-सी बैठी थीं कि मिसेस हैरिस अंदर आयी, और उन्हें वह सारी समस्याओं के समाधान का मूर्तिमान रूप दिखी। कामकाज खत्म करके मिसेस हैरिस उनके साथ चाय पीने बैठी, तो चाय खत्म होते तक उन्होंने एडा (यानी मिसेस हैरिस) को अपनी सारी समस्याओं से परिचित करा दिया था, और मन में एक निर्णय ले लिया था।

मि. शीवर की सहमति से उन्होंने अपना प्रस्ताव मिसेस एडा हैरिस के सामने रखा। मिसेस हैरिस पिछले रोज ही समझ गयी थी कि यह प्रस्ताव उसके सामने आयेगा, और वह अपनी शर्त के साथ तैयार थी। मिसेस शीवर को मानना पड़ा कि मिसेस हैरिस आयेगी, तो मिसेस बटरफील्ड भी

रसोईदारिन के रूप में आयेगी।

मिसेस हैरिस ने जब यह समाचार मिसेस बटरफील्ड को सुनाया, तो उसका ढाई मन का शरीर कुर्सी में धंस गया—'क्या हमारी उम्र इस लायक है कि हम अमरीका जायें?' वह लगभग रोने को हो गयी।

'सोचो तो वायलेट, मुफ्त में अमरीका जाना और ऊपर तनख्वाह के रूप में एक मोटी रकम पाना हम लोगों के लिए कितनी बड़ी बात होगी!'

'एडा, तुम तो रोज बाइबल पढ़ती हो। रुपया ही तो सब कुछ नहीं होता। ज्यादा रुपया तमाम बुराइयों की जड़ है। मैं अपनी जरूरत-भर को यहीं कमा लेती हूं।' मिसेस बटरफील्ड ने किंचित गर्व से सिर उठाकर कहा।

अब मिसेस हैरिस ने दूसरी चाल चली—'और नन्हे हेनरी का क्या होगा?'

मिसेस बटरफील्ड चुप रही।

'उसके पिता को कौन खोजेगा? वायलेट, मुझे तुम्हारे स्वार्थीपन पर शर्म आती है। तुम तो उस पर बड़ी दया दिखाती थी।'

एडा हैरिस के आरोपों का मिसेस बटरफील्ड के पास कोई उत्तर न था, सो उसने तुरुप मारा—'मुझे अमरीका जाने में डर लगता है।'

अंत में जब एडा हैरिस ने कहा कि अमरीका में मुझे हिम्मत बंधाने को तुम्हारा आना बिलकुल जरूरी है, तुम्हारे बिना मैं नहीं जा सकती, तो मिसेस बटरफील्ड राजी हो गयी।

आज तक मिसेस हैरिस यही कहती कि मिसेस शीवर के प्रस्ताव के बावजूद शायद वह अमरीका न जाती, यदि स्व ईश्वर ने परोक्ष रूप में उसके पास संकेत न भेजा होता।

मिसेस हैरिस की एक अजीब आदत थी। सफाई करते-करते जब भी उसे कागज का कोई टुकड़ा मिलता, तो वह उसमें लिखी या छपी इबारत पढ़ती जरूर थी। साथ ही पुराने अखबार और उनमें छपे जन्म, विवाह के समाचार पढ़ने का उसे विशेष शौक था। एक दिन मछली की दूकान पर अपनी बारी की प्रतीक्षा करते हुए वह काउंटर पर रखे कागज के टुकड़ों को पढ़ने लगी तो उसकी दृष्टि निम्नलिखित खबर पर जाकर अटक गयी :

'आज, सेहजानचर्च न्यूयार्क में मिस जार्जिया ट्रेसी और मि. जार्ज ब्राउन का विवाह संपन्न हुआ। वधू ईस्टलेक स्कूल में अध्यापिका है, वर आजकल व्यवसायरत हैं, पहले सं. रा. अमरीका की एअरफोर्स में थे और लंदन में नियुक्त रह चुके हैं। इनका पहली पत्नी से तलाक हो चुका है।'

'अरे यह तो वही है।' एक क्षण को स्तब्ध रहने के बाद वह छोटी बच्ची की नाईं नाच उठी कि मैंने नन्हे हेनरी के पिता को खोज निकाला है। इसी खोज को ईश्वरीय संकेत मानकर उसने मन में योजनाएं गढ़नी आरंभ कर दी थीं।

नन्हा हेनरी उम्र में सिर्फ आठ वर्ष का था लेकिन अनुभव में अस्सी वर्ष का था।

फिर भी उसमें यह बालसुलभ गुण था कि जो उस पर जरा भी प्यार जताये, उसका वह भक्त बन जाता था।

मिसेस हैरिस की रसोई में बैठा हेनरी केक खा रहा था और मिसेस हैरिस मिसेस बटरफील्ड को अपनी योजना समझा रही थी। मिसेस बटरफील्ड सुन अवश्य रही थी, पर उसमें वह उत्साह नहीं था, जो मिसेस हैरिस और नन्हे हेनरी की आंखों में चमक रहा था। एडा हैरिस और हेनरी के जीवन में समानता थी। निर्बल-से दिखने वाले उन दोनों प्राणियों ने जीवन में संघर्ष का सामना किया था, फिर भी उनके मन आशा से भरे थे। मिसेस हैरिस को कभी किसी ने शिकायत करते नहीं सुना था और हेनरी भी ठीक वैसा ही था। योजना सुनते-सुनते एक बार मिसेस बटरफील्ड ने टोका था—'एडा, जो कुछ तुम करने का विचार कर रही हो, वह कानूनन जुर्म है। तुम पकड़ी गयीं तो?' उत्तर नन्हे हेनरी ने दिया था ...... उसने अपनी सजग आंखें उसकी ओर घुमाकर विश्वासपूर्वक कहा था—'हम कभी पकड़े नहीं जायेंगे।' मिसेस हैरिस को हेनरी का इस तरह साथ देना बड़ा भाया था और उसने उसकी पीठ ठोककर कहा था—'शाबास हेनरी बेटे!'

मिसेस हैरिस की योजना बिलकुल सीधी थी। जिस तरह बचपन में उसके माता-पिता उसे किसी बहुत बच्चों वाले परिवार में शामिल करके विभिन्न मुख्य द्वार पार करा दिया करते थे, उसी तरह वह भी हेनरी को जहाज पर चढ़ा देना चाहती थी।

यह अच्छा था कि शीवर दंपति इस बार किसी कारण पानी के जहाज से यात्रा कर रहे थे। कप्तान से कहकर उन्होंने पर्यटक श्रेणी का एक बाथरूम-युक्त कैबिन दोनों महिलाओं को दिलवा दिया था।

इन दोनों के अमरीका जाने की खबर उस मुहल्ले में दावाग्नि की तरह फैल गयी थी। जाने के दिन ढेर सारा सामान लेकर जब ये दोनों घोड़ागाड़ी पर बैठीं, तो करीब-करीब सब लोग इन्हें विदा देने आये। मिसेस हैरिस ने पहले ही इस दृश्य की कल्पना कर ली थी। अतः जब गाड़ी कुछ दूर चली गयी, तो उसने रुकवाया और हेनरी तीर की तेजी से आकर उसमें चढ़ गया। चकित गाड़ीवान के लिए यह बात कल्पना से परे थी कि ये भली-सी दिखने वाली दोनों बूढ़ियां किसी बच्चे को चोरी-छिपे कहीं ले जा रही हैं।

बंदरगाह पर पहुंचकर जब वे सामान गिन रही थीं, तब शीवर-दंपति भी आ पहुंचे। पूर्वनिश्चित संकेत के अनुसार एडा ने हेनरी के कंधे पर एक उंगली रखी और वह धीरे-से टहलता हुआ किसी और के सामान के पास जा खड़ा हुआ। मिसेस बटरफील्ड इतनी देर में पसीने से नहा गयी। हर क्षण वह डरती रही कि अब कोई हेनरी के विषय में पूछेगा।

जब तक शीवर-दंपति पूछताछ करते रहे, एडा हैरिस की छोटी-छोटी आंखें तीव्र गति से इधर-उधर का जायजा लेती रहीं। उनके जाने के बाद उसने हेनरी को बता दिया कि उसे किस झुंड के साथ जहाज पर

चढ़ जाना है।

जैसा कि एडा हैरिस का अनुमान था, जहाज के फ्रांसीसी होने के कारण, चलने के समय वहां हंगामा-सा मच गया और इसी बीच हेनरी उस चुने हुए नौ बच्चों वाले परिवार के साथ जहाज पर चढ़ गया।

'विल द पेरिस' नामक जहाज का १३४ नंबर का कैबिन उन्हें मिला था। तीनों बैठ भी न पाये थे कि दरवाजे पर खटखट हुई। मिसेस बटरफील्ड की धौंकनी-सी चलती सांस बीच में अटकी रह गयी—लगा मानो वह बेहोश हो जायेगी। एडा ने हेनरी के कान में कहा—'बाथरूम में जाकर छिप जाओ।'

दरवाजा खोला तो सामने जहाज का टिकट चेकर खड़ा था। एडा ने शांतिपूर्वक पर्स से टिकट निकालकर उसे थमा दिये और पूछा—'आज तो जहाज पर बेहद भीड़ है न?'

परिचारक के चेहरे पर परेशानी स्पष्ट थी, वह सहानुभूति की आशा में बोलने लगा—'जी हां मैडम, इस बार जैसी भीड़ मैंने जहाज पर कभी नहीं देखी। ऊपर से फ्रांस के राजदूत भी जहाज पर यात्रा कर रहे हैं। मुझे तो याद ही नहीं रह रहा है कि किस कैबिन में कितने लोग भरे हैं।' वह सिर खुजलाता हुआ चला गया, तो एडा मन ही मन मुस्करायी। हेनरी बाथरूम से निकल आया और सतर्कता के नाते पूछने लगा—'हर बार जब कोई आये तो मैं छिप जाया करूं?' मिसेस हैरिस बोली—'नहीं बेटे, अब उसकी जरूरत नहीं पड़ेगी।'

शाम को जब परिचारक फिर
उसने हेनरी को देखकर पूछा–'यह
'अरे, सुबह ही तो बतलाया था।
है, और कौन होगा। आप ऐसे
हम बूढ़ियों की यात्रा कैसे कटेगी?'
हैरिस धृष्टता से बोली।

शाम को मिसेस शीवर चिंतित
अपने पति से कह रही थीं–'मुझे
एडा और मिसेस बटरफील्ड लंदन
होकर बड़ी दुःखी होंगी। मैंने अपने
के लिए उन्हें वहां से हटाकर
किया।'

मि. शीवर अपनी पत्नी की
परिचित थे। उस फिजूल-सी चिंता
चिड़चिड़ाकर उन्होंने उनके कंधे
थपाकर कहा – 'कल मैं उनके
जाकर उनका हालचाल पूछूंगा।
जल्दी से तैयार हो जाओ। हमें कप्तान
व्यक्तिगत क़ाकटेल पार्टी में जाना है।
केवल विशिष्ट व्यक्तियों को निमंत्रित
हैं। इसलिए समय पर पहुंचना चाहिये।

शीवर-दंपति द्वार से प्रविष्ट हुए
कि मिसेस शीवर के कानों में एडा
की परिचित आवाज पड़ी–'जी हां,
मार्क्विस पेरिस में मिले थे।' (मिसेस
दो वर्ष पहले ऐसी ही साहसिक यात्रा
पेरिस जा चुकी थी।) मिसेस शीवर ने
कि चूंकि मैं एडा हैरिस के विषय में
चिंतित थी, इसीलिए उसकी आवाज का
हुआ। मगर सबका परिचय कराते हुए
सचमुच ही कप्तान इन लोगों को

गया, तो एडा बर्फ-से सफेद बाल वाले मार्क्विस से कह रही थी—'मैं कह रही थी न कि मिसेस शीवर बहुत ही अच्छी हैं।'

मार्क्विस ने आगे बढ़कर मिसेस शीवर का हाथ ओंठों से लगाते हुए कहा—'दयालु और उदार व्यक्तियों का मैं बहुत बड़ा प्रशंसक हूं।'

उन विशिष्ट व्यक्तियों के बीच एडा हैरिस की उपस्थिति आश्चर्यजनक थी। वह भी स्थिति के अनुकूल पूरे आत्मविश्वास के साथ मार्क्विस से मित्रों की तरह बात किये जा रही थी। उसकी निष्कपट बातों में उल्लास और उत्साह छलक रहा था। कप्तान भी उसके जादू से अछूता न रह सका था। मार्क्विस के शोफर ने एडा को जहाज पर चढ़ते देखा था। उसी से वह खबर मार्क्विस तक पहुंची और मार्क्विस ने कप्तान को एडा हैरिस की पेरिस यात्रा की कहानी सुनाकर कहा था—'आपके जहाज पर एक असाधारण महिला यात्रा कर रही है।'

एडा हैरिस की पेरिस-यात्रा की कहानी ने कप्तान को भी प्रभावित किया और उसने अन्य विशिष्ट व्यक्तियों के साथ उसे भी निमंत्रण भेज दिया।

जहाज पर तीनों के दिन मजे में कट रहे थे। हेनरी की तो शक्ल ही बदल गयी थी। सब कुछ ठीक था कि मिसेस हैरिस को चिंता ने घेर लिया। जहाज पर उसने अपने ही वर्ग के लोगों की एक मित्रमंडली बना ली थी। वहीं उसे सुनने को मिला था कि यदि किसी के पास पूरे कागजात न हों तो अमरीकी उसके साथ बहुत सख्ती से पेश आते हैं। कभी-कभी तो उसे अपने देश वापस लौट जाना पड़ता है। बारह घंटे वह अकेली इस समस्या पर सिर धुनती रही। नन्हे हेनरी को अगर पकड़ लिया और वापस इंग्लैंड भेज दिया तो क्या होगा? इंग्लैंड और फ्रांस की समस्याएं सुलझा लेने का विश्वास उसके मन में था, लेकिन अमरीका? अमरीका-समस्या उसके बस के बाहर की बात थी। उसे किसी न किसी की सहायता लेनी ही पड़ेगी। लेकिन किसकी? तभी जान वेब्स्टर का भला-सा चेहरा उसके सामने घूम गया।

उस रात डिनर के बाद उसने जान वेब्स्टर को जरा अलग ले जाकर धीरे-से कहा—'मि. वेब्स्टर, मुझे आपसे कुछ पूछना है। जरा एकांत में चलेंगे?'

वेब्स्टर चौंका। तरह-तरह की स्त्रियों से उसका परिचय हुआ था। फिर भी वह अब तक कुंआरा रह सका था। अब मिसेस हैरिस उसे किस विपत्ति में डालने का विचार कर रही है? लेकिन जब उसने मिसेस हैरिस की ओर देखा, तो पाया कि उसके सदैव प्रसन्न रहने वाले चेहरे पर दुःख और निराशा छायी है।

वेब्स्टर का मन उसके लिए कुछ करने को व्याकुल होने लगा।

मिसेस हैरिस एक सांस में पूरी कहानी बता गयी। 'काफी उलझन भरी स्थिति है,' वेब्स्टर सोचते हुए बोला।

'आप तो अमरीका जा चुके हैं, बताइये, किस तरह उस बच्चे को निकाला जाये।'

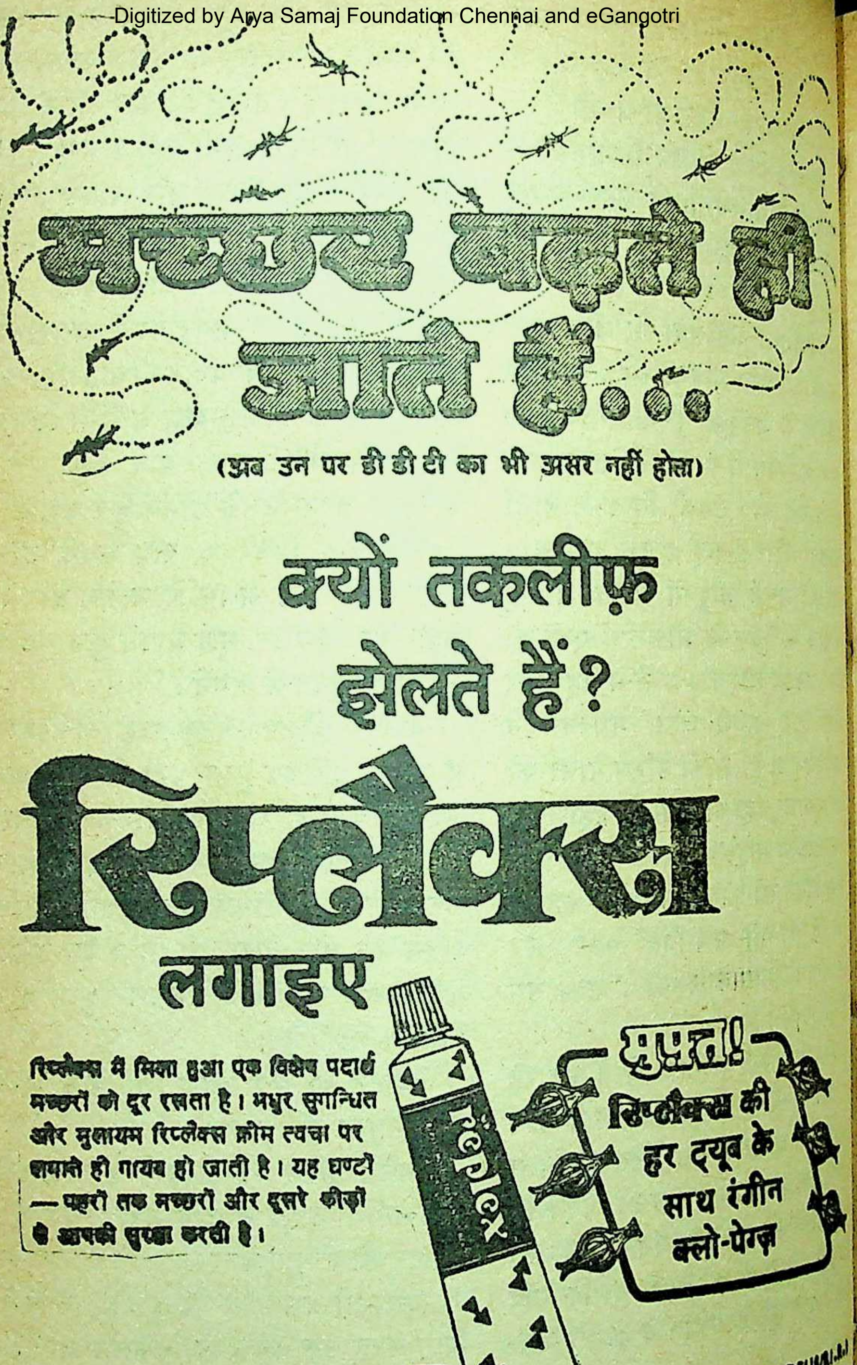

मच्छर बढ़ते ही जाते हैं...

(अब उन पर डी डी टी का भी असर नहीं होता)

क्यों तकलीफ़ झेलते हैं?

रिप्लेक्स लगाइए

रिप्लेक्स में मिला हुआ एक विशेष पदार्थ मच्छरों को दूर रखता है। मधुर सुगन्धित और मुलायम रिप्लेक्स क्रीम त्वचा पर लगाते ही गायब हो जाती है। यह घण्टों—पहरों तक मच्छरों और दूसरे कीड़ों से आपकी सुरक्षा करती है।

मुफ़्त! रिप्लेक्स की हर ट्यूब के साथ रंगीन क्लो-पेगज़

[illegible]

RADEUM/J.B.I

'जो कुछ भी हमें करना है, वह सब कुछ बहुत सतर्कता के साथ, वरना .....'

वेब्स्टर ने 'हम' शब्द का प्रयोग करके अपने को उनके साथ शामिल कर लिया था। इस तरह सोचने पर मिसेस हैरिस में हिम्मत आयी। लेकिन फिर भय उस पर हावी हो गया–'मि. वेब्स्टर, मैं सचमुच बड़ी मूर्ख स्त्री हूं। मुझे सोच-समझकर ऐसा काम करना चाहिये था।' उसकी आंखों में आंसू छलक आये।

'ऐसा न कहिये। सोचिये तो, इसमें कितना बड़ा परोपकार निहित है।' वेब्स्टर ने उसे तसल्ली दी। एकाएक वेब्स्टर का चेहरा चमका–'आपका मेरे मालिक मार्क्विस से इतना अच्छा परिचय है। उनसे बात कीजिये न? वे राजदूत हैं। मैं एक बार देख चुका हूं कि इन लोगों से ज्यादा पूछताछ नहीं की जाती है।'

एक क्षण में ही मिसेस हैरिस का चेहरा बदल गया–'ओह मि. वेब्स्टर, आप बहुत ही प्यारे आदमी हैं।'

उसी रात मिसेस हैरिस ने मार्क्विस से भी बात की। उसके उद्देश्य और कहने के ढंग में कुछ ऐसा था कि मार्क्विस न नहीं कर सके।

राजदूत होने के नाते, मार्क्विस को साधारण यात्रियों से अलग ढंग से बंदरगाह से ले जाने की व्यवस्था थी, अतः हेनरी को भी उनके साथ जाना पड़ा। मार्क्विस हेनरी का हाथ पकड़कर छोटी नाव में उतरे, फिर हेनरी उन्हीं के साथ रहा। जमीन पर पैर रखते ही अखबार वालों ने उन्हें घेर लिया। कुछ फोटो उतारने लगे, दूसरों ने प्रश्नों की बौछार कर दी। कोई पूछ बैठा–'आपके साथ यह बच्चा कौन है?'

इसके बाद कई स्वरों ने इसी प्रश्न को दोहराया। सोचने का समय नहीं था, अतः मार्क्विस ने सबसे स्वाभाविक समाधान दे दिया–'यह मेरा दोहता हेनरी है।'

'क्या यह लार्ड डार्टिंग्टन का पुत्र है?' पूछने वालों को मालूम था मार्क्विस की पुत्री का विवाह लार्ड डार्टिंग्टन से हुआ है।

ooo

अपने ६५०, पार्क एवेन्यू, न्यूयार्क वाले घर में सुबह की चाय पीते हुए मिसेस शीवर ने मार्क्विस के साथ हेनरी की फोटो देखकर कहा–'मार्क्विस का दोहता कितना सुंदर है। लेकिन यह जहाज पर हमें क्यों नहीं दिखा?'

पास ही कुछ काम करती हुई मिसेस हैरिस की आंखें भी चित्र पर पड़ीं। मिसेस बटरफील्ड होती तो अब तक बेहोश होकर गिर गयी होती।

हेनरी को अपने पास बुलाने की समस्या सुबह से ही मिसेस हैरिस के मस्तिष्क में घूम रही थी। अब तो उन्होंने निश्चय कर लिया कि मुझे मार्क्विस जैसे भलेमानुस को तत्काल ही इस स्थिति से मुक्त करना है। समय पाते ही वह मार्क्विस को पत्र लिखने बैठ गयी।

६५०, पार्क एवेन्यू, न्यूयार्क

प्रिय मार्क्विस,

हमें आशा नहीं थी कि आपको इस तरह

अलग उतार दिया जायेगा, इसलिए मैंने अपना पता नहीं दिया था। आपको इतना अधिक कष्ट देने का हम बहुत खेद है। अब आप जिस दिन कहें, उसी दिन आकर मैं उसे ले जाऊंगी।

मि. वेब्स्टर को मेरी ओर से नमस्ते कहियेगा। आपको अपना नया पद कैसा लग रहा है?

आशा है, आप स्वस्थ हैं।

भवदीया—एडा हैरिस

दूसरे दिन मिसेस हैरिस को निम्नलिखित उत्तर मिला।

फ्रांसीसी दूतावास, वाशिंग्टन

प्रिय मिसेस हैरिस,

आपके आने से मुझे प्रसन्नता होती। लेकिन अभी आपका हेनरी को लेने आना उचित न होगा। नन्हा हेनरी दूतावास के परिवारों में बड़ा लोकप्रिय हो गया है। मेरे साथ वह कई जगह निमंत्रित भी है। अतः उसे कम से कम एक सप्ताह मेरे साथ और रहना होगा।

हेनरी के पिता की खोज कहां तक पहुंची? कृपया सूचित करें। पता नहीं अखबार में छपा यह चित्र देखकर मेरी पुत्री एवं जामाता क्या सोच रहे होंगे?

भवदीय—चैसेन हिपीलाइट

मार्क्विस के जामाता ने इंग्लैंड से निम्नलिखित तार भेजा—'आपने जिसे हमारा पुत्र बना दिया है, उसका चित्र देखा। मैं समाचार का खंडन नहीं करूंगा। इस अनोखे उपहार के लिए धन्यवाद। —**डार्टिंग्टन**

कुछ दिन बाद मार्क्विस ने खबर दी कि हेनरी को खसरा निकल आया है, अतः उ तीन सप्ताह उनके पास रहना पड़ेगा। इ समय का उपयोग मिसेस हैरिस ने विभि जार्ज ब्राउनों से मिलने में किया। किसी ने उसके अभियान के प्रति सहानभूति दिखाई, तो किसी ने उसे अपमान-भरे शब्द सुनाये। पचास-साठ जार्ज ब्राउनों से मिलने के बाद, हेनरी के पिता को खोज पाने का उसका विश्वास क्षीण होने लगा। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो अमरीका में जार्ज ब्राउन भरे पड़े हैं, केवल हेनरी का पिता नहीं है। फिर भी मिसेस हैरिस ने अपने को इस निराशा से ज्यादा प्रभावित नहीं होने दिया। मिसेस बटरफील्ड भी बढ़िया से बढ़िया भोजन पकाती रही, और नये रसोइये को काम सिखाती रही।

○○○

मि. शीवर के यहां व्यवसाय के सिलसिले में तरह-तरह के लोग आया करते थे। इनमें से कुछ को मिसेस हैरिस ने सिनेमा के परदे पर देखा था। इन्हें साक्षात् देखकर उन्हें बड़ा आनंद मिलता था और इससे जार्ज ब्राउन को खोज न पाने का दुःख कुछ कम हो जाता था। मि. शीवर के यहां आने वाला केवल एक व्यक्ति उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वह भी उसे देखकर बुरा मुंह बना लेता था। मिसेस हैरिस ने पहले ही दिन उसे मिसेस शीवर से कहते सुना था— 'मिसेस शीवर, आप इन विदेशियों को अपने घर में क्यों रखे हुए हैं? अंग्रेज जाति से मुझे

सख्त नफरत है।'

इस व्यक्ति का नाम केन्टुकी किलबोर्न था। उसकी चाल-ढाल भी कुछ विचित्र थी, स्वभाव बेहद चिड़चिड़ा था। अगर वह इतना अच्छा गिटार बजाने वाला न होता, तो शायद उसे इस घर में आने न दिया जाता। सभी उसे नापसंद करते थे।

हेनरी की तबीयत ठीक हो गयी और मिसेस हैरिस उसे लेने वाशिंग्टन गयी। हेनरी बड़ा ही शिष्ट और सुसंस्कृत लग रहा था। मिसेस हैरिस का मन खुशी और गर्व से भर गया। जब इसका पिता इसे देखेगा तो क्या इसी तरह उसका मन भी प्रसन्न न हो उठेगा? मार्क्विस ने लौटने के लिए उन्हें अपनी नयी रोल्स रायस दी। चलते समय हेनरी उनसे लिपट गया, उन्होंने भी उसके सिर पर हाथ फेरकर विदा किया।

जान वेब्स्टर ने अब तक केवल रोल्स रायस ही चलायी थी। वह अपने को एक विशिष्ट शोफर मानता था। ऐसे-वैसे को वह अपनी गाड़ी पर बैठने भी नहीं देता था। मिसेस हैरिस उसकी विशेष श्रद्धा की अधिकारिणी बन गयी थी, तभी तो उसने अपने हाथों से दरवाजा खोला और उसे बैठाया। कुछ मील जाने पर वेब्स्टर को अपने ऊपर आश्चर्य हुआ कि हमेशा की तरह उसका ध्यान कार की आवाज पर न होकर, मिसेस हैरिस की बातों में उलझा हुआ है। आंखें बार-बार उसके उल्लसित चेहरे और तारों जैसी चमकती आंखों पर जा टिकती थीं। गंतव्य तक पहुंचते-पहुंचते उनमें एक नया अपनत्व स्थापित हो गया, और वे एक-दूसरे को जान, और एडा संबोधित करते हुए बातें करने लगे।

मिसेस हैरिस मि. शीवर के फ्लैट से कुछ ही दूर उतर गयी और पीछे की सीढ़ियों से घर में दाखिल हुई। हेनरी का छिपा रहना मुश्किल नहीं था। मगर कठिनाई तो तब पेश आयी, जब हेनरी के इस तरह चोरी से वहां रहने से मिसेस बटरफील्ड का दिमाग गड़बड़ाने लगा और उनके पकाये पदार्थों का स्वाद पहले जैसा नहीं रहने लगा। हेनरी की उपस्थिति ने उसकी उत्कृष्ट पाककला को जले भोजन के स्तर पर ला दिया, तो एक दिन मिसेस शीवर स्वयं ही तहकीकात करने रसोईघर में आ गयीं। वहां स्टूल पर बैठकर केक खाते हेनरी को देख वे चकित रह गयीं।

'अरे, यह फ्रांसीसी राजदूत का दोहता यहां क्या कर रहा है?'

मिसेस बटरफील्ड बिना कुछ सोचे रोती हुई उनके पैरों पर गिर पड़ी—'मदाम, हमें क्षमा कर दीजिये। हमें जेल न भिजवाइये। हम बुढ्डी विधवाएं हैं।'

मिसेस बटरफील्ड की हालत देखकर नन्हा हेनरी इस तरह चीख के साथ रो पड़ा जैसा कि गसेट-परिवार में मार पड़ने पर रोया करता था। शोरगुल सुनकर मिसेस हैरिस और मि. शीवर भी वहां आ पहुंचे, और उन्होंने भी पूछा कि आखिर माजरा क्या है।

मिसेस बटरफील्ड का बिलखना बढ़ गया,

यांत्रिक प्रगति का
अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
(थाना बंबई)

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि

खोपोली स्थित ओद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

मिसेस हैरिस सधी आवाज में बोली–'यह मार्क्विस का दोहता नहीं है। यह बेचारा अनाथ हेनरी ब्राउन है, जिसे मैं और वायलेट उसके पिता के पास पहुंचाने के लिए चोरी से इंग्लैंड से अमरीका लायी हैं।'

'लेकिन मुझे तो अच्छी तरह याद है कि इसी का चित्र अखबार में छपा था।' मिसेस शीवर बोलीं।

'हमारे पास इसका टिकट और कागजात नहीं थे। इसलिए यह मार्क्विस के साथ उतरा था और अब तक उन्हीं के पास था।'

'मिसेस हैरिस, तुम्हारे कहने से तो ऐसा लगता है कि मार्क्विस इसे छिपाकर अमरीका लाये हैं। क्या यह पूरी तरह सच है?' मि. शीवर के चेहरे पर आश्चर्य था।

तब मिसेस हैरिस ने उन्हें शुरू से अंत तक पूरी कथा कह सुनायी।

'तुम लोग काफी मुसीबत में पड़ सकती हो।' मि. शीवर काफी सोचकर बोले।

'यही सोचकर तो हमें रात-भर नींद नहीं आती है और इसीलिए वायलेट का खाना जल जाता है।'

मिसेज शीवर का भावुक मन द्रवित हो गया था–'जब तक हेनरी का पिता नहीं मिलता, वह हमारे साथ आराम से रहेगा, क्यों बेटे?'

'जी आंटी।'

हेनरी की सुंदरता और शिष्ट-नम्र वाणी से मि. शीवर भी प्रभावित हो गये, और फौरन उस गुट में शामिल होते हुए बोले–'मिसेस हैरिस, तुम चिंता न करो। हम कुछ न कुछ उपाय निकालेंगे।'

हेनरी ने आगे बढ़कर मि. शीवर के कोट का कोना पकड़कर बड़े प्यारे ढंग से कहा–'अंकल आप बड़े अच्छे हैं। मार्क्विस अंकल भी बड़े अच्छे थे। उनकी तरह आप भी मेरे साथ फुटबाल खेलेंगे न?'

'जरूर बेटे!' मि. शीवर के मन का वात्सल्य बहुत दिनों बाद शब्दों की राह प्रकट हुआ था।

मिसेस हैरिस ने उन्हें बताया कि किस तरह अमरीका आकर उसने एयरफोर्स अधिकारियों को पत्र लिखा और बोली–'सहायता करने के बजाय उत्तर में उन्होंने स्वयं ही बहुत-से प्रश्न पूछ डाले?'

'उनका यही तरीका होता है। अपनी आंखों के सामने रखी चीज को भी वे बिना जांच-पड़ताल के देख नहीं पाते हैं। मैं ही कोई रास्ता निकालूंगा।'

० ० ०

मि. शीवर के फ्लैट में हेनरी की पूरी खातिरदारी होने लगी। प्यार पाकर उसका भोला बचपन बड़े आकर्षक रूप में खिल उठा था। मिस्टर और मिसेस शीवर ही नहीं, बल्कि उनके सभी मित्र उससे प्यार करते, अगर कोई वैसा नहीं करता था, तो वह था केन्टुकी किलबोर्न। एक दिन तो दोनों में झड़प भी हो गयी। उस दिन कुछ लोग भोजन के लिए निमंत्रित थे। केन्टुकी कुछ पहले ही आ गया और खाली ड्राइंग-रूम में बैठकर गिटार बजाने लगा। संगीत की ध्वनि सुनकर हेनरी भी वहीं आ गया।

डेट धुलाई की टिकिया
साबुनों के मुक़ाबले
1½ गुनी ज़्यादा शक्तिशाली
—खारे पानी में भी.

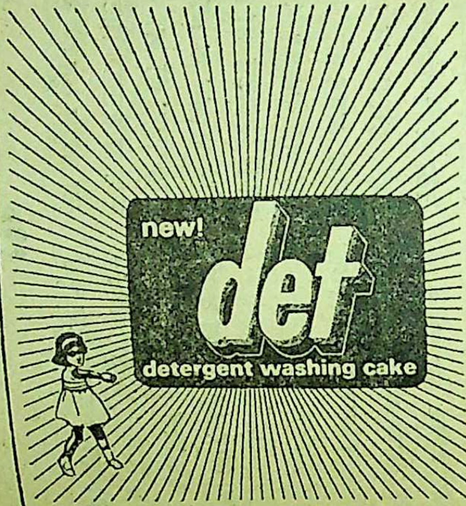
new!
det
detergent washing cake

डेट धुलाई का पाउडर
कई साइज़ के पैक में मिलता है. कपड़ों को
इसके घोल में भिगोइये और धो लीजिये.
हाथों को मुलायम भी रखता है.

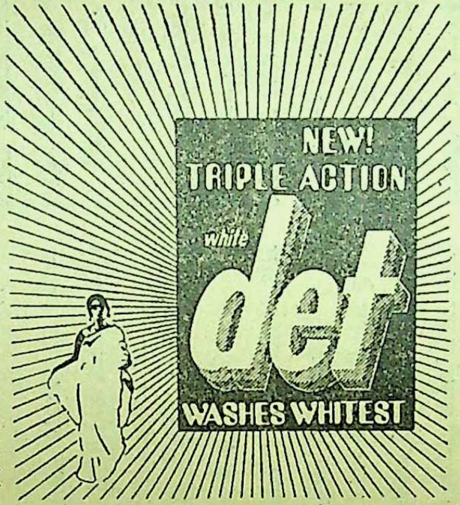
NEW!
TRIPLE ACTION
white
det
WASHES WHITEST

एन-डेट
दाग़-धब्बे नाशक एनज़ाइमयुक्त
धुलाई का पाउडर, सक्रिय
लेकिन हानिरहित.

en zyme
det
washes away stubborn stains

न कभी थी, न मिलेगी; ऐसी सफ़ेदी—डेट उत्तम पदार्थों से

Shilpi HPMA 6A/74 Hin

केन्टुकी उसे झिड़ककर बड़ी बुरी तरह बोला—'ऐ लड़के, भाग जा यहां से।'

हेनरी से यदि प्यार से कहा जाता, तो वह जरूर चला गया होता; लेकिन वह भी जिद पकड़ गया।

कुछ देर में केंटुकी उठा और उसे एक जोरदार चांटा मारकर बोला—'तू अंग्रेज का बच्चा इसी तरह मानेगा।'

हेनरी पूरी ताकत से चीख पड़ा। मिसेस हैरिस दौड़कर आयी और हेनरी को फर्श पर पड़ा देखकर मामला भांप गयी। अगर और कोई होता तो शायद उसे इतना गुस्सा न आता; लेकिन इस समय तो उसका खून खौल गया—'उस बच्चे को हाथ लगाया तो ठीक न होगा!'

'मैं रियाज कर रहा हूं। उसे यहां से ले जाओ!'

'भाड़ में जाये तुम्हारा रियाज!'

केन्टुकी खड़ा हो गया और चिल्लाकर बोला—'इस घर में सारे ब्रिटानी भरे पड़े हैं। तुम दोनों इस कमरे से बाहर चले जाओ। वरना इसी गिटार से सिर तोड़ दूंगा।'

मिसेस हैरिस मूर्ख नहीं थी। अपने कामकाजी जीवन में उसने अनेक बुरे लोग देखे थे, और वह उन्हें पहचानती थी। अत: उसने ज्यादा बहस नहीं की।

सबकी जीवनचर्या इस एक घटना के सिवा पूर्ववत् चलती रही। मिसेस हैरिस जार्ज ब्राउन की खोज में लगी रही। और एक दिन वह मिल गया, लेकिन मिसेस हैरिस को नहीं।

एक दिन मि. शीवर ने मिसेस हैरिस को अपने आफिस में बुलाया। मिसेस शीवर भी वहां उपस्थित थीं। पति-पत्नी परेशान दिख रहे थे। मि. शीवर बोले—'मिसेस हैरिस, हमने तुम्हारे जार्ज ब्राउन को खोज लिया है।'

यह तो खुशी की बात है। फिर ये लोग इतने परेशान क्यों हैं? मिसेस हैरिस ने धड़कते दिल से पूछा—'कहां है वह?'

कुछ देर तक तो मि. शीवर अपनी मेज के कागजों को इधर-उधर करते रहे, फिर धीमी आवाज में बोले—'केन्टुकी किलबोर्न का असली नाम जार्ज ब्राउन है।'

ऐसा लगा, मानो मिसेस हैरिस को गोली लग गयी हो। कुछ रुककर उसके मुंह से आवाज निकली—'नन्हे हेनरी का पिता वह है? मि. शीवर, यह सच नहीं हो सकता।'

मि. शीवर गंभीर स्वर में बोलते गये—'यह सत्य मुझे भी उतना ही नागवार लगा। मैंने जब तक निश्चित रूप से नहीं जान लिया, तुमसे कुछ कहा भी नहीं। उसके एयरफोर्स के रिकार्ड में पैंजी स्काट से शादी, हेनरी का जन्म वगैरह सब कुछ दर्ज है।'

'लेकिन यह सब पता कैसे चला?' बहुत ही उदास स्वर में मिसेस हैरिस ने पूछा।

'कुछ दिन पहले हमारी कंपनी के प्रोग्राम के अनुबंध पर हस्ताक्षर करते समय केन्टुकी की कमीज का गरेबान जरा ज्यादा खुल गया था, तब मैंने देखा कि वहां एक संख्या गुदी हुई है। मैंने उससे पूछा, यह क्या है? तो उसने बताया कि यह संख्या उसका एयरफोर्स का क्रमांक है। मैंने फौरन वह संख्या

दि अवध शुगर मिल्स लि.
हरगांव
जि. सीतापुर, उ. प्र.
शुद्ध दानेदार चीनी और
उत्तम स्पिरिटों के निर्माता

* * *

बरार आयल इंडस्ट्रीज
वनसदा पठ
अकोला (महाराष्ट्र)
वनसदा ब्रांड वनस्पति
के निर्माता

* * *

हरगांव आइल प्रॉडक्ट्स
सीतापुर, उ. प्र.
मूंगफली के तेल
साल्वेंट एक्स्टैक्टेड आइल
और तेल विमुक्त खली
के निर्माता

दि इंडियन स्मेल्टिंग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय
लालबहादुर शास्त्री मार्ग,
भांडुप, बंबई ७८ एन० बी०
केबल : 'लकी' भांडुप
फोन । ५८२४२१
सेमिस रोलिंग विभाग
नानफेरस शीत, स्ट्रिप और
फाइल, नानफेरस प्लेट और
सर्कल
एलाय और कास्टिंग विभाग:
एंटिफ्रिक्शन बेयरिंग मैटल्स गनमैटल्स और ब्रोन्जेन्स, ब्रेजिंग सोल्डर्स और टिन सोल्डर्स, फाइन जिंक डाइकास्टिंग एलाय्स 'इस्माक३,' अल्युमिनियम बेस्ट डाइकास्टिंग एलाय्स, ब्रास और ब्रोन्ज राड्स सालिड कोर्ड, फिनिश्ड कास्टिंग रफ और मशीन्ड।

कंठस्थ कर ली। इससे पहले मैंने उसके हस्ताक्षर देखे थे, जिसमें उसने अपने नाम के साथ जार्ज ब्राउन भी लिखा था। उसके विषय में पूछने पर उसने कहा कि वही उसका असली नाम है—कैंटुकी किलबोर्न तो उसका कला की दुनिया का नाम है। यह देखो, एयरफोर्स के समय का उसका फोटो भी है।'

मिसेस हैरिस को कड़वे सत्य की घूंट पीनी ही पड़ी—'क्या आपने उसे सब कुछ बता दिया है?'

'नहीं, मैंने कुछ भी नहीं बताया। यह काम तो तुम्हें करना है।'

मिसेस हैरिस कांपते पैरों से वापस गयी। उसका चेहरा उसके कपड़ों की तरह सफेद हो गया था।

इस नयी स्थिति ने मिसेस हैरिस को हिला दिया। पेरिस-यात्रा की सफलता की स्मृति भी उसमें कोई आशा संचारित नहीं कर पा रही थी। बार-बार यही विचार उसे निराशा के गर्त में ढकेल रहा था कि उसने नन्हे हेनरी को कड़ाही से निकालकर भाड़ में डाल दिया है। वह अब किसी तरह इंगलैंड वापस चला भी गया, तो फिर वही गसेट-परिवार उसके भाग्य में लिखा है। एक तरफ खाई तो दूसरी ओर खंदक।

हेनरी को केन्टुकी किलबोर्न के हाथों में सौंपने को मिसेस हेनरी का मन राजी नहीं होता था। पर मिसेस बटरफील्ड बार-बार कहती जा रही थी—'एडा, आखिर वह इसका पिता है। पिता-पुत्र को अलग रखने का तुम्हें क्या अधिकार है? और फिर हो सकता है, अपना बच्चा जानकर उसका व्यवहार बदल जाये।' मिसेस हैरिस के कल्पनाशील मस्तिष्क ने फिर उसे भुलावा देना आरंभ कर दिया। वह अपने को विश्वास दिलाने लगी कि शायद केन्टुकी सुधर ही जाये।

केन्टुकी को बुलाया गया। मिस्टर और मिसेस शीवर, मिसेस हैरिस एवं हेनरी सबको कमरे में एक साथ आते देख केन्टुकी को कुछ बेचैनी महसूस हुई और वह अपने आप बोल उठा—'इसने बदतमीजी की थी, तभी मैंने मारा था।'

'इस वक्त हम उस घटना पर चर्चा नहीं करेंगे,' कहकर मि. शीवर सीधे मुख्य विषय पर आ गये—'आपका वास्तविक नाम जार्ज ब्राउन है। और क्या आप सन १९५२ में अमरीकी एयरफोर्स में थे, जहां आपका क्रमांक २८६३६७९४ था?'

केन्टुकी मुंह टेढ़ा करके बोला—'मैं क्या था और अब क्या हूं, इससे आपका क्या संबंध है?'

मि. शीवर पूछते गये—'क्या जब आप लंदन में नियुक्त थे, तब आपने पैंजी स्काट नामक युवती से विवाह किया था, और आपके एक लड़का भी हुआ था, जिसका नाम हेनरी ब्राउन रखा गया था?'

'आप यह सब क्या बोलते जा रहे हैं? मैं आपका आशय नहीं समझ पा रहा हूं।' स्पष्ट था कि केन्टुकी का क्रोध भड़कता जा रहा था।

MIRAT/ADC/203-4

We lend a colourful hand in each...

Think of almost any industry—Textiles, Coir, Jute, Leather, Paints, Plastic, Rubber, Printing Ink etc. Amar Dyes lend a colourfu hand in each. We make myriad colours in haunting hues and subtle shades to the requirements of every industry.

Amar Dye-Chem—Pioneers in dyestuffs in India—have a high record of achievement. Intensive and constant research, meticulous quality control, all-round expansion and increasing exports all go into making their performance one of distinction.

to enrich India's life with colour!

AMAR DYE-CHEM LTD.

RANG UDYAN, MAHIM, BOMBAY-400 016.
BRANCHES: AHMEDABAD-CALCUTTA-DELHI-JAIPUR-MADRAS-MADU

'क्या आपको पता है कि आपका पुत्र कहां है ?'

'पहले मैं पूछना चाहता हूं कि मेरी कला के अतिरिक्त मेरी व्यक्तिगत बातों से आपका क्या संबंध है ?'

मिसेस हैरिस से चुप न रहा गया। वह हेनरी को आगे करते हुए बोल पड़ी—'हमारा उन सब बातों से संबंध इसके द्वारा है। यह हेनरी ब्राउन है, और आपका पुत्र है।'

'यह पिद्दी-सा अंग्रेज लड़का !' केन्टुकी का चेहरा घृणा से विकृत हो गया।

'हां-हां यही। मैं इसे इसके पिता से मिलाने लंदन से लेकर आयी थी।'

'किसने आपसे इसे लाने को कहा था ? कृपया आप इसे जहां से लायी थीं, वहीं ले जाइये।' और वह जंगली जानवर की तरह गुर्राता हुआ दरवाजे के बाहर चला गया।

किंकर्तव्यविमूढ़-से सब बैठे रह गये।

ooo

इस मानसिक आघात ने मिसेस हैरिस की वाणी हर ली। इस नाटक के बाद जो वह बिस्तर पर लेटी, तो उठी नहीं। वह निःशब्द लेटी-लेटी छत को ताकती रहती। मिसेस बटरफील्ड चम्मच से उसे कुछ खिला-पिला देती थी; इसी से वह जीवित थी।

मिसेस शीवर का मारे चिंता के बुरा हाल था। वे कई डाक्टरों को बुलाकर दिखा चुकी थीं। सबने यही कहा कि मानसिक आघात है, समय पाकर ठीक हो जायेगा।

एक दिन जान वेब्स्टर किसी काम से न्यूयार्क आया था। वह हालचाल पूछने आया। मिसेस हैरिस की हालत ने उसे आश्चर्य में डाल दिया। इतने सशक्त मनोबल वाली महिला यह आघात क्यों नहीं सह पायी। उसने विचलित स्वर में पूछा—'क्या बात है एडा, तुमने यह क्या हाल बना रखा है !'

उसके स्वर में कुछ ऐसा था कि मिसेस हैरिस की तंद्रा टूट गयी। वह वेब्स्टर को देखकर मुस्करायी—'हेलो जान, कैसे आये ?'

'तुमसे ही मिलने आया हूं। लेकिन तुम्हें यह क्या हो गया है ?'

मिसेस हैरिस ने हथेलियों से अपना मुंह छिपा लिया।

'ओह !' मिसेस हैरिस को फिर सदमे की याद आ गयी थी।

मिसेस शीवर को मिसेस बटरफील्ड बुला लायी थी। उन्हें मिसेस हैरिस का बदलता हुआ चेहरा देखकर भय लगा, सो उन्होंने तुरंत ही अपनी बात कह दी—'मिसेस हैरिस, अब तुम्हें कोई चिंता नहीं करनी होगी। हम हेनरी को गोद ले रहे हैं। सारी कार्रवाई हो चुकी है, ये कागज देखो।'

ooo

मिस्टर और मिसेस शीवर ने मिसेस हैरिस और उसकी सहेली को न्यूयार्क में रोक रखने की बहुत कोशिश की, लेकिन अब उनका काम हो चुका था। नन्हे हेनरी का सुखमय भविष्य निश्चित हो चुका था। और अब उन्हें अपना छोटा-सा कमरा और काम याद आ रहे थे। लंदन के धुंध-भरे दिन और गीली हवाएं याद आ रही थीं।

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई—४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

* डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स

* डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर
नागरिक के लिए, हर
प्रसंग पर उपलब्ध है।
आकर्षक रंगों की पॉपलीन,
बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्त
में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों
के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म
की धोतियां, सुंदरियों की मन-
मोहक साड़ियां इसके अतिरिक्
लांग क्लॉथ और मारकीन

जब भी आप सूती
वस्त्र खरीदें तो यह
ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव
काटन मिल्स

जब वे दोनों इंग्लैंड वापस जाने लगीं, तो उन्हें विदा देने मार्क्विस वाशिंगटन से आये। उनका छोटा-सा कैबिन फूलों से भर गया था।

क्षितिज में ओझल होते जहाज की ओर देखते हुए मार्क्विस बोले थे–'मेरा बस चले, तो मैं इस स्त्री की मूर्ति गढ़वाकर दूसरों की प्रेरणा के लिए चौराहे पर रखवा दूं। ये ही तो जीवन-संग्राम की सच्ची वीरांगनाएं हैं। ये प्रतिदिन प्रतिक्षण गरीबी अकेलेपन और अभाव के बावजूद हंसती मुस्कराती और सुंदर सपने देखती हैं ......'

हाथ हिलाते हेनरी, आंखों में आंसू-भरे शीवर-दंपति, आंखों में खोया-सा भाव लिये खड़े वेब्स्टर की ओर देखकर मार्क्विस ने वाक्य का अंत किया–'और देखो, ऐसा ही एक सपना कितने सुंदर रूप में साकार हुआ है।'

सीपियां और मोती

* किसी बच्चे के साथ बहस करना बहुत बढ़िया बात है, बशर्ते आप अपना तर्क कायम रखते हुए उसके तर्क को समझ सकें।
–जान मेसन ब्राउन

* अस्सी साल बहुत बढ़िया उम्र है–अगर आप नब्बे साल के हो चुके हों।
–एबेल ग्रीन

* फौजी बंदूक का वजन ८·६९ पौंड होता है। उसे उठाकर कुछ मील जाने के बाद उसके वजन में का दशमलव बिंदु गिर पड़ता है।
–बैंकिग

* ठीक समय पर पार्टी में पहुंचने का नुक्सान यह है कि उस समय कोई आपकी प्रशंसा करने के लिए वहां मौजूद नहीं होता।
–हैरल्ड रोम

* अगर आपको सफलता न मिले, तो कुछ एक बार फिर से कोशिश कीजिये और उसके बाद छोड़ दीजिये। बार-बार कोशिश करने और असफल रहने से खुद को मूर्ख मत बनाइये।
–फील्ड्स

* कान्फरेंस उन महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की बैठक होती है, जो अकेले कुछ नहीं कर सकते, लेकिन साथ मिलकर यह फैसला कर सकते हैं कि कुछ नहीं किया जा सकता।
–फ्रेड एलन

* माता-पिता जब इस योग्य होते हैं कि जीवन की सुख-सुविधाओं का आनंद ले सकें, उनकी संतान उनका आनंद उठाने लगती है।
–बाब ब्राउन

★

खीर

कृष्णकुमार

मैं स्कूल से लौटा तो देखा, अम्मां कहीं जाने की तैयारी में थीं। तीन बजा होगा। इस समय अम्मां को कहां जाना है? मैं पूछने ही वाला था कि अम्मां खुद बोल पड़ीं—'मुन्ना मैं किसी के घर जा रही हूं। एक-दो घंटे में लौट आऊंगी। दरवाजे की सांकल लगाकर बैठना। खाना खा लेना।'

अम्मां जल्दी-जल्दी तैयार हो रही थीं और मैं सोच रहा था कि घर में अकेले कैसे रहूंगा। एक बार मेरे मन में आया कि अम्मां से कहूं, मुझे भी साथ ले चलो। लेकिन उन्हें जल्दी में देखकर कुछ न कह पाया। एक और बात भी मेरे मन में थी कि कुछ देर अकेले रहकर तो देखूं। अभी दीदी को आने में एक घंटे की देर थी और पिताजी को आने में दो घंटे की।

दो-तीन मिनिट में अम्मां चली गयीं। मैंने उनके जाते ही दरवाजा बंद कर लिया। अब मैं बिलकुल अकेला था। मैंने सोचना शुरू किया कि सबसे पहले मुझे क्या करना चाहिये। अपने आप तो कुछ सूझ ही नहीं रहा था।

अम्मां ने कहा था—खाना खा लेना। मैं रसोई में गया। रोटियों का डिब्बा जाली में पड़ा था। खोला तो ठंडी रोटियों की खुशबू आयी। पास ही में स्टोव पर सब्जी की कढ़ाई रखी थी। ढक्कन उठाया तो देखा, भिंडी थी। अम्मां भी कितनी बढ़िया भिंडी बनाती हैं! मैंने सोचा।

मैं एक थाली उठाकर सब्जी लेने के लिए बैठने ही वाला था कि मेरी नजर रोटियों के पास रखे एक कटोरे पर गयी, जो कपड़े से ढंका हुआ था। मैंने कपड़ा हटाया तो देखा, कटोरे में साबूदाने रखे थे। मैं तुरंत समझ गया कि अम्मां साबूदाने की खीर बनाने वाली थीं। खीर का खयाल आते ही भिंडी की सब्जी और रोटी खाने का

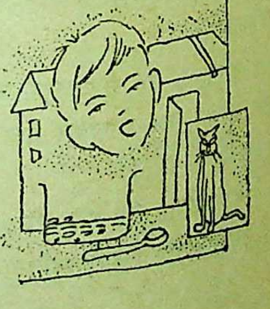

सारा मजा मन से जाता रहा। मैंने तय किया कि अम्मां के आने से पहले खुद ही खीर बनाकर खा लूंगा।

मैं तुरंत काम में जुट गया। भूख तो भाग ही गयी थी, यह ध्यान भी न रहा कि सारा घर सूना है और मैं अकेला हूं। घर में कोई होता तो क्या मैं इस तरह खीर बनाने की हिम्मत करता? क्या पता। पर इस समय तो हिम्मत ही हिम्मत थी। मैंने जाली खोली तो दूध मिल गया। जाली के ऊपर रखे दो-चार डिब्बे खोले तो चीनी मिल गयी। माचिस स्टोव के बगल में पड़ी थी।

अम्मां रसोई को कितनी अच्छी तरह रखती हैं और मैं कभी उनकी तारीफ नहीं करता। आज शाम को उनकी तारीफों के पुल बांध दूंगा—यह सोचते हुए मैंने स्टोव की बत्तियां ऊंची कीं और माचिस जलायी। साबूदाने का कटोरा स्टोव पर रखा और पतीले का आधा दूध कटोरे में उड़ेल दिया। डिब्बा खोलकर चीनी निकाली और तीन चम्मच छोड़ दिये।

दूध गर्म होने तक वहीं खड़े रहने की कोई जरूरत मुझे नहीं दिखी। इसलिए मैं बाहर आ गया। कई काम याद आये, जो स्कूल से आकर मुझे करने थे। कपड़े बदलने थे, बस्ता निकालना था, जूते उतारने थे, मुंह धोना था।

पहले क्या करूं? जूते खोलूं? या मुंह धोऊं? सोचा—मुंह धोकर जूते खोलूंगा तो हाथ फिर धोने पड़ेंगे। जूते को लोग इतनी गंदी चीज क्यों समझते हैं कि उसके छूने के

बाद हाथ जरूर धुलवाते हैं?

जूता ही क्यों, बिल्ली भी। पिताजी रोज कहते हैं—बिल्ली वाले हाथों से खाना मत खाओ। लेकिन बिल्ली जैसी साफ चीज दुनिया में कोई है? पिताजी खुद ही कौन बड़े साफ रहते हैं! उनकी कमीज का कालर हमेशा काला रहता है। पर बिल्ली का गला?

मैंने बस्ते से शुरू किया। निकर उतारकर पाजामा पहना। आंगन के पीछे गया, जहां पानी रखा रहता था। दोनों बालटियां खाली थीं। लोटा लेकर टब से पानी निकाला, फिर मुंह धोया। कितनी बार मुंह धोता हूं, फिर भी हर बार मजा आता है! तौलिये से पोंछा। नीचे नजर पड़ी तो अपनी बेवकूफी दिखाई दी। जूतों पर पानी के छींटे चमक रहे थे। कैसी अजीब बात! मैंने निकर उतारकर पाजामा तो पहन लिया, पर जूते नहीं खोले। रोज ऐसी ही गड़बड़ हो तो डांट ही पड़ती रहे। आज इसलिए हो रही है कि कोई जल्दी नहीं है। कहीं से कोई बुला नहीं रहा है। धीरे करने से सब काम बिगड़ते हैं।

यह सब निपटाकर मुझे याद आया कि खीर स्टोव पर रखी है। मैं भागा। लेकिन तब तक साबूदाने जलकर कटोरे की तली से चिपक चुके थे। मैं कुछ घबराया जरूर,

कथा-चित्रकार : ठाकोर राणा

पर मैंने देखा कि जले हुए साबूदानों के ऊपर कुछ खीर भी है, जिससे [illegible] भाप उठ रही है। मैंने कटोरे को नीचे उतारकर स्टोव बुझा दिया और एक कटोरी लेने के लिए कूदा। कटोरी उठाकर जल्दी-जल्दी चम्मच से खीर निकाली। आधे जले हुए कुछ साबूदाने भी खुरचे।

कटोरी आधी भर गयी थी। देखकर बड़ी तसल्ली हुई और खाने की जल्दी भी। लेकिन कटोरे की लगी जली हुई खीर का क्या होगा? पहले इसी का इलाज किया जाये! मैंने उसे झाड़न के सहारे उठाया और सारा आंगन पार कराकर टब के पास ले जाकर लोटे पर रख दिया। तब ध्यान आया कि मिट्टी की जरूरत पड़ेगी। पहली बार मुझे लगा कि देर होती जा रही है, कहीं कोई आ न जाये।

भागा-भागा बाहर गली में पहुंचा। उंगलियों से कुछ मिट्टी खोदी। लौटकर कटोरे की घिसाई करनी शुरू की। जले हुए साबूदाने इतने कसकर चिपके थे कि छूटते ही नहीं थे। पर मैं उन्हें कहां छोड़ने वाला था! चम्मच और नाखूनों से खरोंच-खरोंचकर मैं कटो [illegible] तली तक पहुंच ही गया। फिर मिट्टी घिसी। आखिरकार खीर का कूड़ा गा और कटोरे की तली मेरे सामने।

खुशी-खुशी कटोरा लिये मैं रसोई घुसा। अब की बार मैंने जो कुछ देखा, सचमुच गड़बड़ था। कटोरी में खीर न थी और खिड़की में बिल्ली मूंछों पर जी फेर रही थी।

अब करने को मेरे पास कुछ न था मैंने चुपचाप कटोरी धोयी और सुखा बरतनों के बीच रख दी। फिर डिब खोलकर दो रोटियां निकालीं, भिंडी लेक रोटियों पर रखी और खिड़की में ज बिल्ली थोड़ी देर पहले दिखाई दी थी, ठी वहीं बैठकर, टांगें हिला-हिलाकर खाने ल

थोड़ी देर बाद दीदी आयीं, फिर पिता लौटे, आखिर में अम्मां आयीं। सब लो चाय पीने बैठे, तो रसोई से अम्मां क आवाज आयी–'मैं साबूदाने निकालकर थी, जाने कहां गये?'

–श्यू-३१, माडल टाउन, दिल्ली-

★

एक जमाखोर दूसरे से–'बाजार में माल जमा करके रखने वाले हम फिर छोटे जमाखोर ही हैं। बड़े जमाखोर वे हैं, जो सरकारी दफ्तरों में फाइलों के ढेर ज किये बैठे हैं।'

० ० ०

एक पुरोहित ने दूसरे से कहा–'जजमानी के बाद भोजन करके आते ही मैं जाता हूं; और किसी लायक नहीं रहता।'

दूसरे ने अपनी बात बतायी–'तुम तो घर तक आ जाते हो न? मैं तो वहीं आया जाता हूं।'

★

शेर के जबड़े और अफ्रीकी अस्पताल में

* मेजर स्व. विलियम्स *

दूसरी बार जब मैं १९०९ में ब्रिटिश पूर्व अफ्रीका गया, तो सौभाग्य से फेडरिक कर्टनी सेलूस के साथ शिकार पर जाने का अवसर मुझे मिला। सेलूस दुनिया के जाने-माने और लोकप्रिय शिकारी थे और अमरीका के राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट के साथ वहां आये थे। हम दोनों राष्ट्रपति रूजवेल्ट के मित्र नार्थरप मैक्मिलन के मेहमान रहे और तभी हमने काले अयाल वाले शेर के शिकार की योजना बनायी।

हम अपनी योजना के अनुसार चल पड़े। कुछ ही दिनों बाद फौज के एक हरकारे ने हमें एक नरभक्षी शेर की खबर दी। एक फौजी को वह शेर पिछली रात उठा ले गया था। किस्मत सचमुच मेरा साथ दे रही थी। एक खंदक पर पहुंचकर सेलूस उसमें नीचे उतर गये और मैं ऊपर रहा। वहां शिकार करते हुए मेरा एक शेर से मुकाबला हुआ जो फौरन मुझ पर झपटा। मैंने भी पलक झपकते उस पर बंदूक दाग दी और शेर मेरे पैरों के पास ही ढेर हो गया। वह वही नरभक्षी पशु था, जिसकी सूचना फौज ने हमें भेजी थी।

कुछ दिन और शिकार करने के बाद सौभाग्य ने फिर मेरा साथ दिया। मैं एक गहरे-से नाले के पास एक चट्टान पर बैठा था। सेलूस नाले के पार शिकार कर रहे थे। उनकी गोलियों से चौकन्ना होकर एक शानदार शेर अपनी जगह से निकला और नाले में उतर आया। मैंने फौरन गोली चलायी और वह लुढ़का और घनी झाड़ियों में अदृश्य हो गया। मैं उसे मरा हुआ समझकर झाड़ियों की ओर भागा। लेकिन वह मरा नहीं था। अंततः उसे मैंने मार तो दिया; परंतु मरने से पहले उसने मेरे एक जूते और आधी से ज्यादा पतलून को ठिकाने लगा दिया। इतने में सेलूस भी आ गये और उन्होंने मुझे शेर के पीछे इस तरह भागने पर डांट पिलायी। वह शेर नाक से पूंछ के सिरे तक दस फुट ढाई इंच लंबा था।

इसके बाद मैक्मिलन और उसके साथी जड के साथ शिकार करते हुए मैंने एक और शेर मारा। उसे मैंने मारा तो सही, परंतु मरने से पहले उसने मुझे कई वर्षों के लिए शिकार के नाकाबिल बना दिया। बात यह हुई कि जब बाकी लोग डेरा लगाने में व्यस्त थे, मैं उस क्षेत्र की जांच-पड़ताल

करने निकल गया। शेर को लुभाने के लिए एक-दो जानवर मारने का काम भी मैंने अपने जिम्मे ले लिया। दो कुली मैंने साथ ले लिये थे।

वह इलाका शिकार के लिए बहुत ही उपयुक्त था और जानवरों की वहां बहुतायत थी। दो जानवर मारकर उन्हें मैंने एक-दूसरे से कुछ दूरी पर डाल दिये, ताकि शेर उन्हें सूंघकर उधर आये। फिर मैं डेरे की ओर लौटा। एक ऊंची-सी जगह पहुंचकर मैंने देखा कि झाड़ियों में कोई जानवर चल रहा है। मैं छिपकर देखने लगा। कुछ ही क्षणों में काले अयाल वाला एक शेर उधर से खुले में निकला।

मैंने कुलियों से छिप जाने को कहा और जिधर शेर जा रहा था उसी ओर को चल दिया—इस विचार से कि उसके निकट पहुंच जाऊं। हमारा फासला तो घटा, परंतु इतना नहीं कि मैं जमकर निशाना लगा सकूं। शेर की पूंछ के हिलने के ढंग से मुझे लग रहा था कि वह कुछ गुस्से में है। मैं उसे आगे बढ़ने से रोकने के लिए खुले में निकला और अपने हाथ पर मैंने जोर का चटाखा लिया। उसे सुनते ही शेर ने घूमकर मुझे देखा। परंतु जैसे ही मैंने बंदूक उठायी, वह वापस मुड़कर आगे को चल दिया। मैंने दुनाली की दोनों गोलियां दाग दीं, क्योंकि मुझे डर था कि निकट पहुंच जाने की कोशिश में मैं कहीं उसे गंवा ही न बैठूं। मेरी एक ही गोली उसके पुट्ठे पर लगी। वह दहाड़ मारकर बैठ गया और फौरन पास
की झाड़ियों में लुढ़क गया। इस बार
उसके पास जाने की कोशिश नहीं की।

मैंने उसे मरा हुआ तो समझा,
किसी तरह का खतरा न उठाने के
से एक खुले स्थान की ओर चल
मेरा खयाल था कि वहां से शेर मुझे
आ जायेगा और अगर वह मरा नहीं
तो अब मैं उसका काम तमाम कर
मेरे कुली मेरे पास पहुंच चुके थे। मैंने
उस झाड़ी पर नजर रखने को कह
था। मुझे विश्वास था कि शेर दायीं
की झाड़ी में छिपा हुआ था। जैसे ही
उस खुली जगह में पहुंचा। बायीं ओर
एक शेर बिजली की तेजी से मुझ पर
मैंने समझा, यह कोई दूसरा शेर है।
दहाड़ से मेरे होश गुम होने लगे।

मैंने अपने पर जैसे-तैसे नियंत्रण
दो गोलियां उस पर चलायीं। पहली
लगी नहीं और दूसरी लगी कंधे के
जिसने उसकी हड्डी को छुआ तक नहीं।
शेर रुका नहीं, आगे बढ़ आया। मेरे
सिवा इसके कोई चारा नहीं रहा कि
भिड़ जाऊं। कारतूस मेरे पास थे ही
शेर जैसे ही मेरी गरदन पकड़ने के
से मेरे पास पहुंचा मैंने बंदूक का कुंदा
मुंह पर दे मारा। उसका सिर घूम गया।
उसने झुककर मेरी दायीं जांघ अपने
में दबा ली। मैं गिर पड़ा। वह ऊपर
नीचे। बंदूक तो मैंने नहीं छोड़ी, परंतु
पर मेरा कोई बस नहीं चल रहा था।

शेर ने टांग पकड़कर मुझे जरा

उठाया और एक-दो झटके ऐसे दिये कि मेरी हड्डी-हड्डी हिल गयी। कुछ दूर तक वह मुझे घसीटकर ले गया। फिर न जाने क्यों उसे बहुत गुस्सा आया और अचानक ही उसने अपनी दिशा बदल दी। इस उठापटकी में मेरा कूल्हे और जांघ का जोड़ उतर गया। कुछ और दूर उसने मुझे घसीटा और करीब-करीब मेरे ऊपर ही लेट गया। उसने अपने मुंह से मेरी जांघ तो छोड़ी ही नहीं थी, पंजों से मेरी पीठ भी पकड़ ली।

अब तक मेरा मस्तिष्क तो ऐसा हो गया था, मानो उसमें दो रेलगाड़ियां जोरों से टकरा रही हों। कितना समय इस तरह बीता, इसका भी मुझे कोई अनुमान नहीं। मेरे घावों से खून जोरों से बह रहा था और मैं मनौतियां मना रहा था कि किसी तरह होश बना रहे, ताकि शेर जब भी मुंह खोले मैं बंदूक का कुंदा उसके मुंह में फंसा दूं।

मुझे अपना एक कुली रमजान कुछ फुट की दूरी पर दिखाई दिया। शेर ने भी उसे देख लिया होगा। रमजान ने फौरन शेर पर गोलियां चलायीं। शेर कूदकर मुझसे अलग तो हुआ ही, कुछ ही दूरी पर धराशायी भी हो गया। मैंने रमजान से दो कारतूस मंगवाये और उन्हें बंदूक में भरकर मैं गोली चलाने को तैयार हुआ ही था कि शेर ने हमला करने का अंतिम प्रयास किया। परंतु मेरी गोली निशाने पर बैठी। फिर भी मुझे विश्वास नहीं था और रमजान से पांच गोलियां और शेर को लगवायीं।

अगले दिन स्ट्रेचर पर डालकर मुझे युगांडा रेल्वे के लोंडियानाइ स्टेशन को रवाना किया गया। साढ़े चार दिन में १६५ मील का यह पैदल सफर हुआ। फिर १९ घंटे की रेल-यात्रा के बाद मैं नैरोबी पहुंचा। वहां अस्पताल में मेरा आपरेशन किया गया। डा. हेंडरसन और उनके साथियों की मेहनत से मैं किसी तरह बच गया और स्वदेश पहुंचाया गया। अफ्रीका का वह छोटा-सा अस्पताल मुझे हमेशा-हमेशा याद रहेगा।

—अनुवाद : प्रकाश खन्ना

★

लेखिका शांता रामाराव ने एक अमरीकी पत्रकार से विवाह किया। विवाह पेरिस के एक कैथलिक गिरजे में हो रहा था। एक हिंदू युवती का एक अमरीकी प्राटेस्टेंट युवक से कैथलिक गिरजे में विवाह लोगों के लिए कुतूहल का विषय था। विवाह के पूर्व वर-वधू को तरह-तरह के फार्मों पर हस्ताक्षर करने पड़े।

विवाह की रस्म के बाद पेरिस के मेयर ने शांता के हाथ में लाल मखमली कवर की एक नोटबुक थमायी और कहा—'महोदया, आपको होने वाले प्रत्येक बच्चे की जानकारी आप इस पुस्तक में दर्ज करें। प्रथम बारह बच्चों के नाम आदि नोट करने के लायक जगह इसमें है। जब यह भर जाये, तो मेरे पास इसे भेज दें। अगले नाम नोट करने के लिए आपको दूसरी नोटबुक दी जायेगी।'

★

अंतरराष्ट्रीय जासूसी के चक्कर में

शशिशेखर वेदक

सोमवार। सुबह साढ़े आठ का समय। मैं सवा आठ बजे ही दफ्तर में हाजिर हो गया। कल का सारा दिन गुलाबी ठंड में गुदगुदे बिस्तर पर सोने में बिताया था, सो जल्दी नींद खुल गयी। इसी से आफिस जल्दी आ सका। मेज पर सौ-डेढ़ सौ पत्र मेरी राह देख रहे थे।

मैंने सबसे ऊपर का लिफाफा उठाया और रोज की तरह पता बिना पढ़े ही उसे खोल लिया। आश्चर्य कि अंदर भी एक बंद लिफाफा निकला। इस बंद लिफाफे पर पेंसिल से लिखा था :

'अत्यंत महत्त्व का।

'लंदन में रूस के राजदूत को तुरंत पहुंचा दें।'

इसने मेरा कुतूहल जगा दिया। ज्यादा न सोचकर मैंने उस लिफाफे को भी खोल डाला। अंदर 'लंदन ईवनिंग न्यूज़' के एक छोटे-से विज्ञापन की कतरन थी, इबारत यों थी :

'जहाज आ रहा है। मैं तुमसे मुला के लिए उत्सुक हूं।'

इसे पढ़कर मैं घबरा उठा। सभी ध्यान में आयीं। विज्ञापन रूसी लिए सांकेतिक भाषा में दिया गया उसकी इबारत का अर्थ निश्चित ही और था।

डाकिये ने वह पत्र रूसी में डालने के बजाय हमारे यहां यानी लियन सरकार के कार्यालय में डाल था। यह कैसे हुआ ? रूसी तो हमारे कार्यालय से दूर था। शायद बूझकर इसे हमारी डाक में डाला गया

नासमझी में मैंने एक घोटाला और डाला। उस लिफाफे को पहले की चिपकाकर लेटर-बक्स में डाल दिया। मेरा उद्देश्य इतना ही था कि पत्र रूसी दूत को ठीक से मिल जाये।

दिन-भर उस अद्‌भुत पत्र की दिमाग से नहीं उतरी। कारण, प्रबल राष्ट्र के गुप्तचर-विभाग के एक से मेरा संबंध जुड़ गया था। मैंने जितना सोचा, मुझे लगा कि मैंने बहुत बड़ी की है। लिफाफे को चिपकाकर डालने के बजाय जला डालना चाहिये क्योंकि वह पत्र डाकिये ने हमारे यहां डाला होगा। लंदन के पोस्ट आफिस भूल नहीं कर सकते। वह लिफाफा डाक में जान-बूझकर डाला गया

उस हालत में मैं रूसी गुप्तचर-विभाग की नजरों में संदिग्ध व्यक्ति ठहरता।

उन दिनों मैं लंदन विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय राजनीति का अध्ययन कर रहा था। विभिन्न राष्ट्रों के गुप्तचर विभागों के जाल कैसे सारे विश्व में फैले हुए हैं और उनका तंत्र कैसे काम करता है, यह भी हमारे पाठ्यक्रम का एक विषय था। डा. बर्जर जैसे विशेषज्ञ और अनुभवी प्राध्यापक इस पर कुछ लेक्चर देते थे। बड़े रोचक ढंग से वे इस विषय को समझाते थे।

डा. बर्जर द्वितीय महायुद्ध के पहले आस्ट्रिया के मंत्रिमंडल में थे। किंतु वह मंत्रिमंडल अल्पजीवी सिद्ध हुआ। हिटलर की नाजी सेना ने आस्ट्रिया को पलक झपकते हड़प लिया। डा. बर्जर नाजी जेलखाने में बंद कर दिये गये। कुछ समय बाद जब रूस की लालसेना ने आस्ट्रिया के कुछ प्रदेश पर अधिकार कर लिया, डा. बर्जर को रूसी कंसेन्ट्रेशन कैंप में भेज दिया गया। तात्पर्य यह कि गुप्तचरी के तंत्र का पाठ मैंने डा. बर्जर जैसे राजनीतिज्ञ पंडित से पढ़ा था।

कार्यालय में मैंने किसी से अधिक बात नहीं की और पत्र की बात दिमाग से निकाल देने का पूरा प्रयत्न किया। परंतु वैसा हो न सका। कार्यालय समाप्त होने पर पढ़ने विश्वविद्यालय जाने के वजाय मैं फिलम देखने चला गया। फिलम का नाम इस समय मुझे याद नहीं। एक निर्जन द्वीप पर योगायोग से एकत्र हो गये एक तरुण और तीन तरुणियों से निर्मित चतुष्कोण पर उसकी कथा घूमती थी। चित्र उत्कृष्ट था, परंतु उसके पूरा होने से पहले ही मैं उठ आया। बाहर 'स्नैक वार' में भोजन किया। रात को लगभग दस बजे पैडिंग्टन स्थित 'साने गुरुजी हॉस्टल' में अपने कमरे में पहुंच गया।

कमरे में भी न साथी विद्यार्थियों से बोला, न पढ़ने के लिए किताब ही खोली; सीधे बिस्तर पर पड़ गया। क्योंकि जो कुछ घटित हुआ था, उसके परिणाम की बात सोचते हुए मैं संत्रस्त हो उठा था। इसका एक ही इलाज था नींद। परंतु वह भी मेरे साथ असहयोग कर रही थी। अंतिम पहर में जैसे-तैसे नींद आयी। सुबह सात बजे हड़बड़ाकर उठ बैठा और झटपट नित्यकर्म से निबटकर दफ्तर पहुंचा।

यह दूसरा दिन भी अस्वस्थ मनःस्थिति में शुरू हुआ। मेरे वरिष्ठ अधिकारी ब्राउन साहब उस दिन अच्छे मूड में थे। यों भी वे स्वभाव से विनोदी थे। मुझे कल से ही गुपचुप बैठा देखकर उन्होंने मेरी चुटकी लेने की कोशिश की। तीसरे पहर दफ्तर में चाय बनती थी। चाय बनाने की बारी आज कुंआरी इटालियन टाइपिस्ट लारा की थी। ब्राउन साहब उससे बोले–'देख लारा, कल से यह लड़का उल्लू की तरह बैठा है। तू आज शाम को इसे अपने साथ नृत्य के लिए ले जा, कल से यह तोते की तरह बोलेगा। यह ऐसे गुमसुम बैठे तो मेरा दिन खराब हो जाता है।' मगर हंसी-ठट्ठे से मेरा

मन ऊब उठा था। मन में खटका हो रहा था कि कुछ अनहोनी होने वाली है। इसलिए आज दफ्तर से सीधा हॉस्टल गया और अपने कमरे का दरवाजा खोला।

अंदर का दृश्य देखकर मैं स्तंभित रह गया। कमरे में जैसे भूकंप आया हो। मेरा संदूक मुंह खोले पड़ा था। उसमें रखे कपड़े और दूसरी चीजें इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं। गद्दा भी खाट पर से आधा लटक रहा था। अलमारी के किवाड़ उघड़े हुए थे। पुस्तकें, शेविंग ब्रश, साबुन, ब्लेड आदि सामान जमीन पर लुढ़क रहे थे। बंद खिड़की खुली हुई थी। ठंडी हवा के झोंके उस छोटे-से कमरे में घुस रहे थे।

हमारे हॉस्टल के वार्डन का नाम दीनानाथ प्रसाद था। वह बिहार का था। लंदन स्कूल ऑफ इकानामिक्स में बी. एस-सी. के द्वितीय वर्ष में पढ़ रहा था। आजकल वह पटना में बैंक ऑफ इंडिया में उच्च पदाधिकारी है। उसका कमरा तीसरी मंजिल पर था। मैंने उसे फौरन बुलाया। कोई भी दुर्घटना हो तो उसकी सूचना वार्डन को देना आवश्यक था। यों भी लंदन में मैं नया था; जब कि वह छह साल का पुराना निवासी था। मेरे कमरे का दृश्य देखकर वह भी चकित रह गया। बोला—'चलो, सारे मामले की खबर पुलिस को दें!'

वह फौरन टेलिफोन के पास गया। वह डायल फिराने ही वाला था कि मेरे मस्तिष्क में एक विचार कौंध गया। इस सारी घटना का संबंध कहीं रूसी राजदूतावास वाले पत्र से न हो। मैंने दीनानाथ को भर रुकने को कहा। अपने कमरे की बंद की। दरवाजे की सांकल चढ़ा दी। उससे बोला—'बैठ, तुझसे मुझे कुछ है। पूरी बात सुन लेने के बाद तुझे लगे तो पुलिस स्टेशन को फोन करना।'

मेरे इस कथन का अर्थ उसकी नहीं आया। सो मैं उसे तीसरी मंजिल उसके कमरे में ले गया। दरवाजा बंद कुंडी चढ़ा दी और धीमी आवाज में वाकया उसे सुनाया। मेरे रहस्य में हिस्सेदार बन गया, इससे मुझे कुछ महसूस हुई।

वह बड़ा ही मेधावी विद्यार्थी था। वर्षों के लंदन निवास में उसे अंतरराष्ट्रीय राजनीति की बारीकियों की खासी कारी हो गयी थी। वह ब्रिटिश मजदूर का सक्रिय सदस्य था। मेरे सब कुछ चुकने पर वह गंभीरता से बोला—'ये बातें पुलिस को बताना मूर्खता होगी। उस पत्र को फिर से बंद करके डाक में डालना चाहिये था। जला देना चाहिये रूसी गुप्तचर-विभाग की नजर तुम पर है यह संभव है। तुम्हारे कमरे में हुई उथल-पुथल का यही मतलब है। तुम्हारा कहना है कि तुम्हारे कमरे से कोई गयी नहीं है। तुम्हारे हाथों तुम अनजाने जो कर गुजरे, उसे वे इरादतन किया मान लें, तो निश्चय ही तुम्हारी जिंदगी खतरा है। यह काम करके तुमने स्पष्ट कम्युनिस्ट-विरोधी भूमिका निभायी है

अब ईश्वर पर भार डालकर शांत बैठा।

उसकी बातों से मैं और घबरा गया। मैंने कहा–'इस प्रकरण से मेरा कुछ भी संबंध नहीं है, यह तो सहज ही उनकी समझ में आ जायेगा।'

दीनानाथ ने जवाब दिया–'फिर भी महाशय, जरा सावधान रहिये!'

मैं अपने कमरे में वापस लौट आया। बिखरी चीजें करीने से रखीं। खाना पकाने के झंझट में न पड़कर पाव, मक्खन और पनीर खाकर गिलास-भर काफी गले के नीचे उतारी। पढ़ने बैठा, पर मन नहीं लगा। जितना ही सोचा, खतरा उतना ही ज्यादा स्पष्ट दिखने लगा। पुस्तक बंद करके बत्ती बुझा दी और बिस्तर में पड़ रहा। उलटे-सीधे विचारों के संघर्ष में ही कहीं झपकी लग गयी।

पास के गिरजे की घड़ी ने रात के दो के टकोर बजाये और तभी किसी दूसरी आवाज से मेरी नींद खुल गयी। खिड़की के बाहर से एक तरह की अस्पष्ट आवाज हुई थी। मैं धीरे-से उठा और बत्ती जलाये बिना खिड़की के कांच में से बाहर देखा। वैसे मेरा कमरा तल मंजिल पर था, तो भी जमीन से छह फुट की ऊंचाई पर था। नीचे दो स्थूलकाय आदमी खड़े थे और कुछ कानाफूसी कर रहे थे। कोई राहगीर होंगे, यह सोचकर मैं वापस आकर बिस्तर पर लेट गया। फिर दोपहर तक नींद नहीं आयी। इसके बाद कितने ही दिन तक अनेक चमत्कारी आदमी मेरा पीछा करते रहे। शायद यह मेरे मन का ही कौतुक रहा हो!

अगले दिन शनिवार था। दफ्तर की छुट्टी थी। तय किया कि भारत में अपनी पत्नी को पत्र लिख दूं। उद्देश्य यही था कि अगर मुझे कुछ कम-ज्यादा हो जाये तो उसे इसका अंदाज रहे।

मेरा खयाल है कि श्री अशोक मेहता उन दिनों भारतीय समाजवादी दल के अध्यक्ष थे। इंग्लैंड आने में मुझे उनसे बहुत मदद मिली थी और उन्हीं के ही कारण लंदन में 'इटालियन स्टेट डेलिगेशन' के कार्यालय में मुझे नौकरी मिली थी। इसलिए मैंने इस पत्र में पत्नी को लिखा–'मेरे संबंध में तुम्हें यदि कुछ कम-ज्यादा खबर सुनने को मिले तो श्री अशोक मेहता को यह पत्र दिखा देना और श्री दीनानाथ से संपर्क करना ......'

उस पत्र में मैंने सविस्तार सब कुछ लिख दिया था। इससे ज्यादा उस समय मैं कुछ कर भी नहीं सकता था।

दीनानाथ ने भी देखा कि कुछ दिनों तक कुछ लोग हमारे हॉस्टल के चक्कर लगाते रहे थे। उन दिनों मैं इंग्लैंड में भारतीय समाजवादी संघटन का एक महत्त्वपूर्ण पदाधिकारी था और उसका प्रचार-विभाग मेरे जिम्मे था। ब्रिटिश लेबर पार्टी का हमें खुला समर्थन प्राप्त था और इस घटना के लगभग एक महीने पहले ही मैं संघटन के मुखपत्र के संपादक के नाते चीन और कम्युनिस्टों के खिलाफ एक तीखा अग्रलेख लिख चुका था। उसमें मैंने चेतावनी दी थी कि चाउ एन-लाइ का भारत में स्वागत नहीं होना चाहिये।

आज मैं फ़ाइनल इन्टरव्यू दूँ तो कैसे! सर बुरी तरह दुख रहा है।
मेरी मानो तो एनासिन ले लो।

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर–एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय–एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्र है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co., Ltd.

इसी पृष्ठभूमि में यह सब घटना घटी थी।

सौभाग्य से फिर कुछ हुआ नहीं। मैं और दीनानाथ इस घटना को भूल गये। पर अचानक एक दिन इटली सरकार के इंग्लैंड स्थित प्रतिनिधि डा. ग्वारियारी ने मुझे बुलवाया। हमारा आफिस लंदन में रीजेंट स्ट्रीट पर था और उनका कार्यालय हमारे पड़ोस में ही था।

उन्होंने मुझे बैठने को कहा और गंभीर मुद्रा में बोलने लगे—'नौजवान, इस देश में तुम विदेशी हो। कोई भी काम करो, विवेकपूर्वक करो। वरना मुसीबत में पड़ जाओगे। तुम्हारा संकट टल गया है। मुझे तुमसे कुछ अधिक नहीं कहना है। जो कुछ घटा था, मुझे बताना चाहिये था। आगे कभी कोई संदेहजनक पत्र तुम्हारे पास आये तो मुझे लाकर दो। घड़े में क्या है देखने को बिल्ली ने उसमें सिर घुसेड़ दिया और उसे जान से हाथ धोना पड़ा—यह कथा कभी न भूलना। ठीक है। ईश्वर कृपालु है।'

मुझे जो समझना चाहिये था, समझ गया। इस तरह मेरे लंदननिवास के एक संत्रास-दायक प्रसंग पर परदा पड़ गया। [**लेखक की शीघ्र प्रकाश्य मराठी पुस्तक 'परदेशी' से**]

★

एक बस-कंडक्टर को चलती हुई बस में कंपनी के कागज पर लिखते हुए देखकर एक यात्री ने कहा—'हमें बड़ा ताज्जुब होता है कि आप हिलती-डुलती गाड़ी में लिख कैसे लेते हैं!' बस-कंडक्टर ने जवाब दिया—'अब तो मैं ऐसे में लिखने का इतना अभ्यस्त हो गया हूं कि जब घर में कुछ लिखता हूं, तो मेरी पत्नी को मेरी मेज हिलानी पड़ती है।

—गुरुप्रसाद अवस्थी

० ० ०

'तीसरी मंजिल पर रहने वाली औरत अपने शौहर से रात-रात-भर झगड़ा करती और पड़ोसियों के लिए मुसीबत है। मकान मालिक के नाते आपको उन्हें इस मुसीबत से छुटकारा दिलाना चाहिये।' एक किरायेदार ने नये मकान मालिक से कहा।

मालिक ने पूछा—'क्या आप उसके पड़ोसी हैं?'

उत्तर मिला—'नहीं जी, मैं उसका शौहर हूं।'

● ● ●

मुल्ला नसरुद्दीन से किसी ने पूछा—'सफलता का रहस्य क्या है?'

'सही निर्णय पर काम करना।' नसरुद्दीन ने कहा।

'लेकिन सही निर्णय किये कैसे जाते हैं?'

'अनुभवों के आधार पर।'

'और अनुभव किस प्रकार हासिल होते हैं?'

नसरुद्दीन ने कुछ सोचा, फिर कहा—'गलत निर्णयों पर काम करके।'

★

आप साधारण नहीं हैं

एडवर्ड बोक

अपने को साधारण समझने वाले लोग काश कहीं यह जान पायें कि उनके भीतर कितनी बड़ी शक्ति छिपी है! बहुधा उनके दिल में कुछ करने की उमंग पैदा होती है; लेकिन वे कुछ करने के बजाय हताश होकर कहते हैं–'मैं अकेला क्या कर सकता हूं!' और कुछ नहीं कर पाते।

लेकिन फ्लोरेंस नाइटिंगेल नामक अंग्रेज नर्स ने अकेले ही रेडक्रॉस की स्थापना की थी, जो आज संसार-भर में घायलों, रोगियों और युद्धबंदियों की सेवा करने वाली सबसे बड़ी संस्था है। शायद आप कहें कि वह तो असाधारण स्त्री थी। नहीं, वह साधारण स्त्री थी, जो बाद में असाधारण बन गयी–अपने कर्तृत्व की बदौलत।

और क्या वह स्त्री 'असाधारण' नहीं थी, जिसके छह साल के बेटे ने एक दिन स्कूल से घर आकर उसे अपने अध्यापक का एक पत्र दिया, जिसमें लिखा था कि लड़का इतना मूर्ख है कि पढ़-लिख नहीं सकेगा, सो उसे स्कूल से हटा लिया जाये? मगर मां ने कहा–'नहीं, मेरा बेटा मूर्ख नहीं है, इसे मैं खुद पढ़ाऊंगी।' और उसने उसे पढ़ाया। वह लड़का बड़ा होकर महान वैज्ञानिक थामस आल्वा एडिसन बना।

एक और उदाहरण लीजिये–'मैं तो बस एक घरेलू औरत हूं और दिन-भर घर के काम-काज में लगी रहती हूं।......' यह बात अब्राहम लिंकन की सौतेली मां ने कही थी। परंतु उसने अपने पति के बेटे को, जो कि उसकी कोख से नहीं जनमा था, ऐसी प्रेरणा दी कि वह संसार के महानतम व्यक्तियों में से एक बन गया। लिंकन ने एक बार कहा था–'आप पूछते हैं कि मैंने सबसे महान पुस्तक कौन-सी पढ़ी है? उसका नाम है–मेरी मां।'

ड्वाइट मूडी की गणना आज ईसाई जगत् के सर्वश्रेष्ठ धर्म-प्रचारकों में होती है। कभी वह अनपढ़ था। लेकिन उसकी पत्नी ने, जो 'साधारण-सी घरेलू स्त्री' थी, उसे पढ़ना-लिखना सिखाया, उसके मन में ईश्वर और मानव के लिए प्यार भरा, और उसे परोपकार के रास्ते पर बढ़ने की प्रेरणा दी।

हम इस बारे में बहुत कम सोचते हैं कि संसार में जो भी महान कार्य हुए हैं, उनकी शुरूआत सबसे पहले किसी एक व्यक्ति ने की थी। एमर्सन के शब्दों में–'कोई भी महान संस्था किसी एक व्यक्ति की दीर्घ होती हुई छाया ही होती है।' सभा-समितियों से तंग आये हुए किसी आदमी ने ठीक ही कहा है–'कोई भी आदर्श समिति तीन व्यक्तियों की होती है, जिनमें से दो व्यक्ति

मर्द

बीमार होते हैं।' और थियोडोर रूजवेल्ट ने कहा है–'ऐसी हर संस्था, जिसने अमरीका की प्रगति में योगदान दिया है, किसी एक व्यक्ति के उपक्रम और लगन की बदौलत अस्तित्व में आयी थी।'

आजकल यह खयाल हम सबके दिलों में जैसे घर कर गया है कि हम अकेले कोई बड़ा काम नहीं कर सकते; उसे करने के लिए किसी संस्था की जरूरत है। लोग यही सोचते हैं कि संस्थाएं व्यक्ति से बड़ी होती हैं। लेकिन एमर्सन का कहना है–'कोई बड़ा या छोटा नहीं होता। हम दूसरों को अपने से बड़ा इसलिए समझते हैं कि वे अपने भीतर की अलौकिक चिनगारी को प्रज्ज्वलित कर सकते हैं, जबकि हम उसे बुझ जाने देते हैं। हम सभी एक ही पिता की संतान हैं। लेकिन हम खुद को नगण्य समझते हैं, इसलिए कोई बड़ा काम नहीं कर पाते।'

एक उदाहरण लीजिये। एक आदमी कहता है–'मैं तो बस एक अध्यापक हूं!' जरा सोचिये तो! यह बात वह व्यक्ति कह रहा है, जो बच्चों के जीवन-निर्माण में मां के बाद सबसे अधिक प्रभावशाली काम कर सकता है। उपर्युक्त बात मेरी परिचित एक अध्यापिका ने एक बार कही थी। बाद में उसे अपनी गलती का एहसास हुआ, तो जैसे उसे नया प्रकाश मिल गया। अगले दिन से कक्षाओं में उसका व्यवहार और ढर्रा बदल गया, उसका पढ़ाने का तरीका बदल गया। उसकी आंखों में नयी चमक दिखाई देने लगी और उसकी आवाज में ऐसा विश्वास भर गया कि विद्यार्थी नयी प्रेरणा और उत्साह से पढ़ने लगे। उसने अंदर की अलौकिक चिनगारी को सुलगा लिया था। वह उन्नति करती गयी और अगले अठारह महीनों में स्कूल की प्रिंसिपल बन गयी। अब वह हर साल सैकड़ों नवयुवकों और नवयुवतियों को ज्ञान का प्रकाश और जीवन में कुछ कर दिखाने की प्रेरणा एवं विश्वास देकर संसार-क्षेत्र में भेजती है।

मुझे उन नौजवानों पर हैरानी होती है, जो सोचते रहते हैं या आपस में बहसें करते रहते हैं कि अमुक काम वे कर सकेंगे या नहीं। असल में वे अपना समय व्यर्थ में गंवाते हैं। अगर उन्हें विश्वास हो जाये कि हम इस संसार में कुछ करने के लिए आये हैं, और हमारे अंदर अलौकिक प्रतिभा विद्यमान है, तो वे व्यर्थ की बहसों में अपना समय नहीं गंवायेंगे। सिर्फ आत्मविश्वासहीन आदमी ही कहेगा–'मैं कुछ नहीं हूं।' आत्मविश्वास वाला व्यक्ति हमेशा कहेगा–'मैं सब कुछ हूं और सब कुछ कर सकता हूं।' और कुछ कर दिखाने के लिए वह जूझ पड़ेगा।

यीशु ख्रिस्त ने कहा था–'अगर तुझमें राई के दाने जितना भी विश्वास है, तो तेरे लिए कोई चीज असंभव नहीं होगी।'

और नेपोलियन ने कहा था–'परिस्थितियां? मैं खुद परिस्थितियों को जन्म देता हूं।' ये शब्द किसी अहंकारी व्यक्ति के नहीं हैं, बल्कि इनमें बहुत बड़ी सचाई है। नेपोलियन ही नहीं, हम सब–हां, हम सब–परिस्थितियों को जन्म देते हैं।

★

अपने पैसे बचाइये

आपका मनपसन्द

पान बहार

सादे पान का मसाला

अब २५० और ५०० ग्राम में भी मिलता है

PAN BAHAR
PAN BAHAR
नया
नया

अशोक एण्ड कं० ५२/३४, नयागंज, कानपुर

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

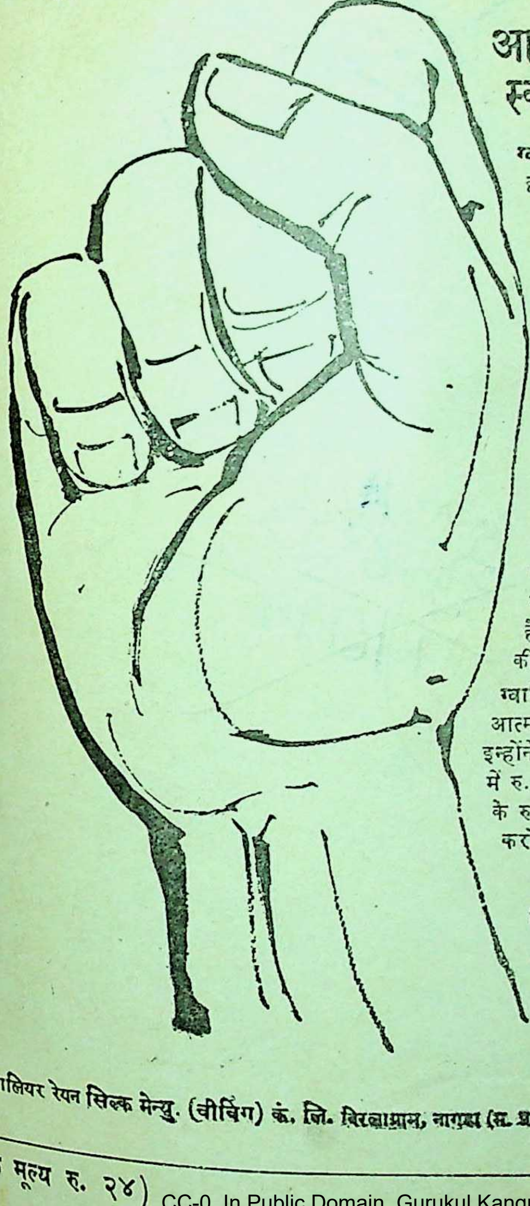

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आजाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन–ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन–ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रुई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रूप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही
एकमात्र उद्देश्य है

दि ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

Sobhagya GR 74-2-Hin.

ार्षिक मूल्य रु. २४)

(मूल्य रु. २–५०

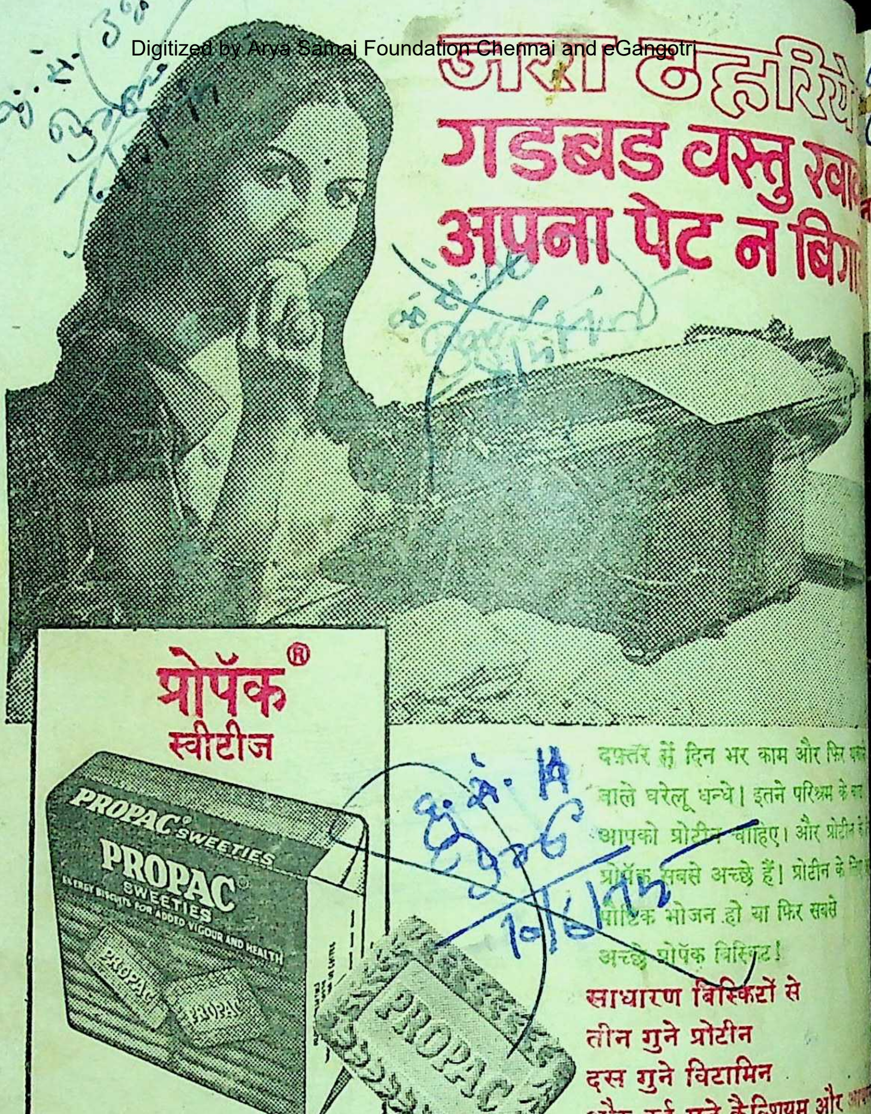

जरा ठहरिये
गडबड वस्तु खा
अपना पेट न बिग

प्रोपॅक®
स्वीटीज

PROPAC® SWEETIES
PROPAC® SWEETIES
ENERGY BISCUITS FOR ADDED VIGOUR AND HEALTH

दफ़्तर में दिन भर काम और फिर
वाले घरेलू धन्धे। इतने परिश्रम के
आपको प्रोटीन चाहिए। और प्रोटीन
प्रोपॅक सबसे अच्छे हैं। प्रोटीन के
पौष्टिक भोजन हो या फिर सबसे
अच्छे प्रोपॅक बिस्किट!

साधारण बिस्किटों से
तीन गुने प्रोटीन
दस गुने विटामिन
और कई गुने कैल्शियम और

हल्के आसानी से हजम हो जाने वाले
प्रोपॅक बिस्किट स्फूर्तिदायक प्रोटीन,
विटामिन, कैल्शियम और
आइरन से भरपूर हैं।

कुरकुरे, स्वादिष्ट प्रोपॅक बिस्कि
नाश्ते, दोपहर की कॉफ़ी या श
चाय के साथ लीजिए।

आपकी प्रिय
प्रोपॅक
साल्टीज
अब नए
किफ़ायती डिब्बों
में मिलती हैं

युनिकेम का उत्पादन

6|6|75

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

न १९७५

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

नयी उमंग, नयी तरंग

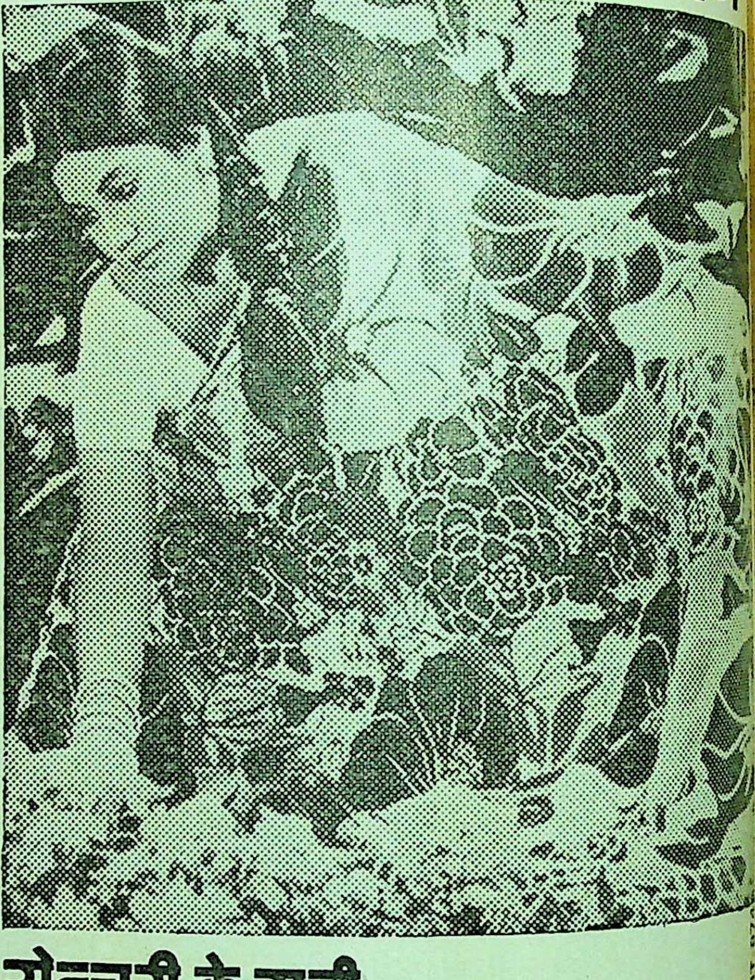

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी - १००% सूती कपड़ों के लिए!

CENTURY

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.
लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५

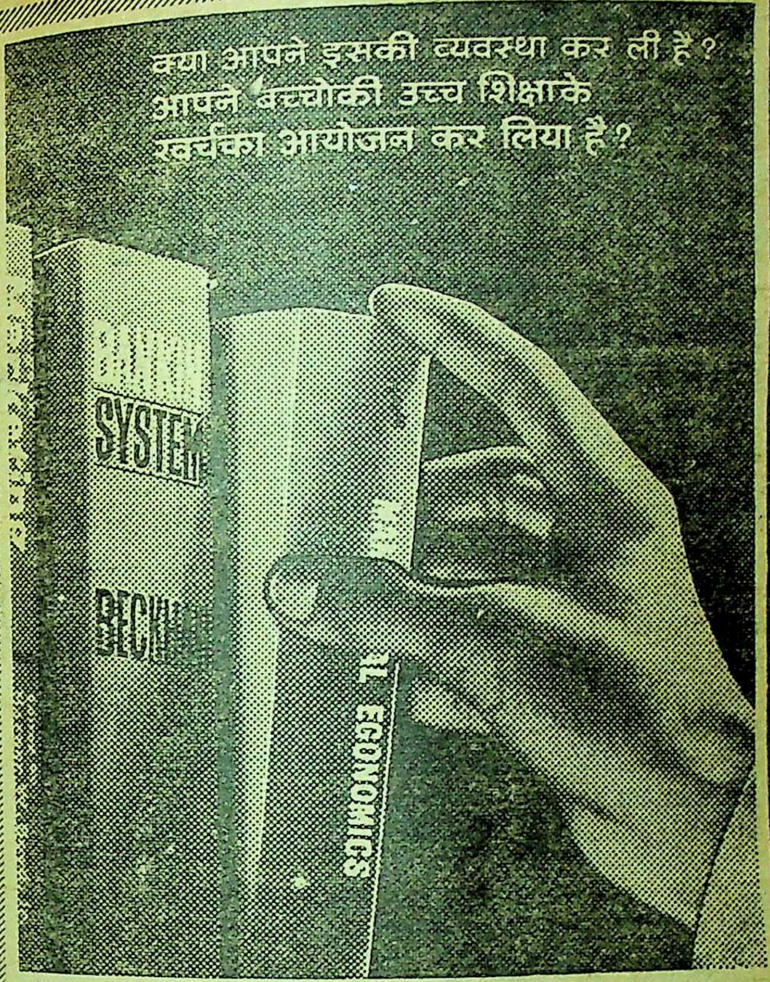
क्या आपने इसकी व्यवस्था कर ली है?
आपने बच्चोंकी उच्च शिक्षाके
खर्चका आयोजन कर लिया है?
SYSTEM
ECONOMICS

जब आपके बच्चें उच्च शिक्षा पानेके योग्य हो जायेंगे तब उनकी शिक्षाका खर्च आप उठा सकेंगे ?
देना बेंक में बचत खाता या मीयादी जमा खाता खोलकर अभीसे नियमित बचत कीजिये।

देना बेंककी अन्य ६ बचत योजनाएं–

नाबालिग बचत योजना • आवर्ती जमा योजना • मासिक बचत व वार्षिकी योजना • बहुप्रयोजनीय जमा योजना • नकदी प्रमाणपत्र बीमा संबद्ध बचत जमा योजना

देना बेंक
(गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया अंडरटेकिंग)
हेड ऑफिस : हॉर्निमेन सर्किल,
बम्बई ४००००१.

Ratan Batra/DB/H1238-A

बढ़ता बचपन
बलवान बने-
इनक्रिमिन* से

बचपन के पहले २ वर्ष, मुन्ने के लिये बढ़ने के दिन हैं। इन दिनों उसका शरीर फूल की तरह खिलता है- विकसित होता है, उसे इनक्रिमिन ड्रॉप्स ज़रूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इसकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिनों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में विशेष अमीनो एसिड, लायसिन भी शामिल है— जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता करता है।

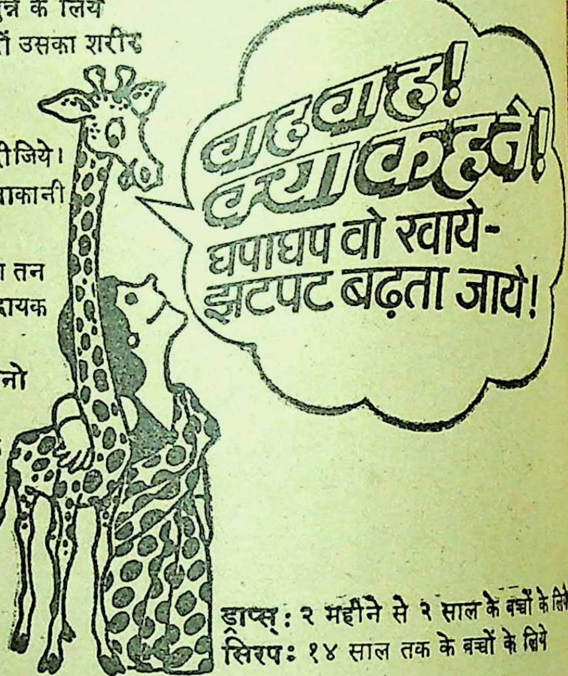
वाह वाह! क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ता जाये!

ड्राप्स्: २ महीने से २ साल के बच्चों के लिये
सिरप: १४ साल तक के बच्चों के लिये

इनक्रिमिन* टॉनिक
अधिक आहार से अधिक बढ़ाये-
खाया पिया अंग लगाये

डॉक्टरों का विश्वासपात्र नाम — Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग
*अमेरीकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क

10 ml.
*
Incremin
drops LYSINE-VITAMINS
TONIC APPETITE
STIMULANT

Sista's INC-364 D/75 Hin

पराग शुद्ध घी

भोजन को स्वादिष्ट बनाये सब के मन को भाये...

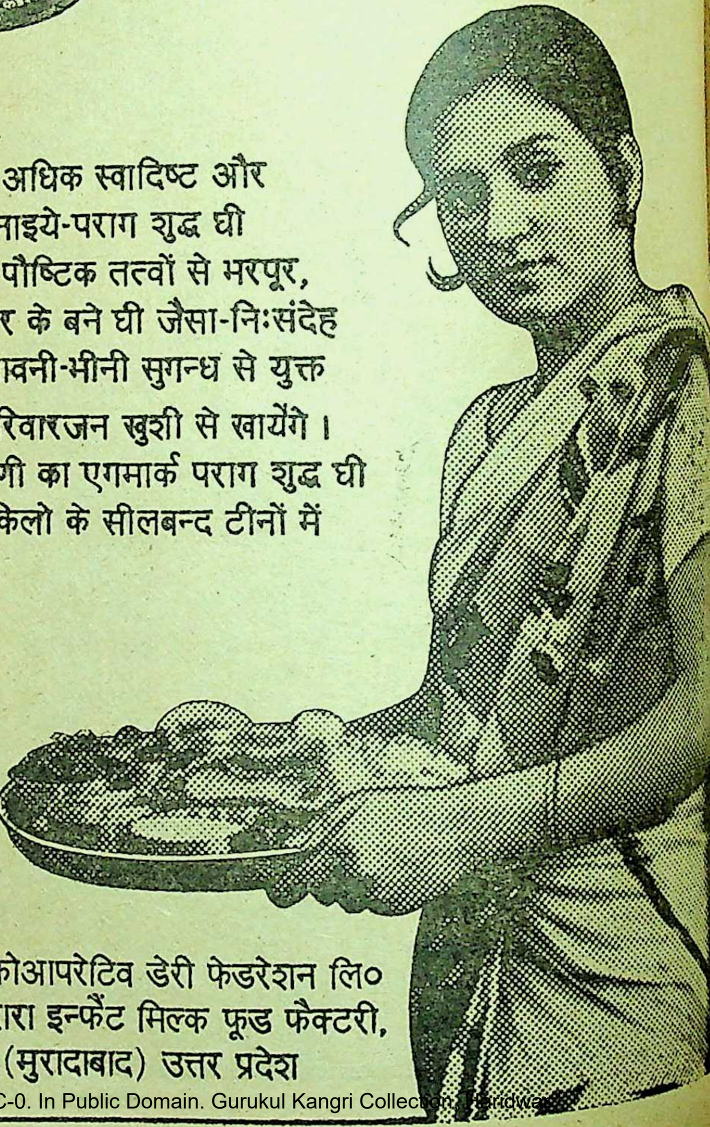

भोजन को अधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक बनाइये-पराग शुद्ध घी अपनाइये। पौष्टिक तत्वों से भरपूर, स्वाद में घर के बने घी जैसा-निःसंदेह इसकी लुभावनी-भीनी सुगन्ध से युक्त पकवान, परिवारजन खुशी से खायेंगे। स्पैशल श्रेणी का एगमार्क पराग शुद्ध घी १ एवं २ किलो के सीलबन्द टीनों में प्राप्य।

निर्माता :
प्रादेशिक कोआपरेटिव डेरी फेडरेशन लि०
लखनऊ द्वारा इन्फैंट मिल्क फूड फैक्टरी,
दलपतपुर (मुरादाबाद) उत्तर प्रदेश

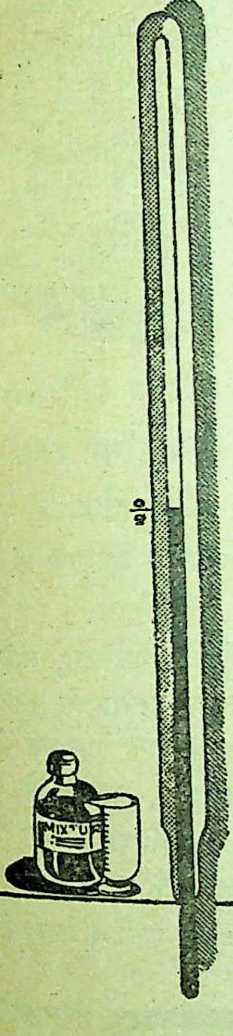

कंपकंपी के साथ बुखार मलेरिया हो सकता है

फौरन अपने खून की जांच कराइये ।
स्वास्थ्य कार्यकर्ता आपके खून की
केवल एक बूंद लेगा ।
अगर मलेरिया निकला तो आपका
फौरन इलाज किया जाएगा ।

खून की जांच मुफ्त की जाती है

यह सुविधा सभी प्रारम्भिक स्वास्थ्य केन्द्रों और अस्पतालों में उपलब्ध है

स्वास्थ्य विभाग
स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मंत्रालय

davp 74/461

सिरपुर-
उत्तम
कागज
के लिये

- ☐ बैंक पेपर
- ☐ बौंड पेपर
- ☐ ग्लेज़्ड एअर मेल पेपर
- ☐ एज्युरलेड पेपर
- ☐ सुपर वाइटलेड पेपर
- ☐ सुपर वाइट मैपलिथो पेपर
- ☐ क्रोमो पेपर
- ☐ एम. एफ. रैपिंग पेपर
- ☐ आर्ट पेपर
- ☐ क्रोमो बोर्ड
- ☐ आर्ट बोर्ड

दि सिरपुर पेपर मिल्स लि.
सिरपुर - कागजनगर, आन्ध्र प्रदेश

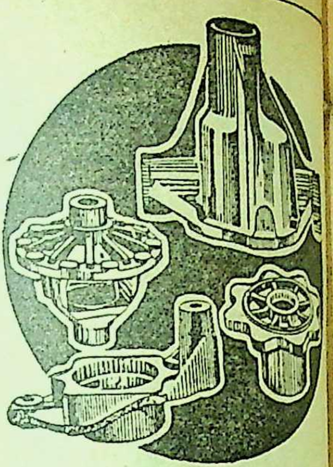

दि इंडियन स्मेल्टिंग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

एस० जी० आइरन के
कास्टिंग

कांसा, पीतल, गनमेटल, लोहेतर धातुओं तथा इस्पात के पुर्जों व हिस्सों का स्थान ले सकते हैं।

मैलिएबल आइरन के
कास्टिंग

अनेक प्रकार की चीजों में इस्पात के कास्टिंग का काम दे सकते हैं।

IS

फेरस फाउंड्री
पंचपाखाड़ी,
पहिला पोखरण
लेन, थाना
(महाराष्ट्र)

नवनीत

वर्ष २४ : अंक ६ जून १९७५

* इस अंक में *

पत्र-वृष्टि ११ संपादक की डाक से
चुनाव-पद्धति में संशोधन की मांग १४ नेमिशरण मित्तल
डालर की माया और भ्रष्टाचार २६ नरोत्तम सिंहनख
दर्शन ३३ स्वामी विद्यानंद गिरि
परोपकारी ३४ आस्कर वाइल्ड
श्रद्धांजलि ३६ ....
प्रजातंत्र : आधार और आयाम ३७ स्व. डा. एस. राधाकृष्णन्
पेट्रोल में आत्मनिर्भरता ४१ वीना सचदेव
एक वृद्धश्रवा भाषाविज्ञानी ४५ डा. सीताराम सहगल
जापानी कविताएं ५१ मुरानो शिरो, त्सुबोडई शिंगेजी
हमारे गूंगे दोस्त ५२ रामेश बेदी
वाक्यदीप ५७ शोपेनहावर
शब्द-मन के दर्पण ५८ जान लेगमान
विज्ञान-बिंदु ६० केजिता
मुगल बेगमें ६५ अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मुआफी (डोगरी कहानी) ७२ मदन मोहन
पुरानी जुर्राब ७७ बिकी बॉम
डेल्फी की देववाणी ८० उदय प्रकाश अरोड़ा

संचालक	संपादक	सहसंपादक	व्यापार-व्यवस्थापक
श्रीगोपाल नेवटिया	**नारायण दत्त**	**सुरेश सिन्हा**	**महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक	उपसंपादक	उपसंपादक	प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
हरिप्रसाद नेवटिया	**गिरिजाशंकर त्रिवेदी**	**डा. विष्णु भटनागर**	सज्जा : **ठाकोर राणा**

लेखक बनने की लालसा	८८	राल्फ मूडी
उपभोक्ताओं का पक्षधर राल्फ नैडर	९१	डा. सुकमाल जैन
स्मृति के अंकुर	९७	'ताइब सैलानी', श्यामजी पंडित,
शहरों का शहर (आस्ट्रेलियाई कहानी)	१००	वरनैन नोल्ज़
नाथद्वारा की चित्रकला	१०५	चरन शर्मा
पांच छोटी कविताएं	१०८	चंदोला, 'राजित'
हंसने में कितना सुख	१०९	सत्यनारायण नाटे
दर्द की कील, एक गजल	११२	'रसिक', 'चंद्रभूषण'
चांदी की घंटियां (हिंदी कहानी)	११३	डा. नरेश
गीत	११६	रूबी अब्बासी
द गोल की ३१ हत्याएं (पुस्तक-संक्षेप)	१२०	प्येर दे मार्त, क्रिश्चियन प्लूम
सौर ऊर्जा-२	१४२	डा. जगदीश लूथरा
चतुर भिखारी (एस्टोनियाई लोककथा)	१४७	संजय
पुस्तकास्वादन	१५२	शर्मा, लूथरा, 'अग्निमुख'
नीली तितली का रहस्य	१५८	सुरजीत

*

चित्रसज्जा : शंकर, अबु, कुट्टी, एड फिशर, ओके, शेणै, संतोष मनचंदा, सत्य
राहुल, विष्णु भटनागर, आर. एस. मूर्ति।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१, ताडदेव, बंबई-३
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डि
३३५, बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष २४ रु.; दो वर्ष ४६ रु.; तीन वर्ष ६६ रु
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष ६० रु.; दो वर्ष १०५ रु.; तीन वर्ष १५० रु
(हवाई डाक से) एक वर्ष १२० रु.; दो वर्ष २१० रु.; तीन वर्ष ३०० रु
भारत में **नवनीत** का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा **नवनीत** प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लि
प्रकाशित तथा **श्री वेंकटेश्वर प्रेस,** ३६।४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रि

पत्र-वृष्टि

श्री शंकर शरनजी का पत्र पढ़ा (पत्र-वृष्टि, मई अंक) । नि:संदेह वे **नवनीत** के पुराने पाठक एवं हितचिंतक हैं; किंतु ऐसा लगता है कि **नवनीत** के पाठकों से कुछ भिन्न प्रकार की अपेक्षा उनकी है । **नवनीत** के घोषणावाक्य में प्राथमिकता ज्ञान को दी गयी है, दूसरे स्थान पर विज्ञान है, एवं मनोरंजन का स्थान अंतिम है।

सामान्य पाठकों के लिए सामान्य पत्रिकाओं की आज बाढ़-सी आयी हुई है। **नवनीत** उनसे भिन्न है। मैं नहीं मानता कि उसकी कोई प्रतिस्पर्धी पत्रिका भी है। आवरण की सादगी **नवनीत** की विशेषता है, त्रुटि नहीं। **नवनीत** का पाठक जो 'सीरत का गुलाम है सूरत का नहीं', उसे छोड़कर सजधज वाली पत्रिका उठायेगा, इसकी मैं कल्पना नहीं कर सकता।

–'पारखी', लखनऊ-२

०००

अप्रैल अंक में श्री कुमार अशोकचरण ने **नवनीत** के मुखपृष्ठों का आकर्षण घट जाने के प्रति दु:ख प्रकट किया है। हम भी उसी दु:ख का अनुभव करते हैं। पिछले डेढ़ वर्ष से कागज एवं मुद्रण की बढ़ती हुई कीमतों के कारण **नवनीत** को आर्थिक कष्ट का सामना करना पड़ रहा है। मुद्रण-व्यय में कमी करने का यह भी एक आंशिक उपाय था कि आवरण-पृष्ठ को कम खर्चीला बनाया जाये। इच्छा न होते हुए भी, आर्थिक व्यवस्था से बाधित होकर हमें वैसा करना पड़ा। फिर भी हमारा प्रयत्न है कि मुखपृष्ठ की शोभा बनी रही और **नवनीत** की पाठ्यसामग्री की उपयोगिता एवं आकर्षकता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो।

–संचालक : नवनीत

०००

एडगर मिशेल का लेख 'आंतरिक अवकाश की ओर' (मई अंक) ऐसे दिमाग का परिचय देता है जो विज्ञान के तत्त्वज्ञान में गहरे उतरने के कारण दर्प और कठमुल्लापन से अछूता है। ज्ञात और अज्ञात की सीमा पर जो कुहरे से ढकी भूमि है, वह सच्चे विज्ञानी को साहसयात्रा के लिए न्योता दिया करती है, उस निमंत्रण को वह ललक के साथ स्वीकार करता है–तभी वह ज्ञान की परिधियों का विस्तार कर पाता है।

–समीर राय, जलपाईगुड़ी, प. बंगाल

०००

डा. जयंत विष्णु नारळीकर की मराठी विज्ञान-कथा का अनुवाद बहुत भाया।

हमदर्द

120ml
HAMDARD
GRIPE
WATER

माँ के
प्यार के बाद!

हमदर्द ग्राइप वाटर।
आप के प्यार की तरह
कुदरती। इसमें पांच
प्राकृतिक द्रव्य सम्मिलित हैं
जो आपके बच्चे की
कोमल पाचन क्रिया को ठीक
करते हैं और पेट की
खराबी, दर्द, अफ़ारा और
दस्तों में आराम देते हैं।

हमदर्द
ग्राइप
वॉटर

HT-HGW.3707 A2

ताक़त
मर्द की शान मर्द की पहचान

इस ताक़त को बनाये रखने के लिए, सदाबहार चुस्ती, फुर्ती और नौजवानी की सी उमंग के लिए ओकासा स्वास्थ्यदायक टॉनिक टिकियां लीजिये। ओकासा टॉनिक टिकियों की अनोखी शक्ति से आपके शरीर और दिमाग़ को लगातार नयी ताक़त मिलती है।
ओकासा की टिकियों पर चांदी चढ़ी रहती है।

ओकासा
टॉनिक टिकियाँ
पुरुषों के लिए चांदी वाली

हार्मो-फ़ार्मा लिमिटेड
लंदन-बर्लिन का उत्पादन

सभी बड़े-बड़े केमिस्टों के यहां मिलता है।

OKASA CO. PVT. LTD., 12A Gunbow
Street, P. B. No. 396, Bombay-400001

OKASA
THE 20TH CENTURY TONIC
RESTORATIVE
Manufactured by
OKASA CO. PVT. LTD. BOMBAY 1.
FOR
HORMO-PHARMA LTD.
LONDON-BERLIN

पश्चिम के नामचीन विज्ञानी विज्ञान-कथाएं लिखने में सुख और गौरव अनुभव करते हैं । हमारे विज्ञानी प्रायः परायी भाषा में पढ़ने-सोचने के कारण शायद इस क्षेत्र से विमुख हैं। डा. नारळीकर ने जो शुभारंभ किया है, उससे और भी विज्ञानी प्रेरणा लें।

—सीता मेहता, जालंधर

०००

'अपनी भाललिपि का लेखक' (मई अंक) इस बात को जोर देकर कहता है (और इस बात पर जोर देना जरूरी भी है) कि संपत्तिशाली बनने की आकांक्षा स्वतंत्र और विकासशील समाज में वैध और हितकारी है—इस शर्त के साथ (और यह शर्त अनिवार्य है) कि इस महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के साधन अवैध, ओछे और दूसरों के लिए घातक न हों और यह महत्त्वाकांक्षा हमें अपने मानवीय कर्तव्यों के प्रति अधिक उन्मुख बनाये । कोनोसुके मात्सुशिता जैसे सच्चे मानवों की जीवन-कथाएं हर बच्चे को पढ़नी चाहिये । **—नीता पंडित, पूना-४**

०००

'पीढ़े और पीढ़ियां' (अप्रैल ७५) जितना सत्य, उतना ही कटु । श्री रामदरश मिश्र इस निबंध के लेखन के लिए बधाई के पात्र हैं। उचित तो यही है कि संग्रहालयों की वस्तु वहीं पर शोभा पाये तथा आधुनिक एवं मौलिक रचनाएं साहित्य में स्थान पायें। पर जैसा कि मिश्रजी ने दिखाया है, पुराने पीढ़े यद्यपि गले जा रहे हैं पर खिसक नहीं रहे हैं। यह समस्या केवल साहित्य में ही नहीं, प्रत्येक क्षेत्र में है । इस लेख से नयी पीढ़ी के पाठक जितने प्रसन्न होंगे, पुराने पीढ़े उतने ही रुष्ट होंगे । किंतु **नवनीत** की समृद्धि के लिए भी नयी पीढ़ी के लेखकों तथा पाठकों को आकर्षित करना अनिवार्य है । आपके साहसी कदम की सराहना करना भी आवश्यक है। **—अरुण कुमार, लखनऊ**

०००

काफी अरसे से **नवनीत** को पढ़ रहा हूं । इसके समकक्ष दूसरा कोई मासिक हमारे देश में शायद ही निकलता हो । किंतु महंगाई के कारण साधारण जनता अब इसके अध्ययन से वंचित रहने लगी है । मैं स्वयं ही अब बुक-स्टालों पर नये **नवनीत** को लालच-भरे नेत्रों से देखता हूं और जब कभी किसी पुरानी पत्रिकाओं के विक्रेता के यहां **नवनीत** देख लेता हूं तो उसी से आधे दर पर खरीद लेता हूं । अभी हाल ही में जून १९७२ की **नवनीत** में निर्मला ठाकुर की 'समाप्ति' कहानी पढ़ी। कहां तक प्रशंसा करूं !

—कपिलनाथ सिंह, पो. कठारा, कानपुर

०००

पत्र तो काफी समय से लिखने की इच्छा थी । मार्च अंक पढ़कर तो हृदय एक दम साधु ! साधु !' कह उठा । 'रक्त के वर्ग' तथा हम देखते कैसे हैं,' जैसे' वैज्ञानिक विषयों को बड़ी खूबी से सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है । सारा अंक ही मनोरंजक व ज्ञानवर्धक रचनाओं से भरा हुआ है । **नवनीत** के उज्ज्वलतर भविष्य के लिए प्रार्थना है। **—शैलेंद्रकुमार खत्री, जबलपुर**

★

चुनाव-पद्धति में संशोधन की मा

*** नेमिशरण मित्तल ***

बीयर की नदियां बहा दी जाती थीं; रिश्वतें खुले आम दी और ली जाती थीं; 'दादाओं' के झुंड के झुंड मतदाताओं को डराते-धमकाते घूमते थे कि हम जिसे कहें उसे वोट दो वरना खैरियत नहीं; जिन लोगों का नाम मतदाता-सूची में न होता वे भी मौज से सभा में घुसकर बैठ जाते; विरोधियों पर सडे सेब तो फेंके हा जाते मरी बिल्लियां तक उछाली जातीं; सिर-फुटौवल होती और सबके सब लोग खूब आपाधापी मचाते।

यह उस देश का चुनाव-दृश्य है, जिसने संसार को 'मर्यादित राजशाही और संसदात्मक लोकशाही' भेंट को तथा जिसकी संसद विश्व की संसदों की जननी मानी जाती है। परंतु यह बात १८५५ से पहले की है। तब मतदाताओं की सभा खुले मैदान में होती थी। मतदाता अपना हाथ उठाकर मत देत । उठे हाथ गिन लिये जाते और जिसके पक्ष में सबसे अधिक हाथ उठ जाते, उसे निर्वाचित घोषित कर दिया जाता था।

चुनाव राजनैतिक उत्सव या समारोह का रूप ले लेते थे। वैसे चुनाव से पहले चाहे जितनी भी धौंस-धमकी दी जाती हो, चुनाव के बाद कोई किसी को कुछ नहीं कहता था। मतदान को एक सार्वजनिक जिम्मेदारी माना जाता था और निर्भयतापूर्वक अपनी पसंद के उम्मीदवार के पक्ष में हाथ उठाकर यह प्रमाणित किया जाता था कि हम साहसी हैं और खुलकर अपने उम्मीदवार के साथ हैं। इसम यह बात निहित थी कि मतदाता विरोधियों से डरता न था और राज्य उसे संरक्षण प्रदान करता था।

मगर औद्योगिक क्रांति ने तो जैसे समाज का समूचा ढांचा ही बदल डाला। मालिक और मजदूर के आपसी संबंधों में इतना भारी असंतुलन पैदा हो गया कि खुलेआम और मालिकों की इच्छा के विपरीत अपनी पसंद के उम्मीदवार के पक्ष में हाथ उठाना अपनी रोजी को खतरे में डालना हो गया। जान को खतरे में डालना आसान होता है, रोजी को नहीं। अपने मत की स्वतंत्रता की रक्षा करना मजदूरों के लिए भारी पड़ गया। अतः यह मांग उठी कि मतदान गुप्त होना चाहिये, ताकि किसी को यह मालूम न हो सके कि किस मतदाता ने किस उम्मीदवार को मत दिया। इस प्रकार १८५५ में जब भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध अंतिम मोर्चा लेने की गुप्त तैयारियां हो रही थीं, ब्रिटेन ने अपने देश के लोगों को गुप्त मतदान का अधिकार दिया।

इसे संयोग माना जाये या दैवी विधान कि जिस साल भारत की इंडियन नेशनल कांग्रेस की नींव रखी जा रही थी, उसी साल इंग्लैंड में उस निर्वाचन-पद्धति की नींव रखी गयी, जो आगे जाकर सारे संसार की प्रमुख संसदों के—भारतीय संसद के भी—निर्वाचन का आधार बनी। उस वर्ष यानी १८८५ में ब्रिटेन ने तय किया कि लोकसभा (हाउस ऑफ़ कामन्स) के लिए ऐसे निर्वाचन-क्षेत्र बनाये जायें, जिनमें से प्रत्येक से एक सदस्य का निर्वाचन हो तथा चुनाव में खड़े उम्मीदवारों में जिसे सबसे अधिक मत प्राप्त हों उसी को निर्वाचित माना जाये। आगे चलकर यह निर्णय एक सुदृढ़ परंपरा और परिपाटी में बदल गया, जो ब्रिटिश संविधान का अभिन्न अंग बन गयी। इसे 'एकल असंक्रमणीय मत प्रणाली (सिंगल नॉन-ट्रांस्फरेबल वोट सिस्टम) अथवा बहुमत निर्वाचन-प्रणाली (मेजॉरिटी वोट सिस्टम) कहा गया। इस पद्धति में यह आग्रह नहीं रखा जाता कि किसी उम्मीदवार को चुने जाने के लिए कुल डाले गये वैध मतों का स्पष्ट बहुमत अर्थात् ५१ प्रतिशत प्राप्त करना होगा।

प्रसिद्ध ब्रिटिश राजनीति-विचारक वाल्टर बेजहाट ने इस पद्धति की आलोचना करते हुए कहा था कि इसमें अल्पसंख्यक मत व्यर्थ चले जाते हैं और यह भी हो सकता है कि चुने जाने वाले प्रतिनिधि को अल्पमत ही मिले हों तथा बहुसंख्यक मत अनेक उम्मीदवारों में बंटकर नष्ट हो गया हो और इस प्रकार वह निर्वाचित प्रतिनिधि वस्तुतः बहुमत के बजाय अल्पमत का ही प्रतिनिधि हो। किंतु इन आलोचनाओं के बावजूद ब्रिटेन ने इस चुनाव-पद्धति को पकड़े रखा। अंग्रेजों ने भारत में भी यही चुनाव-पद्धति प्रचलित की तथा जब हमारे महान संविधान-निर्माताओं ने भारतीय संविधान का निर्माण किया, तो उसमें इसी चुनाव-पद्धति को स्वीकार किया।

आज अट्ठाईस वर्ष बाद भारत में इस चुनाव-पद्धति को यह कहकर चुनौती दी जा रही है कि इसने बहुमत की उपेक्षा करके अल्पमत की सरकार स्थापित कर दी है। वस्तुतः यह तर्क देने वाले राजनीतिज्ञ और राजनैतिक दल चौथाई शताब्दी से इसी पद्धति को स्वीकार करके इसके जरिये अपनी तकदीर आजमा रहे थे; लेकिन जब वे कांग्रेस के हाथों से सत्ता नहीं छीन सके, तो उन्होंने इसके अन्य कारणों को महत्त्व न देकर निर्वाचिन-पद्धति को दोष देना शुरू किया। वे यह भूल गये कि ब्रिटेन में इस प्रणाली की सफलता का कारण मुख्यतः वहां की द्विदलीय राजनीति रही है और वहां जब-जब तीसरे दल—पहले मजदूर दल और अब उदार दल—ने सिर उठाया है, दोनों प्रमुख दलों के बीच शक्ति-संतुलन में विघ्न पड़ा है। यही स्थिति वहां इस समय भी चल रही है।

यहां यह बात स्मरणीय है कि उग्रवादी दलों ने—जिनकी आस्था लोकतंत्र के

प्रतिनिधिमूलक स्वरूप की अपेक्षा अपने सैद्धांतिक कठमुल्लापन में अधिक रही है जो मूलत: एकाधिकारवादी सत्ता में विश्वास करते हैं—बहुमत निर्वाचिन-प्रणाली सदा ही विरोध किया है और उसके स्थान पर समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति समर्थन किया है।

समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति

समानुपातिक प्रतिनिधित्व की कल्पना पहले-पहल १७९३ में फ्रांस के कन्वेन्शन में सामने आयी; किंतु उस समय उस पर कोई कार्रवाई नहीं की गयी। में गणितशास्त्री गेरगोन ने इस विचार को विस्तृत रूप दिया। इसके पश्चात् राइट नामक एक शिक्षक ने इसके बारे में लिखा। राइट से लेकर यह विचार बेटे ने १८३९ में आस्ट्रेलिया में फैलाया। १८४२ में इस विचार ने स्विट्ज़रलैंड भूमि में अपनी जड़ें जमाने की चेष्टा की; उस साल विक्टर कन्सीदेरां ने यह रखा कि जिनीवा की राष्ट्रीय परिषद के चुनाव समानुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली अनुसार हों। १८४४ में टामस गिलपिन्सेट ने इस संदर्भ में अपनी योजना प्रकाशित १८५६ में डेन्मार्क के वित्तमंत्री कार्ल आंद्रे ने आस्ट्रेलियाई योजना के अनुरूप एक तैयार की और १८५७ में टामस हेयर ने समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अपनी पुस्तिका प्रकाशित की, जो आगे जाकर इस पद्धति की सबसे अधिक और प्रचलित रूपरेखा मानी गयी।

हेयर-पद्धति के अनुसार प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र बहुसदस्यीय होना चाहिये प्रत्येक क्षेत्र से कम से कम तीन सदस्य अवश्य चुने जाने चाहिये। इस व्यवस्था के प्रत्येक मतदाता केवल एक मत देता है; किंतु यह मत संक्रमणीय (ट्रांस्फरेबल) होता है अर्थात् मतदाता को यह अधिकार होता है कि वह मतपत्र पर छपे उम्मीदवारों के के सामने अपनी पसंद का प्राथमिकता-क्रम प्रकट कर सके। [द्रष्टव्य : कोष्ठक पृष्ठ

मतगणना के समय विजयी उम्मीदवारों के लिए एक कोटा निश्चित कर जाता है। इसका सूत्र निम्न प्रकार है :

$$\text{कोटा}\ \frac{\text{मतदाताओं द्वारा डाले गये कुल वैध मत}}{\text{सीटों की संख्या} + १} + १$$

मान लीजिये कि निर्वाचन-क्षेत्र में कुल चार लाख मत डाले गये हैं और की संख्या ४ है, तब कोटा इस प्रकार तय होगा :

$$\frac{४,००,०००}{४ + १} + १ = \frac{४,००,०००}{५} + १ \text{ अर्थात् ८०,००१ मत।}$$

गणना होने पर पहले प्रत्येक उम्मीदवार को मिले प्रथम पसंद के मत गिन

जाते हैं। यदि उनमें से किसी के पास प्रथम पसंद के मत निर्धारित कोटा से अधिक आ जाते हैं, तो उन्हें अलग रख दिया जाता है तथा पसंद के क्रम और उम्मीदवारों की आवश्यकता के अनुसार उन्हें दूसरे उम्मीदवारों के मतों में जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार बचे हुए मतों के उपयोग से यदि सभी सीटें नहीं भर पातीं, तो उस उम्मीदवार को होड़ से निकाल दिया जाता है, जिसे प्रथम पसंद के मत सबसे कम मिले हों। फिर उसके मतदाताओं की दूसरी, तीसरी और चौथी पसंद के मतों का इस्तेमाल कर लिया जाता है। इस प्रकार इस प्रणाली में यह चेष्टा की जाती है कि प्रत्येक मत का अधिकतम उपयोग हो जाये। भारत में इस पद्धति का उपयोग राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति तथा राज्यसभा एवं विधान-परिषदों के सदस्यों के निर्वाचन के लिए किया जाता है। इसे हेयर-प्रणाली कहा जाता है।

हेयर-प्रणाली में राजनैतिक दलों पर नहीं, वरन उम्मीदवारों पर बल रहता है। इसमें इस बात की कोई गारंटी नहीं होती कि किसी राजनैतिक दल को उसके उम्मीदवारों को मिले मतों के अनुपात में संसद अथवा विधानसभाओं में स्थान मिल ही जायेंगे इस प्रणाली को शास्त्रीय भाषा में समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अंतर्गत एकल-संक्रमणीय मत (सिंगिल ट्रांस्फरेबल वोट) तथा बहुसदस्यीय निर्वाचन-क्षेत्र प्रणाली (मल्टी-मेम्बर कांस्टिच्युएन्सी सिस्टम) कहा जाता है।

लोकसभा निर्वाचन-क्षेत्र	**रायबरेली**
निर्वाच्य सदस्यों की संख्या	४
उम्मीदवारों के नाम	**मतदाता की पसंद का क्रम**
१. श्रीमती 'इ'	१
२. श्री 'रा'	—
३. श्री 'मो'	४
४. श्री 'अ'	—
५. श्रीमती 'वि'	३
६. श्री 'च'	२

सूची प्रणाली (लिस्ट सिस्टम) :

हेयर-पद्धति से ऐसे देशों के राजनैतिक दलों को संतोष नहीं मिला, जिनमें दो या तीन से अधिक दल थे। समानुपातिक पद्धति का अर्थ राजनैतिक दल यह लगाते हैं कि उन्हें किसी निर्वाचन में जितने प्रतिशत मत प्राप्त हों, उसके समानुपात में स्थान भी मिलें। पर

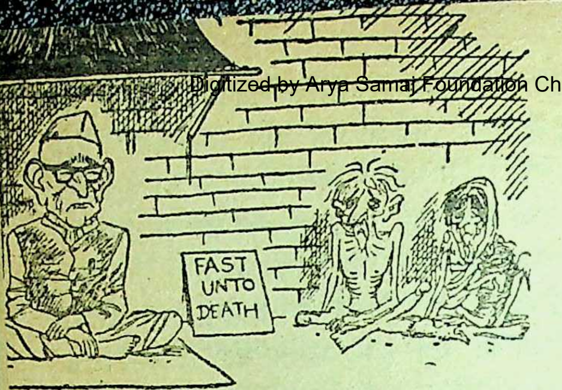

'वर्षों से हमारा अनशन है, मगर किसी ने पूछा नहीं।' ['सर्चलाइट,' पटना]

क्या ? फिर वही आदमी! ['पायोनियर', लखनऊ]

वास्तव में, प्रतिनिधिमूलक लोकतंत्र में राजनैतिक दल एक संस्था के रूप में तो रहे लेकिन उन्हें वैधानिक मान्यता नहीं मिली। उम्मीदवार व्यक्ति के गुण-दोष और नीति कार्यक्रम के आधार पर चुनाव होने की व्यवस्था रही।

राजनैतिक दलों के सुदृढ़ संघटन बन जाने के बाद दलों ने अपने सदस्यों पर वरीयता प्राप्त करने की चेष्टा की और यह कहना शुरू किया कि व्यक्ति को प्रतिनिधि चुनने के बजाय मतदाता दल को अपना प्रतिनिधि चुनें। यह म ग केवल साम्यवादी तथा फासिस्ट दलों की ओर से ही उठी। या फिर इसका प्रचलन बहुत छोटे देशों में हुआ, जिनमें दल और उसके सदस्यों के बीच भेद करना भी कठिन था, जैसे बेल्जियम, स्वीडन, डेन्मार्क, नार्वे तथा स्विट्जरलैंड में। एक कारण और भी रहा। इन देशों ने बहुमत के शासन के बजाय मिश्रित अथवा सर्वदलीय सरकार की कल्पना पसंद की। और इनके लिए यह आसान भी था; क्योंकि ये देश छोटे हैं और दलों के बीच सहयोग सुलभसाध्य हो जाता है। भारत जैसे विराट क्षेत्रफल वाले देश में यदि राजनैतिक दलों के आधार पर चुनाव हों, तो यहां भी फ्रांस जैसी स्थिति हो जायेगी। वहां स्थिर, सुदृढ़ और सशक्त सरकारें स्वप्नवत् बन गयी थीं और इसी कारण दोनों महायुद्धों में उसे पराभव का मुंह देखना पड़ा था।

सूची-प्रणाली में भी चुनाव-क्षेत्र बहुसदस्यीय होते हैं। इसमें प्रत्येक राजनैतिक दल प्राथमिकता के क्रम से उतने उम्मीदवारों की सूची पेश करता है, जितने सदस्य किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुने जाने होते हैं।

इसमें मतदाता अपना प्रतिनिधि व्यक्ति को नहीं चुनता। वह तो राजनैतिक दल के लिए मत देता है और दल ने अपने उम्मीदवारों में प्राथमिकता का जो क्रम घोषित किया है, उसे स्वीकार करने के लिए वह (मतदाता) विवश होता है। इस प्रणाली में

मतदाता अपनी पसंद के अनुसार नहीं, वरन दल के भीतर शक्तिशाली गुट अथवा व्यक्तियों की पसंद के अनुसार अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए विवश हो जाता है। जिस राजनैतिक दल को जितने मत मिलते हैं, उसे उसी अनुपात में स्थान दे दिये जाते हैं तथा उसके द्वारा प्रस्तुत सूची में प्राथमिकता-क्रम से उम्मीदवार निर्वाचित घोषित कर दिये जाते हैं।

प्रतिनिधित्व, नहीं प्रतिबिंबन

समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति तथा विशेषत: तदंतर्गत सूची-प्रणाली का मूल प्रयोजन एक ऐसी प्रतिनिधि संसद या विधानसभा का गठन करना होता है, जिसमें मतदाताओं के विविध समूह—वैचारिक या सैद्धांतिक अथवा जातीय, प्रादेशिक या सांप्रदायिक गुट—दर्पण की तरह प्रतिबिंबित हों। इस पद्धति के समर्थक अपने दल के लिए प्रतिनिधित्व प्राप्त करने की धुन में यह बुनियादी धारणा भूल जाते हैं कि संसद को समाज के विविध मत-मतांतरों अथवा समूहों का प्रतिबिंब या परछाईं नहीं, वरन उनके समग्र स्वरूप और हितों का प्रतिनिधि होना चाहिये।

समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति प्रतिनिधित्व के मूल अर्थ को ही बदल डालती है। प्रतिनिधित्व का एक मूल तत्त्व है—नागरिकों का समग्र प्रतिनिधित्व करना। और प्रतिनिधित्व का अर्थ उनकी सहमति का प्रतिनिधित्व है, न कि उनके विरोधों और मतभेदों का प्रतिबिंबन। समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति नागरिकों के बीच मौजूद मतभेदों की सतह के नीचे विद्यमान सहमति की अंतर्धारा को स्वीकार ही नहीं करती; अत: वह सहमति के प्रतिनिधित्व के बजाय, मतदाताओं के बीच के विरोधों और मतभेदों को ही प्रतिनिधित्व के लिए उपयुक्त इकाई मानती है।

वैसे जान स्टुअर्ट मिल सरीखे असंदिग्ध लोकतंत्रवादी दार्शनिक ने इस पद्धति की सराहना की तथा अपने ग्रंथ 'कन्सिडरेशन्स ऑन रिप्रेज़ेन्टेटिव गवर्नमेंट' में लिखा कि यह पद्धति 'शासन-संबंधी चिंतन और व्यवहार के क्षेत्रों में एक विशद और महानतम उपलब्धि है।' परंतु इसका सबसे सही मूल्यांकन वाल्टर बेजहाट ने किया। उन्होंने कहा कि संसद के दो प्रमुख कार्य हैं—१. उसके बहुसंख्यक सदस्य शासन-कार्य के संचालन के मामले में मंत्रिमंडल का समर्थन करें; तथा २. अल्पसंख्यक सदस्य सरकार के कार्यों और उसकी नीतियों की आलोचना करें। उन्होंने 'विरोध' शब्द का प्रयोग नहीं किया; बल्कि वे 'अपोजिशन' के बजाय 'क्रिटिसिज़्म' शब्द व्यवहार में लाये हैं, जिसका अर्थ है टीका-टिप्पणी अथवा सम लोचना। बेजहाट स्पष्ट कहते है कि इन दोनों कार्यों में पहला कार्य (अर्थात् मंत्रिमंडल का समर्थन अथवा सरकार का संचालन) प्रमुख है तथा दूसरा उस पर आश्रित।

समालोचक अथवा विरोधी पक्ष का कार्य सरकार के मार्ग में बाधा डालना अथवा उसकी स्थिरता और सुदृढ़ता को समाप्त करना नहीं है, वरन उस पर सचेतक की तरह रहकर अपने कर्तव्य का पालन करना है। आवश्यकता पड़ने पर घुड़सवार चाबुक का इस्तेमाल कर सकता है और महावत अंकुश का; लेकिन वे घोड़े या हाथी को नहीं कर सकते। इसी प्रकार विरोधी पक्ष का कार्य सरकार की नियमितता, स्थिरता सुदृढ़ता और उसके सातत्य को खंडित अथवा भंग करना नहीं, वरन उसे सही मार्ग पर बनाये रखना और सत्ता के दुरुपयोग से सावधानी तथा सतर्कतापूर्वक बचाना है।

बेजहाट कहते हैं कि समूची जनता का समग्र प्रतिनिधित्व इन दोनों कार्यों की एकता में समाहित है—१. बहुसंख्यक सदस्यों का समर्थन प्राप्त करके सरकार द्वारा कार्य करना और २. अल्पसंख्यक सदस्यों द्वारा उन कार्यों की आलोचना। उनका मत है कि समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के चाहे कितने भी गुण क्यों न हों, वह सरकार को अस्थिरता प्रदान करके उसकी कार्य-क्षमता को शिथिल कर देती है, अतः वह लोकतंत्र के लिए अनुपयुक्त है।

संसदात्मक लोकतंत्र में कार्यांग (मंत्रिमंडल) विधानांग (संसद) के बहुमत के समर्थन पर आश्रित और उसके प्रति उत्तरदायी होता है; किंतु यदि संसद स्वयं इतने समूहों, दलों और गुटों में बंट जाये कि उसके भीतर कोई सशक्त और स्थिर बहुमत बन ही न जाये जो मंत्रिमंडल को स्थिर और उत्तरदायी बनाये रख सके, तो समूची सरकार की गतिविधि शिथिल हो जायेगी तथा संसदात्मक व्यवस्था अक्षमता और निष्क्रियता का पर्यायवाची बन जायेगी।

राष्ट्रीय संसद के निर्वाचनों के लिए समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के प्रयोग का सबसे पुराना उदाहरण बेल्जियम का है। वहां मतदाताओं को विविध दलीय-सूचियों

बायें—गुजरात में मत्स्यवेध (कुट्टी: बंगला साप्ताहिक 'देश' में)। दायें—'आपकी यह दशा देखकर मेरा कलेजा मुंह को आता है। मैं इसीलिए पिछले पांच साल इस ओर नहीं आया था।'

(आर. एस. मूर्ति : कन्नड 'कर्मवीर' में)

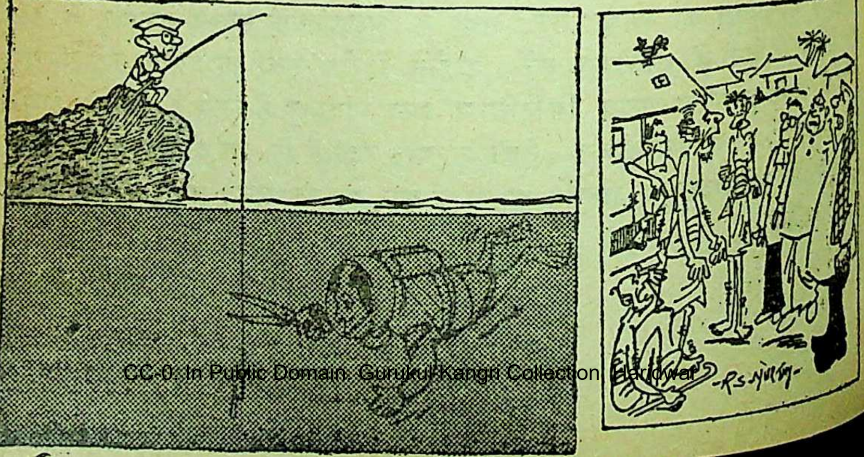

में से किसी एक को चुनना होता है, यद्यपि उन्हें यह अतिरिक्त अधिकार दे दिया गया है कि वे उस सूची के प्राथमिकता-क्रम का अपनी पसंद के अनुसार निर्धारण कर सकते हैं। इस पद्धति ने वहां बहुदलीय व्यवस्था की जड़ें मजबूत कर दी हैं, जिसके परिणामस्वरूप सरकारें अस्थिर और कमजोर बन गयी हैं।

भारत में इसकी मांग क्यों उठी

हमारे देश में समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति और इसके अंतर्गत सूची-प्रणाली की मांग भारतीय साम्यवादी दल (सी. पी. आई.) और भारतीय जनसंघ के मंच से आयी है। जहां तक साम्यवादी दल का प्रश्न है, यह उस दल की अंतरराष्ट्रीय व्यूहरचना का अंग है। यूरोप के देशों के समस्त साम्यवादी दल समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का समर्थन करते रहे हैं। उसका कारण यह है कि वे इस प्रकार दो लक्ष्य एक साथ सिद्ध कर लेते हैं। पहला तो यह कि अस्थिर सरकारों के कारण संसदात्मक लोकतंत्र बदनाम होता है, जिससे उसकी आलोचना और उसके विरुद्ध जनता को भड़काना साम्यवादियों के लिए सुगम हो जाता है। लोकतंत्र के अप्रिय और अक्षम हो जाने पर साम्यवादी अधिनायकवाद का मार्ग सुगमता से प्रशस्त हो सकता है। दूसरा कारण यह है कि संसद में किसी एक दल का पूर्ण बहुमत न रह जाने पर साम्यवादियों को सत्ता पर प्रभाव जमाने और लोकतंत्रात्मक दलों को आपस में भिड़ाकर बदनाम करने का अधिक अनुकूल अवसर मिल जाता है। भारतीय साम्यवादी दल १९६९ में कांग्रेस की फूट के बाद से भारतीय राजनीति में यही भूमिका तो अदा कर रहा है।

अधिनायकवाद का मार्ग प्रशस्त करने में साम्यवादियों की ही नहीं, इटली की फासिस्ट और जर्मनी की नाजी पार्टियों की भी गहरी दिलचस्पी थी। जो राजनैतिक दल किसी न किसी प्रकार की तानाशाही में विश्वास रखते हैं, वे समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का घोर समर्थन करते हैं, यह विश्व-इतिहास की सीख है।

जर्मनी के जिस वाइमर-संविधान ने नाजी तानाशाही को जन्म दिया, वह समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति पर ही आधारित था। वाइमर गणराज्य का नागरिक मतदान द्वारा राजनैतिक दलों को चुनता था। भारत में भी विशेषतः जनसंघ के नेता श्री लालकृष्ण अडवानी का दृढ़ विश्वास है कि मतदाता के मत के राजनैतिक तत्त्व को प्रस्फुटित और सुदृढ़ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वह अपना मत राजनैतिक दलों को दे, दलों के व्यक्तिगत प्रतिनिधियों या उम्मीदवारों को नहीं। इसीलिए वे सूची-प्रणाली के प्रबल समर्थक हैं।

सूची-प्रणाली का दल को सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि उसके राष्ट्रीय नेता चुनाव-अभियान की कटुता और व्यक्तिगत आलोचना-प्रत्यालोचना तथा निंदा-स्तुति

से बचे रहकर संसद तथा विधानसभाओं के सदस्य चुने जा सकते हैं। वास्तव में सूचियां दलों के प्रबंधकों तथा परदे के पीछे से तार खींचने वालों के लिए बहुत सुरक्षित व्यवस्था बन जाती हैं। वे उन्हें जनता के सामने उघड़ने से बचा लेती हैं। इस तरह हिटलर सरीखे राजनैतिक मदारी की सफलता लगभग सुनिश्चित हो जाती है।

इस पद्धति में जनता भी उग्रवादी बन जाती है; क्योंकि उस पर प्रतिनिधियों के व्यक्तिशः चुनाव की कोई जिम्मेदारी रहती ही नहीं। जर्मनी में सूची-प्रणाली के कारण जिम्मेदार राजनैतिक दलों के नेताओं व कार्यकर्ताओं में उम्मीदवारों के रूप में जमकर प्रतिद्वंद्विता हुई ही नहीं, जिससे कि जर्मन जनता यह समझ पाती कि देश की यथार्थ राजनैतिक स्थिति की मांगें क्या हैं तथा उसके सामने क्या-क्या विकल्प उपलब्ध हैं। उसमें विकल्प रह ही नहीं गये थे। एक छोटा किंतु उग्रपंथी नाजी दल शक्तिसंतुलन में प्रमुख भूमिका अदा कर रहा था, अतः सत्ता सहज ही उसके चरणों पर आ गिरी। उदारवादी और उत्तरदायी शासन में विश्वास रखने वाले राजनैतिक दल पिछड़ गये।

यूरोप का अनुभव

यह तथ्य फ्रांस तथा अन्य देशों के एक पूरी शताब्दी के अनुभवों पर आधारित है कि समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अंतर्गत संसदों और विधान-सभाओं में पूर्ण-बहुमत प्राप्त दल उभर ही नहीं सकते तथा सरकारें कभी स्थिर रह ही नहीं सकतीं। स्थिर सरकार बनाने का एक ही मार्ग खुला रह जाता है। यह मार्ग है आपातकालीन शक्तियों के निरंतर प्रयोग द्वारा संवैधानिक व्यवस्था का नाश और मुसोलिनी-हिटलर के ढर्रे की तानाशाही की स्थापना, जिसका समर्थन अस्थिर सरकारों से ऊबी हुई जनता भी कर देती है।

समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति दलों को बांट डालती है तथा नये दलों का निर्माण सुगम कर देती है; क्योंकि उन्हें यह विश्वास रहता है कि उन्हें जितने प्रतिशत मत मिलेंगे, उतने ही प्रतिशत स्थान भी मिल जायेंगे। उन्हें यह भी पता होता है कि उन्हें जितने कम स्थान मिलेंगे, सत्ता की सौदेबाजी में उनका महत्त्व उतना ही बढ़ जायेगा; क्योंकि तब वे मार्जिनल-दल के रूप में काम कर सकेंगे तथा उनके इधर से उधर कूदते ही सरकारें भंग हो जायेंगी। दलों के मन की यह स्वार्थ चेतना उनका मूल्य (रुपयों में) भी बढ़ा देगी।

यह पद्धति मतदाताओं को भ्रमित कर देती है। अनेक दलों के चक्र में उलझकर मतदाता राष्ट्रीय पैमाने पर कोई स्पष्ट निर्णय नहीं दे पाते। परिणामतः संसदात्मक लोकतंत्र का संचालन असंभव हो जाता है।

फ्रांस ने बहुत घमंड के साथ इस पद्धति को अपनाया था। इसके पीछे कारण यह था कि फ्रांस के राजनीतिज्ञ नेपोलियन संबंधी अनुभव से डरे हुए थे; अतः वे अपने यहां

मजबूत सरकार कायम नहीं करना चाहते थे कि कहीं वह अधिनायकवादी न बन जाय। उन्होंने कमजोर सरकार बनाने के लिए ही यह पद्धति अपनायी थी।

मगर फ्रांस का घमंड धूल में मिल गया। पिछले सौ वर्षों म वहां १५ बार नये संविधान बन और बिगड़ चुके हैं। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद पिछल तीन दशकों में ही वहां तीन संविधान लागू हो चुके हैं। अंततः पांचवें गणराज्य के संविधान न एकल-सदस्यीय निर्वाचन-क्षेत्र और बहुमत चुनाव प्रणाली को स्वीकार किया, जिसकी कृपा से द गोल से लेकर अब तक १७ वर्षों में उसे लगातार तीन स्थिर सरकारें प्राप्त हुईं।

पश्चिम जर्मनी ने अपनी लोकसभा (लेंडर) के चुनाव के लिए वाइमर गणराज्य की सूची-प्रणाली को समाप्त कर दिया। उसने अपनी अस्थिर राजनैतिक व्यवस्था को स्थिरता प्रदान करने के लिए दो मार्ग अपनाये। एक तो जिन राजनैतिक दलों को बवेरिया मे १० तथा अन्य प्रदेशों में ५ प्रतिशत से कम मत प्राप्त हों, उनकी मान्यता समाप्त कर दी जाती है। (इसके परिणामस्वरूप वहां पिछले पचीस वर्षों में दलों की संख्या सिकुड़ गयी है और अब अंततः तीन प्रमुख दलों के बीच सत्ता की होड़ शेष रह गयी है।) दूसरे कदम के तौर पर उसने अपने जनप्रतिनिधि सदन के आधे सदस्यों के प्रत्यक्ष निर्वाचन के लिए एकल सदस्यीय निर्वाचन-क्षेत्र और बहुमत निर्वाचन प्रणाली को अपना लिया है; शेष आधे सदस्य पुरानी सूची-पद्धति के अनुसार चुने जाते हैं।

यह व्यवस्था एडिनावर सरीखे कुशल राजनीतिज्ञों की राजनैतिक मेधा का परिचय देती है। इसके द्वारा राज्य के प्रत्येक प्रदेश (लैंड) की जनता को दोनों पद्धतियों के गुण-दोष पहचानने परखने का अवसर मिला है। इससे अब वहां सभी स्तरों पर समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति और सूची-प्रणाली समाप्त करने की मांग जोर पकड़ रही है और भारत एवं ब्रिटेन के ढंग की बहुमत निर्वाचन प्रणाली का समर्थन हो रहा है।

बहुमत पर अल्पमत का जोर

समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह लोकतंत्र के इस बुनियादी सिद्धांत पर ही चोट करती है कि शासन बहुमत द्वारा संचालित होना चाहिये। इस पद्धति में दलों की संख्या बहुत अधिक हो जाने के कारण संसद में किसी भी दल का स्पष्ट बहुमत निर्माण हो ही नहीं सकेगा।

संसद में किसी भी राजनैतिक दल का बहुमत न होने पर क्या स्थिति हो सकती है, इसका अनुमान हम भारतवासी दिसंबर १९६९ से फरवरी १९७१ तक की अपनी संसद, १९६७ में गैर-कांग्रेसी बहुमत वाले राज्यों की विधानसभाओं और केरल की विधानसभा के अनुभव के आधार पर लगा सकते हैं। १९६९ की फूट के बाद अल्पसंख्यक कांग्रेस को सत्ता में बने रहने के लिए भारतीय साम्यवादी दल और द्रमुक के सामने झोली

"नोवा सौंदर्य-प्रसाधन—आपकी आधुनिक गृहस्थी के अनिवार्य साधन"

आकर्षण और सौंदर्य के सभी शौकीन नोवा कॉस्मेटिक्स (सौंदर्य प्रसाधन) ही पसंद करते हैं। वे जानते हैं, नोवा कॉस्मेटिक्स सर्वोत्तम है।

अपने आपको दिन-भर और दिन-प्रतिदिन सदाबहार तथा तरोताजा बनाये रखने के लिये आपको नोवा परिवार के इस या उस उत्पादन की आवश्यकता होती है—एक्ला स्नो, नोव्हा टॅल्कम पावडर, टूथ पावडर, ब्रिलियंटाइन, वेनिशींग क्रीम ...... क्वालिटी में सभी सर्वोत्कृष्ट !

आज ही खरीदिए और स्वयं परख लीजिए।

दि नोवा कंपनी

एल. बी. एस. मार्ग, भांडुप, बम्बई-४०००७८.

nova
LUXURY
TALC
nova
LUXURY
TALC
nova
VANISHING CREAM
Eclat
COLD CREAM
NOVA
nova
BRILLIANTINE
nova
Eclat
NOVA
NOVA
nova
DE-LUKE
AGARBATTI
नोवा
डी-लक्स
सुगंधित अगरबत्ती

फैलानी पड़ी। परिणाम यह हुआ कि एक ओर तो कांग्रेस ने १९७१ में तमिलनाडु को द्रमुक सरीखे प्रादेशिक राजनैतिक दल के हवाले कर दिया; दूसरी ओर उसे साम्यवादी दल के इशारे पर प्रीवी पर्स, वैंकों के राष्ट्रीयकरण और अनाज के सरकारी व्यापार सरीखे महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय मुद्दों पर ऐसी नीतियां अपनानी पड़ीं, जो कांग्रेस की मध्यममार्गी नीतियों से मेल नहीं खाती थीं। (अनाज के व्यापार का राष्ट्रीयकरण तो उसे बहुत अपमानपूर्वक वापस भी लेना पड़ा।)

सन १९६७ में भारत के आधे से अधिक राज्यों की विधानसभाओं में विरोधी दलों द्वारा किये गये सत्ता के जोड़तोड़ की कहानी तो बहुत ही हैरतअंगेज है तथा भारतीय लोकतंत्र के २८ वर्षों के इतिहास का सबसे अधिक घिनौना अध्याय भी। मगर उतना ही घिनौना है केरल की विधानसभा के भीतर सत्ता के जोड़तोड़ का अध्याय भी। भला कोई सोच सकता था कि जो मुस्लिम लीग इस देश के विभाजन के लिए जिम्मेदार रही और जिसने राष्ट्रीय एकता के सिद्धांत को कभी स्वीकार ही नहीं किया, उसी लीग के साथ कांग्रेस सत्ता की घिनौनी दौड़ में शामिल होगी ! मगर यह सब हुआ।

जब वर्तमान बहुमत निर्वाचन प्रणाली के अंतर्गत इतना सब हो सकता है, तो उस भ्रष्टाचार के तो अनुमान से भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं, जो समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति स्वीकार कर लेने के परिणामस्वरूप अनिवार्य तौर पर उदय होगा। क्योंकि तब तो सदस्यों की बिक्री और खरीद (हॉर्स ट्रेडिंग) अनिवार्य हो जायेगी।

सच्चा नेतृत्व नहीं उभर पायेगा

विशेषतः सूची-प्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसके कारण दलों पर उनके चौधरियों (पार्टी बॉसेज़) का नियंत्रण स्थापित हो जाता है। ये चौधरी ही यह तय करते हैं कि सूचियों में किन लोगों के नाम शामिल करने हैं; और उनका क्रम भी वे ही निर्धारित करते हैं। इस व्यवस्था के कारण दलों में नियमितता, सैद्धांतिक कठमुल्लापन और रूढ़िवादी मान्यताओं तथा कठोर अनुशासन पर बेहद बल दिया जाने लगता है, जिससे उग्र और अतिमार्गी (एक्स्ट्रीमिस्ट) दलों का उदय और विकास होता है। तब दल के भीतर लोकतंत्र समाप्त हो जाता है तथा नेताओं व सदस्यों के बीच स्वामी-सेवक संबंध बन जाता है। दल के सदस्य दल में आसन जमाकर बैठे हुए नेताओं को दलीय सत्ता से च्युत नहीं कर सकते। ये नेता अपने नियंत्रण में एक दलीय नौकरशाही खड़ी कर लेते हैं। समूची शक्ति चुनाव-अभियान के मैनेजर के हाथों में चली जाती है। उस शक्ति में प्रायः ऐसे नेताओं का ही साझा होता है, जो दल के लिए धन का संग्रह करते हैं।

दल के ये कर्ता-धर्ता मतदाताओं के सामने नहीं आते तथा असंतुष्ट सदस्यों की बात की सुनवाई तक दल में नहीं हो पाती। दल के प्रतिनिधियों की मतदाताओं में न

कोई पैठ होती है, न उन तक उनकी पहुंच ही। वे पहले तो अपना नाम सूची में रखवाने के लिए, उसके पश्चात् उसमें प्राथमिकता प्राप्त करने के लिए दलीय चौधरियों का मुंह जोहते हैं और पूरी तरह उनके आश्रित हो जाते हैं।

और चूंकि सूची-प्रणाली में उम्मीदवार जनता के बजाय नेताओं की कृपा पर चुना जाता है, अतः उसे नेताओं का हृदय जीतने और उनका विश्वास प्राप्त करने के स्वभाव वाला होना चाहिये। यह जाहिर है कि हृदय का रास्ता पेट से होकर जाता है यानी जो खिला-पिला सकता है, वही दिल तक पहुंच सकता है। इस प्रकार सूची-प्रणाली में नौकरशाह-किस्म के लोग उभरकर राजनीति में आते हैं।

वाइमर-संविधान के अंतर्गत जर्मनी की संसद में ठीक यही तो हुआ था। उसमें अनेक योग्य, विद्वान और विशेषज्ञ लोग थे, जिन्हें तकनीकी विषयों की बहुत उच्च कोटि की जानकारी थी। लेकिन उसमें नेता-किस्म के लोग नहीं थे, जो हिटलर, गोयबल्स व गोयरिंग का सामना कर सकते और दल के भीतर उनके एकाधिकार को चुनौती दे सकते।

सूची-प्रणाली पुराने और बूढ़े लोगों के हाथ में शक्ति दे देती है। उसमें युवावर्ग के अभ्युदय की गुंजाइश ही नहीं रहती। उनमें युवकों के लिए तो सेनाओं में स्थान होता है; भावी नेताओं के रूप में उन्हें तैयार करने की आवश्यकता ही नहीं समझी जाती।

आज हमारे देश में कहा जा रहा है कि समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति जारी करने पर भ्रष्ट राजनैतिक मशीन टूट जायेगी। लेकिन वास्तव में उसे जारी करने का परिणाम यह होगा कि स्थिर और निश्चित सरकार की मशीन टूट जायेगी। दूसरे, एक भ्रष्ट मशीन टूटने के बाद दूसरी भ्रष्ट मशीन का निर्माण अवश्यंभावी है; क्योंकि मशीन का भ्रष्ट होना न होना तो नेताओं पर निर्भर होता है—यदि वे भ्रष्ट न हों तो मशीन स्वच्छ रह सकती है। पर उन्हें स्वच्छ कौन रखे, प्रश्न तो यह है। क्या हमने १९६७ में नहीं देखा कि जिसे उस समय भ्रष्ट मशीन कहा गया था उसके टूटने के बाद विधायकों की बिक्री—और वह भी उन विधायकों की बिक्री जो भ्रष्ट मशीन को तोड़ने के नारे पर चुने गये थे—विधानसभाओं के भीतर और बाहर घोड़ों की तरह होने लगी थी। (हरियाणा विधानसभा के अध्यक्ष ने तो एक बार खीझकर कह भी दिया था कि सदन में हॉर्स-ट्रेडिंग हो रहा है।) समानुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति की सूची-प्रणाली के अंतर्गत तो विधायक नहीं दल के दल बिकने लगेंगे। फ्रांस इसका जीता-जागता उदाहरण रहा है। ऐसी व्यवस्था उत्पन्न होने पर विदेशी शक्तियां धन को पानी की तरह बहाने लगती हैं, जैसा कि अमरीका ने १९६७ से १९७० तक कंबोडिया की राष्ट्रीय सभा के सदस्यों को खरीदने के लिए किया था। और तब देश की आजादी ही खतरे में पड़ जाती है। [अगले अंक में : 'भारत के निर्वाचन कानून का वर्तमान संदर्भ']

*

डालर की माया और भ्रष्टाचार

* नरोत्तम सिंहनख *

राजकुमार नरोत्तम सिंहनख २६ अप्रैल १९४१ के दिन कंबोडिया के राजसिंहासन पर बैठे। तब वे अठारह वर्ष के थे। ९ नवंबर १९५३ को कंबोडिया फ्रांस के अधिपत्य से मुक्त हुआ और २ मार्च १९५५ को वे राजगद्दी अपने पिता को सौंपकर सक्रिय राजनीति में उतर पड़े तथा कंबोडिया के प्रधान-मंत्री बने। ३ अप्रैल १९६० को पिता के देहावसान के बाद उसी वर्ष १४ जून को सम्राट तो नहीं परंतु राष्ट्राध्यक्ष पद पर आसीन हुए।

उन्होंने १९५५-५६ में ही यह समझ लिया था कि अमरीका की आर्थिक सहायता किसी भी स्वाभिमानी राष्ट्र के गले की फांसी है, अतः उन्होंने धीरे-धीरे अपने देश को उससे मुक्त कर लिया, जिसके कारण वे अमरीका के रोष के पात्र बने और अमरीकी सरकार ने सी. आई. ए. के षड्यंत्र द्वारा उन्हें १८ मार्च १९७० को अपदस्थ करा दिया। अपदस्थ होने के बाद वे पीकिंग में रहे और वहीं से उन्होंने अपने राष्ट्रीय संघर्ष का मार्गदर्शन किया, जिसकी निष्पत्ति कंबोडिया में पुनः उनकी सरकार की स्थापना और अमरीकी पिट्ठुओं के पतन के रूप में १८ अप्रैल १९७५ को हुई।

पीकिंग में रहते हुए ही राजकुमार सिंहनख ने एक पुस्तक लिखी थी 'माई वार विद सी. आइ. ए.'। अमरीकी सहायता के बारे में उनका अनुभव उस पुस्तक के आधार पर यहां प्रस्तुत है, जिससे भारत को भी बहुत कुछ सीखने को मिल सकता है।

★

पहला प्रश्न यह है कि मैंने डालर-सहायता स्वीकार ही क्यों की ? सन १९५४ में जिनीवा संमेलन ने जब हिंदचीन में युद्ध-विराम का निश्चय किया, उससे पहले अमरीका युद्ध के व्यय का ८० प्रतिशत भाग ऋण के रूप में फ्रांस को देता था। फ्रांस उस धन का एक अंश कंबोडिया की सेना और प्रशासन पर खर्च के लिए तथा युद्ध जारी रखने के लिए हमें देता था।

अब जब हम स्वतंत्र हो गये और युद्ध थम गया, तो अमरीका ने फ्रांस को धन देना बंद कर दिया तथा हमसे कहा कि वह हमारी सेना के विस्तार और उसके आधुनिक करण के लिए हमें सहायता दे सकता है। उसने कुछ अन्य कार्यों के लिए भी डालर-सहायता की बात चलायी।

हमें सेना तो खड़ी करनी ही थी, उससे भी अधिक बड़ा प्रश्न हमारे सामने था युद्ध में क्षत-विक्षत आर्थिक ढांचे के पुनर्निर्माण का। हमें अंतरराष्ट्रीय संचार के साधन

*** अखिल द्वारा प्रस्तुत ***

सड़कें, पुल सब कुछ तैयार करना था; अपनी जनता के जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करना था। हम विशेषत: शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार चाहते थे। अत: मैंने अमरीकी सहायता का प्रस्ताव कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार कर लिया। लेकिन अंतत: हमें मालूम हुआ कि अमरीका ने शुरू से ही हमारे प्रशासन, राष्ट्रीय चिंतन तथा चरित्र में भ्रष्टाचार के बीज बोने शुरू कर दिये थे।

सैनिक सहायता के अतिरिक्त डालर-सहायता के एक बड़े भाग को उपभोग-सामग्री के आयात के लिए पूंजी के रूप में उपयोग करने की व्यवस्था थी। आयात करने वालों को कंबोडिया सरकार लाइसेंस देती थी और प्रत्येक आयातक के लिए डालरों की एक राशि भी निर्धारित करती थी। वे इस राशि के मूल्य की वस्तुओं का आयात करते और ३५ रियल (कंबोडियाई मुद्रा) प्रति डालर की विनिमय-दर के अनुसार उस राशि के बदले में रियल कंबोडिया के विशेष कोश में जमा करा देते थे। सरकार इस राशि को निकालकर सेना और आर्थिक योजनाओं पर खर्च करती थी।

देखते-देखते देश में नये-नये आयातक खड़े हो गये और सर्वोच्च स्तर पर अमरीकी अधिकारी उनके राजनैतिक सहयोग और सहकार के आधार पर उनके लिए डालर की राशि निर्धारित करने लगे। डालरों की लूट के लिए होड़ मच गयी; उसका आर्थिक विकास से कोई दूर का भी संबंध न था। इसी ने आगे जाकर कंबोडिया की स्वतंत्रता को धक्का पहुंचाया।

आयात-लाइसेंस देने और डालरों का वितरण करने वाले अधिकारियों ने मोटी-मोटी रिश्वतें लेनी शुरू कर दीं। आयात में भी पूरी तरह धोखेबाजी की जाने लगी। बीजक कुछ और होता, माल कुछ और; माल की असली लागत भी बीजक की लागत से बहुत कम होती। तटकर-विभाग और चुंगी-विभाग में भ्रष्टाचार फैल गया। उनके अधिकारी मोटी रिश्वतें लेते और माल की ओर से आंखें मूंद लेते।

आयात सरकारी दर पर होता था, परंतु आयातक उस माल को काले बाजार में बेच देते थे। इस तरह कंबोडिया में काला धन पैदा होना शुरू हुआ। कोई-कोई आयातक-लाइसेंसधारी तो लाइसेंस ही काले बाजार में बेच देते। आयकर-विभाग के अधिकारियों को भारी मात्रा में घूस देकर भ्रष्ट कर दिया गया। यही नहीं, किसी आयातक के लिए जितने डालर निर्धारित किये जाते, वह उन सबकी लागत का माल आयात न करके काफी डालर हांगकांग के बैंकों में जमा करा देता। ऐसे आयातकों की संख्या बहुत बड़ी थी।

मैंने चाहा कि हम देश में नये कारखाने लगायें और अपना उत्पादन शुरू करें, जिससे आयात करने की आवश्यकता न रहे। परंतु अमरीकी डालरों ने राजनीति में एक मजबूत लॉबी तैयार कर दी थी, जिसने मेरी

नीतियों को चलने ही नहीं दिया।

चंद वर्षों में ही अमरीका ने वियतनाम-युद्ध में तटस्थ रहने तथा दक्षिण-पूर्व एशिया संधि-संघटन में शामिल न होने की मेरी नीतियों का सामना करने के लिए डालरों की मदद से एक सशक्त पांचवां दस्ता कंबोडिया के भीतर खड़ा कर लिया। मेरे अकेले के लिए हर बात पर निगाह रखना संभव नहीं था। और राजनीति में कुछ ऐसे तत्त्व उभर आये, जो यथार्थ को मुझ तक आने ही नहीं देते थे।

लेकिन दिसंबर १९५६ में हमारे मंत्रिमंडल में संकट उत्पन्न हो गया। कुछ मंत्री भ्रष्टाचार के निवारण पर बल दे रहे थे; दूसरे भ्रष्टाचार, काले बाजार और काले धन के अस्तित्व से ही इन्कार कर रहे थे। अंततः मंत्रिमंडल भंग हो गया। मेरे पास इस बात के प्रमाण थे कि नोम पेन्ह में अमरीकी दूतावास और हमारे संपन्न व्यापारियों ने अमरीकी इशारे पर राष्ट्रीय महासभा के ९१ सदस्यों में से अधिकांश को खरीद लिया है और वे मुझे ही उठाकर फेंकने की तैयारी में हैं। खैर, वह इतना आसान न था।

मैंने राष्ट्रीय संमेलन का अधिवेशन तुरंत बुलाया और अमरीकी राजदूत कार्ल स्ट्रोम की आंखों में आंखें डालकर खुल्लम-खुल्ला कहा कि हमारी पुलिस के पास इस बात के प्रमाण हैं कि एक विदेशी सत्ता हमारे देश में सत्ता के अपहरण की तैयारियां करा रही है। हमारे राजनीतिज्ञ एक विदेशी राज्य के इशारे पर नाच रहे हैं और वे एक

पुनः प्रतिष्ठित नरोत्तम सिंहनख (बायें) और नयी सरकार के असली सूत्रधार ख्यू संफान (दायें)।

दूसरे को चीर डालने पर उतारू हो गये हैं। विदेशी हमें संतमेंत में ही सहायता नहीं देता है; विशेषतः जब वह व्यक्तियों की सहायता करता है, तो उसका प्रयोजन राष्ट्रीय हितों पर आघात कराना होता है।

इतना ही नहीं, मैंने राष्ट्रीय संमेलन में एक प्रस्ताव रखा कि आगे से राष्ट्रीय महासभा के स्थान पर राष्ट्रीय संमेलन, जिसमें ग्रामस्तर के कई हजार प्रतिनिधि होते थे, प्रभुता-संपन्न हों। इस तरह मैंने अगले तेरह वर्षों के लिए अपने लोकतंत्र को डालर-कूटनीति के पंजे से बचा लिया।

अमरीकी सरकार ने कंबोडिया को भ्रष्ट करने और उसके राजनीतिज्ञों एवं अधिकारियों को खरीदने का काम सी. आइ. ए. को सौंप दिया था। उसका कारण यह था कि यह स्पष्ट हो गया था कि मैं अमरीका की कुचालों को समझ गया हूं तथा मैं न प्रलोभनों में आ सकता हूं, न दबाव में।

सन १९६३ में चीनी नस्ल का एक थाई नागरिक सोन साक्द बैंकाक से कंबोडिया में आया। उसके पास काफी धन था और वह हमारे यहां व्यवसाय आरंभ करना चाहता था। उन दिनों मैं अपने देश की अर्थ-व्यवस्था के निजी क्षेत्र में विदेशी पूंजी को उस सीमा तक प्रोत्साहित कर रहा था, जहां तक कि उससे हमारे विकास कार्यक्रमों में मदद मिलने की संभावना हो। मैं चाहता था कि कंबोडिया के पर्यटन व्यवसाय में वृद्धि हो। अतः सोन साक्द ने सिहनखविल में कई आधुनिक सरायें (मोटेल) बनायीं तथा किरिरम नामक पर्वतीय पर्यटन-स्थल पर कुछ और सरायें बनाने तथा दुग्ध-वस्तु-उत्पादन का संयंत्र लगाने के लिए दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किये। उसने नोम पेन्ह बैंक की भी स्थापना की। यह सब उसकी कानूनी गतिविधि थी।

किंतु एक दिन हमारे राष्ट्रीय बैंक के गवर्नर सोन सान ने मुझसे सोन साक्द की अवैधानिक गतिविधियों की चचा की और मुझे बताया कि यह आदमी साहूकार नहीं, ठग है। उन्होंने मेरे सामने एक रिपोर्ट पेश की, जिसमें प्रमाणित किया गया था कि हमारे सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों के अनेक निर्देशकों ने सरकारी पूंजी और अपनी निजी राशियां राष्ट्रीय बैंक में रखने के बजाय सोन साक्द के निजी नोम पेन्ह बैंक में जमा कर रखी ह। जिन लोगों ने उस बैंक में खाते खोल रखे थे, उनमें तत्कालीन विधानसभा-सदस्य लोंग बोरेथ भी था, जो बाद में लौन नोल की सरकार में प्रधान-मंत्री बना।

राष्ट्रीय बैंक के गवर्नर बोले कि अधिकारियों न इसका कारण यह बताया है कि नोम पेन्ह बैंक राष्ट्रीय बैंककी अपेक्षा अधिक ब्याज देता है; लेकिन मुझे विश्वास है कि वह इस राशि को अपनी जेब में रख रहा है। इस प्रकार ब्याज का तो प्रश्न ही नहीं उठता। वह हमारी पूंजी भी हड़प जायेगा।

मैंने तुरंत आदेश दिया कि नोम पेन्ह बैंक के हिसाब-किताब की जांच की जाये और पूछताछ के लिए सोन साक्द को नजरबंद कर लिया जाये। जब अधिकारी जांच के लिए बैंक में पहुंचे, तो सोन साक्द बैंक की समस्त पूंजी लेकर भाग चुका था।

बैंक के कागजों से हमें मालूम हुआ कि सिरिक मटाक, लोंग बोरेथ, येम सैम्बोर तथा राष्ट्रीय महासभा के लगभग सभी दक्षिणपंथी सदस्यों के खाते उस बैंक में थे। जब मैंने राष्ट्रीय महासभा में यह प्रश्न उठाया, तो वहां अधिकांश सदस्यों ने इस बारे में दक्षिणपंथियों का साथ दिया। उन्हें डर था कि उनके भेद भी खुल सकते हैं, अतः उन्होंने संसदीय सुरक्षितता की ओट में सारे मामले पर चादर डाल दी।

जिन लोगों को इस बैंक से ऋण दिया गया था, उन्होंने एक भी किस्त की अदायगी नहीं की थी, न ऋण-पत्रों में लौटाने की व्यवस्था का ही उल्लेख था। लेकिन खैर हमने यह ऋण वसूल किया और उन लोगों पर कड़ी निगाह रखी, जिन्हें ये ऋण

दिये गये थे। हमने सोन साक्द के अनेक शानदार बंगले और अन्य संपत्ति जब्त कर ली। उससे हमारा काफी घाटा पूरा हो गया।

जांच पड़ताल से मालूम हुआ कि सोन साक्द सी. आइ. ए. का एजेन्ट था तथा सरकारी अधिकारियों पर पानी की तरह धन बहाकर उन्हें खरीद रहा था। इसी कारण वह हमारी पूंजी लेकर भाग सका। उसे सिरिक मटाक ने रात के समय नोम पेन्ह उड्डयन क्लब के विमान में सैगोन पहुंचाया, जहां से वह बैंकाक चला गया और सी. आइ. ए. द्वारा पोषित ख्मेर सेराई गेरिल्ला सेना के नायक और जापानी आक्रमण के समय उनकी ओर से नियुक्त भूतपूर्व प्रधान-मंत्री सोन गोक थान्ह के सहयोगी के रूप में काम करता रहा। हमने मुकद्दमा चलाकर उसे उसकी अनुपस्थिति में मृत्युदंड दिया था। लेकिन १९७० में मुझे अपदस्थ करने के बाद लोन नोल ने उसे माफ कर दिया और नोमपेन्ह आने की अनुमति दे दी।

इस घटना के बाद मैंने बैंकों के राष्ट्रीयकरण की नीति लागू की।

अमरीका हमारी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए हमें सहायता नहीं देता था, वरन उसकी दिलचस्पी हमारे देश को अपनी वस्तुओं की खपत के बाजार के रूप में इस्तेमाल करने और हमारे यहां पूंजीवाद का निर्माण करने में थी।

अमरीका हमारे यहां ज्यादातर ऐसे लोगों को व्यवसायी के रूप में पोषित करता था जो चीन से भागकर विदेशों में बस गये थे।

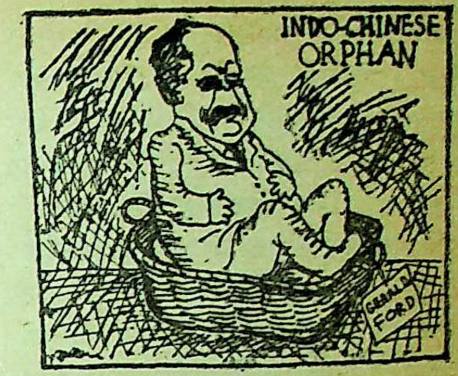

हिंदचीन का अनाथ

[वियतनाम के अनाथ बच्चों के नाम पर अमरीकी राष्ट्रपति फोर्ड ने जो वावेला मचाया उस पर अबू का व्यंग्यचित्र 'इंडियन एक्सप्रेस' में]

ऐसे ही एक आदमी को दियासलाई का एक कारखाना हमारे यहां खोलने के लिए डालर दिये गये। मैंने इसकी अनुमति दे दी; क्योंकि मैं आयात पर निर्भरता बंद करना चाहता था। दस्तावेजों में कहा गया था कि उसे एकदम नयी और आधुनिकतम मशीनें दी जायेंगी; लेकिन जब मशीनें आयीं, तो वे पुरानी और बेकार निकलीं। नतीजा यह हुआ कि व्यवसायी दीवाला निकलाकर एक ओर खड़ा हो गया और अमरीका ने हमारी सरकार से पूंजी वापस मांगी।

इस पर मैंने कहा कि जब ऋण की अदायगी की जिम्मेदारी सरकार पर है, तो मशीनरी का आयात उसकी ही मार्फत होगा। अमरीकी आर्थिक मिशन ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और साफ साफ कहा

कि अमरीका किसी भी सार्वजनिक अथवा सरकारी संस्था को डालर नहीं देगा। उसका प्रयोजन महज निजी उद्योगों को सहायता पहुंचाना है।

मुझे लगा कि इस प्रकार तो हमारे देश में अमरीका द्वारा पोषित पूंजीपतियों का एक वर्ग खड़ा हो जायेगा, जो उसके दलाल के रूप में हमारी राष्ट्रीय स्वाधीनता और एकता के लिए संकट बन जायेगा। यदि हम अपनी राष्ट्रीय प्रभुता पर ये सीमाएं सहन कर लेते हैं, तो हम स्वतंत्र कैसे रहेंगे?

हमने यह कोशिश की कि अमरीका हमें सड़कें और पुल बनाने के लिए सहायता दे; लेकिन जहां उन सड़कों व पुलों का लाभ राज्य-स्वामित्व वाले बागान और उद्योगों को मिलने की जरा भी संभावना होती, हम उस सहायता का उपयोग नहीं कर सकते थे।

इस सबसे ऊबकर मैंने १७ नवंबर १९६३ को राष्ट्रीय संमेलन का एक असाधारण अधिवेशन बुलाया और उसमें अमरीकी आर्थिक सहायता लेना बंद करने के प्रश्न पर विचार किया गया। राष्ट्रीय संमेलन ने विशाल बहुमत से मेरा यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया कि हम अमरीका से आर्थिक सहायता लेना बंद कर दें। संसार के अधिकांश देश यह सुनकर स्तंभित रह गये और वाशिंग्टन ने इसमें बहुत अपमान महसूस किया।

इससे हमें कठिनाइयां हुईं। मेरे आलोचकों ने भविष्यवाणी की कि हम आर्थिक संकट में फंस जायेंगे। प्रारंभिक वर्षों में इस सहायता का उपयोग कार, एयरकंडिशनर, रेफ्रिजरेटर आदि विलासिता की सामग्री का आयात करने के लिए हुआ था। बाद में मेरे आग्रह पर उसे सड़कों, पुलों, छोटी सिंचाई योजनाओं और ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों पर खर्च किया गया था। हमारे मंत्री और सरकारी अधिकारी उस राशि को अपने राजस्व का नियमित अंग मानने के अभ्यस्त हो गये थे।

डालर-सहायता का एक बड़ा दुष्परिणाम अनेक सामाजिक-राजनैतिक विकृतियों के रूप में हमारे सामने आया। राजनीतिज्ञों और सरकारी कर्मचारियों को रिश्वत का चस्का लग गया था। चारों ओर भ्रष्टाचार, षड्यंत्र, ईर्ष्या, आलोचना का वातावरण व्याप्त था। राष्ट्रीय महासभा के सदस्यों के बिकने का तमाशा तो मैं अपनी आंखों से देख चुका था। यद्यपि राष्ट्रीय संमेलन के जरिये मैं उस पर नियंत्रण लगाने में सफल हो गया था, तथापि डालर-सहायता ने हमारी समूची राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को पतित, भ्रष्ट और छिन्न-भिन्न कर डाला था।

इस भ्रष्टाचार और सी. आइ. ए. के धन की सत्ता का सबसे अधिक घिनौना रूप हमारे सामने १९६६ के चुनावों में आया। दक्षिणपंथियों ने मेरे विरुद्ध यह प्रचार जोरों से किया कि मैं लोकतंत्र का हत्यारा हूं और मैंने एकदलीय व्यवस्था स्थापित कर ली है। मैं इस प्रचार के दुष्चक्र में फंस गया और मैंने एकदम तटस्थ रहकर

दूर

राष्ट्रीय महासभा के चुनाव घोषित किये।

परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक सीट पर बीस से तीस उम्मीदवारों ने चुनाव लड़ा। चुनाव पर धन पानी की तरह बहने लगा। मतदाताओं को कपड़े-लत्ते, दवाइयां, मुफ्त सिनेमा-टिकट, उनके बच्चों के लिए खिलौने और मिठाइयां आदि बांटी जाने लगीं। चारों ओर दलालों का बोलबाला था और धन इस हाथ से उस हाथ घूम रहा था। यही पता न लगता था कि कौन किसके साथ है, रातों-रात लोग बिक रहे थे। यह सब सी. आइ. ए. के डालरों और देश के पूंजीपतियों व सामंतों का चमत्कार था।

इसी चुनाव में लोन नोल और सिरिक मटाक सत्ता में उभरकर आये। ये ही वे लोग थे, जिन्होंने सन १९६३ में अमरीकी सहायता लेना बंद करने पर मेरा घोर विरोध किया था और इन्होंने ही १९७० में मुझे अपदस्थ किया था। (आज लोन नोल कंबोडिया से भागकर अमरीका की संरक्षकता में है और राजकुमार सिंहनख पुनः कंबोडिया के राष्ट्राध्यक्ष बन गये हैं। —सं.)

वे लोग कितने भ्रष्ट हो गये, इसका प्रमाण मुझे १९७१ में जां क्लाड पोमोन्ती और सर्जी दियोन की पुस्तक 'दे कोतीसान्स आउ पातिसान्स' से मिला। उन्होंने लिखा है :

'अभी तक (सत्ता के अपहरण के पश्चात् —सं.) कृषि-उपज का व्यापार कुछ सीमा तक शेष है; किंतु उसका माध्यम खुला बाजार नहीं है। हांगकांग अथवा नोम पेन्ह के चीनी नस्ल के लोग उसे खरीदकर दक्षिण वियतनामी सेना के पहरे में सैगोन भेज देते हैं और इसके लिए उस सेना को कमीशन दिया जाता है। सैगोन में उनका एजेंट चावल, काली मिर्च और फल आदि स्थानीय बाजार में ऊंचे दाम पर बेच देते हैं। यह बिक्री वियतनामी मुद्रा में होती है तथा इसका लाभ डालरों में हांगकांग के बैंक-खातों में जमा करा दिया जाता है।

'कंबोडिया के सरकारी कोष को इस व्यापार से कुछ भी लाभ नहीं होता; किंतु सरकार के नेता इस अवैध व्यापार से जुड़े हैं। लोन नोल का पिट्ठू कुच आन्ह है, जो पहले लोन नोल की ओर से काले दामों पर उत्तरी वियतनाम को चावल बेचता था। सिरिक मटाक का पिट्ठू एन गाई कान्ह है, जो आयात-व्यापार भी करता है और जिसके चावल के कई कारखाने हैं तथा जो पहले साम्यवादी चीन की फिल्में दिखाने वाला सिनेमा चलाता था। कंबोडियाई राजनीतिज्ञ और सरकारी अफसर राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के लिए घुन बन गये हैं तथा विदेशियों के साथ उसकी लूट में लगे हैं।'

यह भ्रष्टाचार केवल आर्थिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं रहा, सैनिक क्षेत्रों में भी घुस गया। मुझे अपदस्थ करने के बाद अमरीका लोन नोल की सेना का पूरा खर्च उठाता था। लोन नोल ने इस स्थिति का व्यक्तिगत लाभ उठाना शुरू किया। इस बारे में मुझे सबसे पहले १३ दिसंबर १९७१ को युनाइटेड प्रेस इंटरनेशनल की एक रिपोर्ट से

जानकारी मिली। यह रिपोर्ट नोम पेन्ह से केबल द्वारा भेजी गयी थी। इसमें कहा गया था–'कंबोडिया की सेना में भ्रष्टाचार बड़ी आम चीज हो गयी है। कागजों पर बटालियन के सैनिकों की संख्या वास्तविक संख्या से कहीं अधिक दिखायी जाती है। कभी-कभी तो कागजों में ऐसी बटालियनों का उल्लेख रहता है, जिनका अस्तित्व ही नहीं होता। उनके अधिकारी झूठे बिल बनाकर वेतन प्राप्त कर लेते हैं और झूठे हस्ताक्षर बनाकर वेतन की रकम का बंटवारा कर लेते हैं। राजमार्ग –६ पर जब सेना की आवश्यकता पड़ी, तो जिन बटालियनों को बुलाया गया वे वहां नहीं पहुंचीं, तब उस रहस्य का भंडाफोड़ हुआ।' मगर जो लोग इसके लिए जिम्मेदार थे, उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गयी; क्योंकि इस तरह स्वयं लोन नोल ही अमरीका से झूठे बिलों के आधार पर डालर प्राप्त करके अपने निजी खातों में विदेशी बैंकों में धन का संग्रह कर रहा था।

इसके एक सप्ताह बाद ही यू. पी. आई. के संवाददाता किम विलेन्सन ने नोम पेन्ह से लिखा–'सबसे निकम्मी बात यह है कि सेना भ्रष्टाचार में लिप्त है। बटालियन कमांडर कागजी सैनिक भरती कर लेते हैं। १३ दिसंबर को लोन नोल ने सेना की वास्तविक स्थिति की जानकारी एकत्र की, तो मालूम हुआ कि १५,००० से अधिक सैनिकों की तीस बटालियनें सिर्फ कागज पर थीं।' इन बटालियनों को भंग कर दिया गया; क्योंकि अमरीकी सैनिक अधिकारियों के सामने रहस्य खुल गया था।

यह भ्रष्टाचार अमरीकी डालर के सा चिरकाल से जुड़ा हुआ है। जिस जमाने चीन में मार्शल च्यांग काई-शेक की क्वोमिन्तांग सरकार माओत्से-तुंग की साम्यवा सेनाओं से लोहा ले रही थी, उस समय इसी प्रकार कागजी सैनिक भरती करके अमरीकी सरकार से डालर ऐंठ लेती थी। यही रास्ता लोन नोल ने अपनाया।

इस भ्रष्टाचार का एक अन्य उदाहर है दक्षिण वियतनामी सेना। हमने अमरी हस्तक्षेप के विरुद्ध अपने मुक्ति-संघर्ष सबसे अधिक शस्त्रास्त्र सैगोन के अमरी पिट्ठुओं से खरीदे हैं। एक बार सैगोन उच्च सैनिक अधिकारी ने मेरे एक सैनि अधिकारी से कहा कि डालरों के बदले ह तुम्हें हेलिकाप्टरों के सिवा अन्य सभी सैनि सामग्री और शस्त्रास्त्र दे सकते हैं और कु समय बाद हेलिकाप्टर भी।

मैंने तो एक अंतरराष्ट्रीय संमेलन तृतीय विश्व के देशों को कंबोडिया के अनु-भव से नसीहत लेने की सलाह दी थी। लेकिन मुझे ऐसा लगा कि उनमें से अधिकां देश डालर के व्यसनी हो गये हैं और उसका लोभ अब नहीं छोड़ सकते। य कारण है कि तृतीय विश्व के अधिकांश दे अपने पांवों पर खड़े नहीं हो सके। डाल सहायता का प्रयोजन राष्ट्रों का मनोब क्षीण करना है। यह काम भ्रष्टाचार के द्वारा होता है।

★

नवनीत

दर्शन

एक बार की बात है। वृदावन में अपने आश्रम में पूज्य श्री हरिबाबाजी की अध्यक्षता में श्रीकृष्णलीला चल रही थी। स्वामी अखंडानंद सरस्वतीजी श्रीमद्‌भागवत के दशम स्कंध की कथा कर रहे थे। कथा के बाद स्वयं श्री बाबाजी बोलते थे। एक दिन प्रवचन-प्रसंग में श्री बाबा ने कहा :

हमने परम पूज्य श्री अच्युत मुनिजी महाराज से प्रार्थना की कि आप हमें भगवान का दर्शन करा दीजिये। मुनिजी कुछ देर चुप रहने के बाद आवेश में बोल उठे–'अरे हरि! तू आलसी बनना चाहता है? यदि आज हम तुझे भगवान का दर्शन करा दें, तो कल से तू क्या करेगा? कह कि कल से भगवद्-दर्शन के बाद अनन्य भाव से श्रीभगवान की भक्ति करूंगा। यदि कल से भगवान की अनन्य भक्ति तुझे करनी ही है, तो आज से ही ऐसा करना क्यों नहीं प्रारंभ कर देता? फिर तो किसी के रोकने पर भी भगवान रुक नहीं सकता; अवश्य वह तेरे पास आयेगा और तुझे दर्शन देगा।'

–स्वामी विद्यानंद गिरि

['श्री हरिकथा' त्रैमासिक से]

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

आस्कर वाइल्ड

परोपकारी

रात का समय था और प्रभु अकेले थे। उन्हें गोल परकोटे से घिरा एक नगर दूर से दिखाई दिया और वे उसकी ओर बढ़ चले।

जब वे उसके निकट पहुंचे, उन्हें उसके अंदर से आनंद-भरी पदचाप, सुख-भरी हंसी और अनेक बीनों की जोरदार ध्वनि सुनाई दी। उन्होंने फाटक पर दस्तक दी और द्वारपालों में से एक ने उनके लिए फाटक खोल दिया।

उन्होंने संगमरमर का एक भवन देखा, जिसके सामने संगमरमर के ही खंभे थे। खंभों से मालाएं झूल रही थीं और भवन के भीतर-बाहर देवदारु की मशालें जल रही थीं। वे भवन में प्रविष्ट हुए।

वे गोमेदक के बने कक्ष और सूर्यकांत मणि के कक्ष से होकर एक लंबे भोजन-कक्ष में पहुंचे। वहां उन्होंने मूंगे के पलंग पर एक युवक को लेटे देखा, जिसके बालों में गुलाबों की माला गुंथी हुई थीं और जिसके ओंठ मदिरा से लाल थे। उन्होंने जाकर पीछे से उसके कंधे को छुआ और उससे कहा-'तुम ऐसा जीवन क्यों जी रहे हो?'

युवक ने पीछे मुड़कर देखा और उन्हें पहचान लिया। उसने उत्तर दिया-'कभी मैं कोढ़ी था और आपने मुझे चंगा किया था। मैं और किस तरह जियूं?'

वे भवन में से निकलकर फिर सड़क पर आ गये।

थोड़ी देर बाद उन्होंने एक औरत को देखा, जिसका मुखड़ा और जिसका वेश रंगे हुए थे, और जिसके पैरों में मोतीजड़े जूते थे। उसके पीछे शिकारी की तरह धीरे-

चित्र : शें

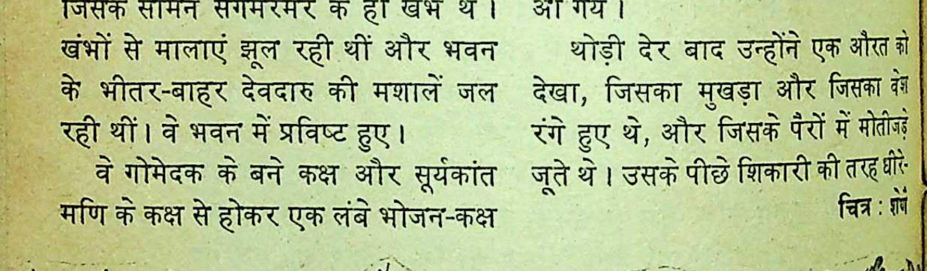

धीरे एक युवक चला आ रहा था, जिसने दुरंगा चोगा पहन रखा था। उस औरत का मुखड़ा किसी मूर्ति के मुखड़े की मानिंद सुंदर था और युवक की आंखें वासना से उद्दीप्त थीं।

तेजी से आगे बढ़कर उन्होंने युवक का हाथ छुआ और कहा–'तुम उस औरत को इस तरह क्यों देख रहे हो?'

युवक ने पीछे मुड़कर देखा और उन्हें पहचान लिया। वह बोला–'कभी मैं अंधा था और आपने मुझे आंखें दीं। मैं और किस चीज को देखूं?'

वे दौड़कर आगे बढ़े और उस औरत के रंगे हुए वस्त्रों को छुआ–'क्या पाप के मार्ग के बिना कोई और मार्ग नहीं है चलने के लिए?'

औरत ने पीछे मुड़कर देखा और उन्हें पहचाना। हंसकर बोली–'मगर आपने मेरे पाप क्षमा किये थे और यह मार्ग तो बड़ा मजेदार है।'

वे शहर में से बाहर निकल आये।

और जब वे शहर से बाहर निकल आये, उन्होंने एक युवक को सड़क के किनारे बैठकर रोते देखा।

वे उसके पास गये और उसकी लंबी अलकें छूकर बोले–'तुम रो क्यों रहे हो?'

युवक ने मुंह ऊपर उठाकर देखा और उन्हें पहचान लिया। बोला–'मैं मरा हुआ था और आपने मुझे फिर से जिलाया। मैं सिवा रोने के क्या करूं?'

★

मौन-साधना

तांदेई संप्रदाय के चार अनुयायी मौन का अभ्यास करने बैठे। चारों मित्र थे और उन्होंने सात दिन तक बिलकुल चुप रहने की प्रतिज्ञा आपस में की।

पहला दिन निःशब्द बीता। धीरे-धीरे रात उतरी और गहराती गयी। साथ ही दीपक की लौ क्षीण होती गयी और एक क्षण ऐसा आया कि वह बुझने को हो गयी। यह देख एक साधक अपने नौकर से बरबस बोल उठा–'दीये में तेल दो।'

उसे बोलते सुनकर दूसरे साधक को अचंभा हुआ; वह बोल पड़ा–'तुम भूल गये कि हमें एक भी शब्द मुंह से नहीं निकालना है।'

तीसरे ने दोनों को डांटा–'मूर्ख हो तुम दोनों ही! भला चखचख क्यों कर रहे हो, जब कि हम सब मौनव्रत पाल रहे हैं।'

तब चौथा बड़े आत्मसंतोष के साथ बोला–'अकेला मैं हूं, जो बोल नहीं रहा है।'

–'ज़ेन फ्लेश, ज़ेन बोन्स' से

★

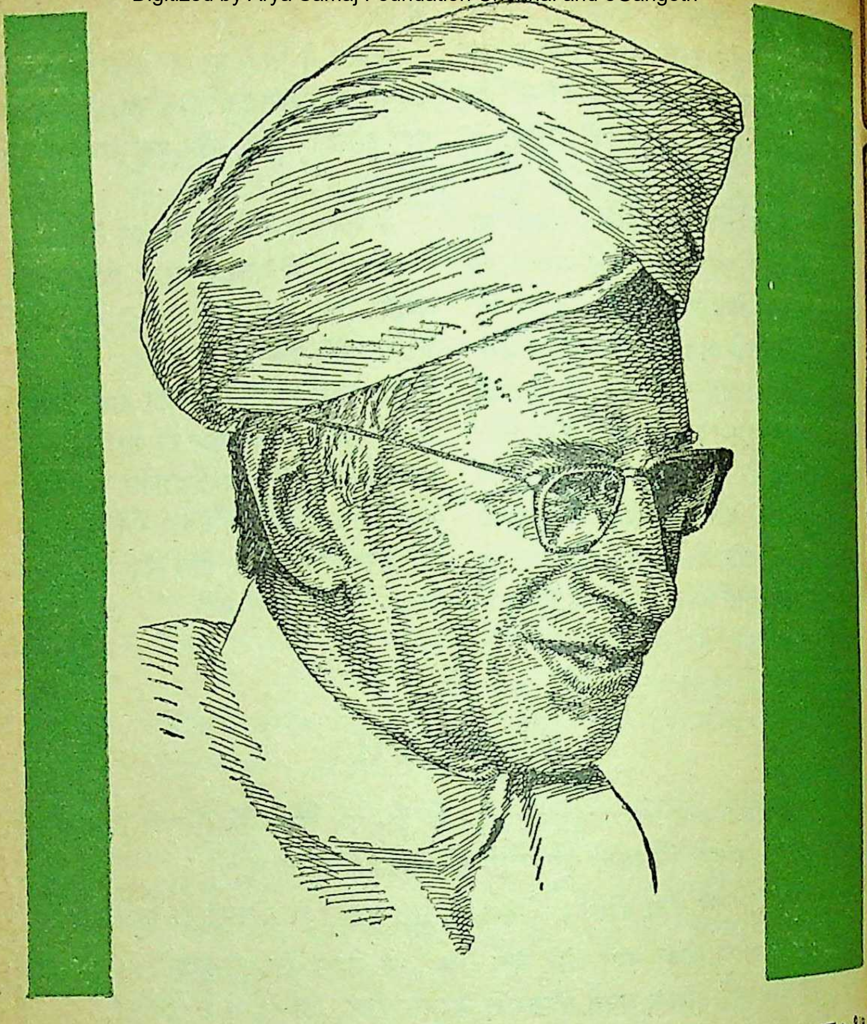

स्वर्गीय डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् (जन्म : ५ सितंबर १८८८; मृत्यु : १७ अप्रैल १९७५) भारत की आर्ष प्रज्ञा के प्रतीक और सुरभित प्रसून थे। भारत के युग-संचित चिंतन का मर्म अपनी उज्ज्वल वाणी और परिष्कृत लेखनी से आधुनिक बुद्धि को समझाने के साथ-साथ उन्होंने सिद्ध किया कि भारतीय मनीषा नये ज्ञान, नये अनुभव को नकारती नहीं है और दर्शन जीवन से जुड़ी हुई विकसमान वस्तु है। शिक्षक, संस्कृति-वाहक, राजनयिक और राष्ट्रपति के रूप में उनकी राष्ट्रसेवाएं कृतज्ञता से स्मरण की जायेंगी। नवनीत-परिवार की विनम्र श्रद्धांजलि।

प्रजातंत्र : आधार और आयाम

स्वर्गीय डा. एस. राधाकृष्णन्

हम अपने देश में प्रजातंत्रीय व्यवस्था विकसित करना चाहते हैं। प्रजातंत्र के विभिन्न पहलू हैं। वह एक राजनैतिक व्यवस्था है; एक आर्थिक 'एप्रोच' है; एक नैतिक जीवन-क्रम है।

प्रजातंत्र का मूल सिद्धांत है—मानव-व्यक्ति का गौरव और स्वातंत्र्य। सब धर्मों ने इस पर जोर दिया है; सब राजनैतिक व्यवस्थाओं ने इसे अंगीकार किया है। यहां तक कि मार्क्स ने भी ईश्वर को इसीलिए नकारा है कि उन्हें मनुष्य की अंतर्निहित दिव्यता में विश्वास था। महाभारत कहता है कि मनुष्य से ऊंचा कुछ नहीं—**न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्**। मनुष्य की स्वतंत्र चेतना मानव-इतिहास में समस्त प्रगति के लिए उत्तरदायी रही है। जो भी व्यवस्था व्यक्ति को विनष्ट करती है, वह अप्रजातंत्रीय है। हमें प्रत्येक व्यक्ति का उसके मानवत्व की खातिर, उसकी संभावनाओं की खातिर, संमान करना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति उच्चतम जीवन का संभावित उम्मीदवार है।

न्याय की प्रतिष्ठा

हमारे संविधान के प्राक्कथन में यह विधान किया गया है कि न्याय—सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय—हमारा प्रथम लक्ष्य है, जो कि हमें समस्त नागरिकों को प्राप्त कराना है। निःसंदेह स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व की परंपरागत शर्तों का भी उसमें उल्लेख है, परंतु प्रथम स्थान है न्याय का। आखिर राजनीति तो साधन है एक ध्येय की प्राप्ति का; उसका काम है ऐसी व्यवस्थाएं सोच निकालना, जिनसे सबको सामाजिक और आर्थिक न्याय मिले।

वह प्रजातंत्र प्रजातंत्र कहलाने योग्य नहीं, जिसकी तमाम कार्रवाइयां यहीं तक सीमित हैं कि निर्वाचित प्रतिनिधि चखचख करते और ओहदों के लिए छल-छंद करते रह सकें, और जो राज्य के लक्ष्यों को राम-भरोसे छोड़ देता है। हमें सामाजिक और आर्थिक क्रांति लानी है और काल ने जो वर्ष खा डाले हैं, उनकी कसर पूरी करनी है।

अवसर की समानता

हम अक्सर समाजवादी ढर्रे के समाज की बात करते हैं। इसका अर्थ व्यक्ति को जकड़ डालना नहीं है। मानव-विकास के नाटक के प्रमुख अभिनेता तो व्यक्ति ही हैं—प्रतिभावान व्यक्ति। विज्ञान और टेक्नोलाजी के प्रहार, और जीवन का यंत्रीकरण मानव-व्यक्तियों को कुचल डालें, उनका दर्जा घटा दें—यह हमें होने नहीं देना है।

समाजवाद का अर्थ समस्त व्यक्तियों की

योग्यता व क्षमता बराबर बनाना नहीं है। वैसा करना असंभव है। सब मनुष्य समान नहीं हैं। समाजवाद का अर्थ है सबको समान अवसर दिलाना। हम नहीं कहते कि सब मनुष्य समान हैं; परंतु हम यह अवश्य कहते हैं कि सब मनुष्यों को अपनी क्षमताओं की अभिव्यक्ति का समान अवसर दिया जाना चाहिये।

बड़ी संख्या में लोग कष्ट, गरीबी और रोगों से पीड़ित हैं। उनकी भौतिक स्थिति ने उन्हें दरिद्री बना रखा है, उनकी बौद्धिक और आत्मिक शक्तियों को बौना बना दिया है। दूसरी ओर ऐसे लोग हैं, जो लापरवाही, विलासिता और व्यसन का जीवन जी रहे हैं। सामाजिक कर्तव्यों की उपेक्षा वृद्धि को अवरुद्ध करती है, वह प्रजातंत्र की सच्ची स्पिरिट के प्रतिकूल पड़ती है।

यदि हमें राजनैतिक प्रजातंत्र को स्थायी रखना है, तो आर्थिक प्रजातंत्र की गति बढ़ानी होगी। विषमताएं कम करने के लिए हमें सदियों की मेहनत एक पीढ़ी में कर दिखानी होगी। समय बहुत थोड़ा है। धनिकों को निर्धनों की खातिर दायित्व स्वीकार करने होंगे।

सर्वसंमत राष्ट्रीय लक्ष्य

प्रजातंत्रीय सरकार के मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कई चीजें आवश्यक हैं। सर्वप्रथम, अनुशासनबद्ध पार्टी-व्यवस्था, जिसमें सब पार्टियां बुनियादी तौर पर एक लक्ष्य को मानती हों और उनका मतभेद केवल उस लक्ष्य तक पहुंचने के उपायों के संबंध में हो। प्रत्येक पार्टी का कार्यक्रम सामाजिक व आर्थिक समता लाने के संविधान-निर्दिष्ट आदेश के अनुरूप होना होगा। पार्टियों के कार्यक्रमों में केवल इस विषय में अंतर हो सकता है कि इसके लिए कौन-से तरीके अपनाये जायें, कौन-सा मार्ग चुना जाये, और प्रगति की रफ्तार क्या हो।

यदि लक्ष्यों के विषय में ही पार्टियों के बीच बुनियादी मतभेद होंगे, तो प्रजातंत्रीय प्रक्रिया चल नहीं पायेगी और संसदीय प्रणाली पर इतना जबर्दस्त बोझ पड़ेगा कि वह मजाक बनकर रह जायेगी।

समर्थ-सशक्त विपक्ष

पार्टी-प्रणाली पर आधारित सरकार की स्थिरता के लिए यह आवश्यक है कि सामान्यत: दो ही मुख्य पार्टियां हों। यदि एक ही पार्टी का वर्चस्व चलता रहेगा, तो वह पार्टी तमाम विरोध को वीटो करने में समर्थ हो जायेगी, वह उचित आलोचना के प्रति बधिर बन जायेगी। सत्ता विकृति लाती है; और जैसी पूर्ण विकृति प्रजातंत्रीय सत्ता लाती है, अन्य कोई चीज नहीं लाती। निरंकुश राजा तो सिर्फ राजा होता है; वह जनता नहीं होता। परंतु भारी बहुमत से जीतने वाली पार्टी द्वारा निर्मित जन-सरकार अपने को विरोधी मत की बंदिशों से स्वतंत्र मानने लगती है। पार्टी की विशालता और अधिकार-काल की अटूट दीर्घता अनुचित आत्मविश्वास, प्रमाद, आलोचना के प्रति उपेक्षाभाव, और प्राय: स्वयं पार्टी के भीतर पद व लाभ के लिए कलह उपजा देती है।

सत्ता का संचालन करने और अच्छा काम कर दिखाने में समर्थ सशक्त विपक्ष यदि मौजूद हो, तो ही ये चीजें रुकती हैं। यदि छोटे-छोटे दलों के जमघट के बजाय एक ही विरोधी पार्टी हो, तो वह सरकार और उसकी नीतियों के दोषों को उघाड़ने में जागरूक रहेगी।

प्रशासन-दक्ष कार्यकर्ता

हमारा प्रजातंत्र भावात्मक प्रजातंत्र है, कतिपय सामाजिक लक्ष्यों के प्रति वचनबद्ध। इसके लिए ज्ञान, दुनिया में चहुं ओर चल रही उद्योगतंत्रीय क्रांति का अध्ययन और इसकी खोज कि आधुनिक उपायों से न्यूनतम समय में समाज का विकास कैसे किया जाये, बहुत ही आवश्यक है। जो पार्टी अपने अनुयायियों को प्रशिक्षित करने तथा विभिन्न स्तरों पर प्रशासन-दक्ष कार्यकर्ताओं का समूह तैयार करने में लापरवाही बरतेगी, वह कभी सफल नहीं हो सकेगी।

सिविल सर्विस का समर्थ शासन-तंत्र के रूप में उपयोग तो करना ही चाहिये; मगर जरूरी है कि क्रिया का स्रोत और नियंत्रण पार्टी के हाथ में रहे। जात-पांत के आधार पर पदों का बंटवारा, पुरस्कार और लाभ की बदरबांट विश्वास की जड़ें ही काट देंगी। राजनीति को एक इज्जतदार पेशा होना चाहिये, जो देश की सर्वोत्तम प्रतिभाओं को आकृष्ट करे।

व्यक्ति और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

प्रजातंत्रीय प्रणाली में आधुनिक राज्य-सत्ता के असीम अधिकारों के मुकाबले नागरिक को कुछ प्रतिदान भी मिलना चाहिये। नागरिक सरकार का खिलौना या शिकार न बन जाये, इसके लिए उसे सरकार की आलोचना करने और उससे जवाब मांगने का अधिकार होना चाहिये। व्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए ही बुनियादी अधिकारों पर जोर दिया गया है। स्वतंत्र न्यायांग, सार्वजनिक सेवा आयोग और लेखा-निरीक्षण—ये सब वे साधन हैं, जिनसे कार्यांग का अधिकार मर्यादित और नियंत्रित होता है। हमें ऐसा कुछ नहीं करना

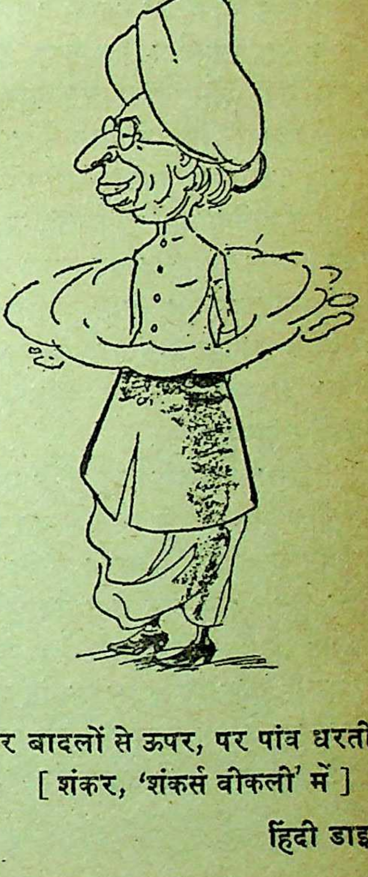

सिर बादलों से ऊपर, पर पांव धरती पर
[शंकर, 'शंकर्स वीकली' में]

चाहिये, जिससे इन संस्थाओं की इज्जत घटे।

प्रजातंत्र के सुचारु संचालन के लिए स्वतंत्र प्रेस बहुत ही जरूरी है। वाल्तेयर ने कहा था—'तुम जो कह रहे हो, वह मुझे नापसंद है; मगर उसे कहने के तुम्हारे अधिकार की हिमायत मैं मरते दम तक करूंगा।' कुल मिलाकर हमारा प्रेस न्यायपूर्ण और जिम्मेदार है।

देशभक्ति और सेवाभाव

सबसे बढ़कर, यह नितांत आवश्यक है कि देशभक्ति हमारी प्रेरक-शक्ति हो। नेतृत्व दिमाग और दिल दोनों का मामला है। सच्चा नेता वह है, जो समाज के दीन-दुखियों के साथ एकत्व अनुभव करता है। निःस्वार्थ सेवा और त्याग की भावना स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में देखने में आती थी; आज उतनी नहीं दिखाई देती। ऐसे समाज में कोई नेता नहीं हो सकता, जहां लोग सेवा करना नहीं जानते। प्रजातंत्र का अर्थ है सामूहिक प्रयत्न, निजी व्यक्तित्व का सामूहिक लक्ष्यसिद्धि के लिए नियमन, और मिल-जुलकर काम करने की शक्ति।

संयम और सहिष्णुता

इससे भी अधिक बुनियादी चीज एक और है—नैतिक रुख। प्रजातंत्र एक आस्था है। प्रजातंत्र का तकाजा है कि अपनी समस्याओं के सुलझाव में हम मान-मनौवल, संयम और सहमति का सहारा लें। क्या आपको लगता है कि हमने, इस सिद्धांत को हृदयंगम किया है कि स्वतंत्रता का अर्थ संयम है? जहां कहीं कोई झगड़ा होता है, हम सीधी कारवाई पर उतर आते हैं।

प्रजातंत्र के नैतिक पक्ष पर बल देने का अर्थ है कि हम यह मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य में बुद्धिवादी अंश है और उस तत्त्व को अपील करना संभव है। हमें मानना चाहिये कि हम शायद हमेशा सही नहीं होते, कई बार शायद हमारे प्रतिपक्षी सही होते हैं। हममें यह मानने का विनय होना चाहिये कि हमारे विरोधियों में भी कुछ गुण हैं। प्रजातंत्र हम पर यह विनय और यह संयम लागू करता है।

विसहमति राजद्रोह नहीं है; और विरोध विद्रोह नहीं है। हमें अपनी समस्याएं तर्क द्वारा, कटुता के बिना सुलझाने की कोशिश करनी चाहिये। प्रजातंत्र और हिंसात्मक कारवाई परस्पर बेमेल चीजें हैं।

नेतावर्ग की जिम्मेदारी

प्रजातंत्र का मर्म किसी संविधान या प्रणाली में निहित नहीं है, अपितु उसका मर्म पर्याप्त अनुशासित स्वशासित समाज में निहित है। उसकी सफलता के लिए अनुशासनबद्ध नेतृत्व आवश्यक है। प्रशासन साफ-सुथरा और पक्षपात-रहित होना ही चाहिये। निजी संबंधों में नेता भले ही फूल से मुलायम हों, परंतु सार्वजनिक मामलों में उन्हें पत्थर से भी कठोर होना चाहियें। भ्रष्टाचार और कुनबापरस्ती क्षमा नहीं की जा सकती।

सब बातचीत में सहिष्णुता और सद्भावना रहनी चाहिये। दूसरों के गलत

[शेष पृष्ठ ५० पर]

पेट्रोल में आत्मनिर्भरता

सन १९७३ में जब अरब देशों ने पेट्रोल को हथियार के रूप में काम में लेना शुरू किया, तो इस हथियार की मार की चोट सारे विश्व में अनुभव की गयी। बात की बात में अमरीका जैसे समृद्ध देश का ऊर्जा-संतुलन डगमगा गया, यूरोप के अनेक देशों का सामान्य जीवन अस्त-व्यस्त हो गए, जापान की अर्थव्यवस्था चरमराने लगी। और भारत? अरब देशों की नीयत से जब पेट्रोल की कीमत आकाश छूने लगी तो महंगाई के बोझ से दबी भारतीय अर्थ-व्यवस्था की तो कमर ही टूट गयी थी। परिवहन १०० प्रतिशत महंगा हो गया और फिर तो हर चीज का महंगा होना स्वाभाविक ही था।

यह मात्र संयोग ही है कि एक ओर जहां यह सब कुछ हो रहा था, तो दूसरी ओर भारत अपने समुद्र के गर्भ में छिपे पेट्रोल को बाहर निकालने की योजना के अंतिम चरण में प्रवेश कर रहा था। बंबई से ११५ मील उत्तर-पश्चिम में 'सागर-सम्राट' 'बंबई हाई' का नीला जल मथ रहा था।

बंबई हाई पर ड्रिलिंग करता हुआ
सागर-सम्राट

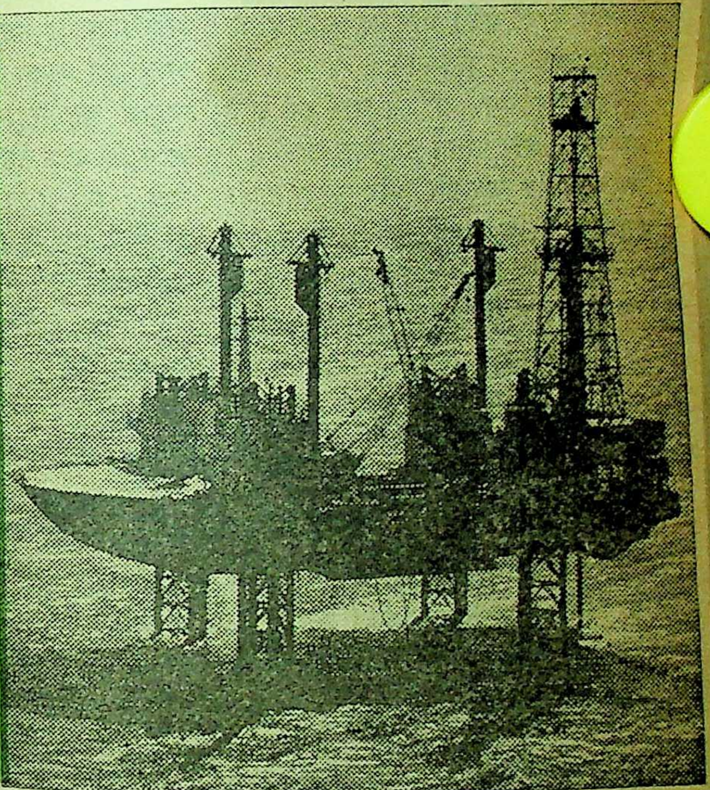

कहते हैं, सागर-मंथन के बाद अमृत निकला था, 'बंबई हाई' के मंथन ने पेट्रोल दिया।

१९ फरवरी १९७४ को सारे देश में इस समाचार से उल्लास की लहर दौड़ गयी कि बंबई हाई से तेल निकलने लगा है। समुद्र की पेंदी में ९६२ मीटर की गहराई से जब उफनकर तेल बाहर निकला था, तो सागर-सम्राट पर काम कर रहे विशेषज्ञ खुशी में एक-दूसरे से लिपट गये थे। तेल की इस उफान की दर थी–७० टन प्रतिदिन। इसके साथ ही ४१,९९० घन मीटर प्रतिदिन की दर से गैस भी निकली। बंबई हाई में मिला यह तेल उच्च श्रेणी का है–इसमें गंधक की मात्रा कम है (१ प्रतिशत से भी कम) और यह काफी हल्का है (घनत्व ०.८ प्रतिशत)।

अब तक बंबई हाई में चार कुएं खोदे जा चुके हैं और पांचवें पर काम जारी है। विशेषज्ञों का अनुमान और राजनेताओं का दावा है कि बंबई हाई में मिले इस तेल के कारण १९८० तक भारत तेल के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो जायेगा। इस समय देश की तेल की आवश्यकता २ करोड़ टन है। १९८० तक यह मांग ३ करोड़ २० लाख टन हो जायेगी। बंबई हाई और असम के तेलभंडारों से एक–एक करोड़ टन तेल निकलने से इस आवश्यकता की पूर्ति हो सकेगी–शेष तेल अन्य स्रोतों से मिल जायेगा। पर यह शायद आशावादिता ही है, क्योंकि इस सबके बाद भी लगभग ८० लाख टन की कमी रहेगी।

नवीनतम परीक्षणों से यह ज्ञान हो गया है कि बंबई हाई में इतना तेल-भंडार है कि बीस वर्ष तक प्रति वर्ष एक करोड़ टन तेल निकाला जा सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बंबई हाई में १०० तेल कूप खोदने पड़ेंगे और यह काम कम व्यय-साध्य नहीं। बंबई हाई को विकसित करने के लिए ५०० करोड़ रुपये की आवश्यकता पड़ेगी। पर सुखद भविष्य की आशाओं के लिए यह कीमत कोई अधिक नहीं है।

तेल की खोज तो एक जूआ है। सागर-सम्राट भी एक जूआ था और यह बाजी जीती जा चुकी है। १५ करोड़ रुपये की लागत का सागर-सम्राट जब जापान से भारत लाया गया था, तो तरह-तरह की आशंकाएं व्यक्त की गयी थीं। पहले तो यह जहाज छह महीने विलंब से आया और आने के बाद तीन महीने तक बेकार पड़ा रहा। इस अरसे में १५ लाख रुपये व्यर्थ ही खर्च हुए थे। इस संदर्भ में जो शंकाएं उठ खड़ी हुई थीं, वे निराधार भी नहीं थीं। पर अंतिम सफलता सारी कमियों को ढंक लेती है।

बंबई हाई का २,००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र चूने के पत्थर के संस्तरों का बना है। चूने के पत्थर के संस्तरों से तेल निकलने का यह पहला ही उदाहरण है। यह तथ्य काफी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि ईरान तथा कुवैत के अतिरिक्त पश्चिम एशिया, मेक्सिको की खाड़ी, पश्चिमी कनाडा, लीबिया और कुछ साइबेरियाई क्षेत्रों में भी चूने

के पत्थर के संस्तर ही हैं—और उनके नीचे ही विश्व का ६० प्रतिशत तेल है !

बंबई हाई की एक विशेषता और भी है—यहां के समुद्र की पेंदी में पानी का तीव्र दाब है। वैज्ञानिक शब्दावली में इसे 'वाटर ड्राइव' कहते हैं और इसका लाभ यह है कि इससे तेल आसानी से ऊपर फेंका जा सकता है। तेल ऊपर फेंकने का दूसरा तरीका 'गस ड्राइव' का होता है, जिसमें अपेक्षित दवाव को बनाये रखने के लिए गैस को फिर से कूप में भेजना पड़ता है। अर्थात् बाहरी उपयोग के लिए यह गैस काम में नहीं आ सकती। बंबई हाई की इस गैस को भी उपयोग में लाया जा सकेगा। साथ ही तेल-कूपों के परीक्षणों से यह भी ज्ञात हुआ है कि 'बंबई हाई' की चूने के पत्थरों की संरचना सछिद्र है, अर्थात् इस संरचना में तेल तेजी से बहता है। अतः अधिक कूप खोदने की आवश्यकता नहीं, एक ही कूप से काफी बड़े क्षेत्र के तेल को बाहर निकाला जा सकता है।

बंबई हाई में तेल-प्राप्ति तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग (ओ. एन. जी. सी.) की एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण सफलता अवश्य है; परंतु इससे पूर्व आयोग को इतनी असफलताओं का सामना करना पड़ा था, जो उसे निराश करने के लिए पर्याप्त हो सकता था। पिछले १८-१९ वर्ष के अपने कार्यकाल में आयोग ने २६ तेल क्षेत्रों की खोज की (इनमें से ५ असम में हैं और २१ गुजरात में) और १,०५० कूप खुदवाये। १९७५ परंतु तेल उत्पादन की दृष्टि से परिणाम बहुत अच्छा नहीं रहा—केवल ४० लाख टन प्रतिवर्ष।

जैसा हम पहले कह आये हैं, तेल की खोज एक बहुत बड़ा जूआ है। उसमें सिर्फ यह पता लगाने में ही कि अमुक क्षेत्र में तेल नहीं है, लंबी-चौड़ी रकम खर्च हो जाती है। (सागर में तेल की खोज में ३,००० से ८,००० डालर प्रति बैरल की दर से खर्च होता है।) यह एक सुखद संयोग ही था कि १९६० में अंकलेश्वर में खोदे गये पहले ही कूप में तेल मिल गया। (तेल और प्राकृतिक गैस आयोग ने समुद्र में पहला कूप १९७० में खोदा था—एलिया बेट में। यहां भी भाग्य ने साथ दिया, तेल निकला, पर वह व्यापारिक उपयोग का नहीं था।) अंकलेश्वर के बाद गुजरात के अन्य स्थानों पर भी सफलता मिली। कलोल, कोसम्बा, कथाना, ढोलका, अहमदाबाद और मेहसाणा में तेल की खोज ने कार्य-क्षेत्र को विस्तार दिया। असम में भी रुद्रसागर और लकवा के तेल-क्षेत्रों ने भविष्य की आशाएं बंधायीं।

परंतु आयोग की असफलताओं की शृंखला भी काफी लंबी है। पंजाब और हिमाचल प्रदेश के सारे सर्वेक्षण-प्रयास व्यर्थ गये; गंगा की घाटी में भी सब कूप सूखे निकले। पर जूआ तो ऐसे ही खेला जाता है। एक बड़ी बाजी पिछली सारी बाजियों का घाटा पूरा कर सकती है। बंबई हाई शायद ऐसी ही बाजी है।

बंबई हाई की कहानी १९६४ से शुरू

होती है। तेल और प्राकृतिक गैस आयोग और रूस के 'टेक्नो एक्सपोर्ट' के संयुक्त प्रयास से १९६४ में ही यह पता चल गया था कि भारत के तटीय समुद्र में तेल की पर्याप्त संभावना है। विशेषज्ञों ने तब अनुमान लगाया था कि पश्चिम बंगाल, मद्रास, केरल, महाराष्ट्र और गुजरात के तटीय समुद्र में १ लाख २४ हजार वर्ग-मील क्षेत्रफल में तेल के भंडार फैले होने की संभावना है। लेकिन आयोग का बजट शायद इतना बड़ा नहीं था कि वह समुद्र में तेल की खोज के अत्यंत व्ययसाध्य और खतरनाक काम को हाथ में ले पाता। लगभग दस साल बाद अंततः यह काम हाथ में लिया गया। भाग्य भारत के साथ था। तेल निकल आया।

जहां तक तेल के उत्पादन का प्रश्न है, १९६३ से लेकर १९७३ तक गाड़ी अटकी रही। १९५६ में भारत के पास तेल का एक ही स्रोत था असम—और वहां से मात्र ५ लाख टन कच्चा तेल निकलता था। १९६३ तक आते-आते असम और गुजरात के तेल के स्रोतों से ६५ लाख टन तेल प्रतिवर्ष निकलने लगा और फिर दस वर्ष तक तेल निकलने की यही दर बनी रही १९७३ में भी हमारा तेल-उत्पादन ६५ लाख टन ही था। पर तेल की आवश्यकता इससे कहीं अधिक थी। फलस्वरूप हमें प्रतिवर्ष डेढ़ करोड़ टन तेल का आयात करना पड़ता था। १९७० में हम तेल के आयात पर १०० करोड़ रुपये खर्च करते थे। १९७३ में अरब देशों ने तेल के दाम बढ़ाकर लगभग चौगुने कर दिये—हमारा तेल का आयात-बिल ४०० करोड़ रुपये हो गया। १९७४ में १,१४० करोड़ रुपये।

तेल के आयात की इस आवश्यकता ने हमारी अर्थ-व्यवस्था को बुरी तरह से झकझोर दिया था। यों अरब देशों से हमारे संबंध बुरे नहीं। उन्होंने हमारी आवश्यकता के अनुसार तेल देने से कभी इन्कार भी नहीं किया। पर आवश्यक तेल खरीदने का अर्थ है, विकास की अधिकांश योजनाओं में कटौती। लेकिन जिस विकासशील देश की आधी से अधिक आबादी गरीबी की सीमा-रेखा से भी निचले स्तर का जीवन जी रही हो, वह विकास-योजनाओं में आखिर कैसी, और कितनी कटौती कर सकता है? विदेशी मुद्रा के रूप में हम जितना कमाते हैं, उसका ४० प्रतिशत से अधिक तेल पर खर्च हो जाता है। अतः अस्तित्व की रक्षा के लिए जरूरी हो गया था कि हम अपने साधन-स्रोतों को टटोलें। पर इस काम में इतना विलंब क्यों हुआ?

इस प्रश्न का जो उत्तर तेल और प्राकृतिक गैस आयोग के अध्यक्ष श्री एन. बी. प्रसाद ने दिया है, वह निराशाजनक चित्र ही उपस्थित करता है। उनके अनुसार, आयोग के साधन सीमित हैं, उसके पास उपकरण कम हैं। स्थल पर तेल की खोज के लिए उसके पास ३७ ड्रिलिंग रिग हैं, जिनमें से ३२ तो बारह वर्ष से भी पुराने

[शेष पृष्ठ ५० पर]

पोर्ट्रेट :
बी. एन. ओके

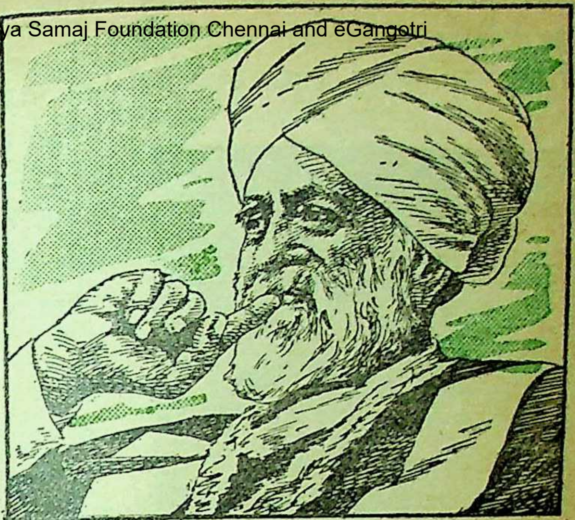

डा. सीताराम सहगल

एक वृद्धश्रवा भाषाविज्ञानी

भाषाविज्ञान के क्षेत्र में भारतवर्ष का स्थान बहुत ऊंचा है। पाणिनि, कात्यायन तथा पतंजलि को मुनित्रय कहकर उनकी वंदना की गयी है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में शाकटायन, गार्ग्य, शाकल्य आदि अनेक व्याकरणाचार्यों का सादर नामोल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि भाषाशास्त्र का अध्ययन सदियों से हमारे देश में निर्विघ्न और अखंडित चला आ रहा है।

डा. सिद्धेश्वर वर्मा उसी महान आर्ष परंपरा में एक असाधारण भाषाविज्ञानी आचार्य हैं, जिनका भारत के ही नहीं, अपितु सारे विश्व के भाषाविज्ञानियों में संमानित स्थान है। उन्होंने देश की ५६ भाषाओं व उपभाषाओं एवं पांच भाषाओं के साहित्य का शास्त्रीय अध्ययन किया है और ४५ वर्षों तक ऋग्वेद का, १० वर्षों तक गालिब का और २५ वर्षों तक तमिल भाषा का मनन और शोधकार्य अद्वितीय तत्परता से किया है।

डा. ग्रियर्सन के सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण' का लघु संस्करण हाल में उन्होंने तैयार किया है। इसका प्रकाशन पंजाब विश्वविद्यालय ने किया है। (उस विश्वविद्यालय में शोधग्रंथों के प्रकाशन की परंपरा स्वर्गीय डा. लक्ष्मण स्वरूप की देन है।) डा. वर्मा का ग्रियर्सन से कई जगह मतभेद भी है। ग्रियर्सन डोगरी को पंजाबी की पुत्री मानते थे। किंतु डा. वर्मा उसे सरहद्दी भाषाओं में उपभाषा गिनते

हैं, जो एक स्वतंत्र बोली है और जिसमें सहज सुबोधता है। इस प्रकार वह पंजाबी की पुत्री नहीं, अपितु उसकी बहन है।

युक्ताहारविहार......भुक्तस्वप्नावबोध

डोगरी में हिंदी 'था' के लिए 'था', 'सां', और 'हा' ये तीन रूप हैं, जो पंजाबी में नहीं पाये जाते, इसलिए डोगरी को स्वतंत्र मानना उचित है–ऐसी उनकी मान्यता है।

डा. वर्मा ने अपने जीवन का अधिक हिस्सा जम्मू में यापन किया है, जहां वे प्रिंस ऑफ़ वेल्स कालेज में संस्कृत के प्राध्यापक थे। उन्होंने बोलियों की खोज में हिमालय की कई यात्राएं कीं, जिनमें उन्हें २१ उपभाषाओं की उपलब्धि हुई। जब उन्होंने कश्मीर की घाटी में तमिल की एक बोली खोज निकाली, नार्वे के विश्वविख्यात भाषाविज्ञानी मार्गेन्स्टीअरने मुग्ध हो उठे। वर्माजी ने उत्तर-पश्चिम बोलियों के कोश की रचना करके तुलनात्मक अध्ययन में जबर्दस्त कार्य किया है; मगर दुर्भाग्यवश यह ग्रंथ वर्षों से अप्रकाशित पड़ा है।

उनका पाणिनि, चरक तथा भरतमुनि का अध्ययन भाषाविज्ञान की दृष्टि से ऐतिहासिक कार्य है। चरक की वैज्ञानिक पदावली पर उन्होंने कई शोधपूर्ण निबंध लिखे हैं। 'चरक में कुछ पौधों का अध्ययन' उनकी हाल की कृति है। वे चरक को विज्ञान का, पाणिनि को भाषा का तथा भरत को कला का आचार्य मानते हैं। इन तीनों आचार्यों पर उनकी रचनाएं शोधपत्रिकाओं में छपती हैं, जिन्हें संबंधित विषयों के विद्वान बड़े मनोयोग से पढ़ते हैं।

वे उर्दू भाषा के मर्मज्ञ लेखक और सुलझे हुए वक्ता हैं। उन्होंने गालिब की भाषा के संबंध में तीन निबंध लिखे हैं, जो केंद्रीय

हिंदी निदेशालय, दिल्ली की त्रैमासिकी 'भाषा' में छपे हैं। स्वतंत्रता पूर्व उन्होंने हैदराबाद सरकार के उर्दू विश्वकोश का संपादन किया था। इसमें उन्होंने चालीस निबंध स्वयं लिखे थे, जिनमें से एक 'आर्या-इ-ज़बाने' उस्मानिया विश्वविद्यालय के उर्दू एम. ए. पाठ्यक्रम में निर्धारित है। विशेष उल्लेखनीय यह है कि इस श्रमसाध्य कार्य के लिए उन्होंने किसी भी प्रकार का पारिश्रमिक नहीं लिया। आजकल वे तमिल-साहित्य के गौरव-ग्रंथ 'शिलप्प-धिकारम्' का उर्दू में अनुवाद कर रहे हैं।

डा. वर्मा ने दस वर्ष तक भारत सरकार के केंद्रीय हिंदी निदेशालय का निदेशन किया और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली के निर्माण के मौलिक सिद्धांत स्थिर किये। उन्हीं के प्रदर्शित मार्ग पर चलकर भाषा आयोग के विद्वानों ने हाल में नये शब्दों की पांच जिल्दें तैयार की हैं।

उनका संबंध देश की अनेक शोध-संस्थाओं से है, जिनका मार्गदर्शन वे अपूर्व लगन से तथा विना किसी पारिश्रमिक के करते हैं। इनमें होशियारपुर के विश्वेश्वरानंद वैदिक शोध संस्थान तथा पूना के डेक्कन कालेज शोध-संस्थान उल्लेखनीय हैं।

वैदिक संस्थान से उनका संबंध १९३० से है और उसके वे आदरी सलाहकार हैं। महर्षि दयानंद ने पंजाब को जो वेदघोष दिया, उसे ठोस बौद्धिक आधार पर प्रतिष्ठित करने का कार्य इस संस्थान ने किया है। सायणाचार्य ने चौदहवीं सदी में विजयनगर साम्राज्य के प्रधान मंत्री के पद पर आसीन होकर सब वेदों के भाष्य तैयार करवाये थे। वैदिक वाङ्मय के पुनरुद्धार का वैसा ही महत्त्वपूर्ण कार्य विश्वेश्वरानंद वैदिक संस्थान ने स्वर्गीय आचार्य विश्वबंधुजी के नेतृत्व में किया है।

इस क्षेत्र में संस्थान की सबसे बड़ी देन है 'वैदिक पदानुक्रम कोष', जिसकी १६ जिल्दों के ११,००० पृष्ठों में २,५०,००० वैदिक शब्दों का विवेचन किया गया है। वैदिक वाङ्मय के किसी पद पर विश्व के किसी भी विद्वान ने जिस किसी भाषा में शोधात्मक निबंध व ग्रंथ लिखे हैं, उनका सारांश संस्कृत में दिया गया है। जो लोग संस्कृत को मृत भाषा कहकर उसका उपहास करते हैं, उन्हें यह ऐतिहासिक कार्य मुंहतोड़ उत्तर है। इन जिल्दों में यूरोपीय विद्वानों के वैदिक वाङ्मय संबंधी लेखन का जो सार है, वह वर्माजी की देन है।

डेक्कन कालेज, पूना में ऐतिहासिक सिद्धांतों पर आधारित संस्कृत शब्दकोष के निर्माण का कार्य वर्षों से चल रहा है। डा. वर्मा ने इसमें परामर्शदाता के रूप में सेवा की है। सच तो यह है कि देश के किसी भी कोने से जब भी कोई विद्या-संबंधी मांग आती है, वर्माजी उसका समाधान बड़ी तत्परता से करते हैं।

इस ऋषिकल्प भाषाविज्ञानी का जन्म ३ नवंबर १८८७ को रावलपिंडी में हुआ। (इनके पूर्वज मूलतः झेहलमा स्थित खटास-सराज तीर्थ के पास तत्राल नामक गांव

के निवासी थे। (रामायण काल में यह प्रदेश केकय कहलाता था और महाराज दशरथ की पत्नी कैकयी तथा यम के कब्जे से अपने पति को छुड़ा लाने वाली सावित्री यहीं की राजकुमारियां थीं।) इनका मूल नाम पिंडीदास था। पिता श्री रामदास नंदा लोकनिर्माण विभाग में ठेकेदार थे। वे ८० वर्ष की अवस्था में भी कठोर श्रम से मुंह नहीं मोड़ते थे। शारीरिक संपत्ति के लिए डा. वर्मा अपने पिता के ऋणी हैं। करुणा आदि दैवी संपत् उन्हें अपनी मा से प्राप्त हुई। बाल्यावस्था में वे माता के साथ 'कथा' सुनने जाते थे, वहां सुनी हुई उदात्त चरित-चर्चाओं का उनके मस्तिष्क पर स्थायी प्रभाव पड़ा।

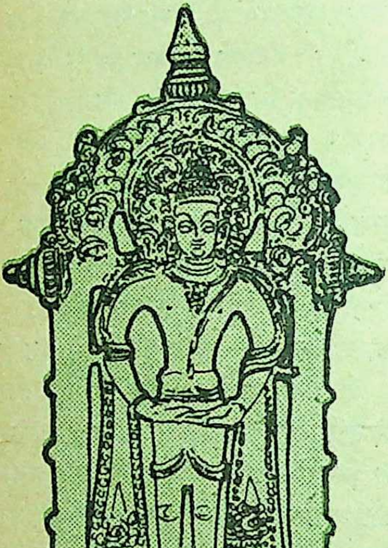

राजा–कांस्यमूर्ति (१४ वीं सदी, कुल्लू)

छोटी कक्षाओं में वे उर्दू भाषा पढ़ते रहे; परंतु घर में हिंदी और गुरुमुखी का अध्ययन भी कर लिया था। सन १९० में उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से मैट्रि परीक्षा पास की। उन दिनों पंजाब में मलेरिया का भारी प्रकोप हुआ, जिसके वे दो-तीन वर्षों तक शिकार रहे। परंतु यह बीमारी उनके जीवन में वरदान सिद्ध हुई। वरदराज-कृत 'लघुकौमुदी' का डा. वैले-न्टाईन का किया अंग्रेजी अनुवाद इन्हीं दिनों उनके हाथ में पड़ा। इसे पढ़कर वे शब्द-निर्माण की कला की ओर आकृष्ट हुए। फिर 'सिद्धांतकौमुदी' का मेजर वामनदास वसु कृत अंग्रेजी अनुवाद भी पढ़ा। १९०९ में बी. ए. तथा १९११ में एम. ए. (इतिहास) की परीक्षाओं में सफल हुए।

उन दिनों पंजाब में वैदिक पुनरुज्जीवन का आंदोलन बड़े जोरों से चल रहा था। संस्कृत सीखने के लिए लोगों में उत्साह था। उन्होंने पंजाब की शास्त्री परीक्षा दी और उसमें उत्तीर्ण हुए। तभी से वे पिंडीदास से 'सिद्धेश्वर' हुए।

कुछ समय वे हिंदू हाई स्कूल, गुजरांवाला में हेडमास्टर रहे। फिर १९१५ में जम्मू कालेज में संस्कृत के अध्यापक नियुक्त हुए और १९४३ तक २८ वर्ष वहां अध्या-

पन-कार्य करते रहे । जम्मू-कश्मीर राज्य के शिक्षा-विभाग ने कई बार उन्हें प्रिंसिपल बनाने की तत्परता प्रकट की, परंतु उन्होंने हमेशा इन्कार किया; क्योंकि वे अपना सारा समय पठन-पाठन को ही देना चाहते थे । वस्तुतः उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षण को प्रभु का प्रसाद समझकर उसका विनियोग ज्ञान के अर्जन एवं वितरण में किया है । पिछले दो वर्षों में उन्होंने संभोट भाषा का अध्ययन किया है।

डा. वर्मा गीता में वर्णित युक्ताहार-विहार के सटीक उदाहरण हैं। मितभाषण उनका स्वभाव है । अभी दो वर्ष पहले तक वे लोगों से पत्रव्यवहार स्वयं करते थे। सायंकाल ७ बजे से मौन धारण कर लेते हैं, जो प्रातः ७ बजे तक जारी रहता है। रात को ८ बजे शयन और प्रातः ५ बजे जागरण। फिर सारे दिन ज्ञानतप।

वर्माजी की सारस्वत सेवाओं का संमान करते हुए स्वातंत्र्य पूर्व जम्मू-कश्मीर की सरकार ने उन्हें 'खिलाल' अलंकरण दिया था । १९५७ में भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मभूषण' पदक से विभूषित किया और १९६७ में संस्कृत के अद्वितीय विद्वान के रूप में संमानित किया । १९५० में आचार्य विश्वबंधु शास्त्री ने उनके संमान में एक अभिनंदन-ग्रंथ (दो जिल्दें) संपादित किया। मूलतः यह ग्रंथ उन्हें उनकी षष्टि-पूर्ति पर १९४८ में समर्पित किया जाना था। परंतु देश-विभाजन के समय इसकी सारी मुद्रित सामग्री नष्ट हो गयी और इसे पुनर्मुद्रित किया गया। १९६० में पंजाब के विद्वान राज्यपाल श्री नरहरि विष्णु गाडगीळ वर्माजी से मिलने के लिए उनके घर पर पधारे। १९६७ में पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला ने उनके घर पर उन्हें डी. लिट्. की पदवी प्रदान करके अपने को आदृत किया। इसी तरह पूना के डेक्कन कालेज में विश्व के तीन महान भाषाविज्ञानियों के साथ उनका चित्र टांगा गया है।

३ नवबंर १९७४ को वर्माजी के ८८ वें जन्म - दिवस पर उनका शिष्य-वृंद उनके घर पर एकत्र हुआ। इस अभिनंदन-गोष्ठी में शास्त्रीय चर्चा ही हुई, 'भूरि-भूरि प्रशंसा' का कोई स्वर न था। वहां इन पंक्तियों के लेखक ने वर्माजी से पूछ लिया कि आप प्रतिदिन बारह घंटे कैसे कार्यरत रहते हैं और आपकी मूल प्रेरणाएं क्या हैं ? बड़े सहज भाव से वे बोले – 'मेरे जीवन पर प्राचीन ऋषियों की अनन्य साधना का प्रभाव है और गीता का मुझ पर अपूर्व उपकार है । विविध भाषाओं के काव्यों ने मेरे जीवन को सुरभित कर दिया है। इनमें कालिदास, गालिब और गेटे तो मेरे प्रिय कवि हैं।'

किसी ने पूछा कि आप ईश्वर-वंदना कब करते हैं ? इस पर उन्होंने अपने प्रिय उर्दू कवि का मशहूर शेर पढ़ा :

मेरा हर नफ़स इक सज्दा है जाहिद ।
मेरी ज़िंदगी ही मेरी बंदगी है।।

—डब्ल्यू, ४३, राजौरी गार्डन,
नयी दिल्ली—२७

* * *

[पृष्ठ ४४ का शेष]

हो चुके हैं। समुद्र में खुदाई के लिए आज विश्व में कुल मिलाकर ४०० ड्रिलिंग हैं, जिनमें से भारत के पास सिर्फ एक है–सागर-सम्राट। आयोग में पिछले छह वर्ष में वैज्ञानिकों और तकनीशियनों की भर्ती भी बहुत कम हुई है। पिछले वर्ष तक आयोग का वार्षिक बजट कुल ८५ करोड़ रुपये का था। इस वर्ष उसे बढ़ाकर २२५ करोड़ रुपये कर दिया गया है। यह तथ्य इस बात का संकेत है कि आयोग किन विषम स्थितियों में काम कर रहा था।

देर आयद दुरुस्त आयद। अब हम आत्मनिर्भरता की दिशा में बढ़ रहे हैं। अकेले बंबई हाई क्षेत्र को पूर्ण विकसित करने के लिए ही लगभग ५०० करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी। हमें और ड्रिलिंग रिग भी चाहिये। आयोग ने तो और रिग मंगवाये हैं। इनमें से एक जून में आ जायेगा और दूसरा वर्ष के अंत तक। 'सागर सम्राट' की सफलता के बाद यह आशा बंधती है कि आयोग को वित्तीय संकट का सामना शायद न करना पड़े।

तेल की दुनिया में एक बात हमेशा से कही जाती रही है–एक टन तेल निकालने के साथ ही तेल का दूसरा कूप खोजने की प्रक्रिया प्रारंभ हो जानी चाहिये। आत्मनिर्भरता के लिए यह बात याद रखनी पड़ेगी।

★

[पृष्ठ ४० का शेष]

आचरण की चर्चा करते समय यह खयाल बना रहना चाहिये कि स्वयं हममें भी कमजोरियां हैं, हम भी गलतियां कर बैठते हैं। हमें सरकार या विरोधी पक्ष की नीयत पर शक करने से बचना चाहिये। देशभक्ति किसी की बपौती नहीं है। ताने, आक्षेप और छिपे इशारों से हम बचें। शिष्टता और शालीनता हम सबका फर्ज है।

मित्रभाव और मेहनत

प्रजातंत्र ऐसी राजनैतिक व्यवस्था है, जो सब मनुष्यों को बराबर मानकर चलती है। वह एक आर्थिक दृष्टिकोण है, जो हमें इस देश और इस दुनिया की आम जनता की आर्थिक दशा सुधारने को कहता है। वह एक नैतिक जीवन-क्रम है, जिसमें हमें दूसरे लोगों को मित्र, या भावी मित्र मानकर उनके साथ व्यवहार करना होता है, भले ही इस क्षण वे हमारे शत्रु हों।

अपने देश को सचमुच प्रजातंत्रीय बनाने के लिए कठोर परिश्रम, कार्य-दक्षता और आयोजन आवश्यक हैं। एक अमरीकी को मध्य-पश्चिम अमरीका में एक सुंदर खेत दिखाया गया, तो वह बोल उठा–'देखिये न, ईश्वर और मनुष्य अगर आपस में सहयोग करें, तो कितना शानदार काम हो सकता है!' इस पर उस खेत के मालिक ने कहा–'आप इस खेत को उन दिनों देखते जब इसे ईश्वर अकेले ही संभालता था।' ईश्वर हमसे कठोर और ईमानदार परिश्रम की आशा करता है। वह उनकी मदद करता है, जो अपनी मदद आप करते हैं।

★

काला गीत

—मुरानो शिरो

आंखों में से, कानों में से
टपकता है काला रंग,
मेरे मुंह में से
निकलता है लहू
रात में पिघला हुआ,
भला क्या हो सकता है
यह काला गीत ?
यहां कोई सुबह नहीं पहुंचती,
एक शून्य है,
धरती की छाया में
न पेड़, न घर, न कुत्ता।
और यहां एक दिल है
जिसे मरना नहीं है
जिसे सोना नहीं है
और वह गा रहा है
गाये जा रहा है।
दुनिया के दोस्तो !
दिल के इस गीत को सुनो
शांति के काले गीत को सुनो।

*

चुप

—त्सुबोई शिगेजी

मैं चुप हूं यद्यपि,
पर मैं सोच रहा हूं,
मैं बोल नहीं रहा हूं
पर मुझे दीवार समझने की
गलती न करना।

*

अनुवाद : सुखबीर

चित्र : तोयोकुनी–अनुकृति : राणा

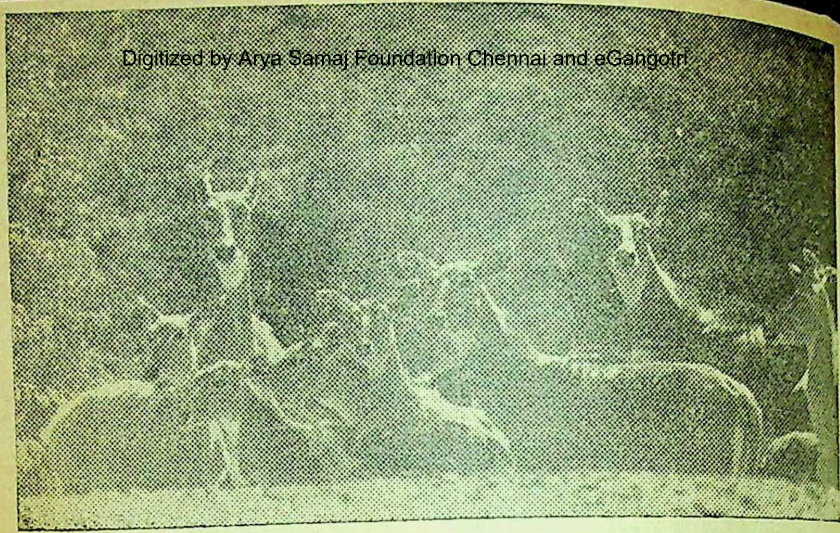

हमारे गूंगे दोस्त

हमारे देश पर प्रकृति की बड़ी कृपा रही है। हमें यहां ठंडे और गरम सभी प्रकार के जलवायु मिल जाते हैं। उफनती हुई नदियां, शांत झीलें, अथाह समुद्र, बर्फ से ढंके हुए पहाड़ों की सफेद चोटियां, घने जंगल–निसर्ग की सभी आकर्षक चीजें यहां मौजूद हैं।

हमें इसका गर्व है कि पशु-पक्षियों की जितनी जातियां हमारे देश में पायी जाती हैं, उतनी दूसरे देशों में नहीं मिलतीं। पक्षियों की करीब दो हजार और पशुओं की पांच सौ जातियां हमारे देश में मिलती हैं। रेंगने वाले जीवों और मछलियों का लेखा इनसे अलग है। इनके अलावा कीड़ों और पतंगों की तीस हजार जातियों का पता कीट-विशारद भारत में लगा चुके हैं।

प्रकृति का सौंदर्य हमारे चारों ओर बिखरा पड़ा है। उसमें रस लेने की वुद्धि का विकास हमें करना चाहिये। चिड़ियाघरों और अभयारण्यों में हमें प्रकृति के कितने ही अनमोल नमूने आसानी से देखने को मिल जाते हैं। अगर हम दूर नहीं जा सकते, तो अपने आस-पास ही फूलों, पंछियों, जानवरों और कीड़े-मकोड़ों के जीवन को गौर से देख सकते हैं।

मुझे बाल्यकाल से ही शिवालक की घाटियों के घने जंगलों में घूमने का मौका मिला है। तब मैं गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा प्राप्त करता था। वनभ्रमण मेरी शिक्षा का अंग था। मुझे दूसरे छात्रों के साथ हर

इस लेख के फोटोग्राफ : राजेश बेदी

रविवार को नदी-नालों को पार कर घाटियों के अंतराल में जाना होता था। सारा दिन हम नालों और जंगलों में घूमते हुए प्रकृति के सौंदर्य को निहारते थे। बालूतट शेर और तेंदुए के ताजा पदचिह्नों से पटे होते थे। नर्म धरती हाथियों के भारी-भरकम पैरों से रौंदी हुई होती थी। चीतल-मृगों के झुंड कुलांचें भरते हुए हमारे सामने से निकल जाते थे। इस तरह प्राथमिक कक्षाओं में ही मुझे जंगली जीवों का परिचय मिलने लगा था। पशु-पक्षियों के प्राकृतिक निवासों में घूमने का मेरा यह शौक स्नातक बनने के बाद भी कायम रहा।

कालेज के दिनों में जब हमें कुछ अधिक स्वतंत्रता मिल गयी, तब हमारे वन-भ्रमण के कार्यक्रम लंबे होने लगे थे। सप्ताह-भर का राशन झोले में डालकर हम बरगद के ऊपर मचान पर सो जाया करते थे। या बालू-तट पर घास-फूस बिछाकर लोट जाया करते थे। जंगली जीवों के जीवन के नये-नये दृश्य दिन-रात मेरी आंखों के सामने से गुजरते थे।

शाह बुलबुल अपनी लंबी दुम को लहराती हुई मेरे ऊपर से उड़ जाती और कचनार की चटकीली कलियों पर जा बैठती। सुनहरे फूलों के फानूसों से लदे हुए सैकड़ों अमलतास के पेड़ के नीचे लजीले मोर पंख उठाकर मोरनियों को रिझाने के लिए नाच उठते। सेमल

रामेश बेदी

और टेसू के पेड़ों पर धनेश, मैना, तोते, बुलबुलें मकरंद पीते रहते। बावला-सा काफल पाकू दिन-रात अपनी रट से घाटी को गुंजाता रहता। दीवाना फाख्ता धूसरित वन-पथों पर प्रेयसी का पीछा करता हुआ हमारी उपस्थिति को भी भुला बैठता। कोमल टहनियां खाते हुए नीलगायों के जोड़े हमें देखते रहते। क्षुद्ररोह में घास चरते हुए

मदारी बंदरिया से दोस्ती का हाथ बढ़ाती हुई रंजु बेदी।

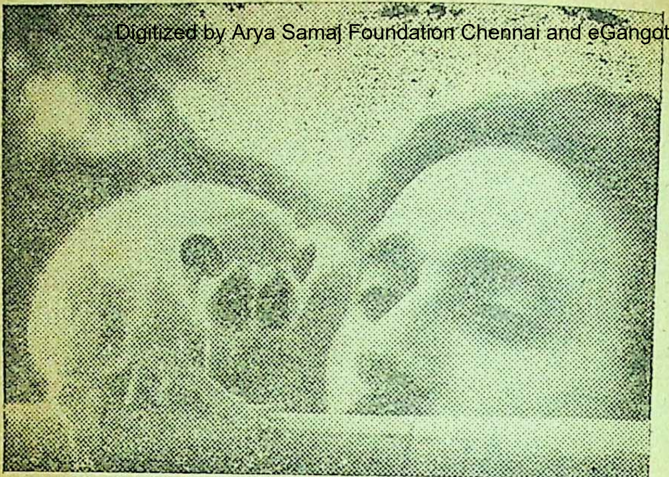

शर्मिदा और नरेश

चिकारे को अठारह फुटा अजगर निगल जाता। गोहें हमारे कैंप से अनतिदूर रतिकर्म में प्रवृत्त रहतीं। हाथियों के बड़े-बड़े झुंड घाटी में बेफिक्री से घास चरते रहते। रात के सन्नाटे में सांभर के भीति-संकेत हमें चौकन्ना कर देते। भीति-संकेतों के बावजूद शेर एक जानदार झांक को मारने में सफल हो जाता। उसका गर्म खून पीकर जब वह तृप्त हो दहाड़ता तो जंगल का पत्ता-पत्ता सहम जाता।

स्नातक होने के बाद आजीविका के लिए मैं लाहौर चला गया। मेरा मन तब भी जंगलों में ही भटकता था। सौभाग्य से दैव ने मुझे फिर १९४६ में हरिद्वार बुला लिया। मुझे फिर अपने पुराने शौक पूरे करने का मौका मिला। अब इसमें मेरे बीवी-बच्चे भी मेरा साथ देने लगे। मेरी बीवी लाहौर के तंग कूचे-गलियों में जनमी-पली और परंपराओं में जकड़ी एक हिंदू औरत थी। पर उसने नयी परिस्थितियों में अपने को कमाल की आसानी से ढाल लिया। जंगलों में वह हमारी अस्थायी घर-गृहस्थी को इस तरह चलाती थी कि हमें जंगल की कठिनाइयां महसूस ही नहीं होती थीं। मेरे नन्हे मासूम बच्चों की शिक्षा-दीक्षा बीहड़ जंगलों और दुर्गम पहाड़ों में हो रही थी। खतरे के समय हम उन्हें पीठ पर उठाकर भागते थे। जंगल की यह हविस मुझे देश के कई जंगलों और हिमालय की सुंदर घाटियों में खींच ले गयी और मेरा कैमरा इन सबका फोटोग्राफिक रेकार्ड रखता जाता था।

सन १९६० में भारत सरकार की एक अनुसंधान-योजना में मैं दिल्ली आ गया, जहां से मैं २० मई १९७३ को सीनियर रिसर्च आफिसर के पद से रिटायर हुआ। दिल्ली में मुझे चिड़ियाघर के जानवरों का अध्ययन करने का मौका मिला। बच्चों में प्रकृति-निरीक्षण के जो बीज पड़े थे, वे अंकुरित तो पहले ही हो चुके थे, अब पल्लवित और फलित भी होने लगे। मैं और मेरे बेटे नरेश बेदी और राजेश बेदी एक टीम की तरह काम करने लगे। हम महीनों

जंगल में डेरा डालकर जंगली जीवों का पीछा करते। उनसे दोस्ती का रिश्ता कायम करते, तभी हम नजदीक से उनका अध्ययन कर सके। गर्मी से व्याकुल शेर जोहड़ में कूदकर स्नान करता और अपनी तपन मिटाता। ऐसे दुर्लभ फोटो खींचने के मौके भाग्य से ही मिलते हैं।

सिंहों के लेहंड़े के बीच में घुसने का लोमहर्षक आनंद भी हमें प्राप्त हुआ। इंसान की नाक को चबाने के लोभी धूर्त भालुओं के और मदमाते हाथियों के हमलों से कई बार हम बाल-बाल बचे। जान जोखिम में डालकर हमने पशु-पक्षियों के हजारों फोटो खींच लिये। जानवरों को बंदूक से शूट करने की अपेक्षा कैमरे से शूट करना कहीं अधिक कठिन, उत्तेजक और संकटपूर्ण होता है।

बंदूकचियों के साथ हमें शिकार के दृश्य देखने के अवसर भी मिलते रहे। प्रकृति का मोहक प्राणी पलक झपकते ही लहूलुहान होकर छटपटाता दिखाई देता। अदना चिकारा हो या प्रतापी शेर, किसी की भी हत्या बड़ा घिनौना दृश्य उपस्थित करती है। इन हत्याओं ने हमारे देश के कुछ जानवरों का वंशोन्मूलन कर दिया है। बहुत-से पशु-पक्षियों को विनाश के कगार पर ला खड़ा किया है। सिंह, शेर, सफेद शेर, बदली तेंदुआ, हिम तेंदुआ, स्याहगोश, स्यूल्यू, सुनहरी बिल्ली, सिकमार, जंगाररंगी चित्रित बिलाव, सुनहरा लंगूर, छोटा पंडा, बारासिंगा, थामिन, चौसिंगा, चिकारा, काला हिरन, हंगूल, कस्तूरा, गैंडा, हाथी; अरना भैंसा, पिग्मी सुअर, मारखोर, उरिल, घोड़खार, टाकिन, मगर, अजगर, वज्रकीट, गोड़ावल, श्वेतपंखी वनमुर्गाबी, गुलाबसिर, मोर, नालुसो आदि जीवों के संरक्षण के लिए आवाज उठायी जा रही है। इन्हें समुचित संरक्षण न मिला, तो ये हमारी धरती से लुप्त हो सकते हैं। अगर ये नष्ट हो गये, तो हमारे देश के जंगलों की शोभा और रौनक खत्म हो जायेगी, हमारा जीवन नीरस बन जायेगा।

वन्य जीवों की रक्षा करने के उपायों का विश्व का सबसे पहला आलेख हमें भारत में ही मिलता है। अशोक-स्तंभ के पांचवें आदेश से यह स्पष्ट है कि तीसरी शताब्दी ई. पू. में उत्तर भारत में शिकार करने पर पाबंदी लगायी गयी थी। इस आदेश में सम्राट ने उन

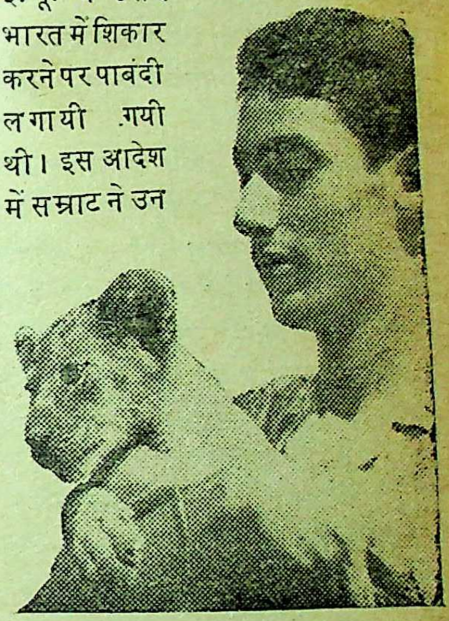

नरेश के हाथ में सिंहशिशु

पक्षियों, पशुओं और मछलियों की सूची दी है, जिनका संरक्षण मुस्तैदी से किया जाना चाहिये। इसमें गिनाये गये स्तनपोषियों में चमगादड़, बंदर, गैंडा, सेह, गिलहरी, बारहसिंगा, हिरन आदि जीव हैं। उस आदेश में जंगल में आग लगाने की भी मनाही की गयी है।

जंगली जीवों के संरक्षण की भावना हमारे देश में इतनी व्यापक हो गयी थी कि जगह-जगह ऐसे स्थान सुरक्षित कर दिये गये थे, जहां शिकार करना मना था। ऐसे स्थानों को 'धर्मारण्य' या 'अभयारण्य' कहते थे। कालिदास (पांचवीं शताब्दी ई.) ने एक धर्मारण्य का जिक्र किया है। यह स्थान हरिद्वार और कोटद्वार के बीच में मालन नदी के साथ-साथ था। मुझे अपने बच्चों के साथ तराई के इस शानदार जंगल में घूमने के कुछ मौके मिले हैं।

जंगल के प्राणी हमारे गूंगे दोस्त हैं। उन्हें इंसान से दया, सहानुभूति और प्रेम मिलना चाहिये। उनके प्रति ऐसे कोमल भाव पैदा करने के लिए हमें बचपन से ही नागरिकों के मानस को जागृत करना होगा। सरकारी माध्यम से यह कार्य कुछ हद तक किया जा रहा है। मिशनरी भावना से कार्य करने वाले कुछ प्रकृति-प्रेमी इधर ध्यान दें, तो इन गूंगे दोस्तों का अधिक भला होगा।

मैंने इन गूंगे दोस्तों को अपने घर में रखकर इन्हें समझने की कोशिश की है। जो अजदहा जंगल में शेर को भी भयाक्रांत कर देता है, वह मेरे हाथों के कोमल स्पर्श से विनीत हो गया था। प्यास लगने पर वह अपनी मृदुल जामनी-लाल जीभ को लपलपाकर पानी मांगता था। नरेश उसे कटोरी में ताजा पानी भरकर देता था। अपना मुंह उसमें डालकर वह सैकड़ों घूंट भरता और अपनी प्यास बुझाता। हम गौर से उसका निरीक्षण करते रहते थे। नरेश उन दिनों करीब चार साल का होगा। शेरों और मगरों से जूझने वाला अजगर चाहता तो उसे अपनी कुंडलियों में भींचकर मार सकता था। लेकिन प्रेमल व्यवहार के कारण भयंकर अजदहा उसे नन्हे फरिश्ते के रूप में मानने लगा था—फरिश्ता जो भूख मिटाने के लिए उसे भोजन देता था और सर्दी से बचाने के लिए कंबल।

मुश्कबिलाव, नेवला, चीतल, थामिन, तोते, बाज, मोर, कबूतर, धनेश, कछुए, केमोलिन—अनेक प्रकार के जीव हमने अपने घर में पाले। घर के स्नेहमय वातावरण में वे आजादी से घूमते थे। हमारे ये कार्यकलाप जीव-जंतुओं को अधिक अच्छी तरह समझ पाने की कामना से प्रेरित होते थे। हिमालय की तराई के वनों से पकड़ा हुआ एक अजगर मेरे घर में १९७० की सर्दियों से १९७४ तक रहा है। वह पूर्ण स्वस्थ था और खूब खाता था। १९७१ की सर्दियों में नरेश और राजेश भूटान से तीन तिब्बती अप्सु अपने साथ ले आये थे। समुद्र-तल से दस-पंद्रह हजार फुट की ऊंचाई पर रहने वाले, लंबे बालों वाले इन जीवों को दिल्ली

[शेष पृष्ठ ६० पर]

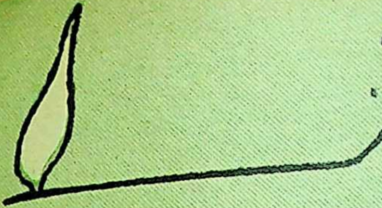

वाक्यदीप

मनुष्यों के प्रति समुचित व्यवहार की कमी का प्रायश्चित्त देवताओं की स्तुति द्वारा कर लेना बड़ा आसान काम है। तभी तो हर जमाने और हर देश में हम देखते हैं कि अधिकांश लोग स्वर्ग जाने की अर्हता अपने कार्यों द्वारा जीतने के बजाय प्रार्थना द्वारा वहां जाने की रियायत पाने में सुविधा अनुभव करते हैं।

दुर्विचार और अयोग्य कर्म धीरे-धीरे अपनी छाप चेहरे पर छोड़ जाते हैं, विशेषतः आंखों में। लिहाजा चेहरे को देखकर यह बताना आसान है कि फलां आदमी कभी कोई अमर कृति नहीं रचेगा; मगर यह कहना आसान नहीं कि वह कभी बहुत बड़ा दुष्कर्म नहीं करेगा।

प्रमादी चरित्र, निर्बल और शिथिल संकल्प अल्प-सी बुद्धि से भी अपना काम चला सकते हैं; तुच्छ चीज के लिए तुच्छ-सा सहारा काफी है।

संभव है, हम अपने शत्रुओं की मृत्यु का भी दीर्घकाल तक वैसा ही शोक मनायें, जैसा कि मित्रों की मृत्यु का—इसलिए कि हमारी शानदार सफलता को देखने के लिए वे मौजूद नहीं हैं।

पैसा मानवीय सुख का अमूर्त रूप है; सो जो आदमी ठोस रूप में मानवीय सुख का सेवन करने में समर्थ नहीं रह जाता, अपना हृदय पूरी तरह पैसे को दे देता है।

डाक्टर मानव-जाति की तमाम निर्बलता को, वकील उसकी तमाम दुष्टता को, और धर्मशास्त्री उसकी तमाम मूर्खता को देख लेता है।

पशुओं को देखने में हमें इतना आनंद जो मिलता है उसका मुख्य कारण यह है कि हम स्वयं अपनी प्रकृति को ऐसे सरल रूप में देखना चाहते हैं। दुनिया में झूठा जीव तो एक ही है, और वह है मनुष्य।

—शोपेनहावर

शब्द मन के दर्पण

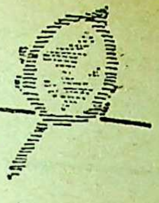

जान लेगस्लान

मेरी मां जब भी किसी से मिलकर आती तो उस व्यक्ति से हुई बातें, उसके बात करने के अंदाज, उसके खास शब्द-प्रयोग आदि का जिक्र करती थी। फिर बहुधा वह उस व्यक्ति के संबंध में कोई ऐसी बात बताती थी, जिसका उस व्यक्ति ने अपनी बातचीत में जिक्र तक न किया होता था। उदाहरणार्थ वह कहती–'हेनरी अपना मकान बेच रहा है...फ्रैंक जूली से शादी करने वाला है ..... श्रीमती कोल समझती है कि वह गर्भवती है।'

मां कोई अंतर्यामी नहीं थी। ये बातें वह उस व्यक्ति के कुछ खास शब्दों और उन्हें बोलने के उसके अंदाज के आधार पर जान लेती थी। जैसा कि बेन जान्सन ने तीन सौ साल पहले लिखा था– 'भाषा हमारे मन के गहनतम भागों में से निकलती है।'

अगर कोई आदमी किसी शब्द का या कुछ शब्दों का प्रयोग बार-बार करता है, तो हम उस पर से पता लगा सकते हैं कि उसके मन में कौन-सी बात घर किये हुए है। कई बार माता-पिता अपनी बेटी की सहज-सामान्य बातें सुनकर अनुमान लगा लेते हैं कि उसके परिचित लड़कों में से कौन-सा लड़का उसके हृदय में प्रवेश क रहा है, हालांकि कई बार तो खुद उ लड़की को इस बात का ज्ञान नहीं होता। आखिर माता-पिता को कैसे पता लग जा है ? इससे कि उनकी बेटी बातचीत के दौरान में उस लड़के का नाम ज्यादा बार लेती है।

किसी-किसी से बातें करते हुए कई बार हम महसूस करते हैं कि वह 'मैं', 'मेरा', 'मुझे' आदि शब्दों का जरूरत से ज्यादा प्रयोग कर रहा है, और हमें उकताहट होने लगती है। वास्तव में ऐसा व्यक्ति कभी दूसरों की दिलचस्पी का केंद्र नहीं बन सकता। डा. मावरर का कथन है–'जब किसी आदमी की कार में कोई नुक्स पड़ जाता है, तो वह बार-बार उसका जिक्र करता है। इसी प्रकार जब किसी व्यक्ति के मन की मशीनरी में कोई नुक्स पड़ जाता है, तो वह नुक्स उसकी बातों में प्रकट हुए बिना नहीं रहता। वह व्यक्ति बातों के दौरान बार-बार उसका जिक्र करेगा।'

देखा गया है कि मानसिक रोगों के अस्पतालों में मरीज 'मैं' का प्रयोग जरूरत से ज्यादा बार करते हैं–हर बारह शब्दों

के पीछे एक बार, और आम आदमियों के मुकाबले में तीन गुना ज्यादा। परंतु ज्यों-ज्यों वे स्वस्थ होने लगते हैं, 'मैं' का प्रयोग कम होने लगता है, और 'हम' का प्रयोग बढ़ने लगता है। (मगर हिंदीभाषी जिस तरह उत्तम पुरुष एकवचन के अर्थ में 'हम' का प्रयोग करते हैं, उस तरह नहीं।)

मनुष्य किसी चीज के संबंध में अपनी पसंद या नापसंद जताने के लिए जिन विशेषणों का प्रयोग करता है, उनसे भी उसके व्यक्तित्व के बारे में बहुत कुछ जाना जा सकता है। हमारी एक परिचित लड़की की सगाई एक आदमी के साथ हुई। वह जब भी किसी चीज की तारीफ करता, तो 'तगड़ी', 'शक्तिशाली', 'जबर्दस्त' जैसे शब्दों का जरूरत से ज्यादा प्रयोग करता था और जो चीज उसे नापसंद होती, उसके बारे में 'कमजोर', 'मामूली', 'नगण्य' शब्दों का प्रयोग करता। हर चीज को वह उसके आकार और शक्ति के आधार पर परखता था। और वह लड़की कलात्मक रुचि वाली थी; हर चीज का जायजा लेते हुए वह उसके बारे में 'खूबसूरत' या 'बदसूरत' आदि शब्दों का प्रयोग करती थी। शादी के कुछ ही समय बाद उनकी अनबन शुरू हो गयी और अंत में उन्होंने तलाक ले लिया।

किसी आदमी की जबान से निकलने वाले रूपकों, उपमाओं और उदाहरणों से सिर्फ उसके जीवन-अनुभव का ही पता नहीं लगता, अपितु इसका भी सुराग मिल जाता है कि वह सोचता कैसे है। हर व्यक्ति कुछ खास विषयों पर जरूरत से ज्यादा बातें करता है, जिनसे उसके चरित्र को समझा जा सकता है।

डा. जान डोनाल्ड और डा. मावरर नामक दो मनोविज्ञानियों ने मरीजों की मानसिक हालत जानने के लिए एक तरह के 'भावनात्मक बैरोमीटर' का पता लगाया है। किसी मरीज की बातें सुनते हुए वे उन विशेष शब्दों को नोट करते हैं, जो वह अपनी किसी भी बेचैनी के संबंध में बोलता है। साथ ही वे उन शब्दों को भी अलग से नोट करते हैं, जिनके द्वारा मरीज अपनी खुशी या संतोष प्रकट करता है। फिर वे इन दोनों प्रकार के शब्दों की आपस में तुलना करते हैं। अगर मरीज कुछ मिनिटों की उस बातचीत के दौरान में खुशी और संतोष प्रकट करने वाले शब्दों का प्रयोग नहीं करता, बल्कि 'बहुत बुरे' मौसम, 'खतरनाक' खबरों, 'उबा देने वाले' नाटकों आदि का ही जिक्र करता है, तो जाहिर है कि वह दुनिया के साथ सुर मिलाकर जी नहीं रहा है।

इसी प्रकार का फार्मूला डा. हैराल्ड लासवेल ने ईजाद किया था। वह मरीज की बातचीत में से उन शब्दों को लिखता जाता, जिसका संबंध उसके व्यक्तित्व से होता। उनमें से कुछ शब्द रोगी के हक में जाते, कुछ उसके खिलाफ। डा. लासवेल उनके अनुपात के आधार पर बता सकता था कि मरीज की नजर में अपना कितना महत्त्व है। इसी तरह मरीज जो शब्द

दूसरों के [illegible] अनुपात भी डा. लासवेल निकालता था। दोनों प्रकार के शब्दों के अनुपातों की तुलना करने से यह पता लगता कि जिस मरीज की नजर में अपना महत्त्व जितना ही ज्यादा होगा, वह दूसरे लोगों के साथ उतना ही ज्यादा मिलकर रहने वाला व्यक्ति होगा।

क्रियापदों के कालवाचक रूपों के आधार पर भी किसी व्यक्ति के बारे में बताया जा सकता है कि वह अपने वर्तमान से किस हद तक संतुष्ट है। अगर अधिकांश क्रियाएं भूतकालिक हों, तो इससे संकेत मिलता है कि उस व्यक्ति का जीवन उदास और निराशा-भरा है।

मेरे [illegible] दोस्त ने मुझे बताया था कि वह नये मरीज से कुछ ही देर बातें करने पर उसके बारे में बहुत कुछ जान जाता है–खासकर इस बात पर से कि प्रश्नों का उत्तर वह किस हद तक रुक-रुककर या झिझककर देता है। जब मरीज से उसका पेशा पूछा जाता है, तो अपने पेशे से संतुष्ट मरीज झट जवाब देगा। लेकिन जो मरीज अपने पेशों से संतुष्ट नहीं है, वह जवाब देते समय कुछ क्षण रुकेगा।

जवाब देते समय बीच में कुछ क्षणों के लिए रुकना, अपने मन की बेचैनी, घबराहट या शंका व्यक्त करना है। साफ मन वाला आदमी हर बात का स्पष्ट जवाब देता है।

★

[पृष्ठ ५६ का शेष]

की गर्मियों में स्वस्थ और प्रसन्न रखने में हमें कठिनाइयां तो अवश्य हुईं, पर इन्हें पालने में हमें सफलता मिली। हमारे यहां ये वंशवृद्धि भी कर रहे हैं।

हमारा उद्देश्य अपने इन गूंगे दोस्तों के बारे में सही जानकारी हासिल करके उसकी सच्ची तस्वीर आम जनता तक पहुंचाना है। इन जानवरों के बारे में फैली हुई कितनी ही बेबुनियाद धारणाओं को हमने रेडियो, टेलिविजन एवं अखबारों के माध्यम से दूर करने की कोशिश की है। ये जानवर खतरनाक जरूर हैं, लेकिन स्नेही और सुंदर भी हैं। हमने अनुभव किया है कि हमारे पालतू अप्सु जिस तरह हमें लिपटकर और हमारे अंगों को चबाकर प्यार करते हैं, उसी तरह शेर का पालतू बच्चा हमारा स्नेह-भरा आलिंगन करता है। वह हमारा समूचा हाथ अपनी यमदंष्ट्राओं में पकड़ लेता है। ऐसे दोस्त बनाने में हमें गर्व अनुभव होता है।

जीवदया की सच्ची भावना पैदा करने के लिए हर घर में कम से कम एक जीव तो अवश्य पाला जाना चाहिये, भले ही वह दुधारू गाय हो या मीठी बोली बोलने वाली मैना। ऐसे जीवों को हम सदियों से पालते भी आ रहे हैं। मेरा सुझाव है कि हमें इस शौक की पूर्ति में प्राथमिकता उन जीवों को देना चाहिये, जिन्हें संरक्षण की अधिक आवश्यकता है। ऐसे जीवों की नामावली मैंने इसी लेख में अन्यत्र दी भी है।

—डी २१, राजौरी गार्डन, नयी दिल्ली-२७

★

विज्ञान-बिंदु

‘ब्लूप्रिंट फॉर सरवाइवल’ के विश्व-विख्यात लेखक एवं ब्रिटिश पत्रिका ‘ईकोलाजिस्ट’ के संस्थापक-संपादक एडवर्ड गोल्डस्मिथ पिछले दिनों जब भारत आये थे, उन्होंने कहा था कि यदि मौजूदा औद्योगिक दौड़ को बेरोकटोक चलते रहने दिया गया, तो इस सदी के अंत तक हमारे ग्रह के ‘लाइफ सपोर्ट सिस्टिम्स’ अक्षुण्ण बने रह सकेंगे, इसमें मुझे संदेह है। प्रकृति को नष्ट करके मनुष्य स्वयं जिंदा नहीं रह सकता। यदि उसे जीवित रहना है, तो वह चाहे या न चाहे उसे प्रकृति के साथ निभाकर रहना पड़ेगा।

विश्व के पारिस्थितिकी-विज्ञों की चिंता वैचारिक एवं सारस्वत दायरे से बाहर निकल कर अब व्यावहारिक आधार ग्रहण करने लगी है। भारत की नवगठित पर्यावरणीय आयोजन एवं समन्वय की राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष डा. बी. डी. नागचौधरी की अध्यक्षता में हुई पहली बैठक में सदस्यों ने यह राय जाहिर की कि उनके सामने सबसे महत्त्वपूर्ण विचारणीय विषय यह है कि विकासात्मक गतिविधियों और पर्यावरणात्मक संरक्षण के बीच विरोध-वैमनस्य पैदा किये बिना आर्थिक विकास की योजनाओं को कैसे क्रियान्वित किया जाये।

समिति ने अपने प्रथम अध्यक्ष स्वर्गीय डा. पीतांबर पंत की स्मृति में एक पुरस्कार की स्थापना का भी निश्चय किया, ताकि इस क्षेत्र में मौलिक शोधकार्य को प्रोत्साहन मिले। इस स्तंभ के लेखक तथा अन्य दो-तीन विज्ञान-संवाददाताओं से बातचीत करते हुए डा. नागचौधरी ने पिछले दिनों कहा था कि वैज्ञानिकों की संख्या की दृष्टि से हमारे देश का विश्व में तीसरा नंबर है और अंशदान की दृष्टि से सातवां। विज्ञान-जगत् में हम एकदम नगण्य नहीं हैं। जो कुछ यहां होता है, विश्व उसे देखता है।

डा. नागचौधरी की बात सही है। पारिस्थिकी जैसे नये क्षेत्र में भी भारत के अनेक युवा विज्ञानी गंभीरता के साथ शोधकार्य में लगे हैं। इनमें से एक उभरता हुआ नाम है डा. बृजगोपाल का। वे राजस्थान विश्वविद्यालय के वनस्पति-विज्ञान विभाग

से संबद्ध है। उनके महत्वपूर्ण शोधकार्य के लिए हाल में प्रधान-मंत्री ने उन्हें विज्ञान अकादमी पदक से पुरस्कृत किया है।

डाक्टर बृजगोपाल का मुख्य कार्यक्षेत्र है–पारिस्थिकी में नये आयामों की खोज। एक मुलाकात में उन्होंने इस लेखक से कहा–'यदि हम अपने आस-पास की दुनिया को आंख खोलकर देखें तो हमें ऐसे असंख्य उदाहरण मिल सकते हैं, जिनसे ज्ञात हो जायेगा कि सभी जीव और उनका भौतिक पर्यावरण आपस में गुंथे हैं। किसी भी एक जीव या कारक पर होने वाला प्रभाव दूसरों को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकता। यही है पारिस्थितिकी की महत्त्वपूर्ण शिक्षा। पृथ्वी एक इकाई है। इसके किसी भी एक भाग में होने वाले परिवर्तन संपूर्ण मानव-जाति को प्रभावित करत हैं। अंतरिक्ष में बैठकर मानव ने पृथ्वी के अविभाज्य-अखंड रूप को देख लिया है। सारे जीव जल और वायु के आवरण से घिरे हैं, जिसमें होकर सभी जीवन-क्रियाएं संपन्न होती हैं। पारिस्थिकी मनुष्य को सृष्टि का अंग–जीव-जगत का अत्यंत सूक्ष्म अंग–बनकर रहने की प्रेरणा देती है; भौतिक संसाधनों के समुचित उपयोग का पाठ सिखाती है, सहअस्तित्व और सामंजस्य स्थापित करने का मूलमंत्र देती है।

कुल जमा तीस वर्ष के डा. बृजगोपाल विश्व के अनेक प्रतिष्ठित विज्ञान-जर्नलों में अपने प्रबंध प्रकाशित करा चुके हैं। दुनिया के विभिन्न देशों से उन्हें अनेक गोष्ठियों में भाग लेने के लिए निमंत्रण मिलते हैं। मानव में उनकी गहरी आस्था ने उन्हें स्वभावतः पारिस्थिकी की ओर आकर्षित किया है।

संगीत-सुधा

हाल में एक प्रमुख सोवियत विज्ञान पत्रिका 'सायंस एंड लाइफ' में प्रकाशित हुई एक खबर के अनुसार मीठी और धीमी संगीत-लहरियों की उपस्थिति में मुर्गी की अंडा देने की क्षमता बढ़ जाती है। मिन्स्क मुर्गीफार्म पर ८ लाख मुर्गियों पर किये गये परीक्षणों से उक्त परिणाम निकाला गया है। गत वर्ष इन मुर्गियों ने कुल मिलाकर २७।। करोड़ अंडे दिये, जो कि अब तक के वार्षिक उत्पादन आंकड़ों में सबसे अधिक है। फार्म में एक विशेष प्रकार का मधुर और धीमा संगीत बजाने की व्यवस्था के फलस्वरूप ही ऐसा हो सका है।

प्रयोगकर्ता वैज्ञानिकों का कहना है कि संगीत के प्रभाव से मुर्गियों की उत्पादकता

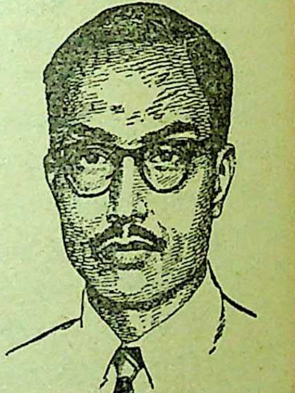

डा. बृजगोपाल

और प्रसन्नता ही नहीं बढ़ी, बल्कि फर्म पर काम करने वाली महिलाओं पर भी संगीत का बहुत अनुकूल प्रभाव देखा गया।

माहौल में मंडराती मौत

आप जानते हैं, कारखानों की चिमनियों से निकलता हुआ धुएं का प्रवाह वायु-मंडलीय संदूषण का एक प्रमुख कारण है। इस धुएं को कार्बन-कणों से यथासंभव मुक्त करने के लिए एक विशेष प्रकार का विद्युत-यंत्र विकसित देशों में काम में लाया जा रहा है। यह यंत्र वस्तुत: एक स्थिरवैद्युत अवक्षेपित्र (इलेक्ट्रोस्टैटिक प्रेसिपिटेटर) है, जो धुएं में स्थित कार्बन-कणों को विद्युत-आवेशित कर देता है। आवेशित कण यंत्र की एक धातु-पट्टिका की ओर खिंचते हैं और वहां जाकर जमा हो जाते हैं। इस यंत्र की कार्यक्षमता को बढ़ाने के लिए विगत कुछ वर्षों से अमोनिया नामक रसायन काम में लाया जाता रहा है। इससे यंत्र की कार्बन-अवक्षेपण क्षमता किसी हद तक बढ़ी है। परंतु धुएं को अत्यंत सूक्ष्म धूलि-कणों से मुक्त कराना उसके भी बस की बात नहीं लगती।

धुएं में सूक्ष्म कार्बन-कण बहुत बड़ी संख्या में होते हैं। सांस के साथ ये आसानी से फेफड़ों में पहुंच जाते हैं। वैज्ञानिक इस खतरे से बेखबर नहीं हैं। इसीलिए धूम्र-अवक्षेपित्र की दक्षता बढ़ाने के लिए विभिन्न देशों के अनेक वैज्ञानिक कार्य करते रहे हैं। अब आस्ट्रेलियाई वैज्ञानिक इसमें सफल हो सके हैं।

इस सफलता का राज है एक नया रसायन—ट्राइएथिलएमीन। इसके उपयोग से यंत्र की अवक्षेपण क्षमता अमोनिया के मुकाबले में बीस गुना अधिक बढ़ जाती है। इसकी सहायता से धूम्र-जनित संदूषण को हानिरहित स्तर तक नीचे लाया जा सकेगा।

तैरते खतरे, बहते पानी पर

उसी संस्था के रासायनिक भौतिकी-विभाग के कुछ शोधकर्ता एक ऐसे यंत्र का विकास करने में भी कामयाब हो गये हैं, जो पानी के संदूषण को मापकर उसका रिकार्ड तैयार कर सकता है।

इस स्वयंचालित एवं आत्मपूरित यंत्र को पानी में नीचे डुबा दिया जाता है, जहां यह वर्षों तक बिना किसी झंझट के अपना काम करता रहता है। पानी में घुले हुए लवणों, अन्य विलेय ठोस पदार्थों तथा संदूषण संबंधी सूचनाएं देने का काम इस यंत्र का संवेदी शीर्ष करता है, जो वस्तुत: विशेष प्रकार की कुंडलियों से तैयार किया गया है। यंत्र का एक और भाग इन सूचनाओं को ग्रहण करके एक तापीय मुद्रण विधि द्वारा टेप पर अंकित कर देता है। अंकन बारह घंटे में सिर्फ एक बार होता है। समय के नियंत्रण के लिए इस यंत्र में एक क्वार्ट्ज क्रिस्टल इस्तेमाल किया गया है।

पानी में उपस्थित विलीन पदार्थों की जानकारी उद्योग और रोजमर्रा की जिंदगी के लिए भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। ऐसे मिलावट-युक्त पानी को यदि बायलरों में काम में लाया जाये, तो बायलरों की दीवारों पर बाह्य पदार्थ पपड़ी की शक्ल में जम जाते हैं

और इस प्रकार उनकी कार्यक्षमता कम होती जाती है। विलीन लवणों से युक्त पानी नहाने और कपड़े धोने के लिए भी प्रायः उपयुक्त नहीं होता। यों जलीय संदूषण के खतरे अपने आपमें बहुत बड़े हैं।

मुस्काते, रंगीन रोगाणु

अस्पताल, नर्सिंग होम आदि में चिकित्साधीन बीमार व्यक्तियों को फूल भेंट में देने जाने की प्रथा पश्चिम में है और वहां से हमारे यहां भी आयी है। रोग के कारण उदास-निराश व्यक्ति को फूलों के साहचर्य से यदि क्षणिक प्रसन्नता का अनुभव होता है तो यह स्वाभाविक ही है। परंतु इस मधुर शिष्टाचार में कुछ खतरे भी छिपे हैं, जिनकी ओर हाल में दो अमरीकी शोधकर्ताओं ने ध्यान आकर्षित किया है।

प्रसिद्ध ब्रिटिश चिकित्सा-पत्रिका 'लैन्सेट' में प्रकाशित एक शोध-प्रबंध में इन शोधकर्ताओं ने बताया है कि फूलों से सज्जित गुलदान के पानी में कुछ विशेष प्रकार के बैक्टीरिया के पैदा होने की काफी संभावना रहती है। प्रयोगों के दौरान उन्होंने पाया कि लगभग छह प्रकार के बैक्टीरिया गुलदान के पानी में पैदा हो गये, जिनमें से कुछ पर तो एन्टिबायोटिक्स का भी कोई असर नहीं हो पाया।

बड़े आपरेशन के पश्चात् यह आवश्यक होता है कि रोगी को संक्रामक रोगाणुओं से मुक्त एवं एकदम शुद्ध वातावरण में रखा जाये। फूलों के पानी में उत्पन्न रोगाणु कभी-कभी रोगी की जान के लिए खतरनाक साबित हो सकते हैं। ऐसा एक बार सचमुच हो चुका है, और उसी घटना से इस विषय में शोधकार्य शुरू हुआ। आपरेशन के पश्चात् एक मरीज के घावों में संक्रमण का प्रभाव देखा गया, तो अस्पताल के कमरे में मौजूद हर चीज की बारीकी से छानबीन की गयी। पता चला कि फूलदान के पानी में वे ही रोगाणु मौजूद थे, जो मरीज के घावों में खराबी पैदा कर रहे थे। शोधकर्ताओं का कहना है कि फूल के साथ एक-आध बैक्टीरिया बाहर से आ सकते हैं। फूलों की बदौलत गुलदान के पानी को वे पोषक तत्त्व मिल जाते हैं, जिन पर बैक्टीरिया पनप सकते हैं। जिस गुलदान में फूल बिना पानी के रखे गये थे, उसमें बैक्टीरिया नगण्य थे।

भुक्त भोगियों के अद्भुत नुस्खे

शराब पीने वाले कभी बहुत ज्यादा चढ़ा जाते हैं, तो पीछे काफी देर तक उसके प्रभाव से अपने को ग्रस्त पाते हैं। इनके लिए तीन वैज्ञानिकों ने अपने अनुभव पेश किये हैं। तीनों ही वैज्ञानिक नोबेल पुरस्कार विजेता हैं। वे हैं—प्रो. लाइनस पालिंग, प्रो. ग्लेन सीबोर्ग, एवं प्रो. लुई एलवारेज।

प्रो. पालिंग के अनुसार विटामिन-सी की भारी मात्राएं तथा प्रो. सीबोर्ग के मुताबिक एक बड़ा चम्मच जैतून का तेल इस दिशा में काफी प्रभावकारी साबित हो सकते हैं। प्रो. एलवारेज का कहना है कि शुद्ध आक्सिजन ऐसी स्थिति में कमाल का काम करती है। मगर जो पियक्कड़ पीते ही गहरी खुमारी के लिए हैं, यह नेक सलाह क्यों मानेंगे?

* * *

मुगल बेगमें

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

बादशाहों, नवाबों के हरम में विधिवत ब्याही पत्नियों के अतिरिक्त अनेक उपपत्नियां, रखैलें, परिचारिकाएं होती थीं। इतिहासों में उन सबका कोई क्रमबद्ध विवरण नहीं मिलता। भारत के प्रथम छह मुगल शासकों की कितनी पत्नियां थीं, इसका भी संपूर्ण उल्लेख इतिहासों में पूर्णरूप से नहीं है। अल्लामा नियाज फतहपुरी ने अनेक ग्रंथों के आधार पर इस विषय में महत्त्वपूर्ण सामग्री पाकिस्तानी पत्रिका 'निगार' के अगस्त १९६४ के अंक में प्रस्तुत की थी। उसे संक्षेप में यहां पेश किया जा रहा है। जो विशेष ज्ञातव्य बातें हमारे अध्ययन में आयीं, उन्हें हमने कोष्ठकों में दे दिया है।

बाबर :

१. **माहम बेगम** अथवा **अख्तर जमानी**–यह मृगल-वंश की लड़की थी और १४९० ई. में जनमी थी। बाबर की यह अत्यंत प्रिय मलिका थी। इसने पति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़ाइयों में भाग लिया और अत्यंत संकटपूर्ण परिस्थितियों में उसकी सहायता की। हुमायूं और कामरान इसी की कोख से जनमे थे। इसने स्वयं ही उन्हें सैनिक शिक्षा में पारंगत किया था। (वैसे बाबर की पुत्री गुलबदन ने कामरान को गुलरुख बेगम का पुत्र बताया है। –गोयलीय) यह अत्यंत रूपवती और पवित्र आचार-विचार की थी।

(बाबर की पुत्री गुलबदन ने 'हुमायूंनामा' में जो लिखा है, उसके अनुसार बाबर के सात ब्याह हुए थे। इनमें से १. माहम बेगम से हुमायूं मिर्जा, बारबूल मिर्जा, महरजा बेगम, ऐशांदौलत बेगम, फारुख मिर्जा ये संतानें हुईं। २. **आयशा बेगम**–१५०३ ई. में यह अपनी बड़ी बहन के षड्यंत्र के कारण बाबर को छोड़कर चली गयी थी। ३. **दिलदार बेगम**–'हुमायूंनामा' की लेखिका गुलबदन बेगम का जन्म इसी की कोख से १५२३ ई. में हुआ। गुलरंग बेगम, गुलचेहरा बेगम, हिंदाल मिर्जा और आलूवर मिर्जा भी इसी की संतान थे। ४. **मासूमा सुलताना**–यह एक लड़की को जन्म देकर मर गयी। ५ **गुलरुख बेगम**–इसके गर्भ से कामरान मिर्जा, असकरी मिर्जा, शाहरुख मिर्जा, सुलतान अहमद मिर्जा, गुलजार बेगम का जन्म हुआ।

शेष दो बेगमों का उल्लेख न तो 'हुमायूंनामा' में है और न श्री नियाज फतहपुरी ने ही किया है। श्री फतहपुरी ने तो केवल दो बेगमों–माहम बेगम और हिमायतुल बेगम–का उल्लेख किया है। बाबर की संतानों के जन्म के संबंध में भी संभवत: उनसे भूल हुई है। इसीलिए हमने यह टिप्पणी

गुलबदन बेगम की पुस्तक के अनुसार दी है। बाबर की कुल अठारह संतानें थीं। —गोयलीय)

हुमायूं :

१. **हमीदाबानो बेगम**—यह कस्बा जाम (खुरासान) के एक सैयद की बेटी थी, जो कि शहजादा जाम का शिक्षक था। खुरासान में विद्रोह होने पर यह खानदान घर बार-छोड़ने को विवश हो गया और तबाह-बरबाद होकर न जाने कहां-कहां मुसीबत के दिन काटता रहा। उसी भटकन के जमाने में हमीदा का जन्म हुआ। बाद में इसका बाप किसी तरह काबुल आकर बाबर के पुत्र हिंदाल के शिक्षक का पद पा गया।

जब हिंदाल अपनी मां दिलदार बेगम के साथ लाहौर में था, तब अपने पिता के साथ हमीदा भी वहां थी। अब वह जवान हो गयी थी। शेरशाह सूरी के आक्रमणों से अपने प्राण बचाकर भागता-भागता हुमायूं जब लाहौर पहुंचा, तो अपनी सौतेली मां (दिलदार बेगम) की सेवा में उपस्थित हुआ। वहां हमीदा को देखकर उस पर आसक्त हो गया। बहुत आरजू-मिन्नत के बाद हमीदा हुमायूं से शादी करने को किसी तरह राजी हुई। उसी की कोख से अकबर ने जन्म लिया।

२. **हाजी बेगम**—एक किजलबाश शिया घराने की इस लड़की से हुमायूं ने शादी तो की, मगर धार्मिक मतभेद के कारण इससे सदैव खिंचा-खिंचा रहता था। यह थी तो अकबर की सौतेली मां, लेकिन अकबर इसे सदैव सगी मां की तरह मानता था।

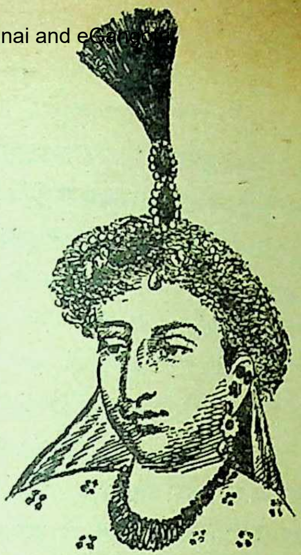

अकबर की मां हमीदाबानो
[१८ वीं सदी में अंकित चित्र की अनुकृति]

(श्री नियाज फतहपुरी ने हुमायूं की केवल दो पत्नियों का उल्लेख किया है। परंतु 'हुमायूंनामा' में लिखा है कि शेरशाह के आक्रमण से मची भगदड़ के वक्त हुमायूं की कितनी ही बेगमें, रखैलें व परिचारिकाएं छूट गयीं, जिनमें बेगाजान कोका, चांद-बीबी, शादबीबी ये तीन पत्नियां भी थीं। —गोयलीय)

जलालुद्दीन अकबर :

१. **जोधाबाई**—यह आमेर के राजा बिहारीमल (भारमल) की पुत्री और मान-सिंह की बूआ थी। अत्यंत रूपवती थी। अकबर ने इससे विवाह करने के लिए स्वयं संदेश भेजा। इससे पहले भी अकबर की

कई शादियां हो चुकी थीं; लेकिन उनसे उसे कोई लड़का न हुआ था। जोधाबाई की कोख से शहजादा सलीम ३० अगस्त १५६९ को फतहपुर सीकरी में पैदा हुआ। (वैसे जहांगीर ने अपनी आत्मकथा में अपनी जो जन्मतिथि दी है, उसके अनुसार उसका जन्म-वर्ष १५७२ ई. होता है। –गोयलीय) यह अकबर की अत्यंत प्रिय प्रधान मलिका थी।

२. **सलीमा सुलताना**–यह जागीरदार हसनखां मेवाती की भतीजी थी। जब सलीम ने अकबर से विद्रोह करके इलाहाबाद पर अधिकार कर लिया, तो अकबर ने उसे समझाने-बुझाने के लिए सलीमा सुलताना को ही उसके पास भेजा और सलीम ने इसकी आज्ञा का तुरंत पालन किया। १६१५ में लाहौर में इसकी मृत्यु हुई।

३. **मरियम** अथवा **मेरी**–यह पुर्तगाल-निवासी विलियम की पुत्री थी। अब तक गोवा में पुर्तगाली हुकूमत कायम हो चुकी थी और पुर्तगाली गवर्नर वहां का शासक होता था। गोवा के कैथलिक मिशन ने अकबर को प्रभावित करने और अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए एक प्रतिनिधि-मंडल मेरी के नेतृत्व में आगरे भेजा। मेरी असाधारण रूप-लावण्य की धनी थी। अकबर उस पर आसक्त हो गया। शादी का उसने स्वयं संदेश भेजा, जो कि स्वीकृत कर लिया गया। शादी के बाद भी मरियम ने अपना मजहब नहीं बदला। मृत्यु के बाद वह आगरे के उस गिरजाघर में दफन की गयी, जिसे अकबर ने उसकी फरमाइश पर बनवाया था।

४. **आरिफउलनिसा बेगम**–यह मारवाड़ के राजा बिहारीमल कछवाहा की बेटी थी। मूल नाम सरूपीबाई था अत्यंत-लावण्यवती थी। जब जसवंतसिंह जागीरदार ने

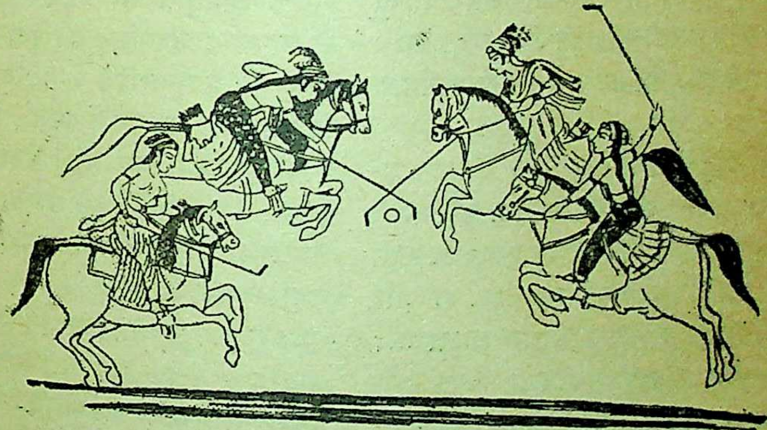

पोलो खेलती मुगल रमणियां : १७ वीं सदी के एक चित्र की अनुकृति

इसे प्राप्त करने के लिए जोधपुर पर आक्रमण किया, तो इसने स्वयं उसका मुकाबला करके उसे शिकस्त दी। अकबर को जब इस घटना का समाचार मिला, तो उसने स्वयं इससे शादी करने का संदेश भेजा, जो स्वीकृत कर लिया गया। शादी के बाद इसे 'आरिफउलनिसा' का खिताब मिला। इससे अकबर को दानियाल नामक पुत्र और तीन पुत्रियां हुईं। (दानियाल को विद्रोहियों के दमन के लिए दक्षिण भेजा गया था; वहां वह अत्यधिक सुरापान से मर गया। –गोयलीय) दानियाल की मृत्यु का सदमा यह बरदाश्त न कर सकी और परलोक सिधार गयी। (मारवाड़ के शासक कछवाहे नहीं, राठौड़ होते थे। –गोयलीय)

५. **शंतली रानी**–यह जयपुर के राजा की कन्या थी। इसके पिता ने ही इसकी शादी का पयाम अकबर को भेजा। मामूली शक्ल-सूरत की थी; लेकिन अकबर इसकी नेकी और सादगी को बहुत पसंद करता था। यौवन में ही प्रसव-काल में इसका स्वर्गवास हो गया।

६. **सैयदाबानो**–यह अरब देशीय छहहजारी अमीर सैयदशरीफ की पुत्री थी। अकबर के अंगरक्षक-दल का एक अधिकारी शुजा इस पर आसक्त हो गया था और इसका बलात् अपहरण करना चाहता था; किंतु इसने उसका मुकाबला किया और उसमें जख्मी हो गयी। अकबर को इस घटना की सूचना मिली, तो उसने शुजा को मरवा डाला और इससे स्वयं शादी कर ली। सन १५९० में अपने बेटे मुराद के साथ यह इलाहाबाद गयी और गंगा में नौका-विहार करते हुए नौका के उलट जाने से डूब गयी। मुराद बच निकला। (मुराद गंगा में तो नहीं डूबा, मगर सुरापान में ऐसा डूबा कि दक्षिण के मोर्चे पर शराब के असर से मर गया। –गोयलीय)

जहांगीर :

१. **आरामजां बेगम**–यह आमेर के राजा बिहारीमल की पौत्री, राजा भगवानदास की पुत्री और मानसिंह की बहन थी। जहांगीर की यह प्रथम पत्नी थी। शहजादा खुसरो इसी का पुत्र था। (खुसरो जीवनभर अपने पिता से विद्रोह करता रहा और सोलह वर्ष बंदी जीवन व्यतीत करने के बाद १६२२ में शाहजहां द्वारा मरवा डाला गया। –गोयलीय) यह अत्यंत सुंदरी और गुणी थी।

२. **हयातुलनिसा बेगम**–यह मारवाड़ के महाराज उदयसिंह की पुत्री थी। मूल नाम था वेदकुमारी। अत्यंत सुंदरी और विदुषी थी। अकबर ने इससे जहांगीर की शादी के लिए स्वयं संदेश भेजा था और बहुत धूम-धाम से इसे पुत्रवधू बनाकर लाया था। इसी की कोख से खुर्रम (शाहजहां) जनमा था।

(खुर्रम ५ जनवरी १५९२ ई. को लाहौर में उत्पन्न हुआ था। उसकी मां का दूसरा नाम मानमती भी था। यह संगीत कला में बहुत प्रवीण थी। मौलाना अबुल कलाम आजाद ने लिखा है–'जब यह जहां-

बूत

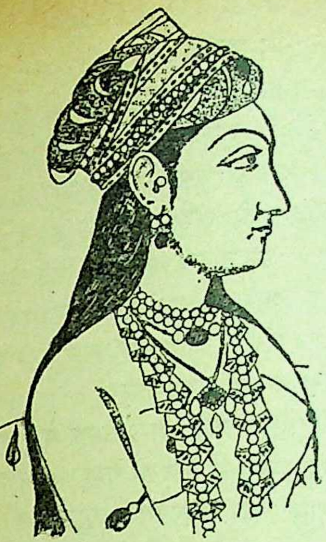

नूरजहां का समझा जाने वाला
एक चित्र [१८ वीं सदी]

गीर के महल में आयी, तो उसके गाने का महल में बहुत अधिक चरचा हुआ। जहांगीर चूंकि स्वयं संगीत में प्रवीण था, अतः उसने इसकी परीक्षा ली और परीक्षा में यह पूर्णरूपेण उत्तीर्ण हुई तो उसने प्रसन्न होकर महल की कोकिल-कंठी परिचारिकाओं को संगीत सीखने के लिए इसके सुपुर्द कर दिया। इसका पुत्र खुर्रम (शाहजहां) संगीत में इतना पारंगत था कि तानसेन का उत्तराधिकारी लालखां खुर्रम का नाम लेकर अपना कान पकड़ता था। (गुबारेखातिर, हिन्दी, पृष्ठ २७४।)

३. **फनातुलनिसा बेगम**—एक कश्मीरी मुल्ला शाहजमा की लड़की थी। दरिद्रता के कारण बाप ने इसे अपने एक मित्र के सुपुर्द कर दिया, जो शिया था। उसने इसे अपनी बेटी बना लिया और इसके जवान होने पर जब मुल्ला ने इसे वापस मांगा, तो उसने देने से इन्कार कर दिया। संयोग से उन्हीं दिनों जहांगीर का पहली बार कश्मीर जाना हुआ और मुल्ला ने अपनी लड़की वापस दिलवाने की उससे प्रार्थना की। जब वह सामने लायी गयी, तो जहांगीर उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो गया और उससे शादी कर ली। परवेज इसी का पुत्र था। (अत्यधिक मदिरापान के कारण १६२६ में परवेज की मृत्यु हुई। —गोयलीय)

४. **नूरजहां बेगम** – इसका वास्तविक नाम महरुन्निसा था। यह खुरासान के बादशाह के वजीर ख्वाजा मुहम्मद शरीफ की पोती और मिर्जा गयास की बेटी थी। गयास ने परिस्थितियों से लाचार होकर अपना वतन छोड़कर भारत की ओर प्रस्थान किया। कंदहार के करीब पत्नी को प्रसवपीड़ा हुई और वहीं महरुन्निसा जनमी। ऐसे आड़े समय में एक काफिले के सरदार ने इनकी सहायता की और उसी के प्रभाव से अकबर के दरबार तक इनकी पहुंच हुई। नूरजहां जब जवान हुई, जहांगीर उसे अपना हृदय दे बैठा। मगर अकबर यह संबंध नहीं चाहता था। उसने नूरजहां की शादी शेर अफगन से करा दी। इससे जहांगीर बहुत छटपटाया, लेकिन उस वक्त उसकी एक न चली। अकबर की मृत्यु के बाद राज्यासीन होने पर शेर अफगन का कत्ल करवाकर उसने महरुन्निसा को अपनी मलिका बना

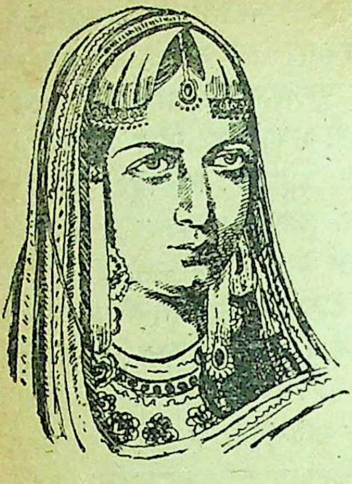

मुमताजमहल

लिया और उसे नूरजहां का खिताब दिया। नूरजहां का जहांगीर पर इतना प्रभाव था कि वह मदिरापान में मस्त रहता था और शासन यह करती थी। यहां तक कि सिक्कों पर भी उसका नाम अंकित होने लगा था।

(मलिका बनते ही नूरजहां ने अपने पिता गयासबेग को 'एतमादुल्ला' की पदवी से विभूषित करके उच्च पद पर प्रतिष्ठित किया। अपने भाई एतमादखां को महत्त्वपूर्ण मंत्री का पद देकर उसकी शक्ति बहुत बढ़ायी। यही आसफखां के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसकी पुत्री से खुर्रम (शाहजहां) का विवाह किया, ताकि जहांगीर के बाद भी अपना प्रभुत्व बना रहे। मगर यह चाल विफल रही, क्योंकि जहांगीर के तीसरे पुत्र शहरयार से उसने अपनी पुत्री (शेख अफगन से उत्पन्न) की शादी कर दी। अब वह शहरयार को जहांगीर का उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी। अतः उसका अपने भाई और उसके दामाद खुर्रम से बिगाड़ हो गया। खुर्रम विद्रोही हो गया और जहांगीर एवं नूरजहां से युद्ध करने को रणक्षेत्र में डट गया। उसके श्वसुर ने शहरयार की आंखें निकलवा दीं और नूरजहां को कैद कर लिया। उधर नूरजहां की अहंमन्यता के कारण उसका प्रधान सेनापति महावत खां भी विद्रोही हो गया और उसने जहांगीर को भी गिरफ्तार कर लिया।

जहांगीर के अंतिम समय में पिता-पुत्र (शाहजहां) में मेल हो गया। अपने दामाद शहरयार की और पति जहांगीर की मृत्यु से नूरजहां को गहरी वेदना पहुंची। वह राजनीति से संन्यास लेकर लाहौर में रहने लगी। शाहजहां उसे मृत्युपर्यंत दो लाख रुपये वार्षिक सहायता भेजता रहा। वहीं १६४५ ई. में उसकी मृत्यु हुई।—गोयलीय)

शाहजहां :

१. **मुमताज महल :** इसका मूल नाम अर्जमंदबानो था। इसे कुदसिया बेगम और आलिया बेगम भी कहते थे। इसका विवाह सन १६१२ ई. में हुआ और १६३१ में चौदहवीं संतान दहरआरा को जन्म देते समय बुरहानपुर में यह अल्लाह को प्यारी हो गयी। यह शाहजहां की अत्यंत प्रिय मलिका थी। इसी के लिए उसने आगरे में ताजमहल का निर्माण कराया था। अतः इसकी लाश आगरे ले जाकर ताजमहल में दफनायी गयी।

(आसफखां जैसे कुशल राजनीतिज्ञ की

बूत

पुत्री तथा नूरजहां जैसी महत्वाकांक्षिणी मलिका की भतीजी होते हुए भी यह शासन-कार्यों से कुछ भी सरोकार न रखकर पति-प्रेम व वात्सल्य में भीगी रहती थी।

श्री नियाज फतहपुरी ने शाहजहां की पत्नी के रूप में केवल इसी का उल्लेख किया है। असल में उसकी पांच हजार से अधिक पत्नियां और उपपत्नियां थीं। उसकी मृत्यु के समय भी अकबराबादीमहल और फतहपुरीमहल नामक बेगमें उसके समीप थीं। मुमताजमहल की चौदह संतानों में से ये चार पुत्र और दो पुत्रियां विशेष उल्लेखनीय हैं और मुगल इतिहास में स्थायी स्थान पा गये हैं—दाराशिकोह, मुहम्मद शुजा, औरंगजेब, मुरादबख्श, जहांआरा बेगम और रौशनआरा बेगम। —गोयलीय)

औरंगजेब :

१. **नवाबबाई**—औरंगजेब की यह प्रथम पत्नी किसी हिंदू सरदार की बेटी थी। यह शादी शाहजहां की इच्छा से हुई थी। औरंगजेब इससे बहुत प्रभावित था; वह जहां भी जाता, इसे अपने साथ रखता था। इससे दो पुत्र मुहम्मद सुलतान व आलम बहादुरशाह और तीन लड़कियां जेबुन्निसा, जीनतुलन्निसा और बदरुन्निसा उत्पन्न हुए। इनमें जेबुन्निसा फारसी की बहुत अच्छी शाइरा थी और अपनी विद्या-बुद्धि एवं गुणों के कारण बहुत प्रसिद्ध हुई। नवाबबाई का पुत्र आलमबहादुर शाह औरंगजेब के बाद राज्यासीन हुआ। (इसका उपनाम शाहआलम था। यही बहादुरशाह प्रथम के नाम से औरंगजेब के बाद गद्दी पर बैठा। इसकी मां नवाबबाई कश्मीर के अंतर्गत राजौरी राज्य के राजा राजू की पुत्री थी। —गो.)

२. **दिलरसबानो बेगम**—यह शाहनवाज खां सफवी की बेटी थी। इसकी पुत्री जुबेदउलन्निसा थी, जो दाराशिकोह के बेटे सिपहर शिकोह से ब्याही गयी। दिलरसबानो बेगम का प्रथम पुत्र मुहम्मद आजम (जन्म : २८ जून १६५३ ई.) उत्तराधिकार के लिए युद्ध करता हुआ जून १७०७ ई. को जाजम में मारा गया। द्वितीय पुत्र मुहम्मद अकबर (जन्म : ११ सितंबर १६५७ ई.) फारस चला गया और वहीं मर गया।

(**उदयपुरी महल** भी औरंगजेब की पत्नी थी। यह जार्जिया की रहने वाली थी और पहले दाराशिकोह के महल में दासी थी। मुगल बादशाहों के लाख प्रयत्न करने पर भी उदयपुर के शीशोदिया राणाओं ने अपने घर की एक भी कन्या उन्हें नहीं दी थी। उसकी खीझ मिटाने के लिए औरंगजेब ने दाराशिकोह की इस रखैल को अपनी पत्नी बनाकर 'उदयपुरी महल' का खिताब प्रदान किया। इसका बेटा मुहम्मद कामबख्श २४ जनवरी १६६८ ई. को दिल्ली में जनमा और उत्तराधिकार-प्राप्ति के लिए युद्ध करता हुआ ३ जनवरी १७०९ ई. को हैदराबाद में मारा गया। औरंगजेब का एक और पुत्र १९ दिसंबर १६३९ ई. को मथुरा में जनमा और ३ दिसंबर १६७६ ई. को कैदखाने में मरा। उसकी माता का नाम अज्ञात है। —गोयलीय) **—गोयलीय कुटीर, सहारनपुर**

★

डोगरी कहानी

मुआफी

मदन मोहन

मरने वाले ने जिस समय आखिरी बार आंखें खोलीं, तो आकाश में कोई-कोई तारा दिखाई दे रहा था। खाट के सिरहाने सिर टिकाकर उसने आंगन में बिछी चारपाइयों की ओर देखा। पास ही दसवीं में पढ़ रही उसकी बेटी सुषमा सोयी थी। दूसरी चारपाई पर आठ वर्ष की पम्मी अपने से दो वर्ष छोटे भाई राजू के गले में बांहें डाले गहरी नींद सो रही थी। अगली चारपाई पर नौकरानी दुर्गा खर्राटे ले रही थी। और घर की मालकिन कृष्णा अंदर बैठक में पंखे की हवा में लेटी थी। कृष्णा सोयी थी या जाग रही थी, वह नहीं जान सकता था। सिरहाने पर सिर टिकाये हुए वह केवल थोड़े-से खुले हुए दरवाजे को देख सकता था, या फिर बैठक में चल रहे पंखे की 'घर्र-घर्र' सुन सकता था।

मरने वाला कितनी ही देर तक सोये हुए बच्चों, आंगन में पड़ी कुर्सियों, लोहे के तार पर लटकते कपड़ों और रसोई के द्वार के पास उगे मौलसिरी के पौधे की ओर देखता रहा। फिर उसने बड़े धीरे-से करवट बदली। करवट बदलने पर जिस ओर उसकी नजरें पड़ीं, उधर गली में खुलने वाला दरवाजा था। दरवाजे पर सांकल लगी हुई थी, फिर भी उसका कलेजा कांप गया। उसकी आंखों में कुछ चुभने लगा। उसका शरीर छटपटाने लगा और उसका मन करने लगा कि वह करवट बदल ले, किसी प्रकार भी उस दरवाजे की तरफ न देखे।......पर वह जैसे पड़ा था, वैसे ही पड़ा रहा।

दरवाजे के बाहर गली थी। गली के बाद कई अन्य गलियां। फिर बाजार, सड़कें, लोग—एक लंबी-चौड़ी दुनिया, जिसमें रह कर उसने भी अपनी उमर के पूरे चालीस वर्ष गुजारे थे। जिसमें बसते करोड़ों में से कुछ हजार उसका नाम जानते थे। कुछ एक उसका आदर करते थे और कुछ ऐसे भी थे जो उसकी 'विवशता' पर तरस भी खाते थे, उसका नाम लेने से पहले कृष्णा

का नाम लेते थे, और फिर कृष्णा के नाम के साथ कई अन्य नाम जोड़कर उसका मजाक उड़ाते थे।

'कितनी अजीब बात है! मेरे घर के बारे में लोगों को मुझसे अधिक पता था।' मरने वाले के ओंठों पर एक बिन-बुलायी, अनचाही मुस्कान उभर आयी। फिर सहसा वह मुस्कान ओंठों पर पड़ी-पड़ी ही मर गयी। उसका मुख कड़वा-कसैला होने लगा। उसके हाथ-पांव की नसें अकड़ने लगीं, शरीर सिकुड़ने लगा और आंखें बंद होने लगीं। पर उसने बंद होती आंखें बड़े जतन से खोले रखीं।

अब वह सीधा होकर लेट गया था और आकाश के बदलते हुए रंगों को बड़े गौर से देख रहा था।

०००

कहने को कृष्णा और वह पिछले पंद्रह वर्ष से एक ही छत तले रह रहे थे; पर विवाह के चार-पांच वर्ष बाद ही उनके बीच एक ऐसी दूरी आ गयी थी, जो दिन-महीने बीतने के साथ बढ़ती गयी थी और फिर दिन-ब-दिन बढ़ती उस दूरी के कारण नौबत यहां तक पहुंची कि उन्होंने आपस में बोलना भी छोड़ दिया था।

यह दूरी क्यों आयी थी? कौन जिम्मेदार था, इसका ठीक-ठीक निर्णय वह कभी नहीं कर सका था। भला इसमें कृष्णा का क्या दोष कि वह अपने महकमे में बड़ी लोकप्रिय थी। बहुत लोग उसे जानते थे, उसके अफसर उसका बड़ा आदर-सत्कार

चित्र : कमलाक्ष शेणै

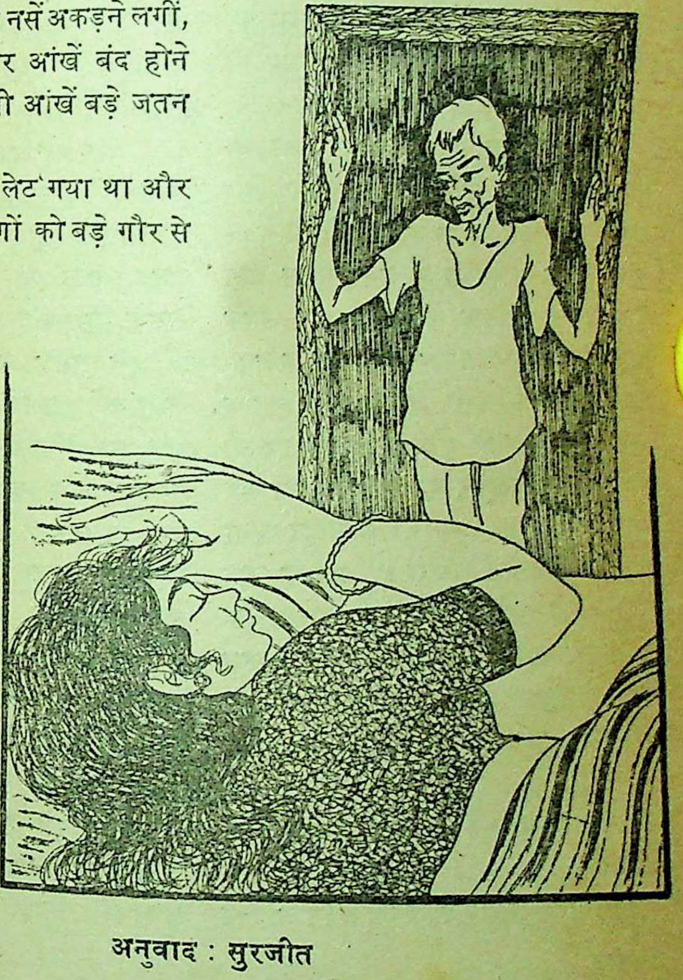

अनुवाद : सुरजीत

करते थे। बड़े-बड़े लोगों के साथ उसका उठना-बैठना था। उसे समय से पहले प्रमोशन मिल गया था। वह अफसर बन गयी थी। लोग सिफारिश के लिए उसके घर चक्कर लगाते थे, डालियां पेश करते थे।

और एक वह था कि अपने महकमे में बिलकुल तरक्की नहीं कर सका था। उसके अफसर उसके मुंह पर तो प्रशंसा करते थे; उसे बहुत भलामानस कहते और समझते थे, पर जिस मन से वे उसकी घरवाली का गुणगान करते थे, उस मन से शायद ही कभी किसी ने उसकी तारीफ की हो।

दूसरों के मुंह से अपनी घरवाली का गुणगान सुनकर उसे खिन्नता होती थी। घर में कृष्णा से मिलने आये लोगों को देखकर उसके मस्तिष्क में उथल-पुथल होने लगती थी। बैठक में कृष्णा और उसके महकमे तथा कई बार अन्य महकमों के अफसरों को गप्पें मारते, जोर-जोर से ठहाके लगाते, चाय पीते और कई बार इकट्ठे खाना खाते देखकर वह या तो कोठे पर जाकर बैठा रहता, या घर से बाहर चला जाता। और जब अंधेरा हो जाने के बाद लौटता तो दुर्गा से उसे पता चलता कि कृष्णा तो बहुत देर से बाहर गयी है। उस समय सुषमा कहती—'पापाजी ! मम्मी आप पर बहुत नाराज हैं।'

'क्यों ?'

'मम्मी कहती हैं कि आपको मैनर्स नहीं आते।'

सुषमा की बात सुनकर वह अपने आपको [illegible] अनुभव करता। क्या सचमुच उसे मैनर्स नहीं आते ? क्या वह चार लोगों के बीच बैठकर बातें नहीं कर सकता ? और उसका प्रमोशन ? एक रोज सुषमा ने ही बताया था कि कृष्णा ने उसकी तरक्की के लिए किसी से सिफारिश की है। उस दिन वह बहुत रात देर तक सोचता रहा कि क्या उसके प्रमोशन के लिए भी कृष्णा को ही कोशिशें करनी पड़ेंगी ?......और क्या वह अपनी घरवाली की सिफारिश से 'अफसर' बनना पसंद करेगा ? ऐसे कई सवाल उसके दिल-दिमाग में हर समय घुमड़ते रहते थे। ......और वह अपने आपको बहुत ही तुच्छ, मामूली, हीन प्रतीत होने लगता। उसे लगता कि वह मर्द कहलाने लायक नहीं। वह तो मिट्टी का माधो है। और इस घर में उसके लिए कोई जगह नहीं।

ऐसे समय उसको नजर दरवाजे पर लगी हुई नेम-प्लेट पर जा पड़ती—कृष्णा भरद्वाज, इंस्पेक्टरिस ! और यह सोचकर कि 'यह घर मेरा नहीं, कृष्णा का है', वह फीकी हंसी हंसता, फिर गंभीर होकर मन में निश्चय करता कि कृष्णा जब बाहर से वापस आयेगी, वह उसके पास जायेगा। उसे बुलायेगा। उससे माफी मांगेगा। लोग उसके बारे में क्या-क्या बातें करते हैं, इसकी बिलकुल परवाह नहीं करेगा ...... पर यह मौका कभी भी नहीं आ सका।

कृष्णा को देखते ही उसे प्रतीत होता, जैसे उसकी आंखों और मन में उसके प्रति घृणा और हिकारत के सिवा और कुछ नहीं

चित्र : संतोष मनचंदा

बचा है। और यह सोचकर वह ठिठक जाता। कृष्णा की ओर बढ़ते उसके कदम रुक जाते।

यदि कृष्णा ठाठें मारता हुआ समुद्र थी, तो वह समुद्र की लहरों में खो रहे तिनके से बढ़कर नहीं था। यदि कृष्णा विशाल आकाश थी, तो वह उस आकाश की विशालता में खो रहा एक मामूली-सा पंछी था। ......क्या हुआ अगर वह कृष्णा से अधिक पढ़ा-लिखा है! डिग्रियां इकट्ठा कर लेना और बात है, संसार में सफल होकर दिखाना एक और ही बात है। वह असफल था, मामूली था, घटिया था। उसे दुनिया में रहना, संघर्ष करना, आगे ही आगे बढ़ते जाना नहीं आया था।

पूरे छह वर्ष पहले उसके जीवन में कुछ दिन-हफ्ते के अंतर से, दो खास घटनाएं घटी थीं। उनमें से एक थी उसका प्रमोशन, और दूसरी थी राजू का जन्म! घर में दो-दो खुशियां हुई थीं। सगे-संबंधियों का कहना था कि लड़का बड़ा भाग्यवान जनमा है। पर वह? वह उस कमरे में ही नहीं घुसा था, जिसमें कृष्णा प्रसूता अवस्था में पड़ी थी। चालीसवें दिन, जिस समय दुर्गा राजू को लाकर उसकी गोद में डाल गयी थी, उसने उसे पहली बार देखा था। क्षण-भर शिशु की ओर देखकर उसने बैठक के दरवाजे में कुर्सी बिछाकर धूप में बैठी हुई कृष्णा की ओर नजर डाली थी। कृष्णा की आंख मुश्किल से एक क्षण के लिए उससे मिली होगी कि वह बड़े गुस्से से उठकर अंदर चली गयी और फिर दुर्गा से कहकर बच्चे को भी अंदर मंगवा लिया था।

पहली बार उस दिन पानी का गिलास उसके हाथ से छूटकर गिर पड़ा था और उसे चक्कर आ गया था। उसके बाद वह एक दिन भी नीरोग नहीं रह सका था। उसके विचार सदा-सदा के लिए बिखर गये थे। उसकी नसें हर समय तनी रहती थीं। कई दिन पहले वह अमृतसर गया था। डाक्टर ने जांच करने के बाद कहा था कि दिमाग में 'टचूमर' बन गया है और अब यह बीमारी लाइलाज है।

०००

आकाश का रंग पहले काला था। फिर

सुरमई हुआ और अब मैली-मैली सफेदी बिखर गयी थी। वह चिड़िया जो हर रोज इस समय कहीं से आकर मौलसिरी के पौधे पर बैठती थी, आज भी आकर बैठी थी और उसकी चूं-चूं पंखे की घर्र-घर्र के बावजूद साफ सुनाई दे रही थी। सहसा हवा के तेज फर्राटे चलने लगे। मरने वाले ने क्षण-भर अपने माथे से दूर ऊपर चमकते हुए तारे की ओर देखा ...... और फिर बड़े प्रयत्न से चारपाई से उठ खड़ा हुआ।

लड़खड़ाती टांगों और झूलते शरीर के साथ अपने को बड़ी कठिनाई से संभालते हुए वह उन चारपाइयों के सामने आ खड़ा हुआ, जिन पर उसके बच्चे सोये हुए थे। राजू के जन्म के बाद उसने एक बार भी बच्चों को स्नेह से नहीं बुलाया था। उसके मन में बच्चों के प्रति उदासी और घृणा पनपती गयी थी, जिसे बच्चे तक जान गये थे।

चारपाइयों के सामने खड़े होकर कुछ क्षण वह सोयी हुई लड़कियों को देखता रहा और फिर उसकी आंखें सजल हो गयीं। उसके कांपते हुए हाथ हवा में उठे और एक दूसरे के साथ जुड़ गये। वह क्षणभर इसी तरह ही खड़ा रहा और फिर बड़ी मुश्किल से झुककर उसने राजू के सिर पर हाथ फेरा।

और अब वह लड़खड़ाता हुआ बैठक की ओर जा रहा था।

कृष्णा पलंग पर सोयी हुई थी। उसकी साड़ी उसके शरीर पर से खिसक गयी थी। गहरी नींद में सोयी कृष्णा उसे बड़ी सुंदर, बड़ी मासूम, सूरज की पहली किरण-जैसी पवित्र लगी। दरवाजे की चौखट को पकड़ और वह एकटकी लगाये कृष्णा की ओर देखता रहा। उसका मन कर रहा था कि कृष्णा को जगा दे। उसके साथ दो-चार बातें करे। कुछ उसकी सुने, कुछ अपनी सुनायें; पर वह कुछ नहीं कर सका। सहसा उसका मस्तिष्क फटने लगा, उसके शरीर में कंपकंपी उठी। वह कांपती टांगों से वापस अपनी चारपाई पर लौट आया और चादर ओढ़ ली।

'नहीं......ई.....' उसके ओंठ क्षण-भर के लिए कांपे और उसने देखा कि मौलसिरी के पौधों पर सहमी-डरी चिड़िया उड़ने लगी है। उड़ती जा रही है। दूर आकाश में ...... और वह अकेला तारा, जो उसके माथे के ऊपर चमक रहा था, अब मद्धिम होता जा रहा है। फिर क्षण-भर बाद उस तारे के स्थान पर खून से रंगा हुआ एक लाल-सुर्ख क्रास उभर आया।

'यह क्रास किसका है? किसे उठाना है इसे अपने कंधों पर?' उसके सुन्न हो रहे मस्तिष्क में एक प्रश्न-चिह्न उभरा और फिर एक पल बाद उसे लगने लगा कि उसके हाथों, बांहों, छाती और टांगों में से खून बह रहा है, लगातार बहे जा रहा है।

सूरज की पहली किरण अभी धरती से करोड़ों कोस दूर थी, जिस समय मरने वाले के दोनों हाथ हवा में उठे, एक दूसरे के साथ जुड़े और फिर छाती पर आ पड़े।

बैठक में चल रहे पंखे की घर्र-घर्र की आवाज अभी भी आ रही थी।

★

पुरानी जुर्राबें

विकी बॉम

पांच साल की उम्र में मैं तैरना सीखने की कोशिश कर रहा था। परंतु जिस रस्से का मैंने सहारा ले रखा था, वह टूट गया और मैं गोते खाने लगा। अंततः मुझे पानी में से निकालकर बाहर लाया गया। इस घटना का मेरे मन पर ऐसा डर बैठ गया कि कई सालों तक मैं जब भी तैरने की कोशिश करता, मेरा सारा शरीर तन जाता। सिखाने वाले मुझसे कहते—'अपने अंगों को ढीला छोड़ दो!' पर कोई भी मुझे यह न बताता कि अंगों को ढीला कैसे छोड़ूं! सो मैं तैरना न सीख सका।

चार साल बाद मैं हार्प (एक तंतु वाद्य) बजाना सीखने लगा। उसमें मैंने अच्छी प्रगति की। लेकिन एक बार किसी सार्वजनिक कार्यक्रम में मंच पर बजाने का मौका आया, तो डर के मारे मेरी उंगलियां ऐंठ गयीं और हार्प में से कनसुरी ध्वनियां निकलीं। मंच के एक ओर खड़े मेरे शिक्षक ने मुझसे दबी आवाज में कहा—'उंगलियों को ढीला छोड़ो!' लेकिन मुझे पता नहीं था कि उन्हें ढीला कैसे छोड़ूं।

उन दिनों मैं चौक में खेलने जाता था। वहां रोज एक नया बूढ़ा आदमी नजर में आता। पुरानी किस्म के बड़े अजीब-से कपड़े पहने वह पक्षियों को दाना डालने आता था वह घंटों बेंच पर बैठा-बैठा हम बच्चों का खेलना देखता, हमसे मजाक करता और कभी हमारी गेंद उसकी ओर चली जाती तो उठाकर गजब की फुर्ती से हमारी ओर फेंक देता। हम उसे चाचा पीटर कहते थे। जब हमें पता चला कि वह पहले सर्कस में जोकर था, तो अक्सर हम उसे घेरकर उससे सर्कस की बातें सुनते।

एक दिन मैं खेलते-खेलते गिर पड़ा। चाचा पीटर ने आकर मुझे उठाया। मेरे घुटनों में से खून बह रहा था और कलाई मोच खा गयी थी।

उसने मुझे समझाया—'तुम्हें चोट इसलिए लगती है कि तुम गिरना नहीं जानते', उसने कहा—'जिंदगी में सबसे पहली चीज तुम्हें यह सीखनी चाहिये कि गिरो तो इस तरह गिरो कि चोट न लगे। चाहे कुर्सी पर से गिरो, चाहे घोड़े पर से, या चाहे सफलता की चोटी पर से—चोट बिलकुल नहीं लगनी चाहिये। जब मैं तुम्हारी उम्र का था, तो इतनी बार गिरा था कि मेरी लगभग हर हड्डी टूट गयी थी। अंत में मैंने इस ढंग से गिरना सीखा कि जरा भी चोट न लगे। आओ, मैं तुम्हें सिखाता हूं।'

चाचा पीटर ने फिर मुझे वे सब करतब सिखाये, जो सर्कस के बच्चे सबसे पहले सीखते हैं। वे करतब तभी सीखे जा सकते हैं, जब हम अपने अंगों को एकदम ढीला छोड़ दें। पर चाचा पीटर ने कभी यह नहीं कहा कि अपने अंगों को ढीला छोड़ दो! उसने तो उन्हें ढीला छोड़ने का तरीका बताया था।

उसने मुझसे कहा था—'समझो कि तुम एक पुरानी जुर्राब हो। अगर तुम पुरानी जुर्राब हो, तो बिना चोट खाये गिर सकते हो। पुरानी जुर्राब न टूट सकती है, न चोट खा सकती है। बस, इसी में सारा भेद है। सो आओ, अब पुरानी जुर्राब बनकर करतब दिखाओ। तुम्हारा सारा शरीर नरम और गुदगुदा है न? कहीं किसी अंग में तनाव नहीं है न?' यह कहते हुए उसने मुझे उठाया और नीचे पटक दिया। सच, मुझे चोट नहीं लगी। मैंने अपना पहला सबक सीखा।

यह सबक बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। बाद में न केवल शारीरिक दृष्टि से, बल्कि मानसिक दृष्टि से भी मैंने तनाव से बचना सीखा।

अधिकांश लोग समझते हैं कि आराम करते समय ही तनाव से बचा जा सकता है; मगर मैंने जाना कि आदमी काम करते हुए भी तनाव से बच सकता है, और तब वह और भी ज्यादा काम कर सकता है। कहानी लिखते समय जब मैं किसी जगह अटक जाता हूं, तो मानसिक दृष्टि से पुरानी जुर्राब बन जाता हूं। और कुछ ही देर में कहानी की गाड़ी फिर-से आगे बढ़ने लगती है। जब किसी कठिन काम या विषम स्थिति का सामना करने से मुझे घबराहट होती है, मैं पुरानी जुर्राब बनने की युक्ति इस्तेमाल करता हूं और इस तरह उस काम या स्थिति से निपटने के लिए तैयार हो जाता हूं।

जब मैं पंद्रह साल का था मेरी मां का आपरेशन होने वाला था, डाक्टरों ने उसके बचने की बहुत कम आशा बतायी थी। जब आपरेशन शुरू हुआ, तो भय से मेरे हाथ-पांव ठंडे और सुन्न हो गये, सारा शरीर निर्जीव-सा हो गया। फिर एकाएक मुझे चाचा पीटर का खयाल आया। उसी समय मैं पुरानी जुर्राब बन गया और मेरे अंग ढीले पड़ने लगे। मानसिक तनाव भी घटने लगा। आखिर मैंने उस डर से छुटकारा पा लिया। धीरे-धीरे मेरे हाथ-पांव में ऊष्मा आयी और मेरा पथराया हुआ दिमाग फिर से चेतन हुआ।

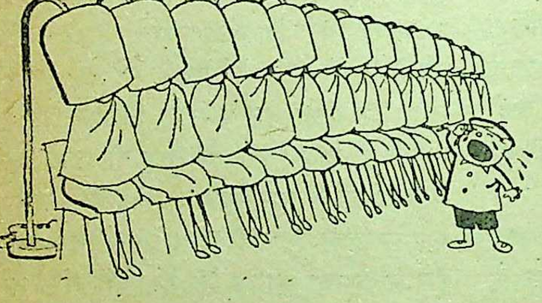

मम्मी ऽऽऽ मम्मी ऽऽ

मैंने नर्स से कुछ कागज मंगवाये और एक कहानी लिखने बैठ गया। समय और स्थान का मुझे कोई खयाल न रहा और मैं तब तक लिखता रहा, जब तक मां का आपरेशन खत्म नहीं हो गया। खतरा टल गया था। मां को होश आने में अभी कुछ देर थी। सो मैं उसके पास बैठकर फिर लिखने लगा। उन खतरनाक क्षणों में मैं जिस आसानी से लिख सका, उस आसानी से उसके बाद फिर कभी नहीं लिख पाया।

बाद में वही कहानी मैंने एक प्रतियोगिता में भेजी और उस पर मुझे पहला इनाम मिला। लेखक के तौर पर वह मेरी पहली सफलता थी।

मनुष्य के लिए आराम केवल खतरनाक स्थितियों में ही नहीं, बल्कि दैनंदिन जीवन में भी जरूरी है। यदि आप किसी पर अच्छा प्रभाव डालना चाहते हैं, तो आराम कीजिये। आत्मकेंद्रित व्यक्ति शायद ही कभी आराम कर पाते हैं और वे दूसरों को भी बेचैन किये रखते हैं। पुरानी जुर्राब बनने से आपमें दूसरों के दुःख-सुख में शरीक होने की क्षमता आती है, और तब लोग आपको चाहने लगते हैं।

जब कभी आप कोई नौकरी पाने के लिए जायें, या मेहमानों का स्वागत करें, या कार चलायें, या अपने बच्चों को पढ़ायें, तो पुरानी जुर्राब बनकर शारीरिक और मानसिक तनाव से छुटकारा पाइये।

तनाव से छुटकारा पाने का आप अभ्यास कर सकते हैं। इसका पहला कदम यह है कि अपने आप पर ऐसा नियंत्रण पाइये कि जब भी चाहें अंगों को ढीला छोड़ सकें। पाजामा पहनकर फर्श पर लेट जाइये, अपने हर एक अंग को ढीला छोड़िये। शरीर का कोई ऐसा हिस्सा ढूंढ़िये, जिसमें अभी भी तनाव हो और उसे भी ढीला छोड़िये। फिर आपका शरीर ज्यों-ज्यों ढीला पड़ता जायेगा, सांस की रफ्तार भी ढीली होने लगेगी और आप अपने आपको एकदम हल्का-फुल्का महसूस करने लगेंगे। थोड़े-से अभ्यास से आप जहां चाहें और जब चाहें, तनाव से छुटकारा पाकर पूरी तरह आराम कर सकेंगे।

★

यूरोप और अमरीका में वसंत के आगमन पर जब बर्फ की जकड़न से मुक्ति मिलती है, गृहणियां सारे घर की साफ-सफाई करती हैं। दीवारें, फर्श, चिमनी सभी कुछ साफ की जाती हैं। इस अवसर पर घरेलू दुर्घटनाएं भी बड़े पैमाने पर होती हैं। अकेले पश्चिम जर्मनी में हिसाब लगाया है कि ३,००० महिलाएं इस मौसमी सफाई के दौरान गिरकर जान गवां बैठती हैं। म्यूनिक नगर में इन दुर्घटनाओं की रोकथाम के लिए 'घर में सुरक्षा' नामक आंदोलन शुरू किया गया है। आंदोलन के कार्यकर्ताओं ने गृहिणियों को सलाह दी है कि वे सफाई करते समय फिसलनदार जूते न पहनें; ऊंचे स्थान की सफाई के लिए सीढ़ी की मदद लें, मेजों पर लकड़ी के डिब्बे जमाकर उन पर न खड़ी हुआ करें।

★

डेल्फी की देववाणी

● उदय प्रकाश अरोड़ा ●

प्राचीन यूनानियों की प्रशस्ति में बहुधा यह कहा जाता है कि वे बुद्धिसंगत और तर्कयुक्त ज्ञान के जन्मदाता थे। प्राचीन यूनान की चर्चा छिड़ने पर हमें तत्काल याद आते हैं सुकरात, अफलातून, अरस्तू, पाइथागोरस और आर्कमिडीस जैसे महान विचारक। यूनानियों के अंधविश्वासों की ओर हमारा ध्यान जाता ही नहीं। भले ही प्राचीन यूनान ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करने वाले कुछ दार्शनिक पैदा किये हों, परंतु वहां की सामान्य जनता अंधविश्वासों से ग्रस्त थी। इसका सर्वोत्तम परिचय देते हैं यूनानियों के रहस्यमय अनुष्ठान तथा देववाणी (ओरेकल) से संबंधित विश्वास। ये देववाणियां यूनानी सभ्यता की समाप्ति के पश्चात् रोमन युग में भी प्रचलित रहीं और इनमें अपोलो की देववाणी का सबसे अधिक दबदबा था।

यूनानी पुराणों में अपोलो सचाई का देवता था। ऐसा माना जाता था कि लाख प्रयत्न करने पर भी मनुष्य उसकी भविष्यवाणी से नहीं बच सकता। किंतु उसकी भविष्यवाणी का पता कैसे चले? देवता का प्रत्यक्ष दर्शन धरती के सामान्य प्राणी के लिए संभव कहां! इस कारण प्राचीन यूनानियों ने अपने प्रिय देवता अपोलो के लिए एक विशाल मंदिर बनाने का निश्चय किया। यूनान के पेलोपोनीसस प्रदेश में एक छोटा-सा गांव है—डेल्फी। प्राचीन यूनानी इस स्थान को पृथ्वी का केंद्र-बिंदु मानते थे। ऊंची-ऊंची पहाड़ियों तथा गहरी सुरम्य घाटियों के कारण इस गांव का वातावरण रहस्यमय था। सो अपोलो देवता के निवास के लिए यह स्थान सर्वथा उपयुक्त था। मंदिर का निर्माण-कार्य प्रारंभ हुआ। यूनान के सभी नगर-राज्यों ने इस पुण्यकार्य में दिल खोलकर खर्च किया।

डेल्फी की ख्याति बढ़ने लगी। सैकड़ों मील पैदल चलकर भक्तजन वहां आने लगे। अपोलो देवता एक पुजारिन के माध्यम से भविष्य की घटनाओं के बारे में घोषणा करते थे। सबको इस देववाणी में अटूट विश्वास था।

अनेक वर्ष बाद यूनान के नगर-राज्य थीब्स की रानी जोकास्टा गर्भवती हुई। भावी संतान का भविष्य जानने के लिए थीब्स का राजा लॉयस डेल्फी पहुंचा। देववाणी द्वारा उसे पता चला कि उसका भावी पुत्र पितृवध करके अपनी मां से विवाह करेगा। राजा ने इस देववाणी को

झुठलाना चाहा। पुत्र का जन्म होते ही उसके दोनों पैर नुकीले छड़ से बंधवाकर उसे पहाड़ी पर फिकवा दिया। न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी। मगर वह बच्चा इस तरह मरने वाला न था। कोरिंथ के एक गड़ेरिये की नजर उस पर पड़ी और उसे वह कोरिंथ की रानी के पास ले गया। रानी ने बच्चे को अपने बेटे की ही तरह पाला। छड़ से बंधे होने के कारण बच्चे के पैर सूज गये थे; इस कारण राजा-रानी ने उसका नाम 'एडीपस' (फूला हुआ पैर) रखा।

बड़ा होकर एडीपस भी अपना भविष्य जानने के लिए डेल्फी पहुंचा। देववाणी से उसे भी पता चला कि वह अपने पिता का वध करेगा; अपनी मां से विवाह करेगा। उसने बहुत सोचा कि इस क्रूर सत्य से कैसे बचा जाये। आखिरकार उसने कोरिंथ छोड़ने का निश्चय किया; क्योंकि वह तो कोरिंथ के राजा को ही अपना पिता समझता था। उसने थीब्स का रास्ता पकड़ा।

चलते-चलते एडीपस एक स्थान पर पहुंचा, जहां डेल्फी की ओर जाने वाली तीन सड़कें मिलती थीं। वहां थीब्स के राजा लॉयस का डेरा पड़ा हुआ था। एडीपस ने आगे जाने का रास्ता मांगा; किंतु राजा के सेवकों ने रास्ता देने से इन्कार कर दिया। बात बढ़कर मारकाट तक पहुंची और उसमें राजा और उसके सभी सेवक मारे गये।

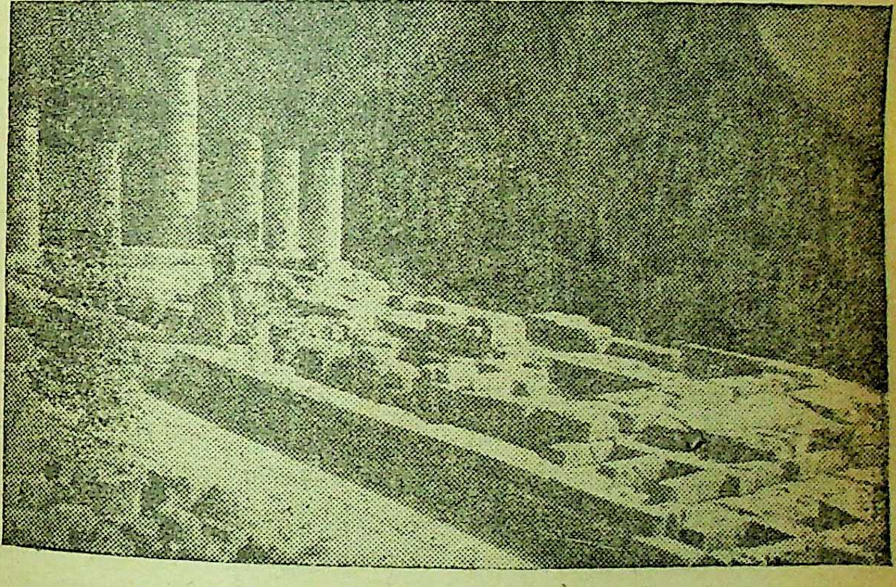

डेल्फी में अपोलो के मंदिर के अवशेष

एडीपस को क्या मालूम कि मरने वाला थीब्स का राजा और साथ ही उसका पिता भी था।

राजा लॉयस का एक सेवक किसी तरह अपनी जान बचा पाया। उसने थीब्स जाकर रानी को सारा हाल सुनाया। सारे शहर में यह खबर फैली कि डाकुओं के एक गिरोह ने राजा की हत्या कर दी। चूंकि उस समय थीब्स संकट की स्थिति में से गुजर रहा था, इस घटना की अधिक छानबीन नहीं हुई।

उन दिनों स्फिक्स नामक एक दैत्य ने थीब्स नगर-राज्य को आतंकित कर रखा था। इस दैत्य का चेहरा और सीना स्त्री के जैसे थे और शेष धड़ सिंह के समान था। उसके पंख भी थे। हर राहगीर से वह एक पहेली पूछता था और सही उत्तर न दे पाने वाले को मार डालता था। इस तरह थीब्स के बहुत मनुष्य मारे गये थे। नगर में यह राजकीय घोषणा की गयी कि जो भी आदमी स्फिक्स की पहेली का सही उत्तर देगा, विधवा रानी उससे विवाह करेगी और वही थीब्स का राजा होगा।

इधर एडीपस थीब्स पहुंचा। उसे भी स्फिक्स की पहेली के बारे में पता चला। वह इस दुनिया में अकेला था; न उसका घर था और न कोई दोस्त। उसने सोचा, क्यों न स्फिक्स के सवाल का उत्तर देने की कोशिश करूं; शायद मैं थीब्स को नष्ट होने से बचा सकूं। वह स्फिक्स के सामने पहुंचा।

स्फिक्स ने उससे सवाल किया कि वह कौन-सा प्राणी है, जो सुबह चार पैरों से, दोपहर को दो पैरों से तथा सांझ को तीन पैरों से चलता है? एडीपस का उत्तर था कि मनुष्य—क्योंकि बचपन में वह चार पैरों से, बड़ा होने पर दो पैरों से तथा बुढ़ापे म लाठी टेककर तीन पैरों से चलता है। उत्तर सही था। थीब्स नगर बच गया। विधवा रानी जोकास्टा से एडीपस का विवाह हुआ और वह थीब्स का राजा बन गया। इस प्रकार मानव की तमाम कोशिशों के बावजूद देववाणी की दोनों बातें सत्य हुईं।

एडीपस और जोकास्टा सुख से दिन गुजार रहे थे। दोनों यही समझते थे कि देववाणी झूठी निकली। कुछ समय और बीता। अब तक एडीपस दो लड़कों का पिता बन चुका था। तभी अचानक थीब्स में ताऊन (प्लेग) और अकाल का एक साथ भयंकर आक्रमण हुआ। मनुष्य और पशु धड़ाधड़ मरने लगे। जो लोग इस रोग से किसी तरह बच पाते, वे अकाल का ग्रास बनते। संकट की इस स्थिति में एडीपस ने जोकास्टा के भाई क्रीओन को अपोलो की सहायता प्राप्त करने डेल्फी भेजा। देववाणी ने संकट टालने का केवल एक ही उपाय बतलाया। वह था राजा लॉयस के हत्यारे को दंड देना। हत्यारे की खोज शुरू हुई।

भूत और भविष्य के बारे में सब कुछ जानने वाले कुछ महात्मा भी उस युग में थे। उन्हीं में से एक थे तीरिसास। एडीपस ने राजा के हत्यारे के विषय में जानकारी पाने के लिए अपने दूतों को महात्मा तीरिसास के पास भेजा। महात्मा ने उत्तर देने

से इन्कार कर दिया। दूतों ने बहुत कोशिशें कीं; किंतु कोई फल न निकला। स्वयं एडीपस भी महात्मा के पास पहुंचा। महात्मा तब भी चुप रहे, तो वह झल्ला उठा और उन्हें ही अपराधी समझ बैठा। महात्मा तीरिसास से यह न सहा गया। क्रुद्ध होकर उन्होंने सत्य का उद्घाटन करते हुए कहा कि स्वयं एडीपस ही राजा लॉयस का हत्यारा है। भला कौन इसमें विश्वास करता! तीरिसास को पागल समझा गया। जोकास्टा को भी विश्वास नहीं हुआ। महात्मा और देववाणी के कथनों में सबका विश्वास हट गया।

एक दिन एडीपस के साथ लॉयस की मृत्यु की चर्चा करते हुए जोकास्टा कहने लगी कि देववाणी ने तो घोषणा की थी कि लॉयस अपने पुत्र के हाथों मारा जायेगा; मगर लायस तो कुछ डाकुओं के द्वारा उस जगह मारा गया, जहां डेल्फी की ओर जाने वाली तीन सड़कें मिलती हैं। यह सुनकर एडीपस को कुछ-कुछ संदेह हुआ। उसने पूछा कि यह घटना कब घटित हुई? जोकास्टा ने बताया कि तुम्हारे थीब्स पहुंचने के ठीक पहले।

अभी एडीपस कुछ सोच ही रहा था कि कोरिंथ से अधेड़ उम्र का एक दूत आया और उसने कोरिंथ के राजा पॉलिबस की मृत्यु का समाचार सुनाया। यह सुनकर एडीपस दुःखी हुआ; किंतु साथ ही उसने यह सोचकर राहत की सांस भी ली कि चलो, मेरे हाथों मेरे पिता का वध नहीं हुआ, देववाणी झूठी निकली। यह बात उसने दूत से भी कही। किंतु दूत को तो पिछला सारा इतिहास मालूम था। उसने एडीपस को बतलाया कि तुम कोरिंथ के राजा के सगे पुत्र नहीं हो; बल्कि कोरिंथ की रानी ने एक गड़रिये से तुम्हें गोद लिया था। गड़रिये की खोज का आदेश जारी हुआ। आखिरकार वह मिला। धीरे-धीरे सब बातें स्पष्ट हुईं। यह सब कुछ असह्य था, एक भयानक सत्य था। रानी जोकास्टा ने आत्महत्या कर ली। एडीपस ने अपनी जान तो नहीं गंवायी, मगर आंखें फोड़ लीं।

इसी डेल्फी की देववाणी से यूनान के एक और राजा पेलिआस को पता चला था

अपोलो, ओलिम्पिया संग्रहालय, यूनान

कि एक सैंडल (चप्पल) पहनने वाला उसी का कोई संबंधी, उसकी मृत्यु का कारण होगा। वह संबंधी था जैसन। पेलिआस ने उसे अनेक असाध्य कार्यों में लगाया, ताकि वह जिंदा बच न सके। किंतु अपोलो की वाणी कैसे टल सकती थी!

प्रसिद्ध यूनानी वीर हेराक्लीज से रुष्ट होकर देवी हरा ने उसे पागल बना दिया। इस पागलपन में हेराक्लीज ने स्वयं अपने तीन पुत्रों तथा पत्नी मेगारा को मार डाला। पागलपन दूर होने पर उसे अपने कुकर्मों पर बहुत ग्लानि हुई और प्रायश्चित्त का उपाय पूछने वह डेल्फी पहुंचा। देववाणी ने उसे राजा यूरीस्थियस के यहां बारह वर्षों तक नौकरी करने की सलाह दी और बताया कि यह राजा प्रतिवर्ष तुम्हें किसी न किसी विकट साहस-कार्य में लगायेगा। यदि तुम जोखिम उठाकर उन बारहों साहस-कार्यों को पूर्ण कर दोगे, तो अपने पापों से छुटकारा पाने के अलावा अमर भी हो जाओगे।

इसी तरह ओरेस्टीज भी अपनी मां की हत्या करने के बाद डेल्फी पहुंचा। देववाणी ने उसे एथेन्स जाने की सलाह दी। एथेन्स की अदालत ने उसे मातृघात के अपराध से मुक्त कर दिया।

इन कथाओं में ऐतिहासिक अंश कितना है, यह कहना कठिन ही है। किंतु विभिन्न साक्ष्यों से यह सिद्ध होता है कि काफी लंबे अरसे तक डेल्फी की देववाणी में प्राचीन यूनानियों की आस्था रही। शायद उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए ही उसका उल्लेख इन कथाओं में किया गया हो।

डेल्फी में देवता से प्रश्न पूछने की विधि अत्यंत विचित्र थी। प्रश्नकर्ता को पहले देवता को भेड़, बकरे अथवा रीछ की बलि देनी पड़ती थी। फिर उसे मंदिर के तहखाने में स्थित एक कमरे में जाना पड़ता था। वहां प्रश्न मंदिर की पुजारिन को लिखित रूप में दिये जाते थे। पुजारिन की आयु पचास वर्ष से ऊपर होती थी। वह पास के कास्तालिया नामक झरने में नहाकर पहले अपने आपको शुद्ध करती थी, फिर गहरे गड्ढे के ऊपर रखी हुई एक तिपाई पर बैठती थी और मुंह में लारेल की पत्ती चबाकर नशे में मस्त व्यक्ति की मानिंद झूमती थी। देवता तब पुजारिन के शरीर में प्रविष्ट होकर उसके माध्यम से अपनी बात कहते थे।

पुजारिन के उत्तर देने का ढंग भी निराला था। अजीब-सी आवाज में वह कुछ टूटे-फूटे शब्द बोलती थी, जो साधारण आदमियों की समझ से परे होते थे। एक पेशेवर कवि पुजारिन के दिये अस्पष्ट उत्तर को छंदबद्ध वाक्यों में प्रश्नकर्ता को समझाता था। कवि की यह व्याख्या भी अत्यंत अस्पष्ट होती थी और उसके अनेक अर्थ निकल सकते थे। बेचारा प्रश्नकर्ता पहले से भी अधिक उलझन में पड़ जाता था। यह भी डेल्फी के पुजारियों की एक चाल थी। यदि भविष्यवाणी सत्य निकली तो कहना ही क्या! बात गलत निकले तो कहा जाता कि प्रश्नकर्ता ने उत्तर को समझने में

गलती की। इस तरह देववाणी सदैव सत्य रहती थी। यद्यपि देववाणी एक पुजारिन के माध्यम से प्रकट होती थी, तथापि स्त्रियों का डेल्फी के मंदिर में जाना सख्त मना था।

यूनान के बाहर भी दूर-दूर तक डेल्फी की ख्याति थी। नाना देशों के राजा देवता से अपने अनुकूल उत्तर पाने के लिए बहुमूल्य भेंट चढ़ाते थे। इनमें मिस्र का राजा अमासिस तथा लीडिया का शासक क्रोसस उल्लेखनीय हैं। क्रोसस की योजना पारसीकों के विरुद्ध युद्ध करने की थी और देववाणी के परामर्श पर ही उसने यह युद्ध प्रारंभ किया; परंतु उसे बुरी तरह से हारना पड़ा। इतिहासकार हेरोडोटस ने घटना के सौ वर्ष बाद क्रोसस की इस कथा का वर्णन अत्यंत रोचक ढंग से किया है। यह कथा उसे डेल्फी के गाइडों के मुख से सुनने को मिली थी।

हेरोडोटस के अनुसार, लीडिया के शासक क्रोसस ने पारसीकों के विरुद्ध अभियान शुरू करने के पूर्व किसी देववाणी की सलाह ले लेना उचित समझा। वस्तुतः उन दिनों यूनान में डेल्फी की ही तरह विभिन्न देवताओं से संबद्ध अन्य भी अनेक देववाणी केंद्र थे। इनमें दोदोना, आम्फीआरिओन तथा ब्रानखिदै अधिक प्रसिद्ध थे। लीबिया (उत्तरी अफ्रीका) में भी अमोन देवता का ऐसा एक केंद्र था। इनमें से कहां की देववाणी सर्वाधिक विश्वसनीय है, इसकी जांच के लिए इन सब स्थलों पर क्रोसस ने अपने प्रतिनिधि भेजे। लीडिया से इन स्थानों पर पहुंचने में कम से कम सौ दिन लगते थे। प्रतिनिधियों को विभिन्न देववाणी-केंद्रों से यह पता लगाना था कि उनके प्रस्थान के सौवें दिन राजा क्रोसस क्या कर रहा था। सभी प्रतिनिधियों को तुलना के लिए अपने-अपने उत्तर क्रोसस के पास लाने थे। हेरोडोटस लिखता है कि इस परीक्षा में डेल्फी की देववाणी की बात पूर्णतः सत्य पायी गयी। छंदबद्ध पंक्तियों में अपोलो की देववाणी ने बतलाया कि क्रोसस एक कड़ाही में भेड़ और कछुए का मांस पका रहा था।

इस परख के बाद क्रोसस ने अनेक बहुमूल्य वस्तुएं देवता को समर्पित कीं, जिनमें प्रमुख

डेल्फी की रथदौड़ का प्रतिस्पर्धी एक रथचालक, डेल्फी संग्रहालय

था सफेद सोने (सोने और चांदी का एक मिश्रण) की ११७ ईंटों पर स्थापित विशुद्ध सोने का सिंह। केवल सिंह का ही भार एक चौथाई टन था। इसके अतिरिक्त सोने और चांदी के दो विशाल पात्र थे, जो मंदिर के प्रवेशद्वार पर स्थापित किये गये। हेरोडोटस ने सोने-चांदी की अन्य अनेक वस्तुओं का भी उल्लेख किया है। क्रोसस ने डेल्फी के अलावा अन्य देववाणी-केंद्रों को भी भरपूर दान दिया, यद्यपि उनकी बातें सत्य नहीं निकली थीं।

पारसीकों के विरुद्ध युद्ध करने के विषय में डेल्फी की देववाणी से क्रोसस को यह उत्तर मिला था कि यदि लीडिया के सम्राट् ने यह अभियान किया, तो निश्चित रूप से एक शक्तिशाली साम्राज्य का पतन होगा। अपने पक्ष में की गयी यह भविष्यवाणी सुनकर क्रोसस ने हमला किया, लेकिन हार खुद उसकी हुई। इस पराजय के बाद डेल्फी के पुरोहितों ने यह स्पष्टीकरण किया कि 'शक्तिशाली साम्राज्य' से देवता का तात्पर्य स्वयं लीडिया के साम्राज्य से था, न कि पारसीकों के साम्राज्य से। त्रुटि क्रोसस के समझने में मानी गयी। इतिहासकार स्ट्राबो का कथन है कि यदा-कदा डेल्फी की भविष्यवाणी भले ही गलत निकली हो, मगर तत्कालीन युग में दूसरी देववाणियों की अपेक्षा वह अधिक विश्वसनीय थी।

स्फिंक्स, ६ सदी ई. पू., डेल्फी संग्रहालय

प्रारंभ में (२५०० ई. पू.) डेल्फी में पृथ्वीदेवी 'गी' की प्रतिष्ठा थी और उसकी देववाणी चलती थी। 'गी' के बाद न्याय देवी 'थीमीज' की और अंततः अपोलो की देववाणी स्थापित हुई। यह निश्चित बात है कि उन देवियों के स्थान पर अपोलो का प्रवेश शांतिपूर्वक नहीं हुआ होगा। यूनानी पुराकथाओं में पृथ्वीदेवी 'गी' के मंदिर की रक्षा करने वाले 'पीथोन' सर्प तथा सूर्य देवता अपोलो के मध्य हुए संघर्ष का उल्लेख है। यह सर्प 'गी' देवी का पुत्र था। इस आख्यान से, मातृ-प्रधान व्यवस्था में पूर्ण विश्वास करने वाली एवं यूनान में पहले से बसी हुई जाति के तथा पितृ-प्रधान व्यवस्था में विश्वास करने वाली इंडो-यूरोपीय जाति के मध्य हुए धार्मिक संघर्ष का परिचय मिलता है। 'पीथोन' के वध के बाद ही 'गी' की देववाणी के स्थान पर अपोलो की देववाणी स्थापित हुई। कालांतर में वहां 'गी' देवी, डायोनिसस और एथेना के भी मंदिर

बने; परंतु प्रधान देवता अपोलो ही रहा।

पीथोन-वध के उपलक्ष्य में प्रति चार वर्ष पश्चात् डेल्फी में भी ओलिंपिया की तरह ही खेल-कूद का आयोजन किया जाता था। यह पर्व 'पीथिया' कहलाता था। ५८२ ई. पू. से पीथिया की ख्याति बढ़ी। इस पर्व में सर्वप्रथम देवताओं को पशुबलि चढ़ायी जाती थी। उसके पश्चात् पीथोन और अपोलो के मध्य हुए संघर्ष की कथा पर आधारित नाटक का प्रदर्शन होता था। नाटक के बाद संगीत की प्रतियोगिताएं होती थीं, अंत में होती थीं खेल-कूद की।

यूनान के बाहर डेल्फी की प्रसिद्धि ६०० ई. पू. के लगभग प्रारंभ हुई। इसी समय से विभिन्न राजाओं ने डेल्फी के पुनर्निर्माण में सहयोग दिया। क्रोसस तथा अमासिस का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। जैसे ओलिंपिक खेलों में राष्ट्रीयता की भावना प्रतिध्वनित होती थी, वैसे ही डेल्फी का स्वरूप अंतरराष्ट्रीय था।

इतिहासकार हेरोडोटस के अनुसार पारसीक युद्धों के समय (४८० ई. पू.) क्षयार्ष ने डेल्फी को लूटने के लिए अपने सैनिक भेजे। किंतु जैसे ही उसके सैनिक एथेना के मंदिर के पास पहुंचे, जोरदार गड़गड़ाहट हुई। दो विशाल पत्थर पहाड़ी पर से गिरे, जिनसे अधिकांश पारसीक सैनिकों की वहीं तत्काल मृत्यु हो गयी। डेल्फी के लिए बहुधा यूनान के नगर-राज्यों के मध्य युद्ध हो जाया करते थे।

धीरे-धीरे डेल्फी की कीर्ति धुंधलाने लगी। देववाणी के अधिकारियों पर पक्षपात तथा भ्रष्टाचार के आरोप लगाये गये। रोमनों ने इस देववाणी को कभी बहुत महत्त्व नहीं दिया। रोमन सेनापति सुला ने अनेक बहुमूल्य वस्तुएं डेल्फी से चुरायीं। देववाणी को अपने प्रतिकूल पाकर सम्राट नीरो ने डेल्फी को तहस-नहस कर डाला और ५०० मूर्तियां लूटीं। मगर इस लूट के बाद भी पोसेनियस (२०० ई.) ने डेल्फी को स्मारकों तथा मूर्तियों से भरा हुआ पाया था।

यूनान में ईसाई धर्म के प्रवेश के बाद डेल्फी का महत्त्व समाप्त हो गया। अब अपोलो की भविष्यवाणी में किसी को भी विश्वास नहीं रहा था। सम्राट कान्स्टेन्टाइन अपनी नयी राजधानी कुस्तुनतुनिया (आधुनिक इस्ताम्बूल) को सजाने के लिए अनेक कीमती और सुंदर कृतियां डेल्फी से उठा ले गया। ३९४ ई. में सम्राट थियोडोसिअस ने एक राजाज्ञा द्वारा सारे रोमन साम्राज्य में मूर्तिपूजा अवैध घोषित कर दी, और डेल्फी की देववाणी का अंत हो गया।

डेल्फी के विभिन्न मंदिर, कोषागार, क्रीडांगण, रंगशाला तथा ढेरों मूर्तियां पुरातत्त्वज्ञों द्वारा प्रकाश में लायी गयी हैं। १८९१ ई. में फ्रांस की पुरातत्त्वशाला ने यहां विशाल पैमाने पर उत्खनन-कार्य प्रारंभ करवाया, जो १९०३ ई. तक चला। आज यहां जो भी अवशेष दिखाई पड़ते हैं, वे मुख्यत: इसी उत्खनन के परिणाम हैं।

—ए-७, यूनिवर्सिटी टीचर्स फ्लैट्स,
चैथम लाइन्स, इलाहाबाद

★

लेखक बनने की लालसा

राल्फ मूडी

मैं छोटी उम्र से ही लेखक बनने के सपने देखने लगा था। लेकिन आठवीं कक्षा के बाद मुझे जब स्कूल छोड़ देना पड़ा, तो मैंने महसूस किया कि लेखक बनने के लिए मेरी शिक्षा पर्याप्त नहीं है। फिर मेरे इक्कीसवें जन्मदिन पर मेरी मां ने मुझे एक सुंदर डायरी दी, तो मैंने उसमें अपने भावी जीवन की योजना की रूपरेखा लिखी :

'मैं जल्दी ही शादी करूंगा, मेरा बड़ा परिवार होगा, मैं काफी पैसे कमाऊंगा, और जब मैं पचास साल का हो जाऊंगा, तो फिर से स्कूल में दाखिल होकर लेखक बनने के लिए पर्याप्त शिक्षा प्राप्त करूंगा।

कई साल बीत गये। मैं अभी पचास साल का नहीं हुआ था कि मेरी बेटी ने हाईस्कूल में कहानी-लेखन का कोर्स लिया। एक दिन उसने कहानी लिखने के सिलसिले में मुझसे मदद मांगी। मैंने कहा—'मैं तो सिर्फ आठवीं तक पढ़ा हूं, तुम अपनी मां के पास जाओ।' पर वह नहीं मानी और कहने लगी—'आप इतनी बढ़िया कहानी सुनाते हैं! सो आप ही बताइये कि यह कहानी कैसे लिखूं।'

मैंने उसे कुछ सुझाव दिये। और तभी मेरे मन में लेखक बनने की लालसा नये सिरे से जागी और मैं अगले ही दिन एक स्कूल में कहानी-लेखन के कोर्स में भरती हो गया। मैं कक्षा में जाकर बैठा, तो शिक्षक ने हमें कागज देते हुए कहा—'सिर्फ एक वाक्य में लिखें कि आप लेखक क्यों बनना चाहते हैं।'

मैंने लिखा—'मैं लेखक इसलिए बनना चाहता हूं कि आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रथम विश्वयुद्ध से पहले के अमरीकी देहाती जीवन का खाका खींच सकूं।'

फिर अर्धवार्षिक परीक्षा में हमें कहा गया कि अपने अनुभवों के आधार पर पांच हजार शब्दों की एक कहानी लिखो। दस साल की उम्र में घर छोड़ने पर मैंने जो पहली नौकरी की थी, उसकी कहानी मैंने लिखी। और जब वह कहानी मुझे वापस मिली, तो शिक्षक ने उसके एक कोने पर लिखा हुआ था—'इसे केवल कहानी न रहने दो, इसे और बढ़ाओ ताकि यह पुस्तक के रूप में छप सके।'

मैं रात को घर पहुंचा, तो दफ्तर से टाइपराइटर लेकर पुस्तक टाइप करते बैठ

गया। पर मुझे यही पता नहीं था कि पुस्तकें लिखी कैसे जाती हैं।

चार घंटे तक मैं बैठा सोचता रहा। सोचते-सोचते मैं अपने बचपन के दिनों में पहुंच गया और मेरे सामने बहुत-से दृश्य आये। फिर मैं अपने पिता के बारे में सोचने लगा, तो मुझे महसूस हुआ कि वे एक असाधारण व्यक्ति थे। वे गूंगे-बहरे माता-पिता की संतान थे और आठ साल की उम्र में अपने रिश्तेदारों के यहां रहकर बोलना सीख पाये थे। बाद में वे तपेदिक के शिकार हो गये थे। लेकिन जीवन के संबंधों में उनके विचारों और धारणाओं में ऐसी स्पष्टता थी, जो मैंने किसी और में नहीं देखी थी। और ये विचार और धारणाएं उन्होंने बिना किसी उपदेश के, अपने बच्चों को दी थीं। सैंतीस साल की उम्र में उनकी मृत्यु हो गयी थी।......

रात के दस बज गये। तब मैंने फैसला किया कि मैं अपनी उम्र के आठ से ग्यारह तक के उन तीन सालों की कहानी लिखूंगा, जिनमें मैंने अपने पिता को सही-सही जाना-समझा था। और मैंने सोचा कि मैं ऐसे सीधे-सादे शब्दों में लिखूंगा कि मानो मैं दस साल की उम्र में वह कहानी सुना रहा हूं। आखिर मैंने उसे टाइप करना शुरू किया। सुबह छह बजे तक मैंने छह पृष्ठ टाइप कर लिये।

तीन महीने में मैं इतने सारे कागज टाइप कर चुका था कि उनसे मेज की दराज भर गयी। मैंने सोचा कि उनमें से शायद कुछ पृष्ठ छपने लायक निकल आयें। सो उन्हें लेकर मैं अपने शिक्षक के पास गया और बोला—'क्या आप फुरसत के समय इन्हें पढ़ने का कष्ट करेंगे? अगर इनमें कुछ छपने लायक हों, तो किसी पेशेवर लेखक से उन्हें ठीक करा दें।'

सप्ताह-भर बाद शिक्षक ने वे पृष्ठ मुझे लौटाते हुए कहा—'आपको पेशेवर लेखक की नहीं, बल्कि पेशेवर टाइपिस्ट की जरूरत है, ताकि इस पांडुलिपि को ठीक से टाइप करवाकर प्रकाशक के यहां छापने को भेजा जा सके।'

वह पांडुलिपि टाइप करवाकर मैंने एक प्रकाशक के पास भेज दी। कुछ ही दिनों में उसका पत्र आया कि वह उसे छापने को तैयार है। मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। तभी मुझे यह जानने की इच्छा हुई कि मैंने उसे लिखना कब शुरू किया था। पांडुलिपि के पहले पृष्ठ पर १६ दिसंबर १९४८ की तारीख पड़ी थी। संयोग से उस दिन मेरा पचासवां जन्मदिन था।

पुस्तक का नाम था 'लिटॅल ब्रिचिस'। वह बहुत बिकी और बेहद लोकप्रिय हुई। पाठकों के जो बहुत-से पत्र मुझे आये, उनमें सबसे बढ़िया पत्र एक छोटे-से लड़के का

था। उसने लिखा था :

'प्रिय लिटल ब्रिचिस, स्कूल में हम नौ जन हैं। हमारे शिक्षक ने आपकी पुस्तक पढ़कर हमें सुनायी। वह मुझे बहुत-बहुत पसंद आयी, क्योंकि आप इतनी कच्ची अंग्रेजी लिखते हैं कि मैं उसे समझ सकता हूं।'

इस पुस्तक के बाद मैंने अपने बचपन के अनुभवों पर कुछ पुस्तकें और लिखीं। इस शृंखला में मेरी अंतिम पुस्तक मेरे जीवन के उन दिनों के बारे में है, जब मैं किसान था। उन्हीं दिनों शहर की एक लड़की से मुझे प्यार हो गया था। मगर वह मुझसे शादी करने को तैयार नहीं थी, क्योंकि उसका खयाल था कि देहात में रहने वाले लोग अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा नहीं दे सकते। और मैं उससे हर हालत में शादी करना चाहता था। सो, मैं काम की तलाश में शहर गया। वहां मैं एक रेस्तरां में काम करने लगा और कुछ ही समय में मैंने अपना रेस्तरां खोल लिया। मुझे सफलता मिली और मिलती चली गयी। मैंने शहर में निजी घर बनाया और उस लड़की से शादी कर ली। मेरा काम बढ़ता रहा। तब एक दिन मैं कहानी लिखना सीखने के लिए स्कूल में दाखिल हुआ।

उसके बाद अगले दस साल दफ्तर में मेरी दो मेजें थीं—एक पर मैं व्यापारिक काम करता था, और दूसरी पर लिखता था। मेरी पहली पांच-छह पुस्तकें दूसरी मेज पर लिखी गयीं। अपने काम से जब भी कुछ फुरसत मिलती—पांच मिनिट से लेकर एक घंटे तक—मैं दूसरी मेज पर बैठकर लिखने लगता। आखिर एक समय आया, जब मैं अपना पूरा समय लिखने में ही लगाने लगा। और सही अर्थों में पेशेवर लेखक बन गया।

★

भारत-दर्शन

भारत के तमाम दृश्यों में से एक दृश्य भव्यता और शान में बाकी सबसे बढ़कर था। एक दिन अलस सवेरे अपने भारतीय मित्रों के संग हम कार में कन्याकुमारी पहुंचे, जो कि भारत का धुर दक्षिणी छोर है। सूर्योदय का भव्य सौंदर्य निहारने के लिए लोग वहां जाते हैं। और सचमुच स्तंभित कर देने वाला दृश्य होता है वह। सारा संसार मानो पीठ पीछे छूट जाता है, और सामने जहां तक दृष्टि का प्रसार संभव है, हिंद महासागर फैला होता है; और उसकी सतह पर से उचकने लगता है प्राचीन अग्नि देवता के मुखड़े की भांति सूर्य-मंडल। मैंने भी उस उदीयमान सूर्य को नमस्कार किया और खारे समुद्र-जल से अपना मुंह धोया। क्या यह भी अलग से कहना होगा कि भारत की खोज का अपना सपना यदि मैं जीवन में एक बार फिर सच कर सका, तो मुझे परम संतोष होगा।

—एद्‌वार्दस मेजेलेइतिस

(लेनिन एवं नेहरू पुरस्कार प्राप्त लिथआनियाई कवि)

★

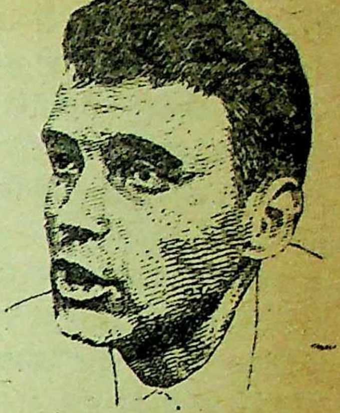

* डा. सुकमाल जैन *

उपभोक्ताओं का पक्षधर राल्फ नैडर

बात २२ मार्च १९६६ की है। अमरीकी सेनेट की एक समिति के समक्ष एक अनोखे मामले की सुनवाई हो रही थी। एक ओर थे अरबों डालर के कारोबार वाली विश्वविख्यात कंपनी जनरल मोटर्स के अध्यक्ष जेम्स रोश, और दूसरी ओर था अमरीका का एक अनजाना-सा नौजवान वकील। जेम्स रोश ने उस वकील से इस बात के लिए माफी मांगी कि उनकी कंपनी ने गैरसरकारी जासूसों की सहायता से उसकी निजी जिंदगी के राज पता लगाने की कोशिश की थी। इस चीज ने कि उनके देश का सबसे ताकतवर व्यापारिक प्रतिष्ठान एक सामान्य नागरिक को परेशान करने के लिए ओछे उपायों का सहारा ले, अमरीकी नागरिकों को चौंका दिया। उस युवा वकील का नाम रातों-रात लोगों की जुबान पर चढ़ गया। यह नाम था राल्फ नैडर।

मगर जनरल मोटर्स को राल्फ नैडर के खिलाफ ये तरीके अपनाने की बात क्यों सूझी? बात यों हुई कि नैडर ने उन्हीं दिनों एक किताब लिखी थी 'अनसेफ एट एनी स्पीड' (हर रफ्तार पर खतरनाक)। इसमें आंकड़ों और उदाहरणों से सिद्ध किया गया था कि अमरीका में बन रही शानदार कारें—विशेषत: जनरल मोटर्स की 'कार्वेयर' माडल की कारें—बहुत ही त्रुटिपूर्ण हैं और उनमें चालकों और यात्रियों के लिए कितने ही खतरे हैं। इस पुस्तक की लाखों प्रतियां हाथों-हाथ बिक गयीं और शानदार कारों की बिक्री में भारी गिरावट शुरू हो गयी। यही नहीं जनता में शोर मचा। अमरीकी सेनेट ने सारे मामले की जांच के लिए एक समिति नियुक्त की। राल्फ नैडर ने अपनी दलीलें सेनेट के सामने पेश कीं। तभी जनरल मोटर्स के कुछ अफसरों ने जासूसों और हसीन लड़कियों के जरिये नैडर के निजी जीवन पर छींटे उछालने की कोशिश

की, जिसके लिए उस कंपनी के अध्यक्ष को सेनेट के सामने माफी मांगनी पड़ी। उससे भी बढ़कर जनरल मोटर्स को अपनी कार्वेयर माडल की कारें वापस लेनी पड़ीं और अमरीकी सरकार ने कारों और टायरों के निर्माण पर अनेक सुरक्षात्मक नियम सख्ती से लागू किये।

तभी से राल्फ नैडर बीस करोड़ अमरीकी नागरिकों के हितों का स्वयंनियुक्त अवैतनिक रखवाला और वकील है। उपभोक्ताओं का शोषण और उनके हितों को क्षति पहुंचाने वाले हर कार्य के विरुद्ध उसने आंदोलन किया है।

शिशु-खाद्य (बेबी फूड) बनाने वाली कंपनियां इन खाद्यों का स्वाद बढ़ाने के लिए इनमें मानोसोडियम ग्लुटामेट मिलाती थीं। वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध हो चुका था कि इस पदार्थ के अधिक मात्रा में सेवन से पशुओं के मस्तिष्क को क्षति पहुंचती है। सो नैडर ने शिशु-खाद्यों में इसका उपयोग बंद करने के लिए आवाज उठायी और उत्पादकों को उसकी मांग स्वीकार करनी पड़ी। इसी तरह उसने खाद्यों और पेयों में मिठास के लिए साइक्लामेट जैसे हानिकारक पदार्थों के उपयोग पर भी प्रतिबंध लगवाया; जनता को मांस और अंडे आदि स्वच्छ और स्वास्थ्यवर्धक अवस्था में मिलें, इसके लिए जरूरी नियम बनवाये; डी. डी. टी. के उपयोग पर बंदिशें लगवाने के आंदोलन में हिस्सा लिया।

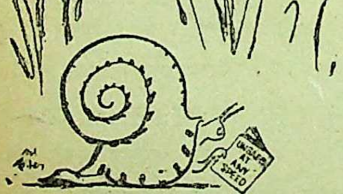

'अनसेफ एट एनी स्पीड'
['सैटर्डे रेव्यू' में एड फिशर]

सन १९७१ के सानफ्रांसिस्को भूकंप से नैडर का क्रोध भड़क उठा–प्रकृति के प्रति नहीं, भूकंप की संभावना ज्ञात होते हुए भी समय रहते उसकी चेतावनी जनता को न देने वाले प्रमादी अफसरों पर। उसने आवेशपूर्वक कहा–'इन्हें मालूम है कि ऐसे खतरों से कब आगाह किया जाये। फिर भी इन मूर्खों ने अपने ज्ञान का उपयोग क्यों नहीं किया?'

नैडर के आंदोलन और प्रचार की बदौलत बने कानूनों में से कुछ हैं–प्राकृतिक गैस की पाइप-लाइनों के सुरक्षा-नियम, कोयलाखानों में स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के नियम। इसी तरह नैडर ने देखा कि बहुत-से ट्रैक्टर अचानक अपने आप चल पड़ते हैं और किसान को भी अपनी चपेट में ले लेते हैं। उसने ऐसे दोषयुक्त माडलों पर प्रतिबंध की मांग की। अनावश्यक एक्स-रे फोटो लेने से रोगी को विकिरण से क्षति पहुंच सकती है; इस बारे में भी नैडर ने आवाज उठायी। रंगीन टेलिविजन से निकलने वाले विकिरण से दर्शक को नुक्सान न हो, इसके लिए सेट से छह फुट दूर बैठने का नियम

भी नैडर के आंदोलन के बाद ही बना।

इससे भी बड़ी बात यह है कि नैडर के आंदोलनों के कारण अमरीकी उपभोक्ता अपने अधिकारों और हितों के प्रति जागरूक हो गये हैं। सं. रा. अमरीका के ५० राज्यों में से ३४ में और अनेक नगरों में उपभोक्ता-हितरक्षण समितियां बन गयी हैं। लगभग ५० सार्वजनिक संस्थाएं उपभोक्ताओं को उनके हितों और अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिए ही स्थापित हो गयी हैं।

चार साल पूर्व राल्फ नैडर ने 'पब्लिक सिटिजन इन्कार्पोरेटेड' नामक संस्था स्थापित की, जो नैडर के जांच कार्यों में मदद देने वाले वकीलों की फीस आदि की व्यवस्था करती है। १९७२ में ६० हजार अमरीकी नागरिकों ने इस संस्था को ७५ लाख रुपये का चंदा दिया।

नैडर के आंदोलनों का स्वरूप क्या है? भाषणों द्वारा तथ्यों को उजागर करना और जनमत को जागृत करना। पेशे से वकील नैडर किसी गैरकानूनी उपाय का सहारा नहीं लेता। कानून और तथ्य उसके सबसे बड़े हथियार हैं। अखबारों, व्यावसायिक पत्रिकाओं, रिपोर्टों आदि से वह तथ्य बीनता है, कानून की छलनी में उन्हें छानता है। इस काम में मदद देने के लिए उसके पास आदर्शवादी युवक सहायकों की एक टोली है। इन युवकों ने बहुत ऊंचे अंक लेकर कानून की परीक्षाएं पास की हैं और अब बहुत अल्प वेतन पर वे नैडर के लिए अपार मेहनत करते हैं।

भाषणों द्वारा नैडर अपने विचार जनता तक पहुंचाने के अलावा अपने सार्वजनिक कार्यों के लिए धन-संग्रह भी करता है। भाषणों की फीस के तौर पर उसे साल में लगभग १५ लाख रुपये प्राप्त होते हैं, जिसमें से बहुत छोटी-सी रकम ही वह अपने ऊपर खर्च करता है। साल में वह कोई १५० भाषण देता है, जिनमें से कुछ आधे शुल्क पर होते हैं, कुछ पूरी तरह निःशुल्क।

इन भाषणों में न शब्दों का मोहक जाल होता है, न आवाज का नाटकीय उतार-चढ़ाव। नैडर माइक के सामने आता है और बिना किसी भूमिका के बोलना शुरू कर देता है। तथ्य-आंकड़े-व्याख्या की बाढ़-सी आ जाती है। अक्सर डेढ़-दो घंटे तक यह सिलसिला अबाध गति से चलता रहता है। फिर नैडर बिना किसी उपसंहार के अचानक ही श्रोताओं को धन्यवाद देकर बैठ जाता है। दो-चार क्षण सभाकक्ष में चुप्पी छायी रहती है; फिर तालियों की गड़गड़ाहट गूंज उठती है और प्रायः चार-पांच मिनिट तक गूंजती रहती है। आलोचकों का आक्षेप है—'नैडर के पास बस एक ही भाषण है।' समर्थकों का जवाब है—'क्योंकि उसका एक ही लक्ष्य है।'

नैडर का सारा जीवन इस एक लक्ष्य से परिचालित है। वह हफ्ते के सातों दिन १७-१८ घंटे मेहनत करता है और चंद घंटे की नींद लेकर सुबह ५ बजे ही उठ

जाता है। बहुत बार उसे दिन में छह भाषण तक देने पड़ जाते हैं और प्रति सप्ताह कई हवाई यात्राएं करनी पड़ती हैं। यात्रा में कोई सेक्रेटरी साथ नहीं होता; एक झोले में दो-चार कपड़े होते ह, हाथों में कई अखबार, और कागज के बड़े-बड़े लिफाफे अखबारी कतरनों से भरे हुए। ये थैले वह हवाई यात्रा के समय अपनी गोद में रखता है, भाषण के समय अपनी मेज पर, और होटल में सोते समय अपने सिरहाने। उसका खाना-पीना बहुत सादा और स्वल्प होता है। पार्टियों में जाने का न उसे शौक है, न उसे इतनी फुरसत है। हालांकि उसका चेहरा-मोहरा काफी आकर्षक है; मगर सजने-संवरने की उसने कभी चिंता नहीं की।

चूंकि बड़े-बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों से उसे जूझना पड़ता है, इसलिए अनजाने खतरों से बचने के लिए वह थोड़ी-बहुत सावधानी जरूर बरतता है। जिस छोटे-से घर में वह रहता है, उसका पता लगा पाना बहुत मुश्किल है। टेलिफोन निर्देशिका में भी आपको उसका पता नहीं मिलेगा। वह कभी अपने घर पर भेंटवार्ता या मुलाकात का आयोजन नहीं करता। टेलिफोन भी उसके कमरे से दूर बाहर रखा रहता है। कई बार टेलिफोन की घंटी लगातार बजती रहने पर भी वह जवाब नहीं देता। शायद ही कभी वह दस्तक सुनकर दरवाजा खोलता हो।

जब मैंने तुमसे दरबार में से भ्रष्टाचार मिटाने को कहा था तो मेरा मतलब मेरे अपने भ्रष्टाचार से हर्गिज नहीं था।

गहरे रंग के सूट और टाई में जब कभी वह हाट-बाजार में नजर आता है, सैकड़ों लोग उसे घेर लेते हैं और उससे तरह-तरह की बातें पूछते हैं और अपनी मुसीबतों का बखान करते हैं। नैडर अक्सर उनसे निवेदन करता है कि ये सारी बातें एक पत्र में लिखकर भेज दें। पता बिलकुल सीधा-सा—राल्फ नैडर, वाशिंगटन डी. सी.। वह गोष्ठीप्रिय सर्वथा नहीं है। बहुत जरूरी हुआ, तो टैक्सी से एक जगह से दूसरी जगह जाते समय लोगों से बातें कर लेता है।

अपना हर अभियान सही समय पर शुरू करने का महत्त्व नैडर बहुत अच्छी तरह समझता है। किसी बड़ी बेईमानी या भ्रष्टाचार का भंडाफोड़ वह अक्सर शुक्रवार की रात या शनिवार के सवेरे ही पत्रकारों के सामने करता है, ताकि शनिवार या रविवार को वह समाचार महत्त्वपूर्ण स्थान पर छप सके और उसका प्रतिवाद

भी उसके साथ न जा सके, क्योंकि उसके आरोप से संबंधित व्यक्तियों या संघटनों से संपर्क करना सप्ताहांत में प्रायः कठिन ही होता है।

'पूत के पांव पालने में ही दिख जाते हैं'—यह कहावत राल्फ नैडर के मामले में भली भांति चरितार्थ होती है। उसका जन्म २७ फरवरी १९३४ को १०,००० की आबादी वाले छोटे-से नगर विन्स्टेड (कनेक्टीकट राज्य) में हुआ। जहां उसके पिता नाद्रा नादर लेबनान से आकर बस गये थे और आज भी अपना रेस्तरां चलाते हैं। जब राल्फ चार साल का था, उसकी मां रोज नादर उसे साथ लेकर बरस-भर के लिए लेबनान चली गयी थी। सो राल्फ ने अरबी और अमरीकी संस्कृति की संयुक्त विरासत पायी है। स्कूल में पढ़ते समय ही उसने स्कूल के वृक्षों पर डी. डी. टी. छिड़कने के खिलाफ आंदोलन किया था, क्योंकि उससे निरीह चिड़ियां मर जाती थीं। फिर हार्वर्ड विश्वविद्यालय के कानून विद्यालय में पढ़ते समय उसने वहां की शिक्षा-पद्धति के बारे में टिप्पणी की थी—'हार्वर्ड वास्तव में बहुत महंगे कलपुर्जों का कारखाना मात्र है।'

उसके पिता ने एक बार कहा था—'हमने राल्फ को हमेशा यह बात महसूस करायी कि देश में न्याय के लिए कार्य करना हमारे लोकतंत्र की सुरक्षा के लिए जरूरी है। अपने बच्चों को मैंने हमेशा यह कहा है कि किसी को सलाम न बजाओ, न किसी को हिकारत की नजर से देखो।'

पिता नैडर बताते हैं—'हमने बच्चों को यह हृदयंगम कराया था कि परिवार एक बैंक है। मेहनत, कर्तव्य-परायणता और विश्वास उसमें जमा कराओ। फिर उस बैंक से वह चीज लो जिसका हर बच्चे को अधिकार है—शिक्षा।' यही बात राल्फ नैडर सब लोगों से कह रहा है। हस्ताक्षर मांगने वालों को प्रायः वह यह कहकर झिड़क देता है कि इसके बजाय देश के लिए कोई ठोस काम करो।

नैडर का दर्शन बिलकुल सीधा है, जिसे वह खुले शब्दों में कहता भी है—उन बड़ी कंपनियों के अधिकारियों की असली जगह जेल है, जो वस्तुओं की बिक्री में धोखाधड़ी, खाद्य पदार्थों में जहर की मिलावट और जानबूझकर ऐसे पदार्थों का उत्पादन और विक्रय करते हैं, जो खरीदार को बेकार करने या मार डालने वाले होते हैं। इन कार्यों को सहने वाले सरकारी कर्मचारियों की भी असली जगह जेल ही है।

एक अमरीकी चित्रकार ने राल्फ नैडर को एक आतशी शीशे के रूप में चित्रित किया था। नैडर ने अपने देश के औद्योगिक-व्यापारिक ढांचे की ही नहीं, बल्कि शासन और कानून-निर्माण के ढांचे की भी बारीकी से छानबीन की है। इसी के आधार पर नैडर और उसके साथियों ने १९७२ में एक पुस्तक लिखी—'हू रन्स कांग्रेस'। इसमें अमरीकी सरकार के विधानांग और उसके सदस्यों के तौर-तरीकों का विश्लेषण किया गया है।

इसी के आधार पर बहुतों का खयाल है

कि नैडर अवश्य ही राजनैतिक महत्त्वाकांक्षा से प्रेरित है। एक छोटी पार्टी के एक सदस्य ने १९७२ में उससे राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ने का आग्रह किया भी था। मगर नैडर ने उसे उत्तर दिया—'मुझे राजनैतिक पदों में दिलचस्पी नहीं है।' नैडर की दृष्टि में 'अमरीका में आज सबसे बड़ा काम है नागरिक सक्रियता। राजनीति उसके बाद की चीज है।'

राजनीति में नैडर उतरना चाहे या न चाहे, मगर इस समय वह जन-मानस पर काफी छाया हुआ है। युवक उसकी तारीफ इसलिए करते हैं कि वह कंप्यूटर-संचालित औद्योगिक समाज में उपभोक्ता के अधिकारों के लिए अकेला लड़ रहा है। बड़े-बड़े उससे इस कारण प्रभावित हैं कि वह वर्तमान आर्थिक ढांचे में ही रहते हुए उसे सुधारने के लिए संघर्ष कर रहा है। उसे नापसंद करने वाले भी कम नहीं हैं। व्यापारी वर्ग का आक्षेप है कि वह आत्म-प्रचार के लिए यह सब कर रहा है, और तथ्यों को खूब बढ़ा-चढ़ाकर पेश करता है। (मजेदार बात है कि यही वर्ग ऊंचा वेतन व बड़ा ओहदा देकर उसे खरीदना भी चाहता है। नैडर बताता है कि सन १९६६ में ही जनरल मोटर्स ने उसे एक बड़ा पद देना चाहा था जो उसने अस्वीकार कर दिया।) दूसरी ओर, उग्र वामपंथी मानते हैं कि वह व्यापारियों का पक्षधर है, क्योंकि वह वर्तमान आर्थिक ढांचे को ज्यों का त्यों बनाये रखना चाहता है। इन सब आलोचकों को नैडर का एक ही जवाब है कि मैं 'व्यापारियों का विरोधी' नहीं, बल्कि 'जनता का हिमायती' हूं।

इस बात में कोई संदेह नहीं कि राल्फ नैडर ने सतत संघर्ष करके अपने देश के उपभोक्ताओं को राह दिखायी है कि किस प्रकार वे आज के विराट एवं निर्वैयक्तिक व्यापार-वाणिज्य-तंत्र के मुकाबले में अपने अधिकारों के लिए लड़ सकते हैं। वैसे वह अपने को और अपने संघटन को 'एक बहुत बड़े मजाक से अधिक नहीं मानता, क्योंकि समस्या की विशालता को देखते हुए वह पूरी बालटी में एक बूंद के समान है।' वह यह भी जानता है कि पिछड़े देशों की भुखमरी और मलेरिया आदि समस्याओं की तुलना में अमरीकी उपभोक्ताओं की समस्याएं छोटी चीजें हैं। मगर उसे विश्वास है कि उसके आंदोलनों द्वारा अमरीका में जिन भूलों को सुधारा जा रहा है, दुनिया के अन्य देश भविष्य में उन भूलों से बच जायेंगे।

एक बार राल्फ नैडर ने एक समाचार-पत्र संवाददाता से कहा था—'मैं कोई सुधारक नहीं हूं। सुधारकों से अक्सर बहुत अपेक्षा की जाती है। एक स्वप्नदर्शी? नहीं, मुझे व्यावहारिक बनना है। लेकिन वास्तविक प्रश्न यह नहीं है कि मैं जो कुछ कह रहा हूं, वह क्यों कर रहा हूं; वास्तविक प्रश्न यह है कि इतने सब लोग आखिर अपने अधिकारों या कर्तव्यों की चिंता क्यों नहीं करते? अगर वे चिंता करने लगें, तो कई समस्याएं अपने आप ही सुलझ जायेंगी।'

★

स्मृति के अंकुर

कुछ वर्ष पहले मध्य प्रदेश के कुछ नौजवान लखनऊ गये। एक खुली जीप में वे लोग लखनऊ की सड़कों पर घूमते हुए अमीनाबाद पहुंचे। वहां एक ककड़ी वाला बड़ी उमंग से गा-गाकर ककड़ी बेच रहा था–'लैला की उंगलियां हैं, मजनूं की पसलियां हैं, क्या खूब ककड़ियां हैं!' नौजवानों ने ककड़ी वाले को, जो कि एक बुजुर्ग मसलमान था, बुलाया। उसने नजदीक आकर निहायत अदब से कहा – 'हुजूर, हुकुम कीजिये।' परंतु उसकी विनम्रता पर ध्यान न देते हुए नौजवान ग्राहकों ने कहा–'ककड़ी दो।' बुजुर्ग ने शांत भाव से ककड़ियों को तराशा और बड़े सलीके से सजाकर, मसाले वगैरह से लजीज बनाकर बड़े अदब से सबको एक-एक पत्ता पेश किया, अपने पैसे लिये और आगे बढ़ गया।

ककड़ियां सचमुच लजीज थीं, इच्छा हुई कि और खायी जायें, लेकिन तब तक बड़े मियां जा चुके थे। मजबूरन वे भी अपनी जीप में आगे बढ़े। थोड़ी ही देर में बड़े मियां फिर नजर आ गये। फिर आवाज लगी–वैसी ही रोबदार–'ए ककड़ी वाले।' बुजुर्ग ककड़ी वाले को नौजवानों का यह ढंग शायद पसंद न आया, फिर भी निहायत आजिजी से उसने पूछा–'हुजूर, आपने याद फरमाया?'

'हां, तुम्हारी टोकरी में जितनी ककड़ियां हैं, उनका क्या लोगे? सब हमें दे दो।'

बेचारा ककड़ी वाला हैरत में आ गया–ककड़ियां उसने कितनी खूबसूरती से तराशीं, कितने सलीके से सजायीं, किस अंदाज से पेश कीं, उसकी शीरीं जुबानी, उसकी तहजीब किसी का भी इन परदेसी नौजवानों पर कुछ असर न हुआ? उसके मर्म को चोट लगी। उसकी तहजीब का अपमान हुआ था। सो उस बेपढ़े-लिखे सड़कछाप ककड़ी वाले ने एक क्षण उन नौजवानों की ओर देखा और निहायत तहजीब से बोला–'हुजूर, जानवरों का चारा कैसरबाग मंडी में मिलता है, मैं तो ककड़ियां बेचता हूं।' और इससे पहले कि

नौजवान कुछ समझें, कुछ बोलें, वह आगे बढ़ चुका था ।

–'ताइब सैलानी', लश्कर, ग्वालियर, म.प्र.

०००

कुली

शाम को तार मिला और मैं तत्काल कानपुर के लिए तैयार हो गया । इलाहाबाद स्टेशन पहुंचते ही कुलियों ने घेर लिया । लेकिन मैंने किसी को अपना बिस्तरबंद नहीं दिया । स्वयं ही प्लैटफार्म पर ले जाने का प्रयास कर रहा था । उसी समय एक दस-बारह वर्ष का बालक फटा पाजामा और बनियान पहने सामने आ गया । सर्दी से वह कांप रहा था । बड़ा निरीह-सा लग रहा था । बोला–'पलेटफारम पर पहुंचाय दूं बाबूजी ?'

'कितने पैसे लेगा ?' मैंने मुड़कर उसे देखा ।

'जो इच्छा होय, दे देना बाबूजी ।'

मेरा इशारा पाकर वह बिस्तरबंद लेकर आगे बढ़ा । अचानक तीन-चार कुलियों ने उसे घेर लिया । एक ने कड़ककर पूछा–'कहां ले जा रहा है रे ?'

लड़का सकपका गया था । मैंने कहा–'कहीं भी ले जाये, तुमसे क्या लेना-देना?'

'लेना-देना क्यों नहीं ? यह कुली नहीं है । जो काम हमारा है, यह क्यों करेगा ?'

'कुछ नहीं, यह मेरा लड़का है । मुझे पहुंचाने जा रहा है ।'

मुझसे झगड़ा करने का फिलहाल उन लोगों ने साहस नहीं किया । लेकिन बकते जरूर रहे–'लौटने दो हरामजादे को......'

जब प्लैटफार्म पर उसने सामान उतारा, तो हांफ रहा था । मैंने पूछा–'बेटा, और कौन-कौन है तेरे घर में ?'

'दो बहनें हैं, तीन भाई हैं । दो साल हुए पिताजी नहीं रहे । आप लोगों से भीख मांगकर ले जाता हूं तो उन सबके पेट में कुछ पड़ जाता है । काम करके दो पैसा कमाना चाहता हूं, भीख मांगना अच्छा नहीं लगता । लेकिन बाबूजी, ये कुली लोग तो यह भी नहीं करने देते । बाबूजी, आप न होते तो उन्होंने मुझे जरूर मारा होता ।'

गाड़ी आने पर उसने सामान अंदर रखा । मैंने एक रुपये का नोट निकालकर उसके हाथ पर रख दिया । उसके पास रेजगारी न थी । मैंने कहा–'पूरा ही ले जा । कुछ खा-पी लेना ।'

'अच्छा बाबूजी !' उसका गला भर आया । गाड़ी ने जैसे ही रेंगना प्रारंभ किया, एक कुली उसकी ओर झपटा । उसने आंखें तरेरकर पूछा–'क्यों हरामजादे, तू मार ही खाने पर तुला है क्या ?'

वह बेचारा भागने की कोशिश करने लगा । तभी दूसरी ओर से एक हट्टा-कट्टा कुली 'साले कहीं के !' कहता हुआ झपटा । उसने तुरंत चार-पांच हाथ उसे जमा दिये । वह जमीन पर गिर पड़ा और चिल्लाने लगा ।

दूसरा कह रहा था–'जाओ साले, फिर दिखाई दिये तो तेरी......'

मुझे क्रोध तो बहुत आया, पर विवश था। गाड़ी रफ्तार पकड़ चुकी थी। फटी हुई बनियान से आंसू पोंछते हुए उस निरीह बालक की सूरत भुलाये नहीं भूलती। और उसी दिन से मैं कुलियों को सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से देख नहीं पाता। संभव है, यह मेरी कमजोरी हो, लेकिन यह बिलकुल सत्य है।

–श्यामजी पंडित, दारागंज, प्रयाग-६

०००

अंतश्चेतना की परख

अप्रैल १९७३। विद्यार्थियों को हिंदी एवं समाजशास्त्र की परीक्षाएं दिलवाने मैं ग्वालियर गया था। परीक्षा के पश्चात् जब वापस लौट रहा था, तो विद्यार्थियों की इच्छानुसार आगरे का किला तथा ताजमहल देखने का निर्णय किया।

ताजमहल को देखकर अत्यंत प्रसन्नता हुई। कुछ ही दूर पर एक स्त्री खड़ी दिखाई दी। मैंने सोचा, शायद वह स्त्री भी हमारी तरह दर्शक ही होगी और किसी का इंतजार कर रही होगी। तभी वह मेरे पास आयी और शर्म से सिर झुकाये कहने लगी–'भैयाजी, मेरे साथ कोई था, मगर वापस नहीं लौटा। उसने मुझे धोखा दिया है। यदि आप जयपुर के रेल-भाड़े का प्रबंध कर दें, तो बड़ी कृपा होगी।' और देखते ही देखते उसकी आंखों में पानी छलक आया। उसकी हालत देख मैंने उसे बीस रुपये दे दिये। हालांकि मेरे विद्यार्थियों में से कई सहायता न देने का सुझाव दे रहे थे, मगर मेरी अंतश्चेतना उसके आंसुओं के कारण उसे सच मान रही थी।

चित्र : सत्यकाम राहुल

जब जयपुर स्टेशन पर गाड़ी रुकी तो मैंने देखा वही स्त्री अपने माता-पिता के साथ मेरी ओर आ रही है। उन्होंने मुझे इनाम देना चाहा, मगर मैंने मना कर दिया। मुझे उस समय लगा कि इस संसार में सबके आंसू दिखावटी नहीं होते। मुसीबत के मारों के साथ मानवीय व्यवहार ही होना चाहिये। अगर कहीं मेरी अंतश्चेतना की परख गलत होती, तो निराश्रिता के साथ अन्याय हो जाता।

–सुभाषचंद्र 'राही', जयपुर, राजस्थान

★

तब हिंदुस्तान-पाकिस्तान-बाङला देश सब एक था। पंडित नेहरू पेशावर पहुंचे और पठानों ने उनका शानदार स्वागत किया। इतने हार पंडितजी को पहनाये गये कि मुस्कराते हुए उन्होंने सरहदी गांधी से कहा–'यहां तो मैं खूंटी समझ लिया गया हूं। जो आता है, अपना हार टांगकर चला जाता है।'

–कुलदीप तलवार

★

आस्ट्रेलियाई कहानी

शहरों का शहर

वरनॅन नोल्ज़

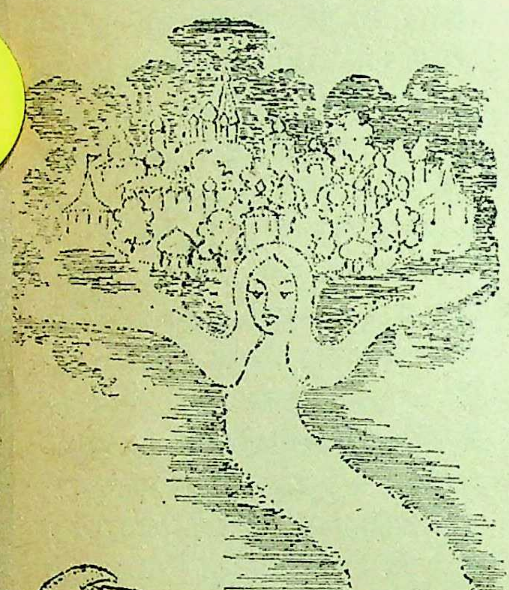

चित्र : कमलाक्ष शेणै

देश के सबसे निर्जन इलाके में एक लड़का अपनी मां के संग रहता था। उस इलाके से होकर एक बड़ी सड़क गुजरती थी। उन मौन पहाड़ियों के बीच उनकी अकेली झोपड़ी थी। मीलों तक कोई दूसरा घर न था। उस विशाल वीरानी में एक-आध पेड़ था। हां, हल्की-सी कुछ घास उगती थी, जो कुछ दिनों बाद सूख-मुरझा जाती थी। वहां एक बहुत ही छोटी-सी झील भी थी।

लड़के को अपना बचपन याद आता है और याद आते हैं मां का पीला किंतु प्यार-भरा मुखड़ा और उसके गालों को चूमते हुए मां के ओंठ। उसकी मां उन दिनों हर समय उसके साथ रहती थी।

जब वह जरा बड़ा हुआ, तो उसने पहली बार बड़ी सड़क को देखा। जब-जब वह सड़क पर आता, सड़क से उसकी आत्मीयता बढ़ती जाती और उसका एकाकीपन कम होने लगता।

सड़क को देखकर उसे हमेशा खुशी होती और वह अनुभव करता कि वह सड़क को अच्छी तरह जान-पहचान गया है।

सड़क पर सूरज की रोशनी में तेज चमचमाहट होती थी और चांद की चांदनी में शांत चांदी की-सी चमक। कई बार उसे इस बात से सड़क पर प्यार उमड़ आता कि वह यात्रियों को कितने विश्वास के साथ मार्ग की कठिनाइयों में सुरक्षित पार लगा देती है।

कई बार उसे बताया गया था कि यह

सड़क दूर समुद्र के किनारे विस्तृत मैदान में बसे हुए एक बड़े नगर तक जाती है। ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता गया, उस बड़े नगर के बारे में वह अधिक सोचने लगा। समय गुजरने के साथ-साथ सड़क के अंतिम छोर तक जाने की उसकी इच्छा प्रबलतर होती गयी। वह अकेलेपन से घोर घृणा करने लगा। अब जबकि वह बड़ी सड़क से परिचित हो गया था, उसे एकांत बहुत खलने लगा था।

एक सुबह जब सूर्य की पहली किरण ओस को छूती हुई उतरी, तो उसके साथ ही एक प्रदीप्त व्यक्तित्व ने लड़के को अत्यंत कोमल स्वर में उसका नाम लेकर पुकारा। वह चकित रह गया। 'अरे, आप मेरा नाम जानती हैं!'

'मैं तो सदा ही तुम्हारे नाम से परिचित रही हूं।'

'परंतु आप हैं कौन?'

'मैं इस बड़ी सड़क की आत्मा हूं।'

अब धूप तेज हो चली थी और घास पर ओस के बिंदु चमक रहे थे। सड़क की आत्मा बोली—'मैं तुम्हारे लिए एक गीत लायी हूं। दूसरों ने इसे पहले सुन रखा है। तुम सुनोगे?' लड़का कांपता हुआ उठा और उसने हां में सिर हिला दिया। 'तो सुनो', सड़क की आत्मा ने कहा और फिर धीरे-धीरे बहुत मधुर स्वर में गीत गाना शुरू कर दिया—उस नगर के संबंध में जिस तक वह जाती थी। जब गीत समाप्त हो गया, तो लड़का बिलख-बिलखकर रो पड़ा। किंतु बाद में उसका हृदय प्रसन्नता से बल्लियों उछलने लगा—'वह नगर बहुत ही सुंदर होगा!' वह चिल्ला उठा।

और अब उस सुंदर नगर में प्रवेश करना उसके जीवन का एकमात्र ध्येय हो गया था।

'मैं अब घर से बाहर जाना चाहता हूं।' उसने अपनी मां से कहा था।

किंतु मां आह भरकर बोली थी—'अभी नहीं, मेरे लाल! थोड़े और बड़े होने तक प्रतीक्षा करो।'

'तुम आहें क्यों भरती हो, मां?' उसने पूछा था।

मां ने आंखों में आंसू भरकर कहा था—'क्योंकि मैं बूढ़ी हूं और बहुत-से नगर देख चुकी हूं।' इससे अधिक वह कुछ नहीं कह सकी थी। 'मेरी प्यारी मां! मैं तुम्हें अपने साथ ले जाऊंगा।' उसने कहा था।

किंतु उसे अपनी योजना के विपरीत अकेले ही जाना पड़ा था; क्योंकि जब वह सोलह साल का हुआ, तो उसकी मां चल बसी थी।

'इस तरह जाने की बात तो नहीं सोची थी मैंने!' ठंडी आह भरते हुए उसने कहा—'मैंने तो अपने दिल में केवल खुशियां समेटने की बात सोची थी, लेकिन इसमें तो गम भी आकर शामिल हो गये हैं...... किंतु फिर भी मैं जा रहा हूं...... उस सुंदर नगर की ओर।' उसने अपनी कल्पना में एक बार फिर उस धीमे और मधुर गीत को सुना।

चलते-चलते उसका भारी मन हल्का होने लगा। हर रात सड़क की आत्मा सपने में आकर उसे अपनी कोमल भुजाओं

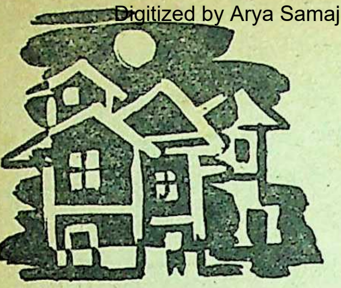

में लेकर वही मधुर गीत सुनाती रही।

यात्रा के छठे दिन उसने एक सुंदर, चमकीली कलगी वाले पक्षी से पूछा—'क्या तुम सुंदर नगर से आये हो? क्या वह मेरी कल्पना से भी अधिक सुंदर है?'

उत्तर में पक्षी ने खुशियों से भरा एक बड़ा ही मीठा गीत गाया।

'यदि शहर इतना सुंदर है जितना तुम गाते हो, तो मैं हमेशा वहीं रहूंगा।' लड़का खुशी से चिल्लाया।

दोपहर के समय पहाड़ी से उसने मैदान में बसे हुए सुंदर नगर के दर्शन किये। नगर के मकानों की संगमरमरी छतें सूर्य के प्रकाश में चमचम चमक रही थीं और दूर समुद्र ठाठें मार रहा था। वह जल्दी-जल्दी पहाड़ी से उतरने लगा। जब वह नगर के द्वार पर पहुंचा, तो अंधेरा हो चला था। एकाएक उसे अपनी चिरपरिचित आवाज सुनाई दी—'मैं और आगे नहीं जा पाऊंगी। यहां मैं तुमसे विदा लेती हूं। मैं तुम्हें तुम्हारे प्यारे नगर में सुरक्षित ले आयी हूं, है न? अच्छा, अलविदा!'

'अलविदा, प्यारी सड़क!'

उसने नगर के द्वार में प्रवेश किया और वह आह्लाद से चिल्ला उठा—'मैं यहां हूं! यहां, इस सुंदर नगर के बीच! कितने सोच-विचार और कितनी कल्पनाओं के बाद यहां आ सका हूं।'

और चकित-सा वह रंगीन भवनों, लंबे संकरे बगीचों, सड़क के बीचो-बीच क्यारियों में उगाये गये फूलों और खुशी से चहकते हुए लोगों को टुकुर-टुकुर देखता रहा।

पहले तो उसने घंटियों के धीमे नाद को नहीं सुना; किंतु धीरे-धीरे यह नाद निकट आता गया। तभी मंत्र आदि पढ़ने की ध्वनि सुनाई दी। एक क्षण बाद एक अरथी का जुलूस सामने आया। हाथों में प्रार्थना-पुस्तकें लिये पादरी अरथी के साथ चल रहे थे। पीछे मातम मनाने वाले सरक रहे थे।

शवयात्रा जब पास से गुजरी, लड़का एक स्थान पर सिमट-सिकुड़कर खड़ा हो गया। पहले तो वह समझ ही न सका कि इस सुंदर नगर में मृत्यु और शोक?

तभी एक तीखे सत्य ने उसके हृदय को बेध दिया – तब उसे बोध हुआ कि उसके साथ धोखा हुआ है। यह नगर......यह तो केवल एक सामान्य नगर है ...... एक बड़ा शहर, इससे अधिक कुछ भी नहीं। उसका मन कटुता से भर उठा और उसकी आंखों से आंसू टपकने लगे।

ऐ, भरपूर जवानी और उत्साह से भरे दिल! याद रखो, तुम्हें अभी बहुत जख्म झेलने हैं। जीवन की क्रूरता तुम्हारी कोमल एवं अनुभवहीन सुखद कल्पनाओं पर उग्र प्रहार करती रहेगी। जीवन में उस समय

तक तुम्हें घाव लगते रहेंगे, जब तक तुम संज्ञाहीन नहीं हो जाओगे। किंतु चाहे तुम्हें कितने ही घाव क्यों न लगें, पर यह पहला घाव तुम्हें सदा स्मरण रहेगा और सालता रहेगा।

वह नगर की दीवारों के बीच कैद न रह सका। उसके मन में दूसरे नगर देखने की तनिक भी उत्सुकता न रही थी। दुःख और निराशा उसे नगर से खदेड़कर बहुत दूर ले गयी। वह अंधाधुंध चलता रहा। अंत में थकान से चूर होकर गिर पड़ा। देवदार के पत्तों के ढेर पर पड़े-पड़े उसे नींद आ गयी। उस नींद में सपने में एक और सुंदर आत्मा उसे दिखाई दी। इस आत्मा ने भी धीरे-से अत्यंत कोमल स्वर में उसका नाम पुकारा।

स्वप्न में ही लड़के ने प्रश्न किया—'आप हैं कौन?'

'जिस सड़क पर तुम आराम कर रहे हो, मैं उसकी आत्मा हूं। मैं तुम्हें एक गीत सुनाने आयी हूं।'

'ओह!' लड़के कहा—'मैंने एक गीत पहले भी सुना था।'

'एक और सुनो।' सड़क की आत्मा ने कहा और जिस नगर तक वह जाती थी, उसकी शान में एक प्यारा-सा गीत मधुर स्वर में गुनगुनाने लगी। लड़का सपने में एक अनचीन्ही प्रसन्नता से रोने लगा। उसके मन में एक अजीब उत्सुकता जाग उठी। कुछ देर बाद वह जाग गया और अदृश्य होते हुए चंद्रमा की ओर निहारकर बुदबुदाया—'वह नगर अवश्य ही सुंदर होगा ......वह मेरी कल्पना के अनुरूप ही होगा।'

सवेरे वह नयी सड़क पर चल पड़ा—'इस बार मैं अवश्य ही वहां पहुंच जाऊंगा।'

किंतु जब वह नगर में पहुंचा, तो उसे महसूस हुआ कि उसका आह्वान करने वाला नगर यह तो नहीं है। भिखारियों के झुंड ने उसे घेर लिया। वे अपने घाव दिखा-दिखाकर उससे भीख मांगने लगे। उन्हें देखकर उसका मन झुंझलाहट से भर उठा।

एक बार फिर वह हार गया था। आंसू उसके गालों से ढुलकने लगे। वह शहर से बाहर सरकने लगा।

कहीं न कहीं वह नगर सुंदर जरूर है। फिर उसने सोचा, कहीं मैं पागल तो नहीं हो गया हूं—मरुभूमि के उस यात्री की तरह, जो मरीचिका के पीछे भटकता रहता है। किंतु दो-दो सड़कों के गीतों को वह मिथ्या कैसे कह सकता था? क्या उसकी आत्मा और मन ने केवल एक छलावे पर विश्वास कर लिया था? उसका दृढ़ विश्वास था कि कहीं न कहीं वह शहर जरूर मौजूद है। अगर कोई दूसरी सड़क फिर उसे पुकारे और उसे किसी दूसरे नगर का गीत सुनाये तो वह उस पर उसी तरह यकीन कर लेगा, जिस तरह पहली सड़क पर किया था।

वह अभी नौजवान था। भला इतनी जल्दी और इतनी आसानी से वह 'शहरों के शहर' को कैसे खोज सकता था! अवश्य ही उसे धैर्य से काम लेना चाहिये। क्या इस खोज के लिए वह आवश्यकता पड़ने पर अपना जीवन तक न्योछावर करने को

तैयार नहीं ? वह जानता है कि आखिरकार वह उस शहर को तलाश ही लेगा।

रात को उसने फिर एक सपना देखा। एक और आत्मा ने उसे दर्शन दिये और गीत भी सुनाया। दिन निकलने पर वह नयी यात्रा पर निकल पड़ा। इस बार उसे पूर्ण विश्वास था कि उसका स्वप्न साकार होगा। परंतु वैसा हो न सका। इतनी लंबी यात्रा के पश्चात् वह जिस महानगर में पहुंचा, वह पिछले नगरों से भी बिलकुल भिन्न था। फिर भी उसने साहस नहीं छोड़ा और अपनी तलाश जारी रखी।

समय की शोभायात्रा जारी रही और मौसम बारी-बारी आते-जाते रहे और वह 'शहरों के शहर' की तलाश में सड़कें नापता रहा।

उम्र बढ़ने के साथ-साथ असफलताएं भी एक-एक करके उसके साथ जुड़ती चली गयीं। वह जवान से बूढ़ा हो गया; मगर उसकी तलाश का कहीं अंत न दिखाई दिया।

उसके दिल के घाव अनगिनत चिह्न छोड़ गये थे; लेकिन उसका विश्वास अडिग रहा।

फिर एक दिन ऐसा भी आया, जब उसका शरीर पूरी तरह जर्जर हो गया और वह एक नदी के किनारे वृक्षों के झुरमुट के पास सड़क पर गिर पड़ा। लेटे-लेटे उसने अपने हाथ नदी में डुबो दिये।

लहरें उठ-उठकर कोमल कमल-कलियों के दिल धड़काने लगीं। उसने आह भरकर कहा–'मैं अब और आगे नहीं जा सकता। मैं थक गया हूं। बहुत थक गया हूं।' फिर उसकी आंखें मंद गयीं।

तभी उसने धीमे स्वर में एक मधुर गीत सुना। उसने यत्नपूर्वक आंखें खोलीं, तो देखा कि एक और सड़क की परम सुंदर आत्मा एक अत्यंत सुंदर नगर का, जिसकी ओर वह जाती थी, गुणगान कर रही है। आशा और आनंद से एक बार फिर उसके दिल की धड़कन बढ़ गयी। उसने उठने की कोशिश की; किंतु कमजोरी के कारण गिर पड़ा। 'मेरा शरीर बिलकुल जीर्ण हो गया है। अब मैं एक कदम भी नहीं चल सकता। जैसा तुम गा रही हो कि तुम्हारे पीछे-पीछे चलकर मैं उस "शहरों के शहर" तक पहुंच जाऊंगा, वैसा अब कैसे हो सकता है?'

वह हताश होकर रोने लगा। परंतु सड़क की आत्मा ने उसे दुलारकर कहा–'मैं मृत्यु की सड़क हूं। मेरा रास्ता एकदम सीधा है और उम्र इसमें कोई रोड़ा नहीं अटका सकती। मैं तुम्हें एक बहुत बड़े और खूबसूरत शहर की ओर ले चलूंगी।' वह पुन: गाने लगी– अत्यंत कोमल, मधुर और धीमे स्वर में। वह चिल्लाया–'इस बार यह वही नगर होगा, जहां जाने की उम्रभर मेरी प्रबल इच्छा रही है।'

वह एकदम उठ खड़ा हुआ और एक कदम आगे बढ़ाया। सहसा एक प्रगाढ़ अंधकार ने उसे चारों ओर से घेर लिया। किंतु उसे अपने पांव सड़क पर बहुत मजबूती से टिके हुए महसूस हो रहे थे। अंधेरे में सड़क की आत्मा का मंद और मधुर स्वर गूंज रहा था। **अनुवादक: राजेंद्र वोहरा**

★

नाथद्वारा की चित्रकला

लेख और फोटो : चरन शर्मा

हमारे यहां कला पुराने समय से आस्तिकता की पोषक और श्रद्धा की प्रेरक रही है। सच्ची कला-साधना किसी स्कूल-विशेष की कवायद नहीं; वह तो आत्मा का दर्शन या ब्रह्म का साक्षात्कार है। इस प्रकार कला धर्म के बहुत निकट आ गयी है, दोनों में गहरा संबंध सध गया है। जैन, बौद्ध, वैदिक आदि सभी धर्म अजंता, एलोरा और अन्य स्थलों पर मंदिरों एवं गुफाओं में कला के रूप में बोल उठे हैं।

नाथद्वारा भी धर्म और कला का ऐसा ही एक संगम-स्थल रहा है। महाप्रभु श्रीमद्-वल्लभाचार्य द्वारा प्रतिपादित वैष्णव धर्म के पुष्टिमार्गीय संप्रदाय का वह केंद्रस्थल है। वहां का संगीत एवं वहां की चित्रकला का भारतीय कला-जगत् में विशिष्ट स्थान है। राजस्थानी चित्रकला की एक शाखा नाथद्वारा शैली के मुख्य केंद्र रहे हैं उदयपुर और नाथद्वारा। ऐसा माना जाता है कि इस शैली का उद्भव आज से लगभग ३०० वर्ष पूर्व १६७१ में हुआ। उस समय सारा देश औरंगजेब के धार्मिक अत्याचारों से पीड़ित था। औरंगजेब हिंदू मंदिरों का विध्वंस करता जा रहा था। ब्रज का वह मंदिर भी, जिसमें भगवान श्रीनाथजी बिराजते थे, उसकी धर्मांधता का शिकार बना। उन विकट परिस्थितियों में उनका श्रीविग्रह नाथद्वारा पहुंचा और नाथद्वारा श्रीनाथजी की नगरी के रूप में पनपने लगा। पुष्टिमार्गीय भक्ति-संप्रदाय की छाया में यहां एक विशिष्ट चित्रशैली का उदय निश्चय ही उल्लेखनीय घटना है, जिसका भारतीय कला के इतिहास में महत्त्व है।

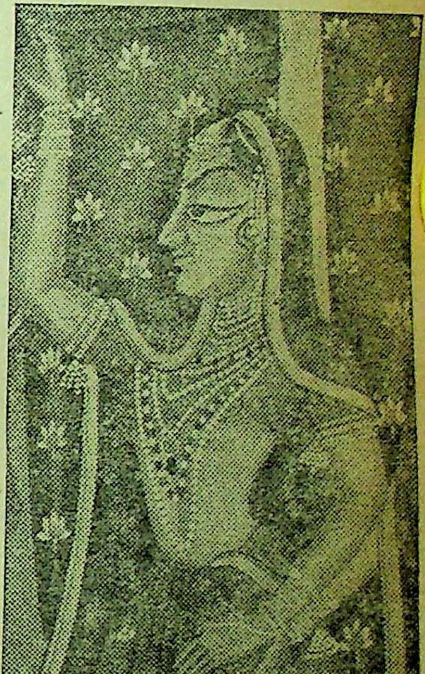

सखी : शरद पिछवाई का एक भाग

भगवान श्रीनाथजी के विभिन्न शृंगार एवं उत्सवों का चित्रण नाथद्वारा शैली का मुख्य विषय है। श्रीनाथजी वर्ष के ३६५ दिनों के ३६५ शृंगार करते हैं जो अपने आपमें बहुत ही मनोरम एवं चित्ताकर्षक होते हैं। श्रीविग्रह की यह वस्त्रालंकार-सज्जा ऋतुओं एवं कीर्तनों के आधार पर की जाती है। उन्हीं की अनुकृति नाथद्वारा चित्रों का प्रमुख विषय है।

इसके अतिरिक्त अन्य देवी-देवताओं का भी इस शैली में चित्रण (अनुकृतियां) किया गया है। इन चित्रों में पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, फूल-पत्तों आदि का अंकन भी अनोखापन लिये हुए है।

कल्पना के आधार पर दृश्य-चित्रण की उनकी अपनी अलग परंपरा है। सुंदर बंगले, नदी, पुल, झरने, पहाड़, सड़कें आकर्षक ढंग से बनाये जाते हैं। तीनों प्रहरों का चित्रण तो बड़ी खूबी से किया जाता है। इनके अतिरिक्त शिकार-प्रसंग भी चित्रित हैं।

रागमाला एवं अष्टछाप के कवियों के पदों पर आधारित नाथद्वारा चित्र बहुत ही सराहनीय हैं। राजा-महाराजाओं, उनके बंधु-बांधवों तथा राष्ट्रीय नेताओं के व्यक्ति-चित्र भी बनाये गये हैं, जो यहां के चित्रकारों की तूलिका की सप्राणता के प्रतीक हैं। वर्तमान काल में कुछ लोकशैली के चित्र जनसाधारण में बहुत ही लोकप्रिय हुए हैं।

हर एक चित्रशैली की अपनी कुछ विशेषताएं होती हैं, जो उसकी पहचान होती हैं। नाथद्वारा परंपरा की भी अपनी कतिपय विषयगत एवं शैलीगत विशेषताएं हैं। इस शैली के चित्रों में मानव-आकृतियों की नाक लंबी, चेहरे गोल, कद ठिगना और गरदन का भाग पुष्ट और भारीपन लिये होता है। चोटी, भुजबंद तथा पहोंची व लहंगे के नाड़े पर काले फुंदने लटकते नजर आते हैं।

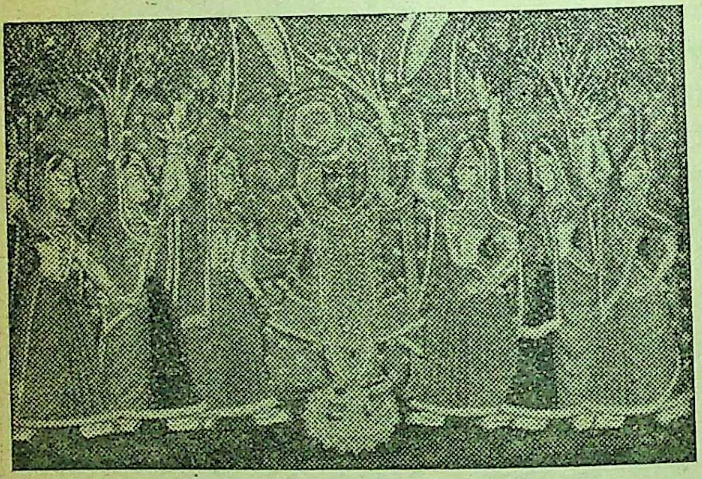

शरद-पूर्णिमा उत्सव पिछवाई का मध्यभाग

नाथद्वारा के चित्रकार पहले पत्थर, पेड़ों की छाल एवं जड़ों, आम के पत्तों, बबूल की जड़, पीली मिट्टी, सिंदूर, हिंगलू, हरा

भाटा, काजल आदि मामूली वस्तुओं से बहुत ही सुंदर रंगों का निर्माण स्वयं कर लेते थे। सफेद रंग का उपयोग बहुतायत से होता था। रंगों में गोंद मिलाकर अच्छी तरह घुटाई की जाती थी। अब तो तैयार रंगों का उपयोग होने लगा है। यहां के रंगों में सुनहरा रंग (सोने का पानी) व रुपहला रंग (चांदी का पानी) विशेष स्थान रखते हैं, जिन्हें यहां के चित्रकार अब भी स्वयं बनाते हैं।

भित्ति-चित्रण में नाथद्वारा की अपनी विशिष्ट शैली है। इसमें रंग, आकृति-संयोजन आदि सभी में अनूठापन होता है। भित्ति-चित्रण का प्रमुख स्थल है भगवान श्रीनाथजी का मंदिर। वहां प्रतिवर्ष दीपावली पर भित्ति-चित्र बनाये जाते हैं।

परंतु भित्ति-चित्रणकला मंदिर तक ही सीमित नहीं रही। विवाह आदि अवसरों पर घरों के मुख्य द्वारों पर विभिन्न प्रकार के बेल-बूटे, हाथी, घोड़े, द्वारपाल, सखियां व अन्य प्रकार की आकृतियां अंकित की जाती हैं। इस प्रकार नाथद्वारा की यह भित्तिचित्र-कला मंदिर से शुरू होकर नाथद्वारा के गली-मोहल्लों में से होती हुई राजस्थान, सिंध, गुजरात, काठियावाड़, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व अन्य भागों में भी अपना रंग बिखेरती गयी।

नाथद्वारा चित्रकला का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है पिछवाइयां। 'पिछवाई चित्रण' कपड़े पर चित्रांकन की विशिष्ट पद्धति व शैली है। उच्चकोटि की पिछवाइयां भगवान श्रीनाथजी के दर्शन के समय विभिन्न उत्सवों, पर्वों पर देखी जा सकती हैं। पिछवाई शब्द का अर्थ मूलत: शायद पीछे लटकने वाला सुसज्जित चित्रित वस्त्र ही है। कुछ पिछवाइयां रंगों के अलावा कसीदाकारी, जरी के रंगीन टुकड़ों आदि से तैयार की जाती हैं, जिन्हें वर्तमान में कोलाज कहा जा सकता है। पिछवाई के विषय कृष्ण-लीला से संबंधित होते हैं।

इसके अलावा यहां हाथीदांत, सोने-चांदी के टिकड़ों (पेन्डेंट) पर अत्यंत बारीक चित्रण किया जाता है। यहां का पुस्तक-चित्रण भी अनोखा होता है। उसका उत्कृष्ट उदाहरण है स्थानीय मोती-महल के निजी पुस्तकालय में रखा 'चित्रमय भागवत' नामक सचित्र ग्रंथ।

काल की गति और बदलती लोकरुचि परंपरागत कला को भी ग्रस लेती है। कहां हैं वे कलाकार जिन्होंने कांगड़ा शैली में प्राण फूंके थे, मुगल शैली का विकास किया था? किशनगढ़ व बूंदी के वे उस्ताद भी जिन्होंने कला की तन्मयता से साधना की थी व राजस्थानी शैली का महत्त्व बढ़ाया था, विदा हो चुके हैं। जयपुर व जोधपुर में इने-गिने चितेरे रह गये हैं। किंतु पुष्टि-मार्गीय संप्रदाय के प्रधान तीर्थ नाथद्वारा में आज भी कई कलाकार उसी तन्मयता से कार्यरत हैं। यदि उन्हें उचित संरक्षण और प्रोत्साहन न मिला तो संभव है कि यह कला-केंद्र भी एक दिन उजड़ जाये।

–१८ एवरेस्ट बिल्डिंग, पदम टेकरी,
पेडर रोड, बंबई-४०००२६

★

पांच छोटी कविताएं

उत्परिवर्तन

हमारे आचार जाने कैसे-कैसे हो गये हैं
सारे विचार रुपये-पैसे हो गये हैं।

०००

सापेक्षता

वक्त की बात है
क्षणों का दर्शन भी
क्या अनोखा प्रदर्शन है
कभी रोने से
दुःखों का हलकान होता है
तो कभी–
मुस्कान से भी नुक्सान होता है।

—प्रेमानंद चंदोला

३/३९, मालवीय नगर, नयी दिल्ली-१७

दृष्टिकोण

उनकी नजर में
जो किसी का संमान नहीं करता
'बड़ा' है ...... !
सच ही 'बड़ा' है–
पर वह नहीं
बल्कि अहम् का वह कुतुबमीनार
जो उनके भीतर खड़ा है !

०००

नकारवाद

लोग कहते हैं–
'कपड़े छोटे हो गये हैं !'
कोई नहीं स्वीकारता–
'हम बढ़ गये ......
या कि मोटे हो गये हैं !'

०००

पलायनवाद

प्रगतिशील कहलाने के इच्छुक
मेरे बंधु–
अनिश्चित दिशा की ओर
बेतहाशा भागने से पहले
अर्थ बदलो–
पलायनवाद का ...... !

—बावरा जोगी 'राजित'

द्वारा–श्री सी. एस. तुकाराम, स्टेट बैंक
कालोनी, लक्ष्मीपुर, जबलपुर, म. प्र.

★

हंसने में कितना सुख

• सत्यनारायण नाटे •

दो स्त्रियां बैठी बातें कर रही थीं। एक बोली—'सुना है, कलुआ का बाप जेल से छूटकर घर आ गया है।'

'अरे, उसका यही हाल है। एक जगह जमकर उससे रहा ही नहीं जाता।' दूसरी ने कहा।

०००

'तुमने उस आदमी को दरिया से निकालकर फिर दरिया में क्यों ढकेल दिया?'

'तुम्हें मालूम नहीं कि नेकी कर दरिया में डाल?'

०००

'देखिये साहब! अब तो हद हो गयी। हर कमरा चू रहा है। पूरा घर तालाब बना जा रहा है। बताइये, ऐसा कब तक चलेगा?' किरायेदार ने मकान-मालिक से पूछा।

'मैं कोई मौसम-विशेषज्ञ तो हूं नहीं, जो बता दूं कि कब तक चलेगा।' मकान-मालिक ने उत्तर दिया।

०००

एक बार एक महिला ने अपने बच्चे को भेजकर बाजार से १ किलो सेब मंगवाये। तोलने पर सेब कम निकले तो वह दुकानदार के पास गयी और बोली—'देखिये मैंने अपने बच्चे से १ किलो सेब मंगवाये थे। घर पर तोलने पर कम निकले।'

दुकानदार ने कहा—'श्रीमतीजी, आपने अपने बच्चे को भी तोला था या नहीं?'

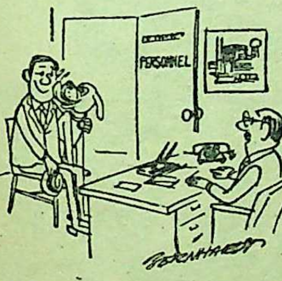

क्या इन श्वान-महाशय के अलावा भी किसी ने आपकी सिफारिश की है?

०००

पति: पानी उबल चुका है, और मुझे चाय का डिब्बा ही नहीं मिल रहा। बता जाओ न!

पत्नी: तुम्हें तो कभी कुछ नहीं मिलता। मेरे कपड़ों की अलमारी में एक काफी का डिब्बा है न, जिस पर माचिस लिखा हुआ है, उसी में है चाय।

०००

म्युनिसिपैलिटी के जल-विभाग का नल

साठे मॉल्टएक्स बिस्कुट
SATHE MALTex
SATHE MALTex BISCUITS
SATHE'S MALTex

साठे मॉल्टएक्स

इतने स्वादिष्ट हैं क्यों कि उनमें मॉल्ट है

ताज़ा, करारा व स्वाद में अनोखा

इस अनोखे स्वाद का कारण है मॉल्ट, जो इस बिस्कुट में भरपूर है। पचने में हलका यह बिस्कुट चाहे जितने भी खायें, और खाने को जी चाहता है। इसलिये कि इसमें मॉल्ट है!

उपहार में देने के लिए सुंदर पेकेट में और घर लेजाने के लिए खुला मिलता है।

IS:1011 ISI

आई. एस. आई मुहर वाले **मॉल्टएक्स** का मतलब है अच्छी किस्म की गारंटी वाले बिस्कुट

साठे बिस्कुट

heros'-SBC-54A-HIN

ठीक करने वाला [illegible] और उसने घंटी बजायी –'हम आपके नल को ठीक करने आये हैं।' गृहिणी के दरवाजा खोलने पर उसने कहा।

'लेकिन हमने तो किसी नल ठीक करने वाले को नहीं बुलाया था।' गृहिणी ने विस्मय से कहा।

'क्या आप श्रीमती सिन्हा नहीं हैं ?'

'नहीं। उन लोगों को तो यह घर छोड़े तीन महीने से ऊपर हो गये। उनके बाद हम आये हैं।'

'यह खूब रही !' नल ठीक करने वाला बड़बड़ाया–'बहुत जरूरी, बहुत जरूरी कहकर हमें बुलवाते हैं और खुद दूसरे घर में जाकर रहने लगते हैं।'

०००

एक सफल व्यापारी ने एक दिन अपने कार्यालय में एक छोटा-सा बक्सा रखवाकर अपने कर्मचारियों से कहा–'देखिये, मैं चाहता हूं, जब भी मैं कार्यालय में प्रवेश करूं, आप सबको प्रसन्न रूप से कार्यरत देखूं। इसके लिए मुझे विशेष रूप से क्या करना चाहिये, इस संबंध में यदि आप लोगों के कुछ सुझाव हों, तो पर्चों पर लिखकर इस बक्से में डाल दें।'

एक सप्ताह के बाद व्यापारी ने जब बक्सा खोला, तो उसके भीतर से केवल एक छोटा-सा पर्चा निकला, जिस पर लिखा था–'कृपया आप रबर सोल के जूतों का प्रयोग न करें।'

–नावाटोली, डालटनगंज, बिहार

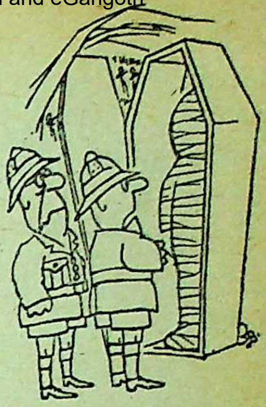

यह कोई मिस्री मोमियाई मालूम पड़ती है, जिसे लोग शायद दफनाना भूल गये।

★

दुश्मन भी दोस्त

एक बार किसी स्त्री ने लिंकन से कहा–'आपके इतने सारे दुश्मन हैं, फिर भी आप उन्हें दुश्मन नहीं मानते और उनके बारे में अच्छी बातें करते हैं, जबकि आपको उन्हें तबाह कर देना चाहिये।'

'मैं उन्हें तबाह ही तो करने में लगा हुआ हूं।'

'यह बात तो कोई भी नहीं मानेगा।'

'जब मैं उनके बारे में अच्छी बातें कहकर उन्हें अपना दोस्त बना लेता हूं तो क्या उन्हें तबाह नहीं कर देता ? तब भी क्या वे मेरे दुश्मन रह जाते हैं ?'

★

दर्द की कील

नीले दरपन-सा गगन
नीले दरपन-सी झील
चुभ गयी दिल में यों
दर्द की एक कील।
यह संकोच इंच-भर
भावना
एक सील
उड़ पहाड़ों के पीछे गयी
मौन संकेत-सी चील।
पेंच कुछ तुमने
कसे
बंधनों को
दी मैंने ढील
जाने फिर कैसे कटी
सरस जिंदगी की रील।

—संत कुमार टंडन 'रसिक'
११, सराय मीर खां, इलाहाबाद—३

एक गजल

रोज तीतर लड़ रहे हैं, हम कबूतर क्या उड़ायें
सीखचों में कैद होती जा रहीं ताजी हवाएं
हर घड़ी हैं 'क्रास' पर चढ़ते मसीहा, क्या करें
शांतिवन के लाल पाटल, राजघाटी प्रार्थनाएं
दलदली इस लीक में वल्गा धरे कब तक रहें
सामने है बंद 'ट्राफिक', क्यों न घोड़े हिनहिनायें
कटघरे में क्या करें इजहार हम अपना भला
कुर्सियों पर हैं विदूषक, मेज पर हैं अप्सराएं।

—रामचंद्र 'चंद्रभूषण'—
सीतामढ़ी कोर्ट, सीतामढ़ी, बिहार

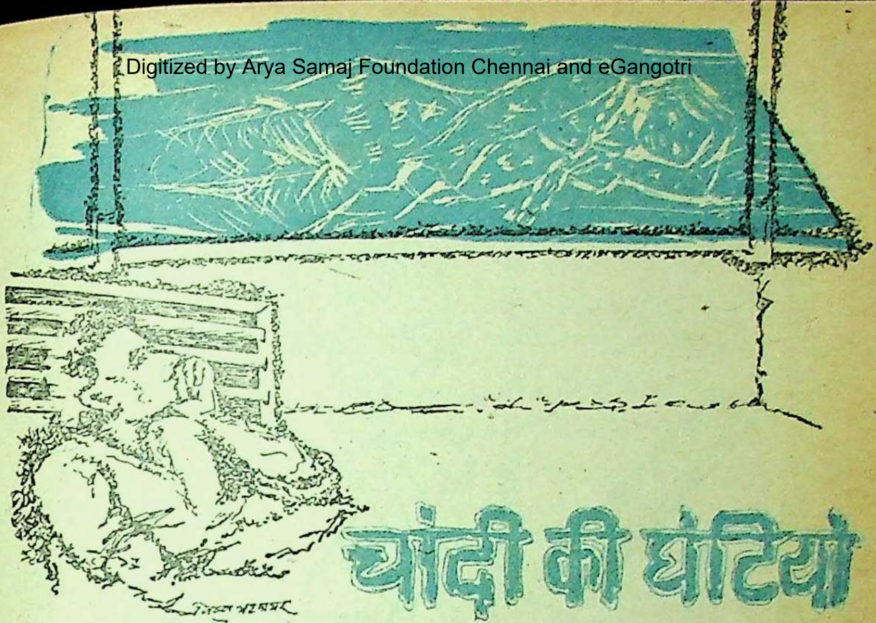

चांदी की घंटियां

डा. नरेश की हिंदी कहानी

बाबूसाहब ने अपने परिचय के दम पर टू-टायर में एक सीट दिलवा ही दी, अन्यथा मेरे लिए वह गाड़ी पकड़ना संभव न था। मैं वैसे ही भीड़भाड़ से बहुत घबराता हूं। फर्स्ट क्लास के पैसे खर्चने का सामर्थ्य है नहीं और सेकेंड क्लास में भीड़ न होने का प्रश्न ही नहीं उठता। बाबूसाहब को भी काफी परेशानी उठानी पड़ी थी। टू-टायर का कंडक्टर उनसे परिचित न था। बाबूसाहब ने उसे अपना हवाला भी दिया, लेकिन वह क्षमायाचना करके चलता बना। दसों आदमी उसके पीछे चिरौरियां कर रहे थे। तब बाबूसाहब भागकर आफिस की ओर गये थे और वहां से एक सरदारजी को पकड़ लाये थे। सरदारजी ने कंडक्टर के कान में फूंक-सी मारी और कंडक्टर ने सरदारजी के कान में वैसी ही फूंक-सी लौटा दी। सरदारजी को साथ लिये हुए बाबूसाहब मेरी ओर लपके, तो उनके चेहरे पर संतोष की झलक थी। आते ही कहने लगे—'जल्दी कीजिये। गाड़ी छूटने ही वाली है। आप अंदर चले जाइये, सीट मिल जायेगी।'

मैं डिब्बे में घुसकर खिड़की के पास वाली एक खाली सीट पर बैठ गया। खिड़की में से मुंह निकालकर मैंने बाबूसाहब का शुक्रिया अदा किया था।

'बाबू, यार, तुम्हें बहुत तकलीफ दी।'

'कैसी बातें करते हो यार!'

'नहीं भैया, तुम्हें पिछले तीन दिनों में एक क्षण भी तो अपने से अलग नहीं होने दिया। तुम्हारा दफ्तर, तुम्हारा घर, तुम्हारी पत्नी-बच्चे, सभी से छीने रखा।'

आराम की ऊंचाइयां

बजाज बहार डीलक्स पंखों से

बिना आवाज चलनेवाले।
अधिकतम हवा देनेवाले।
नवीनतम डिज़ाइनों मे।

यूनीवर्सल पंखा

ब्यूटी पंखा

बजाज इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड
४५-४७ वीर नरिमन रोड, बम्बई-४०००२३
भारत भर में शाखाएँ

heros' BE-201

बाबूसाहब ने प्यार से मेरा गाल थपथपाते हुए और अपनी आंखों को भीगने से बचाते हुए कहा—'कौन किससे चिपका रहा, यह तो तुम बेहतर जानते हो। तीन दिन तक पूरा घर भरा-भरा था। अब बहुत सूना लगेगा।'

......और गाड़ी ने सीटी दे दी। धीमी गति से बढ़ रही रेलगाड़ी के साथ-साथ बाबूसाहब चलते रहे। फिर प्लैटफार्म पर रुक गये। दूर तक हम एक दूसरे के हिलते हुए हाथों को देखते रहे। और फिर गाड़ी ने भागकर, हम दोनों को एक दूसरे की नजर की मार से परे कर दिया।

तीन दिन तक लखनऊ के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेकर काफी थक गया था। लेकिन बाबूसाहब के आनंददायक तथा स्नेह-सने सान्निध्य ने थकावट महसूस नहीं होने दी थी। मैं सोच रहा था—लोग मुझे कितना प्यार करते हैं। मेरे यार-दोस्त, बीवी-बच्चे, भाई-बहन आदि सब मुझसे कितना जुड़े हुए हैं कि उनसे बिछुड़ते ही लगता है, जैसे शरीर का कोई अंग टूट गया हो। लेकिन फिर भी न जाने क्यों अंतर की प्यास नहीं बुझ पाती। चमकती हुई रेत पर पानी की मिथ्या प्रतीति में भागता हूं, भागता चला जाता हूं, और जहां-जहां पानी का भ्रम हुआ होता है, वहां-वहां निराशा की तपती हुई रेत में पांव झुलसाकर लौट आता हूं। नहीं जानता, मेरे अंदर ऐसी कौन-सी रिक्तता है, जो 'पूर्ति' नाम के शब्द से ही अपरिचित है।

किताब खोलकर पढ़ने लगता हूं। चार-छह पंक्तियां पढ़ने के बाद आदतन अपने आस-पास जायज़ा लेने लगता हूं। सामने की बार्क में बर्थों के अंतर को पाटकर कमरा-सा बना लिया गया है। बीच वाले सामान पर दरी दोहरी करके बिछायी गयी है। सामान के ऊपर खाने-पीने का सामान रखा हुआ है। औरतें, तीन बच्चे और दो अधेड़ उम्र के पंजाबी जाट बैठे हुए हैं। लहक-लहककर पंजाबी में बातें कर रहे हैं। बेसन की रोटियों पर प्याज रखकर खा रहे हैं। सुराही से प्लास्टिक के मगों में पानी भरकर पी रहे हैं। कलकत्ता से लौट रहे हैं ये लोग। अभी तक इनकी बातचीत से इतना ही समझ पाया हूं।

मेरे बिलकुल सामने एक गंजे सज्जन बैठे हैं। बड़ी नम्रता से मुझसे किताब मांगकर पढ़ने लगे हैं। उनसे कह नहीं पाता हूं कि किताब पढ़कर मैं समय का सदुपयोग करना चाहता हूं। शायद मेरे चेहरे पर ऐसा कोई भाव भी नहीं उभरा है। अन्यथा वे देखने में इतने शरीफ लग रहे हैं कि तुरंत किताब लौटा दी होती उन्होंने।

ऊपर की बर्थों पर देखता हूं। एक बर्थ पर एक फौजी लंबी तानकर सो रहा है। उसके खर्राटे काफी परेशान करने वाले हैं। काले लंबे बूटों के तलवों का रुख हमारी ओर है। दोनों हाथ छाती पर एक दूसरे से उलझे हुए हैं और उसकी नाक खों ..... खों ..... बज रही है। दूसरी ओर की बर्थ पर एक खूबसूरत नवयुवती बैठी है। गले में पहनी

सोने की जंजीर को वह उंगलियों से बार-बार झुलाती है। पीले रंग की फूलदार कमीज उसके गोरे बदन पर बहुत ही जंच रही है। नारंगी रंग का चूड़ीदार पाजामा। सुनहरे सैंडल सामान रखने वाले जंगले पर पड़े हैं। वह मेरी ओर ही देख रही है। मेरी निगाहें उससे टकरायीं हैं और मैं जैसे उसके रूप पर मुग्ध हो गया हूं। जी चाहता है उसे देखता रहूं—बस देखता ही रहूं।

'किताब काफी इन्टेरेस्टिंग है।' किताब से नजर हटाकर सामने वाले सज्जन कहते हैं।

'जी ...... हां।'

'आप कहां जाइयेगा ?'

'चंडीगढ़। और आप ?'

'मैं तो मुरादाबाद जा रहा हूं। वहीं का रहने वाला हूं। गोरखपुर में काम करता हूं। एक जरूरी काम से जाना पड़ रहा है। वरना साहब नौकरीपेशा आदमी के पास न इतनी फुरसत, न इतना पैसा कि रोज-रोज सफर कर सके।'

चाहता हूं, वे सज्जन फिर से इस इन्टेरेस्टिंग किताब के अध्ययन में लग जायें। उनसे बातचीत करने का बिलकुल मन नहीं हो रहा है। चाहता हूं, उनकी निगाहें तुरंत मुझसे हट जायें, अलग हो जायें, किताब के पन्नों में उलझ जायें, ताकि मेरी निगाहें बर्थ पर बैठी उस औरत को, औरत के शरीर को, शरीर के अंग-अंग को छूती रहें और मेरे शरीर में वही पहले-सी गदगुदी होती रहे। वही मीठी-सी गदगुदी जो चुभती नहीं गहरे उतरती रहती है। मैं आंखें मूंदकर खिड़की से सिर टिका लेता हूं। वे सज्जन शायद समझ गये हैं कि मुझे उनका बतियाना अच्छा नहीं लग रहा। वे चुप हो गये हैं। फिर से किताब में डूब गये हैं चोर आंख से उन्हें देखता हूं। वे पढ़ रहे हैं। सामने की बार्क वाले परिवार को देखता हूं, सभी अपने में मस्त हैं। निगाहें ऊपर की ओर उठाता हूं। वह अभी भी मेरी ओर देख रही है। उसके अधरों पर एक अजीब-सी मुस्कराहट नाच रही है। वह चुप है। गले में पड़ी सोने की जंजीर से उसकी उंगलियां खेल रही हैं। उसके चेहरे से फिसलकर मेरी दृष्टि उसके वक्ष का नाप लेने लगती है। वह भी सिर झुकाकर अपने वक्ष की ओर देखती है। घबराकर निगाहें हटाता हूं तो वे पुनः उसके चेहरे पर जा पहुंचती हैं।

गीत

रात अकेली और उदास,
बस तनहाई मेरे पास।
सुधियों की गिरती उल्काएं,
मन को मार कहां ले जायें॥
लौट-लौट आती है प्यास,
रात अकेली और उदास॥
विश्वासों के झूठे दावे,
संबंधों के सब उलझावे।
कब से तोड़ चुके हैं सांस,
रात अकेली और उदास॥

—रूबी अब्बासी

मेरी परेशानी को वह भांप लेती है और मैं शर्मिंदा हो जाता हूं। लेकिन उसकी आंखों में अभी भी कोई शरारत नाच रही है। मुस्कराते हुए उसके ओंठ एक दूसरे से अलग हो गये हैं। मोतियों-जैसे उसके दांत एक क्षण के लिए देख पाता हूं। फिर जैसे शर्म से मेरी निगाहें झुक जाती हैं। आंखें बंद करके खिड़की से सिर टिका लेता हूं। सोने का अभिनय करने लगता हूं।

बाहर अंधेरा हो गया है। हवा में भी खुनकी आ गयी है। खिड़की का शीशा बंद कर लेता हूं।

'लखनऊ से आप चढ़े थे?' कंडक्टर पूछ रहा है।

'जी।'

उसके हाथ की रसीद-बुक मुझसे एक अठन्नी मांग रही है। पचास पैसे का सिक्का निकालकर उसके हाथ पर रख देता हूं। वह रसीद काटकर आगे बढ जाता है।

अब खिड़की के शीशे में उसका प्रतिबिंब दिखाई दे रहा है। मैं बर्थ की ओर देखने के बजाय शीशे पर टकटकी बांध लेता हूं। उसकी आंखें अभी भी मुझ पर टिकी हुई हैं। शीशे में उसकी नजरों को पकड़ने का प्रयास करता हूं। सफलता नहीं मिलती। फिर धीरे-से अपना सिर शीशे पर टिका देता हूं। मन चाहता है, वह उतरकर नीचे आ जाये। यदि कोई दूसरा आदमी उसके साथ नहीं है, तो आकर मेरे करीब बैठ जाये। नहीं तो टायलेट की ओर ही चली जाये। मैं बस एक मिनिट के लिए उससे बात करना चाहता हूं। मुझे विश्वास-सा हो गया है कि वह खुलकर हंसेगी तो उसकी हंसी छनछनायेगी, चांदी की घंटियों-जैसी आवाज पैदा होगी। चांदी की घंटियां, जो दूर किसी ऊंचे टीले पर बने मंदिर में बज रही हों, गोधूलि-वेला में। ...... लेकिन वह पूर्ववत् बैठी है। उसका हाथ गले मे पड़ी सोने की जंजीर से अभी भी खेल रहा है। शीशे में उसका चेहरा स्पष्ट हो गया है। बाहर अंधेरा चारों पैरों पर उतर आया है। शीशे में प्रतिबिंबित उसके चेहरे पर अपने ओंठ रख देता हूं, फिर उसके गालों पर, उसकी आंखों पर, उसके ओंठों पर।

अब उसने अपनी टांगें फैला दी हैं। पीछे रखी मोटी चादर को दोहरा-तिहरा करके सिरहाना बना लिया है उसने। और वह लेट गयी है। शीशे में से उसका चेहरा गायब हो गया है। उसके बजाय अपना ही चेहरा शीशे में देखकर आंखें मूंद लेता हूं। गाड़ी भागी चली जा रही है, पूरी रफ्तार के साथ।

बरेली स्टेशन पर गाड़ी रुकी है। पांच-सात मरियल-से सिपाही डिब्बे में घुस आये हैं। सामने बैठे परिवार के दोनों पुरुष सदस्यों से कुछ पूछताछ कर रहे हैं। सरदार लोग तलाशी देना नहीं चाहते और सिपाही तलाशी लेने पर उतारू हैं। हिंदी और पंजाबी के वार्तालाप का टकराव काफी सुंदर लग रहा है। वह भी बातों का शोर सुनकर उठ बैठी है। घबरायी दृष्टि से नीचे की ओर देख रही है। दो-दो सिपाही एक-एक सरदारजी की तलाशी ले रहे हैं।

आओ – एक सौदा करें !

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो–

गोला

टॉफियां और मिठाइयां

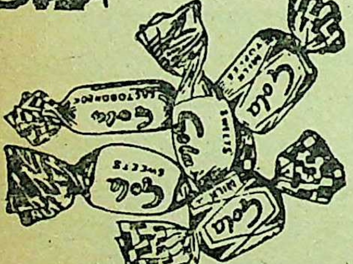
Gola
Gola
Gola
Gola
SWEETS
BUTTERSCOTCH

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि. खीरी, उ.प्र.

कपड़ों की उजली
धुलाई के लिये !

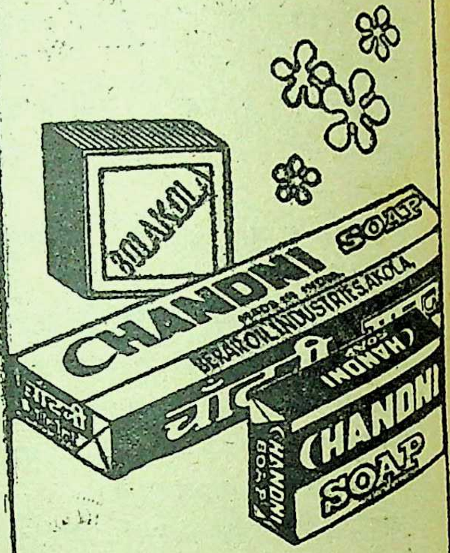
CHANDNI SOAP
BERAR OIL INDUSTRIES AKOLA
चाँदनी
AKOLA
CHANDNI SOAP

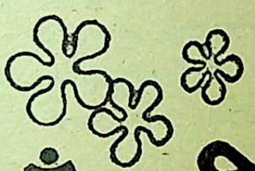

चाँदनी

साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

दुबले-पतले शरीर वाला सरदार गर्म हो रहा है। वह परेशान हो उठती है। बोलने की भरपूर कोशिश में वह आं-आं-आं की पुनरावृत्ति के सिवा कुछ नहीं कह पा रही है। तभी एक सिपाही ऊपर की ओर मुंह करके उसे डांटते हुए कहता है–'चुप रह गूंगी। हम खा तो नहीं जायेंगे इसे। तलाशी ही तो ले रहे हैं।'

गूंगी शब्द मेरे कानों पर वज्रप्रहार कर गया है। चांदी की घंटियों-जैसी आवाज का सपना टूट गया है। टीले पर बना मंदिर जमीन में धंसने लगा है। तलाशी लेकर सिपाही उतर गये हैं। परिवार के सदस्य उनके व्यवहार पर टीका-टिप्पणी कर रहे हैं। ऊपर बैठी उस नवयुवती को भी तसल्ली दी गयी है।

और उसने एक बार फिर भर-पूर निगाहों से मेरी ओर देखा है। शायद मुझसे सहानुभूति के दो शब्द मांग रही हैं उसकी निगाहें। परंतु मुझमें अब उसे देखने का साहस शेष नहीं है।

गाड़ी चल पड़ी है। धीरे-धीरे तेज होती जा रही है। अभी सरपट भागने लगेगी। घबराकर खिड़की का शीशा उठा देता हूं। आंखों के सामने बाहर का सुनसान वियावान है। एकांत का घना अंधकार है। चाहता हूं, गाड़ी और तेज भागे, और अधिक तेज। ताकि अगले किसी स्टेशन पर डिब्बे में किसी दूसरी जगह कोई सीट खाली हो और मैं यहां से उठ जाऊं। मंदिर धंसता-धंसता लोप होता जा रहा है। और मुझे अनुभव हो रहा है, जैसे मैं मंदिर के नीचे बैठा हुआ हूं और मंदिर का बोझ मुझे दबाता जा रहा है। चांदी की घंटियां भी मिट्टी में दब गयी हैं और अब उनकी आवाज कभी सुनी नहीं जा सकेगी।

–पं. वि. ईवनिंग कालेज,
चंडीगढ़–१६००१४

★

- पुरुष का हृदय और शरद का बादल एक-से चंचल।
- सभी ब्याहताएं पत्नियां नहीं होतीं।
- किसी भी पेड़ पर भात नहीं फलता।
- सांप को मारना हो तो एक बार में ही मार दो।
- निकटस्थ मित्र दूरस्थ रिश्तेदार से भला।
- आंख फोड़ने के लिए एक तिनका ही काफी है।
- भयंकर आंधी भी कुएं में तूफान नहीं ला सकती।
- जाड़े में जो अपना सब जलावन दे डाले, वह या तो महादानी है या महामूर्ख।
- सीप से समुद्र को नहीं उलीचा जा सकता।
- परम सत्य जानना हो तो ककहरे से शुरूआत करो।

–जापानी कहावतें

★

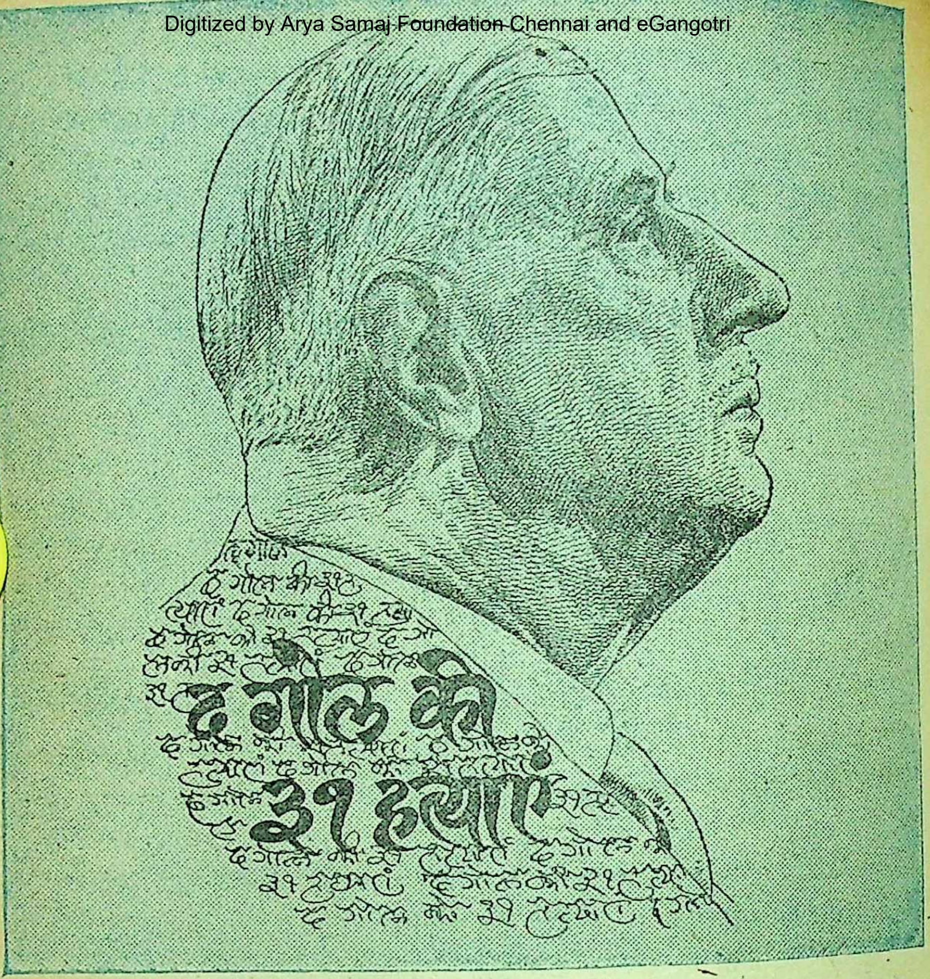

एक जुलाई १९६६। एक गाड़ी में सौ किलो ग्राम डाइनामाइट, साथ ही दो किलो ग्राम भंगार भी, ताकि विस्फोट खूब घातक हो। रेडियो-संकेत के द्वारा इस 'बम' को फटना था और फ्रांसीसी राष्ट्रपति जनरल द गोल का खातमा कर देना था। इस योजना का मुखिया १९ वर्ष का एक युवक था और यह योजना उसने तब बनायी थी, जब वह किसी अपराध के सिलसिले में जेल की हवा खा रहा था।

सब कुछ तैयार था—गाड़ी, बारूद, रेडियो-संकेत-व्यवस्था सभी कुछ। बस, कुछ

'द टार्गेट द गोल' का सार : विश्वास द्वारा प्रस्तुत

पसों की जरूरत थी, ताकि कार्रवाई के बाद भागा जा सके। इसके लिए तय यह हुआ कि एक गोदाम को लूटा जाये। चुरायी हुई एक कार में षड्यंत्रकारी गलत रास्ते पर चल पड़े। पुलिस वाले ने आवाज लगायी तो उन्होंने ब्रेक के बजाय एक्सिलेरेटर दबा दिया। पीछा शुरू हुआ...... दो षड्यंत्री भाग निकले। शेष पकड़े गये। यह जनरल द गोल की हत्या का ३१ वां विफल प्रयास था।

जी, ३१ वां! फ्रांस के इस सर्वाधिक चर्चित और सर्वाधिक विवादग्रस्त राष्ट्रपति की हत्या के लिए १९४४ से १९६६ तक पूरे ३१ षड्यंत्र रचे गये। कुछ क्रियान्वित हुए, कुछ नहीं हुए। परंतु विफल सभी हुए। ८० वर्ष की अवस्था में जनरल द गोल की स्वाभाविक मृत्यु हुई। इतिहास में शायद ही कोई और राष्ट्राध्यक्ष होगा, जिसकी हत्या के इतने प्रयास किये गये हों, मगर जो उनका शिकार न बना हो।

हत्या का शायद ही कोई तरीका था, जो द गोल पर नहीं आजमाया गया। उनकी कार के सामने बम-विस्फोट हुआ; राइफल से उन्हें मारने की चेष्टा हुई; उनकी कार पर मशीनगन से गोलियां दागी गयीं; गुलदस्ते में बम रख दिया गया; एक बार सूचना मिली कि विष-बुझी नोक वाली अंगूठी से हत्यारा उनकी जान लेना चाहता है; वे एक मजार पर फूल चढ़ाने जाने वाले थे, वहां डाइनामाइट रख दिया गया......

लेकिन द गोल हर बार बाल-बाल बचते रहे। वे न आतंकित हुए न चिंतित। हत्या की धमकियां या षड्यंत्र की सूचनाओं से डरकर उन्होंने कभी अपने किसी कार्यक्रम में हेरफेर नहीं किया।

इनमें से अधिकांश हत्या-प्रयास ओ.ए.एस. नामक गुप्त सैनिक संघटन द्वारा आयोजित थे। यह जनरल द गोल की अल्जीरिया-नीति से रुष्ट सेनाधिकारियों का संघटन था। आपको स्मरण होगा कि १३२ वर्ष के फ्रांसीसी आधिपत्य के बाद द गोल ने जनमत-संग्रह करवाकर अल्जीरिया को मुक्त करने की घोषणा की थी। उनकी इस नीति ने फ्रांसीसी सेना के अनेक उच्च अधिकारियों को क्रुद्ध कर दिया। ये लोग इस बात को स्वीकार नहीं कर पाये कि हजारों फ्रांसीसी सैनिकों के लहू से सिंचा अल्जीरिया अल्जीरियावासियों को सौंप दिया जाये। अल्जीरिया स्थित फ्रांसीसी सैनिकों ने तो अपने जनरलों के नेतृत्व में विद्रोह ही कर दिया। विद्रोह तो दब गया, मगर कुछ विद्रोही नेता फरार हो गये।

इन्हीं विद्रोही नेताओं ने ओ.ए.एस का सूत्रपात किया। इन सैनिक नेताओं को द गोल से घोर घृणा थी और वही घृणा बार-बार उन्हें द गोल की हत्या के लिए उकसाती रही। ओ.ए.एस. के कई नेताओं की गिरफ्तारी हुई, उन्हें मृत्युदंड मिला। परंतु घृणा नहीं मरी।

लेकिन ओ. ए. एस. अकेला संघटन नहीं था, जो जनरल द गोल का खातमा करने के लिए कटिबद्ध था। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी के साथ समझौता करने वाले फ्रांस

जियाजी

सूटिंग्स
रोबीले, हठीले पुरुषों की शान
मर्दाना बनावट और डिज़ाइन, पुरुषत्व को उजागर करने वाले
चेक और धारियां, रंगों और शेड्स की विविधता के लिए

J
JIYAJEE FABRICS

जियाजीराव काटन मिल्स लिमिटेड, बिरलानगर (म. प्र.)

के मार्शल पेतां के अनुयायियों ने भी जनरल द गोल को कभी क्षमा नहीं किया। द गोल का अपराध यह था कि उन्होंने पेतां की देशद्रोही कार्रवाई का विरोध किया था और उसे आजीवन कारावास की सजा दिलायी थी। (असल में पेतां को देशद्रोह के आरोप में मृत्युदंड सुनाया गया था और द गोल ने ही उस दंड को आजीवन कारावास में परिणत कर दिया था।)

इन खून के प्यासों से द गोल के बचाव का भार फ्रांस के गृहमंत्री का स्थायी सिरदर्द बना रहा। परंतु इसमें जितना दोष संभावित हत्यारों का था, उससे कहीं अधिक दोष स्वयं द गोल का था। उन्होंने कभी अपनी सुरक्षा की चिंता नहीं की। सारी रक्षा-व्यवस्था को धता बताकर जब वे अचानक भीड़ में घुस पड़ते थे, सुरक्षा-अधिकारियों के चेहरे सफेद पड़ जाते थे। द गोल अपने को जननायक मानते थे और देश के हर हिस्से की जनता तक पहुंचना अपना कर्तव्य समझते थे। उनकी इस 'कर्तव्य-निष्ठा' का फल भुगतना पड़ता था सुरक्षा-व्यवस्थापकों को।

जनरल द गोल की निगरानी के लिए—विशेषत: उनके दौरों के समय—हजारों पुलिस वाले तैनात किये जाते थे। एक बार तो ११ हजार पुलिस-सिपाही उनकी निगरानी कर रहे थे। सड़कें बंद कर दी जाती थीं। पुलों पर विशेष पहरा बैठा दिया जाता था। जहां-जहां द गोल को ठहरना होता था, उसके आस-पास के तमाम मकानों की तलाशी ली जाती थी।

जनरल द गोल को सुरक्षा की इस सारी व्यवस्था से सख्त चिढ़ थी। इसलिए बेचारे पुलिस वालों को छिपकर खड़ा होना पड़ता था। लेकिन द गोल को अपने छह व्यक्तिगत अंगरक्षक तो सहने ही पड़ते थे। ये छहों इंस्पेक्टर 'गुरिल्ला' के नाम से विख्यात थे। सारा फ्रांस इन्हें जानता था; क्योंकि ये द गोल के इतने नजदीक रहा करते थे कि हर फोटो में राष्ट्रपति के साथ इनके चेहरे दिखते थे। सच तो यह है कि कवच की तरह ये लोग द गोल को घेरे रहते थे।

पेरिस में राष्ट्रपति-भवन एलीजे प्रासाद की चौकीदारी किसी किले की तरह बड़ी मुस्तैदी से की जाती थी। एलीजे और इसके साथ सटे बगीचे पर दिन-रात पुलिस की निगाह रहती थी। आस-पास की सड़कों पर वही कारें 'पार्क' की जा सकती थीं, जिन्हें अनुमति प्राप्त हो। निकट के मकानों में रहने वाले सभी परिवारों की पूरी तरह से जांच-पड़ताल की गयी थी। रात के समय चारों ओर की गलियों में पुलिस-गाड़ियां इस तरह से खड़ी की जाती थीं कि आवश्यकता पड़ने पर मिनिटों में सारे रास्ते बंद कर दिये जा सकें। सारी रात इन गाड़ियों में टामीगन लिये सैनिक बैठे रहते थे। १९६२ में तो एलीजे प्रासाद के समीपवर्ती मकानों की छतों पर विमानभेदी तोपें भी लगायी गयी थीं।

परंतु इतनी विकट सुरक्षा-व्यवस्था के

बावजूद, द गोल की हत्या के प्रयास होते ही रहे। कई संभावित हत्यारे मारे गये; मगर घृणा की आग धधकती ही रही, हत्या-प्रयासों का सिलसिला चलता ही रहा।

जनरल द गोल की हत्या का पहला प्रयास १९४४ में हुआ था और अंतिम प्रयास जुलाई १९६६ में। फ्रांस के दो लेखक **प्येर दे मार्त** और **क्रिश्चियन प्लूम** ने दो वर्ष की मेहनत से इन सब हत्या-प्रयासों की कथा ज्ञात-अज्ञात तथ्यों व दस्तावेजों के आधार पर संकलित की है। उनकी पुस्तक का नाम है–**'द टार्गेट द गोल'**।

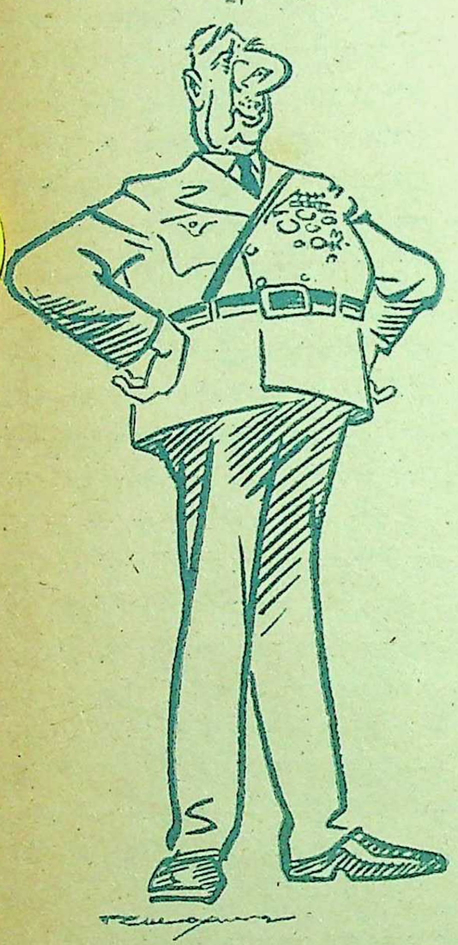

द गोल–लक्ष्मण की तूलिका से

[सौजन्य : व्यास पब्लिकेशन्स, मद्रास]

—१—

हत्या-प्रयासों की यह लंबी शृंखला १९४४ के एक दिन पश्चिम अफ्रीकी देश सेनेगाल की राजधानी दाकार में शुरू हुई। फ्रांसीसी अधिकारियों के स्क्वाड्रन के निरीक्षण के लिए जनरल द गोल 'जार्जेज़ लेग्यू' नामक क्रूजर पर चढ़े। ठीक तीस गज दूर खड़े एक और जहाज पर एक आदमी राइफल लेकर छिपा बैठा था। उधर फ्रांसीसी राष्ट्र-गीत की धुन छिड़ी और जनरल द गोल सावधान की मुद्रा में खड़े हुए, इधर उस आदमी ने निशाना साधा। लेकिन घोड़ा दबने से पहले ही एक २४ वर्षीय अफसर ने उसे देख लिया और झपटकर दबोच लिया। द गोल बच गये।

हत्यारे का नाम था हेनरी बी.। ३ जुलाई १९४० को ओरन के निकट ब्रिटिश बेड़े ने फ्रांसीसी पोत को डुबोकर १,३०० फ्रांसीसी सैनिकों की जो 'हत्या' की थी, उसका बदला वह द गोल से लेना चाहता था। द गोल से उसे यह शिकायत थी कि उन्होंने इस ब्रिटिश कार्रवाई का विरोध नहीं किया।

—२—

अगला प्रयास हुआ इसके बारह साल

बाद ४ जून १[illegible] को [illegible] था अल्जीयर्स। पुरानी कलात्मक वस्तुओं का एक विक्रेता २२ बोर की टेलिस्कोपिक राइफल लिये तैयार बैठा था। सामने की इमारत में फ्रांस के नये राष्ट्रपति जनरल द गोल भाषण कर रहे थे, अल्जीरिया में बसे यूरोपीयों की एक सभा में।

पचास वर्ष की उम्र का यह व्यापारी पेतां का अनुयायी था और उसे पक्का विश्वास था कि द गोल अल्जीरिया को छोड़ने की योजना बना रहे हैं। इसलिए वह उनकी हत्या करना चाहता था। शिकार सामने था। निशाना भी सीधा था। पर राइफल नहीं चली। द गोल कह रहे थे ..... 'मैंने आपको समझा है......मैं वह राह देख रहा हूं, जो आपने अफ्रीका में तैयार की है......भ्रातृत्व की राह .....यह एक महान सफलता है......समझौते का द्वार है .....।' व्यापारी ने यह सुना और उसका निश्चय डगमगा गया।

–३–

उस व्यापारी का निश्चय तो डगमगा गया; पर फ्रांस के एक फासिस्ट संघटन के उग्र युवा सदस्यों ने एक नया निर्णय किया। ये लोग कम्युनिस्टों और यहूदियों से भी ज्यादा घृणा करते थे द गोल से। मार्सेलीज़ जाने वाली सड़क पर इस संघटन के कुछ सदस्य धुआं फैलाने वाले बमों और धड़ाका करने वाले पटाखों से लैस होकर खड़े थे। उनकी योजना थी कि द गोल जब वहां से गुजरें, तो बमों व पटाखों से आतंक और [illegible] जाये और इसी बीच राष्ट्रपति को छुरा भोंक दिया जाये।

परंतु राष्ट्रपति के वहां से गुजरने के सिर्फ दो घंटे पहले वहां भीषण तूफान आ गया और धुएं के बमों का प्रयोग असंभव हो गया।

–४–

नेशनलिस्ट रेवोल्यूशनरी कमिटी नामक एक आतंकवादी संघटन ने नवंबर १९६० में पेरिस में राष्ट्रपति के निवास एलीज़े प्रासाद से द गोल का अपहरण करने की योजना बनायी। इस संघटन का नेता था हिंदचीन-युद्ध का बहुप्रशंसित सार्जेंट-मेजर आंद्रे ओरसोनी। कई पुलिस-अधिकारी और पास ही स्थित एक रेजिमेंट के २२० स्वयंसेवक उसके सहयोगियों में थे। परंतु अधिकारियों को षड्यंत्र की भनक पड़ गयी। ओरसोनी और उसके साथियों को वर्दियां और शास्त्रास्त्र मुहैया करने वाले मेजर को अचानक स्थानांतरित कर दिया गया। सो ओरसोनी की योजना क्रियान्वय के स्तर तक पहुंच ही न सकी।

–५–

दिसंबर १९६० में जब जनरल द गोल अल्जीरिया गये थे, तो वे यह जानते थे कि उनकी हत्या का षड्यंत्र रचा जा रहा है। उन्हें यह भी पता था कि यह प्रयास उनके ओरलीन्सविल से रवाना होने के बाद किया जायेगा। परंतु वे यह नहीं जानते थे कि उनके तीन मार्ग-रक्षकों में से एक हिलेरे जेरोनियो ने उनकी हत्या का दायित्व अपने

अपने पैसे बचाइये

आपका मनपसन्द
पान बहार
सादे पान का मसाला
अब २५० और ५०० ग्राम में भी मिलता है

PAN BAHAR
PAN BAHAR
नया
नया

INTERADS

अशोक एण्ड कं० ५२/३४, नयागंज, कानपुर

ऊपर ले रखा है।

९ दिसंबर को जेरोनियो ने 'फ्रंट नेशनल फ्रांस्वा' (एफ. एन. एफ.) के नेताओं को टेलिफोन करके अंतिम आदेश मांगे। परंतु उससे कहा गया—'अब द गोल की हत्या का कोई प्रश्न नहीं उठता। हमें स्पष्ट सूचना मिल गयी है कि द गोल हमारे साथ हैं। वे अल्जीरिया को फ्रांस से अलग नहीं करेंगे। वे अरबों को धोखा देने के लिए ही वक्तव्य दे रहे हैं।......' मगर असलियत यह है कि षड्यंत्रकारी स्वयं धोखा खा गये थे। द गोल ने अल्जीरिया में जो कहा, वही किया भी।

—६—

मगर वहां से कुछ आगे ओरलीन्सविल में नानी नामक ३१ वर्षीय व्यक्ति अपने साथियों सहित मशीनगनों, पिस्तौलों, हथगोलों और डाइनामाइट से लैस खड़ा था। द गोल के सुरक्षा-अधिकारियों में से ही किसी से उसे जनरल की यात्रा-संबंधी सूचनाएं मिल रही थीं। पर इसकी सूचना भी गुप्तचर-विभाग को मिल गयी। जाने कैसे इस बार द गोल रास्ता बदलने के लिए सहमत हो गये। अन्यथा, जब नानी से द गोल की हत्या का प्रस्ताव किया गया, तो उसने केवल इतना ही पूछा था—'कब और कहां ?'

—७—

इसके एक ही दिन बाद फिर प्रयास हुआ। इस बार हत्यारा एक विमान-चालक था। नाम—क्रिश्चियन पी.। उसे विश्वास था कि द गोल के जीवित रहते फ्रांसीसी सेना उन अफसरों का आदेश नहीं मानेगी, जो अल्जीरिया को छोड़ने के विपक्ष में हैं। इसलिए उसकी योजना थी कि द गोल के हेलिकाप्टर को हवा में ही टक्कर मारकर नष्ट कर दिया जाये। मगर वह ब्लिडा हवाई अड्डे के ऊपर द गोल और उनके रक्षकों के हेलिकाप्टरों में फर्क नहीं कर पाया। द गोल फिर बच गये।

—८—

लेकिन खून के प्यासे अगले कदम पर भी खड़े थे। ११ दिसंबर को रीगाइया में द गोल को वायुसेना के छतरीधारी कमांडो की परेड का निरीक्षण करना था। कमांडो का सेकेंड लेफ्टिनेंट डेलहोम उनकी अल्जीरिया-नीति से अप्रसन्न था। उसे विश्वास था सलामी की रस्म में वह भी शामिल होगा। सो उसने सलामी के वक्त द गोल की हत्या कर देने की योजना बनायी। पर जब वह सलामी में शामिल होने जा रहा था, तो रास्ते में ही वह कुछ अरब उपद्रवियों से उलझ गया ...... उधर परेड समाप्त हो गयी।

—९—

द गोल के अपहरण की विफल योजना बनाने वाले सार्जेंट-मेजर आंद्रे ओरसोनी ने एक माह बाद उनकी हत्या का एक और प्रयास किया। इस बार उसके साथ उसका एक अल्जीरियाई दोस्त फ़ुसिल भी था। इन्होंने राष्ट्रीय पथ १९ पर वृक्षों के दो समूहों के बीच बजरी के एक ढेर के के नीचे ४० किलो ग्राम टी. एन. टी. और उतने ही छर्रे दबा दिये। उन्होंने यह भी व्यवस्था की कि यदि कोई कार बम से बच

जाये, तो ११ आतंकवादी सब मशीनगन से उसे भून दें।

२४ दिसंबर १९६० को आतंककारियों का यह दल एलीजे प्रासाद के अपने एक 'संपर्क' से राष्ट्रपति की रवानगी की सूचना की प्रतीक्षा कर रहा था। सूचना आयी नहीं। ओरसोनी ने टेलिफोन किया, तो पता चला द गोल एक घंटा पहले ही चले गये हैं। ओरसोनी और उनके साथी हाथ मलते रह गये।

–१०–

एक विदेशी ने प्रस्ताव रखा कि अप्रैल १९६१ में जनरल द गोल को दक्षिण-पश्चिम फ्रांस की यात्रा के दौरान मार दिया जाये। अल्जीरियाई विद्रोह के नेताओं की पेरिस सैनिक समिति ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। सौदा ४ करोड़ फ्रैंक में तय हुआ। हत्यारे को आधी राशि अग्रिम दी गयी। पर वह अपना काम पूरा न कर सका।

–११–

राष्ट्रपति की हत्या पर आमादा लोगों में कर्नल जां मारी थिरे भी एक था। वह लगातार एक के बाद दूसरा प्रयास करता ही रहा। पर अंत में पकड़ा गया और स्वयं अपनी जान गंवा बैठा। पहली घटना ५ सितंबर १९६१ की है। थिरे ने द गोल की कार को उड़ा देने की योजना बनायी थी। सारी व्यवस्था हो चुकी थी। पेरिस से बम लाकर रेत में दबा दिया गया था। राष्ट्रपति के कारवां के आने की देर थी—बटन दबता और......। राष्ट्रपति जब एलीजे प्रासाद से निकले, तो वहीं घूमते हुए एक बूढ़े जोड़े ने टेलिफोन किया। वहां से सूचना आगे पहुंची। और अंततः पोंते सर-सेन गांव तक जा पहुंची। राष्ट्रपति आ रहे थे। बस, मार्तिमल दे विलमंडी को बटन दबाना था। वह प्रतीक्षा करने लगा। एक कतार में कारें सड़क पर प्रकट हुईं और सामने से गुजर गयीं—राष्ट्रपति की कार भी। बटन नहीं दबा, बम नहीं फटा। अगले दिन विलमंडी ने कबूल किया कि मैं मानसिक संतुलन खो बैठा था ......

–१२–

तो भी, थिरे निराश नहीं हुआ। दो दिन बाद उसने फिर विलमंडी को वही काम सौंपा।

८ सितंबर १९६१। रात्रि के ९.३५ बजे गुप्त संकेत देखकर बटन दबा दिया गया। बटन का संबंध दूर सड़क के किनारे पड़े रेत के ढेर में छिपे बम से था। तेल और रेत के धुएं ने राष्ट्रपति की कार को घेर लिया। कार में राष्ट्रपति और उनकी पत्नी के अलावा सैनिक अंगरक्षक भी था। ड्राइवर का नाम था मारो। कार के सामने आग की दीवार खड़ी हो गयी। परंतु मारो रुका नहीं। राष्ट्रपति और उनकी पत्नी स्थिर बैठे थे। 'तेज!' राष्ट्रपति ने कहा। और कुछ ही मिनिटों में कार रोमिली-स्थित वायुसेना की बैरकों में पहुंच गयी। कार को मामूली क्षति पहुंची थी। राष्ट्रपति और उनकी पत्नी दूसरी कार में बैठकर आगे बढ़ गये।

थिरे का यह प्रयास भी विफल हो गया।

वैसे थिरे की तैयारी पूरी थी। २५ लिटर पेट्रोल, ३ लिटर इंजन-आइल और दो किलो ग्राम साबुन के टुकड़ों वाले नापाम के कनस्तर के साथ ही प्लास्टिक का बम भी था। बम फटने के साथ ही नापाम सड़क पर फैल जाता और आग की दीवार खड़ी हो जाती। आग की दीवार तो खड़ी हुई, मगर बम नहीं फटा। इस बार विलमंडी नहीं, बम विफल हुआ था। विशेषज्ञों ने बाद में जांच-पड़ताल करके कहा कि बम का प्लास्टिक बहुत तेजी से जल गया था।

इस प्रयास के लिए थिरे ने काफी लंबी-चौड़ी तैयारी की थी। 'ओल्ड जनरल स्टाफ' के सदस्यों के एक दल ने चार माह के सर्वेक्षण के बाद यह अनुमान लगाया था कि इसकी ६० प्रतिशत संभावना है कि कोलंबे जाते समय राष्ट्रपति राष्ट्रीय पथ-१९ का उपयोग करेंगे। अनुमान सही निकला। कुछ ही माह पूर्व सार्जेंट-मेजर ओरसोनी ने भी इसी राष्ट्रीय पथ पर बम फोड़ा था।

–१३–

८ नवंबर १९६१ को जनरल द गोल की हेयर्स-यात्रा के समय अल्बर्ट स्पेगिरी उनकी हत्या के लिए तैयार बैठा था—अपनी मां की दुकान के बंद शटर के पीछे, हाथ में माउजर लिये। पूरे चार सेकेंड तक द गोल उसका निशाना बने रहे। कार सिर्फ १५ फुट दूर से गुजर रही थी। पर गोली नहीं चली......

असल में जनरल की यात्रा का समाचार मिलते ही स्पेगिरी ने उनकी हत्या का प्रस्ताव ओ.ए.एस. के समक्ष रखा था। उसने अपनी योजना भी बतायी थी और कहा था कि आदेश मिलते ही मैं उसे क्रियान्वित कर दूंगा। पर आदेश मिला ही नहीं।...... स्पेगिरी पैराशूट पलटन में रह चुका था और वहां हुए अपने कोर्ट मार्शल का बदला द गोल से लेना चाहता था।

–१४–

एक सुनसान खान में कई सप्ताह तक गोलियों के चलने की आवाज गूंजती रही। यहां द गोल की हत्या के लिए २२ बोर की राइफलों और पिस्तौलों से निशानेबाजी का अभ्यास हो रहा था। अभ्यासकर्ताओं का नेता था रोजर दिगाल्द्रे—अल्जीरिया में ओ.ए.एस. के डेल्हा कमांडो गुट का एक सदस्य। ये लोग चाहते थे कि दिसंबर १९६१ में जब द गोल कोलंबे में एक गिरजे की प्रार्थना में संमिलित हों, उन पर गोली चला दी जाये। परंतु यह कार्यक्रम ही रद्द हो गया। खान में गूंजने वाली आवाजों का धमाका फ्रांस नहीं सुन सका।

–१५–

रोजर दिगाल्द्रे को ७ अप्रैल १९६२ को गिरफ्तार कर लिया गया। शीघ्र ही उसकी पत्नी और पांच साथी उसे छुड़ाने और द गोल का काम तमाम करने की दुहरी योजना लेकर अल्जीरिया से पेरिस पहुंचे। उन्हें आशा थी कि ओ. ए. एस. की फ्रांस स्थित शाखा से उन्हें अपेक्षित सहायता मिलेगी। किंतु कोई सहायता नहीं मिली।

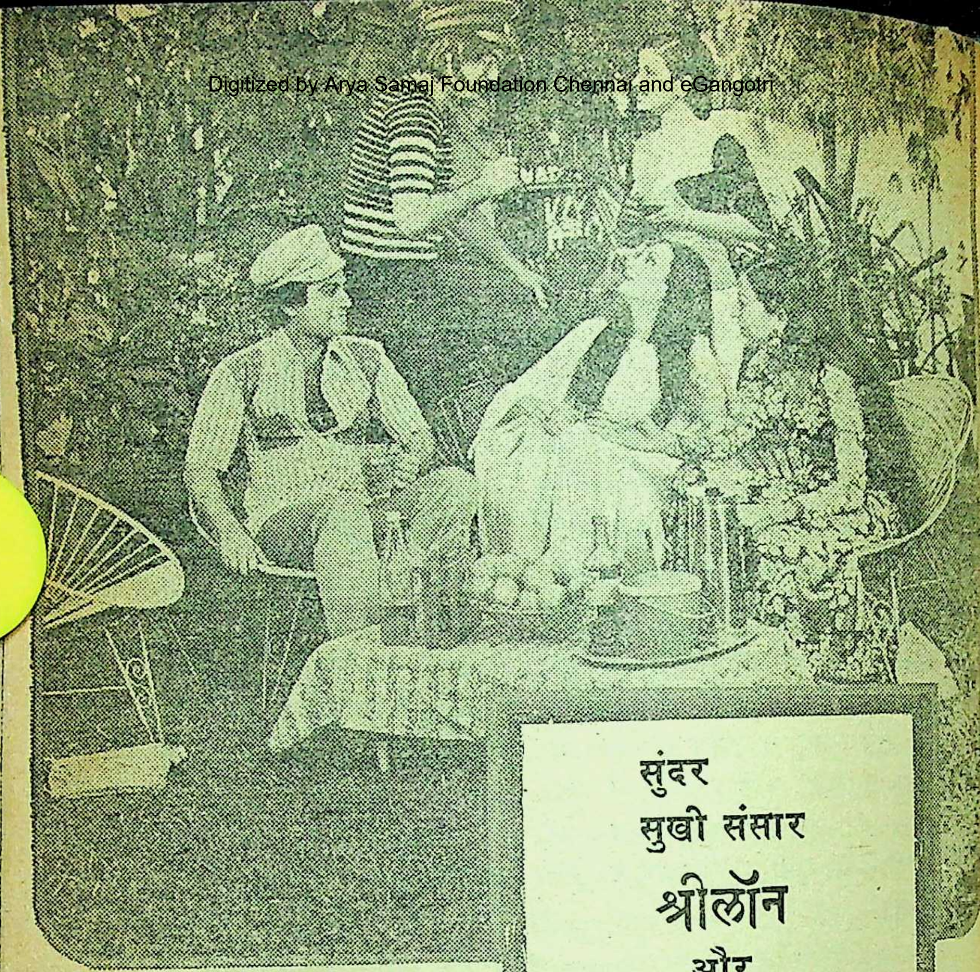

सुंदर
सुखी संसार
श्रीलॉन
और
श्रीस्टर
सुंदर वस्त्रों के लिए
सुंदर तंतु

श्रीलॉन नाइलॉन तंतु—सुरुचिसंपन्न स्त्रियों लिए सुंदर साड़ियां और लुभावने लिबास कपड़े जिससे तैयार होते हैं।

श्रीस्टर पॉलिएस्टर तंतु—आगे बढ़ते मर्दों के ए "पॉट" सूटिंग और शर्टिंग जिससे बनते । इसलिए जब श्रीलॉन और श्रीस्टर मिलते , उसका नतीजा होता है—आनंद-उल्लास, ौज-मस्ती ।

JAISONS-345

उत्पादक : श्री सिंथेटिक्स लिमिटेड, नौलखी, उज्जैन
बिक्री कार्यालय : श्रीनिवास हाउस, एच. एम. सोमानी मार्ग;
बंबई-४००००१. फोन : २६६०७४; २६८२४१.

दिगाल्द्रे को छुड़ाने की योजना को मुल्तवी करके दूसरी योजना हाथ में ली गयी। तय हुआ कि २० फरवरी को जब द गोल एलीजे प्रासाद वापस लौट रहे हों, तब प्रासाद के सामने के किसी मकान से छिपकर उन पर गोली चलायी जाये। एक ८० वर्षीय रूसी कलाकार के स्टूडियो की खिड़की को इस काम के लिए पसंद किया गया। ये लोग चित्र खरीदने के बहाने वहां जाते। निशाना साधने के लिए यह आदर्श जगह थी; परंतु वहां से भाग निकलने के अवसर कम थे। इसलिए वह योजना त्याग दी गयी। विकल्प खोजा जाने लगा।

—१६—

और विकल्प खोजने में उन्हें देर भी नहीं लगी। द गोल उसी शाम ७.३० बजे रेलगाड़ी से पेरिस वापस आने वाले थे। योजना बनी कि रेलगाड़ी ही उड़ा दी जाये। पेरिस से ३० मील दूर रेल्वे-लाइन के साथ-साथ एक निर्जन जंगल है। विस्फोटनशील पदार्थ, ३० मीटर लंबा तार, विस्फोटक और ब्यूटेन गैस की एक बोतल लेकर हत्यारी टोली वहां पहुंची। परंतु वहां तो पटरियों का जाल बिछा था। छह पटरियां। कैसे पता चले कि द गोल की गाड़ी कौन-सी पटरी पर आयेगी! अंततः उन्होंने बम मध्य में रख दिया।

लेकिन जब वे लोग पेरिस लौटे, पुलिस उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। अल्जीयर्स में उनके एक साथी ने सारी साजिश का भंडाफोड़ कर दिया था। इस अभियान का नायक था मार्सेल बिगार।

—१७—

दो बार असफल होने के बावजूद लेफ्टिनेंट कर्नल थिरे हताश नहीं हुआ था। २७ मई १९६२ को उसने एक बार फिर उद्योग किया। राष्ट्रपति उस दिन पेरिस लौटने वाले थे। थिरे ने उनकी कार पर हमला करने की योजना बनायी। उसके दल में आर्मंड बेलविसी और एलेन बोरेने दे ला तोकनाये भी शामिल थे। थिरे की तरह ही वे भी द गोल के खून के प्यासे थे। तोकनाये एक सामंत कुल का युवा सदस्य था; वह इस तथ्य को कभी स्वीकार नहीं कर पाया कि फ्रांसीसी राज्यक्रांति की आग में उसके पूर्वजों के विशेषाधिकार भस्म हो चुके हैं।

इन लोगों के पास दो कारें थीं और दो स्टेशन वैगन थे—चारों हथियारों से लदे हुए। योजना यह थी कि बेलविसी पहली कार में टक्कर मारकर यातायात को अवरुद्ध कर देगा, और शेष लोग द गोल की कार पर बम फेंकेंगे। सुरक्षा-अधिकारियों को रोकने का काम तोकनाये को सौंपा गया था; इसके लिए उसके पास ढेरों हथगोले थे। लेकिन सारी तैयारी के बाद वे लोग प्रतीक्षा ही करते रह गये। द गोल की मोटरों का काफिला आया ही नहीं।

बाद में थिरे को पता चला कि काफिला किसी और राह से चला गया था और उसका आदमी यह परिवर्तन नहीं जान पाया था।

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल,' तीसरी मंजिल, २४१ बैकवे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०००२१

तार : **SODACHEM**

फोन : २९२४०७–२९३२९४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

*** अपग्रेडेड इलमनाइट ***

(सिंथेटिक रॅटाइल ९०-९२ Tio_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

- * **कास्टिक सोडा**
- * **सोडियम बाइकार्बोनेट**
- * **कैल्शियम क्लोराइट**
- * **लिक्विड क्लोरीन**
- * **सोडा एश**
- * **अमोनियम बाइकार्बोनेट**
- * **ट्रिक्लोरो एथिलीन**
- * **हाइड्रोक्लोरिक एसिड**

*** साल्ट ***

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भारत का सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप, स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

-१८-

इसके ११ दिन बाद ही फिर एक प्रयास हुआ। इस बार प्रशिक्षित शिकारी कुत्ते काम में लाये जाने वाले थे। १५ जून १९६२ को वेसोल में द गोल का भाषण था। हत्यारों की योजना यह थी कि प्रशिक्षित कुत्ते बम लेकर मंच पर झपटें और अल्जीरिया से आये ओ. ए. एस. के २१ सदस्य राइफलों व बमों से हमला कर दें। परंतु पुलिस को षड्यंत्र का सूराग मिल गया। चार आदमी गिरफ्तार कर लिये गये। लेकिन उनका नेता विस्फोटक पदार्थ लेकर भाग निकलने में सफल हो गया।

-१९-

२३ जून को थिरे ने फिर कोशिश की। राष्ट्रपति द गोल एक विवाह-समारोह में जाने वाले थे। थिरे ने समारोह का एक निमंत्रण किसी तरह हासिल कर लिया। उसका दल द गोल की मोटर पर धावे के लिए पूरी तरह तैयार था......मगर द गोल हेलिकाप्टर से वहां पहुंचे।

-२०-

जुलाई में अल्जीरिया में जनमत-संग्रह होने वाला था। थिरे चाहता था राष्ट्रपति द गोल इससे पूर्व ही रंगमंच से उठ जायें। २५ जून को उसने एक और योजना बनायी। उसके साथी उस दिन म्यूडेन वुड में छिपे बैठे थे। द गोल उधर से गुजरने वाले थे, तभी उन पर हमला होना था। परंतु उनकी मोटर उधर से गुजरे इसके पहले ही पुलिस की निगाह हत्यारों के एक वाहन पर पड़ गयी......हत्यारों को भागना पड़ा।

-२१-

अगस्त १९६२। मिराबू ब्रिज पर से तीन कारें गुजरीं,और एवेन्यू दे वार्साई की ओर बढ़ गयीं। इनमें थिरे, तोकनाये और तीन अन्य व्यक्ति थे–सब मशीनगनों से लैस।

द गोल जनरल आइसनहावर के स्वागत के लिए पेरिस आने वाले थे। रास्ते में ही उन्हें खत्म कर देने की योजना थी। थिरे दस बार सारे कार्यक्रम का रिहर्सल कर चुका था। बस इतना ही अपेक्षित था कि द गोल की कार उनकी बगल से आगे बढ़े। लेकिन चौराहों पर यातायात की बत्तियां आड़े आ गयीं। थिरे अपने साथियों से अलग पड़ गया। योजना गड़बड़ा गयी। पर तोकनाये ने प्रयास नहीं छोड़ा। वह द गोल की कार की बगल में पहुंच भी गया। उनके सफेद बाल और बांह भी उसने पहचान ली। पर उसके साथी ने मशीनगन का मुंह उधर किया ही था कि एक और कार बीच में आ गयी।

-२२-

लेकिन अगले प्रयास में कोई कार बीच में नहीं आ सकी। यह प्रयास २२ अगस्त १९६२ को पेरिस में हुआ। रात के ८ बजकर १० मिनिट। एवेन्यू दे ला लिबरेशन की शांति मशीनगन से छूटी गोलियों से छितरा गयी। गोलियों का लक्ष्य थी एक कार, और कार में बैठे हुए थे जनरल द गोल, श्रीमती द गोल, उनका दामाद और ड्राइवर।......कार का अगला टायर फट गया,

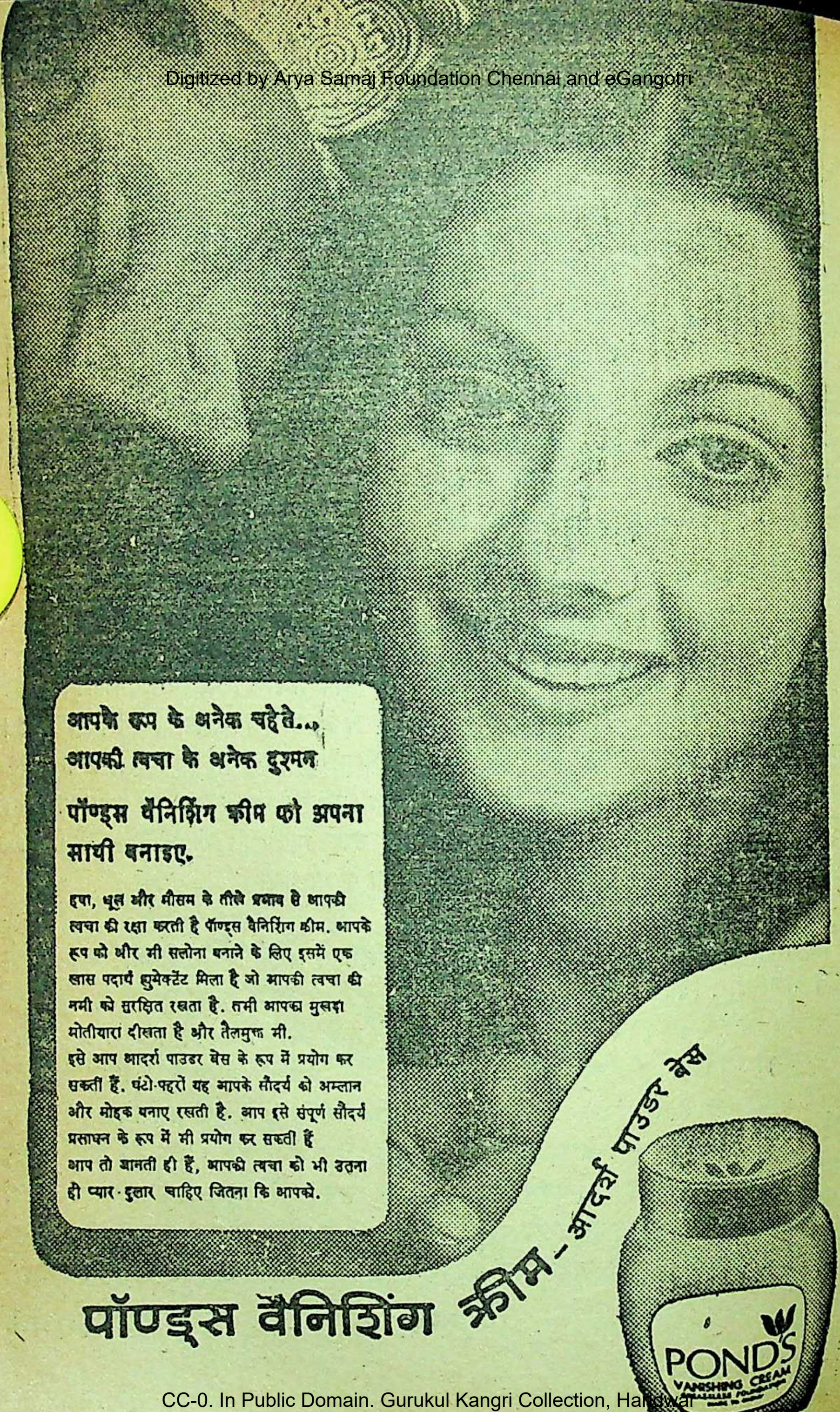

**आपके रूप के अनेक चहेते...
आपकी त्वचा के अनेक दुश्मन**

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम को अपना साथी बनाइए.

हवा, धूल और मौसम के तीखे प्रभाव से आपकी त्वचा की रक्षा करती है पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम. आपके रूप को और भी सलोना बनाने के लिए इसमें एक खास पदार्थ ह्युमेक्टेंट मिला है जो आपकी त्वचा की नमी को सुरक्षित रखता है. तभी आपका मुखड़ा मोतीयारा दीखता है और तैलमुक्त भी.

इसे आप आदर्श पाउडर बेस के रूप में प्रयोग कर सकती हैं. घंटों-पहरों यह आपके सौंदर्य को अम्लान और मोहक बनाए रखती है. आप इसे संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन के रूप में भी प्रयोग कर सकती हैं

आप तो जानती ही हैं, आपकी त्वचा को भी उतना ही प्यार-दुलार चाहिए जितना कि आपको.

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम – आदर्श पाउडर बेस

चीजब्रो-पॉण्ड्स इन्कॉर्पोरेटेड (सीमित दायित्व सहित यू. एस. ए. में संस्थापित)

मगर उसकी रफ्तार कम नहीं हुई......

यह हमला भी थिरे ने ही किया था। २५ मिनिट पहले ही उसे सूचना मिली थी कि राष्ट्रपति की कार एलीजे प्रासाद से बाहर निकली है। उसके आगे मोटर-साइकल-सवार हैं तथा ठीक वैसी ही एक और कार में सुरक्षा-अधिकारी हैं। थिरे ने आगे सूचना दी—'वह राष्ट्रीय पथ-३०६ से एवेन्यू दे ला लिबरेशन के पास से गुजरेगा। गड लक!'

किंतु 'गुड लक' फला नहीं। वैसे तैयारी पूरी थी। हमला तीन तरफ से होना था। एक कार से हमला शुरू होता, दूसरी कार रास्ता रोकती, और तीसरी कार बचा-खुचा काम पूरा करती।...... तीनों कारें तैयार खड़ी थीं। थिरे भी पास की एक गली के नुक्कड़ पर हाथ में एक अखबार लिये खड़ा था। तय यह हुआ था कि ज्यों ही उसे राष्ट्रपति की मोटरों का काफिला दिखेगा, वह अखबार खोलकर पढ़ने लगेगा। उसने ठीक समय पर अखबार खोला भी। पर कार्रवाई दस्ते का मुखिया सर्ज बनियर अंधेरे के कारण इसे देख नहीं पाया। उसने जब कारें देखीं, तो वे केवल ६० गज दूर थीं। 'आ जाओ!' चिल्लाते हुए उसने हल्ला बोल दिया। मशीनगनें चलीं। द गोल की क़ार कुछ डगमगायी। लगा कि उलटने ही वाली है। पर नहीं, ड्राइवर फ्रांस्वा मारो इस बार भी कार को बचा ले गया।

तीसरी कार ने बचा-खुचा काम किया—राष्ट्रपति की कार के पिछले शीशे पर गोलियों की बौछार!

अब तक अंगरक्षकों की कार शिकार और शिकारी के बीच आ गयी थी। राष्ट्रपति की क्षत-विक्षत कार आगे बढ़ गयी। गंतव्य स्थान यानी विला कोबले के हवाई अड्डे पहुंचने तक कार के एक भी यात्री ने मुंह नहीं खोला—द गोल ने भी नहीं।

द गोल की कार को छह गोलियां लगी थीं। जब पुलिस ने पूरी घटनावली की पुनरावृत्ति की, तो प्रमाणित हो गया कि कार में बैठे लोगों का गोलियों से बच जाना एक चमत्कार ही था। पिछली खिड़की फोड़कर घुसने वाली गोली पिछली सीट से कुल साढ़े चार इंच ऊपर से गुजरी थी...... यदि द गोल को सिर झुकाने में एक पल की भी देर हो जाती, तो......

–२३–

इस अभियान में थिरे को 'ओल्ड जनरल स्टाफ' नामक संस्था का सहयोग मिला था। ओ. ए. एस. की तरह ही यह संस्था भी द गोल के खून की प्यासी थी। कैथलिक संपर्कों वाली इस घोर राष्ट्रवादी संस्था के कई सदस्य फ्रांसीसी सेना में जनरल थे। बर्नार्ड नामक छात्र भी इस संस्था के लिए गुप्तचरी किया करता था। १९ जनवरी १९६३ को उसने द गोल की हत्या का बीड़ा उठाया। एक जेब में पी-३८ पिस्तौल और दूसरी में दो हथगोले रखे, हाथ में वैध निमंत्रण पत्र लेकर वह राष्ट्रीय प्रशासन विद्यालय के पुराने स्नातकों की एक सभा में पंहुच गया, जहां उस दिन द गोल आन

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

**हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.**

**इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग
लिमिटेड**

ग्रिंडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

**जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)**

**एशियन सायकल टायर
व टयूब**

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि०
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई–१

**दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चर्स लि.**

१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई—४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

* डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स

* डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

वाले थे।

परंतु जब द गोल आये, तो सादी वर्दी वाले अंगरक्षकों से घिरे हुए थे। बर्नार्ड उनके निकट नहीं पहुंच पाया। ......तीन दिन बाद उसने आत्महत्या कर ली। एक पत्र में उसने लिखा था–'मैंने द गोल की हत्या का वचन दिया था। मैं उसे पूरा नहीं कर सका। मैंने इस काम के लिए अपना जीवन न्योछावर करने का वचन दिया था। मैं नहीं चाहता कि लोग मेरे वचनों को अर्थहीन समझें। यह (आत्महत्या) इसका प्रमाण है।'

–२४–

एवेन्यू दे ला लिबरेशन वाले अभियान में थिरे का साथ देने वाले जोर्जेस वाटिन ने एक कोशिश और की। १४ फरवरी १९६३ को ओ. ए. एस. के इस नेता ने एक सभा में वायलिन की पेटी में राइफल छिपाकर ले जाने की योजना बनायी। इस काम में उसकी सहायता रेजिमेंटल सार्जेंट मारिस थो को करनी थी। परंतु निर्धारित दिन ज्यों-ज्यों नजदीक आने लगा, थो डगमगाने लगा। उसकी रातों की नींद गायब हो गयी। और अंततः उसने अधिकारियों को सब कुछ बता दिया। जनरल द गोल को भी पता चला। उन्होंने आदेश दिया, अपराधी सभास्थल पर ही गिरफ्तार किये जायें। परंतु तब तक अपराधियों को भी पता चल गया और वाटिन भाग निकला......

–२५–

अगला प्रयास १५ जुलाई १९६३ को एथेंस में हुआ। जनरल द गोल यूनान की राजकीय यात्रा पर आ रहे थे और लुई द कोंदे वहां उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। द कोंदे एक पर्यटक के रूप में एथेंस आया था। उसके पास सिर्फ दो कैमरे थे। इन कैमरों से फोटो भी ली जा सकती थी और साइनाइड-मिश्रित गोलियां भी दागी जा सकती थीं......

परंतु द गोल के एथेंस पहुंचने के कुछ ही दिन पहले एक नाइट क्लब में द कोंदे के सब पैसे और दस्तावेज चोरी चले गये। पैसों के अभाव में उसका एथेंस से भाग पाना असंभव था। सो उसने और पैसों के लिए अपने संघटन को तार भेजा। पैसा तो आया नहीं, इस बीच द गोल आ गये। द कोंदे कैमरा लेकर स्वागत-समारोह में गया, पर सिर्फ फोटो खींचकर वापस आ गया–पैसा न भेजने वाले अपने संघटन को यह दिखाने के लिए कि अगर चाहता तो मैं फोटो वाला शटर दबाने के बजाय गोलियों वाला शटर भी दबा सकता था......

–२६–

ओरेंज के निकट एक सड़क पर २५ किलो ग्राम प्लास्टिक का एक बम! यह बम द गोल के लिए था और इसे वहां रखने वाले संघटन का नाम था–'द हैंड'। सब कुछ तैयार था। २४ सितंबर १९६३ को द गोल ओरेंज की यात्रा पर आने वाले थे। बम सही समय पर फटे, इस बात की भी पूरी व्यवस्था हो चुकी थी। परंतु बम फटा नहीं–ओ. ए. एस. ने मना कर दिया था।

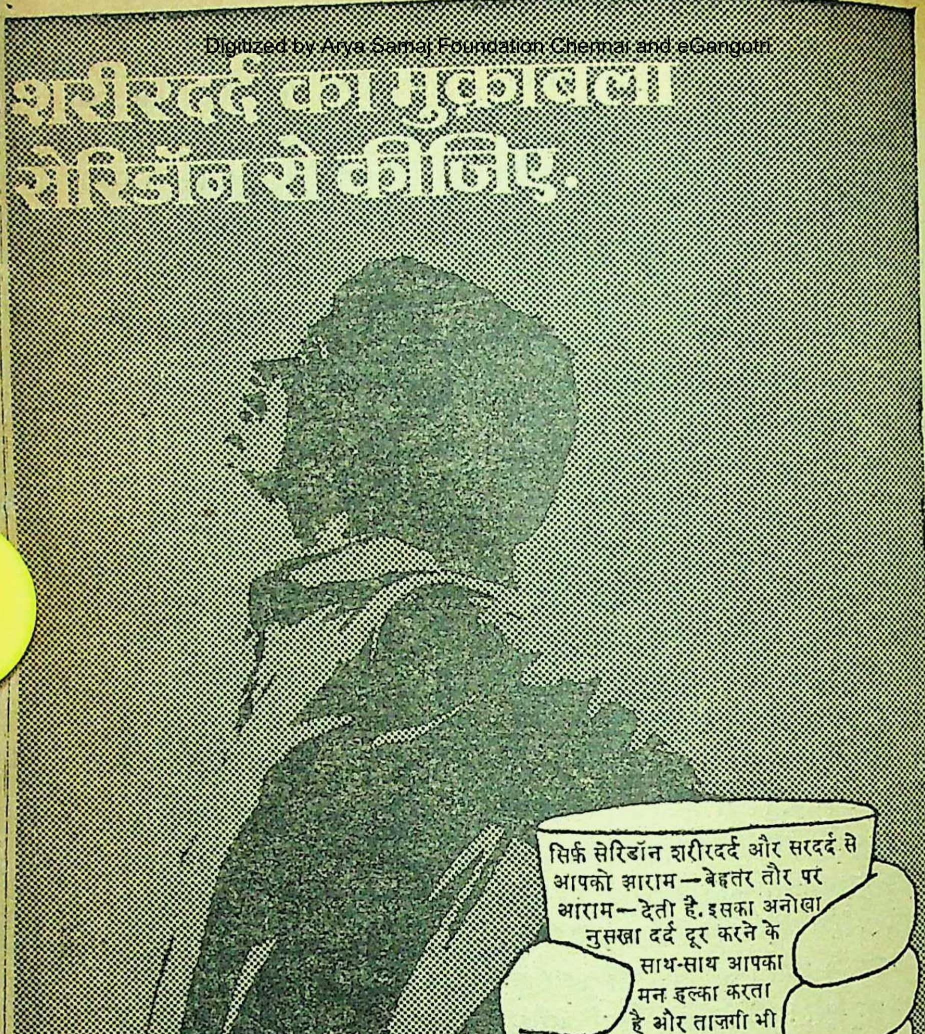

शरीरदर्द का मुक़ाबला
सेरिडॉन से कीजिए.

सिर्फ़ सेरिडॉन शरीरदर्द और सरदर्द से आपको आराम—बेहतर तौर पर आराम—देती है. इसका अनोखा नुसखा दर्द दूर करने के साथ-साथ आपका मन हल्का करता है और ताज़गी भी देता है. यह है रोश का अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान जो हमेशा आपकी सेवा में लगा है.

Saridon

HT-RP-8612

सिर्फ़ एक सेरिडॉन से
सभी तरह के शरीरदर्द ग़ायब

—२७—

इसके बाद लगभग एक वर्ष तक द गोल-हत्या-मोर्चे पर आश्चर्यजनक चुप्पी रही। लेकिन आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी। २४ जुलाई १९६४ को उनकी हत्या की एक और योजना बनी, जिसका रचयिता भूविज्ञान का एक प्रोफेसर था। प्रो. आंद्रे रोसफेल्डर १९६१ में अल्जीरिया में जनरलों के विद्रोह के समय रेडियो अल्जीयर्स का सर्वेसर्वा था। उसकी योजना यह थी कि जब द गोल शांजेलीज़े में परेड की सलामी ले रहे हों, तब सलामी के मंच पर रेडियो-संकेत के जरिये एक बम फोड़ा जाये।

परंतु योजना क्रियान्वित नहीं हो सकी। एक फोटोग्राफर से मंच की फोटो लाने को कहा गया था, ताकि षड्यंत्रकारी तय कर सकें कि बम कहां रखा जाये। लेकिन फोटोग्राफर फोटो नहीं लाया ...बाद में उसने कबूल किया कि मैं डर गया था।

—२८—

प्रोफेसर के बाद आयी छात्रों की बारी। लाइसी द सेलन-द-प्रोवेंस के १६ से २० वर्ष की उम्र के छात्रों ने जुलाई १९६४ में जनरल द गोल की हत्या का निर्णय किया। तय हुआ कि जनरल जब चेरबोर्ग की यात्रा पर आयें तो उनका काम तमाम कर दिया जाये। षड्यंत्रकारी उम्र में जरूर छोटे थे, परंतु अनुभव में बौने नहीं थे। वे सब ओ. ए. एस. के सदस्य थे और द गोल-विरोधी पर्चे छापने से काम शुरू करके सिनेमाघर आदि उड़ा चुके थे। ओ. ए. एस का एक भूतपूर्व अधिकारी भी इस योजन में उनके साथ था। तैयारी शुरू हुई......प पूरी कभी न हुई। एक खेत में इन लोगों ने डाइनामाइट छिपाकर रखा था—किसानों ने देख लिया। पुलिस को खबर हुई और......

—२९—

विकिरणशील बम से द गोल की हत्य की एक योजना और बनी। ३० किलो ग्राम प्लास्टिक और तीन किलो ग्राम टी. एन. टी. का बम मों फेरन में उस स्थान पर छिपा दिया गया, जहां से जनरल द गोल को १५ अगस्त १९६४ को द्वितीय विश्वयुद्ध में मित्रराष्ट्रों के प्रोवेंस में प्रविष्ट होने के उपलक्ष्य में स्थापित स्मारक पर पुष्प चढ़ाना और भाषण देना था। बम को सक्रिय करने का काम दो छात्रों के जिम्मे था। इनमें से एक के हाथ में ट्रांजिस्टर रेडियो था। ..... पर वे दोनों द गोल के निकट भी नहीं पहुंच पाये। पुलिस ने सारे रास्ते रोक रखे थे।

तेरह दिन बाद एक समाचार छपा—'मों फेरन में एक गमले में से अचानक आग की लपटें। गमले में बम था।' बाद में यह भी पता चला कि षड्यंत्रकारियों में से एक ने पुलिस को सावधान कर दिया था और पुलिस ने चुपचाप रिसीवर का संबंध-विच्छेद कर दिया था। बम वहीं पड़ा रहा। एक दिन अनजाने में किसी पुलिस वाले ने अपनी जलती सिगरेट गमले में फेंक दी और लपटें उठ गयीं... ..

जेनिथ

औद्योगिक जगत में एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मुख्य उत्पादन हैं। देश-विदेश में सर्वत्र इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित ओद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

लिंक चेन

❋

जिसकी एक-एक कड़ी मजबूत, परखी हुई और पूर्णत: विश्वसनीय है

❋

सभी उद्योगों व वाहनों में उपयुक्त

❋

एलोय स्टील चेन एक विशेषता

❋

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु.लि.
भाण्डुप बंबई-७८

उधर प्रोफेसर आंद्रे ने प्रयास जारी रखे। उसने एक और बम तैयार किया। परंतु पुलिस को पता चल गया कि १३ मई १९६५ को वेंडी में एक आयोजन में द गोल को बम से उड़ाने की साजिश है। प्रोफेसर के दो साथी पकड़े गये। पर बम बरामद नहीं हुआ। देशव्यापी खोज शुरू हुई। पुलिस को पता चला था कि कोई विमानचालक बम फेंकेगा। पर वह भी पकड़ाई में नहीं आया। सुरक्षा की विशेष व्यवस्था के बीच वेंडी में द गोल ने भाषण दिया.... कोई बम नहीं फटा। यह द गोल की हत्या का ३०वां विफल प्रयास था।

–३१–

अगला प्रयास दस महीने बाद १ जुलाई १९६६ को किया गया। इसी हत्या-प्रयास के वर्णन से हमने ३१ हत्याओं की यह कहानी शुरू की थी।

०००

......और कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। विश्व का यह सर्वाधिक चर्चित राजनीतिक व्यक्ति शायद साधारण मौत मरना भी नहीं चाहता था। वह मूलतः सैनिक था और साधारण सैनिक की तरह ही मरना चाहता था। इसलिए उसकी सुरक्षा के लिए दूसरे लोग ही चिंतित रहे; वह स्वयं तो हमेशा हर सुरक्षा-व्यवस्था को विफल बनाने में ही लगा रहा।

पचीस वर्षों तक जनरल द गोल मृत्यु के बहुत निकट रहे—शायद इसीलिए जीवन के अंतिम दिनों में वे अक्सर मृत्यु के बारे में सोचा करते थे। दिसंबर १९६९ में उनके एक मित्र ने कहा था–'चार्ल्स द गोल अपना समय लिखने और मृत्यु के बारे में सोचने में बिताते हैं। वे अपने को मृत्यु के लिए तैयार कर रहे हैं।'

क्या यह मात्र संयोग था कि अपने को मृत्यु के लिए तैयार करने के इन दिनों में द गोल अपनी जीवन-कथा 'आशा के संस्मरण' (मेम्वार्स ऑफ होप) लिख रहे थे? और क्या यह भी निरा संयोग था कि नवंबर १९७० में जब द गोल की मृत्यु हुई, तो विश्व को इसकी सूचना १४ घंटे २५ मिनिट बाद दी गयी? मौत के साथ खेलते रहने वाले जीवन की 'इत्यलम्' के साथ इन संयोगों का जुड़ जाना शायद स्वाभाविक भी था।

★

अमरीकियों ने दक्षिण वियतनाम को ऐसी फौज खड़ी करने में मदद दी थी, जो पर्याप्त अमरीकी सलाह और निरंतर काफी बड़ी मात्रा में शस्त्रास्त्र-सहायता के बिना अपने आपको कायम नहीं रख सकती थी। जब अमरीकी सहारा हटा लिया गया तो शीघ्र ही बहुत-से वियतनामी सैनिक वह सब कुछ भूल गये, जो कि उन्होंने अमरीकी अफसरों की चेलागिरी में सीखा था।

–'टाइम'

★

सौर ऊर्जा-२

डा. जगदीश लूथरा

पिछले लेख में तुमने पढ़ा कि पृथ्वी के बाहरी वायु-मंडल में सौर ऊर्जा काफी अधिक दर से पहुंचती है। यह दर परंपरागत तरीकों से प्राप्त की जाने वाली ऊर्जा-दर से कई गुना अधिक है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम इस सारी की सारी ऊर्जा को या इसके अधिकांश भाग को आसानी से अपने उपयोग में ला सकते हैं।

हम वैसा क्यों नहीं कर पाते, इसके दो कारण हैं :

१. सौर ऊर्जा को जमा करने और दूसरे उपयोगी रूपों में बदलने के लिए काफी खर्चीले उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है।

२. सूर्य अपनी मर्जी का मालिक है और उससे ऊर्जा प्राप्त करने के लिए हमें उसकी दिनचर्या पर निर्भर रहना पड़ता है। दूसरे शब्दों में कहें तो हम सौर ऊर्जा का उपयोग करने में पूर्ण रूप से आजाद नहीं हैं। विश्व के कई भागों में सूर्य लगातार कई-कई दिनों तक बादलों से ढंका रहता है। और दिन-रात का चक्कर तो लगा ही रहता है; मौसम के अनुसार दिनों की लंबाई घटती-बढ़ती ही रहती है।

ऊपर बतायी समस्या का वैज्ञानिकों ने हल सुझाया है कि दिन में जब सूर्य चमक रहा हो, तब इतनी मात्रा में ताप इकट्ठा कर लिया जाये कि जब सूर्य चमक न रहा हो तब उस संचित ताप का उपयोग बिजली बनाने में किया जा सके। इस काम के लिए वैज्ञानिकों ने चट्टानों के टुकड़े या द्रव सोडियम धातु या साल्ट यूटेक्टिक्स (लवण गलनक्रांतिक) के उपयोग का सुझाव रखा है। इस प्रकार के एक बिजलीघर की रूपरेखा चित्र-१ में दिखायी गयी है।

यह तो तुम जानते ही हो कि द्रवीय और गैसीय ईंधन काफी सुविधाजनक होते हैं; क्योंकि इनका उपयोग हम अपनी मर्जी से जब चाहें कर सकते हैं। इसलिए विज्ञानी ईंधन को इसी रूप में प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं। सौर ऊर्जा से ईंधन का निर्माण किया जा सकता है। सिद्धांत रूप में कोई भी प्रकाश-रासायनिक अभिक्रिया सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा के रूप में बदलने के लिए काम में लायी जा सकती है। अर्थात् सौर ऊर्जा ईंधन में रासायनिक ऊर्जा के रूप में जमा हो जाती है, और जब उस अभिक्रिया को उलटा करते हैं, तो वह ऊर्जा मुक्त हो सकती है। इस बात को इस

प्रकार सूत्र रूप में बताया जा सकता है :

प्रकाश-रासायनिक अभिक्रिया :

अ+फोटान → व (ऊर्जा युक्त ईंधन)

ईंधन (व) → अ+ऊर्जा की मुक्ति

इस तरह ईंधन संश्लेषित किया जाता है, यानी नकली रूप से बनाया जाता है।

इस प्रक्रम में कुछ कठिनाइयां हैं। आरंभिक पदार्थ काफी महंगे हैं। प्रकाश-रासायनिक अभिक्रिया के दौरान कुछ ऐसी अभिक्रियाएं भी हो सकती हैं, जिनकी वजह से अनचाहे पदार्थ भी बन जाते हैं। और यह भी जरूरी नहीं कि जो ईंधन बने वह काफी स्थिर हो। अस्थिर ईंधन का भंडारन (संग्रह) काफी मुश्किल होता है। विज्ञानी ऐसी अभिक्रियाओं पर काम कर रहे हैं, जिनसे इन सभी समस्याओं का हल निकाला जा सके।

पिछले अंक में तुम यह भी पढ़ चुके हो कि कोयला, पेट्रोलियम आदि जीवाश्मी (फासिलीय) ईंधन का निर्माण वनस्पतियों और प्राणियों के अवशेषों से हुआ है। प्रश्न उठता है कि हमारे पास जो जैव पदार्थों का कूड़ा पड़ा रहता है, क्या उसे सूर्य की किरणों की मदद से ईंधन में बदला जा सकेगा? इसके लिए हमें, जो काम प्रकृति सदियों में करती है, उसे झटपट करना होगा।

वनस्पतियों और प्राणियों के अवशेष कार्बनयुक्त पदार्थ हैं। इस तरह के कचरे में अगर थोड़ी नमी रहे, उसे सूर्य की गरमी मिलती रहे और उसे ऐसी जगह रखा जाये जहां आक्सिजन बहुत कम मात्रा में पहुंचती है, तो उस अवशेष का काफी भाग मीथेन या कार्बन डाइ-आक्साइड में बदल जाता है। इस मिश्रण में लगभग ७० प्रतिशत मीथेन होती है। मीथेन बहुत ही उपयोगी ईंधन है। इसके बारे में तुम रासायनिक ऊर्जा वाले लेख में पढ़ ही चुके हो। एक पौंड कचरे से ६।। घनफुट तक मीथेन गैस प्राप्त की जा सकती है।

हमारे देश की आबादी बहुत बड़ी है और हमारे यहां पशुधन अपार है। यदि हम गोबर, मानवीय मल और दूसरे कचरे का उपयोग गैस बनाने में करें, तो इससे कितनी ऊर्जा प्राप्त की जा सकेगी, इसका अंदाजा तुम खुद लगा सकते हो। देश में काम में लाये जा रहे गोबर-गैस प्लांटों के बारे में तुमने सुना ही होगा। वे सब इसी

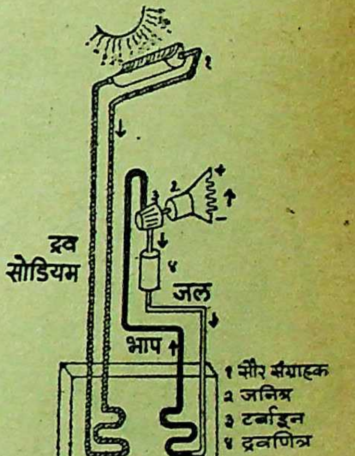

चित्र-१ : सौर ऊर्जा से बिजली-उत्पादन

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

(भारत का सबसे बड़ा रेयान और सिंथेटिक फाइबर की बुनाई, रंगाई और फिनिशिंग का कारखाना)

—: उत्पादन :—

नाना रंगों और डिजाइनों के रेयान और सिंथेटिक वस्त्र पुरुष और स्त्रियां बड़े और बच्चे सभी के लिए बेजोड़ और बढ़िया वैविध्य।

बिक्री और फुटकर दुकान

श्री शक्ति मिल्स लिमिटेड

डॉ. ई. मोसेस रोड, महालक्ष्मी, बंबई-११
टे. नं. ३९४०२१–२२

पैरों की उंगलियों के बीच के घाव (खारवा)?
एड़ी फटना (बिवाई)?
लिचेन्सा
इस्तेमाल कीजिये।

नॉक-११
अधिक संपृक्त ®
अति-तीव्र खटमल नाशक

सुजानिल केमो इण्डस्ट्रीज,
चिंचवड, पूना-१९.

सिद्धांत पर कार्य करते हैं।

सौर सेल

कुछ ऐसे भी पदार्थ हैं, जिनमें खूबी है कि वे प्रकाश को सीधे ही बिजली में बदल देते हैं। सिलिकान सौर सेल ऐसा ही एक उपकरण है, जिसकी मदद से प्रकाश को सीधा ही विद्युत-ऊर्जा में बदला जा सकता है। यह तकनीक काफी उन्नत है और इस प्रकार के सेल कृत्रिम उपग्रहों और अंतरिक्ष-यानों में उपयोग किये जाते हैं। ये सेल काफी महंगे होते हैं, पर इन्हें सस्ता बनाने की दिशा में काफी काम किया जा रहा है।

अब जरा यह भी देखें कि यह सौर सेल किस प्रकार कार्य करता है।

जब कभी पी-और एन-प्रकार के अर्धचालकों को एक साथ आपस में 'सैंडविच' किया जाता है, तो संगम (जंक्शन) के आर-पार एक विभवांतर (वोल्टता अंतर) पैदा हो जाता है। अलग हुई रिक्ति (होल) और इलेक्ट्रान अर्धचालकों में ये विभवांतर उत्पन्न करते हैं। फोटान (सौर ऊर्जा) के सोखने पर उसकी ऊर्जा इन रिक्ति-इलेक्ट्रान युग्म (होल-इलेक्ट्रान पेयर) को मिल जाती है। यदि संगम पर उत्पन्न विभवांतर इन्हें बाहरी लोड की ओर न धकेलें, तो ये युग्म आपस में मिलकर नष्ट हो जाते हैं।

पी-और एन-प्रकार के अर्धचालक क्या होते हैं, यह भी जरा जान लें। अर्धचालक में यह विशेषता होती है कि उसमें अपद्रव्य की थोड़ी-सी मात्रा मिलाने (डोपन) से उसकी चालकता में कई गुना बढ़ोतरी हो जाती है। उदाहरण के लिए, यदि सिलिकान के एक लाख भागों में दस भाग बोरान के मिला दिये जायें, तो उसकी चालकता दस लाख गुना हो जाती है। भिन्न अपद्रव्य मिलाकर पी-प्रकार (धनात्मक चालकता) या एन-प्रकार (ऋणात्मक चालकता) प्राप्त किये जा सकते हैं।

सौर सेल ऊष्मा इंजन नहीं है, फिर भी परिवर्तन के दौरान काफी ऊर्जा खो जाती है यानी यह केवल १५ प्रतिशत ऊर्जा को उपयोगी ऊर्जा में बदलता है। विज्ञानी इसकी दक्षता बढ़ाने में लगे हुए हैं।

अंत में हम यह कह सकते हैं कि सौर ऊर्जा का स्रोत असीमित है और यह ऊर्जा वातावरण को दूषित नहीं करती। ऐसा लगता है कि सौर ऊर्जा हमारी ऊर्जा की बढ़ती हुई मांग को पूरा कर सकेगी। लेकिन

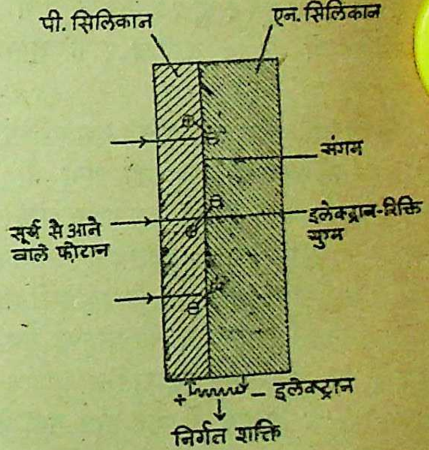

चित्र-२—सौर सेल

भी यह आर्थिक दृष्टि से दूसरी ऊर्जाओं का मुकाबला नहीं कर सकती। आर्थिक दृष्टि से इसे दूसरी ऊर्जाओं की बराबरी पर ाने के लिए अभी बहुत कुछ शोध और विकास-कार्य करना होगा।

(अगली लेख—ऊर्जा की रूपांतरण)

—१२ ए, अल्मोड़ा, अणुशक्ति नगर,
बंबई-४००२०१

★

पीसा की झुकती मीनार को गिरने से बचाने की तरह-तरह की योजनाएं इटली सरकार के सामने प्रस्तुत की जा रही थीं। ऐसा लगता है कि निस्सान फ्रीज और कोनोइक कंस्ट्रक्शन नामक दो जापानी कंपनियों की योजना इटली सरकार ने स्वीकार कर ली है। इन कंपनियों का प्रस्ताव यह है कि सीमेंट और कई रासायनिक पदार्थ झुकती मीनार की नींव में उड़ेले जायें, जिससे नींव मजबूत हो जाये और धंसनी बंद हो जाये। ८०० वर्ष पुरानी विश्वप्रसिद्ध मीनार की रक्षा की इस योजना में ४। करोड़ रुपये खर्च होने की उम्मीद है।

०००

अमरीकी नौसेना के आपरेटर पिछले दस साल से एक अजीब आवाज के बारे में चकित थे। सुरंग में से गुजरती रेलगाड़ी की-सी इस आवाज को वे 'ए–ट्रेन' कहते थे। कुछ पता नहीं चलता था कि उसका उद्गम क्या है। अब रोड आइलैंड विश्वविद्यालय के सागर विज्ञानी डा. विन ने इस रहस्य को सुलझाया है। ह्वेलों की एक किस्म है मिंक, ह्वेलों के हिसाब से काफी छोटी–सिर्फ ३० फुट लंबी। यह अजीब आवाज वही निकाला करती है। मिंक कोका की दुर्लभ ह्वेल मानी जाती थी। मगर शायद ऐसी बात नहीं है; क्योंकि अटलांटिक में 'ए–ट्रेन' आवाज काफी सुनाई देती है।

०००

दो-ढाई वर्ष पूर्व प्रकाशित एक सांख्यिकीय रिपोर्ट में हृदय-रोगों और कॉफीपान के बीच सीधे संबंध की बात कही गयी थी। लगातार कॉफी पीने से हृदय-रोगों की संभावना बढ़ जाती है–यह डर बहुत लोगों के मन में घर कर चुका है। परंतु हाल में बोस्टन (अमरीका) से प्रकाशित एक वैज्ञानिक रिपोर्ट में इस धारणा को निर्मूल बताया गया है। यह रिपोर्ट बारह वर्ष की अवधि में साढ़े चार हजार लोगों पर किये गये अध्ययन पर आधारित है। परिणाम की घोषणा इन शब्दों में की गयी है–'हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि जन-सामान्य द्वारा जिस प्रकार आम तौर पर कॉफी पी जाती है, उसका हृदय-रोगों के विकास में कोई हाथ नहीं है।' मगर रिपोर्ट में यह बात स्पष्ट कर दी गयी है कि जो लोग पहले से ही हृदय-रोग से पीड़ित हों, कॉफी का क्या प्रभाव उन पर पड़ सकता है यह इस अध्ययन का अंग नहीं थी।

★

चतुर भिखारी

एस्टोनिया की एक लोककथा

संजय द्वारा प्रस्तुत

एक राजा था। उसकी सिर्फ एक बेटी थी, बेटा कोई न था। यह राजकुमारी बहुत चतुर थी। उसके सामने मुंह खोलने से भी लोग डरते थे। बड़े से बड़े बातूनों को भी वह बहस में एक ही शब्द से हराकर चुप कर देती थी। सो राजा ने यह घोषणा करा दी थी कि जो भी आदमी राजकुमारी को बहस में हरा दे, उसे मैं अपना दामाद बना लूंगा और आधा राज्य भी दूंगा।

राजकुमारी से शादी करने के लालच से रोज बहुत-से नौजवान राजमहल में आते थे। रोज महल में भीड़ लग जाती थी। बारी-बारी से सभी राजकुमारी से बहस करते; मगर कोई भी बहस में उसे हरा न पाता। लेकिन इस तरह राजकुमारी का सारा दिन बहस में बीत जाता। उसे ठीक से बाल संवारने का भी समय न मिलता। राजा भी बहस के लिए आने वालों की गिनती करते-करते थक जाता।

अंत में राजा ने घोषणा करा दी कि जो बहस करने आकर राजकुमारी से हार जायेगा, उसे जेल में डाल दिया जायेगा। इससे बहस करने आने वालों की संख्या एकदम घट गयी। जो थोड़े-बहुत लोग आते, राजकुमारी उन्हें आसानी से निरुत्तर कर देती थी। मगर अब राजा को चिंता होने लगी कि शायद कोई आदमी कभी बहस में जीत नहीं पायेगा और राजकुमारी बिना विवाह के ही बूढ़ी हो जायेगी।

एक नौजवान भिखारी ने भी यह बात सुनी कि राजकुमारी को जो बहस में हरा दे, उससे राजकुमारी का विवाह कर दिया जायेगा और आधा राज्य भी दिया जायेगा। उसने सोचा कि क्यों न मैं भी जाकर अपना भाग्य आजमाऊं? अगर भाग्य ने साथ दिया, तो मैं राजा का दामाद बन जाऊंगा। नहीं तो मुझे जेल में ही तो डाला जायेगा। वहां मुझे आराम से रोटी मिलेगी।

यह सोचकर वह भिखारी राजमहल की ओर चल पड़ा। चलते-चलते रास्ते में उसे एक मरा हुआ कौआ सड़क पर पड़ा हुआ मिला। उसने सोचा कि शायद कभी यह मेरे किसी काम आये और उठाकर अपने झोले में डाल लिया।

आगे रास्ते में उसे एक डोल मिला, जो एक किनारे से फूटा हुआ था। उसने सोचा कि शायद कभी यह मेरे किसी काम आये

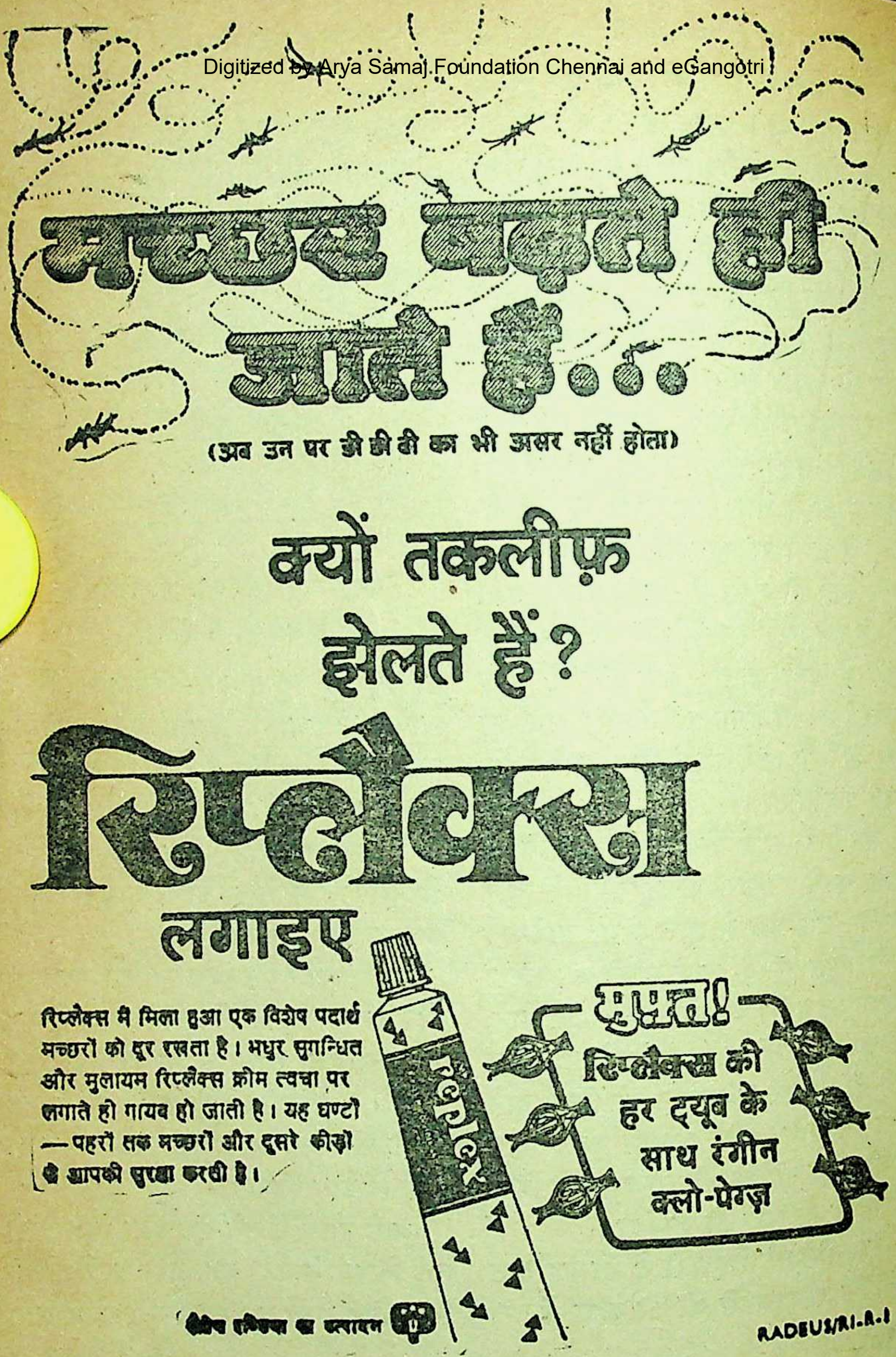

मच्छर बढ़ते ही जाते हैं...

(अब उन पर डी डी टी का भी असर नहीं होता)

क्यों तकलीफ़ झेलते हैं?

रिप्लैक्स लगाइए

रिप्लैक्स में मिला हुआ एक विशेष पदार्थ मच्छरों को दूर रखता है। मधुर सुगन्धित और मुलायम रिप्लैक्स क्रीम त्वचा पर लगाते ही गायब हो जाती है। यह घण्टों—पहरों तक मच्छरों और दूसरे कीड़ों से आपकी सुरक्षा करती है।

मुफ़्त!
रिप्लैक्स की
हर ट्यूब के
साथ रंगीन
क्लो-पेग्ज़

[illegible] इंडिया का उत्पादन

RADEUS/RI.R.I

और उठाकर उसे भी झोले में डाल लिया।

आगे उसे एक छल्ला, एक छड़ी और एक तुरही मिलीं। उसने सोचा कि शायद ये भी कभी मेरे किसी काम आयें, और उन्हें भी झोले में डाल लिया।

अंत में भिखारी शहर के पास पहुंचा। लेकिन वह सीधे शहर में नहीं गया। शहर के बाहर एक खेत में किसी किसान का झोपड़ा था। वहां जाकर उसने रात-भर रहने की जगह मांगी। किसान और उसकी बीवी ने उसे अपने यहां ठहरा लिया और खाना भी दिया।

भिखारी ने उन्हें बताया कि मैं राजकुमारी से बहस करने के लिए शहर जा रहा हूं। वे बोले कि तुम व्यर्थ में मुसीबत में पड़ जाओगे, मत जाओ। लेकिन भिखारी ने जवाब दिया कि नहीं, मेरी नाक के नीचे मुंह है, और मुंह में जीभ है, सो मैं जरूर राजकुमारी के साथ बहस करूंगा।

अगले दिन सवेरे भिखारी सचमुच राजमहल में पहुंच गया। राजा के नौकर ने उससे पूछा कि तुम्हें क्या काम है? भिखारी ने उत्तर दिया कि मैं राजकुमारी से बहस करने आया हूं। नौकर हंस पड़ा और बोला—'तुम अभी बहुत छोटे हो, इसीलिए ऐसी बेवकूफी-भरी बात कह रहे हो। जाओ, जब अक्ल की दाढ़ निकल आये, तब आना।' लेकिन भिखारी ने बड़ी चतुराई से नौकर को मना लिया और नौकर ने जाकर राजकुमारी व राजा को सूचना दी। राजकुमारी बोली कि अगर यह भिखमंगा जेल में ही सड़ना चाहता है तो ठीक है, बुला लाओ।

भिखारी ने राजकुमारी के सामने पहुंचते ही कहा—'बर्फ-जैसे ठंडे हाथों वाली राजकुमारी, तुम्हें सलाम!'

राजकुमारी बोली—'नहीं, मेरे हाथ तो गर्म हैं; इतने गर्म कि उनमें कोई कौआ रख दिया जाये तो भुन जाये।'

फौरन भिखारी ने अपने झोले में से मरा हुआ कौआ निकालकर कहा—'लो, इसे पकड़ो।'

राजकुमारी भी कम नहीं थी। बोली—'मगर भुने कौए की चरबी टपकने लगेगी न?'

भिखारी ने फूटा हुआ डोल निकालकर सामने रख दिया।

राजकुमारी बोली—'मगर यह डोल तो एक किनारे से फूटा हुआ है। चरबी बह जायेगी।'

भिखारी ने झोले में से छल्ला निकाला और डोल को उसमें घुसा दिया।

राजकुमारी बोली—'मगर छल्ला तो ढीला है!'

इस पर भिखारी ने झोले में से छड़ी निकालकर छल्ले में खोंस दी और कहा—'अब छल्ला फिट हो गया है, अब चरबी बहेगी नहीं।'

राजकुमारी ने देखा कि भिखारी बहस में उससे बाजी मार रहा है, तो बोली—'इतना ज्यादा बोलोगे तो तुम्हारी जीभ ऐंठ जायेगी, फिर तुम्हारे मुंह से आवाज भी नहीं निकल पायेगी।'

यांत्रिक प्रगति का अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
(थाना बंबई)

दि अवध शुगर मिल्स लि.
हरगांव
जि. सीतापुर, उ. प्र.

शुद्ध दानेदार चीनी और
उत्तम स्पिरिटों के निर्माता

* *

बरार आयल इंडस्ट्रीज
वनसदा पेठ
अकोला (महाराष्ट्र)

वनसदा ब्रांड वनस्पति
के निर्माता

हरगांव आइल प्रॉडक्ट्स
सीतापुर, उ. प्र.

मूंगफली के तेल
साल्वेंट एक्स्टैक्टेड आइल
और तेल विमुक्त खली
के निर्माता

भिखारी ने झोले में से तुरही निकालकर उसमें फूंक मारी और राजकुमारी से कहा– 'देखो, तुरही भी ऐंठी हुई है, मगर उसमें से कितनी बढ़िया आवाज निकलती है!' और वह राजकुमारी के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। लेकिन राजकुमारी को इसका कोई उत्तर नहीं सूझा और वह चुप बैठी रही। अंत में उसने हार मान ली।

अगले दिन राजकुमारी के साथ नौजवान भिखारी की शादी हो गयी और भिखारी राजा का दामाद बन गया। इसीलिए कहा जाता है–अक्ल दुनिया में सबसे बड़ी चीज है।

★

बीकानेर (राज.) के महाराज पद्मसिंहजी (१६४५-१६८३ ई.) की गणना प्रसिद्ध युद्धवीरों और मानवीरों में की जाती है। कहते हैं, एक चारण के दोहे से प्रसन्न होकर उन्होंने उसे ९ लाख रुपये दान में दे डाले थे।

जब पद्मसिंह मरणासन्न अवस्था में घायल होकर युद्धक्षेत्र में लेटे थे, मराठा सेनापति जादूराय ने उन्हें देख लिया। जादूराय के भाई सावंतराय की मृत्यु पद्मसिंह के हाथों हुई थी। जादूराय ने प्रतिशोध लेने का अच्छा अवसर समझकर पद्मसिंह पर वार किया। इस प्रहार से पद्मसिंह की मूर्च्छा दूर हुई। उन्होंने जादूराय को घुटनों के नीचे दबाया और अपनी कटार उसकी छाती में भोंक दी। ऐसा करने में उनके भी प्राण-पखेरू उड़ गये। इस संबंध में ये पंक्तियां प्रसिद्ध हैं?

धाबां बहु खेत पड्यो न्रप धमत,
बुध हीणै कीवी सिरवाह।
जठै तबम गिरतै जादम ने,
गोडां तळ दीनौं गजगाह।।
कर जुध धरा रह्यो करनाणी,
बदखोरौ आयौ चढ़ वाढ़।
घोड़े हूंत लियो फल घांटौ,
देखत पार करी जमदाढ।।
मैंगळ तणी समापण मौजां,
सकवां रयौ नहीं संसार।
अपसर अर जादू रै अँग में,
करजुत मांही रयौ कटार।।
झुरसी निरधन न्रबळ हजारां,
रीझां दियण सिरै दोय राह।
पड़तै पदम कमध पाटोधर,
पाड़ लियौ दिखण्यां पतसाह।। –डा. कन्हैयालाल सहल

★

* प्रेमचंद के उपन्यासों में शिल्प-विधान
* प्रथम पुरुष
* भारत की सम्पदा
* लीलटांस

पुस्तकास्वादन

***प्रेमचंद के उपन्यासों का शिल्प-विधान ***
लेखक : डा. कमलकिशोर गोयनका; प्रकाशक : सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद; पृष्ठ-संख्या : ५७४; मूल्य : ५० रुपये।

यह शोधप्रबंध दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा डाक्टर ऑफ फिलासफी की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ है। प्रेमचंद पर बहुत अधिक शोध-प्रबंध प्रस्तुत किये गये हैं, जिनमें प्रेमचंद के कथ्य और भावनापक्ष की विशिष्टताओं का अधिक विवेचन हुआ है। इस प्रबंध में लेखक ने पहली बार बजाय कथ्य के प्रेमचंद की शिल्पगत उपलब्धियों को अधिक महत्त्व देकर विस्तृत विवेचन किया है।

इसे पढ़ते हुए यह प्रश्न अनायास ही आ जुड़ता है कि कथ्य के बिना सिर्फ शिल्प का कहां तक महत्त्व है। लेखक की स्वयं की परिवर्तनशील मन:स्थितियों, आदर्शों तथा प्रतिबद्धताओं को जीवन, समाज और परिवेश सीधे-सीधे प्रभावित करते हैं। यह 'प्रभावित करना' लेखकीय कथ्य को स्थिर करता है और अंतत: कथ्य शिल्पगत आकृतियों को स्पष्ट करता है। लेखक ने प्रेमचंद के स्वयं के जीवन-मूल्यों, आदर्शों, मन:स्थितियों और परिस्थितियों की छानबीन के संदर्भ में भी उनकी बदलती-विकसित होती शिल्पगत विशेषताओं को रेखांकित किया होता तो वह और अधिक सार्थक होता। उपर्युक्त संदर्भ की छानबीन के लिए उसे अधिक कठिनाई भी नहीं होती।

प्रसंगवश इस संदर्भ को कहीं-कहीं स्पर्श भी किया गया है, यथा–'गोदान कर्मभूमि के समान अपने युग की किन्हीं विशिष्ट घटनाओं की उपज नहीं है, वह तो प्रेमचंद के मानस में धीरे-धीरे एकत्र होने वाली गहन और घनीभूत संवेदनाओं की एक संश्लिष्ट अभिव्यक्ति है।' (पृ. ४४८) यहां जिज्ञासु पाठक यह जानना चाहेगा कि प्रेमचंद के मानस में एकत्र होने वाली वे घनीभूत संवेदनाएं क्या थीं। लेखक ने 'कर्मभूमि'

के उद्देश्य के संदर्भ में बाह्य परिवेश से प्रेमचंद की संपृक्ति का विश्लेषण किया भी है। पर इस विश्लेषण को स्थापनाओं के लिए एक आधार-रूप देना था।

प्रेमचंद उर्दू से हिंदी में आये थे। हिंदी में प्रारंभिक त्रुटियों और क्रमशः उस पर अधिकार करके अपनी एक भाषा-शैली को उन्होंने जिस तरह विकसित किया उसका सही और रोचक परिचय, वस्तु-विन्यास को संवारने की उनकी क्रमिक सफलता और अन्यान्य शैल्पिक विशिष्टताओं को इस ग्रंथ में पहली बार विस्तृत वैज्ञानिक विश्लेषण मिला है। प्रेमचंद के अध्येताओं के लिए यह ग्रंथ बहुत उपयोगी सिद्ध होगा, विशेषतः उनकी शैल्पिक उपलब्धियों को एक नये कोण से देख पाने के कारण।

ooo

*** प्रथम पुरुष * लेखक : श्री जगन्नाथ प्रसाद दास; अनुवादक : शंकरलाल पुरोहित; प्रकाशक : लहर प्रकाशन, इलाहाबाद; पृष्ठसंख्या : ६०; मूल्य : छह रुपये।**

क्षेत्रीय भाषाओं से हिंदी में अनूदित होकर प्रकाशित होने वाली रचनाओं में प्रकाशन के लिए अभी ऐसी आपाधापी है कि इनके द्वारा संबंधित साहित्य के स्तर को लेकर कोई धारणा बनाना कठिन हो रहा है—खासकर उन्हें जो उस भाषा से परिचित नहीं हैं। साहित्य की किसी न किसी वर्तमान या प्राचीन (अगर प्राचीन रचना हो) विशिष्टता को उकेरने का उद्देश्य भी अनुवाद के साथ जुड़ा हो, तो इस कठिनाई को टाला जा सकता है। ऐसी अनूदित रचनाएं अपने साहित्य का, कम से कम संबंधित विधा का सही चित्र खींचने में, सही धारणा बनाने में मदद करती हैं। अनुवादक का दायित्व इस तरह दोहरा हो जाता है। हिंदी में अनूदित रचनाओं के साथ 'प्रकाशन की सुविधा' वाली बात अधिक है, स्तरीयता या प्रतिनिधित्व वाली बात कम। श्री जगन्नाथ प्रसाद दास की उड़िया कविताओं के इस संकलन को पढ़ते हुए यह बात अधिक तेजी से हमारे सामने उभरती है।

किसी आधुनिक उड़िया कवि का हिंदी में प्रकाशित होने वाला शायद यह प्रथम संकलन है। इसकी महत्ता इस प्रथमत्व की दृष्टि से है। श्री दास की सृजनशीलता पिछले एक दशक तक खामोश रही और इधर दो-तीन वर्षों की मुखरता का उनका स्वर उत्साहित नहीं करता। संकलित पचीसों कविताएं वैयक्तिकता के बदरंग कमरे, छत, दीवारों और झरोखों (कवि जिससे बाहर संसार को कभी-कभार ताकता है) के छोटे-से दायरे में स्मृतियों, मुखौटे लगाने-उतारने और सांप की जीभ-से लपलपाते बंद कमरे के समय की भुतही छायाएं हैं। स्मृतियों और संताप के रंग से रंगी इन कविताओं में बिंबों का प्रभावशाली उपयोग हुआ है।

'प्रथम पुरुष' की मूल उड़िया कविताओं में भाषा का अनगढ़पन है, अतः अनुवाद के बारे में कुछ कहना जायज नहीं होगा।

डेट धुलाई की टिकिया
साबुनों के मुक़ाबले
१½ गुनी ज़्यादा शक्तिशाली
—खारे पानी में भी.

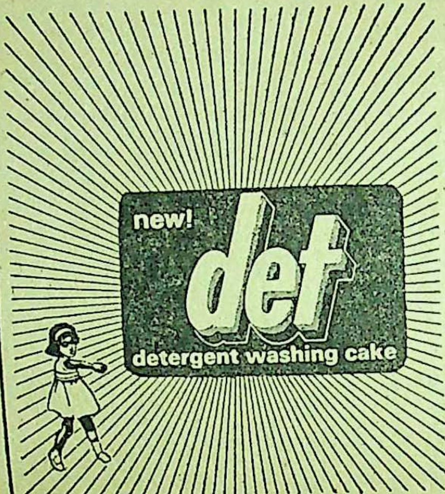
new!
det
detergent washing cake

डेट धुलाई का पाउडर
कई साइज़ के पैक में मिलता है. कपड़ों को इसके घोल में भिगोइये और धो लीजिये. हाथों को मुलायम भी रखता है.

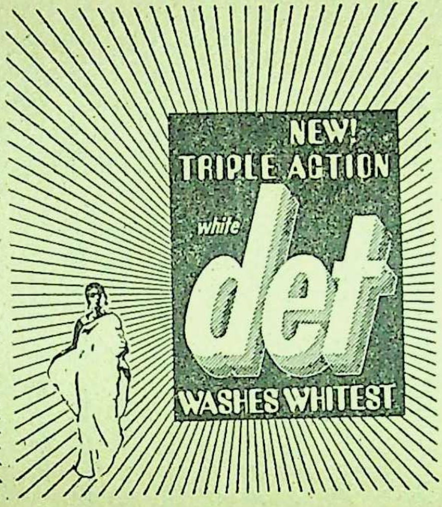
NEW!
TRIPLE ACTION
white
det
WASHES WHITEST

एन-डेट
दाग़-धब्बे नाशक एनज़ाइमयुक्त धुलाई का पाउडर, सक्रिय लेकिन हानिरहित.

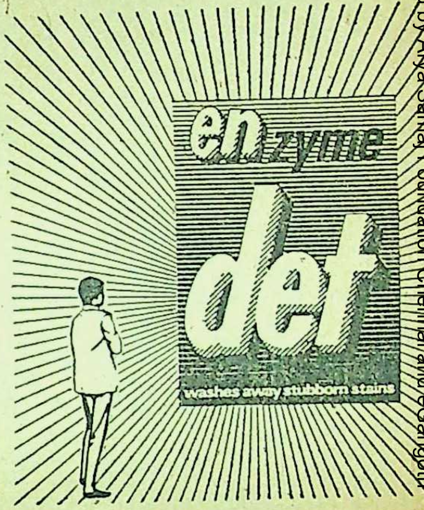
enzyme
det
washes away stubborn stains

न कभी थी, न मिलेगी; ऐसी सफ़ेदी—डेट उत्तम पदार्थों से

Shilpi HPMA 6A/74 Hin

ये कविताएं निश्चय ही उड़िया कविता की इस दशक की विशिष्टताओं का इजहार नहीं करतीं। —महेंद्र शर्मा

०००

*** भारत की सम्पदा : पशुधन और कुक्कुट-पालन * प्रधान संपादक : स्वामी (डा.) सत्य प्रकाश; प्रकाशक : प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय (पी.आई. डी.), नयी दिल्ली; पृष्ठसंख्या : २४२ + १६ (२६ फलक, जिसमें ५ रंगीन हैं); मूल्य : नहीं दिया है।**

आलोच्य ग्रंथ 'भारत की सम्पदा : प्राकृतिक पदार्थ' ग्रंथमाला का एक पूरक खंड है, जिसमें पशुधन के संबंध में विस्तृत और उपयोगी जानकारी दी गयी है। इस ग्रंथमाला के तीन खंडों और उपादेयता की चर्चा मैं पहले कर चुका हूं। यह खंड मूल रूप से अंग्रेजी में 'वेल्थ ऑफ इंडिया—लाइव स्टाक सप्लीमेंट' नाम से सन १९७० में प्रकाशित हुआ था और अब उसका यह हिंदी संस्करण प्रकाशित किया गया है।

यह खंड ११ अनुभागों में बांटा गया है—गोपशु तथा भैंसें, भेड़ें, बकरियां, सूअर, घोड़े तथा टट्टू, गधे तथा खच्चर, ऊंट, याक, पशु-धन, उत्पादों का रसायन, विपणन और व्यापार, तथा कुक्कुट-पालन। आंकड़ों को अद्यतन करने का प्रयास किया गया है। परंतु लगता है, अभी भी इस दिशा में काफी कुछ करना पड़ेगा। कुछ नामों का नागरी लिप्यंतर कुछ अजीब-सा बन पड़ा है। खेडा जिला—कैरा जिला, पडगांव—पडेगांव, आरे—ओरे और अमुल—आमूल बन गये हैं। संपादन की ढिलाई के कुछ उदाहरण भी सामने आ जाते हैं। पुस्तक में खोआ, खोवा और खोया तीनों हिज्जों का प्रयोग किया गया है, परंतु अनुक्रमणिका में केवल 'खोआ' ही मिलता है। 'आवश्यक अमीनो अम्ल' और 'अनिवार्य अमीनो अम्ल' दोनों शब्दों का व्यवहार किया गया है। सारणियों में मैसूर राज्य ही लिखा गया है—कर्नाटक नहीं। इसी प्रकार लक्षदीप भी चलता है और लक्षदीवी भी।

इसी प्रकार सारणियों के शीर्षकों में भी एकरूपता लायी जा सकती थी। कहीं पर '......की संख्या का वितरण' है तो कहीं '...... का वितरण'। पृष्ठ ९४ पर सारणी में ५९ में 'पीलेपन की कोटि' का जो सूत्र दिया गया है, वह सही नहीं है। यह असावधानी अनुवादक की है या प्रेस की, कहा नहीं जा सकता।

अनुक्रमणिका इस प्रकार तैयार की जानी चाहिये कि उसमें सभी महत्त्वपूर्ण शीर्षकों का समावेश हो, ताकि पाठकों को पुस्तक इस्तेमाल करने में आसानी हो। गोबर एक महत्त्वपूर्ण उत्पाद है, परंतु अनुक्रमणिका में यह शब्द नहीं मिलता। पुस्तक में पृष्ठ ६० पर इसके बारे में थोड़ी-सी जानकारी आधे पृष्ठ में दी गयी है। अनुक्रमणिका और विस्तार से होनी चाहिये थी।

अनुवाद का स्तर पहले खंडों जैसा ही है। मुद्रण-स्तर भी काफी ठीक है। संपादन में काफी सुधार की आवश्यकता है।

०००

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है। आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

* * *

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेडमार्क देख लें

* * *

पुलगांव
काटन मिल्स

दि न्यू स्वदेशी
शुगर मिल्स लिमिटेड.
नरकटियागंज,
जि. चंपारन, बिहार

उत्पादन :

शुद्ध दानेदार चीनी
पावर और औद्योगिक
अल्कोहल

अलाहाबाद
कैनिंग
बमरौनी (इलाहाबाद)
उत्तर प्रदेश

उत्पादन :

डिब्बाबंद फल और सब्जी

मैक्फरलेन पेन्ट्स
कलकत्ता

उत्पादन :

उम्दा पेन्ट्स, वार्निश
वैलामॉय्ड रूफिंग कंपाउंड
क्रोम और पिग्मेंट

*** प्राणिलोक (प्राणिविज्ञान की समीक्षा पत्रिका) * वर्ष : १; अंक : २; प्रकाशक : विश्वविद्यालय ग्रंथ निर्माण निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-११०००९; मूल्य : प्रति अंक ३ रुपये।**

इस पत्रिका का उद्देश्य स्नातक, स्नातकोत्तर तथा अनुसंधान कार्य में लगे विद्यार्थियों के लिए समीक्षात्मक लेखों, नयी तकनीकों और उपकरणों एवं नयी-नयी पुस्तकों के बारे में सामग्री का प्रकाशन करना है। इस अंक में प्रकाशित लेख—पेशियों की कार्यिकी, कीटों में बहुरूपता, न्यूक्लीक अम्ल; वाताश्य और जनन नियंत्रण आदि स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर के विद्यार्थियों के लिए काफी लाभप्रद और उपयोगी हैं।

मुद्रण, संपादन, रूप-सज्जा काफी उच्च स्तर की है। हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के अभाव की पूर्ति में यह प्रकाशन एक महत्त्वपूर्ण कदम है। आशा है कि सभी क्षेत्रों में इसका स्वागत होगा। **—डा. जगदीश लूथरा**

ooo

*** लीलटांस * कवि : कन्हैयालाल सेठिया; प्रकाशक : श्री राधेश्याम सराफ, ९/१, शोभाराम बैशाख स्ट्रीट, कलकत्ता-७; पृष्ठ-संख्या : ८४; मूल्य : ८ रुपये।**

लीलटांस (काव्य-संग्रह) राजस्थानी भाषा की एक अनमोल कृति है। विगत और वर्तमान समग्र राजस्थानी साहित्य में भाषा की संप्रेषणीयता, सूक्ष्मार्थ व्यंजकता का जो स्तर श्री सेठियाजी उपलब्ध कर चुके हैं (और उससे ऊपर निरंतर अबाध गति से अनेक दशकों में बढ़ते जा रहे हैं) वैसा कोई भी कृतिकार कर पाया है, मुझे तो नहीं लगता। यह उस परिभाषा में काव्य है, जिसमें लाओ-त्जे का ताओ-तेह किंग, बुद्ध का धम्मपद, महावीर का आचारांग तथा ऋग्वेद के दशम मंडल की ऋचाएं काव्य हैं। इसका रचयिता मंत्र-दृष्टा है। इसमें न कल्पना लोक की रंगीन उड़ान है, न यथार्थ-बोध के नाम पर कुंठाओं की आराधना। यह आत्मा की औषधि है, आत्मा के प्रकाश की अभिव्यक्ति है। जीवन के द्वंद्व के समाधान का दिशा-निर्देश है, चेतना के उन्नयन की प्रेरणा है। इसके शब्दों में कवित्व की स्थूल खोज एक सीमा तक ही सार्थक है। वहां सत्य की अनाम अरूप सत्ता है, जिसकी विकिरणशील आलोक-कणिकाओं को बाहर ही बाहर शब्द अपने अंतस में समेटकर चमकने लगते हैं।

कवि के शब्दों में शब्द तो चेतना का शत्रु है और वह उससे पूरी कृति में लड़ता ही रहा है, जूझता ही रहा है। इस अंतःसंघर्ष के भीतर ही कोई जादुई वातायन है, जिसमें प्रवेश करने पर ही साक्षात्कार होता है लीलटांस का।

यह कृति राजस्थानी भाषा और साहित्य के परिवेश में एक अभूतपूर्व ऐतिहासिक घटना है।

—भानीराम 'अग्निमुख'

* * *

[illegible]
दूँ तो कैसे !
सर बुरी तरह दुख रहा है।
मेरी मानो तो
एनासिन ले लो।

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co., Ltd.

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

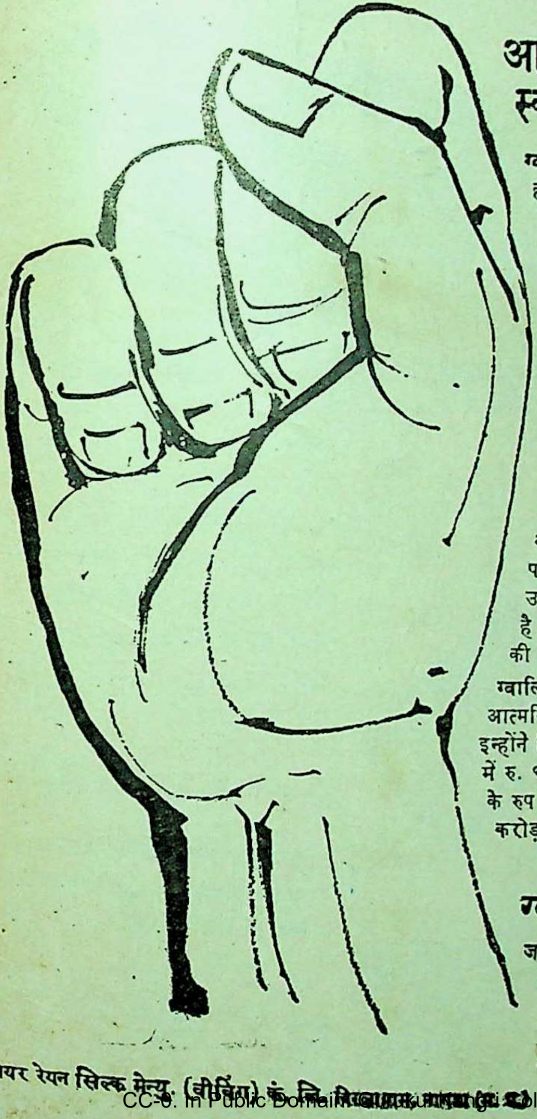

आत्मनिर्भरता का
स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन
जहां राष्ट्र की प्रगति ही
एकमात्र उद्देश्य है

दि ग्वालियर रेयन सिल्क मैन्यु. (वीविंग) कं. लि. [illegible]

Sobhagya GR 74-2-H

जरा ठहरिये! गडबड वस्तु खाकर अपना पेट न बिगाडे!

प्रोपॅक® स्वीटीज

PROPAC SWEETIES
PROPAC SWEETIES
ENERGY BISCUITS FOR ADDED VIGOUR AND HEALTH
PROPAC

दफ़्तर में दिन भर काम और फिर थकाने वाले घरेलू धन्धे। इतने परिश्रम के बाद आपको प्रोटीन चाहिए। और प्रोटीन के लिए प्रोपॅक सबसे अच्छे हैं। प्रोटीन के लिए अच्छा पौष्टिक भोजन हो या फिर सबसे अच्छे प्रोपॅक बिस्किट!

साधारण बिस्किटों से
तीन गुने प्रोटीन
दस गुने विटामिन
और कई गुने कैल्शियम और आयरन से

हल्के आसानी से हजम हो जाने वाले प्रोपॅक बिस्किट स्फूर्तिदायक प्रोटीन, विटामिन, कैल्शियम और आइरन से भरपूर हैं।

कुरकुरे, स्वादिष्ट प्रोपॅक बिस्किट सुबह के नाश्ते, दोपहर की कॉफ़ी या शाम की चाय के साथ लीजिए।

PROPAC
PROPAC SALTIES

आपकी प्रिय
प्रोपॅक
साल्टीज
अब नए
[illegible]
में मिलती हैं

[illegible] का उत्पादन

३१८८४

गुरुकुल
पुस्तकालय

गस्त १९७५

नवनीत

हिंदी डाइजे

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आतमनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही एकमात्र उद्देश्य है

Sobhagya GR 74-2-Hin.

ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

B.Vasant/VPB/1-75

मत समझिए कि यह कोई अचार की मामूली बरणी है यह तो बेडेकर के सर्वोत्तम उत्पादनों में से एक है

सुगन्ध और सुस्वाद के लिए सुपरिचित यह उत्पादन ६९ वर्ष के लम्बे अरसे से भारत के घर-घर में मशहूर है

सुरुचिपूर्ण महिलाएँ तो बेडेकर उत्पादनों की तारीफ़ करते नहीं थकतीं। बेडेकर के कई उत्पादन हैं जैसे अचार, मसाले, पापड़ व चटनी जो अपणी विशुद्धता और उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं। बेडेकर के सभी उत्पादन अन्तराष्ट्रीय स्तर की लीक-प्रफ़ पैकेजिग में मिलते हैं। बेडेकर के उँचे दर्जे के उत्पादन यानी आपकी पहली पसन्द।

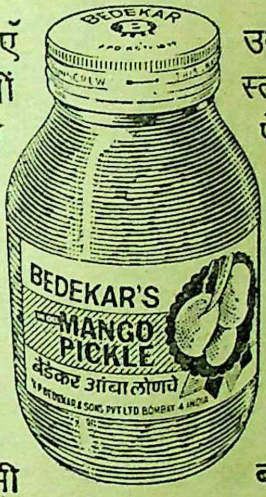
BEDEKAR
BEDEKAR'S
MANGO
PICKLE
बेडेकर आंबा लोणचे
V. P. BEDEKAR & SONS PVT LTD BOMBAY 4 INDIA

व्यापारिक पूछताछ :
व्ही. पी. बेडेकर
एण्ड सन्स प्रा. लि.
बम्बई-४ (भारत)

बेडेकर

बेडेकर अचार • बेडेकर मसाले • बेडेकर पापड • बेडेकर चटनी

बढ़ता बचपन बलवान बने- इनक्रिमिन* से

बचपन के दिन, फलने-फूलने, बढ़ने के दिन! इन दिनों बच्चों का शरीर फूल की तरह खिलता है- विकसित होता है, इन्हें इनक्रिमिन सिरप ज़रूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इनकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिन और लोहतत्वों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में, विशेष अमीनो एसिड, लायसिन भी शामिल है- जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता देता है।

वाह वाह! क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ती जाये!

इनक्रिमिन* टॉनिक

अधिक आहार से अधिक बढ़ाये-
खाया पिया अंग लगाये!

डाक्टरों का विश्वासपात्र नाम

Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग * अमेरीकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क

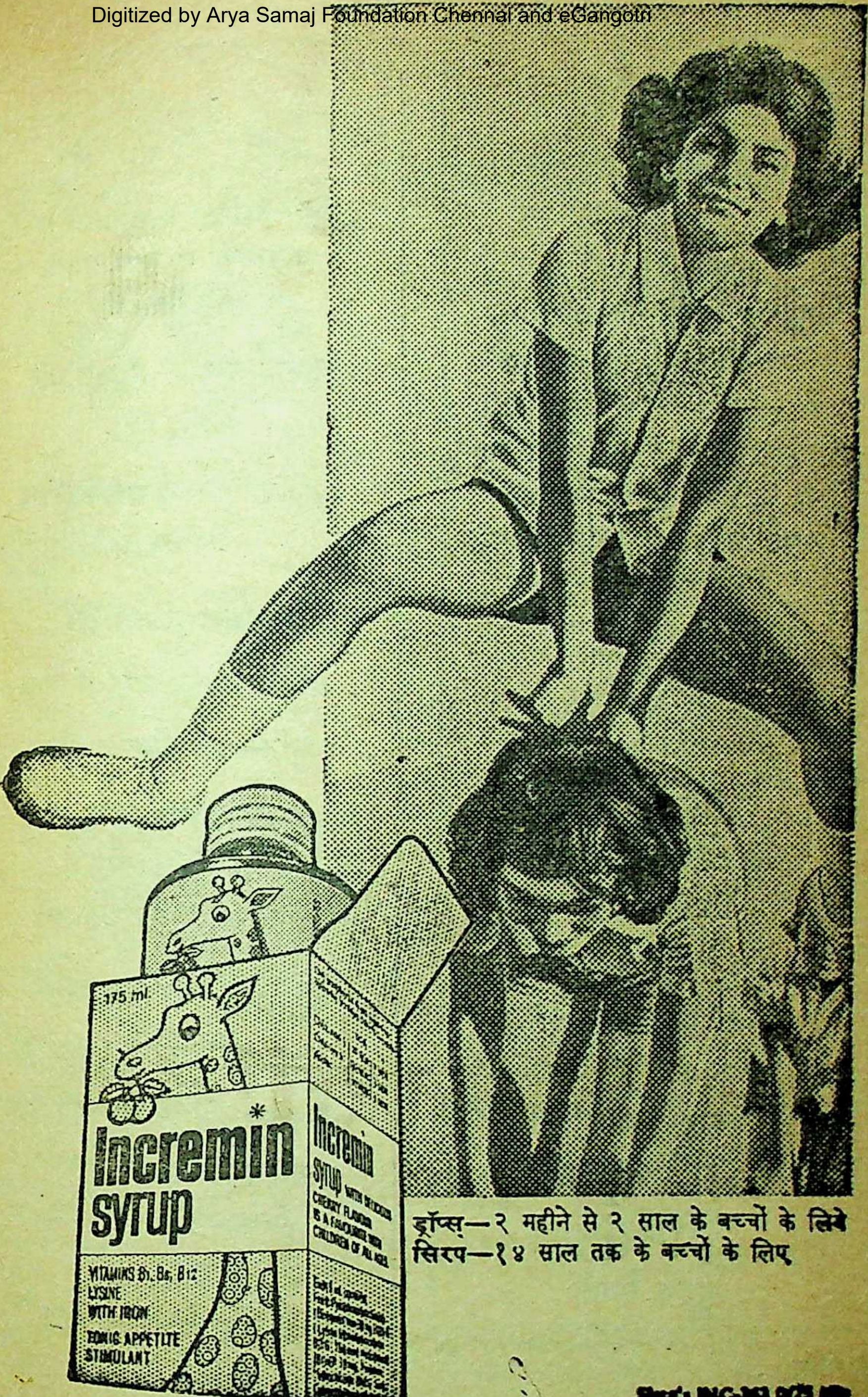
175 ml
Incremin syrup
VITAMINS B1, B6, B12
LYSINE
WITH IRON
TONIC APPETITE STIMULANT
Incremin syrup WITH DELICIOUS CHERRY FLAVOUR IS A FAVOURITE WITH CHILDREN OF ALL AGES

ड्रॉप्स्—२ महीने से २ साल के बच्चों के लिये
सिरप—१४ साल तक के बच्चों के लिए

[illegible]

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है ।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मन-मोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव

काटन मिल्स

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के उत्पादनों के लिए हमसे सम्पर्क करें ।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम कंपनी लि.

इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग लिमिटेड

ग्रिडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)

एशियन सायकल टायर व टच्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि०
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई–१

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती है सप्ताह में एकसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

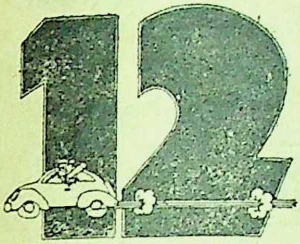

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १२ उड़ानें

लंदन? आठ ७४७ विमानों को आपका इंतज़ार है. इनमें से दो केवल बेरूत हो कर जाते हैं, मंगलवार और शनिवार को. दूसरे छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफ़र्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा होकर जाते हैं. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

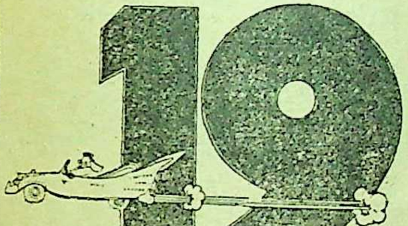

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में १९ उड़ानें

बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? तीन ७४७ विमान और दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन के लिए तीन उड़ानें; और आबू धाबी, मस्कत, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

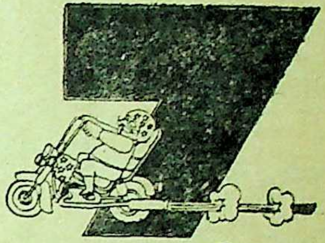

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें

हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

साथ ही हर सप्ताह:
६ उड़ानें
जापान के लिए हाँग काँग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

HT. AI. 8730

कपड़ों की उजली धुलाई के लिये !

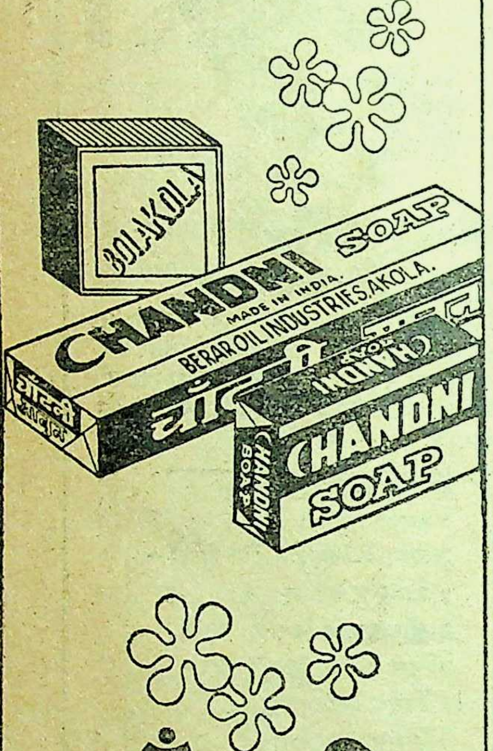
30 AKOLA
CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA.
BERAR OIL INDUSTRIES, AKOLA.
चाँदनी साबुन
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई-४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स
डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स
डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

क्या आपने इसकी
व्यवस्था कर ली है ?
आपकी बेटीके विवाहके लिये
आपके पास पर्याप्त रकम है ?

आपको पता भी नही चलेगा कि समय कितनी जल्दी बीत जाता है। और एक दिन आपको लगेगा कि आपकी बेटी बडी हो गयी है। उसके विवाहकी समस्या आपके सामने मुँह बाये खडी है। क्या आप उसके विवाहका खर्च करनेके लिये तय्यार है ?
आजही देना बेंकमे बचत खाता या मीयादी जमा खाता खोलकर अभीसे नियमित बचत कीजिये।

देना बेंककी अन्य ६ बचत योजनाएं–
नाबालिग बचत योजना • आवर्ती जमा योजना • मासिक बचत व वार्षिकी योजना • बहुप्रयोजनीय जमा योजना • नकदी प्रमाणपत्र बीमा संबद्ध बचत जमा योजना

देना बेंक
(गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया अंडरटेकिंग)
हेड ऑफिस : हॉर्निमेन सर्कल,
बम्बई ४००००१.

Ratan Batra/DB/H1237-A

यांत्रिक प्रगति का
अनुपम प्रतीक

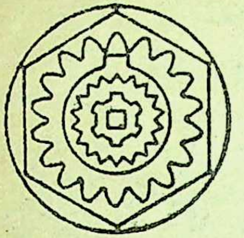

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
(थाना बंबई)

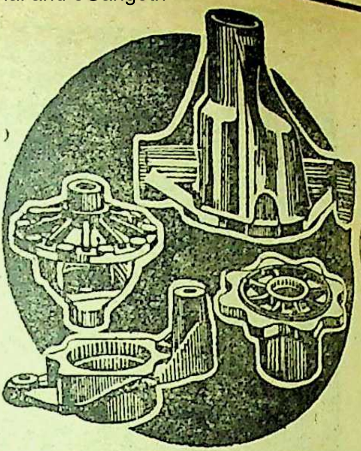

दि इंडियन स्मेल्टिंग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

एस० जी० आइरन के
कास्टिंग

कांसा, पीतल, गनमेटल, लोहेतर धातुओं तथा इस्पात के पुर्जों व हिस्सों का स्थान ले सकते हैं।

मैलिएबल आइरन के
कास्टिंग

अनेक प्रकार की चीजों में इस्पात केकास्टिंग का काम दे सकते हैं।

फेरस फाउंड्री
पंचपाखाड़ी,
पहिला पोखरन
लेन, थाना
(महाराष्ट्र)

बिक्री हेतु उपलब्ध प्रकाशन

भारत : वार्षिक संदर्भ ग्रंथ 1975

24×16 से. मी., पृष्ठ 494, मूल्य 9.00

(बिक्रीखर्च मुफ्त)

यह संदर्भ ग्रंथ सन् 1954 से हर वर्ष नियमित रूप से प्रकाशित होता आ रहा है। इस अधिकृत संदर्भ ग्रंथ में राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित सरकारी और अन्य अधिकृत सूत्रों से एकत्रित सूचनाएं उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त इस वार्षिक संस्करण में 1974 तथा इसके बाद की सूचनाएं शामिल हैं। 'महत्त्वपूर्ण घटनाएं' शीर्षक अध्याय में जुलाई, 1973 से दिसम्बर 1974 तक की घटनाएं दी गई हैं। भारतीय संविधान की संघीय और संसदीय प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं को इस संस्करण के 'सरकार' शीर्षक अध्याय में पहली बार दिया गया है। 'सांस्कृतिक गतिविधियां और वैज्ञानिक अनुसंधान' अध्यायों के विषय विन्यास में भी परिवर्तन किया गया है। इस संस्करण में मई, 1974 में हमारे देश में किये गये भूमिगत परमाणु प्रयोग पर विश्व में हुई प्रतिक्रिया की समीक्षा भी है।

महत्त्वपूर्ण घटनाओं से सम्बद्ध चित्र भी दिये गये हैं। छपाई, सफाई तथा साज-सज्जा पहले से अधिक आकर्षक है।

यह पुस्तक विद्यार्थियों, प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वालों, पुस्तकालयों तथा सामान्य नागरिक के लिए अत्यन्त उपादेय है।

अपनी प्रति प्राप्त करने के लिए आज ही लिखें :–

राजकीय प्रकाशन विक्रय भण्डार
प्रकाशन विभाग
सुपर बाजार (दूसरी मंजिल)
कनाट सरकस,
नई दिल्ली–110001

डीएवीपी/ 75/125

प्रत्येक ईसाई के घर में "बाईबिल"—मसुलमान के घर में "कुरान" अवश्य होगी।
अतः प्रत्येक हिन्दू परिवार में "वेद" भी होना ही चाहिये।

अतः प्रस्तुत हैं :—

"चारों वेदों का हिन्दी भाष्य"

लगभग २००० पृष्ठों में : २५×३८ सें. मी. साईज ४ सुनहरी जिल्दें : लागत मूल्य लगभग ३००) रु. किन्तु पवित्र धार्मिक ग्रन्थ घर-घर में पहुँचाने के लिए कुछ दिनों के लिए **भेंट मूल्य २०१) रु.** (प्लास्टिक कवर सहित)

सर्वश्रेष्ठ आर्ट पेपर पर : मूल्य ५०१) रु.

रेलवे स्टेशन लिखें। १/४ धन आदेश के साथ मनीआर्डर से भेजें।

दयानन्द संस्थान (पंजीकृत ट्रस्ट) १५९७ हरध्यान सिंह मार्ग (३१ नाई वाला)
करौल बाग—नयी दिल्ली-५
दूरभाष ५६६६३१

DAM/75

निश्चित आराम
कफ सर्दी फ्लू
में
त्रिशून
टैब्लेट्स

- पूर्णतया आयुर्वेदिक दवा
- १० गोलियों के पैकेट में सर्वत्र उपलब्ध

जब
खुजली
खसरे में एक समस्या बन जाये
उपयोग कीजिये
स्केबीज़न
मलहम

- खुजली में उपचार के लिए जल्दी प्रभावकारी
- १० ग्राम की ट्यूब में सर्वत्र उपलब्ध

झंडू फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड
बंबई-४०० ०२८

नवनीत

वर्ष २४ : अंक ८ अगस्त १९७५

* इस अंक में *

पत्र-वृष्टि १३ संपादक की डाक से
तीन स्वातंत्र्य-वीर १७ ....
स्वामी दयानंद, आर्यसमाज...... १८ नारायण दत्त
बहरीन २६ नुट् रायस
कोरिया : फिर से युद्ध की घटा २९ प्रयागनारायण
वर्तनी ३३ इदरीस शाह
जीवन-तीर्थ ३४ सुबीर
'भारतीय आत्मा', एक झांकी ३६ रामनाथ सुमन
वाक्यदीप ४० माताजी
पृथ्वी का स्वर्ग है हिंदुस्तान ४१ डा. परमानंद पांचाल
पंजाबमाता : पावन स्मृति ४४ सुरेंद्र श्रीवास्तव
मत सो जाना (कविता) ४९ अंचल
मुत्तुस्वामी दीक्षितर् ५० डा. नारायण मेनन
कविताएं ५३ प्रभाकर माचवे
कविताएं ५५ 'चंद्रभूषण,' सुखबीर
हम तो डूबे हैं मगर (उर्दू कहानी) ५६ अतिया परवीन
विज्ञान-बिंदु ६१ केजिता
त्रिकटु (तीन पंजाबी लघुकथाएं) ६५ पांधी ननकानवी
कार्पोव के बाद कौन ? ६८ रवींद्र मोरपरीआ
अपने ही बारे में अज्ञान ७१ व्योहार राजेंद्र सिंह

संचालक
श्रीगोपाल नेवटिया
प्रबंध-संचालक
हरिप्रसाद नेवटिया

संपादक
नारायण दत्त
उपसंपादक
गिरिजाशंकर त्रिवेदी

सहसंपादक
सुरेश सिन्हा
उपसंपादक
डा. विष्णु भटनागर

व्यापार-व्यवस्थापक
महेंद्र महेता
प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
सज्जा : **ठाकोर राणा**

डाक-टिकटों में रवींद्र ७२ पुष्पेंदु लाहिड़ी
उस मंगलवार को (जर्मन कहानी) ७६ वुल्फ गांग बार्शर्ट
सृष्टि में मानव-कृत व्यवधान ७९ प्रताप कृष्ण जुत्शी तथा डा. देवकीनंदन
गंदे हाथों का रोग ८६ डा. विताली कारेती
तमिळ के नीतिग्रंथ ८८ रा. वीलिनाथन्
पराकाष्ठा ९२ राजेंद्र मेहता
स्मृति के अंकुर ९७ उपाध्याय, पांडेय, मनजीत, व्यास
अंतिम रचनाएं १०० रवींद्रनाथ ठाकुर
जुजुमान (नेपाली कहानी) ११६ गोविंदबहादुर मल्ल 'गोठाले'
हंसी के बुलबुले १२६ शिरीषचंद्र
उपग्रहों के घूमने के सिद्धांत १२९ डा. जगदीश लूथरा
रंग बदलने वाला फूल १३४ सुखबीर
मैं आलाहजरत से मिला १३८ ग. त्र्यं. धर्माधिकारी
कुछ इधर से, कुछ उधर से १४६ मित्र
पुस्तकास्वादन १४९ भटनागर, शेष, पांडेय,
राजनीतिज्ञों के गैरराजनैतिक खेल १५४ ....

★

चित्रसज्जा :

रवींद्रनाथ ठाकुर, ओंके, शेणै, कांबली, पुरोहित, राणा,
सतीश चव्हाण, भटनागर, अंजू मेहरा।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१, ताडदेव, बंबई-३४.
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग,
३३५, बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष २४ रु.; दो वर्ष ४६ रु.; तीन वर्ष ६६ रु.।
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष ६० रु.; दो वर्ष १०५ रु.; तीन वर्ष १५० रु.।
(हवाई डाकसे) एक वर्ष १२० रु.; दो वर्ष २१० रु.; तीन वर्ष ३०० रु.।
भारत में नवनीत का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा **नवनीत** प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्री वेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

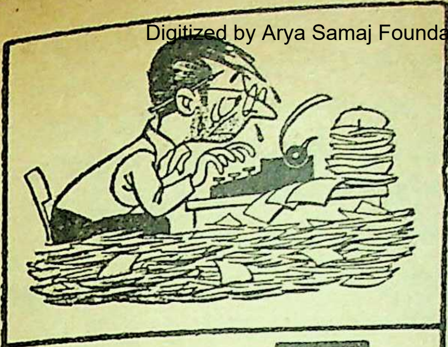

पत्र-वृष्टि

जुलाई अंक में श्री नर्मदाप्रसाद खरे की रचना देखी। वास्तव में इसकी पहली पंक्ति 'भीड़ के इन जंगलों में आदमी हैरान है' मैंने और खरेजी ने मिलकर बनायी थी और फिर हम दोनों ने इस पंक्ति के आधार पर अपने-अपने ढंग से हिंदी गजलें तैयार की थीं। उस समय उनका तथा मेरा इरादा यह था कि दोनों को एक साथ प्रकाशित करवाया जाये। बहरहाल, मेरी रचना इस प्रकार है:

भीड़ के इन जंगलों में आदमी हैरान है।
क्या बतायें किस गुफा में खो गयी पहचान है।
फूल कुछ कुचले हुए, कुछ आईने टूटे हुए—
देखिये मत, यह किसी का व्यक्तिगत सामान है।
जिंदगी का दर्द जीने के लिए दम चाहिये
लाश कंधे पर उठा लेना बहुत आसान है।
सूर्य, तेरे पुत्र सारे बिक गये तो क्या हुआ?
इक दिये की शक्ल में जिंदा अभी ईमान है।

—भवानीशंकर, जबलपुर

०००

'पैगंबर के अंतिम दिन' (जुलाई अंक) पढ़ते-पढ़ते आंखों में आंसू छलक आये। खासकर वह प्रकरण पढ़ते हुए, जहां वर्णन है कि मृत्यु से पिछले दिन पैगंबर ने आयेशा के पास रखे आखिरी छह दीनार भी गरीबों को वंटवा दिये और उस रात दीया जलाने के लिए आयेशा को पड़ोसी से तेल मांगना पड़ा। अपरिग्रह का यह कितना ऊंचा आदर्श है कि दूसरे के धन का ही नहीं, स्वयं अपने धन का भी लालच न हो! शायद **नवनीत** में ही पढ़ा था कि पैगंबर के बाद इस्लाम का नेतृत्व संभालने वाले हजरत अबूबक्र अपने देहावसान के समय यह आदेश दे गये थे कि राज्य की ओर से उन्हें जो बकरी मिली हुई थी, वह राज्य को वापस कर दी जाये और उनके बाद खलीफा बनने वाले हजरत उमर ने कहा था—अबूबक्र, आप अपने उत्तराधिकारियों के लिए बहुत कठिन राह बता गये! हां, ऐसी कठिन राह पर चलने वाले असिधाराव्रती ही राष्ट्रों का निर्माण करते हैं। **—रामलोचन शर्मा, जयपुर**

०००

लीजिये, आपने जिमी कानर्स पर लेख (जुलाई अंक) छापा और उधर आर्थर एश (जूनियर) ने उसे पराजित कर दिया! वैसे उदयन शर्मा का लेख जानदार शैली में लिखा हुआ और जानकारी से भरा था।

—चंद्रकिरण अहूजा, पटियाला

जैसे सत्पुरुष सभी परिस्थितियों में सत्पुरुष ही रहता है, वैसे ही सर्वोत्कृष्ट वस्तुएं विषम परिस्थितियों में भी अपने स्तर एवं गुण को बनाये रखती हैं। **नवनीत** का स्थायी पाठक होने के नाते मैं आशा करता हूं कि ज्ञानवर्धक सामग्री के प्रकाशन द्वारा **नवनीत** अपनी सही ख्याति बनाये रखेगा तथा 'लैला-मजनू' टाइप की 'मिर्जा-साहिबां' (जुलाई अंक) जैसी घिटी-पिटी कहानियां प्रकाशित करके १७ मूल्यवान पृष्ठों का अपव्यय नहीं करेगा। हम पाठक **नवनीत** के एक-एक पृष्ठ में ज्ञानवर्धक एवं स्वस्थ रुचिकर सामग्री की अभिलाषा रखते हैं।

—राधेश्याम कुशवाहा, नयी दिल्ली

०००

जुलाई अंक में 'मिर्जा साहिबां' (गुरुबख्श सिंह) और 'दो मनीषियों की मैत्री' (चंद्रभाल ओझा) विशेषत: आकर्षक रचनाएं रहीं। 'विज्ञान-बिंदु' स्तंभ में 'आर्यभट की उपयोगिता' उपशीर्षक के अंतर्गत आर्यभट का व्यास १४ सेंटिमीटर तथा ऊंचाई ११·६ सेंटिमीटर बतायी गयी है। वस्तुत: आर्यभट केंद्र में १·६ मीटर व्यास तथा ऊंचाई में १·२ मीटर का छब्बीस तलों वाला है और उसका भार है लगभग ३६० कि. ग्राम। **—वीरेंद्रसिंह मल्ल, देहरादून कैंट**

०००

'द गोल की हत्याएं' (जून अंक) दिलचस्प रहा। मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक था कि इनमें से कितने प्रयासों के पीछे सी. आइ. ए. का हाथ रहा होगा। सी. आइ. ए. की कार्रवाइयों की जांच के लिए असरीकी सेनेट द्वारा नियुक्त समिति के सामने आये साक्ष्यों के जो समाचार छपे हैं, उनसे प्रकट होता है कि फ्रांसीसी राष्ट्रपति को परलोक पठाने की योजनाओं से सी. आइ. ए. को सहानुभूति थी।

—केवलकृष्ण, भोपाल

०००

'द गोल की ३१ हत्याएं' जैसे पुस्तक-संक्षेप देकर आप अब शायद सस्ती पत्रकारिता के अखाड़े में उतरना चाहते हैं। भगवान आपको सद्‌बुद्धि दे।

—विश्वनारायण सिंह, बलिया, उ. प्र.

०००

जून अंक को सारगर्भित, सटीक समयानुकूल देखकर आश्चर्य-मिश्रित प्रसन्नता हुई। श्री नेमिशरण मित्तल के लेख 'चुनाव-पद्धति में संशोधन की मांग' से मैं पूर्णत: सहमत नहीं हूं, परंतु लेख था समयानुकूल। आशा है, आपने इस विषय पर श्री लालकृष्ण अडवानी—अध्यक्ष भारतीय जनसंघ जैसे अन्य भी दो-तीन विद्वानों से लेख लिखवाने की योजना बनायी होगी।

'डालर की माया' कितनी विकट है कि उसमें फंसकर जानकार भी सर्वनाश के कगार तक पहुंच ही जाता है। आशा है, अब इस माया में मोहित होने वाला होश रखने का प्रयास करेगा।

स्वर्गीय डा. राधाकृष्णन् का 'प्रजातंत्र: आधार और आयाम' बताता है कि उन्हें भारत के प्रशासन व प्रजातंत्र का कितन

सूक्ष्म ज्ञान था !

—जगदंबी प्रसाद यादव,
पो. बरियारपुर, जि. मुंगेर, बिहार

०००

दिमाग में घूमते रहते जाने कितने प्रश्नों के उत्तर अनायास **नवनीत** की बोधगम्य रचनाओं में मिल जाते हैं। इन दिनों पत्र-पत्रिकाओं में 'अश्लीलता' कुछ इस तरह घर कर गयी है कि उन्हें घर में रखने की इच्छा नहीं होती। अश्लीलता के संबंध में उसके समर्थक न जाने कितनी तरह के ऊट-पटांग तर्क दिया करते हैं, जिन्हें पढ़-सुनकर मन खीज उठता है। मुझे बड़ी सुखद अनुभूति हुई जब मैंने जुलाई के **नवनीत** में स्व. इयन फ्लेमिंग का यह कथन पढ़ा :

'अश्लील साहित्य से मुझे घृणा है। गंदगी को जानने-समझने के लिए यह जरूरी नहीं कि उसमें लथपथ हुआ ही जाये। कुछ लेखक तो उसमें भी सुंदरता देखने लगते हैं और अश्लीलता को उचित सिद्ध करते हैं। संसार पहले ही इस कदर गंदगी से भरा हुआ और भयंकर है कि उसमें और ज्यादा गंदगी क्यों पैदा की जाये ?'

बड़े-बड़े लेखकों के लेखन-संबंधी स्पष्ट विचार इसी तरह प्रकाशित करते रहें। इससे हम जैसे साहित्य की पहली सीढ़ी पर कदम रखने वालों पर बड़ा उपकार होगा।

—गिरीश बख्शी, राजनांदगांव

०००

जून अंक में रामेश बेदी का लेख 'हमारे गूंगे दोस्त' पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। आज जब हमारा अमानुषिक मनुष्य-समाज पशुओं के भयंकर संहार में लगा हुआ है, ऐसे लेखों की बड़ी आवश्यकता है। **नवनीत** को हमारी हार्दिक बधाई। हमारा अनुरोध है कि आगे भी इस प्रकार के लेख छपते रहें। उससे पाठकों की पशु-संबंधी जानकारी बढ़ती है, साथ ही उनकी सुरक्षा में भी वे रुचि लेते हैं।

—नरेंद्र चौधरी, निराया

०००

नवनीत ने विविध विषयों की विधाओं के प्रस्तुतीकरण में मूल्यों का जो आदर्श स्थापित किया है, वह सदा श्लाघ्य रहेगा। किंतु इन दिनों उसके कविता-पक्ष में ऐसा दौर्बल्य आ गया है कि वह मन-प्राण को छू नहीं पा रहा। विश्वास है, **नवनीत** अपने स्तर के अनुरूप कविताएं चुनने और छापने पर अधिक ध्यान देगा।

—विनोद, नयी दिल्ली-११०००३

* * *

'एक पेंसिल दीजियेगा।' महिला ने दुकानदार से कहा।

'बहन आपको सख्त पेंसिल चाहिये या नरम ?'

'अभी तो नरम ही दीजिये; क्योंकि मुझे बेटी को पत्र लिखना है। जब दामाद को पत्र लिखूंगी, तो सख्त पेंसिल ले जाऊंगी।'

* * *

दाँतों के डाक्टरों की राय में

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालोंने अपने आप क्या लिखा है :

'बारह साल की उम्र से ही मैंने फोरहॅन्स से दाँत साफ़ करने शुरू कर दिये थे। आज मैं बीस साल का होने जा रहा हूँ। पहली बार फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करते समय मेरे मसूढ़ों में कुछ तकलीफ़ थी। अब वह तकलीफ़ नहीं रही। पहले, रात के समय दाँतों को ब्रश करने की मेरी आदत नहीं थी। बाद में रोज रात को १० बजे पढ़ाई करते समय आपके विज्ञापन सुन-सुनकर मेरी यह 'नयी आदत' पड़ गयी है।'

(सही) एस. मित्तल,
बी.ई. (इलेक्ट्रिकल), पटियाला।

'...लगभग एक साल पहले मैंने देखा कि मेरे दाँत पीले पड़ने लगे हैं, हालांकि मैं सिगरेट नहीं पीता...मेरे पिताजी ने,... जो पिछले ३० साल से "फ़ोरहॅन्स" से ही दाँत साफ़ करते रहे हैं, मुझे दूसरे टूथपेस्ट के बजाय "फ़ोरहॅन्स" से दाँत साफ़ करने की सलाह दी। कमाल है! मेरे दाँत जितने साफ़ और अच्छे होने चाहिए, वैसे हो गये। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आपके आश्चर्यजनक टूथपेस्ट–**फ़ोरहॅन्स**—में वे सभी गुण हैं जिनका आप प्रचार करते हैं। इसका रहस्य यह है कि यह **दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है।**"

(सही) एस. एस. चटर्जी, एम.ए.
कोयम्बटूर।

Forhans
FOR

(इन पत्रों की फोटोस्टॅट कॉपी आप जैफ़्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं)

दाँतों की समुचित देखभाल के लिए रोज सवेरे और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट और फ़ोरहॅन्स डबल-एक्शन टूथब्रश इस्तेमाल कीजिए...और नियमित रूप से डाक्टर की सलाह भी लेते रहिए!

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका।

अपनी प्रति*प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

नाम: ______________________ उम्र: ________

पता: ______________________ 06

* कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़।

फ़ोरहॅन्स दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

4-182 HIN

तीन स्वातंत्र्य-वीर (चित्रप्रश्न-१ का उत्तर)

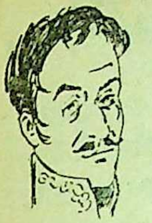

साइमन बोलीवार (१७८३-१८३०) : एक से अधिक दक्षिण अमरीकी देश को स्वातंत्र्य दिलाने वाले वीर सेनानी। जन्म काराकास नगर में जमींदार घराने में हुआ। १८१० से स्पेन के विरुद्ध क्रांतिकारी अभियान में शरीक हुए। १८२२ तक कोलंबिया, वेनेजुएला, ईक्वाडोर और पनामा को स्पेनी साम्राज्य से मुक्त कराया और १८२४ में शाही सेना को शिकस्त दी। १८१९ में वेनेजुएला के और उसी साल बृहत्तर कोलंबिया (वर्तमान कोलंबिया, वेनेजुएला, ईक्वाडोर और पनामा) के राष्ट्रपति चुने गये। पेरू और बोलीविया को स्वतंत्र कराया। १८३० में राष्ट्रपति-पद से त्यागपत्र दे दिया, उसी वर्ष तपेदिक से गुजर गये। जीवन-काल में उग्र तानाशाही शासन के लिए बदनाम रहे, आज 'मुक्तिदाता' के रूप में पूजे जाते हैं।

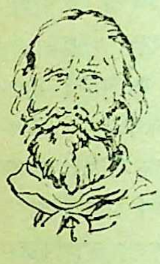

जुसेप्पी गैरीबाल्डी (१८०७-८२) : इटली के स्वातंत्र्य-सेनानी। नीस में जनमे। १८३५ में गणतंत्र-स्थापना के विफल षड्यंत्र में भाग लिया और दक्षिण अमरीका भागना पड़ा। वहां १८३५ से १८४६ तक ब्राजील और उराग्वे के गृहयुद्धों में शरीक हुए। मातृभूमि लौटकर सार्डीनिया की सेना की ओर से आस्ट्रिया से लड़े (१८४८-४९)। फिर मैज़िनी द्वारा स्थापित रोम-गणराज्य की ओर से फ्रांस से जूझे (१८४९)। बाद में गणतंत्रीय विचार तजकर कावूर की प्रेरणा से राजा विक्टर इमैन्युअल के अधीन इटली के एकीकरण के लिए अपनी लालकुर्ती सेना द्वारा सिसिली और नेपल्स को जीता। दो बार पोप के राज्य को सर करने का विफल यत्न किया। अंतिम वर्षों में काप्रेरा टापू में निवृत्त जीवन बिताया।

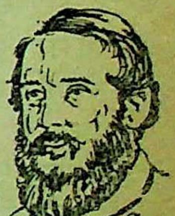

लुई कॉसुथ (१८०२-९४) : हंगेरी के क्रांतिवीर। आस्ट्रिया के विरुद्ध मार्च १८४८ के विद्रोह के अगुओं में एक थे। जब आस्ट्रिया ने सैनिक कार्रवाई की तैयार की, तो राष्ट्रीय सरकार के अध्यक्ष बने और सुरक्षा का आयोजन किया। अप्रैल १८४९ में राष्ट्रपति बनाये गये। मगर उसी वर्ष अगस्त में आस्ट्रिया की ओर से रूस ने सैनिक हस्तक्षेप किया, तो त्यागपत्र देकर विदेश चले गये। निर्वासित व्यक्ति के रूप में विदेश में मरे।

★

स्वामी दयानंद, आर्यसमाज

स्वामी दयानंद सरस्वती और उनके आर्य-समाज का धर्म-परिष्कार एवं समाज-सुधार की उस प्राणवंत लहर से गहरा संबंध था, जो पिछली सदी के मध्य-दशकों में इस देश में तेजी से उठी, किंतु लक्ष्य तक पहुंचने से पहले ही दुर्भाग्यवश अपना वेग खोकर इस सदी के आरंभिक दशकों में विशीर्ण हो गयी। आर्यसमाज की स्थापना के शताब्दी-महोत्सव का यह वर्ष हमें स्वामीजी और आर्यसमाज के दाय (फैशनेबल नयी हिंदी में कहें तो 'अवदान') पर विचार करने का अवसर प्रदान करता है।

उन्नीसवीं सदी, जिसमें कि स्वामीजी जनमे और जिये, भारत के दिशा हारने व दिशा पाने, आस्था गंवाने व आस्था पुन: अर्जित करने की सदी थी। मुगल शासन के नि:सत्त्व हो जाने के बाद से यह देश केंद्रीय सत्ता और नेतृत्व से वंचित हो गया था। मराठे, टीपू सुलतान और बाद में सिक्ख देश की उस आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर पाये; क्योंकि एक तो उन्हें जमाने की ठीक पहचान नहीं थी, दूसरे उनके पीछे वह जागृत राष्ट्रव्यापी जनबल नहीं था, जो ऐसे प्रयत्नों की सफलता के लिए बहुत जरूरी है। कोई सुचिंतित लक्ष्य तथा शत्रु की शक्ति और अपनी दुर्बलताओं का सही अंदाज न होने के कारण १८५७ की उथल-पुथल भी तेजी से भभककर उतनी ही तेजी से बुझ गयी और पहले से भी अधिक अंधेरा अपने पीछे छोड़ गयी। इस प्रकार अपेक्षाकृत अल्प प्रयत्न से ही साम्राज्य रूपी महाफल अंग्रेजों की झोली में टपक पड़ा।

उन्नीसवीं सदी में भारत की चप्पा-चप्पा जमीन को आक्रांत कर लेने वाला ब्रिटिश साम्राज्यवाद व्यापक पश्चिमी साम्राज्यवाद का एक हिस्सा था। यह साम्राज्यवाद नवोदित पूंजीवाद के साथ गलबहियां डालकर चल रहा था और नये विज्ञान व यंत्र-तंत्र से संनद्ध था। इन चार चीजों का यह व्यूह इतिहास में एक नया और निहायत खौफनाक तत्त्व था। भारत का पिछला अनुभव और परंपरागत बौद्धिक उपकरण इस लायक नहीं था कि इन चार तत्त्वों के पृथक् और मिश्रित स्वरूप एवं चरित्र को पहचान व परख सके। सो इस चतुर्व्यूह की चमक से उसकी बूढ़ी आंखें चुंधिया गयीं और वह इसके समक्ष नतमस्तक हो गया। 'पूरी अमी की कटोरिया-सी' विक्टोरिया रानी की प्रजा होना औसत भारतीय को ईश्वरीय विधान और परम सौभाग्य प्रतीत होने लगा। अंग्रेज और अंग्रेजी हुकूमत के बारे में हिंदी एवं अन्य देशभाषाओं में इस

और भारतीय जागरण

अरसे में बनी बीसियों प्रशंसात्मक कहावतें इसकी निशानियां हैं।

किंतु क्रिया के गर्भ में उसकी प्रतिक्रिया भी निहित रहती है। अंग्रेज और अंग्रेजी के संपर्क ने जहां लाखों उथले दिमागों को सुला दिया, वहीं चंद आला दिमागों को गहरा सोचने और अंतर्निरीक्षण करने को प्रेरित किया। इनके प्रथम और प्रखर प्रतिनिधि थे राजा राममोहन राय (१७७४-१८३३)। वे प्रगल्भ मस्तिष्क और संवेदनशील हृदय के धनी थे। अनेक देशों और भाषाओं के धार्मिक व लौकिक साहित्य का उन्हें निकट परिचय था। उन्होंने अनुभव किया कि वैचारिक जड़ता, धार्मिक विकृति एवं सामाजिक कुरीतियां हमारी दुरवस्था का कारण हैं। इनके निवारण के लिए उन्होंने कार्य आरंभ किया। दुनिया में बह रही आर्थिक-राजनैतिक हवाओं की उन्हें काफी पहचान थी और वे भारत को संपूर्ण विश्व के परिप्रेक्ष्य में रखकर विचार कर सकने वाले प्रथम भारतीय थे। उन्होंने हिंदू धर्म का जो प्रतिसंस्कार 'ब्राह्म समाज' नाम से किया, वह एक तरह से हिंदू धर्म का अंतरराष्ट्रीय संस्करण था—काफी वायवीय। उसकी अपील मुख्यतया बौद्धिक वर्ग तक रही। तथापि वह भारत के कायाकल्प की दिशा में पहला पग था।

स्वामी दयानंद सरस्वती (१८२४-१८८३) राममोहन राय के पूरक थे और कुछ हद तक प्रतीप भी। उनकी दृष्टि कम व्यापक किंतु एकमुख थी, इसलिए लेजर की भांति शक्तिशाली और बींधने वाली थी। उनका अध्ययन मूलतः संस्कृत ग्रंथों का था, परंतु उस परिधि में उनका पांडित्य

*** नारायण दत्त ***

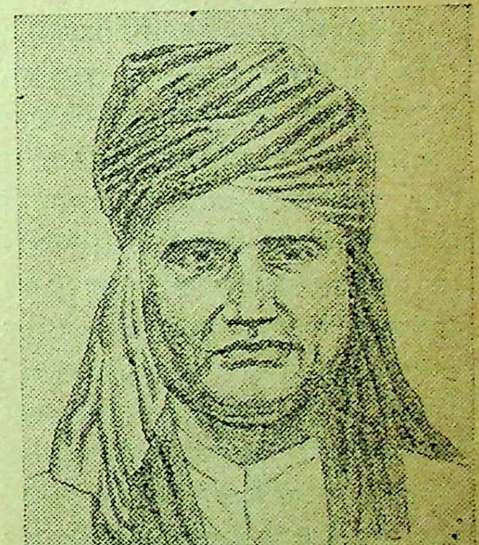

महर्षि दयानंद सरस्वती

अगाध था। पैनी बुद्धि और तत्त्वग्राही प्रज्ञा के कारण वे किसी भी नये-पुराने विचार की तह में पहुंचने और हेय-उपादेय का विवेक करने में समर्थ थे। वे वीतराग संन्यासी थे; किंतु उनकी वज्रोपम काया में ऐसा दिल था, जो दूसरों के लिए दुखता था। जवानी के दिनों में गुरु और सत्य की खोज में उन्होंने भारत के बहुत बड़े भाग का पैदल भ्रमण किया था (ऐसा ही भ्रमण बाद में स्वामी विवेकानंद ने किया) और इन यात्राओं के दौरान उन्होंने अपने देशबांधवों की घोर दीनता-दरिद्रता को, धार्मिक विकृतियों एवं सामाजिक कुरीतियों को, जड़ता व मूढ़ता को, उनके तथाकथित धर्मगुरुओं के स्वार्थीपन को, उनके पंडे-पुजारियों की ठगविद्या को और विदेशी शासन की भोंडी असलियत को प्रत्यक्ष देखा था और दर्द महसूस किया था।

वे भी राममोहन राय की तरह इस नतीजे पर पहुंचे थे कि जब तक भारत अपने वैचारिक और सामाजिक मलों को धो न डाले, उसका उद्धार असंभव है। साथ ही उनकी यह भी मान्यता थी कि आत्मपरिष्कार की इस क्रिया के लिए आवश्यक सब साधन-सामग्री हमारे पुरखों की वैचारिक थाती में मौजूद है। सो इन्हीं 'स्वदेशी' विचारों से लैस होकर उन्होंने अपनी ओजस्वी वाणी एवं लेखनी से धार्मिक पाखंड (जिसे वे विनोद में 'पोपलीला' कहते थे) और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध तुमुल संग्राम छेड़ दिया।

उनकी धार्मिक मान्यताएं बहुत सीधी और बुनियादी थीं। ईश्वर एक-अजन्मा-नित्य निराकार है और 'उसी की उपासना करनी योग्य है'। वेद (ऋक्, यजुः, साम, अथर्व) ईश्वर की वाणी है, वह सब सत्य-विद्याओं का मूल है, वही परम प्रमाण है। वेद का उपदेश परमात्मा ने सृष्टि के आरंभ में सर्वमानवों के कल्याण के लिए किया है। सृष्टिकर्ता ईश्वर के अलावा जड़ प्रकृति और असंख्य जीवात्माएं भी नित्य हैं। स्वामीजी कर्मफल और पुनर्जन्म को मानते थे। चार वर्ण, चार आश्रम और चार पुरुषार्थों में उनकी आस्था थी और सोलह संस्कारों के वे हिमायती थे। ईश्वरोपासना के लिए वे दैनिक संध्या और अग्निहोत्र को महत्त्व देते थे।

ऊपरी नजर से उनकी ये धर्मास्थाएं रूढिवादी हिंदुओं के मूल विश्वासों से बहुत अधिक भिन्न तो नहीं प्रतीत होतीं; किंतु उन्होंने इनसे जो निष्पत्तियां निकालीं या इनकी जो व्याख्याएं कीं, वे परंपरागत हिंदू आस्थाओं से बहुत अलग थीं–कई बार तो उनसे सर्वथा उलटी भी। यदि ईश्वर एक, अजन्मा और निराकार है तो बहुदेवपूजा, अवतार-कल्पना और मूर्तिपूजा धर्म्य नहीं हो सकती। यदि वेद ईश्वरीय वाणी है और उसका उपदेश परम पिता ने सबके कल्याण के लिए किया है, तो वह केवल ब्राह्मणों के घोखने की चीज नहीं रहने दी जा सकती; उस पर सबका समान अधिकार है, सबको उसे पढ़ना व समझना चाहिये। पिछले दो हजार साल की वैदिक परंपरा में यह निपट

नयी बात थी जो वेदवाणी पर ब्राह्मणों का एकाधिकार समाप्त कर देती थी। वस्तुतः उन्होंने वेदों के अर्थ-सहित अध्ययन की नयी परिपाटी की नींव डाली।

वर्ण-व्यवस्था के वे कायल थे; किंतु गुण-कर्म-स्वभाव को उसका आधार मानते थे, जन्म को नहीं। अर्थात् ब्राह्मण का बेटा शूद्र हो सकता है और शूद्र का बेटा ब्राह्मण, और रोटी-बेटी के व्यवहार में जन्मगत वर्ण-विचार अप्रासंगिक है। इसे मान लेने पर जातिप्रथा का लौहढांचा ढह जाता है और जन्ममूलक जाति-व्यवस्था के जटिल ऊंच-नीच-क्रम और उस पर टिके हुए दर्प एवं उत्पीडन के लिए कोई स्थान नहीं रह जाता। तब वर्ण-व्यवस्था एक शास्त्रीय वर्गीकरण मात्र रह जाती है। साथ ही उन्होंने चातुर्वर्ण्य के बाहर किसी को नहीं माना, जिससे अस्पृश्यता के लिए कोई आधार नहीं रह जाता। स्वामीजी के इस उपदेश को जिन आर्यसमाजियों ने पूरी तरह आत्मसात् किया, वे जातिवाद से पूरी तरह मुक्त हो गये। किंतु सब आर्यसमाजी ऐसे नहीं थे। आर्यसमाज की आंतरिक राजनीति में पिछले दशकों में उभरा जातिवाद इसी का फल है।

ईश्वरोपासना के लिए स्वामीजी ने संध्या के साथ अग्निहोत्र का विधान तो किया, किंतु यह अग्निहोत्र अथवा हवन उन लंबे, जटिल और खर्चीले यज्ञों से बहुत भिन्न है, जिनके विरुद्ध उपनिषदों ने और बुद्ध ने आवाज उठायी थी। वस्तुतः मंदिरों की धार्मिक महिमा को पूर्णतः नकारकर, षोडश संस्कारों को सरल बनाकर और श्राद्ध आदि कर्मों को निषिद्ध ठहराकर उन्होंने धर्म के मामले में आम नागरिक को स्वनिर्भर बनाया और पुजारी-पुरोहित वर्ग का वर्चस्व समाप्त किया।

स्वामीजी का कहना था कि धर्म का यह जो रूप वे सामने रख रहे हैं, वही वैदिक धर्म का शुद्ध तथा मूल स्वरूप है, जिसे हिंदू समाज ने अपने मतिभ्रम द्वारा विकृत कर लिया था। उनका यह भी मंतव्य था कि वैदिक धर्म ही सत्यधर्म है और भारत का ही नहीं, अपितु समस्त मानव-जाति का परम श्रेय वैदिक धर्म के अंगीकार एवं पालन से ही सध सकता है। (आग्रह का ऐसा स्वर प्रायः हर नैष्ठिक बौद्ध, ईसाई व मुसलमान का भी होता है। इसका अपवाद शायद सिर्फ सनातनी हिंदू है, जो स्वीकार करता है कि परम सत्य तक पहुंचने के अन्य मार्ग भी हो सकते हैं।) स्वामीजी के विचारों के विवेचन में इस पक्ष को नजरअंदाज नहीं करना चाहिये।

इसी वैदिक धर्म को विश्व के कोने-कोने में पहुंचाने के लिए स्वामीजी ने ७ अप्रैल १८७५ को बंबई में आर्यसमाज की स्थापना की, जिसका संकल्प है–'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'। यह बात याद रखने योग्य है कि स्वामीजी की भाषा में 'आर्य' शब्द श्रेष्ठ का पर्यायवाची मात्र था और उसके साथ किसी भी नस्ल का भाव नत्थी नहीं था। (वस्तुतः भारतीय परंपरा यह मानती ही नहीं कि आर्य कोई अलग नस्ल थी।) साथ

ही धर्म-परिवर्तन को स्वामीजी ने वैचारिक एवं स्वैच्छिक प्रक्रिया माना, जिसमें लोभ और भय का प्रयोग वर्जित है।

स्वामीजी ने तो अपने धर्मोपदेश को हिंदुओं तक सीमित नहीं रखा था, परंतु प्रबुद्ध हिंदुओं ने उसमें धर्म का ऐसा रूप पाया जो तात्त्विक दृष्टि से उनके पुरखों के धर्म से अभिन्न था, किंतु साथ ही उन सब विकृतियों से मुक्त था, जिसके कारण वह आक्षेप और उपहास का विषय बना हुआ था। स्वामीजी का यह सामयिक प्रभाव हिंदू समाज के लिए बहुत शुभ तथा देश के नवजागरण में सहायक सिद्ध हुआ।

यह स्वामीजी के चिंतन और चर्या की खूबी थी कि धर्म के सामाजिक पहलू को उन्होंने कभी नजरों से ओझल न होने दिया। उन्होंने अपने अनुयायियों में यह चेतना जगायी कि अस्पृश्यता एक अधार्मिक और अन्यायमूलक कल्पना है। इस प्रश्न का विशाल आर्थिक पक्ष शायद वे नहीं देख पाये—जैसे यह कि अस्पृश्यता उच्च वर्णों को लगभग बेगार की दर पर मजदूर (विशेषतः, घिन पैदा करने वाले शारीरिक श्रम के कामों के लिए) मुहैया करती है, इसलिए उसके बनाये रखने में उच्च वर्णों का स्वार्थ है। किंतु उन दिनों बहुत कम लोग अस्पृश्यता के प्रश्न की तमाम जटिलता को समझ पाये थे। आज भी, पढ़ा-लिखा भारतीय भी, इस प्रश्न के सही और समग्र रूप को देखना नहीं चाहता है; इसीलिए अस्पृश्यता देश की विषम समस्या बनी हुई है।

स्वामीजी स्वयं ब्रह्मचर्य से सीधे संन्यास में प्रविष्ट हुए थे; किंतु नारी को नरक का द्वार मानने की दूषित मनोवृत्ति उन्हें असह्य थी। उन्होंने नारी को वेदाध्ययन तक का अधिकार—जो हिंदू दृष्टि से सर्वोपरि धार्मिक अधिकार है—देकर पुरुष के समकक्ष स्थान-मान दिलाने का प्रयत्न किया। इसके लिए उन्होंने स्त्रीशिक्षा, परदा-परित्याग और बालविवाह-निषेध पर जोर दिया।

उनका यह उपदेश था कि लड़की कम से कम सोलह और लड़का कम से कम पचीस वर्ष की उम्र तक ब्रह्मचर्य का पालन करके उसके बाद ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे। इससे बालविवाह की समस्या स्वयं ही हल हो जाती थी। वस्तुतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश और पंजाब में स्त्रीशिक्षा एवं नारी-जागरण की मुहिम स्वामीजी के शिष्यों ने ही छेड़ी।

शिक्षा-प्रसार के क्षेत्र में आर्यसमाज ने गुरुकुलों तथा डी. ए. वी. स्कूल-कालेजों के जरिये व्यापक कार्य किया। उसके ये शिक्षणालय विदेशी शासन के जमाने में राष्ट्रवाद की पनीरियों का काम करते रहे। फिर भी यह बात मन में आये बिना नहीं रहती कि सरकारी नियंत्रण से बहुत हद तक या पूरी तरह मुक्त इन शिक्षणालयों ने पढ़ाने के कम खर्चीले व ज्यादा कारगर तरीके, विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास को मापने के अधिक वैज्ञानिक पैमाने और शिक्षितों को आम जनता से जोड़ने की रीतियां खोजने पर ध्यान दिया होता, तो स्वतंत्रता आने के बाद देश के शिक्षातंत्र को सही रास्ते पर चलाते

में बहुत मदद मिलती।

हिंदी का प्रचार व प्रसार स्वामीजी और आर्यसमाज का एक और जबर्दस्त कार्य था। स्वयं गुजराती होते हुए भी स्वामीजी ने अपने सब ग्रंथ ('ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' को छोड़कर) हिंदी में ही लिखे। उनकी गणना हिंदी गद्य के निर्माताओं में होती है। उनका विचार था—'भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा और अलग-अलग व्यवहार का विरोध विना छूटे ... अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है।' और इस अभिप्राय-साधक भाषा के रूप में उन्होंने हिंदी को चुना। पहले स्वामीजी संस्कृत में बोलते-लिखते थे। श्री केशवचंद्र सेन ने उन्हें हिंदी अपनाने का सुझाव दिया, जिसे स्वामीजी ने सहर्ष और तुरंत स्वीकार कर लिया। (द्रष्टव्य : स्वामी सत्यानंद लिखित 'दयानंद-प्रकाश', काशीखंड, षष्ठ सर्ग।) यह उन्नीसवीं सदी की भारतीय मनीषा की उदार दूरदर्शिता का उदाहरण है। इस दृष्टि से आज हम कितने पीछे हट गये हैं!

अपने विचार सब तक पहुंचाने के लिए स्वामीजी ने लेखन एवं भाषण के अलावा शास्त्रार्थों का सहारा लिया, जैसा कि शंकराचार्य के समय से सभी मतप्रस्थापक आचार्य इस देश में करते आये थे। स्वामीजी ने शास्त्रार्थों का स्वरूप चाहे कितना ही बौद्धिक एवं परिष्कृत रखा हो, मगर बाद में आर्यसमाजियों व उनके विरोधियों के शास्त्रार्थ वितंडावाद के दंगलों का रूप धारण करते गये। किंतु भजनोपदेश द्वारा विचार-प्रचार की जो तकनीक आर्यसमाज ने विकसित की, वह जनमत को प्रभावित करने का एक बेजोड़ देशी साधन बन गयी। समाजवादी विचार और आर्थिक आयोजन संबंधी जानकारी के प्रचार के लिए यदि सरकार ने इस प्रचार-तकनीक का उपयोग किया होता, तो बहुत काम हो सकता था।

हिंदू धर्म ने ग्यारहवीं-बारहवीं सदी से अपना प्रवेश-द्वार तो बंद कर लिया था, मगर निर्गमन-द्वार खुला छोड़ दिया था। आर्यसमाज ने इन दोनों भूलों को सुधारने की चेष्टा की। नये लोगों को ग्रहण करने में हिंदू धर्म में कोई सैद्धांतिक अड़चन नहीं थी, जैसी कि पारसी और यहूदी धर्मों में है। रामकृष्ण मिशन ने भी कुछ ईसाइयों को हिंदू धर्म में दीक्षित किया, जो कि पाश्चात्य थे। मगर जब आर्यसमाज ने इस्लाम और ईसाइयत में गये पुराने हिंदुओं को 'शुद्ध' करके वापस लेना शुरू किया, तो विरोध और विग्रह की नौबत आयी। असहयोग-आंदोलन के स्थगन के बाद उपजे वैक्युअम में जब सांप्रदायिकता ने देश में जोर पकड़ा, तब 'शुद्धि' और 'तबलीग' के जंगी खेमे आमने-सामने लग गये। स्वामी श्रद्धानंदजी की हत्या इसी विषैले वातावरण का परिणाम थी।

धीरे-धीरे यह धारणा पनपने लगी कि आर्यसमाज हिंदू समाज का आक्रामक दस्ता है। दुर्भाग्य से आर्यसमाज के एक वर्ग ने इस तस्वीर को स्वीकार कर लिया। इस चीज ने आर्यसमाज की रचनात्मक शक्ति को

सीखना शुरू किया और उसका परिष्कारक तेज मंद पड़ने लगा। भारतीय जागरण के अध्वर्यु के रूप में स्वामीजी के गौरव पर परदा-सा पड़ गया और बौद्धिक वर्ग में कुछ ऐसी हवा बंधी कि स्वामीजी 'हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान' वाली विचारधारा के जनक थे। यह बड़ी अन्यायपूर्ण बात थी। स्वामीजी उस निचले बौद्धिक-आत्मिक धरातल पर नहीं जीते थे, जहां धार्मिक विद्वेष की दूषित हवाएं बहा करती हैं। बेशक धार्मिक विकृतियों के खंडन में वे उग्र भाषा का प्रयोग करते थे, मगर इस मामले में वे अपने-पराये का कोई भेद नहीं करते थे। उनके मित्रों तथा प्रशंसकों में महादेव गोविंद रानडे, केशवचंद्र सेन, पंडिता रमाबाई, सर सैयद अहमद और कर्नल आल्काट आदि नाना विचारधाराओं व धर्मों के व्यक्ति थे।

सौभाग्य से स्वामीजी के संबंध में वे भ्रांतियां अब दूर हो चली हैं। मगर देश के बहुसंख्यक समाज को कुरीतियों-कुसंस्कारों से मुक्त करने का संजीवनकारी कार्य जो रुका, सो रुका ही रह गया। उसका दुष्परिणाम आज तक देश भुगत रहा है।

उन्नीसवीं सदी में भारत में आरंभ हुए धार्मिक आंदोलनों में आर्यसमाज सर्वाधिक व्याप्तिशील और चिरजीवी सिद्ध हुआ। कारण, वह सर्वाधिक जीवननिष्ठ (लाइफ-एसर्टिव) था। स्वामीजी मुक्ति को परम पुरुषार्थ अवश्य मानते थे; परंतु जीवन में अर्थ और काम के स्थान को स्वीकार करते थे। आर्यसमाज को उन्होंने निवृत्तिमार्गी के स्थान पर प्रवृत्तिमार्गी संघटन का ही रूप दिया। स्वयं नैष्ठिक संन्यासी होते हुए भी उन्होंने आर्यसमाज के संविधान में संन्यासियों को कोई विशेषाधिकार नहीं दिलवाये, न संन्यासियों की जमात ही खड़ी की।

यद्यपि अपने 'सत्यार्थप्रकाश' के राजधर्म-प्रकरण में स्वामीजी ने मनुस्मृति का अनुसरण करते हुए 'राजा' का उल्लेख किया है, किंतु आर्यसमाज का संविधान उन्होंने सर्वथा प्रजातंत्रात्मक रखा और व्यवस्था की कि प्रतिवर्ष प्रत्येक आर्यसमाज के सब पदाधिकारी प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा सरल बहुमत से निर्वाचित किये जायें। अपने लिए उन्होंने न कोई विशेष पद रखा, न अधिकार; 'समाज' के मार्गदर्शन के लिए अपना कोई उत्तराधिकारी भी नियुक्त नहीं किया। यह प्रजातंत्र के प्रति उनकी निष्ठा और गुरुडम से बचने की उनकी सतत तत्परता दोनों का प्रमाण है।

स्वामीजी की देशभक्ति और स्वातंत्र्य-चेतना आधुनिक भारतीय इतिहास के विद्यार्थी को विशेषतः आकृष्ट करती है। उन्होंने 'सत्यार्थप्रकाश' (रचना-वर्ष संवत् १९३९ अर्थात् सन १८८२) में लिखा—'कोई कितना ही करे परंतु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतांतर के आग्रहरहित, अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर मातापिता के समान कृपा और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।' लोकमान्य तिलक का मंत्रतुल्य वाक्य 'स्वराज्य

मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है (स्वराज्य हा माझा जन्मसिद्ध हक्क आहे) काल की दृष्टि से इसके बाद का है। यह देशभक्ति आर्यसमाज को अपने प्रवर्तक से प्रसाद में मिली और आर्यसमाज ने देश को लाला लाजपतराय और स्वामी श्रद्धानंद जैसे नेता, लाला हंसराज और लाला देवराज जैसी रचनात्मक प्रतिभाएं और श्यामजी कृष्णवर्मा, लाला हरदयाल, भाई परमानंद, सरदार भगतसिंह और रामप्रसाद बिस्मिल जैसे उत्कट स्वातंत्र्य-योद्धा दिये।

सन १८५७ की उथल-पुथल में स्वामीजी की भूमिका इस समय आर्यसमाजियों का प्रिय चर्चा-विषय है। अभी इस मामले में काफी परख और पड़ताल होनी बाकी है; उसके बाद ही ऐतिहासिक तथ्य के रूप में कुछ कहना ठीक होगा। किंतु इस संदर्भ में कुछ बातें ध्यान में रखने योग्य हैं। स्वामीजी को अपने जीवन का मिशन मथुरा के दंडीस्वामी विरजानंदजी से मिला, जिनकी सेवा में वे पहले पहल सन १८६० में (३६ वर्ष की वय में) पहुंचे। स्वामीजी ने आर्यसमाज को ब्रिटिश सरकार से असहयोग करने का कोई गुप्त या प्रकट आदेश दिया हो (जैसा कि नामधारी सिक्खों के गुरु बाबा रामसिंहजी ने दिया था), ऐसा प्रतीत नहीं होता। अन्यथा पं. गुरुदत्त और लाला हंसराज जैसे स्वामीजी के निष्ठावान तरुण भक्त डी. ए. वी. कालेज को सरकारी विश्वविद्यालय से शायद न जोड़ते और न सरकारी कर्मचारी (जिनमें कई तो ब्रिटिश हुकूमत से खिताब पाते हुए थे) आर्यसमाज के सदस्य और पदाधिकारी बन पाते। स्वामीजी के समग्र चरित्र का एक आधारभूत गुण था निर्भीक वाणी और छिपाव-रहित कर्म। केवल ब्रिटिश सरकार के संबंध में वे कोई और रीति अपनाते, ऐसा विश्वास नहीं होता। सच तो यह है कि इतिहास के फुटनोटों में ही स्थान पा सकने वाले छोटे तथ्यों से स्वामीजी के ऊंचे ऐतिहासिक कद में विशेष अंतर नहीं पड़ने वाला है।

ऐसा ही एक और प्रश्न है—भारतीय राष्ट्रवाद के पिता राममोहन राय कि दयानंद ? शायद यह प्रश्न स्वर्गीय राममनोहर लोहिया ने सबसे पहले पूछा था। 'पिता' का शाब्दिक अर्थ लेने पर ही ऐसा प्रश्न उठ सकता है। भारतीय राष्ट्रवाद अनेक ऐतिहासिक तत्त्वों तथा अनेक महापुरुषों के कर्त्तृत्व की संमिलित देन है।

जब कोई जन-समूह धार्मिक मूढ़ता और अर्थहीन कर्मकांड से, सामाजिक कुरीतियों एवं वैचारिक जड़ता से अपने को मुक्त करने लगता है, उसकी प्राणशक्ति बढ़ती है और उसमें तेजस्विता उदित होती है। तब वह किसी भी प्रकार के अन्याय को—चाहे वह विदेशी हो या स्वदेशी—सहने से इन्कार कर देता है। विश्व-इतिहास में ऐसा बार-बार हुआ है। स्वामी दयानंद की ऐतिहासिक महिमा यह है कि उन्होंने धर्म-परिष्कार और समाज-सुधार की वह अलख जगायी, जिसने भारत के पुरुषार्थ को जागृत किया।

★

बहरीन

नुट् रायस

बहरीन कैसा है, यह इस पर निर्भर है कि आप कहां से आये हैं। यह एक छोटा-सा द्वीप है, जो सऊदी अरब के तट से केवल २० मील दूर स्थित है। पहले यह ब्रिटेन का उपनिवेश था। इसमें खजूर के पेड़ों की कतारों से युक्त सड़कें हैं, और अच्छे स्कूल हैं। अच्छी टेलिफोन और टेलेक्स व्यवस्था है और बढ़िया हवाई अड्डा है, जहां से दुनिया से बढ़िया हवाई संपर्क है। जनता प्रशिक्षित है और पिछले पचास वर्षों से उसकी शिक्षा-दीक्षा पब्लिक स्कूलों में होती है।

सऊदी अरब से आने वाले के लिए तो बहरीन मानो एकाएक बीसवीं सदी से मुलाकात है—ठीक से काम करने वाले फोन, कारें चलातीं औरतें, रंगीन टेलिविजन, बीयर इत्यादि-इत्यादि। किंतु दुबई या बेरुत से आने वाले के लिए बहरीन बोरियत-भरी जगह है। बढ़िया रेस्तरां नहीं। नाइट-क्लब नहीं। कैसिनो (द्यूतगृह) नहीं। समुद्र-तट धूल-भरा। संगीत अति दुर्लभ।

बहरीन की २॥ लाख आबादी का अधिक हिस्सा बहरीन द्वीप के उत्तरार्ध में रहता है और बहरीन द्वीप ३५ द्वीपों के इस लघुदेश का सबसे बड़ा द्वीप है।

यों फारस की खाड़ी के इलाके में सबसे पहले पेट्रोलियम का पता बहरीन में ही चला था—सन १९३२ में। फिर भी बहरीन फारस खाड़ी के देशों में शायद सबसे गरीब है। दिन में वहां केवल ६८ हजार बैरल तेल निकलता है। १९७३ में तेल के भाव चार गुना बढ़ जाने से हालत सुधर गयी, वरना तेल-उत्पादन का खर्चा भी मुश्किल से ही निकल पाता था। पर तेल की आमदनी बढ़ने के बाद से बहरीन सरकार ने अनेक खर्चीली योजनाएं शुरू की हैं—बिजली बनाने और खारे पानी को शोधने का एक अति विशाल कारखाना, पानी के नल और नालियां अल्प और मध्यम आय वाले वर्गों के लिए मकान, बंदरगाह और हवाई अड्डे का विस्तार, सूखी गोदी, दफ्तरी इमारतें, स्कूल, अध्यापकों के लिए ट्रेनिंग कालेज और बड़ा डाकघर। इनमें से कुछ का निर्माण कुवैत और अबू धाबी से प्राप्त कर्जों के बूते पर हो रहा है। विदेशों में पूंजी लगाने के लिए बहरीन के पास धन नहीं है।

मगर फारस खाड़ी में बहरीन का महत्त्व उसके आकार या ऐश्वर्य पर आधारित नहीं है। उसमें एक विशाल पेट्रोलियम-शोधक

कारखाना है, जो सऊदी अरब के तेल को साफ करके देता है। यूरोप और अमरीका की लगभग एक सौ बड़ी कंपनियों ने बहरीन में अपने क्षेत्रीय मुख्यालय खोल रखे हैं। ब्रिटिश एयरवेज, ग्रिंडलेज बैंक, ग्रे मैकेन्जी शिपिंग लाइन, गल्फ एयर और गल्फ वर्ल्ड के क्षेत्रीय मुख्यालय यहीं हैं। सबसे बड़ा दफ्तर है टेक्सास (अमरीका) की कंपनी ब्राउन एंट रूट इन्कार्पोरेटेड का, जो कि तेल-कंपनियों को समुद्री तेलकूप खोदने के लिए 'रिग' मुहैया करती है। इस कंपनी के क्षेत्रीय उपाध्यक्ष का कहना है—'पिछले तेरह वर्षों से हम यहां इसलिए हैं कि फारस खाड़ी में हवाई संपर्क की दृष्टि से यह स्थान सबसे सुविधाजनक है।'

इन्हीं सज्जन के कथनानुसार, बहरीन का दूसरा बड़ा आकर्षण है अमरीकी सेना-विभाग द्वारा यहां चलाया जा रहा स्कूल, जिसमें इस क्षेत्र में नियुक्त अमरीकी कर्मचारियों के ६४० बच्चे तालीम पाते हैं। लगभग एक चौथाई बच्चों के पिता अमरीकी सेना में काम करते हैं। यों बहरीन के अपने स्कूल भी उत्तम हैं। यहां आधुनिक सार्वजनिक शिक्षा-व्यवस्था सन १९१९ में आरंभ हुई और उसकी कृपा से अब यहां अच्छे प्रशिक्षित मध्यमवर्गीय दफ्तरी कर्मचारी पर्याप्त संख्या में प्राप्य हैं।

यह महज संयोग नहीं है कि फारस खाड़ी प्रदेश के दो सबसे बड़े व्यापारी दुबई के महदी अलताजिर और सऊदी अरब के सुलेमान ओलय्या ने बहरीन में ही शिक्षा पायी थी। यह भी आश्चर्य की बात नहीं कि ऐश्वर्य उन्होंने कमाया बहरीन के बाहर। असल में बहरीन तुलनात्मक दृष्टि से काफी गरीब है और थोड़ी-बहुत चुंगी की चोरी को छोड़ दें, तो भ्रष्टाचार से भी लगभग मुक्त है। जैसा कि एक राजदूत ने कहा है—'जब मालमत्ता ही नहीं, तो हड़पियेगा कहां से?'

बहरीन के अमरीकी स्कूल के काफी बच्चे निकटस्थ अमरीकी नौसेना-अड्डे से आते हैं। यह अड्डा अमरीकी जलसेना की मध्य-पूर्व टुकड़ी के कमांडर एडमिरल टामस बिग्ली का मुख्यालय है। बिग्ली के अधीन ३७५ नौसैनिक और एक ध्वजपोत यू. एस. एस. 'लासेल' है और नाक्स-श्रेणी के दो विध्वंसक पोत भी साल में छह महीने उनके अधीन रहते हैं। भूमध्य सागर और हिंद महासागर के बीच के क्षेत्र में यही एकमात्र अमरीकी जलसेना-टुकड़ी है।

एडमिरल बिग्ली का काम है इस इलाके, पूर्वी अफ्रीका तट, लालसागर और हिंद महासागर की सद्भावना-यात्राएं करना। उन्होंने इस खबर का उग्रता से खंडन किया है कि उनका असली काम जासूसी करना और सी. आइ. ए. को ओट देना है। साथ ही उन्हें इस बात का भी अफसोस है कि इस इलाके में रूस के २० युद्धपोत गश्त लगाया करते हैं, जबकि खुद उनके पास अधिक से अधिक तीन युद्धपोत हैं।

सन १९७३ के अरब-इस्रायली युद्ध के दौरान बहरीन सरकार ने इस सेना को साल-भर में यहां से चले जाने को कह दिया

था। मगर बाद में बातचीत चली। (उन्हीं दिनों अमरीकी नौसेना ने अड्डे के सालाना किराये का जो ६ लाख डालर का चेक दिया था, वह बैंक से अस्वीकार हो गया था।) अंततः किराया बढ़ाकर ४० लाख डालर सालाना कर दिया गया और अमरीकी नौसेना को वचन देना पड़ा कि किसी अरब देश पर हमला करने के लिए इस अड्डे का उपयोग नहीं किया जायेगा।

बहरीन में केवल अमरीकी और यूरोपीय ही नहीं हैं। वहां के दफ्तरों व कलकारखानों के ६० हजार कर्मचारियों में से २२ हजार पाकिस्तानी, हिंदुस्तानी, यमनी व ओमनी हैं। हिंदुस्तानी व पाकिस्तानी मुख्यतः क्लर्की करते हैं और यमनी व ओमनी मजदूरी करते हैं। राजधानी मनामा के बाजारों में इनके झुंड के झुंड घूमते नजर आते हैं।

फिलस्तीनी, मिस्री और लेबनानी यहां बहुत कम संख्या में हैं। एक बहरीनी अफसर की शिकायत है–'फिलस्तीनी और मिस्री अपने साथ में ढेर सारा अरब आदर्शवाद बांध लाते हैं। और लेबनानी? वे तो ज्यों हीं आपकी कंपनी में काम करके आपका कारोबार जान जाते हैं, अपना कारोबार खड़ा करना चाहते हैं।'

* * *

मोर को देखा है–कैसे ताव के साथ, शान के साथ एक-एक पग उठाकर धरता चलता है, मस्ती से कैसा मधुर बोलता है और कभी-कभी अपनी रंग-बिरंगी पूंछ उठाकर मस्ती से नाच भी उठता है। यही जीवन है। हमें अपने राष्ट्रपक्षी मोर से जीने की कला सीख ही लेनी चाहिये। यदि हम हंस और परमहंस न बन सकें, तो मोर अवश्य बन सकते हैं। हां, सर्प का आहार अवश्य छोड़ देना पड़ेगा और यह कोई बहुत बड़ा त्याग नहीं होगा। और फिर आप नीलकंठ तो हैं नहीं, गरुड़ भी नहीं हैं। आपसे सर्प खाया भी कहां जायेगा?

–आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ('सुधाबिदु' में)

* * *

गौरव-ग्रंथ सदैव अगली पीढ़ी की प्रेरणा और अनुशासन का कार्य करते हैं। कदाचित् हमसे यह भूल हुई है कि अपने गौरव-ग्रंथों में व्यक्त अतीत की प्रासंगिकता को समझने के लिए नये प्रतिमान खोजने का श्रम नहीं किया या तो निरी भावुक वाचालता अथवा पौराणिक प्रभविष्णुता से उनकी महिमा का अटूट बखान करते रहे अथवा सीधे अस्वीकार किया। ये दोनों स्थितियां अपनी रचनाशीलता का चरित्र नष्ट करने के लिए पर्याप्त हैं। यह स्थिति इस सीमा तक पहुंच चुकी है कि अधिकांश समकालीन लेखन चेहरा-विहीन लगता है। आज यह बहुत जरूरी है कि हम अपने अतीत को नहीं, बल्कि उसमें परिव्याप्त द्वंद्वात्मकता को गहराई से पहचानें। **–विजेंद्र ('पूर्वग्रह' में)**

* * *

कोरिया : फिर से युद्ध की घटा

प्रयागनारायण

जब जून के अंतिम सप्ताह में अमरीकी राष्ट्रपति जेराल्ड फोर्ड ने यह बात कही कि दक्षिण कोरिया पर आक्रमण की स्थिति में अमरीका परमाणु-अस्त्रों से उसकी रक्षा करेगा, तो अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रों में सनसनी-सी फैली। पूछा जाने लगा कि क्या संयुक्त राज्य अमरीका अभी भी वियतनाम और कंबोडिया के अनुभव से सबक सीखने को तैयार नहीं है ! यह भी जिज्ञासा जागी है कि कोरिया प्रायद्वीप में ऐसा क्या हो रहा है, जिसकी वजह से एक महाशक्ति परमाणु-अस्त्रों के सीमित उपयोग जैसी धमकी दे रही है।

इन जिज्ञासाओं के उत्तर की तलाश दूसरे महायुद्ध के बाद हुए कोरिया के विभाजन व १९५० से ५३ तक लड़े गये कोरिया-युद्ध की सरसरी तौर पर याद दिलाती है। दूसरे महायुद्ध के पहले तक जापान के अधीन रहे कोरिया के उत्तरी भाग पर महायुद्ध के दौरान सोवियत सेना का और दक्षिणी भाग पर अमरीकी सेना का अधिकार हो गया था। पोत्सदम-संमेलन ने ३८ अक्षांश के समानांतर रेखा को सोवियत और अमरीकी अधिकृत क्षेत्रों की सीमा-रेखा निश्चित किया। मई १९४८ में दक्षिण कोरिया और उत्तर कोरिया के अलग-अलग गणतंत्रों का गठन हुआ। कहने की आवश्यकता नहीं कि दक्षिण कोरियाई गणतंत्र अमरीकी प्रभाव-क्षेत्र में रहा और उत्तर कोरियाई गणतंत्र में सोवियत समर्थित कम्युनिस्ट व्यवस्था अपनायी गयी।

कोरिया के समसामयिक इतिहास का एक निर्णायक मोड़ जून १९५० में आया, जब लाल चीन के सक्रिय सहयोग से उत्तर कोरिया के सैनिकों ने दक्षिण कोरिया पर आक्रमण कर दिया। पीत सागर से जापान सागर तक फैली हुई १५० मील लंबी सीमा को पार करके उत्तर कोरिया के सैनिक रूसी टी-३४ टैंकों के साथ दक्षिण कोरिया की राजधानी सिओल तक आ धमके। तीन साल लंबी लड़ाई के बाद जब युद्ध-विराम हुआ, तब तक कोरिया प्रायद्वीप बहुत हद तक ध्वस्त हो चुका था और ३० लाख से अधिक सैनिक मारे जा चुके थे। स्थिति यहां तक पहुंची थी कि दक्षिण कोरिया के रक्षक अमरीका और उत्तर कोरिया के साम्यवादी बंधु चीन में सीधा युद्ध छिड़ते-छिड़ते बचा।

कोरिया-युद्ध के पचीस वर्ष बाद यद्यपि विश्व-राजनीति का मानचित्र बहुत-कुछ बदल चुका है, पर कोरिया के विभक्त भागों में युद्ध का खतरा पूरी तरह से टला नहीं

है। सच तो यह है कि दक्षिण वियतनाम और कंबोडिया में अमरीका समर्थित सरकारों के पतन के बाद उत्तर कोरिया के ६३ वर्षीय सर्वेसर्वा किम इल सुंग ने चीन, रुमानिया, बल्गारिया और अल्जीरिया की यात्रा करके अपनी सरमुख्त्यारी में कोरिया के एकीकरण के लिए अंतरराष्ट्रीय समर्थन जुटाने का प्रयास किया है। इधर दक्षिण कोरिया के सैनिकों का दावा है कि उन्होंने हाल के महीनों में उत्तर से दक्षिण कोरिया में सैनिकों की घुसपैठ के लिए बनायी गयी सुरंगों का पता लगाया है, जो विसैन्यीकृत क्षेत्र के नीचे-नीचे खोदी गयी थीं। इन सुरंगों में न सिर्फ बिजली का इंतजाम था, बल्कि छोटी लाइन की रेल-पटरियां तक बिछा दी गयी थीं। दक्षिण कोरिया का दावा है कि उत्तर कोरिया से सैनिक अभी भी इस तरह की सुरंगें, खोदने में लगे हुए हैं और उत्तर कोरिया के 'सबसे प्रिय, आदरणीय नेता' किम इल सुंग दक्षिण पर अधिकार करके अपने सपने को चरितार्थ करने को कृतसंकल्प हैं।

दक्षिण कोरिया को चिंता है कि उत्तर कोरिया के आक्रमण की संभावना उपस्थित होने पर अमरीका दक्षिण कोरिया के साथ अपनी सैनिक संधि को निभायेगा या नहीं। परमाणु-अस्त्रों के सीमित उपयोग द्वारा भी दक्षिण कोरिया की रक्षा करने की जो बात अमरीकी राष्ट्रपति ने कही, उसका कोई मकसद हो या न हो, वे दक्षिण कोरिया को अवश्य आश्वस्त कर देना चाहते थे कि अमरीका वियतनाम की हार के बावजूद कोरिया से हाथ झटक नहीं लेगा। परमाणु-अस्त्र की धमकी से उन्होंने उत्तर कोरिया के नेता किम इल सुंग को भी आगाह कर दिया है।

परंतु इस आश्वासन और चेतावनी के बावजूद यह तथ्य नकारा नहीं जा सकता कि उत्तर और दक्षिण कोरियाओं ने पिछले २५ वर्षों में नख से शिख तक शस्त्र-शृंगार किया है। कुल मिलाकर १.५ करोड़ की आबादी वाले उत्तर कोरिया के पास इस समय ४,६७,००० सैनिक (४,१०,००० स्थलसेना में, ४०,००० वायुसेना में और १७,००० नौसेना में), ६०० युद्धक तथा परिवहन विमान, १,००० टैंक और ४ पनडुब्बियों सहित १६२ पोत हैं। दक्षिण कोरिया के पास इससे करीब डेढ़ गुनी अधिक सैन्यशक्ति है—६,२५,००० सैनिक (५,६०,००० स्थलसेना में, २५,००० वायुसेना में, २०,००० नौसेना में, २०,००० तटसेना में), २१० युद्धक विमान, १,००० टैंक, ४०० बख्तरबंद गाड़ियां और १३० पोत हैं। इसके अतिरिक्त अमरीका के साथ उसकी पारस्परिक प्रतिरक्षा संधि के अंतर्गत ४२,००० अमरीकी सैनिक (३५,००० स्थल-सैनिक और ७,००० वायु-सैनिक) ७८ युद्धक विमान और सातवां बेड़ा उसकी रक्षा के लिए अभी भी वचनबद्ध हैं।

ये सैनिक तैयारियां तो हैं ही, इनके अलावा दक्षिण और उत्तर कोरिया के आर्थिक प्रगति के भी अपने-अपने दावे हैं।

दक्षिण कोरिया का कहना है कि उसने कोरिया-युद्ध के खंडहरों पर २५ वर्षों में आर्थिक उन्नति का जबर्दस्त महल खड़ा किया है। उसकी उन्नति का एक प्रमाण है कि उसकी आर्थिक वृद्धि की दर १० प्रतिशत वार्षिक है। दूसरा प्रमाण यह है कि अपने ३ करोड़ ३५ लाख नागरिकों के लिए आज उसका प्रतिव्यक्ति कुल राष्ट्रीय उत्पादन ५१३ डालर है, जबकि कोरिया-युद्ध के एकदम बाद सिर्फ २१९ डालर था।

उत्तर कोरिया के दावे भी किसी तरह कम नहीं। प्रतिव्यक्ति कुल राष्ट्रीय उत्पादन में वह दक्षिण कोरिया से पीछे है (३०० डालर) तो क्या! उसके यहां सभी नागरिकों के लिए सस्ते आवास, वृद्धावस्था की पेंशन, मुफ्त शिक्षा आदि की पूरी व्यवस्था है। यद्यपि उत्तर कोरिया अंतरराष्ट्रीय व्यापार में अपने दक्षिणी दायाद से काफी पीछे है, पर हाल के वर्षों में उसने नवस्वतंत्र देशों के साथ उन्हीं की मुद्रा में व्यापार करके बहुत-कुछ सफलता प्राप्त की है।

लेकिन आंतरिक राजनीति? यह एक विचित्र विडंबना है कि कोरिया में दोनों ओर निरंकुश सत्तातंत्र हैं। उत्तर कोरिया में ३० वर्षों से अबाध रूप से सत्तासीन किम इल सुंग ने हर प्रकार के राजनैतिक विरोध को समाप्त कर साम्यवाद के कोरियाई संस्करण के अंतर्गत सभी महत्त्वपूर्ण पदों पर अपने भाई-भतीजों को आगे बढ़ाया है। स्तालिन को भी मात देने वाले स्तालिनवादी किम ने अपनी व्यक्तिपूजा को इस हद तक बढ़ाया है कि उत्तर कोरिया की राजधानी प्योंगयांग में 'कोरियाई क्रांति के संग्रहालय' के ९५ कमरों में उसके जीवन; व्यक्तित्व, नेतृत्व-क्षमता और उपदेशों से संबंधित सामग्री के साथ उसकी पी हुई सिगरेटों के टुकड़े तक संजोकर रखे गये हैं।

हाल में प्योंगयांग की यात्रा से लौटे एक चीनी ने बताया–'पहली ही रात को मुझे किम इल सुंग-रचित ऑपेरा दिखाया गया; एक भवन दिखाया गया, जिसकी डिजाइन किम इल सुंग ने बनायी थी; और उसी की प्रेरणा से आयोजित रात्रिभोज दिया गया। मैं सोचता था कि माओ कोई बड़ी हस्ती है। पर अब मुझे लगता है कि किम इल सुंग की तुलना में वह बहुत मामूली हस्ती है।' कोई आश्चर्य नहीं कि हाल के वर्षों में किम ने एक ओर तो अपने माता-पिता की स्मृति में विशाल स्मारक बनवाये हैं और दूसरी ओर वह अपने ३५ वर्षीय पुत्र किम जुंग इल को अपना उत्तराधिकारी बनाने को यत्नशील है।

यदि उत्तर कोरिया में किम इल सुंग का वचन वेदवाक्य है, तो दक्षिण कोरिया में राष्ट्रपति पार्क चुंग ही की स्वेच्छाचारिता और दमन-चक्र का बोलबाला है। अमरीका के टफ्ट्स विश्वविद्यालय के कोरिया-विशेषज्ञ ग्रेगरी हेंडरसन के अनुसार, 'दक्षिण कोरिया के लोगों को एक ही चीज में विश्वास रखने की सीख दी गयी है–प्रजातंत्र, जिस पर वहां कभी अमल नहीं हुआ।' यह एक वस्तुस्थिति है कि उत्तर कोरिया के साम्यवाद से लड़ने के नाम पर राष्ट्रपति

पार्क चुंग ही ने अपने यहां विरोधी तत्वों को कुचल दिया है। तीन साल पहले, तीसरी बार अत्यल्प बहुमत से राष्ट्रपति चुने जाने के बाद पार्क ने देश में मार्शल ला घोषित कर 'सुधार' के नाम पर संविधान को तोड़ा-मरोड़ा और दक्षिण कोरिया में अपना एकछत्र राज्य स्थापित कर लिया। अपनी निरंकुश सत्ता का विरोध करने वाले छात्रों, बुद्धिजीवियों, ईसाई पादरियों और समाचारपत्रों को उसने कुचलकर रख दिया। पार्क के संकेत पर काम करने वाली खुफिया पुलिस ने विरोधियों को आतंकित किया, यंत्रणाएं दीं और एक विरोधी नेता का तो जापान से अपहरण कर लिया; कवियों, पादरियों और एक भूतपूर्व राष्ट्रपति तक को जेलों में ठूंस दिया या घर में नजरबंद कर दिया।

दक्षिण वियतनाम की पराजय के बाद यह दौरदौरा और भी बढ़ा है। उत्तर से खतरे और आंतरिक विध्वंस के नाम पर पार्क ने नये सिरे से अपने राजनैतिक प्रतिद्वंद्वियों को कुचलना शुरू किया है। जैसा कि स्वाभाविक था, अमरीका के उदारपंथियों पर इसकी गहरी प्रतिक्रिया हुई है और यह कहा जा रहा है कि अमरीका से सहायता की अपेक्षा करने के पहले पार्क अपने देशवासियों को नागरिक स्वतंत्रता तो दे।

लेकिन महत्त्वपूर्ण प्रश्न अभी भी एक ही है—क्या फिर से कोरिया में युद्ध छिड़ेगा? बदले हुए संदर्भ में यह अप्रत्याशित लगता है। पिछले दिनों जब किम इल सुंग पीकिंग गये, तो उनके चीनी मेजबानों ने कोरियाई जनता के साथ अपनी एकजुटता की तो बात कही, पर साथ ही यह भी जोड़ दिया कि हम कोरिया के शांतिपूर्ण एकीकरण के पक्ष में हैं। वस्तुत: अब चीनी पूर्वी एशिया में अमरीकी सैनिकों की उपस्थिति को अपने लिए खतरे के रूप में नहीं देखता है, बल्कि उसे सोवियत संघ के साथ मुठभेड़ की स्थिति में अपनी सुरक्षा का साधन मानता है। उधर सोवियत संघ ने किम की मास्को-यात्रा को फिलहाल खटाई में डाल दिया है।

रूस-अमरीका-चीन के बीच तनावरहित संबंधों के वर्तमान दौर में यदि रूस-चीन को भिड़ाकर अपना काम निकालने में माहिर किम इल सुंग की वर्षों से आजमायी हुई कूटनीति ज्यादा कारगर न हो, तो आश्चर्य नहीं। यह अलग बात है कि अपने पुराने नुस्खे की विफलता ही उत्तर कोरिया को संघर्ष के लिए प्रेरित कर दे। परंतु पहले की तरह ही इस बार भी किम इल सुंग के अंतरराष्ट्रीय व्यवहार और पार्क चुंग ही के आंतरिक दमन-चक्र के बारे में कोई सीधी भविष्यवाणी नहीं हो सकती।

★

हिंदी को अपनी प्रतिभा से समृद्ध करने वाले दो साहित्यकारों का पिछले दिनों देहावसान हो गया—कवि-पत्रकार-प्रशासक श्री बालकृष्ण राव का १ जून को और कवि भारतभूषण अग्रवाल का २३ जून को। दोनों को नवनीत-परिवार की श्रद्धांजलि।

—संपादक

नवनीत

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

वर्तनी

सूफी अब्दुल्ला बिन यह्या अपनी पुस्तक की पांडुलिपि एक मुलाकाती को दिखा रहे थे। मुलाकाती ने कहा—'इस शब्द के हिज्जे आपने गलत लिख दिये हैं।' सूफी ने वह शब्द काटकर उसके बताये ढंग से फिर से लिख दिया। मुलाकाती के जाने के बाद शिष्यों ने सूफी से पूछा—'आपने उस आदमी की बात मान क्यों ली? आप जानते थे कि आपने जो हिज्जे लिखे थे, वे ही सही थे।'

सूफी ने उत्तर दिया—'यह सामाजिक अवसर था। उस आदमी का खयाल था कि वह मेरी मदद कर रहा है और अपने अज्ञान के प्रदर्शन को वह ज्ञान का प्रदर्शन समझ रहा था। मैंने भी सभ्यता और शिष्टाचार से काम लिया, सत्य से नहीं; क्योंकि जब लोग सभ्यता और शिष्टाचार चाहते हैं, तब सत्य को नहीं सह सकते। यदि मेरा और उस आदमी का संबंध गुरु-शिष्य का होता, तो और बात थी। केवल वे ही लोग जो मूर्ख हैं या अपने को बड़ा पंडित मानते हैं ऐसा समझते हैं कि उनका काम हर किसी को नसीहत देना है, जबकि लोग तो असल में नसीहत नहीं चाहते, बल्कि दूसरों का ध्यान खींचना चाहते हैं।'

—इदरीस शाह

जीवन-तीर्थ

सुबीर

शत्रुसेना से घिरा हुआ स्पेन का बादशाह अल्फांसो अपनी राजधानी की रक्षा के लिए जी-जान से कोशिश कर रहा था। तभी मोर्चे पर लड़ता हुआ उसका बेटा दुश्मनों के हाथ आ गया।

दुश्मन सुलतान ने एक ऊंचे स्थान पर फांसी का तख्ता लगवाया और बादशाह अल्फांसो को यह संदेश भेजा—'राजधानी और अपने बेटे में से आप जिसे चाहें बचा सकते हैं।'

इस संदेश से दरबार में सन्नाटा छा गया। सबकी नजरें बादशाह के चेहरे पर टिक गयीं कि देखें वह किसे बचाता है। अल्फांसो को फैसला करने में देर नहीं लगी और उसने सुलतान को कहला भेजा—'मुझे अपने बेटे की कुर्बानी मंजूर है, ताकि मेरी प्रजा जिंदा रह सके।'

कुर्बानी या उत्सर्ग किसी उच्च ध्येय के लिए प्रिय वस्तु का परित्याग है। शर्त यह है कि परित्याग प्रतिदान की आशा से अछूता हो, वरना वह इन्वेस्टमेंट बन जाता है।

रानी एलिजाबेथ प्रथम की राजसभा का रत्न, लेखक-योद्धा सर फिलिप सिडनी जुटफेन के मोर्चे पर बुरी तरह घायल हो गया था। उसे मालूम था कि उसकी मृत्यु अब दूर नहीं है। उसे जोरों की प्यास लग रही थी। एक अनुचर बड़े प्रयत्न के बाद एक प्याली पानी कहीं से लेकर लाया। तभी पास पड़ा कोई मामूली सिपाही कराह उठा—'पानी! एक घूंट पानी!'

सर फिलिप ने प्याला उसके ओंठों से लगवा दिया और कहा—'भाई, तुम्हें इसकी ज्यादा जरूरत है!' और कुछ क्षण बाद स्वयं प्यासे ही इस दुनिया से विदा ले ली।

अंग्रेजी की यह सूक्ति मानो उसी को दृष्टि में रखकर लिखी गयी थी—'आत्मरक्षा प्रकृति का प्रथम कानून है; किंतु आत्मोत्सर्ग दैवीय कृपा का सर्वोपरि नियम है।'

इस 'सर्वोपरि नियम' का एक निष्ठावान पालक था फादर दामियेन, जो जवानी में ही अपना देश फ्रांस छोड़कर सुदूर मोलोकाई द्वीप में रहने वाले कोढ़ियों की सेवा करने के लिए चला गया था। वर्षों तक उसने उनकी सेवा की। वे कोढ़ी उसे बहुत मानते और

चाहते थे। फिर भी दामियेन को इस बात की तीव्र व्यथा थी कि उसकी नीरोगता के कारण वे लोग उसे किसी हद तक पराया समझते हैं।

इस अंतर को भी मिटा देने के लिए फादर दामियेन ने जान-बूझकर कोढ़ की बीमारी मोल ले ली। और जब उसे इसका पक्का प्रमाण मिल गया कि रोग ने उस पर दांत गड़ा दिये हैं, तब अगले इतवार को गिरजे में कोढ़ियों के समक्ष अपना प्रवचन उसने इन शब्दों में आरंभ किया—'हम कोढ़ी लोग ...' सुनते ही कोढ़ी सन्नाटे में आ गये। फिर उन्हें लगा कि फादर दामियेन अब उन्हीं में से एक है।

कवि ग्यॉयथे का कहना है—'बड़ी-बड़ी चीजों का तो हम त्याग कर सकते हैं; मगर छोटी चीजों की कुर्बानी में हम बहुधा कच्चे निकलते हैं।'

काका कालेलकर एक दिन कोई पुस्तक पढ़ने में तल्लीन थे कि गांधीजी ने पूछा—'क्या पढ़ रहे हो ?' उत्तर मिला—'उमर खयाम की रुबाइयां ... फिट्ज़जेरल्ड द्वारा अंग्रेजी में अनूदित।'

गांधीजी ने आह-सी भरी और कहा—'कभी मुझे भी अंग्रेजी कविताएं पढ़ने का बहुत शौक था। आखिरकार वह शौक मैंने छोड़ दिया। शायद तुम्हें यह सुनकर आश्चर्य होगा कि देशसेवा के लिए मैंने अगर किसी चीज का सचमुच त्याग किया है, तो वह है अंग्रेजी साहित्य पढ़ने का शौक। धन-दौलत की तो मैंने कभी परवाह नहीं की थी। सो उससे मुंह मोड़ना कोई त्याग नहीं था। परंतु अंग्रेजी साहित्य छोड़ना मेरे लिए बहुत कठिन था। फिर भी मैंने उसे छोड़ने का ही फैसला किया।'

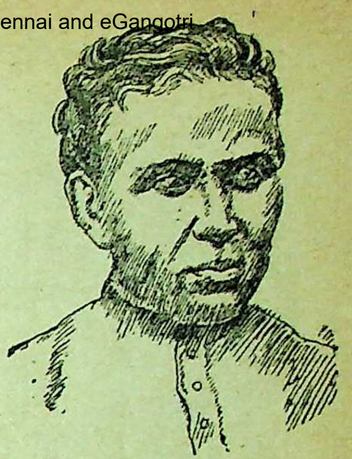
फादर दामियेन

किंतु कुर्बानी के बाजार में छोटे-छोटे सिक्के जेब में डालकर घूमने से काम नहीं चलता। वहां तो न जाने कब कितनी बड़ी रकम की बाजी लगानी पड़ जाये।

शत्रुओं ने एथेंस का घेरा डाल रखा था। उन्हें अपनी जीत का पूरा भरोसा था, क्योंकि उन्होंने यह भविष्यवाणी सुन रखी थी—'या तो एथेंस का खात्मा होगा, या उसके राजा कोडोरस का।' यह भविष्यवाणी एथेंसवासियों को भी ज्ञात थी, जो अपने नगर की रक्षा में जी-जान से जुटे हुए थे।

एक रात को एथेन्स का एक किसान शत्रुसेना की छावनी में पहुंचा और एक सिपाही से जबर्दस्ती जूझ पड़ा। सिपाही ने

[शेष पृठ ६४ पर]

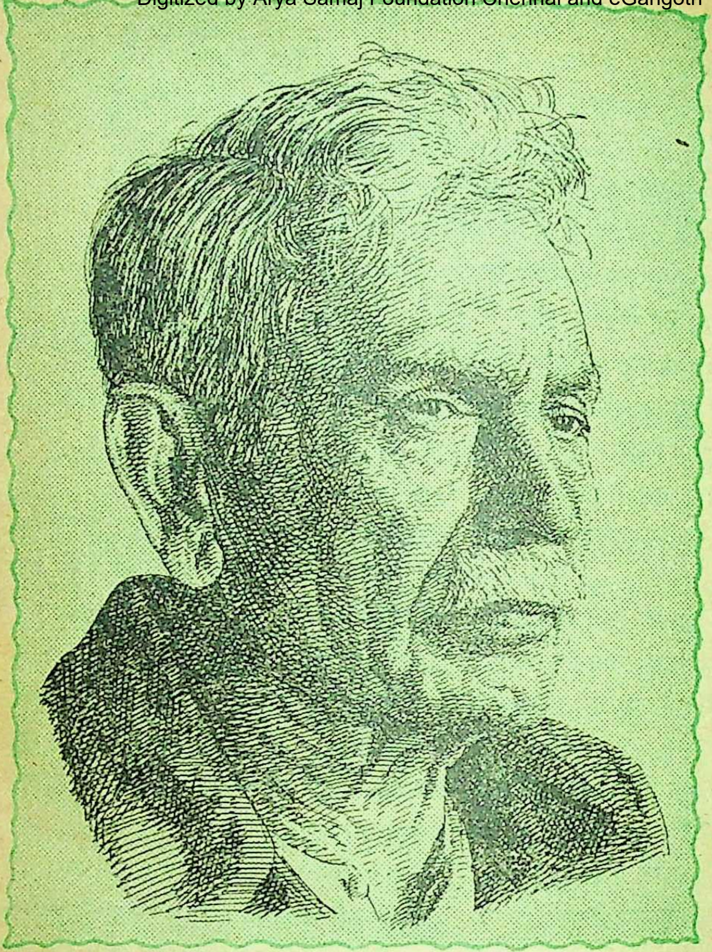

छायावाद-युग के प्रमुख कवियों एवं साहित्यकारों में माखनलालजी सबसे वयोवृद्ध थे–'प्रसाद' से भी बड़े। 'प्रताप' में उनकी रचनाएं मैं पढ़ा करता था। उनकी षट्पदियों ने हिंदी को एक नयी तर्ज दी थी। मैं तो उन पर मुग्ध था। बल्कि उनके अनुकरण पर मैंने भी अनेक षट्पदियां लिखी थीं। जब तक मैंने होश संभाला और कुछ समझने-लिखने योग्य हुआ, वे हजारों युवकों के मानस-गगन पर छा गये थे।

माखनलालजी का जन्म होशंगाबाद (मध्य प्रदेश) के एक कस्बे बाबई में ४ अप्रैल १८८७ ई. को पं. नंदलाल चतुर्वेदी के घर हुआ था। बहुत दिनों से उनके परिवार के लोग वहां रहते आये थे। आज भी उनका पुश्तैनी मकान वहां सुरक्षित है। इसी गांव में उनकी

ससुराल भी है। चतुर्वेदीजी बचपन से ही दुबले-पतले, किंतु बड़े नटखट लड़कों में से थे। हिंदी या 'भाखा' से उनका प्रेम तभी से था, जब वे विद्यार्थी थे और इसके लिए उन्होंने अपने गुरु संस्कृत के पंडित बलवंत भट्ट के न जाने कितने सोंटे खाये होंगे। उन दिनों वे मंदिर से चुराकर 'प्रेमसागर' पढ़ते और उसमें मगन हो जाते थे।

उनकी विधिवत् शिक्षा ज्यादा नहीं हो सकी। थोड़ी पढ़ाई के बाद ही वे प्राइमरी शाला में अध्यापक हो गये। वे तेजस्वी और तेज-तर्रार अध्यापक थे, किंतु बच्चों को प्यार भी खूब करते थे। बालकों-युवकों के प्रति उनमें स्वाभाविक आकर्षण था। जब स्कूल में थे और थोड़ा वेतन पाते थे, तब भी जिस दिन वेतन मिलता, घर आते-आते आधी तनख्वाह गरीब विद्यार्थियों में बंट जाती थी। शादी बचपन में ही हो गयी थी। पति-पत्नी में गजब का प्यार था। किंतु उदार स्वभाव के कारण उन दोनों को मुश्किल से पेट-भर भोजन मिल पाता। पतिव्रता पत्नी बड़ी मुश्किलों से काम चलाती। और शिकायत भी करती तो उनकी मस्ती पर उसका क्या असर होता? यह उदारता उनमें आजीवन बनी रही। किसी को कष्ट में देखकर वे स्थिर नहीं रह पाते थे। उनके गले का दुपट्टा न जाने कितनी बार छिना होगा। खुद गरीबी में दिन बिताते हुए, सूखे चावलों पर गुजर करते हुए भी दूसरों को खिलाते थे।

किशोरावस्था में ही उनकी प्रिया पत्नी का देहावसान हो गया। लोगों के बहुत आग्रह पर भी दूसरी शादी का कभी विचार नहीं किया। बिछुड़कर उनकी पत्नी उन्हीं में समा गयीं। उनके रसमय जीवन में उन्हीं की व्यथा, उन्हीं का बिछोह अनेक रूपों में बोलता था। वे कभी उन्हें भूल नहीं पाये। वही थीं उनकी जीवन-परिधि की केंद्रबिंदु। पत्नी के अतिरिक्त उनके निर्माण में तुलसीदास के रामचरितमानस का बड़ा हाथ था। उसका उनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। उनके सार्वजनिक जीवन को गढ़ने वालों में गणेशशंकर विद्यार्थी, विष्णुदत्त शुक्ल और माधवराव सप्रे प्रमुख थे। नेताओं में लोकमान्य, गांधी और सरदार पटेल का उन पर अत्यधिक प्रभाव था।

× × ×

*** रामनाथ सुमन ***

'भारतीय आत्मा' एक झांकी

'प्रताप', 'प्रभा' तथा अन्य पत्रों के माध्यम से उनकी रचनाओं का सुधापान तो मैं बहुत पहले से करता आ रहा था। कविताएं तो वे १९०९ ई. से ही लिखने लगे थे। १९२७ के मुजफ्फरपुर संमेलन के समय से मैं छायावाद-युग के श्रेष्ठ कवियों को एक दूसरे के निकट लाकर उनका एक संघटन बनाने के काम में लग गया था। प्रसाद, पंत, निराला, नवीन, महादेवी, दिनकर इत्यादि से उसी सिलसिले में घनिष्ठता हुई थी। स्वभावत: इन सबको निकट लाने के काम में मैंने 'एक भारतीय आत्मा' का क्रियात्मक आशीर्वाद और सहयोग मांगा था।

इसी समय के आस-पास मेरे सखा विनयमोहन की आलोचनाएं लोगों का ध्यान आर्कषित करने लगी थीं। बंबई से लौटकर मैं स्व. हरिभाऊजी उपाध्याय के साथ मासिक 'त्यागभूमि' का संपादक हो गया था और विनयमोहन माखनलालजी के पास उनके 'कर्मवीर' में पहुंच गये थे। उनके माध्यम से चतुर्वेदीजी के साथ मेरा परिचय बढ़ चला।

तब के विनयमोहन बाद में पं. शुकदेव प्रसाद तिवारी बन गये और आगे चलकर आगरकर या लोंढेजी के 'स्वराज्य' के संपादकीय विभाग में रहने के बाद नागपुर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष हो गये। कुरुक्षेत्र तथा भोपाल के विश्वविद्यालयों में वे संमानित अध्यापकों में रहे हैं। आज तो वे साहित्यकारों और अध्यापकों में 'संत' बन गये हैं, परंतु उन दिनों बड़े ही भावुक, रोने और रुलाने वाले, निजी प्रेम-भावनाओं तथा व्यथाओं से पीड़ित, रस में डूबे हुए युवक थे। चतुर्वेदीजी के सान्निध्य में उनकी भावुकता सान पर चढ़ गयी, क्योंकि चतुर्वेदीजी सदा से प्रतिभावान युवकों को दुलार-प्यार करते रहे थे—वही चतुर्वेदीजी के देवता थे। इस कदर कि ओछी प्रकृति के लोग उनके बारे में बेपर की कुत्सित बातें भी उड़ाते रहते थे।

चतुर्वेदीजी को मेरी अनेक कविताएं बहुत पसंद थीं। एक गीत तो वे कई-कई दिनों तक गुनगुनाते रहे थे। आज वह कविता तो पूरी याद नहीं है। हां, कुछ पंक्तियां ये थीं:

भूल गये तुम आते-आते।
मैं विलीन हो चली शून्य में तुमको पाते-पाते॥

… … …

स्मृतियों से कब तक खेलूंगी, तुम हो नहीं अघाते।
भूल चली इस पथ पर चलकर दुनिया के सब नाते॥ भूल०॥

उनकी मुझ पर सहज कृपा हो गयी और वह आजीवन बनी रही। मैं वाराणसी से अजमेर जाते या बंबई, इंदौर जाते प्राय: खंडवा उतर जाता और उनके सत्संग का लाभ उठाता। कभी-कभी शाम को हम उस दूरस्थ जलाशय की सैर करने भी जाते, जिससे खंडवा को पानी मिलता था। कविता तो उनके इर्द-गिर्द सर्वत्र बिखरी रहती थी। वे

अत्यंत कोमल, रस से भरे मधूक-पुष्प की भांति थे—वैसा ही कंचन-रंग, वैसा ही रसार्द्र अंतर। जरा भी ठेस पहुंचते ही वह अंतर का रस वाणी से निकल पड़ता या फिर आंखों से अगणित अश्रुबिंदु पारिजात पुष्प की भांति ढुलक पड़ते।

ऊपर कहीं मैंने नवीन विधा वाले साहित्यकारों के संघटन की बात कही है। जब मैंने उन्हें इस संबंध में लिखा, तब निराला दायें-बायें दुलत्तियां झाड़ने लगे थे। पंत पर तो उन्होंने प्रबल आक्रमण किया था। इस बात से चतुर्वेदीजी को बहुत ठेस लगी थी। उन दिनों उन्होंने इस संबंध में मुझे महत्त्वपूर्ण पत्र लिखा था। उस पत्र से उनके विचार और मनःस्थिति पर प्रकाश पड़ता है। मेरे पास पड़े अनेक महत्त्वपूर्ण पत्र दीमकों ने चाटकर खत्म कर दिये; परंतु सौभाग्य से यह बचा रह गया है। देखिये :

श्रीगोपाल

कर्मवीर कार्यालय, खंडवा
आषाढ़ कृष्ण ८।८५ वि., ता. १०-६-२८

प्रियवर,

आपका कृपापत्र मिल गया। विनयमोहनजी की कैफियत इस पत्र के पूर्व मिल चुकी होगी। मेरे अपने विचार से तो जो तरुण अपने आपको 'बिंबवादी', 'रहस्यवादी', 'छायावादी' और न जाने किन-किन वादियों में बांट रहे हैं और आपस ही में एक-दूसरे के आचार्य होने की कोशिश में हैं, वे स्वतः नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं। नवीन युग की नीवों की इन कंकरियों को मंदिर के कंगूरों पर शोभित होने का लालच है; यदि ये, यह छोड़कर, चुपचाप मिल-जुलकर क्रांति पर समर्पित हों, तो युग अपने आप इनमें से आचार्य को ढूंढ़ लेगा। हर सेनापति को तो सैनिक-रहित ही रहना पड़ेगा। मुझे नये से नया, नवीन युग का स्वप्न देखने या औरों के स्वप्नों का अनुकरण और नकल करने वाला अपना सैनिक मानें, मैं आज्ञाओं का पालन कर दूंगा। पहले, इस छोटे से घर में, आपस में होने वाले 'तू तू, मैं मैं' को 'संघ' का महत्त्व जता लीजिये, फिर बाहर बाण छोड़िये।

युग तो आप लोगों का आ पहुंचा है। इसका कोई शक्ति सामना न कर सकेगी। परंतु आज तो आपके दायें-बायें की विभूतियां दंभ का सामना अज्ञान को सामने रखकर कर रही हैं। जरा इन्हें समझा लीजिये। इन 'बेमूंछों का आचार्य' एक दूसरे को कोस रहा है। आपस की सिविल वार वाली सेना से आप आडंबर पर आक्रमण करने जा रहे हैं। भगवान आपको बल दे।

संघटन मैं स्वयं पसंद करता हूं। उसी तरह, जिस तरह मनुस्मृतियों के समुद्र में फेंक दिये जाने पर भी, सद्गुणों और सत्कार्यों की चाह जिंदा रखने में ललचता रहना चाहूंगा। मेरे बोलने से नवीन युग की हानि न होगी, शायद लाभ होगा—यही आपकी भावना है। आपकी आज्ञा का समय की मांग शायद * * * * * [शेष पृष्ठ ९३ पर] * * * * *

वाक्यदीप

कोई क्या करता है या नहीं करता है, इसकी बात करना गलत है। ऐसी बातें सुनना गलत है। ऐसी बातें सच्ची हैं या नहीं, इसकी जांच करना गलत है। गलत बातों के खिलाफ शब्दों से प्रहार करना गलत है। ये सभी चीजें अपना समय बिगाड़ने और अपनी चेतना को नीचा करने की बहुत ही खराब रीतियां हैं।

दूसरों की खामियों के बारे में बोलना बहुत ही खराब है। हर एक की अपनी खामियां होती हैं और खामियों का विचार करते रहने से उन्हें दूर करने में वस्तुतः कोई मदद नहीं मिलती।

दूसरे क्या करते हैं, इसकी चिंता मत करो। किसी के भी बारे में राय मत बना लो, टीका मत करो, तुलना मत करो; यह तुम्हारी चिंता का विषय नहीं है।

बातें करने की आदत के वश में न हो जाना, आवश्यकता के रूप में उसके बिना ही काम चला लेना, जब हमें जरूरी लगे कि बोलना ठीक है तभी बोलना और जो हमें सच लगता हो वही बोलना—यह यौगिक आत्मसंयम का एक हिस्सा है।

तमाम वाद-विवाद, तकरार और अतिशय उत्तेजना से भरी बहस से दूर रहना, और जो कहना है सिर्फ उतना ही कहना और बात को वहीं छोड़ देना। हम सच्चे हैं और दूसरा झूठा है ऐसा आग्रह न रखना और जो कहना हो उसे तथ्य की जांच में एक योगदान के रूप में कह देना।

यदि दूसरों के विषय में गपशप चल रही हो और कठोर टीका हो रही हो ...... तो उसमें पड़ना नहीं; क्योंकि ये चीजें तनिक भी मदद नहीं देतीं; बल्कि चेतना को उसके उच्च स्तर से नीचे जरूर ले आती हैं।

जो दूसरों को अखरें अथवा आघात पहुंचायें, उन सभी चीजों से दूर रहना।

—माताजी

अमीर खुसरो सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति थे। वे फारसी के अद्वितीय कवि होने के साथ-साथ खड़ी बोली हिंदी के भी आदिकवि थे। अमीर खुसरो जिस खड़ी बोली का प्रयोग काव्य की भाषा के रूप में कर रहे थे, वही कालांतर में 'दक्खिनी हिंदी' के रूप में देश की राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित है। उन्होंने 'खालिकबारी' नाम से फारसी-हिंदी का एक पर्यायवाची शब्दकोश भी लिखा था।

खुसरो को भारत और भारतीयता पर गर्व था। वे कहते थे :

चू मन तूतीए हिन्दम, अर रास्त पुरसी
ज़े मन हिन्दूई पुर्स, ता नाज़ गोयम।

—मैं हिंदुस्तान की तूती हूं। मुझसे तू हिंदी में बोल। अगर तू मुझसे हिंदी में पूछे, तो मैं बेजोड़ बातें बताऊं।

खुसरो के संबंध में हजरत निजामुद्दीन औलिया ने कहा था—'यदि खुदा मुझसे यह पूछे कि निजामुद्दीन, तुम मेरे लिए क्या लाये हो, तो मैं खुसरो को पेश कर दूंगा।'

इस वर्ष अमीर खुसरो की सात सौवीं जयंती अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ताशकंद (रूस) में मनायी जा रही है।

आज से लगभग सात सौ वर्ष पूर्व भारत के महान सपूत अमीर खुसरो ने अपनी काव्यकृतियों में भारत की महानता और उसके गौरव की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। खुसरो भारत को पृथ्वी का स्वर्ग मानते थे—

'किश्वरे हिंद अस्त बहिश्ते बज़मी।'

देशप्रेम उनमें कूट-कूटकर भरा था और उन्हें अपने भारतीय होने का गहरा अभिमान था। वे गर्व से कहते थे—'हस्त मेरा मौलिद व मावी व वतन' (अर्थात् भारत

डा. परमानंद पांचाल

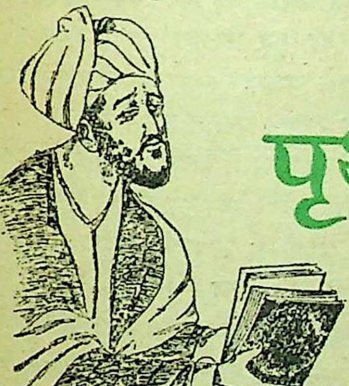

पृथ्वी का स्वर्ग है हिंदुस्तान

* * * * * * * * * * * * *

मेरी जन्मभूमि और मेरा देश है)।

प्रसिद्ध विद्वान सैयद सुलेमान नदवी ने अखिल भारतीय इतिहास परिषद के मद्रास अधिवेशन (१९४४) के अध्यक्षीय भाषण में खुसरो के भारत-प्रेम की चर्चा करते हुए कहा था–'अमीर खुसरो ने हिंदुस्तान की खाक को अपनी आंखों का सुरमा बनाया। गो वे नस्ल से तुर्क थे, मगर उनका दिल हिंदुस्तान की मिट्टी से बना था।'

खुसरो ने अपनी प्रसिद्ध मसनवी 'नूह सिपहर' ('नौ आकाश', १३१८ ई.) का पूरा एक अध्याय भारत की प्रशंसा में ही लिखा है। हिंदुस्तान का राग अलापते हुए वे भावावेश में एक स्थान पर कहते हैं:

हिक्मत व दानाई व इल्मो हुनर
व आंचे कि दर हिंद मानीस्त दिगर।

वे अपने भारत-प्रेम के समर्थन में एक हदीस पेश करते हैं कि 'हुब्बुल वतन मिन उल ईमां', यानी देशप्रेम ईमान का अंग है।

भारत को पृथ्वी का स्वर्ग मानने के वे सात कारण बताते हैं:

१. हजरत आदम यहां जन्नत से आये थे:

अव्वलिश इनस्त कि आदम व जिनां
चूं ज़ असी खुनगई याफ्त चुनां।

२. यहां मोर जैसा स्वर्गिक पक्षी है:

गर न बहिश्त अस्त हमीं हिंद चिरा
अज़पिए ताऊस जनां गश्त सरा।

३. यहां सांप भी बागे फलक (स्वर्ग) से आया है:

हुज्जतम ईनस्त सुय्यम गर शके
कामदन मार ज़ बागे फलकी।

४. हजरत आदम हिंद से बाहर निकले, तो स्वर्ग की विभूतियों से वंचित हो गये:

हुज्जते चहारूम मगर इनस्त कि चुं
जद कदम आदम ज़ हद हिंद बरूं।

५. हिंदुस्तान की सर जमीन खुशबू और फूलों से हमेशा गुलजार रहती है:

हिंद हमा साल कि गुलरूये बुवद
जीं बूद व गुल हमा खुशबू बुवद।

६. हिंदुस्तान अपनी नैसर्गिक देनों के कारण स्वर्ग से बढ़कर है:

बस बहमा हाल ज़खूबी वबिही
हिंद बहिश्त अस्त बा सबात रही।

७. मुसलमान सारी दुनिया को एक कैदखाना समझते हैं; लेकिन हिंदुस्तान उनके लिए खुल्दे बरीं (स्वर्ग) है:

गर्चे कि बर निस्बते फिर्दोशे निहां
बा हमा लुत्फीश चूं जिंदा अस जहां।

....

जां सबब खास बर असहाबे यकीं
हिंद तवां गुप्त कि खुल्दस्त बरीं।

[मसनवी 'नूह सिपहर', पृष्ठ १५१-१५७]

आगे चलकर वे भारत की प्रशंसा के हेतु ये दस प्रमाण प्रस्तुत करते हैं:

१. इस देश में विद्या सब देशों से अधिक है। बाहर के लोगों को इसका इल्म नहीं है।

२. यहां के निवासी संसार की तमाम भाषाएं शुद्ध बोल सकते हैं; जबकि दूसरे देशों वाले हिंद की भाषा नहीं बोल सकते।

३. प्राचीन काल से ही बाहर के लोग विद्या ग्रहण करने के लिए भारत आते रहे हैं; किंतु भारत से कोई (ब्राह्मण) विद्यार्जन

के लिए बाहर नहीं गया :

लेकबत हसीले हिकम् बहरे शरफ
बरहमन अज़ हिंद न शुद ही चतरफ

४. 'इल्मे हिंदसा' (अंकगणित) भारत की देन है। शून्य का आविष्कार यहीं हुआ था।

५. पंचतंत्र भारत की पुरानी पुस्तक है। इसके अनुवाद संसार की अन्य भाषाओं में हुए हैं।

६. शतरंज का आविष्कार भारत में ही हुआ था।

७. गणित भारत में घर-घर में पढ़ा व पढ़ाया जाता है और उपर्युक्त तीनों विद्याएं भारत से ही गयी हैं, जिसके लिए सभी उसके ऋणी हैं।

८. सरोद भारत में बजाया जाता है, दुनिया-भर में ऐसा साज कहीं नहीं है।

९. यहां के संगीत से जंगल के हिरन भी बेहोश हो जाते हैं।

१०. दसवीं दलील यह है कि इस नील गगन के नीचे खुसरो जैसा कवि कोई और नहीं है :

हुज्जते दह आनं कहे चूं खुसरो सुखन
सहगरी नीस्त तहे चर्खे कुहन।

अमीर खुसरो भारत के मेवों और फलों की भी प्रशंसा करते नहीं अघाते। वे कहते हैं कि हमारे यहां दो ऐसे तोहफे हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। पहला तो गरीबों का फल 'मौज' (केला) जो कि अन्य जगहों पर नहीं होता, दूसरा है पान, जो फल की भांति बड़े गर्व से खाया जाता है। पान की बराबरी भला कैसे हो सकती है ?

इसीलिए तो भारत-भक्त अमीर खुसरो की यह दृढ़ोक्ति है:

तरजीहे मुल्के हिंद ब अक्लज़ हवाए खुश
बर रूमो,बर ईराको-खिरासानो-कंदहार।

—हिंद की आबोहवा रूम, ईराक, खिरासान और कंदहार से भी बेहतर है। इसीलिए मैं इसे सब देशों पर तरजीह देता हूं।

—ए-६ सिद्धार्थ बस्ती, पो. जंगपुरा,
नयी दिल्ली-१४

खंडित मूर्ति

एक बार दक्षिणेश्वर के मंदिर के पुजारी के हाथ से भगवान विष्णु की मूर्ति का पांव टूट गया। अब क्या किया जाये, यह तय करने के लिए पंडितों की बैठक बुलायी गयी। कई शास्त्रों और ग्रंथों को देखकर उन्होंने निर्णय दिया कि यह खंडित मूर्ति अब शास्त्रों के अनुसार पूजा के योग्य नहीं रही, इसलिए अब नयी मूर्ति की स्थापना करनी चाहिये। इस पर काफी खलबली मच गयी। अंत में श्री रामकृष्ण परमहंस को बुलाया गया। उन्होंने सबकी बात सुनी और कहा—'पति पत्नी का परमेश्वर होता है। यदि किसी स्त्री का पति किसी दुर्घटना से लंगड़ा हो जाये, तो क्या वह उसे छोड़ देगी; और परमेश्वर मानकर दूसरा पति कर लेगी ?' यह सुनते ही पंडित-मंडली का मुंह एकदम बंद हो गया ! श्री रामकृष्ण की इस अत्यंत सादी दलील के सामने उनके सारे शास्त्र लूले हो गये।

—मनोहर शंकर जावडेकर

* * *

पंजाबमाता : पावन स्मृति

इस वर्ष जून की पहली तारीख। स्थान—नयी दिल्ली का विलिंग्डन अस्पताल। शाम के साढ़े पांच बजते-बजते अमरशहीद भगतसिंह की मां विद्यावतीजी (पंजाबमाता) का ९८ वर्ष की आयु में देहांत हो गया।

पंजाब-माता का जन्म पंजाब के होशियारपुर जिले के मुरानवाले गांव में एक गरीब किसान के यहां हुआ था। बचपन में ही उनका विवाह सरदार किशनसिंह से हो गया था। किशनसिंह स्वयं एक क्रांतिकारी थे। घर से अधिक महत्त्व वे देश को देते थे और आजादी की लड़ाई में जुझारू सिपाही की भूमिका अदा कर रहे थे। स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान उनके विरुद्ध ४२ राजनैतिक मुकद्दमे चले। ऐसे पति के सान्निध्य में विद्यावतीजी में भी देशप्रेम अंकुरित हुआ जो शनैः-शनैः विशाल वृक्ष के रूप में विकसित हो गया।

असल में क्रांति तो मानो विद्यावतीजी के श्वशुर-कुल की जागीर थी। उनके देवर सरदार स्वर्णसिंह भी स्वतंत्रता के सैनिकों में अग्रणी थे। उनके साथ जेल में बड़ा ही क्रूर व्यवहार किया गया था, जिससे वे तपेदिक से पीड़ित होकर १९१० में चल बसे। उनके दूसरे देवर सरदार अजीतसिंह भी महान क्रांतिकारी थे। १९०६ में उन्हें अंग्रेज सरकार ने देशनिकाला दे दिया और वे विदेशों में भारत की स्वतंत्रता का संदेश फैलाते रहे।

देशप्रेम का यही पावन संस्कार लेकर विद्यावतीजी की कोख से २६ सितंबर १९०७ को जालंधर जिले के खटहरकलां गांव में भगतसिंह ने जन्म लिया।

......१९३० को भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने 'पब्लिक सेफ्टी बिल' के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए केंद्रीय धारासभा में बम डाला और 'इन्कलाब जिंदाबाद' का नारा लगाते हुए गिरफ्तार हो गये। उनके अन्य साथियों की भी धरपकड़ हुई। मुकद्दमा चला और अदालत से ३० अक्तूबर १९३० को भगतसिंह, राजगुरु एवं सुखदेव को फांसी की तथा बटुकेश्वर दत्त तथा अन्य कई साथियों को काले पानी की सजा हुई।

समाचार मिलते ही पिता सरदार किशनसिंह, मां विद्यावती तथा अन्य संबंधी लाहौर पहुंचे। राजगुरु की मां और बहन तथा सुखदेव की मां भी वहां पहुंच गयीं। सरकार ने फांसी से एक माह पूर्व ही इन तीनों से लोगों का मिलना बंद कर दिया था। फिर २३ मार्च १९३१ को (जिस दिन शाम को तीनों वीरों को फांसी पर लटकाया जाना था) उनसे मुलाकात की स्वीकृति दी गयी, किंतु साथ में यह शर्त भी

रखी कि सिर्फ खून के रिश्तेदार अर्थात माता-पिता व भाई-बहन ही उनसे मिल सकते हैं। सरदार किशनसिंह को इस पर गुस्सा आ गया—सिर्फ हमीं लोग क्यों मिल सकते हैं? दूसरे रिश्तेदार—दादा-दादी और दोनों चाचियां भगतसिंह से व उसके साथियों से क्यों नहीं मिल सकते? भगतसिंह की चाचियों में अजीतसिंह की धर्मपत्नी भी थीं, जिन्होंने निःसंतान होने के कारण भगतसिंह को अपने पुत्र की तरह पाला था।

लेकिन गोरे अधिकारी अपनी जिद पर अड़े रहे कि सिर्फ खून के रिश्ते वाले ही मिल सकते हैं। इस पर वीरमाता विद्यावती ने कह दिया कि मुझे अपने बेटे से नहीं मिलना है। यह खबर पाकर राजगुरु और सुखदेव की मां ने भी अपने बेटों से मुलाकात नहीं की। तीन अमर सपूतों की महान माताओं ने विदेशी हुकूमत की एक बेहूदी जिद का विरोध करते हुए अपने सीनों पर पत्थर रख लिये और उफ् तक न की।

भगतसिंह के बलिदान के बाद माता विद्यावतीजी ने अपने दूसरे दो बेटे कुलबीर सिंह व कुलतार सिंह को भी स्वतंत्रता-संग्राम में नियोजित कर दिया। १९४० में दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान देश-भर में चुन-चुनकर क्रांतिकारियों को गिरफ्तार किया जाने लगा। भगतसिंह के दोनों अनुज भी गिरफ्तार कर लिये गये।

इन गिरफ्तारियों के विरोध में माताजी की अध्यक्षता में एक सभा हुई। उसमें भाषण करते हुए उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्य को ललकारा था—'मेरे एक बेटे को तुमने फांसी पर लटकाया। मेरे छोटे देवर सरदार स्वर्णसिंह को जेल के अंदर अत्यधिक शारीरिक कष्ट पहुंचाकर तपेदिक का रोगी

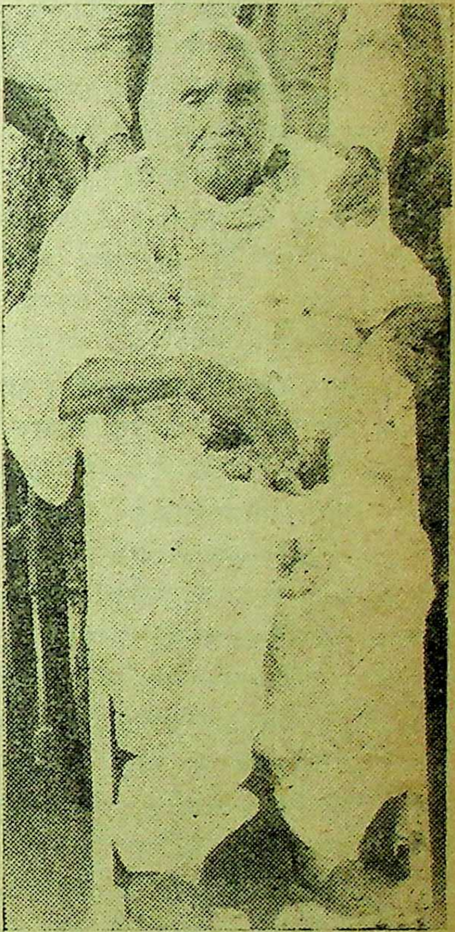

पंजाबमाता विद्यावतीजी

बनाया और इस दुनिया से विदा होने को मजबूर किया। मेरे दूसरे देवर अजीतसिंह को जलावतन करके निर्वासित का जीवन बसर करने पर मजबूर किया और अब मेरे दो बेटों को बिना मुकद्दमा चलाये गिरफ्तार कर लिया है। क्या मैं इन सबसे डर गयी ? नहीं, मैं मिट जाऊंगी, पर झुकूंगी नहीं। ओ ज़ालिमो ! अभी मेरे दो बेटे और हैं। मैं उन्हें भी देशसेवा के लिए पेश करती हूं। अगर तुम्हारी हविस अभी भी पूरी नहीं हुई, तो रणवीर और राजेंद्र को भी ले जाओ।'

सिंहनी की इस गर्जना से सारी सभा में जोश फैल गया और चारों ओर 'भगतसिंह जिंदाबाद !' के नारे सुनाई देने लगे।

कुलतारसिंह व कुलबीरसिंह को मिंटगुमरी जेल में रखा गया था। दोनों ने वहां भूख-हड़ताल शुरू कर दी। उनकी हौसला-अफजाई करने के उद्देश्य से माताजी उनसे मिलने गयीं। लेकिन उन्हें बेटों से मिलने नहीं दिया गया। क्रुद्ध हो वे जेल सुपरिंटेंडेंट की कोठी पर पहुंचीं। सुपरिंटेंडेंट का छोटा बच्चा बीमार था, वह घबराया हुआ भी था। उसने कहा—'मेरा छोटा बच्चा बीमार है। मैं बहुत परेशान हूं, आप मुझे तंग न कीजिये। जब तक दोनों भूख हड़ताल नहीं तोड़ते, उनसे मुलाकात की इजाजत नहीं मिलेगी।'

माताजी ने उसे फटकार सुनायी—'आप अपने छोटे बच्चे की बीमारी से इतने परेशान हैं। क्या आपने इस बात का भी कभी खयाल किया है कि जिस मां के दो नौजवान शेरों जैसे बेटे कई दिनों से भूख-हड़ताल पर हैं, उसकी क्या हालत होगी?'

माता विद्यावतीजी को इसका गर्व था कि उनका एक पुत्र देश के स्वतंत्रता-संग्राम का बेजोड़ सूरमा था। एक बार एक पत्रकार ने उनसे कहा—'माताजी, भगतसिंह के बारे में कोई बात सुनाइये।'

माताजी बताने लगीं—'जब भगतसिंह पर मुकद्दमा चल रहा था, तो मैं बहुत परेशान थी। मैंने एक साधु से कहा कि कोई ऐसा उपाय बताइये कि भगतसिंह बच जाये। साधु ने थोड़ी-सी धूल दी और कहा कि किसी तरह इसे भगतसिंह के सिर में डाल दो, उसका बाल भी बांका नहीं होगा। मैं इसके लिए जेल गयी। बातों-बातों में उसे प्यार करने के बहाने उसके सिर में धूल डालने ही वाली थी कि वह समझ गया। उसने मेरे हाथ से वह धूल छीनकर फेंक दी और कहा—इस प्रकार के पाखंडों में विश्वास नहीं करना चाहिये।'

उन्होंने यह भी सुनाया—'एक दिन भगतसिंह ने मुझे बताया था कि सपने में उसे चारों ओर फूल ही फूल दिखाई देते हैं। भगतसिंह को शहीद हुए बरसों गुजर गये, लेकिन उसे सिर्फ उसकी जिंदगी में ही नहीं, बल्कि अब भी फूल भेंट किये जाते हैं। उस समय तो मैं उसके स्वप्न को न समझ सकी थी, लेकिन अब देख रही हूं कि उसका वह स्वप्न सही साबित हो रहा है।'

भगतसिंह से सात साल छोटे सरदार कुलबीरसिंह का कहना है—'मां का सीना

चट्टान की तरह मजबूत थीं। एक के बाद एक दु:ख झेलते चले जाना उनकी आदत बन गयी थी। उन्हें मौत कभी भी नहीं डरा सकी। एक नहीं, चार बार उन्हें सांप ने डसा, लेकिन हर बार वे मौत से जीत गयीं। उन्होंने कभी भी कष्टों की परवाह नहीं की। भाईसाहब (भगतसिंह) उनके रोम-रोम में बसे हुए थे। वह अक्सर कहती थीं कि जब तक मैं जीवित हूं, भगतसिंह हरदम मेरे पास है और जब मरूंगी तो मैं भी उसके पास चली जाऊंगी।' अस्पताल में भी उनके बिस्तर के पास मेज पर भगतसिंह का चित्र रखा हुआ था। उनकी अंत्येष्टि भी भगतसिंह की समाधि के पास (पंजाब के फिरोजपुर जिले के हुसैनीवाला में) की गयी।

माता विद्यावतीजी केवल भगतसिंह की मां नहीं थीं। भगतसिंह के सभी साथी तथा देश के समस्त क्रांतिकारी उनकी नजरों में उनके बेटे थे। उनके इस असीम मातृत्व के बारे में स्वर्गीय बटुकेश्वर दत्त सुनाया करते थे—'माताजी फांसी की कोठरी में आकर एक तरफ मुझे तथा दूसरी तरफ भगतसिंह को बैठाकर अपने हाथ से खाना खिलाती थीं। भगतसिंह कहता, पहले दत्त को खिलाओ। माताजी मुझे खिलाने लगतीं, तो मैं जिद करता कि पहले भगतसिंह को खिलाओ, तब मैं खाऊंगा। कई मिनिटों तक यह नाटक होता रहता। अंत में माताजी को खुश करने के लिए हम दोनों एक साथ उनके हाथ से खा लेते। माताजी इतने प्रेम से खाना खिलातीं कि मन प्रसन्न हो उठता।'

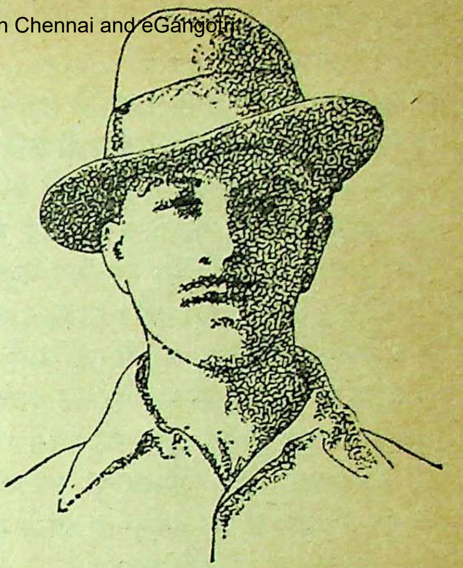

शहीदेआजम भगतसिंह

स्वतंत्रता आने के बाद शुरू में पंजाब सरकार ने उनके लिए बहुत छोटी-सी पेंशन बांध दी। बटुकेश्वर दत्त यह जानकर बहुत दु:खी हुए। वे पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रतापसिंह कैरों से मिलने गये। कैरों ने पूछा—'कहिये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं?' बटुकेश्वरजी ने कहा—'मुझे किसी चीज की आवश्यकता नहीं। बस एक ही इच्छा है कि भगतसिंह की मां की पेंशन बढ़ायी जाये। वृद्धावस्था के कारण वे प्राय: बीमार रहती हैं। उन्हें उपचार के लिए धन की आवश्यकता है।' कैरों ने उनकी बात मान ली और तुरंत माताजी की पेंशन में वृद्धि कर दी। १ जनवरी १९७३ को पंजाब के वर्तमान मुख्यमंत्री श्री जैलसिंह ने उन्हें 'पंजाबमाता' घोषित किया और

तब से उन्हें एक हजार रुपये मासिक की पेंशन मिलने लगी।

'पंजाबमाता' का हृदय पंजाब के मैदानों की भांति विशाल था और उतना ही अविचल भी। सरदार कुलबीरसिंह बताते हैं–'जब भाईसाहब को फांसी लगी, तब मैं १६-१७ साल का था। मां उस दिन बहुत परेशान हुईं, लेकिन रोयीं नहीं। शायद दुःख इतना बड़ा था कि आंसू आ ही नहीं पाये। या संभव है, उन्हें भाईसाहब का यह वाक्य याद आता रहा हो कि बेजी, मेरे मरने पर तुम रोना नहीं। तुम एक बहादुर बेटे की बहादुर मां हो। मैं इन अंग्रेजों के खात्मे के लिए बार-बार जन्म लेता रहूंगा।'

बटुकेश्वर दत्त को सदा उन्होंने अपना पुत्र माना। २४ नवंबर १९६४ को सख्त बीमारी की हालत में बटुकेश्वरजी को पटना से दिल्ली लाया गया। माताजी पुत्र राजेंद्रसिंह को साथ ले उन्हें देखने दिल्ली आयीं। अस्पताल में बटुकेश्वरजी के सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा था–'यदि परमात्मा कोई ऐसा प्रबंध कर दे कि बेटों के दुःख माताओं को लग जायें, तो संसार में कोई भी बेटा दुःखी न हो।'

लगभग चार मास पश्चात् उज्जैन के नागरिकों ने माताजी को अपने यहां आमंत्रित किया। वहां के श्रीकृष्ण सरल ने भगतसिंह पर एक पुस्तक लिखी थी। उन्होंने वह पुस्तक माताजी को भेंट की। लगभग एक लाख लोगों की सभा को संबोधित करते हुए माताजी ने कहा–'मेरा बेटा दत्त बीमार है। मुझे उसके इलाज के लिए रुपया चाहिये, इसलिए मैं यह पुस्तक नीलाम करती हूं।'

पुस्तक हाथों-हाथ ३,४०० रुपये में नीलाम हो गयी। इसके अतिरिक्त दो-तीन अन्य स्थानों पर भी माताजी का स्वागत हुआ और उन्हें १,१०० रुपये भेंट किये गये। माताजी ने दिल्ली आकर वह सारी रकम बटुकेश्वरजी को उनके इलाज के लिए दे दी। बहुत कोशिश करके भी चिकित्सक रोग को काबू में न ला सके और २० जुलाई १९६५ को श्री बटुकेश्वर दत्त का देहावसान हो गया। उनकी इच्छा के अनुसार भगतसिंह की समाधि के पास उनकी अंत्येष्टि की व्यवस्था की गयी। जब शव हुसैनीवाला पहुंचा, तो माताजी वहां पहले से ही मौजूद थीं। बटुकेश्वरजी के मुखड़े को सहलाते हुए उन्होंने कहा–'भगतसिंह की जुदाई तो सहन कर चुकी थी, तुम्हारा गम कैसे सहन करूंगी।'

माताजी की मृत्यु पर संसद-सदस्या श्रीमती लक्ष्मीकांतम्मा ने ठीक ही कहा–'जिस मां ने अपने बेटे को राष्ट्र के नाम शहीद होने के लिए सूली पर चढ़ने से पहले आशीर्वाद दिया हो, वह पूरे राष्ट्र की मां है। उसका बलिदान पूरे राष्ट्र के लिए था। हमें उस महान जननी को 'राष्ट्रमाता' कहना चाहिये।'

सचमुच वे सारे हिंदुस्तान की मां थीं।

–१६२, शुगर मिल कालोनी,
शामली-२४७७७६

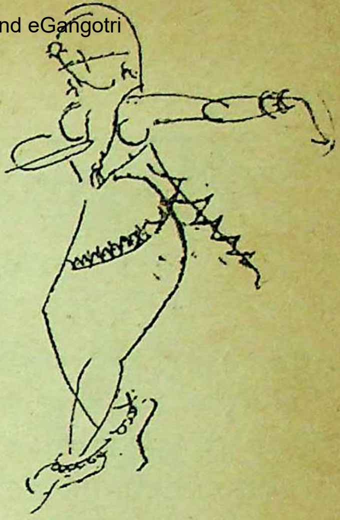

मत सो जाना

है शेष अभी खंडित शशि का खग्रास ग्रहण
मत सो जाना अधकटी टंगी उजियाली में
आकाश अतंद्रित, जागृत रुग्णा वृद्ध धरा
मत सो जाना इस अस्थिशेष वर्णाली में

सब सृष्टि मंत्रकीलित, अगजग संपूर्ण ग्रसित
रसधर्मी शशि को निगल रहा है राहु प्रबल
मत सो जाना जब भीत जड़ित सचराचर को
कर दे निष्प्रभ निर्जीव तमस का हालाहल

मत सो जाना इस ज्योतिदहन से निष्कृति तक
उपरागग्रस्त पीयूष जी उठे फिर भू पर
हो स्वप्नगर्भ नभ पुण्यपर्विता धौत विमल
शोभा-श्री का अध्वर्यु बने यह सीमांतर

सच! मत सो जाना तुम ओ अंतर्दीपमुखी!
हो लग्न भयावह कैसी कितनी प्रलयमयी
केवल जगने की होती देव-मरण-बेला
ऐसे में भी जब जी जी उठता मरणजयी

—अंचल

साउथ सिविल लाइन, पचपेढ़ी, जबलपुर

अमर वाग्गेयकार

मुतुस्वामी दीक्षितर्

डा. नारायण मेनन

आज से दो सौ वर्ष पूर्व मुत्तुस्वामी दीक्षितर् का जन्म हुआ था, जो संगीत के इतिहास की महान सृजनात्मक प्रतिभाओं में से एक थे। उनका नाम दक्षिण भारत के बाहर बहुत कम को ज्ञात है, यह संगीत के अलग-थलगपन का प्रमाण है और एक ऐतिहासिक संयोग भी।

वे सन १७७५ में तमिलनाडु के तंजाऊर जिले के तिरुवारूरु में जनमे। नक्षत्र के हिसाब से वे फाल्गुन मास में कृत्तिका नक्षत्र में पैदा हुए थे। महान संत-गायक त्यागराज का जन्म सन १७६७ में हुआ था और श्यामाशास्त्री का १७६२ में। श्यामाशास्त्री, त्यागराज और दीक्षितर् कर्नाटक संगीत की त्रिमूर्ति कहलाते हैं। यह कर्नाटक संगीत का एक दैवीय चमत्कार है कि उसके सुदीर्घ इतिहास में उसकी तीन महानतम सृजनात्मक शक्तियां एक ही जमाने में और एक ही स्थान में जनमीं। अन्य किसी भी संगीत-परंपरा में तीन महाप्रज्ञाओं का ऐसा देश-काल-गत मिलन-बिंदु मुझे ज्ञात नहीं है।

वस्तुतः 'स्वरस्रष्टा' (कंपोजर) उनके लिए सही शब्द नहीं है, यद्यपि तीनों ने विशाल संख्या में गानों या सही शब्द का उपयोग करें तो 'कृतियों' की स्वर-रचना की है। उनके लिए अधिक उपयुक्त शब्द होगा 'वाग्गेयकार' अर्थात् ऐसा संगीतकार जो गाने के स्वर ही नहीं, उनके शब्द भी रचता है।

अधिकांश संगीत-परंपराओं में—पाश्चात्य संगीत में तो विशेष रूप से—जब हम मार्ले या आर्नी, शूबर्ट या ब्राह्म्स, मैह्लर या ह्यूगो वूल्फ या बेंजामिन ब्रिट्टेन के गानों की बात करते हैं तो उसका अर्थ यह होता है कि मार्ले या शूबर्ट या ब्रिट्टेन ने स्वर-संयोजन किया, मगर शब्द शेक्सपियर, शिलर या येट्स के थे। स्वरस्रष्टा सिर्फ शब्दों को स्वरों में बांधता है। मगर वाग्गेयकार कवि भी होता है, स्वरस्रष्टा भी। संगीत में यह बड़ी विरल चीज होती है; परंतु कर्नाटक संगीत में इसके कई बेजोड़ उदाहरण हैं।

इसकी महत्ता क्या है? यदि कविता किसी और की लिखी है, तो कोई भी संगीतकार उसके हृदय में, मर्म में पूरी तरह पैठ नहीं सकता। किंतु यदि अपनी ही कविता हो, अपने ही शब्द हों, तो आप उसे पूरी तरह

समझते हैं–उसकी समस्त अर्थच्छटाओं को, सूक्ष्मताओं को, व्यंजनाओं को। तब शब्द और स्वर गलबहियां डालकर साथ-साथ विकसित होते हैं, दोनों एक दूसरे को परिपुष्ट करते हैं। और इसका सुफल है एक पूर्णवस्तु। इसीलिए सच्चे वाग्गेयकार का रचा हुआ गाना शब्द व संगीत का सच्चा दांपत्य होता है।

हां तो मुत्तुस्वामी दीक्षितर् के परिवार और जीवन पर भी एक नजर डाले लें। वे अपने पिता राम दीक्षितर् के ज्येष्ठ पुत्र थे। पिता भी श्रेष्ठ संगीतकार थे, और 'संगीत-सुधा' के लेखक गोविंद दीक्षितर् एवं महान ग्रंथ 'चतुर्दण्डि प्रकाशिका' के रचयिता वेंकटमखी के परिवार के थे। वे ही हंसध्वनि राग के स्रष्टा माने जाते हैं; यह राग आजकल उत्तर और दक्षिण दोनों में बहुत लोकप्रिय है।

रामस्वामी चालीस वर्ष की वय तक निःसंतान थे। कहा जाता है कि उन्होंन देवी बालांबिका की पूजा की और चालीस दिन तक उनके श्रीविग्रह के समक्ष भजन करते रहे। किस्सा है कि उनकी प्रार्थना की सुनवाई हुई और देवी ने स्वप्न में उन्हें दर्शन देकर एक मुक्ताहार (मोतियों की माला) दिया। बाद में लड़का हुआ और उसका नाम मुत्तुकुमारस्वामी रखा गया। तमिल में 'मुत्तु' का अर्थ होता है मोती।

मुत्तस्वामी दीक्षितर् का आरंभिक विद्याध्ययन और संगीत-शिक्षण अपने पिता के अधीन हुआ। तरुणाई में वे अपने कुलगुरु चिदंबरनाथ योगी के साथ तीर्थयात्रा करते हुए वाराणसी गये। अगले छह वर्ष तक वे यात्रा, अध्ययन, मानसिक तथा बौद्धिक साधना करते हुए उत्तर भारत में घूमे।

उनकी कृतियों से कई बातें स्पष्ट होती हैं। एक है उनका हिंदुस्तानी पद्धति के रागों का अध्ययन। दूसरा, उनके घूमे हुए तीर्थस्थान। उनके एक गाने में काठमांडू के पशुपतीश्वर (पशुपतिनाथ) का उल्लेख है; दूसरे में बदरीनाथ का। और वाराणसी तो मानो उनका अड्डा था।

हिंदुस्तानी रागों में दीक्षितर् की रच-

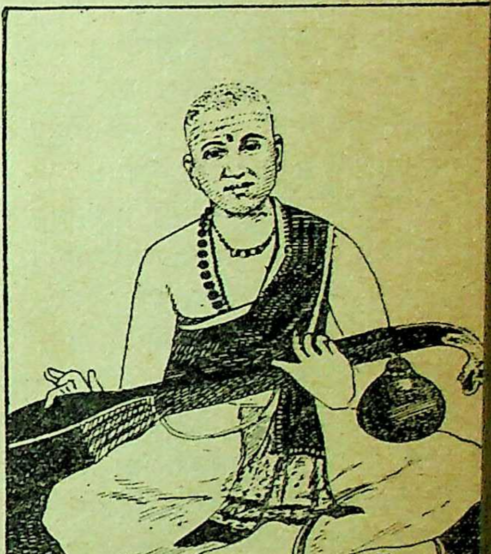

मुत्तुस्वामी दीक्षितर्

नाएं हिंदुस्तानी संगीत की निरी नकल नहीं हैं। उन्होंने रागों की संरचना, स्वरूप और भाव का अध्ययन किया और उन्हें पूरी तरह समझा; सगीत के मर्म को इस तरह आत्मसात् किया कि उसके साथ उनका भावनात्मक संबंध जुड़ गया और वह उनके सांगीतिक चिंतन का, उनके सांगीतिक परिदर्शन (विजन) का अविभाज्य अंग बन गया। उनकी संगीत-सृष्टि में संकरता नहीं है, समझौता नहीं है।

जैसा कि हमारे संगीत के इतिहास में अनेक बार हुआ है, दीक्षितर् कर्नाटक संगीतकार के रूप में अपनी 'स्वता' को खोये बिना नये विचारों को, नयी धारणाओं को पचा सके। उन्होंने अपने सृजन में एक नये आयाम को अधिगत किया और कर्नाटक परंपरा में अब तक न चीन्हे गये सौंदर्य के लिए दक्षिण के कान खोल दिये।

दीक्षितर् की ही कृतियों के माध्यम से दक्षिण ने बृंदावनी सारंग, यमुना कल्याणी (हिंदुस्तानी संगीत का यमन), हमीर कल्याणी, द्विजावंती (जिसे दीक्षितर् ने जैजैवंती ही कहा) जैसे रागों की सौंदर्य-संपदा का बोध पाया। इनमें से कुछ रागों में उनकी रचनाएं—विशेषत: बृंदावनी सारंग का 'श्रीरंगपुरविहारऽ' और द्विजावंती का 'चेत: श्रीबालकृष्णम्' दक्षिणात्यों के हियहार हैं।

छह वर्ष बाद दीक्षितर् वाराणसी से घर वापस लौटे। मगर वे पक्के यात्री थे। और कांचीपुरम्, तंजाऊर, मदुरा, एट्टियापुरम्, केरल आदि जहां भी वे गय, वहां के देवी-देवताओं की स्तुति में गाने रचकर अपनी यात्रा की स्मृति उन्होंने अमिट कर दी।

तिरुवारूरु उनका स्वस्थान था और वहां के मंदिर के अधिदेवता त्यागराजस्वामी (संत-संगीतकार त्यागराज से भिन्न) की स्मृति में उन्होंने अनेक कृतियां रची हैं, जिनमें उनके कृपाकटाक्ष और संरक्षण की याचना की है, उनके अलौकिक सौंदर्य एवं कल्याण-गुणों का यशोगान आत्मविभोर होकर किया है। कैसा शब्दचयन! कैसे विषय और कैसी अंतर्भुक्त बौद्धिक कल्पनाएं! और बहुधा कैसा कौशल! उदाहरण के लिए आनंदभैरवी की कृति 'त्यागराजयोगवैभवम्' को लीजिये और सुनिये कि वे इन पदों का किस प्रकार विन्यास करते हैं:

त्यागराजयोगवैभवम्
अगराजयोगवैभवम्
राजयोगवैभवम्
योगवैभवम्
भवम्
वम्

'वम्' के भाव का अनुवाद नहीं किया जा सकता। यह गोपुच्छ नाम का अलंकार है। इसी कृति में से दूसरा अंश लीजिये:

शम्
प्रकाशम्
स्वरूपप्रकाशम्
तत्त्वस्वरूपप्रकाशम्
सकलतत्त्वस्वरूपप्रकाशम्
शिवशक्त्यादिसकलतत्त्वस्वरूपप्रकाशम्

यहां स्रोतोवहा अलंकार का प्रभाव एकदम अभिभूत कर लेता है।

साहित्य (शब्द), राग और लय के प्रति यह बौद्धिक तल्लीनता उनकी रचनाओं में सर्वत्र देखने को मिलती है। इसी तरह उनमें उनकी अभिरुचियों, आस्थाओं, विद्वत्ता, दर्शन और तंत्रशास्त्र के गहरे ज्ञान आदि का भी प्रमांण मिलता है। उनकी 'नवग्रह-कृतियां' नवग्रहों को विषय बनाकर रची गयी हैं।

किस्सा है कि उनका एक चेला किसी रोग से पीड़ित था, जिसे कोई वैद्य ठीक नहीं कर पा रहा था। दीक्षितर् ने उसकी जन्मकुंडली देखी और अनुभव किया कि उस पर बृहस्पति (गुरु) की कुदृष्टि है; सो बृहस्पति को रिझाने के लिए उन्होंने अटाणा राग में 'बृहस्पते!' नामक कृति रची। शिष्य इस गाने को गाता रहा और अंत में रोग-मुक्त हो गया।

दीक्षितर् ने सोचा कि दूसरे भी बहुत-से लोग अन्यान्य ग्रहों की कुदृष्टि से पीड़ित होंगे, सो उन्होंने सबके कल्याण के लिए नवग्रह-कृतिसमूह रचा:

सूर्य	सूर्यमूर्ते (राग सौराष्ट्र)
चंद्र	चंद्रं भजे (आसावेरी)
मंगल	अंगारकम् (सुरटि)
बुध	बुधमाश्रयामि (नाटकुरंजि)
बृहस्पति	बृहस्पते (अटाणा)
शुक्र	श्रीशुक्रभगवंतम् (यदुकुल कांबोजि)
राहु	स्मराम्यहम् (राममनोहरी)
केतु	महासुरम् (चामरम्)

१९७५

'स्त्रीला नमस्कार हा!' (तांबे)

अंतरराष्ट्रीय नारी वर्ष में
एवरेस्ट पर चढ़ गयीं हर्ष में :
जुंको ताबेई (जापानी)
फांत होग (चीनी-तिब्बती)!
भारत में किरण बटूरा
आइ.ए.एस., आइ.एफ.एस. में प्रथम स्थान बटोरा
मथुरा में अज्ञातनामा ग्राम-महिला ने
ग्यारह सशस्त्र डाकुओं में एक को मारा,
बाकी को खदेड़ा!
बंकिम! तुमने ठीक ही कहा था:
'के बोले! मां तुमि अबले!'
फारसी का नाम ही सही है: स्त्री है 'बला'
शक्तिरूपिणी, नमस्तस्यै।

हृदय-परिवर्तन!

डाकुओं ने डाले हथियार
और बनना चाहा भद्रलोक (जेंटलमैन)
नेताओं का देखा व्यवहार
निकट से घर-बार
फिर से वे बन गये डाकू
कलम से ताकतवर तलवार
या बटनदार चाकू
'हाय विधाता अस करी,
भायी फिर से तस्करी!'

'हिंदी तेरे रूप अनेक!'

(बंबैया हिंदी)
लिखने बैठे 'हाइकू'—
इतने में बोली 'वायकू'
तीन लाइन के वास्ते खालीपोली
खराब करता पूरा कागज कायकू?

—प्रभाकर माचवे

ये उनकी सर्वोत्तम और सर्वाधिक प्रशंसित रचनाओं में से हैं। इस तरह के अन्य भी समूह उन्होंने रचे। जैसे, देवी कमलांबिका की स्तुति में नववर्ण कृतियां, विभिन्न शिवलिंगों की स्तुति में पंचलिंग कृतियां, त्यागराज स्वामी की स्तुति में नीलोत्पलांबा कृतियां।

ये सब कृति-समूह ज्योतिष, तंत्रविद्या, और मंत्रविद्या में उनके गहरे पांडित्य को प्रमाणित करते हैं। इन सभी में रागमुद्रा है अर्थात् राग का नाम कृति के शब्दों में गुंथा हुआ है। इसी तरह कृतिकार का अपना अंकित 'गुरुगुह' भी इनमें है। कृतियों में प्राचीन परंपरा के अनुसार स्वराक्षरों का उपयोग हुआ है और प्रास-अनुप्रास का चमत्कार है। ये सब एक प्रगल्भ कलाशिल्पी की रचनाएं हैं, जो उस कलाविधा के प्रत्येक कौशल और सूक्ष्मता को जानता है, रागों की सूक्ष्म छायाओं एवं लय के सुकोमल प्रभाव को समझता है।

अपनी कृतियों में उन्होंने प्राचीन प्रयोगों और स्वर-संचारों को लोकप्रिय एवं प्रचलित रागों में पुनर्जन्म दिया है; अपूर्व रागों को फिर से जिलाया और प्राणवंत बनाया। सारंगनाट, छाया गौळ, पाडि, सुधावसंत, अमृतवर्षिणी, मंगलकौशिकी, घंटा आदि कुछ रागों में तो शायद उनकी ही कृतियां एकमात्र नमूने हैं। विवादी मेलों का उन्होंने ऐसा अपूर्व प्रयोग किया है कि वे निरे स्वरग्राम न रहकर जीवंत हो उठते हैं।

मानो यह दिखाने के लिए कि वे भी मानव ही थे, कहीं-कहीं उनकी पदरचना में व्याकरण की मोटी भूलें हैं। कई बार ताल शब्दों को दबा देता है। कोई-कोई कृति ऐसी भी है, जो एक महान शिल्पी के अनुरूप नहीं पड़ती।

अवतारी पुरुषों के रूप में दीक्षितर, त्यागराज और श्यामाशास्त्री के विषय में बहुत कुछ लिखा गया है—उनके किये चमत्कार, भगवत्साक्षात्कार आदि की कथाएं भी प्रचलित हैं। मगर उनमें मेरी दिलचस्पी पूर्णत: संगीत के कारण है। संगीत के बाहर उनकी जो भी सिद्धियां थीं, वे हमारे लिए महत्त्वहीन हैं। मैं जानता हूं कि ऐसा कहना कुफ्र समझा जायेगा। हम स्तुतिपरायण हो जाते हैं; हम भावुक हो उठते हैं; हम आलोचना को बेवफाई समझते हैं; हम मानव को देवता बना डालते हैं। देवोपम होना आसान है, मानव होना कठिन है।

दीक्षितर् इसके पूरे अधिकारी हैं कि समालोचक दृष्टि से उनका अध्ययन किया जाये। हमें उनकी सीमाओं को उनकी महानता और सिद्धि के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिये। किसी संगीतस्रष्टा को हमारी सबसे बड़ी और मूल्यवान श्रद्धांजलि यही हो सकती है कि हम उसकी कृतियों का अध्ययन करें और पूर्ण मनोयोग और योग्यता से उन्हें गायें-बजायें। ('आकाशवाणी' से)

❧

चार बांस—चौबीस गज

आदमी टूटा हुआ
खोखला नतग्रीव
दोनों नयन फूटा हुआ
ताड़ना-अपमान के
वज्राभ क्षण—
कंधों ठुके
पैनी-नुकीली कील से
—अलगाव की मजबूरियां
किंतु इसमें
और ऊंचाई पर बैठे
उस संक्रमण के बीच
चार बांसों
औ' महज चौबीस गज की दूरियां
अभी मानस-पुत्र कोई
उच्छवित वर्चस्व का
कुहनियों से इसे
आंदोलित करेगा
देखना फिर
अहम् के उस
लिजलिजे विस्फोट को
किस कदर है
धराशायी किये देता
तीर —
इसके हाथ से
छूटा हुआ।

—रामचंद्र 'चंद्रभूषण'
सीतामढ़ी कोर्ट, सीतामढ़ी, बिहार

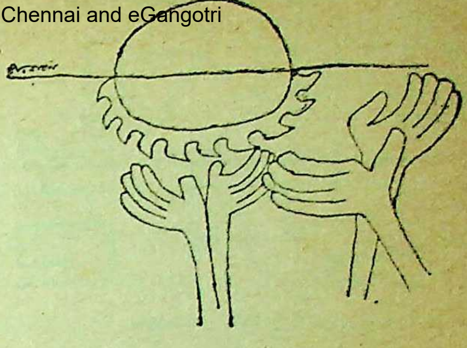

रेखाएं और शब्द

कभी मैंने तुम्हें
लिखना चाहा था रेखाओं द्वारा।
रेखाएं डगमगा गयीं, उलझ गयीं
तो मैं तुम्हें शब्दों द्वारा चित्रित करने लगा
शायद कभी
शब्द डगमगा जायें, उलझ जायें
तो मैं तुम्हें रेखाओं द्वारा लिखने लगूंगा।
[२]
यह जो एक रेखा खींची है मैंने
इसमें अक्षरों की बांकी-टेढ़ी आकृति
सीधी-सपाट बन गयी है।
एक बात
जो शब्दों के सामर्थ्य के बाहर थी,
शायद अब कही गयी है।
[३]
कभी कोई रेखा
शब्दों का सफर तय करती हुई
कहीं अटक जाती है
तो ऊल-जलूल-सी शक्ल बनने लगती है।
कोई अनकही बात कही जाती है।

—सुखबीर

★

हम तो डूबे हैं मगर...

अतिया परवीन की उर्दू कहानी

'तुम जानना चाहती हो बेटी कि हर जुमेरात (बृहस्पतिवार) को मैं इस ताक पर दीया क्यों जलाती हूं? लोबान क्यों सुलगाती हूं? और घंटों इसके सामने बैठी किस खयाल में खोयी रहती हूं?'

बीबी ने एक ठंडी सांस ली और क्षीण मुस्कराहट के साथ मुझसे पूछा—'जी हां, बीबी! जब से मैं यहां आयी हूं। आपको इस ताक पर हर जुमेरात को रोशनी और खुशबू करते देखती हूं। बीबी, आखिर इस ताक में ऐसी कौन-सी बात है?'

'तुम क्या जानो कि यह ताक कितना अहम है......' बीबी ने दीये की थरथराती हुई लौ पर नजर जमा दी और खुली-खुली आंखों से कोई सपना देखने लगीं।

मैंने कुछ देर तक उस गहरे और ऊंचे ताक को देखा, जिसके अंदर एक बड़ा-सा सफेद दीया जल रहा था। लोबानदान में लोबान सुलग रहा था और गहरा खुशबूदार धुआं ताक के अंदर बल खाता हुआ निकलकर हवा में घुलता जा रहा था। कोई खास बात नजर नहीं आ रही थी। आम ढंग का ताक था, जैसा कि पुराने मकानों के बरामदों, कमरों और आंगनों में हुआ करते हैं। बीबी के मकान में ऐसे और भी जाने कितने ताक थे। ये सब ताक उनके पुराने ढंग के गोल नीचे दरों वाले दोहरे दालान के बीच में थे। अगल-बगल इसी साइज के दो ताक और थे। मेरी नजर ताक के सीध में ऊपर पहुंची, जहां एक पुरानी फोटो सुनहरे फ्रेम में लगी हुई थी। मैं उस फोटो को जानती थी—दो नौजवान लड़कियों की हंसती हुई प्यारी तस्वीरें। बीबी और उनकी छोटी बहन।

जवानी में बीबी कितनी खूबसूरत रही होंगी। मैंने फोटो से नजर हटाकर बीबी को देखा। पचास-साठ वर्ष की पतली-दुबली, गोरी रंगत वाली उदास शक्ल-सूरत वाली बीबी। मैंने उन्हें न कभी खिलकर हंसते देखा। न बातें करते देखा। हरदम अपने आपमें खोयी हुई। अपने चारों ओर से बेखबर! सोच में डूबी आंखें। मौन अधर। अकेली। न कोई आगे, न पीछे। शादी की ही नहीं थी। एक बहन थी, वह जवानी में ही मर गयी थी। अपना मकान था। बाप की दो दुकानें थीं, जिनका किराया बीबी के गुजारे के लिए बहुत था; क्योंकि उन्हें न पहनने का शौक था, न खाने का। तन ढांकने

अनुवाद : हरपाल कौर

को मोटा-झोटा पहनतीं। पेट भरने को रूखा-सूखा खातीं और दुनिया से अलग-थलग जिंदगी के दिन पूरे किये जातीं।

मेरी अम्मी कभी बीबी की दोस्त रही थीं। एक बार छुट्टियों में मुझे दिल्ली घूमने का जी चाहा, तो अम्मी को अपनी भूली-बिसरी सहेली याद आ गयी। उनके घर से बेहतर कोई ठिकाना न था, और न उनसे बेहतर कोई अभिभावक। इसलिए अम्मी की एक चिट्ठी लेकर मैं बीबी के दरवाजे पर जा पहुंची। बड़ा प्यार जाहिर किया बीबी ने। मुझे भी वे बेहद पसंद आयीं। फिर ऐसा हुआ कि हर साल गर्मियों की छुट्टियां मैं बीबी ही के साथ बिताने लगी।

हर जुमेरात को बीबी उस राज-भरे ताक को साफ करतीं। कलई करतीं। दीया जलातीं। लोबान सुलगातीं। और बड़ी देर तक मौन बैठी दीये की थरथराती लौ को देखती रहतीं। कभी-कभार उनका पतला, सफेद और रगों के जाल वाला हाथ लोबान की चुटकियां भर-भरकर अंगारों पर डालता रहता। धुआं बल खाता हुआ उठता। ताक की सीध में लगी तस्वीर पर चक्कर काटता और फिर हवा में घुल जाता।

आज मैंने यह फैसला कर लिया था कि इस भेद को जानकर रहूंगी।

'क्यों बीबी!' मैंने उनकी गहरी खामोशी से उकताकर पूछा। वे चौंक-सी गयीं। एक पल तक मेरी ओर देखा। एक लंबी सांस ली। चुटकी-भर लोबान झोंका। दाहिने हाथ में पकड़ी माला घुटनों पर रखी और बोलीं, 'हाय अल्लाह !' कितना दर्द घुला हुआ था उनकी मद्धिम आवाज में!

'मेरी बच्ची! यह एक छोटी-सी कहानी है, जिसे मैं रंगीन लफ्जों में बयान न कर सकूंगी। मेरी रूह की तड़प मुझे इतना लाचार कर चुकी है कि मुंह उसे जाहिर किये बिना न रहेगा। लेकिन मेरी बेटी! वादा करो, तुम इस पुराने राज को इसी तरह परदे में रखोगी, जिस तरह मैंने अब तक रखा है ...... इसमें कुछ परदा-नशीनों के भी नाम आते हैं .....' उन्होंने कंपकंपाती

चित्र : आर. डी. पुरोहित

हुई आवाज में यह कहकर [illegible] की ऊंचाई पर लगी उस तस्वीर की ओर देखा। देखती ही रहीं। यहां तक कि आंखों में आंसुओं की धुंध छा गयी और ओंठ कांपने लगे।

उन्होंने सफेद मोटे दुपट्टे के आंचल से आंखें पोंछीं और कहने लगीं—'उस वक्त की बात है बेटी, जब इस लक-दक मकान में हम दोनों बहनें रंगीन तितलियों की तरह उड़ती फिरती थीं और अम्मां-अब्बा के दिल हमें देखकर फूल की तरह खिल उठा करते थे। मैं स्वभाव से कम बोलने वाली, अलग-थलग रहने वाली और सीधी थी। मेरी बहन शोख व शरारती हंगामों की आशिक और बेहद चालाक थी। हर अच्छी चीज को झपट लेती। हर प्यारी चीज को हथिया लेती—लेकिन बहुत होशियारी से, मुझे बातों में उलझाकर। अम्मां-अब्बा उसकी इन आदतों पर खूब हंसते। खुद मैं भी मुस्करा देती।

'खुदा गवाह है। मैं अपनी उस शरारती व चालाक बहन को बहुत चाहती थी। एक बार ऐसा हुआ कि मेरे एक फुफेरे भाई छुट्टियां बिताने और दिल्ली घूमने हमारे घर आये ......'

बीबी के ओंठ हिल रहे थे, पर खोयी-खोयी-सी आंखें किसी अनजाने नुक्ते पर टिकी हुई थीं। ...... 'आह ! कितने अच्छे थे वे रात-दिन ! यह सूना-सूना घर उस समय कितना हंसता-बोलता और भरा हुआ नजर आता था ! ..... खुरशीद भाई अजीब-से आदमी थे।' बीबी की आवाज में एक कंपन पैदा हो गयी। 'मेरी संजीदगी को, कम बोलने और अलग-थलग रहने के स्वभाव को भी पसंद करते, और आतका की चुलबुलाहट और ऊंचे जिंदगी से भरपूर कहकहों पर भी फिदा हुआ करते। खुद भी घड़ी-घड़ी रंग बदलने वाले इंसान थे। कभी इतने संजीदा कि उनसे बात करते डर लगे। कभी इतने चंचल, मानो नन्हा बच्चा।

'हम दोनों ही बहनें शादी के लायक हो गयी थीं। मैं उन्नीस की थी। आतका सत्रह साल की। उस जमाने में लड़कियों की इतनी उम्र मां-बाप के कंधों का भारी पत्थर बन जाती थी। हमारे मां-बाप हम पर जान देते थे, पर इज्जत-आबरू के साथ हमारे हाथ पीले कर देने की फिक्र में मुब्तिला थे। खुरशीद भाई को देखकर जहां मेरे दिल के मुलायम कोनों में एक अजीब-सी गुदगुदाहट हुई, वहां अम्मां की आंखें भी चमक उठीं। अब्बा और अम्मां की सरगोशियां एक रात मैंने सुन लीं। मेरे दिल के तार झनझना उठे। बरबस मेरे ओंठों पर मुस्कराहट दौड़ गयी ...... अब्बा-अम्मां खुरशीद को मेरा जीवन-साथी बनाना चाहते थे। जाहिर है, पहले मेरी ही उन्हें फिक्र थी, क्योंकि मैं आतका से दो बरस बड़ी थी।

'दूसरी सुबह शरम के मारे मैं खुरशीद से आंखें न मिला पायी। वे मुझे जितना छेड़ते, उतना ही मैं बीरबहूटी की तरह सिमट जाती...... "तुम तो उस प्यारी-सी बीरबहूटी की तरह हो आसिया, जिसे देख-

कर हाथ और हाथ से दिल में रख लेने की तमन्ना मचल उठे ……"

'यह पहली बात थी, जो उन्होंने पहली बार उस दिन खुलकर मुझसे कही थी। आह! मैं उनकी गहरी-गहरी आंखों की चमक, भरे-भरे ओंठों का कंपन और आवाज की कंपकंपाहट कभी न भूलूंगी ……'

बीबी की आंखें फिर गीली हो गयीं। उन्होंने फिर आंचल से अपने आंसू साफ किये। अपने को संभाला। माला घुटनों पर से सरक रही थी, उठाकर हाथ में ली। चुटकी-भर लोबान उठाया। अंगारों पर राख जमने लगी थी। फूंककर उसे हटाया। लोबान डालकर उन्होंने मद्धिम होते हुए दीये पर नजर जमायी और धीरे-धीरे कहने लगीं:

'अम्मां ने बातों ही बातों में खुरशीद की मर्जी जाननी चाही। मेरी शादी जल्दी कर देने की ख्वाहिश जाहिर की। खुरशीद जैसे उधार खाये बैठे थे। फौरन अपना नाम पेश कर दिया। यह भी कहा कि मैं इसी खयाल से यहां आया था; अम्मीजान मेरी शादी मेरी पसंद ही से करना चाहती है। अल्लाह! ऐसी मां हर एक को दे।

'उनके कहकहे की आवाज किसी खूबसूरत संगीत की तरह मेरे कानों को गुदगुदाने लगी। आह! मैं क्या जानती थी कि इतने प्यारे कहकहे अब कभी न सुन सकूंगी। अम्मां-अब्बा को मुंह-मांगी मुराद मिल गयी थी। सारा घर खुश था। मैं खुश थी। खुरशीद खुश थे। लेकिन एक हस्ती ऐसी थी जो किसी कुचली हुई नागिन की तरह बल खा रही थी ……'

बीबी ने फिर एक ठंडी सांस भरी। थूक निगलकर गला तर किया और उंगली से दीये की भड़कती हुई लौ को ठीक कर दिया।

'मैं अपनी खुशी और खूबसूरत सपनों के बीच आतका के बदलते हुए रंगों को महसूस न कर सकी। वह भी खुरशीद से मुहब्बत करती थी। और उस हठी लड़की ने जब अपने मनपसंद शख्स को मेरे गले का हार बनते देखा, तो बदले की आग ने उसके होश-हवास छीन लिये। खुरशीद इस बीच अपने वतन गये। वहां भी सबने इस रिश्ते को पसंद किया और हमारी सगाई बड़ी धूम-धाम से कर दी गयी। मैं सगाई की अंगूठी देखती और खुशी से झूम उठती। आखिर मेरे सपनों का शहजादा मुझे मिल ही गया था। खुरशीद के बिरह का एहसास तड़पाता तो यह सोचकर दिल को तसल्ली देती कि छह महीने बाद तो वह मेरे दिल के भी समीप हो जायेंगे।

'दूल्हे के लिबास सिलने का वक्त आया तो मौका और बहाना तलाश करके खुरशीद अपना नाप भेजने के बजाय खुद आ गये…… आ गये या समझो …… कुदरती बुलावा आ गया था। मिट्टी खींचकर लायी थी……'

बीबी के ओंठ कांपने लगे। सीने पर हाथ रखकर उन्होंने एक लंबी-सी सांस ली। 'उनके आने से घर की रौनक दुगुनी हो गयी। लेकिन इस बार मेरा-उनका परदा

था। कितनी हसीन और दिलचस्प कैद था। खुरशीद का बिस्तर यहां रहता था......' बीबी ने इशारे से बताया—'इस ताक के पास सिरहाना रहता था। रात में सोते समय इसी ताक पर एक गिलास में पानी भरकर रख दिया जाता था। खुरशीद की आदत थी, सोते में एक बार पानी जरूर पीते थे।

'वह रात ...... आह वह स्याह, मनहूस और खौफनाक रात! सब लोग खाना खाकर अपनी-अपनी जगह आराम करने चले गये। आतंका मेरे पास आयी। अजीब अंदाज था उसका। बोली—"आपा! मैंने हमेशा अच्छी और प्यारी चीज तुमसे हथियायी है। तुम हंसकर टाल जाती थीं। इस बार ......हां! आपा। इस वार मुझे फिर तुम्हारी एक बहुत प्यारी चीज पसंद आ गयी है। बहुत जब्त किया मैंने। मगर मेरी जिद्दी तबीयत नहीं मानती। मैं वह आज तुमसे लेकर रहूंगी आपा......"

'मैं हंसने लगी। मैंने बहुत पूछा—पगली लड़की! बता, वो कौन-सी चीज है? वह कहती हुई चली गयी—"वक्त पर मालूम हो जायेगा।"

'मैं देर तक हंसती रही। सोचती रही। अल्लाह! क्या चीज पसंद है उस शरारती लड़की को! ......वह सुबह! उफ! मेरे खुदा!

'मैं उस सुबह को कभी न भूलूंगी। मेरी वरबादी और तबाही की सुबह। अम्मां सीना कूट-कूटकर रो रही थीं। अब्बा जैसे सकते में आ गये थे। नौकर हैरान थे। सामने साफ-शफ्फाफ बिस्तर पर खुरशीद लेटे थे। जिस्म नीला, चेहरे पर यातना के निशान थे। मैंने दुनिया की लाज को नोच फेंका। दौड़कर उनका हाथ पकड़ लिया, मगर आह! वहां था क्या। कुछ नहीं। बेजान बर्फ जैसे जिस्म का एक हिस्सा। उंगली में सगाई की अंगूठी उसी तरह जगमगा रही थी।

'हालांकि दिमाग जड़ था। फिर भी मैं दौड़कर आतका के कमरे की तरफ गयी। चादर लपेटे वह अब भी सो रही थी। इतने हंगामे के वावजूद! मेरे चादर खींचने पर वह लुढ़क गयी.....यों जैसे पत्थर की कोई बुत गिर पड़े। उसका जिस्म भी नीला था। लेकिन चेहरे पर दर्द-यातना के निशान के साथ-साथ ओंठों पर एक अजीब-सी मुस्कराहट भी थी, जो पुकार-पुकारकर कह रही थी—खुद तो डूबे हैं, मगर यार को ले डूबेंगे .....'

बीबी अम्मां इतना कहकर रुक गयीं। उनकी धुंधली आंखों से आंसू माला के दानों की तरह गिर रहे थे। इस बार उन्होंने अपने ऊपर काबू पाने की कोशिश नहीं की थी। उनका शरीर तीव्र रुदन से कांप रहा था। .....

मैंने देखा, दीया जलते-जलते अब खत्म होने के करीब आ गया था। फिर मेरी नजर आप ही आप तस्वीर की ओर उठ गयी। आतका की मुस्कराहट कितनी स्पष्ट थी। कितनी विजयपूर्ण ..... कितनी जिद्दी.....!

★

विज्ञान-बिंदु

अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष में महिला पाठकों को पसंद आने वाली एक खबर। न्यूयार्क स्टेट यूनिवर्सिटी (अमरीका) के विज्ञानियों ने पता लगाया है कि एक किलोमीटर की दूरी तैरकर पार करने में पुरुष की अपेक्षा स्त्री कम ऊर्जा खर्च करती है। ऊर्जा का व्यय इस आधार पर कूता गया है कि तैरते समय तैराक ने कितनी आक्सिजन खपायी।

जांच से पाया गया कि तैरते समय स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा कम आक्सिजन खपाती हैं। इसका कारण यह समझा गया है कि वक्षस्थल और जांघों में एकत्र चर्बी की परतों के कारण स्त्री-शरीर पुरुष-शरीर की अपेक्षा अधिक संतरणशील होता है।

इन विज्ञानियों ने यह भी सिद्ध किया है कि तैरना आवागमन का बहुत ही अक्षम उपाय है। चलते या दौड़ते समय मनुष्य-शरीर २० से २५ प्रतिशत तक क्षमता पर काम करता है, जबकि तैरते समय केवल २ से १० प्रतिशत तक क्षमता पर। रिपोर्ट के अनुसार, 'मनुष्य १ मील तैरने में उतनी ही शक्ति का उपयोग करता है, जितना कि पांच मील चलने में।'

बांध, बाजरा और बीमारी

नेशनल इंस्टिटचूट आफ न्यूट्रिशन (एन-एन-एन), हैदराबाद द्वारा कराये गये एक सर्वेक्षण से यह बात प्रकट हुई है कि आंध्र, कर्नाटक और तमिलनाडु राज्यों में जिन क्षेत्रों में नदी-बांध बनाये गये हैं, वहां 'नॉक-नी' नामक रोग फैल रहा है। इस रोग में टांगों की आकृति विकृत हो जाती है। दोनों घुटने परस्पर निकट खिंच आते हैं और पांव दूर-दूर हो जाते हैं, जिससे चलने-फिरने में दिक्कत होती है और अंततः आदमी काम-काज करके कमाने-खाने की क्षमता पूर्णतः या बड़ी हद तक खो बैठता है।

आंध्र प्रदेश में नागार्जुन सागर बांध के जल से सींचे जाने वाले नलगोंडा, प्रकाशम् और गुंटूर जिलों, कर्नाटक में तुंगभद्रा बांध के निकट होसपेट इलाके और कोयंबत्तूर जिले (तमिलनाडु) में परांबिकुलमलियार बांध के समीप के प्रदेश में बाजरा खाने वाले गरीब किसानों में यह रोग तेजी से फैल

रहा है ।

नदी-बांध वाले क्षेत्रों में ही यह रोग क्यों फैल रहा है और बाजरा खाने वालों को ही क्यों सता रहा है ?

यह रोग शरीर में मोलिब्डिनम तत्त्व की मात्रा बढ़ जाने से उत्पन्न होता है । सामान्यतः नदी-बांध बनाने से बांध के निकट के प्रदेश में भूमिवर्ती जल की सतह ऊंची उठ जाती है । देखा गया है कि नागार्जुन सागर के प्रदेश में कुछ दशक पहले जमीन में २५-३५ फुट की निचाई पर पानी मिलता था, अब १०-१५ फुट खोदने पर ही पानी निकल आता है । जल-सतह के ऊपर उठ आने से जमीन की क्षारीयता बढ़ जाती है । ऐसी जमीन में बोया गया बाजरा मिट्टी में से ज्यादा मोलिब्डिनम सोख लेता है । इस अतिरिक्त मोलिब्डिनम से युक्त बाजरे को खाने वाले—विशेषतः १० से २० वर्ष की वय के—मनुष्य 'नॉक-नी' रोग से ग्रस्त हो जाते हैं । गेहूं और धान इस प्रकार जमीन से अतिरिक्त मोलिब्डिनम नहीं सोखते। अतः उनके खाने वालों को खतरा नहीं।

मोलिब्डिनम उन तत्त्वों में से एक है, जो शरीर के लिए अत्यावश्यक हैं, मगर अत्यल्प मात्रा में। शरीर में मोलिब्डिनम की मात्रा बढ़ने पर शरीर में से तांबा ज्यादा मात्रा में बाहर जाने लगता है। तांबा हड्डियों के ऊतकों के निर्माण के लिए अत्यावश्यक है।

यह सब घटना-चक्र हमें पारिस्थितिकी के इस महत्त्वपूर्ण सत्य की याद दिलाता है कि प्रकृति में परस्पर असंबद्ध प्रतीत होने वाली अनेक चीजों में परस्पर ऐसा गहरा और गुप्त संबंध होता है कि एक जगह मनुष्य दखलंदाजी करे, तो बीसों जगह संतुलन डगमगा जाता है।

पूर्णतः स्वदेशी बीयर

'हॉप' एक सदाबहार बेल है, जिसके कड़वे फलों के गुच्छे बीयर का स्वाद सुधारने और उसे बेक्टीरिया से मुक्त रखने के लिए काम में आते हैं । अपने बढ़ते हुए बीयर-उद्योग के लिए भारत को सालाना एक करोड़ रुपये के २३० टन 'हॉप' बाहर से मंगवाने पड़ते हैं।

विदेशी-मुद्रा की बचत के लिए श्रीनगर की रीजनल रिसर्च लैबोरेटरी में 'हॉप' की लगभग बीस किस्मों के बीज मंगवाकर कश्मीर में उन्हें उगाने का प्रयत्न किया । प्रयोग सफल रहे और यह पाया गया

बेल लैबोरेटरी (अमरीका) में कंप्यूटर पर रचित चित्र

कि अमरीका और फ्रांस से मगवायी गयी थी किस्में कश्मीर में बखूबी पनप सकती हैं। इनमें ८ प्रतिशत आल्फा एसिड होती है। इसी एसिड के कारण 'हॉप' की उपयोगिता है। लैबोरेटरी की देखरेख में देश की दो बड़ी बीयर कंपनियों ने 'हॉप' की खेती आरंभ कर दी है।

मां का दूध

यह आवाज अब फिर जोरों से उठ रही है कि १९८० वाले दशक में दुनिया को व्यापक अकाल का सामना करना पड़ेगा। मगर अचरज की बात यह है कि एक ओर तो भावी अन्न-संकट की बातें की जा रही हैं, दूसरी ओर करोड़ों रुपये की कीमत की बेजोड़ भोजन-सामग्री का उपयोग फैशन के नाम पर तेजी से बंद किया जा रहा है। हमारा मतलब है माता के दूध से।

मां का दूध बच्चे के लिए अत्यंत सुपाच्य और पौष्टिक तो होता ही है, साथ ही वह बच्चे को मलेरिया से तथा बेक्टीरिया एवं वाइरस के संक्रमण से जूझने की शक्ति भी देता है। बच्चा अपने जीवन के प्रथम छह महीनों में ३७५ लिटर मातृदुग्ध पीता है। उतना ही पोषण पाने के लिए उसे ४३७ लिटर दुग्ध पीना पड़ेगा।

हिसाब लगाकर देख लीजिये कि इतना गोदुग्ध आज के बाजार-भाव से कितने रुपये का और औसत भारतीय परिवार के बजट का कितना बड़ा हिस्सा होता है। दूसरे देशों में इसका हिसाब लगाकर देखा गया है। बच्चे के लिए बाहरी दूध जुटाने के लिए किसी भी व्यक्ति को युगांडा में अपनी दैनिक आय का ३३ प्रतिशत, चिली में २० प्रतिशत और तांजानिया में तो पूरे ५० प्रतिशत हिस्सा खर्च करना पड़ता है।

धाय गाय

कृत्रिम गर्भाधान की विधि से ऊंची नस्ल का एक सांड सैकड़ों उत्तम बछड़े-बछियों को जन्म दे सकता है। मगर उत्तम गाय की प्रजनन-क्षमता का इस तरह पूरा-पूरा लाभ उठाना अब तक संभव नहीं हो पाया था। गाय की गर्भावधि औसतन २८४ दिन की होती है। यानी साल में वह एक से ज्यादा बार ब्या नहीं सकती। एक ब्यात में एक बछड़ा या एक बछिया—बहुत हुआ तो कभी जुड़वां। मगर अब लगता है कि ऊंची नस्ल की गाय से वर्ष में एक से ज्यादा बछड़े पाना संभव हो जायेगा, गर्भ-प्रतिरोपण द्वारा।

पशु-विज्ञानियों को यह पता है कि गाय को गाभिन घोड़ी के सीरम का इंजेक्शन देकर उसके अंडाशय से एक साथ २० तक अंडे मुक्त कराये जा सकते हैं। इनमें एक साथ कई अंडों को कृत्रिम विधि से निषेचित किया जा सकता है।

सन १९७१ में कैम्ब्रिज (ब्रिटेन) के डा. टिम रासन ने यह सिद्ध कर दिखाया कि निषेचित अंडे को गर्भिणी गाय के गर्भ से शल्यक्रिया द्वारा निकालकर दूसरी धाय-गाय के गर्भ में स्थापित करके वहां पनपाया जा सकता है। इससे घटिया किस्म की बूढ़ी गाय ऊंची नस्ल की संतान को जन्म दे सकेगी।

अब तक इसमें कठिनाई यही थी कि

निषेचित अंडे को धाय-गाय के गर्भ में स्थापित करने के लिए खर्चीली शल्यक्रिया करनी पड़ती थी। परंतु अब ब्रिटेन के ही डा. जो स्टीनैन तथा उनके सहयोगियों ने एक सस्ती विधि ईजाद की है। निषेचित अंडे को अब सिरिंज द्वारा धाय गाय के गर्भ में पहुंचा दिया जायेगा, जैसे कि कृत्रिम गर्भाधान में शुक्राणु पहुंचाये जाते हैं। यह क्रिया कोई भी प्रशिक्षित पशुपालक चंद मिनिटों में कर सकता है। आशा की जाती है कि ऐसे ऊंची नस्ल के अंडे मुहैया करने के लिए विशेष केंद्र बनाये जायेंगे।

★

[पृष्ठ ३५ का शेष]

खंजर से उसका खात्मा कर दिया। बाद में पता चला कि वह किसान तो वास्तव में राजा कोडोरस था।

अपने राजा की मौत की खबर से एथेंस की फौजों में डर की लहर दौड़ गयी; लेकिन तभी किसी ने उन्हें उस भविष्यवाणी के शब्द याद दिलाये कि या एथेंस का खात्मा होगा या राजा कोडोरस का। और उस आदमी ने कहा–'अब चूंकि हमारे राजा का खात्मा हो चुका है, इसलिए एथेंस का खात्मा कभी नहीं हो सकता!'

यह सुनते ही फौजियों में नया जोश जगा, उन्होंने जी-जान से दुश्मन से जूझकर उसे पराजित कर दिया। तब उनकी समझ में आया कि क्यों उनके राजा ने अपने को दुश्मन की खंजर का शिकार बना दिया।

उच्चतर आत्माओं के लिए उत्सर्ग एक 'सात्विक' क्रिया होती है–सर्वथा, सहज, तत्काल स्फूर्त और योजना-रहित।

संत विंसेंट डी पाल एक दिन मार्सेल्स (फ्रांस) में कैदी गुलामों को देखने गये। उनकी नजर एक बेहद गमगीन गुलाम पर पड़ी। उन्होंने उसकी उदासी का कारण पूछा।

कैदी गुलाम ने कहा–'मेरी पत्नी और बच्चे यहां से बहुत दूर हैं। मेरा दिल उनसे मिलने को तड़प रहा है। मगर मैं वर्षों तक शायद उनसे मिल न पाऊंगा। यही सोचकर मेरा मन बहुत उदास है।'

संत विंसेंट कुछ क्षण चुप रहे। फिर उन्होंने अपने कपड़े उतारकर गुलाम की ओर बढ़ाते हुए कहा–'लो, अपने कपड़े मुझे दे दो और ये कपड़े पहनकर यहां से चुपचाप निकल जाओ।'

गुलाम उनके कपड़े पहनकर वहां से चला गया। खैर, अगले दिन असलियत सबको पता चल गयी और संत को रिहा कर दिया गया। परंतु अपनी ओर से वे तो उस गमगीन गुलाम की खातिर वर्षों तक गुलामी झेलने को पूरी तरह से तैयार थे।

उत्सर्ग का यह अनूठा उत्साह तब उदित होता है, जब मनुष्य की सांसों में यह प्रार्थना बस जाती है :

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नाऽपुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥

–न तो मैं राज्य चाहता हूं, न स्वर्ग और न मोक्ष; मैं तो सिर्फ इतना चाहता हूं कि सब दुखियारे जीवों का दुःख मिट जाये।

तिकड़

मनसासिंह कई दिनों से पुलिस-चौकी के चक्कर लगा रहा था। कभी थानेदार न होता और कभी कोठी वाला सरदार न पहुंचा होता। सरदार की कोठी का डिस्टेंपर करने का ठेका उसने दो महीने पहले लिया था; पर सरदार था कि पैसे देने का नाम नहीं ले रहा था। आखिर एक दिन संयोगवश तीनों चौकी में इकट्ठे हो गये। थानेदार ने सरदार से पूछा—'क्या बात है सरदारजी! आपने पैसे क्यों नहीं दिये इस गरीब के?'

'एंजी, पैसे किस बात के दें? इसने काम हमारी मर्जी के माफिक नहीं किया।'

'बताइये न महाराज, कौन-सा काम नहीं किया? मैंने कोठी चमकाकर रख दी है...... तो भी कहते हैं......' मनसासिंह बोल उठा।

'जी, रंग निखरा ही नहीं। हम पैसे किस बात के दें?'

'देखिये यह ज्यादती है। यह गरीबमार अच्छी नहीं। यह चौकी है......यहां ऐसी शिकायतें आती रहती हैं कि काम कराया है, पैसे नहीं देता।' थानेदार ने सोच-साचकर अपना फैसला दिया।

'अरे जनाब! आप कहते हैं तो पैसे दे देते हैं। लेकिन काम हमारी मर्जी के माफिक नहीं हुआ।' सरदारजी ने भी रोज-रोज के झगड़े को खत्म करने में ही अपनी खैरियत समझी।

'सुना भई, कितने का ठेका था?'

'पांच सौ का जी!'

'दीजिये ...... साढ़े चार सौ।'

और बिना कुछ और बोले सरदार ने साढ़े चार सौ के नोट मनसासिंह के हाथ में थमाये और लिखा-पढ़ी करवाने के बाद चौकी से बाहर आ गया।

और मनसासिंह कह रहा था—'हुजूर ने बड़ी समझदारी से पैसे निकलवाये हैं। हुजूर के इंसाफ की धूम पहले भी मैं सुन चुका था। मुझे कोई सेवा हो तो बताइये।'

'अरे नहीं भाई! मैंने रिश्वत कभी नहीं ली। मैंने तो इंसानियत के नाते तुम्हारा काम किया है। यों यार, मेरे कमरों में भी सफेदी की जरूरत है। अगर एक-आध दिन मेरे घर लगा सको ...... बस दो कमरे हैं छोटे-से, एक बरामदा है ......रसोई, गुसलखाना तो है ही ...... यही बस थोड़ा-बहुत

अनुवाद : सुरजीत

डिस्टैंपर-का......'

'जी...... जी ......' बड़ी मुश्किल से मनसासिंह के मुख से निकला।

'बैठ यार! पता बताता हूं अपना...... तुम समझदार आदमी हो ...... जरा अच्छे चमक जायेंगे कमरे......'

और मनसासिंह को थूक निगलनी मुश्किल हो रही थी।

° ° °

दुर्भाग्य से फिर भाई-भाई एक-दूसरे के खून के प्यासे बन गये थे। भारत और पाकिस्तान की सेनाएं एक-दूसरे के खून में डुबकियां लगा रही थीं। देश में जंग-जनून पूरे जोबन पर था। अखबार देशभक्ति के कारनामों से भरे पड़े थे। शहर में हर रोज जल्से हो रहे थे, जुलूस निकल रहे थे और हर छोटा-बड़ा नेता लोगों की भावनाओं से खेल रहा था।

लाला मांगेराम गड़गज भी आजकल बढ़-चढ़कर देशभक्ति का सुबूत दे रहा था। ...... उसका लड़का मदन लगभग साल-भर से बेकार था। हर रोज मांगेराम उसे कोई काम-काज करने को कहता ......कोई सरकारी या गैर-सरकारी नौकरी करने को कहता। पर नौकरियां क्या रास्ते पर पड़ी हुई थीं! बेचारा बाप की घुड़कियां चुपचाप सुन लेता।

युद्ध छिड़ा तो मदन सीधा भरती के दफ्तर गया और जांच-पड़ताल के बाद सेकेंड लेफ्टिनेंट के पद पर भरती होने के लिए फार्म ले आया। फार्म भरने के बाद उसने अपने पिता से पूछा–'मुझे फोटो एटेस करवाने हैं। आप आज करवा दें। कई मंत्री आपके परिचित हैं।'

'फोटो कैसा? मैं समझा नहीं।' बात सच-मुच मांगेराम की समझ में नहीं आ रही थी।

'नौकरी के लिए।' मदन ने धीरे-से कहा।

'अच्छा! आखिर मूड बना ही लिया तुमने!' मांगेराम की खुशी की कोई सीमा न रही थी।

'तुम मुझे दे दो, मैं आज ही करवा दूंगा एटेस्ट। ...... पर तुमने यह तो बताया ही नहीं कि तुम किस जगह के लिए एप्लाई कर रहे हो?'

'मैं मिलिटरी में भरती होने के लिए.....'

'मिलिटरी में?' मांगेराम यों चौंका, जैसे किसी ने उसके पैरों तले जलते हुए अंगारे रख दिये हों।

'अरे नहीं, नहीं ...'

'पर पिताजी! मुझे बतौर सेकेंड लेफ्टि-नेंट ले लेंगे। यह मौका भी गजब का है...... क्या बुरा है?'

'अरे नहीं ... तुम रहने दो ... मिलिटरी में नहीं ... खुद ही मिल जायेगी कोई नौकरी ... इतनी जल्दी क्या है हमें!'

और यह कहते हुए मांगेराम ने काली ऐनक चढ़ा ली और मदन को चेतावनी देता हुआ जल्दी-जल्दी बाहर निकल गया! शायद जल्से के लिए लेट हो गया था वह।

° ° °

शामसिंह ने धड़कते हुए दिल से तार खोला। लिखा था–'तेजसिंह सीरि-

यसली इल। रीच इमीजिएटली।

और वह सोच में डूब गया। अभी पिछले सप्ताह ही तो तेजसिंह बाल-बच्चों सहित आकर उसे मिलकर गया था। अच्छा खासा स्वास्थ्य था उसका उस समय। अब अचानक कौन-सी बीमारी लग गयी? खैर, जाये बिना गुजारा नहीं था। उसने सोचा—जाना तो है ही, क्यों न रात की गाड़ी से चला जाऊं? सीधा वह स्टेशन चला गया, और सीट रिजर्व कराने के लिए अपने भतीजे से मिला।

'आइये अंकलजी, खैरियत तो है?'

'भई, तार आया है कि तेजसिंह सख्त बीमार है।'

'अच्छा! अभी पिछले हफ्ते तो खासा तंदुरुस्त गया है यहां से।'

'यही बात तो समझ में नहीं आती। अब मैंने सोचा, रात की गाड़ी से चला जाऊं। ईश्वर ने चाहा, तो सुबह पहुंच जाऊंगा।'

'हां-हां! जरूर पता करना चाहिये। रिश्तेदारी जो हुई।'

'अच्छा! तुम एक सीट मेरे लिए रिजर्व करवा दो।'

'यह तो अंकलजी बड़ा मुश्किल काम है।'

'क्यों?'

'सीटें तो सबकी सब रिजर्व हो चुकी हैं।'

'भई, तुम कोशिश तो करके देखो।'

'अंकलजी! आखिर मैं ही तो रिजर्व करता हूं। पर आप चिंता न करें। मैं यों ही बैठा दूंगा आपको। आ जाइयेगा।'

शामसिंह के दिल को बात जंची नहीं। वह निराश होकर स्टेशन से बाहर आ गया। बाहर उसका एक दोस्त उसे मिल गया।

'ओ हो! आप कहां जा रहे हैं?'

'भई जाना तो अमृतसर ही है। सीट रिजर्व कराने आया था। ससुरा कोटा ही खत्म हो चुका है।'

'हूं! कोटा खत्म हो चुका है? आप भी बस भोले बादशाह हैं।'

'भई, मेरा अपना भतीजा लगा हुआ है इस काम पर। उसे मुझसे झूठ बोलकर क्या लेना है?' शामसिंह ने बड़े गर्व से यह बात दोस्त से कही।

'अच्छा! सीट तो मुझे भी अमृतसर के लिए रिजर्व करानी है। मैं भी आज ही रात को अमृतसर जाना चाहता हूं।'

'फिर तो यों ही सवार हो जाइये तो हो जा ये। अब आज रिजर्वेशन तो हो नहीं सकेगा।'

'ठहरिये! ......मैं कोशिश करके देखता हूं। आप यहीं ठहरिये।'

शामसिंह वहीं खड़ा होकर अपने मित्र की प्रतीक्षा करने लगा। मिनिट-भर के बाद मित्र मुस्कराता हुआ उसके सामने खड़ा था।

'यह लीजिये महाराज, अपना टिकट।'

'रिजर्व हो गया?'

'हां, रुपये दस लगे हैं।'

'दस रुपये! ......'

'इस जमाने की महान ताकत के सहारे ही ......'

और शामसिंह का मुंह खुला का खुला रह गया।

★

कार्पोव के बाद कौन?

रवींद्र मोरपरीआ

पिछले मार्च में भारतीय पत्र-पत्रिकाएं इस चर्चा में व्यस्त थीं कि अमरीकी शतरंज-विजेता बाबी फिशर और रूसी प्रतिस्पर्धी अनातोले कार्पोव के बीच विश्व-शतरंज का मुकाबला होगा भी या नहीं। अंततः ४ अप्रैल १९७५ को, फिशर ने खेलने से इन्कार कर दिया और कार्पोव को बिना खेले ही विश्व-विजेता घोषित कर दिया गया। इसके साथ भारतीय अखबारों की शतरंज-चर्चा समाप्त हो गयी। लेकिन मजे की बात यह है कि फरवरी-मार्च में ही विदेशी अखबारों में इस बात की चर्चा चल रही थी कि 'कार्पोव के बाद कौन?' अर्थात् विदेशी शतरंज-विशेषज्ञों ने कार्पोव को पहले से ही विजेता मान लिया था।

सन १९७२ में रूसी विश्व-विजेता बोरिस स्पास्की को मात देने के बाद से फिशर ने शतरंज को हाथ नहीं लगाया। तीन वर्ष का अंतराल बहुत लंबा होता है। चाकू को इस्तेमाल किये बिना रखे रहें, तो उस पर जंग लग जाता है। उसी तरह, बुद्धि चाहे कितनी पैनी हो, मगर तीन साल—तीन लंबे साल—तक उसका बिलकुल उपयोग न किया जाये तो उसका पैनापन कुछ कम हो ही जाता है। खासकर शतरंज के क्षेत्र में तो ऐसा अवश्य होता है। प्रैक्टिस यानी प्रतिदिन का अभ्यास उस पैनेपन को बनाये रखने के लिए निहायत जरूरी है।

शायद फिशर ने भी यही बात अनुभव की हो और खेलकर हारने व इज्जत गंवाने के बजाय खेल से बाइज्जत रुखसत हो जाना ही बेहतर समझा हो। अलबत्ता इसमें उसने सिद्धांत की आड़ ली; मगर शतरंज-प्रेमी असलियत ताड़ गये।

यह बात गौर करने योग्य है कि फिशर ने विश्व-शतरंज मंडल (एफ. आइ. डी. इ.) के सामने जो दो मुख्य शर्तें रखी थीं, उनमें परस्पर विरोध है। फिशर की पहली शर्त यह थी कि स्पर्धा के लिए किसी निश्चित संख्या में खेल (गेम) नहीं होंगे, अर्थात 'अनलिमिटेड' खेल होंगे। जो खिलाड़ी १० गेम पहले जीत जाये, उसके सिर विजेता का सेहरा बंधेगा। दूसरी शर्त यह थी कि यदि दोनों खिलाड़ी ९-९ के बराबर रहें, तो विजेता फिशर ही रहेगा।

विश्व-शतरंज मंडल ने जून १९७४ में नीस (फ्रांस) में यह फैसला किया था कि इस बार प्रतियोगिता के लिए ३६ खेल खेले जायेंगे। ड्रा के लिए कोई अंक नहीं था। बाद में फिशर और उसके समर्थकों ने इस

फैसले को अनुचित माना और इसमें फिशर की इच्छा के अनुसार परिवर्तन करवाने के लिए मंडल की विशेष बैठक बुलाने का नोटिस दिया।

१८ मार्च १९७५ को मंडल ने अपनी विशेष बैठक में फिशर की यह पहली शर्त कि खेल 'अनलिमिटेड' हो, स्वीकार कर ली; किन्तु दूसरी शर्त नामंजूर कर दी। फिशर को यह मंजूर न था। अपनी दूसरी शर्त के मंडल द्वारा अस्वीकार कर दिये जाने के विरोध में उसने खेल में भाग लेने से इन्कार कर दिया। ९-९ की बराबरी के बाद भी निश्चित परिणाम और विजय के लिए आगे खेला जाये, यह उसे मंजूर न था।

खैर, फिशर ने अब विजेता-पद गंवा ही दिया, जिसे पुनः प्राप्त करने के लिए उसे एकदम नीचे से शुरू करना पड़ेगा। अर्थात् उसे प्रतिस्पर्धा के सभी व्यूह भेदने पड़ेंगे। मगर अब वह उन व्यूहों को भेदने से रहा।

किंतु अमरीका में ही माइकल र्होड नामक खिलाड़ी विश्व-विजेता कार्पोव को ललकारने के लिए तैयार हो रहा है। १५ साल का माइकल अमरीकी हाइस्कूल चैंपियनशिप का विजेता है और अपने देश में फिशर के बाद सबसे कमउम्र खिलाड़ी है। अमरीकी ओपन शतरंज प्रतियोगिता में रेशेव्स्की को ९-३ से शिकस्त देने वाला यह किशोर फिशर से इस मामले में आगे है।

दूसरा युवा खिलाड़ी यूव बोन्सच पूर्व जर्मनी का है। यह भी अभी १५ साल का ही है। जर्मनी के एक प्रसिद्ध शतरंज-कोच के इस बेटे ने १५ में से ५।। अंक प्राप्त करके हेल इंटरनेशनल प्रतियोगिता जीत ली है।

मगर इन दोनों से कहीं आगे निकल गया है सोवियत रूस के बाकू नगर का ११ वर्षीय गैरी वेइनस्टीन। प्रख्यात कोच इम बागिरोव से तालीम पाये हुए इस किशोर ने हाल में रूसी जूनियर चैंपियनशिप जीती है और यह कार्पोव के बाद सबसे कमउम्र खिलाड़ी है। गैरी ने रूसी ग्रैंड मास्टर यूरी एवरबाख को भी इस तरह हराया है कि विदेशों के प्रायः सभी शतरंज-विशेषज्ञ अभी से उसे १९९० का विश्व-विजेता मानने लगे हैं। १९८१ तक तो विजेता का सेहरा कार्पोव के सिर रहेगा, ऐसा विशेषज्ञों ने माना है।

सन १९८१ के बाद कभी भी—शायद १९८५ में—गैरी विश्व-विजेता को चुनौती देने योग्य हो जायेगा। ब्रिटिश अखबार 'गार्जियन' में लियोनार्ड बर्डन ने उसके बारे में

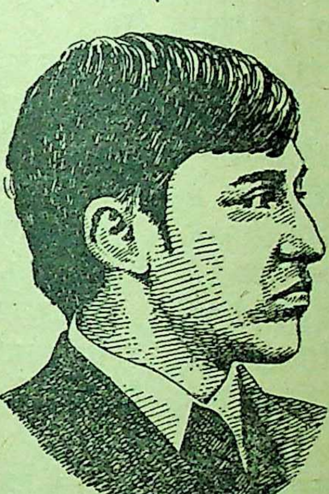

कार्पोव

बाबी फिशर

लिखा है—'मेरी राय में १९९० की विश्व-चैंपियनशिप के लिए बहुत ही स्पष्ट मन-पसंद दावेदार अभी से मौजूद है।'

गैरी अब तक कैंडिडेट मास्टर बन चुका है। उसके खेल को देखते हुए वह काफी सशक्त खिलाड़ी प्रतीत होता है।

०००

तेईस साल जैसी छोटी उम्र में विश्व-विजेता बनने वाला पहला ही व्यक्ति है रूसी खिलाड़ी अनातोले कार्पोव। १५ साल की आयु से अब तक जीवन में केवल २२ खेल हारने वाले इस खिलाड़ी ने किसी भी प्रतियोगिता में दो से ज्यादा गेम नहीं गंवाई है। जब कि फिशर १९६० में ब्यूनोस एयर्स में पांच गेम हारा था और १९६२ की कैंडिडेट्स प्रतियोगिता में सात गेम।

फिशर के नखरे से तो हम सभी परिचित ही हैं, लेकिन प्रतिस्पर्धा पर मानसिक दबाव डालने की युक्ति उपयोग करने में कार्पोव भी कुछ कम नहीं। फिशर यदि एक है, तो कार्पोव सवा है। धैर्यवान और साहसी कार्पोव एक अच्छा 'डिफेंस प्लेयर' है। १९७४ में उसने चेकोस्लोवाकिया के ग्रैंड मास्टर व्लास्तिमिल होर्ट को जिस तरह शिकस्त दी, वह काबिले तारीफ है। उसके बाद १९७४ में ही उसने विश्व-विजेता को ललकारने के लिए आवश्यक व्यूहों को भेदकर कैंडिडेट्स प्रतियोगिता में भूतपूर्व रूसी विश्व-विजेता बोरिस स्पास्की को भी ऐसी करारी हार दी कि उसके विश्व-विजेता होने की क्षमता में फिर किसी को संदेह न रहा।

कार्पोव ने अपने जीवन में जितने खेल जीते हैं, वे सब 'के इन फोर कार्पोव' नामक पुस्तक में छपे हैं। (प्रकाशक: जे. बी. एडम्स, ७३, होलोवे रोड, लंडन एन ७८जे जेड।)

इससे कार्पोव का खेल के प्रति रवैया और खेलने का ढंग एकदम स्पष्ट हो जाता है।

अब मनचला फिशर विश्व-विजेता कार्पोव के साथ कुछ-एक गेम खेलने के लिए तैयार हुआ है। देखें कौन किसे पछाड़ता है!

★

हम लोग शिकायत किया करते हैं कि भारत में बहुत-सा अनाज गोमाताओं पर बरबाद कर दिया जाता है। अमरीका और कनाडा की गोमाताएं हैं घरेलू कुत्ते-बिल्ली।

—ए. ई. विंच (कनाडा रेडक्रास के राष्ट्रीय आयुक्त)

★

ब्योहार राजेंद्र सिंह

अपने ही बारे में हमारा अज्ञान

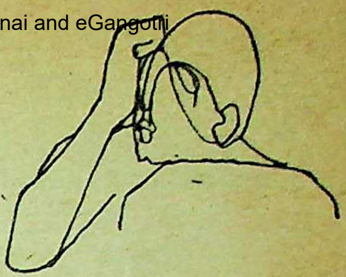

इंग्लैंड की थियोसाफिकल सोसायटी की मंत्री श्रीमती हाफकिन्स को वाराणसी में होने वाले अंतरराष्ट्रीय थियोसाफिकल संमेलन में आना था। उन्होंने लंदन में एयर इंडिया इंटरनेशनल के अधिकारियों से वाराणसी के लिए हवाई जहाज का टिकिट बनाने को कहा। उन्हें उत्तर मिला कि ऐसा कोई स्थान भारत में नहीं है। श्रीमती हाफकिन्स को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कुछ क्षण सोचकर फिर कहा–'अगर वाराणसी नहीं है, तो बनारस अवश्य होगा।' तब अधिकारी बोला–'हां, बनारस तो है।' श्रीमती हाफकिन्स ने उसे फटकार सुनायी–'भारतीय होकर भी आपको यह नहीं मालूम कि वाराणसी बनारस का पुराना नाम है, जिसे कि सरकारी तौर पर अपना लिया गया है।' अधिकारी इस पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए बोला–'अच्छा तो मुझे अपने अफसर से पूछना पड़ेगा कि असली बात क्या है।'

विद्यार्थियों में योग का प्रचार करते हुए श्रीमती हाफकिन्स इंग्लैंड के लीड्स नगर गयीं। वहां एक महाविद्यालय में उन्हें भारतीय विद्यार्थी भी मिले, जो भारत से डिग्रियां लेकर यहां ऊंची पढ़ाई करने आये थे। इससे प्रोत्साहित होकर उन्होंने योग की विस्तृत विवेचना करते हुए कहा–'पतंजलि सचमुच हमारे आदर के पात्र हैं।' एक भारतीय विद्यार्थी पूछ बैठा–'मैडम, यह पतंजलि कौन है, जिनका नाम आप आदर के साथ ले रही हैं?'

श्रीमती हाफकिन्स ने इस पर बड़े दुःख के साथ कहा–'मुझे आश्चर्य है कि भारतीय होते हुए भी आप लोगों ने योग सूत्रों के कर्ता और योग शास्त्र के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि का नाम नहीं सुना। विद्यार्थियों का उत्तर था–'हमें तो हमारे देश के स्कूलों और कालेजों में पतंजलि का नाम नहीं बतलाया गया था।'

उसके बाद श्रीमती हाफकिन्स महाविद्यालय के भोजनालय में गयीं, जहां अंग्रेज और हिंदुस्तानी विद्यार्थी एक साथ भोजन कर रहे थे। उन्होंने देखा कि अंग्रेज विद्यार्थी उंगलियों से शाकाहारी भोजन कर रहे थे, जब कि ज्यादातर भारतीय विद्यार्थी कांटा-छुरी से मांसाहार कर रहे थे। वे स्तब्ध रह गयीं।

★

डाक-टिकटों में रवींद्र

पुष्पेंदु लाहिड़ी

सन १९७३ में दिल्ली में हुई द्वितीय अंतरराष्ट्रीय डाक-टिकट प्रदर्शनी की स्मारिका में प्रधान-मंत्री (और विश्वभारती की कुलपति) श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा— 'टिकट-संकलन ने विभिन्न राष्ट्रों के बीच सद्भावना और मैत्री बढ़ाने में काफी मदद की है।'

डाक-टिकटों ने किस प्रकार अंतरराष्ट्रीय भाईचारा बढ़ाया है, यह बात देश-विदेश के डाक-टिकटों पर नजर डालने से ही पता चलेगी। भारत ने लिंकन की स्मृति में टिकट छापा है, तो अमरीका ने नेहरू के मुखड़े को अपने टिकट पर स्थान दिया है। भारत ने गोर्की का टिकट प्रकाशित किया है, रूस ने अपने टिकटों में कालिदास को स्मरण किया है। सारी दुनिया में ऐसे उदाहरण बिखरे पड़े हैं। गांधी-जन्मशताब्दी में लगभग चालीस देशों ने गांधी-स्मारक डाक-टिकट प्रकाशित किये हैं।

रवींद्रनाथ भारत के गौरव थे और सारे विश्व ने उन्हें भारत की गौरवशालिनी संस्कृति का संमाननीय प्रतिनिधि माना। पृथ्वी के विभिन्न देशों से उन्हें बार-बार निमंत्रण मिले और अनेक बार उन्होंने विश्व-परिभ्रमण किया। रवींद्र-जन्मशताब्दी में कई देशों ने उनके स्मरणार्थ डाक-टिकट जारी करके उनके प्रति श्रद्धाभाव प्रकट किया। भारत ने भी एकाधिक बार रवींद्र-डाक-टिकट प्रकाशित किये हैं।

मई १९२४ में जब रवींद्र जापान की यात्रा पर थे, उन्हें पेरू (दक्षिण अमरीका) की स्वाधीनता-शताब्दी के उत्सव में भाग लेने का निमंत्रण मिला। दक्षिण अमरीका की यात्रा के पिछले दिन जापान में अपने भाषण में प्रसंगवश उन्होंने कहा—'मनुष्य गृहत्यागी जीव है, मनुष्य पथिक है।...... वह चिरपथिक है।' उस समय वे अस्वस्थ थे, फिर भी १९ सितंबर १९२४ को रवाना हुए। कलकत्ते से मद्रास, कोलंबो (श्रीलंका) होकर यूरोप जाने वाला जहाज उन्होंने पकड़ा था। फिर कोलंबो से फ्रांस। फ्रांस के शेरबुर्ग से सीधे दक्षिण अमरीका। उनकी इच्छा थी कि क्यूबा होकर पनामा नहर से पेरू जायें। लेकिन ऐसा हो नहीं पाया।

हडसन की पुस्तकें पढ़कर रवींद्र के मनोलोक में ब्राजील की अमेजन नदी के किनारों के घनघोर और अभेद्य जंगलों के प्रति शायद एक आकर्षण था। किंतु शारीरिक कारणों

बंगला से अनुवाद : सुरेश सिन्हा

से ब्राजील न उतरकर सीधे अर्जेंटाइना उतरे और वहां एकांतवास किया। तथापि रवींद्र-जन्मशताब्दी वर्ष में ब्राजील ने उनकी आवक्ष आकृति की प्रतिकृति सहित दस कूजेरो का डाक-टिकट मुद्रित किया। टिकट गुलाबी रंग का है और उस पर अंग्रेजी में रवींद्रनाथ का हस्ताक्षर भी मुद्रित है।

कवि १ नवंबर १९२४ को अर्जेंटाइना की राजधानी ब्यूनोस एयर्स पहुंचे। जहाज में उनकी तबीयत बहुत खराब हो गयी थी और हृदय की दुर्बलता दिखाई देने लगी। अतः डाक्टरों की सलाह से उन्होंने पेरू जाने

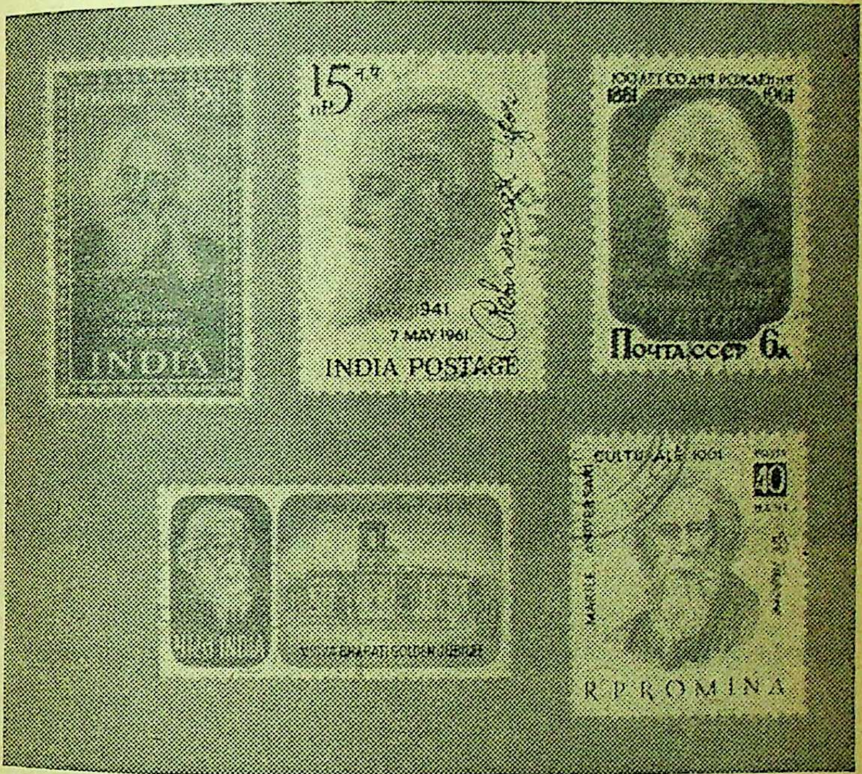
INDIA
15 नये पैसे
1941
7 MAY 1961
INDIA POSTAGE
1861 1961
ПОЧТА СССР 6к
CULTURALE 1961
40
R P ROMINA

पहली पंक्ति (बायें से दायें)–१. एवं २. भारत सरकार द्वारा १९५२ व १९६१ में प्रकाशित रवींद्र-डाक-टिकट; ३. रूस द्वारा १९६१ में प्रकाशित रवींद्र-डाक-टिकट। दूसरी पंक्ति (बायें से दायें)–१. विश्वभारती की स्वर्णजयंती (१९६८) पर भारत द्वारा प्रकाशित डाक-टिकट, २. रुमानिया द्वारा १९६१ में प्रकाशित डाक-टिकट।

का कार्यक्रम स्थगित कर दिया। अर्जेंटाइना में वे करीब दो महीने रहे। 'पूरबी' काव्य-ग्रंथ की अनेक कविताएं उन्होंने इन्हीं दिनों में लिखी थीं। अर्जेंटाइना स्पेनिशभाषी देश है। वहां रवींद्रनाथ की अनेक पुस्तकों का अनुवाद हुआ है, फलतः उन्हें अत्यधिक संमान यहां मिला। वहां की एक महीयसी महिला ने उनकी बहुत देखभाल की थी। नाम था—वित्तोरिया द ओकम्पू; रवींद्रनाथ ने उनका नाम रखा 'विजया' और 'पूरबी' उन्हीं को समर्पित की। विजया के बारे में उन्होंने लिखा है :

प्रवासेर दिन मोर परिपूर्ण करि दिले नारी
माधुर्य सुधाय, कत सहजे करिले आपनारी
दूर देशी पथिकेरे।......

उस दिन के कवि-अतिथि को अर्जेंटाइना भूला नहीं। १९६१ में उनकी जन्मशताब्दी पर उसने दो पेसों के मूल्य का बैंगनी रंग का डाक-टिकट जारी किया। टिकट पर रवींद्रनाथ का पार्श्वचित्र (प्रोफाइल) है।

मई १९२६ में रवींद्रनाथ आठवीं बार यूरोप-भ्रमण के लिए निकले। इटली, स्विट्जरलैंड, फ्रांस, ब्रिटेन, नार्वे, स्वीडन, डेन्मार्क, जर्मनी, हंगेरी युगोस्लाविया, बुल्गारिया घूमकर वे अपने साथियों सहित नवंबर में रुमानिया की राजधानी बुखारेस्ट पहुंचे। वहां उनका काफी स्वागत हुआ। वे वहां पांच दिन रुके और इन दिनों में उनके आदर-सत्कार में कोई कमी नहीं हुई। राजा फार्दिनान्द के साथ कवि ने एक दिन दोपहर का भोजन किया। वहां उन्होंने जनगण का उच्छ्वसित अभिनंदन पाया। १९६१ में रुमानिया ने कई मनीषियों को डाक-टिकट के माध्यम से श्रद्धा अर्पित की। उसी में रवींद्रनाथ की जन्मशताब्दी को ध्यान में रखते हुए चालीस वानि का एक डाक-टिकट निकाला—इसमें कवि का चित्र हरे रंग में है।

रवींद्रनाथ की बहुत दिनों की इच्छा थी सोवियत रूस जाने की। १९२६ में वियेना-प्रवास के समय उन्हें रूस जाने का निमंत्रण मिला। अस्वस्थता की वजह से उस समय वहां जाना स्थगित हो गया था। १९२९ में जापान-प्रवास के समय उन्हें फिर रूस सरकार ने निमंत्रित किया, लेकिन इस बार भी अस्वस्थता आड़े आयी। १९३० में वे अंतिम बार यूरोप गये और कई यूरोपीय देशों में घूमने के बाद ११ सितंबर को सदलवल मास्को पहुंचे। अपने इस सोवियत-भ्रमण का विवरण उन्होंने 'राशियार चिठि' में दिया है। अब तक कवि ने अमरीका, फ्रांस, संयुक्तराज्य अमरीका, जर्मनी, जापान जैसे धनतांत्रिक राष्ट्रों का ही संदर्शन किया था। उन्होंने लिखा है—'अंत में रूस में आना हुआ। जो देखता हूं, आश्चर्य लगता है। अन्य किसी देश की तरह नहीं। एकदम अलग है। बूढ़े से बच्चे तक हर आदमी को इन्होंने समान भाव से जागृत किया है।'

वे मास्को में दो सप्ताह रहे। इस अवधि में उन्होंने अनेक प्रतिष्ठान देखे और अनेक लोगों के साथ मुलाकात करके देश के अंतर को देखना चाहा। अंत में उन्होंने लिखा—'पृथ्वी पर जहां सबसे बड़ा ऐतिहासिक अनु-

ष्ठान चल रहा हो, वहां से निमंत्रण पाकर भी वहां न आना मेरे लिए अक्षम्य होता।' इसी से पता चलता है कि उन दिनों के आत्म-निर्माण रत रूस ने किस तरह रवींद्रनाथ के मन को छू लिया था। रूस ने भी रवींद्रनाथ की जन्मशताब्दी के अवसर पर छह कोपेक का एक डाक-टिकट जारी किया। टिकट में उनकी आवक्ष मूर्ति काले, खाकी और गुलाबी रंग में मुद्रित है।

नोबेल पुरस्कार की परंपरा १९०१ में आरंभ हुई थी। सन १९६१ से स्वीडन प्रतिवर्ष ऐसे सज्जनों के चित्र डाक-टिकटों पर छापता है, जिन्हें नोबेल पुरस्कार मिले उस वर्ष साठ साल पूरे होते हों। इस क्रम में स्वीडन ने १९७३ में जो तीन टिकट जारी किये, उनमें से एक पर रवींद्रनाथ ठाकुर का चित्र था। (रवींद्र को १९१३ में नोबेल पुरस्कार मिला था।) १ क्रोनर ४० ओर के इस टिकट पर रवींद्रनाथ का पार्श्वचित्र हरे रंग में मुद्रित है। यह चित्र १९१० में लिये गये एक फोटो पर से लिया गया है।

भारत में अब तक ३ रवींद्र-डाक-टिकट निकल चुके हैं। सन १९५२ में 'साधक और कवि' सीरीज में भारत ने छह डाक-टिकट जारी किये थे—कबीर (तीन पैसे), तुलसीदास (एक आना), मीराबाई (दो आने), सूरदास (चार आने), गालिब (साढ़े चार आने) और रवींद्रनाथ (बारह आने)। रवींद्र-डाक-टिकट में कवींद्र की आवक्ष मूर्ति कत्थई रंग में मुद्रित है।

रवींद्र-जन्मशताब्दी वर्ष में १५ नये पैसे का [illegible] एक टिकट जारी किया गया। इस पर रवींद्रनाथ का मुंदी आंखों वाला पार्श्वचित्र नारंगी रंग में छपा है। टिकट के दूसरे हिस्से नीले और हरे रंग के मिश्रण में छपे हैं। टिकट पर अंग्रेजी में रवींद्रनाथ का हस्ताक्षर है। यह कुल मिलाकर सुंदर है। इसकी डिजाइन सत्यजित राय ने बनायी थी। मगर रवींद्र-भक्तों को एक दुःख रह ही गया। सारे विश्व में पढ़े व पूजे जाने वाले एकमात्र आधुनिक भारतीय कवि रवींद्रनाथ की जन्मशताब्दी पर केवल एक टिकट जारी करके हमारे डाक-विभाग ने अपने कर्तव्य की इतिश्री मान ली, जबकि बाद में गांधी जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में चार डाक-टिकट जारी किये गये। (ब्रिटेन ने तो शेक्सपियर की त्रिशतवार्षिकी पर पांच टिकट छापे थे।)

विश्वभारती के पचास वर्ष पूरे होने पर २८ दिसंबर १९६८ को भारत के डाक-विभाग ने एक विशेष डाक-टिकट मुद्रित किया। इसके एक हिस्से में रवींद्रनाथ का चित्र काले एवं कत्थई रंगों में छपा है और दूसरे हिस्से में विश्वविद्यालय का प्रधान भवन हल्के कत्थई रंग में है।

इस प्रसंग में बाङलादेश की बात मन में आना स्वाभाविक है। बाङला-मुक्तियुद्ध के समय रवींद्रनाथ के गीतों ने मंत्र का काम किया था। आशा है, वह भी शीघ्र डाक-टिकट के माध्यम से विश्वकवि को श्रद्धा-निवेदन करेगा। [इस लेख में प्रभातकुमार मुखोपाध्याय रचित रवींद्र-जीवनी के तीसरे खंड से सहायता ली गयी है।]

★

जर्मन कहानी :

उस मंगलवार को

वुल्फ गांग बार्शर्ट

हफ्ते में एक मंगलवार आता है ...... साल में बावन आते हैं। ...... युद्ध में कई मंगलवार आते हैं।

०००

उस मंगलवार को वह रोमन लिपि के बड़े अक्षर लिखना सीख रहा था। अध्यापिका बहुत मोटे शीशों की ऐनक पहने हुए थी। जिनमें से उसकी आंखें चुंधियायी हुई-सी लगती थीं। कक्षा में बैठी बयालीस लड़कियां सामने ब्लैकबोर्ड की ओर देखती हुई लिख रही थीं :

'युद्ध में हर पिता सिपाही होता है।'

उला ने अंतिम वाक्य लिखते हुए जबान निकालकर अपनी नाक से छुआयी।

अध्यापिका ने उसकी कापी देखते हुए कहा–'तुमने "वार" (युद्ध) शब्द में फिर 'ओ' लिख दिया है; वार में "ए" होता है। मैं पहले भी तुम्हें कई बार बता चुकी हूं। कल इस वाक्य को दस बार और खूब संवारकर लिखकर लाना समझीं?'

उला ने हां में सिर हिलाया।

बाहर मैदान में पड़े रोटी के टुकड़ों को कौवे खा रहे थे।

०००

लेफ्टिनेंट एलरस को बटालियन-कमांडर ने बुलाकर कहा–'तुम्हें अपना लाल गुलूबंद उतारना पड़ेगा।'

'जी, जनाब।'

'कंपनी में यह सब पसंद नहीं किया जाता।'

'जी, जनाब! ...... क्या मैं कंपनी नंबर दो में जा रहा हूं?'

'हां। उस कंपनी का रवैया सख्त है। कप्तान हेस इस किस्म की कोई चीज नहीं पहनता।'

'क्या कप्तान हेस जख्मी हो गये हैं?'

'नहीं, सिर्फ बीमार है। ...... जब से वह कप्तान बना है, कुछ सुस्त हो गया है। ...... पहले वह बहुत चुस्त था। अच्छा, जरा सावधान रहना। और यह गुलूबंद ......'

'उतार दूंगा।'

'और रात को तुम सब लोग अपनी सिगरेटों का ध्यान रखना। उनकी जुगुनुओं जैसी चमक देखकर किसी भी निशानेबाज की उंगलियां हरकत में आ सकती हैं। पिछले हफ्ते पांच आदमी इसी वजह से गोलियों का निशाना बने थे।'

'जी, जनाब।'

वह जाने लगा तो उसने अपना गुलूबंद उतार डाला। फिर उसने सिगरेट सुलगायी।

तभी एक गोली चली।

०००

उस मंगलवार को ......

हेनसेन ने जेवरिन से कहा—'प्यारी जेवरिन, हेस के लिए हमें अब फिर कुछ भेजना चाहिये—कुछ सिगरेटें, कुछ खाने की चीजें, कुछ किताबें और दस्ताने। वहां कड़ाके की सर्दी पड़ती है। किताबें भेजनी चाहिये हल्की-फुल्की और हंसी-मजाक वाली। हेस को हंसना बहुत अच्छा लगता है। वह हंसता है, तो कितना प्यारा लगता है ! ......'

'हां, हमारा हेस !' जेवरिन ने कहा।

०००

उस मंगलवार को ......

कप्तान हेस को स्ट्रेचर पर डालकर डिलाउज़िग स्टेशन पर ले जाया गया। वहां दरवाजे पर एक नोटिस लगा हुआ था :

'चाहे जनरल हो, चाहे ग्रेनेडियर हजामत जरूरी है।'

कप्तान हेस के सिर के बाल सफाचट कर दिये गये। फिर स्ट्रेचर उठाया गया। स्ट्रेचर उठाने वाले सीढ़ियां उतरने लगे। हेस का सिर इधर-उधर लुढ़क रहा था...

०००

उस मंगलवार को ......

हेस की मां ने अपनी पड़ोसिन के घर की घंटी बजायी। दरवाजा खुला, तो उसने अपने हाथ में पकड़े पत्र को हवा में लहराते हुए कहा—'हेस कप्तान बन गया है—कप्तान ! कप्तान और कंपनी-कमांडर भी। उसका यह पत्र आने में नौ दिन लगे हैं ।.....'

०००

उस मंगलवार को ......

नर्स एलिजाबेथ ने अपने माता-पिता को लिखा :

'ईश्वर के भरोसे के बिना यह सब कुछ

चित्र : शेणै

सहन करना बहुत कठिन है।

तभी फौजी डाक्टर वहां आया और एलिजाबेथ उठकर खड़ी हो गयी। डाक्टर ऐसे झुककर चल रहा था, जैसे पूरे रूस का बोझ उसने अपने कंधों पर उठा रखा हो।

'उन्हें कुछ और देना है ?' नर्स ने पूछा।

'नहीं,' डाक्टर ने ऐसे कहा, जैसे वह इस बात पर शर्मिंदा हो।

फिर कप्तान हेस को उठाकर बाहर ले जाया गया। वहां किसी चीज के धड़ाम से गिरने की आवाज आयी।

'वे हमेशा इसी तरह पटकते हैं। पता नहीं, लाश को आहिस्ते-से जमीन पर क्यों नहीं रखते ?' किसी ने कहा।

उसके पास खड़े आदमी ने कुछ कहने के बजाय गाना शुरू किया—ट्रा-ट्रा रम, ट्रा रा री ......

डाक्टर ने प्रत्येक मरीज को देखा। वह रोज इसी तरह देखता था और रोज इसी तरह झुककर चलता था।

○○○

उस मंगलवार को ......

शाम के वक्त वह अपने घर में बैठी रोमन लिपि के बड़े अक्षरों में खूब संवारकर लिख रही थी :

'युद्ध में हर पिता सिपाही होता है।'

यह वाक्य उसने दस बार लिखा और हर बार 'वार' शब्द में 'ओ' के बजाय 'ए' लिखा।

* * *

'अ' उपसर्ग संस्कृत में निषेधवाची है। जावा की जावी भाषा में भी स्वार्थवाची एक देशी उपसर्ग 'अ' होता है, जो शब्द में ही लग जाता है। जावी भाषा के इतिहास से यह भली भांति ज्ञात होता है कि यह देशी उपसर्ग 'अ' शब्द के अर्थ में किसी प्रकार का परिवर्तन लाये बिना छोड़ा भी जा सकता है। उदाहरणार्थ, 'उरिप' और 'अउरिप' दोनों का वहां एक ही अर्थ है—जीना।

प्राचीन जावी के इस नियम को निषेधवाची 'अ' से युक्त संस्कृत शब्दों पर लागू करने पर वे जावी भाषा में, बिना अर्थ-परिवर्तन के 'अ' विहीन हो गये हैं। इस तरह, जावी भाषा में 'संभव' का अर्थ 'असंभव' भी होता है। इस विकास से निःसंदेह काफी उलझनें भी खड़ी हो जाती हैं। एक उदाहरण है इंदोनेसी गणराज्य की पूर्व-राजधानी 'योग्याकार्ता' का नाम। 'योग्या' संस्कृत के 'अयोध्या' से निष्पन्न है, जो रामायण के अनुसार राम की राजधानी थी और जिसका अर्थ है—अविजेय। मगर ऊपर बताये जावी नियम के अनुसार 'अ' को छोड़ देने पर भी 'योग्या' का अर्थ 'अविजेय' रहता है। यह जान लेने पर आपको इस बात से आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि इंदोनीसिया के एक बहुत बड़े ठेकेदार का नाम 'निंद्यकार्य' है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार यह नाम अनिंद्यकार्य ('अ' उपसर्ग-युक्त) होना चाहिये।

—सुत्जिप्तो वीर्यसुपर्तो ('सरस्वती' में)

★

सृष्टि में मानव-कृत व्यवधान

प्रताप कृष्ण जुत्शी तथा डा. देवकी नंदन

तेजी से बदलती हुई भौतिक परिस्थितियों ने आज मानव-समाज को विचित्र मनःस्थिति में डाल रखा है। आबादी और अन्न-उत्पादन के आंकड़ों के विशेषज्ञ परिवार-नियोजन पर बल दे रहे हैं और पारिस्थितिकी-विज्ञ जल, स्थल और वायु-मंडल की बढ़ती अस्वच्छता से चिंतित हैं। मौसम-विज्ञानी अगले सौ वर्षों के अंदर ही पृथ्वी के मौसम में और ध्रुव-प्रदेशों में अकल्पनीय परिवर्तन होने की आशंका व्यक्त कर रहे हैं।

क्या सचमुच कुछ अजीब घट रहा है? क्या गीता में चर्चित सृष्टिचक्र में कोई व्यवधान उत्पन्न हो गया है। इन प्रश्नों के उत्तर खोजने में जुटे वैज्ञानिकों के अनुसंधान और चिंतन से प्राप्त संकेत निश्चय ही गंभीर चिंता उत्पन्न करते हैं।

धरा पर जीवन का रहस्य

हरे पेड़-पौधों में चल रही प्रकाश-संश्लेषण की प्रक्रिया का ज्ञान विज्ञान को काफी समय से है। पृथ्वी पर पड़ रही सौर ऊर्जा का हजारवां भाग ही इस प्रक्रिया के माध्यम से उपयुक्त या बंधित होकर पृथ्वी के विलक्षण जीव-मंडल का पोषण और नियंत्रण कर रहा है। इस सौर ऊर्जा के आधे भाग से पेड़-पौधों का श्वसन चल रहा है और शेष भाग प्राणि-जगत् के निर्माण और मृत जैव पदार्थों के (जीवाणुओं द्वारा) क्षय में खर्च हो जाता है।

सृष्टि और विनाश की यह प्रक्रिया प्रकृति में मौजूद विभिन्न चक्रों द्वारा करोड़ों-अरबों वर्षों से निर्बाध रूप से चलती रही है। जीव अपने उपयोग के लिए वातावरण से पदार्थ और ऊर्जा लेते रहे हैं और उनके मरने के बाद जीवाणुओं द्वारा उनका क्षय (रूपांतरण) होने से पदार्थ पुनः वातावरण में पहुंचता रहा है। इनमें कार्बन, नाइट्रोजन, जल, आक्सिजन और ऊर्जा के आधारभूत चक्र उल्लेखनीय हैं।

कार्बन-चक्र का संचालन

कार्बन हमारे वायु-मंडल में कार्बन-डाइ-आक्साइड के रूप में विद्यमान है। वायु से यह पौधों के प्रकाश-संश्लेषण तथा अन्य जैविक विधियों द्वारा बंधित होकर स्थल में पहुंच जाता है। इस प्रकार पहुंचने वाली कार्बन की मात्रा लगभग २०-३० अरब टन वार्षिक है। महासागरों में उपस्थित फाइटो-प्लैंक्टन (जीवाणु) संभवतः वायु की ४० अरब टन कार्बन-डाइआक्साइड हर साल खा जाते हैं। कालांतर में स्थल और जल के जीवों के विघटन से यह कार्बन फिर डाइआक्साइड

बनकर वायु में समा जाता है। वायु-मंडल और महासागरों के बीच हो रहा कार्बन-डाइआक्साइड का यह आदान-प्रदान करीब एक खरब टन प्रतिवर्ष का रहा है।

प्रकृति में यह कार्य इतने व्यवस्थित रूप से चलता रहा कि वायु-मंडल में कार्बन-डाइआक्साइड का अंश पिछले १ करोड़ साल से स्थिर था। लेकिन जब से मनुष्य ने कोयला, पेट्रोल आदि जीवाश्म-ईंधनों का अंधाधुंध इस्तेमाल शुरू किया, वायु में कार्बन-डाइ-आक्साइड का अंश बढ़ने लगा। पिछले सौ वर्षों में ही वह ०.०२९ प्रतिशत से बढ़कर ०.०३२ प्रतिशत पर पहुंच गया है, अर्थात् १० प्रतिशत बढ़ गया है। आज दुनिया प्रति-वर्ष लगभग ६ अरब टन ईंधन का उपयोग कर रही है। इससे अनुमान है कि सन २००० तक वायु-मंडल में कार्बन-डाइआक्साइड की मात्रा ०.०४ प्रतिशत हो जायेगी और अगले दो-तीन सौ वर्षों के भीतर १.५ प्रतिशत पर पहुच जायेगी।

आज हम जीवन के जो विविध रूप देख रहे हैं, वे अरबों वर्षों से निरंतर चली आ रही जैविक प्रक्रियाओं का परिणाम हैं। पृथ्वी पर जीवन के आदिकाल में, वातावरण में मुक्त आक्सिजन मौजूद नहीं थी; लेकिन फिर धीरे-धीरे मुक्त आक्सिजन का निर्माण हुआ। इसके साथ ही अधिक सक्षम (बहुकोषीय) जीवों का प्रादुर्भाव हुआ और जीव-विकास में तेजी आयी। आक्सिजन को ग्रहण करने के लिए जीव के शरीर में फेफड़ों, रुधिर-वाहिनियों आदि के विकास के साथ जीवन-पोषक हेमोग्लोबिन के माध्यम से यह आक्सिजन ऊतकों (टिशू) तक पहुंचने लगी। इस प्रकार जीवन पर्याप्त विकसित अवस्था में पहुंचा।

लेकिन मानव ने सांस में आक्सिजन ग्रहण करने और कार्बन-डाइआक्साइड छोड़ने की इस सुंदर एवं स्वस्थ प्रणाली में स्वयं बाधा डालना शुरू कर दिया। विशाल मात्रा में ईंधन जलाने, आक्सिजन-उत्पादक जंगलों को उजाड़ने और अन्य हरियाली को नष्ट करने आदि अविवेकी कार्य करके और अन्य प्रकार से अस्वच्छता पैदा करके अर्थात् वातावरण में 'प्रदूषण' का निर्माण करके वह स्वयं अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारने लगा। इस प्रकार निर्मित प्रदूषण से वायु में आक्सिजन का अंश घटा है और कार्बन-डाइआक्साइड का अंश बढ़ा है। इससे विकास की प्रक्रिया में तो एक व्यवधान खड़ा हुआ ही है, साथ ही आबादी और प्राकृतिक संपदा के लिए भी खतरा पैदा हो गया है।

वायु-मंडल में कार्बन की इस वृद्धि के कारण ताप और कालिमा बढ़ने लगी है और इस कालिमा के कारण सौर ऊर्जा का अधिक अवशोषण हो रहा है। उससे ध्रुवों पर जमी बर्फ-चादर के अगली शताब्दी में ही पिघल जाने की संभावना और समुद्र-तटवर्ती महानगरों के डूब जाने की आशंका पैदा हो गयी है।

प्रदूषण की कृपा से आज वातावरण में जिस मात्रा में विष जमा हो गये हैं, उतनी मात्रा में वे पहले कभी नहीं थे। इसीलिए

आक्सिजन उत्पन्न करने वाली जैविक प्रक्रियाएं पनप पायीं। लेकिन आज कार्बन मोनोक्साइड, सीसा, डी. डी. टी. आदि की वातावरण में निरंतर बढ़ोतरी हो रही है। अभी तक जीवन का ऐसा कोई स्वरूप ज्ञात नहीं है, जो सैकड़ों विषों से परिपूर्ण वातावरण में पनपता रह सके। इस बदलते वातावरण से किस नवीन जीवन-व्यवस्था का जन्म होगा, यह समझ पाना बहुत कठिन है।

रासायनिक खाद से असंतुलन

कार्बन-चक्र की तरह नाइट्रोजन-चक्र भी है। उसमें वायु की नाइट्रोजन का जैविक प्रक्रियाओं द्वारा जल-स्थल में बंधन होता है और विशेष बैक्टीरियाओं द्वारा मृत जैव पदार्थों के विघटन से नाइट्रोजन का मोचन होता है। गणनाओं से हिसाब लगाया गया है कि इन बैक्टीरियाओं की कृपा से लगभग ८.३ करोड़ टन नाइट्रोजन प्रतिवर्ष मुक्त होती है। बंधन की प्राकृतिक प्रक्रिया में प्रतिवर्ष वायु में से ६ करोड़ टन नाइट्रोजन ही प्रयुक्त होती थी। परंतु इधर इसान ने औद्योगिक रूप से इस गैस का बड़े पैमाने पर बंधन आरंभ कर दिया है। इस कृत्रिम बंधन का प्रमुख स्वरूप है रासायनिक नाइट्रोजन आदि खाद; और इसमें वातावरण की कोई ३.५ करोड़ टन नाइट्रोजन प्रतिवर्ष खप रही है। यही नहीं, यह मात्रा प्रति १२-१४ साल में दुगुनी हो रही है। इस तरह हर साल ९.५ करोड़ टन नाइट्रोजन का बंधन होता है, और केवल ८.३ करोड़ टन का विच्छेदन। फलस्वरूप प्रतिवर्ष पृथ्वी के जल-स्थल में १.२ करोड़ टन नाइट्रोजन और जुड़ जाती है। समय के साथ-साथ इस जमाव (संपन्नीकरण) की मात्रा बढ़ती ही जायेगी।

मानव-जाति दो वर्गों में बंटी हुई है—एक वर्ग में वे लोग हैं, जो पसीना बहाकर जीविका कमाते हैं; दूसरा वर्ग उन लोगों का है, जो पहले वर्ग के लोगों को रूमाल, कोल्डड्रिंक और बिजली के पंखे मुहैया करते हैं।

कृषि में प्रयुक्त हो रहे इन उर्वरकों तथा कीटमारकों की बढ़ती मात्रा से पृथ्वी के संवेदनशील पेड़-पौधों तथा जीवाणुओं को निश्चय ही खतरा है। दूसरी ओर छोटे अनुपयोगी पेड़-पौधों की संख्या बढ़ने के संकेत मिल रहे हैं। इस तरह वर्तमान भोजन-शृंखला में दरार पड़नी शुरू हो गयी है। जिन अन्य क्षयकारी प्रक्रियाओं के द्वारा वातावरण में आक्सिजन का अंश घट रहा है, उनका असर भी भोजन-चक्र में उपचयापचय-व्यवस्था के भंग होने से पड़ेगा। इन सबका नतीजा होगा—सक्षम आक्सिजन-युक्त जीवन से अक्षम आक्सिजन-रहित जीवन की ओर वापसी। इससे मृत जैव द्रव्य का उत्पादन तथा विच्छेदन अधिक तेजी से होगा। फलस्वरूप निकली मीथेन, हाइड्रोजन सल्फाइड आदि गैसें वायु-मंडल में पहुंचकर इस 'वापसी' की प्रक्रिया को अधिकाधिक वेग देंगी। ऐसे संकेत सारी दुनिया में (भारत में भी) मिलने लगे हैं, जिनसे इन धारणाओं को बल मिला है।

उर्वरकों में नाइट्रोजन के साथ ही बड़े पैमाने पर फास्फोरस का भी प्रयोग होता है। इससे भी प्राकृतिक संतुलन बिगड़ रहा है। यह सर्वविदित तथ्य है कि फास्फोरस के बगैर जीव-मंडल के सूक्ष्म जीवों का भी अस्तित्व न होता। 'फास्फेट बांड' की उपस्थिति के बिना कोई भी प्रोटीन तैयार नहीं होती। लेकिन कार्बन और नाइट्रोजन की तरह फास्फोरस वायु-मंडल से स्थल और जल पर बंधित नहीं होता। वह स्थल-मंडल (लीथोस्फियर) में पर्याप्त मात्रा में है और जल-मंडल (हाइड्रोस्फियर) में सूक्ष्म मात्रा में। वस्तुतः फास्फोरस का प्राकृतिक प्रवाह स्थल से जल की ओर है। लेकिन उर्वरकों में 'फास्फेट रॉक' के इस्तेमाल से जलीय फास्फेट का स्थल पर अधिकाधिक जमाव हो रहा है, जो कि हरी नीली 'एलगी' का उत्पादन बढ़ा रहा है। फिर उपचारित मल और 'पाली-फास्फेट डेटेरजेंट' अपशिष्ट के रूप में यह 'एलगी' जल में पहुंच रही है। इस प्रकार की अप्राकृतिक प्रक्रिया नाइट्रोजन खाने वाले 'प्लैंकटनों' की फसल को बढ़ा रही है और नाइट्रोजन-विच्छेदक बैक्टीरिया की फसल को घटा रही है। इसके अतिरिक्त खाद-कारखानों से निकली नाइट्रोजन और गंधकीय गैसें प्राकृतिक जीव-मंडल को और झकझोर रही हैं।

क्या मानव प्रलय की ओर अग्रसर है?

ये और अन्य कई तथ्य इस बात का संकेत दे रहे हैं कि प्राकृतिक व्यवस्थाएं निश्चय ही भंग हो रही हैं। प्राकृतिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन कुछ [illegible] अतीत में भी होते रहे हैं; मगर जैसी असाधारण और संभावित रूप से विनाशकारी बड़ी तब्दीलियां आज हो रही हैं, वैसी पहले कभी नहीं हुईं। यह निश्चित है कि जनसंख्या बढ़ने के साथ ये सब प्रक्रियाएं अधिक वेग पकड़ेंगी।

प्रश्न यह उठता है कि आखिर मानव-जाति इस गलत दिशा में क्यों जा रही है? इसका उत्तर कुछ इस प्रकार का हो सकता है। जीने के लिए मनुष्य को हवा, पानी, ईंधन आदि वस्तुएं अनिवार्यतः चाहिये ही; साथ ही तरह-तरह की विलास-सामग्री भी अपेक्षित है, जो कि आज सभ्य समाज और अच्छे जीवन-स्तर का अभिन्न अंग बन गयी है। इस प्रकार प्रतिव्यक्ति के लिए आवश्यक ऊर्जा, भोजन और अन्य सामग्री को यदि विश्व की जनसंख्या से गुणा करें, तो स्पष्ट हो जायेगा कि अवश्य ही इसका हमारे वायु-मंडल और वातावरण पर भारी कुप्रभाव पड़ेगा। इसलिए अब जरूरत है कि हम अपनी आवश्यकताएं घटायें और समस्याओं को हल करने के ठीक तरीके खोजें। बढ़ती जनसंख्या और जीवन-यापन तथा सामाजिक स्तर में ताल-मेल बैठाने की समस्याओं का औद्योगिक क्रांति और हरित क्रांति आदि ने आंशिक और अस्थायी हल तो किया; परंतु उसी हल ने सृष्टि में असंतुलन की समस्याएं पैदा कर दी हैं। इस तरह समस्याओं का स्वरूप ही बदला, उनकी जड़ें नहीं कटीं।

जनसंख्या की विकट समस्या पर दृष्टिपात करें तो एक विस्मयकारी बात प्रकट

होगी। विश्व की आबादी को पहली अरब की संख्या तक पहुंचने में करोड़ों वर्ष लगे; परंतु आज से एक-दो वर्ष में जो चौथा अरब पूरा होगा, यह केवल पिछले पंद्रह वर्षों की देन होगी। उसके बाद तो और भी कम समय में अरब की संख्याएं जुड़ती चली जायेंगी और सन २००० तक पृथ्वी की जनसंख्या लगभग १० अरब हो जायेगी। (इसमें भारत का योगदान १० प्रतिशत होगा।) जनसंख्या-वृद्धि की इस भयंकर दर का नियंत्रण होना ही चाहिये।

एक और खतरनाक तथ्य है, सभ्यता के नाम पर चल रहा शहरीकरण। नये-नये शहरों के निर्माण से मनुष्यों और उद्योगों का बड़े पैमाने पर संपुंजन होने से वातावरण के प्रदूषण आदि अवांछित परिवर्तनों की दर बढ़ रही है।

जनसंख्या और भोजन के बीच चोली-दामन का संबंध है। अगर भोजन की कमी को जनसंख्या-नियंत्रण के लिए इस्तेमाल नहीं करना है, तो हमें भोजन का उत्पादन आनुपातिक रूप में बढ़ाना ही होगा। इस हिसाब से दुनिया में हमें अगले तीस वर्षों में अन्नोत्पादन में इतनी वृद्धि कर लेनी होगी, जितनी कि पिछले १०,००० वर्षों में हो पायी है। इसके लिए हमें क्या करना होगा? इस समस्या के ये तकनीकी हल हो सकते हैं—यंत्रों के द्वारा खेती, अच्छी नस्ल के बीजों का विकास, कृषिभूमि को बढ़ाना, सिंचाई बढ़ाना, उर्वरकों तथा कीटमारकों का बड़े पैमाने पर उपयोग।

राजनीति : धनियों से पैसा और गरीबों से वोट बटोर पाना—सो भी उन्हें यह विश्वास दिलाकर कि आप एक को दूसरे से बचा रहे हैं।

राजनय : महिला का जन्मदिन याद रखना, मगर उसकी उम्र भूल जाना।

—स्व. केनेथ कीटिंग

(भारत में भूतपूर्व अमरीकी राजदूत)

परंतु विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि ये सब हल कई अन्य समस्याओं को जन्म देते हैं। यांत्रिक कृषि से अन्नोत्पादन की अपेक्षा ईंधन का खर्च ज्यादा होगा, साथ ही ताप-प्रदूषण और रासायनिक प्रदूषण बढ़ेगा। उर्वरक तथा उन पर आश्रित नयी किस्म के बीज जल-स्थल में नाइट्रोजन आदि के जमाव (संपन्नीकरण) की समस्या को बढ़ावा देंगे। कृषिभूमि बढ़ाने में पानी तथा हवा द्वारा मिट्टी की ऊपरी सतह के अपहरण का खतरा है। राजस्थान में ऐसा हो भी रहा है, जिससे कि कृषिभूमि के बड़े भाग का परित्याग करना पड़ रहा है। यह बात यहां स्मरणीय है कि जमीन की चंद इंच मोटी ह्यूमस-युक्त ऊपरी परत अत्यंत महत्त्वपूर्ण है और उसके निर्माण में प्रकृति को शताब्दियां लग जाती हैं, जबकि पानी और हवा उसे आनन-फानन में बहा ले जाते हैं। नहर आदि द्वारा सिंचाई बढ़ाने में खतरा है 'पानी के रुकाव' (वाटर लागिग) का, जिससे पानी के बाष्प बनने से मिट्टी पर नमक की तह जम जाती है। इसी कारण पाकिस्तान में

भारत में आज इस बात पर बड़ी हाय-तौबा मचायी जाती है कि विद्यार्थी परीक्षाओं में पाठ्य पुस्तकों में से नकल करने और इस काम में अध्यापकों से खुली मदद पाने के आदी हो गये हैं। मगर क्या हमें इस बात का बोध है कि आज हम जिस दर्शन या प्राचीन गौरव का दावा करते हैं, लगभग वह सबका सब ऐसी पाठ्य पुस्तकों से नकल किया हुआ है, जो बहुत पहले पाठ्यक्रम से हटा दी जानी चाहिये थीं और जिन्हें पढ़ते समय हम गलत पन्नों पर निशान लगा लेते हैं और असली महत्त्व की पंक्तियों को पढ़े बिना टाप जाते हैं? **—पी. डी. सी. सेवक**

(अंग्रेजी पत्रिका 'राम' में)

प्रतिवर्ष ६० हजार एकड़ उर्वर भूमि बेकार हो जाती है। रुके पानी की निकासी के लिए मशीनों का इस्तेमाल करें, तो प्रदूषण बढ़ता है। कीटनाशक तो वैसे ही वातावरण को खराब करने के लिए काफी बदनाम हो चुके हैं। (जांच से प्रकट हुआ है कि मानव-वसा में सबसे अधिक डी. डी. टी. भारत में पायी गयी है।)

अब रहा समुद्री भोजन। गणनाओं से प्रकट हुआ है कि तमाम समुद्रों से अधिक से अधिक १० करोड़ टन मछली प्रतिवर्ष मिल सकती है और इसके ८० प्रतिशत का उपयोग आज किया ही जा रहा है। इस प्रकार इस दशाब्दी के बाद समुद्री भोजन में उत्पादन-वृद्धि की कोई संभावना नहीं दिखती। उलटे इसकी आशंका है कि जल प्रदूषण से मछलियां घट जायेंगी एवं विषाक्त हो जायेंगी। बंबई-तट पर यह होने भी लग गया है।

मानव की अन्य आवश्यकताओं के बारे में सोचें तो 'असंभव' शब्द स्वतः ही मुंह से निकल जाता है। केवल इस्पात-उत्पादन को ही लें, जो कि आर्थिक और औद्योगिक प्रगति का आधुनिकतम पैमाना है। यदि सन २००१ में हम विश्व के मानवों के औसत जीवन-स्तर को १९६० के यूरोपीय स्तर पर रखना चाहें, तो प्रतिव्यक्ति आधा टन इस्पात-उत्पादन की जरूरत होगी। इस प्रकार भारत को सालाना ४०-५० करोड़ टन इस्पात का उत्पादन करना होगा। (वर्तमान उत्पादन है एक करोड़ टन।) इस हिसाब से हमें अगले हर पांच सालों में उत्पादन की मात्रा दुगुनी करनी होगी। यदि मान लें कि ऐसा हो जायेगा, तो भी यह प्रतिव्यक्ति ६-७ टन पड़ेगा। (वर्तमान अमरीकी उत्पादन है १५ टन।) लंबे-चौड़े हिसाब के मुताबिक, एक टन इस्पात-उत्पादन में एक सौ टन कोयले के बराबर ऊर्जा खर्च होती है। इस तरह भारत को सन २००० में ५० अरब टन कोयले के बराबर ऊर्जा की जरूरत पड़ेगी, जो कि संपूर्ण विश्व के वर्तमान कोयला-उत्पादन के बराबर है।

सारे विश्व में इस हिसाब से ऊर्जा के खर्च से पारिस्थितिकी (ईको-सिस्टम) पर भयानक और अतुलनीय प्रभाव पड़ेगा। मनुष्य की इन बढ़ी-चढ़ी गतिविधियों से इतने मल और अपशिष्ट पैदा होंगे कि उनका उपचार

और विसर्जन [illegible] सिरदर्द बन जायेगा। इसका भी अंदाजा आपको अकेले बंबई शहर के उदाहरण से लग जायेगा। वहां अभी रोज ढाई हजार टन कूड़ा-कचरा इकट्ठा होता है, दो-तीन दशाब्दियों में उसकी मात्रा दस गुनी हो जाने वाली है। अन्य भी कई उलझनें हैं। विश्व के खनिजों और ईंधनों के स्रोत भी रीते होते जा रहे हैं। तरल जीवाश्म-ईंधन यानी पेट्रोल का भंडार तो लगभग सन २०१० तक ही चल सकेगा।

ऊर्जा कहां है ?

जीवन की गति बनाये रखने के लिए अब हमें केवल एक साधन दिखाई दे रहा है—परमाणु-ऊर्जा यानी युरेनियम-२३५। क्योंकि युरेनियम-२३५ प्राकृतिक युरेनियम का केवल ०.७ प्रतिशत है, इसलिए अगले ३०-४० साल में इसके भी समाप्त हो जाने के आसार नजर आ रहे हैं। कुछ वैज्ञानिकों ने यह आशंका व्यक्त की है कि रूपांतरक रीएक्टर तथा 'ब्रीडर टेक्नालाजी' जब तक पर्याप्त प्लूटोनियम-२३९ और युरेनियम-२३३ पैदा कर पायेंगे, उससे पहले ही युरेनियम-२३५ समाप्त हो जायेगा। लेकिन अगर ये तकनीकें सफल हुईं, तो प्राकृतिक युरेनियम-२३८ तथा थोरियम-२३२ के विशाल भंडारों से ऊर्जा निर्बाध बहती रहेगी। परंतु इस संदर्भ में परमाणु ऊर्जा की अवैध संतान 'रेडियो-एक्टिव प्रदूषण' तथा रेडियो-एक्टिव अपशिष्टों के उपचार की समस्याएं भी काफी गंभीर हैं।

ईंधन कोई भी हो, ऊर्जा-उत्पादन में उसका अच्छा-खासा भाग व्यर्थ-ताप के रूप में वातावरण में पहुंचता ही है। अब यह हमारी मर्जी पर है कि हम उस व्यर्थ-ताप को पानी में अवशोषित करा दें अथवा वायु में पहुंचा दें। जल में पहुंचने पर यह ताप आक्सिजन को निकाल फेंकेगा। वायु में बढ़ते ताप के भयानक परिणाम भी हमारे सामने हैं। हालत सांप-छछूंदर की-सी है।

कः पन्था ?

अब क्या रास्ता बचा है ? वैज्ञानिक चिंतन और विश्लेषण की दिशा इस ओर है कि सभी तरफ यथासंभव प्रयास किये जायें, परंतु विशेष रूप से जनसंख्या की विकराल वृद्धि को यत्नपूर्वक रोका जाये। दरअसल इस अंधेरे में यही एक रास्ता दिखाई दे रहा है कि आबादी-नियंत्रण की इस प्रक्रिया में मानव स्वयं निमित्त बने। अन्यथा प्रकृति अकाल आदि विनाशक उपायों द्वारा यह कार्य भयावह रूप से संपन्न करेगी। आज भी दुनिया के आधे लोग अधपेट सोते हैं और हम सब इसके लिए उत्तरदायी हैं। और अधिक भूखे-नंगों को जन्म देना घातक तो होगा ही, नितांत अनैतिक भी होगा।

[हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, बंबई द्वारा प्रेषित]

★

मैं भाषणों के विरुद्ध हूं; क्योंकि उनसे शब्दस्फीति होती है।

—योजना-आयोग के उपाध्यक्ष पी. एन. हक्सर (एक भाषण में)

★

गंदे हाथों का रोग

डा. विताली कारेती

पेचिश या आमातिसार बहुत ही व्यापक संक्रामक रोगों में से है। पेचिश उत्पन्न करने वाले रोग-कारकों का पता १९ वीं सदी में लगा, जब चिकित्सा-विज्ञान के शोध-कार्य में सूक्ष्मदर्शक यंत्र का बड़े पैमाने पर उपयोग होने लगा।

पेचिश के वाहक कई प्रकार के हैं। इनमें कुछ, जो कि दूसरों से आकार में बड़े होते हैं, अमीबा कहलाते हैं। दूसरे, जीवाणु (बेक्टीरिया) कहे जाते हैं। साधारणतया ये मनुष्य की आंतों की दीवारों पर बस जाते हैं और जीवंत ऊतकों और कोशिकाओं का भक्षण करने लगते हैं और अपनी वंशवृद्धि करते हैं। रोगी के मल के जरिये ये जीवाणु आस-पास के वातावरण में फैलते हैं और वहां काफी समय तक जीवित रहते हैं। इससे दूसरे लोगों में भी रोग का संक्रमण होता है।

पेचिश के रोगाणु बड़े दृढ़ होते हैं। वे निम्न तापमान पर भी आराम से जी सकते हैं, सीलन-भरी जमीन में भी सुरक्षित रहते हैं और बहुत उच्च तापमान पर ही मरते हैं। सीलन-भरे कमरे में रखे रोगी के कपड़ों पर तो वे कई-कई हफ्ते जीवित रह सकते हैं। अनधुले हाथों पर वे दो-तीन दिन तक जी सकते हैं; और दूसरों में बीमारी का संक्रमण कर पाने के लिए यह अरसा काफी होता है। इसी कारण पेचिश को 'गंदे हाथों की बीमारी' कहा जाता है।

दूध, दूध से निर्मित पदार्थ, कच्चा मांस आदि पेचिश के रोगाणुओं की वंशवृद्धि के बहुत अनुकूल माध्यम हैं। ये रोगाणु पानी के जरिये भी शरीर में पहुंच सकते हैं। इसलिए रोगी के मल को और उस मल के संसर्ग में आयी सब वस्तुओं को रोगाणु-रहित कर देना बहुत आवश्यक है।

पेचिश के रोगाणु केवल मुंह के रास्ते मानव-शरीर में प्रवेश करते हैं। यहां से वे बड़ी आंतों में पहुंचते हैं, जहां वे गंभीर सूजन पैदा कर देते हैं। आरंभ में रोग सुप्तावस्था में रहता है। यह अवधि दो से पांच दिन तक की होती है। फिर रोगी को थकान महसूस होती है, जोड़ दुखने लगते हैं, ज़्वर चढ़ आता है। शरीर का तापमान ३८°-३९° शतांश तक पहुंच जाता है। मतली और कै भी हो सकती है और बच्चों को तो ऐंठन के दौरे भी पड़ सकते हैं। फिर शीघ्र ही पेट में ऐंठन के साथ दर्द उठता है, साथ ही बार-बार पतली टट्टी होती है। मलाशय में दर्द

पदा करने वाली ऐंठन होने के कारण बार-बार मल-विसर्जन होता है, जिनकी संख्या दस से बीस तक पहुंच सकती है।

अगर रोग उग्र रूप न धारण करे, तो छह-सात दिन में रोगी की हालत सुधर जाती है। दस्त बंद हो जाते हैं, रोगी की भूख वापस लौट आती है। मगर कुछ लोगों को, खास-कर बच्चों को, जठर-आंत्र संबंधी गड़बड़ी होने की संभावना रहती है।

कई बार पेचिश बड़े तीव्र रूप में अचानक ही शुरू हो जाती है। सिर दुखने लगता है, ४०° शतांश तक का बुखार हो आता है। बार-बार मतली और कै होती है; पेट में जोरदार दर्द होता है, हाथ-पांव भी ऐंठते हैं; दिन में ४० बार तक टट्टी होती है। खून मिली आंव मल में निकलती है। त्वचा सूखने लगती है और जर्द पड़ जाती है, हाथ-पांव ठंडे पड़ जाते हैं।

पेचिश के हल्के दौरे रोगी के आस-पास रहने वालों के लिए खतरनाक होते हैं; क्योंकि रोग का पता नहीं चलता और इससे रोग फैलता है।

पेचिश का इलाज फौरन आरंभ हो जाना चाहिये; ताकि आंतों को गंभीर क्षति पहुंचने की रोकथाम की जा सके। दवा डाक्टर-वैद्य के आदेश के अनुसार ही लेनी चाहिये। भोजन में उबली चीजें ही लेनी चाहिये, मगर उसमें वैविध्य रहना चाहिये और विटामिन भरपूर होने चाहिये। रोगी की बहुत अच्छी सार-संभाल होनी चाहिये—उसके कपड़े, चादर, तौलिया आदि नियमित रूप से बदले जाने चाहिये। रोगी के कपड़े अलग से और विशेष सावधानी से धोये-सुखाये जाने चाहिये। कमरे में हवा की अच्छी व्यवस्था रखनी चाहिये। ये चीजें रोगी के शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ में सहायक होंगी।

★

अमरीकी मेडिकल एसोसिएशन ने जानकारी दी है कि अमरीकी संशोधकों ने पपीते के वृक्ष का एक नया उपयोग खोज लिया है। रीढ़ के मनकों के जोड़ से सरक जाने पर जो गंभीर रोग होता है, उस पर पपीते के पत्ते असरकारी होते हैं। उनसे मांस नरम होता है, इसलिए पालिनेशिया के लोग पपीते के पत्ते में मांस लपेटकर रखते हैं। मांस नरम करने के लिए कायमोपापेन नामक फेनक द्रव्य उपयोगी है। यह पपीते के पत्ते से तैयार किया जाता है। उपरोक्त रोग वाले मनके पर इस फेनक द्रव्य का इंजेक्शन देना काफी समय के लिए गुणकारी है।

•••

इधर चार-पांच वर्ष से और किसी क्षेत्र में उन्नति हुई हो या न हुई हो, टेलिफोन के मिजाज बिगड़ने में बड़ी उन्नति हुई है। लखनऊ की बेगमों और पाश्चात्य देशों की 'प्राइमा डोनाओं' की नाजुक-मिजाजी तथा नखरों के लिए प्रसिद्धि रही है। हमारे टेलिफोन इन बातों में उनसे स्पर्धा कर सकते हैं।

—श्रीनारायण चतुर्वेदी

★

तमिळ के नीतिग्रंथ

रा. वीलिनाथन्

साहित्य की एक परिभाषा यह है कि जो 'हित-सहित' हो। हित किसका? उत्तर है–अपना और सबका। समूचे विश्व के साहित्य में हित-चिंतन की यह नीति-धारा अनादि काल से प्रवाहित होती आ रही है। तमिळ साहित्य ने नीति के प्रश्न पर बहुत गहरा और मौलिक चिंतन किया है।

सुसंस्कारों का बीज कच्चे दिल में ही डालना चाहिये, तभी वह फलदायक सिद्ध होता है। तमिळ में मसल मशहूर है– 'ऐन्दिल् वळैयाददु ऐम्बदिल् वळैयादु।' अर्थात् पांच की उम्र में जो न झुके या वश में न आ सके, वह पचास की उम्र में क्योंकर झुकेगा या वश में आयेगा? सो बाल-मन में नीति के बीज बोने के लिए एक अनूठा कदम तमिळ साहित्य ने उठाया है। उसमें ऐसे नीतिवाक्य रचे गये हैं, जो दो-दो, तीन-तीन, चार-चार छोटे सरल शब्दों से निर्मित हैं, जिन्हें अत्यल्प शब्द-संपत्ति और उच्चारण-सामर्थ्य वाले नन्हे-नन्हे बच्चे भी आसानी से दुहरा सकते हैं। ये नीतिवाक्य बच्चों को सहज ही कंठस्थ हो जाते हैं और उनके चित्त पर अंकित हो जाते हैं।

यही नहीं, 'ओरु कल्लिल् इरण्डु मांगाय्' वाली तमिळ कहावत के अनुसार यहां एक पत्थर से दो आम गिराये गये हैं। नीति-वाक्यों की रचना ऐसी चतुरता से की गयी है कि बच्चे नीति के साथ-साथ तमिळ वर्णमाला के अक्षरों का क्रमबद्ध ज्ञान भी प्राप्त कर लें।

'अरम् चेय विरुम्बु।'
'आरुवदु शिनम्।'
'इयल्वदु करवेल्।'
'ईवदु विलक्केल्।'

इन छोटे-छोटे नीतिवाक्यों में अकारादि वर्णक्रम को बनाये रखते हुए धर्म-कर्म पर प्रीति रखने, क्रोध पर काबू पाने, अपने से जो बन पड़े वह बिना छिपाये दान देने, और दान देने वाले को न रोकने की सीख भी दी गयी है।

ये उदाहरण हमने तमिळ के संघम् काल की संत-कवयित्री औवैयार की 'आत्ति

चूडि' से दिये हैं। अतिवीर राम पाण्डियन् ने 'कोन्ड्रै वेन्दन्' में भी यही प्रणाली अपनायी है, परंतु चार-चार शब्दों के तनिक लंबे वाक्यों में। उनका लक्ष्य यह है कि बढ़ती उम्र के साथ बच्चे अपना शब्दज्ञान भी बढ़ा सकें।

ऐसे ग्रंथों में उलकनाथर् की 'उलकनीति' (लोकनीति) और हमारे युग के महाकवि भारती की नयी 'आत्ति चूडि' विशेष उल्लेखनीय हैं।

'एण् एळत्तु इकळेल्', 'एण्णुम् एळुत्तुम कण्णेनत् तहुम्'–अंक और अक्षर की अवहेलना न कर, अंक और अक्षर आंख बराबर हैं–यह सीख देने वाले तमिळ साहित्य का स्वर्णकाल माना गया है संघम् काल्। उसमें ग्रंथों का विभाजन भी अंक-प्रधान ही हुआ है–शायद यह जताने के लिए कि सत्साहित्य पर खड़ा नीतितत्त्व भी अंकगणित के समान अपरिवर्तनशील और अक्षर है, काल-देश से रे है। क्या संसार में कहीं देखने-सुनने में आया है कि दो और दो चार के बदले तीन या पांच हो जायें? उसी तरह नीति भी अक्षर है।

'ऐम्पेरुम् काप्पियंगळ्' (पंच महाकाव्य) 'एट्टुत्तोहै' (अष्ठग्रंथ संग्रह), 'पत्तुप्पाट्टु' (दस पद्य), 'पदिनेण् कीळ् कणक्कु' (अठारह ग्रंथ)–ये संघम् काल के तमिळ साहित्य-ग्रंथ हैं।

यों तो पुराने जमाने का शायद ही कोई उत्तम साहित्यिक ग्रंथ होगा, जिसमें कोई न कोई नीति, जाने-अनजाने गुंफित नहीं हो। परंतु 'पदिनेण् कीळ्कणक्कु' नाम के अठारह ग्रंथों में से ग्यारह तो नीति से सीधा संबंध रखते हैं। एक तमिळ पद उन अठारह ग्रंथों की सूची इस प्रकार देता है:

'नालडि, नाण् मणि, नानार्पदु, ऐन्दिणै, मुप्पाल्, कडुकम्, कोवै, पळमोळि, मामूलम्, इन्निलै, चोर कांचियोडु, एलादि एन्बवुम, कैन्निलैयुम् आम् कीळ् कणक्कु।'

इनमें नालडि और मुप्पाल् प्रमुख माने जाते हैं। नालडि चौपाई की तरह चार चरणों वाला छंद है, और मुप्पाल् (यानी तिरुक्कुरळ्) दो चरणों वाला होता है, दोहों की तरह। इन पर एक लोकोक्ति मशहूर है:

'नालुम् इरण्डुम् शोल्लुक्कु उरुदि
आलुम् वेलुम पल्लुक्कु उरुदि।'

–चार और दो यानी नालडि और कुरळ् वाणी को बल-संपन्न करते हैं, जैसे बरगद और बबूल-नीम के दतौन दांतों को मजबूत बनाते हैं।

तिरुक्कुरळ् को तो 'तमिळ वेद' कहा जाता है। इसके रचयिता तिरुवळ्ळुवर ने धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चतुर्विध पुरुषार्थों में से मोक्ष को छोड़कर अन्य तीन पर बड़ी खूबी के साथ प्रकाश डाला है। तीनों को बखूबी निभाने पर मोक्ष तो स्वयं ही प्राप्त हो जाता है। मुक्ति पाने पर आत्मा की अवस्था गुड़ खाने वाले गूंगे की हो जाती है। इसीलिए तिरुवळ्ळुवर मौन धारण कर लेते हैं। धर्म-विभाग में वे गृहस्थ और संन्यास धर्म का खाका खींचते हैं, अर्थ-

विभाग में राजनीति और अर्थव्यवहार का; काम-विभाग में सच्चे सुख का। सच्ची नीति चिर-पुरातन होते हुए नित्य-नवीन रहती है, इसका दर्शन हम तिरुक्कुरळ् में करते हैं।

नालडि नाम के नीतिग्रंथ के संकलनकर्ता पदुमनार नाम से प्रसिद्ध हैं। नालडि में चार सौ पद संकलित हैं। कहा जाता है कि उत्तर भारत में अकाल पड़ने पर आठ हजार श्रमण दक्षिण चले आये और पांडिय राजा के आश्रय में ठहरे। उनके साथ राजा की ऐसी प्रगाढ़ मैत्री हो गयी कि अकाल समाप्त हो जाने पर वह उन्हें वापस जाने देना नहीं चाहता था। परंतु उसकी नजर बचाकर श्रमण चले गये और जाते समय एक-एक पद छोड़ गये। राजा ने क्रोध में आकर वे पद वैगै नदी में बहा दिये। उनमें चार सौ पद पानी के बहाव के विपरीत बहकर अपनी अस्तित्व-रक्षा में सफल हुए। पदुमनार ने तिरुक्कुरळ् की भांति ही इन पदों का विभाजन कर उनकी टीका भी लिखी है।

'नान्मणि कटिकै' विळंबि नागनार का लिखा है। 'वेण्बा' छंद में रचित एक सौ तीन पद इसमें संकलित है। हर पद में चार नीतियों का समावेश होने से इसका नाम 'नान्मणि कटिकै' अर्थात् चार मणियों से जड़ित कंकण पड़ा।

'कडुकम्' या 'तिरिकडुकम्' सौ पदों का संकलन है, जिसे नल्लादनार ने लिखा है। हरड, बहेड़ा और आंवला आरोग्य के लिए बहुत उपयोगी माने गये हैं और त्रिफला नाम से विख्यात हैं। उसी तरह यह 'तिरिकडुकम्' भी समाज के लिए उपयोगी है। तीन उपदेश-परक नीतियों का समावेश इसमें होने से इसका यह सार्थक नाम पड़ा। उसकी प्रतिपादन-शैली का एक उदाहरण लें।

कहते हैं कि जिस गांव में ठीक-ठीक हिसाब रखने वाला कोई पटेल नहीं, उस गांव का भला नहीं। वहां आपस में मनमुटाव या झगड़ा बढ़ेगा ही। झगड़ा मिटाने के लिए मंच पर कोई सरपंच न हो, तो न्याय कहां से होगा? अपने पड़ोस में रहने वाले की दुरवस्था देखकर भी उसका निवारण करना भूलकर खूब जमकर जीमने वाले पड़ोसी से क्या फायदा होगा भला? 'तिरिकडुकम्' का कवि इन्हीं बातों की ओर इशारा कर समाज को चेताता है:

'कणक्कायर इल्लाद ऊरुम् पिणक्कुअरुंक्कुम्
सूत्तोरैयिल्ला अवैक्कळनुम्–पात्तुण्णुम्
तन्मैयिल्लाकर अयलिरुप्पुम्-इम्मून्डुम्
नन्मैपयत्तल् इल।'

'कोवै' ही 'आचारक्कोवै' नाम से विख्यात है। इसके रचयिता हैं पेरुवायिन् मुळ्ळियार। सौ पदों वाला यह ग्रंथ संस्कृत की शुक्रनीति पर आधारित माना जाता है और दिनचर्या की विधि पर जोर देता है।

लोकोक्तियों का चलन ही समाज की रीति-नीति पर से हुआ है। ऐसी चार सौ सूक्तियों पर 'पळमोळि नानूरु' (चार सौ लोकोक्तियां) का संकलन किया गया है। पद्य रूप में उनकी विशद व्याख्या करने वाले कवि मुन्डुरैयरैयर हैं।

'मामूलम्' या 'चिरु पंचमूलम्' के प्रणेता

हैं कारियाशान् । मूल यानी जड़ी दवा के काम आती है। जिस प्रकार पांच-छह जड़ी-बूटियों का अर्क बनाकर सेवन किया जाता है, उसी प्रकार इन पदों में पांच मूलनीतियां घोलकर दी जाती हैं । एक पद का अर्क हम भी क्यों न सेवन करें ?

'पूवादु कायक्कुम् सरमुळ । नन्ड्रिवार
मूवादु मूत्तवर नूल वल्लार्—तावा
विदैयामै नारुव विव्तुळ सेदैक्कु
उरैयामै शेल्लुम् उणर्वु ।'

—मेधावी पंडित यह अच्छी तरह जानते हैं कि बिना फूले ही फल देने वाले पेड़ होते हैं। बिना वृद्ध हुए ज्ञानवृद्ध बन जाने वाले लोग होते हैं । बगैर बोये उगने वाले बीज होते हैं ।वैसे बिना ही खोलकर बताये भावना के रास्ते बात की जड़ तक पहुंचने वाले मेधावी भी होते हैं।

कूडलूर किळार की 'मुदुमोळि कांचि' और कणि मेदैयार की 'एलादि' भी नीति-ग्रंथ-परंपरा के भूषण हैं ।

'एट्टुत्तोहै' ग्रंथों में 'पुरनानूरु' राजधर्म और नीति का सुंदर चित्र उपस्थित करता है।

तेरहवीं शताब्दी में मुनेप्याडिया ने 'अरनेरिच्चारम्' रचा है । उसके पहले ही 'अरुंकलच्चेप्पु' की रचना हुई है, जो धर्म-नीति का यश गाता है ।

सत्रहवीं शताब्दी में कुमरगुरुपर स्वामी ने 'नीतिनेरि विळक्कम्' नाम के ग्रंथ का प्रणयन किया । उसमें एक सौ दो पद 'वेण्वा' छंद में संकलित हैं । शिवप्रकाश स्वामी का 'नन्नेरि' उपमाओं से भूषित चालीस पदों का संग्रह है ।

'नीतिवेण्बा' नाम से सौ पदों वाला एक संकलन भी मिलता है, जिसके रचयिता का नाम-पता अज्ञात है।

अठारहवीं शताब्दी में वेदगिरि मुदलियार ने 'मनुनीतिशतकम्', 'नीतिचिंतामणि' जैसे सुंदर ग्रंथों का प्रणयन किया । उन्नीसवीं शताब्दी में तांडवराय मुदलियार ने मराठी से पंचतंत्र का तमिळ अनुवाद प्रस्तुत करके स्तुत्य कदम उठाया।

मायूरम् वेदनायकम् पिल्लै ने 'पेण् मति मालै' नाम से एक नीतिग्रंथ की रचना की। पिल्लै की भाषा-शैली में चुभता व्यंग्य है, जो दिल पर गहरा असर डालता है। मुत्तुरामलिंग सेतुपति के 'नीतिबोधम्' को भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय स्थान प्राप्त है।

इस सदी में कई नीतिशतक तमिळ में रचे गये, जिनमें 'तंडलैयारशतकम्', 'गोविंदशतकम्' 'कुमरेशशतकम्' उल्लेखनीय है राजाजी के नीतिकथा-संग्रह 'कर्पनैक्काड' का अपना ही महत्त्व है।

इस तरह नीति की एक अटूट धारा तमिळ साहित्य में वह रही है और तमिळ जनमानस को सींच रही है।

—**'कल्कि,' चेतपेट, मद्रास—६०००३१**

★

समस्त कला का मर्म है—आनंद देने में आनंद पाना । —**मिखाइल बेरिश्निकोव**

अब तक आविष्कृत सबसे बड़ी मशीनरी है—इंसान के दो हाथ । —**जयप्रकाश नारायण**

★

पराकाष्ठा

अजीब किस्म का था वह सरकारी कार्यालय। उसके कर्मचारियों की कई कठिनाइयां व शिकायतें थीं। उन्होंने एक मांगपत्र भी बना रखा था। उनकी बाकायदा एक यूनियन थी, जिसके पदाधिकारी चुने जा चुके थे। संघर्ष-समिति का गठन भी हो गया था। हड़ताल की नोटिस का प्रारूप बन चुका था। यह भी तय हो चुका था कि हड़ताल के समय कौन-सी उपसमिति सभा एवं जुलूस का आयोजन करेगी, वार्ता करने वाले शिष्टमंडल में कौन-कौन सदस्य होंगे, भूख-हड़ताल एवं धरना देने के लिए किन कार्यकर्ताओं को पहले मौका दिया जायेगा और प्रचार व जनसंपर्क का काम किस उपसमिति के अधीन रहेगा।

फिर भी हड़ताल नहीं हो पा रही थी।

कार्यालय के सभी कर्मचारी नियमित रूप से रेडियो पर खबरें सुनते। समाचार-पत्र शुरू से आखिर तक गौर से पढ़ते। हर मंत्री का वक्तव्य अथवा भाषण बिना भूले सुनते। मगर बाकी सब सामान्य था—नियमित रूप से आधा घंटा लेट आना, लंच के आधे घंटे को पूरे एक घंटे में बदलना, दुनिया-भर की गप्पें लगाना, हरदम काम टालने के प्रयास में लगे रहना, कुर्सी पर बैठे-बैठे ऊंघना, छोटे साहब की स्टेनो के नख-शिख की चर्चा करना और बड़े बाबू से दिन-ब-दिन बढ़ती महंगाई की चर्चा करना। अब भी चाय के दौर चलते, सिगरेट के धुएं के छल्ले उड़ते, पान चबाये जाते और मुर्गे फंसाये जाते थे।

मगर हड़ताल नहीं हो पा रही थी।

एक संवाददाता ने पूछताछ की तो यूनियन के नेता ने बताया:

'देखिये, हम सरकार के वफादार कर्मचारी हैं। हर काम सरकारी आदेश के अनुसार करते हैं।'

'मतलब आप हड़ताल के पक्ष में नहीं हैं?'

'नहीं, ऐसी बात नहीं है। हड़ताल की तैयारियां कब की पूरी हो चुकी हैं।'

'फिर देरी किस बात की है?'

'दरअसल हमने यह नोट किया है कि जब भी हड़ताल होती है, सरकार यही कहती है कि यह हड़ताल ऐसे वक्त की जा रही है जब देश के सामने कई और समस्याएं हैं। या कि आपकी मांगें तो वाजिब हैं और हम उन पर सहानुभूतिपूर्वक विचार भी करते, मगर आपने ऐसी नाजुक स्थिति में आंदोलन का रास्ता अपनाया है, जबकि सारी शक्ति गरीबी, महंगाई आदि से लड़ने में लगायी जानी चाहिये थी। सो अब हम इस उम्मीद में हैं कि किसी दिन सरकार घोषणा करे कि अब वातावरण हड़तालों के अनुकूल है, सरकार आंदोलन का सामना करने को तैयार है, और अब कर्मचारी अथवा मजदूर अपनी मांगों को मनवाने के लिए काम बंद कर सकते हैं। बस, हम उसी अवसर की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'—**राजेंद्र मेहता**

★

[पृष्ठ ३९ का शेष]

कभी पालन करा लेगी। पर मेरे मौन से आपको हानि कैसे पहुंचेगी? मैं बोलता तो हूं ही; किसी न किसी रूप में बोलता ही रहा हूं। आबरू खो-खोकर, और प्रतिध्वनि के सिवा कोई सुनने वाला न होने पर भी, बोलता ही रहा हूं। किंतु जो कुछ बोलता रहा हूं, उससे जो कुछ न बोला, वह बहुत था। कितने ही स्वप्नों की हत्या का पुण्य कमा चुका हूं—और कमाने का लालच अभी भी है—इसलिए कि कुछ तो अपने पतन की कीमत तक पर, जिस डाली पर मैं और वे बैठे थे—बिना जाने काट रहे थे और कुछ घुटनों के बल चल रहे थे। उनके बीच बैठकर क्या बोलता? आज जिस तरह मुंह खोलने की बात आप कह रहे हैं, वह किस बूते हो? यदि आप यह विश्वास कर सकें कि कम से कम घर में तो आपका स्वर संयुक्त हो सकेगा—तो मुझे लिख भेजिये। मैं अंतःकरण की गरीब आबरू को एक बार और बाजार में रख दूंगा। वह है ही कितनी-सी! गरीब को अपनी एक दिन की मजदूरी दे देने में देर नहीं हुआ करती। वह तो बड़ों की बातें हैं, जहां ब्याज का अंश भी बाजी पर नहीं रखा जाता। जरा, अपने शिल्पियों को भी समझाइये। स्वप्नों की कल्पना मात्र को लिखने न दौड़ पड़ें। पूरा स्वप्न ही लिखें। नकल या अनुकरण भी स्वप्न देखने की सामर्थ्य रखकर ही करें।

'कर्मवीर' आपके उद्योगों से दूर नहीं रहेगा। विनयमोहनजी की शिकायत है कि वे अपने बाग के छोटे और दूषित पुष्पों वाले गुलाबों की कलम कर देने का कष्टमय धंधा करते भले ही रहें, पर आपका स्वर, नवीन युग की ध्वनि, नीचे नहीं गिरेगी।

पता नहीं, मेरा यह लंबा पत्र आपको दुख देगा या और कुछ। भाई गणेशजी ने क्या उत्तर दिया? शेष कुशल।

आपका अपना—मा.

इस पत्र में उस समय के हमारे साहित्य की स्थिति पर तो चुटकियां हैं ही, स्वयं चतुर्वेदीजी की विचारणा और मनःस्थिति पर भी कम प्रकाश नहीं पड़ता। माखनलालजी के समस्त जीवन, काव्य और साहित्य में चार मुख्य तत्त्व रहे हैं:

१. भारतमाता की जीवित, मांसल मूर्ति के दर्शन एवं स्पर्श से कंपित समर्पण भावना।
२. दीन-दुखियों, पीड़ितों की वेदना का प्राणद स्पर्श; कठिनाइयों की चुनौतियों का निरंतर ग्रहण।
३. तरुणाई के प्रति अप्रतिम आकर्षण।
४. अपनी पत्नी और उसके माध्यम से नारीत्व की मृदुल भावनाओं पर सब कुछ चढ़ा देने का लोभ।

हिंदी के राष्ट्रीय काव्य को उनकी देन असाधारण है। उन्होंने कोई खंडकाव्य नहीं

लिखा; किंतु उनकी छोटी-छोटी अनुभूतियों और रचनाओं में जो समर्पण-भावना, जो तेजस्विता, कांटों पर हंसते-हंसते चलने की प्रेरणा और सहज भाव से चुनौतियों के ग्रहण की जो महिमा है, वह अन्यत्र दिखाई नहीं देती। राजनीति के प्रत्येक ज्वार में तरंगों की चोटियों पर नर्तन करते रहने वाले इस कवि में राजनीति का ओछापन कहीं नहीं है; वे राजनैतिक कवि नहीं हैं। उनमें हमारी उच्च, उदार राष्ट्रीय संवेदनाएं और प्रेरणाएं बोलती हैं। जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को काव्य के मृदुल प्रसूनों की माला में गूंथकर रख देने का उनका कौशल अपूर्व है।

उनकी अधिकांश कविताएं निजी घटनाओं से निःसृत हुई हैं। जेल-जीवन में बिछौने के अभाव में जमीन पर सोने और जेल के प्रहारों को लेकर लिखी गयी उनकी वह कविता कितनी ऊंची है, जिसकी अंतिम दो पंक्तियां यों हैं :

भूखंड बिछा आकाश ओढ़, नयनोदक ले मोदक प्रहार।
ब्रह्मांड हथेली पर उछाल, अपना जीवन-धन ले निहार।।

धरती को बिछौना और आकाश को ओढ़ना बनाने, प्यास के लिए आंसू पीने और भूख में रोटी के बदले जेल के प्रहारों का मोदक खाने और इन सब भावनाओं के बीच अपने जीवन-धन का दर्शन करने में कवि की संवेदना धुलकर स्वच्छ हो गयी है।

और जेल के सीखचों के अंदर लिखी इस रचना को देखिये :

किस प्रकार मिनटें गिनता हूं, दिन के बरस बनता हूं,
खान-पान को, ज्ञान-ध्यान की धूनी यहां रमाता हूं;
तुमको आया जान, वायु में बांहों को फैलाता हूं,
चरण समझते हुए, सीखचों पर मैं शीश झुकाता हूं......

संवेगों से भरी, वर्षा-नद के प्रवाह-सी उनकी कल्पना तटों को बहाते हुए अबाध गति से चलती है।

उनकी अधिकांश रचनाओं की पार्श्वभूमि में कोई न कोई घटना है। इसीलिए उनसे दूर रहने वाले, उन्हें ठीक तरह समझ न पाने वाले उनकी रचनाओं की अंतर्भावना को छू नहीं पाते। बृंदावन संमेलन में गये थे। वहीं स्व. गोपीवल्लभ उपाध्याय ने नीलांबरदत्त चंदोला तथा सत्याचरण से परिचय कराया। चंदोला बड़ा भावुक किशोर था। उसकी भावुकता पर ये लट्टू हो गये और जो कविताएं कभी किसी को न दिखायीं-सुनायीं थीं, वे भी उसे दिखायीं-सुनायीं। जैसे वर्षा की स्रोतस्विनी में बाढ़ आती है, वैसे ही उनमें भावप्रवणता की बाढ़ आती थी। और जब वह आती थी, तब उनका संपूर्ण अस्तित्व उसमें डूबने-उतराने लगता था। चंदोला इत्यादि के साथ रात को चांदनी में नाव पर देर तक घूमते रहे। उसी समय यह कविता लिखी थी :

पगली तेरा ठाठ, किया है रत्नांबर परिधान,
अपने काबू नहीं, और यह सत्याचरण विधान।
उन्मादक मीठे सपने ये, और अधिक मत ठहरें,
साक्षी न हों, न्याय-मंदिर में, कालिंदी की लहरें।
डोर खींच, मत शोर मचा, मत बहक, लगा मत जोर।
मांझी, थाह देखकर आ तू मानस-तट की ओर।।

अत्यंत भाव-प्रवण कवि होने के अतिरिक्त माखनलालजी शक्तिमान गद्यकार भी थे। उन्होंने दो नाटक भी लिखे थे। १९११ में 'विद्याविलासी बालक' नाम का नाटक लिखा, जो उसी समय अभिनीत एवं छात्र-समुदाय में प्रशंसित हुआ था। फिर १९१८ में 'कृष्णार्जुन-युद्ध' नाटक लिखा गया, जो उसी वर्ष जबलपुर संमेलन के अवसर पर खेला गया था और उस समय के अत्यंत लोकप्रिय और उच्च कोटि के नाटकों में गिना गया।

बाद में तो इस 'कृष्णार्जुन-युद्ध' को लेकर बड़ा अप्रिय विवाद चला था। उनके बहुत पुराने साथी सिद्धनाथ माधव आगरकर जब 'कर्मवीर' से अलग हो गये और उन्होंने 'स्वराज्य' नाम का साप्ताहिक पत्र खंडवा से ही निकाला, उन्होंने यह आरोप लगाया कि यह नाटक माखनलालजी का नहीं, किसी दूसरे का लिखा है। वे इसके लिए पूरा प्रमाण देने को प्रस्तुत थे। ईश्वर ही जाने, सत्य क्या है। किंतु इन आक्षेपों के बावजूद इसमें कोई संदेह नहीं कि माखनलालजी एक शक्तिमान गद्य-लेखक थे। उनके गद्य में विचारक की अंतर्दृष्टि, कवि का भावोद्रेक और उपासक का प्राण-निवेदन होता था। उनका 'साहित्य-देवता' ग्रंथ बहुत समादृत हुआ; यहां तक कि उनका नाम ही 'साहित्य-देवता' पड़ गया।

वक्ता तो वे प्रथम कोटि के थे। विराट् जन-समुदाय को भाव-विभोर कर देना उनके लिए बायें हाथ का खेल था। मुझे याद है कि एक बार भीलवाड़ा (राजस्थान) की एक बड़ी सभा में मुझे उनके साथ ही बोलना पड़ा था। यद्यपि जिस विषय (भारतीय संस्कृति का तत्त्व) पर मुझे बोलना था, वह मेरा बहुत प्रिय विषय था और मैं बहुत अच्छा बोला था; किंतु उनका भाषण बेजोड़ था। वैसा वक्ता हिन्दी में दूसरा नहीं हुआ।

एक इंसान के रूप में उनमें अनेक दुर्लभ गुणों का समावेश था। अपने प्रति मौन उनका स्वभाव था; किंतु यदि किसी ने उनके हृदय के बंद कपाट की कुंडी खटखटा दी और द्वार खुल गया, तो फिर वर्षों का संचित मौन क्षण-भर में वेदी पर चढ़ जाता था। फिर बोलते थे तो बोलते ही थे। सचमुच जैसा उनका नाम था, हृदय भी उनका माखन का ही था; स्नेह की आंच और अपनेपन का स्पर्श पाते ही द्रवीभूत हो जाता था। अंदर से मृदुल ही मृदुल परंतु ऊपर से कठोरता का बाना बनाये वे जीवन के पथ पर चलते रहे। अभिमान तो जरा भी न था, किंतु स्वाभिमान और आत्मगौरव का सौदा कभी किसी कीमत

पर करने को तैयार नहीं होते थे। अपने काव्य और अंतरानुभूतियों की दृष्टि से वे एक प्रकार के 'प्रेमिक रहस्यवादी' या 'लव मिस्टिक' थे—अंग्रेजी कवि पैटमोर की तरह।

एक बार उन्होंने मेरे एक सुहृद से कहा था—'समाज के बंधन निरे ढकोसले हैं। हृदय का बंधन ही विवाह है। नेत्रों का मिल जाना, हृदयों का गुंथ जाना, आजीवन विवाह है। मेरा कोई "रिलीजन" नहीं है। कविता ही मेरा धर्म है और प्रेम ही मेरी कविता है।' उन्होंने मेरे साहित्यकार मित्र से यह भी कहा—'प्रत्येक को साहित्य-जीवन की चार अवस्थाओं का मुकाबला करना पड़ता है—उपेक्षा, आलोचना, मौनावस्था और फिर "एप्रीसियेशन" (प्रशंसा)। लेखक और कवि को अपने जीवन में आलोचना और उपेक्षा से खूब मुठभेड़ करनी पड़ती है। "एप्रीसियेशन" (प्रशंसा) तो अंतिम अवस्था है।'

एक बार उन्होंने कहा था—'मैं विद्यार्थियों से प्रेम करता हूं। नवयुवक मेरी कविता की सामग्री हैं। उन्हीं में मैं अपने वनमाली की सुंदर झांकी देखता हूं। वे मेरी निधि हैं, राष्ट्र के सर्वस्व हैं।'

अंदर से जैसी भी हालत हो, बाहर वे सुदर्शन और भव्य वेशभूषा में रहते थे। प्राय: प्रथम श्रेणी में यात्रा करते थे। अनेक श्रीमानों पर उनका अच्छा प्रभाव था और उनसे अपने कार्यों के लिए धन भी प्राप्त करते रहते थे। उत्तरकाल में वे अनेक रोगों से आक्रांत हो उठे थे। हृत्कंप के तो पुराने रोगी थे। एक छोटा-मोटा दवाखाना ही उनके साथ चलता था; कोई न कोई साहित्यप्रेमी युवक या सेवक सदा साथ रहता था। ऊपर की मंजिलों या पहाड़ों पर जाने का निषेध था और उन्होंने सदा ही इसका पालन किया।

वृद्धावस्था में मोतियाबिंद के आपरेशन के बाद वे शिथिल होते गये। ज्ञानतंतु अशक्त होने लगे; यहां तक कि खड़े होने और चलने में वे डगमगा जाते थे। मेरा खयाल है कि उनका रक्तचाप भी बढ़ गया होगा। इसी तरह रोग बढ़ते गये और शक्ति क्षीण होती गयी। यहां तक कि उनकी जो वाणी सभाओं का शृंगार थी और जिसमें सिंह की तड़प और दहाड़ थी, वह गले में कफ का प्रकोप बढ़ने से दिन-दिन क्षीण होती गयी और ३० जनवरी १९६८ ई. को सदा के लिए असीम मौन के सागर में विलीन हो गयी।

अस्सी वर्ष का उनका लंबा जीवन अध्यापक, पत्रकार, कवि, राष्ट्र-सैनिक, वक्ता और नेता के अनेक रूपों में बिखरा पड़ा है। इनमें से प्रत्येक क्षेत्र में उनकी उपलब्धियां असाधारण थीं। उनका साहित्य केवल मनोविनोद का नहीं, प्रेरणा का, समर्पित साधना और पूजा का, यौवन के गौरव-गान का साहित्य है। वे सरस्वती के मंदिर के ऐसे दीपक थे जो बुझकर भी नहीं बुझता, जल-जल उठता है और जिसकी ज्योति की बाती के नीचे स्नेह की ऐसी पावन राशि है कि वह जलती ही रहेगी। जलती रहेगी और हमें प्रकाश देगी, हमें प्रकाश देगी और जलती रहेगी। **—७७/१५६, लूकरगंज, इलाहाबाद-२११००१**

★

स्मृति के अंकुर

एक दिन मैं नयी प्रारंभ हुई एक बहुचर्चित फिल्म देखने पहुंचा। क्यू में बुकिंग की खिड़की के काफी समीप पहुंच गया था कि सज्जन से दिखाई पड़ने वाले एक महाशय ने आकर अपना भी टिकट लेने के लिए मुझे पांच रुपये का नोट पकड़ा दिया। संकोचवश मैं इन्कार न कर सका।

उनका टिकट और बाकी पैसे उन्हें वापस करके मैं आगे बढ़ा ही था कि उन्होंने मुझे रोककर कहा—'भाई साहब, मैंने आपको दस का नोट दिया था, आपने बाकी पैसे कम दिये हैं।' मैं दंग रह गया। मैंने उन्हें याद दिलाया कि उन्होंने सिर्फ पांच का नोट मुझे दिया था। वे अड़ गये। उनकी और मेरी हुज्जतबाजी सुनकर भीड़ इकट्ठी हो गयी। उस सार्वजनिक स्थान पर उन 'सज्जन' ने ऐसा माहौल बना दिया कि मुझे दस रुपये के हिसाब से उन्हें बाकी पैसे भुगतान करने ही पड़े। सद्भाव और सहयोग का यह दंड मुझे मिला।

—कृष्ण वल्लभ उपाध्याय, इंदौर

○○○

रिक्शेवाला

जब मेरी नींद खुली मैं एकदम घबरा गया। बिलासपुर पैसेंजर का समय पूरा हो चुका था। तुरंत कपड़े बदले, झोला संभाला और सड़क पर भागने लगा। बगल से गुजरते हुए एक पहचान वाले ने बताया कि गाड़ी प्लेटफार्म पर खड़ी है।

तभी एक रिक्शा धीमा हुआ। मेरा मन ललचाया, पर जेब में पैसे गिने-गिनाये थे। बरबस उस ओर से ध्यान हटा लिया। रिक्शेवाला मेरे समय की कीमत जानता था, मजबूरी को भी शायद समझ गया। बड़े आग्रह के साथ बोला—'जनाब! आप जानबूझकर विलंब कर रहे हैं, अब गाड़ी का समय नहीं है।' बात तो सच थी, पर मुझे हंसी आ गयी। सोचा—'अपना स्वार्थ देखकर लोगों को कितनी जल्दी परमार्थ याद आ जाता है।' दो कदम आगे बढ़ा ही था कि

रिक्शा रुक गया। मैं पैसा नहीं लूंगा।' और रिक्शेवाले ने मुझे रिक्शे पर बैठ जाने के लिए बाध्य कर दिया। स्टेशन के फाटक पर उतरकर जब मैंने उसकी ओर नोट बढ़ाया। उसने इन्कार में सिर हिला दिया और मेरा झोला मेरी ओर बढ़ाते हुए बोला—'जल्दी जाइये साहब। गाड़ी सीटी दे चुकी है।'

—श्यामराज पांडेय, धवैया, रीवां, म. प्र.

०००

लेने के देने पड़े

नवंबर में हम पांच-छह लड़कियां अपनी टीचर के साथ मसूरी घूमने गयी थीं। सीजन न होने की वजह से हम जिस होटल में ठहरीं, वह एकदम खाली था। दोपहर में पहुंचते ही अंदर के कमरे में सामान रखकर ताला लगा दिया और खाना खाने चली गयीं। लगभग घंटे-भर बाद हम दो लड़कियां शाल वगैरह लेने होटल आयीं। कमरा खोलते ही हम अवाक् रह गयीं। अंदर का कमरा खुला पड़ा था और सारा सामान गायब ! सोचा, शायद चौकीदारों ने शरारत की हो। हम दोनों ने चौकीदारों के कमरों के सामने जाकर जो मुंह में आया, खरी-खोटी सुनायीं। वे बार-बार कसमें खा रहे थे, पर हमें विश्वास नहीं हुआ। जिस चौकीदार ने कमरा दिखाया था, उसी को साथ लाकर कमरा खुलवाया, तो अंदर के कमरे में हमारा ही ताला लगा हुआ था और सामान भी रखा था। बात यह हुई थी कि होटल के सभी कमरे एक से थे और किसी में भी बाहर से ताला नहीं लगा था। हमने हड़बड़ी में ग्यारह के बजाय दस नंबर का कमरा खोल दिया था। चौकीदार तो कुछ नहीं बोले, पर उस समय हमारी जो हालत हुई, उसे आज तक नहीं भूल पायी हूं।

—मनजीत कौर, गढ़शंकर, पंजाब

०००

उद्दंड से उदात्त

हर वर्ष की भांति उस वर्ष भी वसंत पंचमी का उत्सव मनाने के लिए हमने छात्रों को विद्यालय के सभा-भवन में एकत्रित किया। अध्यापक अपने-अपने स्थान पर बैठ चुके थे। संयोजक ने छात्रों से कहा कि वे अपने में से किसी को अध्यक्ष चुन लें। एक छात्र ने चटपट ग्यारहवीं कक्षा के छात्र रवि गुप्ता का नाम प्रस्तावित कर दिया। समस्त छात्रों ने करतल ध्वनि से इसका समर्थन व अनुमोदन किया। देखते ही देखते अध्यक्ष-पद पर वह छात्र जा बैठा, जो केवल मेरी ही नहीं, समस्त अध्यापकों की दृष्टि

चित्र : शरद कांबली

में एक निकृष्ट छात्र था और जिसका परिचय केवल तीन शब्दों द्वारा कराया जा सकता था—वाचाल, मसखरा, उद्दंड।

कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। कुछ कविताएं पढ़ी गयीं। कुछ भाषण हुए। लेकिन मैं अंदर ही अंदर कटा जा रहा था। तभी संयोजक महोदय की आज्ञा हुई कि मैं भी अपने विचार प्रस्तुत करूं। रवि गुप्ता जैसे छात्र को 'मान्यवर', 'महोदय' आदि शब्दों से संबोधित करना मुझे बहुत ही असंगत लग रहा था। मैंने अपने भाषण को असंतुलित नहीं होने दिया और वसंत के महत्त्व, छात्रों के परिश्रम करने की प्रेरणा तथा उनकी प्रजातांत्रिक भावना की प्रशंसा के साथ ही अपने भाषण को समाप्त कर दिया।

फिर अध्यक्ष महोदय के भाषण की घोषणा हुई। साधारण औपचारिक शब्दों के उच्चारण के बाद अध्यक्ष रवि गुप्ता का गला रुंध गया, नेत्रों से अश्रुधारा बह चली और सिर झुक गया। कुछ क्षण बाद उसने साहस बटोरकर कहा—'प्यारे साथियो! अभी तक तो मैं इस पद के योग्य नहीं हूं, लेकिन आपको विश्वास दिलाता हूं कि आज के बाद मैं अपने को इसके योग्य बनाने का हर संभव प्रयास करूंगा। आप मुझमें एक अभूतपूर्व परिवर्तन पायेंगे। मैं कोशिश करूंगा कि अगली बार जब आप मुझे इस पद के लिए चुनें, तो आपके सिर गौरव से ऊंचे रहें। आपके समक्ष प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं अब से कभी अभद्र व्यवहार, असामयिक बात अथवा अनुचित व्यवहार नहीं करूंगा। मैं अपने आज तक के व्यवहार के लिए पश्चात्ताप करता हूं और अपने समस्त गुरुजनों के चरण स्पर्श कर क्षमायाचना तथा प्रार्थना करता हूं कि वे मुझे आशीर्वाद दें, ताकि मैं महान व्यक्ति न सही, एक साधारण इंसान तो बन ही सकूं।'

इसके बाद रवि गुप्ता अपना स्थान छोड़कर समस्त अध्यापकों के बारी-बारी से पैर छूने लगा। जब वह मेरे पास आया, तो मेरी आंखें सजल हो गयीं। मैंने बिना हिचकिचाहट के उसे अपनी बांहों में भर लिया। वह क्षण मेरे जीवन का सबसे मधुरतम क्षण था। मैंने एक उद्दंड बालक को उदात्त जीवन की सीढ़ी के प्रथम चरण पर पांव रखते देखा था। **—उदय किशन व्यास, जोधपुर**

★

अमरीका की एक लघुपत्रिका के संपादक ने अपने मित्र से कहा—'दोस्त, मेरी पत्रिका का एक साल का चंदा भर दो। पत्रिका तुम्हें अच्छी न लगे तो साल के अंत में कहना, मैं तुम्हारा पैसा वापस कर दूंगा।'

मित्र ने चंदा दे दिया। एक साल बाद संपादक-मित्र मिले तो पाठक मित्र ने कहा—'बुरा न मानो दोस्त! मुझे तुम्हारी पत्रिका पसंद नहीं आयी!'

संपादक ने अपने वादे के मुताबिक पर्स से पैसा निकालकर बढ़ाया, तो मित्र ने कहा—'नहीं, नहीं! अगले साल के चंदे में ये पैसे जमा कर लो!' **—रा. वीलिनाथन्**

★

कविगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर की ये शीर्षकहीन अंतिम पंद्रह रचनाएं (कविताएं) हिंदी में सर्वप्रथम यहां रूपांतरित हैं। ये अंतिम रचनाएं (कविताएं) इसलिए कही जाती हैं कि कवि का निधन ७ अगस्त १९४१ को हुआ था और इन रचनाओं (कविताओं) का प्रकाशन हो सका था १९४२ में, 'शेषलेखा' नामक पुस्तक में।

इनमें से पहली कविता लिखी तो १९३९ में गयी थी, किंतु कवि ने यह इच्छा व्यक्त की थी कि उनकी मृत्यु के बाद की प्रार्थना में इसी को गाया जाये। दूसरी १९४० में रची गयी थी; लेकिन इसकी तकनीक कवि की अंतिम रचनाओं जैसी ही है। कवि ने तीसरी से पंद्रहवीं तक सारी कविताएं १९४१ की फरवरी-जुलाई के बीच रची थीं। सभी कविताओं में (सिर्फ दो-चार में कुछ भिन्नता बरती गयी है) स्थान और समय का भी निर्देश है।

एक ही अंत:प्रेरणा से सर्जित न होने के कारण ये कविताएं कुछ असंबद्ध-सी लगती हैं। परंतु वास्तव में ये सत्य के सार अंश के संप्रेषण में पूर्णतया समर्थ हैं, इनमें प्रकृत कविता-तत्त्व भी अक्षुण्ण हैं। श्यामश्री देवी और पुरुषोत्तम लाल ने अपने अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका में ठीक ही कहा है–'इन कविताओं में एक भी शब्द अतिरिक्त नहीं है। कुछ कविताएं तो काव्यात्मक "टेलिग्राम" जैसी हैं (उदाहरणार्थ, ११ वीं और १३ वीं कविताएं)। बहुत-कुछ ऐसा लगता है कि रवींद्रनाथ उन दिनों भाषिक शब्दशक्ति का अतिक्रमण कर रहे थे... उनकी कविता स्वयं ही अपना मर्म उद्भासित करने की शक्ति पा रही थी।'

प्रस्तुत हिंदी रूपांतर में मूल कविताओं के वे शब्द रूपांतरित नहीं किये गये, जिन्हें पाठक थोड़ी-सी कोशिश करने से समझ सकते हैं। यथासाध्य मूल कविताओं की लय की भी रक्षा की गयी है। मूल कविताओं की शब्द-संपत्ति में कुछ तो द्वयर्थी मिथकीय शब्द हैं (जैसे–ध्रुव, राहु, माया, लक्ष्मी, काल, रूपनारायण आदि), कुछ में कहीं संदेह और निषेध का आश्रय है तो कहीं दृढ़ आस्था का। कोरी आशावादिता को कहीं प्रश्रय नहीं मिला है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

पृथ्वीनाथ शास्त्री द्वारा अनूदित और हिंदी में प्रथम बार प्रस्तुत

अंतिम रचनाएं

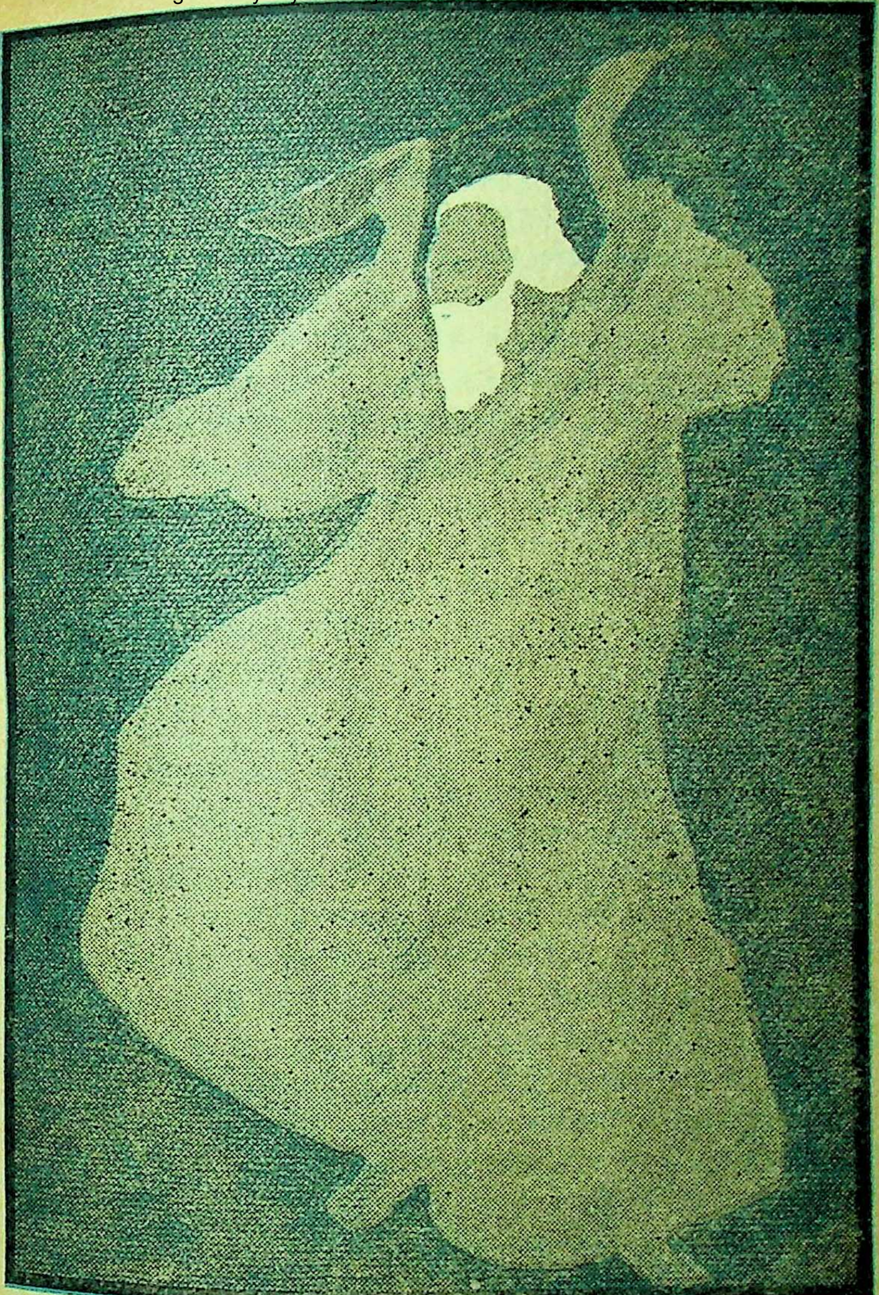

स्व. गगनेंद्रनाथ ठाकुर रचित चित्र की शेणै द्वारा अनुकृति

(देखिये कविताएं–२, ७, १२ और १५ आदि)। चौथी और पांचवीं कविताओं को प्रेमानुभूति से परिपूर्ण माना जाता है, यद्यपि इनमें स्नेहस्मृति से अनुप्राणित गहरी व्यथा-संवेदना ही है। ये वासना-कामना के आवेश से वर्जित और वेदना से आलोकित हैं। चौथी कविता में, जिस कुर्सी का संदर्भ है, संभवत: वह विक्टोरिया ओ'कैम्पो के घर की वही पोली छाती वाली कुर्सी है, जिस पर कवि के सिवा और किसी को बैठने की इजाजत नहीं थी।

इन सारी कविताओं में व्याप्त कवि की संवेदना जीवन की समग्रता के 'विज़न' से ओतप्रोत है। मृत्यु के बिना जीवन का अनजाना रहस्य उद्घाटित नहीं होता, कवि को मानो यह प्रातिभ ज्ञान हो चुका था, जैसा कि अंतिम कविता में स्पष्ट है। इन कविताओं की भाषा में भी कवि के महान व्यक्तित्व की गरिमा का भार नहीं है। प्रत्युत, एक ऐसी सूक्ष्म शक्तिमयता है, सरलता है जो श्रीअरविंद के शब्दों में कविता के मांत्रिक होने पर ही प्राय: एवं अधिकांशत: व्यक्त हो सकती है। इनमें सर्वत्र एक ऐसी वाग्मिता है, जो कवि के अंतरतम में अनुभूत विस्मय, आश्चर्य, पराजय एवं अलौकिक आनंद से पाठक का सीधा साक्षात्कार ही नहीं, तादात्म्य भी करा देती है। इसीलिए अंतिम प्रश्न अनुत्तरित रहने में (देखिये १३ वीं कविता) सार्थक हो उठा है।

कवि अपनी आखिरी घड़ियों तक मानव-मन की अफुरंत जिज्ञासा के हामी थे। अनेक विघ्न-बाधाओं के रहते हुए भी मानव अपनी आस्था के टिमटिमाते दीये के सहारे आगे बढ़कर जीवन की यात्रा पूरी करता है, चाहे सामने अंधेरे का वह सागर ही क्यों न लहरा रहा हो, जिसके तूफानी थपेड़े किसी का भी जी दहला सकते हैं। लगता है, इन कविताओं द्वारा कवि यह संदेह पूर्णत: संप्रेषित कर पाये हैं।

शायद कुछ 'कुशाग्रबुद्धि' पाठक अपनी सदा संशयालु प्रवृत्ति के कारण इन कविताओं में यत्र-तत्र अंतर्विरोध भी पा लें। यों वे कवि की तीन कविता-पुस्तकें* और पढ़ें तो अपनी शंकाओं का स्वयं समाधान कर सकते हैं। 'शेषलेखा' की १५ वीं कविता कवि ने अपने शरीर पर हुई सर्जरी (शल्यक्रिया) के दिन सुबह ही बोलकर लिखवा दी थी। सर्जरी के बाद तो उन्हें होश ही नहीं रहा था। मृत्युपर्यंत वे इस आपरेशन (शल्योपचार) की तीव्रता से उबर नहीं सके, बेहोश ही रहे थे।

यों तो इन सारी कविताओं में ही कवि का बहुविध और संमिश्र अनुभव व्याप्त है, किंतु कई कविताओं में वे मृत्यु से मर्त्य की निर्भयता के ही समर्थक प्रतीत होते हैं। अपने अंतिम चार वर्ष कवि ने रोग और उसकी पीड़ा से जूझते हुए बिताये थे। तब उन्हें मानव का शेष सृष्टि से संबंध और भी अधिक महसूस हुआ होगा, इसमें संदेह नहीं किया जा सकता।

---

* प्रांतिक (१९३८), रोगशय्या (१९४०), आरोग्य (१९४१)।

मृत्यु का मतलब, फिर भी, वे उस विश्व के अभिप्रेरक तत्त्व प्रेम के सामने संतुलित कर जान पाये, यही महत्त्वपूर्ण है।

मृत्यु की अर्थवत्ता नवजीवन की एक विधि होने में है, यह तो उनसे पहले भी कितने ही मनीषी कवियों की वाणी से व्यक्त हुआ था; लेकिन यह शायद ही किसी ने कहा था कि मृत्यु अज्ञेय को जानने की एक प्रक्रिया भी है। ...कवि के ये शब्द इसी संदर्भ में अवधेय हैं–'सब किछु चलियाछे निरंतर परिवर्त वेगे। सेई तो कालेर धर्म। मृत्यु देखा देय एसे एकान्तई अपरिवर्तने। ए विश्वे ताइ से सत्य नहे। ए कथा निश्चित मने जानि।' शायद इसी से वे 'परम-आमिर सत्ये सत्य तार। ए कथा निश्चित मने जानि।' वह भी स्पष्ट कर सके थे।......

–पृ. शा.

इन पृष्ठों में रवींद्र की सब मुखाकृतियां कमलाक्ष शेणै द्वारा रचित हैं। अन्य सब चित्र स्वयं रवींद्र द्वारा अंकित हैं।

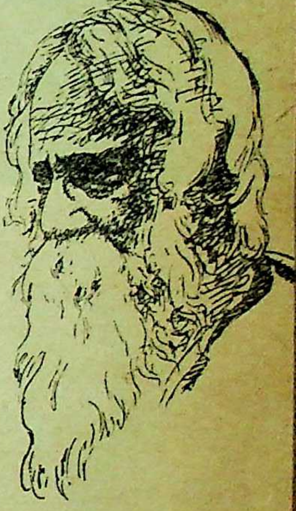

।। एक ।।

सामने है शांति-पारावार
खेओ यह तरणी हे खेवनहार
तुम्हीं होगे मेरे चिरसाथी
मुझे अपना लो खुली छाती
असीम पथ में जलेगी ज्योति
ध्रुव नक्षत्र की।
मुक्तिदाता तेरी क्षमा, तेरी दया
बने चिरपाथेय इस चिरयात्रा में
टूट जायें पाश सारे मर्त्य के
मिले वह बांहें फैलाये विराट् विश्व से
उसे होवे आंतरिक निर्भीक परिचय
महान अज्ञात से।

पुनश्च। शांतिनिकेतन। दोपहर के बाद १ बजे, ३ दिसंबर १९३९

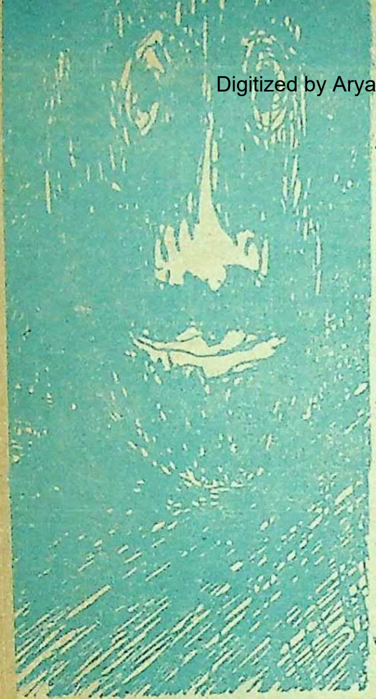

।।दो।।

राहु की तरह मृत्यु
सिर्फ डालती छाया,
नहीं ग्रस पाती वह जीवन का दिव्य अमृत
जड़ के कवल में
यह बात निश्चित मैं जानता।

प्रेम का असीम मूल्य
समूचा उड़ा ले जाये
ऐसा दस्यु नहीं छिपा
निखिल की गहरी गुफा में
यह बात निश्चित मैं जानता।

सर्वाधिक सत्य जिसे समझा था मैंने
सर्वाधिक मिथ्या छिपा वहीं छद्मवेष में
अस्तित्व का कलंक यह कभी
सहता नहीं विश्व का विधान
यह बात निश्चित मैं जानता।

सभी कुछ चलता है निरंतर बदलता हुआ
यही तो है काल का स्वधर्म।
मृत्यु आती अचानक ही अपरिवर्तन से
विश्व का सच नहीं लगती वह इसी से
यह बात निश्चित मैं जानता।

विश्व है, यह जानता जो
'अहम्' को पहचानता वो
जगत् के अस्तित्व का मैं साक्षी हूं
सत्य मेरा परम—मैं के सत्य में है
यह बात निश्चित मैं जानता।

७ मई १९४०

॥ तीन ॥

ओ रे पखेरू
रुक-रुककर अपना सुर भूलता क्यूं
गाये जाता नहीं क्यूं–
कलरव-हीन भोर होता है वृथा
यह क्या नहीं जानता !

ओ रे पखेरू
अरुण आलोक का यह पहला परस
गाछ-गाछ पर है झलक रहा,
उसके कंपन में है तेरा सुर
पात-पात पर है जागता–
भोर के उजाले का तू ही मितवा
यह क्या नहीं जानता ।

वह जो रही जागरण की लक्ष्मी
मेरे सिरहाने
आंचल बिछाये
यह क्या जानता नहीं ।
अपने गायन के उपहार से
अभी नहीं वंचित कर दे उसे
दुख-भरी रातों के सपनों के नीचे
तेरी प्रभाती जो बोले
नये प्राणों की यह गीता
यह क्या नहीं जानता ।

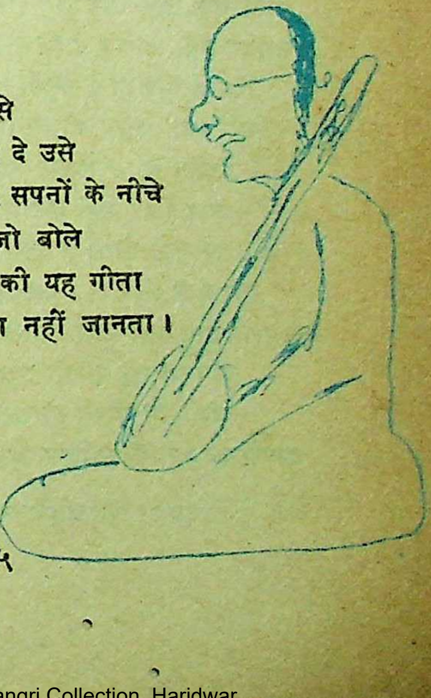

उदयन । शांतिनिकेतन
१७ फरवरी १९४१, शाम

।। चार ।।

बहुत तेज धूप पड़ रही
जनहीन बेला दुपहरी।
सूनी कुर्सी की ओर निरखता
नहीं वहां थोड़ी भी सांत्वना।
उसकी छाती में भरी
निराशा की भाषा हाय-हाय करती।
शून्यता की वाणी में करुणा भर उठती
उसका मर्म गहा जाता नहीं।
कूकर स्वामिहीन देखे जैसे करुण निगाह
अरुण मन की व्यथा वैसे ही करे हाय-हाय;
क्या हुआ क्यों हुआ कुछ नहीं बूझती –
दिन-रात व्यर्थ दृष्टि चारों ओर ढूंढ़ती।
कुर्सी की भाषा ज्यों और भी करुण-कातर,
शून्यता की मूक व्यथा से भरती प्रियहीन कक्ष।

उदयन। शांतिनिकेतन
२९ मार्च १९४१, शाम

।। पांच ।।

और एक बार यदि कर सका
तुमको वही आसन खोज दूंगा,
जिसके अंक में है बिछी हुई
बिदेसिया आदर की बानी।
अतीत के भागे हुए सपने
भीड़ फिर वहां लगायेंगे,
अस्पष्ट गूंजते कलरव से
एक नीड़ फिर से रच लेंगे।
सुख की याद बुला-बुला जो लायी
जागरण वह करेगी मधुर,
वंशी जो नीरव हो आयी
वापस वह लायेगी उसी का सुर।
बांहें फैलाकर रहेगी वातायन में
वसंत के सौरभ के पथ में,
महानिःशब्द की पगध्वनि
सुनी जायेगी निशीथ जगत् में।
बिदेसिया सनेह देकर
प्रेयसी जो बिछाये है आसन,
हमेशा रखेगी वह संजोकर
कानों-कान प्रिय का भाषण।
जिसे नहीं आती भाषा कोई
जिसकी बात चितवन ही कहती,
जगाये वह रखेगी हमेशा
उसी की करुणामयी वार्ता।

उदयन। शांतिनिकेतन। ६ अप्रैल १९४१, दोपहर

अपनी कलकत्ता यात्रा में मैं रवींद्रनाथ ठाकुर का घर देखने गया। वहां मैंने एक ऐसे पक्षी का चित्र देखा, जिस पक्षी का दुनिया में कभी कहीं अस्तित्व नहीं रहा है। वह रवींद्र की आत्मा में उपजा और जिया था—उनकी कल्पना की कृपा से। बेशक उन्हें वास्तविक रूप से विद्यमान पक्षियों का ज्ञान नहीं था, वरना वे इस अजीबोगरीब जीव की आकृति कभी सिरज न पाते।

—रसूल गमज़ातोव (दागिस्तानी कवि)

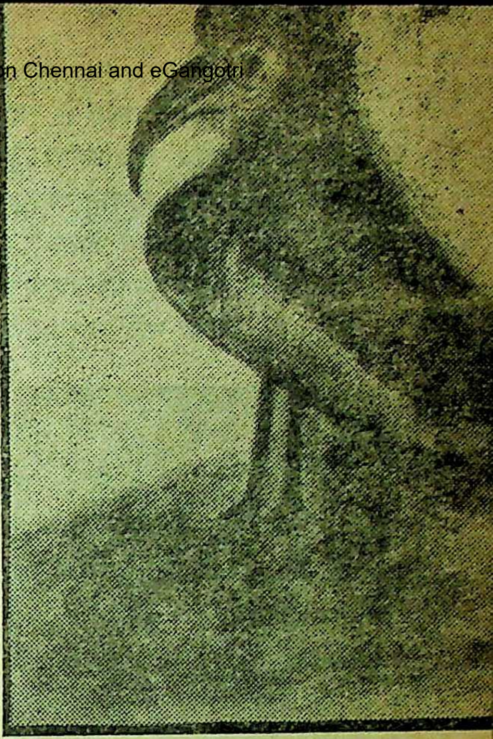

।। छह ।।

यह महामानव आता
दिशा-दिशा में रोमहर्ष आता
नश्वर जगत् के तिनके-तिनके पर।
स्वर्ग में शंख बज उठते
भूतल पर जयडंके बजते
आयी महाजीवन की लग्न।
अमावस की रात आज सारे दुर्ग-तोरण
माटी में मिल गये सब परिचूर्णित भग्न।
उदयाचल पर होता 'न डरो, न डरो' यह स्वन
मिलता नवजीवन का आश्वासन।
जय जय जय रे मानव के अभ्युदय,
महाकाश में उठता धीरे-से यही स्वर।

उदयन। शांतिनिकेतन। प्रथम वैशाख १३४८ बंग संवत् (७ अप्रैल १९४१)

।। सात ।।

जीवन पवित्र है, यह मैं जानता
खींच नहीं सकता किंतु उसकी रूप-रेखा
किस अनजाने रहस्य के उत्स से
उद्‌भव हो जाता है इस जीवन का
किस अनदेखे पथ से वह आता
कभी नहीं चल पाता इसका पता।

प्रतिदिन नयी निर्मलता
सूर्योदय इसे देता
लाखों कोस दूर से आलोक-लेखा
भर देती स्वर्णघट में अभिषेक-धारा।

इसी जीवन ने दी वाणी दिवस-रात्रि को
रच डाले वनफूल अगोचर के अर्चन को
आरती के दीप हैं जला दिये
निःशब्द संध्या की वेला।

चित्त ने उसे किया निवेदित
जीवन का प्रथम स्नेह
प्रतिदिन का सारा स्नेह
उसी के जादू की सुनहरी छड़ी से छुआ
जाग-जाग उठता;
प्रिया को किया है प्रेम
प्रेम किया फूलों की मंजरी से;
जिसको भी छू दिया फिर
उसको ही बना लिया अंतरतम।

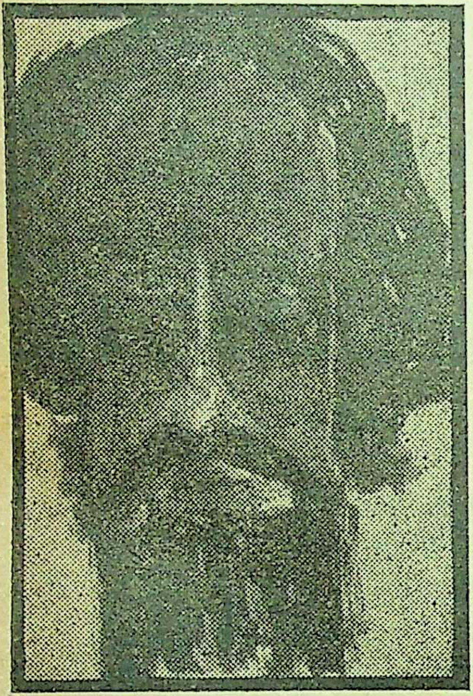

सेल्फ-पोर्ट्रेट

जीवन की पहली पोथी ले आती कोरे पन्ने
दिन-प्रतिदिन होते वे वाणी से पूरे।
निज का परिचय भी ग्रंथित हो जाता,
दिन शेष होने पर चित्र उभर आता,
निज को चीन्ह पाये

रूपकार निजी हस्ताक्षरों में
फिर मिटाये उसके वर्ण, उसकी रेखाएं
उदासीन चित्रकार काली स्याही से
अथवा कुछ स्वर्णलिपि जो नहीं मिट सकती
ध्रुवतारे के निकट उसी ज्योतिष्क की लीला जागती।

उदयन। शांतिनिकेतन। २५ अप्रैल १९४१

।। आठ ।।

विवाह के पांचवें बरस में
यौवन के सघन परस में
गुप्त रहस्य से पूर्ण
रसपुंज हृदय में परिपक्व
पुष्प-मंजरी सें फलस्तबक में
वृंत से त्वक् में
स्वर्णकांति व्याप्त कर देता।
संवृत मंद-मंद गंध अतिथि को कक्ष में बुला देती
संयत सुषमा से
पथिकों के नयन लुभा लेती
पांच बरस तक वसंत में माधवी-मंजरी
मिलन-स्वर्णपात्र में सुधा भरती गयी
मधु-संचय के अनंतर
मधुपों को मुखर कर देती।
शांत आनंद का आमंत्रण
सुन-आये न-बुलाये जन के लिए बिछा देता आसन।
विवाह के पहले वर्ष में
दिशा-दिशांतर में
शाहाना राग बजाती थी वंशी
फूट पड़ी तरंगित हंसी

आज प्रभात का मुख खिल रहा मुस्कान से
निःशब्द कौतुक से (हिमवातिहास से)।

कानड़ा बजा रही है बांसुरी खूब गहरी तान से
सप्तर्षिगण के ध्यान-आवाहन के लिए।

पांच वर्ष में खिले, विकसित सुख-सपने
घर-गिरस्ती मांझ पूर्णता का स्वर्ग ला चुके।
शुरू में वसंत पंचम राग बजा दिया
सुर-ताल-संपूरित आज वह हो उठा;
पुष्पित अरण्यतले पग-पग चलने पर
बजता वसंतराग मंजीरों में कांप-कांपकर।

उदयन। शांतिनिकेतन
२५ अप्रैल १९४१, सुबह

॥ नौ ॥

गढ़ता हूं वाणी की मूरत
मन लगाये
निर्जन आंगन में
माटी के लोंदों पर लोंदे
छितरे पड़ रहे हैं इधर-उधर –
अधूरे, गूंगे
शून्य पर दीठ जमाये
उत्कंठा-विरहित।
गर्वीली मूरति के चरणों पर आनत
नीचे किये रहते जो अपने सिर
क्यों नहीं दे पाते वे कुछ भी उत्तर।
उनसे भी बहुत अधिक शोचनीय वे
जो किसी क्षण रूप तो पा जाते
किंतु क्षण-प्रतिक्षण अर्थहीनता में
क्रमशः मिल जाते।
निमंत्रण मिला था यह कहां से, यह पूछने पर
नहीं दे पाते वे जो भी कोई उत्तर –

कौन-सा सपना संजोते
धूलि का कर्जा-सा ढोते
दिखाई पड़ते हैं वे
मानव के द्वारे।

भूले हुए स्वर्ग की किस
उर्वशी की प्रतिकृति
पृथ्वी के चित्र-पट पर
आंकना है चाहता
वह कवि –
तुमको वाहन की तरह
बुलाया था उसी ने
चित्रशाला में रखा जतन से,
कब वह अनमना-सा भूल गया न जाने
आदिम आत्मीय तेरी धूलि,
असीम वैराग्य से अपने दिशाहीन पथ पर
उठा ली थी चुपचाप रथ पर।

यही भला है
विश्वव्यापी धूसर संमान में
आज पंगु आवर्जना
नियत अवमानना
काल की गति में पग-पग पर
रोड़े अटकाना जानती
ठोकरों से, जीर्ण अपमान से
आखिर शांति पाती
जब फिर धूलि में मिल जाती।

उदयन। शांतिनिकेतन। ३ मई १९४१, सुबह

।।दस।।

अपने जन्मदिन के बीच में हूं खोया-सा
चाहता हूं, जो भी बंधु-बांधव हैं यहां
उनके हाथों के स्पर्श से
मर्त्य के अंतिम प्रीतिरस से
ले जाऊं जीवन का अंतिम प्रसाद
ले जाऊं मानव का चरम आशीर्वाद।

आज मेरी यह झोली सूनी
कर चुका हूं समूची रीती
देकर जो कुछ भी था देना
प्रतिदिन यदि कुछ भी था पावना—
कुछ सनेह, कुछ क्षमा —
तो उसे भी संग ही ले जाना—
अब पारगामिनि नाव में बैठूंगा मैं
भाषाहीन अंत के उत्सव में।

उदयन। शांतिनिकेतन
सुबह, ६ मई १९४१

।।ग्यारह।।

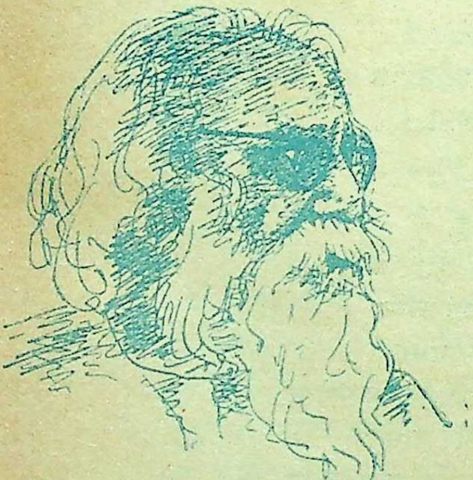

रूपनारायण के तीर पर
जाग उठा
जान लिया, यह जगत्
नहीं एक सपना।
रक्त के अक्षरों में देखा
रूप अपने आपका
अपने को चीन्हा
चोट पर चोट में
टीस पर टीस में
सत्य है कठिन
पर कठिन को किया है मैंने प्यार
देता वह धोखा कभी न।

आमरण दुःख की तपस्या यह जीवन,
सत्य का दारुण मूल्य पाने के लिए
मृत्यु से सारा कर्ज अदा करने के लिए।

उदयन। शांतिनिकेतन। १३ मई १९४१, रात्रि, ३·१५ मिनिट

।। बारह ।।

तेरे जन्मदिन की भेंट के उत्सव में
सजा है विचित्र आज यह
ऊषा का आंगन।
नयी जिंदगी का दानसत्र फूल-पत्तों में
हो रही प्रकृति परीक्षा कर
क्षण-प्रतिक्षण अपना भांडार
तेरे सामने रख उसने पाया सुअवसर।
दाता और ग्रहीता के संगम के लिए
नित्य ही जो आग्रह है विधाता का
आज वही सार्थक-सा हो रहा,
विश्वकवि उसी के विस्मय से
तुमको आशीष स्वयं दे रहा—
उसके कवित्व के साक्षी बन तुम दिखाई पड़े
वर्षा-धुले सावन के
निर्मल आकाश-तले।

उदयन। शांतिनिकेतन
सुबह, १३ जुलाई १९४१

।। तेरह ।।

प्रथम दिन के सूर्य ने
प्रश्न किया था
अस्तित्व के नये आविर्भाव से
कौन हो तुम ?
मिला नहीं उत्तर।
वर्ष पर वर्ष बीत गये
दिवस के अंतिम सूर्य ने
शेष प्रश्न पूछा पश्चिमांबुधि के तीर पर
निस्तब्ध सांझ के समय
कौन हो तुम ?
पाया नहीं उत्तर।

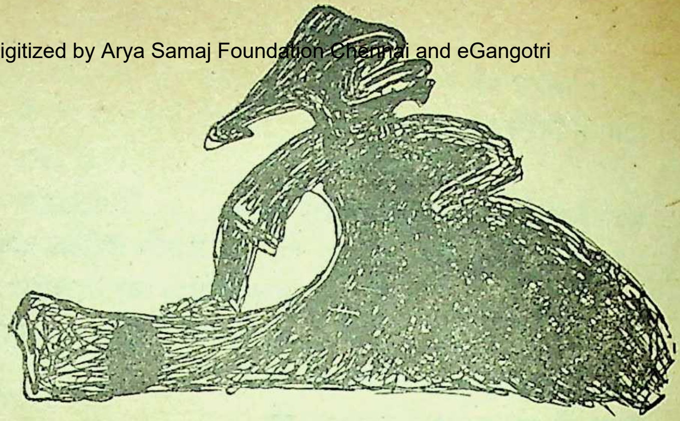

।। चौदह ।।

दु:ख की अंधियारी रात बार-बार
आयी है मेरे द्वार;
देखा था उसका एकमात्र हथियार
कष्ट का विकृत भान, त्रास की विकट भंगिमाएं सारी
अंधेरे में धोखेबाज उनकी अदाकारी।
जब-जब उसके डर के मुखौटे पर किया विश्वास
तब-तब हुई है अर्थहीन हार।

हार-जीत का यह खेल, जीवन की मिथ्या ये कुहक
बचपन से विजड़ित पद-पद पर छा गया आतंक
दु:ख के प्रहसन से पूर्ण
भय का विचित्र यह चलचित्र –
मृत्यु का कुशल शिल्प तमस में विकीर्ण।

जोड़ासांको। कलकत्ता
२९ जुलाई १९४१
शाम

।। पंद्रह ।।

अपने सृष्टिपथ पर तुमने रखा है बिछाकर
विचित्र छलना का जाल
हे छलनामयी !
कुशल कारीगरी से फंसाये हैं फंदे झूठे विश्वासों के
सरल जीवन में
महत्त्व भी हो गया है इसी प्रवंचना से चिह्नित
छोड़ी नहीं उसके लिए भी कोई रात ।
तेरे ज्योतिष्क तारे
जो हैं पथ दिखा रहे
वह तो है उसी के अंतर का पथ
वह तो है हमेशा से स्वच्छ
सहज विश्वास से वह
करता उसे चिर-समुज्ज्वल ।
बाहर से कुटिल भले ही हो, अंतर में है वह सरल
इसी से तो होता है उसका चिरगौरव
लोग उसे कहते हैं विडंबित ।
सत्य को पा रहा है वह
आंतरिक आलोक से प्रक्षालित ।
किसी से भी हो नहीं सकता है प्रवंचित
होता है वही आखिर में पुरस्कृत
अपने भांडार से ।
छलना जो अनायास सह सकता
तेरे हाथों से वही पा सकता
शांति का अक्षय अधिकार ।

जोड़ासांको । कलकत्ता
३० जुलाई १९४१
सुबह, साढ़े नौ बजे

★

दुर्घटना

गोविन्दबहादुर मल्ल 'गोठाले' की नेपाली कहानी

मुझे कुछ पता नहीं था कि ऐसा होगा, मुझे कुछ पता नहीं था। प्रसूति-गृह से मेरी पत्नी ने मुझे पुकारकर कहा—'आज आपको दावत में नहीं जाना है?'

मैंने कहा—'इस तरह क्यों बुलाया ? मैंने तो सोचा जाने क्या हो गया ! मुझे याद है।'

सवेरे जब से उठा था, मन में एक प्रकार का भारीपन महसूस हो रहा था। दुकान में चावल-वावल बेचते-बेचते किसी बात की जल्दी मुझे सता रही थी। बीच में अकेले होने पर भी मैं बहुत देर तक उठकर नहीं जा सका। पत्नी ने नवजात शिशु को स्तनपान कराते हुए कहा—'मैं तो न जा सकूंगी।' उसने फिर कहा—'बल्कि आप जल्दी ही चले जायें, दूर जाना है। फिर देर से नहीं लौटना चाहिये, आजकल का जमाना, रास्ते में अकेले चलना भी ठीक नहीं।'

'हां-हां!' मैंने झुंझलाकर कहा—'एक बात मिलनी चाहिये तुम्हें ! किचकिच करती रहती हो ! मुझे भी मालूम है।'

लेकिन मुझे नहीं मालूम था कि ऐसा होगा। मुझे दावत खाने जाना है, एक बड़े आदमी के यहां। मेरी साली का पति सेठ है। उसी के यहां साली के बच्चे के अन्नप्राशन की दावत है। कल से ही कौन-सा कपड़ा पहनकर जाऊं, कौन-सा कोट पहनकर जाऊं, इस बात की चिंता लगी थी। दस वर्ष पहले शादी में सिलवाया एक कोट है, 'दौरा-सुरूवाल' (नेपाली पोशाक) भी ढंग का एक ही है शहर से दूर चावल की दुकान करने वाला मैं ! मैं कहां से पाता दूसरा अच्छा कपड़ा ! फिर कपड़े सिलवाकर उसे मैं पहनता कब ? खाली पैसा बरबाद करना है। 'भारिया' (पहाड़ी कुली) और दूर से आये लोगों को 'वास' देने और माल-सामान बेचने के अलावा मुझे अन्य किसी व्यवहार के लिए फुरसत ही नहीं। कभी-कभार कुछ खरीदने के लिए शहर जाना पड़ता है, तभी शादी के वक्त सिलवाया कोट पहनकर जाता हूं। मेरा काम चल जाता है।

'कहां जा रहे हैं ?' शहर जाने के रास्ते में एक किसान ने मुझे जाते देखकर पूछा।

'दावत खाने शहर जा रहा हूं। साली के यहां।'

'ओऽऽ !' कहकर वह आगे बढ़ा। लेकिन मैंने उसे रोककर कहा—'रुको भई, एक चुरोट तो खाते जाओ !'

तब वह अन्यमनस्क होकर रुका। शहर में चावल बेचकर आया हूं, कपड़े खरीदकर लाया हूं, शहर में माल-सामान बड़े महंगे हो गये हैं—यह सब वह मुझे बताने लगा। लेकिन मुझे तो उसे कुछ बताने की उतावली

अनुवाद : दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ

थी। मैंने झट उससे कहा—'मालूम है, मेरी साली का पति सेक्रेटरी है?'

वह 'सेक्रेटरी' के अर्थ की गहराई न समझ सका। मैंने बताया—'सेक्रेटरी मंत्री से कुछ ही नीचे होता है। पहले-पहले के सुब्बा-सरदार भी उसका हुक्म मानते हैं!'

किसान को आश्चर्य हुआ। एकटक मुझे देखता रहा। 'ऐसा है? तब तो .....' वह बीच में रुक गया। फिर बोला—'अपना-अपना भाग्य है!'

'हांऽऽ' मैंने कहा। मेरा मतलब पूरा हो गया था।

मैं चुपचाप अपने रास्ते चलने लगा। मेरा कोई रिश्तेदार भी है। वह नेपाल का एक बड़ा आदमी है। पहले मैं उसके यहां साली की शादी में 'मुंह देखने' गया था। उसके बाद साली का आदमी, मेरा साढ़ू, 'कांगरेस पर्व' में जेल गया। एक दिन साली जब मेरे यहां आकर रोयी थी और उसने अपनी दिदी को सब बताया, तो मैंने साढ़ू-भाई को गाली दी थी कि उसने ऐसा खराब काम किया। अब क्रांति के बाद प्रजातंत्र आया है, लोगों को बात करते डरने की

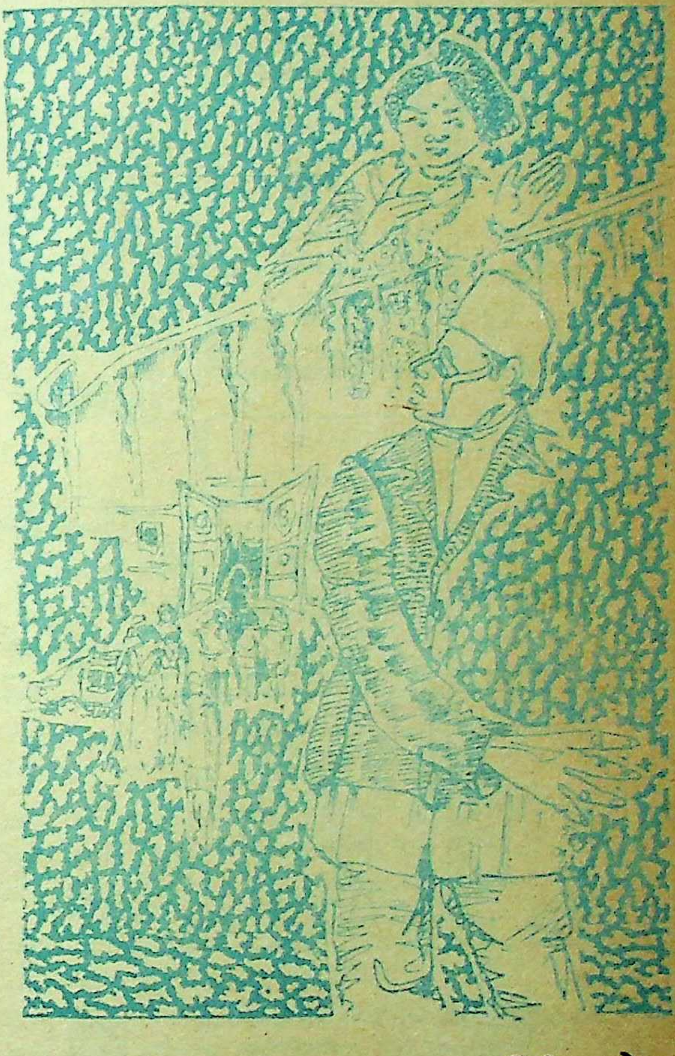

चित्र : वि. भटनागर

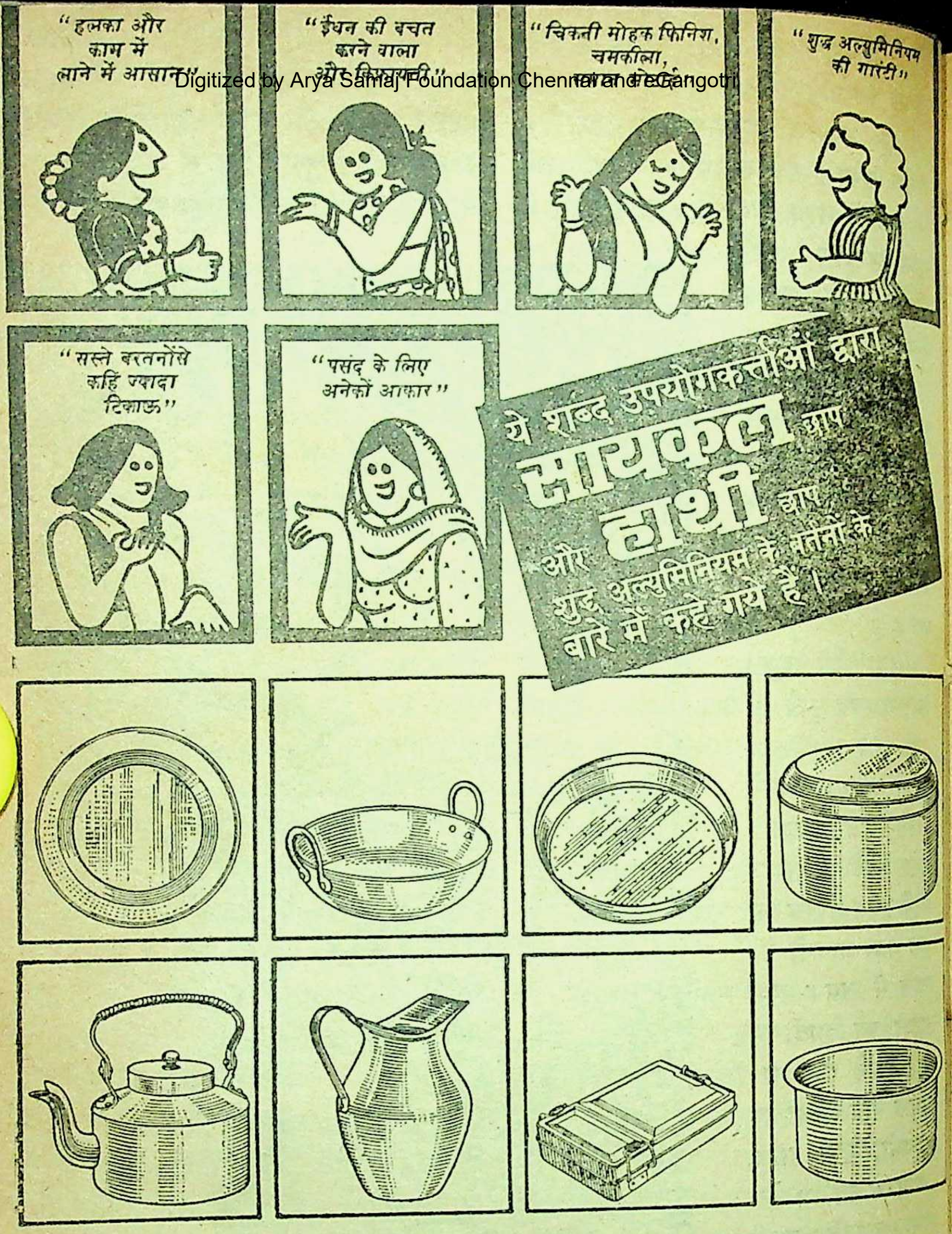
"हलका और काम में लाने में आसान"
"ईंधन की बचत करने वाला और किफ़ायती"
"चिकनी मोहक फिनिश, चमकीला, [illegible]"
"शुद्ध अल्युमिनियम की गारंटी"
"सस्ते बरतनोंसे कहीं ज्यादा टिकाऊ"
"पसंद के लिए अनेकों आकार"
ये शब्द उपयोगकर्त्ताओं द्वारा सायकल छाप हाथी छाप और शुद्ध अल्युमिनियम के बर्तनों के बारे में कहे गये हैं।

६० वर्षों से भी अधिक समय से
अल्युमिनियम में **सायकल** छाप और
हाथी छाप दो विश्वसनीय नाम

लल्लूभाई अमीचंद प्राइवेट लि
४८-५०, कंसारा चाल, बम्बई ४०००0२

Ratan Batra/LA/H/

जरूरत नहीं रह गयी । अपनी उन्नति की कल्पना करके बात करते वक्त 'इधर-उधर कोई सुन तो नहीं रहा है ?' यह कहकर सतर्क होने की जरूरत नहीं रह गयी अब !

साढ़ूभाई को गाली देने की बात याद करके मुझे हंसना चाहिये या रोना, कुछ समझ में नहीं आया।

रास्ते चलते एक आदमी को मैंने अपने पैरों की ओर घूरते देखा। मुझे शरम आयी। मैंने उस दिन मोजा भी पहन रखा था। मोजा नीचे सरक आया था। मोजा पहने मुझे बहुत दिन हो गये थे। उस दिन भी मोजा न पहनने से कुछ फर्क पड़ता या नहीं, मैं कुछ कह नहीं सकता। मोजा पहनकर ही गया। 'सुरूवाल' ऊपर उठा था या मोजा नीचे सरका था, पता नहीं। मेरे पास दूसरा कोई कपड़ा भी नहीं था; यदि मालूम होता कि सिकुड़ गया है तो भी क्या करता ?

मैं रास्ता तय कर रहा था। पैंट-कोट पहने एक नौजवान आया। उसने मेरी ओर देखा। या हो सकता है उसकी आंखें यों ही मेरे ऊपर पड़ गयी हों, उसने देखने के लिए न देखा हो ! मैं सिहर-सा गया। उसके पैंट-कोट कितने साफ-सुथरे, इस्तिरी किये हुए थे ! मैंने अपना कोट देखा। जब से सिलवाया है इस्तिरी नहीं लगा है। उस नौजवान के कोट के सामने मेरा कोट काला लग रहा था। लेकिन ईर्ष्या करने से मुझे क्या लाभ है, मैं नौजवान पट्ठा नहीं हूं। मैं तो गांव का परचूनी हूं। अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर इधर-उधर चलने से मेरा व्यापार नहीं चलने का। पट्ठे लोग अच्छा पहनकर घूमते हैं, लेकिन जब सिर पर बोझ पड़ेगा, तब मेरे जैसे हो जायेंगे !

फिर, मैं कोई दूसरा आदमी भी तो नहीं हूं ! मैं तो जुजुमान 'साहू' हूं ! कपड़े तो तन ढंकने के लिए होते हैं। कपड़े पहने भी मैं जुजुमान हूं और बगैर कपड़ों के भी मैं जुजुमान ही रहूंगा ! मन में सोचता हुआ मैं चलता रहा, अचानक मेरी हथेली मेरे गालों तक पहुंची। मैं चौंका। उस रोज दूसरी ही चिंता में होने के कारण मैं दाढ़ी बनाना भी भूल गया था। बाद में खुद ही हंसा। दाढ़ी बनाता तो भी जुजुमान ही रहता, दाढ़ी नहीं बनायी तो भी जुजुमान ही हूं।

शहर पहुंचा। जब भी मैं शहर पहुंचता हूं, तो शहर मुझे नया लगता है। कितना रमणीय। कितने बड़े-बड़े कितने सारे मकान और कितने आदमी ! कितने किस्म-किस्म के चेहरे वाले लोग ! पता नहीं कहां-कहां से आते हैं इतने सारे लोग ! ये सब इतने सारे लोग क्या-क्या कितना काम करते होंगे। किस्म-किस्म के आकार-प्रकार के कपड़े, नयी-नयी डिजाइन के कोट-पैंट, औरतों का नया-नया फैशन, झीना-पतला 'ओढ़ना', चादर ओढ़ना नहीं भी हो सकता, हवा के साथ-साथ उड़ने वाले कपड़े ......। औरतें भी पढ़ने जाती हैं।

अचानक सर्र से जीप दौड़ी। मैंने एक आदमी से पूछा। माइक से चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। कल जुलूस और सभा

है। सरकार नागरिक अधिकार हनन करने जा रही है, इसलिए। 'अखबार, चार पैसा, चार पैसा ......' मुझमें इतनी समझ नहीं है, नहीं तो खरीदकर ढ़ता।

शहर में विचार, बुद्धि और चेतना की लहर आती है। वही लहर लहराती बहुत दूर हमारे गांव पहुंचती है, फिर सारे देश में फैल जाती है। इधर-उधर देखता-सुनता अपनी साली के मुहल्ले पहुंचा। लेकिन कौन-सा घर है, याद नहीं पड़ा। एक आदमी से पूछा तो उसने बता दिया। मुझे आश्चर्य आ, अभी-अभी इसी घर के नीचे से होकर कई बार गुजरा था। एक-दो आदमी आ-जा रहे थे। विश्वास नहीं हुआ कि यह वही घर है। मेरे स्मृतिपट का घर दूसरा ही था। सब कुछ बिलकुल नया था यह !

मैं दरवाजे पर खड़ा होकर 'क्या यही घर है?' सोचता रहा और जरा संकोच से अंदर घुसा। सीढ़ी से एक आदमी उतरा, उसने मुझे नहीं पहचाना। वह आदमी मुझे पहचाना-सा लग रहा था। मैं मुस्कराया। उसने उत्तर नहीं दिया। मुझे एक बार घूरकर वह बाहर की ओर गया। बाद में मुझे याद आया, वह तो साढ़ूभाई का भानजा था। उसने पिछली बार, जब मैं साली का 'मुंह देखने' आया था, मुझे एक सिगरेट दिया था।

मैं संकोचपूर्वक ऊपर की ओर चढ़ने लगा। छत पर पहुंचने ही वाला था कि सीढ़ियों से एक लड़की सरसराकर नीचे उतरी। रास्ते में मेरी तरह और दो-चार लोग भी थे। सभी यंत्रवत् हट गये। वह लड़की जिस तरह सीढ़ियों से उतरी थी, उसी तरह इधर-उधर देखे बिना सरसराकर एक कमरे में घुस गयी। उसका चेहरा, उसके केश, बिना चादर की पोशाक, सब कुछ देखकर मुझे एक तस्वीर की 'मेम' याद आ गयी। वहां खड़े एक सज्जन ने दूसरे को धीरे-से बताया—'मंत्रीजी की लड़की है, मंत्रीजी की!' जहां मंत्रीजी की लड़की आयी है, वहीं मैं भी आया हूं! मैं अपने आप पर आश्चर्यचकित हो गया।

मैं कमरे में जाने से हिचकिचाता रहा। तभी एक ने कहा—'बैठ न जाओ, यहां!' मैंने देखा वे लोग बाहर ही बरामदे में बैठे थे। वे लोग देखने में नौकर-से लग रहे थे। उनके साथ बैठने में मुझे हिचकिचाहट हुई। तभी मेरी साली नीचे उतरी। मैं अपनी साली को आश्चर्य से देखता रहा। वह भी 'मेम' की तरह लग रही थी। टप्-टप् आंसू गिराने वाली वह साली नहीं थी यह। उसने मुझे कुछ देर घूरकर देखा, फिर धीरे-से हंसी। मैं कुछ पीछे हटा, क्योंकि मैंने सोचा वह मेरा चरण-स्पर्श करने झुकेगी। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। उसने धीरे-से कहा, ताकि और लोग न सुन सकें—'अंदर कमरे में जाइये न!'

मैं डरते हुए बैठक का दरवाजा पार कर ही रहा था कि साली का स्वर सुनाई दिया—'मेरी दिदी का आदमी!'

मुझे आश्चर्य हुआ। उसने 'जीजाजी' न कहकर 'दिदी का आदमी' क्यों कहा?

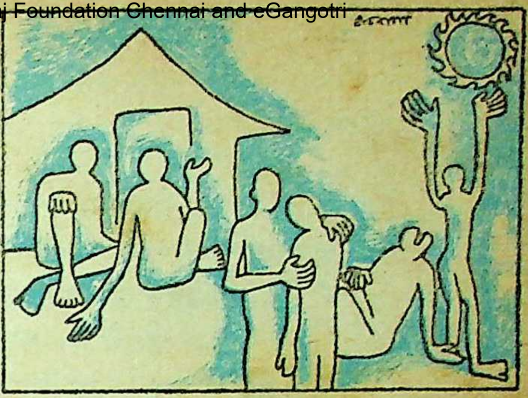

चित्र : ठाकोर राणा

बैठक में पहुंचकर मैं फिर हिचकिचाया, क्या यहां बैठना उचित होगा ? कैसा सजाकर रखा है कमरा ! चारों तरफ सोफे और टेबल लगे थे। वही मेम-जैसी लड़की एक सोफे पर बैठी भद्र पुरुषों से बेफिक्री से हंसी-मजाक में तल्लीन थी। 'राणा काल' से ही मेरे एक परिचित सरदार भी वहां बैठे हुए थे। अन्य लोगों को मैं पहचान नहीं पाया। सभी अच्छे-अच्छे कपड़ों में सजे पट्ठे थे। सबने एक बार मुझे देखा, फिर अपनी-अपनी बातों में तल्लीन हो गये। गोल-गोल छल्ला निकालते हुए सिगरेट पीते रहे।

अभद्र बनकर कुर्सी पर कैसे बैठूं, यह सोचकर मैं खिड़की के नजदीक जमीन पर ही बैठ गया। एक बार फिर लोगों ने मुझे आश्चर्य से देखा। मैं बिना इधर-उधर देखे खुद को देखता रहा। सोचता रहा—'मैं जुजुमान, जुजुमान ही हूं। मैं जुजुमान नहीं हूं, ऐसा कोई नहीं कह सकता। फिर भी साली की इज्जत के लिए ......

बैठक में लोग टेबल पर रखे सिगरेटों को निकाल-निकालकर पी रहे थे। मुझे भी सिगरेट पीने की इच्छा हुई। लेकिन ऐसे ही जाकर निकालना ठीक नहीं लगा। अपने पास का दो पैसे वाला 'फुल मार्का' सिगरेट भी कैसे पीऊं, वह भी ठीक नहीं। बाद में मैंने सोचा, 'फुल मार्का' सिगरेट पीने पर भी मैं जुजुमान ही रहूंगा, न पीने पर भी जुजुमान ही रहूंगा। तब सिगरेट निकालकर सुलगायी। लोग जोर-जोर से बातें करने और हंसने लगे थे।

'सरकार का मतलब जनता से है,' 'नहीं, यह प्रजातंत्र है ... कोई किसी का कहना नहीं मानता,' 'हा हा हा-ही ही ही,' 'जागीरदारों को राजनीति में भाग नहीं लेना चाहिये,' 'आजकल कोई अच्छी फिल्में नहीं आ रहीं,' 'आजकल मोटर महंगी होती जा रही है,' 'सुरैया से नरगिस अच्छा काम करती है,' 'आजकल पार्टी बहुत स्वार्थी हो गयी है,' 'फुटबाल के अच्छे खिलाड़ी तो रक्षादल में ही हैं,' 'फिल्म तो राज कपूर की अच्छी होती है,' 'मैं तो स्वतंत्र आदमी,' 'जो देशभक्त नहीं है, वे जागीर न खायें,' 'हा हा हा-हो ही ही' 'लता मंगेशकर की आवाज......', 'आर्थिक समानता चाहिये ......कुछ समझ में नहीं आ रहा था, कौन क्या कह रहा है।

'आप कहां चले गये थे ? यहां कैसी-

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

निर्मल, तीसरी मंजिल, २४१, बैकबे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०००२१

तार : SODACHEM
फोन : २९२४०७–२९३२९४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :
* अपग्रेडेड इलमनाइट *
(सिंथेटिक रॅटाइल ९०-९२ TiO_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

* कास्टिक सोडा
* सोडियम बाइकार्बोनेट
* कैल्शियम क्लोराइट
* लिक्विड क्लोरीन
* सोडा एश
* अमोनियम बाइकार्बोनेट
* ट्रिक्लोरो एथिलीन
* हाइड्रोक्लोरिक एसिड

* साल्ट *

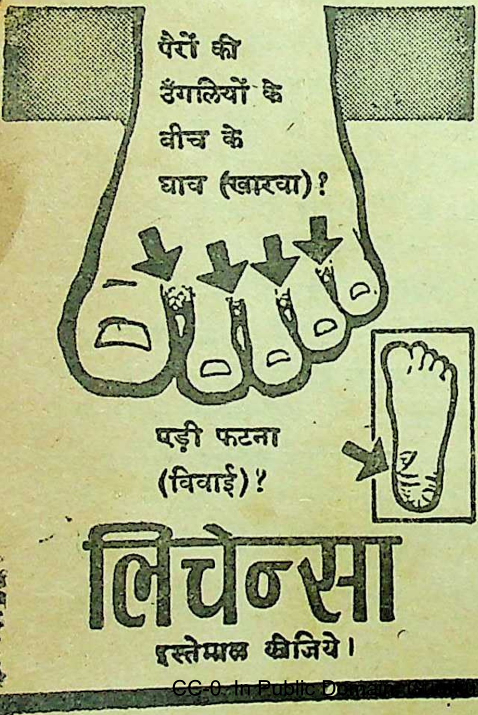

पैरों की उँगलियों के बीच के घाव (खारवा)?

पड़ी फटना (बिवाई)?

लिचेन्सा

इस्तेमाल कीजिये।

नॉक-११ ®

अधिक संपृक्त

अति-तीव्र खटमल नाशक

सुजानिल केमो इण्डस्ट्रीज,
चिंचवड, पूना - १९.

कैसी बातें हो रही थीं !'

'भई, ऊपर भी तो देखना पड़ता है !'

उस आदमी की आवाज सुनकर मैंने उसकी ओर देखा। मैंने झट-से नमस्ते की। उसने भी तुरंत नमस्ते लौटायी। वह भौंचक्का-सा थोड़ी देर मुझे देखता रहा, फिर पूछने लगा–'अभी आये क्या ?'

वह आदमी मेरी साली का पति था। बाद में मुझे शरम आयी। वह तो मुझसे छोटा है, मुझे पहले नमस्ते नहीं करनी चाहिये थी। लेकिन शायद उसी ने पहले नमस्ते की थी। जो भी हो, वह बड़ा आदमी है। लेकिन कैसे ..... मैं पसोपेश में पड़ा।

'अच्छा, अब उठा जाये !' सुनकर सभी उठ खड़े हुए। मंत्रीजी की लड़की भी उठी। उसने कहा–'मैं चली, मोटर आ गयी !'

मैं पसोपेश में था कि उठूं या न उठूं। 'आप भी आइये !' एक आदमी ने, जो अभी-अभी कमरे में घुसा था, मुझसे कहा। मैंभी भीड़ के पीछे-पीछे चला। मैंने बाहर से देखा, कमरे में खाना सजाकर रखा गया था। कांच के बरतनों में सजाया गया कितना सारा खाना ! असली शराब की बोतलें भी थीं। 'ज्यादा मत खाइयेगा, हां ?' पत्नी ने मुझसे कहा था। मुझे हंसी आयी। फिर से सोचा–'नहीं तो, इतनी सारी अच्छी चीजें कैसे पचाऊंगा ?'

'आप उधर कमरे में आइये !' वही साढ़ूभाई का भानजा कह रहा था।

'अच्छा !' कहकर मैं घूमा। एक अजीब किस्म का संतोष मुझे हुआ। अपरिचित लोगों के सामने बैठकर कैसे खाऊंगा, इस बात का मुझे संकोच लग रहा था। मैं बताये गये कमरे में गया। 'इधर !' मैंने पूछा।

'हां !'

उस बताये गये कमरे में पहुंचते ही मैं एकदम से रुक गया। नहीं, मेरी आंखों को भ्रांति हो गयी शायद, यह सोचकर मैंने अच्छी तरह से देखा। नहीं, शायद दूसरा कमरा होगा, यह सोचकर मैंने उस भानजे की ओर फिर देखा। उसने हां-हां', आइये, आइये !' कहा। उसी वक्त रसोइया उस कमरे से बाहर निकला। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। यह कमरा पहले कमरे की तरह सजाया नहीं गया था। वहां अच्छे-अच्छे बरतनों में खाना नहीं रखा गया था। जमीन पर ही पत्तों पर तरकारी-अचार परोसकर रखा गया था। मिट्टी के पुरवों में पानी था। मैं दरवाजे पर ही खड़ा रहा।

'भीतर आइये न, भीतर !'

'आता हूं !' मैंने कहा और खड़ा रहा।

'ओह यहां एक और जगह बनानी चाहिये थी !' भीतर से एक ने कहा।

मैंने कहा–'मैं एक बार नीचे होकर आता हूं।' और चुपचाप सीढ़ियां उतरने लगा। मैंने किस तरह अपना जूता पहना, किस तरह एक आदमी के 'कहां जा रहे हैं ?' पूछने पर 'लघुशंका करके आता हूं' कहा, कुछ भी याद नहीं आता। अभी आश्चर्य होता है। मैं सड़क पर पहुंचने पर चौंका था–'अरे ! मैं तो भोजन किये बगैर ही चला आया !'

आपके सहयोग से हम आपकी बेहत्तर सेवा कर सकते हैं

१९७३-७४ के दौरान
निपटाये गये दावों की संख्या

३.७४ लाख

दावों का भुगतान
१९७३-७४ में निगम द्वारा

रु. १०७.३६ करोड़

१९७३-७४ के दौरान, निगम ने सूचित दावों में से ७९ प्रतिशत से अधिक दावों का भुगतान किया। राष्ट्रीयकरण के पहले की बीमा कम्पनियों के कार्य से यह रेकार्ड कई गुना अच्छा है।

बीमेदार या उनके वारिसों ने पालिसी-दस्तावेज, मृत्यु का प्रमाण, हक़नामा आदि आवश्यक प्रमाण समय पर पेश नहीं किये और इसलिए बहुत से दावों का भुगतान न हो सका। तो भी १२५० से अधिक दावों के लिए औसतन ३६ लाख रुपयों का भुगतान प्रत्येक कार्य-दिवस पर होता रहा। भुगतान की कार्य-प्रणाली अब अधिक सरल बनायी है। इसके लिए निगम ने दावा भुगतान सेवा विभाग खोला है जो अपनी किस्म का सारे भारत में पहला विभाग है। अब दावे के भुगतान को निगम में चरम अग्रता दी जाती है।

आपके दावों का शीघ्र भुगतान करा लेना आप ही के हाथों में है। अतः विलम्ब न कीजिए, पालिसी में अपनी आयु को प्रमाणित करा लीजिए तथा आपके पते में यदि हेरबदल हो जाए तो उसकी इतला तुरन्त कार्यालय को दीजिए।

सामान्यतः दावे की तिथि से एक महीने पहले निगम आपके पास डिस्चार्ज वाउचर भेज देता है। जिस कार्यालय ने पालिसी जारी की थी उसी के पास पूरा विवरण देकर पालिसी भेजिए।

यदि दावे के भुगतान में देरी हो जाए तो उस कार्यालय के कार्यभारी अधिकारी से मिलिए जिनसे आपका अंतिम समय तक सम्पर्क था। जब कोई संदेह पैदा हो जाय तो उचित सलाह के लिए अपने ऐजन्ट से या पास के जीवन बीमा निगम कार्यालय से सम्पर्क स्थापित करे।

कर सकेंगे सेवा...आपकी सहायता के बल पर!

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

RADEUS/LIC/AS-8

मैं अपने तईं शरमाया या साली या साढ़ूभाई के लिए शरमाया, कह नहीं सकता। अंधेरा हो चुका था; मैं भागकर घर की ओर जा रहा था। या अपनी पत्नी के लिए शरमाया नहीं कह सकता। मैं अपने से भाग रहा था, या औरों से दूर भाग रहा था। एक जगह सुनसान पाकर थकान मिटाने रुका। एक पुलिया थी। पुलिया के रेलिंग का सहारा लेकर मैंने संध्याकाल-से काले पानी की ओर देखा। मैंने कहा—'मैंने भरपेट खा लिया है!'

बिलकुल अंधकार। रास्ता सुनसान। मैं चल रहा था। मुझे कोई नहीं चाहिये, आश्चर्य! मुझे डर भी नहीं लगा। मेरी आंखों के सामने पहले की बातें स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगीं। तब क्रांति नहीं हुई थी। मैं रास्ते में किसी चीज की गठरी लेकर जा रहा था। रास्ते में 'जनरल' की सवारी हुई। एकाएक एक आदमी ने गर्दन पकड़कर मुझे हटा दिया और गाली दी, ... 'देखते नहीं जनरल साहब की सवारी हुई है?'

मैं छोटा ही था। बाप ने कहा—'दुकान में बैठ!' लेकिन मैं उलटा पैसा चुराकर जुआ खेलने गया। बाप मुझे कान पकड़कर ले आया। मैं रोता रहा। बाप ने समझाया, 'यह सब तेरी ही भलाई के लिए है!'

फटा-पुराना कपड़ा पहने कुली, लकड़ी बेचने वाले लकड़हारे, मेरी दुकान पर आते। एक 'भरिया' (कुली) से एक पैसे के लिए झगड़ा हो गया। मैंने उसे 'कुजात' कहा, तो उसने मुझे पीट दिया। इसके बाद उसे औरों ने मिलकर खूब मारा। मैं एकांत में बैठकर सोचता रहा—'मुझे उसे "कुजात" नहीं कहना चाहिये था!'

क्रांति, भयानक क्रांति, शहर में जुलूस आते देखकर मैं घर आ गया भागकर। दुकान-वुकान बंद करके सोचता रहा—'अगर मैं भी क्रांति में भाग ले सकता!'

पत्नी, साली, साढ़ूभाई, फिर मैं, पत्नी, साली, साढ़ूभाई, मैं, पिताजी, मां—इन सभी को मैं देख रहा था।

मैं चौंका। घर आ गया। पत्नी के प्रसूति-गृह में न जाकर मैं अपने कमरे में गया। पत्नी ने वहीं आकर कहा—'बड़ी देर कर दी। मैं तो डर रही थी!' मुझे शरम आयी। मैं पत्नी की ओर न देख सका, दूसरी ओर देखता रहा।

आधी रात हो गयी। चारों तरफ सन्नाटा। सब सो गये थे। शिथिल होकर मैं भी सोना चाहता था। नींद उड़ गयी थी। लेकिन भूख लग रही थी। लेकिन आज मैं नहीं खाऊंगा। कुछ नहीं खाऊंगा। लेकिन मुझे किसी के साथ द्वेष-राग नहीं है। किसी के भी साथ नहीं है। अपने साथ भी नहीं।

सपना देखा जैसा लगा। लेकिन वह सपना नहीं था। परलोकवासी मां का स्वर जैसा सुनाई दिया। 'बेटा जुजुमान!' मैंने आंखें खोलकर चारों तरफ देखा। कमरे में व्यथा-भरी हुई थी। मैंने धीरे-से जवाब दिया—'मैं यहां हूं, मां!' मुझे किसी के साथ द्वेष-राग नहीं है। लेकिन मुझे यह भी पता नहीं था कि ऐसा होगा। कुछ पता नहीं था।

★

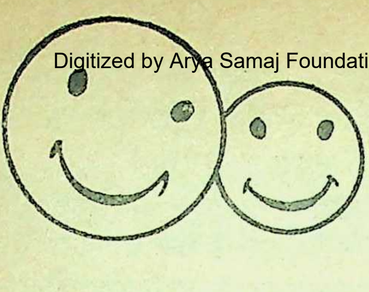

हंसी के बुलबुले

शिरीषचंद्र

कभी रूसी यहूदी कहा करते थे कि चुटकुलों का सर्वोत्तम श्रोता होता है रूसी जमींदार; क्योंकि हर चुटकुले पर वह तीन बार हंसता है—पहले जब आप चुटकुला सुनाते हैं, दूसरे जब आप उसकी व्याख्या करते हैं, तीसरे जब वह उसकी समझ में आता है।

रूसी अफसर उतना अच्छा श्रोता नहीं होता; क्योंकि वह दो ही बार हंसता है—जब आप चुटकुला सुनाते हैं, और जब आप उसकी व्याख्या करते हैं। वह चुटकुले को कभी समझ नहीं पाता।

रूसी किसान तो और भी बुरा श्रोता होता है; क्योंकि वह बस एक ही बार हंसता है—जब आप उसे चुटकुला सुनाते हैं। उसके पास आपकी व्याख्या सुनने का वक्त ही नहीं होता और अगर सुन भी ले, तो वह उसे समझ नहीं पाता।

मगर सबसे बुरा श्रोता होता है यहूदी। वह एक बार भी नहीं हंसता। आप ज्यों ही चुटकुला सुनाने लगते हैं, वह बीच में बोल उठता है—'बस करो यार! यह चुटकुला मैंने पालने में ही सुन लिया था।'

○○○

एक प्रगतिशील यहूदी परेशान था कि उसका बेटा स्कूल में प्रायः हर साल परीक्षा में फेल हो जाता है और कारण पूछने पर यही कहता है कि यहूदी होने के कारण मुझे ईसाई अध्यापक फेल कर देते हैं। अंत में उसने बेटे को ईसाई धर्म की दीक्षा दिला दी। मगर उस साल भी चिरंजीव फेल हो गया। कारण पूछने पर बोला—'पिताजी आप ही तो अक्सर कहा करते हैं, ईसाइयों के दिमाग नहीं होता।'

○○○

मेले-ठेलों में कपड़ा बेचने वाले दो यहूदी व्यापारियों की किसी रेल्वे-स्टेशन पर मुलाकात हो गयी। पहले ने पूछा—'कहां जा रहे हो?' दूसरे ने कहा—'मिंस्क जा रहा हूं।' इस पर पहला बोला—'असल में तुम चाहते हो कि मैं समझूं कि तुम मिंस्क नहीं पिंस्क जा रहे हो। मगर मैं जानता हूं कि तुम मिंस्क ही जा रहे हो। सो मुझसे झूठ बोलने की क्या जरूरत थी?'

○○○

यहूदी से किसी ने पूछा—'तुम यहूदी लोग हर सवाल का जवाब दूसरे सवाल से क्यों देते हो?'

'क्यों न दें ?' जवाब मिला ।

०००

एक यहूदी बड़े गर्व से बता रहा था कि उसके चारों बेटे बुद्धिजीवी हैं—एक लेखक है, एक डाक्टर है, एक वकील है, चौथा वैज्ञानिक है ।

'और आप ?' सुनने वाले ने पूछा ।

'मैं तो दुकान चलाता हूं,......परचून की दुकान । खास बड़ी तो नहीं है, मगर इतनी कमाई हो जाती है कि चारों बेटों और उनके परिवारों की परवरिश कर लेता हूं ।'

०००

एक यहूदी जिसने पिछली शाम को ही अपनी बेटी की शादी की थी, रब्बी (यहूदी धर्मगुरु) के पास आया और बेटी को तलाक दिलवाने की प्रार्थना करने लगा ।

'दूल्हे में कोई खराबी है ?' रब्बी ने पूछा ।

'ताश खेलना नहीं जानता ।'

'क्या कहा ? ताश खेलना नहीं जानता ! मैं तो भगवान से मनाया करता हूं कि कोई भी यहूदी नौजवान ताश न खेल पाये ।'

'बात ठीक है,' लड़की का पिता उदासी से बोला—'मगर यह युवक खेल पाता नहीं, फिर भी खेलता है ।'

०००

एक पत्रिका ने 'धूम्रपान कैसे छोड़ें ?' इस प्रश्न का संक्षिप्त उत्तर पाठकों से मांगा । जो हजारों उत्तर आये । उनमें सर्वोत्तम यह था :

'१६ जून १९६४ की दोपहर के १२.३० बजे—हां ठीक १२.३० बजे—मेरी पत्नी और मैं अपनी बैठक में सिगरेट के धुएं के घने बादल से घिरे बैठे खांस व खखार रहे थे कि एकाएक मैंने वह संकल्प किया, जिसने जिंदगी बदल डाली । मैंने सिगरेटों का पैकेट उठाया और जोर से बाहर फेंक दिया । सौभाग्य से वह बालकनी की रेलिंग से टकरा कर अंदर ही गिर पड़ा; "सौभाग्य से" मैंने इसलिए कहा कि मैं चीजों के अपव्यय के सख्त खिलाफ हूं । मैंने उसे उठा लिया । मगर मैंने फैसला कर लिया कि मेरी पत्नी सिगरेट पीना छोड़ देगी; क्योंकि उसकी कमाई में हम दोनों का सिगरेट पीना पुसाता नहीं था । चूंकि मैं जानता हूं कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है, मैंने स्वार्थ को तिलांजलि देकर निश्चय किया कि मेरी पत्नी आज से सिगरेट पीना छोड़ दे—अपनी पत्नी के स्वास्थ्य के मुकाबले मैं अपने स्वास्थ्य को बहुत ही कम महत्त्व देता हूं ।'

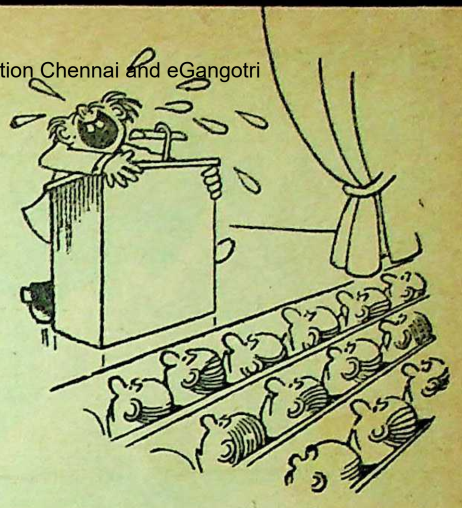

'...आपको एक और मजेदार किस्सा सुनाऊं...'

★

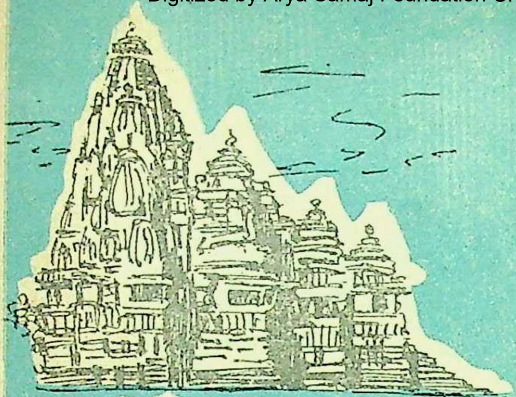

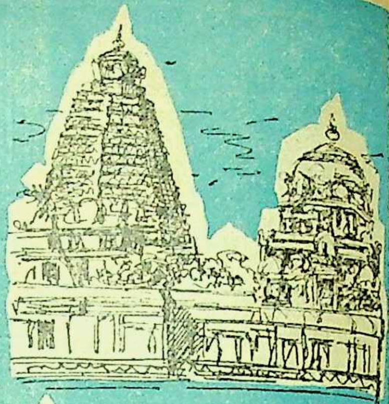

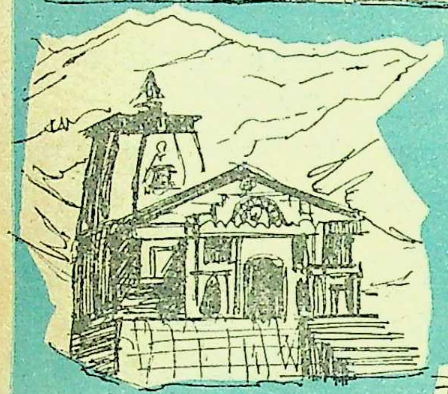

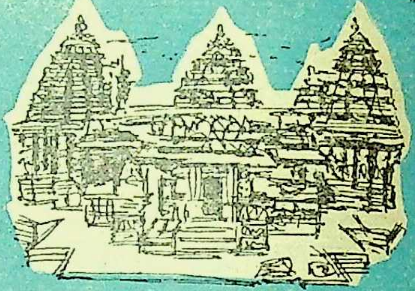

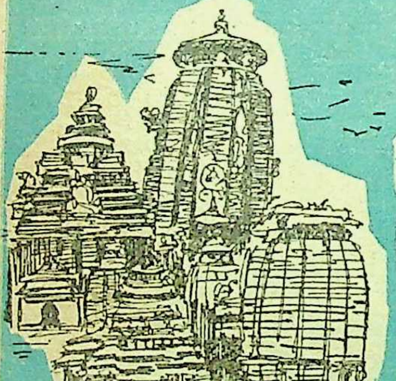

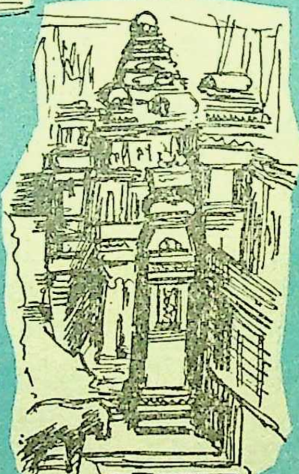

चित्रप्रश्न २

भारत अपने प्राचीन मंदिरों के लिए विश्वविख्यात है। यहां पर हम भारत के छह प्रसिद्ध मंदिरों के चित्र दे रहे हैं। देखिये, आप इनमें से कितनों को पहचान पाते हैं। उत्तर सितंबर अंक में पढ़ें।

किशोरों के लिए विज्ञान :

उपग्रहों के घूमने के सिद्धांत

डा. जगदीश लूथरा

अप्रैल १९७५ की १९ तारीख को भारतीय समय के अनुसार १२ बजकर ५९ मिनिट ११ सेकेंड पर भारत ने रूस की भूमि पर से रूसी राकेटों की सहायता से एक उपग्रह छोड़ा, जिसका नाम हमारे देश के एक महान प्राचीन खगोलशास्त्री के नाम पर 'आर्यभट' रखा गया। उपग्रहों के बारे में तुम पहले लेखों में काफी कुछ पढ़ चुके हो। आज हम उपग्रहों के घूमने के सिद्धांतों के बारे में चर्चा करेंगे। मगर उससे पहले जरा विज्ञानी आर्यभट और उपग्रह आर्यभट दोनों के बारे में कुछ जान लें।

विज्ञानी आर्यभट का जन्म शक संवत ३९८ (४७६ ई.) में कुसुमपुर में हुआ था। उसका प्रसिद्ध ग्रंथ 'आर्यभटीयम्' है। उसमें १२१ श्लोक हैं और गणित व खगोल संबंधी चार पाद (अध्याय) हैं, जिनमें सौर वर्ष, चांद्र वर्ष, ग्रहों की गतियां व दूरियां इत्यादि के बारे में जानकारी दी गयी है। आर्यभट ने 'पाइ' (वृत्त की परिधि और व्यास का अनुपात) का मान ३.१४१६ बताया है। (आर्यभट के बारे में मार्च १९७१ के नवनीत में एक छोटा लेख छपा था। एक विस्तृत लेख अगले कुछ महीनों में प्रकाशित करेंगे—संपादक।)

भारत ने इस महान वैज्ञानिक के संमान में अपने जिस उपग्रह का नाम आर्यभट रखा है, वह २६ मुखों (पहलुओं) वाला, नीले व बैंगनी रंग और ३६० किलोग्राम वजन का है। वह पृथ्वी से ६०० किलोमीटर (असल में ६२६ किलोमीटर भूमि-उच्च और ५६४ किलोमीटर भूमि-नीच) ऊंचाई पर वृत्ताकार कक्षा में घूम रहा है और ८ किलोमीटर प्रति सेकेंड की रफ्तार से ९६.४१ मिनिट में एक चक्कर पूरा कर रहा है। यद्यपि अपने शक्तिसंकाय में गड़बड़ी हो जाने की वजह से यह अपना कार्य सही ढंग से नहीं कर पाया; परंतु इसका अंतरिक्ष में छोड़ा जाना भी हमारे देश के लिए एक महत्त्वपूर्ण घटना है।

तुम सभी ने बचपन में कभी न कभी डोरी के एक सिरे पर बंधी किसी वस्तु को घुमाया होगा। जरा देखें कि इस घटना में क्या होता है। गोल घेरे में घूमती हुई वस्तु डोरी को अपनी ओर खींचती है। यदि रस्सी तोड़ दी जाये या स्वयं टूट जाये, तो वह वस्तु वृत्ताकार पथ तजकर सीधे एक ही दिशा में भाग जाती है, जैसा कि चित्र (पृ. १३१) में दिखाया गया है। तुम जानते हो कि हर वस्तु की प्रवृत्ति सीधी रेखा में गति करने की

जब भी आप क़ीमती शैंपू से बाल धोती हैं अपना बहुमूल्य पैसा
पानी के साथ बहा देती हैं इसलिये अब बाल धोने के लिये लाइये

स्वस्तिक
शिकाकाई
शैंपू साबुन

लिक्विड शैंपू के सभी गुणों से युक्त...
और ख़र्च कम!

SWASTIK
SWASTIK
SHIKAKAI

स्वस्तिक शिकाकाई शैंपू साबुन में
शिकाकाई मिला है—भारतीय महिला के मनोरम बालों का
पारम्परिक रहस्य.

shilpi-shilp la/75 hin

होती है। परंतु ऊपर बताये गये उदाहरण में वस्तु पर एक लगातार बल लगने के कारण उसकी गति वृत्ताकार हो गयी है। वह बल है डोरी का तनाव, जो कि हमेशा केंद्र की ओर होता है। उसे अभिकेंद्री बल कहते हैं।

तुम्हारे मन में एकदम यह सवाल उठेगा कि यदि वस्तु पर बल केंद्र की ओर है, तो वह (वस्तु) केंद्र की ओर ही क्यों नहीं चली आती और वृत्ताकार कक्षा में क्यों घूमती है? इसकी वजह है वस्तु पर एक दूसरे बल का लगना। बात यह है कि वस्तु भी अभिकेंद्री बल के बराबर किंतु विपरीत दिशा में (यानी केंद्र से बाहर की ओर) एक प्रतिक्रिया-बल लगाती है, जिसे अपकेंद्री बल कहते हैं। यह बल वस्तु द्वारा डोरी से होकर वस्तु को घुमाने वाले हाथ पर कार्य करता है। क्योंकि इसकी दिशा केंद्र से बाहर की ओर होती है, डोरी तनी रहती है।

भौतिकशास्त्र की पुस्तकों में अभिकेंद्री बल के लिए यह सूत्र दिया जाता है :

$$F=\frac{mv^2}{r}$$

इसमें :-

$F=$ अभिकेंद्री बल
$m=$ घूमती हुई वस्तु का द्रव्यमान
$v=$ वस्तु का वेग
$r=$ वृत्त की त्रिज्या

न्यूटन के नियम के अनुसार, अभिकद्री और अपकेंद्री बल एक दूसरे के क्रियात्मक एवं प्रतिक्रियात्मक बल हैं। इन दो बलों का सिद्धांत सूर्य के चारों ओर ग्रहों के घूमने और पृथ्वी के चारों ओर चंद्रमा अथवा मानव-रचित उपग्रहों के घूमने पर भी लागू होता है।

सूर्य के चारों ओर किसी ग्रह के वृत्ताकार कक्षा में घूमते समय अभिकेंद्री बल ग्रह पर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण बल से दिया जाता है, जिसका मान होता है :

$$=G.\frac{Mm}{r^2}$$

इसमें :- M तथा m क्रमश: सूर्य और ग्रह का द्रव्यमान, r सूर्य और ग्रह के मध्य की दूरी तथा G एक नियतांक है।

इस अवस्था में सूत्र-१ तथा सूत्र-२ से यह तीसरा सूत्र प्राप्त होता है :

$$\frac{mv^2}{r}=G\,\frac{Mm}{r^2} \text{ अथवा } v^2=\frac{GM}{r}$$

इस सूत्र से यह जाहिर होता है कि ग्रह का वेग केवल इस बात पर निर्भर होता है कि वह सूर्य से कितनी दूरी पर है। कोई ग्रह सूर्य के चारों ओर एक चक्कर लगाने में जो समय लेता है, वह उस ग्रह का साल है।

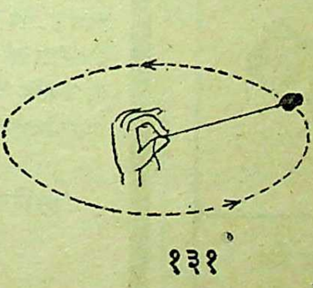

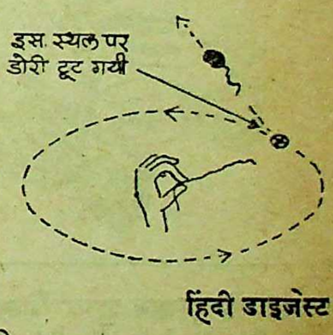

आओ — एक सौदा करें।

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—

गोला

टॉफियां और मिठाइयां

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.प्र.

'औरमो' छाप असोनिया कागज़

(पैरा - डाइजो टाइप)

- चमकदार और सुन्दर छपाई
- बरतने और रखने में टिकाऊ
- जल्दी और अच्छे परिणा
- कम खर्च और सस्ता.

स्टैंडर्ड साइज के रोल और शीटस हर प्रकार
मीडियम फास्ट और सूपर फास्ट की स्पीड्स
मिलते हैं. रोशनी और नमी से बचाव के लि
पोलीथीन के टयूब और रैपरों में पैक किया हु
होता है. यह देर तक खराब न होने वाला अ
क्वालिटी की छपाई के लिये गारन्टी किया हु
है, क्योंकि औरमो का बेस पेपर भी ओरि
पेपर मिल्स का बनाया हुआ है।

ओरियंट पेपर मिल्स लिमिटेड
ब्रजराज नगर, उडीसा

अतः जो ग्रह सूर्य के निकट होता है, उस ग्रह का साल छोटा तथा जो दूर स्थित होता है, उसका साल लंबा होता है। इसी प्रकार का सिद्धांत उपग्रहों के घूमने पर लागू होता है।

इस संकाय में पृथ्वी को केंद्र मानकर ऊपर बताये गये सिद्धांत से उपग्रहों के घूमने के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। ऊपर वाले सूत्र के अनुसार जो उपग्रह पृथ्वी के नजदीक होगा, वह जल्दी-जल्दी पृथ्वी की परिक्रमा करेगा। ज्यों-ज्यों पृथ्वी से उसकी दूरी अधिक होगी, उसका परिक्रमा-काल भी बढ़ता जायेगा।

यह ध्यान देने योग्य बात है कि ऊपर बताये सूत्र-३ में उपग्रह का द्रव्यमान नहीं आता; इसका मतलब यह हुआ कि यदि अलग-अलग वजन के दो उपग्रह एक ही कक्षा में घूमें, तो वे एक ही रफ्तार से पृथ्वी की परिक्रमा करेंगे। **–११ सी, धवलगिरि,**

अणुशक्ति नगर, बंबई-४०००९४

★

महंगाई की इस विस्तृत मरुभूमि में सजग, अपढ़ भारतीय मस्तिष्क भी स्वयं कैसे साधन जुटाकर ओएसिस की सृष्टि कर लेता है, इसका ज्वलंत प्रमाण मिला उस दिन, जब अपनी दरिद्र महरी के कच्चे आंगन से आती मसाले की सुगंध सीधे मेरे बरामदे में दस्यु-सी चली आयी। आश्चर्य भी हुआ, अभी-अभी तो बेचारी मेरे पास महंगाई का रोना रोकर गयी है–'का करी बहू जी, दालन में तो ससुरी आग लगी है, मटर-चना की दाल भी हुई गयी है दुई अस्सी ! मुला सब्जी को कउन पूछे।' तब अचानक आज उस टूटी-सी कढ़ाई में कौन-सा व्यंजन भूंज उसने इस मदमस्त सुगंध की सृष्टि कर दी। मैं अपना कौतूहल रोक नहीं पा रही थी कि वह स्वयं नमक मांगने आ गयी। 'क्या बना रही हो आज, बड़ी खुशबू आ रही है?' मैंने पूछा।

'हुजूर, गरीबी क़ा शोरबा।'

'गोश्त का शोरबा, तीतर-बटेर का शोरबा तो सुना था, पर यह गरीबी का शोरबा कैसा होता है?' और फिर उस मौलिक डिस की संक्षिप्त व्याख्या वह मुझे समझाकर चली गयी, तो मैं दंग रह गयी। कढ़ाई में बूंद-भर तेल, उसी में पिसा लहसून-प्याज, ढेर-सी मिर्च, तनी-सा खस-खस भूंज-भांज पानी छोड़ दिया। बस बन गया गरीबी का शोरबा, न सब्जी न दाल, केवल सुगंध का व्यर्थ आश्वासन।

मुझे लगा, आज के भारत की दरिद्र जनता-जनार्दन की सारी व्यथा की साकार परिभाषा है यह गरीबी का शोरबा–इसमें झांकने पर हम स्वयं अपना ही प्रतिबिंब देख सकते हैं। देखने में तरी भी, सुगंध भी, किंतु डुबकी लगाने पर केवल खोखले आडंबर की मरीचिका। आज यह उक्ति कितनी सत्य लगती है : 'हा कष्टं खलु जीवितं कलियुगे धन्या जना ये मृताः।' **–शिवानी ('वातायन' में)**

★

बालपाठकों के लिए :

रंग बदलने वाला फूल

सुखबीर

कुसुम स्कूल जा रही थी कि रास्ते में एक पेड़ के नीचे उसने एक बौने को बैठा देखा। बहुत ही छोटा-सा बौना था वह और उसने रंग-बिरंगे चिथड़े पहन रखे थे। उसकी दोनों आंखें अंधी थीं, उसके सिर के रूखे बाल जटाओं की शक्ल में उलझे हुए थे और उन बालों में एक छोटा-सा घोंसला बना हुआ था, जिसमें दो छोटे-छोटे अंडे पड़े थे।

कुसुम उसके पास जाकर रुक गयी और उसे बड़ी हैरानी और दिलचस्पी से देखने लगी। तभी उसका ध्यान बौने के पास पड़े एक फूल की ओर गया। वह उसे और भी हैरानी से देखने लगी। वैसा फूल उसने पहले कभी नहीं देखा था। फूल बेहद सुंदर था और इतना ताजा था, जैसे अभी-अभी टहनी से तोड़ा गया हो। उसकी पंखुड़ियों में कई रंगों की हल्की-सी आभा झलक रही थी।

कुसुम उसे देख ही रही थी कि बौने ने फूल उठाया और अपने नाक के पास ले जाकर सूंघने लगा।

कुसुम को वह फूल जितना सुंदर लगा, उतना ही वह बौना दयनीय लगा। उसे यह भी लगा कि वह बहुत भूखा है। उसकी इच्छा हुई कि उसे कुछ पैसे दे। उसने अपने जेब-खर्च के पैसों में से दस पैसे निकाले और उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा–'यह लो।'

'नहीं बेटी, मैं भिखारी नहीं हूं।' बौने ने कहा।

'पर तुम बहुत भूखे लगते हो।'

'हां, भूखा तो कई दिन से हूं।'

'तो फिर यह खाना खा लो, जो मैं अपने लिए स्कूल ले जा रही हूं।'

'हां, खाना खा लूंगा।'

कुसुम ने अपने बस्ते में से खाने का डिब्बा निकालकर उसे दिया, तो बौने ने पूछा–'क्या नाम है तुम्हारा ?'

'कुसुम।'

'कुसुम–यानी फूल !' बौने ने कहा और अपने हाथ में पकड़े फूल को आंखों के सामने लाकर जैसे देखने लगा–'बहुत सुंदर नाम है।'

'और यह फूल भी बहुत सुंदर है।' कुसुम बोली।

'तुम्हारे जैसा ही।'

'नहीं, मैं तो......मैं तो इतनी सुंदर नहीं हूं।' कुसुम के लहजे में उदासी थी।

'कौन कहता है ?' बौना कहने लगा–'तुम अच्छी हो, और हर अच्छी चीज सुंदर

होती है।'

सुनकर कुसुम को खुशी हुई।

बौने ने फिर कहा—'हां, हर अच्छी चीज सुंदर होती है। हो सकता है कि कोई सुंदर चीज अच्छी न हो, पर हर अच्छी चीज जरूर सुंदर होती है।' उसने फूल को एक तरफ रखा और खाना खाने लगा।

'यह किस चीज का फूल है?' कुसुम ने पूछा।

'यह फूल? यह जादू का फूल है।'

'अच्छा! कहां मिला तुम्हें?'

'एक पहाड़ पर। लो, तुम ले लो।' उसने फूल उठाकर कुसुम की ओर बढ़ाया—'यह रंग बदल सकता है। दिखाऊं तुम्हें? जरा आंखें बंद करो तो। ...... हां, अब खोलो। और देखो इसका रंग।'

'अरे, यह तो सुनहरा हो गया है!' कुसुम ने कहा।

'अब फिर से आंखें बंद करो तो। ...... और अब खोलो।'

'अब तो यह लाल हो गया है!'

'एक बार फिर आंखें बंद करके खोलो।'

'वाह, अबके यह नीला हो गया है। यह तो सचमुच जादू का फूल है! भला इसके रंग कैसे बदलते हैं?'

'जैसे आदमी के रंग बदलते हैं।' बौने ने कहा।

'आदमी के रंग। वह कैसे?'

'आदमी जोश या गुस्से में आता है, तो उसके चेहरे और आंखों का रंग लाल-सुर्ख हो जाता है न?'

'हां।'

'और किसी गम या दुःख में उसके चेहरे का रंग काला पड़ जाता है।'

'हां, ऐसा तो होता है।'

'और खुशी में उसका चेहरा चमक उठता है—सूरज की तरह।'

'हां, बिलकुल।'

'इसी तरह आदमी के गुणों के भी अलग-अलग रंग होते हैं।'

'गुणों के भी रंग होते हैं?' कुसुम ने पूछा।

'हां, अब जैसे बहादुरी का रंग केसरी माना गया है। बलिदान का रंग लाल, पवित्रता का रंग सफेद और शांति का रंग हरा माना गया है। वैसे तो फूल कभी हरे रंग के नहीं होते, पर यह फूल हरा भी बन जाता है। लो, इसे रख लो तुम।'

कुसुम फूल को पाकर बहुत खुश हुई।

बौना खाना खा चुका, तो कुसुम ने कहा—'अब मैं स्कूल जाती हूं। शाम को लौटूंगी, तो तुम्हारे लिए बेर लाऊंगी—पके हुए लाल-लाल बेर।'

'ईश्वर तुम्हारा भला

चित्र : टी. ए. राणा

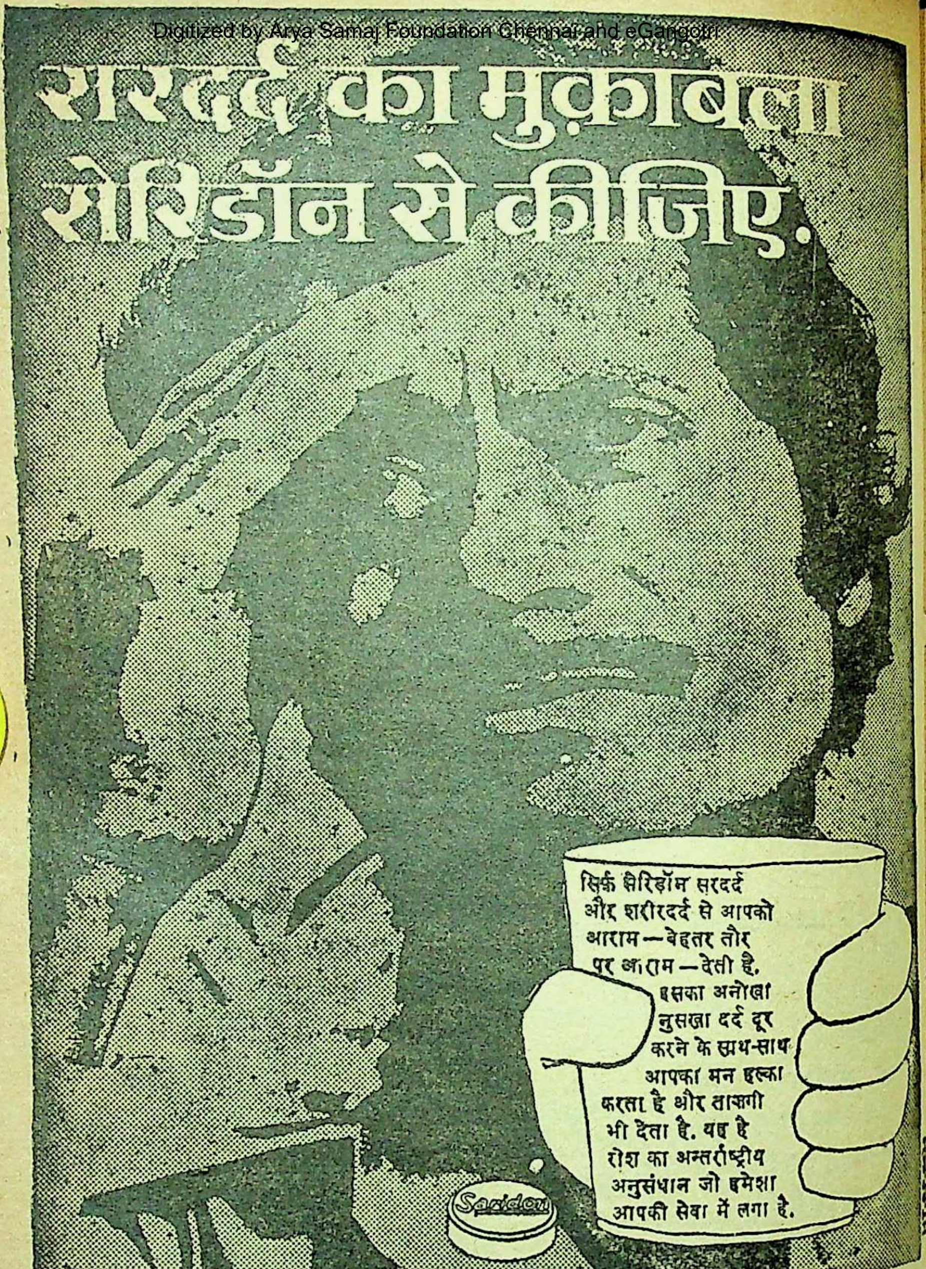

सरदर्द का मुक़ाबला
सैरिडॉन से कीजिए.

सिर्फ़ सैरिडॉन सरदर्द और शरीरदर्द से आपको आराम—बेहतर तौर पर आराम—देती है. इसका अनोखा नुसख़ा दर्द दूर करने के साथ-साथ आपका मन हल्का करता है और ताज़गी भी देता है. यह है रोश का अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान जो हमेशा आपकी सेवा में लगा है.

सिर्फ़ एक सैरिडॉन से सभी तरह के सरदर्द गायब

करे !' बौने ने डकार लेकर कहा।

कुसुम चल पड़ी। वह फूल को देख रही थी, जो अब नीले रंग के बजाय सुनहरे रंग का दिखाई दे रहा था। वह बहुत खुश हुई। तभी वह बौने को एक नजर देखने के लिए मुड़ी, तो ठिठककर वहीं खड़ी हो गयी और आंखें फाड़कर देखती रह गयी। बौने के सिर के ऊपर पेड़ की टहनी से एक बहुत लंबा सांप लटक रहा था और उसे छूने का बार-बार प्रयत्न कर रहा था।

कुसुम जैसे पथरा गयी थी। आखिर जब वह संभली, तो उसने सोचा कि अब क्या करूं? बौने को सांप से कैसे बचाऊं? या सांप को मार डालूं? पर सांप को मारना तो बहुत खतरे का काम है। मारते समय कहीं मुझे डस लिया तो? ...... क्या बौने को सांप के रहम पर छोड़कर चली जाऊं? ...... नहीं, ऐसा नहीं किया जा सकता। मुझे बौने को सांप से बचाना ही होगा।

वह बहुत सतर्क होकर बौने की ओर बढ़ी। उसकी नजर सांप पर टिकी हुई थी, जो उसी प्रकार झूलता हुआ बौने के सिर को छूने का प्रयत्न कर रहा था।

कुछ कदम आगे जाने पर कुसुम ने इधर-उधर देखा, तो उसकी नजर एक सूखी टहनी पर पड़ी। उसने उसे उठा लिया और धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगी। कुछ आगे जाकर वह रुकी। उसने अपना बस्ता कंधे पर से उतारकर नीचे रखा और हाथ में पकड़ा हुआ फूल उसके ऊपर रखा। फिर उसने टहनी को छड़ी की तरह मजबूती से पकड़ा और कुछ कदम आगे बढ़ी। उसकी सांस तेजी से चल रही थी। सांप अब उससे दो ही कदम की दूरी पर था और बहुत लंबा और डरावना लग रहा था।

एक बार तो कुसुम को लगा कि वह बेहोश होकर गिर पड़ेगी। पर अगले ही क्षण उसने टहनी उठाकर पूरे जोर से सांप पर वार किया। सांप तड़पकर नीचे गिरा और गिरते ही बल खाता हुआ एक ओर को भाग उठा और झाड़ियों में गायब हो गया।

आखिर जब कुसुम ने उधर से नजर हटाकर बौने की ओर देखा, तो वह वहां नहीं था। उसे बड़ी हैरानी हुई। भला कहां चला गया? उसने इधर-उधर देखा; पर वह कहीं भी दिखाई न दिया। तब उसे लगा कि वह कोई जादूगर होगा, जो बौना बनकर आया था। तभी तो उसके पास जादू का फूल था। कहीं वह फूल भी ...... फौरन कुसुम की नजर अपने बस्ते की ओर गयी। फूल तो उसी पर पड़ा हुआ था, पर उसका रंग सुनहरे के बजाय केसरी हो गया था।

कुसुम ने फूल उठाया, बस्ता गले में लटकाया और स्कूल की तरफ चल दी। रास्ते में वह फूल के केसरी बन जाने के रहस्य के बारे में सोचने लगी। आखिर उसे लगा कि उस रंग में बहादुरी झलक रही है। उसे अपनी बहादुरी पर खुशी हुई। तब उसने सोचा कि रोज मैं कोई न कोई ऐसा अच्छा काम किया करूंगी, जिससे रोज फूल एक नया रंग पा सके। **—बी-१९, सन एंड सी, वरसोवा रोड, बंबई ४०००६१**

★

मैं आलाहज़रत से मिला

ग. त्र्यं. धर्माधिकारी

सन १९४६ की बात है। उन दिनों मैं अस्त हो रहे निजाम राज्य में वरंगल नामक स्थान में नौकरी पर था। रजाकारों का आंदोलन जोरों पर था। सभी बंदे लाल किले पर हरा झंडा फहराने की बाट जोह रहे थे। हैदराबाद के पास सलतनगर में ब्रेनगन का कारखाना खुल चुका था। विश्व-कुख्यात अंतरराष्ट्रीय तस्कर वालकाट की कृपादृष्टि थी। कासिम रिजवी का बोलबाला था। वालकाट की सप्लाई की हुई न चलनेवाली बंदूकें, गांठों पर बांधी जानेवाली लोहे की पत्तियों से गढ़ी गयी तलवारें, कपड़े सुखाने के बांसों से बने भाले, नेवार के कमरपट्टे और ऐसी सामग्री से सज्ज जवांमर्द चोबदारों और रजाकारों का जुलूस 'दीन! दीन!' ललकारता हुआ गांव-गांव में घूम रहा था।

यों निजाम-राज्य में अमन-चैन ही था। नब्बे प्रतिशत से अधिक बस्ती हिंदुओं की थी। आयकर नहीं। घी-खिचड़ी, मुर्ग-मुसल्लम, रोटी-सब्जी-दाल की कोई कमी नहीं। पर आदमी को इन सबसे तो संतोष होता नहीं। निजामशाही में 'काफिर' अशांत थे। हैदराबाद राज्य कांग्रेस के स्वामी रामानंद तीर्थ, विनायकराव (विद्यालंकार) कोरटकर, वोरगुल रामकृष्णराव, दिगंबरराव बिंदु, गोपालराव एकबोटे, रामाचार, काशीनाथराव वैद्य, रामकृष्णजी धूत, नरेंद्रजी, हरिश्चंद्र हेडा, हयग्रीवाचारी, राजेश्वरराव आदि वरिष्ठ और तरु मुल्की नेताओं का जन-जागृति का का अथक रूप से चालू था ही। चारों ओर प्रांतों से आशीर्वाद और सहयोग मिल लग गया था। सरदार पटेल ने कहा था-'निजाम राज्य मेरे पेट में फोड़े की तरह है। मुल्की लोगों का आत्मसंमान जग उठा था। दूसरे दर्जे की नागरिकता के जख्म में द शुरू हो गया था।

जैसे-जैसे जन-आंदोलन ने जोर पक वैसे-वैसे रजाकारों की धींगामुश्ती भी ब लगी। सरकारी दमन-चक्र चल पड़ा। रा के मामनूर हवाई अड्डे को सक्रिय कर शुरू कर दिया गया।

मैं एक व्यापारी संस्था में नौकरी क रहा था। भारत के स्वतंत्रता-सेनानियों निजाम राज्य में दौरे शुरू हो गये। दा (मेरे बड़े भाई आचार्य दादा धर्माधिकारी के मित्रों में से अरुणा आसफअली और जे. कुमारप्पा के व्याख्यान विशाल जन-स के समक्ष हुए। वे धाराप्रवाह और अल

अग

प्रभावशाली अंग्रेजी में बोले। नरेंद्रजी अध्यक्ष पद पर विराजमान थे। जब मैं उन्हें सभा-स्थल तक पहुंचाने गया, तो तरुण कार्यकर्ताओं ने आग्रह किया कि भाषणों का हिंदी रूपांतर मैं करूं। मेरे होश उड़ गये। मैं मेज का किनारा मजबूती से पकड़कर खड़ा हो गया। मन ही मन दादा को स्मरण किया और घंटे-भर तक उनके भाषण का हिंदुस्तानी में अनुवाद करता रहा। खूब तालियां बजीं। मेरे कार्य की उत्कृष्टता की नरेंद्रजी ने प्रशंसा की और कुमारप्पा ने पीठ ठोकते हुए मेरी सराहना यह कहकर की कि 'तुमने मुझे पराजित कर दिया।' और मेरी देशभक्ति इतने पर समाप्त हो गयी। मैं अपने सट्टा बाजार के लेन-देन में पुनः मग्न हो गया।

कुछ दिनों बाद मुल्की दुकानदारों और उद्योगपतियों को ऐसी जरूरत अनुभव होने लगी कि हमें कुछ रचनात्मक कार्य (पैसे देने के अलावा) करना चाहिये। भय के कारण वे आंदोलनकर्ताओं और रजाकारों दोनों को छिपे रूप में धन देते थे। पर वे तटस्थ हैं, यह दिखाना उन्हें जरूरी लगने लगा। एक मिला-जुला प्रतिनिधि-मंडल वजीरे आजम (मुख्य-मंत्री) से मिलने के लिए चुन लिया गया। कुछ व्यापारी और कुछ व्यवसायी उसमें शामिल किये गये। उर्दू में एक आवेदन-पत्र—यथासंभव मृदु भाषा में—तैयार किया गया। मुझे यह सब बाद में मालूम हुआ; क्योंकि मैं मुल्की नहीं था और कार्यकर्ता तो था ही नहीं।

उस समय वजीरे आजम (मुख्य-मंत्री) सर मिर्जा इस्माईल थे। तभी यह जुर्रत हो पायी। वे तटस्थ और न्यायपरायण माने जाते थे। उन्हें मिलने का दिन, स्थान, समय निश्चित करते वक्त मालूम पड़ा कि वे उर्दू की अपेक्षा अंग्रेजी अधिक समझते हैं और अपने विचार अंग्रेजी में अधिक स्पष्ट रूप में व्यक्त कर पाते हैं। फिर क्या था, व्यापारियों की ओर से तुरंत सुझाव आया कि 'कुमारप्पा फेम' वाले धर्माधिकारी को पकड़ो। बात सभी को जंच गयी। मैं संकट में पड़ गया। मैं मुल्की नहीं था। साधारण, मामूली नौकर था। मैं बहुत गिड़गिड़ाया कि भाषा मेरा क्षेत्र नहीं है। लेकिन उत्तर मिला—'हम सब जानते हैं। आप तो सिर्फ तर्जुमेकार की हैसियत से चलेंगे। इसमें मुल्की का क्या सवाल है। घबराइये नहीं।' उनका वह 'घबराइये नहीं' मेरे तरुण मन को चुभ गया। मैं बहक गया। श्री सूर्यराव रेड्डी वकील और मैंने रात-

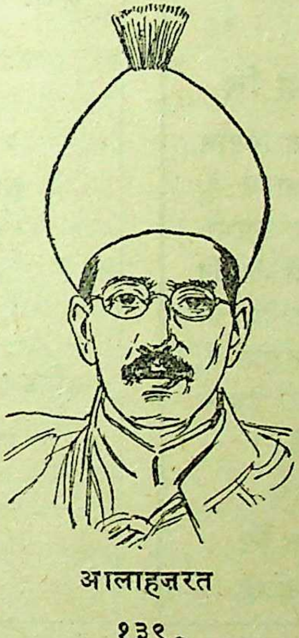

आलाहजरत

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित ओद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

लिंक चेन

* * *

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

* * *

सभी उद्योगों व वाहनों में
उपयुक्त

* * *

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

* * *

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप; बंबई-७८

भर जागकर उस लंबे स्मृतिपत्र का अंग्रेजी में अनुवाद कर डाला। वे उर्दू पढ़ते और मैं अंग्रेजी में अनुवाद करता। परंतु मेरे गैर-मुल्की तरुण मन की तल्खी स्वाभाविक रूप से उसमें उतर आयी। उनकी मृदु भाषा का यथासंभव प्रखर रूपांतर हुआ। उनका अभिप्राय मैंने नहीं समझा, मेरा उन्होंने नहीं समझा—ऐसा ही समझना चाहिये। क्योंकि मेरा अनुवाद सर्वानुमति से स्वीकार कर लिया गया।

निश्चित दिन, स्थान और समय पर हम मिर्जा साहब से मिले। मैं कुरता, धोती और चप्पल वाली सट्टाबाजारी पोशाक में था। बाकी और सभी शरीफ पोशाक में थे। एक वृद्ध वकील ने बड़े अदब के साथ स्पष्ट लहजे में उर्दू दरख्वास्त पढ़ी; फिर मैंने अंग्रेजी में। घंटे-भर से अधिक हम वहां रहे। संबंधित सूबेदार, तालुकेदार, पुलिस-अधिकारी (मि. मार्टन), थानेदार सभी हाजिर थे। कहीं 'अंदर' संवाददाता भी थे। अनुवाद पढ़े जाते समय मार्टन साहब बार-बार उचकते थे। मिर्जा साहब आंखें मूंदें शांत भाव से मुस्कराते हुए सुन रहे थे। कागज आगे बढ़ा दिये गये। भेंट के अंत में मैंने अंग्रेजी में कहा—'सर, इफ द एटिच्यूड ऑफ इग्नोरिंग द फीलिंग्स ऑफ ओवर नाइन्टी परसेंट कंटिन्यूज, आइ एम एफ्रेड, यू विल हैव टु रिपेन्ट। आई बेग युवर पार्डन।' (श्रीमन्, यदि नब्बे प्रतिशत की भावनाओं की उपेक्षा करने की मनोवृत्ति जारी रही तो आपको पछताना पड़ेगा। मुझे क्षमा करें।)

वातावरण गर्म हो उठा। अधिकारी बिफर उठे। मिर्जा साहब शांत भाव से मेरे पास आये और मेरी पीठ पर हाथ रखकर बोले—'यंग मैन, युवर्स इज़ नॉट ए मियर ट्रांसलेशन। आइ एम श्योर यू आर नॉट फ्रॉम हैदराबाद। आइ हैव अंडरस्टुड एवरी थिंग, बट माइ हैंड्स आर टाइड। बी केयरफ़ुल। गॉड ब्लेस यू।' (नौजवान! तुम्हारा अनुवाद अनुवाद मात्र नहीं है। मुझे, पूरा विश्वास है कि तुम हैदराबाद के नहीं हो। मैं सारी बात समझ गया हूं; मगर मेरे हाथ बंधे हैं। सावधान रहो। भगवान तुम्हारा भला करे।)

बाहर निकलते समय थानेदार साहब मेरे पास आये और बोले—'बॉय, आइ विल ब्लेस यू।' (बेटा, भला तो मैं करूंगा तुम्हारा।)

मुझे काटो तो खून नहीं। मेरे होश उड़ गये। उस रात नींद नहीं आयी। दूसरे दिन स्थानीय उर्दू दैनिक में 'वजीरे आजम के सामने खुली टांगें एक पर एक चढ़ाकर बैठने वाला बदतमीज गुस्ताख' कहकर मेरा उल्लेख किया गया।

दो दिन बाद मिर्जा इस्माईल के रातो-रात काचीगुडा के स्टेशन से मीटर गेज द्वारा बंगलोर चले जाने की अचानक खबर आयी। पता चला कि उनके स्थान पर नवाब छतारी को बुलाया गया है। यह भी पता चला कि भारत सरकार की ओर से निजाम से बातचीत करने के लिए भारत के मुस्लिम नेता आ रहे हैं। हमारे प्रतिनिधि-मंडल ने नवाब छतारी से मिलने का निश्चय किया,

MRAT/ADC/203-4

We lend a colourful hand in each...

Think of almost any industry—Textiles, Coir, Jute, Leather, Paints, Plastic, Rubber, Printing Ink etc. Amar Dyes lend a colourful hand in each. We make myriad colours in haunting hues and subtle shades to the requirements of every industry.

Amar Dye-Chem—Pioneers in dyestuffs in India—have a high record of achievement. Intensive and constant research, meticulous quality control, all-round expansion and increasing exports all go into making their performance one of distinction.

MEMBER

to enrich India's life with colour!

AMAR DYE-CHEM LTD.

RANG UDYAN, MAHIM, BOMBAY-400 016.
BRANCHES: AHMEDABAD-CALCUTTA-DELHI-JAIPUR-MADRAS-MADURAI.

पर शीघ्र ही यह अफवाह फैली कि उनकी एक ओर की मूंछ मूंडकर उन्हें ग्रांड ट्रंक एक्सप्रेस से रवाना कर दिया गया है।

अंत में मंडल ने अहले वतन, निजाम उल्-मुल्क, बंदगाने अली, परवरदिगार, उस्मान अली बादशाह के सामने हाजिर होने का फैसला किया। बादशाह सलामत हिंदू और मुसलमानों को 'मेरी दो आंखें' कहते थे। इसलिए किसी नये हकीम का वहां हाजिर रहना जरूरी समझा गया और मुझसे फिर से साथ चलने की जोर-जबर्दस्ती शुरू हुई। वास्तव में पूछा जाये तो मैं एकदम घबड़ा गया था; पर यह लोभ भी था कि इस डूबते सूर्य के शानदार वैभव को देखने का अवसर मुझ जैसी नाचीज को जीवन में फिर नहीं मिलेगा। हम आठ-नौ जने जाने वाले थे। राजदरबार में खाली हाथ जाने की रीति नहीं है। फिर निजाम का रिवाज और लोभीपन मशहूर था। कुछ नहीं तो दस-दस अशर्फियां हर एक को ले जाना ही पड़ता था। क्या हमारी ऐसी कूवत और बिसात थी? ठीक से याद नहीं, फिर भी सिक्के, थाल, ऊपर ढंकने के लिए सुनहला रूमाल, सब मिलकर ३,५०० रुपये से कुछ अधिक ही लगा था। सिर के बालों से लेकर पैर के नखों तक सब कुछ (चेहरा छोड़कर) ढंका रहे, ऐसी पोशाक बनवानी पड़ी। निश्चित दिन—निजाम को जब फुरसत हो तब मिलने के लिए—हम किंग कोठी की ड्योढ़ी पर हाजिर हुए। बिना सफेदी के लंबे-चौड़े पर-कोटे के कमानीदार दरवाजे पर ताडपत्रों की गद्दी चटाई का परदा लगा था।

ड्योढ़ी के अधिकारी के दफ्तर में तीन लड़खड़ाती कुर्सियों पर हममें से 'विशिष्ट' जन बैठे। बाकी लोग कभी एक पैर पर तो कभी दूसरे पैर पर जोर डालते हुए खड़े रहे। हमें क्या-क्या कवायद करनी होगी, यह सिखा दिया गया। दोनों हाथों की हथेलियां शेरवानी की आस्तीनों में खोंसकर नजर जमीन पर टिकाये अदब के साथ मुजरा करते हुए आला हजरत के सामने पेश होना था। लौटते समय सौ कदम तक बादशाह सलामत की ओर पीठ न करते हुए मुजरा करते हुए लौटना था। मुंह में पान-सुपारी तो क्या लौंग भी न हो। कोई भी हंसे नहीं। आवेदन सिर्फ एक आदमी करे। आदि-आदि।

हमारी पूरी तलाशी ली गयी। हम निःशस्त्र तो थे ही। नजराने का सामान छोड़कर हमें निर्धन भी कर दिया गया! जांच-पड़ताल के बाद दो पहरेदार हमें परदे की दराजों को हटाकर अंदर छोड़ आये। विशाल, पर जैसा सोचा था उससे अधिक वीरान अहाते में से हम कंकड़ों पर अपना संतुलन संभालते हुए लंबी सीढ़ियों तक पहुंचे। जवाहरात, मोहरें, सिक्के, सोना चांदी से लबालब भरे ट्रक कहीं नहीं दिखाई दिये। जमीन की ओर लगी तिरछी नजर जहां तक पहुंचती थी, वहां तक कंकड़, और सामने विस्तीर्ण सीढ़ियां। सभी एक लाइन से पंद्रह-बीस सीढ़ियां चढ़े और एक बड़े कमानीदार बरामदे में खड़े हो गये। अंदर से भद्दी और रूखी आवाज आयी—

अति-भूख, [illegible] भोजन पेट को भारी कर देते हैं, ऐसे समय या जब गैस से बेचैनी महसूस होती हो तब 'चरक' की—

"पवन मुक्तादिवटी"

लीजिये । समस्त वायु-विकारों से मुक्ति होकर अन्न-पाचन भी सहज हो जायेगा ।

प्रमुख दवा-विक्रेताओं से प्राप्त ।

CHARAK PHARMACEUTICALS BOMBAY चरक

चरक फार्मास्युटिकल्स
बम्बई-११

बवासीर
की पीड़ा
और जलन से,
बिना ऑपरेशन के,
शीघ्र आराम पाने
के लिए
हडेन्सा
मरहम
इस्तेमाल कीजिए !

OBH: 2670 HIN

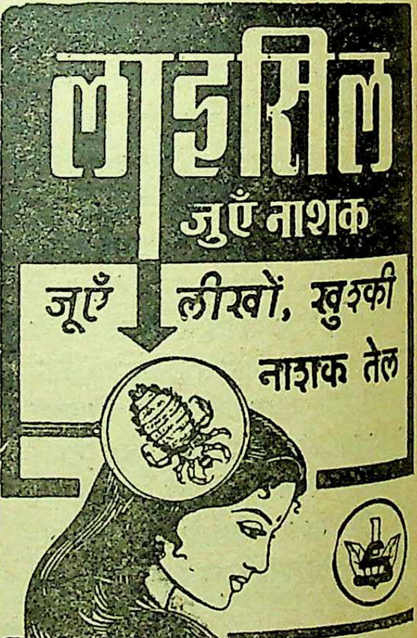

लाइसिल
जुएँ नाशक
जूएँ लीखों, खुश्की
नाशक तेल

मुजानिल केमो इण्डस्ट्रीज,
[illegible], पूना-१९.

'कौन है?' दरवाजे के पास से बड़े अदब से [illegible] साथ पेशकार ने अंदर जाकर कहा—'हुजूर, अव्वाम से अहले हुनूद के नुमाइंदे दरख्वास्त पेश करने आये हैं!'

और......आलाहज़रत बाहर आये। सादे पर स्वच्छ पाजामे, सफेद अंगरखे, डा. एन.बी. खरे की-सी उलटे पतीले के आकार की बिना गोटे की काली टोपी व चमड़े के स्लीपर में ऊंची गोरी-सी मूर्ति। दरअसल डा. खरे जैसा ही कुछ अलिप्त, कुछ उजड्ड-सा, फिर भी स्पष्टत: उतावला आर होशियार व्यक्तित्व मैंने जमीन पर टिकी हुई अपनी आंखों से अनुभव किया। फौरन झुककर हमने पेशकार के साथ ही अनेक बार दायां हाथ हिलाकर मुजरा किया। (मैं चूंकि डेबरा हूं, इसलिए उस हाथ को अचल रखने में मुझे बड़ी तकलीफ हुई।) हमारा तथाकथित नेता थोड़ा तनकर खड़ा हुआ। बाअदब बामुलाहजा दो कदम आगे बढ़ा और उसने नजराने का थाल और दरखवास्त आगे कर दिये। आलाहजरत ने रूमाल उठाकर एक क्षण के लिए जैसे सूंघा और फरमाया—'जाओ, वजीरे खारजा से मिलो।' और वे अंदर चले गये। तुरंत एक हुजरा दौड़ता हुआ आया और नजराने वाला थाल लपककर उठाये अंदर अदृश्य हो गया।

समाप्त हो गयी मुलाकात, समाप्त हो गयी गुजारिश, समाप्त हो गयी अर्ज, समाप्त हो गयी वारदात, समाप्त हो गयी दरख्वास्त।

अब परेशानी पेश हुई बाहर निकलते समय की रटी-रटायी कवायद की—यानी उस [illegible] छाजन के नीचे से गुजरते समय दरवाजे की ओर पीठ न करते हुए मुजरा करते-करते पंद्रह-बीस सीढ़ियां उतरने की। यह ठीक है कि नहीं, पहले बायां पांव उठाना है कि दायां, इसकी परवाह न करता हुआ मैं बहादुर की तरह सौ कदम पीछे हट आया। डचोढ़ी पर आया तो वही चपल हुजरा वहां आ पहुंचा और मोतमीन से कहने लगा—'अजी मियां, जहांपनाह ने हजरात से गुफ्तगू की!' सारी उपस्थित मुजाहिब बिरादरी हमारी ओर यों देखने लगी, जैसे हम धन्य हो गये हों।

हुजरा मुजरे पर मुजरा करता जा रहा था। हम पहले ही कंगाल हो चुके थे। पेट खाली और मस्तिष्क खोखला हो चुका था। उसे एक फीकी मुस्कान के सिवा और क्या दे सकते थे? 'जाने भी दो मियां!' कहकर हमने अपनी जान छुड़ायी और किंग कोठी के पास ही स्थित ताजमहल होटल में जाकर क्षुधा शांत की।

क्या हासिल हुआ? किसको क्या मिला?

जिसका जितना आंचल था,
उतनी उसको सौगात मिली।

महाराष्ट्र राज्य के वर्तमान राज्यपाल श्री अली यावर जंग तब वहां के वजीरे खारजा यानी गृहमंत्री थे। उनसे मुलाकात का क्या हुआ, इसका मुझे पता नहीं। पर कुछ ही दिन बाद मेरे घर पर रजाकारों का धावा जरूर हुआ। गोलियां बरसायी गयीं। घर में आग लगा दी गयी। यह उपलब्धि निराली और बेजोड़ है।

* * *

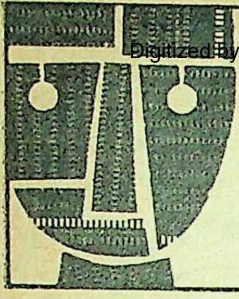

कुछ इधर से कुछ उधर से

• मित्र

आप लोगों ने यह कथा शायद सुनी हो। एक जादूगर था, उसके दो लड़के थे। उसने उन्हें एक-जैसी शिक्षा दी और उनके हाल पर छोड़कर तीर्थयात्रा पर निकल पड़ा। साल-भर बाद जब वह वापस आया, तो देखा कि एक लड़का तो चमत्कार दिखा कर 'भगवान' बन बैठा है, और दूसरा सड़कों पर जादू के खेल दिखाकर जैसे-तैसे पेट भरता है। कहने का मतलब केवल यह है कि प्रकृति के कुछ नियम होते हैं और उन नियमों के विपरीत कुछ कर पाना संभव नहीं होता। मगर पुराने समय से ही कुछ लोग जन-साधारण के अज्ञान का फायदा उठाकर अपना उल्लू सीधा करते रहे हैं। आइये, जरा जादूगर की कुछ और ट्रिकों पर विचार करें।

१. जादूगर किसी दर्शक को बुलाता है और उसे कोई दो संख्याएं लिखने को कहता है। (उदाहरण के लिए, दर्शक ५ और ३ चुनता है।) वह दर्शक को इन दोनों संख्याओं को एक दूसरे के नीचे लिखने को कहता है। फिर इन दोनों संख्याओं के जोड़ को उनके नीचे लिखने को कहता है। फिर चौथी संख्या लिखने को कहता है, जो दूसरी ओर तीसरी संख्या का जोड़ हो। इसी तरह पांचवीं संख्या चौथी और तीसरी संख्या का जोड़ हो। इस तरह वह दर्शक से दस संख्याएं लिखवाता है। उसके बाद वह मदारी एक नजर कागज पर डालकर इन दसों संख्याओं का जोड़ बता देता है।

सो.	मं.	बु.	गु.
अ	अ+१	अ+२	अ+३
अ+७	अ+८	अ+९	अ+१०
अ+१४	अ+१५	अ+१६	अ+१७
अ+२१	अ+२२	अ+२३	अ+२४

र.	सो.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
३	४	५	६	७	८	९
१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०

५	अ
३	ब
८	अ + ब
११	अ + २ ब
१९	२ अ + ३ ब
३०	३ अ + ५ ब
४९	५ अ + ८ ब
७९	८ अ + १३ ब
१२८	१३ अ + २१ ब
२०७	२१ अ + ३४ ब
५३९	५५ अ + ८८ ब
	११ (५ अ + ८ ब)

तरीका : इसका तरीका बड़ा ही सरल है। नीचे से चौथी संख्या को ११ से गुणा करने पर जो संख्या आती है, वह ही इन संख्याओं का जोड़ है।

सिद्धांत : बीजगणित की भाषा में लिखी गयी संख्याओं से साफ जाहिर है कि इन सबका जोड़ ५५ अ + ८८ ब है, जो कि नीचे से चौथी संख्या ५ अ + ८ ब का ११ गुना है।

२. जादूगर किसी कैलेंडर में ऐसे वर्ग के चारों ओर हद खींचता है, जिसमें १६ तारीखें हों। उसके बाद वह उस पर नजर दौड़ाकर एक संख्या लिखता है और एक दर्शक को बुलाकर एक विशेष नियमानुसार चार संख्याएं चुनने को कहता है और कहता है कि इन चार संख्याओं का जोड़ उस द्वारा लिखी गयी संख्या के बराबर होगा। फिर दर्शक को एक तारीख चुनने को कहता है, उसके बाद जादूगर उस तारीख से गुजरते खड़े और पड़े कालमों को काट देता है।

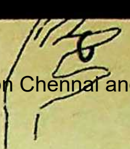

चित्र · १

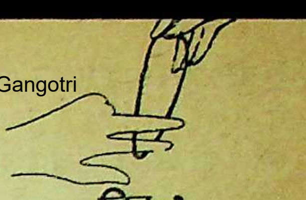

चित्र · २

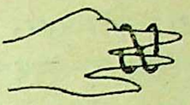

चित्र · ३

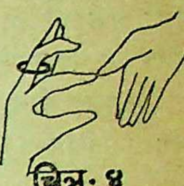

चित्र · ४

अब वह दर्शक को दूसरी तारीख चुनने को कहता है, जो काटी नहीं गयी हो। दर्शक दूसरी तारीख चुनता है और जादूगर फिर उस तारीख से गुजरती पड़ी और खड़ी रेखाएं खींचकर तारीखें काट देता है। इसी तरह तीसरी तारीख चुनने को कहता है। अंत में एक तारीख बच जाती है, इन चारों तारीखों को जोड़ने पर वह संख्या प्राप्त होती है, जो जादूगर ने पहले ही बतायी थी:

तरीका : इस वर्ग के विकर्ण के कोनों पर स्थित दो तारीखों के जोड़ का दुगुना ही इन चार तारीखों का जोड़ होगा = २× (२८ + ४) = २ (२५ + ७)।

सिद्धांत : ऊपर वृत्त वाली तारीखों का जोड़ है : (अ + २) + (अ + ७) + (अ + १५) + (अ + २४) = ४ अ + ४८ = २ (अ + अ + २४) = २ (अ + ३ + अ + २१)।

३. जादूगर चित्र १ में दिये गये तरीके से एक रबर-बैंड को उंगली में डाल देता है। उसके बाद वह बैंड के दूसरे किनारे को बीच की उंगली के गिर्द (चित्र २) ले जाता

है और फिर उसे वापस पहली उंगली पर ले आता है (चित्र ३)। अब वह किसी दर्शक को बुलाता है और उसे पहली उंगली पकड़ने को कहता है। ज्यों ही दर्शक पहली उंगली पकड़ता है, जादूगर बीच वाली उंगली को थोड़ा मोड़ देता है और रबर-बैंड उछलकर बीच वाली उंगली पर पहुंच जाता है (चित्र-४)।

इसे समझाने के लिए हमें स्थान-विज्ञान का सहारा लेना पड़ेगा। अभी इतना ही जान लेना काफी होगा कि स्थान-विज्ञान (टोपोलॉजी) संबंधी जादू केवल लचकीली वस्तुओं (जैसे कागज, कपड़ा, रस्सी, धागे और रबर-बैंड) तक सीमित है। और ऊपर बतायी गयी ट्रिक स्थान-विज्ञान के सिद्धांतों के विपरीत नहीं है।

* * *

सन १८२० के आस-पास कोई वर्ष। राजा ताउफा आहुआ समोआ में अपने यौवनागमन की रस्म पूरी करके टोंगा द्वीप को लौट रहा था। समोआ द्वीप के दक्षिण (या पश्चिम या पूर्व ?) में कहीं बेड़े के पथदर्शक राह भटक गये। हैरान होकर वे आपस में बातें कर रहे थे। एक और किश्ती में बूढ़ा अंधा काहो, बैठा था, जो बहुत ही निचले दर्जे का पथदर्शक था। उसने अपने बेटे पो ओवई से पूछा—'ये लोग क्या बात कर रहे हैं आपस में ?' बालक ने बताया कि पथदर्शक राह भटक गये हैं। काहो ने आज्ञा दी कि उसकी किश्ती का रुख हवा के बहाव के विरुद्ध कर दिया जाये। किश्ती की रफ्तार धीमी हो गयी। तब वह किश्ती के अग्रभाग में आया। उसके बेटे ने उसे पकड़े रखा और खुद उसने किश्ती से झुककर समुद्र में हाथ डुबाकर कहा—'राजा से कह दो कि हम फीजी के समुद्र में हैं।'

राजा के पथदर्शक अवज्ञा से हंस दिये, बोले—'बुढ़ऊ कह रहा है न ?' मगर राजा ने काहो से कहा—'अब क्या करें? हमारा खाना पानी लगभग चुक गया है।'

काहो ने सूर्य की स्थिति पूछी, फिर कहा—'राजा साहब से कह दो जब सूरज आसमान के बीचोबीच पहुंचेगा, जमीन दिखाई देगी।' चंद घंटे बाद बेड़ा फीजी के पूर्व लाउ द्वीप पुंज के लाकेंबा टापू पहुंच गया। कृतज्ञतापूर्वक राजा ताउका आहुआ ने काहो को प्रधान पथप्रदर्शक और सामंत बनाया और वह व उसके वंशज 'फाफा कितही' यानी 'समुद्र स्पर्शी' कहलाये। डेढ़ सदी बाद काहो के पड़पोते का कहना है कि उसके पडदादा ने लोगों पर रोब जमाने के लिए समुद्र में हाथ डाला था। उसे मालूम था कि धरती पास है, क्योंकि उसके बेटे ने बता दिया था कि मछलीमार पक्षी आकाश में दिखाई दे रहा है।

☆

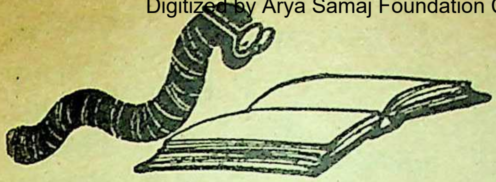

- ※ एक और नीलांजना
- ※ भारतीय सृष्टिविद्या
- ※ राजा राज करे
- ※ कैकेयी का अंतर्द्वंद्व

पुस्तकास्वादन

***एक और नीलांजना* लेखक: वीरेंद्र कुमार जैन; प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली-१; पृष्ठसंख्या: १२७; मूल्य: ८ रुपये।**

पौराणिक पात्रों के गिर्द बुनी गयी ज्योतिर्मयी जैन पुराकथाओं के इस संग्रह की कथाएं मानसिक द्वंद्व में फंसे व्यक्ति के मन में जी उठने की आकुलता जगाती हैं। इनमें अपूर्व चेतना और नये व्यक्तित्व का आविर्भाव है।

आज के साहित्य से पुराकथा की समन्विति करने की यह सृजन-प्रक्रिया लेखक की प्रयोगी सम्यक् दृष्टि का प्रतिफल है। संगृहीत नौ पुराकथाएं अलग-अलग शीर्षकों में बंटने के बावजूद एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं और इन्हें एक-दूसरे से जोड़कर ही ठीक तरह से समझा-परखा जा सकता है। इनके मूलभूत चेतना-स्रोत हैं—आत्मसौंदर्य की तलाश, रोमांटिक वायवीय कल्पना, ऐहिक कामबोध की एकात्म सर्जना, कामाध्यात्म से सम्यक् ज्ञान और सम्यक् दृष्टि की उपलब्धि और रहस्यवाद की भूमि पर प्रकृति-रूपों की अन्विति। इन कथाओं में कथा-तत्त्वों की अपेक्षा काव्य-दर्शन-तत्त्वों का समाहार अधिक प्रवलता से मुखर हुआ है।

कामाध्यात्मिक चेतना का मनोवैज्ञानिक चित्रण 'त्रिभुवनमोहिनी मां' में द्रष्टव्य है। दर्शन के धरालत पर रहस्य और प्रकृति का सामंजस्य-साधन, शब्दशिल्प का चमत्कार, जीवन और स्त्री-पुरुष के मनोभावों के मूलभूत तथ्यों को साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्कार देने की कलात्मक शैली—ये कवि-कथाकार वीरेंद्रजी की अपनी पहचान हैं। इसलिए 'आम आदमी' की तलाश में लिखी जा रही आज की कहानियों में इन कथाओं की इयत्ता के खो जाने का खतरा नहीं है। (भले आज कोई इनकी प्रासंगिकता का प्रश्न उठाये।) आवरण, मुद्रण अच्छा है।

—डा. विष्णु भटनागर

०००

***भारतीय सृष्टिविद्या* लेखक: डा. प्रकाश; प्रकाशक: भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,**

नयी दिल्ली; पृष्ठसंख्या : २४४; मूल्य : २० रुपये ।

'भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण-महोत्सव के अवसर पर' प्रकाशित यह पुस्तक लेखक का शोध-प्रबंध है। इस पर उन्हें जबलपुर विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि मिली है। पुस्तक का उपशीर्षक है 'जैन, बौद्ध एवं पौराणिक सृष्टिविद्या विकासवाद के संदर्भ में'। 'सृष्टिविद्या' शब्द से अपना अभिप्रेत अर्थ बताते हुए डा. प्रकाश कहते हैं—'सृष्टिविद्या का अर्थ है सृष्टि अर्थात् ब्रह्मांड, लोक अथवा विश्व की उत्पत्ति को बतलाने वाला ज्ञान'। और उनका कहना है कि उन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ में 'सृष्टि के मूलतत्त्व, सर्ग-प्रक्रिया और ब्रह्मांडविद्या' इन तीन तत्त्वों पर विशेष जोर दिया है।

आधुनिक सृष्टिविद्या (कॉस्मॉलाजी) के परिप्रेक्ष्य में भारतीय सृष्टिविद्या-विषयक वैदिक, जैन, बौद्ध और पौराणिक सिद्धांतों का तुलनात्मक अध्ययन सचमुच बड़ा रोचक विषय है। सृष्ट्युत्पत्ति के विषय में आदिमानव का कुतूहल; बादल, हिम, वृष्टि, दिन व मौसम के हेरफेर और सूर्य-चंद्र-नक्षत्रों के परिभ्रमण आदि के बारे में उसकी तर्कना और उसके आधार पर अग्नि, वायु, पर्जन्य आदि देवों की कल्पना; आकाशस्थ तारा-नक्षत्रों पर से दैवत-कथाओं की रचना, फिर सृष्ट्युत्पत्ति के सिद्धांत रचने का प्रयत्न; आकाश को प्रथम मूल मानकर 'आकाशाद् वायुः, वायोरग्निः' इत्यादि उत्पत्ति-शृंखला की कल्पना; कणाद का अणु-मूलक विश्व का सिद्धांत; उधर यूनान में एनाक्सागोरस द्वारा जड़ द्रव्य से विश्वोत्पत्ति का प्रतिपादन और एथेंस से उसका निष्कासन; भौतिकवादी डेमाक्रिटस की पुस्तकों का जलाया जाना, उसके शिष्य एपिक्यूरस का ख्रिस्तियों द्वारा बहिष्कार; हमारे यहां भी ईश्वर के अस्तित्व को नकारने वाले लोकायतवाद का पाखंड ठहराया जाना, पूर्व-सांख्य की अनीश्वरवादी मीमांसा में ईश्वरवाद का घुसेड़ा जाना, प्रारंभ में पूर्णतः अनीश्वरवादी जैन एवं बौद्ध सिद्धांतों का कालांतर में अशुद्ध हो जाना—यह सब इस विषय का ऐतिहासिक पक्ष है।

परंतु डा. प्रकाश के ग्रंथ में शास्त्रीय मीमांसा, ऐतिहासिक क्रम, विवेचनात्मक तुलनात्मक अध्ययन तथा जैन, बौद्ध एवं वैदिक उत्पत्ति का स्पष्टीकरण इन सबका निराशाजनक अभाव है। लेखक को 'कॉस्मॉलाजी' का तनिक भी ज्ञान हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। प्राचीन आदिसूत्र और परवर्ती ग्रंथों का अंतर उन्होंने कहीं भी नहीं दिखाया है। विषय-प्रतिपादन इतना ढीला है कि जैन सिद्धांत बताते हुए लेखक अकारण वैदिक-पौराणिक ग्रंथों की सामग्री बीच में घुसाकर घोटाला पदा कर देता है। देवत्व-भावना इतनी प्रबल हो गयी है कि कृष्ण द्वैपायन व्यास भगवान व्यास बन जाते हैं, ब्रह्मा ब्रह्माजी; चौरासी लाख जीवयोनियों की भरमार हो जाती है; सर्वप्रथम भौतिकवादी सिद्धांत प्रतिपादित करनेवाले लोका-

यत, जैन व बौद्ध दर्शनों का महत्त्व पूर्णतः विलुप्त हो जाता है।

सृष्टिविद्या पर विचार करने वाले जैन दार्शनिकों ने विश्व के प्राकृतिक और अप्राकृतिक स्वरूप में सात मूल तत्त्व बताये हैं। इनमें 'जीव' और 'अजीव' तत्त्वों को 'द्रव्य' कहा गया है। विश्व की संरचना में 'जीव, पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल' इन छह द्रव्यों का उल्लेख है। लेखक ने इनका सम्यक् विचार नहीं किया है। वस्तुतः जैनों का 'जीव' चेतना है और 'अजीव' अस्तिकाय अर्थात् 'विद् मास' (with mass) है। 'जीव' जैनों की महान कल्पना है। जीव प्रतिक्षण परिणामशील है, सो उसका स्वरूप क्षण-क्षण बदलता है। गति (मोशन) की आधुनिक कल्पना इसमें मूलभूत है। यह परिवर्तन 'काल' तत्त्व के प्रभाव से होता है। जैनों-बौद्धों के 'धर्म' शब्द का अर्थ साधारणतः समझा जाने वाला धर्म (रिलिजन) नहीं, अपितु 'पदार्थ' या तत्त्व है। अभिधर्मकोश में वसुबंधु ने धर्म का अर्थ 'अवबोधोप्रयोजनिः पदार्थः' ऐसा स्पष्ट किया है।

बौद्ध सृष्टिविद्या के संदर्भ में लेखक ने स्त्खेरबात्स्की, राहुल सांकृत्यायन, यामाकामी सोगेन इत्यादि प्रकांड पंडितों के ग्रंथों का लेशमात्र उपयोग नहीं किया है। वैदिक वाङ्मय से लेकर पौराणिक वाङ्मय तक के काल में सृष्टिविद्या की कल्पनाओं का विकास किस प्रकार हुआ और अंत में ब्रह्म, परमात्मा, ईश्वर, शिव, विष्णु, गणेश आदि भाववादी संकल्पनाएं कैसे हावी हो गयीं, इसका भान भी लेखक को हो ऐसा नहीं प्रकट होता। वैदिक दैवत-संहिता में आकाशस्थ ज्योतिष्चक्र के स्थान का तो लेखक को जैसे पता ही नहीं।

संदर्भ-ग्रंथों की सूची में लेखक ने १०० ग्रंथ एवं लेख गिनाये हैं। परंतु पाश्चात्य शास्त्रज्ञों के सृष्टिविज्ञान-संबंधी ग्रंथों का उचित उपयोग नहीं किया गया है। कम से कम, डा. जगजीत सिंह की अत्यंत उपयोगी पुस्तक का आधार तो उन्हें लेना ही चाहिये था।

यह खेद की बात है कि विशदता, पद्धति और विमर्श इन गुणों से वंचित होने के कारण यह पुस्तक भारतीय सृष्टिविद्या का नितांत प्राथमिक ज्ञान भी पाठकों को नहीं करा पाती। —शेष

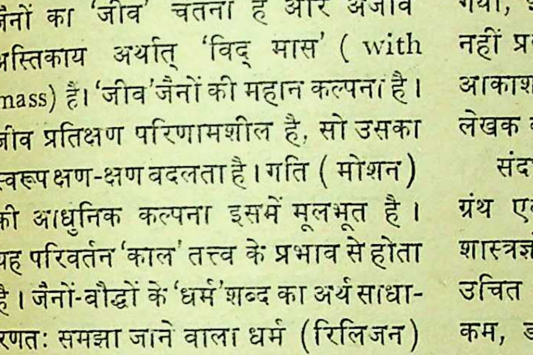

०००

***राजा राज करे * लेखक : फिक्र तौंसवी; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली-१;**

पृष्ठसंख्या : १३४; मल्य ८ रुपये।

चौपट राजा की इस लंबी कहानी में राजा-रानी के किस्से के बहाने आज के राजनैतिक नेताओं के मुखौटे उतारे गये हैं। चूंकि पाठक का मन पढ़ने में रमाने के लिए किस्सागोई जरूरी है, सो वह सब भी इसमें है। परंतु इससे व्यंग्य का मूल भाव तिरोहित नहीं हुआ है।

दरबारी माहौल के कारण पात्रों की भरमार है। स्थानों एवं पात्रों के नामों में व्यंग्य और हास्य का तत्त्व है।

भाषा सरल, प्रांजल और प्रवाहपूर्ण है; अंग्रेजी व उर्दू के प्रचलित शब्दों के समुचित उपयोग के कारण समकालीन चित्रण में समर्थ है। कथ्य स्पष्ट और रोचक है। परंतु हां, समर्थ व्यंग्य-चित्रकारों के रहते घटिया व्यंग्यचित्र मुखपष्ठ पर छापने का कारण समझ में नहीं आता।

—डा. विष्णु भटनागर

०००

***कैकेयी का अंतर्द्वंद्व*प्रणेता: श्री उमेशजी; पृष्ठसंख्या : १६४; मूल्य: ६ रुपये; प्रकाशक: भागलपुर जिला हिंदी साहित्य संमेलन, भगवान पुस्तकालय, भागलपुर-२।**

आज के राजनीति-प्रधान युग में रामकथा को भी राजनीति का चश्मा चढ़ाकर लिखा-पढ़ा जाये, तो क्या आश्चर्य। घनाक्षरी छंद में निबद्ध इस नाटचकाव्य में यही हुआ है। (द्रष्टव्य : आमुख के अंतर्गत 'राजनीति का अद्भुत चक्कर' शीर्षक अनुच्छेद।) रामायण के पांच प्रमुख पात्रों के संबंध में अतिसंक्षेप से एक पृष्ठ में कहकर, दूसरा पृष्ठ कवि इस प्रकार आरंभ करता है—'तत्कालीन भारत का राजनैतिक वातावरण बड़ा ही दूषित हो गया था...' और फिर आज का यह अतिमहान विषय आमुख के अंत तक (२० पृ.) चलता रहता है।

कवि की दृष्टि में तत्कालीन ऋषियों के आश्रम राजनीति के गुप्त अखाड़े तथा शस्त्रास्त्रों के निर्माण-स्थल थे; बढ़ते हुए रक्ष-संप्रदाय पर विजय प्राप्त करके आर्य-संस्कृति के प्रचार-प्रसार की योजनाएं वहां बनायी जाती थीं। वाल्मीकि, वसिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्य, भरद्वाज आदि सभी ऋषि इन षड्यंत्रपूर्ण कुचक्रों की लपेट में ले लिये गये हैं और वे राम को अपनी योजना को कार्यान्वित करने वाला नायक बनाने के लिए बड़े अधीर तथा उत्सुक हैं। फिर राम बचकर कहां जाते? उनका आदेश सिर-माथे चढ़ाया और अपनी छोटी माता कैकेयी को महाराज दशरथ से अपने लिए वनवास का वरदान मांगने के लिए प्रेरित ही नहीं, विवश किया।

राम को प्राणों से भी अधिक प्यार करने वाली कैकेयी जब पति से राम के वनवास का वरदान मांगती है, तब उसके हृदय में भावों का कैसा घोर अंतर्द्वंद्व मचता है, यही कवि का मूल प्रतिपाद्य विषय है। आगे सारी रामकथा चलती है, जिसका पर्यवसान राम के राजतिलक में हआ है। ग्रंथ के अंतिम शब्द हैं—'जय हो कैकेयी की।'

निःसंदेह, सौंदर्य की दृष्टि से कैकेयी के

अंतर्द्वंद्व का चित्रण अत्यंत हृदयग्राही एवं सफल है, तर्कपूर्ण मनोवैज्ञानिक संवादों में पर्याप्त प्रभावोत्पादकता है तथा भाषा प्रसादगुण-युक्त है। फिर भी अनावश्यक तथ्य को चाहे जितना संवारा-सजाया जाये, उसका महत्त्व नहीं बढ़ सकता।

सामान्य प्रचलित रामकथा में, सरस्वती द्वारा प्रेरित मंथरा कैकेयी को बहका-फुसलाकर राम-वनवास का वरदान मंगवाती है। कोई समझदार पाठक या श्रोता कैकेयी को दोष नहीं देता। गोस्वामी तुलसीदास ने चित्रकूट की सभा में कैकेयी के कलंक का पूर्ण परिहार कर दिया है। किंतु श्री उमेशजी को इससे भी संतोष नहीं हुआ और उन्होंने मंथरा के स्थान पर राम को घसीट लिया और कैकेयी के मिथ्या कलंक को धोने के लिए राम के सत्य चरित्र का अवमूल्यन कर डाला। 'मानस' के मानवोचित-गुण-संपन्न मर्यादा-पुरुषोत्तम राम प्रस्तुत ग्रंथ में कैकेयी को अपने वनवास का वरदान मांगने के लिए इस कारण विवश करते हैं, जिससे वे आर्य-संस्कृति-उन्नायक का यश प्राप्त कर सकें।

किसी अल्पवर्णित चरित्र को व्यासरूप में चित्रित करके उठाना तो सराहनीय है, जैसे स्व. गुप्तजी ने 'साकेत' में उर्मिला के साथ किया है। किंतु यहां तो चरित्र ही उलट-पुलट दिया गया है। अपनी-अपनी दृष्टि है, इससे अधिक क्या कहा जा सकता है।

—चंद्रशेखर पांडेय

★

कन्नड के नामी नाटककार श्रीरंग या आद्य रंगाचार्य इंग्लैंड से भाषा विज्ञान की डिग्री लेकर लौटे ही थे। जिस भी सभा में वे बोलने जाते, लोग उनसे आग्रह करते—'आपकी अंग्रेजी बढ़िया है, अंग्रेजी में ही बोलिये।'

फिर श्रीरंग ने एक अवसर पर स्वयं यह बात कही—'मेरी अंग्रेजी पर आप लोगों को बहुत भरोसा है, जबकि मुझे खुद नहीं है। जब मैं लंदन में था, रोज किसी नयी सड़क पर घूमने निकल जाया करता था। एक रोज रास्ता भूल गया। एक अंग्रेज से रास्ता पूछा। वह "आइ डोन्ट अंडरस्टैंड युवर इंग्लिश!" कहता हुआ आगे बढ़ गया।'

—एन. के. चेन्नकेशव (कन्नड 'कस्तूरी' से)

○ ○ ○

पिछले मार्च महीने में शिवमोग्गा (कर्नाटक) में वर जब ऐन शादी के दिन विवाह-स्थल से गायब हो गया तो सब अवाक् रह गये। गायब होने का कारण? वधू के माता-पिता १०,००० रुपये के अतिरिक्त दहेज की व्यवस्था नहीं कर पाये थे। वर के इस व्यवहार से क्षुब्ध बुजुर्गों ने दृढ़ता दिखायी और वहीं दूसरा दूल्हा खोजने में वे सफल हो गये। उसी मुहूर्त में, उसी मंडप में लड़की के हाथ पीले कर दिये गये। मजे की बात यह है, कि दूसरा दूल्हा इंजीनियरिंग का स्नातक है।

★

राजनीतिज्ञों के गैरराजनैतिक खेल

राजनीतिज्ञ का सबसे बड़ा मनोविनोद तो राजनीति ही है। उससे यदि एक दिन के लिए भी उसे बलात् दूर कर दिया जाये, तो उसका मन-मुकुल मुरझा जाता है। दुनिया के बड़े राजनीतिज्ञ या सत्ताधीश मन-बहलाव के लिए राजनैतिक खेल के अलावा किन क्रिया-कलापों का सहारा लेते हैं, इसका पता लगाने की कोशिश प्रसिद्ध अमरीकी अखबार 'लास एंजल्स टाइम्स' ने की। उसकी उस खोज के परिणामों से निश्चय ही आपका मनबहलाव होगा।

अमरीकी राष्ट्रपति जेराल्ड फोर्ड राजनीति में कितने मंजे खिलाड़ी हैं, यह बात अभी सिद्ध होनी बाकी है, हालांकि उन्हें राष्ट्रपति-पद की बागडोर संभाले इस महीने एक साल पूरा हो रहा है। विद्यार्थी अवस्था में वे साकर (फुटबाल) के कुशल खिलाड़ी थे। आजकल प्रायः गोल्फ खेलते है, जो श्रीमती और राजनीति के शक्तिमंतों का प्रिय खेल है। कई बार वे जैक निक्लास और डेवस्टाक्टन जैसे पेशेवर गोल्फ-खिलाड़ियों को अपने साथ खेलने के लिए निमंत्रित करते हैं, तो कई बार अपने पुराने दोस्तों को। तैराकी भी फोर्ड को प्रिय है।

अमरीकी राष्ट्रपतियों में गोल्फ के सबसे बड़े व्यसनी तो शायद जनरल आइसनहोवर थे, जिन पर आक्षेप था कि राष्ट्र की समस्याओं को समझने-सुलझाने से अधिक समय वे अपने नये लखपति मित्रों के साथ गोल्फ-स्टिक घुमाने में लगाते हैं।

दक्षिण अफ्रीका के प्रधान-मंत्री जान वोर्स्टर भी प्रायः नियमित रूप से गोल्फ खेलते हैं—कभी-कभी पेशेवर गोल्फ-खिलाड़ी गैरी प्लेयर के साथ भी। ब्रिटेन के प्रधान-मंत्री हेरोल्ड विल्सन को भी गोल्फ का शौक है, मगर उसके लिए वे बहुधा समय नहीं निकाल पाते। जांबिया के राष्ट्रपति डा. केनेथ काउंडा समय तो निकाल लेते हैं, मगर लुसाका में उनके राजकीय निवास का गोल्फ कोर्स छोटा-सा है—सिर्फ पांच 'होल' वाला।

विश्व के अन्य गोल्फ-प्रेमी शासकों में उल्लेखनीय हैं—फिलिपाइन्स के राष्ट्रपति फर्नांडो मार्कोस, इंदोनेसिया के राष्ट्रपति जनरल सुहर्तो, सिंगापुर के प्रधान-मंत्री ली क्वान यी, मलय के प्रधान-मंत्री तुन अब्दुल रजाक और थाइलैंड के प्रधान-मंत्री कुकृत प्रमोज।

आखेट या शिकार पूर्वकाल से शासकों का व्यसन रहा है। अमरीका के राष्ट्रपति

थियोडोर रूजवेल्ट की गिनती दुनिया के सबसे बड़े पशुहंता शिकारियों में होती थी। उन्होंने अपनी अफ्रीकी 'सफारी' में सौ से ज्यादा तो सिंहों का सफाया कर डाला था। दक्षिण अफ्रीका के प्रधान-मंत्री वोर्स्टर रूजवेल्ट के पद-चिह्नों पर तो नहीं चलते—वन्य पशु-संरक्षण आंदोलन के इन दिनों में चलना संभव भी नहीं—मगर 'अचूक नजर और अचूक निशाने वाले' शिकारी के रूप में मशहूर हैं। कुछ समय पूर्व उन्होंने रोडेसिया में एक जंगली हाथी को मार गिराया था। प्राय: हर साल जुलाई में (जब वहां सर्दियां होती हैं) वे कुछ दिन शिकार के लिए निकाल लेते हैं।

दक्षिण अमरीका का बोलीविया घने जंगलों और वन्य पशुओं से संपन्न है और वहां के राष्ट्रपति जनरल ह्यूगो बैंजर शिकार के उत्साह से संपन्न। आयरलैंड के प्रधान-मंत्री कासग्रेव की गणना भी शिकारियों में होती है; मगर उनका सर्वाधिक प्रिय मनोविनोद है घुड़दौड़। हर सप्ताह दो-तीन दिन वे सवेरे आधा घंटा घुड़सवारी गांठते हैं।

गिस्कार् देस्तांग जब फ्रांस के वित्तमंत्री थे, शिकार के शौकीन थे; मगर जब से वे राष्ट्रपति बने हैं, अपने इस प्रिय मनोविनोद के लिए समय नहीं निकाल पाते हैं। अपनी अफ्रीकी यात्राओं में शिकार किये पशुओं के सिर आदि उन्होंने राष्ट्रपति निवास एलीजे-प्रासाद में सजाकर रखे हैं।

पड़ोसी पाकिस्तान के प्रधान-मंत्री भुट्टो मुर्गाबियों व बटेरों के शिकार में रस लेते हैं। कहा जाता है उनकी राजनैतिक उन्नति के द्वार भी इसी की मदद से खुले। जनरल इस्कंदर मिर्जा से उनकी दोस्ती शिकार के माध्यम से ही बढ़ी। और जब जनरल मिर्जा ने देश के शासन की बागडोर अपने हाथ में ली तो भुट्टो को केंद्रीय व्यापार-मंत्री बनाया। उसके बाद भुट्टो रेंगते, बल खाते व फुफकारते हुए कैसे सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचे, यह इतिहास आप जानते हैं।

लाख-लाख दर्शकों को आनंद देने वाला खेल साकर अनेक राष्ट्र-कर्णधारों को भी आनंद देता है। अमरीकी राष्ट्रपति फोर्ड पहले खुद साकर-खिलाड़ी थे। फ्रांसीसी राष्ट्रपति गिस्कार् देस्तांग भी कभी यह खेला करते थे, अब केवल देखते हैं। देखने वालों में जांबिया के केनेथ काउंडा उल्लेखनीय हैं। और पोप पाल भी। (यह न सोचिये कि शासकों के बीच पोप कहां से आ गये; वैटिकन बाकायदा एक राज्य है, और पोप उसके बाकायदा शासक हैं।)

साकर खेलने के शौकीन शासकों में भूटान के नौउम्र राजा जिग्मे सिग्ये वांगचुक अग्रगण्य हैं। वे सधे हुए गोलकीपर हैं। ईक्वेडोर के राष्ट्रपति जनरल रोड्रीग्ज़ भी साकर खेलत हैं। पेरू की सत्ताधारी सैनिक-मंडली के अध्यक्ष जनरल जुआर भी बड़े शौक से साकर खेला करते थे; मगर कुछ वर्ष पूर्व उनका दायां पैर आपरेशन में काट दिया गया, सो अब लाचार हैं। लेकिन एक पैर गंवाकर भी वे अब भी तैरते हैं।

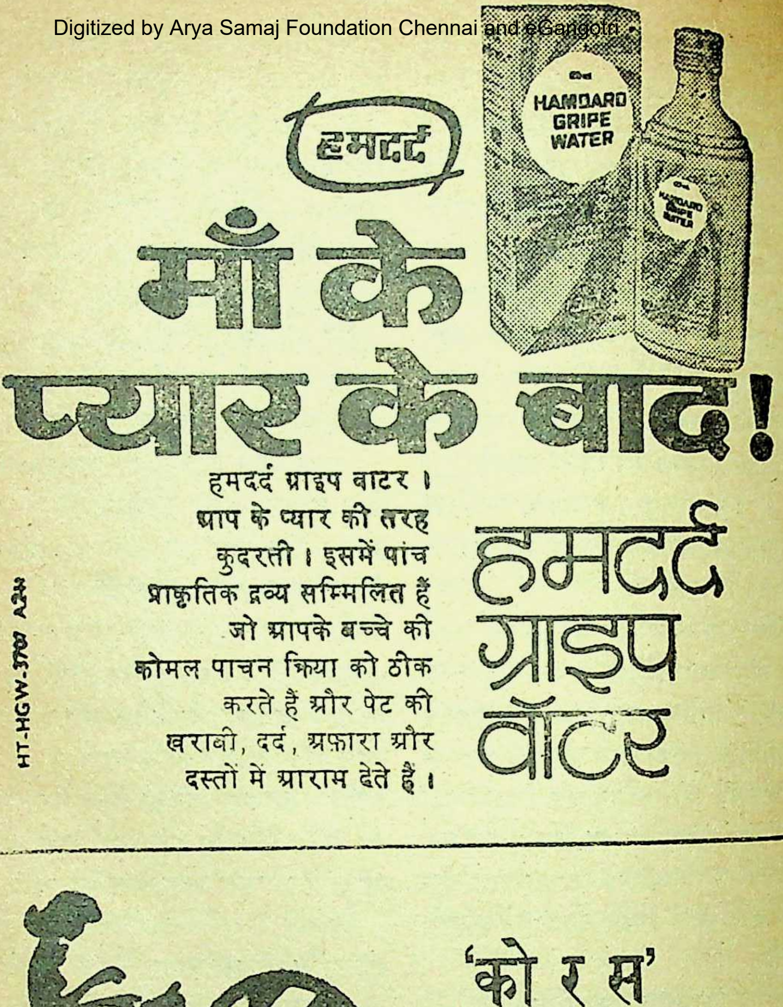

हमदर्द

माँ के प्यार के बाद!

हमदर्द ग्राइप वाटर। आप के प्यार की तरह कुदरती। इसमें पांच प्राकृतिक द्रव्य सम्मिलित हैं जो आपके बच्चे की कोमल पाचन क्रिया को ठीक करते हैं और पेट की खराबी, दर्द, अफ़ारा और दस्तों में आराम देते हैं।

हमदर्द
ग्राइप
वॉटर

HT-HGW-3760 A2

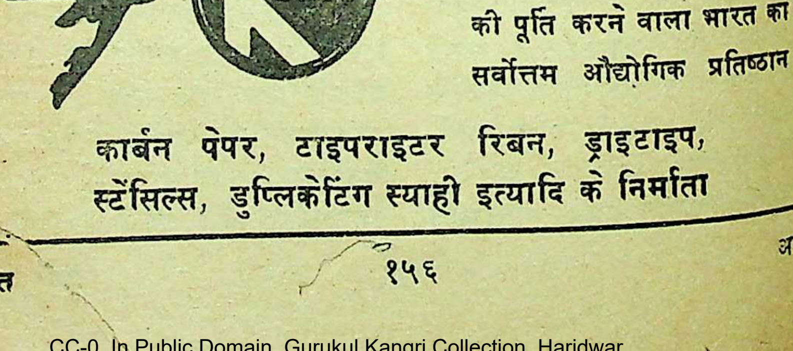

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भारत का सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप, स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

ताश तो खेलते ही हैं—खासकर 'पोकर'।

तैरने के रसिकों में चीन के माओ त्से-तुंग का नाम उल्लेखनीय है। दस-एक साल पहले वे बहुधा ह्वांग्हो (पीली नदी) में तैरते देखे जाते थे। अब कहते हैं, वे पक्षाघातग्रस्त हैं; सो तैरते तो नहीं ही होंगे, राज्य की नौका भले अब भी खेते हों। इटली के राष्ट्रपति जियोवानी लियोन को समुद्र में तैरना पसंद है। यही शौक उनके प्रधान-मंत्री आल्डो मोरो को भी है, मगर वे समझते हैं कि वे अगर समुद्र-तट पर तैरने जायें, तो भीड़ ज़मा हो जायेगी। इसलिए वे किश्ती में बैठकर समुद्र में एक-आध मील दूर चले जाते हैं, फिर तट के समानांतर तैरते हैं।

समुद्र में नहाने और तट की रेती में बैठने-लेटने के शौकीनों में विश्व की एकमात्र महिला राष्ट्रपति, अर्जेंटाइना की मारिया इजाबेला पेरोन उल्लेखनीय हैं। मिस्र के अनवर सआदत का भी यह प्रिय मनबहलाव है।

समुद्र में नाव खेने के शौकीन हैं थाइलैंड के राजा भूमिबल अतुल्यतेज। वे तो इसकी प्रतिस्पर्धा में भी भाग लेते हैं और प्रतिस्पर्धियों के हाथों हारकर भी प्रसन्न ही होते हैं। अपनी किश्ती खुद बनाते हैं। राजा भूमिबल अच्छे संगीतज्ञ भी हैं; उन्होंने जाज की कई संगीत-कृतियां रची हैं, जो थाई युवावर्ग में लोकप्रिय हैं। संगीत और नौकानयन का यह संमिलित व्यसन पश्चिम जर्मनी के प्रधान-मंत्री हेल्मुट श्मिट को भी है।

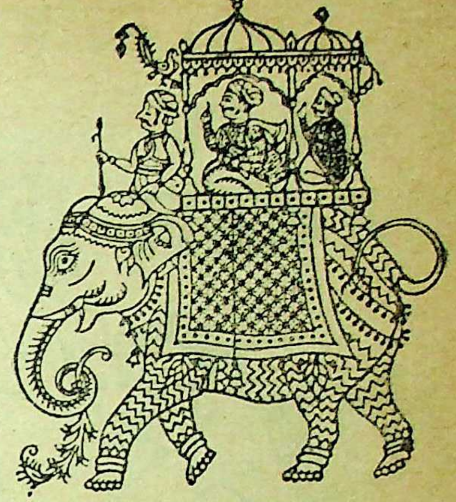

राजा की सवारी

[कपड़े पर छापा चित्र, १५वीं, सदी मद्रास

पांव पर तख्तियां बांधकर बर्फ पर फिसलने का खेल स्कीइंग ठंडे देशों में धनी-निर्धन सभी का प्रिय खेल है। अब तो अनेक अरब देशों के तेल-कुबेर शेख भी यूरोप के विख्यात स्कीइंग-स्थलों में यह खेल खेलने पहुंचते हैं। अमरीकी राष्ट्रपति फोर्ड और फ्रांसीसी राष्ट्रपति गिस्कार् देस्तांग इसके भी शौकीन हैं। गिस्कार् देस्तांग टेनिस भी खेलते रहे हैं, जैसे कि कभी माओ भी खेलते थे।

इस लेख में फोर्ड और गिस्कार् देस्तांग का नाम बार-बार देखकर आपको आश्चर्य हो रहा होगा; युगांडा के राष्ट्रपति जनरल इदी अमीन अगर इसे देखें तो शायद ईर्ष्या से जलभुन जायें। क्योंकि वे समझते हैं कि खेलों में उनके बराबर कोई नहीं। उन्हें खेलने का और उससे बढ़कर खेल में जी

शादी हो या त्यौहार
हर मौके पर
पान बहार

पान बहार

सादे पान का
मसाला

सादे पान में अथवा
ऐसे ही खाने के लिए
एक अनोखा सुगन्धित
तथा स्वादिष्ट मसाला

अशोक एण्ड कं०, ५२/३४, नयागंज, कानपुर

का व्यसन है। कंपाला के होटल इंटरनेशनल में वे अक्सर तैराकी प्रतियोगिता में भाग लेते हैं। कहते हैं, जो भी उनसे आगे निकलने की कोशिश कर रहा हो, उसका सिर पानी में दबोच देते हैं।

अंग्रेजों के वक्त जब वे सेना में मामूली से ओहदे पर थे, तब बाक्सिंग के चैंपियन थे। अभी कुछ समय पूर्व वे पूरे कपड़े पहने अखाड़े में आये और एक बाक्सिंग चैंपियन को बिना किसी पूर्व सूचना के घूंसा जड़कर धराशायी कर दिया। जनरल अमीन को कार-रेस में भाग लेने का भी शौक है। दूसरे प्रतिस्पर्धी उन्हें जीतने देने में ही कुशल समझते हैं।

जरा कल्पना तो कीजिये कि जनरल अमीन किसी अन्य देश के राष्ट्रपति या प्रधान-मंत्री के साथ तैर रहे हों और उसे आगे निकलते देख उसकी मुंडी पानी में दबोच दें तो? वैसे भी वे दैत्याकार आदमी हैं! मगर इसकी नौबत आना कठिन है। बहुत कम राष्ट्रपति या प्रधान-मंत्री युगांडा जाने की तत्परता दिखाते हैं; और जनरल इदी अमीन स्वयं विदेश जाते नहीं—इस डर से कि उनकी गैरहाजिरी में कोई उनका तख्ता न पलट दे, जैसे उन्होंने राष्ट्रपति डा. मिल्टन ओबोटे का तख्ता पलटा था।

इस मामले में वे जैरे के जनरल मोबुटु सेसे सेको से एक गुर सीख सकते हैं। मोबुटु जब भी छुट्टी मनाने या राजकीय यात्रा पर विदेश जाते हैं, उन सब अफसरों को अपने संग ले जाते हैं, जिनसे उन्हें इस तरह की आशंका होती है।

विचित्र बात यह कि बहुत कम राष्ट्र-कर्णधारों की शतरंज में दिलचस्पी है। शायद दिन-भर राजनैतिक बिसात पर गोटियां बैठाने के बाद वे शतरंज से छुट्टी चाहते हैं।

* * *

महाप्रभु चैतन्य को हुए चार सौ वर्ष हो गये। उनके बाद बंगाल में कई महापुरुष हुए, तो भी किसी और का बंगाल पर उतना प्रभाव नहीं, जितना चैतन्य महाप्रभु का है। उनके बाद बंगाल में कितने-कितने महापुरुष हो गुजरे! राजा राममोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, श्री अरविंद, रवींद्रनाथ ठाकुर, इन पांच नामों की जानकारी हमें ठेठ महाराष्ट्र में थी। तो भी बंगाल के गांवों में पदयात्रा करते हुए मैंने देखा कि वहां कितने ही गांवों में इन पांच में से एक भी महापुरुष का नाम जनता ने नहीं सुना था! तो भी चार सौ वर्ष पहले हो गुजरे चैतन्य महाप्रभु का नाम उन सबने सुन रखा था। इसका कारण! दूसरे महापुरुष शहरों तक और शहरों के आस-पास के इलाके तक ही सीमित रहे, जब कि चैतन्य महाप्रभु गांव-गांव घूमते फिरे, बारह-पंद्रह वर्ष तक निरंतर यात्रा करते रहे, लोगों को 'हरि बोल! हरि बोल!' सिखाते रहे। सो चार सौ वर्ष बाद भी लोगों पर उनका असर है। हिंदुस्तान के लोग अक्लमंद हैं। वे जानते हैं कि किसे याद रखें और किसे भूल जायें।

—[illegible]

* * *

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू का हमला और उसका मुकाबला

आपके लिए कुछ ज़रूरी बातें

"मैंने एनासिन को बहुत गुणकारी पाया है," नर्स एंजेला फ़र्नान्डेस का बयान है।

इन्होंने यही देखा है कि एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा से जल्द आराम दिलाने के लिए काफ़ी तेज़ असर है।

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू कैसे होते हैं?

ये छूत से फैलने वाले उस विष से होते हैं, जो इन रोगों में ग्रस्त लोगों से हवा में फैलता है। आम तौर से शरीर में उसके मुकाबले की शक्ति होती है। परन्तु ज्यादा मेहनत या कम ख़ूराक के कारण शरीर में कमज़ोरी आ जाती है और रोग के मुकाबले की शक्ति कम हो जाती है।

रोग लक्षण क्या हैं?

बदन का दर्द, सर का भारीपन, छींकें आना और नाक बहना, जिसके साथ अक्सर कँपकँपी छूटती है, बेचैनी महसूस होती है और पसीना आता है। उसके बाद खाँसी, गले की ख़राबी, भूख की कमी और थकावट की शिकायत हो सकती है।

क्या इस से और तकलीफ़ें भी हो सकती हैं?

यदि लापरवाही बरती जाय तो निमोनिया और साँस की ऊपरी नाली में छूत का असर हो सकता है।

एनासिन कैसे सहायक होती है?

एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा से आराम दिलाती है। एनासिन तेज असर है- क्योंकि इस में वह दर्द-निवारक दवा ज्यादा है जिसकी दुनिया-भर के डॉक्टर सब से ज्यादा सिफ़ारिश करते हैं। एनासिन पर लाखों लोगों को विश्वास है- क्योंकि यह आपके डॉक्टर की दवा की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। सर्दी-ज़ुकाम या फ़्लू के पहले लक्षण देखते ही दिन में चार बार एनासिन लीजिए।

आपको और क्या करना चाहिए?

- उबाला हुआ पानी, सन्तरे या मौसंबी का रस और पीने के दूसरे पदार्थ काफ़ी पीजिए।
- पौष्टिक आहार खाइए।
- पूरा आराम कीजिए।
- पानी में ऐंटिसेप्टिक दवा या नमक डालकर गरारे कीजिए।
- कमरों को हवादार रखिए।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

ANACIN
ANACIN

A-1-774

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

ंबर १९७५

16/9/75

पुस्तकालय गुरुकुल काँगड़ी

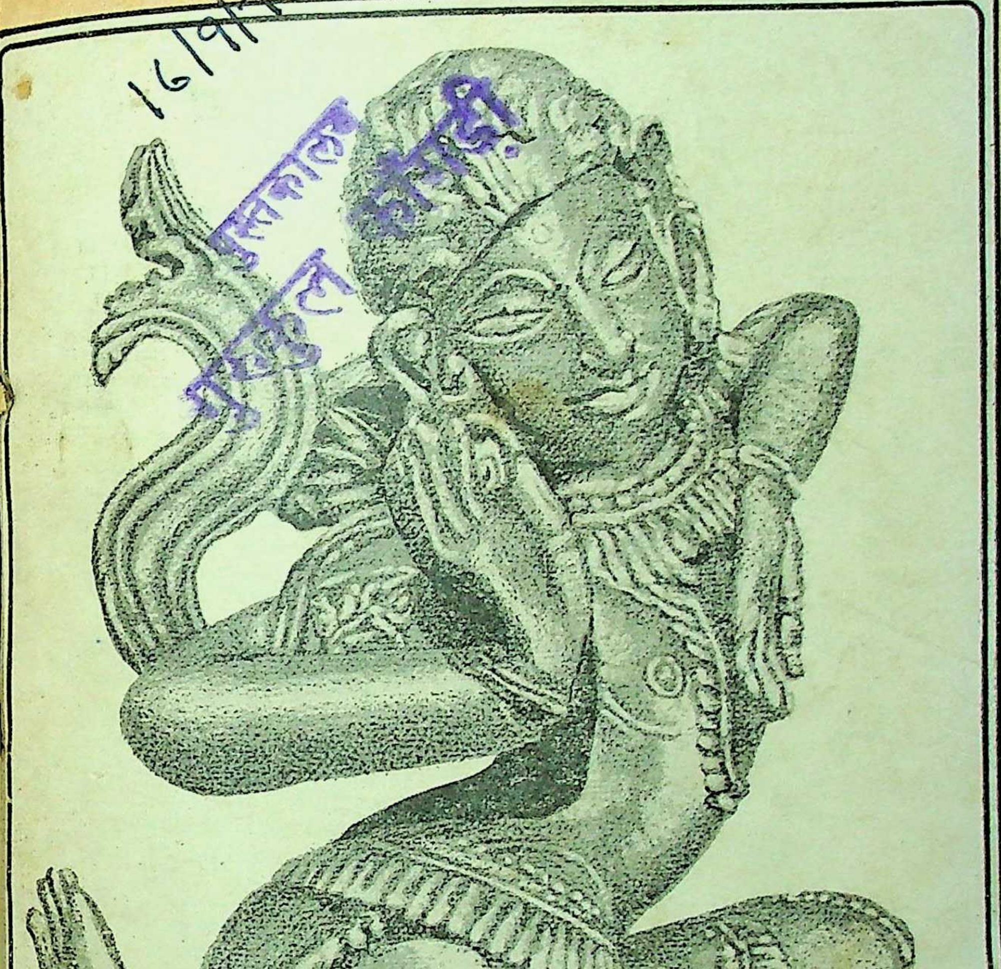

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन–ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सस्त लकड़ियों से रेयन–ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील है.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही
एकमात्र उद्देश्य है

दि ग्वालियर रेयन [illegible] मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

Sobhagya GR 74-2-

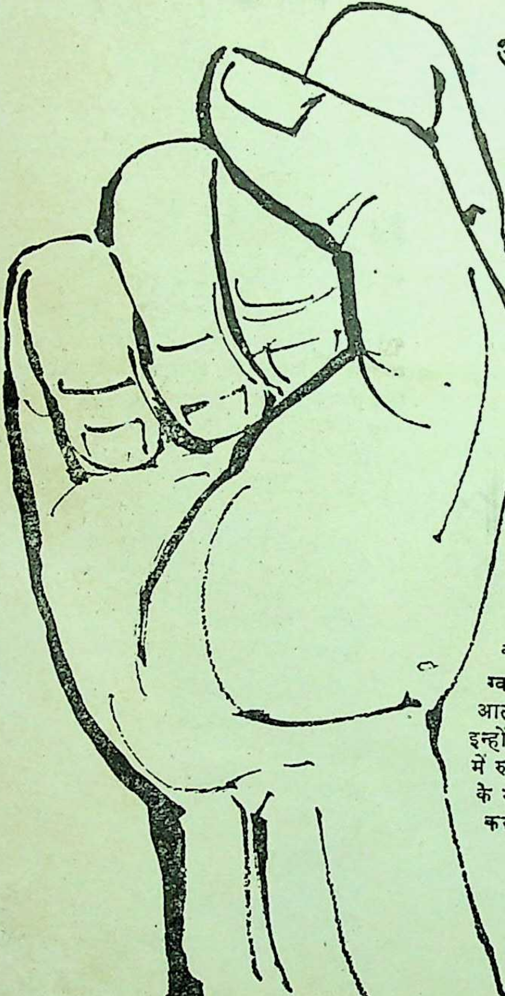

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती हैं सप्ताह में पैंसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

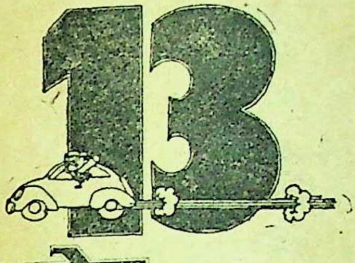

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १२ उड़ानें
लंदन? नौ ७४७ विमानों को आपका इंतज़ार है. इनमें से तीन, शुक्रवार, शनिवार और मंगलवार को, तेज़ गतिवाले हैं. अन्य छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफर्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा हो कर. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में २२ उड़ानें
बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? चार ७४७ तथा दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन तथा मस्कत के लिए तीन उड़ानें तथा आबू धाबी, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

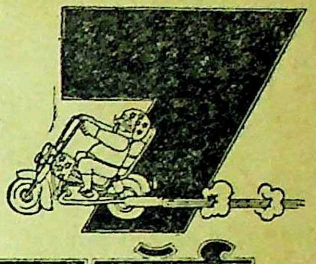

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

साथ ही हर सप्ताह:
६ उड़ानें
जापान के लिए हाँग काँग हो कर-
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
[illegible] मनपसंद एयरलाईन

AL 9084

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल' तीसरी मंजिल, २४१ बैकबे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०००२१

तार : **SODACHEM**

फोन : २९२४०७–२९३२९४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

*** अपग्रेडेड इलमनाइट ***

(सिंथेटिक रॅटाइल ९०-९२ TiO_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

- * कास्टिक सोडा
- * सोडियम बाइकार्बोनेट
- * कैल्शियम क्लोराइट
- * लिक्विड क्लोरीन
- * सोडा एश
- * अमोनियम बाइकार्बोनेट
- * ट्रिक्लोरो एथिलीन
- * हाइड्रोक्लोरिक एसिड

* साल्ट *

निश्चित आराम
कफ सर्दी फ्लू
में
त्रिशून
टैबलेट्स

○ पूर्णतया आयुर्वेदिक दवा
○ १० गोलियों के पैकेट में
सर्वत्र उपलब्ध

जब
खुजली
खसरे में एक समस्या बन जाये
उपयोग कीजिये
स्केबीज़न
मलहम

○ खुजली में उपचार के लिए
जल्दी प्रभावकारी
○ १० ग्राम की ट्यूब में सर्वत्र
उपलब्ध

झंडु फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड
बंबई-४०० ०२८

विटामिन और खनिज पदार्थ आपके परिवार के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी हैं

SQUIBB
VIMGRAN
MULTIPLE VITAMINS-MINERALS TABLETS
SARABHAI CHEMICALS

क्या उन्हें ये ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहे हैं?

विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी से आपके परिवार के लोगों का स्वास्थ्य गिर सकता है. थकान, ठंड और जुकाम, भूख की कमी, कमज़ोरी, चमड़ी तथा दाँतों के रोग अधिकतर ज़रूरी विटामिनों और खनिज-पदार्थों की कमी के कारण होते हैं.

इन की कमी, भोजनों में भी रह सकती है. इस बात के विश्वास के लिये कि परिवार के सभी लोगों को ये ज़रूरी पोषकतत्व उचित मात्रा में मिलें, उन्हें रोज़ विमग्रान दीजिये.

विमग्रान®

विविध विटामिन एवं खनिजयुक्त गोलियाँ
११ विटामिन + ८ खनिज पदार्थ

विमग्रान में आवश्यक ११ विटामिन और ८ खनिजपदार्थ मिले हैं. लोहा — खून बढ़ाने और फुर्ती लाने के लिये, कैल्सियम — हड्डियों और दाँतों को मज़बूत बनाने के लिये, विटामिन सी — ठंड और जुकाम रोकने की शक्ति बढ़ाने के लिये, विटामिन ए — चमकदार आँखों और स्वस्थ त्वचा के लिये, विटामिन बी१२ — भूख बढ़ाने के लिये तथा शरीर को स्वस्थ रखने के लिये दूसरे ज़रूरी पोषक तत्व! आज से ही रोज़ लीजिये — विमग्रान!

SQUIBB®
SARABHAI CHEMICALS PVT. LTD.
® ई. आर. स्क्विब एंड सन्स इन्कॉ. का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है जिसके [illegible] उपयोगकर्ता हैं — एस. [illegible]

केवल एक विमग्रान आपको दिन भर स्फूर्तियुक्त रखता है

Shilpi-HPMA 2A/74 Hin

लिंक चेन

*

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

*

सभी उद्योगों व वाहनों में
उपयुक्त

*

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

*

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप; बंबई-७८

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.

इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग
लिमिटेड

ग्रिडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)

एशियन सायकल टायर
व ट्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि०
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई-१

POND'S
VANISHING CREAM
GREASELESS FOUNDATION
MADE IN INDIA

आपके रूप के अनेक चहेते...
आपकी त्वचा के अनेक दुश्मन

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम को अपना साथी बनाइए.

हवा, धूल और मौसम के तीखे प्रभाव से आपकी त्वचा की रक्षा करती है पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम. आपके रूप को और भी सलोना बनाने के लिए इसमें एक खास पदार्थ ह्युमेक्टेंट मिला है जो आपकी त्वचा की नमी को सुरक्षित रखता है. तभी आपका मुखड़ा मोतीयारा दीखता है और तैलमुक्त भी.
इसे आप आदर्श पाउडर बेस के रूप में प्रयोग कर सकती हैं. घंटो-पहरों यह आपके सौंदर्य को अम्लान और मोहक बनाए रखती है. आप इसे संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन के रूप में भी प्रयोग कर सकती हैं
आप तो जानती ही हैं, आपकी त्वचा को भी उतना ही प्यार-दुलार चाहिए जितना कि आपको.

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम—आदर्श पाउडर बेस

(चीज़ब्रो-पॉण्ड्स इनकॉर्पोरेटेड (सीमित दायित्व सहित) यू.एस.ए. में संस्थापित)

बढ़ता बचपन बलवान बने—इनक्रिमिन* से

बचपन के पहले २ वर्ष, मुन्ने के लिये बढ़ने के दिन हैं। इन दिनों उसका शरीर फूल की तरह खिलता है—विकसित होता है, उसे इनक्रिमिन ड्रॉप्स जरूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इसकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिनों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में विशेष अमीनो एसिड, लायसिन भी शामिल है—जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता करता है।

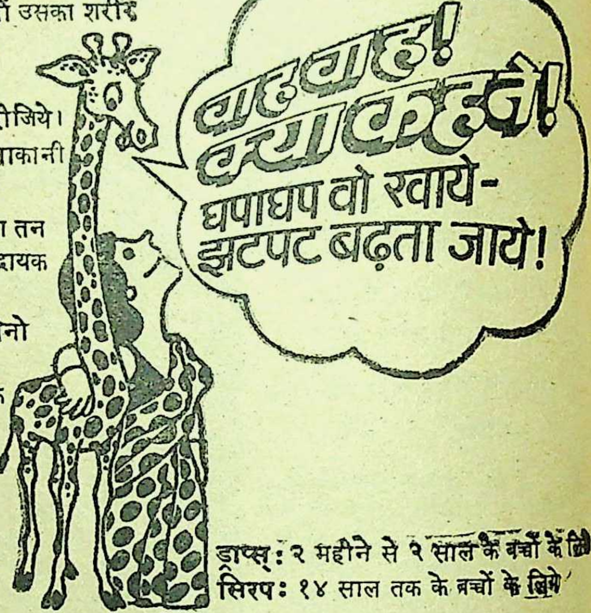
वाह वाह!
क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ता जाये!

ड्राप्स: २ महीने से २ साल के बच्चों के लिये
सिरप: १४ साल तक के बच्चों के लिये

इनक्रिमिन* टॉनिक

अधिक आहार से अधिक बढ़ाये—खाया पिया अंग लगाये

डॉक्टेरों का विश्वासपात्र नाम—Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग

*अमेरीकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क।

10 ml
*
Incremin
drops LYSINE-VITAMINS
TONIC APPETITE
STIMULANT

Sista's INC-364 D/75 Hin

सुखाने की अनोखी दवा

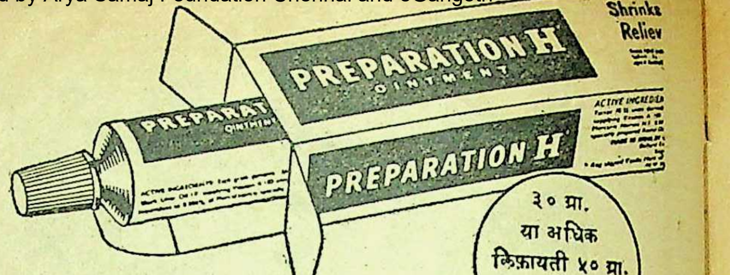

३० ग्रा.
या अधिक
किफ़ायती ५० ग्रा.
वाली ट्यूब में
मिलती है

प्रेपरेशन एच्*

अमरीकी डाक्टरों की आज़मायी हुई
- इससे खुजली मिनटों में रुक जाती है
- दर्द से फ़ौरन राहत मिलती है
- यह बवासीर के बहुत ही बिगड़े रोगों को छोड़ कर, बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने में मदद देती है
- इससे चिकनाहट मिलती है और शौच भी कष्टरहित होता है

मुफ़्त ! बवासीर के बारे में जानकारी देनेवाली मुफ़्त पुस्तिका के लिए (लिफ़ाफ़े में २५ पैसे के डाक-टिकट साथ में भेजकर) आज ही इस पते पर लिखिए : डिपार्टमेंट PH-83 पो. ऑ. बॉक्स १०१३३, बम्बई-४०० ००१

*Regd. User of TM : Geoffrey Manners & Co. Ltd.
743 PH-92 Hin

दुनिया का कोना-कोना, घूमे करोना

१९७२-७३ में, ३६ देशों के १५ लाख से भी ज़्यादा लोगों ने करोना के ही जूते पहने, जी हाँ ! करोना के खेल-कूद के जूते और गर्मी के सैंडल।

जानकारी के लिए, कृपया संपर्क करें:

करोना साहू कं. लि.

रजिस्टर्ड ऑफिस :
१२१, डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड
बम्बई ४०० ००१, भारत
टेलीफ़ोन: २६७८२१ (८ लाइनें), तार: करोनासाहू, टेलेक्स: ०११/२५६१

लिज्जत
पापड

देश में और परदेश में सब के मनपसंद

श्री महिला गृह उद्योग लिज्जत पापड
(खादी एवं ग्रामोद्योग कमिशन द्वारा मान्य)

REGD. TRADE MARK

* बम्बई-२ * नारायणवाडी (बम्बई-४) * बान्द्रा (बम्बई-५०) * वडाळा (बम्बई-३१) * मुलुंड (बम्बई-८०) * कांदीवली (बम्बई-६७) * पूना * अमरावती * वारणानगर * वालोड (सूरत) * रामाणिया (कच्छ) * जबलपुर * हैद्राबाद * कलकत्ता *

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई-४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स

डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है। आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती
वस्त्र खरीदें तो यह
ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव
काटन मिल्स

हमारे नए प्रकाशन

	रु. पै.
भूलाभाई देसाई (आधुनिक भारत के निर्माता पुस्तक माला)	५.००
लालबहादुर शास्त्री (,, ,, ,, ,,)	७.००
बदरुद्दीन तैयबजी (,, ,, ,, ,,)	५.००
राजा राममोहन राय (,, ,, ,, ,,)	४.००
श्रीनिवास शास्त्री (,, ,, ,, ,,)	४.५०
समाज व्यवस्थापक (भारतीय संस्कृति के प्रवर्तक ग्रन्थ माला)	३.६०
षठ दर्शनाचार्य (भारतीय संस्कृति के प्रवर्तक ग्रन्थ माला)	३.५०
रेडियो नाटक एक संकलन	१०.००
आधुनिक भारत की आर्थिक कहानी	४.००
सच्ची जासूसी कहानियां भाग-२	२.२५
१९२१ के असहयोग आंदोलन की झांकियां	७.००
हमारा स्वतंत्रता आंदोलन	३.५०
१९७१ के युद्ध-चित्रों में	१५.००
एक देश का एक हृदय	५.००
भारत (संदर्भ ग्रन्थ) १९७५ राष्ट्रीय जीवन की विविध गतिविधियों के सम्बन्ध में अधिकृत तथ्य एवं अन्य उपयोगी सामग्री।	९.००
ऐतिहासिक कहानियां	३.५०
जातक कथाएं	५.००
प्रेरणा दीप	४.००
हवा की बेटी	२.५०
कलात्मक लिखाई	३.५०

(तथा अन्य कई भाषाओं में रोचक व उपयोगी पुस्तकें) डाक खर्च मुफ्त। तीन रुपये से अधिक मूल्य की पुस्तकें वी. पी. पी. से भी भेजी जा सकती हैं। वृहद सूत्री पत्र मुफ्त मंगाएं।

प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली

डीएवीपी ७५/२०२

AVAILABLE

SOYMILK/SOYBEANS/DEFATED SOYFLOUR

PLEASE CONTACT FOR YOUR REQUIREMENT.

M/S ANAND MANGAL TEXTILES COMPANY

'SHREE NIKETAN'
14, M. K. ROAD MARINE LINE,
CROSS ROAD, NO. 2,
NEAR CHURCHGATE STATION,
BOMBAY-400 020.

सेलटेक्स®

सेल-टेक्स

- खाज,
- चमडी कटने,
- खरोंच तथा
- फुन्सीओ के लिये

दाद का मलहम

फार्मा-मेडीको (इण्डीया) प्रा.ली. बंबई-६०,

सफेद दाग का अचूक इलाज

'सफेद कुष्ट बटी' रक्त के समस्त विकारों को तेजी से बाहर निकालकर बिलकुल शुद्ध रक्त शरीर में प्रवाहित करती है तथा सिर्फ सात दिनों में पुराने से पुराने सफेद दाग के स्थान पर भी शारीरिक चमड़ी का प्राकृतिक रंग बदलने लगता है, जिससे गौरपूर्वक निरीक्षण करने पर भी रोग के नामोनिशान नहीं मिल पाते। साथ ही भविष्य में इस रोग के लौटने का भय नहीं रहता। सेवन-विधि बिलकुल सरल है। प्रचारार्थ एक फायल दवा मुफ्त के लिए लिखें।

पता—सरयुग फार्मेसी
पो.—कतरी सराय (गया)

PAN BAHAR
PAN BAHAR
INTERADS

अपने पैसे बचाइये

आपका मनपसन्द
पान बहार
सादे पान का मसाला
अब २५० और ५०० ग्राम में भी मिलता है

नया

नया

अशोक एण्ड कं० ५२/३४, नयागंज, कानपुर

यांत्रिक प्रगति का अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
(थाना बंबई)

दि इंडियन स्मेल्टिंग एंड रिफाइनिंग कंपनी लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय
लालबहादुर शास्त्री मार्ग,
भांडुप, बंबई ७८ एन० बी०
केबल : 'लकी' भांडुप
फोन : ५८४३८१

सेमिस रोलिंग विभाग
नानफेरस शीत, स्ट्रिप और फाइल, नानफेरस प्लेट और सर्कल

एलाय और कास्टिंग विभाग :
एंटिफ्रिक्शन बेयरिंग मैटल्स गन-मैटल्स और ब्रोन्जेन्स, ब्रेजिंग सोल्डर्स और टिन सोल्डर्स, फाइन जिंक डाइकास्टिंग एलाय्स 'इस्माक ३,' अल्युमिनियम बेस्ड डाइकास्टिंग एलाय्स, ब्रास और ब्रोन्ज राड्स सालिड कोर्ड, फिनिश्ड कास्टिंग रफ और मशीन्ड।

नवनीत

वर्ष २४ : अंक ९ सितंबर १९७५

* इस अंक में *

पत्र-वृष्टि १७ ....
यूरोप में सुरक्षा की समस्या? २२ अवधनंदन
पुर्तगाल...... २८ विश्वास
सनातन ऊर्जा ३३ साधु टी. एल. वासवानी
मुक्ता-युगल ३४ शिवानंद
कांतिदर्शी साहित्यस्रष्टा ३६ लक्ष्मीशंकर व्यास
अलबेरूनी ४० हरिदत्त वेदालंकार
जीवन-तीर्थ ४४ सुवीर
ग़ज़ल ४८ फैज़ अहमद फैज़
फील्डमार्शल माणेकशा ४९ ....
गति विचित्र है प्रेम की (बंगला कहानी) ५३ बुद्धदेव बसु
चुभन (कविता) ५७ सुधांशु
शाश्वत प्रेम ५९ मार्क ट्वेन
विज्ञान-बिंदु ६० केजिता
वाक्यदीप ६४ अथर्ववेद
आत्मतेजोबलं बलम् ६५ गो. नी. दांडेकर
छानबीन अपराधों की ६८ ए. आर. निजामुद्दीन
क्या बाल उड़ रहे हैं? ७३ डा. मानवेंद्र सिंह

संचालक	संपादक	सहसंपादक	व्यापार-व्यवस्थापक
श्रीगोपाल नेवटिया	**नारायण दत्त**	**सुरेश सिन्हा**	**महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक	उपसंपादक	उपसंपादक	प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
हरिप्रसाद नेवटिया	**गिरिजाशंकर त्रिवेदी**	**डा. विष्णु भटनागर**	सज्जा : **ठाकोर राणा**

वसीयतनामा (अंग्रेजी कहानी)	८२	चार्ल्स लीवर
माता-पिता : प्रेम और प्रेम	८७	रिचर्ड ए. गार्डिनर
मुद्रास्फीति : बहुत बड़ी बीमारी	९२	हान्स रोपर
स्मृति के अंकुर	९७	सिंह, त्रिवेदी, 'जलेश,' शर्मा
महाकलाकार माइकलेंजेलो	१००	डा. जगदीश गुप्त
विचित्र जीवों की रहस्यमय मौत	१०८	डा. प्रकाशचंद दीक्षित
हंसी के बुलबुले	११४	गिरीश आचार्य
वह कुछ भी तो नहीं कह गया (कहानी)	११६	कमला सिंघवी
कविताएं	१२४	रमा सिंह, उपाध्याय
प्रजनन का ज्वार	१२५	मनोहरलाल वर्मा
सो न पाती थीं मोमियाइयां	१२८	ब्रायन फैगन
कुछ इधर से, कुछ उधर से	१३७	मित्र
सापेक्षतावाद : कुछ प्रसंग	१४०	बलवीर
फूलों की ताजगी	१४२	सिंह और भदौरिया
भालू (बालकथा)	१४४	सुरजीत
ग्रंथ-लोक	१४८	पाषाण, व्यास, शर्मा

सूचना :—कृपया पृष्ठ ११६ पर लेखिका का नाम कमला सिंघवी पढ़ें।

*

चित्रसज्जा :

माइकलेंजेलो, रवींद्रनाथ ठाकुर, जगदीश गुप्त, हानफ्रीड शुल्ज़, ओके, शेणै, सतीश चव्हाण, डा. भटनागर, शरद कांबली।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१, ताडदेव, बंबई-३४.
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग, ३३५, बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष २४ रु.; दो वर्ष ४६ रु.; तीन वर्ष ६६ रु.।
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष ६० रु.; दो वर्ष १०५ रु.; तीन वर्ष १५० रु.।
(हवाई डाक से) एक वर्ष १२० रु.; दो वर्ष २१० रु.; तीन वर्ष ३०० रु.।
भारत में नवनीत का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा **नवनीत** प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्री वेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

पत्र-वृष्टि

अगस्त अंक में 'स्वामी दयानंद, आर्यसमाज और भारतीय जागरण' शीर्षक से छपे सारगर्भ लेख के लिए मेरी बधाई। स्वामीजी के विचारों और आर्यसमाज आंदोलन का सही और स्पष्ट विवेचन करके **नवनीत** की समृद्ध परंपरा को आपने आगे बढ़ाया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस लेख से अनेक भ्रांतियों के निवारण में सहायता मिलेगी।

—मेजर प्रेमचंद आर्य, जालंधर छावनी

[२]

स्वामीजी के राजनैतिक विचारों की तुलना गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य प्रो. रामदेवजी मिल द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से किया करते थे। मिल ने लिखा था—'गुड गवर्नमेंट इज़ नो सब्स्टिच्यूट फ़ॉर सेल्फ गवर्नमेंट।' प्रो. रामदेवजी मजाक में यह भी कहा करते थे कि अच्छा हुआ जो स्वामीजी ने अंग्रेजी नहीं पढ़ी थी, अन्यथा पश्चिमी विचारों से प्रभावित हमारे भाई कह देते कि 'कोई कितना ही करे परंतु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि होता है...' इत्यादि वाक्य (जिसे आपने अपने लेख में उद्धृत किया है) स्वामीजी ने मिल की पुस्तक से चुराये हैं।

—प्रो. हरिदत्त वेदालंकार, पंतनगर, उ. प्र.

[३]

'स्वामी दयानंद, आर्यसमाज और भारतीय जागरण' में आपने दो बातों का प्रमाण खूब अच्छी तरह प्रस्तुत किया है—१. आपको संस्कृत के कठिन शब्द खूब आते हैं; और २. भारत के प्रश्नों को अभारतीय दृष्टि से देखने की बीमारी आपके रोम-रोम में भरी है। वरना आपको 'प्रतीप', 'दाय' आदि शब्दों का सहारा लेने की आवश्यकता न पड़ती; और न ही आप १८५७ के स्वातंत्र्य-संग्राम को '१८५७ की उथल-पुथल' कहते, न आपको स्वामी दयानंद की दृष्टि राजा राममोहन राय की तुलना में 'कम व्यापक' नजर आती और न ही आपको आर्यसमाज का हिंदुत्व-समर्थक रुख अपराध-सा प्रतीत होता। यह लेख असल में आपको अंग्रेजी में लिखकर किसी अंग्रेजी अखबार में छपवाना चाहिये था। शायद आप पर्याप्त अंग्रेजी नहीं जानते, इसलिए उसका दंड आपने हमें दे डाला।

—वेदव्रत, हैदराबाद

[४]

अगस्त अंक में आपका लेख 'स्वामी दयानंद, आर्यसमाज और भारतीय जागरण' अध्येताओं के तो बड़े काम की चीज है; पर इसे तनिक रसमय (स्पाइसी) बना

देते, जैसे क्षितीशजी का बाङ्लादेश वाला लेख (जुलाई अंक) था।

—सत्यपाल विद्यालंकार, दिल्ली

०००

इस समय ग्रामवासियों की ऋणग्रस्तता के निवारण के लिए कई राज्यों में कानून बनाये जा रहे हैं। क्या इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर **नवनीत** में एक विशद लेख पढ़ने को मिलेगा?

—चंपारानी, मुंगेर

०००

अगस्त अंक दिल को छू देने वाला था। मुखपृष्ठ का अपना ही आकर्षण था।

—अजयकुमार पुगला, मुरादाबाद, उ. प्र.

०००

श्री रामनाथ सुमन का लेख 'भारतीय आत्मा : एक झांकी' बड़ा ही मर्मस्पर्शी था, और साथ ही उसने स्वर्गीय 'दादा' के व्यक्तित्व का जीवंत चित्र प्रस्तुत किया है। लंबी-लंबी लेखमालाओं में लोग जो नहीं कर पाये, वह काम सुमनजी ने आठ पृष्ठ के इस लेख में कर दिया। लेखनी का कमाल इसी को कहते हैं।

—कु. किरणमयी, जबलपुर

०००

नया स्तंभ 'जीवन-तीर्थ' नाम से तो कुछ धर्मोपदेशपरक प्रतीत हुआ। मगर पढ़ने पर पाया कि वह तो सचमुच जीवन-परक है। मैंने उसे 'नया स्तंभ' कह डाला है, इस इरादे से कि यदि आपने उसकी कल्पना स्तंभ के रूप में न की हो तो अब कर लें। ऐसी चीजें घर में सबके लिए अत्यंत उपयोगी होती हैं।

—राजेंद्र कृष्ण वर्मा, जयपुर

अतिया परवीन की 'हम तो डूबे मगर . . .' कहानी एवं 'त्रिकटु' शीर्षक से छपी पांधी ननकानवी की लघुकथाएं अच्छी लगीं। 'डाक-टिकटों में रवींद्र' लेख ज्ञान-वर्धक था।

—चे. भा. 'ललित', शिमला

०००

'पंजाबमाता : पावन स्मृति' (अगस्त अंक) पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। ऐसे लेखों के द्वारा उन महान आत्माओं का पता चलता है, जिन्होंने हंसते-हंसते अपने कुल के चिराग अपने देश की वेदी पर चढ़ा दिये।

—विनोद शर्मा, दिल्ली

०००

नये स्तंभ 'चित्रप्रश्न' की शुरूआत आपने पाठकों के किस वर्ग को दृष्टि में रखकर की है, यह मैं समझ नहीं पाया। जुलाई के चित्रप्रश्न में आपने जिन तीन स्वातंत्र्य-योद्धाओं के चित्र दिये हैं, उनमें से दो का तो नाम भी मैं अगस्त अंक से ही जान पाया, हालांकि मैं एक कालेज में पढ़ाता हूं। मैं समझता हूं, आपको ऐसे प्रश्न इसमें पूछने चाहिये, जिनके उत्तर ढूंढ़ने का साहस आम पाठक कर सके। यदि आप ऐसी चीजें पूछते रहेंगे, जो पाठक की पहुंच से परे हैं, तो वह इस पन्ने को यों ही पलट देगा।

—करुणेशचंद्र, दिल्ली

[२] -

नये स्तंभ 'चित्रप्रश्न' की कल्पना अच्छी है। पाठकों के ज्ञान और स्मरण-शक्ति की इस प्रकार अच्छी परीक्षा की जा सकती है। सुझाव है कि इसके साथ कोई इनाम

भी रखा जाये—भले वह छोटा ही हो।

—सूर्यकुमारी, इलाहाबाद

[३]

जुलाई के चित्रप्रश्न-१ का जो उत्तर अगस्त अंक में छपा है, उसे पढ़कर बोलिवार और कासुथ के बारे में विस्तार से जानने की उत्सुकता है। क्या इन पर **नवनीत** में लेख दे सकेंगे ? **—प्रसन्न देसाई, सूरत**

* आपकी इच्छा यथाशीघ्र पूरी करने का प्रयत्न किया जायेगा। **—संपादक**

०००

कविगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर की 'अंतिम रचनाएं' हिंदी में पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। अनुवादक श्री पृथ्वीनाथ शास्त्री को हमारी हार्दिक बधाई ! याद आता है, १९७२ के दीपावली अंक में उनका एक सुंदर लेख अवनींद्रनाथ ठाकुर के विषय में पढ़ा था।

उपन्यास-सम्राट् शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की जन्म-शताब्दी शीघ्र मनायी जाने वाली है। हम आशा करते हैं कि उनके बारे में अच्छी सामग्री **नवनीत** के माध्यम से पढ़ने को मिलेगी। **—रवि गोस्वामी, जबलपुर**

०००

जुलाई का **नवनीत** लेखों के चयन की विविधता की दृष्टि से हृदयहारी था। श्री वीरेंद्र अग्रवाल का आयकर-विषयक, श्री नेमिशरण मित्तल का निर्वाचन-कानून संबंधी तथा जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी का शेख़ अब्दुल्ला वाला लेख विशेष रूप से ज्ञानवर्द्धक लगे। 'मिर्जा-साहिबां' का सार-संक्षेप भी अत्यधिक रोचक लगा।

जहां तक कविताओं का संबंध है, **नवनीत** में मन को छूने या झकझोर देने वाली इक्की-दुक्की रचनाएं यदा-कदा ही मिल पाती हैं। यों यह रुचि-वैचित्र्य की भी बात है। वैसे, कुल मिलाकर पत्र का स्तर उच्च है।

—प्रमोदरंजन वाजपेयी, मुजफ्फरनगर, उ. प्र.

०००

जुलाई के **नवनीत** को देखकर काफी प्रसन्नता हुई। नर्मदाप्रसाद खरे की कविता यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ रही है। इस बार मुखपृष्ठ को कुछ आकर्षक बनाया गया है। शिकायत समझें या सलाह समझें, मैं आपसे कुछ व्यक्तिगत अनुरोध करना उचित समझता हूं :

क. मुखपृष्ठ को और आकर्षक बनायें।

ख. कागज में कुछ और सुधार करें।

ग. यदि आप हस्तसामुद्रिकशास्त्र एवं ज्योतिष-विज्ञान आदि के संबंध में कुछ लेख प्रकाशित कर सकें तो उत्तम होगा।

घ. प्रत्येक मास के अंक में किसी न किसी प्रख्यात साहित्यकार का लेख होना आवश्यक है। लेख ऐसा होना चाहिये, जो पाठक और साहित्यकार के बीच तादात्म्य स्थापित कर सके।

ङ. गोष्ठी से संबंधित एक अध्याय होना परमावश्यक है, जिससे पाठक अपनी समस्याओं का समाधान कर सकें।

—वासुदेव मिश्र 'महीप',

ग्राम प्रतापपुर, जि. सुलतानपुर, उ. प्र.

* प्रथम दो सुझावों के बारे में कृपया अगले पत्र पर दृष्टिपात करें। **नवनीत** की जो

ओरिएन्ट

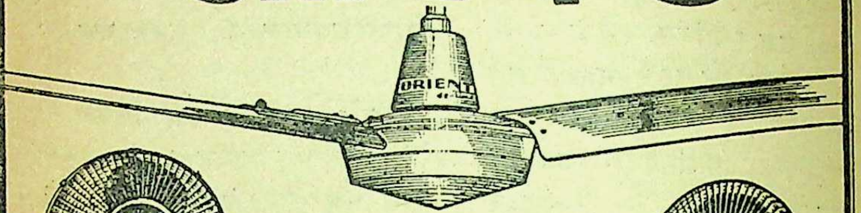

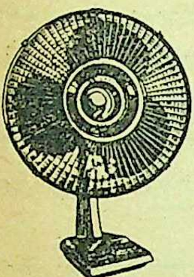
डेस्क पंखा

अब आकर्षक

आफ-सीजन दामों

में खरीदिये

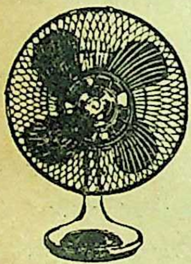
सुपर डीलक्स टेबल पंखा

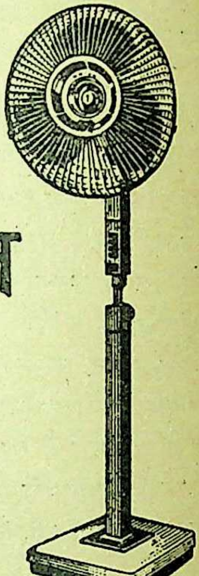
स्टैंड पंखा

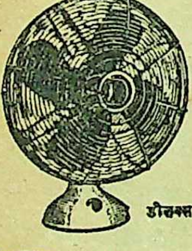
डीलक्स टेबल पंखा

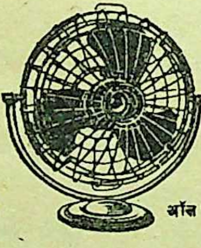
ऑल परपज़ पंखा

ओरिएन्ट
पंखा
विश्व विख्यात

ओरिएन्ट पंखा

ओरिएन्ट जनरल इन्डस्ट्रीज़ लि० ६, घोर बीबी लेन, कलकत्ता-१४
फैक्ट्री : कलकत्ता और फरीदाबाद

CC/O/4/73 HIN

रूपरेखा बनायी गयी है, उसमें हस्तसामुद्रिक आदि विषयों के लिए गुंजाइश कम ही है। प्रश्नोत्तर-स्तंभ अनेक पत्रिकाओं में चलते हैं, क्या वे काफी नहीं हैं? हर पत्रिका अपना अलग स्वरूप रखे, यही अच्छा है। **—संपादक**

०००

जुलाई ७५ का अंक मिलते ही हमेशा की तरह सबसे पहले 'पत्र-वृष्टि' पढ़ी। यह देखकर दुःख हुआ कि एक पाठक ने वही रोना दुहराया कि कागज घटिया है और मुखपृष्ठ अनाकर्षक।

क्या हमारे ये पाठक बंधु पत्र-वृष्टि स्तंभ पढ़ते नहीं, जिसमें एक से अधिक बार आप अपनी कठिनाई समझा चुके हैं? या वे केवल अपना नाम छपाना चाहते हैं? उनकी वही शिकायत और आपका वही रोना पढ़ते-पढ़ते हमें तो उबकाई आने लगी है। मेरा सुझाव है कि अब इस संबंध में आप कोई पत्र न छापें और इस प्रकार बचा हुआ स्थान अन्य महत्त्वपूर्ण पत्रों को दें।

मैं समझता हूं, **नवनीत** के प्रबुद्ध पाठक आपसे उम्दा मिठाई की आशा करते हैं, महज टोकरी की खूबसूरती की नहीं।

—उ. सि. चंदेल, अकलतरा, म. प्र.

०००

सिनेमा के अभिनेताओं एवं अभिनेत्रियों के विषय में पत्र-पत्रिकाओं में आकर्षक चित्रों सहित लेख छपते रहते हैं, किंतु हमारे देश के साहित्यकारों के संबंध में बहुत कम ही छापा जाता है। मेरी आपसे प्रार्थना है कि उनके लिए भी अपनी पत्रिका में कुछ पृष्ठ रखें, ताकि प्रेमचंद, प्रसाद तथा निराला जैसे महान साहित्यकारों के विषय में नयी पीढ़ी के पाठक जानकारी पा सकें तथा उन्हें भूलें नहीं। **—कपिलनाथ सिंह,**

पो. कठारा, जि. कानपुर, उ. प्र.

★

मैं अपने को काफी घूमा-फिरा समझता हूं—यूरोप के अधिकांश देश देख चुका हूं, आधे से अधिक अफ्रीकी देश, और अन्य भी अनेक देश। फिर भी दक्षिण ध्रुव प्रदेश की यात्रा में स्थान-स्थान पर अपने अज्ञान का अनुभव कराये जाने का आनंद मुझे मिला। दक्षिण ध्रुव महाद्वीप पर कुल सत्रह किस्म के पक्षी रहते हैं और इनमें से केवल चार पेंग्विन जाति के हैं। यह सबसे ऊंचा, सबसे तेज हवा वाला और सबसे ठंडा महाद्वीप है। इस पर छायी बर्फ की औसत मोटाई ६,००० फुट है। सर्दियों में जब समुद्र जम जाता है, इस महाद्वीप का क्षेत्रफल दुगुना बड़ा हो जाता है। शेष समय में भी इसका क्षेत्रफल संयुक्त राज्य अमरीका और मेक्सिको के संयुक्त क्षेत्रफल जितना होता है। भूमध्यरेखा के दक्षिण में जितनी भी जमीन है उसका २८ प्रतिशत दक्षिण ध्रुव प्रदेश में है। फिर भी १८वीं शताब्दी में भी कोई मनुष्य उसे खोज नहीं पाया था और १८९० तक कोई आदमी वहां सर्दियां नहीं बिता पाया था। आज तक वहां किसी मानव-शिशु ने जन्म नहीं लिया। जो सबसे बड़ा स्थलवासी जीव वहां पाया गया है, वह आध इंच लंबा एक कीड़ा है। **—एंटनी स्मिथ**

★

यूरोप में सुरक्षा की समस्या कितनी सुलझी थी?

अवधनंदन

राजनैतिक टीकाकारों ने उसे ऐतिहासिक घटना कहा है। राजनेताओं ने उसे यूरोप के इतिहास का नया पथचिह्न बताया है। १ अगस्त को यूरोप तथा उत्तर अमरीका के ३५ राष्ट्रों द्वारा पारस्परिक सुरक्षा और सहयोग के घोषणापत्र पर हस्ताक्षर के साथ समाप्त हुए हेलसिंकी-संमेलन की तुलना नेपोलियन की पराजय के पश्चात् १८१४–१५ में हुई प्रसिद्ध वियेना कांग्रेस से की गयी है। फिनलैंड की राजधानी में सफेद संगमरमर के फिनलैंडिया सभागृह में हुए इस महाशिखर-संमेलन में लगभग १,००० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। उनसे डयोढ़ी संख्या में पत्रकार आये थे—इस ऐतिहासिक संमेलन के साक्षी बनने के लिए!

संमेलन के वातावरण का स्वरूप फिनलैंड के राष्ट्रपति उर्हो केक्कोनेन ने निर्धारित किया था। समागत प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए उन्होंने कहा—'यह यूरोप के लिए खुशियों और उम्मीदों का दिन है। हमारे यह मानने के लिए सभी कारण मौजूद हैं कि हमारे पारस्परिक संबंधों में नवयुग का आरंभ हो रहा है।' कमोबेश यही विचार संमेलन के विशिष्ट अतिथि और राष्ट्रसंघ के महासचिव कुर्ट वाल्डहाइम ने भी व्यक्त किया। उन्होंने कहा—'यह संमेलन पूरे मानव-इतिहास का न सही, तो भी हमारी शताब्दी का एक अनूठा संमेलन है। कारण, इसका उद्देश्य किसी युद्ध को समाप्त करना या शांति की शर्तों की परिभाषा करना नहीं है; अपितु इसका उद्देश्य है कुछ समय से अस्तित्व में चले आ रहे शांति के आधार को पुख्ता बनाना।'

हेलसिंकी-संमेलन की प्रमुख उपलब्धि है—३०,००० शब्दों का वह घोषणापत्र जो छह भाषाओं में तैयार किया गया और जिस पर दोनों महाशक्तियों समेत, संमेलन में उपस्थित ३५ देशों ने हस्ताक्षर किये। निश्चय ही यह घोषणापत्र हेलसिंकी में नहीं लिखा गया था। इसे तैयार करने में जिनीवा में राजनयिक प्रतिनिधियों को दो वर्ष लगे थे। लंबे अरसे में कभी-कभी तो राजनयिक वार्ता भंग होने तक की नौबत आ गयी थी; परंतु सभी पक्षों ने धीरे-धीरे 'समझौते और

रियायत का रुख अपनाकर वार्ता को अंतिम मंजिल पर पहुंचाया।

हेलसिंकी-घोषणापत्र चार खंडों में है, जिन्हें 'बास्केट' यानी डलिया कहा गया है। (बौद्ध परिभाषा में चाहे तो इसे हम 'पिटक' कह सकते हैं, क्योंकि उसका अर्थ भी डलिया ही होता है।) पहली 'डलिया' सुरक्षा से संबंधित है। इसमें सभी राष्ट्रों की स्वतंत्र और समान प्रभुसत्ता के संबंध में १० सिद्धांत प्रतिपादित किये गये हैं, जिनमें राष्ट्रीय सीमाओं की सुरक्षा, विवादों के शांतिपूर्ण निबटारे व अन्य देशों के मामलों में अहस्तक्षेप की घोषणा की गयी है तथा आत्मनिर्णय के राष्ट्रीय अधिकार और मानव-अधिकारों की सुरक्षा एवं संवर्धन का वचन दिया गया है। घोषणापत्र में कहा गया है कि ये देश नागरिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं के प्रभावी उपयोग को बढ़ावा देंगे।

साम्यवादी और गैरसाम्यवादी देशों के बीच लेन-देन की वर्तमान स्थिति इस 'डलिया' से स्पष्ट झलकती है। इसमें जहां सोवियत संघ राष्ट्रीय सीमाओं की सुरक्षा के माध्यम से पूर्व यूरोप के साम्यवादी देशों की वर्तमान सीमाओं की पुष्टि कराने में सफल हुआ है, वहीं गैरसाम्यवादी देश भी आत्मनिर्णय के राष्ट्रीय अधिकार तथा मानव-अधिकारों की रक्षा एवं संवर्धन का आश्वासन सोवियत संघ से प्राप्त करने में सफल हुए हैं।

'विश्वास स्थापित करने वाली' कुछ कार्रवाइयों का भी इस खंड में उल्लेख है। उदाहरण के लिए, इसमें कहा गया है कि यदि कोई देश २५,००० से अधिक सैनिकों का कोई सैनिक अभ्यास करेगा, तो वह तीन सप्ताह पहले इसकी अग्रिम सूचना दूसरों को देगा। साथ ही यह भी स्वीकार किया गया है कि जो देश सोवियत संघ की तरह यूरोप के बाहर भी फैला हुआ है, वह केवल उन्हीं सैनिक अभ्यासों की इस तरह की अग्रिम सूचना देने को बाध्य होगा, जो अभ्यास हेलसिंकी-संधि पर हस्ताक्षर करने वाले अन्य देशों की सीमाओं से २५० किलोमीटर के भीतर होने वाला हो। सुनने में यह व्यवस्था चाहे कितनी नयी प्रतीत हो, मगर अपने संचार-उपग्रहों द्वारा अमरीका अब भी ऐसे सब अभ्यासों की सूचना जुटाने में समर्थ है।

दूसरी 'डलिया' या द्वितीय खंड में आर्थिक, वैज्ञानिक, प्राविधिक और पर्यावरण संबंधी प्रश्नों पर सहयोग का जिक्र है। घोषणापत्र में कहा गया है कि हस्ताक्षरकर्ता देश परस्पर व्यापार-संबंधों के सुधार एवं प्रसार के लिए वचनबद्ध हैं और व्यापार में बाधक बनने वाले तत्त्वों को उत्तरोत्तर कम करने का प्रयास करेंगे। इसी खंड में वैज्ञानिक अनुसंधान एवं पर्यावरण के क्षेत्र में मिल-जुलकर कार्य करने का भी उल्लेख है।

तीसरी 'डलिया' मानव-संपर्कों के विषय में है। वस्तुतः जिनीवा में वार्ताकारों को सबसे अधिक कठिनाई इसी खंड पर सर्व-

सहमति प्राप्त करने में हुई। सोवियत संघ ने पहले तो गैरसाम्यवादी देशों की इस मांग को ठुकरा ही दिया था कि साम्यवादी और गैरसाम्यवादी देशों के नागरिकों के बीच संपर्क आसान रहें और दोनों ओर से सूचनाओं का आदान-प्रदान अबाधित हो। सोवियत संघ का कहना था कि यह हमारे आंतरिक मामलों में सीधे हस्तक्षेप का प्रयास है। परंतु बाद में वह इस मामले में कई रियायतें देने को राजी हो गया, विशेषत: विदेश-यात्रा तथा विदेशी पत्र-पत्रिकाओं के बारे में। वह इसके लिए राजी हो गया कि परदेश में बसे अपने कुटुंबियों से मिलने के निमित्त विदेश-यात्रा का वीसा मांगने वाले रूसियों के आवेदनों पर रूस सरकार अनुकूल दृष्टि से विचार किया करेगी। उसने वचन दिया है कि विभिन्न देशों के नागरिकों के परस्पर विवाह और अपने मनपसंद देश में बसने की उनकी इच्छा पर वह 'सकारात्मक एवं मानवतावादी भावना से' विचार करेगा। इसी खंड में, सभी प्रकार की सूचनाओं के मुक्त तथा व्यापक आदान-प्रदान और अन्य देशों से प्रकाशित समाचारपत्रों व पत्रिकाओं के प्रसार में सुधार की अपील की गयी है।

अंतिम 'डलिया' अर्थात् चतुर्थ खंड इस घोषणापत्र के बाद उठाये जाने वाले कदमों से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि हस्ताक्षर करने वाले देशो में हेलसिंकी-संमेलन के बाद भी संवाद चलता रहेगा। इसके लिए सोवियत संघ ने एक स्थायी संघटन की स्थापना का प्रस्ताव रखा था; परंतु उस पर सहमति नहीं हो सकी। किंतु इस बात पर सब सहमत हुए कि १९७७ में बेलग्रेड में पहले तो विभिन्न देशों के वरिष्ठ अधिकारियों की और बाद में विदेश-मंत्रियों की बैठक हो और उसमें इसका जायजा लिया जाये कि घोषणापत्र में प्रतिपादित सिद्धांतों पर कहां तक अमल हुआ।

वस्तुत:, महाशक्तियों के पारस्परिक संबंध पिछले डेढ़ दशक में तनावहीनता की ओर निरंतर अग्रसर हो रहे हैं, और हेलसिंकी-संमेलन एवं उसका घोषणापत्र उसी का परिणाम है। १९५९ में आइसनहावर और ख्रुश्चोव के बीच कैंप डेविड (अमरीका) में जो शिखर-संमेलन हुआ, उसके बाद से दोनों महाशक्तियां द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् छिड़े शीतयुद्ध के माहौल से धीरे-धीरे उबरने और तनावरहित संबंध बनाने के लिए प्रयत्नशील रही हैं। तनाव घटने के साथ एक ओर तो पश्चिमी देशों की आंतरिक एकता ढीली पड़ी है; दूसरी ओर अपनी आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाने के कारण, यूरोप में तैनात सैन्यशक्ति का खर्च उठाना अमरीका के लिए भारी होता गया है। इसके साथ ही, दूसरे देशों से अपनी सेना हटाने के लिए राजनैतिक दबाव भी अमरीका में बढ़ता गया है। वियतनाम में अमरीका की पराजय के बाद तो यह दबाव चरम बिंदु पर जा पहुंचा है। इसलिए यह आश्चर्य की बात नहीं कि महायुद्ध के बाद के वर्षों में पूर्वी यूरोपीय देशों पर सोवियत

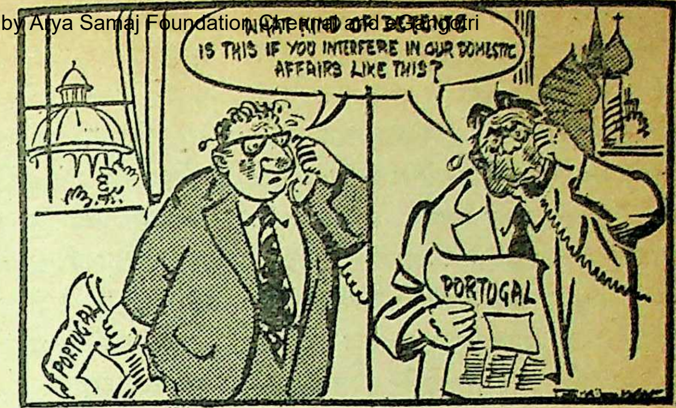
WHAT KIND OF DETENTE IS THIS IF YOU INTERFERE IN OUR DOMESTIC AFFAIRS LIKE THIS?
PORTUGAL
PORTUGAL

'यह भला कैसी तनावरहितता है कि आप इस तरह हमारे घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करें?' ['टाइम्स आफ इंडिया' में लक्ष्मण]

संघ के प्रभाव को अनुचित मानकर पश्चिमी यूरोप के देशों की रक्षा के लिए 'नैटो' का गठन करने वाला संयुक्त राज्य अमरीका तथा उसके साथी पश्चिमी देश अब यूरोप का 'पूर्व' और 'पश्चिम' में बंटवारा कबूल करने को तैयार हो गये हैं। पारस्परिक सीमाओं की अलंघनीयता का जो सिद्धांत घोषणापत्र के प्रथम खंड में वर्णित है, वह इसी का द्योतक है।

संभवत: इसीलिए पश्चिम यूरोप तथा अमरीका के कतिपय अनुदारपंथियों ने हेलसिंकी-संमेलन को मुख्यतया रूसी नेता ब्रेजनेव की विजय बताया है। रूसी राजनयिक क्षेत्र भी इस टीका से सहमत प्रतीत होते हैं। कई रूस-समर्थक राजनीति-विशारदों ने अब एशियाई देशों के लिए हेलसिंकी-जैसे संमेलन और घोषणा की बात उठायी है।

एशिया में यह संभव होगा या नहीं, यह बाद की बात है; परंतु यह निश्चित है कि हेलसिंकी-घोषणा की स्पिरिट पर अमल करके दिखाने का एक अवसर फिलहाल यूरोप में पुर्तगाल की समस्या के रूप में सामने खड़ा है। पुर्तगाल का साम्यवादी दल सेना के सत्तारूढ़ गुट के साथ अपनी सांठगांठ के बल पर देश की राजनीति पर पूरी तरह हावी होने का प्रयत्न कर रहा है। हेलसिंकी-संमेलन के दौरान अनेक पश्चिमी नेताओं ने श्री ब्रेजनेव तथा पुर्तगाली राष्ट्रपति जनरल कोस्टा गोमेज के साथ निजी बातचीत में इस बात की ओर स्पष्ट संकेत किया कि पुर्तगाल की भावी घटनाओं को पश्चिम तथा पूर्व यूरोप के मध्य तनावहीन संबंधों की कसौटी माना जायेगा।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण कसौटी है सोवियत संघ और अमरीका के बीच सामरिक महत्त्व के परमाणु-अस्त्रों के परिसीमन के लिए चल रही संधिवार्ता, जिसे संक्षेप में 'साल्ट' वार्ताएं कहा जा रहा है। इस वार्ता के फलस्वरूप दोनों देशों में एक संधि अब तक हो चुकी है और हेलसिंकी-संमेलन के बाद श्री

ब्रेजनेव और राष्ट्रपति फोर्ड में हुई वार्ता से द्वितीय संधि का काम अधिक सहज हो गया है। ये दोनों नेता संधि के कुछ मुद्दों पर सहमत हो गये हैं और यह बात दोनों पक्षों के वार्ताकारों तक पहुंचा दी जायेगी। वस्तुत: पिछले साल नवंबर में जब दोनों महाशक्तियों के कर्णधार व्लादीवोस्तोक में मिले थे, तब वे अपने-अपने देशों के परमाणु-प्रक्षेपास्त्रों की संख्या १,३२५ तक सीमित करने के लिए राजी हो गये थे; परंतु बाद में वार्ताकार इस सहमति को संधि के अनुच्छेदों की राजनयिक भाषा में बांध नहीं पाये। संभवत: अब ये कठिनाइयां दूर हो जायेंगी।

'साल्ट' की भांति ही एक और वार्ता नैटो तथा वारसा संधि देशों के बीच वियेना में चल रही है। इसका उद्देश्य भी नि:शस्त्रीकरण है, विशेषत: मध्य यूरोप का नि:शस्त्रीकरण। हेलसिंकी-संमेलन में भाग लेने वाले पश्चिमी तथा साम्यवादी देशों के प्रतिनिधियों ने इस बात पर समान बल दिया है कि मध्य यूरोप में सैन्यशक्ति घटायी जाये। इसका एकमात्र अपवाद रहा है फ्रांस, जिसने वियेना की नि:शस्त्रीकरण-वार्ता में भाग लेने से भी इंकार कर दिया। वह मध्य यूरोप में सीमित शस्त्रसज्जा वाले ऐसे किसी भी क्षेत्र के निर्माण को शंका की दृष्टि से देखता है, जिसका नियंत्रण मध्य यूरोपीय देशों के बजाय संयुक्त राज्य अमरीका तथा सोवियत संघ के हाथों में रहने वाला हो।

वियेना-वार्ता का सफल होना आसान नहीं है। अनेक पश्चिमी देशों का कहना है कि वारसा-संधि देशों के पास नैटो-देशों से अधिक सैन्यशक्ति है। पश्चिमी देश चाहते हैं कि दोनों ओर संतुलित रूप से शक्ति कम की जाये, जब कि वारसा-संधि देश दोनों ओर समान मात्रा में शक्ति कम करने के पक्ष में हैं। फिर भी यह आशा की जा रही है कि हेलसिंकी के बाद वियेना-वार्ता के अवरोध कम होंगे।

कोई भी यथार्थ विश्लेषण इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकता कि तीस वर्ष तक शीतयुद्ध के नारों और सामरिक तैयारियों से यूरोप के वातावरण में जो विष भरा गया है, वह एक संमेलन से रातोंरात छंट नहीं जायेगा। वस्तुत: जैसा कि अमरीकी राष्ट्रपति फोर्ड ने कहा है—'इतिहास इस संमेलन के बारे में अपना फैसला आज जो कुछ हम कर रहे हैं उसके आधार पर नहीं बल्कि जो कुछ हम कल करेंगे उसके आधार पर, आज दिये गये वचनों के आधार पर नहीं अपितु कल पूरे किये जाने वाले वचनों के आधार पर देगा।'

इस यथार्थपरक रुख के बावजूद इस तथ्य से कौन इन्कार करेगा कि हेलसिंकी-संमेलन यूरोप में शांति के वातावरण को सुदृढ़ करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है! आखिर कल के कर्म, आज के चिंतन पर निर्भर भी होते हैं और उससे प्रभावित भी।

* * *

छह मंदिर : चित्रप्रश्न-२ का उत्तर

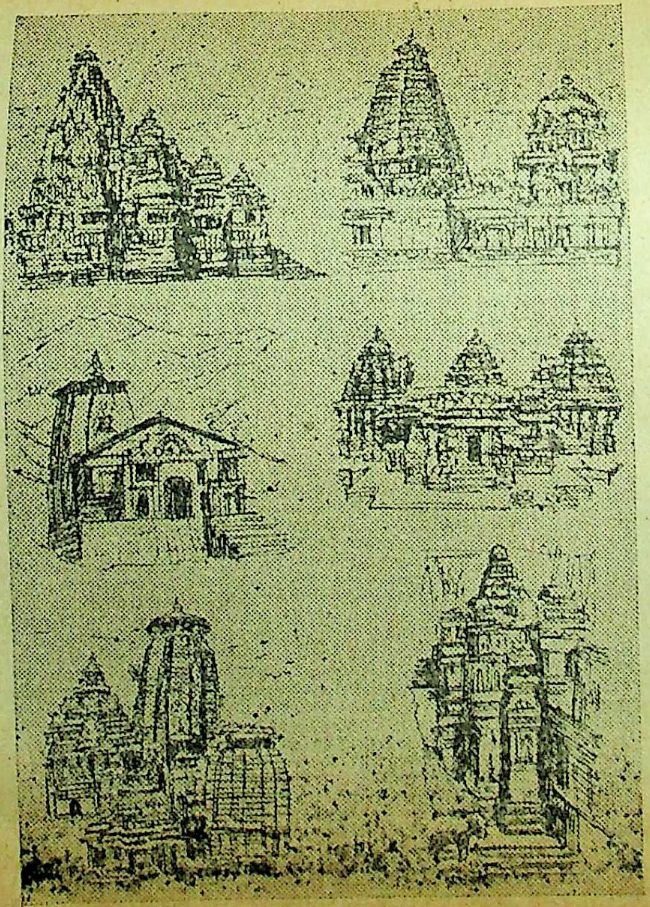

प्रथम पंक्ति—बायें : खजुराहो, मध्य प्रदेश का कंदरिया महादेव मंदिर, जिसे चंदेल राजाओं ने ९५०-१०५० ई. के बीच बनवाया। यह ११६ फुट ऊंचा है, परंतु अपनी ऊंची चौकी व पिरामिडी आकृति के कारण अधिक ऊंचाई का भ्रम कराता है। यह ६५० मनोरम मूर्तियों से मंडित है। दायें : तंजाऊर, तमिलनाडु का बृहदीश्वर मंदिर, जिसे चोल नरेश राजराज प्रथम (९८५-१०१४ ई.) ने बनवाया। इसका विमान चौदह मंजिला और २१६ फुट ऊंचा है।

द्वितीय पंक्ति—बायें : गढ़वाल, उत्तर प्रदेश में केदारनाथ का मंदिर। दायें : मैसूर (कर्नाटक) के निकट सोमनाथपुर का केशव मंदिर १२६८ ई. में बना; इसे होय्सळ या परवर्ती चालुक्य शैली का पूर्ण उदाहरण कहा जाता है।

तृतीय पंक्ति—बायें : भुवनेश्वर, उड़ीसा का लिंगराज मंदिर (निर्माण : १००० ई. के आस-पास) उत्तर भारतीय मंदिर-शिल्प का सर्वोपरि दृष्टांत माना जाता है। लगभग २०० फुट ऊंचा है; इसका अग्रभाग बाद में जोड़ा गया। दायें : एलोरा (शुद्ध रूप—वेरुळ), महाराष्ट्र का कैलासनाथ मंदिर। राष्ट्रकूट राजा कृष्ण प्रथम (७५७-७७३ ई.) की आज्ञा से बनाया गया। पहाड़ को काटकर एक ही विशाल शिलाखंड में तराशा गया यह मंदिर शिल्प का चमत्कार है।

पुर्तगाल

उथल-पुथल का लंबा दौर

विश्वास

पुर्तगाल की परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए एक अमरीकी पत्रकार ने लिखा था–'लिस्बन क्रांति की गिरफ्त में तो है, परंतु क्रांतिकारी इतने विभाजित और अनुभवरहित हैं कि वे अपने जिहाद को ऐसी प्रतियोगिता में बदल दे रहे हैं, जिसमें फैसला इस बात का होगा कि मलबे का मालिक कौन हो।'

राष्ट्रपति गोमेज़ : उदारपंथी?

अड़तालीस वर्षों के तानाशाही शासन से मुक्ति पाकर जनतांत्रिक व्यवस्था की ओर कदम बढ़ाने के इच्छुक पुर्तगाल की आंतरिक स्थिति का यह विश्लेषण घुमावदार आलंकारिक भाषा के बावजूद बहुत सटीक है। इसमें जिस प्रतियोगिता का संकेत किया गया है, उसका नवीनतम चरण है आज पुर्तगाल की गलियों में लड़ा जा रहा कम्युनिस्ट-विरोधी संघर्ष।

तानाशाही के विरुद्ध विद्रोह किया था, पुर्तगाल के युवा सैनिक अधिकारियों ने, अप्रैल १९७४ में। विद्रोह सफल हुआ। जनरल स्पिनोला के नेतृत्व में सरकार बनी। परंतु विद्रोह के कर्णधारों को महसूस हुआ कि जनतंत्र अभी दूर है। स्पिनोला सितंबर १९७४ में अपदस्थ कर दिये गये। सेना और राजनैतिक दलों के सहयोग से एक संविधान-सभा स्थापित हुई। सैनिकों-असैनिकों की मिली-जुली सरकार बनी। परंतु नियंत्रण तो सेना का ही रहा।

फिर सत्ता की ओर बढ़ने में अतिचतुर कम्युनिस्टों ने (जिन्हें कि चुनाव में केवल

१३% मत मिले थे) सर्वाधिक मत प्राप्त करने वाले सोशलिस्टों को सत्ता से अलग करने का षड्यंत्र रचा। षड्यंत्र सफल हुआ। मगर सोशलिस्ट नेता मारियो सोरेस ने तब कहा था–'मेरा बहुमत चुप नहीं बैठेगा।' और वे सच कह रहे थे। तानाशाही से ऊबी पुर्तगाल की जनता को लगा कि कम्युनिस्ट को मारना किसी सैनिक पर हाथ उठाने से अधिक आसान है। सो आज सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट वहां सड़कों पर लड़ रहे हैं।

संक्षेप में यह है आज के पुर्तगाल की कहानी। परंतु कहानी जितनी सरल और सीधी लगती है, उतनी वस्तुतः है नहीं। उसके चक्करों व पेचों को समझने के लिए उसे शुरू से पढ़ना होगा।

शुरूआत इसकी हुई पिछले वर्ष मार्च महीने में। लिस्बन के बाहरी छोर पर एक जगह सेना के १७६ कनिष्ठ अफसरों की एक गुप्त बैठक हुई। इन सब अफसरों को तब कमिशन मिला था, जब अफ्रीका में उपनिवेशवाद के विरुद्ध लड़ाई चल रही थी। छोटी उम्र के इन सैनिक अधिकारियों को कोई राजनैतिक अनुभव नहीं था। यदि उनमें कोई आपसी समानता थी तो बस यही कि पिछले दस वर्षों की लड़ाइयों में पुर्तगाल की सैनिक प्रतिष्ठा को पहुंची ठेस से वे सभी आहत थे। नेतृत्व के खिलाफ विद्रोह की यह पहली बैठक थी। लंबी-चौड़ी बहस के बाद जो कार्यक्रम तैयार किया गया, उसमें कहा गया–'अड़तालीस वर्ष की तानाशाही के बाद जनतांत्रिक उपायों से पुर्तगाल का राजनैतिक जीवन सही अर्थों में पुर्तगाल की जनता का प्रतिनिधित्व करने वाला हो।'

जनतांत्रिक व्यवस्था के पक्षधर इन युवा सैनिकों ने पुर्तगाली जनता को आश्वासन

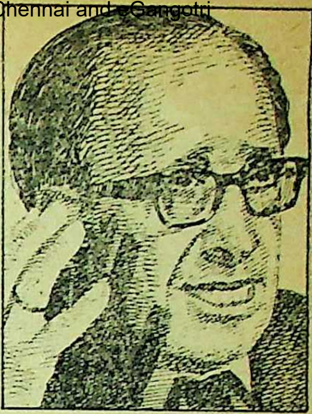

प्रधान-मंत्री गोनसाल्वेज : कम्युनिस्ट?

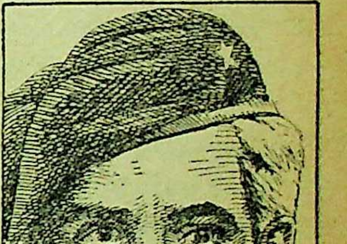

कॉपकॉन के जनरल करवाल्हो: किस ओर?

दिया कि प्रस्तावित नयी व्यवस्था में उसे सब प्रकार की पूरी प्रजातंत्रीय स्वतंत्रताएं होंगी। साथ ही इन सैनिकों ने अफ्रीकी मुद्दे को समाप्त करने तथा सभी रंगों व नस्लों के पुर्तगालियों के साथ शांतिपूर्ण जीवन के लिए कार्य करने की शपथ ली।

इस प्रकार पुर्तगाल में फासीवाद के विरुद्ध लड़ाई की शुरूआत बड़े ही पुनीत संकल्पों के साथ हुई थी। परंतु बाद में वहां जो कुछ हुआ, वह इस कार्यक्रम से उलटा ही था।

युवा सैनिक अधिकारियों के इस गुप्त संमेलन के एक ही माह बाद अप्रैल में सैनिक विद्रोह सफल भी हो गया और उसके साथ ही शुरू हुआ राजनैतिक स्पर्धा का एक दौर। एक करोड़ से भी कम आबादी वाले छोटे-से देश पुर्तगाल में देखते ही देखते ५० से अधिक राजनैतिक पार्टियां खड़ी हो गयीं! १९२६ से चले आ रहे तानाशाही शासन से मुक्ति के बाद ऐसा होना स्वाभाविक भी था। परंतु यह स्वाभाविक स्थिति जनरल स्पिनोला के नेतृत्व में बनी नयी सरकार के लिए सिरदर्द बन गयी। फल यह निकला कि पिछले डेढ़ वर्ष में पुर्तगाल ने सब मिलाकर छह सरकारें देख ली हैं।

पुर्तगाल को तानाशाही के चंगुल से निकालने का श्रेय था युवा सैनिक अधिकारियों के 'सशस्त्र सेना आंदोलन' को। बाद में भी सत्ता इन्हीं लोगों के हाथ में रही। मगर लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सत्ता का उपयोग कैसे किया जाता है, यह शायद इन युवकों को मालूम नहीं था। तभी तो शुरू में जनरल स्पिनोला ने उन्हें अपना हथियार बनाया। किंतु इनमें से अधिकांश लोग स्पिनोला के एकाधिकारवादी रुख से असंतुष्ट हो उठे। तब उन्हें कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी ओर आकर्षित कर लिया। नतीजा यह निकला कि पांच माह के शासन के बाद ही महत्त्वाकांक्षी जनरल स्पिनोला की मिली-जुली सरकार का तख्ता गत सितंबर में उलट दिया गया।

इसके बाद बनी सरकार में सैनिक और कम्युनिस्ट दोनों का वर्चस्व बढ़ गया। इसी दौरान कम्युनिस्टों के मुखिया डा. अल्वारो कुन्हाल ने अपनी पार्टी की स्थिति काफी मजबूत कर ली। ज्यों-ज्यों संविधान-सभा के चुनाव नजदीक आने लगे, राजनैतिक दलों की प्रतिस्पर्धा के विषय में सेना व्यग्र होती गयी। सेना का आरोप था कि राजनैतिक दल राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा कर रहे हैं। यह व्यग्रता ११ मार्च को एक दक्षिणपंथी सैनिक विद्रोह के रूप में सामने आयी और तभी 'सशस्त्र सेना आंदोलन' के सदस्यों को लगा कि 'पुर्तगाल अभी जनतंत्र के लिए तैयार नहीं है।' उन्होंने जनता से चुनाव का बहिष्कार करने की अपील की।

लेकिन इन युवा सैनिक अधिकारियों के विरोध के बावजूद प्रधान-मंत्री जनरल गोनसाल्वेज ने संविधान-सभा के चुनाव कराये और मतदान में मारियो सोरेस के नेतृत्व वाली सोशलिस्ट पार्टी को सर्वाधिक मत (३८ प्रतिशत) प्राप्त हुए। परंतु

सत्ताधारी सेना इस स्थिति को स्वीकार करने के लिए तैयार न थी। परिणाम यह हुआ कि संविधान-सभा में सबसे बड़ा दल होने के बावजूद सोशलिस्ट पार्टी को शासन की बागडोर नहीं सौंपी गयी; मिली-जुली सरकार बनायी गयी, जिसमें उसके केवल दो मंत्री थे। वास्तविक सत्ता सेना के हाथ में रही और चुनाव में केवल १३ प्रतिशत वोट और संविधान-सभा में नाममात्र का प्रतिनिधित्व पाने वाले कम्युनिस्ट कतिपय सैनिक अधिकारियों के माध्यम से अपना वर्चस्व बढ़ाते रहे।

इस प्रकार चुनाव से उत्पन्न नया शक्ति-संतुलन सत्ताधारियों के हाथों डगमगा गया। सैनिक सत्ताधारियों ने साम्यवादी तानाशाही के अनुरूप एक 'जनता राज' की योजना बनायी। स्वाभाविक था कि गैर-साम्यवादी दल और पुर्तगाल का सशक्त कैथलिक गिरजा इसका विरोध करें।

विरोध हुआ। संकट गहराता गया और एक दिन सैनिक अधिकारियों के प्रश्रय में कम्युनिस्टों ने सोशलिस्ट पार्टी के अखबार 'रिपब्लिका' पर कब्जा कर लिया। अखबार का प्रकाशन बंद हो गया।

इस घटना के बाद सोशलिस्टों का सत्ता में भागीदार बने रहना असंभव था। डा. मारियो सोरेस सरकार से अलग हो गये। यह पुर्तगाल के नये संकट की शुरूआत थी। २६ प्रतिशत मत पाने वाली पाप्युलर डेमोक्रैट्स पार्टी के प्रतिनिधि भी डा. सोरेस के त्यागपत्र के सात दिन के भीतर ही सरकार के बाहर निकल आये।

इसके बाद से पुर्तगाल में जन-आंदोलन और जन-प्रदर्शनों की राजनीति चल रही है। आक्रोश का शिकार हैं कम्युनिस्ट। सारे पुर्तगाल में—विशेषत: उत्तरी भाग में—उग्र कम्युनिस्ट-विरोधी प्रदर्शन हो रहे हैं। जगह-जगह कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यालय जलाये जा रहे हैं, कम्युनिस्टों पर हमले हो रहे हैं।

इस बीच सैनिक अफसरों की २५० सदस्यों की सभा ने सारी सत्ता तीन जनरलों को सौंप दी। ये त्रिमूर्ति हैं—राष्ट्रपति जनरल कोस्टा गोमेज, प्रधान-मंत्री वास्को गोनसाल्वेज और विशेष आंतरिक सुरक्षा सेना (कॉपकॉन) के कमांडर जनरल करवाल्हो। अफसरों की यह कार्रवाई इस बात का प्रमाण थी कि पुर्तगाल का बहुत प्रचारित जनतंत्र अभी दूर है। स्वाभाविक था कि सोशलिस्ट और डेमोक्रैट इस व्यवस्था का विरोध करें। दोनों दलों ने इस कार्रवाई को 'असंवैधानिक' बताया। डा. मारियो सोरेस ने राष्ट्रपति गोमेज से अपील की कि 'तानाशाही को रोकने तथा स्वतंत्रता, क्रांति और पुर्तगाल की रक्षा करने के लिए' आप स्वयं राष्ट्रीय सरकार का गठन करें। पूरा दिन और पूरी रात चलने वाली एक बैठक में सोशलिस्ट पार्टी ने एक प्रस्ताव पारित करके त्रिमूर्ति सत्ता को सौंपे जाने की निंदा की। पाप्युलर डेमोक्रैट्स पार्टी ने भी कहा कि २५० सैनिक अधिकारियों को कोई अधिकार नहीं था कि वे त्रिमूर्ति को सत्ता

सौपें और उसने 'जनतंत्र, समाजवाद और शांति के लिए संघर्ष करने' की शपथ ली।

डा. मारियो सोरेस ने तो प्रधान-मंत्री जनरल गोनसाल्वेज को कम्युनिस्ट-समर्थक कहा ही है। 'सशस्त्र सेना आंदोलन' के कई अधिकारी भी गोनसाल्वेज के विरुद्ध हैं। कहा जाता है कि जो ३० सदस्यीय सैनिक परिषद सरकार की निगरानी करती थी, उसमें भी केवल छह व्यक्ति गोनसाल्वेज के पक्ष में थे। एक विरोधी ने तो गोनसाल्वेज से खुलेआम कहा था—'आप कम्युनिस्ट हैं; सशस्त्र सेना आंदोलन कम्युनिस्ट नहीं है।'

पुर्तगाल की इस कहानी का अंत क्या होगा, यह तो भविष्य ही बता सकेगा। परंतु पिछले कुछ दिनों की घटनाओं के संकेत कुछ अनुमानों, कुछ निष्कर्षों तक पहुंचने में सहायक हो सकते हैं।

जनरल गोनसाल्वेज ने हाल ही में कहा था—'परिवर्तन की गति इतनी तेज नहीं होनी चाहिये कि वह आम जनता को स्वीकार्य न हो।' उनका कहना है कि 'ऐसी कोई भी क्रांति सफल नहीं हो सकती, जो जनता को साथ लेकर न चले;' और यह भी कि 'पूंजीवादी लोग सैनिक आंदोलन और श्रमजीवी वर्ग में फूट डालने की कोशिश कर रहे हैं।'

इन तीनों कथनों से जो बातें साफ होती वे ये हैं—पुर्तगाल के सैनिक शासक वर्तमान उथल-पुथल से परेशान हैं; ६४ प्रतिशत मत पाने वालों को सत्ता से हटाने के बाद भी वे जनता को साथ लेकर चलने की आवश्यकता महसूस करते हैं; और पुर्तगाल को दक्षिणपंथी और वामपंथी खेमे में बांटने का प्रयास किया जा रहा है। ये सब बातें भविष्य की अनिश्चितता को और बढ़ाती ही हैं।

इस राजनैतिक उथल-पुथल के साथ ही पुर्तगाल की डगमगाती अर्थ-व्यवस्था का प्रश्न भी जुड़ा है। शायद इसी संदर्भ में पुर्तगाल के राष्ट्रपति ने अमरीकी विदेश-मंत्री डा. किसिंजर से संपर्क साधना आवश्यक समझा है और पुर्तगाल-स्थित अमरीकी राजदूत राष्ट्रपति गोमेज का संदेश लेकर किसिंजर के पास गया है।

डा. किसिंजर द्वारा पुर्तगाल के बारे में पिछले दिनों व्यक्त किये गये विचार भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। रूस द्वारा पुर्तगाली वामपंथियों को दी जाने वाली सहायता के संदर्भ में उन्होंने कहा था—'अगर स्थिति हमारे हितों के प्रतिकूल जाती है, तो सारा दोष रूसी चालबाजी के मत्थे मढ़ देना आसान है। हमें यह भी देखना चाहिये कि पश्चिमी देश जो कुछ कर सकते थे, वह करने में समर्थ रहे या नहीं।'

डा. किसिंजर की यह बात पुर्तगाली संकट का एक अलग आयाम है। प्रश्न यह है कि क्या पश्चिम यूरोप के महत्त्वपूर्ण सामरिक नाके पर एक वामपंथी तानाशाही कायम हो जायेगी? क्या फासिस्ट तानाशाही के खिलाफ उठा एक विद्रोह अपनी असली मंजिल तक पहुंचने से पहले ही भटक जायेगा या भटका दिया जायेगा? देखें, भावी इतिहास क्या कहता है।

★

नवनीत

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

सनातन ऊर्जा

मीस्टर एकहार्ट चिंतक थे—सच्चे ऋषि। उनके संबंध में एक कहानी सुनी जाती है। एक दिन वे अपने कमरे में ध्यानमग्न थे। एक अतिसुंदर बालक उनके सामने प्रकट हुआ। उन्होंने उससे पूछा—'तुम कहां से आये हो?' बालक बोला—'परमात्मा के यहां से।' एकहार्ट—'तुम परमात्मा को कहां छोड़ आये?' बालक—'पवित्र हृदयों में।' इस उत्तर से चौंककर एकहार्ट ने पूछा—'तुम कौन हो?' बालक ने उत्तर दिया—'मैं राजा हूं।' एकहार्ट—'तुम्हारा राज्य कहां है?' बालक—'हृदय में।' एकहार्ट बालक को दूसरे कमरे में ले जाकर बोले—'इनमें से जो भी कोट तुम्हें पसंद आये, ले लो।' बालक बोला—'नहीं, लेना राजा की शान के खिलाफ है; राजा तो बस देता है।' और बालक गायब हो गया।

एक विचार इस कहानी में छिपा है। तुम राजा हो। प्रत्येक आत्मा शाही आत्मा है। तुम वह निर्बल व तुच्छ व्यक्ति नहीं हो, जो तुम अपने को मान बैठे हो। अपने को तुम जैसा समझते हो, उससे बहुत बड़े हो। तुममें एक शक्ति छिपी है, एक सनातन ऊर्जा। उसे अभिव्यक्त करो, तुम दुनिया को हिला सकोगे। यह शक्ति उसी अनुपात में प्रकट होगी, जिस अनुपात में तुम निःस्वार्थ होगे, निर्लिप्त होगे।

—साधु टी. एल. वासवानी

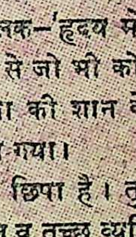

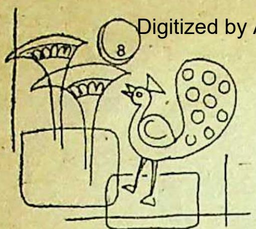

शिवानंद

मुक्ता-युगल

नौका जल में विहार कर रही थी। अकस्मात् आकाश में मेघ घिर आये और घोर वर्षा होने लगी। वायु प्रकोप ने तूफान को भीषण कर दिया। यात्री घबराकर हाहाकार करने लगे। नाविक भी भयभीत हो गया। उसने नौका को तट पर लाने के लिए घोर परिश्रम प्रारंभ कर दिया। वह अपने मजबूत हाथों से नाव को खेता ही रहा, जब तक कि वह बिलकुल थक न गया। किंतु थकने पर भी नौका को कैसे छोड़ दे? थके शरीर से ही वह नौका को पार लगाने में जुटा रहा।

धीरे-धीरे नौका में जल भरने लगा और यात्रियों के द्वारा उलीचे जाने पर भी भरता ही गया। नौका धीरे-धीरे भारी होने लगी। अंत में नाविक को निराशा ने घेर लिया। अभी तट पर्याप्त दूर था। नौका जल में डूबने लगी थी, नीचे की ओर बैठने लगी थी। बेचारा नाविक क्या करे? उसने हाथ से पतवार फेंक दी और सिर थामकर बैठ गया। कुछ क्षणों में ही नौका डूब गयी। यात्री और नाविक सभी मृत्यु को प्राप्त हो गये।

यमराज के पार्षद आये और नाविक को नरक के द्वार पर ले गये। नाविक ने पूछा-'आखिर मेरा अपराध तो बताओ। मुझे क्यों नरक में घसीटा जा रहा है?' पार्षदों ने उत्तर दिया—'तुम्हें नौका के यात्रियों को डुबो देने का पाप लगा है।' नाविक चकित होकर बोला—'यह तो कोई न्याय नहीं है! मैंने तो भरसक प्रयत्न किया कि यात्रियों की रक्षा हो सके।'

पार्षदों ने उत्तर में कहा—'यह ठीक है कि तुमने अथक परिश्रम किया; किंतु तुमने अंत में नौका चलाना छोड़ दिया था। तुम्हारा कर्तव्य था कि तुम अंत तक नौका को खेते ही रहते, यद्यपि नौका डूब रही थी। नौका के यात्रियों का उत्तरदायित्व तुम पर था और तुम्हारा कर्तव्य था कि अंतिम श्वास तक नौका को खेते ही रहते। तुमने वैसा न किया। सो तुम पर यात्रियों की हत्या का दोष है।'

× × ×

एक राजा शिकार खेलते हुए घने वन में मार्ग भूल गया। उसे एक मंद प्रकाश दिखाई दिया। उस प्रकाश की ओर बढ़ते-बढ़ते वह एक झोपड़ी के समीप पहुंचा, जहां एक निर्धन भील रहता था। राजा ने भील की झोपड़ी में शरण ग्रहण की और वहां सुख-

पूर्वक रात्रि व्यतीत की।

प्रात:काल विदा होते हुए राजा ने प्रश्न किया—'भाई, तुम्हारी आजीविका का साधन क्या है?' उत्तर मिला—'महाराज, मैं वन से लकड़ी काटकर लाता हूं और उसका कोयला बनाकर बाजार में बेच आता हूं।'

राजा भील को अपने राज्य में ले गया और एक छोटा-सा चंदन-वन दे दिया। भील उसमें कुटी बनाकर सुख से रहने लगा।

एक वर्ष के पश्चात् राजा उस चंदन-वन को देखने गया और यह देखकर चकित रह गया कि वन तो प्राय: उजड़ चुका है। भील एक झोंपड़ी में दयनीय अवस्था में रह रहा था। राजा ने उससे पूछा—'तुमने वन का क्या किया?' भील ने उत्तर दिया—'महाराज, पहले तो मैं दूर से लकड़ी काटकर लाता था और उसका कोयला बनाता था। अब मैं यहीं लकड़ी काटकर कोयला बना लेता हूं और उसे बेचकर अपना गुजारा करता हूं। मगर अब तो सारा वन कट चुका है और केवल एक वृक्ष शेष बचा है।'

राजा को उसकी बुद्धिहीनता पर बड़ा खेद हुआ और उसने कहा—'भील, तू बहुत मूर्ख है। मैंने तो तुझे चंदन-वन दिया था!'

★

सच्चा शिष्य

जब नार्सिसस मर गया, तो वह जलकुंड जिसमें वह अपनी परछाईं निहारा करता था, मीठे पानी के प्याले से खारे आंसुओं के प्याले में बदल गया। वन-परियां वन में से रोती हुई वहां आयीं, ताकि गीत गाकर जलकुंड को ढाढ़स बंधा सकें।

जब उन्होंने देखा कि जलकुंड मीठे पानी के प्याले से खारे आंसुओं के प्याले में बदल गया है, उन्होंने अपने हरे केशपाश खोल लिये और रोती हुईं वे जलकुंड से बोलीं—'कोई अचरज नहीं कि तुम नार्सिसस के लिए इतना शोक मना रहे हो, कितना सुंदर था वह!'

'मगर क्या नार्सिसस सुंदर था?' जलकुंड ने प्रश्न किया।

'तुमसे बढ़कर इसे कौन जानता होगा!' वन-परियां बोलीं—'हमारे पास से तो वह बस गुजर जाता था, जबकि तुम्हारे पास खास तौर से आता था, तुम्हारे तट पर लेटता था और तुममें झांकता था, और तुम्हारे दर्पण सरीखे जल में अपने सौंदर्य को प्रतिबिंबित करता था।'

जलकुंड ने उत्तर दिया—'मगर मैं तो नार्सिसस से इसलिए प्यार करता था कि जब वह आकर मेरे तट पर लेटता था और मुझमें झांकता था, तो उसके दर्पण-जैसे नेत्रों में मुझे अपने सौंदर्य का प्रतिबिंब देखने को मिलता था।'

—आस्कर वाइल्ड

★

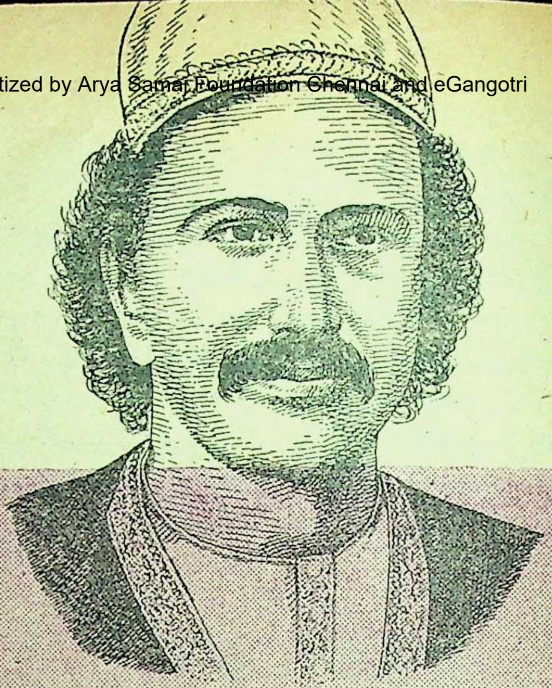

भारतेंदु हरिश्चंद्र राष्ट्र-निर्माता साहित्यकार थे, जन-जागृति के अग्रदूत थे—यह उनकी युगांतरकारी कृतियों से स्पष्ट है। साहित्य-साधना द्वारा जन-जागरण तथा राष्ट्र-निर्माण का कार्य किस प्रकार साधा जा सकता है, इसका निदर्शन उन्होंने प्रस्तुत किया। पराधीनता के दिनों में भारतेंदु ने राष्ट्रीयता की जो ज्योति जगायी, उससे देश के स्वाधीनता-संग्राम को अपूर्व शक्ति मिली। स्वदेशी तथा राष्ट्रीयता के प्रचार की जो योजना उन्होंने बनायी, उससे सामाजिक नवचेतना तथा जन-जागृति का संदेश चतुर्दिक फैला। जिस राष्ट्रीय एकता पर आज बल दिया जा रहा है, उसकी अनिवार्यता भारतेंदु ने नब्बे-पंचानबे वर्ष पूर्व समझी थी। केवल समझी ही नहीं, उसके लिए रचनात्मक और व्यावहारिक योजना भी उन्होंने बनायी थी।

सन १८६८ में भारतेंदु ने 'कवि वचन सुधा' का प्रकाशन किया। उसका उद्देश्य इस प्रकार था :

खल गनन सों सज्जन दुखी मत होई, हरिपद रति रहै,
उपधर्म छूटै, सत्व निज भारत गहै, कर-दुख बहै।
बुध तजहिं मत्सर, नारि-नर सम होहिं, सब जग सुख लहै,
तजि ग्राम-कविता सुकविजन की अमृतभाषी सब कहै ॥

१२५ वीं जन्म-जयंती पर श्रद्धांजलि * चित्र : वी. एन. ओके

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की योजना भी जब अभी बनी नहीं थी, भारतेंदु ने 'सत्व निज भारत गहै' और 'कर-दुख बहै' कहकर स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए तथा करों के असहनीय भार को कम कराने के लिए जनमत को आंदोलित किया। यही नहीं, स्त्री-पुरुष की समानता और समग्र मानवता के कल्याण की भावना भी उन्होंने व्यक्त की, जो कि भारत के राष्ट्रीय आंदोलन की दो विशेषताएं रहीं। इस तरह अपने देश और काल की सीमाओं को लांघकर आगे की बात कहने वाला साहित्यकार क्रांतदर्शी नहीं तो और क्या कहा जायेगा ?

भारतेंदु की दृष्टि भारत के ग्रामों की उन्नति पर विशेष रूप से थी। उनका स्पष्ट मत था कि इसके बिना देश अग्रसर नहीं हो सकेगा। ग्रामोन्नति को जन-आंदोलन का रूप कैसे दिया जाये, इस बारे में उन्होंने गहराई से सोचा था। इस संबंध में उन्होंने लिखा था—'भारतवर्ष की उन्नति के जो अनेक उपाय महात्मा-गण आजकल सोच रहे हैं, उनमें एक और उपाय भी होने की आवश्यकता है। इस विषय के बड़े-बड़े लेख और काव्य प्रकाश होते हैं। किंतु वे जनसाधारण के दृष्टिगोचर नहीं होते। इसके हेतु मैंने यह सोचा है कि जातीय (राष्ट्रीय) संगीत की छोटी-छोटी पुस्तकें बनें और वे सारे देश में गांव-गांव में साधारण लोगों में प्रचारित की जायें। यह सब लोग जानते हैं कि जो बात साधारण लोगों में फैलेगी, उसी का प्रचार सार्वदेशिक होगा और यह भी विदित है कि जितना ग्रामगीत शीघ्र फैलते हैं और जितना काव्य को संगीत द्वारा सुनकर चित्त पर प्रभाव होता है, उतना साधारण शिक्षा से नहीं होता।'

राष्ट्रीय जागरण की जो साहित्यिक योजना भारतेंदु ने बनायी, वह सप्तसूत्रीय थी। इसके अनुसार साहित्यकारों को १. अंग्रेजी फैशन, २. फूट और वैर, ३. मैत्री और ऐक्य, ४. योग्यता, ५. जन्मभूमि, ६. स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार तथा ७. भारतवर्ष के दुर्भाग्य का वर्णन—इन विषयों पर सब साहित्य रचकर देश में नयी चेतना और नवीन प्रेरणा उत्पन्न करनी थी। उनका कथन था—'ऐसे ही और-और विषय जिसमें देश की उन्नति की संभावना हो, लिये जायं। इन सब विषयों के छोटे-छोटे, सरल देश-भाषा में गीत और छंदों की आवश्यकता है, जो पृथक् पुस्तकाकार मुद्रित होकर, साधारणजनों में फैलाये जायंगे।'

*** लक्ष्मीशंकर व्यास ***

क्रांतदर्शी साहित्यस्रष्टा

'भारत-दुर्दशा,' 'पाखंड विडंबन,' 'अंधेर नगरी,' 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति,' 'सती प्रताप,' 'प्रेमयोगिनी' आदि में भारतेंदु ने सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक दुरवस्था का सजीव चित्रांकन किया है। बालकों के चरित्र-निर्माण के लिए उन्होंने 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक की रचना की। स्त्री-शिक्षा के वे प्रबल समर्थक थे। इसी निमित्त उन्होंने 'बाला बोधिनी' पत्रिका प्रकाशित की। 'कवि वचन सुधा' और 'हरिश्चंद्र मैगजीन' को उन्होंने राष्ट्रीय जागरण का माध्यम बनाया और हिंदी रंगमंच की स्थापना तथा हिंदी नाटकों के प्रणयन द्वारा नये विचारों को जन-जन तक पहुंचाया।

भारतेंदु ने हिंदी की प्रतिष्ठा के लिए एक नया मंत्र दिया—'**निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।**' इस 'निज भाषा उन्नति' के लिए उन्होंने स्वयं तो कविता, नाटक, निबंध तथा लोकगीत आदि साहित्य के विविध अंगों में रचना-कार्य किया ही, साथ ही समानधर्मा लेखकों का विशाल मंडल भी तैयार किया, यह भी हिंदी को उनकी महान देन थी। पंडित प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनाथ भट्ट, पंडित सुधाकर द्विवेदी, पंडित ईश्वरदत्त सरदार, दीनदयाल गिरि, महात्मा राय किंकरदास, हरिकृष्ण टेकमाली, भगवानदास, तुलाराम आदि भारतेंदु-मंडल के ही साहित्यकार थे।

भारतेंदु की मान्यता थी कि देश में एकता सबसे आवश्यक है। उन्होंने भारतीय जनता को आंतरिक मतभेद भुलाने और अपनी संस्कृति विस्मृत न करने की सीख दी:

भारत में एहि समय भई है सब कुछ बिनहि प्रमान हो दुइ-रंगी।
आधे पुराने पुरानहि मानें आधे भये क्रिस्तान हो दुइ-रंगी।।
एही से भारत नास भया सब जहां-तहां यही हाल हो दुइ-रंगी।
होई एकमत भाई सबै अब छोड़हु चाल-कुचाल हो दुइ-रंगी।।

जिस भावात्मक एकता के लिए आज भी हमारे नेताओं को अपीलें जारी करनी पड़ती हैं, उसका आह्वान भारतेंदु ने आज से प्रायः सौ वर्ष पूर्व किया था।

अंग्रेजी शिक्षा से देश में बेकारी फैलेगी, इसका आभास उन्हें उसी समय हो गया था। उन्होंने लिखा :

तीन बुलाए तेरह आवैं, निज निज विपता रोई सुनावैं।
आंखों फूटे भरे न पेट, क्यों सखि सज्जन! नहिं ग्रैजुएट।।

अंग्रेजी शासन और अंग्रेजी भाषा का जो कुप्रभाव तत्कालीन समाज पर पड़ रहा था, उसकी ओर उन्होंने लोगों का ध्यान खींचा था। विदेशी शासन के अधिकारियों की चाटुकारिता तथा उनका कृपापात्र बनने की कामना के प्रति भी उन्होंने लोगों को चेताया था:

इनकी उनकी खिदमत करो, रुपया देते देते मरो।
सब आवैं मोहि करन खराब, क्यों सखि सज्जन! नहीं खिताब।।

इस प्रकार १८५७ के विफल राष्ट्रीय प्रयत्न के बाद के अंधकारमय वातावरण में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने दिखाया कि किस प्रकार विदेशी शासन की कठोरता और आतंक के बावजूद सच्चा साहित्य-स्रष्टा राष्ट्र-निर्माण की भावना और स्वातंत्र्य-चेतना उत्पन्न कर सकता है। इसी मूलभूत उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने नाटकों की रचना की, उनके अभिनय की व्यवस्था की और स्वयं भी उनमें अभिनय किया।

सन १८८४ में अपने निधन के कुछ ही दिनों पूर्व उन्होंने बलिया में ५ नवंबर को जो भाषण किया था, वह ऐतिहासिक महत्त्व का है। इसमें उन्होंने कहा था :

'हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी है पर यह बिना इंजन से सब नहीं चल सकतीं। वैसे ही हिंदुस्तानी लोगों को कोई चलाने वाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते ? इनसे इतना कह दीजिये—"का चुप साधि रहा बलवाना।" फिर देखिये, हनुमानजी को अपना बल कैसा याद आ जाता है, सो बल कौन याद दिलावै ? राजे-महाराजों को अपनी पूजा, भोजन, झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सरकारी काम घेरे रहता है, कुछ बाल, घुड़दौड़, थिएटर, अखबार में समय गया। कुछ समय बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब, गंदे, काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवैं ?'

इस प्रकार भारतेंदु ने विदेशी शासन से प्रभावित तथा मानसिक दृष्टि से पराजित हिंदीभाषी जनता के जीवन में नये जागरण और क्रांति का बीज बोया। उन्होंने बताया कि जनता में शक्ति है, प्रतिभा है तथा हनुमान जैसा बल है; आवश्यकता केवल उसे जागृत करने की है। उनका विपुल साहित्य इन क्रांतिकारी भावनाओं से भरा पड़ा है। साहित्यकार राष्ट्र में किस प्रकार नवजागरण, नवचेतना तथा स्वतंत्रता का शंखनाद कर सकता है, यह उनके महान व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से स्पष्ट है। **—के. ३१/५१, कालभैरव, वाराणसी-१**

★

भारतीय संस्कृति का प्रथम मुस्लिम अध्येता

अलबेरूनी

हरिदत्त वेदालंकार

ग्यारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण में जब महमूद गजनवी की सेनाएं उत्तर और पश्चिम भारत पर आक्रमण करके थानेसर, मथुरा, कन्नौज और प्रभास पाटन (सोमनाथ) के समृद्ध नगरों का विध्वंस कर रही थीं और प्रसिद्ध देवालयों में शताब्दियों से संचित बहुमूल्य संपदा को लूटने के लिए देवमूर्तियों को खंडित कर रही थीं, तब एक मुस्लिम विचारक काफिर समझे जाने वाले हिंदुओं की संस्कृति और सभ्यता के गंभीर अध्ययन में जुटा हुआ था।

इस्लाम के इतिहास में संभवत: वह पहला व्यक्ति था, जिसने गीता, सांख्य, योग तथा पुराणों को संस्कृत में पढ़ने का प्रयास किया और संस्कृत ग्रंथों का अरबी में एवं अरबी ग्रंथों का संस्कृत में अनुवाद किया। उसने भारत, उसकी संस्कृति एवं विद्या पर एक प्रामाणिक ग्रंथ का प्रणयन किया। विध्वंस के तांडव के बीच अद्भुत सत्यनिष्ठा के साथ अपूर्व साहित्य का सृजन करने वाले इस विद्वान का नाम था—अबू रैहां मुहम्मद इब्न अहमद अलबेरूनी।

अलबेरूनी वर्तमान सोवियत रूस के उज्बेकिस्तान के सुप्रसिद्ध नगर ख्वारिज्म या खीवा के निकट कैथ नामक छोटे-से कस्बे के एक ईरानी परिवार में ९७३ ई. में जन्मा था। बचपन में उसे सुप्रसिद्ध ज्योतिषी और गणितज्ञ बंदादुल सरहसनी और अबूनस्र मंसूर के चरणों में बैठकर विद्या प्राप्त करने का अवसर मिला था।

उसके अपने ग्रंथों में मिलने वाले अंत:साक्ष्यों को छोड़ दें, तो उसके जीवन के संबंध में प्रामाणिक जानकारी बहुत कम मिलती है। शायद वह ख्वारिज्म से बाहर (बेरू) कैथ का निवासी होने के कारण 'अलबेरूनी' अर्थात् 'बाहर वाला' कहलाया। अपनी असाधारण प्रतिभा के बल पर उसने शीघ्र ही गणित, ज्योतिष आदि नाना शास्त्रों में प्रवीणता प्राप्त कर ली और यूनानी, इबरानी, ईरानी, मानी आदि विभिन्न धर्म-संप्रदायों और दार्शनिक पद्धतियों का अध्ययन किया।

सन ९९५ ई. में पड़ोस के जुर्जान राज्य ने उसकी मातृभूमि खीवा पर हमला किया। परिणामत: उसे निर्वासित होकर रै नामक नगर में जाना पड़ा, जहां से दो वर्ष बाद वह

अपने जन्मस्थान [illegible] कैथ में ही उसने ९९७ ई. में एक चंद्र-ग्रहण का निरीक्षण किया, जिसे बगदाद में अबुलवफा नामक ज्योतिषी ने भी देखा था। दोनों स्थानों पर ग्रहण लगने के समय के अंतर से उसने उन स्थानों की देशांतर रेखा का निर्धारण किया। यह इस ढंग का नया ही प्रयास था।

इसके बाद वह विभिन्न राज्यों के पंचांगों, संवतों तथा तिथियों के संबंध में मूल्यवान सामग्री एकत्र करता रहा। १००० ई. में उसने इस विषय पर एक पुस्तक 'आसार अलबाकिया' (प्राचीन राज्यों का कालक्रम) लिखी और जुर्जान के राजकुमार को समर्पित की। इसमें ईरानी पंचांगों, संवतों तथा मध्य एशिया के इतिहास की महत्त्वपूर्ण जानकारी भरी है। इस पुस्तक के कारण उसे जुर्जान के राजदरबार में बहुत प्रतिष्ठा मिली। मगर कुछ समय बाद शायद वह अपनी मातृभूमि खीवा लौट आया, जहां उसे राजदरबार में उच्च पद मिला।

सन १०१७ में खीवा महमूद गजनवी के आक्रमण का शिकार हुआ। चूंकि अलबेरूनी ने खीवा को इस आक्रमण से बचाने का प्रयत्न किया था, महमूद और उसका प्रधानमंत्री अहमद हसन मैमंदी उसे अपना कट्टर विरोधी समझने लगे। महमूद ने पराजित खीवा के सभी प्रमुख राजनीतिज्ञों और सैनिकों को बंदी बनाकर भारत भेज दिया, ताकि वे उसके विरुद्ध कोई षड्यंत्र न कर सकें। इस प्रकार अलबेरूनी मातृभूमि से निर्वासित होकर भारत आया था।

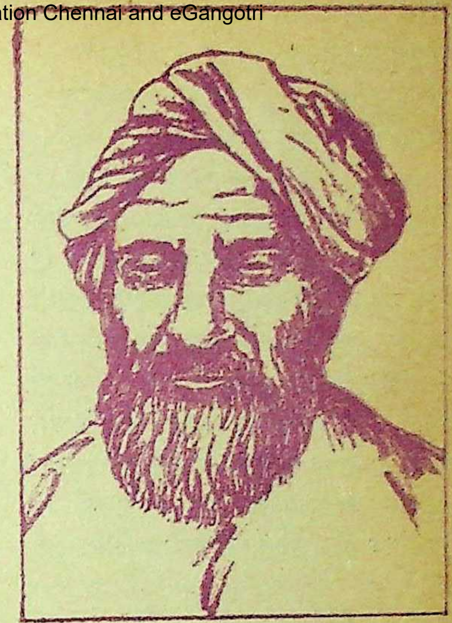

अलबेरूनी : ईरानी चितेरे अजरगिन द्वारा ऐतिहासिक शोध के आधार पर अंकित।

किंतु संभवतः यहां आने से पहले ही उसे भारतीय गणित, ज्योतिष और तिथिक्रम का काफी अच्छा ज्ञान था, जो कि उसने संस्कृत ग्रंथों के अरबी अनुवादों से प्राप्त किया था। ये अनुवाद बगदाद के अब्बासी खलीफाओं द्वारा ईसा की आठवीं शताब्दी में तैयार कराये गये थे। इनमें ब्रह्मगुप्त रचित और अल्फजारी द्वारा अनूदित 'ब्रह्मसिद्धांत' या 'सिंदहिंद', याकूब इब्न तारीफ द्वारा अनूदित 'खंडखाद्यक' या 'अरकंद', चरक का अली इब्न ज़ैन कृत अनुवाद और वित्तेश्वर का 'करणसार' नामक ग्रंथ थे।

भारत आकर उसने मूल संस्कृत ग्रंथों से भारतीय ज्योतिष का अध्ययन आरंभ किया।

इस प्रसंग में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि ज्योतिष के क्षेत्र में १०२० ई. में भी भारत में वही ग्रंथ सर्वश्रेष्ठ समझे जाते थे, जिनका अनुवाद ७७० ई. के आस-पास बगदाद में हुआ था। ये सब ब्रह्मगुप्त के लिखे हुए थे। अलबेरूनी ने संस्कृत के विद्वानों की सहायता से इन ग्रंथों तथा 'पुलिश-सिद्धांत' (पौलस्त्यसिद्धांत) का अनुवाद करने की कोशिश की। जब उसने अपनी भारत-विषयक पुस्तक लिखीं, उसके पास भारतीय ज्योतिष की सात अन्य पुस्तकें भी विद्यमान थीं। संस्कृत के जिन ज्योतिषग्रंथों का उसने अनुवाद किया, वे पहले भी अरबी में अनूदित हो चुके थे। उसने पुराने अनुवादों में विद्यमान दोषों से मुक्त, अधिक शुद्ध एवं प्रामाणिक भाषांतर प्रस्तुत करने के साथ ही भारतीय ज्योतिषियों की गणनाओं की फिर से जांच भी बहुत परिश्रमपूर्वक की।

अलबेरूनी ने लिखा है कि मुस्लिम देशों में रहने वाले उसके धर्मभाई फलित ज्योतिष की हिंदू रीतियों से परिचित नहीं हैं और उन्हें इस विषय की भारतीय पुस्तकों के अध्ययन का अवसर नहीं मिला है। इस न्यूनता के निवारण के लिए उसने वराहमिहिर की बृहत्संहिता और लघुजातक का अरबी में अनुवाद किया। वैसे उसका वह कथन शतशः सत्य नहीं प्रतीत होता; क्योंकि अब्बासी खलीफाओं के समय में भी भारतीय फलित ज्योतिष के कुछ ग्रंथ अरबी में अनुवाद किये जा चुके थे।

चिकित्साशास्त्र में अलबेरूनी की विशेष रुचि नहीं थी। चरकसंहिता का अरबी अनुवाद पहले से विद्यमान था। मगर अलबेरूनी ने उस अनुवाद के सही न होने की शिकायत कई स्थानों

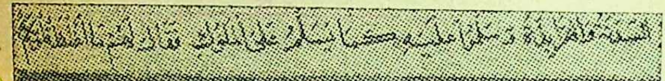

सासानी राजा फीरोज अपने दरबार में : अलबेरूनी की पुस्तक 'आसार अलबाकिया' (प्राचीन राज्यों का कालक्रम) की १७ वीं सदी की हस्तलिखित प्रति में से। [युनेस्को 'कूरियर' से साभार]

घर की है। जघन्य बीमारियों संबंधी एक संस्कृत पुस्तक का अनुवाद उसने स्वयं किया। पंचतंत्र का नवीन अरबी अनुवाद करने की उसकी तीव्र अभिलाषा थी। उस समय अरबी में पंचतंत्र का जो अनुवाद उपलब्ध था, वह फारसी अनुवाद 'कलेला-दिमना' (करटक-दमनक) पर से किया गया था, जिसे अलबेरूनी प्रामाणिक नहीं समझता था।

भारतीय दर्शन अलबेरूनी का प्रिय विषय था। वही पहला मुस्लिम विद्वान था, जिसने मूल संस्कृत ग्रंथों से इस विषय का गंभीर अध्ययन किया। उससे पहले केवल एक व्यक्ति ने इस विषय पर अरबी में लिखा था; वह था अल् ईरानशहरी, जिसने जुरकान नामक लेखक की पुस्तक के आधार पर इस विषय का विवेचन किया था। अलबेरूनी ने उस विवेचन की आलोचना करने के साथ-साथ कपिल के सांख्य तथा पतंजलि के योग-दर्शन के उत्तम अनुवाद अरबी में पहली बार प्रस्तुत किये। (सांख्य का उसने जो विवरण दिया है, वह सांख्यसूत्रों की अपेक्षा सांख्यकारिका से ज्यादा मिलता है।) यह कार्य वह अपनी सुप्रसिद्ध भारत-विषयक पुस्तक 'तारीखल् हिंद' के लेखन से पहले ही कर चुका था और इससे उसे इस पुस्तक के दर्शन-विषयक प्रकरणों के लिखने में बहुत सहायता मिली।

भगवद्गीता के उदात्त विचारों ने भी उसे मुग्ध किया था। उनकी चर्चा उसने 'तारीखल् हिंद' में बार-बार की है। वस्तुतः

अलबेरूनी का विज्ञान-प्रेम

अलबेरूनी ने ज्योतिष संबंधी अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक का नाम महमूद गजनवी के पुत्र तथा गजनी के तत्कालीन शासक सुलतान मसऊद के नाम पर 'कानूने मसऊदी' रखा, उसे सुलतान को समर्पित किया और उसकी प्रशंसा करते हुए मसऊद को मिस्र के पुराने शासक टालमी की अपेक्षा विद्वानों को अधिक संरक्षण देने वाला बताया।

सुलतान ने पुस्तक मिलने पर अलबेरूनी को शुद्ध चांदी से लदा हुआ एक हाथी भेंट के रूप में भेजा। अलबेरूनी इस बहुमूल्य उपहार को पाकर घबरा गया। शाही उपहार को अस्वीकार करते हुए उसने बड़े विनम्र शब्दों में उसका यह कारण सुलतान को बताया :

'आपका यह उपहार मुझे विज्ञान के अध्ययन से विरत कर देगा। बुद्धिमान यह जानते हैं कि चांदी जल्दी ही व्यय हो जायेगी; किंतु विज्ञान सदा बना रहेगा। मैं यह कभी नहीं चाहूंगा कि मैं वैज्ञानिक ज्ञान की शाश्वत बनी रहने वाली संपदा का विनिमय क्षणभंगुर, भड़कीली तथा चमकीली चांदी से करूं।'

* * *

मुस्लिम-जगत् को भगवद्गीता के विचारों का सर्वप्रथम परिचय देने का श्रेय उसी को है। इसी तरह पुराणों का प्रथम परिचय भी अरबी के विद्वानों को उसी ने कराया।

[शेष पृष्ठ ८८ पर]

सुबीर

जीवन-तीर्थ

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में पधारे हुए राजाओं की पूजा का अवसर था। प्रश्न उठा कि सर्वप्रथम किसकी पूजा की जाये। युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से सलाह मांगी। भीष्म ने श्रीकृष्ण को अग्रपूजा का अधिकारी बताया। सो सर्वप्रथम उन्हीं को अर्घ्य अर्पित किया गया। किंतु उसी यज्ञ के आरंभ में जब युधिष्ठिर अपने बंधु-मित्रों को विभिन्न कार्य सौंप रहे थे, तब आग्रह करके श्रीकृष्ण ने यज्ञ में आये अतिथि-अभ्यागतों के पांव पखारने का काम अपने जिम्मे लिया था।

लोगों की सेवा द्वारा ही आप उन पर शासन कर सकते हैं। —विक्टर कजिन

ब्रिटिश राजनेता ग्लैडस्टन

इटली के मुक्तिदाता जुसेप्पी गैरीबाल्डी को एक बार एक गड़रिया मिला। वह अपने एक मेमने के खो जाने से बहुत दुःखी था। गैरीबाल्डी ने अपने सिपाहियों को उसका मेमना ढूंढ़ने की आज्ञा दी। तब तक रात उतर आयी थी। सिपाही अंधेरे में काफी देर तक ढूंढ़कर निराश वापस लौट आये।

जब सुबह हुई तो गैरीबाल्डी नित्य के निश्चित समय पर जागे नहीं थे। कुछ देर प्रतीक्षा करके उनका सेवक उन्हें जगाने भीतर गया। उसने देखा कि वे लेटे हुए हैं और एक मेमना उनके पैरों के पास चादर के नीचे आराम से बैठा सो रहा है। तभी गैरीबाल्डी की नींद खुल गयी और मेमने की ओर संकेत करते हुए उन्होंने अपने सेवक से कहा—'लो, इसे उस गड़रिये को दे आओ।' असल में बात यह हुई थी कि पिछली रात को जब सिपाही निराश होकर लौट आये थे, तो गैरीबाल्डी खुद मेमने की खोज में निकल गये थे और उसे ढूंढ़ लाये थे।

इंग्लैंड के महान राजनेता ग्लैडस्टन को अगले दिन पार्लमेंट में भाषण करना था और वे उसे लिखने में निमग्न थे। तभी उन्हें किसी बालक की बीमारी की खबर

मिली और पता चला कि उसकी हालत बहुत ही खराब है। फौरन वे उसे देखने गये और बड़ी देर तक उसकी देखभाल करते रहे। वहां से लौटने पर वे अपना भाषण पूरा न लिख पाये। उन्होंने कहा—'भाषण अधूरा रह जाने से देश का कुछ नहीं बिगड़ेगा। पर मेरे जाने से उस लड़के की हालत सुधर गयी। उससे बढ़कर खुशी की बात और क्या हो सकती है!'

केवल वही जीवन सार्थक कहा जा सकता है, जो दूसरों की सेवा के लिए जिया गया हो।

—आइंस्टाइन

क्लिमेंट हाफवायर घर-घर जाकर गरीबों की खातिर दान मांग रहे थे। एक घर के मालिक ने उन्हें हिकारत से देखते हुए कहा—'दफा हो जाओ यहां से! जब देखो कोई न कोई मांगने को आ टपकता है।'

हाफवायर वहीं खड़े रहे। उन्होंने उससे दान के लिए दुबारा आग्रह किया। इस पर वह आदमी एकदम बिगड़ पड़ा और उनके मुंह पर थूकते हुए बोला—'लो, यह ले जाओ।' हाफवायर ने तब और भी नरमी से कहा—'यह तो मेरे लिए हुआ। गरीबों के लिए भी तो कुछ दीजिये।'

आपका दिन तब तक सार्थक नहीं कहा जायेगा, चाहे उस दिन आपने कितना ही धन क्यों न कमाया हो, जब तक आप किसी ऐसे व्यक्ति के लिए जो आपकी सेवा का प्रतिदान देने में असमर्थ है, कुछ करते नहीं।

—नैथन शैफर

जिनके दिन इस तरह सार्थक होते हैं, उनके साल बहुत हल्के होते हैं। वृद्ध कर्नल टामस हार्ट बेन्टन को कठोर परिश्रम करते देख किसी ने पूछा—'कर्नल साहब, आपकी उम्र क्या है?' उत्तर मिला—'वैसे तो मैं चौहत्तर साल का हो गया हूं; मगर लोगों की सेवा करते समय मुझे लगता है कि मैं अभी तीस-पैंतीस साल का ही हूं।'

पीटर क्लेवर 'गुलामों के संत' के नाम से प्रसिद्ध थे। एक दिन पेचिश से पीड़ित एक नीग्रो को लड़खड़ाकर गिरते देख उन्होंने उसे अपनी बांहों में थाम लिया। तभी मरीज को दस्त हुआ और उनके कपड़े मल में सन गये। एक महिला यह सह न पायी और नाक-भौंह चढ़ाती हुई कमरे से बाहर जाने लगी। क्लेवर ने टोका—'ईश्वर के वास्ते लौट आइये। क्या आप भूल गयीं कि ये लोग हमारे भाई हैं, जिनके लिए प्रभु यीशु ने अपना लहू दिया था?' महिला लौट आयी और मरीज की सेवा में उनके साथ जुट गयीं।

भगवान बुद्ध ने एक भिक्खु को मल-मूत्र में लिपटे पड़े देखा। पूछने पर भिक्खु ने बताया कि मैं अतिसार से पीड़ित हूं और कोई मेरे पास फटक नहीं रहा है। तब भगवान ने भिक्खु आनंद की सहायता से उसे नहलाकर साफ किया और स्वच्छ विस्तर पर लिटाया, उसकी परिचर्या की व्यवस्था की।

मनुष्य का महत्त्व इस बात में नहीं है कि उसके पास कितने सेवक हैं; बल्कि इसमें है कि वह स्वयं कितनों की सेवा करता है।

—पाल म्यूडी

*

कृत्रिम गुर्दा

गुर्दे शरीर में बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। शरीर में भोजन-पाचन-क्रिया की वजह से उत्पन्न होने वाली यूरिया-जैसी अशुद्धियों को बाहर निकालने के अतिरिक्त, वे शरीर में जल और लवण का संतुलन बनाये रखते हैं।

यदि ये महत्त्वपूर्ण अंग सही ढंग से काम करना बंद कर दें, तो 'यूरेमिया' की हालत उत्पन्न हो सकती है। उस दशा में यूरिया जैसी अशुद्धियां रक्त में ही बनी रह जाती हैं और रक्त में उनकी विषैली मात्रा जमा हो जाती है।

गुर्दे दो होते हैं। यदि उनमें से एक गुर्दा स्थायी रूप से बेकार हो गया हो, मगर दूसरा गुर्दा यदि स्वस्थ है तो वह सारा काम संभाल लेता है।

गुर्दा-खराबी यानी दोनों गुर्दों की स्थायी खराबी की बहुत-सी हालतों में मरीज को तब तक जिंदा रखा जा सकता है, जब तक कि नया गुर्दा प्रतिरोपित नहीं कर दिया जाये। गुर्दा-प्रतिरोपण की सफलता इस बात पर निर्भर रहती है कि बाहरी ऊतक को अस्वीकार करने की शरीर की जो स्वाभाविक प्रवृत्ति है, उससे उपजने वाली समस्याओं को हम कहां तक बस में रख पाते हैं।

जब दोनों गुर्दे लगभग पूरी तरह बेकाम हो जायें, तब कृत्रिम गुर्दे का उपयोग बहुत ही प्रभावकारी उपचार है। यह एक ऐसा उपकरण है, जो शरीर के बाहर रहते हुए काम करता है। रोगी के रक्त को इसमें प्रवाहित करके और वहां साफ करके शरीर में वापस भेज दिया जाता है। गुर्दे में कोई अल्पकालिक खराबी उत्पन्न हो जाये, तो ऐसी दशा में कृत्रिम गुर्दा प्राकृतिक गुर्दे का काम संभाल सकता है, ताकि रोगी गुर्दा आराम लेकर पुनः स्वस्थ हो सके।

कृत्रिम गुर्दा रक्त से कई तरह के विषैले रासायनिक यौगिकों को बाहर निकाल सकता है। उसकी सहायता से ऐसे बहुत-से

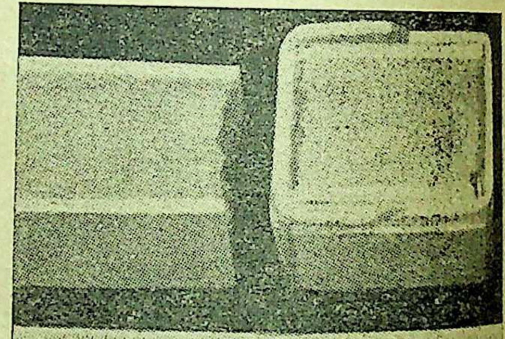

कृत्रिम गुर्दा उपकरण के काटे हुए अंतर्दृश्य, जिनमें १०० माइक्रोमीटर व्यास की सूक्ष्म रक्तवाहिनियां देखी जा सकती हैं।

भाभा केंद्र में निर्मित कृत्रिम गुर्दा।

लोगों की जान बचायी जा सकी है, जिन्होंने जान-बूझकर या गलती से जहरीली वस्तुओं का सेवन कर लिया हो। आपने कई बार सुना होगा कि फ्रेंच पालिश इत्यादि पीने से कई लोग मर गये। इसमें मृत्यु 'मीथानाल विषाक्तन' से होती है। इसके उपचार में भी कृत्रिम गुर्दे का उपयोग किया जाता है।

कृत्रिम गुर्दा उपकरण का मुख्य भाग है 'रुधिर अपोहित्र' (हीमोडायलाइज़र)। रक्त में व्याप्त अशुद्धियों को इसमें पुनर्जनित सेलुलोस की बहुत पतली (तकरीबन ०.०२ मिलीमीटर मोटी) झिल्ली में से गुजारा जाता है। झिल्ली के एक ओर बह रहा होता है रक्त, और दूसरी ओर एक उपयुक्त जलीय घोल जो 'अपोहक' कहलाता है। रक्त की अशुद्धियां झिल्ली में से होकर अपोहित्र में चली जाती हैं और इस तरह रक्त उनसे मुक्त हो जाता है। झिल्ली के सूराख बहुत बारीक होते हैं—तकरीबन २५×१०^{-८} सें. मी.। रक्त के सामान्य घटक, कोशिकाएं और प्रोटीन इत्यादि उन्हें पार नहीं कर पाते और रक्त में ही बने रहते हैं। कृत्रिम गुर्दा उपकरण के अन्य भाग हैं—शंट (Shunts), उचित धमनी और शिरा को जोड़ने वाले ट्यूब-संयोजन और रक्त-पंप। यदि आवश्यक हो, तो उपयुक्त जलीय घोल (अपोहक) को धारण करने के लिए कुंड (टैंक) की और उस घोल को शरीर के तापमान तक गर्म करने और रुधिर अपोहित्र (हीमोडायलाइजर) में उसके संचरण की व्यवस्था भी की जाती है।

एक अत्यंत उन्नत प्रकार के कृत्रिम गुर्दा उपकरण का विकास भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (बंबई) के रसायन प्रभाग में किया जा रहा है। उसका आकार ४ सें. मी. × ५ सें. मी. × ३५ से. मी. है और भार ४०० ग्राम से कम है। इतने थोड़े स्थल में १ वर्ग मीटर सेलोफेन झिल्ली एक विशेष विन्यास में रखी गयी है, ताकि रक्त में से अशुद्धियां शीघ्रता से हटायी जा सकें। आकार, रक्त समा सकने वाले आयतन (कंटेन्ड ब्लड वाल्यूम) और अशुद्धियों को दूर करने की दर के लिहाज से यह यूनिट भारत में आम तौर पर प्रयोग में लायी जा रही कईल (Kiil) किस्म की यूनिट से बेहतर और खोखली फिल्म यूनिट (हालो फिल्म यूनिट) के तुल्य है। कईल और हालो फिल्म किस्म की यूनिटें विदेश से आयात की जाती हैं।

[रसायन प्रभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, ट्रांबे, बंबई से साभार]

★

ग़ज़ल

जुनूँ की याद मनाओ कि जश्न का दिन है
सलीबो-दार[१] सजाओ कि जश्न का दिन है
तरब[२] की बज़्म[३] है बदलो दिलों के पैराहन[४]
जिगर के चाक सिलाओ कि जश्न का दिन है
तुनकमिज़ाज है साकी, न रंगे-मय[५] देखो
भरे जो शीशा, चढ़ाओ कि जश्न का दिन है
तमीज़े-रहबरो-रहज़न[६] करो न आज के दिन
हर इक से हाथ मिलाओ कि जश्न का दिन है
है इंतज़ारे-मलामत[७] में नासहों[८] का हुजूम
नज़र संभाल के जाओ कि जश्न का दिन है
बहुत अज़ीज़[९] हो लेकिन शिकस्ता-दिल[१०] यारो
तुम आज याद न आओ कि जश्न का दिन है
वो शोरिशे-ग़मे-दिल[११] जिसकी लय नहीं कोई
ग़ज़ल की धुन में सुनाओ कि जश्न का दिन है।

—फ़ैज़ अहमद फ़ैज़

---

१. सूली और फांसी, २. आनंद, ३. महफिल, ४. लिबास, ५. शराब का रंग, ६. पथप्रदर्शक और लुटेरे का अंतर, ७. फटकारने की प्रतीक्षा, ८. उपदेशकों, ९. प्रिय, १०. टूटा हुआ दिल, ११. दुखी हृदय की बगावत।

फील्डमार्शल

माणेकशा

★

अपने ही शब्दों में

★

पारसी लोग एक छोटी-सी कौम हैं। सारे संसार में पारसियों की कुल संख्या नब्बे हजार के करीब होगी। प्रतिशत का हिसाब लगाना मुश्किल है। (तथापि इस जाति में कैसे-कैसे महापुरुष पैदा हुए हैं!) भारतवर्ष एक महान देश है। शायद ही किसी अन्य देश ने इतनी छोटी अल्पसंख्यक जाति के सदस्य को प्रथम सैनिक का पद दिया हो!

यह देश हिंदू-प्रधान देश है। परंतु इसमें परेशान होने की कोई बात नहीं। लड़ाई में मारे गये हमारे सैनिकों में नब्बे प्रतिशत से अधिक हिंदू थे। भारत में सभी जातियों को बराबर का दर्जा मिला है। बल्कि कभी-कभी तो अल्पसंख्यक होने के कारण ही हम लोग किसी को अच्छा पद दे देते हैं। मैं इसका विरोधी हूं। योग्यता के अनुसार ही पद देना चाहिये। उसमें जाति का विचार नहीं करना चाहिये।

नदी-तट पर अथवा सागर-तट पर बसे प्रदेश प्राय: अधिक प्रगतिशील होते हैं। भारत में भी ऐसा ही है। पर्वतीय प्रदेशों तक प्रगति को पहुंचने में देर लगती है—यह स्वाभाविक भी है।

बाहर से आये लोगों को जब किसी देश में शरण दी जाती है, तो वे ज्यादा वफादार रहते हैं। प्योरिटन लोग इंग्लैंड से अमरीका गये थे और उन्होंने वहां अच्छे नागरिकों के रूप में मान प्राप्त किया। पारसी लोगों ने भी भारत में अच्छा मान पाया है।

अनेक बड़े राष्ट्रों के मन में भारत के लिए ईर्ष्या का भाव है। यह ईर्ष्या भय के

कारण होती है। भारत शक्तिशाली बन जाये, यह बात उन्हें पसंद नहीं। परंतु यह देश शक्तिशाली बन रहा है, यह देश तरह-तरह के शस्त्र बना रहा है—यांत्रिक खूबियों वाले शस्त्र।

हमारे देश की जनसंख्या छप्पन करोड़ है। सिर्फ चीन ही हमसे इस मामले में आगे है। आज से तीस वर्ष पहले चीन के लोग हमारे यहां कपड़े की गठरी उठाकर फेरियां लगाते फिरते थे। वे ही आज योद्धा (फाइटर) बन गये हैं। मुख्यतया इसके तीन कारण हैं—अनुशासनबद्ध संघटन, ध्येयनिष्ठा, और अच्छा नेतृत्व।

हमारा देश बुद्धिशाली है। हिंदू एक बहुत बुद्धिशाली जाति है। हमारे सैनिक अमरीकियों की तरह कद्दावर नहीं होते; क्योंकि उन्होंने तीन पीढ़ियों से पोषण-युक्त आहार नहीं पाया है। वे तो भरपेट खाना भी नहीं पा सके हैं। परंतु हमारी जलवायु के लिए उनका शरीर ठीक है। तीस वर्ष पहले हिंदुस्तान और पाकिस्तान की सेनाएं एक ही थीं। जाट, डोगरा, सिक्ख, मराठे, मद्रासी तथा गोरखे—हमारे ये सब सैनिक बहुत वफादार और शूर हैं।

वियतनाम का युद्ध एक विचित्र घटना थी। वहां भेजे गये अमरीकी सैनिक वास्तव में पेशेवर सिपाही (प्रोफेशनल आर्मी) नहीं थे; वे थे ड्राफ्ट आर्मी के सिपाही। डेढ़ वर्ष की मियाद वहां पूरी करना और जीवित रहना—बस यह था उनका संकल्प। देश पर विपदा आ पड़ी है, या किसी सिद्धांत की रक्षा का मामला है—ऐसा कुछ भी उनके मन में नहीं था। मियाद का समय पूरा करने का जो खयाल उनके चित्त में था, उसका परिणाम दुनिया ने देख लिया है। अमरीका का वैभव और भोगप्रधान जीवन भी कारण था ही।

अंग्रेज भारत में आये। वह कोई बड़ी लड़ाकू कौम नहीं थी। उन्हें तो भारतीयों ने ही भारतवर्ष जीतकर दिया। उनके सैनिक भारतीय ही थे। लड़ाकू सैनिकों का उदाहरण आप अरबों और इस्रायलियों के युद्ध में देख सकते हैं। दुनिया-भर में यहूदियों का संघटन और अनुशासन उत्तम माना जाता है। भाग निकलने के लिए उनके पास कोई स्थान ही नहीं है। चूहा भी जब घिर जाता है, तब कैसा बहादुर बनकर लड़ता है! यहूदियों के लिए संपूर्ण प्रश्न अस्तित्व का है।

सन १९६२ में चीन के आक्रमण के समय मुझे पूर्वी सीमा पर भेजा गया था। तब शत्रु की व्यूह-रचना की हमारी जानकारी (मिलिटरी इन्टेलिजेन्स) बहुत कमजोर थी। उससे पहले ही मुझे नीचे उतार दिया गया था। श्री कृष्ण मेनन ने मेरी तरक्की रोक दी थी। श्री तिम्मय्या की तरह मुझसे भी उनका विरोध था। उस युद्ध में श्री कौल पूर्वी क्षेत्र के सेनापति थे। उनमें कतिपय योग्यताएं अच्छी थीं। वे अच्छे क्वार्टर-मास्टर-जनरल बन सकते थे। परंतु युद्ध की दृष्टि से यह उचित नहीं था।

१९७१ के युद्ध के समय मैं अपनी पत्नी से कहता था कि मुझे पूना जाना होगा, परंतु पहुंच जाता था मैं कलकत्ता। बंबई के

दैनिक पत्रों में वहां के फोटोग्राफ भी छप जाते थे। परंतु युद्ध में तो ऐसा होता ही है। बाङला देश में बड़ी-बड़ी नदियां हैं, जिनके एक किनारे से दूसरा किनारा भी नहीं दिखाई देता। वहां जाने पर सैनिकों के समक्ष मैंने शपथ ली थी—'दोस्तो, भारत कभी नहीं पीछे हटेगा!' खूब सोच-विचारकर हमने आक्रमण किया था।

भारत का इरादा बाङला देश को मुक्त करने का ही था। पाकिस्तान को जीतने का यह अच्छा मौका था। परंतु हमने वैसा नहीं किया; क्योंकि हम एक अच्छे पड़ोसी की तरह ही रहना चाहते थे। इसीलिए हमने सैनिक गतिविधि को संयम से रोके रखा।

बहुत लोग मुझसे बार-बार पूछते रहते हैं कि जिन लोगों ने दो लाख बंगाली नारियों का स्त्रीत्व भंग किया तथा पंद्रह लाख बंगालियों को कत्ल कर डाला, उन्हें उचित दंड क्यों नहीं दिया गया! युद्ध में सब तरफ को विचार करना पड़ता है। उतावली नहीं करनी चाहिये। बरसात में नदी-नाले उफन पड़ते हैं, उन दिनों आक्रमण करना युद्धकला की दृष्टि से उचित नहीं होता। नदीनालों से स्वयं घिर जा सकते हैं। इसके अलावा उस समय चीनी आक्रमण का भी खयाल रखना जरूरी था। राजनैतिक दृष्टि से निराश्रितों की समस्या थी तथा पाकिस्तानियों की नराधमता की जानकारी यूरोपीय देशों तक पहुंचानी थी। सो यह थी परिस्थिति, इसलिए दिसंबर महीने में ही सेनाएं आगे बढ़ायी गयीं।

कुछ लोग कहते हैं कि जिन नब्बे हजार सैनिकों को हमने कैद किया था, उन्हें वापस लौटाना उचित नहीं था। परंतु जब हम बाङला देश में आधे तक पहुंच गये, तब मैंने जनरल नियाजी को शरण में आने का संदेश भेजा था। मैंने उन्हें वचन दिया था कि शरण में आ जाओगे, तो तुमसे सैनिक मानमर्यादा के अनुसार व्यवहार किया जायेगा।

मैं 'सैनिक' हूं, राजनीतिज्ञ नहीं। मुझे वचन का पालन करना था। हमारा देश गरीब है, फिर भी पाकिस्तानी सैनिकों को भरपेट भोजन खिलाता था। हमारे सैनिक स्वयं जमीन पर सोते थे और पाकिस्तानियों को पलंगों पर गर्म हवा वाली बैरकों में सुलाते थे। हमारे सिपाहियों ने अपने कंबल भी उन्हें ओढ़ने को दे दिये थे। पाकिस्तानी बंदियों के मुक्त किये जाने पर हमारे यहां बहुत लोगों ने नाराजगी प्रकट की थी। परंतु जब वे सैनिक पाकिस्तान लौटे, उन्होंने भारत की मेहमाननवाजी की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। उससे पहले वहां की सरकार वर्षों से यह प्रचार करती रहती थी कि हिंदू शैतान हैं, क्रूर हैं, मुसलमानों को देखते ही मारने लगते हैं। परंतु इन सैनिक कैदियों ने स्वयं अनुभव किया कि कितना वाहियात प्रचार किया गया था। हमारी मेहमाननवाजी की बात वहां गांव-गांव तक पहुंच गयी। पाकिस्तानी युद्धबंदियों के साथ मैं उर्दू में बातें करता था; क्योंकि मुझे उर्दू आती है। मैं पंजाब का हूं और मेरी पत्नी बंबई की है! मुझे गोरखाली बोली भी

आती है और गोरखा जवानों के साथ मैं प्रेमपूर्वक उनकी जबान में बतिया सकता हूं।

जीवन में मुझे भी सफलताएं और निराशाएं दोनों मिली हैं। किसे नहीं मिलतीं? बर्मा में सितांग नदी के पुल की रक्षा के समय एक जापानी सिपाही ने मुझ पर अनेक गोलियां दागी थीं। आपरेशन करके नौ गोलियां निकाली गयीं। वह फरवरी १९४२ की बात थी। बाद में श्री कृष्ण मेनन द्वारा मैं अपमानित हुआ और अंत में मेरे निवृत्त (रिटायर्ड) होने का समय आ गया।

निवृत्ति की चिंता हमें जरूर रहती है। पिछले अनुभवों का लाभ हम किस प्रकार उठायें यह देखना पड़ता है। मुझे ४,५०० रु. के वेतन की पेंशन १,२०० रु. मिलती है। (वह भी जवानों को नहीं मिलती।) परंतु निवृत्त होना आवश्यक है—अन्यथा जवान लोगों को अच्छे अवसर कैसे मिलेंगे?

मैं सैनिक हूं। रिश्वत लेने से घबराता हूं। समय का पूरा पाबंद हूं। जवानी में मैंने हार भी खायी है और बड़ा अफसर बनकर विजय भी पायी है। सैन्य-जीवन में मुझे बहुत स्नेह और संतोष मिला है।

जिंदगी फिर से शुरू करने का अवसर मिले, तो मैं सैनिक बनना ही पसंद करूंगा। घायल होने पर मुझे मिलिटरी क्रास मिला था। वह प्रसंग मेरे लिए स्मरणीय है। बाद में मिलिटरी हेडक्वार्टर्स का डाइरेक्टर बना। फिर पूर्वी क्षेत्रों का कमांडर हुआ। फिर 'चीफ आफ दि आर्मी' का पद पाया। युद्ध जीतने पर बड़ा आनंद हुआ। फील्डमार्शल बनने का प्रसंग भी स्मरणीय है। देहरादून में आठवीं गोरखा रेजिमेंट की छावनी में एक कमरा 'साम बहादुर रूम' कहा जाता है। मुझे जो भी संमानसूचक पदक आदि मिले हैं, वे मैंने अपनी रेजिमेंट को सौंप दिये हैं; वे सब उस कमरे में सजाकर रखे गये हैं। केवल 'फील्डमार्शल' की बैटन और तलवार मैंने अभी तक अपने पास रखी है।

दूसरे विश्वयुद्ध के सेनापतियों में जर्मन कमांडर महान माने जाते हैं। उनके कामों में हिटलर बहुत दखल देता था; तो भी केसरलिग, रोमेल, रुन्डस्टाट आदि सभी उच्च कोटि के कमांडर थे। यदि उन्हें हिटलर की जगह कोई दूसरा नेता मिला होता, तो बहुत बड़ा परिवर्तन हो जाता। केसरलिंग के सामने इटली में भारतीय सेनाएं लड़ी थीं। कम सैनिकों के जरिये शत्रु की रोकथाम करते हुए किस प्रकार पीछे हटें—यह केसरलिंग जैसा कोई महान् सेनापति ही कर सकता है। उस पर चले मुकद्दमे में भी कमांडर के रूप में उसकी तारीफ हुई।

रूस में जुकोव और कोनिएव की शोहरत हुई है। आपके तीस हजार टैंकों में से दस हजार जायें तो बीस हजार टैंकों के साथ आगे कैसे बढ़ा जा सकता है—यह जुकोव ने कर दिखाया था। अमरीकी सेनापति मैकआर्थर बहुत होशियार और विद्वान था।

टिक्का खां ने बाङला देश में जिस प्रकार का कत्लेआम किया, वैसा मैं कभी न करूं। असहाय मनुष्यों को कत्ल करना मेरे खून में नहीं है। [गुजराती 'अखंड आनंद' से]

★

गति विचित्र है प्रेम की

मूल बंगला

बुद्धदेव बसु

अनुवाद

रमेश दुबे

इला अपने कमरे में अधीर होकर चहलकदमी कर रही थी, इसी समय दरवाजे के सामने शोभन आ खड़ा हुआ। दोनों के बारे में सिर्फ एक तथ्य जानने की जरूरत है, इला की उम्र बीस और शोभन की सोलह है।

इला (रूखे स्वर में) / कौन है ?

शोभन / मैं।

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

इला / ओह, शोभन ? (मधुर स्वर में) आओ। (शोभन कमरे में आ गया।) बैठो। (शोभन बैठ गया।) शोभन क्या तुम्हें अमल बाबू की करतूत पता है ?

शोभन / कैसी करतूत ?

इला / सुना नहीं तुमने ? (कर्कश स्वर में) उनकी शादी हो रही है।

शोभन / तब तो आपकी भी होगी !

इला (सहसा टहलना बंद करके शोभन के सामने खड़ी होकर) / देखो, शोभन, मैं तुमसे कहे देती हूं कि दिनो-दिन तुम शैतान हुए जा रहे हो ......

शोभन / आ' एम सॉरी।

इला (झट से शोभन के कंधे पर हल्की थाप जमाकर) / वेल सो'म, बुरा न मानना, आज मेरा दिमाग ठीक नहीं है।

शोभन / हां, यह तो मैं देख ही रहा हूं।

इला / सुनो, तुम्हारे अमल बाबू पामेला मित्तिर से शादी कर रहे हैं, कभी सोचा था तुमने ! पामेला ...... हा हा हा। (फीकी मुस्कान में) पामेला का चेहरा तुम्हें कैसा लगता है, शोभन ?

शोभन / भद्दा !

इला / आह, शोभन तुम्हारे पास नजर है। पामेला—उसका चेहरा ठीक मागुर मछली जैसा है न ?

शोभन (तनिक सोचकर) / कुछ-कुछ।

इला / कुछ-कुछ नहीं शोभन, बिलकुल मागुर की ही तरह। तुम एक बार अच्छी तरह देखना।

शोभन / देखूंगा।

इला / उस मागुर-मुंही लड़की से ...... शोभन, मेरी सिगरेट लाये हो ?

शोभन / लाया हूं। (जेब से सिगरेट का पैकेट निकालकर इला के हाथ में देता है।)

इला (एक झटके में ऊपर के पारदर्शक कागज को फाड़कर पैकेट को इतनी जोर से उंगली से दबाती है कि पन्नी में मुड़ी सिगरेटें फर्श पर गिर पड़ती हैं) / डैम।

शोभन / यह रहा। (फर्श से सिगरेट उठाकर देता है।)

इला / 'क्यूं। (एक सिगरेट ओंठों में दबाकर) एक लोगे ?

शोभन / नहीं।

इला / एक सिगरेट पिओ न। रहने दो, न पिओ, अभी बच्चे हो। (पैकेट को ड्रेसिंग-टेबल पर उछाल देती है और फिर पास रखी तिपाई से लाइटर उठाकर सिगरेट सुलगाती है।) मुझे तो यह समझ में नहीं आ रहा है, शोभन, कि उस मागुर-मुंही लड़की ने किस तरह ...... उफ्, अमल का भी क्या टेस्ट है। ठीक ही हुआ, पामेला के साथ ही फबेगा वह। क्या तुम यह समझते हो शोभन कि अगर वह मेरे पैरों पर आ गिरता या जीभ से मेरे जूते चाटकर रोता-धोता, तो मैं उससे शादी कर लेती ? या मैं सपने में भी भला उससे शादी की बात कभी सोचती थी ?

शोभन / आप ऐसे टहल क्यों रही हैं ? एक जगह बैठिये न।

इला / उससे तुम्हारी मुलाकात हो तो कहना शोभन कि जिसका ऐसा टेस्ट हो,

वैसे आदमी के साथ इला का संबंध था, यह सोचते हुए भी इला को लाज आती है, वह स्वयं पर दुखित होती है ......

शोभन / कहूंगा ।

इला / नहीं-नहीं ...... स्वयं पर दुखित होती है, मत कहना । बल्कि कहना ...... खैर, रहने दो, कुछ भी कहने की जरूरत नहीं है । उससे मुलाकात हो तो मेरे बारे में कुछ न कहना । समझे, शोभन ?

शोभन / हां, समझ गया ।

इला / और अगर वह कुछ कहने आये, मेरे बारे में, तो शोभन उसके गाल पर तड़ाक से एक तमाचा जड़ देना । जड़ सकोगे शोभन ?

शोभन / बिलकुल ।

इला / नहीं-नहीं, भले लड़के, तुम कुछ न कहना, चुप रहना । सीन क्रिएट करके कोई फायदा नहीं । उसकी चाहे जो मर्जी हो वह करे, उससे अब मेरा संबंध ही क्या रह गया है ? (तनिक चुप रहकर, सिगरेट को खिड़की से फेंककर) वह मुआ चाहे चूल्हे में जाये या जहन्नुम में—इससे मुझे क्या मतलब ?...... फिर भी, फिर भी, फिर भी शोभन, हां ...... तुम तो जानते ही हो, शोभन, मैं उससे प्यार करती थी...... क्या तुम बता सकते हो कि उसने मुझसे शादी क्यों नहीं की ? हां ...... मैं तो करती ही, मैं तो तैयार ही थी । मगर वह कहे, तो अब भी, अभी भी......शोभन तुम हंस रहे हो?

शोभन / नहीं-नहीं, इसमें हंसने की क्या बात है !

इला / बताओ तो शोभन, अब मैं क्या करूं ? अब मेरे जीने से क्या फायदा ? अब मैं सोचती हूं कि पहले ही मर जाती तो अच्छा होता ...... पर किसे मालूम था कि ऐसा होगा ? नहीं, अब मेरे जिंदा रहने का कोई अर्थ नहीं है । शोभन, मैं आत्महत्या करूंगी ।

शोभन / करना जरूरी ही है क्या ?

इला / मैं तुम्हें ही बता रही हूं, शोभन, तुम और किसी को मत बताना । कल ...... कल इस वक्त तक मैं मुर्दा होऊंगी ।

शोभन / कैसे मरेंगी ?

इला / जहर खाकर ...... नहीं, गोली मारकर । शोभन, क्या तुम पिताजी की पिस्तौल छिपाकर ला नहीं दे सकते ?

शोभन / चला सकेंगी ?

इला / हां, वही तो सोच रही हूं, कभी तो चलायी नहीं है मैंने । अगर चूक गयी ...... कितनी भयंकर बात होगी । धमाका होगा, सभी जान जायेंगे, हंगामा हो जायेगा

...... और मर भी नहीं सकूंगी। तब तो शरम से ही मर जाना पड़ेगा मुझे। नहीं, जहर खाकर ही मरूंगी......अफीम, स्ट्रिक्निन, पोटैशियम साइनायड ......

शोभन / कहां से लायेंगी?

इला / तुम ला देना।

शोभन / मुझे कहां मिलेगा?

इला / हां, ठीक कहते हो, ठीक ही कहते हो। यह तो बहुत मुश्किल है। धरती पर कितने तरह के कितने ही जहर हैं ...... और एक आदमी के मरने-भर का जहर क्या कहीं नहीं मिलेगा? ...... क्या किया जाये, शोभन बताओ तो, क्या किया जाये?

शोभन / तो क्या मरे बिना नहीं चलेगा?

इला (तनिक चुप रहकर) / हां, ठीक कह रहे हो, ठीक कह रहे हो। नहीं—मैं नहीं मरूंगी, मैं जिऊंगी। मैं जिऊंगी। मैं उसे दिखा दूंगी, वह मेरे सामने कुछ भी नहीं है। मैं उसे काफी अदना समझती हूं, मैं उससे घृणा करती हूं ...... नहीं, घृणा भी नहीं करती! वह समझ जायेगा, मैंने कभी उससे प्यार नहीं किया (सहसा रुककर, टूटे स्वर में) पर मैं तो प्यार करती थी, शोभन।

शोभन / आप यहां आकर बैठिये, और एक सिगरेट पीजिये।

इला (शोभन के पास बैठकर उसका हाथ अपने हाथों पर रखकर) / तुम बड़े भले लड़के हो, शोभन, बहुत भले हो तुम।

***

[एक बरस बाद]

शोभन (टेलिफोन उठाकर) / हलो।

इला (टेलिफोन पर) / तुम, शोभन?

शोभन / हां, मैं।

इला / सुनो शोभन, मेरा तो ...... मैं इला ......

शोभन / समझ रहा हूं ...... कहिये।

इला / मेरा जाना तय हो गया है। कल कलकत्ता छोड़ रही हूं, तीन दिनों बाद भारतवर्ष।

शोभन / हमारा दुर्भाग्य है।

इला / नहीं-नहीं, ऐसा न कहो। तुम लोगों को छोड़कर जाते हुए मुझे भी कम तकलीफ नहीं हो रही है।

शोभन / क्यों जा रही हैं?

इला / यों ही, घूमने।

शोभन / यह देश अब आपको अच्छा नहीं लग रहा है?

इला / ऐसी बात नहीं है; बहुत दूर कहीं चले जाना है, इसीलिए।

शोभन / अरे! हमेशा के लिए विलायत में ही रह जायेंगी?

इला / यह भी मुमकिन है। अचानक जाना तय हो गया ...... सभी से मिलने का वक्त भी नहीं मिला ......

शोभन / रंजीत बाबू की शादी के बाद......

इला / ऐसा न कहो शोभन, ऐसा न कहो।

शोभन / मैं नहीं कह रहा ...... सभी कह रहे हैं।

इला / कौन कहता है?

शोभन / सभी।

इला / कैसे लोग हैं, सब कैसे लोग हैं! लेकिन शोभन, इसीलिए ही तो, इसीलिए

ही मुझे देश छोड़कर जाना पड़ रहा है।

शोभन / ठीक है, यह देश बड़ा गर्म है।

इला / (थोड़ी देर बाद) क्या, शोभन, तुमसे एक बात पूछती हूं। उसके साथ ...... रंजीत के साथ क्या फिर तुम्हारी मुलाकात हुई थी?

शोभन / हुई थी। उस दिन मैं उसके घर गया था–दावत थी।

इला / तुमने उसे कैसा देखा, मजे से है?

शोभन / ऐसा ही लगा।

इला (थोड़ी देर बाद) / सुनकर मैं खुश हुई।

शोभन / सचमुच ?

इला / हां शोभन सच। वह सुखी रहे, इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं चाहती। वह सुख से रहे–मैं चली जा रही हूं। अभी सचमुच ही ऐसा लग रहा है कि अब नहीं लौटूंगी–नहीं अब नहीं लौटूंगी। अब शायद तुम लोगों से कभी मुलाकात नहीं होगी, मुझे याद रखना।

शोभन / मुझसे होगी। अगले बरस आइ. एस-सी. पास करते ही मैं विलायत जाऊंगा। लौटते वक्त आपको साथ ले आऊंगा। आना नहीं चाहेंगी तो जबर्दस्ती पकड़ लाऊंगा।

इला (तनिक मुस्कराकर) / शोभन, शोभन, जितने लोगों से मैं अब तक मिली हूं, उनमें से सिर्फ तुम्हीं ने मुझे कुछ-कुछ प्यार किया है।

शोभन / मेरा क्या प्लान है, सुनेंगी? विलायत से इंजीनियरिंग पास करके लौटते ही मेरे लिए यहां नौकरी तय रहेगी तब...

चुभन

एक चुभन छुईमुई-सी,
कसक गयी
पीर सुई-सी।
नभ में घन उड़े श्वेत-श्याम
नदिया के राम,
चातक के दर्द पर विराम
स्वर्णलता शाम।
बिखर गयी सोनजुही-सी
कसक गयी
पीर सुई-सी।
पीपल के पात-पात मोर,
पवन के नगर,
पावस में विरहा का शोर
अनमनी डगर
लेटी है सजल धुई-सी,
कसक गयी
पीर सुई-सी।
तट के अनुबंधों के जाल
तोड़ गये ताल,
व्याकुल मन-राही के भाल,
चिंता की माल
उलझ गयी पंख-फुही-सी
कसक गयी
पीर सुई-सी।

- सुधांशु

वैदिक इंटर कालेज, दिव्यपुरी,
दिबियापुर, इटावा

तब मैं आपसे शादी कर लूंगा।

इला / बड़े शरीर हो गये हो, शोभन......

***

[और चार बरसों बाद]

शोभन / हलो।

इला / शोभन हो न ?

शोभन / हां।

इला / मैं इला।

शोभन / ओह इला। सो ग्लैड। सो काइंड आफ यू टु हैव रंग मी अप—

इला / नॉट एट ऑल।

शोभन / लौटकर पहले तुम्हारी ही याद मुझे आयी थी। कैसी हो ?

इला / आज ही खबर मिली कि तुम लौट आये हो। और भी एक बार मैंने रिंग किया था, तुम नहीं थे। सुनो, क्या एक बार हमारे घर नहीं आओगे ?

शोभन / जरूर—एक क्यों, हजार बार। तुम नहीं कहती, तो भी जाता।

इला / आह, शोभन, याद है, शुरू के कुछ महीने लंदन में कितने सुंदर बीते थे। याद है ?

शोभन / मैंने सोचा था, हमेशा न सही कम से कम और कुछ दिन वहां तुम जरूर रहोगी।

इला / क्या मेरा मन नहीं हो रहा था ? पर क्या करती, बताओ, मां अचानक बीमार पड़ गयी ...... पर लंदन छोड़ने के दिन तुमसे मुलाकात नहीं हो सकी, मैंने सोचा था......

शोभन / मैंने भी कम कोशिश नहीं की थी। पर ऐसे कुछ—एक ......

इला / खैर छोड़ो, वे सब बात अब छ दो। याद है, शोभन, मेरे लौटने से एक दि पहले तुमने मुझे फोन पर क्या कहा था

शोभन / मैंने तुमसे शादी करने की बा कही थी और तुमने मुझे डांटा था। (हं कर) आह, इला, इला, बचपन में लो क्या-क्या नहीं कहते !

इला / तो कब आ रहे हो ?

शोभन / आज, शाम को ?

इला / हां, आज शाम को ही आ जाओ।

[थोड़ी देर मौन]

इला / आज कितने दिनों बाद तुम मुलाकात होगी ! तीन बरस—या इससे भी ज्यादा ? आखिरी बार हम कहां मिले थे ठहरो, सोचने दो ...... सोहो के उस चीनी रेस्त्रां में न ?

शोभन / ओह, वह चीनी रेस्त्रां ह्वाट ए फनी प्लेस। कितनी फनी अंग्रे बोलता था वह ! पर चाहे जो कहो, कितन बढ़िया खाना देता था ! बाद में कितनी बार मर्जरी को साथ लेकर मैं वहां गया था।

इला / किसे लेकर ?

शोभन / मर्जरी को।

इला / मर्जरी ? ...... यह कौन है ?

शोभन / मेरी पत्नी।

इला (रुंधे स्वर में) / क्या कहा ?

शोभन / मेरी पत्नी। तुम्हें ही बता रह हूं इला, और किसी को मत बताना। अभी तक मैंने किसी को नहीं बताया है। आइ डिया है कि मर्जरी के यहां आ जाने के बाद ....

★

• ब्रह्मानंद •

शाश्वत प्रेम

अमरीकी हास्य-लेखक मार्क ट्वेन ने प्रेम विवाह किया था। शादी से पहले अगर ट्वेन को शहर से कहीं बाहर जाना पड़ता तो वह अपनी प्रेमिका लाइवी को रोज पत्र लिखता, उसकी यह आदत विवाह के बाद भी बनी रही। कभी-कभी तो वह उसे दिन में चार-चार पत्र भी लिख डालता था। और कभी तो शहर में रहते हुए भी वह उसे पत्र लिखता—छोटे-छोटे पत्र, जो कभी नाश्ते की प्लेट में रख दिये जाते, कभी चुपके-से हाथ में थमा दिये जाते। विवाह के १७ साल बाद उन्होंने २७ नवंबर १८९५ को लाइवी के जन्म-दिन पर उसे लिखा था :

'हम एक और मील-पत्थर तक पहुंच गये हैं, प्रिये! और वह मील-पत्थर जहां से हम चले थे, बहुत-बहुत पीछे रह गया है। परंतु हम अपने पीछे एक बहुत सुहावना दृश्य देखते हैं—घाटियां जो हरी-भरी हैं, मैदान जो अभी भी फूलों से भरे हैं, पहाड़ियां जो अभी भी सुखद यादों की सुबह के मंद-मंद प्रकाश में सोती हैं। और इस सफर में हमें साथी भी नसीब हुए हैं—ऐसे बढ़िया, ऐसे प्रेरणादायक, ऐसे प्यारे कि उनकी बदौलत सफर कितना आसान लगता है! हमारे चेहरे अब सूर्यास्त की ओर हैं, पर वे साथी अब भी हमारे साथ हैं—हमारे हाथ पकड़ने के लिए और हमारे साथ कदम मिलाकर चलने के लिए। और जब कि वे हमारे साथ हैं, और हमारा पुराना प्यार बढ़-फूल रहा है और तनिक भी कम नहीं हो रहा है, हमारा सफर फिर भी फूलों, हरे-भरे खेतों, और यहां तक कि बीते दिनों की सुबह के मंद प्रकाश जैसे ही शाम के सुखद प्रकाश में से भी होकर गुजरेगा। —तुम्हारा पति'

★

केजिता

विज्ञान-बिंदु

बकौल पंडित प्रतापनारायण मिश्र 'आंख से न आंख लड़ जाये इस कारण से भिन्नता की भीत यह नासिका लगायी है।' भगवान ने दो कान क्यों लगाये, इसकी भी कारण-मीमांसा मिश्रजी ने की थी या नहीं, हम नहीं जानते। कान या तो काटने के काम आते हैं (मुहावरे में भी पुराने ढर्रे के दंडशास्त्र में भी) या उमेठने के। अन्यथा आधुनिक शरीर-रचना शास्त्र की दृष्टि से मनुष्य के कान के बाहरी ढांचे का कोई विशेष क्रियात्मक (फंक्शनल) महत्त्व नहीं है; क्योंकि वास्तविक श्रवणेंद्रिय तो कर्णरंध्र के अंदर स्थित होती है। परंतु दिल्ली के डा. अब्दुल ज़ालिल ने फिलेडेल्फिया (अमरीका) में आयोजित एक्यपंक्चर-विषयक अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी से लौटकर ऐसी बात कही है, जो बिलकुल नये ढंग की है। उनका कहना है—मनुष्य के कान की बाह्य संरचना में उसके शरीर के सभी महत्त्वपूर्ण अंगों का प्रतिनिधित्व रहता है। अपनी बात को वे 'ऑरिक्युलो-थैरेपी' के आधार पर समझाते हैं। 'ऑरिक्युलो-थैरेपी' कान का एक्युपंक्चर है। सामान्य एक्युपंक्चर की उपचार-पद्धति में शरीर के विभिन्न भागों में सूई चुभोयी जाती है; मगर ऑरिक्युलो-थैरेपी में शरीर के सभी अंगों का उपचार केवल कान के माध्यम से किया जाता है और यह एक्युपंक्चर का ही एक नवविकसित रूप है—केवल बीस वर्ष पुराना।

आधुनिक ऑरिक्युलो-थैरेपिस्टों का ध्यान एक बात पर विशेष रूप से गया है। वह है बाह्य कान और गर्भस्थ शिशु की रेखानुकृतियों में दिखाई देने वाली आश्चर्यजनक समानता, जिससे वे दोनों एक ही वस्तु के चित्र मालूम पड़ते हैं। कान में मनुष्य-शरीर के विभिन्न अंगों से संगत बिंदुओं की कल्पना संभवत: इसी आधार पर ऑरिक्युलो-थैरेपी में की गयी है और माना जाता है कि इनमें से किसी एक बिंदु को सूई द्वारा उत्तेजित करके शरीर में उससे संगत अंग का उपचार किया जा सकता है।

एक्युपंक्चर का इतिहास चीन में बहुत पुराना—लगभग पांच हजार वर्ष का—है। ऑरिक्युलो-थैरेपी अपेक्षाकृत बहुत नयी है।

परंतु नी-चिंग द्वारा चीनी भाषा में लिखित प्रसिद्ध आयुर्वैज्ञानिक आदिग्रंथ (४००-२०० ई. पू.) में कान को एक पृथक् अंग न मानकर शरीर के सभी प्रमुख अंगों (अर्थात् पांच अंतरग एवं छह आंत्र-अंगों) से संयोजित केंद्रीय अंग बताया गया है। अन्य भी अनेक प्राचीन चीनी चिकित्साग्रंथों ने किसी न किसी रूप में इस मत की पुष्टि की है। हमारे यहां भी दमा आदि अनेक रोगों के उपचार के लिए कर्ण-वेधन का रिवाज था।

ऑरिक्युलो-थैरेपी या कर्ण-एक्युपंक्चर के लिए कई तरीके काम में लाये जाते हैं। जैसे कान के संवेदनशील बिंदु का साधारण सूई से उत्तेजन, गीली-सूई से उत्तेजन, गर्म सूई से उत्तेजन; औषधयुक्त सूई का प्रयोग; रक्त-निष्कासन; मालिश या ऐंठन आदि।

कान में शरीर के जिन विभिन्न अंगों से संबंधित सक्रिय बिंदुओं की उपस्थिति की कल्पना की गयी है, उनमें प्रमुख हैं हाथ, जिगर, गुर्दे, आंतें, मस्तिष्क आदि। कर्ण-एक्युपंक्चर में इन बिंदुओं की सहायता से सिर, अस्थि, आंत्र आदि से उत्पन्न सभी प्रकार की पीड़ा, निमोनिया, मलेरिया आदि ज्वर, त्वचारोग, लू, आघात, अनिद्रा, दुःस्वप्न, मानसिक रोग, यकृतशोथ, पीलिया, पथरी, गंजपन, दमा तथा श्वसन संबंधी विभिन्न विकृतियां, उच्च रक्तचाप, सीने और उदर के रोग एवं गठिया आदि का उपचार सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

अलीबाबा का ताला

बस 'खुल जा सिम-सिम' कहा और ताला खुल गया—यह बात 'अलीबाबा, चालीस चोर' नामक प्रसिद्ध कहानी में हम सब सुनते-सुनाते आये हैं। मगर कूट शब्द 'सुनते' ही खुल जाने वाले ताले आज तक कहीं किसी के देखने में नहीं आये थे। अब खबर है कि विश्वप्रसिद्ध वेस्टिंग हाउस इलेक्ट्रिक कार्पोरेशन ने ध्वनिचालित ताले का विकास कर लिया है।

बताया गया है कि इस ताले की 'मेमोरी' में एक कूट शब्द 'भर' दिया जायेगा। जब आप उसके सामने उस कूट शब्द को उचारेंगे, तत्काल ताला खुल जायेगा। मगर जरूरी यह है कि आपकी आवाज एकदम साफ हो और आप स्वर यंत्रशोथ (लैरिंजिटिस) आदि से ग्रस्त न हों।

यह ताला एक लघु कंप्यूटर और एक ध्वनि-पहचान-यंत्र को मिलाकर बनाया गया है। ध्वनि-पहचान-यंत्र पर व्यक्ति-विशेष की ध्वनि में कूट शब्द अंकित रहते हैं। अथवा कोई विशेष यांत्रिक ध्वनि भी इसके लिए अपनायी जा सकती है। इसी ढर्रे पर कैश-रजिस्टर-ड्राअर अथवा कार-डोर-ओपनर भी तैयार किये जा सकते हैं। मगर हां एक बार कोई चोर आपकी आवाज की हूबहू नकल करने में सफल हो गया तो बस खैर नहीं। इस ताले का अनुमानित मूल्य साढ़े सात सौ रुपये (एक सौ डालर) है।

शक्ति-संपन्न सोया

खूराक में प्रोटीन का अभाव आम भारतीय की समस्या है। अविकसित, अल्पविकसित और कमजोर शरीर का कारण प्रोटीन

की कमी ही है; क्योंकि शरीर में नये ऊतकों का निर्माण प्रोटीन से ही होता है। भारत के कृषि और खाद्य वैज्ञानिकों ने प्रोटीनयुक्त नये खाद्य पदार्थों की खोज की दिशा में सराहनीय काम किया है।

इस वर्ष के मध्य में नयी दिल्ली में आयोजित एक महत्त्वपूर्ण संगोष्ठी में बताया गया कि गत वर्ष जारी की गयी 'अंकुर' नाम की सोयाबीन-किस्म के अलावा लगभग एक दर्जन नयी किस्मों पर काम चल रहा है और उन्हें किसी भी समय जारी किया जा सकता है। इन किस्मों की विशेषता होगी रोगरोधकता, अधिकधारिता एवं अपेक्षाकृत कम समय में पककर तैयार हो जाना।

इसके अलावा सोयाबीन की एक खूबी यह है कि वह खेत पर एकाधिकार नहीं करता, यानी उसे मिश्र-फसल के रूप में उगाया जा सकता है। वायुमंडलीय नाइट्रोजन के यौगिकीकरण (फिक्सिंग) की इसकी क्षमता तो किसानों के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है। इससे कृषकों को उर्वरकों पर कम धन व्यय करना पड़ेगा। सोयाबीन से होने वाला मुनाफा अलग।

सोयाबीन की पोषकता एक बार फिर स्मरण कर लें। एक किलोग्राम सोयाबीन में बारह लिटर शुद्ध दूध अथवा दो किलोग्राम बकरी के गोश्त की अपेक्षा कहीं अधिक प्रोटीन मौजूद होती है। पंतनगर (उत्तर-प्रदेश) के कृषि विश्वविद्यालय के डा. एम. सी. सक्सेना के अनुसार उस विश्वविद्यालय में पूर्णतया सोयाबीन से निर्मित कई खाद्य पदार्थ तैयार किये गये हैं और उन्हें जनता में प्रचलित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इनमें से एक पदार्थ पनीर से मिलता-जुलता है और उसकी पोषण-क्षमता गोश्त की तुलना में चार गुना अधिक है। मरीजों और शिशुओं के लिए भी कुछ खाद्य सोयाबीन की सहायता से तैयार किये जा चुके हैं।

कैन्सररोधी औषध

घने काले बादलों के बीच से छनकर कभी-कभार आ टपकने वाली सूर्य-किरण की भांति ही जब कभी-कभी सफल कैन्सररोधी औषधों की चर्चा भी सुनने-पढ़ने को मिल जाती है, मन को ढाढ़स-सा मिलता है। ऐसा ही एक सुखद समाचार अभी सामने आया है। इसके अनुसार दक्षिण कोरिया के परमाणु शोध-संस्थान के डा. युन ता एक-कू ने ट्यूबरक्युलस बैसिलाई नामक बैक्टीरियम से एक विशेष पदार्थ प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है। यदि इसे पहले से ज्ञात एक कैं सररोधी औषध के साथ मरीज को दिया जाये, तो इससे उस औषध की प्रभावशीलता काफी बढ़ जाती है और मरीज कैन्सर के प्रति उतना अधिक संवेदनशील नहीं रह जाता। पशुओं पर इस औषधमिश्रण को आजमाया गया है और परिणाम काफी आशाजनक रहा है।

पराश्रव्य निदान

सही रोगोपचार की पहली शर्त है सही रोग निदान। इसके लिए नाड़ी-परीक्षा से लेकर विभिन्न जटिल तकनीकों एवं उपकरणों तक का सहारा लिया जाता है।

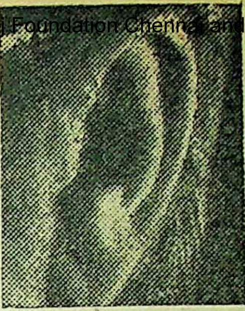

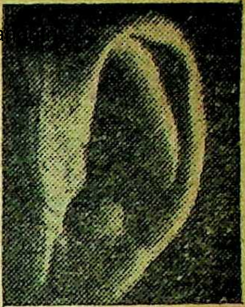

भविष्य में यदि रोगी तो दिल की शिकायत लेकर जाये और डाक्टर उसके कानों का निरीक्षण करने लगे, तो रोगी को आश्चर्य नहीं करना चाहिये। अमरीका के माउंट सिनाई अस्पताल के डा. लिकस्टाइन, डा. चड्ढा, डा. नायक और डा. गुप्ता नामक चार विज्ञानियों ने यह विचित्र बात देखी कि उनके यहां जितने रोगियों को दिल का दौरा पड़ चुका था, उनमें से लगभग आधों के कान की लोलकी में तिरछी सलवट थी। (देखिये, बायीं ओर का चित्र।) विस्तृत जांच के लिए उन्होंने ५३१ हृद्रोगियों और ३०५ स्वस्थ व्यक्तियों के कानों का निरीक्षण किया। हृद्रोगियों में से ४७ प्रतिशत की लोलकी में सलवट थी, जबकि स्वस्थ व्यक्तियों में से केवल ३० प्रतिशत में यह चीज देखी गयी। कैलिफोर्निया के डा. एस. टी. फ्रैंक ने भी स्वतंत्र रूप से २० रोगियों की जांच की जिनकी लोलकी में सलवट थी; उनमें से १९ को एक या अधिक बार दिल का दौरा पड़ चुका था। यह सलवट शायद हृद्रोग जैसे क्षयकारी रोग का त्वचा में अभिव्यक्त लक्षण है।

* * *

'एक्स-किरण' जिसे आज अपढ़ ग्रामीण भी 'एक्स-रा' के रूप में जानता है, इस सदी में आविष्कृत ऐसा सबसे बड़ा साधन है।

अब एक और उपकरण की ईजाद हुई है और उसका श्रेय है पश्चिम जर्मनी की प्रसिद्ध सीमेन्स कंपनी को। यह उपकरण वस्तुतः एक पराश्रव्य यूनिट है जो मानव-शरीर की शिराओं एवं धमनियों में बह रहे रक्त के संबंध में ध्वन्यात्मक सूचनाएं प्रदान करती है। जाहिर है, रक्त-परिचक्रण से संबद्ध रोगों की पहचान में यह विशेष रूप से उपयोगी हो सकेगा। इसके काम करने का आधार है—डाप्लर प्रभाव।

इस उपकरण में एक ट्रांसमिटर होता है। उसमें से पराश्रव्य ध्वनि-तरंगें निकलकर रक्तवाहिकाओं से टकराती हैं। जब वे तरंगें वहां से परावर्तित होती हैं, उनकी प्रकृति पहले-जैसी नहीं रहती। रक्त की गति के अनुसार उनकी आवृत्ति यानी फ्रीक्वेंसी में परिवर्तन हो जाता है। रिसीवर में पहुंचने पर उन्हें कर्णश्रव्य बनाया जाता है। यदि रक्तप्रवाह का वेग सामान्य से अधिक या कम हो, तो तरंगों की आवृत्ति भी क्रमशः अधिक अथवा कम होती है। अतः यदि शिराओं के किसी वाल्व में कोई त्रुटि हो, तो इस उपकरण की सहायता से उसका पता लगाया जा सकता है। उपकरण को छोटा और सुविधाजनक बनाया गया है।

★

वाक्यदीप

शं च नो मयश्च नः ।
–हमें शांति मिले, सुख मिले ।

शं नो वातो वातु ।
–वायु हमारे लिए सुखकर होती हुई बहे।

शं नस्तपतु सूर्यः ।
–सूर्य हमारे लिए सुखकर होता हुआ तपे।

अहानि शं भवन्तु नः शं रात्री प्रतिधीयताम् ।
–दिन हमारे लिए सुखकर हों, रात्रि सुखकर हो।

सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः ।
–विश्ववेत्ता प्रभु हमारे लिए अति सुखकारी हो।

जीवेषु भद्रं तन्मयि ।
–जीवों को सुख मिले, मुझे भी सुख मिले।

शं मे अस्त्वभयं मे अस्तु ।
–मुझे सुख-शांति मिले, अभय मिले।

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु ।
–ज्योतिर्मुख अग्नि हमें सुख देने वाला हो।

शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु ।
–पुण्यात्माओं के पुण्यकर्म हमें सुख दें।

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु ।
–महाप्रकाशक सूर्य हमें सुख-शांति देता हुआ उदित हो ।

शं नो भवन्तु प्रदिशश्चतस्रः ।
–चारों दिशाएं हमें सुख-शांति दें।

शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु ।
–ये अचल पर्वत हमें सुख-शांति दें।

शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ।
–समुद्र हमें सुख-शांति दे, नदियां सुख-शांति दें।

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः ।
–राष्ट्रभूमि अपने राजनियमों से हमें सुख-शांति दे।

शं नो देवः सविता त्रायमाणः ।
–रक्षक सविता देव हमें सुख-शांति दे।

शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
–प्रकाशवती उषाएं हमें सुख-शांति देने वाली हों।

शं न पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः ।
–बादल हम प्रजाजनों पर सुख-शांति बरसायें।

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु ।
–सत्यव्रती जन हमें सुख-शांति दें।

–अथर्ववेद [डा. रामनाथ वेदालंकार संकलित 'वैदिक सूक्तियां' से]

आत्मनोमोक्षार्थं बलम्

गो. नी. दांडेकर

बेंत लगाने की टिकठी खड़ी थी। कक्षा में तख्ती टांगने की काठघोड़ी होती है न वैसी। नीचे के दोनों पाये शुंडाकार और ऊपर की ओर एक पर एक मिले हुए। पीछे आधार के लिए तीसरा पाया। जमीन से दो फुट की ऊंचाई पर पैर फैलाकर अटकाने के लिए आड़। कमर टिक सके इतनी चौड़ी आड़ी पट्टी। टिकठी के पास ही भिगोये हुए बेंतों का गट्ठा। उसमें से एक लपलपाता बेंत हाथ में तौलता हुआ संडा-मुस्टंडा काला-कलूटा वार्डर। टिकठी ही नहीं, पूरा मैदान ही लाठीधारी वार्डरों से आवृत। इसके अलावा प्रत्येक कोठरी के बाहर एक-एक लट्ठधारी वार्डर।

टिकठी के सामने कुर्सी। उस पर बैठा यमदूत सुपरिंटेंडेंट। पास में खड़े अन्य अधिकारी। उन्हीं में जेल का डाक्टर भी।

और सामने पचीस-तीस पंजाबी सत्याग्रही लाइन में उकड़ूं बैठे हुए। सजा का इंतजार करते। वे सब उस यमदूत द्वारा जेल में से चुने हुए थे।

उनका अपराध क्या था?

कुछ नहीं। होगा भी तो इतना ही कि वे सभी पंजाब से अच्छे घरों से दूर सत्याग्रह के लिए आये थे और जेल में खुलकर बातें करते थे।

सुपरिंटेंडेंट कसम खाकर उन्हें सबक सिखाने के लिए आ डटा था। सारे किवाड़ खोल दिये गये। फिर वह चारों ओर देखकर गरजा:

'सब देखो, बदतमीजी का नतीजा क्या होता है!'

एक वार्डर ने सत्याग्रहियों में से एक को उठाकर खड़ा किया। उसके कपड़े उतारकर उसे नंगा कर दिया। दो जनों ने पकड़कर उसे टिकठी पर चढ़ाया। महज खानापूर्ति के लिए डाक्टर ने एक बार उसकी नाड़ी जांची। नीचे के अड़गोड़े काठ में उसके दोनों पैर फंसाये। हाथ सिर के ऊपर ले जाकर टिकठी के दोनों शुंडाकार डंडों के जोड़ पर नेवार से बांध दिये गये। कमर बीच की आड़ी पट्टी पर टिका दी गयी।

बेंतधारी वार्डर लपलपाते बेंत को बांका किये खड़ा था। उसकी ओर देखकर सुपरिंटेंडेंट बोला:

'चलाओ!'

वह पांच कदम पीछे खिसका। बोलिंग करते समय स्टार्ट लेते हैं न, वैसे। और फिर झपाटे से कदम रखता हुआ बढ़ आया और बेंत को शरीर के चारों ओर घुमाकर उसने तड़ाक से कैदी के चूतड़ों पर मारा।

हम सभी ने देखा कि कैदी वहीं का

अनुवाद: गिरिजाशंकर त्रिवेदी

आगे बढ़ने वाले युवक सबसे विद्रोह करें, किंतु वे एक भावना से विद्रोह करने की इच्छा को हृदय में न आने दें। उनके मन में ऊंचे चरित्र के प्रति कभी प्रतारणा या उपेक्षा का भाव उदय न हो। वे स्वयं चरित्रवान हों, उनका सिर भी जब झुके तब चरित्रवान के लिए झुके। यदि चरित्र के लिए उनमें आदरभाव रहा, तो उनका विद्रोह चाहे कितनी ही कटुता क्यों न धारण कर ले, देश के लिए अंत में अमृत-फल ही सिद्ध होगा। **—स्व. गणेशशंकर विद्यार्थी**

वहीं सिकुड़कर रह गया। भय से हम सब एकदम जम-से गये। आंखों को लगातार खोलते-मूंदते वह दृश्य हम देखते रह गये। हममें से एक तो सुध खोकर दूसरे की पीठ पर ढुलक पड़ा। सभी कोठरियों से दु:ख का चीत्कार उठा और वहीं का वहीं मिट गया।

बेंतवाला वार्डर फिर पीछे हटा और कुछ क्षण रुककर उसने दूसरा बेंत मारा। तीसरा, चौथा। कैदी के चूतड़ लाल-नीले हो गये। नागफनी के डंठल पर गंडासा मारने पर जैसे दूध के कतरें फूटते हैं, उसी तरह लहू के कतरे फूट निकले।

दो-तीन बेंत तो सत्याग्रही ने सह लिये। पर उसके बाद वह कराहने लगा। छटपटाने लगा। प्रत्येक प्रहार पर वह जानवर की तरह मिमियाता। उसकी चीख जेल-भर में गूंज जाती। सभी के कलेजे इस उग्रता से थरथरा उठे।

पचीस बेंत मारने के बाद उस सत्याग्र के हाथ खोल दिये गये। पैर अड़गोड़े बाहर निकाल दिये गये। दो वार्डरों ने लोथड़े को उठाकर एक ओर ले जाक औंधा लिटा दिया। डाक्टर उसके चूतड़ों दवा लगाने लगा। फिर दूसरे को टिक पर चढ़ाया गया।

कुछ पंजाबी बड़े बहादुर थे। वे वार्ड के हाथ को झटककर स्वयं टिकठी पर गये। अड़गोड़े में पैर अटकाकर खड़े गये। उन्होंने अपने हाथ स्वयं ऊंचे कर दि वार्डरों की मदद अस्वीकार कर दी। प्रत्ये बार बेंत के प्रहार पर वे ज्यादा करा कांखे नहीं। बेंतों की सजा उन्होंने बेधड़ दिल से झेली।

एक कमउम्र लड़का जरूर अपना नंब आने पर फूट पड़ा। जानवर की तरह मिमियाने लगा। चीखने लगा :

'सुपरिंटेंडेंट साहब, अब नहीं करूंगा! मुझे मत मारिये! छोड़ दीजिये!'

हम सबके मन पिघल गये। पर उस यमराज को दया नहीं आयी। दो-चार वार्ड के जरिये उसने उसे टिकठी पर चढ़ा दस बेंत लगवाये ही।

उस क्रूरकर्मी की फूंक खिसका दी साधारण कदकाठी वाले एक सांवले संन्यासी ने अपना नंबर आते ही वह अपने आप उ खड़ा हुआ। कपड़े उतारकर रख दिये। मजबूत कदमों से टिकठी की ओर बढ़ चला उस पर चढ़कर अड़गोड़े में पैर अटका गर्जना की :

'जो बोले सो अभय ! वैदिक धर्म की जय !'

सुपरिंटेंडेंट बेहद चिढ़ गया। उसने बेंत मारने वाले वार्डर को बदल दिया। पास खड़े दूसरे हट्टे-कट्टे वार्डर को उसके स्थान पर बुलाया और गरजा :

'खूब कसकर ! जी-जान लगाकर !'

उस वार्डर ने कोई कसर न रखी। पहले ही बेंत के साथ संन्यासी के चूतड़ों से रक्त की धारा फूट निकली। मगर आश्चर्य कि उसने चूं तक न की। करता क्यों ? उसने तो प्राणायाम द्वारा श्वास को हृदयकपाट में रोक लिया था। शरीर का जो कुछ होना हो, होता रहे।

पूरी ताकत जुटाकर वार्डर ने पचास बेंत पूरे किये। वह खुद हांफ उठा था। परंतु संन्यासी ने एक भी सिसकारी नहीं भरी। जैसे वह शरीर उसका हो ही नहीं। पचास बेंत पूरे होते ही उसने फिर गर्जना की :

'जो बोले सो अभय ......'

[illegible] हुआ सुपरिंटेंडेंट चिंघाड़ा—'और पचास मारो। कमीना मुंह से चीखा तक नहीं।'

वार्डर पीछे मुड़ा। तभी एक चमत्कार घटित हुआ। मद्रासी डाक्टर आगे बढ़ा। बोला—'साहब, मैं एलाउ नहीं कर सकता!'

आंखें तरेरते हुए सुपरिंटेंडेंट ने सवाल किया—'क्यों ?'

'मुझे शक है, कैदी यहीं पर मर जायेगा। आप उसके मुंह से चीं नहीं निकलवा सकते।'

'जो होगा, देख लेंगे।'

'अच्छा, तब मैं चला। अपनी आंखों के सामने मैं इससे ज्यादा बर्दाश्त नहीं कर सकता।' डाक्टर उठकर जाने लगा।

यम झुका। वार्डर को उसने इशारे से रोका। निःशस्त्र प्रतिकार की शक्ति क्या होती है, यह सबकी समझ में आ गया।

['स्मरणगाथा' से]

* * *

शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, यह भाषाशास्त्र का सर्वविदित तथ्य है। मगर सरकार द्वारा किसी शब्द का अर्थ बदला जाना सर्वथा नयी बात है। ब्रिटेन के इस वर्ष के बजट में एक टिप्पणी जोड़ दी गयी है कि इस आय-व्यय-पत्रक में जहां भी 'बिलियन' शब्द आया है उसका अर्थ १००० मिलियन है। अमरीका और फ्रांस में भी 'बिलियन' शब्द का अर्थ १००० मिलियन (हमारे हिसाब से १ अरब) ही होता है। मगर ब्रिटेन में अब तक मिलियन का अर्थ १ मिलियन-मिलियन (हिंदी के हिसाब से १० खरब) था। अंग्रेजी के शब्दकोशों में ये दोनों अर्थ स्पष्टीकरणपूर्वक दिये जाते थे। मिलियन शब्द अब भारत में भी बजटों व आंकड़ों की तालिकाओं में प्रयुक्त होने लगा है। उसका अनुवाद प्रायः दशलक्ष किया जाता है। कन्नड में 'मिलियन' शब्द ही अपना लिया गया है और उसे 'मिलिय' बना लिया गया है।

★

छानबीन अपराधों की

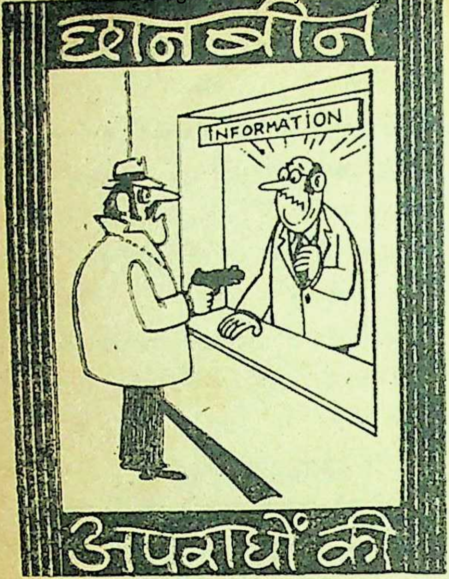

ए. आर. निजामुद्दीन

डि. **इंस्पेक्टर** जनरल-पुलिस, कर्नाटक

अपराधों की जांच में आजकल उन्नत वैज्ञानिक ज्ञान एवं टेक्नोलाजी का अनुभव एवं चतुराई का जबर्दस्त योगदान रहता है। विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों, जैसे भौतिकी, रसायनशास्त्र, जीवशास्त्र एवं यहां तक कि मनोविज्ञान के भी विशेषज्ञ अपराधों की जांच-पड़ताल में सक्रिय सहयोग देते हैं।

मूलत: विज्ञान का यह सारा सहयोग इस सचाई पर निर्भर है कि अपराधी तमाम सावधानी के बावजूद ऐसा कोई न कोई निशान छोड़ जाता है, जो अंतत: उसे पकड़वा देता है।

लोकार्ड के विनिमय-सिद्धांत के अनुसार, जब कोई दो वस्तुएं एक दूसरे के संपर्क में आती हैं, तब उनमें पदार्थ का एक से दूसरे में संक्रमण अवश्य ही होता है। इसलिए यह अति आवश्यक है कि जांच करने वाला अधिकारी अपराध-स्थल की बड़ी सूक्ष्मता से छानबीन करे और ऐसी चीजों की तलाश करे जो महज आंखों से नजर नहीं आतीं। इसलिए जांच करने वाला अधिकारी तथा संबंधित अन्य विशेषज्ञों के वहां पहुंचने तक अपराध-स्थल को हूबहू वैसा रहने देना आवश्यक है। इसके लिए जनता का सहयोग जरूरी है। आम तौर पर जांच करने वाले रेशा, कपड़ा, बाल, फर, खून, वीर्य, पेशाब, थूक, पसीना, आंसू, उलटी, टट्टी या दस्त, रंग, तेल, चिकनाई, धूल, मिट्टी, शीशा, धातु, धातु की कतरनें, संभावित विष, किसी भी प्रकार के कार्बनिक या अकार्बनिक कण, वनस्पतिक पदार्थ, कागज, उंगलियों के निशान एवं पांव के निशान आदि की तलाश करते हैं।

हत्या के एक मामले में अपराधी शिकार की छाती में छुरा घोंपने के बाद घर से निकल गया था। अपराध-स्थल के परीक्षण से कमरे के फर्श एवं दीवारों पर खून के धब्बे एवं मृतक की मुट्ठी में कुछ बाल पाये गये। मृतक के खून-सने कपड़े रासायनिक परीक्षण के लिए भेजे गये। जांच-पड़ताल के बाद संदिग्ध व्यक्ति को पुलिस ने ढूंढ़ निकाला। उसने अपराध से पूर्ण अनभिज्ञता प्रकट की। लेकिन उसके घर की बहुत सावधानी से तलाशी ली गयी तो एक पै

और कमीज मिली, जो हाल ही धोयी गयी लगती थीं। उस कमीज की आस्तीन पर खून-सा नजर आया। कपड़ों की रासायनिक परीक्षा की गयी तो पता चला कि यह खून और मृतक के कपड़ों पर का खून एक ही रक्त-ग्रुप का है। उस आदमी के बाल और मृतक की मुट्ठी में पाये गये बालों का जब बाकायदा मिलान किया गया, तो पता चला कि वे सभी बाल हत्यारे के थे।

इन दो प्रमाणों ने यह स्पष्टतः दिखा दिया कि संदिग्ध व्यक्ति ही हत्यारा है। मुकद्दमा चला, अपराध सिद्ध हुआ और अपराधी को मृत्युदंड दिया गया।

बाल शरीर के किस हिस्से के हैं, यह उन पर लगे अंजन, वैक्स, तेल तथा बाहरी पदार्थों के आधार पर बताया जा सकता है। यह बताना भी आसान है कि बाल स्वयं गिरे हैं या उन्हें खींचकर उखाड़ा गया है। प्राकृतिक रूप से या बीमारी के कारण गिरे बालों की जड़ में एक 'बल्ब'-सा होता है और वह बिलकुल साफ हालत में होता है, उस पर कुछ चिपका हुआ नहीं होता। जोर लगाकर खींचे गये बालों के 'बल्ब' पर उसके झिल्लीनुमा आवरण के अंश चिपके होते हैं; स्वयं 'बल्ब' भी खंडित अवस्था में हो सकता है। यदि मृतक के सिर पर चोट की गयी हो और जांच के सिलसिले में उसके बाल कट गये हों, तो उन बालों का परीक्षण बारीकी से करने से पता चल सकता है कि हथियार पैना था या भोंथरा।

विष से हुई मृत्यु में चाहे हत्या हो या आत्महत्या, मृतक की आंतों तथा उसकी कै एवं घटनास्थल पर पाये गये बचे-खुचे विष का विश्लेषण यह तय करने में सहायक होता है कि किस प्रकार का विष काम में लाया गया था। भारत में विष देना हत्या का बहुत पुराना तरीका रहा है।

मृतक के शरीर में विष पहुंचाने के कई चतुराई-भरे तरीके थे। यहां तक कि इसमें हीरे की अंगूठियां काम में लायी जाती थीं जिनकी पैनी नोक त्वचा को खरोंच सकती थी।

सन १९३३ में पाकुर हत्याकांड में यही तरीका इस्तेमाल किया गया था। इस मामले में पाकुर राज-परिवार के अमरेंद्र पांडे को उनके पांस-ने (बिना कमानी का पेंचदार चश्मा) के जरिये विष दिया गया। चश्मे से उनकी नाक के किनारे पर महीन-सी खरोंच लगी और उसके जरिये विष भीतर पहुंचा। पांडे इस वार को तो झेल गये; लेकिन कुछ दिनों बाद हावड़ा रेल्वे स्टेशन की भीड़ में इंजेक्शन की सिरिंज के जरिये उनकी दायीं बांह में प्लेग के कीटाणु पहुंचा दिये गये और नौ दिन बाद वे प्लेग से मर गये।

किसी पशु को सांप से डसाया जाये और विष उसके रक्त में मिल जाये, फिर उसका ताजा मांस आदमी को खिला दिया जाये तो परिणाम घातक हो सकता है। एक मामले में एक बालक अपनी मां का दूध पीने के दो घंटे के अंदर मर गया—मां को विषैले सांप ने डस लिया था।

बहुधा विष से हुई मृत्यु की जांच काफी कष्टसाध्य होती है; क्योंकि कई बीमारियों के लक्षणों और विष-प्रभाव में काफी समानता होती है। लेकिन सावधानीपूर्वक रासायनिक विश्लेषण द्वारा तय किया जा सकता है कि मृत्यु किस समूह के विष से हुई है। मृतक के शरीर का बाह्य निरीक्षण भी सहायक होता है। उस पर अगर कहीं कै चिपकी हुई हो या विष के ही अवशेष बाकी हों, तो उससे विष का निर्धारण हो सकता है। मृत्यु या हत्या विष से हुई है, इसकी पुष्टि के लिए आंत और उसमें मौजूद वस्तुओं की परीक्षा आवश्यक है। पेट में प्राप्त चीजों और उसकी श्लेष्मा झिल्ली का परीक्षण आंखों और आवर्धन लेन्स से उनका रंग और उन पर हुई प्रतिक्रिया जानने के लिए किया जाता है। यदि वहां घुलने से बचे जहर के कण अथवा किसी जहरीली वनस्पति के पत्ते या जड़ जैसे बाहरी तत्त्व मिल जायें तो माइक्रोस्कोप से उनका परीक्षण किया जाता है।

संदिग्ध व्यक्ति के जूतों की एड़ी में लगी मिट्टी के खनिज-विश्लेषण द्वारा यह जाना जा सकता है, वह अपराध-स्थल पर था या नहीं। अपराधी के कपड़ों पर के खनिज या ईंट के टुकड़ों, गारा, प्लास्टर एवं वस्त्र के टुकड़ों के परीक्षण से भी घटनास्थल पर उसकी उपस्थिति का निर्णय किया जा सकता है। अनेक बार स्पेक्टोग्राफ या स्पेक्टोमीटर जैसे यंत्र अपराधी को पकड़ने में सहायक होते हैं।

हत्या, चोरी अथवा बलात्कार के मामले में पाये गये धागों का विश्लेषण मामले को हल करने में काफी सहायक होता है। शिकार के कपड़ों के धागे अपराधी के कपड़ों पर पाये जा सकते हैं अथवा हत्यारे के कपड़ों के धागे मृतक के नाखून में मिल सकते हैं। अगर चोर किसी तंग स्थान में से भीतर घुसने की कोशिश करे तो संभव है, उसके कपड़ों के धागे या रेशे वहां किसी चीज में फंस जायें। ये धागे व रेशे सावधानी से निकालकर प्रयोगशाला में निरीक्षण के लिए भेजे जाते हैं।

एक बार कई सारे कीमती कालीन चुराये गये और उन्हें बंद गाड़ी में वहां से ले जाया गया। जिस गोदाम में कालीन रखे गये थे, वहां के फर्श पर पड़े हुए रेशों को इकट्ठा करके संदिग्ध बंदगाड़ी के फर्श पर पाये गये धागों से मिलान किया गया, तो दोनों एक-से थे। वे कालीन तो नहीं मिले, लेकिन अपराधियों को सजा जरूर भुगतनी पड़ी।

एक और मामला। एक चोर ने एक गिरजे में चोरी की। उसके कुछ ही देर बाद वह पकड़ा गया। पकड़वाया उसके कपड़ों पर चिपके हुए मोम ने। अवरक्त किरण अवशोषक किरण-मापी ने यह साबित कर दिया कि वह मोम घर में जलने वाली मोमबत्ती का नहीं, बल्कि गिरजे में जलायी जाने वाली मोमबत्ती का था।

इसी तरह एक आदमी ने एक लड़की के चेहरे पर लात जमायी। उसके बूट के पंजे

पर सफेद फेस-पाउडर लगा हुआ मिला, जिसके एक्स-रे द्वारा उसके कणों की क्रिस्टलीय संरचना का अध्ययन करने से पता चला कि उसमें लड़कियों द्वारा मेक-अप में चेहरे के सूक्ष्म छिद्रों को भरने के लिए उपयोग किया जाने वाला रसायन भी मौजूद है।

सड़क-दुर्घटनाओं में टक्कर मारकर भाग जाने वाले कार, ट्रक या बस के ड्राइवरों को तलाशने में पुलिस को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। हमारे देश में जहां कि प्रत्यक्षदर्शी गवाह भी पुलिस को कोई सूचना देने से कतराते हैं, यह काफी कठिन कार्य है। ऐसी स्थिति में मोटर के टूटे विंडस्क्रीन या हेडलाइट्स के कांच के टुकड़े काफी उपयोगी सूत्र साबित होते हैं। उन टुकड़ों को कई तरह से परखा जाता है—उनका रंग, मोटाई, यहां तक कि अल्ट्रावायलेट रोशनी के नीचे उनका अपवर्तनांक और विशिष्ट गुरुत्व आदि भी देखे जाते हैं।

इन सब परीक्षणों के बाद विशेषज्ञ यह कह सकते हैं कि दुर्घटनास्थल पर पाये गये खास शीशे के टुकड़े किसी खास मोटर-गाड़ी के हैं। कांच के टूटे टुकड़ों की बनावट से यह पता लगाना संभव है कि वह किस ढंग से दूसरी चीज से टकराया। टकराने वाली वस्तु गाड़ी भी हो सकती है और जीवित प्राणी भी। यदि कांच के काफी बड़े टुकड़े मिलें तो उन टुकड़ों को इकट्ठा करके उन्हें जोड़कर उनका सही आकार बनाकर उसे संदिग्ध गाड़ी में लगाकर देखा जा सकता है।

राहगीर और मोटर में होने वाली टक्कर में राहगीर के शरीर पर पाया जाने वाला रंग काफी सहायक सिद्ध होता है। यह रंग टक्कर के समय उसके शरीर पर आ चिपकता है। संदिग्ध गाड़ी में से थोड़ा रंग खुरचकर राहगीर के शरीर पर पाये गये रंग से उसका मिलान किया जाता है। दोनों मिल जायें तो यह एक पक्का सबूत बन जाता है।

हमारे देश में पानी में डूबकर मरने के मामले अक्सर सामने आते रहते हैं। ऊतकों की जांच के बाद यह बताया जा सकता है कि मृतक सचमुच डूबकर मरा है या उसे मारकर नदी या कुएं में फेंक दिया गया था। यदि वह डूबकर मरा हो तो उसके ऊतकों में अतिसूक्ष्म एककोशीय शैवाल (डायटम) पाये जाते हैं, जबकि मारकर पानी में फेंके गये आदमी की लाश में ये नहीं मिलते। ये अतिसूक्ष्म शैवाल, जिनकी संरचना बड़ी सुंदर होती है, डूबते समय मनुष्य की सांस के जरिये अंदर पहुंचते हैं।

बलात्कार के मामले में शिकार के शरीर पर पाये गये वीर्य के धब्बे, खून के धब्बे एवं अपराधी के शरीर से संक्रांत अन्य वस्तुएं, शरीर पर चोट, खरोंच, दांतकाटे के निशान, इसी तरह अपराधी के शरीर पर जो जनाना बाल चिपक गये हों, वे महत्त्वपूर्ण सूत्र हैं और प्रमाण के लिए उनका सफल परीक्षण किया जा सकता है।

आजकल अदालती विज्ञानी द्वारा काम में लाये जाने वाला सर्वाधिक सूक्ष्म और

विश्वसनीय तरीका है नाभिकीय सक्रियकरण विश्लेषण। इसमें चंद माइक्रोग्राम नमूने का भी विश्लेषण किया जा सकता है एवं उसमें ट्रेसर तत्त्व की अतिसूक्ष्म मात्राओं की उपस्थिति का पता लगाया जा सकता है कि नमूना नष्ट न हो। गोली चलाने का अवशेष, बाल, सिक्के, शीशा, ग्रीज़, लकड़ी, दवाएं, प्लास्टिक, तेल, स्याही, ह्विस्की, रंग, कीटाणुनाशकों के अवशेष का विश्लेषण अपराध-निर्णय के लिए किया जा सकता है। नाभिकीय सक्रियकरण विश्लेषण विष के मामलों में काम में लाया जाता है।

इस प्रकार अदालती विज्ञान आवश्यक प्रमाण पेश करता है, कमजोर प्रमाणों को मजबूत करता है, संदिग्ध व्यक्ति या गवाह के बयान की सचाई की जांच को संभव बनाता है।

भारत में सबसे पहले अदालती विज्ञान प्रयोगशाला पश्चिम बंगाल में सन १९५२ में बनी। केंद्रीय अदालती विज्ञान प्रयोगशाला १९५६ के नवंबर में कलकत्ता में स्थापित हुई। इसके बाद जल्द ही महाराष्ट्र, तमिलनाडु, पंजाब और बिहार ने भी अपनी अदालती विज्ञान प्रयोगशाला स्थापित की। कर्नाटक सरकार ने १९६८ में बेंगलूर में यह बनवायी।

अपराधों की जांच एवं कानून के क्रियान्वयन में अदालती विज्ञान का उपयोग बढ़ाने के लिए केंद्रीय अदालती विज्ञान सलाहकार समिति की स्थापना १९५९ में हुई और भारतीय अदालती विज्ञान अकादमी-इंडियन एकैडमी आफ फोरेन्सिक सायंस-की स्थापना १९६२ में हुई। कुछ विश्वविद्यालयों में तो अदालती विज्ञान की बाकायदा पढ़ाई भी होती है।

विज्ञान चाहे कितनी भी मदद दे, मगर अपराध के रहस्योद्घाटन में सबसे महत्वपूर्ण तत्त्व तो जांच-अधिकारी की सूझ, अनुभव और परिश्रम ही होगा।

[**'आकाशवाणी' से**]

*

अमरीकी अखबार 'शिकागो ट्रिब्यून' में छपे एक लेख के अनुसार, सी. आइ. ए. की कारगुजारियों की जांच कर रहे अमरीकी कांग्रेस-सदस्यों को जून में बताया गया कि फ्रांसीसी राष्ट्रपति दगोल की हत्या के एक षड्यंत्र से सी. आइ. ए. का भी संबंध था। कांग्रेस-सदस्यों को जो कुछ बताया गया है, उससे इतना तो स्पष्ट है कि जनरल की हत्या की एक योजना पर सी. आइ. ए. के लोगों में वार्तालाप हुआ था; पर योजना वार्तालाप के स्तर से आगे बढ़ी थी या नहीं इसका कोई संकेत नहीं मिलता। योजना यह थी कि दगोल द्वारा दी जाने वाली एक पार्टी में हत्यारा विषबुझी नुकीली अंगूठी पहनकर जाये और दगोल से हाथ मिलाये। दगोल को इस सूक्ष्म विषदंश का पता भी नहीं चल पायेगा। हत्यारा सहज भाव से चलता हुआ भीड़ में गायब हो जायेगा।

*

क्या बाल उड़ रहे हैं?

~ डा. मानवेंद्र सिंह

उम्र बढ़ने के साथ-साथ मनुष्य के बालों का सफेद हो जाना स्वाभाविक प्रक्रियाएं हैं। परंतु छोटी उम्र में ही यदि ऐसा हो जाये तो अवश्य ही वह रोग का लक्षण है। कहा जाता है कि गंजापन फिलासफर और धनवान होने की निशानी है; परंतु जो इन लक्षणों से पीड़ित हैं, उन्हें यह खयाल कोई तसल्ली नहीं देता।

केशों से संबंधित वे क्या कारण हैं जो युवावस्था में ही मनुष्य को बूढ़ा-सा बना देते हैं :

परंतु पहले बालों की संरचना के बारे में कुछ जान लें। हथेली, तलुवों आदि कुछ स्थानों को छोड़कर मनुष्य के सारे शरीर में बाल पाये जाते हैं। कुदरत ने इन्हें हर स्थान पर उपयुक्त मात्रा व आकार में प्रदान किया है–कहीं लंबे व घने, कहीं विरल व मृदु। स्त्रियों में लंबे केश खूबसूरती की निशानी मानी जाती है।

ठंडे प्रदेशों में रहने वाले प्राणियों के शरीर पर बहुत अधिक बाल होते हैं। इनसे शरीर को गरमाहट मिलती है। बिल्ली, कुत्तों इत्यादि की नाक के पास के बाल विशेष रूप से बहुत संवेदी होते हैं। मामूली से स्पर्श को वे पहचान लेते हैं।

प्रत्येक बाल का कुछ हिस्सा त्वचा में होता है। वह बाल की जड़ कहलाता है और जो भाग बाहर दिखाई देता है, उसे 'शैफ्ट' कहते हैं। बाल की जड़ में कुछ ग्रंथियां खुलती हैं, इन्हें तेलग्रंथि या वसाग्रंथि कहते हैं। इनमें बनने वाला रस बाल की जड़ में होकर त्वचा के ऊपर आ जाता है और बालों को प्राकृतिक चमक प्रदान करता है।

शैफ्ट का भीतरी भाग मेड्युला कहलाता है। महीन बालों में यह नहीं होता, इसके बाहर कोर्टेक्स की सतह होती है। यही बाल का मुख्य भाग है तथा इसी में ही रंग की वे कोषाएं होती हैं, जो बालों के सुनहरे, काले या सफेद होने के लिए उत्तरदायी हैं। बाल हमेशा जड़ से बाहर की ओर बढ़ते हैं, न कि बाहर से। बाल भी बूढ़े होते हैं। हमारे सिर के एक बाल की आयु लगभग ४ वर्ष होती है। इसके बाद वह झड़ जाता है। और उसका स्थान उभरता हुआ नया बाल ले लेता है। बाल एक सप्ताह में १·५ से २·२ मि. मी. तक बढ़ता है।

बालों के सफेद होने का मुख्य कारण है कोर्टेक्स एवं मेड्युला की कोषाओं में महीन हवा के बुलबुलों का इकट्ठा होना तथा रंगीन कोषाओं (मिलेनिन) का धीरे-धीरे

नष्ट होना।

नवजात शिशु करीब-करीब गंजा ही होता है; परंतु शीघ्र ही उसके बाल बढ़ना शुरू कर देते हैं। कुछ शिशुओं में गंजेपन का वंशानुगत रोग होता है, सो उनके बाल नहीं बढ़ते। ऐसे बच्चे जब तनिक बड़े हो जायें, उनके लिए नकली बालों के विग बनवा देना चाहिये, ताकि बच्चा बड़ा होने पर हीन-भावना का शिकार न हो जाये। कुपोषण से भी बच्चों के बालों की वृद्धि रुक जाती है।

युवावस्था में जल्दी तथा बहुत मात्रा में बाल झड़ने का मुख्य कारण है सिर में अत्यधिक रूसी का बनना। कंघा करते समय हर बार कुछ बाल जड़ से उखड़कर कंघे में आ जाते हैं। रूसी बनने पर वे इतनी तेजी से झड़ते जाते हैं कि रोगी गंजेपन की चिंता में पड़ जाता है। सारा सिर सफेद रंग के बारीक-से शल्यकों से भर जाता है। इस अवस्था को वैज्ञानिक भाषा में 'सिबोंहरिया' कहा जाता है।

इस रोग की तुरंत चिकित्सा हो जाये, तब तो बाल दुबारा उग आते हैं; परंतु यदि इस रोग का शीघ्र उपचार न हुआ, तो वह आस-पास की त्वचा को भी अपनी चपेट में ले लेता है। आंखों में खारिश तथा सूजन, चेहरे पर फुंसियां आदि होने लगती हैं और सिर में अत्यधिक खुजलाहट होती है।

आजकल तो इसके लिए बाजार में बहुत-सी दवाइयां तथा शैंपू मिलने लगे हैं, जिनका उपयुक्त ढंग से इस्तेमाल करने से रूसी जल्दी गायब हो जाती है और बाकी लक्षण भी धीरे-धीरे गायब होने लगते हैं। शैंपुओं में सेलसन, क्लीनिक इत्यादि बाजार में उपलब्ध हैं। इनसे सिर में आम साबुन की तरह झाग निकलता है। सिर पर शैंपू अच्छी तरह मलकर कुछ मिनिट के लिए यों ही छोड़ दें, ताकि उसका रासायनिक द्रव्य अच्छी तरह अपना काम कर सके, फिर ठंडे पानी से अच्छी तरह सिर धो लीजिये। शुरू में एक दिन छोड़कर तथा बाद में सप्ताह में दो दिन इससे सिर धोयें। इसके अतिरिक्त सैवलान लोशन, जो अपेक्षाकृत सस्ते दामों में मिलता है, काम दे सकता है।

कुछ अन्य व्याधियां भी बालों की वृद्धि में रुकावट उत्पन्न कर सकती हैं। टाइफाइड में ज्यादातर बाल झड़ जाते हैं और यह स्थायी अवस्था है, जहां से एक बार बाल झड़े हैं, वहां दुबारा नहीं उगेंगे। प्रसूति के उपरांत स्त्रियों के कुछ बाल झड़ने लगते हैं लेकिन यह स्थिति स्वयं ही ठीक हो जाती है। कहा जाता है कि चिंता कई बीमारियों की जड़ है। मानिये या न मानिये, गंजापन भी चिंता करने से हो सकता है। मुश्किल यह है कि आज के युग में चाहकर भी चिंता से बचा नहीं जा सकता।

करीब ३०-३५ वर्ष की आयु में कुछ लोगों को गंजेपन का एक रोग हो जाता है। इसमें बाल यहां-वहां गुच्छे के रूप में उतरने लगते हैं। यदि फौरन ध्यान नहीं दिया गया तो सिर पर कहीं-कहीं सर्वथा छोटे-छोटे मैदान उभर आते हैं। धीरे-धीरे बड़े होकर नजदीकी धब्बों से जुड़ने लगते हैं। वैसे हैं

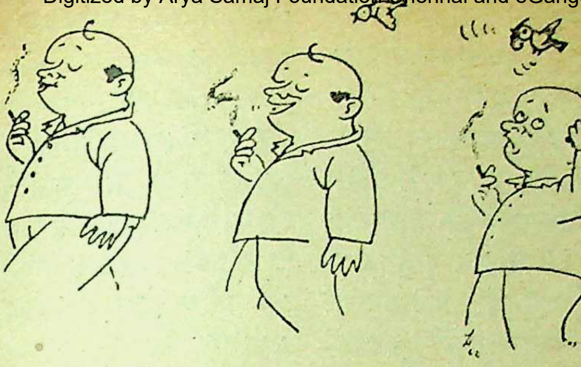

लैंस से ध्यानपूर्वक देखने पर इन धब्बों पर छोटे-छोटे बाल देखे जा सकते हैं। आकार में ये बाल आश्चर्यबोधक चिह्न (!) की तरह होते हैं—ऊपर ठूंठ की तरह मोटे और जड़ की तरफ क्रमश: पतले। इस रोग को 'एलोपेसिया एरिटा' कहते हैं। यह बिना किसी दवा के स्वयं ही ठीक हो जाता है और खाली स्थानों पर फिर पहले की तरह बाल लहलहाने लगते हैं। अलबत्ता, बालों का तेजी से ह्रास मरीज के लिए चिंता का विषय बन जाता है।

लेकिन इसी की तरह एक और अवस्था भी देखी जाती है। उसमें बालों के झड़ने का क्रम करीब-करीब ऊपर जैसा ही होता है; परंतु झड़ने का सिलसिला रुकता नहीं। धीरे-धीरे सिर के सारे बाल झड़ जाते हैं हमेशा के लिए। यही नहीं, भौंहों व पलकों के बाल भी इसकी चपेट में आ जाते हैं। लेकिन यह रोग जिसे एलोपेसिया युनिवर्सेलिस कहते हैं, बहुत कम देखा गया है।

बालों की चर्चा में जो बात सहसा ध्यान में आती है, वह है—बालों के लिए तेलों का उपयोग। नित्य हम पत्र-पत्रिकाओं में कई प्रकार के तेलों के विज्ञापन देखते हैं। असल में स्वस्थ बालों को किसी तेल की आवश्यकता नहीं होती। प्रत्येक बाल की जड़ में प्रकृति ने वसाग्रंथि बना दी है, जो बालों को पोषण देती है और उनकी चिकनाहट को बरकरार रखती है।

सुगंधित तेल एक प्रकार से बालों को हानि ही पहुंचाते हैं। उन तेलों में उपस्थित रासायनिक पदार्थों से बाल जल्दी सफेद हो सकते हैं। यही नहीं, उनसे एलर्जी भी हो सकती है।

बस इतनी बात का ध्यान रखें कि बालों की सफाई नियमित रूप से अच्छी तरह करें, अन्यथा पसीना एवं अन्य मैल जमा होकर विभिन्न परजीवियों को निमंत्रण दे सकते हैं, जो आपको तंग करेंगे।

—९, गिल कालोनी, सहारनपुर, उ. प्र.

★

[पृष्ठ ४३ का शेष]

'तारीखल् हिंद' में उसने वायुपुराण, आदित्यपुराण, मत्स्यपुराण एव विष्णुधर्मपुराण से अनेक प्रमाण और उद्धरण दिये हैं।

इनके अतिरिक्त उसने गणित एवं फलित ज्योतिष, तिथिक्रम और भूगोल के संबंध में संभवत: निम्नलिखित ग्रंथों का अनुशीलन किया था—ब्रह्मगुप्त लिखित पुलिशसिद्धांत (पौलस्त्यसिद्धांत), ब्रह्मसिद्धांत, खंडखाद्यक, उत्तरखंडखाद्यक, खंडखाद्यक की बलभद्र कृत टीका, वराहमिहिर की बृहत्संहिता, पंचसिद्धांतिका, बृहज्जातक, लघुजातक, बृहत्संहिता की एक टीका, वित्तेश्वर का करणसार, विजयानंदी का करणतिलक और मुल्तान-वासी दुर्लभ की लिखी कोई पुस्तक। यों तो उसने अपनी पुस्तक में रामायण और महाभारत के भी अतवरण दिये हैं, किंतु अवतरणों के देने के ढंग से ऐसा नहीं प्रतीत होता कि ये ग्रंथ मूलरूप में उसके पास थे।

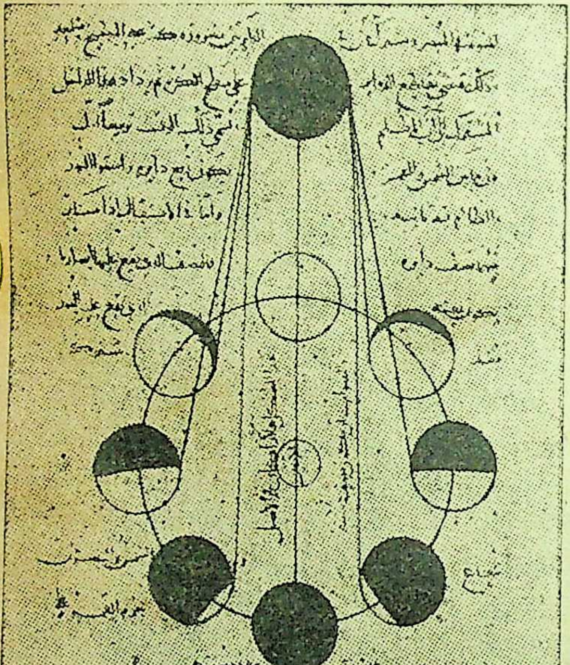

ब्रिटिश म्यूजियम में रखी अलबेरूनी की ज्योतिष संबंधी एक पुस्तक का पन्ना। [युनेस्को 'कूरियर' से साभार]

इन सब आधारभूत ग्रंथों के प्रत्यक्ष अध्ययन के कारण उसका प्रस्तुत किया हुआ हिंदू दर्शन का विवरण उस जमाने की दृष्टि से अद्वितीय था। ज्योतिष की हिंदू पद्धति का जो परिचय उसने दिया, वह पिछले सब वर्णनों में बहुत अधिक शुद्ध और पूर्ण था।

अलबेरूनी तेरह वर्ष तक भारत में निर्वासित रहा। संभवत: यह काल उसने मुल्तान और पेशावर में बिताया, जहां उसने संस्कृत के अधिक से अधिक ग्रंथ जुटाने, विद्वानों से यथाशक्ति संपर्क स्थापित करने तथा ऐसे व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करने का यत्न किया, जो संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाएं जानते थे। उसने स्वयं लिखा है

'इस विषय में मुझे भारी अनुराग है। इस दृष्टि से मैं अपने

समय का अकेला व्यक्ति हूं। जिन-जिन स्थानों से संस्कृत पुस्तकें मिलने की संभावना हो वहां से उन्हें इकट्ठा करने, उन पुस्तकों का अर्थ समझने और मुझे समझा सकने में समर्थ विद्वानों से—चाहे वे कितने भी दूर रहते हों—सहायता प्राप्त करने के लिए धन व्यय करने में, और किसी भी प्रकार का कोई कष्ट सहन करने में मैं कोई कसर बाकी नहीं रखता हूं। फिर भी इस विषय को पूरी तरह समझ पाना मुझे बहुत कठिन प्रतीत होता है।'

जिन भारतीय पंडितों से उसे सहायता मिली, उनमें श्रीपाल और जीवशर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं। जीवशर्मा ने उसे कश्मीर और स्वात में मनाये जाने वाले त्योहारों के संबंध में जानकारी दी थी।

स्वदेश से निर्वासित होकर भारत आये हुए अलबेरूनी ने जब विभिन्न भारतीय राज्यों को महमूद गजनवी के हमलों का शिकार होते देखा, तो उसकी सहानुभूति स्वाभाविक रूप से भारतीयों के साथ हो गयी। भारतीय ज्योतिष से वह पहले ही प्रभावित था; भारतीय दर्शन और तत्त्वज्ञान उसे मुग्ध कर चुके थे। उस समय तक भारत के बारे में अरबी में कोई उत्तम पुस्तक नहीं थी। जो दो-एक पुस्तकें थीं, वे संकीर्ण सांप्रदायिक दृष्टि से लिखी गयी थीं, जिनका उद्देश्य इस्लाम की प्रशंसा, हिंदू धर्म की निंदा और वितंडा मात्र था। अतः उसने अपने गुरु अबू सहल के आदेश से भारत के धर्म-दर्शन, सभ्यता, ज्ञान-विज्ञान तथा आचार-विचार पर निष्पक्षभाव से एक पुस्तक लिखने का निश्चय किया।

तेरह वर्ष तक वह इसके सामग्री-चयन और लेखन में लगा रहा। अंत में उसने महमूद गजनवी की मृत्यु के डेढ़ वर्ष बाद २९ दिसंबर १०३१ ई. को अपनी अमर कृति 'हिंदुओं के सब प्रकार के उपादेय तथा हेय विचारों का यथार्थ वर्णन' लिखकर पूरा किया। यह 'तारीखल् हिंद' (भारत का इतिहास) भी कहलाता है और उसकी सबसे प्रसिद्ध रचना है।

'तारीखल् हिंद' अलबेरूनी की सत्यनिष्ठा, वैज्ञानिक दृष्टि, उदार एवं सहिष्णु मनोवृत्ति का प्रबल परिचायक है। ग्रंथ के आरंभ में ही लेखक ने कुरान शरीफ की इस आयत का उल्लेख किया है—'सत्य बोलो, चाहे वह तुम्हारे अपने ही विरुद्ध क्यों न हो।' साथ ही उसने ईसा मसीह की यह उक्ति भी उद्धृत की है—'सम्राटों के संमुख सत्य बोलने में उनके क्रोध से मत डरो।' सारी पुस्तक में तथ्यों का उपयोग, विवेचन और प्रतिपादन गहरी सत्यनिष्ठा एवं वैज्ञानिक मनोवृत्ति के साथ किया गया है।

इस्लाम की दृष्टि में हिंदू काफिर और मूर्ति-पूजक थे; उनके धर्म का विवरण देना मुसलमान लेखक के लिए प्राणघातक हो सकता था। किंतु अलबेरूनी ने हिंदुओं के विचारों, आस्थाओं और मुसलमानों की दृष्टि में अत्यंत गर्हित मूर्तिपूजा-पद्धति तक का विस्तार से वर्णन किया है। वह मानता है कि अत्यंत श्रद्धास्पद व्यक्तियों, अवतारों,

TÜRKIYE CUMHURIYETI
POSTA
250
KIBRIS
ПОЧТА СССР 1973

अलबेरूनी की जन्म-सहस्राब्दी के उपलक्ष्य में सन १९७३ में तुर्की (बायें) और रूस द्वारा प्रकाशित डाक-टिकट। इस अवसर पर ईरान, अफ़गानिस्तान, लीबिया, सीरिया और पाकिस्तान ने भी विशेष डाक-टिकट छापे। केवल भारत इस रूप में श्रद्धांजलि देने से चूक गया।

ऋषि-मुनियों की अनुपस्थिति में या उनके देहावसान के बाद उनकी स्मृति को स्थायी बनाये रखने की भावना ही मूर्तिपूजा का मूल है, और वह अशिक्षा का परिणाम है। सब धर्मों में इसके प्रसार के उदाहरण देता हुआ वह मुसलमानों में भी इस बुराई की मौजूदगी को इन शब्दों में साहसपूर्वक स्वीकार करता है—'यदि आप मुहम्मद साहब, मक्के और काबे का चित्र बनाकर किसी अशिक्षित स्त्री या पुरुष को दिखायें, तो वह उसे देखकर इतना प्रसन्न होगा कि उसे चूमने लग जायेगा।' हिंदुओं के गोमांस-भक्षण के निषेध का समर्थन उसने आर्थिक युक्तियों के आधार पर किया है।

वह दूसरे विद्वानों से भी ऐसी ही वैज्ञानिक सत्यनिष्ठा की अपेक्षा करता है। इस दृष्टि से उसने भारतीय ज्योतिषी ब्रह्मगुप्त की जो आलोचना की है, वह यहां उल्लेखनीय है। सूर्य और चंद्र के ग्रहण के विषय में पुराने भारतीय ज्योतिषी वराहमिहिर, आर्यभट और विष्णुचंद्र यह मानते थे कि ये चंद्रमा और पृथ्वी की छाया के कारण होते हैं; जबकि प्रचलित पौराणिक मान्यता के अनुसार राहु का सूर्य और चंद्रमा को ग्रसना ग्रहण का कारण है।

ज्योतिषी ब्रह्मगुप्त पहले कारण को ही सही मानता था। परंतु उसमें पौराणिक मान्यता का विरोध करने का नैतिक साहस नहीं था और उसने अपने ब्रह्मसिद्धांत के प्रथम अध्याय में राहु के सिर को ग्रहण का मूल कारण स्वीकार करते हुए उसकी पुष्टि में वेद, मनुस्मृति और गर्ग संहिता के प्रमाण दिये हैं। अलबेरूनी ब्रह्मगुप्त की इस बौद्धिक बेईमानी की भर्त्सना करता है और कहता है कि अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध यह पाप ब्रह्मगुप्त ने शायद सुकरात के विषपान जैसी भीषण विपत्ति की आशंका से भयभीत होकर किया होगा।

भारतीय सभ्यता का वर्णन अलबेरूनी रेखागणित के प्रमेयों के ढर्रे पर वैज्ञानिक पद्धति से करता है। प्रत्येक अध्याय के आरंभ में प्रतिपाद्य विषय का संक्षिप्त परि-

चय देन के बाद वह उसके संबंध में गीता, सांख्यदर्शन, बृहत्संहिता आदि भारतीय ग्रंथों के विस्तृत उद्धरण देता है और अंत में उपसंहार में उस विषय का मूल्यांकन करता है। विषय-प्रतिपादन में उसकी अपूर्व विद्वत्ता ही नहीं, विनम्रता भी हमारा ध्यान खींचती है। जिस विषय को अलबेरूनी नहीं जानता, उसके बारे में अपनी अज्ञानता स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करता है, पाठकों से उसके लिए क्षमा मांगता है और ५८ वर्ष का हो जाने पर भी वचन देता है कि इस विषय में अनुसंधान जारी रखूंगा और उसके परिणाम पाठकों के लिए प्रकाशित करूंगा। किसी विषय का अल्प ज्ञान होने पर भी वह जितना ज्ञात है, उतना पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने से झिझकता नहीं। संस्कृत छंदों के विषय में उसका ज्ञान बहुत सीमित था, फिर भी उसने उसे अत्यंत संक्षेप में पाठकों के लिए पेश किया।

अलबेरूनी की सबसे बड़ी विशेषता है भारतीय सिद्धांतों का तुलनात्मक विवेचन। अंग्रेज कवि-लेखक किप्लिंग कहा करता था कि जो केवल इंग्लैंड को जानते हैं, वे इंग्लैंड को बिलकुल नहीं जानते; इंग्लैंड का यथार्थ ज्ञान अन्य देशों के इतिहास के साथ उसकी तुलना करने से ही हो सकता है। यही बात अलबेरूनी भारत के बारे में मानता था। अतः जहां वह भारतीय विचारों का वर्णन करता है, वहीं उनके स्वरूप को अधिक स्पष्टता से समझाने के लिए उनकी तुलना यूनानियों, यहूदियों, ईसाइयों, अग्नि-पूजक जरथुस्त्रियों, मानी मत के अनुयायियों तथा सूफियों के विचारों के साथ करता है।

उदाहरणार्थ, प्रतिमा-पूजन के प्रसंग में वह केवल हिंदुओं के मूर्ति-पूजन का नहीं, अपितु इबरानियों, ईसाइयों तथा यूनानियों के प्रतिमा-पूजा-विषयक विचार भी पेश करता है। इसी तरह आत्मा, मोक्ष तथा देवताओं के संबंध में वह भारतीय मान्यताओं के साथ जालीनूस, प्लेटो और मानी मतानुयायियों के विचारों का भी उल्लेख करता है।

अलबेरूनी का 'तारीखल् हिंद' मध्यकालीन भारतीय संस्कृति और साहित्य का संक्षिप्त विश्वकोश है। उसके ८० अध्यायों में हिंदुओं से संबंध रखने वाले निम्नलिखित प्रमुख विषयों का समावेश हुआ है :

ईश्वर-विषयक विश्वास, आत्मा और कर्म का स्वरूप, पुनर्जन्म, स्वर्ग-नरक, मोक्ष, सृष्टि की विभिन्न जातियों का वर्णन, मूर्ति-पूजन का प्रारंभ, विभिन्न प्रकार की प्रतिमाओं का वर्णन, वेद, पुराण, व्याकरण, छंद, फलित ज्योतिष, गणितशास्त्र, भारतीय भूगोल, ग्रह-नक्षत्र, राशिचक्र, ब्रह्मांड, सात द्वीपों का स्वरूप, भारत की नदियां, ज्योतिष-संबंधी विषय, सूर्य-चंद्र-ग्रहण, मुहूर्त, यज्ञ, दान, विवाह, दंड, प्रायश्चित्त, दाय-संबंधी नियम, उपवास, त्योहार, करण, चतुर्युग। पुस्तक के अंत में मूल ग्रंथों के आधार पर भारतीय फलित ज्योतिष पर प्रकाश डाला गया है।

मुसलमानों को हिंदू संस्कृति का परिचय

देने के लिए यह पुस्तक लिखने और संस्कृत ग्रंथों का अरबी में अनुवाद करने के अलावा अलबेरूनी ने हिंदुओं को यूनानियों तथा अरबों के उत्कृष्ट शास्त्रीय वाङमय का परिचय देने के लिए निम्नलिखित अरबी ग्रंथों का संस्कृत में अनुवाद या प्रणयन किया :

१. यूक्लिड की रेखागणित-विषयक प्रसिद्ध पुस्तक;
२. सिकंदरिया के यूनानी ज्योतिषी टालमी या बतलीमूस (१२७-१५१ ई.) का ज्योतिष ग्रंथ 'अलमजस्त';
३. नक्षत्रों की स्थिति मापने वाले 'अस्तरलाब' नामक यंत्र के निर्माण की विधि का वर्णन।

ये संस्कृत पुस्तकें उसने भारतीय परंपरा के अनुसार पद्य में लिखी थीं। इसके लिए उसने श्लोक रचने का अभ्यास किया था। संस्कृत छंदों का वर्णन करते हुए उसने 'तारीखल् हिंद' में लिखा है—'हिंदुओं की पुस्तकें प्रायः श्लोकों में निबद्ध हैं। मैं भी आजकल श्लोक बनाने का अभ्यास कर रहा हूं; क्योंकि मैं हिंदुओं के लिए यूक्लिड और अलमजस्त का भाषांतर तैयार करने तथा अस्तरलाब के निर्माण पर एक निबंध तैयार करने में लगा हुआ हूं।' दुर्भाग्य से ये अनुवाद अब उपलब्ध नहीं हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि महमूद गजनवी के शासन-काल में अलबेरूनी को कोई राज-संमान नहीं मिला और उसे तेरह लंबे वर्ष भारत में निर्वासित व्यक्ति के रूप में व्यतीत करने पड़े। किंतु महमूद की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी मसऊद के समय रा नीतिक परिस्थितियां बदलीं और अलबेरू के अच्छे दिन आये। मसऊद पियक्कड़ और महमूद ने अपनी सैनिक प्रतिभा तेंतीस वर्ष में जो विशाल साम्राज्य तैया किया था, उसे उसने दस ही वर्ष में चौप कर दिया; परंतु वह उदार था और विद्वा का संरक्षक था। अलबेरूनी पर उस विशेष कृपा थी। अलबेरूनी ने अपनी ए ज्योतिष-संबंधी पुस्तक का शीर्षक उसी नाम पर 'कानून अल् मसऊदी' रखा। पुस्तक उसने सुलतान मसऊद को समर्पि की है और भूमिका में सुलतान की प्रशं के पुल बांधे हैं।

अलबेरूनी का सारा समय ज्ञान के अ शीलन और ग्रंथ-प्रणयन में ही बीतता था एक मुस्लिम लेखक शहरज़ूरी के शब्दों वह 'सदा विद्या और विज्ञान की प्राप्ति मग्न रहता था, पुस्तकें लिखने में झुका र था। लेखनी कभी उसके हाथ से अलग होती थी। उसकी आंख सदा नयी बा खोजती रहती थी, मन कभी चिंतन से मु नहीं होता था। साल-भर में वह केवल दिन छुट्टी रखता था—एक तो नौरोज (न वर्ष) के दिन और दूसरा, मिहरजान दिन। इन दिनों में वह अपने खान-पान आ की सामग्री जुटाता था।'

वह शायद अपने समय का सबसे ब लिक्खाड़ था। उसने १४६ पुस्तकें लि थीं, जिनमें से अब केवल २२ उपलब्ध है उसके समकालीन अरबी इतिहास-लेख

बेहकी ने लिखा है—'मैंने बेरूनी की पुस्तकों में से बहुत-सी उसके हाथ की लिखी देखी हैं। उसकी पुस्तकें एक ऊंट के बोझ से अधिक हैं। इस प्रशंसनीय कार्य के लिए भगवान ने उसे सामर्थ्य प्रदान किया है।'

अलबेरूनी ने कई वैज्ञानिक खोजें भी की थीं। अठारह मणियों और बहुमूल्य धातुओं की आपेक्षिक गुरुता का पता लगाने का श्रेय उसे दिया जाता है। भूगोल के क्षेत्र में उसकी सबसे बड़ी खोज थी—सिंधु घाटी में पुराने जमाने में भी समुद्र की अवस्थिति को बताना। उसने पातालतोड़ (आर्टीजियन) कुओं से स्वयं पानी के निकलने के कारण का पता लगाया था।

निःसंदेह अलबेरूनी अपने समय का एक सर्वतोमुखी प्रतिभा वाला महान विद्वान था। यूनान से लेकर भारत तक की विचार-धाराओं का अद्‌भुत संगम और अपूर्व समन्वय उसमें हुआ था। वैज्ञानिक अन्वेषण और आलोचनात्मक मूल्यांकन की 'आधुनिक' वृत्ति उसमें पूर्ण रूप में थी। इसीलिए विज्ञान के सुप्रसिद्ध इतिहासकार जार्ज सार्टन ने ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध को 'अलबेरूनी का युग' नाम दिया है और लिखा है—'वह इस्लाम का एक महान वैज्ञानिक है और यदि तमाम बातों पर विचार किया जाये तो उसकी गणना अब तक सब देशों और कालों में हुए महानतम वैज्ञानिकों में की जा सकती है।'

—V/१३५८, पंतनगर (नैनीताल), उ.प्र.

★

लेखकीय

किसी भी सफल पेशेवर लेखक के लिए जबर्दस्त आत्मानुशासन आवश्यक है। उसे जमकर और अच्छे से अच्छा लिखने के लिए अपने को विवश करना पड़ता है। यह काम दूसरा कोई नहीं कर सकता—न उसका प्रकाशक कर सकता है, न उसकी पत्नी कर सकती है। रोज-रोज उसे जाकर मेज के सामने बैठना पड़ता है और कोरे कागज की निहायत सर्द चुनौती स्वीकार करनी पड़ती है। इतना सब करने के बाद जब उसकी पुस्तक छपती है, या उसका नाटक मंच पर खेला जाता है, तो उसे वाहवाही या सड़े टमाटरों का सामना करने के लिए हाट में नंगा खड़ा होना पड़ता है। यकीन मानिये—इसके लिए आत्मानुशासन चाहिये।

—जे. बी. प्रीस्टली

ooo

जब आदमी बहुत सारा—क्या कहूं—कूड़ा-कबाड़ लिख चुकता है, तब कहीं वह ढंग से लिखना सीख पाता है—सो भी किस्मत साथ दे तो।

—किंग्स्ले एमिस

★

अंग्रेजी कहानी :

वसीयतनामा

चार्ल्स लीवर

मैं आजकल मैथ और किंग नामक तहसीलों के बीच में स्थित एक छोटे-से मकान में रहता हूं। हर पांच या दस वर्ष बाद हमारे प्रदेश का मुआइना होता रहता है, लेकिन अधिकारी कभी इस बात का निर्णय नहीं कर सके कि धरती का यह टुकड़ा, जिस पर हमारा मकान खड़ा है, किस तहसील में पड़ता है। बहुतों का खयाल है मेरे पिता ने जान-बूझकर यह स्थान चुना है, क्योंकि 'विवादास्पद' क्षेत्र में होने का लाभ उठाकर वह दोनों तहसीलों के करों आदि से जान छुड़ाना चाहता था। यह बात इस सीमा तक ठीक है कि जब तहसील समिति के चुनाव का अवसर आता है, तो वह दोनों प्रदेशों में वोट डालने के अधिकार का उपयोग करता है। सो यह सच है कि मेरा पिता स्वाभाविक रूप में चतुर था और जिस ढंग से उसने जमीन का यह टुकड़ा प्राप्त किया, वह भी उसकी आश्चर्यजनक बुद्धिमत्ता और चतुराई को प्रकट करता है।

हमारे प्रदेश में रईस तो कोई भी नहीं, पर एक खाता-पिता जमींदार परिवार मौजूद था। जमींदार हेनरी मकेब वृद्ध और गंभीर स्वभाव का आदमी था; लेकिन उसके बेटे पीटर और मेट सख्त झगड़ालू और कटु स्वभाव के थे। दोनों में प्राय: पिता की जायदाद के बारे में ठन जाती। बेचारा पिता समझा-समझाकर थक गया कि मैं तुम दोनों के बीच जमीन का बराबर बंटवारा करूंगा; लेकिन बेटों की लड़ाई जारी रही।

अंत में एक दिन मेट तंग आकर घर से भाग निकला और कुछ सप्ताहों बाद एक बंदरगाह से उसका पत्र प्राप्त हुआ कि वह भारत जाने वाले एक जहाज पर सवार हो गया है। बूढ़े हेनरी को इस समाचार से इतना आघात पहुंचा कि उसने बिस्तर पकड़ लिया और मौत ही ने उसे पुत्र-वियोग के दु:ख से मुक्ति दी। मगर जितने दिन वह बीमार रहा, पीटर लगभग हर रोज उसे वसीयतनामा लिखवाने को कहता रहा। ताकि 'बदमाश और दुष्ट' मेट को कुछ न मिले। लेकिन जमींदार इसके लिए बिलकुल तैयार न था कि सारी संपत्ति एक बेटा हथिया ले और दूसरा खाली हाथ रह जाये।

अनुवाद : सुरजीत

पड़ोसी इस मामले में भलीभांति परिचित थे। प्राय: रात गये तक बूढ़ा और पीटर आपस में बहस करते रहते। लेकिन एक रात–और वह रविवार की रात थी–उसके घर में निस्तब्धता छायी रही, तो पड़ोसी समझ गये कि बूढ़ा या तो चल बसा है या उसकी दशा शोचनीय है।

लगभग आधी रात के समय हमारे पुराने घर के दरवाजे पर दस्तक हुई। सबसे पहले मैंने उसे सुना, क्योंकि मैं आग के पास सोया हुआ था। लेकिन भय के मारे उठने की हिम्मत नहीं हुई। दस्तक देने वाले ने कुछ देर प्रतीक्षा की। फिर दरवाजा पीटते हुए मेरे पिता को पुकारा–'कोइन ट्रेगन, तनिक दरवाजा तो खोलो।'

आवाज से मैं जान गया कि बाहर पीटर मकेब खड़ा है; लेकिन निश्चल लेटा रहा। अंत में मेरा पिता उठा और दरवाजे की चटकनी खोलकर बाहर निकल गया। रात की नीरवता में उसकी आवाज गूंजी–'मिस्टर पीटर! क्या बात है? आपके पिता तो सकुशल हैं?'

'पिताजी की मृत्यु हो गयी।' पीटर ने उत्तर दिया।

'ओह! भगवान उन्हें सद्गति दे। कब हुई मृत्यु?'

'लगभग एक घंटा पहले', पीटर की भर्रायी हुई आवाज सुनाई दी–'कोइन! वे तो निश्चिंतता से चल बसे, लेकिन मुझ पर मुसीबत आ पड़ी है। वसीयतनामा तो कोई है ही नहीं।'

'वाकई यह तो बहुत ही अफसोस की बात है', मेरे पिता ने कहा।

'हां कोइन! वसीयतनामा होता तो मुझे इतनी चिंता न होती। मैं तुम्हारे पास इसीलिए तो आया हूं... .. ..देखो कोइन, वे पांच गिनी स्वीकार करो और मेरी सहायता करने का वचन दो। तुम्हें पता है कि तुम मेरे पिता के हमशक्ल हो और हमशक्ल भी ऐसे कि लोग आये दिन धोखा खाते हैं।'

'तो फिर?'

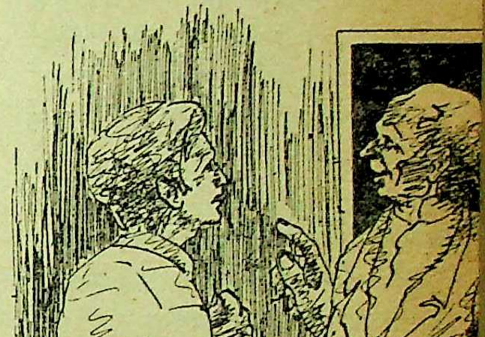

चित्र : कमलाक्ष शेणै

'तनिक सुनो तो सही! मैं चाहता हूं, तुम हमारे घर आकर बिस्तर पर लेट जाओ।'

'शव के साथ?' मेरे पिता ने कांपते हुए पूछा।

'बिलकुल नहीं! तुम अलग बिस्तर पर बीमारों की तरह लेट जाना। मैं पड़ोसियों और स्कूल-मास्टर बिली स्कालिनन से कहूंगा कि पिताजी वसीयतनामा लिखवाना चाहते हैं। जब वे लोग आ जायें, तुम बिली स्कालिनन को वसीयतनामा लिखवा देना और सारी संपत्ति मेरे नाम कर देना। किसी को गुमान भी न होगा कि धोखेबाजी हो रही है। तैयार हो न?'

'हां! लेकिन कमरा खूब अंधेरा रहना चाहिये।'

'अरे! चिंता न करो। ऐसा ही होगा और कोई तुम्हारे पास न फटक सकेगा! तुम्हें केवल वसीयतनामे के कागज पर पिताजी के नाम के नीचे रेखा खींचनी पड़ेगी।'

'और पादरी कहां होगा?'

'पादरी से पिता ईस्टर के मौके पर झगड़ पड़े थे और उसे कह आये थे कि मेरी मौत पर तुम मत आना। यह भी मेरा सौभाग्य है......चलो कोइन! जल्दी से मेरे साथ आ जाओ। दिन निकलने से पहले ही सब काम समाप्त हो जाना चाहिये।'

मेरे पिता ने अंदर आकर अपना बड़ा-सा कोट पहना और पीटर के साथ हो लिया। उनके जाते ही मैं उछलकर बिस्तर से निकला और जमींदार साहब के घर जाने के इरादे से एक पगडंडी पर हो लिया, ताकि उन दोनों से पहले ही वहां पहुंचकर किसी कोने में छिपकर यह सारा नाटक देख सकूं। लेकिन मेरा दुर्भाग्य देखिये कि एक गड्ढे में गिर पड़ा। ईश्वर को धन्यवाद कि मैं जल्दी उसमें से निकल आया, नहीं तो डूब ही जाता।

जमींदार साहब के यहां पहुंचा तो मेरे पिता की कार्रवाई शुरू हो चुकी थी। खैर, मैं टूटे शीशों वाली एक खिड़की से सटकर खड़ा हो गया और अंदर झांकने लगा। कमरा खासा चौड़ा था। एक दीवार के साथ बिस्तर लगा हुआ था और मेरा पिता बीमारों की तरह रजाई ओढ़े उस पर लेटा हुआ था। पास ही एक मेज पर दवाओं की शीशियां, चाय की खाली प्यालियां और कुछ चमचे पड़े थे। कुछ दूरी पर एक और मेज थी, जिस पर कागज और कलम-दवात आदि रखे थे। उसके सामने कुर्सी पर बिली स्कालिनन बैठा था। बिली स्कालिनन के दोनों ओर बहुत-से लोग खड़े थे और वसीयतनामा लिखे जाने की प्रतीक्षा बहुत गंभीरता से कर रहे थे। पीटर उदास चेहरा लिये एक कोने में खड़ा था और थोड़ी-थोड़ी देर के बाद ह्विस्की के गिलास लोगों को पेश कर रहा था। ह्विस्की की बोतलें खाली होती चली गयीं, लेकिन उसके माथे पर बल तक न आया। आज वह बड़ा मेहमान-नवाज लग रहा था।

निस्संदेह मुझे पता था कि यह सब धोखेबाजी हो रही है। मगर न जाने क्यों, मुझे भी इस अंधेरे-से कमरे का वातावरण बेहद पवित्र दिखाई देने लगा। लोग भीगी हुई आंखें लिये चुपचाप खड़े थे। कभी-कभार

कोई सिसकी लेकर रो भी देता था। यह सब कुछ देखकर मैं भूल ही गया कि असल मामला क्या है और दहशत से मेरा रोम-रोम कांप उठा।

बीमार के बिस्तर की ओर से धीमी आवाज में खांसने और कराहने की आवाज आयी, तो सब लोग अदब से खड़े हो गये और फिर उस संमोहक निस्तब्धता में मेरे पिता की आवाज सुनाई दी—'बिली स्कालिनन को बुलाओ...... मैं वसीयतनामा लिखवाना चाहता हूं।' वह पूरी कोशिश कर रहा था कि आवाज स्वर्गीय जमींदार से मिलती-जुलती हो।

'वह यहां उपस्थित हैं पिताजी।' पीटर बिली स्कालिनन का हाथ पकड़कर बिस्तर के पास चला गया।

'बिली! जो मैं कहता हूं, लिखते जाना; क्योंकि मेरा अंत बहुत नजदीक आ गया है। पादरी राफर्टी यहां बेशक न आये; पर तुम सब लोग साक्षी हो कि मैं एक सच्चे रोमन-कैथोलिक के रूप म संसार को छोड़कर जा रहा हूं।'

इस पर लोगों के झुंड में से 'हाय!' आवाज उठी। जाने लोग मरते हुए जमींदार की दशा पर खेद प्रकट कर रहे थे, या पादरी के न आने पर रुष्ट थे।

'मुझे अपने संबंधियों, पड़ोसियों और सब लोगों से किसी प्रकार की शिकायत नहीं है।' लोगों ने प्रशंसा भाव से 'खूब' कहा। ... 'मैं अपने बेटे पीटर को ...... और यह भी लिखना कि वह मेरा बहुत ही भद्र और आज्ञाकारी बेटा है, अपने दोनों खेत और [illegible] देता हूं। इसके अलावा मैं उसे अपनी लांटी वाला खेत और लारी के क्षेत्र वाली जमीन भी देता हूं......ओह! मेरा गला बिलकुल सूख गया है ...... जरा कुछ पी लूं', यह कहते हुए मेरे पिता ने ह्विस्की से भरा हुआ गिलास उठाया और दो-चार घूंट लेकर वापस मेज पर रख दिया। फिर जरा ऊंची आवाज में बोला—'मैं अपने बेटे पीटर को कुएं के पास वाले आलुओं के दो खेत भी देता हूं। वहां तो शानदार फसल पैदा होती है ......'

'पिताजी! आप कमजोरी तो महसूस नहीं कर रहे हैं?' पीटर ने मेरे पिता की बात काटते हुए पूछा; क्योंकि ह्विस्की पीकर मेरा पिता तेज आवाज में बोलने लगा था।

'हां, बेटे! जरा वह गिलास मुझे पकड़ाना। कहीं तुमने उसमें पानी तो नहीं मिला दिया?'

'नहीं पिताजी! आपके मुंह का स्वाद खराब हो चुका है।' लोगों की ओर से सहानुभूति के कुछ शब्द सुनाई दिये।

'अब मेरा वसीयतनामा समाप्त होने वाला है। बेटा पीटर! मैं चाहता हूं कि तुम भी मेरी तरह ईमानदारी से जीवन व्यतीत करो और शांतिपूर्ण मौत मरो। इसीलिए मेरे अंतिम शब्द ध्यान से सुन लो। क्या बिली और बाकी सब लोग सुन रहे हैं?'

'हां जी! हम सब सुन रहे हैं।'

'अच्छा! तो यह मेरे वसीयतनामे का अंतिम हिस्सा है और ...... तनिक वह

गिलास मुझे पकड़ाना', यह कहते हुए उसने ह्विस्की का गिलास खाली कर दिया—'और तुम सब यह भी अच्छी तरह समझ लो कि मैं अपने वसीयतनामे की हर पंक्ति पर अमल करवाना चाहता हूं। मैं चौक के साथ वाला जमीन का टुकड़ा कोइन क्रेगन को देता हूं, क्योंकि वह बेचारा अपने परिश्रमीपन और भद्रता के बावजूद गरीबी के बोझ तले दबा हुआ है। पीटर बेटा! उससे हमेशा अच्छा सलूक करना और जब भी कभी वह तुमसे कुछ आर्थिक सहायता मांगे, तो तत्काल दे देना! मुझे विश्वास है कि तुम मेरे अंतिम शब्दों का ध्यान रखोगे। बिली स्कालिनन! तुमने यह लिख लिया है न कि मैं चौक वाला दो एकड़ जमीन का टुकड़ा कोइन क्रेगन के नाम कर रहा हूं......आह! अब मेरा अंतःकरण प्रसन्न है ...... और ...... निश्चित भी ......' न जाने वह और क्या कहना चाहता था, पर पीटर ने जब देखा कि 'मृत्युशय्या' पर पड़ा आदमी इतनी वाक्पटुता से काम ले रहा है, तो फौरन वह सबको कमरे से बाहर ले गया, ताकि उसका पिता शांति से अंतिम सांस ले सके।

जब सब लोग जा चुके तो पीटर लपककर मेरे पिता के पास वापस आया, जो एक कोने में खड़ा अपने कपड़े पहन रहा था।

'शाबाश कोइन! तुमने खूब अभिनय किया, लेकिन यह समझ लो कि वह चौक वाले टुकड़े की बात केवल एक मजाक है।'

'मजाक? वैसे तो सारा वसीयतनामा ही एक मजाक है। मैं कल सराय में बैठकर लोगों को सारी बात सुना दूंगा।'

'मुझे पता न था कि तुम इतने ज्यादा कमीने निकलोगे। खबरदार! मेरा भेद मत खोलना।' पीटर डर गया।

'और मुझे भी पता न था कि तुम इतने लोभी निकलोगे कि अपने पिता के अंतिम शब्दों का भी ध्यान न रखोगे।' यह कहते हुए मेरे पिता ने अट्टहास किया।

'बहुत अच्छा कोइन!' पीटर मेरे पिता का हाथ पकड़ते हुए बोला—'समझौता, आखिर समझौता है। मगर यह तो मान लो कि तुमने चालाकी की।'

इस प्रकार यह मामला खूबसूरती से तय हो गया और मेरा पिता जमींदार के घर के पिछवाड़े से निकलकर अपने घर पहुंच गया और हम उस जमीन के टुकड़े के मालिक बन गये, जिस पर आजकल मैं रहता हूं।

★

एक आदमी रात के समय एक सुनसान सड़क पर जा रहा था। रास्ते में उसने एक आदमी को खड़े पाया, जो गरीब-सा था और जिसके चेहरे पर भूख नजर आ रही थी।

तभी उस आदमी ने आगे बढ़कर कहा—'माफ कीजियेगा, मैंने आपको रोका है। क्या आप मुझे कुछ पैसे देंगे, ताकि मैं खाना खा सकूं? मेरे पास न काम है, न अच्छे कपड़े और न ही कमाई का कोई साधन। बस, सिर्फ यह एक चाकू है।' और उसने हाथ में पकड़े बड़े-से चाकू का फाल खट से खोला और उस व्यक्ति की ओर बढ़ाया।

★

रिचर्ड ए. गार्डनर

माता-पिता प्रेम और भ्रम

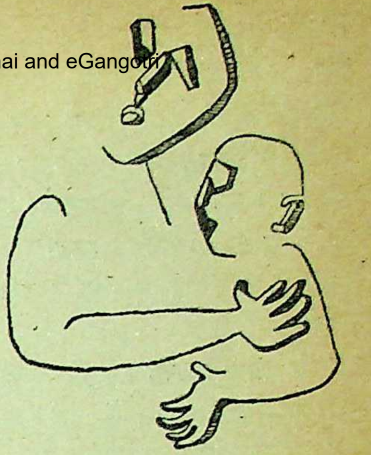

बड़ा अस्पष्ट और प्राय: ही दुरुपयोग किया जाने वाला शब्द है 'प्रेम'। बहुधा ऐसे अनेक भावों को इस शब्द की ओट में छिपाया जाता है, जिनका प्रेम से दूर का भी संबंध नहीं होता—कभी अपराध पर लीपा-पोती करने के लिए, कभी दूसरे को अपनी इच्छा के अनुसार चलाने के लिए और कभी हित, कामना और स्नेह से सर्वथा भिन्न इरादों पर मुलम्मा चढ़ाने के लिए। माता-पिता और बच्चे के आपसी संबंधों में भी प्रेम के ये शब्द तुड़े-मुड़े रूप में बहुधा अनायास ही प्रकट होते रहते हैं।

इनकी चर्चा में उतरने से पहले चंद बुनियादी बातों पर नजर डालें। यह सच है कि नवजात बच्चे के साथ पिता का संबंध उतना गहरा नहीं होता, जितना कि माता का। आखिर माता ही तो उसे गर्भ में धारण करती है और वही तो उसे जन्म के बाद अपने शरीर से पोषण देती है। तथापि बच्चे से पिता का लगाव भी काफी गहरा होता है। सामाजिक व्यवस्था या पिता का ही कोई व्यक्तित्व-दोष इसे दबा दे तो और बात है।

बच्चे से सचमुच प्रेम करने वाले माता-पिता बच्चे के साथ या बच्चे के लिए कुछ भी करते हुए अपने अंदर से प्राय: ऊष्मा अनुभव करते हैं। मैंने कहा, 'प्राय:'। क्योंकि बच्चे के प्रति विरोधभाव भी कभी-कभी उनमें अवश्य ही उठता है। मगर साधारणतया बच्चे को सुख देकर वे आनंदित होते हैं। बच्चे का हर्षपूर्ण प्रतिदान उनके आनंद को और बढ़ा देता है। इस प्रकार आनंद उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। बच्चे के स्वास्थ्य या कल्याण के लिए खतरा उपस्थित होने पर वे बेचैन हो उठते हैं। बच्चे की इच्छा और बच्चे के कल्याण के बीच वे सही संतुलन साध पाते हैं।

बच्चे से सचमुच प्रेम करने वाले माता-

पिता यह नहीं मानते कि बच्चे की खातिर हम जो त्याग कर रहे हैं, उसके लिए वह हमारा ऋणी है; बल्कि बच्चे के पालन-पोषण से मिलने वाले आनंद को ही वे अपना पुरस्कार मानते हैं। वे यह भी जानते हैं कि बच्चे के प्रति उनकी भावनाएं खालिस प्रेम नहीं हैं और यह जानकारी उन्हें विचलित नहीं करती।

वे यह भी जानते हैं कि बच्चे के जीवन की सब अवस्थाओं में उसके प्रति उनका लगाव एक-सा तीव्र नहीं होता। कुछ माता-पिता नन्हे शिशुओं के साथ ज्यादा स्वस्ति-भाव अनुभव करते हैं, दूसरे स्कूल जाने की उम्र के बच्चों के साथ, और कुछ किशोर वय वालों के साथ।

माता या पिता के प्रेम का एक महत्त्वपूर्ण लक्षण यह है कि उसे बच्चे के संग समय बिताना अच्छा लगता है। सच तो यह है कि वे बच्चे के साथ रोज अकेले थोड़ा समय बितायें, तो बच्चा भावी मानसिक गड़बड़ों से बच सकता है और यदि गड़बड़ शुरू हो गयी हो, तो उसे इससे लाभ पहुंच सकता है। मैं प्राय: माता-पिता को सलाह दिया करता हूं कि प्रतिदिन अपने प्रत्येक बच्चे के लिए थोड़ा-सा पृथक् समय अवश्य मुकर्रर रखें। केवल बहुत अनिवार्य परिस्थितियों में ही यह कार्यक्रम मंसूख किया जाये।

बेशक इस समय का पूरा लाभ तो तभी होता है, जब माता-पिता और बच्चा दोनों इसमें समुचित आनंद पायें। यदि माता या पिता बच्चे के साथ खेलने आदि में सिर्फ ऊपरी मन से भाग ले रहे हों, तो बच्चा फौरन इस बात को ताड़ लेता है; उस हालत में वे क्षण बच्चे के लिए निराशाप्रद अनुभव सिद्ध होते हैं।

जरूरी नहीं कि इन क्षणों में बच्चे के साथ कोई क्रिया-कलाप ही किया जाये। बैठकर बातें करना, दिन-भर के अनुभव पूछना-बताना, सुख-दु:ख की चर्चा करना बच्चे व माता-पिता में परस्पर प्रेम और सहानुभूति जगाता है। जिससे दोनों को पोषण मिलता है। कुछ परिवारों में यह चीज सहज रूप से सध पाती है। दुर्भाग्यवश कुछ में नहीं सध पाती। इसलिए नहीं कि वे माता-पिता बच्चे से प्रेम नहीं करना चाहते, बल्कि इसलिए कि वे खुद अपनी भावनाओं के साथ समस्वर नहीं हो पाये हैं, और न यही समझ पाये हैं कि उनके शब्दों का, उनके मौन का बच्चों पर क्या प्रभाव पड़ता है।

माता-पिता के प्रेम के कई झूठे रूप हैं और ऐसा एक भी माता-पिता नहीं, जिसके व्यवहार में झूठे प्रेम के एक या अधिक रूप कभी न कभी प्रकट न होते हों। यदि इनमें से अनेक रूप बहुत प्रकट होते रहें, तो माता-पिता और बच्चे के आपसी संबंधों में कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं। यद्यपि प्रत्येक झूठा प्रेम माता-पिता से ही आरंभ होता है, मगर वह किस रूप में किस हद तक बढ़ेगा, यह बच्चे के व्यवहार पर भी निर्भर होता है।

माता-पिता के झूठे प्रेम के कुछ स्वरूप ये हैं :

१. हम बच्चे के हर स्वाभाविक आवेग का मान करते हैं। कई माता-पिता बच्चे की इच्छा को ही बच्चे के हित की कसौटी मानते हैं। वे बच्चे के सहज आवेगों को सर्वोपरि मानते हैं और समझते हैं कि इनका नियमन या दमन करने से बच्चे अपसामान्य (एब्नार्मल) हो जायेंगे। सो वे बच्चे को चाहे जब खाने, चाहे जब सोने और जिज्ञासा के नाम पर घर की चीजें तोड़ने-फोड़ने देते हैं।

मैं नहीं मानता कि यह बच्चे का सच्चा मान करना है। ये बच्चे अवश्य ही अपने मन में बेचैनी अनुभव करते होंगे, क्योंकि उन्हें वह सुरक्षा और मार्गदर्शन नहीं मिल पाता जो हर बच्चे के स्वस्थ विकास के लिए आवश्यक है। इससे बहुधा वे बिगड़ैल बन जाते हैं।

फ्रायड ने अपनी आरंभिक पुस्तकों में अवश्य यह माना था कि सहज इच्छाओं का दमन न्यूरोसिस को जन्म देता है और उसकी सहज अभिव्यक्ति न्यूरोसिस को दूर करती है। मगर बाद में वे इस बात को मान गये थे कि यह इतना सीधा मामला नहीं है। मगर आज मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी और उसके बाहर भी ऐसे बहुत लोग हैं, जो फ्रायड के आरंभिक दृष्टिकोण को ही मानते हैं और कहते हैं कि बच्चों को अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति एवं पूर्ति का अधिक से अधिक अवसर दिया जाना चाहिये।

मुझे बच्चे के आरंभिक विवेक में बहुत ज्यादा विश्वास नहीं है। मैं यह तो नहीं कहता कि बच्चे को प्रत्येक सामाजिक बंधन के आगे झुकने की सीख दी जाये; मगर मैं मानता हूं कि बच्चे की सहज प्रवृत्तियों का ध्यान रखते हुए उसे परिवेश के अनुरूप ढाला जाये। आदर्श स्थिति यह है कि माता-पिता बच्चे की इच्छाओं को जानें व समझें और बच्चे का हित किसमें है, इसका विचार करते हुए तय करें कि किस इच्छा की पूर्ति करनी है, किसकी नहीं।

२. बच्चे का रोना मैं नहीं देख सकता। बहुत-से माता-पिता अपनी असुरक्षा या अक्षमता की भावना की पूर्ति के लिए बच्चे की 'आदर्श' परवरिश करना चाहते हैं। वे समझते हैं कि 'आदर्श' परवरिश पा रहा बच्चा पूर्णतः संतुष्ट होता है, कभी उसे नैराश्य नहीं सताता। ऐसे माता-पिता के लिए बच्चे का रोना खतरे की घंटी है, जो यह बताती है कि बच्चे की कोई इच्छा अतृप्त रह गयी है, यानी हम माता-पिता के रूप में कच्चे रहे हैं।

बच्चे की इच्छाओं का मान करने के नाम पर ये माता-पिता उसे एक महत्त्वपूर्ण अनुभव से वंचित रखते हैं। वह है निराशा का सामना करने का अनुभव। सारी दुनिया तो उस बच्चे से वैसा लाड़ लड़ाने से रही और अपनी इच्छाओं की पूर्ति की प्रतीक्षा करना सीखे बिना बच्चा दुनिया में सफलता से नहीं जी सकता। साथ ही, अपनी हर इच्छा के सामने झुक जाने वाले माता-पिता को बच्चा कमजोर व्यक्ति ही समझता है।

३. मैं अपने बच्चे को ऐसा नहीं करने दूंगा। बहुत-से माता-पिता अपने बच्चों को—

जैसे लड़कों को लंबे बाल रखने, लड़कियों को जीन्स पहनने से–केवल इसलिए रोकते हैं कि इस प्रकार वे अपनी सामाजिक श्रेष्ठता दिखाना चाहते हैं। जिन माता-पिता में अपने प्रति संदेह या अविश्वास नहीं हैं, उन्हें इस तरह दूसरों से अपने को श्रेष्ठ दिखाने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

४. मैं उन माताओं में नहीं हूं जो बच्चे को छोड़कर काम करने चली जाती हैं। निश्चय ही बच्चा जितना ही छोटा हो, उस पर उतना ही ज्यादा ध्यान देना पड़ता है–विशेषतः माता को। मगर घर के अन्य सदस्यों, स्नेहशील आयाओं आदि द्वारा की जाने वाली प्रेमपूर्ण देख-रेख भी मां की देख-रेख का स्थान काफी हद तक ले सकती है। चूंकि बच्चे की देख-रेख काफी उबाने व थकाने वाला काम है, इसलिए मेरी राय में तो प्रत्येक माता को बीच-बीच में थोड़े समय इस काम से फुरसत लेनी चाहिये।

५. उसका नाराज होना मुझे सह्य नहीं। कई लोगों का यह खयाल होता है कि अगर कोई हमसे नाराज है, तो निश्चय ही हम अच्छे नहीं हैं। बहुत-से माता-पिता यह समझ ही नहीं पाते कि बच्चों का बहुत-सा गुस्सा गलत होता है। वे हर तरह से उसे टालना चाहते हैं। इससे बच्चा जान जाता है कि रूठकर सब कुछ हासिल किया जा सकता है।

६. मैंने वचन दिया है। बहुत-से माता-पिता बड़ों के साथ वचन-भंग करने में तो तनिक भी नहीं झिझकते; मगर बच्चे को दिये हुए वचन को पत्थर की लकीर मानते हैं। वे समझते हैं कि बच्चे को दिया वचन यदि हमने तोड़ दिया, तो बच्चे के मन में हमारे लिए मान नहीं रहेगा और इसके मानसिक परिणाम भयंकर होंगे।

एक दृष्टांत लें। आपने बच्चे को वचन दिया था कि उसके जन्मदिन पर इतने बजे जाकर अमुक खिलौना खरीद देंगे। आप उसके साथ बाजार जाते हैं; मगर दुकान में वह खिलौना नहीं मिलता। आप दो-चार दुकानें और छानते हैं, उनमें भी वह नहीं मिलता। ऐसे में अगर बच्चा कहे कि 'पर पिताजी आपने कहा था कि आज खिलौना खरीदेंगे' और आप उसके साथ बाजार के चक्कर पर चक्कर लगाते ही रहें तो क्या ऐसा वचन पालन हितकारी है? जिस पिता को इस प्रकार हांका जा सके, उसके लिए बच्चे के मन में कितना आदर पनपेगा? फिर बच्चा यह कब सीखेगा कि दुनिया में सब चीजें हमारे हाथ में नहीं होतीं? वह अपने माता-पिता की विवशता को समझना, उनसे सहानुभूति करना कब सीखेगा?

अच्छा तो यह है कि आप बच्चे से कहें–'बेटा तीन दुकानें हमने देख लीं, खिलौना मिल नहीं रहा है। कल मैं और दुकानों में ढूंढ़कर ले आऊंगा, अभी घर चलो।'

७. हमारे त्याग का प्रतिदान तुम न दे सकोगे। सचमुच प्रेम करने वाले माता-पिता अपने त्यागों का बच्चे से या किसी दूसरे से कोई प्रतिदान नहीं चाहते। वैसे तो यह आशा करना सहज और उचित है कि हमारे बच्चे बड़े होने पर हमारे पास रहें, हमारी

इज्जत और हमारी चिंता करें, मगर बच्चे से सचमुच प्यार करने वाले माता-पिता उससे आगे चलकर प्रतिफल पाने के इरादे से त्याग नहीं करते; वे तो बच्चे को बड़ा होकर आत्मनिर्भर बनते देखकर परितोष पाते हैं। 'हम तुम्हारे लिए त्याग कर रहे हैं" की रट लगाये रहना एक ढंग से बच्चे को यह महसूस कराना है कि तुम हमारे इस त्याग के लायक नहीं हो। बच्चा इस बात को बहुत आसानी से भांप जाता है, और यह अहसास कि माता-पिता को मेरी खातिर कष्ट उठाना पड़ रहा है, उसमें अपने प्रति अपराध-भावना को जन्म देता है।

८. मेरा बच्चा मेरा सब कुछ है। कुछ माता-पिताओं के जीवन का दायरा इतना छोटा होता है कि जीवन के सार्थक्य की अनुभूति उन्हें केवल अपनी संतान के जरिये ही होती है। जीवन में उनका अपना स्वतंत्र लक्ष्य या ध्येय होता ही नहीं। उन्हें यह डर लगता है कि बच्चे बड़े हो जायेंगे, तो आत्म-परितोष का हमारा एकमात्र साधन छिन जायेगा। बच्चा जब तरुणाई की देहरी पर पहुंच जाये तब तो इन माता-पिताओं को लगता है कि अब वह उनके हाथ से निकल जायेगा। वे उसके साथी-संगियों की—विशेषत: जिसे वह अपने भावी जीवन-संगी या संगिनी के रूप में देखने की ओर झुक रहा हो—नुक्ताचीनी करने लगते हैं। गरज यह कि वे बच्चे में यह भाव भरना चाहते हैं कि माता-पिता से स्वतंत्र होकर जीने की बात सोचना जैसे अपराध हो।

९. मैं खुद जो नहीं पा सका, वह सब बच्चे को देना चाहता हूं। प्राय: जीवन में हम अपनी इनी-गिनी इच्छाएं ही पूरी कर पाते हैं। अत: हम अपने बच्चों के साथ अपने को तदाकार करके उनके सुख या सफलता का आनंद उठाने की कोशिश करते हैं। यह बहुत स्वाभाविक है। परंतु इस चीज को बहुत अधिक बढ़ा दें तो यह बच्चे पर बोझ बन जाती है।

१०. मेरा बेटा तो डाक्टर बनेगा। ऊपर बनायी मनोवृत्ति का एक रूप यह है कि माता-पिता अपनी पसंद के किसी पेशे के लिए बच्चे पर बहुत दबाव डालते हैं। वह भ्रमित-सा हो जाता है। वह जान नहीं पाता कि उसे सचमुच उस पेशे में दिलचस्पी है, या वह माता-पिता की इच्छा के आगे जबरन झुक रहा है। जो बच्चे झुक जाते हैं, संभव है कि वे जीवन-भर अपने पेशे से असंतुष्ट रहें।

झूठे और सच्चे प्रेम में मुख्य अंतर है कि सच्चा प्रेम दुतरफा होता है। इकतरफा प्रेम विकास में सहायक संबंध नहीं होता। असल में वह संबंध ही नहीं है। मगर बच्चे में माता-पिता के लिए प्रेम जगे-पनपे इसके लिए पहले उसे माता-पिता की ओर से प्रेम मिलना जरूरी है। आरंभ में तो बच्चा केवल जरूरतें जानता है, प्रेम नहीं। मगर जब ये जरूरतें पूरी की जाती हैं, बच्चे में माता-पिता के प्रति विश्वास व प्रेम और उन्हें रिझाने की चाह धीरे-धीरे उगती व पनपती है। यही प्रेम का जन्म है।

★

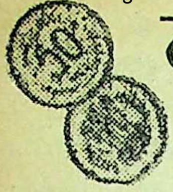

मुद्रास्फीति बहुत बड़ी बीमारी

हान्स रोपर

हर जमाने में मुद्रा के ह्रास के साथ चीजों के दाम तेजी से बढ़े हैं और हर जमाने में लोगों पर इसकी एक-सी प्रतिक्रिया हुई है।

'पहले मैं जेब में पैसे और चीजें रखने के लिए डलिया लेकर बाजार जाता था; आजकल डलिया में पैसे लेकर बाजार जाता हूं, और चीजें जेब में लेकर लौटता हूं।' ये शब्द अमरीकी गृहयुद्ध (१८६१-१८६४) के दिनों में कहे गये थे, जब युद्ध-संचालन के लिए ४५ करोड़ के कागजी डालर चलाये गये थे। उन नोटों का पृष्ठभाग हरा होने के कारण लोग उन्हें 'ग्रीन बैक' कहते थे। दो साल के भीतर उनकी कीमत उन पर छपी अधिकृत कीमत के ४० प्रतिशत से भी कम रह गयी।

जिस भुक्तभोगी के शब्द हमने ऊपर उद्धृत किये हैं, उसी का यह भी कथन है—'सिवा पैसे के सब चीजों की तंगी है। चीजों की जमाखोरी करने और अच्छे धातु के सिक्के को स्थानभ्रष्ट कर रहे कागजी सिक्कों से छुटकारा पाने की कोशिश हर कोई कर रहा है।'

हम देखते हैं कि ठीक यही प्रतिक्रिया १,५०० वर्ष पूर्व रोम साम्राज्य के एक अफसर की थी। उसे इसका सुराग मिल गया था कि रोम का तत्कालीन सम्राट डायोक्लिशियन (२८४-३०५ ई.) मुद्रास्फीति के इलाज के लिए मुद्रा-सुधार करने की बात सोच रहा है। उस अफसर ने अन्यत्र स्थित अपने अधीनस्थ कर्मचारी को लिखा:

'हमारे जहांपनाह के शाही दिमाग ने तय किया है कि शाही सिक्के की कीमत उसके अधिकृत मूल्य से आधी कर दी जाये। सो मैंने तुम्हारे पास जो रकमें रखवायी हैं, वे सब रकमें फौरन खर्च करके जिस किसी भी दाम पर जो भी जिंस मिले, मेरे लिए खरीद डालो। इस मकसद से एक कर्मचारी को मैंने तुम्हारे पास भेजा है। मगर याद रखना, अगर तुमने किसी तरह मुझे ठगने की कोशिश की, तो मैं बर्दाश्त नहीं करूंगा। मैं तुम्हारे सुदीर्घ स्वास्थ्य की कामना करता हूं, भैया!'

ईसा की दूसरी-तीसरी सदियां रोम साम्राज्य में गंभीर संकटों और निरंतर मुद्राह्रास का युग था। सम्राट मार्कस औरेलियस (१६१-१८० ई. पू.) ने उस युग के सबसे महत्त्वपूर्ण चांदी के सिक्के दिनेरियुस (दीनार) में चांदी का अंश घटाकर ७५

प्रतिशत कर दिया। इस तरह से जो मुद्रा-ह्रास शुरू हुआ वह निरंतर बढ़ता ही गया। डायोक्लिशियन के राजपाट संभालने से पहले २६७ ई. में चीजों के दाम (दिनेरियुसों में) चौबीस गुना बढ़ चुके थे। अंततः मुद्रा की ऐसी दुर्दशा हो गयी कि लोग अधिकाधिक व्यापार वस्तु-विनिमय के रूप में करने को विवश हो गये। शाही सिक्के को कोई न पूछता था। २६० ई. का पैपिरस पर लिखा एक फरमान मिलता है, जिसमें मिस्री मुद्रा-विनिमयकर्ताओं को सख्त चेतावनी दी गयी है कि वे शाही सिक्के को लेने से इन्कार करने से बाज आयें।

मतलब यह कि उन दिनों भी खराब सिक्का अच्छे सिक्के को बाजार से खदेड़ डालता था, जिसे अर्थशास्त्र में ग्रैशम का कानून कहते हैं। सर टामस ग्रैशम (१५१९-१५७९ ई.) रानी एलिजाबेथ प्रथम का चतुर आर्थिक सलाहकार था, और जितना दक्ष सलाहकार था, उतना ही चतुर था वह अपनी जेबें भरने में। उन दिनों एक साथ सोने, चांदी और तांबे के सिक्के चला करते थे और जब सिक्कों में सोने व चांदी की मात्रा घटी, खराब सिक्के द्वारा अच्छे सिक्के के भगा दिये जाने की बात की सचाई अधिकाधिक स्पष्ट होने लगी।

आज कागजी सिक्कों के इस जमाने में हम बहुधा पूंजी के पलायन की बात करते हैं। मगर स्पार्टा नगर-राज्य के जमाने में भी यह नौबत आ गयी थी। वैसे स्पार्टा में लोहे के सिक्के का चलन था और सोना-चांदी अपने पास रखने की सख्त मनाही थी। फिर भी कुछ स्पार्टावासियों ने किसी तरह सोना-चांदी बटोरकर स्पार्टा की सीमा के बाहर सुरक्षित जमा करा दी थी। प्राचीन यूनान में बार-बार युद्ध छिड़ते रहने के कारण चीजों के दाम अक्सर बहुत चढ़ जाते थे।

बाइबल में भी ऊंची कीमतों की चर्चा कई जगह है। सबसे प्रसिद्ध किस्सा है जोसेफ का। जब वह मिस्र में गुलाम था, उसने सात साल सुभिक्ष और उसके बाद सात साल दुर्भिक्ष आने की भविष्यवाणी की थी। मगर चीजों की कीमतें बढ़ने और सिक्के का मूल्य गिरने का कारण हमेशा अकाल या चीजों का अभाव ही नहीं होता था। आधुनिक अर्थ में मुद्रास्फीति तब भी हुआ करती थी, यानी सिक्कों के अत्यधिक चलन के कारण भी सिक्के का मूल्य गिर जाता था।

ऐसी परिस्थिति विशेषतः तब आती थी जब सोने-चांदी की बहुतायत हो जाती थी। ऐसी बहुतायत सोने-चांदी की नयी खानें खुदने के कारण भी हो सकती थी, या सोना-चांदी-उत्पादक देशों के साथ लाभप्रद व्यापार के कारण भी, या विदेशों की सैनिक विजय में बहुत-सा सोना-चांदी हाथ लग जाने के कारण भी। नतीजा यह होता था कि सोने व चांदी के बहुत ज्यादा सिक्के ढलकर चलन में आ जाते थे और चूंकि इनके साथ-साथ अन्य वस्तुओं का उत्पादन नहीं बढ़ता था, इसलिए सिक्कों का मूल्य घट जाता था।

ऐसा लगता है कि राजा सुलेमान के

शासन (अनुमानत: ९६५-९२६ ई. पू.) में इस्रायल और जूडिया में चांदी का फुलाव हो गया था। बाइबल में जिक्र है कि 'पीने के सभी बरतन सोने के थे और चांदी का कोई नहीं, क्योंकि चांदी की कीमत शून्य थी।' बाइबल में ही एक और जगह (राजे-१) कहा गया कि राजा ने चांदी को पत्थरों के बराबर कर दिया। कीमती धातुओं का इससे भी विकट फुलाव इसके छह सौ वर्ष बाद हुआ। इसका सबब यह था कि फारस के सम्राट के महलों में अपार सोना-चांदी सिकंदर (३६५-३२३) के हाथ लगा और उसने बड़े पैमाने पर सिक्के ढलवाये। कहते हैं, अकेले सूसा में उसे ४० हजार टैलेंट (यानी १० लाख किलोग्राम) से ज्यादा चांदी हासिल हुई थी। परिणामत: चांदी की कीमत गिरकर आधी रह गयी।

अमरीका की खोज के बाद भी ठीक ऐसा ही हुआ। स्पेनी यात्री मेक्सिको और दक्षिण अमरीका से जहाज भर-भरकर सोना सेविल लाये, जहां से वह धीरे-धीरे यूरोप में फैला। आर. रोमानो का कहना है कि १५०३ से १५६० के बीच ५ लाख ७४ हजार किलोग्राम चांदी और १ लाख २० हजार किलोग्राम सोना अमरीका से यूरोप आया। उन्हीं दिनों यूरोप में भी—खासकर जर्मनी में—चांदी के उत्पादन में बहुत वृद्धि हो गयी। १५२०-४० के बीच चीजों की कीमतें तेजी से चढ़नी शुरू हुईं। १५८० से १५९० के बीच ६० से १०० प्रतिशत तक दाम बढ़ गये और उनका बढ़ना १७ वीं सदी में भी जारी रहा।

मगर ये फुलाव निर्दोष थे—इस अर्थ कि ये जानबूझकर पैदा किये हुए नहीं थे। उस जमाने में लोग यही समझते थे कि सो व चांदी का स्थिर मूल्य होता है। अत: समझ नहीं पाते थे कि सिक्के में सोने-चां की मात्रा के स्थिर रहते हुए भी वही सिक्का अब पहले जितना माल क्यों नहीं दिला पाता। अंतत: फ्रांसीसी राजनीतिशास्त्री जां बोदें (१५३०-१५९६) ने इस बात को पहचाना कि बाहर से बहुत सोना-चांदी के आ जाने और उसके सिक्के ढलने से यह हालत पैदा हुई।

इसके विपरीत, सिक्के का अधिकृत मूल्य वही बनाये रखते हुए उसमें सोने या चांदी की मात्रा घटाते जाना सरासर ठगी थी। इस युक्ति से सोने-चांदी की उतनी ही मात्रा से अधिकाधिक संख्या में सिक्के ढालते जाना और निरंतर मुद्रा-फुलाव करना मुमकिन हो गया। राजाओं ने और जिन्हें राजाओं ने सिक्के ढालने का अधिकार दिया था उन्होंने, इस युक्ति से भारी मुनाफा कमाया। यह मुनाफा या तो लड़ाइयां लड़ने में ख गया या शाही महलों और दरबारों की शान-शौकत में पानी की तरह बहाया गया।

डायोक्लिशियन के समय में हुई दीनार की दुर्दशा का जिक्र हम ऊपर कर आये हैं। फ्रांस के सिक्के लीव्र की भी यही हालत हुई। सन १२५० से १७९५ (जब फ्रांक चलन में आया) के बीच उसका वजन ३६९ बार बदला। अंत में उसमें कीमती धातु की मात्रा मूल का ३·५ प्रतिशत मात्र रह गयी।

वियेना का चांदी फेनिंग इसका दूसरा उदाहरण है। १४०० में १ हंगेरियाई गुल्डेन (स्वर्णमुद्रा) के लिए १५० वियेनाई फेनिंग देने पड़ते थे; मगर छह ही साल बाद ३६०० फेनिंग देने पड़ने लगे। 'तीस वर्षीय युद्ध' के आरंभ में तो ऐसे भ्रष्ट सिक्कों की कोई इंतहा न थी। टकसालों की भरमार हो गयी और वे ढेरों भ्रष्ट सिक्के ढाल-ढालकर बाजार में ठेल रहे थे।

कागजी सिक्के यूरोप में पहले-पहल प्रकट हुए १४ वीं सदी में। असल में तो ये 'डिपाजट स्लिप' थे, जो कि सोना-चांदी या सिक्कों की धरोहर रखवाने वाले को महाजन द्वारा दिये जाते थे। मगर धीरे-धीरे व्यापार में सिक्कों के बजाय इन 'स्क्रिपों' से भुगतान किया जाने लगा। (बाबुल और प्राचीन यूनान में भी ऐसे स्क्रिपों का चलन था।) अंतत: इन्हीं से नोटों का जन्म हुआ।

वैसे चीन के लोग इससे भी बहुत पहले से कागजी मुद्रा से परिचित थे। चीन में कई वर्ष बिताने वाले वेनिस-वासी यात्री मार्को पोलो (१२५४-१३२४) ने लिखा था—'साम्राज्य के सभी हिस्सों में कागजी सिक्के का प्रचलन था।' इस मामले में कितनी सख्त निगरानी रखी जाती थी, इसका परिचय सन १३१४ में चीन के केंद्रीय सचिवालय से जारी हुए एक आदेश से मिलता है—'उधर यह देखा गया है कि चकलों, शराबखानों, चायघरों और हम्मामों के मालिक बार-बार बांस या लकड़ी की तख्तियां या लिखे हुए कागजी पुर्जे कागजी सिक्के के तौर पर जारी कर रहे हैं। यह "कागजी मुद्रा कानून" का अतिक्रमण है। फैसला किया गया है कि ये सब बांस या लकड़ी की तख्तियां या कागजी सिक्के गैरकानूनी हैं।'

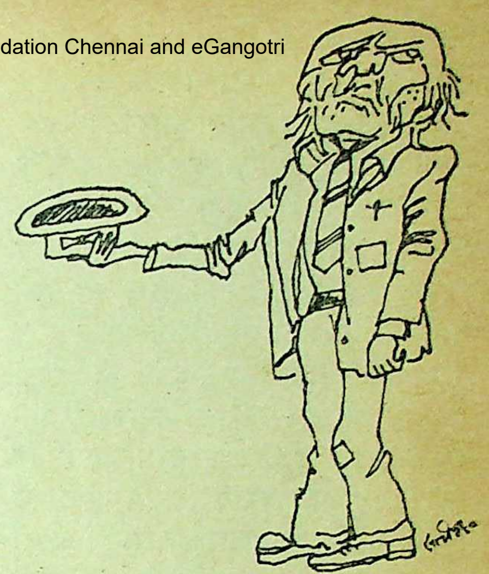

चित्र : सतीश चव्हाण

मार्को पोलो के अनुसार, चीनी कागजी सिक्के सलेटी रंग के शहतूती कागज के बने होते थे और उन पर 'मिंग साम्राज्य के राजकीय बैंक नोट' इन शब्दों के नीचे यह इबारत छपी होती थी—'सर्वकाल के लिए प्रचारित'। बाद में वहां इस कदर मुद्रास्फीति हुई कि १६२० में कागजी मुद्रा जारी करना कानूनन रोक दिया गया।

मगर स्काटलैंड के निवासी जॉन ला नामक महाजन ने फ्रांस में जो कारोबार किया, वह कागजी मुद्रा के फुलाव का क्लासिकी उदाहरण है। ला ने यह सिद्धांत

गढ़ा कि राष्ट्र की भूमि और प्राकृतिक साधन-संपदा पर आधारित मुद्रा परंपरागत धातुआधारित मुद्रा से श्रेष्ठ और स्थिर मूल्य वाली होती है—विशेषत: जब उसमें राष्ट्र के समृद्ध उपनिवेशों का हिसाब भी शामिल हो। फ्रांसीसी सरकार उस समय घोर वित्तीय विपदा में ग्रस्त थी। जॉन ला ने उसे सब्ज बाग दिखाये और सरकार ने उसके द्वारा १७१७ में स्थापित 'कंपनी दे इंड' को तंबाकू-व्यापार का एकाधिकार, करवसूली एवं समूचे राजस्व के प्रबंध का काम तथा सिक्के ढालने का अधिकार दे दिया। कंपनी के शेयरों का भयंकर सट्टा होने लगा। कंपनी धड़ाधड़ बैंक-नोट और शेयर जारी करती चली गयी। अंतत: १७२० में यह बालू की भीत ढह गयी और फ्रांस में भीषण आर्थिक एवं वित्तीय संकट छा गया।

ऐसी ही भयंकर दुर्दशा १७८९ में फ्रांसीसी राज्यक्रांति के समय भी हुई। क्रांतिकारी सरकार ने गिरजों और भगोड़े अमीर-उमरा की जब्तशुदा संपत्ति पर ४० करोड़ लीव्र के 'एसिन्यात' (प्रामिसरी नोट) जारी किये। शुरू में तो ये ब्याजयुक्त राजकीय बांड ही थे; मगर शीघ्र ही इन्हें मुद्रा का रुतबा मिल गया। १७९० में इन्हें लाजमी कीमत पर स्वीकारना अनिवार्य कर दिया गया। १७९६ में जब ये वापस लिये गये, तब ४५ अरब ७८ करोड़ लीव्र के ऐसे कागज चलन में थे, हालांकि इनकी क्रयशक्ति अपने अधिकृत मूल्य के ८३३वें हिस्से के बराबर थी।

लेकिन मुद्रास्फीति का अपकीर्तिमान तो प्रथम विश्वयुद्ध के बाद के जर्मनी का है। १९२३ में जब वहां मुद्रा-सुधार किया गया, १० खरब (जी हां, १० खरब!) पुराने मार्कों को केवल १ रेंटेन मार्क (बाद का राइश मार्क) के बराबर माना गया। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद १९४८ में जब पश्चिम जर्मनी में मुद्रास्फीति समाप्त की गयी, तो १०० राइश मार्क ७·५ ड्यूश मार्क के बराबर माने गये।

आज फिर सारी दुनिया में—चाहे वे औद्योगिक देश हों या पिछड़े हुए देश—मुद्रास्फीति है। सब जगह कीमतें १५, २०, २५ प्रतिशत वार्षिक के हिसाब से बढ़ रही हैं। अर्थशास्त्री और वित्त-विशेषज्ञ चाहे इसका कारण कुछ भी बतायें, मगर सच्चाई यह है कि यदि मुद्रास्फीति की रोकथाम नहीं की जाती, तो वह राष्ट्रीय धोखाधड़ी बन जाती है।

★

संबंध

किसी ने एक वैज्ञानिक से पूछा—'आइंस्टाइन के सिद्धांत के अनुसार एक क्षण और अनंत समय में क्या संबंध है?'

वैज्ञानिक ने कहा—'आइंस्टाइन के अनुसार अगर मैं एक क्षण के बारे में बताने लगूं, तो आपको अनंत समय तक सुनना पड़ेगा।'

★

स्मृति के अंकुर

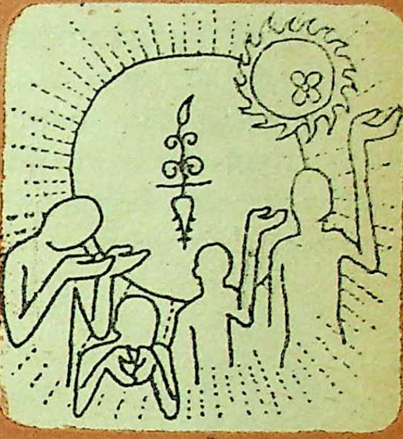

सन १९७१ के दिसंबर में मैं वायुसेना में साक्षात्कार हेतु देहरादून जा रहा था। देहरादून जाने वाली गाड़ी रात को ग्यारह बजे गाजियाबाद आती थी। द्वितीय श्रेणी के प्रतीक्षालय में बैठा गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था। वहीं एक व्यक्ति से मुलाकात हुई, वे भी वायुसेना के साक्षात्कार के लिए देहरादून जा रहे थे। गाड़ी ठीक ग्यारह बजे आयी। यात्रियों की भीड़ तेजी से गाड़ी में घुसने लगी। मेरे नवपरिचित साथी ने बड़ी फुर्ती से द्वितीय श्रेणी के डब्बे में घुसकर ऊपर के दो बर्थ घेर लिये। जल्दी से हम दोनों ने उन पर अपने-अपने बिस्तर खोल दिये। कुछ क्षण बाद एक प्रौढ़ महिला और एक सज्जन डब्बे में आये। सज्जन ने पहले पूरे कंपार्टमेंट का जायजा लिया, फिर बोले—सोने की जगह है नहीं, बैठे-बैठे तो बड़ी परेशानी होगी। दस-ग्यारह घंटे का सफर है। फिर यह कहते हुए नीचे उतर गये कि और जगह देखता हूं। महिला मेरे बर्थ के नीचे की सीट पर बैठ गयी।

थोड़ी देर बाद वे सज्जन लौटे और बोले—'चलो, फर्स्ट क्लास में सोने की जगह है। टी. टी. अपनी जान-पहचान का है, कुछ भी एक्स्ट्रा चार्ज नहीं करेगा।' पर महिला नहीं मानी। वे सज्जन जोर देकर दुबारा बोले—'ही विल नॉट माइन्ड।' उत्तर में महिला बोली—'बट आइ विल माइन्ड, आइ हैव ए सेकेंड क्लास टिकेट।' कैसा जबर्दस्त दायित्वबोध!

—योगेंद्रपाल सिंह, सवाईमाधोपुर

पाकिस्तानी

मेरी सहेली के पति श्री वर्मा उन दिनों काबुल में दूतावास में नियुक्त थे। एक दिन दो भारतीय विद्यार्थी सुरेश और अनिल उनसे मिलने आये। दोनों लंदन से आये थे और स्थलमार्ग से यात्रा करते हुए भारत जा रहे थे। वर्मा-दंपति का आतिथ्य लेकर दोनों छात्र यात्रा पर आगे बढ़ गये। दो दिन बाद ही भारत-पाक युद्ध छिड़ गया।

लगभग इसी समय दोनों छात्रों को पाकिस्तान पहुंचना था। श्री और श्रीमती वर्मा उनके लिए चिंतित हो उठे। लेकिन इसके पांच-छह दिन बाद दोनों छात्र मुस्कराते हुए उनके सामने आ खड़े हुए और उन्होंने यह कहानी सुनायी।

आने वाली विपत्ति से बेखबर सुरेश और अनिल कावुल में सीखा हुआ एक लोकगीत गाते हुए ट्रेन में जा रहे थे। लाहौर से दो स्टेशन पहले उनके डब्बे में टिकट-चेकर आया। उसने उनके टिकट देखे और अगले स्टेशन पर—जो कि छोटा-सा स्टेशन था—दोनों को उतार लिया। फिर एक ओर ले जाकर धीरे-से पूछा—'क्या आप लोगों को पता नहीं कि भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध छिड़ गया है?' और यह जानकर कि वे इस बात से बेखबर हैं, उसने उन्हें सलाह दी कि यह बात किसी को न बतायें कि आप भारतीय हैं और चुपचाप वापस कावुल लौट जायें। इस तरह एक पाकिस्तानी नागरिक की मानवीयता की कृपा से वे दोनों मौत के मुंह से सकुशल वापस लौट आये थे।

—क्रांति त्रिवेदी, नयी दिल्ली

०००

चित्र : रवींद्रनाथ ठाकुर

स्वप्न का सत्य

चार वर्ष पूर्व मेरे बहनोई जो हृदय-रोग के मरीज थे, जबलपुर मेडिकल कालेज में दो माह तक चिकित्सा कराने के बाद दमोह अपने घर वापस आये थे। फिर एक दिन अचानक दर्द उठा, तो अकेले ही ट्रेन से जबलपुर चले गये।

उनके जाने के एक दिन बाद रात को मैंने स्वप्न देखा। ट्रेन से मैं कहीं जा रहा हूं। एक स्टेशन पर जब ट्रेन रुकती है और एक डब्बे के दरवाजे पर काफी भीड़ देखकर मैं भी वहां पहुंच जाता हूं। वहां देखता हूं कि कुछ आदमी एक नौजवान की लाश को डब्बे से बाहर निकाल रहे हैं। उनमें से एक ने मुझे बताया कि गाड़ी में ही बेचारे का हार्ट फेल हो गया। बस इसके बाद मेरी नींद खुल गयी।

सवेरे चाय पीकर बैठा ही था कि एक आदमी ने आकर खबर दी कि मेरे बहनोई के पिताजी की रात में मृत्यु हो गयी है। अब मुझे रात के स्वप्न की याद हो आयी और उस पर विचार करता हुआ बहनोई के घर

पहुंचा। वहां जाकर मालूम हुआ कि मेरे बहनोई तो इलाज कराने जबलपुर गये हैं। उन्हीं की याद करते-करते रात में उनके पिताजी की मृत्यु हो गयी।

तुरंत मैंने मेडिकल कालेज, जबलपुर को तार किया और बहनोई के आने की प्रतीक्षा करता हुआ दाह-संस्कार की तैयारी करने लगा। मेरे बहनोई अपने पिता के एकमात्र पुत्र थे, इसलिए ठहरना जरूरी था। प्रतीक्षा करते-करते ३ बज गये, पर कोई समाचार न मिला। बहन भी चिंतित हो गयीं। लोगों के कहने पर उनकी अनुपस्थिति में ही दाह-संस्कार कर दिया गया।

घर आकर जबलपुर में एक रिश्तेदार को तार किया। उन्होंने खबर दी कि मेरे बहनोई मेडिकल कालेज में नहीं हैं। मैंने सोचा शायद इंदौर गये हों, सो इंदौर तार किया। लेकिन वहां से भी कोई खबर नहीं मिली।

दिन बीत गया। रात भी चिंता में गुजरी। अगले दिन एक पुलिस वाले ने आकर खबर दी कि मेरे बहनोई जब जबलपुर जा रहे थे, तभी ट्रेन में ही उनका हार्टफेल हो गया था। उनकी लाश को जबलपुर स्टेशन पर उतारा गया था। उनका सामान व रुपये पुलिस स्टेशन में जमा हैं। जबलपुर गया तो उनके कपड़े व रुपये मिले।

बहुत जगह पढ़ा था कि स्वप्न भावी का पूर्वाभास करा सकते हैं, इस घटना ने मुझे उस मान्यता पर गंभीरता से विचार करने को बाध्य कर दिया।

—ठा. जमना प्रसाद 'जलेश', दमोह, म.प्र.

○○○

क्षुद्रता

कुछ दिन पूर्व एक ऋण-आवेदक अपने एक मित्र के साथ मेरे पास आया। उसे बंधकनामा आदि निष्पादित करना था, जिसमें गवाह के हस्ताक्षर आवश्यक थे। मैंने समस्त प्रपत्र उसके मित्र की ओर गवाही के हस्ताक्षर करने के लिए बढ़ा दिये। उसने तत्काल कहा—'साहब, मैं हस्ताक्षर नहीं करूंगा।'

मैंने पूछा—'क्यों, ये तो गवाह के हस्ताक्षर हैं। तुम साथ में आये हो, यदि तुम नहीं करोगे तो कौन करेगा?'

उसने काफी संकोच के बाद बताया—'असली बात यह है कि आज बी. एस. पी. (भिलाई इस्पात संयंत्र) में मेरी ड्यूटी ओवरटाइम में लगी हुई है। इस कारण मैं आज की तारीख में गवाही का हस्ताक्षर नहीं कर सकता हूं।'

देखिये, सार्वजनिक उद्योग के एक कर्मचारी की ओवरटाइम में दुगुनी राशि पक रही है, और वह अपने कार्यस्थल से सात मील दूर दुर्ग में भ्रमण कर रहा है! यदि यही हालत सार्वजनिक उद्योगों की रही, तो क्या हम कभी इन्हें लाभ पर चला सकेंगे?

—नारायण प्रसाद शर्मा, भिलाई, म.प्र.

महाकलाकार माइकलेंजेलो

पंचम जन्मशती पर श्रद्धांजलि

यूरोपीय मूर्तिकारों में से जिन्होंने अपने परिष्कृत सौंदर्यबोध का कला-मर्मज्ञों के मन पर विशद, गहरा और स्थायी प्रभाव छोड़ा है, तीन विशेष उल्लेखनीय हैं—माइकलेंजेलो, रोदैं और हेनरी मूर। तीनों के सृजन की निजी दिशाएं हैं और स्वतंत्र उपलब्धियां हैं, जिनका मध्यकालीन और आधुनिक कला पर व्यापक प्रभाव परिलक्षित होता है। कहीं-कहीं मूर्तिकला के साथ चित्रकला सहज संपृक्त मिलती है; पर माइकलेंजेलो के व्यक्तित्व में इन दोनों धाराओं के अतिरिक्त अंतःसलिला सरस्वती की भांति कविता भी प्रवाहित मिलती है मूलतः इतालवी भाषा में लिखित उस एक सानेट की अंग्रेजी में अनूदित पं मुझे अविस्मरणीय लगती है, क्योंकि उसमें हर सहृदय की भावना का समावेश हो गया है :

बाइ ब्यूटी आइ एम बाउंड, बाइ ल एन्स्लेव्ड ।

(सौंदर्य से मैं आबद्ध हूं, प्रेम से पराधीन ।)

निश्चय ही माइकलेंजेलो की सम कला-साधना ईसाइयत के धार्मिक परिवे में रहकर भी विशुद्ध मानवीय सौंदर्य और प्रेम के उस प्रेरक आधारपर विकसित हुई, जिससे 'हाइ रिनेसां' का शक्तिशाली आंदोलन व्यापक रूप से प्रभावित था। धरती से आकाश तक व्याप्त प्रकृति के रंगारंग रूप-वैभव ने उसकी कला-चेतना का संस्पर्श नहीं किया, यह आश्चर्य ही है। उसके रेखाचित्रों में एक भी दृश्यांकन नहीं मिला है। वह केवल मानवीय रूपाकारों एवं संवेदनाओं के माध्यम से अपने को आजीवन नये-नये रूपों में व्यक्त करता रहा।

मनुष्य की देह और आत्मा का जित सूक्ष्म निरीक्षण माइकलेंजेलो की कला में मिलता है, वैसा यूनानी कला में भी प्राय दुर्लभ है। कला-पारखियों के अनुसार, 'ग्री आर्ट' में गति एवं भंगिमा का अंकन सदैव सोद्देश्य किया जाता था। कोई न कोई बाह्य घटना उसका आधार बनती थी। ऐसी अवस्था को 'प्रभावात्मक गति' कहा

लेख और चित्रानुकृतियां

डा. जगदीश गुप्त

सकता है। परंतु माइकलेंजेलो की कला-कृतियों में ज्यादातर 'भावात्मक गति' के दर्शन होते हैं, जिसका उद्भव स्वयं भावों में ही निहित रहता है।

ऐसी स्वयंसंपूर्ण भावात्मक चेतना से अनुप्राणित कला की परंपरा का समारंभ माइकलेंजेलो जैसे अत्यंत भाव-प्रवण शिल्पी द्वारा ही संभव था, जिसका सारा जीवन कला को समर्पित होकर बीता। महान कलाकृतियों को रचने के पीछे उसके कौन-से अनुभव रहे होंगे तथा उन्हें रचने के बाद कैसा परितोष उसे हुआ होगा, मैं यही सोचता रहता हूं। रचनाधर्मी माइकलेंजेलो की कलादृष्टि एक दिव्यता-संपन्न पूर्णता पर केंद्रित थी। उसने निष्कर्षतः अपने सुचिंतित विचारों को व्यक्त करते हुए लिखा है:

'आत्मा को पवित्र एवं धर्मप्रवण बनाने वाली वस्तुओं में सर्वोपरि है किसी ऐसी वस्तु की रचना जो पूर्ण हो; क्योंकि ईश्वर पूर्णता का ही दूसरा नाम है, और जो भी पूर्णता के लिए प्रयत्नशील होता है, वह वस्तुतः-ईश्वरत्व को ही प्रतिभासित करने का आकांक्षी होता है।'

'ओं पूर्णमदः पूर्णमिदम्' से गहन रूप से जुड़े हुए भारतीय मानस को यूरोपीय कलाकार के ये अनुभव-सिद्ध शब्द कितने आत्मीय, कितने प्रेरक लगेंगे, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। यह दूसरी बात है कि आज का विषयवस्तु-बोध हमें उस पूर्णता की आकांक्षा से उत्तरोत्तर विरत करता जा रहा है, जिसकी ललक मध्यकालीन धर्माश्रित कला एवं साहित्य में निरंतर मिलती है।

जोना : सिस्टाइन चैपल की यह कलाकृति माइकलेंजेलो के चित्रकार रूप को सफलतापूर्वक सामने लाती है।

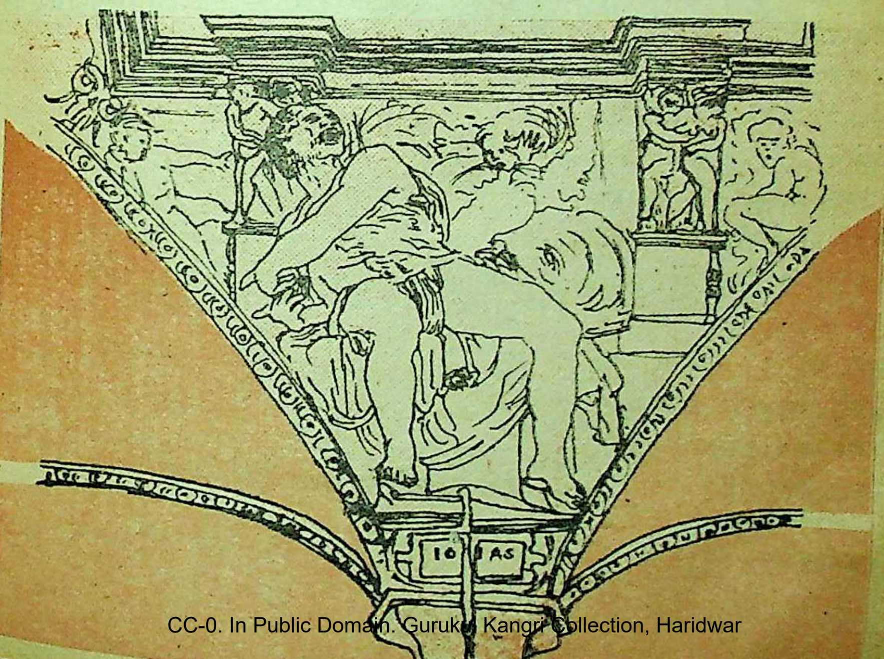

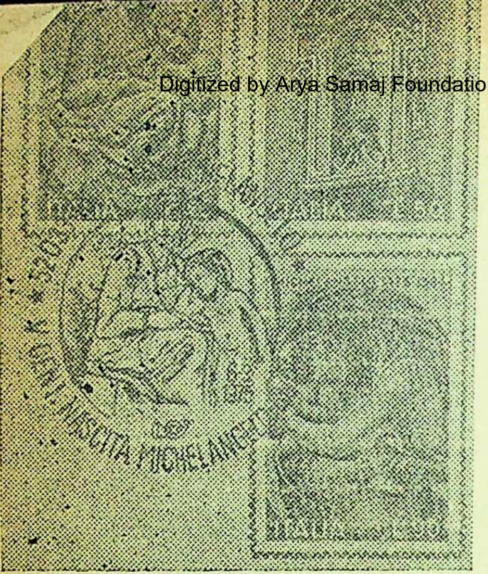

जन्म पंचशती के अवसर पर इटली द्वारा जारी किये गये डाक-टिकट।

अपूर्णता को ही यथार्थ मानकर आधुनिक जीवन-दृष्टि जिस बिंदु तक पहुंच सकी है, उसके आगे की मंजिल तय करते समय मझे विश्वास है कि मानवता माइकलेंजेलो-जैसे अप्रतिम कलाकार के उस संदेश को आदरपूर्वक स्मरण करेगी—भले वह उस पर वैसी अटूट आस्था न ला सके, जैसी विज्ञान की प्रगति से पूर्व संभव थी। जो अपूर्णता अपनी छटपटाहट से संभावित पूर्णता को व्यंजित करने लगती है, वह भी कम आकर्षक नहीं होती। आधुनिक कला मुख्यतया इसी आधार पर प्रतिष्ठित है।

माइकलेंजेलो ने शुद्धतावादी आदर्श नैष्ठिक धर्मोपासक की अपेक्षा, एक कलाकार का उन्मुक्त पाप-पुण्यमय, अनुभव-प्रधान सहज जीवन जीना अधिक श्रेयस्कर समझा। पोप-जैसे गौरवशाली धर्मगुरुओं से वह मैत्री का-सा संबंध रखता था। उनकी शिष्यता का भाव उसमें नहीं था, क्योंकि उनके अंतरंग जीवन से वह सुपरिचित था। उसने कला में छल-छद्म को भी वर्जित नहीं माना और अनेक वार विचक्षणों को भी प्रवंचित करने में सफलता पायी। प्राचीन कलाकृतियों की अनुकृति करके चित्रित कागज को धुआं दिखाकर तथा निर्मित मूर्ति को जमीन में गाड़कर उसने उन्हें 'ऐन्टीक' बनाकर बहुतों को चकित एवं विभ्रमित कर दिया। जिन कला-विद्यालयों में उसने शिक्षा पायी, उनके गुरुओं को भी उसने अपनी असाधारण प्रतिभा-संपन्नता, दक्षता एवं प्रत्युत्पन्न बुद्धि से इतना चमत्का किया कि वे शिक्षक की जगह उसके मित्र

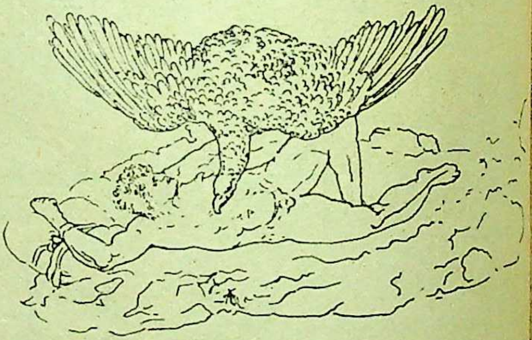

बंदी का कलेजा खाने वाला गिद्ध (१५३२ ई.)

एवं सहयोगी बन गये।

गोगैं, तुलूज-लात्रेक तथा वान गो आदि की जीवनियों से प्रकट है कि अपने 'माडलों' से, जो ज्यादातर नारी-वर्ग के होते थे, मानसिक ही नहीं दैहिक संबंध रखना मध्यकालीन यूरोपीय कलाकारों के जीवन की सामान्य बात रही है। परंतु माइकलेंजेलो सूफियों की तरह 'अमरदपरस्ती' की ओर भी प्रवृत्त हुआ, ऐसा माना जाता है। कम से कम इतना तो सत्य है ही कि उसने बहुत-सी कविताएं माडल बनने वाले युवकों के प्रति लिखीं और उन्हें अपने बनाये अनेक स्केच भी उपहारस्वरूप भेंट किये। ऐसे ही एक तरुण मित्र पोगियो को आर्थिक सहायता देने के भी प्रमाण मिले हैं। 'विक्टर' नामक प्रसिद्ध कलाकृति के माडल गेरार्दो पेरिनी तथा उपहार-संग्राहक कैविलियरी के नाम इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। लेख के

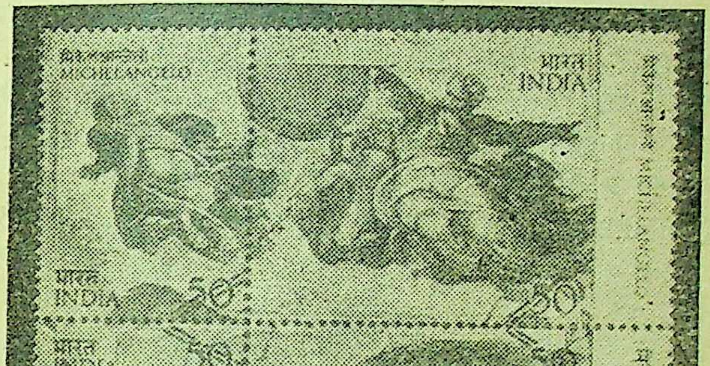
MICHELANGELO
भारत INDIA
भारत INDIA
50
भारत INDIA
50
भारत INDIA
50
MICHELANGELO
भारत INDIA

भारत द्वारा जारी किये गये चार-रंगी चार टिकटों का समूह। ऊपर के दो टिकटों में 'सूर्य, चंद्र और ग्रहों की सृष्टि'; नीचे के दो टिकटों में 'आदम की सृष्टि'। माइकलेंजेलो ने ये दोनों महान कृतियां सिस्टाइन चैपल, रोम में अंकित की हैं।

प्रारंभ में उद्धृत सानेट की पंक्ति इसी दूसरे नाम की प्रेरणा का फल कहा जाता है।

किंतु निश्चय ही माइकलेंजेलो का भावात्मक जीवन उन्मुक्त होते हुए भी कुत्सित नहीं रहा होगा; क्योंकि जिन जीवन-मूल्यों की उपलब्धि उसने अपनी स्पृहणीय कला के द्वारा की, वे असाधारण और उदात्त हैं। लोकदृष्टि कलाकार के अंतरंग जीवन की पहचान करने में बहुधा चूक जाती है; क्योंकि उसकी प्रवृत्ति सामाजिक रूढ़ियों से ग्रस्त होती है, जिनसे ऊपर उठना उसके लिए बहुत कठिन होता है। कीचड़ और कमल के बीच एक प्राणसंचार-संबंध भी होता है, जो जीवनवाही होने के कारण कभी अवांछित या अग्राह्य नहीं माना जा सकता।

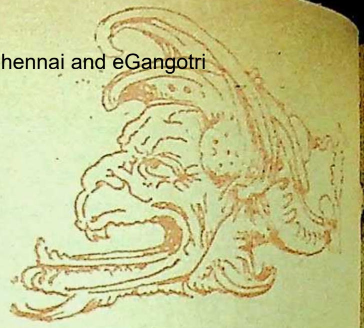

एक रोचक आकल्पन, जिसकी रचना माइकलेंजेलो ने मूर्तन के आधार-रूप में की थी।

जो कला अनुकूल-प्रतिकूल, मधुर-तिक्त, कोमल-कटु उभयात्मक जीवनानुभव से गहराई के साथ संपृक्त नहीं होती, वह न तो स्थायित्व ग्रहण कर पाती है और न प्रेर ही सिद्ध होती है। सौंदर्य ही कला का प्र है और अनुभूति की ईमानदारी ही उसकी नैतिकता। कला और साहित्य के क्षेत्र में उन्हीं विचारों का महत्त्व होता है, जि हम जी सकें। केवल दूसरों को समझाने या पराभूत करने के लि उन्हें हथियार मात्र न बनायें।

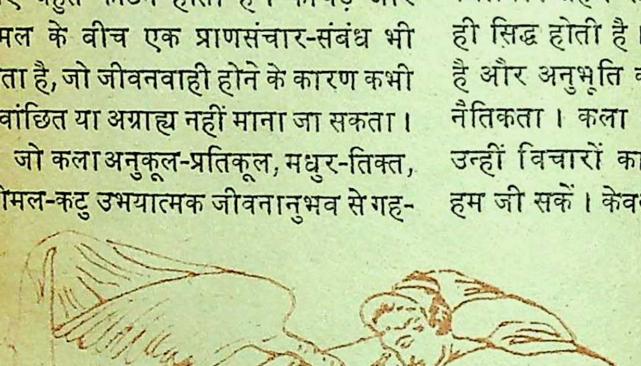

'लीडा और हंस' : माइकलेंजेलो द्वारा अपनी विख्यात कृति के लिए रचित 'कार्टून' की, समकालीन चितेरे रोसो फायोरेन्टिनो द्वारा अंकित रेखानुकृति पर से।

'हाइ रिनेसां' भावात्मक ही नहीं, एक सशक्त वैचारिक आंदोलन भी था। १४ वीं शती से ही फ्रांसीसी और स्पेनी लोगों का वैमनस्य अपनी काली छाया इटली पर फैलाने लगा था। १६ वीं शती के प्रथम चरण तक आते-आते यह आक्र

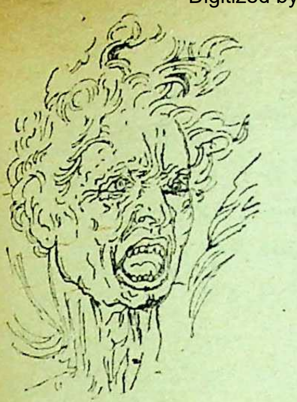

सशक्त भयाक्रांत मुख वाले 'अभिशप्त आत्मा' नामक एक प्रसिद्ध चित्र के मूल अंकन की रेखानुकृति।

मणकारी संघर्ष और भी गहरा हो गया था। इटली की अग्रगण्य नगरी रोम को जर्मन सेनाओं ने आक्रांत किया। यह राजनैतिक उथल-पुथल ही एक प्रकार से इटली की राष्ट्रीय चेतना को महान पुनरुत्थानवादी आंदोलन की ओर मोड़ने में सहायक हुई। उसके द्वारा कला के क्षेत्र में भी नवोन्मेष उत्पन्न हुआ। स्वातंत्र्य और स्वाभिमान तथा नये कृतित्व के माध्यम से पुरातन गौरव की पुनः-प्रतिष्ठा ही युगधर्म बन गया।

इसी पृष्ठभूमि में माइकलेंजेलो की कला का मूल्यांकन किया जाना उचित है। वह अपने पूर्ववर्ती प्रख्यात कलाकारों से प्रभावित हुआ और परवर्ती कलाकारों को उसने प्रभावित भी किया। उसके समकालीन महाकलाकार थे राफायल और लियोनार्दो द विंची। आर्थर काउंट द गोबिनो ने माइकलेंजेलो की जीवनी लिखते हुए इन दोनों विश्वविख्यात शिल्पियों से उसके बहुविध संबंधों का निरूपण किया है, जिनमें प्रेरणा के साथ प्रतिस्पर्धा का भाव भी मिलता है।

माइकलेंजेलो की कला में भावना और मुद्रा की जो एकान्विति मिलती है, वह इन समकालीन कलाकारों में भी कम ही लक्षित होती है; यद्यपि उनकी भी अपनी ऐसी विशेषताएं हैं, जो अन्यत्र नहीं मिलतीं। लियोनार्दो की महिला-मूर्तियों में माधुर्य

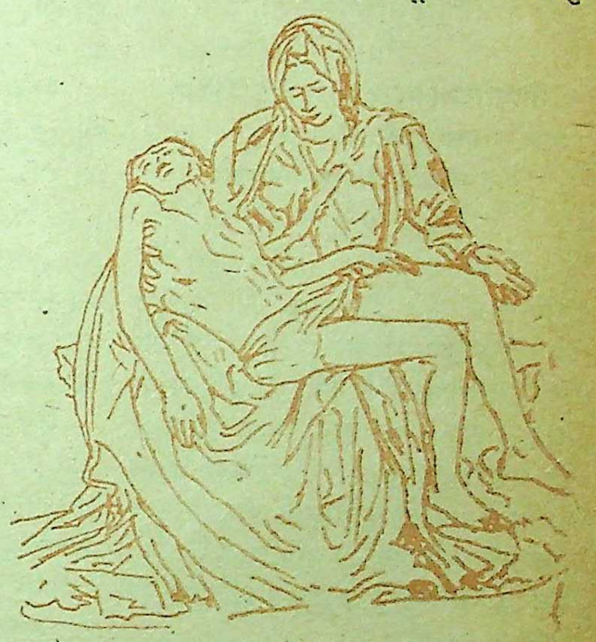

पीएता : फ्लोरेंस की कला की विशिष्ट भावमयता, गंभीरता और रचनात्मक पूर्णता से युक्त संगमरमर की मूर्ति (सेंट पीटर्स, रोम)।

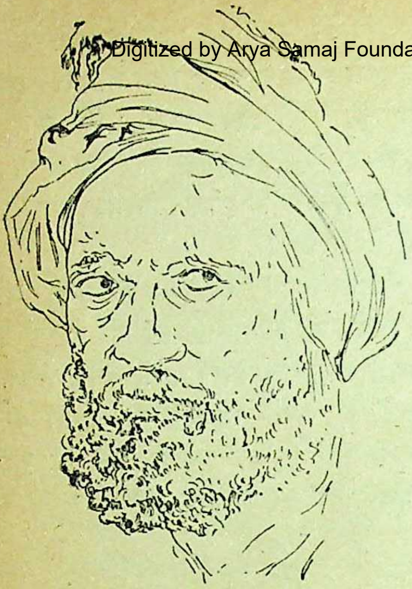

ब्यूगियार्दिनी द्वारा १५२२ ई. में विनिर्मित माइकलेंजेलो की मुखाकृति (लूव्र संग्रहालय) का रेखानुकरण।

अधिक है, जबकि माइकलेंजेलो की पुरुष-मूर्तियां अधिक सशक्त, सामंजस्यपूर्ण एवं प्रभावशाली हैं। लियोनार्दो के युद्धांकन भी अपेक्षाकृत अधिक उग्र हैं। राफायल तथा माइकलेंजेलो की कला में जो विपर्यायभाव मिलता है, वह 'हाइ रिनेसां' की कला को एकता के स्थान पर अनेकता प्रदान करता है। दोनों कलाकारों की मानसिक विसंगति कला-जगत् में सुविदित है। राफायल के अल्पायुष्य ने उसके इतिहास को संक्षिप्त कर दिया।

माइकलेंजेलो अधिक समय तक अपने शिष्यों का सहयोग बर्दाश्त नहीं कर पाता था। क्योंकि अपने से नीचे स्तर वाले व्यक्तियों से उसका वैर-प्रीति का संबंध टिकाऊ नहीं हो पाता था। उसकी उत्क परिश्रमशीलता भी शिष्यों को भारी पड़ थी। उसके पारिवारिक-जीवन के बहुत पक्ष अभी सामने नहीं आ सके हैं; इसीलि व्यक्ति के रूप में उसके बारे में अधिक कुछ कहना संभव नहीं है।

परिभ्रमण भी उसने विशेष नहीं किया। प्रारंभ से १५०५ ई. तक के ३० वर्ष और फिर १५१६ से १५३४ तक के १८ व अपने जन्मस्थल फ्लोरेंस में बिताये; ४ वर्ष का शेष भाग रोम में व्यतीत हुआ-१५०५ से १५१६ तक और १५३४ से १५६४ तक। ८९ साल की लंबी आयु भोग-कर रोम में ही उसने अपनी जीवन-लीला समाप्त की। उसका सारा जीवन कलाक्षेत्र की सक्रियता में ही बीता। उसके कृति ने इन दोनों नगरों को पेरिस, वेनिस, मिला और एथेन्स के समकक्ष ला दिया। वैटिक का सिस्टाइन चैपल वह कलातीर्थ है, युगों तक उसकी छेनी और तूली के वै को सर्वजन-सुलभ बनाता रहेगा।

मैं सोचता हूं– वह दिन भी कभी आये जब मैं विदेश जाकर प्रत्यक्षतः माइकलें की पिएता, डेविड, बैकस, आदम, हर्कुली सैम्सन-डिलाइला आदि सुप्रसिद्ध कल कृतियों को देखकर कृतार्थता का अनु कर सकूंगा ! जो लोग इस सौभाग्य को सके हैं, मुझे उनसे ईर्ष्या है। यों आज यू में कला-मुद्रण का स्तर इतना ऊंचा हो है कि उससे वस्तुस्थिति का बहुत कुछ

सितं

यों भी हो जाता है; परंतु वह परिवेश तो पूरा का पूरा लाया नहीं जा सकता, जिसमें कलाकृतियां उपजीं और प्रतिष्ठित हुईं।

संसार की अनेक भाषाओं में माइकलेंजेलो की कला पर श्रेष्ठ पुस्तकें उपलब्ध हैं। 'दि वर्ल्ड आफ माइकलेंजेलो' एक ताजा उदाहरण है। लूव्र आदि अनेक विश्वप्रसिद्ध कला-संग्रहालयों में उसके स्केच एवं 'कार्टून' (यह शब्द पहले रेखांकित प्रारूप के लिए प्रयुक्त होता था, अब व्यंग्यचित्र के लिए रूढ़ हो गया है) सुरक्षित हैं। भले ही उनमें से कुछ की प्रामाणिकता विवादग्रस्त हो, वे कलाकार के उन प्रयत्न-सोपानों का बोध कराते हैं, जिन पर पांव रखकर वह अपनी उपलब्धियों के चरम बिंदुओं को छू सका। कुछ स्केच इससे उलटी प्रक्रिया भी व्यक्त करते हैं, यानी स्वयं कलाकार ने स्वनिर्मित 'मास्टर पीसेज़' के रेखांकन किये। स्मृति, उपहार, शिष्यार्थ अभ्यास आदि अनेक उद्देश्य हो सकते हैं इस विपर्यय के। निर्वसन देह माइकलेंजेलो की कल्पना को मानवीय भावों से विशेष प्रदीप्त करती थी, ऐसा प्रतीत होता है; क्योंकि इस क्षेत्र में उसका कृतित्व अद्वितीय है। उसका कहना है—'कलाकार अपने मस्तिष्क से चित्रण करता है, हाथों से नहीं।' यह अनुभव १५४२ का है, जब वह वृद्ध हो चला था।

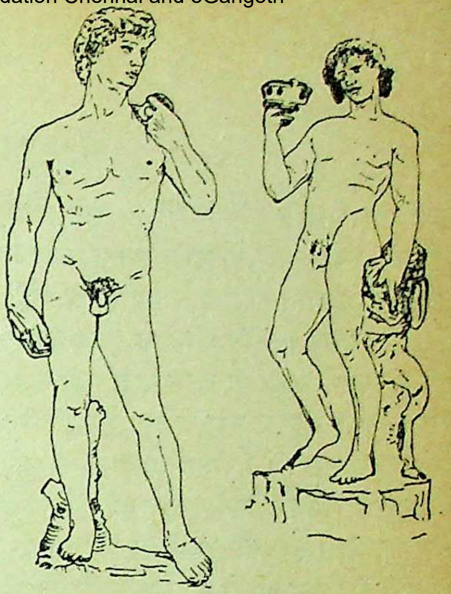

डेविड (बायें): १६ फुट १०।। इंच की अर्थात् मानवाकृति से लगभग तीन गुना बड़ी सफेद पत्थर की मूर्ति, जो कलात्मक परिपाक और विशालता में अनुपम है। बैकस (दायें): यूनानी मद्य-देवता की ८० इंच ऊंची संगमरमरी मनोरम मूर्ति।

देह के माध्यम से देहातीत अस्तित्व की प्रतीति, अपूर्णता के सहारे पूर्णता की व्यंजना, नग्नता के द्वारा सौंदर्यविरणों की सृष्टि, धार्मिक रूढिवादिता के बीच मानवीयता की प्रतिष्ठा तथा एकदेशीयता की परिधि में बंधकर भी विश्वव्यापी प्रभाव की शक्ति माइकलेंजेलो की कला की पहचान के प्रमुख आधार हैं। मध्यकालीन कलाकृतियों के महत्त्व का निर्धारण भी अधिकतर इन्हीं के द्वारा किया जाता है।

—१८१-ए/१, नागवासुकि, इलाहाबाद

★

विचित्र जीवों की रहस्यमय मौत

डा. प्रकाशचंद्र दीक्षित

वह एक अजीब दुनिया थी। चारों ओर घने-घने जंगल, दलदली जमीन, कीचड़ से भरी नदियां। कहीं ऊंचे पहाड़ तो कहीं गरजते सागर। जीव भी ऐसे विचित्र कि उनके सामने आज के जीव कहीं नहीं ठहरते। हाथी और ऊंट से कई गुना बड़े और कई गुना भारी। टैरोसार नाम का उड़ने वाला भीमकाय जीव आकाश का एकच्छत्र शासक था। इख्थ्योसार तथा मौजासार नाम के विशाल जीवों का सागर पर एकाधिपत्य था। विश्वास करना कठिन प्रतीत होता है, परंतु वास्तव में यह सब कुछ यहीं था, हमारी इसी धरती पर—आज से कोई १७ करोड़ वर्ष पहले।

पूरे १० करोड़ वर्षों तक ऐसे विशाल और भीमकाय जीव हमारी इस पृथ्वी पर विचरते रहे—किसी एक देश में नहीं वरन सारे संसार में, केवल थल पर ही नहीं अपितु जल और नभ में भी। फिर अचानक ही पृथ्वी पर प्रलय का वातावरण छा गया। संसार-भर के ये तमाम भीमकाय जीव बड़े रहस्यमय ढंग से मौत के शिकार हो गये।

ऐसा क्यों हुआ? क्यों सारे के सारे जीव लगभग एक साथ ही मौत की गोद में सो गये? क्या इनका कोई उत्तराधिकारी नहीं जीवित बचा? ये कुछ प्रश्न हैं, जिनका संतोषजनक उत्तर पिछले डेढ़ सौ वर्षों की वैज्ञानिक प्रगति के बावजूद अभी तक नहीं मिल सका है।

इन विचित्र जीवों को 'डायनोसार' की संज्ञा दी गयी है। जीवविज्ञान की दृष्टि से ये सरीसृप वर्ग के सदस्य हैं, इसलिए मोटे तौर पर इन्हें मगर, सांप तथा छिपकली के परिवार में संमिलित किया जा सकता है।

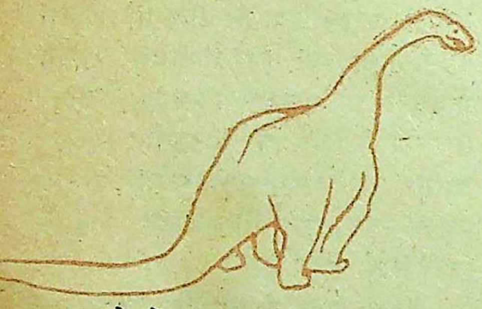

ब्रोन्टोसारस

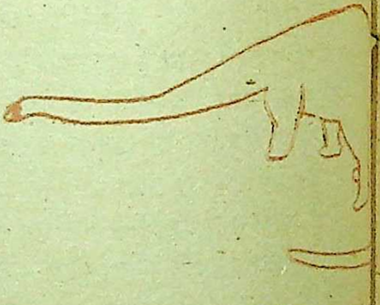

डिप्लोडोकस

इनके अपने अनेक भेद-उपभेद थे। कोई जल-चर था, कोई थलचर और कोई नभचर।

डायनोसारों में सबसे अधिक जाना-पहचाना था ‘ब्रोन्टोसारस’। कहा जाता है कि यह गरजने वाला जीव था। यह चार पैरों पर चलता था और इसकी लंबाई लगभग २०-२२ मीटर थी। अनुमान है कि इसका वजन ४० टन के लगभग होता था। (शायद आप जानते हों, हाथी का वजन औसतन ४ टन से अधिक नहीं होता है।) काया इतनी भारी होने पर भी इसका मुंह बहुत छोटा होता था और इसका दिमाग तो केवल एक पौंड वजन का होता था। स्पष्ट है कि यह निहायत मूर्ख जानवर रहा होगा। यह पेड़-पौधे और पत्तियां आदि खाकर गुजारा करता था।

इसी जाति का एक अन्य जीव था ‘डिप्लोडोकस’, जो चार पैरों पर चलने वाले डायनोसारों में सबसे बड़ा था। अवशेषों पर से इसकी लंबाई २९ मीटर तक नापी गयी है। यह अपना अधिकांश समय पानी में बिताता था। सारे धड़ को पानी में छिपाकर यह अपने छोटे-से मुंह को ही पानी से बाहर रखता था—सांस लेने तथा देखने के लिए।

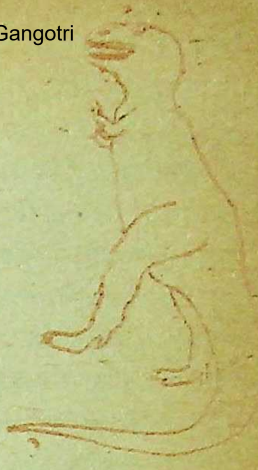

टायरेनोसारस रेक्स

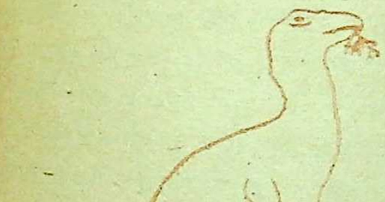

इगुआडोन

डिप्लोडोकस को सबसे अधिक खतरा हुआ करता था ‘ऐलोसारस’ नाम के जानवर से, जो केवल १०-११ मीटर लंबा होते हुए भी ब्रोन्टोसारस तथा अन्य डायनोसारों को मारकर खा जाता था। इसके विशाल जबड़ों तथा चाकू-जैसे तीखे दांतों से सारा डायनोसार-संसार आतंकित था। यह भी चार पैरों वाला था; परंतु पिछले दो पैरों के बल चलता था तथा फुर्ती से अपने शिकार पर आक्रमण करता था। इसके अगले दो पांव या कहिये हाथ नुकीले पंजों से लैस हुआ करते थे।

इसी से मिलते-जुलते जीव ‘टायरेनोसारस रेक्स’ को पृथ्वी का अब तक का सबसे भयानक जीव कहा जा सकता है। १५ मीटर

लंबे इस डायनोसार को 'अत्याचारियों का बादशाह' (किंग आफ टाइरेन्ट्स) कहा गया है।

डायनोसारों में सबसे अधिक संख्या में पाये जाने वाले जीव थे 'ट्रेकोडोन', जो १० मीटर से अधिक लंबे होते थे। इनके खड़े होने और चलने का ढंग कंगारू जैसा था। इनके दो हजार दांत होते थे, जिनका उपयोग ये पत्ती और फल-फूल चबाने में ही करते थे। इन्हीं के सगे-संबंधी थे 'इगुआडोन', जिनके अवशेष इंग्लैंड और बेल्जियम में मिलते हैं। इस वर्ग के अन्य सदस्य थे कोरिथोसारस, सारोलोफस तथा पैरासारोलोफस।

ऐसे भी कुछ डायनोसार थे, जिनके शरीर पर अपनी आत्मरक्षा तथा शिकार के लिए बड़े-बड़े सींग, दांत अथवा ढालें होती थीं। 'स्टेगोसारस' इनमें से बहुत ही विचित्र जीव था। चार पैरों पर चलने वाले इस ५ मीटर लंबे जीव की पीठ पर तिकोनी खड़ी ढालों की दुहरी पंक्तियां होती थीं। इसकी पूंछ के सिरे पर ३-३ फुट लंबे तथा ६ इंच मोटे कांटे होते थे, जिनका प्रयोग करके यह बड़े-बड़े डायनोसारों के पेट फाड़ डालता था। इसके बारे में एक उल्लेखनीय बात यह है कि आकार में हाथी से बड़ा होते हुए भी इसका सिर बहुत छोटा होता था, जिसमें बादाम के ही बराबर का दिमाग होता था। शायद इसी कारण यह ब्रोन्टोसारस से भी ज्यादा मूर्ख होता था।

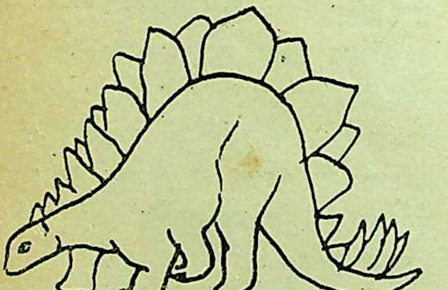

स्टेगोसारस

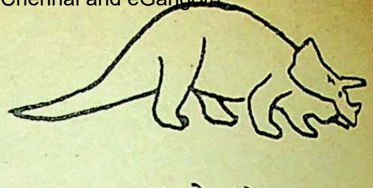

ट्रायसेराटोप्स

इस प्रकार के अंगों से विभूषित भीमकाय जीवों में 'ट्रायसेराटोप्स' सबसे अजीब था। इस १० मीटर लंबे डायनोसार का सिर बहुत ही बड़ा होता था, जिस पर दो बड़े-बड़े सींग होते थे। उनके अलावा तोते की चोंच जैसा एक और सींग इसकी नाक के ऊपर होता था। डायनोसारों की एक-आध किस्म को छोड़कर शेष कोई इसके मुकाबले में टिक नहीं सकते थे। इसका वजन लगभग द टन के बराबर होता था। इस जीव के कई अन्य निकट संबंधी भी थे।

यह तो हुई थल पर बिचरने वाले डायनोसारों की बात, जिनके कि वास्तव में सैकड़ों भाई-बिरादर और रिश्तेदार थे। जल और नभ में डायनोसारों के ही आकार

प्रकार के अन्य जीव पाये हुए थे। उन सबके नामोल्लेख के लिए भी कई पन्ने चाहिये। संक्षेप में, हमारी धरती ऐसे-ऐसे अजीबोगरीब भीमकाय जीवों से भरी पड़ी थी, जिनके अस्तित्व पर विश्वास करना आज साधारण आदमी के बस के बाहर की बात है। परंतु आज से लगभग ७ करोड़ वर्ष पूर्व इन जीवों की जितनी भी किस्में जीवित थीं, वे सबकी सब एकाएक ही समाप्त हो गयीं। पृथ्वी के रंगमंच पर अचानक ही पटाक्षेप हो गया और वह ड्रामा, जिसमें डायनोसार भाग ले रहे थे, खत्म हो गया। परदा जब फिर से उठा तो बिलकुल नयी शक्ल के जीव रंगमंच पर बिचर रहे थे, जिन्हें हम स्तनधारी कहते हैं। पृथ्वी के धरातल पर भी परिवर्तन हुए और आज दिखाई देने वाली बड़ी-बड़ी पर्वत-शृंखलाओं ने जन्म लेना आरंभ किया। किंतु यह प्रश्न कि डायनोसार क्यों समाप्त हो गये, आज भी अनबूझ पहेली ही बना हुआ है।

वैज्ञानिकों ने प्रश्न को कई प्रकार से हल करने की कोशिश की है और इस प्रयत्न में अनेक सिद्धांत सामने आये हैं। उनमें से एक यह है कि उस काल में धरती पर हुए परिवर्तनों के कारण दलदल तथा उन पर उगे घने जंगल धीरे-धीरे गायब होने लगे। इस प्रकार शाकाहारी डायनोसारों को खाने की कमी होने लगी तथा वे समाप्त होने लगे। इसके बाद विनाश की बारी आयी मांसाहारी जीवों की, जो डायनोसारों खाते थे।

कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि खाद्याभाव की स्थिति उत्पन्न होने पर डायनोसार अपने ही अंडों को खाने लगे थे और इस प्रकार उनकी अगली पीढ़ियां पैदा होने के पूर्व ही समाप्त हो गयीं। कुछ अन्य विद्वानों की मान्यता है कि इस युग में जो स्तनधारी जीव पहले-पहल प्रकट हुए, वे डायनोसारों के अंडे खाकर गुजारा करने लगे और इस प्रकार डायनोसारों का धीरे-धीरे सफाया हो गया। इन तर्कों में कुछ दम तो अवश्य है। परंतु विश्वास नहीं होता कि जल, थल और नभ पर शासन करने वाले सारे के सारे भीमकाय जीव इस तरह समाप्त हो गये होंगे।

भारतीय भूसर्वेक्षण विभाग के विज्ञानियों को हाल में आंध्र प्रदेश के आदिलाबाद जिले में प्राणहिता नदी की घाटी में १५ करोड़ वर्ष पुराने वनस्पतिभक्षी डायनोसारों के अवशेष खुदाई में मिले थे। इससे प्रोत्साहित होकर उन्होंने और खोज की तो महाराष्ट्र की सीमा पर उन्हें एक विशाल वनस्पतिभक्षी डायनोसार का संपूर्ण अस्थिपंजर प्राप्त हो गया। इतने पुराने 'महाद्वीपीय न्यास' (कान्टिनेंटल डिपाजिट) बहुत ही बिरले मिलते हैं। विज्ञानियों को इसी इलाके से उड़ने वाले सरीसृपों, डिनायड् और गोनायड् मछलियों के अस्थिपंजर तथा अनेक वनस्पतियों के जीवाश्म भी मिले हैं।

तो फिर क्या पृथ्वी की बदलती हुई जलवायु ने इन जीवों को समाप्त कर दिया? क्या ये विशाल जीव बर्फ की चादर में दबकर हमेशा के लिए सो गये? परंतु इसका

कोई प्रमाण नहीं मिलता कि आज से ७ करोड़ वर्ष पहले सारा संसार हिमाच्छादित था। तब फिर क्या संसार-भर की जलवायु इतनी गर्म हो गयी कि उसके कारण इनका जीना असंभव हो गया? पर भूवैज्ञानिक तथ्यों को देखते हुए इसकी संभावना भी बहुत ही कम लगती है।

कुछ वैज्ञानिकों का खयाल है कि ये जीव शायद महामारियों के शिकार हो गये। कुछ अंश तक तो यह बात सही हो सकती है। किंतु प्राय: देखा यह जाता था कि एक महामारी से एक ही नस्ल के जीव ग्रसित होते हैं और अन्य नस्लों पर उसका प्रभाव नहीं होता। फिर यह बात भी आसानी से गले नहीं उतरती कि सारे संसार में एक समय में एक ही बीमारी से अथवा कई बीमारियों से इन जीवों का सफाया हो गया हो।

परंतु अनेक स्थानों पर डायनोसारों के ऐसे अवशेष मिलते हैं, जिनसे आभास होता है कि किसी आकस्मिक प्राकृतिक प्रकोप के कारण सामूहिक रूप से ये जीव समाप्त हो गये होंगे। यहां वैज्ञानिकों में कई मत हैं। कुछ यह मानते हैं कि इस प्रकार के प्रकोपों से कुछ स्थलों के डायनोसार अवश्य मर सकते हैं, किंतु संसार-भर में इस प्रकार के संकटों से सारे डायनोसार मर जायें, यह कुछ विश्वसनीय नहीं लगता। फिर भी अनेक वैज्ञानिकों की यही राय है कि विश्वव्यापी प्राकृतिक प्रकोपों के कारण ही ऐसा हुआ।

कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार, पृथ्वी पर हुए परिवर्तनों अथवा विश्वव्यापी संकटों के लिए पृथ्वी के बाहर की शक्तियां जिम्मेदा थीं। अमरीका के दो वैज्ञानिक डा. टे तथा डा. टकर इस विचार के समर्थकों में प्रमुख हैं। उनका कहना है कि ब्रह्मांड में किसी नक्षत्र के विस्फोट के कारण जो ब्रह्मांडीय (कास्मिक) विकिरण निकले होंगे, उनकी वजह से सारी पृथ्वी पर रहने वाले डायनोसारों का एक साथ अंत हो गया होगा। इन वैज्ञानिकों का यह भी कहना है कि विकिरणों का कुप्रभाव केवल जीवों पर ही हुआ होगा तथा पेड़-पौधे उनसे अप्रभावित रहे होंगे। इस सिद्धांत की खूबी यह है कि इससे केवल जीवों के समाप्त होने की संभावना आसानी से समझ में आ जाती है। हो सकता है कि ये विशाल जीव इन विकिरणों से अत्यधिक प्रभावित हुए हों, जबकि चूहे जैसे स्तनधारी जीव जिनका अभी प्रादुर्भाव हुआ ही था, बिलों में रहने के कारण विकिरणों से बच गये हों। यह सिद्धांत दिलचस्प तो बहुत है, परंतु इसकी पुष्टि में कोई ठोस प्रमाण मौजूद नहीं हैं। वैज्ञानिक आजकल इन्हीं अप्राप्त प्रमाणों की खोज में हैं।

इन सिद्धांतों तथा अनुमानों की शृंखला में एक नयी कड़ी जोड़ी है येल विश्वविद्यालय (अमरीका) के डा. मैक्एलस्टर ने। उन्होंने कुछ जीवों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला है कि जो जीव अधिक आक्सिजन ग्रहण करते हैं, उनकी नस्ल के अपेक्षाकृत जल्दी समाप्त होने की संभावना होती है; इसके विपरीत जो जीव अपेक्षा-

[शेष पृष्ठ १२७ पर]

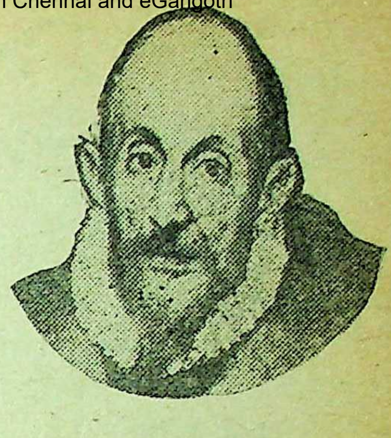

* * * *

चित्रप्रश्न-३

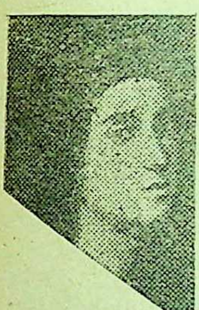

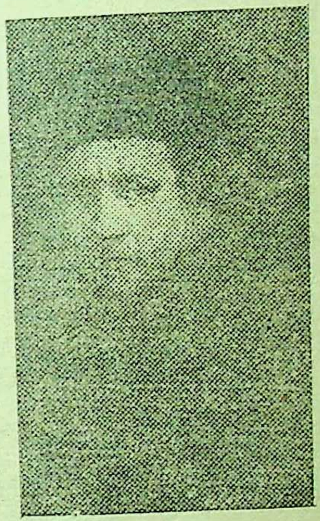

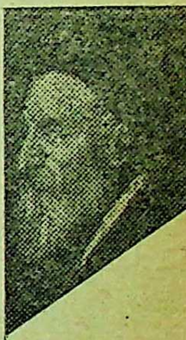

इसी अंक में पृष्ठ १०० पर डा. जगदीश गुप्त के लेख में महान चित्रकार-मूर्तिकार माइकलेंजेलो की जो तस्वीर दी गयी है, उसे कुछ लोग उसका आत्मचित्र (सेल्फ-पोर्ट्रेट) मानते हैं–यद्यपि इस विषय में निश्चयपूर्वक कुछ कहना कठिन है। किंतु इस पृष्ठ पर जो पांच चित्र दिये जा रहे हैं, ये निश्चय ही पुनर्जागरण-कालीन यूरोप के पांच महान चितेरों के आत्मचित्र हैं। प्रायः इन सभी चितेरों के बारे में नवनीत में लेख छपे हैं। इनमें से एक आत्म-चित्र तो कोई चार वर्ष पूर्व छपा था। कोशिश करके देखिये कि आप किन-किन को पहचान पाते हैं। [चित्रप्रश्न-२ का उत्तर पृष्ठ २७ पर।]

हंसी के बुलबुले

गिरीश आचार्य

'हां', फिल्म-अभिनेता ने गहन चिंतन की मुद्रा में कहा—'यह पता लगाने म मुझे सात बरस लग गये कि असल में मुझमें अभिनय की प्रतिभा नहीं है।'

'और तब शायद आपने अभिनय के पेशे को तिलांजलि दे दी?'

'नहीं भाई, तब तक बहुत देर हो चुकी थी......मैं स्टार बन चुका था।'

ooo

प्रश्नपत्र में : भारत से किसी एक वर्ष में निर्यात की गयी कुल साइकलों की संख्या बताओ।

उत्तरपत्र में : ३२६ ई. पू. में – ० साइकलें।

ooo

सभापति के मुंह से अपनी वक्तृत्व-कला की बढ़ी-चढ़ी प्रशंसा सुनकर तनिक लजाये हुए वक्ता ने अपना भाषण इन शब्दों में आरंभ किया :

'सभापतिजी ने मेरे बारे में जो-जो बातें बतायीं, उन्हें सुनकर मैं स्वयं अपना भाषण सुनने को आतुर-सा हो उठा हूं।'

ooo

ऊमस-भरी दुपहरी में एक नवधनिक अपनी पत्नी के संग खरीदारी करने निकला। कार के शीशे चढ़े हुए थे। उसने पत्नी से उन्हें उतार देने को कहा।

इस पर पत्नी विफर पड़ी—'क्या? शीशे उतार दूं, और सारे मुहल्ले को यह जान जाने दूं कि हमारी कार एयर-कंडिशंड नहीं है!'

ooo

रिपोर्टर : क्या यह खेत आपका है?

किसान : बेशक।

रिपोर्टर : क्या इसमें तेल निकला है?

किसान : हां, पांच तेलकूप हैं। दिन में उनसे पांच सौ बैरल तेल निकलेगा।

रिपोर्टर : तब तो बहुत पैसा मिलेगा! इतने पैसों से आप क्या करेंगे?

किसान : एक ऐसा खेत खरीदूंगा, जिसमें तेल न हो।

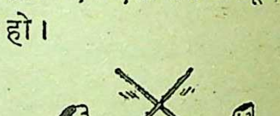

गैरराष्ट्रीयकृत बैंक में एक कुशल युवा कर्मचारी को तीव्रता से महसूस हुआ कि उसकी प्रतिभा का सही मूल्यांकन और उपयोग तो विज्ञापन-व्यवसाय में ही हो सकता है। सो उसने दफ्तर में ही बैठकर एक विज्ञापन-कंपनी के नाम अर्जी लिखी और उसके ऊपर लाल अक्षरों में टाइप किया—'बैंक में कैद प्रतिभा को मुक्ति दिलाइये।'

संयोग से बैंक-मैनेजर की नजर अर्जी पर पड़ गयी। उसने युवक को बुलाकर कहा—'अब आप कैद नहीं हैं। हमने आपको मुक्त कर दिया है।'

०००

मंगल से पृथ्वी पर भेजे गये प्रथम यात्रियों का आकाशयान धरती पर उतरने से पहले शहर पर से उड़ रहा था। एक मंगल-वासी ने छतों पर लगे टेलिविजन के एरियल देखकर बड़ी आतुरता और उत्सुकता से अपने साथी से कहा—'देखो-देखो! लड़कियां!'

०००

डाक्टर : दिन-भर में आप कितनी सिगरेट पीते हैं?

रोगी : अक्सर पंद्रह।

डाक्टर : अब से भोजन के बाद बस एक सिगरेट पिया कीजिये।

तीन महीने बाद रोगी फिर डाक्टर के पास आया, तो उसका वजन बहुत ज्यादा बढ़ गया था।

डाक्टर : देखा, आपने मेरी सलाह मानी और आपका वजन बढ़ गया।

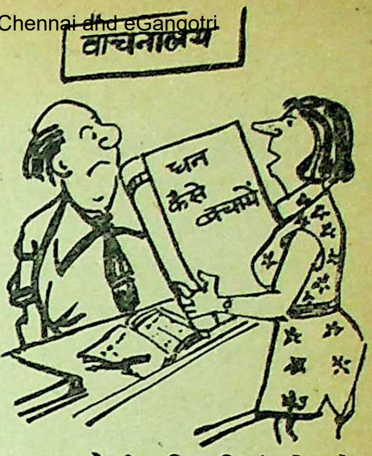

'पुस्तक आपने तीन दिन विलंब से लौटायी है...... तीन रुपये जुर्माने के दीजिये।'

रोगी : मगर डाक्टर साहब, दिन में पंद्रह-पंद्रह बार भोजन करने में खासी मुसीबत हो जाती है।

०००

संगीत-विद्यालय में शुल्क जमा कराते हुए शिष्य ने शिक्षक से पूछा—'गुरुजी, मेरी आवाज जैसी है उसे देखते हुए, क्या मेरे यहां आते रहने से कोई लाभ है?

शिक्षक : हां-हां, आते रहो बेटा! अगर किसी दिन इस बिल्डिंग में आग लग गयी, तो तुम्हारी आवाज बहुत काम आयेगी।

०००

पति (फोन पर डाक्टर से) : मेरी पत्नी की जबड़े की हड्डी खिसक गयी है। वह न मुंह खोल पाती है, न बोल पाती है। अगर इस हफ्ते, अगले हफ्ते या उससे अगले हफ्ते कभी आप इस ओर से जायें, तो जरा आकर देखते जाइयेगा।

★

'रूपा, आज आने में देर कैसे हो गयी? कहीं भावज से फिर कुछ कहा-सुनी तो नहीं हुई?'

'नहीं बीबीजी, गीता को बहुत तेज बुखार है, सो छोड़ ही नहीं रही थी। इसी से थोड़ी देर हो गयी।' और रूपा झटपट काम निपटाने के लिए रसोईघर में घुस पड़ी।

थोड़ी देर में बरतन मांजकर और रसोई धोकर रूपा पड़ोस में काम करने चली गयी। उसके जाने के बाद भी मैं बहुत देर तक न जाने क्यों उसी के बारे में सोचती रही। वह मेरे पास तीन साल से महरी के तौर पर काम कर रही है। बहुत नेक और शरीफ औरत है, अपने काम में माहिर। पड़ोस के दो-तीन घरों में भी काम करती है। किसी को उससे या उसके काम से कोई शिकायत नहीं। समय पर आना, चुपचाप काम करना और चले जाना, यही जैसे उसकी नियति है। मेरा बहुत ध्यान रखती है। रात-बेरात, देर-सबेर जब जिस काम के लिए कह दूं, खुशी-खुशी कर देती है। न जाने क्यों इस गरीब विधवा पर मुझे एक अनजानी-सी

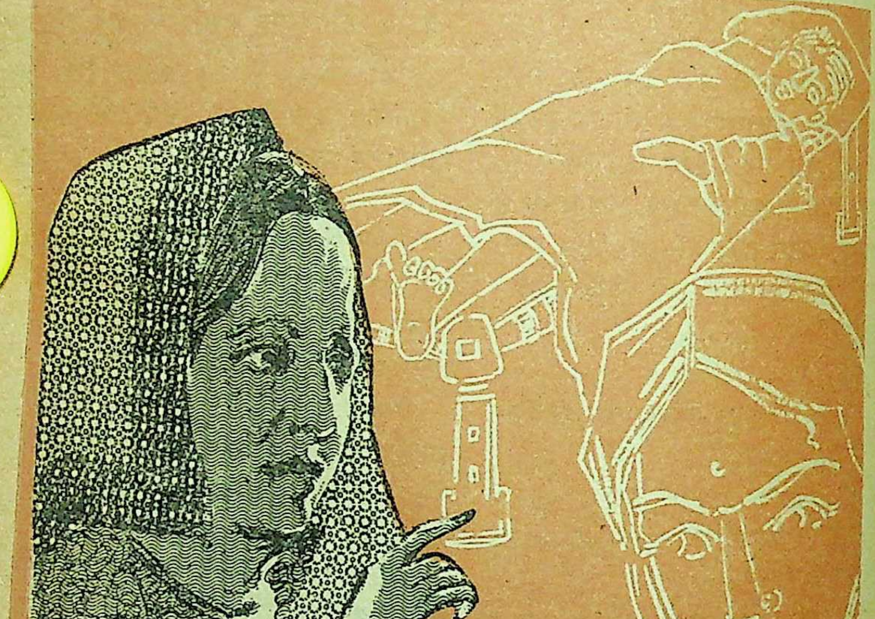

वह कुछ भी ते
नहीं कह गय

कमला संघवी की हिंदी कहानी

ममता हो आयी है। लगता है, रूपा का करुण इतिहास कहीं न कहीं मुझे बहुत गहरे से छू गया है। जब-जब मैं उसके दुःख में भीग-सी जाती हूं, तब-तब उसकी पीड़ा, उसकी मनोव्यथा मुझे उसके प्रति ममता से सराबोर कर जाती है।

रूपा का पति मदन जवान था—गबरू और दबंग, सुंदर और गठीला। किसी अच्छे दफ्तर में चपरासी था। अच्छा कमाता था और हाथ भी खुला था। ठाठ से शादी की, रूपा का गौना हुआ और वह रूपा को पाकर निहाल हो उठा। रूपा क्या थी मानो रूप की ढेरी हो। लंबी, पतली, नाक-नक्श ऐसे कि अजंता-एलोरा की चित्रकला याद आ जाये। रंग जरा सांवला था, पर उसे सांवला न कहकर मदन 'सलोना सांवला' कहता था। कोमल इतनी कि हाथ लगे तो मक्खन-सी पिघल पड़े। बोलती कम थी, पर आंखें मानो जबान का काम करतीं। आठों पहर उन आंखों में सैकड़ों प्रश्नचिह्न उभरते, संवरते और सजते रहते।

तीन साल में रूपा दो बेटियों की मां बन गयी। पत्नी बनकर सलोने सांवलेपन में स्निग्धता आयी थी, मां बनकर उसमें लावण्य की लुनाई और आ गयी। मदन उसे हिलने नहीं देता था। बस, घर का रोटी-पानी का काम जल्दी से खत्म करो और दोनों बेटियों को लेकर खाट पर बैठ जाओ। शाम को दफ्तर से उसके आने के पहले घर का सारा काम हो जाना चाहिये, यह मदन का सख्त आदेश था। उसके बाद खा-पीकर मदन और रूपा बच्चों में मगन हो जाते। न कहीं जाना, न आना। लोग ताना कसते—'मदन तो जोरू का गुलाम बन गया... दिन-भर जोरू के घाघरे की छाया में छिपा रहता है।' पर मदन और रूपा न इन तानों की परवाह करते और न अपना रवैया ही बदलते। उन्हें किराये के अपने छोटे-से एक कमरे के घर में स्वर्ग का-सा सुख मिलता था।

कभी-कभी जब मदन मूड में होता तो कहता—'रूपा, गीता-गायत्री को जरा बड़ी हो जाने दे, फिर देखना तुझे दिल्ली की कैसी सैर कराता हूं। लाल किला, जामा मस्जिद, कुतुबमीनार, चांदनी चौक, कोई जगह बाकी नहीं छोड़ूंगा।' गीता व गायत्री पर अथाह प्यार था मदन को। रूपा कभी-कभी मजाक में कहती—'बेटियों का इतना लाड़! जो ये दोनों बेटे होते, तब तो पता नहीं तुम क्या करते!' मदन आंखों में शोखी और शरारत भरकर कहता—'बेटा भी होगा, अभी जल्दी क्या है! फिर उसका लाड़ भी देखना। और फिर मेरी गीता-गायत्री किसी बेटे से कम थोड़े ही हैं? दोनों दिल्ली में पढ़ेंगी, लायक

बनेंगी, मेरा-तेरा नाम रोशन करेंगी, हमें और क्या चाहिये!' रूपा अपनी तकदीर पर फूली न समाती। सुहाने सपने देखती और भगवान से बिनती करती रहती कि उसकी तकदीर पर किसी की नजर न लगे।

लेकिन एक दिन विधाता की नजर लग गयी। मदन दफ्तर से एक सौ तीन डिग्री बुखार लेकर घर लौटा और जो पलंग पर पड़ा तो फिर वह नहीं, उसकी लाश ही उठी। रूपा ने मदन की सेवा में कोई कसर न उठा रखी। उन चार दिनों में डाक्टर, वैद्य, हकीम सबको उसने इकट्ठा कर लिया। देवताओं की मनौतियां मानीं, पीरजी को सुमिरा। पर पता नहीं क्या जानलेवा बुखार था कि मदन को साथ लेकर ही गया।

रूपा की रुपहली दुनिया उजड़ गयी। कई दिनों तक तो उसे सुधबुध ही नहीं रही। कब किसने दो बूंद पानी उसके मुंह में टपका दिया, कब किसने दो निवाले खिचड़ी खिला दी, उसे कुछ नहीं मालूम। जब कुछ सुधबुध आयी, तो दोनों बेटियों को छाती में भींचकर वह फूट-फूटकर रोयी और शायद इसीलिए जी गयी।

गांव से रूपा की सास और देवर आ गये थे। सास ने बच्चों को संभाला और उसने घर-गृहस्थी। सास और देवर उसे अपने साथ गांव चलने को मनाते रहे, पर रूपा ने जिद पकड़ ली कि मैं दिल्ली में ही रहूंगी, मुझे मदन की इच्छा पूरी करनी है। सास के लाख मना करने पर भी उसने पास के गृहकल्याण-केंद्र में जाकर सिलाई-कढ़ाई के काम के लिए अर्जी दे दी और उसे काम भी मिल गया। सुबह केंद्र में जाकर सिलाई-कढ़ाई के का घर पर ले आती और समय पर पूरा कर उन्हें लौटा देती। उसके हाथ में सफाई औ हुनर था। केंद्र में भी सब उसके काम से खु थे। वह भी अपने आपको गृहस्थी के कठोर श्रम में झोंककर खुश थी।

कुछ दिन बीते, एक आध महीना भी गुपचुप बीत गया। फिर धीमी-धीमी खुसर-फुसर सुनाई पड़ने लगी। आस-पड़ोस के लोगों की आंखों और जवान पर एक ही प्रश्न बार-बार उभरने लगा—'रूपा ने अपने लिए क्या सोचा है? क्यों नहीं देवर से नाता कर लेती? पति की मृत्यु हो जाने पर जवान औरत का दूसरे पुरुष के घर में जाकर बसना और उसकी होकर रहना रूपा की जाति की आम प्रथा थी। पहले पति के बच्चे को भी दूसरा पति अपना लेता था। इस तरह साधारणतया हर विधवा की जिंदगी को सहारा मिल जाता था। प्राय: बच्चे वाली औरत सुरक्षा की दृष्टि से देवर से ही नाता जोड़ लिया करती थी।

रूपा की सास भी तहेदिल से यही चाहती थी कि रूपा अपने देवर चंदर का हाथ पकड़ ले, ताकि घर की बहू, बच्चे और धन घर में ही रह जायें। चंदर था भी सुंदर और मेहनती। खेती-बारी ने उसके शरीर को श्रम की सुंदरता भी दे रखी थी। चंदर ने भी रूपा को अपने मन का संकेत कई बार दिया, सास ने भी समझाने में कोई कसर न छोड़ी। 'बच्चों का क्या होगा?' कहकर उसे भ

भीत करना चाहा । 'लोगों की बुरी नजर से तू अपने को कैसे बचा पायेगी ?' कहकर ऊंच-नीच समझाया । पर वह पत्थर की तरह बुत बनी सब सुनती रहती । सब सुनने के बाद एक ही उत्तर देती—'मांजी, मैं ऐसे ही ठीक हूं, मुझे कुछ भी करने को न कहिये ।'

हारकर, रूपा और उसके बच्चों को भाग्य के भरोसे छोड़कर सास और देवर कुछ दिनों बाद अपने गांव को लौट गये । ऐसी जिद्दी बहू के लिए वे अपनी खेती का नुक्सान तो नहीं होने दे सकते थे । रूपा की मां और भाई दिल्ली में ही एक बंगले के सर्वेंट्स-क्वाटर में रहते थे । कुछ महीनों बाद उसकी मां ने बहुत कह-सुनकर उसे अपने साथ रहने को मना लिया । मां ने समझाया कि हमारे साथ रहने से लोग तुम पर कीचड़ नहीं उछाल सकेंगे । लोगों की जबान का क्या भरोसा ! तू अभी जवान है, सुंदर है और तेरी मांग में सिंदूर भी नहीं है । लोगों को यह कहते देर नहीं लगेगी कि रूपा नाता करके एक आदमी के साथ भला अपने को क्यों बांधती ? अब तो उसे खुली छूट है; अकेली रहती है, चाहे रोज एक मरद को घर में बुलाये । उसे रोकने वाला कौन है ।

सुनकर रूपा के ओंठों पर एक व्यंग्य-सी हंसी खेल गयी । धीमे-से बोली—'मां, तुम्हारे पास रहने से भी लोग तो उलटा-सीधा बोलने से बाज नहीं आयेंगे, क्योंकि मैं कम उम्र और ठीक नाक-नक्श वाली विधवा जो हूं । फिर भी अगर तुम्हें संतोष होता है कि

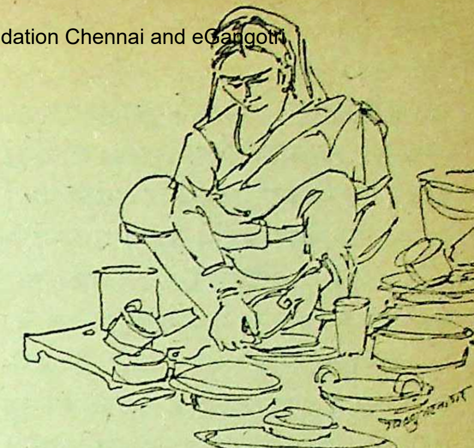

तुम्हारे पास रहने से तुम्हारी बेटी लोगों की कहा-सुनी से बच जायेगी, तो मैं तुम्हारे साथ चलती हूं । मुझे गृहकल्याण-केंद्र का काम छोड़ना पड़ेगा, कोई और काम पकड़वा देना ताकि तुम पर बोझ न बनूं ।' भाई ने प्यार से टोकते हुए कहा—'रूपा, तू पागल हो गयी है क्या ? मेरे होते हुए तू काम करे, ऐसा नहीं होगा और रूपा तब से मां-भाई के साथ रहने लगी ।

मदन को गुजरे सात साल हो गये । रूपा की आत्मा का तेज उसके सुंदर चेहरे पर खूब झलकने लगा है । लोगों को लगने लगा था कि रूपा किसी खास जीवट की बनी हुई है । वह अब शायद ही किसी पुरुष का घर बसाये । फिर भी कुछ लोग कहते—'अरे मन बदलते देर थोड़े ही लगती है । अभी तो अंग-अंग जवान है उसका । दुबली जरूर हो गयी है, पर फिर भी दिन-दिन निखरती ही जा रही है । अभी तो पहाड़ जैसी जिंदगी

सामने पड़ी है। वह भी तो आखिर है तो मानुष ही।

इस बीच रूपा के भाई का ब्याह हो गया, गीता व गायत्री स्कूल जाने लगीं। रूपा की भावज को विधवा ननद और उसकी दोनों बेटियों का अपने घर में रहना न भाया। बच्चों की स्कूल की फीस, उनके कपड़े-लत्ते और खाने-पीने का खर्च उसकी आंख की किरकिरी बनते गये। रूपा देखती, सब समझती और भाई को चक्की के दो पाटों के बीच में पिसता हुआ देखकर दुःखी हो उठती। किसी तरह भाई को समझा-बुझाकर उसने भाई के घर के पास ही अपने लिए एक झुग्गी बना ली। विधवा मां को भी वहीं बुला लिया। आस-पड़ोस के दो-चार घरों में महरी का काम पकड़ लिया। तब से वह घरों में बरतन मांजती है, बूढ़ी मां की सेवा करती है, अपने बच्चों को पढ़ाती है और गृहस्थी की आग में अपने को तपा-तपाकर खरे सोने की भांति चंपई होती जा रही है।

एक दिन मैंने उससे पूछा था—'रूपा, मदन तो तुझे जरा भी काम नहीं करने देता था। तू अब इतना कठोर परिश्रम कैसे कर लेती है?' रूपा ने सीधे मेरी आंखों में झांकते हुए कहा—'बीबीजी, जब मदन काम नहीं करने देता था, तब नहीं करती थी। अब वही काम करने की हिम्मत देता है इसलिए मैं काम करती हूं। मैं तो अब भी जैसा वह कहता है, वैसा ही करती हूं। उसकी बात क्या कभी मैंने टाली है? रूपा का चेहरा एक अनचीन्हे गौरव से चमकने लगा था। उसकी आंखों में से आत्मविश्वास की निकल रहा था। उस तेज के समक्ष पल-को मेरी पलक झुक गयी। उसके जाने पर सोचने लगी—मदन मरा कहां है? वह तो रूपा में क्षण-क्षण जी रहा है।

शाम को जब रूपा आयी, तो मैंने उसे अपने पास बरामदे में ही बैठा लिया। कहने लगी—'पहले काम खत्म कर बीबीजी, फिर बैठूंगी। आप नाराज न हों सच कहूं, मुझे आपके पास बैठना, बातें करना बहुत अच्छा लगता है। आप मुझसे मदन की बातें करती हैं—मैं जी उठती हूं, मेरा मदन जी उठता है। सब सोचते हैं कि मदन की बात करने से मैं उसे याद करके दुःखी हो जाऊंगी, इसलिए मेरे सामने कोई उसकी बात नहीं करता। पर यह कोई नहीं समझता कि मैं क्या मदन को एक पल के लिए भी भूली हूं। जो उसे याद करके दुःखी हो जाऊंगी? वह तो सोते-जागते, उठते-बैठते हर समय मेरे साथ होता है। वह मरा नहीं है—मुझमें, मेरे बच्चों में जी रहा है। खैर, छोड़िये इन बातों को, कहिये, मुझे क्यों यहां बैठाया है? क्या पूछना चाहती हैं आप?'

मैं उसकी बातों में कहीं खो चुकी थी। उसके पूछने पर मानो कहीं दूर से लौटी। उसकी हथेली अपने हाथों में लेकर मैंने पूछा—'रूपा मैं बहुत दिनों से पूछना चाहती थी, पर पूछ नहीं सकी। सच बता, तूने मदन के मरने के बाद दूसरा घर क्यों नहीं किया? क्या मदन ने तुझसे वचन ले लिया था कि तू दूसरा घर नहीं करेगी? पुरानी यादों ने

लिपटकर जिंदगी को तूने अपने लिए कितना मुश्किल बना लिया है! कितना दुःख तू सह रही है, कितना और सहना पड़ेगा, कौन जाने! तेरी बेटियां अपने-अपने घर चली जायेंगी। बूढ़ी मां भी एक दिन नहीं रहेगी। तब तू कितनी निपट अकेली होगी! अपनी जवानी की तू तिल-तिल जला रही है, फिर बाद में तेरा हाथ कौन पकड़ेगा, बता? मदन ने तुझसे कोई वचन नहीं लिया, तूने कोई वचन नहीं दिया, फिर इस निश्चय पर अटल क्यों है तू? बोल जवाब दे!'

रूपा की आंखों में परछाइयां-सी तैर गयीं। क्षण-भर को उसने अपनी नम आंखें जमीन की ओर झुका लीं। फिर धीरे-से बोली—'यही तो सारी बात है बीबीजी। मदन ने यदि मुझसे वचन ले लिया होता कि मैं दूसरा घर नहीं करूंगी, तो मैं शायद वचन तोड़ भी देती। मुझसे वचन न लेकर ही तो वह अपने पूरे विश्वास का बोझ मुझ पर डाल गया है। मरते दम तक वह होशो-हवास में था। यह भी अंदाज था उसे कि शायद वह बच न सके। फिर भी उसने मुझे वचन में नहीं बांधा। मेरी हथेली को बुखार से तपते अपने हाथों में लेकर, केवल मेरी आंखों में अपनी विश्वास-भरी आंखों से झांकता रहा। उसने जबान से कुछ नहीं कहा। पर उसके कांपते ओंठ, आंखों की कोरों से झांकती आंसू की कुछ बूंदें और उसके हाथों का कंपन मुझसे बहुत कुछ कह गये। उसी दिन मैंने जाना कि मन की भी एक भाषा होती है, एक विश्वास होता है। 'रही शरीर की बात, तो मदन ने तीन साल में मुझे तीन सौ साल का सुख दिया है, मन की ऐसी तृप्ति दी है कि शरीर अब बहुत पीछे छूट गया है। जहां मन से मन का मिलन इतना गहरा हो, मन से मन का बंधन इतना अटूट हो, वहां शरीर के न मिलने से क्या मन के उस बंधन को कोई तोड़ सकता है? मदन को विश्वास था कि उसके सिवा मैं कभी किसी की नहीं हो सकती, इसीलिए उसने मुझसे वचन नहीं लिया। अपने उसी विश्वास के कारण वह मेरे लिए मरा नहीं है। मैं आज भी उसके गीले और नम हाथों का स्पर्श अपनी हथेलियों पर महसूस करती हूं, उसकी आंखों के विश्वास को अपनी आंखों में संजोकर रखती हूं। उसके न रहने पर उसके उस विश्वास को मैं कैसे तोड़ दूं!' और अपने मैले आंचल की कोर से आंखें पोंछती हुई वह रसोईघर में घुस गयी।'

उस दिन मेरी समझ में आया कि रूपा बुझ क्यों नहीं रही है, कुम्हला क्यों नहीं रही है, सूख क्यों नहीं रही है।

कुछ महीनों बाद मेरे पति का तबादला जयपुर हो गया। फिर बंबई, मद्रास और श्रीनगर भी तबादले होते रहे। देखते-देखते बीस साल बीत गये। बीच बीच में रूपा मुझे कई बार याद आयी, फिर धीरे-धीरे उसकी याद धुंधली होती गयी। एक-दो बार, एक-आध दिन को दिल्ली भी आना हुआ, पर रूपा को बुलाने का अवकाश ही नहीं मिला।

अवकाश प्राप्ति के बाद हम पुनः दिल्ली में बसने के लिए आ गये। घर-गृहस्थी जमाने

satin doll
SHAMPOO
FOR LOVELY HAIR

नया
कॉन्सन्ट्रेटेड
सॅटिन डॉल
शैम्पू
तुम जैसी प्यारी
परियों के लिए!

ज़्यादा असरदार
कॉन्सन्ट्रेटेड शैम्पू

● साफ रेशम से मुलायम बालों
भरपूर झाग देता है. ● बालों को
भीनी भीनी महक देता है.

सॅटिन डॉल—अपने भरपूर झाग से
को पूरी तरह निकाल देता है. फिर
झाग और मैल को धो डालता है.
बाल बिल्कुल स्वच्छ हो जाते हैं...
ढंग से संवारे जा सकते हैं.

ज़रा सा सॅटिन डॉल, आपके बालों
एक नई चमक... एक नई जान देता

everest/82

के बाद जब जरा फुरसत मिली तो रूपा की याद आयी। सोचा, उसे अपने आने की खबर भेजूंगी कि एक दिन दोपहर को वह स्वयं ही आ पहुंची। देखकर पहले तो मैं उसे पहचान ही नहीं पायी। वही बोली–'बीबीजी, भूल गयीं क्या? मैं रूपा हूं, मदन की रूपा। पड़ोस की बीबीजी से मालूम हुआ कि आप फिर से दिल्ली आ गयी हैं, सो उन्हीं से पता लेकर चली आ रही हूं। कैसी हैं आप, बाबूजी कैसे हैं?......'

जब मैंने रूपा को गौर से देखा–उसका वह भव्य रूप प्रौढ़ता में और भी भव्य हो गया था। काले बालों में झांकते सफेद बालों के बादल मानो बरस-बरसकर अपनी दास्तान कहना चाहते हों। नाकनक्श में वही तीखापन। सच कहूं तो रूपा जवानी से भी अधिक अब सुंदर लगी। कैसी तो स्निग्ध-स्निग्ध-सी–जिसे देखकर किसी स्नेहमयी पत्नी की याद आ जाये, किसी ममतामयी मां की याद आ जाये। आंखों में विश्वास की वही चमक जो वक्त के साथ और अधिक गहरी हो गयी थी। चेहरे पर 'एक की होकर' रहने की वह आत्मतुष्टि, जो उसकी आंखों के नीचे पड़ते हुए हल्के काले गड्ढे को भी एक अजीब-सा सौंदर्य दे रही थी। मैं अभिभूत हो उठी। बरतन मांज-मांजकर खुरदुरी हो गयी उसकी दोनों हथेलियों को अपने हाथ में लेकर मैंने पूछा–'तू कैसी है रूपा, गीता-गायत्री कहां हैं?'

रूपा खिल उठी–'गायत्री का ब्याह कर दिया बीबीजी, उसने दसवीं पास कर ली थी। पारसाल उसके बेटा हुआ है, मदन का नाती। गीता डाक्टरी पढ़ रही है। बस उसका ब्याह हो जाये, फिर मैं तो आपके पास ही रहने के लिए आ जाऊंगी। रोटी-कपड़ा दे देना, और मुझे चाहिये भी क्या?'

मैं उससे पूछना चाहती थी–'तूने पहाड़-सी जिंदगी कैसे काटी,' लेकिन उसकी आंखों की चमक देखकर बिना पूछे ही मुझे उत्तर मिल गया–जाने वाले के दुःख को छोड़कर, उसके मन के विश्वास को कलेजे से लगाकर, अकेले भी जिंदगी को जिया जा सकता है। यादों का बड़ा सहारा होता है, उसकी अपनी एक गंध होती है, सुवास होती है, ताकत होती है, जिसके सहारे जिंदगी अपने आप कट जाती है, काटनी नहीं पड़ती।

इस अनपढ़ रूपा के प्यार का अपना ही एक आकाश है, अपनी ही एक पृथ्वी। अपने पहले और एकांकी प्यार की पवित्रता और निष्ठा को जिस विश्वास के साथ रूपा ने जिया है, उसने कभी मदन को मरने नहीं दिया, न अपने ऊपर कोई लांछन लगने दिया। उस अनकहे वचन को रूपा ने जिस गरिमा से निभाया है, क्या कोई दिये हुए वचन को भी इतनी दृढ़ता से निभा पाता है?

रूपा से कभी मैंने कहा था–'तुझ पर किसी दिन कहानी लिखूंगी। पर क्या रूपा पर कहानी लिखना इतना आसान है? कहानी लिखने की चेष्टा में उसके जीवन का सच ही तो पृष्ठों पर उतर आता है। उस पर क्या कभी कहानी लिख सकूंगी?

–३०, लोदी स्टेट, नयी दिल्ली-३

★

कुछ सूत्र

सबसे प्रामाणिक है
बच्चों की हंसी
जो दिखावे के लिए नहीं फूटती......

सबसे स्पष्ट हैं
ओस की बूंदें
जहां गर्द जमती नहीं......

विद्रोह का–
प्रतीक है एक छोटा कंकड़
जो अपार जलराशि को
मथ देता है......

सबसे ज्यादा असहाय है
झरी हुई पत्ती
जो हवा के थपेड़ों में
भटकती है निर्लक्ष्य......

- कुमारी रमा सिंह
रीडर, हिंदी-विभाग,
जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

गेहूं और गुलाब

तुम्हें चिंता है गेहूं की
मुझे गेहूं की, और गुलाब के फूलों की!
गेहूं खाकर क्या होगा ?
यदि गुलाब न खिले
तुम्हारे चेहरे पर
ओठों पर
हर ओंठ की डाली पर।

—रामनारायण उपाध्या
साहित्य-कुटीर, ब्राह्मणपुरी, खंडवा, म. प्र.

प्रजनन का ज्वार

मनोहरलाल वर्मा

समुद्र में ज्वार-भाटा आना एक प्राकृतिक और नियमित क्रिया है। परंतु संसार में ऐसे कुछ जीव हैं, जिनके प्रजनन का भी ज्वार उठता है और घटता है। इन जीवों की वंशवृद्धि एक निश्चित अवधि में ही होती है।

प्रतिवर्ष अक्तूबर और नवंबर के महीनों में सामुआ और फिजी द्वीप के समुद्रतट 'पेलोलो' नामक समुद्री कृमि के अंगों से भर जाते हैं। पूर्णिमा के एक दिन पहले सवेरे ही पेलोलो कृमियों का समूह पानी पर दिखाई पड़ता है। धीरे-धीरे कृमियों की संख्या बढ़ती जाती है और दूसरे दिन समुद्र में इन कृमियों की बाढ़-सी आ जाती है। समुद्र का रंग पीलापन लिये हरा हो जाता है और समुद्र ठोस-सा दिखाई पड़ने लगता है।

प्रशांत महासागर के द्वीपों के तटीय समुद्र में पेलोलो बहुतायत से मिलते हैं। इन द्वीपों के निवासी भाटे के समय इन्हें जाल व टोकरियों से पकड़ते हैं और पकाकर, भूनकर या कच्चा ही खाते हैं। ये स्वादिष्ट होते हैं—विशेषत: इनका प्रजनन अंग।

पेलोलो का जीवशास्त्रीय नाम 'लियोडिस विरिडिस' है। यह 'एनीलिडा' समूह का प्राणी है। यह समुद्र-तल में चट्टानों में सूराख बनाकर रहता है। इसके शरीर का प्रत्येक खंड अपने आप में पूर्ण होता है और प्रजनन-काल में प्रजनन-कोशाओं से भर जाता है।

साधारणतया 'एनीलिडा' जाति के प्राणी परिपक्व होने पर समुद्र की सतह पर आकर तेजी से तैरने लगते हैं और अपने अंडे या शुक्राणु पानी में छोड़कर तेजी से समुद्र-तल में लौट जाते हैं। यह प्रक्रिया एकदम अनियमित होती है। परंतु इस जाति के दो जीव 'लियोडिस विरिडिस' (या पेलोलो) और 'लियोडिस फ्यूकेटा' इसके अपवाद हैं। इनका प्रजनन-काल अति नियमित होता है।

अक्तूबर-नवंबर के चंद्रमा के अंतिम चरण के प्रथम दिन दक्षिण प्रशांत महा-

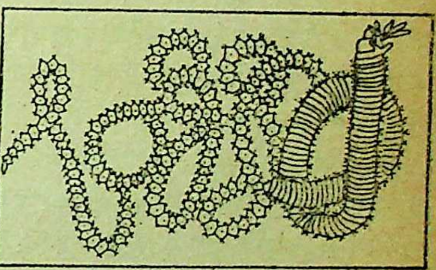

पेलोलो कृमि। सिर की तरफ का आधा भाग एक प्रकार के खंडों से बना होता है और पिछला भाग प्रजनन-अंगों से भरे खंडों से बना होता है।

[चित्र-सौजन्य : दुर्गाप्रसाद पांडेय]

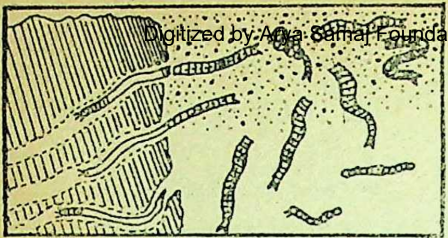

चट्टानों के सूराखों में पेलोलो कृमि का आवास और उसके प्रजनन की विभिन्न अवस्थाएं। प्रजनन के दिनों में समुद्र की सतह पेलोलो के अंडों, शुक्राणुओं और टूटे हुए पिछले हिस्सों से पट जाती है। गहरे व हल्के बिंदु अंडों और शुक्राणुओं को दरशाते हैं।

सागर का पेलोलो अपने शरीर के पिछले अर्धभाग को (जो चट्टानों के सूराख से बाहर निकला रहता है) अलग कर देता है। यह अलग किया हुआ टुकड़ा समुद्र की सतह पर आकर तैरने लगता है। उस दिन ये टुकड़े इतनी बड़ी संख्या में ऊपर आ जाते हैं कि समुद्र का बहुत बड़ा भाग इनसे पट जाता है। इन टुकड़ों से अंडे एवं शुक्राणु निकलकर पानी में फैल जाते हैं, जहां उनका निषेचन हो जाता है।

कृमि का अगला हिस्सा, जो चट्टान में ही रह जाता है, जल्दी ही अपने टूटे हिस्से का फिर से निर्माण कर लेता है। मगर उसे फिर से प्रजननक्षम होने में एक वर्ष लग जाता है और अगले वर्ष ठीक उसी दिन यह सारी प्रक्रिया दुहरायी जाती है। समय और दिन का यह नियम इतना सख्त है कि उससे एक भी दिन पहले निषेचन संभव नहीं होता।

वेस्ट इंडीज के समुद्र में पाया जाने वा 'लियोडिस फ्यूकेटा' पेलोलो से केवल इ बात में भिन्न है कि उसमें यह प्रक्रिया जू जुलाई चंद्रमा के तीसरे चरण में होती है।

पेलोलो कृमि के प्रजनन-अंग समुद्र की लहरों द्वारा दूर प्रदेशों में पहुंच जाते हैं, जहां वे नये खंड बनाते और अपने वंश की वृद्धि करते हैं। इसके अलावा बड़ी तादाद में अंडों व शुक्राणुओं के उत्पादन से ज्यादातर अंडों के निषेचन की संभावना रहती है।

पेलोलो जैसे कुछ अन्य कृमि भी प्रशांत सागर, मलय व पूर्वी एशिया के समुद्र-तट पर पाये जाते हैं। वे चंद्रमा की घटती-बढ़ती कलाओं से प्रेरित होते हैं। कुछ जीव मा व अप्रैल की पूर्णिमा के पश्चात् कुछ, जू व जुलाई की पूर्णिमा के दो दिन पहले तथा कुछ अक्तूबर व नवंबर की पूर्णिमा के पश्चात् सामूहिक रूप में एकत्र होते हैं।

अभी तक वैज्ञानिक इसका पता नहीं लग सके हैं कि पेलोलो तथा उसकी भांति के अन्य कृमियों की वंशवृद्धि में चंद्रमा का क हाथ है।

'साइलिस' नामक प्राणी पेलोलो जै ही होता है। इसका भी पिछला भाग पृथक् हो जाता है। कुछ समय पश्चात् पिछले भा में नया सिर स्वयमेव पैदा हो जाता है परंतु यह थोड़े ही समय तक जीवित र पाता है; क्योंकि इसके जबड़ा नहीं ब पाता और इस कारण यह खाने में असम होता है।

साइलिस की एक किस्म होती है, जिस

माता तो अपने अंग से एक प्रकार का स्थायी प्रकाश पैदा करती है और नर पटबीजने की भांति रह-रहकर चमकता है। जब नर-मादा का समागम होता है, तो प्रकाश अदृश्य हो जाता है।

एनीलिडा जाति की एक विशेष किस्म की मादा अंडे देने के पश्चात् नर बन जाती है। फिर वह नर दूसरी मादाओं की खोज में चल पड़ता है। ऐसी मादाओं के शरीर के पिछले भाग को आधा काटकर, उन्हें नर में परिवर्तित किया जा सकता है।

प्रजनन-प्रक्रिया की विचित्रताओं की [illegible] रीस मेगालाप्स’ की याद तो आयेगी ही। इस मछली-सदृश जीव की मादा अपने नर के प्रजनन-अंग को खाकर गर्भधारण कर लेती है। नर के दो भाग होते हैं—शरीर का अग्रभाग एवं प्रजनन-अंग। मादा के संमुख आकर नर हाव-भाव प्रदर्शित करता है। मादा उत्तेजित हो नर के ऊपर झपट पड़ती है और उसके पिछले भाग को काटकर निगल जाती है। इस प्रकार शुक्राणु मादा के उदर में पहुंचकर अंडों को निषेचित करने में समर्थ होते हैं।

—ई ५२-ए, रेल्वे कालोनी, मुरादाबाद

★

[पृष्ठ ११२ का शेष]

कृत कम आक्सिजन पर जीते हैं, उनकी नस्ल काफी स्थायी मालूम होती है। स्पष्ट है कि समय-समय पर वातावरण में आक्सिजन की कमी होने से यानी आक्सिजन के अनुपात की कमी होने से कुछ विशेष जीवों का सफाया हो गया होगा। संभावना है कि डायनासारों के इतिहास के अंतिम दिनों में भी ऐसा ही कुछ हुआ हो।

इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि क्रिटेशियस युग (१३ से ७ करोड़ वर्ष पूर्व) के अंतिम चरण में संसार-भर में ज्वालामुखी प्रस्फुटित हुए थे। उनसे निकली गैसों ने वातावरण में आक्सिजन को बहुत घटा दिया होगा। तब अधिक आक्सिजन पर रहने वाले जीव डायनोसार समाप्त हो गये होंगे। संभव है, उन्हें इसका मौका ही न मिला हो कि वे कम आक्सिजन में जीने के लिए अपने को ढाल सकें।

इन सारे तथ्यों से यह बात साफ हो जाती है कि डायनोसारों की समाप्ति का प्रश्न वास्तव में बड़ा टेढ़ा है तथा कोई भी एक सिद्धांत संतोषजनक रूप से इसका समाधान नहीं कर पाया है। ऐसा लगता है कि इन भीमकाय जीवों की मृत्यु के कई कारण रहे होंगे। यह भ्रांति तो अब दूर हो गयी है कि संपूर्ण संसार के सारे डायनोसारों का एक ही दिन किसी विश्वव्यापी प्राकृतिक प्रकोप के कारण अंत हुआ था। उलटे अब यह पूरी तरह सिद्ध हो चुका है कि १० करोड़ वर्षों की अवधि में जब सारी पृथ्वी पर इनका बोलबाला था, धीरे-धीरे ये समाप्त हुए तथा अंतिम दिनों में केवल कुछ ही नस्लों के डायनोसार बच गये थे।

—भारतीय सहयोग मिशन, हरीभवन,
काठमांडू, नेपाल

★

सो न पाती थीं मोमियाइयां लुटेरों के मारे

मिस्र के प्रतापी फिरऊन मरणोत्तर-जीवन संबंधी आस्थाओं के अनुसार अपार धन-वैभव के साथ दफन किये जाते थे। यही धन-वैभव प्राचीन काल से आज तक मिस्र में समाधि लूटने के घृणित किंतु धनप्रद धंधे को पनपाता रहा है। 'रेप ऑफ नाइल' नामक नयी पुस्तक में इस धंधे का सहस्राब्दियों लंबा इतिहास दिया गया है। समाधियों की लूट का एक पुराना और एक नया किस्सा उसी ग्रंथकार के शब्दों में यहां प्रस्तुत है।

ब्रायन फैगन

फिरऊनों (फैराओं), उनके शाही बंधु-बांधवों एवं पुरोहितों की समाधियों को लूटने का खेल नील नदी की घाटी में बहुत पुराना है। सदियों से चोर-लुटेरे सक्करेह और थीब्स की प्राचीन मिस्री समाधियों में घुसकर बहुमूल्य वस्तुओं से अपनी झोलियां भरते रहे हैं। असल में समाधियों को दूषित करने का धंधा प्राचीन मिस्रियों ने स्वयं ही शुरू कर दिया था और इसके पीछे काम कर रही थी उनकी धनलिप्सा।

सेथी प्रथम और रेमसिस द्वितीय जैसे महान फिरऊन थीब्स के निकट बियाबान 'राजाओं की घाटी' में गुप्त समाधियों में दफनाये गये थे और पुजारियों की टोलियां उनकी हिफाजत करती थीं। मगर जब राजसत्ता दुर्बल हो गयी, तो भ्रष्टाचार का बोलबाला हो गया। कब्र लूटने वाले 'राजाओं की घाटी' में जगह-जगह समाधियों की खुदाई करने लगे। छोटे-मोटे स्थानीय अफसरों की उनके साथ मिलीभगत थी। रेमसिस द्वितीय (११४२-११२३ ई.पू.) के शासन-काल में इस अवैध लूट की जांच-पड़ताल की गयी थी। परिणामतः एक मुकदमा चला, जिसकी लपेट में थीब्स के दो अफसर भी आ गये थे।

पा-सेर थीब्स नगर के पूर्वी भाग का प्रशासक था। वह था तो ईमानदार अफसर, मगर सब मामलों में टांग अड़ाया करता था। नदी के दूसरी ओर शाही समाधि-नगर (नेक्रोपोलिस) में कब्रों के लूटे जाने की जो अफवाहें बार-बार सुनने में आती थीं, उनसे वह चिंतित हो उठा। शायद वह अपने से ऊपर के अधिकारियों पर अच्छा प्रभाव जमाना चाहता था और अपने प्रतिस्पर्धी तथा समाधि-नगर के प्रशासक पा-वेरो को बदनाम भी करना चाहता था। सो उसने समाधियों की लूट के बारे में जांच-पड़ताल शुरू करायी, हालांकि यह उसके अधिकार-क्षेत्र से बाहर की बात थी।

शीघ्र ही बहुत ही चौंका देने वाले तथ्य उसे पता चले। शाही कब्रों की लूट के चश्मदीद गवाह भी उसे मिल गये। अनेक गवाहों ने इसका ब्योरेवार वर्णन किया कि किस प्रकार उन्होंने शाही समाधियों के द्वार खोले। इनमें से एक गवाह के ये शब्द एक तत्कालीन पैपिरस-अभिलेख में दर्ज हैं:

'तब हमें राजा की भव्य मोमियाई मिली। उसके गले में अनेक तावीज और

स्वर्णाभूषण थे। उसके सिर पर सोने का मुखौटा था और सारी मोमियाई पर सोना बिछा हुआ था। हमने राजा की भव्य मोमियाई पर से सारा सोना, सारे तावीज और गहने उतार लिये और सारे आवरण भी। फिर हमने ताबूतों में आग लगा दी और उनके साथ मिले समस्त मृतक-उपकरण जो कि सोने, चांदी व कांसे के थे, उठा लिये।'

पा-सेर ये सब गवाहियां लेकर स्थानीय वजीर खा-एम-वेस के पास पहुंचा और यह मांग पेश की कि शाही समाधियों के लूटे जाने के सारे मामले की जांच होनी चाहिये। खा-एम-वेस ने एक आयोग को सारे समाधि-नगर में घूमकर जांच करने को कहा। आयोग के सदस्यों ने पाया कि एक राजा समाधि और कुछ पुजारियों की कब्रें लू गयी थीं। पा-सेर द्वारा पकड़े गये गवाह को वजीर के सामने पेश किया गया। मग अब वे अपने को सर्वथा निर्दोष बताने ल और पिछली गवाही से वे साफ मुकर गये।

पा-सेर के लिए यह सब बहुत बुरा हुआ। उसे इसका अंदाज नहीं था कि लूटपाट के इस धंधे में पा-वेरो का कितना गहरा हाथ था। वजीर खा-एम-वेस ने कब्र-लुटेरों के विरुद्ध अभियोग रद्द कर दिया और स्व राहत की सांस ली। यह लगभग निश्चित है कि वह खुद भी इसमें आकंठ डूबा हुआ था।

पा-वेरो अपने प्रतिस्पर्धी की पराजय से बहुत खुश हुआ। महीने भर बाद उसने समाधि-नगर के तमाम निरीक्षकों, शासन-कर्ताओं, पुलिस-सिपाहियों और मजदूरों को नील के पूर्वी तट पर विजयोत्सव मनाने भेजा। इन लोगों ने पा-सेर के घर के आगे खूब हो-हल्ला किया।

शुरू में तो पा-सेर ने उनकी उपेक्षा की, मगर जब उससे और सहा न गया तो जाकर फिरऊन के पाचक के सामने अपना दुखड़ा रोया और पा-वेरो के खिलाफ अपनी शिका

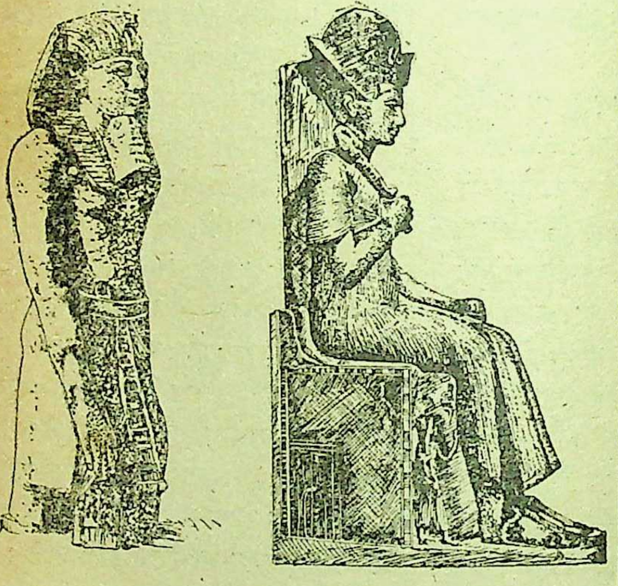

दो फिरऊन – थतमोस तृतीय और रेमसिस द्वितीय

यतें दुहरायीं। उसने कहा कि शाही समाधियों के लूटे जाने की बात मैं बाकायदा सिद्ध कर सकता हूं। वह तो यहां तक भी कह बैठा कि मैं सारा मामला खुद फिरऊन के सामने पेश करूंगा। यह मिस्री राजनियमों के अनुसार बहुत गलत बात उसने कह दी थी। शाही पाचक ने वजीर खा-एम-वेस से इसकी शिकायत कर दी और वजीर ने पा-सेर को झूठी गवाही का अभियोग लगाकर दंडित किया और संभलकर रहने की चेतावनी दी।

मगर पा-सेर चुप नहीं बैठा। वह शाही समाधियों के लूटे जाने के बारे में शिकायती चिट्ठियां वजीर को भेजता ही रहा, जिनकी उपेक्षा करना असंभव हो गया। साल-भर बाद नये वजीर नेबमेर-नख्त ने फिर से एक जांच-आयोग नियुक्त किया। पैंतालीस लुटेरे वजीर की अदालत में पेश किये गये। वहां उन्होंने जो गवाहियां दीं, वे पैपिरस के तावों पर दर्ज की गयी थीं। वे आज भी उपलब्ध हैं। (कितनी दिलचस्प बात है कि खुद ये दस्तावेज पिछली सदी में थीब्स में चोरी से विदेशियों को बेच दिये गये।)

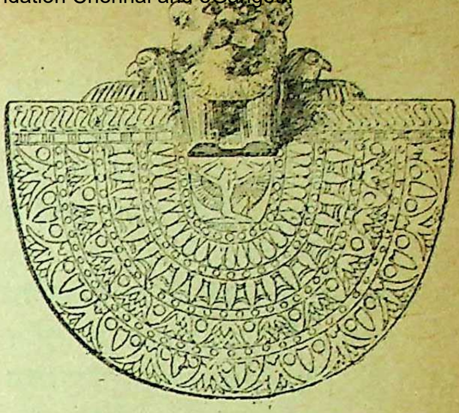

एक प्राचीन मिस्री तावीज
[लूव्र संग्रहालय, पेरिस]

इन गवाहियों ने लुटेरों को फंसा दिया। आमुन के मंदिर में लोबान तैयार करने वाले कर्मचारी ने बताया कि किस प्रकार लुटेरों ने रात को उसे जगाया और उसे लूट-अभियान पर ले गये। उस रात उन्होंने एक समाधि खोली, और सोने व चांदी का एक कफन चुराया। कफन को वे एक टोकरी में रखकर बाहर ले गये। लूट के माल के छह हिस्से करके उन्हें चोरबाजार में बेच दिया गया। अनेक गवाहों के पैरों के तलवों पर डंडे मारकर या उनमें पेंचदार कीलें घोंपकर उनसे बातें कबूल करवायी गयीं। हालांकि इन गवाहियों में बहुत-सी परस्पर-विरोधी बातें थीं, मगर तमाम अभियुक्त लुटेरों को मृत्युदंड दे दिया गया।

फिर भी समाधियां लूटने की वारदातें होती ही रहीं। निष्ठावान पुजारी शाही शवों को भ्रष्ट होने से बचाने की भरपूर कोशिशें करते रहे। शाही शव एक से दूसरी, दूसरी से तीसरी समाधि में पहुंचाये जाते रहे। हर बार लुटेरों को सुराग मिल ही जाता था। रेमसिस द्वितीय और सेथी प्रथम को तो कई-कई बार स्थानांतरित किया गया। अंत में तो लुटेरे इतने ढीठ हो गये कि पुजारियों ने इसी में खैरियत समझी कि तमाम ज्ञात शाही मोमियाइयां ले जाकर

दो गुप्त स्थानों में रख दी जायें। इनमें से एक तो राजाओं की घाटी की ही एक समाधि थी; दूसरी जगह थी थीब्स के पास की एक पहाड़ी दरार। इस तरह वे इन शवों को अगले ३,००० वर्षों के लिए यानी १८७० ई. तक लुटेरों के नापाक हाथों से बचा सकें।

इसका यह अर्थ नहीं कि इस बीच कोई शाही समाधि लूटी ही नहीं गयी। प्राचीन मिस्री लुटेरों के बाद अरब लुटेरे सदियों तक थीब्स के मंदिरों और समाधियों पर हाथ साफ करते रहे। नेपोलियन के सिपाही जब लुक्सोर और करनाक के मंदिरों की भव्यता को निहारकर वाह-वाह कर रहे थे, फ्रांसीसी विज्ञानी और इतिहासज्ञ 'राजाओं की घाटी' में शाही कब्रों में घुसने की कोशिश कर रहे थे। मगर उन्हें सफलता नहीं मिली।

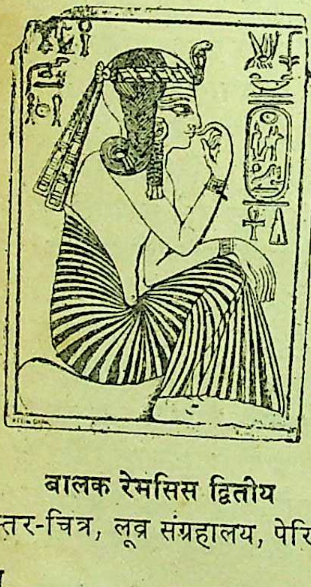

बालक रेमसिस द्वितीय
[प्रस्तर-चित्र, लूव्र संग्रहालय, पेरिस]

रेमसिस द्वितीय की मोमियाई
[१८८१ में आवरण खोले जाने पर]

इसके बाद आये अंग्रेज और फ्रांसी राजनयिक, जो समूचे मिस्र में से पुरातत्वं वस्तुएं बटोरने में एक-दूसरे को मात देने चेष्टा में लगे रहे। प्राचीन मिस्री चीजें ब रने की होड़-सी लग गयी और पिछली पू सदी में चलती रही, जिसने प्राचीन मि संबंधी अध्ययन को बहुत क्षति पहुंचायी थीब्स के आस-पास सैकड़ों समाधियों छेड़ा गया और मंदिरों में से सैकड़ों मूर्ति तोड़कर निकाल ली गयीं।

सन १८७० तक तो लुक्सोर के प्राची वस्तु-विक्रेताओं का खूब अच्छा धंधा च निकला। उनके ग्राहक होते थे लुक्सोर आ वाले धनी विदेशी पर्यटक। मोमियाइयों औ प्राचीन कलावस्तुओं की सप्लाई का को अंत नहीं था—खासकर अहमद अब्दलरसु और उसके भाई मुहम्मद के पास। ये ची

कपड़े के गट्ठरों में या सब्जी की टोकरियां में छिपाकर थीब्स में लायी जाती थीं। इनमें से चंद बहुत ही नफीस चीजें लुक्सोर के व्यापारियों के पास पहुंचीं। ये इतनी नफीस थीं कि केवल राजाओं की समाधियां ही इनका स्रोत हो सकती थीं।

असल में बात यह थी कि एक रोज अपनी एक खोयी हुई बकरी ढूंढ़ते हुए अहमद अब्दल रसूल को एक चट्टानी पहाड़ी के नीचे पुराने कूपक में मोमियाइयों और मृतक-उपकरणों का अनमोल और विशाल गुप्त खजाना मिल गया था। दस साल तक अहमद और उसका भाई मुहम्मद इस कूपक में से छोटी-छोटी नफीस पुरावस्तुएं निकाल लाते थे और एक-एक, दो-दो करके खुले बाजार में बेचते थे। इस तरह चीजों के दाम नहीं गिरने पाते थे। राजचिह्न-युक्त छोटे-छोटे आभूषणों को लक्सोर के बाजार में लोभी अंग्रेज और अमरीकी यात्री लपककर खरीद लेते थे।

इन अपूर्व पुरावस्तुओं की चर्चा धीरे-धीरे सारी नील घाटी में फैल गयी और मिस्र के पुरावस्तु-निदेशक और फ्रांसीसी पुरातत्त्ववेत्ता गस्तोंन मस्पेरो के कानों तक भी पहुंची। (उन दिनों मिस्र फ्रांस के कब्जे में था।) मस्पेरो भांप गये कि जरूर कोई विशाल खजाना किसी के हाथ लगा है। कुछ आभूषण या वस्तुएं इतनी असाधारण और शाही किस्म की थीं कि अवश्य ही फिरऊनों की मोमियाइयों पर से उतारी हुई ही हो सकती थीं।

मस्पेरो ने बहुत सावधानी बरती; क्योंकि उन दिनों अर्थात् १८८१ में लुक्सोर के स्थानीय अधिकारी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं थे। पहले मस्पेरो ने लुक्सोर की पुलिस को तार दिया कि स्थानीय पुरावस्तु-विक्रेताओं पर नजर रखी जाये। फिर उन्होंने अपने एक सहायक को काफी पैसे देकर धनी पर्यटक के रूप में लुक्सोर भेजा।

मस्पेरो के सहायक ने पहले बड़े सहज भाव से चंद बहुत ही उम्दा चीजें खरीदीं और विक्रेताओं पर अपना विश्वास जमाया। धीरे-धीरे उत्तम से उत्तम वस्तुएं उसे पेश की जाने लगीं। एक दिन विक्रेता उसके पास इक्कीसवें राजवंश के समय की एक छोटी मूर्ति लाया, जो निश्चय ही किसी शाही कब्र में से निकाली गयी थी। मस्पेरो

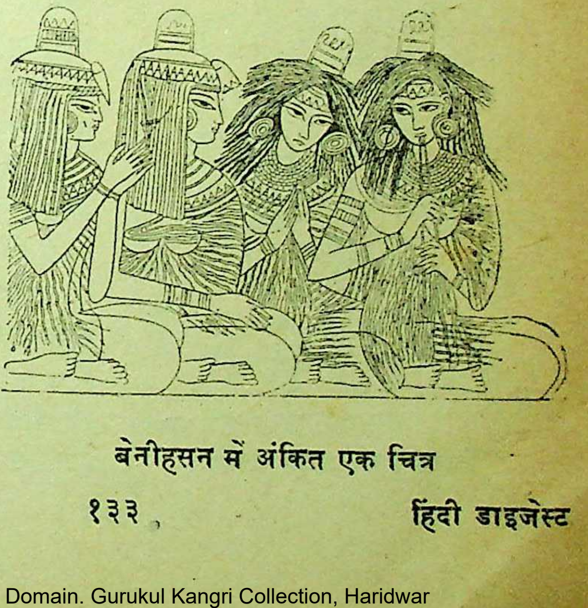

बेनीहसन में अंकित एक चित्र

के सहायक ने काफी मोल-भाव करने के बाद उसे खरीद तो लिया मगर तभी, जब विक्रेता ने उसे अहमद अब्दल रसूल से मिलाया।

सहायक और पुलिस दोनों को अब तक की जांच-पड़ताल और अनुभव से रसूल-परिवार और मुस्तफा आगा अयात नामक आदमी पर शक हो गया था। यह मुस्तफा अयात एक तुर्क था, जिसने किसी तरह अपने को मिस्र में बेल्जियम, ब्रिटेन और रूस का राजनयिक प्रतिनिधि नियुक्त करा लिया था। अपने राजनयिक पद की ओट में वह पुरावस्तुओं का लाभप्रद व्यापार कर रहा था। रसूल-परिवार ने अधिकांश चीजें इसी के हाथ बेची थीं।

फिरऊन की शाही कुर्सी

सन १८८१ में अहमद और मुहम्मद रसूल को गिरफ्तार करके बेड़ियां पहनाकर स्थानीय प्रशासक दाऊद पाशा के सामने पेश किया गया। दोनों भाइयों ने अपनी निर्दोषता की दुहाई दी और कहा कि हमारे घर पर कोई पुरावस्तुएं बरामद नहीं हुई हैं। उन्होंने बीसियों गवाह भी पेश किये, जिन्होंने दोनों भाइयों को बहुत ही शरीफ आदमी बताया। मार-पीट और प्रलोभन से भी कोई पक्का सबूत नहीं मिल सका। सो प्रशासक दाऊद पाशा ने उन्हें छोड़ दिया। उसे शायद असलियत का पता था।

मगर शीघ्र ही मुनाफे के बंटवारे को लेकर रसूल-परिवार में जबर्दस्त कलह हो गयी और इसकी खबर छिपी न रह सकी। अहमद का कहना था कि पुलिस द्वारा की गयी पिटाई के एवज में उसे मुनाफे का बड़ा हिस्सा मिलना चाहिये। पुरावस्तु-विभाग ने झगड़े की खबर पाकर फिर से जांच-पड़ताल शुरू करायी। मुहम्मद अब्दल रसूल जान गया कि अब खैरियत इसी में है कि सचाई कबूल कर ली जाये। सो तीन महीने बाद उसने स्थानीय प्रशासक दाऊद पाशा के सामने विस्तृत इकबाली बयान लिखवा दिया। कुछ दिन बाद वह एक छोटी टोली को गुप्त खजाने पर ले गया।

काहिरा संग्रहालय के उपनिदेशक एमिल ब्रग्श सरकारी प्रतिनिधि के रूप में इस टोली में थे। उन्हें यह भय था कि कहीं उनके साथ विश्वासघात न किया जाये; इसलिए वे हथियारों से लैस होकर आये थे। हथियारों से

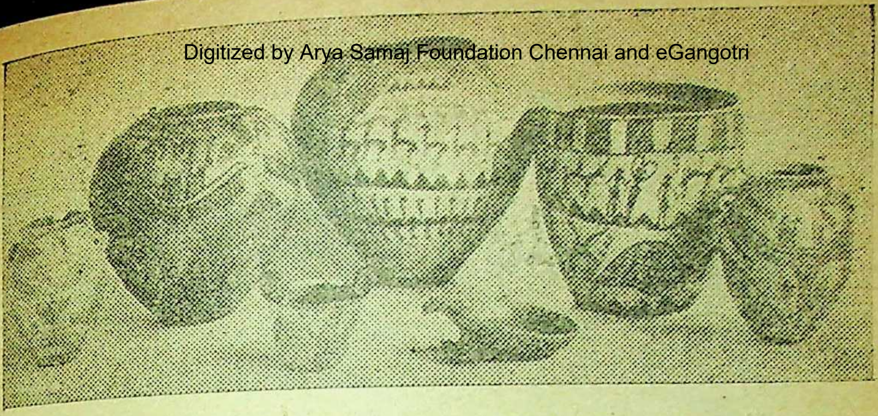

४००० ई. पू. के मिस्री मृत्पात्र [न्यूयार्क मेट्रोपोलिटन संग्रहालय]

साथ ही वे रस्सी के जरिये कूपिका में उतरे। साथ में शव कक्ष को ठीक से देख पाने के लिए वे मोमबत्तियां भी ले गये थे। वहां जो कुछ उन्हें देखने को मिला, उससे वे हक्के-बक्के रह गये। बाद में स्वयं मस्पेरो ने भी लिखा :

'स्थानीय अरबों को फिरऊनों का खासा बड़ा शव-संग्रह हासिल हो गया था। और फिरऊन भी कैसे-कैसे! शायद मिस्र के इतिहास के सबसे प्रतापी फिरऊन—थतमोस तृतीय, सेथी प्रथम, अह-मोस (मुक्तिदाता) और रेमसिस द्वितीय ...... आज भी मैं सोचा करता हूं, क्या सचमुच मैं इन सारे विशिष्ट व्यक्तियों का स्पर्श कर रहा था, जिनके बारे में उनके नामों के सिवा कुछ भी जान पाने की उम्मीद तक हमने कभी नहीं की थी? कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा था?'

अनेक विख्यात सम्राज्ञियों के ताबूत वहां एक पर एक चिनकर रख दिये गये थे। निश्चय ही प्राचीन पुरोहितों ने इन्हें लुटेरों के हाथों में पड़ने से बचाने के लिए उनकी समाधियों से निकालकर बड़ी आपाधापी में यहां जमा कर दिया था।

इस गुप्त स्थान से इन बेशकीमती चीजों को निकालने व ढोने के लिए पूरे तीन सौ मजदूर काम पर लगाये गये। अड़तालीस घंटों के भीतर बहुत-सी मोमियाइयां कूपिका में से निकालकर सरकारी जहाज पर पहुंचा दी गयीं। जब जहाज ने कूच का भोंपू बजाया, तो नील के तट पर खड़ी अरब औरतों ने जोर-जोर से रोकर और उनके

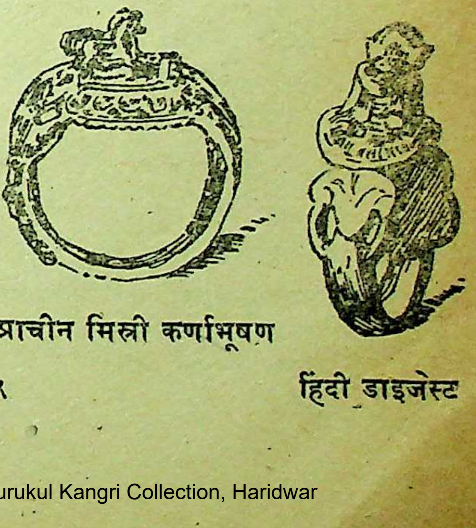

प्राचीन मिस्री कर्णाभूषण

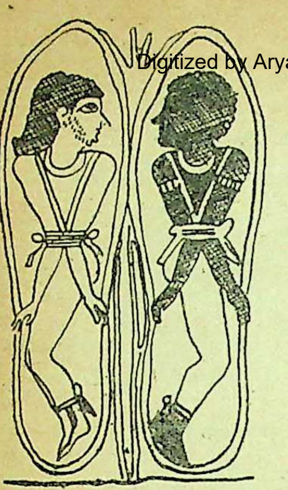

जूते के तल्लों पर आज भी डिजाइन बनाये जाते हैं, मगर इस प्राचीन मिस्री डिजाइन जितने कलात्मक नहीं।

मर्दों ने हवा में बंदूकें दागकर शाही शवों को विदाई दी। किसी ने उस समय कहा था कि असल में ये आंसू इसलिए बहाये जा रहे हैं कि आमदनी का आसान और बढ़िया जरिया छिन गया। खैर, मस्पेरो की समयोचित कार्रवाई ने मिस्र के महानतम फिरऊनों के शवों को विनष्ट होने से बचा लिया।

बाद में जब कुछ मोमियाइयों को खोलकर देखा गया, तो पुरातत्त्वज्ञों को मिस्री इतिहास के कई महामहिम शासकों की मुखाकृतियां निहारने का अवसर मिला। सेथी प्रथम सबसे सुरक्षित दशा में था। ...... 'शानदार शाही सिर। अब भी उसके ओंठों पर सौम्य शांत मुस्कान खेल रही थी। आंखें अधखुली थीं और पलकें अब भी जरा भीगी हुई थीं और उन पर चीनी प्रकाश की हल्की-सी रेखा थी जो शव-संरक्षण के समय चक्षु-गोलकों में बैठायी गयीं चीनी मिट्टी की गोलियों की परछाईं थी।'

इस तमाम हलचल के बाद कुछ वर्ष शांति रहा। सरकार का साथ देने के में मुहम्मद अब्दल रसूल को ५०० पौं बतौर इनाम बख्शे गये और उसे थीब्स समाधि-नगर का मुख्य चौकीदार बना गया। समाधि-लुटेरे के लिए कैसी नौकरी

सत्रह साल बाद जब फ्रांसीसी मिस्र-विशेषज्ञ विक्टर लारेट १८ वें राजवंश फिरऊन अमेनहोटेप द्वितीय की समाधि खुदाई करा रहे थे, तो शाही शवों के और गुप्त संग्रह का पता चला। फिरऊ अमेनहोटेप द्वितीय अपने समाधिकक्ष आराम से सो रहा था, मगर शाही पुरोहितों ने और भी तेरह शव वहां एक एक जमा कर दिये थे। ये मोमियाइयां काहिरा ले जायी गयीं, मगर अमेनहोटे द्वितीय को वहीं सोते रहने दिया गया। समाधि-कक्ष में लोहे के सींखचे लगा गये और फाटक पर पहरा बैठा दिया गया।

तीन साल बाद एक शाम को जब पहरेदार बैठे खाना खा रहे थे, चंद हथियारबं नकाबपोश आदमियों ने हमला करके हिरासत में ले लिया। कुछ नकाबपोश पहरेदारों पर पहरा देते रहे, बाकी समाधि में घुसकर शाही मोमियाई पर तावीज और गहने उतार लिये। फिर वे वहां से भाग गये। पहरेदारों ने पीछा कि तो गोलियां दागकर उन्हें रोक दिया गया परंतु पहरेदारों ने कुछ लुटेरों को पहचा लिया था। ये रसूल-परिवार के सदस्य थे।

[शेष पृष्ठ १५५ पर]

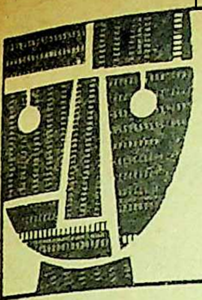

• मित्र

कुछ इधर से कुछ उधर से

संख्याओं के मामले में स्त्रियां कैसे पेश आयेंगी कहना कठिन होता है। यदि सवाल उनकी अपनी उम्र का हो, तो वे अपनी कुछ जोड़-तोड़कर बतायेंगी। यदि किसी दूसरी स्त्री की उम्र का मामला हो तो फिर कहना ही क्या! उनकी उम्र पता लगाने के लिए आपको जादूगरों वाली ट्रिकें अपनानी होंगी। जादूगर अक्सर ऐसा खेल दिखाते हैं, जिसमें वे किसी सोची गयी संख्या के बारे में भविष्यवाणी करते हैं। मदारी किसी दर्शक को कोई संख्या सोचने के लिए कहता है, फिर वह दर्शक को उस संख्या पर कुछ संक्रियाएं (आपरेशन्स) करने को कहता है। जो परिणाम आता है, वह पहले से लिखी गयी संख्या से मेल खाता है।

उदाहरण के लिए: जादूगर सोची गयी संख्या को दुगुना करने को कहता है और उसमें ६ जोड़ने को कहता है। उसके बाद प्राप्त राशि को आधा करके उसमें से मूल संख्या घटाने को कहता है। परिणाम (३) होगा।

विधि: जादूगर जो संख्या जोड़ने को कहेगा, उत्तर हमेशा उस संख्या का आधा होगा। ऊपर के उदाहरण में उसने ६ जोड़ने को कहा था, उत्तर उसका आधा—यानी तीन है। यदि वह ८ जोड़ने को कहता तो उत्तर ४ होता।

मान लीजिये सोची गयी संख्या है = अ
दुगुना करने पर = २ अ
६ जोड़ने पर = २ अ + ६
आधा करने पर = अ + ३
मूल संख्या घटाने पर = अ + ३ − अ = ३

२. कैलेंडर से संबंधित सबसे मशहूर ट्रिक इस बारे में है कि किसी विशेष तारीख को कौन-सा वार था। वस्तुतः यह गणित की विधि है। जादूगर अपनी सुविधा के लिए शार्ट-कट निकाल लेता है और बिना कागज-पेंसिल की सहायता से यह करतब दिखाकर लोगों को विस्मय में डाल देता है। चूंकि जादूगर अक्सर चालू वर्ष की किसी तारीख के बारे में ही पूछता है, इसलिए यह करतब दिखाना उसके लिए और भी आसान हो जाता है।

आप जानते ही हैं कि कैलेंडर में सात दिन का चक्र चलता है। वर्ष में ३६५ दिन

आधुनिक गृहणियों
की पसंद
सायकल छाप
और
हाथी छाप
शुद्ध अल्युमिनियम बर्तन

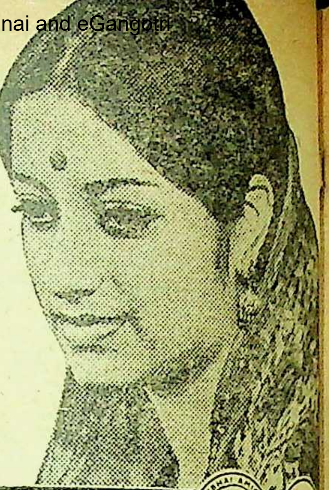

सायकल छाप और **हाथी** छाप अल्युमिनियम बर्तन :

- सस्ते किस्म के बर्तनों के बिल्कुल विपरीत ये शुद्ध अल्युमिनियम के बने हैं।
- काम में लाने में आसान।
- समान मोटाई, चिकनी फिनिश और चमकीला देखाव।
- ये जल्दी गर्म होते हैं इसलिए ईंधन में बचत होती है।
- सस्ते किस्म के बर्तनों से अधिक टिकाऊ होते है।
- अनेक आकारों और श्रेणियों में मिलते हैं।

६० वर्षों से भी अधिक समय से अल्युमिनियम में **सायकल** छाप और **हाथी** छाप दो विश्वसनीय नाम।

लल्लूभाई अमीचंद प्राइवे
४८-५०, कंसारा चाल, बम्बई

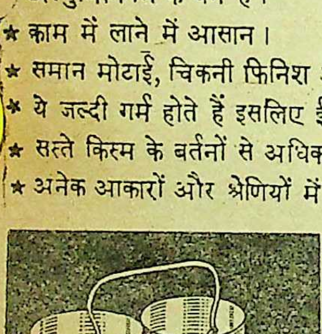

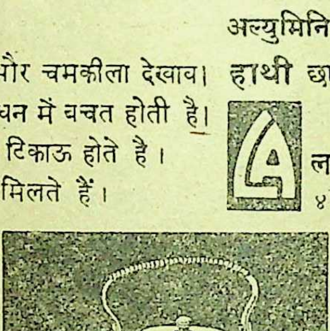

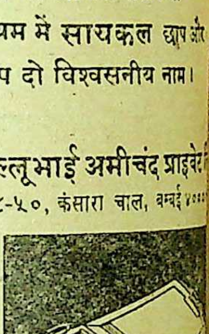

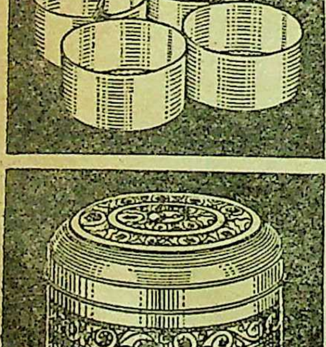

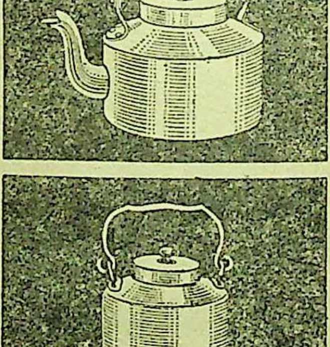

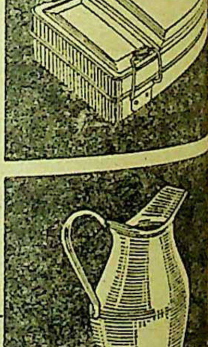

Ratan Batra/LA/H/07-C

होते हैं—५२ सप्ताह और एक दिन अधिक। इस एक 'अधिक' दिन की वजह से पिछले वर्ष और चालू वर्ष में एक वार का फर्क पड़ जाता है। यानी पिछले वर्ष यदि किसी तारीख को मंगलवार था, तो इस वर्ष उस तारीख को बुधवार होगा। लीप इयर में यह फर्क दो दिन का होता है; क्योंकि उसमें ३६६ दिन होते हैं। यह बात भी ध्यान में रखने योग्य है कि वही वर्ष लीप इयर होता है, जिसे चार से विभाजित किया जा सके। इसी तरह सदियों वाले सालों (१००, २००, ३०० आदि) में वही वर्ष लीप इयर होते हैं, जो ४०० से विभाजित किये जा सकते हैं, यानी ४००, ८००, १२००, १६०० ...... इत्यादि। अब देखें कि १०० वर्षों में कितने 'अधिक' दिन होंगे। १०० वर्षों में १०० दिन अधिक होंगे। उनके अलावा २४ लीप इयर होंगे, जिनके हिसाब का एक-एक अधिक दिन और जुड़ेगा। इस तरह कुल अधिक दिन होंगे १२४। जैसा कि हमने ऊपर देखा, कैलेंडर में सात का चक्र चलता है। सो १२४ को सात से भाग देना होगा। जो शेष रहता है, उस संख्या को ही लें। वह है=५।

इस तरह २०० वर्षों में होंगे १०=१०−७=३

इस तरह ३०० वर्षों में होंगे १५=१५−१४=१

इस तरह ४०० वर्षों में होंगे २०+१=२१−२१=० (एक अधिक दिन लीप इयर की वजह से) क्योंकि सन ४०० लीप इयर होगा।

अब जरा देखें कि १५ अगस्त १९७५ को कौन-सा वार होगा।

वर्ष	अधिक दिन	
सन १६००	०	
३००	१	
सन ७४ के लिए	४	७४ को सात से भाग देने पर शेष।
७४ वर्ष में १८ लीप इयर	४	१८ को सात से भाग देने पर शेष।
सन १९७५		
जनवरी (३१ दिन)	३	३१ को सात का भाग देने पर शेष।
फरवरी (२८ दिन)	०	
मार्च (३१ दिन)	३	
अप्रैल (३० दिन)	२	
मई (३१ दिन)	३	
जून (३० दिन)	२	
जुलाई (३१ दिन)	३	
अगस्त (१५ दिन)	१	१५ को सात से भाग देने पर शेष
कुल दिन हुए	२६	
	=५	२६ को सात से भाग देनें पर

रविवार	सोम.	मंगल.	बुध.	बृह.	शुक्र.	शनि.
०	१	२	३	४	५	६

ऊपर के चार्ट की सहायता से आप बता सकते हैं कि ५ शेष संख्या वाला दिन शुक्रवार होगा।

* * *

सापेक्षतावाद : कुछ प्रसंग

आइंस्टाइन ने एक बार कहा था—'कभी-कभी सोचने लगता हूं कि सापेक्षतावाद के सिद्धांत को आखिर मैंने ही क्यों जन्म दिया। मेरे खयाल में इसका कारण यह है कि प्रौढ़ वय का औसत आदमी स्थान और समय की समस्याओं के बारे में सोचने के लिए शायद ही कभी समय निकालता है। इन चीजों के बारे में वह बचपन में सोच चुका होता है। पर मैं स्थान और समय के बारे में सिर्फ तब सोचने लगा, जब मैं बड़ा हो चुका था। स्वाभाविक है कि मैं एक बच्चे के मुकाबले में ज्यादा गहराई से सोच सकता था।'

०००

आइंस्टाइन की दूसरी पत्नी एल्सा उनके वैज्ञानिक कार्य में हाथ नहीं बंटाती थी, पर दोनों के पारस्परिक संबंध बहुत घनिष्ठ थे। आइंस्टाइन जब अपने अध्ययन-कक्ष में से पाइप का कश खींचते हुए निकलते, तो एल्सा उन्हें धीरे-धीरे फिर से वास्तविक संसार में लाती, जैसे कोई जादूगर किसी को जादू के प्रभाव से मुक्त करता है। वह उनके गिर्द बैठे लोगों या खाने-पीने की चीजों की ओर उनका ध्यान खींचती।

एक दिन एल्सा ने उनसे कहा-'लोग तुम्हारे काम के बारे में बहुत-सी बातें करते हैं। पर ऐसे मौकों पर जब मैं उनसे कहती हूं कि इस बारे में मैं कुछ नहीं जानती, तो मुझे लगता है कि मैं मूर्ख-सी हूं। क्या तुम मुझे कुछ खास-खास बातें बता नहीं सकते?'

आइंस्टाइन ने कुछ क्षण सोचा। उनके चेहरे पर एक नया भाव आया और वे बोले-'अगर लोग पूछें, तो उन्हें कहना कि मैं इस बारे में सब कुछ जानती हूं, पर बता नहीं सकती; क्योंकि यह बड़े भेद की बात है।'

०००

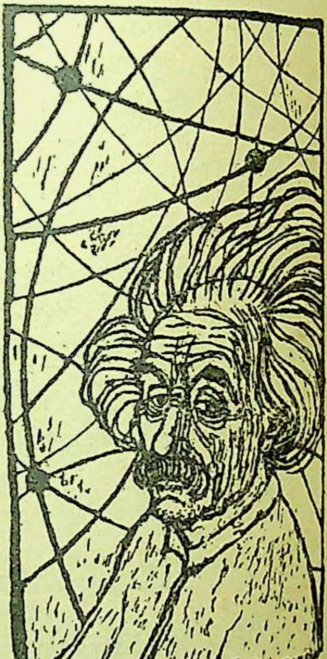

आइंस्टाइन (चित्रः हानफ्रीड शुल्ज)

सन १९२० में जर्मनी की एक संस्था ने सापेक्षतावाद और आइंस्टाइन दोनों के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए बर्लिन का फिलहार्मोनिक हाल किराये पर लिया, तो आइंस्टाइन भी वहां जा पहुंचे। वे एक बाक्स में अकेले बैठे वहां हो रही कार्रवाई का मजा लेते रहे। जब कोई वक्ता कोई बहुत ही मूर्खतापूर्ण बात कह देता, तो वे खिलखिलाकर हंस पड़ते और तालियां बजाकर उसकी दाद देते थे।

०००

सन १९२१ में कुछ पत्रकारों ने आइंस्टाइन से थोड़े-से वाक्यों में सापेक्षतावाद का सिद्धांत समझाने को कहा, तो उन्होंने उत्तर दिया—'अगर आप मेरी बात को बहुत अधिक गंभीरता से न लें और इसे एक तरह का मजाक ही समझें, तो मैं इस सिद्धांत को इस प्रकार समझा सकता हूं :

'पहले यह माना जाता था कि अगर भौतिक वस्तुएं ब्रह्मांड से गायब हो जायें, तो सिर्फ समय और स्थान बच रहेंगे। सापेक्षतावाद के अनुसार, समय और स्थान भौतिक वस्तुओं के साथ ही गायब हो जाते हैं।'

०००

एक पत्रिका ने एलान किया कि जो भी आदमी सापेक्षतावाद सिद्धांत को तीन हजार शब्दों में सर्वाधिक स्पष्ट रूप में समझायेगा, उसे दो हजार पौंड का इनाम दिया जायेगा।

यह एलान पढ़ने पर आइंस्टाइन ने कहा—'अपने सारे दोस्तों की टोली में एक मैं ही हूं, जो इस प्रतिस्पर्धा में भाग नहीं ले रहा; क्योंकि मैं यह सिद्धांत समझा नहीं सकता।'

०००

सन १९३३ में आइंस्टाइन को जर्मनी में अपनी जान का खतरा मालूम हुआ, तो वे इंग्लैंड चले गये। वहां प्रसिद्ध मूर्तिकार जेकब एप्स्टाइन उनकी मूर्ति बनाने लगे। एक दिन दोनों के बीच सापेक्षतावाद-सिद्धांत का जिक्र होने पर आइंस्टाइन ने कहा—'एक सौ नाजी प्रोफेसरों ने मिलकर सापेक्षतावाद को गलत सिद्ध करने के लिए एक पुस्तक लिखी है। पर अगर यह सिद्धांत गलत होता, तो उसका खंडन करने के लिए एक ही प्रोफेसर काफी होता।' **—बलवीर**

★

सफलता-सूत्र

मेरे पिताजी ने मुझे दो नसीहतें दी थीं—अव्वल, सफलता की आशा न करो; दूसरे, जल्दी से सफल हो जाने की आशा न करो। यानी यदि मैं चालीस की उम्र तक सफल हो जाता तो यह एक बड़ी बात होती। आजकल लगता है, लोगों को यह नसीहत नहीं मिलती। पचीस की उम्र तक अगर आप सफल नहीं होते तो समझ लिया जाता है कि आप काम से गये।

—किंग्स्ले एमिस

★

कृष्ण मोहन प्रसाद
एवं
इंदल सिंह भदौरिया

गुरुकुल कांगड़ी

फूलों की ताजगी

फूल प्रकृति की अनूठी एवं अमूल्य देन हैं; उपमा, उपहार एवं उपासना के लिए उपादेय अनुपम वस्तु। रंग-बिरंगे फूलों के बिना संसार एक मनहूस नजारा बनकर रह जायेगा—मुस्कान-रहित चेहरे की तरह।

इसीलिए मनुष्य न केवल क्यारियों और गमलों में फूल वाले पौधे उगाता है, बल्कि आकर्षक आकृतियों वाले फूलदानों में फूल सजाकर अपने आवास-स्थान को शोभाशाली बनाता है। जापान में तो पुष्पसज्जा का विशाल और जटिल शास्त्र ही विकसित हो गया है, जिसे 'इकेबाना' कहते हैं। रसजीवी मनीषी काका कालेलकर तो जापानी पुष्पसज्जा की कलात्मकता से इतने प्रभावित हुए कि उन्हें प्रतीत हुआ कि यह चीज भारत को जापान से अवश्य सीखनी चाहिये।

किसी भी पुष्पसज्जा की सुंदरता मूलतः इस बात पर आधारित होती है कि उसमें फूल अधिक समय तक ताजे बने रहें। उनकी ताजगी बनाये रखने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये :

१. फूलों को सुबह या शाम को ही पौधे से निकाला जाये। धूप में काटे गये फूल शीघ्र मुरझा जाते हैं।

२. फूलों के साथ डंठल यथासाध्य बड़ा रहना चाहिये। डंठल-रहित फूल शीघ्र सूखने लगते हैं।

३. फूलों को पौधों से निकालने के लिए तेज धारदार चाकू या ब्लेड काम में लाना चाहिये। हाथ से डंठल समेत फूल तोड़ना कठिन और हानिकारक होता है।

४. डंठल के निचले १५ सें. मी. वाले भाग से सभी पत्तियां निकाल देनी चाहिये; क्योंकि पत्तियां फूल में जमा नमी को वायुमंडल में फेंकती हैं।

५. डंठल का निचला छोर उबलते हुए पानी में ३० सेकेंड तक डुबोकर रखें, फिर उसे तुरंत ठंडे पानी में डुबो दें। ऐसा करने से डंठल का पानी कटे हुए भाग से वाष्पन द्वारा बाहर नहीं निकलेगा।

६. फूलदान का पानी प्रतिदिन बदलना चाहिये।

७. डंठल के कटे हुए भाग पर मोम की पतली परत जमा देनी चाहिये।

८. फूलदान के पानी में निम्नलिखित रसायनों का उपयोग बहुत सहयोगी सिद्ध होता है :

क. कोयला और एस्पिरीन फूलदान के पानी को शुद्ध रखते हैं, जिससे फूल अधिक देर तक ताजे रहते हैं। एस्पिरीन की आधी गोली फूलदान में घोल दें।

ख. बोरिक एसिड का ०.१ घोल (१० भाग पानी में १ भाग बोरिक एसिड) कारनेशन फूल को सात दिन तक ताजा रख सकता है।

ग. तांबे के टुकड़े, शकर, नमक आदि भी फूलों को ताजा रखने में सहायक होते हैं।

घ. ६ प्रतिशत सल्फ्यूरिक अम्ल दो चम्मच एक लिटर पानी में मिलाया जाये, तो इस पानी में फूल कई दिन तक ताजे रहते हैं। परंतु इस तेजाब का उपयोग धातु के फूलदानों में नहीं करना चाहिये।

ङ. पोस्त (पॉपी) तथा कुछ किस्म के गुलाबों की पंखुड़ियों के बहुत जल्दी झड़ जाने का भय रहता है; ऐसे फूलों में पिघले हुए जिलेटिन की एक-दो बूंदें डाल देने से पंखुड़ियां झड़ती नहीं और फूल काफी समय तक ताजे बने रहते हैं।

च. ब्लूमलाइफ और फ्लोरालाइफ जैसे कुछ रसायन फूलों को ताजा रखने में विशेषतः सहायक होते हैं। उन्हें घर में तैयार करने का तरीका यह है :

सूत्र-एक : ३० ग्राम हाइड्राजीन सलफेट को १.२५ लिटर पानी में डालकर स्टाक घोल बना लें। इस घोल की ५ मिली लिटर मात्रा १ लिटर पानी में मिलायें। इस पानी में टेबल कारनेशन व अन्य मौसमी फूल अधिक देर तक ताजे रहेंगे।

सूत्र-दो : ३ चम्मच (चाय की) फिटकरी व उसी अनुपात में कलोरिकस एवं एक चौथाई ग्राम फैरिक आक्साइड और १० ग्राम शकर १ लिटर पानी में घोलकर उपयोग में लायें।

इन सूत्रों की सहायता से फूलों को काफी लंबे अरसे तक ताजा रखकर गुलदस्ते के लिए रोज-रोज नये फूल काटने की व्यथा से बचा जा सकता है।

—ज. ने. कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

★

थोक उपभोक्ता

आंध्र प्रदेश डेरी डेवलपमेंट कार्पोरेशन साल में १,८०० टन घी तैयार करता है। उसमें से ३६० टन तो तिरुपति का वेंकटेश्वर मंदिर खपाता है। कार्पोरेशन के निदेशक एम. आर. रत्नम् विनोद में कहते हैं—'श्री वेंकटेश्वर भगवान हमारे थोक उपभोक्ता हैं।' उन्होंने पत्रकारों को बताया कि तिरुपति मंदिर ने प्रतिमास ३० टन घी सप्लाई करने का स्थायी आर्डर दे रखा है।

[एक समाचार]

★

तुर्की देश में दो अति चतुर आदमी रहते थे। उनमें से एक [illegible] दुबला था और दूसरा काफी मोटा था। दोनों पक्के मित्र थे। उनका काम था लोगों को तरह-तरह के तरीकों से लूटना। वे विदेशियों और यात्रियों को ठगने के नये-नये ढंग निकालते और लूट के पैसे से सुख से जीवन बिताते थे। मेहनत और काम के नाम से उनका पसीना छूटता था।

तुर्की का राजा बहुत नेक और दयालु था। प्रजा के दुःख-सुख का वह पूरा ध्यान रखता था। उसके राज्य में बहुत धन-दौलत थी; लोग सुख से जीवन बिता रहे थे। साथ ही राजा बहुत शौकीन स्वभाव का था। उसके दरबार में अनेक विद्वान, कवि, गायक, चित्रकार आदि थे। राजा को नयी-नयी और अनोखी चीजों का भी बड़ा शौक था। दूर-दूर के देशों के लोग इनाम की आशा अपने यहां की विचित्र और अनरोल वस् उसके दरबार में लाते और मुंह-मांगा इना पाते।

एक दिन वे दोनों अति चतुर आदमी ए बगीचे में छायादार वृक्ष के नीचे सिर बैठे थे। उनके चेहरों पर चिंता के चिह्न या तो पिछले कुछ दिनों से वे कोई मोटा शिकार फांसने में असफल रहे थे; या जो फंसे, उनसे खास पैसे हाथ नहीं लगे थे। उन दिनों उनका हाथ बहुत तंग था और सोच रहे थे कि अबकी बार किसी ऐ आदमी को फांसा जाये जिससे खूब हाथ लगें और बहुत दिनों तक सुख से सकें।

सुरजीत की बालकथा

भालू

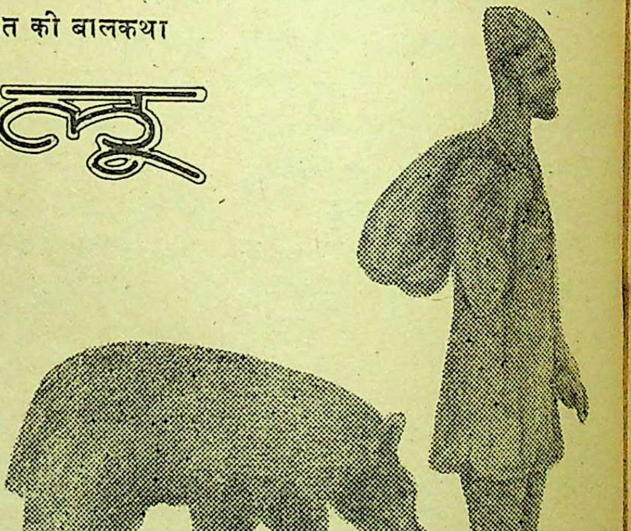

कुछ समय बाद तुर्की की राजधानी इस्तंबोल में एक यात्री की बड़ी चर्चा होने लगी। उसके पास एक भालू था। यह भालू बहुत अच्छा नाचता था, तरह-तरह के रंगों को पहचानता था, बहुत सभ्य और शिष्ट था, और कई बाजे भी बजा सकता था।

राजा ने यात्री और भालू के बारे में सुना, तो तुरंत एक कर्मचारी को उन्हें लाने के लिए भेजा। राजा ऐसी चीजों का बहुत शौकीन था।

आखिर यात्री को उस राजा के सामने पेश किया गया। यात्री के पीछे उसका भालू था। भालू ने सफेद रंग का कोट पहन रखा था। जब यात्री अभिवादन के लिए राजा के सामने झुका, भालू ने भी झुककर अभिवादन किया। राजा और सभी दरबारी यह देखकर चकित रह गये। इसके बाद भालू ने कई कौतुक दिखाये। उसने कई तरह के बाजों की धुन पर कई तरह के नाच दिखाये। राजा बहुत प्रसन्न हुआ। हर नाच और कौतुक पर उसने बरबस तालियां बजाकर आनंद प्रकट किया; इसके बाद कई रंगों के कागज एक स्थान पर रखे गये और राजा ने जिस रंग का नाम लिया, भालू ने जाकर उसी रंग के कागज पर हाथ रख दिया। सभी दरबारी ठगे-से रह गये। फिर राजा ने यात्री से फरमाइश की कि भालू से पियानो बजवाओ। यात्री ने भालू को पियानो के सामने एक स्टूल पर बैठा दिया और भालू ने एक धुन के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी धुन बजायी।

जब भालू पियानो बजा चुका तो यात्री और भालू ने झुककर राजा को प्रणाम किया। फिर यात्री ने विदा होने की इजाजत राजा से मांगी।

इस पर राजा ने कहा—'हम तुम्हारे इस अनोखे भालू को देखकर बहुत प्रसन्न हुए हैं। हमारे विचार में यह दुनिया का एकमात्र भालू है, जो इतने कौतुक दिखाता है। एक जंगली जानवर को इस प्रकार सधाने पर हम तुम्हें भी बधाई देते हैं। हमने तय किया है कि इस भालू को हम स्थायी रूप से अपने पास रखेंगे। इसलिए तुम इसका मूल्य बताओ, ताकि शाही खजाने से तुम्हें धन दिलवाकर विदा किया जाये।'

यात्री के चेहरे का रंग उड़ गया। वह भालू को अपने से अलग नहीं कर सकता था। आखिर उसने तय किया कि भालू का इतना ज्यादा मूल्य मांगा जाये कि राजा तैयार न हो। यही सोचकर उसने कहा—'ईश्वर महाराज को सलामत रखे। सेवक ने वर्षों कठोर परिश्रम करके इस जानवर को इस तरह सधाया है। इसी के द्वारा सेवक देश-देश फिरकर अपनी जीविका कमाता और भ्रमण का शौक पूरा करता है। यदि यह भालू आपने ले लिया, तो सेवक जीवन-भर के लिए जीविका से वंचित हो जायेगा। मगर चूंकि आपने उसे अपने पास रखने का पक्का फैसला कर लिया है, मैं उसके बदले में कम से कम दो करोड़ रुपये चाहता हूं, जिससे कि आगे जीवन में

नन्हे बच्चों की बढ़ोतरी के लिये

Naunehal
BABY TONIC
Hamdard
Naunehal
BABY TONIC
Hamdard

नौनिहाल
बेबी टॉनिक

विटामिन ए,सी,डी,बी कॉम्पलेक्स और
चार खनिज पदार्थों का मिश्रण

नन्हे बच्चों की हड्डियों और पट्ठों को मज़बूत
और त्वचा को मुलायम और तन्दुरुस्त बनाता है।
भरपूर तन्दुरुस्ती और ताक़त के लिये बच्चों को
सदा नौनिहाल बेबी टॉनिक दीजिये।

हमदर्द

HD-BT-3218 HA

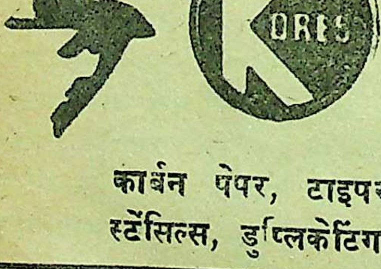

'को र स'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं
की पूर्ति करने वाला भारत का
सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप,
स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

कभी मुझे पैसों की तंगी न हो।'

उसे पूरा विश्वास था कि राजा इतनी बड़ी रकम देने को राजी न होगा। परंतु राजा ने तो भालू को प्राप्त करने का पक्का निश्चय कर लिया था। थोड़ी देर तक सोचने के बाद उसने प्रधान-मंत्री को आदेश दिया—'यात्री को शाही खजाने से दो करोड़ रुपये दे दिये जायें। उसके बाद भालू को शाही चिड़ियाघर में दूसरे भालुओं के साथ छोड़ दिया जाये। क्योंकि वे सब भालू जंगली हैं। इस भालू के साथ रहकर वे भी कुछ सभ्यता सीख जायेंगे।'

इतना सुनना था कि भालू को गश आने लगा और सैलानी भी चकरा गया। पलक झपकते में वे दोनों बाहर की ओर भागे। राजा ने सिपाहियों को आदेश दिया—'पकड़ लो। भागने न पायें।'

कुछ ही क्षण बाद इस्तंबोल के दोनों बदनाम बदमाश बेड़ियों में बंधे राजा के सामने खड़े थे। एक बदमाश के ऊपर से उतरी भालू की खाल पास ही पड़ी थी। दोनों ने राजा के सामने अपने अपराधों को स्वीकार कर लिया और प्राणदान की प्रार्थना की।

राजा ने कहा—'हम भालू की असलियत उसी समय जान गये थे, जब वह पियानो बजा रहा था; क्योंकि उसके पंजों के नीचे आदमी की उगलियां हमें साफ नजर आ रही थीं। हम चाहते तो उसी समय खेल खत्म कर सकते थे। पर हमने दूसरा तरीका सोचा और इसीलिए भालू को खरीदने की इच्छा प्रकट की। खैर हम और हमारे दरबारी तुम्हारे कौतुक से बहुत प्रसन्न हुए थे। इसलिए दोनों को हम प्राणदान देते हैं। मगर यह शर्त है कि भविष्य में तुम लोग किसी को धोखा मत देना और परिश्रम से जीविका कमाना।'

उसके बाद दोनों को सारे नगर में घुमाया गया, ताकि लोग उन्हें अच्छी तरह पहचान लें, उनके हाथों धोखा न खायें और उनकी दुर्दशा से शिक्षा लें। इसीलिए कहा जाता है—धूर्तता करते समय दूसरे को निरा मूर्ख न समझो।

सी-३४, सुदर्शन पार्क, मोतीनगर,
नयी दिल्ली-१५

* * *

एक लड़की दुकान में गयी और कुछ साड़ियां देखने के बाद उसने लाल रंग की दो साड़ियों का चुनाव करके दुकानदार से कहा—'इनमें से कौन-सी लूं ? इन दोनों में से किसकी सरसराहट की आवाज ज्यादा अच्छी लगती है ?'

'तो यह साड़ी लीजिये', दुकानदार ने कहा—'लेकिन आप आवाज के आधार पर साड़ी का चुनाव क्यों करना चाहती हैं ?'

लड़की ने कहा—'यह मैं अपनी शादी के लिए ले रही हूं। मेरे भावी पति नेत्रहीन हैं, मैं चाहती हूं कि जब मैं उनके पास जाऊं, तो वे मुझे अपने पास आते हुए सुन सकें।'

★

ग्रंथ-लोक

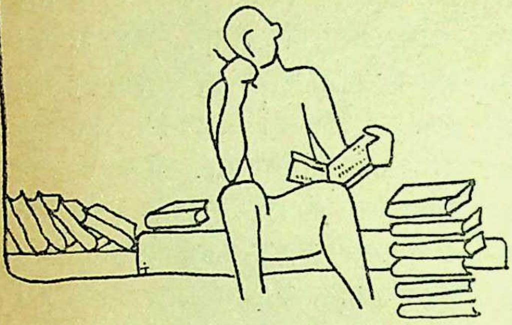

- * निषाद बांसुरी
- * अंतरा
- * भारतीय संगीतवाद्य
- * संत साहित्य के प्रेरणा-स्रो

*** निषाद बांसुरी * लेखक : कुबेरनाथ राय; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली; पृष्ठसंख्या : २३३; मूल्य : १७ रुपये।**

श्री कुबेरनाथ राय एक प्रकार की विशिष्ट शैली के लिए परिचित हैं। उस शैली में हिंदी और बंगला की कई परंपराएं अंतर्निहित हैं। स्पष्ट है कि राय महाशय की सांस्कृतिक संचेतना पुष्ट और संपन्न है। शास्त्रों, परंपराओं, लोक-विश्वासों को अपनी कल्पना से रंगकर जो ठंढाई वे घोटते हैं, वह निश्चय ही उष्णता-नाशक और शीतलतादायी है। 'निषाद बांसुरी' में भारतीय संस्कृति को समृद्ध करने वाली ब्राह्मणेतर सांस्कृतिक परंपरा की पृष्ठभूमि को ग्रहण किया गया है। अवश्य ही बहुत बड़ा काम हुआ है।

लोक-संस्कृति की धारा तो स्वयंभू ठहरी, उसे शास्त्रवाक्यों की प्रमाण की आवश्यकता कहां! उस लोक-संस्कृति की रसधारा में राय महाशय खूब ही डूबे हैं। पांडित्य के बावजूद शैली सरस है। समाजशास्त्र और अन्य आधुनिक विषयों को उन्होंने सफलतापूर्वक भारतीय ज्ञानकोष में मिलाकर ऐसा वातावरण पैदा किया है कि पाठक ज्ञान को जमा की हुई वस्तु न समझकर एक नवीन दृष्टि मानने को बाध्य होता है—नवीन ऐसी कि वह सब दृश्यों का नवीनीकरण कर देती है। राय महाशय इसके लिए अभिनंदन के पात्र हैं।

केवल एक ही सुझाव—इतने परोक्ष वि से वस्तुओं का वर्णन कुछ और पुस्तकों के बाद एकरस या 'मोनॉटनस' हो जाने का खतरा शायद है। रस लेते-लेते पाठक हमेशा परोक्ष तथ्यों को—'फैक्ट्स' को शायद हमेशा याद करना नहीं चाहता। ०००

*** अंतरा * लेखक : अज्ञेय : प्रकाशक : राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली; पृष्ठसंख्या : १२०; मूल्य : १२ रुपये।**

हिंदी में आधुनिक कविता के प्रतिष्ठापक समझे जाते हैं अज्ञेयजी। वे अंग्रेजी में भी छप चुके हैं और अंग्रेजी पत्रों का भी संपादन कर चुके हैं। संस्कृत के भी विद्वान हैं। बंगला भी जानते हैं। आतंकवादी भी रहे हैं। संक्षेप में, हिंदी साहित्य में उन्हें समझने के लिए कुछ-एक उन्हीं के-से विद्वान हैं। बाकी पाठक तो सिर्फ प्रभावित ही हो सकते हैं।

'अंतरा' नामक उनकी पुस्तक में अंग्रेजी की रचनाएं भी खूब हैं, जो शायद अंतरराष्ट्रीय पाठकों के लिए हैं-'I must think', he said; and he sat down and thunk' (सेमीकोलन मूल में है!) या 'Sometimes it's cary/And Sometimes dary/But mostly life is ordinary/I don't cary.' फिर 'रुरूपयिषा' जैसे शब्द भी हैं। असल में 'अंतरा' जैसी पुस्तक सटीक छपनी चाहिये। अंग्रेजी का एम. ए. पास या संस्कृत-हिंदी का साधारण विद्यार्थी तो समझ ही नहीं सकता कि यह चंपू है या डायरी या प्रकाशक का आग्रह। पीछे अज्ञेयजी का एक फोटो वर्क में छपा है, जिसमें वे अर्न्स्ट हेमिंग्वे जैसे दिखते हैं।

रचनाओं में दूसरे रचनाकारों पर भी रचनाएं हैं: 'एक थे ध. भारती साकिन अतरसुइया / मौके से छू आये बाङला देश की धइया / पद्मश्री तो पा गये / पर कविता गंवा गये / (या यों ही हेरा गये होके बम्बइया)'। ऐसी रचना का सेंट्रल आयडिया यह कि यदि कोई कवि अतरसुइया का साकिन हो तो न तो उसे बाङला देश जाना चाहिये, न पद्मश्री स्वीकार करना चाहिये, और न बंबई आना चाहिये। विषय और शैली दोनों आधुनिक हैं। भारतीय इंटेलेक्चुअल (मतलब intellectual) से नाराज हैं-'अगर अक्ल भारतीय इंटेलेक्चुअल की और भैंस सरकार की तो निस्संदेह भैंस बड़ी है। बल्कि इंटेलेक्चुअल तो भैंस को भी पूजने को तैयार होगा!' पाठक शायद यह नहीं जानता कि बरसों अज्ञेयजी अंग्रेज सरकार के पत्र 'Our Assam' का संपादन करते थे और मोटे तौर पर अंग्रेज का समर्थन करते थे। फ्रेंच की भी एक रचना पृष्ठ १११ पर है। जाहिर है कि बहुत ही पढ़े-लिखे आदमी की किताब है और भारत के भैंस को पूजने वाले इंटेलेक्चुअल से अलग वह आदमी है। एक बात पते की पृष्ठ ३४ पर है-'किसी को ठीक-ठीक पहचानना हो तो उसे दूसरों की बुराई करते सुनो। ध्यान से सुनो।'

पाठक से निवेदन है कि वह ध्यान से पढ़े। 'अंतरा' का स्थायी यही है।

—अनंत कुमार पाषाण

ooo

*** भारतीय संगीत-वाद्य * लेखक : डा. लालमणि मिश्र; प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ; नयी दिल्ली; पृष्ठसंख्या : २०० + ५४; मूल्य : ४० रुपये।**

आदिकाल से ही गायन की संगति के लिए वाद्य रहे हैं और इन वाद्यों के रूप एवं उपयोगिता का वर्णन प्राचीन काल के ग्रंथों

पानी के साथ बहा देती है.इसलिये अब बाल धोने के लिये लाइये...

卐 स्वस्तिक
शिकाकाई
शैंपू साबुन

लिक्विड शैंपू के सभी गुणों से युक्त...
और ख़र्च कम!

卐 SWASTIK
SHIKAKAI

卐 स्वस्तिक शिकाकाई शैंपू साबुन में शिकाकाई मिला है—भारतीय महिला के मनोरम बालों का पारम्परिक रहस्य.

में मिलता है। सामगान और गांधर्व-अभिजात देशी गान के साथ वाद्यों के उपयोग का प्रमाण मिलता है। ब्राह्मण, तंत्रशास्त्र, शिक्षा, नाटचशास्त्र, संगीतरत्नाकर आदि से इनके क्रमिक विकास का पता चलता है। सर शौरींद्रमोहन ठाकुर के 'यंत्रकोष' के बाद आधुनिक परिप्रेक्ष्य में डा. लालमणि मिश्र का यह ग्रंथ अपनी विशिष्टता लिये हुए है।

डा. मिश्र ने अपने इस शोध-प्रबंध में विभिन्न शास्त्रों का आधार लेकर वाद्यों के क्रमिक विकास, उनकी निर्माण-विधि व वादन-विधि पर प्रकाश डाला है, जो आज के संदर्भ में उपयोगी माना जायेगा। संगीत के मुख्य तत्त्व, स्वर-विकास, नादतत्त्व, वाद्यों का प्रतीकात्मक व रसात्मक प्रयोग तथा तालों के बोल व ततवाद्यों की गतें इस ग्रंथ की विशिष्टता हैं। प्रचलित-अप्रचलित तथा लोकवाद्यों की जानकारी से इस संबंध में फैली भ्रांत धारणाओं का निराकरण होगा, इसमें संदेह नहीं। अधिक महत्त्वपूर्ण है सारणा-प्रणाली और मार्जना-पद्धति का विवेचन, धातु के प्रकारों का उद्धरण एवं विधि का स्पष्टीकरण, अवनद्ध वाद्यों के पाठाक्षर, अक्षर, मार्ग, बोल निकालने की विधि तथा भारतीय संगीत के आदिवाद्य वीणाओं का विशद विवेचन। संगीतकार, शास्त्रज्ञ एवं अनुसंधानी डा. मिश्र द्वारा तत, अवनद्ध, सुषिर एवं घन वाद्यों के लिए यहां दी गयी सामग्री संगीतकारों का पथ आलोकित करेगी।

इस विस्तृत ग्रंथ की विशिष्टता है इसमें शामिल चित्र एवं [illegible] मूर्तिकला, भित्ति-चित्रों व मूर्तियों के फोटोग्राफ व स्केच विषय को स्पष्ट करने में सहायक हैं। निश्चय यह शोध-प्रबंध वर्षों की साधना का प्रतिफल है और संगीत में अनुसंधान के क्षेत्र में एक आदर्श प्रस्तुत करेगा। **—मदनलाल व्यास**

०००

*** संत साहित्य के प्रेरणा-स्रोत * लेखक : आचार्य परशुराम चतुर्वेदी; प्रकाशक : राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली; पृष्ठसंख्या २०८; मूल्य : २० रुपये।**

आलोच्य पुस्तक संत साहित्य का संक्षिप्त पर्यवेक्षण है। संत-साहित्य की अपनी कुछ विशेषताएं हैं, जो कुछ 'समुझत कठिन'-सी हैं। इसमें गुण-दोषों ने अविच्छेद्य रूप धारण कर लिया है। इसमें स्वानुभूति का विश्वास है तो अहंकार का उच्छ्वास भी है; वैचारिक उदात्तता तथा पवित्रता के सद्भाव के साथ ही संतोचित सहिष्णुता एवं विनम्रता का अभाव भी है; सद्वचनों की मिठास में उक्ति-कर्कशता की खटास भी मिश्रित है। इसमें निर्गुण-निराकार के समर्थन की धुन में सगुण-साकार की भर्त्सना, संतों के अधिकार-भेद के विवेक-साहित्य का प्रदर्शन है। इन संतों के विचार-स्वातंत्र्य-जन्य आचार-स्वातंत्र्य का लोकोच्छेक रूप, धार्मिक कृत्यों के खंडन में उनमें निहित सदुद्देश्य तथा मर्यादित आचरण की उपेक्षा एवं शास्त्र तथा ज्ञाननिंदा में निहित मानव तथा उसकी मानवता के विकास का मार्गावरोध भी विचारणीय और महत्त्वपूर्ण बातें

'औरमो'
छाप
अमोनिया
कागज़

(पैरा-डाइजो टाइप)

- चमकदार और सुन्दर छपाई
- बरतने और रखने में टिकाऊ
- जल्दी और अच्छे परिणाम
- कम खर्च और सस्ता.

स्टैंडर्ड साइज के रोल और शीटस हर प्रकार की मीडियम फास्ट और सूपर फास्ट की स्पीड्स में मिलते हैं. रोशनी और नमी से बचाव के लिये पोलीथीन के ट्यूब और रेपरों में पेक किया हुआ होता है. यह देर तक खराब न होने वाला अच्छी क्वालिटी की छपाई के लिये गारन्टी किया हुआ है, क्योंकि औरमो का बेस पेपर भी ओरियंट पेपर मिल्स का बनाया हुआ है।

ओरियंट पेपर मिल्स लिमिटेड
ब्रजराज नगर, उडीसा

कपड़ों की उजल
धुलाई के लिये!

CHANDNI SOAP
BERAR OIL INDUSTRIES AKOLA
चाँदनी
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

हैं। गीतोक्त 'न बुद्धिभेदं जनयेद अज्ञानां कर्मसंगिनाम्' के लोकसंग्रह की कसौटी पर खरा न उतरने के कारण ही आचार्य शुक्ल ने कहा है कि 'निर्गुन बानी' के संतों के लोकविरोधी स्वरूप को गोस्वामी तुलसीदास ने अच्छी तरह पहचाना था। संत-साहित्य के अध्ययन में उपर्युक्त बातों को भी देखना उसकी सही समीक्षा कहला सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में १३ अध्याय हैं। (१) 'बाह्य प्रेरणा' में संत साहित्य के आरंभ से लेकर प्रायः १६ वीं शती तक के ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य का सिंहावलोकन है। (२) 'अंतःप्रेरणा' में भारत के विभिन्न धार्मिक संप्रदायों तथा साधनाओं का परिचय तथा संतसाहित्य में उनके योगदान का विवरण है। (३) 'सूफी मत की समन्वयात्मक प्रवृत्ति का विकास' में सूफी मत के विकास तथा संत-साहित्य को प्रभावित करने का लेखा-जोखा है। निर्गुण-निराकार की साधना में उसके प्रति प्रेमाभिव्यक्ति एवं विरहानुभूति इन्हीं सूफियों की देन है। (४) में 'गुरु-तत्त्व' तथा (५) में 'गुरु का स्वरूप' विवेचित है। अंत में लेखक ने गुरुओं के प्रमुख रूपों का वर्गीकरण करके उनमें लक्षित होने वाली विभिन्न प्रवृत्तियों के आधार पर संतों की गुरु-विषयक भावना पर प्रकाश डालने का काम औरों पर छोड़ दिया है। (६) में 'संत साहित्य में नाम-तत्त्व', (७) में 'संत साहित्य में नाम-साधना' तथा (८) में 'संत मत में भगवन्नाम' पर विचार हुआ है। लेखक का यह कथन कि 'वास्तव में इन्होंने (संतों ने) इस संबंध में (नाम के विषय में) जो कुछ भी कहा है वह अधिकतर इनकी निजी अनुभूति पर ही आश्रित रहने के कारण हमारे लिए कभी-कभी कुछ रहस्यमय-सा बन गया प्रतीत होता है' यही सिद्ध करता है कि अधिकांश संतों के अशिक्षित होने तथा उनके किसी सैद्धांतिक परंपरा से संपृक्त न होने के कारण उनके वचनों में यत्र-तत्र भ्रम तथा असंबद्धता पायी जाती है। नाम के विषय में गोस्वामीजी ने भी बहुत-कुछ कहा है, किंतु वहां पर न कोई भ्रम है, न संदेह; सब कुछ सरल और बोधगम्य है। (९) 'संत-मत में श्रम-साधना' में संतों को श्रम और स्वावलंबन का समर्थक कहा गया है, किंतु इन्हीं में अकर्मण्यता के समर्थक संत मलूकदास भी तो थे। (१०) 'संतों की चमत्कार-प्रियता' में चमत्कार के विभिन्न रूपों पर विचार करके संतों के कुछ चमत्कारों का वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत करने का प्रयत्न है। (११) 'संतों का निर्वैर धर्म' में विकासवाद के सिद्धांत, उससे प्रभावित भौतिकतावादी पाश्चात्य जीवन-पद्धति एवं तज्जन्य विकृतियों के परिप्रेक्ष्य में संतों के निर्वैर धर्म की श्रेष्ठता तथा वांछनीयता दिखायी गयी है। (१२) में 'संतों की रहनी' अर्थात् उनकी जीवन-पद्धति का स्वल्प परिचय है। (१३) 'संत काव्य में शांत रस' में शांत रस तथा उसके स्थायी भाव निर्वेद का शास्त्रीय

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू का हमला और उसका मुकाबला

आपके लिए कुछ ज़रूरी बातें

"मैंने एनासिन को बहुत गुणकारी पाया है," नर्स एंजेला फ़र्नान्डेस का बयान है।

इन्होंने यही देखा है कि एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा से जल्द आराम दिलाने के लिए काफ़ी तेज़ असर है।

सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू कैसे होते हैं?

ये छूत से फैलने वाले उस विष से होते हैं, जो इन रोगों में ग्रस्त लोगों से हवा में फैलता है। आम तौर से शरीर में उसके मुकाबले की शक्ति होती है। परन्तु ज्यादा मेहनत या कम ख़ूराक के कारण शरीर में कमज़ोरी आ जाती है और रोग के मुकाबले की शक्ति कम हो जाती है।

रोग लक्षण क्या हैं?

बदन का दर्द, सर का भारीपन, छींकें आना और नाक बहना, जिसके साथ अक्सर कँपकँपी छूटती है, बेचैनी महसूस होती है और पसीना आता है। उसके बाद खाँसी, गले की ख़राबी, भूख की कमी और थकावट की शिकायत हो सकती है।

क्या इस से और तकलीफ़ें भी हो सकती हैं?

यदि लापरवाही बरती जाय तो निमोनिया की साँस की ऊपरी नाली में छूत का असर हो सकता है।

एनासिन कैसे सहायक होती है?

एनासिन सर्दी-ज़ुकाम और फ़्लू की पीड़ा में आराम दिलाती है। एनासिन तेज़ असर है- क्योंकि इस में वह दर्द-निवारक दवा ज्यादा है जिसकी दुनिया-भर के डॉक्टर सब से ज्यादा सिफ़ारिश करते हैं। एनासिन पर लाखों लोगों को विश्वास है- क्योंकि यह आपके डॉक्टर की दवा की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। सर्दी-ज़ुकाम या फ़्लू के पहले लक्षण देखते ही दिन में चार बार एनासिन लीजिए।

आपको और क्या करना चाहिए?

- उबाला हुआ पानी, सन्तरे या मौसंबी का रस और पीने के दूसरे पदार्थ काफ़ी पीजिए।
- पौष्टिक आहार खाइए।
- पूरा आराम कीजिए।
- पानी में ऐंटिसेप्टिक दवा या नमक डालकर गरारे कीजिए।
- कमरों को हवादार रखिए।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

ANACIN
ANACIN

A-1-774

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

विवेचन मात्र है।

आचार्य चतुर्वेदीजी संत-साहित्य के अधिकारी तथा लब्धप्रतिष्ठ विद्वान हैं। उनकी रचना यदि संत-साहित्य की एक आलोचनात्मक उपलब्धि हो तो कोई नयी बात नहीं। संत-साहित्य के अध्येताओं के लिए इस पुस्तक की उपादेयता असंदिग्ध है। पुस्तक के अंत में संदर्भ-ग्रंथों की सूची का अभाव खटकता ही नहीं है, अक्षम्य त्रुटि भी है। **—डा. स्वामीनाथ शर्मा**

★

[पृष्ठ १३६ का शेष]

अगले दिन कुरना गांव में लुटेरों के अगुआ गिरफ्तार कर लिये गये। पुलिस और पुरावस्तु-विभाग के निरीक्षकों ने उनके घरों की तलाशी ली। मगर नतीजा कुछ न निकला। तब अंग्रेज मिस्र-विशेषज्ञ होवर्ड कार्टर ने मामले की जासूसी जांच आरंभ करायी। (इन्हीं होवर्ड कार्टर ने आगे चलकर फिरऊन तुत-अंख आमुन की कब्र की खुदाई करके अपार अंतरराष्ट्रीय ख्याति अर्जित की।)

जांच-पड़ताल से पता चला कि कई समाधियों के तालों से छेड़छाड़ की गयी थी। अमेनहोटेप के समाधि-कक्ष के लौह-द्वार को खोलने के लिए सबरी का उपयोग किया गया था। समाधि-कक्ष में कई जोड़े पैरों के निशान थे। मगर उनमें एक ही जोड़ी पांव नंगे थे। होवर्ड कार्टर ने बड़ी सावधानी से इन नंगे पांवों के निशानों के फोटोग्राफ ले लिये। उन्हें शक था कि ये निशान मुहम्मद के पांवों के हैं। उन्हें समाधि-नगर के मुख्य चौकीदार के विषय में किसी प्रकार का भ्रम नहीं था। उन फोटोग्राफों समेत वे कुरना गांव पहुंचे।

उधर ठीक वैसे ही पदचिह्नों का पीछा करते हुए पुलिस भी कुरना गांव म रसूल-परिवार के मकानों तक जा पहुंची थी। कुछ घंटों के बाद, कार्टर के लिये हुए फोटोग्राफों का मुहम्मद के पैरों से मिलान किया गया। उनमें एक मिलीमीटर से भी कम अंतर पाया गया। पूछताछ से यह भी जाहिर हुआ कि मुहम्मद ने गांव के लुहार से 'शाही समाधियों की जांच के लिए' एक सबरी कुछ ही दिन पहले बनवायी थी। दोनों भाई पकड़े गये, उन पर मुकद्दमा चला और शाही कब्रों को लूटने के अपराध मे उन्हें दंड दिया गया।

इस तरह एक बार तो पुरातत्त्वज्ञ थीब्स की शाही समाधियों के लुटेरों को शिकस्त देने में कामयाब हो गये। मगर मिस्री पुरा-वस्तुओं के संरक्षण का जो संघर्ष पिछली सदी में शुरू हुआ, अब भी जारी है।

★

सान फ्रांसिस्को के एक महानुभाव ने एक शुक्र-बैंक में अपने वीर्य का नमूना जमा कराकर नसबंदी करा ली थी। अब उन्होंने बैंक के विरुद्ध ५० लाख डालर हर्जाने का दावा दायर कर दिया है; क्योंकि बैंक ने गलती से उनकी अमानत को नष्ट कर दिया। **—संडे टाइम्स**

★

आओ — एक सौदा करें!

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—

गोला

टॉफियां और मिठाइयां

Gola
Gola
Gola
Gola
MILK
SWEETS

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.प्र.

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गाड्डियां व कवर बनाने के
मुलायम और बहुरंगी • क्रोशेसेटों
लिए सुंदर और चमकदार •
में लचीले और नमीसोख

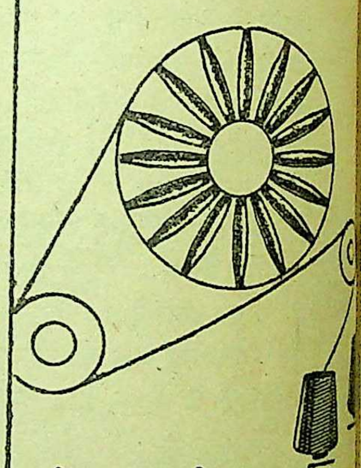

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता—७०० ००१

दाँतों के डाक्टरों की राय में

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालोंने अपने आप क्या लिखा है :

'बारह साल की उम्र से ही मैने फोरहॅन्स से दाँत साफ़ करने शुरू कर दिये थे। आज मैं बीस साल का होने जा रहा हूँ। पहली बार फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करते समय मेरे मसूढ़ों में कुछ तकलीफ़ थी। अब वह तकलीफ़ नहीं रही। पहले, रात के समय दाँतों को ब्रश करने की मेरी आदत नहीं थी। बाद में रोज रात को १० बजे पढ़ाई करते समय आपके विज्ञापन सुन-सुनकर मेरी यह 'नयी आदत' पड़ गयी है।'

(सही) एस. मित्तल,
बी.ई. (इलेक्ट्रिकल), पटियाला।

'...लगभग एक साल पहले मैंने देखा कि मेरे दाँत पीले पड़ने लगे हैं, हालांकि मैं सिगरेट नहीं पीता...मेरे पिताजी ने,... जो पिछले ३० साल से "फ़ोरहॅन्स" से ही दाँत साफ़ करते रहे हैं, मुझे दूसरे टूथपेस्ट के बजाय "फ़ोरहॅन्स" से दाँत साफ़ करने की सलाह दी। कमाल है! मेरे दाँत जितने साफ़ और अच्छे होने चाहिए, वैसे हो गये। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आपके आश्चर्यजनक टूथपेस्ट–**फ़ोरहॅन्स**—में वे सभी गुण हैं जिनका आप प्रचार करते हैं। इसका रहस्य यह है कि यह **दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है।**"

(सही) एस. एस. चटर्जी, एम.ए.
कोयम्बटूर।

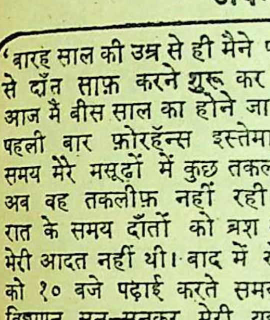

(इन पत्रों की फोटोस्टॅट कॉपी आप जैफ़्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं)

दाँतों की समुचित देखभाल के लिए रोज सवेरे और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट और फ़ोरहॅन्स डबल-एक्शन टूथब्रश इस्तेमाल कीजिए...और नियमित रूप से डाक्टर की सलाह भी लेते रहिए!

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका।

अपनी प्रति* प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

नाम: ____________________

पता: ____________________ उम्र: __________

06

* कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़।

फ़ोरहॅन्स दाँतों के डाक्टर क[illegible] टूथपेस्ट

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित औद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

उद्योग की सेवा में

निम्नलिखित निर्माताओं के
उत्पादनों के लिए हमसे
सम्पर्क करें।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम
कंपनी लि.

इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग
लिमिटेड

ग्रिंडबेल नोर्टन लि.

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

युनिवर्सल केबल्स लि.

जयश्री टेक्सटाइल्स एन्ड
इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)

एशियन सायकल टायर
व ट्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि०
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई-१

जियाजी

सूटिंग्स

रोबीले, हठीले पुरुषों की शान

मर्दाना बनावट और डिजाइन, पुरुषत्व को उजागर करने वाले
चेक और धारियां, रंगों और शेड्स की विविधता के लिए

J
JIYAJEE
FABRICS

जियाजीराव काटन मिल्स लिमिटेड, बिरल[illegible]गर (म. प्र.)

WHO MAKES THE MOST TRUSTED YARN?

CENTURY ENKA, OF COURSE!

World-famous **Enkalon** nylon yarn– made in India to the highest international standards by
Century Enka.
Fast, flawless, fabulous– for the exciting world of fashion.

Enkalon©
nylon yarn is now produced in India
the quality yarn that weaves faultless fabrics
® Registered Trade Mark of AKZO N.V., Holland
Licensed users:
CENTURY ENKA LTD.

हम आपके सहयोग से परिपक्वता-दावों का भुगतान अधिक गति से कर सकेंगे

६४,८८९ आवश्यकताओं की पूर्ति के अभाव में
११९१ लाख रुपयों के दावों
का भुगतान रुका हुआ है।

३,२४,००० आवश्यकताओं की पूर्ति होने के कारण
८१२४ लाख रुपयों के दावों
का भुगतान हो चुका है।

पालिसी की अवधि पूर्ण होने पर दावों के भुगतान में देरी होने का एक कारण यह है-बीमेदारों द्वारा आवश्यकताओं की पूर्ति समय पर न होना।

जीवन बीमा निगम सामान्यतः डिस्चार्ज वाऊचर बीमेदार के पास परिपक्वता-तिथि के एक महिने पहले भेज देता है। अगर वाउचर ठीक तरह से न भरा हो और पालिसी के साथ निगम के पास न भेजा हो तो दावे के भुगतान में देरी हो जाती है।

यदि आपकी पालिसी की मियाद पूरी हो चुकी हो और यदि आपको डिसचार्ज वाउचर न मिला हो (१ प्रतिशत मामलों में मशीन या कर्मचारी की त्रुटी से ऐसा हो जाता है) तो तुरन्त निगम के उस कार्यालय से सम्पर्क स्थापित कीजिए जहाँ से आपको सेवा मिलती थी।

निगम द्वारा भेजे गये डिस्चार्ज वाउचर बीमेदारों को नही मिलते, इसकी वजह यह है कि बीमेदार या तो अपनी पुरानी जगह छोड़कर नई जगह पर चले जाते हैं या पते के हेरबदल की ईत्तला निगम को देना भूल जाते है। ऐसे मामलों में निगम कर ही क्या सकता है।

१९७३-७४ में ४०३४ बीमेदारों का पता निगम को मालूम न होने के कारण दावों का भुगतान बीमेदारों को न हो सका।

१९७३-७४ में डिस्चार्ज वाउचर या पालिसी-दस्तावेज न मिलने के कारण ५१,५५२ पालिसियों का याने ५९ प्रतिशत परिपक्वता दावों का भुगतान न हो सका।

आवश्यकताओं की पूर्ति का मतलब है दावों का शीघ्र भुगतान।

सामान्यतः डिस्चार्ज वाउचर ठीक तरह से भरने और पालिसी के साथ भेजने पर भुगतान जल्द होता है।

१९७३-७४ में ८,१२४ लाख रुपयों के ३,२४,००० परिपक्वता-दावों का भुगतान हुआ।

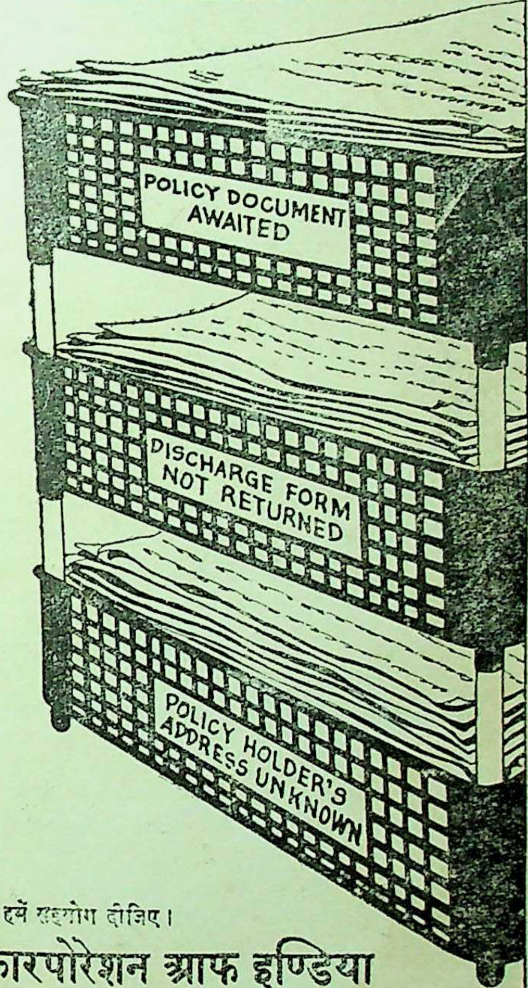

आपको अच्छी सेवा करने के लिए आप हमें सहयोग दीजिए।

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

RADEUS/LIC/AS-9

सितंबर (१-९-१९७२) मूल्य रु. २-५० Regd. No. BYW

नयी उमंग, नयी तरंग

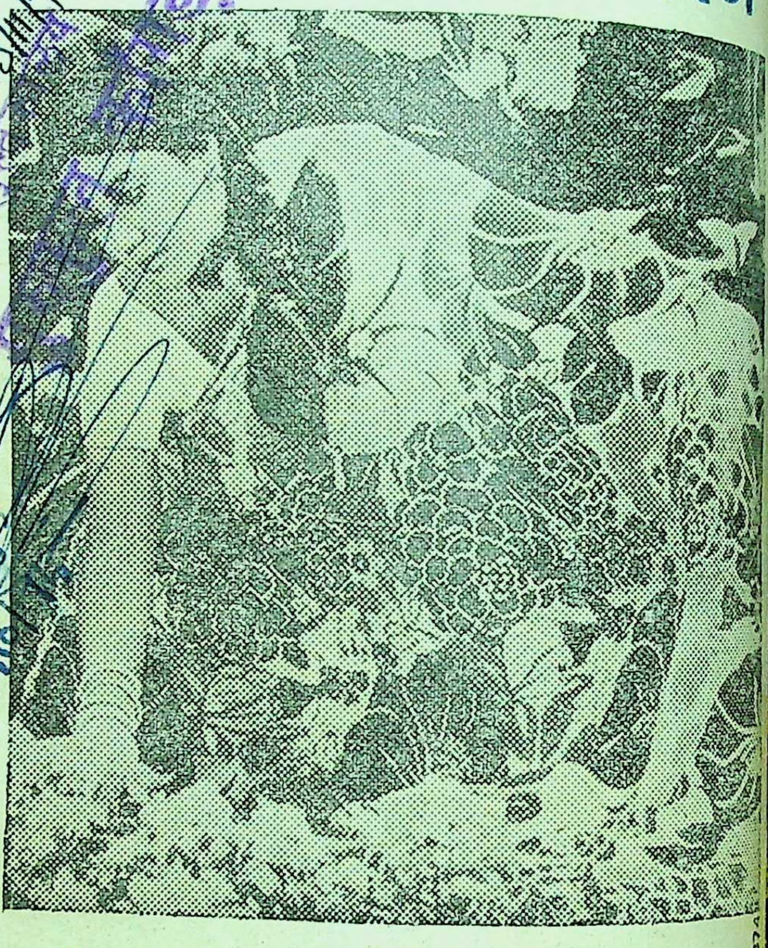

सेन्चुरी के सूती कपड़ों के संग

सेन्चुरी – १००% सूती कपड़ों के लिए!

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.क.
लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५

ADROIT-674

अक्तूबर ७५

उ.सं. ७६

२७।१०।७५

५।१०।७५

नवनीत

हिंदी डाइजेस्ट

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

मूल्य: २।। रु

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

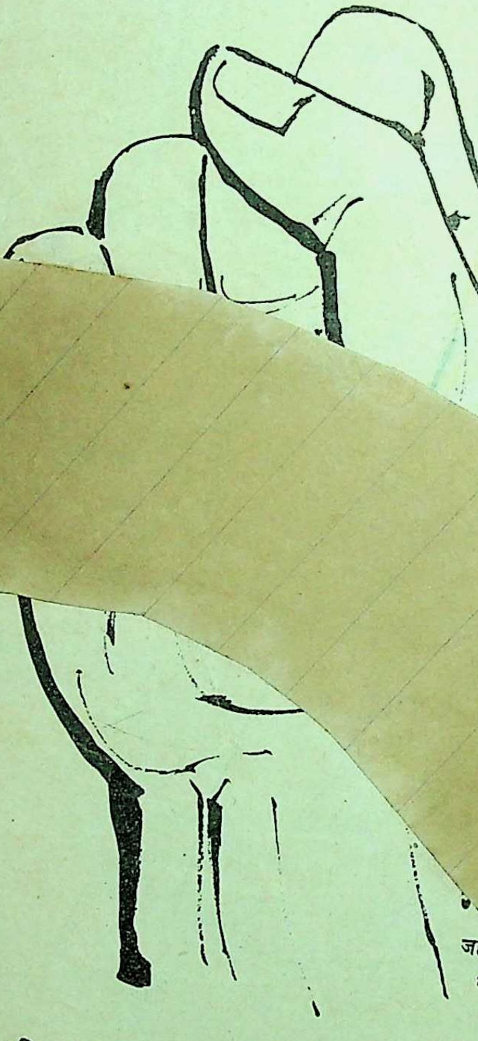

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आज़ाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्मा
हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को
त्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील है
ालियर रेयन के स्टेपल रेशों का
करोड़ २० लाख देशवासियों
रतें पूरी करने के लिए
पल्प का वार्षिक
े भी ज्यादा का
ष्टि से रुई

ट से
या है

जहां रा,
एकमात्र

ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

B.Vasani/VPB/1-75

मत समझिए कि यह कोई अचार की मामूली बरणी है यह तो बेडेकर के सर्वोत्तम उत्पादनों में से एक है

सुगन्ध और सुस्वाद के लिए सुपरिचित यह उत्पादन ६१ वर्षों के लम्बे अरसे से भारत के घर-घर में मशहूर है

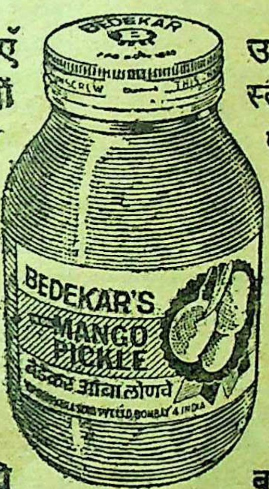
BEDEKAR
BEDEKAR'S
MANGO PICKLE
बेडेकर आंबा लोणचे
BOMBAY 4 INDIA

सुरुचिपूर्ण महिलाएँ तो बेडेकर उत्पादनों की तारीफ़ करते नहीं थकतीं। बेडेकर के कई उत्पादन हैं जैसे अचार, मसाले, पापड़ व चटनी जो अपणी विशुद्धता और उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं। बेडेकर के सभी उत्पादन अन्तराष्ट्रीय स्तर की लीक-प्रफ़ पैकेजिंग में मिलते हैं। बेडेकर के उँचे दर्जे के उत्पादन यानी आपकी पहली पसन्द।

व्यापारिक पूछताछ :
व्ही. पी. बेडेकर
एण्ड सन्स प्रा. लि.
बम्बई - ४ (भारत)

बेडेकर

बेडेकर अचार • बेडेकर मसाले • बेडेकर पापड • बेडेकर चटनी

बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन
सुखाने की अनोखी दवा

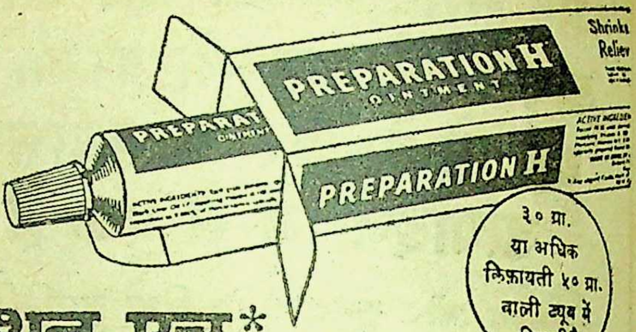
PREPARATION H
OINTMENT
PREPARATION H
Shrinks
Relieves

३० ग्रा.
या अधिक
किफ़ायती ५० ग्रा.
वाली ट्यूब में
मिलती है

प्रेपरेशन एच्*

अमरीकी डाक्टरों की आज़मायी हुई
- इससे खुजली मिनटों में रुक जाती है
- दर्द से फ़ौरन राहत मिलती है
- यह बवासीर के बहुत ही बिगड़े रोगों को छोड़ कर, बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने में मदद देती है
- इससे चिकनाहट मिलती है और शौच भी कष्टरहित होता है

मुफ़्त ! बवासीर के बारे में जानकारी देनेवाली मुफ़्त पुस्तिका के लिए (लिफ़ाफ़े में २५ पैसे के डाक-टिकट साथ में भेजकर) आज ही इस पते पर लिखिए : डिपार्टमेंट PH-83 पो. ऑ. बॉक्स १०१३३, बम्बई-४०० ००१

*Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.
743 PH-92 Hin

'कोरस'

पत्र-व्यवहार की आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला भारत का सर्वोत्तम औद्योगिक प्रतिष्ठान

कार्बन पेपर, टाइपराइटर रिबन, ड्राइटाइप,
स्टेंसिल्स, डुप्लिकेटिंग स्याही इत्यादि के निर्माता

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती है सप्ताह में पैंसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

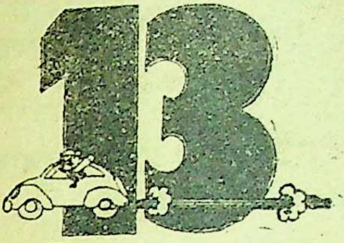

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १३ उड़ानें
लंदन? नौ ७४७ विमानों को आपका इंतज़ार है. इनमें से तीन, शुक्रवार, शनिवार और मंगलवार को, तेज़ गतिवाले हैं. अन्य छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफ़र्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा हो कर. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

मध्य पूर्व

मध्य पूर्व के लिए सप्ताह में २२ उड़ानें
बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? चार ७४७ तथा दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन तथा मस्कत के लिए तीन उड़ानें तथा आबू धाबी, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

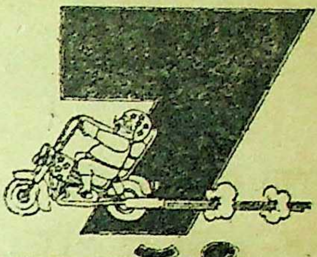

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

साथ ही हर सप्ताह:
६ उड़ानें
जापान के लिए हाँग काँग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

AI. 1086

लिंक चेन

*

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

*

सभी उद्योगों व वाहनों में
उपयुक्त

*

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

*

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप; बंबई-७८

दि इंडियन टूल
मैन्यूफैक्चर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई-४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स

डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

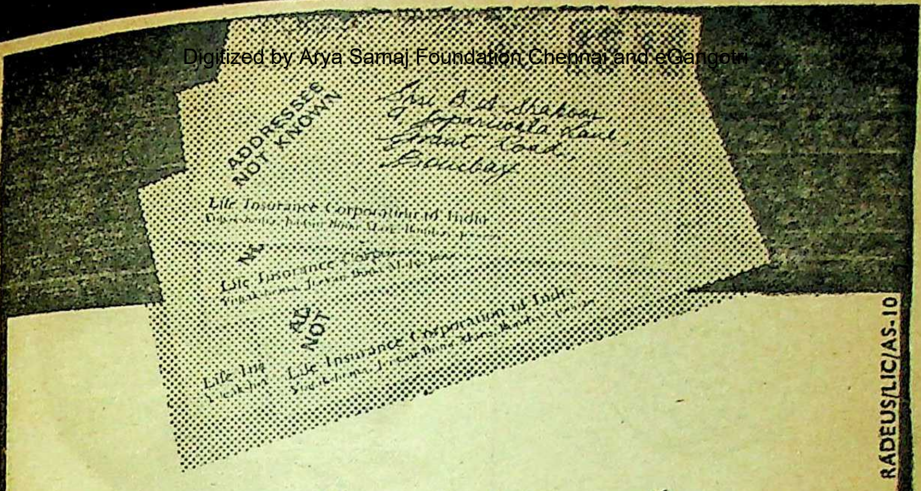
ADDRESSEE NOT KNOWN
Life Insurance Corporation of India
Life Insurance Corporation of India
NOT
Life Insurance Corporation of India

RADEUS/LIC/AS-10

५००० से अधिक लोगों का मौजूदा पता न जानने के कारण हम परिपक्वता-दावों का भुगतान न कर सके

आप उन्हीं लोगों में से एक तो नहीं हैं ?

यह बात भले ही अविश्वसनीय लग जाए लेकिन वह सच है। सैकड़ों लोग इस नन्हीं सी बात को भूल गये हैं। उन्हें यह भी पता नहीं है कि निगम से उन्हें पैसे मिलने वाले हैं। आप पूछेंगे कि ऐसा क्यों हुआ ? तो सुनिए :

पालिसी लेने के बाद वे नई जगह पर रहने के लिये चले गये और उसकी सूचना उन्होंने निगम को नहीं दी। नतीजा यह हुआ कि उन्हें न कोई फार्म मिले और न ही डिस्चार्ज वाउचर।

क्या आपके पास कोई ऐसी पालिसी तो नहीं है ? यदि हो तो जाच कर लीजिये और देखिये–

● उस पालिसी की अवधि कब पूरी होती है ? ● यदि उसकी अवधि पूरी हो चुकी हो तो आप अपनी पालिसी का पूरा विवरण देकर उस कार्यालय को लिखिये जहाँ से आपको सेवा मिलती थी। एक बात और आप उसमें अपना नया पता देना न भूलें। ● चालू पालिसी उसे कहते हैं जिसके अबतक के सारे प्रीमियम अदा किये गये हों ● और चुकता बीमा पालिसी वह है जिसके आपने, कम-से-कम दो या तीन साल के प्रीमियम अदा किये हों।

चुकता बीमा पालिसी के आपको कितने पैसे मिलेंगे ?

उसपर अनुपातिक राशि दी जाती है। जैसे-१०००० रुपये की २० वर्ष की पालिसी के ५ वर्ष के प्रीमियम दिये जाने पर आपको २५०० रुपये मिलेंगे। (१९५६ के पहले की बीमा कम्पनियों द्वारा जारी की गई पालिसियों के लिये ये दरें अलग-अलग हैं) ४४ लाख रुपयों का भुगतान कराना अब बाकी है। उनमें से २६४८ चुकता बीमा पालिसियों पर...१८.५० लाख रु. देने हैं और १३८६ चालू पालिसियों पर...२५.१२ लाख रु. यदि आपके मन में कोई संदेह पैदा हो जाए तो आप तुरन्त जीवन बीमा एजेंट से मिलिये या अधिक जानकारी के लिये निकटतम कार्यालय से सम्पर्क प्रस्थापित कीजिए।

कर सकेंगे सेवा बेहतर आपकी सहायता के बल पर।

लाइफ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ इण्डिया

यांत्रिक प्रगति का अनुपम प्रतीक

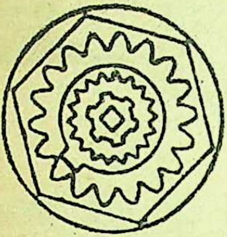

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां ब्रोच उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
(थाना बंबई)

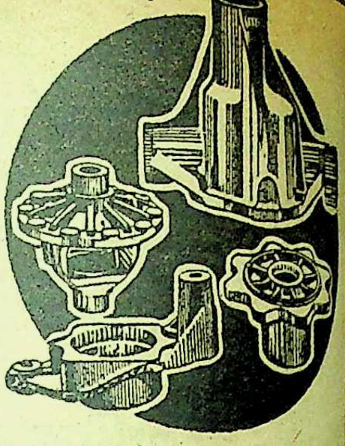

दि इंडियन स्मेल्टिंग एंड रिफाइनिंग कंपनी लिमिटेड

एस० जी० आइरन के कास्टिंग

कांसा, पीतल, गनमेटल, लोहेतर धातुओं तथा इस्पात के पुर्जों व हिस्सों का स्थान ले सकते हैं।

मैलिएबल आइरन के कास्टिंग

अनेक प्रकार की चीजों में इस्पात के कास्टिंग का काम दे सकते हैं।

फेरस फाउंड्री
पंचपाखाड़ी,
पहिला पोखरन
लेन, थाना
(महाराष्ट्र)

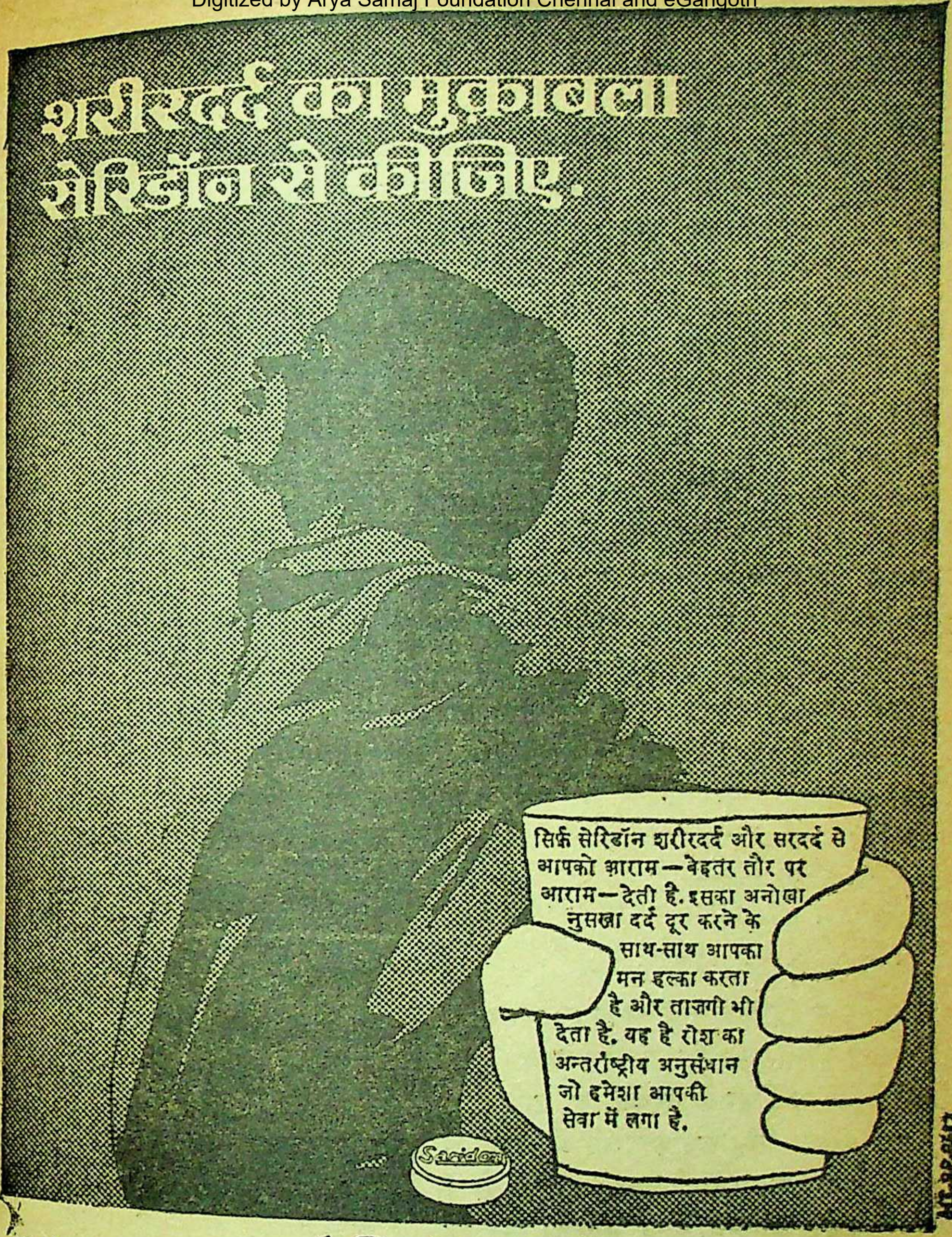
शरीरदर्द का मुक़ाबला
सेरिडॉन से कीजिए.
Saridon

सिर्फ़ सेरिडॉन शरीरदर्द और सरदर्द से आपको आराम—बेहतर तौर पर आराम—देती है. इसका अनोखा नुसखा दर्द दूर करने के साथ-साथ आपका मन हल्का करता है और ताज़गी भी देता है. यह है रोश का अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान जो हमेशा आपकी सेवा में लगा है.

सिर्फ़ एक सेरिडॉन से
सभी तरह के शरीरदर्द ग़ायब

गांधी साहित्य

संपूर्ण गांधी वाङ्मय

बापू ने जो कुछ कहा या लिखा, उसका संपूर्ण संग्रह लगभग पचासी खंडों में, गांधी वाङ्मय तथा भारतीय इतिहास के अध्येता के लिए इन खण्डों में बहुमूल्य साम है। ६० खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं और शेष तैयार किए जा रहे हैं।

प्रथम खण्ड (साधारण) .. .. रु. ७.५
द्वितीय खण्ड (सजिल्द) .. .. रु. ५.५
तृतीय व उससे आगे के खण्ड (प्रत्येक) .. .. .. रु. ७.५
प्रथम ६० खण्ड एक साथ खरीदने पर रियायती मूल्य .. .. रु.३५०.०
महात्मा गांधी (चित्रावली)
गांधीजी का अलौकिक जीवन—आकर्षक चित्रों में।
३२.५ × २३.५ से. मी. साइज़ में सुन्दर आर्ट पेपर पर .. रु. १२.५
बापू के आशीर्वाद (राजे के लिए गांधीजी का एक विचार) .. रु. ६.०
(संकलन: आनन्द टी. हिन्गोरानी)
गांधी शतदल (संकलन: सोहनलाल द्विवेदी) .. .. .. रु. ५.०
मोहनदास कर्मचन्द गांधी (ले. नरेन्द्र शर्मा) .. .. .. रु. ४.
महात्मा गांधी का सन्देश (ले. यू. एस. मोहन राव) .. .. रु. २.
गांधी कथा (चित्रों में) (ले. एस. डी. सावन्त, एस.डी. बादलकर)
गांधीजी की आद्योपान्त जीवन कथा मनोहारी सतरंग चित्रों में। बच्चों के लिए विशेष आकर्षक .. .. रु. २.५
गांधीजी के संस्मरण .. .. रु. १.
सब ईश्वर के प्यारे बेटे
छुआछूत से संबन्धित गांधीजी के भाषणों का संग्रह .. .. रु. १.
बापू की वाणी (ले. निरंकारदेव सेवक)
कविता में गांधीजी के उपदेशों का सारांश .. .. .. रु. ०.

(तथा अन्य कई भाषाओं में रोचक व उपयोगी पुस्तकें) डाक खर्च मुफ्त) ती रुपये से अधिक मूल्य की पुस्तकें वी. पी. से भी भेजी जा सकती हैं।

वृहद सूचीपत्र मुफ्त मंगाएँ।

प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली.

डीएवीपी–75/

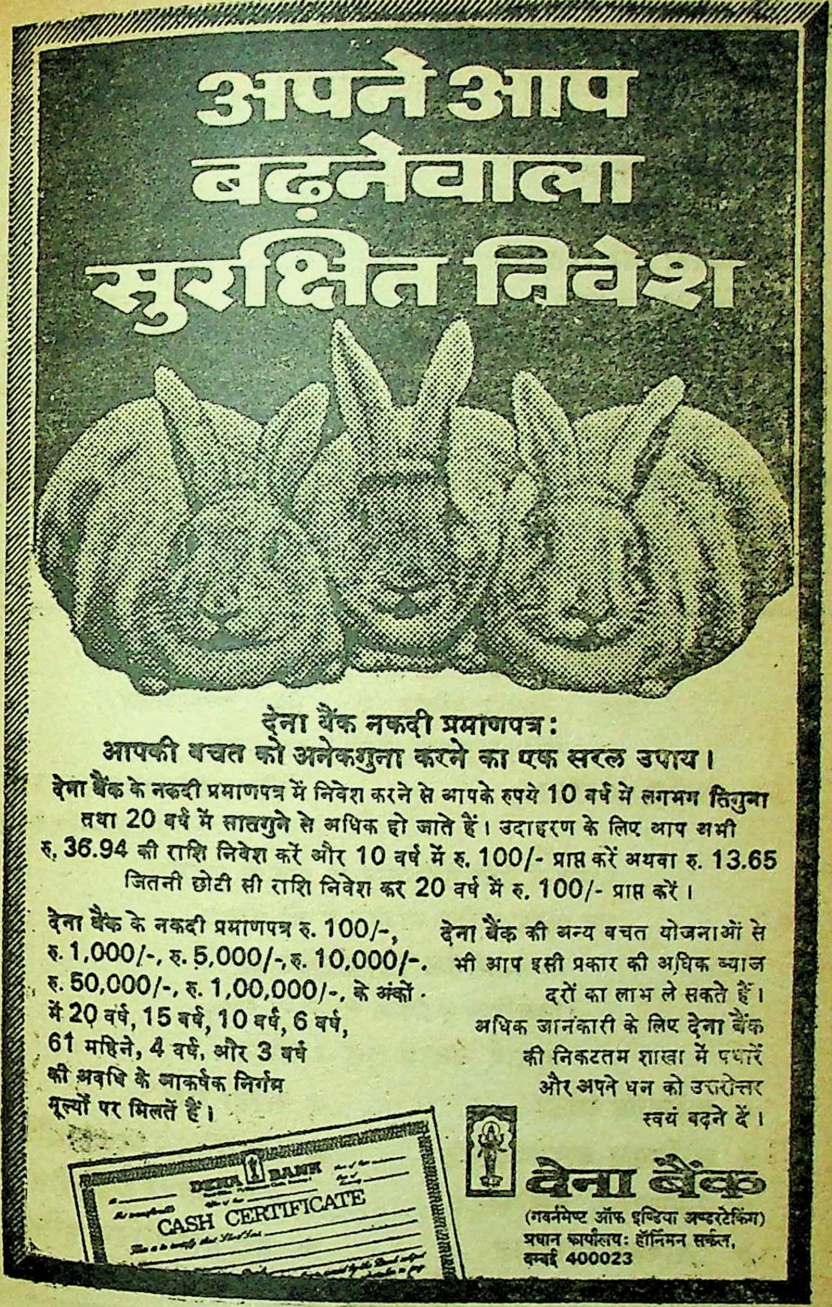

अपने आप बढ़नेवाला सुरक्षित निवेश

देना बैंक नकदी प्रमाणपत्र:
आपकी बचत को अनेकगुना करने का एक सरल उपाय।

देना बैंक के नकदी प्रमाणपत्र में निवेश करने से आपके रुपये 10 वर्ष में लगभग तिगुना तथा 20 वर्ष में सातगुने से अधिक हो जाते हैं। उदाहरण के लिए आप अभी रु. 36.94 की राशि निवेश करें और 10 वर्ष में रु. 100/- प्राप्त करें अथवा रु. 13.65 जितनी छोटी सी राशि निवेश कर 20 वर्ष में रु. 100/- प्राप्त करें।

देना बैंक के नकदी प्रमाणपत्र रु. 100/-, रु. 1,000/-, रु. 5,000/-, रु. 10,000/-. रु. 50,000/-, रु. 1,00,000/-, के अंकों में 20 वर्ष, 15 वर्ष, 10 वर्ष, 6 वर्ष, 61 महिने, 4 वर्ष, और 3 वर्ष की अवधि के आकर्षक निर्गम मूल्यों पर मिलतें हैं।

देना बैंक की अन्य बचत योजनाओं से भी आप इसी प्रकार की अधिक ब्याज दरों का लाभ ले सकते हैं। अधिक जानकारी के लिए देना बैंक की निकटतम शाखा में पधारें और अपने धन को उत्तरोत्तर स्वयं बढ़ने दें।

देना बैंक
(गवर्नमेण्ट ऑफ इण्डिया अण्डरटेकिंग)
प्रधान कार्यालय: हॉर्निमन सर्कल,
बम्बई 400023

Ratan Batra/DB/H/277-A

"महत्त्वपूर्ण वैदिक प्रकाशन"

१. **चारों वेदों का हिन्दी भाष्य** – मूल्य २०१)
(चार सुनहरी जिल्दें– १० × १५ इंच साइज़)
२. **वेदामृत** – ४३६ पृष्ठ सजिल्द – मूल्य ८)
३. **वेदज्योति** – सजिल्द – मूल्य ६)
(प्रत्येक वेद के चुने हुए १००-१०० मंत्रों का अर्थ सहित संग्रह)
४. **अथर्ववेदीय चिकित्साशास्त्र** – मूल्य १०)
५. **अथर्ववेदीय मंत्र विद्या**– – मूल्य ६)

पूरा सेट एक साथ मँगाने के लिए "१५ नवंबर १९७५" तक केवल २०१) भेजिए। रेलवे स्टेशन लिखें–चौथायी अगाऊ भेजें–रेल–डाक–पैकिंग–करा खर्चा अलग लगेगा।

दयानन्द संस्थान–१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, करोलबाग, नयी दिल्ली
दूरभाष ५६६६३९.

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल,' तीसरी मंजिल, २४१ बैकवे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०० ०२१

तार : **SODACHEM**
फोन : २९२४०७–२९३२१४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

*** अपग्रेडेड इलमनाइट ***
(सिंथेटिक रूटाइल ९०-९२ TiO_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

- * **कास्टिक सोडा**
- * **सोडियम बाइकार्बोनेट**
- * **कैलशियम क्लोराइड**
- * **लिक्विड क्लोरीन**
- * **सोडा एश**
- * **अमोनियम बाइकार्बोनेट**
- * **ट्राइक्लोरो एथिलीन**
- * **हाइड्रोक्लोरिक एसिड**

*** साल्ट ***

ओरिएन्ट
ने अब के
एक्सपोर्ट के सारे
रिकार्ड तोड़ दिये

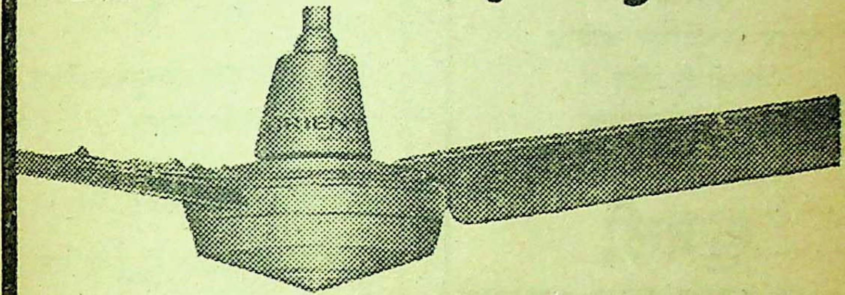

१. १९७४-७५ में २ करोड़ ४० लाख से अधिक के मूल्य के पंखों का निर्यात हुआ— जो कि पंखे निर्यात में आज तक का सर्वोच्च रिकार्ड है।

२. १९७३-७४ में सर्वोच्च पद पर किये गये ओरिएन्ट के निर्यात से यह तीन गुना अधिक है।

३. १९७३-७४ में हुए देश के सीलिंग पंखों के पूरे निर्यात मूल्य के यह तकरीबन बराबर है।

कई वर्षों से ओरिएन्ट ही विदेशों में बिकने वाले देशी पंखों में सबसे बढ़िया माना जाता रहा है। इस निरन्तर अन्तर्राष्ट्रीय पसन्दगी का कारण है इनका :

- ■ अभिनव डिजाइन
- ■ मजबूत बनावट
- ■ सुन्दर फिनिश
- ■ निर्झंझट कार्यक्षमता
- ■ विक्रयोपरांत की सेवा-सुविधा

ओरिएन्ट
पंखा

ओरिएन्ट जनरल इन्डस्ट्रीज़ लिमिटेड, कलकत्ता व फरीदाबाद

CC/OGI-1/75 HIN

निश्चित आराम
कफ सर्दी फ्लू
में
त्रिशून
टब्लेट्स
- निरापद आयुर्वेदिक औषधि
- १० गोलियों के पैकेट में सर्वत्र उपलब्ध

जब
खुजली
खसरे में एक समस्या बन जाये
उपयोग कीजिये
स्केबीज़न
मलहम
- खुजली में उपचार के लिए जल्दी प्रभावकारी
- १० ग्राम की ट्यूब में सर्वत्र उपलब्ध

झंडू फार्मास्युटिकल वर्क्स लिमिटेड
बंबई-४०० ०२८

उद्योग की सेवा में
निम्नलिखित निर्माताओं के उत्पादनों के लिए हमसे सम्पर्क करें।

हिन्दुस्तान अल्युमिनियम कंपनी लि.
इंडियन टूल मैन्युफैक्चरिंग लिमिटेड
ग्रिंडवेल नोर्टन लि.
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
युनिव्र्सल केबल्स लि.
जयश्री टेक्सटाइल्स एण्ड इन्डस्ट्रीज लि.
(फ्लेक्स फायर होज)
एशियन सायकल टायर व ट्यूब

एशियन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि०
क्वींस मेन्शन, तल मजला
प्रेस्काट रोड, बंबई-१

नवनीत

वर्ष २४ : अंक १०

* इस अंक में *

अक्तूबर १९७५

पत्र-वृष्टि	१५	....
श्रद्धांजलि	२१	नवनीत-परिवार
ग्रामीणों की ऋणग्रस्तता	२२	जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी
दक्षिण-पूर्व एशिया	२८	अवधनंदन
पिपीलिका-उपनिषद्	३३	विनोबा
जीवन-तीर्थ	३४	सुबीर
प्रणाम, हे कृती पुरुष !	३६	....
एक याद	३८	राधाकृष्ण
नमो ज्येष्ठाय	४०	बनारसीदास चतुर्वेदी
आर्थर एश	४४	उदयन शर्मा
वाक्यदीप	४९	महात्मा गांधी
किस्सा एक त्यागपत्र का	५०	....
कविताएं	५१	उद्भ्रांत
सुनो भैया, कन्हैया !	५२	डा. कुसुम
विज्ञान-बिंदु	६१	केजिता
सूरज के राजदूत	६५	बालकवि बैरागी
अहमदियों की मुसीबत	६८	शिवकुमार गोयल

संचालक	संपादक	सहसंपादक	व्यापार-व्यवस्थापक
स्व. श्रीगोपाल नेवटिया	**नारायण दत्त**	**सुरेश सिन्हा**	**महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक	उपसंपादक	उपसंपादक	प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
हरिप्रसाद नेवटिया	**गिरिजाशंकर त्रिवेदी**	**डा. विष्णु भटनागर**	सज्जा : **ठाकोर राणा**

चीनी शहजादे-शहजादियां ७२ डोरोथी मार्क्स
अद्भुत प्राकृतिक रीएक्टर ७५ ललितचंद्र चंदोला
अकेलापन ७९ नवजात
ऋग्वेद-वर्णित सोम ८२ डा. विनोद प्रकाश उपाध्याय
गया काम से (पंजाबी कहानी) ८५ गुरदेव सिंह रुपाणा
अलास्का की पाइप लाइन ९१ विश्वास
स्मृति के अंकुर ९७ भूजेंद्र आरत
लेखक-संपादक १०० ....
वापसी (अंग्रेजी कहानी) १०१ अर्विन शॉ
दो चेहरों वाली पुस्तक (कहानी) ११२ सुखबीर
हंसी के बुलबुले ११७ सत्यनारायण नाटे
शेर (पुस्तक-संक्षेप) १२० रामेश बेदी
तीन पैसे (चीनी लोककथा) १४६ सुखबीर
कुछ इधर से, कुछ उधर से १४९ मित्र
बल १५२ डा. जगदीश लूथरा
ग्रंथ-लोक १५४ डा. शर्मा, नारायण दत्त

★

चित्रसज्जा :

डी. एच. वोल्ज़, लूरी, मर्विन पीक, आर. के. लक्ष्मण, लक्ष्मण पै, विजयन्, सुधीर दर, ओके, शेणै, शरद कांबळी, सतीश चव्हाण, भटनागर, अंजू मेहरा।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१, ताडदेव, बंबई-३४.
फोन : ३७२८४७
व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग, ३३५, बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४ फोन : ३९२८८

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष २४ रु., दो वर्ष ४६ रु., तीन वर्ष ६६ रु.।
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष ६० रु., दो वर्ष १०५ रु.; तीन वर्ष १५० रु.।
(हवाई डाक से) एक वर्ष १२० रु.; दो वर्ष २१० रु.; तीन वर्ष ३०० रु.।
भारत में **नवनीत** का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा **नवनीत** प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्री वेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

पत्र-वृष्टि

किसी भी चालू मामले पर एकदम अप-टू-डेट जानकारी तो शायद दैनिक पत्र ही दे सकते हैं; शेष पत्र-पत्रिकाओं में यह खतरा रहता ही है कि लेख के छपने तक घटनाक्रम आगे बढ़कर लेख को कुछ हद तक बासी बना देगा। अतः प्रायः मामले की पृष्ठभूमि और घटनाओं के रुख का वर्णन ही उनमें मुख्यतया हो सकता है। श्री विश्वास ने पुर्तगाल संबंधी लेख (सितंबर अंक) में यही किया है। मगर भूतपूर्व विदेश-मंत्री और उदारपंथी बुद्धिजीवी मेजर आंत्यून्स के नेतृत्व में पुर्तगाली सेना के नौ अधिकारियों ने (अब भूतपूर्व) प्रधान-मंत्री गोनसाल्वेज के विरुद्ध जो वक्तव्य जारी किया, उसका उल्लेख अवश्य होना चाहिये था; क्योंकि वह सेना के कम्युनिस्ट-विरोधी तत्त्वों को एकजुट होने में सहायक हुआ, जिसके कारण अंततः गोनसाल्वेज को प्रधान-मंत्री से सेना-प्रमुख बनना पड़ा और अंततः उस पद से भी हटना पड़ा।

—आसकरण, अजमेर

[२]

कई बार किसी देश की स्थिति को समझने में विवेचनात्मक लेखों जितनी ही सहायता उस देश में उस समय लोगों की जबान पर चढ़े हुए मजाकों से मिलती है। पुर्तगाल में इस समय प्रचलित कुछ मजाक यों हैं :

'पुर्तगाल दुनिया का सबसे बड़ा देश है—उसकी राजधानी लिस्बन में है, उसकी सरकार मास्को में है, जनता ब्राजील में और धन स्विट्जरलैंड में।' (इशारा इस ओर है कि सरकार कम्युनिस्टों की मुट्ठी में है जो कि मास्को के ताबे में हैं, और देश में छायी अराजकता से परेशान होकर लोग रुपया-पैसा समेटकर विदेश भाग रहे हैं।)

अखबारों पर कम्युनिस्टों का वर्चस्व पर एक फब्ती—'प्रश्न : दायरियोदे नोटिसियास (लिस्बन का एक प्रमुख अखबार) चार एस्क्यूडो का क्यों है, जब कि प्रावदा तीन ही एस्क्यूडो में मिलता है? उत्तर : एक एस्क्यूडो अनुवाद कराने के खर्च का।'

देश के आर्थिक संकट पर—'अक्तूबर तक तो शायद घास-फूस खाने की नौबत आ जायेगी। ..... मगर शायद तब तक तो घास-फूस भी न बचे।'

—चंचला मिश्रा, कटक

०००

आस्कर वाइल्ड की लघुकथा 'सच्चा शिष्य' (सितंबर अंक) पढ़कर **नवनीत** के पुराने अंकों की याद आ गयी, जब आप ऐसे मार्मिक लघु-प्रसंग बहुतायत से छापते थे।

अपने लेखकों से

श्री संपादकजी, कृपया मुझे बतायें कि नवनीत में आप कैसी रचनाएं लेते हैं? इस आशय के अनेक पत्र हमें प्रतिदिन मिलते हैं। नवनीत के कुछ अंक देखने से भी इस प्रश्न का उत्तर मिल जायेगा; फिर भी यदि आप हमसे ही जानना चाहें, तो हम कहेंगे कि निम्नलिखित ढंग की रचनाएं हमें नहीं चाहिये:

क. जो जीवन में अनास्था जगायें, देश के विभिन्न समुदायों में स्नेहसूत्र तोड़ें, व्यक्तिगत आक्षेप करें, सहज-स्वस्थ सुरुचि को ठेस पहुंचायें; या जो कैलेंडर देखकर पर्वों, जयंतियों और पुण्यतिथियों के उपलक्ष्य में लिखी गयी हों।

ख. आपके अन्यत्र प्रकाशित लेख का नया संस्करण, कश्मीरी कविता का वाया तमिल उल्था, अल्बर्तो मोराविया के 'रोम की औरत' का भारतीय रूपांतर 'कौशांबी की कामकन्या,' सर्वविदित हास्योक्तियों का श्रेय आपके जिला-महाकवि या तहसील-राजनेता को देने वाले विनोद-प्रसंग।

ग. इन विषयों से हमें परहेज है – वेदों में हृदय-प्रतिरोपण, कोसी कलां के जंगल में जिराफ और बबरशेर की मुठभेड़, कामायनी में क अक्षर का प्रयोग, महावानर पुराण में मिर्जापुर का उल्लेख, कड़वी लौकी के रस से सर्वरोगों का उपचार, इत्यादि-इत्यादि।

* लेखमालाएं या मास-भविष्य लिखने के आश्वासन कृपया हमें न दें। न एक साथ सवा सत्ताईस कविताएं भेजें।

* रचना पर्याप्त हाशिया और पंक्तियों के बीच पर्याप्त स्थान छोड़कर सधे अक्षरों में कागज के एक ओर लिखकर या टाइप करवाकर भेजें। भेजने से पहले उसे एक बार पूरे मनोयोग से अवश्य पढ़ लें, भले उस दिन के बजाय अगले दिन की डाक में भेजनी पड़े। कार्बन-कापी न भेजें। लेख के आरंभ या अंत में अपना पूरा डाक-पता दें।

* रचना के साथ टिकट लगा और पूरा पता लिखा लिफाफा अवश्य रखें; अन्यथा रचना लौटायी नहीं जायेगी, न उसके बारे में पत्र-व्यवहार होगा।

* रचनाएं किसी व्यक्ति के नाम पर नहीं, निम्नलिखित पते पर भेजें:

संपादक–नवनीत हिंदी डाइजेस्ट,
नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ताडदेव, बंबई–३४

पुर्तगाल के भूतपूर्व विदेश-मंत्री तथा उदारपंथी मार्क्सवादी मेजर आंत्यून्स, जिनके नेतृत्व में नौ सेनाधिकारियों ने एक वक्तव्य निकालकर जनरल गोनसाल्वेज की कम्युनिस्ट-परस्त नीति का खंडन किया। उनके तथा उनके साथियों के विरोध के कारण ही गोनसाल्वेज सेना-प्रमुख भी न रह सके।

पता नहीं, वह परिपाटी आपने क्यों छोड़ दी! **–शशिभूषण सिंह, करनाल, हरियाणा**

०००

सितंबर के **नवनीत** में किसी गुजराती पत्रिका से उद्धृत 'फील्ड मार्शल माणेकशा अपने शब्दों में' मुझे बहुत पसंद आया। उसमें सैनिक की सचाई, स्पष्टभाषिता और देशभक्ति झलकती है। ऐसी रचनाएं ज्यादा संख्या में प्राप्त करके छापें। हमारी तरह जिन परिवारों का पीढ़ियों से भारतीय सेना से घनिष्ठ संबंध है, उन्हें इससे बहुत प्रेरणा मिलती है।

–कृष्णकुमार सिंह वाघेला, भावनगर

०००

नवनीत में इधर कुछ समय से कला-विषयक लेखों एवं प्रसिद्ध कलाकारों के चित्रों अथवा उनकी मूर्तियों की अनुकृतियों का छपना बंद-सा हो गया था। सितंबर अंक में डा. जगदीश गुप्त के लेख 'महाकलाकार माइकलेंजेलो' से उन दोनों अभावों की पूर्ति हो गयी। लेख सारगर्भ और संग्राह्य था।

–रचना द्विवेदी, कानपुर

०००

सितंबर अंक के लंबे लेखों में 'अलबेरूनी' (हरिदत्त वेदालंकार), 'माइकलेंजेलो' (डा. जगदीश गुप्त) और 'सो न पाती थीं मोमिमाइयां लुटेरों के मारे' (ब्रायन फैगन) सुलिखित और ज्ञानवर्धक थे। उनकी चित्रसज्जा भी संपादकीय परिश्रम की द्योतक है, बधाई। **–रामकृष्ण, लुधियाना**

०००

'दयानंद, आर्यसमाज और भारतीय जागरण' मैंने अगस्त अंक पाते ही दिलचस्पी से पढ़ा। उसमें महर्षि की कुछ विशेषताएं विशेष रूप से उजागर हुई हैं। वे राजा राममोहन राय के पूरक थे, यह बात मुझे बहुत सूझ-बूझ वाली लगी। जीवन के प्रश्नों की पैठ महर्षि की गहरी थी, शास्त्रों का नवीन अर्थघटन उनकी व्यापक और उदार दृष्टि का सूचक था–ये सभी बातें मुझे खूब अच्छी लगीं। शताब्दी के सिलसिले में लिखे गये लेखों में यह लेख सत्त्वशाली और विचार-प्रेरक है। **–शंकरदेव विद्यालंकार, पोरबंदर**

०००

स्वर्गीय बुद्धदेव बसु की व्यंग्य-रचना

'गति विचित्र है प्रेम की' तो 'कंचनप्रभा' में भी प्रकाशित हो गयी है। वह वहां काफी दिनों से पड़ी हुई थी और वहां से कोई जवाब न मिलने पर उसकी दूसरी प्रतिलिपि **नवनीत** को भेजी थी। मैंने 'कंचनप्रभा' को रचना न प्रकाशित करने की सूचना भी यथासमय भेज दी थी। किंतु दुःख है कि बिना किसी पूर्व सूचना के उन्होंने रचना प्रकाशित कर दी।

मैं आपके प्रति स्वयं को अपराधी अनुभव करता हूं और आशा करता हूं, आप मुझे क्षमा करेंगे। **—रमेश दुबे, खडगपुर-४**

०००

'मित्र' का 'कुछ इधर से कुछ उधर से' नामक स्तंभ (जुलाई और अगस्त) बहुत अच्छा लगा। इससे मैं अपने दोस्तों को अचंभे में डाल देता हूं। आशा है, वे बराबर इस स्तंभ में कुछ गणितीय ट्रिकें देते रहेंगे। 'पत्र-वृष्टि' (अगस्त अंक) में श्री विनोद ने ठीक ही कहा है कि **नवनीत** के कविता-पक्ष में ऐसा दौर्बल्य आ गया है कि वह मन-प्राण को छू नहीं पा रहा है। मैं भी इस बात से पूर्णतया सहमत हूं और सुंदर कविताओं की आशा करता हूं। **—कुमार अशोक चरण,**
पो. लोहरदगा, रांची, बिहार

०००

जून के **नवनीत** में 'मुगल बेगमें' शीर्षक लेख पढ़ा। इतिहास के विद्यार्थियों के लिए उस लेख में बहुत-सी उत्तम जानकारी है। लेकिन लेखक की कुछ बातें सही नहीं हैं।

१. माहम बेगम को लेखक ने मुगल-वंश की लडकी बताया है। वास्तव में वह सुलतान हुसैन मिर्जा (वाइकरा) तथा खुरासान के प्रसिद्ध संत शेख अबू नस्र अहमद जाम के वंश से संबंधित थी। अबू नस्र अहमद जाम 'जिंदा पील' ईरान के एक प्रसिद्ध सूफी संत थे। उनका जन्म ४४१ हि. में हुआ था। डा. ईश्वरी प्रसाद के अनुसार ('हुमायूं' पृष्ठ-१) भी यह निश्चित ही है कि माहम बेगम मुगल नहीं थी और वह शिआ मतावलंबी थी।

२. लेखक का यह कथन भी कि बाबर के सात ब्याह हुए, स्वीकार नहीं किया जा सकता। 'बाबरनामा' तथा गुलबदन बेगम के 'हुमायूंनामा' से हमें बाबर की नौ पत्नियों और उनमें से कुछ के विवाह-वर्षों की जानकारी प्राप्त होती है:

१. आयशा सुलतान बेगम (१५० ई.), २. जैनब सुलतान बेगम (१५० ई.), ३. मासूमा सुलतान बेगम (१५० ई.), ४. माहम बेगम, ५. गुलरुख बेगम (१५०८ ई.), ६. दिलदार अघाचा (१५०९ ई.), ७. मुबारिका बीबी (१५१ ई.), ८. गुलनार अघाचा और ९. नारगुल अघाचा। इनमें से अंतिम दो १५२६ ई. में ताहमास्प से बाबर को उपहार में मिली थीं। बाद में इनकी गणना राजमहल की संभ्रांत महिलाओं में होने लगी। गुलबदन बेगम ने अपने संस्मरण में कई बार उनको तथा पारिवारिक विचार-विमर्शों में इन्हें भाग लेते हुए वर्णित किया है। गुलनार हिंदाल के विवाह के उत्सव में उपस्थित

थी तथा गुलबदन के साथ [illegible] ई. में हज यात्रा पर गयी थी। (द्रष्टव्य : गुलबदन, हुमायूंनामा, बेवरिज, पृ. २३२ तथा अकबरनामा अंग्रेजी अनुवाद, ३ पृष्ठ १४५। 'तारीखे शाह रुख' के लेखक नियाज मुहम्मद खुकंडी ने इन नौ पत्नियों के अतिरिक्त साईदा आफ़ाक नाम की एक दसवीं पत्नी का भी उल्लेख किया है।

३. लेखक ने बाबर की अठारह संतानें होने की जानकारी दी है; लेकिन गुलबदन ने बाबर की उन्नीस संतानों का उल्लेख किया है, हालांकि नाम केवल अठारह के लिखे हैं।

–टी. आर. पेसवानी, दतिया, म. प्र.

००

जुलाई अंक में विज्ञान संबंधी लेख काफी रोचक व ज्ञानवर्धक थे। मेरे विचार से साधारण रोग और उनके उपचार पर एक लेख प्रत्येक अंक में रहा करे तो बहुत अच्छा रहेगा, क्योंकि इससे साधारण लोग थोड़े ही व्यय में स्वास्थ्य के प्रति ज्ञान प्राप्त करके भारी परेशानियों से बच सकते हैं।

–सतीश पाराशर, दादा हाथरसी, लखनऊ

०००

इसी अंक में छपे लेख 'आर्थर एश' के लिए यह अतिरिक्त सामग्री लेखक उदयन शर्मा ने तनिक विलंब से भेजी है :

'यह सही है कि आर्थर एश विश्व-टेनिस का इतिहास-पुरुष नहीं है। विंबलडन १९७५ से पहले उसने सफलता की कोई खास ऊंचाइयां भी नहीं छुई थीं। न ही विंबलडन-विजय के बाद उसने एक भी टूर्नामेंट जीता है। इसलिए टेनिस-प्रेमी उसे पसंद करने के बावजूद विश्व का नंबर एक खिलाड़ी नहीं मान रहे हैं। शायद इसी कारण अगस्त में फारेस्ट हिल में एश को वरीयता-क्रम में चौथा स्थान ही मिल पाया, जबकि जिमी कानर्स को पहला मिला। एश विंबलडन के बाद इसी टूर्नामेंट को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानता रहा है, पर इस साल विंबलडन चैंपियन एश चौथे चक्र में एडो डिब्स से हार गया।

'दरअसल आर्थर एश को याद किया जायेगा उसके खुशनुमा मूड, मृदु स्वभाव और तौर-तरीकों के लिए। इतिहास में इसकी विंबलडन-विजय को बहुत ही महत्त्वपूर्ण इस दृष्टि से माना जायेगा कि वह बुद्धि और शतरंजी टेनिस की मशीनी-ताकती टेनिस पर विजय थी–एक पूर्व नियोजित योजना के अंतर्गत।'

चित्रप्रश्न-३ का उत्तर

चित्रप्रश्न-३ (सितंबर अंक) में मध्ययुगीन यूरोप के जिन पांच महान चित्रकारों के आत्मचित्र दिये गये थे, उनके नाम इस प्रकार हैं–ऊपर की पंक्ति में बायें : लियोनार्दो द विंची (१४५२-१५१९ ई.), दायें : एल ग्रीको (१५४८-१६२५ ई.); नीचे की पंक्ति में बायें : राफायल (१४८३-१५२० ई.), बीच में : रेम्ब्रां (१६०६-१६६९ ई.) और दायें : टीशियन (१४७७-१५७६ ई.)।

★

स्वर्गीय श्री श्रीगोपालजी नेवटिया

श्रद्धेय,

आपके शुभनाम के साथ 'स्वर्गीय' शब्द जोड़ने का दर्द-भरा क्षण इतनी जल्दी और अचानक ही उपस्थित हो जायेगा, इसकी आशंका हमें नहीं थी। शोक का यह आघात इतना तीव्र है कि श्रद्धांजलि के लिए उचित शब्द भी हम चुन नहीं पाते। यों भी आपसे हमारा संबंध उस भावभूमि का था, जहां शब्दों का राज्य नहीं चलता।

आप विपुल और सफल कर्तृत्व वाले व्यक्ति थे। आपने अनेक औद्योगिक-व्यापारिक प्रतिष्ठानों का संस्थापन और संचालन-संवर्धन सफलतापूर्वक किया। 'नवनीत' इनमें से एक था और शायद आपके हृदय के सबसे अधिक निकट भी था; क्योंकि आपके लिए वह व्यवसाय से बहुत कुछ अधिक था—अपनी उच्चतर चेतना का प्रतिबिंब। यह चेतना आपके व्यक्तित्व को एक विशेष प्रकार की संपन्नता और समग्रता से मंडित करती थी।

आर्थिक उपक्रम और व्यावसायिक उन्नति के लिए आपमें जितनी ललक थी, आपको उतना ही लगाव था जीवन को गहरा और अर्थवान बनाने वाली उन चीजों से, जिनका सामूहिक नाम संस्कृति है। स्वतंत्रता-संग्राम के दौर में पले प्रबुद्ध भारतीयों का देशानुराग और सामाजिक हितचिंतन तो आपमें था ही, साथ ही ज्ञान-विज्ञान में जिज्ञासाभाव, साहित्य प्रेम, कलानुराग और प्रकृति-सौंदर्य के प्रति पुलक-भरा आकर्षण भी आपमें था। जीवन में जो कुछ अच्छा और सुंदर है, उसका अनुभव और आस्वाद पाने का अखूट उत्साह आपमें था, जिससे आप कर्तव्य और आनंद, कर्मठता और सरसता के बीच सहज संतुलन साध पाते थे। आपकी जीवनदृष्टि यह थी कि हमारी जड़ें अतीत में हों, हम जियें वर्तमान में और हमारी दृष्टि भविष्य पर स्थिर रहे।

इन्हीं आस्थाओं से प्रेरित होकर आपने 'नवनीत डाइजेस्ट' (हिंदी, मराठी, गुजराती) का प्रवर्तन और संचालन किया। इसके लिए प्रेरणा अवश्य आपने 'रीडर्स डाइजेस्ट' से ली थी, किंतु 'नवनीत' को आपने अधिक आदर्शोन्मुख बनाना चाहा।

'नवनीत' को आपने एक परिवार का रूप दिया था। इस परिवार के आप अध्यक्ष थे—केवल स्वामित्व और वय के कारण नहीं, अपनी हार्दिक स्नेहशीलता के कारण भी। वह स्नेह ही अब इस परिवार का संबल रहेगा। पार्थिव शरीर नश्वर है, सभी संयोगों का अंत वियोग में होता है—यह किताबी तत्त्वज्ञान इस वियोग की चुभन को मंद नहीं करता है। आपके अभाव का अभ्यस्त होने में हमें लंबा समय लगेगा। किंतु आपकी स्मृति और आपकी सीख हमें सदा प्रेरणा देती रहेगी। प्रणाम ! शोकावनत—नवनीत-परिवार

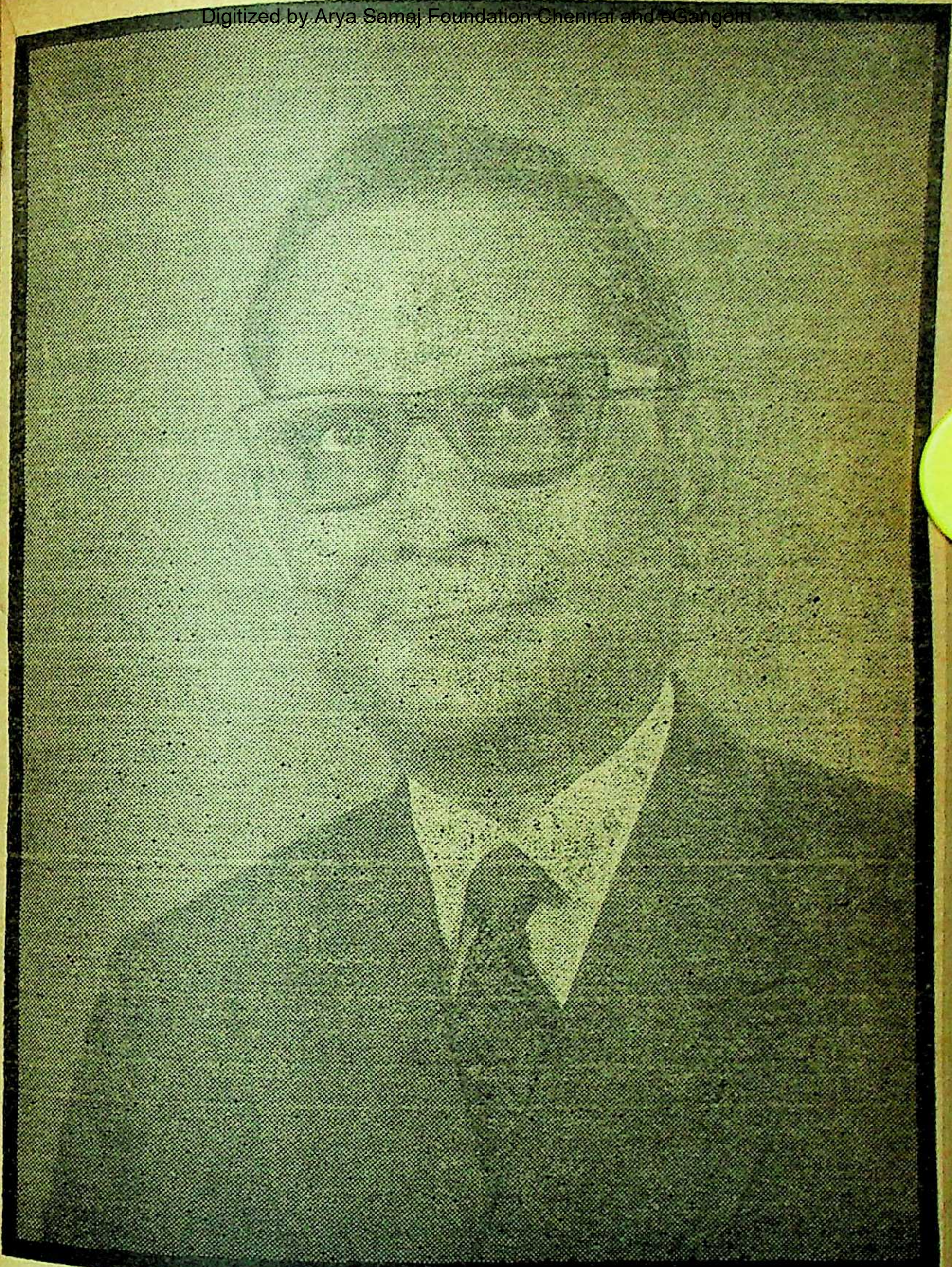

जन्म : २३ फरवरी १९०७–मृत्यु : १९ सितंबर १९७५

ग्रामीणों की ऋणग्रस्तता

जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी

सातवीं-आठवीं सदी ईसवी में भारत पर आक्रमण करने वाले अरब भारतीयों के आर्थिक चारित्र्य को देखकर चकित रह गये थे। मुहम्मद बिन कासिम के साथ ७११-१२ ई. में आये हुए एक अरब इतिहासकार ने लिखा (वह तो अपने को पर्यटक समझता होगा या बिन कासिम की फौज का सिपाही, परंतु उसने जो लिखा वह इतिहास हो गया) कि आप रुपये-पैसे के मामले में न तो रूमी (बाइजन्टाइन या कुस्तुनतुनिया के निवासी) पर भरोसा कर सकते हैं और न ईरानी-खुरासानी पर; लेकिन हिंदुस्तानी को आप अपना खजाना निश्चित होकर सौंप सकते हैं और वह आपको ज्यों का त्यों वापस मिल जायेगा।

लेखक जानता था कि जिस देश पर अरब लोग हमला कर रहे हैं और जिसके निवासी उनके साथ लड़ रहे हैं, उन पर इतना भरोसा करना अरबों के गले नहीं उतरेगा। इसलिए उसने विस्तार से बताया कि जब कोई भारतीय किसी से कर्ज लेता है और वापस नहीं दे पाता है तो कर्जदाता उसे खड़ा करके उसके चारों तरफ एक लकीर खींच देता है; फिर जब तक वह कर्ज वापस न दे या कर्जदाता ही उसे मुक्त न कर दे, वह उस घेरे से बाहर नहीं निकलता।

जिस देश में कर्ज को इतनी धार्मिक दृष्टि से देखा जाता हो, वहां यदि कोई कर्जदार हो जाये, तो उसकी हालत की कल्पना ही की जा सकती है। आज भी भारत के ग्रामों की लगभग आधी जनता ऐसी है, जो किसी न किसी का कर्ज लिये हुए है या अपने पुरखों के लिये हुए कर्ज उतार रही है।

हरियाणा के सरकारी आंकड़ों के अनुसार, देहातों की ५१·६४ प्रतिशत जनता कर्जदार है। यह हाल उस राज्य का है, जहां प्रत्येक गांव में बिजली है, जिसके आधे से अधिक हिस्से की सिंचाई नहरों से होती है, जिसका किसान कठोर परिश्रमी है और खेती एवं पशुपालन के मामले में देश का अग्रणी किसान समझा जाता है, और जिसके बारे में कहावत है—'देसां मां देस हरियाणा, जहां दूध-दही का खाणा।' अगर हम हरियाणा की तुलना में बिहार या मध्य प्रदेश को लें, तो पता चलेगा कि बिरला ही ऐसा किसान होगा, जिसे किसी का कुछ देना न हो। गांवों में एक या दो कर्ज देने वाले होते हैं और सारा गांव चक्करघिन्नी की तरह उनके पीछे नाचता है।

कर्जदाता किस तरह अपना रुपया वसूल करते थे, इसके दो उदाहरण मेरी आंखों में अभी तक छाये हुए हैं। तब मैं बालक था।

मेरे गांव में पास ही एक किसान था जो खेती कम, बैलगाड़ी चलाने का काम अधिक करता था। उसने सहकारी समिति से कर्ज लिया था, जो वह अदा नहीं कर सका। कुर्की आयी और उसका सारा माल-असबाब कुर्क कर लिया गया, बरतन-भांडे फेंक दिये गये और जब इससे भी कर्ज पूरा नहीं हुआ तो उसे पकड़कर जेल ले गये। उसकी चीख-पुकार मैं आज भी भूल नहीं पाता हूं।

दूसरी घटना एक कस्बे की है। मैं एक सज्जन के यहां ठहरा हुआ था, जो दो गांवों के जमींदार थे। सरकार में उनकी पूछ थी और अपने क्षेत्र में अत्यंत सामाजिक जीव माने जाते थे। हमारी भी आवभगत की। एक दिन मैं उनकी 'कचहरी' यानी बैठकखाने से चलकर अंदर उनके आंगन में पहुंच गया। वहां मैंने देखा कि एक ग्रामीण किसान मुर्गा बना बैठा है और वे सज्जन उस पर लगातार बेंत बरसा रहे हैं, उस पर चिल्ला रहे हैं। उनकी बातचीत से पता लगा कि उनका रुपया उसने अदा नहीं किया था और वह बेचारा चुपचाप पिटे जा रहा था।

यह घटना चालीस वर्ष पूर्व की है। लेकिन यह न समझें कि ऐसी घटनाएं देहात में आज नहीं होतीं। जो शक्तिमान हैं, जिनके हाथ में रुपया है और जिनसे कर्ज लिये बिना गांव में किसी का गुजारा नहीं होता, उन्हें आज भी यह सब करने का अधिकार है; क्योंकि उन्होंने पैसा दिया है। उनके इस आचरण के खिलाफ़ न कोई गवाह मिलेगा और न कोई शिकायत करने वाला।

एक समय था जब खेती से जिसका भी वास्ता होता था, उसका कर्ज से भी वास्ता होता था। हमें अच्छी तरह स्मरण है कि द्वितीय महायुद्ध से पहले उत्तर प्रदेश में एक कानून पारित हुआ था—एन्कम्बर्ड एस्टेट्स एक्ट। उसका उद्देश्य उन जमींदारों की जमीनें बचाना था, जो कर्जदार थे। उनकी जमीन कुर्क नहीं हो सकती थी और उनसे केवल

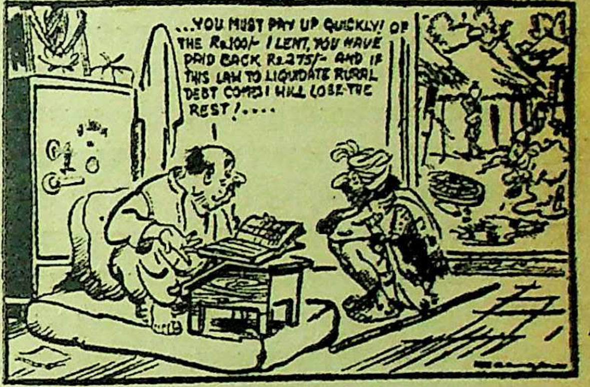
...YOU MUST PAY UP QUICKLY! OF THE Rs.1000/- I LENT, YOU HAVE PAID BACK Rs.275/- AND IF THIS LAW TO LIQUIDATE RURAL DEBT COMES I WILL LOSE THE REST!....

चटपट सब चुकता कर दो। जो १०० रुपये कर्ज में मैंने दिये थे, उनमें सिर्फ २७५ रुपये तुमने चुकाये हैं। यह ग्रामीण ऋण समाप्ति का कानून अगर जारी हो गया, तो मेरा बकाया डूब जायेगा। [लक्ष्मण: 'टाइम्स आफ इंडिया' में]

किस्तों में ही रुपया वसूल किया जा सकता था, ब्याज भी हल्का लगता था। अगर वह कानून पास न होता, तो स्वतंत्रता-प्राप्ति के समय उत्तर प्रदेश में जो २०,१६,७३८ जमींदार थे, उनमें बहुत-से केवल भूतपूर्व जमींदार होते।

यह तो उन लोगों की हालत थी, जो जमीन के स्वामी थे, उसे चाहे जब-तब बेच या गिरवी रख सकते थे और किसानों से मनमाना लगान वसूल कर सकते थे। लेकिन उन किसानों की क्या हालत रही होगी, जिनका सारा जीवन मानो जमींदारों का पेट भरने के लिए ही होता था! दो-दो, चार-चार बीघे के किसान न तो बैल मोल ले सकते थे, न सिंचाई का पैसा ही अदा कर सकते थे।

उन्नत खेती ने ग्रामवासियों की ऋण-ग्रस्तता को और बढ़ा दिया। पहले तो वही किसान ऋण लेता था, जिसे गाय-भैंस या बैल खरीदना होता था, या जिसकी लड़की की शादी होती थी, या जिसकी गुजर नहीं चलती थी। लेकिन जब से देहात में उन्नत कृषि का आंदोलन चला, तो बड़े से बड़े किसान-परिवार को ऋणग्रस्त होना पड़ा। वैसे बीज के लिए तो हर किसान ही ऋण-ग्रस्त होता है। बीज-गोदाम से बीज लेने पर चार-छह महीने बाद उसका सवाया देना पड़ता है। अगर चार महीने बाद आपने सवाया दिया, तो उसका मतलब यह हुआ कि एक साल में शत-प्रतिशत हिसाब से ब्याज देना पड़ा। बहुत-से किसानों की जो बचत होती है, वह इसी में समाप्त हो जाती है। फिर अगर उर्वरक, ट्रैक्टर, पंप आदि के लिए रुपया उधार लिया हो तो वह देना अलग से।

वैसे तो आजकल सरकारी बैंक १७-१८ प्रतिशत के हिसाब से ब्याज लेने लगे हैं, जिसके मानी ये हैं कि अगर कोई आदमी पांच वर्ष तक कर्ज न चुका सके, तो उसे मूलधन जितनी ही रकम ब्याज में देनी पड़ेगी। लेकिन देहात में जो ब्याज की रकम है वह और ही है। अलग-अलग स्थानों पर ब्याज की अलग-अलग प्रणालियां हैं। बुंदेलखंड के गांवों में आज भी सुरक्षित ऋण पर २ पुराने पैसे प्रति रुपया मासिक के हिसाब से ब्याज लगता है, जो ३ रु. २ आने सैकड़ा प्रतिमास यानी लगभग ३८ प्रतिशत वार्षिक बैठता है। यह तब है जबकि जमीन, जेवर या और कोई वस्तु गिरवी रखनी पड़ती है। इसके मानी ये हैं कि ढाई साल में ही ऋण की रकम दुगुनी हो जाती है।

लेकिन हाल ही में प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया ने जो सर्वेक्षण किया, उससे पता चला है कि ऐसे क्षेत्र भी हैं, जहां कर्ज देने वाले १०० रु. पर १० रु. प्रतिमाह या १२० रु. वार्षिक के हिसाब से ब्याज वसूल करते हैं। जिस आदमी को किसी उत्पादन-कार्य के लिए भी यह ऋण लेना पड़े, वह ऋण कभी भी चुकता नहीं कर सकता। यदि उसे शादी, बीमारी, मैयत, मुकद्दमेबाजी, पढ़ाई आदि के लिए लेना पड़े, तो शायद उसकी संतान ही उसके ऋण को पूरा कर सके; और गांवों में ऐसा कौन है, जिसके जीवन में इस प्रकार

के कामों के अवसर नहीं आते। ये सब अनुत्पादक ऋण हैं; इनके लिए कोई बैंक, कोई सहकारी समिति, कोई ग्रामीण सेवा समिति ऋण नहीं देती। लिहाजा किसान को किसी व्यापारी या महाजन की शरण में जाना पड़ता है, जिसका काम ही लेन-देन का है।

मैं ऐसे कई ग्रामीण परिवारों को जानता हूं, जिनके पास कभी इतनी रकम जुटी ही नहीं कि वे ऋण चुका सकें और इसी कारण जिन्हें वर्षों ब्याज के रूप में मूलधन से कई गुना देना पड़ा। अगर हमारे देहात में कृषि का विकास नहीं हो पा रहा है, तो उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि किसानों को, खेतिहर मजदूरों को और खेती में लगे हुए अधिकांश लोगों को अपना जीवन ऋण-ग्रस्तता में बिताना पड़ता है।

मजे की बात यह है कि साधारणतया ऋणों की भूमिका उत्पादक होती है। अगर कोई व्यापारी या कोई उद्योगपति ऋण ले सकता है, तो वह अपने काम-काज को इतना बढ़ा लेता है कि ऋण अदा करने के बाद भी उसे मुनाफा होता है। आज शहरों की सबसे बड़ी समस्या यह है कि उन्हें अधिक ऋण मिले और वे अधिक उत्पादक कार्य कर सकें। यही बात राष्ट्रों की है। जिस राष्ट्र को जितना अधिक कर्ज मिल जाता है, वह अपने को उतना अधिक भाग्यवान मानता है, क्योंकि उससे वह अनेक उत्पादनों को बढ़ा सकता है।

मगर देहात में स्थिति इससे सर्वथा उलटी है। वहां ऋण की मदद से उत्पादन बढ़ाने का सवाल तो दूर, सारी जिंदगी ऋण की अदायगी में ही बीत जाती है। इसका सबसे बड़ा कारण है ब्याज की ऊंची दर और भुगतान की छोटी मियादें। अगर ब्याज की दरें कम हो जायें और यह सुविधा हो कि ऋण आसान किस्तों में चुकाया जा सके, तो ऋण ग्रामवासियों के लिए भी उत्पादक और सहायक चीज हो सकती है।

भारत के किसानों की गरीबी और ऋण-ग्रस्तता पर सबसे प्रबल चोट हुई है प्रधानमंत्री के २०-सूत्री कार्यक्रम के द्वारा। इस सिलसिले में विभिन्न राज्यों ने कानून बनाये हैं और बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र तथा पंजाब ने तो कुछ श्रेणियों के लोगों के पिछले कर्ज माफ कर दिये हैं। अन्य राज्यों में कर्ज तो माफ नहीं हुए हैं, लेकिन कर्ज की अदायगी में राहत दी गयी है। बहुत राज्यों में, जैसे कि हरियाणा और पंजाब में, यह सुविधा दी गयी है कि यदि किसी कर्जदार ने मूलधन तथा उसके आधे के बराबर की रकम अदा कर दी है, तो यह समझा जायेगा कि उसने ऋण पूरा चुका दिया।

देहातों में तीन श्रेणियां ऐसी हैं, जिन्हें सबसे ऊंची दर पर ब्याज देना पड़ा है और जिन पर ऋण का बोझ अधिक होता है। एक हैं वे लोग, जो आज के कृषि-अर्थशास्त्र में सीमावर्ती किसान (मार्जिनल फार्मर्स) कहलाते हैं, यानी जिनके पास दो एकड़ से कम जमीन होती है। अकेले आंध्र प्रदेश में ऐसे किसानों की संख्या २४,७९,८०८ है।

वहां १०,५८,१३४ छोटे किसान, ९८,२८, ६८५ खेतिहर मजदूर और ७,३०,४९६ देहाती कारीगर हैं। हर राज्य में कुल मिलाकर कमोबेश यही स्थिति है। ये वे वर्ग हैं, जो प्रायः हमेशा ही कर्ज में डूबे रहते हैं।

बिहार में हरिजनों, आदिवासियों, पिछड़े वर्ग के लोगों और किसी समय जरायमपेशा कही जाने वाली जातियों के लोगों के ऊपर जो ऋण थे, वे माफ कर दिये गये। सरकार यह भी विचार कर रही है कि जिन लोगों की खेती दो हैक्टर से कम हो, उन सबका ऋण माफ कर दिया जाये। उत्तर प्रदेश में जिन लोगों की खेती एक एकड़ तक ही है या जो लोग खेतिहर मजदूर हैं, उनका ऋण माफ कर दिया गया है और अन्य कमजोर वर्ग के लोगों के लिए ऋण की अदायगी में छूट दे दी गयी है। मध्य प्रदेश में भी आदिवासियों, हरिजनों, छोटे किसानों, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों और देहाती कारीगरों के ऋण माफ कर दिये गये हैं तथा अन्य कुछ लोगों को ऋण की अदायगी में छूट दे दी गयी है।

महाराष्ट्र में भी एक अध्यादेश द्वारा गांव और शहर के गरीब लोगों को ऋण से मुक्त कर दिया गया है। जिन्हें मुक्त नहीं किया जा सका है, उन्हें एक साल तक ऋण अदा न करने की छूट दे दी गयी है और यह भी व्यवस्था हो गयी है कि जो लोग मूलधन की डयोढ़ी रकम दे चुके हैं, उनके ऋण माफ कर दिये जायेंगे। कर्नाटक, केरल, राजस्थान आदि राज्यों में भी इसी तरह ऋण अदा न करने के लिए समय बढ़ा दिया गया है। इसके साथ ही यह विचार भी किया जा रहा है कि जिन किसानों को ऋणमुक्ति से लाभ नहीं पहुंचता, उन्हें क्या सुविधा दी जाये और किस सीमा तक।

लेकिन समस्या ऋणमुक्ति या ऋण की छूट तक ही सीमित नहीं है। मुख्य समस्या तो यह है कि देहात में ऋणों की क्या व्यवस्था हो? सरकार ने कानून बनाकर वर्षों पुराने दस्तावेजों को समाप्त कर दिया। तय है कि जो लोग लेन-देन का पेशा करते हैं, उन्हें इन उपायों से बहुत हानि पहुंचेगी। यह राष्ट्रीयकरण भी नहीं है कि सरकार की ओर से कुछ मुआवजा या क्षतिपूर्ति मिल जाये। इसका परिणाम यह होगा कि जो लोग अभी तक ऋण दे रहे थे, वे कह देंगे कि अब हमारे पास ऋण देने के लिए पैसा ही नहीं है, क्योंकि जो पैसा हमें मिलना था वह हमें मिला ही नहीं। वे उसी असल और ब्याज से दूसरों को ऋण देते थे।

इसका दूसरा दुष्परिणाम यह होगा कि जो लोग बहुत गरजमंद हैं, उनके स्टांप और तमस्सुक (कर्जनामे) तो अब स्वीकार होंगे नहीं, न उनके मकान या जमीन रहन रखी जा सकेगी; क्योंकि कर्ज देने वाले को हमेशा डर लगा रहेगा कि न जाने कब सरकार कानून पास करके इन ऋणों को समाप्त कर दे और उसकी वसूली न हो। परिणामतः सोने-चांदी तथा बहुमूल्य वस्तुओं के आधार पर ही कर्ज मिल सकेगा और गांवों में सोने-चांदी से हटकर अन्य वस्तुओं व खेती आदि

में पूंजी लगाने की जो परंपरा विकसित हो रही थी, वह दब जायेगी। उन्नत खेत बेचा जा सकता है, पर रहन नहीं रखा जा सकता और जो लोग तात्कालिक कार्य के लिए धन तलाश करेंगे, उन्हें अधिक व्याज और अधिक कीमती अमानत-जमानत रखनी पड़ेगी।

जहां तक कागजों का हाल है, स्थिति आज भी बुरी है। बेपढ़े-लिखे किसान से सफेद कागज पर अंगूठा लगवा लिया जाता है और उसमें मूल की रकम और ब्याज की रकम मिलाकर जो चाहे लिख दी जाती है। अगर कभी दावा करना पड़ा, तो किसान को पता लगता है कि जितनी रकम का दावा किया जा रहा है, वह तो उसने कभी ली ही नहीं थी।

यह बात किसानों तक सीमित हो, सो बात नहीं। शहर दिल्ली में तीस हजारी कचहरी के ठीक पीछे सिविल लाइन्स या ठंडी सड़क के आस-पास ऐसे लोग रहते हैं, जो दो हजार रुपये कर्ज देते हुए चार हजार का रुक्का लिखवाते हैं (वह भी उन लोगों से जो उनकी जान-पहचान के होते हैं), साल-भर का व्याज पहले काट लेते हैं, जितनी रकम देने का वादा होता है वह भी पूरी नहीं देते और रुपया वसूल हो जाने पर भी रुक्का वापस नहीं करते। पढ़े-लिखे गरजमंद यह सब स्वीकार करते हैं।

इसलिए जरूरत इस बात की है कि वैसे तो सारे देश में और विशेषतया गांवों में ऐसी ऋण प्रणाली हो, जो किसानों की आवश्यकता को पूरी करे, उचित दर पर आसान किस्तों में भुगतान-योग्य कर्ज दे। तभी हम वास्तव में गांवों का विकास होगा।

अगर देश का व्यापक सर्वेक्षण किया जाये, तो पता लगेगा कि कृषि के क्षेत्र में सबसे अधिक पिछड़े राज्य वे हैं, जिनमें सबसे अधिक लोग ऋणग्रस्त हैं। ऋण का केवल आर्थिक ही नहीं, मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी पड़ता है। जिस आदमी को यह पता हो कि वह जो भी कमाई करे वह तो ऋणों के भुगतान में ही चली जायेगी, उसकी श्रम करने की इच्छा घट जायेगी; अपने काम में वह सुधार नहीं कर सकेगा। परिणामतः राष्ट्र की क्षति होती है। ग्रामवासियों की ऋणग्रस्तता को दूर करने के लिए यह भी बहुत जरूरी है कि विवाह और मृत्यु-संस्कारों पर होने वाला खर्च कम हो। यह बहुत परिवारों को ऋणग्रस्त बना देता है।

तात्पर्य यह कि ग्रामवासियों की ऋणग्रस्तता केवल कानून पास करने से समाप्त नहीं होगी। उसके लिए नयी ऋण-प्रणाली का आविष्कार करना होगा और साथ ही जो अनावश्यक खर्च हैं उन्हें सामाजिक क्रांति द्वारा समाप्त करना होगा। सरकार ने पचास देहाती बैंक खोलने का जो इरादा घोषित किया है, वह स्वागतयोग्य है। सामाजिक क्रांति की जिम्मेदारी नागरिकों पर है।

–५५, काकानगर, नयी दिल्ली-११०००३

* * *

दक्षिण-पूर्व एशिया
नयी परिस्थितियां : नयी प्रतिस्पर्धाएं

अवधनंदन

अभी अप्रैल तक दक्षिण-पूर्व एशिया का राजनैतिक मानचित्र ही कुछ अलग था। उस पर सब कहीं वर्षों से चल रहे वियतनाम युद्ध की छाया थी। इस युद्ध ने ही फैलते-फैलते अंतत: लाओस और कंबोडिया को भी अपनी लपेट में ले लिया था। दूसरी ओर द्वितीय महायुद्ध ने, विशेषत: चीन में कम्युनिस्ट क्रांति की सफलता के साथ इस क्षेत्र में उग्र रूप धारण करने वाले शीतयुद्ध ने, समूचे दक्षिण-पूर्व एशिया को मोटे तौर पर दो शिविरों में बांट दिया था। उत्तर वियतनाम शुरू से ही साम्यवादी था। दक्षिण वियतनाम, थाइलैंड, फिलिपाइन, मलेशिया, सिंगापुर साम्यवाद-विरोधी थे। १९६५ की साम्यवाद-विरोधी सैनिक क्रांति के बाद इंदोनीशिया भी इनके साथ हो गया। दक्षिण वियतनाम, थाइलैंड और फिलिपाइन का तो अमरीका से प्रत्यक्ष सैनिक गठबंधन भी था।

परंतु अप्रैल १९७५ में हिंदचीन युद्ध में दक्षिण वियतनाम, लाओस और कंबोडिया के तीनों मोर्चों पर अमरीका-समर्थित सरकारों की पराजय से दक्षिण-पूर्व एशिया में पासा एकाएक पलट गया। थाइलैंड और फिलिपाइन की अमरीका-समर्थक सरकारों को भी अब एक ओर तो अमरीका पर अत्यधिक सामरिक अवलंबन की अपनी पुरानी नीति बदलनी पड़ी; दूसरी ओर वे चीन के साथ संबंध सुधारने के लिए आतुर हो गयीं।

दक्षिण-पूर्व एशिया की इस बदली हुई वस्तुस्थिति को सबसे पहले भांपा मलेशिया ने। उसे यह समझते देर नहीं लगी कि हिंद-चीन-युद्ध में अमरीका की पराजय के बाद इस प्रायद्वीप में वियतनाम का पलड़ा काफी भारी हो जायेगा। यह भी कि उस स्थिति में रूस, चीन और वियतनाम की साम्यवादी सरकारें इस क्षेत्र में अपना-अपना प्रभाव बढ़ाने की चेष्टा करेंगी। इसमें साम्यवाद के दो खेमों में जो पारस्परिक प्रतिस्पर्धा अनिवार्यत: होगी, उसे ध्यान में रखकर मलेशिया ने चीन के साथ संबंध स्थापित करने के लिए पहल की।

मलेशियाई प्रधान-मंत्री तुन अब्दुल रजाक की यह धारणा थी कि चीन इस क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की शासन-प्रणालियों वाले देशों के बीच सहअस्तित्व की अनिवार्यता को मान चुका है, जब कि अपनी नयी-नयी

विजय के कारण उत्तर वियतनाम इस पूरे क्षेत्र में साम्यवादी विद्रोहों को सफल बनाने को सन्नद्ध रहेगा। दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य गैरसाम्यवादी देशों की तरह ही मलेशिया में भी साम्यवादी विद्रोही लंबे अरसे से सक्रिय हैं और उन्हें नियंत्रित करने की अनिवार्यता मलेशिया की विदेश-नीति में बहुत हद तक प्रतिबिंबित होती रही है।

मलेशिया का अनुकरण करने में फिलिपाइन और थाइलैंड को भी देर नहीं लगी। उन्होंने भी पिछले कुछ महीनों में चीन के साथ सामान्य कूटनीतिक संबंध स्थापित कर लिये हैं। जैसे-जैसे ये संबंध घनिष्ठ होंगे, दक्षिण-पूर्व एशिया के साम्यवादी विद्रोहियों को चीन का समर्थन कम होता जायेगा।

यों तो कहते हैं कि पीकिंग की यात्रा करने वाले फिलिपाइनी और थाइ नेताओं से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष माओ ने स्पष्ट कहा कि हमारी पार्टी साम्यवादी आंदोलनों के प्रति अपने कर्तव्य को नहीं भूल सकती। लेकिन साथ ही माओ ने इन नेताओं को यह भी सलाह दी कि वे अपने यहां विद्रोह के कारणों का निराकरण करें तथा विद्रोहियों को राष्ट्रीय राजनीति की मूलधारा से जोड़ने का प्रयत्न करें। दूसरे शब्दों में, दक्षिण-पूर्व एशिया में चीन भी अब कमोबेश वही सहअस्तित्व की नीति अपना रहा है, जिसे लेकर वह पिछले पंद्रह वर्षों से सोवियत संघ पर 'संशोधनवादी,' 'साम्राज्यवादियों का पिट्ठू' आदि होने के आरोप लगाता रहा है।

चीन का रुख कितना बदल गया है, इसका अंदाज इससे भी होता है कि पीकिंग पधारे थाइ नेताओं को चीनी अधिकारी बार-बार यह समझाते रहे कि 'थाइ जनता की आवाज' के नाम से काम कर रहे साम्यवादी रेडियो का प्रसारण-केंद्र चीनी सीमा में स्थित नहीं है; थाइलैंड को उसके लिए कहीं और टटोलना चाहिये। इशारा साफ था कि वह रेडियो वियतनाम अथवा लाओस में किसी जगह से काम कर रहा है।

सबसे दिलचस्प बात तो यह सुनने में आयी है कि जब दक्षिण-पूर्व एशिया की बदलती हुई वस्तुस्थिति को देखकर थाइलैंड के प्रधान-मंत्री कुकृत प्रमोज और फिलिपाइन के राष्ट्रपति मार्कोस ने अपने यहां स्थित अमरीकी सैनिक अड्डों को खाली कराने

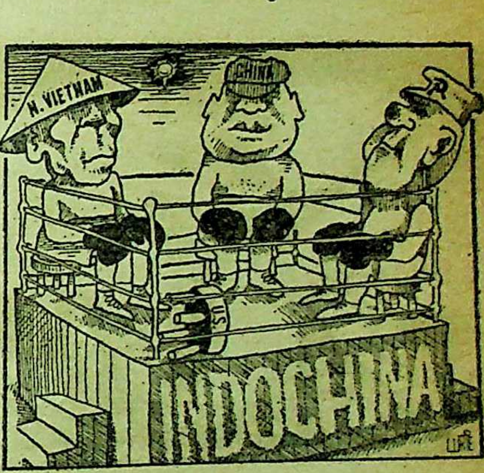

अब अगला राउंड [लूरी : 'न्यूयार्क टाइम्स' में]

अथवा उनका नियंत्रण पूरी तरह से अपने हाथ में लेने की बात छेड़ी, तो चीन ने उन्हें सलाह दी कि इस मामले में जल्दबाजी न करें। कहीं ऐसा न हो कि भेड़िये को सामने के दरवाजे से निकालने की हड़बड़ी में पिछले दरवाजों से घर में शेर घुस आये। कहने की आवश्यकता नहीं कि शेर से चीन का संकेत यहां रूस से है। रूस के साथ अपनी तनातनी के कारण इस समय चीन दक्षिण-पूर्व एशिया में अमरीका की मौजूदगी को रूसी प्रभाव की निरोधक शक्ति के रूप में देखता है।

इससे ठीक विपरीत है उत्तर वियतनाम का दृष्टिकोण। कुछ वर्ष पूर्व जब अमरीका और चीन के संबंधों में सुधार और तनावहीनता का दौर शुरू हुआ था, तभी उत्तर वियतनाम के नेता त्रुआंग चिन्ह ने चीन को चेताया था कि अमरीका समाजवादी देशों के मध्य आपसी विरोध पनपाने का प्रयास कर रहा है; वह बड़े राष्ट्रों के साथ अच्छे संबंध बनाकर छोटे देशों को धौंस देते रहना चाहता है। अपने राष्ट्रीय हितों को महत्त्व देते हुए चीन ने चिन्ह की यह चेतावनी अनसुनी कर दी थी। अब शायद चीन की चेतावनी देने और वियतनाम के अनसुनी कर देने की बारी है।

एक सूचना के अनुसार तो माओ ने यह भी कहा कि मेरे दिमाग में 'दक्षिण वियतनाम की स्पष्ट तस्वीर है—वह यह कि यदि वियतनामी सिर्फ साम्राज्यवाद से ही लड़ते हैं और संशोधनवाद से लोहा नहीं लेते, तो वहां दूसरी क्रांति होकर रहेगी।' स्पष्ट ही माओ चाहते हैं कि वियतनामी लोग सिर्फ अमरीकी साम्राज्यवाद को ही अपना शत्रु न समझें, बल्कि सोवियत संशोधनवाद के खतरे को भी पहचानें।

माओ चाहे कुछ भी कहते हों, पर वियतनाम दक्षिण-पूर्व एशिया में चीन से अलग अपनी खास हैसियत बनाने के लिए कृतसंकल्प है। वह अपने को हिंदचीन के देशों की स्वतंत्रता के प्रहरी और दक्षिण-पूर्व एशिया में किसी भी रूप में अमरीका की मौजूदगी के प्रबल विरोधी के रूप में आगे रखना चाहता है। यही कारण है कि जिन दिनों थाइलैंड चीन के

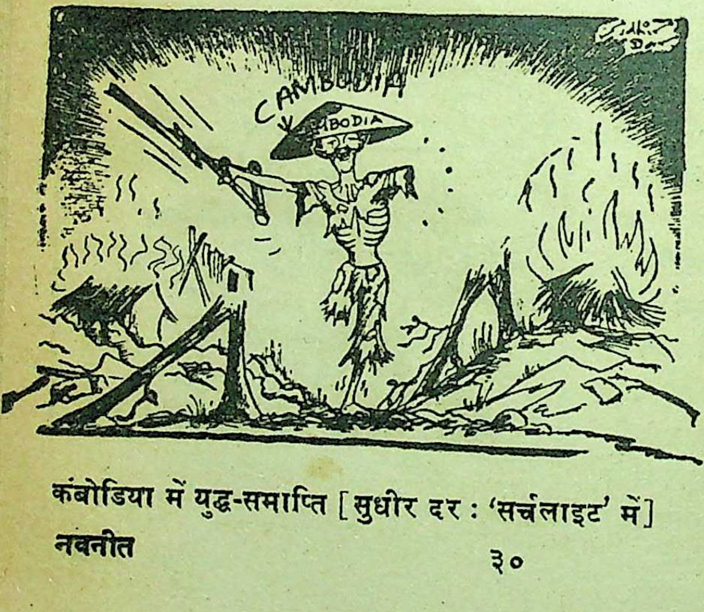

कंबोडिया में युद्ध-समाप्ति [सुधीर दर : 'सर्चलाइट' में]

साथ सहज संबंध बनाने की पहल कर रहा था, उन्हीं दिनों वियतनाम ने कहा था कि थाइलैंड क्रांतिकारी हिंदचीन में 'अमरीकी बंदर का पंजा' है। वियतनाम के साम्यवादी शासक इस तथ्य से भी अपरिचित नहीं हैं कि रूस-चीन-संघर्ष में अमरीका की संतुलनकारी स्थिति के कारण चीन चाहे तो भी 'अमरीकी बंदर' और उसके 'थाइ पंजे' को हटाने की दिशा में कोई पहल नहीं कर सकता; क्योंकि इस तरह की पहल उसके अपने राष्ट्रहित के विरुद्ध है।

चीन के क्रांतिकारी तेवर की इस सीमा को पहचानते हुए ही पिछले दिनों उत्तर वियतनाम ने थाइलैंड और मलेशिया के विरुद्ध जोरदार प्रचार अभियान छेड़ा है। अधिक दिन नहीं हुए, जब वियतनाम ने इन दोनों देशों में सक्रिय चीनी मूल के छापामार विद्रोहियों के नाम चीनी भाषा के एक रेडियो-प्रसारण में कहा था कि ये दोनों देश अपने सीमाक्षेत्रों में छापामार सैनिकों को कुचलने के लिए अभी भी आपस में गठजोड़ किये हुए हैं। वियतनाम ने इस ओर ध्यान खींचा है कि ये दोनों देश अमरीकी विदेश-नीति से अपने को अलग करके शांति, स्वतंत्रता और तटस्थता के मार्ग पर चलने की घोषणा तो कर रहे हैं, परंतु आंतरिक मामलों में आज भी साम्यवाद-विरोधी नीतियां अपनाये हुए हैं। इतना ही नहीं, वियतनाम ने इन दोनों देशों की सरकारों को यह चेतावनी भी दी है कि वे दूसरे साम्यवाद-विरोधी शासनों के राजनैतिक विनाश की ताजा घटनाओं को नहीं भूलें।

सीधी बात है कि वियतनाम के शासक यह साबित करने पर तुले हुए हैं कि भले ही चीन दक्षिण-पूर्व एशिया के साम्यवादी विद्रोहियों को अधर में छोड़ दे, परंतु वियतनाम उनका साथ देगा। वस्तुतः लाओस में अपना प्रभाव बढ़ाने के उद्देश्य से पिछले दिनों उसने थाइलैंड पर निरंतर प्रहार किया है।

लेकिन हिंदचीन का ही एक अन्य देश कंबोडिया थाइलैंड के मामले में कुछ अलग

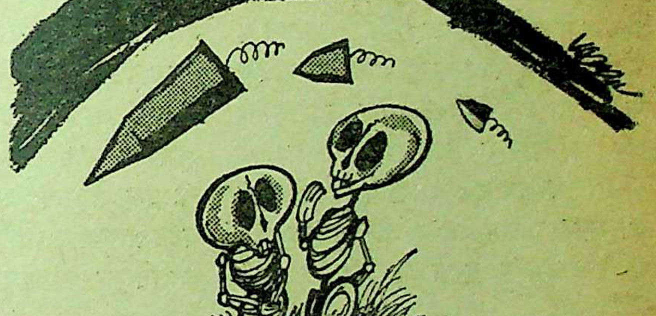

'तुम वियतनाम युद्ध में मरे थे? कितनी खौफनाक बात! मैं तो वियतनाम शांति में मरा था।' [विजयन् : 'हिंदू' में]

ही रुख अपनाए रहा है। थाइलैंड के प्रति उसका रवैया थोड़ा नरम है। उसने कंबोडिया-थाइ सीमा पर हुए कुछ संघर्षों को 'अमरीकी-साम्राज्यवाद प्रेरित' कहकर महत्त्वहीन माना और यह भी कहा कि थाइ तथा कंबोडियाई जनता साम्राज्यवादियों की इन साजिशों को नाकाम कर देगी। उसने थाइलैंड के साथ बैठकर बातचीत करने का जो सुझाव दिया है, उससे भी उसका नरम रुख झलकता है।

इस नरमी का कारण ऐतिहासिक है। यद्यपि अब तो वियतनाम और कंबोडिया दोनों में साम्यवादी सरकारें हैं, परंतु कंबोडिया वियतनाम की पुरानी प्रसारलिप्सा को आज भी नहीं भूला है। वियतनाम की बढ़ती हुई शक्ति को वह आज भी शंका की निगाह से देखता है और वियतनामी खतरे के संतुलन के लिए थाइलैंड से अच्छा संबंध बनाना चाहता है।

दक्षिण-पूर्व एशिया की इस बदली हुई स्थिति में बहुत मुमकिन है कि वियतनाम व सोवियत संघ तो पहले की बनिस्बत अधिक करीब आ जायें और कंबोडिया व थाइलैंड अपने को चीन के निकट पायें।

परंतु दक्षिण-पूर्व एशिया में इंदोनीशिया का अपना अलग महत्त्व और भूमिका है। वह इस क्षेत्र का सबसे बड़ा देश है। उसके शासन में साम्यवाद-विरोधी भावना अभी भी प्रबल है। हाल ही में उसके राष्ट्रपति सुहार्तो अपनी सेना के—विशेषत: नौसेना के—आधुनिकीकरण के लिए अमरीका से बड़े पैमाने की सहायता का आश्वासन लाये हैं।

बहुत मुमकिन है कि जापान, इंदोनीशिया और आस्ट्रेलिया में दक्षिण-पूर्व एशिया की प्रतिरक्षा के लिए एक विशेष गठबंधन हो। इधर मनीला में फिलिपाइन के राष्ट्रपति मार्कोस और थाईलैंड के प्रधान-मंत्री प्रमोज में हुई बातचीत के बाद यह संकेत मिला है कि ये दोनों देश भी जापान, इंदोनीशिया और आस्ट्रेलिया के साथ किसी प्रकार का रक्षा-संबंध बनाने का प्रयास करेंगे।

स्पष्ट ही, दक्षिण-पूर्व एशिया में शक्ति-गठबंधनों का एक नया दौर शुरू हो गया है। पुराने समीकरण बदल रहे हैं, नयी परिस्थितियां नयी प्रतिस्पर्धाओं को जन्म दे रही हैं। जो लोग अभी भी साम्यवाद की अंतरराष्ट्रीय एकता में विश्वास रखते हैं, उनके लिए दक्षिण-पूर्व एशिया की भावी घटनाएं शायद कुछ और चौंका देने वाले तथ्यों का उद्घाटन करें; ठीक वैसे ही जैसे कि इस क्षेत्र ने अमरीकी अपराजेयता में अटूट आस्था रखने वालों को अपनी मान्यता बदलने को विवश कर दिया!

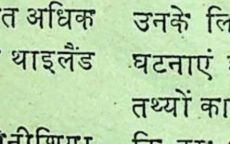

नवनीत

नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन

पिपीलिका-उपनिषद्

जो ज्ञानी होगा उसे जरा भी ऐसा नहीं लगेगा कि फलाना मुझसे बढ़कर है, हीन है। वह मेरी बराबरी का है, ऐसा ही उसे लगेगा। मुझे गणित आती है, उसे तो नहीं आती—ऐसा उसके मन में नहीं आयेगा। आयेगा तो इतना ही कि मुझे गणित आती है, तो उसे भूगोल आता है, दोनों समान ही हैं।

मान लो कि एक चींटी है। मेरे पास जो ज्ञान है वह उसके पास नहीं। पर उसके पास इतना सूक्ष्म ज्ञान है कि रेतीले मैदान में शक्कर के कण बिखरें हों, तो जाने वह कहां से आ जाती है और कणों को उठाकर ले जाती है। अर्थात् मेरे पास क्या ज्ञान है? यही न कि मैं उपनिषद् पर व्याख्यान दे सकता हूं। उसी तरह चींटी रेत में से शक्कर के कण बीन ले जा सकती है। ऐसे ही हर एक प्राणी के पास कोई न कोई ज्ञान होता ही है।

ज्ञान का अर्थ क्या है? चैतन्य। मुझमें चैतन्य है, वैसे ही उसमें भी चैतन्य है। चैतन्य में छोटे-बड़े का भेद कैसे हो सकता है? विवेकानंद ने एक उपमा दी है। एक विशाल रेलगाड़ी सामने से बढ़ती चली आ रही है। पटरी पर एक चींटी है। चींटी धीरे-से पटरी पर से उतर जाती है और इतनी बड़ी रेलगाड़ी उसका कुछ भी नहीं कर सकती। क्योंकि चींटी में चैतन्य है, और रेलगाड़ी अचेतन है। उसमें नीचे उतरने की शक्ति नहीं।

—विनोबा

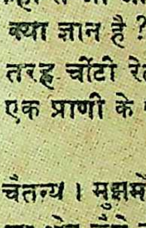

जीवन-तीर्थ

विलियम एलन ह्वाइट ने अपने शहर को पचास एकड़ जमीन का टुकड़ा सार्वजनिक वाटिका के लिए देते हुए कहा था—'यह जमीन देकर मैंने तीसरी खुशी हासिल की है।'

'तीसरी खुशी ?......बाकी दो खुशियां कौन-सी हैं ?' किसी ने सवाल किया।

ह्वाइट ने उत्तर दिया—'मैं हमेशा कहा करता हूं कि किसी भी जायदाद में तीन खुशियां होती हैं। पहली उस जायदाद को बनाने की खुशी। दूसरी उस जायदाद को पाने की खुशी। तीसरी और सबसे बड़ी, उस जायदाद को देने की खुशी है।'

देने वाले का हृदय देन को प्रिय और मूल्यवान बना देता है। —लूथर

पोप पाल चतुर्थ उन दिनों कार्डिनल थे और मिलान के आर्चबिशप के पद पर थे। एक समाज-सेवक उनके पास गया और बोला—'गरीब भूखों का पेट भरने को मेरे पास इस समय कुछ भी नहीं है। सो मदद मांगने के लिए मैं आपके पास आया हूं।'

कार्डिनल ने फौरन कहा—'मेरे यहां जो भी समान है, उठाकर ले जाइये और बेचकर फिलहाल भूखों के खाने का प्रबंध कीजिये।'

पिबन्ति नद्यः स्वयमेवनाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहा :
परोपकाराय सतां विभूतयः ॥

—नदियां अपना जल स्वयं नहीं पी डालतीं, वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खा डालते, बादल (अपने जल से उगायी) फसल स्वयं नहीं चर लेते; सज्जनों की विभूतियां परोपकार के लिए होती हैं।

अंग्रेजी के कवि अलेग्जैंडर पोप ने एक बार व्यंग्य-लेखक जोनाथन स्विफ्ट को बताया—'मैं हर साल लोगों को एक सौ पौंड देना चाहता हूं।'

'किसलिए ?' स्विफ्ट ने पूछा।

पोप बोले—'उनकी खुशी देखने के लिए। मैं चाहता हूं कि मरने तक अपनी सारी की सारी दौलत लोगों को दे जाऊं, ताकि मरते समय मुझे यह सोचकर लज्जित न होना पड़े कि मैं अपने नाम पैसा छोड़कर मर रहा हूं, जबकि लोगों को पैसे की जरूरत थी।'

अभिमान के साथ, प्रदर्शन के साथ

देना उदारता नहीं, महत्त्वाकांक्षा है।

—सेनेका

चित्रकार कोरोट को अपने दोस्तों व साथियों की मदद करके बड़ी खुशी होती थी। लेकिन वे इसका भी पूरा खयाल रखते थे कि उस मदद से उनके दोस्त अपने को छोटा न अनुभव करें।

एक बार उन्हें पता लगा कि प्रसिद्ध चित्रकार दाम्येर काफी समय से मकान का किराया नहीं दे पाये हैं और मकान-मालिक ने उन्हें वहां से निकाल देने की धमकी दी है। अगले ही दिन उन्होंने एक बढ़िया मकान किराये पर लिया और दाम्येर को लिखा कि आप वहां जाकर रहें। साथ ही लिखा—'यह मकान मैंने आपकी खातिर नहीं, बल्कि आपके उस मकान-मालिक को यह जताने के लिए लिया है कि आप जैसा श्रेष्ठ चित्रकार उसके मकान से कहीं बढ़िया घर में रह सकता है।'

यदि मैं खुले हाथ नहीं दे सकता, तो भी मैं पूरे हृदय से दूंगा; हाथों की कमी को मैं हृदय से पूरा करूंगा।

—वारविक

संगीतकार ब्राह्म्स का कोई प्रशंसक उनके नाम काफी बड़ी रकम वसीयत में छोड़ गया। जब उस आदमी का मित्र वह रकम ब्राह्म्स को देने गया, तो संगीतकार ने कहा—'एक अपरिचित व्यक्ति से इतना बड़ा उपहार पाकर मैं आनंद ही नहीं, गौरव भी अनुभव कर रहा हूं। मेरे लिए यह बहुत सुंदर अनुभूति है। सचमुच, मैं बहुत प्रसन्न हूं। किंतु इससे भी अधिक आनंद मैं यह रकम उन लोगों को देकर पाना चाहता हूं, जिन्हें इसकी मुझसे अधिक आवश्यकता है।'

उत्तम प्रकृति के लोग सर्वाधिक सुख तब अनुभव करते हैं, जब दूसरों को उस सुख में हिस्सेदार बना सकें।

—डंकन

* सुबीर द्वारा प्रस्तुत *

★

मेरी परिचित एक महिला ने चालीस वर्ष तक खुशीभरा वैवाहिक जीवन बिताया था। वे हर नवविवाहिता से कहतीं—'मैं आशा करती हूं कि शादी के बादतुम दोनों का कभी मतभेद नहीं होगा। लेकिन अगर कभी मतभेद हो ही जाये, तो बातचीत के दौरान 'हमेशा' शब्द का उपयोग कभी न करना।' कितनी सादी और बुद्धिमत्ता वाली बात थी यह ! उन मौकों के बारे में सोचिये, जब पति-पत्नी में किसी छोटी-सी बात पर झगड़ा शुरू हुआ और उसने इसीलिए भयानक रूप धारण कर लिया कि दोनों में से किसी ने 'हमेशा' शब्द का प्रयोग कर दिया। उदाहरणार्थ :

'तुम गुसलखाने से हमेशा गीले पांव लिये बैठक में आ जाते हो।'

'तुम हमेशा ही टूथपेस्ट का ढक्कन बंद करना भूल जाती हो।'

'जब कोई घर में मिलने आता है, तुम हमेशा उससे राजनैतिक बहस छेड़ बैठते हो।'

'तुम हमेशा ऐसे ही समय पार्टी से वापस लौटने की जल्दी मचाती हो जब पार्टी जोरों पर होती है।'

—जान स्टुथर

★

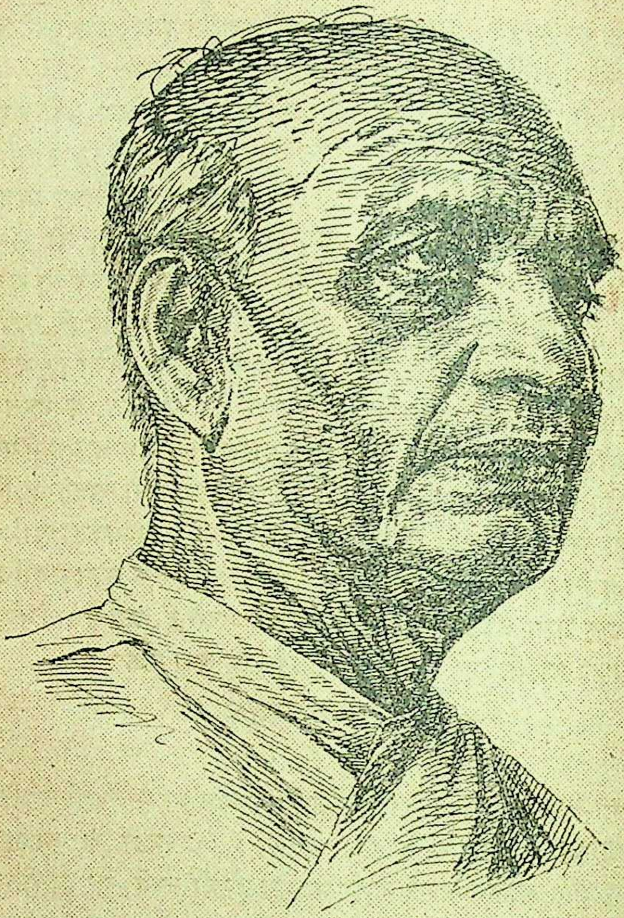

जन्म : ३१ अक्तूबर १८७५—मृत्यु : १५ दिसंबर १९५०

प्रणाम, हे कृती पुरुष !

देश के लिए तुम्हारी पहली पहचान यह थी कि तुम दबंग-धाकड़ किस्म के गुजराती बैरिस्टर हो, जिसने अफ्रीका से लौटे अजीब विचार व कार्य-पद्धति वाले कर्मवीर गांधी के मार्गदर्शन में खेडा जिले के किसानों की कर-माफी की लड़ाई लड़ी। फिर जब उसी गांधी ने असहयोग का शंखनाद किया, उस लड़ाई में तुम गांधी के एक 'चुनिंदा' चेले के रूप में उभरे।

परंतु देश में तुम्हारे नाम का डंका बजा बारडोली सत्याग्रह से, जिसमें तुम्हारे तेजस्वी नेतृत्व-गुण देश ने देखे। गांधी ने तुम्हें 'सरदार' कहा, जो तुम्हारा नाम ही बन गया। स्वातंत्र्य-संग्राम की हर मुहिम के साथ तुम्हारी साख-धाक बढ़ती गयी; कांग्रेस-संघटन पर तुम्हारी पकड़ दृढ़ होती गयी। फिर भी गुजरात के बाहर तुम प्रेम के बजाय भयभरी भक्ति के विषय रहे; 'विरोधियों को कुचलने वाले' और 'लौह पुरुष' की ख्याति रही तुम्हारी। हम बहुत देर से जान पाये कि कांग्रेस की शक्तियां आंतरिक विरोध-विग्रह में बंट-बिखर न जायें, इस चिंता ने तुम्हें कठोरता का मुखौटा ओढ़ाया था। असल में, बकौल सरोजिनी नायडू, तुम 'लौह मंजूषा में रखे रत्न' थे।

अपने कई अतिरथ साथियों की पंक्ति में तुम बौद्धिक चमक व भाषा-चमत्कार में कुछ फीके थे। तुम स्वयं हास्य में कहते थे—'माइ कल्चर इज़ एग्रिकल्चर।' तुम हमें किसान ही दिखते भी थे। यह तो बाद में विदेशी पत्रकारों से हमें पता चला कि तुम्हारी मुख-मुद्रा रोमन सम्राटों जैसी गरिमामय थी। फैशनेबल वादों से तुम्हें चिढ़ थी, यहां तक कि 'दक्षिणपंथी' कहलाना भी मंजूर था; क्योंकि तुम्हारी निष्ठा कर्म में थी, वाणी में नहीं।

देश-विभाजन अनिवार्य हो उठा; तुम पर और नेहरू पर आरोप लगाया गया कि सत्ता पाने को तुम बेसब्र हो गये थे। ढहते स्वास्थ्य के बीच तुमने टूटे देश को संभाला, आधे हजार देशी राज्यों के विलयन द्वारा देश को एक सूत्र में गूंथा। तुम्हारा यह ऐतिहासिक काम बिस्मार्क व कावूर के काम से भी बढ़कर था; क्योंकि तुमने बिना डंडा घुमाये और प्रजातंत्र के लिए यह एकीकरण किया था।

जीवन में तुमने बहुत विष पिया—अपने गुरु गांधी की प्राणरक्षा न कर पाने के लांछन तक को झेला—और अपनी प्रिय मातृभूमि के लिए अमृत छोड़ गये, ताकि वह पनपे-फूले। हे कर्ममय कृती पुरुष तुम्हें प्रणाम !

★

एक याद

राधाकृष्ण

दो अक्तूबर अठारह सौ सड़सठ को मानवता ने एक नयी खिड़की खोली और पोरबंदर में एक नया प्रकाश उतरा। उस समय स्वर्ग ने झांककर धरती की ओर देखा था और ऋग्वेद की ऋचाएं लोगों से बातचीत के लिए चली आयी थीं। तुम मुट्ठी बांधे किलक रहे थे–एक हाथ में सत्य, दूसरे में अहिंसा।

सूरज ने चांद से तुम्हारे बारे में पूछा था। ग्रह और नक्षत्रों ने लुक्झुक् मुस्कराकर तुम्हारी आरती उतारी। आशाओं के धूप और अरमानों के लोबान जले। पत्तों ने हिलकर और फूलों ने खिलकर तुम्हारा स्वागत किया। पहाड़ की दरारों में सदाबहार और बनफशा के फूल उल्लास से हंस पड़े। एक शांति थी, जिसमें लयबद्ध संगीत था। महासागर की लहरों पर प्रश्न साकार होने लगे और वायु ने शंखध्वनि की।

इतिहास तुम्हें देखकर आश्चर्य और अदब से पीछे हट गया। तुम स्वयं अपने चलने की राह बनाते गये और चलते गये। हेराक्लीज की दसवीं वीरता के स्तंभ के समान तुम सर्वोच्च खड़े हो गये। तुमने उपनिषदों का छाता लगाया और गौतम बुद्ध के तत्त्वज्ञान को प्रचारित किया। चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर तुम्हें पहचानते थे और शताब्दियों के शिखर पर बैठे हुए निर्निमेष तुम्हें देख रहे थे। नल और नील की भांति तुमने पुल बांधा धर्मनीति और राजनीति के बीच। तुम्हारी आवाज उसी तरह आयी थी, जिस तरह किसी दिन बादशाह सुलेमान के बनवाये हुए यहोवा के मंदिर के नीचे से खड़े होकर किसी ने पुकारा था और जिस तरह अरब में हिरा की गुफा से निकली हुई आवाज सुनकर मरुभूमि में जाता हुआ काफला ठिठक गया था और चौंककर चारों ओर देखने लगा

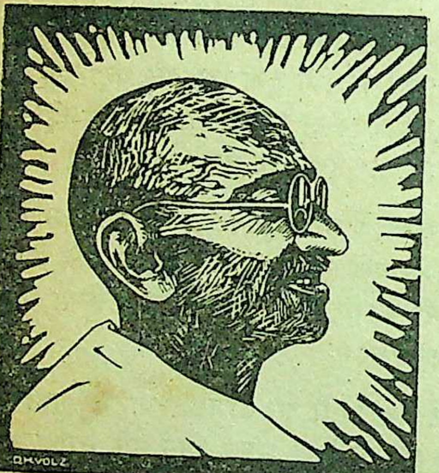

बापू : डी. एच. वोल्ज

था। सहस्राब्दियों के बाद हमने धर्मराज युधिष्ठिर को स्वर्ग के चमकीले हिरण्य-पथ से धरती की ओर उतरते हुए देखा। सुकरात ने फिर आकर पुकारा—ओ सिमेआस, ओ काबेज, प्लेटो और केटो, केवल सत्य का पक्ष लेना; सुकरात का पक्ष नहीं।

पुरानी मान्यताएं और पुरानी बेड़ियां तड़तड़ाकर जनक के धनुष की भांति टूट गयीं। हिंद महासागर की लहरें इतिहास की नूतन पंक्तियां लिखने लगीं। बूढ़े हिमालय ने अपना धवल मस्तक उठाकर मौन भाषा में कुछ कहा। टूटी हुई बांसुरी को उस मोहन ने कुशलतापूर्वक बजाया और एक अद्भुत गीत सुनाया। तुमने एक ऐसा सत्य दिया जो शब्दों से तो सत्य था ही, शब्दातीत भी वह सत्य ही था। नारायणीयोपनिषद् से कंठ में कंठ मिलाकर तुमने कहा—'सत्यं परं परं सत्यम्।' सत्य सर्वोत्कृष्ट है, जो सर्वोत्कृष्ट है वह सत्य है। मूसा ने अपनी लाठी पटकी और वह सांप बन गयी। हमारे हाथ में तुमने अहिंसा दे दी, वह धारदार तलवार हो गयी। उससे परे सत्य उज्ज्वल किरणें विकीर्ण करता प्रकाशित हो रहा था।

परिचित की भांति तुम चिरंतन मुस्कान बिखेरते हुए आये और अजनबी की तरह चले गये। एक भावना, जो इकट्ठी नहीं हो पायी। एक विचार, जिसका सिरजन अधूरा ही रह गया। एक कहानी, जिसे गोली से मारकर बीच में ही तोड़ दिया गया। एक गीत, जो गर्जन, कोलाहल, वाग्विलास और हाहाकार में खो गया। स्वर्ग और मर्त्य की चाभी देकर तुम कुहरे में जाने कहां लीन हो गये।

पिछली शताब्दी के इस पार जनजीवन की आत्माएं तुम्हें याद करती हुई उदास हैं। सड़कें आज पहेलियां बन गयीं हैं। राकेट अंतरिक्ष में जाते हैं और प्रतिध्वनि की तरह लौट आते हैं, मगर स्वर्ग का कोई भी संदेश नहीं ला पाते। जो लोग चंद्रमा पर गये थे, वे वहां से केवल कंकड़, पत्थर और धूल ही ला सके। कुहरे की चादर हटाकर कूटनीति मुस्कराती हुई झांकती है और विज्ञान की संहारक शक्तियों से इशारे में बातचीत करती है। कला, साहित्य, संगीत, इतिहास और भूगोल के ऊपर एक गहरा काला अंधकार आकर घिर गया है। उस अंधकार में तुम्हारे उज्ज्वल चरण-चिह्न तारागण की तरह चमक रहे हैं।

बापू, आज तुम्हारी बड़ी याद आती है। **—२१, राधाकृष्ण लेन, रांची-१**

★

मुझे विश्वास है, हम सभी भगवान के संदेश-वाहक बन सकते हैं, बशर्ते हम इंसान से डरना छोड़ दें और ईश्वरीय सत्य को खोजें। मुझे तो सचमुच विश्वास है कि मैं ईश्वरीय सत्य की खोज कर रहा हूं और इंसान से डरना पूरी तरह छोड़ चुका हूं।

—मो. क. गांधी

★

नमो अकिंचनाय

बनारसीदास चतुर्वेदी

अभिमानं सुरापानं, गौरवं घोररौरवम्।
प्रतिष्ठा शूकरीविष्टा त्रयं त्यक्त्वा सुखी भवेत् ।।

यह श्लोक मैंने भिक्षु आनंदानंद से साबरमती आश्रम में आज से चौवन वर्ष पहले सुना था। वे सस्तुं साहित्यवर्द्धक प्रकाशन-गृह के संस्थापक थे और उनसे मैंने अपने जीवन के विषय में कुछ बतलाने की प्रार्थना की थी। उन्होंने साफ इन्कार कर दिया और यह श्लोक सुना दिया।

हिंदी जगत् में इस उक्ति को अपने जीवन में चरितार्थ करने वाला यदि कोई है तो वे श्रद्धेय पं. झाबरमल्ल शर्मा ही हैं।

पूज्य शर्माजी से मेरा परिचय संभवत: सन १९२० में 'कलकत्ता समाचार' के आफिस में हुआ था; पर उसकी केवल धुंधली-सी याद रह गयी है। हां 'हिन्दू-संसार' के कार्यालय (दिल्ली) में जो विचार-विमर्श हुआ, उसका मुझे भली भांति स्मरण है। उस समय हम लोगों ने साहित्यसेवियों की कीर्तिरक्षा की एक योजना तैयार की थी। उसे अब पचास वर्ष से अधिक हो चुके हैं।

इन पचास वर्षों में मैंने शर्माजी को बहुत निकट से देखा है। साथ-साथ काम किया है और कई आयोजनों में उन्हें सहयोग देने तथा उनसे सहयोग पाने के अवसर भी मुझे मिले हैं। इन पचास वर्षों में मैंने उन्हें किसी की भी निंदा करते कभी नहीं सुना और न कभी उनमें अपने को आगे बढ़ाने या प्रकाश में लाने की प्रवृत्ति ही देखी। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए अपने को पीछे रखना उनका सहज स्वाभाविक गुण ही बन गया है।

दूसरों की कीर्तिरक्षा ही उनके जीवन का लक्ष्य रहा है और अपनी घोर से घोर विपत्तियों में भी वे उसे नहीं भूल सके। कोई चार-साढ़े चार वर्ष पहले उन पर वज्रपात हुआ था और पक्षाघात का आक्रमण भी। पर उन दिनों भी उन्हें अपने लक्ष्य का स्मरण रहा और चित्त के कुछ स्वस्थ होते ही वे स्वर्गीय गुलेरीजी, स्वर्गीय माधवप्रसाद मिश्र की कीर्तिरक्षा के कार्य में संलग्न हो गये। ऐसी नि:स्वार्थ साहित्यिक लगन के दृष्टांत हिंदी-जगत् में दुर्लभ ही हैं।

श्रद्धेय शर्माजी बहुतों के यश:शरीर की रक्षा करने में सफल हुए हैं। चाहे खेतड़ी-नरेश महाराज अजीतसिंहजी हों या स्वामी विवेकानंद, पंडित मोतीलाल नेहरू हों या कुंवर गणेशसिंह भदौरिया, गणेशशंकर विद्यार्थी हों या बालमुकुंद गुप्त—यही नहीं,

चाहे कोई साधारण से साधारण लेखक या कवि हो—शर्माजी उसे श्रद्धांजलि अर्पित करने में कभी प्रमाद नहीं करते।

बाबू बालमुकुंद गुप्त की निबंधावली तथा उनके जीवन-चरित्र के प्रकाशन के लिए उन्होंने जो भगीरथ प्रयत्न किया, वह हिंदी साहित्य के इतिहास में अमर रहेगा। उसके लिए उन्हें अनेक स्थानों की यात्रा करनी पड़ी। दो बार तो वे मेरे पास कुंडेश्वर (टीकमगढ़) पधारे। श्रद्धेय टंडनजी की स्वीकृति लेने लखनऊ गये और लगातार डेढ़ वर्ष कलकत्ते में रहकर उन्होंने इस श्राद्ध-कार्य को संपन्न किया।

उन्हीं की प्रेरणा से स्वर्गीय गुप्तजी के सुपुत्र श्री नवलकिशोरजी ने इस पवित्र कार्य में तीस-पैंतीस हजार रुपये खर्च कर दिये। श्रद्धेय टंडनजी के करकमलों से उन ग्रंथों का विमोचन हुआ था। कलकत्ते का वह समारोह हिंदी साहित्य संमेलन के किसी वार्षिक अधिवेशन से कम महत्त्व का न था। अनेक साहित्यिक महारथी उसमें पधारे थे।

हिंदी पत्रकारिता का इतिहास लिखने के लिए शर्माजी के संग्रहालय की तीर्थयात्रा अनिवार्य है। प्रत्येक पत्र, पुस्तक, समाचार-पत्र इत्यादि को संभालकर रखने में उनके बहुमूल्य समय का एक अच्छा अंश व्यय हो गया है। मुझे बिस्मिल की आत्मकथा के लिए 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक की आवश्यकता थी। उसे ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया था और वह अप्राप्य हो गयी थी। शर्माजी के पुस्तकालय में उसकी प्रति मिल गयी और उसी से टाइप करवाकर मैंने बिस्मिल की आत्मकथा की पांडुलिपि तैयार की थी।

अभी हाल ही में मुझे बंधुवर प्रफुल्लचंद्र ओझा 'मुक्त' से ज्ञात हुआ कि उनके पूज्य पिता पं. चंद्रशेखरजी शास्त्री के द्वारा संपादित 'संस्कृत-पत्रिका' के अंक सर्वथा अप्राप्य हो गये हैं। मैंने शर्माजी को लिखा तो उन्होंने तुरंत ही उत्तर दिया कि पत्रिका के कई अंक ही नहीं, शास्त्रीजी की कुछ चिट्ठियां भी उनके संग्रहालय में सुरक्षित हैं। स्व. चतुर्वेदी द्वारिकाप्रसादजी के कई पत्र उनके यहां मौजूद हैं और उन्होंने मेरी प्रार्थना पर चतुर्वेदीजी के संस्मरण भी लिख भेजे। भाई श्रीनारायणजी (चतुर्वेदी) के यज्ञोपवीत का निमंत्रण-पत्र भी उनके यहां सुरक्षित है!

छोटे-छोटे लेखकों की कीर्तिरक्षा के लिए वे कितने चिंतित रहते हैं, इस बात का प्रमाण उनके फुटनोटों से लग सकता है। वे कहते हैं—'भविष्य के किसी शोधकर्ता को शायद इससे कुछ सहायता ही मिल जाये।'

कलकत्ते के हिंदी साहित्य संमेलन के अवसर पर जो सामूहिक चित्र लिया गया था, वह उनके पास सुरक्षित है। उसमें स्व. राजेंद्र बाबू की एक दुर्लभ छबि है। 'नर्मदा' के गणेशशंकर विद्यार्थी स्मृति-विशेषांक का मुख्य श्रेय उन्हीं को मिलना चाहिये। कानपुर की यात्रा करके वे सारी सामग्री ले आये और मेरे साथ दिल्ली में बारह दिन रहकर उसका विधिवत् संपादन भी कर दिया।

शर्माजी की एक नीति रही है—अपने द्वारा किये गये कार्यों के यश में दूसरों को भी साझीदार बना देना। जब मैंने उनसे कहा कि बाबू बालमुकुंद गुप्त के ग्रंथ में मेरा तो केवल एक लेख ही है, फिर आपने मेरा नाम सहकारी संपादक के तौर पर क्यों रख दिया? तब शर्माजी ने मुस्कराते हुए सिर्फ इतना ही कहा—'चतुर्वेदियों का सहयोग हमारे लिए कल्याणकारी ही होता है। स्व. द्वारिकाप्रसादजी चतुर्वेदी ने माधवप्रसाद मिश्र के लेख-संग्रह में मुझे भरपूर सहयोग दिया था।'

यदि शर्माजी प्रयत्न न करते, तो स्वामी विवेकानंद के लिखे हुए वे महत्त्वपूर्ण पत्र, जो महाराज अजीतसिंह को भेजे गये थे, नष्ट हो गये होते। बहुत कम लोगों को इस बात का पता होगा कि पं. मोतीलालजी नेहरू की बाल्यावस्था के कुछ वर्ष अपने बड़े भाई नंदलाल नेहरू के साथ खेतड़ी में बीते थे, जो खेतड़ी-नरेश के दीवान थे। पंडितजी के पत्रों को भी शर्माजी ने सुरक्षित कर दिया और उनकी फोटोस्टैट कापी पंडित जवाहरलाल नेहरू को अर्पित कर दी।

विवेकानंदजी के पत्रों का उपयोग एक ग्रंथ में हो गया। इन दुर्लभ पत्रों को पढ़ने वालों को इस बात का पता शायद ही हो कि हम इनके लिए किसके ऋणी हैं।

हिंदी पत्रकारिता के विकास एवं संवर्धन में श्रद्धेय शर्माजी का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। 'कलकत्ता समाचार' (कलकत्ता) और 'हिन्दू संसार' (दिल्ली) के द्वारा उन्होंने जो सेवाएं कीं उनका वर्णन करने के लिए तो एक स्वतंत्र लेख ही अपेक्षित है। इन दोनों पत्रों के द्वारा उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण आंदोलन चलाये थे और अपने समय में ये दोनों पत्र अपना विशेष महत्त्व रखते थे।

एक बार मैंने शर्माजी से कहा—'हम लोग मिलकर एक "श्राद्ध-अभिनंदन कंपनी" क्यों न बना लें?' उन्हें यह मजाक पसंद आया और मैं पत्रों में अपनी इस कंपनी का उल्लेख करने लगा। जब नवीनजी को इसका पता लगा, तो उन्होंने कहा—'इसमें "मुंडन" शब्द और जोड़ दो, क्योंकि बिना कुछ धनाढ्यों को मूंड़े तुम्हारी यह कंपनी फेल हो जायेगी!' शर्माजी ही श्राद्ध-अभिनंदन-मुंडन कंपनी अनलिमिटेड के डाइरेक्टर हैं।

शर्माजी में हास्यरस की प्रवृत्ति अच्छी मात्रा में है। मुझे फालतू कामों में व्यस्त देखकर उन्होंने एक बार कहा था—'आप पर तो डिंगल की वह कविता चरितार्थ होती है:

आया नै नांटी नहीं, तड़कों विण्यों न सांझ।
जण-जण को मन राखतां वेश्या रह गयी बांझ।।'

मुझे रुई का ओवरकोट पहने देखकर शर्माजी बोले—'आप तो बिलकुल दलाई लामा जैसे लगते हो। आपकी इस धज का एक चित्र हमें चाहिये।'

आचार्य पद्मसिंहजी जहां कहीं जाते थे, वहां के साहित्यसेवियों के घर जाकर उनसे अवश्य मिलते थे। शर्माजी में भी यही गुण है। स्वर्गीय मोहनसिंह सेंगर ने हमें बतलाया था कि शर्माजी आकाशवाणी कार्यालय में

जीना चढ़कर उनसे मिलने आये थे। बंधुवर राजेश्वर बाबू भी शर्माजी से मिलने की याद कर लेते हैं। कानपुर की यात्रा में वे ही मुझे श्री लक्ष्मीधरजी वाजपेयी से मिलाने ले गये थे, जबकि श्री वाजपेयीजी मेरे लिए गुरु-तुल्य थे और मुझे इस बात का ध्यान भी नहीं रहा था। सुप्रसिद्ध खयालगो स्वामी नारायणानंदजी तथा श्री नारायणप्रसादजी अरोड़ा से भी वे मिले। हम लोगों के स्वागतार्थ एक खयालगो संमेलन भी किया गया था। गणेशजी की कीर्तिरक्षा के लिए वे दो-तीन बार कानपुर गये और स्व. हरिशंकर विद्यार्थी के यहां ठहरे। शर्माजी बड़े गुणग्राहक हैं—चाहे सुप्रसिद्ध शिक्षा-विशेषज्ञ शुकदेव पांडे हों, या पुरातत्त्ववेत्ता मुनि जिनविजयजी, वे सभी से विनम्रतापूर्वक मिलते हैं।

यद्यपि बंधुवर श्रीराम शर्मा का ग्राम किरथरा हमारे यहां से ६-७ मील की दूरी पर ही था, पर मैं वहां कभी नहीं गया था। शर्माजी ही मुझे वहां ले गये। वहां के ग्रामीणों ने जो नाटक हमें दिखलाया था, उसकी याद वे अब भी कर लेते हैं।

शर्माजी में कोई व्यसन नहीं है। चाय, तंबाखू, सिगरेट इत्यादि से वे कोसों दूर रहते हैं। स्नान के बाद डेढ़-दो घंटे भजन-पूजन के लिए उन्हें मिल जाने चाहिये और भोजन के समय दही भी। कलेवा के विषय में वे कहते हैं—'जो आदमी कलेवा करता है, वह भूख के खिलाफ लाठी लिये घूमता है।'

शर्माजी के पूज्य पिताश्री वैद्य थे और वे ९५ वर्ष तक जीवित रहे थे। हिंदी-जगत् में ८९ वर्षीय पं. सुंदरलालजी ही उनके अग्रज हैं और मुझे दोनों का ही कृपापात्र होने का सौभाग्य प्राप्त है। हिंदी के उद्यान में श्रद्धेय पं. झाबरमल्लजी शर्मा का व्यक्तित्व शीतल स्निग्ध छाया वाले वटवृक्ष की तरह सुशोभित है। **['लोकशिक्षक' से साभार]**

★

पोलैंड के जनरल कोस्क्यूस्को जितने बड़े देशभक्त थे, दीन-दुखियों के सहायक के रूप में भी उतने ही मशहूर थे। एक बार उन्हें कोई बहुत जरूरी संदेश कहीं भेजना था। तेज रफ्तार वाला कोई बढ़िया घोड़ा तत्काल नहीं मिला, तो उन्होंने संदेशवाहक को अपना निजी घोड़ा दे दिया।

संदेशवाहक ने लौटकर बताया—'मैंने संदेश ठीक समय पर पहुंचा दिया था। लेकिन मुझे अगर कोई दूसरा घोड़ा दिया जाता, तो संदेश और भी जल्दी पहुंच सकता था। तब लौटने में भी इतनी देर न लगती।'

उन्होंने पूछा—'क्यों, मेरे घोड़े में क्या नुक्स है? वह तो सबसे तेज रफ्तार वाला घोड़ा है।'

'सो तो है। लेकिन उसे गरीबों के घरों के सामने रुकने की आदत है। और रास्ते में कोई भिखारी दिखाई दे जाये, तो वह उसके पास रुके बिना नहीं रहता।' संदेशवाहक ने सफाई दी।

—बलवीर

★

'मैं चैंपियन हूं–मेरा टाइटल छीनने की कोशिश करके देखो।' ढीठ जिमी कानर्स १९७५ के विंबलडन फाइनल से पहले कह रहा था, मुक्केबाज मुहम्मद अली की टोन में। वह ऐसा कहने का हकदार भी था। पहले चक्र से सेमी फाइनल तक उसने एक सेट नहीं गंवाया था। लगता था १९३८ के डान बज के बाद केवल कानर्स में ही बिना कोई सेट हारे विंबलडन जीतने की क्षमता है।

एकाएक आर्थर एश ने कानर्स की चुनौती स्वीकारते हुए उससे विंबलडन टाइटल छीन लिया और इसके साथ पूरा हो गया एश का सपना–विंबलडन जीतने वाला पहला काला एश ही होगा।

५ जुलाई को वहशी ताकत वाले कानर्स को एश ने अपनी उत्कृष्ट सर्विसों और वॉलियों से ६-१, ६-१, ५-७, ६-४ से परास्त किया। अभी तक कानर्स अपने प्रतिद्वंद्वियों को तगड़ी सर्विस वापसी से हराता आया था। यही उसने एश के विरुद्ध करने का प्रयास किया। पर कहीं कुछ गड़बड़ हो गयी। एश की सर्विस सटीक पड़ रही थी; कानर्स का मनोबल टूटता जा रहा था। शाम के सवा चार बजे पंद्रह हजार दर्शक चिल्ला रहे थे। २२ वर्षीय जिमी कानर्स के रैकेट-कम्-सोटे का प्रभाव ३२ वर्षीय आर्थर एश ने ख़त्म कर दिया था।

छरहरे चुस्त एश और गठीले-गुर्राते-भभकते कानर्स का मुकाबला दो घंटे पांच मिनिटों तक चला। किंतु हारने के बाद भी जिमी का कहना था कि अगले साल भी मैं इसी शान से विंबलडन टेनिस में कदम रखूंगा।

एश की यह अप्रत्याशित विजय दिमागी जीत थी। अपने ताक़तवर दुश्मन के खेल को देखकर उसने अपने खेल को 'रिएडजस्ट' किया। कई सप्ताहों तक वह कानर्स के खेल की खामियां खोजता रहा और कमजोर नस पकड़ में आते ही उसने जिमी को धर पटका।

विजय के बाद जब पत्रकारों ने विनम्र और शांत एश से पूछा कि क्या विंबलडन जीतना आपकी नजर में सबसे बड़ा गौरव है, उसने तपाक से उत्तर दिया–'नहीं।

यह दूसरे नंबर पर है। १९६७ में अमरीका के लिए डेविस कप जीतना ही असली गौरव था। अपने देश के लिए जीतना सबसे बड़ा गौरव है। विंबलडन के साथ ही दूसरे नंबर पर मैं फारेस्ट हिल चैंपियनशिप जीतना मानता हूं। क्योंकि वह मेरी राष्ट्रीय चैंपियनशिप है।'

रिचमंड, वर्जीनिया। एक विधुर नीग्रो पुलिस-सिपाही अपने परिवार का लालन-पोषण कर रहा है। बिना मां के बच्चे खुद ही दुनियादारी सीख रहे हैं। उसका दस वर्षीय बेटा रंगभेद की कटुता के बावजूद जनसामान्य के लिए बने कोर्टों पर टेनिस की शिक्षा ले रहा है।

करीबन बीस साल बाद यह नीग्रो लड़का विंबलडन के ९८ वर्षीय इतिहास में पहली बार विंबलडन टाइटल जीतकर कालों के घर ले जाता है। एश की प्रारंभिक अड़चनों का अंदाजा लगाना काफी मुश्किल है। टेनिस मुख्यत: गोरों और अभिजात-वर्ग का खेल रहा है। उनके सामने मुहम्मद अली या पेले सरीखे उदाहरण नहीं थे।

दरअसल यह एश का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि कई सालों से वह कोई भी बड़ा टूर्नामेंट नहीं जीत पाया था। पर उसे विश्व के प्रथम दस टेनिस खिलाड़ियों में गिना जाता रहा है।

अत: इस साल 'वर्ल्ड चैंपियनशिप आ टेनिस' के फाइनल में जोर्न बोर्ग को हराने पर उसमें जीत का आत्मविश्वास आ गया। बोर्ग को हराने के बाद उसने कहा–'अब मेरी तमन्ना विंबलडन जीतने की है। यह विश्व के सर्वाधिक सभ्य शहर यानी लंदन में खेला जाने वाला विश्व का सर्वश्रेष्ठ टूर्नामेंट है।'

एश ने यह भी फैसला किया कि वह फ्रांसीसी चैंपियनशिप में भाग न लेकर घास के कोर्ट वाली टेनिस प्रतियोगिताओं में भाग लेगा; क्योंकि क्ले कोर्ट पर वह कभी नहीं जम सका है। उसका यह निर्णय निर्विवाद रूप से सही था। पेरिस-रोम के हार्डकोर्ट टेनिस टूर्नामेंटों में ग्वेलेर्मो विलास, मेनुअल ओरेंतस, इली नास्तासे, जान कोदेश और बोर्ग का बोलबाला रहता है। धीमे कोर्ट की प्रतियोगिताओं में अमरीकी और आस्ट्रेलियाई टेनिस जम नहीं पाती।

दरअसल एश ने ये प्रतियोगिताएं अन्य कारणों से भी छोड़ी थीं। वह भयंकर रूप से 'मूडी' खिलाड़ी है। जब तक उसके जीवन और व्यक्तिगत संबंधों आदि सभी पक्षों में तनाव गायब न हो, वह जीत नहीं सकता। इसलिए मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ऐन विंबलडन के मौके पर हारना उसे रास नहीं आता।

*** उदयन शर्मा ***

आर्थर एश

अपने मूडी स्वभाव के बारे में बताते हुए एश १९७४ के विंबलडन की याद करता है। अमरीका के रोस्को टैनर से हारने से कुछ दिनों पहले ही उसका अपनी मंगेतर कैथी बेन से अलगाव हुआ था; हार के बाद एश ने दु:खी मुद्रा में पत्रकारों से कहा था–'मुझे अगले साल फिर आना होगा और सबकुछ दुबारा शुरू करना होगा।'

विंबलडन जीतने के लिए एश कुछ शर्तों का पूरा होना जरूरी मानता है–'मैं अभी भी सोचता हूं कि शारीरिक "फिटनेस" विंबलडन जीतने की असली शर्त है। इसके लिए सिर्फ शारीरिक दुरुस्ती ही नहीं चाहिये; आपको मानसिक रूप से भी दृढ़ होना है और वह आप तब तक नहीं हो सकते, जब तक आप शत प्रतिशत दुरुस्त न हों।'

शायद इन्हीं शर्तों पर कानर्स खरा नहीं उतर सका। मानसिक तनाव उसी पर लदे थे। विंबलडन-विजेता का खिताब बचाने की जिम्मेदारी उसी की थी। हृदय से उसे एश से घृणा थी।

पिछले पांच मुकाबलों में उसने बिना किसी संघर्ष के सभी को ठोंक लिया था। उसके खेल से टेनिस खेलने वाली मशीन का-सा आभास होता था। १४० मील प्रतिघंटा की रफ्तार से सर्विस करने वाले टैनर ने भी सेमी फाइनल में उसके सामने घुटने टेक दिये। ये आसान विजयें ही महाबली कानर्स को ले डूबीं।

कानर्स पर एश की विजय को समझने के लिए एश का व्यक्तित्व काफी सहायक होगा। पेशेवर टेनिस-खिलाड़ियों में एश टेनिसबाज कम, बुद्धिजीवी अधिक गिना जाता है। विंबलडन से पहले ब्रिटिश प्रकाशक स्टेनले पाल ने एक किताब छापी थी–'ए पोर्ट्रेट इन मोशन : द आर्थर एश डायरी।'

किताब में जून १९७३ से जुलाई १९७४ तक की घटनाएं वर्णित हैं। ये एश के खराब दिन थे। इसमें उसने अपने साथी खिलाड़ियों के बारे में मजेदार बातें लिखी हैं। केन रोजवाल के बारे में एश का कहना है कि रोजवाल के पास आज भी वे तमाम डालर हैं, जो उसने कमाये हैं। वह ऐसे कपड़े पहनता है, जैसे कोई किसान शहर में चल आया हो।

सबसे महत्त्वपूर्ण टिप्पणी जिमी कानर्स पर है–'इस लड़के ने विजेता के सभी लक्षण विकसित कर लिये हैं ...... हर चीज का फैसला कानर्स को ध्यान में रखकर किया गया है। वह अपने देश के लिए डेविस कप में नहीं खेलता।'

यह बात काफी महत्त्वपूर्ण है कि जहां कानर्स डेविस कप को कोई अहमियत नहीं देता, वहीं एश विंबलडन जीतने की मूल महत्त्वाकांक्षा के बावजूद अपने देश के लिए खेलना अपना सबसे पहला कर्तव्य और सबसे बड़ा गौरव मानता है। कानर्स काफी झगड़ालू और चिड़चिड़ा है, हर वक्त लाइन्समेनों या दर्शकों पर चिल्लाता रहता है। 'किलर इंस्टिंक्ट' हर वक्त उस पर हावी रहती है। आर्थर एश इसके बिलकुल विपरीत है। इसका कारण वह इसी पुस्तक में

बताता है—अपना नीग्रो होना। बचपन में उसने अपमान-घृणा का सामना किया था, इसीलिए उसमें अपार सहनशीलता है।

विंबलडन में जिमी को हराने के बाद एसोसिएशन आफ टेनिस प्रोफेशनल्स के अध्यक्ष एश ने कहा—'यह विजय दोस्तों की खातिर थी, जिन्होंने मेरा साथ दिया है। डोनाल्ड डेल, जैक क्रैमर, बाब ब्रिनर और ए. टी. पी. के पूरे बोर्ड के लिए!'

डोनाल्ड डेल १९६८-६९ में अमरीकी डेविस कप दल का कप्तान था और तभी से ऐश का यार है। वाशिंग्टन में वकालत करता है और एश के व्यावसायिक हितों का खयाल रखता है। वह ए. टी. पी. का कानूनी सलाहकार भी है। जैक क्रैमर ए. टी. पी. का चीफ एग्जिक्युटिव है। ये दोनों ४.१ करोड़ डालर के एक मुकद्दमे में एश के साथी प्रतिवादी हैं। यह दावा पिछले साल कानर्स ने एश पर किया था।

इन तीनों पर कानर्स ने एक और मुकद्दमा चला रखा है। एश ने कानर्स के बारे में एक पत्र विभिन्न अमरीकी टेनिस-खिलाड़ियों को लिखा था। इससे क्रुद्ध होकर कानर्स ने ५० लाख डालर का मानहानि का दावा एश पर ठोंक दिया।

विंबलडन फाइनल से पहले दोनों ने कहा था कि कानूनी उखाड़-पछाड़ का प्रभाव मैच पर नहीं पड़ेगा। किंतु मुकाबले के बाद जाहिर हो गया कि यह दो व्यक्तियों की टकराहट ज्यादा थी, टेनिस का मुकाबला कम। मुकाबले के बाद दोनों परंपरा के अनुसार कोर्ट से साथ बाहर नहीं आये।

मैच के बाद कानर्स ने सिर्फ यही कहा—'नो बॉडी इज परफेक्ट, आइ जस्ट डिन्ट हैव इट इन द फाइनल।' जिमी कानर्स इससे पहले एश के खिलाफ तीन फाइनलों में खेला था और तीनों में एश हारा था। १९७३ में बोस्टन की यू. एस. ओपन चैंपियनशिप में; १९७३ और १९७४ में दक्षिण अफ्रीका ओपन्स में।

विंबलडन १९७५ से पहले एश दुनिया के चार बड़े टूर्नामेंटों में से दो जीत चुका था—१९६८ का यू. एस. ओपन्स और १९७० में आस्ट्रेलियन ओपन।

दरअसल विंबलडन शुरू भी नहीं हुआ था और एश ने फाइनल में कानर्स का मुकाबला करना तय कर लिया था। एक टेलिविजन इंटरव्यू में उसने कहा भी था कि इस बार मैं ही जीतूंगा।

कानर्स को हराने के लिए एश शतरंज की बिसात बैठा रहा था। उसने कानर्स-रॉल रेमिरेज मुकाबले का बारीकी से अध्ययन किया। टैनर-कानर्स विजय के बाद उसने अपनी विजय-यात्रा का मार्ग तय कर लिया था—'टैनर के खेल को देखकर मैं समझा कि जिमी के साथ किस तरह से नहीं खेला जाये। मैं जान गया था कि अपने खेल में मुझे नियंत्रित रहना है।' कानर्स की हार का कारण एश ने उसकी लापरवाही को बताया है—'उसने विंबलडन की तैयारी उस तरह नहीं की, जैसी लास वेगास में उसने रॉड लेवर और न्यूकोंब के खिलाफ की थी।

मैच से पहले ही एश ने तय कर लिया था कि कानर्स को नेट पर नहीं आने देना है, वरना ताकतवर टेनिस का धनी कानर्स खेल पर हावी हो जायेगा। इसलिए एश का पूरा प्रयास उसे बेसलाइन पर अटकाये रखने का था। एश नेट पर आकर खेलने का खतरा मोल ले रहा था और कानर्स असहाय होता जा रहा था। एश के पासिंग शॉटों और सर्विस-वापसी ने कानर्स को चकित कर दिया। एश के खूबसूरत 'लॉब' उसके आत्मविश्वास को तोड़ रहे थे। आज कानर्स के खेल में वह आतिशी जान नहीं थी, जो उसके खेल में हमेशा रहती है। खराब वॉलियों और गड़बड़ाये हुए ग्राउंड-स्ट्रोकों की बदौलत कानर्स की मैच पर पकड़ ढीली पड़ती गयी और फोरहैंड पर एश की वॉली शानदार और तेज। कानर्स एश की शतरंजी चाल में फंस चुका था।

और पहली बार एक नीग्रो विंबलडन चैंपियन बन रहा था। आर्थर एश ने बारह साल पहले विंबलडन में कदम रखा था और अमरीकी चक मेकेन्ली से पहले ही चक्र में हार गया था। चक ही उस साल विंबलडन चैंपियन बना। १९६८-१९६९ में सेमी फाइनल में वह रॉड लेवर से हार गया था।

एक खिलाड़ी के रूप में आर्थर एश टेनिस का सर्वाधिक सभ्य खिलाड़ी है। यदि वह टेनिस-खिलाड़ी न होता, तो आज किसी देश में अमरीकी राजदूत होता।

पत्रकारों के साथ एश का संबंध काफी मधुर है। पत्रकारों को वह जब भी इंटरव्यू देता है, पोचड़ अंडे और काफी का नाश्ता हाजिर रहता है। पर 'आपका जन्म कहां हुआ था?' सरीखे प्रश्न उसे भड़का देते हैं।

पेशेवर खिलाड़ी होते हुए भी खेल के प्रति एश का रवैया मामूली और अमेच्योर सरीखा है। टेनिस उसके लिए एक कला है, बुद्धि का खेल है। दूसरे पेशेवर खिलाड़ियों की भांति टके गिनने में भी उसका ज्यादा विश्वास नहीं है।

खाली वक्त में वह पुस्तकें पढ़ना पसंद करता है या संगीत सुनना। कभी-कभार जुआ खेलने में उसे आनंद आता है। सिनेमा देखना और सोना भी उसके शौकों में से हैं। लंदन को वह सर्वाधिक शांत, सभ्य, उदार और दोस्ताना शहर मानता है।

दलित-पीड़ित वर्गों के साथ एश की विशेष सहानुभूति रही है; क्योंकि उनके कष्टों को उसने स्वयं भोगा है। अफ्रीका में स्थानीय कबीलों की उन्नति के लिए एश अक्सर अफ्रीकी देशों का दौरा करता है। १९७० में दक्षिण अफ्रीका ने उसके प्रवेश पर रोक लगा दी थी। बाद में यह प्रतिबंध हटा दिया गया। दक्षिण अफ्रीका के बारे में एश काफी आशावान है—'मेरे जीवन काल में वहां कालों की सरकार बनेगी।'

टेनिस के बाद क्या करना है? बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न आर्थर एश भविष्य के बारे में अधिक सोचने को तैयार नहीं हैं। क्योंकि अभी राजनैतिक और व्यावसायिक क्षेत्र में उसकी घुसपैठ होना बाकी है।

—डी-१६, निजामुद्दीन पूर्व, नयी दिल्ली-१३

★

वाक्यदीप

दुनिया में मैं घुमड़ते-घिरते अंधेरे में प्रकाश की राह टटोल रहा हूं। अक्सर मैं गलती कर बैठता हूं, गलत हिसाब लगा बैठता हूं......मेरा भरोसा केवल ईश्वर पर है। और मैं मनुष्य पर भरोसा करता हूं, क्योंकि मैं ईश्वर पर भरोसा करता हूं।

ईश्वर का वर्णन हम लाखों चीजों के रूप में कर सकते हैं, मगर अपने लिए मैंने यह सूत्र अपनाया है—सत्य ईश्वर है।

मैं तुच्छ-नीच आदमी हो सकता हूं, मगर जब सत्य मेरे जरिये बोलता है, मैं अजेय होता हूं।

जब मैं किसी को गलती करते देखता हूं तो अपने से कहता हूं कि मैं भी ऐसी गलती कर चुका हूं; जब मैं किसी विषयासक्त मनुष्य को देखता हूं तो अपने से कहता हूं कि मैं भी कभी ऐसा ही था। इस तरह मैं दुनिया में हर एक के साथ रिश्ता अनुभव करता हूं और अनुभव करता हूं कि हममें से छोटे से छोटा जब तक सुखी न हो, मैं सुखी नहीं हो सकता।

मैं आशावादी ही हूं, इस कारण नहीं कि मैं इसका कोई प्रमाण पेश कर सकता हूं कि जो सही है वह पनपेगा-फूलेगा, बल्कि अपनी इस अटल आस्था के कारण कि जो सही है उसे अंततः पनपना-फूलना ही चाहिये।...... हमें स्फूर्ति केवल अपनी इस आस्था से मिल सकती है कि जो सही है उसकी अंततः विजय होनी ही चाहिये।

मैं सौंदर्य को सत्य में और सत्य के द्वारा देखता व पाता हूं। सारा सत्य—केवल सच्चे विचार ही नहीं, बल्कि सच्चे चेहरे, सच्चे चित्र और गीत—अत्यंत सुंदर होता है। लोग अक्सर सत्य में सौंदर्य देख नहीं पाते, सामान्य मनुष्य उससे भाग खड़ा होता है और उसमें निहित सौंदर्य के प्रति अंधा हो जाता है। जब कभी मनुष्य सत्य में सौंदर्य देखने लगेगा, सच्ची कला का जन्म होगा।

धर्मग्रंथ तर्क और सत्य से ऊपर नहीं हो सकते। वे तो तर्क को परिशुद्ध करने और सत्य को उजागर करने की खातिर हैं। —महात्मा गांधी

किस्सा एक त्यागपत्र का

जवाहरलाल नेहरू की ग्यारहवीं पुण्यतिथि के प्रसंग में श्री के. पी. एस. मेनन ने एक घटना सुनायी, जिसके बारे में पिछले तेईस वर्षों से वे चुप्पी साधे हुए थे।

सन १९५२ में तत्कालीन ट्रावंकोर-कोचीन (आज के केरल) का कांग्रेसी मंत्रिमंडल पदच्युत हो गया। कुछ लोगों का विचार बना कि यदि श्री पानंपल्ली गोविंद मेनन (जो वर्षों बाद केंद्रीय मंत्री बने) स्थानीय राजनीति से हटाये जा सकें, तो मामला सुधरेगा। ऐसा सोचने वालों में वी. पी. मेनन भी थे, जो उन दिनों राज्य-मंत्रालय के सचिव थे। (श्री गोपाल स्वामी अय्यंगार उस मंत्रालय के मंत्री थे।) सुझाव पेश किया गया कि श्री गोविंद मेनन को हाइ कमिश्नर के रूप में मलय भेजा जाये। श्री नेहरू ने श्री के. पी. एस. मेनन को, जो उन दिनों विदेश-सचिव थे, इसकी पड़ताल करने को कहा।

मगर महीनों तक कुछ नहीं हुआ—शायद इसीलिए कि विदेश-मंत्रालय ने चुपचाप इस सुझाव का खात्मा कर दिया था। तब श्री गोविंद मेनन नेहरूजी से मिले और उनसे पूछा कि क्या उन्हें वह राजनयिक पद दिया जा रहा है, जिसके लिए वी. पी. मेनन ने उनकी सिफारिश की थी। नेहरूजी एकदम भड़क उठे, जिसके लिए वे मशहूर ही थे। गरजकर बोले—'सरकार वी. पी. मेनन नहीं चलाते हैं।' गोविंद मेनन ने जाकर सारी बात वी. पी. मेनन को बता दी और उन्होंने फौरन नेहरूजी को अपना त्यागपत्र भेज दिया।

अगली दुपहर को जब एक अंतरंग मित्र वी. पी. मेनन से कह रहे थे कि बड़ा मूर्खतापूर्ण पत्र आपने नेहरूजी को लिख डाला, श्री गोपाल स्वामी अय्यंगार उन्हें (वी. पी. मेनन को) त्यागपत्र वापस लेने के लिए मनाने को आये। मगर वी. पी. टस से मस न हुए। तभी तीनों ने आश्चर्य से देखा कि चक्रवर्ती राजगोपालाचारी भीतर चले आये और आते ही बोले—'तुम मलयालियों की यह कहावत बिलकुल सही है कि गुस्सा हरदम तुम लोगों की नाक की नोक पर बैठा रहता है।' मगर यह चीज भी वी. पी. को त्यागपत्र वापस लेने को राजी न कर सकी।

नाटक का अगला और अंतिम अंक दो दिन बाद खेला गया। वी. पी. मेनन को नेहरूजी ने अपने कमरे में बुलवा भेजा। 'बैठो वी. पी.!' नेहरूजी बोले—'कई मसले हैं, जिन पर मुझे तुम्हारी सलाह चाहिये।' दोनों के बीच कई एक फाइलों के बारे में चर्चा होती रही। फिर वी. पी. मेनन अपने दफ्तर चले आये। दोनों ने त्यागपत्र का जिक्र तक न तब किया, न फिर कभी।

('टाइम्स आफ इंडिया' से)

★

दूर कर सभी झंझावात
गीतपुत्र को लेकर साथ
डोलने लगे नभ में चमकीले पंख।

डूब गयीं कुहरीली
आकृतियां झील में
किरण-बोल नाच उठे
मन के कंदील में
जिन्होंने ये स्वप्न सब डंसे
सांसों के भीतर जो बसे
टूट गये कुंठा के वे ही विष-डंक।

केसरिया बांहों में
अस्ताचल घेरकर
पिघल गये इंद्रधनुष
को फिर से टेरकर
मौसम ने चितवन के द्वार
टांग दिये नारंगी हार
प्राणों में गूंज उठे भावों के शंख।

• उद्भ्रांत •

गीत के दिन

आ गये
ये गीत के दिन आ गये।

हिल रही हैं पत्तियां मन की
एक कविता कहें जीवन की
तम गया है बीत
उजली प्रीति के दिन आ गये
ये गीत के दिन आ गये।

धड़कनों के राग बोले हैं
सिंधु में फिर प्राण डोले हैं
झनझनाते
सृष्टि के संगीत के दिन आ गये।
ये गीत के दिन आ गये।

—११७/४८३, पांडुनगर, कानपुर-५

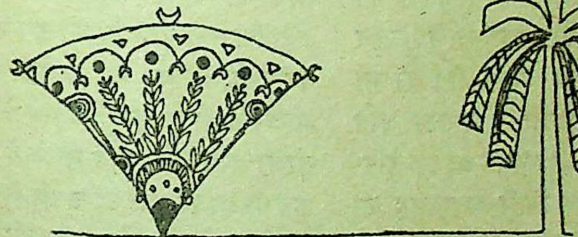

सुनो भैया, कन्हैया!

डा. कुसुम

'कन्हैया, वह आया नहीं भैया। वह आया नहीं। वह घर भूल गया मालूम होता है।' पिता बहुत व्यग्रता से अपने बेटे से कह रहे थे। बेटा उनकी बात का संदर्भ नहीं समझ पा रहा था, पूछा—'कौन नहीं आया, पिताजी?' 'वही कन्हैया, वह घसियारा रजाई लेने नहीं आया,' पिता लंबी सांस भरकर कहते चले गये—'बेचारा घर भूल गया होगा।'

कन्हैया के पिता उत्तर प्रदेश में सहारनपुर के पास देवबंद नामक कस्बे में पूजापाठ कराने वाले पंडित थे। कट्टर सनातनी थे। उनकी दोनों गायों के लिए जो घसियारा घास लाता था, वह जाति से हरिजन (चमार) था। पंडितजी को चाय का शौक था और वे शाम को चाय तभी बनवाते थे, जब घसियारा घास की गठरी लेकर आता था। वह चीनी के प्यालों की प्रचुरता का युग न था, मुरादाबादी कलई वाले पीतल के गिलासों में चाय पी जाती थी। यों भी पंडितजी के घर में चीनी के बरतन आते भी कैसे! जरूर यह हो सकता था कि हरिजन घसियारे के लिए मिट्टी के कुल्हड़ की व्यवस्था रखी जाये। मगर ऐसा नहीं होता था। सनातनी पंडितजी अपने हाथ से पीतल के गिलास में चाय लाकर घसियारे को देते और जब वह पी चुकता तो उसका जूठा गिलास ले जाकर घर के दूसरे जूठे बरतनों में रख देते, जिसे कन्हैया की मां सहज भाव से मांज लेती थीं।

घसियारा एक दिन बीमार पड़ गया और पंडितजी घासमंडी से एक दूसरे घसियारे से घास की गठरी उसके सिर पर रखवा लाये। उसे भी चाय पिलायी और उसके दुख-दर्द की बातें सुनते रहे। नये घसियारे ने देखा कि ये उदार पुरुष हैं, तो उसने नम्रता और संकोच के साथ कहा कि पंडितजी मुझे एक रजाई दे दीजिये। गरमी के दिन थे। पंडितजी ने कहा कि भैया, अभी रजाई का क्या करोगे, जाड़ों में आना, तब कुछ इंतजाम कर देंगे। घसियारे ने उदास मन से कहा कि मेरी बूढ़ी मां को इन जाड़ों में रजाई न मिली, तो वह मर जायेगी। और उसकी आंखों से दो आंसू ढुलक गये! शायद उसने सोचा होगा कि जाड़े में आने की बात कहकर पंडितजी मुझे टाल रहे हैं।

दिन बीतने लगे। आम तौर पर दीवाली

पर लोग रजाई आदि संभालते हैं; मगर पंडितजी ने दशहरा बीतते ही घर में से एक पुरानी रजाई निकलवायी (नयी तो थी ही नहीं), उसका कपड़ा धुलवाया, उसकी रुई नये सिरे से धुनवायी और उसे भरवाकर उसमें धागे डलवाये। इस प्रकार उन्होंने दीवाली आने से पहले ही रजाई को सहेजकर अपनी बैठक में रख लिया।

दीवाली बीत गयी, पर घसियारा नहीं आया। पंडितजी बहुत बेचैन रहने लगे। रोज अपने बेटे से कहते—'कन्हैया, वह आया नहीं भैया।' कन्हैया हर बार हैरान होता और बाद में उस बात को भूल जाता। पंडितजी से जब न रहा गया, तो एक दिन वे डंडा उठाकर घासमंडी जा पहुंचे और उस घसियारे के बारे में पूछताछ करने लगे। छोटे-से स्थान की छोटी-सी घासमंडी थी, पता लग गया। उसके गांव के एक दूसरे घसियारे को एक दुअन्नी देकर वे बोले कि भैया, उसे हमारे घर ले आना।

घसियारा पंडितजी के घर आ गया। पंडितजी की शंका सही निकली, वह घर भूल गया था। पंडितजी ने उसे चाय पिलायी बच्चों के लिए मिठाई दी और बहुत प्रेम और आदरभाव से उसे रजाई देकर विदा किया। उस दिन शाम को जब कन्हैया संस्कृत पाठशाला से घर लौटा, तो पंडितजी उमगकर बोले—'सुनो भैया कन्हैया, आज हमारा वह काम हो गया।' कन्हैया भौंचक्का होकर पिताजी का मुंह देखने लगा और पंडितजी ने अपनी धुन में बात जारी रखी—'हम कहा नहीं करते थे, वह घर भूल गया होगा। हमने उसे खोज ही लिया और आज वह रजाई ले गया।' पंडितजी बहुत प्रसन्न थे।

वह कन्हैया अब बड़ा हो गया है। २९ मई १९७५ को उसने अपने जीवन के सत्तरवें वर्ष में पदार्पण किया है। हिंदी साहित्य और पत्रकारिता से परिचित शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उनके नाम से परिचित न हो। वे हैं—पं. कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'। एक दिन मैं उनसे पूछ बैठी थी कि बाबूजी, आपको गांधीजी के पास कौन-सा संस्कार ले गया, तब मुझे उन्होंने यह घटना सुनायी। (मैं उन्हें 'बाबूजी' कहती हूं।)

तो वे मुझे यह घटना सुनाकर बोले—'मुझे गांधीजी के पास यह संस्कार ले गया।

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

१९२६ की बात है। उस साल कुंभ पड़ा था और गांधीजी गुरुकुल कांगड़ी के रजत जयंती समारोह में भाग लेने हरिद्वार आये थे। मैं भी गया। सोचा, गांधीजी से मिलकर ही आऊंगा। तब बीस बरस का था। स्वयंसेवक और नेता उनके पास जाने ही न देते थे। बहुत निराशा हुई, मगर थोड़ी-सी देर के लिए। फिर मैंने जेब से एक कागज निकाला और उस पर लिखा कि बापूजी, बारह रुपये उधार लेकर मैं देवबंद से आपसे मिलने के लिए यहां आया हूं। आपके स्वयंसेवक मुझे मिलने नहीं दे रहे हैं। यदि आप मुझसे नहीं मिल सकते, तो मेरे बारह रुपये मुझे लौटा दें। और, वह कागज मुट्ठी में दबाकर मैं मंडप के द्वार पर डटकर खड़ा हो गया। ज्यों ही गांधीजी द्वार पर आये, मैंने वह कागज उनके हाथ में सौंप दिया। वे ठिठककर खड़े हो गये। उन्होंने वह कागज पढ़ा और हंस पड़े। बोले—कल सवेरे सात बजे आ जाना।'

फिर तो गांधीजी के साथ मुलाकात का सिलसिला चल निकला और बाबूजी गांधीजी के रंग में रंगते गये। मैं बचपन से ही बाबूजी और उनके लेखन के बारे में सुनती आयी थी। उनके बहुत-से निबंध पढ़ डाले थे और तीनों प्रकाशित पुस्तकें भी—'जिंदगी मुस्करायी', 'बाजे पायलिया के घुंघरू', 'महके आंगन चहके द्वार'। और अब तो चौथी पुस्तक 'जिंदगी लहलहायी' (प्रकाशनाधीन) की पांडुलिपि भी पढ़ डाली है और उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के संबंध में डा. कमला का शोध-प्रबंध भी देख चुकी हूं। इस सबसे मेरे मन में यह भाव जगा कि बाबूजी के लेखक के पीछे कोई चिंतक छिपा बैठा है, जो बहुत सौम्य है, मगर हठी और बागी भी।

सौम्यता तो उन्हें मिली अपने पिताश्री से और बगावत पूज्या मां से। मां ने आठ बच्चों को जन्म दिया था। सात मर गये थे और बचा था एक कन्हैया। वे बहुत क्रोधी हो गयी थीं, क्योंकि वे तो ईश्वर से ही नाराज थीं। वह क्रोध बाबूजी को भी विरासत में मिला, मगर उसे संयत किया पिता के उदाहरण ने। एक दिन उनके पिताजी मलमल का कुरता सिलवाकर लाये और उनकी मां से बोले कि लो इसे रख दो। मां ने झुंझलाकर उत्तर दिया कि अपने आप ही रख दो ना। पिताजी को पता न था कि कहां रखना है। पूछा—कहां रख दूं? मां और भी झुंझला गयीं। बोलीं—फेंक दो नीचे गली में। उन्होंने कुरता नीचे फेंक दिया और फिर तुरंत पत्नी के कहने पर उसे उठाकर भी ले आये। मन पर कोई तनाव नहीं आया। बाबूजी ने यह देखा और पिताजी से पूछा कि आपने कुरता नीचे क्यों फेंक दिया? उत्तर मिला कि इसमें क्या हुआ, सारा जनम तेरी मां के साथ बिताया है, उसका मन रख लिया; धुल जायेगा तो पहन लूंगा।

इससे पड़ा अक्रोध का संस्कार और भी पुष्ट हुआ एक दूसरी घटना से। पिताजी एक घर में रहते थे और उनके भाई-भतीजे दूसरे घर में। पिताजी गरीब थे और उनके भाई-

भतीजे मालदार थे। वे पिताजी का घर हथियाना चाहते थे। एक दिन पिताजी भोजन के लिए बैठे ही थे कि उनके भाई-भतीजे चढ़ आये और धमकी देने लगे कि यह मकान हमारे नाम कर दो, वरना हम तुम्हें मारेंगे। उस दिन घर में और कुछ नहीं था, सिर्फ खिचड़ी बनी थी। पिताजी शांत रहे और बोले कि वह तो सब देखा जायेगा; आओ, पहले बैठकर खिचड़ी तो खा लो। इस दृश्य ने बाबूजी को नम्रता का महा-पाठ सिखाया।

मगर विद्रोही वे बने रहे। पहला विद्रोह उन्होंने आठ वर्ष की अवस्था में किया था। उनके पिताजी के सबसे बड़े यजमान देवबंद के दल्लों वाले सेठ थे। पिताजी ने उन्हें आठ वर्ष की वय में ही इन सेठजी की आठ बहुओं का गुरु बना दिया। वे चाहते थे कि उनका कन्हैया पूजा-पाठ का पुश्तैनी काम करे। वे उन्हें सिखा-पढ़ाकर सेठजी के यहां ले गये। पूजन हुआ और उसके बाद बाबूजी ने उन आठों बहुओं में से हर एक के कान में मंत्र फूंका 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' और बस गुरुजी बन गये। जब वे सेठजी के घर से लौटे, तो उनके पीछे-पीछे एक ठेले पर कुछ रुपये, बिस्तर, अन्न, घी और वस्त्र लदकर आये। इस सबके कारण उनका मन घृणा से भर उठा। उन्हें लगा कि यह तो ईश्वर के नाम पर व्यवसाय है। खिन्नता चेहरे पर झलक आयी। पिताजी ने पूछा—'क्यों रे कन्हैया, कैसा हो रहा है तू?' बाबूजी ने बस इतना ही कहा कि आज जो हुआ सो तो हो गया, किंतु यदि आगे आप मुझे कहीं इस तरह ले जायेंगे तो मैं मंत्र सुनाने के बजाय कान में गाली दूंगा। उसी दिन धर्म-पुरोहित के कर्म से जीवन-भर के लिए उन्हें छुट्टी मिल गयी।

एक दिन शाम की चाय के समय मैं बाबूजी से पूछ बैठी—'आप चौराहे पर कब खड़े हुए?' वे मेरा अभिप्राय झट समझ गये। पहले तो खूब हंसे, फिर बोले—चौदह वर्ष की अवस्था में। उस समय वे खुरजा के नत्थीराम संस्कृत विद्यालय में मध्यमा के पहले खंड में पढ़ते थे। छात्रावास था नहीं, गौरीशंकर की धर्मशाला में रहते थे। एक रोज रात के समय दीये की रोशनी में पढ़ रहे थे कि अचानक बूंदा-बांदी शुरू हो गयी और धर्मशाला के बाहर के मैदान में कांग्रेस की जो सभा हो रही थी उससे उठकर लोग धर्मशाला में आ गये। जल्सा नये सिरे से शुरू हो गया। वहां पहले-पहल असहयोग की बात सुनी। मानवता के पाठ पिताश्री से सीखे थे; समाज-सुधार की बातें आर्यसमाज के जल्सों में सीखीं थीं; और अब नया चस्का लगा कांग्रेस के जल्सों का, जहां से छिटककर राष्ट्रीय चेतना के बीज उनकी मनोभूमि में पड़े।

उन दिनों प्रभुदत्त नाम का एक लड़का उसी पाठशाला में मध्यमा के अंतिम खंड में पढ़ता था। (ये ही झूसी वाले ब्रह्मचारी प्रभुदत्तजी के नाम से प्रसिद्ध हैं—सच्चे राष्ट्रवादी व आदर्श धर्मगुरु।) एक दिन बाबूजी

[शेष पृष्ठ ५८ पर]

दीपावली-विशेषांक

प्रकाश हमारी अनिवार्य आवश्यकता है, आनं हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है—अपना यह चिर-नूतन संदेश देने दीपावली नवंबर के आरंभ मे आ रही है।

प्रकाश और आनंद का उपासक नवनीत दीपावली के स्वागत में अपना नवंबर का अंक विशेषांक के रूप में प्रस्तुत करेगा, जिसकी तैयारी में वह इस समय पूरी तरह तन्मय है।

सामग्री के जुटाने-संवारने का काम अभी चल रहा है। कोशिश यह है कि लंबे लेखों व कहानियों से लेकर चार पंक्तियों के टेलपीस तक सब चीजें विशिष्ट और रसमय हों। जो तैयारी अब तक हो चुकी है, उसकी झांकी यहां प्रस्तुत है :

जीवन और संस्कार :

सार्वभौम वैदिक प्रार्थनाएं – डा. मंगलदेव शास्त्री; **और देव सब दास के** – श्रीमन्नारायण; **आनंद की असली उम्र** – फ्रेंच जीवन-रसिक गूडेकेट।

चिंतन :

सूर्य-अतिसूर्य – कुबेरनाथ राय का निबंध, **यांत्रिक संत्रास से मुक्ति का मसीहा** – 'गांधी के बाद का गांधी' कहलाने वाले आज के विशिष्ट चिंतक इवान इलिच के विचारों का परिचय नमिशरण मित्तल के शब्दों में, **पचास वर्ष बाद की दुनिया** – रूसी विज्ञान-मनीषी सखारोव की भविष्योक्ति।

कविताएं :

भवानी प्रसाद मिश्र, अंचल, रामदरश मिश्र, वीरेंद्र कुमार जैन, रमा सिंह, दिनकर सोनवलकर।

कथा-संस्मरण :

कर्त्तारसिंह दुग्गल और मसऊद मुफ्ती की कहानियां और **शिवानी** की कलम से निःसृत हृदयस्पर्शी व्यक्तिचित्र। **आस्कर वाइल्ड** की एक अत्यंत सुकुमार रूपक-कथा।

हास्य-व्यंग्य :

उन्नीसवां पुराण — अमृत राय का व्यंग्य-लेख, मराठी के हास्यकार रमेश मंत्री की **लघुकथाएं**, यहूदी हास्य का बेजोड़ नमूना— **लालबुझक्कड़ों के शहर में।**

कालपात्र के लिए मेरी किताब

हिंदी के सौ से अधिक साहित्यकारों ने नवनीत के पूछने पर बताया है कि यदि आधुनिक हिंदी साहित्य का कोई कालपात्र गाड़ा जाने वाला हो, तो उसके लिए वे अपनी सर्वोत्तम कृति के रूप में कौन-सी पुस्तक देंगे।

सम्राट् हर्षवर्धन के नाटक 'नागानंद' का सार पुस्तक-संक्षेप के रूप में।

विविध लेख :

कलिंग चक्रवर्ती खारवेल, रामायण-महाभारत का पुरातत्त्व, नरकासुर-वध : कल्पित प्रसंग, ये बेजोड़ जोड़े, कारागार में लिखे गये ग्रंथ, भारतीय इतिहास के कतिपय राजनैतिक विवाह।

सरदार पटेल की जन्म-शताब्दी पर विशिष्ट लेख।

कला :

गायक कुमार गंधर्व और चित्रकार वासुदेव स्मार्त पर परिचयात्मक लेख।

पृष्ठसंख्या : २५६; मूल्य : ३ रु. ६० पै.

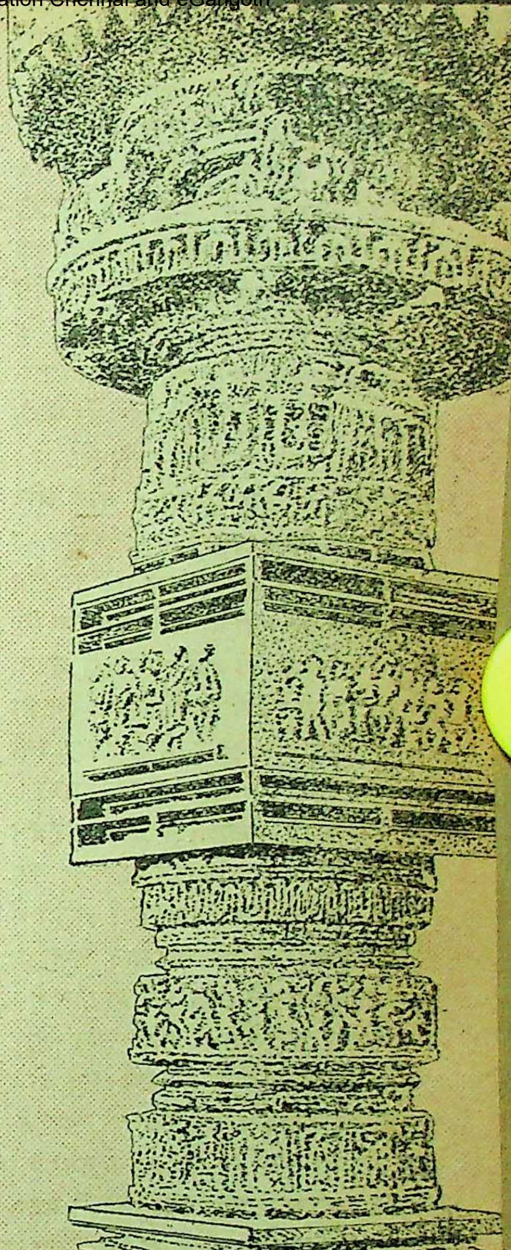

[पृष्ठ ५५ का शेष]

और ब्रह्मचारीजी खुरजा में श्री आसफअली का भाषण सुनने गये। दोनों चकित थे। आसफअली ने हिंदुओं की तरह धोती पहन रखी थी और ऊपर से एक चादर लपेटे थे। गोरे और सुंदर वे थे ही, शुद्ध आर्य लग रहे थे। बोलना शुरू किया तो धाराप्रवाह शुद्ध हिंदी में 'आवश्यकता' और 'यथासंभव' जैसे शब्द प्रयोग किये। मंच पर अलीगढ़ के रायसाहब प्रिंसिपल गंगारामजी पूज्य मालवीयजी की तरह पगड़ी बांधे, माथे पर चंदन लगाये और गले में दुपट्टा डाले बैठे थे। आसफअली के बाद रायसाहब बोले और उन्होंने कहा कि मैं असहयोग के विचार का समर्थन करता हूं, लेकिन जब तक राष्ट्रीय शिक्षासंस्थाएं न बना ली जायें, तब तक मेरे विचार से स्कूलों का बहिष्कार नहीं करना चाहिये, वरना इस पीढ़ी का भविष्य नष्ट हो जायेगा। इस प्रश्न पर उनमें व आसफअली में विवाद छिड़ गया और लोग सुनते रहे।

इतने में ही श्रोताओं के बीच हलचल शुरू हो गयी। आसफअली मेज पर चढ़ गये और पूछा कि क्या बात है? लोगों ने बताया कि शहर में एक लाल सांड़ रहता है, वह बहुत खूंख्वार है; वह यहां आ गया है। आसफअली का चेहरा दमक उठा और उन्होंने कड़ककर कहा कि उसे आने दो। हमारा यह विवाद कैलास पर्वत पर विराजमान शिवजी महाराज तक पहुंच गया है। हम ठहरे अधम प्राणी, अतः शिवजी महाराज स्वयं तो निर्णय करने के लिए यहां न आये, लेकिन उन्होंने अपने वाहन नंदी को भेज दिया है; इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि उसे आगे आने दिया जाये।

यह सुनकर सारी सभा संमोहित हो गयी और लोगों ने नंदी को मार्ग दे दिया। नंदी सीधा आकर मंच के सामने खड़ा हो गया और आसफअली ने आंखें मूंदकर शिवजी से प्रार्थना की कि हे न्यायमूर्ति, यदि आप विद्यार्थियों द्वारा स्कूलों का बहिष्कार न्यायपूर्ण मानते हैं तो इन नंदी महाराज को आदेश दीजिये कि ये हमारी बात का समर्थन करके यहां से शांतभाव से चले जायें।

समूची सभा स्तब्ध थी; ब्रह्मचारीजी और पंडित कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' भी श्रद्धाभाव से यह नाटक देख रहे थे। नंदी ने तीन बार सिर हिलाया और झटपट पीछे मुड़कर वह वहां से चला गया। इसका प्रभाव यह हुआ कि ब्रह्मचारीजी पूरी तरह राष्ट्रीय आंदोलन में कूद पड़े और जेल चले गये, प्रभाकरजी विद्यालय छोड़कर कांग्रेस के कार्य में जुट पड़े। उन्हें सभाओं में प्रायः समाचारपत्रों के अग्रलेख पढ़ने का काम सौंपा जाता था। शायद अग्रलेख ही उनकी नियति थे, जो पढ़ने से लेकर लिखने तक उनके जीवन को आप्लावित किये रहे हैं।

इधर राष्ट्रीय आंदोलन का कार्य चलता रहा, उधर बाबूजी के साहित्यिक जीवन की शुरूआत १९२४ में एक कविता से हुई। १९२६-२७ में इटावा के 'ब्राह्मणसर्वस्व' में सामाजिक विषयों पर लेखन शुरू हुआ। आत्मविश्वास इतना था कि जो विषय मन

को छू जाता, उस पर एक टिप्पणी लिखते और 'ब्राह्मणसर्वस्व' के संपादक को लिख भेजते कि इसे संपादकीय टिप्पणी के रूप में छाप दिया जाये। ऐसा ही होता।

सन १९२९ में सूचना मिली कि बापू सहारनपुर आ रहे हैं और निमंत्रण मिला कि देवबंद के लोग बापू को सुनने सहारनपुर आ जायें तथा वहीं उन्हें अपनी ओर से थैली भेंट कर दें। पर बाबूजी ने तय कर लिया कि यदि बापू देवबंद नहीं आयेंगे तो जीवन-भर के लिए देवबंद छोड़ दूंगा।

गांधीजी जैसे ही हरिद्वार पहुंचे, बाबूजी उनसे मिलने वहां गये और बोले कि जब आपकी गाड़ी सहारनपुर से मुजफ्फरनगर के लिए जायेगी तो देवबंद के १८ हजार लोग देवबंद स्टेशन पर पटरी पर लेट जायेंगे। बापू ने इनके कंधे पर हाथ रखा और बोले—'बापू के सामने सत्याग्रह करोगे?' बाबूजी बोले—'हमें यही देखना है कि बापू पर सत्याग्रह असर करता है या नहीं। अगर उसने बापू पर असर नहीं किया, तो फिर हम जनता को कह देंगे कि सत्याग्रह सरकार पर भी असर नहीं करेगा।'

बापू ने तुरंत कृपालानीजी के हाथ से कार्यक्रम का कागज लिया और सहारनपुर, मुजफ्फरनगर के बीच देवबंद लिख दिया।

साल-भर बाद जेल जाने का समय आ गया। उस समय बाबूजी के पिताजी ने उनसे कहा कि स्वराज्य का विचार अच्छा है, पर यदि तुम जेल गये तो मैं आत्महत्या कर लूंगा। यह सुनकर बाबूजी एक बार तो सन्नाटे में आ गये और कुछ देर तक पिता-पुत्र के बीच खामोशी छायी रही; लेकिन थोड़ा संभलने पर उन्होंने पिताजी से पूछा कि क्या आपका यह पक्का निश्चय है। पिताजी ने कहा कि हां। इस पर बाबूजी ने बहुत दृढ़ स्वर में कहा कि मैं कांग्रेस से पंद्रह दिन का अवकाश लिये लेता हूं, आप आज ही आत्महत्या कर लें, आपका एकमात्र पुत्र होने के नाते आपका क्रिया-कर्म तेरह दिन में करके मैं जेल चला जाऊंगा। इन शब्दों ने पिताजी को डिगा दिया। पिताजी पर बहू (बाबूजी की धर्मपत्नी स्व. प्रभावतीजी) का बहुत प्रभाव था। जब उन्होंने भी आग्रह किया, तो बाबूजी को जेल जाने की अनुमति पिताजी की ओर से मिल गयी।

सन १९३३-३४ में श्री विश्वंभरप्रसाद शर्मा ने सहारनपुर से 'विकास' पत्र का प्रकाशन शुरू किया। उसके 'आर्यसमाज अंक' में सहयोग के लिए उन्होंने बाबूजी को देवबंद से सहारनपुर बुलाया। बस तब से वे वहीं बस गये। १९३६ में कांग्रेस की स्वर्णजयंती मनायी गयी। देवबंद में एक बहुत बड़ी सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें सभापति-पद से भाषण करते हुए बाबूजी ने अपना निजी मकान कांग्रेस को दे दिया।

बाबूजी हिंदी गद्य के कुशलतम शिल्पियों में से हैं, वे एक विशिष्ट शैलीकार हैं। उनके शिल्प, उनकी शैली और उनकी विधायक प्रवृत्ति को आयाम देने वाला तत्त्व क्या है? मैंने एक दिन बाबूजी से पूछा कि आपके जीवन की मूल प्रेरणा क्या है? उन्होंने

बहुत सहजता से उत्तर दिया, 'अच्छे जीवन की खोज।' उनका सारा लेखन 'अच्छे जीवन की खोज' ही है। शुरू उन्होंने किया 'मैं अपने को अच्छा व्यक्ति बनाऊंगा' से। सामाजिक जीवन में उन्हें सबसे अधिक खलता रहा मानवीय करुणा का अभाव। उनके चिंतन की करुणा आदमी की आदमी के साथ तद्रूपता और आत्मीयता की उपज है, और उसमें अल्बर्ट श्वाइत्जर की तरह जीवन का संमान (रेवरेन्स फॉर लाइफ) निहित है। जीवन का यह संमान ही उन्हें बुद्ध, महावीर और गांधीजी के चरणों में ले गया और उन्होंने जीवन का यह संमान समाज के उन सैकड़ों छोटे माने जाने वाले लोगों को दिया, जिनकी जीवन-संजीवनी उनके लेखन का आधार बनी। छुआछूत, जातिवाद, दहेज और हिंदू-मुस्लिम सांप्रदायिकता वे प्रमुख मोर्चे हैं, जिन पर उनकी लेखनी पिछले पचास साल से लोहा ले रही है। वे आज भी इनमें से किसी के साथ समझौता नहीं करेंगे।

आजादी की लड़ाई लड़ना एक बात है और राजनीति में भाग लेना दूसरी। बाबूजी पर निर्णायक प्रभाव बापू का है। आखिरी बार जब वे उनसे मिले, तो महादेवभाई-स्मृतिग्रंथ के बारे में चर्चा हुई। वह योजना बीच में ही रह गयी। बापू स्वराज्योत्तर काल में कांग्रेस को राजनीति से हटाकर रचनात्मक भूमिका सौंपना चाहते थे। बाबूजी ने १५ अगस्त १९४७ की आधी रात को ही कांग्रेस छोड़ दी; फिर वे कभी किसी राजनैतिक दल के सदस्य नहीं बने।

राजनीतिक चिंतन उनका श्वास-निश्वास बन गया है। लोकतंत्र में उनकी आस्था अडोल और अकंप रही है, इस सत्य के बावजूद कि नेहरूजी को वे लोकनायक ही नहीं, राष्ट्रनायक भी मानते रहे हैं। अरस्तू की तरह राजनीति उनके लिए शीर्ष-विद्या, शीर्षकला और शीर्षविज्ञान है। जिनके भ्रष्ट होते ही भ्रष्टाचार का विष छनकर समाज के बुनियादी आधारों तक पहुंच जाता है। वे राजनीति को एक नैतिक प्रत्यय के रूप में देखते हैं। वे व्यक्तिगत पूंजी को नागरिकों के बीच फैली असमानता का मूल कारण मानते हैं और किसी न किसी स्तर पर आर्थिक जीवन के प्रबंध में सबका सहयोग अपेक्षित समझते हैं। उनकी दृष्टि में लोकतंत्र मुख्यतया एक राजनैतिक व्यवस्था नहीं, वरन एक सामाजिक और आर्थिक परिकल्पना है।

वे राजनीति में नहीं हैं, राजनीति उनमें है। कोई माने चाहे न माने, पिछले २८ वर्षों में उन्होंने 'नया जीवन', 'विकास' और देश की अन्य पत्र-पत्रिकाओं में देश की राजनीति के बारे में जो कुछ लिखा है, वह राजनीतिक धर्मशिक्षा के पाठ हैं। वे अब किसी बहू के कान में 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' तो नहीं कहते, किंतु रूसो का यह मंत्र 'अन मॉय कम्यून' (राष्ट्रायेदम् इदं न मम) हर श्रोता और पाठक के कान में फूंकने में इस वय में भी अप्रमत्त भाव से जुटे हुए हैं।

—नारायणदास भवन, सेतजी गेट, जोधपुर

★

केजिता

विज्ञान-बिंदु

दो आंखें सचमुच नियामत हैं। ये न रहें तो कैसा कहर टूट पड़ता है इंसान पर! तभी तो कहा गया है कि आंखें हैं तो जहान है। ये आंखें सलामत बनी रहें, इसके लिए जिन गिने-चुने भारतीयों ने आजीवन काम किया है, उनमें से एक हैं—डा. परमानंद अवस्थी।

आगरा के सरोजनी नायडू मेडिकल कालेज में नेत्र-चिकित्सा विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष डा. अवस्थी जैसे निपुण शास्त्रज्ञ हैं, वैसे ही सहज सधे हुए इंसान हैं।

उनके विद्याव्यसन का प्रमाण है उनकी देशी-विदेशी शैक्षणिक डिग्रियों और उपाधियों का लंबा तांता, जिसे गिनाने के लिए एक अलग पैराग्राफ अपेक्षित है। परंतु उनकी नजर में उनकी असली धरोहर प्रतिभा और परिश्रम से अर्जित ये डिग्रियां नहीं, बल्कि उनके विद्यार्थी और मरीज हैं। एक बार उन्होंने कहा था—'मेरे मरीज मेरी एक आंख हैं और मेरे विद्यार्थी मेरी दूसरी आंख।'

डा. अवस्थी अब तक लगभग २० लाख नेत्र-रोगियों का इलाज कर चुके हैं। उनके द्वारा की गयी बड़ी शल्य-चिकित्साओं की संख्या भी ४७ हजार के आस-पास है। यानी उनके भूतपूर्व रोगी एक नगर बसायें तो खासा महानगर बस जाये।

उनका शोध-क्षेत्र भी बहुत व्यापक है। उनके मार्गदर्शन में शोधकार्य करके लगभग तीन दर्जन डाक्टर उच्च डिग्रियां प्राप्त कर चुके हैं। स्वयं के उनके डेढ़ सौ से भी अधिक शोध लेख भारत और विश्व की विभिन्न सर्वोत्कृष्ट शोध-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं और लगभग एक दर्जन लेख फिलहाल प्रकाशनाधीन हैं। इनके अलावा उन्होंने विभन्न राज्यों की एवं अखिल भारतीय नेत्र-चिकित्सा समितियों में अनेक महत्त्वपूर्ण शोधलेख पढ़े हैं, जिन्हें नेत्र-विशेषज्ञों ने स्थायी महत्त्व का माना है।

आस्ट्रेलिया (एशियन पैसिफिक कांग्रेस, १९६४), पश्चिम जर्मनी (इंटर नेशनल कांग्रेस, १९६६), मेक्सिको (इंटर नेशनल कांग्रेस, १९७०), टोक्यो (आफ्रो-एशियन कांग्रेस, १९७२), पेरिस (इंटर नेशनल कांग्रेस, १९७४) तथा अन्य अनेक स्थलों पर उनके शोधलेखों ने सम्मान पाया है।

भारत में उनकी जिन शोध-परियोजनाओं की विशेष चर्चा रही, उनमें उत्तर प्रदेश सरकार की सहायता से चालित योजनाएं 'काजल का मूल्यांकन' और 'फंगस इन्फेक्शन इन आई' तथा इंडियन कौंसिल की सहायता से चालित 'ट्रैकोमा' और 'एपिडेमियॉलोजी आफ ग्लॉकोमा एंड ब्लाइंडनेस' प्रमुख हैं।

नेत्र-चिकित्सा संबंधी कितनी देशी-विदेशी विशेषज्ञ-संस्थाओं ने डा. अवस्थी को अपना सदस्य अथवा अध्यक्ष निर्वाचित कर उनके कार्य और योग्यता को स्वीकार किया है। साथ ही वे निष्ठावान समाजसेवी हैं। देश के दूर-दूर के कोनों में बसे ऐसे गांवों में जहां नेत्र-चिकित्सा संबंधी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं, उनके योगदान से कई दर्जन कैंप आयोजित हुए हैं, जिनमें निर्धन और असहाय नेत्र-रोगियों की निःशुल्क चिकित्सा की जाती है और जहां आवश्यक हो आपरेशन भी किये जाते हैं।

अब जब कि डा. अवस्थी अपने कैरियर के दूसरे छोर पर पहुंच चुके हैं, उनमें थकान अथवा उदासीनता के तनिक भी लक्षण दिखाई नहीं देते। इस देश में एक भी व्यक्ति नेत्र-रोगी न रहे, यही उनकी एकमात्र कामना शेष रह गयी है। भारतीय चिकित्सा-जगत उनका ऋणी है।

एवरेस्ट कितना ऊंचा

अब तक एवरेस्ट दुनिया का सबसे ऊंचा पर्वत-शिखर माना जाता रहा है। परंतु उसकी ऊंचाई को लेकर पिछले दिनों कुछ विवाद खड़ा हो गया है। अमरीकी संस्थान स्मिथसोनियन इंस्टिटयूट के शोधकर्ताओं के अनुसार, एवरेस्ट की ऊंचाई केवल २०,०६२.४५८ फुट है, जबकि दक्षिण अमरीकी देश इक्वेडोर स्थित किंबेरेजो नामक चोटी की ऊंचाई २१,०६८.५५६ फुट है-यानी विश्व की सबसे ऊंची चोटी किंबेरेजो है, न कि एवरेस्ट।

असल में इन शोधकर्ताओं ने दावा किया है कि उन्होंने ऊंचाई नापने की एक नयी पद्धति का विकास किया है, जिसमें पृथ्वी के केंद्र को आधार मानकर ऊंचाई नापी जाती है। और इसी नयी पद्धति की सहायता से ये नये आंकड़े प्राप्त किये गये हैं। समुद्र की सतह को आधार मानने वाली पुरानी विधि के अनुसार एवरेस्ट की ऊंचाई २९,०२८ फुट है।

ये नयी गणनाएं पंद्रह वर्ष की खोज का परिणाम हैं। इस अवधि में विभिन्न अमरीकी उपग्रहों की सहायता से संकलित सूचनाओं से यह बात सामने आयी है कि पृथ्वी कुछ-कुछ अंडाकार है और भूमध्यरेखा के पास का क्षेत्र थोड़ा-सा उभरा हुआ है। किंबेरेजो भूमध्यरेखा से १ डिग्री दक्षिण में है; जब कि एवरेस्ट ३८ डिग्री उत्तर में स्थित है। यानी एवरेस्ट की अपेक्षा किंबेरेजो केंद्र से अधिक दूर हुआ।

स्मिथसोनियन के विज्ञानियों की घोषणा के अगले दिन २२ जुलाई १९७५ को पीकिंग रेडियो ने कहा कि एवरेस्ट अब भी दुनिया की सबसे ऊंची चोटी है। पीकिंग रेडियो के

अनुसार चीनी सर्वेक्षकों एवं भौतिकविदों द्वारा हाल में किये गये एक स्थल-सर्वेक्षण से सिद्ध हुआ है कि एवरेस्ट की वास्तविक ऊंचाई २९,०३०·२४ फुट है, जबकि पश्चिमी देश उसे सिर्फ २९,०२८ फुट ऊंचा बताते रहे हैं। इन स्रोतों के अनुसार पृथ्वी के केंद्र से नापने पर भी किंवेरेजो एवरेस्ट की अपेक्षा एक फुट नीचा पड़ता है। चीनी सर्वेक्षकों ने एवरेस्ट की चोटी पर चढ़कर वहां विशेष प्रकार के यंत्रोपकरण लगाये थे और वहां से दस केंद्रों की सहायता लेकर यह गणना की थी।

धुआं, जहरीला-बहरीला

सिगरेट का धुआं जहरीला होता है, उसके कारण फेफड़े की कार्यक्षमता कम हो जाती है और रक्त-शोधन के कार्य में बाधा पड़ती है—यह सब आपने बार-बार पढ़ा-सुना है और यह भी कि फेफड़ा-कैन्सर भी धूम्रपान की कृपा से हो सकता है। मगर अब यह बात सामने आयी है कि धूम्रपान मात्र जहरीला नहीं, 'बहरीला' भी है, यानी वह आदमी को बहरा भी बना सकता है।

स्टेफीन प्रेसकोड नामक एक शोधकर्ता इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि कोई आदमी अगर बीस सिगरेट प्रतिदिन पिये, तो वह जल्दी बहरा हो सकता है। श्रवण-क्षमता का जो ह्रास होता है, वह बड़ी मात्रा में सिगरेट पीने पर छोटी उम्र में ही हो सकता है।

खंडहर राग ?

कुमकुम मलिक

नीचे मोटर-गराज थी और ऊपर नाचघर था। शाम होते-होते संगीत की धुनों पर मदमाते जुगल-जोड़े सिमट-सिमटकर थिरकने लगते। जैसे-जैसे अंधेरा गहराता जाता, वैसे-वैसे मदिरा की महक, यौवन की उमंग और मस्ती की तरंग में झूमते-झूलते जोड़े बेकाबू हो बहकने लगते और उनकी थिरकन में गजब की तेजी आने लगती। मगर छत कभी गिर सकती है, यह खतरा गराज-मालिक को कभी नहीं हुआ। इंग्लैंड जैसे देश के लिए यह सामान्य-सी स्थिति थी।

फिर एक दिन गराज की छत जोरों से हिलने लगी। मालिक घबरा गया, उसे अपनी जान खतरे में नजर आने लगी। उसने इमारत की छत की मजबूती की जांच कराने का निश्चय किया और मामला 'ब्रिटेन्स बिल्डिंग रिसर्च एस्टैब्लिशमेंट' को सौंपा। छत की एक प्रबलित (रीइन्फोर्स्ड) बीम पर एक्सिलेरोमीटर लगा दिया गया।

रोज की तरह नाच और धूम-धमाका हुआ। मगर छत में कोई कंपन नहीं आयी।

फिर अलग-अलग धुनें बजवाकर परीक्षण किया जाने लगा। तब एक धुन की बारी आयी–'रॉक एराउंड द क्लाक'। उसके छिड़ते ही छत की छाती भी उछलने लगी। 'रीडिंग' ली गयी। यह अनुनाद (रेज़ोनेन्स) ठीक उसी आवृत्ति पर था, जिस पर संगीत चल रहा था। यह खास आवृत्ति इस छत के लिए पचासों उछलते-कूदते पांवों के धमाके से भी खतरनाक थी। उससे पूरी छत ढह सकती थी।

इससे बचने के दो रास्ते हो सकते थे– छत की बीम का दृढ़ीकरण करके उसकी प्राकृतिक आवृत्ति को बदलना, नाचघर में उस धुन का बजना हमेशा के लिए बंद कर देना। विशेषज्ञों ने दूसरा रास्ता चुना। जोड़े वहां अब भी हर शाम को थिरकते हैं, संगीत-लहरी भी लहराती है; मगर छत का सीना शांत है और खुश है उस गराज का मालिक।

पुरस्कृत प्रतिभा

प्रतिभा और यौवन के सोते पाषण-शैल को तोड़कर सतह पर फूट पड़ते हैं। कुमकुम मलिक में इन दोनों सोतों का संगम है। कुल जमा सत्रह वर्ष की इस किशोरी को जब उस रोज राष्ट्रपति महोदय ने नयी दिल्ली के विज्ञान-भवन में वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सुशोभित किया, तो सारी उपस्थिति चकित रह गयी।

भारत का राष्ट्रीय अनुसंधान विकास निगम प्रतिवर्ष समूचे देश में से ऐसे चुने हुए खोजकर्ताओं को राष्ट्रीय पुरस्कार देता है, जिन्होंने चालू वर्ष के दौरान तात्कालिक व्यावहार एवं अनुप्रयोगात्मक महत्त्व के यंत्र, उपकरण, तकनीक आदि का विकास किया हो। इस वर्ष राष्ट्रपति महोदय ने तैंतीस खोजकर्ताओं को पुरस्कार प्रदान किये।

कुमारी कुमकुम मलिक ने एक रक्त-सरक्युलेशन पंप का विकास किया है, जो परीक्षण-प्राणियों की कार्डियोवस्क्युलर शल्य-चिकित्सा के दौरान रक्त के विरत-अविरत प्रवाह के लिए उपयोगी है। कुमकुम के पिता अजमेर में सलाहकार चिकित्सक हैं और उन्हीं से उसे प्रेरणा मिली थी। इस उपकरण के प्रमुख घटक हैं एक स्क्रीन, एक धातु-छड़, दो वाइपर तथा दो रोलर।

कुमकुम की प्रतिभा बहुमुखी है। दस वर्ष की उम्र में उसने भारतीय शास्त्रीय नृत्य में डिप्लोमा कोर्स पूरा किया, तेरह वर्ष की उम्र में उसने मंच पर कत्थक नृत्य का सार्वजनिक प्रदर्शन किया, पंद्रह वर्ष की आयु में चित्रकला में पुरस्कार जीता। अब सत्रह वर्ष की उम्र में उसने वैज्ञानिक के रूप में राष्ट्रीय पुरस्कार पाया है।

पिल्ला-रोक पिल

एक अमरीकी वैज्ञानिक ने एक 'कुत्ता-पिल' का विकास कर लेने की घोषणा की है। इस पिल के प्रयोग से कुतियों में सेक्स उत्तेजना नहीं होगी। इस तरह कुतियों के बंध्याकरण की भी आवश्यकता नहीं रह जायेगी। इस पिल का प्रभाव अस्थायी होगा और आवश्यकतानुसार कुतिया को प्रजनन-क्षम बनाया जा सकेगा।

★

• बालकवि बैरागी •

सूरज के राजदूत

सूरज उगे या डूबे, उसकी पूजा बराबर होती है। बिना प्रकाश का दान दिये उसे अपना जीवन निरर्थक लगता है। उसकी विशेषता ही यह है कि वह सबको एक-सा प्रकाश देता है। किवाड़ बंद करो या लाख अंधेरों में छिपो, पर सूई की नोक के बराबर भी छेद मिला कि वह अपनी किरण को भीतर धकेल देगा। अंधेरे में रहने वालों की भाग्यलिपि पर किरण की कूंची फेरना उसका धर्म है। मैं प्रकाश को सूरज का राजदूत मानता हूं। अपना संदेश दिये बिना प्रकाश कभी वापस नहीं लौटता। सबसे अधिक ईमान की खाने वाला कोई है तो प्रकाश है।

आपकी और मेरी जिंदगी के आस-पास संसार के इस विशाल कैनवास पर हजारों प्राणी जीवन का शाश्वत प्रकाश लिये रात-दिन मंडरा रहे हैं; पर न आप उन्हें देख पाये न मैं! जो देख पाये उनके छप्पर उजले हो गये, जो नहीं देख पाये वे अपने-अपने अंधेरों से मन बहला रहे हैं।

साधारण-सी छोटी-छोटी तीन तानें हैं, पूरा सरगम नहीं; पर जब भी इन लोगों की और देखता हूं मन निहाल हो जाता है। लगता है, किरण ने आंगन लीपना शुरू कर दिया है। कई निराशाएं और कुंठाएं गलकर पानी हो जाती हैं।

इंदौर में एक हैं डाक्टर मुखर्जी। रिटायर होने के बाद अब निजी प्रैक्टिस कर रहे हैं। सारे भारत से उनके पास बीमार आते हैं। कहते हैं उनके पढ़ाये हजारों डाक्टर आज देश में रोगियों की सेवा कर रहे हैं। उनके एक सुपुत्र तो इंदौर में ही डाक्टर हैं। शाम को जाइये या सवेरे, डाक्टर मुखर्जी के बंगले पर बीमारों का मेला-सा लगा दिखाई देगा। नया आदमी तो शायद मेला और भीड़ देखकर ही घबड़ाकर वापस हो जाये।

पर आज तक नहीं सुना कि डाक्टर मुखर्जी के यहां का क्यू कभी टूटा हो। जिसका नंबर है, वही भीतर जायेगा। चाहे कितना ही बड़ा अमीर या ओहदेदार आ जाये, डाक्टर मुखर्जी का क्यू नहीं टूटेगा। कोई उस क्यू को तोड़ने की कोशिश भी नहीं करता।

समय की पाबंदी कोई डाक्टर मुखर्जी से सीखे। दिये हुए समय पर आ जाना और मरीज को देख लेना उनका अपना नियम है। मरीज के घर वाले अगर दिये समय पर न मिलें, तो भी मुखर्जी साहब अपना काम करके लौट जायेंगे।

उनकी उम्र साठ को पार कर गयी है। वे धीमे बोलते हैं। गुस्सा कभी करते नहीं। पर एक नियम उनका बड़ा विचित्र है। जब मोटर से उतरेंगे तो अपनी दवा की पेटी किसी को नहीं उठाने देंगे। यदि चकमा देकर आपने उठा ही लिया, तो वे मुस्कराकर वापस ले लेंगे। मैं स्वयं उनके एक विद्यार्थी डाक्टर से इस मामले में शर्त हार चुका हूं। उनके हजारों विद्यार्थी इस बात को तरस कर रहे गये हैं कि वे उनकी पेटी उठाकर दो कदम चल सकें।

जब-जब भी मैंने उन्हें देखा है सहज ही मुझे लगा है कि सूरज का राजदूत आ रहा है। वाकई सूरज अपनी किरण को स्वयं उठाता है। भला कौन सूरज की किरण को अपने हाथ में लेकर चला है।

यह तो एक पढ़े-लिखे और प्रसिद्ध डाक्टर की बात हुई; पर अगली बात तो और भी विचित्र है। इंदौर में ही एक सराफा बाजार है। लाखों रुपये रोज का कारबार वहां होता है। उस बाजार में एक जलेबी वाले की दुकान है। प्रतिदिन निश्चित समय पर वह दुकान खुलती है और निश्चित समय पर बंद हो जाती है। उसके मालिक का नियम है कि वह पांच किलो बेसन से अधिक की जलेबी नहीं बनायेगा। जलेबी खाने वाले का लंबा क्यू एक निश्चित समय पर दुकान पर भी लग जाता है। उस क्यू को तोड़ने पर वहां हड़कंप मच जायेगा। लोग आराम से अपने नंबर की राह देखते रहते हैं और वहीं जलेबी तुलवाकर मजे से खा लेते हैं। बड़े-बड़े महारथियों को मैंने उस क्यू में देखा है। एक निश्चित तौल से ज्यादा जलेबी वह किसी को देता नहीं और ज्यों ही पांच किलो का खमीर खाया बेसन समाप्त हुआ कि दुकान बंद।

क्यू में बाकी बचे लोग चुपचाप वापस हो जाते हैं और दूसरे दिन जलेबी खाने का कार्यक्रम बनाते हैं।

मैंने देखा है कि दुकानदार के बहुत-से परिचित क्यू में होते हैं, पर वह किसी का भी लिहाज नहीं करता और हर व्यक्ति अपने नंबर की प्रतीक्षा करते-करते वापस तक हो जाता है। उस जलेबी का जायका ही अलग है और ख्याति की तो बात ही क्या है। सचमुच सूरज सब पर अपनी किरण एक-सी बरसाता है। उसके लिए क्या छोटा, क्या बड़ा। उसके यहां पक्षपात नहीं है।

इसे भी छोड़िये। यह मामला एक निरे पागल का है। मेरे गांव में एक जनण-पागल है, उसका नाम है जुम्मा। जुम्मा हमारे यहां का किसी जमाने में बड़ा लोकप्रिय पागल रहा है। मुझे याद है लोग उसका शकुन माना करते थे। आजकल उसका शकुन नहीं माना जाता है। मेरे देखते-देखते उसका अवमूल्यन हुआ।

बड़े सवेरे जुम्मा घर से निकल पड़ता था। राह चलते लोगों से मजाक करना और चाय के लिए पैसा मांगना उसका मुख्य काम होता था। पागल होते हुए भी वह घर का सारा काम-काज साधारण सदस्य की तरह करता था। आज भी वह है और उसका वही क्रम है।

उस जमाने में चार पैसे की इकन्नी चलती थी। जुम्मा जिससे भी मांगता था इकन्नी ही मांगता था। उससे कम वह लेता नहीं था। यदि इकन्नी के स्थान पर कोई उसे दुअन्नी या चवन्नी भी दे दे, तो उसे वह हंसकर फेंक देता था। मनचलों का यह खेल हो गया था कि वे उसे नकद रुपया तक देते थे, और वह फेंककर आगे बढ़ जाता था। हां, इकन्नी दो तो जुम्मा 'बाबूसाहब, फतह!' कहकर आगे बढ़ जाता। और उसकी आदत यह थी कि ज्यों ही उसे इकन्नी मिली कि वह पास की दुकान पर जाकर चाय पीता। इकट्ठा करके रखना उसका संस्कार नहीं था।

उन दिनों घर से बाहर कोई यात्रा पर जाता या कोई दूसरा मंगल-कार्य होता तो इकन्नी का लालच देकर जुम्मा को दूर-दूर के मुहल्लों में लोग ले जाते थे और उससे शकुन सधवाते। जब जुम्मा कहता 'बाबूजी, फतह!' तब यात्रा शुरू होती या काम प्रारंभ होता। जुम्मा का शकुन तब सोलह आने सही बैठता था।

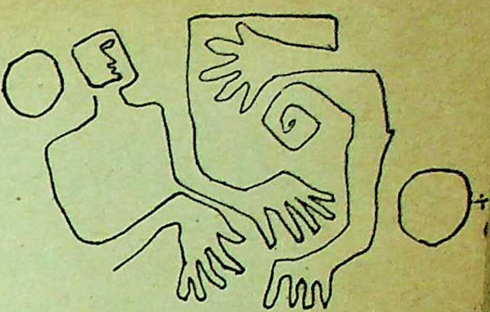

चित्र : टी. राणा

जब सिक्का बदला तो जुम्मा तबाह हो गया। इकन्नियां ज्यों-ज्यों लुप्त हुईं, त्यों-त्यों जुम्मा बूढ़ा होता गया। लोग मार-मारकर उसे दूसरा सिक्का देने लगे। और अब तो जो भी सिक्का दो, वह ले लेता है। पर पुराने सिक्के बदलने और नये सिक्के की स्वीकृति के साथ ही जुम्मा का शकुन भी शिथिल होता गया और उसकी साख उठ गयी।

अब वह पैसे इकट्ठे करने वाला माना जाता है और शकुन मानने वाले लोग उससे कतराने लगे हैं।

समझ नहीं पाता हूं कि सूरज ने अपने राजदूत के पद से जुम्मा-जैसे पागल को कब और क्यों बरखास्त कर दिया। सिक्का बदल गया, तो उसमें बेचारे जुम्मा का क्या कसूर! 'बाबूजी, फतह!' तो वह आज भी कहता है, पर उसके कहने में अब वह वजन नहीं रहा, जो पहले था।

—मनासा, मंदसौर, म. प्र.

* * *

पाकिस्तान में अहमदियों की लंबी मुसीबत

शिवकुमार गोयल

मई १९७४ में पाकिस्तान में धर्मांध मुल्ला-मौलवियों द्वारा अहमदियों के विरुद्ध छेड़ा गया जेहाद सफल हुआ और पाकिस्तान सरकार ने अहमदिया संप्रदाय को 'गैर-मुस्लिम' करार देकर पाकिस्तान व अन्य देशों में रहने वाले लाखों अहमदियों को 'काफिर' घोषित कर दिया।

पाकिस्तान के प्रायः सभी प्रमुख नगरों में मई १९७४ में सुन्नी मुसलमानों ने अहमदिया मुसलमानों के विरुद्ध बड़े सुनियोजित ढंग से जेहाद बोला, उनके मकानों-दुकानों व मस्जिदों को तहस-नहस किया, आक्रमण करके उनकी हत्याएं कीं। उससे यह बिलकुल स्पष्ट हो गया था कि इन सबके पीछे पाकिस्तान सरकार का हाथ है।

दंगे शुरू होते ही पाकिस्तान के कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों ने मस्जिदों से फरमान जारी करके मांग की कि अहमदियों को 'इस्लाम का दुश्मन' घोषित करके उनकी तमाम संपत्ति जब्त कर ली जाये। फौरन बड़े शहरों के कालेजों की यूनियनों के छात्रों ने इस 'फरमान' को पूरा करने का काम अपने हाथों में लिया और अहमदियों के विरुद्ध 'जेहाद' छेड़ दिया।

तमाम देश को दंगों की आग में जलता देखकर प्रधान-मंत्री भुट्टो भागे-भागे लाहौर पहुंचे और उन्होंने घोषणा की–'सरकार समय पर अहमदियों के विरुद्ध कदम उठायेगी, किंतु इस दंगे के पीछे पाकिस्तान को कमजोर करने वाले तत्त्वों का हाथ है।' अपनी आदत के अनुसार भुट्टो ने दूसरे स्वर में यह भी कहा–'यह ९० वर्ष पुराना रोग मैं तुरंत दूर कैसे कर सकता हूं? मैं इस समस्या का निदान चाहता हूं, किंतु कुछ कट्टरपंथी लोग बाधा डाल रहे हैं।'

इस मिलीभगत के बाद श्री भुट्टो ने इस मसले के हल के लिए एक आयोग की स्थापना की घोषणा की तथा कुछ ही दिन बाद उनकी सरकार ने अहमदिया संप्रदाय को 'गैरमुस्लिम' घोषित कर दिया। गैर-मुस्लिम घोषित करते ही जैसे अहमदियों की शामत आ गयी। उन पर खुलकर अत्याचार और उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाने लगा। अक्तूबर के अंतिम सप्ताह में पुनः पाकिस्तान के कई नगरों में अहमदियों पर हमले किये जाने की घटनाएं सामने आयीं।

पाकिस्तान में, अहमदियों पर अत्याचार व उन्हें नेस्तनाबूद करने का षड्यंत्र कोई

नयी चीज नहीं है। सन १९५३ में जमात-ए-इस्लामी के अमीर मौलाना अबुल अला मौदूदी ने कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों को एकत्रित करके लाहौर में एक संमेलन बुलाया। प्रगतिशीलता की डींग भरने वाले मौलाना भाषानी भी उसमें शामिल हुए थे। इसमें सर्वसम्मति से प्रस्ताव पारित करके यह फतवा दिया गया कि अहमदी मुसलमान 'इस्लाम के दुश्मन' व 'काफिर' हैं। अहमदियों को समाप्त करने के तरीकों पर विचार करने के लिए एक समिति गठित की गयी। पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री मियां मुमताज दौलताना से मिलकर एक शिष्टमंडल ने मांग की कि अहमदिया बिरादरी को गैरमुस्लिम संप्रदाय घोषित करके उनकी तमाम जायदाद व हक छीन लिये जायें। दौलताना ने केंद्र-सरकार से इस मांग को पूरा करने की अपील की।

मौलाना मौदूदी ने तो पश्चिम पाकिस्तान में अहमदियों के खिलाफ जेहाद ही छेड़ दिया। लाहौर, करांची, पेशावर, रावलपिंडी आदि स्थानों पर सभाएं आयोजित करके अहमदिया विरोधी वातावरण बनाया गया। तमाम पाकिस्तान सांप्रदायिक उपद्रवों की लपेट में आ गया।

फरवरी १९५३ से लेकर अप्रैल तक पूरे तीन महीने अहमदियों पर कट्टरपंथी सुन्नी अत्याचार करते रहे। लाहौर, करांची व अन्य नगरों में सरेआम उन्हें मौत के घाट उतारा गया। हजारों मकानों व दुकानों को जलाकर राख कर डाला गया। विदेशी पत्रकारों एवं प्रसिद्ध अहमदिया राजनेता जफरुल्ला खां के अनुमान के अनुसार इन तीन महीनों में पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान में ५० हजार से अधिक अहमदियों को जान से हाथ धोने पड़े।

यह भयंकर खून-खराबा देखकर तत्कालीन केंद्रीय रक्षामंत्री इस्कंदर मिर्जा ने लाहौर में मार्शल ला लागू कर दिया। सेना

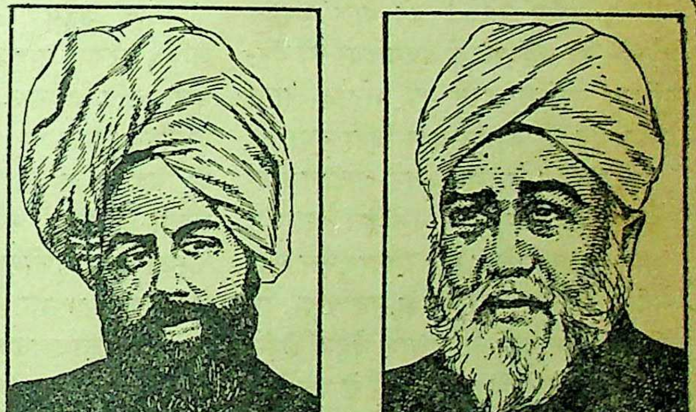

अहमदिया संप्रदाय के प्रवर्तक हजरत मिर्जा गुलाम अहमद (बायें) तथा अहमदियों के वर्तमान नेता हजरत हाफिज मिर्जा नसीर अहमद।

ने बड़ी कठिनाई से शहर में शांति स्थापित की। मौलाना मौदूदी को गिरफ्तार करके उनका कोर्ट मार्शल किया गया तथा हजारों निरपराधों के खून की जिम्मेवारी में फांसी की सजा सुनायी गयी। सुन्नी नेता मौलाना अब्दुल्ला नियाजी को आजीवन कारावास की सजा दी गयी। अहमदी नेता मिर्जा नासिर अहमद को भी १४ वर्ष का दंड दिया गया। मौदूदी को दी गयी सजा का कट्टरपंथी मुसलमानों ने घोर विरोध किया। सरकार को धमकियां दी गयीं। अंत में गवर्नर जनरल ने फांसी माफ करके उन्हें जेल से रिहा कर दिया।

इसके बाद समय-समय पर अहमदियों पर अत्याचार किये जाते रहे। उन्हें मस्जिदों में नमाज नहीं अदा करने दी गयी। उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाता रहा।

२९ अप्रैल १९७३ को पाक अपहृत कश्मीर की असेंबली में अहमदियों को गैर-मुस्लिम घोषित करने का प्रस्ताव लाया गया। यह भी कानून बना दिया गया कि अहमदी तबके के लोग अपने आपको गैर-मुस्लिम की हैसियत से पंजीकृत करायें। जमात-ए-इस्लामी के नेता मियां तुफैल मुहम्मद ने मौलाना मौदूदी के पदचिह्नों पर चलकर अहमदियों के खिलाफ जेहाद छेड़ने की घोषणा कर दी। और यहीं से पुनः वह षड्यंत्र प्रारंभ हुआ, जिसका विस्फोट मई १९७४ में दंगों के रूप में हुआ।

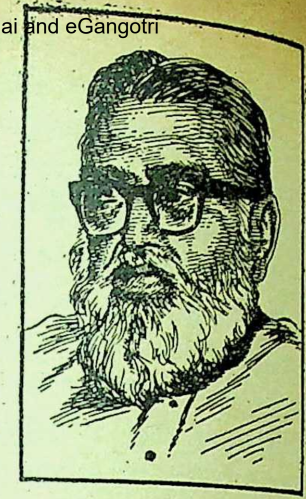

मौलाना मौदूदी

ये अहमदिया हैं कौन? सन १८८९ में पंजाब के जिला गुरदासपुर के कादियान नामक ग्राम में मिर्जा गुलाम अहमद साहब नामक एक उदारचेता मुस्लिम नेता ने नये संप्रदाय की नींव डाली तथा वह अहमदिया संप्रदाय के नाम से विख्यात हुआ।

मिर्जा अहमद ने न केवल कुरान का अपितु गुरुग्रंथ साहब, वेद, उपनिषद, बाइबल आदि धार्मिक आध्यात्मिक ग्रंथों का अध्ययन किया था। उन्होंने सभी संप्रदायों के विद्वानों से शास्त्रार्थ किये। कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों को उन्होंने चेतावनी दी-'इस्लाम को संकीर्णता व कट्टरता के दायरे में रखकर पनपाया नहीं जा सकता। इसके लिए उदारता अपनानी होगी।' उनका कहना था कि अल्लाह, कृष्ण, मसीह सब एक हैं। किसी पर भी ईमान लाना काफी है।

उनकी इन बातों से कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों में होहल्ला मच गया तथा उनका खुला विरोध प्रारंभ हो गया। मगर अहमद

साहब के अनुयायियों की संख्या बढ़ती गयी। हिंदू भी उनके संप्रदाय से आकृष्ट हुए। अहमद साहब का कहना था—'हिंदू अपने मजहब पर कायम रहें तथा अपने किसी भी अवतार की पूजा करते रहें, किंतु ईमानदारी व सच्चाई का जीवन जियें।'

लाहौर, करांची, लायलपुर आदि के मौलवियों ने १९०७ में फतवा दिया कि यह आदमी अल्लाह व कृष्ण को एक समान बताकर इस्लाम की तौहीन कर रहा है; कोई भी मुसलमान इसके चक्कर में न फंसे। किंतु सुधारवादी व पढ़े-लिखे मुस्लिम युवक अहमदिया संप्रदाय की उदारवादी नीतियों के समर्थक होते गये। कट्टरपंथी मुसलमानों का विश्वास था कि मुहम्मद साहब आखिरी नबी थे, किंतु अहमदिया लोग मिर्जा गुलाम अहमद साहब को भी नबी मानने लगे।

अहमदियों का कहना था कि मुसलमानों को कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों के चंगुल से निकलकर वैज्ञानिक व सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिये; धर्मग्रंथों की हर बात को अक्षरशः सच मानना आवश्यक नहीं है। एक अहमदी नेता ने कहा—'हिंदू भी अल्लाह की औलाद है। अत: कोई भी सच्चा मुसलमान उनसे घृणा नहीं कर सकता।'

करांची के एक अहमदी विद्वान मिर्जा करीम अहमद को सन १९३२ में इसलिए मार डाला गया कि उन्होंने मुस्लिम महिलाओं को बुर्के से निकलने व मुसलमानों को सुधारवादी दृष्टि अपनाने की सलाह दी थी।

मिर्जा गुलाम अहमद साहब का २६ मई १९०८ को देहावसान हुआ, तो हकीम नूरुद्दीन साहब ने उनका स्थान लिया। उन्होंने देश-विदेश का दौरा करके मुसलमानों में सुधारवादी दृष्टि का प्रचार किया।

जब मिर्जा नूरुद्दीन साहब का देहांत (१९१४) में हुआ तो मिर्जा गुलाम अहमद साहब के पुत्र बशीरुद्दीन महमूद अहमद नये इमाम हुए। पश्चिम पंजाब में तो अहमदियों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ती गयी।

देश-विभाजन में कादियान भारत की सीमा में रहा और मिर्जा बशीरुद्दीन अहमद ने भारत में ही रहने की घोषणा की। श्री जिन्ना ने उनसे व्यक्तिगत अनुरोध करके उन्हें पाकिस्तान चलने को तैयार कर लिया तथा झंग में चिनाब नदी के किनारे उनके संप्रदाय के मुख्यालय के लिए जमीन दी। लगभग पांच लाख अहमदियों के इस विशाल केंद्र ने एक भव्य नगर का रूप धारण किया।

मिर्जा बशीरुद्दीन साहब के निधन (१९६५) के बाद उनके पुत्र मिर्जा नासिर अहमद इमाम बनाये गये, जो इस समय अहमदियों के मुखिया हैं और मुल्ला-मौलवी उनके देश-निकाले की मांग कर रहे हैं।

पाकिस्तान में अहमदिया लोग अनेक ऊंचे पदों व सरकारी नौकरियों में हैं। वायुसेना व जलसेना में तो उनकी बहुतायत है। गैरमुस्लिम घोषित कर दिये जाने के बाद अब उनके समक्ष अस्तित्व व जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित हो गया है।

—हिंदुस्थान समाचार, जीवन-विहार बिल्डिंग, पार्लमेंट स्ट्रीट, नयी दिल्ली-१

★

चीनी शहजादे-शहजादियां

• डोरोथी मार्क्स •

चीन पर अपनी दूरबीन हरदम गड़ाये रखने वाले विशेषज्ञ बाकी बातों में चाहे कितना भी मतभेद रखते हों, मगर एक बात में एकमत हैं। वर्गहीन समाज होने का दम भरने वाले चीन में यदि कोई विशेषाधिकार-संपन्न वर्ग है तो वह है बच्चों का।

लाक्षणिक और शाब्दिक दोनों अर्थों में चीन के महल बच्चों की संपदा हैं। जन-मुक्ति सेना और साम्यवादी पार्टी के कर्णधारों के भी महल हैं; मगर सबसे बढ़कर हैं बच्चों के महल। सं. रा. अमरीका के वाशिंगटन (डी. सी.) से आये हम बाईस पर्यटकों के दल को शंघाई के बाल-महल में ले जाया गया। हर अमरीकी यात्री को वहां अवश्य ले जाया जाता है।

वैसे शंघाई के दसों नगर-विभागों और दसों उपनगरों के अपने-अपने बाल-महल हैं; मगर यह बाल-महल मानो बाल-महलों का बकिंग्हम प्रासाद है। इसे प्रतिभाशाली और लगनशील बच्चों की नुमाइश ही समझिये। शंघाई इलाके से प्रति दिन कोई एक हजार बच्चे यहां लाये जाते हैं। चीन की सबसे विशाल प्राकृतिक संपदा यानी शिशु-संपदा का बेजोड़ प्रदर्शन है यह।

चीनी स्त्रियों ने प्रसाधन, सजीले वस्त्र और गहने, यहां तक कि शादी की अंगूठी को भी तिलांजलि दे दी है। (अलबत्ता वे हाथघड़ी धारण करती हैं।) मगर बच्चों को खूब सजाकर रखा जाता है। रंगीन कपड़ों, टोपियों और जूतों में वे बड़े सलोने लगते हैं। बाल-नाटकों में उन्हें लिपस्टिक, रूज आदि का भी उपयोग करने दिया जाता है।

खिलौने भी वर्जित नहीं हैं। बहुत-से बच्चों को हमने बैटरी से चालित और बुलबुले छोड़ने वाले प्लास्टिकी पंडाओं (भालूनुमा चीनी जीव) से और अंडे देने वाली प्लास्टिकी मुर्गियों से खेलते देखा। फ्रेंडशिप स्टोरों में ये खिलौने देखकर हमने पहले सोचा था कि ये शायद विदेशी खरीदारों के लिए हैं।

यहां सड़कों या सार्वजनिक स्थलों पर पुरुष और नारी को प्रेम का तनिक-सा भी प्रदर्शन करते नहीं देखा जा सकता। मगर बच्चों को सब लोग खुल्लमखुल्ला पुचकारते - दुलराते हैं। प्रायः माताएं, नानी-दादियां और बहुत बार तो नाना-दादा भी नन्हे बच्चों को झूलानुमा झोली में अपने सीने पर लटकाये घूमते मिलते हैं। यह व्यवस्था बच्चों को पीठ पर लटकाने की जापानी व अमरीकी व्यवस्था से कहीं ज्यादा

आरामदेह है—बच्चों के लिए सर्वोत्तम ही।

टाली ताल्लुके की नर्सरी और कैंटन की बालवाड़ी (किंडरगार्टन) में हमें बताया गया कि सरकार द्वारा प्रशिक्षित नर्सों को आदेश है कि वे बच्चों को अंक में भरकर प्यार किया करें। हमें यह भी बताया गया कि चीन में समस्त बच्चे समान हैसियत से, एक-सी सुख-सुविधाएं भोगते हुए जीवन आरंभ करते हैं। बच्चों की चिकित्सा, डाक्टरी देखरेख और शिक्षा मुफ्त या लगभग मुफ्त होती है। सभी बच्चों को एक-से टीके लगाये जाते हैं, ताकि वे तपेदिक, चेचक, डिफ्थीरिया, कुत्ताखांसी, खसरा, पोलियो और टेटनस आदि से सुरक्षित रहें।

कैंटन बालवाड़ी के बच्चों ने बड़े उत्साह और आत्मविश्वास से हमें एक गाना अभिनय के साथ सुनाया। बाद में हमें अन्य स्थानों पर भी वह गाना सुनने को मिला। उसका भावार्थ यह था—'हम अपनी मातृभूमि के फूल हैं। हम गुलाबी धूप में खिलते-पलते हैं। हम नन्हे लाल रक्षक हैं। हमें एकता से रहना है। हमें विदेशी अतिथियों का स्वागत करना है। (यहां खूब तालियां बजायी जाती हैं।) हमें अध्यक्ष माओ की खातिर अच्छे बच्चे बनना है।'

अपने बारे में यह धारणा और अपने से बड़ों के आदर्श लेकर ये नन्हे बच्चे कन्फ्यूशस और लिन प्याओ के विरुद्ध, जमींदारों और पूंजीपतियों के विरुद्ध नृत्य-गीत नाटिकाएं बड़े आत्मविश्वास के साथ रचते व पेश करते हैं। दूसरे विषयों पर भी वे ऐसे कार्य-

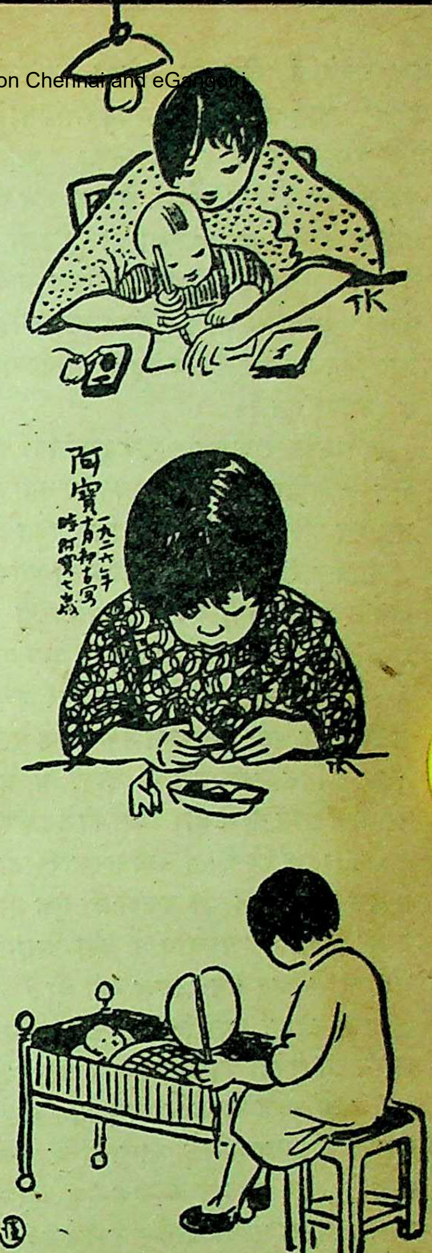

फेंग त्से-काई रचित चित्र

क्रम रचते हैं, जैसे कि पड़ोसी की मदद करना, पढ़ाई और खेल में अपने साथियों से प्रतिस्पर्धा करने के बजाय उनकी सहायता करना, नये चीन के निर्माण के लिए श्रम की महिमा आदि। बाल-महलों और होटलों में विदेशी यात्रियों के लिए सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करना तो उन्हें बहुत छुटपन में ही सिखा दिया जाता है। वे बड़े आत्मविश्वास से इंटरव्यू देते हैं।

इन नन्हे राजकुमार-राजकुमारियों को श्रम की महिमा का जो पाठ पढ़ाया गया है, वह हम पश्चिमी पर्यटकों के लिए बहुत ही आश्चर्यकारी है। बालवाड़ियों में ही इसकी शुरूआत हो जाती है। एक बालवाड़ी में कुछ बच्चे कागज की मछलियां बना रहे थे; मगर उसी कमरे में कुछ और बच्चे बैठकर एक बड़ी चिलमची में से फ्लैश बल्ब निकाल-निकालकर गत्ते के डब्बों में बने खानों में खोंस रहे थे और डब्बों को बंद करके करीने से रख रहे थे। ये डब्बे सरकारी स्टोर में भेजे जाने वाले थे। बच्चों की एक और टोली निकट के कारखाने में बनी सिलाई-मशीनों के लिए लेबल पिरो रही थी।

हमें बताया गया कि प्रत्येक प्राथमिक शाला का अपना कारखाना और खेत होता है, जिसमें बच्चे राज्य के लिए काम करना सीखते हैं। माध्यमिक शालाओं के बच्चे गर्मियों और सर्दियों में एक-एक महीना असली कारखानों या खेतों में जाकर बड़ों की निगरानी में काम करना सीखते हैं। इसके बाद भी उनके पास गर्मियों में एक माह और सर्दियों में तीन हफ्ते की छुट्टी और बची रहती है।

सुचाओ बहुत बड़ा विहार-स्थल है। वहां हमने ५ से १६ साल तक के बच्चों का कमाल का कार्यक्रम देखा। शंघाई के बच्चों का प्रदर्शन तो और भी प्रभावशाली रहा। रविवार को हम जहां-कहीं जाते, हजारों बच्चे हमें नाचते-गाते, खेलते कूदते काम करते हुए मिलते।

जो बाल-नाटक हमें देखने को मिले, वे प्राय: प्रचार से लबालब भरे थे। एक नृत्य-नाटिका में स्कूल की बच्चियों ने लाल रक्षकों (रेडगार्ड) के तौर पर उन्हें रूमाल मिलने का आनंद नाचकर व्यक्त किया। बच्चों का अपने से छोटे बच्चों के बाल काटना, घर से दूर के क्षेत्रों में नियुक्त सैनिकों के परिवारों के घर-काम में सहायता देना, सड़कों की सफाई करना आदि भी नृत्य-नाटकों के विषय थे।

अध्यक्ष माओ ने १९४० के जमाने के चीनी किसानों के बारे में कहा था कि वे कोरे पन्ने हैं और 'कोरे पन्नों पर बहुत खूबसूरत अक्षर लिखे जा सकते हैं।' बच्चों से बढ़िया कोरे पन्ने किसी क्रांति को भला कहां हासिल होंगे! अध्यक्ष माओ के विचार इन कोरे पन्नों पर यानी चीन के भविष्य पर विशाल अक्षरों में अंकित किये जा रहे हैं।

अद्भुत प्राकृतिक रीएक्टर

ललितचंद्र चंदोला

विज्ञान का लक्ष्य होता है प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन। प्रकृति अपने गूढ़ रहस्यों को आसानी से खोलती नहीं। कभी-कभी अवश्य लगता है कि विज्ञान ने प्रकृति से बाजी जीत ली है; परंतु पुनः देखने पर प्रकट होता है कि प्रकृति से पार पाना उतना आसान नहीं।

जब २ दिसंबर १९४५ को अमरीका के शिकागो शहर में प्रसिद्ध विज्ञानी एनरिको फर्मी ने मानव-इतिहास में प्रथम बार नियंत्रित अणु-प्रक्रिया को संभव बनाया तथा प्रथम रीएक्टर को सक्रिय किया, तब लगता था कि वैज्ञानिकों ने अंततः ऐसा कुछ कर दिखाया है, जो प्रकृति अभी तक नहीं कर पायी है।

उस समय किसी को स्वप्न में भी इसका खयाल नहीं था कि रीएक्टर बनाने का कार्य तो मनुष्य से १ खरब ७० अरब वर्ष पूर्व ही प्रकृति कर चुकी है। उस चमत्कारी प्रयोग को पूर्ण करने के बाद से जैसे प्रकृति तमाशबीन बनकर चुप बैठी हुई थी, यह देखने के लिए कि उसके इस कार्य की नकल कर दिखाने में मनुष्य को कितना समय और श्रम खर्च करना पड़ेगा।

प्रकृति की इस दुहरी भूमिका का पता तब चला, जब फ्रांसीसी परमाणु-आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा. फ्रांसिस पेरिन ने दो शोधपत्र लिखकर फ्रांसीसी विज्ञान अकादमी को सूचित किया कि उन्होंने उत्तर-पश्चिम अफ्रीका में एक भूतपूर्व प्राकृतिक रीएक्टर के अवशेष ढूंढ़ निकाले हैं।

इस खोज की खबर मिलने पर नोबुल-पुरस्कार विजेता तथा अमरीकी परमाणु-आयोग के अध्यक्ष ग्लेन टी. सीबोर्ग के मुंह से अनायास ही निकल पड़ा—'अद्भुत!' कुछ सोचने के उपरांत उन्होंने आगे कहा—'यदि सचमुच प्राकृतिक रीएक्टर कभी क्रियाशील था, तो वह रुक-रुककर काम करता होगा।' उनका यह कथन बाद को सत्य सिद्ध हुआ।

इस अद्भुत खोज का श्रीगणेश १५ जून १९७२ को हुआ। उस दिन एक वैज्ञानिक ने अपने दैनंदिन कार्य के सिलसिले में पाया कि फ्रांस में संसाधित हो रहा युरेनियम हेक्साफ्लोराइड यौगिक अपने नैसर्गिक यौगिक से तनिक भिन्न है।

यह फ्रांसीसी वैज्ञानिक युरेनियम सांद्रीकरण केंद्र में काम कर रहा था। उसका काम यह ज्ञात करना था कि उस संयंत्र से प्राप्त युरेनियम हेक्साफ्लोराइड से तैयार किये

गये युरेनियम में युरेनियम-२३५ समस्थानिक की मात्रा बढ़ रही है या नहीं? यह देखकर उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही कि विश्लेषण का परिणाम यह सिद्ध कर रहा है कि युरेनियम-२३५ की मात्रा का बढ़ना तो दूर रहा, अपितु वह न केवल उतनी की उतनी है, बल्कि प्राकृतिक मात्रा से भी कम है।

प्राकृतिक युरेनियम में युरेनियम-२३५ की सांद्रता ०.७२ प्रतिशत होती है। पृथ्वी पर के किसी भी भंडार से प्राप्त युरेनियम में यह अनुपात स्थिर रहता है। भारत की जादूगुड़ा खान का युरेनियम हो अथवा ब्राजील या अमरीका की खानों से प्राप्त युरेनियम सभी में युरेनियम-२३५ की मात्रा ०.७२ प्रतिशत से न कम होती है न अधिक। परंतु फ्रांस में जो युरेनियम बनाया गया था, उसमें युरेनियम-२३५ की मात्रा केवल ०.७१ प्रतिशत ही पायी गयी। यहां पर यह बता देना उचित होगा कि प्राकृतिक युरेनियम में शेष भाग (९९.२८ प्रतिशत) मुख्यतः युरेनियम-२३८ का होता है।

रीएक्टर में जब युरेनियम ईंधन के रूप में प्रयुक्त होता है, तो उसमें सूक्ष्म सांद्रता वाला समस्थानिक युरेनियम-२३५ ही विखंडित होता है। और चूंकि उसका कुछ अंश रीएक्टर में विखंडित हो जाता है, इसलिए प्रयोग के बाद उस ईंधन में उसकी यानी युरेनियम-२३५ की मात्रा ०.७२ प्रतिशत से कम हो जाती है। प्राकृतिक अयस्कों से प्राप्त युरेनियम में यह मात्रा कम नहीं हो सकती।

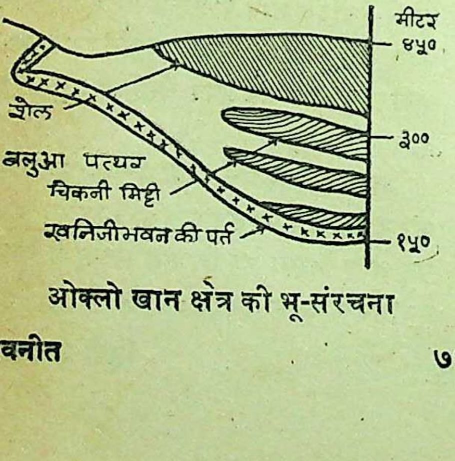

ओक्लो खान क्षेत्र की भू-संरचना

इस कारण से पहले तो यही संदेह हुआ कि फ्रांसीसी फैक्टरी में बन रहे युरेनियम में किसी मानव-निर्मित रीएक्टर में प्रयुक्त युरेनियम धातु भूल से मिल गयी है। परंतु यह संदेह अधिक दिनों तक टिक न सका; क्योंकि बाद में अत्यधिक सावधानी से किये गये प्रयोगों से प्राप्त युरेनियम में भी युरेनियम-२३५ की मात्रा कम ही पायी गयी।

अंततः यह ज्ञात हुआ कि जो युरेनियम फ्रांस में शुद्ध किया जा रहा था, वह उत्तर-पश्चिम अफ्रीका के गेबोन देश की ओक्लो नामक खान से प्राप्त हुआ था। इस खान के अलग-अलग हिस्सों से प्राप्त युरेनियम के नमूनों में भी यह असंगति पायी गयी। यहां तक कि एक नमूने में तो युरेनियम-२३५ की मात्रा केवल ०.४४ प्रतिशत थी। यह अनुपात बहुत ही अपसामान्य था।

ओक्लो के समीप ही मुआता नामक स्थान में भी युरेनियम की खान थी। वहां से प्राप्त युरेनियम का भी विश्लेषण किया गया। उसमें भी इस महत्त्वपूर्ण समस्थानिक (यु-२३५) की मात्रा कम ही पायी गयी।

गया काम से

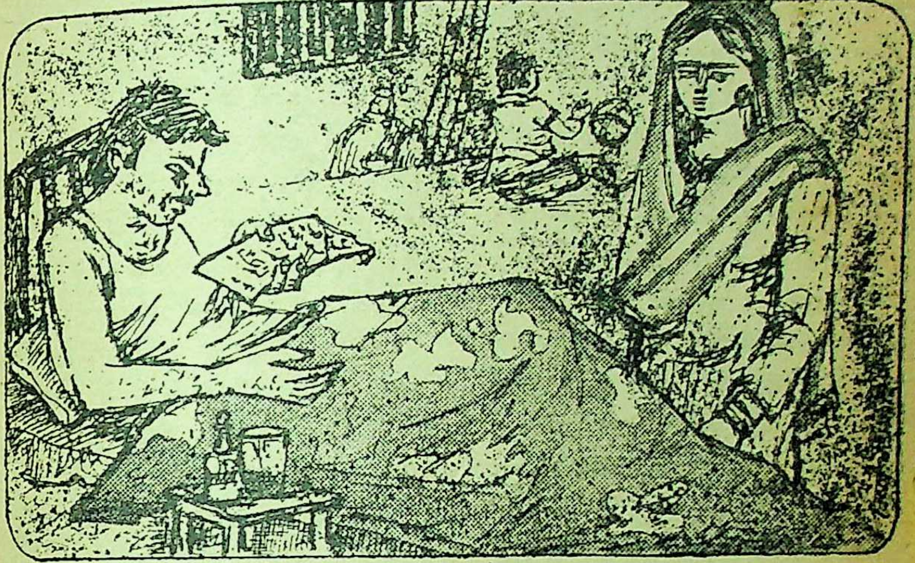

गुरदेव सिंह-रुपाणा की पंजाबी कहानी

जब हम पहली बार मिले, तो मुझे उसके व्यवहार से ऐसा लगा, जैसे हम बहुत पुराने मित्र हों। पहली बार जब वह हमारे घर आया, तो उसने बिना संकोच बता दिया कि वह दालफ्राई बड़े शौक से खाता है, अगर एक अंडा भी उसमें फेंट दिया जाये तो पूछना ही क्या! प्यास लगी, तो स्वयं ही रसोई में से पानी पी आया। पढ़ने के लिए स्वयं ही शेल्फ में से पुस्तकें ढूंढ़ लीं। नहाने के लिए स्वयं ही हैंड-पंप से पानी का टब भर लिया। शाम को जहां चारपाइयां बिछती थीं, स्वयं ही पानी का छिड़काव कर दिया। खाना खाने के लिए स्वयं ही प्याज आदि काटने लगा, जैसे घर का ही कोई जीव हो। मैं खुश था। ऐसा मित्र मिल जाने पर हर कोई खुश होगा।

दो-चार बार हमारे घर आने के बाद वह हमारे परिवार में घुल-मिल गया। जिस चीज की उसे जरूरत होती, बिना पूछे वह हमारे घर से ले जाता। जिस चीज की हमें

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

आवश्यकता होती, बिना कहे ही वह अपने घर से ले आता।

कोई उससे मिलने आता और उसे घर न पाता, तो ढूंढ़ता हुआ मेरे घरआ जाता।

मेरा कोई मिलने वाला आता और मैं घर पर न होता तो उसके घर मिल जाता। इस प्रकार उसके मित्र मेरे और मेरे मित्र उसके मित्र बन गये।

धीरे-धीरे उसने मुझे अपने घर के बारे में सब कुछ बता दिया। मां की मौत के बाद उसके पिता ने दूसरी शादी कर ली थी। पहली शादी से वे चार बहन-भाई थे। बड़ा, जिसकी शादी हो चुकी थी, पुलिस में था। बड़ी बहन, जो लगभग तीस वर्ष की थी, दसवीं में पढ़ती थी, (पहले उसने पढ़ाई छोड़ दी थी) और उसकी शादी अभी तक नहीं हुई थी। उसकी शादी की उसे बहुत चिंता थी।

यद्यपि उसके बाप के पास हजारों रुपये थे, पर वह शिक्षा प्राप्त कर रहे दोनों बच्चों की जिम्मेदारी अपने सिर पर लेने को तैयार न था। उसने तो मेरे मित्र से साफ कह दिया था कि तुम और पुलिस वाला भाई चाहो तो अपने भाई-बहनों को लिखा-पढ़ा लो, चाहो तो घर बैठाये रखो। वे तुम्हारे ही बहन-भाई हैं, मेरे कुछ नहीं लगते। बाप सैकड़ों रुपये दूसरों को बिना ब्याज के दे देता था; पर अपनी संतान उसकी जैसे कुछ नहीं लगती थी। उसकी बातें सुनकर मुझे ऐसे पाषाण-हृदय पिता पर बहुत क्रोध आया। पहले महीने उसने मुझसे पचास रुपये मांगे। मुझे उसकी सहायता करके बहुत खुशी हुई।

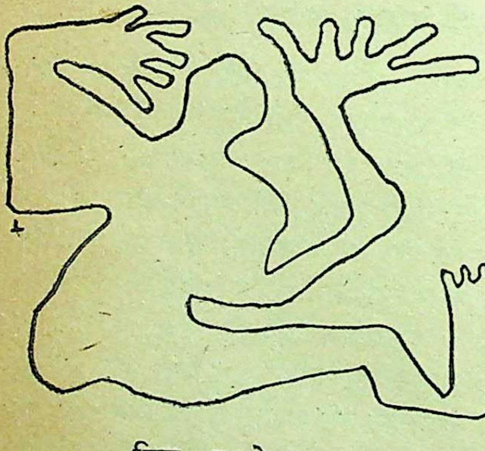

चित्र : ठाकोर राणा

अगले महीने उसका तबादला दिल्ली हो गया। उसके दिल्ली जाने से पिछली रात को हमने पीने का प्रोग्राम बनाया। थोड़ी-सी पीकर उसने मेरी दु:खी जिंदगी का पहलू देखना चाहा। मेरी जिंदगी सपाट-सी है—न कोई उतार न चढ़ाव। न कभी खुदकुशी करने की इच्छा मन में उठी है, और न मुझे यही पता है कि मैं किसलिए जी रहा हूं। सो मैं उसे कुछ न बता सका।

खूब मस्त होकर उसने अपने बाप की शिकायतें करनी शुरू कर दीं। इस साल पिताजी ने हजारों रुपये का कपास बेचा है; पर हम बहन-भाई उधार लेकर गुजारा कर रहे हैं। पिता के घर देशी घी के पीपे सड़ते रहते हैं और वे वनस्पति से संतोष कर रहे हैं। उसने धीरे-धीरे रोना शुरू कर

दिया। मैंने उसे सांत्वना देकर चुप कराना चाहा, तो वह मेरे गले लगकर जोरों से रोने लगा। काफी समय के बाद जब वह चुप हुआ, तो मुझसे उसने अगली सुबह तक सौ रुपये का प्रबंध कर देने को कहा।

दिल्ली जाकर वह ऊब-सा गया। हर सप्ताह उसके दर्द-भरे पत्र आते, जिनमें आग्रह होता कि एक-दो दिन की छुट्टी लेकर मुझसे मिल जाओ। कभी-कभी लिखा होता, बिट्टू बहुत याद करता रहता है। कभी अपनी बीवी से टूटे-फूटे शब्दों में पत्र लिखवाता। मुझे लगता, वे सब मेरे बिना ही उदास हो गये हैं। जब कभी मैं छुट्टी लेकर उनसे मिलने जाता। मुझे देखते ही वह जैसे बावला हो जाता, मुझसे चिपट जाता। ऐसी तैयारी करता कि साल-भर का राशन मुझे एक-दो दिनों में खिला देने वाला हो। उन्हें खुश देखकर मुझे भी बहुत खुशी होती। वापस लौटते समय मैं उनसे पैसों की जरूरत के बारे में पूछ लेता। वह कहता—'अगर फालतू हों तो थोड़े-बहुत दे जाओ।'

और कई बार वह कहता—'वहां बहनजी और मक्खन को जरूरत हो, तो उन्हें दे देना!' उसके बहन-भाई मेरे शहर में ही पढ़ते थे।

हेड आफिस में मिल-मिलाकर उसने मेरा तबादला भी दिल्ली करवा दिया। मेरे रहने की व्यवस्था उसने अपने साथ की। वह और उसके बीवी-बच्चे बहुत खुश थे और मुझे भी उनके साथ ही रहते हुए कभी घर की याद नहीं आयी।

शाम को इकट्ठे बैठकर हम अपने साथियों की चुगलियां करके खुश होते। लोगों की नकलें उतार-उतारकर मजाक करते। दिल्ली में अच्छी तरह से जम जाने के सपने देखते। बात करते-करते वह कई बार अचानक ही उदास हो जाता और दीर्घ निःश्वास लेकर यह शेर गुनगुनाता :

जिंदगी बीत गयी तेरा रास्ता तकते
तेरी आहट भी राह-गुजारों में नहीं!

'किसका रास्ता ताकने लगे हो आजकल?' मैं पूछता।

'किसी का भी नहीं। अपना तो ऐसा स्वभाव ही नहीं।' वह इस तरह इन्कार करता, जिससे मुझे संदेह हो कि वह जरूर किसी की राह देखने लगा है।

मैं सोचता, अगर उसका प्यार असफल हो गया होता, तो वह मुझे जरूर बता देता। वह तो मुझे अपनी छोटी-छोटी बातें भी बता देता था। दफ्तर जाते समय एक लड़की बस में उसे अपने साथ बैठाने के लिए उसकी खातिर जगह छोड़ देती थी। एक दिन उसे देर हो गयी तो लड़की ने भी बस छोड़ दी। यह बात बताने के बाद वह इस तरह हंसता, जैसे उसका मजाक उड़ा रहा हो। यों भी आदमी कत्ल करके, चोरी करके छिपा सकता है, प्यार करके नहीं। बल्कि होता तो यह है कि लोग मामूली जान-पहचान को भी बढ़ा-चढ़ाकर प्यार का दर्जा देकर अपने मित्रों को बताते हैं। फिर वह तो अपनी बीवी और बच्चों को बेहद प्यार करता था। उनकी जरूरतों की चिंता में कई बार दीवाना-सा

लगता था। उस समय वह बहुत प्यारा लगता और मेरा भी ब्याह करवाने को जी चाहता। सो मैं जानता था कि प्यार-व्यार का कोई चक्कर नहीं है।

मैंने कहीं पढ़ा था कि मनुष्य अपनी आर्थिक विवशताओं को बार-बार प्यार की असफलता के रूप में जाहिर करता है। उसके बाप के कठोर व्यवहार के कारण उपजी उसकी आर्थिक विवशताओं का मुझे पता था। इसलिए कई बार उसका यह शेर 'जिंदगी बीत गयी......' कुछ इसी सिलसिले का लगता।

कई बार तो मेरे मन में आया कि उससे कहूं—'किसकी आहट राहगुजारों में नहीं' मुझे पता है।

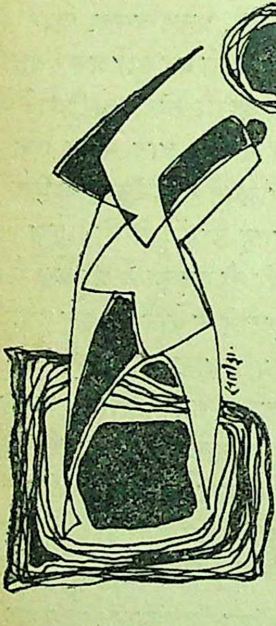

चित्र : सतीश चव्हाण

वह अचकचाकर पूछेगा—'किसकी ?'

'लक्ष्मी की!' मैं कहूंगा।

'लक्ष्मी कौन ?' वह फिर पूछेगा।

'धन ...... माया ...... नकद-नारायण ......' मैं कितने नाम गिनवा दूंगा।

पर वह और दुःखी होगा, इसीलिए मैं उसे कह न सका।

पता नहीं कैसे एक दिन प्यार की बातें चल ही पड़ीं। मैं बड़ी आदर्शवादी बातें करता रहा, जिनकी सच्चाई के बारे में मुझे खुद भी पता न था। अंत में मैंने कहा—'प्यार करना तो सबके लिए अच्छा ही होता है, पर केवल प्यार का अभिनय करना बहुत बुरा लगता है।'

उसने नजर भरकर मेरी ओर देखा। शायद वह मेरी बात का मतलब साफ समझना चाहता था। उसने आंखें झुका लीं। वह समझ गया था। इसके बाद उसने कभी मेरे सामने वह शेर न कहा। और अगर मैं कभी उसे वह शेर कहते हुए सुन लेता, तो उसका मुखभाव ऐसा हो जाता, जैसे उसकी चोरी पकड़ी गयी हो। वह मुझे चिड़चिड़ा-सा लगने लगा। कई बार सख्ती से मैंने अलग रहने जाने की बात की, पर पति-पत्नी ने मुझे चुप कर दिया।

दिन बीतते गये। मैंने देखा अब वह मेरी उपस्थिति में बहुत कम बात करता है। एक दिन मित्रता के बारे में बातें चल पड़ीं। उसके सारे दोस्तों की असलियत मैं जानता था। उसके सामने मैं बड़ी ऊट-पटांग तर्क पेश

करता रहा। उसने अपने मित्रों की प्रशंसा करनी शुरू कर दी। कहने लगा, मित्र उसके बहुत काम आये हैं, जिससे जिंदगी का बोझ उसे हल्का लगने लगा है। फिर उसने मुझे बताया कि उसने एक मित्र को बहुत कठिनाई के समय किसी अन्य मित्र से हजार रुपया उधार लेकर दिया था। अब वह मुकर गया है और उसे वे रुपये वापस करने हैं। उसे रुपयों का इतना दुःख नहीं था, जितना एक मित्र के खो जाने का।

'जो मुकर गया है, कौन है?' मैंने पूछा।

'यह मुझ तक ही रहने दे यार!'

मैं लगभग उसके सब मित्रों को जानता था। कौन है, जिसने इतने दुःखी आदमी के रुपये मार लिये हैं। मुझे उस मित्र पर गुस्सा आ रहा था और मन ही मन मैं उसके साथ लड़ने के लिए तैयार हो रहा था। फिर मैंने उसके सब मित्रों को एक-एक करके याद किया। पर उन सबका थोड़ा-बहुत उधार उसे खुद चुकाना था। मुझे पहली बार लगा कि वह मुझसे झूठ बोल रहा है और वह भी हजार रुपये का। अगले दिन सुबह दफ्तर जाते समय उसने घर का सामान लाने के लिए मुझसे पचास रुपये लिये।

उस दिन मेरी तबीयत ठीक नहीं थी। मैं दफ्तर न गया। दोपहर तक बिस्तर में ही लेटा रहा। फिर मुझे खयाल आया, क्यों न आज पत्रों के उत्तर दे दिये जायें। मैं डाकखाने से लिफाफे वगैरह लेने चल दिया। रास्ते में एक परिचित होटल वाले ने आवाज देकर मुझे बुलाया। उसने मुझे पचास रुपये और एक भरा हुआ मनीआर्डर फार्म दिया और कहा—'आपका भाई मनीआर्डर करवाने के लिए दे गया था। अब आप खुद ही उधर जा रहे हैं, तो यह मनीआर्डर भी कर दीजियेगा।' फार्म पर उसके पिता का पता लिखा हुआ था। मैं चकित था। भला पचास रुपये उसके पिता के लिए क्या थे!

'बुजुर्गों को माया की क्या जरूरत पड़ गयी?' शाम को रसीद देते हुए मैंने पूछा।

'माया तो बुजुर्गों के पास आग लगाने पर भी खत्म नहीं होती,' वह चुप हो गया। फिर बोला—'यह तो लज्जित करने को भेजा है। सोचा, कुछ तो लाज आयेगी।' उसने कहा।

'तू अपने आपको क्यों इस तरह दुःखी करता रहता है। तू क्यों इस तरह सोचता है।' मैंने समझाया। वह चुप हो गया।

अगले दिन मेरी तबीयत और भी खराब हो गयी। दोपहर के समय उसकी पत्नी एक पत्र लेकर आयी। पत्र उर्दू में था और भाभी को उर्दू आती नहीं थी। उन्होंने मुझे पत्र पढ़कर सुनाने के लिए कहा। बड़े दुलार-भरे संबोधनों से पत्र शुरू किया गया था—'मेरी आंखों के तारे, लख्ते जिगर!' आगे पढ़ा, तो मैं विस्मित रह गया। पत्र का आशय यह था—'जल्दी से जल्दी पैसे भेजो। घर में कोई सामान नहीं है। हमें और उधार भी नहीं मिलता। मैं बीमार हूं। दवाई के बिना मर रहा हूं। भैंस बिक जाती, तो मैं तुझे परेशान न करता। पर वह खून निकालकर मर गयी है। पैसों के बिना सलोतरी गांव में नहीं आया। तेरे पुलिस वाले भाई ने कोई

पैसा नहीं भेजा। उसे क्या, चाहे कोई मरे, या जिये ! इस फागुन तक लड़की के हाथ पीले कर देंगे। तुम रुपयों का प्रबंध कर लेना ! ......तीस की हो गयी है। तेरे जैसा बेटा ईश्वर सबको दे ......'

भाभी पत्र सुनकर चुपचाप चली गयीं। लगा, मुझसे पत्र पढ़वाकर पछता रही हैं।

मैं अपने मित्र के व्यवहार को चुपचाप जांचता रहा। मैं हैरान था कि अब तक वह मुझसे झूठ क्यों बोलता रहा। मैं समझ गया, हजार रुपये उसे बहन के विवाह के लिए चाहिये थे। पर उसने सीधे तौर पर क्यों नहीं मांगे ? पता नहीं उसने मुझे कितना अमीर समझ रखा था कि मेरे बराबर होने के लिए उसे झूठ बोलना पड़ा। मैं बिलकुल उस जैसा ही था। अगर मेरा परिवार उसके जितना बड़ा होता, तो न जाने मेरी क्या दशा होती। घर की हालत से मित्रता में थोड़ा फर्क तो आ जाता है।

मुझे बहुत गुस्सा आता रहा। 'जिंदगी संघर्ष भरी है। यह सब तो चलता ही है।' मैंने अपने आपको समझाया–'मित्र है। बहुत-सी खुशियां हमने साथ-साथ मनायी हैं, उसकी सहायता करनी चाहिये।' मैं बड़े भावुक ढंग से उसकी सहायता के लिए योजनाएं बनाता रहा। अपनी कई प्रिय वस्तुएं बेचने के बारे में भी सोचता रहा।

शाम को आने के बाद उसने पत्र पढ़ा और फिर फाड़कर फेंक दिया। खाना खाने के बाद हम बिस्तरों में बैठ गये। भाभी ने बिट्टू को कुछ सिखाकर मेरे पास भेज दिया।

'तातादी, ताती लायेगें?' बिट्टू ने कहा।

'क्या तुझे क्या करना है चाची से ?' मैंने रोज की तरह पूछा।

'ताती को मेरा जी चाहता है,' बिट्टू ने कहा। सभी हंस पड़े।

'बिट्टू इस साल हम तेरी बुआ पूरो का ब्याह करेंगे। अगले साल तेरे लिए चाची लायेंगे।' मैंने आत्मीयता से कहा।

'क्या मतलब ?' मेरे मित्र ने गंभीर होकर पूछा।

मैं चुप रहा।

'बापूजी का पत्र मैंने इनसे पढ़वाया था।' भाभी ने कहा।

उसका चेहरा गंदला-सा हो गया। मैं सोच रहा था, वह मेरे हृदय की भावनाओं को समझकर, अब तक मेरे सामने झूठ बोलने के लिए क्षमा मांगेगा। मैं लगातार उसके चेहरे की ओर देखता रहा। क्षण-प्रतिक्षण मैं पिघलता जा रहा था। मेरी आंखें भर-सी आयी थीं। मगर उसका चेहरा एकदम कठोर हो गया और कुछ भयानक भी। बहुत देर तक वह चुप बैठा रहा।

'अच्छा ......' उसने लंबी सांस ली–'तू भी गया काम से !' और उसने रजाई ऊपर खींच ली।

हजार चाहने पर भी मैं उसकी चुप्पी न तोड़ सका। अगले दिन मैंने अपने लिए कमरा ढूंढ़ लिया और उससे अगले दिन सामान इकट्ठा करके तांगे पर रखवा लिया। उन्होंने एक बार भी न कहा कि यहीं रह जाओ।

अनुवाद : सुरजीत

★

अलास्का की पाइप लाइन

विश्वास

अलास्का। अमरीका का ४९ वां राज्य। ५,७१,०६५ वर्गमील क्षेत्रफल और ३,४०,००० की आबादी। आबादी की दृष्टि से विरल और आर्थिक दृष्टि से अविकसित। परंतु वह दिन शायद दूर नहीं, जब इन दोनों विशेषणों के साथ 'था' का प्रयोग करना पड़ेगा और इस परिवर्तन का कारण होगी एक फौलादी पाइप-लाइन। अलास्का के उत्तरी और दक्षिणी सीमांतों को जोड़ने वाली ७९८ मील लंबी एक पाइप-लाइन, जो उत्तर ध्रुव सागर की प्रडहो खाड़ी से शुरू होगी और प्रशांत सागर के किनारे बसे वालडीज बंदरगाह तक जायेगी। इस पाइपलाइन में पेट्रोल बहेगा। और नहरों में बहते पानी की तरह सारे अलास्का को खुशहाल कर देगा।

वर्षों के विलंब के बाद इस ७९८ मील लंबी पाइप-लाइन का निर्माण-कार्य शुरू हो गया है। साथ ही शुरू हो गया है टेक्सास, कैलिफोर्निया, शिकागो आदि राज्यों से काम की तलाश में आने वालों का सिलसिला। मजदूर, तकनीशियन, ड्राइवर, विज्ञानी, वेश्याएं ...... हां, सबके लिए अलास्का में काम है। ये सब अलास्का पहुंच रहे हैं उसके पेट्रोल-वैभव का मजा लूटने की तमन्ना लेकर। इस समय १२ हजार स्त्री-पुरुष पाइप-लाइन के लिए कार्य कर रहे हैं और कुछ ही महीनों में इनकी संख्या २०

हजार तक हो जाने की आशा है; क्योंकि ठेकेदार पाइप-लाइन के काम को १९७७ तक पूरा कर डालना चाहते हैं।

प्रडहो खाड़ी के क्षेत्र में लगभग ९.६ अरब बैरल पेट्रोल होने का अनुमान है। यह अमरीका का सबसे बड़ा तेल-भंडार होगा। पाइप-लाइन पूरी हो जाने पर शुरू में तो उससे प्रतिदिन १२ लाख बैरल पेट्रोल वालडीज पहुंचेगा, जहां से उसे अमरीका के पश्चिमी तट पर स्थित तेल-शोधक कारखानों को भेजा जायेगा। बाद में यह मात्रा २० लाख बैरल प्रतिदिन हो जायेगी।

यह पेट्रोल अमरीकी अर्थ-व्यवस्था को मजबूत बनायेगा; और अलास्का का तो नक्शा ही बदल देगा। १९८० तक पेट्रोल की रायल्टी और करों से अलास्का को सालाना एक अरब डालर प्राप्त होने लगेंगे—अभी तो इस राज्य का वार्षिक बजट इससे आधा है। सो पाइप-लाइन की बदौलत अलास्का विकसित प्रदेशों की श्रेणी में पहुंच जायेगा और रोजगार की वृद्धि वहां समृद्धि के नये आयाम खोल देगी।

छह अरब डालर लागत की यह पाइप-लाइन प्रायोजना निजी क्षेत्र की सबसे महंगी प्रायोजना है और अमरीका की आठ बड़ी कंपनियां १९७७ तक इसे पूरा कर देने को कृतसंकल्प हैं।

प्रायोजना जितनी महत्त्वाकांक्षापूर्ण है उतनी ही खतरनाक भी है। प्रडहो खाड़ी के समुद्र-तल से पाइप-लाइन धीरे-धीरे ४,८००' फुट की ऊंचाई तक चढ़ेगी, फिर राह की ३४ नदियों को लांघती हुई वालडीज पहुंचेगी। और खतरे? अब तक इस कार्य में ४० से अधिक लोगों की मृत्यु हो चुकी है। काम वैसे ही कठोर, अलास्का के मौसम ने उसे कठोरतर बना दिया है। गर्मियों में खून चूसने वाले मक्खी-मच्छरों का क्लेश और शेष मौसम में बर्फीली हवाओं के थपेड़े। सर्दी इतनी उग्र कि कभी-कभी तापमान-७०° फा. से भी नीचे पहुंच जाता है। बुलडोजरों के इंजन चौबीसों घंटे चालू रखे जाते हैं—अन्यथा उनके जम जाने का खतरा है। चेहरा खुला रह जाये तो क्षणों में शीत-दंश का शिकार हो जाये! श्रमिकों के हाथ-पांव ठंड से अकड़कर टूटना सामान्य बात है। एक बुलडोजर का पेट्रोल समाप्त हो गया। ड्राइवर ने पैदल ही शिविर तक पहुंचने का निश्चय किया। अगले दिन सवेरे शिविर से सिर्फ १०० गज की दूरी पर वह ठंड से अकड़कर मरा हुआ पाया गया।

इन तमाम खतरों को झेलते हुए श्रमिकों को रोज १० से १२ घंटे तक काम करना पड़ता है। और सप्ताह के सातों दिन काम चलता है। नौ सप्ताह तक कोई छुट्टी नहीं। मगर इस सबके बावजूद पाइप-लाइन पर काम करने के लिए आने वालों की कतार बढ़ती ही जा रही है। आखिर क्यों? कारण बहुत साधारण है—धनवान बनने की आकांक्षा। पाइप-लाइन पर काम मिलने का अर्थ है अर्थ-चिंता से मुक्ति। जिन्हें यहां काम मिल गया है, वे प्रतिमास छह हजार डालर से अधिक ही कमा रहे हैं। और वेतन की

दरें निरंतर बढ़ रही हैं। श्रमिकों ने हड़ताल न करने का वादा किया है और बदले में उन्हें मिला है भारी वेतन और ढेरों सुविधाएं।

इससे अलास्का में एक नयी समस्या उठ खड़ी हुई है। लोग लगी हुई नौकरियां छोड़कर पाइप-लाइन की नौकरी पाने के लिए दौड़ रहे हैं। सन १९७४ की पहली छमाही में अलास्का नेशनल बैंक के १८० कर्मचारियों में से १०४ 'पाइप-लाइन की नौकरी' में चले गये। वेतन और अन्य शर्तों के इतना आकर्षक होने का कारण है इस योजना को निर्धारित समय में जैसे भी हो पूरा कर देने का ठेकेदारों का संकल्प। अन्यथा भयंकर गति से बढ़ती महंगाई और मुद्रास्फीति उनके लिए इसे घाटे का सौदा बना देगी।

सौदे की बात से याद आया। सारा अलास्का एक ऐसा सौदा था, जिसे कभी अमरीकियों ने घाटे का सौदा समझा था। सन १७४१ में पहले पहल रूसी यात्री अलेक्सांदर चिश्किोव अलास्का पहुंचा था और तब से लगभग सवा सौ साल तक इस भूभाग पर रूसियों का प्रभुत्व रहा। १८६७ में अमरीकी विदेश-मंत्री विलियम सीवार्ड ने रूस से इसका सौदा किया और ७२ लाख डालर में अर्थात् २ सेंट प्रति एकड़ के भाव से अलास्का अमरीका का हो गया।

तब से अभी हाल तक अलास्का का इतिहास अव्यवस्थित विकास की कथा है। विशालता, प्रतिकूल जलवायु और ऊबड़-खाबड़ जमीन के कारण सिलसिले से इसका विकास हो नहीं सका। बाहर से लोग आये तो सही, मगर लुटेरों की तरह। आये और सोना, सील मछलियां आदि जो कुछ मिला लूटकर चले गये। यहां का सबसे बड़ा प्रतिष्ठान है सरकार। २५ प्रतिशत आबादी सरकारी कर्मचारियों और सैनिकों की है। बेरोजगारी का प्रतिशत यहां अमरीका के अन्य भागों से दुगुना हैं। ९० प्रतिशत खाद्यान्न बाहर से आता है और निर्मित माल तो लगभग सारा ही। इसलिए महंगाई स्वाभाविक स्थिति है। औद्योगिक उत्पादन न के बराबर है; इसलिए करों से राज्य सरकार को होने वाली आय भी न के बराबर ही है।

सन १९५९ में अलास्का को राज्य का दर्जा मिला। साथ ही एक उपहार भी मिला—कुल २७ करोड़ ५० लाख एकड़ सरकारी जमीन में से १० करोड़ ३० लाख एकड़ जमीन अपने लिए चुनने का अधिकार। राज्य सरकार ने अपने लिए जो जमीन चुनी उसमें उत्तरी ढलान पर की २० लाख एकड़ जमीन भी थी। यही जमीन आज अलास्का की समृद्धि का स्रोत बन रही है। इसके नीचे पेट्रोल था। कई दशकों से एस्किमो लोग धरती में से रिसने वाले इस पेट्रोल का उपयोग करते आ रहे थे। फिर व्यावसायिक स्तर पर उसकी खोज शुरू हुई। अटलांटिक रिच फील्ड और ब्रिटिश पेट्रोलियम नामक कंपनियों ने तेल खोजने के अधिकार बहुत सस्ते में खरीदे थे। पर १९६३ से १९६८ के बीच १५ करोड़ ५० लाख डालर कम

करने पर भी तेल के सूखे कुएं ही उनके हाथ लगे। ब्रिटिश पेट्रोलियम ने हाथ खींच लेने का निश्चय कर लिया। अटलांटिक रिच-फील्ड ने अंतिम प्रयास किया और १८ फरवरी १९६८ को तेल मिल गया।

उन्नीस कंपनियों ने ९० करोड़ डालर में उत्तरी ढलान पर की ४,५१,००० एकड़ जमीन के अधिकार खरीद लिये। मगर पाइप-लाइन का काम फिर भी शुरू नहीं हो पाया। वातावरण-प्रदूषण से रक्षा के नाम पर कुछ लोगों ने अदालत का दरवाजा खटखटाया। पांच वर्ष तक काम रुका रहा। फिर १९७३ में अमरीकी कांग्रेस ने पाइप-लाइन-निर्माण विधेयक पारित किया और अप्रैल १९७४ में काम शुरू हो गया।

पाइप-लाइन के पूरी होने में अभी वक्त है। परंतु अलास्का का नक्शा बदलना शुरू हो गया है। पाइप-लाइन के आकर्षण से खिचकर अमरीका के विभिन्न भागों से आये लोग, उनकी आदतें, उनकी परंपराएं इन सबने मिलकर वहां की हवा ही बदल दी है। उसका समूचा सामाजिक ढांचा ही

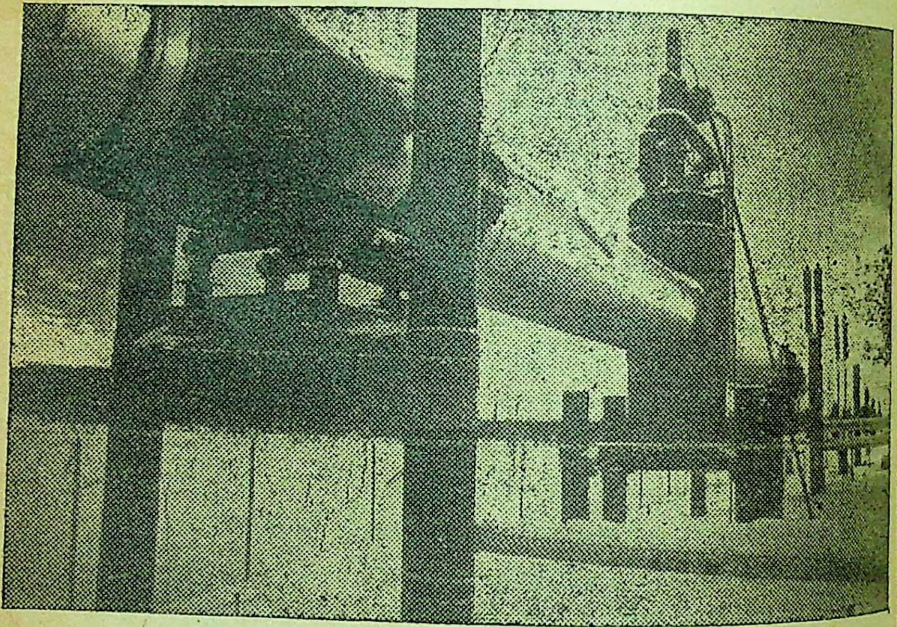

फेयरबैंक्स के निकट १२१ सें. मी. व्यास की पाइप-लाइन का एक खंड। अग्रभूमि में वाल्व है। पाइप में कहीं भी तेल का दबाव १ प्र. श. जितना भी घटे तो वालदीज में रखे हुए इलेक्ट्रानिक संवेदक पहचान लेते हैं।

बदल रहा है। उसके गवर्नर जे. एस. हेमंड का तो कहना है—'अब हम अलास्का के वर्तमान स्वरूप को बनाये नहीं रख सकते। हमें अपने जीवन की कुछ विशेषताओं और स्वतंत्रता को खोना ही पड़ेगा।'

अलास्का धनवान बन रहा है। साथ ही महंगाई भी बढ़ रही है। यातायात एक समस्या बनता जा रहा है। आवास का सवाल गंभीर होता जा रहा है। लोगों का स्वभाव बदलने लगा है। अलास्का के एक वरिष्ठ पत्रकार के अनुसार, 'यहां रहते हुए कोई इसकी (पाइप-लाइन की) अवहेलना नहीं कर सकता। इसने सबको हर स्तर पर प्रभावित किया है। इसने किसी को अछूता नहीं छोड़ा।'

परंतु पाइप-लाइन के निर्माण की भी अपनी समस्याएं हैं। पहली समस्या स्वयं पेट्रोल है। जब वह धरती से निकलेगा तो उसका तापमान होगा १८०° फारनहाइट, और १४०° फारनहाइट तापमान पर वह पाइप में बहेगा। यह ऊंचा तापमान इस क्षेत्र की वनस्पति के लिए घातक होगा। इसलिए पाइप को आवश्यकतानुसार जमीन में ३ फुट से १२ फुट नीचे तक गाड़ा गया है। लेकिन ३८२ मील तक पाइप जमीन से ४ फुट ऊपर रहेगा।

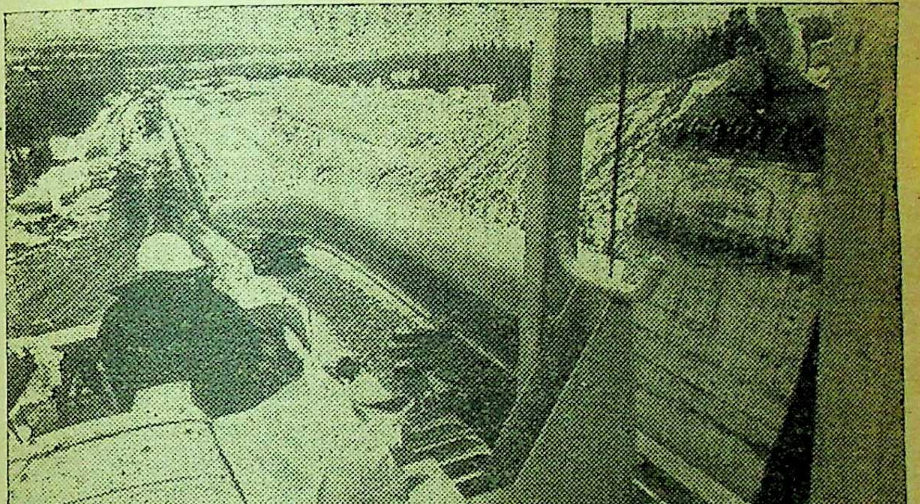

पाइप-लाइन का निरीक्षण निरंतर मुस्तैदी से चलता रहता है।

हर साल वसंत में यहां के कैरियू बारहसिंगे स्थान-परिवर्तन करते हैं। कॉपर रिवर वैली में से होकर उनका रास्ता जाता है। उनकी राह में बाधा न पड़े, इसके लिए इस क्षेत्र में पूरे सात मील तक पाइप-लाइन जमीन के भीतर रहेगी। और शाश्वत हिम (पर्मा-फ्रास्ट) पिघले नहीं, इसके लिए इसी क्षेत्र में पाइप-लाइन को खारे पानी से भरी नालियों से ढंक दिया जायेगा।

पाइप-लाइन ऐसे तीन प्रदेशों से होकर गुजरती है, जहां भूकंप की आशंका हमेशा बनी रहती है। इन हिस्सों में पाइपों के फटने का भी खतरा है। इससे बचाव के लिए पाइप-लाइन को मानव-पहाड़ियों के ऊपर से ले जाया जायेगा। यही नहीं, यदि पाइप में दबाव में १ प्रतिशत की भी कमी आयी तो इलेक्ट्रानिक उपकरण तत्काल पता लगा लेंगे और वालडीज में बैठे इंजीनियर सात मिनिट के भीतर ही उसे बंद कर सकेंगे।

कुछ वैज्ञानिकों ने आशंका प्रकट की है कि पाइप-लाइन के कारण नदियों के बहाव में बदलाव होगा। अन्य कुछ मत्स्य-जीवन के प्रभावित होने की संभावना से चिंतित हैं। कुछ को चिंता है कि पाइप के साथ-साथ बनायी गयी सड़क अलास्का को 'मनुष्य की पशुता' का शिकार बनायेगी।

परंतु सबसे बड़ा खतरा तो शायद राज्य के अनियंत्रित विकास का है। पाइप-लाइन का निर्माण एक अर्थशास्त्री के अनुसार 'एक ऐतिहासिक त्रासदी' है। अलास्का में बेरोजगारी बढ़ती जा रही है, अपराध बढ़ रहे हैं। (इसी वर्ष के प्रथम तीन महीनों में वहां हत्या, बलात्कार और डकैती के मामलों में १२ प्रतिशत वृद्धि हुई।) और तो और, कानून और व्यवस्था बनाये रखने के लिए भी आदमी नहीं मिल रहे हैं। पाइप-लाइन के लिए काम करना आर्थिक दृष्टि से कहीं अधिक लाभप्रद है।

पाइप-लाइन को पारिवारिक कलहों का भी कारण बताया जा रहा है। एक पादरी के अनुसार, 'नौ सप्ताह के बाद पुरुष थके-मांदे घर लौटते हैं—शारीरिक और भावनात्मक दोनों दृष्टियों से बिलकुल रीते। उनके पास खर्चने के लिए ख़ूब पैसा होता है, पर पारिवारिक दायित्व निभाने की शक्ति उनमें नहीं बचती।'

क्या पाइप-लाइन का महत्त्व इन सब समस्याओं से भी अधिक है? शायद हां। शायद नहीं। 'नहीं' इसलिए कि जीवन के आर्थिक पहलू के समक्ष अन्य सभी पहलुओं का बलिदान हो रहा है और 'हां' इसलिए कि विकासयात्रा के इस चरण में आर्थिक समृद्धि जीवन और विकास का आधार बन चुकी है। पाइप-लाइन के पूरा हो जाने के बाद अलास्का सारे अमरीका के लिए शक्ति का स्रोत बनेगा। अलास्का में इतना ईंधन है कि वह १८०० वर्षों तक पूरे अमरीका की आवश्यकता-पूर्ति कर सकता है। किंतु प्राकृतिक स्रोतों का दोहन इस पाइप-लाइन पर ही आधारित है। समृद्धि और वैभव की इस सीढ़ी पर चढ़ने के लिए अलास्का भविष्य की हर समस्या को स्वीकारने के लिए तैयार है।

★

स्मृति के अंकुर

सन १९६५ में मैं [illegible] (जि. संथाल परगना, बिहार) आवासीय विद्यालय में प्रधानाध्यापक था। आस-पास की बस्ती आदिवासी संथालों की थी। संथालों के जीवन पर मैं उपन्यास भी लिख रहा था, इस सिलसिले में प्रायः संथाल-बस्तियों का दौरा करता था। शनिवार का आधा दिन और रविवार का पूरा दिन गांवों के दौरे में व्यतीत होता।

नवंबर का महीना [illegible] लय के सहायक शिक्षक श्री शैलेंद्र ठाकुर और मैं घूमते-घामते लगभग ३ बजे अपराह्न कोंगा-बेड़ा गांव पहुंचे। वहां एक भी आदमी नजर नहीं आया। हम चकित-से खड़े रहे। फिर एक बालिका, जो मेरे विद्यालय में आठवीं की छात्रा थी, अपने घर से बाहर निकली और हमें खड़ा देखकर जल्दी से अपने घर के अंदर चली गयी।

मैंने ठाकुरजी से कहा–'सब लोग घरों में ही हैं, लेकिन बाहर नहीं निकलते। हमारा आना शायद इन्हें पसंद नहीं आया...।

वे बोले–'आखिर संथाल ही हैं न मास्टर साहब ! अभी आदमी बनने में इन्हें काफी समय और लगेगा ...।' इसलिए गांव की गलियों की ओर न जाकर हमने वृंदावन की राह पर पग बढ़ाये। तभी वही लड़की दौड़कर आयी और बोली–'महाशय, मेरी गोड़ोम (दादी) आप लोगों से बात करना चाहती है। किवाड़ की ओट में खड़ी आप लोगों की राह देख रही है।'

लड़की उस गांव के मुखिया की बेटी थी। हम उसके यहां पहुंचे। बरामदे में खटिया बिछायी गयी थी और उस पर बहुत ही सुंदर एवं स्वच्छ चादर बिछी थी। खाट पर बैठ गये और घर की सुव्यवस्था को निहारते रहे। पुआल-मिट्टी का घर सफाई में अच्छे-अच्छे पक्के मकानों को मात दे रहा था।

लगभग सत्तर-पचहत्तर वर्ष की एक महिला अपनी पोती के साथ बाहर निकली। हाथकरघे पर बुनी मोटी सफेद साड़ी पहने

अब आपको अपने बच्चे को बेकार एल्कोहॉल देने की ज़रूरत नहीं

शार्कोफ़ेरॉल के होते हुए आपको अपने बच्चे के खामख्वाह एल्कोहॉल पर चलने की कोई ज़रूरत नहीं। अधिकांश टॉनिकों का आधार या तो माल्ट होता है या एल्कोहॉल। इने गिने माँ बाप ही यह फर्क जानने का कष्ट उठाते हैं। कम से कम आपको यह फर्क पहचान कर उस पर अमल करना चाहिये। विश्व भर के डाक्टरों का यह मत है कि एल्कोहॉल में कोई भी स्वास्थ्य वर्द्धक गुण नहीं है, किंतु माल्ट में है।

Sharkoferrol®

भारत का सबसे अधिक बिकने वाला टॉनिक

शार्कोफ़ेरॉल के हर चम्मच में अन्य
टॉनिक से अधिक मात्रा में विटामिन ए
तथा आवश्यक बी कॉम्प्लेक्स होते हैं।
पोषक लोह तत्त्व, मजबूत हड्डियों के लि
कैल्शियम तथा शक्तिदायक मॉल्ट
आधारित शार्कोफ़ेरॉल बढ़ते बच्चों की
बढ़ाता है। वे तो इसे उँगलियाँ चाट
कर खाते हैं।

शार्कोफ़ेरॉल®

शरीर विकास का उत्तम साधन

एलेम्बिक का विश्वसनीय उत्पादन Alembic

शार्कोफ़ेरॉल
शक्ति से भरपूर टॉनिक

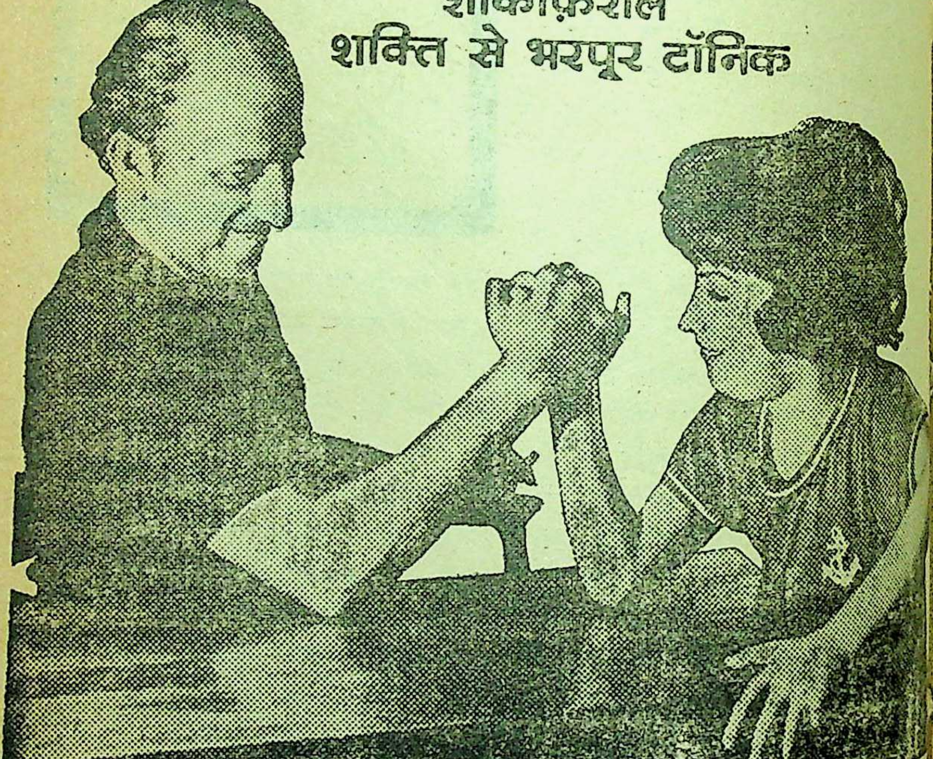

हुए थी वह । बाल एकदम काले थे । दांत मजबूत और सही-सलामत । शरीर काफी सबल । उसके बायें हाथ में पानी से भरा लोटा था और दायें हाथ में एक छोटी-सी थाली थी । वह हमारे करीब आयी और उसने पहले मेरे पैर के पास अपनी खाली थाली रखी । बारी-बारी से उसने हमारे पैर धोये । मुझे तब पता नहीं था कि संथालप्रथा के अनुसार मुझे उस थाली में कुछ पैसे रखने चाहिये । खैर वृद्धा ने बड़ी आत्मीयता से स्वागत का पहला विधान समाप्त किया ।

मैंने पूछा—'मुखिया को नहीं देख रहा हूं, क्या घर में कोई और नहीं है ...... ?'

बोली—'सब घर में ही हैं, लेकिन सबने हंडिया (एक प्रकार की शराब) पी ली है । आपके सामने आते लजा रहे हैं । पहली बार मरांग महाशय गांव आये हैं, हमें नशे की हालत में देखकर भला क्या कहेंगे !' ठाकुरजी मेरी ओर देख रहे थे और मैं ठाकुरजी की ओर ।

बुढ़िया कुछ क्षण रुककर बोली—'थोड़ा भैंस का दूध लाती हूं, तुम बहुत थके-से मालूम पड़ते हो ...... ।'

मैंने कहा—'उसकी जरूरत नहीं । मैं भैंस का दूध पीता भी नहीं ।'

'तब थोड़ा चूड़ा लाती हूं ।'

'मैं खा-पीकर आया हूं, किसी चीज की जरूरत नहीं ।'

'तो थोड़ा खेंजड़ी (मूढ़ी) ही खाओ ।'

'कुछ भी नहीं ।'

मेरी इस ना-ना पर वह बोली—'मरांग महाशय ! आज पहली बार हमारे गांव और फिर मेरे घर आये हो, बिना कुछ खाये चले जाओगे ? ...... हम लोग संथाल हैं, इसीलिए मेरे घर में खाना नहीं चाहते हो..... ।' उसकी आंखों में आंसू आ गये, उसका गला भर आया ।

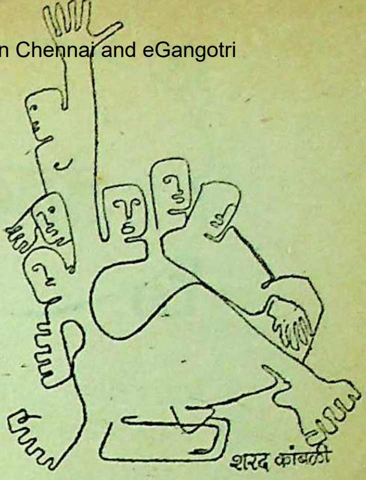

चित्र : शरद कांबळी

मैंने कहा—'ऐसी बात नहीं है गोड़ोम ! मुझे खाने की इच्छा नहीं है । फिर भी मैं थोड़ी-सी मूढ़ी खाऊंगा ...... ।'

मेरे इस वाक्य से जाने उस वृद्धा को कितनी खुशी हुई, कह नहीं सकता । लगभग आधे घंटे के बाद मैंने देखा कि मेरे सामने दो सुंदर प्यालों में अति स्वादिष्ट चाय और मूढ़ी रखी थी ।

मैं बुढ़िया के उस असीम प्रेम के भार से दब गया । वह प्रेम शब्दों में व्यक्त करने की नहीं, हृदय के प्रकोष्ठ में सहेजकर रखने की चीज है—अनमोल और चिरनवीन ।

—भूजेंद्र आरत, संथाल परगना, बिहार

★

लेखक-संपादक

प्रकाशक ने एक किताव छापी ! नाम था–'बिल्लियां'। किताब तेजी से बिकने लगी। एक दुकानदार के यहां किताब खत्म होने को आयी, तो उसने प्रकाशक को तार दिया–'एक सौ "बिल्लियां" भेजो।' विनोदी प्रकाशक ने दुकानदार को तार से यह उत्तर दिया–'सौ "बिल्लियां" भेज दी हैं। क्या आपके शहर में इतने ज्यादा चूहे हैं ?'

○○○

एक कवि काफी समय से विभिन्न पत्रिकाओं को अपनी कविताएं भेजता आ रहा था, लेकिन वे कभी छपी नहीं। कभी किसी पत्रिका से उसे कोई जवाब भी नहीं मिला था। उसे बहुत निराशा हुई, हालांकि उसे अपनी प्रतिभा पर पूरा भरोसा था।

एक दिन उसने अपनी बहुत-सी कविताएं एक बड़े लेखक के पास उसकी राय जानने के लिए भेजीं और साथ में पत्रिकाओं के खिलाफ लंबी-चौड़ी शिकायतें करते हुए लिखा–'ऐसा लगता है कि सभी पत्रिकाओं ने मेरे खिलाफ चुप रहने की साजिश कर रखी है। बताये, मैं क्या करूं ?'

जवाब में उस लेखक ने लिखा–'आप भी उस साजिश में शामिल हो जाइये।'

○○○

एक पत्रिका के संपादक को किसी नेता-किस्म के व्यक्ति का राजनैतिक किस्म का लेख मिला। संपादक ने लेख पढ़ना शुरू किया, तो पाया कि उसमें विराम-चिह्न लगभग नहीं के बराबर थे। इससे लेख पढ़ने में बड़ी दिक्कत होती थी और लेखक के विचार स्पष्ट नहीं हो पाते थे। वैसे भी, बड़े उलझे-उलझे विचार थे और उनमें कोई तुक नजर नहीं आती थी। संपादक ने इन सब बातों का जिक्र करते हुए लेख वापस भेज दिया।

कुछ ही दिनों में लेख लौट आया। उसके साथ एक पत्र था, जिसमें लिखा था–'संपादक हैं आप विराम-चिह्न लगा लीजिये खुद ही और भी छोटा-मोटा सुधार कर लीजिये हां विचारों में कोई तब्दीली न होने पाये।'

★

वापसी

अर्विन शॉ की अंग्रेजी कहानी

ट्रकों की पूरी कतार मैंडेलीन के बगल वाले स्क्वायर की ओर घूम गयी। दरख्तों के नजदीक ट्रक रुक गये। वे धूल की उस मोटी परत से आच्छादित थे, जो उन्होंने नारमंडी से वापसी के दौरान रास्ते में जमा कर ली थी।

ट्रकों के इंजनों के बंद होते ही अचानक सारे स्क्वायर में खामोशी छा गयी। ड्राइवर

अनुवाद : सत्येंद्र शरत्

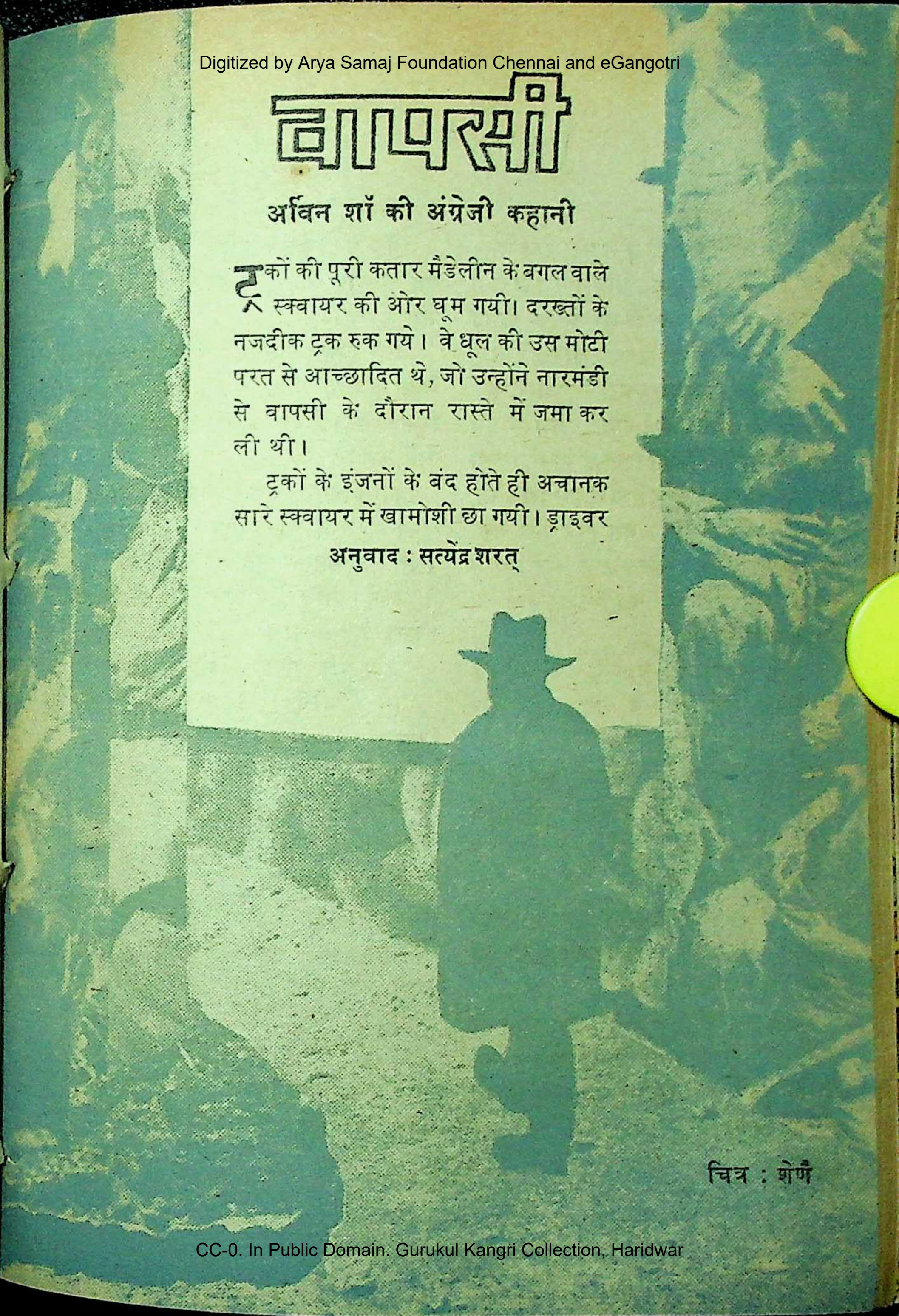

चित्र : शेणै

और सिपाही ट्रकों में सुस्ताने लगे। कैफे में छोटी-छोटी मेजों के इर्द-गिर्द बैठे व्यक्ति भावरहित चेहरों से मैडेलीन के ग्रीक कालम के दरख्तों के नीचे खड़ी जंग से ताजा लौटे उन ट्रकों को देखने लगे।

सबसे अगली गाड़ी में से एक प्रौढ़ मेजर धीरे-से उतरकर बाहर आया। धूल से सना था वह। उसकी वरदी का कलफ बिगड़ चुका था। कुछ देर वह मैडेलीन की ओर देखता रहा, फिर मुड़कर धीरे-धीरे कैफे बर्नार्ड की ओर चलने लगा। सोच में डूबे होने के कारण उसकी चाल धीमी थी। ट्रकों में बैठे सिपाही तटस्थ भाव से उसे देखते रहे, मानो वर्षों से उसे जानते हों। कुछ लोग गाड़ियों से बाहर निकल आये और धूप में सड़क की पटरी पर चित लेटकर सोने का उपक्रम करने लगे।

कैफे बर्नार्ड की मेजों के इर्द-गिर्द बैठे व्यक्तियों को मेजर ने उसी ठंडी और विचार-मग्न दृष्टि से देखा, जैसे उसने मैडेलीन को देखा था। वे लोग भी उसी सहमी दृष्टि से बिना पलक झपकाये उसे देखते रहे, जिस दृष्टि से वे पिछले चार वर्षों से जर्मनों को देखते आये थे।

मेजर उस मेज के सामने रुक गया, जहां सीगल बियर का आधा गिलास हाथ में लिये अकेला बैठा था।

'मेरे यहां बैठने में तुम्हें कोई एतराज तो न होगा?' मेजर ने सीगल की बगल में पड़ी खाली कुर्सी की ओर हाथ का हल्का-सा इशारा किया।

'शौक से बैठिये,' सीगल ने कंधे सिकोड़े-'भला मुझे क्या एतराज होगा।'

मेजर ने बैठते हुए आवाज लगायी-'वेटर, दो बियर!' और जान-बूझकर अपने पैर सीगल के सामने फैला दिये।

'मैं इस "ड्रिंक" के लिए किसी सिविलियन के साथ बैठना चाहता था।' मेजर ने फ्रेंच में कहा।

वेटर बियर ले आया। 'यह जाम तुम्हारी सेहत के लिए!' कहते हुए मेजर ने अपना गिलास उठा लिया। सीगल ने अपना। दोनों पीने लगे।

अपना गिलास एक सांस में लगभग खत्म करके मेजर ने चारों ओर की इमारतों को देखते हुए कहा-'बहुत ही सुंदर शहर है। मैं अपने आखिरी "ड्रिंक" के लिए यहीं रुकना चाहता था।'

'आप मोर्चे पर थे?' सीगल ने पूछा।

'हां, मैं मोर्चे पर था।' मेज़र ने उत्तर दिया।

'और अब आप वापस जा रहे हैं?'

'हां, अब मैं वापस जा रहा हूं', मेजर ने कहा-'फ्रंट अब पीछे हट रहा है।' उसकी आवाज में कुछ तीखापन आ गया था। अपनी शेष बियर खत्म करके सीगल की ओर देखते हुए उसने कहा-'जल्दी ही अमरीकी यहां होंगे। यह बात तुम्हें कैसी लगती है?'

सीगल के चेहरे पर बेचैनी उभर आयी-'आप सचमुच ही किसी पेरिसवासी से इस सवाल का सही जवाब नहीं चाहते हैं न?

......या कि चाहते हैं?'

'नहीं', मेजर ने मुस्कराते हुए कहा—'शायद नहीं। हालांकि यह बुरी ही बात है कि अमरीका को दखल-अंदाजी करनी पड़ी है। पर खैर, इस बात पर चिंता प्रकट करने का समय तो बीत चुका।' युद्ध के धुएं और धूल से ढंका उसका चेहरा अब थका-थका-सा, लेकिन साथ ही शांत, विवेकपूर्ण और किसी अध्येता का-सा प्रतीत हो रहा था। वेटर की ओर इशारा करके, उसने कहा—'...... दो बियर और!' फिर सीगल की ओर मुड़कर बोला—'मेरे साथ दूसरी बियर पीने में उज्र तो नहीं?'

सीगल ने तोप और मशीनगनों से लदी ट्रकों और उनके आस-पास बिखरे दो सौ आदमियों की ओर दृष्टि डाली और अपने कंधे सिकोड़े। उसका अभिप्राय स्पष्ट था—मेरी जुर्रत कहां कि मैं इन्कार कर सकूं?

मेजर ने कहा—'नहीं, मैं सपने में भी ज़र्मन सेना का इस्तेमाल किसी पेरिसवासी को मेरे साथ बैठकर बियर पीने को मजबूर करने के लिए नहीं करूंगा।'

सीगल ने कहा—'जब से जर्मनों ने पेरिस पर कब्जा किया है, मैंने न किसी जर्मन से बात की है, न उसके साथ बैठकर बियर पी है। चार वर्ष हो गये। मेरा खयाल है कि आपका यह प्रस्ताव मुझे ठुकराना नहीं चाहिये—कम से कम यह अनुभव तो मैं पा सकूंगा कि किसी जर्मन के साथ बैठकर बियर पीना कैसा होता है। शायद इसके अनुभव का दूसरा कोई मौका हम पेरिसवालों को अब नहीं मिलेगा।'

मेजर ने सीगल के व्यंग्य की ओर ध्यान नहीं दिया। वह उसी शांत दृष्टि से अपने सिपाहियों और शस्त्रों की ओर देखता रहा, जैसे उनके और उसके बीच का संबंध कटु, असंतोषपूर्ण और पीड़ामय होने के बावजूद भी टूटने वाला न हो। तब उसने धीमे-से सीगल से कहा—'तुम यहूदी हो! हो न?'

अपने हाथों की कंपकंपी छिपाने के लिए सीगल ने उन्हें नीचे कर लिया। उसकी कुहनियां, शरीर और घुटनों के बीच भय और घबराहट की लहरें तेजी से दौड़ने लगीं—ठीक उसी तरह से जिस तरह कि १९४० के बाद से इस शब्द के सुन-भर लेने पर प्रतिदिन, प्रति घड़ी उसके शरीर में दौड़ा करती थीं।

वेटर ने बियर के दो गिलास मेज पर सजा दिये। मेजर ने अपना गिलास उठाया और कहा—'यह भी तुम्हारी सेहत के लिए! ...... पियो। रुक क्यों गये?'

सीगल ने अपने खुश्क ओंठ बियर से गीले किये।

'तुम मुझे तो सच बता ही सकते हो', मेजर ने कहा—'यदि तुम खामोश रहोगे, तो यह तुम भी जानते हो कि मेरे लिए दुनिया में इससे ज्यादा आसान काम कोई न होगा कि मैं किसी सार्जेंट को बुलाकर उसे तुम्हारे कागजात देखने का आदेश दूं ......।'

'हां', सीगल ने लड़खड़ाते हुए कहा—'मैं यहूदी हूं ......'

'मुझे पता था, इसीलिए मैं तुम्हारे पास

बैठा।' सीगल की ओर दृष्टि जमाते हुए मेजर बोला—'मेरे दिमाग में कई सवालात थे। मेरे खयाल से औरों की अपेक्षा तुम मुझे उनके बेहतर जवाब दे सकते हो।'

'आपके सवाल..... क्या हैं?' सीगल ने बोलने में कठिनाई महसूस की।

मेजर ने कहा—'कोई जल्दी नहीं, मेरे सैनिक कुछ और इंतजार कर सकते हैं।' फिर सीगल की ओर एक कुतूहल-भरी दृष्टि डालते हुए प्रश्न किया—'तुम्हें पता है, फ्रांस में यहूदियों का कैफे में प्रवेश करना निषिद्ध है?'

चित्र : मर्विन पीक

'मुझे मालूम है।' सीगल ने उत्तर दिया।

'और यह भी कि सब यहूदियों को यह आदेश दिया गया है कि वे अपने कोटों पर पीला सितारा लगायें......'

'हां!'

'लेकिन तुमने तो पीला सितारा भी नहीं लगा रखा है! साथ ही तुम दिन-दहाड़े कैफे में मजे से बैठे हुए बियर पी रहे हो!'

'हां।'

'तुम तो खासे हिम्मती हो।' मेजर की आवाज में हल्का व्यंग्य था—'क्या कैफे में बैठकर "ड्रिंक" पीने के लिए अपनी जान खतरे में डाली जा सकती है?'

सीगल ने कंधे सिकोड़े और अपनी सफाई दी—'नहीं, मैं "ड्रिंक" के लिए यहां नहीं बैठा था। शायद आप न समझ सकेंगे। मैं... मैं यहीं पेरिस में पैदा हुआ और मैंने अपनी पूरी जिंदगी इस कैफे जैसी जगहों में, इन बुलिवारों पर ही विचरण करते हुए काटी है......'

'तुम्हारा नाम क्या है मिस्टर?'

'सीगल!'

'तुम जीविका के लिए क्या करते हो मिस्टर सीगल?'

'मैं संगीतज्ञ था।'

'ओह!' जर्मन मेजर के स्वर में अचानक ही आदर का भाव उत्पन्न हो गया—'तुम कौन-सा वाद्य बजाते थे?'

'सैक्सोफोन।' सीगल ने कहा—'जाज आर्केस्ट्रा में। लेकिन चार वर्ष से मैंने कभी कुछ नहीं बजाया है। शायद मैं सैक्सोफोन के लिए ज्यादा बूढ़ा हो गया था और जर्मनों ने मुझे अनायास ही अपने इस बाजे को इज्जत के साथ त्यागने का अवसर प्रदान कर दिया। इसके बावजूद मैं इस कैफे को नहीं छोड़ सका। जरा सोचिये, जाज आर्केस्ट्रा के वादक के लिए उसकी जिंदगी, उसका स्टूडियो, उसका क्लब, उसकी लाइब्रेरी, उसके व्यापार की जगह, उसका सभी कुछ कैफे ही तो है। अगर मुझे कैफे की टेरेस पर बैठकर पेरिस की छवि निहारते

की आजादी न हो तो मेरे लिए जिंदगी में बचता ही क्या है ? इससे तो कहीं अच्छा यह होगा कि मुझे किसी यातना-शिविर में ही भेज दिया जाये।'

'हर आदमी के देश-प्रेम का रूप दूसरे से कितना अलग, कितना भिन्न होता है !' मेजर बोला।

'मेरे खयाल से, मुझे अब चलना चाहिये।' सीगल ने उठते हुए कहा।

'थोड़ा और बैठो। मेरे पास अभी समय है', मेजर ने एक बार फिर अपने सैनिकों की ओर दृष्टि डाली—'हम शायद आधा-पौन घंटे के अंदर जर्मनी में होंगे। खैर ! तुम मुझे फ्रांसीसी लोगों के बारे में कुछ बताओ। हमने फ्रांसीसियों के साथ बुरा सलूक नहीं किया, फिर भी मैं महसूस करता हूं कि वे हमसे नफरत करते हैं—उतनी ही नफरत, जितनी कि रूसी हमसे करते हैं।'

'हां, यह सही है', सीगल ने कहा।

'विचित्र बात है !' मेजर ने कहा—'अपनी सैनिक आवश्यकताओं की सीमा में हमने उनसे बिलकुल सही तरीके से व्यवहार किया है।'

'आप ऐसा सोचते हैं, यह आश्चर्य की बात है ...... लेकिन क्या आप सचमुच इस बात पर विश्वास करते हैं ?' सीगल भूल गया था कि वह कहां है और किससे बातें कर रहा है।

'बिलकुल। मैं इस पर पूरी तरह विश्वास करता हूं।'

'और वे सब फ्रांसीसी, जिन्हें गोली मारी गयी ? ......'

'सेना का इस बात से कोई सरोकार नहीं था। वह हत्याकांड तो एस-एस .... गेस्टापो ......'

सीगल ने सिर हिलाया—'कितनी बार मैं यह बात सुन चुका हूं। खैर ! और जितने यहूदी मारे गये, वे भी शायद ......'

'सेना को इस संबंध में कुछ भी पता नहीं है', मेजर ने दृढ़ता के साथ कहा—'मैंने खुद आज तक कभी किसी यहूदी पर हाथ नहीं उठाया है, न ही उसका बुरा किया है...... न जर्मनी में, न पोलैंड में और न यहां फ्रांस में। मैं समझता हूं, आज इस जगह इसकी जांच बड़ी जरूरी हो जाती है कि किसने क्या किया। ......'

'क्यों ? यह जांच क्यों जरूरी हो जाती है ?'

मेजर ने अचानक अपनी आवाज धीमी करते हुए कहा—'हमें सचाई का सामना करना चाहिये......यह तो अब निश्चित ही है कि हम हार गये हैं ....'

सीगल मुस्कराया—'हां, यह इतना ही निश्चित है जितना यह कि सूरज कल सुबह छह बजे फिर निकलेगा।'

'काफी मात्रा में प्रतिशोध की—जिसे तुम न्याय कहते हो उसकी—मांग की जायेगी, यह सच है। मगर यह बात भी नहीं भुलायी जानी चाहिये कि हमारी सेना ने युद्ध के दौरान बहुत सभ्य तरीके से व्यवहार किया है।' मेजर बोला।

सीगल ने कंधे सिकोड़े—'मुझे तो याद

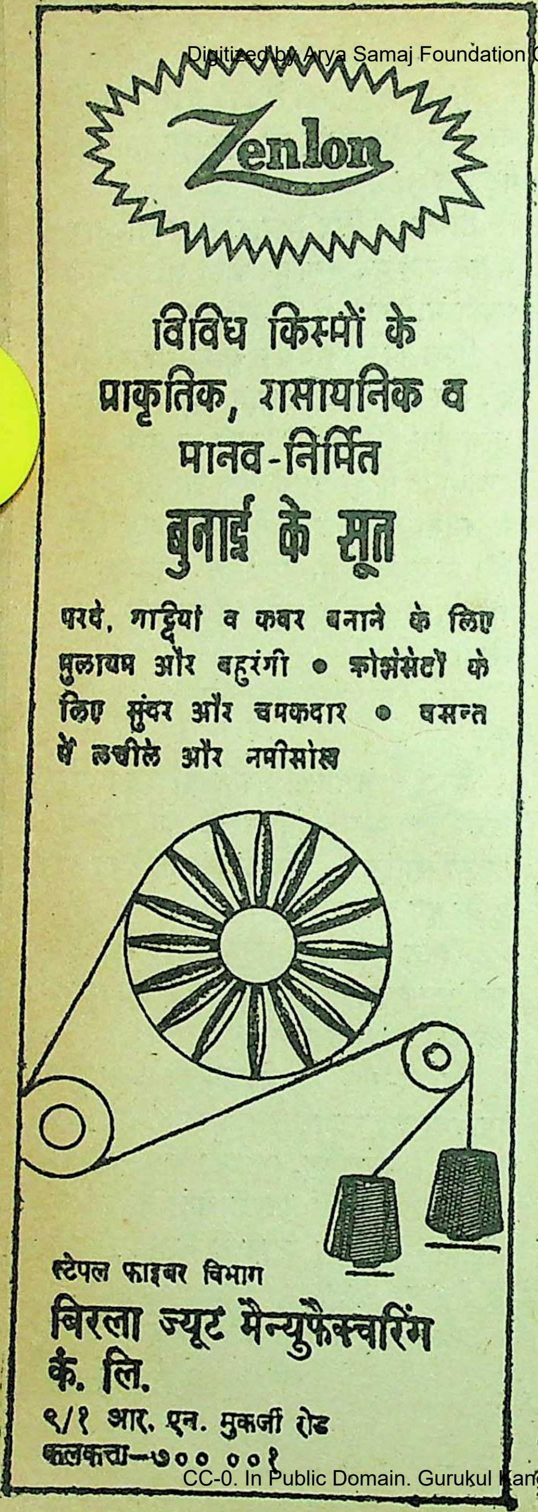

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक व
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गद्दियां व कवर बनाने के लिए मुलायम और बहुरंगी • कोसेटों के लिए सुंदर और चमकदार • बसन्त में लचीले और नमीसोख

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता—७०० ००१

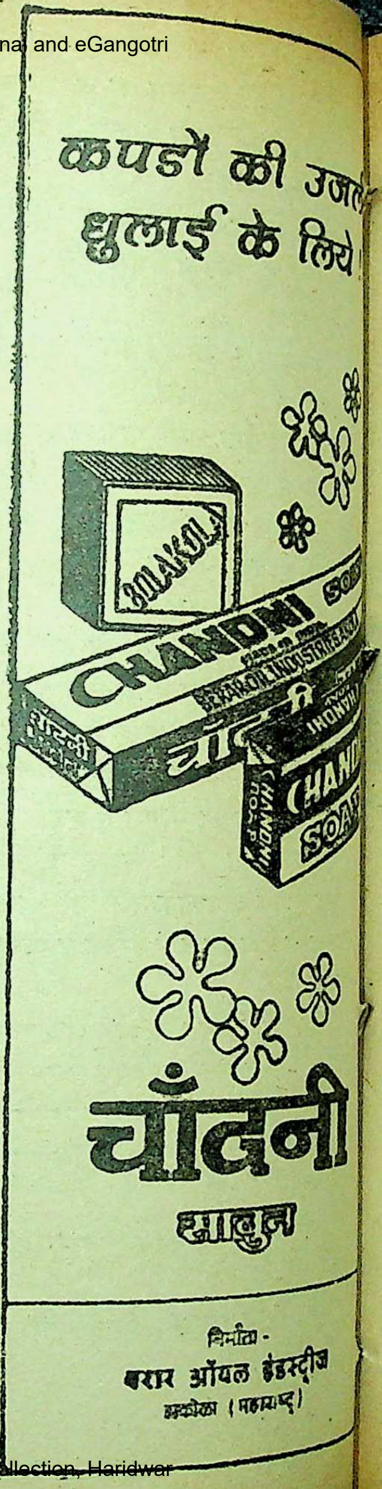

कपड़ों की उजल
धुलाई के लिये

CHANDNI SOAP
BERAR OIL INDUSTRIES AKOLA
चाँदनी

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

नहीं आ रहा है कि पेरिस में जर्मन सेना के आने से पहले मैंने कभी गेस्टापो देखे हों।'

'अपनी बात मत कहो। पूरे फ्रांस की बात कहो। तुम यहूदी हो। इसलिए तुम लोगों को अधिक सहना पड़ा है। यही कारण है कि तुम अधिक कटु हो। हालांकि बाकी यहूदियों के मुकाबले तुम ज्यादा मजे में रहे हो—यह स्पष्ट दिख रहा है।' मेजर ने कहा।

'मैं ज्यादा मजे में रहा हूं।' सीगल ने व्यंग्यपूर्वक कहा—'हां, मैं अभी तक जिंदा हूं, इसीलिए आप यह बात कह सके हैं। लेकिन आपको यह पता नहीं है कि मेरे दोनों भाई जर्मनों द्वारा मार डाले गये, मेरी बहन पोलैंड के किसी कोने-खुदरे में छिपी हुई है और मेरे रिश्तेदारों का नामो-निशान मिटा दिया गया है ...... लेकिन, इस पर भी आपके अनुसार मैं ''मजे में'' रहा हूं।'

सीगल ने अपना छोटा थैला निकालकर मेजर को दिखाया। 'डेविड का सितारा' एक पीले कार्ड और सूई-धागे के साथ उसमें लगा हुआ था। 'संकट की स्थिति में मैं छह टांके लगाकर यह ''डेविड का सितारा'' अपने कोट पर टांक लिया करता था।' उसने कहा। छोटा थैला बंद करके अंदर रखते हुए उसके हाथ कांपने लगे थे। वह कांपते स्वर में कहता रहा—'चार वर्ष मेजर! पूरे चार वर्ष, मैंने प्रतिक्षण यह प्रार्थना करते हुए बिताये हैं कि गेस्टापो द्वारा पकड़ लिये जाने पर उस संकट की घड़ी में भी मुझे कम से कम तीस सेकेंड अवश्य मिल जायें, ताकि मेरे कागजात देखे जाने से पहले मैं छह टांके लगाकर ''डेविड के सितारे'' को अपने कोट पर सी सकूं ... और आपके अनुसार मैं ''बड़े मजे में रहा हूं'' क्योंकि हमेशा ही मुझे वे तीस सेकेंड मिल गये .... और आपको पता है, मैं रात को कहां छिपता था? ......औरतों की जेल में। इसीलिए जब गेस्टापो मुझे ढूंढ़ने रात को मेरे घर आते थे, तो मैं उन्हें वहां नहीं मिलता था, क्योंकि उस समय जेल की किसी कोठरी में घटिया किस्म की औरतों के बीच बंद रहता था। यह व्यवस्था मेरी बीवी के कारण ही संभव हुई थी। वह कैथलिक थी और औरतों की जेल में नर्स थी। आपका सोचना बिलकुल ठीक है मेजर, मैं सचमुच ही ''बड़े मजे में रहा हूं,'' क्योंकि बाद में मेरी बीवी ने तंग आकर यह फैसला कर लिया था कि वह मुझसे तलाक ले लेगी ...... मैं उसे दोष नहीं देता मेजर! औरत के लिए इस तरह के जीवन को अधिक समय तक निभाना बहुत कठिन होता है। सो उसने मुझसे तलाक ले लिया। बड़ी सरलता से यह काम हो गया। अदालत में उसका इतना ही कहना काफी था कि मेरा पति यहूदी है...... हमारे तीन बच्चे हैं। साल से ऊपर हो गया है और मैंने उन्हें नहीं देखा है ...... कहिये, हूं न मैं ''बड़े मजे में!'' और आपकी प्रचार एजेंसियां, जिनका कि आपके कथनानुसार जर्मन सेना से कोई संबंध नहीं है! आपकी इन प्रचार-एजेंसियों ने भी बढ़िया काम किया है। फ्रांसीसी जर्मनों से घृणा करते हैं, किंतु लगातार चार वर्ष तक आपकी प्रचार

चित्रप्रश्न-४

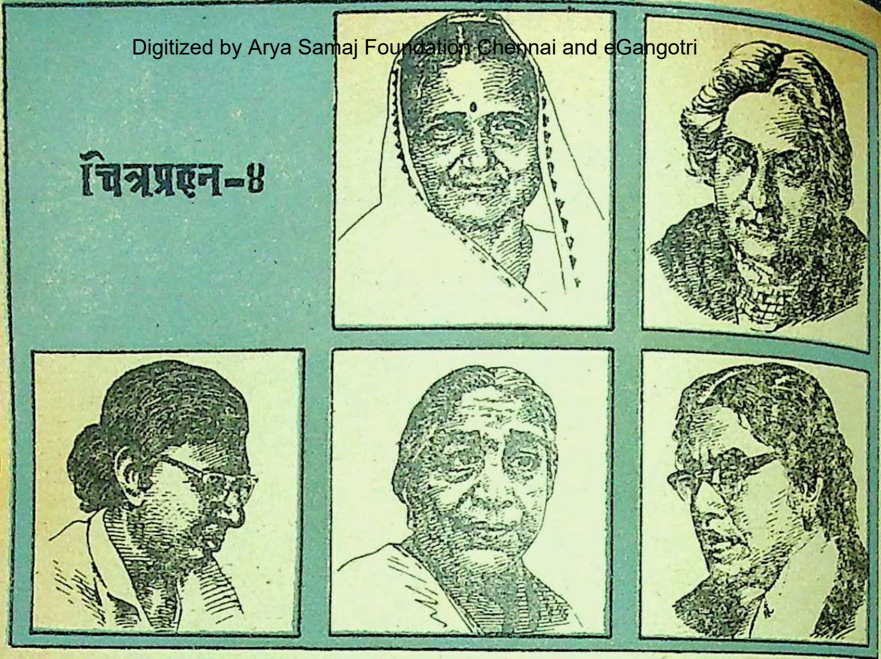

इस समय अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष चल रहा है। यहां हम पांच विशिष्ट भारतीय नारियों के चित्र दे रहे हैं, जिन्हें किसी क्षेत्र में प्रथम होने का सौभाग्य रहा है। क्या आप बता सकते हैं कि ये कौन हैं और ये किस-किस क्षेत्र में प्रथम रही हैं? उत्तर नवबंर अंक में पढ़ें।

चित्रप्रश्न—३ का उत्तर पृष्ठ १९ पर है।

एजेंसियों ने हम यहूदियों के बारे में फ्रांसीसियों के सामने जितना असत्य प्रचार किया है, मुझे लगता है, फ्रांसीसी इस जिंदगी में तो आपके उसके असर से मुक्त नहीं हो पायेंगे।'

मेजर ने कहा—'मेरे खयाल से तुम बहुत ही ज्यादा निराशावादी हो गये हो। जमाना बदलता है, लोग बदल जाते हैं। दुनिया वापस सामान्य अवस्था में पहुंच जाती है। लोग घृणा और रक्तपात से ऊब उठते हैं।'

'मुझे लगता है, आप शायद अब घृणा और रक्तपात से ऊब उठे हैं।' सीगल बोला।

'मैंने तो कभी रक्तपात की कामना नहीं की थी। मेरी ओर देखकर कहो—क्या मैं सिपाही लगता हूं?......मूलतः मैं सिपाही नहीं हूं। मैं तो मोटर-विक्रेता हूं। मेरी पत्नी है और तीन बच्चे हैं।' मेजर ने कहा।

'हो सकता है', सीगल ने कहा—'आपकी बात सही हो। वैसे अब हमें बहुत-से फौजियों से यही बात सुनने को मिलेगी—मैं सिपाही

नहीं हूं, मोटर-विक्रेता हूं ...... या संगीतज्ञ हूं ...... या धर्म-प्रचारक हूं ...... या स्कूल-मास्टर हूं ...... या डाक-टिकटों का संग्राहक हूं ...... किंतु १९४० में जब तुम लोग हमारे पार्कों को रौंदते चले आये, तब हमने ये बातें नहीं सुनी थीं ! तब मोटर-विक्रेता और स्कूल-मास्टर नहीं थे—तब केवल कप्तान, सार्जेंट, पायलट और तोपची ही दिखते थे।'

मेजर ने सोचते हुए कहा—'सीगल ! इस युद्ध के समाप्त होने पर यूरोप का पुनरुद्धार करना बहुत जरूरी हो जायेगा। हमें इसी धरती पर एक साथ रहना है। इसलिए हममें क्षमा की भावना अवश्य होनी चाहिये। मैं जानता हूं, हर एक को क्षमा करना असंभव है। लेकिन सोचो, लाखों व्यक्ति ऐसे हैं जिन्होंने कुछ नहीं किया।'

'जैसे आप ! ......'

'हां, जैसे मैं।' मेजर ने कहा—'मैं पार्टी का मेंबर तक नहीं था। मैं तो अपने बीवी-बच्चों के साथ शांतिपूर्वक जीवन बिता रहा था।'

'मुझे माफ कीजियेगा, मैं अब घर जाऊंगा। मुझे खासी दूर जाना है।' सीगल बोला।

'यदि तुम्हें कोई एतराज न हो तो मैं तुम्हें गाड़ी में घर तक छोड़ आऊं।' मेजर बोला।

'शुक्रिया !'

मेजर ने बिल चुकाया। दोनों कैफे से बाहर निकले और सिपाहियों के सामने से होते हुए गुजरे, जो उन्हें कुतूहलहीनता और विद्वेष की मिली-जुली भावनाओं के साथ देखते रहे। मेजर की कार में बैठकर अपने घर की ओर बढ़ता हुआ सीगल चार वर्ष बाद कार में बैठने के सुखद अनुभव के कारण प्रफुल्लित हो रहा था। जब कार धूप में चमकती हुई नीली और आकर्षक सीन नदी के ऊपर से गुजरी, तो सीगल के चेहरे पर मुस्कराहट आ गयी।

मेजर बोला—'मैं इस सत्य का सामना करने के लिए तैयार हूं कि उस चीज की सजा हमें अवश्य भुगतनी होगी, जिसे तुम हमारा “अपराध” कहते हो। हम हार गये हैं, इसलिए हम “अपराधी” हैं।' उसकी आवाज में नरमी थी।

सीगल व्यंग्यपूर्वक एक छोटी-सी हंसी हंसा।

मेजर कहता गया—'शायद अगर हम न हारते तो भी हम ही “अपराधी” होते। मैं ईमानदारी से कह रहा हूं मिस्टर सीगल, पिछले दो वर्षों से मैं इसी नतीजे पर पहुंचा हूं। युद्ध के आरंभ में बहाव इतना तेज होता है कि आदमी के पांव उखड़ जाते हैं। जब जर्मनी जैसा देश युद्ध आरंभ करता है, तब जन-साधारण पर जो दबाव पड़ता है, आप उस दबाव की कल्पना नहीं कर सकते। हर आदमी को अधूरे मन से नहीं, बल्कि इस भावना से युद्ध में शामिल होना पड़ता है कि उसे एक सफल सैनिक बनना होगा। इस सबके बावजूद मेरे जैसे अधेड़ नहीं, बल्कि नौजवान—जोश व उत्साह से भरे नौजवान—बाढ़ की तरह आगे बढ़े, और बाकी हम सब

लोग उनके साथ-साथ इस बाढ़ में बह गये। तुमने खुद देखा है ......'

'जी हां, मैंने नौजवानों को भी देखा है और बुजुर्गों को भी,' सीगल ने कहा–'उन प्रौढ़ और बुजुर्ग अफसरों को, जो बढ़िया रेस्तरां में मुझे इन चार वर्षों में दिखाई दिये हैं–बढ़िया कलफदार वर्दियों में, सफेद डबलरोटी और मक्खन का सेवन करते हुए, उन आदेशों पर दस्तखत करते हुए, जिनमें लिखा रहता था कि दस ... बीस फ्रांसीसी रोज गोली से उड़ा दिये जायें।'

मेजर बोला–'मानवीय दुर्बलता! मनुष्य-जाति संतों से बनी हुई नहीं है। कहीं न कहीं तो क्षमा को जन्म लेना ही होगा।'

सीगल आगे झुककर, ड्राइवर का कंधा छूता हुआ जर्मन में बोला–'बस यहीं रोक दीजिये। मैं उतरूंगा।'

'तुम यहीं रहते हो?' मेजर ने प्रश्न किया।

'नहीं! यहां से पांच-छह सड़कें पार करनी होती हैं।' सीगल ने कहा–'गुस्ताखी माफ कीजियेगा मेजर, मैं आपको–या किसी भी जर्मन को–यह बताना कभी न पसंद करूंगा कि मैं कहां रहता हूं।'

मेजर ने कंधे सिकोड़े और ड्राइवर को गाड़ी रोकने का आदेश दिया।

गाड़ी रुकने पर सीगल दरवाजा खोलकर बाहर निकल आया।

उसका हाथ थामते हुए मेजर ने प्रश्न किया–'क्या तुम यह महसूस नहीं करते कि हम अपने अपराध के लिए काफी सजा भुगत चुके हैं? ...... तुमने बर्लिन की हाल देखी है? ...... तुमने हैम्बर्ग देखा है? ...... क्या तुम स्तालिनग्राद पर थे? क्या तुम कल्पना कर सकते हो कि सेंट लो की युद्धभूमि की क्या दशा थी? ......और मोरटैन की? .... क्या तुम इस स्थिति की सही कल्पना कर सकते हो कि जर्मन पैदल, साइकलों पर और गाड़ियों में भाग रहे हैं और उनके ऊपर आकाश में चारों ओर अमरीकी वायुसेना के बाम्बर मंडरा रहे हैं? ......' मेजर का चेहरा धुंधला पड़ गया और सीगल को लगा कि किसी भी क्षण यह आदमी रो पड़ेगा। 'हां', मेजर कहता गया–'हम अपराधी हैं। मैं मानता हूं जर्मन अपराधी हैं। हममें से बहुत सारे व्यक्ति औरों की अपेक्षा अधिक अपराधी हैं। लेकिन प्रतिकार में हम अब क्या कर सकते हैं? हम अपने रक्त से सने हाथ कैसे साफ कर सकते हैं?'

सीगल ने अपना हाथ छुड़ा लिया। एक क्षण तो उसके मन में आया कि बुढ़ापे की ओर अग्रसर होते, क्लांत और भले दिखने वाले इस व्यक्ति को–इस मोटर-विक्रेता, तीन बच्चों के पिता, थके, भयभीत और वापस स्वदेश लौटते सैनिक को–कुछ सांत्वना दे, किंतु तभी उसकी दृष्टि ड्राइवर के कठोर और कसे हुए चेहरे की ओर घूम गयी, जो सामने की सीट पर तना बैठा था। उसकी साफ-सुथरी छोटी पिस्तौल, किसी की भी मृत्यु का आह्वान करने के लिए तैयार प्रतीत हो रही थी।

मेजर ने वेदनापूर्वक फिर कहा—'बताओ, मैं अपने हाथों पर सना रक्त कैसे छुड़ा सकता हूं।'

सीगल ने कुछ थकित-भाव से सांस ली और हर्ष, विषाद या किसी कटुता के बिना बोलना आरंभ किया। अब वह अपनी ओर से नहीं, बल्कि उस प्रथम यहूदी की ओर से बोल रहा था, जिसका शरीर बरसों पहले म्यूनिख की सड़क पर गोलियों से छलनी कर दिया गया था। वह तमाम मृतकों की ओर से, और इतने वर्षों के यातनापूर्ण जीवन की ओर से बोल रहा था। उसने मेजर से कहा—'तुम्हें चाहिये कि अपने हाथों अपना गला काट लो। उस खून से ही तुम्हारे हाथों पर लगा खून छूट सकता है!'

मेजर तनकर बैठ गया। उसकी मुख-मुद्रा, क्रोध और पराजय के कारण आतंकपूर्ण हो उठी। और सीगल को लगा कि वह जरूरत से ज्यादा आगे बढ़ गया है। उसे यह भी लगा कि चार वर्ष सफलतापूर्वक अपने जीवन की रक्षा कर लेने के बाद वह अब मरने जा रहा है—अब, जबकि पेरिस को मुक्त होने में सिर्फ एक सप्ताह रह गया है।

साहस करके वह पीछे की ओर मुड़ा और धीरे-धीरे अपने घर की ओर बढ़ने लगा। प्रत्येक क्षण वह प्रतीक्षा करता रहा कि पिस्तौल की गोली अब आयी, और अब आयी।

वह मुश्किल से दस कदम बढ़ा होगा कि उसने मेजर को जर्मन में कुछ कहते सुना। उसकी चाल और धीमी हो गयी और उसका जिस्म सख्त पड़ गया। उसने कार के स्टार्ट होने की आवाज सुनी। फिर कार तेजी से घूमकर सीन नदी के पुल की ओर लौट गयी। सीगल ने एक बार भी पीछे मुड़कर न देखा। वह उसी तरह चलता रहा। कार मैडेलीन की ओर बढ़ गयी, जहां सिपाही लाशों की तरह सड़क पर लेटे, जर्मनी के अक्षम्य मार्ग पर वापस लौटने के लिए मेजर की प्रतीक्षा कर रहे थे।

★

जब तुम उस बस्ती से गुजरोगे तो शायद, आदत के अनुसार, तुम्हारे कदम
उस तरफ भी उठ जायें—एक उजड़ा-सा मकान देखने के लिए।
उस वक्त अगर तुम्हें ठोकर लगे तो माफ कर देना!
मेरी आंखें इंतजार करते-करते रास्ते का पत्थर बन गयी हैं।

—सैयद मुहम्मद अली जैदी 'तालिब'

०००

घर वह स्थान हो .....
जहां रहने में परिवार को, जहां पधारने में अतिथि को आनंद हो।
घर वह स्थान हो .....
जहां बच्चे सुख, युवक प्रेम और बूढ़े शांति प्राप्त करें। **—रसूल गमज़ातोव**

★

दो चेहरों वाली पुस्तक

सुखबीर की हिंदी कहानी

अलका ने एक बड़ी-सी जम्हाई ली तो उसके लिपस्टिक से रंगे लाल सुर्ख ओंठों का एक दायरा बना और फैल गया। तब उसने हाथ की पुस्तक तिपाई पर रख दी और सोफे के साथ पीठ टेककर सिर पीछे की ओर डाल दिया।

यह कैसी उकताहट थी!

एक क्षण के लिए उसकी दृष्टि सामने दीवार पर टंगे चित्र पर पड़ी। वह चित्र उसने एक प्रदर्शनी में दो सौ रुपये में खरीदा था। लोकशैली में अंकित उस चित्र को समझना किसी परयथार्थवादी चित्र को समझने से कम आसान नहीं था। मगर अलका को वह पसंद आ गया था। यद्यपि चित्रकार के समझाने पर ही वह उसकी समझ में आया था। शायद वह चित्र उसे पसंद न आता, पर चित्रकार उसे बहुत पसंद आया था–वह अपने चित्रों की प्रदर्शनी में गहरे लाल रंग की रेशमी कमीज, पीली टाई और काले रंग की खद्दर की पैंट पहने घूम रहा था। उन कपड़ों में से उसका कमजोर-सा शरीर झांक रहा था और उसकी उदास आंखों में एक अजीब-सी चमक थी।

अलका ने चित्र को देखा और फिर एक बड़ी-सी जम्हाई लेकर आंखें मूंद लीं।

उसके सिर में हल्का-सा दर्द था, और उसके दिल में एक तल्खी थी।

यह तल्खी तिपाई पर पड़ी उस पुस्तक के कारण थी, जिसे वह अभी कुछ क्षण पहले पढ़ रही थी। उसके कुछ-एक पृष्ठ पढ़ने अभी बाकी थे। और उसे आज ही उनकी कड़वी घूंट पीनी थी।

मगर तिपाई पर से पुस्तक उठाने की अलका में शक्ति नहीं थी। ऐसी तल्ख उकताहट उसने जीवन में कभी किसी पुस्तक को पढ़ते हुए महसूस नहीं की थी।

यह कैसी पुस्तक थी!......उन पुस्तकों से बिलकुल भिन्न, जिन्हें पढ़ने का अलका को हद से ज्यादा शौक था। वे पुस्तकें मनोरंजक भी इतनी होती थीं कि मन उनमें खोया रहता था। और अलका की पढ़ने की रफ्तार भी हद से गुजरी हुई थी। वह पुस्तक पढ़ना शुरू करती और एक ही बैठक में खत्म करके उठती।

परंतु इस पुस्तक को पढ़ना तो ऐसा था, अलका ने सोचा, जैसे उस-जैसी कोमलांगी लड़की को ऊंची एड़ी के सेंडिल पहनकर खेतों में से गुजरना पड़े। अपनी इस उपमा पर हल्का-सा मुस्करायी। इस प्रकार खेतों में चलने का बड़ा ही कटु अनुभव उसे हुआ भी था, जब उनकी प्रोफेसर एक बार बी. ए. की कक्षा को गांव दिखाने के लिए लेकर

गयी थी। सारी उम्र शहरों में रहने वाली उन लड़कियों के लिए गांव जैसे कोई बड़ी रोमांटिक वस्तु थी।

हां, वैसा ही अनुभव अलका को वह पुस्तक पढ़ते वक्त हुआ था। उसने पुस्तक पढ़ते समय कई बार बंद करके रख दिया था, कई बार फिर पढ़ना शुरू किया था।

अलका ने उसी प्रकार आंखें मूंदे हुए सोचा कि कुछ लेखक तो ऐसा लिखते हैं, जैसे सारी दुनिया से उनकी दुश्मनी हो, जैसे वे सारी दुनिया से, सारे लोगों से, हर चीज से उकताये हुए हों, चिढ़े हुए हों। और यही उकताहट उनकी लेखनी से भी उपजती थी। कैसी रूखी पुस्तक है यह। एक खुरदरे जीवन से भरी हुई। खेतों के ढेलों जैसी असलियतें। शायद मैथ्यू आर्नाल्ड ने कहा था या किसने ?—कि साहित्य एक कलात्मक अपसार होता है, जो मनुष्य को इस संसार से ऊपर उठा देता है और मनुष्य अपने दु:खों और गमों को भूल जाता है......

अलका ने नौकरानी को आवाज दी और चाय लाने को कहा।

यह कैसा लेखक है, अलका ने फिर सोचा, जिसे पढ़ते हुए पुस्तक रखकर चाय पीने की जरूरत पड़ती है ! जैसे मोटर रास्ते में रुक जाये और पेट्रोल डालने पर ही फिर चले। वास्तव में हमारे देश के लेखकों को अभी बहुत कुछ सीखना है। अभी वे यूरोप, फ्रांस और अमरीका के लेखकों से बहुत पीछे हैं। और कुछ नहीं तो कम से कम मनोरंजक तो लिखें। एक तरफ मिकी स्पिलेन

चित्र : डा. भटनागर

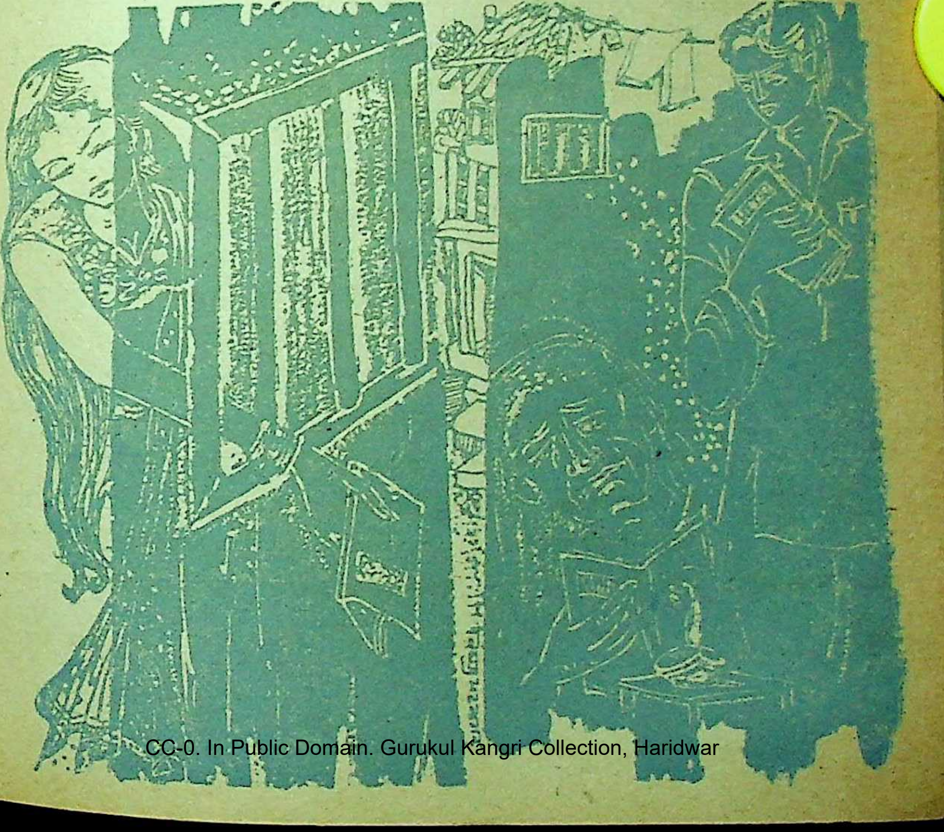

जैसे लेखक भी हैं। पढ़ते समय आदमी अपनी सुध-बुध भूले रहता है। क्या मिकी स्पिलेन को पढ़ते समय भी आदमी को कभी पुस्तक रखकर चाय पीने का खयाल आ सकता है ? पुस्तक तो हाथ से तब छूटती है, जब समाप्त हो जाये। आदमी उसके उपन्यास के साथ जैसे दौड़ता है। कई बार तो उसकी सांस रुकी हुई होती है और वह उपन्यास से भी आगे निकल जाता है ......

मगर यह उपन्यास ! डाक्टर की कड़वी दवा ! कैसे पात्र हैं इसमें ! ......फीके और रूखे, शराबी, लड़ाकू, बेकार, भूखे......जो रोटी के टुकड़े की खातिर लड़ते हैं, और हड़तालें करते हैं ! इनकी बेढंगी किस्म की बातें, बेढंगे किस्म के प्यार, और बेढंगे किस्म के जीवन। और यह जो एक सभ्य मनुष्य का पात्र है, यह तो बिलकुल मेरे पिताजी के जैसा है। उसका स्वभाव, बातचीत, व्यवहार – बहुत-सी बातें मेरे पिताजी से मिलती हैं। और दो साल पहले पिताजी की मिलों में जो हड़ताल हुई थी, उसका भी हूबहू वर्णन है इसमें। वह हड़ताल तो फेल हो गयी थी, पर इसमें उसे बहुत सफल दिखाया गया है......

चित्र : अंजू मेहरा

नौकरानी चाय दे गयी। अलका ने चाय के दो प्याले पिये और फिर उपन्यास उठाकर पढ़ने लगी। पढ़ते समय तल्खी और बढ़ने लगी। उपन्यास के साधारण लोग उसे बहुत अपरिचित-से लग रहे थे–उनकी बातें, उनका रहन-सहन, उनका जीवन। और उस पात्र को, जो उसके पिताजी से मिलता-जुलता था, अंत में कितना बुरा दिखाया गया था।

आखिर जब वह उपन्यास के अंतिम पृष्ठ पर पहुंची, तो उसके अंदर एक ऐसी तल्खी छा गयी थी कि उसने उपन्यास उठाकर खिड़की से बाहर फेंक दिया। फिर उठकर कपड़े बदलने लगी। शायद क्लब जाकर सहेलियों और दोस्तों की महफिल में इस उकताहट को भुलाया जा सके।

× × ×

आधी रात। चारों ओर फैला अंधकार। लेकिन एक छोटी-सी कोठरी में अभी भी प्रकाश है। कोठरी के एक कोने में पार्वती टाट बिछाकर बैठी हुई है। मूर्तिमंत बुढ़ापा। उसकी ऐनक के दोनों कांच धुंधले हैं। दीये की धुंधली-सी लौ कभी-कभी कांप उठती है। पार्वती जैसे अपने आपमें खोयी हुई है। उसके कपोलों की झुर्रियों में अभी भी आंसुओं की आर्द्रता है। उसका पुत्र रात-पाली करके अब आने ही वाला है। पार्वती ने अभी-अभी एक मैली-सी खस्ता हालत पुस्तक पढ़कर खत्म की है। यह पुस्तक उसका बेटा कल अपनी यूनियन की लायब्रेरी से लाया था। बेटे के आने तक वह कुछ न

कुछ पढ़ा करती है। यह पुस्तक पढ़ते समय पहले भी वह तीन बार इसी तरह उसे रखकर बैठ चुकी है और फिर कुछ देर के बाद पढ़ने लगी है।

पुस्तक पढ़ते समय कई बार उसे लगा है जैसे किसी ने घोंटकर उसका दिल पकड़ लिया हो। पता नहीं, दिल में यह क्या होने लगता था! बैठे-बैठे वह गुमसुम हो जाती थी। उससे न आगे पढ़ा जाता था, न पुस्तक छोड़ी जाती थी। वह अब तक तीन बार रो चुकी थी। हर बार उसकी आंखों के आगे अंधकार फैल गया था और पुस्तक उस अंधकार में खो गयी थी।

एक बार वह तब रोयी थी, जब पुस्तक के राजू को पुलिस के सिपाही जेल में यातनाएं देते हैं। इन यातनाओं के बारे में पढ़ते हुए उसके दिल को कुछ होने लगा था। उसने महसूस किया था, जैसे उसका अपना बेटा जेल में बंद है और वे यातनाएं उसे दी जा रही हैं। वह आगे पढ़ नहीं पायी थी, और देर तक भयभीत हो बैठी रही थी।

एक बार वह तब रोयी थी, जब वैधव्य काट रही लक्ष्मी भूख से तंग आकर एक दिन आधी रात के समय अपने बच्चों को लेकर कुएं में छलांग लगा देती है।

और तीसरी बार वह तब रोयी थी, जब राजू को फांसी की सजा हो गयी है और वह अंतिम रात को जेल की कोठरी में बैठा हुआ है। वह आगे नहीं पढ़ पायी थी। राजू की जगह बार-बार उसे अपना बेटा दिखता था—छोटी-सी कोठरी में बैठा हुआ उसका अपना बेटा, जिसके लिए सुबह होते ही यह दुनिया अंधेरी बन जायेगी और उससे भी बढ़कर जिसकी मां के लिए यह दुनिया अंधेरी बन जायेगी ...... । अपने बेटे को फांसी चढ़ते हुए वह कैसे देखेगी? उसके दिल में रह-रहकर टीस उठ रही है, उसे जैसे कोई पकड़े हुए है, और अंत में वह आंखें फाड़े गुमसुम बैठ गयी है।

उसका बेटा अभी तक क्यों नहीं आया? अब तक तो आ जाया करता था वह! कुशल तो है! बार-बार दरवाजे की तरफ देखती हुई वह सोच रही है।

फिर वह पास पड़ी हुई पुस्तक की ओर देखती है। यह कैसी पुस्तक है, जो न पढ़ी जाती है, न छोड़ी जाती है!

एक बार उसके सामने पुस्तक की 'बूढ़ी मां' आती है। बिलकुल उसी के जैसी है यह 'बूढ़ी मां'। उसी के जैसी बातें, उसी के जैसा रहन-सहन, उसी के जैसा सोचना। हां, कद में वह उससे बहुत छोटी है, और उसकी तरह डरपोक नहीं है। बाकी सभी बातें उसी के जैसी हैं। पुस्तक लिखने वाले ने उसे कहीं देखा तो नहीं है। वह जरूर कभी उसके बेटे के साथ यहां घर आया होगा। कितने तो आदमी आते रहते हैं उसके बेटे के साथ। अच्छा, बेटा आये तो उसके बारे में पूछेगी। यह पुस्तक लिखने वाला जरूर कभी उसके साथ यहां आया होगा। इस बस्ती में कभी रहा भी होगा वह। तभी तो पुस्तक में उनकी बस्ती के कई आदमियों का भी जिक्र है। बस नामों का थोड़ा-बहुत

फर्क है। यह राधा की बेटी कमला तो चार जमात भी नहीं पढ़ी है, पर पुस्तक में उसे कितनी अक्लमंद दिखाया गया है ! और यह बूढ़ा जम्मन खां उनका पड़ोसी रामदीन ही तो है। उसी के जैसी बातें और उसी के जैसा स्वभाव। पर लेखक ने उसे मुसलमान कैसे बना दिया है? ......अच्छा, बेटा आये, तो उससे पूछेगी। पुस्तक लिखने वाला कभी जरूर यहां आया होगा। वह बेटे से कहेगी कि कभी फिर उसे घर लाना। वह उससे बहुत-सी बातें पूछेगी और कहेगी कि बेटा, ऐसा न लिखा करो कि पढ़ते समय दिल पकड़ा जाये और बार-बार रोने को दिल चाहे। ऐसी पुस्तक पढ़ने के लिए तो बहुत बड़ा दिल चाहिये।

वह इसी तरह सोचती रहती है।

फिर वह पुस्तक उठाकर पढ़ने लगती है। दो पृष्ठ पढ़ने पर ही अचानक उसकी आंखें बहने लगती हैं। आंसू ही आंसू। आंसू उससे रोके नहीं जाते। और इस बार वह पुस्तक को नीचे रखने की बजाय अचानक उसे छाती से भींच लेती है। हाय, जालिमों ने उसके पुत्र को फांसी लगा दी है। जालिमों ने ......

उसी समय रात पाली से लौटा उसका बेटा दरवाजे में आकर खड़ा होता है। वह हैरान आंखों से उसकी तरफ देख रही है। आखिर उसके मुंह से घबरायी हुई आवाज में निकलता है – 'बेटा ...... बेटा ...... तू आ गया ?' और फिर उसका ध्यान पुस्तक की ओर जाता है, जो उसने अभी तक अपनी छाती से भींची हुई है। वह उसे धीरे-से नीचे रख देती है।

उसका बेटा देखता है, सब कुछ समझ जाता है, और आगे बढ़ते हुए हल्का-सा मुस्कराता है।

वह मां की ओर एक पुस्तक बढ़ाता है। वह देखकर कहती है–'यह तो बेटा वही पुस्तक है, जो मैं पढ़ रही हूं।'

वह कहता है–'हां, पर यह बिलकुल नयी है। घर आ रहा था तो सड़क पर पड़ी हुई मिली। पता नहीं किसकी गिर गयी थी।'

–बी-१९, सन एंड सी,
वरसोवा रोड, बंबई-४०००६१

* * *

नोबेल-पुरस्कृत अमरीकी कथाकार सिंक्लेयर लेविस जहाज से कहीं जा रहे थे। उन्होंने देखा कि डेक पर बैठी एक संभ्रांत महिला उनकी एक नयी पुस्तक पढ़ रही है। उस पुस्तक को लेकर उन दिनों गरमागरम बहस चल रही थी और लेखक पर तरह-तरह के आरोप लगाये जा रहे थे। लेविस ने देखा कि उस महिला ने वह अध्याय पढ़ना शुरू कर दिया है, जिसे लेकर उन्हें बहुत बदनाम किया जा रहा है। अब वे ध्यान से देखने लगे कि महिला पर उस अध्याय की क्या प्रतिक्रिया होती है। कुछ ही देर में उन्होंने देखा कि महिला कुर्सी से उठकर रेलिंग के पास गयी और पुस्तक समुद्र के हवाले कर दी। **–सुरेश पांडेय**

* * *

हंसी के बुलबुले

सत्यनारायण नाटे

एक आदमी अपने दोस्त के पास गया और बोला–'यार बड़ी परेशानी में हूं, मुझे कुछ रुपयों की जरूरत है। समझ में नहीं आता, किससे मांगूं। उलझन में फंसा हूं।'

दोस्त ने राहत की सांस ली और बोला–'चलो बच गया। तुम्हारी बात का पहला हिस्सा सुनकर तो मैं यही समझा था कि तुम मुझसे उधार मांगने आये हो।'

०००

मास्टर ने सुरेश को डांटते हुए–'इस प्रश्न का उत्तर तो कोई भी मूर्ख बता सकता है।'

'तभी तो मैं नहीं बता रहा हूं।' सुरेश ने बहुत ही सहज होकर उत्तर दिया।

०००

दोनों मित्र होटल में खाना खा चुके, तो बैरे ने उनके हाथ धुलवाये। फिर खूंटी से कोट उतारकर अपने हाथ से एक मित्र को पहना दिया। उसने बैरे को दो रुपये टिप में दिये।

दूसरे मित्र ने पूछा–'इतनी बड़ी टिप क्यों दी?

क्यों? क्या दो रुपये में यह कोट महंगा है?' पहले ने पलटकर प्रश्न किया।

०००

'तुमने कल फोन पर महरी से कौन-सी ऐसी बात कह दी कि वह फिर काम पर लौट आयी?' पत्नी ने पति से पूछा।

'अरे, बाप रे, महरी थी! मैंने समझा था कि मैं तुमसे बातें कर रहा हूं।' पति ने कहा।

०००

एक स्त्री थाने पर जाकर बोली–'मेरे पति तीन दिन से गायब हैं। धोती, धारीदार कमीज और सिर पर सफेद टोपी पहने हैं। कमीज आधी बांह की है।'

'आपके पास उनकी कोई नयी या पुरानी तस्वीर है?' थानेदार ने पूछा।

'जी हां! लीजिये, यह तस्वीर तब की है, जब वे आठ वर्ष के थे।' स्त्री बोली।

०००

एक सज्जन विदेश-यात्रा पर थे। एक अधिकारी ने उनका पासपोर्ट जांचकर कहा 'पासपोर्ट पर का फोटो बताता है कि आपका सिर गंजा है, पर आपके सिर पर तो बाल हैं। आपका पासपोर्ट नकली है?'

POND'S
VANISHING CREAM
GREASELESS FOUNDATION
MADE IN INDIA

आपके रूप के अनेक चहेते...
आपकी त्वचा के अनेक दुश्मन

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम को अपना साथी बनाइए.

हवा, धूल और मौसम के तीखे प्रभाव से आपकी त्वचा की रक्षा करती है पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम. आपके रूप को और भी सलोना बनाने के लिए इसमें एक खास पदार्थ ह्युमेक्टेंट मिला है जो आपकी त्वचा की नमी को सुरक्षित रखता है. तभी आपका मुखड़ा मोतीयारा दीखता है और तैलमुक्त भी.

इसे आप आदर्श पाउडर बेस के रूप में प्रयोग कर सकती हैं. घंटो-पहरों यह आपके सौंदर्य को अम्लान और मोहक बनाए रखती है. आप इसे संपूर्ण सौंदर्य प्रसाधन के रूप में भी प्रयोग कर सकती हैं

आप तो जानती ही हैं, आपकी त्वचा को भी उतना ही प्यार दुलार चाहिए जितना कि आपको.

पॉण्ड्स वैनिशिंग क्रीम – आदर्श पाउडर बेस

चेसब्रो-पॉण्ड्स इन्कॉर्पोरेटेड (सीमित दायित्व सहित यू. एस. ए. मे संस्थापित)

'क्या बाल नकली नहीं हो सकते?' सज्जन ने प्रश्न किया।

०००

'क्या आपसे कभी कोई गलती नहीं हुई?' रोगी ने डाक्टर से पूछा।

'हुई क्यों नहीं, एक बार मैंने एक रोगी को सिर्फ दो दिनों में ही ठीक कर दिया। बाद में मुझे मालूम हुआ कि वह काफी पैसे वाला था।' डाक्टर ने उत्तर दिया।

०००

एक घायल आदमी को किसी तरह टांग-टूंगकर अस्पताल लाया गया। मरहमपट्टी के बाद पूछा गया—'शादीशुदा हो?'

'न-न, मेरी पत्नी ने कुछ नहीं किया। यह तो मैं मोटर से टकरा गया था।' घायल आदमी ने कहा।

०००

'घर-घर जाकर भीख मांगते फिरना क्या तुम्हें अच्छा लगता है?' समाजसेवक ने पूछा।

'दर-दर भटकना तो मुझे भी अच्छा नहीं लगता। लेकिन मेरे घर आकर भला कौन भीख दे जायेगा?' भिखारी ने कहा।

०००

मजिस्ट्रेट (अभियुक्त से): 'क्या तुमने जुर्म किया है?'

अभियुक्त: 'कह नहीं सकता हुजूर! अभी मैंने वकीलों के जिरह नहीं सुने।'

दुकानदार खरीदारिन से: हां, यह सच है कि इस चीज की कीमत ५० पैसे थी, मगर वह तो एक घंटा पहले की बात है।

आर्यसमाज के प्रसिद्ध उपदेशक शास्त्रार्थ-महारथी पं. रामचंद्र देहलवी मीठे हास्य के लिए प्रसिद्ध थे। एक बार शास्त्रार्थ में उन्होंने प्रतिपक्षी मौलवी साहब से पूछा—'मौलवी साहब, आज कौन दिन है?' उत्तर मिला—'आज जुम्मेरात है।' इस पर देहलवीजी बोले—'मैं दिन पूछता हूं, आप रात बता रहे हैं। यह क्या तरीका है?'

०००

मेरी सास काफी अरसे तक बीमार रहीं। बड़े शहरों में बड़े-बड़े डाक्टरों से उनका इलाज कराया गया। वे ठीक तो हो गयीं, पर पांच-छह हजार तक खर्च हो गया। एक बार यों ही चर्चा करते हुए हमारे श्वशुर ने नौकरानी को इस खर्चे की बात बतायी, तो वह आश्चर्यचकित होकर बोली (उस नौकरानी की जाति में बहुविवाह की प्रथा है) 'वकील साहब, इतना खर्जा आपने बेकार किया। इतने पैसे में तो आप मजे से दूसरा ब्याह कर सकते थे।'

०००

मेरी सहधर्मिणी सामान्यतः मेरे भोजन कर लेने के बाद ही खाना खाती हैं। एक बार हम दोनों किसी सार्वजनिक भोज में गये। आयोजकों ने स्त्रियों के लिए भोजन की व्यवस्था पहले की थी। जब पहले स्त्रियां खाकर उठीं, तो मैंने मजाक करने के इरादे से सब लोगों के सामने अपनी देवीजी से कहा—'यह क्या? तुमने पति से पहले भोजन कर लिया?' वे भी कुछ कम न थीं, चट से बोलीं—'आप इतना बुरा क्यों मानते हैं? आप भोजन कर लीजिये। आपके बाद मैं फिर कर लूंगी।' —वेदकुमार वेदालंकार

★

शेर

शेर की फुर्ती, शक्ति, उसका वेग, गठा हुआ सुंदर शरीर आदि विशेषताएं इतनी अधिक पसंद की गयी हैं कि भारत तथा बहुत-से देशों में इसे विज्ञापन उद्योग में नाना रूपों में व्यापक रूप से चित्रित किया गया है। सड़कों के किनारे पेट्रोल-पंपों के पास हम इसे बड़े-बड़े आकर्षक विज्ञापनों में गति व शक्ति के प्रतीक के रूप में देखते हैं। इतने पर भी मनुष्य अपने इस प्यारे जीव की आदतों के बारे में बहुत कम सही और विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सका है।

सामान्य लोग सिंह, शेर (या बाघ), गुलदार और चीते को अज्ञानवश एक ही प्राणी समझ बैठते हैं। एक जिम्मेदार शैक्षणिक संगठन द्वारा प्रकाशित बच्चों की एक पुस्तक में मैंने शेर के चित्र के ऊपर चीता लिखा हुआ देखा था। हिंदी के अखबारों में इन चारों प्राणियों को सही नाम देने में कोई विचार नहीं किया जाता।

शेर के लिए संस्कृत का शब्द 'व्याघ्र' है और हिंदी शब्द 'बाघ' उसी का तद्भव है। व्याघ्र की व्युत्पत्ति 'विशेषेण आसमन्ताद् जिघ्रति' की जाती है, जिसका अर्थ है—ऐसा जानवर जिसमें सूंघने की शक्ति विशेष रूप से उन्नत है। परंतु अनुभव इस बात की पुष्टि नहीं करता। इसलिए इसकी सही निरुक्ति होगी—'विशेषेण आक्रामति जिघ्रति वा', अर्थात् ऐसा जानवर जो हमला करने तथा सूंघने दोनों गुणों से संपन्न है। राजस्थानी में इसे नाहर कहते हैं। अंग्रेजी में इसका नाम टाइगर (tiger) है और जीवशास्त्रीय पारिभाषिक पद पैंथेरा टिग्रिस टिग्रिस (Panthera tigris tigris) है। परंतु जैसा कि स्व. श्रीराम शर्मा ने अपनी पुस्तक 'भारत के वन्य पशु' में बताया है, हिंदी प्रदेश में बोल-चाल में व्याघ्र के लिए शेर शब्द ही प्रचलित है और बाघ प्रायः गुलदार के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसलिए हम भी शेर शब्द का ही उपयोग कर रहे हैं।

सिंधु-घाटी में

सिंधु-संस्कृति की खुदाई में मिली मुद्राओं पर शेर को अनेक रूपों में अंकित किया गया है। बहुत-सी मुद्राओं पर इसके सींग भी बनाये गये हैं, जिससे वह यूनानी पौराणिक पशु एकशृंग (यूनिकार्न) जैसा लगता है। कुछ मुद्राओं पर एक संमिश्र देवता प्रदर्शित किया गया है, जो कटि के ऊपर तो मनुष्य के आकार का है, परंतु शेष शरीर शेर का है।

इसमें संदेह नहीं कि कोई पांच हजार साल पहले उस विस्तृत प्रदेश में, जहां सिंधु-सभ्यता फैली हुई थी, शेर बहुत अधिक संख्या में पाया जाता था और सिंधु-घाटी के निवासी इससे बहुत आतंकित रहते थे। इसीसे उन लोगों ने इसे भयंकर व्याघ्र-दानव के रूप में चित्रित किया था।

व्याघ्र-दानव अक्सर उनके पवित्र देवद्रुम की चोरी करता था, जिससे उसका संरक्षक शेर का दमन करता था। मुअनजोदड़ों की एक मुद्रा पर नर-वृषभ सींगों वाले शेर पर विकट रूप से झपट रहा है, क्योंकि शेर ने देवद्रुम की शाखा चुराने की कोशिश

फोटो : राजेश बेदी एवं नरेश बेदी

की थी। एक अन्य मुद्रा के एक पार्श्व पर बने हुए दृश्य में बायीं ओर अमृत-घट रखा है। उसके साथ देवद्रुम पर आरूढ़ यक्ष के द्वारा व्याघ्र-दानव को दमन करते हुए दिखाया गया है। उससे अगले दृश्य में दूसरे यक्ष ने देवद्रुम के दो चोरों को रंगे हाथ पकड़ लिया है।

अनेक सिंधु-मुद्राओं पर अलौकिक बलशाली दिव्य वीरों को शेरों के साथ द्वंद्व-युद्ध में प्रवृत्त दिखाया गया है। मुअनजो-दड़ो से उपलब्ध दो मुद्राओं पर दो शेरों के बीच खड़ा एक पराक्रमी वीर अपनी भुजाओं से उनका गला घोंटकर उन्हें पछाड़ रहा है। हड़प्पा की एक मुद्रा-छाप के एक ओर ऊपर के रिक्त स्थान में यही वीर उसी प्रका शेरों को पछाड़ रहा है। इसके नीचे एक हाथी की मूर्ति है। छाप के दूसरी ओर के दृश्य में शमी वृक्ष पर आसीन एक उपदेवता व्याघ्र का दमन करते हुए दिखाया गया है।

शेरों को वश में करने के लिए सिंधु-घाटी के निवासी तांत्रिक उपायों का भी आश्र लिया करते थे। हड़प्पा की एक मृण्मय मुद्रा-छाप पर योगासनस्थ देवता अंकित है। उसके दायीं ओर व्याघ्र-वशीकरण का दृश्य है और बायीं ओर एक अहाते के अंदर खड़ा पशु मुड़कर पीछे देख रहा है। संभवतः यह पशु व्याघ्र-दानव है, जो पकड़े जाने पर इस अहाते में कैद कर दिया गया है।

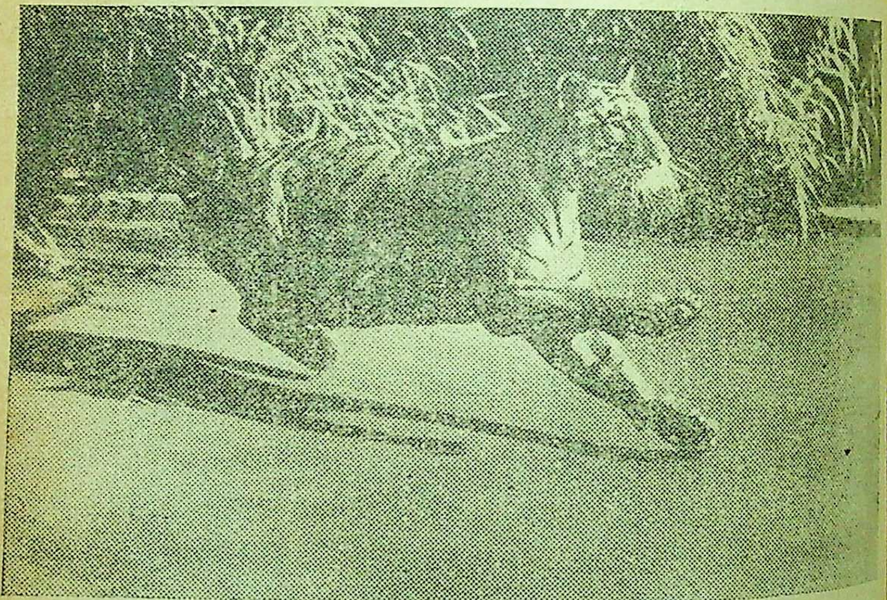

गर्मी से त्राण पाने के लिए पानी में सहर्ष छलांग

वैदिक युग के लोग भी शेर को एक जबर्दस्त आक्रामक प्राणी मानते थे। अथर्ववेद (४.५.२२.७) में राजा को शेर के समान शत्रुओं पर आक्रमण करने वाला बताया गया है :

सिंहप्रतीको विशो अद्धि सर्वा व्याघ्रप्रतीको बाधस्व शत्रुन् ।

महान पराक्रमी पुरुष के लिए संस्कृत में 'नरव्याघ्र' शब्द प्रयोग किया गया है :

किन्तु दुःखतरं शक्यं मया द्रष्टुमतः परम्।
योऽहमद्य नरव्याघ्रान् सुप्तान् पश्यामि भूतले ।।

[महाभारत १.१५२.२९]

उग्र

स्वाभाविक मौत से मरे हुए शेर जंगल में प्रायः नहीं मिलते। ब्रैंडर ने जो दो सौ शेर मारे थे, उनमें कुल दो बीमार निकले थे। एक का जिगर खराब था और दूसरे के फेफड़े में छोटी रसौलियां थीं, जिनमें सफेद कृमियों जैसे पराश्रयी थे। दोनों शेर बहुत दुबले थे। शेर के जिस्म में चीचड़ चिपटे रहते हैं और उनका खून चूसते रहते हैं। उनसे छुटकारा पाने के लिए शेर रेत में या वाहनों के चलने से बारीक पिसी हुई धूलि में लोट लेते हैं।

पशु-वाटिकाओं में बंदी जीवन बिताते समय शेर और उसकी बिरादरी के प्राणी बीमार पड़ सकते हैं। वहां उन्हें हाजमे की खराबी हो, तो गोश्त में पपीते का पका फल मसल करके दिया जाता है। अनुभवी पालक उन्हें बदहजमी से बचाने के लिए सुहागे की खील हर आठवें दिन देते हैं। इसी तरह वे उनके पानी पीने की कुंडी में गंधक का डला रख छोड़ते हैं। गंधक पानी में नहीं घुलती। परंतु बूढ़े पालकों के मत में वह पानी में अपना प्रभाव छोड़ देती है और यह पानी पीते रहने से शेर को खुजली नहीं होती; गोश्त को पचाने में भी यह मदद करती है।

रमेश बेदी

भारतीय वन्यजीवन के विशेष
अध्येता तथा नवनीत के पाठकों
के सुपरिचित लेखक

शेर के तलवे नाजुक होते हैं, जिससे तपी हुई धरती पर वह नहीं चलना चाहता। हांका करके यदि उसे जंगल से निकाल लिया जाये और तपी हुई चट्टानों पर चलने को मजबूर किया जाये, तो उसके तलवों पर छाले पड़ जाते हैं।

जंगलों में [illegible] यदि उसके शरीर पर ऐसी जगह घाव बन जायें, जहां वह अपनी जीभ से चाटकर साफ नहीं कर सकता, वहां सफेद कीड़े पड़ जाते हैं। ऐसे शेर दर्द से पीड़ित होकर मर जाते हैं। कभी-कभी ये लाचार शेर मनुष्य के पास आश्रय लेने उनके मकानों में घुस जाते हैं; तब वे मनुष्यों और बच्चों को भी कुछ नहीं करते। जामनगर के चिड़ियाघर में नाग के काटने से एक शेरनी मर गयी थी।

शेर की उम्र लगभग पचीस बरस मानी जाती है। पशु-वाटिकाओं में अच्छी तरह पाले जाते हुए शेर संभवतः अधिक समय जीते हैं। अक्सर कहा जाता है कि शेर के जिगर को देखकर उसकी उम्र का अंदाज लगाया जा सकता है। उसके जिगर में कई खंड होते हैं और माना जाता है कि प्रत्येक खंड एक साल की उम्र को सूचित करता है। ब्रैंडर ने इस विश्वास का खंडन किया है, क्योंकि अठारह महीने की उम्र के पालतू शेर में उन्हें ग्यारह खंड मिले थे।

रंग

कुछ शेर स्पष्ट रूप से चमकीले पीले रंग के होते हैं, जबकि दूसरे गहरे रंग के होते हैं। पीली-सी आभा वाले शेर दूसरों की तुलना में स्वभाव में कुछ कोमल होते हैं। रहने के स्थान के अनुसार भी शेर के रंग में परिवर्तन हो जाता है। घने जंगल में, जहां

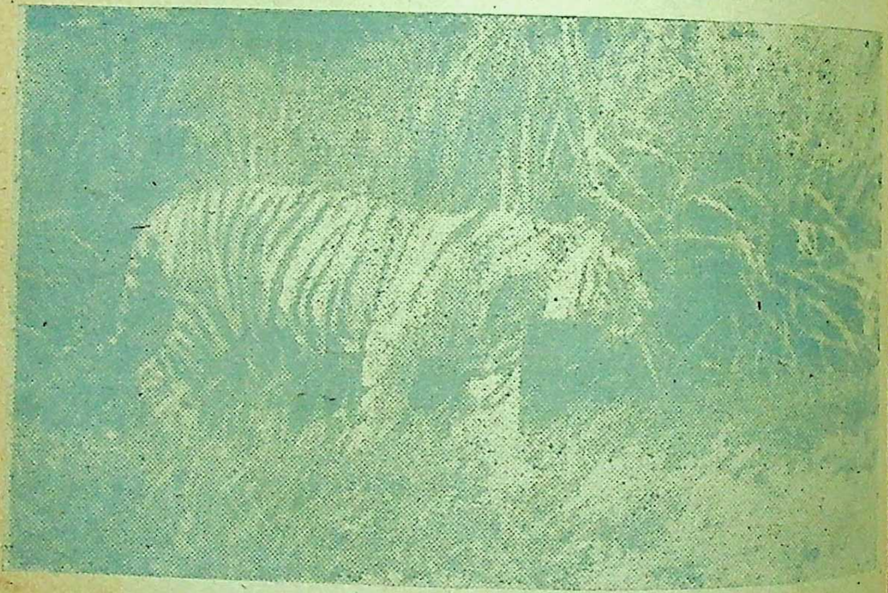

शेर सिर नीचा करके देखता हुआ चलता है।

वनस्पतियां गाढ़े रंग की हों, शेर का रंग भी गाढ़ा हो जाता है ।

चटगांव के पास सी. एस. बकलैंड ने एक काला शेर मारा था । बर्मा में वनरक्षण-अधिकारी टी. ए. हाक्सवेल के पुत्र ने भी भामो जिले के कौक्कावे जंगलों में एक काले शेर पर गोली दागी थी । गोली आमाशय में लगी थी और घायल शेर भाग गया था । यह अफ़सोस की बात थी कि ऐसे अनमोल दुर्लभ प्राणी को हस्तगत नहीं किया जा सका । उसके पैर के निशान का घेरा १ फुट ८ इंच नापा गया था, जिससे पता चलता था कि वह बड़े आकार का प्राणी था ।

काले शेरों के अस्तित्व के बारे में प्रकृतिविदों ने सदा संदेह व्यक्त किया है । उनका खयाल है कि काले तेंदुए को प्रायः भूल से काला शेर समझ लिया जाता है । जंगल में आग लगने के बाद जगह-जगह बिखरी हुई राख पर जब शेर लोट लगाता है, तो उसके बदन पर काली राख चिपट जाती है, जिससे वह काला शेर समझा जा सकता है । ताजे शिकार को खाते हुए शेर के बदन पर कई बार खून इस तरह चिपट जाता है कि उसकी खाल की सफेदी और उसका सुनहरा रंग बिलकुल खत्म हो जाता है । सूखने पर यह खून काला पड़ जाता है, जिससे शेर काला प्रतीत होता है ।

गर्मियों में जब पानी की कमी हो जाती है तब शेर दिन के अधिक समय कीचड़ में लेटे रहते हैं । काले कीचड़ से सने हुए जब वे बाहर निकलते हैं, तो काले शेर दीखते हैं । मुझे कार्बेट-नेशनल पार्क के ऐसे दो 'काले शेरों' का ज्ञान है । गेम-गार्डों ने मुझे कई बार उनकी सूचना दी थी । इनमें से एक शेरनी थी, जो शेरखोजी में रहा करती थी; और दूसरा शेर था, जो ढिकाला के अंतर्गत पटेरपानी के मार्ग में रहा करता था । आहट पाकर वे कीचड़ में से उठ जाया करते थे ।

ठंडी जगहों पर रहने वाले पूरी उम्र के किसी-किसी शेर में सर्दियों में गर्दन के ऊपर तथा गले के चारों ओर के बाल इतने लंबे हो जाते हैं मानो कि सिंह की अयाल का

कुमाऊं के नरभक्षी शेरों के शिकार की कथाओं से विश्व के शिकार-साहित्य को अपूर्व शोभा से भरने वाले जिम कार्बेट शेर के प्रशंसक तथा भारत के वन्य जीवों के संरक्षण के लिए बहुत चिंतित थे। यह उनकी जन्म-शताब्दी का वर्ष है।

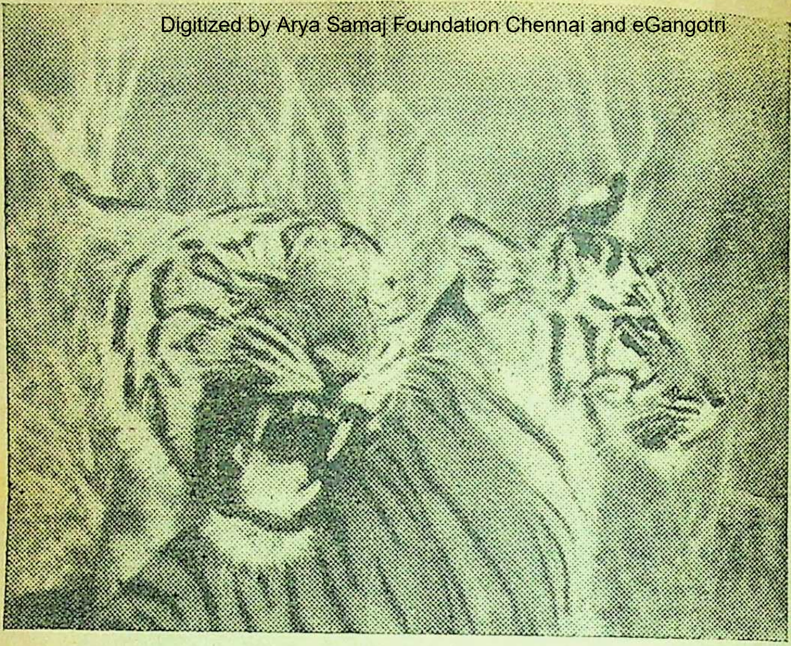

शेर व शेरनी

मुकाबला करना चाहते हों। गर्मियों में बाल छोटे होते हैं। रंग भी तब हल्का पड़ जाता है। सर्दियों में खाल ज्यादा खूबसूरत होती है। इसलिए खाल के लिए गर्मियों की अपेक्षा सर्दियों में शेर का शिकार करना अच्छा है।

नर और मादा में धारियों की संख्या एक समान होती है। छोटे बच्चों में धारियां अधिक घनी जान पड़ती हैं। ऐसा इसलिए प्रतीत होता है कि उनका शरीर छोटा होता है। बड़े और हृष्ट-पुष्ट शेरों के कंधों पर धारियों की आपसी दूरी बहुत अधिक हो जाती है। इसका मतलब यह नहीं कि कुछ धारियां लुप्त हो गयी हैं। इसका कारण उसकी मांसपेशियों का विकास है, जिससे धारियां दूर चली जाती हैं।

बुढ़ापा आने के साथ-साथ-शेर की खाल का रंग हल्का पड़ जाता है। उसकी चमक जाती रहती है। धारियां अस्पष्ट होती जाती हैं। चेहरे के बाल सफेद पड़ने लगते हैं। बूढ़ों की अपेक्षा युवा शेरों के बाल लंबे व फुज्जीदार होते हैं। बुढ़ापे में शेर के कुछ दांत या तो अंशतः टूट जाते हैं या जड़ से ही गिर जाते हैं। गीली मिट्टी पर बूढ़े शेर के पैरों के निशान् में कई दरारें दिखाई देती हैं।

भार और नाप

जंगल अच्छा हो और शिकार भरपूर मिले, तो शेरों का कद बढ़ जाता है। बड़े ढोरों को उठाकर ले जाने की क्षमता प्रदान करने के उद्देश्य से प्रकृति उनका शरीर भी भारी-भरकम बना देती है। यदि वह जंगली

सूअरों के भरे वन में रहता हो और [illegible] ही सूअर का मांस खाता रहा हो, तो अधिक पुष्ट बन जाता है।

शेर की ऊंचाई कंधे पर ३६ से ४४ इंच तक हो सकती है। औसत अच्छा नर ४० इंच ऊंचा होता है। सिर के चारों ओर का औसत नाप ३५ इंच, गले के चारों ओर ३२ इंच और कलई १९ इंच होती है।

कर्नल केसरीसिंह ने सबसे बड़ा शेर ११ फुट ५।। इंच लंबा मारा था, जिसका भार ५९० पौंड था। सबसे बड़ी शेरनी की लंबाई उन्होंने ९ फुट ४ इंच नापी थी—उसका भार ३८० पौंड था। मैसूर-नरेश ने एक शेर का शिकार किया था, जिसकी ऊंचाई ३६ इंच और वजन ६५० पौंड था। औसत शेर का वजन ४४० पौंड और शेरनी का २४० पौंड होता है।

दस फुट लंबा शेर औसत अच्छी लंबाई वाला समझा जाता है। नापने के तरीके से भी लंबाई कम या अधिक हो जाती है। एक तरीका तो यह है कि प्राणी को चित्त लिटाकर उसकी नाक और पूंछ के सिरे पर एक-एक खूंटी गाड़ दी जाये, फिर प्राणी को हटाकर फीते से इस दूरी को सीधी रेखा में नाप लिया जाये। दूसरा तरीका यह है कि फीते के सिरे को शेर की नाक पर रखकर उसके सिर, गर्दन व पीठ के घुमावों के साथ-साथ बढ़ाते हुए पूंछ के सिरे तक नाप लिया जाये। इस तरीके में लंबाई कुछ इंच बढ़ जाती है। उतारी हुई खाल को नापने से ठीक अंदाज नहीं होता, क्योंकि खाल किसी भी दिशा में सिकुड़ सकती है। सबसे अधिक अंतर तो पूंछ के नाप में पाया जाता है। सबसे लंबी पूंछ ४५ इंच और सबसे छोटी ३० इंच नापी गयी है।

नर और मादा के आकार में पर्याप्त अंतर होता है। नर ज्यादा बड़ा और ज्यादा मजबूत होता है। मुख्य अंतर होता है सिर में। नर का सिर खूब बड़ा होता है। मादा का सिर उसकी गर्दन के लगभग बराबर ही चौड़ा नजर आता है; जब कि नर का सिर गर्दन से साफ बड़ा दीखता है—खासकर जबड़े अनुपात में अधिक बढ़े हुए रहते हैं।

नर और मादा की बोलियों में भी अंतर होता है। नर की आवाज अधिक ऊंची और अधिक गंभीर होती है। संवेशन के लिए पुकारें छोटी-छोटी तथा तीखी होती हैं। ललकार की दहाड़ें ऊंची होती हैं, देर तक कायम रहती हैं और खूब गूंजती हैं।

पदचिह्नों को देखकर कुछ हद तक नर और मादा की पहचान की जा सकती है। नर के पांवों के निशान बड़े और गोल बनते हैं। तुलना में मादा के पदचिह्न छोटे होते हैं। नर की उंगलियों की छाप सिरे पर गोल और नियमित होती है। इसके मुकाबले मादा की उंगलियों की छाप लंबोतरी पड़ती है, जिसमें बीच की उंगली का निशान आगे बढ़ा होता है। यह बात जानने योग्य है कि पदचिह्नों पर विचार करते समय केवल सामने के चिह्नों का निरीक्षण किया जाता है। मोटे तौर पर सभी शेर एक जैसे दीखते हैं। परंतु जार्ज शेल्लर का कहना है

कि गौर से देखने पर आंख के ऊपर काले निशानों की बनावट में कुछ अंतर का पता चल जाता है, जिससे उन्हें एक-दूसरे से अलग पहचाना जा सकता है।

निवास-स्थान

किसी स्थान का शेरों के निवास के अनुकूल होना तीन मुख्य बातों पर निर्भर है— भोजन, पानी और छिपने के लिए जंगल। शेर अपने को अत्यंत भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के अनुकूल बना लेता है। गर्म प्रदेशों में, वायुशिफों (गरान या मैन्ग्रोव) से व्याप्त दलदलों वाले आर्द्र क्षेत्रों में, सरकंडे से आच्छादित पट्टियों में, वर्षा-बहुल जंगलों से लेकर सूखे अर्ध रेगिस्तानी झाड़खंडों में तथा ठंडे शंकुवनों (कोनिफेरस फारेस्ट) में जहां सर्दियों में कई फुट गहरी बर्फ पड़ती है, यह पाया जाता है।

किसी समय शेर पूर्वी तुर्किस्तान में और कास्पिअन समुद्र के पास से लेकर रूसी मंचूरिया तक पाया जाता था। उत्तर अफगानिस्तान तथा ईरान में और रूस के अंदर बलखाश झील के निकट भी यह मिल जाता

एक परिवार शेरों का सुखी और संतुष्ट

था। चीनी तुर्किस्तान में अब शेर नहीं पाया जाता; परंतु उत्तर कोरिया में अब भी कुछ शेर रहते हैं।

चीन, बर्मा और लाओस जहां मिलते हैं, वहां युन्नान प्रदेश है, उसके दक्षिणी भाग में अब भी शेर की एक जाति मिलती है, जो हमारे शेर से भिन्न है।

एशिया के पूर्वी प्रदेश में, विशेषत: मलय में, शेर व्यापक रूप से फैला हुआ है और इंदोनीसियाई द्वीपों की शृंखला में प्रविष्ट हो गया है। बर्मा, थाइलैंड, लाओस, सुमात्रा, साइबेरिया, मंचूरिया, मंगोलिया, चीन, कोरिया और ईरान में शेर रहते हैं।

भारत में शेर का क्षेत्र असम से पश्चिम की ओर भूटान और नेपाल से होकर हिमाचल प्रदेश तक, और उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान से लेकर दक्षिण की ओर सारे प्रायद्वीप में है। पश्चिम पाकिस्तान की सिंधु घाटी में भी यह नस्ल पायी जाती थी। वहां पर अंतिम शेर पिछली शताब्दी में गोली से मारा गया था।

इससे यह स्पष्ट है कि शेर किसी खास जलवायु वाले स्थान में नहीं रहता। उसे तो ऐसा स्थान चाहिये जहां छिपने के लिए बढ़िया वनस्पति हो, साल-भर पानी रहता हो और काफी भोजन मिल जाता हो। हमारे देश में जंगल की जो मुख्य किस्में हैं उन सब में शेर पाया जाता है। उदाहरण के लिए यह कांटेदार जंगल में, सूखे जंगल में, नमीदार पर्णपाती जंगल में, अर्ध सदाहरित जंगल में और सदा हरे जंगल में रहता है।

गढ़वाल-हिमालय में शेर काफी ऊंचाई तक चले जाते हैं। १९६४ की गर्मियों में उत्तरकाशी वन-मंडल के तटनोर रेंज में लगभग ८,००० फुट की ऊंचाई पर पिलाङ्ग में एक शेर देखा गया था। सन १८८० के करीब वन-प्रशिक्षक बी. बी. ओस्मस्टन ने मुंडाली फारेस्ट रेस्ट हाउस से कुछ ही दूर एक नरभक्षी शेर को मार गिराया था, जब वह उनके एक छात्र को खा रहा था। घटना-स्थान समुद्र-तल से ९,००० फुट की ऊंचाई पर था और सबसे नजदीक के शेरों के जंगल से तीस-चालीस मील दूर था।

विश्वास किया जाता है कि पिछले हिम-युग के बाद शेर उत्तरी एशिया से भारत में आया। वह चीन के रास्ते हिमालय की पूर्वी शृंखला को पार करके उत्तर-पूर्व भारत में प्रविष्ट हुआ होगा। अब वह उत्तर-पश्चिम के रेगिस्तानी प्रदेशों और हिमालय के अधिक ऊंचे पर्वतों को छोड़कर इस देश में सर्वत्र मिलता है। सौराष्ट्र में गीर-वनों के चारों ओर सौ मील के दायरे में शेर नहीं मिलते, वरना वे सिंहों को मार डालते। श्रीलंका में भी शेर नहीं पाये जाते।

आजकल का मंचूरियन या उस्सूरी शेर अधिक बड़ा और लंबे बालों वाला होता है। हम मान सकते हैं कि भारत का जरा-सा छोटा तथा विरल बालों वाला शेर उसी का परिवर्तित रूप है। यहां की अधिक गर्मी और नमी में सदियों तक रहने के कारण उसमें ये परिवर्तन आ गये होंगे। और भी एक कारण संभव है। उत्तरी एशिया के पूर्व-

ऐतिहासिक काल की तुलना में भारत में उसे अपेक्षाकृत छोटे जानवर मारने पड़ते हैं। इन्हें मारने में छोटे शरीर से भी काम चल जाता है। इसलिए धीरे-धीरे उसका शरीर छोटा होता गया।

कुछ लोगों का मत है कि बंगाल का शेर असम, बिहार या भारत के अन्य प्रदेशों में पाये जाने वाले शेरों के मुकाबले अधिक बड़ा या अधिक खूबसूरत नहीं होता; इसलिए उसे 'रायल बंगाल टाइगर' कहना उपयुक्त नहीं।

सन १७५८ में लिनेयस ने जिस नमून को देखकर इस प्राणी का वैज्ञानिक नाम 'फेलिस टिग्रिस' रखा था, वह बंगाल का है नमूना था।

जोड़ा बनाना

गर्मी में आयी हुई शेरनी की पहचान मुख्यतया एक खास किस्म की गंध से होती है, जिसे प्राय: पशुवाटिकाओं के अनुभवी पालक भी नहीं जान पाते। नर शेर इस गंध को दूर से ही ग्रहण कर लेते हैं और शेरनी के पीछे लग जाते हैं। जंगल में तो मादाएं स्वयं नर की तलाश में निकल पड़ती हैं। जोड़ा बनाने के लिए वे जोर-जोर से नर को पुकारती हैं, जिसे संवेशन आह्वान (मेटिंग काल्स) कहते हैं। नर की तलाश में वे अपने

कुल १८१ मैथुनों में ये शेर-शेरनी १२० मिनिट ५७ सेकेंड रतिकर्म में प्रवृत्त रहे।

क्षेत्र से दूर तक चली जाती है, और कुछ दिन तक उनके साथ रहकर फिर अपने क्षेत्र में लौट आती हैं। अपने क्षेत्र में नर गर्मी में आयी हुई किसी भी मादा से जोड़ा बना लेता है, चाहे वह उसी के क्षेत्र में रहने वाली हो या ऋतुकाल में बाहर से आयी हो। मादा के लिए होने वाली लड़ाइयां इन क्षेत्रों में नहीं छिड़तीं।

पशुवाटिकाओं में एक शेरनी के साथ एक ही शेर को जोड़ा बनाने का अवसर दिया जाता है। लेकिन शेरनी की गर्मी की गंध को दूसरे शेर भी जान जाते हैं और वे कामातुर हो उठते हैं, दिन-भर उनके संवेशन-आह्वान जारी रहते हैं।

गर्मी में आयी हुई शेरनी में मैंने सबसे मुख्य लक्षण देखा है—नर की चाह। संभोग से पूर्व तक उसकी पूंछ प्राय: उठी रहती है। वह बार-बार पेशाब करती है। पक्के फर्श पर हो तो शेर इसको थोड़ा-थोड़ा चाटता है। पेशाब मिट्टी में किया गया होता है, तो वह उस जगह अपनी थूंथनी गाड़कर पेशाब से सनी हुई मिट्टी को मल लेता है। ढोरों में जैसे नर मादा का पेशाब पीने के बाद देर तक दांत निकालकर अजीब-सी मुखाकृति बनाये रहता है, शेर भी वैसे ही करता है। मैथुन के बाद ये लक्षण समाप्त हो जाते हैं। पहले समागम के समय की जाने वाली काम-चेष्टाओं में यह भी है कि नर दांतों के द्वारा मादा की गर्दन को ऊपर से पकड़कर घुरघुराता हुआ उसे बैठने के लिए राजी करना चाहता है। मादा का योनिद्वार गीला-सा, सूजा हुआ-सा और पहले की अपेक्षा अधिक खुला हुआ रहता है। संवेशन काल की सारी अवधि में ये लक्षण इसी प्रकार बने रहते हैं। पशुवाटिकाओं में शेर-शेरनियों के जोड़ा बनाने के कुछ उदाहरणों का मैंने अध्ययन किया है। किसी कामशास्त्री का वचन है 'स्त्रिय: अष्टगुणं कामम्' शेरों के मामले में एकदम उलटी बात है। यहां तो 'नृण: शतगुणं कामम्' ही सही है। अपने अध्ययन के अंतर्गत एक जोड़े के नर के बारे में तो मैं कह सकता हूं कि मादा की ओर दस से चालीस बार बढ़ने के बाद कहीं एक बार वह इरादों को पूरा करने में सफल होता था। खाने में उसकी दिलचस्पी खत्म हो चुकी थी।

मैथुन के लिए शेरनी पेट और छाती को धरती पर टिकाकर बैठ जाती है, उसकी चारों टांगें जमीन पर टिकी हुई होती हैं। मैथुन करते समय शेर शेरनी को अपने दांतों से गर्दन या सिर के ऊपर से हल्का-सा पकड़े रहता है। उसके मुंह से गाढ़ी सफेद लार निकलकर मादा की गर्दन पर टपकती रहती है। शेर के चारों पंजे जमीन पर टिके रहते हैं। रतिकर्म आरंभ करने से पूर्व या उसकी समाप्ति पर नर और मादा दोनों या इनमें से एक घुरघुराता है। यह घुड़कना शेरनी की ओर से अधिक होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि जिस संभोग में दोनों में से किसी एक की या दोनों की तसल्ली न हुई हो, उसके बाद काम-कलह अवश्य होता है, जिसमें भृकुटि को तानकर दांतों और पंजों से वार किया जाता है और एक दूसरे पर घुड़कने

से बड़ा शोरगुल मचता है। संवेशनकाल में भोजन के प्रति मादा की रुचि पहले के समान ही रहती है; जबकि अनेक बार मैंने देखा कि कामातुर नर मुख के नीचे पड़े गोश्त को देखते तक नहीं।

पशुवाटिकाओं के रेकार्डों से ज्ञात होता है कि एक दिन में ये छब्बीस बार तक भी संभोग कर लेते हैं। आठ दिन के संवेशन-काल में ग्यारह-बारह बरस के एक युगल ने १८१ बार संभोग किया और इन १८१ मैथुनों में यह व्याघ्र-युगल १२० मिनिट और ५७ सेकेंड रतिकर्म में प्रवृत्त रहा। एक बार के मैथुन में कम से कम पांच सेकेंड लगते थे; सबसे लंबा समय ८ मिनिट १५ सेकेंड रेकार्ड किया गया।

कामासक्त शेर अपने राज्य में मनुष्य को देखने पर हमला कर सकते हैं। ब्रैंडर का कारिंदा एक बार गोधूलि-वेला में जंगल की चौड़ी सड़क पर जा रहा था। उसके सामने सड़क पर दूर एक शेरनी प्रकट हुई। उसके साथ सिमटकर शेर चल रहा था। कारि ठहर गया। शेर ने उसे देख लिया और हमला कर दिया। वहां पेड़ कम थे। करीब दो सौ गज की दूरी पर सलई का एक पे खड़ा था, जिस पर वह शरण ले सकता था। वह फौरन उधर दौड़ा। वह घबराया नहीं। रास्ते में उसने अपनी पगड़ी फेंक दी। शे को उस चीज ने रोक लिया, परंतु उसे उसे संतोष नहीं हुआ। वह फिर आदमी की तरफ बढ़ा, जो अब तक पेड़ पर चढ़ चु

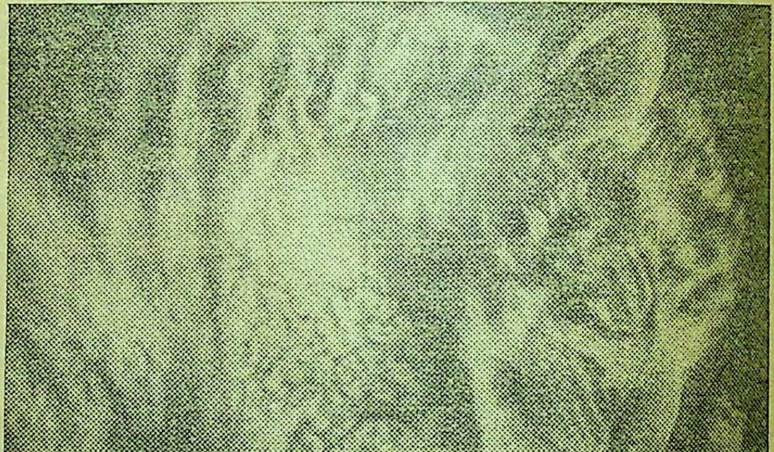

मेमने की तरह नरम बालों से ढंका हुआ सफेद शेर का बच्चा मीठी नींद में।

बच्चा ज्यादा शरारत करे तो मां उसकी ताड़ करती है।

था। शेर ने अपनी पिछली टांगों पर खड़े होकर आदमी को पंजा मारा। लेकिन पंजा वहां तक पहुंच नहीं पाया। दोनों शेर तब पास के नाले में चले गये और काम-चेष्टाओं में लीन हो गये। कुछ-कुछ देर बाद शेर लौटकर आता था और आदमी पर झपटता था। इस बीच सूरज डूब गया। अभागे आदमी को कड़ाके की ठंड में खाये-पिये बगैर रात सलई की एक मोटी डाल पर चिमटकर बितानी पड़ी। अपर्याप्त कपड़ों में बैठे-बैठे वह जम-सा गया था। अगली सुबह नौ बजे तक वह ऊपर टंगा रहा। फिर एक बैलगाड़ी उधर आ निकली, जिसके गाड़ीवान ने उसे बचाया। इस घटना के बाद भी शेर बहुत समय तक इसी क्षेत्र में देखा जाता रहा और उसने किसी आदमी को नहीं सताया।

राजधानी की पशुवाटिका में मैंने प्रायः सभी महीनों में शेरों को जोड़े बनाते देखा है। नव्वे से एक सौ पांच दिन तक बच्चे गर्भ में विकसित होते रहते हैं। एक उदाहरण में एक सौ सात दिन बाद बच्चे पैदा हुए थे। चिड़ियाघरों में मां जेर को खा जाती है।

सन १९६० से १९६९ तक दिल्ली के चिड़ियाघर में पैंसठ शेर पैदा हुए थे। जनवरी-फरवरी (शुरू के दो महीनों) को छोड़-

कर मार्च से दिसंबर तक, हर महीने में बच्चे पैदा हुए। परंतु संख्या की अधिकता की दृष्टि से दो मुख्य प्रसव-काल कहे जा सकते हैं–एक तो मार्च से जून तक का, और दूसरा अगस्त से सितंबर तक का। प्रकृति में भी शेरों के बच्चे देने का यही समय है।

नये पैदा हुए बच्चे अपेक्षाकृत बहुत छोटे होते हैं। शेर के आकार के किसी भी अन्य जानवर का नवजात बच्चा इनसे कहीं बड़ा होता है। १२ नवंबर १९६८ की सुबह ८ बजे दिल्ली की पशुवाटिका में विंध्या नामक शेरनी के चार नवजात बच्चे देखे गये। इनमें से एक मर गया था। इनका वजन इस प्रकार था–१·२५० (मरे हुए का), १·४००, १·५०० और १·५५० किलोग्राम।

पैदा होने पर बच्चों की आंखें प्रायः बंद होती हैं। चार दिन बाद खुलने लगती हैं। किसी-किसी बच्चे की जनमते ही आंखें खुली रहती हैं। पैदा होने के एक डेढ़ घंटे बाद वे मां का दूध पीना शुरू कर देते हैं और अपना अधिक समय दूध पीने और सोने में गुजारते हैं। बच्चों के नाखून और दांत बन चुके होते हैं। बदन पर पूरी धारियां पड़ी रहती हैं जो

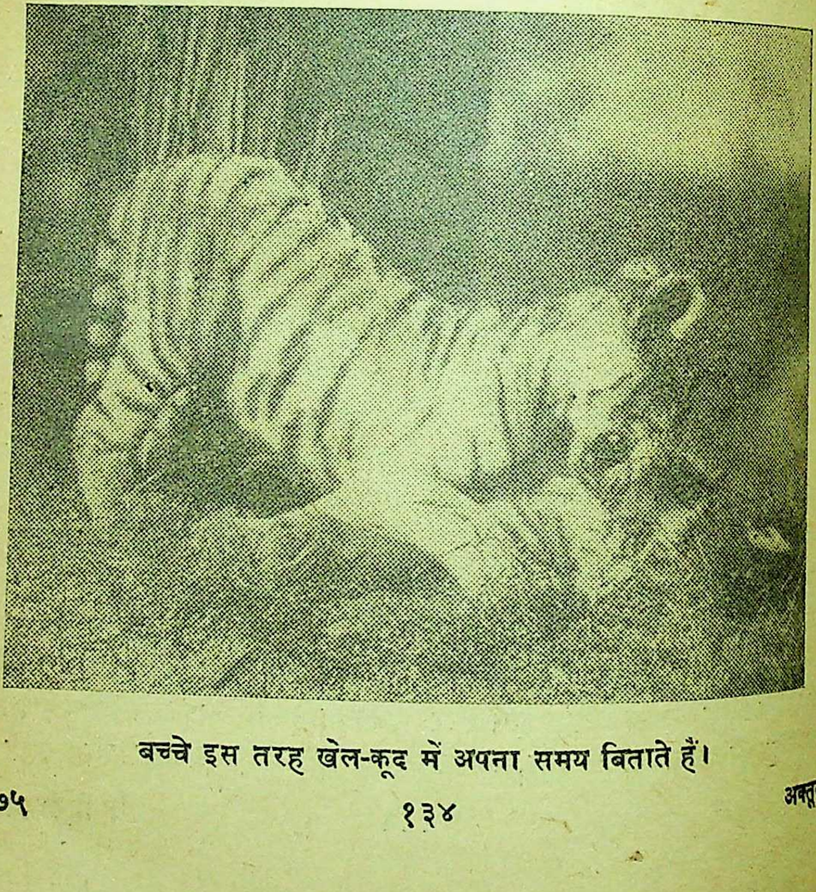

बच्चे इस तरह खेल-कूद में अपना समय बिताते हैं।

सारी जिंदगी-भर बनी रहती है और बुढ़ापे में कुछ फीकी पड़ जाती हैं।

शुरू में अंधे और असहाय बच्चे पूर्णतया मां पर निर्भर रहते हैं। मां उन्हें अपना दूध पिलाती है और आरंभ के महीनों में घर पर ही मांस खिलाती है। जब वे करीब दो महीने के हो जाते हैं, तो अपने आलने को छोड़ना शुरू करते हैं। धीरे-धीरे वे अपने घूमने के दायरे को बढ़ाते हैं। स्पेनिअल कुत्ते बराबर डीलडौल के हो जाने पर मां के साथ नियमित रूप से जाने लगते हैं। गुलदारों की बनिस्बत शेरनियों में मातृत्व की भावना कम उन्नत होती है। वे अपने बच्चे की रक्षा तो करती हैं, पर संकट उपस्थित होने पर अक्सर स्नेह व ममता को भूलकर बच्चों को छोड़कर भाग जाती हैं।

सुरक्षा की दृष्टि से मां को कई बार जगह बदलने की जरूरत पड़ सकती है। उस समय बच्चे बहुत छोटे हैं तो मां उन्हें गर्दन के ऊपर ढीली खाल से पकड़कर उठा ले जाती है। बच्चा चाहे एक दिन का हो, तो भी इसी तरह उठाया जाता है। अक्सर रात को वह एक-एक बच्चे को उठाकर बिलकुल दूसरी घाटी में पहुंचा देती है।

एक ब्यात में शेरनी सामान्यतया दो या तीन बच्चों को जन्म देती है। कई बार केवल एक ही बच्चा पैदा होता है। यह संख्या संभवतः सात से ऊपर कभी नहीं जाती। बेस्ट ने एक शेरनी का उल्लेख किया है, जिसके गर्भ में से सात भ्रूण निकले थे। बहुत कम उदाहरणों में दो से अधिक बच्चे पूरी जवानी तक आ पाते हैं। एक बार कर्नल केसरीसिंह ने मां-बाप के साथ छह पूरे जवान बच्चे मारे थे। आवश्यक नहीं कि एक बार में नर और मादा बच्चों की संख्या बराबर हो। ऐसे भी उदाहरण हैं कि एक ब्यात में तीनों बच्चे एक ही लिंग के थे।

शेर और सिंह एक ही गण (जीनस) के प्राणी हैं। पशुवाटिकाओं में कभी-कभी इनकी दोगली संतान पैदा हो जाती है। शेर और सिंहनी के संयोग से उत्पन्न संतान 'टाइगोन' कहलाती है; सिंह और शेरनी के मेल से पैदा हुई संतान 'लाइगर'।

अपने प्राकृतिक निवासस्थान में शेरनी बच्चे देने के लिए एकांत में गिरे हुए किसी पेड़ के नीचे चली जाती है।

सर्दी से बचने के लिए शेर अढ़ाये में छिप जाते हैं। घास-फूस की झाड़ियों को वे अपने शरीर से दबाकर आलना-सा बना लेते हैं।

प्रत्येक शेर प्रायः एक निश्चित स्थान में ही रहा करता है, जिसे शेर का घर कहते हैं। इस शेर को मार दिया जाये तो जल्दी ही वहां दूसरा शेर आ जाता है और वह भी पहले शेर के समान उसी जगह को अपना घर बना लेता है। उसी स्थान पर वह लोट लगाता है और उसी जगह पानी पीने जाता है। गली के कुत्तों के समान शेर भी अपने-अपने क्षेत्रों में रहते हैं। दूसरे के क्षेत्र में भी वे चले तो जाते हैं; परंतु वहां जब दूसरे शेर का आधिपत्य देखते हैं, तो लौट जाते हैं।

अपने पंजों को साफ करने के लिए शेर पेड़ों के तनों के साथ खड़े होकर तनों के

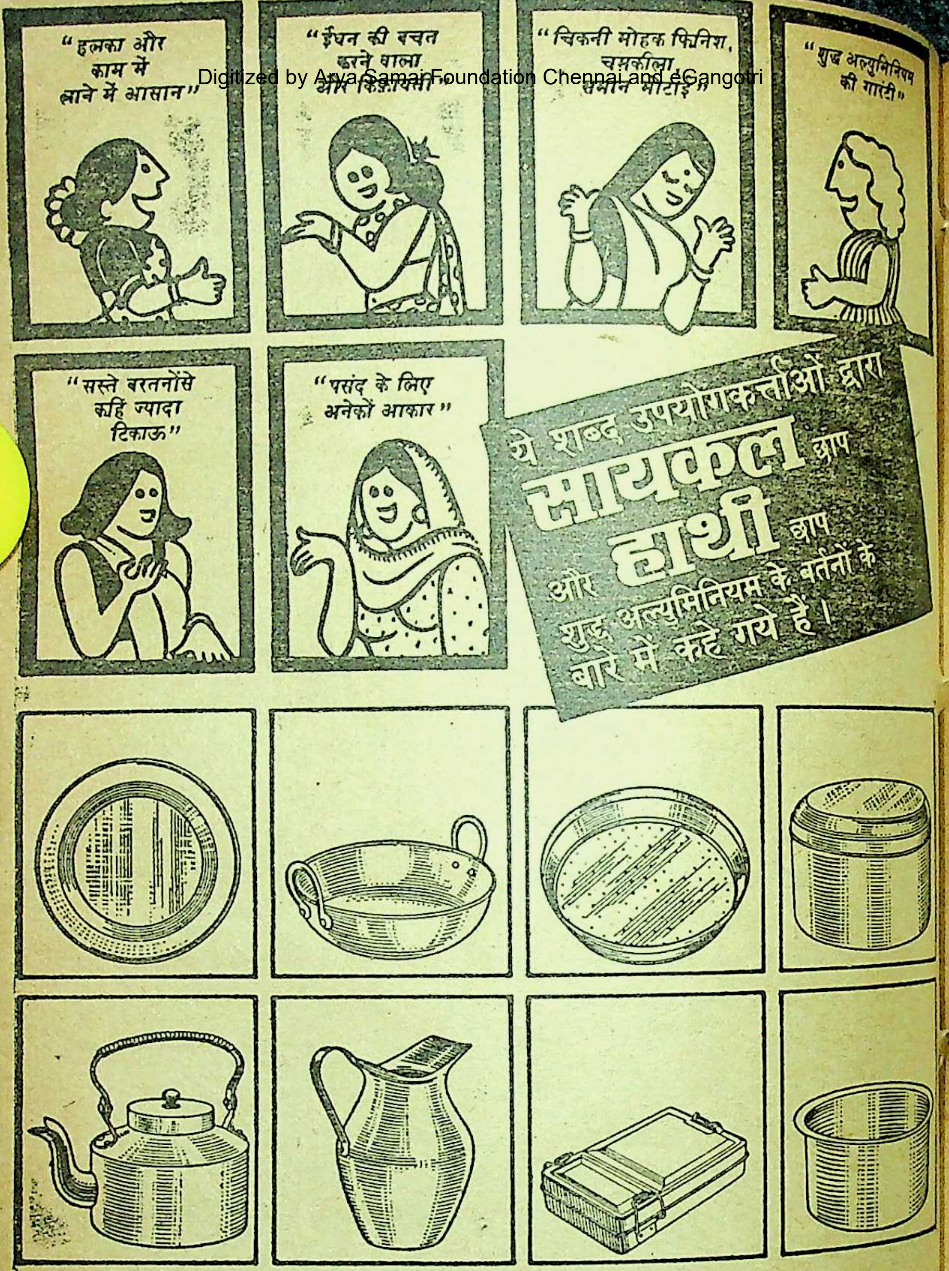
"हलका और काम में लाने में आसान"
"ईंधन की बचत करने वाला और किफ़ायती"
"चिकनी मोहक फिनिश, चमकीला, समान मोटाई"
"शुद्ध अल्युमिनियम की गारंटी"
"सस्ते बरतनोंसे कहीं ज्यादा टिकाऊ"
"पसंद के लिए अनेकों आकार"
ये शब्द उपयोगकर्त्ताओं द्वारा सायकल छाप और हाथी छाप शुद्ध अल्युमिनियम के बर्तनों के बारे में कहे गये हैं।

६० वर्षों से भी अधिक समय से
अल्युमिनियम में **सायकल** छाप और
हाथी छाप दो विश्वसनीय नाम

लल्लूभाई अमीचंद प्राइवेट लि
४८-५०, कंसारा चाल, बम्बई ४०००

Ratan Batra/LA/H

ऊपर पंजे रगड़ा करते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि नाखूनों को तेज करने के उद्देश्य से ऐसा किया जाता है। यह देखा गया है कि इस क्रिया में वे अधिक से अधिक जितना ऊंचा पहुंच सकते हैं, वहीं पर पंजों को रगड़ते हैं और अपनी नाक भी घिसते हैं। नाक के स्रावों की गंध तने पर बस जाती है और पंजों के निशान भी पड़ जाते हैं। इन दोनों पहचानों से शेर की ऊंचाई का पता चल जाता है। बाहर का शेर जब उस क्षेत्र में आता है, तो इन पहचानों से शेर के कद और शक्ति का अंदाज कर लेता है। यदि उसे अपने से कमजोर पाता है तो ललकारने के लिए तैयार हो जाता है। चार शेरों की सीमाएं जिस जगह मिलती हों, वहां अलग-अलग चार वृक्षों पर ऐसे निशान मिल जाते हैं।

जंगल में जाते हुए शेर जगह-जगह जो पेशाब करता जाता है, उसके बारे में एक अंदाज है कि इस तरह वह अपने राज्य की सीमा का अंकन कर रहा होता है। पेशाब में मिली गंध को पाकर दूसरा शेर उस सीमा के अंदर नहीं जाता। यदि चला भी जाये तो उस राज्य के शेर से मुठभेड़ होने के खतरे का मुकाबला करने के लिए तैयार होकर जाता है।

शेरनी अपने सारे जंगल बीट में या उस भाग में किसी नर या अन्य मादाओं के साथ मिलकर रह सकती है। परंतु युवा नर प्रायः दूसरे नर की उपस्थिति को अपने क्षेत्र की सीमाओं में बर्दाश्त नहीं करता।

शेर सामान्यतया अकेले शिकार करते हैं; परंतु रात में इनकी संक्षिप्त मुलाकातें होना भी साधारण बात है। दूर के साथियों को अपनी उपस्थिति बताने के लिए शेर एक विशेष आवाज में गरजता है, जिसमें वह बताता है कि मैं यहां हूं। इस गरज का अनुकरण हम कुछ इस प्रकार कर सकते हैं— आ ...... आ ...... उ उ उ ......, आ आ ...... उ उ उ ......। इस ध्वनि को वह बार-बार दोहराता है, जिसमें पहले स्वर आ पर अधिक जोर होता है। रात के सन्नाटे में यह आवाज मील-भर दूर से अच्छी तरह सुनाई दे जाती है।

इसके अलावा जब नर और मादा दोनों एक साथ जा रहे होते हैं, तो बीच-बीच में अपनी पूछें उठाकर झाड़ियों और वृक्षों पर एक गंध छोड़ते जाते हैं, जो पेशाब के साथ मिली रहती है। यह इतनी शक्तिशाली गंध है कि वहां महीनों बनी रहती है। कुछ उदाहरणों में तो तीन महीने बाद भी यह गंध पायी गयी है। साथियों का अनुसरण करने और उन्हें तलाश करने में यह गंध निस्संदेह सहायक होती है।

शिकार को खाने के समय भी शेर दूसरों को अपने साथ शामिल करते देखे गये हैं। ऐसे समय, शिकार को मारकर शेरनी बार-बार गरजती है, आ आ ...... उ उ उ...... (मैं यहां हूं)। दूर से उसी तरह का जवाब आता है, जिसका मतलब होता है कि दावत मंजूर है। आमंत्रित शेर यदि कहीं दूर हैं, तो उन्हें पहुंचने में एक घंटे का समय भी

ताक़त

मर्द की शान मर्द की पहचान

इस ताक़त को बनाये रखने के लिए, सदाबहार चुस्ती, फुर्ती और नौजवानी की की उमंग के लिए ओकासा स्वास्थ्यदायक टॉनिक टिकियाँ लीजिये। ओकासा टॉनिक टिकियों की अनोखी शक्ति से आपके शरीर और दिमाग़ को लगातार नयी ताक़त मिलती है।
ओकासा की टिकियों पर चांदी चढ़ी रहती है।

OKASA
THE 20TH CENTURY TONIC
RESTORATIVE
OKASA CO. PVT. LTD. BOMBAY
FOR
HORMO-PHARMA LTD.

ओकासा

टॉनिक टिकियाँ
पुरुषों के लिए चांदी वाली
हार्मो-फ़ार्मा लिमिटेड लंदन-बर्लिन का उत्पादन
सभी बड़े-बड़े केमिस्टों के यहाँ मिलता है।

OKASA CO. PVT. LTD., 12A Gunbow
Street, P. B. No. 396, Bombay-400001

बवासीर

की पीड़ा
और जलन से,
बिना ऑपरेशन के,
शीघ्र आराम पाने
के लिए

हडेन्सा

मरहम
इस्तेमाल कीजिए!

OBM: 2670 HIN

सेल-टेक्स®

- खाज,
- चमडी कटने,
- खरोच तथा
- फुन्सीयो के लिये

दाद का मलहम

फार्मा-मेडीको (इण्डीया) प्रा.ली. बंबई-40

लग सकता है। एक बार बच्चों वाली दो शेरनियां दो दिन तक एक साथ दावत का मजा लेती रहीं। इसमें एक शेरनी के साथ चार बच्चे थे और दूसरी के साथ एक बच्चा था। सब मिलकर वे सात जीव थे।

कान्हा पार्क के एक खंड में एक बड़े कद्दावर सुशील शेर का राज्य था। शिकार की टोह में उसकी परिसीमा में कभी-कभी दूसरे क्षेत्र की शेरनियां तथा उनके बच्चे भी चले जाते थे। इनके साथ वह बहुत भद्र व्यवहार करता था। इससे शेरनियां भी उस पर बहुत भरोसा करती थीं और उसे पसंद करती थीं और अपने छोटे बच्चों तक को उससे दूर रखने की कोशिश नहीं करती थीं।

एक बार इस शेर के साथ दो शेरनियां और चार बच्चे एक बैल की दावत उड़ाते हुए देखे गये। दूसरे मौके पर एक शेरनी द्वारा मारे गये शिकार पर यह शेर देखा गया। शेरनी के चार बच्चे भी साथ में थे। निस्संदेह भूख उसे वहां ले गयी थी और गोश्त भी लुभाने वाला था। परंतु वह बीस फुट दूर जाकर बैठ गया और धैर्य से प्रतीक्षा करता रहा। हर एक ने खाने का पहला दौर खत्म कर लिया। बीच-बीच में बच्चे अपने चेहरों को उसके चेहरे से रगड़ते थे और अपनी देहों को उसके सिर तथा गर्दन के साथ मलते थे। (जब शेर कुछ समय बाद आपस में मिलते हैं, तो दोस्ती और आत्मीयता को प्रकट करने के लिए ऐसा ही करते हैं।) वह सुबह तक इस परिवार के साथ रही और तब अकेली दौरे पर चल दिया।

इन उदाहरणों से शेरों में सामाजिक या पारिवारिक भावना का पता चलता है।

सामान्यतया शेर समूह में रहने वाला प्राणी नहीं है। कभी-कभी परिवार के सदस्य एक साथ रहते हुए देखे जाते हैं। यदि बाप सहिष्णु है तो वे मिलकर भी शिकार कर लेते हैं। बूढ़ा हो जाने पर शेर अकेले रहना पसंद करता है।

अपना जन्मस्थान छोड़ने के बाद बच्चे जब मां के साथ चल पड़ते हैं तो उस दिन से उनका कोई स्थायी घर नहीं रहता। वे खानाबदोशों की तरह जिंदगी बसर करते हैं। कभी इस झाड़खंड में और कभी उस झाड़खंड में छिपे रहते हैं और शिकार की तलाश में फिरते रहते हैं। बच्चों का जीवन किसी छिपी हुई जगह पर चुपचाप घंटों और कई बार तो अनेक दिनों तक मां की प्रतीक्षा करते बीतता है। शिकार मारकर जब वह लौटती है, तो उन्हें भोजन के लिए साथ ले जाती है।

बच्चे जब छोटे होते हैं तो मां शिकार मारने के काम से कभी-कभी छुट्टी भी मना लेती है। एक परिवार ने रात्रि में एक चीतल खाया। यह हिरन इतना छोटा होता है कि अगले दिन उस परिवार को और भोजन की जरूरत थी। परंतु उस शाम को फिर शिकार पर निकलने के बजाय शेरनी घास में लोट लगाने लगी और बच्चे उसके चारों ओर युद्ध के अभ्यासों में मगन हो गये। अगले सारे दिन भी वे गहरी घास में लोट लगाते

विटामिन और खनिज पदार्थ आपके परिवार के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी हैं

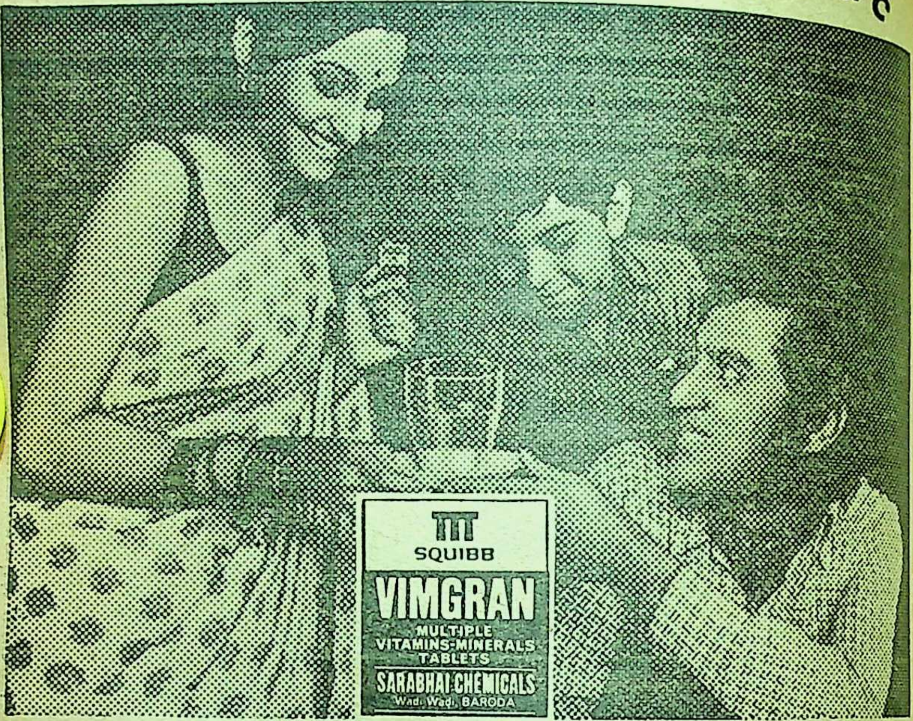
SQUIBB
VIMGRAN
MULTIPLE VITAMINS-MINERALS TABLETS
SARABHAI CHEMICALS
Wadi Wadi BARODA

क्या उन्हें ये ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहे हैं?

विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी से आपके परिवार के लोगों का स्वास्थ्य गिर सकता है. थकान, ठंड और जुकाम, भूख की कमी, कमजोरी, चमड़ी तथा दाँतों के रोग अधिकतर जरूरी विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी के कारण होते हैं.

इन की कमी, भोजनों में भी रह सकती है. इस बांत के विश्वास के लिये कि परिवार के सभी लोगों को ये जरूरी पोषकतत्व उचित मात्रा में मिलें, उन्हें रोज़ विमग्रान दीजिये.

विमग्रान में आवश्यक ११ विटामिन और ८ खनिजपदार्थ मिले हैं. लोहा – खून बढ़ाने और फुर्ती लाने के लिये, केल्सियम– हड्डियों और दाँतों को मजबूत बनाने के लिये, विटामिन सी– ठंड और जुकाम रोकने की शक्ति बढ़ाने के लिये, विटामिन ए–चमकदार आँखों और स्वस्थ त्वचा के लिये, विटामिन बी१२–भूख बढ़ाने के लिये तथा शरीर को स्वस्थ रखने के लिये दूसरे जरूरी पोषक तत्व! आज से ही रोज लीजिये. विमग्रान!

विमग्रान®

विविध विटामिन एवं खनिजयुक्त गोलियाँ

११ विटामिन + ८ खनिज पदार्थ

®SQUIBB®

SARABHAI CHEMICALS PVT. LTD.

® ई. आर. स्क्विब एंड सन्स इन्कॉ. का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है जिसके अनुसार उपयोगकर्ता हैं–एस. सी. पी. एल.

केवल एक विमग्रान आपको दिन भर स्फूर्तियुक्त रखता है

Shilpi-HPMA 2A/74 Hin

रहे। गोधूलि-बेला में शेरनी अकेली ही शिकार पर चल पड़ी। भाग्य ने उसका साथ दिया। एक घंटे से ऊपर कुछ ही मिनिट गुजरे होंगे कि वह एक भैंस को मारने में सफल हो गयी, जो गांव से भटककर इधर चली आयी थी। इससे शेरनी के परिवार को और दो दिन के लिए मांस मिल गया।

जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते जाते हैं, मां को जरा भी फुरसत नहीं रहती। घाटियों और जंगलों में भटकने वाले अपने शावक-कुल के लिए भरपूर आहार जुटाने में उसे बड़ी मुश्किलें उठानी पड़ती हैं। जब बच्चे एक साल के हो जाते हैं, तो उन्हें एक चीतल के बराबर आहार की आवश्यकता प्रतिदिन होती है। शेरनी के लिए इतना प्रबंध करना बहुत कठिन होता है।

एक साल की उम्र तक बच्चों को बड़ा शिकार मारने का वास्तव में कोई अनुभव नहीं होता। परंतु अब रात्रिकालीन आखेटों पर जाते समय उनमें से एक या अधिक बच्चे मां के साथ चल पड़ते हैं। जैसे शेरनी भी मारने की कला का अपना अनुभव उन्हें बताने के उद्देश्य से कोई निश्चित प्रयत्न करने जा रही हो। बच्चों वाली जिस शेरनी का जिक्र हमने ऊपर किया है, एक बार उसने बिना जख्मी किये एक भैंस को गिरा लिया। तब वह पीछे हट गयी और उसके तीन बच्चे मारने के लिए लपके। वे इतने अनाड़ी थे कि भैंस ने उन्हें दूर झटक दिया। एक बार फिर शेरनी ने बच्चों के लिए भैंस को नीचे पटक दिया। अंत में जिस बच्चे का जहां बस चला, उसने वहीं से भैंस को काटना शुरू किया और उसे मार डाला।

बच्चों और उनकी मां के बीच का बंधन फिर शीघ्र ही क्षीण होने लगा। दो या अधिक दिनों बाद वह कभी उन्हें मिलने आ जाती और कभी-कभी एक शिकार उनके लिए जुटा देती। आंशिक स्वतंत्रता से पूर्ण स्वतंत्रता तक पहुंचाने का यह एक तरीका था।

दो बरस की उम्र तक पहुंचने पर वे पूरी तरह अपने पैरों पर खड़े हो जाते हैं; तब इनकी लंबाई सात और आठ फुट के बीच में पहुंच जाती है। इस समय तक उनकी मां अगले ब्यात के लिए तैयार हो सकती है। परिवार में यदि बाप भी शामिल होने आ जाये, तो बच्चों को इसे मां से अलग हो जाने का स्पष्ट संकेत समझना चाहिये। बाप से नर बच्चे को अधिक खतरा होता है। नर बच्चा प्रायः एक साल की उम्र में परिवार छोड़ देता है। यदि ठीक समय पर अलग न हो, तो बाप उसे जान से मार सकता है। शेरनी इस बात को जानती है और इसीलिए वह उन स्थानों पर नहीं जाती, जहां उसे शेर के मिल जाने की संभावना हो। बच्चों पर कोई शेर हमला कर दे, तो वह उन्हें बचाने के लिए जी-जान से लड़ती है।

ब्रैंडर को ऐसे वाकये मालूम थे, जिनमें दो अलग-अलग समयों में पैदा हुए बच्चे मां के साथ रहते थे। ब्रैंडर ने सबसे बड़ी टोली छह शेरों की देखी थी, जिसमें एक बड़ा नर था और दो पूर्ण विकसित मादाएं व उनके

आओ — एक सौदा करें !

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—

गोला

टॉफियां और मिठाइयां

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.प्र.

'ओरमो' छाप अमोनिया कागज़

(पैरा-डाइजो टाइप)

- चमकदार और सुन्दर छपाई
- बरतने और रखने में टिकाऊ
- जल्दी और अच्छे परिणाम
- कम खर्च और सस्ता.

स्टैंडर्ड साइज के रोल और शीटस हर प्रकार की मीडियम फास्ट और सूपर फास्ट की स्पीड्स में मिलते हैं. रोशनी और नमी से बचाव के लिये पोलीथीन के टयूब और रेपरों में पेक किया हुआ होता है. यह देर तक खराब न होने वाला अच्छी क्वालिटी की छपाई के लिये गारन्टी किया हुआ है, क्योंकि ओरमो का बेस पेपर भी ओरियंट पेपर मिल्स का बनाया हुआ है।

ओरियंट पेपर मिल्स लिमिटेड
ब्रजराज नगर, उड़ीसा

तीन बच्चे थे, जो लगभग शेरनियों के बराबर थे। पांच की टोलियों का मिल जाना असाधारण बात नहीं, एक बार तो पूर्ण विकसित तीन नर एक साथ देखे गये थे। पांच साल की उम्र तक शेरों की वृद्धि होती रहती है। इसके बाद उनकी वृद्धि तो रुक जाती है, परंतु उनकी मांसपेशियां पुष्ट होती रहती हैं।

जब शेर शिकार को मार ले, उसका मन तब तक उस शव में अटका रहता है, जब तक कि वह शिकार के सारे मांस को कोमल हड्डियों समेत खा न डाले। पेटभर खाने के बाद वह पास में ही किसी बांस के झुंड की छाया में या तलैया में अधडूबा सोया पड़ा रहता है। दिन-भर कुछ-कुछ समय बाद वह पशु के अवशेषों पर आता है। कभी तो कुछ लुकमे निगल लेता है, अन्यथा शव पर आये हुए कौओं या गिद्धों को भगाने के लिए गरज उठता है। गिद्धों से शेर नफरत करता है। उसके आने पर शव पर से गिद्ध न उड़ें तो वह उन्हें मार डालता है।

शव को किसी कंदरा में छिपाने की कोशिश भी वह प्रायः करता है। ऐसा करने में कुछ कठिनाई हो तो पंजों के द्वारा घास और मिट्टी डालकर उसे छिपा देता है। जंगल के भंगी और लुटेरे हड्डियों पर चिपटे मांस को नोच न लें, इसी से ये सब सावधानियां बरती जाती हैं।

मारा गया जीव कितने दिन काम दे जायेगा, यह उसके आकार पर निर्भर है। १२५ पौंड वजनी चीतल दो या तीन दिन चल सकता है और ३०० पौंड का बारहसिंगा पांच या छह दिन। पूरी बड़ी गाय, सांभर या नील गाय लगभग तीन दिन चल जाते हैं। मांस के जरा-से टुकड़े को भी नहीं छोड़ा जाता, वह कितना ही सड़ा-गला क्यों न हो।

एक उथले नाले में एक शेरनी ने नर गौर का शिकार किया। एक पेड़ के तने के पीछे छिपकर जार्ज शेलर उसे सारी रात कुल सौ फुट की दूरी से देखते रहे। इस शेरनी के साथ चार महीन की उम्र के चार बच्चे थे। रात पड़ जाने पर बच्चों ने अपना अधिक समय लाश को खाने और सोने में गुजारा। जब चांद की जगह सूरज ने ले ली, तो बच्चे खेलने लगे। वे एक कतार में दौड़ते थे, जैसे कि कवायद का अभ्यास कर रहे हों। कभी वे घास के बीच में से एक-दूसरे पर घात लगाते थे और घमासान युद्ध में जुट जाते थे। आस-पास की चीजों की खोज करना भी उनकी दिनचर्या का अंग था। वे पत्तों को सूंघते थे, छिद्रों का अवलोकन करते थे और कभी-कभी किसी कीड़े या दूसरी चीज पर झपट पड़ते थे।

सुबह की सुहावनी ठंडक धीरे-धीरे सरकती गयी और दिन की गर्मी ने वातावरण में बेचैनी पैदा करनी शुरू की। शेरनी उठी। धीमी आवाज में उसने बार-बार कुछ कहा, जिसका स्पष्ट मतलब था—'मेरे पीछे आओ।' पास ही एक छायादार कुंज में वह उन्हें ले गयी। पांच दिन तक वह परिवार गौर के गिर्द ही रहा। उसका सफाया हो जाने पर

वह गायब हो गया।

ग्यारह दिन बाद यही शेरनी दोपहर बीते कोई दो बजे देखी गयी। चीड़ के बीचों-बीच वह ताजे मारे हुए गौर के एक बच्चे को गर्दन से पकड़कर घसीट रही थी। अगली सुबह तक इस परिवार ने गौर के बच्चे को बिलकुल साफ कर दिया था। मां के पीछे पंक्ति में चलते हुए वे लगभग आधा मील दूर एक जलकुंड के पास पेड़ों के झुरमुट में जा छिपे।

जार्ज शेलर ने बची-खुची हड्डियों को तोला। भोज से पहले जब शेरनी बच्चों को बुलाने गयी थी, तब भी उन्होंने गौर के बच्चे की लाश को तोला था। रात-भर में ये शेर कुल पचासी पौंड मांस चट कर गये थे।

कान्हा नेशनल पार्क में सोलह महीने की आयु के चार शेरों में से एक ने एक भैंस को मारा। उसकी बहनें भी आ गयीं। रात-भर उन्होंने दावत उड़ायी। पौ फटने तक वे दो सौ पौंड से अधिक मांस खा गये थे।

ऐसे भारी भोजन के बाद वह क्षेत्र शेर के हमले से कुछ देर के लिए मुक्त हो जाता है। सामान्यतया शेर अपने भोजन की वास्तविक आवश्यकता से अधिक जीवों को नहीं मारते। मनुष्यों की तरह जानवरों की अंधाधुंध हत्या करने का शौक भी उन्हें नहीं है।

औसत युवा शेर को प्रतिदिन लगभग १५ से २० पौंड मांस चाहिये। इस हिसाब से उसकी वार्षिक आवश्यकता ३।। टन मांस की है। शिकार किये गये जानवर का ६० से ७० प्रतिशत हिस्सा ही खाने योग्य होता है। (हड्डियां, आमाशय, आंतों में विद्यमान मल आदि को शेर छोड़ देता है।) इस हिसाब से शेर को हर साल ४।। टन जितने जानवर मारने पड़ते हैं। यानी उसकी वार्षिक आवश्यकता लगभग ३० ढोरों या ७० युवा चीतल-हिरनों से पूरी हो सकती है। कई क्षेत्रों में शेर को वस्तुतः इससे अधिक मारना पड़ जाता है; क्योंकि यदि उसने पालतू ढोर मारा है तो गांव वाले पीछा करके उसे (यानी शेर को) तलाश लेते हैं और शिकार पर से भगा देते हैं। जहां शेरों को उनके शिकार के ऊपर शूट करने का रिवाज है, वहां शेरों ने दुबारा शिकार पर न लौटना सीख लिया है।

जब सारा मांस चट कर लिया जाता है, तो शेर पुनः अपने रात्रिकालीन दौरों पर निकलने लगता है। सूरज डूबने से लेकर पौ फटने तक वह लगभग पंद्रह से बीस मील के भूभाग में गश्त लगा आता है। बहुत-से युवा शेर एक निश्चित सीमा में कुछ नियत मार्गों का अनुगमन करते हुए, जानवरों के आराम करने के स्थानों पर धावा बोलते हैं। शिकार की कमी वाले प्रदेशों में इन दौरों की सीमाएं पर्याप्त बड़ी हो जाती हैं।

दौरों में शेर प्रायः त्रिभुज की आकृति में बढ़ता है। इस त्रिभुज की प्रत्येक भुजा पांच से आठ मील तक लंबी हो सकती है। इनमें से किसी जगह शिकार मारकर वह उसे खत्म करने के लिए कुछ दिन ठहर सकता है। फिर आगे बढ़ता है। इस प्रकार प्रत्येक शिकारगाह में नौवें या दसवें दिन पहुंचता है। इस

प्रत्येक शिकारगाह के जानवरों को कुछ समय विश्राम के लिए मिल जाता है और उनमें मनोबल पैदा हो जाता है। यही कारण है कि कुछ इलाकों में शेर एक स्थान पर अधिक देर तक नहीं टिकते। उस स्थान के जानवरों को जब शेर का भान हो जाता है, तो वे दूसरी जगह चले जाते हैं।

शेर के जीवन का अधिक समय भोजन जुटाने में चला जाता है। जंगल की पगडंडियों पर, नालों के अंदर, ऊंची घास के बीच में किसी असावधान जीव की टोह में चौकन्नी आंखों और चौकस कानों से, प्रति-घंटा दो से तीन मील की चाल में स्थिरता से पंजे रखता हुआ वह प्राय: अकेला शिकार के लिए निकल पड़ता है। सर्दियों में जब घास घनी, ओस से गीली और ठंडी होती है, तो वह प्राय: पगडंडियों पर चलता है। शिकार की आहट सुनने के लिए वह जगह-जगह रुकता है।

गोधूलि-वेला और उषा के बीच में ज्यादातर शिकार किया जाता है। उस समय जंगली सूअर, हिरन, और खुर वाले अन्य चौपाये आहार के लिए बाहर निकले होते हैं और आसानी से दबोचे जा सकते हैं। लेकिन यदि शेर भूखा है, या शेरनी को अपने बच्चों को भोजन खिलाना है, तो किसी भी समय वे शिकार कर सकते हैं, मगर तभी जब वे या उनके बच्चे भूखे हों।

शेर का हमला भयंकर होता है। पांच सौ पौंड वजनी, मजबूत मांसपेशियों का यह पुंज बड़े वेग के साथ अचानक कूदकर दुश्मन की गर्दन पर या उसके सिर पर लपकता है। अगले पंजे से वह प्राणी को जकड़ लेता है और सिर के पास गर्दन पर दांत गड़ाकर उसे एक ओर झटक देता है। इससे गर्दन की हड्डियां अपनी जगह से हिल जाती हैं। शेर के बोझ से दुश्मन धरती पर गिर पड़ता है। गिरने के समय तक दुश्मन अक्सर जिंदा होता है। शेर गिरे हुए दुश्मन को दांतों से काटकर मार डालता है। वह निर्दयी नहीं है; शिकार को पूरी तरह मारने के बाद ही खाता है।

सिंह की भांति शेर भी पंजों से चोट करता है। दांत गड़ाने से पहले वह शिकार को पंजों से पकड़कर स्थिर कर लेता है। वरना डर रहता है कि मुक्त होने की चेष्टा में प्राणी बहुत कशमकश करे तो उसके दांत गर्दन में टूट सकते हैं।

इस पुस्तक की कुछ और सामग्री अगले किसी अंक में प्रकाशित होगी।

★

जज साहब अदालत में अभियुक्त की बातें सुनकर झुंझला उठे और बोले—'कैसे बेहूदे आदमी हो तुम!'

अभियुक्त ने कहा—'मैं उतना बेहूदा नहीं हूं, जितना कि आप ......' इतना कहकर वह एक क्षण रुका और जज साहब के लालसुर्ख हो उठे चेहरे की ओर देखकर बोला—'......मुझे समझते हैं।'

★

बाल पाठकों के लिए चीनी लोककथा सुखबीर के शब्दों में

तीन पैसे

चांग दुबला-पतला, कमजोर-सा आदमी था। वह बहुत गरीब था और तंबाकू बेचकर गुजारा करता था। तंबाकू की छोटी-सी टोकरी सिर पर उठाये वह गलियों-बाजारों में घूमता हुआ हांक लगाता। उसका बहुत कम तंबाकू बिक पाता था—किसी-किसी दिन तो इतना कम कि बेचारे को पेट-भर खाना भी नसीब न होता।

एक दिन वह सिर पर टोकरी उठाये बाजार में से गुजर रहा था कि एक आदमी ने उसे तंबाकू के लिए रोका। आदमी बहुत बूढ़ा और फटेहाल था, भिखारी-सा लगता था। चांग ने उसे दया-भरी आंखों से देखते हुए पूछा—'कितने का चाहिये?'

बूढ़े ने अपने पाइप की ओर संकेत करते हुए कहा—'बस, थोड़ा-सा—यह भर जाये इस लायक।'

'तीन पैसे का आयेगा,' चांग ने कहा और सिर पर से टोकरी उतारी। उस भीड़ में टोकरी को नीचे रखना संभव नहीं था। सो चांग ने उसे दोनों हाथों से पकड़े हुए ही बूढ़े से कहा—'लो, खुद ही भर लो पाइप में।'

बूढ़े ने अपनी जेब में से तीन पैसे निकालकर टोकरी में रखे और तंबाकू की चुटकियां भरकर पाइप में डालने लगा। जब वह पांच-छह चुटकियां डाल चुका, तो चांग चौंका। पाइप भरने में ही नहीं आ रहा था। और बूढ़ा था कि चुटकियां भर-भरकर डालता जा रहा था। आधी टोकरी खाली हो गयी, तो भी पाइप पूरी तरह भरा नहीं। चांग आश्चर्य से इस तरह देख रहा था, मानो अपनी सुध-बुध खो चुका हो। आखिर जब उसे होश आया, बूढ़ा सारी तंबाकू पाइप में डाल चुका था। और इसके पहले कि चांग कुछ कहे, बूढ़ा चलता बना और भीड़ में गायब हो गया।

चांग सकपकाया-सा खड़ा अपनी खाली टोकरी को देखता रहा। उसे आश्चर्य था कि इतना सब तंबाकू उस पाइप में समा कैसे गया था। कहीं जादुई पाइप तो नहीं था वह?

जब वह घर लौट चला, उसे अपनी कुल तीन पैसे की कमाई पर बहुत अफसोस था। उसके कदम बहुत भारी पड़ रहे थे। सिर पर रखी खाली टोकरी भी उसे बहुत भारी लग रही थी।

जब वह बाजार की भीड़ में से निकलकर बाजार के सिरे पर पहुंचा, तो उसे अपने सिर पर रखी टोकरी और भी भारी लगी। उसकी इच्छा हुई कि कहीं बैठकर जरा

आराम करूं और इन तीन पैसों के चने लेकर खाऊं। सड़क के मोड़ पर चनों की एक दुकान आयी, तो उसने वहां रुककर सिर पर से टोकरी उतारी। जब उसकी नजर टोकरी में पड़ी, तो उसकी आंखें फटी की फटी रह गयीं। आधी से ज्यादा टोकरी पैसों से भरी हुई थी।

'वाह, आज तो तुमने इतना ज्यादा कमाया है कि जेब के बजाय टोकरी में पैसे डालकर लाये हो!' दुकानदार ने कहा।

चांग का ध्यान टूटा। 'हां, बस ...... टोकरी ही समझो ...... टोकरी में......' वह घबराहट में बोला और काफी सारे चने खरीदकर घर की ओर चल दिया। रास्ते में वह सोच रहा था कि वह पाइप ही जादुई नहीं था, बल्कि वे तीन पैसे भी जादुई पैसे रहे होंगे, तभी तो वे इतने ज्यादा हो गये।

घर पहुंचने पर उसकी हैरानी और बढ़ी; क्योंकि उसने देखा कि टोकरी तो पैसों से पूरी तरह भर गयी है।

अगले दिन वह टोकरी में से थोड़े-से पैसे निकालकर जरूरत की कुछ चीजें खरीदने गया। जब लौटा तो टोकरी फिर से पूरी तरह भरी हुई मिली। इसका मतलब है कि यह खाली होगी ही नहीं, उसने सोचा। तब उसने उसमें से बहुत-से पैसे निकाले और कई किस्म की बढ़िया तंबाकू खरीद लाया। अब फेरी लगाने के बजाय छोटी-सी दुकान लगाना चाहता था तंबाकू की। इस बार भी घर लौटकर उसने देखा कि टोकरी पहले ही की तरह भरी हुई है।

कुछ ही समय में उसकी दुकान अच्छी चलने लगी। कमाई बढ़ती गयी। अब लोग उसकी मेहनत और ईमानदारी की चर्चा करते।

फिर एकाएक बहुत धनवान बन जाने और ऐश-आराम की जिंदगी बिताने की लालसा चांग के मन में जागी। उसने अपने परिचित एक व्यापारी की देखा-देखी लोगों को सूद पर पैसा देने का धंधा शुरू किया। लोग उसके पास अपने जेवर या दूसरी कीमती चीजें गिरवी रखकर कर्ज ले जाते। अगर वे निश्चित समय पर कर्ज की रकम न लौटाते, तो चांग उनकी गिरवी रखी चीज जब्त कर लेता। कई बार लोग अपनी चीजें बेचने भी आते। चांग बहुत सस्ते दामों पर वे चीजें खरीद लेता। इस नये

धंधे में उसे तंबाकू की दुकान से भी ज्यादा आमदनी होने लगी। परंतु अब लोग पहले जैसे उसकी इज्जत नहीं करते थे, क्योंकि वह ईमानदारी की कमाई नहीं करता था।

एक दिन एक अंधा आदमी उसके पास आया और एक पाइप दिखाते हुए बोला—'यह मुझे कहीं से मिला है। अगर इसके कुछ पैसे मिल जायें, तो चने खरीदकर पेट की आग बुझाऊं। सुबह से कुछ भी नहीं खाया है।'

चांग ने पाइप देखा और उसकी आंखें चमकीं। कहीं वह वही जादू का पाइप न हो, जिसमें बूढ़े ने तंबाकू भरी थी, उसने सोचा। इसे तो हर कीमत पर खरीद लेना चाहिये। और उसने पूछा कितने पैसे दूं ?

'तीन !' अंधे ने कहा।

इतनी कम कीमत सुनकर चांग खुश हो उठा। उसने पैसों की टोकरी में हाथ डाले और तीन पैसे निकालकर भिखारी को दे दिये।

अगले दिन चांग को कोई चीज खरीदनी थी। उसने टोकरी में से बहुत-से पैसे निकाले। घर वापस आकर उसने देखा कि टोकरी भरी नहीं है। उसे हैरानी हुई। फिर एक-दो मौकों पर और पैसे निकालने पर भी टोकरी नहीं भरी। अब तो चांग को चिंता हुई। अंत में उसने टोकरी में सिर्फ तीन पैसे छोड़कर बाकी सारे पैसे निकाल लिये और सोचा कि शायद पहले की तरह वह फिर से भर जायेगी। मगर वह भरी नहीं। तब चांग को लगा कि वे तीन जादुई पैसे उसने अंधे को दे दिये थे। और वह अंधा शायद वही बूढ़ा था, जिसने उसे तीन पैसे दिये थे।

बी-१९, सन एंड सी, वर्सोवा, बंबई-६१

★

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के गांव दौलतपुर (जि. रायबरेली) में एक मकान की दीवार बहुत कमजोर हो गयी थी और किसी भी समय गिर सकती थी। द्विवेदीजी ने जिलाधिकारी को पत्र लिखकर उन्हें बताया कि दीवार अचानक किसी भी समय गिर सकती है और दीवार के निकट से गुजरने वालों के प्राण भी जा सकते हैं।

जिलाधिकारी की आज्ञा से एक अधिकारी पहुंचा। स्थिति की जांच करके उसने यह निष्कर्ष निकाला कि द्विवेदीजी की आशंका का कोई ठोस आधार नहीं है। उसने उनसे कहा भी—'द्विवेदीजी ! आपकी शंका हमारी समझ में नहीं आयी। यदि दीवार को गिरना ही होगा तो गिर जायेगी। इसके इतने गंभीर परिणाम क्या हो सकते हैं !'

इस पर द्विवेदीजी मुस्कराये और उस अधिकारी से बोले—'आप ठीक कहते हैं। बस, इतनी-सी बात आप एक कागज पर लिखकर मुझे दे दीजिये कि इस दीवार के गिरने से यदि किसी की जान चली गयी तो उसकी जिम्मेदारी आपकी होगी।'

अधिकारी निरुत्तर रह गया और उसने तुरंत उस दीवार को गिरा देने का आदेश दे दिया।

—केशवदेव मिश्र 'कमल'

★

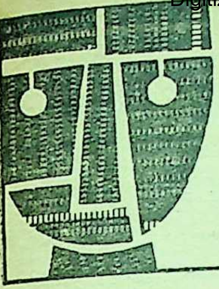

• मित्र

कुछ इधर से कुछ उधर से

घड़ी और पेंसिल की कुछ ट्रिकें भी जादूगर अक्सर दिखाते हैं। इस बार जरा घड़ी की एक ट्रिक का राज जानें।

जादूगर किसी दर्शक को अपने पास बुलाता है और उसे घड़ी के डायल पर के किसी अंक को सोचने को कहता है। अब वह पेंसिल से या लकड़ी के किसी टुकड़े से डायल पर के अंकों को बिना किसी क्रम के थपथपाने लगता है। मगर पहले ही दर्शक से कह देता है कि मेरे पहली थपकी देने पर मन में गिनती शुरू करना। और पहली थपकी पर वही संख्या लेना जो तुमने सोची थी, फिर आगे गिनती गिनना। (जैसे कि यदि दर्शक ने ३ सोचा है तो पहली थपकी पर उसे ३, दूसरी थपकी पर ४, तीसरी पर ५ ...... इत्यादि।) गिनती २० पर पहुंचने पर दर्शक 'रुको' कहता होगा। रुकने पर जादूगर की पेंसिल डायल पर उसी संख्या पर होगी, जो दर्शक ने सोची थी!

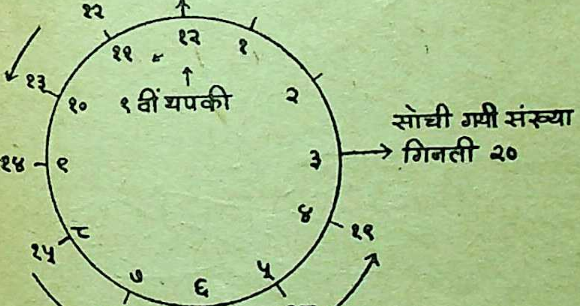

विधि : पहली आठ थपकियां जादूगर बिना किसी नियम के इधर-उधर मारता है। मगर ९ वीं थपकी वह डायल पर १२ के अंक पर मारता है। इसके बाद वह वामावर्त दिशा में, यानी घड़ी की सूइयों के घूमने से उलटी दिशा में क्रम से अंकों पर थपकी देता जाता है। जब दर्शक 'रुको' कहता है, तो उसकी पेंसिल दर्शक द्वारा सोची गयी संख्या पर होती है। जरूरी नहीं कि दर्शक २० पर ही रुके; वह अन्य किसी भी संख्या पर रुक सकता है। परंतु उसे पहले ही जादूगर को बता देना होगा कि मैं फलानी संख्या पर

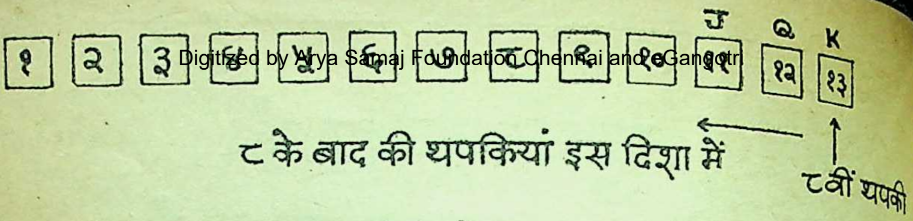

रुकूंगा। मान लीजिये वह कहता है कि मैं १८ पर रुकूंगा। उस हालत में जादूगर ६ (१८-१२=६) थपकियां मारकर ७ वीं थपकी डायल पर १२ की संख्या पर मारेगा।

२. इसी तरह की एक ट्रिक ताश के पत्तों से भी की जाती है। पत्ते एक कतार में १ से १३ तक की तरतीब उलटकर रख दिये जाते हैं। जादूगर दर्शक को १ से १३ के अंदर कोई भी संख्या सोचने को कहता है और पिछली ट्रिक की तरह उसे थपकी पर गिनती करने व बीस पर रुकने को कहता है।

विधि : इसमें जादूगर पहली ७ थपकियां बिना क्रम के मारता है, पर ८ वीं थपकी तेरह पर मारता है। उसके बाद वह तेरह से उलटी दिशा में एक क्रम से थपकियां मारता जाता है। 'रुको' कहने पर उसकी उंगली उसी पत्ते पर होती है, जो दर्शक ने सोचा था। उस पत्ते को खोलकर वह दर्शक से पूछता है कि क्या यह वही संख्या थी जो तुमने सोची थी।

३. रूमाल की सहायता से किये जाने वाले स्टंट काफी लोकप्रिय होते हैं और उन्हें समझाना भी काफी आसान होता है। ये ट्रिकें स्थान-विज्ञान के आम नियमों पर आधारित होती हैं।

जादूगर दर्शकों को ललकारता है-है कोई माई का लाल? जो एक रूमाल के दोनों किनारों को पकड़कर बिना किसी किनारे को छोड़े रूमाल के बीच की एक गांठ लगा दे। उसकी ललकार पर यदि कोई दर्शक यह करतब करके दिखा दे, तो जादूगर यह कहकर अपनी जान छुड़ाता है कि जरूर तुमने पहले यह करतब देखा होगा। यदि दर्शकों में कोई माई का लाल नहीं उठता तो जादूगर बड़ी शान से यह करतब दिखाता है।

विधि : रूमाल को रस्सी की तरह बटकर मेज पर सीधा रख देता है। अब वह अपनी बाजुएं बांधकर खड़ा हो जाता है। फिर बाजुओं को आड़े बांधे हुए वह आगे की ओर झुकता है और मेज पर रखे रूमाल के दोनों सिरे एक-एक हाथ से पकड़ता है। बाजू खोलने पर गांठ रूमाल पर आ जाती है।

स्थान-विज्ञान की भाषा में, बाजू, शरीर

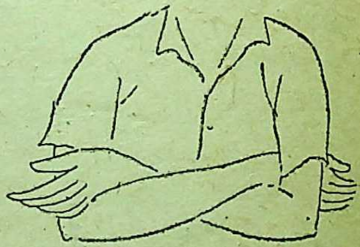

बाज़ू इस तरह बंधे होते हैं।

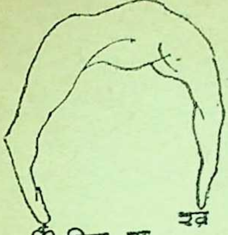

चित्र-अ

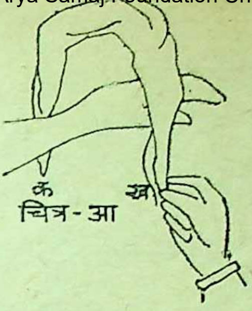

चित्र-आ

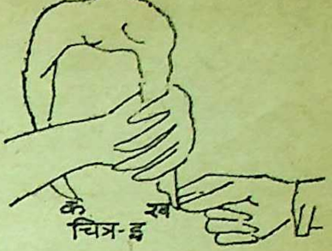

चित्र-इ

और रूमाल एक तिपतिया (Trefoil) गांठ के रूप में एक बंद वक्र है। बाजुओं को खोलने से बाजुओं पर लगी गांठ रूमाल पर आ जाती है।

इस ट्रिक का एक और रूप भी ऊपर दिया गया है, जो रस्सी की सहायता से किया जा सकता है। रस्सी को चित्र-अ की तरह रखो। फिर चित्र-आ वाली स्थिति लाओ। उसके बाद चित्र-इ में बताये ढंग से रस्सी के ख भाग में हाथ उलटा करके पकड़ो। बाद में हाथ अलग करो। देखो, क्या यह संभव है कि रस्सी पर गांठ आ जाये।

★

ब्रिटेन के हाउस आफ कामन्स की पहली महिला-सदस्य लेडी नैन्सी एस्टर द्वितीय विश्वयुद्ध के जमाने में एक रात को घर लौट रही थीं। रास्ते में उन्होंने एक नौजवान अमरीकी सैनिक को नशे में धुत होकर सड़क पर पड़े पाया। जैसे-तैसे उन्होंने उसे उठाया और पैरों पर खड़ा किया। फिर बोलीं–'चलो, अब मेरे घर।'

'नहीं-नहीं', कहता हुआ अमरीकी फौजी फिर सड़क पर लुढ़क गया और बोला–'मेरी मां ने मुझे तुम्हारे जैसी औरतों से आगाह किया है।'

'मेरे जैसी औरतों से ?' लेडी एस्टर गरजीं–'मैं तुम्हारी नानी समझी जाने लायक बूढ़ी हूं।' और सैनिक के तमाम विरोध के बावजूद वे उसे धकेलकर अपने फ्लैट में लायीं और उसके सोने की व्यवस्था की। अगले दिन सवेरे शराब के विरुद्ध लंबा उपदेश देकर और हाथ में पांच पौंड का नोट थमाकर उसे चलता किया।

पैंतीस वर्ष तक लेडी एस्टर की निजी परिचारिका के रूप में सेवा करने वाली रोज़िना हैरिसन ने अपनी पुस्तक 'माइ लाइफ इन सर्विस' में इस घटना का जिक्र किया है। वे यह भी बताती हैं कि लेडी एस्टर ही नहीं उनके पति लार्ड एस्टर भी (जो कि ब्रिटेन के सबसे धनी व्यक्तियों में गिने जाते थे) इतने सख्त परहेजगार थे कि अपने यहां भोजों व पार्टियों में कभी शराब नहीं परोसते थे। यहां तक कि एक बार जब राजा जार्ज पंचम और रानी मेरी उनका आतिथ्य ग्रहण करने आये, तो राजा के लिए शराब राजमहल से ही आयी थी।

★

किशोरों के लिए विज्ञान :

बल

डा. जगदीश लूथरा

तुममें से बहुतों को इस बात की धुंधली-सी धारणा होगी कि 'बल' से क्या मतलब है। यदि तुमसे पूछा जाये कि बल क्या है समझाओ, तो शायद तुम्हारा उत्तर होगा—'बल बल है, उसे अनुभव करना संभव है, परंतु समझाना जरा टेढ़ी खीर है। तो आओ, जरा देखें कि बल क्या है!

तुमने अक्सर घोड़े को गाड़ी खींचते हुए देखा है, आदमी को भार उठाते हुए देखा है। इन सबमें बल लगता है। इसी तरह की और भी जानी-पहचानी मिसालें हैं, जिनमें बल का उपयोग होता है। जैसे कोई भी वस्तु ऊपर फेंकने पर वापस पृथ्वी पर आ जाती है; लोहे के चूर्ण के कण चुंबक पर चिपक जाते हैं; कागज के छोटे-छोटे टुकड़े कंघी की ओर खिंच जाते हैं; परमाणु के घटक न्यूक्लियस में ही अटके रहते हैं और बाहर नहीं निकल पाते।

ऊपर दी गयी मिसालों में एक केंद्रीय विचार है—धकेलना और खींचना। यही बल के पीछे की धारणा है। विज्ञान में हम किसी भी संकल्पना के बारे में एक मूलभूत प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयास करते हैं। वह प्रश्न है—इसका क्या मतलब है? पहले जरा यह देख लें कि इसे समझना क्यों जरूरी है। प्रकृति में जो भी कुछ हो रहा है, उसके मूल में बलों की ही करामात है। ऊपर दिये गये उदाहरणों में तुम गुरुत्वाकर्षी, चुंबकीय वैद्युत और न्यूक्लीय बलों को तो पहचान ही गये होंगे। यदि ये प्राकृतिक बल न होते, तो यह ब्रह्मांड कैसा होता, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसलिए प्राकृतिक प्रक्रियाओं को समझने के लिए बलों को समझना बहुत जरूरी है।

बल की वैज्ञानिक परिभाषा पर नजर डालें। यांत्रिकी में वस्तुओं के पारस्परिक प्रभाव (इंटर एक्शन) का मात्रात्मक मान ही बल कहलाता है। शायद तुम कहोगे इससे भी कुछ बात बनी नहीं। एक दूसरी परिभाषा को देखें, शायद उससे कुछ समझ में आये। पारस्परिक प्रभाव जो वस्तुओं के वेग में हेर-फेर लाते हैं, बल कहलाते हैं। डोरी की सहायता से लटकी हुई एक वस्तु के दृष्टांत से इस परिभाषा को परखें।

हालांकि वातावरण और वस्तु के बीच पारस्परिक प्रभाव होते हैं, फिर भी इन

प्रभावों के फलस्वरूप वस्तु स्थिर है, यानी उसका वेग शून्य है। यदि अब हम डोरी को काट दें, तो डोरी वेग से नीचे की ओर जाने लगेगी। इस वस्तु के वेग में हेर-फेर हुआ। यानी अब एक बल नीचे की ओर लग गया। हालांकि यह बल डोरी काटने से पहले भी वस्तु पर लगा हुआ था। लेकिन डोरी का तनाव उसे ऊपर की ओर खींच रहा था, अर्थात् उस पर एक बल नीचे की ओर और एक बल ऊपर की ओर लगा था। इन दोनों का परिणामी बल इस प्रकार था कि जैसे वस्तु पर कोई बल नहीं लगा हुआ हो। इस तरह हम यह कह सकते हैं कि बल कोई प्रभाव है, जो किसी वस्तु की गति में फेर-बदल ला सकता है। यह जरूरी नहीं है कि बल लगाने से गति में हेर-फेर हो ही। किसी बड़े पत्थर को हम पूरा बल लगाकर धकेलें, तो हो सकता है कि भारी होने से पत्थर न सरके (असल में उसमें इतना नगण्य हेर-फेर होता है जो दृष्टिगोचर नहीं होता।) परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि हमने बल नहीं लगाया। यदि उतनी ही ताकत हम किसी छोटे पत्थर पर लगायें, तो वह जरूर सरक जायेगा।

गति में हेर-फेर को 'त्वरण' कहते हैं। ऐसी चलती हुई वस्तु, जिस पर कोई बल न लग रहा हो, एक स्थिर वेग से चलती ही चली जायेगी। यदि कोई बल उस पर लगा दिया जाये तो उस वस्तु के वेग में फर्क आ जायेगा। यह फर्क वेग के मान में, दिशा में या दोनों में हो सकता है। तब हम कह सकते हैं बल ऐसी चीज है, जो त्वरण पैदा कर सकती है या इसी को यों कहा जा सकता है कि हर त्वरण किसी बल का परिणाम है। ऊपर बताये गये विचारों का मात्रात्मक भाव न्यूटन का दूसरा गति-नियम कहलाता है।

[अगला लेख 'कुदरत के बल']

★

अमरीका की विश्वविख्यात मेयो क्लिनिक के डा. विल मेयो के पास जाकर एक गरीब लड़के ने अपनी बीमारी का हाल सुनाया और कहा–'डाक्टरों ने मुझे आपरेशन कराने को कहा है। पर मेरे पास पैसे नहीं हैं। क्या आप मेरा आपरेशन करा देंगे?'

डा. मेयो बोले–'मैं खुद तुम्हारा आपरेशन करूंगा और फिलहाल कोई फीस नहीं लूंगा। मगर क्या ठीक हो जाने पर दस महीने तक तुम मुझे हर महीने दस डालर भेज दिया करोगे?'

'जरूर डाक्टर साहब!' लड़के ने बड़े उत्साह से उत्तर दिया।

आपरेशन के बाद लड़का हर महीने दस डालर भेजता रहा। जब इस तरह एक सौ डालर पूरे कर दिये, डा. मेयो ने उसे लिखा :

'मुझे खुशी है कि तुमने अपना वादा पूरा किया है। पत्र के साथ मैं तुम्हारे भेजे हुए सौ डालर चेक द्वारा लौटा रहा हूं और साथ में उनके ब्याज की रकम भी।'

★

ग्रंथ-लोक

- * बिहारी काव्य की उपलब्धि
- * प्रसाद की कविता
- * नाटक और नाटयशैलियां
- * चित्रमयी गीता-प्रवेशिका

*** बिहारी काव्य की उपलब्धियां * लेखक : डा. किशोरी लाल; प्रकाशक : हिंदी साहित्य भवन प्रा. लि., इलाहाबाद; पृष्ठसंख्या : २०८; मूल्य : १५ रुपये।**

रीतिकाल के कवियों में बिहारी अग्रगण्य हैं। इनकी रीतिबद्धता अनायास है, औरों की सायास। इनकी सतसई की भाव-गरिमा, अर्थ-गौरव तथा भाषा-भंगिमा से विद्वन्मंडली चमत्कृत, आनंदित एवं रसासिक्त; इनकी नायक-नायिकाओं की विलासलीलाओं, प्रेम-क्रीड़ाओं तथा विरह-विह्वलता से प्रेमी-जगत आह्लादित, पुलकित तथा स्नेहाप्लावित और इनकी प्रतिभा, विचक्षणता एवं बहुज्ञता से काव्यलोक समृद्ध तथा उपकृत रहा है। 'बिहारी काव्य की उपलब्धियां' में कवि तथा उसकी कृति की इन सभी तथा अन्य अनेक विशेषताओं को यथाशक्ति उजागर करने, उनकी दृढ़ छाप पाठकों के हृदय पर अंकित करने एवं उन्हें सहृदय-संवेद्य बनाने में लेखक को अपनी विद्वत्ता, काव्य-मर्मज्ञता, सूक्ष्मदर्शिता तथा अभिव्यक्तिक्षमता का संतोषजनक सहयोग मिला है।

प्रस्तुत पुस्तक पांच अध्यायों में विभक्त है। (१) में 'ऐतिहासिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि' का परिचय है। (२) में 'शृंगारिक मुक्तकों की परंपरा' का वर्णन है। इसी के अंतर्गत बिहारी का शृंगारिक भाव-विवेचन भी है। (३) 'शृंगारेतर भाव-विवेचन' में बिहारी की भक्ति, ज्ञान तथा नीति-संबंधी रचनाओं का मूल्यांकन है। (४) 'काव्यशास्त्रीय विवेचन' में ध्वनि, वक्रोक्ति, अलंकार तथा नायक-नायिका भेद के आधार पर विवेचन है। (५) 'अभि-व्यंजना-कौशल' में आलोच्य कृति के सौंदर्य-बोध, कलात्मकता, व्यंजना, लक्षणा तथा दोष आदि का निरूपण है।

विद्वान लेखक ने अतीव मनोयोग तथा

परिश्रम से सतर्क [illegible] अध्ययन और मूल्यांकन किया है। लेखक की पकड़, निरीक्षण, परीक्षण तथा प्रस्तुतीकरण उत्कृष्ट हैं। लेखक का प्रयत्न श्लाघ्य है।

०००

*** प्रसाद की कविता * लेखक : डा. भोलानाथ तिवारी; प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ-संख्या : १६७; मूल्य : १५ रुपये।**

प्रसाद का नाम लेते ही एक ऐसी बहुमुखी प्रतिभा का चित्र चक्षुगोचर हो जाता है, जिसकी लेखनी में पारसपन था। जिस विधा का स्पर्श किया, उसे ही स्वर्णिम आभा से मंडित किया। उनकी रचनाओं में एक विशिष्ट आभिजात्य-गरिमा है, जो अन्यत्र दुर्लभ है। आधुनिक कविता के क्षेत्र में उनका योगदान अमूल्य तो है ही, 'कामायनी' के कारण अनुपम भी हो गया है। 'प्रसाद की कविता' उनकी कविताओं के मूल्यांकन का प्रयत्न है। लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है कि इसमें 'अंशों के स्तर अलग-अलग हैं।' कुछ अंश कक्षा में व्याख्यानार्थ लिखे गये थे, कुछ कभी स्वांत:सुखाय। स्पष्ट है कि किसी विशिष्ट आलोचनात्मक कृति का प्रणयन इस पुस्तक की रचना का उद्देश्य नहीं था। इसमें संकलित अंशों को 'प्रसाद' की विभिन्न कविताओं की परिचयात्मक टिप्पणियां कह सकते हैं। केवल 'छायावाद' ही अपवाद है; इसी में कुछ चिंतन-गंभीरता भी है। हां, जिन्हें 'प्रसाद' के विभिन्न कविता-संकलनों की रचना-तिथियों, समय-समय पर उनमें किये गये परिवर्तनों तथा उनके संस्करणों का इतिहास जानने की उत्कंठा हो, उन्हें यह रचना अवश्य संतोष देगी।

पुस्तक में छोटे-बड़े अध्याय हैं, जिनके नाम ही विषय के परिचायक हैं। लेखक 'कामायनी' का प्रशंसक वर्गावतंस है। उसके मतानुसार 'कामायनी' जैसी गाथा 'न भूतो न भविष्यति'। प्रशंसा के इस चश्मे से देखने पर, 'दोषउ गुनसम' हो जायें, तो स्वाभाविक ही होगा।

०००

*** नाटक और नाटचशैलियां * लेखिका : डा. दुर्गा दीक्षित; प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ-संख्या : ९०; मूल्य : ७ रुपये।**

भारतीय साहित्य-शास्त्र में रूपक के छोटे-बड़े २८ भेद माने गये हैं, जिनमें अनेक नाटचशैलियों का समावेश हो जाता है। फिर भी मानव-मस्तिष्क की उर्वरता एवं मौलिकता नवीनता की खोज कर ही लेती है। विदेशी साहित्य के संपर्क के कारण भी नयी नाटचशैलियों का आगमन हो रहा है। अत: यह नितांत आवश्यक हो जाता है कि इन विभिन्न नाटचशैलियों की रूपात्मक तथा क्रियात्मक विशेषताओं का अध्ययन एवं निरूपण हो। प्रस्तुत पुस्तक इसी दिशा में एक प्रशंसनीय प्रयत्न है।

प्रस्तुत पुस्तक में (१) 'नाटक किसे कहते हैं,' (२) गीति-नाटच, (३) नृत्य-नाटक, (४) संगीतक [ऑपेरा], (५) रेडियो नाटक, (६) ध्वनि-संगीत [जो रेडियो नाटक से ही संबंधित है] (७) एक नटक [मोनोड्रामा] (८) प्रहसन

आज मैं फाइनल इन्टरव्यू दूँ तो कैसे! सर बुरी तरह दुख रहा है।
मेरी मानो तो एनासिन ले लो।

जल्द आराम पाने के लिए
तेज़ असर और विश्वसनीय
एनासिन लीजिए

तेज़ असर–एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय–एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्र है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय
एनासिन
(भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक)
Regd. User of T.M. Geoffrey Manners & Co. Ltd.

[फर्स], (९) अन्योक्तिनाटक [एलिगारिकल ड्रामा], (१०) एब्सर्ड नाटक का यथाक्रम विवेचन है।

'नाटक किसे कहते हैं' में लेखिका ने विवेचन-उत्साह का जो परिचय दिया था, वह आगे चलकर न जाने क्यों तिरोहित हो गया। गद्यकाव्य नाटक, पद्यात्मक नाटक तथा संगीत नाटक से गीतिनाटच का अंतर भी यदि सोदाहरण प्रदर्शित किया गया होता, तो स्वागतार्ह होता। अन्य नाटचशैलियों का विवेचन भी दृष्टांत-पोषित होने पर प्रतिपाद्य को अधिक सरल एवं सुबोध बना देता। अपेक्षाकृत नवीन तथा अल्प परिचित शैलियों के विवेचन में हिंदी की कुछ रचनाओं का उल्लेख तथा सैद्धांतिक दृष्टि से उनकी सफलता-असफलता का निर्देश हुआ होता, तो विवेचन अधिक ठोस तथा व्यावहारिक हो जाता। केवल सिद्धांत-निरूपण तो कुछ वायवीय-सा हो क्या जाता है, हो भी गया है। संभवतः अंग्रेजी पुस्तकों के विशेष आश्रय के कारण भाषा कुछ खुरदरी तथा दुरूह एवं शैली बोझिल हो गयी है। फिर भी लेखिका ने पर्याप्त परिश्रम और लगन से कार्य संपन्न किया है; इसके साथ ही उसने अपनी विश्लेषण-प्रतिभा तथा अन्वेषण प्रक्रिया का सुशोभनीय परिचय भी दिया है।

–डा. स्वामीनाथ शर्मा

०००

*** चित्रमयी गीता-प्रवेशिका * संपादक : मंगल; चित्रकार : उमाशंकर; प्रकाशक : ऋत भेरा, कलकत्ता-५४; पृष्ठसंख्या २३६; चित्र : लगभग ६० (रंगीन); मूल्य : १५० रुपये।**

कुल सात सौ श्लोकों की भगवद्गीता महाभारत का एक छोटा-सा भाग है; परंतु विचारों की भास्वरता और शब्दों की आभामयता से उसने भारतीय मानस को सदियों से मुग्ध कर रखा है। आस्तिक हिंदू परंपरा में कोई भी नया मत प्रस्थापित करना हो, तो जिन तीन आधारभूत ग्रंथों (प्रस्थानों) पर भाष्य लिखना आवश्यक समझा गया है, उनमें गीता भी एक है। शंकर, रामानुज, माध्व से लेकर अरविंद तक अनेक आचार्यों ने तथा तिलक, गांधी तथा विनोबा जैसे धर्म-चितकों तथा साधकों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से गीता का अर्थ किया है और उससे अपने विचारों के लिए आधार पाने का यत्न किया है।

श्री मंगल ने अपनी दृष्टि से गीता के मुख्य चिंतन पर लघु निबंध लिखे हैं और ४२ महत्त्वपूर्ण श्लोक चुनकर उनका अर्थ किया है। श्री उमाशंकर ने इन विचारों और श्लोकों को आधार बनाकर लगभग ६० रंगीन चित्र तथा १५ रेखाचित्र रचे हैं, जो कुल मिलाकर अभिधात्मक हैं। ४२ श्लोकों को राग-ताल में बांधकर उनकी स्वरलिपि भी दी गयी है।

अच्छे कागज की दुर्लभता के इन दिनों में इतनी व्ययसाध्य पुस्तक का छपवाना श्री मंगल के आयोजन कौशल का प्रमाण है।

–नारायण दत्त

★

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित औद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती हैं, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव
काटन मिल्स

अब
आधी क़ीमत में
जगमग सफ़ेदी
स्वस्तिक
डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर

जब भी
'स्वस्तिक'
ख़रीदें,
६ रु.
बचायें

ऑप्टिकल व्हाइटनर युक्त नया स्वस्तिक डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर आपके कपड़ों को जगमग साफ़-सफ़ेद धोता है. महँगे उत्तम डिटर्जेण्ट धुलाई के पाउडरों की तरह 'स्प्रे-ड्राइड' होने के कारण यह पानी में बहुत जल्दी घुल जाता है. और धुलाई के बाद कपड़े जगमगाने, चमचमाने लगते हैं. इससे हर प्रकार के वस्त्र धोये जा सकते हैं. और फिर भी हर १ कि. ग्रा. पैक पर ६ रु. की बचत! यह १ कि. ग्रा. और ½ कि. ग्रा. के पॉलिपैक में मिलता है.

कम से कम दाम... ज़्यादा से ज़्यादा काम

Shilpi-DM 9A/75 hin

नियमित रूप से दाँत ब्रश करने और मसूढ़ों की मालिश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है

देखिए, फोरहॅन्स टूथपेस्ट नियमित इस्तेमाल करनेवालोंने अपने आप क्या लिखा है :

'बारह साल की उम्र से ही मैंने फोरहॅन्स से दाँत साफ़ करने शुरू कर दिये थे। आज मैं बीस साल का होने जा रहा हूँ। पहली बार फ़ोरहॅन्स इस्तेमाल करते समय मेरे मसूढ़ों में कुछ तकलीफ़ थी। अब वह तकलीफ़ नहीं रही। पहले, रात के समय दाँतों को ब्रश करने की मेरी आदत नहीं थी। बाद में रोज रात को १० बजे पढ़ाई करते समय आपके विज्ञापन सुन-सुनकर मेरी यह 'नयी आदत' पड़ गयी है।'

(सही) एस. मित्तल,
बी.ई. (इलेक्ट्रिकल), पटियाला।

'...लगभग एक साल पहले मैंने देखा कि मेरे दाँत पीले पड़ने लगे हैं, हालांकि मैं सिगरेट नहीं पीता...मेरे पिताजी ने,... जो पिछले ३० साल से "फ़ोरहॅन्स" से ही दाँत साफ़ करते रहे हैं, मुझे दूसरे टूथपेस्ट के बजाय "फ़ोरहँन्स" से दाँत साफ़ करने की सलाह दी। कमाल है! मेरे दाँत जितने साफ़ और अच्छे होने चाहिए, वैसे हो गये। मुझे यह कहना पड़ेगा कि आपके आश्चर्यजनक टूथपेस्ट-फ़ोरहॅन्स—में वे सभी गुण हैं जिनका आप प्रचार करते हैं। इसका रहस्य यह है कि यह **दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है।**"

(सही) एस. एस. चटर्जी, एम.ए.
कोयम्बटूर।

Forhans
FOR

(इन पत्रों की फोटोस्टॅट कॉपी आप जैफ्री मैनर्स एण्ड कं. लि. के किसी भी कार्यालय में देख सकते हैं)

दाँतों की समुचित देखभाल के लिए रोज सवेरे और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट और फ़ोरहॅन्स डबल-एकशन टूथब्रश इस्तेमाल कीजिए...और नियमित रूप से डाक्टर की सलाह भी लेते रहिए!

मुफ़्त! "आपके दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना-पुस्तिका।

अपनी प्रति*प्राप्त करने के लिए (डाक-खर्च के लिए) २५ पैसे के टिकट इस कूपन के साथ इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१.

नाम: ______________________ उम्र: ________ 06

पता: ______________________

* कृपया जिस भाषा की पुस्तिका चाहिए, उसके नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, आसामी, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़।

फ़ोरहॅन्स दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

इनका साथ कभी न छूटे ....

बस, जियाजी के सूटिंग्स
पहन लेने के बाद आपको
भी ऐसा ही महसूस होता है...
रोबदार व्यक्तित्व
और तन संवारनेवाले ये
सूटिंग्स जिसने भी पहने,
यही कहा — इनका साथ
कभी न छूटे...

J

जियाजी सूटिंग

एवं ड्रैस-मटीरियल

जियाजीराव कॉटन मिल्स लिमिटेड,
बिरलानगर (म. प्र.)

MAPP-JSU-751 Hin

र्षिक मूल्य रु. २४) (मूल्य रु. २–५०

अक्तूबर (१-१०-१९७५) मूल्य रु. २-५०

Regd. No. BYW

नयी उमंग, नयी तरंग

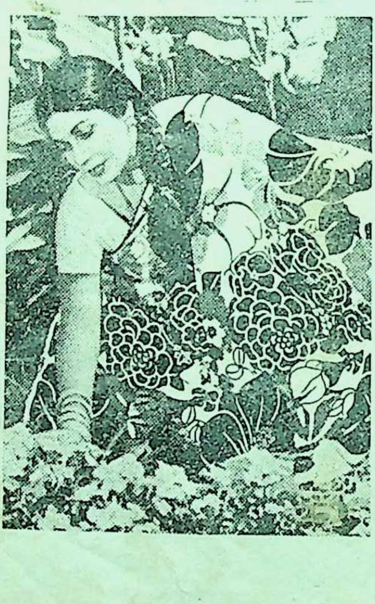

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी – १००% सूती कपड़ों के

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.
कं. लिमिटेड, बम्बई-४०००२५.

दीपावली विशेषांक

नवनीत

हिंदी डाइजेस्ट

41176

नयी उमंग, नयी तरंग

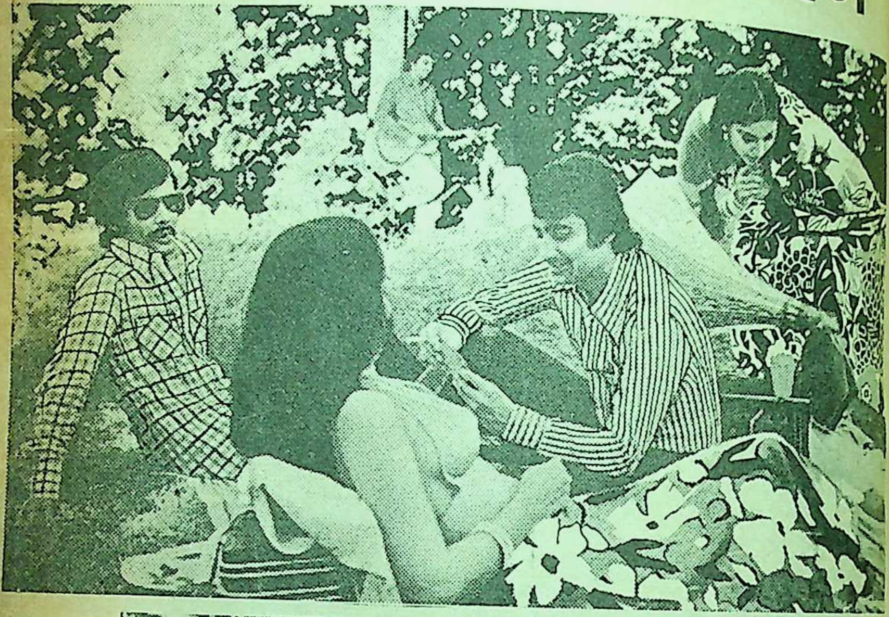

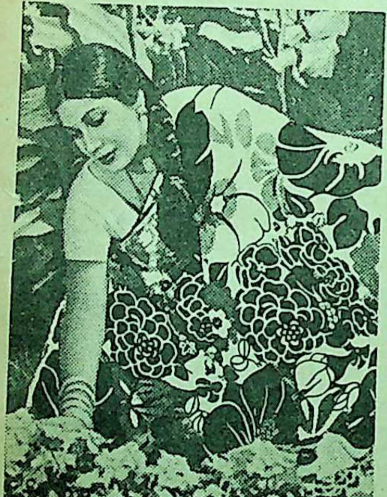

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सेन्चुरी – १००% सूती कपड़ों के लिए

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मेन्यु.
कं. लिमिटेड, बम्बई-४०० ०२५.

मत समझिए कि यह कोई
अचार की मामूली बरणी है
यह तो बेडेकर के सर्वोत्तम
उत्पादनों में से एक है

B.Vasant/VPB/1-75

*सुगन्ध और सुस्वाद के लिए सुपरिचित
यह उत्पादन ६९ वर्षों के लम्बे अरसे से
भारत के घर-घर में मशहूर है*

सुरुचिपूर्ण महिलाएँ तो बेडेकर उत्पादनों की तारीफ़ करते नहीं थकतीं। बेडेकर के कई उत्पादन हैं जैसे अचार, मसाले, पापड़ व चटनी जो अपणी विशुद्धता और उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं। बेडेकर के सभी उत्पादन अन्तराष्ट्रीय स्तर की लीक-प्रफ़ पैकेजिंग में मिलते हैं। बेडेकर के उँचे दर्जे के उत्पादन यानी आपकी पहली पसन्द।

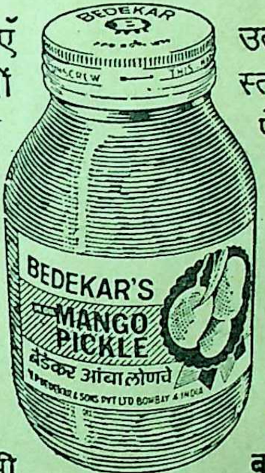

व्यापारिक पूछताछ :
व्ही. पी. बेडेकर
एण्ड सन्स प्रा. लि.
बम्बई - ४ (भारत)

बेडेकर

बेडेकर अचार • बेडेकर मसाले • बेडेकर पापड • बेडेकर चटनी

दीपावली अभिनन्दन

खंडेलवाल ट्यूब्स

खंडेलवाल फेरो अलॉइज लि. का विभाग

मुख्य आफिस :
खंडेलवाल भवन,
१६६, डा. दादाभाई रोड,
बंबई–४००००१

कारखाना :
खंडेलवाल नगर,
जिला : नागपु

प्यार का बंधन
उपहार का बंधन

स्टेट बैंक गिफ़्ट चेक!

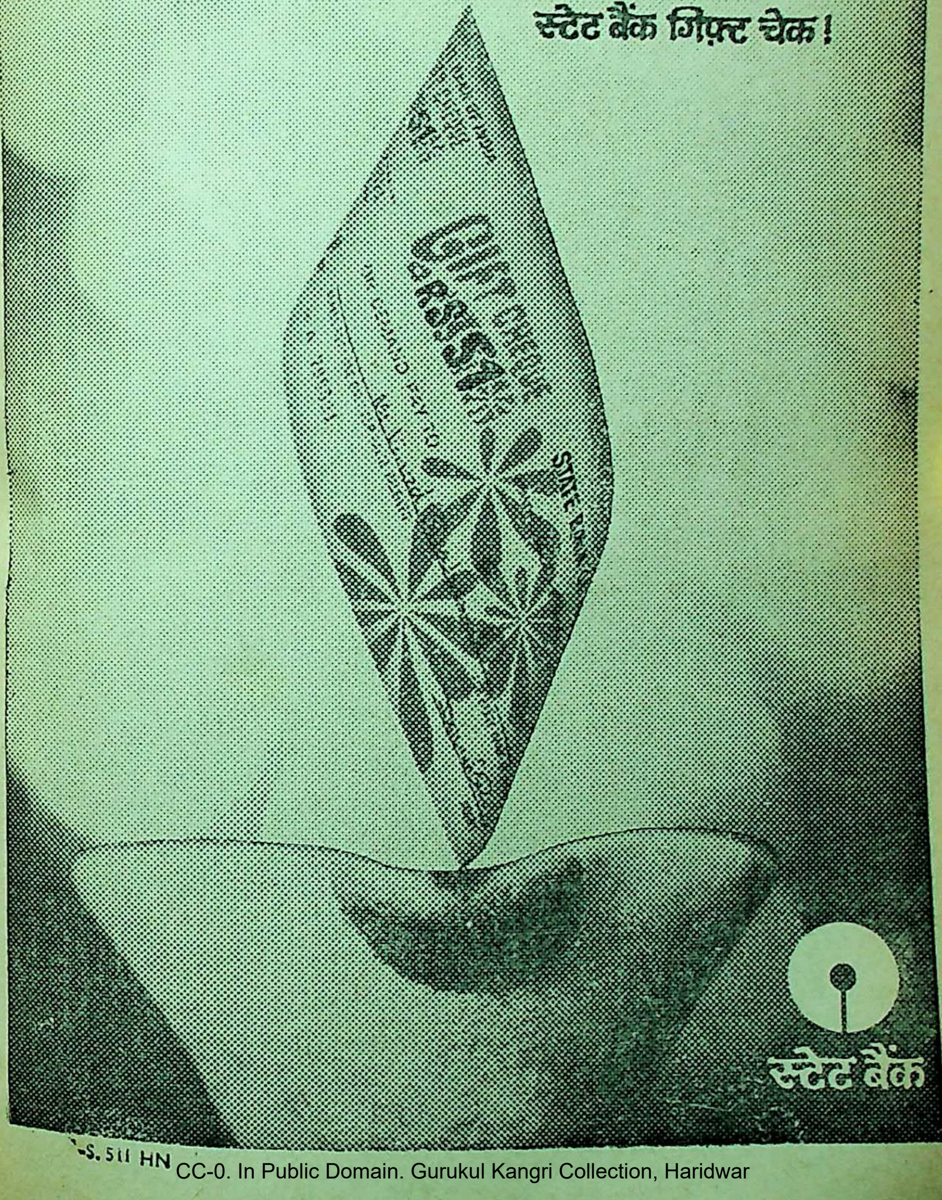
GIFT CHEQUE
STATE BANK

स्टेट बैंक

S. 511 HN

REGD. TRADE MARK

अतुल

निम्नलिखित वस्तुएं बनाता व प्रस्तुत करता है।

* डाइरेक्ट डाइज़
* टयुलाथॉल
* टयुलाजीन
* मोननोपमोत्री रंग
* चमड़े का रंग
* एसिड डाइज़
* टयुलाबेज़
* लाइम कलर
* ऑइल कलर
* पेपर कलर

फलुओरेसेंट अप्टिकल ब्राइटनर्स
* स्वेटक सी. टी. कागज उद्योग के लिए
* स्वेटक एम. एन. ए. वस्त्रोद्योग के लिए

कृपया संपर्क करें

दि अतुल प्रॉडक्ट्स लिमिटेड

पो. अतुल, वाया बलसार
(पश्चिम रेल्वे)

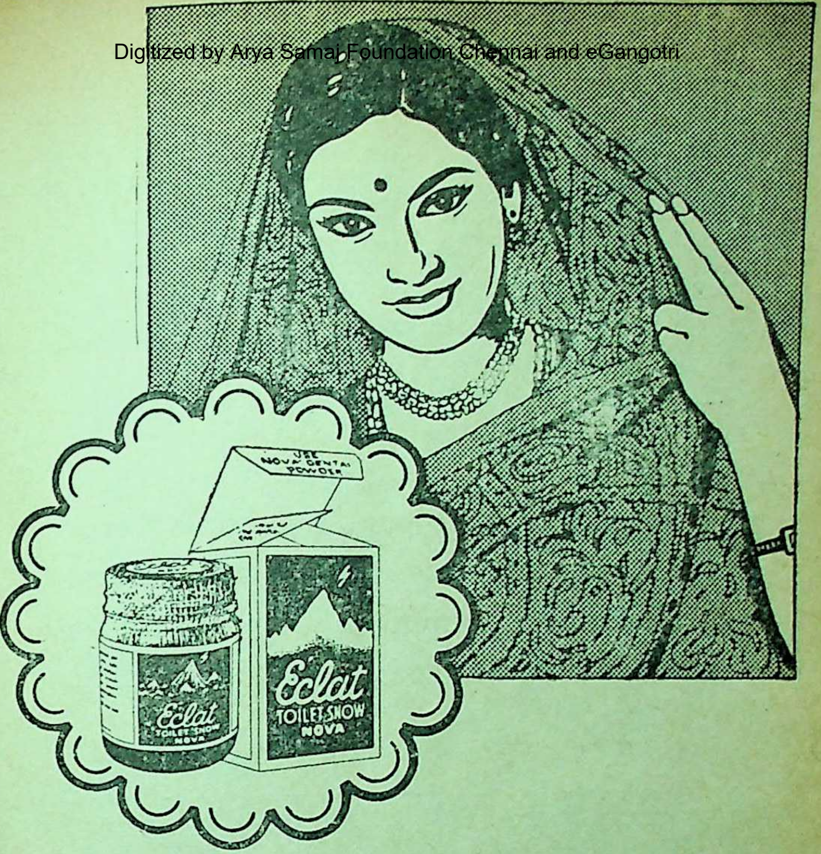
USE NOVA DENTAL POWDER
Eclat TOILET SNOW NOVA
Eclat TOILET SNOW NOVA

अेक्ला स्नो से
आपका सौंदर्य खिल उठता है

आपकी नाज़ुक, ओस-सी निर्मल, चमकती त्वचा ही बताती है कि आपकी पसंद **अेक्ला स्नो** है। विशेषज्ञों और सौंदर्य-तकनीशियनों द्वारा तैयार किये गये वैज्ञानिक फार्मूले के अनुसार निर्मित। **अेक्ला स्नो** आपकी त्वचा की सहज देखभाल करता है और आवश्यक पोषक तत्त्वों से उसे नाज़ुक, चिकनी, रेशम-सी मुलायम बनाता है। पाउडर लगाने के लिए **अेक्ला स्नो** एक बेहतरीन आधार है—इसकी भीनी-भीनी, खुशनुमा महक आपको अरसे तक तरोताज़ा बनाये रखती है।

आज ही एक जार खरीदिए और स्वयं परख लीजिए।

दि नोवा कंपनी

एल. बी. एस. मार्ग, भांडुप, बंबई : ४०० ०७८

BOMBAY CALCUTTA PAPER
HIGH GRADE PAPERS

**The Trade Mark
of
High Grade Service**

We regularly stock papers ranging from standard varieties to high grades. Whites and coloured ranging from thin grades to the highest substances.

Distributors :

THE BENGAL PAPER MILLS CO. LTD.,

Stockists :

THE WEST COAST PAPER MILLS LTD.
THE BOMBAY CALCUTTA PAPER AND GENERAL CO. PRIVATE LTD.

Regd. Office : **Macmillan Building,
Dr. D. N. Road, Bombay-1 (BR.)**

Telephone No. **262567** (3 Lines) *Telegram* : PAPERHOUSE

सभी भारतवासियों को नया साल
सुखद और समृद्धिशाली हो

रत्न की तरह

आँखों की
सुरक्षा
तथा
स्वास्थ्य
के लिए

Jai Kajal
WESTERN INDIA CHEMICAL CO. BORIVLI-EAST, BOMBAY (INDIA)

जाई काजल

आँखें ठण्ड, तन्दुरुस्त, तेजदार रखकर
नज़र साफ़ करता है।

सैन्टोमिक्स और ओवामिल का निर्माता
वेस्टर्न इण्डिया केमिकल कम्पनी. बोरिवली-पूर्व, बम्बई (भारत)

शुभकामनाओं के साथ

इंडियन प्राडक्ट्स ट्रेडिंग कारपोरेशन

१६, नोबल चेम्बर्स
पारसी बाजार स्ट्रीट, फोर्ट
बंबई-४००००१

आयातक व निर्यातक
(भारत सरकार द्वारा मान्य निर्यात संस्था)

जेनिथ स्टील पाइप्स लि. (टी. एम. डी.) के एजेंट

फोन : २५४१२०
२५४६६३

तार : **'FASH FAB'**
टेलेक्स : **'GOENKA'** ४२०९

दीवाली अभिनन्दन

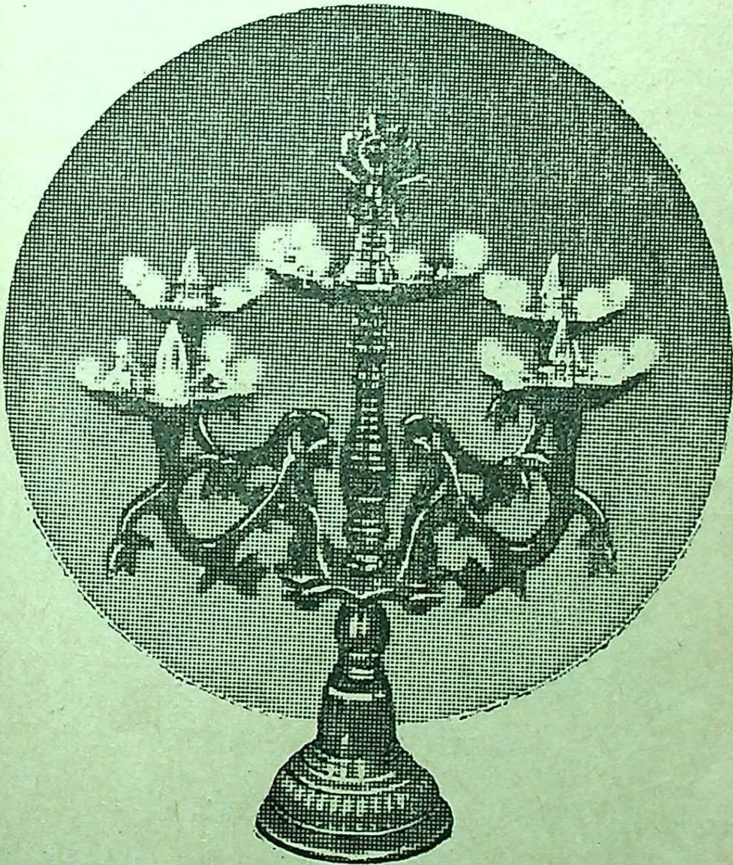

MAFATLAL GROUP

मफतलाल ग्रुप

हम उद्योग की कई प्रकार से सेवा करते हैं।
हमसे संपर्क करना आपको सदा लाभप्रद होगा।

(१) **पाईप्स**–जेनिथ स्टील पाइप्स लिमि. खोपोली के बिक्रेता और स्टाकिस्ट.
(२) **अल्युमिनियम**–हम सभी प्रकार के शीटों और एक्सट्रुडेट सेक्शनों के लिए 'हिन्दालको' के एजेन्ट हैं।
(३) **केबल**–युनिवर्सल केबल्स लि. सतना (म.प्र.) के महाराष्ट्र (विदर्भ, गोवा और गुजरात को छोड़कर) में बिक्री-एजेंट।
(४) **फायर होज़**–जयश्री टेक्सटाइल एंड इंडस्ट्रीज लि. रिशरा (पं. बंगाल) द्वारा निर्मित, 'वरुण' फ्लैक्स पाइप व 'जयश्री' एंगस R. R. L. होज पाइपों के स्टॉकिस्ट और वितरक।

एशियन डिस्ट्रिब्यूटर्स लिमिटेड
क्वीन्स मेन्शन, तल मजला, प्रेस्कास्ट रोड, बंबई-१.
तार : "ADPIPE" टेलेक्स : 011-2177 टेलिफोन : २६६६७१-३-४

तिगरानिया स्टील कारपोरेशन

पुराने जहाजों को तोड़नेवाले ठेकेदार, पाइप्स, लोहा और इस्पात के व्यापारी

गोडाउन:
३१०, कोल बंदर
दारूखाना
बंबई–४०० ०१०
तार : TIGRANIA

कार्यालय:
२१०, कालबादेवी रोड
४ था मजला, बंबई–2 B. R.
फोन : ३१०९८४, ३७४७१२

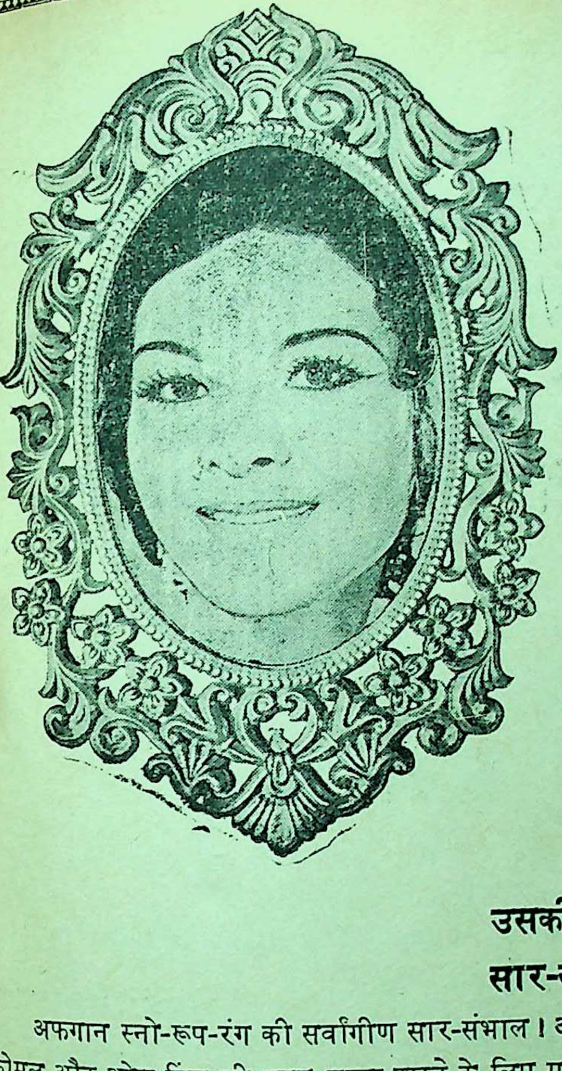

चेहरा
बहुत बड़ी
नियामत है

AFGHAN SNOW
AFGHAN SNOW

उसकी समुचित
सार-संभाल कीजिये

अफगान स्नो-रूप-रंग की सर्वांगीण सार-संभाल। अपनी त्वचा को पंखड़ी की तरह कोमल और ओस-बिंदु की तरह ताजा रखने के लिए महिलाएं अपन रूप-रंग की सार-संभाल अफगान स्नो को सौंप देती हैं। इसका कुंछ तो कारण होगा।

अफगाण स्नो–रूप-रंग की सर्वांगीण सार-संभाल!

सुंदर डिजाइन

तथा

आकर्षक रंग के वस्त्रों के लिए

न्यू स्वदेशी तथा मंजुश्री

के वस्त्रों का आग्रह रखिये

न्यू स्वदेशी मिल्स ऑफ
अहमदाबाद लिमिटेड,
नरोडा रोड, अहमदाबाद

मंजुश्री टेक्सटाइल्स
शाहीबाग रोड,
अहमदाबाद

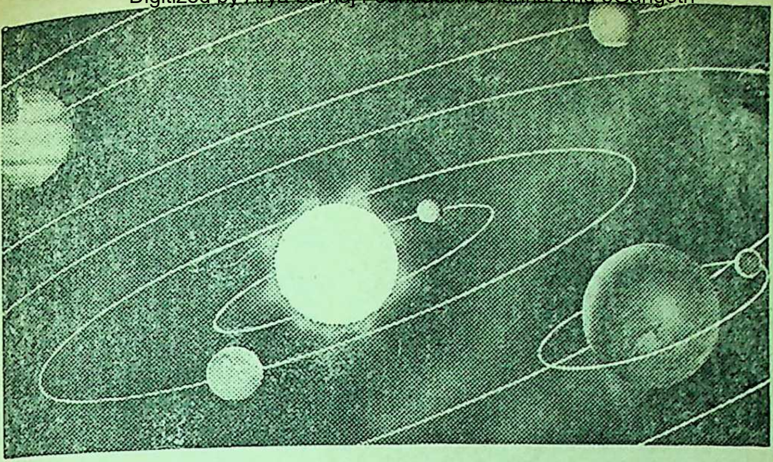

सौरशक्ति...जीवजगत् का मुख्य आधार

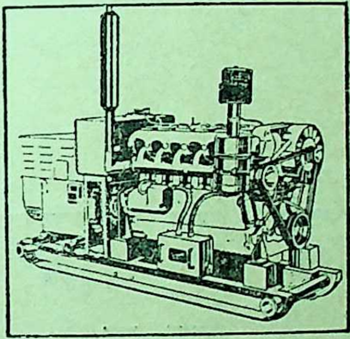

किर्लोस्करशक्ति...
उद्योगविकास का मुख्य आधार
दोनों भी
विश्वासपात्र... अत्यावश्यक!

किर्लोस्कर ऑईल इंजिन्स लिमिटेड
१३, लक्ष्मणराव किर्लोस्कर पथ, खडकी, पुणे-४११००३.

PRATIBHA-7524 A

SCINDIA

हमारी विदेश-सेवा
ब्रिटेन, यूरोप, पोलैंड, सोवियत रूस,
सं. रा. अमरीका, कनाडा, ग्रेट लेक्स,
ए. आर. ई., पश्चिम एशिया (ईरान की
खाड़ी), लाल सागर, कैरिबियन
समुद्र के बंदरगाह, स्ट्रेट्स के बंदरगाह
पूर्व और पश्चिम अफ्रीका तक व्याप्त है।

अपना माल सिंधिया जहाजों
द्वारा भेजिये।
हमारी तटीय सेवा
भारत के समूचे तट, पाकिस्तान,
बाङ्ला देश, श्रीलंका और बर्मा त
व्याप्त है।

केबल : SAMUDRAPAR (ओवरसीज)
JALANATH (तटीय)

टेलिफोन: २६८१६१ (बाहर लाइनें)
टेलेक्स : 2205/3519

सिंधिया के जहाजों द्वारा माल-ढुलाई से देश को विदेशी
मुद्रा की बचत और कमाई होती है।

द सिंधिया स्टीम नेविगेशन कंपनी लिमिटेड

सिंधिया हाउस,
नरोत्तम मोरारजी मार्ग,
बेलार्ड एस्टेट, बंबई-४००-०३८

१५ पार्क स्ट्रीट
कलकत्ता ७००-०१

पारेख एंड कंपनी
७७, सुतार चाल
बंबई-२
टेलीफोन : ३२४९२४

मोदी एंड कं.
६४/७ सुतार चाल, बंबई-२.
साथ ही संयुक्त हर प्रकार के कागज और गत्तों के व्यापारी

बंबई महानगर और उपनगरों में

नवनीत

[हिंदी, मराठी, गुजराती]

के

सोल एजेंट

राजाराम बी. मोरे

न्यूज पेपर एजेंट

भायखळा, बंबई-२७

से अपनी प्रति के लिए संपर्क करें।

मुख्य कार्यालय :

फोन : ३७६०७०

शाखा : गिरगांव पोर्तुगीज

चर्च के सामने

शुभकामनाएं

★

ध्रुव वुलन मिल्स प्राइवेट लिमिटेड

कूम्बर्स और वर्स्टेड स्पिनर्स

कूम्बिग यूनिट :
बल्कुम. थाना
फोन नं. ५९१६३२/५९१३७७

स्पिनिंग और वीविंग यूनिट :
पो. बॉ. नं. ६३०४, बंबई-१३
फोन नं. ३९५७६८/६९/६०

क्रोशिये के रूमाल से ढकी मिठाई की थाली। रावलगांव का नाम लेते ही याद आती दीवाली।। टाफियों में 'टाफ़ी' किसकी ? रावलगांव की। तारीफ बहुत वह 'लॅक्टो बॉन बॉन' की।। कितने निराले-निराले रूप–कितनी तरह-तरह की। किसी को भी खुश कर दे ऐसी महिमा रावलगांव की।।

दि रावलगांव शुगर फार्म लिमिटेड, रजिस्टर्ड कार्यालय : कंस्ट्रक्शन हाउस, वालचंद हीराचंद मार्ग, बेलार्ड इस्टेट, बंबई-४०००३८

यांत्रिक प्रगति का अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां 'ब्रोच' उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये 'ब्रोच' से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
पहला पोखरण रास्ता,
थाना (बंबई)

आप भारतीय हैं, क्या आप भारतीय संस्कृति का सर्वांगीण परिचय पाना चाहते हैं ? तो

शास्त्रार्थ महारथी पं० माधवाचार्य शास्त्री द्वारा लिखित निम्नांकित साहित्य का अध्ययन कीजिये

वैदिक साहित्य

अथर्ववेद (प्रथम भाग)	२५) रु.
अथर्ववेद (द्वितीय भाग)	४०) रु.
(हिन्दी सनातन भाष्य सहित)	
वेद दिग्दर्शन	१०) रु.
मन्त्रालोक	३) रु.

भारतीय संस्कृति की विशिष्ट वैज्ञानिक विवेचना करनेवाला साहित्य

क्यों ? (प्रथम भाग)	१२) रु.
क्यों ? (द्वितीय भाग)	१५) रु.
सार्वभौम हिन्दू	४) रु.
सनातन धर्म	२) रु.
हमारे पर्व-त्योहार	२) रु.
शिखा सूत्र	२) रु.
श्राद्ध विज्ञान	२) रु.
मूर्तिपूजा विज्ञान	१) रु.
हिन्दू और हिन्दू राष्ट्र	२) रु.
शल्यों जेष्यति पाण्डवान्	१) रु.
आंख का शहतीर	

पौराणिक साहित्य

पुराण दिग्दर्शन	१५) रु.
पुराण परिशिष्ट	२) रु.

विविध साहित्य

दृष्टान्त दिग्दर्शन	१०) रु.
संस्कार विधि	१०) रु.
विविध रामायण सार	३) रु.
प्रेरक कथाएं	३) रु.
धर्म शिक्षा २ भाग	२) रु.
शास्त्रार्थ महारथी	४) रु.
चार शास्त्रार्थ	२) रु.
शास्त्रार्थ पंचक	५) रु.
लबड़ घौं घौं	१) रु.

* **हमारा विस्तृत सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये।**

* **पचीस रुपये से ऊपर के आर्डर पर डाकखर्च माफ।**

* **पुस्तकालयों और पुस्तक-विक्रेताओं को कमीशन की विशेष व्यवस्था।**

शीघ्र संपर्क करें—

माधव पुस्तकालय

१०३ ए-कमलानगर, दिल्ली–११०००७

अब
आधी क़ीमत में
जगमग सफ़ेदी
स्वस्तिक
डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर

जब भी
'स्वस्तिक'
ख़रीदें,
६ रु.
बचायें

ऑप्टिकल व्हाइटनर युक्त नया स्वस्तिक डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर आपके कपड़ों को जगमग साफ़-सफ़ेद धोता है. महँगे उत्तम डिटर्जेंट धुलाई के पाउडरों की तरह 'स्प्रे-ड्राइड' होने के कारण यह पानी में बहुत जल्दी घुल जाता है. और धुलाई के बाद कपड़े जगमगाने चमचमाने लगते हैं. इससे हर प्रकार के वस्त्र धोये जा सकते हैं. और फिर भी हर १ कि. ग्रा. पैक पर ६ रु. की बचत! यह १ कि. ग्रा. और ½ कि. ग्रा. के पॉलिपैक में मिलता है.

कम से कम दाम... ज़्यादा से ज़्यादा काम

Shilpi-DM 9A/75 hin

मन लुभावने रंगों में दमकते
एकदम गर्म शीत से सुरक्षित
हंसा
कम्बल
आपकी रंगीली
रातों की
शुरुआत
Hans
अमृतसर स्वदेशी वूलन मिल्स
राम तीर्थ रोड, अमृतसर
INTERADS

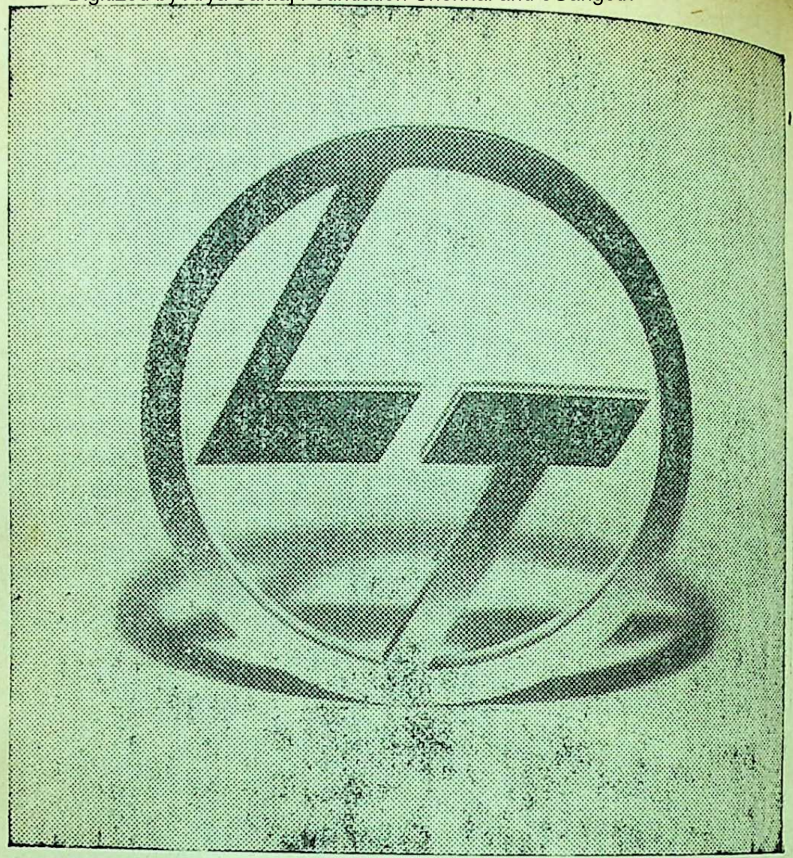

किस चीज का प्रतीक है यह चिह्न?

इंजीनियरी में नयी कल्पनाएं। वे जन्म लेती हैं L&T में, जहां कि इंजीनियरों की टोली प्रमुख उद्योगों के लिए संयंत्रों और उपकरणों का आकल्पन, रचना तथा प्रतिष्ठापन करती है। ये उद्योग हैं—रसायन एवं औषध, खाद्य एवं डेरी, खनिज एवं तेल, लुगदी एवं कागज, फौलाद एवं सीमेंट, बिजली एवं सिंचाई। L&T चिह्न प्रमुख ग्राहकों और विश्वविख्यात सहायकों के विशेष ज्ञान के आधार पर संपूर्ण संयंत्र के निर्माण का भी प्रतीक है। L&T संयंत्र की नींव डालने से उत्पादन आरंभ करने तक सारी देखभाल करता है। संक्षेप में, L&T चिह्न भारत के प्रत्येक अतिमहत्त्वपूर्ण उद्योग के विकास का प्रतीक है।

लार्सन एंड टूब्रो लिमिटेड

INDIANOIL

राष्ट्रीय एकता और
अनुशासन के लिए आह्वान

"यह समय है एकता और अनुशासन का।
मुझे पूरा विश्वास है कि दिन-ब-दिन स्थिति
में सुधार होगा और इस कठिन कार्य में
हमारी शहरी तथा ग्रामीण जनता का
हमें पूरा समर्थन मिलता रहेगा ताकि देश
शक्तिशाली बन जाए।"

— प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी

Dattaram-IOC-55A HINDI

दीपावली की शुभकामनाएं

दि लक्ष्मी विष्णु टेक्सटाइल मिल्स लिमि.

एयरलाइन्स होटल बिल्डिंग, चौथी मंजिल
१९९, चर्चगेट रिक्लेमेशन
बंबई-४०० ०२०

तार : SPINSTER
बंबई ४०० ०२०

फोन : २९३५९३
(चार लाइनें)

हमारा नया प्रकाशन

श्रीरामकृष्ण की कहानियां

३३ रंगीन चित्रों के साथ बच्चों के लिए

पृष्ठ ५६, लेखिकाएं–ऐरिन रे तथा मल्लिका गुप्ता **मूल्य रु. ४·२५**

श्री रामकृष्ण लोगों को उपदेश देते समय अपनी बातों को समझाने के लिए जब कहानियां सुनाते थे, उस समय उनका कमरा हंसी और आनंद से भर जाता था। छोटे-बड़े सभी इन कथाओं की सरसता का उपभोग कर सकते हैं और साथ-साथ उसमें निहित मर्म को भी समझ सकते हैं। सहज शैली में बाल-साहित्य विशेषज्ञों द्वारा लिखित।

हमारे हिंदी प्रकाशन :–

विवेकानंद साहित्य

कुल दस खंड, डबल डिमाई साइज में, अनुक्रमणिका समेत पृष्ठसंख्या लगभग ४५०, मजबूत और आकर्षक जिल्द, नव प्रकाशित द्वितीय संस्करण का मूल्य प्रति खंड रु. १२, संपूर्ण सेट रु. ११२। पूरा सेट रेल द्वारा मंगाने से रेल-खर्चा नहीं लगेगा। पुस्तक-विक्रेताओं को विशेष कमीशन दिया जाता है।

विवेकानंद की कहानी

६४ रंगीन चित्रों के साथ, बच्चों के लिए

पृष्ठ : ७२ मूल्य : रु. ४.५०

मन और उसका निग्रह

पृष्ठ : १५०, लेखक–स्वामी बुधानंद, मूल्य २·५० रु.

श्रीरामकृष्ण (संक्षिप्त जीवनी) मूल्य २.५० रु:

श्रीसारदा देवी (") मूल्य २.५० रु.

स्वामी विवेकानंद (") मूल्य २.५० रु:

अंग्रेजी तथा हिंदी पुस्तकों के लिए लिखिये :

व्यवस्थापक : अद्वैत आश्रम

५, डिही एन्टाली रोड, कलकत्ता–७००-०१४

SHRI AMBICA
GROUP
Life is worth living...with Shri Ambica Group
THIS MAGIC OF MUSIC

Come. Sway. Swing to the tune. Live a little. Life is so much fun and full of joy. The gift of modern industrial boons is the gift of leisure and carefree pleasure it bestows upon you. Shri Ambica Group believes in this heritage of happiness. ...and helps create it through today's Textiles ...Chemicals...Engineering.

Shri Ambica Mills Ltd. Shri Arbuda Mills Ltd. Shri Ambica Cylinder Mfg. Co.
Shri Ambica Tubes Shri Ambuja Chemicals Co. Shri Ambica Machinery Mfrs.

Bidhan-AG-11C

रूप-सौन्दर्य में नया रंग लाने के लिए

पैरिस ब्यूटी

अब आपके लिए लाये हैं

ब्रा और पैंटी सैट

मोहक रंगों और मन चाहे प्रिन्टों में

TRENDS

'पैरिस ब्यूटी' की एक और भेंट !
आकर्षक और मुलायम ब्रेसियर
के साथ मेल खाती पैंटी ।
फैशन में नयापन चाहने वाली महिलायें
ब्रेसियर और पैंटी का नया सैट
उतना ही पसंद करेंगी, जितना कि
'पैरिस ब्यूटी' के ब्रेसियर !

उपहार सैट
29.75

निर्माता : **पैरिस ब्यूटी**
ब्रेसियर्ज कं०, दिल्ली-7

थोक विक्रेता :
पैरिस ब्यूटी सेल्स कार्पोरेशन
अजमल खाँ रोड, करोल बाग़,
नई दिल्ली-110005, फ़ोन : 566594

GARWARE SYNTHETICS PVT. LTD.

MANUFACTURE
Garflon rods
making metals obsolete

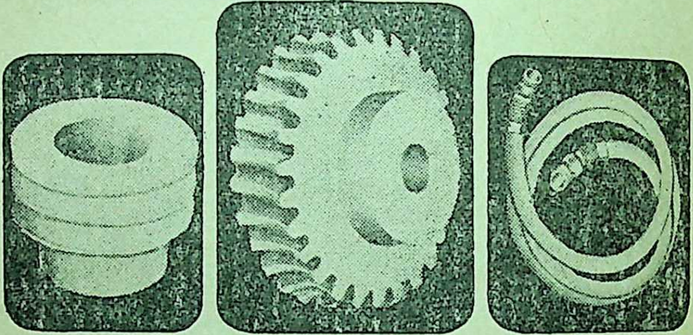

Salient qualities:

EXCELLENT WEAR RESISTANCE: GOOD MECHANICAL & PHYSICAL PROPERTIES: HIGH IMPACT STRENGTH: VERY HIGH RESISTANCE TO CORROSION: SELF LUBRICATING & SELF DAMPING PROPERTIES: IDEALLY SUITABLE FOR FABRICATION OF GEARS, BUSHES, BEARINGS.

NEW INNOVATION-
HIGH PRESSURE GARFLON TUBING

GARWARE®
गरवारे

GARWARE SYNTHETICS PVT. LTD.
135, Dr. Annie Besant Road,
Bombay-400 018.
Tel : 393631, Telex No. 011-4388

VENART

शुभकामनाओं सहित

स्वदेशी

काटन मिल्स कंपनी लिमिटेड

काटन मिल्स :

- स्वदेशी काटन मिल्स, कानपुर
- स्वदेशी काटन मिल्स पांडिचेरी
- उदयपुर काटन मिल्स, उदयपुर
- स्वदेशी काटन मिल्स, मउनाथ भंजन
- रायबरेली टेक्सटाइल मिल्स, रायबरेली

स्टेपल फाइबर एंड काटन यार्न मिल्स :

- स्वदेशी काटन मिल्स, नैनी

—सहकारी—

- स्वदेशी माईनिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कं. लि.

——प्रतिनिधि यूनिट्स——

शुगर मिल्स :

- **गणेश शुगर मिल्स, आनंदनगर**
- **श्री आनंद शुगर मिल्स, खलीलाबाद**

जयपुरिया इंटरप्राइज़

जेनिथ

औद्योगिक जगत में
एक विख्यात नाम है।

स्टील पाइप
स्टील कटर

इसके मुख्य उत्पादन हैं।
देश-विदेश में सर्वत्र
इनका प्रचार है।

जेनिथ स्टील पाइप्स लि.

खोपोली स्थित औद्योगिक निर्माण का स्थान अनुपम है, आदर्श है, उसके उत्पादन के द्वारा उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, निर्यात के द्वारा देश को विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है, और विविध करों के द्वारा देश के अर्थकोष की वृद्धि होती है।

सबकी सेवा में प्रस्तुत
जेनिथ स्टील पाइप्स लि.
खोपोली (कुलाबा) बंबई.

दि इंडियन टूल
मेन्यूफेक्चर्स लि.
१०१, सायन रोड, सायन,
बंबई-४०००२२

सुनिश्चित होकर चुनाव
कीजिये

'डॅगर' ट्विस्ट ड्रिल्स रीमर्स,
कटर्स, टैप्स, टूलबिट्स
और माइक्रोमीटर्स

डॅगेलाय कार्बाइड
टूल्स और टिप्स

डॅगर-साके गियर हॉब्स
और गियर शेपिंग कटर्स

प्रिसिशन का प्रतीक

एक आधुनिक आकर्षक भूमिका में शर्मिला टैगोर

बॉम्बे डाइंग की नयी रंगारंग साड़ियों का संभार. चित्रतारिकाओं का मन मोहनेवाले शुद्ध सूती और पॉलिएस्टर कपड़ों में. 'आशियाना', 'शिफ़ाला'–अभिनव हाई ट्विस्ट वायल. रैलिका और २×२ स्विस वॉयल—सुखद और शीतल. स्वप्निल १००% पॉलिएस्टर—नारी सुलभ नयनरम्य. शर्मिला टैगोर जैसी ही लुभावनी साड़ियाँ.

बॉम्बे डाइंग

निर्मित 100% पॉलिएस्टर साड़ियाँ

विजेता जोड़ी

होड़ में विजयी होने के लिए किसान सर्वश्रेष्ठ बैलों की जोड़ी काम में लाते हैं। ज्योति सर्वश्रेष्ठ मोटर और सर्वश्रेष्ठ पंप की जोड़ी लगाकर आपके लिए युनिबिल्ट का निर्माण करते हैं।

पंप और मोटर बनाने में अग्रणी ज्योति ने युनिबिल्ट में सर्वोत्तम पंप और मोटर का समावेश किया है। ज्योति के विशिष्ट कौशल, ज्ञान और दीर्घकालिक शोध के कारण तथा यह एक यूनिट पंप मोटर होने के युनिबिल्ट बढ़िया काम देता व अधिक पानी निकालता है। फिर भी बिजली की कम से कम खपत होती है। अधिक अन्न उपजाने की होड़ में विजयी होने के लिए आप बहुत ही टिकाऊ और बिना तकलीफ चलने वाले युनिबिल्ट पर पूरा भरोसा कर सकते हैं।

ज्योति युनिबिल्ट

उत्पादक :
ज्योति
ज्योति लिमिटेड, बड़ौदा ३.
quality is our creed

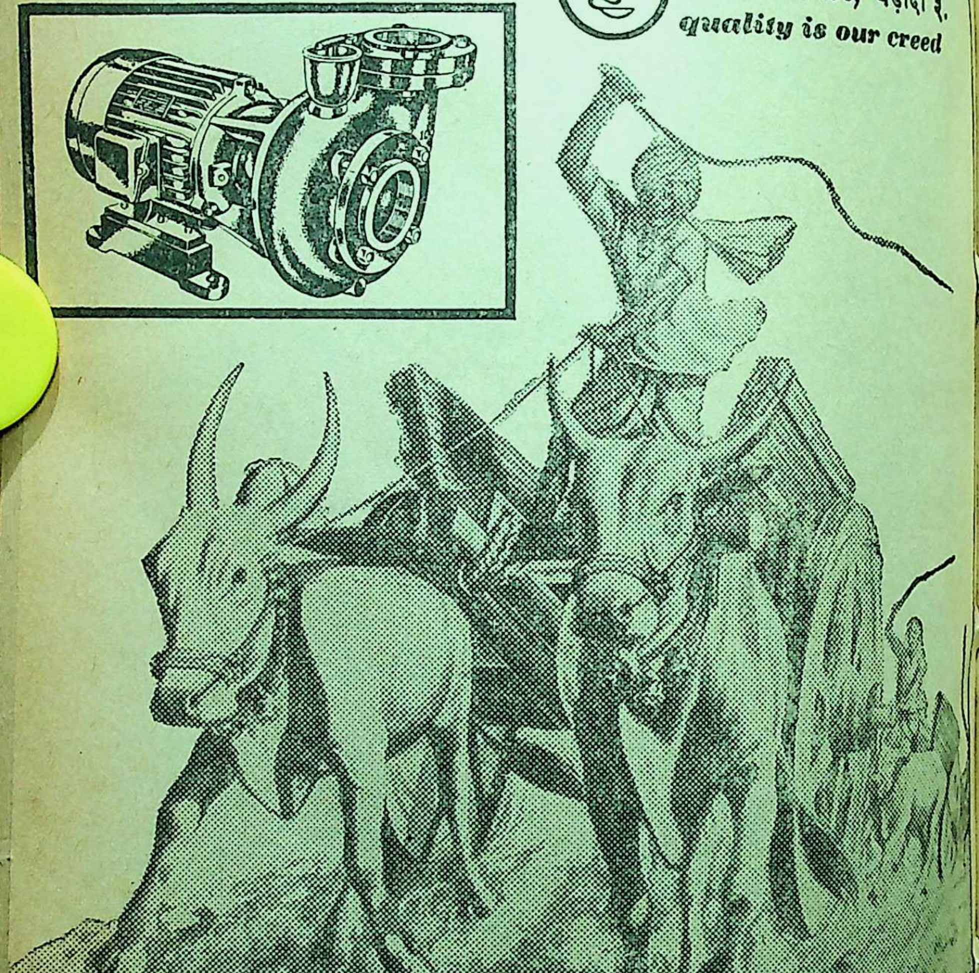

everest/fidelity

नवनीत

नवंबर १९७५

इस अंक में

३५ आलोक-गीत (कविता)
जानकीवल्लभ शास्त्री
३६ और देव सब दाम के
श्रीमन्नारायण
४० दीपलक्ष्मी
डा. भटनागर द्वारा आयोजित
४१ उजाला अपना और पराया (कविता)
भवानीप्रसाद मिश्र
४२ एक सुरभित जीवन
सत्यकाम विद्यालंकार
४९ कुमार गंधर्व
सुशीला कशालकर
५३ शुभकामना
नवनीत-परिवार
५४ वह जादुई आईना (कविता)
वीरेंद्र कुमार जैन
५६ वल्लभभाई
रामनाथ सुमन
६५ पुनः शरणार्थी (पंजाबी कहानी)
नवतेज सिंह
६९ प्राणवंत परंपरा के प्रतिनिधि
डा. सुरेशव्रत राय
७६ कालपात्र के लिए पुस्तकें
८१ आनंद की असली उम्र
मारिस गुडेकेट
८४ दीपावली (कविता)
अंचल
८५ कलिंग-चक्रवर्ती खारवेल
हरिदत्त वेदालंकार
९१ विरसा
एल्सा मैक्सवेल
९२ एक याद (हिंदी कहानी)
कर्त्तारसिंह दुग्गल
९७ मेरी वसीयत जेकब क्लात्स्किन

संस्थापक
स्व. श्रीगोपाल नेवटिया
संपादक
नारायण दत्त
प्रबंध-संचालक
हरिप्रसाद नेवटिया
सहसंपादक
सुरेश सिन्हा
उपसंपादक
गिरिजाशंकर त्रिवेदी, डा. विष्णु भटनागर
व्यापार-व्यवस्थापक
महेंद्र मेहता
प्रबंधक
सोहनराज पारेख
सज्जाकार : ठाकोर राणा

९८ दया (कविता)
नारायणलाल परमार
९९ सार्वभौम वैदिक प्रार्थनाएं
डा. मंगलदेव शास्त्री
१०१ उन्नीसवां पुराण
अमृत राय
१०७ तीन कथाएं
लेव ताल्सताय
१०९ नरकासुर-वध
डा. स्वामीनाथ शर्मा
११२ गज़ल
'कतील' शिफ़ाई
११३ रामायण का पुरातत्त्व
डा. ब्रजबासी लाल
११६ स्वार्थी दैत्य
आस्कर वाइल्ड
१२४ एक संवाद पर्वत का (कविता)
डा. रमा सिंह
१२५ लालबुझक्कड़ों के शहर में
मुकुल भट्ट
१२९ सूर्य और अतिसूर्य
कुवेरनाथ राय
१३६ फूटा मटका (उर्दू कहानी)
मसऊद मुफ्ती
१४४ कविताएं दिनकर सोनवलकर
१४५ खंभ (पोलिश कहानी)
एलेग्जेंडर गोम्बोकी
१४८ मरण सागर पारे (व्यक्तिचित्र)
शिवानी
१६० जब भी छुआ ज्योति को (कविता)
तारादत्त निर्विरो
१६१ भारतीय इतिहास के कुछ राजनैतिक विवाह
अ. ला. श्रीवास्तव
१६८ विज्ञान सहृदय बने ......
कृष्णकुमार गुप्त
१७५ एक्स-रे
चंद्रशेखर दुबे
१७७ नागानंद
सम्राट् हर्षवर्धन
२०२ यांत्रिक संत्रास से मुक्ति ......
नेमिशरण मित्तल
२१९ देखना जीना है
जान लेगमान
२२३ नयी विश्व-अर्थ-व्यवस्था की तलाश
अवधनंदन
२३५ अमरीका का तीसरा जासूसी पंजा
वीरेंद्र सिंह
२५१ दीपशिखा (बालकथा)
सुखवी

★

आवरण-चित्र : वी. एन. ओके

चित्रसज्जा : होकुसाई, हेब्बार, लक्ष्मण पै, आर. के. लक्ष्मण, पणिक्कर, श्रीनिवासुलु, वासुदेव स्मार्त, भाऊ समर्थ, स्वामीनाथ, ओके, शेणै, सत्यकाम राहुल, एन. सी. नाथ, रमेश सत्यार्थी, मेलीको, फोंग त्से-काई, मार्विन पीक, राणा, भटनागर, चव्हाण, कांबळी, ओम पांडेय, जोज़फ आर्थर।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित

नवनीत

आलोक-गीत

ज्योति-प्रपात झरो हे तम-संघात पर !
आत्मा की शुचिता कलुषित चित, गात पर !

क्षुद्र भावना को शतमुख विस्तार दो
अहंकार को पारावार अपार दो
हो उदार झिंझरी तरणी को तार दो
मृदुतर कर फेरो तरंग-आघात पर !

पाटल की सुधि बिंधी हुई है शूल से
ढंका हुआ है क्षितिज मांग की धूल से
बंधा हुआ है श्रेय-शिखर मन-मूल से
स्वर्ण-भ्रमर गूंजे कज्जल-जलजात पर !

जब न दिवस था और नहीं थी रात रे,
तेज शरद या तिमिर निबिड़ बरसात रे,
गगन नहीं था--अवनी का अहिवात रे,
तरुण अरुण तब से तुम हिम अवदात पर !

दीपावली-विशेषांक

और देव सब दाम के

~ श्रीमन्नारायण

छुटपन में धार्मिक पुरुषों को हम 'साधु', 'स्वामी' व 'आचार्य' आदि नामों से पहचानते थे। कभी कोई बहुत बड़े संन्यासी आते, तो उनका 'श्री १०८' कहकर आदर-सम्मान किया जाता था। मुझे स्मरण है कि बाद में धीरेधीरे- इन प्रतिष्ठित धर्मगुरुओं को 'श्री १००८' की प्रतिष्ठा दी जाने लगी। किंतु अब तो 'महर्षि' या 'जगद्गुरु' की उपाधियां भी पर्याप्त नहीं मानी जातीं। इन दिनों कई आचार्य 'भगवान' बन गये हैं। भविष्य में शायद इन्हें 'परब्रह्म' उपाधि से भी संतोष न मिले।

सच तो यह है कि विनोबाजी के अनुसार अब जमाना विज्ञान व अध्यात्म का है, धर्म और राजनीति के दिन लद चुके हैं। भारतीय परंपरा में धर्म का असली अर्थ तो बहुत ऊंचा है। लेकिन वर्तमान युग में मजहब के नाम पर व्यापार चलने लगा है और बहुत-से व्यक्ति 'मठाधीश' बन गये हैं। उनके विशाल आश्रम व मंदिर कई प्रकार की बुराइयों के केंद्र बनते जा रहे हैं। पारस्परिक द्वेष व ईर्ष्या के कारण इन धार्मिक केंद्रों का परिवेश कलुषित एवं तामसिक बन गया है। जो खुद को 'भगवान' कहलाने लगे हैं, उन्हें मैं प्रथम श्रेणी का नास्तिक मानता हूं, उनके प्रति मेरे मन में तनिक भी आदर नहीं है, और न किसी को होना चाहिये। यह तो अहंभाव की चरम सीमा है न?

इसी दृष्टि से गोस्वामी तुलसीदास ने केवल 'राम' का भरोसा रखा, सिर्फ दो अक्षरों के बल पर उन्होंने अपने जीवन में परम शांति का अनुभव किया:

और नहीं कछु काम के, मैं भरोसे अपने राम के।
दोऊ अक्षर सब कुल तारे, वारी जाऊं उस नाम पे।
तुलसिदास प्रभु राम दयाधन, और देव सब दाम के।

राष्ट्रपिता गांधी ने भी 'रामनाम' का सहारा लिया और अपने सार्वजनिक जीवन की अत्यंत कठिन घड़ियों में इसी नाम की शरण गये। अंत में उनकी पावन स्मृति 'हे राम' में ही समा गयी। इन दिनों विनोबा अपने मौन-काल में 'राम हरि' लिखकर ही अपने हस्ताक्षर करने लगे हैं। सूक्ष्म चिंतन के परिणामस्वरूप उन्होंने अपने व्यक्तित्व को शून्यवत् बनाकर 'राम' के हवाले कर दिया है।

× × ×

वाल्मीकि-रामायण के अंत में एक बड़ी दिलचस्प कथा है। अयोध्या लौटने पर राज्याभिषेक के बाद भगवान राम रोज सुबह नियमित रूप से अपने दरबार में विराजमान होते थे। उनकी आज्ञा थी कि उनके समीप आने से किसी को न रोका जाये। एक दिन सिर्फ एक कुत्ता भौंकता हुआ महल के सामने खड़ा था। दरबान ने भगवान की अनुमति पाकर उस कुत्ते को दरबार में जाने दिया। पूछने पर कुत्ते ने एक ब्राह्मण की शिकायत की, जिसने उसे रास्ते में बिना कारण ही लाठी से मारा था। उसके सिर में काफी चोट लगने से खून बह रहा था। मर्यादा-पुरुषोत्तम रामचंद्रजी के आदेश पर उस ब्राह्मण को दरबार में पेश किया गया। उसने हाथ जोड़कर कहा—'महाराज, मैं कई दिन से भूखा हूं। रास्ते में यह कुत्ता बैठा था। आवाज देने पर भी उठा नहीं। मुझे गुस्सा आ गया और मैंने इसके सिर पर लाठी मार दी। मुझसे गलती हुई। क्षमा कीजिये।'

भगवान ने फिर कुत्ते से पूछा कि ब्राह्मण को क्या सजा दी जाये। उत्तर मिला—'महाराज, इसे मठाधीश बना दीजिये।' रामचंद्रजी ने आश्चर्य से पूछा—'यह क्या सजा हुई?' कुत्ते ने बड़ी नम्रता से कहा—'भगवन्, मैं भी पिछले जन्म में एक मठाधीश था। बहुत-से पाप करने के कारण मैंने इस जन्म में कुत्ते की योनि पायी है।'

कितनी मार्मिक कथा है यह! काश, हमारे मंदिरों व आश्रमों के सभी धर्मगुरु इस प्रकरण को ध्यान से पढ़कर अपना जीवन सुधारने की कोशिश करें। यह हाल सिर्फ हिंदू मठाधीशों का नहीं है; दूसरे मजहबों के धर्माध्यक्षों की भी लगभग यही दशा है। धर्म के नाम पर आर्थिक शोषण की कहानियां सचमुच बड़ी दुखद हैं।

लेकिन प्रश्न तो यह है कि बहुत-से लोग इस तरह अपना शोषण क्यों होने देते हैं? शायद अमीर भक्तों की तो यही धारणा रहती है कि इन 'धर्मात्माओं' की कृपा से वे स्वर्ग में अपने लिए एक कक्ष रिजर्व करा लेंगे। उनका खयाल है कि धन द्वारा इहलोक व परलोक दोनों ही सुरक्षित बन सकते हैं। गरीब जनता भी भोलेपन के कारण इन 'दाम के देवों' की पूजा करती है, इस आशा से कि शायद उनका जीवन अधिक स्वस्थ, सुखी व समृद्ध बन सके।

हां, कुछ धार्मिक व्यक्तियों में बीमारियों आदि को दूर करने की क्षमता पायी जाती है। लेकिन यह शक्ति उनमें ऋद्धि-सिद्धि के रूप में आ जाती है। यदि कोई

राम-सीता [लक्ष्मण पै]

उसका दुरुपयोग करे और उसे धन व प्रतिष्ठा [illegible] का साधन बना ले तो वह आध्यात्मिक शक्ति तुरंत लुप्त भी हो जाती है। इस तरह के व्यवहार से अध्यात्म के विकास में बाधाएं आती हैं। हमारे पुराणों में योगियों के भ्रष्ट हो जाने की कथाएं हैं। मैं तो जब कभी किसी 'महापुरुष' को इस तरह के नाटक करते देखता हूं, तो मुझे क्रोध के बजाय दया आती है। 'भगवान' बनकर उन्हें माया भले ही मिल जाये, किंतु राम तो कदापि नहीं मिलेंगे।

यह आश्चर्य का विषय है कि भारत के कई 'भगवानों' ने अपना सिक्का अमरीका, यूरोप व एशिया के काफी देशों में जमा रखा है। विदेशों में उनके हजारों शिष्य बन गये हैं और सैकड़ों मंदिरों का निर्माण हो चुका है। धन तो मानो धर्मगुरुओं के ऊपर बरसता है। एक महर्षि ने तो अमरीकी हिप्पियों पर भी अपना गहरा प्रभाव स्थापित कर लिया था। 'योग' का शिक्षण देने के लिए न जाने कितने 'स्वामी' विदेशों में ही भ्रमण करते रहते हैं। साधारणतः यह माना जाता है कि पाश्चात्य देशों की जनता विज्ञान के इस युग में अंधश्रद्धा की शिकार नहीं बनती है। किंतु इस दिशा में जो अनुभव मिल रहा है, उससे प्रतीत होता है कि धर्म के नाम पर लुट जाना सिर्फ भारत की विशेषता नहीं है। यह मानव का स्वभाव बन गया है कि वह भौतिक व्याधियों को भूलने के हेतु 'मजहबी' लोगों का आश्रय लेने को लालायित रहे।

इसका यह मतलब न लगाया जाये कि सच्चे 'धर्म' की ओर मुड़ना कोई बुरी वस्तु है। दिन-रात दवाई व नशे की गोलियां खाने की अपेक्षा भजन-ध्यान-कीर्तन कहीं अच्छा है। डाक्टरों और साइकियेट्रिस्टों के पास दौड़ने के बजाय योग का अभ्यास अधिक हितकर है। प्रश्न इतना ही है कि क्या अध्यात्म को इस तरह बेचना और शोषण का साधन बनाना उचित है? धर्म को बाजारू चीज बना डालना अत्यंत अशोभनीय है। मजहब का यह व्यापार अब बंद हो जाना चाहिये। सच्चा धर्म आंतरिक साधना व चिंतन का विषय है, बाहरी दिखावे का नहीं। भारत में अब भी कुछ ऐसी विभूतियां हैं, जो सच्चे अर्थ में पूजनीय हैं और जिनकी अविरत साधना द्वारा मनुष्यमात्र का कल्याण हो रहा है। किंतु इनकी संख्या तेजी से घट रही है; क्योंकि भौतिकवाद का तूफान दिनों-दिन जोर पकड़ता जा रहा है।

× × ×

मेरे पिताश्री एक प्रमुख थियासोफिस्ट थे, जिन्होंने करीब सभी मजहबों का गहरा अध्ययन किया था। वे हमसे अक्सर कहा करते थे कि धर्मगुरु हमें केवल मार्ग दिखा सकते हैं, उस रास्ते पर चलना तो हमें ही पड़ेगा। मुमुक्षु-मार्ग पर चलने के लिए संयम, ध्यान व तपस्या की निरंतर आवश्यकता होती है। किसी जादू या 'शार्ट कट' से काम नहीं चल सकता। उपनिषदों में इसे 'छुरे की धार' की उपमा दी गयी है – **क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति।**

आजकल तो इस तरह की साधनाओं के लिए पेशेवर पंडितों को रख लिया जाता है, जो 'यजमानों' की मनोकामनाओं के हेतु विभिन्न प्रकार के 'जप' करते रहते हैं। गुरु के आदेशानुसार यदि किसी नाम का दस लाख बार जप करना है, तो पंडितजी ही अपने 'सेठ' की ओर से यह शुभकार्य संपन्न कर देंगे। सच ही यह तो धर्म का बड़ा मजाक है। हां, यदि किसी के पास जरूरत से ज्यादा धन है, तो उसे मदिरा या अन्य व्यसनों पर बहाने के बजाय भजन-कीर्तन के आयोजनों पर व्यय करना अधिक श्रेयस्कर है ही।

× × ×

गीता में भगवान कृष्ण ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि हम ही अपने मित्र हैं और हम ही अपने शत्रु हैं—आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः। जैन धर्म के तीर्थंकरों ने भी इस बात पर बहुत जोर दिया है कि बाहरी युद्ध व संघर्ष के बजाय हमें स्वयं पर ही विजय पानी चाहिये। यह साधना कठिन अवश्य है, किंतु उसी में जीवात्मा का सुख व कल्याण है:

अप्पा चैव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दंतो सुही होइ, अस्सि लोए परत्थ य।।

मेरे छोटे चाचाजी प्रो. बद्रीनारायणजी काफी अरसे से बीमार हैं। लेकिन फिर भी उनकी मानसिक शांति गजब की है। हाल में जब मैं उनसे मिलने गया और स्वास्थ्य के बारे में पूछताछ की, तो उन्होंने मुझे कबीर का एक दोहा सुनाया:

देह धरन को दंड सब काहू को होय।
ज्ञानी काटे ज्ञान से, मूरख भुगते रोय।।

यहां ज्ञानी का अर्थ है आत्मज्ञान का साधक, जो अपनी आत्मा को परमात्मा राम के अंश के रूप में परखता है। तुलसीदास के शब्दों में:

ईश्वर अंश जीव अविनाशी।
चेतन अमल सहज सुखराशी।।

जब हमें आत्मसाक्षात्कार की अनुभूति होने लगती है, तब हम दुनिया को 'सियाराममय' देखते हैं और परमानंद का अनुभव करते हैं। फिर हमारी आत्मा ही हमारी इष्टदेव बन जाती है और 'दाम के देवों' की आवश्यकता नहीं रहती। इस संबंध में मशहूर शायर इकबाल ने कमाल की गजल लिखी है:

अपने मन में डूबकर पा जा सुराग़ जिन्दगी।
तू अगर मेरा नहीं बनता न बन, अपना तो बन।।

★

आनंद का साम्राज्य कोई संत या पैगंबर तुम्हें इनायत नहीं करेगा।
वह तो तुम्हें स्वयं ही जीतना होगा। —साधु वासवानी

★

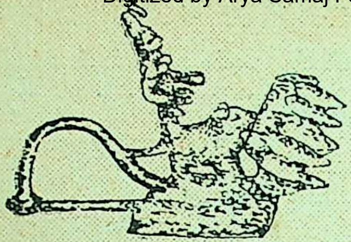

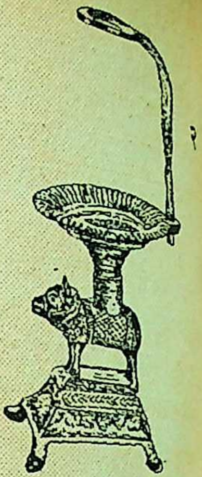

दीपलक्ष्मी

१. **लक्ष्मी से युक्त पंचआरती** धातु, द. भारत। २. **नंदीदीप,** धातु, उत्तरी मध्य भारत। ३. **लक्ष्मी,** धातु, बांकुरा, प. बंगाल। ४. **मृत्तिका दीप,** पटना। ५. **मृत्तिकादीप,** पटना। ६. **दीपलक्ष्मी,** मोम, बांकुरा, पश्चिम बंगाल। ७. **सांध्यप्रदीप,** धातु, बंगाल।

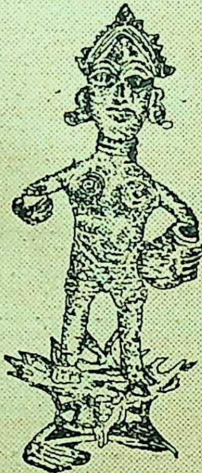

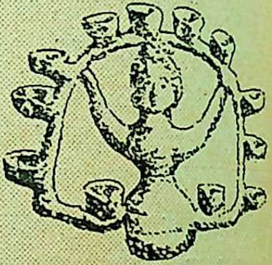

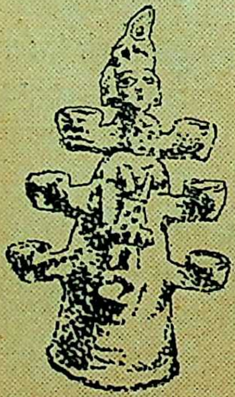

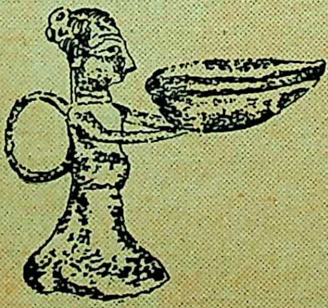

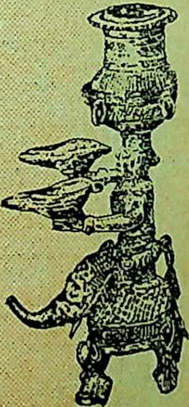

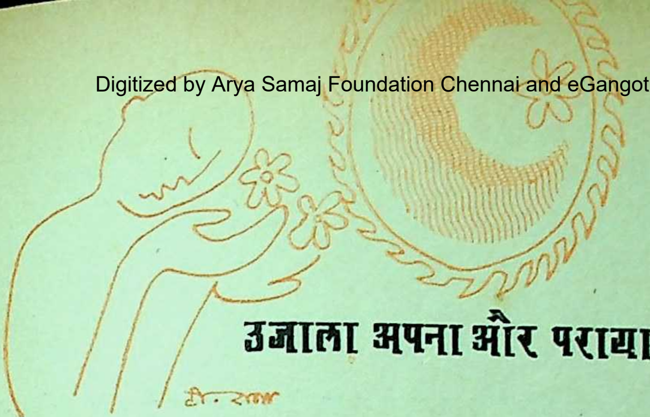

उजाला अपना और पराया

उधार उजाला
चौबीस घंटों में
चार बार मिला
और चार बार
भर गया भीतर
पहले से भी घना अंधेरा !

उधार के चार-चार
सूरजों से अच्छा है
हमारा माटी का दिया
जिसने हमसे
हमारी इज्जत नहीं
हमारा स्नेह-भर लिया
और जितना स्नेह
हमने उसमें ढाला
और उकसाया जितना
सतर्क रहकर
उसकी बाती को
उसने फेंका उतना प्रकाश
आस-पास !
और चलन कर लिया
अगर हमने
गांव-गलियों में
नेह भर-भरकर
जला-जलाकर दीपक
उन्हें धरने का
तो नाम नहीं लिया
सुबह तक
मरने का
हमारे इन ज्योतिवंतों ने !

और सुबह होने पर
निकल आया
हमारा ही सूरज
हमारे काले आसमान में
बनाते हुए उसे
अभी लाल
अभी पीला
और फिर
सफेद-झक !

—भवानीप्रसाद मिश्र—

१९, राजघाट कालनी, नयी दिल्ली—१

एक सुरभित जीवन

सत्यकाम विद्यालंकार

वर्षों से वशवर्तिनी मेरी लेखनी आज ये पंक्तियां लिखते हुए बार-बार ठहर जाती है और मेरी आंखों के आगे उभर आता है श्रीगोपालजी नेवटिया का स्नेह और सौजन्य से भरा चेहरा। मन को विश्वास दिलाना कठिन हो जाता है कि वे अब हमारे बीच नहीं हैं (वे मुझसे कुछ वर्ष छोटे थे), केवल उनकी कीर्ति और स्मृति शेष हैं।

श्रीगोपालजी ने नवनीत के प्रवर्तक, दर्जनों उद्योगों के संचालक, साहित्यप्रेमी एवं साहित्यकारों के आतिथेय, अनेक लोकोपकारी संस्थाओं के सक्रिय समर्थक और मार्गदर्शक के रूप में अड़सठ वर्षों का भरा-पूरा और सार्थक जीवन जिया। विविध क्षेत्रों में अपने संपर्क में आये सहस्रों व्यक्तियों पर वे अपने कार्य-कौशल की ही नहीं, अपनी सौजन्यशीलता की भी गहरी छाप छोड़ गये। मृत्यु पर आत्मा की विजय का यह भी तो एक रूप है।

उनका जन्म पुरानी जयपुर रियासत के फतहपुर कस्बे के एक वणिक् परिवार में १९०७ की २४ फरवरी को हुआ था। अभी वे चार-एक साल के ही थे कि उनके पिता का देहांत हो गया और वे अपने पितामह और चाचा की देखरेख में पले। तब उनके पितामह के ताऊ श्री रामदयालुजी अभी जीवित थे और नेवटिया-परिवार के अध्यक्ष भी वही थे।

कई दृष्टियों से असाधारण व्यक्ति थे रामदयालुजी। वे सफल व्यापारी थे, साथ ही विद्या में उनकी गहरी आसक्ति थी। अठारहवीं सदी के तीसरे चरण में वे व्यापार के सिलसिले में नौ वर्ष तक पूना में रहे थे। उस अरसे में उन्होंने संस्कृत का अध्ययन किया, मराठी-गुजराती के अलावा कामचलाऊ अंग्रेजी भी सीखी। व्यापार से निवृत्त होने के बाद उनका अधिक समय स्वाध्याय और सत्संग में बीतता था। हिंदी में वे भक्ति-रस के अच्छे छंद रचते थे। भारतेंदु हरिश्चंद्र तथा शिवप्रसादजी सितारे-हिंद से उनका मैत्री-संबंध एवं पत्रव्यवहार था। वे निष्ठावान हिंदू थे, परंतु परंपरा के अंधभक्त न थे; उस जमाने में उन्होंने 'हेड़ा-बाड़ा' जैसी सामाजिक कुरीति को मानने से इन्कार कर दिया था। बहुत लंबी उम्र पाकर वे मरे। इस कुलवृद्ध का अपने नन्हे प्रपौत्र के

अवचेतन मन पर गहरा प्रभाव पड़ा होगा।

श्रीगोपालजी के जीवन का गढ़न-तराशन वाले दूसरे व्यक्ति थे हिंदी के सुकवि पंडित रामनरेश त्रिपाठी। सन १९१० में कलकत्ता में संग्रहणी से ग्रस्त होकर वे स्वास्थ्य-सुधार के लिए फतहपुर आये और नेवटिया-परिवार के प्रेम में सदा के लिए बंध गये। चार वर्ष के श्रीगोपालजी एवं उनके भाइयों की शिक्षा-दीक्षा की जिम्मेवारी उन्होंने अपने हाथ में ली। 'लालनाश्रयिणो दोषास्ताडनाश्रयिणो गुणा:' उस समय शिक्षा-दर्शन का मूलसूत्र था। परंतु त्रिपाठीजी ने श्रीगोपालजी को अक्षर-विद्या और अनुशासन का ही पाठ नहीं पढ़ाया, अपितु उनमें ज्ञान के प्रति आकर्षण और साहित्यिक रुचि भी जगायी। किशोर श्रीगोपाल पद्य रचते एवं लेख लिखते। आगे चलकर पद्य-रचना तो छूट गयी; परंतु गद्य-लेखन का सिलसिला अंत तक चलता रहा और उन्होंने अपनी एक विशिष्ट शैली विकसित कर ली, जिससे नवनीत के पाठक सुपरिचित हैं।

ऐसा लगता है कि वे बहुत-से स्वप्न अपने साथ लेकर जनमे थे। सोलह वर्ष की वय में उन्होंने 'श्रीस्वदेश' नामक मासिक पत्रिका आरंभ की; संपादन-प्रकाशन फतहपुर से होता, छपाई होती इलाहाबाद में। छह-एक अंक ही निकल पाये थे कि जयपुर दरबार ने इस 'अवांछनीय' कार्य को बंद करवा दिया। किंतु पत्रिका निकालने की वही आकांक्षा तीस वर्ष बाद 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' के रूप में फलीभूत हुई। किशोरावस्था में ही वे फोटोग्राफी पर अनुरक्त हुए, जो आजीवन उनका प्रिय शौक रही। नयी चीजों के प्रति शुरू से ही उनमें कुछ ऐसी

फूलों के साहचर्य से दिन-भर के लिए मन में ताजगी भरते हुए श्रीगोपालजी

तरुणाई में आरंभ हुआ फोटोग्राफी का शौक जीवन-भर बना रहा।

ललक थी कि ड्राइबैटरी लाकर अपनी हवेली में बिजली की रोशनी की व्यवस्था कर डाली, जो कुछ ही दिन चली।

मैट्रिक उन्होंने बंबई के मारवाड़ी विद्यालय से पास की और कुछ महीने कालेज में भी पढ़े। मगर गोर्की की तरह उनका विश्वविद्यालय तो जीवन था। बंबई में उनके परिवार की एक छोटी अल्युमिनियम-फैक्टरी भी थी, उसीमें उन्होंने अपने चाचा श्री केशवदेवजी और बड़े भाई रामकुमारजी की देखरेख में व्यवसाय-धंधे का ककहरा सीखा। श्री त्रिपाठीजी ने देशप्रेम और सामाजिक चेतना के जो बीज उनके मन में बो दिये थे, वे पनपते रहे। इन्हीं दिनों जमनालालजी बजाज से उनका पारिवारिक संबंध जुड़ा और वे उस महान देशभक्त के प्रभाव में आये। इससे पूर्व सन १९२३ में ही श्रीमती सुभद्रादेवीजी से उनका विवाह हो चुका था।

लगभग चौवीस वर्ष की वय में १९३१ में श्रीगोपालजी देश के व्यावसायिक धुरंधरों में से अन्यतम श्री रामेश्वरदासजी बिरला के निकट संपर्क में आये। उनके सुपुत्र श्री गजानन बिरला के प्रिय मित्र के नाते वे उनके स्नेहभाजन तो पहले से ही थे; अब वे उनकी छत्रछाया में आ गये। आगे चलकर श्रीगोपालजी ने लिखा–'उस पितृतुल्य पुण्य-पुरुष की कृपा से मुझे बहुत आगे बढ़ने का अवसर मिला। उन्हीं की प्रेरणा से विविध उद्योग-प्रतिष्ठानों की सफल स्थापना और सुचारु संचालन मेरे हाथों हो पाया। यही नहीं, उन्हीं के कारण सार्वजनिक सेवा के विविध क्षेत्रों में भाग लेने का अवसर मुझे मिला।'

उन्हीं दिनों अंग्रेजी सरकार ने भारत के चीनी-उद्योग को संरक्षण प्रदान किया था। श्री रामेश्वरदासजी बिरला ने उत्तर प्रदेश (तत्कालीन संयुक्त प्रांत) के सीतापुर जिले के हरगांव में अवध शुगर मिल खोलने का निश्चय किया। (बिहार में वे एक चीनी मिल खोल चुके थे।) योजना की पूरी जिम्मेवारी उन्होंने युवक श्रीगोपालजी के कंधे पर डाल दी। काम सीखने और अपनी क्षमता सिद्ध करने का अपूर्व अवसर था। श्रीगोपालजी ने कारखाना-स्थल पर ही

झोपड़ी में रहते हुए रात-दिन काम करके दिखा दिया कि श्री बिरलाजी ने गलत आदमी नहीं चुना था।

स्वयं उनके ही शब्दों में—'उस गंवई-गांव में एक आलपिन से लेकर स्टीम-टरबाइन तक जुटाने, मजदूरों के निवास से लेकर मिल-बिल्डिंग बनवाने, सड़क पर कंकड़ कुटवाने से लेकर रेल की लाइन बिछवाने, नहर से पानी काटने से लेकर टचूबवेल खुदवाने, नौ रुपये महीने के मजदूर से लेकर हजार रुपये महीने के टेक्नीशियनों को नियुक्त करने तक के कामों में मैं इतना व्यस्त रहता कि उसकी याद आने पर उस समय के संतोष का सुख आज भी मन को आह्लादित कर देता है।' इसी अनुभव की पृष्ठभूमि पर बाद में उन्होंने एक लघु उपन्यास 'दीदी' (नवनीत में मार्च, अप्रैल एवं मई १९६८ में प्रकाशित) लिखा। वे सन १९३२ से १९३९ तक वहां रहे।

इसके बाद उन्होंने बिरला-प्रतिष्ठान की ओर से अनेक उद्योगों का संस्थापन और सूत्र-संचालन किया, जिनमें मुख्य हैं— बरार आइल इंडस्ट्रीज (अकोला), हिंद साइकल्स (बंबई), जेनिथ स्टील पाइप्स (खोपोली, महाराष्ट्र), यूनिकार्न टायर्स लिमिटेड (औरंगाबाद)। उन्होंने अपने भी कुछ कारखाने खोले। वर्षों तक वे बिरला ब्रदर्स प्राइवेट लिमिटेड के एक डाइरेक्टर रहे। साथ-साथ उनका साहित्यानुराग भी पनपता रहा। तीस वाले दशक में उन्होंने कश्मीर पर और यूरोप-यात्रा पर एक-एक पुस्तक लिखी, जो प्रशंसित हुईं। उनकी कुछ कहानियां भी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में छपीं।

किंतु उनका सबसे बड़ा सृजन तो नवनीत है, जिसकी स्थापना उन्होंने विश्वविख्यात

बंबई अस्पताल के शिलान्यास के अवसर पर सरदार पटेल, श्रीरामेश्वरदासजी बिरला (मध्य में) और श्रीगोपालजी।

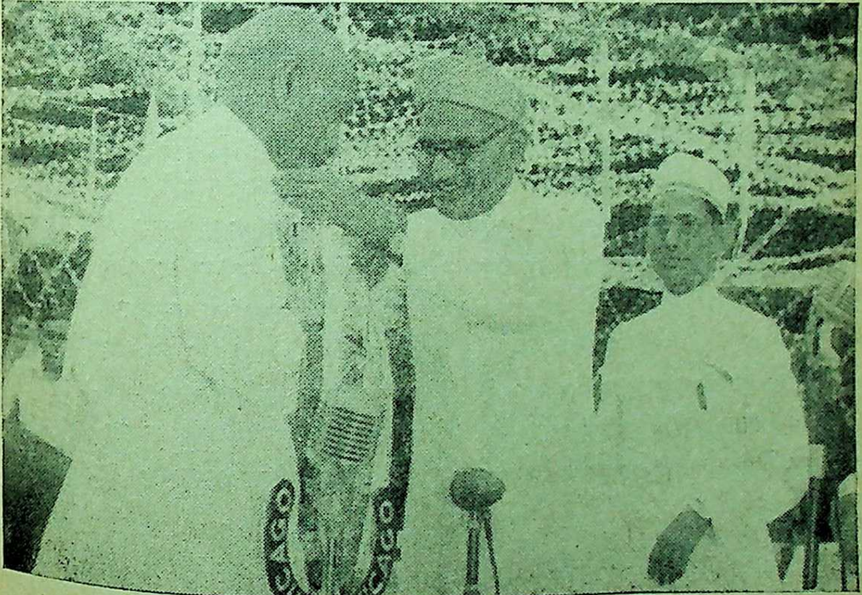

'रीडर्स डाइजेस्ट' से प्रेरणा लेकर १९५२ में की। किशोरावस्था की आकांक्षा अब प्रौढ़ रूप से फलित हुई। इस बीच वे कार्य-बहुल जीवन के गहरे अनुभव, विविध क्षेत्रों के व्यक्तियों के परिचय, स्वाध्याय और विदेश-यात्राओं से संचित ज्ञान से एक सुनिश्चित दृष्टिकोण विकसित कर चुके थे। नवनीत के माध्यम से हिंदी पाठक को दुनिया का सब नया-पुराना ज्ञान और चिंतन सरल और रसमय रूप में मिले, यह उनका लक्ष्य था। इसीलिए उन्होंने नवनीत का ध्येयवाक्य रखा—'नूतन-पुरातन ज्ञान-विज्ञान और मनोरंजन'।

आज से लगभग पचीस साल पूर्व नवनीत ने एक आवश्यकता या अभाव की पूर्ति की। छपाई और साजसज्जा का नया प्रतिमान स्थापित किया। जनता ने उसे हाथों-हाथ अपनाया। १९६० में उसका मराठी संस्करण आरंभ हुआ और १९६१ में गुजराती संस्करण।

आरंभ के वर्षों में श्रीगोपालजी स्वयं भी नाना नामों से नवनीत में स्वतंत्र लेखन और रूपांतर व भाषांतर करते रहे। आर्थिक विषयों और विशेषत: देश की आर्थिक प्रगति से संबंधित बातों पर वे बहुत सुलझे हुए लेख अंत तक लिखते रहे। किंतु उनके सर्वाधिक स्मरणीय लेख हैं देश-विदेश के यात्रा-वृत्तांत। किसी भी देश या प्रदेश का प्राकृतिक सौंदर्य, कला-समृद्धि, आर्थिक स्थिति, रीति-रिवाज, जन-स्वभाव सबको वे थोड़े ही समय में पैनी नजर से देख लेते थे और सरस व सचित्र शैली में उसका बयान करते थे। यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि पत्रिका के संचालक होते हुए भी अपने लेखों के साथ वे किसी प्रकार की रियायत की अपेक्षा नवनीत से नहीं करते थे। संपादकीय स्वतंत्रता का उन्होंने सदा समान किया।

नवनीत के स्थापन और संचालन की तरह ही जिस कार्य ने उन्हें आत्मिक परितोष दिया, वह था बंबई के निकट कल्याण में बिरला-बंधुओं के सेंचुरी रेयान कारखाने के अहाते में विठोबा-मंदिर की स्थापना। बिरला-प्रतिष्ठान की शताब्दी के उपलक्ष्य में निर्मित इस मंदिर की पूरी योजना उन्हीं के तत्त्वावधान में बनी और कार्यान्वित हुई। नागरशैली का यह भव्य मंदिर विख्यात स्थपति श्री प्रभाशंकर सोमपुरा की प्रतिभा का ही नहीं, श्रीगोपालजी की निष्ठा और कार्य-निपुणता का भी प्रमाण है।

व्यावसायिक व्यस्तता उनके सार्वजनिक सेवाकार्य में कभी आड़े नहीं आयी। बंबई में स्व. रामेश्वरदासजी बिरला की प्रेरणा से निर्मित बंबई अस्पताल की स्थापना के समय से ही श्रीगोपालजी उसके सेक्रेटरी रहे। अस्पताल का नवनिर्मित 'मेडिकल रिसर्च सेंटर' उन्हीं के मस्तिष्क की उपज थी। अस्पताल से जुड़े बिरला मातुश्री सभागार की योजना भी उन्हीं ने बनायी और कार्यगत करायी थी। श्री क. मा. मुनशी द्वारा स्थापित भारतीय विद्याभवन के वे बीस वर्ष तक मानद मंत्री रहे और उसके प्रकाशन-कार्यों में गहरी दिलचस्पी लेते रहे। बिरला

कल्याण-मंदिर के प्रांगण में श्रीगोपालजी और उनकी सहधर्मचरी सुभद्रादेवीजी।

चैरिटीज़ ट्रस्ट के मैनेजिंग ट्रस्टी के नाते बंबई के बिरला बालिका विद्यालय (वालकेश्वर) की स्थापना में उनका मुख्य हाथ था।

भिन्न-भिन्न क्षेत्रों और कार्यों में उनकी इस सफलता का आधार था उनका संतुलित व्यक्तित्व। वे आत्मविश्वासी, कर्मठ और मनुष्य व मौके को पहचानने में कुशल तो थे ही, साथ ही शिष्ट, संयत और सौजन्यशील भी थे। दूसरों की योग्यता की ही नहीं, दूसरों के स्वभाव की भी वे कद्र करते थे और मतभेद होने पर भी मिलकर काम कर सकते थे, करा सकते थे। उनकी दृष्टि सदा रचनात्मक रही। अपने अधीन काम करने वालों को वे वेतनभोगी कर्मचारी के बजाय अपने विशाल परिवार के सदस्य के रूप में देखते थे, जिससे वे उनका आदर और स्नेह सहज ही जीत लेते थे।

जब मैंने नवनीत के संपादन-कार्य से निवृत्त होने की इच्छा प्रकट की, उन्होंने मुझे लिखा था—'आपके जसा मित्र और सहयोगी भाग्य से ही प्राप्त होता है। जितना और जैसा साथ जीवन में बना रहे, वही

अच्छी से अच्छी चीज जो आप अपने शत्रु को दे सकते हैं, वह है क्षमा; विरोधी को सहिष्णुता; मित्र को अपना हृदय; अपने बच्चे को अच्छा उदाहरण; अपने पिता को इज्जत; मां को ऐसा आचरण कि वह आप पर अभिमान कर सके; और अपने आपको आत्मसंमान; और मनुष्य मात्र को उदारता।

—बालफोर

अहोभाग्य। नवनीत में आप सक्रिय कार्य न भी करें, तो भी नवनीत आपका है। हम दोनों भाई-भाई हैं और ईश्वर की कृपा से यह मधुर संबंध बना रहेगा।'

उनके चित्त में जल की-सी तरलता थी, जिससे वे अपने को परिस्थितियों के अनुकूल जल्दी ढाल लेते थे। इसीलिए वय बढ़ने के साथ वे जमाने से कभी पिछड़े नहीं। किंतु ऐसा भी नहीं था कि उनकी स्पष्ट मान्यताएं और सुनिश्चित आदर्श न रहे हों। परंतु उनका दृष्टिकोण रचनात्मक था। आवेश, अपव्यय, अपशब्द—इनसे उन्हें सख्त परहेज था। उनके सारे व्यक्तित्व का मूल स्वर था विवेक। वे कभी आत्मश्लाघी नहीं बने। उन्होंने एक बार लिखा था—'मैं मानता हूं, मैं उन लाखों जैसा एक हूं जो यथाशक्ति अपना कर्तव्य विवेकपूर्वक करते जाते हैं; वैसा करने में उनके द्वारा कुछ अच्छा काम बन पड़ता है, तो वह अनायास हो जाता है।'

एक और स्थान पर उन्होंने लिखा था—'एक चीज ने आजीवन मेरा साथ दिया—वह है हीनभावना और महत्त्वभावना का अभाव। मैंने अपने आपको न किसी से नीचा माना, न किसी से ऊंचा। ...... साथ ही मैंने कभी अपने से अधिक सुख-संपत्ति-संपन्नता वाले की ओर नहीं देखा अर्थात स्पृहा नहीं की, ईर्ष्या नहीं की। देखा तो अपने से नीचे वालों की ओर। ..... मैंने पाया, मुझसे अधिक सुखी-समृद्ध तो बहुत कम और दुःखी व अभावग्रस्त बहुत अधिक हैं। इस तुलनात्मक स्थिति में अपने स्थान की अनुभूति सदैव मेरे लिए सुखद रही, मुझे अग्रसर होने में सहायक होती रही।'

जीवन के अंतिम दो वर्षों में उनके शरीर में स्थायी थकावट रहने लगी थी। स्वास्थ्य जब-तब डगमगा जाता था। वे कहते थे कि अब पहले जैसा उत्साह नहीं रहा। चाल में भी वह चुस्ती नहीं रह गयी थी। किंतु कामकाज में कोई अंतर नहीं पड़ा था। हां, व्यवहार में कुछ और मधुरता आ गयी थी। लिखना कम हो गया था; मगर पढ़ना जारी रहा, और सार्वजनिक कार्य भी। मृत्यु से पूर्व जिस रात वे संज्ञाहीन हो गये, उस दिन गूंगे-बहरों का एक स्कूल देखने गये थे और उसकी आर्थिक सहायता के लिए एक मनोरंजन-कार्यक्रम की योजना बना रहे थे। इस तरह मनुष्य अंतिम क्षण तक सक्रिय और सार्थक रहे, और स्नेह और सौजन्य का सौरभ दूसरों के हृदयों में छोड़ जाये, यही तो सफल जीवन है। ऐसा जीवन स्वयं अपना स्मारक होता है। अपनी कृति के रूप में वे जो स्मारक छोड़ गये हैं, वे तो हैं ही।

—२/१७८, चंद्रेश्वर भवन,
सायन पश्चिम, बंबई-४०००२२

★

सुशीला कशालकर

स्वरसृष्टि के चिरयात्री कुमार गंधर्व

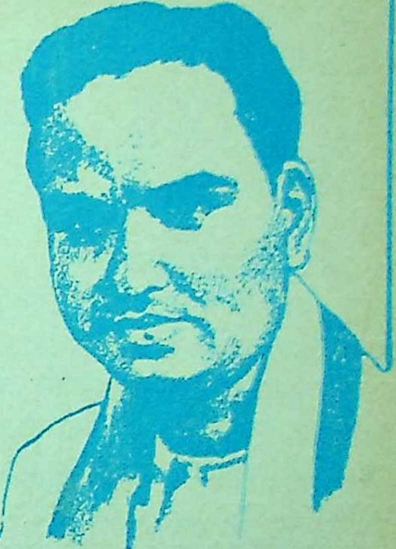

इलाहाबाद के पैलेस थिएटर का हाल। १२ जनवरी १९५४ की वह शाम। कड़ाके की ठंड। श्रोता-वर्ग की दृष्टि मंच पर पधारने वाले चिरपरिचित गायक श्री कुमार गंधर्व पर लगी थी।

इलाहाबाद पूरे आठ वर्ष के बाद उनका स्वागत कर रहा था। वनवास से लौटे राम के स्वागत जैसा भाव था कुछ-कुछ। कुमार १९४७ से १९५३ तक एक अत्यंत कष्टदायक रोग से ग्रस्त रहे थे। विवाह के तीसरे महीने ही बीमारी ने उन्हें दबोच लिया था। पूरे छह वर्ष घूमना-फिरना और गाना—जो उनका जीवन था—सब पर पूर्णविराम लग गया। मगर ऐसी परिस्थिति में भी कुमार का आत्मबल और साहस जरा भी डिगा नहीं। जब कभी लोग उनसे मिलने जाते, वे प्रसन्नचित्त दिखाई देते और लोगों से संगीत पर बातें करते। डाक्टर ने मुंह से सुर निकालने की सख्त मनाही कर रखी थी। मगर उनका कहना था—'ठीक है, गले को आराम चाहिये। पर दिमाग से तो गा ही सकता हूं।' सो बिस्तर पर लेटे-लेटे वे दिमाग से गाकर नित्यक्रम पूरा करते। कहते—'मुझे संगीत में क्रांति करनी है; नयी-नयी चीजों का शोध करना है; नये-नये मार्ग खोजने हैं। बिना वह किये मैं इहलोक से जा नहीं सकता।' इसे कहते हैं आत्मविश्वास।

यों कुमार इलाहाबाद के लिए नये नहीं थे। वर्षों पूर्व १९३५ में बचपन में यहां की संगीत-परिषद में अपने चमत्कारी गायन से

उन्होंने सबको चकित कर दिया था। तब वे कुल ग्यारह साल के थे; मगर सधे हुए उस्ताद की तरह गा रहे थे। उस काल के चोटी के संगीतज्ञों ने भी दांतों तले उंगली दबा ली थी–ऐसा प्रभावपूर्ण गायन, गहरा आत्मविश्वास और सौंदर्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्थलों की पहचान गोटी और गिल्ली-डंडा खेलने की उम्र में! उसके बाद तो कुमार अनेक बार इलाहाबाद में गा चुके थे।

मगर आज की सभा का वातावरण ही कुछ और था। आज कुमार ने गायन आरंभ किया तो पहला ही सुर ऐसा विलक्षण लगा कि कुछ क्षण तक तो श्रोता यही सोचते रहे कि क्या ये वही कुमार हैं, जिन्हें हमने इतनी बार सुना है! न-न...... यह तो कोई और ही गायक है–दिव्य गायक। पूरी गायन-शैली में आमूल परिवर्तन! पूरी महफिल प्रश्नाकुल बन गयी थी। किंतु धीरे-धीरे उसे उत्तर भी मिल गया।

अंत में, कबीर का भजन 'कौन ठगवा नगरिया लूटल हो' ने तो पूरी महफिल के मन को लूट लिया। लग रहा था, साक्षात् कबीर आह्वान कर रहे हैं। वाणी में निर्गुण कूट-कूटकर भरा था। अभी तक लोग सूर, मीरा और तुलसी तक ही सीमित थे। आज कुमार ने गाकर सिद्ध कर दिखाया कि ये सब तो दास ही हैं, मगर कबीर साहब हैं; उन्होंने जो बात कह दी वह चाहे कड़वी क्यों न हो पर परम सत्य है, हमें माननी ही पड़ेगी। ऐसा निश्चयात्मक सुर कुमार के ही बूते का था।

सामान्यतया 'नजर से परे सो दिल से परे' का फार्मूला कला के क्षेत्र में बहुत जल्दी लागू होता है। मगर कुमार गंधर्व से जैसे सब फार्मूलों ने माफी मांग ली है। पूरे छह वर्ष मंच से दूर रहकर पुन: मंच पर आने पर स्वयं उन्हें जो एहसास हुआ, उसकी चर्चा करते हुए कुमार ने कहा था–'मेरे दिमाग में संगीत के भविष्य के प्रति ढेरों कल्पनाएं थीं; उनके परिणाम, श्रोताओं पर उनकी प्रतिक्रिया, वाहवाही, आलोचना इत्यादि सब बातों का पूरा अंदाज मुझे था। और मुझे क्या करना है, यह भी मैंने तय कर रखा था। यानी संगीत के क्षेत्र में मेरा क्या योगदान होगा, इसकी योजनाएं पंचवर्षीय योजनाओं के उद्भव के पूर्व ही बन चुकी थीं।

'मगर चूंकि मैं कुछ काल तक प्लैटफार्म से दूर रहा था, इसलिए मैंने यह भी तय कर लिया था कि अब आगे मुझे डबल स्पीड से दौड़ना होगा; तभी मैं उस उच्चांक पर पहुंच सकूंगा, जहां मैं पहुंचना चाहता हूं। (बीमारी के पहले वे एक स्तर पर पहुंच चुके थे, जो स्वयं बहुत ऊंचा था।) मगर जब मैं पुन: मंच पर आया, तो मैंने देखा कि संगीत अभी वहीं है, जब कि मैं विचारों की दुनिया में बहुत आगे आ चुका हूं। मेरी अब यह अतिरिक्त ड्यूटी हो गयी कि मैं श्रोताओं को भी वहां तक लाऊं। इसीलिए जब कभी मैं किसी महफिल में अप्रचलित रागों को नये ढंग से गाता हूं, तो महफ़िल में बहुतों का यही कहना होता है कि भई, कुछ समझ में नहीं आया कुमारजी क्या गा गये, कुछ भी

पल्ले नहीं पड़ा ! मुझे बड़ा अच्छा लगता है। मैं तो चाहता ही हूं कि लोगों के मन में इस कला के प्रति नये-नये प्रश्न पैदा हों।'

एक बार यही बात एक विशिष्ट व्यक्ति ने उनसे कही थी। कुमार ने उत्तर दिया था–'मैं कोई मदारी हूं, जो सैकड़ों साल से चले आ रहे वही-वही तमाशे दिखाकर आपका मनोरंजन करता फिरूं !' फिर आवाज को नरम बनाते हुए कहा था–'भई, कलाकार की परिभाषा क्या है ? जिन नये-नये सौंदर्य-स्थलों का अनुभव मुझे होता है, उन्हें मैं आपके सामने रखता हूं, सुंदरता से रखता हूं, स्वरों की तूलिका से उनमें रंग भरता हूं, ताकि आप उनका आनंद लें। सौंदर्य की अनुभूति कराना ही तो कलाकार का काम है। बाजार में जिन चीजों की मांग अधिक है, उन्हें अपनी दुकान में रखने वाला बनिया तो नहीं हूं मैं !'

वे बताते हैं–'गायन ईश्वर की पूजा है, नाद ब्रह्म का स्वरूप है, ऐसी श्रद्धा मन में रखकर ही मैं गाने बैठता हूं। गाना और रियाज मेरे लिए भिन्न चीजें नहीं हैं। शब्द, स्वर और लय–ये ब्रह्मा-विष्णु-महेश के प्रतिरूप हैं, सत्यं-शिवं-सुंदरम् का साक्षात् दर्शन है। स्वरों के माध्यम से उस परब्रह्म की प्राप्ति, यही साधना है, मेरा जीवन है। कलाकार होने के नाते निरंतर नये-नये सौंदर्य-स्थलों को शोध कर श्रोताओं को उनका प्रत्यक्ष दर्शन कराना मेरा कर्तव्य है।'

इसीलिए उन्हें महफिल में किसी का भी फरमाइश करना पसंद नहीं।

कुमार गंधर्व का असली नाम शिवपुत्र सिद्दरामय्या कोमकालीमठ है। उनका जन्म ८ अप्रैल १९२४ को सुळेभावी (जिला बेळगांव, कर्नाटक) में हुआ। जब कि अभी पांच वर्ष के थे, प्रसिद्ध गायक सवाई गंधर्व का गाया हुआ बसंत राग हूबहू गाकर सबको विस्मित कर दिया। पिता स्वयं गायक थे; पुत्र की देवदत्त प्रतिभा को पहचानकर वे सचेत हो गये कि उसे योग्य मार्गदर्शन प्राप्त कराना होगा।

शिवपुत्र जब सात वर्ष के थे, उनकी विलक्षण प्रतिभा को आंककर उनके धर्मगुरु श्री गुरुकुलमठ स्वामीजी ने उन्हें 'कुमार गंधर्व' की उपाधि दी और तब से शिवपुत्र 'कुमार गंधर्व' बन गये। उनका कुल लिंगायत शैव संप्रदाय का अनुयायी और कन्नडभाषी है। किंतु कुमार इन सब सीमाओं को लांघ गये हैं। उनके निकट न जाति का भेद है और न वर्ग-वर्ण का बंधन; उनके लिए तो 'मानुस सब जाति समान'।

नौ वर्ष की उम्र में ही कुमार का कैरियर शुरू हो गया। संगीत-जगत् में उनकी चर्चा होने लगी। परंतु उनके पिता किसी योग्य गुरु की तलाश में थे। पुत्र को उन्होंने बंबई के प्रसिद्ध संगीतज्ञ प्रो. देवधर की सेवा में भेजा। देवधरजी से संगीत-विद्या सीखना और बचे समय में उनके शिक्षणालय (स्कूल ऑफ़ इंडियन म्यूज़िक) में दूसरों को संगीत सिखाना, यही कुमार का जीवन-क्रम रहा सन ४७ तक।

अगले वर्ष के आरंभ में बीमारी की हालत

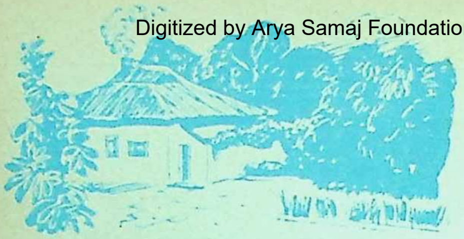

झील के किनारे एक छोटा-सा घर
छत में से निकल रहा धुआं .....
अगर यह धुआं न होता
तो कितने उदास होते
यह घर, पेड़ और झील !

—वर्टोल्ट ब्रेख्ट

में वे इंदौर के पास देवास में रहने आये और अब वे तो पूरी तरह मालवी बन गये हैं। मालवा की छोटी-छोटी अंदरूनी बातों की जैसी जानकारी उन्हें है, पुश्तैनी मालवियों को भी कम ही होगी।

कुमार ने बारहमासे के विभिन्न मौसमों में गाये जाने वाले लोकगीतों का स्वर-ताल-बद्ध सुंदर-सा संग्रह छपवाया है। 'मालवा की लोकधुनें' शीर्षक से भी उनका एक लोक-संगीत का कार्यक्रम है; वह भी पुस्तिका के रूप में छपा है। एक बार ये दोनों पुस्तिकाएं स्वयं उन्होंने मुझे दीं। जब मैं उन्हें देख रही थी, मेरे मुखभाव से वे जान गये कि मैं कुछ पूछना चाहती हूं। खुद बोले :

'शास्त्रीय संगीत की परंपरा का होते हुए भी मैं लोकसंगीत की ओर क्यों झुका, यही जिज्ञासा है न ? भई, लोक-संगीत ही तो शास्त्रीय संगीत की जननी है। मैं जब यहां पर [illegible], बीमार था। मुझे गाने की मनाही थी। पर सुनने की मनाही थोड़े ही थी ! सुबह-शाम टहलने जाता तो खेतों में, पास-पड़ोस में तरह-तरह की लोकधुनें कानों में पड़तीं। मैं चुपचाप सुनता रहता। मैंने उन्हीं स्वरों को, उसी ताल को वहां भी पाया, मगर एक अलग धरातल पर। इसीलिए मैंने जो भी रचनाएं कीं, उनमें शब्द भी लोक-भाषा के ही लिये। जिन शब्दों से हमारी संस्कृति का बोध हो, हम उन्हें क्यों न गायें? ठीक है न ? मैंने सबसे पहले "गीतवर्षा" शीर्षक से पूरे तीन घंटे का कार्यक्रम दिया, जिसमें पूरे चौमासे का वर्णन है। जरा देखो तो, प्रकृति कैसा-कैसा रंग रचाती है! फिर वसंतऋतु की रंगीली मस्ती। और फिर हेमंत। फिर मालवा की लोकधुनें!'

कुमार ने उन्हीं लोकधुनों पर आधारित कई नये राग भी निर्माण किये हैं। जैसे-मालवती, मधुसुरजा, लगन गंधार, संजारी, सहेली-तोड़ी आदि।

फिर सूर, मीरा और कबीर की त्रिवेणी-केवल भक्ति-गीतों का आनंद। त्रिवेणी का तो रेकार्ड भी है। जब-जब सुनती हूं, लगता है कि स्वरों के माध्यम से कबीर का निर्गुण, मीरा की भाव-विह्वलता और सूर का आत्म-समर्पण तीनों को शायद ही कोई इस तरह प्रत्यक्ष करा पाये ! तुलसी के पद तो गाये जाते थे, किंतु 'मानस' अब तक केवल पारायण की वस्तु थी। जब मानसचतुःशती के अवसर पर कुमार ने उन्हीं दोहे-चौपाइयों

[शेष पृष्ठ २४१ पर]

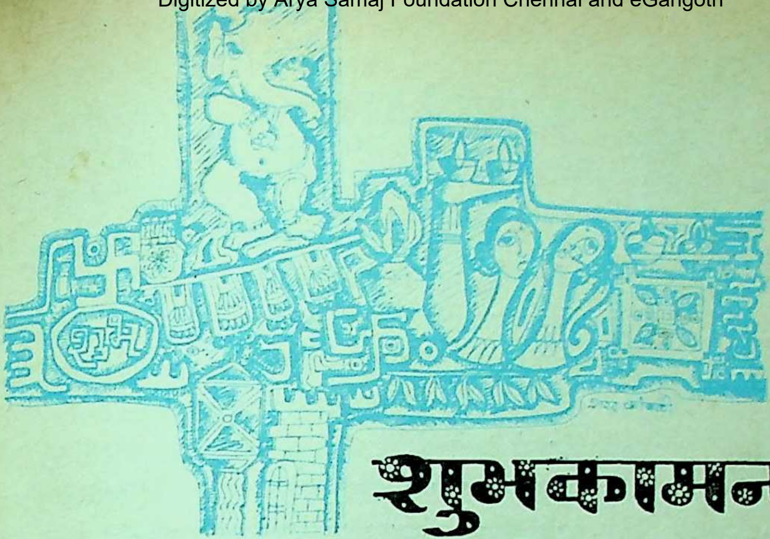

शुभकामना

दीपावली के मंगलमय अवसर पर हम
आपके और आपके परिवार के
सुख, सौमनस्य एवं उत्कर्ष की
शुभकामना करते हैं।
आपने पाठक, लेखक, शुभचिंतक एवं
विज्ञापनदाता के रूप में
नवनीत को जो स्नेह दिया है,
उसके लिए हम आपके आभारी हैं।
हमें आशा है कि आपका स्नेह
नवनीत को इसी तरह मिलता रहेगा,
जिससे हम आपकी सेवा
और भी उत्साह एवं दक्षता से कर सकें।

भवदीय,

नवनीत-परिवार

वह जादुई आईना

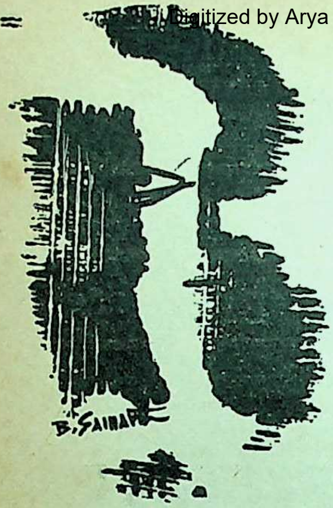

चित्र : भाऊ समर्थ

मेरी बायीं ओर की जेब में एक आईना है,
जो तुमने कभी मुझे दिया था :
और जिसे सामने पाते ही
बाहरी दुनिया का सारा बेसुरापन
सहसा संवादी हो उठता था :
जिसमें देखते ही,
बाहर से हृदय पर लगी सारी चोटों और खरोंचों को
कपूर की उंगलियां-सी छुहला जाती थीं :
जिसमें निगाह डालते ही
सारे जगत-प्रपंच और गुत्थियों में
उलझा दिमाग यों सुलझ जाता था,
जैसे किसी के ढेर-सारे केशों की
शीतल ऊष्मा अचानक माथे को ढांप ले,
और चेतना में सहसा ही
बोधिसत्त्व का समुद्र-वातायन खुल जाये .....!

जिसको सन्मुख पाते ही,
चाहता तो पीला गुलाब नारंगी हो जाता था,
और चाहता तो नारंगी काला अंगूर हो जाती थी......!
और चाहता, तो पल मात्र में काला अंगूर
अपनी दिलरुबा बन आगोश में भर आता था!
...... जिस आईने में झलकते ही
मेरी साधारण-सी कविता की पंक्ति भी
मांत्रिक सूर्यो से भर उठती थी।
...... जिसमें निगाह डालते ही
हर प्रतिकूलता की कंटीली डाल

मेरी चाह के अनहोने नरगिस फूलों से भर उठती थी :
जिसके भीतर, मेरा चेहरा,
आयु के सारे क्षतों को भरकर,
सदा आयुहीन और युवा लगता था :
जिसमें अपने पौरुष का प्रतिबिंब देखते ही
मौत अचानक असंभव लग उठती थी।

हाय, आज क्या हो गया है उस आईने को,
कि उसमें मेरा अस्तित्व अचानक
एक परित्यक्त प्रेत-सा नग्न हो उठा है।
निरे संभावनाहीन भविष्यहीन निःसार की वीरानियों में,
मैं अपने ही आपसे भयभीत और अपरिचित हो उठा हूं।
कहीं कोई नहीं है मेरा, इस अंतिम वीराने में :
स्वयं मैं भी अपना नहीं रह गया हूं।
आत्मन्, एक दिन बड़े प्यार से
मुझे दिया था तुमने यह आईना :
तुम्हीं बताओ न, आज यह कैसे अचानक
यों अंधा हो गया है?
क्या इसमें कोई अदृश्य दरार पड़ गयी है ?
क्या यह आईना भी
सिर्फ एक काल की तरंग ही था ?

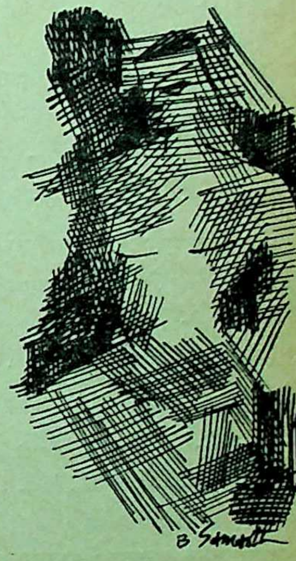

...... तुम कुछ बोलती क्यों नहीं ?
...... अरे तुम ऐसी बदली-बदली
और अपरिचित-सी क्यों हो उठी ?
......उत्तर में तुम केवल दूसरी ओर मुंह फेरकर,
अलक्ष्य शून्य ताकती-सी मुस्करा उठी हो ..... !

—वीरेंद्रकुमार जैन

गोविंद निवास, सरोजिनी रोड, विले पारले (पश्चिम), बंबई-५६

वल्लभभाई
विभिन्न व्यक्तित्वों के व्यक्ति

जन्म-शताब्दी पर श्रद्धांजलि

*** रामनाथ सुमन ***

चौड़ा माथा, दृढ़ जवड़े, वृषभ के-से स्कंध, लंबी एवं पुष्ट भुजाएं, कलेजे के आर-पार देखने वाली आंखें, कम बोलने वाली परंतु कटार की धार-सी काट करती जिह्वा, आतंक उत्पन्न करने वाला मुख-मंडल; गद्दी पर कोई हो परंतु जिनकी आज्ञा राजाज्ञा थी, जिनमें देश की नाड़ी धड़कती मालूम होती थी; लोमड़ी की चतुराई और शेर की दहाड़ तथा आक्रामकता से युक्त, ऊपर से शांत परंतु अंदर पिघले हुए फौलाद की उबाल छिपाये, देखने में रूखे परंतु अंतर में मार्दव और भक्ति का आत्मार्पण लिये; कठोर और स्निग्ध, स्निग्ध और कठोर; कलेजे में तड़प और ललक, अन्याय के प्रति प्रबल रोष और अनुगतों के प्रति गंभीर ममत्व से भरे—कुछ अजीब और विभिन्न व्यक्तित्वों के व्यक्ति थे वल्लभभाई।

एक मित्र उस दिन कहने लगे—'गांधीजी ने अपने जीवन में एक ही भूल की कि जवाहरलाजी को अपना उत्तराधिकारी बना गये; एक उभरते-बनते देश के लिए उनके वास्तविक उत्तराधिकारी तो वल्लभभाई ही हो सकते थे; उन्होंने (गांधीजी ने) व्यक्तिगत कारणों को राष्ट्रीय हित पर तरजीह दी।' मेरी समझ से इसमें सत्यांश है, परंतु सत्य नहीं है। सत्य यह है कि कोई एक व्यक्ति गांधीजी की विराटता का उत्तराधिकार पा नहीं सकता था। राजेंद्रबाबू, वल्लभभाई तथा जवाहरलाल का एक त्रिकोण यह काम कर सकता था; स्वभाव-भेद उसमें बाधक हुआ।

परंतु यह सच है कि आंग्ल उपनिवेशवाद के ध्वंसावशेष पर एक स्वतंत्र, अपनी ही संस्कृति, प्रज्ञा और राष्ट्रनीति लेकर उठने वाले भारत का निर्माण यदि पूर्णतः वल्लभभाई के हाथ में होता तो आज सुरसा की तरह क्षण-क्षण बढ़ने और रूप बदलने वाली हमारी बहुतेरी समस्याएं कभी हल हो गयी होतीं—अपने ढंग से, शायद अप्रिय ढंग से भी, पर हल जरूर हो जातीं।

वे गांधीजी के परम शिष्य थे, परंतु अंधानुगामी न थे; निरंतर प्रयत्न, सतत त्याग तथा दृढ़ निश्चय और अनुशासन से उन्होंने गांधीजी को पाया और समझा था। उनके रंग में ऐसे रंगे हुए थे कि क्या कहें। वही उनके स्वप्नों के भारत का निर्माण करने में सक्षम हो सकते थे। परंतु वह होना नहीं था; नहीं हुआ।

× × ×

नींव की एक झलक

वल्लभभाई के पिता झवेरभाई धर्मपरायण और देशभक्त थे। १८५७ ई. के प्रथम राष्ट्रीय विद्रोह में उन्होंने झांसी की रानी लक्ष्मीबाई का साथ दिया था और उसी सिलसिले में मल्हारराव होलकर के कैदी हो गये थे। उसी समय की एक घटना है। महाराज मल्हारराव एक चबूतरे पर बैठे शतरंज खेल रहे थे। वहीं बगल में कैदखाने के दरवाजे के सीखचों में से झवेरभाई देख रहे थे। राजा को गलत चाल चलते देख वहीं से तड़पकर बोले—'राजा, खोटी चाल मत चल। अमुक-अमुक मोहरे को अमुक-अमुक तरह से चला।' बात मल्हारराव की समझ में आ गयी और वही चाल चलकर वे खेल में विजयी हुए। ऐसे बुद्धिमान व्यक्ति को जेल में रखना उन्हें ठीक न लगा और उन्होंने कैदी को संमानपूर्वक छोड़ दिया। इन्हीं पिता के यहां, ननिहाल करमसद गांव में शायद ३१ अक्तूबर १८७५ ई. को वल्लभभाई का जन्म हुआ था। 'शायद' इसलिए कि निश्चित एवं निर्णीत जन्मतिथि का पता नहीं लगता। यह तिथि उनके मैट्रिक के प्रमाणपत्र से ली गयी है। उस जमाने में स्कूल में परीक्षार्थी अंदाज से जो जन्मतिथि भर देते थे, मान ली जाती थी।

देशभक्ति एवं दृढ़ता, साहस और खतरे के बीच चमक उठने वाली सैनिक प्रतिभा, किसानों के प्रति प्रेम और कर्तव्यनिष्ठा, धीरज और कष्ट-सहिष्णुता के गुण उन्हें पिता से विरासत में मिले थे, जबकि अग्रज

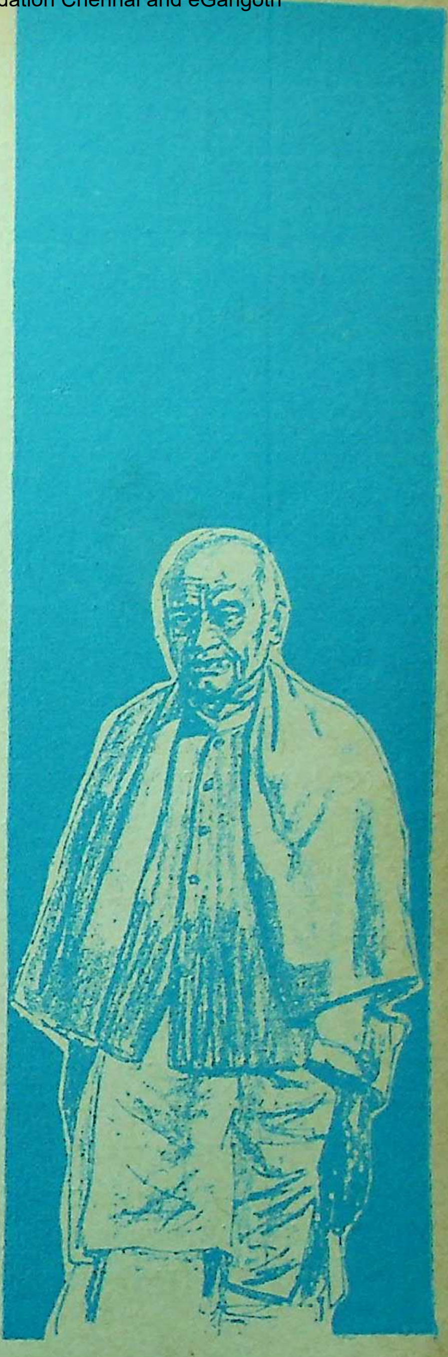

विट्ठलभाई पिता की कूटनीतिज्ञता के सच्चे वारिस थे। प्राथमिक शिक्षा गांव में ही हुई। साथ खेती-किसानी भी चलती रही। कुछ समय बाद नडियाद पढ़ने गये। बचपन से ही वे नटखट और शरारती थे। जोर-जबर्दस्ती के आगे कंधा डालना उनके स्वभाव में न था। स्कूल के एक मास्टर कापियां, कलम आदि बेचा करते थे और छात्रों पर दबाव डालते कि उन्हीं से ये चीजें खरीदें। वल्लभभाई उनसे उलझ गये। डटकर विरोध किया; लड़कों से हड़ताल करा दी। बड़ी उत्तेजना फैली। अंत में मास्टर को झुकना पड़ा।

नडियाद से बड़ौदा पढ़ने गये तो वहां भी कुछ ऐसा ही हुआ। एक शिक्षक थे छोटालाल मास्टर। थे तो गुजराती के शिक्षक, किंतु संस्कृत के प्रेम में कुछ ऐसे डूबे हुए कि सबसे संस्कृत लेने को कहते। वल्लभभाई को संस्कृत दुर्बोध लगी, इससे उन्होंने मैट्रिक में गुजराती ली। छोटालाल ने टोका–'क्या, तुम्हें नहीं मालूम कि बिना संस्कृत के गुजराती नहीं शोभती!' वल्लभभाई ने छूटते ही कहा–'मास्टरजी, अगर सब संस्कृत लें तो आप क्या करेंगे?'

मास्टर इनके पीछे पड़ गये। अक्सर घर से पहाड़े लिखकर लाने का दंड देते। गुजराती में पहाड़े को 'पाडे' कहते हैं, जिसका दूसरा अर्थ गाय-भैंस का बच्चा (पाड़ा) भी है। एक दिन मास्टर ने पूछा–'क्यों जी, पाडे करके लाये?' वल्लभ ने कहा–'हां मास्टरजी, लाया तो था। मगर फाटक तक आते-आते उनमें से दो-तीन भड़क गये और उनके भड़कते ही सब भाग गये।' मास्टर आग-बबूला हो गये। वह झगड़ा बढ़ता ही गया, यहां तक कि वल्लभभाई स्कूल से निकाल दिये गये। नडियाद जाकर मैट्रिक की परीक्षा दी और पास हुए। इस तरह हम देखते हैं कि संघर्ष की वृत्ति इनमें स्वाभाविक हो गयी थी।

इसके साथ ही उनमें शरीर-कष्ट सहने की गजब की शक्ति शुरू से थी। वकालत की पढ़ाई के समय एक मित्र के साथ दो महीने वाकरोल में रहे थे। वहां उनकी कांख में फोड़ा हो गया। नश्तर देने के लिए गांव का नाई बुलवाया गया। उसने सलाख आग में डालकर फोड़े से लगा दिया, परंतु अंदर का मवाद निकाल देने की हिम्मत उसे न हुई। वल्लभभाई ने उससे कहा–'इस तरह क्या देख रहे हो? तुमसे न हो सके तो लाओ, मैं करूं।' यह कहकर सलाख हाथ में ली और तुरंत अंदर घुसेड़ दी तथा अंदर चारों तरफ घुमाकर सारा मवाद निकाल दिया।

यह घटना एकाकी नहीं है। विलायत में बैरिस्टरी की पढ़ाई के समय एक मकान-मालकिन के यहां रहते थे। मई १९११ की बात है। एक दिन नहाते समय चक्कर खाकर गिर पड़े। बाद में खूब बुखार चढ़ा और उसी में पांव में नाहरू का दर्द हो गया। एक नर्सिंग होम में भरती हुए। वहां आपरेशन किया गया। परंतु सर्जन को इस बीमारी का पूरा ज्ञान न था; नाहरू पूर्णतः निकल नहीं पाया। उसने दूसरी बार आप-

रेशन किया। उसके [illegible] बीमारी बढ़ गयी; धनुर्वात हो गया। स्थिति गंभीर देख सर्जन ने प्राणरक्षा के लिए तुरंत पांव काट देने की सलाह दी। उन्होंने उसे छोड़ एक दूसरे सर्जन से सलाह ली। उसने फिर से आपरेशन करने की बात कही; परंतु यह भी कहा कि बेहोशी की दवा न सूंघो तो अच्छा होने की अधिक संभावना है। वल्लभभाई ने कहा–'मुझे तो क्लोरोफार्म लेने की जरूरत ही नहीं है। कितनी ही पीड़ा या दुःख हो तो भी मैं सहन कर सकता हूं।' पूरे आपरेशन में उन्होंने एक आह भी नहीं भरी। सर्जन और उसके सहायक चकित रह गये, बोले–'ऐसा रोगी पहली ही बार मिला है।'

परिश्रम की वृत्ति भी उनमें सदा से थी। कोई उन्हें प्रतिभाशाली छात्र नहीं कह सकता; किंतु जो जिम्मेवारी आ जाती, उसे लगन तथा एकाग्र निष्ठा के साथ पूरा करते थे। विलायत में बैरिस्टरी पास करने गये तो और किसी प्रवृत्ति में पड़े बिना उसी में तल्लीन हो गये। जहां रहते थे, वहां से मिडल टेम्पल का पुस्तकालय ग्यारह-बारह मील दूर पड़ता था। पैदल चलकर रोज सुबह ९ बजे वहां पहुंचते और शाम के ६ बजे पुस्तकालय बंद होने पर लौटते। इस प्रकार प्रतिदिन बाईस-तेईस मील चलते थे। दिन-भर एकाग्र चित्त से पढ़ते थे। इसका फल भी अद्‌भुत हुआ। छह ही टर्म पूरे कर संपूर्ण परीक्षा दी और उसमें प्रथम श्रेणी में आनर्स के साथ प्रथम आये। पचास पौंड का नकद इनाम मिला।

नडियाद में विद्यार्थी

स्वयं कष्ट उठाने के अलावा आपदाओं को सहन करने की भी अद्‌भुत क्षमता उनमें थी। एक बार पत्नी गंभीर रूप से बीमार पड़ी। चिकित्सा के लिए उसे बंबई ले गये। डाक्टरों ने कामा अस्पताल में भरती कर लिया और कुछ दिन बाद आपरेशन करने की बात कही। वल्लभभाई यह कहकर कि आपरेशन करने का निश्चय हो जाये तो मुझे बुलवा लेना, हत्या के एक महत्त्वपूर्ण मुकद्दमे में उपस्थित रहने के लिए आणंद चले आये। मगर डाक्टर का विचार बदल गया, उसे एकदम आपरेशन करने की आवश्यकता महसूस हुई। इसलिए उसने वल्लभभाई को खबर दिये बिना आपरेशन कर दिया।

एक दिन जब वल्लभभाई अदालत में मुकद्दमे की पैरवी कर रहे थे, तब पत्नी झवेरबा के देहांत का निर्दय समाचार तार से मिला। वल्लभभाई के लिए बड़े धर्म-संकट का समय था। जरा भी विचलित होते

हैं तो केस बिगड जाने का भय था और कत्ल का मामला होने से अभियुक्त की प्राणरक्षा का प्रश्न था। उन्होंने मन पर पूर्ण नियंत्रण रखा; उसी तरह जिरह और बहस की। शाम को अदालत का काम पूरा होने पर पत्नी की मृत्यु का तार दिखाया। अंतिम समय पत्नी से भेंट न हो सकने की गहरी व्यथा उन्हें थी; पर कर्तव्य के लिए सब कुछ सहन किया। सब लोग उनके चित्त-नियंत्रण को देखकर दंग रह गये।

विट्ठलभाई और वल्लभभाई के बीच समझौता हुआ था कि विट्ठलभाई सार्वजनिक सेवा का काम करेंगे और वल्लभभाई कुटुंब के भरण-पोषण की जिम्मेवारी वहन करेंगे। बहुत दिनों तक यह क्रम चला भी। अहमदाबाद में वल्लभभाई की वकालत खूब चलती थी; फौजदारी के मामलों में तो उनकी धाक थी। आराम से जिंदगी गुजरती थी। विट्ठलभाई का और अपना सब खर्च वही चलाते थे। गुजरात क्लब के सदस्य थे। ब्रिज खेलने में एक ही थे। श्री ब्रोकर नामक वकील को ब्रिज खेलने में अपनी चतुराई का बड़ा अभिमान था। एक दिन उसकी ललकार पर वल्लभभाई तैश में आ गये और बोले—'पाइंट पर आने-दो आने की शर्त लगाकर हम नहीं खेलते। खेलना हो तो पांच पौंड प्रति सौ पाइंट की शर्त लगाओ।' वह तो चाहता ही था, झट तैयार हो गया। दो दिन तक खेल हुआ। पहले दिन ब्रोकर पंद्रह-बीस पौंड हार गया और दूसरे दिन तो पचीस-तीस पौंड के मत्थे गया। उस दिन से उसका घमंड चूर हो गया। इस तरह वल्लभभाई जिस भी क्षेत्र में गये, अपनी मूंछें सबके ऊपर रखीं।

१९१८ तक वकालत के क्षेत्र में वे छा गये थे। परंतु खेडा सत्याग्रह में गांधीजी के आह्वान पर जो शामिल हुए तो जीवन की सारी व्यवस्था ही बदल गयी। उस दिन से जो गांधीजी को गुरु बनाया तो उन्हीं के रंग में रंग गये। उनके जीवन की नींव में अन्याय के प्रति प्रबल रोष, तेजस्विता, कष्ट-सहिष्णुता, त्याग, अनुगतों के प्रति ममत्व, लक्ष्य-सिद्धि के लिए सब कुछ समर्पित करने तथा किसान की व्यथा को अनुभव करने की जो वृत्तियां थीं, वे गुजरात के तथा बाद में भारत के सार्वजनिक जीवन में पल्लवित हुईं।

विकास के चरण

सन १९१८ के खेडा सत्याग्रह की सफलता के बाद वे दिनों-दिन सार्वजनिक सेवा में गहरे उतरते गये। १९१९ ई. में रौलट कानून-संबंधी सत्याग्रह के बाजे बजने लगे। जगह-जगह दंगे-फसाद भी हुए। तब वे उनमें फंसे अभियुक्तों के बचाव और राहत के काम में लग गये। अहमदाबाद म्युनिस्पल बोर्ड में भी सदलबल प्रवेश किया। पुरानी गुजरात-सभा में नवजीवन का संचार किया। उसके तत्त्वावधान में गोधरा में १९१७ में गुजरात राजनैतिक परिषद हुई। इसके सभापति थे गांधीजी और इसमें लोकमान्य तिलक एवं जिन्ना जैसे लोग शामिल हुए और उन्होंने अंग्रेजी का बहिष्कार कर अपनी-अपनी मातृभाषाओं में

भाषण किये। परिषद की कार्य-समिति चुनी गयी। वल्लभभाई मंत्री हुए।

सन १९२० में नागपुर अधिवेशन के बाद जब कांग्रेस का ध्येय स्पष्ट हो गया, सदस्यों की भरती के आधार पर प्रांतीय समितियों का निर्माण हुआ। गुजरात-सभा का स्थान गुजरात प्रांतीय समिति ने ले लिया। वल्लभभाई उसके अध्यक्ष हुए। समिति की हलचल केवल राजनीति तक सीमित नहीं थी, वह समग्र सार्वजनिक जीवन का पथप्रदर्शन करती थी, दैवी और प्राकृतिक विपत्तियों में भी उत्साहपूर्वक काम करती थी।

×××

खेडा-सत्याग्रह के व्यापक संघटन के कारण सारा गुजरात जाग गया। जनता ने बड़े त्याग और अनुशासन का परिचय दिया। अपने ढंग की यह निराली लड़ाई थी। जब्ती, जुर्माने और जेल के भय को जीतकर लोगों ने सफलता प्राप्त की। सारे संघटन के पीछे वल्लभभाई थे। गांधीजी ने स्वयं स्वीकार किया–'वल्लभभाई मुझे न मिले होते तो जो काम हुआ है, वह हर्गिज न होता।'

खेडा-सत्याग्रह को बहुत दिन न बीते थे कि देश में रौलट कानूनों के विरुद्ध व्यापक आंदोलन छिड़ गया। युद्ध के बाद कहां तो प्रांतीय स्वराज्य तथा सुधारों के जारी करने की बात चल रही थी, कहां जीहजूर सदस्यों के बहुमत से धारासभाओं में दमन का काला कानून पास हो गया। गांधीजी उस समय गंभीर बीमारी से उठे ही थे; बड़े अशक्त थे। पर उन्होंने वल्लभभाई से कहा कि कुछ आदमी भी तैयार हो जाय तो हमें सत्याग्रह करना चाहिये। परिणामस्वरूप बीस-एक व्यक्तियों की एक छोटी सभा साबरमती आश्रम में की गयी। उसमें वल्लभभाई के अलावा सरोजिनी नायडू, बी. जी. हार्निमन, उमर सोबानी, शंकरलाल बैंकर तथा इंदुलाल याज्ञिक मुख्य थे। एक प्रतिज्ञापत्र पर सबने हस्ताक्षर किये और सत्याग्रह-सभा की स्थापना हुई। वह कानून पास न करने के लिए गांधीजी ने वाइसराय से विनय की, खानगी पत्र लिखे, खुली चिट्ठियां लिखीं और साफ-साफ बता दिया कि सत्याग्रह के सिवा उनके पास कोई और रास्ता नहीं है। परंतु सब व्यर्थ हुआ और कानून पास हो गया।

गांधीजी की सलाह से ३० मार्च १९१९ का दिन उपवास और हड़ताल के लिए रखा गया था। परंतु बाद में वह सुविधा की

गोधरा में नये वकील

दृष्टि से ६ अप्रैल कर दिया गया। खबर ठीक समय पर न पहुंचने के कारण दिल्ली इत्यादि में ३० मार्च को ही हड़ताल हो गयी। ऐसी हड़ताल पहले कभी न हुई थी। जुलूस निकला तो पुलिस ने उस पर गोली चला दी। लाहौर और अमृतसर में भी बड़ी उत्तेजना फैली। ७ तारीख को दिल्ली होकर अमृतसर जाने के लिए गांधीजी बंबई से रवाना हुए। दिल्ली पहुंचने के पहले ही ८ ता. को पलवल स्टेशन पर गाड़ी रोककर उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उधर ६ तारीख को अहमदाबाद में वल्लभभाई के नेतृत्व में विराट जुलूस निकला, सभा हुई और कानून-भंग का कार्यक्रम शुरू हुआ। जब्त पुस्तकें खुले-आम बेची गयीं।

गांधीजी की गिरफ्तारी की खबर बिजली की तरह चारों ओर फैल गयी और लाहौर, अमृतसर, अहमदाबाद तथा वीरमगाम में जबर्दस्त दंगे हो गये। अहमदाबाद में फौज के गोलाबारी करने से और उत्तेजना फैली। लोगों ने पुलिस-थाने जला दिये; तारघर, कलेक्टर का दफ्तर इत्यादि नष्ट कर दिये; एक गोरे सार्जेंट को मार दिया। तीसरे दिन बंबई से फौज आयी, मार्शल ला घोषित कर दिया गया। उसमें बहुत लोग घायल हुए तथा मारे गये। वल्लभभाई बराबर शांति स्थापित करने का प्रयत्न करते रहे, जिसकी प्रशंसा बड़े-बड़े अधिकारियों ने की। बंबई में भी दंगा हो गया; घुड़सवार पुलिस ने बहुतों को रौंद डाला। लाहौर और अमृतसर में तो बेहद जुल्म ढाया गया। १३ अप्रैल को जलियांवाला बाग में जनरल डायर ने सैकड़ों निहत्थे नर-नारियों को गोलियों से भुनवा डाला। फौजी कानून के दिनों में पंजाब में भयंकर कृत्य किये गये। जब कांग्रेस-जांच-समिति ने इन कृत्यों को उद्घाटित किया, तो समस्त देश संताप से उबल पड़ा।

चित्र : लक्ष्मण

सन १९२० में कलकत्ता और बाद में नागपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमें अहिंसात्मक असहयोग आंदोलन चलाने का अधिकार गांधीजी को दिया गया। उन्होंने त्रिविध बहिष्कार का आंदोलन चलाया। स्कूल-कालेज खाली हो गये; अदालतें सूनी पड़ गयीं। हजारों आदमी हंसते-हंसते जेल गये; कितनों ने कोड़े खाये; जब्तियां और कुर्कियां सहीं। उस समय वल्लभभाई के सीधे-सादे भाषण जन-समूहों में प्राण फूंक

देते थे। उनके तथा अन्य नेताओं के प्रयत्न से तिलक स्वराज्य कोष में एक करोड़ से ज्यादा रुपये एकत्र हुए। गुजरात विद्यापीठ के लिए वल्लभभाई ने दस लाख रुपये अलग एकत्र किये। फिर गुजरात का—विशेषत: बारडोली तालुके का—ऐसा अभूतपूर्व और अनुशासित संघटन किया कि जो देखता आश्चर्य करता था।

अगले वर्ष १९२१ ई. में अहमदाबाद में कांग्रेस का जो अधिवेशन हुआ, उसका सारा बोझ वल्लभभाई पर ही था। वही स्वागताध्यक्ष थे। इस अधिवेशन से कांग्रेस एक सर्वथा नवीन रूप में प्रकट हुई। चारों ओर के घोर दमन को लक्ष्य करके गांधीजी ने कहा था—'जो सत्ता अपनी रक्षा करने के लिए वाणी और संस्थाएं बनाने का स्वातंत्र्य कुचल डालना चाहती है, उसे मैं आपकी तरफ से नम्र किंतु अटल चुनौती देता हूं। अगर ऐसी कोई हुकूमत बनी रहना चाहती हो, तो उसे मैं आपकी तरफ से कह देता हूं कि या तो वह नेस्तनाबूद हो जायेगी, या इस महान कार्य को करते हुए जब तक हिंदुस्तान का हर-एक स्त्री-पुरुष इस पृथ्वीतल से नष्ट नहीं हो जायेगा, तब तक चैन से नहीं बैठेगा।'

सन १९२१ का वर्ष लड़ाई की चुनौती का वर्ष था। विलायती कपड़ों, शिक्षण-संस्थाओं तथा अदालतों के बहिष्कार द्वारा राष्ट्र आगामी सत्याग्रह-युद्ध के लिए तैयार हो रहा था। प्रांतीय समितियों की तैयारी देखकर किसी तहसील या तालुके में सामूहिक सत्याग्रह शुरू करने का अधिकार दिया गया था। गुजरात में बारडोली तथा आणंद दो तालुके इसके लिए तैयार थे। अंत में बारडोली का चुनाव हुआ। सत्याग्रह की सारी तैयारियां हो चुकी थीं; परंतु उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में चौरीचौरा हत्याकांड हो गया। उत्तेजित भीड़ ने सिपाहियों-सहित थाने को फूंक दिया। इस पर गांधीजी ने पांच दिन का उपवास किया और सत्याग्रह का कार्यक्रम भी स्थगित कर दिया।

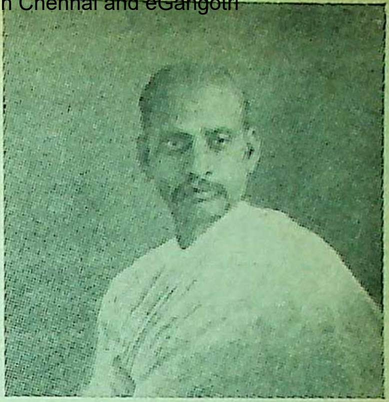

नागपुर के झंडा सत्याग्रह के समय

मार्च १९२२ ई. को गांधीजी गिरफ्तार कर लिये गये और उन पर 'यंग इंडिया' के राजद्रोहात्मक लेखों के लिए मुकद्दमा चलाया गया और उन्हें छह साल की सजा दी गयी। गांधीजी के कारावास के बाद गुजरात और देश के सार्वजनिक कार्य की सीधी जिम्मेवारी वल्लभभाई पर आ गयी। उनकी वाणी का ओज फूटा—'इस बार हमने सिंह को अच्छी तरह छेड़ा है। उसकी आंखें गुस्से से विकराल हैं। कुछ दिनों से वह अपने अयाल फड़-

प्रश्नोत्तरी

'गुलाम मैंने तुम्हें खरीद लिया है।'
'हां, ईश्वर जानता है।'
'अब तुम मेरे हो।'
'ईश्वर जानता है।'
'पर अब तुम कहीं
भाग तो नहीं जाओगे?
'ईश्वर जानता है।'

—कार्ल सैंडबर्ग

फड़ा रहा है। परंतु हिंदुस्तान के ऋषि-मुनियों ने अपने तपोबल से सैकड़ों विकराल सिंहों को भेड़ बना दिया है। इसी तरह यह सिंह भी जल्दी या देर से, इस महापुरुष के तपोबल के सामने बकरी बनकर रहेगा।'

गांधीजी के जेल चले जाने के बाद देश में एक ऐसा दल उत्पन्न हो गया, जो धारासभाओं में जाकर वहां सरकार से टक्कर लेने का समर्थक था। गया कांग्रेस में देशबंधु चित्तरंजन दास ने भी अपने ढंग पर इसकी वकालत की। तब वल्लभभाई ने व्यथित होकर कहा था—'मैं कोई नेता नहीं। मैं तो एक सिपाही हूं। किसान का बेटा हूं और मैं यह मानता नहीं कि जबान के जोर से स्वराज्य मिल सकता है।' उस समय तो धारासभा-प्रवेश के पक्ष में प्रस्ताव पास नहीं हो सका, परंतु दिन-दिन उसके पक्षधरों का जोर बढ़ता गया और अंत में कांग्रेस में एक शक्तिशाली स्वराजदल बन गया, जो निर्वाचन में भाग लेने तथा कौंसिलों में जाने को उत्सुक था।

इधर यह सब हो रहा था, उधर १९२३ में नागपुर में झंडे के प्रश्न को लेकर सत्याग्रह छिड़ गया। जमनालाल बजाज की गिरफ्तारी के बाद इसके संचालन का सारा बोझ वल्लभभाई पर आ पड़ा। इस सत्याग्रह में हजारों आदमी जेल गये, २२ वर्ष का एक बिहारी युवक तो जेल में ही चल बसा। सारे देश से सत्याग्रहियों की टोलियां आयीं। अंत में सरकार को झुकना पड़ा। यह लड़ाई खत्म होते न होते बोरसद की लड़ाई आ गयी। उसमें भी सरदार की अपूर्व विजय हुई।

परंतु जिस कार्य ने वल्लभभाई की धाक समस्त भारत में जमा दी, वह तो बारडोली सत्याग्रह था। १९२८ के इस सत्याग्रह का उन्होंने ऐसा अपूर्व संघटन किया कि सरकारी अधिकारियों तक को विवश होकर सत्याग्रह-छावनियों में जाकर सहायता मांगनी पड़ती थी। 'टाइम्स आफ इंडिया' के संवाददाता को लिखना पड़ा—'बारडोली से अंग्रेजी राज उठ चुका है।' हर तरह का दमन हुआ; जमीनें जब्त की गयीं; मवेशी हंका लिये गये; बच्चों के मुंह में दूध नहीं गया। पर कोई उस गीत की भावना से जरा भी नहीं हटा, जो सत्याग्रह शुरू करते समय प्रार्थना-सभा में गाया गया था:

शूर संग्राम को देख भागे नहीं,
देख भागे सोई शूर नाहीं। [क्रमशः]

★

नवतेज सिंह

पंजाबी से अनुवाद
हरपाल कौर

पुनःशरणार्थी

आज मेरे जीवन में एक ऐसी रिक्तता आ गयी है कि उसका दुःख मैं आपसे ही बयान कर सकता हूं। अपने इर्द-गिर्द तो मैं इस समय किसी के साथ इसका मामूली-सा जिक्र भी नहीं कर सकूंगा।

आप भी कहेंगे, इतने वर्षों के बाद पत्र लिख रहा है और वह भी ऐसा! पत्र मैंने आपको उस समय न लिखा, जब इन गर्मियों में मैं शिमला गया था—पहली बार पहाड़ देखा था। और अब इस बाढ़ग्रस्त गांव से—अपनी जन्मभूमि से नहीं, बल्कि स्वतंत्रता के बाद अपने चाचाजी की शरणभूमि से—मैं यह पत्र लिख रहा हूं। कलम-दवात भी पास नहीं, एक पेंसिल का टुकड़ा ही मिला है; और एक अजीब भावावेग से विवश होकर मैंने यह पत्र शुरू किया है।

नेहरू [के. के. हेब्बार]

मेरे इर्द-गिर्द सभी के मकान गिरे हुए हैं। फसलें बरबाद हो गयी हैं। घर के जीव और ढोर-डंगर बीमार पड़े हुए हैं और इन सबके दुःखों से मैं विचलित हूं, और अपने विशिष्ट दुःख का मामूली-सा जिक्र भी यहां नहीं कर सकता।

मेरी कोई फसल नहीं। मैं तो भूमिहीन अछूत मां-बाप के घर जनमा था। मेरे कोई ढोर-डंगर भी नहीं। जब मैं बहुत छोटा था, उसी समय मेरे मां-बाप दोनों मर गये थे, और मैं अपने चाचा के घर पला था। लगातार छह-छह महीने हमारे घर गुड़ का एक ढेला भी नहीं आता था। जब लोगों के घर गेहूं के दाने आते थे, उस समय कुछ महीनों के बाद ही हमारे घर दीमक लगे दाने उबालकर खाये जाते थे।

मैं काफी गंदा बच्चा था। सिर में बसी असंख्य जुएं गले में पड़े चिथड़ों पर कुलबुलाती रहती थीं। फिर अछूतों के घर में जनमा-पला होने के कारण वैसे भी लोगों की घृणा का पात्र था। किंतु मूर्खता की हद देखिये, मैं उस समय भी बहुत बड़ा आदमी बनने के सपने देखा करता था और सोचता

था कि किसी दिन इतना बड़ा वक्ता बनूंगा कि नेहरूजी भी मुझे बोलते हुए सुनकर हैरान हो जायेंगे। नेहरूजी उस समय भी मेरे लिए सबसे बड़े व्यक्ति थे, और जार्ज पंचम सबसे अधिक घृणास्पद।

हमारे गांव में पन्नेशाह की कपड़े की दुकान थी। पन्नेशाह का लड़का मानिक मेरा सहपाठी था। मैं पढ़ाई में बहुत अच्छा था और मानिक सुस्त व कमजोर था। प्राय: मैं उसके सवाल हल करवा देता, स्कूल से मिला काम करवा देता; और वह अपनी दुकान पर आये कपड़े के थानों से उतारी तस्वीरें कभी-कभार मुझे दे देता था।

एक बार मुझे उसने बड़े ही खूबसूरत कागजों पर छपी तीन रंगदार तस्वीरें दीं। वे ऐसे चमकती थीं, जैसे उनमें सोना-चांदी लगा हो। पर मेरे लिए उनका आकर्षण सोने-चांदी के कारण नहीं, बल्कि इसलिए था कि वे नेहरूजी, उनकी पत्नी और बच्ची की तस्वीरें थीं। मैं उन तस्वीरों को खजाने की तरह संभालकर रखता था—मैं जिसके मां-बाप नहीं थे, जिसके चाचा के पास जमीन नहीं थी, और जिसके घर एक बकरी तक नहीं थी।

मैं पहले बता चुका हूं कि पढ़ाई में मैं लायक था। आठवीं में मुझे छात्रवृत्ति मिल गयी, फिर दसवीं में भी; और इसी छात्रवृत्ति के आसरे मैं कालेज भी पहुंच गया। यहां एक हमदर्द प्रोफेसर ने मुझे हास्टल के करीब रहते किसी ठेकेदार के छोटे बेटे को पढ़ाने का काम दिलवा दिया। महीने-भर के बाद पहली बार जब मुझे ठेकेदार ने पैसे दिये, तो मैंने उन पैसों से नेहरूजी की 'आत्मकथा' खरीद ली। स्कूल और कालेज की कोर्स की किताबें तो मैं उधार मांगकर या पुरानी खरीदकर काम चला लिया करता था। परंतु यह अपने जीवन में मेरी स्वयं चुनी हुई पहली पुस्तक थी और यह मैंने नयी खरीदी थी।

उत्साह के साथ मैं पुस्तक लेकर अपने कमरे में पहुंचा। अपने ट्रंक में से मैंने गांव से लायी उन तीन रंगदार तस्वीरों वाला लिफाफा निकालकर पुस्तक के साथ रखा और मुझे ऐसी खुशी हुई, जैसे युगों से भूमिहीन किसी किसान को भूमि मिल जाये।

वर्ष बीतते गये। दूसरे खर्चों में किफायत करके मैंने धीरे-धीरे नेहरूजी की अन्य रचनाएं भी खरीद लीं और हर रोज रात को सोने से पहले मैं नेहरूजी की किसी पुस्तक में से कुछ पृष्ठ अवश्य पढ़ता और उनमें से विशेष पंक्तियों पर निशान लगाता। यह मेरा नित्य-नियम बन गया।

एक बार हमारे होस्टल के निकट एक बहुत बड़ा जलसा हुआ। वहां नेहरूजी भी आये थे। मगर उस जलसे में मैं बहुत दूर खड़ा रहा। मैं उनके निकट भी न जा सका। उस क्षण जैसे मेरे पैर सीसे के हो गये थे। हालांकि तब मैं गांव का वह गंदा, कुलबुलाती जुओं से भरा, चिथड़ों में लिपटा बच्चा नहीं था; लेकिन मुझे ईश्वर से कुछ भी सुंदर नहीं मिला था। जो कुछ मिला था, उसे संभालने का न ढंग आता था, और

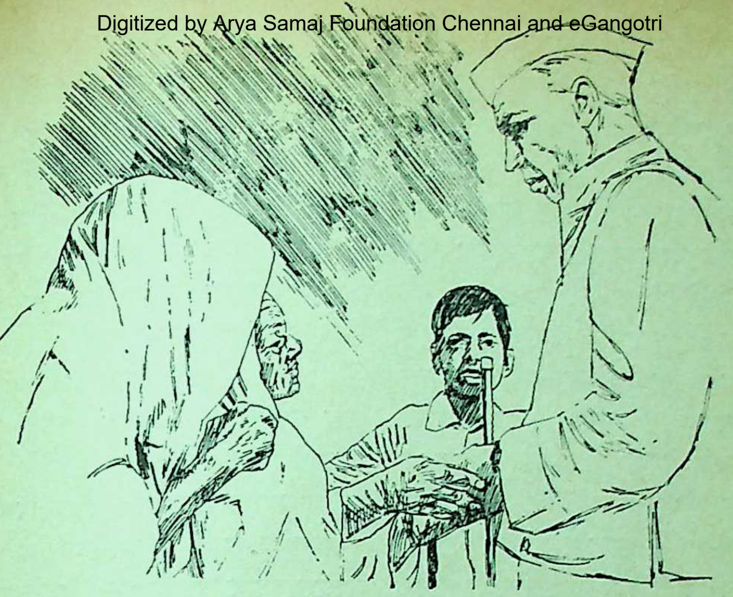

न रुचि थी। इतने सुंदर मनुष्य के निकट मैं कैसे जा सकता था! मैं दूर से नेहरूजी की वाणी सुनता और आंखें उनके दीदार से भरता रहा और बस . . . . .

फिर १९४७ आया। देश का विभाजन हुआ। कालेज में छुट्टियां थीं। नेहरूजी की पुस्तकें और वे तीनों तस्वीरें मैं अपने साथ अपने ट्रंक में गांव लाया हुआ था। सहसा गांव पर हमला हो गया। कोई घायल काफिला आजाद हुए मेरे वतन के दूसरे हिस्से से भागकर हमारे गांव के पास से गुजर गया था; और अब हमारे मारे जाने व भागने की बारी थी।

जमीन नहीं, ढोर-डंगर नहीं, पर अपनी झोपड़ी छोड़कर जन्मभूमि से भागकर हमारे परिवार को तीन कपड़ों में इधर आना पड़ा।

हमारे साथ भागने वाले लोगों के पीछे जमीनें, भैंसों के झुंड, दबे हुए गहने, लिहाफ-रजाइयां, बेटियों के विवाह के लिए जमा किया हुआ दहेज—सब कुछ रह गया; और मेरी नेहरूजी की पुस्तकें और वे तीन तस्वीरें रह गयीं, जिनमें मेरे बचपन का सोना-चांदी भी था।

मैं एक शरणार्थी-कैंप में काम पर लग गया। लुटे-पिटे, पीड़ा से कराहते, अपने-अपने दुखड़ों के पर्वत तले दबे गुमसुम लोग—और मैं सारा-सारा दिन उनकी सेवा करता रहता। पर रात के समय एक टीस-सी उठती। मेरे पास पढ़ने के लिए अब नेहरूजी की कोई पुस्तक नहीं थी।

एक रात को उस टीस के आवेग में मैंने नेहरूजी को एक पत्र लिखा। उसमें मैंने लिखा—'लोगों को जमीनों और मकान के

क्लेम शायद मिल जायेंगे, पर मेरी पुस्तकें जिन पर मैंने जिंदगी के भिन्न-भिन्न वर्षों की सूझ के अनुसार भिन्न-भिन्न पंक्तियों पर निशान लगाये थे, और वे रंगदार तस्वीरें जिनमें मेरी बचपन-विहीन बाल्यावस्था का सोना और चांदी मढ़ा हुआ था—इनके क्लेम कहां से मिलेंगे ?'

पत्र लिखने के सप्ताह-भर बाद ही एक दिन डाकिया कैंप में पूछता हुआ मेरे पास एक रजिस्ट्री-पैकेट लाया। पैकेट नेहरूजी के सचिव की ओर से आया था। मैंने कांपते हाथों उसे खोला। उसमें नेहरूजी की दो पुस्तकें थीं—'मेरी आत्मकथा' और 'भारत की खोज' और एक तस्वीर भी; और तीनों पर नेहरूजी के हस्ताक्षर थे।

विभाजन के कारण बी. ए. के अंतिम वर्ष में मुझे पढ़ाई छोड़नी पड़ी; पर शरणार्थी कैंप में सामाजिक सेवा के बदले में मुझे बी. ए. की डिग्री मिल गयी। फिर कुछ दिनों बाद सरकार ने, पता नहीं अछूत समझकर, एक साधारण-सी नौकरी मुझे दे दी। यहां तरक्की करता हुआ मैं अफसर बन गया।

मगर पता नहीं, अब तक मेरे बचपन के वर्षों की मुझ पर छाया क्यों पड़ी हुई है! मैं अपने बराबर के या बड़े अफसरों से मिलने से इतना डरता हूं, जितना कोई चपरासी भी नहीं डरता होगा। किसी पार्टी में मुझे कोई बुलाये तो अव्वल तो मैं जाता ही नहीं, और अगर जबर्दस्ती कोई ले जाये तो पसीने-पसीने हो जाता हूं और हकलाने लगता हूं—हां, यह वह व्यक्ति है जो कभी सपने देखा करता था कि वह किसी दिन इतना बड़ा वक्ता बनेगा कि नेहरूजी भी उसका भाषण सुनकर हैरान रह जायेंगे। और मैं अपने सपनों के परम-नायक नेहरूजी को कभी निकट से नहीं देख सका—कहीं मेरे मुख से कोई भद्दा, असभ्य शब्द न निकल जाये, कहीं बचपन वाली जुओं का बचा-खुचा ढेर फिर कहीं से न सरक आये ......

अब जब नेहरूजी सदा के लिए हमसे दूर चले गये हैं, और उनके निकटवर्ती उनके बारे में लिख रहे हैं कि वे अपने निकट के प्रत्येक व्यक्ति के साथ, नौकरों के साथ भी, बड़ा स्नेह का व्यवहार करते थे, तो मेरी लालसा जाग उठती है—मैं पार्टियों में हकलाते अफसर के बजाय, काश नेहरूजी का सेवक ही होता ......

पत्र बहुत लंबा हो गया है, और आज मेरे जीवन में जो फिर न भरी जाने वाली रिक्तता आ गयी है, उसकी तो बात भी अभी शुरू नहीं हुई और कागज खत्म होने वाला है। और कागज यहां आस-पास कहीं मिलना कठिन है।

मैं कुछ दिनों के लिए अपने गांव छुट्टी पर आया हूं। चाचाजी के घर की मरम्मत करा रहा हूं। उनकी एकमात्र निशानी अब यह ही रह गयी थी, और आज बाढ़ ने यह सब कुछ भी बहा दिया है। इस घर के भीतर मेरे सूटकेस में पड़ी नेहरूजी के हस्ताक्षरों वाली दो पुस्तकें और एक तस्वीर भी जल-मग्न हो गयी हैं, और आज मैं पुनः शरणार्थी बन गया हूं ......

★

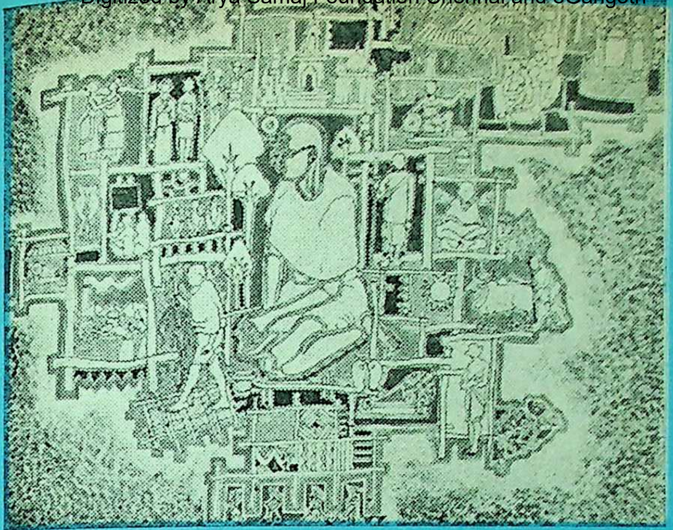

चित्र : गांधी-दर्शन

काशी हिंदू विश्वविद्यालय के परिसर में डाकखाने के पीछे क्वार्टर नं. १६ का दरवाजा मेरे दस्तक देते ही खुलता है और उसके साथ ही जैसे खुल जाता है कलाकृतियों का भंडार। दीवारों पर, फर्श पर, सोफे के गिलाफों व गद्दियों पर, मेजपोश पर सर्वत्र उत्कृष्ट कला के नमूने। उनके बीच चलने-बैठने का मुझे साहस नहीं होता कि कहीं कोई चीज कुचल न जाये। सो वहीं खड़े-खड़े प्रतीक्षा कर रहा हूं और चारों ओर देख रहा हूं।

कमरे के पिछले भाग में एक ओर बड़े-बड़े चित्रों का ढेर लगा है, दूसरी ओर चित्र-कर्म के उपकरण बेतरतीब फैले हुए हैं कैनवस-बोर्ड के सामने। एक चौकी पर डाक और लेखन-सामग्री पड़ी है। चौकी के ठीक पीछे दीवार पर १५ अगस्त १९४७ के स्वातंत्र्योत्सव को चित्रित करने वाला लगभग ६ फुट लंबा, ४ फुट चौड़ा पैनल लगा हुआ है। चित्र में तिरंगे ध्वज हैं, भीड़ है, उल्लास है, नृत्य-संगीत है, साथ ही इन सब से उदासीन गांधीजी एक कोने में बैठे उपदेश दे रहे हैं; दूसरी ओर सड़क के किनारे पार्क में लोग चादर तानकर सो रहे हैं, इस विशाल ऐतिहासिक समारोह से बेखबर।

*** डा. सुरेशव्रत राय ***

प्राणवंत परंपरा के प्रतिनिधि

चित्र के ऊपर दायें-बायें संस्कृत में भारत-प्रशस्ति है, स्वातंत्र्य-प्राप्ति से लेकर बाङलादेश-अभियान तक की उपलब्धियों का विवरण है।

'क्षमा कीजियेगा, आपको काफी देर प्रतीक्षा करनी पड़ी', कहते हुए श्री वासुदेव स्मार्त कमरे में प्रवेश करते हैं, फिर क्षण-भर ठिठककर कह उठते हैं—'अरे, आप इतनी देर से खड़े ही हैं! आइये, बैठिये ......!' मैं सफाई देने की कोशिश करता हूं—'इतने सारे सौंदर्य के बीच......' परंतु जोरदार ठहाका लगाते हुए स्मार्तजी मुझे टोकते हैं—'तब तो आपको संसार में सारे समय एक ही स्थान पर खड़े रहना पड़ेगा। प्रकृति में हर कहीं इतना सौंदर्य बिखरा पड़ा है कि उससे बचाकर पग रखना असंभव है। बस, सौंदर्य-बोध रखते हुए विचरें तो फिर कोई दोष नहीं। सो आइये, बैठिये।'

पग-पग पर बिखरे सौंदर्य का अवलोकन और आस्वादन करते हुए स्मार्तजी भारत में आसेतुहिमाचल, अरुणाचल से अरब सागर तक घूमे-भटके हैं। वे कहते हैं—'यही सौंदर्य तो भारतीय कला का रहस्य है। अमरकंटक से भरुच तक नर्मदा संगीतबद्ध लय में बहती है; शंकराचार्य ने ठीक उसी छंद में "नर्मदाष्टकम्" की रचना की है और **हिमालयो नाम नगाधिराजः** ......? उसका सौंदर्य तो वर्णनातीत है। बार-बार घूमा हूं कश्मीर और कुमाऊं से नंदनवन नेफा तक ...... मन तृप्त ही नहीं होता। एक बार पूरे दल के साथ गया था, जिसमें वनस्पतिशास्त्री, भूगर्भशास्त्री, मानसशास्त्री, डाक्टर, पत्रकार, साधु, साहित्यकार सभी थे। मैं कुमारसंभव साथ ले गया था। कालिदास की एक-एक पंक्ति में हिमालय के सौंदर्य का प्रतिबिंब मैंने देखा। वस्तुतः हिमालय वर्णन का नहीं, अनुभूति का विषय है। मेरे मन-मस्तिष्क पर तो जैसे छा गया है वह, और मेरे चित्रों में जब-तब व्यक्त होता रहता है।'

'कालिदास भी तो आप पर छाये हुए हैं!' रघुवंश, कुमारसंभव और मेघदूत पर आधारित

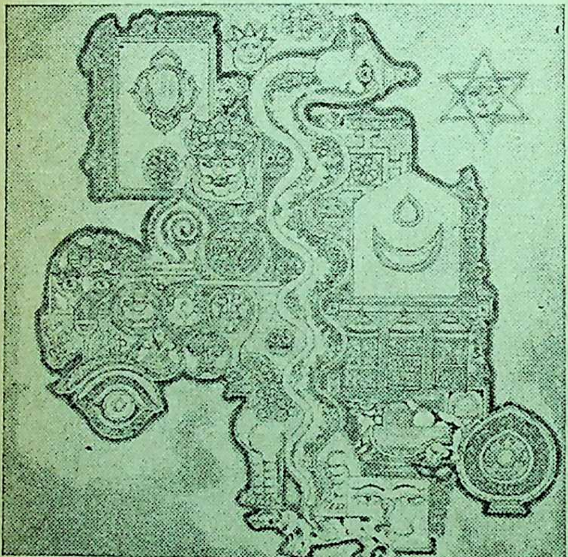

तांत्रिक शैली का एक चित्र

उनके चित्रों को स्मरण करके मैं कहता हूं।

'हां। कालिदास कवि ही नहीं, समाजशास्त्री, मानसशास्त्री, वनस्पतिशास्त्री, इतिहासज्ञ, भूगोलवेत्ता और कलाकार भी थे। भारत की संपन्न और अविच्छिन्न सांस्कृतिक परंपरा के प्रतिनिधि थे वे। वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत और भागवत इस संस्कृति के मूल स्रोत हैं। हमें इनका अध्ययन करना चाहिये—अनुवादों के माध्यम से ही सही। भारत की कला में भारत की माटी की महक, रूप और रंग रहना चाहिये।'

'आपके अनेक चित्र—विशेषत: "गांधीदर्शन" नामक चित्र—गांधीवादी प्रभाव दरशाते हैं।'

'आप ठीक कहते हैं। गांधीजी इस युग के महामानव थे। प्रारंभ में उनकी अहिंसा और असहयोग में मेरी आस्था सामान्य-सी ही थी। सन ४२ के आंदोलन में तो मैं गरमदलीय विचारधारा के अनुसार काम कर रहा था। हम लोग ठप्पे, ब्लाक आदि से "भारत छोड़ो", "ब्रिटिश हुकूमत मुर्दाबाद" आदि नारे कागज पर छापकर दीवारों पर चिपकाते थे, पर्चियां बांटते थे। पुलिस परेशान रहती थी। एक बार अंग्रेजी स्कूल की इमारत को उड़ाने के इरादे से किसी ने बम रख दिया। बम सहसा फटा और राह चलती एक निर्दोष स्त्री और उसके बच्चे की जान चली गयी। मुझे बड़ा सदमा पहुंचा। इसी प्रकार डाकघर जलाने का प्रस्ताव आया, जिससे बेगुनाह लोगों की ही हानि होती। सो मन गांधी और उनके दर्शन की ओर मुड़ा। उनके विचार पढ़े, उन पर सोचा और उनका कायल हो गया। अब तो मेरी पत्नी मजाक में मुझसे कहा करती है कि गांधीजी को गोली लगने पर उनकी जो चप्पल खो गयी थी, वह शायद आपको ही मिली है।'

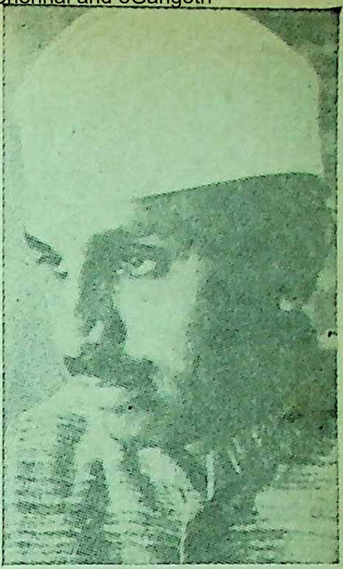

वासुदेव स्मार्त

इस तरह प्रकृति-सौंदर्य, प्राचीन ग्रंथ और गांधीदर्शन का त्रिवेणी संगम है स्मार्तजी की कलाचेतना। 'किंतु इस त्रिवेणी की गंगोत्री-यमुनोत्री कहां हैं?'

'अपने पूज्य पिता बलवंतरामजी और पूज्य माताजी से मिले धार्मिक संस्कारों में ...... पिताजी पुरोहिताई करते थे, इस कारण धार्मिक ग्रंथों की ओर मेरा सहज झुकाव हुआ। विभिन्न डिजाइनों की अल्पना

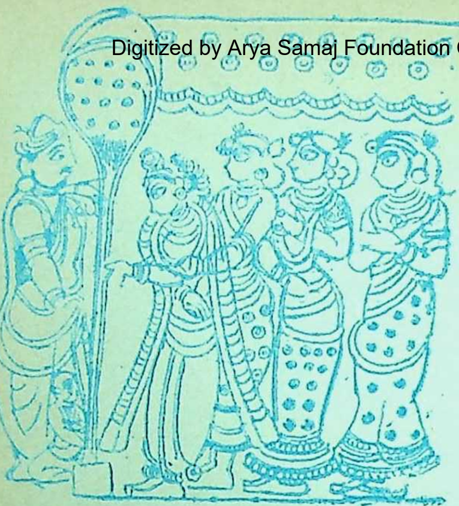

राम-सीता : तिरुचिरपल्ली शैली के एक चित्र की स्मार्त द्वारा रेखानुकृति। प्राचीन चित्रों की रेखानुकृतियां बनाना उनका प्रिय शौक है।

और रांगोली देखने से कलात्मक रुचि जागी। स्कूल में चित्रकला के प्रति आकर्षण जागा। बाद की मेरी कला मेरे गुरुवर्य श्री अहिवासीजी का कृपा-प्रसाद है। आचार्यों की छाप से कल्पना-शक्ति उत्पन्न हुई और मंजी। अहिवासीजी साहित्यकार थे, संगीतकार थे और भारतीयता की मूर्ति थे। उनका और शिष्यों का संबंध पिता-पुत्र का-सा रहता था। शिष्य को अच्छा आदमी बनाना उनका लक्ष्य था। मुझ पर अनेक संकट आये, परंतु ये पंक्तियां जिन्हें वे प्राय: गुनगुनाया करते थे, सदैव मेरा मार्गदर्शन करती रही हैं :

'सुनिये सबकी कहिये न कछू
रहिये निसि-दिवस उजागर में,
रसखान गोविंद को यों भजिये
जस नागर को मन गागर में।'

और उनकी संघर्ष कथा ?

'परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत ही मामूली थी। इस कारण छात्रावस्था में ही सूरत शहर, जहां कि मैं जन्म (१७ जुलाई १९२५) से ही रहता था, छोड़ना पड़ा। आर्ट स्कूल में पढ़ने बंबई पहुंचा। कई-कई दिन भूखे रहना पड़ता। कुछ टयूशन करके काम चलाता। दो वर्षों के आवास की व्यवस्था किसी प्रकार हुई। इस बीच अहिवासीजी की सहायता प्राप्त हुई। शिक्षा पूरी भी न होने पायी थी कि १९४८-४९ में अठारह दिनों के भीतर माता-पिता दोनों का अकस्मात् देहांत हो गया। सारी योजना धरी रह गयी। एक वर्ष के लिए सूरत जाना पड़ा। बाद में फिर बंबई आया। १९५१ से ५८ और १९६०-६१ में आर्ट स्कूल, सूरत में अध्यापन-कार्य करता रहा। १९५१ में ही मुझे संभालने और प्रेरणा देने वाली प्रमीलाजी ने मेरे जीवन में पदार्पण किया। इसी संघर्ष के बीच मैंने तैलचित्रण-शैली के अतिरिक्त अजंता एवं जयपुर फ्रेस्को एवं म्यूरल चित्रशैली का अभ्यास किया।'

सन १९५८-६० में उन्हें सांस्कृतिक शोध-छात्रवृत्ति मिली। ललित कला अकादमी के लिए फ्रेस्को शैली में तथा महाराष्ट्र एवं गुजरात सरकारों के लिए म्यूरल शैली में चित्र बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। नयी दिल्ली की आल इंडिया फाइन आर्ट सोसायटी एवं माडर्न आर्ट गैलरी, वाराणसी के

भारत कलाभवन, गुजरात सरकार, उत्तर प्रदेश की सरकार तथा राज्य ललितकला अकादमी, बड़ौदा के संग्रहालय तथा उज्जैन के कलाभवन व विक्रम वि. वि. में उनकी अनेक कलाकृतियां संगृहीत हैं। गुजरात ललितकला अकादमी, केंद्रीय ललितकला अकादमी, बांबे आर्ट सोसायटी तथा उत्तर प्रदेश ललितकला अकादमी की कला-प्रदर्शनियों, मध्य प्रदेश कला परिषद द्वारा आयोजित अखिल भारतीय कालिदास चित्र एवं मूर्तिकला समारोह प्रदर्शनी, अखिल भारतीय तुलसी रामकथा कला प्रदर्शनी (लखनऊ) में उनकी कलाकृतियां प्रदर्शित और प्रशंसित हुई हैं। काशी विश्वविद्यालय, सूरत, अहमदाबाद, लखनऊ, नेफा तथा बंबई में उनके चित्रों की एकल प्रदर्शनियां हुई हैं।

'अब तो मेरे बहुत-से चित्र प्रायः दौरे पर ही रहते हैं। देखिये न, यह कलाकृति कल ही लौटी है ... ' स्मार्तजी 'फल-फूलों का बाजार' नामक चित्र की ओर संकेत करते हैं, जिसकी पैकिंग अभी पूरी तरह खोली नहीं गयी है।

उनके पुरस्कारजयी चित्रों की सूची लंबी है। '१५ अगस्त ४७' बंबई कला-प्रदर्शनी में

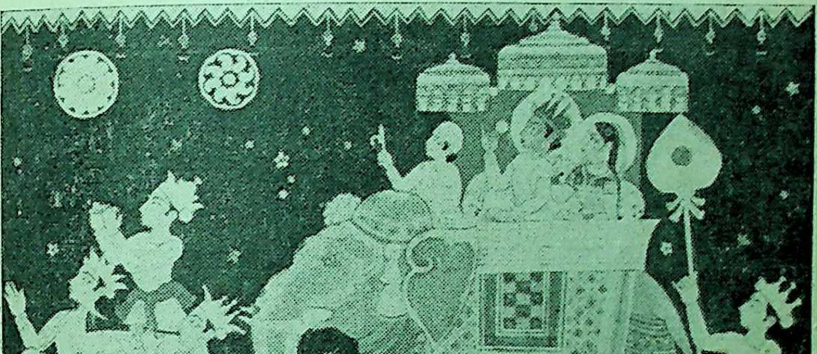

स्वयंवर के पश्चात् अज-इंदुमती की शोभायात्रा, रघुवंश (सप्तम सर्ग) पर आधारित चित्र का मध्यभाग।

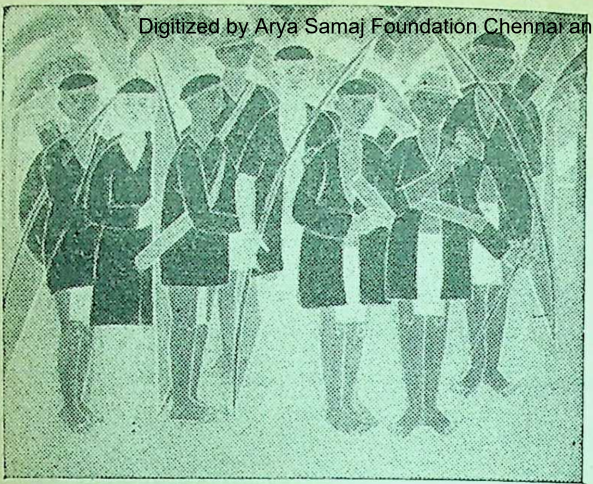

नेफा के आदिवासी

पुरस्कृत हुआ है। अन्य पुरस्कृत चित्रों में विशेष उल्लेखनीय हैं–शेषशायी, दानलीला, नवरसदर्शन, मवेशी-मेला, बाजार, बुद्ध का गृहत्याग, कामक्रीड़ा, मिलन, वसंत, रामविवाह।

स्मार्तजी ने रंग और रेखाओं से ही नहीं, शब्दों द्वारा भी कला की सेवा की है। 'आज', 'कुमार' जैसी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में उनके कला-विषयक लेख छपते रहते हैं। 'रूप-संहिता' उनकी नवीनतम पुस्तक है, जो वर्षों की मेहनत का फल है और १,८०० डिजाइनों से मंडित है। इसमें स्मार्तजी ने मानव की रूपात्मक कलाभिव्यक्ति के विभिन्न पक्षों का इतिहास दिया है। सिंधु घाटी सभ्यता के अवशेषों से लेकर मंदिरों, गुफाओं, भित्तिचित्रों, मूर्तियों, मिट्टी के बरतनों, आहत मुद्राओं, हाथीदांत-काम, कसीदा, जरी-काम, ठप्पा-छपाई, प्रांगण-चित्र, मंडित पात्र, आभूषण तथा हस्तकला आदि पर इसमें अलग-अलग अध्याय हैं। मत-प्रतिपादन मुअनजो-दड़ो, भरहुत, सांची, सारनाथ, भूमरा, बाघ आदि के शिल्प एवं चित्रों के आधार पर सप्रमाण किया गया है।

मैं चकित हूं कि स्मार्तजी लेखन के लिए समय कहां से निकाल लेते हैं! सन १९६२ से वे काशी हिंदू विश्वविद्यालय में नियमित रूप से अध्यापन करते हैं। शेष समय में चित्रांकन और अन्य काम भी चलते हैं। वे ही रहस्य खोलते हैं–'लेखन प्रायः रात में हो पाता है। इस सिलसिले में अक्सर भ्रमण भी करना पड़ता है। ''रूप-संहिता'' के लिए भारत के भिन्न-भिन्न मंदिरों, गुफाओं आदि में जाना पड़ा। वहीं रेखाचित्र तैयार कर लेता था। इन डिजाइनों में से एक में भी कैमरे की सहायता नहीं ली गयी है।'

'कला-दर्पण' उनकी दूसरी पुस्तक है, जो उन्हीं के शब्दों में 'एक तरह से विश्व की कला का संक्षिप्त इतिहास है।' इसमें रसानुदर्शन, पाश्चात्य एवं भारतीय चित्रकला के इतिहास का तुलनात्मक विवेचन, भारतीय शिल्प-स्थापत्य तथा हस्तोद्योगों आदि की चर्चा है।

नयी कलाशैलियों के प्रभाव और अनुकरण की बात चलने पर वे कहते हैं–'अमूर्त

शैली और तैलरंगों के कुछ चित्र तो मैंने भी बनाये हैं; परंतु किसी विशिष्ट शैली का अनिवार्य प्रभाव नहीं है वह। देश की सम-सामयिक परिस्थितियों ने जनमानस को सदैव प्रभावित किया है, उसकी अभिव्यक्ति कलाकृतियों में होती है। प्रभाव का अर्थ व्यापक रूप में लिया जा सकता है। पुरातन साहित्य और गांधी-दर्शन के प्रभाव की बात मैं बता ही चुका हूं। पाश्चात्य शैली और प्रयोगों के बारे में एक अमरीकी महिला-चित्रकार की उक्ति की याद दिलाना काफी होगा। उसने कहा था—"हम लोगों के पीछे चार ही सौ वर्षों की संस्कृति का इतिहास हैं; परंतु भारतीय कला के पीछे हजारों वर्षों की परंपराएं हैं, जिनमें प्रयोगों की अनंत संभावनाएं हैं।" कलाकार की कृति को विशिष्ट शैली की परिधि में बांधना कठिन होता है। फिर भी यदि आप आग्रही हैं तो कह सकते हैं कि मेरी अलंकरण-शैली जैन-चित्रों, तंत्रदर्शन और प्राचीन साहित्य से प्रभावित है।'

मेरे मन में कुछ देर से कुलबुलाता हुआ एक सवाल सहज ही फूट पड़ता है—'स्वतंत्रता-समारोह के इस पैनल में आपने दो-तीन आदमी पार्क में चादर ओढ़कर सोते हुए क्यों दिखाये हैं?' उत्तर मिलता है—'ये हैं श्रमिक—रिक्शेवाले आदि—जिनकी स्थिति में स्वतंत्रता से कोई फर्क नहीं पड़ा है। उन्हें तो वही रिक्शा खींचना है, श्रम करना है। थकान से चूर होकर वे सो रहे हैं। आजादी आने के पचीस वर्ष बाद इन सोती आकृतियों का महत्त्व और स्पष्ट हो गया है।' यानी 'कमिटमेन्ट' की नारेबाजी के बिना भी कलाकार आम आदमी के जीवन की करुणता को जान सकता है और उसे कला में तीव्रता से अभिव्यक्त कर सकता है।

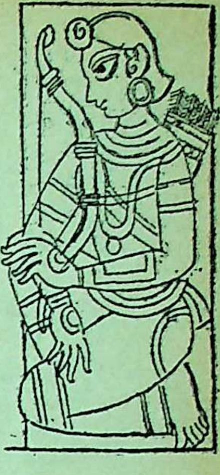

राजा दिलीप

[चित्र 'नंदिनी' में]

बैठक से, जहां हमारी बातचीत चल रही है, लगा हुआ कमरा है तो डाइनिंग-रूम किंतु स्थानाभाव के कारण परिणत हो गया है कर्मशाला में। उसमें जहां-तहां रखे चित्रों के ऊंचे ढेर मेरी आंखों को बार-बार आकृष्ट कर लेते हैं। स्मार्तजी मेरी उत्सुकता और संकोच को ताड़कर प्रस्ताव करते हैं—'आइये, आपको कुछ चित्र दिखाऊं।' और मैं अगले क्षण अपने को पाता हूं चित्रों के बीच—चित्रों के जुलूस के बीच।

पहले संयोजन-प्रधान चित्र। तमिलनाडु का फल-फूल बाजार, जिसमें सब महिलाएं व पुरुष उस प्रदेश की वेश-भूषा में हैं। ठेठ सौराष्ट्री परिधान में यह है दूध बेचने वाली। यहां विशुद्ध तंत्र-साधना चल रही है—सहस्रदल कमल, कुंडलिनी, घट एवं अन्य

[शेष पृष्ठ २४५ पर]

कालपात्र के लिए पुस्तकें

एक छोटा-सा कल्पित प्रश्न **नवनीत** ने दीपावली अंक के सिलसिले में हिंदी के अनेक नये-पुराने साहित्यकारों तथा पत्रकारों से पूछा था :

'मान लीजिये कि द्वितीय विश्व हिंदी परिषद के अवसर पर एक अति विशाल कालपात्र (टाइम कैप्स्यूल) गाड़ा जाने वाला है और उसमें रखने के लिए आपसे अपनी केवल एक पुस्तक भेजने की प्रार्थना की जाती है। आप अपनी कौन-सी पुस्तक भेजेंगे ? साथ ही यह भी मान लें कि आपको आधुनिक साहित्य में से अपनी सर्वाधिक प्रिय तीन पुस्तकों के नाम सुझाने हैं—क. एक हिंदी की, ख. एक किसी हिंदीतर भारतीय भाषा की, और ग. एक किसी अभारतीय भाषा की। आप क़िन तीन पुस्तकों के नाम लिखेंगे ?'

लगभग डेढ़ सौ व्यक्तियों के पास पत्र भेजे गये थे; उनमें से लगभग सौ ने उत्तर दिये। इतनी सफलता की हमने आशा नहीं की थी। यह भी प्रसन्नता का विषय है कि सब उत्तर एक ढर्रे के नहीं हैं।

हिंदी के प्रबल पक्षधर **काका साहब कालेलकर** ने लिखा—'नव्वे वर्ष की इस उम्र में ऐसे सवालों का उत्तर लिखवाने का उत्साह नहीं होता। आपको निराश कर रहा हूं, क्षमा करें।' **डा. कामिल बुल्के** हमारा पत्र कहीं खो बैठे। अतः, 'प्रश्न कौन-से थे याद नहीं। इतना ही जानता हूं कि इस साल के अंत में प्रकाशित होने वाले बाइबल के उत्तरार्ध के हिंदी अनुवाद को मैं अपनी सर्वोत्तम रचना मानता हूं।'

राजेंद्र यादव को हमारा 'प्रश्न बहुत घपले में डाले हुए है।' उनकी दृष्टि में 'यह प्रश्न कुछ इस तरह का है जैसे कोई कहे अपने परिवार, प्रांत और देश-विदेश के किसी सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति का नाम बताइये। मैं नहीं समझता कि इस तरह का व्यक्ति आसानी से छांटा जा सकता है; क्योंकि श्रेष्ठता कभी भी किसी एक व्यक्ति में नहीं होती, वह टुकड़ों-टुकड़ों में बंटी होती है- सब मिलाकर ही हम इमेज तैयार करते हैं। पुस्तक को चुनते वक्त भी वही सामरसेट मॉम वाली दिक्कत पैदा होती है, जहां उसे एक निहायत अंतर्विरोधी वक्तव्य देना पड़ा था कि संसार का सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार दास्तोएव्स्की है, लेकिन संसार का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास वार एंड पीस है।'

मन्नू भंडारी ने अपनी पुस्तक तो चुन दी है, किंतु अन्य तीन प्रश्नों के बारे में वे अनु-

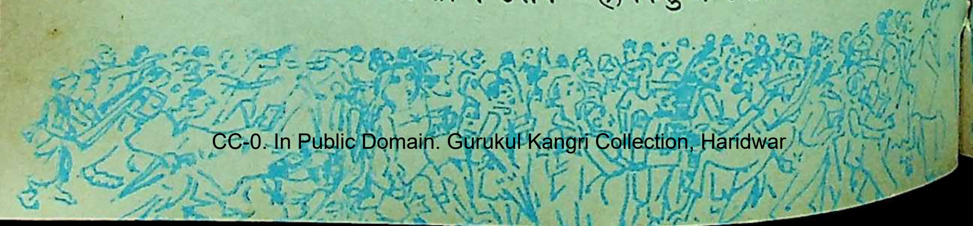

भव करती हैं–'इतनी सारी पुस्तकों में से केवल एक का चुनाव ! .....बहुत ही कठिन काम है।'

चंद्रगुप्त विद्यालंकार 'कई कारणों से इस तरह के टाइमकैप्स्यूलों को निरर्थक' मानते हैं और उसके लिए 'अपनी किसी भी पुस्तक की एक भी प्रति देना उसका दुरुपयोग' समझते हैं। वैसे, 'यदि आप सीधे पूछते कि आपको अपनी तथा दूसरों की कौन-सी पुस्तकें पसंद हैं तो उसका उत्तर मैं खुशी से देता।'

शमशेर बहादुर सिंह ने हमारे सवालों का उत्तर इस कैफियत के साथ दिया है– 'अव्वल तो यह कालपात्र का आइडिया ही मुझे गलत, वल्कि रुग्ण मानसिक दृष्टिकोण का द्योतक लगता है। मगर खैर, अगर मेरे लिए बाध्यता हो तो.....'

डा. सूर्यनारायण व्यास को पिछले दो हजार साल के भारतीय साहित्य में कालिदास का 'मेघदूत' ही एकमात्र 'चिरंतन' पुस्तक प्रतीत होती है और पं. नेहरू का डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया 'कुछ काल के लिए चिरस्मरणीय'। उनके मत में, 'आधुनिक साहित्य में चिरंतन प्रश्न ही प्रश्न है।'

डा. लक्ष्मीनारायण लाल हमारे 'इस कल्पित प्रश्न से स्वयं को जोड़ने में सर्वथा असमर्थ' पाते हैं। **रमेश बक्षी** सूचित करते हैं–'मैं एक जीवित लेखक हूं और अभी लगातार लिखना चाहता हूं .....अपनी किसी भी पुस्तक को कालपात्र में गाड़ा जाना पसंद नहीं करूंगा; क्योंकि कालांतर में जीवित रहने की मेरी कोई इच्छा नहीं। मैं केवल वर्तमान में जीना चाहता हूं।'

गोपालप्रसाद व्यास का आग्रह है–'पहले यह तय हो जाना आवश्यक है कि कालपात्र किस जगह गाड़ा जायेगा–प्रयाग में, काशी में, वर्धा में, या बंबई में आपके दफ्तर के सामने। जब तक स्थान का निश्चय नहीं हो जाता मैं अपनी पुस्तक की एक प्रति खराब करने को तैयार नहीं हूं।' साथ ही, 'आपने कुछ अन्य लेखकों की पुस्तकों के बारे में भी जिज्ञासा की है। लगता है, आपको हिंदी जगत् और हिंदी साहित्यकारों के बारे में तनिक भी ज्ञान नहीं है। श्रीमानजी, अपने ज्ञान में यह संशोधन कर लें कि हिंदी का ९९ फी सदी साहित्यकार केवल अपनी लिखी पुस्तकें पढ़ता है; और क्योंकि मैं बहुमत का पक्षपाती हूं, इसलिए एक प्रतिशत में अपनी गिनती नहीं करा सकता।'

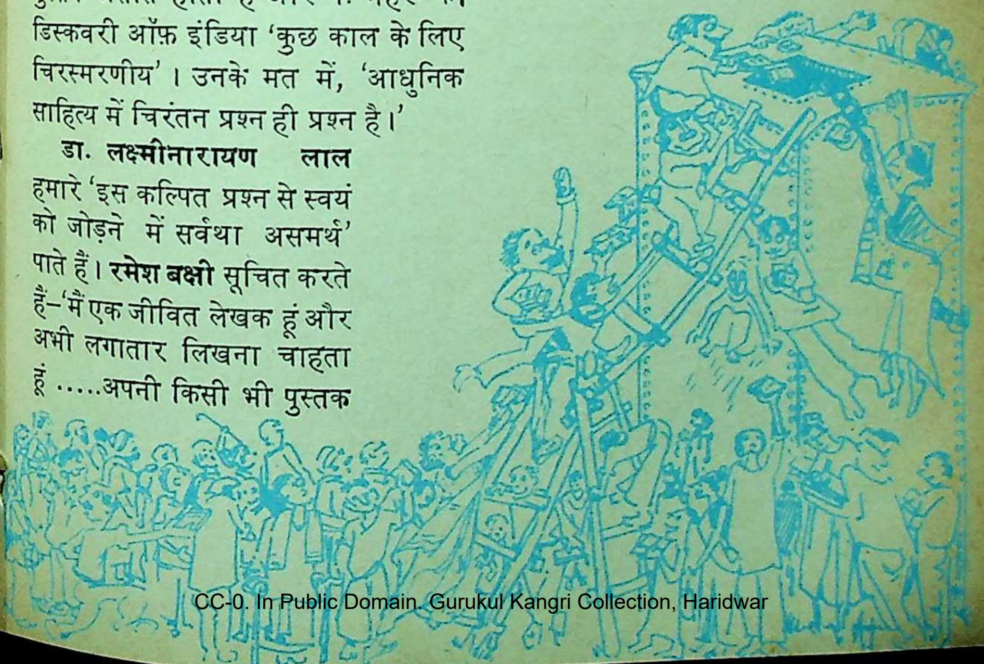

किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि संयोग से **नवनीत** के पत्र ज्यादातर 'एक प्रतिशत' वालों के पास ही पहुंचे हैं।

श्रीनारायण चतुर्वेदी ने पुस्तकों के नाम देने के बाद टिप्पणी जोड़ी है—'ये सब आधुनिक पुस्तकें हैं। यदि हिंदी के संपूर्ण साहित्य में से एक पुस्तक चुननी हो तो वह तुलसीदास का रामचरितमानस होगा।' वस्तुतः इसी बात को ध्यान में रखकर हमने अपने प्रश्न में **आधुनिक** शब्द जोड़ा था। परंतु उत्तर के लिए जो मुद्रित फार्म भेजा गया, उसमें यह शब्द छूट गया; फलतः मानस के अलावा महाभारत, भगवद्गीता, बाइबल और पदमावत आदि नाम भी कुछ उत्तरों में मिले हैं; हमने वहां उत्तर में × का चिह्न रख दिया है।

हमने पत्र में स्पष्टतः लिखा था—'आपके उत्तर दीपावली अंक में प्रकाशित होंगे।' किंतु हमारी आशा से बहुत अधिक उत्तर आ जाने के कारण हमें उत्तर दो किस्तों में छापने पड़ रहे हैं। अगली किस्त दिसंबर में छपेगी, उसमें जिन व्यक्तियों के उत्तर समाविष्ट हैं, उनकी नामावली अन्यत्र दी जा रही है।

—संपादक

डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी :– 'बाणभट्ट की आत्मकथा'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. रवींद्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

बनारसीदास चतुर्वेदी :–'संस्मरण'। क. दिनकर का 'रश्मिरथी'; ख. स्व. महादेव देसाई की डायरी (गुजराती); ग. तुर्गनेव का 'फ़ादर्स एंड सन्स'।

डा. दत्तो वामन पोतदार :–'मराठी गद्याचा इंग्रजी अवतार'। क. डा. राजेंद्रप्रसाद की आत्मकथा; ख. मो. क. गांधी का 'सत्यना प्रयोगो' (गुजराती); ग. एच. जी. वेल्स का 'आउटलाइन्स ऑफ़ वर्ल्ड हिस्टरी'।

किशोरीदास वाजपेयी :– 'हिंदी शब्दानुशासन'। क. गौरीशंकर हीरानंद ओझा की 'प्राचीन भारतीय लिपिमाला'; ख. लोकमान्य तिलक का 'गीतारहस्य'; ग ×।

डा. बाबूराम सक्सेना:–'सामान्य भाषाविज्ञान'। क-ख-ग ×।

श्रीनारायण चतुर्वेदी :–'आधुनिक हिंदी का आदिकाल'। क. पद्य में निराला का 'तुलसीदास', प्रसाद की 'कामायनी, दिनकर का 'कुरुक्षेत्र' और गद्य में प्रेमचंद का 'गोदान', डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा; ख. पद्य में माइकल मधुसूदन दत्त का 'मेघनादवध' और गद्य में मो. क. गांधी की आत्मकथा, बंकिम का 'आनंदमठ'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस', विक्टर ह्यूगो का 'ला मिजरेबल', गेटे का 'फाउस्ट'। (गद्य और पद्य की पुस्तकों को एक साथ मिलाकर निर्णय करना कठिन काम है। मैंने कहीं दो या तीन पुस्तकों के नाम लिखे हैं, जिन्हें मैं समकक्ष समझता हूं।)

डा. रामकुमार वर्मा :–'उत्तरायण'। (महाकाव्य)। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. ×; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

डा. हरिवंश राय बच्चन :–'क्या भूलूं क्या याद करूं' (आत्मचित्रण)। क. दिनकर

की 'उर्वशी'; ख. फिराक गोरखपुरी का 'गुले नग़मा'; ग. मिखाइल शोलोखोव का 'एंड क्वायट फ्लोज़ द डॉन'।

उपेंद्रनाथ अश्क :–'गिरती दीवारें' (पांचों खंड)। क. निराला का 'बिल्लेसुर बकरिहा'; ख. रवींद्रनाथ का 'घरे बाहिरे'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

डा. नगेंद्र :–'रस-सिद्धांत'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. रवींद्रनाथ का 'गोरा'; ग. ब्रैडले का 'शेक्सपीरियन ट्रैजेडी'।

इलाचंद्र जोशी :– 'ऋतुचक्र'। क. ×; ख. रवींद्रनाथ का कविता-संकलन 'संचयिता'; ग. ताल्सताय का 'रिज़रेक्शन'।

अमृतलाल नागर :– (मेरा लेखन-कार्य चुका नहीं है, इसलिए कैसे कहूं ?)। क. डा. रामविलास शर्मा का 'निराला की साहित्य-साधना' (जीवनी-खंड); ख. तकषि शिवशंकर पिळ्ळे का 'मछेरे' (मलयालम्); ग. हेमिंग्वे का 'द ओल्ड मैन एंड द सी'।

शमशेर बहादुर सिंह :–कोई नहीं। क. त्रिलोचन का 'दिगंत'; ख. फैज का 'वादिए-सीना' (मैं उर्दू को भारत की भाषा मानता हूं, पाकिस्तान की नहीं; फिर भी यदि टेक्निकल एतराज हो तो कुर्रतुल ऐन हैदर का 'आग का दरिया'); ग. पाब्लो नेरूदा का 'रेसिदेंथिया एन ला तिएर्रा' (स्पेनी)। पुनश्च:–धरती में (कालपात्र में) गाड़ी जायें या न गाड़ी जायें युगों बाद भी, मुझे विश्वास है कि उपर्युक्त पुस्तकें कालजयी रहेंगी। इनके भुलाये जाने का कोई खतरा नहीं है।

निर्मल वर्मा :—कोई नहीं (कृपया यह न समझें कि यह मेरी किसी पुस्तक का शीर्षक है)। क. प्रेमचंद की सिर्फ एक कहानी 'कफन'; ख. मो. क. गांधी की आत्मकथा (गुजराती); ग. कवि रिल्के के पत्रों का संकलन।

डा. विनयमोहन शर्मा :–'हिंदी गीत गोविंद'। क. द्वारका प्रसाद मिश्र का 'कृष्णायन'; ख. शरतचंद्र का 'श्रीकांत'; ग. पर्ल बक का 'गुड अर्थ'।

व्योहार राजेंद्र सिंह :–'गो. तुलसीदास की समन्वय-साधना'। क. सुमित्रानंदन पंत का 'लोकायतन'; ख. वि. स. खांडेकर की 'उल्का' (मराठी); ग. लुइस मम्फर्ड का 'कंडिशन्स ऑफ़ मैन'।

राय कृष्णदास :–'साधना'। क-ख-ग.×।

डा. रामविलास शर्मा :—कालपात्र के लिए मेरी एक ही प्रिय पुस्तक है 'अनामिका', 'राम की शक्ति पूजा' कविता के कारण। इसे समझने के लिए आलोचना-पुस्तक की जरूरत हो सकती है, इसलिए उसके साथ 'निराला की साहित्य-साधना' (२) को भी दफना सकते हैं।

डा. धर्मवीर भारती :–'कनुप्रिया'। क. ×; ख. 'षडोपनिषद' (विविध); ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

डा. प्रभाकर माचवे :—उपन्यास 'जो'। क. निराला की 'अनामिका'; ख. बा. सी. मर्ढेकर की 'समग्र कविता' (मराठी); ग. दास्तोएव्स्की का 'क्राइम एंड पनिशमेंट'।

भैरव प्रसाद गुप्त :–'सती मैया का चौरा'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. बरेन बसु का

इनके उत्तर दिसंबर अंक में छप रहे हैं :

भवानीप्रसाद मिश्र, जानकीवल्लभ शास्त्री, वीरेंद्रकुमार जैन, अमृत राय, कुबेरनाथ राय, कर्त्तारसिंह दुग्गल, रामदरश मिश्र, रामकुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा, सुरेश सिंह, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', गौरापंत शिवानी, गिरिराज किशोर, अजित कुमार, शैलेश मटियानी, गंगाप्रसाद विमल, लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी, प्रकाश पंडित, श्यामू संन्यासी, रामकुमार 'भ्रमर', डा. राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी, युगेश्वर, अगरचंद नाहटा, दामोदर सदन, डा. परमानंद श्रीवास्तव, यशपाल जैन, दिनकर सोनवलकर, रामेश्वरदयाल दुबे, रमेश उपाध्याय, डा. श्याम परमार, उमाकांत मालवीय, द्विजेंद्रनाथ मिश्र 'निर्गुण', बालकवि बैरागी, शेरजंग गर्ग, प्रयाग शुक्ल, रामावतार त्यागी।

'रंगरूट', ग. जूलियस फूचिक का 'नोट्स फ्रॉम द गैलोज़'।

डा. जगदीश गुप्त :—'युग्म'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. क. मा. मुनशी की 'पाटण-नी प्रभुता' (गुजराती); ग. हर्बर्ट रीड का 'द मीनिंग ऑफ़ आर्ट'।

डा. शंभुनाथ सिंह :—'खंडित सेतु'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. रवींद्रनाथ की 'सोनार तरी'; ग. सैम्युअल बैकेट का 'वेटिंग फॉर गोदो'।

मन्मथनाथ गुप्त :—जो आउट आफ़ प्रिंट नहीं, उनमें से 'नरक' उपन्यास। क. यशपाल का 'झूठासच'; ख. विष्णु दे का कविता-संग्रह 'पचिस बछर' (बंगला); ग. अर्विंग स्टोन की लिखी फ्रायड की जीवनी 'द पैशन्स ऑफ़ द माइंड'।

राधाकृष्ण :—'रूपांतर'। क. ×; ख. रवींद्रनाथ की 'गीतांजलि'; ग. रोमां रोलां का 'ज्यां क्रिस्तोफ'।

विष्णु प्रभाकर : 'आवारा मसीहा'। क-ख. कहना बहुत कठिन है; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

कृष्णा सोबती :—जो पुस्तक भेजना चाहूं, वह अभी मुझे लिखनी है। क. राही मासूम रजा का 'आधा गांव'; ख. कुर्रतुल ऐन हैदर का 'आग का दरिया'; ग. लारेन्स डरेल का 'एलेग्जैंड्रिया क्वार्टेट'।

राजेंद्र अवस्थी :—'बीमार शहर'। क. डा. धर्मवीर भारती का 'अंधा युग'; ख. ताराशंकर बंद्योपाध्याय का 'भगिनी कंयार काहिनी'; ग. मिखाइल शोलोखोव का 'वर्जिन साइल अपटर्न्ड'।

डा. राही मासूम रजा :—कोई नहीं। क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. ×; ग. हावर्ड फास्ट का 'स्पार्टेकस'।

डा. विद्यानिवास मिश्र :—'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है'। क-ख. ×; ग. रोमां रोलां का

[शेष पृष्ठ २४७ पर]

आनंद की असली उम्र

मारिस गुडकेट

बुढ़ापे की कल्पना से ही चौंक उठने वाले नौजवानो, तुम्हें यह पता होना चाहिये कि बुढ़ापे से बढ़कर आनंद-भरी अवस्था दूसरी नहीं है। फाउस्ट सरासर मूर्ख था, जिसने बुढ़ापे के बदले जवानी ली। और भला उससे उसे क्या लाभ हुआ? मैं पचहत्तर साल का हो चला हूं, मगर एक रहस्य तुम्हें बताता हूं—हम कभी बूढ़े नहीं होते।

और आपमें से भी लोग जो पचहत्तर के हो चले हैं, वे आपाततः दिखाई देने वाली बातों से भ्रम में न पड़ें, बल्कि अपने दिल में झांककर देखें। क्या बालिग अवस्था के आरंभिक वर्षों की तुलना में आपके 'मैं' में कोई परिवर्तन हुआ है, सिवा इसके कि उसमें अधिक परिपक्वता, शुद्धता आ गयी है?

बेशक आपकी सांस जल्दी फूल जाती है, चाल पहले जैसी चुस्त नहीं रह गयी है, रीढ़ का लचीलापन घट गया है; मगर ये तो महज शारीरिक बातें हैं। वह अभौतिक वस्तु जो हमारे इस भंगुर देह-भवन को जीवंत वस्तु बनाती है, झुर्रियों से नितांत मुक्त है।

मैं जानता हूं, आपमें से बहुत-से अभी से अपने अंतिम निष्क्रमण के बारे में अनुचित रूप से संत्रस्त हैं। जैसे कि दुनिया में पहली सांस लेने के समय से ही मौत आपकी सहचरी न रही हो! बल्कि आपको तो इस बात की खुशी होनी चाहिये कि आप उन अनेक रोगों से अब सुरक्षित हो गये हैं, जो बच्चों व मध्यवय के मनुष्यों को होते हैं।

कुछ दिन पहले मेरे एक युवा डाक्टर मित्र ने मुझसे कहा था—'शीघ्र ही वह समय आ पहुंचेगा, जब आप लोगों यानी बूढ़ों से छुटकारा पाना मुश्किल हो जायेगा। न्यूमोनिया तो तकरीबन निरापद हो ही गया है; और लगभग यही हाल बाकी संक्रामक रोगों का है। हृद्रोग पर भी बहुत भरोसा नहीं किया जा सकता। अलबत्ता कैन्सर मौजूद है; मगर आपकी उम्र में वह बहुत धीमे-धीमे बढ़ता है और आपको किसी कम अप्रिय रोग से मरने का मौका देता है।'

अपनी बात कहूं? जब भी मुझे अपने पचहत्तर वर्षों की जबरन याद दिलायी जाती है, मुझे हैरानी-सी होती है। अरे, इतनी दूर तक मैं कैसे चला आया? कहीं गिनने में गलती तो नहीं कर दी मैंने? सभी तो कहते हैं, मैं बड़ा भुलक्कड़ हो गया हूं। फिर मेरा चित्त शांत हो जाता है। आखिर क्या यह एक अच्छा-खासा पराक्रम नहीं है

कि रोगों, रोग-कीटाणुओं, दुर्घटनाओं, विपदाओं और युद्धों से भरी इस दुनिया में कोई इन्सान पचहत्तर की सीमा को छू ले?

और अब तो हर नया दिन मुझे विस्मय से भरा और उससे (यानी नये दिन से) आनंद की आखिरी बूंद तक निचोड़ लेने में अधिक समर्थ एवं दक्ष पाता है। क्योंकि अब तक मैंने काल के अप्रकट ऐश्वर्य को नहीं पहचाना था, और मेरी जवानी ने कभी सुख को पूरी तरह आत्मसमर्पण नहीं किया था।

क्या स्मृतियों की ये अनवरत तरंगें जो मेरी आंतरिक शांति के सरोवर में उमड़ आती हैं, यह संयत और शांत आनंद, यह हल्का-फुल्का संगीत जो मुझे अपने संग उड़ाये ले जा रहा है, दुनिया को देखने की यह अधिक चौड़ी खिड़की, यह विस्तार पाती हुई करुणा, और यह मृदुता—क्या इसी का नाम बूढ़ा होना है?

'आज मेरे पास कोई काम नहीं'—इस कथन का अब मेरे लिए कोई अर्थ नहीं रह गया है। अपनी एकरूपता द्वारा छूंछेपन का एहसास कराने वाले दैनिक कार्यों से अगर कभी कुछ फुरसत मिल जाती है, तो मेरे सामने इतनी गतिविधियों के द्वार खुले होते हैं कि यह तय करना कठिन हो जाता है कि किसे चुनूं, किसे छोड़ूं।

मानो मेरे इन चंद स्वतंत्र क्षणों को ही दृष्टि में रखकर हजारों लेखकों ने तरह-तरह के विषयों पर हजारों पुस्तकें लिखी हैं; हर युग और हर देश के कलाकारों ने असंख्य कलाकृतियां रची हैं, जिन्हें संग्रहालयों ने मेरे ही निजी लाभ के लिए संजो
रखा है। मेरे पढ़ने के लिए इतिहास है
प्रबल नाटकीयता और अप्रत्याशितता
कोई कहानी उसका क्या मुकाबला करे

घर पर सुबह सबसे पहले मैं जागता हूं
इसलिए नहीं कि इस ढलती वय में नीं
मुझे धता बता गयी है; बल्कि इसलिए
जीने की तीव्र ललक मुझे बिस्तर में से बा
खींच लेती है। इसी तरह हर रात मैं आ
वाले दिन के बारे में निभृत संतोष के सा
सोचता-सोचता नींद में डूब जाता हूं,
ही आने वाला दिन स्याह हो; क्योंकि 'क
भविष्यत् है और समग्र संभावना उसमें है

हर सुबह नाश्ते में मेरी चाय का न
ही स्वाद होता है; इस नयेपन का श्रे
जितना केतली को है, उतना ही मुझे
है। फिर अखबार है, जो मुझे समूचे संसार
से जोड़ देता है; और अखबार चाहे को
हो, अगर उसे ढंग से पढ़ा जाये तो उस
विस्मयकारी, करुण, उपहासास्पद समाचार
का आश्चर्यजनक ढेर भरा होता है।

थोड़ी देर में डाक आ जायेगी। शाय
उसमें कोई बिल होगा, जिसकी मैंने उम्मीद
नहीं की थी। या शायद किसी अज्ञात प
लेखक से कोई हृदयस्पर्शी पत्र ही आ पहुंचे।
या शायद—क्यों नहीं भला?—किसी वकी
से इस आशय की चिट्ठी मिले कि कोई
तुम्हारे लिए खासी संपत्ति छोड़ गया है।

मैं वस्तुओं से घिरा हुआ हूं। ये वस्तु
ये पदार्थ मिलकर मेरा वातावरण बनाते हैं।
मैं लोगों से भी घिरा हुआ हूं—ये लोग

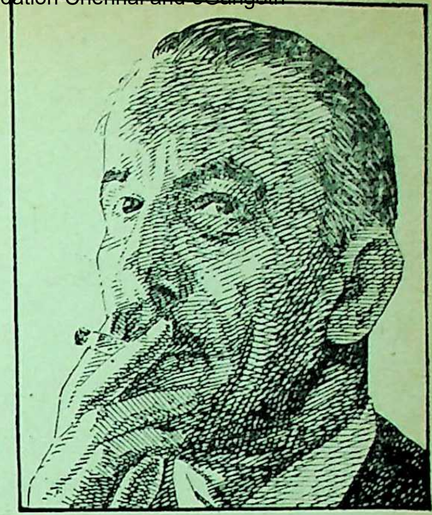

मारिस गुडेकेट विख्यात फ्रेंच लेखिका कोलेट के प्रेमी व जीवन-संगी थे। प्रस्तुत लेख उनकी पुस्तक 'द डिलाइट्स ऑफ ग्रोइंग ओल्ड' (१९६६) में से है।

लिए स्वयं अपने से अधिक महत्वपूर्ण है। मेरा प्रतिदिन का प्रातःकालीन कार्यक्रम हैं इन वस्तुओं, इन व्यक्तियों के साथ और स्वयं अपने साथ अपनी दोस्ती ताजी करना।

और फिर मैं उतरता हूं सड़क पर। और सड़क? वह तो अजूबों का अजबा है। उसके प्रति मेरा रुख सदा एक-सा नहीं होता। कई बार मैं अपनी 'फोटोग्राफिक आंख' खोल लेता हूं। तब सड़क अलग-अलग 'स्नैप शॉट्स' में विभक्त हो जाती है—पोर्ट्रेट, ग्रुप-फोटो आदि। कई बार मैं रंगों और उनके मिश्रणों को तलाशता हूं। कई बार श्रवणेंद्रिय अन्य इंद्रियों से प्रमुखता पा जाती है। मगर चेहरे वहां हमेशा होते हैं—भाव छिपाते हुए, भाव छिपा न पाते हुए चेहरों का हुजूम।

मैं चल पड़ता हूं, चलता चला जाता हूं; और मेरी ओर, मुझे घेरती हुई यह चलती-फिरती प्रदर्शनी आती है—अनिर्धारित भवितव्यताएं, जो क्षण-भर को मेरी भवितव्यता से छू जाती हैं। एक साथ ही मैं अपने को उनसे जुड़ा हुआ भी महसूस करता हूं और उनसे पूर्णतः पृथक् भी।

मैं चलता चला जाता हूं, और तेज, और प्रसन्न; मेरी इंद्रियां तीव्रतर हो उठती हैं; मेरे खयाल ऊंची और लंबी उड़ानें भरते हैं; और सारे समय स्मृतियों के झुंड उड़ते, गुंजार करते और मेरे बीते वर्षों से रस चूसते रहते हैं और मेरी रक्तवाहिनियों की झंकार मेरे सिर में नशा-सा भर देती है।

मेरा दिन तो अभी शुरू हुआ है। मैंने तो अभी अपनी सूक्ष्म संपदाओं की गिनती शुरू ही की है। मृत्युमुख की ओर बढ़ते हुए कार्डिनल मजारिन ने अपनी लबालब भरी कलाशालाओं में से बड़ी मुश्किल से पांव घसीटते हुए कहा था—'हमें यह सभी कुछ छोड़ जाना होगा।' मगर वे तो काफी लंबी जिंदगी जिये थे; उसमें उन्हें पता चल जाना चाहिये था कि हाथ में आयी चीज हाथ से छूट भी जाती है—रेत की तरह। क्यों नहीं उन्होंने अपनी क्षीण होती हुई शक्ति उन संपदाओं की ओर मोड़ दी, जो अधिक सच्चे अर्थों में उनकी संपदा हो सकती थीं—अपने परम सुख के क्षणों की स्मृति, अंतिम मानवीय संबंध, धूप की एक झलक?

★

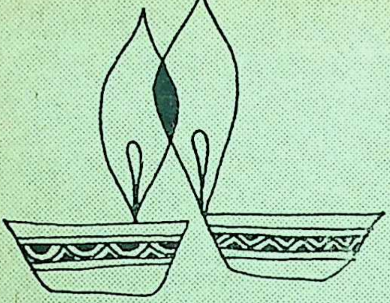

दीपावली

* अंचल *

दिशा-दिशा में दीपों की आलोक-ध्वजा फहराओ
देव-प्रहित शुभ शुक्र! आज तुम घर-घर में उग आओ
व्योम-भाल पर अंकित कर दो ज्योति-हर्षिणी क्रीड़ा
सप्तवर्ण सौंदर्य! प्रभामंडल में प्राण जगाओ!

जागो! जागो! किरणों के ईशान! क्षितिज-बांहों में
जागो द्योनायक! पर्जन्यों की अरश्मि राहों में
जागो स्वप्नगर्भ तमसा के ऊर्ध्व शिखर अवदाती
श्री के संवत्सर जागो द्युति की चकित चाहों में।

तिमिर-पंथ-जीवन की जल-जल उठे वर्तिका काली
पके समूची सृष्टि विभा से, अमा घनी भौराली
सुषमा के अध्वर्यु, उदित शोभा के मंत्रजयी ओ !
भर दो ऊर्जा से प्रदीप्ति की भुवन-मंडिनी थाली।

गोरज-चिह्नित अतरिक्ष के ज्योति-कलश उमड़ाओ
स्वर्णपर्ण नभ से फिर मिट्टी के दीपों में आओ
आभा के अधिदेव! मिटा दो धरा-गगन की रेखा
रश्मित निखिल यज्ञफल को फिर जन-जन-सुलभ बनाओ।

दिशा-दिशा में इंद्रकांति के कुमुद-पात्र बिखराओ
सप्तसिंधु-पोषित धरणी की अंजलि भरते जाओ
सुरजन्मी आलोक ! चतुर्दिक प्रतिकल्पी तम छाया
श्री के संवत्सर ! ऋतुओं की जड़ता पर छा जाओ !

—दक्षिण सिविल लाइन, पचपेड़ी, जबलपुर

कलिंग-चक्रवर्ती खारवेल

*** हरिदत्त वेदालंकार ***

उत्तर में पाटलिपुत्र से दक्षिण में पांड्य प्रदेश तक फैले विशाल भूभाग को अपनी सेनाओं द्वारा पादाक्रांत करने वाला, जैन-धर्म का संरक्षक, कलिंग देश (उड़ीसा) का पहला चक्रवर्ती राजा खारवेल ऐसे भास्वर धूमकेतु की भांति है, जो सहसा आकाश में प्रकट होकर अपनी उज्ज्वल आभा से दिगंत को आलोकित करके शीघ्र ही विलुप्त हो जाता है।

सम्राट् अशोक ने तीसरी शताब्दी ई. पू. में कलिंग को एक भीषण एवं रक्तरंजित युद्ध में जीतकर मौर्य साम्राज्य में मिला लिया था; परंतु उसके निर्बल उत्तराधिकारी इस प्रांत को देर तक अपने अधिकार में नहीं रख सके। इसके बाद कलिंग का इतिहास तिमिरावृत है। पहली शताब्दी ई. पू. में जब अंधकार का परदा उठता है, तो हम उसके राजनैतिक रंगमंच पर एक प्रतापी एवं प्रजावत्सल राजा के दर्शन करते हैं, जिसने कलिंग को शक्तिशाली बनाया, उत्तर में मगध पर आक्रमण करके अपने हाथियों और घोड़ों को गंगा नदी का पानी पिलाया और मगधेश्वर को अपनी चरण-वंदना के लिए विवश किया।

आश्चर्य की बात यह है कि इस प्रतापी राजा की कीर्तिकथा प्राचीन भारत के साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों में कहीं भी नहीं मिलती है। उनमें इस नरेश के वंश, पूर्वजों तथा उत्तराधिकारियों के संबंध में कोई उल्लेख नहीं मिलता है। इसके इतिहास पर प्रकाश डालने वाला एकमात्र स्रोत है एक प्राचीन अभिलेख, जो भुवनेश्वर के निकट उदयगिरि पहाड़ी की हाथीगुंफा नामक गुफा में खुदा है।

इस अभिलेख को सुप्रसिद्ध पुरातत्त्वज्ञ श्री रैप्सन ने प्राचीन भारत का एक अतिप्रसिद्ध और अतिजटिल लेख बताया है। इसमें कुल १७ पंक्तियां हैं, जिनमें पहली चार ही अखंड एवं पूर्ण दशा में हैं। गुफा की रेतीली चट्टान भुरभुरी है, इस कारण काल के प्रभाव से शेष पंक्तियां बहुत खंडित दशा में हैं। सन १८३७ में श्री किट्टो ने इसकी पहली स्वच्छ प्रतिलिपि तैयार की। उसके बाद से प्रिन्सेप, पं. भगवानलाल इंद्रजी, राजेंद्रलाल मित्र, स्टैन कोनो, दुब्रेउइल, काशीप्रसाद जायसवाल, बेनीमाधव बरुआ, रमाप्रसाद चंदा, दिनेशचंद्र सरकार आदि मूर्धन्य विदेशी और भारतीय पुरातत्त्वज्ञ इसका गंभीर अध्ययन एवं इसके खंडित स्थलों एवं अस्पष्ट पाठों के बारे में ऊहापोह करते रहे हैं। किंतु यह प्रशस्ति अब भी प्राचीन भारतीय इतिहास की एक विवादास्पद वस्तु बनी हुई है।

खारवेल के काल के संबंध में दो प्रधान पक्ष हैं। पहला और पुराना पक्ष डा. काशी-

प्रसाद जायसवाल जैसे पुरानी पीढ़ी के ऐतिहासिकों का है, जो उसे दूसरी शताब्दी ई. पू. के मध्य में पुष्यमित्र शुंग का समकालीन समझते हैं। दूसरा पक्ष श्री बरुआ, दिनेशचंद्र सरकार आदि नये ऐतिहासिकों का है; इनके मतानुसार खारवेल का समय पहली शताब्दी ई. पू. का उत्तरार्ध है।

हाथीगुंफा की खारवेल-प्रशस्ति की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें खारवेल के वंश, जीवन और शासन की घटनाओं का काफी सिलसिले से वर्णन किया गया है। प्रशस्तिकार ने राजा के शासन की घटनाओं का उल्लेख कालक्रम से करते हुए प्रतिवर्ष राजा द्वारा किये गये आक्रमणों तथा लोकहित के कार्यों की चर्चा की है।

प्रशस्ति का आरंभ अर्हतों और सिद्धों के प्रति प्रणाम से होता है। यह जैनधर्म में खारवेल की भक्ति एवं निष्ठा का सूचक है। प्रशस्ति में बताया गया है कि उसका जन्म चेति (चेदि) नामक राजवंश में हुआ। इस वंश का वर्णन पुराणों और महाभारत में मिलता है। चेदियों को चंद्रवंशीय अथवा ऐलवंशीय भी कहा गया है। आधुनिक बुंदेलखंड प्राचीन काल में चेदि प्रदेश कहलाता था। वही इस वंश का मूलस्थान था। संभवतः वहीं से चेदिवंश के कुछ लोग दक्षिण कोसल (वर्तमान छत्तीसगढ़) होते हुए कलिंग पहुंचे। उड़ीसा में ऐसी अनुश्रुति है कि चेदिवंश अथवा ऐलवंश पहले कोसल से ही खंडगिरि (धोली) में आया था। खारवेल को इस लेख में सुप्रसिद्ध चंद्रवंश में जन्म लेने वाला तथा राजर्षि वसु का वंशज बताया गया है।

कलिंग देश में चेदिकुल का प्रवर्तक महामेघवाहन नाम का राजा था। उसकी तीसरी पीढ़ी में खारवेल कलिंग का अधिपति हुआ। बचपन में उसे उन सब विषयों की शिक्षा दी गयी, जिनका ज्ञान उस समय राजकुमारों के लिए आवश्यक समझा जाता था। ये विषय

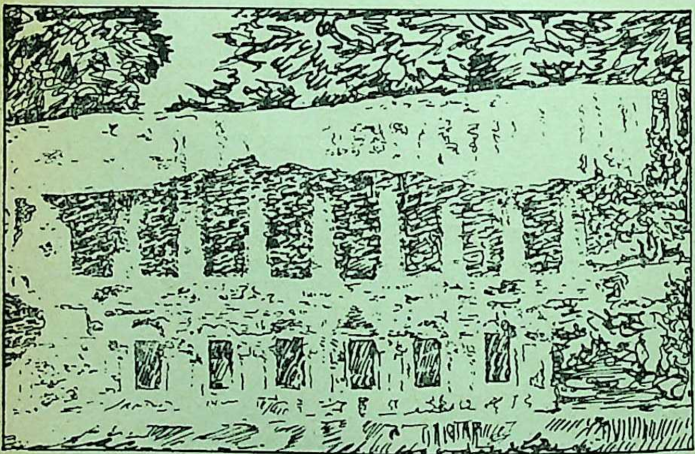

रानीगुंफा—खारवेल की रानी द्वारा खंडगिरि (जि. पुरी) की चट्टान में कटवाया हुआ गुहा-विहार।

थ–लेखन-कला (लेख), मुद्राओं यानी सिक्कों का ज्ञान (रूप), हिसाब-किताब एवं लेखा (गणना), कानून (व्यवहार) और प्रशासन। जीवन के प्रथम चौदह वर्ष खारवेल ने इन विद्याओं में प्रवीणता प्राप्त करने में तथा खेल-कूद में बिताये। पंद्रह वर्ष की आयु में वह युवराज नियुक्त हुआ और इसी हैसियत से अगले नौ वर्ष तक शासन-कार्य में भाग लेता रहा। चौबीस वर्ष की वय में कलिंग के महाराज के रूप में उसका राज्याभिषेक हुआ और उसने 'कलिंगाधिपति' और 'कलिंगचक्रवर्ती' की उपाधियां धारण कीं। संभवतः इसी समय ललाक-वंश के राजा हस्तसिंह के प्रपौत्र की कन्या से उसका पाणिग्रहण हुआ।

खारवेल के शासन के पहले वर्ष में ही उड़ीसा में एक भीषण तूफान आया। इससे राजधानी को बहुत हानि पहुंची। खारवेल ने तूफान से विध्वस्त (वाताहत) अपनी राजधानी कलिंगनगर (वर्तमान शिशुपालगढ़) में विभिन्न प्रकार के मरम्मत-कार्य कराये। यही नहीं, राजधानी को सुंदर बनाने के लिए उसने शीतल जल वाले और सीढ़ियों से युक्त जलाशयों का निर्माण कराया, उद्यान बनवाये। फिर उसने पैंतीस लाख मुद्राएं खर्च करके जनता के मनोविनोद का प्रबंध कराया। इस प्रकार शासन के पहले वर्ष में उसने अगले वर्षों के लिए आवश्यक सैनिक तैयारियां करते हुए भी जनता को प्रसन्न रखने का पूरा प्रयास किया।

दूसरे वर्ष में उसने सातवाहन राजा शातकर्णि पर हमला करने के लिए अपनी विशाल सेना पश्चिम दिशा में भेजी। यह सेना कन्हवेणा नदी तक पहुंच गयी और इसने असिकनगर को भयभीत किया। इस नदी और नगर की भौगोलिक स्थिति के संबंध में विद्वानों में तीव्र मतभेद है। श्री रैप्सन और श्री बरुआ का मत है कि कन्हवेणा नदी वैनगंगा और उसकी उपनदी कन्हन को सूचित करती है। किंतु श्री जायसवाल इसे कृष्णा मानते हैं। साथ ही वे 'असिक' के स्थान पर 'मुसिक' पाठ को शुद्ध समझते हैं और उसे कृष्णा तथा मूसी नदियों के संगम की समीपवर्ती वस्ती समझते हैं।

इस प्रसंग में शातकर्णि के साथ खारवेल की सेना के सैनिक संघर्ष का कोई उल्लेख नहीं है। इससे यह प्रतीत होता है कि दोनों राजाओं में मैत्रीपूर्ण संबंध था और खारवेल की सेना शातकर्णि के राज्य में से होती हुई असिक (या मुसिक) नगर तक पहुंच गयी थी। प्रशस्ति में खारवेल के शासन के तीसरे वर्ष की किसी घटना का उल्लेख नहीं है।

चौथे वर्ष में खारवेल ने भोजकों और रठिकों पर आक्रमण किया। ये संभवतः पूर्वी खानदेश और अहमदनगर के वर्तमान मराठी-भाषी प्रदेशों के सरदार थे। खारवेल ने इन्हें लड़ाई में हराकर अपनी प्रभुता स्वीकार करने के लिए बाधित किया। इस युद्ध के प्रसंग में विद्याधरों की राजधानी विजाधराधिवास का उल्लेख हुआ है। गुप्तवंशी सम्राट् कुमारगुप्त (४१४-४५५ ई.) के समय के मथुरा के एक अभिलेख से ज्ञात

होता है कि विद्याधर जैनधर्म की एक शाखा थी। जैनधर्मावलंबी खारवेल ने संभवतः यह आक्रमण विद्याधर संप्रदाय के जैनों की रक्षा के लिए किया था। प्रशस्ति में वर्णित विद्याधर-राजधानी शायद जैनों का प्रमुख तीर्थ थी, जिसे भोजकों और रठिकों से कुछ खतरा पैदा हो गया था। कट्टर जैन होने के कारण खारवेल ने उसकी रक्षा करना अपना उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य समझा।

अपने शासन के पांचवें वर्ष में खारवेल ने तनसुली नामक स्थान से अपनी राजधानी तक एक नहर (प्रणाली) का जीर्णोद्धार कराया। प्रशस्ति के अनुसार, यह नहर तीन सौ वर्ष पहले नंदराज ने बनवायी थी। इस विषय में ऐतिहासिकों में तीव्र मतभेद है कि यह नंदराज मौर्यों से ठीक पहले मगध का शासन करने वाला सुप्रसिद्ध महापद्मनंद था, अथवा कलिंग का ही कोई पुराना राजा था।

इसके बाद खारवेल ने प्रजा को सुखी बनाने के लिए अनेक कार्य किये। ग्रामीण जनता के कल्याणार्थ उसने करों में छूट दी तथा राजधानी के निवासियों को अनेक प्रकार की सुविधाएं प्रदान कीं। इन कार्यों के लिए राजकोष से कई लाख मुद्राएं व्यय की गयीं। इसी प्रसंग में डा. जायसवाल ने खारवेल द्वारा राजसूय यज्ञ किये जाने का उल्लेख किया है। किंतु श्री बरुआ 'राजसूय' शब्द को शुद्ध पाठ नहीं मानते और इसे राजा द्वारा राज्य की समृद्धि बढ़ाने के लिए किये गये कार्य समझते हैं।

दक्षिण में विजय प्राप्त करने तथा अपनी स्थिति को दृढ़ करने के बाद कलिंगराज खारवेल ने अपने शासन के आठवें वर्ष में उत्तर भारत की ओर ध्यान दिया और उस प्रदेश पर पहला आक्रमण किया।

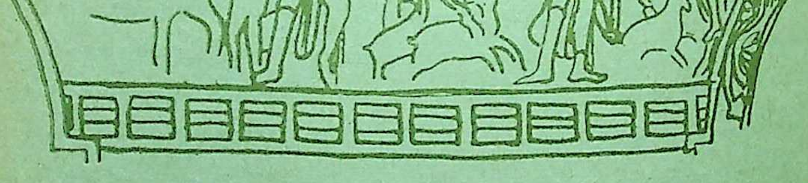

रानीगुंफा में उत्कीर्ण दुष्यंत की मृगया और कण्वाश्रम में प्रवेश के प्रस्तरचित्र की श्रीमती उमा मेहरोत्रा द्वारा रेखानुकृति। इसमें शिल्पी ने 'शाकुंतल' के प्रथम अंक के बजाय महाभारत के आदिपर्व के शकुंतला-आख्यान का अनुसरण किया है।

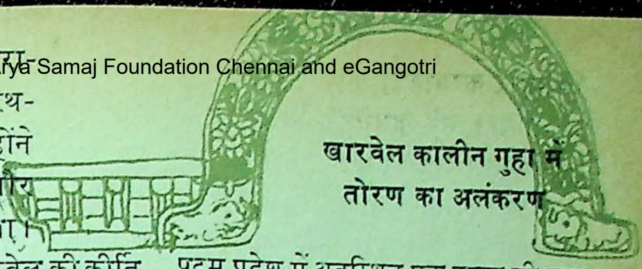

खारवेल कालीन गुहा में तोरण का अलंकरण

उसकी सेनाएं गया जिले की बराबर नाम की पहाड़ियों (गोरथगिरि) में से होकर गुजरीं। उन्होंने वहां के दुर्गों को नष्ट किया और तदनंतर राजगृह का घेरा डाला। इस दुष्कर कर्म के करने से खारवेल की कीर्ति चारों ओर फैल गयी। एक यूनानी राजा (योनराज) तो उसकी सेना के आक्रमण के भय से संत्रस्त होकर मथुरा भाग गया।

डा. जायसवाल आदि ऐतिहासिकों के मतानुसार यह यूनानी राजा डिमीट्रियस था। 'डिमित' पाठ इस मत का आधार है। वस्तुतः यहां यवन राजा का उल्लेख तो स्पष्ट है, किंतु उसके नाम—डिमित या दिमित—का पाठ बहुत संदिग्ध है। श्री दिनेशचंद्र सरकार के कथनानुसार यदि यहां 'दिमित' पाठ को सही माना जाये तो भी यह यूनानी राजा दूसरी शताब्दी ई. पू. के पूर्वार्ध का डिमीट्रियस नहीं हो सकता; क्योंकि वे खारवेल के इस शिलालेख को पहली शताब्दी ई. पू. का समझते हैं। संभवतः वह मथुरा का दिमित नामक कोई अन्य यूनानी राजा था।

खारवेल ने अपने शासन के दसवें वर्ष में 'भारतवर्ष' अर्थात् उत्तर भारत पर दूसरी बार आक्रमण किया; किंतु इसमें उसे विशेष सफलता नहीं मिली। सो अगले वर्ष उसने अपनी सेनाओं का मुंह दक्षिण की ओर मोड़ा और पीथुंड नामक राज्य की राजधानी को जीतकर वहां गधों से हल चलवा दिया। यह स्थान टालमी द्वारा वर्णित पितुंद्र प्रतीत होता है, जोकि आंध्र के मछलीपट्टम् प्रदेश में अवस्थित एक राज्य की राजधानी थी। इसी वर्ष उसने तमिल देश के राजाओं के एक गुट (त्रमिरदेश-संघात) की शक्ति को भंग किया।

उत्तर भारत पर दो बार आक्रमण करने से भी खारवेल को संतोष नहीं हुआ था। अतः अपने शासन के बारहवें वर्ष में उसने तीसरी बार उत्तरापथ के राजाओं पर चढ़ाई की। मगधवासियों के हृदयों में उसने भय उत्पन्न कर दिया और अपने हाथियों और घोड़ों को गंगा नदी का पानी पिलाया। मगध का राजा उसकी चरण-वंदना करने को विवश हुआ और खारवेल मगध से विशाल लूट-पाट के साथ स्वदेश लौटा। इस बार वह एक ऐसी जिनमूर्ति (कलिंगजिन) भी अपने साथ लाया, जिसे तीन सौ वर्ष पूर्व राजा नंद कलिंग से छीनकर ले गया था। संभवतः इसी वर्ष उसने दक्षिण में पांड्य देश के राजा को भी हराया, उससे बहुमूल्य मुक्ता-मणियों के उपहार पाये।

किंतु खारवेल केवल विजयी और प्रबल प्रतापी राजा ही नहीं था; वह सदैव अपनी प्रजा के कल्याण तथा हितचिंता में लगा रहता था। कृषि में सिंचाई के महत्त्व को उसने भली भांति अनुभव किया था। इसके लिए वह तीन सौ वर्ष पुरानी एक नहर का

जीर्णोद्धार करवाकर, उसे अपने राजधानी तक लाया। उसे हाथीगुफा-शिलालेख में 'गंधर्ववेदबुध' यानी संगीतशास्त्र का उत्तम ज्ञाता कहा गया है। उस जमाने में जनता को पहलवानों की कुश्तियां देखने एवं संगीत के जल्से सुनने का बड़ा शौक था, अतः प्रजाजनों के मनोविनोद के लिए वह अपनी राजधानी में मल्लयुद्धों तथा नृत्य-संगीतगोष्ठियों का आयोजन करवाया करता था।

उन दिनों जनता नाटकों में कितनी गहरी दिलचस्पी लेती थी, यह बात इस प्रदेश में बनी गुफाओं की वास्तुकला से तथा उनमें पत्थरों पर उत्कीर्ण चित्रों से भली भांति स्पष्ट होती है। हाथीगुंफा के निकट की इन गुफाओं के बरामदे (मुखमंडप) की पिछली दीवारों पर भारतीय साहित्य और लोकजीवन में अत्यधिक प्रसिद्ध एवं प्रचलित उदयन-वासवदत्ता, दुष्यंत-शकुंतला जैसी प्रणय-कथाओं के विविध दृश्यों का मनोरम तक्षण किया गया है। रानीगुंफा की उपरली मंजिल के बरामदे के ऊपर के भाग में बनी शोभापट्टिका में इस प्रकार के सात दृश्य हैं। उनमें से सर्वोत्तम है दुष्यंत के आखेट और कण्व-तपोवन में शकुंतला के दर्शन का दृश्य।

जैसा कि हम पहले कह आये हैं, खारवेल जैनधर्म का परम भक्त था। उसने तथा उसकी रानी ने जैनधर्म को प्रबल संरक्षण प्रदान किया। उन्होंने मुनियों को उदारतापूर्वक नाना प्रकार के दान दिये, उनके सुखपूर्ण निवास के लिए पहाड़ों को काटकर गुफाएं बनवायीं, उन्हें रेशमी वस्त्र प्रदान किये, उनके खानपान की सुचारु व्यवस्था की। हाथीगुंफा-अभिलेख को लिखवाने का उद्देश्य भी राजा द्वारा कुमारीपर्वत (उदयगिरि) के शिखर पर भिक्षुओं के निवास-गृह तथा जैन मुनियों की सभाओं के लिए एक विशाल मंडप बनवाने के महत्त्वपूर्ण धार्मिक कार्यों का वर्णन करना ही था। इस मंडप को मूर्तियों के चौंसठ चौखटों से अलंकृत किया गया था। इसके बनवाने में राजा ने ७५ लाख मुद्राएं व्यय की थीं, जोकि जैनधर्म के प्रति उसकी अगाध भक्ति और अतिशय उदारता को सूचित करता है।

किंतु जैनधर्म का अनन्य उपासक होते हुए भी खारवेल अन्य धार्मिक संप्रदायों के साथ सहिष्णुता और संमान का व्यवहार करता था। प्रशस्तिकार ने उसे सभी मतों का आदर करने वाला तथा सब मतों के देवालयों की मरम्मत करवाने वाला कहा है।

खारवेल विलक्षण प्रतिभा रखने वाला सैनिक नेता, महत्त्वाकांक्षी राजा तथा प्रजावत्सल शासक था। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह अपने युग का एक प्रतापी राजा था। हाथीगुंफा-अभिलेख में प्रशस्तिकार ने उसे कभी न पराजित होने वाली सेना से संपन्न (अप्रतिहतचक्रवाहनबलः) बताया है और उसकी पटरानी ने अपने अभिलेख में उसे 'कलिंगचक्रवर्ती' कहा है। अशोक ने कलिंग की विजय की थी; खारवेल ने मगध की तीन बार विजय करके कलिंग की पराजय के अपमान का परिमार्जन किया था।

—V/१३५८, पंतनगर, जि. नैनीताल, उ.प्र.

★

विरसा

एल्सा मैक्सवेल

मेरे पिता लाजवाब थे। मैं उनकी इकलौती बेटी थी। सन १९०७ में पिताजी ने मुझे बुलाया और कहा – 'मैं तो मर रहा हूं बेटी, और मैं तुम्हारे लिए कुछ भी छोड़कर नहीं जा रहा हूं। तुम्हें अपने गुजारे का इंतजाम खुद करना पड़ेगा। आखिर कैसे करोगी? तुम देखने में ऐसी खास नहीं हो। न हमारा वंश ही नामी-गिरामी है। तुम्हारे पास पैसे भी नहीं हैं। पर मैं तुम्हें विरसे में कुछ देकर जा रहा हूं–सादे-से तीन नियम। अगर तुम उनका पालन करोगी, तो संसार तुम्हारे कदम चूमेगा।

'पहला नियम है कि "लोगों" से कभी भी डरना नहीं। अक्सर मनुष्य किसी और चीज से उतना नहीं डरते हैं, जितना "लोग" से। उन्हें सदा यही डर लगा रहता है कि "लोग" क्या कहेंग, "लोग" क्या करेंगे, "लोग" यह पसंद नहीं करेंगे, वह पसंद नहीं करेंगे।

'दूसरा नियम इससे भी महत्त्वपूर्ण है। कभी भी बेजान चीजों का संग्रह न करना। तुम समझती हो तुमने उन्हें जमा किया है, असल में वे तुम्हें जमा कर लेती हैं।

'और तीसरा नियम है कि हमेशा सबसे पहले अपने पर खुद हंसना। हर आदमी का कोई हास्यास्पद पक्ष होता है और हर आदमी किसी दूसरे पर हंसना पसंद करता है। सो अगर तुम सबसे पहले खुद ही अपने पर हंस दोगी, तो दूसरों की हंसी बेकार जायेगी और तुम्हें ऐसा लगेगा कि तुमने सुनहरा कवच पहन रखा है।'

पिताजी के इन तीनों नियमों का मैंने हमेशा पालन किया है और बहुत सुखी जीवन बिताया है।

★

कर्त्तारसिंह दुग्गल
की कहानी

एक याद

वही बात हुई । कार फेल हो गयी । ड्राइवर ने पोला-सा मुंह बनाकर कहा—'जी, इसके ठीक होने का ......' और वह चुप हो गया।

'कोई भरोसा नहीं ।' मैंने उसका वाक्य पूरा किया। ड्राइवर चुप ही रहा।

मैं दांत भींचकर रह गया। मैंने कहा भी था, मैं ट्रेन में चला जाता हूं, कार का कोई भरोसा नहीं । मुझे गुलबर्गा जरूर पहुंचना था; अगर मैं नहीं पहुंचा तो प्रदर्शनी का उद्घाटन नहीं हो सकेगा। वहां तैयारियां पूरी हो चुकी थीं। पिछली रात कार्यकर्ताओं से टेलिफोन पर मेरी बात हुई थी।

'गाड़ी का एक्सल टूट गया है। और बिना एक्सल के गाड़ी चल नहीं सकती। किसी और गाड़ी से बांधकर भी इसे ले जाया नहीं जा सकता। मैं किसी आती-जाती बस में बैठकर शहर जाऊंगा और फिर एक्सल बदला जायेगा।' ड्राइवर अपनी समस्या बता रहा था। मुझे उससे पूरी सहानुभूति थी।

सड़क के किनारे, खेतों की रखवाली कर रहे किसानों से पता चला कि वहां से कोई दो किलोमीटर दूर एक स्टेशन है। गाड़ी के आने में अभी घंटा-डेढ़ घंटा होगा। अगर मैं इसी समय चल दूं तो शायद गाड़ी को पकड़ सकूं। मैं ड्राइवर को समझा-बुझाकर स्टेशन की ओर चल पड़ा। मेरा मन कह रहा था, अगर अपना इलाका होता तो कोई कहता—'मैं आपको अभी अपनी घोड़ी पर स्टेशन पहुंचा आता हूं। ..... मेरा बेटा आपको साइकल पर छोड़ आयेगा।' मगर इन लोगों का दोष भी क्या था? इस ओर गरीबी इतनी है कि अभी तक साइकल इन गांवों में नहीं पहुंची। और घोड़ी रखने का इधर रिवाज नहीं।

सड़क पक्की थी। लेकिन उसके दोनों ओर चलने का रास्ता कच्चा था। कच्चा और ढोरों के खुरों से कटा हुआ। किसी तरह जल्दी-जल्दी चलकर मैं स्टेशन पर पहुंच गया। गाड़ी के आने में अभी काफी समय था। टिकट लेकर मैं प्लैटफार्म पर टहलने लगा। कहीं कोई सवारी नजर नहीं आ रही थी। सामने एक पेड़ के नीचे कुछ स्थानीय कामगार लेटे-बैठे थे। शायद उन्हें भी गाड़ी पकड़नी थी। शायद यों ही सुस्ता रहे थे। कई औरतें, मर्द, बच्चे।

गाड़ी के आने में समय था। इसलिए मैं प्लैटफार्म पर टहल रहा था। एक छोर से दूसरे छोर तक चक्कर काट रहा था। मैंने महसूस किया, जैसे सामने नीम के पेड़ के नीचे, कामगारों की टोली में से एक बांकी

औरत बिट-बिट मेरी ओर देखे जा रही है। जब भी मेरी नजर उधर जा पड़ती, वह टुकुर-टुकुर मुझे निहार रही होती। कुछ देर के बाद उसने अपना स्तन निकालकर अपने नंग-धड़ंग बच्चे को पिलाना शुरू कर दिया। एक स्तन बच्चा पी चुका, तो दूसरा स्तन उसके मुंह में डाल दिया। बच्चा दूध पी रहा था, मां उसके बाल संवार रही थी, उसकी आंखें साफ कर रही थी, उसकी नाक पर लगा मैल उतार रही थी। गोरा-चिट्टा बच्चा, सांवली-सलोनी मां की गोद में मचल रहा था। बार-बार अपनी मां के गाल पर चपत मारने लगता। और इस पर तिलंगन खिलखिलाकर हंस पड़ती। हर बार बच्चा उसके गाल पर चपत मारता और मां आगे बढ़कर उसे चूम लेती। कभी ओंठों को, कभी माथे को। कितनी-कितनी देर उसके ओंठों को दांतों में लेकर जैसे चबाती रहती। इतनी देर से टहल रहा मैं मां-बच्चे का यह तमाशा देख रहा था। औरत सचमुच लुभावनी थी। शीशम के तने में से जैसे किसी ने उसे तराशा हो। बच्चा बड़ा प्यारा था, गोरा-गोरा, मक्खन का पेड़ा।

कुछ देर टहलने के बाद, मुझे थकावट-सी महसूस हुई। स्टेशन तक पहुंचने के लिए भी तो मुझे चलना पड़ा था। मौसम सुहावना था, लेकिन सफर फिर भी सफर होता है। इतने में चाय का एक स्टाल खुल गया। मैं स्टाल के सामने जा खड़ा हुआ। चाय का प्याला मेरे सामने रखकर स्टाल वाले ने एक केक का 'पीस' मुझे पेश किया। मैंने ध्यान

चित्र : [illegible]

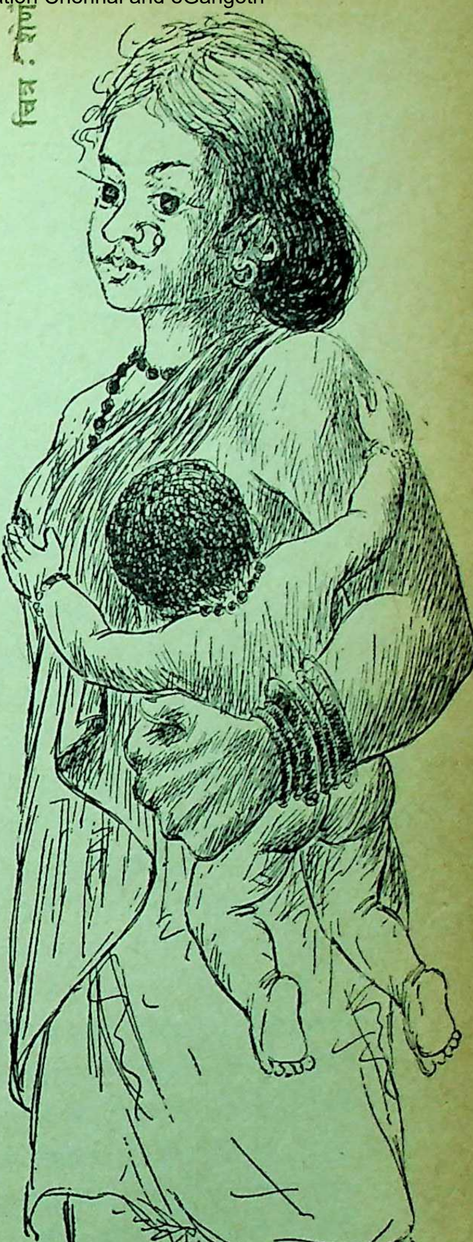

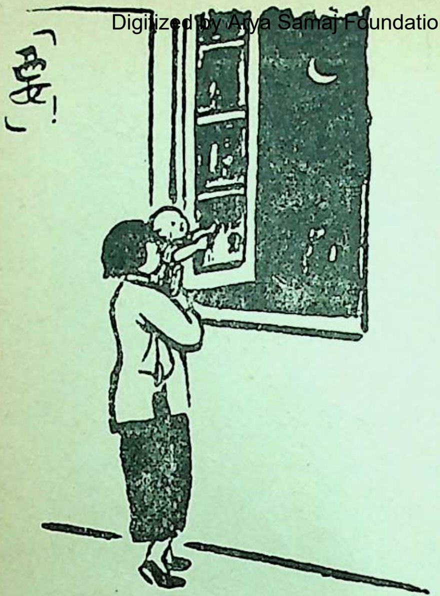

चंदा मामा दूर के [चित्र : फेंग त्से-काई]

नहीं दिया। फिर स्टाल वाले ने चाकलेट के मर्तबान की ओर इशारा किया, फिर टाफियों की पिटारी की ओर, पर मैंने कोई दिलचस्पी नहीं दिखायी। मैं तो इडली खाना चाह रहा था। स्टाल वाला दौड़कर सामने के ढाबे से मेरे लिए इडली ले आया। इडली और सांबार। एक, दो, तीन इडलियां मैं खा गया। फिर चाय का एक और प्याला ले लिया।

गाड़ी का दूर-दूर तक कोई निशान नहीं था। मैं बड़े आराम से चाय पी रहा था। रेल्वे-स्टेशन की मिक्श्चर चाय मुझे हमेशा अच्छी लगती है। अगर कुल्हड़ में मिले तो और मजा आता है। कुल्हड़ की सोंधी-सोंधी खुशबू, गर्मियों में तप रही धरती पर वर्षा के पहले छींटों की सुगंध, और दूध-पीते बच्चे के मुंह में से उसकी मां के स्तनों की सुवास, ये तीन खुशबुएं मुझे बड़ी प्यारी लगती हैं।

मैंने देखा, बांकी तिलंगन अपने गोरे-चिट्टे बच्चे को गोद में लिये स्टाल की ओर आ रही है। पतली-लचीली, धुआं-धुआं-सा मुश्की रंग, मोटी-मोटी काली आंखें। पट-पट मेरी ओर देखती, धीरे-धीरे चली आ रही थी—मंद-मंद मुस्कराती हुई। जैसे कोई किसी को जानता हो, पहचानता हो।

चाय के स्टाल के पास पहुंचकर, उसने इधर-उधर कांच के मर्तबानों और टीन के डिब्बों में सजी चीजों की ओर देखा। फिर दो-चार चीजों का भाव पूछा। मैंने सोचा, तिलंगन रस्क लेगी। रस्क देकर अपने बच्चे को बहला लेगी। बच्चा कैसे बांहें फैला-फैलाकर खाने की चीजों पर टूट पड़ना चाहता है। लेकिन नहीं, चंपा के फूल की तरह खिले उस गोरे-चिट्टे बच्चे की मां ने केक का वह पीस खरीदा, जिसके लिए मैंने इन्कार किया था। फिर पेस्ट्री, कैडबरी चाकलेट, फिर टाफियां। हर चीज लेकर बच्चे के सामने रखती जाती। और वह केक, पेस्ट्री, चाकलेट, टाफियां ऐसे खा रहा था, जैसे इन्हीं पर पला हो। तिलंगन ने अपने लिए कुछ नहीं लिया। स्वयं किसी भी चीज को मुंह नहीं लगाया। अनंत प्यार आंखों में भरकर, बच्चे की ओर देख रही थी वह। जितनी देर बच्चा मिठाइयां खाता रहा, मां ने उसके लिए दूध का प्याला तैयार करवा लिया। पोर-पोर मलाई उसने

डलवायी।

'तूने दूध में मलाई तो पंजाबियों की तरह डलवायी है।' स्टाल वाले ने उससे तेलुगू में कहा।

तिलंगन ने सुना तो खिलखिलाकर हंस पड़ी, जैसे झरना फूट पड़ा हो। हंसती गयी, हंसती गयी। टाफियां खा रहे अपने बच्चे को चूमने लग गयी। बार-बार उसे लाड़ करती, जैसे उसकी आंखों में कुछ ढूंढ़ रही हो।

सचमुच हसीन औरत थी। और फिर मां। सोने में जैसे सुगंध हो। उसकी शक्ल-सूरत, उसकी चाल, उसकी हंसी, उसकी हरकतें, जैसे कोई पटरानी हो। बालों को बेपरवाही से पीछे हटाकर उसने गांठ लगा रखी थी। बालों की लट पीछे लटक रही थी, जैसे उड़-उड़कर उसकी पीठ चूमने के लिए बेताब हो रही हो। उसकी मोटी-मोटी काली आंखों में कुछ खिला-खिला सा था। और एक हल्की-सी उदासी थी, जैसे कोई मीठी याद कहीं छिपी हुई हो। उसकी कसी हुई चोली में उसकी छलक-छलक पड़ती छातियां काबू में नहीं आ रही थीं। बार-बार मेरी नजर उन पर जा पड़ती और लगता जैसे एक नशा-सा मुझ पर चढ़ रहा हो।

मैं कुछ देर से दूर कोने में हटकर एक पुराने अखबार को देख रहा था। तिलंगन बच्चे को मलाई वाला दूध पिलाकर वापस अपनी टोली में नहीं गयी। अब वह बच्चे को सामने नल पर नहला रही थी। अपनी धोती के एक कोने में उसने साबुन की एक टिकिया बांध रखी थी। साबुन को खोलकर उसने झागों से बच्चे को सिर से पांव तक ढंक दिया। और बच्चा भी क्या मजाल जो जरा भी रोया हो, हंसते-हंसते बाल धुलवा रहा था, मुंह-माथे को साफ करवा रहा था। कितनी देर बच्चा पानी के नल के नीचे बैठा रहा। पानी से खेलते हुए बार-बार मां पर छींटे मारने लगता। तिलंगन उस पर मानो बलि-बलि हो रही थी। आंखों-आंखों से ही उस पर अपना प्यार लुटा रही थी।

जब बच्चा जी भरकर नहा चुका, तिलंगन ने बांहों में उठाकर उसे एक-दो बार उछाला, ताकि उसका पानी निचुड़ जाये। अपनी धोती के पल्लू से उसके बदन को सुखाने लगी। बच्चे को नहलाकर मां ने अपना मुंह-हाथ धोया, बालों को खोलकर फिर से जूड़ा बनाया। और खिली-खिली-सी बच्चे के साथ खेलने लग गयी।

कुछ देर बाद मुझे महसूस हुआ जैसे तिलंगन बार-बार मेरी ओर इशारा करके बच्चे से कुछ कह रही है। वह क्या कह रही थी, क्यों मेरी ओर इशारा करती थी, मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

इतने में गाड़ी आ गयी। गाड़ी आने की घंटी, फिर स्टेशन पर कर्मचारियों की भाग-दौड़, फिर दूर से आ रहे इंजन की चीखें, फिर छुक-छुक गाड़ी का शोर। गाड़ी प्लैटफार्म पर आ रुकी। मैं एक डिब्बे में जा बैठा। मेरे अलावा पहले दर्जे के उस डिब्बे में और कोई नहीं था।

स्टेशन पर कई सवारियां चढ़ीं, कई

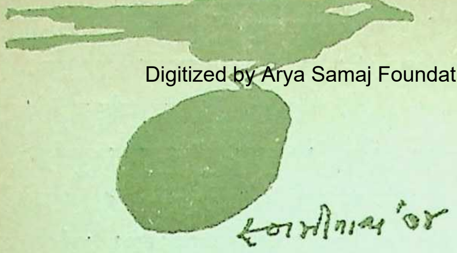

चित्र : स्वामीनाथ

उतरीं। अपनी ओर का कोई आदमी मुझे नजर नहीं आया। इस तरफ कोई पंजाबी कभी-कभार ही आता है।

गाड़ी आने की अफरा-तफरी में, गाड़ी में बैठने की जल्दी में, मैं तिलंगन को जैसे भूल ही गया। अपने अकेले डिब्बे में गद्दीदार सीट पर बैठा मैं एक उपन्यास पढ़ रहा था।

'सरदारजी नें.........।' कुछ देर बाद अचानक मेरे कानों में यह आवाज आयी। और मैंने किताब से आंखें उठाकर देखा। सामने कुछ कदमों की दूरी पर मेरी खिड़की के पास प्लैटफार्म पर वह तिलंगन खड़ी थी। उसकी गोद में उसका बच्चा था। यह तो पंजाबी बोल रही थी!

'सरदारजीनें.........।' वह बार-बार बच्चे से कह रही थी। और बार-बार उसका ध्यान मेरी ओर दिला रही थी।

अब मुझसे रहा न गया। मैंने उस बच्चे को बुलाया। जैसे तिलंगन की जान में जान आ गयी हो। वह बच्चे को लेकर खिड़की के पास आ गयी। मैं बच्चे के गालों को थपथपा रहा था। उससे बातें करने की कोशिश कर रहा था। मां जैसे खुशी से फूली न समा रही थी। कितनी देर खिड़की [illegible] खड़ी, बच्चे को लाड़ करवा रही। इतने में गाड़ी के चलने की घंटी हु

मेरे पूछने पर तिलंगन ने बताया कि मजदूरी करती है, कभी किसी ठेकेदार कभी किसी ठेकेदार की। सामने ही रे लाइन बन रही थी।

'इस बच्चे का बाप क्या करता है मैंने जल्दी में उससे पूछा। गाड़ी चलने ही थी। तिलंगन ने कोई जवाब नहीं दि

'इसके बाप का क्या नाम है ?' मैंने फि सवाल किया। इतने प्यारे बच्चे का ब जरूर कोई खूबसूरत आदमी होगा, मु विश्वास था।

तिलंगन इस सवाल को भी टाल गयी।

गाड़ी के चलने की सीटी बज रही थी। और मैंने जल्दी में तिलंगन के बच्चे को प्यार करते हुए फिर सवाल किया–'कौन है इस बच्चे का बाप ?'

तिलंगन ने आंखों में आंसू भरकर मेरी ओर देखा। गाड़ी चल पड़ी थी।

गाड़ी जा रही है, यह देखकर जैसे उसकी जान ही निकल गयी। 'सरदारजी नें .....।' 'ए सरदारजी नें......।' तिलंगन अपने बच्चे का मुंह घुमाकर मेरी ओर कर रही थी। बार-बार मुझे देखने के लिए उसे कह रही थी। तब तक गाड़ी स्टेशन से आगे निक चुकी थी।

—पी-७ हौज खास एन्क्लेव,
नयी दिल्ली-१६

★

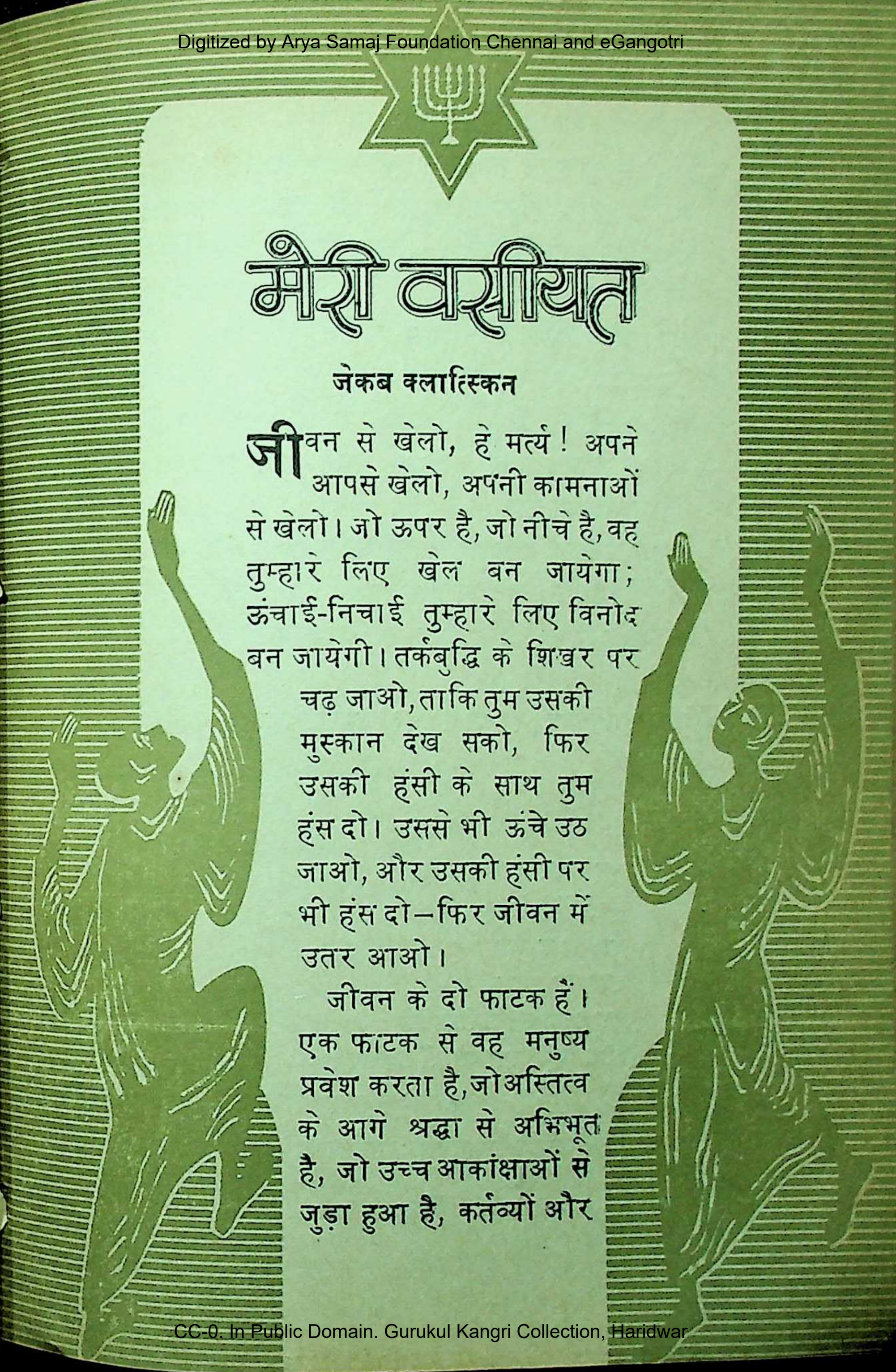

मेरी वसीयत

जेकब क्लात्स्किन

जीवन से खेलो, हे मर्त्य! अपने आपसे खेलो, अपनी कामनाओं से खेलो। जो ऊपर है, जो नीचे है, वह तुम्हारे लिए खेल बन जायेगा; ऊंचाई-निचाई तुम्हारे लिए विनोद बन जायेगी। तर्कबुद्धि के शिखर पर चढ़ जाओ, ताकि तुम उसकी मुस्कान देख सको, फिर उसकी हंसी के साथ तुम हंस दो। उससे भी ऊंचे उठ जाओ, और उसकी हंसी पर भी हंस दो—फिर जीवन में उतर आओ।

जीवन के दो फाटक हैं। एक फाटक से वह मनुष्य प्रवेश करता है, जो अस्तित्व के आगे श्रद्धा से अभिभूत है, जो उच्च आकांक्षाओं से जुड़ा हुआ है, कर्तव्यों और

आदेशों से प्यार करता है; वह इंद्रिय-दमन में आनंद पाता है; गंभीर मन से वह ऊंचे चढ़ता है, आरोहण करता है, हालांकि ध्येय की भारी गठरियां उसकी कमर झुका रही होती हैं। दूसरे फाटक से दूसरा मनुष्य प्रवेश करता है, जो समस्त ध्येयों से और ध्येयों की क्षुद्र शाश्वतताओं से ऊपर उठ गया है, जिसने जीवन की चेरी तर्कबुद्धि के जूए को उतार फेंका है और उसकी नैतिकता की जंजीरों से अपने को स्वतंत्र कर लिया है, जिसने ज्ञान पर एक घड़ी राज्य किया है और उसके अज्ञान को देख लिया है—हल्के-फुल्के मन से वह नीचे उतरता है, मुस्कराता है।

मैं इस उतरने वाले को उस चढ़ने वाले से अधिक प्रशंसनीय मानता हूं।

जीवन से खेलो हे मर्त्य! खतरे को तलाशो और अगर वह न मिले तो उसे जन्म दो। अथाह में झांको और डरो। जो महाभय से नहीं डरा है, उसने महाजीवन नहीं जिया है। डरो और हंसो।

[जेकब क्लात्स्किन (१८८२-१९५१) यहूदी विचारक थे।]

★

दया

एक सूरज मर जाता है
सितारों के लिए
आदमी कहलाता है
दयावान, किंतु
एक छोटा-सा झरोखा भी
खोल नहीं पाता बहारों के लिए।

—नारायणलाल परमार

[छत्तीसगढ़ी से अनुवाद: सरोज द्विवेदी]

★

सार्वभौम वैदिक प्रार्थनाएं

डा. मंगलदेव शास्त्री

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।
यद् भद्रं तन्न आ सुव ।।

दिव्यगुण-युक्त भगवन् ! आप सचराचर जगत् के प्रेरक हैं। आप हमारे समस्त दुर्गुणों को हमसे दूर कीजिये और जो हमारे लिए वास्तविक कल्याण है, उसका हमें पात्र बनाइये। (यजुर्वेद ३०·२)

*

अग्ने नय सुपथा रायेऽस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो
भूयिष्ठां ते नमउक्तिं विधेम ।।

दिव्यतेजोमय भगवन् ! आप ही वास्तविक सत्यमार्ग के ज्ञाता तथा प्रदर्शक हैं। आप हमें उस सन्मार्ग का प्रदर्शन कीजिये, जिसके द्वारा हम भौतिक और आध्यात्मिक संपत्ति को प्राप्त कर सकें। भगवन् ! आप हमारी सारी कुटिलता तथा अपूर्णता को हमसे दूर कीजिये। इसके लिए हम बार-बार आपको प्रणाम करते हैं।

(यजुर्वेद ४०.१६)

*

महीरस्य प्रणतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः।
नास्य क्षीयन्त ऊतयः।।

परमैश्वर्यशाली भगवान की लीला या चरित्रों की कोई सीमा नहीं है। इस अनंतानंत विश्व-प्रपंच के निर्माता के संख्यातीत गुणों का ज्ञान भला कौन कर सकता है? हम अल्पज्ञ जीवों का कल्याण इसी में है कि हमें सदा यह विश्वास रहे कि भगवान सबके रक्षक हैं और इस सारे विश्व की रचना का उद्देश्य हमारा कल्याण ही है।

(ऋग्वेद ६·४५·३)

*

ममाग्ने वर्चो विहवेष्वस्तु
वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम ।

हे प्रभो! ......[चित्र : मार्विन पीक]

मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्र-
स्त्वयाध्यक्षेण पृतनां जयेम ।।

भगवन् ! आपका अपरिमेय तेज समस्त विश्व में व्याप्त होकर उसे कार्यक्षम बना रहा है । आप हम पर ऐसी कृपा कीजिये कि हम आपके उस परम तेजस्वी स्वरूप का गुणगान करते हुए आपके संरक्षण में जीवन-यात्रा के विभिन्न प्रकार के संघर्षों में अपने को तेजस्वी और बलवान बनायें, जिससे कि समस्त दिशाएं हमारे संमुख सिर नवायें और विरोधी शक्तियों पर हम विजय प्राप्त कर सकें। (ऋग्वेद १०·१२८·१)

*

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि
बलमसि बलं मयि धेहि
ओजोऽस्योजो मयि धेहि
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि
सहोऽसि सहो मयि धेहि ।।

भगवन् ! आप तेजःस्वरूप हैं; आप मुझमें तेज की स्थापना कीजिये। आप पराक्रमशाली हैं; मुझे पराक्रमशाली बनाइये। आप बलवान हैं; मुझे बल दीजिये। आप जीवनी-शक्ति के केंद्र हैं; मुझमें जीवनी-शक्ति का संचार कीजिये। आप अदम्य उत्साह के स्रोत हैं; मुझे उत्साहसंपन्न बनाइये। आप विजयशील हैं; मुझे विरोधी शक्तियों पर विजयी बनाइये। (यजुर्वेद १९·१)

*

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ।।

मनुष्यता के उच्च आदर्श की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य मनुष्य को आदर तथा भ्रातृभाव से देखे। इसलिए हे मनुष्यो ! भाई भाई के प्रति और बहन बहन के प्रति द्वेष न रखे। तुम्हारे मंतव्य तथा आदर्श एक हों और तुम परस्पर मधुर तथा कल्याणमय वाणी का उपयोग करो। (अथर्ववेद ३.१०.३)

*

वाङ्म आसन्नसोः प्राणश्चक्षुरक्ष्णोः श्रोत्रं कर्णयोः। अपलिताः केशा अशोणा दन्ता बहु बाह्वोर्बलम् ।। ऊर्वोरोजो जङ्घयोर्जवः पादयोः प्रतिष्ठा अरिष्टानि मे सर्वात्मानिभृष्टः।। (अथर्ववेद १९.६०.१-२)

भगवन् ! आपकी कृपा से मेरी सब शारीरिक शक्तियां स्वस्थ तथा अक्षुण्ण रहें। मेरे मुख में वाणी, नासिका में प्राण, आंखों में दृष्टि और कानों में श्रवण-शक्ति हो। मेरे केश कृष्णवर्ण और दांत सुदृढ रहें। मेरी भुजाओं में पर्याप्त बल हो। मेरी जांघों में शक्ति, टांगों में वेग और पैरों में स्थिरता रहे। और मेरे सारे अंग नीरोग हों। मैं स्वयं प्रफुल्लित रहूं।

★

मिलावट पुराण

अमृत राय

॥१॥

लोगों की तो बात मत करिये। उन्हें तो कुछ न कुछ होना चाहिये। सो आजकल इसी का जोर है। जहां जाइये उसी मिलावट की हाय-हाय। जैसे कोई दूसरी बात ही नहीं बची करने को। चार मरदुए मिलें तो वही और चार देवियां मिलें तो वही। बल्कि मुझे तो लगता है कि अब जहां दोनों आपस में भी मिलते होंगे—मिलते ही होंगे कहीं न कहीं!—वहां भी अब शायद वह पहले वाली घुलावट की बातें नहीं, यही मिलावट की बातें होती होंगी। पक्का जान लो, इस दुनिया को अब रसातल जाने में देर नहीं—अडल्टरी से ज्यादा अडल्टरेशन की चर्चा होने लगी है!

यह भी एक तरह का कौआरोर है। एक ने कांव-कांव शुरू की नहीं कि दूसरे सब भी करने लगे। अपनी अकल तो कोई लगाना ही नहीं चाहता। जिसे देखो एक शिकायत का दफ्तर खोले बैठा है। पूछो भला मिलावट के बिना कहीं कुछ है भी? मिलावट न होती तो यह सृष्टि भी न होती, हम-आप भी न होते। कालिदास ने पार्वती-परमेश्वर को वाक् और अर्थ के समान संपृक्त कहकर उनकी वंदना की है तो कुछ समझ-बूझकर ही की है। इस संपृक्ति के बिना जगदंबा भी कुछ नहीं कर सकती थीं। अब इसको आप चाहे मिलावट कह लें चाहे कुछ और, दूसरी कोई मिलावट न होती है और न हो सकती है। आप इस रहस्य को समझें या न समझें, गोस्वामी तुलसीदास समझते थे, जिन्होंने इसी का भाषांतर अपने शब्दों में इस प्रकार किया है:

गिरा अरथ जल वीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।

कितनी साफ बात है। वाक् और अर्थ पानी और उसकी लहर के समान कहने के

लिए अलग-अलग हैं, असल में दोनों एक हैं।

वैसे ही जैसे सगुण-निर्गुण, विद्या-अविद्या, ज्ञान-अज्ञान, धर्म-अधर्म, सुख-दुःख, जड़-चेतन, प्रकृति-पुरुष, आत्मा-परमात्मा, जीव-ब्रह्म, सभी कहने के लिए अलग-अलग हैं, पर वास्तव में सब एक हैं।

लेकिन मनुष्य की बुद्धि पर परदा पड़ा हुआ है—उसी का नाम माया है—इसलिए वह वस्तुओं को अलग-अलग करके, अलग-अलग रूपों में देखता है। योग से बुद्धि का यह परदा हट जाता है और यह समस्त सचराचर सृष्टि एक दिखाई पड़ने लगती है। इसी को अद्वैत कहा है। अर्थात् दो नहीं, एक। बाह्यतः दो, अंततः एक।

इसी बात को समझाते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है :

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ।।

अर्थात् जो भी है मैं उस सबमें हूं और वह सब मुझमें है। योगयुक्त आत्मा सबको ऐसी ही समदृष्टि से देखती है।

यही सार-मर्म है उनके विराट् रूप का। इसीलिए बार-बार उन्होंने इसी बात को अलग-अलग ढंग से कहा है :

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ।।

अर्थात् जो मुझको सबमें देखता है और सबको मुझमें देखता है, वह कभी मुझसे नहीं बिछुड़ता और न मैं उससे बिछुड़ता हूं।

इतना ही नहीं, भगवान की समदृष्टि में यहां अच्छे-बुरे का भी कोई विचार नहीं है :

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।

अर्थात् मैं सबमें समान रूप से रहता हूं। न मैं किसी से द्वेष करता हूं और न कोई मेरा प्रिय है।

कितनी स्पष्ट उक्ति है! भ्रांति के लिए स्थान ही नहीं। यह तो इस देश का दुर्भाग्य है कि हम अपने धर्मशास्त्रों को उठाकर देखने तक का कष्ट नहीं करते और झूठमूठ शोर मचाये जाते हैं। चीजों में मिलावट देखना ही भूल है। अद्वैत में मिलावट कैसी? जो मिलाया गया और जिसमें मिलाया गया, सब तो एक है। दूध भी वही, पानी भी वही। ग्वाले ने दूध में और दूध न मिलाकर एक का तीन पानी मिला दिया, तो कौन-सा ऐसा अनर्थ हो गया, जो इतना सब गुल-गपाड़ा मचाये हो!

गोसाईंजी द्वैत वेदांत को लेकर चले—लेकिन पहुंचे वहीं जहां गीताकार पहुंचा था। उनके मतानुसार भी मिलावट भागवत व्यापार है। कहते हैं :

जड़ चेतन गुन दोस मय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार।।

अर्थात् यह जड़-चेतन और गुण-दोषमय विश्व स्वयं करतार ने बनाया है। [इसलिए बेकार हल्ला-गुल्ला मत करो।] नीर-क्षीर-विवेक रखने वाले हंस-गुण-संपन्न संत लोग पानी को अलग करके दूध को पी जाते हैं।

यह गोसाईंजी की ही महिमा है कि हम सब देश के कोटि-कोटि नर-नारी रोज यही करते हैं, साल के तीन सौ पैंसठों दिन। अंतर केवल इतना है कि हम सब हंसगुण-संपन्न संत नहीं हैं—और सच तो यह है कि हमारा उस बात पर विश्वास भी नहीं है; हंस नहीं, हंस का बाप भी दूध का दूध और पानी का पानी नहीं कर सकता, क्योंकि दूध खुद पानी है, जैसा कि हम तो हम हमारा वह बिनपढ़ा ग्वाला भी जानता है! अतः यह वारि-विकार दूर करने का काम हम खुद न करके उसी परमशोधक अग्नि को सौंप देते हैं, जिसने कभी स्वयं जानकीजी की भी परीक्षा ली थी।

फिर क्या फायदा मिलावट-मिलावट रटने से, जब भगवानजी ने ही इस संसार को गुण-दोषमय बनाया है :

भलेउ पोच सब बिधि उपजाये।
गनि गुन दोस बेद बिलगाये।।
कहहिं बेद इतिहास पुराना।
बिधि प्रपंचु गुन अवगुन साना।।

वेदों ने अगर हम पर यह कृपा न की होती कि भले-बुरे को अलग करते फिरें, तो हम बड़े आराम से होते—हमें पता ही न होता कि क्या भला है और क्या बुरा, वैसे ही जैसे गैया-गोरू को इसका कुछ पता नहीं होता, क्योंकि उनके यहां ये सब बेद-लबेद नहीं! आराम से बैठे पागुर करते रहते हैं। दुनिया गड्डमड्ड है तो हो। भगवान ने कुछ सोच-समझकर ही तो उसको ऐसा बनाया होगा। फिर हम क्यों उनके कारखाने में दखल देने जायें? हमारे पास क्या उनसे ज्यादा अक्किल है? सच बात है, असल भगवद्भक्त तो वही गैया-गोरू हैं जो कान-पूंछ हिलाये बिना सब कुछ चुपचाप झेल जाते हैं। हमारी-आपकी भक्ति कोई भक्ति नहीं। जहां पूर्ण

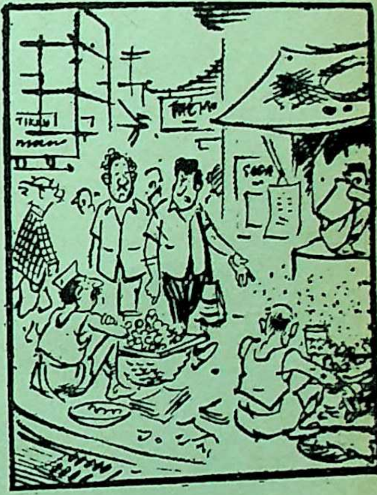

न-न, इस आदमी से नहीं, दूसरे से खरीदेंगे। इसकी मिठाई पर तो मक्खियां तक नहीं बैठ रही हैं, जरूर इसमें मिलावट होगी।
[लक्ष्मण : टाइम्स आफ इंडिया।]

आस्था नहीं, वहां भक्ति कहां ?

इस प्रकार आप चाहे द्वैत वेदांत की दृष्टि से विचार करें और चाहे अद्वैत वेदांत की दृष्टि से, यह जो मिलावट नाम का व्यापार है उसका सिद्धांत-पक्ष नितांत सबल है।

॥२॥

उसका सिद्धांत-पक्ष जितना ही सबल है, उसका व्यवहार-पक्ष उतना ही प्रबल। उसके दिगंतव्यापी साम्राज्य के आगे अशोक और अकबर का साम्राज्य कुछ भी नहीं। और जैसा चक्रवर्ती यह साम्राज्य है, वैसी ही विराट् मेधा उसके पीछे काम करती है। आवश्यक भी है। मिलावट न हो तो लोग मिलें कैसे। मिलावट ही तो भारत की भावात्मक एकता की आधारशिला है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और कामरूप से लेकर कच्छ तक आपको अनेकानेक धर्म, अनेकानेक भाषाएं, अनेकानेक संस्कृतियां दिखाई पड़ेंगी; पर सबको एकता के सूत्र में पिरोने वाली चीज यही मिलावट है। कहां तो देश को चाहिये कि उन लोगों का उचित संमान करे जो मिलावट के इस महायज्ञ में तन-मन-धन से अनुक्षण लगे हैं, और कहां यह देश ऐसा कृतघ्न है कि उन लोगों की बुराई करते नहीं अघाता !

मिलावट .... मिलावट ...... मिलावट। कान पक गये सुनते-सुनते। मगर बात की तह में पैठकर देखो तो कहीं कुछ नहीं।

जैसे घी को ही लीजिये। जिसे देखिये उसके नाम को रो रहा है। किसी कीमत शुद्ध घी नहीं मिलता। मैं कहता हूं, बहुत अच्छी बात है कि नहीं मिलता। आपको खुश होना चाहिये। कौन नहीं जानता कि घी आदमी का जानी दुश्मन है। सच्चे अर्थों में हार्दिक शत्रु। जिस डाक्टर से मन करे पूछ लीजिये। घी आपके पेट में गया नहीं कि आपका कोलेस्टेरोल बढ़ा नहीं। बड़ी विकराल चीज है यह कोलेस्टेरोल। तमाम हार्ट-अटैक उसी से होते हैं। होंगे ही। घी की चिकनाई खून में जाकर जम जाती है, फिर बेचारा दौड़े कैसे। और जब दिल को ठीक से खून नहीं पहुंचेगा तो वह बैठ ही जायेगा। यह तो कोई ऐसी महीन बात भी नहीं। दिल को अपनी चलत-फिरत के लिए चाहिये खून, और आप उसको देते हैं घी ! अजब उलटी खोपड़ी है लोगों की! घी खाते रहेंगे और मरते रहेंगे। मरिये, अगर ऐसा ही शौक चर्राया है घी खाने का ! अच्छा तो होता कि घी दुनिया से उठ ही जाता, लेकिन जब तक नहीं उठता तब तक उसके बुरे असर को जितना कम कर सको वही करो।

इंसाफ की बात तो यही थी कि आप दौड़कर अपने उस हितैषी को गले से लगा लेते जो आपके घी में मिलावट करके, यानी घी के घीपन को कम करके आपको मौत के मुंह में जाने से बचा रहा है, और नेकी कर कुएं में डाल, इस खूबसूरती से बचा रहा है कि आपको कानो-कान खबर तक नहीं होती कि उसने आपके साथ इतना बड़ा एहसान किया

लेखक
अमृत राय

है–वरना आप शायद उसको यह नेकी करने भी न दें–लेकिन आप ऐसे नाशुक्रे हैं कि अपने उस मेहरबान को सौ-सौ गालियां सुनाते हैं। इसी को तो कहते हैं, होम करते हाथ जलता है।

दूध में मिलावट की बात तो और भी कच्ची है, यानी कि जितना कुछ हम ऊपर विचार कर चुके हैं उससे भी ज्यादा कच्ची। कभी सोचा है आपने, आपके पाव-भर दूध में अगर आध सेर पानी न मिला हो तो क्या होगा ? होगा यही कि जब आप पकाने के लिए दूध को आग पर चढ़ायेंगे तब [आपके खून के अलावा जिसकी चर्चा यहां अप्रासंगिक है !] सीधे-सीधे आपका दूध जलेगा जब कि अभी उस पर आंच भी नहीं आती, क्योंकि उसके चारों तरफ पानी लहरें मार रहा होता है ! इस तरह ग्वाला जो दूध में पानी मिलाता है वह अपने किसी छोटे लाभ के लिए नहीं, आपके दूध की सुरक्षा के लिए–यानी कि जितना भी दूध आपके उस दूध में है, उसकी सुरक्षा के लिए। लेकिन लोग ऐसे एहसानफरामोश हैं कि बेकार बेचारे को बदनाम करते फिरते हैं। सब भाग्य की विडंबना है, या कह लीजिये कि समय का फेर है। द्वापर में कन्हैयाजी मक्खन की चोरी करते थे तो लोग उनको सिर आंखों पर लिये फिरते थे, आज इस कलजुग में उन्हीं कन्हैयाजी का वंशज वही काम करता है तो लोग उसको बुरा-भला कहते हैं।

उसी तरह कड़वे तेल के बारे में। लोगों को शिकायत है कि उसमें मोबिल आयल मिलाया जाता है–कि जैसे वह कहीं फोकट का मिलता हो; आंख निकल आती है एक लिटर खरीदने में ! फिर भी दुकानदार मिलाता है तो क्यों मिलाता है ? इसलिए कि तेल की

ताकत उससे बढ़ जाती है। मोबिल आयल कोई ऐसी-वैसी चीज नहीं है। चौदह घोड़ों की ताकत वाली मोटरगाड़ी को ठेल ले जाता है, सौ-सौ हाथियों-जैसी जबरजंग मशीनें चलती हैं उसी के दम से तो अपनी यह पांच हाथ की काया किस गिनती में है ! मामूली सरसों का तेल बेचारा कितना क्या कर सकता है—इसके पहले कि वह आपको पुष्ट करे, खुद उसको पुष्ट करने के लिए मोबिल आयल जरूरी है, भले महंगा मिलता हो दुकानदार को इसकी चिंता नहीं।

वही हाल शक्कर में मिलायी जाने वाली रासायनिक खाद का है। कितनी दुर्लभ चीज है। किसान को अपनी खेती के लिए नहीं मिलती, लेकिन दुकानदार सारी दुनिया छानकर उसे ले आता है, सस्ती-महंगी जैसी भी मिले, और आपकी शक्कर में मिला देता है। क्यों मिला देता है ? यों ही, अललटप ? जी नहीं, यह भी आपकी सेहत के लिए किया जाता है और बड़े-बड़े डाक्टरों की सलाह से किया जाता है। और सब बाढ़ों के साथ-साथ आजकल देश में डायबिटीज की जैसी बाढ़ आयी हुई है, उससे डाक्टर लोगों की अकल गुम है। जिसे देखो डायबिटीज। और लोग हैं कि लाख मना करो, शक्कर खाने से बाज नहीं आते। इसमें शक्कर, उसमें शक्कर। ऐसी तो शक्करखोर कौम ही दुनिया में नहीं। हर सुबह हमको हलवा चाहिये और हर रात खीर—और मिठाई दिन में जितनी बार मिले इन्कार नहीं। आखिरकार डाक्टरों को कहना पड़ा कि शक्कर का शुगर कंटेंट कम करो, नहीं तो महामारी फैल जायेगी डायबिटीज की, जिसका रोगों में वही मूर्धन्य स्थान है जो दार्शनिकों में साक्रेटीज़ का और नाटककारों में यूरीपिडीज़ का ! और तत्काल शक्कर में मिलावट की जाने लगी। पहले तो बहुत दिनों तक लकड़ी के बुरादे से ही काम चलाया गया; लेकिन उसे जब उन मृत्यु-पथ-यात्री शक्करखोरों ने, जिनके ही भले के लिए यह सब काम हो रहा था, पकड़ लिया तो रासायनिक खाद मिलायी जाने लगी, जिसकी कोई पकड़ ही नहीं। अलावा इसके, रासायनिक खाद से एक लाभ यह भी होता है कि धीरे-धीरे आदमी का पेट अच्छे खेत की तरह तैयार हो जाता है और जो भी हरी सब्जी खाने के साथ आपके पेट में जाती है वह आपसे आप चौगुनी-दसगुनी होकर लहलहाने लगती है। और कौन नहीं जानता कि हरी सब्जी डायबिटीज के लिए अनन्य गुणकारी होती है!

क्या-क्या गिनायें आपको। इतना ही समझ लीजिये कि जिस भी चीज में मिलावट की जाती है, वह आपके भले के लिए की जाती है। काली मिर्च में पपीते का बीज जो मिलाया जाता है वह भी इसी खयाल से। उससे काली मिर्च की तो जलन जैसे मर ही जाती है, पपीते जैसे अच्छे और सुपथ्य फल के भी सब आवश्यक स्वास्थ्यवर्द्धक तत्त्व, अपने बीज-रूप में अनायास ही शरीर को मिल जाते हैं।

लेकिन यह जो दवाओं में मिलावट होती है, यह तो ठीक बात नहीं ? इससे अच्छी

[शेष पृष्ठ १०८ पर]

तीन कथाएं

लेव तालस्ताय

अकड़खान मुर्गा

दो मुर्गे कूड़े-करकट के ढेर पर आपस में लड़ पड़े। उनमें से एक तगड़ा था। उसने दूसरे को हरा दिया और वहां से भगा दिया।

सभी मुर्गियां विजयी मुर्गे के गिर्द जमा होकर उसका गुणगान करने लगीं। विजयी मुर्गा चाहता था कि उसकी शक्ति और जीत की बात पास-पड़ोस में सभी जान लें, सो वह खलिहान पर चढ़कर अपने पंख फड़फड़ाता हुआ ऊंची आवाज में बोला–'देखो मुझे! मैं विजयी मुर्गा हूं। दूसरा कोई मुर्गा मेरे जितना बलवान नहीं है।'

उसने अपना गुणगान अभी पूरा भी नहीं किया था कि एक चील उस पर झपटी और पंजों में दबोचकर अपने घोंसले में ले गयी।

फिक्रमंद मुर्गी

एक मुर्गी के अंडों में से चूजे निकले तो उसे लगा कि मैं तो उन सबका पालन-पोषण नहीं कर पाऊंगी। सो उसने चूजों से कहा–'फिर से अंडों में चले जाओ। तब मैं पहले की तरह अंडों पर बैठकर तुम्हारी रक्षा किया करूंगी।'

चूजों ने अंडों में वापस जाने की कोशिश की, मगर दाखिल नहीं हो पाये। ज्यादा कोशिश करने पर उनके पंख टूट गये।

तब एक चूजे ने मुर्गी से कहा–'मां, तू हमें अंडों में ही रखना चाहती है, तो अच्छा होता कि हमें उनमें से निकालती ही नहीं।'

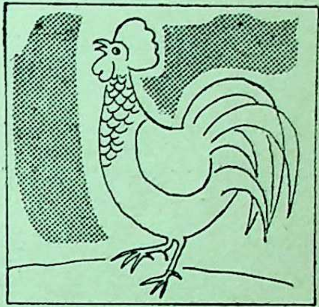

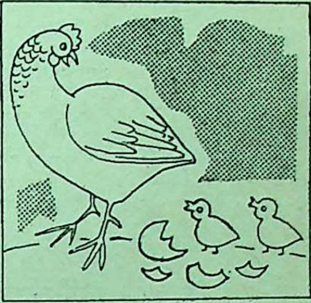

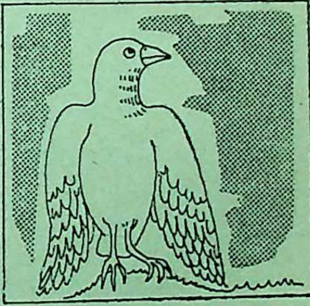

चित्र : ठाकोर राणा

सावधान मुर्गा

एक बाज पालतू बन गया था। जब भी उसका मालिक उसे बुलाता, वह जाकर उसके हाथ पर बैठ जाता था। पर मुर्गा अपने मालिक से डरता था और ज्यों ही मालिक उसके पास आता, वह चीखता हुआ भाग उठता था।

एक दिन बाज ने मुर्गे से कहा–'तुम मुर्गों में रत्ती-भर भी कृतज्ञता नहीं है। कैसी गुलामों की कौम हो तुम! ज्यों ही तुम्हें भूख लगती है, तुम अपने मालिक के पास जाते हो। यह बात हम बाजों पर लागू नहीं होती, क्योंकि हम शक्तिशाली हैं और सबसे ज्यादा तेज उड़ सकते हैं। और आदमियों से हम डरते नहीं; बल्कि अपनी मर्जी से उनके हाथ पर जाकर बैठते हैं, जब भी वे हमें बुलाते हैं। हम इस बात को नहीं भूलते कि उन्होंने हमें खाना दिया था।'

मुर्गे ने कहा–'हां, तुम आदमियों से नहीं डरते, क्योंकि तुमने कभी किसी बाज को आदमियों के हाथों भूने जाते नहीं देखा। पर हमने कई बार मुर्गों को आदमियों के हाथों भूने जाते देखा है।'

★

[पृष्ठ १०६ का शेष]

तो कोई बात ही नहीं हो सकती। आपको पता नहीं, ये बड़ी जानलेवा दवाइयां हैं, पेट में जितनी कम जायें उतना ही अच्छा। जरा-सी छींक आयी नहीं कि पेनिसिलिन, जरा-सी खांसी उठी नहीं कि स्ट्रेप्टोमाइसिन, जरा-सा बुखार आया नहीं कि क्लोरोमाइसिटिन, जरा-सा जोड़ दुखा नहीं कि इर्गापाइरिन। जानते हैं अमरीका में इन तमाम एंटीबायोटिक्स को 'किलर-ड्रग्स' कहते हैं! कितनी खुशी की बात है कि अपने यहां उनमें भी धड़ल्ले से मिलावट होती है और इसी बहाने ये सब जहर-माहुर हमारे पेट में उतना ही कम पहुंचता है। फिर भी अगर आपने मरने की ही दिल में ठानी हो तो सीधे-सीधे जहर खा लीजिये–मगर कुछ अजब नही कि उसमें भी मिलावट हो!

–१८, न्यायमार्ग, इलाहाबाद

★

विश्व-प्रसिद्ध संगीतस्रष्टा और संगीत-संचालक आइगर स्ट्राविंस्की तब अभी जवान थे। एक फिल्म-निर्माता ने उन्हें अपनी नयी फिल्म का संगीत देने के लिए कहा और पारिश्रमिक के रूप में काफी बड़ी रकम तजवीज की।

स्ट्राविंस्की ने कहा–'यह रकम तो ...... काफी नहीं है।' 'काफी नहीं है! इससे कहीं छोटी रकम हमने अपनी पिछली फिल्म के संगीत-निर्देशक को दी थी।'

'मगर वे प्रतिभावान संगीतकार हैं, जबकि मैं प्रतिभावान नहीं हूं। सो मेरे लिए यह काम ज्यादा मुश्किल है और मुझे उनकी अपेक्षा कहीं ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी। इसलिए मुझे ज्यादा रकम चाहिये।' स्ट्राविंस्की ने दलील दी।

★

नरकासुर-वध

एक कल्पित प्रसंग

डा. स्वामी ाथ शर्मा

चित्र : रमेश सत्यार्थी

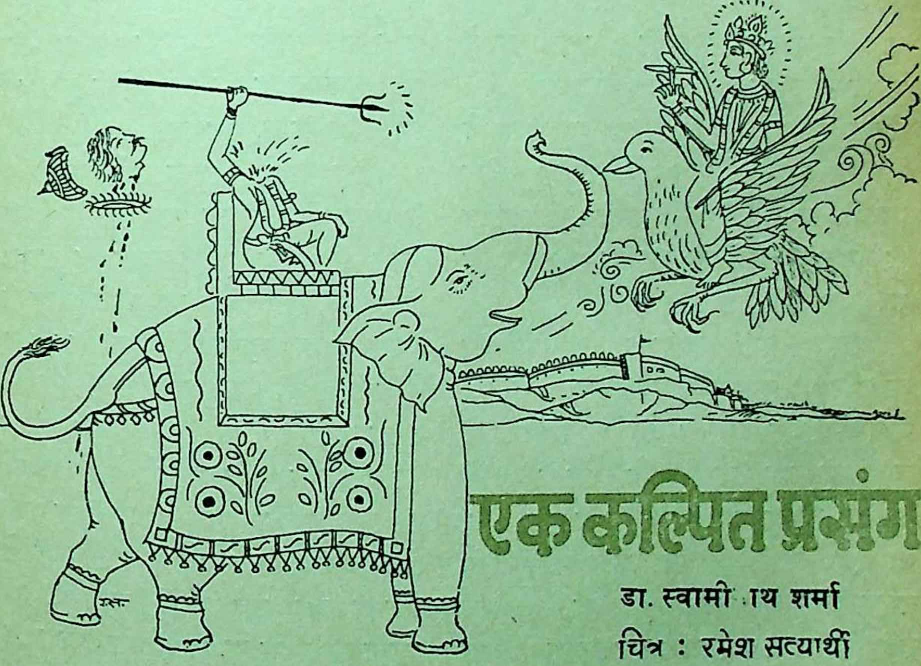

श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व के विकास और महत्ता की दृष्टि से नरकासुर का वध अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसका एक कारण तो यह है कि उन्होंने जितने असुरों का वध किया था, उनमें से कोई भी बल, प्रताप तथा आतंक की दृष्टि से नरक की समानता नहीं कर सकता। दूसरा कारण यह है कि नरक के वध से ही उन्हें सोलह हजार एक सौ कुमारियों का पति बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ था, जिनसे विवाह करने के लिए उतने ही रूप धारण कर उन्होंने अपना ईश्वरत्व भी प्रमाणित कर दिया था (विष्णुपुराण ५.३१.१८)। नरक-चतुर्दशी प्रतिवर्ष श्रीकृष्ण की इस विजय तथा नरक-वध की गाथा का स्मरण कराती है।

पौराणिक विवरणों के अनुसार नरकासुर प्राग्ज्योतिषपुर का अधिपति था। उसने इंद्र की माता अदिति के कुंडल तथा वरुण का छत्र छीन लिये थे और देवों, गंधर्वों तथा मनुष्यों की सोलह हजार एक सौ नारियों का अपहरण कर उन्हें कैद कर रखा था। वह वराहरूपधारी विष्णु के स्पर्श से पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

महाभारत में नरक-वध की सूचनाएं तो अवश्य मिलती हैं (२.४५.७; ३.१२.२९ आदि), किंतु वहां प्राग्ज्योतिषपुर के अधिपति के रूप में सर्वत्र भगदत्त का ही उल्लेख

हुआ है। आदिपर्व के अनुसार, असुरसत्तम बाष्कल ने ही भगदत्त के रूप में जन्म लिया था (१.६७.९)। द्रौपदी के स्वयंवर में भी वह हमें उपस्थित मिलता है (१.१८५.१२)। राजसूय-यज्ञ के अवसर पर तत्कालीन राजाओं का परिचय देते हुए श्रीकृष्ण युधिष्ठिर से कहते हैं—'ये मुर और नरक देश का शासन करने वाले तथा वरुण के समान पश्चिम के अधिपति समझे जाने वाले वृद्ध महाराज भगदत्त हैं, जो आपके पिता के मित्र रहे हैं' (२.१४.१४-१५)।

उपर्युक्त विवरणों में दो बातें विशेष द्रष्टव्य हैं—१. भगदत्त को वृद्ध कहा गया है; २. वह पांडु का सखा था। महाभारत के वर्णनों को प्रमाण मानें तो उस काल में वृद्धावस्था संभवत: डेढ़ या दो सौ वर्षों के बाद ही आरंभ होती थी। महाभारत में भीष्म और द्रोण को वृद्ध कहा गया है। भीष्म ने तीन सौ वाजिमेध यज्ञ किये थे (६.१२.१५); अत: उनकी आयु साढ़े तीन या सौ चार सौ वर्ष रही होगी। महाभारत के अनुसार, द्रोण की आयु उनकी मृत्यु के समय चार सौ वर्ष थी (७.१९३.४३)।

श्रीकृष्ण का देहावसान १२५ वर्ष की आयु में हुआ था (भागवत ११.६.२५)। महाभारत के युद्ध के अंत में गांधारी ने कृष्ण को शाप दिया था कि आज से ३६ वें वर्ष में यदुकुल का विनाश हो जायेगा (म. भा. ११.२५.४४)। अत: महाभारत-युद्ध के समय श्रीकृष्ण की आयु ८९ या ९० वर्ष रही होगी। अर्जुन उनके समवयस्क थे तथा युधिष्ठिर और भीम दोनों उनसे बड़े थे। दुर्योधन भीम का ही समवयस्क था। युद्ध के समय इन सबको 'युवा' कहा गया है।

यदि भीष्म और द्रोण की आयु कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण मानी जाये, तो भी उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर भगदत्त की आयु युद्ध के समय लगभग दो सौ वर्ष अवश्य रही होगी; अत: वह आयु में श्रीकृष्ण से करीब सौ वर्ष बड़ा था। राजा होने की हैसियत से ही वह पांडु का सखा रहा होगा। जब श्रीकृष्ण मथुरा में थे और अविवाहित थे, तभी पांडु का देहावसान हो गया था (भागवत १०.४८.३२-३३)।

भगदत्त के पिता का नाम तो नहीं मिलता, किंतु उसके पितामह का नाम शैलालय था। नरकासुर के पिता थे वराह भगवान और माता थीं पृथ्वी। अत: शैलालय और भगदत्त के बीच में नरकासुर के लिए स्थान हो ही नहीं सकता।

श्रीकृष्ण का विवाह सर्वप्रथम रुक्मिणी से हुआ था। उसके भाई रुक्मी ने अपनी बहन का विवाह शिशुपाल के साथ तय किया था, इसलिए श्रीकृष्ण को रुक्मिणी का हरण करना पड़ा था। शिशुपाल की बरात में भगदत्त भी था (हरिवंश २.५९.८)। नरकासुर को मारने के लिए श्रीकृष्ण सत्यभामा को साथ लेकर गये थे। रुक्मिणी के पश्चात् उनका विवाह स्यमंतक-मणि के लिए जांबवान को युद्ध में परास्त करने पर उसकी पुत्री जांबवती से हुआ। श्रीकृष्ण से यह मणि वापस पाकर ही प्रसन्न होकर सत्रा-

जित ने अपनी पुत्री सत्यभामा का विवाह उनके साथ कर दिया था। जब रुक्मिणी से विवाह के पूर्व ही भगदत्त उपस्थित था, तब सत्यभामा से विवाह के पश्चात् नरकासुर प्राग्योतिषपुर में कहां से आ गया, जिसे मारने श्रीकृष्ण वहां गये?

उपर्युक्त विवेचन से यही सिद्ध होता है कि श्रीकृष्ण के समय में प्राग्ज्योतिषपुर में कोई नरकासुर नहीं था। महाभारत के नरकासुर-संबंधी उल्लेख सरलता से प्रक्षिप्त प्रमाणित किये जा सकते हैं। हां, भगदत्त के राज्य में नरक और मुर नामक दो जनपद अवश्य थे। पौराणिकों की कल्पना ने संभवत: इन्हीं दोनों जनपदों के आधार पर नरक तथा उसके सहायक मुर असुर की सृष्टि कर डाली। नरक के अस्तित्वहीन सिद्ध होते ही श्रीकृष्ण का सोलह हजार एक सौ नारियों का पति होना भी स्वत: कल्पना-विलास सिद्ध हो जाता है।

नरक-संबंधी विवरण में दो सूत्र ऐसे हैं, जिनसे इस प्रसंग की कल्पना का समय अनुमानित हो सकता है। ये हैं—१. श्रीकृष्ण का विष्णुत्व, तथा २. पृथ्वी का देवीकरण।

महाभारत में श्रीकृष्ण का आवागमन सदा रथ से ही हुआ है; किंतु नरकासुर का वध करने के लिए वे गरुड पर आसीन होकर जाते हैं और हाथों में शंख, चक्र, गदा और (पद्म के स्थान पर) असि धारण करते हैं। इस प्रकार इस प्रसंग में वे चतुर्भुज विष्णु के रूप में ही चित्रित हुए हैं।

श्री आर. आर. तिवारी ने अपने निबंध 'बृहत्संहिता अर्थात् नीतिसार' (जर्नल आफ इंडियन हिस्टरी, अप्रैल १९६०) में यह प्रतिपादित किया है कि ईसा की प्रथम शती के पूर्वार्ध तथा द्वितीय शती के उत्तरार्ध के बीच किसी समय चतुर्भुज विष्णु की कल्पना की गयी। इसके पूर्व द्विभुज विष्णु का ही रूप वर्णित हुआ है। श्री एच. सी. रायचौधरी ने 'अर्ली हिस्टरी आफ वैष्णव सेक्ट' में दिखाया है कि तुशाम शिलालेख (चौथी शती) में विष्णु को जांबवती के मुख-कमल पर भ्रमर के रूप में प्रशंसित किया गया है।

श्री रायचौधरी ने उक्त पुस्तक में (पृष्ठ १७७) यह भी दिखलाया है कि गुप्तकाल में लक्ष्मी के साथ ही एक दूसरी देवी का प्राकट्य भी होता है; वह है भूदेवी, जिसे वैष्णवी—विष्णु की सहचरी—कहा गया है।

ये प्रमाण असंदिग्ध रूप से यही संकेत देते हैं कि गुप्तकाल में ही कृष्ण और विष्णु की एकता स्थापित हुई और पृथ्वी को भी देवी-रूप में प्रतिष्ठित किया गया। अत: नरकासुर का प्रसंग भी इसी समय कल्पित हुआ होगा। श्री विपिनबिहारी मजूमदार ने 'कृष्ण इन हिस्टरी एंड लेजेंड' (पृष्ठ २८०) में लिखा है – 'प्राग्ज्योतिषपुर, असम में नरकासुर के विरुद्ध कृष्ण का अभियान संभवत: उनके देहावसान के पांच सौ वर्षों के बाद कल्पित हुआ होगा।' उनका यह अनुमान वैदिक साहित्य तथा पाणिनि के साक्ष्य पर आधारित है। पुराणों का ऐतिहासिक विवेचन भी यही घोषित करता है कि नरकासुर-प्रसंग कल्पना की उपज है।

★

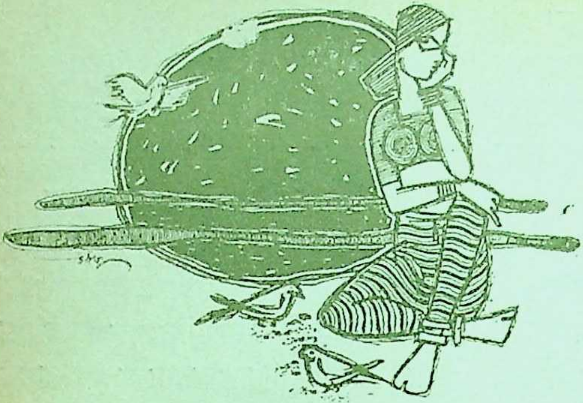

गज़ल

'कतील' शिफ़ाई

फूलों की उदासी को छिपा जाती है खुशबू,
उड़ता है कोई रंग तो छा जाती है खुशबू।

खुशबू का खमीर उठता है खाकिस्तरे-गुल[१] से
गुल भी से अगर आंख चुरा जाती है खुशबू।

आती है तो कांटे भी हवा देते हैं उसको
जाती है तो गुलशन को रुला जाती है खुशबू।

यों मुझको तेरे लम्स[२] का एहसास रचा है
अपने ही बदन से तेरी आ जाती है खुशबू।

मैं हूं किसी मंदिर में सुलगता हुआ संदल
जो मुझको जलाये उसे आ जाती है खुशबू।

देखूं जो 'कतील' उन-सा कोई हुस्ने-मुअत्तर[३]
जज्बात में हलचल-सी मचा जाती है खुशबू।

१. फूल का खाक, २. स्पर्श, ३. महका हुआ।

रामायण का पुरातत्त्व

डा. ब्रजबासी लाल

राम और कृष्ण के नाम औसत हिंदू की जबान पर अक्सर ही आते रहते हैं। उसके लिए वे ईश्वर के अवतार हैं। मगर इतिहासज्ञ के लिए मामला भक्ति पर समाप्त नहीं हो जाता। वह तो यह जानने को बेचैन हो उठता है कि ये महान व्यक्ति कब जिये थे और उनके जमाने की सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियां क्या थीं। इन व्यक्तियों के इर्द-गिर्द जो पौराणिकता की धुंध घिर आयी है, उसे वह भेदना चाहता है।

यदि रामायण और महाभारत का लेखन उनमें वर्णित घटनाओं के जमाने में ही हुआ होता, तो मामला कुछ आसान हो जाता। मगर दुर्भाग्यवश उनके लेखन और उन घटनाओं में एक हजार वर्ष से भी अधिक का व्यवधान है और वे सामान्यतः चौथी सदी ई. में लिखित माने जाते हैं। और सबसे बड़ी बात यह कि उनमें कवि-कल्पना खुलकर खेली है। ऐसी स्थिति में तथ्यों का निर्धारण करना इतिहासज्ञ के लिए कठिन हो जाता है।

इसी समस्या का सामना करते हुए १९५०-५२ में मैंने महाभारत की कथा से संबद्ध स्थलों की व्यवस्थित छान-बीन शुरू की। इस प्रयत्न की परिणति हुई कौरवों की राजधानी हस्तिनापुर की खुदाई में। नतीजा काफी उत्साहवर्धक था, क्योंकि सभी महाभारतीय स्थलों में सबसे निचले स्तरों पर एक ही भौतिक संस्कृति का साक्षात्कार हुआ।

इन स्थलों में से उल्लेखनीय हैं—मेरठ जिले का बरनावा (वारणावत) जहां कि कौरवों ने पांडवों को लाक्षागृह में जलवा डालने की चेष्टा की थी; जयपुर के निकट बैराट (विराटनगर) जहां पांडव अज्ञातवास में रहे थे; पानीपत, सोनपत, इंदरपत, बागपत और तिलपत—यमुना के किनारे के वे पांच गांव जो संधिवार्ता में पांडवों ने

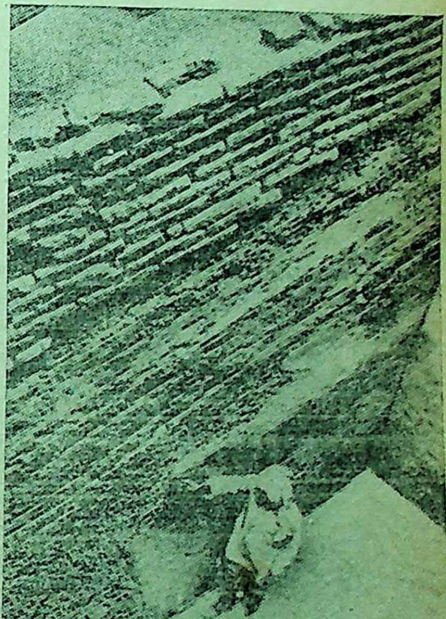

हस्तिनापुर-अवशेष—बाढ़ का निशान
[चित्र : भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण]

कौरवों से मांगे थे; कुरुक्षेत्र जहां महाभारत युद्ध लड़ा गया था; मथुरा जहां के कृष्ण थे; इत्यादि।

युद्ध के बाद परिक्षित् (परीक्षित) गद्दी पर बैठा। उनसे पांचवीं पीढ़ी में राजा निश्चक्षु हुआ, जिसके शासन-काल में गंगा की बाढ़ ने हस्तिनापुर को नष्ट कर दिया। परिणामतः राजधानी वहां से हटाकर कौशांबी ले जायी गयी।

हस्तिनापुर की खुदाई से बाढ़ के पर्याप्त प्रमाण मिले हैं। हस्तिनापुर के टीले के गंगा-तरफ के किनारे पर कटाव के निशान और पानी द्वारा जमाये गये निक्षेप तो मिले ही हैं, साथ ही बाढ़ द्वारा बहा ले जायी गयी वस्तुएं नदी के पाट में पानी की सतह से ५० फुट नीचे बोरिंग करने पर प्राप्त हुई हैं। यह पुरातत्त्वीय प्रमाण दिखाता है कि महाभारत शायद कोरी पौराणिक चीज नहीं है।

जहां तक काल का प्रश्न है, पुराण बताते हैं कि परिक्षित् से चौबीसवीं पीढ़ी में उदयन हुआ, जो बुद्ध का समकालीन था। बुद्ध की मृत्यु ४८३ ई. पू. के आस-पास हुई। चौबीस पीढ़ियों में ठीक कितने वर्ष लगे होंगे, यह तो अटकल की ही बात है। किंतु यदि भारत और बाहर के ज्ञात राजवंशों के इतिहास को देखें, तो प्रत्येक राजा के हिस्से में औसतन १८ साल आते हैं। इस तरह स्वयं साहित्यिक प्रमाण के अनुसार महाभारत-युद्ध ९०० ई. पू. के आस-पास हुआ होगा।

कार्बन काल-मापन की वैज्ञानिक विधि द्वारा इन स्थलों के पुरातत्त्वीय अवशेषों का जो काल निकाला गया है, वह साहित्यिक साक्ष्यों के आधार पर कूते गये काल का पूरी तरह समर्थन करता है। सो ऐसा प्रतीत होता है कि पुरातत्त्वज्ञ पौराणिक धुंध में कुछ स्पष्टता लाने में सफल हो गया है।

यह जरूरी है कि जो काम महाभारतीय स्थलों के बारे में किया गया, वही रामायणीय स्थलों के बारे में भी किया जाये। इस उद्देश्य से 'रामायणीय स्थलों का पुरातत्त्व' नामक विशेष प्रायोजना प्रारंभ की गयी है। इस पंचवर्षीय प्रायोजना को जिवाजी विश्वविद्यालय (ग्वालियर), भारत सरकार का पुरातत्त्वीय सर्वेक्षण और उत्तर प्रदेश पुरातत्त्व विभाग मिलकर कार्यान्वित कर रहे हैं। इसके लिए धन दे रहे हैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और भारतीय पुरातत्त्वीय सर्वेक्षण विभाग। अंदाजन छह लाख रुपये खर्च होंगे। केंद्रीय शिक्षा-मंत्री प्रो. एस. नूरुल हसन ने प्रायोजना का उद्घाटन गत ३१ मार्च को किया।

इसके पहले चरण में अयोध्या में खुदाई शुरू की गयी है, जो कि कथा का केंद्रस्थल है। वहां कम से कम आधे दर्जन स्थानों की छान-बीन की जायेगी, ताकि सबसे निचले आवासीय निक्षेप पहचाने जा सकें। इस प्रकार, यदि राम ने सचमुच अयोध्या में निवास किया था, तो उनके समय की भौतिक संस्कृति उस स्थान पर खोदे गये संस्तरों के अंदर मौजूद होगी।

अयोध्या की खुदाई के बाद रामायण-

कथा से संबद्ध अन्य स्थलों की छानबीन और खुदाई होगी। इनमें से कुछ हैं—शृंगवेरपुर जहां राम ने दक्षिणाभिमुख यात्रा करते हुए गंगा नदी पार की; प्रयाग के पास का आश्रम जहां राम भरद्वाज ऋषि से मिले; चित्रकूट जहां पर उन्होंने निवास किया; कानपुर के निकट बिठूर जिसका संबंध वाल्मीकि से जोड़ा जाता है; नेपाल की तराई में जनकपुर जो सीता की पीहर थी; उन्नाव जिले में परिहार जहां कि सीता का परित्याग किया गया था; इत्यादि।

अगर इन सब स्थलों पर सबसे निचले स्तरों पर ठीक वैसे ही सांस्कृतिक अवशेष मिलें, जैसे कि अयोध्या की खुदाई में मिले हैं, तो यह मानना ही पड़ेगा कि राम यदि ऐतिहासिक व्यक्ति थे तो उनका काल उस अवधि के अंदर ही होगा, जिसका प्रतिनिधित्व यह संस्कृति करती है। जहां तक राम की ऐतिहासिकता का प्रश्न है, वह तो तभी सिद्ध हो सकेगी, जब उनका समकालीन या लगभग समकालीन कोई अभिलेख या ऐसा ही अन्य कोई प्रमाण उपलब्ध हो जाये। देखें, कुदाली और खुरपा क्या तोहफा पेश करते हैं। **[‘आकाशवाणी’ से साभार]**

★

आचार्य रामचंद्र शुक्ल आरंभ से ही बड़े व्यक्तित्व वाले थे। जब वे नागरी प्रचारिणी सभा, काशी में बहुत कम वेतन पर कार्य कर रहे थे, तो उनके तेजस्वी व्यक्तित्व से प्रभावित एक बड़े आदमी ने अलवर के राजा के दरबार में उन्हें बहुत अच्छी नौकरी दिलवा दी। उन्हें राजासाहब के अंग्रेजी के लंबे-लंबे भाषणों का हिंदी में अनुवाद करना होता था। और भी कुछ काम लिखने-पढ़ने का ही रहा होगा। राज्य की ओर से सजा हुआ शानदार बंगला, सवारी और मासिक वेतन चौदह सौ रुपये।

शुक्लजी गये। दरबार में पहले ही दिन उन्होंने देखा कि लोग राजासाहब के सामने झुककर जमीन पर हाथ ले जाकर अपने माथे से लगा रहे हैं। सलाम पूरा हो जाने पर लोग सामने देखते हुए, पीछे खिसकते हुए उलटी चाल से तब तक चलते हैं, जब तक राजासाहब की आंखों से ओझल न हो जायें। यह क्रिया सबको करनी पड़ती थी। शुक्लजी संमानित पद पर थे, परंतु इस रस्म में छूट तो किसी को नहीं थी। दरबार के बाद शुक्लजी ने लोगों को मंत्रियों और दरबारियों की खुशामद करते हुए देखा। उनसे भी इसकी आशा की जाती थी।

दो-तीन दिनों तक तो वे यह सब झेलते रहे, फिर तीसरे या चौथे दिन बिना किसी को कुछ बताये ही वे काशी चले आये और जिस बड़े आदमी ने उन्हें इतनी बड़ी नौकरी दिलायी थी, उसके पास यह लिखकर भेज दिया:

‘चीथड़े लपेटे चने चाबेंगे चौखट पर, चाकरी करेंगे नहीं चौपट चमार की।’

फिर से वे बड़े आनंद से नागरी प्रचारिणी सभा वाले कार्य में जुट गये, उसी पचीस रुपये मासिक के वेतन पर।

—डा. रामदेव शुक्ल

★

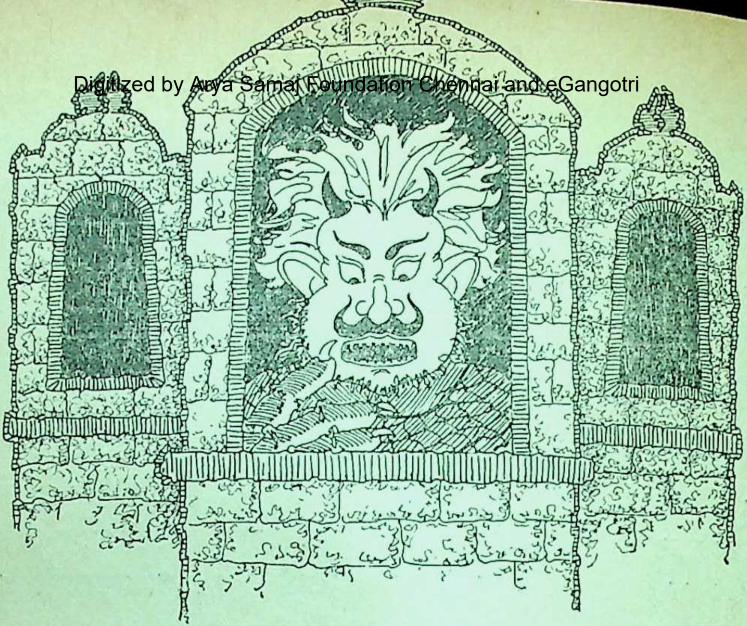

स्वार्थी दैत्य

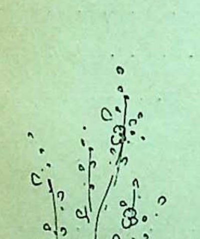

रोज दोपहर को स्कूल से लौटते समय बच्चे दैत्य के बगीचे में जाकर खेला करते थे। वह बहुत बड़ा सुंदर बगीचा था, जिसमें हरी नरम घास थी। घास के बीच जहां-तहां सुंदर फूल खिले हुए थे तारों-जैसे और आड़ू के बारह पेड़ थे, जिन पर वसंत ऋतु में सुंदर सफेद-गुलाबी फूल खिलते थे और शरद् ऋतु में बढ़िया फल पकते थे। पक्षी उन पेड़ों पर बैठते थे और इतना सुरीला गाते थे कि बच्चे अपना खेल रोककर उनका गाना सुनने

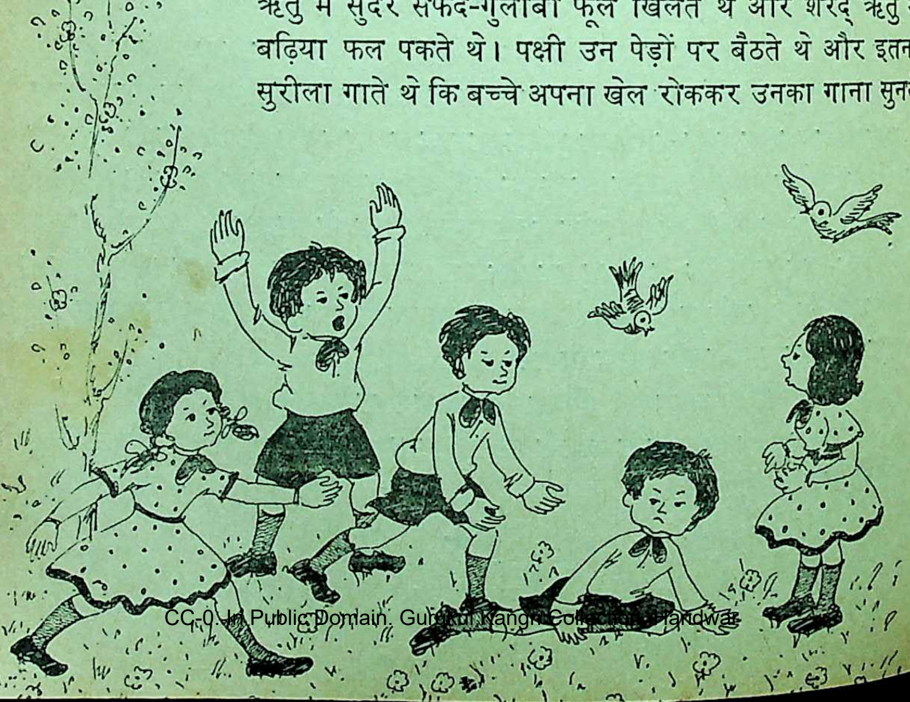

लगते थे। वे एक दूसरे से कहते थे—'ओह! यहां हम कितने खुश हैं।'

एक दिन दैत्य वापस लौट आया। वह अपने एक दोस्त दैत्य से मिलने गया था और सात वर्ष उसके यहां रहा था। सात वर्ष बाद जब उसके पास अपने दोस्त से कहने के लिए कोई बात नहीं रह गयी, उसने अपने किले में लौट जाने का निश्चय किया। जब वह लौटा तो उसने बच्चों को बगीचे में खेलते देखा।

भारी और भर्रायी हुई आवाज में वह चिल्लाया—'क्या कर रहे हो तुम लोग यहां?' और सब बच्चे फौरन वहां से भाग गये।

दैत्य बोला—'मेरा बगीचा सिर्फ मेरा है, यह बात सबको मालूम होनी चाहिये। मैं अपने सिवा किसी को इसमें खेलने नहीं दूंगा।' उसने पूरे बगीचे के चारों ओर ऊंची दीवार बना दी और यह सूचना टांग दी:

'बिना आज्ञा अंदर आने वालों पर सख्त कार्रवाई की जायेगी।'

बड़ा स्वार्थी था वह दैत्य।

अब बच्चों के लिए खेलने की कोई जगह नहीं रही। उन्होंने सड़क पर खेलने की कोशिश की। मगर सड़क धूल और नुकीले कंकड़ों से भरी हुई थी, और उन्हें वह अच्छी नहीं लगती थी। जब स्कूल में पढ़ाई खत्म हो जाती, तो बच्चे ऊंची दीवार का चक्कर लगाते और अंदर के सुंदर बगीचे के बारे में आपस में बातें करते।

फिर वसंत ऋतु आयी। सारे देश में जहां देखो वृक्षों पर कलियां निकल आयीं, पक्षी चहकने लगे। मगर सिर्फ स्वार्थी दैत्य के बगीचे में अभी तक सर्दियां थीं। पक्षी उसमें जाकर गाना नहीं गाते थे, क्योंकि वहां बच्चे नहीं थे। और वृक्ष भी फूल-पत्ती उगाना भूल गये थे। एक दिन एक सुंदर फूल ने घास में से सिर निकाला, मगर जब उसने वह सूचना देखी, तो उसे बच्चों पर बहुत तरस आया और वह फिर मिट्टी में सिर छिपाकर सो गया।

सिर्फ बर्फ और पाला प्रसन्न थे। वे खुशी से चिल्लाये—'वसंत ऋतु इस बगीचे को भूल गयी है। सो हम यहां साल-भर रह

कमलाक्ष शेणै के चित्र

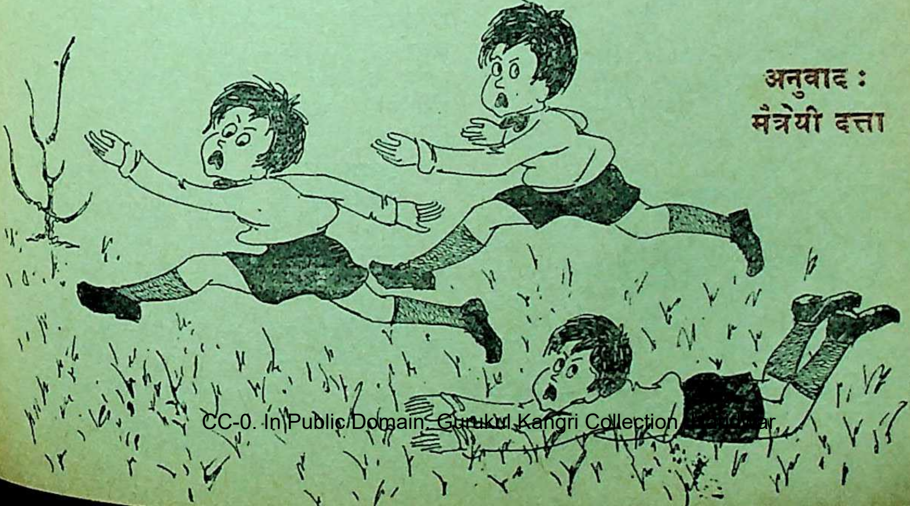

अनुवाद :
मैत्रेयी दत्ता

विटामिन और खनिज पदार्थ आपके परिवार के स्वास्थ्य के लिये बहुत ज़रूरी हैं

SQUIBB
VIMGRAN
MULTIPLE
VITAMINS-MINERALS
TABLETS
SARABHAI CHEMICALS
Wadi Wadi, BARODA

क्या उन्हें ये ज़रूरत के मुताबिक़ मिल रहे हैं?

विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी से आपके परिवार के लोगों का स्वास्थ्य गिर सकता है. थकान, ठंड और जुकाम, भूख की कमी, कमजोरी, चमड़ी तथा दाँतों के रोग अधिकतर जरूरी विटामिनों और खनिज पदार्थों की कमी के कारण होते हैं.

इन की कमी, भोजनों में भी रह सकती है. इस बात के विश्वास के लिये कि परिवार के सभी लोगों को ये जरूरी पोषकतत्व उचित मात्रा में मिलें, उन्हें रोज़ विमग्रान दीजिये.

विमग्रान में आवश्यक ११ विटामिन और ८ खनिजपदार्थ मिले हैं. लोहा – खून बढ़ाने और फुर्ती लाने के लिये, कैल्सियम– हड्डियों और दाँतों को मजबूत बनाने के लिये, विटामिन सी– ठंड और जुकाम रोकने की शक्ति बढ़ाने के लिये, विटामिन ए–चमकदार आँखों और स्वस्थ त्वचा के लिये, विटामिन बी१२–भूख बढ़ाने के लिये तथा शरीर को स्वस्थ रखने के लिये दूसरे जरूरी पोषक तत्व! आज से ही रोज लीजिये-विमग्रान!

विमग्रान®

विविध विटामिन एवं खनिजयुक्त गोलियाँ
११ विटामिन + ८ खनिज पदार्थ

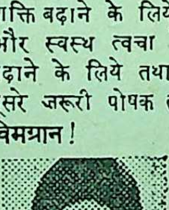

SQUIBB®
SARABHAI CHEMICALS PVT. LTD.

® ई. आर. स्क्विब एंड सन्स इन्कॉ. का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है जिसके अनुज्ञप्त उपयोगकर्ता हैं–एस. सी. पी. एल.

केवल एक विमग्रान आपको दिन भर स्फूर्तियुक्त रखता है

Shilpi-HPMA 2A/74 Hin

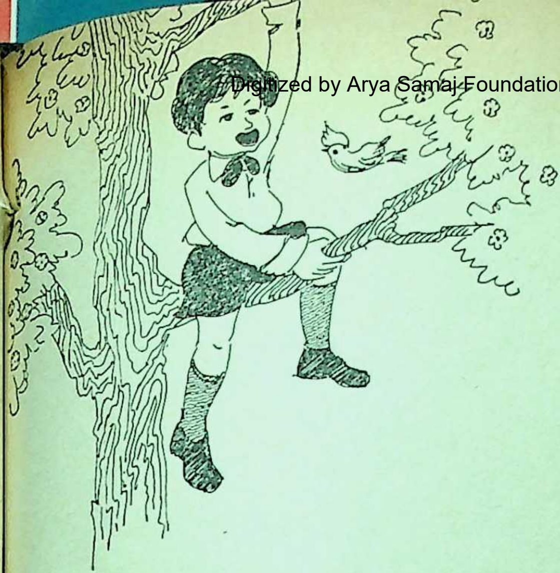

सकेंगे।' बर्फ ने घास पर अपना विशाल सफेद लबादा बिछा दिया। पाले ने सब वृक्षों को रुपहले रंग से रंग दिया। फिर बर्फ और पाले ने उत्तरी हवा को बुलावा भेजा कि आकर हमारे साथ बगीचे में रहो। समूर का कोट पहनकर उत्तरी हवा आयी। सारे दिन वह बगीचे में हू-हू करती हुई बहती रहती। उसने चिमनियों के ढक्कन उड़ा दिये। बोली—'बड़ी सुंदर जगह है यह! हमें अपने दोस्त ओलों को छुट्टियां बिताने यहां बुलाना चाहिये।'

सो ओले भी आ गये। रोज शाम को तीन घंटे दैत्य के किले की छत पर तड़ातड़ ओले बरसते। यहां तक कि किले के सारे खपरे टूट गये। फिर ओले बगीचे में चक्कर काटते। उनकी सांस बर्फ जैसी ठिठुराने वाली होती थी।

स्वार्थी दैत्य किले की खिड़की में बैठकर अपने सफेद, बेहद ठंडे बगीचे को देखता हुआ सोच रहा था, 'क्या नहीं, इस बार वसंत ऋतु अब तक क्यों नहीं आयी? जल्दी मौसम बदल जाये तो कितना अच्छा होगा!'

मगर वसंत ऋतु आयी ही नहीं, और न गर्मियां आयीं। बाकी सब बगीचों को तो शरद ऋतु ने मीठे-मीठे फल दिये, मगर स्वार्थी दैत्य के बगीचे को नहीं दिये। बोली—'यह दैत्य तो बहुत स्वार्थी है।' इस तरह उस बगीचे में हमेशा सर्दियां बनी रहतीं—उत्तरी हवा, पाला और ओले वहां रहते और बर्फ वृक्षों के बीच नाचा करती।

एक सुबह राक्षस अभी अपने बिस्तर में लेटा हुआ था कि उसे बहुत सुंदर संगीत सुनाई दिया। वह उसे बहुत ही मीठा लगा और उसने सोचा, जरूर राजा के संगीतकार इधर से गुजरे होंगे। मगर असल में एक छोटी-सी तूती उसकी खिड़की के पास गा रही थी। दैत्य को पक्षियों का गाना सुने इतने दिन हो गये थे कि वह उसके कानों को दुनिया का सबसे सुंदर संगीत लगा। अचानक ही ओलों ने किले की छत पर नाचना बंद कर दिया, उत्तरी हवा ने अपनी हू-हू बंद कर दी और खुली खिड़की में से बढ़िया खुशबू आकर कमरे में भर गयी। 'लगता है, आखिरकार वसंत ऋतु आ ही गयी।' यह कहते हुए दैत्य बिस्तर से उछल पड़ा और उसने बाहर झांककर देखा।

और क्या देखा उसने?

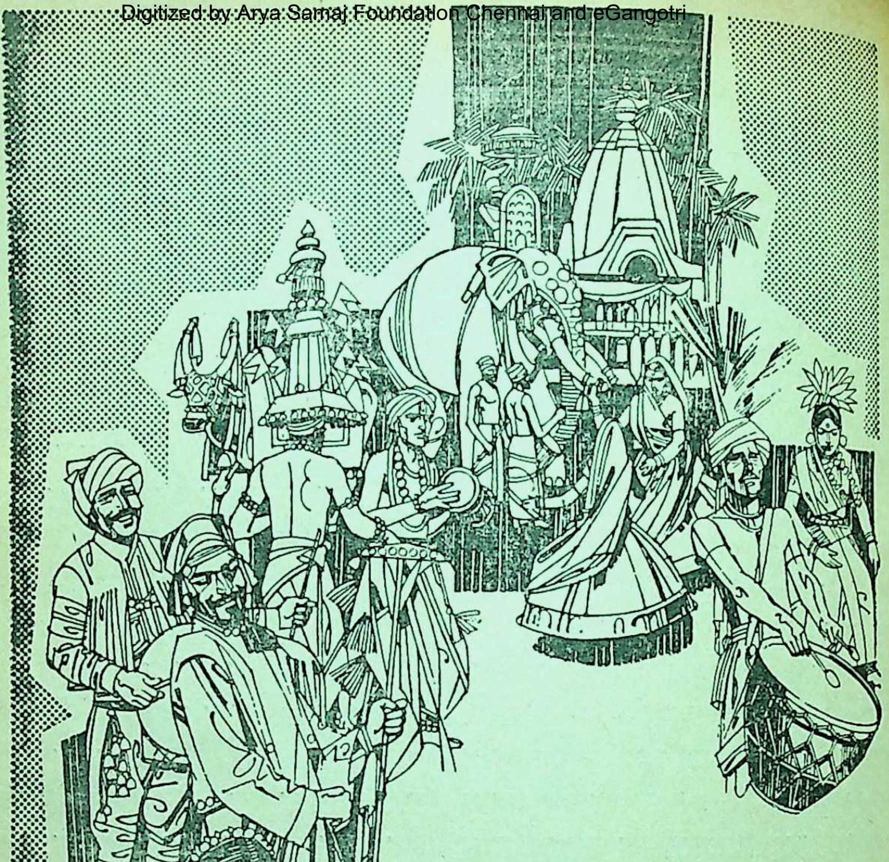
जिन्ह उपजा तिन्ह पाइयाँ,
कर कर बचत-अभ्यास
थोड़ा-थोड़ा कष्ट पर
नित-दिन सुख का वास
उपज और बचत के प्रयासों का
नित-दिन साथी
बैंक ऑफ़ इन्डिया

बड़ा गजब का दृश्य था। दीवार में एक छेद में से छोटे बच्चे अंदर घुस आये थे और वृक्षों की डालियों पर बैठे हुए थे। हर वृक्ष पर उसे एक बच्चा बैठा हुआ दिखाई दिया। बच्चों के फिर से आने से वृक्ष इतने खुश थे कि उन्होंने अपनी डालियों को फूलों से सजा लिया था और वे अपनी बांहें धीरे-धीरे बच्चों के सिर पर झुला रहे थे। पक्षी बड़ी खुशी से यहां से वहां उड़ानें भर रहे थे और चहचहा रहे थे। हरी घास में से सुंदर फूल सिर उठाकर देख रहे थे और हंस रहे थे।

बड़ा सुंदर दृश्य था, सिर्फ एक कोने में अभी भी सर्दियां थीं। वह कोना बगीचे के बिलकुल अंत में था, और वहां एक नन्हा बालक खड़ा था। वह इतना छोटा था कि वृक्ष की डालियों तक उसके हाथ पहुंचते ही नहीं थे। वृक्ष के चारों ओर बार-बार घूमता हुआ वह रो रहा था। बेचारा वृक्ष अभी तक बर्फ और पाले से लगभग ढंका हुआ था। उत्तरी हवा अभी तक उस पर मंडरा रही थी। 'चढ़ जाओ न मुन्ने!' वृक्ष ने कहा और जितना हो सकता था अपनी डालियों को नीचा झुकाया। मगर बालक तो बहुत ही छोटा था।

यह देखकर दैत्य का दिल पसीज गया। वह बोला—'मैं कितना स्वार्थी था! अब मेरी समझ में आया कि वसंत ऋतु यहां आती क्यों नहीं थी। मैं उस छोटे बालक को पेड़ की चोटी पर बैठाऊंगा और फिर पूरी दीवार को तोड़ डालूंगा; उसके बाद मेरा बगीचा हमेशा के लिए बच्चों के खेलने का बगीचा बन जायेगा।' उसे अपने किये पर सचमुच बहुत पछतावा हुआ।

वह चुपचाप नीचे उतरा, धीरे-से उसने दरवाजा खोला और बगीचे में चला आया। मगर उसे देखकर सब बच्चे एकदम डर गये, वृक्षों पर से कूद-कूदकर भाग गये और बगीचे में एक बार फिर सर्दियां छा गयीं। सिर्फ वह छोटा बच्चा नहीं भागा। उसकी आंखों में आंसू भरे हुए थे; इसलिए उसे दैत्य आता हुआ दिखाई नहीं दिया था। दैत्य चुपके-से उसके पीछे पहुंचा और उसने धीमे-से उसे उठाकर वृक्ष पर बैठा दिया। वृक्ष में एकदम कलियां फूट पड़ीं, चिड़ियां आयीं और चहकने लगीं, और छोटे बालक ने अपनी दोनों बांहें बढ़ाकर राक्षस की गर्दन में डाल दीं और उसे चूम लिया।

जब दूसरे बच्चों ने देखा कि दैत्य अब दुष्ट नहीं रह गया है, तो वे दौड़ते हुए बगीचे में घुस आये और उनके साथ वसंत ऋतु भी वापस बगीचे में आ गयी। दैत्य उन सबसे बोला—'नन्हे बच्चो, अब से यह बगीचा तुम्हीं लोगों का है।' और उसने कुदाल लेकर दीवार तोड़ गिरायी। उस दोपहर को जब लोग

बाजार जा रहे थे, उन्होंने देखा कि सुंदर बगीचे में दैत्य बच्चों के साथ खेल रहा है।

बच्चे दिन-भर वहां खेलते रहे और शाम को अपने-अपने घर जाने से पहले दैत्य को 'नमस्ते' कहने पहुंचे।

दैत्य ने उनसे पूछा—'तुम लोगों का वह नन्हा साथी कहां है, जिसे मैंने वृक्ष पर बैठाया था?' दैत्य को उससे बहुत प्यार हो गया था, क्योंकि उसने उसे चूमा था।

'पता नहीं, शायद वह घर चला गया।' बच्चे बोले। दैत्य ने कहा—'उससे कहना कि कल जरूर आये।' मगर बच्चे बोले कि हमें नहीं मालूम, वह कहां रहता है और हमने आज से पहले कभी उसे देखा भी नहीं। दैत्य यह सुनकर बहुत उदास हो गया।

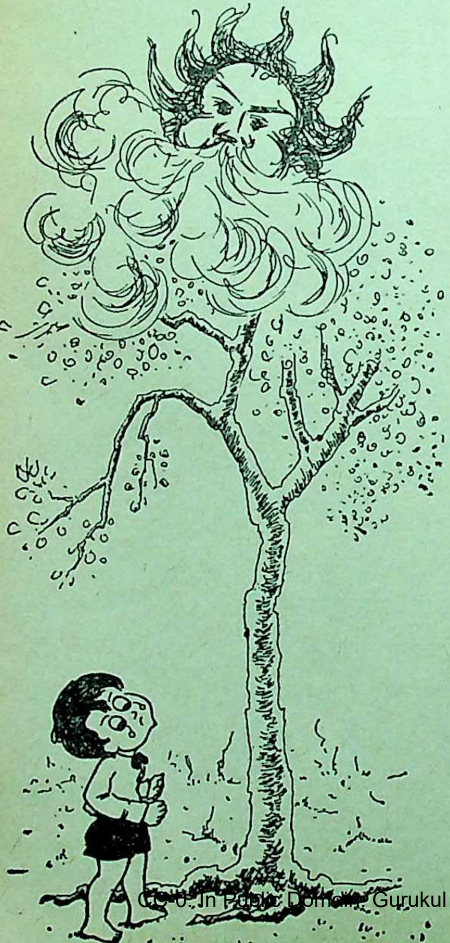

रोज तीसरे पहल स्कूल बंद होते ही बच्चे बगीचे में आ जाते और दैत्य के साथ खेलते। मगर वह नन्हा बालक, जिसे दैत्य इतना चाहता था, फिर कभी दिखाई नहीं दिया। दैत्य सब बच्चों के साथ बहुत मीठा व्यवहार करता था, मगर उसे उस नन्हे बालक की बहुत याद आती थी और वह कहता—'ओह! उसे फिर देखकर मुझे कितनी खुशी होगी!'

वर्ष पर वर्ष बीत गये। दैत्य बहुत बूढ़ा और कमजोर हो गया। अब उसमें बच्चों के साथ खेलने की शक्ति नहीं रह गयी थी। इसलिए वह एक बड़ी-सी आराम-कुर्सी पर बैठ जाता, बच्चों को खेलते देखकर खुश होता और अपने बगीचे की सुंदरता की मन ही मन प्रशंसा करता। वह कहा करता—'बहुत-से सुंदर फूल मेरे बगीचे में हैं; मगर सबसे सुंदर फूल हैं बच्चे!'

सर्दियों की एक सुबह कपड़े पहनते समय दैत्य ने खिड़की से बाहर झांककर देखा। अब उसे सर्दियां बुरी नहीं लगती थीं, क्योंकि अब वह जानता था कि सर्दियां वसंत ऋतु के सोने के दिन हैं, फूलों के आराम करने के दिन हैं।

एकाएक उसने आंखें मलीं और आश्चर्य के साथ देखा। और वह देखता ही रह गया। बहुत गजब का दृश्य था। बगीचे के सबसे दूर के कोने में एक वृक्ष सुंदर सफेद फूलों से लगभग ढंक गया था। उसकी सब डालियां सुनहरी थीं और उन डालियों से

रुपहले फल लटक रहे थे और नीचे एक छोटा बालक खड़ा था—वही बालक, जिससे उसे उतना प्यार था।

दैत्य खुशी से झटपट सीढ़ियां उतरकर बगीचे में आ गया। घास पर से लपककर वह उस बालक के पास पहुंचा। और जब वह उसके बिलकुल पास गया, तो उसका मुंह गुस्से से एकदम लाल हो गया और उसने पूछा—'तुम्हें चोट पहुंचाने की हिम्मत किसकी हुई?' बात यह थी कि बच्चे की दोनों हथेलियों पर एक-एक की लठोकें जाने की निशानी थी और दोनों नन्हे पांवों पर भी इसी तरह दो कीलों की निशानियां थीं।

'तुम्हें चोट पहुंचाने की हिम्मत किसे हुई? मुझे बताओ, अपनी तलवार से मैं उसे मार डालूंगा।'

'न—न', नन्हे बालक ने उत्तर दिया—'ये तो प्यार के घाव हैं।'

'तो तुम कौन हो?' दैत्य ने उससे पूछा। अजीब-सा भय उस पर छा गया था और वह बालक के आगे घुटनों के बल झुक गया।

और बालक उसे देखकर मुस्कराया और उससे बोला—'तुमने एक दिन मुझे अपने बगीचे में खेलने दिया था न? आज तुम मेरे साथ मेरे बगीचे में आना; मेरे बगीचे को स्वर्ग कहते हैं।'

और उस दिन तीसरे पहर जब सब बच्चे बगीचे में दौड़े-दौड़े आये, उन्होंने देखा कि दैत्य पेड़ के नीचे लेटा हुआ है और उसके ऊपर खूब फूल गिरे हुए हैं। ×××

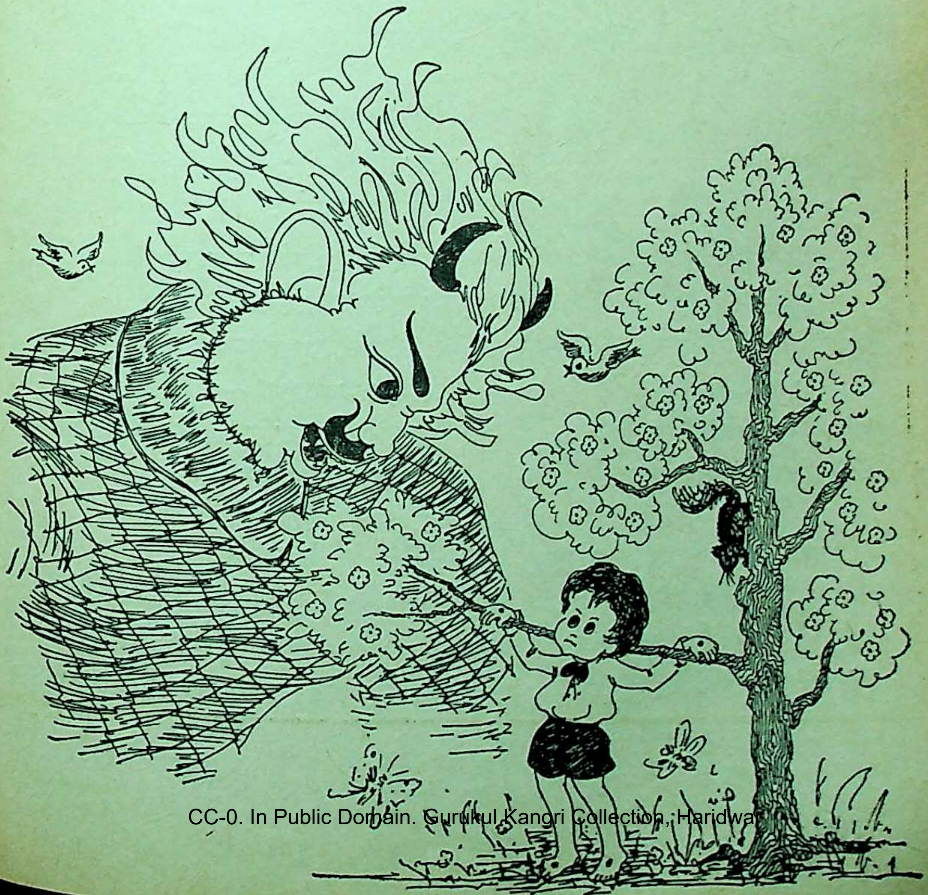

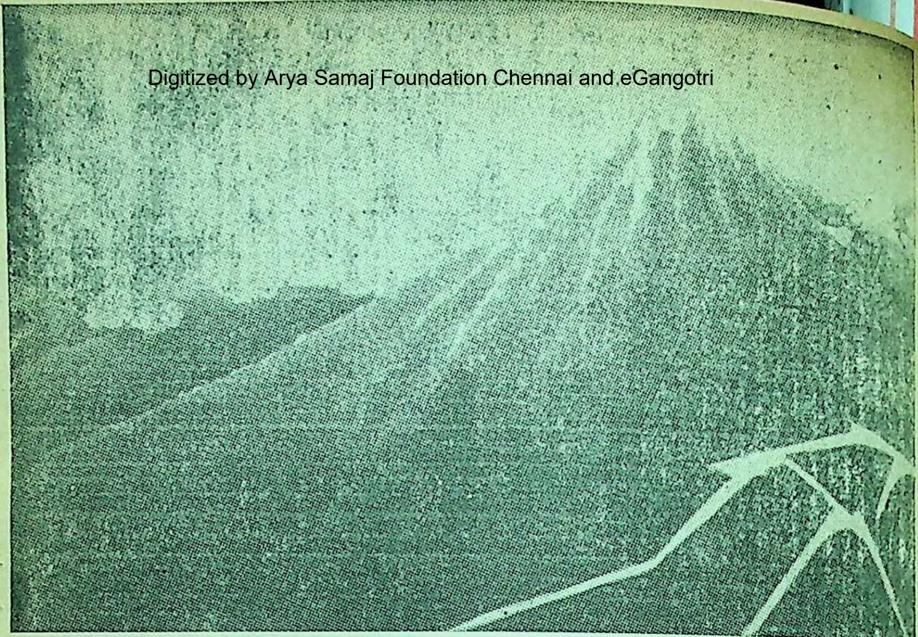

एक संवाद पर्वत का

पर्वत ने कहा :
ये बरसती बूंदें
गरजते बादल
तोड़-फोड़ करता अंधड़
ये कटखन्नी शीत लहरें
झुलसाने वाले ग्रीष्म के ये किरन-बान–
भला क्या नहीं सहा मैंने ?
झेला है इन सभी को
अपने चट्टानी मस्तक पर ......

बंधु, यदि बनाये रखना है अस्तित्व
तो–दायें-बायें और ऊपर-नीचे से
आने वाले बाधा के झोकों से–
चारों ओर से घेरने वाली
विपत्ति की व्यूह-शृंखला से–
घबराना मत;
सह लेना इन्हें !
पहन लेना धैर्य का कवच;
उठा लेना आस्था की ढाल;
संभाल लेना सामर्थ्य के अस्त्र;
और–तब देखना –
विगलित हो अस्तित्वहीन हो जायेंगे
ये सारे मदांध उपकरण;
और तुम लिख सकोगे
जगमगाते पृष्ठों पर
अपने संघर्ष की कथा और संस्मरण ......

–डा. रमा सिंह

जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर

लालबुझक्कड़ों के शहर में

मुकुल भट्ट

बुद्धिमत्ता का भूगोल से कोई संवंध है या नहीं, कहना मुश्किल है। मगर हर प्रदेश में 'बुद्धिमत्ता' के किस्से किसी विशेष शहर या गांव के साथ जुड़ जाते हैं। जैसे, राजस्थान में चौमूं, गुजरात में धोगा और पंजाब में शिकारपुर लालबुझक्कड़ों के लिए मशहूर हैं। इसी तरह, जार के जमाने में रूस में चेलम यहूदी डेढ़ सयानों का स्वर्ग समझा जाता था। वहां के सब बाशिंदे एक दूसरे से बढ़कर लालबुझक्कड़ थे। प्रमाण चाहते हैं तो लीजिये।

प्राचीनतम प्रमाण सबसे पहले। चेलम की नींव अभी रखी ही गयी थी। इमारती काम के लिए लकड़ी की जरूरत थी। पास के टीले पर पहुंचकर लोग लकड़ी काटने लगे। बड़े-बड़े शहतीर काटे जाते, कंधों पर ढोकर नीचे पहुंचाये जाते।

एक दिन एक परदेशी उधर से निकला और लोगों को शहतीर ढोते देखकर बोला—'इस तरह पसीना क्यों बहाते हो? देखो...' उसने एक शहतीर को पैर से धक्का दिया। शहतीर लुढ़कता हुआ टीले के नीचे पहुंच गया। चेलम के नागरिक नयी बात सीखने में कभी आलस नहीं करते थे। फौरन वे नीचे से सब शहतीर ढोकर टीले पर ले आये और ठोकर मारकर नीचे पहुंचाने लगे।

अब सार्वजनिक हम्माम का निर्माण किया जा रहा था। सवाल उठा कि स्नानार्थियों के बैठने के लिए जो चौकियां बनेंगी, उनके तख्ते चिकने रखे जायें या खुरदरे। फौरन दो पार्टियां बन गयीं—खुरदरा-दल और चिकना-दल। पहले का कहना था कि तख्ते चिकने होंगे, तो स्नानार्थी उन पर से फिसलकर गिर पड़ेंगे। दूसरे दल की दलील थी कि अगर तख्ते खुरदरे रहेंगे, तो उन पर बैठने पर शरीर में फांस गड़ जायेगी और इस तरह शीघ्र ही तख्ते पतले भी हो जायेंगे। विवाद जब सुलझता न दिखाई दिया तो नगरवासियों ने फैसले के लिए रब्बी को पंच बनाया। रब्बी ने दोनों पक्षों

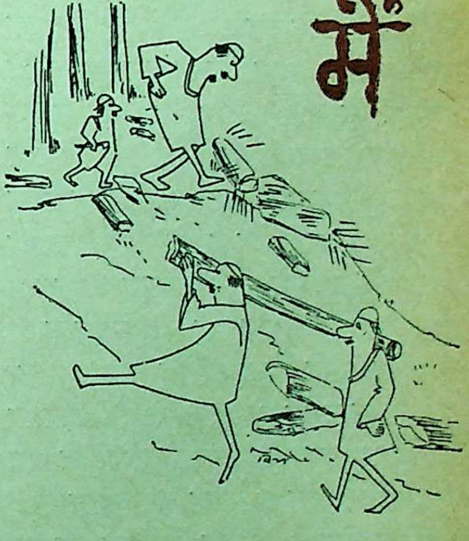

चित्रांकन : डा. विष्णु भटनागर

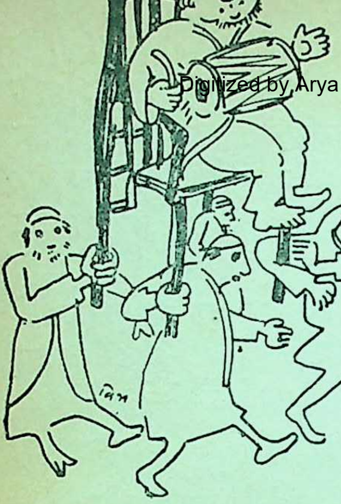

की दलीलें सुनकर फैसला दिया–'तख्ते एक ओर से चिकने और दूसरी ओर से खुरदरे रखे जायेंगे। मगर लोग फिसलकर गिरें नहीं, इसलिए चिकना हिस्सा नीचे और खुरदरा हिस्सा ऊपर की ओर रखा जायेगा।'

रब्बी साहब किसी भी समस्या की जड़ में पहुंचकर उसे सुलझाने में बेजोड़ थे। एक बार वर्ष का पहला हिमपात शुक्रवार की दुपहर को आरंभ हुआ। बर्फ की सफेद-सफेद चादर चारों ओर बिछ गयी। सबकी इच्छा हुई कि यह हिम-चादर ऐसी ही सफेद बनी रहे। मगर आप जानते हैं, शुक्रवार की सांझ को यहूदियों का साप्ताहिक व्रत सबाथ शुरू होता है और उसकी मुनादी की जाती है। लोगों को चिंता हुई कि मुनादी वाला घूमेगा तो उसके पांव पड़ने से बर्फ मैली हो जायेगी। वह नहीं घूमेगा तो लोगों को पता कैसे चलेगा कि व्रत कब शुरू करना है! क्या किया जाये? रब्बी ने समस्या की जड़ टटोली और फौरन हल पेश किया कि मुनादी वाला कुर्सी पर बैठकर मुनादी करे, और चार आदमी कुर्सी को उठाकर सारे शहर में घुमायें।

सबाथ के ही सिलसिले में खरीदारी करने रब्बी साहब बाजार गये और उन्होंने एक तगड़ी और लंबी-मोटी जिंदा मछली खरीदी। चूंकि उन्हें एक हाथ में लाठी और दूसरे हाथ में प्रार्थना की शाल का झोला उठाना था, उन्होंने मछली अपने चोगे की जेब में रख ली, सो भी इस तरह कि मछली का सिर जेब में नीचे की ओर रहे। जैसा कि हमने पहले बताया मछली लंबी, तगड़ी और जानदार थी। उसने अपनी दुम झटककर रब्बी साहब की नाक पर जोरदार झापड़ जमा दिया।

सरेबाजार रब्बी का यह अपमान! लोग जमा हो गये। जज साहब को बुलवा भेजा गया। जज साहब ने गवाहियां लीं और मछली को मृत्युदंड सुना दिया। फौरन मछली को नदी में डुबा दिया गया।

ये जज साहब खुले दिमाग और निष्पक्षता के लिए मशहूर थे। एक बार उन्होंने घर पर ही इजलास लगाया था। अभियोक्ता की बात सुनकर उन्होंने कहा–'तुम्हारी बात सही है।' फिर अभियुक्त ने अपना पक्ष रखा। सुनकर जज साहब उससे भी बोले–'तुम्हारी बात सही है।' जज साहब की पत्नी जो यह सब सुन रही थीं, पति से बोलीं–'भला अभियोक्ता और अभियुक्त दोनों की बात सही कैसे हो सकती है?' जज साहब क्षण-भर सोचते रहे, फिर बोले–

'तुम्हारी बात भी सही है।'

चेलम के नागरिकों में गजब की व्यापारिक बुद्धि थी। बेरेल और शोलेम पड़ोसी और मित्र थे। दोनों ने साझे में व्यापार करने का निश्चय किया। दोनों ने मिलकर शराब की चंद बोतलें खरीदीं और बेचने बैठ गये। दोनों ने फैसला किया कि उधार किसी को नहीं देंगे, सिर्फ नकद बिक्री करेंगे। दिन चढ़ने लगा, मगर कोई ग्राहक नहीं आया। खुद बेरेल को प्यास लग आयी। शोलेम से उसने कहा—'भैया, एक गिलास मेरे लिए ढाल दो। हां, उधार नहीं; मैं पैसे दे रहा हूं। मेरे पास पांच कोपेक हैं।' उसने पैसे शोलेम को दिये और शोलेम ने उसे शराब बेची। थोड़ी देर बाद शोलेम को भी प्यास लग आयी। बोला—'भैया बेरेल, एक गिलास मेरे लिए ढाल दो। बेशक पैसे चुकाऊंगा; मेरे पास भी पांच कोपेक हैं।' बेरेल ने उससे पैसे लिये और शराब का गिलास उसके हाथ थमा दिया। इस तरह दोनों दोस्त शराब खरीदते-बेचते रहे। दिन ढल गया, बोतलों की सारी शराब ढलकर बेरेल और शोलेम के पेट में पहुंच गयी। दोनों खुश-खुश घर लौट चले कि हम सारी शराब नकद दाम पर बेचने में कामयाब हो गये!

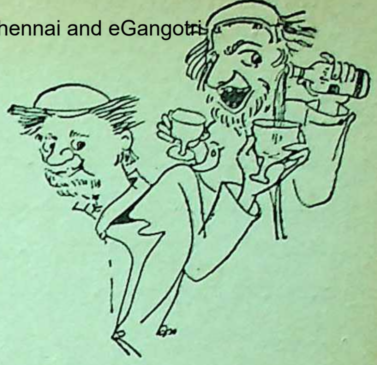

चेलम की स्त्रियां तो व्यापार में और भी चतुर थीं; क्योंकि गणित में वे सब बड़ी पक्की थीं। उनमें से एक खातून होटल चलाती थी। एक दिन एक परदेशी ग्राहक आया। खाना खाने के बाद उसने पूछा कि कितने पैसे हुए? होटल-मालकिन बोली—'पावरोटी, मक्खन और शोरबे के सात कोपेक, भुने मुर्गे के सात कोपेक, कुल ग्यारह कोपेक।'

ग्राहक ने कहा—'आप हिसाब में गलती कर बैठीं। सात दुनी चौदह।'

होटल-मालकिन बोली—'नहीं, सात दुनी ग्यारह। मैं विधवा थी और मेरे चार बच्चे थे। मैंने एक विधुर से शादी की, उनके भी चार बच्चे थे। फिर हमारे तीन बच्चे हुए।

इस तरह दोनों के सात-सात बच्चे हुए, और सब मिलकर कुल [illegible]।'

जब आम चेलमवासी इतने बुद्धिमान थे, तो उनके स्कूलमास्टर का तो पूछना ही क्या ! एक दिन मास्टरजी अपनी पत्नी से बोले–'अगर मैं जार होता तो जार से ज्यादा पैसे वाला होता।' बीवी ने हैरानी के साथ पूछा–'सो कैसे ?' बोले–'मैं दो-एक टच्यूशनें भी तो करता।'

मास्टर साहब के पढ़ाने की खूबी यह थी कि वे जटिल से जटिल विचार को सुंदर उदाहरणों द्वारा विद्यार्थियों के दिमाग में बैठा देते थे। मनुष्य की आर्थिक अवस्था उसकी आदतों को कैसे प्रभावित करती है, यह बात उन्होंने इन तीन लाजवाब उदाहरणों से समझायी :

१. साधारण आदमी हर शुक्रवार को सबाथ के उपलक्ष्य में धुली कमीज पहनता है। अमीर आदमी हर रोज धुली कमीज पहनता है। धनकुबेर राथ्सचाइल्ड हर रोज तीन बार धुली कमीज पहनता है–सवेरे, दुपहर और शाम को। जार को कमीज पहनाने-उतारने के लिए दो जनरल नियुक्त हैं। एक जनरल धुली कमीज पहनाता है, दूसरा फौरन उतार देता है। पहला जनरल दूसरी धुली कमीज पहनाता है, दूसरा जनरल उसे उतार देता है। इसी तरह धुली कमीजें पहनाने-उतारने का सिलसिला सारे दिन चलता रहता है।

२. साधारण आदमी भोजन के बाद छोटी-सी नींद लेता है। उस वक्त उसकी पत्नी इसका खयाल रखती है कि कोई उसे जगाये नहीं। जब अमीर आदमी झपकी लेता है, चौकीदार कमरे के बाहर बैठकर देखभाल करता है। जब धनकुबेर राथ्सचाइल्ड झपकी लेता है, बारह चौकीदार कमरे के बाहर निगरानी रखते हैं। जब जार झपकी लेता है, पूरी एक फौज कमरे के बाहर खड़ी रहकर जोर-जोर से सबको आगाह करती रहती है–'खामोश ! बादशाह सलामत सो रहे हैं।'

३. साधारण आदमी सवेरे उठता है और मुंह-हाथ धोकर नाश्ता करता है। अमीर आदमी सुबह दस बजे उठता है और मुंह-हाथ धोकर नाश्ता करता है। धनकुबेर राथ्सचाइल्ड दिन के दो बजे उठता है और मुंह-हाथ धोकर नाश्ता करता है। जार सारे दिन, सारी रात सोता रहता है और अगले दिन नाश्ता करता है।

ऐसे बुद्धिमानों के नगर में कोई दार्शनिक न हो यह कैसे हो सकता है! चेलम में कई दार्शनिक थे और उनके सिरमौर थे लेमाक बेन लेकीश। कोई भी समस्या उनके लिए समस्या नहीं थी। एक रोज उनसे बड़ा ही बुनियादी सवाल पूछ लिया गया–'कुत्ता दुम क्यों हिलाता है?'

उत्तर मिला–'इसलिए कि कुत्ता दुम से ज्यादा ताकतवर है। अगर इससे उलटी बात होती, तो दुम कुत्ते को हिलाया करती।'

किसी ने पूछा–'सिर के बाल दाढ़ी के बालों से जल्दी क्यों पकने लगते हैं?'

[शेष पृष्ठ १४३ पर]

सूर्य और अतिसूर्य

–कुबेरनाथ राय

पौ फटी। सूरज का लाल घोड़ा हिनहिना गया। सिंहों ने आंखें खोलकर अंगड़ाई ली, फिर मुख फाड़कर 'आऽऽऽ ओऽम्' करके अपने सप्तवर्णी फिर एकादशवर्णी विकराल 'ओंकार' का उच्चारण किया, एक बार–दो बार–तीन बार! अरुणवर्ण सूर्य का यह छांदस स्वागत मनुष्य के अतिरिक्त केवल सिंह ही कर सकता है, अन्य किसी मानवेतर प्राणी से यह संभव नहीं। बेचारे काक-कोकिल ने भी अपनी मातृभाषा में छंद-सोरठा जो बन पड़ा, इस अरुण अश्वारोही के स्वागत में पढ़ा। हस्तियूथ ने शुंडादंड उठाकर राजसी सलाम दिया और चिंघाड़कर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। गंगातीरी धेनुओं ने हंऽऽऽ बांऽऽऽ!' ध्वनि से रंभाना शुरू किया और बछड़ों तथा बच्चों ने उछल-कूदकर तथा कोलाहल करके अपना उल्लास व्यक्त किया।

सूरज के लाल घोड़े की हिनहिनाहट सुनते ही शबरी धारण करके चलने वाले रात्रिचर गण, रात्रि में औरों की खेती उखाड़ने वाले गोपाल एवं महिषपाल गण, अंधकार में धारदार गुप्ती मारने वाले तस्कर गण एवं उनके सरकारी तथा गैर-सरकारी 'मातुल' गण, ये सभी के सभी विश्राम-गह्वर ढूंढ़ने लगे। 'कौटिल्य' तथा 'मेकियाविली' की पोथियों पर वेष्टन लपेट दिया गया और इनके उपासक-गण भी रामनाम भजते हुए नजर आने लगे। सारे छलछंद, कुहक, अपघात, इंद्रजाल टूटकर छिन्न-भिन्न हो गये, क्योंकि भगवान का उदय

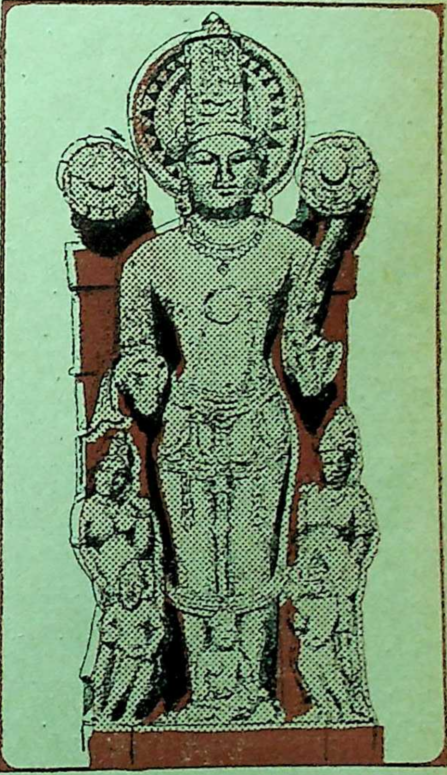

विष्णु–अनुकृति : वी. एन. ओके

होने जा रहा है, 'रामजी की बेला' आ रही है। ज्यों ही कृष्णवर्ण आकाश पर हल्की कांति या आभा का आभास फूटा, त्यों ही सारी अबनार्मल तृषाओं, अवदमनों और उत्पीड़नों के प्रेत, 'सैडिज्म' और विकृत 'लिबिडो' की अतृप्त लालसा-यक्षिणियां, क्रूरता और कामुकता के सर्प-श्वापद मारे शर्म के अपने-अपने अंध गह्वरों में चले गये।

पौ फटी। पूर्व के द्वार पर लाल घोड़ा हिनहिना गया और नन्ही-नन्ही किरण-कन्याएं, असंख्य सविताएं धरती के शृंग-शृंग, शाख-शाख, पत्र-पत्र, फुगनी-फुनगी पर उतरने लगीं। यह लाल उस खूनी लाल से भिन्न है जो तमसा-रात्रि का पाप-पुष्प है, जो अंधकार में गुप्ती मारने वालों का एवं दंत-नख तीक्ष्ण करने वालों का रंग है। यह लाल मंगलमय अरुणवर्ण है, जननी के सीमंत जैसा, गणेशजी के दिव्य ललाट जैसा, पवित्र कुंकुम-वर्ण लाल। प्रतिदिन प्रातः अरुणवर्ण घोड़ों का एक रथ अंधकार-समुद्र को मथित करते हुए उदित होता है। उसमें सात-सात घोड़े जुते हैं। परंतु वैदिक कवि उस रथ का स्तवगान करते हुए बताता है—'ये सातों अश्व वस्तुतः एक ही अश्व हैं।' यही है तेजस्वी धावमान काल-तुरंग। सतरंगी लगाम रहने से एक ही घोड़ा सात-सात वर्ण धारण कर लेता है। परंतु वस्तुतः है वह एक ही घोड़ा। 'कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः ...... तमारोहन्ति कवयो विपश्चतः। तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा' (अथर्व)। काल एक तुरंग है, सात-रश्मियों वाला तुरंग। उस पर सर्वज्ञ 'कवि' सवार होता है, उस कवि के रथ के चक्र ही ये सारे भुवन हैं।

यह कवि है स्वयं सूर्य, जो सृष्टि को सतरंगी मायापट का रूप दे देता है अपनी असंख्य किरण-कन्याएं भेजकर। धरती के कविगण इसी महाकवि की कन्या 'सावित्री' की प्रार्थना करते हैं और उसे श्रद्धा, सावित्री, सविता आदि नामों से पुकारते हैं। उषा का चाक्षुष अवतरण-दृश्य इसी देवता का काव्य है। तभी तो वैदिक कवियों ने कहा है—'पश्य देवस्य काव्यं, न ममार न जोर्यति', देवता की इस कविता को देखो, जो न कभी मरती है और न जीर्ण होती है। सारी वैदिक कविता ही सूर्यवती ज्योति का काव्य है। वैदिक कविता ही क्यों, समूचे भारतीय साहित्य की असली प्रकृति सूर्यप्रधान है। यह सावित्री-संपृक्त और सूर्यवती ज्योति से सुप्रकाशित साहित्य है।

भारतीय साहित्य की तीन आंखें हैं—रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत; और बाह्य दृष्टि से देखने पर इनकी प्रकृति, रीति और विषय-वस्तु में क्रमशः सूर्य, अग्नि और सोम तत्त्वों का प्राधान्य है। ये तीनों काव्य भारतवर्ष के दिव्य त्रिनेत्र हैं। इन्हीं तीनों नेत्रों के माध्यम से भारतवर्ष सृष्टि के देश-काल को और देशातीत-कालातीत को देखता-पहचानता आ रहा है। भविष्य में भी चश्मा चाहे जो चढ़े, आंखें यही रहेंगी। परंतु इन तीनों को सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो अंतिम विश्लेषण में एक ही तत्त्व हाथ आयेगा। वह है

सूर्य-तत्त्व । अग्नि सूर्य की ही एक प्रकृति है, दाहिका प्रकृति; और सोमकला मूलतः सूर्यवती ज्योति का ही एक रूपांतर है। एक ही मधु है जो अग्नि की स्वाहा-शिखा में 'उपासना' बनकर स्थित है, सूर्य की ज्योति में 'कर्म' बनकर स्थित है, और सोम की कला में 'भोग' बनकर स्थित है। सारे मधु का दाता-स्रोत-देवता एक ही है। उसी देवता को नायक बनाकर ये तीनों काव्य रचे गये हैं। आदिनायक और मूलनायक है यही कवि सूर्य, अश्वारोही सूर्य, या महारथी सूर्य। श्रीमद्भागवत बाह्यतः सोमकाव्य होते हुए भी इसी आदित्य-मधु का कीर्तिगान है। इसी काव्य के अंतिम स्कंध में सूर्य के रथ का अपूर्व वर्णन हुआ है। वस्तुतः यह 'सूर्यात्मनो हरेः' (सूर्यात्मा हरि का) ही रथ है। श्रद्धा के माध्यम से ही ध्यानलोक में इसका साक्षात्कार संभव है, अन्यथा नहीं।

सूर्य के बारह रूप ह जो द्वादश आदित्य कहलाते हैं। ये रूप धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इंद्र, विवस्वान, त्वष्टा, विष्णु, अंशु, भग, पूषन् और पर्जन्य नामों से क्रमशः चैत्र से लेकर फाल्गुन तक के द्वादश मासों में विहार करते हैं। प्रत्येक मास में एक आदित्य-विशेष का रथ चलता है और उसके साथ-साथ एक ऋषि, एक गंधर्व, एक अप्सरा, एक यक्ष, एक नाग और एक राक्षस संयुक्त रहता है। ये सातों मिलकर एक सौर 'गण' की रचना करते हैं, जिसकी अवधि एक मास होती है। सूर्य का यह अपूर्व रथ पूर्व दिशा के उदयाचल से उठता है। रथ के आगे-आगे अबोध बच्चों जैसे नन्हे-नन्हे साठ हजार वालखिल्य ऋषि पहाड़ा रटते हुए प्राइमरी स्कूल के बच्चों की तरह रथ की ओर मुख करके बृहत्साम का निरंतर पाठ करते हुए चलते हैं। ऋषि ऋचाओं का उद्गान करते हुए चलता है, गंधर्व उस उद्गान से ताल बैठाते हुए वीणा-वादन करता चलता है, अप्सरा रथ के संमुख प्रकाश-पट पर नृत्य करती चलती है, यक्षगण रथ का निरंतर परिवर्तित अलंकरण और साज रचते हुए चलते हैं, नाग रथ के धुरों और जोड़ों में अपने अंग लपेटकर रस्सी की तरह कसे चलता है और पीछे से भीमकाय महाबाहु राक्षस रथ को ठेलता चलता है। आगे-आगे मरुद्गामी सात अश्व धावमान हैं। परंतु पीछे विरोधी दिशा में उच्चैःश्रवा रथ को खींच रहा है, जिससे गति असंयमित न हो और ऋतुचक्र तथा दिवसचक्र की अवधि में 'त्रुटि' मात्र भी हेरफेर न हो पाये।

यह रथ अपूर्व शोभा, अपूर्व पवित्रता, अपूर्व उद्गान, अपूर्व बल के साथ-साथ महान उत्तरदायित्व और महान संयम का प्रतीक है। एक सधे हुए छंद में दिवस, सप्ताह, पक्ष, मास, ऋतु और संवत्सर के कालचक्र की रचना करते हुए इस कविसूर्य का रथ अविराम चल रहा है। प्राण का, स्वाद का, मधु का, जीवन का तथा जीवन को प्रकाशित करने वाली अन्नवती, जलवती, वाग्वती ज्योतियों का वितरण करता हुआ सूर्य अपने महान उत्तरदायित्व और महान संयम के साथ विचरण कर रहा है।

यदि यह ज्येष्ठ मास है, जिसकी वैदिक संज्ञा है 'शुक्र', तो इसमें सूर्य का नाम है 'मित्र', ऋषि हैं अत्रि, गंधर्व है हाहा, अप्सरा है मेनका, यक्ष है रथस्वन, नाग है तक्षक और राक्ष है पौरुषेय। अगला मास होगा आषाढ़ अर्थात् वैदिक भाषा में 'शुचि', और ये सातों बदल जायेंगे। सूर्य होगा वरुण, ऋषि होंगे वशिष्ठ, गंधर्व होगा हूहू, अप्सरा होगी रंभा, यक्ष होगा सहजन्य, नाग होगा शुक्र और राक्षस होगा चित्रस्वन! यदि कोई नहीं बदलेगा, तो वह है वालखिल्य-समुदाय। शायद अंगुष्ठमात्र के ये ६० हजार नन्हे-मुन्ने ऋषिगण मचल जाते हैं और अपनी निरंतर धावमान पाठशाला के छोड़ने के लिए तैयार ही नहीं होते।

वास्तव में श्रीमद्भागवत का यह काव्यमय वर्णन 'सूर्य' का नहीं, 'अतिसूर्य' अथवा 'परासूर्य' (ट्रान्सेन्डेन्टल सन) का वर्णन है। अतिसूर्य है स्थूल सूर्य-गोलक का ही अधिष्ठान देवता। वस्तुतः यह अतिसूर्य और कोई नहीं साक्षात् परमात्मा ही है, जिसके चक्षु हैं सूर्य-चंद्र और अग्नि, जिसकी प्रसविनी शक्ति है सविता, और जिसका उपासना-मंत्र है सावित्री। यह अतिसूर्य ही स्वयंभू है, कवि है, धाता-विधाता है, मधु-माधव है। यह जो सवेरे लाल धक-धक चमकता चक्का उगता है वह तो इसके अनंत चक्रों वाले विराट् रथ का एक चक्का मात्र है—'तस्य चक्रा भवनानि विश्वा', तीनों भुवनों के सारे लोक उसके रथ के चक्र हैं। हमें जो दृश्यमान होता है वह सवार नहीं, सवार के अनंत-व्यापी रथ का एक पहिया मात्र है। हमारे एम. एस-सी. मित्र ही नहीं, हम भी कहते हैं कि जो प्रातः दिखाई देता है वह 'वह' देवता नहीं जिसका वर्णन भागवत में है। वह देवता तो 'वाङ्मनसा अगोचर......' है, उसका बोध तो इन दुर्बल चर्मेंद्रियों द्वारा संभव ही नहीं, वह देवता 'अतिसूर्य' समस्त भुवनों के रथ पर सवार होकर उन्हें जीवन और प्राण की गतिकक्षाओं पर चला रहा है। साठ हजार वालखिल्यों का स्तवगान, ऋषियों का सामपाठ तथा अप्सराओं का मंगलमय नृत्य इस 'अतिसूर्य' के संमुख हो रहा है, स्थूल प्रातःकालीन अरुणचक्र के संमुख नहीं।

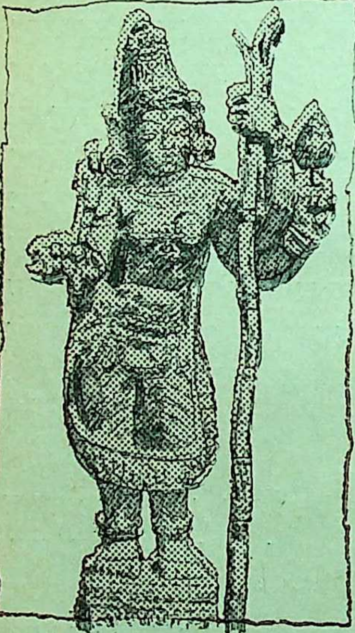

भगवती उषा
[दक्षिण भारतीय काष्ठशिल्प]

स्थूल सूर्य का वर्णन अरिस्टार्कस, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर, टालमी, कोपर्निकस केप्लर और गेलिलियो देते हैं, तो इस अतिसूर्य का वर्णन किया है मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने, उनके सारे 'साम' और 'स्तोम'

का विषय यही 'अतिसूर्य' है। स्थूल सूर्य और अतिसूर्य में वही संबंध है जो खड़ाऊं और रामचंद्र में था; तो भी भरत ने खड़ाऊं के ही मंगलानुशासन में राजकाज चलाया। यह स्थूल सूर्य तो भावबोध का एक आधार मात्र है, जिसके माध्यम से हम अपने मन को अतिसूर्य के निकट ले जा सकते हैं। उस अतिसूर्य से संबंध स्थापित करने का यह सरलतम उपाय है। जिन्होंने रथंतर और बृहत्साम की रचना की थी, उनके स्तवगान का लक्ष्य निश्चय ही हाइड्रोजन-हीलियम-कोबाल्ट की यह अविराम ज्वलंत चुल्लिका नहीं थी। यह बात उनके स्तवगान की भाषा से ही पंक्ति-पंक्ति में स्पष्ट है। उनकी सारी वंदना अतिसूर्य या परासूर्य को संबोधित की गयी है। अतः बिना बूझे-समझे उन्हें व्यर्थ धिक्कारने में कोई तुक नहीं।

महाभारत के शांतिपर्व (अ. ३१८) में याज्ञवल्क्य से गंधर्व विश्वावसु कुछ प्रश्न करता है–'विश्व क्या है, विश्वा क्या है ? अश्व क्या है, अश्वा क्या है ? मित्र क्या है, वरुण क्या है ? सूर्य क्या है, अतिसूर्य क्या है ?' याज्ञवल्क्य सरस्वती का चिंतन करके मन का मंथन करने लगे और उस मानस-मंथन से, दही से घृत की भांति, उत्तर अपने आप मन में उदित होने लगे–'विश्व है पुरुषोत्तम, विश्वा है अव्यक्त प्रकृति। अश्व है पुरुषोत्तम और अश्वा है अव्यक्त प्रकृति। मित्र है पुरुषोत्तम और वरुण (जलतत्त्व) है अव्यक्त प्रकृति। अतिसूर्य है पुरुषोत्तम और सूर्य है अव्यक्त प्रकृति।'

यह अव्यक्त प्रकृति ही परमाप्रकृति का महत् या प्रधान रूप है, जिस पर पुरुष या जीवात्मा का प्रतिबिंब पड़ चुका है और जिसका रूपांतर होता है अहंकार में जो व्यक्तित्व-रचना का केंद्रबिंदु है। अतः अतिसूर्य है पुरुषोत्तम या परमात्मा, और सूर्य है अस्मिता या व्यक्तित्व की जननभूमि। दोनों चेतन हैं। वस्तुतः प्रातः अरुणोदय का जो स्थूल अरुणवर्ण सूर्य हम देखते हैं, वह तो सूर्य भी नहीं बल्कि अ-सूर्य है, जड़ प्रकृति है, पंचमहाभूत-समुदाय मात्र है। 'अतिसूर्य' का बोध मिलता है सांख्य-योग के द्वारा 'विशुद्धं विजरं' हृदय-कमल में; 'सूर्य' अर्थात् चेतन प्रकृति या व्यक्तित्व का बोध मिलता है काव्य-साहित्य और शिल्प में; तथा स्थूल सूर्य या 'असूर्य' अर्थात् जड़ प्रकृति का बोध मिलता है विज्ञान और अर्थशास्त्र आदि के माध्यम से। अतिसूर्य है अधिदैवत, सूर्य है अध्यात्म, और अ-सूर्य है अधिभूत, जो क्रमशः दार्शनिक, कवि और वैज्ञानिक के विषय हैं।

श्रीमद्भागवत में वर्णित रथारोही सूर्य अतिसूर्य है। परंतु अरिस्टार्कस-ब्रह्मगुप्त-वराहमिहिर, कोपर्निकस-केप्लर का सूर्य है वस्तुतः अ-सूर्य, या जड़ प्रकृति का अधिभूत रूप, पंचमहाभूतों का पिंड मात्र। अतः श्रीमद्भागवत में वर्णित इस अतिसूर्य के रथ का अवतरण अपनी प्रतीकात्मक भाषा के धरातल पर सही वर्णन है। कहीं कोई वंचना नहीं, कहीं कोई अपलाप नहीं; सब कुछ ही सत्य अनुभवों को बूंद-बूंद जोड़कर इकट्ठा किया हुआ

मानस-मधु है । इस मानस-मधु का स्वाद पाने की क्षमता जिनमें है वे जानते हैं कि यह रथ ध्यान के, मन के मधुमय लोक में अवश्य उतरता है और रवि साठ हजार नन्हे-मुन्ने निष्पाप वालखिल्यों के कंठ सें समुद्र-तरंगों जैसी पवित्र सामधेनी उठती है, उर्वशी और रंभा के चरण मानस-भूमि पर छनाछन छंदोबद्ध रीति में पड़ने लगते हैं; ब्रह्मरंध कपाल से लेकर ललाट और पलकों तक प्रस्फुटित कमल-वन में परिवर्तित हो जाता है, और सारा स्थूल दैहिक अस्तित्व गंध और शब्द बनकर वायु और व्योम में विलीन होने-होने की अवस्था में पहुंच जाता है । इस अतिसूर्य की (जो परमचैतन्य का आदिस्रोत है) क्षणिक हल्की छाया भी हमारी व्यक्तिगत चेतना पर पड़ जाती है तो यह अरुणवर्ण रथ हमारे व्यक्तित्व में जय बनकर, आशीर्वाद बनकर, चिरंतन काव्य बनकर निवास करने लगता है।

जिनकी मनोभूमि में यह अतिसूर्य अपनी सविता-शक्ति स्थापित कर देता है, अपना अवतरण प्रतिष्ठित कर देता है, वे पुरुषोत्तम या अवतार कहे जाते हैं। ऐसे ही अवतार हैं, राम और कृष्ण, व्यास और कपिल, बुद्ध और महावीर । हमारा राष्ट्रीय काव्य रामायण जो 'भारतीयता' की सगुण साकार 'प्रतिमा' या बिंब उद्घाटित करने के लिए रचा गया है, इसी अतिसूर्य का शत-प्रतिशत मानवी संस्करण उपस्थित करता है राम के चरित्र में। 'रामायण' नाम ही इस बात का द्योतक है कि यह सूर्य-प्रतिबद्ध काव्य है । 'रामायण' अर्थात् राम नामक अतिसूर्य-पुरुष का 'अयन-वृत्त' । 'अयन' शुद्धतः ज्योतिषशास्त्र का शब्द है। रामायण में चौबीस हजार श्लोक हैं, जो गायत्री या सविता-मंत्र के चौबीस अक्षरों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

शरद पूर्णिमा बीते पंद्रह दिन हो गये, इस समय दामोदर मास अर्थात् कार्तिक मास चालू है और मैं मन-वृंदावन की परिक्रमा आजकल नित्य करता हूं। आकाश-वीथी पर सूर्य तुला राशि में प्रवेश कर चुका है । इस मास में इसका रथ आधा चित्रा, पूरा स्वाती और फिर आधा विशाखा (राधा) नक्षत्रों का भोग करता हुआ पूरे तीस दिनों तक चलता रहेगा। चित्रा की धूप बड़ी रूपसी होती है। स्वाती में मेघगण एक-आध दिन के लिए पुनः लौट आते हैं और बांस को वंशलोचन, सीपी को मोती, कदलीगुंफ को कर्पूर और तृषित चातक को जीवन-जल का दान दे जाते हैं । महज दो-एक दिन की फुहार-बहार है। अन्यथा यह पावसकाल थोड़े है ! बाहर की कौन कहे, मन के भीतर की बजती मेघ-मृदंग और ताल-मंदिरा की ध्वनियां कब की थम चुकी हैं एवं मन अपने शृंगार-कलाप का त्याग करके विरागी बन चुका है।

धरती पर कार्तिक मास परिश्रम का पवित्र मास है 'मर्द' और 'बलीवर्द' दोनों के लिए । एक ओर स्वर्ण-धान्य खेत-पथार में लगा है, कटने के लिए सुनहली फसल तैयार हो गयी है, और दूसरी ओर खेतों में जुताई चालू है, पानी पटाया जा रहा है, चास-कोन-पटेला

हो रहा है । शस्य के वपन [illegible] गेहूं-चने के बीज हराई में डाले जा रहे हैं । अगले मास मार्गशीर्ष में धरती का धान घर की 'बखार' में पहुंच जायेगा और हराई का बीज गेहूं-चने का थान बन जायेगा तथा खेत-खेत में नारायण की नयी अन्नवती ज्योति का अवतरण होगा । हरित वर्ण वाली अन्नवती ज्योति ! परंतु इसके लिए कार्त्तिक में 'मर्द और 'बलीवर्द' दोनों को खटना है । दोनों को 'शारदातप' बरदाश्त करना है।

शरद का 'आतप' बड़ा ही प्रखर होता है । गोसाईंजी ने लिखा है कि इस 'आतप' अर्थात् धूप का जहर रात्रिकाल में चंद्रमा खींच लेता है–'शरदातप निसि ससि अपहरई।' तो भी यह शरद-कालीन मध्याह्न सूर्य तीसरा नेत्र खोलकर हंकड़ते हुए रुद्रवृषभ जैसा ज्येष्ठ-सूर्य नहीं। उस समय तो आसमान का चेहरा इतना रोबीला हो जाता है कि आंख मिलाने का साहस नहीं होता। ज्येष्ठ-सूर्य तो 'डिक्टेटर' है । पर कार्त्तिक-सूर्य लोकतंत्र का तेजस्वी नेता है, जो दोपहर को हांक-डांट से काम कराता है, पर सुबह-शाम कुशल-मंगल बड़े मजे में पूछता है । शरद-प्रात में सौम्यकांत मुख वाला सूर्य मुझे बड़ा ही मिलन-सार लगता है, गोया अभी पूछ बैठेगा–'कैसे हो ? सब ठीक है न !'

मैं जानता हूं यह सूर्य कितना भी दूर क्यों न हो, बेगाना नहीं, अपना सखा है, अपना सगोत्र है । अहंकार के कारण अपनी अस्मिता की सीमा से बंधकर मैं उससे कुछ भिन्न-सा लगता हूं। परंतु वास्तव में वह यदि 'अतिसूर्य' (परमात्मा) है, तो मैं भी 'सूर्य' (जीवात्मा) ही हूं । अष्टधा प्रकृति का माया-परिधान धारण करके मैं देखने में 'अ-सूर्य' (जड़ प्रकृति) सा लगता हूं। परंतु वस्तुत: जो वह है, वही मैं भी हूं। वह महासुपर्ण है तो मैं जीवगृध्र हूं। परंतु कौन नहीं जानता कि सुपर्ण और गृध्र दोनों एक ही गोत्र (स्पीशीज़) के जीव हैं। इसी से प्रात:सूर्य का चेहरा देखने में मुझे एक अद्भुत सुख मिलता है, चाहे वह कोई भी मास अथवा कोई भी ऋतु क्यों न हो। आभाभास्वर प्रात:सूर्य को देखकर मेरे मन का एक-एक भाव-परमाणु, मेरे रक्त की बूंद-बूंद मेरे अंग का रोम-रोम प्रार्थना करने लगता है और भीतर के षट्चक्र विसंपुटित और मुकुलित होने लगते हैं तथा शरतल्प पड़े हुए पुरुषव्याघ्र भीष्म पितामह की यह गिरा मुझे स्मरण आने लगती है :

हिरण्यवर्णं यं गर्भमदितेर्दैत्यनाशम् ।
एकं द्वादशधा जज्ञे तस्मै सूर्यात्मने नमः ॥

–जो हिरण्यवर्ण है, जो अदिति के गर्भ से उत्पन्न है, जो दैत्यों का नाशक है और जो एक होकर भी द्वादश रूपों में व्यक्त होता है, उस सूर्यात्मा प्रभु को नमस्कार !

–नलबारी कालेज, नलबारी, जि. कामरूप, असम

मसऊद मुफ्ती

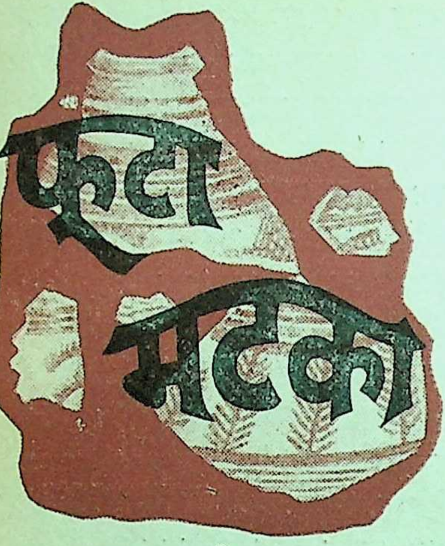

फूटा मटका

अनुवाद : ज़ाहिद इकबाल

टप......टप......उत्तरी सिंध की झुलसती हुई सुबह में पसीने की दो बूंदें माथे से चलकर नाक से गिरीं और ठीकरे के ऊपर जमी हुई मिट्टी की तह में जज्ब हो गयीं।

मुहम्मद फतह मुअनजो-दड़ो में दूसरे मजदूरों के साथ काम कर रहा था। खुदाई का काम। कभी कुदाल से, कभी खुरपियों से, कभी हाथों से और कभी उंगलियों की पोरों से। यह बड़ा असंतोषजनक और उकता देने वाला काम था। मगर उसे अपनी मजदूरी से गरज थी। जब थोड़ा काम करके मजदूरी ज्यादा मिले तो और क्या चाहिये?

मुहम्मद फतह के साथ पंद्रह मजदूर कुछ दिनों से एक टीले की खुदाई कर रहे थे, जिसमें से कुछ ईंटों का टूटा हुआ फर्श, एक-दो मटके और कुछ गहने मिले थे। ज्यादा कुछ प्रकट होने की उम्मीद में वे बड़ी सावधानी से पिछले चार दिन से काम कर रहे थे और कल शाम तक एक टूटे हुए मटके की तमाम ठीकरियां ढूंढ़ चुके थे, जो उसके सामने पड़ी थीं। और वह सिर झुकाये उन पर से धीरे-धीरे मिट्टी साफ कर रहा था। उसके हाथ में लोहे की पतरी थी, जिससे वह मिट्टी उतार रहा था। जिस टुकड़े पर बेल-बूटे नजर आते, उसे वह खुरचे बगैर दूसरे आदमी को दे देता, जो उसे ब्रश से हौले-हौले साफ करता। साथ ही वह पुराने सिंधी लोकगीत का एक पद गुनगुना रहा था, जिसका अर्थ यह था कि जेब में पैसा हो तो लड़काना घूमो।

वह कई हफ्ते से यहां काम कर रहा था और जानता था कि खुदाई के जरिये पांच हजार साल पुराने शहर का एक और हिस्सा प्रकट हो रहा था। इसलिए आज मिट्टी खुरचते हुए उसने सोचा कि उन पांच हजार सालों में यहां कुछ भी तो नहीं बदला। इन ठीकरियों पर जमी हुई मिट्टी बिलकुल वैसी ही है, जैसे आजकल की मिट्टी। ये ठीकरियां भी वैसी ही हैं, जैसी हमारे बरतन टूटने से बनती हैं। उस जमाने के खिलौनों में जो बैलगाड़ियां और किश्तियां प्रकट हुई हैं, वे भी एकदम आजकल जैसी ही हैं। अगर यह सब कुछ वैसा ही है, तो खुदा जाने ये लोग क्यों इतनी मेहनत से ये चीजें खोदते हैं, जबकि हूबहू ऐसी ही चीजें आज भी डूकरी और लड़काना के गली-कूचों में ढेरों नजर

आती हैं।

पतरी को जमीन पर रखकर मुहम्मद फतह ने माथे पर उंगली फेरी और पसीने की बूंदें इकट्ठी होकर धार की शक्ल में उंगली के सिरे से उसके दामन पर गिरने लगीं। उसने नजर उठाकर देखा तो एक मील दूर सिंध दरिया की चौड़ी सतह चांदी की तरह चमक रही थी और उस चमक से गर्मी का एहसास और भी गहरा हो रहा था। उसने दूसरे मजदूरों पर निगाह डाली। दो-चार काम में डूबे हुए थे और बाकी घास के छप्पर के नीचे सुस्ता रहे थे।

दरअसल वे सब इंतजार में थे। कराची से कुछ अफसर खासकर ये चीजें देखने के लिए आ रहे थे, जो खुदाई में निकली थीं। उनके लिए खास हवाई जहाज का इंतजाम किया गया था। और म्यूजियम के तमाम अफसरान उन्हें लेने के लिए मुअनजो-दड़ो के हवाई अड्डे पर गये थे। जाने से पहले कस्टोडियन ने मजदूरों को सख्ती से हिदायत दी थी कि वे लोग खासकर इस मटके के टुकड़े को देखेंगे; इसलिए यह काम उनके आने से पहले खत्म हो जाना चाहिये। वह गया तो बाबा आचर, जो सबसे बूढ़ा मजदूर

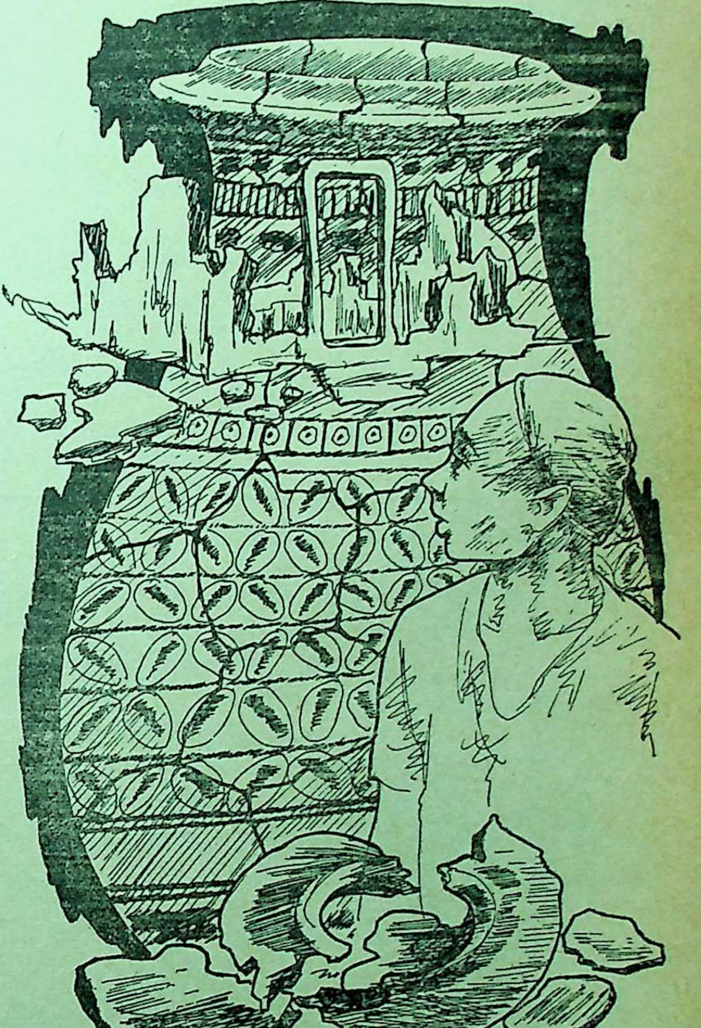

चित्र : शेणै

सर्दी बंद

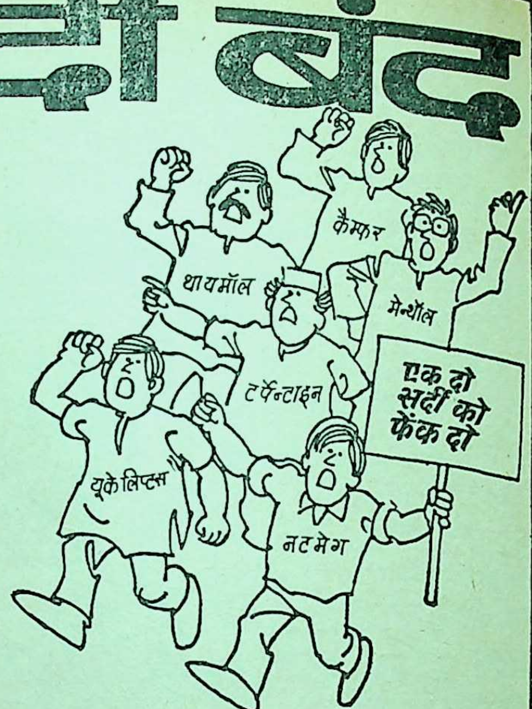
कैम्फर
थायमॉल
मेन्थॉल
टर्पेन्टाइन
एक दो सर्दी को फेंक दो
यूकेलिप्टस
नटमेग

रबेक्स की ६ अकसीर दवाओं का कमाल!

सर्दी-जुकाम का जोरदार इलाज— खास फार्मूले से बना रबेक्स सर्दी-जुकाम से जल्द आराम देता है... बंद नाक खोलता है, छाती में जमा बलगम दूर करता है और शरीर में स्फूर्तिभरी गर्माहट लाता है.

२० और ६५ ग्राम की शीशी व ६ ग्राम की डिब्बी में मिलता है.

मुफ्त बॉल पेन २० ग्राम की शीशी खरीदने पर...
स्टॉक रहने तक ही मिलेगा.

everest/921a/ACW-hn

Rubex
FOR COLDS, PAINS & ACHES
COLDS, ACHES AND PAINS
Rubex
रबेक्स
CHEMICAL WORKS CO LTD

था, हंसने लगा—'ये साहब लोग भी खूब हैं! एक पुराने मटके के लिए हवाई जहाज से आयेंगे, इतना रुपया बरबाद करेंगे!'

झुके-झुके मुहम्मद फतह की गर्दन थक गयी थी। उसने सिर उठाकर अंगड़ाई ली। इधर-उधर निगाह दौड़ायी। मुअनजो-दड़ो के ऊंचे टीले से दूर-दूर तक खेतों में फैला पानी नजर आ रहा था, जिसके नीचे धान की फसल ऐसे परवरिश पा रही थी, जैसे बच्चा मां के पेट में हो। फिजा में सड़े हुए पानी की बिसांद रची हुई थी और घुटन सीने पर पत्थर के बोझ की तरह अनदेखा दबाव डाल रही थी।

थोड़ी देर बाद वे आ गये। वे चार अफसर थे। सिर पर मोटे-मोटे टोप पहने हुए और काली ऐनकें आंखों पर चिपकाये हुए। उन्होंने एक-एक चीज कई-कई बार देखी और मटके के तो आशिक हो गये। कभी उनमें से एक कोई ठीकरी उठाकर देखता, फिर दूसरे को ऐसे देता, मानो नाजुक मोती हो। वह भी आंखें जमाकर उसे देखता। अर्थपूर्ण अंदाज में जोर-जोर से अंग्रेजी में बोलता। बाकी सभी सिर हिलाते और फिर वह अगले को दे देता।

उन्होंने मटके के कई टुकड़े आतशी शीशे की मदद से बार-बार देखे। फिर वे वहीं जमीन पर बैठ गये और मटके के ठीकरों के किनारों पर मसाला लगा-लगाकर उन्हें आपस में जोड़ने लगे। मुहम्मद फतह ने आगे बढ़कर अपनी सेवाएं पेश करनी चाहीं तो उन्होंने ऐसे हटा दिया, जैसे वह किसी पवित्र स्थान को भ्रष्ट करने जा रहा हो। लाचार होकर वह खड़ा हो गया और तमाशा देखने लगा।

एक घंटे की मेहनत के बाद मटके का मुंह और थोड़ा-सा गर्दन वाला भाग जुड़ गया। उन अफसरों में जो सबसे बूढ़ा था, वह खुशी से तालियां बजाने लगा और दूसरे के कंधे पर हाथ मारकर बोला—'हमने यह मटका नहीं जोड़ा, बल्कि पांच हजार साल पुरानी सभ्यता जोड़ी है। यह मटका उन दिनों किसी भरे घर की शोभा रहा होगा।'

मुहम्मद फतह पहले तो उन सबको बेवकूफ समझ रहा था, मगर इस अफसर की बात उसके दिल को छू गयी, क्योंकि ठीकरे जोड़ने के बाद मटके की जो शक्ल बनी थी, वह हूबहू उसी मटके जैसी थी, जो उसके अपने घर में था। और वह जानता था कि उसके घर की सारी शोभा उस मटके के दम से है।

मुहम्मद फतह का बाप मुअनजो-दड़ो से थोड़ी दूर रहता था और एक बड़े जमींदार का हारी था। उसकी तमाम संपत्ति थी—दो बैल और एक हल—एकदम वैसे हल-बैल, जैसे मुअनजो-दड़ो के म्यूजियम में खिलौने बनकर पड़े थे। उनका घर एक कमरे का अंधेरा-सा कोठा था, जिसमें उसके मां-बाप और दो छोटे भाई रहते थे। मुहम्मद फतह की अपनी उम्र कोई पंद्रह बरस के लगभग थी और वह घर की आय में बढ़ोतरी के लिए खुदाई के काम पर मजदूरी करता था।

यह मटका उसके अंधेरे घर के अंधेरे कोने

में पड़ा था और दोनों छोटे भाइयों के कद से ऊंचा था। उसका चौड़ा मुंह सदा एक पुरानी चंगीर से ढंका होता था। मटके में कभी चावल होते थे और कभी गेहूं। नयी फसल के दिनों में मटका लबालब भरा होता था और जैसे-जैसे दिन गुजरते जाते, उसमें अनाज की चोटी नीचे सरकती जाती।

उसके घर की सारी शोभा मटके के दम से थी। रात के समय मां-बाप की चारपाइयां एकदम मटके के साथ होती थीं, ताकि चोर वहां न पहुंच सके। छोटा भाई पैदा हुआ था तो एक पेड़ी पर पड़ा रहता था, जो मटके के पास रखी होती थी और सारा दिन गूं-गूं करता रहता था और दूसरे बच्चे मटके के इर्द-गिर्द घूमकर और ऊपर चढ़कर उसे हंसाने की कोशिश करते। घर के बच्चे जिद करते या लड़ते, तो मां मटके में से मुट्ठी-भर अनाज निकालकर उन्हें देती कि भट्ठी से जाकर भुनवा लो।

कभी पड़ोसियों में से कोई उधार मांगने आता, तो मां मटके में से एक-आध कटोरा अनाज निकालकर देती, या उसी में से पैसों की पोटली निकालती और खोलकर पैसे दे देती। जब उसकी बड़ी बहन की शादी हुई थी या जब भी मेला-ठेला होता था, मां मटके के अनाज में दबी हुई पोटली में से रुपये निकालती। बाप शहर जाने लगता, तो मां उसी मटके में से पैसे निकाल कर देती।

और मुहम्मद फतह को यह भी याद था—जिन दिनों उसे और भाई को फाके से सोना पड़ता था, तो मां आहें भर-भरकर खाली मटके में कई बार झांकती थी कि शायद कोई अनाज का दाना नजर आ जाये। उनके घर के जितने उतार-चढ़ाव थे, उनका सूचक यह मटका था। खुशहाली का भी, तंगदस्ती का भी, और फाकेकशी का भी।

घर की कई दुर्घटनाएं भी उस मटके से संबंधित थीं। अभी पिछले ही दिनों वह अपने बाप के साथ घर वापस लौटा, तो उसकी मां मटके पर लगभग औंधी पड़ी थी। उसकी सांस जोर-जोर से चल रही थी। वह पसीने में डूबी हुई थी और सिसकियां भर-भरकर रो रही थी। उन दोनों ने उसे उठाया, चारपाई पर लिटाया, कारण पूछा। मगर वह रोती ही गयी। एक-आध अर्थहीन-सा शब्द बोली भी, मगर फतह के पल्ले कुछ नहीं पड़ा। लेकिन उसका बाप समझ गया और उसने फतह को बाहर भेज दिया।

बाहर तो वह चला गया, मगर दरवाजे से कान लगाकर सुनने की कोशिश करता रहा। सारी बात तो पल्ले न पड़ी। सिर्फ इतना अंदाजा हुआ कि उसकी मां को जमींदार ने घर बुलवाया था, बंद कमरे में कुछ मनवाने की कोशिश की थी। मगर वह इन्कार करती रही और आखिर खिड़की से छलांग लगाकर भाग आयी।

थोड़ी देर बाद जब वह बाप के बुलाने पर भीतर जाकर मां को गुड़ का शर्बत पिलाने लगा, तो उसके बाजुओं और चेहरे पर कई खराशें नजर आयीं। फिर उसका बाप सारी शाम किसी गहरे सोच में डूबा हुआ दरवाजे

के बाहर बैठा रहा। उससे पूछा भी, मगर वह जमींदारों को दो-चार गालियां देने के सिवा कुछ बताता न था। जमींदार जो बड़ा जागीरदार भी था और बड़ा नीतिज्ञ भी, जिससे थानेदार डरता था और पटवारी भी।

मुहम्मद फतह सोचता रहा कि यह कहानी क्या है और वह क्या करे? मगर उसके दिमाग में सारी चीजें गड्डमड्ड थीं। और जब दिमाग बहुत परेशान हुआ, तो वह अंदर गया, मटके में से मुट्ठी-भर अनाज लिया और भुनवाने के लिए भट्ठी पर चला गया।

× × ×

मटका जुड़ गया था। अफसर दूसरी चीजें देखने रेस्ट-हाउस चले गये थे और मुहम्मद फतह दिन का काम खत्म करके घर रवाना हुआ। सारे रास्ते वह उन लोगों के बारे में सोचता रहा, जो वहां इतनी लगन और उम्मीद से मटका जोड़ते रहे थे। तीन-चार मील का रास्ता तय करके वह घर पहुंचा, तो मगरिब होने को थी और शाम की खुनकी शुरू हो चुकी थी। वह तेज-तेज कदम उठाता आखिरी मोड़ मुड़ा, जहां से दो सौ गज दूर उसका मकान था। वह एकदम ठिठककर रुक गया। वहां तो नक्शा ही बदला हुआ था।

घर का सारा सामान कोठे के बाहर बिखरा पड़ा था। बिस्तर और बरतन आदि चारपाई पर ढेर थे। घर में ताला पड़ा था। कुछ पड़ोसी दूर खड़े तमाशा देख रहे थे। ऐसे, जैसे ये लोग अछूत हों। वह भागकर आगे गया तो उसे ठोकर लगी, संभलकर देखा तो घर के अंदर वाला मटका टूटा पड़ा था। उसके ठीकरे बिखरे पड़े थे और उन्हीं में से एक से उसे ठोकर लगी थी।

तब उसके बाप ने बड़े ही मद्धिम और बुझे अंदाज में सारी कहानी सुनायी, जिसका सारांश यह था कि जमींदार ने उसे बेदखल कर दिया है। उसकी जानकारी के बगैर ही कोई झूठा मुकद्दमा चलता रहा, जिसमें इकतरफा डिक्री हुई और तहसीलदार के आदमी आज आकर बेदखल कर गये हैं।

उसका गला सूख गया, खुश्क-सा गोला पेट से लपककर गले में आ फंसा। उसकी समझ में न आया कि वह क्या कहे। बेबसी में सिर्फ इतना मुंह से निकला—'मगर ..... मगर यह मटका क्यों तोड़ गये?' ..... 'मटका कहां बेटा .....' उसका बाप बोला—'हमारा तो घर ही टूट गया।'

बेबसी के आलम में मुहम्मद फतह जमीन पर बैठ गया और बेचारगी से ठीकरे देखने लगा। फिर बड़ी ही नरमी से ठीकरों को इकट्ठा किया और परेशानी की हालत में उनके किनारे आपस में मिलाने लगा। ठीक उसी अंदाज में जिस तरह साहब लोग सुबह मुअनजो-दड़ो में मटका जोड़ रहे थे .... और फिर उसके दिमाग में एक भ्रम-मूलक-सा सवाल पैदा हुआ कि क्या पांच हजार साल पहले का वह मटका भी ऐसे ही टूटा था .....? मुमकिन है ..... बाकी चीजें जो देशी ही हैं ..... और वह टूटे हुए ठीकरे जोड़ने की बेसूद कोशिश

आधुनिक गृहणियों की पसंद सायकल छाप और हाथी छाप शुद्ध अल्युमिनियम बर्तन

सायकल छाप और **हाथी** छाप अल्युमिनियम बर्तन :

- ★ सस्ते किस्म के बर्तनों के बिल्कुल विपरीत ये शुद्ध अल्युमिनियम के बने हैं।
- ★ काम में लाने में आसान।
- ★ समान मोटाई, चिकनी फिनिश और चमकीला देखाव।
- ★ ये जल्दी गर्म होते हैं इसलिए ईंधन में बचत होती है।
- ★ सस्ते किस्म के बर्तनों से अधिक टिकाऊ होते है।
- ★ अनेक आकारों और श्रेणियों में मिलते हैं।

६० वर्षों से भी अधिक समय से अल्युमिनियम में **सायकल** छाप और **हाथी** छाप दो विश्वसनीय नाम।

लल्लूभाई अमीचंद प्राइवेट लि.
४८-५०, कंसारा चाल, बम्बई ४००००२

Ratan Batra/LA/H107-C

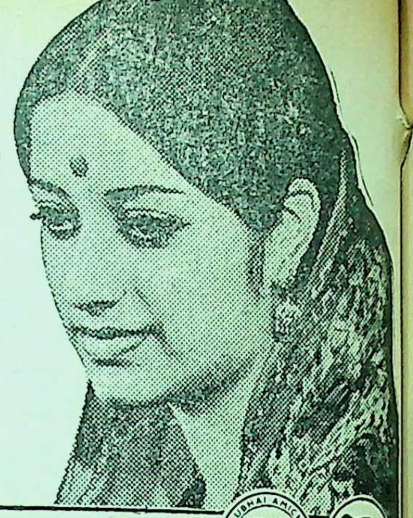

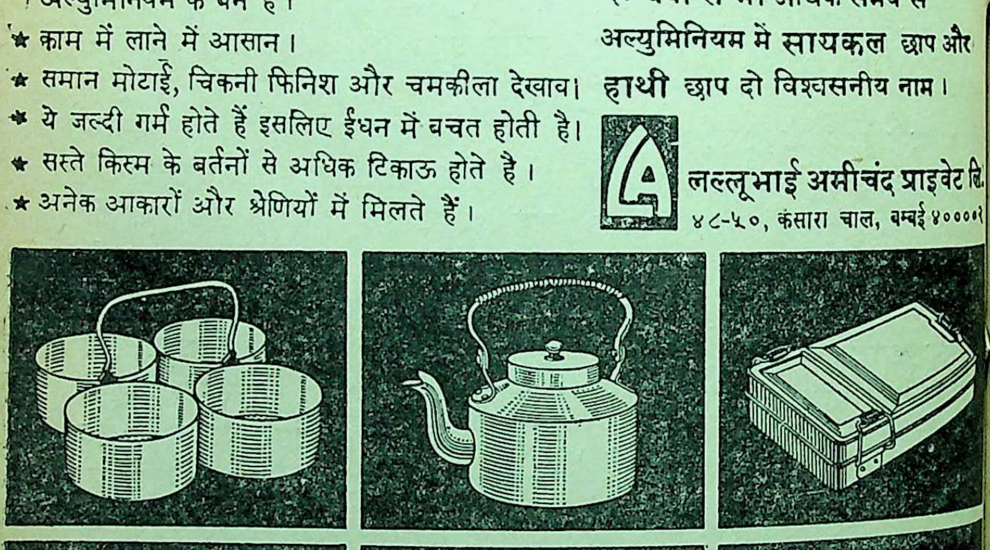

करता रहा । मगर वे हर बार फिर टूट जाते ।

उसने आंख उठायी तो मां को अपनी ओर देखते पाया । छोटा बच्चा उसके कंधे से चिपका था और उसकी आंखों में आंसू उबल रहे थे । 'मां, मैं अभी साहब के पास ये ठीकरे ले जाता हूं । उनके पास मसाला है, उन्होंने सुबह ही पांच हजार साल पुराना मटका जोड़ा है ......'

'चल हट बेवकूफ !' उसका बाप नजदीक आकर चिल्लाया–'वे यह मटका नहीं जोड़ेंगे ।' फिर उसने प्यार से बेटे के गाल थपथपाये और नरमी से बोला–'दिल को न लगाओ बेटा ! बड़े लोग दूसरों के मटके तोड़ते ही रहते हैं । मैंने अपने दादा का वक्त देखा है । वह हमें अपने दादा की बातें सुनाता था । यह हमेशा से ऐसा ही है।'

मुहम्मद फतह हैरान होकर बाप को देखता रहा फिर बोला-'कमाल हैं ये साहब लोग भी । पुराने मटके जोड़ने पर तो इतना खर्च करते हैं, और नये मटके टूटने पर कोई इंतजाम नहीं करते।'

'हां बेटा, हमारा जमाना ऐसा ही है...... शायद पांच हजार साल बाद कोई ऐसेही हमारे मटके जोड़ने वाला भी पैदा हो जाये ।'

उसके बाप ने आकाश की ओर देखते हुए ठंडी आह भरी और ओंठों में बोला–'पांच हजार ...... साल ......

★

[पृष्ठ १२८ का शेष]

जवाब हाजिर था–'क्योंकि सिर के बाल दाढ़ी के बालों से उम्र में बीस बरस बड़े होते हैं।'

इसी पाये का एक और सवाल था–'समुद्र का पानी खारा क्यों होता है?'

'क्योंकि जितने नमक की जरूरत होती है, उसके सिवा सारा नमक व्यापारी लोग समुद्र के पानी में घोलकर रखते हैं।'

लेमाक साहब सोते-उठते, घूमते-फिरते सृष्टि के रहस्यों के बारे में सोचा करते थे। एक दिन हवाखोरी करते हुए वे अपने साथी से बोले–'अजीब हैं खुदा के रंग-ढंग! चिड़िया की नन्ही-सी जान, नन्हा-सा पेट, मगर उसे पंख दे रखे हैं! जबकि गाय को मनों घास चाहिये, मगर उसे खुदा ने जमीन से जकड़ रखा है।' तभी चिड़ियों का झुंड उनके सिर पर से उड़ा और उन्होंने सिर उठाकर ऊपर देखा। ऊपर से कोई गीली-सी चीज उनकी नाक पर टपकी। फौरन दार्शनिक लेमाक का हाथ नाक पर गया और वे चिल्ला उठे–'मैंने इसका उत्तर पा लिया कि खुदा ने गायों को क्यों पंख नहीं दिये।'

दीर्घकाल तक चिंतन-मनन करने के बाद लेमाक ने साथी दार्शनिकों की सभा में घोषणा की–'मैंने एक ऐसा उपाय सोचा है, जिससे गरीब श्रीखंड खाया करेंगे और अमीर छाछ पिया करेंगे।'

एक स्वर से सबने पूछा–'कैसे?'

उत्तर मिला–'बस, कल से श्रीखंड का नाम छाछ और छाछ का नाम श्रीखंड कर देंगे।'

★

सृजन-प्रक्रिया

तुम मुझे देते हो
सहज-स्नेह,
मैं उसे पाकर
कोशिश करता हू
कि वह बन सके
छंद;
तुम उसे
बांध लेते हो
अपने सुरों में
और वह
बन जाता है
आनंद।

—दिनकर सोनवलकर

अहम्-बाधित

कुछ क्षणों को ही
जुड़ पाता हूं
तुमसे ...... !
वे क्षण
डूबे हुए चरम आनंद में
समर्पण के अ-द्वैत छंद में।
लेकिन
फिर जाने कहां से
सिर उठाता है
मेरा अहंकार ?
टूट जाता है तार
खंडित हो जाती है लय;
और लौटना पड़ता है
इस बे-सुरी दुनिया में।

शासकीय महाविद्यालय, जावरा, म. प्र.

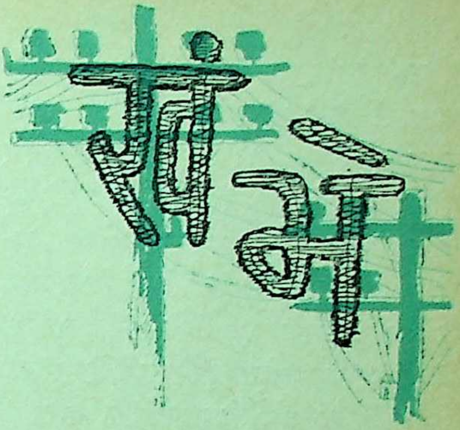

एलेग्जैंडर गोग्लोकी

एक भद्र महिला को समाज-कल्याण के कार्यों में बहुत दिलचस्पी थी। वे प्रायः अनाथालय में जाया करती थीं, ताकि अनाथों की दुर्दशा का स्वयं निरीक्षण कर सकें। एक बार जब वे अनाथालय गयीं, तो उन्होंने देखा कि तीन लड़के एक फटी हुई पुस्तक को एक-दूसरे से छीनने का प्रयत्न कर रहे हैं और इस प्रयत्न में उनमें हाथापाई हो रही है।

'अरे बच्चो!' भद्र महिला घबराकर चिल्लायी—'यह तुम आपस में क्यों लड़ रहे हो! जानते हो, इसका दंड क्या है? खाना नहीं मिलेगा और मुर्गा भी बनना पड़ेगा।'

'मैडम! ..... इसने मेरी पुस्तक छीन ली है।' एक लड़का दूसरे की ओर इशारा करते हुए बोला।

'यह झूठ बोलता है। पुस्तक इसने छीनी है।' दूसरा चिल्लाया।

'बिलकुल गलत मैडम! पुस्तक मेरे पास थी, और ये दोनों मुझसे उसे छीन रहे थे।' तीसरे ने रोते हुए कहा।

अनाथालय की व्यवस्थापिका ने भद्र महिला को बताया कि ऐसा लड़ाई-झगड़ा तो यहां रोज का नियम बन गया है। बच्चों को पुस्तकें पढ़ने का शौक है और हमारे पास पुस्तकें कम हैं।

भद्र महिला पर इस बात का बहुत प्रभाव पड़ा। परंतु वे जानती थीं कि अधिक चिंता करना स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालता है। इसलिए उन्होंने उसी क्षण इस घटना को मस्तिष्क से निकाल दिया।

कुछ दिन बाद उन्हें एक दावत में शामिल होने का अवसर मिला। बड़े लोगों की दावत थी; और आप जानते ही हैं कि ऐसी दावतों में प्रायः वार्तालाप का विषय होता है—समाज-कल्याण, गरीबों की सहायता और धर्म। बातों-बातों में भद्र महिला को अनाथालय वाली घटना याद हो आयी। उन्होंने इसका जिक्र नगर के मेयर साहब से किया और अनाथालय की व्यवस्थापिका की शिकायत का विस्तार से वर्णन किया।

'अच्छा!' मेयर साहब बोले—'यह तो बहुत ही बुरी बात है कि बेचारे अनाथ बच्चे पढ़ने का शौक रखते हुए भी पुस्तकों को तरसा करें! क्या ही अच्छा हो कि हम लोग अनाथालय को पुस्तकें मुहैया करने का प्रबंध करें। हां, याद आया। मैंने अपने बच्चों के लिए, जब वे छोटे थे, कहानियों की बहुत-सी पुस्तकें खरीदी थीं और शायद अब भी वे किसी संदूक में पड़ी होंगी। मगर

साहब, कौन अब जाकर काठ-कबाड़ में सिर खपाये और पुस्तकें ढूंढ़े !'

उसी शाम मेयर साहब को बहुत बड़े व्यापारी से मिलने जाना था। ये साहब भी बहुत भलेमानस थे। उनका सारा जीवन नौकर-चाकरों, अनाथों और विधवाओं की चिंता में बीता था। मेयर साहब ने अनाथालय में पुस्तकों की कमी का जिक्र किया और बड़े करुणाजनक स्वर में बोले—'सेठ साहब, मैं तो बस यह चाहता हूं कि कहीं से पुस्तकों का प्रबंध हो जाये तो मुझे शांति मिले।'

'अरे साहब ! इसमें मुश्किल कौन-सी है!' व्यापारी ने कहा—'मुझे कल सुबह दैनिक "टाइम्स" के दफ्तर जाना है। उन लोगों से कह दूंगा कि इस संदर्भ में एक अपील प्रकाशित कर दें।'

अगली सुबह व्यापारी महोदय जब समाचार-पत्र के कार्यालय में गये, वहां उन्होंने अपील प्रकाशित करने की बात कही। अखबार वाले तो शायद इसी प्रतीक्षा में थे कि जगह भरने की सामग्री मिले ! सो एक रिपोर्टर को बुलाया गया। उसने तुरंत एक अपील लिख मारी :

'अनाथ बच्चे...... जो राष्ट्र की अमानत हैं...... पुस्तकों को तरस रहे हैं......क्या आप इन्हें निराश करेंगे.. ...नहीं......हरगिज नहीं.....इन्हें विद्या-रूपी आभूषण से सजाइये......पुस्तकें दीजिये......'

इस काम से निपटकर रिपोर्टर महोदय निश्चितता से सीटी बजाते हुए खाना खाने चल दिये।

कुछ दिनों बाद मैं अपने एक मित्र से मिलने समाचार-पत्र के कार्यालय गया। थोड़ी देर बाद फटे कपड़े पहने एक आदमी वहां आया। उसके साथ एक दुबली-पतली मासूम-सी लड़की थी, जिसने पुरानी पुस्तकों का बंडल-सा उठा रखा था।

'क्यों भई, क्या चाहते हो?' मैंने उससे पूछा।

'श्रीमानजी ! समाचार-पत्र

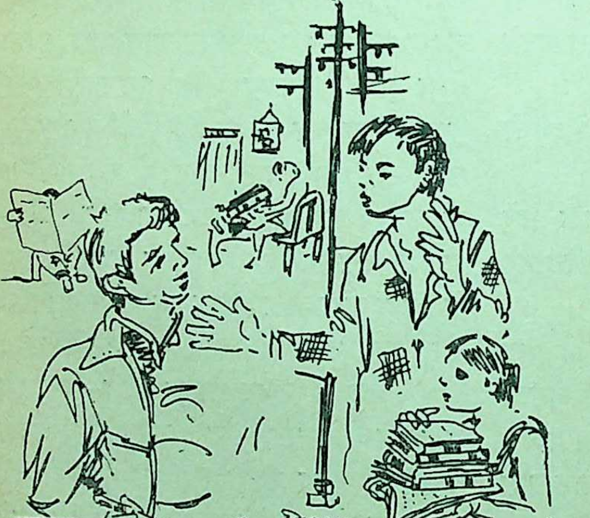

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

में अपील छपी थी कि अनाथालय के लिए पुस्तकें चाहिये। मैं ये पुस्तकें लाया हूं !'

इस पर बच्ची ने बंडल मेरी ओर बढ़ा दिया। उस समय उसके चेहरे पर खुशी की झलक थी।

'तुम्हारा नाम ?' मैंने आदमी से पूछा।

'वह किसलिए श्रीमानजी ?' वह बोला।

'इसलिए कि इस भेंट की खबर के साथ तुम्हारा नाम भी प्रकाशित किया जायेगा।'

'मेरा नाम रहने दें श्रीमानजी ! मैं तो एक साधारण गरीब आदमी हूं।' यह कहते हुए वह अपनी बच्ची की उंगली पकड़े वहां से चल दिया।

× × ×

आपने कभी तार की व्यवस्था पर विचार किया है ? एक ओर से संदेश दिया जाता है, दूसरी ओर से प्राप्त किया जाता है। अनाथालय के अनाथों ने संदेश दिया। गरीब आदमी ने संदेश सुना और अपना कर्तव्य पूरा करके चल पड़ा। बाकी हम सब लोग तार के खंभों की तरह थे, जो संदेश एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं कर सकते—बेजान और बेहिस खंभे!

अनुवादक : सुरजीत

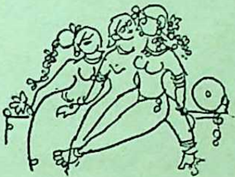

मेरे एक मित्र अपने विनोदी स्वभाव के लिए प्रसिद्ध हैं। वे स्वयं तो सदा प्रसन्न रहते ही हैं, दुःख एवं वेदना के क्षणों में भी सबको हंसाकर वातावरण हल्का बना देते हैं।

उनकी वृद्धा बहन के अतिवृद्ध पति का देहांत हो गया। उनकी बहन बहुत दुःखी थी। थोड़ी देर तो उन्होंने उसे सांत्वना दी, फिर अचानक पूछ बैठे—'ताई ! (महाराष्ट्र में बड़ी बहन को ताई कहते हैं) तू कहा करती थी न कि अगले सात जन्मों में तुझे ये ही पति के रूप में मिलें। उस हिसाब से तो जीजाजी की मृत्यु ठीक समय पर ही हुई है।' उपस्थित लोग और ताई उनके इस कथन का आशय न समझ सके और उनकी ओर देखने लगे। तब मेरे मित्र बोले—'ताई ! यदि तू अगले जन्म में भी उन्हें पति रूप में पाना चाहती है, तो उन्हें तुझसे पांच-सात बरस आगे जाना चाहिये या नहीं ?' शोक के उस वातावरण में भी उनके इस वाक्य से हल्कापन आ गया।

—वेदकुमार वेदालंकार

०००

रब्बी मोसेस टीटलबाम को सपना पड़ा कि वे स्वर्ग पहुंच गये हैं और वहां देखते हैं कि ज्ञानी-जन बैठकर तालमुद का स्वाध्याय कर रहे हैं। उन्होंने प्रश्न किया—'तो क्या स्वर्ग में बस यही कुछ है ?' उत्तर मिला—'रब्बी, तुम समझते हो, ज्ञानी-जन स्वर्ग में हैं। तुम गलती पर हो। असल में स्वर्ग ज्ञानी-जनों के भीतर है।'

—तालमुद

★

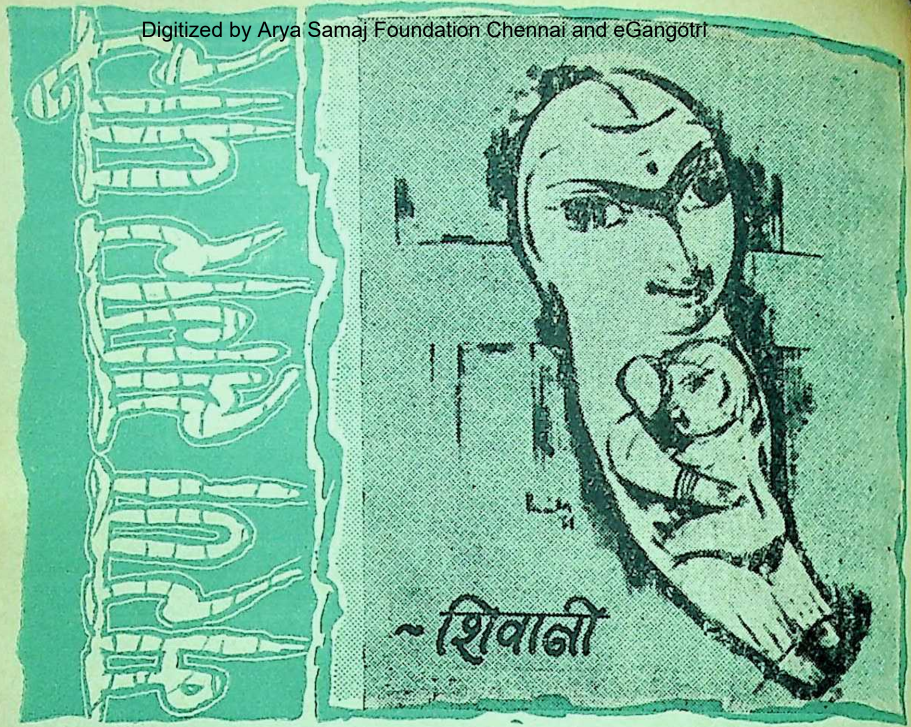

~शिवानी

आज जब उनके संस्मरण लिपिबद्ध करने बैठी, तो न जाने कौन-सी प्रेरणा मुझे बहन के पूजागृह में टंगे उनके बड़े-से चित्र की ओर खींच ले गयी। शायद यह लेखनी के ही अंतर्मन की प्रेरणा थी, मेरी नहीं। हो सकता है, वह गतिशील होने से पूर्व उस सरल चेहरे की एक-एक रेखा को कंठस्थ करना चाह रही थी। एकदम वही चिरपरिचित स्निग्ध हंसी, उदार आंखों में अकपट वात्सल्य और अनुभव की झुर्रियों में न जाने कितने अनाथ हृदयों के कृतज्ञ हस्ताक्षर! कैसा बोलता, जीता-जागता चित्र था!

वैसे भी मेरी यह धारणा है कि जिसने जैसा जीवन जिया है, उसकी एक-एक रेखा उसके चित्र में उभर आती ही है, चाहे कुशल चितेरे का कैमरा या तूलिका अनचाही रेखाओं को कितना ही मिटाना चाहे। जिसका हृदय निष्कपट है, उसका चित्र भी अवश्य ही उतना ही निष्कपट उतरता है, उतना ही स्वाभाविक—अर्थात् अंतरंग और बहिरंग समान रूप से उज्ज्वल। ऐसे चित्र और उनके माडल प्रायः ही दुर्लभ होते हैं। कैमरामैनों को फोटो खींचने से पूर्व उन्हें फोटोग्राफरों का बहुप्रचलित अंग्रेजी आदेश 'चीज़' (Cheese) नहीं देना पड़ता। यही कारण है कि संसार के सर्वश्रेष्ठ बहुचर्चित चित्र वे ही माने गये हैं, जिनमें माडल की सहज निर्दोष स्वाभाविकता पूर्ण निश्छलता

*** शीर्षक के साथ के. सी. एस. पणिक्कर का चित्र ***

से उभरकर मुखरित हुई है। चित्र को दुबारा देखती हूं, तो चेहरे की साधारण बनावट को उस अनोखे व्यक्तित्व की गरिमा जैसे किसी अदृश्य रबर से मिटाकर दूर फेंक देती है।

सौभाग्य से मेरे जीवन में परिचय का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत रहा। पिता की रियासती दीवानी ने शैशव से ही जीवन को अनेक व्यक्तित्व-संपन्ना महिलाओं का सान्निध्य निरंतर प्रदान किया। रानी-महारानियां, बेगमें, राजकन्याएं, राजमहलों के आमोद-उत्सवों में अतिथि बनकर आने वाली प्रसिद्ध नृत्यांगनाएं, गायिकाएं, राजकुमारियों के पीछे-पीछे 'खम्मा खम्मा' करती छाया-सी डोलने वाली छत्र-चामरधारिणी सौराष्ट्री खवासिनें, पेशेदारिनें, उच्च आंग्ल समाज के रेसिडेंट-कमिश्नरों की पत्नियां जिनकी चार-चार गिरही फिरंगी जूतियों की ऊंची एड़ियों की खटखट अभी भी कभी भूले-बिखरे दिवास्वप्नों के बीच सहसा चौंका देती है। कभी बुंदेलखंडी डचोढ़ियों के संगमरमरी फर्श में बजते पैंजनों की झंकार, खड्ग-सी तीखी राजपूती नासिका पर चमकती सोने की बुंदेलखंडी 'पुंगनिया', ककरेजी कछौटे से झांकती सुडौल गेहूंगोरी पिंडलियां लेखनी को संवार जाती हैं; और कभी रामपुर के खास बाग के अंदर महल में छपरखट-से चौड़े तख्तों पर अलसायी बिल्लियों-सी बदन तोड़ती, पेंचदार गुड़गुड़ी में अंबरी तंबाकू के सुवासित छल्ले उड़ाती रोहिल्ला पठानिनों के सतरंगी अबरकी दुपट्टे की स्मृति मुझे विह्वल कर जाती है। नारी के कितने रूप देखने का सुअवसर दिया ईश्वर ने! किंतु उस सतरंगी रामधनु की छटा के बीच, जो सरल-साधारण चेहरा सबसे अधिक प्रखरता से उभरता है, वह है बसंती दीदी का।

इसी साधारण चेहरे की असाधारण स्वामिनी ने मुझे जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाया—ऐसा पाठ जो कंठस्थ करने में समय नहीं लेता, किंतु जिसे साधकर, सही उत्तर लिखने में स्याही सदा फैल ही जाती है। एक बार जब उनके अनेक आश्रितों में से एक पढ़-लिख, योग्य बन, विदेश हो आया और बैरिस्टर बन गया, तो बहुत वर्षों बाद मैंने किसी से उसके अतीत की कहानी सुनकर बसंती दीदी से कहा—'क्यों, बसंती दी, एक नौकर को तुमने पढ़ा-लिखाकर इतना योग्य बनाया, उसने तुम्हें कभी कुछ भेजा?'

'अरी चल हट, मैंने क्या उसे इसलिए पढ़ाया था कि वह मुझे कुछ भेजे! पर जब कभी भी आया, कुर्सी देने पर भी नहीं बैठा, खड़ा ही रहा।' उनका चेहरा कृतज्ञ भृत्य की नम्रता की स्मृति से स्निग्ध हो उठा।

'मैं उसकी जगह होती, तो तुम्हें सोने से मढ़ देती।' मैंने कहा।

'अरी, सोने से तो मैं तब ही मढ़ गयी, जब सुना कि वह "बारिष्टर" बन गया। देख, एक बात मेरी गांठ बांध ले—किसी का भला करती है, तो कभी मुंह मत खोल, और न कभी यह आशा रख कि तुझे वह सोने से मढ़ेगा।' नेकी कर दरिया में डालने का पाठ

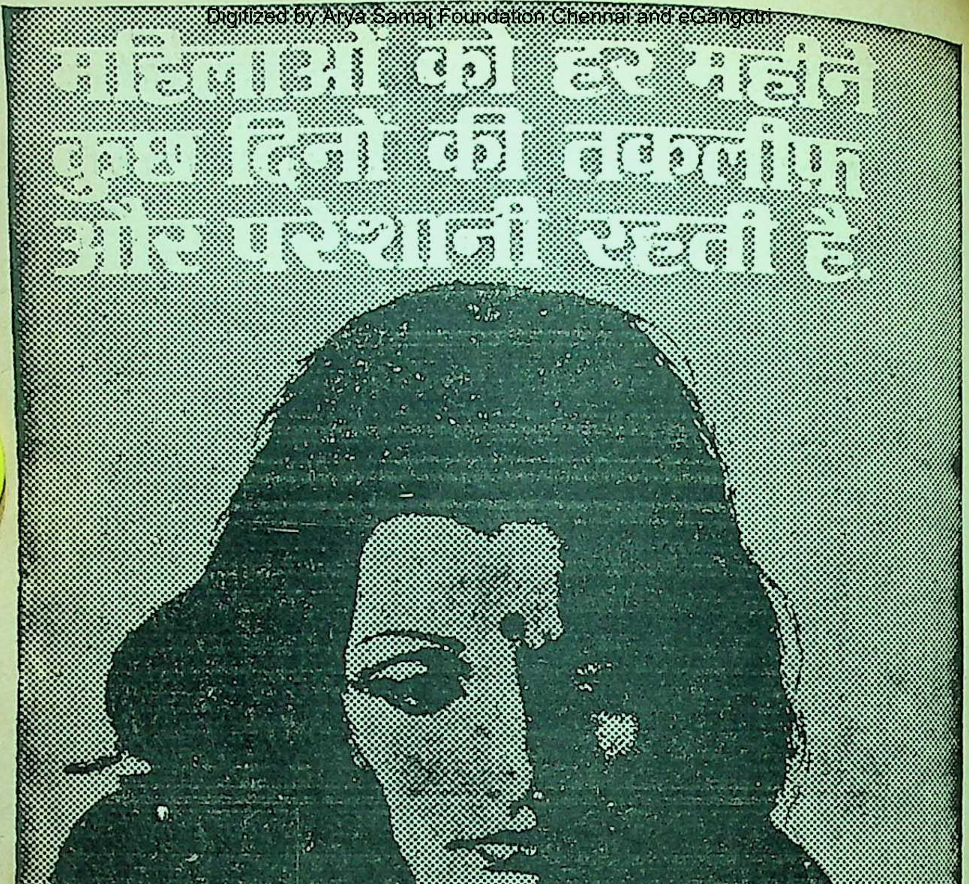
महिलाओं को हर महीने
कुछ दिनों की तकलीफ़
और परेशानी रहती है
Saridon
Saridon
सिर्फ़ एक सैरिडॉन काफ़ी है.
HT-RP. 8613

परेशानी के इन दिनों में वे बेचैनी और तनाव महसूस करती हैं. ऐसे में सेरिडॉन उन्हें आराम देती है. इसका अनोखा नुसखा दर्द दूर करता है, तनाव मिटाता है और आराम तथा ताज़गी देता है. यह है रोश का अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान जो हमेशा आपकी सेवा में लगा है.

तो उन्होंने पढ़ा दिया, किंतु उस प्यार का शतांश भी मैं कभी जीवन में उतार नहीं पायी।

बसंती दीदी से मेरे दो रिश्ते थे। दूसरा रिश्ता प्रथम परिचय के बहुत बाद बना, जब छोटी बहन उनकी पुत्रवधू बनी। उससे पूर्व, वे मेरी एकमात्र ननद की जिठानी थीं। मेरी ननद अल्प अवधि तक ही विवाह-सुख भोग सकी थीं; किंतु उस अवधि में ही जिठानी ने, मातृहीना देवरानी को जिस अपनत्व से अपनाया, यक्ष्मा की रोगिणी होने का संदेह होने पर भी जिस स्नेह से उनकी दिन-रात सेवा की, उसके लिए हमारा कृतज्ञ परिवार वर्षों से ही उन्हें दिवंगता पुत्री की ही मान्यता देता चला आ रहा था। कुमाऊं के ऐसे प्रत्येक पर्व पर, जिसमें पुत्री के लिए मायके से विशेष सौगात के साथ घृत-पक्वान्न भेजे जाते हैं, उसी निष्ठा से भेजे जाते रहे जैसे सगी पुत्री के लिए भेजे जाते हैं। इसी से जब मेरा विवाह हुआ, तो मेरे श्वसुर सबसे पहले मुझे अपनी इन्हीं दत्तक पुत्री के पास ले गये थे। 'बहू, इनके पैर छू। ये तेरी सगी नानज्यू (बड़ी ननद) हैं।'

आज भी उनकी वह प्रथम छवि किसी जराजीर्ण अलबम में लगे धूसर-गोधूमवर्णी चित्र-सी आंखों में तिर उठती है। पृथुल चेहरा, वैसा ही पृथुल शरीर, बीसियों सलवटें पड़ी म्लान साड़ी, किंतु अम्लान चेहरे पर दिव्य हंसी, जो पहली ही झलक में किसी अपरिचित को भी परिचय के घेरे में बांधकर अपना बना लेती थी। पास ही एक डलिया में उनका दुधमुंहा शिशु अंगूठा चूस रहा था। मुझे आश्चर्य हुआ था, क्योंकि उनका सद्य:मातृत्व उनके प्रौढ़ व्यक्तित्व से एकदम ही मेल नहीं खा रहा था। शायद, मेरा आश्चर्य उन्होंने भांप लिया। 'देखा अंबिदा', उन्होंने मेरे श्वसुर से हंसकर कहा—'तुम्हारी बहू सोच रही है कि यह इस बुढ़िया का बेटा है या नाती! अरी, यह मेरी उन्नीसवीं संतान है।' और वे जोर से हंसीं। 'हे भगवान!' मैं आश्चर्य से अभिभूत हो गयी—'क्या सचमुच ही यह इनकी उन्नीसवीं संतान है!' किंतु उन उन्नीस संतानों में अधिकांश ऐसी हैं, जिन्हें उन्होंने गर्भ में धारण न करने पर भी जननी के अकपट वात्सल्य से अपनाया है, यह मुझे घर लौटने पर पता लगा। उनके व्यक्तित्व के उस पहलू से जब मैं परिचित हुई, तो उस अपढ़ वात्सल्यमयी के विराट परिवार-संचालन की अद्भुत महिमा मुझे दंग कर गयी।

न जाने कितने अनाथ भानजे-भतीजियों, आत्मीय-अनात्मीयों के कलकंठ से पूरा घर गूंज उठता। एक-एक कर, न जाने किधर-किधर से बच्चे टपकने लगते। मिट्टी-लिपे चौके में कोयले की लक्ष्मण-रेखा खींच, एकवस्त्रा बनी बसंती दीदी अपने उस विचित्र अटाले का संचालन स्वयं कर, स्कूली भीड़ को जिमातीं। बड़ी-सी कड़ाहियां, उनसे भी बड़े पतीले और दीर्घ कलछुल! न जाने कितनी थालियों में चावल-दाल परोसते-परोसते बसंती दीदी कठोर अभिभाविका के आदेश देतीं—'अबके फेल हुआ

छोकरे, तो पौलीटेक्नीक में डाल दूंगी, समझा ? ... खबरदार, जो एक रोटी का टुकड़ा भी बरबाद किया !' साक्षात् अन्नपूर्णा के धैर्य से ही एक पंगत को जिमा, दूसरी को बैठाने का आदेश देतीं। उस बृहत् आयोजन के बीच भी उनकी पाककला-निपुण उंगलियां पहाड़ी व्यंजनों में न जाने कैसा अद्‌भुत रस टपकाती रहतीं। उनके हाथ के-से स्वादिष्ट 'सिंगल' और कुरकुरे 'खजूर' खाने का सौभाग्य मुझे फिर कभी नहीं मिला।

विवाह होकर ससुराल आयीं, तो वयस थी कुल ग्यारह वर्ष। भरा-पूरा संस्कारग्रस्त परिवार था। पति की उन दिनों की कप्तानी किसी भी अंश में आज की कमिश्नरी से कम नहीं थी। बालिका-वधू ने कैशोर्य में कदम भी नहीं रखा था कि मृत्यु ने किसी अवांछित दुःसाहसी अतिथि की भांति, मरुत की गति से पूरे परिवार को प्रकंपित कर झकझोर दिया। जेठ-जिठानी की लगभग एक साथ ही मृत्यु हुई और जिठानी अपनी क्षीणकाया पुत्री दुर्गा को उन्हीं की गोद में डाल गयी। उस मातृहीना भतीजी पर उनका लाड़-दुलार स्वयं अपने में एक मिसाल था। इतने वर्षों बाद भी जब कभी वे मुझे उसके विवाह, पुत्रजन्म और मृत्यु की बातें सुनाने लगतीं तो उनकी आंखें छलछला आतीं। 'अरी वह "मोहिली" (स्नेही) थी दुश्मन! जाने से पहले बस इतना ही कह सकी–"इजा, इस अभागे को भी तू ऐसे ही छाती से लगा लेना, जैसे तूने मुझे लगाया था।"

Nenath
5/9/75.

चित्र : एन. सी. नाथ

पर उस विराट छाती में क्या वही एक अभागा लगा था ? उधर भाई-भाभी भी एक साथ प्लेग की चपेट में आ गये। दुधमुंहा पुत्र मृत जननी के स्तन से लगा था। 'मेरा खोटा भाग्य ही ऐसा रहा', वे ऐसी अपूर्व हंसी से चेहरा उद्‌भासित कर कहतीं, जैसे कोई चुटकुला सुना रही हों–'जो भी गया, जोड़ों में ही गया और मेरे लिए एक तोहफा छोड़ गया।' किंतु उनका यही दुर्भाग्य तो उन अनाथ तोहफों का सौभाग्य बन गया। जिस अनाथा भतीजी को पाल-पोसकर कन्यादान किया, वह भी चल बसी। उधर अपना परिवार भी विस्तृत हो चला था। अथर्ववेद में स्त्री का जो गृहसाम्राज्ञी रूप उद्‌घोषित है, वही अब बसंतीदी में पूर्ण रूप से मुखरित हो चुका था :

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा।
एवा त्वं साम्राज्येधि पत्युरस्तं परेत्य च॥

उस वटवृक्ष की शीतल उदार छाया में अनेक नन्हे अनाथ पथिक आ-आकर सुस्ताने लगे थे। पितृकुल के ध्वंसावशेष से वे तीन भाइयों को भी अपनी ससुराल में बटोर

लायीं । उस अद्भुत वि[illegible] में भी उनकी मौलिकता सजीव हो उठती थी। 'बड़ी-सी कड़ाही में दूध खौला लेती थीं', वे कहतीं–'और कतार में अपने-अपने गिलास लेकर सब बैठ जाते।' वह नन्हा नौकर भी, जिसे उसका क्रोधी पिता कई बार खींचकर घर ले जा चुका था और जो उतनी ही बार खोटे सिक्के-सा, मीलों की दुर्गम चढ़ाई पार करके उन्हीं के पास लौट आया था। 'एक-एक कलछुल हर गिलास में डालती जाती। बराबर न देती तो अभागे शुंभ-निशुंभ-से जूझ मरते। फिर कह देती–मरो, पियो अब।' किंतु उस 'मरो' में जो 'जियो' का मौन संदेश रहता, उसे वे नन्हे हृदय खूब समझते थे।

तीनों भाइयों को योग्य बना, वे उनकी गृहस्थी बसा चुकी थीं। किंतु मृत्यु जैसे कमर बांधकर उनका प्रत्येक विजयी दांव विफल करने पर तुली थी। जहां किसी लालिता-पालिता कन्या के कन्यादान से मुक्ति पातीं कि मृत्यु तुरुप लगा उनके पत्ते अपनी ओर बटोर लेती। एक पुत्री को किड्नी की असाध्य व्याधि खींच ले गयी; दूसरी को कैन्सर; भतीजी को यक्ष्मा; भाई-भाभियों को यक्ष्मा, प्लेग; जीवन की धूसर गोधलि में ज्येष्ठा पुत्री का वैधव्य; और अंत में स्वयं वैधव्य का असह्य दुःख। किंतु उस अद्भुत अक्लांत महिला के चेहरे की एक भी रेखा को मैंने कभी म्लान होते नहीं देखा। अपने परिहास-रसिक चित्त को उन्होंने विपत्ति के कठिन क्षणों में भी कभी [illegible]। 'अरी, वह कविता पढ़ी है तूने?' वे हंसकर कहतीं–'पांच पूत रामा बुढ़िया के ...... बाकी बचा न एक! वह मेरे ही लिए लिखी गयी थी।'

संध्या होते ही जब कभी वे अपने बहुरंगी जीवन के अतीत का बहीखाता खोलकर बैठतीं, तो पूरा घर जुट जाता। कुछ उनके किस्से सुनाने का अनोखा ढंग, कुछ स्वयं किस्सों का भोला सहज कथानक हमें बांध लेता। उनके वे अनूठे संस्मरण प्रायः लैन्स डाउन के ही रहते, जहां संभवतः उनके जीवन के सबसे सुखद क्षण बीते थे। कैसे एक बार जब वे भैंसों के नीचे से गोबर बटोर रही थीं कि सहसा उनके पति के किसी अफसर की लंबतड़ंगी मेम, बटुआ झुलाती, अपना रेशमी 'गौन' सरसराती उनके सामने खड़ी हो गयी। 'अरी, मुझे तो सांप सूंघ गया। हो न हो, ये वही मेम हैं जो कई बार "भुवन के बाबू" से कह चुकी थीं कि हमें अपनी मेम से मिलाओ।' 'टुम्हारा मेमसाब

ओरिएन्ट

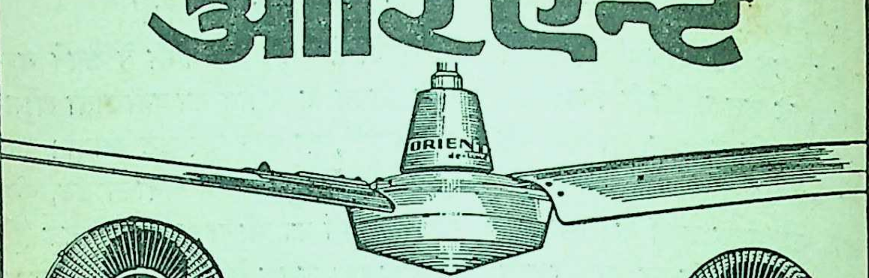

डेस्क पंखा

अब आकर्षक
आफ-सीजन
दामों
में खरीदिये

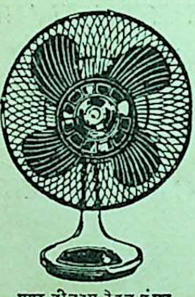

सुपर डीलक्स टेबल पंखा

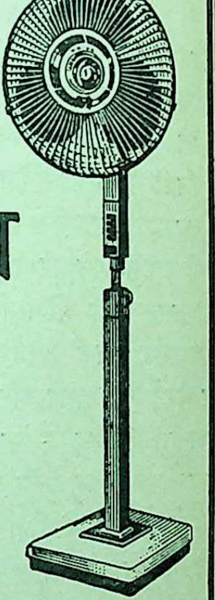

स्टैण्ड पंखा

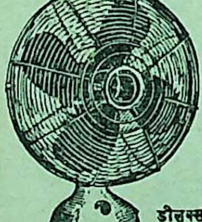

डीलक्स टेबल पंखा

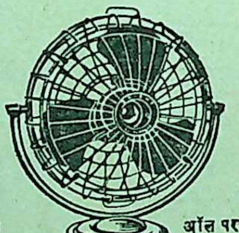

ऑल परपज़ पंखा

ओरिएन्ट
पंखा
विश्व विख्यात

ओरिएन्ट
पंखा

ओरिएन्ट जनरल इन्डस्ट्रीज़ लि० ६, घोर बीबी लेन, कलकत्ता-५४
फैक्ट्री : कलकत्ता और फरीदाबाद

CC/OI/173 HN

किडर है ?' उस मेम ने पूछा और तत्काल बसंतीदी ने घूंघट खींच, उन्हें जो समझा गया था उसी के अपूर्व अभिनय से, दबंग फिरंगिन मेम को पलक झपकाते ही उसी दिशा में प्रत्यावर्तित कर दिया, जहां से वह आयी थीं। 'हुजूर, हमारा मेमसाब, साब के साथ घूमने गया। ...... ठीक ही तो था, बेचारी मुझे आया न समझती तो क्या रानी-महारानी समझती ? दोनों हाथ गोबर से सने थे। साड़ी घुटनों तक समेटे थी। उस पर सुबह से चोटी-कंघी करने की फुरसत ही कहां मिली थी।'

और फिर उनका एक बेजोड़ संस्मरण, जो कई बार उनसे सुनने पर भी सर्वदा नवीन लगता था। 'अरी, लैंसडौन की मेरी एक पड़ोसन थी ललाइन। उसके लाला थे जीभ के चटोरे। सुबह हुई नहीं कि मरी, जप में भी विघन डाल देती थी, किसका मन लगता था फिर जप में ! कभी असली घी में बन रहे पराठों की सुगंध तो कभी सूजी की सोंधी लपट। कभी हींग-मेथी की बघार का धुआं तो कभी उड़द के बड़ों की छन्न-छन्न। इधर मैं "विष्णु ! विष्णु !" कर आचमन लेती, उधर ललाइन गर्म घी में दुश्मन-सा मालपुआ छोड़ देती।'

ललाइन अत्यंत पतिपरायणा धर्मभीरु स्त्री थीं। पति का हाजमा बहुत सुविधा का न होने पर भी, वह पति की प्रत्येक गरिष्ठ फरमाइश का तत्काल पालन करती। उसका लगभग सारा दिन ही चौके में बीतता। फिर अचानक एक दिन उस चौके से विभिन्न व्यंजनों की सुगंध-भरी धूम्ररेखा स्वयं विलीन हो गयी। न लाला बाहर निकलते, न ललाइन। बीच-बीच में लाला की क्षीण कराह का स्वर सुनकर बसंतीदी व्याकुल हो उठतीं—'मैं सोचती, क्या हो गया लाला को ? ये तो ठीक ऐसे कराह रहे हैं जैसे मरे को "पीड़" (प्रसव-वेदना) उठ रही हो।' लाला की उपस्थिति में वे अपनी सहेली के घर नहीं जाती थीं। नौकर ने ही बताया कि लालाजी के पेट में दर्द उठा है। तीन-चार दिन तक लाला का उदरशूल-पर्व चला, फिर पांचवें दिन अचानक ललाइन के हाथ के बने क्रोशिया के मेजपोश से ढंके, बड़े-बड़े चांदी के थालों में ढाल-से बताशे और बमगोले-से मोतीचूर के लड्डू पड़ोस में बांटने नौकर निकला। बसंतीदी ललाइन की अंतरंग सखी थीं, इस प्रोटोकोल के अनुसार पहला थाल उन्हीं के यहां आया।

'अरी, मेरा तो कलेजा धक् हो गया।' अपने चेहरे को किसी पेशेवर दरबारी विदूषक के परिहास से उद्भासित कर बसंतीदी कहतीं—'अरी, कलजुग तो है ही, मरे को दरद भी उठ रहे थे, हो न हो बेटा जना है लाला ने। "क्या हुआ है रे ? बताता क्यों नहीं, कैसी मिठाई बांट रही है तेरी मलकिन ?" मैंने उस बजरबट्टू से नौकर से पूछा। पर वह हरामी मुसकियाने लगा। मुझे तो अब भारी अकुलाहट हो आयी। दौड़कर छज्जे से झांका, खांसा-खंखारा, ताली बजायी। पर ललाइन नहीं निकली। आखिर मैंने उसकी छत पर अपना लोटा लुढ़का

डेट धुलाई की टिकिया
साबुनों के मुक़ाबले
१½ गुनी ज़्यादा शक्तिशाली
—खारे पानी में भी.

डेट धुलाई का पाउडर
कई साइज़ के पैक में मिलता है. कपड़ों को
इसके घोल में भिगोइये और धो लीजिये.
हाथों को मुलायम भी रखता है.

एन-डेट
दाग़-धब्बे नाशक एनज़ाइमयुक्त
धुलाई का पाउडर, सक्रिय
लेकिन हानिरहित.

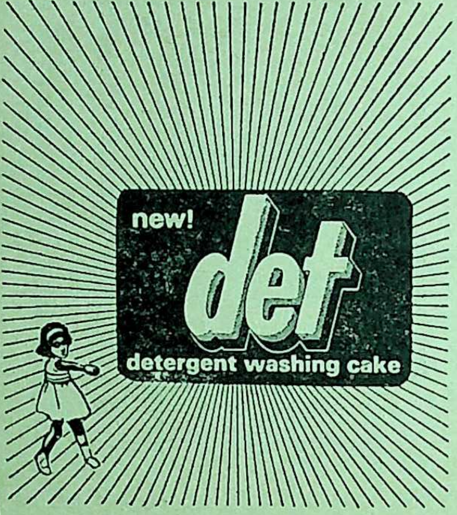
new!
det
detergent washing cake

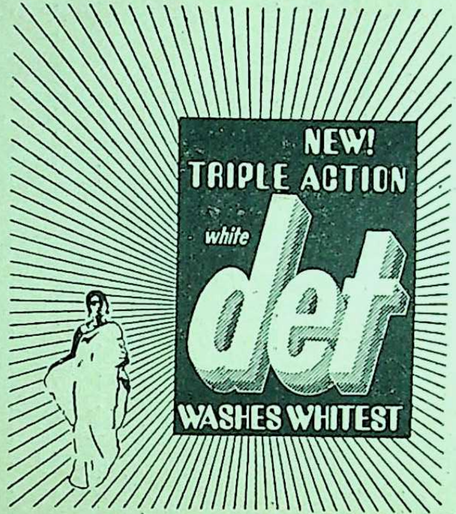
NEW!
TRIPLE ACTION
white
det
WASHES WHITEST

enzyme
det
washes away stubborn stains

न कभी थी, न मिलेगी; ऐसी सफ़ेदी—डेट उत्तम पदार्थों से

Shilpi HPMA 6A/74 Hin

दिया। ललाइन पल-भर की बदली से छिटकी पहाड़ी धूप-सी बाहर निकली। "अरी क्या हुआ, क्यों मिठाई बांट रही है? शरमा क्यों रही है इतना?" अब तो मुझे पक्का विश्वास हो गया कि लाला सौर में है। कैसी लाल पड़ रही थी बेचारी! "क्यों, बता ना?" मेरा धड़कता कलेजा, सलूके से धड़फड़ाकर बाहर निकला जा रहा था। लग रहा था अब कहेगी–"लाला ने बेटा जना है।" पर वह हरामजादी भी अपने उसी नौकर की तरह मुसकियायी, फिर आंचल से मुंह सटाकर धीरे-से बोली–"लालाजी की हवा खुल गयी।"'

और फिर बसंतीदी की, मुंह में आंचल रख 'लालाजी की हवा खुल गयी' कहने की अद्भुत मिमिकरी हमारे राशीभूत अट्टहास से फानस में जल रहे दीपक की लौ को भी प्रकंपित कर जाती।

तीन वर्ष पूर्व, विपत्ति के कठिन क्षणों में इस पंक्ति की सार्थकता सहसा स्पष्ट हो उठी थी–**स्त्रीणां विपत्प्रतीकारे स्त्रिय एवावलम्बनम्।** सचमुच, स्त्री ही स्त्री का विपत्ति से उद्धार करती है, पुरुष नहीं। नारी का नारी पर यही अटूट विश्वास मुझे उसी वटवृक्ष की उदार छाया में सुस्ताने खींच ले गया था। मैं अस्वस्थ पति को लेकर उन्हीं की शरण में गयी थी। चार-पांच महीने की सुदीर्घ अवधि तक मुझे उनके पास रहना पड़ा। छोटी बहन की ससुराल में रहने का संकोच मुझे प्रतिपल धरातल में धंसा रहा था। और एक दिन जब वही विवशता अश्रु-धारा के साथ उनके संमुख बिखर गयी, तो [illegible] 'शर्म नहीं आती तुझे? यह क्या तेरी बहन की ही ससुराल है? अरी, तेरी बहन के इस घर में आने के पैंतीस साल पहले जो तेरा पति इस घर में मुझे सगी बहन मान बीसियों बार बग्वाली (भाई दूज) का टीका करा गया है, वह क्या भूल गयी है तू? खबरदार, जो अब ऐसी बात जबान पर लायी!'

और फिर, पति के स्वस्थ होने पर भी घर लौटने के मेरे दुराग्रह को वे अपने दुलार-भरे आग्रह से पराजित कर देतीं। 'कल अमावस है।' 'अब नवरात्रि छोड़कर कैसे जायेगी?' या 'भद्रा के दिन बीमार पति को लेकर कैसे जा सकती है तू।' पर अंत में एक दिन उनसे विदा लेनी ही पड़ी। जाने के तीन दिन पूर्व, उन्होंने मुझे अपनी दिव्य-दृष्टि का जो अद्भुत परिचय दिया, उसका रहस्य आज तक नहीं समझ पायी।

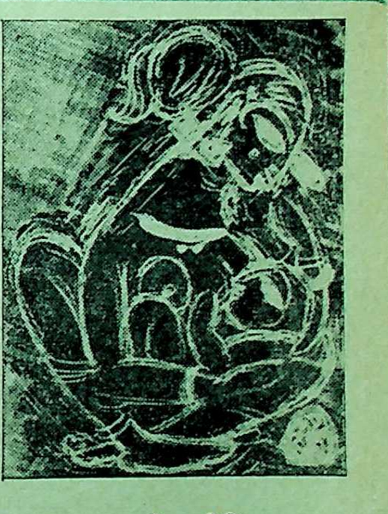

वात्सल्य : के. श्रीनिवासुलु

दीपावली अभिनन्दन

श्रीवेंकटेश्वर प्रेस

कलात्मक उत्कृष्ट छपाई व प्राचीन सांस्कृतिक साहित्य का प्रकाशन केन्द्र

अध्यक्ष

खेमराज श्रीकृष्णदास

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बम्बई-४०० ००४

दूरध्वनि : ३५७४५६
(दो लायनें)

तार : वेंकटेश्वर

'अरी सुन, जब जा ही रही है तो एक बात कहूं ?' 'कहिये ।' मेरे सशंकित चित्त की प्रत्येक धड़कन कानों में बज रही थी ।

उनके विषण्ण चेहरे की एक-एक झुर्री को उनके उदार हृदय की समस्त सहानुभूति, अपने दग्ध पिछले लावे से एक पल को स्याह बना गयी । 'सब कह तो रहे हैं, यह ठीक हो गया है, पर मुझे ठीक नहीं लग रहा है । कैसा चंदन-सा रंग था इसका, और देखती नहीं, एकदम काला पड़कर रह गया है। जब ऐसे गोरे रंग पर ऐसी स्याही फुंकती है तो समझ ले ......' उन्होंने फिर वाक्य अधूरा ही छोड़ मेरा हाथ थाम लिया ।

मैं कांप गयी। मृत्यु से जिसका परिचय इतना घनिष्ठ था, उस छलनामयी की पदचाप को जिसने एक नहीं, अनेक बार सुना था, क्या वह कभी उसे पहचानने में भूल कर सकती थी ? जो उनके विराट साम्राज्य के अनेक सदस्यों को बाज की भांति झपट्टा मारकर उन्हीं की आंखों के सामने दबोच ले गयी थी, उसे मेरे जीवनाकाश की निरभ्रता के बीच मंडराते, शायद उन्होंने उसी क्षण देख लिया था।

कुछ ही दिनों बाद, मैं एक विवाह में संमिलित होने गयी। शरीर और मन दोनों में इतनी शक्ति नहीं रह गयी थी कि नैनीताल जाकर, हम दोनों बसंतीदी से मिल आयें। फिर शायद उन्हीं की स्नेहडोर हमें खींच ले गयी। मुझे देखते ही उन्होंने बांहों में भर लिया—'अरी, जानती थी, जानती थी, तू बिना मुझसे मिले कभी लौट नहीं पायेगी।' उस एक ही रात्रि में उन्होंने न जाने कितनी बार मेरे म्लान मन को गुदगुदाया, हंसाया।

चलने लगी तो मैंने पैर छुए । उनकी अश्रुपूरित मूक दृष्टि जैसे फिर उसी चेतावनी से मुझे कंपा गयी—'अरी, सब कहते तो हैं यह ठीक हो गया पर......' तीखा उतार उतरते-उतरते मैंने फिर एक बार मुड़कर देखा । अपनी खिड़की से चिबुक टिकाये, वे एकटक हमें देख रही थीं। जैसे जान गयी थीं कि मेरे साथ उतार उतरने वाला, अब फिर कभी वह चढ़ाई चढ़ने नहीं लौट पायेगा ।

चलते-चलते उन्होंने अपनी गुदगुदी हथेली से मेरा हाथ दाबा-भर था। आज उस स्पर्श की स्मृति ही शेष है । अपनी असंख्य संतानों में से अंतिम अनाथा भतीजी का कन्यादान कर उन्होंने अपने इन शब्दों का पालन किया। 'इसे ब्याहकर गंगा नहा लूं, फिर चैन से आंखें मूंद लूंगी।'

पर कैसी भाग्यवती जननी ने आंखें मूंदी थीं, जिसकी मृत्यु ने केवल उसी के पुत्र-पुत्रियों को अनाथ नहीं किया, अनाथ किया उन उन्नीस संतानों को, जिन्होंने अपनी जननी खोकर उस वात्सल्यमयी उदार नारी की गोद में खोयी मां का वात्सल्य पाया था । शायद ऐसे ही अमर प्राणों के लिए, रवींद्रनाथ ने पंक्ति लिखी थी :

'मरण सागर पारे / तोमरा अमर
तोमादरे स्मरि'

—मरण-सागर के पार भी तुम अमर हो; हम तुम्हारा स्मरण करते हैं।

—६६, गुलिस्तां, लखनऊ

★

जब भी छुआ ज्योति को

तारादत्त 'निर्विरोध'

ऐसे जिया गया है जीवन जैसे एक दिया,
फूंक लगी बुझ गया और आंधी में जला किया !
जब भी छुआ ज्योति के कर को
तब ही जलन मिली,
आखिर किसी अंधेरे में ही
अपनी रात ढली,
ऐसे पिया गया है अमृत जैसे जहर पिया,
प्यास अबूझी रही और पानी भी रीत गया !
जीवन को उजलाने बैठे
सतहें नहीं रहीं,
किसी अकेले में खो जाते
कोई मिला नहीं,
ऐसे दिया भुलावा मन को जैसे प्यार किया,
दर्पण में अपने को देखा कोई नाम लिया !
अपने को बाहर से जोड़ा
भीतर टूट गये,
भीतर को बाहर लाये तो
साथी छूट गये,
ऐसे सिया अधर को जैसे मन को कैद किया,
सब कुछ दिया मगर लगता है कुछ भी नहीं दिया ।

—खेजड़े का रास्ता, जयपुर-१

भारतीय इतिहास के कुछ राजनैतिक विवाह

अ.ला. श्रीवास्तव

विवाह एक पवित्र और धार्मिक संस्कार है जो मंत्रोच्चार के बीच संपन्न होता है। हिंदू शास्त्रकारों ने गृहस्थाश्रम को अन्य तीनों आश्रमों का आधार होने के कारण 'ज्येष्ठाश्रम' कहा है; और विवाह उसमें प्रवेश की पहली सीढ़ी है। पितृ-ऋण से उऋण होने का एकमात्र उपाय विवाह ही होता है, जिससे सृष्टि का क्रम निरंतर चलता रहता है। परंतु कभी-कभी विवाह के उद्देश्य इनसे भिन्न भी रहे हैं। राजघरानों के विवाह के पीछे बहुधा राजनीति के रंगीन दांवपेंच होते रहे हैं। इसका पता भारतीय इतिहास के पन्ने पलटने से चल सकता है।

ईसा से लगभग छह सौ वर्ष पहले गौतम बुद्ध के समय में मगध के राजा बिंबिसार थे। उस समय देश कई छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था, जिन्हें जनपद या महाजनपद कहते थे। उस समय का मगध महाजनपद पटना और गया जिलों के आस-पास के क्षेत्र में फैला हुआ था। इसके ठीक उत्तर गंगा के दूसरी ओर था लिच्छवि जनपद, पश्चिम में कोसल, दक्षिणपूर्व में अंग तथा दक्षिण-पश्चिम में वत्स। उस समय सभी राज्य एक-दूसरे की सीमाओं में अतिक्रमण करके अपना सीमा-विस्तार करने में तत्पर थे। मगध-सम्राट् बिंबिसार भी यही करना चाहता था। परंतु स्वयं अपने राज्य पर कोसल और लिच्छवि राज्यों के आक्रमण का भय भी था। सो बिंबिसार ने बड़ों से मेल रखकर छोटों पर विजय पाने की योजना बनायी। उसने लिच्छवि गणराज्य के प्रधान चेतक की कन्या छलना से और कोसलराज प्रसेनजित् की बहन कोसलदेवी से विवाह करके इन दोनों शक्तिशाली राज्यों को अपना मित्र बना लिया। फिर निर्भीक होकर उसने अंग पर चढ़ाई कर दी और उसे जीत करके अपने राज्य में मिला लिया।

बिंबिसार के बाद उसका बेटा अजातशत्रु मगध का राजा बना। उसके जीवन में भी विवाह ने बड़े ही राजनैतिक गुल खिलाये थे। कहते हैं, उसने अपने पिता बिंबिसार को कारागार में बंद करके मार डाला और स्वयं राजा बन बैठा। कुछ दिनों बाद विधवा रानी कोसलदेवी भी पति के शोक में मर गयी। तब कोसल-सम्राट् प्रसेनजित् ने अपनी बहन के विवाह में दहेज के रूप में दिये गये काशी के एक गांव की वार्षिक आमदनी मगध को देना बंद कर दिया। यह बात अजातशत्रु के लिए आर्थिक दृष्टि से हानिकारक और राजकीय संप्रभुता की

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक व
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गद्दियां व कवर बनाने के लिए मुलायम और बहुरंगी • क्रोशेसेटों के लिए सुंदर और चमकदार • वसन्त में लचीले और नमीसोख

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता—७०० ००१

आओ — एक सौदा करें।

मैं तुम्हें अपने सारे
खिलौने देती हूं,
तुम मुझे दे दो—

गोला
टॉफियां और मिठाइयां

Gola
Gola
Gola
Gola

दी हिन्दुस्थान शुगर मिल्स लि.
गोलागोकर्णनाथ, जि.खीरी, उ.प्र.

दृष्टि से अपमानजनक थीं । फलतः उसने कोसल पर आक्रमण कर दिया ।

कई वर्षों के अनवरत युद्ध के बाद एक बार प्रसेनजित् ने अजातशत्रु को बंदी बना लिया । अभी अजातशत्रु अपनी मुक्ति की योजना सोच ही रहा था कि एक दिन अचानक कोसलराज ने उसे स्वयं मुक्त कर दिया और उससे अपनी बेटी वाजिरा का विवाह करके दहेज में पुनः काशी के उस गांव की वार्षिक आमदनी मगध को सौंप दी, जिसके लिए सारा झगड़ा खड़ा हुआ था ।

वस्तुतः प्रसेनजित् के सामने एक बड़ी ही जटिल समस्या थी । वह नवयुवक अजातशत्रु की शक्ति से भली भांति परिचित था और दूसरी ओर उसे अपनी प्रतिष्ठा का भी ध्यान था । इस जटिल समस्या का संमानजनक समाधान उसने बेटी के विवाह के माध्यम से ढूंढ़ा । इससे दोनों पक्षों का मान भी बना रहा और झगड़ा भी शांत हो गया ।

मगध महाजनपद का इतिहास सदियों तक एक तरह से समूचे प्राचीन भारत का इतिहास रहा है । मौर्यवंश के पहले मगध में नंद नामक एक शूद्र वंश शासन करता था । नंदराज के दरबार में अपमानित होने के कारण ब्राह्मण चाणक्य ने उस वंश को समूल नष्ट करने की प्रतिज्ञा कर ली । चाणक्य ने चंद्रगुप्त मौर्य को अपनी देख-रेख में पढ़ा-लिखाकर उसके वयस्क होने पर सेना सजाकर नंदराज पर आक्रमण करने की सोची । परंतु नंदराज की सेना ऐसी-वैसी न थी । उसके डर से विश्व-विजेता सिकंदर की सेना ने मगध की सीमाओं में घुसने से इन्कार कर दिया था । अतः चाणक्य ने पर्वतक नामक एक पहाड़ी राजा से चंद्रगुप्त का समझौता कराया । तय हुआ कि दोनों की मिली-जुली सेनाएं नंदराज पर आक्रमण करेंगी और जीत जाने पर ये दोनों राज्य मगध का आधा-आधा बंटवारा कर लेंगे ।

संमिलित सेनाओं ने पाटलिपुत्र के राजमहल पर अधिकार कर लिया । संधि की शर्तों के अनुसार अब मगध राज्य का बंटवारा होना था । परंतु चाणक्य को यह पसंद नहीं था । उसने कुटिल चाल चली और विजय की खुशी में दोनों राजाओं के विवाह रचाये । चंद्रगुप्त का विवाह उसने एक नंदकन्या से करवाया और पर्वतक का विवाह एक विषकन्या से । योजनानुसार, अगले दिन सवेरे पर्वतक मृत पाया गया ।

विषकन्याओं का उल्लेख संस्कृत नाटकों में प्रायः हुआ है । ये अत्यंत रूपवती युवतियां होती थीं, जिनके शारीरिक संपर्क में आते ही पुरुष विषाक्त होकर मर जाते थे । कुछ लोगों का कहना है कि बचपन से ही इन कन्याओं को थोड़ा-थोड़ा विष खिलाया जाता था और आयु के साथ-साथ विष की मात्रा भी बढ़ा दी जाती थी । इस प्रकार उनका संस्पर्श और संपर्क बिना किसी शस्त्र-प्रयोग के ही किसी पुरुष के वध के लिए काफी होता था । यह भी हो सकता है कि उनके अंगों-नाखूनों आदि में विष रखने की व्यवस्था रहती हो । खैर, कुछ भी हो, यहां हमारा तात्पर्य केवल पर्वतक के विवाह से

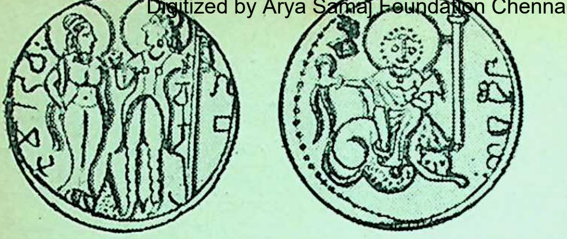

चंद्रगुप्त और कुमारदेवी का संमिलित सिक्का। चित (बायें) प राजा-रानी आमने-सामने खड़े है और उनके नाम ब्राह्मी लिपि म अंकित हैं। पट (दायें) पर सिह पर आसीन देवी और 'लिच्छवयः' शब्द अंकित है।

है। यह विवाह सच कहा जाये तो राजनीति की विषकन्या से हुआ था, जिसमें 'सांप मरै न लाठी टूटे' वाली उक्ति चरितार्थ हुई थी। यह सारी कथा विशाखदत्त ने 'मुद्राराक्षस' नाटक में दी है।

मौर्य सम्राट् चंद्रगुप्त और यूनानी विजेता सिकंदर के सेनापति सेल्यूकस की पुत्री का विवाह जग-जाहिर है। इस विवाह की सूचना सबसे पहले हमें यूनानी लेखकों से मिलती है। किंतु वे केवल इतना बताते हैं कि 'जब सीरिया-सम्राट् सेल्यूकस ने सिकंदर के जीते हुए भारतीय भूभाग पर पुनः अधिकार करने के लिए चढ़ाई की, तो चंद्रगुप्त मौर्य से वैवाहिक संबंधों पर आधारित संधि कर ली और अपने राज्य के चार प्रदेश—एरिया, अराकोशिया, गेड्रोसिया तथा पैरोपोनेसिडाइ—चंद्रगुप्त के राज्य में मिला दिये। बदले में चंद्रगुप्त से उसे ५०० हाथियों का बहुमूल्य उपहार मिला।' बाद के लेखकों ने लिखा कि चंद्रगुप्त के साथ सेल्यूकस ने अपनी बेटी ब्याहकर संधि कर ली। और आज तक यही बात दोहरायी जाती रही है।

सबसे पहले विन्सेंट स्मिथ ने इस बात का विरोध किया था और कहा था कि बिना किसी प्रमाण के यह क्यों कहा जाता है कि सेल्यूकस ने अपनी बेटी ब्याही? स्मिथ के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए यह कहा गया है कि संधि-प्रस्तावक वही होता है, जो अपने को शत्रु के समक्ष कमजोर समझता है। अब देखना यह है कि चंद्रगुप्त मौर्य और सेल्यूकस में से संधि-प्रस्तावक कौन हो सकता है। सेल्यूकस ने सिकंदर के द्वारा जीते गये भारतीय भूभाग को पुनः हस्तगत करने के लिए आक्रमण किया था। यदि संधि-प्रस्तावक चंद्रगुप्त मौर्य होता, तो सेल्यूकस ने मगध सम्राट् से व्यास नदी तक का भूभाग मांग लिया होता। परंतु हुआ इसका उलटा। स्वयं सेल्यूकस ने अपने राज्य के चार सीमावर्ती प्रदेश चंद्रगुप्त मौर्य के राज्य में मिला दिये। चौबेजी गये थे छब्बे होने, पर रह गये दुबे होकर!

सो स्पष्ट है कि संधि-प्रस्तावक चंद्रगुप्त मौर्य नहीं, वरन सेल्यूकस था, जिसने अपने को मौर्य-सम्राट् के समक्ष कमजोर समझा था। भारतीय इतिहास का यह तथ्य भी सर्वविदित है कि प्रायः पराजित राजा ही विजयी राजा को अपनी बहन या बेटी ब्याहता है। इस कसौटी पर सेल्यूकस का

कन्यापक्षी होना सिद्ध हो जाता है और उसके द्वारा चार प्रदेशों का प्रदान दहेज-सा जान पड़ता है। भारतीय इतिहास का यह अज्ञात विवाह कितना रोचक है और राजनीति के दांवपेंच से कितना भरा हुआ है!

मगध का ही एक और विवाह इतिहास-विद्वानों के लिए पहेली रहा है। यह विवाह हुआ था ईसा की चौथी शताब्दी में, लगभग ३२० ई. के आस-पास। इस विवाह में वर था गुप्तवंश का राजा चंद्रगुप्त प्रथम और वधू थी पड़ोसी लिच्छवि राज्य की कन्या कुमारदेवी। इस विवाह की जानकारी हमें सोने के कुछ सिक्कों और गुप्त-सम्राटों के अभिलेखों से मिली है।

सोने के कुछ ऐसे सिक्के मिले हैं, जिनमें अग्रभाग पर एक राजा और रानी एक दूसरे की ओर मुंह किये खड़े हैं और राजा रानी को कोई वस्तु दे रहा है। यह वस्तु स्पष्ट नहीं है। इसे भिन्न-भिन्न विद्वानों ने फूल, मणि, अंगूठी अथवा सिंदूरदानी समझा है। राजा के हाथ के नीचे ब्राह्मी लिपि में 'चंद्रगुप्त' और रानी की बगल में 'कुमारदेवी' लिखा है। पृष्ठ भाग पर एक देवी सिंह पर बैठी है और लेख है 'लिच्छवय:' अर्थात् 'लिच्छवि जाति के लोग'।

इसी प्रकार चंद्रगुप्त प्रथम के पुत्र समुद्रगुप्त ने अपने अभिलेख में अपने को चंद्रगुप्त तथा महादेवी कुमारदेवी से उत्पन्न और 'लिच्छवि-दौहित्र' कहा है। इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मगध के राजा चंद्रगुप्त प्रथम ने लिच्छवि-कन्या कुमारदेवी से विवाह किया और उनसे समुद्रगुप्त का जन्म हुआ। इस विवाह के पीछे राजनीति के जो संभावित रहस्य छिपे हैं, अब जरा उन पर भी दृष्टि डालें। वस्तुतः कुमारदेवी लिच्छवि राज्य के गणमुख्य की कन्या और राज्य की उत्तराधिकारणी थी। इसीलिए कुमारदेवी से विवाह करके चंद्रगुप्त प्रथम ने लिच्छवि राज्य पर भी अपना शासन स्थापित करने की घात लगायी।

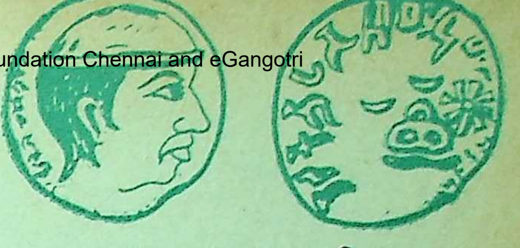

महाक्षत्रप रुद्रदामन् का सिक्का

परंतु चूंकि कुमारदेवी के रहते, जो लिच्छवि राज्य की वैध शासिका थी, चंद्रगुप्त प्रथम लिच्छवि राज्य का राजा नहीं हो सकता था, इसीलिए उसने (चंद्रगुप्त प्रथम ने) संमिलित सिक्के ढलवाये, जिन पर राजा और रानी दोनों की आकृतियां और नाम अंकित थे। कहा जाता है कि ये सिक्के गुप्त और लिच्छवि दोनों राज्यों में प्रचलित थे। [वैसे लेखक इस मत से सहमत नहीं। उसके अनुसार ये सिक्के केवल लिच्छवि राज्य के लिए थे; क्योंकि इन पर केवल 'लिच्छवय:' लेख अंकित है। 'गुता:' लेख वाले ऐसे ही सिक्के गुप्त राज्य के लिए ढलवाये गये होंगे, जो संयोगवश अभी तक प्राप्त नहीं हो सके हैं।] और इस प्रकार इस विवाह के माध्यम से चंद्रगुप्त प्रथम

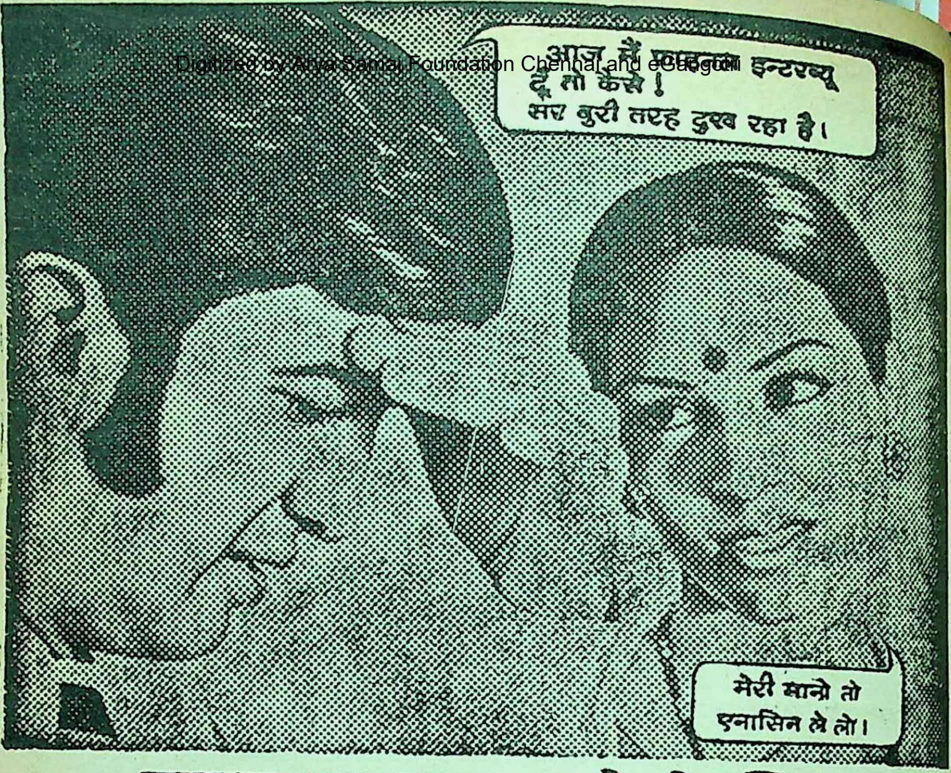
आज मैं [illegible] इन्टरव्यू दूँ तो कैसे! सर बुरी तरह दुख रहा है।
मेरी मानो तो एनासिन ले लो।

जल्द आराम पाने के लिए
तेज़ असर और विश्वसनीय
एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

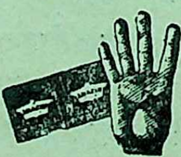

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक

Regd. User of T/M: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

लिच्छवि राज्य को हड़पने में सफल हो गया।

समुद्रगुप्त के चंद्रगुप्त प्रथम का उत्तराधिकारी बनने में भी इस विवाह की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। चंद्रगुप्त प्रथम वैधानिक रूप से लिच्छवि राज्य का राजा नहीं था। वह तो केवल अपनी रानी के पति के नाते उस राज्य पर शासन कर रहा था। इसलिए अपने उत्तराधिकारी के चयन में उसने बड़ी ही कूटनीतिक दूरदर्शिता दिखायी।

यदि वह अपनी किसी अन्य रानी से उत्पन्न पुत्र को अपना उत्तराधिकारी बनाता तो वह केवल गुप्त राज्य का राजा बनता, लिच्छवि राज्य का नहीं। लिच्छवि राज्य का शासन केवल कुमारदेवी की संतान को ही मिल सकता था। इसलिए उसने कुमारदेवी से उत्पन्न पुत्र समुद्रगुप्त को अपना उत्तराधिकारी बनाया। इससे समुद्रगुप्त एक साथ गुप्त तथा लिच्छवि दोनों राज्यों का वैधानिक शासक बन सका और चंद्रगुप्त प्रथम की योजना सफल हुई।

दूसरी शती में दक्षिण भारत के महाराष्ट्र प्रांत में शासन करने वाले सातवाहन वंश के राजा वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी के विवाह की कहानी और भी अधिक मनोरंजक है। गुजरात-काठियावाड़ और मालवा में शासन करने वाले विदेशी शकों का सातवाहन वंश से पुराना संघर्ष था। वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी के पिता गौतमीपुत्र शातकर्णि ने शक-क्षत्रप नहपान को मारकर उसे निर्वंश कर दिया था। परंतु उसके न रहते ही उज्जैन के शक-क्षत्रप रुद्रदामन् ने सातवाहन राज्य के कुछ प्रदेशों पर अधिकार जमा लिया।

यह बात वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी को सहन न थी। वह रुद्रदामन् के चंगुल से अपने राज्य के भूभाग छुड़ाना चाहता था। परंतु रुद्रदामन् की अदम्य शक्ति से भी वह पूर्ण परिचित था। सो लाचार होकर उसने कूटनीति का सहारा लिया। उसने तो रुद्रदामन् की पुत्री से विवाह किया और बाद में उसके राज्य पर आक्रमण कर दिया—और आक्रमण भी एक बार नहीं, दो-दो बार। किंतु, दुर्भाग्य! दोनों बार वह हार गया। रुद्रदामन् के जूनागढ़ अभिलेख से पता चलता है कि उसने वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी को अपना निकट संबंधी (दामाद) समझकर दो-दो बार युद्ध में छोड़ दिया था।

इस विवाह के पीछे की राजनीति पूरी तरह समझ में न आयी हो, तो सुनिये। रुद्रदामन् यद्यपि विदेशी था, परंतु भारत में रहकर वह पूर्ण रूप से भारतीय बन गया था। उसने भारतीय रीति-नीति एवं संस्कृति को अपना लिया था। दामाद को मारने का तात्पर्य अपनी ही बेटी को विधवा बनाना है। यह भारतीय विचार रुद्रदामन् के मन में भी था और इसीलिए उसने पुलुमावी को दोनों बार हराकर भी छोड़ दिया था और इसी भावना का लाभ उठाया था वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी ने। देखा, कितनी बड़ी चाल थी विवाह की! इस विवाह का नाटक तो केवल शत्रु को निरुपाय करने के लिए था।

—१३६, तुलाराम बाग, इलाहाबाद

★

विज्ञान सहृदय बने और धर्म तर्क-विशुद्ध

कृष्णकुमार गुप्त द्वारा प्रस्तुत

विज्ञान और धर्म अब तक जीवन के दो अलग-अलग रास्ते रहे हैं। मंजिल दोनों की शायद एक ही है–सत्य की खोज। परंतु इधर की सदियों में यह भ्रम पनपता रहा है कि ये दोनों एक दूसरे के विपरीत और परस्पर असंबद्ध हैं। परंतु सचराचर अखिल ब्रह्मांड एक अखंड, अविरत, सुघटित एवं सुचालित इकाई है। वह असीम है। व्यक्ति उसका एक घटक है–अति सीमित अल्पाकार घटक। इसलिए यदि उसकी दृष्टि भी सीमित हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। यही सीमित दृष्टि उपर्युक्त भ्रम के मूल में है। स्वस्थ और समग्र दृष्टि यह है कि विज्ञान और धर्म के रास्ते परस्पर संपूरक और समदैशिक हैं, अतः इनका समन्वय एवं संश्लेषण केवल संभव ही नहीं, अपेक्ष्य भी है। इसी परिपक्व दृष्टि के धनी हैं स्वामी सत्यप्रकाशजी, जिनके पूर्वाश्रम के नाम 'डा. सत्यप्रकाश' से हिंदी संसार ज्यादा परिचित है।

वायु-तरंगिकाओं पर तैरती संगीत-लहरियों में एक लय होती है। संगीत का जन्म कंपन से होता है; कंपन का स्रोत है ऊर्जा। डा. सत्यप्रकाश के जीवन के विभिन्न 'फेजों' में जो संगीतमय लय है उसका आधार है उनका प्रचंड एवं अखंड कर्म। इस कर्म का जो गहरा और गुप्त ऊर्जास्रोत है, वहीं से एक और अजस्र धारा बहती है, उन्मुक्त अट्टहास और निर्विकार विनोद की। 'संन्यासी-वेश में आपका एक चित्र चाहिये, धोती-कुरते वाला चित्र तो मेरे पास है'–मेरे यह कहने पर तत्काल बोले–'क्यों नहीं मेरा एक चित्र प्रकृति-वेश में ले लेते हो? जो वस्त्र चाहो उसे पहना देना।' और एक मीठी-सी मुस्कान हवा में बिखेर दी।

आतिथ्य और सत्कार करने का उन्हें खासा शौक है और उसमें भी स्वादिष्ट व्यंजनों का समावेश करने का विशेष रूप से। एक बार एक मित्र से उन्होंने कहा–'आज का खाना आपका हमारे साथ रहेगा।' मित्र ने औपचारिकतावश असमर्थता प्रकट की, तो तत्काल कह उठे–'कैसे

सखा हो भई ! जो [illegible] है।' उनकी इस भाषा-वैज्ञानिक व्याख्या से हंसी का गुब्बारा उस गंभीर वातावरण में भी सहसा फूट पड़ा था।

गैरिक परिधानधारी स्वामी सत्यप्रकाशजी से मिलने पर मुझे लगा कि एक ही सत्य अलग-अलग व्यक्ति-जीवनों में किस प्रकार विविध और कभी-कभी विपरीत रूपों में भी प्रकट हो सकता है।

स्वामी रामतीर्थ ने जब गेरुआ बाना सदा के लिए त्यागकर श्वेत वस्त्र धारण करने का निश्चय किया था, उन्होंने अपने सचिव सरदार पूरनसिंह से कहा था—'भारत बड़ा विचित्र देश है, पूरनसिंह ! यदि संन्यास-वेश में मैं अपनी पत्नी से बात भी कर लूं, तो आने वाला भारत यह कहने में भी संकोच नहीं करेगा कि रामतीर्थ ने संन्यासावस्था में भी संभोग किया था।'

दूसरी ओर सत्यप्रकाशजी ने अपने संन्यास-वेश के बारे में इस लेखक से कहा—'संन्यास मेरे तई निष्क्रियता नहीं है। मैंने इस वेश को धारण करके जीवन का त्याग नहीं किया है। आज मेरे सभी कर्म लगभग निष्काम हैं। मुझे उनके बदले में धन और पद की अपेक्षा नहीं रह गयी है। यदि व्यवस्थावश कहीं से धन प्राप्त भी होता है, तो मैं उसे दूसरी ओर लगा देता हूं। निष्काम कर्म ही मेरा संन्यास है।'

आज सचमुच उनकी जीवनचर्या 'स्व' से कटकर 'पर' को समर्पित है। वे अपने खाने-पीने की व्यवस्था से भी मुक्त हैं। कोई जो [illegible] दे, खा लेते हैं। अपने किसी स्वजन या संबंधी का आतिथ्य स्वीकार नहीं करते। इलाहाबाद में अपना जो मकान था, उससे उनका कोई मोह नहीं है। वह टूटे-गिरे, उन्हें कोई सरोकार नहीं। कटरे के आर्यसमाज मंदिर में उनका आश्रम है, वे प्रायः वहीं निवास करते हैं। यों उनका पर्याप्त समय भ्रमण में ही बीतता है। भ्रमण भी विश्व-भर का।

आजीवन शिक्षाशास्त्री रहे हैं वे, सो आज भी उनका मुख्य कार्यक्षेत्र शिक्षा, समाज और विज्ञान से संबद्ध है। हाल ही लिखित उनकी पुस्तक 'मैन एंड हिज़ रिलिजन' का कैसा व्यापक स्वागत हुआ है, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है

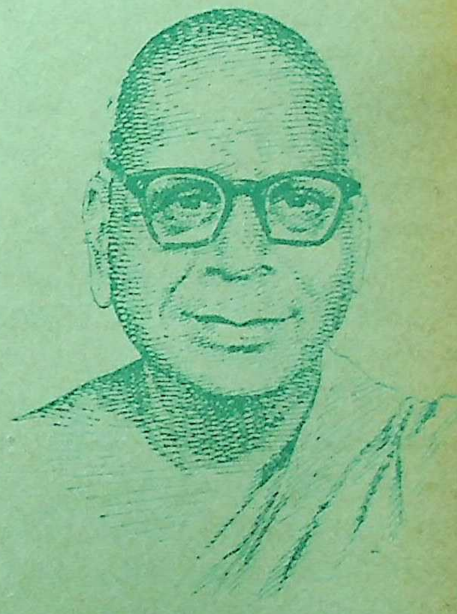

स्वामी सत्यप्रकाशजी

दीपावली
और
नूतन वर्ष के लिए
हार्दिक शुभेच्छा

अशोक प्रिंटिंग प्रेस

२०१, खेतवाड़ी मेन रोड,
बंबई–४०० ००४
फोन—प्रेस : ३५५४४५
निवास : ५७३५६२

कि अभी स्वदेश में हिंदी अनुवाद बाजार में आया भी नहीं है कि मारिशस में उसका फ्रेंच संस्करण और पूर्वी अफ्रीका में स्वाहिली संस्करण धड़ल्ले से चल निकले हैं।

सत्यप्रकाशजी का धर्म वस्तुतः मानव-धर्म है। वे कहा करते हैं—'मैं कैसे कह दूं कि गंगा अधिक पवित्र है और टेम्स उसकी अपेक्षा कम पवित्र, या कि कश्मीर अधिक आकर्षक है और स्विट्जरलैंड उसके मुकाबले फीका है? मुझसे यह सब नहीं हो सकता।' उनके इस मानव-धर्म का प्रेरणास्रोत पाश्चात्य चिंतन नहीं, बल्कि वेद हैं, जिनमें उनकी निष्ठा इतनी गहरी है कि उन्होंने चारों वेदों के अंग्रेजी अनुवाद के गुरुतर कार्य का भार अपने कंधों पर लिया है। इस कार्य में भारत के अनेक विद्वानों का, जिनमें 'नवनीत' के भूतपूर्व संपादक श्री सत्यकाम विद्यालंकार भी हैं, सहयोग उन्हें मिल रहा है।

वे बताते हैं कि यों तो वेदों के अंग्रेजी अनुवाद कुछ पश्चिमी विद्वानों ने भी किये हैं, परंतु वे अनुवाद ऐतिहासिक दृष्टि पर अधिक आधारित हैं। वेद हमारे लिए इतिहास नहीं है। वे जीवन को अनुप्राणित करने वाले उत्कृष्टतम आदि-ग्रंथ हैं। उनमें किसी संप्रदाय, पैगंबर, अवतार, मूर्ति, मंदिर या मतविशेष का जिक्र नहीं है—हो भी नहीं सकता; क्योंकि वे उस समय रचे गये थे, जब ये चीजें अभी गढ़ी ही नहीं गयी थीं। उनमें जो सत्य उजागर हुआ है, वह शाश्वत है, मानव-मात्र के लिए है।

उन्होंने कहा—'मैं तो पश्चिमी लोगों से भी कहा करता हूं कि वेद जितना मेरा है, उतना ही तुम्हारा भी, क्योंकि इसके रचयिता मेरे और तुम्हारे दोनों के पूर्वज थे। तब कोई धर्म था ही नहीं। सारा विभाजन वेदों के बाद का है।'

स्वामी दयानंद के प्रति उनके विशेष आकर्षण के पीछे भी उनकी यही अनुभति थी कि दयानंद ने वेदों की व्याख्या कर्मकांडपरक मंत्रों के रूप में नहीं, अपितु समग्र जीवन को गति देने वाले शक्तिस्रोत के रूप में की है। योगी अरविंद ने भी दयानंद की इस व्यापक दृष्टि को सराहा-स्वीकारा था।

वेदों का यह नया अंग्रेजी अनुवाद दस खंडों में प्रकाशित होगा। अब तक ऋग्वेद का लगभग पांचवां हिस्सा अनूदित हो चुका है और प्रथम खंड के शीघ्र प्रकाशित होने की आशा है।

जब वे वेदों की बात कह रहे थे, मैंने विज्ञान की बात छेड़ दी। विज्ञान में उनकी पैठ कम गहरी नहीं है। पचास वर्षों तक उनका संबंध इलाहाबाद विश्वविद्यालय से रहा है। लगभग नौ वर्ष पूर्व जनवरी १९६७ में वे वहां से रसायन-विभाग के अध्यक्ष एवं प्राध्यापक के पद से निवृत्त हुए। 'विज्ञान परिषद' के वे सक्रिय सदस्य ही नहीं एक प्रमुख संचालक रहे हैं। हिंदी में 'शोध-पत्रिका' के वे आदि-संपादक हैं। उत्तरप्रदेश और भारत सरकार द्वारा गठित विज्ञान, विकास और भाषा संबंधी अनेक समितियों के वे संमानित सलाहकार और सदस्य रहे

ग्वालियर रेयन के
२६
गौरवशाली वर्ष

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के **आजाद** होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन–ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सख्त लकड़ियों से रेयन–ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील है.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रूई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही एकमात्र उद्देश्य है

दि ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

Sobhagya.GB 74-2-83

हैं, आज भी हैं। विज्ञान की अनुसंधान प्रवृत्तियों से वे पूरी तरह परिचित रहते हैं। सो मैंने पूछा–'विज्ञान और धर्म एक साथ कैसे चल पायेंगे?'

उन्होंने जो उत्तर दिया, वह गहराई से विचार करने योग्य है:

'यदि मानव-जाति को जीवित रहना है और विनाश के गर्त में गिरने से बचना है, तो दोनों का तालमेल बैठाना ही होगा। इसलिए हमें धर्म को विशाल बुद्धिगम्य आधार प्रदान करना होगा।

'चमत्कार-प्रदर्शन अध्यात्म नहीं है। उंगली रगड़कर भस्मी पैदा करने वाले अथवा हाथ फेरकर दुःसाध्य रोग से छुटकारा दिला देने का दम भरने वाले साधु यदि अपने चमत्कार का उपयोग मानव-मात्र के लिए कर सकें, तभी वह ग्राह्य अथवा स्तुत्य हो सकता है। यदि वह अपने आपमें एक शक्ति है, तो क्यों राष्ट्रीय धन की एक बड़ी राशि चिकित्सा-कार्यों पर खर्च की जाये? उस शक्ति से वह काम लिया जाना चाहिये।

'अवैज्ञानिक धर्म धोखा है। जिससे मानव-मात्र का कल्याण हो, वही धर्म है। अंधविश्वासों पर खड़ा धर्म ज्यादा समय तक टिक पायेगा, इसमें संदेह है। यही वजह है कि धर्म और अध्यात्म को युक्तिसंगत बनाने (रैशनलाइज़ेशन) की तत्काल आवश्यकता है।

'इसी प्रकार विज्ञान को भी मानव के प्रति अपने दायित्व को समझना होगा। यदि वह केवल समर्थ और बलवान को जीने-पनपने का अधिकार देता है, तो उसका भविष्य भी उज्ज्वल नहीं रह सकता। विज्ञान को एक ऐसी दुनिया बनानी होगी, जिसमें निर्बल और शक्तिहीन को भी जीने-पनपने का उतना ही अधिकार हो, जितना कि बलवान को है। अगर ऐसा नहीं हुआ, तो बलवान निर्बल को मिटाता रहेगा और युद्ध, खून-खराबी और मार-काट का सिलसिला कभी बंद नहीं हो सकेगा।

'विज्ञान के पास शक्ति है; उसके पास हृदय भी होना चाहिये। इसके लिए विज्ञान को अध्यात्म में लगाना होगा। यह विचार अब कोई नया नहीं रह गया है। विश्व-भर में इसकी आवश्यकता महसूस की जाती रही है। जरूरत है, इस विचार को क्रियान्वित करने की।'

फिर बातचीत का रुख भारत की तरफ हुआ। बड़े दर्द के साथ बोले कि हम अभी तक अपनी कोई राष्ट्रीय 'इमेज' संसार के सामने कायम नहीं रख पाये हैं। जो पहले थी वह खो दी है, नयी बना नहीं पाये हैं। मसलन, सन ६१ में जब मैं धोती, कुरता, टोपी और चप्पल में इंग्लैंड गया, तो प्रो. होम ने कहा था–"आपको देखकर लगता है कि सचमुच कोई हिंदुस्तानी प्रोफेसर आया है। बाकी तो हमें अपनी ही नकल मालूम देते हैं।"

'ऐसी ही बात सन ७४ में दार-ए-सलाम में हुई। मैंने भारत में हुई विज्ञान की प्रगति और विकास पर जब वहां के विश्वविद्यालय में भाषण दिया, तो वहां एक अधिकारी ने

कहा कि "आपने जितना पैसा प्रयोगशालाओं पर खर्च किया है, उतना तो हम अपने यहां खर्च नहीं करना चाहते। हमारी कोशिश तो यह है कि जो शोध यहां हम करें, वह हमारी जरूरतों के मुताबिक हों। क्या आपके यहां भी ऐसा ही हो रहा है ?" इस सबसे किसी को खुशी नहीं हो सकती।'

शिक्षक के रूप में व्यापक अनुभव और चिंतन के आधार पर वे महसूस करते हैं कि 'हमें अपने स्कूल-कालेजों में पाठचक्रमों के परिवर्तन और टीमटाम पर ज्यादा जोर न देकर वहां नया और सही वातावरण तैयार करने पर अधिक ध्यान देना होगा। वातावरण की कमी को पाठचक्रम और टीमटाम से पूरा करना काफी मुश्किल काम होगा।'

स्वामी सत्यप्रकाश चिंतन में ही नहीं, कर्म में भी धर्म और विज्ञान दोनों के प्रति एक साथ समर्पित हैं। उनकी अध्यक्षता में चल रहे वेदानुवाद का उल्लेख ऊपर हो ही चुका है। वैज्ञानिक और औद्योगिक शोध परिषद के अंतर्गत 'वेल्थ आफ इंडिया' का अनुवाद उन्हीं की देखरेख में चल रहा है। वे चाहते हैं कि यह काम और भी तेजी से हो।

उन्होंने हाल में एक पुस्तक लिखी है 'कॉइनेज इन एन्शेन्ट इंडिया' जिसमें प्राचीन भारत के सिक्कों का विस्तृत धात्वीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अपनी एक और पुस्तक 'ज्यॉमिट्री इन एन्शेन्ट इंडिया' की रचना के दौरान वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि 'पाइथागोरस प्रमेय' का नाम 'बोधायन प्रमेय' होना चाहिये; क्योंकि बोधायन पाइथागोरस से पूर्ववर्ती था और उसने आयताकार चित्रों के संदर्भ में उस प्रमेय की स्थापना की थी, जो आजकल पाइथागोरस के नाम पर प्रचलित है।

जब मैं उनसे मिलने गया, वे दिल्ली के एक आर्यसमाज मंदिर में धर्मोपदेश देने पधारे थे। मानवीयता, विज्ञान, धर्म, शिक्षा, समाज इन सबके प्रति कर्ममय, प्राणमय किंतु निष्काम चिंता इस विज्ञानी संन्यासी को एक अनूठे आकर्षण से मंडित कर देती है, जिसमें गरिमा और सहजता का सोद्देश्यता और सरसता का संगम हुआ है।

* * *

एक सूफी का किस्सा है कि एक आदमी ने दुकान पर जाकर पूछा—'आपके पास चमड़ा है ?' उत्तर मिला—'हां !' 'सुई-धागा ?' 'हां।' 'और कीलें ?' 'हां।' 'तो फिर आप मेरे लिए एक जोड़ी जूते क्यों नहीं सी देते ?' ज्ञान का उपयोग करने की असमर्थता को दरसाना इस कहानी का उद्देश्य है। आज की सभ्यता में मनुष्य समृद्धि के बीच भूखों मर रहे हैं। यह सभ्यता डूबती जा रही है, इसलिए नहीं कि उबारने वाला ज्ञान इसके पास नहीं है। बल्कि इसलिए कि कोई उस ज्ञान का उपयोग नहीं करेगा।

—इदरीस शाह

★

एक्स-रे

नन्ही बिटिया खेल के पीछे खाना तक भूल जाती है। वह बस खेला करती है; कुछ भी नहीं खाती। मां मनुहार कर-करके हार जाती है, मगर वह सुनती ही नहीं। मां उसे जैसे-तैसे भोजन करने को बैठाती भी है, तो एक-दो कौर निगलकर खेलने भाग जाती है।

ऐसे में उसके बूढ़े दादा युगों पुरानी चाल चलते हैं। उसे वे बड़े प्यार से आवाज देते हैं–'बिटिया रानी!'

नन्ही फिर भी अपने खेल में ही मग्न है। यह देख वे अपनी बात पर आ जाते हैं–'बिटिया, आज पेट की जांच नहीं करवाओगी? उसमें क्या-क्या है मैं भी तो जानूं!'

बिटिया रानी खेल भूलकर दादाजी के पास दौड़ी आती है, पेट उघाड़कर कहती है–'देखो, दादाजी......देखो।'

दादा बड़ी गंभीरता से पेट का एक्स-रे-सा करते हुए पेट पर हाथ रखकर बताते जाते हैं–'यहां पर पानी है।......और यहां पर दूध है ...... और यह क्या चाकलेट है?'

नन्ही बिटिया का चेहरा खुशी से दमक उठता है। स्वीकृति में सिर हिलाकर वह कहती है–'और बताओ?'

दादाजी उसी गंभीरता से एक्स-रे किये जाते हैं। बिटिया जिस चीज से विमुख होकर भाग रही थी, उचित अवसर पर उसका उल्लेख करते हुए कहते हैं–'अरे भई रोटी तो नहीं दिखती ही नहीं इसमें ......दाल भी नहीं दिखती है आज तो?'

यह बात रामबाण का-सा असर करती है। बिटिया रानी बिना कुछ कहे दौड़कर मां के पास जाती है। एक पल पहले जिस चीज को वह किसी भी तरह नहीं खा रही थी, वही वह गपागप खाने लगती है।

मां का चेहरा खुशी से खिल उठता है।

जल्दी-जल्दी खा-पीकर बिटिया दादाजी के पास वापस आती है। पेट उघाड़कर कहती है–'अब देखो। रोटी-दाल है या नहीं?'

दादाजी की कमजोर आंखें फिर एक्स-रे-आंखें बन जाती हैं। वे फिर उसी गंभीरता से उसके पेट पर नजरें जमाकर कहते हैं–'अरे वाह! यह आ गयी यहां दाल...... और यह रही रोटी।'

नन्ही बिटिया खुशी से नाचने लगती है–'आ गयी रोटी, आ गयी दाल!'

दादाजी एक्स-रे की फीस के रूप में बिटिया का मुंह चूम लेते हैं।

–२४२, तिलक नगर, इंदौर-१

*** चंद्रशेखर दुबे ***

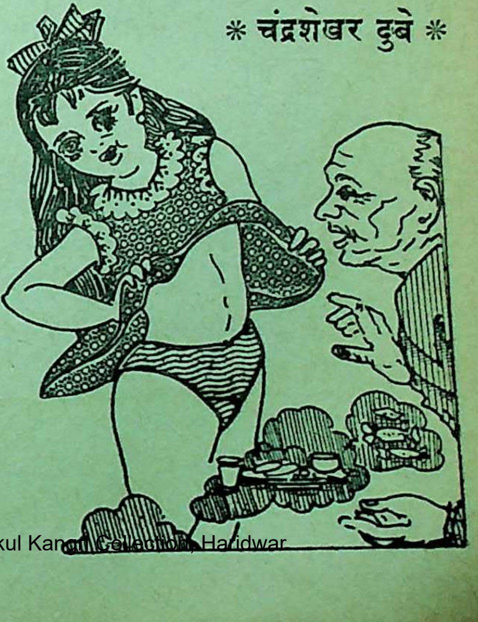

सम्राट् हर्षवर्धन रचित

नागानंद

बाणभट्ट एवं ह्वान च्वाङ का आश्रयदाता, कन्नौज का पराक्रमी सम्राट् हर्षवर्धन (५९०-६४७ ई.) संस्कृत का सुकवि भी था। उसके रचे हुए तीन रूपक मिलते हैं, जो संस्कृत साहित्य में विशेष स्थान रखते हैं–'प्रियदर्शिका' एवं 'रत्नावली' नामक नाटिकाएं तथा 'नागानंद' नाटक। 'नागानंद', जिसका कथासार यहां डा. **विनोदचंद्र विद्यालंकार** ने प्रस्तुत किया है, बौद्ध चिंतन से प्रेरित है। इसका कथानायक एक बोधिसत्त्व है। इसकी कथा-वस्तु मूलतः शायद 'बृहत्कथा' में थी और वह 'कथासरित्सागर,' 'बृहत्कथामंजरी' एवं 'वेतालपंचविंशति' में भी विद्यमान है।

★

प्रथम अंक

विद्याधरों का राजा जीमूतकेतु वृद्धावस्था में राज्य का भार अपने रूप-गुण-संपन्न युवा पुत्र जीमूतवाहन को सौंपकर वन में पत्नी-समेत तापस-जीवन व्यतीत कर रहा है। पुत्र जीमूतवाहन राजकाज प्रधानामात्य को संभलवाकर स्वयं सारा समय माता-पिता की सेवा में वन में बिताने लगा है। विदूषक आत्रेय को उसकी यह रीति अच्छी नहीं लगती। जब-तब वह काफी पैने ढंग से जीमूतवाहन को समझाया करता है। आज भी उनमें वही चर्चा छिड़ी हुई है।

विदूषक जीमूतवाहन को उसके यौवन और राज्य-सुखों का स्मरण कराता है। किंतु सदा की तरह जीमूतवाहन का उत्तर है–'यौवन तो वासनाओं का घर है, भंगुर है, विवेक-विमुख है..... ऐसा निंदनीय यौवन यदि माता-पिता की चरण-शुश्रूषा में व्यतीत हो जाये, तो उसे मैं सार्थक समझूंगा।' और रही राज्य-सुखों की बात। 'पिताजी के संमुख खड़े रहने में जो शोभा है, वह सिंहासन पर बैठने में कहां! उनके पांव दबाने में जो सुख है, वह राजत्व में कहां! उनके खा चुकने के बाद बचे भोजन का भोग लगाने में जो तृप्ति है, वह त्रिलोकी के भोग में कहां! माता-पिता को छोड़कर राज्य करना तो केवल क्लेश है। उसमें कौन-सा गुण है भला?'

विदूषक चुटकी लेता है कि यह केवल राज्य-सुख की बात नहीं है; राज्य के प्र
तुम्हारे कुछ कर्तव्य भी हैं। जीमूतवाहन का उत्तर है :

'न्याय्ये वर्त्मनि योजिताः प्रकृतयः सन्तः सुखं स्थापिता
नीतो बन्धुजनस्तथात्मसमतां राज्ये च रक्षा कृता।
दत्तो दत्तमनोरथाधिकफलः कल्पद्रुमोऽप्यर्थिने
किं कर्तव्यमतः परं कथय वा यत्ते स्थितं चेतसि ॥'

–मैंने प्रजाओं को न्यायमार्ग पर नियोजित कर दिया है; सज्जनों की सुखपू व्यवस्था कर दी है; बंधु-बांधवों को अपने बराबर बना दिया है; राज्य को सुरक्षित क दिया है; याचकों को मनोरथ से अधिक फल देने वाला साक्षात् कल्पवृक्ष ही दे डाला है मेरे लिए इससे भी बढ़कर कौन-सा कर्तव्य तुम्हारे मन में है, बताओ तो।

विदूषक उसे चेतावनी देता है कि शत्रु मतंग तुम्हारे राज्य पर घात लगाये बैठा है और वह दिनों-दिन दुःसाहसी होता जा रहा है। इस पर जीमूतवाहन उत्तर देता है–'शरीर से लेकर मेरा सभी कुछ दूसरों के ही लिए है; यदि मैं स्वयं अपने आपको दे नहीं डालता तो केवल पिताजी के कारण। सो यह सब व्यर्थ की चिंता है। चलो, पिताजी की आज्ञा पू करें। उन्होंने आज्ञा दी है कि इस स्थान पर रहते हमें बहुत समय हो गया है और यहां की समिधा, कुशा, कुसुम, मूल, कंद, फल आदि समाप्त हो चले हैं, सो तुम मलय पर्वत प जाकर आश्रम के लिए कोई निवासयोग्य स्थान खोजो। तो आओ, मलय पर्वत पर चलें।

दोनों प्रस्थान करते हैं और मलय पर्वत के एक ऐसे भाग में पहुंचते हैं, जहां घने हरे भरे वृक्ष उगे हैं, सुगंधित यज्ञधूम मंडरा रहा है और मृगछौने बिलकुल निडर हैं। वे देखते हैं कि वल्कल के लिए इस वनप्रांत में वृक्षों की छाल काटी तो गयी है, किंतु दयापूर्वक थोड़ी-थोड़ी। यहां के स्वच्छ निर्झरों में पुराने कमंडलु जहां-तहां डूबे हुए हैं, बटुओं द्वारा फेंक दी गयी मूंज की टूटी तगड़ियां जहां-तहां पड़ी हैं, और तोते सामगान कर रहे हैं। निश्चय ही यह कोई तपोवन है, जिसमें प्रसन्नचित्त मुनि-जन संदिग्ध वेदवाक्यों का अर्थ-विचार कर रहे हैं, बटु-जन ताजी समिधाओं को तोड़ते-तोड़ते पाठ कंठस्थ कर रहे हैं, तापस-कुमारियां वृक्षों के थांवलों को पानी से सींच रही हैं। जीमूतवाहन कह उठता है :

'मधुरमिव वदन्ति स्वागतं भृङ्गशब्दै-
र्नतिमिव फलनम्रैः कुर्वतेऽमी शिरोभिः।
मम ददत इवार्घ्यं पुष्पवृष्टीः किरन्तः
कथमतिथिसपर्यां शिक्षिताः शाखिनोऽपि ॥'

–क्या यहां के वृक्षों को भी अतिथि-सत्कार की शिक्षा दी गयी है? क्योंकि ये तो भ्रमरों के शब्दों से हमारे लिए 'स्वागत' का उच्चारण कर रहे हैं, फलों के कारण नम्र

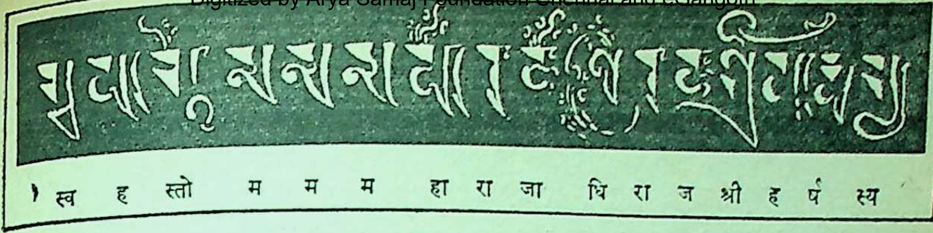
स्व ह स्तो म म म हा रा जा धि रा ज श्री ह र्ष स्य

हर्ष के हस्ताक्षर, लखनऊ म्यूजियम में रखे बांसखेड़ा ताम्रपत्र पर ['इतिहास-प्रवेश' से]

शाखाओं द्वारा हमारा नमस्कार-सा कर रहे हैं और फूलों की वृष्टि करके हमें अर्घ्य-सा दे रहे हैं !

जीमूतवाहन को लगता है कि यह तपोवन सर्वथा निवास-योग्य है, यहां सुख से रहा जा सकेगा।

तभी विदूषक आत्रेय का ध्यान कुछ हिरनों की ओर जाता है, जो गर्दन तनिक टेढ़ी किये, सुख से आंखें मूंदे, जुगाली बंद करके कुछ सुनते-से जान पड़ते हैं। साथ ही किसी नारी के बहुत सधे हाथों से वीणा बजाते हुए गाने की मधुर स्वर-लहरी उनके कानों में पड़ती है। वे अनुमान करते हैं कि सामने के देव-मंदिर में कोई ललना देवता की आराधना करती हुई वीणावादन के साथ गा रही है। विदूषक और जीमूतवाहन तमाल-तरुओं की ओट में छिपकर अवसर की प्रतीक्षा करने लगते हैं।

देव-मंदिर में सिद्धों के राजा विश्वावसु की बेटी मलयवती और उसकी चेटी चतुरिका बैठी हैं। मलयवती गा रही है :

'उत्फुल्लकमलकेसरपरागगौरद्युते मम हि गौरि !
अभिवाञ्छितं प्रसिध्यतु भगवति युष्मत्प्रसादेन।।'

—खिले कमल के केसर के पराग के समान गौर द्युति वाली हे भगवती गौरी, आपकी कृपा से मेरा मनोरथ पूर्ण हो।

चेटी उसे टोकती है कि व्यर्थ इस निष्करुणा देवी के आगे क्यों बजाती हो ? कन्याओं के लिए अतिदुष्कर व्रतोपवासों द्वारा तुम जाने कब से इसकी आराधना कर रही हो; परंतु यह तुम पर पसीजती ही नहीं।

इससे विदूषक और जीमूतवाहन को यह संकेत मिल जाता है कि गाने वाली कोई कन्या है। वे तमाल-जाल के पीछे से उचककर उसे देखते हैं। विदूषक बोल उठता है—'यह यवती वीणा-विज्ञान से ही नहीं, तदनुरूप रूप से भी सुख उत्पन्न करती है।' जीमूतवाहन तो ऐसा मुग्ध होता है कि निश्चय ही नहीं कर पाता कि यह किसी देवयोनि की स्त्री है या

स्वर्गस्त्री यदि तत् कृतार्थमभवच्चक्षुःसहस्रं हरे-
र्नागी चेन्न रसातलं शशभृता शून्यं मुखेऽस्याः स्थिते।
जातिर्नः सकलान्यजातिजयिनी विद्याधरी चेदियं
स्यात् सिद्धान्वयजा यदि त्रिभुवने सिद्धाः प्रसिद्धास्ततः ।।

—यदि यह कोई अप्सरा है तो इंद्र की हजार आंखें सफल हो गयीं; यदि यह कोई नागस्त्री है तो इसके मुख के विद्यमान रहते रसातल चंद्र-विहीन नहीं है; यदि यह कोई विद्याधरी है तो हमारी विद्याधर जाति सब जातियों से आगे बढ़ गयी; और यदि यह सिद्धों के वंश की है तो सिद्ध त्रिभुवन में प्रसिद्ध हो गये।

विदूषक को प्रसन्नता होती है कि इतने समय बाद जीमूतवाहन पर कामदेव का कुछ तो प्रभाव पड़ा।

उधर चेटी फिर वही बात दुहराती है कि इस निष्करुणा देवी के सामने वीणा बजाने से क्या लाभ और मलयवती के हाथ से वीणा छीन लेती है। मलवयवती उसे समझाती है-'देवी की निंदा मत करो। आज देवी ने मुझे प्रसाद दे दिया है। स्वप्न में वीणा बजाती हुई मुझसे आज भगवती गौरी ने कहा कि तुम्हारी इस बालजन-दुष्कर, असाधारण भक्ति से मैं प्रसन्न हूं। शीघ्र ही विद्याधरों का चक्रवर्ती राजा तुम्हारा पाणिग्रहण करेगा।' चेटी सहर्ष कह उठती है—'इसे स्वप्न क्यों कहती हो? देवी ने तुम्हारा हृदयस्थ वर दे दिया।'

विदूषक इसे अच्छा अवसर जान जीमूतवाहन को जबरन आगे धकेलकर मंदिर में प्रवेश करता हुआ बोल उठता है—'चेटी ठीक ही कहती है कि देवी ने "वर" ही दिया है।'

मलयवती घबरा उठती है और जीमूतवाहन को लक्ष्य करके चेटी से पूछती है, यह कौन है? चेटी उत्तर देती है—'इसकी असाधारण आकृति से तो यही लगता है कि भगवती ने यही प्रसाद तुम्हें दिया है।' मलयवती स्पृहा और लज्जा के साथ तिरछी दृष्टि से जीमूतवाहन को निहारती है और उठकर जाने का प्रयत्न करती है। विदूषक उसे रोके रखने के विचार से बोल पड़ता है—'क्या आपके तपोवन की यही रीति है कि आये हुए

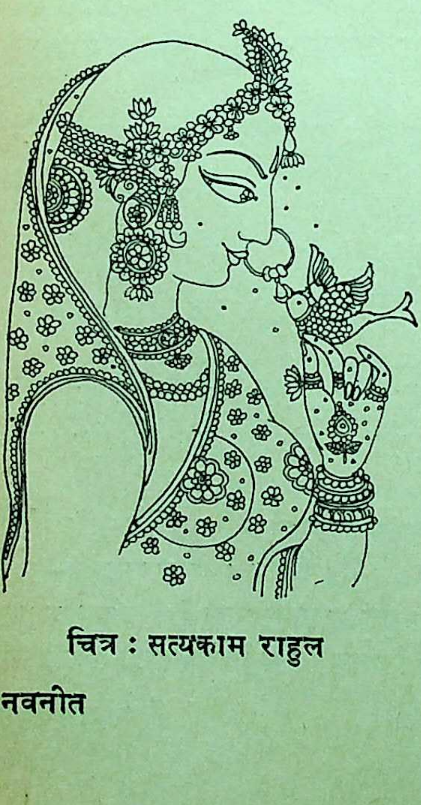

चित्र : सत्यकाम राहुल

अतिथि का वाणी से सत्कार नहीं किया जाता ?'

चेटी चतुरिका समझ गयी है कि मलयवती का हृदय जीमूतवाहन में अनुरक्त हो गया है। सो वह मलयवती की ओर से स्वयं कहती है कि आप लोगों का स्वागत है, आसन ग्रहण कर इस प्रदेश को अलंकृत कीजिये। वे दोनों बैठ जाते हैं। मलयवती चेटी से कहती है–'ऐसा न करो। कोई तापस देख लेगा, तो मुझे लोकलाज से रहित समझेगा।'

ठीक तभी उस तपोवन के कुलपति कौशिक की ओर से तापस शांडिल्य मलयवती को माध्याह्निक स्नान के लिए बुलाने मंदिर में आ पहुंचता है। वहां जीमूतवाहन को देखकर वह क्षण-भर को विस्मित होता है कि असाधारण लक्षणों से संपन्न यह युवक कौन है ? निश्चय ही यह विद्याधरों का चक्रवर्ती होकर रहेगा। फिर उसे निश्चय हो जाता है कि अवश्य ही यह जीमूतवाहन है, जिसे मलयवती का पिता सिद्धराज विश्वावसु अपना दामाद बनाना चाहता है। उसे लगता है, यदि विधाता यह परस्पर अनुरूप जोड़ी मिला दे, तो उसके हाथों बहुत समय बाद यह एक उचित काम होगा। जीमूतवाहन को वह आशीर्वाद देता है। मलयवती गुरु के आदेश और प्रिय के दर्शन-सुख के बीच डोलते हृदय को लेकर वहां से प्रस्थान करती है। जीमूतवाहन अनुभव करता है–'यह जा तो और ही किसी ओर रही है, किंतु पग मेरे हृदय में रख रही है।'

द्वितीय अंक

प्रेम-पीड़िता मलयवती फूल चुनने से उत्पन्न हुई थकावट और शरत्कालीन धूप की बाधा के निवारण के बहाने से कोमल कदली-पत्रों से आच्छादित चंदन-लतागृह में चंद्रमणि-शिला को चेटी चतुरिका के द्वारा सज्जित करवाकर वहां पर जा बैठती है। किंतु लतागृह भी उसे शांति नहीं दे पाता। मन ही मन वह कामदेव को कोसती है कि जिसने अपने रूप से तुम्हें पराजित कर दिया, उसे तो तुमने कुछ नहीं कहा; और मुझे अबला जानकर मुझ पर बाण बरसा रहे हो ! चतुरिका उसके हृदय की अवस्था जानती है और उसे सांत्वना देती है कि तुम्हें देख लेने के बाद उस युवक को भी चैन नहीं पड़ रही होगी; क्या लक्ष्मी को वक्षस्थल पर धारण न करते हुए मधुसूदन सुखी हो सकते हैं। चतुरिका के वचन प्रिय तो हैं, परंतु मलयवती यह स्मरण करके और भी संतप्त हो उठती है कि मैंने उस महानुभाव का वाणी मात्र से भी सत्कार नहीं किया।

उधर जीमूतवाहन की भी यही हालत है। विदूषक आत्रेय उसे उलाहना देता है कि तुम्हारी सारी धीरता कहां चली गयी ? इस पर जीमूतवाहन उलटकर प्रश्न करता है :

'नीताः किं न निशाः शशांकधवला नाऽघ्रातमिन्दीवरं
किं नोन्मीलितमालतीसुरभयः सोढाः प्रदोषानिलाः।

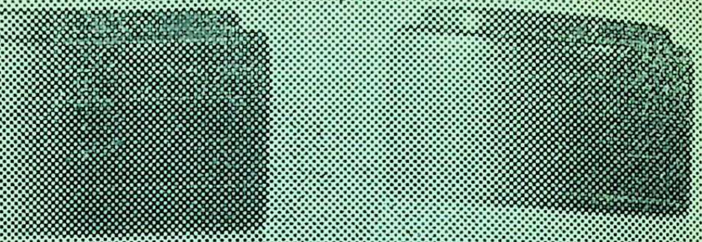

WHO MAKES THE MOST TRUSTED YARN?

CENTURY ENKA, OF COURSE!

World-famous **Enkalon** nylon yarn–made in India to the highest international standards by

Century Enka.

Fast, flawless, fabulous–for the exciting world of fashion.

Enkalon®

nylon yarn is now produced in India

the quality yarn that weaves faultless fabrics

® Registered Trade Mark of AKZO N. V., Holland

Licensed users :

CENTURY ENKA LTD.

झङ्कारः कमलाकरे मधुलिहां किं वा मया न श्रुती
निर्व्याजं विधुरेष्वधीर इति मां येनाऽभिधत्ते भवान् ।।'

—क्या मैंने चंद्रमा से धवलित रात्रियां नहीं गुजारीं, क्या नीलकमल को नहीं सूंघा, क्या खिले मालती-पुष्पों से सुरभित संध्याकालीन वायुएं मैंने सहन नहीं कीं, क्या मैंने कमल-सर में भौंरों की झंकार नहीं सुनी, जो तुम मुझे कातरों में अधीर कह रहे हो ?

किंतु अंततः अपनी अधीरता उसे स्वीकार करनी ही पड़ती है और विदूषक को वह बताता है कि मैंने स्वप्न में देखा है कि चंदन-लतागृह में चंद्रमणि की शिला पर बैठी हुई मेरी प्रिया मुझे उपालंभ देती हुई रो रही है; अतः मैं उसी चंदन-लतागृह में दिन का शेष भाग व्यतीत करूंगा । यह कहकर वह उसी ओर चल पड़ता है।

चंदन-लतागृह में पहले से बैठी हुई मलयवती और चेटी चतुरिका उठकर वहीं एक रक्त-अशोक वृक्ष की ओट में खड़ी हो जाती हैं। जीमूतवाहन लतागृह में प्रविष्ट होता है; परंतु लतागृह उसे सूना-सा प्रतीत होता है। विदूषक से वह कहता है :

'चन्दनलतागृहमिदं सचन्द्रमणिशिलमपि प्रियं न मम।
चन्द्राननया रहितं चन्द्रिकया मुखमिव निशायाः।।'

—यह चंदन-लतागृह चंद्रमणिशिला से युक्त होते हुए भी उस चंद्रमुखी से विहीन होने के कारण मेरे लिए उसी तरह प्रीतिकर नहीं हो पा रहा है, जैसे कि चंद्रिका-रहित निशा का मुख हो।

यह सुनकर मलयवती शंकित होती है कि जाने यह चंद्रमुखी कौन है, जिसमें यह अनुरक्त है। जीमूतवाहन मन की शांति का अन्य उपाय न देखकर विदूषक से कहकर गेरू आदि रंग मंगवाकर उनसे चंद्रमणिशिला पर उस चंद्रमुखी का चित्र उकेरता है। चित्र इतना यथार्थ बन पड़ता है कि विदूषक को विस्मय होता है। तब जीमूतवाहन कहता है :

'प्रिया सन्निहितैवेयं संकल्पस्थापिता पुरः।
दृष्ट्वा दृष्ट्वा लिखाम्येनां यदि तत् कोऽत्र विस्मयः।।'

—अपने संकल्प द्वारा सामने स्थापित प्रिया तो मेरे निकट ही है; उसे देख-देखकर चित्रित करता जाता हूं। इसमें विस्मय की क्या बात है।

रक्त-अशोक की ओट में खड़ी मलयवती विदूषक और जीमतवाहन के वार्तालाप से यह तो जान जाती है कि चित्र बनाया गया है; किंतु यह नहीं जान पाती कि चित्र वस्तुतः उसी का है। वह उसे अन्य किसी का चित्र समझकर अश्रुपात करती हुई वहां से चली जाना चाहती है।

तभी मलयवती के बड़े भाई और सिद्धों के युवराज मित्रावसु का प्रवेश होता है। उसे उसके पिता सिद्धराज विश्वावसु ने कहा है कि हमने समीपवर्तिता के कारण जीमूतवाहन

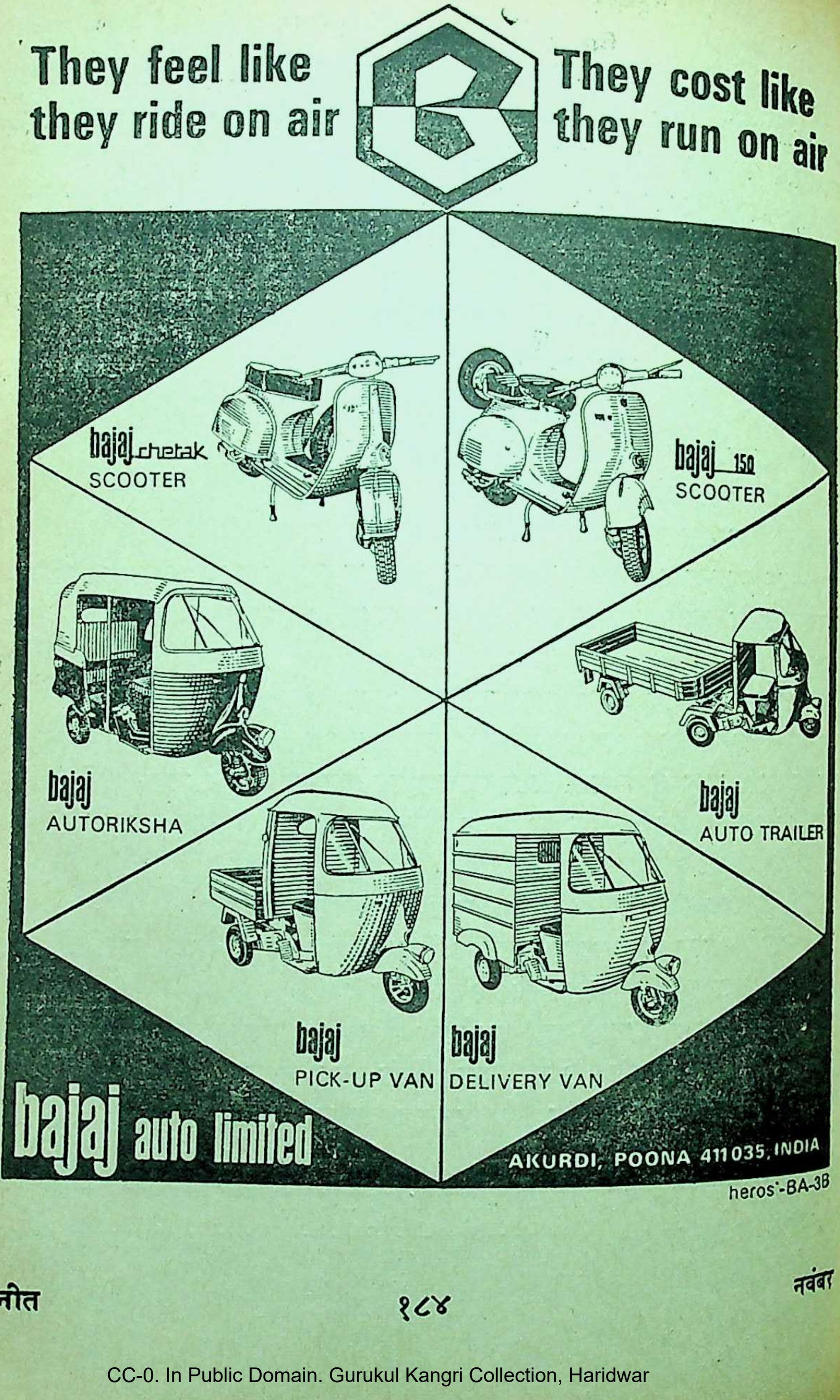
They feel like they ride on air
They cost like they run on air
bajaj chetak SCOOTER
bajaj 150 SCOOTER
bajaj AUTORIKSHA
bajaj AUTO TRAILER
bajaj PICK-UP VAN
bajaj DELIVERY VAN
bajaj auto limited
AKURDI, POONA 411035, INDIA
heros:-BA-3B

की परीक्षा करके जान लिया है कि उससे योग्य वर अन्य कोई नहीं हो सकता, इसलिए उसी

के साथ पुत्री मलयवती का विवाह करना है। जीमूतवाहन इस समय गौरी-मंदिर के पास चंदन-लतागृह में बैठा हुआ है, वह सूचना पाकर मित्रावसु लतागृह में प्रवेश करता है। जीमूतवाहन विदूषक के कहने से स्वलिखित चित्र को कदली-पत्र से ढंक देता है।

प्रणाम एवं कुशलवार्ता के अनंतर मित्रावसु अपने पिता का संदेश जीमूतवाहन को सुनाता है–'मलयवती नाम की हमारी कन्या है, जो समस्त सिद्धराजकुल को प्राणों के समान प्यारी है। उसे मैं तुम्हें सौंपता हूं। स्वीकार करो।' जीमूतवाहन को क्या पता कि उसने गौरी-मंदिर में जिसे देखकर अपना हृदय दे दिया है, वही सिद्धराज-कन्या मलयवती है। इसलिए वह उत्तर देता है–'ऐसे श्लाघ्य संबंध को भला कौन नहीं चाहेगा ? किंतु एक जगह लगे हृदय को उखाड़कर दूसरी जगह नहीं लगाया जा सकता। इसलिए मैं आपकी बहन को स्वीकार नहीं कर सकता।' समझदार विदूषक बीच में दखल देकर कहता है–'ये तो पराधीन हैं, आप इनसे क्यों कहते हैं ? जाकर इनके पिता से प्रार्थना कीजिये।' मित्रावसु को यह सुझाव पसंद आता है और वह जीमूतवाहन के पिता मलयकेतु से निवेदन करने चला जाता है।

उधर रक्त-अशोक की ओट में चेटी के संग खड़ी मलयवती ने यह सब बातचीत सुन ली है। जीमूतवाहन के मुंह से ही यह सुनकर कि उसका हृदय किसी अन्य में आसक्त है, वह जीवन के प्रति निराश हो उठती है और उसी रक्त-अशोक वृक्ष पर चढ़ी माधवीलता से गले में फांसी लगाकर प्राणांत कर लेने का निश्चय कर लेती है। मित्रावसु को देखने के बहाने वह चेटी को वहां से भेज देती है। किंतु चेटी उसके मनोगत भाव को ताड़ गयी है। वह उसे छोड़कर जाती नहीं; अपितु निकट ही छिपकर उसकी चेष्टाओं को देखती रहती है। मलयवती भगवती गौरी को स्मरण करके ज्यों ही गले में लतापाश डालती है, चेटी चिल्ला उठती है–'बचाओ, बचाओ ! यह राजकुमारी फांसी लगाकर मर रही है।' पुकार सुनते ही जीमूतवाहन लपककर वहां पहुंच जाता है और मलयवती का हाथ पकड़कर लतापाश को झटके से हटा देता है।

जब विदूषक चेटी से राजकुमारी की आत्महत्या के इस प्रयत्न का कारण पूछता है, तब चेटी चतुरिका बताती है कि तुम्हारे ये प्रिय मित्र ही कारण हैं। इन्होंने अपनी किसी प्राण-वल्लभा का चित्र चंद्रमणिशिला पर अंकित किया है और उसके प्रति पक्षपात होने के कारण ही ये हमारी राजकुमारी से विवाह करने को तैयार नहीं हो रहे हैं। इसी दुःख से व्यथित होकर हमारी राजकुमारी प्राणत्याग के लिए उद्यत हुई।

इस प्रकार जीमूतवाहन को पता चलता है कि उसने जिसे देवी-मंदिर में वीणा बजाते हुए देखा था और जिसकी प्रतिकृति अब शिलातल पर अंकित की है, वह राजकुमारी मलय-

कपड़ों की उजली
धुलाई के लिये !

AKOLA
CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA.
BERAR OIL INDUSTRIES, AKOLA.
चाँदनी
चाँदनी साबुन
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता-
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

सिरपुर-
उत्तम
कागज
के लिये

☐ बैंक पेपर
☐ बाँड पेपर
☐ ग्लेज़्ड एअर मेल पेपर
☐ एज्युरलेड पेपर
☐ सुपर वाइटलेड पेपर
☐ सुपर वाइट मैपलिथो पेपर
☐ क्रोमो पेपर
☐ एम. एफ. रैपिंग पेपर
☐ आर्ट पेपर
☐ क्रोमो बोर्ड
☐ आर्ट बोर्ड

दि सिरपुर पेपर मिल्स लि
सिरपुर - कागजनगर, आन्ध्र प्रदेश

वती ही है। विदूषक कदली-पत्र हटाकर चित्र दिखाता है और मलयवती लजाकर मुंह फेर लेती है। मूल और चित्र में इतना अधिक सादृश्य है कि चेटी कह उठती है कि ऐसा प्रतीत होता है, जैसे राजकुमारी ही शिला में प्रतिबिंबित हो गयी हो। जीमूतवाहन ने अभी तक मलयवती का हाथ पकड़ रखा था। विदूषक उससे चुहल करता है–'अब तुम लोगों का गांधर्व विवाह संपन्न हो गया। अब तो हाथ छोड़ दो।'

तभी एक चेटी आकर मलयवती को यह सुसंवाद सुनाती है–'जीमूतवाहन के माता-पिता ने तुम्हें अपनी पुत्रवधू बनाना स्वीकार कर लिया है। विवाह आज ही है। तुम्हें तुरंत बुलाया गया है।' जीमूतवाहन भी यह कहते हुए मंगल-स्नान के लिए स्नानभूमि की ओर प्रस्थान करता है :

'अन्योन्यदर्शनकृतः समानरूपानुरागकुलवयसाम्।
केषाञ्चिदेव मन्ये समागमो भवति पुण्यवताम्।।'

–समान रूप, अनुराग, कुल तथा आयु वाले किन्हीं विरले पुण्यशालियों का ही परस्पर दर्शनकृत विवाह-रूप समागम हो पाता है।

तृतीय अंक

राजकुमारी का विवाह-मंगल संपन्न हो चुका है। उसके उपलक्ष्य में समस्त सिद्ध और विद्याधर अपनी प्रणयिनियों समेत कुसुमाकरोद्यान में एकत्र होकर आपानगोष्ठी का सुख अनुभव कर रहे हैं। नववधू मलयवती को लेकर जीमूतवाहन भी अनुचरों सहित उद्यान में पहुंचता है और उसकी रमणीकता पर मुग्ध हो उठता है। लता-मंडपों में जुटी मधुपों की गोष्ठी और मद्य-पान-गोष्ठी में उसे सादृश्य दिखाई देता है। वह कहता है :

'अमी गीतारम्भैर्मुखरितलतामण्डपभुवः
परागैः पुष्पाणां प्रकटपटवासव्यतिकराः।
पिबन्तः पर्य्याप्तं सह सहचरीभिर्मधुरसं
समन्तादापानोत्सवमनुभवन्तीव मधुपाः।।

–गुंजार रूपी गीतों से लतामंडप-भूमियों को मुखरित करते हुए, फूलों के पराग से पटवास के संपर्क का-सा आभास

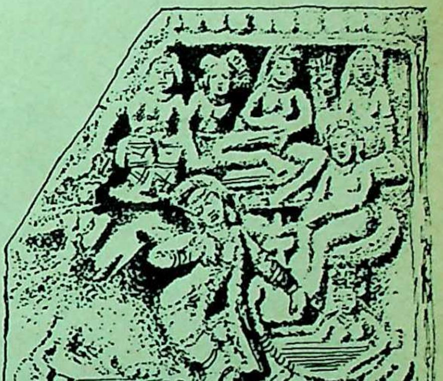

आनंदोत्सव [अनुकृति : ओके]

ब्लैक और गाल्वनाइज्ड स्टील ट्यूब्ज़
के लिए

श्रीनिवास स्टील एंड पाइप्स प्रा० लि०

(आंध्र और मद्रास सिटी के लिए जेनिथ वितरक)
से कृपया संपर्क साधिये

१८, मूकेर नल्मुत्तु स्ट्रीट,
मद्रास–६०० ००१

–: टेलेक्स :–
MS–७१४१
AB—"PYPKING"

फोन : २७०९१
२५५३६
केबल : "PIPEKING"

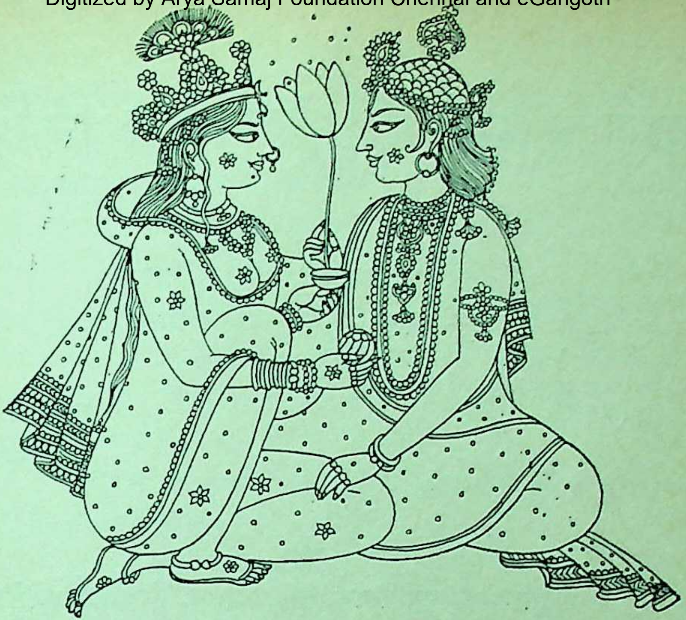

चित्र : सत्यकाम राहुल

कराते हुए, अपनी सहचरियों के साथ भरपूर मधुरस का पान करते हुए मधुप मानो चारों ओर आपानगोष्ठी (मद्यपान गोष्ठी) का सुख अनुभव कर रहे हैं।

इतने में विदूषक भी, जो सिद्धों एवं विद्याधरों का मद्यपान देखने के लिए पहले ही उद्यान में चला आया था, उनसे आ मिलता है। फिर वे सब तमाल-वीथी की ओर चल पड़ते हैं। वहां पहुंचकर विदूषक प्रस्ताव करता है कि यहां स्फटिकशिला पर थोड़ी देर विश्राम किया जाये, क्योंकि मलयवती थक-सी गयी प्रतीत होती है। जीमूतवाहन को विदूषक का वह चतुराई-भरा सुझाव अच्छा लगता है। उसे स्वीकार करते हुए वह विदूषक से कहता है—'तुमने ठीक ही देखा।

'एतन्मुखं प्रियायाः शशिनं जित्वा कपोलयोः कान्त्या।
तापानुरक्तमधुना कमलं ध्रुवमीहते जेतुम्।।'

—मेरी प्रिया का मुखड़ा अपने गोरे कपोलों की कांति से चंद्रमा को तो जीत ही चुका था; अब यह (थकान के) ताप से लाल होकर कमल को भी जीत लेना चाहता है।

प्रिया का हाथ पकड़कर वह उसे स्फटिकशिला पर बैठा लेता है और कहता है—'प्रिये! कुसुमाकरोद्यान को देखने के कुतूहल में हमने व्यर्थ ही तुम्हें कष्ट दिया; वास्तव में तो तुम्हारा यह मुखड़ा ही नंदन है, जिसमें भौंहें लताएं हैं और लाल अधर ही पल्लव हैं; शेष तो केवल वन है।'

भारत कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड

मोती महल, ७ वीं मंजिल,
१९५, चर्चगेट, रेक्लमेशन,
बंबई–४००० २०

फोन : २९५४१८

ग्राम : RAYONSPIN
टेलेक्स : 011-2199
RAYSPIN

★

विस्कोस स्पन रेयान, एसेटेड स्पन, सिंथेटिक ब्लैंडेड
और फैंसी यार्न तथा
फैशन प्रवर्तक–**नागदा शर्टिंग्स व सूटिंग्स**
के अग्रगण्य निर्माता

★

वर्क्स : १ भारत कामर्स एड इंडस्ट्रीज लि., बिरलाग्राम, नागदा (म० प्र०)
२ किरण स्पिनिंग मिल्स, कोलसेट रोड, थाना (महाराष्ट्र)
३ सुजाता टेक्सटाइल मिल्स, नजनगूड (कर्नाटक)
४ भारत कामर्स एंड इंडस्ट्रीज लि०, राजपुरा (पंजाब)

रजिस्टर्ड आफिस :
'सूर्यकिरण' ५ वीं मंजिल, १९ कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली ११०००१

इन चाटूक्तियों को सुनकर मुस्कराती हुई चेटी विदूषक आत्रेय से कहती है–'देखो तो, ये राजकुमारी को किस तरह वर्णित कर रहे हैं ! यदि तुम क्षण-भर आंखें मूंदकर बैठो, तो मैं भी तुम्हें वर्णित करूं ।' विदूषक आंखें मूंदकर बैठ जाता है और चेटी तमाल के पत्ते निचोड़कर उनके काले रंग से विदूषक का मुंह 'वर्णित' कर देती है। चेटी की इस शरारत पर मलयवती मुस्करा पड़ती है, जिस पर जीमूतवाहन उससे कहता है :

'स्मितपुष्पोद्गमोयं ते दृश्यतेऽधरपल्लवे।
फलं त्वन्यत्र मुग्धाक्षि चक्षुषोर्मम पश्यतः ।।'

–यह कैसा आश्चर्य कि मुस्कान का फूल तो तुम्हारे अधर-पल्लव पर खिलता है, परंतु उसका फलोद्गम होता है मेरी आंखों में ! (अर्थात् फल मेरी आंखों को मिलता है।)

विदूषक चेटी की करतूत से रुष्ट होने के बहाने और चेटी उसे मनाने के बहाने तभी वहां से खिसक जाते हैं । जीमूतवाहन एकांत पाकर व्यंजनात्मक रीति से कहता है :

'दिनकरकरामृष्टं बिभ्रत् द्युतिं परिपाटलां
दशनकिरणैः संसर्पद्भिः स्फुटीकृतकेसरम्।
यदि मुखमिदं मुग्धे सत्यं समं कमलेन ते
मधु मधुकरः किन्त्वेतस्मिन् पिबन् न विभाव्यते।।'

–तुम्हारा मुख सर्वथा कमल के समान है । कमी केवल यह है कि इसमें मधुपान करता हुआ भ्रमर दिखाई नहीं देता।

किंतु मधुपान हो नहीं पाता । मलयवती लजाकर मुंह फेर लेती है । और तभी चेटी आकर राजकुमार मित्रावसु के आगमन की सूचना देती है । जीमूतवाहन चेटी के साथ मलयवती को यह कहकर घर भेज देता है कि मित्रावसु से भेंट करके मैं भी अभी आता हूं।

मित्रावसु जीमूतवाहन को यह समाचार देने आया है कि शत्रु मतंग ने तुम्हारे राज्य पर आक्रमण कर दिया है । वह यह भी कहता है कि हमें उसका उच्छेद करने की आज्ञा दे दो। तुम्हारी आज्ञा पाते ही समस्त सिद्धगण वर्षाऋतु के समान दिन को श्याम बनाते हुए विमानों से गगन को आच्छादित कर लेंगे और शत्रु का संहार करके तुम्हारे स्वराज्य को अक्षय कर देंगे । वह तो यहां तक कहता है :

'एकाकिनाऽपि हि मया रभसावकृष्ट-
निस्त्रिंशदीधितिसटाभरभासुरेण ।
आरान्निपत्य हरिणेव मतङ्गजेन्द्र-
माजौ मतङ्गहतकं हतमेव विद्धि ।।

–झटपट म्यान में से खींची हुई अपनी तलवार की चमक-रूपी अयाल से दमकता हुआ सिंह-सा मैं अकेला ही उस मतंग को युद्ध में हाथी की तरह मार डालूंगा।

MRAT/ADC/203-4

We lend a colourful hand in each...

Think of almost any industry—Textiles, Coir, Jute, Leather, Paints, Plastic, Rubber, Printing Ink etc. Amar Dyes lend a colourful hand in each. We make myriad colours in haunting hues and subtle shades to the requirements of every industry.

Amar Dye-Chem—Pioneers in dyestuffs in India—have a high record of achievement. Intensive and constant research, meticulous quality control, all-round expansion and increasing exports all go into making their performance one of distinction.

to enrich India's life with colour!

AMAR DYE-CHEM LTD.

RANG UDYAN, MAHIM, BOMBAY-400 016.
BRANCHES: AHMEDABAD-CALCUTTA-DELHI-JAIPUR-MADRAS-MADURAI.

जीमूतवाहन उत्तर देता है कि तुम्हारे लिए यह भला कौन-सी बात है ! तुम तो इससे भी अधिक कर [illegible] दूसरों के लिए अपना शरीर तक बिना मांगे दे देने को तैयार हो, वह भला राज्य-जैसी तुच्छ वस्तु के लिए जीवहत्या-जैसी क्रूरता का अनुमोदन कैसे कर सकता है ? वह यह भी कहता है कि मैं तो अविद्यादि पंचक्लेशों को ही वास्तविक शत्रु मानता हूं । अतः यदि तुम मेरा प्रिय करना चाहते हो, तो उस बेचारे मतंग पर दया ही करो ।

परंतु मित्रावसु किसी प्रकार सहमत नहीं होता । तब जीमूतवाहन कहता है कि आओ, अंदर चलें; वहीं तुम्हें समझाऊंगा । देखो, दिन ढल गया है । सूर्य अस्त हो रहा है । कैसा श्लाघ्य है यह सूर्य, जिसका समस्त प्रयत्न परोपकार के लिए ही है —**एकः श्लाघ्यो विवस्वान् परहितकरणायैव यस्य प्रसादः ।**

चतुर्थ अंक

जीमूतवाहन मित्रावसु के साथ समुद्र-तट पर भ्रमण कर रहा है। वन-प्रांतर में उसका चित्त अपूर्व शांति और आनंद से भर उठता है । उसे लगता है कि वन में समस्त वैभव विद्यमान हैं—हरी घास शय्या है, स्वच्छ शिला आसन है, तरुछाया घर है, शीतल निर्झर-जल शरबत है, कंद भोजन है, मृग साथी-संगी हैं; वन में यदि कोई दोष है तो यही कि यहां याचकों के न होने से परोपकार नहीं करने को मिलता ।

चलते-चलते उन्हें तीव्र ध्वनि के साथ उमड़ती तरंगों से संकुल समुद्र-वेला दिखाई देती है । मित्रावसु कहता है कि शीघ्र ही यहां चारों ओर ज्वार का पानी फैल जायेगा, सो चलो, पर्वत-शिखर की ओर चलें ।

राह में कोई चीज जीमूतवाहन का ध्यान आकृष्ट करती है और वह कह उठता है—देखो तो, शरत्काल के धवल मेघों से घिरी ये मलय पर्वत की चोटियां हिमालय की बर्फ-ढंकी चोटियों-जैसी प्रतीत होती हैं ! मित्रावसु उसका भ्रम यह कहकर मिटाता है कि यह मलय पर्वत का शिखर नहीं, यह तो नागों के अस्थिपंजरों का ढेर है । फिर वह अस्थिपंजरों के उस विशाल ढेर के जमा होने की कथा उसे बताता है।

पक्षिराज गरुड प्रतिदिन अपने पंखों की प्रबल वायु से सागर-जल को परे हटाकर पाताल से नागों को उठाकर खा जाया करता था । जब वह झपटता था, तो नागस्त्रियों के गर्भ गिर जाते थे और नागशिशु भय से मर जाते थे। इससे समस्त नागों के विनाश की आशंका उत्पन्न हो गयी । तब नागराज वासुकि ने गरुड से निवेदन किया कि इस प्रकार तो शीघ्र ही सर्पजाति समाप्त हो जायेगी, उससे आपकी ही स्वार्थहानि होगी । इसलिए आप इस तरह झपट्टा न मारा करें। मैं प्रतिदिन आपके भोजनार्थ एक-एक नाग भेज दिया करूंगा।

यह सुनकर जीमूतवाहन का हृदय धिक्कार उठता है वासुकि को, जो कि दो हजार जिह्वाओं के रहते भी यह न कह सका कि एक नाग की रक्षा के लिए मैं अपने आपको अर्पित कर दूंगा। मित्रावसु यह कहकर कथा पूरी करता है कि गरुड ने वासुकि की प्रार्थना स्वीकार कर ली और तब से गरुड के खाये हुए नागों के अस्थिपंजरों का ढेर निरंतर ऊंचा होता जा रहा है। जीमूतवाहन का मन यह सोचकर व्यथा से भर उठता है कि समस्त अपवित्रताओं के घर, कृतघ्न और नाशवान शरीर के लिए मूर्खजन कैसे-कैसे पाप कर गुजरते हैं! वह सोचता है—यदि मैं अपनी काया देकर एक भी नाग की प्राणरक्षा कर सकूं, तो कितनी बड़ी बात होगी!

तभी सिद्धराज विश्वावसु का प्रतीहार सुनंद आकर मित्रावसु के कान में यह कहता है कि दीप-प्रतिपदा के पर्व पर बेटी और दामाद को क्या-क्या भेंट देनी है, इसका चुनाव करने के लिए महाराज ने आपको फौरन बुलाया है। मित्रावसु जीमूतवाहन से यह कहकर विदा लेता है कि तुम भी शीघ्र वापस आ जाना, यह स्थान भयों से भरा हुआ है।

तभी नेपथ्य से किसी स्त्री का आर्त रुदन सुनाई देता है—'हा बेटा शंखचूड! तेरा मारा जाना मैं कैसे देख सकती हूं!' और एक युवा नाग, हाथों में लाल वस्त्रों का जोड़ा लिये एक राजभृत्य और एक नागवृद्धा वहां आते हैं। जीमूतवाहन वृक्ष की ओट में खड़ा होकर उनकी बातें सुनने लगता है।

वृद्धा रो-रोकर कह रही है—'बेटा, तेरे चांद-जैसे मुखड़े के बिना तो पाताल में अंधकार छा जायेगा। हाय, तेरे इस सुकुमार शरीर को निर्दय गरुड खा डालेगा!' शंखचूड उसे समझाने का यत्न करता है—'मां, अधिक विलाप न करो। सोचो तो—

'क्रोडीकरोति प्रथमं यदा जातमनित्यता।
धात्रीव जननी पश्चात्तदा शोकस्य कः क्रमः॥'

—पैदा होने वाले को माता से भी पहले अनित्यता धाय की तरह गोद में ले लेती है; ऐसे में शोक का क्या काम?

अब तक वे सब नाग वध्यशिला के पास आ पहुंचते हैं। नागराज वासुकि का भृत्य शंखचूड से कहता है—'पुत्रशोक से मोहित यह वृद्धा तो बोलती ही रहेगी। यह क्या जाने राजकार्य! यह लो लाल वस्त्रों का जोड़ा। इसे पहनकर वध्यशिला पर बैठ जाओ, ताकि लाल वस्त्रों की निशानी से तुम्हें पहचानकर, गरुड तुम्हारा भक्षण कर ले।' और गरुड के आगमन की बेला निकट आयी जानकर राजभृत्य लाल वस्त्रों का जोड़ा शंखचड को सौंपकर स्वयं वहां से चला जाता है।

वृद्धा अब भी छाती पीटकर रोये जा रही है। शंखचूड अपने आंसू पोंछकर उसे समझाता है कि रोने से कुछ भी नहीं बनेगा। वृद्धा भी यह जानती है और कहती है—'हां बेटा, जब

नागराज वासुकि ने ही तुम्हारा परित्याग कर दिया है, तब कौन तुम्हारा परित्राण करेगा ?'

जीमूतवाहन, जो कि अब तक सारा मामला समझ चुका है, सहसा वृक्ष की ओट से उनके सामने आकर बोल पड़ता है—'मैं करूंगा।' उसे ही गरुड समझकर वृद्धा शंखचूड को अपने आंचल से ढंककर जीमूतवाहन से कहने लगती है—'हे गरुड, मुझे मार डालो। नागराज ने तुम्हारे आहार के लिए मुझे भेजा है।'

जीमूतवाहन की आंखों में आंसू उमड़ आते हैं। क्षण-भर को उसे ऐसा लगता है कि वृद्धा की यह पुत्रवात्सल्य-भरी विकलता देखकर शायद निष्करुण गरुड की भी करुणा उमड़ पड़े। शंखचूड मां को समझाता है कि यह गरुड नहीं है। कहां तो सर्पों के छिन्न-भिन्न मस्तकों से छूटती रक्तच्छटा से रंगी चोंच वाला गरुड, और कहां यह सौम्य स्वभाव, रूप और आकृति वाला सत्पुरुष!

जीमूतवाहन वृद्धा से कहता है—'मां, यह लाल वस्त्रों का जोड़ा मुझे दे दो, ताकि इसे ओढ़कर मैं अपना शरीर गरुड को सौंप दूं।' वृद्धा कांप उठती है और कानों पर हाथ रखकर कहती है—'नहीं-नहीं! तुम भी शंखचूड जितने ही मेरे पुत्र हो। अथवा तुम शंखचूड से भी बढ़कर हो; क्योंकि तुम अपना शरीर देकर मेरे पुत्र की रक्षा करना चाहते हो।'

शंखचूड भी विस्मयपूर्वक सोच रहा है कि संसार से कितनी न्यारी है इस महाप्राण की मनोवृत्ति! जिन प्राणों के निमित्त ऋषि विश्वामित्र ने चांडाल की तरह कुत्ते का मांस खाया था, ऋषि गौतम ने अपने उपकारी नाडीजंघ को मार डाला था, और यह गरुड ऋषि कश्यप का बेटा होते हुए भी प्रतिदिन नागों का भक्षण करता है, उन्हीं प्राणों को यह करुणावश दूसरों के लिए तिनके की तरह न्योछावर कर देने को तैयार है!

जीमूतवाहन से वह कहता है—'मेरे जैसे क्षुद्र जंतु तो पैदा होते और मरते रहते ही हैं। परोपकार के लिए कटिबद्ध तुम जैसों का जन्म विरला ही होता है। सो मेरी रक्षा का प्रयत्न छोड़ दो। यदि दया ही दिखाना चाहते हो तो यह मेरी बूढ़ी मां मेरे विरह में प्राणत्याग न कर दे, इसका कुछ उपाय करो।' जीमूतवाहन उत्तर देता है कि मां की रक्षा का एकमात्र उपाय यह है कि तुम इसे लेकर अन्यत्र चले जाओ, अन्यथा स्त्रीस्वभाव के कारण यह इस भयंकर श्मशान को देखकर ही शायद प्राण छोड़ दे।

शंखचूड मां को समझाता है कि गरुड के आने का समय अब निकट है, अब यहां से चली जाओ। फिर उसे प्रणाम करते हुए कहता है:

'समुत्पत्स्यामहे मातर्यस्यां यस्यां गतौ वयम्।
तस्यां तस्यां प्रियसुते माता भूयास्त्वमेव नः ॥'

—मैं जिस-जिस भी योनि में जन्म लूं, उसमें हे वात्सल्यमयी! तुम्हीं मेरी मां होना।

फिर जीमूतवाहन से यह कहकर कि निकट ही जो दक्षिणगोकर्ण भगवान हैं, मैं उन्हें

प्रणाम करके अभी लौट आता हूं, लाल कपड़ों की जोड़ी लिये वह अपनी मां के साथ वहां से प्रस्थान करता है।

उनके जाने के साथ ही, सिद्धराज विश्वावसु के महल का वृद्ध कंचुकी वसुभद्र मलयवती की मां की ओर से विवाह के बाद दस दिन तक उपहार के रूप में दामाद को भेजा जाने वाला लाल रेशम का वस्त्रयुगल लाकर जीमूतवाहन को देता है। जीमतवाहन को मनचाही वस्तु मिल जाती है। कंचुकी को विदा करके वह उन लाल वस्त्रों को ओढ़कर वध्यशिला पर जा बैठता है। वध्यशिला का स्पर्श उसे मलयवती के स्पर्श से भी अधिक सुखदायक जान पड़ता है। वह तो यहां तक अनुभव करता है :

'शयितेन मातुरङ्के विश्रब्धं शैशवे न तत् प्राप्तम्।
लब्धं सुखं मयास्या वध्यशिलाया यदुत्सङ्गे।।'

—बचपन में मां की गोद में निश्चिंत सोते हुए भी मैंने यह सुख नहीं पाया था, जो इस वध्यशिला की गोद में मुझे मिल रहा है।

तभी गरुड झपट्टा मारकर उसे उठा ले जाता है। आकाश से पुष्पवृष्टि होती है, देवदुंदुभियां बज उठती हैं। गरुड समझता है कि उसकी उड़ान के वेग से उत्पन्न वायु से कंपित देवतरु पारिजात के फूल झड़ रहे हैं और प्रलयकालीन बादल मारे डर के गरज रहे हैं। हां, उसे इसका आश्चर्य अवश्य होता है कि आज का यह नाग तो खूब भारी है! आज मेरी भूख पूरी तरह शांत होगी। वह जीमूतवाहन को खाने के लिए मलय पर्वत पर उठा ले जाता है।

पंचम अंक

जीमूतवाहन का पिता जीमूतकेतु कुटिया के आंगन में बैठा हुआ है। अलसी की बनी झीनी सफेद धोती और दुपट्टा धारण किये वह समुद्रराज-जैसा प्रतीत हो रहा है और उसके समीप बैठी हुई उसकी वृद्धा पत्नी भगवती गंगा-जैसी और पुत्रवधू मलयवती समुद्र-वेला-सी जान पड़ रही हैं। वृद्ध राजा जीमूतकेतु पत्नी और बहू से कह रहा है :

'भुक्तानि यौवनसुखानि यशोऽवकीर्णं
राज्ये स्थितं स्थिरधिया चरितं तपोऽपि।
श्लाघ्यः सुतः सुसदृशान्वयजा स्नुषेयं
चिन्त्यो मया ननु कृतार्थतयाद्य मृत्युः।।'

—मैंने भरपूर यौवन-सुख भोगे, चारों ओर अपना यश बिखेरा, राज्य किया, स्थिरचित्त होकर तप भी किया, मेरा पुत्र प्रशंसनीय है, अनुरूप कुल में उपजी यह पुत्रवधू है। अब तो मुझे कृतज्ञ-भाव से मृत्यु की चिंता करनी चाहिये।

इस बीच सिद्धराज विश्वावसु का प्रतीहार सुनंद वहां पहुंचता है। वह अपने स्वामी की ओर से यह पता लगाने आया है कि जीमूतवाहन घर लौट आया कि नहीं। (दामाद समुद्र-तट को देखने गया है, जहां गरुड का भय बना रहता है, यह जानकर सिद्धराज विश्वावसु को बहुत चिंता हुई थी।) किंतु यहां सुनंद को पता चलता है कि जीमूतवाहन अभी तक नहीं लौटा। अब तो सभी चिंतित हो उठते हैं। वृद्ध जीमूतकेतु की बायीं आंख फड़ककर किसी अनिष्ट का संकेत दे रही है।

इतने में कोई वस्तु उल्का की तरह आकाश को चीरती हुई आकर जीमूतकेतु के पैरों के पास गिरती है। देखने से पता चलता है कि वह रक्त-मांस एवं केशों से सनी हुई चूडामणि है। जीमूतवाहन की बूढ़ी मां चौंककर कहती है कि यह तो मेरे ही बेटे की चूडामणि प्रतीत होती है। मलयवती व्याकुल होकर उसे टोकती है–'मां, ऐसा न कहो।' सुनंद भी उन्हें आश्वस्त करता है कि यहां तो प्रतिदिन ही गरुड द्वारा खाये जाने वाले नागों के सिरों की मणियां उल्का की तरह गिरा करती हैं। जीमूतवाहन की मां सुनंद को यह कहकर विदा करती है कि जाकर देखो, शायद मेरा बेटा अब तक ससुराल ही जा पहुंचा हो।

इसी समय लाल वस्त्र पहने शंखचूड उधर से आ निकलता है। वह समुद्र-तट पर स्थित गोकर्णमहादेव को प्रणाम करके गरुड का आहार बनने को तेजी से वध्यशिला पर लौट आया था। परंतु जब उसने देखा कि गरुड तो चोंच और नखों से जीमूतवाहन की छाती फाड़कर उसे आकाश में उठा ले जा चुका है, वह विलाप करने लगा–'हा महाप्राण, हा परम करुणालु, हा अकारणबंधु, हा दूसरों के दुःख से दुःखी हो उठने वाले, तुम कहां चले गये?' उसकी आत्मा ग्लानि से भर उठी कि न मैंने किसी सांप को बचाकर कीर्ति पायी, न स्वामी नागराज की आज्ञा का पालन ही किया; बल्कि दूसरे ने अपने प्राण देकर मेरी रक्षा की। हाय, मैं तो सब तरह से ठगा गया!

भूमि पर गिरे रक्तबिंदुओं का अनुसरण करता हुआ वह जीमूतकेतु की कुटिया की ओर से निकलता है। अब भी वह प्रलाप किये जा रहा है–'हा त्रिभुवन के एकमात्र चूडामणि! तुम कहां हो?' यह सुनकर जीमूतकेतु समझ बैठता है कि रक्त-मांस-सनी जो चूडामणि मेरे पैरों के पास आ पड़ी, वह इसी की होगी, जिसे शायद कोई पक्षी मांसपिंड समझकर इसके मस्तक से उठा ले गया होगा। क्षण-भर को उसका मन आश्वस्त-सा होता है कि हमारा

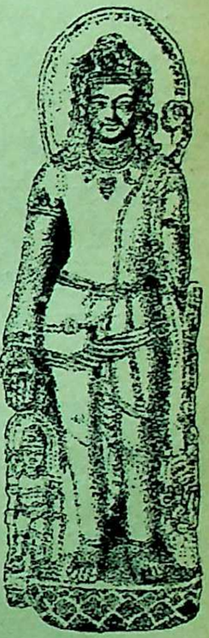

बोधिसत्व

बेटा सकुशल होगा। शंखचूड से वह पूछता है—'क्या तुम्हारी चूडामणि को कोई हर ले गया?' उत्तर मिलता है—'अकेले मेरी ही नहीं, तीनों लोकों का चूडामणि था वह।' फिर वह पू कथा सुनाता है कि किस प्रकार एक दयालु विद्याधर ने अपना शरीर गरुड के भक्षणार्थ अर्पित करके मेरे प्राणों की रक्षा की।

वृद्ध जीमूतकेतु को यह समझते देर नहीं लगती कि वह दयालु विद्याधर उसका पु जीमूतवाहन ही है। उसके मुंह से निकल पड़ता है:

'चूडामणिं चरणयोर्मम पातयता त्वया।
लोकान्तरगतेनापि नोज्झितो विनयक्रमः।।'

—बेटा, तुम परलोक तो चले गये, परंतु मेरे चरणों में अपनी चूडामणि गिराकर तुमने विनय का व्रत कायम रखा।

अब पुत्र-विरह से पीड़ित जीमूतकेतु, उसकी वृद्ध पत्नी तथा पति-वियुक्ता मलयवती तीनों अग्नि-प्रवेश करके अपनी इहलीला समाप्त कर देने का निश्चय कर लेते हैं।

शंखचूड को बहुत पछतावा होता है कि मुझ अकेले के लिए यह पूरा कुल उच्छिन्न हो रहा है। जीमूतकेतु से वह कहता है—'ऐसा न कीजिये। देवगति विचित्र है। संभव है, गरुड यह देखकर कि यह नाग नहीं है, आपके पुत्र को छोड़ ही दे। मेरे साथ चलिये। इस रक्तपंक्ति का अनुसरण करते हुए हम वहीं जा पहुंचेंगे, जहां गरुड आपके पुत्र को लेकर बैठा होगा।' वे सब उसके साथ चलने को तैयार हो जाते हैं। किंतु जीमूतवाहन आहिताग्नि है, उसका दाह-संस्कार केवल यज्ञाग्नि से ही किया जा सकता है; इसलिए वह शंखचूड से कहता है—'तुम चलो, हम तीनों यज्ञाग्नि लेकर पीछे-पीछे आते हैं।'

उधर गरुड यह सोच रहा है—'जन्म से ही मैं नागों का भक्षण कर रहा हूं। परंतु ऐसा आश्चर्य पहले कभी नहीं देखा था। यह महानुभाव दुःखी होना तो दूर, उलटे प्रसन्न दिखाई दे रहा है! इसका रक्त पिया जा रहा है, तो भी इसका मन मुरझाया नहीं है! शरीर से मांस के नोचे जाने की वेदना के बीच भी इसका मुखड़ा प्रफुल्लित है! शरीर के जो अवयव कट-चिर नहीं गये हैं, उनमें रोमांच

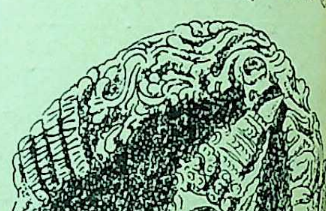

गरुड (अनुकृति : ओके)

दिखाई दे रहा है ! मुझ अपकारी को भी यह ऐसी दृष्टि से देख रहा है कि जैसे मैं इसका उपकारी होऊं।' वह मांस नोचना बंद कर देता है। इस पर जीमूतवाहन उससे निवेदन करता है :

'शिरोमुखैः स्यन्दत एव रक्तम् अद्यापि देहे मम मांसमस्ति।
तृप्तिं न पश्यामि तवापि तावत् किं भक्षणात् त्वं विरतो गरुत्मन् ।।'

–हे गरुड, मेरी शिराओं से अब भी रक्त झर ही रहा है। मेरे शरीर में अभी मांस शेष है। अभी तो तुम तृप्त भी नहीं हुए हो। फिर तुमने मुझे खाना बंद क्यों कर दिया?

गरुड चकित होकर उत्तर देता है :

'आवर्जितं मया चञ्च्वा हृदयात्तवशोणितम् ।
अनेन धैर्येण पुनस्त्वया हृदयमेव नः ।।'

–मैंने अपनी चोंच से तुम्हारे हृदय से रक्त का हरण किया है; परंतु तुमने तो अपने धीरज से मानो मेरा हृदय ही हर लिया है।

गरुड जीमूतवाहन से उसका नाम-धाम पूछता है। किंतु जीमूतवाहन यह कहकर उसे टाल देता है कि अभी तुम भूखे हो, पहले मेरे रक्त-मांस से तृप्त हो जाओ।

तभी शंखचूड वहां आ पहुंचता है और कह उठता है–'हे गरुड, यह कोई नाग नहीं है। छोड़ दो इसे। मुझे खाओ। वासुकि ने तुम्हारे आहार के लिए मुझे भेजा था।' और अपना सीना गरुड के आगे कर देता है।

गरुड दुविधा में पड़ जाता है कि इन दोनों में से नाग कौन है? दोनों ही वध्यचिह्न (लाल कपड़े) धारण किये हुए हैं। किंतु जब शंखचूड अपनी केंचुली और दो जीभें दिखाता है, तब उसे विश्वास करना ही पड़ता है कि यही नाग है। वह पूछता है कि फिर यह कौन है? शंखचूड बताता है कि यह विद्याधर-वंश का तिलक जीमूतवाहन है।

गरुड स्तंभित रह जाता है और सोचता है कि मैं तो भयंकर कुकर्म कर बैठा! निश्चय ही एक बोधिसत्त्व को मैंने मार डाला! अग्नि-प्रवेश के सिवा इसका कोई प्रायश्चित्त मुझे दिखाई नहीं देता। अब अग्नि कहां से पाऊं? अरे, कुछ लोग अग्नि लिये इसी ओर चले आ रहे हैं!

जीमूतवाहन के माता-पिता और पत्नी अग्नि लेकर आ रहे हैं। जीमूतवाहन उनसे अपनी अवस्था को छिपाने के लिए शरीर को उत्तरीय से ढंकवाकर शंखचूड का सहारा लेकर बैठ जाता है। जीमूतकेतु विलाप करता हुआ अपने पुत्र की ओर आ रहा है–'यह सच है कि दया में अपने-पराये का भेद नहीं होता; परंतु गरुड से नाग को बचाने के लिए प्राण-त्याग करते हुए तुमने स्वयं अपने को, अपने माता-पिता को और बहू को इस प्रकार संपूर्ण कुल को ही नष्ट कर दिया।'

गरुड जीमूतवाहन से कह रहा है कि प्राणत्याग के लिए मुझे अग्नि की भी क्या आवश्यकता ! मैं समद्र में ही कूदकर आत्मघात क्यों न कर लूं ? जीमूतवाहन उसे समझाता है कि पक्षिराज, तुम्हारे पाप का प्रतीकार यह नहीं है। इतने में उसके माता-पिता व पत्नी उसके समीप आ पहुंचते हैं। जीमूतवाहन माता-पिता को प्रणाम करने के लिए उठता है किंतु बेहोश होकर गिर पड़ता है। गरुड अपने पंखों से हवा झलकर उसकी मूर्च्छा दूर करता है। जीमूतवाहन उसे उपदेश देता है :

'नित्यं प्राणाभिघातात्प्रतिविरम कुरु प्राक्कृतस्यानुतापं
यत्नात् पुण्यप्रवाहं समुपचिनु दिशन् सर्वसत्वेष्वभीतिम्।
मग्नं येनात्र नैनः फलति परिणतं प्राणिहिंसासमुत्थं
येनैतद्वारिपूरे लवणकणमिव क्षिप्तमन्तर्ह्रदस्य।।'

–प्राणिवध से पूर्णतः विरत हो जाओ, पिछले किये का पछतावा करो, सब जंतुओं को अभयदान देकर पुण्य संग्रह करो। इससे तुम्हारा पाप अथाह जल वाले सरोवर में गिरे नमक के कण की तरह घुलकर निष्फल हो जायेगा।

गरुड उसके उपदेश को शिरोधार्य करके कहता है–'अज्ञान की नींद में सोये हुए मुझको आपने जगा दिया। आज से मैं प्राणिवध से विरत होता हूं। आज से सब नाग निश्चिंत होकर समुद्र में विहार किया करें और इस चंदन-कानन में आपकी कीर्ति गाया करें।'

इससे जीमूतवाहन को बड़ी तृप्ति मिलती है। वह शंखचूड से भी कहता है कि तुम भी अब अपने घर जाओ, तुम्हारी मां शोक मना रही होगी। परंतु शंखचूड वहां से टलता नहीं।

अब तक तो परहित साधने के उत्साह में जीमूतवाहन का ध्यान शारीरिक वेदना की ओर नहीं गया था; परंतु अब वह प्राणांतक पीड़ा से छटपटाने लगता है। उसे प्रतीत होता है कि उसकी अंतिम घड़ी आ पहुंची है। उसे पूरी तरह सुनाई नहीं देता, आंखें भी बरबस झपकने लगती हैं और वह लुढ़क जाता है।

पिता जीमूतकेतु पुत्र के लिए विलाप करते हुए कहता है :

'निराधारं धैर्यं कमिव शरणं यातु विनयः
क्षमः क्षान्ति वोढुं क इह विरता दानपरता।
हतं सत्यं सत्यं व्रजतु च कृपा क्वाद्य कृपणा
जगज्जातं शून्यं त्वयि तनय लोकान्तरगते।।'

–हे पुत्र ! आज धैर्य निराधार हो गया है। विनय अब किसकी शरण जाये? क्षमा को वहन करने में समर्थ अब कौन रह गया है ? दानपरता भी निवृत्त हो गयी है। सत्य सचमुच ही मारा गया है। अब बेचारी करुणा कहां जाये ? पुत्र ! तुम्हारे परलोक चले जाने से संसार सूना हो गया है।

गरुड का हृदय छटपटा रहा है कि अब क्या करूं? जीमूतवाहन की मां आंसू-भरी आंखों से ऊपर देखती हुई प्रार्थना करती है–'हे लोकपालो! तुम किसी भी तरह अमृत से सींचकर मेरे पुत्र को जिला दो।' इससे गरुड को राह सूझती है। वह यह संकल्प करके स्वर्ग की ओर उड़ जाता है कि मैं इंद्र से प्रार्थना करके अमृत-वृष्टि कराकर जीमूतवाहन को ही नहीं, अब तक खाये हुए सब नागों को भी जिला दूंगा। यदि इंद्र अमृत न दे, तो मैं उसे तथा देवताओं को युद्ध में जीतकर अमृत की वर्षा करूंगा।

जीमूतकेतु शंखचूड के हाथों एक विशाल चिता रचवाता है और पत्नी एवं पुत्रवधू के साथ उस पर चढ़ने लगता है। उस समय पुत्रवधू मलयवती हाथ जोड़कर आकाश की ओर मुंह करके कहती है–'हे भगवती गौरी, आपने तो आज्ञा दी थी कि विद्याधरों का चक्रवर्ती तुम्हारा पति होगा। किंतु मुझ अभागिन के कारण आप असत्यवादिनी हो गयीं।'

तब भगवती गौरी स्वयं प्रकट होती हैं। वे महाराज जीमूतकेतु को चिता-प्रवेश से रोकती हैं और मलयवती से कहती हैं कि भला मैं कैसे असत्यवादिनी हो सकती हूं! फिर वे जीमूतवाहन के पास जाकर अपने कमंडलु का पवित्र जल उस पर छिड़कते हुए कहती हैं–'अपने प्राण भी देकर जगत का उपकार करने वाले हे वत्स, मैं तुम पर प्रसन्न हूं। जीवित हो जाओ।'

जीमूतवाहन जी उठता है और भगवती के चरणों में प्रणाम करता है। तभी आकाश से बिना बादलों के ही वृष्टि होने लगती है। भगवती गौरी जीमूतवाहन को बताती हैं कि पश्चात्ताप से भरे गरुड ने तुम्हें तथा अब तक खाये समस्त नागों को जिलाने के लिए स्वर्ग से यह अमृतवृष्टि की है।

देवी के प्रसाद से जीमूतवाहन सोने के रथचक्र, श्वेत हाथी, श्याम अश्व और रानी मलयवती आदि रत्नों से युक्त होकर चक्रवर्ती सम्राट् बन जाता है। समस्त मृत नाग भी जी उठते हैं और दुष्ट मतंग आदि भी भक्तिपूर्वक झुककर जीमूतवाहन को प्रणाम करते हैं।

भगवती गौरी के विशेष अनुरोध पर जीमूतवाहन उनसे यह वर मांगता है:

'वृष्टिं हृष्टशिखण्डिताण्डवकृते मुञ्चतु काले घनाः
कुर्वन्तु प्रतिरूढसंततिहरित्सस्योत्तरीयां दिशम्।
चिन्वानाः सुकृतानि वीतविपदो निर्मत्सरैर्मानसै-
र्मोदन्तां सततं च बान्धवसुहृद्गोष्ठीप्रमोदाः प्रजाः॥'

–प्रहृष्ट मयूरों को नचाने के लिए समय पर बादल जल बरसायें और पृथ्वी को समृद्ध हरी फस्ल रूपी उत्तरीय ओढ़ा दें। पुण्यों का चयन करते हुए, विपदारहित प्रजाजन बंधु-मित्रों के साथ गोष्ठियों का आनंद उठाते हुए प्रमुदित रहें। **[समाप्त]**

धार्मिक अंधकार से

'परमपावन पोप महोदय, ब्राजील सरकार द्वारा अराजनैतिक बंदियों पर ढाये जा रहे जुल्मों के बारे में आपके मौन के लिए मैं आपकी भर्त्सना करता हूं। आपके अंतःकरण पर आपका यह मौन हमेशा भार बना रहेगा। यह भार ठीक वैसा होगा, जैसा कि पोप पायस (त्रयोदश) के अंतःकरण का भार था, जिन्होंने हिटलर के अत्याचारों पर "बुद्धिमत्तापूर्वक" मौन साध लिया था।'

कैथलिक संप्रदाय के सर्वोच्च गुरु पोप पाल षष्ठ के प्रति इन कठोर शब्दों का प्रयोग किसी नास्तिक ने नहीं, अपितु उनके ही एक अनुयायी, पादरी इवान इलिच ने मेक्सिको से उनके नाम लिखे एक पत्र में किया था। इलिच का मत है कि धर्म को प्रत्येक प्रकार के अन्याय का खंडन करना चाहिये, परंतु किसी आंदोलन या संघर्ष में भाग नहीं लेना चाहिये। धर्म और धर्मगुरुओं का यह कर्तव्य है कि वे धार्मिक कार्यों द्वारा मनुष्यों के हृदयों में न्यायपूर्ण सामाजिक कार्यों के प्रति ललक जागृत करें।

इवान इलिच का जन्म १९२६ में वियेना में हुआ था। उनके पिता, जो मूलतः स्पेनिश नस्ल के थे और जर्मनी के कोशिया क्षेत्र में बस गये थे, एक संपन्न इंजीनियर और जमींदार थे। मां यहूदी थीं। इलिच की प्रारंभिक शिक्षा वियेना में हुई। मां के यहूदी होने के कारण उनका परिवार हिटलरी तानाशाही के दौर में इटली में जा बसा।

प्रारंभ में इलिच विज्ञान के विद्यार्थी थे। फ्लारेंस विश्वविद्यालय में उन्होंने स्फटिक-विज्ञान में शोधकार्य किया तथा स्फटिकीय रचना के आधार पर रक्तवर्ग ज्ञात करने की नयी विधि खोजी। इसके बाद वे दर्शनशास्त्र की ओर मुड़े तथा चौबीस वर्ष की आयु में उन्होंने साल्सबर्ग विश्वविद्यालय में 'आर्नाल्ड टायन्बी का इतिहास-दर्शन' विषय पर शोधग्रंथ लिखा और डाक्टरेट प्राप्त की। यहां से वे धर्म की ओर मुड़े तथा उन्होंने रोम में कैथलिक संप्रदाय के ग्रिगोरियन विश्वविद्यालय से दर्शन और धर्मशास्त्र में कई उपाधियां प्राप्त कीं। रोम में ही उन्होंने पादरीपन की दीक्षा ली और वहां से उन्हें पादरी के रूप में पोर्टोरिको भेजा गया। कुछ ही समय बाद उन्हें पोर्टोरिको कैथलिक विश्वविद्यालय का उपकुलपति बना दिया गया।

इलिच एक असाधारण पादरी सिद्ध हुए। जब उन्होंने देखा कि दक्षिण अमरीकी देशों में अमरीकी मिशनरी वस्तुतः अमरीकी सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के एजेंट के रूप में काम करते हैं, तो उनका मन विद्रोह से भर उठा। उन्होंने महसूस किया कि अमरीकी मिशनरी न तो दक्षिण अमरीकी देशों

मुक्ति का संदेश

*** नेमिशरण मित्तल ***

की जनता के बारे में कुछ जानते हैं, न उन्हें उसकी संस्कृति में ही दिलचस्पी है; वे तो अमरीकी पूंजीवाद के हितों के संरक्षक और सौदागर के रूप में कार्य कर रहे हैं।

इस स्थिति का इलिच ने खुलकर विरोध किया और १९६१ में दक्षिण अमरीकी देशों में ही कहीं बसने के इरादे से निकल पड़े। चार महीनों तक वे सांतियागो (चिली) से कराकास (वेनिजुएला) तक पैदल घूमे और अंततः मेक्सिको में कुएर्नावाका की सुरम्य उपत्यका में पहुंचे। वहां उन्होंने बिना पूर्वसूचना के बिशप सर्जियो मेंदेज आर्कियो के दरवाजे पर जाकर घंटी बजा दी। बिशप की बैठक में सोफे पर बैठते ही वे बोल उठे–'आपके तत्त्वावधान में मैं एक वि-यांकीकरण (वि-अमरीकीकरण) केंद्र स्थापित करना चाहता हूं।'

बिशप आर्कियो ने एक ही नजर में इलिच की प्रतिभा को पहचान लिया और दोनों के बीच लगातार नौ घंटे चर्चा चलती रही। परिणाम यह निकला कि इलिच कुएर्नावाका में बस गये। उन्होंने महसूस किया–'बिशप आर्कियो ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके साथ मैं सहजतापूर्वक विचार-विनिमय कर सकता हूं। मैं शुरू से ही समझ गया था कि हम दोनों एक दूसरे से मिलकर प्रसन्न ही नहीं, चमत्कृत भी होंगे।' बिशप को भी लगा कि इलिच असाधारण व्यक्ति हैं। उनके विचार बहुत सहज हैं तथा मुझे विश्वास हो गया है कि वे निरंतर नवीन चिंतन में जियेंगे।'

कुएर्नावाका में इलिच ने अंतर-सांस्कृतिक प्रशिक्षण के लिए सन १९६१ में एक विशाल केंद्र की स्थापना की, जो प्लेटो की 'अकादमी' की तरह सुसंस्कृत, उन्मुक्त और नितांत व्यवस्थित है। इसमें विविध भाषाएं सिखायी जाती हैं। (वे स्वयं ग्यारह भाषाओं

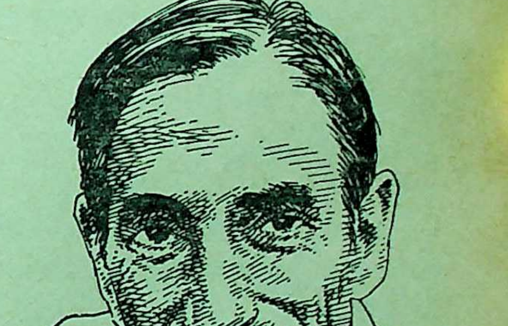

इवान इलिच [पोर्ट्रेट : ओके]

Tempo

THREE WHEELER PICK-UP TRUCK

an ideal, economical, light commercial vehicle for small scale industries

Small scale industries and independent enterpreneurs will find this vehicle best suited to their light transport needs with minimum investment. Powered by economical 2-stroke 2-cylinder Engine, with a nett payload of approximately $\frac{3}{4}$ tonne, this is the right vehicle for short intra-city hauls, small loads, door deliveries and occasionally for small groups of workers.

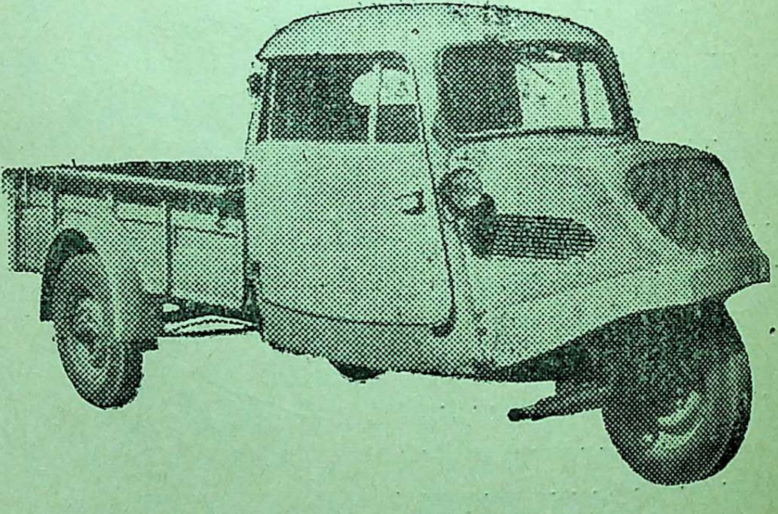

Manufacturers : Bajaj-Tempo LTD. Akurdi, Poona - 35

के पंडित हैं।) उसके अलावा यह संस्था परिसंवाद-केंद्र, महाविद्यालय, शोध-ग्रंथालय व प्रकाशन-गृह भी है। यह एक प्रकार का प्रति-विद्यालय है, जहां उग्रतम चर्चाएं होती हैं। इन चर्चाओं में दुनिया के कोने-कोने से आये लोग भाग लेते हैं। यहां अब तक १,००० से भी अधिक पादरियों और कई हजार अन्य जनों ने दक्षिण अमरीकी देशों की भाषाओं और संस्कृतियों का अध्ययन किया है और चर्चाएं सुनी हैं। इन चर्चाओं में व्यवस्था के समर्थक और विरोधी दोनों भाग लेते हैं। इलिच का कहना है :

'हम केंद्र को एक मुक्त द्वीप, एक नखलिस्तान बनाये रखना चाहते हैं, जहां ज्ञान और अनुभव का उन्मुक्त आदान-प्रदान होता रहे। हम केवल चंद नियमों का पालन करते हैं–१. आप विना व्यवधान के दस मिनिट तक बात कर सकते हैं; २. न तो उपदेश देने की कोशिश कीजिये, न मस्तिष्क की धुलाई (ब्रेनवाशिंग) करने की; ३. प्रत्यक्ष राजनैतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक आंदोलनों का संघटन मत कीजिये–धार्मिक आंदोलन का भी नहीं। केंद्र गहनतम अर्थों में एक चिंतन-स्थल है, षड्यंत्र-स्थल नहीं। ......यहां हम हिंसा की परवाह किये बिना मुस्कराते हैं। यह एक ऐसा स्थान है, जहां हिंसक लोग भी आ सकते हैं और पारस्परिक सद्भाव सीख सकते हैं। सच्चे क्रांतिकारी अपने ही विधानों और संस्थानों को उपहास और व्यंग्य की दृष्टि से देखते हैं। कठमुल्लापन इसका उलटा होता है।'

सहज ही प्रश्न उठता है कि ऐसे अपरंपरावादी और उन्मुक्त मानस का मनुष्य किस प्रकार कैथलिक संप्रदाय के संकीर्ण दायरे में पादरी बना रह सका है? कहां रह सका! जून १९६८ में इलिच को रोम में हाजिर होने का आदेश मिला। वहां उन पर धार्मिक अदालत में मुकद्दमा चलाने की कोशिश की गयी। इलिच ने इसका सामना किया और गोपनीयता की शपथ लेने से इन्कार कर दिया। उन्हें एक लिखित प्रश्नावली दी गयी, जिसमें ऐसे ८५ प्रश्न थे :

'राष्ट्रीयता, अंतरराष्ट्रीयता, मार्क्सवाद तथा धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक विश्व-व्यवस्था में कैथलिक चिंतन के बारे में तुम्हारे क्या विचार हैं?

'उन सब आधुनिकतावादी, क्रांतिकारी गेरिल्ला दक्षिण अमरीकी पादरियों के बारे में तुम्हारे क्या विचार हैं, जो कहते हैं कि कोई कैथलिक यदि क्रांतिकारी नहीं है तथा क्रांतिकारियों का पक्ष नहीं लेता है, तो वह घोर पापी है?

'क्या यह सच है कि अंतरसंस्कृति अभिलेख केंद्र के विभिन्न प्रकाशनों में साम्यवादी प्रचार तथा धर्म की टीका करने वाले, और उनमें भी सामान्यतः प्रोटेस्टेंट मत के समर्थक एवं विशेषतः कैथलिक चिंतन के विरोधी लेख तत्परतापूर्वक छापे जाते हैं?'

इलिच ने प्रश्नों के उत्तर नहीं दिये। उन्होंने कहा–'यह प्रश्नावली चर्च-संघटन की परंपरागत नियमावली के सिद्धांतों की दृष्टि से असंगत है। साथ ही, पावन मातृ-

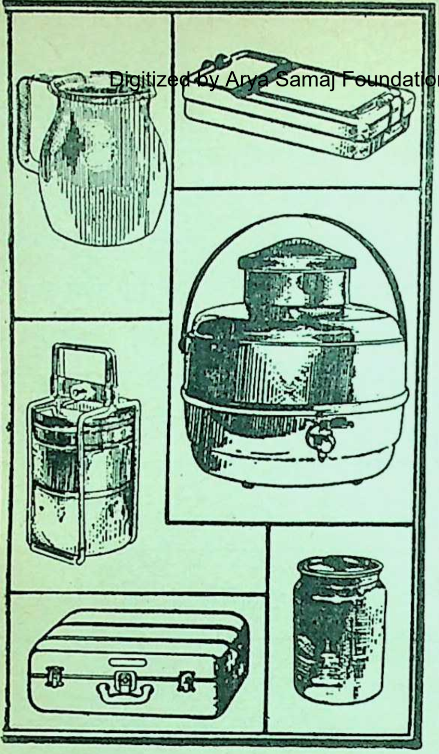

क्राउन ब्रान्ड

एल्युमिनियम के बर्तन

समझदार व्यक्ति

अपने रसोईघर की शोभा बढ़ाने वाले क्राउन ब्रान्ड एल्युमिनियम के बर्तन और ॲनोडाईज्ड चीजें पसंद करेगा।

जीवनलाल (१९२९) लि.

लिबर्टी बिल्डिंग मरीन लाईन्स,
बंबई-४०००२० टे.२९११५
शोरूम : कंसारा चाळ,
कालबादेवी.
बंबई-४००००२ टे.३३४८५

● कलकत्ता ● मद्रास ● हैदराबाद
● दिल्ली ● मदुराई ● कोचीन

होटलों में अति तीखा खाने से मुंह में जलन आना, चर्मरोग, फुंसियों, खाज, माता, खांसी तथा मूलव्याधि रक्तपात आदि से पीड़ित हों

तब चरक का

गुलकन्द

प्रवाल, पिष्टी, रुपा, बंशलोचन युक्त उपयोग करें, आंतरिक तथा मानसिक स्वस्थता के लिये तमाम औषधिविक्रेताओं से प्राप्त।

चरक फार्मास्युटिकल्स (इंडिया) प्रा. लि.
बम्बई-११

स्वरूप चर्च तथा उसके बच्चों के बीच–भले ही वे बच्चे अपराधी हों–मानवीय और आध्यात्मिक संबंध की दृष्टि से यह व्यवहार अनुचित है।' उनका कहना था–'मैं वाम-पक्ष का नायक नहीं बनना चाहता। किसी भी राजनैतिक प्रयोजन के लिए प्रभु के नाम का दुरुपयोग नहीं करना चाहिये।'

इलिच ने प्रश्नों के उत्तर तो नहीं दिये, लेकिन यह निश्चय कर लिया कि इस तरह पोप का विश्वास खो देने के बाद पादरी बने रहना उचित नहीं है। अतः उन्होंने पादरी-पद का परित्याग कर दिया। उनका कहना था–'मैं नहीं चाहता कि लोग मुझे एक शरारती पादरी के रूप में जानें। मैं चाहता हूं कि चर्च मेरे कार्यों की जिम्मेवारी से मुक्त रहे। चर्च संस्कृति का संरक्षक और परंपरा का वाहक रहा है, उसने पादरियों पर कठोर और व्यर्थ के प्रतिबंध लगाकर स्वयं अपनी जड़ों से संपर्क और अपनी सजीवता को नष्ट कर लिया है।'

अपने त्यागपत्र में उन्होंने पोप के लिए परंपरागत आदरसूचक संबोधनों का ही प्रयोग किया और अपने को उनका सेवक कहा। उन्होंने पोप से प्रार्थना की–'मुझे प्रभु के समक्ष प्रार्थना करने और ब्रह्मचर्य-व्रत पालने की अनुमति दी जाये।' आज भी इलिच प्रतिदिन सवेरे गिरजे में प्रार्थना करते हैं, माला फेरते हैं, ब्रह्मचारी हैं।

त्याग और तपस्या के प्राचीन आदर्शों में इलिच की आस्था है। उनके जीवन में जब-जब संकट और निर्णय की घड़ियां आयीं, उन्होंने उपवास, एकांत एवं तीर्थयात्रा के कठोर अनुशासन का सहारा लिया है। अठारह वर्ष की अवस्था में जब उन्होंने पादरी बनने का संकल्प किया, एक जेसुइट पादरी के संरक्षण में तीस दिन तक एकांत में प्रार्थना की थी। १९५८ में उन्होंने सहारा के एक आश्रम में चालीस दिन प्रार्थना और ध्यान में बिताये। सांतियागो से कराकास तक की चार महीने की पैदल यात्रा एक प्रकार की तीर्थयात्रा ही थी, जो उनके जीवन का परिवर्तन-बिंदु सिद्ध हुई। वे सदाचार और नियम-पालन पर विशेष बल देते हैं तथा कुएर्नावाका-केंद्र का संचालन इसी आधार पर करते हैं।

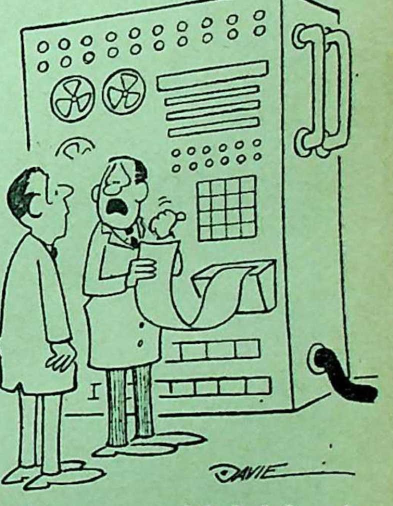

'कंप्यूटर कह रहा है कि मेरी बिजली-सप्लाई में फौरन १० प्रतिशत की वृद्धि करो; वरना वेतनों की शीट में घोटाला कर दूंगा।'

रूप सौन्दर्य का आधार

लेटेस्ट फ़ार्म ब्रा.

Latest form BRA.

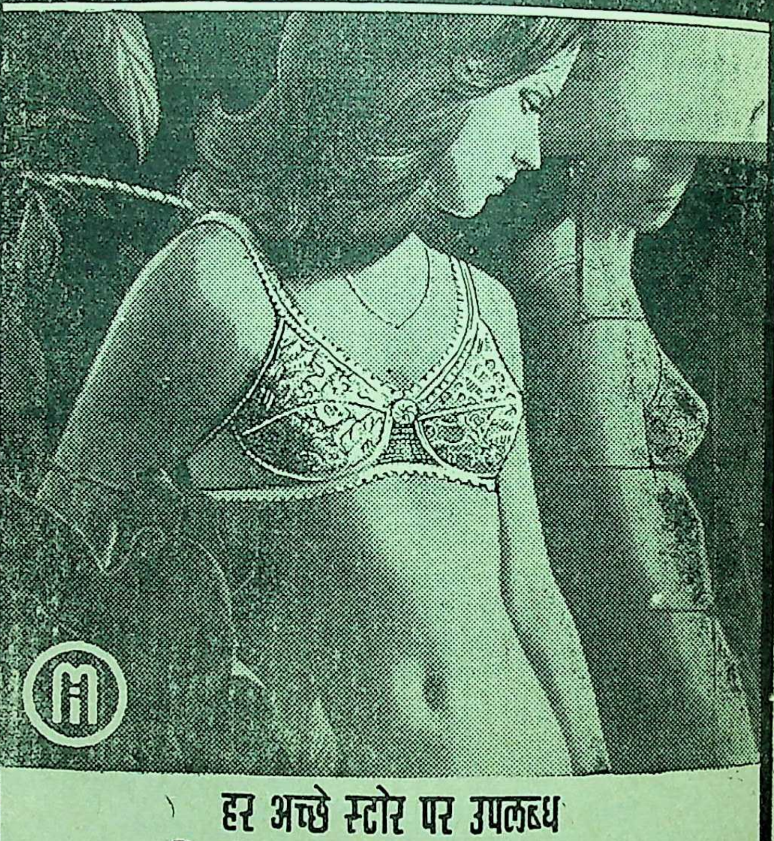

हर अच्छे स्टोर पर उपलब्ध

मिथिला इन्डस्ट्रीज

३०२ प्रकाश गली तेलीवाड़ा दिल्ली-६ फोन-५१९०३१

NEWAGE

यद्यपि इलिच आधुनिक मनुष्य को भ्रांत करने वाले विवादास्पद प्रश्नों के प्रतीक बन गये हैं, परंतु स्वयं उनसे परे हैं। वे एक ओर कठोर अनुशास्ता हैं, दूसरी ओर नितांत विनम्र। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है और दृष्टि तलभेदी। वे आधुनिक औद्योगिक समाज का गहराई से विश्लेषण करते हैं तथा औद्योगिकोत्तर स्वस्थ समाज अथवा सम्यक् समाज का विचार प्रस्तुत करते हैं। चर्च के अधिकारियों की स्वेच्छाचारिता के ही नहीं, प्रत्येक प्रकार की कृत्रिम सत्ता और संरचना के विरोधी हैं। मनुष्य को मनुष्य से पृथक् करने वाली प्रमाणपत्र-विभूषित शिक्षा तथा वर्ग एवं सुविधा पर आधारित भेदभाव जैसी बाधाओं पर वे कठोर प्रहार करते हैं। मनुष्य को उसकी गरिमा से और आनंद के परंपरागत स्रोतों से दूर हटाने वाले समस्त आदर्शों और ढांचों के वे विरोधी हैं। वे औद्योगिक सभ्यता के नीचे दबे हुए मनुष्य को उबारना और यंत्रों की दासता से मुक्त करना चाहते हैं।

वर्गभेदकारी शिक्षा-प्रणाली

इलिच ने सबसे पहला प्रहार किया है वर्तमान शिक्षा-प्रणाली पर। उनका कहना है कि सामंती युग ने समाज को दो वर्गों में बांट दिया था–अभिजात-वर्ग और सामान्य वर्ग; अर्थात् विशेष और शेष। आधुनिक शिक्षा-प्रणाली ने इस वर्गभेद को मिटाने के बजाय दृढ़तर बना दिया है। अंतर यही है कि अभिजात-वर्ग का स्वरूप अब सीमित, सामंती और वंशगत न रहकर तथाकथित 'योग्यतामूलक' हो गया है। अब उसमें उन चंद लोगों का ही प्रवेश हो सकता है, जो वर्तमान शिक्षा-प्रणाली की भूल-भुलैया में से सफलतापूर्वक बाहर निकल आयें। पुराने सामंती समाज की वर्ग-व्यवस्था ने अब नया रूप ले लिया है–एक ओर है बहुसंख्यक वर्ग, दूसरी ओर है शिक्षित अल्पसंख्यक वर्ग। नवोदित राष्ट्रों में शहरी और देहाती जन-साधारण और शिक्षित अभिजात-वर्ग के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। यह दूरी सामंती युग की दूरी की तरह अस्थायी नहीं है; शिक्षा के प्रसार के साथ यह कम होने के बजाय बढ़तीही जायेगी। शिक्षा के प्रसार से बहुसंख्यक वर्ग की कुंठा बढ़ रही है।

आधुनिक पाश्चात्य समाज की चेतना में यह विश्वास रूढ़ हो गया है कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से सामाजिक एकीकरण होगा। इलिच दिखाते हैं कि यथार्थ इसके सर्वथा विपरीत है। इस शिक्षा-प्रणाली ने सामाजिक एकता को भंग कर दिया है और शिक्षा प्रबंधकारी (मैनेजियरयल) मध्यम-वर्ग में प्रवेश की एक अनिवार्य शर्त बन गयी है। पाश्चात्य देशों में यह धारणा बनी थी कि विद्यालय में पांव रखे बिना समाज में प्रवेश असंभव है; किंतु व्यवहार में हुआ यह कि सामाजिक खाइयां और चौड़ी हो गयीं तथा विशाल बहुसंख्या के लिए विद्यालय में प्रवेश का अर्थ हो गया–अभिजात-वर्ग में प्रवेश न कर पाने की कुंठा।

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली ने आत्मप्रतिष्ठा के लिए अपने समस्त ग्राहकों यानी छात्र-

खुशियों से
जगमगाती दीपावलि
के लिए
मंगल कामनाएँ

एयर-इंडिया

छात्राओं के लिए 'पदवीदान समारोहों' की व्यवस्था की है। जो ग्राहक शिक्षा-प्रणाली के प्रबंधकों की दृष्टि में सफल हो जाते हैं, उन्हें 'उत्तीर्ण' का तमगा दे दिया जाता है। इसका प्रयोजन महज यह बताना नहीं है कि 'उत्तीर्ण' व्यक्ति 'योग्य' है, वरन यह भी कि अनुत्तीर्ण व्यक्ति अयोग्य है और अवांछनीय भी, उसे 'प्रबंधक वर्ग' में यानी सुविधाभोगी वर्ग में प्रवेश नहीं मिलेगा।

इस तरह शिक्षा किसी सम्यक् समाज की नींव डालने के बजाय सामाजिक और आर्थिक भेदभाव का नया आधार बन गयी है। उसने इस अन्यायपूर्ण धारणा को जन्म दिया है कि जिन लोगों ने उसके अनुशासन के अंतर्गत 'उत्तीर्ण' का तमगा प्राप्त नहीं किया, वे 'द्वितीय श्रेणी' के नागरिक हैं, जो मत तो देंगे लेकिन निर्णय करने वाले सदनों के सदस्य और सुविधाओं में भागीदार नहीं होंगे। यहीं से अशिक्षित-अल्पशिक्षित बहुसंख्यक समाज में कुंठा जन्म लेती है।

'सबके लिए शिक्षा के अधिकार' की आड़ में तथाकथित उदारतावादी अभिजात-वर्ग का उदय हुआ है। यह अभिजात-वर्ग पश्चिमी देशों में ही नहीं, अपितु जापान और भारत में, दक्षिण-पूर्व एशिया, अफ्रीका एवं दक्षिण अमरीका के पिछड़े देशों में तथा रूस व युगोस्लाविया सरीखे साम्यवादी देशों में भी पनप रहा है। समूचे शासन, प्रशासन, सेवाओं तथा सामाजिक नियंत्रण व संचालन के तंत्र पर उसका एकछत्र आधिपत्य है।

इलिच का सुनिश्चित मत है कि यह शिक्षा-प्रणाली व्यक्ति की श्रेणी को निर्धारित करती है, अतः सहज ही वह उसे श्रेणीच्युत भी करती है। श्रेणीच्युत व्यक्ति में आत्महीनता का बोध स्वाभाविक है, वह इस व्यवस्था को न्यायसंगत मान लेता है। इस शिक्षा-प्रणाली ने 'योग्यता' के आधार पर सुविधा के नये भेदभावकारी सिद्धांत का प्रतिपादन किया है तथा रूस जैसे तथाकथित वर्ग-विहीन समाज में भी यह सिद्धांत यथार्थ रूप में प्रतिष्ठित है। सबसे बड़ा विद्रूप तो यह है कि यह शिक्षा-प्रणाली सुविधाओं के असमान वितरण को समानता के अधिकार की आड़ में प्रतिष्ठा प्रदान करती है। यह एक ऐसी समानता है, जिसमें चंद 'योग्य' व्यक्ति ही सुविधाओं के अधिकतम अंश के अधिकारी माने जाते हैं। इसने समाज को दो समाजों में विभाजित कर दिया है, जिनमें से बहुसंख्यक समाज अल्पसंख्यक समाज का साम्राज्यवादी उपनिवेश बनता जा रहा है। इलिच को इसमें हिंसा के बीज दिखाई देते हैं।

औद्योगिक समाज : बुनियादी विडंबना

वर्तमान औद्योगिक समाज के दोषों से इलिच घनिष्ठ रूप से परिचित हैं। वे इसे विज्ञान की नहीं, वरन विज्ञान के शोषण या व्यावसायिक उपयोग की उपज मानते हैं। इस स्थिति के लिए वे विशेषज्ञ, शिक्षित अथवा प्रशिक्षित अभिजात-वर्ग को जिम्मेवार मानते हैं। विज्ञान की खोज मानव-जीवन तथा समाज की समस्याओं के सुलझाव के लिए हुई थी तथा उसकी बदौलत नयी कार्यक्षमता का उदय हुआ था। किंतु

जगशिप्स

आपकी सेवा में सदा तत्पर तुरंत और दक्षतापूर्ण ढुलाई
के लिए अपना सामान

दि ग्रेट ईस्टर्न शिपिंग कंपनी लिमिटेड

को सुपुर्द कीजिये

सुदक्ष नौभार सेवाएं

भारत / जापान / भारत

सं. रा. अमरीका का पश्चिमी तट–कनाडा–भारत-श्रीलंका

भारतीय तट

अंतरराष्ट्रीय मालढुलाई व्यापार

रजिस्टर्ड कार्यालय :

मर्कन्टाइल बैंक बिल्डिंग
६०, महात्मा गांधी रोड, बंबई-२३.
टेलिफोन : २५८९६१ (आठ लाइनें)
टेलेक्स : २७१९
२८२४
२२१७

शाखा कार्यालय :

५ क्लाइव रोड,
कलकत्ता-१
टेलिफोन : २२०५६
(सात लाइनें)
टेलेक्स : TLX 733

कालांतर में इस कार्यक्षमता का दुरुपयोग शुरू हुआ तथा एक ऐसी सेवा के नाम पर समूचे समाज का शोषण होने लग गया, जिसका निर्धारण समाज का एक स्वयंभू अभिजात-वर्ग करने लगा। यह अभिजात-वर्ग स्वयं ही अपने को विशेषज्ञ की पदवी से विभूषित करता है तथा उस सेवा के मान-दंडों और उसकी कीमतों का मनमाने ढंग से निर्धारण और पुनर्निधारण करता रहता है।

उदाहरणार्थ, आरंभ में ऐसा लगता था कि साधारणतम व्यक्ति भी रेलगाड़ी, कार और विमान में ऐसे आराम और तेजी से यात्रा कर सकता है जो पहले सम्राटों को भी मयस्सर न था। परंतु शीघ्र ही परिवहन के साधनों का इस प्रकार व्यावसायिक आधार पर संघटन किया गया और लोगों को उनका इस तरह अभ्यस्त बना दिया गया कि इन साधनों ने दूरी जितनी कम की थी उससे कहीं अधिक बढ़ा दी तथा समूचा समाज आवागमन के विकसित साधनों द्वारा अपना जितना समय बचा पाता है, उससे अधिक समय और धन उन पर व्यय कर देता है।

औद्योगिक समाज की विडंबना यह है कि उसके विभिन्न उपकरण जिस अभाव का निवारण करने के लिए वे खोजे गये थे, उस अभाव में बेहिसाब वृद्धि कालांतर में कर देते हैं। गरीबी पर किया गया आक्रमण गरीबी को, और असहमति पर किया गया आक्रमण असहमति एवं विरोध को उग्रतर बना देने में ही सफल हुआ है, न कि मिटाने में; क्योंकि गरीबी मिटाने का काम जिन विशेषज्ञों को सौंपा जाता है, वे उलपब्ध सुविधाओं पर एक नया भार बन जाते हैं।

इसी प्रकार चिकित्सा-विज्ञान रोगों से लड़ने के बजाय धन कमाने का उपकरण बन गया है और अब उसकी चिंता का विषय बन गये हैं वे रोग, जो स्वयं चिकित्सा एवं चिकित्सकों द्वारा रोगी की काया में पैदा किये जाते हैं। इस दुष्चक्र को तोड़ने में बाधक हैं चिकित्सकों और दवा-निर्माताओं के व्यावसायिक हित। अब घर में रोगियों की सेवा-शुश्रूषा करना असंभव होता जा रहा है। इलिच कहते हैं कि अमरीका में अमीरों को भी वह बहुमूल्य वस्तु प्राप्त नहीं है, जो गरीब देशों में गरीबों तक को सहज सुलभ है—'मृत्यु के क्षणों में स्वजनों, परिजनों के हाथों ममतापूर्ण सेवा-टहल।' संसार की प्रतिव्यक्ति औसत वार्षिक आय के बराबर राशि अमरीकी नागरिक प्राइवेट शुश्रूषा-गृह में दो दिनों के भीतर व्यय कर देता है।

इलिच का आरोप है कि औद्योगिक समाज के संघटन का मूल सूत्र ही यह है कि 'जिनके पास कोई वस्तु जितनी अधिक मात्रा में है, वे उसे उतनी ही अधिक मात्रा में प्राप्त करते रहेंगे तथा जिनके पास वह कम मात्रा में है, वे उस कम मात्रा के कारण उत्पीड़न भोगने के लिए विवश होंगे, अर्थात् उनके अभाव के साथ उत्पीड़न भी जुड़ जायेगा।' अमीरों को डाक्टरों द्वारा पैदा किये गये रोगों की चिकित्सा मिलती रहती है, लेकिन गरीब अभागेपन के साथ उत्पीड़न भी भोगते रहते हैं।

दुनिया का कोना-कोना, घूमे करोना

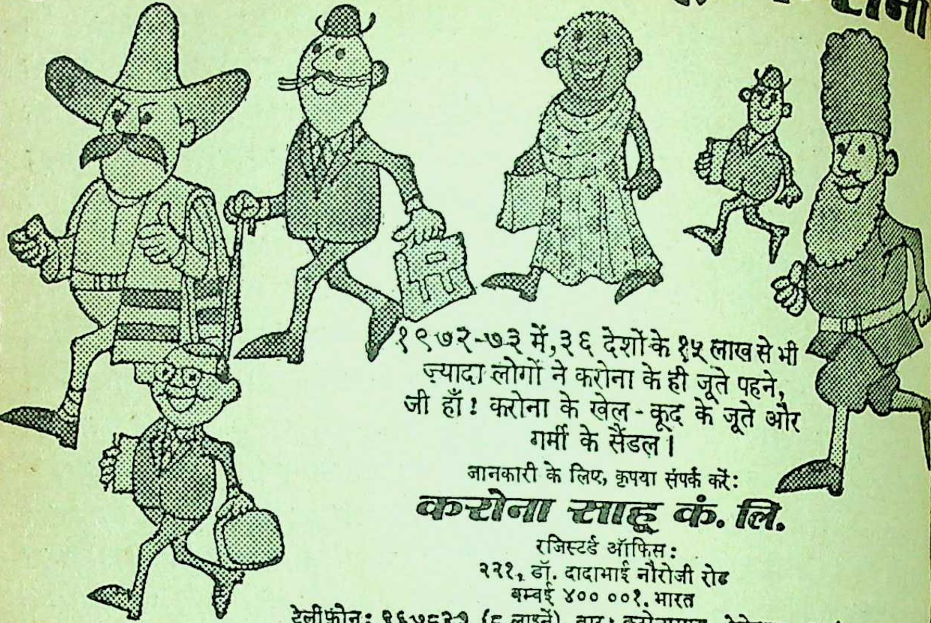

१९७२-७३ में, ३६ देशों के १५ लाख से भी ज़्यादा लोगों ने करोना के ही जूते पहने, जी हाँ! करोना के खेल-कूद के जूते और गर्मी के सैंडल।

जानकारी के लिए, कृपया संपर्क करें:

करोना साहू कं. लि.

रजिस्टर्ड ऑफिस:
२२१, डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड
बम्बई ४०० ००१. भारत
टेलीफ़ोन: २६७८२३ (८ लाइनें), तार: करोनासाहू, टेलेक्स: ०११/२९६१

अधिक अच्छी रोशनी और टिकाऊ सेवा इसकी विशेषता है

FARGO
GAS MANTLES
25 FARGO MANTLES
FARGO

RPC/HINDI

फारगो ७५१

गैस मैंटल

एकमात्र विक्रयप्रतिनिधि: फार्गो सेल्स एजेंसीज
२५५/२५६ ए टु जेड, इंडस्ट्रीयल इस्टेट, फर्ग्युसन रोड, लोअर परेल, बम्बई-१३

मूलगामी संकट

चिकित्सा और शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त यह संकट वस्तुतः औद्योगिक समाज के उस मूलगामी संकट का अंग मात्र है, जो समूची व्यवस्था में परिव्याप्त है। इस संकट का उदय व्यावसायिकता में से हुआ है। औद्योगिक समाज प्रबंधक-प्रधान समाज बन गया है। समाज की संपूर्ण सत्ता प्रबंधक वर्ग के हाथों में चली गयी है—चाहे आप आर्थिक क्षेत्र को लें, चाहे राजनैतिक दलों को, या चाहे व्यावसायों को। समूची औद्योगिक व्यवस्था का प्रयोजन है उत्पादन और उपभोग में अधिकाधिक वृद्धि करते जाना; और इन प्रक्रियाओं पर व्यावसायिक प्रबंधक वर्ग का प्रभुत्व है। यह वर्ग ही सब महत्त्वपूर्ण निर्णय करता है; यही नयी मांग उत्पन्न कर सकता है। इसने समूचे समाज को अभिशप्त उपभोक्ता समाज बना डाला है।

भले ही किसी भी राजनीतिज्ञ अथवा शासक को यह भ्रम हो कि समाज के उपकरणों पर उसका नियंत्रण है, परंतु वस्तुतः नियंत्रण उसके नहीं, अपितु प्रबंधकों के हाथों में होता है। यदि समाज को सम्यक् स्वरूप प्रदान करना है, तो सत्ता-संग्रह करने वाले इस वर्ग को समाप्त करना होगा; और इसका मार्ग है उत्पादन के उपकरणों को सरल बनाना। इस व्यवस्था के पीछे मूलतः यंत्रों की सत्ता है। यंत्रों की ईजाद इसलिए हुई थी कि वे गुलामों के स्थान पर श्रम करें; और उनके बारे में यही धारणा अभी तक है।

इलिच का कहना है कि अब समय आ गया है कि हम इस बुनियादी भूल को सुधारें और इस भ्रांति से उबरें कि मनुष्य का जन्म गुलामों से काम लेने के लिए हुआ है। अब यह पहचानने का समय आ गया है कि अतीत में हमसे सबसे बड़ी भूल यह हुई कि हमने श्रम के मामले में मनुष्य मात्र की समानता का सिद्धांत स्वीकार नहीं किया। हमने यंत्रों का उपयोग दासों के रूप में किया। परिणाम यह हुआ कि जैसे-जैसे दासों की भूमिका प्रमुख होती गयी, मनुष्य की भूमिका गौण होती चली गयी; मनुष्य उपभोक्ता की स्थिति में आ गिरा और यंत्र एवं उनका निर्माण, व नियंत्रण करने वाले 'विशेषज्ञ' मनुष्य के स्वामी बनते चले गये।

वस्तुतः इलिच के इस मंतव्य को चुनौती नहीं दी जा सकती कि 'निरंतर विकासशील औद्योगिक उपकरणों (औजारों) की दासता से कोई नहीं बच सकता, भले ही वह अधिनायकवादी सर्वहारा हो या लोकतंत्रवादी जनता।' वे कहते हैं कि प्रगति का सही अर्थ है अपनी फिक्र खुद करने का अधिकाधिक सामर्थ्य प्राप्त करना, न कि अधिकाधिक परावलंबन। स्वावलंबन तभी संभव है जब हम इस बात को पहचानें कि औद्योगिक समाज में जब व्यक्तिगत कार्यक्षमता एकाधिकारपूर्ण संघटन का रूप ले लेती है और वस्तु के रूप में बाजार में बिकने लगती है, तब उसका व्यवसायीकरण आरंभ हो जाता है तथा समाज व्यावसायिक साम्राज्यवाद के चंगुल में फंस जाता है।

इलिच का यह दृढ़ मत है कि आधुनिक

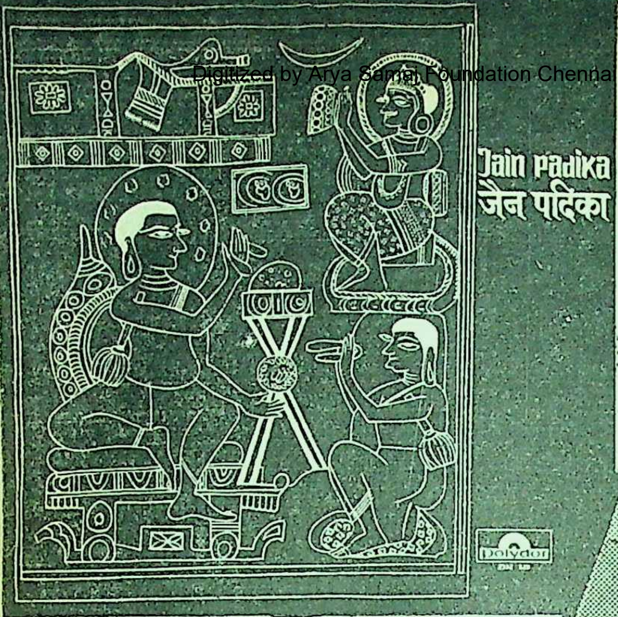

polydor

JAIN RELIGIOUS RECORDS

Jain Padika

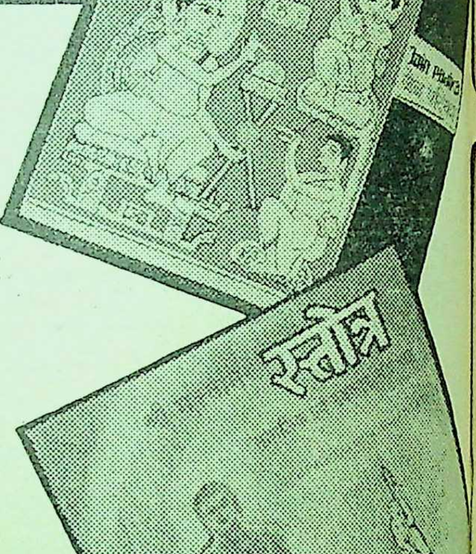

Jain Padika LP and Jain Padika EP 1 & EP 2 are made on the occasion of Bhagwan Mahaveer's 2500th Nirvana Centenary year 1974. Words of wisdom of poet Anandghanji & Others will inspire and elevate the consciousness of all.

Released with the blessings of Param Puja Munipravar Yashovijayji, these records will meet the demands of countless Jains & others.

Also available in the
Supernatural LP

SRI BHAKTAMAR STOTRA
The Immortal Incantation

Available with POLYDOR Dealers.

polydor

POLYDOR OF INDIA LTD.
Dhan-nur, Sir P. M. Road, BOMBAY 400 001

समाज में राजनैतिक और आर्थिक प्रभुत्व टूटता जा रहा है तथा उसका स्थान लेता जा रहा है 'ज्ञान-पूंजीवाद'। यह 'ज्ञान-पूंजीवादी' व्यावसायिक साम्राज्यवाद, विदेशी पूंजी तथा विदेशी शस्त्रास्त्रों की अपेक्षा अधिक घातक होता है; किंतु यह होता है अदृश्य, सो प्रगति के भुलावे में समाज इसके सामने आत्मसमर्पण कर बैठता है।

औद्योगिक समाज के अभिशाप को इलिच ने खूब पहचाना है। वे कहते हैं—'हमारे युग के अन्याय का मूल स्रोत यह है कि राजनीति ने ऐसे उपकरणों के अस्तित्व को स्वीकृति प्रदान कर दी है, जिनकी मूल प्रकृति ही ऐसी है कि उनका उपयोग चंद लोग ही कर सकते हैं। ...... औद्योगिक उपकरणों का यह साम्राज्यवाद स्वेच्छाचारपूर्ण है तथा बढ़ता ही जाता है। साधनों को साध्यों के रूप में प्रतिष्ठित करने की घातक प्रक्रिया है यह।'

उपकरणों का यह साम्राज्यवाद जनसंख्या और समृद्धि दोनों में वृद्धि करता है, मगर दो प्रतिकूल सिरों पर। दरिद्र वर्ग की आबादी बढ़ती है और संपन्न वर्ग की समृद्धि। परिणाम यह होता है कि दरिद्र वर्ग भ्रांतिवश इसकी मांग करने लगता है कि औद्योगीकरण की दर में तेजी से वृद्धि हो; और विलास-सामग्री का व्यसनी संपन्न वर्ग और अधिक उत्पादन के लिए चेष्टा करता है। इस प्रकार सत्ता का ध्रुवीकरण होता जाता है। एक ओर कुंठा व्याप्त होती जाती है और समाज का सुख एक स्वप्न बनकर रह जाता है; दूसरी ओर तेज गति वाले स्वयंचलित यंत्रों का विकास समाज की समूची आर्थिक, राजनैतिक और निर्णय करने की सत्ता को थोड़े-से लोगों के हाथों में केंद्रित कर देता है और बहुसंख्या इस अल्पसंख्या की कृपा पर जीने लगती है।

यह अल्पसंख्यक वर्ग अपनी तथाकथित उच्चतर 'उत्पादन-क्षमता' के नाम पर समाज की संपत्ति और सुविधा के बड़े अंश पर अधिकार जमा लेता है तथा शेष समाज इस स्थिति को अपनी ओर से मान्यता दे देता है। इस मान्यता का आधार वही है, जो डार्विन ने पशु-जगत् के अध्ययन की बुनियाद पर प्रतिपादित किया था—योग्यतम की विजय। अंतर केवल इतना है कि पशुओं में योग्यता का मानदंड है महज शारीरिक शक्ति, जबकि इस व्यवस्था में उसका आधार है बौद्धिक शक्ति द्वारा प्राप्त तथा नियंत्रित भौतिक शक्ति। है यह सामंतवाद का ही आधुनिक संस्करण, भले इसे कह लीजिये लोकतंत्र अथवा समाजवाद। इसमें दरिद्रता का आधुनिकीकरण हो जाता है और समाज पर शिक्षित-वर्ग की तानाशाही स्थापित हो जाती है।

सर्वोदयी चिंतक :

आधुनिक औद्योगिक समाज, वर्तमान शिक्षा-प्रणाली, शिक्षित अभिजात-वर्ग की तानाशाही और 'उपकरणों के साम्राज्यवाद' की यह आलोचना इवान इलिच को विचारक के रूप में गांधीजी की कोटि में बैठा देती है। वस्तुतः गांधीजी और डा. जे. सी.

कुमारप्पा की तरह वे एक ऐसे समाज का स्वप्न देखते हैं, जिसमें समाज के प्रत्येक व्यक्ति का समान रूप से और सर्वतोमुख उदय संभव हो। वे कहते हैं कि इस सर्वतोभद्र संस्कृति का निर्माण ही वर्तमान औद्योगिक समाज की चुनौतियों का सही उत्तर है।

इलिच की राय है कि इसके लिए हमें औद्योगिक उत्पादन के उपकरणों की वर्तमान गहन संरचना को भीतर की ओर मोड़ना होगा और मनुष्य के हाथ में वे ही औजार देने होंगे जिनसे उसे उच्च कोटि की एवं स्वातंत्र्यपूर्ण कार्यक्षमता के साथ श्रम करने का अधिकार प्राप्त हो सके—ऐसे औजार जो दास और स्वामी दोनों की जरूरत ही मिटा दें और व्यक्ति की स्वतंत्रता में वृद्धि करें। आज आवश्यकता है ऐसे उपकरणों की जिनसे मनुष्य काम ले सके, न कि ऐसे उपकरणों की जो मनुष्यों को हटाकर उनके स्थान पर काम करने लगें और जिनका संचालन थोड़े-से लोगों के हाथों में संकेंद्रित हो जाये। गांधीजी की तरह इलिच भी व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक शक्तियों के अधिकतम उपयोग की दृष्टि से बनाये गये औजारों को ही सम्यक् समाज के लिए वांछनीय मानते हैं।

जीवन, न्याय और आत्मनिर्धारित कार्य को इलिच सम्यक् समाज के लिए अनिवार्य मानते हैं। इनमें केंद्रीय मूल्य है न्याय, जिसकी प्राप्ति उत्पादन के उसी ढांचे में संभव है, जिसमें विज्ञान द्वारा खोजी गयी असामान्य शक्ति का न्यायपूर्ण वितरण संभव हो तथा इच्छा के विपरीत श्रम करने, शिक्षा प्राप्त करने और दूसरों का शोषण करने की विवशता न हो। पूर्ण न्याय वितरण में ही नहीं, कर्म में भी साझेदारी है। इस साझेदारी के लिए उत्पादन के उपकरणों का विवेकपूर्ण संशोधन करना होगा।

इस समय तो मनुष्य और उपकरणों के बीच विकृत संबंध स्थापित हो गये हैं, जिसके कारण मनुष्य साधन बन गये हैं और उपकरण साध्य। इसे उलटना होगा।

सम्यक् समाज के लिए मनुष्य को व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर तीन चीजों का त्याग करना होगा—१. अमर्यादित संतानवृद्धि, २. अमर्यादित समृद्धि और ३. अमर्यादित शक्ति। लोग यदि ऊर्जा के दासभूत यंत्रों पर निर्भर रहने के बजाय एक दूसरे पर निर्भर रहना फिर से सीख लें, तो उन्हें आनंददायी गंभीरता और मुक्तिदायी सादगी के मूल्य की फिर से अनुभूति हो सकेगी।

इस तरह इवान इलिच यंत्रों की उपलब्धि को नहीं, वरन प्रत्येक मनुष्य की स्वतंत्र सृजनात्मक उपलब्धि और आत्माभिव्यक्ति को मनुष्य-समाज में महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उनका यह चिंतन उन्हें 'गांधी के बाद के गांधी' के रूप में प्रतिष्ठित करता है। वे आदिम समाज की ओर लौटने का नहीं, वरन गांधी की तरह यंत्र-प्रधान व्यवस्था से मनुष्य-प्रधान व्यवस्था की ओर अग्रसर होने का संदेश देते हैं।

—अयोध्या हाउस, विष्णुघाट, हरिद्वार, उ.प्र.

★

जान लेगमान

देखना जीना है

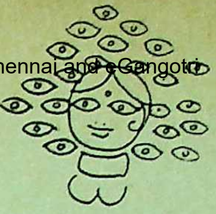

एक बार किसी ने हेलेन केलर से पूछा था कि मनुष्य के लिए सबसे बड़ा दुर्भाग्य कौन-सा है। जवाब में उन्होंने कहा था–'आंखों के होते हुए न देख सकना।'

ये शब्द मुझे उस दिन विशेष रूप से याद आये, जब प्रसिद्ध फोटोग्राफर अर्न्स्ट हास से मैंने एक सभा में सुना कि कलाकारों के देखने की तकनीक क्या है, जिसकी बदौलत वे संसार को कहीं ज्यादा सूक्ष्मता और गहराई से दिखा पाते हैं। वह तकनीक है–फ्रेमिंग। संसार इतना बड़ा है कि उसे एक ही नजर में देख पाना संभव नहीं। सो हम उसकी छोटी-छोटी चीजों को अलग से देखते हैं और बाकी चीजों को आंखों से ओझल कर देते हैं। फोटोग्राफर कैमरे की आंख में से इसी तरह देखता है। दूसरे शब्दों में हर चीज को 'फ्रेम' में लाकर देखता है।

एक और अवसर पर अर्न्स्ट हास ने कहा था–'चाहे आप कहीं भी जायें, तस्वीरों से घिरे रहते हैं। बस, उन्हें देखने वाली नजर चाहिये।' एक बार मैं उनके साथ एक छोटी सड़क पर जा रहा था कि उन्होंने एक जगह रुककर मुझसे कहा कि तस्वीरें देखो। पहले तो मुझे कोई भी खास चीज नजर नहीं आयी। फिर जब मैंने पुट्ठे के बने एक फ्रेम में से देखा, तो एक-एक करके कई तस्वीरें मेरे सामने आयीं। सड़क पर गिरा हुआ और धब्बे की शक्ल में फैला हुआ रंग मुझे अमूर्त चित्र के रूप में दिखाई दिया। फिर मैंने एक पुरानी इमारत की दीवार पर किसी बच्चे का बनाया रेखाचित्र देखा, तो वह मुझे किसी गुफा में बना हुआ प्राचीन भित्तिचित्र प्रतीत हुआ। वहां बच्चों ने चाक से कुछ और भी चित्र बना दिये थे। वे भी मुझे बिलकुल नये रूप में दिखाई दिये।

'वह देखो!' हास ने अधेड़ उम्र के एक दंपति की ओर संकेत किया, जो घर की सीढ़ियों पर अचानक रुक गये थे। पीछे की ओर मुड़कर कोई चीज देखने लगे थे। कोई खास बात नहीं थी उनमें, मगर फ्रेम में से देखने पर उनमें कुछ नयी बात महसूस हुई।

इस प्रकार की तस्वीरों को देखने और उनका आनंद लेने के लिए कैमरे की जरूरत नहीं है। फ्रेम को छोटा या बड़ा बनाकर देखने से चीजों का महत्त्व बदल जाता है।

प्रसिद्ध कवि विलियम ब्लेक के इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि 'रेत के एक कण में पूरा संसार और किसी जंगली फूल में स्वर्ग देखा जा सकता है।'

छोटी-छोटी चीजों को देखने का भी

कार्यालय :
फोन नं. ३७०३६४
३७७३१८

निवास :
फोन नं.
४७४६८०

मे० अमृतलाल डी० कोठारी

मॅगेझीन स्ट्रीट, दारूखाना
बंबई—१०

लोहा, फौलाद और सेकेंडहैंड
मशीनरी के व्यापारी

अपना ही आनंद है। एक बार मैंने समुद्र-तट पर मुट्ठी-भर गीली रेत हाथ में लेकर उसे आतशी शीशे में से देखा और मैं हैरान रह गया। रेत के प्रत्येक कण के गिर्द पानी की परत थी और कोई भी कण दूसरे कण को छू नहीं रहा था। उस समय एक वैज्ञानिक मेरे साथ थे। उन्होंने मुझे बताया—'इसीलिए रेत कभी बदलती नहीं है और लहरों के थपेड़े के बावजूद धूल बन जाती नहीं।'

अगर आप वृक्षों का चित्र बना रहे हों, तो उनके तने किस रंग के बनायेंगे? दस में से नौ आदमी भूरे या काले रंग के तने बनायेंगे। वास्तव में, वृक्षों के तने जामुनी, स्लेटी, पीले, हरे आदि रंगों के होते हैं; भूरे या काले सर्वथा नहीं होते।

चित्रकार मारिस स्टर्न ने कहा है—'मैं अपने विद्यार्थियों को माडल सामने रखकर चित्र बनाने की सलाह नहीं देता। इस प्रकार तो कोई भी चित्र बना सकता है। मैं विद्यार्थियों को "देखना" सिखाता हूं। वास्तव में कला का सृजन तकनीक द्वारा नहीं, दृष्टि द्वारा होता है।'

अधिक सूक्ष्मता से देखने और देखी हुई बातों को स्मरण रखने का एक सरल तरीका यह है कि उस चीज को दुबारा देखकर पहले देखी हुई बातों की पुष्टि की जाये। आप खुद इसे आजमाकर देखिये। आपको हैरानी होगी कि दूसरी बार देखने पर आप कितना अधिक देख पाते हैं! किसी नोट को एक नजर देखकर आंखें बंद कर लीजिये और सोचिये कि आपने क्या देखा है। कई छोटी-छोटी बातें आपको अस्पष्ट-सी दिखाई देंगी। अब नोट को दुबारा देखिये और फिर सोचिये तो वे अधिक स्पष्ट रूप में उभरेंगी।

कार्ल वान डोरेन ने एक किसान के बारे में लिखा है। उसकी दृष्टिशक्ति लगभग आधी रह गयी थी। एक दिन बातों के दौरान में किसान उनसे बोला—'क्या आप बादल की उस छाया को देख रहे हैं, जो हमारी ओर आ रही है? अगर आप ध्यान से देखें, तो पायेंगे कि ये छायाएं इस घाटी को हर क्षण बदलती रहती हैं। कभी ये बड़े आराम से चलती हैं, कभी भागी जा रही होती हैं। मेरे लिए तो ये चलती-फिरती तस्वीरें हैं।'

कार्ल वान डोरेन ने उस छाया को ध्यान से देखा। फिर उन्होंने कुछ और छायाओं को देखा। उन्हें हैरानी हुई कि उनकी सुंदरता को उन्होंने पहले कभी क्यों नहीं देखा था!

संसार को अलग ढंग से देखने की आश्चर्यजनक दृष्टि की बदौलत ही कलाकार अपनी विशेष शैली को जन्म देता है। जैसा कि हास ने कहा है, उसी दृष्टि के कारण मनुष्य 'आंखें खोले हुए सपने देख सकता है।' हम सब इस दृष्टि को पा सकते हैं। बचपन में यह दृष्टि काफी पैनी होती है, पर बड़े होने पर धीरे धीरे मंद पड़ने लगती है।

किसी विद्वान ने कहा है—'देखना विश्वास करना है।' परंतु उससे भी बढ़कर, देखना जीना है।' जितनी ही सूक्ष्मता से देखना आप सीख लेंगे, ज्यादा जीने का उतना ही ज्यादा आनंद पायेंगे।

★

लिंक चेन

*

जिसकी एक-एक कड़ी
मजबूत, परखी हुई और
पूर्णतः विश्वसनीय है

*

सभी उद्योगों व वाहनों में
उपयुक्त

*

एलोय स्टील चेन
एक विशेषता

*

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप; बंबई-७८

दि इंडियन स्मेल्टिग
एंड रिफाइनिंग कंपनी
लिमिटेड

रजिस्टर्ड कार्यालय
लालबहादुर शास्त्री मार्ग,
भांडुप, बंबई ७८ एन० बी०
केबल : 'लकी' भांडुप
फोन । ५८४३८१

सेमिस रोलिंग विभाग
नानफेरस शीत, स्ट्रिप और
फाइल, नानफेरस प्लेट और
सर्कल

एलाय और कास्टिंग विभाग : एंटिफ्रिक्शन बेयरिंग मैटल्स गन-मैटल्स और ब्रोन्जेन्स, ब्रेजिंग सोल्डर्स और टिन सोल्डर्स, फाइन जिंक डाइकास्टिंग एलाय्स 'इस्माक ३,' अल्युमिनियम बेस्ड डाइकास्टिंग एलाय्स, ब्रास और ब्रोन्ज राड्स सालिड कोर्ड्स, फिनिश्ड कास्टिंग रफ और मशीन्ड।

अवधनंदन

नयी विश्व-अर्थ-व्यवस्था की तलाश

विकसित-धनी देशों के नेताओं को यह बात अविश्वसनीय लगती है। वहां के साधारण नागरिक यह सब सुनकर झुंझला उठते हैं। पश्चिमी अनुदारवादी राजनीतिज्ञ और नौकरशाह तो अपने पुराने साम्राज्यवादी तेवरों के साथ हवा में मुट्ठियां बांधकर 'उद्धत' गरीब देशों से निबट लेने तक की बात कहते हैं। मगर इन सबके बावजूद उद्योग-व्यवसाय में पिछड़े, निर्धन, नवस्वतंत्र देशों के प्रतिनिधि अब बिना किसी हीले-हवाले के अंतरराष्ट्रीय मंचों से बार-बार कह रहे हैं कि हम अपना आर्थिक शोषण अब और ज्यादा नहीं चलने देंगे। धनी देशों के हाथों निर्धन देशों के निर्मम शोषण का अंत करने के लिए वे मौजूदा विश्व-अर्थ-व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन की मांग कर रहे हैं। उनका सीधा-सा तर्क है—समता बिना शांति और सद्भाव असंभव है।

इस साल अगस्त व सितंबर में विकासशील-निर्धन देशों ने अपनी यह आवाज एक के बाद दूसरे मंच से उठायी। पेरू की राजधानी लिमा में आयोजित गुटमुक्त देशों के संमेलन से लेकर राष्ट्रसंघ की महासभा के विशेष अधिवेशन और अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष तथा विश्वबैंक के संचालक-मंडल की बैठकों तक में उन्होंने बार-बार वर्तमान अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में निहित अन्याय और शोषण पर प्रहार किया और नयी व्यवस्था की मांग की।

उनका उद्देश्य स्पष्ट था—पश्चिमी देशों और जापान को यह बतला देना कि वे निर्धन देशों पर अब अपनी मनमानी नीतियां नहीं थोप सकेंगे। साथ ही यह भी कि विकसित देशों को निर्धन-विकासशील देशों के साथ अपनी संपत्ति के पुनर्वितरण के लिए तैयार रहना चाहिये। वस्तुतः सूडान के अर्थशास्त्री अब्दुल रहीम दिरार ने तो दावा भी किया कि यदि राष्ट्रसंघ से हम अपनी बात मनवाने में सफल हो सकें, तो 'हम विश्व की संपत्ति में साझीदारी की एक नयी व्यवस्था स्थापित कर सकते हैं।'

ऐसा केवल सूडानी अर्थशास्त्री दिरार ही नहीं सोचते। निर्धन-विकासशील देशों की धीरे-धीरे यह धारणा बनती गयी है कि पिछले तीस वर्षों में समाचारपत्रों में सुर्खियां पाने वाले संघर्ष—साम्यवादी-गैरसाम्यवादी देशों का शीतयुद्ध, कोरिया और वियतनाम युद्ध, या पश्चिम एशिया-संघर्ष—तो हवाई कुश्तियों की तरह थे। मूल और वास्तविक संघर्ष धनी और निर्धन देशों के बीच है।

यह आवश्यक नहीं कि किसी टॉनिक के द्रव्य क्या हैं।
आवश्यक बात यह है कि आपके शरीर को उससे क्या मिलता है?

सिंकारा मे आवश्यक विटामिनों और खनिज पदार्थों के साथ ही १४ जड़ी-बूटियां विशेषकर सम्मिलित हैं जिनसे पाचन शक्ति अच्छा कार्य करती है और जिनकी सहायता से आपका शरीर सिंकारा में सम्मिलित विटामिनों आदि को बहुत तेज़ी से अपने अन्दर समा लेता है। आहार भली-भांति शीघ्र हज़म होकर आपके शरीर को बहुत जल्द शक्ति प्रदान करता है।

cinkara
cinkara
cinkara

HT-HDC-375IA 2H.

हमदर्द

सिंकारा आपके शरीर को बहुत कुछ देता है।

सिंकारा
विटामिनों और प्राकृतिक द्रव्यों से भरपूर
हर मौसम में पूरे परिवार के लिये अद्वितीय टॉनिक

ॐ

महामण्डलेश्वर स्वामी गणेशानन्द जी महाराज
की अध्यक्षता में
तीन धाम तथा ४० तीर्थ यात्रा स्पेशल ट्रेन
भारत दर्शन का अपूर्व अवसर

दिनांक ७-१-७६ को दिल्ली से प्रस्थान दिनांक १७-२-७६ को दिल्ली वापस
प्रातःकाल नाश्ता, दो बार भोजन, दो बार चाय बस किराये सहित.
प्रथम श्रेणी - २५५१.०० रु० द्वितीय श्रेणी - १२०१ ०० रु०

दिल्ली, प्रयाग, अयोध्या, वाराणसी, गया, बैद्यनाथधाम, कलकत्ता, (हावड़ा), भुवनेश्वर, जगन्ननाथपुरी, साक्षीगोपाल, वाल्टेयर, तृप्तीबाला, कांचीपुरम्, चिदम्बरम, तन्जौर मद्रास, रामेश्वरम्, मदुराई, तिरुनावली, कन्याकुमारी, त्रिचुनापल्ली, बंगलौर, मैसूर, किष्किन्धा, हास्पेट, होतगी, नासिक रोड, पंचवटी, त्र्यम्बकेश्वर, बम्बई, डाकोर, उज्जैन-इन्दौर, द्वारिका, ओखा, भेटद्वारका, वेरावल, सोमनाथ, अहमदाबाद, ओंकारेश्वर उदयपुर, नाथद्वारा, चित्तोड़, अजमेर (पुष्करराज), दिल्ली.

नोट–रेलवे विभाग की सुविधा तथा आदेश के अनुसार वर्तमान कार्यक्रम प्रकाशित किया गया है

कार्यालय : श्री कृष्ण आश्रम फोन : २७५१४५
नं० २३६२ तिलक गली चूना मण्डी पहाड़ गंज नई दिल्ली

इस संघर्ष का समाधान किये बिना वास्तविक अर्थों में विश्वशांति असंभव है।

निर्धन देश इस निष्कर्ष पर एकाएक नहीं पहुंच गये हैं, गोंकि इन देशों के अनेक दृष्टिसंपन्न चिंतकों ने वर्षों पूर्व इस संघर्ष की ओर संकेत किया था। उदाहरण के लिए, अल्जीरिया के स्वातंत्र्य-संग्राम में हिस्सा बंटाने वाले चिंतक फ्रांज फेनान ने वर्षों पूर्व अपनी प्रख्यात पुस्तक 'द रेचेड ऑफ़ द अर्थ' में यह लिखा था —'उपनिवेशवाद और उसके विरोध के रूप में चल रहा मूल संघर्ष अब अपनी महत्ता खोने लगा है । आज क्षितिज पर उभरता हुआ महत्त्व का प्रश्न है संपत्ति के पुर्नवितरण का । मनुष्य-जाति को इस प्रश्न का निश्चय ही उत्तर देना होगा, अन्यथा वह स्वयं खंड-खंड हो जायेगी ।'

अपने देश में भी स्व. राममनोहर लोहिया ने संभवत: १९५६ में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'इतिहास-चक्र' में यह प्रतिपादित किया था कि संपन्न देशों को अपनी संपन्नता को सुरक्षित रखने के लिए ही विपन्न देशों के साथ अपनी संपन्नता में साझेदारी करनी होगी।

जो कुछ भी हो, निर्धन-विकासशील देशों ने स्वतंत्रता के बाद यह अनुभव किया है कि विकसित-धनी देश कहने को उन्हें आर्थिक सहायता अवश्य देते हैं, पर वास्तव में कच्चे माल और तैयार माल के भावों में जबर्दस्त खाई रखकर जो एक हाथ से दिया उससे कहीं ज्यादा दूसरे हाथ से वापस खसोट लेते हैं। धूमधाम से देने और चुपचाप खसोटने के इस काम के चलते, निर्धन देशों के भी धीरे-धीरे संपन्न बनने के बीस साल पुराने सपने महज मृगमरीचिका ही सिद्ध हुए हैं । वस्तुत: निर्धन देख रहे हैं कि समता और संपन्नता का आना तो दूर, इस बीच वे धनी देशों की तुलना में पहले से कहीं अधिक पिछड़ गये हैं । यह बात पिछले वर्षों के तेल-संकट के साथ शुरू हुई अंतरराष्ट्रीय मंदी के साथ और भी स्पष्ट होती गयी है।

इस मंदी के कारण तेल-जैसी चंद चीजों को छोड़कर निर्धन देशों द्वारा विकसित-संपन्न देशों को बेचे जाने वाले माल के मूल्य में गजब का असंतुलन आया है। उदाहरण के लिए, विकसित देशों द्वारा बेची जाने वाली चीजों के दाम तो तेल-संकट और मुद्रास्फीति के कारण बढ़कर जब आसमान छूने लगे हैं, पर निर्धन-विकासशील देशों द्वारा इन्हें बेची जाने वाली चाय, काफी, जूट जैसी चीजों के दाम अभी ठीक से सरके तक नहीं हैं। तुलना के लिए कहें तो बीस साल पहले दक्षिण अमरीका में एक जीप का आयात-मूल्य १२४ बोरी काफी के निर्यात-मूल्य के बराबर था । पर अब वह ३४४ बोरी काफी के बराबर है । इस लेख के अंत में दी गयी तालिका भी धनी और निर्धन-देशों के बीच की खाई को स्पष्ट रूप से रखती है । इन आंकड़ों के संदर्भ में कोई आश्चर्य नहीं कि जो तथ्य पंद्रह-बीस वर्ष पहले तक फेनान, लोहिया तथा कुछ अन्य चिंतकों के लिए चिंता का नुक्ता था, वह आज राष्ट्रसंघ में निर्धन देशों के प्रव-

दीपावली की शुभकामनाएं
और
नववर्ष का अभिनंदन

पंडित प्रोसेस स्टूडियो

फोन : ४१८४८०

दूसरी मंजिल, ब्लाक नं. १५
प्रभादेवी इंडस्ट्रियल इस्टेट
वीर सावरकर रोड,
बंबई–२५ डी डी

क्ताओं के माध्यम से नये अंतरराष्ट्रीय शक्ति-संघर्ष का मुद्दा बन रहा है। निश्चय ही इस दिशा में सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है अल्जीरिया के मितभाषी राष्ट्रपति हौदी बूमेदियेन का। १९७३ में अल्जीयर्स में हुए गुटमुक्त देशों के शिखर-संमेलन के कुछ ही दिन पहले बूमेदियेन ने फ्रांज फेनान के शब्दों को ही कमोबेश दोहराते हुए कहा था—'यदि अतीत में दुनिया साम्यवाद और पूंजीवाद के दो गुटों में बंटी हुई थी, तो हमारी राय में आज वह दो दलों में बंटी हुई है—धनी दुनिया और गरीब दुनिया, या धरती के उत्तरी और दक्षिणी हिस्सों के निवासियों की दो अलग-अलग दुनियाएं।'

धनी-निर्धन देशों के हितों के इस संघर्ष को उग्रतर बनाया तेल-उत्पादक देशों ने। पश्चिम एशिया के संघर्ष में पश्चिमी देशों की इस्रायल-समर्थक नीति के कारण युद्ध के मैदान में बार-बार मात खाने वाले अरब देशों ने अंततः एक नया अस्त्र खोजा। उन्होंने पिछले वर्षों में तेल के भाव चार गुने से भी अधिक बढ़ाकर उद्योग-प्रधान पश्चिमी देशों की अर्थ-व्यवस्थाओं को डांवाडोल कर दिया है। यद्यपि तेल की कीमतों में चौगुनी से भी ज्यादा बढ़ौती से निर्धन देशों की अपनी अर्थ-व्यवस्थाएं भी चौपट हुई, पर अरब देशों की नयी रणनीति ने इन देशों को एक अनूठा आत्मविश्वास भी दिया है। वह यह है कि अपने यहां से निर्यात होने वाले कच्चे माल के भाव बढ़ाकर वे भी विकसित देशों के साथ कमोबेश बराबरी का रिश्ता कायम कर सकते हैं। यह आत्मविश्वास निराधार नहीं है। कारण, जिन निर्धन देशों के पास निर्यात करने के लिए तेल नहीं है, वे भी कारखानेदार धनी देशों के उद्योगों को चालू रखने के लिए खनिजों आदि के रूप में कच्चा माल तो देते ही हैं।

कुछ ठोस उदाहरण लें, पहले बाक्साइट का। गिनी, गयाना, जमैका, सियरा लियोन, सुरीनाम व युगोस्लाविया जैसे छह विकासशील देशों और आस्ट्रेलिया का संसार के कुल बाक्साइट और अल्युमिना निर्यात में ७५ प्रतिशत हिस्सा है। अकेला जमैका ३० प्रतिशत निर्यात करता है। अंतरराष्ट्रीय बाक्साइट एसोसियेशन के सदस्य देशों ने पिछले वर्षों में विदेशी बाक्साइट खान-कंपनियों पर कर बढ़ाकर अपनी राजस्व-आय सात गुनी बढ़ा ली है। इसी तरह से जैरे, जांबिया, पेरू और चिली जैसे तांबा-उत्पादक देश भी तांबे के अंतरराष्ट्रीय भावों को काफी हद तक प्रभावित कर सकते हैं, यद्यपि इनका तांबा-उत्पादन गैरसाम्यवादी देशों के कुल तांबा-उत्पादन का २० प्रतिशत ही है और स्वयं संयुक्त राज्य अमरीका संसार का सबसे बड़ा तांबा-उत्पादक है। तांबा-उत्पादक निर्धन देशों से कहीं अधिक मजबूत स्थिति उन निर्धन देशों की है, जो टिन और रबर का उत्पादन करते हैं। गैरसाम्यवादी देशों के कुल टिन-उत्पादन का ८० प्रतिशत बोलीविया, इंदोनीसिया, मलेशिया और थाइलैंड की देन है। उन्होंने निर्यात में २० प्रतिशत की कटौती

दि बॉम्बे रजिस्टर्ड
पाइप डीलर्स सिंडिकेट प्रा० लि०

रजिस्टर्ड कार्यालय :

९३-ए, नागदेवी स्ट्रीट, पो. बॉक्स ३३०८, बबई-४००००३
तार – पाइपस्टाक

फोन नं. कार्यालय : ३२१६६७
३२०२१४
गोदाम : ३९४६११

सब साइजों के ब्लैक और गाल्वनाइज्ड पाइपों के सबसे बड़े स्टाकिस्ट

दि इंडियन टच्यूब कं० लि०, कलकत्ता

के टाटा-मेक पाइप के वितरक

श्री अंबिका टच्यूब्स, अहमदाबाद

और

जेनिथ स्टील पाइप्स लि०, खोपोली

के स्टाकिस्ट

अहमदाबाद शाखा :

५२२/२, सरोज मेन्शन, पंचकुवा गेट के बाहर, अहमदाबाद
फोन नं. ३४३४९
तार : पाइपडीलर

करके टिन के भाव करीब ५० प्रतिशत बढ़ा दिये हैं। दिक्कत यही है कि टिन की एवजी धातुएं मौजूद हैं। कमोबेश यही दिक्कत रबर-उत्पादकों के सामने है; क्योंकि अब रबर के स्थान पर कृत्रिम रासायनिक वस्तुएं इस्तेमाल होने लगी हैं। ये दिक्कतें सिर्फ इतना ही दरशाती हैं कि कच्चे माल के भाव बढ़ाने का अस्त्र हर मामले में तेल जितना कारगर नहीं हो सकता। परंतु कम कारगर होने पर भी वह धनी देशों की अर्थव्यवस्थाओं को, जो कि पहले से ही डांवाडोल हैं कुछ और डांवाडोल करा ही सकता है।

अब यह भी देख लिया जाये कि निर्धन देश अंतरराष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में क्या कुछ परिवर्तन चाहते हैं। दूसरे शब्दों में, उनकी मुख्य मांगें क्या हैं? इन मांगों को मोटे तौर पर पांच कोटियों में विभक्त किया जा सकता है–अंतरराष्ट्रीय व्यापार सहायता, विदेशी विनियोजन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा-व्यवस्था और विज्ञान एवं तकनीक।

१. अंतरराष्ट्रीय व्यापार : निर्धन देश अपने यहां से निर्यात होने वाले विविध कच्चे माल के लिए नये समझौते करना चाहते हैं, जिनसे वे इस माल का उचित मूल्य पा सकें। उनकी मांग है कि कच्चे माल का मूल्य निर्धन देशों द्वारा विकसित देशों से किये जा रहे आयात के मूल्य के निर्देशांक से जुड़ा रहना चाहिये। सीधे शब्दों में, जब भारत जैसे विकासशील देश का आयात का बिल बढ़े, तो उसके साथ भारत को अपने निर्यात का मूल्य भी ज्यादा मिले। निर्धन देशों की यह भी मांग है कि विकसित देशों ने विकासशील देशों के तैयारशुदा माल के आयात पर अपने यहां जो अवरोध लगा रखे हैं, वे हटें।

२. विदेशी सहायता : निर्धन-विकासशील देशों की मांग है कि धनी-विकसित देश विदेशी सहायता के उस वचन को पूरा करें, जिसे वे सिद्धांततः स्वीकार कर चुके हैं।

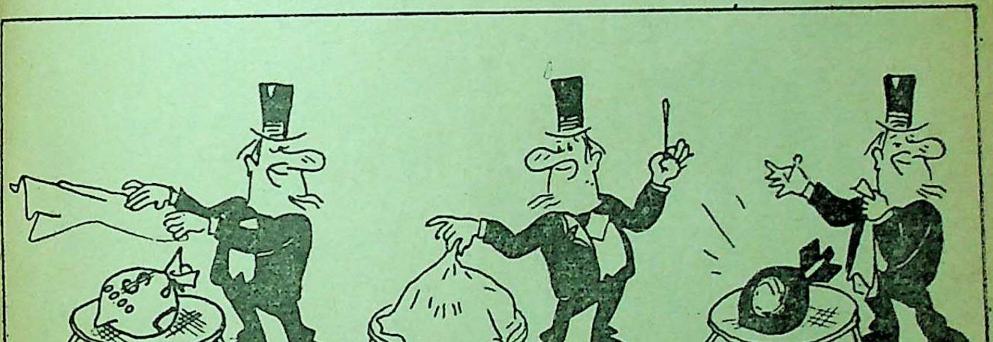

पेन्टागान के चमत्कार : 'इजवेस्तिया' में वी. मेलीको

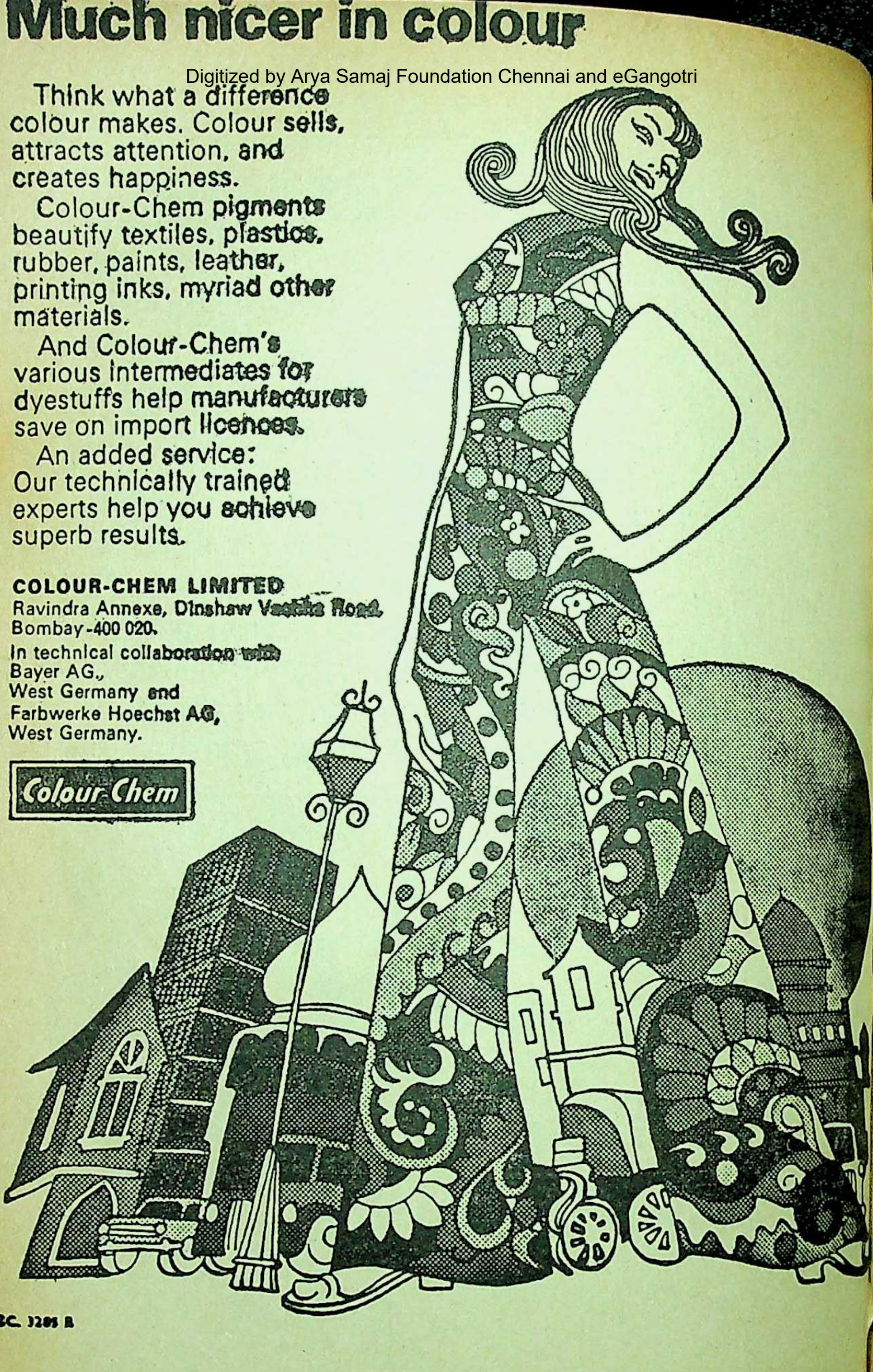

Much nicer in colour

Think what a difference colour makes. Colour sells, attracts attention, and creates happiness.

Colour-Chem pigments beautify textiles, plastics, rubber, paints, leather, printing inks, myriad other materials.

And Colour-Chem's various intermediates for dyestuffs help manufacturers save on import licences.

An added service: Our technically trained experts help you achieve superb results.

COLOUR-CHEM LIMITED
Ravindra Annexe, Dinshaw Vachha Road,
Bombay-400 020.
In technical collaboration with
Bayer AG.,
West Germany and
Farbwerke Hoechst AG,
West Germany.

Colour-Chem

CC. 3285 B

यानी वे अपने कुल राष्ट्रीय उत्पादन के ०.७ प्रतिशत के बराबर विदेशी सहायता देने का लक्ष्य पूरा करें। इसके साथ ही निर्धन देश अपने पिछले ऋणों के भुगतान की शर्तों पर भी नये सिरे से बातचीत करना चाहते हैं। उनका यह भी कहना है कि पिछले डेढ़ साल में अन्न और ईंधन के भावों में आयी तेजी का असर कम करने के लिए धनी देश हमें आपात्कालीन सहायता दें।

३. विदेशी पूंजी-विनियोजन : इस संबंध में निर्धन देशों की तीन मुख्य मांगें हैं। क. वे विदेशी पूंजी-बाजार में अधिक से अधिक पहुंच चाहते हैं, ताकि अपने विकास-कार्यों के लिए समुचित साधन जुटा सकें। परंतु इसका अर्थ यह नहीं कि वे अपनी अर्थ-व्यवस्थाओं पर विदेशी पूंजी की निरंकुश जकड़ की छूट देते रहना चाहते हैं। ख. निर्धन देशों ने अपनी आर्थिक स्वतंत्रता और प्रभुसत्ता को सुरक्षित रखने के लिए यह ठीक ही मांग की है कि विदेशी पूंजी, संपत्ति और कारोबार का राष्ट्रीयकरण करने पर उन्हें खमियाजा भरने को विवश न किया जाये। ग. यदि संपन्न देशों को बहुराष्ट्रीय औद्योगिक-व्यापारिक प्रतिष्ठान स्थापित करने की छूट है, तो विपन्न देशों को भी संपन्न देशों में इस तरह की छूट हो।

४. अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष : निर्धन देश विश्वबैंक तथा अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष जैसी संस्थाओं के नीति-निर्धारण में पहले से अधिक साझीदारी चाहते हैं। उनका कहना है कि विशेष निकासी अधिकारों (स्पेशल ड्राइंग राइट्स) के वितरण में उन्हें पहले से अधिक हिस्सा मिले। विशेष निकासी अधिकार हैं 'कागजी सोना', जिसके बूते पर विभिन्न देश व्यापार्थ विदेशी मुद्राएं खरीदते हैं।

५. विज्ञान और तकनीक : निर्धन देशों की इस संबंध में दो प्रमुख मांगें हैं—एक तो वे सस्ती दर पर पश्चिमी तकनीक का आयात करना चाहते हैं; और दूसरे, वे बहुराष्ट्रीय निगमों से यह अपेक्षा करते हैं कि वे प्रत्येक देश की आवश्यकता के अनुरूप तकनीक को संशोधित करेंगे।

यह कहने की जरूरत नहीं कि विकसित देशों की सरकारों और लोगों ने इन मांगों को अपनी समूची अर्थ-व्यवस्था को तहस-नहस करने की साजिश के रूप में देखा है। धनी देशों के अनुदार रुख के सबसे कट्टर प्रवक्ता के रूप में सामने आया है संयुक्त राज्य अमरीका। उसने राष्ट्रसंघ की महासभा और अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष एवं विश्व-बैंक के संचालक-मंडलों की बैठकों में एक ओर तो वर्तमान आर्थिक संकट के लिए तेल-उत्पादक देशों की हठधर्मी को दोष दिया और दूसरी ओर किसी भी सर्वसंमत समाधान को टालने के लिए स्वयं हठधर्मी अपनायी। यहां तक कि उसके विदेशमंत्री डा. हेनरी किसिंजर ने कभी खुल्लमखुल्ला तो कभी छिपे तौर पर यह धमकी दी कि तेल-उत्पादक देशों के तेल-भंडारों पर जबरन कब्जा कर लिया जायेगा।

अमरीका की इस अड़ंगेबाजी के बावजूद संयुक्त राष्ट्रसंघ के विशेष अधिवेशन की

ब्लॉक मेकर्स

शंकर आणि कंपनी

प्रभात प्रोसेस स्टुडिओ

दूरध्वनी ३११६५७ (मुंबई)
५१३५१६ (ठाणा)

धोबीवाडी, डॉ. जयकर मार्ग, (ठाकुरद्वार) मुंबई - २.

कुल अंतरराष्ट्रीय उत्पादन : कितना अंतर ! (स्रोत : विश्व बैंक, १९५४)

	जनसंख्या करोड़ों में	कुल राष्ट्रीय उत्पादन अरब अमरीकी डालर	कुल राष्ट्रीय उपादन (प्रतिव्यक्ति) अमरीकी डालर
विकसित दुनिया ..	६७.२	२,५००	३,७२०
साम्यवादी दुनिया ..	११८.७	६८६	५८०
तेल उत्पादक तीसरी दुनिया ..	२९.०	१३६	४७०
गैर तेल उत्पादक तीसरी दुनिया ..	१६८.०	५३६	३२०

तदर्थ समिति अंतरराष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं पर निर्धन देशों के हितों के अनुकूल दस्तावेज यदि स्वीकार कर पायी, तो उसका कारण यही है कि आज की विश्व-राजनीति में अमरीका और दूसरे विकसित देश इतने बड़े जनमत की उपेक्षा नहीं कर सकते।

राष्ट्रसंघ महासभा के इस दस्तावेज में कहा गया है कि विकसित देश इस दशक की समाप्ति के पहले अपने कुल राष्ट्रीय उत्पादन के ०.७ प्रतिशत के बराबर अधिकारिक विकास सहायता देने का वचन पूरा करें। 'विशेष निकासी अधिकारों' को विकास-सहायता से संबद्ध करने की भी इस दस्तावेज में बात कही गयी है और विकसित तकनीक के स्थानांतरण के लिए अंतरराष्ट्रीय-विधि-संहिता तैयार करने का सुझाव दिया गया है। दस्तावेज में मुआवजे के रूप में वित्तीय सुविधा की भी बात कही गयी है। अब तक यह सुविधा सिर्फ कच्चे माल पर ही दी जाती थी; पर अब यह तैयार माल समेत सभी तरह के निर्यात पर उपलब्ध होगी। यह भी मान लिया गया है कि ऋणों को अनुदानों में बदला जा सकता है।

महासभा के अधिवेशन के बाद हुई अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष तथा विश्वबैंक के संचालक-मंडलों की बैठकों में यद्यपि धनी और निर्धन देशों के प्रतिनिधियों ने काफी स्पष्टता से अपनी बात रखी, पर निश्चय ही वहां टकराव का वातावरण नहीं था। धनी देशों के प्रतिनिधि निर्धन देशों की बात सुनने को तैयार थे, भले वह एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल दी गयी हो। यों भी शोषण पर आधारित व्यवस्था को बदलने की प्रक्रिया लंबी चलती है। हां, उसके वस्तुपरक, यथार्थदर्शी विश्लेषण से ही यह प्रक्रिया शुरू होती है। अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की दृष्टि से यह प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। इसे अपनी निर्णायक परिणति तक पहुंचने, अर्थात् धनी-निर्धन देशों में न्यायसंगत आर्थिक संबंधों की स्थापना के पहले कितने उतार-चढ़ाव, तनाव-सद्भाव, सहयोग-संघर्ष के दौर देखने पड़ेंगे, यह भविष्य ही बतायेगा।

★

घरों, खेतों व कारखानों में
हमेशा इस्तेमाल करें

जे. टी. सी.

काले व गेल्वनाइज्ड स्टील पाइप

(१५ मि. मी. से १५० मि. मी. व्यास की साइज में प्राप्य)
ISS, BSS व अन्य प्रमाणित गुणों के
अनुसार आधुनिकतम कारीगरी से निर्मित

निर्माता / निर्यातक

जैन ट्यूब कंपनी लिमिटेड

डी / २०, कनाट प्लेस, नई दिल्ली—११०००१

टेलीफोन : ४५८४१ (४ लाईन) ★ तार : '**JAINTUBES**'

टेलेक्स : JTC ND—३१०२

कारखाना : १३.४ मील, मेरठ रोड, गाजियाबाद (उ. प्र.)

अमरीका का तीसरा जासूसी पंजा

*** वीरेंद्र सिंह ***

आज प्रायः हर कोई जानता है कि सी. आइ. ए. और एफ. बी. आइ. अमरीकी सरकार के दो जासूसी पंजे हैं। एक मुख्यतः विदेशों में काम करता है, दूसरा स्वदेश में। वस्तुतः उसका और भी एक जासूसी पंजा है, जो विदेशों में भी काम करता है और स्वदेश में भी। वह है 'नेशनल सिक्योरिटी एजेन्सी' (एन. एस. ए.), हिंदी में कहें तो 'राष्ट्रीय सुरक्षा अभिकरण'।

यह इतनी चतुराई से और चुपचाप अपना काम करता है कि बहुतों ने तो इसका नाम भी नहीं सुना है और इसकी तुलना में सी. आइ. ए. को खुली किताब कहा जा सकता है। संयोग से जो थोड़ी बहुत जानकारी इसके बारे में प्रकाश में आयी है, वह 'टाइम' और न्यूजवीक' जैसी सूचनाशोधक पत्रिकाओं के माध्यम से यदा-कदा मिलती रहती है। सी. आइ. ए. और एफ. बी. आइ. तथा इसमें एक अंतर यह भी है कि उनकी तरह यह पंजा खून में नहीं सना है।

एन. एस. ए. की स्थापना आज से तेईस साल पहले हुई। जिस 'राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद गुप्तचरी निर्देश संस्था-६' के अधीन इसे कायम किया गया, वह स्वयं परम-गोपनीय (सुपर सीक्रेट) है। सो कहना मुश्किल है कि कानूनन इसका कार्यक्षेत्र और अधिकार क्या हैं। इसका वार्षिक बजट भी गुप्त है; मगर अनुमानतः ९ अरब रुपये का है—अर्थात् सी. आइ. ए. के बजट से दुगुना। इसके कर्मचारियों की संख्या २० हजार कूती गयी है; इनके अलावा अमरीका द्वारा सारी दुनिया में स्थापित २,००० गुप्त संवाद-श्रवण-प्रेषण केंद्रों में नियुक्त हजारों अमरीकी सैनिक तकनीशियन भी इसके निर्देशन में काम करते हैं।

इसका मुख्यालय फोर्ट मीड (मेरीलैंड राज्य) में है। इसका निदेशक सदा ही कोई उच्च सेनाधिकारी होता है। वर्तमान निदेशक ल्यू एलन (जूनियर) अमरीकी वायुसेना के लेफ्टिनेंट जनरल हैं।

जनरल एलन ने गत अगस्त मास में अमरीकी कांग्रेस की एक समिति को साक्ष्य देते हुए बताया कि एन. एस. ए. के दो कार्य हैं:

१. अमरीकी संवाद-सूचनाओं को विदेशी जासूसों के हाथ पड़ने से बचाना;

२. अमरीकी सरकार की ओर से विदेशी संवाद-सूचनाओं की टोह लेना।

सीधे शब्दों में एन. एस. ए. गुप्त संवादों

तार : DIGJAM
जामनगर

फोन : २५८५
२५८६

दिग्जाम सूटिंग

शुद्ध ऊन डबल प्लेन, 'टी.जे.' व
टेरीन-ऊन के सर्व प्रकार के सूटिंग
में सर्वाधिक लोकप्रिय नाम :---

★

दिग्जाम

: निर्माता :

श्री दिग्विजय वुलन मिल्स लिमिटेड
एरोड्रोम रोड, जामनगर--३, गुजरात

व संदेशों को पकड़ता है; यदि वे संदेश संकेत-भाषा (कोड) में हों तो उन संकेतों को भेदता है तथा इस प्रकार प्राप्त जानकारी सरकार के पास पहुंचाता है। इसके लिए वह अमरीका में बाहर से आने वाले और अमरीका से बाहर भेजे जाने वाले तमाम टेलिफोन, तार और रेडियो-संदेशों को चोरी से सुनता है। इस काम के लिए उसके पास ऐसे सूक्ष्म एवं विकसित श्रवण-यंत्र हैं, जो वैज्ञानिक कथाओं की काल्पनिक वस्तुएं प्रतीत होते हैं।

ये स्वयंचलित श्रवण-यंत्र कंप्यूटर से जुड़े रहते हैं। कंप्यूटर में ऐसी व्यवस्था कर दी जाती है कि यदि श्रवण-यंत्र को कुछ विशेष ढंग के शब्द या मुहावरे (ट्रिगर वर्ड्स) सुनाई दें तो फौरन समूचा संवाद टेप पर रेकार्ड कर लिया जाता है; क्योंकि यह संवाद अमरीकी सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण हो सकता है। यह टेप किया हुआ संवाद फिर अमरीकी सेना मुख्यालय राष्ट्रपति-कार्यालय आदि को भेज दिया जाता है।

संवादों और संदेशों को सुनने में एन. एस. ए. बहुत ही नफासत से काम लेता है। वह टेलिफोन या टेलिग्राम के तारों को 'टैप' नहीं करता। बल्कि विद्युत-स्पंदनों को ग्रहण करके उनके द्वारा सारी बात सुन लेता है। आजकल अमरीका में प्रायः सभी दूरगामी टेलिफोन-संदेश और टेलिटाइप-संदेश सूक्ष्म-तरंगों (माइक्रोवेव) द्वारा प्रेषित किये जाते हैं। एन. एस. ए. के अत्यंत संवेदनशील श्रवण-यंत्र इन तरंगों को पकड़ लेते हैं।

यों एन. एस. ए. की ज्यादातर जासूसी का लक्ष्य है रूस तथा सोवियत गुट के देशों की अमरीका-विरोधी कार्रवाइयों की खोज-खबर लेना और वह इन देशों के दूतावासों, उनके राजनयिक एवं सैनिक कर्मचारियों के वार्तालापों व संदेशों को चौकन्ना होकर सुनता है। परंतु यह न समझें कि बाकी लोगों की बातों में उसे दिलचस्पी नहीं। कांग्रेस की एक समिति में जब लेफ्टि. जनरल एलन से कहा गया कि हां या न में इसका जवाब दो कि एन. एस. ए. ने अमरीकी नागरिकों के वार्तालाप और संदेश चोरी से सुने या नहीं, उन्होंने उत्तर दिया कि कानून मुझे इस सवाल का उत्तर देने की अनुमति नहीं देता।

असल में विदेशों से संबंध रखने वाली व्यापारिक कंपनियों (विशेषतः तेल-कंपनियों), अखबारों, प्रमुख नागरिकों, छात्र तथा राजनैतिक संघटनों के नेताओं आदि किसी को भी एन. एस. ए. नहीं बख्शता। न वह अपने को सैनिक महत्त्व के या राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित विषयों तक ही सीमित रखता है। हाल में राकफेलर जांच आयोग ने यह प्रकट किया कि राष्ट्रपति निक्सन ने मादक द्रव्यों की तस्करी के विरुद्ध जो अभियान छेड़ा था, उसमें मदद देने के लिए एन. एस. ए. वर्षों तक दक्षिण अमरीका जाने वाले और वहां से आने वाले तमाम गैरसरकारी तार, फोन और वायरलेस संदेशों को सुनता रहा। १९६७ से १९७४ तक उसने अमरीका के वियतनाम-युद्ध विरो-

शुभकामनाओं के साथ

जिन्दाल इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

कई साइजों में काले व गेल्वनाइज्ड

इ. आर. डबल्यू. लोहे के पाइप व ट्यूब

के निर्माता व निर्यातक

रजिस्टर्ड कार्यालय व कारखाना :
दिल्ली रोड,
मॉडल टाउन,
हिस्सार (हरियाणा)
टेलीफोन : ३६८१ (तीन लाईन).

शाखा :
१९५/९, असफअली रोड,
नई दिल्ली – ११०००१.
टेलीफोन : २७–३१८०,
२७–४६३०.
टेलेक्स : ND २७९९

धियों की हरकतों पर नजर रखी और उनके बारे में १,१०० पृष्ठों की महत्वपूर्ण सामग्री सी. आइ. इ. को मुहैया की। और तो और, पिछले वर्षों में रूस ने अमरीका में जो गेहूं की खरीदी की, उस व्यापारिक चर्चा को भी उसने चोरी से सुना। असल में अमरीका में बोले-लिखे-छापे जाने वाले प्रत्येक शब्द पर एन. एस. ए. के कान व आंखें लगी हुई हैं।

संवाद या सूचना प्रेषण के प्रत्येक माध्यम पर निगरानी रखने की आवश्यकता के पक्ष में यह दलील दी जाती है कि यदि इनमें किसी की भी उपेक्षा की गयी तो अमरीका के शत्रु उसी माध्यम से संदेश भेजते-पाते रहेंगे।

एन. एस. ए. को चोरी से सुनने से कानूनन रोक पाना बहुत कठिन है। वह वायरटैपिंग करता नहीं, जो कि कानून-विरुद्ध है। वह तो विद्युत-तरंगों को पकड़ता है, जिस पर कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं। ऐसा प्रतिबंध लगाना कठिन है और अव्यवहार्य भी। यही कारण है कि सी. आइ. ए. और. एफ. बी. आइ. आदि की तरह कभी वह कानूनी चपेट में नहीं आया है, न उस पर कभी अदालत में लथाड़ पड़ी है। किंतु इससे अमरीका में नागरिकों की निजी बातचीत की गुप्तता जैसी कोई चीज बाकी नहीं रह गयी है और नागरिक-अधिकारों के समर्थक इस बात से चिंतित हैं। संभव है, वे अदालत में जायें।

बात यह है कि वैद्युतिक उपकरणों का विकास नागरिकों की निजी स्वतंत्रता और गोपनीयता (प्राइवेसी) के अधिकार के लिए खतरा पैदा कर रहा है। टेलिफोन या टेलिग्राम के तार के पास सूक्ष्मसंवेदी श्रवण-यंत्र गाड़कर विद्युत-स्पंदनों के जरिये पूरे संदेश को पकड़ पाना अब संभव हो गया है। विद्युत-चालित टाइपराइटरों से उत्पन्न निर्बल विद्युत-तरंगों के जरिये दूर से 'पढ़' पाना भी तकनीकी दृष्टि से संभव हो गया है। कुछ विज्ञानी तो यहां तक सोच रहे हैं कि मनुष्य के मस्तिष्क की विद्युत-तरंगों को दूर से पकड़कर उसके मन की बात को पढ़ लेना भी शायद संभव हो जायेगा। ब्रिटिश लेखक जार्ज आर्वेल ने अपने उपन्यास 'नाइन्टीन एटीफोर' में जो कल्पना की थी, वह तब सत्य हो जायेगी।

चोरी से सुनने की दुष्ट विद्या में एन. एस. ए. की होड़ है रूस के के. जी. बी. से। कहा जाता है कि रूस ने खुद अमरीका में कम से कम पांच गुप्त श्रवण-केंद्र कायम कर रखे हैं, जिनमें से एक वाशिंग्टन में तथा दो न्यूयार्क और सानफ्रांसिस्को में हैं। ये केंद्र अमरीका के समस्त आंतरिक एवं बाह्य संवाद-संदेशों को सुनने में समर्थ हैं। यह भी कहा जाता है कि रूस ने अमरीका के महत्त्वपूर्ण सैनिक अड्डों के पास जमीन में ऐसे यंत्र लगा रखे हैं, जो संवाद-संदेशों को चोरी से सुनते तो हैं ही, जब रूसी गुप्तचर-उपग्रह उनके ऊपर से उड़कर जाते हैं, तब जमीन से सिर निकालकर उन संवाद-संदेशों को उन तक प्रसारित करते हैं।

सचमुच, जासूसी के क्षेत्र में आज सत्य कल्पना से कहीं अधिक विस्मयकारी हो गया है। **—स्वतंत्र भारत, लखनऊ—१**

★

सही पालन-पोषण का आधार
पराग (स्प्रे ड्राईड) शिशु दुग्ध आहार

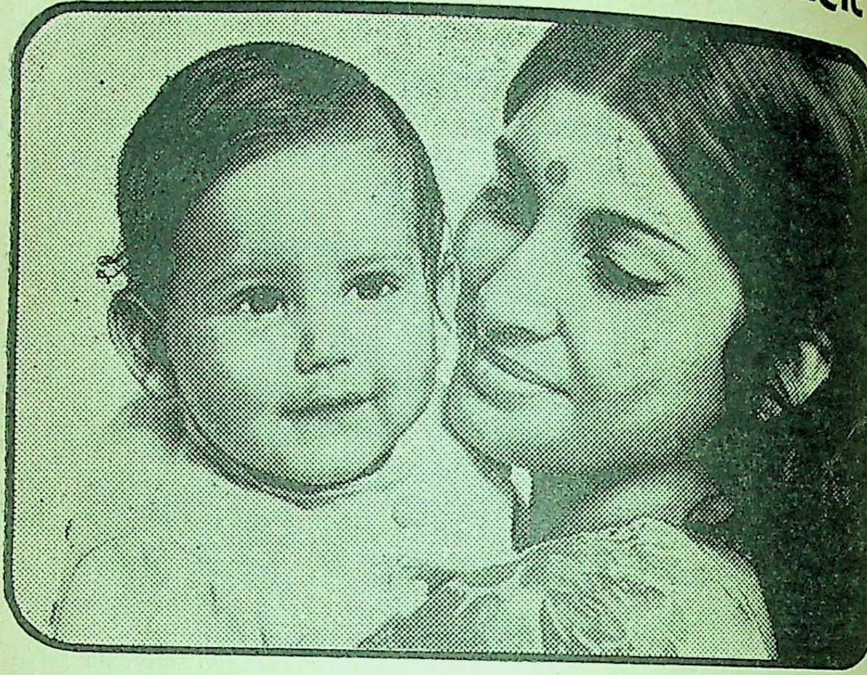

पूर्णतया संतुलित 'पराग' नवजात शिशु के सही पालन-पोषण के लिए विश्वसनीय दुग्ध आहार है। इसे आप शिशु को जन्म के पहले ही सप्ताह से दे सकती हैं। ताज़े दूध से अत्याधुनिक स्प्रे-ड्राइंग द्वारा निर्मित, पल-भर में तैयार प्रोटीन, विटामिनों (आठ), खनिज पदार्थों तथा अन्य पौष्टिक तत्वों से भरपूर 'पराग' को आप अपने शिशु की कोमल पाचन शक्ति के अनुकूल पायेंगी।

एकमात्र वितरक :
स्पैंसर एण्ड कं० लिमिटेड
प्रादेशिक कोऑपरेटिव डेरी फेडरेशन लि०
लखनऊ द्वारा इन्फैंट मिल्क फूड फैक्टरी
दलपतपुर (मुरादाबाद) में निर्मित

parag
parag
INFANT MILK FOOD

ASIAN/Pa/73/22

[पृष्ठ ५२ का शेष]

को स्वरों का जरीदार परिधान पहनाकर ताल पर थिरकाया, तो मानस का एक नया ही आयाम हमारे सामने आया। शब्द वही थे, मगर स्वरों के साहचर्य से उनमें विद्युत-संचार हो गया था।

आज के संदर्भ में गुरु शिष्य-परंपरा की संगति की चर्चा चल रही थी। कुमार ने कहा—'कबीर भी क्या अनूठी बात कह गये... "बिन सतगुरु नर रहत भुलाना"। तभी तो कबीर ने गुरु को ईश्वर से भी अधिक पूजनीय कहा है। मगर गुरु हो सो ऐसा जो शिष्य की काया पलट दे; इतना प्रतिभावान होना चाहिये उसे। इसीलिए हमें आज समय की गति को देखते हुए अपनी परंपरा और रूढ़ि को गतिमान बनाना और नये-नये आयामों से युक्त करना चाहिये।

'मेरे पास कई लोग सीखने के लिए आते हैं मैं सिखाता हूं। मगर 'सीखना' शब्द की परिभाषा वे सालों सीखने के बाद भी नहीं जान पाते, हालांकि मेरी सिखाने की पद्धति बिलकुल अलग ढंग की है। मेरा तो कहना है कि कोई भी कला, और खासकर संगीत, मात्र रियाज से नहीं आती। आप सारे दिन तानपूरा लेकर आरोह-अवरोह की सैकड़ों पुनरावृत्तियां कर डालें तो आप बड़े भारी गायक बन जायेंगे, ऐसा नहीं है। रियाज केवल गले से ही नहीं, वरन मस्तिष्क से भी होता है। दिमाग को गतिमान रखना, उसकी झाड़-पोंछ करते रहना, उसमें नये-नये कमरे खोलते रहना, अर्थात् नये-नये विचारों का आवागमन—यह भी रियाज ही है।'

फिर इसी बात को एक सुंदर दृष्टांत से समझाते हुए उन्होंने कहा—'केवल डंड-बैठक करने से कुश्ती नहीं आती; उसके दांव-पेंच की जानकारी भी बहुत जरूरी है। अगर सचमुच अच्छी कुश्ती लड़नी है, तो दिमाग भी लड़ाना पड़ेगा। केवल हाथ-पैर चलाने से कुछ नहीं होता।'

हम उनकी इसी बात को सोच रहे थे कि कुमार कहने लगे—'तुम्हें एक किस्सा सुनाता हूं। गंडा-बंधन की परंपरा संगीत-क्षेत्र में काफी दिनों से प्रचलित है। मूलतः यह भारतीय परंपरा नहीं है। मेरा एक शिष्य कुछ वर्ष सीखने के बाद जब घर वापस गया, उसके आत्मीयों ने कहा कि भई, गंडा तो तुमने बंधवाया नहीं! यह रस्म जरूर होनी चाहिये; वरना इसका प्रमाण ही क्या कि तुम उनसे सीखे हो! .....बस, मेरे पास उसका निमंत्रण आ गया। मैं गया, गुरु जो ठहरा! बाकायदा आमंत्रित अतिथियों के समक्ष मैंने उसके हाथ में गंडा बांधा और उसने मुझे एक लिफाफा भेंट किया। गाना हुआ। बाद में लोगों ने मुझसे आग्रह किया कि कुमारजी, दो शब्द आशीर्वाद के कहिये। मुझे रह-रहकर कबीर का एक दोहा बेचैन कर रहा था। आखिर मैंने सुना ही दिया—"सिख तो ऐसा चाहिये जो गुरु को सब कछु देय। गुरु तो ऐसा चाहिये जो सिख से कछु ना लेय।।" गुरु शिष्य-परंपरा का सही आदर्श तो हमें कबीर बता गये। क्या आज उसका शतांश भी हम निभा पाते हैं? है न

"दिपावली शुभचिन्तन"

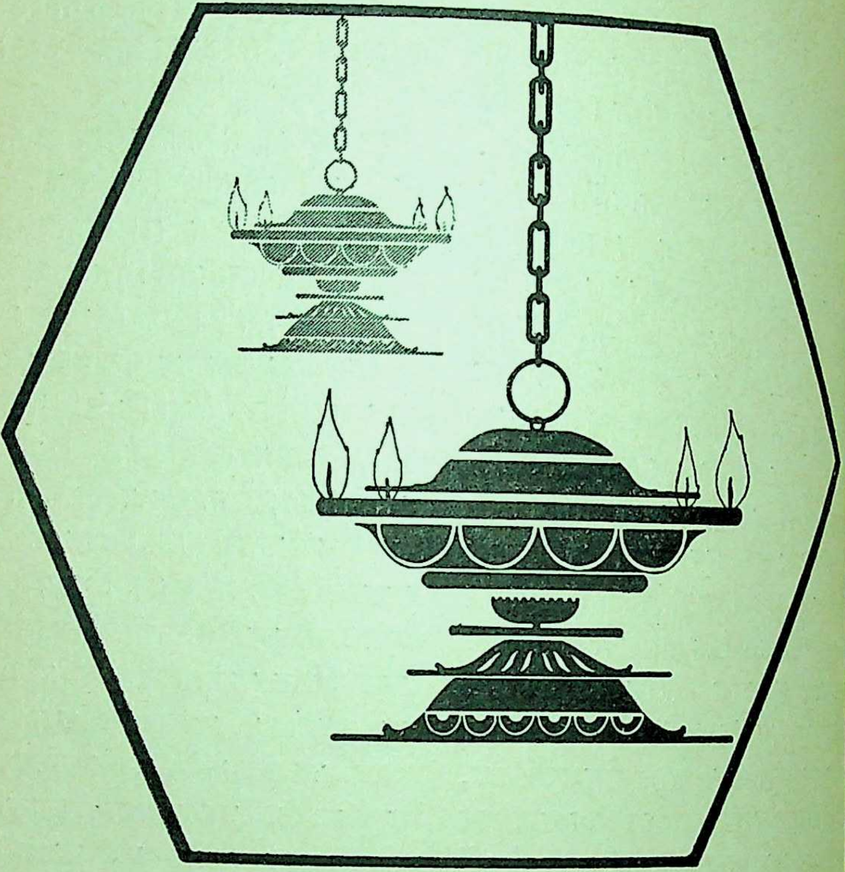

रेगे प्रोसेस स्टुडिओ

ब्लॉक मेकर्स

पार्वती इंडस्ट्रियल इस्टेट नं. ३-१० अ, दुसरा मजला,
सनमिल लेन, लोअर परळ, मुंबई १३

विचार करने की बात?.....विद्या दान की वस्तु है, उसे अर्थ में तौला नहीं जा सकता।'

शायद यही कारण है कि कुमार 'घराना' प्रथा के विशेष कायल नहीं हैं। वे यह कहा करते हैं—'कलाकार तो निरंतर नये प्रयोग करने वाला शोधकर्ता है। उसे सीमामुक्त होना चाहिये। मैं आज भी विद्यार्थी हूं। प्रकृति मेरी मार्गदर्शिका है। कोयल की कूक, आम का बौर, भोर का सूरज, संध्या का कलरव—सब मुझे गुदगुदा जाते हैं। भई, जिसे हर आने वाला दिन नया न प्रतीत हो, वह कैसा कलाकार? सतत नवनिर्माण की खोज ही तो लक्षण है सच्चे कलाकार का। परंपरा और तकनीक का अपना एक स्थान है; मगर स्वरों को उनका बंदी नहीं बनाया जा सकता। अक्सर व्याकरण संगीत के शुद्ध रूप (प्योर फ़ार्म) पर हावी हो जाता है और लोग शास्त्रीय संगीत को नीरस, बोरिंग कहकर बदनाम कर देते हैं।'

कुमार के कई विदेशी शिष्य हैं और उन्होंने उन्हें वहां निमंत्रित भी किया है। क्या विदेश जाने की उनकी कोई योजना नहीं है?

कुमार पान लगा रहे थे। साफ-सुथरा डिब्बा बड़े करीने से बंद करते हुए बोले—'अभी अपना संगीत यहीं कितनों के पल्ले पड़ता है? झूठ-मूठ विदेश जाकर वहां वालों पर किसी चीज को फैशनेबल कहकर थोपना है क्या? हमारा संगीत इतना फालतू और निम्न स्तर का है, ऐसा मैं नहीं मानता। जब आज भी कबीर, सूर, तुलसी दक्षिण के पल्ले नहीं पड़ते और त्यागराज, नामदेव, तुकाराम की भाषा का रस-ग्रहण उत्तर भारत नहीं कर पाता, तब इतनी दूर जाकर क्या केवल झंडा गाड़कर आना है?'

गत वर्ष ८ अप्रैल को उनकी ५० वीं वर्ष-गांठ उनके निवास-स्थान देवास में बड़े धूमधाम से मनायी गयी थी। विभिन्न क्षेत्रों के ख्यातिप्राप्त व्यक्ति उनके मित्र हैं, भक्त हैं। अनेक शिल्पकार, चित्रकार, कवि, लेखक, दार्शनिक, इतिहासवेत्ता, डाक्टर, संगीतज्ञ, बालमित्र, प्रौढ़मित्र सभी एक मंच पर उपस्थित थे। उस दिन लगा कि कुमार केवल संगीतकार ही नहीं, वरन शब्द-रंग-रस-गंध के उपासक हैं, प्रेमी हैं; समग्र जीवन उनका आदर्श है। उस समारोह में मराठी के प्रसिद्ध लेखक श्री अरविंद मंगरुळकर ने कहा था—'कुमार एक जीवन-दर्शन हैं'। तीन दिन कुमार-प्रेमियों का मेला-सा लगा रहा।

स्कूल की दहलीज लांघे बिना गहन से गहन विषयों पर तलस्पर्शी चिंतन, रोज-मर्रा की छोटी-छोटी बातों को देखने की कलापूर्ण दृष्टि, आदमी की सही पहचान—ये सब बातें सिद्ध करती हैं कि कुमार केवल गायक ही नहीं, चिंतक और निरंतर प्रयोग-क्षम शोधकर्ता भी हैं। स्नेही और आत्मीय मित्र के रूप में हमारे परिवार के लिए वे जो कुछ हैं, उसके लिए मेरे शब्दकोश में कोई शब्द नहीं। उनका आना हम लोगों के लिए पर्व होता है। और जब वे जाते हैं, हम उनके पुनरागमन की प्रतीक्षा में उन्हीं की बंदिश 'मंगल दिन आज' रह-रहकर गुनगुना लेते हैं। **—१५, पन्नालाल रोड, इलाहाबाद-१**

★

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां, इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव

काटन मिल्स

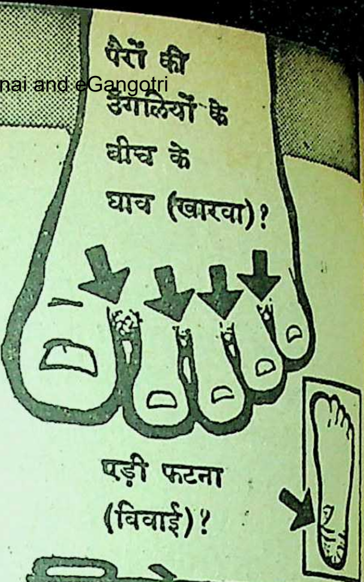

पैरों की उंगलियों के बीच के घाव (खारवा)?

पड़ी फटना (बिवाई)?

लिचेन्सा

इस्तेमाल कीजिये।

लाइसिल

जुएँ नाशक

जूएँ लीखों, खुश्की नाशक तेल

सुजानिल केमो इण्डस्ट्रीज,
चिंचवड़, पूना - १९

[पृष्ठ ७५ का शेष]

प्रतीक। कुएं से जल भरती हुई ये महिलाएं क्यूबिक शैली में हैं। और यह दशहरा है—रावण-कुंभकर्ण के पुतले जल चुके हैं, खपच्ची के ढांचे वाले सिर व धड़ इधर-उधर लुढ़के पड़े हैं। कहीं-कहीं अधजला कागज लगा रह गया है और कहीं धुआं निकल रहा है—आसुरी दर्प के दयनीय अंत का व्यंजनात्मक निरूपण! फिर तंत्र पर आधारित एक और कृति-स्वयंशिव काली, सूर्य-चंद्र, चतुर्दश लिंग। फिर दही मथती हुई गुजरातिन। यह है ढोर-बाजार। और ये हैं नेफा और असम की जनजातियों के चित्र, जिनमें उनकी जीवन-रीति, आचार, और आस्थाएं बोल रही हैं। स्मार्तजी ने इन आदिवासियों के जीवन का जो गहरा निरीक्षण किया है, ये चित्र उसके प्रमाण हैं। इनमें से अनेक चित्र ग्रीटिंग-कार्डों, कैलेंडरों पर भी छप चुके हैं।

फिर आकृति-प्रधान चित्रों का सिलसिला ... जैन शैली में चित्रित नर्तकी... किशनगढ़ शैली में प्रस्तुत राधिका...और राजस्थान के पनघट।

धार्मिक ग्रंथों से प्रेरित चित्र स्मार्तजी की विशेषता है। मेरे सामने है रामचरितमानस की पंक्तियों पर आधारित 'राम-विवाह'। विशाल चित्र है। ऊपर कदली-द्वारों, बरात के अलंकृत हाथी-घोड़ों, रथों, ध्वजवाहकों, पालकियों की पंक्तियां हैं। बीच में अल्पना, बंदनवार और कलशों से सजा विवाह-मंडप है; पुरोहित यज्ञ कर रहे हैं। मंडप के दोनों ओर तुरही, ढोलक आदि बज रहे हैं, शृंगार-रत नारियां गवाक्षों से विवाह-शोभा देख रही हैं। उधर श्रीराम सीता की मांग में सिंदूर भर रहे हैं। आमंत्रित नरेश आश्चर्य से मंडप की सौंदर्य-सज्जा निहार रहे हैं। नीचे गायिका-वादिकाओं की पंक्तियां हैं। मंडप के ठीक नीचे मंगलसूचक अलंकृत अश्व-गज, आरती उतारती हुई महिलाएं और एकदम नीचे जलपूर्ण कलश लिये स्त्रियां और बरातियों के आतिथ्य के लिए बहंगियों में दही-चिउड़ा भरकर ले जाते हुए अनुचरों की पंक्ति है। वहीं मानस की तीन पंक्तियां भी अंकित हैं—'चितवहिं चकित बिचित्र बिताना', 'राम सीय सिर सेंदुर देहीं' तथा 'दधि चिउरा उपहार अपारा भरि-भरि कांवरि चले कहारा।' सभी कुछ जीवंत है, कोई विवरण छूट नहीं पाया है।

स्मार्तजी के कालिदास-प्रेरित चित्र एक स्वतंत्र लेख के विषय बन सकते हैं—एक पूरी पुस्तक के भी। दिलीप की गोसेवा और गोरक्षा के इस चित्र का आधार है रघुवंश का द्वितीय सर्ग। सूर्य यहां दिलीप के सूर्यवंशित्व और पराक्रम का सूचक है, वन-पर्वत भी प्रतीकात्मक रूप में चित्रित हैं, बीचोंबीच खड़ी है सर्वदेवमयी गौ नंदिनी।

रघुवंश के सप्तम सर्ग का अज-इंदुमती-विवाह स्मार्तजी का बहुत प्रिय विषय है, जिसे उन्होंने अनेक बार अनेक रूपों में अंकित किया है। इंदुमती की वह रूपशोभा, जिसके कारण कवि ने 'संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा'

की उपमा दी है, यहां जीवंत हो उठी है। अज-इंदुमती की शोभायात्रा के चित्र में उसी सर्ग के श्लोक ५-८ के वर्णन के अनुसार श्रृंगार करती हुई स्त्रियां केश बांधना अंगराग-लेपन और अंजन लगाना छोड़कर गवाक्षों में आ जुटी हैं।

संयोग-श्रृंगार के प्रसंग में कलाकार ने 'जलविहार' शीर्षक चित्र के लिए १६ वें सर्ग के वे श्लोक चुने हैं, जिनका आरंभ इन पंक्तियों के साथ होता है :

पश्यावरोधैः शतशो मदीयै-
विगाह्यमानो गलिताङ्गरागैः ।
सन्ध्योदयः साभ्र इवैष वर्ण
पुष्यत्यनेकं सरयूप्रवाहः ।।

रघुवंश के २१ वें सर्ग में अग्निवर्ण-प्रसंग को समेटते हुए स्मार्तजी ने रतिक्रीडा का विस्तृत चित्रण किया है। रतिक्रिया की कोई स्थिति छूटने नहीं पायी है, तथापि कहीं अश्लीलता का स्पर्श नहीं हुआ है। और अंत में अत्यधिक कामक्रीड़ा के फलस्वरूप राजयक्ष्मा से पीड़ित एवं मृत्यु के निकट पहुंचे हुए अग्निवर्ण का चित्र (श्लोक ५० के आधार पर) पूर्ववर्ती मुद्राओं की कामुकता को बहा ले जाता है, साथ ही स्मार्तजी की कला के शिवत्व को रेखांकित करता है।

चित्र 'अयोध्या-प्रत्यागमनम्' में पुष्पक विमान द्वारा लंका लौटते हुए श्रीराम सीता से कह रहे हैं, 'वैदेहि पश्याऽमलयाद्विभक्तं मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम्।' उत्ताल तरंगों तथा मीन-मकरों से संकुल फेनिल सागर पर से उड़ते पुष्पक की गति का आभास दर्शनीय है।

'ऋतुसंहार' चित्रों में स्मार्तजी ने 'द्रुमाः सुपुष्पाः सलिलं पद्मं स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः' जैसे ललित शब्दचित्रों को मनोहर रंग-रेखाओं में ढाला है। 'कुमारसंभव' में शिव की बरात का आनंदोल्लास एवं मंगल-गान मुखरित है। वहीं शिव-पार्वती के परिणय एवं मधुयामिनी की अनेक मुद्राएं हैं। एक चित्र में पार्वती के कपोलों पर शिव का चंद्रचिह्न अंकित हो गया है।

जब चित्रों की बरात थमती है और स्मार्तजी पूछते हैं कि 'कहिये, कुछ संतोष हुआ ?' तब हाथ घड़ी पर मेरी नजर जाती है। मुझे उनके यहां आये पांच घंटे से ज्यादा समय बीत चुका है! पहले से सोचे हुए प्रश्नों में से कुछ ही पूछ पाया। किंतु शेष का समाधान उनके चित्रों से मिल गया है। मन में तृप्ति और आंखों में उमड़ते चित्रों का हुजूम लिये मैं विदा लेता हूं। उन सब चित्रों पर 'सुपर इम्पोज्ड' है श्री स्मार्तजी और उनकी सहधर्मिणी की सहज सौजन्यशीलता का चित्र।

—३६७, अतरसुइया, इलाहाबाद

★

हमें खेद है कि हम पूर्वघोषित लेखों में से कुछ को इस अंक में नहीं ले पाये, क्योंकि कई लेख हमारे अंदाज से अधिक लंबे रहे और कुछ अन्य लेखों का समावेश भी हमें करना पड़ा। ये पूर्वघोषित लेख अगले अंक में छपेंगे।

—संपादक

★

[पृष्ठ ८० का शेष]

'ज्यां क्रिस्तोफ़'।

हरिशंकर परसाई :—'ठिठुरता हुआ गणतंत्र'। क. श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी'; ख. लक्ष्मीबाई तिलक का 'स्मति चित्रें' (मराठी); ग. ज्यां पाल सार्त्र का 'वर्ड्स', अथवा 'रसेल पेपर्स'।

दुष्यंत कुमार :—'साये में धूप' (गजल-संग्रह)। क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. रवींद्र की 'गीतांजलि' या गालिब का दीवान; ग. मार्गरेट मिशेल का 'गॉन विद द विंड'।

रमेश चौधरी आरिगपूडि :—'दूर के ढोल'। क. फणीश्वरनाथ रेणु की 'परती परिकथा'; ख. गोपीनाथ महांति की 'अमृत संतान' (उड़िया); ग. निकोलस कजान्तजाकिस का 'द लास्ट टेम्प्टेशन ऑफ़ क्राइस्ट'।

विनोद रस्तोगी :—'सूतपुत्र' (काव्य-नाटक)। क. दिनकर की 'उर्वशी'; ख. बादल सरकार का 'एवम् इंद्रजित' (बंगला नाटक); ग. बैकेट का 'वेटिंग फ़ॉर गोदो'।

केशवचंद्र वर्मा :—'अफलातूनों का शहर'। क. विजयदेव नारायण साही का 'मछलीघर' (कविता-संग्रह); ख. रणजीत देसाई का उपन्यास 'स्वामी' (मराठी); ग. आयनेस्को का नाटक-संग्रह।

राजीव सक्सेना :—'आत्मनिर्वासन तथा अन्य कविताएं'। क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. तकषि शिवशंकर पिळ्ळे का 'चेम्मीन' (मलयालम्); ग. शोलोखोव का 'एंड क्वायट फ्लोज़ द डॉन'। पुनश्च:—मैंने दो बातों का ध्यान रखकर पुस्तक-चयन किया है। प्रथमतः कालजयी रचनाओं के अध्ययन से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि शिल्प-शैलीगत नवोन्मेषों के बल पर कोई रचना अपने समय में बहुचर्चित हो सकती है, किंतु कालांतर में वह जीवित रहती है अपने सर्जन-काल के इतिहास-बोध के रूप में या अपने विचारों की महत्ता के कारण। दूसरे, हिंदी और भारतीय भाषा की कृति के चयन में मैंने स्वतंत्रता के बाद की रचनाओं पर ही ध्यान केंद्रित करना ठीक समझा।

डा. प्रभुदयाल अग्निहोत्री :—'पतंजलिकालीन भारतवर्ष'। क. बच्चन का 'एकांत गीत'; ख. शरत का 'शेषप्रश्न'; ग. पर्ल बक का 'गुड अर्थ'।

डा. इंद्रनाथ मदान :—'आधुनिकता और हिंदी साहित्य'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. शरतचंद्र का 'चरित्रहीन'; ग. रोमां रोलां का 'ज्यां क्रिस्तोफ'।

सीताराम चतुर्वेदी :— 'अभिनव नाट्यशास्त्र'। क. डा. राजेंद्रप्रसाद की 'आत्मकथा'; ख. न. चिं. केलकर का 'लोकमान्य तिलक का जीवनचरित'; ग. पीटर फेयरले का 'मैन ऑन द मून'।

डा. कन्हैयालाल सहल :—'निहालदे-सुलतान'। क. दिनकर की 'उर्वशी'; ख. महादेवभाईनी डायरी (गुजराती); ग. जार्ज आर्वेल का 'नाइन्टीन एटी फोर'।

हंसकुमार तिवारी :—'कला'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. ताराशंकर बंद्योपाध्याय का 'गणदेवता'; ग. रिचर्ड लेविलिन का

Most economical, most versatile

Vinar

Slotted Angles

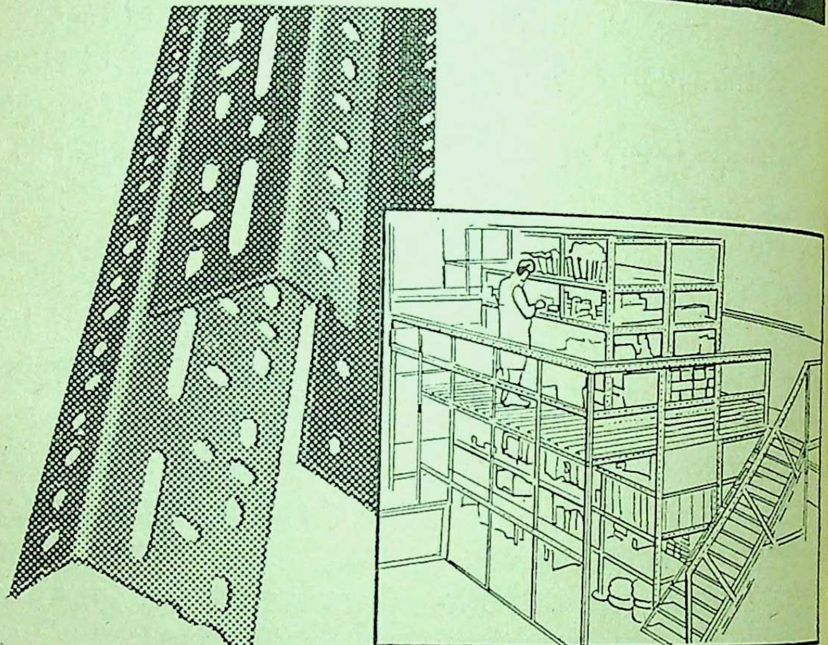

VINAR SYSTEMS PVT. LTD.

5A, Lord Sinha Road, Calcutta 16 Phone : 443661
Branches at Bombay, Delhi, Madras

For your urgent requirements contact:

VINAR SYSTEMS PVT. LTD.
59, Apollo Street, Bombay-1. Phone : 255749

VYAPYANTRA TRADERS
30, New Brahmakshatriya Society
Opp. Kochrab Ashram, Ellisbridge Ahmedabad 6
Telephone No. 85-7966

OBM-2752AR

स्वागतम्
जोज़फ आर्थर

चित्र : जोज़फ आर्थर

‘हाउ ग्रीन वॉज़ माइ वैली’।

डा. विवेकी राय :–‘फिर बैतलवा डाल पर’। क. दिनकर की ‘उर्वशी’; ख. कल्कि का ‘आलै ओलै’ (तमिळ); ग. मुल्कराज आनंद का ‘मार्निंग फेस’।

कृष्णदत्त वाजपेयी :–‘ब्रज का इतिहास’। क. प्रसाद की ‘कामायनी’; ख. बंकिमचंद्र की ‘रजनी’; ग. आनंद कुमारस्वामी का ‘हिस्टरी ऑफ इंडियन एंड इंडोनीशियन आर्ट’।

महावीर अधिकारी :–‘मानस मोती’ (उपन्यास)। क. दिनकर की ‘उर्वशी’; ख. ताराशंकर बंद्योपाध्याय का ‘आरोग्य-निकेतन’; ग. हरमन हेस का ‘सिद्धार्थ’।

रवींद्रनाथ त्यागी :–‘आदिम राग’। क. फणीश्वरनाथ रेणु की ‘ठुमरी’; परशुराम की ‘आनंदीबाई’; ग. स्टाइन बेक का ‘द पर्ल’।

रामनारायण उपाध्याय :–‘धुंधले कांच की दीवार’। क. डा. वासुदेवशरण अग्रवाल की ‘[illegible]’; ख. [illegible] का ‘श्रीकांत’; ग. गोर्की का ‘मदर’।

जगदीश चतुर्वेदी :–‘इतिहासहंता’ (कविता-संग्रह)। क. राजकमल चौधरी का ‘मुक्ति-प्रसंग’ (कविता); ख. मलय राय चौधरी का ‘जख्म’ (कविता); ग. कामू का ‘प्लेग’।

शशिप्रभा शास्त्री :–पुस्तक जो अभी लिखी जानी है। क. प्रेमचंद का ‘गोदान’; ख. बुद्धदेव बसु की ‘रात भर वर्षा’; ग. ताल्सताय की ‘अन्ना कैरेनिना’।

काका हाथरसी :–‘कहँ काका कविराय’। क. आचार्य चतुरसेन की ‘वार्वाचिन’; ख-ग. कुछ पढ़ा नहीं।

वीरेंद्र मिश्र :–‘अविराम चल मधुवंती’। क. रमेश बक्षी का ‘अठारह सूरज के पौधे’; ख. जयवंत दळवी की ‘घुन लगी बस्तियां’ (मराठी); ग. हेमिंग्वे का ‘द ओल्ड मैन एंड द सी’।

दिनकर कौशिक :–कालपात्र में गाड़ने लायक चिरंतन लेखन मैं कर नहीं पाया। क. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी का ‘बाणभट्ट की आत्मकथा’; ख. डा. इरावती कर्वे का ‘युगांत’ (मराठी); ग. दास्तोएव्स्की का ‘क्राइम एंड पनिशमेंट’।

नीरज :–‘प्राणगीत’। क. प्रसाद की ‘कामायनी’; ख. रवींद्रनाथ की ‘गीतांजलि; ग.×।

मेहरुन्निसा परवेज :–‘कोरजा’ (उपन्यास)। क. शिवप्रसाद सिंह का ‘गली आगे मुड़ती है’; ख. शंकर की ‘चौरंगी’ (बंगला); ग. दाफ्ने दयू मारियेर की ‘रेबेका’।

मन्नू भंडारी :–‘आपका बंटी’। क. ख ग.×।

★

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल,' तीसरी मंजिल, २४१ बैकबे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०० ०२१

तार : SODACHEM

फोन : २९२४०७–२९३२९४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

*** अपग्रेडेड इलमनाइट ***

(सिंथेटिक रूटाइल ९०-९२ Tio_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

- **कास्टिक सोडा**
- **सोडियम बाइकार्बोनेट**
- **केल्शियम क्लोराइड**
- **लिक्विड क्लोरीन**
- **सोडा एश**
- **अमोनियम बाइकार्बोनेट**
- **ट्राइक्लोरो एथिलीन**
- **हाइड्रोक्लोरिक एसिड**

*** साल्ट ***

टेलिफोन : २९३४५५
टेलिग्राम : BRASHEET
सरकारी लिस्ट पर

भाऊसाहब थत्ते एंड कंपनी

स्थापना १९४७

इंजीनियर–आयातक–स्टाकिस्ट

५वां माला, क्रिसेन्ट चेम्बर्स, टैंमरिन्ड लेन,
फोर्ट, बम्बई–४०० ००१.

हाईग्रेड कास्ट स्टील पेरेलल स्लाइड ग्लोब और आयसोलेटिंग वाल्स, तांबा, पीतल और स्टेनलेस स्टील पाइप फिटिंग्स, पेपर, तेल, टेक्सटाइल. केमिकल और रबर उद्योगों के लिये हमारे उपरोक्त पते पर संपर्क करें।

सेल-टेक्स

मेल-टेक्स

- खाज,
- चमडी कटने,
- खरोच तथा
- फुन्सीयो के लिये

दाद का मलहम

फार्मा-मेडीको (इण्डीया) प्रा. ली. बंबई-४०

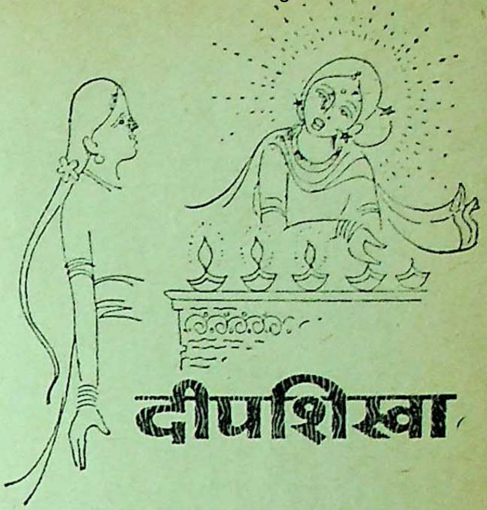

दीपशिखा

सुखबीर की बालकथा

रात आधी से ज्यादा बीत गयी थी। नीता को नींद नहीं आ रही थी । आखिर वह घर से बाहर निकली । आंगन में आकर उसने चारों ओर नजर दौड़ायी। दीवाली के अधिकांश दिये बुझ चुके थे । तब उसने आकाश की ओर देखा । उसमें तारे और भी चमकीले और बड़े-बड़े लग रहे थे। तभी उसे उन तारों में एक कांपती हुई ज्योति दिखाई दी और वह ज्योति उसे अपनी ही ओर आती हुई प्रतीत हुई । उसे लगा, जैसे हाथ में दिया लिये कोई आकाश से नीचे उतर रहा है। वह उसे एकटक देखती रही । ज्योति ज्यों-ज्यों नीचे आ रही थी, बड़ी बनती जा रही थी । फिर तो वह इतनी बड़ी बन गयी कि जैसे कड़ाही जितने बड़े दिये की ज्योति हो । पर नीता को न तो दिया दिखाई दिया, न दिया उठाये कोई व्यक्ति ही ।

वह हैरान होकर इस बारे में सोच ही रही थी कि ज्योति को बिलकुल अपने सामने पाकर चौंकी । वह ज्योति बहुत बड़ी थी—आदमी जितनी बड़ी—और उस ज्योति में एक स्त्री दिखाई दे रही थी। वह स्त्री इतनी सुंदर थी कि परियां भी उसकी तुलना में क्या सुंदर होंगी ।

नीता समझ नहीं पा रही थी कि वह स्त्री ही ज्योति है, या उस ज्योति ने स्त्री का रूप धारण कर रखा है।

‘मैं दीपशिखा हूं ।’ स्त्री ने अपना परिचय देते हुए कहा।

‘दीपशिखा ! ...... यानी यह नाम है तुम्हारा ?’ नीता ने पूछा ।

‘हां, नाम ही समझो’, स्त्री ने कहा और फिर चारों ओर इशारा करते हुए पूछा—‘ये सारे दिये बुझे हुए क्यों हैं? दीवाली पर तो रात-भर दिये जलने चाहिये।’

‘शायद हवा से बुझे गये।’ नीता ने कहा।

‘तो इन्हें फिर से जलाना चाहिये,’ स्त्री ने कहा और उन दियों की ओर चल दी। हर बुझे दिये को वह हाथ छुआकर जलाने लगी। सभी दिये जल गये, तो चारों ओर प्रकाश फैल गया।

स्त्री अब लौटकर नीता की ओर आ रही थी। उसकी झिलमिल करती सुंदरता को देखते हुए नीता का ध्यान अपनी ओर गया और वह एकाएक उदास हो उठी। उसे लगा कि वह स्वयं तो किसी दिये की अधजली, बुझी हुई वत्ती जैसी है।

‘क्यों, क्या हुआ ?’ स्त्री अब वापस नीता

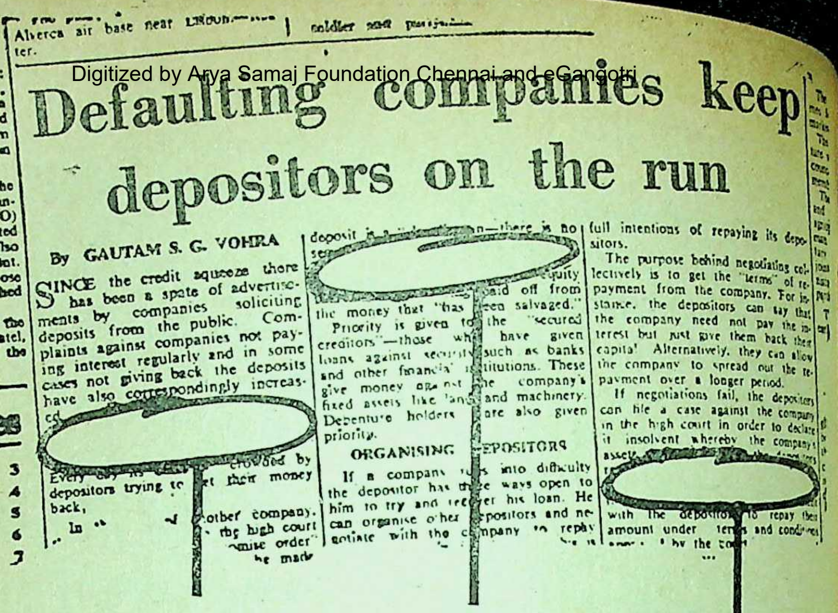

Alverca air base near Lisbon ... | soldier and ...

Defaulting companies keep depositors on the run

By GAUTAM S. G. VOHRA

SINCE the credit squeeze there has been a spate of advertisements by companies soliciting deposits from the public. Complaints against companies not paying interest regularly and in some cases not giving back the deposits have also correspondingly increased [illegible] crowded by [illegible] Every day its [illegible] depositors trying to get their money back,

In [illegible] other company. [illegible] the high court [illegible] omise order [illegible] he made [illegible] deposit is [illegible] n—there is no se[illegible] equity [illegible] paid off from the money that "has been salvaged."

Priority is given to the "secured creditors"—those who have given loans against security such as banks and other financial institutions. These give money against the company's fixed assets like land and machinery. Debenture holders are also given priority.

ORGANISING DEPOSITORS

If a company runs into difficulty the depositor has three ways open to him to try and recover his loan. He can organise other depositors and negotiate with the company to repay [illegible] full intentions of repaying its depositors.

The purpose behind negotiating collectively is to get the "terms" of repayment from the company. For instance, the depositors can say that the company need not pay the interest but just give them back their capital. Alternatively, they can allow the company to spread out the repayment over a longer period.

If negotiations fail, the depositors can file a case against the company in the high court in order to declare it insolvent whereby the company's assets [illegible] the depositors [illegible] with the depositors to repay their amount under terms and conditions [illegible] by the court

...

फोर्ट क्षेत्र की एक हाईबोर्ड कम्पनी ने पिछले २ वर्षों से जमाकर्ताओं को भुगतान नहीं किया है।

कम्पनी का दिवाला होने पर, जमाकर्ताओं का नम्बर सबसे बाद में आता है।

दिवाले के आवेदन पर न्यायालय में कभी कभी समझौता हो जाता है।

टाइम्स आफ-इंडिया में प्रकाशित एक खबर

जीवन बीमा-सुरक्षा पाने का सबसे सुरक्षित और विश्वस्त तरीका है।

(भारत सरकार द्वारा पूर्णतया गारन्टी शुदा है)

ऊँची दर पर ब्याज वाली योजनायें आकर्षक
होती हैं, परन्तु उनसे मृत्यु होने पर सुरक्षा नहीं मिलती।
केवल जीवन बीमा द्वारा ही जीवन पर जोखिम से
सुरक्षा मिलती है। इसलिए बीमा कराने के दिन से ही,
आप उस पूरी राशि के लिए आश्वासित हैं जिसे
बचाने की आपकी योजना है—उन अंशांश बचत योजनाओं की
तरह नहीं जिनमें कुल जमा-राशि ही मिलती है।

योगक्षेमं वहाम्यहम्

जीवन बीमा का दूसरा विकल्प नहीं है।

RADEUS/LIC/AS 12 HIN

के पास आ गयी थी। 'अचानक इतनी उदास क्यों हो गयी ?'

'तुम्हारे झिलमिलाते रूप को देखकर मुझे लगा, मैं तो जैसे बुझी हुई बत्ती हूं।'

स्त्री ने उसे ध्यान से देखा और बोली—'पर उदास होकर तो तुम और भी बुझी-बुझी-सी लग रही हो।'

'मेरा रंग भी तो सांवला है', नीता बोली—'मैं कमजोर भी इतनी हूं, जैसे कोई सूखी हुई टहनी हो। सच पूछो तो मेरा रंग-रूप ही ऐसा है कि मैं बुझी-बुझी-सी लगती हूं।'

'नहीं, यह बात तो नहीं है,' स्त्री ने कहा—'जरा ध्यान से देखो तो मुझे। मुझमें यह जो नीली-सी आभा दिखाई देती है, यह मेरे सांवले रंग की ही तो झलक है।'

'अरे हां!' नीता के मुंह से निकला—'सचमुच, तुम तो सांवले रंग की हो। फिर भी इतनी सुंदर.....'

'और क्या कभी तुमने आईने में अपनी आंखें नहीं देखीं ? कितनी बड़ी-बड़ी आंखें हैं तुम्हारी! पर कितनी फीकी-फीकी-सी और मटमैली-सी हैं। ये आंखें तो बुझे हुए दियों से भी ज्यादा अंधेरी दिखाई देती हैं।'

'तो इन्हें अपना हाथ छुआकर प्रकाशित कर दो न, जैसे तुमने उन बुझे हुए दियों को जला दिया।'

'नहीं, मैं इन्हें प्रकाशित नहीं कर सकती।'

'क्यों नहीं कर सकती ?' नीता ने निराशा से पूछा।

'इसलिए कि ये दिये नहीं हैं। इनमें तुम्हें खुद ही प्रकाश भरना होगा। प्रकाश से भर जाने पर ये तुम्हारे चेहरे को ही नहीं, तुम्हारे पूरे जीवन को प्रकाशित कर देंगी।'

'वह कैसे ? भला कैसे प्रकाश भरूं इनमें ?'

'ये जन्म से ही ऐसी बुझी-बुझी, फीकी-फीकी-सी तो नहीं रही होंगी ?'

'नहीं। बचपन में ये ऐसी नहीं थीं। बाद में, पता नहीं, इनमें क्या खराबी हो गयी कि यह ऐसी बन गयीं।'

'जरा देखूं तो कि आखिर ऐसा क्यों है।' स्त्री झुककर नीता की आंखों में झांकने लगी, फिर बोली—'यह तो गंदला है और लगता है कि यह घृणा के कारण है, ईर्ष्या के कारण है। शायद तुम दूसरों से घृणा करती हो, और दूसरों पर गुस्सा भी। क्यों ?'

नीता कुछ क्षण चुप रही। आखिर उसने कहा—'हां, कभी-कभी—किसी-किसी से। असल में, हमारे पड़ोस की लड़कियां बहुत बुरी हैं। और मेरी कक्षा की भी सभी लड़कियां बहुत खराब हैं। वे मेरे साथ अच्छी तरह नहीं रहतीं।'

'तुम भी तो उन्हें अच्छा नहीं समझती।'

'वे हैं ही बुरी, तो अच्छा कैसे समझूं।'

'पर उनसे घृणा करके तुम खुद बुरी क्यों बनो ? तब तुममें और उनमें फर्क ही क्या हुआ ?'

नीता कुछ क्षण चुप सोचती रही। अंत में उसने पूछा—'तो क्या मेरी आंखों के गंदलेपन का यही कारण है ?'

'हां, मुझे तो यही लगता है।'

'तब तो इसका मतलब है कि मैं अपनी

devices or equipments

HIRECT RECTIFIERS

are made to be faithful

When perfection goes into DC power supplies, the result is a confirmed faithfulness of semi-conductor devices—a faithfulness that ensures smooth operation of your unit. Backed with years of Westinghouse expertise, Hirect rectifiers bring you the best in technical competence. Hirect is equipped to chalk out and design the most suitable equipment your power system demands. Like rectifiers, Hirect engineers are faithful to your requirements.

Hirect

HIND RECTIFIERS LTD.
MARKETING DIVISION
Mahalaxmi Chambers,
Bhulabhai Desai Road,
BOMBAY-26.

heros'-HR47-A

आंखों में का मैल साफ कर सकती हूं। तब क्या ये पहले की तरह जगमगाने लगेंगी ?'

'हां ! पर सिर्फ मैल साफ करने से ही उतनी जगमगाहट नहीं आयेगी। पूरी चमक के लिए इनमें खुशी भरनी होगी—यानी अपने मन में खुशी भरनी होगी।'

'तो ठीक है। मैं दिन-भर खुश रहा करूंगी,' नीता ने ऐसे उत्साह से कहा, जैसे उसे बहुत आसान इलाज मिल गया हो।

स्त्री मुस्करायी—'दिन-भर खुश रहोगी ? खुश रहना इतना आसान नहीं है। अपने चारों ओर देखो, लोग कितने दु:खी और उदास नजर आते हैं। कितनी आंखें हैं, जो अंधेरी दिखाई देती हैं। इन दियों की तरह उनमें भी ज्योति जगायी जा सकती है।'

'वह कैसे ?' नीता ने उत्सुकता से पूछा।

'उन्हें खुशी देकर—उनके मन में खुशी भरकर। जब आदमी दूसरों को खुशी देता है, तो उससे कई गुना ज्यादा खुशी खुद भी पाता है।'

'हां, अब समझी,' नीता ने सोचते हुए कहा—'अब समझ में आयी बात।'

उसी समय स्त्री ने चौंककर सामने देखा और बोली—'वह ..... वह बूढ़ा रास्ते से भटक गया लगता है। शायद अंधा है। कहीं ठोकर खाकर गिर न पड़े।'

'हां, सचमुच !' नीता बोली—'आगे एक गड्ढा भी है। कहीं उसी में न गिर पड़े। मैं अभी आयी।' वह लपककर बूढ़े के पास गयी और उसकी बांह पकड़कर बोली—'बाबा, रास्ता उधर है। तुम्हें कहां जाना है ? आओ, मैं आगे तक छोड़ आऊं।'

जब वह बूढ़े को रास्ते पर काफी आगे तक छोड़कर लौटी, तो बड़ी खुश नजर आ रही थी।

उसके आते ही स्त्री ने कहा—'अच्छा, अब मैं चलूं।'

'कहां जाओगी ?'

'उस बस्ती में। वहां के लगभग सभी दिये बुझे हुए हैं।'

'शायद उनमें बहुत कम तेल डाला गया था। वह गरीब लोगों की बस्ती है न। उन्होंने बस नाम के ही दिये जलाये होंगे।'

'तब तो उन्हें जलाना मुश्किल है।' स्त्री ने उदास होकर कहा।

'जरा ठहरो, मैं घर से तेल लेकर आती हूं। यह कहते हुए नीता अपने घर में गयी। कुछ ही देर में वह तेल का एक छोटा पीपा उठाये आयी और उत्साह से बोली—'चलो, उन दियों में तेल डालकर उन्हें जलायें।''

वहां पहुंचकर नीता उन दियों में तेल डालने लगी और वह स्त्री उन्हें हाथ छुआकर जलाती गयी। उन दियों का प्रकाश नीता को अपने चेहरे पर झिलमिलाता लगा।

कुछ देर के बाद स्त्री चली गयी, तो नीता अपने घर की ओर चल दी। एक बार तो उसे लगा, जैसे किसी दिये की लौ उसके आगे-आगे रास्ते को प्रकाशित करती जा रही है। उसे हैरानी हुई। फिर उसे लगा कि वह रोशनी तो उसी की आंखों की है।

—बी/१९, सन एंड सी, वरसोवा रोड,
बंबई-६१

★

शुभकामनाओं के साथ

मनोलाल किलाभाई एंड कं०

माइल्डस्टील छड़ें, दूसरे इमारती लोहे के सामान, प्लेट, शीट, तार व कीलों के अग्रणी स्टाकिस्ट
आई. टी. सी., जेनिथ, गुजरात के काले व गेल्वनाइज्ड पाइपों व हमारी सहयोगी संस्था।

मेसर्स / एमके डाइ-कास्टिंग इंडस्ट्रीज

[नानफेरस (अल्युमीनियम व जिंक) में **प्रेशर व ग्रेवटी डाईकास्टिंग** निर्माण में विशेषज्ञ] के उत्पादनों के

अधिकृत वितरक

कार्यालय :
लतीफ हाउस, लोहा मार्केट
२३४/२३६, संत तुकाराम रोड
बम्बई–४००००९
फोन : ३२२३३१/३२, ३२२०३५
तार : MANICO (MD)
टेलेक्स : ०११ – ३७६६

कारखाना (एमके)
प्लाट नं. ९६
जी. आई. डी. सी. स्टेट
वापी, ३९६१९५.
जि. बलसाड (गुजरात)
फोन – फैक्टरी : ६०६.
फोन–निवासस्थान : ८१३

इनका साथ कभी न छूटे

बस, जियाजी के सूटिंग्स
पहन लेने के बाद आपको
ी ऐसा ही महसूस होता है...
रोबदार व्यक्तित्व
और तन संवारनेवाले ये
सूटिंग्स जिसने भी पहने,
यही कहा — इनका साथ
कभी न छूटे...

J
जियाजी
सूटिंग
एवं ड्रेस-मटीरियल

जियाजीराव कॉटन मिल्स लिमिटेड,
बिरलानगर (म. प्र.)

MAPP-JSU-751 Hin

वार्षिक मूल्य रु. २४) (मूल्य रु. ३-६०

नवंबर (१-११-१९७५) मूल्य रु० ३-६० Regd. No.

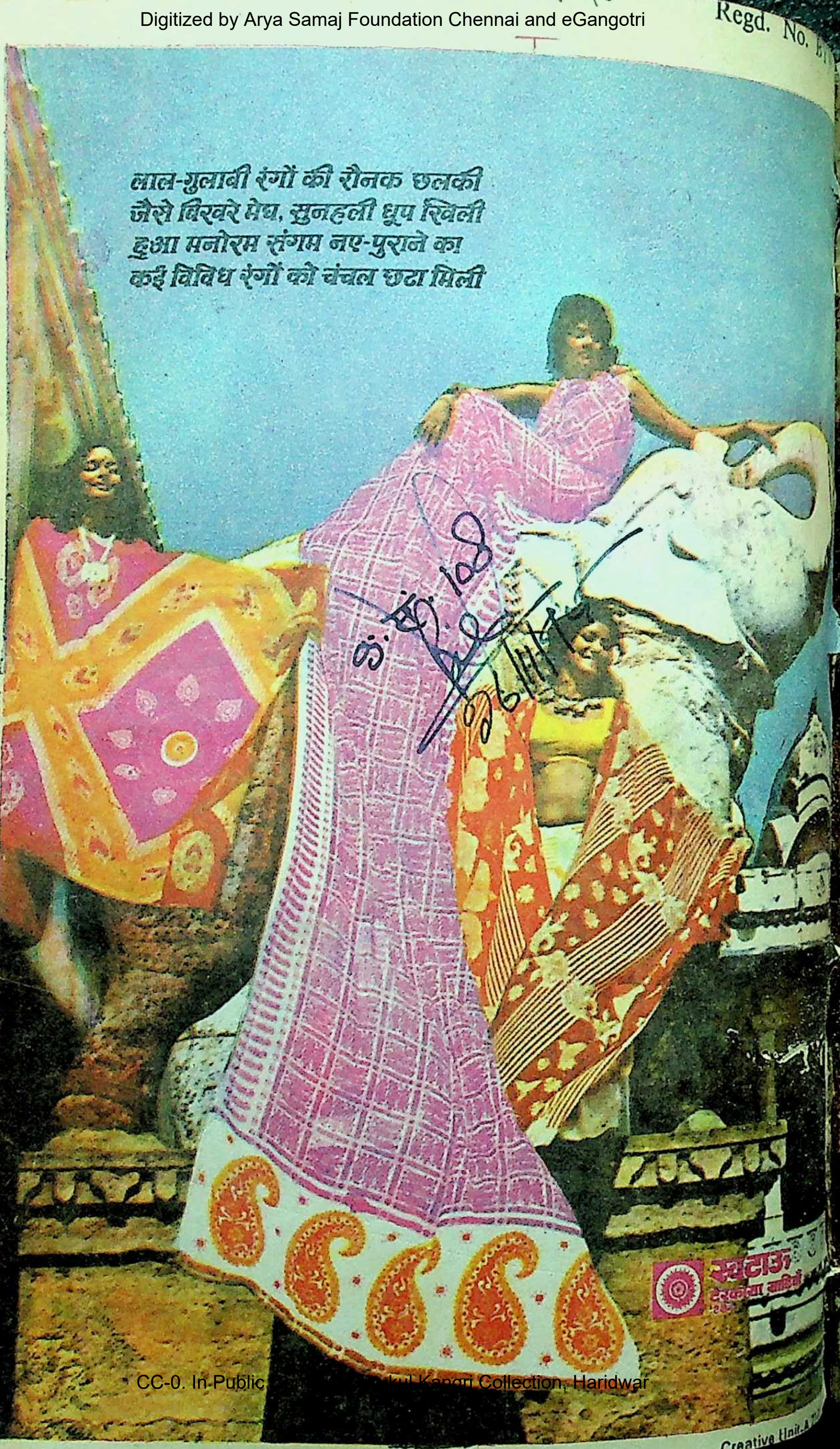
लाल-गुलाबी रंगों की रौनक छलकी
जैसे बिखरे मेघ, सुनहली धूप खिली
हुआ मनोरम संगम नए-पुराने का
कई विविध रंगों की चंचल छटा मिली
Creative Unit-A

12/2/76

नवनीत हिंदी डाइजेस्ट

संबर १९७५

७

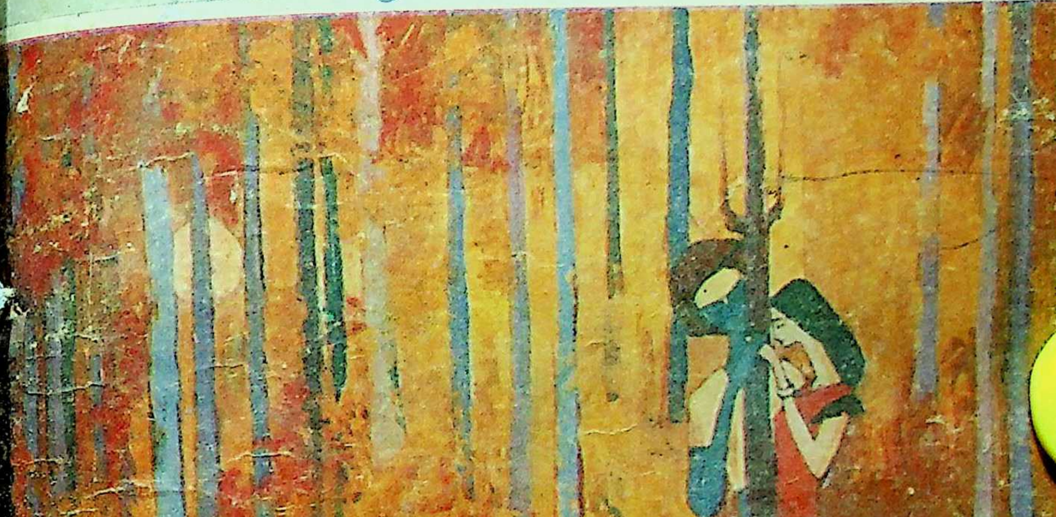

मूल्य रु. २

नयी उमंग, नयी तरंग

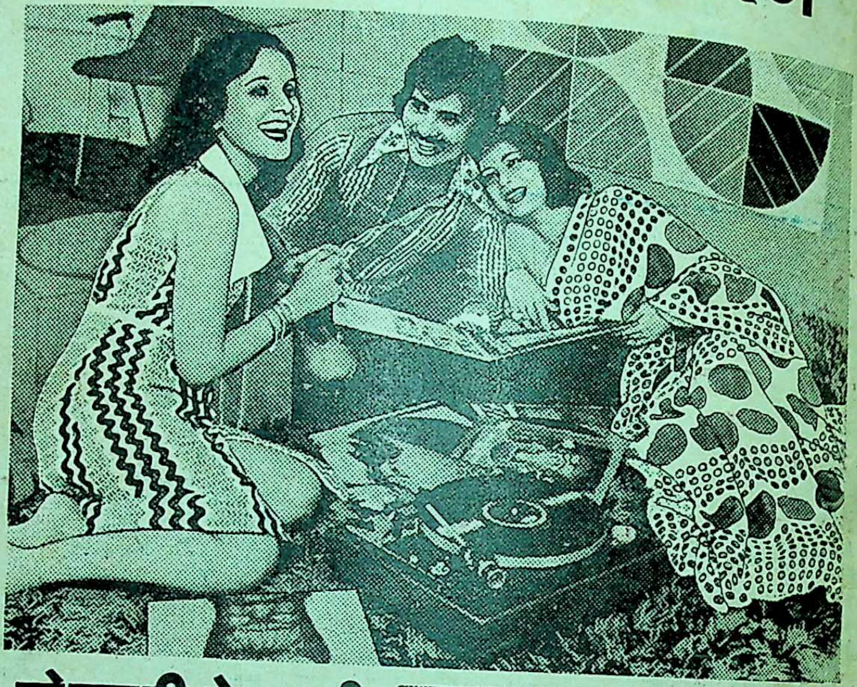

सेन्चुरी के सूती
कपड़ों के संग

सैन्चुरी – १००% सूती कपड़ों के लिए!

दि सेन्चुरी स्पि. एण्ड मैन्यु.
कं. लि. बम्बई-४०० ०२५

Adroit-237-Hindi

मत समझिए कि यह कोई
अचार की मामूली बरणी है
यह तो बेडेकर के सर्वोत्तम
उत्पादनों में से एक है

*सुगन्ध और सुस्वाद के लिए सुपरिचित
यह उत्पादन ६९ वर्षों के लम्बे अरसे से
भारत के घर-घर में मशहूर है*

सुरुचिपूर्ण महिलाएँ तो बेडेकर उत्पादनों की तारीफ़ करते नहीं थकतीं। बेडेकर के कई उत्पादन हैं जैसे अचार, मसाले, पापड़ व चटनी जो अपणी विशुद्धता और उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं। बेडेकर के सभी उत्पादन अन्तराष्ट्रीय स्तर की लीक-प्रूफ़ पैकेजिंग में मिलते हैं। बेडेकर के उँचे दर्जे के उत्पादन यानी आपकी पहली पसन्द।

व्यापारिक पूछताछ :
व्ही. पी. बेडेकर
एण्ड सन्स प्रा. लि.
बम्बई - ४ (भारत)

BEDEKAR
BEDEKAR'S
MANGO PICKLE
बेडेकर आंबा लोणचे

बेडेकर

बेडेकर अचार • बेडेकर मसाले • बेडेकर पापड • बेडेकर चटनी

B.Vasant/VPB/1-75

१०,००० रु० = ७७,६१६ रु०
अपनी बचत ८ गुना कीजिए !

१०,००० रु० २१ वर्ष में
७७,६१६ रु० हो जाते हैं

खरीदिए
राष्ट्रीय बचत पत्र

पंचम निर्गम

अधिकतम ब्याज कमाइये
इससे अधिक ब्याज
आपको कहीं नहीं मिलता

राष्ट्रीय बचत संगठन
पोस्ट बाक्स नं० ९६, नागपुर

davp 75/229

एयर-इंडिया प्रस्तुत करती है सप्ताह में पैंसठ उड़ानें—५ महाद्वीपों के लिए.

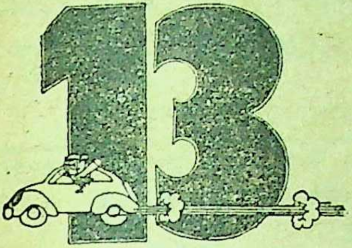

यूरोप

यूरोप के लिए सप्ताह में १३ उड़ानें
लंदन? नौ ७४७ विमानों को आपका इंतज़ार है. इनमें से तीन, शुक्रवार, शनिवार और मंगलवार को, [illegible] [illegible]वाले हैं. अन्य छह में आपको रोम, पेरिस या फ्रैंकफर्ट हो कर जाने की सुविधा मिलती है. इसके अलावा दो ७०७ विमान जिनेवा हो कर. मॉस्को? दो ७०७ विमान.

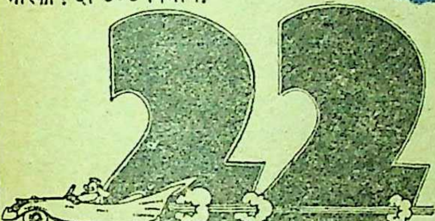

मध्य पूर्व

मध्य [illegible] के लिए सप्ताह में २२ उड़ानें
बेरूत? पाँच ७४७ विमान उड़ान भरने को तैयार. कुवैत? चार ७४७ तथा दो ७०७ विमानों में से आप मनपसंद चुनाव कर सकते हैं. दुबई के लिए चार ७०७ विमानों में से कोईसा भी चुनिए. बहरैन तथा मस्कत के लिए तीन उड़ानें तथा आबू धाबी, कैरो और तेहरान में से प्रत्येक के लिए दो उड़ानें. इसके अलावा अदन, दौहा या दहरान में से प्रत्येक के लिए एक ७०७ विमान.

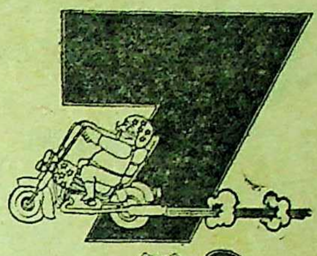

न्यू यॉर्क

न्यू यॉर्क के लिए सप्ताह में ७ उड़ानें
हर दिन ७४७ विमान की एक उड़ान. मध्य पूर्व और यूरोप होते हुए. हमारे विशेष एक्सकर्शन फ़ेयर के अन्तर्गत न्यू यॉर्क जा कर वापस लौटने का किराया आम तौर पर लगनेवाले एकतरफ़ा किराये से भी कम पड़ता है.

साथ ही हर सप्ताह:
६ उड़ानें
जापान के लिए हौंग कौंग हो कर—
४ टोकियो के लिए
२ ओसाका के लिए. १० उड़ानें
दक्षिण पूर्व एशिया के लिए—
६ बैंकॉक के लिए और
४ सिंगापुर के लिए.
२ उड़ानें
ऑस्ट्रेलिया के लिए
३ उड़ानें
पूर्व अफ्रीका के लिए
२ उड़ानें
मॉरिशस के लिए.

एयर-इंडिया
आपकी मनपसंद एयरलाईन

AI 9084

जीतिए

हिन्द पॉकेट बुक्स

इनामी प्रतियोगिता में भाग लेकर बड़े-बड़े इनाम प्राप्त कीजिए

पहला इनाम : **मोटर साईकल**
दूसरा इनाम : **रेफ्रीजरेटर**
तीसरा इनाम : **टेलिविज़न**
चौथा इनाम : **रिकार्ड प्लेयर**

पांचवां स्थान पाने वाले बीस व्यक्तियों को हिन्द पॉकेट बुक्स द्वारा संचालित घरेलू लाइब्रेरी योजना का सदस्य बनाकर एक वर्ष के लिए प्रत्येक मास 12 रुपये मूल्य की पुस्तकें मुफ्त भेंट की जाएंगी।

आपको क्या करना है?

- ■ सामने के पृष्ठ पर दिए गए छः प्रश्नों के उत्तर देते समय कोष्ठकों □ में ✓ का चिह्न लगाएं।
- ■ केवल दस शब्दों में यह कथन या स्लोगन लिखें कि हिन्द पॉकेट बुक्स आपको क्यों पसन्द हैं।

नियम

1. प्रत्येक प्रतियोगी को हिन्द पॉकेट बुक्स के किसी भी विक्रेता से कोई-सी तीन पुस्तकें खरीदकर कैशमीमो अपने हल के साथ अवश्य भेजना होगा।
2. एक से अधिक हल भी भेजे जा सकते हैं, परन्तु हर हल के साथ तीन हिन्द पॉकेट बुक्स की कैशमीमो अवश्य लगी होनी चाहिए अन्यथा हल पर विचार नहीं किया जाएगा।
3. घरेलू लाइब्रेरी योजना के सदस्य भी इस प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं, परन्तु उन्हें अपनी मासिक किस्त की पुस्तकों के अतिरिक्त तीन पुस्तकें और मंगवानी होंगी।
4. इस प्रतियोगिता में हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा० लि० के कार्यकर्ता भाग नहीं ले सकते।
5. प्रतियोगिता का निर्णय संस्था द्वारा नियुक्त जजों का पेनल करेगा जो सर्वमान्य होगा।

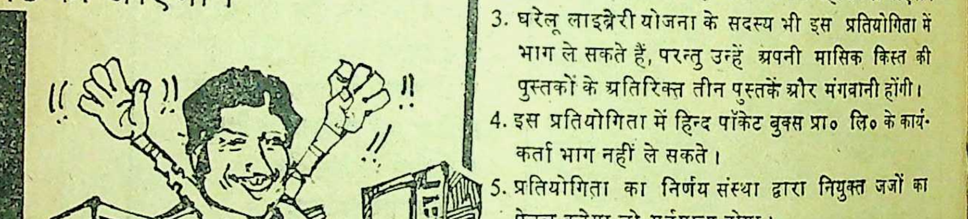

हल भेजने की अन्तिम तारीख 15 दिसम्बर, 1975

अपना हल भेजने के लिए प्रतियोगिता कूपन यहां से काटें या अपने नगर के पुस्तक-विक्रेता से प्राप्त करें।

प्रतियोगिता कूपन

1. हिन्द पॉकेट बुक्स के संबंध में केवल दस शब्दों में यह कथन (स्लोगन) लिखिए कि हिन्द पॉकेट बुक्स आपको क्यों पसन्द हैं। क्योंकि……………………………………………………………………………………
2. हिन्द पॉकेट बुक्स की स्थापना कब हुई थी ? ☐ 1957 में ☐ 1958 में ☐ 1960 में
3. हिन्द पॉकेट बुक्स की ओर से प्रकाशित सबसे पहली पुस्तक कौन-सी थी ? ☐ गीतांजलि ☐ अमर वाणी ☐ आभा
4. हिन्द पॉकेट बुक्स द्वारा यह विज्ञापन छपने तक कुल कितनी पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं ? ☐ 850 से 1150 ☐ 1150 से 1800 ☐ 1800 से 2500
5. हिन्द पॉकेट बुक्स किन-किन भाषाओं में प्रकाशित होती हैं ? ☐ हिन्दी ☐ अंग्रेजी ☐ पंजाबी ☐ बंगाली ☐ गुजराती ☐ उर्दू
6. क्या हिन्द पॉकेट बुक्स की ओर से सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान का साहित्य प्रतिमास प्रकाशित होता है ? ☐ हां ☐ नहीं

यदि घरेलू लाइब्रेरी योजना के सदस्य हैं तो सदस्यता-नम्बर लिखें……………………

न

आपका नाम……………………………………

पता……………………………………………

……………………………………………

इनामों की घोषणा फरवरी के अंतिम सप्ताह के 'धर्मयुग' में की जाएगी।

कैशमीमो सहित अपने हल इस पते पर भेजें—

प्रतियोगिता

हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा. लिमिटिड

जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली- 110032

बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने की अनोखी दवा

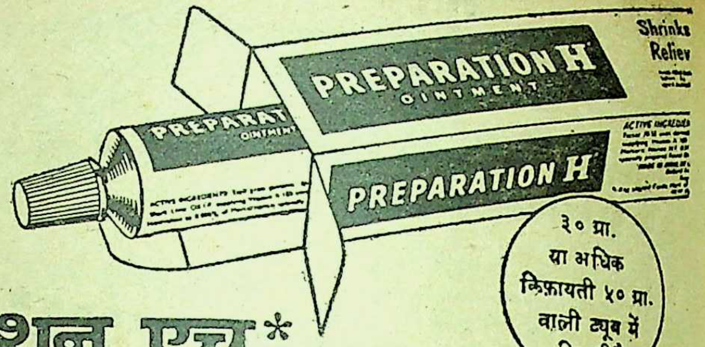
PREPARATION H
OINTMENT
PREPARATION H
PREPARAT
OINTMENT
Shrinks
Reliev

३० ग्रा.
या अधिक
क़िफ़ायती ५० ग्रा.
वाली ट्यूब में
मिलती है

प्रेपरेशन एच्*

अमरीकी डाक्टरों की आज़मायी हुई
- इससे खुजली मिनटों में रुक जाती है
- दर्द से फ़ौरन राहत मिलती है
- यह बवासीर के बहुत ही बिगड़े रोगों को छोड़ कर, बवासीर के मस्सों को बिना ऑपरेशन सुखाने में मदद देती है
- इससे चिकनाहट मिलती है और शौच भी कष्टरहित होता है

मुफ़्त ! बवासीर के बारे में जानकारी देनेवाली मुफ़्त पुस्तिका के लिए (लिफ़ाफ़े में २५ पैसे के डाक-टिकट साथ में भेजकर) आज ही इस पते पर लिखिए : डिपार्टमेंट **PH-83** पो. ऑ. बॉक्स १०३३३, बम्बई-४०० ००१

*Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.
743 PH-92 Hin

४१ रु का आकर्षक
वैदिक साहित्य व कवर मुफ्त
आज ही अपने परिवार में लाएं : प्रभु की अमर वाणी

'चारों वेदों का हिन्दी भाष्य'

लागत रु. ३५०, मूल्य रु. २८४, किन्तु घर-घर में धर्मग्रन्थ पहुंचाने के लिए ३१ दिसम्बर १९७५ तक मूल्य केवल रु. २११। उपहार साथ में। उपहार थोड़े हैं! शीघ्रता करें! आज ही मंगाएं।

१/४ धन अग्रिम भेजें – रेलवे स्टेशन लिखें।

पंडिता राकेशरानी मन्त्री, दयानन्द-संस्थान, १५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
(निकट ३१, नाई वाला) करोलबाग, नई दिल्ली-५, दूरभाष : ५६६६३९

DAM/75

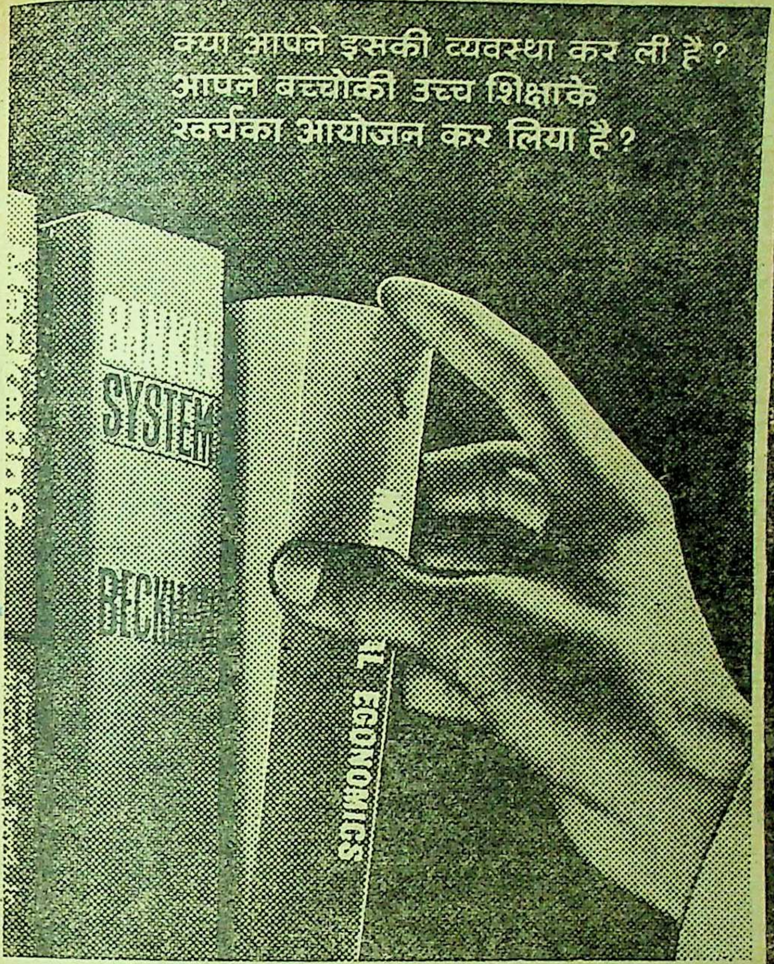
क्या आपने इसकी व्यवस्था कर ली है ?
आपने बच्चोंकी उच्च शिक्षाके
खर्चका आयोजन कर लिया है ?
SYSTEM
BECK
L ECONOMICS

जब आपके बच्चें उच्च शिक्षा पानेके योग्य हो जायेंगे तब उनकी शिक्षाका खर्च आप उठा सकेंगे ?
देना बेंक में बचत खाता या मीयादी जमा खाता खोलकर अभीसे नियमित बचत कीजिये।

देना बेंककी अन्य ६ बचत योजनाएं–

नाबालिग बचत योजना • आवर्ती जमा योजना • मासिक बचत व वार्षिकी योजना • बहुप्रयोजनीय जमा योजना • नकदी प्रमाणपत्र बीमा संबद्ध बचत जमा योजना

देना बेंक

(गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया अंडरटेकिंग)
हेड ऑफिस : हॉर्निमेन सर्किल,
बम्बई ४००००१.

Ratan Batra/DB/H/238-A

बढ़ता बचपन
बलवान बने-
इनक्रिमिन* से

बचपन के पहले २ वर्ष, मुन्ने के लिये बढ़ने के दिन हैं। इन दिनों उसका शरीर फूल की तरह खिलता है- विकसित होता है, उसे इनक्रिमिन ड्रॉप्स जरूर दीजिये। फिर देखिये, खाने से आनाकानी के बजाये इसकी भूख कैसे जाग उठती है—खाया पिया तन को लगने लगता है। लाभदायक विटामिनों से परिपूर्ण इनक्रिमिन में विशेष अमीनो एसिड, लायसिन भी शामिल है— जो आहार के सभी पोषक तत्वों को ग्रहण करने में सहायता करता है।

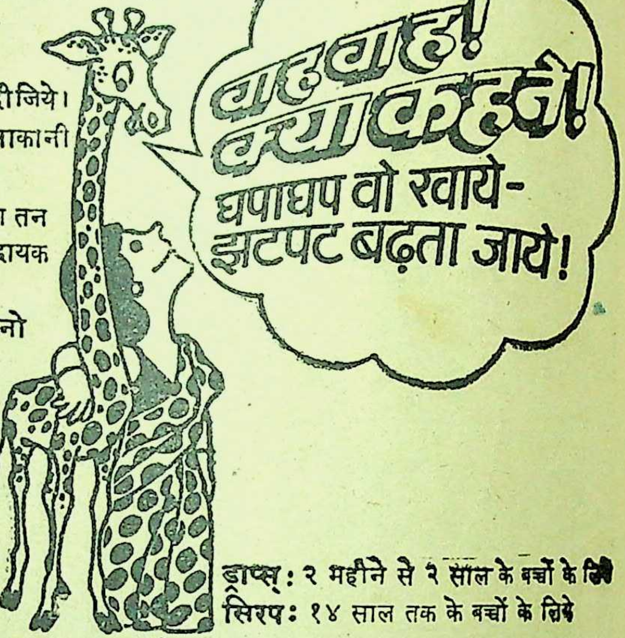
वाह वाह! क्या कहने!
घपाघप वो खाये-
झटपट बढ़ता जाये!

ड्राप्स: २ महीने से २ साल के बच्चों के लिये
सिरप: १४ साल तक के बच्चों के लिये

इनक्रिमिन* टॉनिक
अधिक आहार से अधिक बढ़ाये-
खाया पिया अंग लगाये

डॉक्टेरों का विश्वासपात्र नाम — Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक [illegible]
*अमेरीकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क

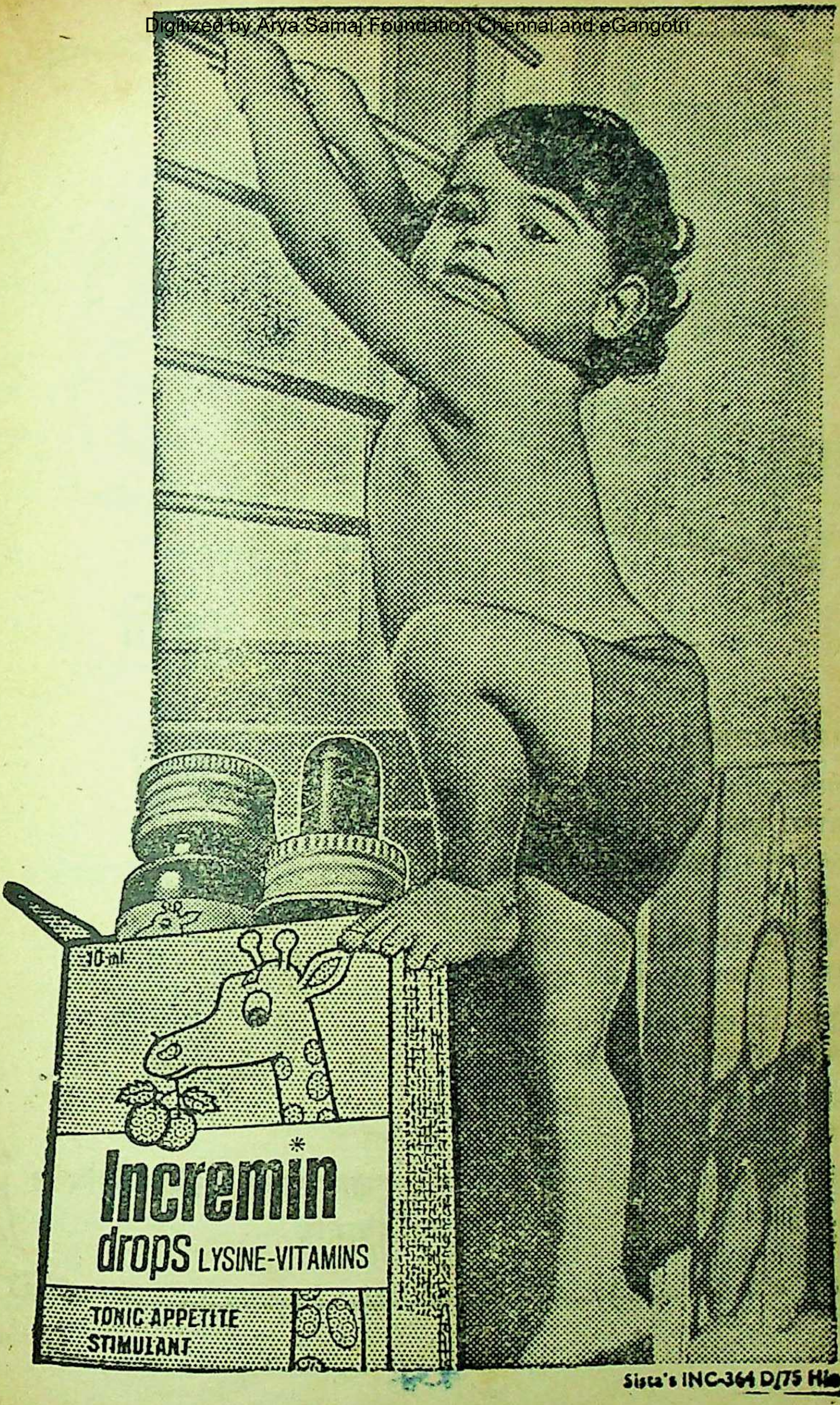
10 ml.
Incremin
drops LYSINE-VITAMINS
TONIC APPETITE
STIMULANT

Sista's INC-364 D/75 Hin

महिलायें सदियों से
खाना बनाती आ रही हैं
और अब
महिलायें सदियों तक

देवीदयाल प्रेशर कुकर
में स्वादिष्ट भोजन
बनाती रहेंगी

विशिष्टतायें :

गैस्केट अधिक चौड़ा है और इसकी गोलाई कुकर के ढक्कन के समान हैं। इससे भाप रिसने की कोई सम्भावना नहीं।

वाल्वपिन स्टेनलैस स्टील के बने होने के कारण ज़ंग से बचे रहते हैं।

फ़ैरुल डाई कास्ट होने के कारण सुन्दर, मज़बूत तथा टिकाऊ होते हैं।

फैरुल में ब्रास नट चूड़ियों को मज़बूत पकड़ देते हैं। (पेटैन्ट विचाराधीन)

कुकर ISI द्वारा निर्धारित आदेशों के अनुसार टैस्ट किया गया है।

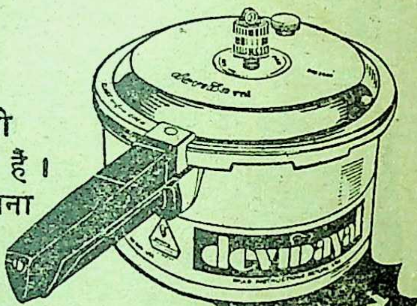

समय बचाये
ईंधन बचाये

निर्माता
हिन्दुस्तान चेन्स प्राईवेट लिमिटेड
गाज़ियाबाद

नवनीत

वर्ष २४ : अंक १२ * इस अंक में * दिसंबर १९७५

पत्र-वृष्टि	१३	संपादक की डांक से
पचास वर्ष बाद की दुनिया	१८	आंद्रेई सखारोव
स्पेन : मरणासन्न अवस्था	२६	गिरिजाकुमार
गुरु का प्रशिक्षण	३३	इदरीस शाह
जीवन-तीर्थ	३४	सुवीर
महावीर की मांगलिक विरासत	३६	पंडित सुखलाल
माचिस वाली लड़की	४१	हान्स क्रिश्चन एंडरसन
कालपात्र के लिए पुस्तकें	४४	....
प्रिय मित्र की याद	४८	एम. पी. गांधी
वल्लभभाई	५३	रामनाथ सुमन
पश्चिमी संस्कृति की आत्मा रुग्ण है	५६	स्वर्गीय आर्नाल्ड टॉयन्बी
विज्ञान-बिंदु	६१	केजिता
कविताएं	६४	कार्ल सैंडबर्ग, सेठिया, जाफरी
इंसाफ कहां है (उर्दू हास्य)	६५	कन्हैयालाल कपूर
कारागार में जनमा साहित्य	६८	विष्णु प्रभाकर
नारी-प्रगति : मील के पत्थर	७५	....
धिक्कार महिला-वर्ष !	७९	जर्मेन ग्रियर

संस्थापक	संपादक	सहसंपादक	व्यापार-व्यवस्थापक
स्व. श्रीगोपाल नेवटिया	**नारायण दत्त**	**सुरेश सिन्हा**	**महेंद्र महेता**
प्रबंध-संचालक	उपसंपादक	उपसंपादक	प्रबंधक : **सोहनराज पारेख**
हरिप्रसाद नेवटिया	**गिरिजाशंकर त्रिवेदी**	**डा. विष्णु भटनागर**	सज्जा : **ठाकोर राणा**

सफलता : कुछ सूत्र ८३ विशाखदत्त
नीला निशान (सिंधी कहानी) ८४ ताज बलोच
शाही इलाज ८७ अखिल
अफसरों की उदारता (मराठी हास्य) ८८ रमेश मंत्री
बेतार से बात ९३ वंदना मिश्र
अगर आप दिल के दौरे से उठे हों ९४ वैडिम जाइत्सेव
स्मृति के अंकुर ९७ हंसा गर्ग, जगदीश गौड़
हमारे दूरस्थ सगे बांधव १०० कृष्णकुमार गुप्त
सृजन के अनुभव १०४ के. एच. आरा
स्वप्न-संयोग (कविता) १०८ रामावतार चेतन
३३३ वर्ष से जलमग्न जहाज १०९ नरेंद्र छाबड़ा
रिश्ते (हिंदी कहानी) ११३ नरेंद्र चतुर्वेदी
दो सांड, दो योद्धा १२० हडसन स्ट्रोड
जिलास की जेल-डायरी १२५ मिलोवान जिलास
कितने जुझार हैं आप ? १३२ के. यू. ऊर्मि
हंसी के बुलबुले १४१ सत्यनारायण नाटे
अपनी-अपनी दृष्टि १४५ उपाध्याय अमरमुनि
कुछ इधर से, कुछ उधर से १४६ मित्र
ग्रंथ-लोक १४८ शर्मा, पांडेय, भटनागर
उर्वर मस्तिष्क का रहस्य १५४ बलवीर
कितनी जमीन, कितने शेयर १५७ रवींद्र जैन

★

आवरण-चित्र : राम जैसवाल

चित्रसज्जा : पिकासो, आरा, लक्ष्मण, लूरी, लैंगहैमर, मारियो, ओके, गिलमोर, प्लांतू, आचरेकर, हेब्बार, अंजू मेहरा, भटनागर, राणा, चव्हाण, जोजफ आर्थर।

संपादकीय पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत (हिंदी डाइजेस्ट), ३४१ तारदेव, बंबई-३४
फोन : ३७२८४७

व्यवस्था-संबंधी पत्र-व्यवहार का पता : नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, अशीष बिल्डिंग, ३३५ बेलासिस रोड, ताडदेव, बंबई-३४. फोन : ३९२८८७

चंदे की दरें : (भारत में) एक वर्ष : २४ रु; दो वर्ष : ४६ रु; तीन वर्ष : ६६ रु.
विदेशों में : (समुद्री डाक से) एक वर्ष : ६० रु.; दो वर्ष : १०५ रु.; तीन वर्ष : १५० रु.
(हवाई डाक से) एक वर्ष : १२० रु.; दो वर्ष : २१० रु.; तीन वर्ष : ३०० रु.
भारत में नवनीत का आजीवन सदस्यता-शुल्क ४०० रुपये है।

श्री हरिप्रसाद नेवटिया द्वारा नवनीत प्रकाशन लिमिटेड, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के लिए प्रकाशित तथा **श्री वेंकटेश्वर प्रेस,** ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई-४ में मुद्रित।

पत्र-वृष्टि

दीपावली अंक बहुत प्यारा लगा। कालपात्र वाले प्रश्न के उत्तर मजेदार रहे और साथ ही उससे गोदान, बाणभट्ट की आत्मकथा, झूठा सच, अंधायुग-जैसी रचनाओं के कालजयी होने की पुष्टि भी हुई। **नवनीत** माह-दर-माह अनोखी स्निग्धता पा रहा है। बधाई! **—शेरजंग गर्ग, नयी दिल्ली**

○○○

दीपावली विशेषांक खूब सुंदर और समृद्ध बन पड़ा है। पाठ्य सामग्री का वैविध्य और सुरुचिपूर्ण संचयन मन को आकृष्ट करता है। **नवनीत** के दिवंगत मालिक श्रीयुत श्रीगोपालजी नेवटिया के शब्दचित्र से उनकी बहुमुखी रसिकता, महानुभावता और अभिजातता का सौरभ बिखर रहा है। श्री रामनाथजी सुमन द्वारा अंकित सरदार वल्लभभाई का चरित्रांकन खूब उठावदार है। इसी प्रकार शिवानी का शब्द चित्र 'मरण सागर पारे' की संवेदनशीलता अंतर को आर्द्र बना देती है। 'इतिहास के कुछ राजनैतिक विवाह' लेख भी बड़ा दिलचस्प है। सुरुचिपूर्ण संपादन के लिए बधाई।

अक्तूबर अंक में शेर-विषयक दीर्घ लेख खूब अच्छा बन पड़ा था। बड़ा खोजपूर्ण है। इसी तरह पं. झाबरमल्ल शर्मा और पं. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के शब्दचित्र भी प्रभावक और प्रेरक थे।

—शंकरदेव विद्यालंकार, पोरबंदर

○○○

जब भी रेल्वे बुक-स्टाल पर पत्रिका खरीदने जाता हूं, मेरे अभ्यस्त हाथ सर्वप्रथम **नवनीत** की ओर ही बढ़ जाते हैं। इस बार मधुबनी-शैली के मुखपृष्ठ से युक्त **नवनीत** पत्रिकाओं की भीड़ में अलग ही दिख रहा था। इस दीपावली-विशेषांक की हर रचना मन की गहराई में पूरी तरह उतर गयी। लेकिन जिन रचनाओं की याद अभी भी मन को गुदगुदा रही है, वे हैं—'एक याद' (हिंदी कहानी), 'फूटा मटका' (उर्दू कहानी) तथा 'मरण-सागर पारे।'

लेकिन विशेषांक की सर्वाधिक ज्ञानवर्धक रचना 'कालपात्र के लिए पुस्तकें' है। आशा है, दूसरी किस्त भी इसी प्रकार रोचक रहेगी। प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक विषयों पर महत्त्वपूर्ण सामग्री बहुत ही कम उपलब्ध हो पाती है। इस संदर्भ में 'कलिंग-चक्रवर्ती खारवेल' लेख बहुत ही ज्ञानवर्धक रहा।

—शरद श्रीवास्तव, विदिशा, म. प्र.

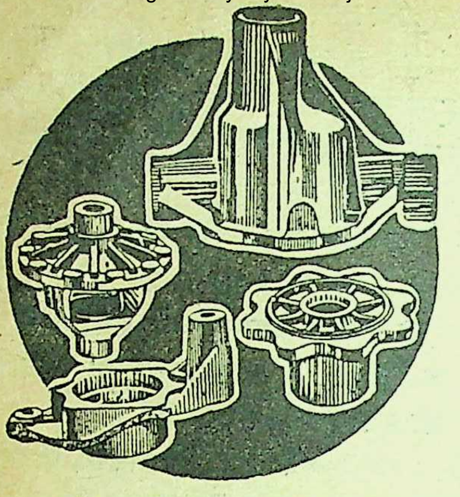

दि इंडियन स्मेल्टिंग एंड रिफाइनिंग कंपनी लिमिटेड

एस० जी० आइरन के कास्टिंग

कांसा, पीतल, गनमेटल, लोहेतर धातुओं तथा इस्पात के पुर्जों व हिस्सों का स्थान ले सकते हैं।

मैलिएबल आइरन के कास्टिंग

अनेक प्रकार की चीजों में इस्पात के कास्टिंग का काम दे सकते हैं।

IS

फेरस फाउंड्री
पंचपाखाड़ी,
पहिला पोखरन
लेन, थाना
(महाराष्ट्र)

KORES

आपकी पत्रव्यवहार की तमाम आवश्यकताओं की पूर्ति।

डुप्लिकेटिंग स्टेन्सिल और स्याही
टाइप-राइटर कार्बन और स्याही
पेन और पेन्सिल के कार्बन कागज
प्रिंटिंग स्याही आदि

कोरस (इंडिया) लिमिटेड

ऑफ–डा. मोसेस रोड,
बंबई-४०००१८

शाखाएं सारे देश में

मारिस गुडेकेर का रोमानी-भरा लेख 'आनंद की असली उम्र' (दीपावली अंक) पढ़ते हुए स्वर्गीय पी. जी. वुडहाउस के लेख 'ओवर सेवेन्टी' की ये पंक्तियां याद हो आयीं :

'आप पूछते हैं कि अब मैं अपने रोजमर्रा के जीवन में क्या बदलाव पाता हूं। लीजिये, मैं एक बदलाव तो अपने प्रति टैक्सी-ड्राइवरों के रुख में पाता हूं। पहले, मुझे टैक्सी से लगभग रौंदते हुए वे खिड़की से झांककर चिल्लाते थे— "बेवकूफ !"; अब चिल्लाते हैं—"बुड्ढे बेवकूफ !"

'हम सत्तर-पारीण लोगों को अपने स्वास्थ्य पर निरंतर गृध्रदृष्टि रखनी पड़ती है और इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए मैंने सारे दिन और देर गये रात तक धूम्रपान करने का अभ्यास डाल लिया है। धूम्रपान शरीर को दृढ़ और पुख्ता बनाता है। ताल्सताय कहते थे कि नहीं बनाता। और देखिये, अब ताल्सताय साहब कहां हैं !'

—विद्याशंकर मिश्र, वाराणसी

०००

यों तो साधारणतया भी आपकी पत्रिका प्रबुद्ध पाठकों की रुचि का बहुत ध्यान रखती है; किंतु दीपावली विशेषांक की रचनाओं का चयन बहुत ही सुरुचिपूर्ण है। शिवानी का शब्दचित्र 'मरण सागर पारे' बहुत मार्मिक है। उसमें हास्य, करुणा एवं वात्सल्य का अद्भुत सामंजस्य है। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि शिवानीजी पालीटेकनिकों को हेय समझती हैं। इस पत्र द्वारा प्रतिवाद करना आवश्यक हुआ, क्योंकि उतनी श्रेष्ठ रचना में, अभिभाविका के आदेश 'अब के फेल हुआ छोकरे, तो पौलीटेकनिक में डाल दूंगी' से भारतीय जनमानस पर त्रिवर्षीय डिप्लोमा स्तर की तकनीकी शिक्षा के प्रति गलत छाप पड़ती है। देश का विकास तकनीशियनों पर अत्यधिक निर्भर है तथा किसी भी श्रेणी में डिप्लोमा-पास व्यक्ति, द्वितीय व तृतीय श्रेणी सायन्स या आर्ट्स के डिग्रीधारियों की तुलना में अधिक सरलता से तुलनात्मक रोजगार पाता है। शायद पालीटेकनिक में हर किसी का प्रवेश इतना सरल भी नहीं है कि अन्यत्र फेल हुओं को उसमें 'डाला जा सके'।

—दिनेशचंद्र, प्राचार्य, पालीटेकनिक,
अशोक नगर, म. प्र.

०००

दीपावली अंक में श्री हरिदत्त वेदालंकार के लेख 'कलिंग-चक्रवर्ती खारवेल' में छपी रेखानुकृतियां डा. वासुदेवशरण अग्रवाल की पुस्तक 'भारतीय कला' में मुद्रित चित्रों पर से तैयार की गयी थीं। **—संपादक**

०००

अक्तूबर ७५ अंक में छपा लेख 'अकेलापन' अत्यंत प्रेरणादायक लगा। अकेलापन मनुष्य के लिए वरदान है, यदि वह उसका सही उपयोग करना जाने। आज के युवक-युवतियां अकेलेपन से घबराकर दूर भागते हैं और उससे छुटकारा पाने के लिए (विशेष रूप से पश्चिमी देशों में) आत्महत्या पर भी उतारू हो जाते हैं। आशा है, 'अकेलेपन

चित्रप्रश्न-४ उत्तर

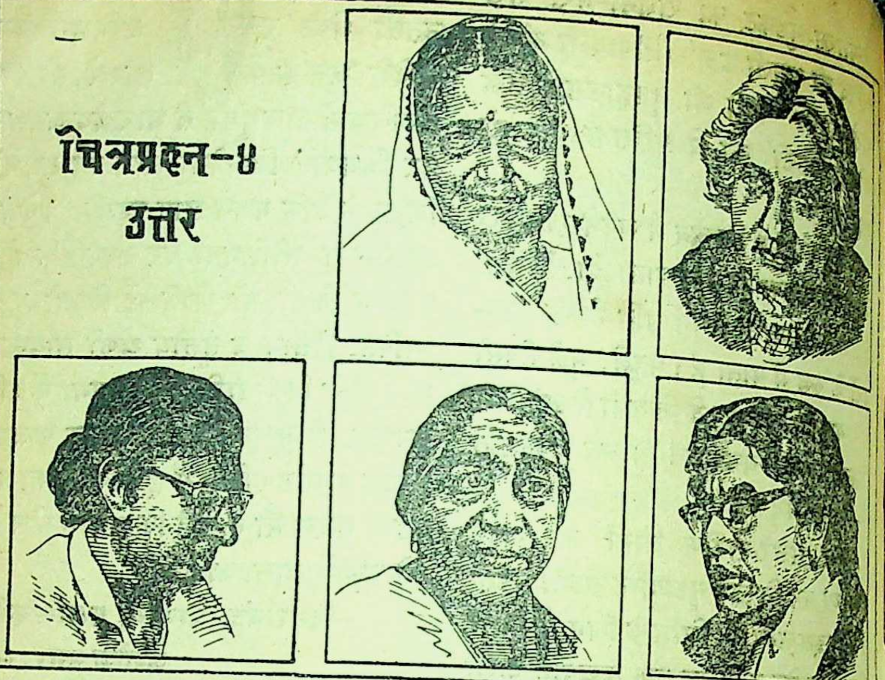

अक्तूबर अंक के चित्रप्रश्न-४ का उत्तर अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष की समाप्ति के इस मास में छपना संयोगवश सामयिक हो गया है। अपने क्षेत्र में प्रथम होने के गौरव से मंडित ये पांच विशिष्ट भारतीय नारियां हैं—प्रथम पंक्ति में बायीं ओर से १. श्रीमती हंसा महेता, प्रथम भारतीय महिला वाइस-चांसलर (बड़ौदा वि. वि.); २. श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित, प्रथम भारतीय महिला राजदूत (रूस) और राष्ट्रसंघ की महासभा की प्रथम महिला अध्यक्ष (१९५३); द्वितीय पंक्ति में बायीं ओर से ३. प्रो. असीमा चटर्जी, भारतीय विज्ञान-कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष (१९७५); ४. श्रीमती सरोजिनी नायडू, भारत की प्रथम महिला राज्यपाल (उत्तर प्रदेश); ५. श्रीमती अन्ना चंडी, उच्च न्यायालय की न्यायाधीश बनने वाली प्रथम तथा अब तक एकमात्र भारतीय महिला (केरल उच्च न्यायालय)।

के अंधेरे' में (जो अकेलेपन को अंधेरा समझते हैं) भटके हुओं के लिए यह लेख प्रकाश-किरण होगा। —रामचंद्र कुल्मी, कोटा-७

०००

नवनीत अक्तूबर १९७५, लेख : 'एक याद' लेखक रांची के श्री राधाकृष्ण। बड़ी आलंकारिक भाषा में गांधीजी की तुलना अन्य ऐतिहासिक व्यक्तियों से की गयी है

और मानव गांधी को मनुष्य न रहने देकर मात्र खयालों का भगवान बना दिया गया है। परंतु मैं तो यहां उस मानव गांधी के विषय में लिख रहा हूं, जो हमारे बीच रहा। वह २ अक्तूबर १८६९ को पैदा हुआ था २ अक्तूबर १८६७ को नहीं, जैसा कि लेख की पहली ही पंक्ति में लिखा गया है। कृपया सुधार कर लें।

–रामरक्षपाल वर्मा, दिल्ली

* इस भीषण भूल की ओर अन्य हितैषी पाठकों ने भी ध्यान दिलाया है। **–संपादक**

०००

अक्तूबर के अंक में श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी का लेख 'ग्रामीणों की ऋणग्रस्तता' पढ़ा। इधर छोटा नागपुर के गांवों तथा औद्योगिक क्षेत्रों में प्रायः ८० प्रतिशत किसान एवं श्रमिक ऋण के बोझ से त्रस्त हैं। मजदूरों के बीच तो सूद की दर २५-३० प्रतिशत प्रतिमास तक है। प्रतिमास ८ रुपये तक ब्याज लेने वालों को तो भला आदमी समझा जाता है। आपत्-काल की घोषणा के बाद कुछ आशा बंधी थी; परंतु वह क्षीण हो चली है। हां, वेतन-भुगतान की खिड़की के पास सूदखोरों का मजदूरों से रुपया छीनना प्रायः रुक गया है। सहकारी ऋणदात्री समितियों की बड़े पैमाने पर स्थापना करके इस क्षेत्र में कुछ सुधार किया जा सकता है।

–श्रद्धानंद पांडेय,
पो. बोकारो थर्मल-८२९१०७

०००

अक्तूबर का **नवनीत** देखा। इसमें 'पत्र-कृति' स्तंभ के अंतर्गत श्री रमेश दुबे का एक पत्र प्रकाशित हुआ है, जिसमें 'कंचनप्रभा' पर आरोप लगाया गया है। श्री दुबे का कथन पूर्ण रूप से मिथ्या है। श्री दुबे को यथासमय रचना की स्वीकृति-संबंधी सूचना भेजी गयी थी। उसके उत्तर में उनका १२-७-७५ का पत्र भी हमें प्राप्त हुआ था। इस पत्र की अविकल प्रतिलिपि आपके अवलोकनार्थ भेज रहे हैं। आप स्वयं निर्णय कर लें कि श्री रमेश दुबे ने कितनी ईमानदारी बरती है।

यदि उचित समझें तो इस संबंध में एक स्पष्टीकरण आगामी अंक में अवश्य प्रकाशित कर दें। यदि आवश्यकता हो तो श्री दुबे का मूल पत्र भी आपकी सेवा में भेजा जा सकता है।

अंत में आपसे निवेदन है कि आपने श्री रमेश दुबे के निराधार पत्र को प्रकाशित करके 'कंचनप्रभा' के साथ बहुत अन्याय किया है।

–शंभूरत्न त्रिपाठी,
स. संपादक: कंचनप्रभा, कानपुर

* श्री बुद्धदेव बसु की बंगला कहानी का अनुवाद 'गति विचित्र है प्रेम की' सितंबर के **नवनीत** में छपने पर अनेक पाठकों ने शिकायत की कि यही अनुवाद 'कंचनप्रभा' (कानपुर) में भी छपा है। तभी अनुवादक श्री रमेश दुबे का उपर्युक्त पत्र आया। उस पत्र को इस स्तंभ में छापने में 'कंचनप्रभा' को लांछित करने का हमारा कोई इरादा नहीं था। अनजाने जो अन्याय हुआ, उसके लिए हमें खेद है। **–संपादक**

★

यह बात लगभग सर्वस्वीकृत है कि आने वाले दशकों में जो बातें दुनिया के स्वरूप को निर्धारित करेंगी, उनमें सबसे मुख्य हैं–जनसंख्या-वृद्धि (पचास वर्ष बाद हमारी पृथ्वी पर ७ अरब नर-नारी होंगे); पेट्रोलियम, जमीन की उर्वरता, शुद्ध जल आदि प्राकृतिक संसाधनों का क्षय; और पारिस्थितिक संतुलन एवं मनुष्य के परिवेश का गंभीर विघटन। ये तीन असंदिग्ध तत्त्व भविष्य-कथन को बड़ा ही नैराश्यमय बना देते हैं। मगर इतना ही असंदिग्ध और महत्त्वपूर्ण एक और तत्त्व भी है। वह है वैज्ञानिक एवं उद्योगतंत्रीय प्रगति, जो कि सभ्यता के विकास की पिछली सहस्राब्दियों में मानो भाप जुटाती रही और केवल अब अपनी गजब की संभावनाओं को पूरी तरह उद्घाटित कर रही है।

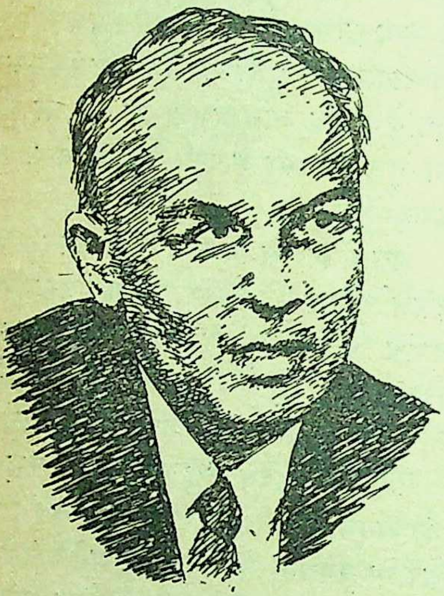

लेखक : आंद्रेई सखारोव

रूसी परमाणु-बम के जनक, रूस में वैचारिक विसहमति के साहसी प्रवक्ता और इस वर्ष के नोबेल शांति-पुरस्कार के विजेता। रूस ने उन्हें नोबेल पुरस्कार समारोह के लिए ओस्लो जाने का पारपत्र नहीं दिया है।

ऐसी किसी भी भविष्योक्ति में सबसे महत्त्वपूर्ण अज्ञात तत्त्व है नाभिकीय सर्वमेध में सभ्यता और मानव-जाति का नाश। जब तक नाभिकीय प्रक्षेपास्त्र तथा शत्रुतापूर्ण एवं शक्की सरकारें और उनके गुट मौजूद हैं, यह भयानक खतरा समकालीन जीवन का सबसे क्रूर यथार्थ बना रहेगा।

मानव-समाज को व्यक्तियों और सरकारों की नैतिकता के ह्रास से भी खतरा है। कानून और न्याय के बुनियादी आदर्शों का अनेक देशों में विघटन, स्वार्थपूर्ण उपभोग, अपराधों में आम वृद्धि, राष्ट्रवादी एवं राजनैतिक आतंकवाद की नयी अंतरराष्ट्रीय ध्वंसलीला और पियक्कड़पन व नशाखोरी का विनाशकारी प्रसार–इन सब चीजों में यह ह्रास आज भी प्रकट हो रहा है। अलग-अलग देशों में इसके अलग-अलग कारण हैं।

विश्व की वर्तमान अवस्था में–जिसमें कि विभिन्न देशों के आर्थिक विकास में अपार और निरंतर बढ़ता हुआ अंतर है और सरकारों की परस्पर विरोधी टोलियों में दुनिया कटती-बंटती चली जा रही है–मानव-जाति को धमका रहे ये खतरे कल्पनातीत रूप से

पचास वर्ष बाद की दुनिया

विराट् रूप धारण कर लेते हैं।

वह कौन-सी चीज है, जो वर्तमान जीवन की विनाशकारी प्रवृत्तियों का विरोध कर रही है, कर सकती है या करने को कर्तव्यबद्ध है? मैं समझता हूं कि दुनिया के परस्पर-विरोधी देशों के समूहों में कट-बंट जाने की रोकथाम विशेषतः आवश्यक है। समाजवादी और पूंजीवादी व्यवस्थाओं का मिलन जब होगा, उसके साथ विसैन्यीकरण, अंतरराष्ट्रीय विश्वास की पुष्टि, मानवीय अधिकारों, कानून व स्वतंत्रता की रक्षा भी होगी। उसके बाद जबर्दस्त सामाजिक प्रगति होगी और मनुष्य के नैतिक, आध्यात्मिक और वैयक्तिक स्रोत मजबूत होंगे।

विश्व-सरकार जरूरी

मेरी यह कल्पना है कि इस मिलन के परिणाम से जो आर्थिक ढांचा उभरेगा, वह जरूर ही एक मिश्रित ढर्रे का होगा, जिसमें अधिक से अधिक लचीलापन, स्वतंत्रता, सामाजिक गतिशीलता और विश्वव्यापी नियमन के लिए अवसर होंगे। राष्ट्रसंघ, युनेस्को जैसे अंतरराष्ट्रीय संघटनों को मुख्य भूमिका निभानी होगी और इसमें मैं सार्वभौम मानवीय अधिकारों पर आधारित निर्देशक सिद्धांतों वाली विश्व-सरकार की झलक देखता हूं।

मगर यह हमारा फर्ज हो जाता है कि इस बीच जो महत्त्वपूर्ण कदम संभव हैं, वे उठाये जायें। सबसे सरल और फौरन आवश्यक कदम है भिन्न विचार अथवा व्यवहार वालों के उत्पीडन आदि असहनीय कार्रवाइयों की सर्वत्र रोकथाम। रेडक्रास, विश्व स्वास्थ्य संघटन, एम्नेस्टी इंटरनेशनल और इस तरह की अन्य जो अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं मौजूद हैं, उन्हें ऐसे सब स्थलों पर जाने की छूट हो, जहां मानवीय अधिकारों का उल्लंघन संभावित है—विशेषतः जेलों और पागलखानों में। विश्व-भर में स्वतंत्रतापूर्वक आने-जाने के प्रश्न का भी प्रजातंत्रीय ढंग से समाधान होना चाहिये।

अब मैं भविष्य-कथन की दृष्टि से चंद परिकल्पनाएं प्रस्तुत करूंगा, जो कि मूलतः वैज्ञानिक और उद्योगतंत्रीय स्वरूप की हैं।

द्विविध क्षेत्र

मैं कल्पना करता हूं आज की भीड़-भरी और अहितकर औद्योगिक दुनिया में दो प्रकार के क्षेत्र धीरे-धीरे विकसित होंगे। मैं उन्हें कामचलाऊ तौर पर 'कार्यभूमि' और 'संरक्षण-भूमि' कहूंगा। 'संरक्षण-भूमि' मुख्यतया धरती का पारिस्थितिक संतुलन बनाये रखने, फुरसत का समय गुजारने और मानव का अपना संतुलन बनाये रखने के लिए सुर-

क्षित रखी जायेगी। कार्यभूमि इससे छोटी और घनी आबादी वाली होगी और लोग अपना अधिक समय उसी में बितायेंगे।

कार्यभूमि में ही खेती भी की जायेगी—सघन खेती। उसमें प्रकृति को पूरी तरह मानव की आवश्यकताओं के अनुसार ढाल दिया जायेगा। सारा उद्योग अतिविशाल और स्वयंचलित फैक्टरियों में सिमट आयेगा। प्राय: सारी मानव-जाति विराट् नगरों (सुपर सिटीज़) में निवास किया करेगी। इन नगरों के केंद्र में बहुमंजले निवास-भवन होंगे, जिनमें हवा, तापमान, रोशनी आदि सब कृत्रिम रूप से नियंत्रित होंगे और स्वयंचलित रसोईघर होंगे।

इन नगरों का बहुत बड़ा हिस्सा उपनगरों के रूप में होगा, जो केंद्र से दर्जनों क़िलोमीटर दूर तक फैले होंगे। ये आज के सर्वाधिक संपन्न देशों के उपनगरों जैसे होंगे। इनमें छोटे-छोटे बंगले या काटेज होंगे, जिनके साथ आंगन, बगिया, बच्चों के क्लब, खेल के मैदान और तैरने के तालाब होंगे। इनमें आधुनिक जीवन की समस्त सुख-सुविधाएं, शोर-रहित और आरामदेह सार्वजनिक यातायात-व्यवस्था, शुद्ध हवा, कला-कौशल के विकास और स्वातंत्र्यपूर्ण सांस्कृतिक जीवन की सहूलियतें होंगी।

चूंकि सामाजिक और अंतरराष्ट्रीय समस्याओं का बुद्धिसंगत ढंग से समाधान कर लिया जायेगा, इसलिए घनी आबादी के बावजूद विराट् नगरों में जीवन अस्वास्थ्यकर या अस्वाभाविक नहीं होगा। फिर भी भविष्य के मानव को अपने समय का कुछ हिस्सा संरक्षण-भूमि में बिताने का अवसर नियमित रूप से मिला करेगा, जो कि कार्यभूमि की अपेक्षा अधिक प्राकृतिक होगी।

संरक्षण-भूमि में रहते समय लोग सामाजिक दृष्टि से अधिक सार्थक जीवन बितायेंगे। यहां वे न केवल आराम करेंगे, अपितु हाथों और दिमाग से काम भी करेंगे, पढ़ेंगे और सोचेंगे। वे छोलदारियों में रहेंगे, या अपने ही हाथ से बनाये हुए मकानों में रहेंगे, जैसे कि हमारे पुरखे रहते थे। वे पहाड़ी नदी-नालों का कलकल निनाद सुनेंगे या नीरवता का, खुले स्थानों व वनों की नैसर्गिक सुंदरता का, आकाश और बादलों का आनंद उठायेंगे। यहां उनका बुनियादी काम होगा—आत्म-संरक्षण और प्रकृति-संरक्षण।

आंकड़ों में कुछ उदाहरण लीजिये। कार्यभूमि का कुल क्षेत्रफल ३ करोड़ वर्ग किलोमीटर होगा और उसकी जनसंख्या-घनता होगी ३०० मनुष्य प्रति वर्ग किलोमीटर। संरक्षण-भूमि का क्षेत्रफल होगा ८ करोड़ वर्ग किलोमीटर और जनसंख्या-घनता होगी औसतन २५ मनुष्य प्रति वर्ग किलोमीटर। विश्व की कुल जनसंख्या होगी ११ अरब। लोंग अपना २० प्रतिशत समय संरक्षण-भूमि में बिता सकेंगे।

उड़ते उपग्रहीय नगर

कार्यभूमि को फैलाने का स्वाभाविक उपाय होगा—उड़ते शहरों की स्थापना। ये कृत्रिम उपग्रह होंगे, जो कि महत्त्वपूर्ण और

औद्योगिक काम करेंगे। सौर ताप को वहां संकेंद्रित किया जायेगा और शायद काफी सारे नाभिकीय और तापनाभिकीय संयंत्र भी वहीं होंगे, ताकि पृथ्वी को बहुत अधिक गरम होने से बचाया जा सके।

इन कृत्रिम उपग्रहों में वैक्युअम धातु-कारखाने, गरमघर (हाट-हाउस) आदि रहेंगे। इन पर ब्रह्मांड-किरणों के संबंध में शोधकार्य होंगे। ये लंबी अंतरिक्ष-यात्राओं में पड़ावों का भी काम देंगे।

उधर पृथ्वी पर कार्यभूमि और संरक्षण-भूमि दोनों में भूमिगत नगर होंगे, जिनमें लोग सोने और मनोविनोद के लिए जायेंगे। भूमिगत रेलों के मरम्मत-खाने और खानें तो वहां होंगी ही।

मुझे दिख रहा है कि कार्यभूमि में सारी खेती यांत्रिक साधनों और सघन विधि से होगी। रासायनिक खाद का उपयोग तो होगा ही, कृत्रिम मिट्टी भी बनायी जायेगी। सर्वत्र सिंचाई-व्यवस्था होगी। पृथ्वी के उत्तरी प्रदेशों में गरमघर होंगे, कृत्रिम धूप होगी और जमीन को कृत्रिम रूप से गरम किया जायेगा, ताकि वनस्पतियों की बढ़वार हो।

हरित क्रांति जारी रहेगी

आनुवंशिकी और बीज-चयन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते रहेंगे ही। इस तरह आज की हरित क्रांति जारी रहेगी और पनपेगी। इनके अलावा मछली आदि जलचरों, खाद्य जीवाणुओं, सूक्ष्म शैवाल और फफूंद की खेती होगी। समुद्र की सतह, दक्षिण ध्रुव-प्रदेश और अंततः चंद्रमा व ग्रहों को कृषि-योग्य बना लिया जायेगा।

करोड़ों इंसान आज प्रोटीन की कमी से पीड़ित हैं। पशुपालन को बढ़ाकर यह विकट समस्या सुलझायी नहीं जा सकती; क्योंकि आज भी दुनिया के कुल कृषि-उत्पादन का लगभग ५० प्रतिशत तो पशुपालन पर खर्च हो जाता है। वस्तुतः पशुपालन को घटाना जरूरी है। मुझे आशा है, अगले कुछ दशकों में पशुजन्य प्रोटीन का स्थान लेने वाले कृत्रिम अमीनो-एसिडों का निर्माण बड़े पैमाने पर होगा—विशेषतः वानस्पतिक सामग्री के समृद्धीकरण द्वारा।

उद्योगतंत्रीय विकास

इसी तरह के क्रांतिकारी परिवर्तन उद्योग, ऊर्जा-निर्माण, जीवन-क्रम आदि में भी करने जरूरी होंगे। सबसे आवश्यक काम होगा ऐसी बंद चक्रीय शृंखलाओं को अपनाना, जिससे कि वातावरण को प्रदूषित करने वाली गंदगी बाहर निकले ही नहीं। ऐसी विशाल उद्योगतंत्रीय एवं आर्थिक समस्याओं का सुलझाव अंतरराष्ट्रीय पैमाने पर ही संभव है। यही बात कृषि-उत्पादन के ढांचे को बदलने, जनसंख्या के नियंत्रण आदि समस्याओं के बारे में भी सच है।

भविष्य-कालीन उद्योग की एक और विशेषता होगी साइबरनेटिक उद्योगतंत्र का अधिक व्यापक उपयोग। अर्धचालक, चुंबकीय, विद्युत-वैक्युअम, प्रकाश-विद्युतीय, लेजर, क्रायोट्रोन, गैस-डाइनैमिक आदि

ढलती उम्र में
स्वास्थ्य-संपन्न और उमंग-भरे जीवन के लिए
लीजिये

झंडू की स्ट्रेनेक्स टेब्लेट्स

(पुरुषों व महिलाओं के लिए)
शक्तिवर्धक, आयुर्वेदिक तत्त्वों का संतुलित संविन्यास–जैसे : अश्वगंध, कौंच, चंद्रोदय (मकरध्वज), माणिक्य भस्म, अभ्रक भस्म, शिलाजीत, अंबर कस्तूरी और अनेकानेक चीज़ें 'स्ट्रेनेक्स' को अपने वर्ग में एक असाधारण उत्पादन बनाती हैं।

स्ट्रेनेक्स – कमजोरी और बुढ़ापे में एक महान वरदान।

दि झंडू फार्मास्यूटिकल वर्क्स लि., बंबई–४०००२५

3 BROTHERS

सफल पत्रकार बनें

सफल लेखक और पत्रकार बनते हेतु हिन्दी / अंग्रेजी में पत्रकारिता व लेखनकला का पत्राचार द्वारा संपूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त करें। विवरणी व प्रवेशपत्र मंगवाने हेतु लिखें।

पत्रकारिता महाविद्यालय (ड),
पोस्ट बाक्स ३५८३,
नई दिल्ली-११००२४

विविध प्रकार के साइबरनैटिक्स का एक साथ विकास साइबरनैटिक्स की आर्थिक उपयोगिता को बहुत बढ़ा देगा।

अबाधित सूचना-प्रवाह

संवाद-प्रेषण के क्षेत्र में अपूर्व प्रगति होगी। एक विश्वव्यापी टेलिफोन व वीडियोफोन शृंखला स्थापित हो जायेगी। पचास-एक साल में एक विश्वव्यापी-सूचना व्यवस्था भी कायम हो जायेगी, जिसके जरिये कोई भी जब चाहे दुनिया के किसी भी हिस्से में कभी भी छपी किसी भी पुस्तक या पत्रिका में से कोई भी जानकारी अथवा अन्य कोई आवश्यक तथ्य प्राप्त कर सकेगा। यह व्यवस्था वैयक्तिक कंप्यूटर-टर्मिनलों, कृत्रिम संचार-उपग्रहों, केब्लों और लेजरों की मदद से अपना काम करेगी। इसमें वैयक्तिक चुनाव की स्वतंत्रता टेलिविजन की अपेक्षा बहुत अधिक होगी।

इस विश्व-सूचना-व्यवस्था का सबसे बड़ा परिणाम यह होगा कि राष्ट्रों के बीच सूचना और जानकारी के आदान-प्रदान पर अभी जो बंधन हैं, वे पूरी तरह टूट जायेंगे। परंतु चूंकि कला और उसका आस्वादन पूरी तरह वैयक्तिक चीज होती है, इसलिए मुझे आशा है कि उस पर इसका कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ेगा। पुस्तकों का महत्त्व भी बना रहेगा और लोग निजी तौर पर पुस्तकें संग्रह करना नहीं छोड़ेंगे।

पैरों वाले 'यान'

बिजली के उत्पादन में प्रदूषण-रहित एवं विशाल कोयला-आधारित बिजलीघरों का महत्त्व पचास साल बाद आज से कहीं अधिक होगा। साथ ही परमाणु-बिजली का निर्माण भी बड़े पैमाने पर होने लगेगा और इस प्रक्रिया में निकलने वाले विकिरणशील अपशिष्ट को रफा-दफा करने का सरल व कमखर्चीला तरीका निकल जायेगा; और इसी तरह भाप-बिजलीघरों की भट्ठियों से निकलने वाली गंधकीय गैस और नाइट्रोजन आक्साइड को रफा-दफा करने का तरीका खोज लिया जायेगा।

मेरे खयाल से कार्यभूमि में वैयक्तिक यातयात के लिए कारों की जगह यांत्रिक 'पैरों' वाले बैटरी-चालित यानों का उपयोग होने लगेगा, जो कि घास को कुचलेंगे नहीं और जिनके लिए तारकोल की सड़कों की जरूरत नहीं होगी। मालढुलाई और सार्वजनिक यातायात होगा परमाणु-ऊर्जा द्वारा चालित, एक पटरी वाली तीव्रगामी भूगर्भ-रेलों द्वारा। इनमें माल व यात्री प्रायः गतिशील फुटपाथों या समानांतर पटरियों पर चलने वाले डिब्बे से चढ़ेंगे-उतरेंगे।

कंप्यूटरी अनुकरण

वैज्ञानिक शोध में जटिल प्रक्रियाओं का कंप्यूटर पर सैद्धांतिक अनुकरण (सिम्युलेशन) करने की उपयोगिता बढ़ती जायेगी। विशालतर स्मृति और तीव्रतर गति वाले कंप्यूटरों की मदद से अनेक समस्याओं के सुलझाव संभव हो जायेंगे, जैसे कि निम्नलिखित क्षेत्रों में—मौसम की भविष्यवाणी; सूर्य, सौर प्रभामंडल तथा अन्य तारा-भौतिकीय वस्तुओं का चुंबकीय-गैस गतिविज्ञान;

ठोस और तरल पदार्थों, तरल-स्फटिकों मूलभूत कणों आदि के गुणों का निर्धारण; ब्रह्मांडीय गणनाएं; धातु और रसायन के उद्योगों में बहुपक्षीय उत्पादन-प्रक्रियाओं का आलेखन; अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र की जटिल गणनाएं। यद्यपि कंप्यूटरीय अनुकरण कभी प्रयोग और पर्यवेक्षण का स्थान नहीं ले सकता, तथापि किसी भी चीज की सैद्धांतिक व्याख्या की शुद्धता की जांच-परख में वह सहायक होगा।

नये व कृत्रिम पदार्थ

संभव है कि ऐसा पदार्थ तैयार करने में सफलता मिल जाये, जो कमरे के तापमान पर सुपर-कंडक्टर का काम करे। इससे इलेक्ट्रानिक्स और उद्योगतंत्र के अनेक क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन होंगे; उदाहरणार्थ, रेलों में। तब रेलें सुपर-कंडक्टर पटरियों पर चुंबकीय 'गद्दियों' पर दौड़ेंगी, या यह भी संभव है कि डिब्बे सुपर-कंडक्टर से निर्मित 'रनरों' से युक्त हों और पटरियां ही चुंबकीय हों।

मैं कल्पना करता हूं कि भौतिकी एवं रसायनशास्त्र की प्रगति की कृपा से मूल प्राकृतिक पदार्थों का स्थान लेने के लिए उनसे अधिक श्रेष्ठ पदार्थों का निर्माण करना और प्रकृति की कई संपूर्ण व्यवस्थाओं को कृत्रिम रूप से प्रस्तुत करना संभव होगा। भविष्य के स्वयंचलित यंत्रों में मानव-निर्मित बहुलकों (पालिमर) से बनी, आसानी से सिकुड़ने-फैलने वाली 'मांसपेशियां' होंगी। जल और वायु में स्थित जैविक और अजैविक मिश्रणों को पृथक् करने के लि कृत्रिम 'नासिका' के सिद्धांत पर काम कर वाले संवेदनशील विश्लेषक होंगे। वि भूमिगत परमाणु-विस्फोटों द्वारा ग्रेफाइट से औद्योगिक हीरे तैयार किये जायेंगे।

लोकांतरीय सभ्यताओं से मिलाप

ग्रहांतरीय सभ्यताओं से संपर्क साधने का प्रयत्न बढ़ेगा। समस्त ज्ञात तरंगदैर्घ्यों (वेवलेंग्थ) पर ग्रहांतरों से आ सकने वाले संकेतों को पकड़ने और पृथ्वी से ऐसे संकेत भेजने का प्रयत्न किया जायेगा। अंतरिक्ष में लोकांतरीय सभ्यताओं की खोज चलेगी। यदि ऐसी सभ्यताओं का पता चला तो वह जानकारी मानव-जीवन के समस्त पहलुओं को, निश्चय ही विज्ञान और उद्योगतंत्र को, प्रभावित करेगी और संभव है, उन सभ्यताओं के साथ सामाजिक आदान-प्रदान भी हो।

अंतरिक्षवर्ती प्रयोगशालाओं अथवा चंद्रमा पर स्थापित शक्तिशाली दूरदर्शकों की मदद से हम अल्फा सेंटारी आदि निकटवर्ती नक्षत्रों की परिक्रमा करने वाले ग्रहों को देख लेंगे। अभी तो वातावरणीय अड़चनें पृथ्वी पर के दूरदर्शकों के दर्पणों को एक सीमा से अधिक बड़ा नहीं बनने देतीं। शायद पचास वर्ष के भीतर क्षुद्रग्रहों को पृथ्वी के निकट लाया जा सकेगा।

सैद्धांतिक शोध में

अभी तक मैंने विज्ञान के हृदय-रूप सैद्धांतिक वैज्ञानिक शोध की चर्चा नहीं की, जिसके व्यावहारिक परिणाम बहुधा अत्यंत महत्त्व-

पूर्ण होते हैं। यह सैद्धांतिक शोध अथक जिज्ञासा, बौद्धिक लचीलेपन और मानवीय तर्कशक्ति की उपज होती है। इस शताब्दी के प्रथम चरण में इसी सैद्धांतिक शोध की बदौलत सापेक्षवाद के सामान्य सिद्धांत की स्थापना हुई, क्वांटम-यांत्रिकी का निर्माण हुआ और परमाणु तथा उसके नाभिक की संरचना का पता चला। इस दर्जे की खोजों की भविष्यवाणी करना सदा ही असंभव रहा है और रहेगा। मैं तो झिझकते हुए यह अनुमान ही लगा सकता हूं कि किन-किन दिशाओं में लगभग इस दर्जे की खोजें होंगी।

मौलिक कणों एवं ब्रह्मांड-विज्ञान की सैद्धांतिक शोध से वर्तमान शोधक्षेत्र का विस्तार होने के साथ ही शायद देश-काल की संरचना के सबंध में भी सर्वथा नवीन अवधारणाएं जन्म लें। शरीरक्रियाशास्त्र और जैवभौतिकी, महत्त्वपूर्ण शरीरक्रियाओं के नियंत्रण, चिकित्साशास्त्र, सामाजिक साइबर्नेटिक्स और आत्मनियमन के सामान्य सिद्धांतों के क्षेत्र में शोध से सर्वथा अप्रत्याशित बातें प्रकाश में आ सकती हैं और ऐसी प्रत्येक महत्त्वपूर्ण खोज का मानव-जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है।

प्रगति-रथ रुक नहीं सकता

यह मुझे अपरिहार्य जान पड़ता है कि विज्ञान और उद्योगतंत्र की प्रगति की वर्तमान प्रवृत्ति जारी रहेगी और बढ़ेगी। आबादी-वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों के क्षय के कारण, मानव-जाति का अतीत के तथाकथित 'स्वस्थ' जीवन में लौट पाना मुझे असंभव लगता है। (वह 'स्वस्थ' जीवन वास्तव में बहुत कठोर तथा बहुधा क्रूर एवं आनंदहीन जीवन था।) शहरीकरण, यंत्रों का अधिकाधिक प्रयोग, कल-कारखानों में स्वयंचलित यंत्रों की स्थापना, रासायनिक खाद एवं खर-पतवार-नाशकों का उपयोग, संस्कृति तथा फुरसत की वृद्धि, चिकित्सा की प्रगति, अधिक पौष्टिक खान-पान, मृत्युदर में कमी, आयुष्य में वृद्धि—ये सब चीजें वैज्ञानिक-उद्योगतंत्रीय प्रगति के परस्पर गुंथे हुए पहलू हैं। समग्र सभ्यता को नष्ट किये बिना इनमें से कुछ से मुंह मोड़ना संभव नहीं है।

विश्वव्यापी परमाणु-युद्ध, अकाल, महामारी या अराजकता द्वारा मानव-सभ्यता का विध्वंस ही प्रगति के रथ को उलटा मोड़ सकेगा। मगर कोई पागल ही उस अवस्था की कामना करेगा।

परम उद्देश्य

आज दुनिया की हालत दुरुस्त नहीं है। अधिकांश मानवों के आगे आज भुखमरी और मौत मुंह बाये खड़ी है। इसलिए सच्चे अर्थों में मानवीय प्रगति का पहला काम होगा इन खतरों को खत्म करना; इससे भिन्न कोई भी दृष्टिकोण 'स्नॉबिज्म' होगा। तथापि प्रगति के उद्योगतंत्रीय अथवा भौतिक पक्ष को बहुत अधिक महत्त्व देने की प्रवृत्ति मेरी नहीं है। मुझे पूर्ण आस्था है कि मानव-निर्मित व्यवस्थाओं का—और प्रगति भी इनमें एक है—'परम उद्देश्य' केवल यह नहीं

[शेष पृष्ठ ३२ पर]

स्पेन : मरणासन्न व्यवस्था

गिरिजाकुमार

स्पेन के तानाशाह जनरल फ्रांसिस्को फ्रांको आखिर चल बसे। उत्तराधिकारी के रूप में शासन की बागडोर राजकुमार जुआन कार्लोस ने संभाल ली है। परंतु फ्रांको की मृत्यु के साथ ही मरणासन्न हो गयी है स्पेन की फासिस्ट शासन-व्यवस्था, जिसे करीब ३९ वर्ष पहले फ्रांको ने स्थापित किया था। यह भी मुमकिन है कि एक बार फिर स्पेन में वैसा ही गृहयुद्ध छिड़ जाये, जैसा १९३६ में छिड़ा था। तब जनरल फ्रांको ने स्पेनी गणतंत्र को विनष्ट करके हिटलर व मुसोलिनी की मदद से सत्ता हथियायी थी।

तब से आज तक तानाशाह फ्रांको स्पेन में घोर अनुदारपंथी निरंकुशता की पोषक शक्तियों और संस्थानों को बलशाली बनाये रखने का भरपूर प्रयत्न करते आ रहे थे। उन्होंने स्पेनी प्रशासन-तंत्र, न्यायपालिका और धर्म-संस्थानों को बीसवीं सदी के प्रभावों से कमोबेश अछूता ही रखा था। वे किस प्रकार अतीत में जी रहे थे, इसका एक और प्रमाण यह है कि उन्होंने यह व्यवस्था की थी कि उनके पश्चात् स्पेन फिर से राजतंत्र बन जाये और बोर्बोन-वंशी राजकुमार जुआन कार्लोस राजगद्दी संभालें।

समय के साथ कदम मिलाकर न चलने में फ्रांको की सरकार का कितना पुख्ता विश्वास था, इसका एक और प्रमाण सितंबर के अंत में मिला। उस महीने की २७ तारीख को पांच स्पेनी क्रांतिकारियों को पुलिस कांस्टेबलों की हत्या के आरोप में गोली मारकर मृत्युदंड दिया गया। अभियुक्तों को स्पेन के अपने कायदे-कानूनों के अनुसार अपनी सफाई देने और अपना बचाव करने तक का भी अवसर नहीं दिया गया।

स्वाभाविक रूप से इस मनमाने मृत्युदंड की विश्वव्यापी प्रतिक्रिया हुई। और तो और, नैटो-संधि संघटन में स्पेन के साथी पश्चिम यूरोपीय देशों में भी जनता और नेता दोनों ने इस मध्ययुगीन बर्बरता का उग्र विरोध किया। चार यूरोपीय देशों में तो प्रदर्शनकारियों ने स्पेनी दूतावासों में आग लगा दी। पंद्रह देशों ने स्पेन से अपने राजदूत वापस बुला लिये। (अलबत्ता कुछ राजदूत अब मैड्रिड लौट आये हैं।) पूर्वी जर्मनी, स्वीडन, ब्रिटेन के राजनेताओं से लेकर पोप पाल छठे तक ने स्पेनी दमन की कड़ी निंदा की।

किंतु इस उग्र प्रतिक्रिया का जनरल फ्रांको ने वही जवाब दिया, जो प्रायः सभी तानाशाह देते रहे हैं। १ अक्तूबर को मैड्रिड के राजमहल के झरोखे के नीचे

प्लाजा ओरियेंत में करीब ढाई लाख नागरिकों की विशाल रैली आयोजित की गयी। जराजीर्ण रोगी फ्रांको सैनिक वेशभूषा में झरोखे पर आये। कांपती कमजोर आवाज में उन्होंने कुछ देर भीड़ को संबोधित किया। उनके भाषण की समाप्ति के साथ भीड़ ने नारा लगाया—'स्पेनी एकता अमर रहे! हम कभी हारेंगे नहीं!' इस विशाल रैली का प्रयोजन सिर्फ यह दिखाना था कि बाहर के लोग चाहे कुछ भी सोचें, स्पेनी जनता हमारे साथ है।

परंतु यह तो तस्वीर का केवल एक पहलू है। दूसरा पहलू है, तानाशाही व्यवस्था के विरुद्ध स्पेन में भीतर ही भीतर उफनते हुए विरोध का। दिसंबर १९७३ में स्पेनी प्रधान-मंत्री लुई कार्रेरो ब्लांको की हत्या के रूप में यह विरोध सामने आया था। यह हत्या की थी उत्तर स्पेन के चार सर्वाधिक धनाढ्य प्रांतों की पूर्ण स्वतंत्रता के समर्थक बास्क राष्ट्रवादी संघटन 'एजकादी ता एजकातासुना' (संक्षेप में, ई. टी. ए.) के आतंककारियों ने। इस साल २७ सितंबर को जिन क्रांतिकारियों को मृत्युदंड दिया गया, उनमें भी दो बास्क राष्ट्रवादी थे, शेष तीन उग्र वामपंथी।

बास्क लोगों और फासिस्टों का संघर्ष आज का नहीं है; वह उतना ही पुराना है, जितना कि स्पेनी गृहयुद्ध। उस युद्ध के आरंभिक दौर में ही स्पेन की गणतंत्री सरकार ने बास्क लोगों को स्वशासनाधिकार दे दिया था। बास्कों ने अपना स्वतंत्र गणतंत्र स्थापित कर लिया, परंतु गृहयुद्ध में स्पेनी गणतंत्र का पूरा साथ दिया। इसके लिए उन्हें सचमुच भारी कीमत भी चुकानी पड़ी। ३१ मार्च १९३७ को फासिस्ट सेना के जनरल एमिलो मोला ने बास्कों को धमकी दी कि यदि आत्मसमर्पण नहीं करोगे, तो तुम्हारे विजकाया प्रांत को नष्ट कर दिया जायेगा। यही किया भी गया। असंघटित बास्कों को जर्मन विमानों और चालकों की मदद से कुचल दिया गया।

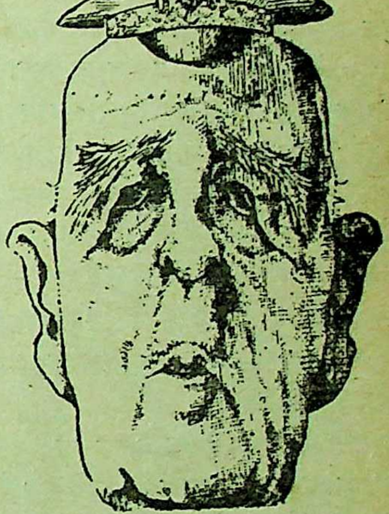

सभ्यता के किसी भी मापदंड से यह नहीं कहा जा सकता कि फ्रांको ने स्पेनी इतिहास की शान में खास वृद्धि की। उनका शासन आतंक का शासन था और उनकी देन मुख्यतः सैनिक तानाशाही की कला की थी। —'न्यूजवीक'

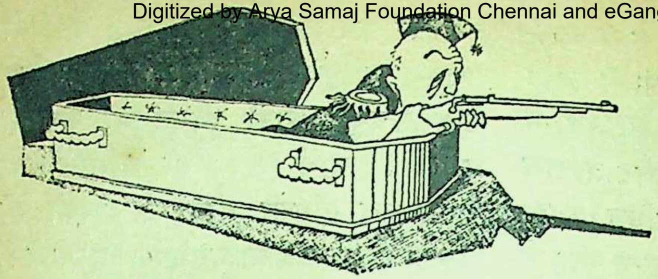

मरतिहु बार कटक संहारा ['ले मोंद' में प्लांतू]

फासिस्ट दमन का सबसे बर्बर उदाहरण था गुएर्निका का विध्वंस। नस्ल से गैरस्पेनी मगर धर्म से रोमन कैथलिक मतावलंबी बास्क लोगों के इस प्राचीनतम नगर को, उनके इतिहास एवं संस्कृति के इस केंद्र को, फासिस्ट सेना के निर्देश पर जर्मन विमानों ने भयंकर बमबारी द्वारा विध्वस्त कर दिया। यहीं नहीं, जब इस विध्वंस की खबरें विदेशी समाचारपत्रों में छपीं, तो जनरल फ्रांको ने 'सौ बार दुहराने से झूठ सच हो जाता है' की फासिस्ट प्रचार-नीति के अनुरूप यह गढ़ंत किस्सा फैलाया कि गुएर्निका बमबारी से नहीं, स्वयं बास्कों द्वारा लगायी गयी आग से ध्वस्त हुआ है।

इतना निश्चित है कि बास्क लोग गुएर्निका के विध्वंस को आज भी नहीं भूले हैं। वस्तुत: वे पिछले कुछ वर्षों से स्पेन में तानाशाही के विरुद्ध सबसे अगले मोर्चे पर लड़ रहे हैं। पांच क्रांतिकारियों के मृत्युदंड के विरोध में एक लाख से अधिक बास्क लोगों ने सितंबर के अंत में हड़ताल की—यह जानते हुए भी कि अगस्त में बनाये गये नये कानून के तहत उन्हें 'आतंककारियों से हमदर्दी रखने' के अपराध में बारह वर्ष की लंबी कैद हो सकती है।

स्पेनी संविधान के तहत स्थापित सरकारी मजदूर संघ पिछले कुछ सालों से काफी असंतुष्ट होते जा रहे हैं। इसके साथ ही बढ़ा है मजदूरों में वामपंथी तत्त्वों का प्रभाव भी। बास्क राष्ट्रवादियों और इन वामपंथी तत्त्वों में किसी हद तक आपसी तालमेल भी है। परंतु अभी सितंबर तक यह तालमेल बहुत प्रभावकारी नहीं समझा जाता था। कारण, स्पेन के विभिन्न राजनैतिक तत्त्व यह मानते थे कि फ्रांको की मृत्यु के बाद सत्ता संभालने वाले शासक राजकुमार जुआन कार्लोस देर-सवेर स्पेनी तानाशाही की गिरफ्त ढीली करेंगे और वर्तमान व्यवस्था के विरोधियों से बातचीत करके देश में किसी न किसी प्रकार जनतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना के लिए सहमत हो जायेंगे।

परंतु १ अक्तूबर को मैड्रिड में हुई फ्रांको-समर्थक रैली से यह आशा टूट गयी। उस रैली में राजकुमार कार्लोस जनरल फ्रांको की बगल में चुपचाप खड़े रहे। इसका अर्थ यह लगाया गया है कि उन्होंने धुर दक्षिणपंथियों के दबाव के आगे घुटने टेक दिये हैं और अपनी किस्मत को फ्रांको-स्थापित निरंकुश व्यवस्था की किस्मत के साथ जोड़ दिया है। एक विदेशी कूटनीतिज्ञ ने तो यहां तक कहा है कि इस कार्रवाई से

कार्लोस का भविष्य [illegible] है।

तो स्पेन में फ्रांको का असली उत्तराधिकारी कौन होगा? इस प्रश्न के उत्तर में कुछ लोगों की निगाहें कार्लोस के पिता डान जुआन की ओर उठ रही हैं। डान जुआन आजकल पुर्तगाल में रहते हैं और वस्तुतः वे ही पुर्तगाल की राजगद्दी के अधिकारी हैं। परंतु वे प्रजातंत्र के समर्थक हैं और इसीलिए स्पेन के वर्तमान शासकों ने उनकी उपेक्षा करके उनके पुत्र को स्पेनी राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनाया था। परंतु डान जुआन भी चुपचाप नहीं बैठे हैं। जून में उन्होंने स्पेन के कतिपय विरोधी दलों के प्रतिनिधियों को पुर्तगाल में अपने निवास-स्थान पर आमंत्रित किया था। तब से वे इन लोगों से लगातार संपर्क बनाये हुए हैं। एक पश्चिमी पत्रकार के अनुसार, १ अक्तूबर की रैली में फ्रांको की बगल में खड़े होने की 'हरकत' के कारण वे राजकुमार कार्लोस से बहुत क्षुब्ध हैं। पर डान जुआन का गद्दी पर बैठ सकना आसान नहीं है। यदि वे गद्दी तक पहुंच पाये, तो उसके पहले उन्हें और पूरे स्पेन को कट्टर फासिस्टों के साथ गृहयुद्ध के दौर में से गुजरना पड़ेगा।

ऐसी स्थिति में स्पेन में गृहयुद्ध टालने में समर्थ एक ही शक्ति नजर आती है—सेना। स्पेन के ज्यादातर व्यवस्था-विरोधी राजनैतिक तत्त्वों में इस बात पर आम सहमति है कि सेना 'फ्रांको के बाद?' के प्रश्न से काफी चिंतित है और उसके कर्नलों, ब्रिगेडियरों और जनरलों में भावी व्यवस्था को लेकर विचार-विमर्श चल रहा है। सेना की चिंता इसलिए भी बढ़ गयी है कि शासन ने अक्तूबर के आरंभ में तीन सेनाधिकारियों को राजद्रोह के अभियोग में गिरफ्तार कर लिया। बार्सीलोना में हुई इन गिरफ्तारियों के बाद स्पेनी सेना में एक गोपनीय दस्तावेज बांटा गया है, जिसमें 'अत्याचारी और भ्रष्ट शासन' की सख्त निंदा की गयी है और कहा गया है कि हम इस शासन के जुए को अधिक समय तक बरदाश्त नहीं करेंगे।

कहते हैं, सेना के जिस समूह ने यह दस्ता-

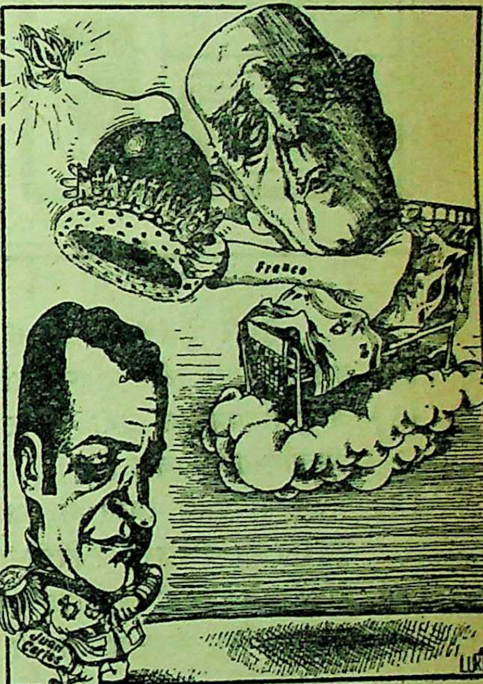

विस्फोटक उत्तराधिकार [व्यंग्यचित्र : लूरी]

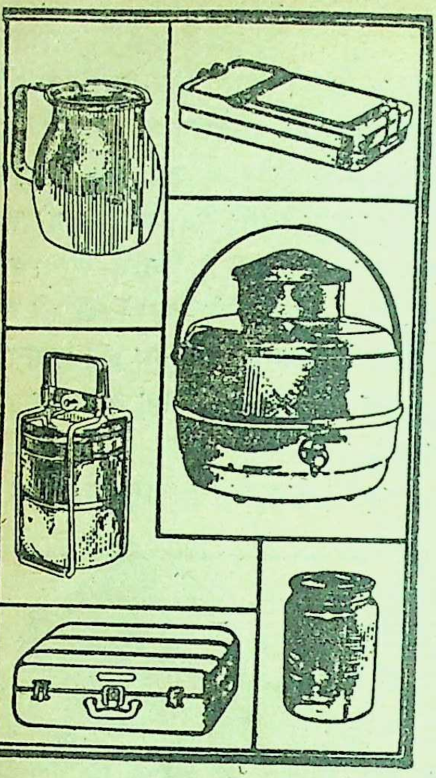

क्राउन ब्राण्ड

एल्युमिनियम के बर्तन

समझदार व्यक्ति

अपने रसोईघर की शोभा बढ़ाने वाले क्राउन ब्रान्ड एल्युमिनियम के बर्तन और ॲनोडाईज्ड चीजें पसंद करेगा।

जीवनलाल (१९२९) लि.

[लिबर्टी बिल्डिंग, मरीन लाईन्स,
बंबई-४०००२०, टे. २९११५६
शोरूम : कंसारा चाळ,
कालबादेवी.]
बंबई-४००००२, टे. ३३४८५१
● कलकत्ता ● मद्रास ● हैदराबाद
● दिल्ली ● मदुराई ● कोचीन

हम उद्योग की कई प्रकार से सेवा करते हैं।
हमसे संपर्क करना आपको सदा लाभप्रद होगा।

(१) **पाईप्स**–जेनिथ स्टील पाइप्स लिमि. खोपोली के विक्रेता और स्टाकिस्ट.

(२) **अल्युमिनियम**–हम सभी प्रकार के शीटों और एक्सट्रुडेट सेक्शनों के लिए 'हिन्दालको के एजेन्ट हैं।

(३) **केबल**–युनिवर्सल केबल्स लि. सतना (म.प्र.) के महाराष्ट्र (विदर्भ, गोवा और गुजरात को छोड़कर) में बिक्री-एजेंट।

(४) **फायर होज़**–जयश्री टेक्सटाइल एंडस्ट्रीज लि. रिशरा (पं. बंगाल) द्वारा निर्मित, 'वरुण' फ्लैक्स पाइप व 'जयश्री' एंगस R. R. L. होज पाइपों के स्टॉकिस्ट और वितरक।

एशियन डिस्ट्रिब्यूटर्स लिमिटेड

क्वीन्स मेन्शन, तल मजला, प्रेस्कास्ट रोड, बंबई-१.

तार : "ADPIPE" टेलेक्स : O11-2177 टेलिफोन : २६६६७१-३-४

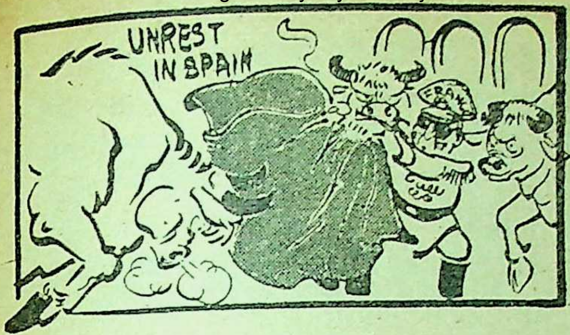

स्पेन में अशांति [लक्ष्मण : टाइम्स ऑफ़ इंडिया]

वेज प्रचारित किया है, उसका मिलिटरी डेमोक्रैटिक यूनियन से संबंध है। यह यूनियन कोई पांच साल पहले मध्यम श्रेणी के अधिकारियों ने संघटित की थी। तब कहा गया था कि इसका मुख्य उद्देश्य सैनिक मामलों पर विचार-विमर्श करना है। परंतु पिछले वर्षों में इसकी सदस्य-संख्या बढ़कर एक हजार तक पहुंच गयी है और इसमें स्पेन के सबसे आधुनिक ढंग से सोचने वाले और सर्वाधिक योग्य सेनाधिकारी संमिलित हो गये हैं। चार-छह महीनों में इस संघटन की राजनैतिक सरगरमी भी बढ़ी है और इसके सदस्य अब राजनैतिक समस्याओं पर भी विचार-विमर्श करने लगे हैं।

वस्तुतः तीन सेनाधिकारियों की गिरफ्तारियों का मूल कारण यही है। इन गिरफ्तारियों से पहले से ही यूनियन के ९ अन्य सदस्यों पर राजद्रोह फैलाने का मुकद्दमा सैनिक अदालत में चल रहा है। ये सभी सेनाधिकारी गृहयुद्ध के बाद जनमी पीढ़ी के हैं। वस्तुतः इनमें से कुछ के पिता गृहयुद्ध में जनरल फ्रांको के पक्ष में लड़े थे।

स्पेन के बढ़ते हुए आंतरिक संकट को देखते हुए सेनाधिकारियों का यह समूह यदि राजनीति में सीधा हस्तक्षेप करे, तो आश्चर्य नहीं होना चाहिये। वस्तुतः अपने वरिष्ठ जनरलों पर उनका विश्वास डिग चुका है। उनका कहना है कि जो सेनाधिकारी मौजूदा हालात में भी फासिस्ट शासन का समर्थन कर रहे हैं, वे अवसरवादी हैं।

मिलिटरी डेमोक्रैटिक यूनियन के बारे में लोगों की राय इससे ठीक विपरीत है। इन मध्यम श्रेणी के अफसरों को ध्यान में रखकर ही कुछ दिन पहले सोशल डेमोक्रैटिक तत्त्वों के प्रवक्ता एंटोनियो गार्सिया लोपेज ने दावा किया था कि सेना हस्तक्षेप करना चाहे तो जरूर कर सकती है; यह मरने-मारने वाली, अनुशासित और संघटित सेना है; जब यह कोई निर्णय लेगी, तो उस पर अमल भी कर दिखायेगी। परंतु क्रिश्चियन डेमोक्रैटिक ग्रुप के फर्नांडो अल्वारेस डेमिरांडा का कहना है कि अगर सेना बैरकों से निकलकर राजनीति के दायरे में आ गयी, तो उसे वापस बैरकों में भेजना मुश्किल होगा। पुर्तगाल इसका ताजा उदाहरण है।

सेना जो भी निर्णय करे और घटना-क्रम जो भी मोड़ ले, स्पेनी समाजशास्त्री तथा पापुलर सोशलिस्ट पार्टी के सिद्धांतशास्त्री प्रो. थिएर्नो गाल्वान का यह निष्कर्ष सही है

कि 'स्पेन क्रांति-पूर्व स्थिति में से गुजर रहा है। उसके सारे तत्त्व स्पेन में मौजूद हैं—आर्थिक संकट गहरा है, शासन लड़खड़ा रहा है और सेना इस असमंजस में है कि कब, कहां और किस तरह कार्रवाई की जाये।'

निश्चय ही यह स्थिति स्पेन में नयी नहीं है। मगर नयी बात यह है कि अब वहां जनतंत्र-समर्थकों और फासिस्टों के बीच तेजी से ध्रुवीकरण हो रहा है। डेढ़ साल पहले, ब्लांको की हत्या के बाद प्रधान-मंत्री का पद संभालने वाले एरियास ने धीरे-धीरे उदार रुख की नीति अपनायी थी। लेकिन बदले हुए संदर्भ में उन्होंने अपना रवैया भी बदल लिया है और वे पहले से अधिक अनुदारवादी नीतियों के समर्थक हो गये हैं। ये एक आशंका यह भी है कि एरियास-सरकार से भी अधिक दक्षिणपंथी रुख अपनाने वाली सरकार स्पेन में बन सकती है।

परंतु जैसे दक्षिणपंथी अपनी शक्ति संघटित कर रहे हैं, वैसे ही वामपंथी और उदारवादी भी सक्रिय हैं। प्रो. गाल्वान के अनुसार, अधिक से अधिक कामगार अब राजनीति में दिलचस्पी लेने लगे हैं। दूसरे शब्दों में, स्पेन में अब क्रांति के लिए कार्यकर्ताओं की कमी नहीं पड़ेगी—मृत्युदंड-जैसी बर्बरताओं के बावजूद।

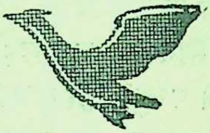

[पृष्ठ २५ का शेष]

है कि पृथ्वी पर जनमे प्रत्येक मनुष्य को तीव्र कष्टों और असामयिक मृत्यु से बचाया जाये, बल्कि यह भी है कि मानव में जो कुछ भी मानवीय है, उसका भी बचाव किया जाये। ये चीजें हैं—जानकार हाथों और जानकार दिमाग से काम करने का आनंद; परस्पर सहायता तथा मनुष्यों एवं प्रकृति के साथ अच्छे संबंध का आनंद; और ज्ञान एवं कला का आनंद। इन लक्ष्यों में जो परस्पर विरोध हैं, उन्हें मैं अजेय नहीं मानता हूं।

आज भी अधिक विकसित औद्योगिक देशों के निवासियों को पिछड़े एवं भूखग्रस्त देशों के निवासियों के मुकाबले सामान्य एवं स्वस्थ जीवन जीने का अधिक अवसर प्राप्त है। यों भी जो प्रगति मनुष्यों को भूख और बीमारी से बचायेगी, वह सक्रिय कल्याण के स्रोत और मानव के सर्वोपरि मानवीय अंश की रक्षा की विरोधी नहीं हो सकती।

मुझे विश्वास है कि मानव की मानवता एवं प्रकृति की प्राकृतिकता को गंवाये बिना प्रगति के भव्य, आवश्यक एवं अनिवार्य लक्ष्यों की पूर्ति कैसे हो, इस जटिल समस्या का तर्कसंमत समाधान मानव-जाति अवश्य प्राप्त कर लेगी।

['सैटर्डे रेव्यू' से साभार]

★

नवनीत

गुरु का प्रशिक्षण

इस्कंदर खां ने अपने बेटे हैदरअली को सूफियों के अधीन वर्षों तक शिक्षा दिलवायी; फिर महमूद गजनवी की खिदमत में पेश किया कि इसे दरबार में कोई ओहदा दीजिये। महमूद ने हैदर से कहा—'साल-भर बाद आना।' साल-भर बगदाद के सूफियों के पास रहकर हैदर पिता के संग फिर दरबार में हाजिर हुआ। फिर वही उत्तर मिला—'साल-भर बाद आना।' इस साल हैदरअली बल्ख, बोखारा और समरकंद के सूफियों की खिदमत में रहकर लौटा; मगर महमूद ने फिर वही उत्तर दिया। इस्कंदर ने बेटे को हज करायी, हिंदुस्तान भेजा, फिर दरबार में हाजिर किया। इस बार महमूद ने हैदर से कहा—'कोई सूफी गुरु खोजकर साल-भर उससे पढ़ो, फिर आना।' हैदरअली हेरात चला गया और एक बड़े सूफी का शिष्य बन गया। साल-भर बाद पिता उसे लेने आया; पर अब उसे दरबार और ओहदे में उसे कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी थी। निश्चित दिन जब इस्कंदर और उसका बेटा दरबार नहीं आये, महमूद गजनवी स्वयं हेरात गया और सूफी गुरु से बोला कि इन्हें मेरे दरबार में रहकर मेरा मार्गदर्शन करने का आदेश दीजिये। यही हैदर हेरात के महान सूफी हैदरअली जान हिरवी थे।

—इदरीस शाह

जीवन-तीर्थ

भर्तृहरि ने सत्पुरुषों के स्वभाव का वर्णन करते हुए एक सुंदर बात कही है—नम्रत्वेनोन्नमन्तः, अर्थात् वे नम्रता द्वारा ऊपर उठते हैं। इसमें उक्ति-चमत्कार यह है कि संस्कृत में 'नम्र' का मूल शब्दार्थ है—'झुका हुआ' और सत्पुरुषों का यह झुकना निःसारता के कारण नहीं, अपितु ब्रह्मांड में अपने को सही परिपेक्ष्य में देखने का फल होता है।

फ्रैंकलिन डिलानो रूजवेल्ट जब अमरीका के राष्ट्रपति थे, एक बार हत्यारों ने उन पर आक्रमण किया। सौभाग्य से वे बाल-बाल बच गये। तब से पुलिस ने उनकी सुरक्षा का प्रबंध और भी कड़ा कर दिया। उनकी पत्नी श्रीमती एलीनर रूजवेल्ट से भी कहा गया कि अब से आपके साथ अंगरक्षक रहा करेगा। श्रीमती रूजवेल्ट, जो कि स्वयं बहुत बड़ी समाजसेविका थीं, इसके लिए तैयार नहीं हुईं। जब उनके पति ने पुलिस की बात मानने के लिए उन पर जोर डाला तो वे बोलीं—'मुझे कोई खतरा नहीं है; क्योंकि मैं इतनी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति नहीं हूं।'

स्वामी दयानंद सरस्वती अपने समय के सबसे महिमाशाली भारतीयों में से एक थे—विद्वान, सत्यनिष्ठ और निर्भीक। अपने जीवन-काल में ही वे 'महर्षि' कहलाने लगे थे। एक दिन किसी ने बातचीत में उन्हें 'महर्षि' संबोधित कर दिया। वे बड़े सहज भाव से बोले—'आज आप मुझे महर्षि कह रहे हैं। यदि मैं कपिल और कणाद के जमाने में पैदा हुआ होता तो पढ़े-लिखों में भी मेरी गणना मुश्किल से ही हो पाती।'

भर्तृहरि का ही बड़ा प्रसिद्ध श्लोक है:

यदा किंचिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किंचित्किंचिद् बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः॥

—जब मैं बहुत थोड़ा जानता था, हाथी की तरह मदांध था और अपने को सर्वज्ञ मानकर इतराता था। फिर जब विद्वानों के सत्संग से मुझे कुछ-कुछ जानने को मिला, तब पता चला कि मैं तो निरा मूर्ख हूं, और मेरा सारा घमंड बुखार की तरह उतर गया।

जो विवेकशाली होते हैं, वे इसके लिए जागरूक रहते हैं कि उन्हें ऐसा बुखार चढ़े ही नहीं; क्योंकि उन्हें इस चीज का हरदम भान रहता है कि ज्ञान अनंत है, और मानव-मस्तिष्क अत्यंत सीमित। प्येर ला प्लेस फ्रांस के नामी विज्ञानी थे। खगोलशास्त्र

को उनकी देन बहुत बड़ी है। ७८ वर्ष की आयु में जब वे मृत्युशय्या पर पड़े हुए थे, उन्होंने कहा था—'हम जो कुछ जानते हैं, वह कुछ भी नहीं है; और जो कुछ हम नहीं जानते, वह असीम है।'

अल्बर्ट आइन्स्टाइन का सारा जीवन मानो इस आंतरिक विनम्रता का मधुर गीत था। ब्रिटिश चित्रकार रोथेन्स्टाइन बर्लिन में आइन्स्टाइन का पोर्ट्रेट बना रहे थे। इसके लिए प्रतिदिन आइन्स्टाइन उनके स्टूडियो में आकर बैठते थे। उनके साथ गंभीर मुखमुद्रा वाला एक आदमी भी वहां प्रतिदिन आता था और उनसे कुछ दूर एक तरफ बैठ जाता था। रोथेन्स्टाइन जब चित्रांकन में लग जाते, आइन्स्टाइन उस आदमी से सापेक्षतावाद के गणित-पक्ष के बारे में बोलने लगते थे। कभी वे कोई प्रश्न पूछते, तो वह आदमी सिर हिलाकर हां या ना में जवाब देता और अगर कभी बोलता भी तो चंद शब्दों में अपनी बात कह डालता।

रोथेन्स्टाइन को उस आदमी के बारे में बहुत कुतूहल हुआ। अंत में जब चित्र पूरा हो गया, तो उन्होंने आन्इस्टाइन से पूछ ही लिया। उस महान विज्ञानी ने कहा—'ये सज्जन गणितज्ञ हैं, और मेरे सिद्धांतों को परखकर बताते हैं कि वे सही हैं या गलत। वास्तव में, मैं अच्छा गणितज्ञ नहीं हूं।'

यदि हममें ऐसी विनम्रता जन्मजात न हो, तो भी हम उसे विकसित तो कर ही सकते हैं। ब्रह्मांड की विराटता मानो हर क्षण हमें विनम्र बनने को कह रही है।

अमरीका के राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट रोज रात को सोने से पहले तारों-भरे आकाश को बड़ी दिलचस्पी से देखा करते थे। एक रात को वे प्रसिद्ध प्रकृति-विज्ञानी विलियम बीब के साथ खुले आसमान के नीचे बैठे हुए थे। दोनों आकाश की ओर देखते हुए चर्चा कर रहे थे कि ब्रह्मांड में करोड़ों सूरज हैं, अरबों-खरबों तारे हैं, जिनमें से कइयों के प्रकाश को पृथ्वी तक पहुंचने में लाखों साल लग जाते हैं। अंत में रूजवेल्ट बोले—'मैं समझता हूं कि अब हम अपने को काफी छोटा महसूस करने लगे हैं। सो, चलकर सोयें।'

विनम्रता प्रदर्शनप्रिय और अहंमन्य नहीं होती। किन्हीं दो ईसाई मठों के पादरियों में बहस हो रही थी। एक ने दूसरे से कहा—'विद्वत्ता में शायद हमारा मठ आपके मठ का मुकाबला न कर सके। शायद सेवा कार्यों में भी नहीं; क्योंकि हमारे साधन बहुत सीमित हैं। मगर जहां तक विनम्रता का सवाल है, हम आपसे बहुत आगे हैं।' सच्ची विनम्रता ऐसे शब्द कभी नहीं बोल सकती।

प्योरिया (अमरीका) के बिशप एडमंड इन बड़े विद्वान थे, नौ भाषाएं जानते थे। वे जब भी गिरजे में आत्मस्वीकृति के लिए जाते, तो पादरी से कहते—'फादर, यह बात आप भूल जाइये कि मैं बिशप हूं। मुझे एक साधारण अपराधी और पश्चात्तापकर्ता के रूप में ही देखिये।' यह है सच्ची विनम्रता की वाणी।

—सुवीर

★

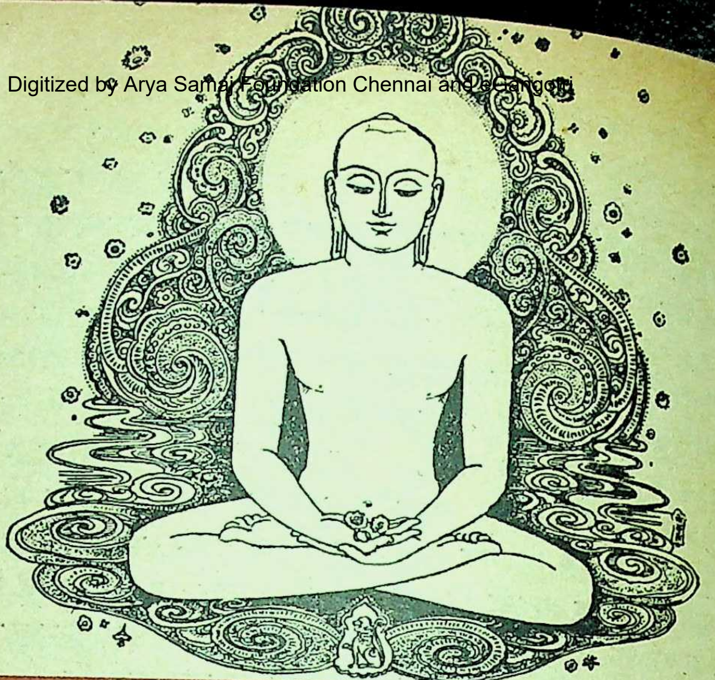

महावीर की मांगलिक विरासत

पंडित सुखलाल

साधारण तौर पर हमें तीन प्रकार की विरासतें मिलती हैं—शारीरिक, सांपत्तिक और सांस्कारिक। माता-पिता और गुरुजनों की ओर से शरीर के रूप, आकार आदि गुणधर्म की जो विरासत मिलती है, वह है शारीरिक विरासत। माता-पिता या अन्य किसी से विरासत में जो संपत्ति मिलती है, वह है सांपत्तिक विरासत। तीसरी है सांस्कारिक विरासत। संस्कार माता-पिता से मिलते हैं, शिक्षक और मित्रों से भी मिलते हैं और जिस समाज में हमारी परवरिश होती है, उससे भी मिलते हैं।

यह ठीक है कि जीवन जीने के लिए, उसे विकसित करने और समृद्ध बनाने के लिए तीनों विरासतों का महत्त्व है; किंतु इन तीनों में संजीवनी की नवचेतना दाखिल करने वाली विरासत अलग ही है। और इसीलिए वह चौथी विरासत मंगल-रूप है। सामान्य जीवन जीने में प्रथम तीन विरासतें साधन-रूप बनती हैं, उपयोगी होती हैं; किंतु चौथी मांगलिक विरासत के अभाव में मनुष्य का जीवन उन्नत नहीं बनता, धन्य नहीं बनता। यही चौथी विरासत की विशेषता है।

यह कोई नियम नहीं हो सकता कि मांगलिक विरासत हमें माता-पिता, अन्य गुरुजन या साधारण समाज से मिलेगी ही, फिर भी किसी भिन्न प्रवाह से वह जरूर मिलती है।

शारीरिक, सांपत्तिक और सांस्कारिक विरासत स्थूल इंद्रियों से जानी समझी जा सकती है; परंतु चौथी विरासत के संबंध में यह बात नहीं कह सकते। जिस मनुष्य को प्रज्ञा-इंद्रिय प्राप्त हो, जिसका संवेदन सूक्ष्म-सूक्ष्मतर हो, वही इस विरासत को समझ सकता है या ग्रहण कर सकता है। अन्य विरासतें जीवन के रहते हुए या मृत्यु के समय नष्ट होती हैं, जबकि इस मांगलिक विरासत का कभी नाश नहीं होता। एक बार उसने चेतना में प्रवेश किया कि वह जन्म-जन्मांतर चलेगी, उत्तरोत्तर उसका विकास होता रहेगा और वह अनेक लोगों को संप्लावित भी करेगी।

जो मंगल-विरासत भगवान महावीर ने हमें सौंपी है, वह कौन-सी है? एक बात हम पहले ही स्पष्ट समझ लें। यहां हम मुख्यतः सिद्धार्थ-नंदन या त्रिशला-पुत्र, स्थूल देहधारी महावीर के संबंध में नहीं सोच रहे हैं। शुद्ध-बुद्ध और वासनामुक्त चेतन-स्वरूप महान वीर को ध्यान में रखकर यहां मैं 'महावीर' का निर्देश कर रहा हूं। ऐसे महावीर में सिद्धार्थ-नंदन का समावेश हो ही जाता है। इसके अलावा इसमें उनके सदृश सभी शुद्ध-बुद्ध चेतनाओं का समावेश होता है। महावीर में जात-पांत या देश-काल का कोई भेद नहीं। वे वीतरागाद्वैत रूप से एक ही हैं।

भगवान महावीर ने जो मंगल-विरासत हमें सौंपी है, वह उन्होंने केवल विचार में ही संगृहीत नहीं रखी; जीवन में उतारकर परिपक्व करने के बाद ही उन्होंने उसे हमारे समक्ष रखा है।

भगवान महावीर द्वारा प्रदत्त विरासत को संक्षेप में चार विभागों में बांट सकते हैं—१. जीवन-दृष्टि, २. जीवन-शुद्धि, ३. जीवन-पद्धति में परिवर्तन, और ४. पुरुषार्थ।

हम प्रथम यह देखें कि भगवान की जीवन दृष्टि क्या थी। जीवन-दृष्टि यानी उसके मूल्यांकन की दृष्टि। हम सब अपने-अपने जीवन का मूल्य समझते हैं। जिस परिवार, जिस गांव, जिस समाज और जिस राष्ट्र के साथ हमारा संबंध हो, उसके जीवन की कीमत भी समझते हैं। उससे आगे बढ़कर पूरे मानव-समाज की और उससे भी आगे जाकर हमारे साथ संबंध रखने वाले पशु-पक्षी के जीवन की भी कीमत समझते हैं।

किंतु महावीर की स्वसंवेदन-दृष्टि उससे भी आगे बढ़ी हुई थी। वे ऐसे धैर्य-संपन्न और सूक्ष्मप्रज्ञ थे कि कीट-पतंग तो क्या, पानी, वनस्पति-जैसी जीवन-शून्य मानी गयी भौतिक वस्तुओं में भी उन्होंने जीवन-तत्त्व देखा था। महावीर ने अपनी जीवन-दृष्टि लोगों के सामने रखी, तब यह नहीं सोचा कि कौन उसे ग्रहण करेगा। उन्होंने इतना ही सोचा कि काल निरवधि है, पृथ्वी विशाल है, कभी तो कोई उसे समझेगा ही।

महावीर ने अपने प्राचीन उपदेश-ग्रंथ

आचारांग में यह बात बहुत सरल भाषा में रखी है और कहा है कि हर एक को जीवन प्रिय है, जैसा खुद हमें है। भगवान की सरल और सर्वग्राह्य दलील इतनी ही है—'मैं आनंद और सुख चाहता हूं, इसलिए मैं खुद हूं। फिर उसी न्याय से आनंद और सुख चाहने वाले अन्य छोटे-बड़े प्राणी भी होंगे। ऐसी स्थिति में यह कैसे कह सकते हैं कि मनुष्य में ही आत्मा है, पशु-पक्षी में ही आत्मा है और दूसरों में नहीं है? कीट-पतंग तो अपनी-अपनी पद्धति से सुख खोजते ही हैं। सूक्ष्मतम वानस्पतिक जीवसृष्टि में भी संतति, जनन और पोषण की प्रक्रिया अगम्य रीति से चलती ही रहती हैं।'

भगवान की यह दलील थी और इसी दलील के आधार पर से उन्होंने पूरे विश्व में अपने जैसा ही चेतना-तत्त्व भरा हुआ, उल्लसित हुआ देखा। उसे धारण करने वाले तथा निभाने वाले शरीर और इंद्रियों के आकार-प्रकार में कितना भी अंतर हो, कार्यशक्ति में भी अंतर हो, फिर भी तात्त्विक रूप से सर्व में व्याप्त चेतन-तत्त्व एक ही प्रकार से विलास कर रहा है।

भगवान की इस जीवन-दृष्टि को हम आत्मौपम्य-दृष्टि कहेंगे। तात्त्विक रूप से जैसे हम हैं, वैसे ही छोटे-बड़े सर्व प्राणी हैं। जो अन्य जीव प्राणिरूप में हैं, वे भी कभी विकास-क्रम में मानव-भूमि को स्पर्श करते हैं और मानव-भूमि-प्राप्त जीव भी अवक्रांति-क्रम में कभी अन्य प्राणी का स्वरूप धारण करते हैं। इस प्रकार की उत्क्रांति और अवक्रांति का चक्र चलता रहता है, लेकिन उससे मूल चेतन-तत्त्व के स्वरूप में कुछ भी अंतर नहीं होता। जो कुछ भी अंतर होता है, वह व्यावहारिक अंतर है।

भगवान की आत्मौपम्य-दृष्टि में जीवन शुद्धि का प्रश्न आ ही जाता है। भले अज्ञात काल से चेतन का प्रकाश आवृत हो, ढका हुआ हो, उसका आविर्भाव कमोबेश हो, फिर भी शक्ति तो उसकी पूर्ण विकास की, पूर्ण शुद्धि की है ही। जीवतत्त्व में अगर पूर्ण शुद्धि की शक्यता न हो, तो आध्यात्मिक साधना का कोई अर्थ ही नहीं रहता। सच्चे आध्यात्मिक-अनुभव-संपन्न व्यक्तियों की प्रतीति हर जगह एक ही प्रकार की है—'चेतन-तत्त्व मूल में शुद्ध है, वासना और संग से पृथक् है।' शुद्ध चेतन-तत्त्व पर वासना या कर्म की जो छाया उठती है, वह उसका मूल स्वरूप नहीं। मूल स्वरूप तो उससे भिन्न ही है। यह जीवन-शुद्धि का सिद्धांत हुआ।

अगर तात्त्विक रूप से जीव का स्वरूप शुद्ध ही है, तो फिर उस स्वरूप को प्राप्त करने के लिए क्या करें, यह साधना-विषयक प्रश्न खड़ा होता है। भगवान महावीर ने इस प्रश्न का जवाब देते हुए कहा है कि जहां तक जीवन-पद्धति का परिवर्तन नहीं होता है, आत्मौपम्य दृष्टि और आत्मशुद्धि संभव हो इस प्रकार का परिवर्तन जीवन में नहीं होता है, तब तक आत्मौपम्य और जीवन-शुद्धि का अनुभव नहीं हो पाता।

जीवन-पद्धति के परिवर्तन को जैनशैली

में 'चरणकरण' कहते हैं। व्यावहारिक भाषा में उसका अर्थ इतना ही है—बिलकुल सरल, सादा और निष्कपट जीवन जीना। व्यावहारिक जीवन आत्मौपम्य-दृष्टि और जीवन की शुद्धि पर के आवरण, माया के परदे बढ़ाते जाने का साधन नहीं है; बल्कि वह साधन है उस दृष्टि और उस शुद्धि को साधने का। जीवन-पद्धति के परिवर्तन में समझने की बात मुख्य एक ही है; वह यह कि प्राप्त स्थूल साधनों का उपयोग इस प्रकार न करें, जिससे कि उसमें हम खुद खो जायें।

यह सब बात सही है, फिर भी सोचना यह पड़ता है कि यह सब कैसे सधेगा? जिस समाज में, जिस लोकप्रवाह में हम रहते हैं, उसमें तो ऐसा कुछ होता हुआ दिखाई नहीं देता। क्या ईश्वर या कोई ऐसी दैवी शक्ति नहीं है, जो हमारा हाथ पकड़े और लोकप्रवाह की विरुद्ध दिशा में हमें ले जाये, ऊपर उठाये?

इसका उत्तर महावीर ने स्वानुभव से दिया है। उन्होंने कहा है कि इसके लिए पुरुषार्थ ही आवश्यक है। जब तक कोई भी साधक स्वयं पुरुषार्थ नहीं करता, वासनाओं के दबाव का सामना नहीं करता, उसके आघात-प्रत्याघात से क्षुब्ध न होते अडिगता से जूझने का पराक्रम नहीं करता, तब तक ऊपर कही हुई एक भी बात सिद्ध नहीं होती। इसी कारण उन्होंने कहा है—**संजमम्मि वीरियम्**, अर्थात् संयम, चारित्र्य, सादा रहनसहन, इन सबके लिए पराक्रम करें।

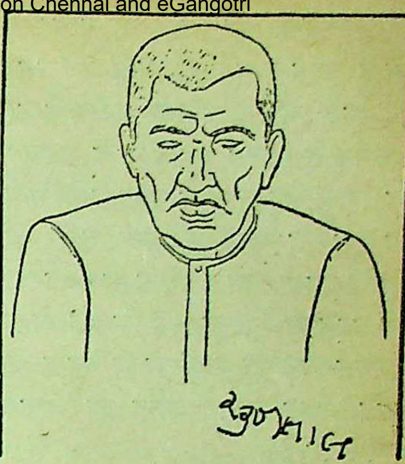

भारतीय प्रज्ञा के एक मेरुशृंग सुखलालजी

वास्तव में, 'महावीर' कोई नाम नहीं है, विशेषण है। जो इस प्रकार का महान वीर्य—पराक्रम—दिखाते हैं, वे सब महावीर हैं। इसमें सिद्धार्थ-नंदन तो आ ही जाते हैं, और अन्य ऐसे सारे अध्यात्म-पराक्रमी भी आ जाते हैं। हम निःशंकता से देख सकते हैं कि जो मांगलिक विरासत महावीर के उपदेश से मिलती है, वही उपनिषद् से भी मिलती है। और बुद्ध तथा ऐसे ही अन्य महान वीरों ने उसके अलावा और कहा भी क्या है?

इसी अर्थ में, अगर मैं उपनिषद् का शब्द 'भूमा' इस्तेमाल करके कहूं कि 'महावीर यानी भूमा, और वही ब्रह्म' तो उसमें कोई असंगति नहीं होगी। महावीर भूमा थे, महान थे, इसी कारण वे सुखरूप थे, इसी कारण वे अमृत थे। उन्हें दुःख कभी स्पर्श नहीं कर सकता, उनकी कभी मृत्यु नहीं होती। दुःख और मृत्यु 'अल्प' की होती है,

ह्रस्वदृष्टि-युक्त की होती है, पामर की होती है, वासना-बद्ध की होती है। उसका संबंध सिर्फ स्थूल और सूक्ष्म शरीर के साथ ही संभव है। जिस महावीर के संबंध में बोल रहा हूं, वह तो स्थूल-सूक्ष्म-उभय शरीर से परे होने से 'भूमा' है, 'अल्प' नहीं।

इतिहासकार की पद्धति से सोचने पर यह प्रश्न सहज ही पैदा होता है कि महावीर ने जो मंगल-विरासत अन्यों को दी, वह उन्होंने किससे, किस प्रकार प्राप्त की? इसका उत्तर सरल है।

शास्त्र में कहा है और व्यवहार में भी कहा जाता है कि बिंदु में सिंधु समाता है। सुनने पर यह उलटा-सा लगता है। कहां बिंदु और कहां सिंधु? सिंधु में तो बिंदु रहता है, किंतु बिंदु में सिंधु किस तरह रह सकता है? फिर भी यह बात बिलकुल सही है। महावीर के स्थूल जीवन का परिमित-काल काल के महान समुद्र का एक बिंदुमात्र है। भूतकाल तो भूत है, सत्-रूप से वह रहता नहीं। हम जिसकी कल्पना नहीं कर सकते इतनी त्वरा से वह आता है और जाता है; किंतु उसमें संचित हुए संस्कार नये-नये वर्तमान के बिंदु में समाते जाते हैं। भगवान महावीर ने जीवन में जो आध्यात्मिक विरासत प्राप्त की और सिद्ध की, वह उनके पुरुषार्थ का फल है, यह सही है; किंतु उसके पीछे अज्ञात भूतकाल की उसी विरासत की सतत परंपरा रही है।

कोई उन्हें ऋषभ, नेमिनाथ या पार्श्वनाथ आदि की परंपरा के कह सकते हैं; किंतु मैं इसे एक अर्धसत्य के तौर पर ही स्वीकार करता हूं। भगवान महावीर के पहले मानव-जाति ने ऐसे अनेक महापुरुष पैदा किये हैं। वे चाहे किसी भी नाम से प्रसिद्ध हुए हों, या अज्ञात भी रहे हों, उन समग्र आध्यात्मिक पुरुषों की साधना-संपत्ति मानव-जाति में उत्तरोत्तर इस प्रकार संक्रांत होती रही कि ऐसा नहीं कहा जा सकता कि यह सारी संपत्ति किसी एक ने ही साधी है। ऐसा कहना केवल भक्ति-कथन होगा। भगवान महावीर ने भी ऐसे ही आध्यात्मिक कालस्रोत से उपर्युक्त मांगलिक विरासत प्राप्त की और स्वपुरुषार्थ से उसे संजीवित कर विशेष रूप से विकसित किया तथा उसे देशकालानुकूल समृद्ध करके हमारे सामने रखा।

मैं नहीं जानता कि उनके उत्तरकालीन त्यागी संतों ने उस मांगलिक विरासत से कितना प्राप्त किया और कितना साधा; किंतु कह सकते हैं कि उस बिंदु में, जैसे भूतकाल का महान समुद्र समाविष्ट है, वैसे ही भविष्य का अनंत समुद्र भी उस बिंदु में समाविष्ट है; अर्थात् भविष्य की धारा उसी बिंदु द्वारा चलेगी और अनवरत चलेगी।

['तीर्थंकर' से साभार]

माचिस वाली लड़की

हान्स क्रिश्चन एंडरसन

भयंकर ठंड थी। बर्फ गिर रही थी और जल्दी ही अंधेरा घिर जाने को था; क्योंकि वह वर्ष का अंतिम दिन था—नये वर्ष की पिछली शाम। उस ठंड और अंधेरे में एक छोटी-सी लड़की सड़क पर नंगे पांव चली जा रही थी। हां, यह सच है कि जब वह घर से चली थी तो उसके पांवों में चप्पलें थीं। मगर वे भी भला किस काम की चप्पलें थीं? बहुत बड़ी चप्पलें थीं वे, जिन्हें उसकी मां पहना करती थी। सो आप खुद ही सोच लीजिये, वे किस माप की रही होंगी। और वे भी उसके पैरों से खिसककर गिर गयीं, जब एक बिल्ली दो डरावने चूहों का पीछा करती हुई सर्र-से उसके पास से निकली और लड़की सड़क के दूसरी ओर जाने को भागी। एक चप्पल का तो फिर पता ही नहीं चला; और दूसरी चप्पल एक लड़का उठाकर भाग गया—यह कहता हुआ कि जब मेरे बच्चे होंगे तो यह उनके लिए पालने का काम देगी।

सो वह छोटी-सी लड़की चली जा रही थी नंगे पांव, और उसके पांव ठंड के मारे नीले पड़ गये थे। एक पुराने झोले में उसने माचिस की तीलियां भर रखी थीं। उसके हाथ में भी तीलियों की गड्डी थी। सारे दिन वह कुछ भी तीलियां बेच नहीं पायी थी, किसी ने उसे एक पैसा भी नहीं दिया था। बेचारी कितनी उदास थी—नंगे पांव चलती हुई, भूखी और ठिठुरती हुई!

कंधों तक लटकते हुए उसके घुंघराले रेशमी बालों पर बर्फ के फाहे बैठते जा रहे थे। मगर सच मानिये, वह अपनी शक्ल के बारे में नहीं सोच रही थी। हर खिड़की और झरोखे में रोशनियां जगमगा रही थीं; भुनी बत्तख की खुशबू घरों से निकल-निकलकर सड़क पर फैल रही थी। आखिर वह नये वर्ष की पिछली रात थी न! और उसी के बारे में सोच रही थी वह।

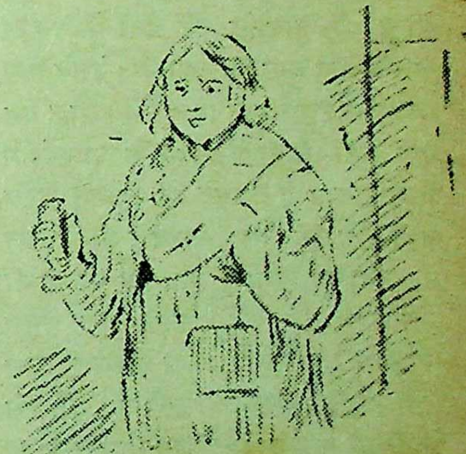

बाल-साहित्य और परीकथाओं के अप्रतिम स्रष्टा हान्स क्रिश्चन एंडरसन डेनिश भाषा के श्रेष्ठ प्रेमगीतकार भी थे। सन १९७५ उनकी मृत्यु का शताब्दी वर्ष था। इस उपलक्ष्य में उनकी एक दीर्घ परीकथा 'जलपरी' आप जनवरी अंक में पढ़ चुके हैं।

वह दो मकानों के बीच के छोटे-से कोने में बैठ गयी, जिनमें से एक मकान दूसरे से जरा आगे निकला हुआ था। वहां वह दुबककर बैठ गयी और उसने पैर नीचे सिकोड़ लिये। मगर उसे ज्यादा ही ज्यादा ठंड लगती जा रही थी। घर जाने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ रही थी, क्योंकि आज उसने एक भी तीली नहीं बेची थी, एक भी पैसा नहीं कमाया था। पिता जरूर उसे पीटता। यों भी घर में तो और भी ज्यादा ठंड थी।

उसके घर पर कहने को ही छत थी। हवा उस छत में से हू-हू करती हुई अंदर घुस आती थी, हालांकि बड़े छेदों में उन्होंने कागज और घास ठूंस रखी थी। उसके हाथ ठंड से बिलकुल सुन्न पड़ गये थे। ओह, बस एक छोटी-सी तीली—उससे कितना आराम मिल सकता है! अगर वह हिम्मत करके गड्डी में से एक तीली निकाल ले और दीवार पर रगड़कर जला दे और उस पर अपनी उंगलियां गर्म करे! उसने एक तीली खींच ली ..... खच्.....कैसे भभककर जल उठी तीली! कितनी उजली गर्म लौ, जैसे छोटी-सी मोमबत्ती हो! उसने अपनी हथेली उसके चारों ओर कर ली—सच, कितनी अनोखी रोशनी थी! छोटी-सी लड़की कल्पना करने लगी कि वह एक बड़ी-सी अंगीठी के सामने बैठी है, अंगीठी के हत्थे पीतल के हैं और चमचमा रहे हैं और अंगीठी में प्यारी-सी गरम आग जल रही है.... अरे! क्या हो गया? अंगूठों को जरा गर्मी पहुंचाने के लिए वह अपने पांव आगे बढ़ा ही रही थी कि इतने में लौ बुझ गयी, अंगीठी गायब हो गयी। और वह वहीं बैठी रह गयी जली तीली का टुकड़ा हाथ में लिये।

उसने दूसरी तीली दीवार पर रगड़ी। कितनी चमक के साथ जल उठी तीली! और जहां उसकी रोशनी पड़ी, वहां दीवार पारदर्शक बन गयी जाली की तरह। उसमें से वह पूरा कमरा देख सकती थी अब। कमरे में प्रीतिभोज की मेज सजी थी, उस पर लकदक सफेद मेजपोश बिछा था, बड़े सुंदर चीनी के बरतन रखे थे, और उनके बीच थाल में रखी थी आलूबुखारे और मेवों से भरी भुनी हुई बत्तख—गरमागरम। इससे भी बढ़िया बात यह हुई कि भुनी हुई बत्तख थाल में से कूदकर फर्श पर घिसटने लगी—बगल में खोंसी हुई छुरी और कांटे के साथ। वह सीधे छोटी लड़की के पास तक चली आयी.... मगर तभी तीली बुझ गयी और लंबी-चौड़ी ठंडी दीवार के सिवा वहां अब कुछ भी दिख नहीं रहा था।

उसने तीसरी तीली सुलगायी। अब वह बहुत ही सुंदर क्रिस्मस-वृक्ष के नीचे बैठी थी। क्रिस्मस पर उसने धनी व्यापारी के घर कांच के दरवाजे में से जो क्रिस्मस-वृक्ष

देखा था, यह उससे भी बड़ा था। इसकी हरी-हरी टहनियों पर सैकड़ों मोमबत्तियां जल रही थीं और कागज के सुंदर चित्र लटक रहे थे, जैसे कि दुकानों की खिड़कियों में लगे रहते हैं। वे चित्र जैसे उसी को देख रहे थे। लड़की ने दोनों हाथ ऊपर को बढ़ा दिये..... तभी तीली बुझ गयी; अंत में उसने देखा कि वे तो जगमगाते हुए तारे हैं। उन तारों में से एक तेजी से पृथ्वी की ओर लपका और आग की लंबी-सी लकीर अपने पीछे खींचता चला गया। 'जरूर कोई मर रहा है,' छोटी लड़की ने सोचा; क्योंकि उसकी मृत दादी ने उसे बताया था कि तारे के गिरने का मतलब यह है कि कोई आत्मा भगवान के पास ऊपर जा रही है। सिर्फ दादी ही तो थी जो उसे प्यार करती थी। उसने एक तीली और दीवार पर रगड़ी। चारों ओर चमक फैल गयी। और उस चमक के बीच उसकी बूढ़ी दादी खड़ी थी, जो बड़ी प्रसन्न, बड़ी भली और प्यार-भरी लग रही थी। छोटी लड़की रुआंसी आवाज में चिल्लायी—'ओ दादी मां, मुझे भी अपने साथ ले चलो। मुझे पता है, तीली के बुझते ही तुम गायब हो जाओगी, जैसे कि गरम अंगीठी गायब हो गयी, भुनी हुई बत्तख गायब हो गयी, और सुंदर क्रिस्मस-वृक्ष गायब हो गया।' चटपट उसने उस गड्डी की बाकी सबकी-सब तीलियां दीवार पर रगड़ दीं; क्योंकि वह अपनी दादी मां को वहीं रोके रखना चाहती थी। और तीलियां ऐसी शान से जल उठीं कि दिन के जैसी

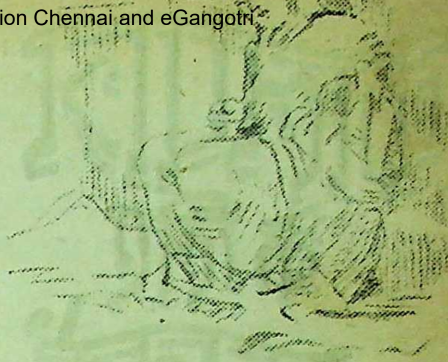

रोशनी हो गयी। दादी मां आज बहुत ही लंबी और बहुत सुंदर लग रही थी। उसने छोटी लड़की को बांहों में भर लिया और वे दोनों खुशी से, बड़ी शान से उड़ चलीं—ऊपर, और ऊपर, उस जगह की ओर जहां सरदी नहीं है, भूख नहीं है, डर नहीं है। वे भगवान के पास पहुंच गयीं।

लेकिन अगले दिन ठंड में दो घरों के बीच दुबकी हुई वह छोटी-सी लड़की बैठी हुई थी। उसके गाल गुलाबी थे, उसके ओंठों पर मुस्कान थी और वह ठंड से अकड़कर मर गयी थी पुराने वर्ष की अंतिम रात को। नये वर्ष के पहले सवेरे की रोशनी उसके मुर्दा शरीर पर पड़ी। मरी हुई छोटी लड़की माचिस की तीलियां लिये दुबककर बैठी हुई थी और एक पूरी गड्डी की तीलियां काम आ चुकी थी। 'शायद वह अपने को गरमाने की कोशिश कर रही थी', लोग बोले। मगर किसी को नहीं पता था कि कैसी गजब की चीजें उसने देखी थीं और कैसे ठाठ से वह अपनी बूढ़ी दादी-मां के साथ नये वर्ष का सुख मनाने चली गयी थी। [अनुवाद: मैत्रेयी दत्ता]

★

कालपात्र के लिए पुस्तकें

दीपावली के अवसर पर हमने एक कल्पित प्रश्न हिंदी के अनेक साहित्यकारों और पत्रकारों से पूछा था। उत्तरों की पहली खेप दीपावली विशेषांक में दी गयी थी। स्थानाभाव के कारण जो उत्तर हमें उस अंक से अनिच्छापूर्वक रोकने पड़े, वे यहां प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

हमारा प्रश्न इस प्रकार था :

'मान लीजिये कि द्वितीय विश्व हिंदी परिषद के अवसर पर एक अतिविशाल कालपात्र (टाइम कैप्स्यूल) गाड़ा जाने वाला है और उसमें रखने के लिए आपसे अपनी केवल एक पुस्तक भेजने की प्रार्थना की जाती है। आप अपनी कौन-सी पुस्तक भेजेंगे ? साथ ही यह भी मान लें कि आपको आधुनिक साहित्य में से अपनी सर्वाधिक प्रिय तीन पुस्तकों के नाम सुझाने हैं—क. एक हिंदी की, ख. एक किसी हिंदीतर भारतीय भाषा की, और ग. एक किसी अभारतीय भाषा की। आप किन तीन पुस्तकों के नाम लिखेंगे ?'

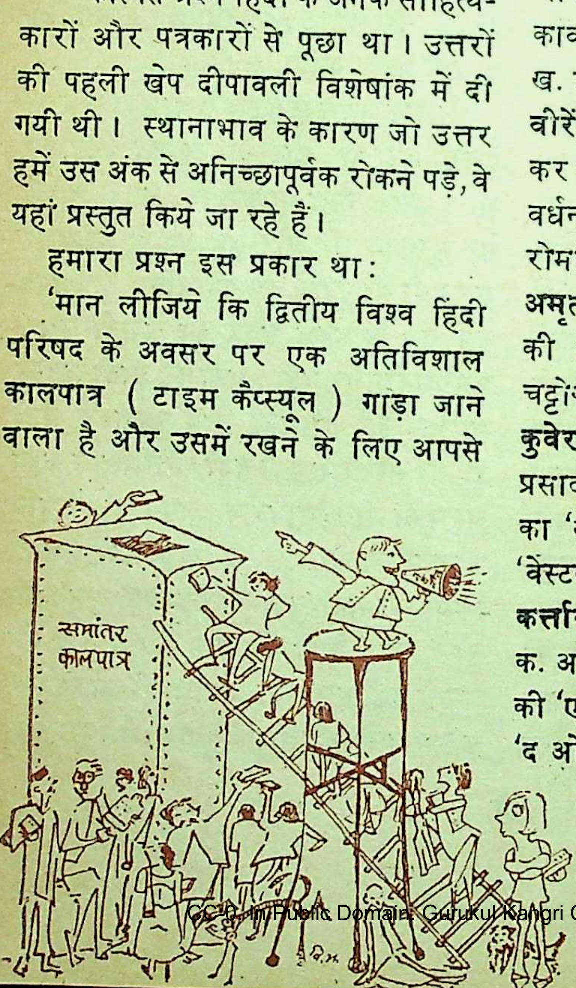

भवानीप्रसाद मिश्र :– 'गांधी पंचशती'। क. दिनकर का 'संस्कृति के चार अध्याय'; ख. रवींद्र का 'संचयिता'; ग. अलेग्जेंडर सोल्जेनित्सिन का 'गुलाग आर्किपैलेगो'।

जानकीवल्लभ शास्त्री : –'राधा' (महाकाव्य)। क. निराला की 'अनामिका'; ख. रवींद्रनाथ का 'संचयिता'; ग. ×।

वीरेंद्रकुमार जैन :–'अनुत्तर योगी : तीर्थंकर महावीर'। क. जैनेंद्रकुमार का 'जयवर्धन'; ख. शरतचंद्र का 'श्रीकांत'; ग. रोमां रोलां का 'ज्यां क्रिस्तोफ'।

अमृत राय :–' बीज'। क. 'मंजूषा' (प्रेमचंद की चुनी हुई कहानियां); ख. शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का 'श्रीकांत'; ग. ×।

कुबेरनाथ राय :–'निषाद बांसुरी'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. रवींद्रनाथ ठाकुर का 'संचयिता'; ग. टी. एस. एलियट का 'वेस्टलैंड'।

कर्त्तारसिंह दुग्गल :–'हाल मुरीदों का'। क. अज्ञेय का 'शेखर'; ख. राजेंद्रसिंह बेदी की 'एक चादर मैली-सी'; ग. हेमिंग्वे का 'द ओल्ड मैन एंड द सी'।

रामदरश मिश्र :–'जल टूटता हुआ'। क. प्रसाद की 'कामायनी' या प्रेमचंद का 'गोदान' या धर्मवीर भारती का 'अंधा युग'; ख. फिराक का 'गुले नग़मा'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

रामकुमार :–'रेवा' (कहानी)। क. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा'; ख. विभूतिभूषण मुखोपाध्याय का 'आरण्यक'; ग. अंत्वान द सैं एजूपेरी का 'विंड, सैंड एंड स्टार्स'।

सुमित्राकुमारी सिन्हा :–'आशा पर्व' (काव्य-संग्रह); क. भगवतीचरण वर्मा का 'प्रश्न और मरीचिका'; ख. बिमल मित्र का 'इकाई दहाई सैकड़ा'; ग. सोल्जेनित्सिन का 'गुलाग आर्किपैलेगो'।

सुरेश सिंह :–'भारतीय पक्षी'। क. सुमित्रानंदन पंत की 'पल्लविनी'; ख. शरतचंद्र का 'चरित्रहीन'; ग. आस्कर वाइल्ड का 'पिक्चर आफ डोरियन ग्रे'।

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' :–'अनुपूर्वा'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. शरतचंद्र का 'चरित्रहीन'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

शिवानी :–'कृष्णकली'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. रवींद्रनाथ का 'गोरा'; ग. दास्तोएव्स्की का 'क्राइम एंड पनिशमेंट'।

गिरिराज किशोर :–'जुगलबंदी'। क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. गिरीश कर्नाड का 'तुगलक' (नाटक); ग. गुंटर ग्रास का 'टिन ड्रम'।

अजित कुमार :–'अंकित होने दो'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख.-ग. ×।

शैलेश मटियानी :–'लेखक की हैसियत से'। क. प्रेमचंद का 'गोदान'; ख. ×; ग. गोर्की का 'माइ यूनिवर्सिटीज़'।

गंगाप्रसाद विमल :–अभी लिख रहा हूं, और उसी को सुरक्षित रखना चाहूंगा, जो अभी लिखी नहीं गयी। क. डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी की 'बाणभट्ट की आत्मकथा'; ख. 'ओमाचू' (मलयालम); ग. कार्ल मार्क्स का 'डास कैपिटल'।

लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय :–'आधुनिक हिंदी साहित्य (१८५०-१९०० ई.)'। क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. गोपीनाथ महांति का 'माटिमटाल' (उड़िया); ग. हेमिंग्वे का 'द ओल्ड मैन एंड द सी'।

डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी :–'हिंदी साहित्य में हास्य रस' (शोध-प्रबंध)। क. ×; ख. ज्योतींद्र दवे की 'मारी नोंध पोथी' (गुजराती); ग. डिकन्स का 'पिकविक पेपर्स'।

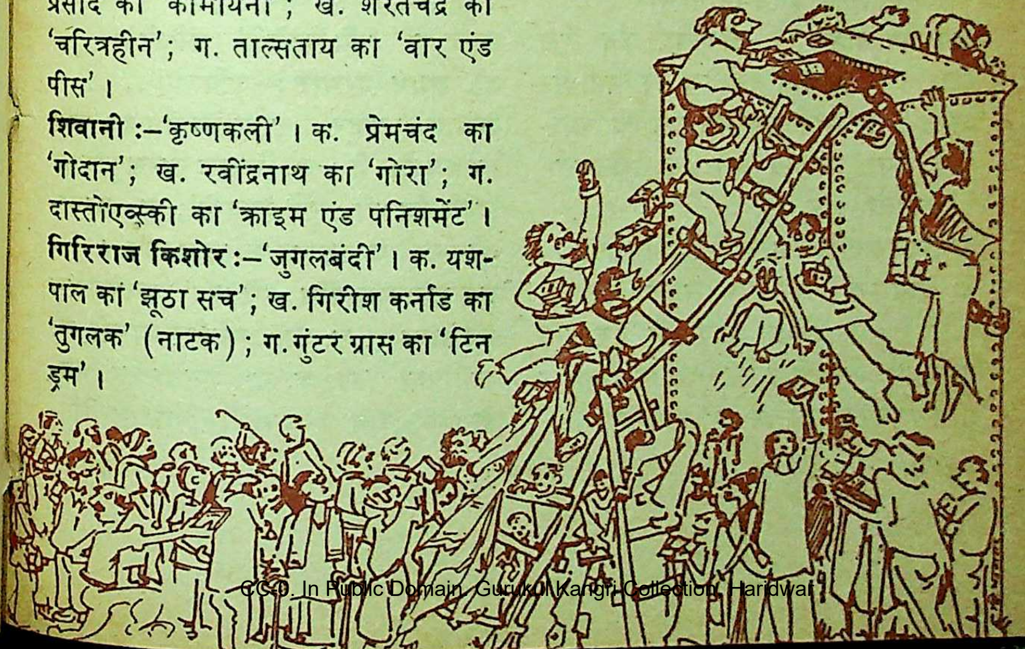

प्रकाश पंडित :– बक रहा हूं जुनून में । क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. कुर्रतुल ऐन हैदर का 'आग का दरिया'; ग. ऐन रैंड का 'द फाउंटन हेड'।

श्यामू संन्यासी :–मैंने जो भी लिखा है, वह इस कोटि में नहीं आता । क. महादेवी के गीत; ख. गुजराती में झवेरचंद मेघाणी का स्मृतिग्रंथ; ग. माइकेल गोल्ड का 'ज्यूज़ विदाउट मनी'।

रामकुमार 'भ्रमर' :–'सेतुकथा' (उपन्यास)। क. रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूं'; ख. बिमल मित्र का 'खरीदी कौड़ियों के मोल'; ग. ताल्सताय का 'वार एंड पीस'।

डा.राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी:–'विनय पत्रिका की टीका'। क. ×; ख. रवींद्र की 'गीतांजलि'; ग. एडविन आर्नाल्ड की 'द लाइट आफ एशिया'।

डा. युगेश्वर :–मेरी कोई पुस्तक कालपात्र के लायक नहीं है । क. प्रसाद की 'कामायनी'; ख. रवींद्र की 'गीतांजलि'; ग. पास्तरनाक का 'डा. जिवागो'।

अगरचंद नाहटा :– 'बीकानेर जैन लेख संग्रह'। क. आचार्य रजनीश की 'महावीर वाणी'; ख. मुनि पुण्यविजयजी की 'भारतीय श्रमण संस्कृति अने जैन लेखनकला' (गुजराती); ग. ×।

दामोदर सदन :–'आग' (कहानी-संग्रह)। क. कमलेश्वर की 'एक सड़क : सत्तावन गलियां'; ख. जयवंत दळवी की 'घुन लगी बस्तियां' (मराठी उपन्यास); ग. मिगुएल आंजेल आस्तुरिया का 'द साइक्लोन'।

डा. परमानंद श्रीवास्तव :–'कविकर्म और काव्यभाषा'। क. मुक्तिबोध का 'चांद का मुंह टेढ़ा है'; ख. बादल सरकार का 'पागल घोड़ा' (बंगला); ग. पाब्लो नेरूदा का 'कैंटो जेनरल'।

यशपाल जैन :–'सेतु-निर्माता'। क. वीरेंद्रकुमार जैन का 'अनुत्तर योगी : तीर्थंकर महावीर' (प्रथम खंड); ख. इरावती कर्वे का 'युगांत' (मराठी); ग. स्टीफन ज्वाइग का 'विराट' और 'द आइज़ आफ द अनडाइंग ब्रदर'।

दिनकर सोनवलकर :–'अ से असभ्यता'। क. अमृतलाल नागर का 'मानस का हंस'; ख. दुर्गा भागवत का 'व्यासपर्व' (मराठी); ग. मैक्सिम गोर्की का 'मदर'।

रामेश्वरदयाल दुबे:– 'कोणार्क' (खंडकाव्य)। क. अमृतलाल नागर का 'मानस का हंस'; ख. रवींद्रनाथ की 'गीतांजलि'; ग.×।

रमेश उपाध्याय :–'जमी हुई झील'। क. यशपाल का 'झूठा सच'; ख. ताराशंकर बंद्योपाध्याय का 'गणदेवता'; ग. हावर्ड फास्ट का 'आदि विद्रोही' (अंग्रेजी)।

डा. श्याम परमार :–'कविताएं .... कविता के बाहर'। क. मुक्तिबोध का 'चांद का मुंह टेढ़ा है'; ख. फिराक गोरखपुरी का 'बज्मे जिंदगी : रंगे शायरी'; ग. शोलोखोव का 'एंड क्वायट फ्लोज़ द डॉन'।

उमाकांत मालवीय :–'देवकी' (अकथात्मक खंडकाव्य)। क. डा. धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया'; ख. क. मा. मुनशी का 'भगवान परशुराम' (गुजराती); ग. सोल्जेनि-

त्सिन का 'कैन्सर वार्ड'।

द्विजेंद्रनाथ मिश्र 'निर्गुण' :–अपनी किसी भी पुस्तक को मैं इस योग्य नहीं मानता। क. प्रेमचंद का 'गोदान' या प्रसाद की 'कामायनी'; ख. शरतचंद्र का 'श्रीकांत' या रवींद्रनाथ का 'संचयिता'; ग. श्रीअरविंद की 'सावित्री'।

बालकवि बैरागी :–'मंगते से मिनिस्टर' (अभी अप्रकाशित)। क. भवानीप्रसाद मिश्र की 'गांधी पंचशती'; ख. झवेरचंद मेघाणी का 'माणसाई ना दीवा' (गुजराती); ग. 'लास्ट होराइज़न'।

डा. शेरजंग गर्ग :– 'सुमन बाल गीत'; क. धर्मवीर भारती का 'अंधायुग'; ख. ताराशंकर बंद्योपाध्याय का 'गणदेवता'; ग. कामू का 'प्लेग'।

प्रयाग शुक्ल:–वह पुस्तक मुझे अभी लिखनी है। क. मुक्तिबोध की 'एक साहित्यिक की डायरी'; ख. जीवनानंददास की श्रेष्ठ कविताएं; ग. पास्तरनाक का 'डा. जिवागो'।

रामावतार त्यागी :–'आठवां स्वर'। क. दिनकर की 'उर्वशी'; ख. शरतचंद्र का 'शेष प्रश्न'; ग. हरमन हेस का 'सिद्धार्थ'।

विद्यावती कोकिल:–'आत्मा की पुकार' (प्रेस में)। क. सुमित्रानंदन पंत की 'पौ फटने के पहले'; ख. रवींद्र की 'गीतांजलि'; ग. श्रीअरविंद की 'सावित्री'।

केदारनाथ अग्रवाल :–'फूल नहीं रंग बोलते हैं'। क. रामविलास शर्मा की 'निराला की साहित्य-साधना'; ख. तकषि का 'चेम्मीन' (मलयालम); ग. पुश्किन का काव्यसंग्रह।

उत्तरों के साथ की कुछ टिप्पणियां महत्त्वपूर्ण हैं। **अमृत राय** का कहना है–'सच तो यह है कि ऐसे प्रश्नों का उत्तर नहीं हुआ करता। कल कोई और ही पुस्तकें हो सकती हैं।' **शैलेश मटियानी** ने इसी को पल्लवित करते हुए साहित्य-कृतियों को स्थायित्व देने वाले तत्त्व की चर्चा की है –'यों मैं कालपात्र में बंद करके सुरक्षित रखे जाने वाले साहित्य को नहीं, अपने समय और भविष्य की मनुष्य-जाति की स्मृति और उसके अस्तित्व का अविच्छिन्न हिस्सा बन जाने वाले साहित्य को ही कालजयी मान सकता हूं।'

डा. जगदीश गुप्त ने कालपात्र के लिए जो अपनी व परायी पुस्तकें चुनी हैं, उनके नाम आप पिछले अंक में पढ़ चुके हैं। उनकी टिप्पणी का आनंद अब लीजिये :

'मुझे यह विचार–यानी अपनी किसी पुस्तक का नाम कालपात्र में रखवाने के लिए देना–काफी हास्यास्पद लग रहा है। फिर आप आधुनिक साहित्य की हिंदी, हिंदीतर भाषा तथा विदेशी भाषा की तीन पुस्तकों के नाम चाहते हैं। कालपात्र अगर कभी संयोगवशात् दो-चार सहस्राब्दियों बाद खुला, तब तक वे सारी आधुनिक कृतियां अति पुरातन हो चुकी होंगी; और सिंधलिपि की तरह शायद वह लिपि भी अबोधगम्य हो जायेगी। फिर भी आपने जो आत्म-प्रचार का मौका दिया है उसका लाभ उठा रहा हूं। "मुफ्त हाथ आये तो बुरा क्या है!" गालिब कह ही गये हैं।' [यह किस्त छपते समय आये उत्तर जनवरी अंक में छपेंगे।]

★

श्री गोपालजी नेवटिया के आकस्मिक देहावसान से मेरे जीवन में से जैसे एक दीपक बुझ गया है। पिछले ४१ वर्षों से उन्हें निकट से देखने-जानने का सौभाग्य मुझे मिला था। वे एक उदात्त, निरभिमान और हृदय से विनम्र व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने जीवन द्वारा समाज को कई ढंग से समृद्ध किया।

उनसे पहली बार मैं मिला था १९३ में कलकत्ता में, जहां कि वे अवध शुगर मिल्स की स्थापना के सिलसिले में आया करते थे। तब मैं इंडियन शुगर मिल्स एसोसिएशन तथा इंडियन चेंबर ऑफ कामर्स का मंत्री था। उनकी स्पष्टभाषिता और हार्दिकता, मोहक तौर-तरीके और आनंदी स्वभाव ने मुझे बहुत प्रभावित किया।

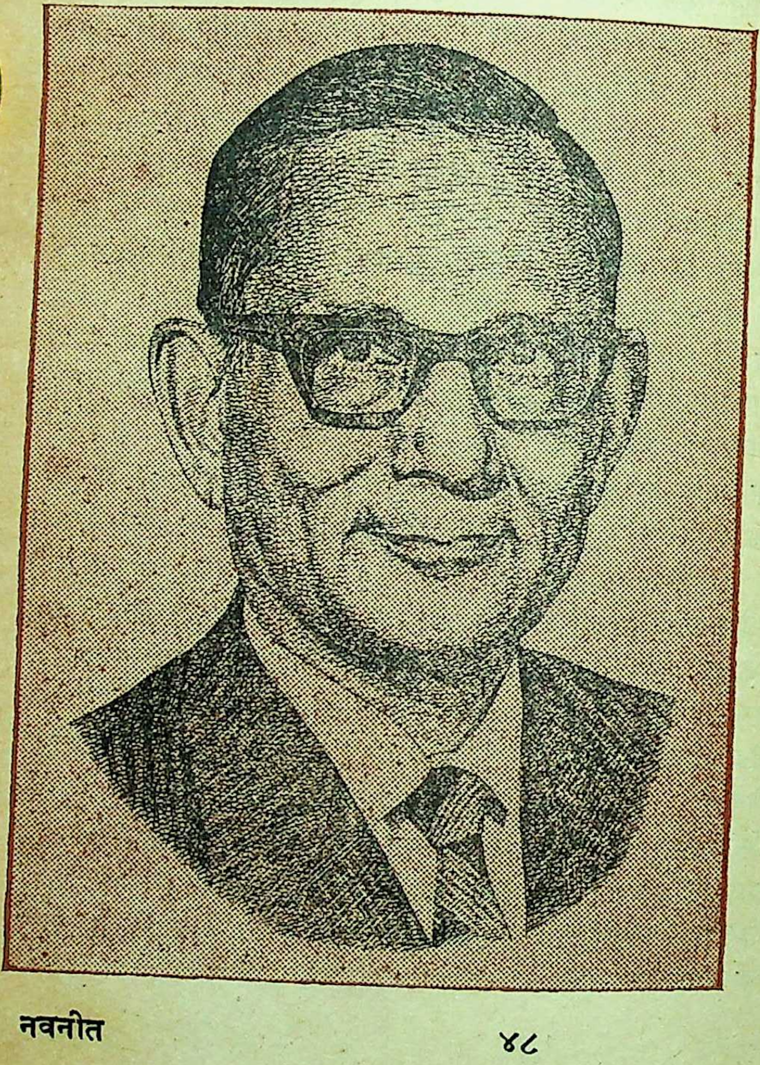

सन २६ से सोलह साल कलकत्ते रहकर १९४२ में मैं बंबई आ गया। उसके बाद हमारा परिचय घनिष्ठ मित्रता में परिणत होता गया; क्योंकि हमारी दिलचस्पियां समान थीं। जीवन के प्रति हमारे दृष्टिकोण में सादृश्य था; और हम दोनों ही, व्यक्तियों और घटनाओं को जरा दार्शनिक दृष्टिकोण से देखने के आदी थे। व्यापार, वाणिज्य एवं उद्योग के अलावा शिक्षा, पत्रकारिता, खेलकूद, सांस्कृतिक क्रिया-कलाप और रोटरी इत्यादि में भी हमारी एक-सी दिल-

पोर्ट्रेट : ओके

प्रिय मित्र की स्मृति

* एम. पी. गांधी *

चस्पी थीं तथा दोनों ही शांतिमय आनंदपूर्ण जीवन के चाहक थे। दोनों को अच्छा पढ़ने और चर्चा का शौक था।

यों उनकी बाकायदा पढ़ाई तो मैट्रिक तक ही हुई थी, किंतु स्वाध्याय द्वारा अपना ज्ञान बढ़ाने में वे सदा उत्सुक और सजग रहे। हिंदी में उन्होंने एक सहज और प्रवाहमय शैली विकसित कर ली थी। उनमें सूक्ष्म और परिमार्जित विनोदवृत्ति थी। वे वार्तालाप-पटु थे, तरह-तरह के किस्से व बातें चमत्कारी शैली में सुनाते थे। संस्कृत और हिंदी की बड़ी सुंदर सूक्तियां वे बातचीत में गूंथ दिया करते थे। विविध विषयों की वे अप-टु-डेट जानकारी रखते थे और उनके विचार बहुत सुलझे हुए व सुग्रथित थे। समृद्ध और वैविध्यपूर्ण अनुभव पर आधारित अपनी सलाह वे निर्व्याज भाव से देते थे। काम के मामले में वे बहुत सुनिश्चित और पक्के थे, तत्काल निर्णय लेते थे, किसी भी प्रश्न के मूल मुद्दे और किसी भी व्यक्ति के मनोभाव को फौरन पहचान लेते थे।

वे छोटे कद-काठ के थे, किंतु बुद्धि और हृदय के विशेष गुणों द्वारा उन्होंने विशिष्ट व्यक्तित्व विकसित कर लिया था। सभी लोगों के साथ उनका व्यवहार शुष्क औपचारिकता से विमुक्त, स्नेहपूर्ण और विवेकभरा होता था।

अपने अधीन काम करने वालों को प्रशिक्षित करने और उन्हें अधिक बड़ी जिम्मेदारियों के लिए तैयार करने में उनका बहुत विश्वास था। वे मानते थे कि कोई भी व्यक्ति अनिवार्य नहीं है और उत्तरदायित्व दूसरों को सौंपने पर ही संस्थाएं ठीक से पनप और चल पाती हैं।

जिन-जिन संस्थाओं का काम वे संभालते थे, उन सबके प्रति एक-सी गहरी निष्ठा रखते थे और उनका काम अनुशासनपूर्वक एवं पूरे दिल से करते थे। प्रखर और बहुमुखी बुद्धि, नया कुछ करने की साहस-वृत्ति, आत्मगौरव तथा सुव्यवहार के बल पर उन्होंने सबका स्नेह संपादन किया था।

इन सब बातों के साथ, श्रीगोपालजी आनंदी स्वभाव के आदमी थे। अपने समृद्ध अनुभव के आधार पर वे व्यक्तियों और परिस्थितियों के बारे में प्रायः ऐसी बातें कहते कि जो विनोद और प्रकाश दोनों से भरी होती थीं। घंटे-भर की बातचीत में पांच-सात बार तो ठहाका लगाने की नौबत आ ही जाती।

किस तरह वे अपनी बात दूसरों से मनवा लेते थे, इसका एक उदाहरण देता हूं। एक दोपहर को मैं उनके पास बैठा हुआ था कि एक उच्चपदस्थ संमाननीय मित्र उनसे

मिलने उनके दफ्तर में आये और बोले–'मुझे थोड़ी मदद चाहिये, और वह आप ही दे सकते हैं।' फिर उन सज्जन ने बताया कि उन्होंने बंबई अस्पताल का बिरला मातुश्री सभागार एक धर्मार्थ कार्य के सिलसिले में संगीत-कार्यक्रम के लिए किराये पर लिया था। मगर कार्यक्रम निर्धारित अवधि से दो घंटे लंबा खिंच गया, जिससे सभागार के व्यवस्थापक निर्धारित रकम से अधिक पैसा मांग रहे हैं। वे बोले–'आप यदि व्यवस्थापकों को अधिक रकम न लेने को कह दें तो मैं आपका कृतज्ञ हूंगा, क्योंकि तब उस धर्मार्थ कार्य के लिए उतनी रकम बच जायेगी।'

यूरोप-यात्रा में कार्यव्यस्त

श्रीगोपालजी क्षण-भर चुप रहे। फिर बोले–'शायद आप जानते हों, सभागार बंबई अस्पताल की जायदाद है। और बंबई अस्पताल एक धर्मार्थ संस्था है, जो धन के लिए दान पर निर्भर है। सभागार की आमदनी अस्पताल की निधि में जाती है। क्या आपको यह उचित लगता है कि अस्पताल अपना "नार्मल चार्ज" न ले और वह रकम आपके द्वारा आयोजित धर्मार्थ कार्य में चंदे के रूप में दे? क्या अस्पताल दान का सर्वोत्तम पात्र नहीं?' उन्होंने यह भी कहा कि यदि यह जायदाद श्री बिरलाजी की होती तो इस बारे में कुछ विचार भी किया जा सकता था, किंतु वर्तमान नियमों के रहते क्या अस्पताल को अपनी स्वाभाविक आय से वंचित करना ठीक होगा? वे सज्जन विचार में पड़ गये, फिर बोले–'मुझे लगता है, आपका दृष्टिकोण सही है।'

कोई व्यक्ति किसी संस्था के लिए अपरिहार्य नहीं होता–अपने इस बुनियादी विश्वास के कारण वे हर एक कार्यकर्ता और कर्मचारी को अपनी जिम्मेवारी पर काम करने की प्रेरणा देते थे, भले ही इसमें उससे कोई भूल हो जाये। एक उदाहरण संक्षेप में:

कुछ समय पूर्व जब वे बंबई से बाहर गये थे, एक समस्या उठी। बंबई पोर्ट ट्रस्ट ने बंबई अस्पताल को सूचना दी कि आपने कुछ समय पूर्व जो कोबाल्ट-एक्सरे-यंत्र आयात किया था, उसे ५,००० रुपया विलंब-शुल्क

भरकर फौरन बंदरगाह से ले जाइये। चूंकि श्रीगोपालजी शहर में न थे, अस्पताल के एक अधिकारी ने मुझसे पूछा कि क्या आप बंबई पोर्ट ट्रस्ट के ट्रस्टियों में से किसी को सारी स्थिति समझाकर विलंब-शुल्क माफ करवा सकेंगे? उन्होंने मुझे यह भी बताया कि जिन कारणों से विलंब शुल्क चढ़ा, उन पर अस्पताल का कोई बस नहीं था।

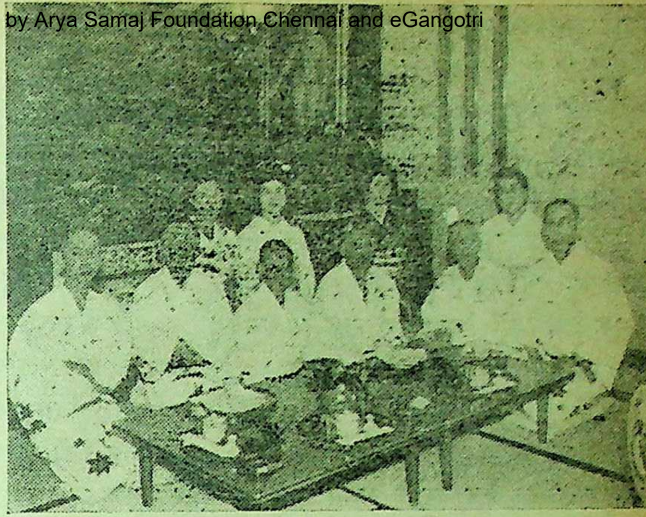

जापान-यात्रा में अपने आतिथेयों के साथ जापानी वेश में श्रीगोपालजी एवं उनके अनुज आनंदकिशोरजी। (प्रथम पंक्ति में बायीं ओर से तीसरे व चौथे।)

श्रीगोपालजी यदि शहर में होते, तो वे पोर्ट-ट्रस्ट के जिन सज्जन से बात करते, उन्हें सौभाग्य से मैं भी अच्छी तरह जानता था। मैंने उनसे निवेदन किया। बंबई अस्पताल के लिए उनके मन में बड़ी सद्भावना थी। उन्होंने पोर्ट-ट्रस्ट को विलंब-शुल्क माफ करने के लिए राजी कर लिया। परंतु जब यह सब बातचीत चल रही थी, उन्होंने पूछ लिया—'जब यह मामला नेवटियाजी के हाथ में था, तो ऐसी नौबत कैसे आयी?'

श्रीगोपालजी ने बंबई लौटने के बाद बताया कि एक सज्जन ने अस्पताल को वचन दिया था कि वे दिल्ली में संबंधित विभाग से कहकर इस यंत्र पर से आयात-कर माफ करवा देंगे। इसलिए इस बीच यंत्र की डिलिवरी न ली जाये। परंतु आप जानते हैं कि दिल्ली का कारोबार किस रफ्तार से चलता है। खैर, अस्पताल के अधिकारी ने जिस सूझबूझ से इस समस्या को सुलझाया, उससे श्रीगोपालजी बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसे इसके लिए बधाई दी।

दूसरे के दुःखों और दुर्घटनाओं के प्रति उन्हें सच्ची सहानुभूति रहती थी। ऐसे समय वे स्नेह-भरे शब्दों, सही सलाह और ठोस सहायता द्वारा मददगार बनते थे। मेरे ही जीवन का एक प्रसंग है:

चार वर्ष पूर्व एक दोपहर को मैंने उन्हें बताया कि एकाएक मुझ पर कैसी विपदा आ पड़ी है। मेरी पत्नी का आपरेशन करने

[शेष पृष्ठ १३५ पर]

वल्लभभाई

विभिन्न व्यक्तित्वों के व्यक्ति

द्वितीय तथा अंतिम किस्त

*** रामनाथ सुमन ***

इसके बाद वल्लभभाई स्वराज्य की लड़ाई के लिए रचनात्मक कामों में लग गये। १९२९ में लाहौर कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया। १९३० का मार्च आ गया। गांधीजी दांडी-यात्रा की तैयारियां कर रहे थे। वल्लभभाई गुजरात की किसान-शक्ति को जगा रहे थे। ७ मार्च को वे रास नामक स्थान पर गिरफ्तार कर लिये गये। तीन महीने तीन सप्ताह की सजा हुई।

जेल में बड़ा कष्ट सहना पड़ा। पंद्रह पौंड वजन घट गया। २६ जून को छूटे। मोतीलालजी जेल जाते समय इन्हें ही स्थानापन्न 'राष्ट्रपति' बना गये थे। इस समय तक पूरे देश में सत्याग्रह की ज्वाला धधक उठी थी। इनके समय में धरासणा (गुजरात) और वडाला (बंबई) के मोर्चों पर सत्याग्रही स्वयंसेवकों ने जिस वीरता और साहस का प्रदर्शन किया, वह अद्भुत था। सैकड़ों स्वयंसेवकों और महिलाओं ने हाड़तोड़ लाठी-वर्षा में अप्रतिम शक्ति का परिचय दिया। १ अगस्त को लोकमान्य की बरसी के दिन बंबई में जो जुलूस निकला उसमें मैं भी था। वल्लभभाई, मालवीयजी, शेरवानी, डा. हर्डीकर इत्यादि थे। स्त्रियां भी थीं। विक्टोरिया टर्मिनस के सामने जुलूस गैरकानूनी कहकर रोक दिया गया। शाम के चार बजे से दूसरे दिन सवेरे आठ बजे तक जुलूस सड़क पर डटा रहा। तब नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया और भयंकर लाठी-वर्षा हुई। कितने ही लोगों के सिर और हाथ की हड्डियां टूट गयीं। वल्लभभाई को तीन माह की सजा हुई।

अंत में सत्याग्रह आंशिक रूप से सफल हुआ। गांधी-अर्विन समझौता हुआ। सब कैदी छोड़ दिये गये। आर्डिनेंस उठा लिये गये। करांची में धूमधाम से कांग्रेस हुई। उसके अध्यक्ष वल्लभभाई ही चुने गये। गांधीजी गोलमेज कान्फरेंस में लंदन गये; परंतु वहां कुछ परिणाम न निकला। जब वे विलायत में थे, तभी बंगाल, सीमाप्रांत और युक्तप्रांत (उत्तर प्रदेश) के लिए आर्डिनेंस जारी किये गये। गांधी-अर्विन समझौते को बार-बार भंग किया गया। जवाहरलाजी कार्यसमिति की बैठक के लिए बंबई जाते हुए गिरफ्तार कर लिये गये। भारत लौटने पर गांधीजी ने वायसराय से बातचीत करने की आज्ञा मांगी; परंतु उनका अनुरोध अमान्य कर दिया गया। फलतः ५ जनवरी १९३२ ई. से पुनः सत्याग्रह आरंभ हुआ। सरकार ने वल्लभभाई

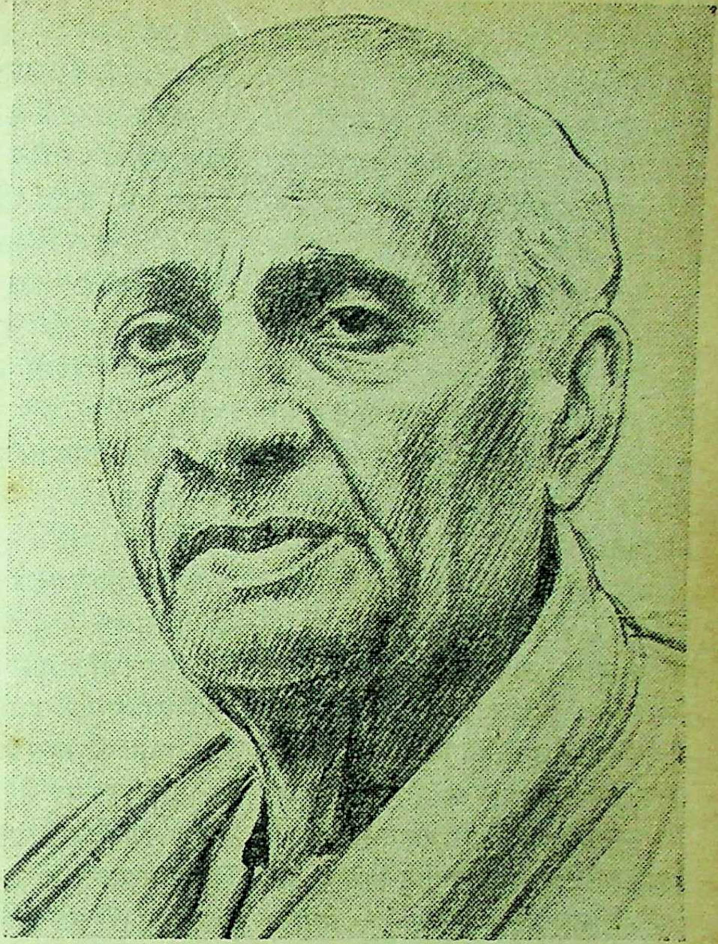

चित्र : एम. आर. आचरेकर [सौजन्य : भारतीय विद्याभवन, बंबई]

को गिरफ्तार कर लिया; कांग्रेस-संस्थाएं गैरकानूनी करार देकर बंद कर दी गयीं। सत्याग्रह चलता रहा।

बाद में सत्याग्रह स्थगित हुआ। पूना-परिषद, दिल्ली तथा करांची के संमेलन, पटना महासमिति की बैठक और कांग्रेस पार्लमेंटरी बोर्ड की स्थापना के समय सरदार जेल में बंद थे। स्वास्थ्य बहुत गिर जाने पर १९३४ ई. के अंत में उन्हें रिहा किया गया। स्वास्थ्य सुधरने के पहले ही कांग्रेस पार्लमेंटरी बोर्ड का भार उन पर आ पड़ा। परंतु स्वभावानुसार उसमें जी-जान से जुट गये और समस्त देश का दौरा करके नवजीवन की लहर दौड़ा दी। चुनाव के समय अन्य दलों की गर्वोक्तियों का जवाब देते हुए उन्होंने कहा था—'जब कांग्रेस के स्टीम-रोलर चलेंगे, तो सब विरोध कंकड़-पत्थर की भांति कुचलकर चौरस हो जायेंगे।'

सचमुच ऐसा ही हुआ। सीमाप्रांत, युक्तप्रांत, बिहार, असम, उड़ीसा, मध्यप्रांत, बंबई और मद्रास में कांग्रेस बहुमत में आयी। इन प्रांतों के वैधानिक कार्य के निर्देशन के लिए जो पार्लमेंटरी बोर्ड बनाया गया, उसके अध्यक्ष वल्लभभाई थे। उन्होंने इन

आठ प्रांतों में कांग्रेस मंत्रिमंडलों का संचालन करते हुए जिस दृढ़ता और अनुशासन का परिचय दिया, वह अभूतपूर्व था। राजकोट-प्रकरण में भी सरदार ने अपूर्व संघटन-शक्ति का परिचय दिया था। कांग्रेस मंत्रिमंडलों के इस्तीफे के बाद वे फिर रचनात्मक कार्यों में लग गये। ९ अगस्त १९४२ को 'भारत छोड़ो' (क्विट इंडिया) आंदोलन के सिलसिले में अन्य प्रमुख नेताओं के साथ गिरफ्तार करके वे अहमदनगर किले में रखे गये। कहा जाता है कि सन १९४२ ई. की जनक्रांति की योजना बनाने में उनका प्रमुख हाथ था।

स्वतंत्रता के युग में

१५ जून १९४५ को जेल से छूटे। १९४६ के प्रारंभ में धारासभाओं का जो चुनाव हुआ, उसका संघटन उन्होंने ही किया था। उसमें कांग्रेस को अद्भुत सफलता मिली। उसी वर्ष सितंबर में अंतरिम सरकार में गृह-सदस्य बने। १९४७ में जब देश स्वतंत्र हुआ तो वे भारत-सरकार के उपप्रधान-मंत्री तथा स्वराष्ट्र-विभाग, देशी राज्य-विभाग तथा सूचना एवं प्रसारण विभाग के मंत्री नियुक्त हुए।

परतंत्रता-युग में जो सफलताएं उन्होंने प्राप्त की थीं, उससे अधिक महत्त्वपूर्ण सफलताएं उन्होंने स्वतंत्रता के बाद प्राप्त कीं। विषैली आंग्ल-नीति के कारण भारत का दुःखद विभाजन हुआ। सांप्रदायिक दंगों में लाखों जानें गयीं; विस्तृत भूखंड श्मशान बन गये; जनता अपने ही घरों में अनाथ हो गयी। उस अवसर पर वल्लभभाई ने जिस दृढ़ता तथा प्रबंध-कुशलता का परिचय दिया, उसकी इतिहास में मिसाल नहीं है।

अंग्रेज भारत में सैकड़ों स्वतंत्र लघुराज्य छोड़ गये थे। भारत की संप्रभुता के लिए वे खतरे के बिंदु थे और समस्त देश में फैले हुए थे। सरदार ने इस समस्या को सुलझाने में अद्भुत सफलता प्राप्त की। उनकी दृढ़ता से छह महीने के अंदर ही देशी राज्यों में तेजी से परिवर्तन हुए। अनेक छोटे-छोटे राज्य उड़ीसा, मध्यप्रांत, बंबई में मिला दिये गये। काठियावाड के राज्यों को मिलाकर सौराष्ट्र राज्य की स्थापना की गयी; रीवां तथा अन्य बुंदेलखंडी राज्यों को मिलाकर विंध्य प्रदेश बना; इंदौर, ग्वालियर को मिलाकर मध्य भारत तथा राजपूताना की रियासतों के एकीकरण द्वारा राजस्थान-संघ का निर्माण हुआ।

हैदराबाद की समस्या

देशी राज्यों में हैदराबाद सबसे बड़ा था। दुर्भाग्यवश, उसके शासक निजामुलमुल्क उस्मान अली खां के दिमाग में यह सनक सवार हुई कि एक स्वतंत्र हैदराबाद राज्य के निर्माण का समय आ गया है। रजाकारों का बोलबाला था; कासिम रिजवी की तूती बोलती थी। ब्रेनगन का कारखाना खुल चुका था और अंग्रेज विशेषज्ञों की देखरेख में सैनिक टुकड़ियों का प्रशिक्षण भी शुरू हो चुका था। आलाहजरत इतने उन्मत्त थे कि वायसराय के बुलाने पर भी दिल्ली नहीं गये। सर मिर्जा इस्मा-

ईल-जैसे उदारचेता प्रधान-मंत्री निराश होकर वहां से खिसक गये थे। मुस्लिम-लीगियों का बड़ा असर था। दिल्ली पर अर्धचंद्र वाला मुसलमानी झंडा फहराने की बातें भी सुनाई देती थीं। रजाकार 'दीन-दीन' ललकारते घूमते फिरते थे।

कांग्रेस और देश में जो राष्ट्रवादी मुसलमान थे, वे भी इस भय से बोलते न थे कि कोई गड़बड़ी हुई तो सारे देश में मार-काट मच जायेगी। जवाहरलालजी प्रधान-मंत्री होते हुए भी चुप थे। सरदार इस स्थिति से बहुत दुःखी थे और कुछ करना चाहते थे। किंतु जवाहरलाल और मौलाना आजाद वगैरह ब्रेक का काम करते थे। उन्हीं दिनों सरदार ने कहा था—'निजाम राज्य मेरे पेट में फोड़े की तरह है।' संयोगवश जवाहरलालजी को विदेश जाना पड़ा। सरदार के हाथ में सर्वशासनसूत्र आया। उन्होंने अत्यंत गोपनीय ढंग से हैदराबाद की घेराबंदी की योजना बनायी। मंत्रिमंडल के सदस्यों तक को कुछ नहीं मालूम हुआ। केवल सरदार बलदेवसिंह को कुछ बातें मालूम थीं। सरदार ने स्वयं सेनाधिकारियों को सब बातें समझायीं और जनरल राजेंद्रसिंहजी को हैदराबाद घेर लेने और उसे सर करने का काम सौंपा।

एक दिन पहले इसकी कुछ भनक स्वास्थ्य-मंत्री राजकुमारी अमृत कौर के कानों में पड़ी। उन्होंने मौलाना आजाद से कहा। फिर दोनों जवाहरलाल के पास पहुंचे, जो तब तक लौट आये थे। जवाहरलालजी ने कहा कि हमारे बीच समझौता है कि हम एक-दूसरे के मामले में दखल न देंगे। इसलिए आप लोग चलें तो मैं आपके साथ चल सकता हूं, पर कुछ बोलूंगा नहीं। बहरहाल सब सरदार के पास पहुंचे। उन दिनों वे कटिवेदना से कष्ट में थे। गद्दे पर मसनद के

[शेष पृष्ठ १३९ पर]

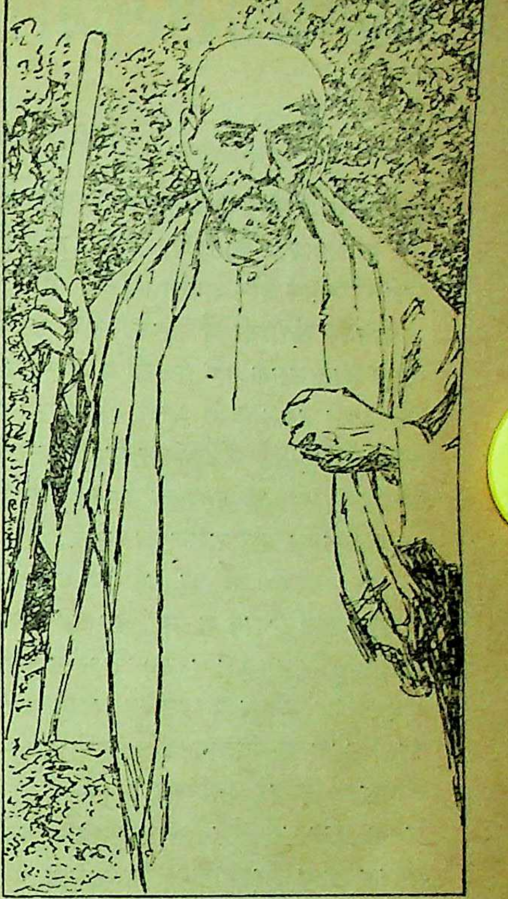

बारडोली सत्याग्रह के समय

पश्चिमी संस्कृति की आत्मा रुग्ण है

स्वर्गीय आर्नाल्ड टायन्बी

लगभग दो सौ वर्षों से औद्योगिक क्रांति की गति तीव्रतर होती जा रही है। साथ ही उसकी शक्ति और क्षमता भी बढ़ रही है। उन्नीसवीं शताब्दी में उसका लाभ उठाने वाले लोग उसके गुण गा रहे थे और जिन लोगों को उससे हानि पहुंची थी, वे उसका विरोध कर रहे थे। लेकिन पिछले पचीस वर्षों में दोनों पक्ष अचानक उसकी हानियों के प्रति सचेत और सशंक हो उठे हैं।

सन १९४५ में दो परमाणु-बमों के निर्माण और प्रयोग के बाद अब यह संभव नहीं रहा कि हम इस सत्य की ओर से आंखें मूंद लें कि मनुष्य की शक्ति बढ़ाने वाले दोनों उपकरण—विज्ञान और टेक्नोलाजी—नैतिकता से परे निष्क्रिय उपकरण हैं। उनका उपयोग सृजन और विनाश दोनों प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है। हमारे सामने यह प्रश्न भी उठ खड़ा हुआ है कि यदि हम ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दें कि युद्ध के लिए परमाणुशक्ति का उपयोग नहीं किया जा सके, तब भी शांतिपूर्ण प्रयोजनों के लिए इसके उपयोग के परिणामस्वरूप हमें इसके विषैले और घातक मलबे से पिंड छुड़ाने की समस्या का सामना तो करना ही होगा।

वस्तुतः परमाणु-धूल की समस्या औद्योगिक सभ्यता द्वारा उत्पन्न एक व्यापक समस्या का अंग मात्र है। औद्योगिक क्रांति के आरंभ से ही मनुष्य निरंतर अपने वातावरण को गंदा कर रहा है तथा प्रदूषण की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। हम धातु, कोयले तथा खनिज तेलों सरीखे ऐसे प्राकृतिक संसाधनों को खपाते चले जा रहे हैं, जिनकी भरपाई की ही नहीं जा सकती। हम इन संसाधनों का इस्तेमाल औद्योगिक उत्पादन के लिए कर रहे हैं। हमारी निगाह महज तात्कालिक मुनाफे पर है तथा हम नैसर्गिक वातावरण के उन अंगों को भी गंदला करते जा रहे हैं, जो अभी तक अछूते थे। हमें अगली पीढ़ियों की चिंता नहीं है।

मुनाफे की अंधी दौड़

मनुष्य की इस शर्मनाक और चिंताजनक हरकत का कारण क्या है ? सतही तौर पर कहा जा सकता है कि यह उसके लोभ का परिणाम है। संसार के अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य भी लोभी है और हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि जीवन के लिए प्रकृति के शोषण की क्षमता और प्रवृत्ति जीवन का अनिवार्य चरित्र है। वस्तुतः वह जीवन का ही दूसरा नाम है। तथापि यह सही है कि अन्य प्राणियों की अपेक्षा मनुष्य में लोभ ने अधिक प्रबल रूप धारण कर लिया है। इसका कारण यह है कि उसकी

क्षमता उनकी अपेक्षा कहीं अधिक है। हमारे पुरखों ने औजारों का निर्माण करके ही सच्चे अर्थों में मनुष्य का रूप ग्रहण किया था, तथा पिछली दो शताब्दियों में हमने अपने औजारों की क्षमता में असीम वृद्धि के साधन खोज लिये हैं। हमने पानी से लेकर परमाणु-ऊर्जा तक असंख्य प्राकृतिक शक्तियों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया है। चाहे हिरोशिमा और नागासाकी की दुर्घटना हो या वातावरण का प्रदूषण, उन सबके लिए यह नियंत्रण ही जिम्मेवार है।

एकेश्वरवाद की लहर

पीछे मुड़कर देखते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि एक शताब्दी पहले के वे विज्ञानी जिन्हें हम प्रबोधकाल के अग्रदूत मानते हैं, धर्म द्वारा उत्पन्न असहनशीलता और द्वेष को कम करने में तो सफल हुए, किंतु उन्होंने ईश्वर, मनुष्य और प्रकृति के संबंधों के बारे में ईसाई-आस्था को चुनौती नहीं दी। बाइबल में इस आस्था का उल्लेख एक वाक्य में कर दिया गया है:

'ईश्वर ने उन्हें आशीर्वाद दिया, तथा ईश्वर ने उनसे कहा—फूलो-फलो और अपनी संख्या में वृद्धि करो; और धरती को बसाओ; और उसे पदाक्रांत करो; और सागर की मछलियों पर स्वामित्व स्थापित करो, और हवा की चिड़ियों पर, और धरती पर चलने-फिरने वाली प्रत्येक जीवित वस्तु पर।' [जेनेसिस १, २८]

बाइबल के अनुसार, सृष्टि का निर्माण ईश्वर ने किया; सृष्टि उसकी है और वह इसका जो चाहे सो उपयोग कर सकता है; उसने आदम और हव्वा को इसका मनमाने ढंग से इस्तेमाल करने की छूट दे दी; तथा उसने यह छूट उनके पतन के बावजूद वापस नहीं ली। अमर-कानन में जिस मनुष्य को निःशुल्क बसने की छूट दी गयी थी, उसे वहां से निकालते तथा पृथ्वी का साम्राज्य सौंपते समय शुल्क चुकाने का आदेश दिया गया—'अपने चेहरे के पसीने से तुम अपनी

ब्रिटिश मनीषी आर्नाल्ड टाय्न्बी (१८८९-१९७५) ने दस खंडों वाले अपने महाग्रंथ 'ए स्टडी ऑफ़ हिस्टरी' में इतिहास की कोरी भौतिक-आर्थिक व्याख्या को अस्वीकार करते हुए धर्म और चैतस तत्त्वों के महत्त्व को प्रतिपादित किया।

रोटी कमाओगे ...... (जेनेसिस ३, १९)। लेकिन साथ ही उसे पसीने के बदले में प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण स्थापित करने का खुला लाइसेंस दे दिया गया। सन १९६३ में संतान उत्पन्न करने की छूट वरदान प्रतीत होती थी, १९७३ में वही जनसंख्या-विस्फोट तथा यंत्रीकरण एवं प्रदूषण का अभिशाप प्रतीत होने लगी।

वस्तुतः आज संसार की अधिकांश समस्याओं, प्रकृति के अपूरणीय कोषों के विवेकहीन अपव्यय और प्रदूषण के पीछे मूलतः एकेश्वरवाद की आस्था है। संसार के ईसाई, यहूदी और मुसलमान एकेश्वरवाद और उसके निहितार्थों को सहज वस्तु मानते हैं। मैं भी ईसाई धर्म में पला हूं, लेकिन मैंने ईसा से पहले की यूनानी संस्कृति और लैटिन साहित्य का भी अध्ययन किया है, जिसने मेरे चिंतन पर बहुत प्रभाव डाला है और मुझे यह चेतना प्रदान की है कि ईसापूर्व के मेरे पुरखे एकेश्वरवादी नहीं थे।

वसुंधरा 'मां' न रही

एकेश्वरवादी आस्था से पहले के लोग प्रकृति को 'प्राकृतिक संसाधनों का खजाना' भर नहीं मानते थे। उनके लिए प्रकृति एक 'देवी' थी, वसुंधरा 'मां' थी; उस पर उगने वाली वनस्पति, उस पर मनुष्य की तरह घूमने-फिरने वाले पशु और धरती के कटोरे में भरी हुई धातुएं सबमें वे प्रकृति के दैवीय स्वरूप का दर्शन करते थे। मनुष्य का समूचा वातावरण दैवीय था, तथा पौधों की खेती और पशुओं को पालतू बनाने की विद्या उसकी इस आस्था को खंडित नहीं क पाती थी कि प्रकृति दैवीय है। गेहूं और चावल महज अनाज नहीं थे; वे स्वयं उ देवी का ही स्वरूप थे, जिसने मनुष्यों को इनकी खेती करने की अनुमति दी थी और उसकी कला सिखायी थी।

ईसापूर्व की यूनानी संस्कृति में प्रकृति के दैवीय स्वरूप की आस्था दार्शनिक चिंतन के बावजूद अखंड बनी रही। प्राकृतिक वस्तुओं और घटनाओं में, पानी के झरनों और सोतों में, नदियों और सागर में, वृक्षों में—जंगली बरगद में और बगीचे में उगाये गये जैतून में—अनाज और मदिरा में, पर्वतों में, भूचाल और वज्रपात में, अर्थात् समस्त प्राकृतिक वस्तुओं और घटनाओं में देवत्व निहित था। ईश्वर संपूर्ण सृष्टि में व्याप्त था। वह अनेकरूप था, एकरूप नहीं। वह एक अनुपम, सर्वशक्तिसंपन्न अतिमानवीय व्यक्ति नहीं, वरन अदृश्य शक्तिपुंज था।

यूनानी और रोमन जगत् ने जब ईसाई धर्म ग्रहण किया, तो प्रकृति में से देवत्व का सार निचोड़कर फेंक दिया गया। उसे एकमेव एवं परा-जागतिक परमेश्वर में सीमित कर दिया गया। यह सच है कि जन-स्तर पर एकेश्वरवाद के आवरण के तले अनेकेश्वरवादी आस्थाएं पलती रही हैं; तथापि कालांतर में स्थानीय देवताओं—ग्रामदेवताओं—का स्थान संतों ने ले लिया।

संतुलन-नाश

समूचा पश्चिमी जगत् एकेश्वरवाद से ग्रस्त है। किंतु जब हम पश्चिमी जगत् की

पूर्वी सीमाओं को पार कर जाते हैं, तो हमें एकेश्वरवाद के जन्म से पहले के विश्व का दर्शन होता है। यूनानी और लैटिन साहित्य और वाङ्मय का अनुशीलन उन आस्थाओं को समझने में सहायक सिद्ध होता है।

पूर्वी एशिया के जीवित धर्मों के बारे में प्रत्यक्ष अनुभव और यूनानी तथा रोमन धर्मों के अध्ययन के आधार पर मेरे मन में यह चेतना उत्पन्न हो गयी है कि ईसाई धर्म ने जिस एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया है, उसने प्रकृति के देवत्व की आस्था द्वारा मनुष्य के लोभ पर लगाये गये समस्त नियंत्रण हटा डाले हैं। जब मनुष्य प्रकृति को दैवीय मानता था, तब वह प्राकृतिक साधनों का उपयोग उस तरह करता था, जैसे बच्चा मां का दूध पीता है; और उसके लोभ पर नियंत्रण रहता था (मां का दूध बोतलों में नहीं भरा जाता, उसकी मिठाई भी नहीं बनायी जाती)। एकेश्वरवाद ने प्रकृति के प्रति जिस अनादर-भाव को जन्म दिया है, उसने अनेकेश्वरवादी आस्था वाले समाजों को भी प्रभावित किया है।

जापान-जैसे देश में भी, जहां शिंतो और बौद्ध धर्म पीढ़ियों से प्रकृति को मां मानना सिखाते रहे हैं, १८६८ में माईजी पुनःस्थापना के बाद से प्रकृति के प्रति अनास्था का ईसाई दृष्टिकोण हावी हो गया है। विशेषतः द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से जापान प्रकृति को पश्चिमी चश्मे से देखने लगा है। वह औद्योगीकरण द्वारा धन कमा रहा है और प्रदूषण का शिकार हो रहा है। जापान इस बात का उदाहरण है कि जिन देशों में एकेश्वरवाद की जड़ें गहरी नहीं हैं, वहां भी उसके प्रभाव के कारण मनुष्य और प्रकृति के बीच दीर्घकाल से चला आ रहा संतुलन बिगड़ रहा है।

बाइबल में कहा गया है कि तुम्हारा हृदय वहां रहेगा, जहां तुम्हारा खजाना होगा। पाश्चात्य लोगों ने भौतिक संपदा की वृद्धि को ही अपना असली खजाना मान लिया; अतः उनका हृदय उसी पर लगा है तथा उन्हें उसका पुरस्कार (प्रदूषण के रूप में) मिल रहा है।

हम टेक्नोलाजी के विकास के द्वारा आर्थिक विकास की धुन में व्यस्त हैं। हम प्रकृति का खुलकर इस्तेमाल कर रहे हैं; क्योंकि अपनी एकेश्वरवादी आस्था के परिणामस्वरूप हम उसे दैवीय नहीं मानते तथा उसे महज कच्चा माल समझते हैं। प्रदूषण यांत्रिक औद्योगीकरण का परिणाम है, न कि व्यापार, कृषि और पशुपालन का। मध्यकाल में मुसलमान विज्ञान और टेक्नोलाजी के मामले में ईसाइयों से बहुत आगे थे और यदि वे चाहते तो औद्योगीकरण के अग्रदूत बन सकते थे। रूस में भी पाश्चात्य टेक्नोलाजी का प्रयोग पीटर महान के जमाने से ही आत्मरक्षा के लिए हो रहा है। वह आत्मस्फुरित नहीं है। आज वह परमाणु-विज्ञान और अंतरिक्ष की खोज के क्षेत्रों में अमरीका के साथ प्रतिस्पर्द्धा में फंसा है।

बुनियादी मूल्यों का प्रश्न

पश्चिमी जगत् में बुनियादी मूल्यों का

प्रश्न सात शताब्दियों पहले असीसी के संत फ्रांसिस और उनके पिता की मुठभेड़ के समय उठा था और उसके बारे में अंतिम निर्णय उसी समय हो गया था। संत फ्रांसिस के पिता प्येत्रो बर्नार्दो आधुनिक पाश्चात्य व्यापारियों के अग्रदूत थे। उन्होंने धन कमाया, बेटे ने गरीबी का वरण किया। संत फ्रांसिस ईसा का अनुकरण कर रहे थे तथा अनजाने ही बुद्ध का भी। उन्होंने पिता के समृद्ध व्यवसाय की विरासत का परित्याग कर दिया। बुद्ध ने पिता का राज्य छोड़ा था। किंतु दोनों का प्रयोजन एक ही था। उन्होंने भौतिक संपत्ति और सत्ता को आध्यात्मिक प्रगति में बाधक पाया।

सारा पाश्चात्य जगत् संत फ्रांसिस की आत्मिक परंपरा का परित्याग कर बैठा है और उसने समूची प्रकृति पर स्वामित्व स्थापित कर लिया है, जिसके कारण उसकी आत्मा बीमार हो गयी है। संत फ्रांसिस भी येहवेह के बेटे थे, मगर उन्होंने सूरज को भाई, चांद को बहन तथा वायु, जल, पृथ्वी फूलों और घास को अपना आत्मीय माना था। संत फ्रांसिस ने अपने पिता के व्यवसाय और कारोबार में ही पश्चिमी जगत् के पतन के बीज देख लिये थे; अतः उन्होंने उस मार्ग का परित्याग करके मुक्ति का मार्ग दिखाया, जिसे उनके जगत् ने ग्रह नहीं किया।

परित्राण का मार्ग

पश्चिम का मनुष्य प्रकृति से कट गया है और उसने प्रकृति को विज्ञान तथा टेक्नोलाजी की मदद से अपने अधीन कर लिया है। जिन औजारों से उसने अपने आपको इस संकट में फंसा लिया है, उनकी मदद से वह इससे छुटकारा नहीं पा सकता। मनुष्य को अपने आपको पुनः प्रकृति के साथ जोड़ना होगा; क्योंकि वह प्रकृति का अभिन्न अंग है। इसके लिए उसे विज्ञान का नहीं, समाधि और ध्यान का, अर्थात् धर्म और दर्शन का सहारा लेना होगा।

समाधि का मार्ग संत फ्रांसिस ने दिखाया है। उन्होंने प्रकृति के साथ बंधुत्व की स्थापना की। ध्यान का मार्ग हिंदू आस्था ने प्रस्तुत किया है, जिसके अनुसार मनुष्य अपने मन की आंख से भीतर की ओर झांककर अपनी आत्मा की गहराइयों में प्रवेश करता है और इस सत्य का दर्शन करता है कि उसकी आत्मा उस परम सत्य जैसी ही है, जो इस दृश्यमान जगत में; इसके पीछे और इससे परे विद्यमान है–'तत्त्वमसि'। आधुनिक मनुष्य को आज पुनः इस दर्शन की आवश्यकता है।

* * *

माता पृथिवी महीयम् ।

—यह विस्तृत पृथ्वी हमारी माता हैं । [ऋग्वेद १.१६४-३३]

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।

—भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं । [अथर्ववेद १२.१.१२]

* * *

संचिता

विज्ञान-बिंदु

चीन चुपचाप खिसक रहा है, भारत उसे प्रशांत महासागर में धकेल रहा है। मगर वह खामोश बैठा है; कोई शोर-शराबा नहीं, कोई धौंस-धमकी नहीं। हो भी कैसे! बात कोई सेना और राजनीति की तो है नहीं। यह तो साजिश है भूगर्भीय शक्ति और सामग्री की, जिस पर इंसान का कोई बस नहीं।

पिछले दिनों बोस्टन (अमरीका) की विश्वविख्यात मैसाच्युसेट्स इंस्टिटयूट ऑफ टेक्नोलाजी के पीटर मोलनर और पाल टैपायनर नामक दो विज्ञानियों ने इस रहस्य का उद्घाटन किया है। उनके अध्ययन का आधार है भूसाधन-संबंधी अनुसंधान के लिए पृथ्वी की कक्षा में छोड़े गये अमरीकी उपग्रह के भेजे हुए फोटोग्राफ।

भौमिकीविज्ञों के अनुसार, पृथ्वी का ऊपरी भाग ६४ से लेकर ८० किलोमीटर तक मोटी और सख्त चट्टानों से बना है। जब ये चट्टानें आपस में एक दूसरे की ओर या एक दूसरे से परे खिसकती हैं, तो भूपर्पटी विरूपित हो जाती है और इन भ्रंशों (फॉल्ट्स) के सहारे नयी सीमाएं बन जाती हैं। यहीं स्थिति भूकंपों को भी जन्म देती है। प्रो. मोलनर का कहना है कि चीन के भूकंप-क्षेत्र से भी यह स्पष्ट है कि भूपर्पटी का उस ओर विचलन हो रहा है।

मोलनर-टैपायनर की इस नयी खोज से इस मान्यता पर भी शंका पैदा हो गयी है कि भारत की विचलनशील भूगर्भीय सामग्री निकटस्थ महाद्वीपीय ब्लाक के नीचे खिसक जाती है। यह संभव है कि करोड़ों वर्षों से चले आ रहे विचलन के फलस्वरूप कुछ भूगर्भीय सामग्री तिब्बती पठार के नीचे पहुंच गयी हो; परंतु अधिकांश प्रभाव चीन की स्थिति पर पड़ा है, जिसके परिणामस्वरूप उसे प्रशांत महासागर की ओर खिसकना पड़ रहा है।

अमरीकी भौमिकीविज्ञों के इस मत का समर्थन दो ब्रिटिश वैज्ञानिक डा. आर. ए. ब्लो और डा. एन. हैमिल्टन ने भी किया है। वे भी इसी नतीजे पर पहुंचे हैं कि भारत उत्तर की ओर खिसक रहा है; मगर उनके अध्ययन का आधार अमरीकी शोधकर्ताओं से एकदम भिन्न है। ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने भारत से लगभग ढाई सौ किलोमीटर

दक्षिण की ओर हिंद महासागर में खोदे गये एक गड्ढे से प्राप्त ४४ नमूनों का विश्लेषण किया है।

प्रसिद्ध विज्ञान-पत्रिका 'नेचर' में अपने खोज-परिणामों पर लिखते हुए डा. ब्लो और डा. हैमिल्टन ने बताया है कि लगभग चार करोड़ वर्ष पूर्व भारत २६ सेंटिमीटर प्रति वर्ष की दर से उत्तर की ओर बढ़ रहा था। लेकिन दो करोड़ वर्ष पहले यह गति घटकर १६ सेंटिमीटर रह गयी थी।

जिन बेसाल्ट नमूनों का विश्लेषण इन ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने किया है, उन्हें 'डीप सी ड्रिलिंग प्राजेक्ट' के कर्मचारियों ने निकाला था।

जैव-चुंबकीकरण

जीवधारियों पर चुंबकीकरण के प्रभाव का अध्ययन करने वाले कतिपय रूसी वैज्ञानिकों ने हाल ही में बताया है कि यदि गाय का चुंबकीकरण किया जाये, तो वह अधिक दूध देने लगती है। एक सोवियत समाचार-एजेंसी के अनुसार, चुंबकीकरण द्वारा दूध की मात्रा को ही नहीं, अपितु दूध में वसा (चिकनाई) की मात्रा को भी बढ़ाया जा सकता है। जैव-चुंबकीकरण के लिए जीवधारी को विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र की प्रभावी सीमा में एक निश्चित समय तक रखा जाता है।

चुंबकीकरण का प्रभाव मनुष्य पर भी पड़ता है। शारीरिक दर्द से छुटकारा दिलाने, सूजन कम करने और गुर्दे की पथरी निकालने के लिए अनेक रूसी चिकित्सालयों में चुंबकीकरण का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इस संदर्भ में कुछ रूसी वैज्ञानिकों का मत है कि चुंबकीकरण से जीवधारी के शरीर में उपस्थित जल प्रभावित होता है और यह चुंबकित जल ही अंततः अनेक जैव क्रियाओं के लिए जिम्मेवार होता है।

एक भारतीय शोधकर्ता डा. के. एस. बालसुब्रमण्यम् (दिल्ली कालेज, दिल्ली) के अनुसार चुंबकीकरण का जीवधारी पर प्रभाव सदा अनुकूल ही रहता हो, ऐसा नहीं है। उन्होंने बताया कि अपने एक प्रयोग के दौरान उन्होंने कुछ चिड़ियों और चूहों के सिर दो हफ्ते तक प्रतिदिन चार घंटे विद्युत-चुंबकीय क्षेत्र में रखे। लगभग पंद्रह दिन में इन जीवों की जननेंद्रियों का वजन कम हो गया और उनकी उत्पादन-कोशिकाएं विगलित होने लगीं। जैवरसायन-विश्लेषण से यह बात सामने आयी है कि चुंबकीकरण के फलस्वरूप पीयूष-हारमोन का उत्पादन कम या समाप्त हो जाता है। पीयूष-हारमोन का काम जीवधारी में प्रजनन-प्रक्रियाओं को नियंत्रित करना है।

संक्षारणरोध

वायुमंडल और पानी या नमी के प्रभाव से धातुओं का संक्षारण (कोरोज़न) एक ऐसी हानि है, जिससे अभी तक पूरी तरह छुटकारा नहीं मिल सका है। संक्षारण जहाजरानी आदि अनेक महत्त्वपूर्ण उद्योगों की जटिल समस्या है।'

हाल ही में कारैकुडी (तमिलनाडु)

स्थित केंद्रीय विद्युत-रसायन शोध-संस्थान के वैज्ञानिकों ने धातु-संक्षारण को रोकने की एक नयी तकनीक के विकास की घोषणा की है। इस तकनीक का नाम रखा गया है 'कैथोडिक प्रोटेक्शन'। इसमें अल्युमिनियम का एक विशेष धातु-मिश्रण, जिसमें जस्ते और पारे की मामूली मात्राएं भी मिली रहती हैं, फौलादी संरचना पर लेप के रूप में काम में लाया जाता है।

तूतिकोरिन बंदरगाह पर अल्युमिनियम एनोडों का क्षेत्रीय (फील्ड) परीक्षण किया जा चुका है, जिसके परिणाम काफी सफल रहे हैं। इससे प्रभावित होकर कोचीन जहाज कारखाने ने इसकी खरीद के लिए आर्डर भी दे दिया है।

शाकाहार : सुरक्षापूर्ण

मांस-भोजन का मनुष्य-देह पर क्या-क्या जैववैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है, इस दिशा में पिछले दिनों अनेक प्रयोगशालाओं में शोधकार्य हुए हैं। नयी दिल्ली के मौलाना आजाद मेडिकल कालेज में औषध-विज्ञान के सहप्राध्यापक डा. एम. पी. एस. वर्मा की अध्यक्षता में एक टोली ने भी इस क्षेत्र में कार्य किया है।

डा. वर्मा का कहना है कि शाकाहारियों की तुलना में मांसाहारियों को मधुमेह होने की संभावना अधिक रहती है। वे बताते हैं कि साग-भाजियों के रेशे अनेक मामलों में मधुमेह से बचाव करते हैं। चूंकि मांसाहार में ये नहीं होते, अत: मांसाहारियों को यह सुरक्षा नहीं मिल पाती। पश्चिमी देशों में मांसाहार का प्रचलन अधिक है और इसीलिए वहां मधुमेह की आशंका भी अधिक रहती है। यों मिष्ठान्न अधिक खाने से भी मधुमेह का खतरा बढ़ जाता है।

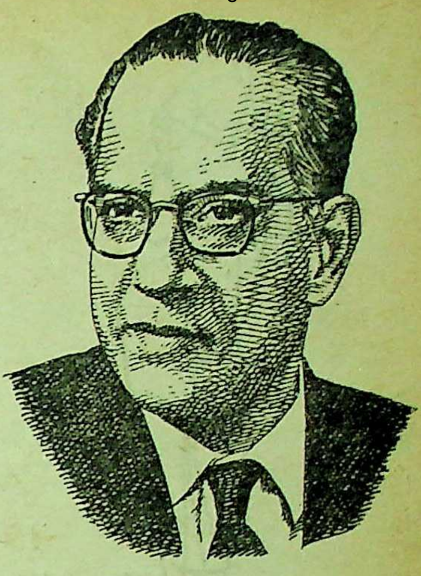

देश के विख्यात रसायनशास्त्री तथा रायल सोसायटी के फेलो प्रो. तिरुवेंकटराजेंद्र शेषाद्रि (भूतपूर्व अध्यक्ष, रसायन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय), जिनका देहांत २७ सितंबर १९७५ को दिल्ली में हुआ।

सन १९२१ में इन्सुलिन के आविष्कार से पहले मधुमेह से मरने वालों में से ७५ प्रतिशत की मृत्यु का कारण होता था—विमूर्छा (कीटोएसीडोसिस)। यह दर अब घटकर २५ प्रतिशत के लगभग रह गयी है। हां, इन दिनों मधुमेह से मरने वाले मनुष्यों में से लगभग ५० प्रतिशत की मृत्यु का कारण होता है दिल की गड़बड़ियां।

★

ग़ज़लें

—रामदरश मिश्र—

चित्र : के. के. हेब्बार

-१-

देर से ही सही, तुम आये बहुत अच्छा किया
इस विरह के बाद यों भाये, बहुत अच्छा किया
खो गये थे हाय, अपनी ही सुरंगों बीच हम
खोजकर हमको यहां लाये, बहुत अच्छा किया
गरजनें सुनता रहा कब से तुम्हारी दूर से
आज जल बनकर यहां छाये, बहुत अच्छा किया
खो गया था प्यार, तुम पर सारे शिकवों का असर
आज अरसे बाद शरमाये, बहुत अच्छा किया
नदी, नालों, पर्वतों ने रास्ते रोके बहुत
भूल तुम हमको नहीं पाये, बहुत अच्छा किया
बोलने तो दीजिये हमको भी कुछ ऐ जानेमन
यों तो सब उच्छ्वास बंधवाये, बहुत अच्छा किया।

-२-

दूबें उठा रही हैं नजर, राह दीजिये
साये जो आपके हैं जमे, साफ कीजिये
रोके खड़े हैं रास्ते कितने पगों के आप
भूधरजी, आज ताप बहुत, कुछ तो छीजिये
गिरती हैं छतें आपकी तो चीखिये नहीं
औरों के साथ आप भी बारिश में भीजिये
लहरों को कोसते ही रहे तीर खड़े आप
कितना हैं थक गये जनाब, चाय पीजिये
पगडंडियों को बांध लिये जा रहे कहां
बाजार बंद आपका है, हाथ मीजिये
बकने को फिर हैं बहक रहे ओंठ आपके
रुकिये हुजूर, एक मिनट, पान लीजिये।

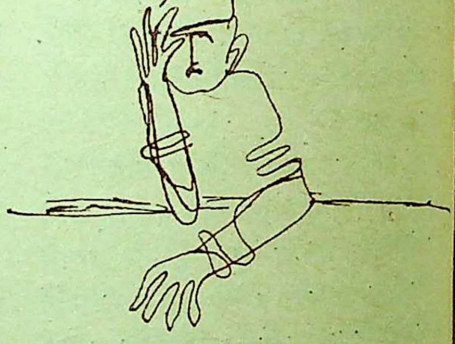

चित्र : अंजू मेहरा

* ई, ४/११, माडल टाउन, दिल्ली-९ *

इंसाफ कहां है

कन्हैयालाल कपूर

अगर मनोहर इन दिनों यह पंक्ति बार-बार दोहराता है 'इंसाफ को आवाज दो, इंसाफ कहां है', तो इसका कारण यह नहीं कि उसकी मम्मी ने हलवा बांटते समय उसके साथ अन्याय किया था, या बड़े भाई साहब ने अकारण उसे थप्पड़ रसीद किया, बल्कि छमाही परीक्षा में उसे फेल कर दिया गया था। जहां तक इस मामले में मनोहर की राय का संबंध है, उसने प्रत्येक प्रश्न का उत्तर सोच-समझकर ही दिया था। अब यह दूसरी बात है कि परीक्षक को उसके उत्तर पसंद नहीं आये। मसलन गणित के पर्चे ही को लीजिये—प्रश्नों के साथ ही मनोहर के लिखे उत्तर भी हैं।

पहला प्रश्न था—एक दुर्ग में पचास आदमियों के लिए बीस दिन की खूराक मौजूद है। यदि दस दिन के बाद वहां पचीस आदमी और आ जायें तो यह खूराक कितने दिनों के लिए पर्याप्त होगी ?

उत्तर : यदि वे पचीस आदमी पेटू किस्म के नवयुवक हैं, तो सारी खूराक एक दिन में चट कर सकते हैं। इसके विपरीत यदि उनकी पाचन-शक्ति खराब रहती है, तो यह खूराक काफी दिनों तक चल सकती है। क्योंकि प्रश्न में इस बात को स्पष्ट नहीं किया गया है कि इन नवयुवकों की पाचन-शक्ति का क्या हाल है; इसलिए पूरे विश्वास के साथ यह कहना कि खूराक कितने दिनों के लिए पर्याप्त होगी, अति कठिन है।

प्रश्न २ : बीस आदमी या दस औरतें एक काम को पंद्रह दिन में कर सकती हैं, तो बताओ, उस काम को चालीस औरतें कितने दिनों में करेंगी ?

उत्तर : औरतें काम करने के बजाय बातें करना अधिक पसंद करती हैं। फिर जहां चालीस औरतें इकट्ठी हो जायें, वहां अच्छा-खासा विवाद या बलवा तो हो सकता है, लेकिन काम नहीं हो सकता। इसलिए हमारी राय में वह काम वहीं रहेगा, जहां चालीस औरतों के आने से पहले था। यदि विश्वास न हो, तो प्रयोग करके देख लीजिये।

प्रश्न ३ : मोहनलाल यदि बनारसीदास को ५०० रुपये ४ प्रतिशत वार्षिक दर पर ऋण दे, तो उसे सात वर्ष के बाद कितना

अनुवाद : सुरजीत

ब्याज मिलेगा?

उत्तर : यदि ये वही बनारसीदास हैं जो हमारे मुहल्ले में रहते हैं, तो मोहनलाल साहब संतोष रखें कि उन्हें एक कौड़ी भी ब्याज के रूप में नहीं मिलेगी; क्योंकि बनारसीदास (जिन्हें वास्तव में 'बनारसी ठग' कहना चाहिये) की आदत है कि वे ब्याज के साथ मूलधन भी पी जाते हैं। पर अगर ये कोई अन्य महाशय हैं, तो जितना ब्याज हिसाब से बनेगा, मोहनलाल को मिल जायेगा।

प्रश्न ४ : एक आदमी ने एक भैंस बीस रुपये में बेची और उसे दस प्रतिशत हानि हुई। यदि वह उसे तीस रुपये में बेचता तो उसे कितने प्रतिशत लाभ होता?

उत्तर : आजकल जबकि एक अच्छी बकरी भी बीस रुपये में नहीं बेची जा सकती, यह मान लेना कि भैंस इतने रुपयों में बेची गयी है, अनुमान और सत्य के विरुद्ध है। लगता है कि वह भैंस बिलकुल बूढ़ी और नाकारा थी। यदि यह बात है तो उसे बेचने में लाभ ही लाभ था। हमारे विचार में तो भैंस के मालिक को ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिये कि उसे ऐसी बेकार चीज से छुटकारा मिला और साथ ही बीस रुपये भी मिल गये। स्पष्ट है कि जिस भैंस का मूल्य मुश्किल से बीस रुपये तय पाया, उसे तीस रुपये में कौन मूर्ख खरीदेगा! इसलिए किसी प्रकार के लाभ की तो आशा नहीं की जा सकती।

प्रश्न ५ : एक बंदर एक बांस पर चढ़ते समय एक मिनिट में तीन फुट चढ़ता है तो एक फुट फिसलकर फिर नीचे आ जाता है। यदि बांस की लंबाई बीस फुट हो तो उसके सिरे तक पहुंचने में बंदर को कितने मिनिट लगेंगे?

उत्तर : लगता है कि आम बंदरों की तरह यह बंदर भी बड़ा शरारती है और जान-बूझकर फिसलने का प्रयत्न करता है। नहीं तो वह चाहे तो केवल एक छलांग में बांस के सिरे तक पहुंच सकता है। पर जब नीयत में शरारत हो और खामख्वाह समय नष्ट करने को जी चाहे, तो फिर कोई क्या कह सकता है कि बंदर बांस की चोटी तक कब पहुंचेगा! वैसे यह बात भी विश्वास के योग्य नहीं कि वह पूरे तीन फुट चढ़ने के बाद एक फुट नीचे को फिसल आता है; क्योंकि जहां तक मेरा अध्ययन है, बंदरों के पास फासला नापने का कोई नाप नहीं होता और बिना किसी नाप के पूरे तीन फुट चढ़ना या एक फुट फिसलना असंभव है।

बाकी पर्चों में भी मनोहर ने इसी प्रकार की बुद्धिमानी का प्रमाण दिया। उदाहरण के लिए इतिहास के परचे में एक प्रश्न था—'हैदरअली पर एक संक्षिप्त नोट लिखो।'

मनोहर ने उत्तर में लिखा—'ख्वाजा हैदरअली आतिश उर्दू के प्रसिद्ध कवि थे। आप फैजाबाद में पैदा हुए और १२६३ हिजरी में स्वर्गवासी हुए। आपका काव्य अद्वितीय है।'

कुछ अन्य प्रश्नों के उत्तर भी प्रशंसनीय थे, जैसे :

प्रश्न : धर्मशाला कहां स्थित है?

उत्तर : लगभग प्रत्येक नगर में; क्योंकि प्रत्येक नगर म मंदिर के अलावा एक-आध धर्मशाला अवश्य होती है।

प्रश्न : इन मुहावरों का अर्थ बताइये :

क. अंधेरे का उजाला।

ख. तीन में न तेरह में।

क. गागर में सागर बंद करना।

उत्तर : 'अंधेरे घर का उजाला' से अभिप्रेत है वह छोटा-सा मिट्टी का दीया, जिसे गरीब लोग अपनी झोंपड़ी में शाम के समय जलाते हैं। 'तीन में न तेरह में' अर्थात् ऐसा अंक जो न तीन में शामिल हो और न तेरह में। जैसे पांच, छह, सात आदि। 'गागर में सागर बंद करना' अर्थात् कोई मूर्खता की बात करना। स्पष्ट है, सागर को गागर में बंद नहीं किया जा सकता।

प्रश्न : यह शेर किसका है ?

सुन चुके हाल बस तेरा आज़ाद
हमसे आगे सुना नहीं जाता।

उत्तर : शायद यह शेर मौलवी मुहम्मद हुसैन आजाद या मौलाना अबुल कलाम आजाद, या मिस्टर जगन्नाथ आजाद का है।

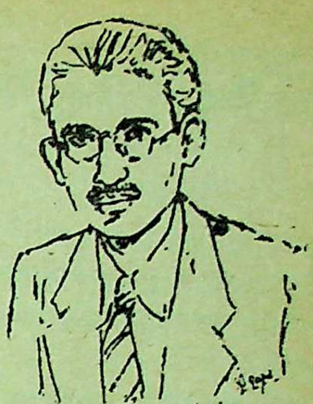

सुप्रसिद्ध हास्य-लेखक श्री कन्हैयालाल कपूर, जिन्हें उर्दू साहित्य की सेवा के लिए इस वर्ष 'गालिब पुरस्कार' प्रदान किया गया है।

[चित्र 'सारिका' से साभार]

आपने मनोहर के उत्तर देख लिये। अब आप ही इंसाफ से कहिये कि क्या उसे फेल करके उसके साथ अत्याचार नहीं किया गया ? और क्या उसका वह पंक्ति गुनगुनाना न्यायसंगत नहीं है ?

इंसाफ को आवाज दो, इंसाफ कहां है ?

★

बेल्जियम के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ पाल हेनरी स्पाक एक बार अमरीका में भाषण के दौरे पर थे। हाउस्टन नगर में उनका भाषण सुनने के पश्चात् एक महिला ने उनसे कहा—'आपसे मैं बहुत प्रभावित हुई! आपका व्यक्तित्व विंस्टन चर्चिल की तरह है, और आप चार्ल्स बोयर (प्रसिद्ध अभिनेता) की तरह भाषण देते हैं।'

'मैडम', स्पाक ने उत्तर दिया—'मैं तो चाहता हूं कि मैं देखने में चार्ल्स बोयर जैसा लगूं और भाषण चर्चिल की तरह दे सकूं।' **—सुरेश पांडेय**

★

कारागार में जनमा साहित्य

विष्णु प्रभाकर

ब्रिटिश राजनेता-साहित्यकार बेंजामिन डिजरेली ने एक बहुत सार्थक बात कही है— 'देशनिकाले या कैद की सजा पाये हुए दूसरे लोग यदि जीते निकल आयें तो, हताश हो जाते हैं; मगर साहित्यिक व्यक्ति, उन दिनों को अपने जीवन के सबसे मधुर दिनों में गिनता है।'

हो सकता है, कुछ व्यक्तियों को इस 'मधुर' शब्द पर आपत्ति हो; क्योंकि बकौल श्री जवाहरलाल नेहरू—'थोड़ी मुद्दत तक भी रहने के लिए जेलखाना कोई खुशगवार जगह नहीं है।'

न हो, परंतु सरस्वती के लाड़ले पुत्रों ने इन 'नाखुशगवार' दिनों का उपयोग जिस प्रकार किया, उससे तो इन्हें 'मधुर' ही कहा जा सकता है। कारागार में कृष्ण महाराज का ही जन्म नहीं हुआ था, विश्व का विपुल श्रेष्ठ साहित्य भी वहां रचा गया है। हम फिर जवाहरलालजी के शब्द याद करें—'जेल और उसके अकेलेपन और बेकारी की वजह से सोच-विचार की तरफ झुकाव होता है और जिंदगी की खाली जगह को अपनी जिंदगी और इंसान के काम-काजों के इतिहास के लंबे सिलसिले की पिछली स्मृतियों से भरने की कोशिश होती है।'

ये स्मृतियां नाना रूपों में प्रकट होती हैं। कारागार का विपुल साहित्य इन्हीं स्मृतियों और अनुभूतियों का परिणाम है। उस सबकी चर्चा करना तो असंभव है ही; अपने देश के साहित्य की भी पूरी रूपरेखा हम दे सकेंगे, इसमें भी संदेह है। सबसे पहले पत्र-साहित्य पर ही एक दृष्टि डालें तो क्या ऐसा नहीं लगता कि यदि कोई माई का लाल जेल से लिखे पत्रों के कुछ संग्रह संपादित कर सके, तो वे किसी भी कृतिकार के लिए मानव-मन के अंधकूपों में झांकने का अमूल्य साधन प्रस्तुत करेंगे? व्यक्तिगत रूप से ऐसे कुछ संग्रह प्रकाशित हुए भी हैं।

ये पत्र अनेक प्रकार के हैं। कुछ व्यक्तियों ने पत्रों के माध्यम से ही अनेक अमूल्य ग्रंथों की रचना की है। गांधीजी ने अपने सिद्धांतों और व्रतों को समझाते हुए अनेक पत्र कारागार से समय-समय पर लिखे, जो कालांतर में 'मंगल प्रभात' और 'आश्रमवासियों से' आदि पुस्तिकाओं के रूप में प्रकाशित हुए। लेकिन इस क्षेत्र में सबसे अद्भुत काम किया नेहरूजी ने। उन्होंने नैनी जेल से अक्तूबर १९३० से अपनी बेटी की १३ वीं सालगिरह पर

पत्रों का एक सिलसिला शुरू किया, जो १९३३ में देहरादून जेल जाकर समाप्त हुआ। ये ही पत्र 'ग्लिम्प्सिस ऑफ़ वर्ल्ड हिस्टरी' (विश्व-इतिहास की झलक) के नाम से प्रकाशित हुए। इन पत्रों के सृजन-काल में उनकी जो मनोदशा थी, उसकी झलक उनके इन शब्दों में मिलती है—'मैं नहीं कह सकता कि मेरी चिट्ठियां तुम्हारे लिए मनोरंजक होंगी और तुम्हारे दिल में कुतूहल पैदा करेंगी, या नहीं। सच तो यह है कि मैं यह भी नहीं जानता कि ये चिट्ठियां तुम्हें कब मिलेंगी, या मिलेंगी भी या नहीं ?'

नेहरूजी भाग्यशाली थे कि लोग सदा उनके प्रति सौजन्य दिखाते रहे। पर सभी तो ऐसा भाग्य लिखाकर नहीं लाते। विकास पब्लिशिंग हाउस ने सीमाप्रांत के 'खुदाई खितमतगार' श्री मुहम्मद यूनिस के उन पत्रों का, जो उन्होंने 'भारत छोड़ो' आंदोलन के दौरान सीमाप्रांत की विभिन्न जेलों से लिखे थे, 'कैदी के खत' के नाम से एक संग्रह प्रकाशित किया है। वे उस संघर्ष की कहानी तो कहते ही हैं, पर कैदी की मनःस्थिति पर भी प्रकाश डालते हैं। उन्होंने यह पत्र लिखे तो, पर किसे लिखे, क्यों लिखे, उन्हीं के शब्दों में सुनिये—'काश, इन खतों को बाहर भिजवाकर इनका जवाब पाता, ताकि इनका असर तो मालूम होता। इस यकतरफा कार्रवाई का मजा नहीं ..... ताहम इन चीजों से मेरी जानकारी बढ़ रही है। बाहर तो हम कातिल, चोर और दूसरी वारदातों को करने वालों को सजावार करार देते हैं और बगैर कुछ मालूम किये उनसे नफरत करते हैं। भला किसकी हिम्मत कि उनके विचारों से हमदर्दी कर सके या इनका नजरिया भी सामने रखे। मगर यहां इस मसले की गहराई में जाकर असलियत दिखती है और तस्वीर का दूसरा रुख नजर आ जाता है।'

कारागार कवियों के लिए भी बहुत उर्वर प्रमाणित हुए। वहां का वह मनहूस एकांत और वह दर्द-भरी मनोदशा जैसे कवि को अनुप्राणित कर देती है। वह यादों में गहरा खो जाता है। बहादुरशाह 'जफ़र' और सुब्रह्मण्य भारती, माखनलाल चतुर्वेदी, द्वारकाप्रसाद मिश्र, बालकृष्ण शर्मा नवीन, भवानी प्रसाद मिश्र, क्षेमचंद्र सुमन, कैफी आजमी, मजरूह सुलतानपुरी, अली सरदार

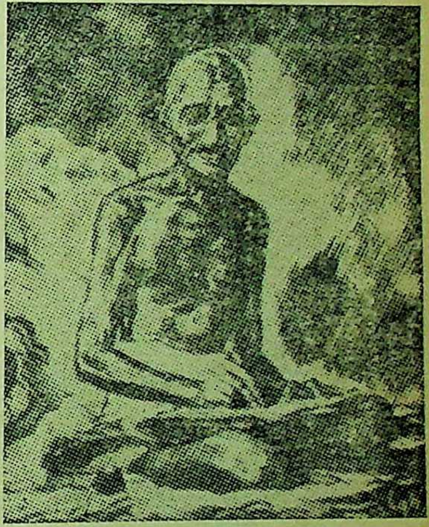

महात्मा गांधी [चित्र : प्रो. लैंगहैमर]

जाफरी, सोरिश कश्मीरी, ज्ञानी गुरमुख सिंह मुसाफिर ये कुछ जाने-माने नाम ही उदाहरण के लिए ले रहा हूं। यों तो जेल-जीवन ने बाबू संपूर्णानंदजी जैसे दार्शनिक को भी कवि बना दिया था। काव्यग्रंथों में 'कृष्णायन' की याद आती है। पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र ने १९४० से १९४५ के जेलवास के अरसे में इसकी रचना की थी। नवीनजी ने 'उर्मिला' का अधिकांश भाग जेल में ही लिखा। अली सरदार जाफरी का संग्रह 'पत्थर की दीवार' जेल-जीवन की ही देन है। स्मृतियां उन्हें भी परेशान करती हैं। कभी वे अपने 'अवध' की यादों में खो जाते हैं, कभी शादी के दिन की याद आती है, और कभी नन्हे बेटे की। 'पत्थर की दीवार' अपनी सशक्त अभिव्यक्ति के लिए उल्लेखनीय है :

क्या कहूं भयानक है या हंसीं है ये मंजर
ख्वाब है कि बेदारी कुछ पता नहीं चलता।
फूल भी हैं साये भी खाक भी है पानी भी
आदमी भी है मेहनत भी गीत भी हैं आंसू भी
फिर भी एक खामुशी रूहो-दिल की तन्हाई
इक तबील सन्नाटा जैसे सांप लहराये।

नियाज हैदर की यह लाइन 'सुबह की पहली किरन तक जिंदगी मुश्किल में है' किसी व्याख्या की मोहताज नहीं है। जफर की गजल 'न किसी की आंख का नूर हूं न किसी के दिल का करार हूं' तो दर्द की जीती-जागती तस्वीर है ही। नवीनजी देखते हैं कि श्रावणी फिर आ गयी है, तो उनका दर्द इन शब्दों में अभिव्यक्त हो उठता है :

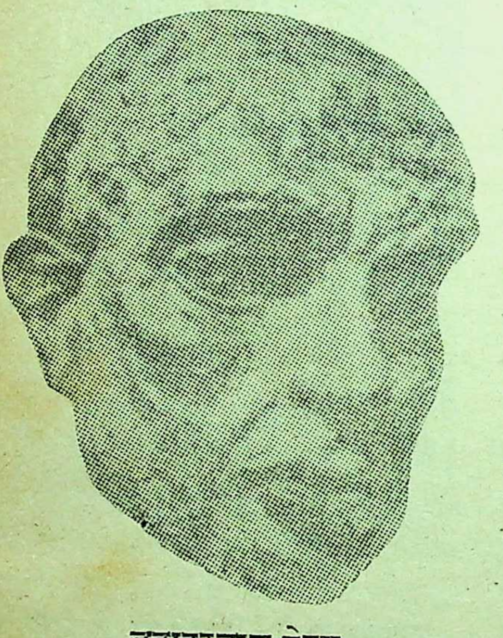

जवाहरलाल नेहरू

सोच क्या रहे हो खोये-खोये-से 'नवीन' तुम
आज फिर आयी राखी पूनम सुहावनी
मेदिनी लहर रही, नभ में हहर बही
हर-हर कर जलधारा ये लुभावनी।
अरि-दुर्ग बीच अब लौं बिता चुके हो
एक-दो क्या, अरे देखो सात-सात श्रावणी
सोच क्या, अवश्य ध्वस्त होगी,
नष्ट-भ्रष्ट होगी
बैरियों की यह शस्त्र-अस्त्रवती छावनी॥
[बरेली, १५ अगस्त १९४४]

कवि के रूप में दो क्रांतिकारियों का

उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा। ये दोनों काकोरी केस के बंदी थे—रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाकउल्ला खान। बिस्मिल की यह कविता 'प्रेम कविता' के रूप में जेल से बाहर आयी, लेकिन इसके अर्थ कुछ और ही थे। उन्हें जेल से छुड़ाने की योजना थी, पर वह सफल नहीं हो रही थी, हुई भी नहीं। उसी समय उन्होंने यह कविता लिखी थी :

मिट गया जब मिटने वाला फिर सलाम आया तो क्या
दिल की बरबादी के बाद उनका पयाम आया तो क्या
काश अपनी जिंदगी में हम ये मंजर देखते
यूं सरे तुरबत कोई महशर खराम आया तो क्या।

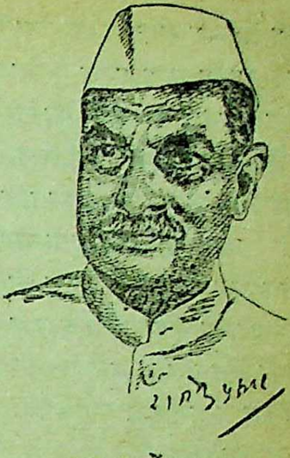

डा. राजेंद्रप्रसाद

और अशफाकउल्लाह ने अंतिम क्षणों में ये उद्‌गार प्रकट किये थे :

यूं ही लिखा था किस्मत में चमन पैराये आलम ने
कि फसले गुल में गुलशन छूटकर है कैद जिंदा की
कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह
रख दे कोई जरा-सी खाके-वतन कफन में।

आइये, अब जरा कथाकारों की ओर चलें। शायद यह बहुत कम लोग जानते हैं कि नाटककार डा. गोविंददास ने अपना भारी-भरकम उपन्यास 'इंदुमती' जेल में ही लिखा था। जैनेंद्रकुमार कुछ कहानियां ही लिख पाये। क्रांतिकारी यशपाल ने अपनी बहुत-सी कहानियां जेल में लिखीं और अंग्रेजी में लिखी। 'पिंजरे की उड़ान' संकलन में अधिकांश ये ही कहानियां हैं। मन्मथनाथ गुप्त ने अपना पहला उपन्यास तो जेल में लिखा ही था, बल्कि उसकी कहानी भी उन्हें वहीं के एक कैदी से मिली थी। वह मार्मिक कथा उस कैदी की अपनी आत्मकथा है। भूख-हड़ताल के दिनों में वह कथा जैसे उन्हें बुरी तरह कुरेदती रही और अंत में उस उपन्यास के रूप में अवतरित हुई। ज्ञानी गुरमुख सिंह मुसाफिर का कहानी-संग्रह 'वखरी दुनिया' न केवल जेल में लिखा गया, बल्कि वे कहानियां भी जेल-जीवन पर हैं।

साहित्य को कारागार की एक और सशक्त देन है—डायरियों की विधा। चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य और एम. एन. राय की डायरियां तो प्रसिद्ध हैं ही; लेकिन गांधीजी के साथ विभिन्न जेलों में रहने वाले उनके निजी सचिवों ने जो डायरियां प्रस्तुत कीं, उनमें महादेव देसाई की डायरी के कई भाग तथा डा. सुशीला नैयड़ द्वारा लिखी गयी आगाखां महल की डायरी बहुत ही रोचक हैं। आगाखां महल की डायरी गांधीजी स्वयं देखते थे और

संशोधित भी करते थे, क्योंकि वे जानते थे कि यह एक दिन छपने वाली है। डा. जान्सन के लिए जो काम बासवेल ने किया था, वही काम महादेवभाई ने गांधीजी के लिए किया। लेकिन जवाहरलालजी की तरह गांधीजी भी भाग्यशाली थे। उन्हें भी अपने जेल-जीवन में लिखने-पढ़ने में परेशानी नहीं हुई। इसके विपरीत क्रांतिकारी एकदम अभागे थे। उनके लेखन की कहानी बहुत रोमांचकारी है।

आत्मकथा-साहित्य में बिस्मिल की आत्मकथा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। फांसी के तीन दिन पहले तक वे उसे लिखते रहे और चोरी-चोरी गोरखपुर के पत्रकार दशरथप्रसाद द्विवेदी को भेजते रहे। वहां से वह गणेशशंकर विद्यार्थी के पास पहुंची, छपी और जब्त हो गयी। तीस साल बाद 'स्वतंत्र भारत' में फिर उसका पुनर्जन्म हुआ। इसके प्रथम संस्करण में श्री मन्मथनाथ गुप्त और राजकुमार सिन्हा ने काकौरी के दूसरे शहीदों के बारे में भी कुछ लिखा था।

पं. नेहरू ने अपनी आत्मकथा 'मेरी कहानी' जून १९३४ और फरवरी १९३५ के बीच जेल में ही लिखी। उनके शब्दों में—'इसके लिखने का खास मकसद यह था कि मैं किसी निश्चित काम में लग जाऊं जो कि जेल-जीवन की तन्हाई के पहाड़-से दिन काटने के लिए बहुत जरूरी होता है। साथ ही मैं पिछले दिनों की हिंदुस्तान की उन घटनाओं का ऊहापोह भी कर लेना चाहता था, जिनसे मेरा ताल्लुक रहा है ताकि उनके बारे में मैं स्पष्टता के साथ सोच सकूं।'

डा. राजेंद्रप्रसाद ने भी अपनी आत्मकथा का अधिकांश भाग जेल में ही लिखा है और मात्र स्मृति के सहारे लिखा है। उनका कहना है—'एक प्रकार से यह संस्मरण सच्चा संस्मरण है, क्योंकि इसमें केवल उन्हीं बातों का उल्लेख है जो लिखते समय स्मृति में आ गयीं।'

राजेंद्रबाबू ने जेल में एक और पुस्तक लिखी—'इंडिया डिवाय्डिड'। यद्यपि यह पता नहीं था कि वे कब जेल से बाहर आ सकेंगे और जो कुछ लिखा है वह छपेगा या नहीं, तो भी उन्होंने अपने विचारों को साफ-साफ ऐसे रूप में लिपिबद्ध करने का निश्चय किया, जो दूसरों की समझ में आ जाये। वे पन्ने के दोनों ओर छोटे-छोटे अक्षरों में लिखते थे और बीच-बीच में चेपियां भी लगाते रहते थे। सरकार की ओर से आपत्ति हुई कि ये अक्षर पढ़े नहीं जा सकते। पांडुलिपि-टाइप होनी चाहिये। स्वयं उसी ने टाइपिस्ट की सुविधा कर दी और छूटने के पहले दिन यह पुस्तक समाप्त हुई और इसे बाहर लाने की इजाजत मिल गयी।

मन्मथनाथ गुप्त ने प्रेमचंद और शरतचंद्र पर अपनी दोनों पुस्तकें जेल में ही लिखीं। इसके अतिरिक्त 'ऐतिहासिक भौतिकवाद', 'अगस्त क्रांति और प्रतिक्रांति', 'सेक्स का स्वभाव' और 'आत्मकथा' भी जेल-जीवन की ही देन हैं। पं. कमलापति त्रिपाठी ने 'बंदी-जीवन', प्रिंसिपल छबीलदास ने 'फांसी की कोठरी' और सज्जाद जहीर ने प्रगतिशील

आंदोलन का इतिहास 'रोशनी' लिखने का अवकाश जेल में ही मिला।

लेकिन अभी तो हमने उन सभी ग्रंथों की चर्चा नहीं की, जिन्होंने देश में ही नहीं, विदेशों में भी ख्याति प्राप्त की। लोकमान्य तिलक स्वराज्य-मंत्र के देने वाले ही नहीं थे, बल्कि भारतीय मनीषा के उज्ज्वल प्रतीक भी थे। उन्होंने अपने तीनों प्रसिद्ध ग्रंथ 'द ओरायन,' 'आर्कटिक होम इन वेदाज़' तथा 'गीता-रहस्य' कारागार में ही लिखे। सार्वजनिक जीवन की व्यस्तता से मुक्ति यहीं मिल सकती थी।

'श्रीमद्भगवद्गीता-रहस्य' २ नवंबर १९१० से ३० मार्च १९११ तक मांडले नगर के कारावास में लिखा गया और पेंसिल से लिखा गया। तिलक के शब्दों में 'ग्रंथ के संबंध में तीन वक्त तीन हुक्म आये। सब पुस्तकें मेरे पास रखने का कुछ दिन बंद होकर सिर्फ चार पुस्तकें एक ही समय रखने का हुक्म हुआ। उस पर सरकार को अर्ज करने पर ग्रंथलेखन के लिए सब पुस्तकें मेरे पास रखने की परवानगी हुई। कागज देने आते वे छुटे न देकर जिल्दबंद किताब बांधकर देते। भीतर के सफे गिनकर और उन पर दोनों ओर नंबर लिखकर देते और लिखने को स्याही न देते, सिर्फ पेंसिल छीलकर देते थे।'

इतना नहीं, इन ग्रंथों की पांडुलिपियां भी बहुत दिनों तक सरकार के पास ही पड़ी रहीं।

जवाहरलालजी ने 'डिस्कवरी आफ इंडिया' (हिंदुस्तान की कहानी) भी अहमदनगर किले की जेल में ही लिखी। वे बराबर इतिहास से इसीलिए जुड़े रहे कि उन्हें जेल में जाहिर तौर पर काम करने की गुंजाइश नहीं रहती थी। 'जब दरअसल मुझे किसी काम में लगने की आजादी नहीं रह गयी, तब मैंने गुजरे हुए जमाने और इतिहास को कुछ इस तरह से समझने की कोशिश की।'

अहमदनगर के किले में ही मौलाना आजाद ने 'गुबारे खातिर' की रचना की। वह अत्यंत रोचक साहित्यिक निबंधों का संग्रह है। चाय कैसे पीनी चाहिये, यह बताना भी वे नहीं भूलते।

एम. एन. राय ने भी कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकें जेल में ही लिखीं। 'सायन्स एंड सुपरस्टिशन' के अतिरिक्त 'फिलोसाफिकल कान्सिक्वेन्सिस ऑफ़ माडर्न सायन्स' उनकी उल्लेखनीय कृति है। लेकिन अभी तक यह प्रकाशित नहीं हो सकी। 'मेम्वार्स ऑफ़ ए कैट' के साथ एक रोमांचक कहानी जुड़ी है। कारागार में सीधे वे अंग्रेजों पर आक्रमण नहीं कर सकते थे, इसलिए उन्होंने बिल्ली को प्रतीक बनाकर पुस्तक लिखी। क्योंकि कागज बहुत कम मिलता था, इसलिए वे बहुत बारीक अक्षर लिखते थे। इसी प्रसंग में सर्वश्री रामबृक्ष बेनीपुरी, उपेंद्र गंगोपाध्याय और बारींद्र कुमार घोष के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

देवली कैंप का एक मनोरंजक किस्सा सुनने में आया है। एक मित्र ने यूरोप के सेक्स-

जीवन पर एक पुस्तक लिखी थी, लेकिन जेलर ने उसे इसलिए फाड़ दिया था कि उससे उनकी प्रतिष्ठा पर आंच आती थी। वे क्रांति की बात सह सकते थे, लेकिन यह बदनामी नहीं।

बहुत कम लोग जानते हैं कि विनोबा के 'गीता-प्रवचन' की रचना भी धुलिया जेल में हुई थी। 'बी' क्लास मिलने पर भी वे 'सी' क्लास में ही रहे और फरवरी १९३२ से लेकर जून १९३२ तक प्रति दिन गीता पर प्रवचन देते रहे। साने गुरुजी ने इन प्रवचनों को लिपिबद्ध किया था। भारतन् कुमारप्पा की रचना 'इकोनामिक्स ऑफ़ परमनेन्स' जेलजीवन की ही देन है।

संपूर्णानंदजी ने लिखा है कि ब्रिटिश साम्राज्य की स्थिति के बारे में इससे बढ़िया टिप्पणी और क्या हो सकती है कि बुद्धिजीवी को फुरसत जेल में ही होती है। इस फुरसत का उन्होंने पूरा-पूरा लाभ उठाया। 'दर्शन और जीवन', 'चिद्‌विलास' और 'आर्यों का आदिदेश' उनकी ये तीनों महत्त्वपूर्ण रचनाएं फतहगढ़ और बरेली जेल में ही लिखी गयीं। उन्होंने कुछ वैदिक कहानियां भी लिखीं। 'वेदमंत्रों के प्रकाश में' इन्हीं कथाओं का संग्रह है।

कारागार में गांधीजी द्वारा रचित पुस्तकों में 'आरोग्य की कुंजी', 'बालपोथी', गीताबोध' और 'गीता-प्रवेशिका' का उल्लेख आवश्यक है। एक भाई को 'अनासक्तियोग' समझने में कठिनाई होती थी, तब उन्होंने इस विषय को सरल रीति से रखने के प्रयत्न में 'गीताबोध' की रचना की। उनके 'अनासक्ति-योग' का पंजाबी में अनुवाद गुरुमुखसिंह मुसाफिर ने जेल में ही किया था। सामान मिलने में इन्हें भी कठिनाई होती थी। पेंसिल तक चुरानी पड़ती थी, लेकिन ये सब कठिनाइयां १९३० तक आकर समाप्त हो गयीं।

क्रांतिकारी भगतसिंह ने अपने जेल-जीवन में चोरी-चोरी चार पुस्तकों की रचना की थी। उनमें उनकी आत्मकथा भी थी, लेकिन वे सुरक्षा के लिए एक हाथ से दूसरे हाथ में जाते-जाते न जाने कहां खो गयीं और हम उस बुद्धिजीवी क्रांतिकारी को उसी की दृष्टि से समझने का अवसर खो बैठे।

कोई अंत नहीं कारागार में लिखे साहित्य का। मात्र-एक रूपरेखा हम प्रस्तुत कर सके हैं। क्या यह अच्छा नहीं होगा कि डाक्टरेट के लिए थीसिस लिखने वाला कोई व्यक्ति इस क्षेत्र में काम करे? तब हम देखेंगे कि हमारे सामने एक ऐसा संसार प्रकट हो गया है, जो हमें अपने और अपने परिवेश के भीतर झांकने की दृष्टि देता है। वह सबको दिखाई देने वाला बाह्य जीवन नहीं है; बल्कि वह आंतरिक व्यक्तिगत जीवन है, जो बाहरी दुनिया के तमाम बखेड़ों से प्रभावित हुए बिना खोज के अपने संतुलित और सीधे मार्ग पर चलता रहता है।

—८३८, कुंडेवालान, दिल्ली-११०००६

अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष के
अवसर पर

नारी-प्रगति : मील के पत्थर

'यूनेस्को कूरियर' से उद्धृत

१६९१ : अमरीका—मैसेच्युसेट्स राज्य में स्त्रियों को मताधिकार मिला। पर १७८० में वह छीन लिया गया।

१७८८ : फ्रांस—फ्रांसीसी तत्त्ववेत्ता और राजनीतिज्ञ कान्डर्सेट ने मांग की कि स्त्रियों को शिक्षा पाने, राजनीति में भाग लेने और नौकरी करने का अधिकार हो।

१७९२ : ब्रिटेन—नारी-अधिकारों की आद्य योद्धा मेरी वुल्स्टोनक्राफ्ट की पुस्तक 'ए विंडिकेशन ऑफ राइट्स ऑफ विमेन' का प्रकाशन।

१८४० : सं. रा. अमरीका—लुक्रीशिया मॉट ने स्त्रियों और नीग्रो लोगों के लिए समानाधिकार की मांग करते हुए 'ईक्वल राइट्स एसोसिएशन' की स्थापना की।

१८५७ : सं. रा. अमरीका—८ मार्च को न्यूयार्क की सिलाई-उद्योग और वस्त्रोद्योग की मजदूरिनों ने पुरुषों के बराबर मजदूरी और १० घंटे के कार्य-दिवस के लिए हड़ताल की।

१८५९ : रूस—सेंट पीटर्सबर्ग में नारी-विमुक्ति आंदोलन का आरंभ।

१८६२ : स्वीडन—स्त्रियों को म्युनिसिपल चुनावों में मताधिकार दिया गया।

१८६५ : जर्मनी—लुइज़ी ओट्टो द्वारा जर्मन महिलाओं के महासंघ की स्थापना।

१८६६ : ब्रिटेन—तत्त्ववेत्ता और अर्थशास्त्री जान स्टुअर्ट मिल द्वारा स्त्रियों के लिए मताधिकार की मांग।

१८६८ : ब्रिटेन—नेशनल विमेन्स सफ़्रजेट सोसायटी की स्थापना।

१८६९ : सं. रा. अमरीका—नेशनल विमेन्स सफ़रेज एसोसिएशन (राष्ट्रीय नारी मताधिकार संघ) की स्थापना हुई। व्योमिंग राज्य ने स्त्रियों को मताधिकार दिया, ताकि वह अमरीकी संघ का सदस्य होने के लिए आवश्यक मतादार कोटा प्राप्त कर सके।

१८७० : स्वीडन व फ्रांस—चिकित्साशास्त्र के अध्ययन का द्वार स्त्रियों के लिए खोल दिया गया।

तुर्की—लड़कियों की प्राथमिक और माध्यमिक शाला की अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण के लिए ट्रेनिंग कालेज

खुला।

१८७४ : जापान–लड़कियों के लिए पहला टीचर्स ट्रेनिंग कालेज खुला।

१८७८ : रूस–सेंट पीटर्सबर्ग में प्रथम महिला विश्वविद्यालय (बेत्सुजेव विश्वविद्यालय) स्थापित हुआ।

१८८२ : फ्रांस–प्रसिद्ध लेखक विक्टर ह्यूगो की संरक्षकता में नारी-अधिकार लीग की स्थापना हुई।

१८८८ : सं. रा. अमरीका – सूसन बी. एंटनी ने 'यू. एस. इंटर नेशनल कौंसिल ऑफ़ विमेन' की स्थापना की। यूरोप और उत्तर अमरीका के नारी-संघटनों ने वाशिंग्टन में 'इंटरनेशनल कौंसिल ऑफ़ विमेन' की स्थापना की।

१८९३ : न्यूजीलैंड–स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९०१ : फ्रांस–फ्रांसीसी संसद में पहली बार नारी-मताधिकार के प्रश्न पर बहस हुई।

नार्वे–स्त्रियों ने म्युनिसिपल चुनावों में मतदान शुरू किया।

१९०३ : ब्रिटेन–एमेलाइन पैंकहर्स्ट ने नेशनल विमेन्स सोशल एंड पोलिटिकल यूनियन (डब्ल्यू. एस. पी. यू.) की स्थापना की।

१९०४ : सं. रा. अमरीका–इंटरनेशनल वुमन सफ़रेज एलायन्स की स्थापना।

१९०५ : ब्रिटेन– मैंचेस्टर में नारी आंदोलनकर्त्रियों की सभा; एनी कैनी तथा क्रिस्टाबेल पैंकहर्स्ट की गिरफ्तारी।

१९०६ : फिनलैंड–स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९०८ : ब्रिटेन–विमेन्स फ्रीडम लीग की स्थापना। नारी-आंदोलनकर्त्रियों की सभाएं व प्रदर्शन; क्रिस्टाबेल पैंकहर्स्ट और फ्लोरा ड्रुमांड की गिरफ्तारी।

१९१० : डेन्मार्क–कोपनहेगन में द्वितीय अंतरराष्ट्रीय समाजवादी महिला कांग्रेस में क्लारा जेटकिन ने प्रस्ताव किया कि न्यूयार्क की मजदूरिनों की हड़ताल (८ मार्च १८५७) की याद में ८ मार्च को महिला-दिवस मनाया जाया करे।

१९११ : जापान–सीतोशा नारी विमुक्ति आंदोलन का सूत्रपात।

१९१२ : चीन–नारी-आंदोलन के कई संघटनों ने अपनी गतिविधियों के समन्वयन के लिए नानकिंग में संमिलित अधिवेशन किया, स्त्री-पुरुषों के समानाधिकार की मांग की और २० मई को राष्ट्रपति सन यात-सेन को एतदर्थ प्रार्थना-पत्र भेंट किया।

१९१३ : नार्वे–स्त्रियों को पुरुषों के समान मताधिकार प्राप्त हुआ। **जर्मनी, आस्ट्रिया, स्विट्जरलैंड, डेन्मार्क**–८ मार्च को स्त्रियों ने अंतरराष्ट्रीय महिला-दिवस मनाया और मत देने व चुने जाने के अधिकार की मांग की।

१९१४ : तुर्की—इस्तंबूल विश्वविद्यालय में लड़कियों के लिए विभाग खोला गया।

१९१५ : स्वीडन—लेखिका एलेन के ने मांग की कि संतति-नियमन संबंधी जानकारी सबको सुलभ की जाये और अविवाहिता माताओं के लिए सार्वजनिक कल्याण-व्यवस्थाएं की जायें।

१९१७ : हालैंड और रूस—स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

सोवियत रूस—अक्तूबर क्रांति ने स्त्रियों के लिए समान राजनैतिक आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों की घोषणा की और सोवियत संविधान (१९१८) ने उसकी पुष्टि की।

१९१८ : ब्रिटेन—तीस वर्ष से ऊपर की स्त्रियों को मत देने और पार्लमेंट में बैठने का अधिकार प्राप्त हुआ।

१९१९ : जर्मनी और चेकोस्लोवाकिया—स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९२० : सं. रा. अमरीका—समस्त राज्यों में स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९२३ : दक्षिण अमरीका—सांतियागो (चिली) में समस्त अमरीकी राष्ट्रों के अंतरराष्ट्रीय संमेलन ने स्त्रियों के अधिकारों के संबंध में ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया।

तुर्की—कमाल अतातुर्क के अध्यक्ष निर्वाचित होने के बाद नारी-मुक्ति की अपूर्व प्रगति।

१९२५ : जापान—३० मार्च को डायट (जापानी संसद) द्वारा पारित 'सार्वत्रिक' मताधिकार विधेयक में भी स्त्रियों को मताधिकार से वंचित रखा गया। इससे नारी-आंदोलन तेजी से भड़का।

भारत—श्रीमती सरोजिनी नायडू भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष चुनी गयीं। इससे पूर्व १९१७ में श्रीमती एनी बेसेंट कांग्रेस अध्यक्ष बन चुकी थीं।

१९२८ : दक्षिण अमरीका—हवाना में अमरीकी राष्ट्रों के छठे संमेलन में अंतर-अमरीकी महिला कमिशन की स्थापना हुई।

१९२९ : ईक्वाडोर—स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९३२ : स्पेन—गणतंत्रीय संविधान में स्त्रियों को मताधिकार दिया गया।

नारी [चित्र : पिकासो]

१९३४ : **फ्रांस**–फासिज्म और युद्ध के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए महिलाओं का अंतरराष्ट्रीय संमेलन पेरिस में हुआ।

१९३६ : **फ्रांस**–नोबेल पुरस्कृत विज्ञानी श्रीमती आइरीन जोलियो-क्यूरी समेत तीन महिलाएं लियोन ब्लम के जनमोर्चे की सरकार में मंत्री बनीं, फिर भी स्त्रियां मताधिकार से वंचित ही रहीं।

१९४५ : **फ्रांस और इटली**– स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९४६ : **जापान**–छह स्त्रियां डायट की सदस्य चुनी गयीं।

१९५१ : **अंतरराष्ट्रीय श्रम संघटन** ने जून १९ को समान मूल्य के काम के लिए स्त्री व पुरुष श्रमिकों को समान मजदूरी देने का नियम पास किया।

१९५२ : **राष्ट्रसंघ** की महासभा ने भारी बहुमत से स्त्रियों के राजनैतिक अधिकारों का नियम पास किया।

१९५७ : **ट्यूनीशिया**–पुरुष और स्त्री की समानता का नया कानून पास किया।

१९[illegible] : **श्रीलंका**–श्रीमती सिरिमाओ भंडारनायक विश्व की प्रथम महिला प्रधान-मंत्री बनीं।

१९६१ : **पैरागुए**–स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ। अब संपूर्ण दक्षिण अमरीका में स्त्रियों को मताधिकार है।

१९६२ : **अल्जीरिया**–तेरह महिलाएं राष्ट्रीय असेम्बली की सदस्य चुनी गयीं।

१९६४ : **पाकिस्तान**–कुमारी फातिमा जिन्ना ने राष्ट्रपति पद के लिए चुनाव लड़ा, जो विश्व में ऐसा पहला अवसर था।

१९६७ : **ईरान**–परिवार-रक्षा कानून बना, जो पत्नी को पति की अनुमति के बिना नौकरी करने का अधिकार देता है। (ईरान ने १९६३ से बुर्का पहनने पर रोक लगा दी है।)

१९७१ : **स्विट्जरलैंड**–स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त हुआ।

१९७५ : **अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष।**
क्यूबा–८ मार्च को परिवार कोड लागू किया गया, जिसके अनुसार घर-काम में हाथ बंटाना पुरुषों के लिए लाजमी है।

★

नारी : अपराजेय

मेरे खयाल में पुरुषों और स्त्रियों में जो वास्तविक अंतर है, वह है दुःख सहने के उनके तरीके में। स्त्री दुःख को कबूल करना सीख जाती है–शारीरिक और आत्मिक दोनों दृष्टियों से। परंतु पुरुष संघर्षरत रहता है, और उसका वह संघर्ष क्रमेण कमजोर पड़ता जाता है और अंत में उसे हार माननी पड़ती है। दुःख कभी भी स्त्री को हराता नहीं, कमजोर नहीं बनाता। वह उसका एक अंग बन जाता है। वह उसे जीवन के और अधिक निकट लाता है, जबकि पुरुष को वह मौत के निकट ले जाता है। –**फ्रेडरिक प्रोकोश**

★

धिक्कार महिला-वर्ष!

जर्मेन ग्रियर

बिना इस बात को ध्यान में रखे कि राष्ट्रसंघ के सभी सदस्य देश किसी न किसी रूप में महिलाओं का उत्पीड़न और शोषण करते हैं, एक उजली सुबह राष्ट्रसंघ-सचिवालय के कुछ भलेमानुसों ने यह तय कर डाला कि इस वर्ष को अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में मना डाला जाये।

राष्ट्रसंघ में छाया हुआ खास तरह का असमंजस और दृष्टिहीनता की यह एक मिसाल है। खुद राष्ट्रसंघ-सचिवालय ने अपने यहां कितने प्रतिशत नौकरियां महिलाओं को दी हैं पर गौर करने से यह विडंबना अपने आप स्पष्ट हो जायेगी।

वास्तव में यह महिला-वर्ष मनाने के पीछे पश्चिमी देशों का जोर था, जहां नारीवाद आजकल एक फैशन के रूप में खूब लोकप्रिय हो रहा है। और पश्चिमी देशों की जीवनशैली राष्ट्रसंघ पर हावी है। यह बात और है कि इस जीवनशैली का हमारे इस छोटे-से ग्रह की बहुसंख्यक आबादी के जीवन से कोई संबंध नहीं है।

इस ढोंग का नतीजा सिर्फ इतना निकला है कि जहां आज भी अधिकांश महिलाएं या तो साल-भर गर्भवती रहती हैं, अथवा बिना वेतन के तरह-तरह का श्रम करने में जुटी रहती हैं। ऐसे देशों की चंद फैशनपरस्त और उच्चवर्गीय महिलाओं का 'शादी करें या व्यवसाय अपनायें' जैसे विषयों पर महिला-पत्रिकाओं के स्तर पर गोष्ठियां करने का मौका मिल गया है। एशिया और अफ्रीका में खेतों में पशुओं की तरह जुतने वाली और सिर पर गुम्मा ढोने वाली महिलाएं अगर चाहें, तो महिला-वर्ष की खुशी में दो क्षण के लिए अपना काम रोककर वर्जीनिया स्लिम सिगरेट पीकर मर्दों के बराबर होने का संतोष कर सकती हैं।

कटु सत्य यह है कि इस वर्ष भी पिछले और उससे पिछले तमाम वर्षों की तरह हजारों बच्चियां सिर्फ इसलिए मर जायेंगी कि खाना खिलाने में लड़कों को प्राथमिकता दी जाती है। हजारों स्त्रियों को उन देशों में जननेंद्रिय को विक्षत कराना पड़ेगा, जहां यह जघन्य परंपरा आज भी कायम है। लाखों करोड़ों स्त्रियों को फुसलाकर दवाइयों और सर्जन के चाकू-कैंचियों के माध्यम से जनसंख्या-नियंत्रण की

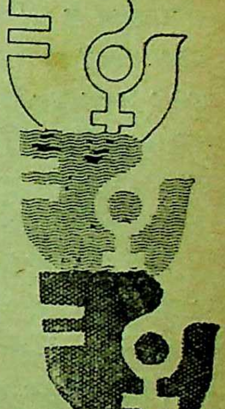

बलिबेदी पर अपने प्रजनन-अंगों को चढ़ाना पड़ेगा, जैसे कि यह एकमात्र उन्हीं की जिम्मेवारी हो।

युद्ध भी चलते रहेंगे और संसार के अनेक भागों में स्त्रियों के साथ बलात्कार, हत्या और वेश्यावृत्ति का जुल्म जारी रहेगा। १९७५ में भी राष्ट्रसंघ अपने घोषणा-पत्र में नारी के समान अधिकार से संबंधित संशोधन पास न करने में सफल होगा। स्त्रियों को अपनी प्रजनन-शक्ति पर स्वयं नियंत्रण का अधिकार मिलने की संभावना बढ़ने के बजाय घट जायेगी। इन सब बातों से बेफिक्र राष्ट्रसंघ 'महिला समानता, विकास और शांति' पर घंटों बकझक करता रहेगा।

इस महिला-वर्ष में राष्ट्रसंघ के लगभग आधे सदस्यों ने महिला-समानता की घोषणा को मौखिक रूप से भी कबूल नहीं किया है। १३८ सरकारों में से केवल १६ ने महिला-वर्ष मनाने के लिए धन देने का वादा किया और उनमें से भी भुगतान केवल १३ ने किया। फिनलैंड जैसे देश ने जितना दिया, उससे केवल दस गुना ज्यादा महाशक्ति अमरीका ने दिया। कुल वादे केवल १३ लाख ५० हजार डालर के थे और उनमें से १२,०९,६३३ डालर वसूल हुए।

स्थिति यह है कि न तो राष्ट्रसंघ पर महिलाओं का नियंत्रण है, न इसकी सदस्य सरकारों पर, न बड़ी-बड़ी व्यापारिक कंपनियों पर और न राष्ट्रों के खजानों पर। इसके बावजूद डर यही है कि महिला-वर्ष के फीकेपन के लिए नारी-समुदाय को ही दोषी ठहराया जायेगा और कहा जायेगा कि उन्होंने स्वयं ही पर्याप्त उत्साह नहीं दिखाया।

यह बात कि राष्ट्रसंघ के पास इतनी शक्ति नहीं है कि वह अपने सदस्यों पर दबाव डालकर महिलाओं का शोषण बंद करा सके, किसी तरह के दिखावे और पोस्टरबाजी से छिप नहीं सकती। वास्तव में राष्ट्रसंघ अपने सदस्यों के विभिन्न गुटों से इतना भयभीत है कि महिलाओं का शोषण करने वाले देशों के विरुद्ध निंदा-प्रस्ताव लाने का साहस भी नहीं जुटा सकता। और तो और जिन देशों में औरतों को मत देने का अधिकार नहीं है, जहां उन्हें अपना चेहरा ढांककर रखना पड़ता है, जहां पतियों को अपनी पत्नी को मार डालने का अधिकार मिला हुआ है और जहां उनके पैरों में बेड़ियां डालकर रखा जाता है, उन देशों के प्रतिनिधियों से राष्ट्रसंघ जवाब-तलब तक नहीं कर सकता। उलटे ये देश बड़ी शान से अपने यहां की कुछ पालतू महिलाओं को राष्ट्रसंघ के मंच पर नारीवाद के पक्ष में लंबे-चौड़े भाषण झाड़ने के लिए भेजने की धृष्टता दिखाते हैं।

जिस सलाहकार-समिति ने विश्व स्तर पर महिला-वर्ष मनाने के लिए कार्य-योजना बनायी, उसकी अध्यक्ष ईरान के शाह की बहन राजकुमारी अशरफ थीं। उनसे यह पूछने की किसी की हिम्मत न पड़ी कि ईरान की पहली महिला-वकील मेहरी मनूशेरि-

यान के साथ क्या हुआ, जिसने संसद् से इसलिए इस्तीफा दे दिया कि ईरान के पासपोर्ट-कानून के अनुसार पत्नी के विदेश जाने के लिए पति की लिखित अनुमति होना जरूरी होता है।

पागल बना देने वाली बात यह है कि महिलाएं अपने को राष्ट्रसंघ के इस प्रपंच से अलग भी नहीं रख सकतीं; क्योंकि डर है कि वैसा करने से महिलाओं के हित-लाभ के नाम पर उनके हितों का गला न घोंट दिया जाये, जैसा कि अक्सर होता है। अभी पिछले साल मनाये गये जनसंख्या वर्ष की कार्य-योजना से महिलाओं को राष्ट्रसंघ के अज्ञान और पाखंड का जो दर्शन हुआ, उसने बहुत-सी विचारशील नारियों को चौकन्ना कर दिया है। इस कार्य-योजना में कूटनीतिक दोगली शब्दावली का प्रयोग करते हुए बस एक ही बात पर जोर दिया गया कि जनसंख्यावृद्धि रोकने की सीधी जिम्मेवारी महिलाओं पर है और इसके लिए उन्हें ही जन्म-नियंत्रण के उपायों को अपनाना चाहिये।

उसी वर्ष रोम में 'महिलाएं और खाद्य' विषय पर जो प्रस्ताव पास हुआ, उसमें महिलाओं को केवल बच्चों को दूध पिलाने वाला प्राणी मानकर सारी समस्याएं और सिफारिशें प्रस्तुत की गयी थीं। अर्थात् महिलाओं को अच्छा आहार मिलना इसलिए जरूरी है कि बच्चे पैदा करके उन्हें दूध पिलाना होता है—इसलिए नहीं कि वे भी इंसान हैं और उनका भी अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है, जो मातृत्व के अलावा भी कोई अर्थ रखता है। इस बात पर कतई गौर नहीं किया गया कि जो स्त्रियां बच्चे नहीं पाल रही हैं, वे भी जनसंख्या-वृद्धि और तज्जनित-खाद्य तंगी से मारे भूख के मर सकती हैं।

आज सारे संसार में स्त्रियों की नियति यही है कि आदमी से कम खायें, उनका बचा-खुचा खायें; लेकिन इस विडंबना की ओर शायद ही कभी राष्ट्रसंघ में किसी ने ध्यान आकर्षित किया हो।

गुस्सा इस बात पर आता है कि इस साल होने वाले चार क्षेत्रीय संमेलन 'महिलाएं और जनसंख्या' पर हैं। मक्कारी की इस हवा में यह तथ्य कि 'महिलाएं भी जनसंख्या हैं' जानबूझकर गायब कर दिया गया है, सो भी महिलावर्ष में।

POLICE-WOMAN
IN TEL-AVIV

तेलअवीव में महिला-पुलिस
[चित्र : मारियो]

अगर महिला-वर्ष का आयोजन सही तरीके से किया जाता, उसके लिए पर्याप्त कोष उपलब्ध होता और पहले से तत्संबंधी विषयों पर अनुसंधान कराकर महत्त्वपूर्ण जानकारी एकत्र की जाती तो विश्व की आधी मूक मानव-जाति के बारे में व्यापक जानकारी प्रकाश में आ सकती थी। तब पता चलता कि इस आधी मानव-जाति का स्वास्थ्य, मनोबल, कार्यभार और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उसका योगदान क्या और कैसा है। तब नारी के कार्य का मूल्यांकन होता और आर्थिक-सामाजिक परिवर्तनों का उसके सामाजिक रुतबे और जीवन-शैली पर क्या प्रभाव पड़ा है, यह मालम होता। और वह सारी जानकारी महिला-वर्ग के बारे में यथार्थवादी विचार-विमर्श का आधार बन सकती थी।

इसके बाद जनसंख्या-आयोजन, युद्ध का महिलाओं पर प्रभाव, प्रभावी गुटों में महिलाओं की प्रभावशीलता इत्यादि का अध्ययन किया जाता और तब शायद संसार की ५० करोड़ अशिक्षित महिलाओं में से भी कुछ की आवाज सुनी जाती, जिससे अवैतनिक घरेलू नौकरों के रूप में जीवन बिताने वाली लाखों नारियों की जिंदगी के बारे में हमें आंखें खोलने वाली जानकारी मिलती।

चूंकि यह तो सर्वथा स्पष्ट हो गया है कि अंतरराष्ट्रीय महिला-वर्ष को सफल बनाने वाली एक भी परिस्थिति मौजूद नहीं है, इसलिए महिलाएं नारी-विरोधी बहुमत से ग्रस्त राष्ट्रसंघ के आयोजनों से निकलने वाले हानिकारक नतीजों की आशंका से ग्रस्त हैं और उन नतीजों को रोकने के लिए प्रयत्नशील हैं।

आज उनके आगे सवाल यह नहीं है कि महिला-वर्ष उनके लिए क्या कर सकता है। सवाल यह है कि महिला-वर्ष उनके खिलाफ क्या कर सकता है—यह आशंका उन्हें त्रस्त किये हुए है। **अनुवाद : वीरेंद्र सिंह**

* * *

'भाग्य क्या है?' एक विद्वान ने मुल्ला नसरुद्दीन से सवाल किया।

'आपस में गुंथी हुई और एक-दूसरे को प्रभावित करने वाली घटनाओं का अंतहीन सिलसिला।'

'यह व्याख्या संतोषजनक नहीं है। मैं तो कार्यकारणभाव में विश्वास रखता हूं।'

'अच्छा! तो उधर देखिये,' नसरुद्दीन ने सड़क पर से गुजरते हुए एक जुलूस की ओर इशारा किया और कहा—'उस आदमी को सूली पर चढ़ाने ले जाया जा रहा है। अब बताइये कि उसे सूली पर क्यों चढ़ाया जा रहा है—क्या इसलिए कि किसी ने उसे चांदी का एक सिक्का दे दिया, जिससे उसने वह छुरा खरीदा जिससे उसने कत्ल किया, या क्या इसलिए कि किसी ने उसे कत्ल करते देख लिया, या कि इसलिए कि किसी ने उसे कत्ल करने से रोका नहीं?'

—संबुद्ध

* * *

सफलता : कुछ सूत्र

विशाखदत्त

एक बार किसी ने हेनरी फोर्ड से पूछा—'सफलता का रहस्य क्या है ?' हेनरी फोर्ड ने कहा—'सफलता का सबसे पहला रहस्य है—हर परिस्थिति के लिए तैयार रहना।'

○○○

महान उपन्यासकार चार्ल्स डिकन्स से किसी ने पूछा—'आपकी महान सफलता का कारण क्या है ?'

डिकन्स ने उत्तर दिया—'जीवन में मैंने जो कुछ भी करने की कोशिश की है, उसमें पूरे दिल से चाहा है कि उसे अच्छे से अच्छा करूं। और मैंने जिस काम में भी दिल लगाया है, पूरा दिल लगाया है।'

○○○

संगीत-समीक्षक डीम्स टेलर ने फ्रेड्रिक स्टाक की सफलता का कारण बताते हुए लिखा है :

'वे जानते थे कि लोग अच्छे हैं। लोग जानते थे कि फ्रेड्रिक स्टाक अच्छे हैं। और स्टाक ने दूसरों पर दोष लगाने के बजाय सदा अपनी गलती को सुधारने की कोशिश की।'

○○○

प्रसिद्ध अंग्रेज लेखक सामरसेट माम ने अपनी सफलता के बारे में लिखा है—'जिस एक चीज ने मेरे जीवन को सर्वाधिक प्रभावित किया है, वह है मेरा हकलाना। अगर मुझमें यह ऐब न होता, तो मैं भी संभवतः अपने भाइयों की तरह केंब्रिज विश्वविद्यालय में पढ़ने जाता और फिर कभी-कभार फ्रांसीसी साहित्य के बारे में कोई नीरस-सी आलोचनात्मक पुस्तक लिख दिया करता।'

○○○

हर्बर्ट स्वूप ने अपनी सफलता के रहस्य के बारे में लिखा है—'सफलता का रहस्य तो मैं नहीं बता सकता, पर असफलता का रहस्य जरूर बता सकता हूं—हर किसी को खुश करने की कोशिश।'

पाकिस्तानी सिंधी कहानी:

नीला निशान

ताज बलोच

हम काफी-हाउस से निकलकर फुटपाथ पर आ गये। रात का काफी हिस्सा गुजर चुका था और हर कोई रिक्शे या टैक्सी से अपनी-अपनी मंजिल पर पहुंचने की कोशिश कर रहा था। अच्छी-खासी ठंड पड़ रही थी। मैंने कोट के बटन बंद किये और कालर ऊपर उठा दिये और घर की ओर चल दिया।

'अबकी बार तो तुमने बहुत कीमती कोट सिलवाया है?' मेरे साथ खड़े होकर उसने बहुत ही धीरे-से पहला प्रश्न किया।

अन्यमनस्कता में मैंने उसे कोई उत्तर नहीं दिया; मगर वह मेरे साथ-साथ चलने लगा। दिन की भीड़ में अगर ऐसी घटना पेश आ जाये, तो कोई असाधारण बात नहीं; लेकिन रात की खामोशी में और वीरान सड़क पर उसका यों मेरे साथ-साथ चलना मुझे न सिर्फ अच्छा न मालूम हुआ, बल्कि मुझे भय भी महसूस होने लगा।

'डर गये?' उसने मेरे भय को भांपते हुए व्यंग्य किया। अब भी मैंने उत्तर नहीं दिया और फुटपाथ छोड़कर सड़क पर चलने लगा।

'मुझसे कब तक और कहां तक भाग सकोगे?' उसने मासूम बच्चे की तरह हंसी में लोट-पोट होते हुए कहा।

उसकी हंसी और आवाज ने मेरे हृदय में बुरी तरह दहशत पैदा कर दी। मैंने भय में कांपते हुए पीछे मुड़कर टैक्सी या रिक्शा के लिए निगाह दौड़ायी।

'तुम्हारा मकान इतना दूर नहीं है कि कोई टैक्सी वाला ले चलने को तैयार हो जाये।' उसने नरम और सांत्वनापूर्ण स्वर में कहा।—'आज सुबह तुमने अपनी बीवी से कहा था कि मेरे पास बिलकुल भी रुपये नहीं..... फिर काफी-हाउस का इतना मोटा बिल कैसे चुकाया?'

'तुम कौन होते हो मुझसे पूछने वाले?' मैंने बेहद संयत होकर कहा।

'तो तुम मुझे नहीं पहचानते!' उसने एक बार फिर भयभीत करने वाला कहकहा लगाते हुए कहा।

मैं उत्तर दिये बिना ही सड़क छोड़कर दूसरे फुटपाथ पर चलने लगा। किंतु वह भूत की तरह मुझसे चिपटा रहा।

अनुवाद : हरपाल कौर

'आज तो बड़ा ऐश किया दोस्त ! आला दर्जे के रेस्तरां में डिनर और बेहतरीन काफी ! सिर्फ व्हिस्की की कसर रह गयी थी।' उसने कटाक्ष किया।

इधर मैं उससे अपना दामन छुड़ाने के लिए तेज-तेज कदम उठाता हुआ घर की ओर बढ़ रहा था।

'तुम्हारी बीवी तो बच्चों को सुलाकर तुम्हारा इंतजार करने की आदी हो गयी है। फिर तुम्हें इतनी जल्दी क्यों है?' उसने एक बार फिर व्यंग्यपूर्ण चोट की। मैं पसीने में डूब-डूब गया। कोट के बटन खोल दिये और कालर नीचे करके चलने लगा। इधर वह अब भी मेरे साथ था।

'आज तुम्हारे बच्चों ने सालन न होने के कारण, बिना दूध की काली चाय से रात का खाना खाया और तुमने अपने दोस्त के साथ खूब ऐश किया।......' उसने तीखा वार किया।

मैं गुमसुम सुना-अनसुना करके तेज-तेज कदम उठाता हुआ घर की ओर बढ़ने लगा।

'दूध वाले ने तुम्हारी बेगम को आज दूध देने से इन्कार कर दिया है। वह कह रहा था, मैं कोई लखपति तो हूं नहीं कि लगातार चार महीने का उधार बरदाश्त कर सकूं!'

मैंने कदम बहुत तेजी से बढ़ाये। उसके वाक्य बरछी बनकर मेरे कलेजे में घुसते गये; लेकिन भय के मारे अपने में इतना साहस पैदा न कर सका कि उसे कोई जवाब दे सकूं।

'तुम्हारी बीवी सुबह उठती है तो सरदी से दोहरी हो जाती है। फलालैन की पुरानी और फटी हुई शाल अब सरदी से उसकी रक्षा नहीं कर पाती। तुम्हें शरम आनी चाहिये। नयी न सही, कोई पुरानी और कम कीमत की शाल ही दिलवा दो।' उसने मेरा मजाक उड़ाते हुए कहा।

'आज तो तुमने अपनी प्रेमिका नाजनीन को मंजूर डिपार्टमेंटल स्टोर में खूब जी

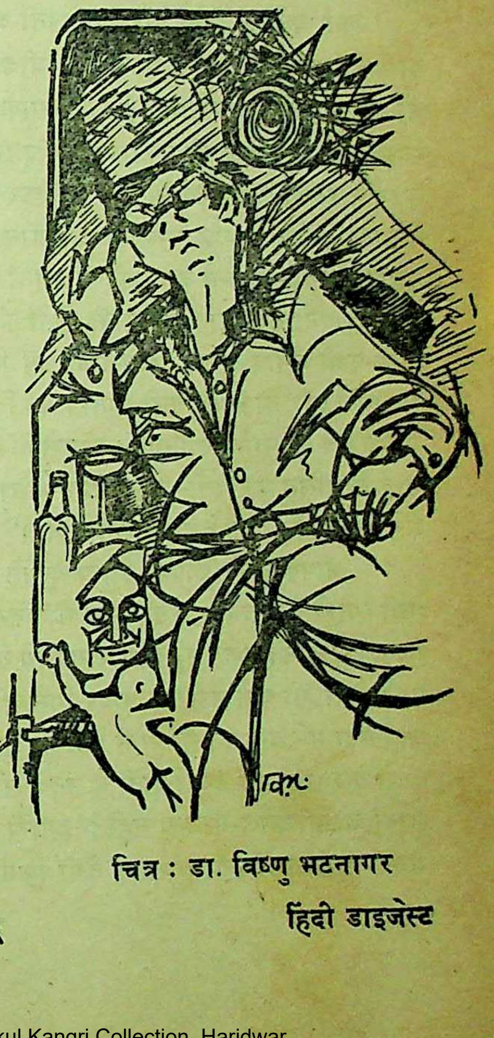

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

खोलकर शापिंग करायी। अगर पांच रुपयों तक की कोई-सी चीज अपने बीबी-बच्चों के लिए खरीदकर ले जाते तो क्या पहाड़ टूट पड़ता ?' उसने शिष्टाचार की सीमा लांघकर मेरे बेहद नजदीक आते हुए कहा।

भय और दहशत के कारण मैंने अपनी सारी शक्ति इकट्ठी करके उसके दायें गाल पर एक जोरदार थप्पड़ जड़ दिया। थप्पड़ लगाने के परिणामस्वरूप मैं स्वयं ही लड़खड़ाकर दूर जा पड़ा, और पता नहीं कब और किस अवस्था में घर तक पहुंच सका।

सुबह को देर से आंख खुली तो एकाएक मेरी नजर पुरानी अलमारी के बड़े और पुराने आईने पर जा पड़ी। मेरे दायें गाल पर थप्पड़ का नीला निशान अभी बाकी था और आईने में से दो निगाहें मुझे घूर रही थीं। उनमें घृणा, उपेक्षा और व्यंग्य स्पष्ट रूप में दिखाई दे रहे थे।

*

कई वर्ष पूर्व मेरा परिचय अपनी बहन की प्रतिवेशिनी एक विदेशी वृद्धा से हुआ था। कभी वे नैनीताल के सामाजिक जीवन का एक सुदृढ़ स्तंभ थीं, कमिश्नरी का कोई भी जलसा उनकी उपस्थिति के बिना साकार नहीं होता था। पति थे सिविल सर्जन और स्वयं वे थीं नैनीताल की ब्यूटीक्वीन। घुड़सवारी, मास्क बॉल, बाजार आदि आयोजित करने में उनकी विशेष ख्याति थी। किंतु क्रूर काल ने निमिष-भर में सब कुछ छीन लिया। धन-यौवन-पति-विहीना वह विस्मृत ब्यूटीक्वीन, 'विडोज होम' में एक कमरा लेकर रहने लगी। सुंदरी पुत्रियां विदेश में बस गयी थीं, तीनों पुत्रों को विदेश की ऊंची नौकरियों का आकर्षण वहीं का बना गया था। कई नाती-पोतों की जरा-जीर्ण नानी, भारत में ही रह गयी थी। कभी-कभी नैनीताल की क्षणस्थायी धूप में, स्टील के भारी-भारी बक्सों के गरम कपड़े सुखाने बैठतीं, तो मैं भी चली जाती। अब दिवंगत पति, प्रवासी संतानों के ये ही कपड़े उनके सुदीर्घ पथ का पाथेय थे। सूखते स्वेटरों के साथ ही, पहनने वालों की स्मृति भी कभी-कभी उन्हें विचलित कर देती—'इस स्वेटर में राबर्ट कितना प्यारा लगता था, और ये कार्डिगन मैंने "मैक्कॉल" को देखकर बनाया था।'

'आपके बच्चे आपको इतना बुलाते हैं, आप कहती हैं पुत्र इतने मातृभक्त हैं, बहुएं ऐसी प्यारी हैं—तब आप इस उम्र में, इतनी दूर अकेली क्यों पड़ी हैं ?' मैंने एक दिन पूछ लिया। उन्होंने हंसकर मेरे हाथ थाम लिये थे। 'नहीं जाती हूं, इसी से इतना प्यार है, बच्ची। पास होती, तो क्या मुझे यह आदर मिलता ? हमारा देश तुम्हारे भारत-सा उदार नहीं है, जहां बेटा मरे बाप को भी पानी देता है। तुम्हारी बहन को, अपने बुड्ढे सास-ससुर की सेवा करते देखती हूं, तो ईर्ष्या होती है उनके सौभाग्य पर ! हमारे यहां केवल आडंबर है, तुम लोगों का-सा शील-सौजन्य नहीं ! हमारी बहुएं मिलेंगी तो चूम-चाटकर रख देंगी, ममी अगर रहने चली गयी तो डाल देंगी किसी होम में।' —**शिवानी** ('वातायन' में)

*

शाही इलाज

ब्रिटेन का राजा चार्ल्स द्वितीय घोर विलासी था। उसने समूचा जीवन ऐश-आराम में बिताया। मगर विधि की विडंबना तो देखिये कि उसका अंत अत्यंत करुण रहा।

सन् १६८५ की फरवरी में चार्ल्स को दौरा पड़ा और वह बेहोश हो गया। तुरंत देश के एक दर्जन सर्वोत्कृष्ट चिकित्सक उसकी सेवा में जुट गये। सबसे पहले उन्होंने उसकी फसद खोली, यानी उसके शरीर से ढेर सारा रक्त निकाल दिया। जब इससे उसे होश नहीं आया तो डाक्टरों ने उसे भारी जुलाब दिया तथा चौदह दवाइयां मिलाकर एनिमा लगाया, जिसके कारण उसे बेहिसाब दस्त हुए।

कई घंटे बाद जब चार्ल्स को होश आया, तो चिकित्सकों के दल ने उसका सिर मुंडवा दिया और उसकी खोपड़ी को गर्म लोहे से इस कदर दागा कि उस पर फफोले पड़ गये। उसे नसवार भी सुंघायी गयी। वह वापस बेहोश हो गया। अब उसके शरीर पर गर्म मलहम के फाहे चिपकाये गये और अगले दिन जब उन्हें उतारा गया, तो खाल खिचने की पीड़ा से चार्ल्स की पलकें फड़फड़ायीं, इस पर चिकित्सक बहुत प्रसन्न हुए।

राजा चार्ल्स को होश आया तो उसने गले और बदन में दर्द की शिकायत की। चिकित्सकों ने उसे इस बार दुगुनी मात्रा में जुलाब की दवा खिलायी, जिसके कारण रात-भर में उसे सोलह दस्त हुए और ठंडे पसीने छूट पड़े। इस स्थिति का सामना करने के लिए चिकित्सकों ने उसके तलुवों में राल और कबूतर की बीट मली। चार्ल्स बहुत कमजोर हो गया था, तथापि चिकित्सकों ने दुगुने उत्साह से फसद खोलने और जुलाब व एनिमा की प्रक्रिया दोहरायी; उसे मोती की भस्म और अमोनिया का मिश्रण दिया तथा आदमी की खोपड़ी से निकाले गये द्रव की चालीस बूंदें भी पिलायीं।

पांचवें दिन चार्ल्स पूरे होश में था। वह अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को पूरी तरह समझ रहा था। कष्ट के बावजूद उसने अपनी विनोदी-वृत्ति खोयी नहीं थी। अपने चिकित्सकों को बुलाकर वह उनसे बोला—'धन्यवाद, आप लोगों ने मुझे इस युग का सर्वोत्तम उपचार दिया। मुझे अफसोस है कि मैंने मरने में इतनी देरी लगा दी है।' इतना कहकर उसने आंखें मूंद लीं और उसका देहांत हो गया।

—अखिल

★

अगर आप पृथ्वी के भौतिक नक्शे पर नजर डालें तो पायेंगे कि नर्मदा ही ऐसी एकमात्र नदी है, जो कर्करेखा के समानांतर बहती है।

★

अफसरों की उदारता

रमेश मंत्री

शंकर सांभारे एक मामूली क्लर्क था। फोर्ट की 'केटी खंबाटा, सन्स एंड ग्रैंडसन्स' कंपनी में पिछले सोलह साल से ईमानदारी से काम कर रहा था—अर्थात् यथासंभव काम टालता आ रहा था। नाक की सीध में चलने वाला आदमी। न किसी के लेने में, न देने में। सही समय पर उसने लड़की देखी, विवाह किया और सरकार के आदेशानुसार 'हम दो और हमारे दो' बच्चे पैदा हुए। क्लर्क के जीवन में लिखने योग्य कुछ नहीं होता—यह कहना एक फैशन-सा हो गया है। परंतु क्लर्क का जीवन नीरस होता है, ऐसा मानना भ्रम है।

शंकर का ही उदाहरण लीजिये न। ढाई कमरों में रहने वाला दो पूरे और दो आधे अदद आदमियों का परिवार। पर उसे भी जब-तब लगा करता कि मेरे घर भी टी. वी. हो, रेफ्रिजरेटर हो, घर एयरकंडिशंड हो। उसकी बीवी अपनी मालदार सहेली के घर जाती और उसके शानदार फ्लैट में टी. वी., फ्रिज वगैरह देखती तो उसके मुंह से स्वयं ही निकल पड़ता—'हमें भी एक फ्रिज लेना है। पर हमारा घर छोटा है। जरा बड़ी जगह लेने पर ऐसा ही फ्रिज हम लेंगे। तुम्हारा फ्रिज बहुत सुंदर है।' यों वह अच्छी तरह जानती कि फ्रिज लेना अपने नसीब में नहीं है। शंकर भी अच्छी तरह जानता था।

उसके दफ्तर के बॉस सुब्रह्मण्यम् ने एक बार उसे कुछ फाइलों समेत काम के लिए घर पर बुलाया था। रविवार की सुबह थी; ओवर-टाइम की आशा से शंकर गया। सामने ही टी. वी. चल रहा था। कोई बढ़िया कार्यक्रम था। काम पूरा हो जाने के बाद शंकर टी. वी. देखता रहा। तभी बॉस सुब्रह्मण्यम् ने मुस्कराते हुए उससे कहा-'मिस्टर सांभारे, तुम भी ऐसा ही एक टी. वी. ले डालो। इतना ओवरटाइम मिलता है, उसे बैंक में ही मत जमा करते रहो। एन्जॉय युवर सेल्फ।'

शंकर ने हड़बड़ाहट में कहा था-'हां-हां, जल्द ही लेने वाला हूं। आपका ई. सी. है न?'

'येस, गुड पीस।' कहकर बॉस ने सभा बर्खास्त की थी।

शंकर और उसकी पत्नी ने तो टी. वी. और फ्रिज की चाहत को जैसे-तैसे दबा लिया था; मगर जब बच्चे लोकप्रिय फिल्में देखने के लिए जिद करने लगे, तो उनके सामने प्रश्न खड़ा हो गया। इसी चिंता में वे डूबे

मराठी से अनुवाद : गिरिजाशंकर त्रिवेदी

हुए थे कि एक रविवार को सुबह साक्षात् टी वी. शंकर के घर आ गया—मुफ्त !

रविवार की सुबह की तीसरी चाय पीते हुए वह दैनिक अखबार के आखिरी पन्ने की आखिरी लाइन पढ़ रहा था, तभी उसके कार्यालय के बॉस उसकी 'चाल' का पता लगाते हुए अचानक दरवाजे पर आकर खड़े हो गये । शंकर घबराया कि अब रविवार की छुट्टी डूबने वाली है, साहब आफिस के काम में जोत देंगे । साहब के पीछे आ रहे कुली के सिर पर कपड़े में लपेटे हुए बड़े-से गट्ठर को देखकर तो उसे पक्का भरोसा हो गया कि दफ्तर की फाइलों का पहाड़ मेरे ही सिर पड़ने वाला है।

घर की पुरानी जीर्ण कुर्सी पर बैठते हुए शंकर के बॉस ने कुली से बोझा उतारकर नीचे रखने को कहा और मीठी आवाज में शंकर से बोले—'मिस्टर शंकर सांभारे, एक्सक्यूज मी । इस तरह तुम्हारे घर अचानक आने का कारण ...... हुआ यों कि जब तुम मेरे फ्लैट में आये थे, तो तुम्हें मेरा टी. वी. बहुत पसंद आया था न ?'

'हां सर, लेकिन ......'

'लेकिन-वेकिन कुछ नहीं । मैं वही टी. वी. लाया हूं । जापानी है, नेशनल । उत्तम रिसेप्शन ।'

शंकर सोच में पड़ा ही था कि विदेशी टी. वी. रखना अपने लिए कैसे संभव होगा, तभी सुब्रह्मण्यम् ने कपड़े में बंधे टी. वी. को खोल दिया और बड़े फख्र से दिखलाते हुए कहा—'मिस्टर सांभारे, यह पीस तुम्हें बहुत पसंद आयेगा।'

'वह तो ठीक है, पर इसकी कीमत......'

'कीमत की तुम जरा भी चिंता न करो । बाजार में इसका दाम साढ़े छह-सात हजार है, पर तुम मुझे एक भी पैसा न देना।'

शंकर को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ । कंजूस नंबर एक के रूप में मशहूर बॉस इतना कीमती टी. वी. मुफ्त में दे देगा ? इतने में उसके बॉस ने ही उसकी शंका दूर की—'बात यह है कि आजकल मेरी आंखें कमजोर हो गयीं हैं । डाक्टर ने कहा है कि टी. वी. देखना बिलकुल बंद कर दो । आंखों की दवा चल रही है । सोचा कि इतना अच्छा टी. वी. इतने दिन घर में बेकार पड़ा रहे, इससे तो अच्छा है कि तुम्हारे जैसे उत्साही आदमी के पास दो-चार महीने के लिए रख दूं । तुम्हारे भी काम आयेगा। कैसी लगी मेरी कल्पना ?'

'वाह, बहुत सुंदर है !' शंकर आनंद में भरकर बोला और अंदर जाकर पत्नी को

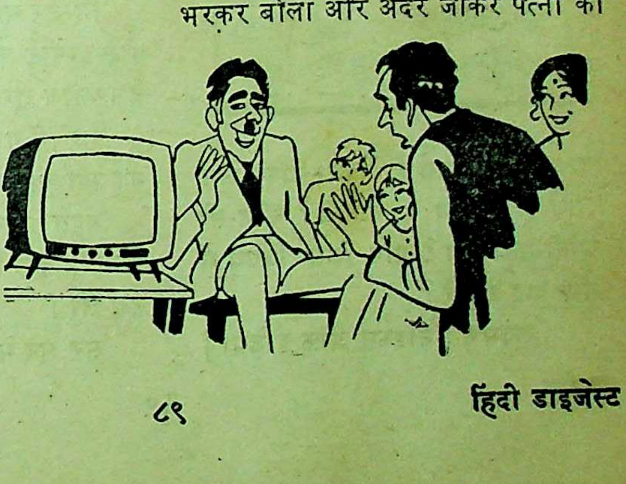

आज्ञा दी कि चाय के साथ प्याज की पकौड़ियां भी बना दे। पत्नी दबी आवाज में फुसफुसायी–'इतना कीमती टी. वी. इस्तेमाल करने के लिए दे रहे हैं, तो पकौड़ियों के साथ हलवा भी होना चाहिये।' शंकर ने सलाह मंजूर की। उनके दोनों बच्चे 'हमारे घर टी. वी. आ गया है', यह बताने चाल में दो दिशाओं में दौड़ पड़े।

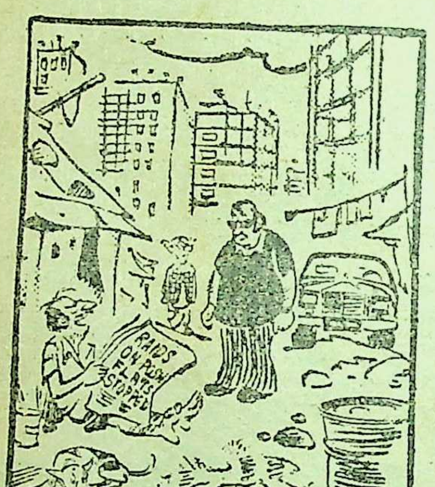

वापस लेने आये हैं ? क्या वापस लेने आये हैं ? कौन से गलीचे ? कौन-सी चांदी-मढ़ी मेज ? आप किस विषय में बात कर रहे हैं ?

[लक्ष्मण : टाइम्स ऑफ़ इंडिया]

बॉस के जाने के बाद शंकर ने इलेक्ट्रिशयन को बुलाकर टी. वी. चालू करवा दिया और सारा परिवार आस-पास के अनेक परिवारों के साथ सुखपूर्वक टी. वी. देखने बैठ गया। कार्यक्रम शुरू ही हुआ था कि एक अपरिचित आदमी ने दरवाजे पर आकर पूछा–'शंकर सांभारे कहां रहते हैं?' शंकर के यह कहने पर कि मैं ही हूं, उसने एक पत्र उसे दिया। पत्र उसकी कंपनी के चीफ एकाउंटेंट डिसूजा का था। लिखा था–'मेरा इंपोर्टेड रेफ्रिजेरेटर कुछ दिनों के लिए अपने पास रख लो। मैं घर बदल रहा हूं और मुझे नयी जगह मिलने तक फ्रिज का तुम्हीं उपयोग करो तो कोई हर्ज नहीं।' पत्र पढ़कर समाप्त करने तक तीन-चार कुलियों ने खासा बड़ा फ्रिज लाकर उसके घर में रख दिया।

इन दोनों ही आकस्मिक उपहारों के लिए शंकर ने ईश्वर का आभार माना। उस दिन उसके यहां फ्रिज में आइस्क्रीम तैयार की गयी और टी. वी. का कार्यक्रम आखिरी क्षण तक देखा गया।

अगले दिन आफिस में लंच के समय सुब्रह्मण्यम् ने उसे अपने कैबिन में बुलाया और चाय देकर पूछा–'कहो टी. वी. कैसा चलता है ?'

'बहुत बढ़िया, धन्यवाद।'

'मिस्टर सांभारे, मेरे बहनोई एक एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट फर्म में हैं। उनका एक काम है। प्लीज तुम्हें वह कर देना होगा।'

'सर', मैं गरीब आदमी इतने बड़े आदमी का क्या काम कर सकता हूं ?'

'बहुत आसान काम है। उनका एक फ्रिज है, कुछ दिनों के लिए उसे अपने यहां रख लो।'

'सर, पर मेरे यहां फ्रिज……'

'तुम्हारे पास फ्रिज नहीं है, मुझे मालूम है। इसीलिए तो मैंने बहनोई से कहा कि अपना फ्रिज सांभारे के यहां भेज दो। विदेशी है जी. ई. सी. का!' और फिर घड़ी देखते हुए सुब्रह्मण्यम् ने कहा–'अब तक तो फ्रिज तुम्हारे घर में चालू भी हो गया होगा।'

'लेकिन सर ......' शंकर आगे कुछ बोले इससे पहले सुब्रह्मण्यम् बोल पड़े–'डोन्ट बॉदर टु थैंक......अच्छा!'

शंकर इसी उलझन में था कि इतने छोटे घर में एक टी. वी. और दो-दो फ्रिज कैसे रखे, इतने में चाय के समय उसे मैनेजिंग डाइरेक्टर बलसाडवाला ने बुलाया और बोले–'मिस्टर सांभारे, तुम्हें प्रोमोशन देने के सुझाव का कागज मेरे पास आया है। उस पर मेरी सही होना बाकी है। इसके पहले तुम्हें मेरा एक काम कर देना होगा।'

'यस सर, आप जो आज्ञा करें ......' ऊपर-ऊपर से प्रसन्न शंकर बोला। पर मन में वह घबराया हुआ था; कहीं इन्होंने भी एक फ्रिज लाकर घर में डाल दिया तो?

'बात यों है कि मेरे बेड-रूम और हाल में एयरकंडीशनर लगा हुआ है। पर डाक्टरों ने मेरे स्वास्थ्य की जांच करके बताया है कि एयरकंडिशनिंग मेरी प्रकृति के अनुकूल नहीं है। इसलिए मैंने कंपनी के टेक्नीशियनों से कह दिया है कि उसे छह महीने के लिए तुम्हारे घर में लगा दें।'

शंकर समझ न पाया कि आगे क्या बोले। गिरगांव की चाल में एयरकंडिशनर? सारी चाल उस पर हंसेगी। मगर बड़े साहब के सामने क्या बोलता।

शंकर घर लौटा तो अपने टुटपुंजिया कमरे में एक टी. वी., दो फ्रिज, तीन एयर कंडिशनर और एक बड़ा-सा कीमती गलीचा रखा पाया। गलीचा एक और विभाग के अफसर ने भिजवाया था। इस आकस्मिक श्रीमंती के कारण वह आस-पास के लोगों के लिए शंकास्पद हो उठा था। पड़ोसियों ने अंदाज लगाया कि जरूर स्मगलिंग में इसे बहुत काला धन मिला है।

अब तो शंकर को आफिस जाने से घबराहट होने लगी। कहीं कोई और अफसर अपना टी. वी., फ्रिज, तिजोरी अथवा अन्य कोई कीमती वस्तु उसे रखने के लिए न कह दे, इस डर से उस रात उसे नींद भी न आयी। उसका भय सत्य सिद्ध हुआ। क्योंकि तीन और वरिष्ठ अधिकारियों ने उसके यहां विदेशी स्टीरियोफोनिक, थ्री-इन-वन, जापानी टी. वी. आदि सामान भेज दिये। अब उसे पूरा विश्वास हो गया कि जब ईश्वर देने लगता है तो दो हाथों से संभाल पाना संभव नहीं होता।

तीसरे दिन पड़ोसी काका शिंगे बोल ही पड़े–'अरे, जब हुन बरस रहा है, तो ऐसा फ्लैट भी ले लो, जिसमें यह सामान शोभा दे। आज तो जैसे-तैसे लेटने लायक जगह है भी, पर कल तो टी. वी. सेटों को कतार में जोड़ उन पर सोना पड़ेगा तुम्हें।'

'मैं समझ नहीं पाता, क्या करूं? पर मेरे अफसरान अपने सामान के साथ ही अपने

लंबे-चौड़े फ्लैटों में थोड़ी-थोड़ी जगह भी क्यों नहीं देते मुझे ?'

पड़ोसियों ने तो नहीं, पर शंकर की पत्नी ने ही शंकर को आड़े लिया—'अजी यह हमारा घर है कि तुम्हारे अफसरों का गोदाम ? मेरे लिए तो अनाज साफ करने तक की जगह नहीं रह गयी। "रख लो" कहने वाले से "नहीं" कहने के लिए तुम्हारी जबान ही नहीं खुलती।'

चौथे दिन रात के बारह बजे शंकर अपने कमरे में पैर उकडूं किये—पैर लंबे करने लायक तो जगह ही नहीं रह गयी थी—ऊंघ रहा था, कि दरवाजे पर दस्तक हुई।

'हम पुलिस अधिकारी हैं, दरवाजा खोलो। किसी ने धमकाते हुए आवाज दी। शंकर ने तुरंत दरवाजा खोला। तीन अफसर—एक सादे कपड़े में, दो पुलिस की वर्दी में—और पांच सिपाही खड़े थे।

'क्षमा कीजिये मिस्टर सांभारे, हमें सिर्फ जांच करनी है। हमारे प्रश्नों का उत्तर देकर हमारे काम में मदद कीजिये।'

'जरूर-जरूर। पर साहब, आप लोग बैठिये न!' शंकर बोला।

पुलिस अधिकारियों ने चारों ओर नजर डाली। सारे कमरे में इतना सामान अटा हुआ था कि बैठने की जगह ही नहीं थी।

प्रश्नों में मुख्य यह था कि यह सारा महंगा सामान कहां से और कैसे आया?

शंकर ने सच्चा इतिहास सुना दिया। मुख्य अधिकारी सारी बातें नोट करने के बाद हंसकर बोला-'मुझे भी लग रहा था कि आपने कोई बेकायदा काम नहीं किया होगा। मगर मिस्टर सांभारे, यह माल जिस-जिसका है, उसे-उसे जल्दी ही वापस कर दीजिये। आजकल बंबई में आलीशान फ्लैटों की तलाशी चल रही है, इसलिए तुम्हारे सभी अफसरों ने कोई न कोई बहाना बताकर यह सारा सामान तुम्हारे गले बांध दिया है। फ्लैटों की तलाशी खत्म होते ही वे यह सब वापस ले जायेंगे। पर आयकर-अधिकारियों को इस सामान का पूरा अंदाज है; इस माल को फिर आंकेंगे ही। ठीक है, थैंक यू। सहयोग के लिए धन्यवाद।'

अपने भिन्न-भिन्न अफसरों की उदारता के रहस्य का शंकर को अब पता चला। उसने अपने खर्चे से कुली करके उन सबका सामान उनके-उनके घर पहुंचा देने का निश्चय किया। तब कहीं बहुत दिनों बाद उसे शांतिपूर्ण नींद आयी। **—वैभव,**

लिबर्टी गार्डन, मलाड पश्चिम, बंबई-६४

★

एक दिन मेरे मित्र श्री अबोधजी और मैं अंग्रेजी के विरुद्ध आपस में बातचीत कर रहे थे। हम चाहते थे कि हिंदी का अधिकाधिक प्रचार हो और इसके लिए हमने एक 'हिंदी व्यवहार समिति' बनाकर अंग्रेजी का भरपूर विरोध करने का निश्चय किया। मेरा आठ वर्षीय भतीजा ये सारी बातें ध्यान से सुन रहा था। उसने सहमते हुए कहा—'अंग्रेजी का विरोध तो सब करते हैं, पर गणित का कोई नहीं करता!' **—शंकर शर्मा सरोज**

★

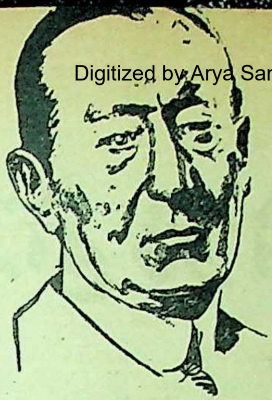

बेतार से बात

• वंदना मिश्र •

बेतार के आविष्कारक मारकोनी, जिनकी जन्म-शताब्दी पिछले साल मनायी गयी, बच्चों से बेहद प्यार करते थे। चाहे कितना भी महत्त्वपूर्ण काम सामने पड़ा हो, वे बच्चों की बात सुनने के लिए समय निकाल लेते थे। एक बार वे आयरलैंड गये हुए थे। वहां अखबारों के प्रतिनिधि उनसे मिलने पहुंचे, मगर उनसे मुलाकात नहीं कर पाये। बाद में रहस्य खुला कि बात यह थी कि छह बरस की एक बच्ची अपनी टूटी हुई गुड़िया दुरुस्त कराने उनके पास लायी थी और वे गुड़िया की मरम्मत करने में व्यस्त थे।

एक और किस्सा इंग्लैड का है, जहां मारकोनी का बहुत बड़ा स्थायी कार्यालय था। एक दिन उनके कर्मचारियों ने देखा कि एक छोटा बालक अंदर चला आया है और दफ्तर के 'मालिक' से मिलना चाहता है। मारकोनी को खबर दी गयी तो उन्होंने उसे अपने पास बुलवा लिया।

बालक बोला—'क्या आप भगवान से बात कर सकेंगे? मेरा कुत्ता बहुत बीमार है। पिताजी कहते हैं कि हमें उसे वापस स्वर्ग भेज देना पड़ेगा। मैं उसे अभी अपने पास रखना चाहता हूं। यह बात आप भगवान से कह देंगे?'

मारकोनी उसे कैसे समझाते कि बेतार के जरिये भगवान से बात नहीं हो सकती। उन्होंने बच्चे को आश्वासन दिया कि कुत्ते के लिए जो कुछ भी हो सकेगा मैं करूंगा, और अपने सेक्रेटरी के संग उसे उसके घर पहुंचवाया। फिर उन्होंने लंदन के सबसे बढ़िया पशु-चिकित्सक को बुलवाया और अपने खर्चे से बच्चे के घर भेजा। सौभाग्य से चिकित्सक कुत्ते की जान बचा सका।

★

अगर आप दिल के दौरे से उठे हों...

वैडिम जाइत्सेव

अभी कुछ समय पहले तक यह हालत थी कि जिस भी व्यक्ति को एक बार दिल का दौरा पड़ जाये, उसका नाम कामकाजी नागरिकों की सूची से काट-सा दिया जाता था। किंतु हाल के वर्षों में चिकित्सा के क्षेत्र में हुई प्रगति ने ऐसे व्यक्तियों में जीवन के विषय में नये आशावाद का संचार किया है।

हम सभी जानते हैं कि हृद्‌रोगियों की संख्या बढ़ती जा रही है। अब तो जिन्हें तीन-तीन बार दिल का दौरा पड़ चुका है, ऐसे व्यक्तियों को भी देखकर किसी को अचरज नहीं होता। चिकित्सा-शास्त्रियों, हृद्रोगचिकित्सकों, जलवायु-विज्ञानियों व रोगियों के लिए उपयुक्त निवास-स्थल सुझाने वाले विशेषज्ञों की कृपा से ऐसे लोग अब धीमे-धीमे सामान्य जीवन जीने और अपने काम-धंधे पर लौटने में समर्थ हो जाते हैं।

किंतु अब यह बात भी स्पष्ट हो गयी है कि ऐसे लोगों को मनोविज्ञानियों तथा मानस-चिकित्सकों की सहायता की भी आवश्यकता होती है, क्योंकि दिल का दौरा केवल हृदय की ही नहीं, मन की स्थिति पर भी प्रभाव डालता है।

यह बात बाकायदा सिद्ध की जा चुकी है कि दिल के दौरे के बाद पचास प्रतिशत रोगी तो मानसिक कारणों से सामान्य जीवन में वापस नहीं आ पाते। कुछ लोगों को तो यह भय हरदम सताता रहता है कि शायद उनका हृदय फट पड़ेगा—विशेषतः सोते समय। रातें उन्हें डरावनी लगने लगती हैं और वे अनिद्रा रोग के शिकार हो जाते हैं।

कुछ अन्य रोगी दीन-दुनिया से विमुख होकर अपने आपमें सिमट जाते हैं—दिल की हर धड़कन का, शरीर में होने वाले तनिक से हेर-फेर का भी हिसाब रखने लगते हैं। वे रोगभ्रमी (हाइपोकोन्ड्रियैक) बन जाते हैं। हर छोटी विगत को वे बहुत अधिक महत्त्व देने लगते हैं और जो कुछ भी उन्हें 'सामान्य स्थिति' से तनिक भी भिन्न प्रतीत हो, उसे बहुत बढ़ा-चढ़ाकर देखते-कहते हैं।

ये सभी प्रतिक्रियाएं मानसिक उथल-पुथल का प्रमाण हैं और विशेषतः हानिकारक हैं, क्योंकि वे अन्य चीजों से असंबद्ध नहीं होते। उनका समूचे शरीर की शरीर-शास्त्रीय क्रिया-चर्या से गहरा संबंध होता है। चिंता, भय और मायूसी शरीर में शरीर क्रियाशास्त्रीय एवं जैवरासायनिक परिवर्तन पैदा कर देती है। रक्तचाप बढ़ जाता

है, दिल ज्यादा तेज धड़कने लगता है, उसे कम आराम मिल पाता है और उस पर ज्यादा बोझ पड़ने लगता है। परिणामतः हृदय का रक्त-संचरण जो कि रोग के कारण पहले ही गड़बड़ाया हुआ था, और भी गड़बड़ा जाता है और रोगी की हालत बदतर हो जाती है।

सोवियत रूस के चिकित्सा-विज्ञान संस्थान में विशेषज्ञों की हमारी टोली जिन-जिन समस्याओं पर शोधकार्य कर रही है, उनमें यह भी एक है।

दिल के दौरे से संभले हृद्रोगी को वापस सामान्य जीवन-क्रम में लौटाने के लिए हम लोग ई. चाजोव और आइ. श्खावात्साबाया आदि विख्यात हृद्रोग-चिकित्सकों की मदद से रोगी पर विशेष निगरानी रखते हैं और विशेष रीतियों से इस बात की जांच करते हैं कि बीमारी ने उसमें कितनी और किस प्रकार की मानसिक गड़बड़ पैदा कर दी है, और उसके लिए चिकित्सा और उपचार निर्धारित करते हैं।

इसके अलावा हम रोगी को इस चीज के लिए फुसलाते हैं कि वह अपनी हालत व चिकित्सा के प्रति सही दृष्टिकोण अपनाये और उसे नये जीवनक्रम और आदतों का अभ्यास डालने में सहायता देते हैं।

उदाहरणार्थ, कुछ रोगी यह मानने को तैयार ही नहीं होते कि धूम्रपान उनके लिए हानिकारी है। वे कह उठते हैं कि मैं तो जीवन-भर धूम्रपान करता रहा हूं। और वे सिगरेट को तिलांजलि देने से इन्कार कर देते हैं, जबकि दिल के दौरे के बाद अब सिगरेट उनके लिए विशेषतः हानिकारी होती है।

यदि ऐसा रोगी आंकड़ों से भी प्रभावित न हो, तो हम उसे परदे के सामने बैठाकर चलचित्रों के जरिये यह दिखाते हैं कि धूम्रपान में तंबाकू के प्रभाव से हृदय और रक्तवाहिनियों पर क्या बीतती है और यह भी कि ताजी हवा और शारीरिक सक्रियता शरीर को कितना लाभ पहुंचाती है। हम रोगी को 'आटोसजेश्चन' की विधि भी सिखाते हैं, जिससे वह स्नायु-तनाव और चिंता से राहत पा सकता है।

यह सब तो अस्पताल की बात हुई। किंतु बहुत-से रोगियों के लिए चिंता का क्षण अस्पताल से मुक्त किये जाने पर उपस्थित होता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। अब डाक्टर और नर्स उस पर प्रतिक्षण ध्यान नहीं रखते; उसे अब रोजमर्रा की दुनिया में वापस आना होगा और अपना खयाल स्वयं रखना पड़ेगा।

हमारी सलाह और तैयारी के बावजूद रोगी के मन में तरह-तरह की दुश्चिताएं उठती हैं—मेरा वजन कितने से ज्यादा नहीं होना चाहिये ? क्या काम-काज शुरू करने पर मेरी हालत फिर से खराब हो जायेगी? क्या मैं सेक्स के मामले में सामान्य जीवन जी सकता हूं ? इत्यादि।

इसके अलावा भी दैनिक जीवन की कितनी ही समस्याएं उसके सामने उठती हैं—बस और लोकल-ट्रेन में मेरा रवैया क्या हो ? किसी औरत के आने पर मैं उसे सीट

नहीं दूंगा, तो लोग क्या समझेंगे ? आखिर हर जगह यह तो नहीं बताया जा सकता कि मुझे हाल ही में दिल का दौरा पड़ा था। बाजार से लौटते समय सामान के सब थैले श्रीमतीजी ढोयें और मैं हाथ हिलाता हुआ चलूं, यह तो बहुत अटपटा लगेगा देखने वालों को ! इत्यादि।

इसलिए रोगी की मन:स्थिति का महत्त्व बहुत बढ़ जाता है। जिन लोगों को 'दृढ़-चरित्र व्यक्ति' कहा जाता है, वे इस प्रकार की नाना समस्याओं से आसानी से निबट लेते हैं; जबकि झिझकने-दबने वाले आदमी निबट नहीं पाते। इस दूसरी किस्म के आदमियों के साथ विशेष प्रकार का व्यवहार करना आवश्यक हो जाता है, खासकर उनके स्वजनों व साथियों के लिए।

स्वजनों व साथियों को पुराने ढर्रे के और निराधार विचारों से छुट्टी पा लेनी चाहिये। उन्हें दिल के दौरे से उठे आदमी पर यह जोर नहीं डालना चाहिये कि अपनी क्रियाशीलता कम कर दो, ज्यादा समय बिस्तर में बिताओ और भीड़-भड़क्के और गहमा-गहमी से बचो।

पत्नी की भूमिका विशेषत: महत्त्वपूर्ण है। दुर्भाग्य से, प्राय: वह करुणा और प्रेम के कारण ही उलटा रवैया अपना लेती है। वह पति से कहती रहती है कि यह न करो, वह न करो, और उसे माटी की मूरत बना डालती है। जो पहले घर का कर्ताधर्ता और कमाने-खिलाने वाला था, वह अब अपने को अपंग और भाररूप अनुभव करने लगता है। यह स्थिति हर्गिज नहीं आने देनी चाहिये। डाक्टर के साथ-साथ पत्नी को भी इस बात में मदद करनी चाहिये कि वह शारीरिक स्वास्थ्य ही नहीं, मनोबल और मानसिक संतुलन भी फिर से प्राप्त करे।

यह पूर्णत: यथार्थवादी लक्ष्य है और हमारे अधिकांश रोगियों ने इस लक्ष्य को साधा है। उनमें से अनेक अब पूरा सक्रिय जीवन जी रहे हैं—यहां तक कि स्कीइंग भी करने लगे हैं।

यदि रोगी मानसिक तनाव तथा तज्जन्य हृदयशूल से छुटकारा पा ले, तो वह भय से भी मुक्त हो जाता है और इस सचाई पर विश्वास जमता जाता है कि सही जीवन-क्रम अपनाकर वह पूरा जीवन जी सकेगा।

अलबत्ता सही 'जीवन-क्रम' हर व्यक्ति के लिए अलग होगा। सबको एक ही नियम के डंडे से हांका नहीं जा सकता। मगर एक बात सब पर लागू होती है—दिल के दौरे के बाद मन में घर कर जाने वाले भय को मिटाना संभव है और इसमें रोगी कितना सफल होता है, यह स्वयं उस पर और उसके निकटवर्ती स्वजनों पर निर्भर होता है।

*

सरपंच : बहुत बुरी बात है ...... तुमने अपनी पत्नी को झापड़ क्यों मारा ?

ग्रामीण : जी, वह बार-बार मुझे चुनौती देती रही कि झापड़ मारकर तो देखो, मैं उस गंजे बुढ़ऊ सरपंच से तुम्हारी शिकायत न कर दूंगी !

*

स्मृति के अंकुर

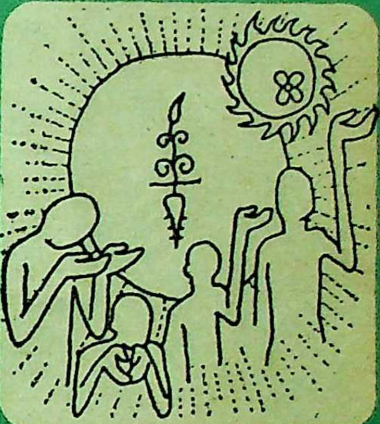

आज से करीब चार वर्ष पहले की बात है, जब मैं नौवीं कक्षा में पढ़ती थी। १५ अगस्त पास आता जा रहा था और स्कूल में उसके समारोह की जोर-शोर से तैयारियां चल रही थीं। जो प्रोग्राम उस दिन होना था, उसकी रोज प्रैक्टिस करायी जाती थी और अंत में राष्ट्रीय गीत दोहराया जाता था।

१३ अगस्त की बात है, प्रैक्टिस के दौरान अचानक मेरे पैर में दर्द उठा और मैं अध्यापिका से आज्ञा लेकर दूर बनी पत्थर की बेंच पर जा बैठी। प्रैक्टिस समाप्त होने के पश्चात् राष्ट्रगीत दोहराया गया। सब लड़कियां सावधान की मुद्रा में खड़ी थीं, परंतु मैंने उठकर खड़े होना आवश्यक न समझा, हालांकि मेरे पैर में इतना दर्द न था कि दो मिनिट के लिए भी न खड़ी हो सकूं। उसी समय कोई गांव वाला साइकल पर किसी काम से उधर आया। जैसे ही राष्ट्रगीत प्रारंभ हुआ, वह बीच रास्ते में ही साइकल से उतर गया और सावधान की मुद्रा में तनकर खड़ा हो गया। राष्ट्रगीत की समाप्ति के पश्चात् ही वह प्रिंसिपल के दफ्तर में गया।

मैं सोचती ही रह गयी कि एक इस अनपढ़ गांव वाले की अनुशासनप्रियता देखो और एक मुझ कान्वेन्ट में पढ़ने वाली को देखो। वह ग्रामीण व्यक्ति मुझे उन दो मिनिटों में वह चीज सिखा गया, जो मैंने दस वर्षों में भी नहीं सीखा था।

—कु. हंसा गर्ग, इंदौर

भूत की करामात

आठवीं कक्षा में पढ़ते समय मेरा एक मित्र था विनोद, जिसका तिमंजिला मकान हमारे ही मोहल्ले में था। एक रात उसके घर के बाकी लोग कहीं कथा में गये हुए थे। मैं और वह उसी के मकान में बैठे गप्पें मार रहे थे। सहसा मुझे एक शरारत सूझी। मैंने उससे कहा—'तू ऐसा कर कि घर को बंद करके बाहर से ताला लगा दे तथा घर

खाँसी को पछाड़नेवाला चॅम्पियन

Alembic

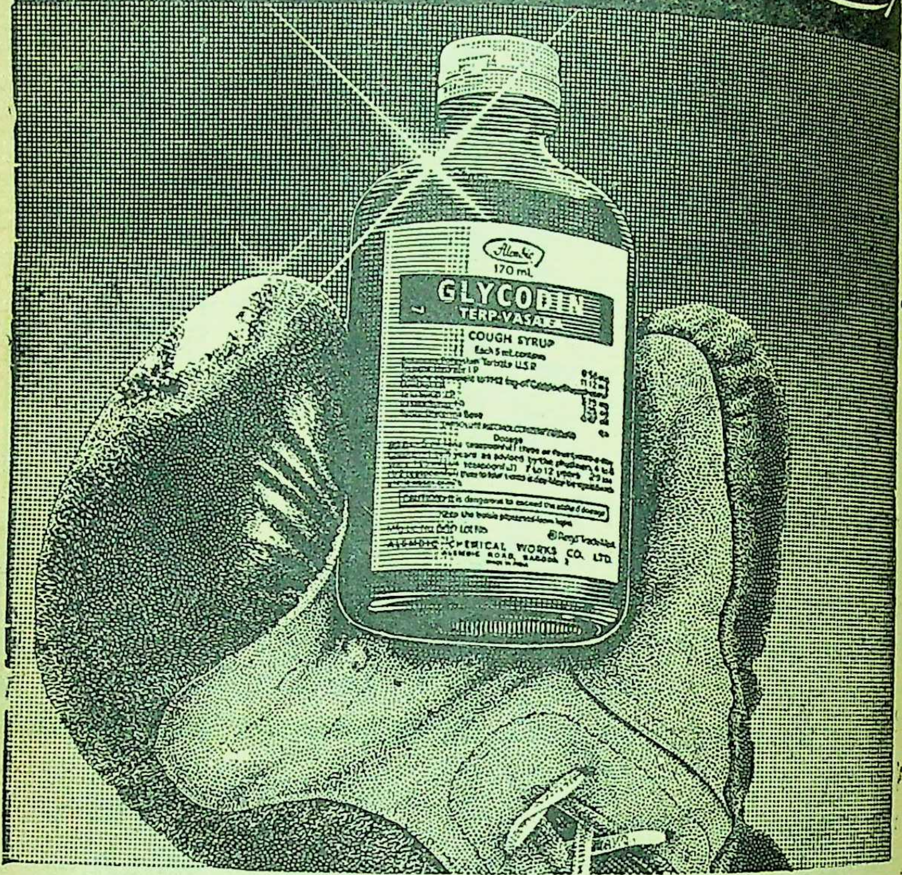
Alembic
170 mL
GLYCODIN
TERP-VASAKA
COUGH SYRUP
ALEMBIC CHEMICAL WORKS CO. LTD.

ग्लायकोडिन वर्षों से लाखों लोगों की खाँसी पर पूरा काबू पाने में खाँसी के अन्य इलाजों से ज़्यादा असरकारक और जोरदार साबित हुआ है. □ ग्लायकोडिन दिमाग, गला, छाती और फेफड़ों जैसे खाँसी के चारों मोर्चों पर हमला कर खाँसी को मार भगाता है. ● तेज असर करनेवाला ● मधुर स्वादवाला ● किफ़ायती

ग्लायकोडिन — भारतभर में खाँसी का सबसे अधिक लोकप्रिय और विश्वसनीय इलाज.

everest/617/AEW Hin

के आस-पास ही कहीं रहूं। जब घर वाले आयें तो उन्हीं के साथ आकर ताला खोलना और तब मैं भूत का अभिनय करूंगा।' विनोद को बात जंच गयी और वह दरवाजा बंद करके बाहर से ताला लगाकर मोहल्ले में ही टहलने लगा। मैं उसके घर वालों के आगमन की राह देखता रहा।

थोड़ी देर बाद वे लोग आते दिखाई दिये। उनके साथ विनोद भी था। मैंने कमरे में रखे रेडियो को झट से 'आन' कर दिया और ऐसे स्थान पर उसकी सूई स्थिर की जहां से सिर्फ गड़गड़ाहट आ रही थी। साथ ही मैंने मुंह से विचित्र आवाजें निकालनी आरंभ कर दीं। बीच-बीच में मैं एक-दो बरतन भी फर्श पर फेंक देता था। शीघ्र ही शोर मच गया और मुहल्ले वालों की भीड़ घर के सामने एकत्र हो गयी। विनोद ने दरवाजा तो खोला, किंतु अंदर घुसने का साहस किसी में न था।

तभी पड़ोस के एक वृद्ध किंतु साहसी एवं स्वस्थ सज्जन बोले—'मैं आगे चलता हूं, दो-चार आदमी लाठी लेकर मेरे पीछे आओ।' उनकी बात पर अमल किया जाने लगा। यह देख मैं दो-तीन थालियां लेकर दूसरी मंजिल पर जा पहुंचा।

वृद्ध महाशय के नेतृत्व में लट्ठधारी समूह बड़ी सतर्कता से आगे बढ़ रहा था। सहसा मैंने एक थाली जीने पर से लुढ़का दी। छनन की आवाज के साथ पीतल की थाली जीना उतरने लगी। साथ ही मैंने मुंह से भयानक आवाजें भी निकालीं। लट्ठधारी समूह भय से विचलित हो वापस भागा और दरवाजे पर खड़ी भीड़ में भगदड़ मच गयी। तब तक मैं तीसरी व अंतिम मंजिल पर पहुंच चुका था। मेरे दूसरे मित्र गोपाल का मकान साथ ही लगा हुआ था। पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार मैं उसके मकान में कूदकर, उसी के साथ नीचे उतर आया और भीड़ में शामिल हो गया। अब मैं साहसपूर्वक हाथ में एक लाठी लिये मकान में घुसा और अंदर जाकर चिल्लाया—'यहां कोई भूत-वूत नहीं है, अंदर आ जाओ।' धीरे-धीरे सब अंदर आ गये।

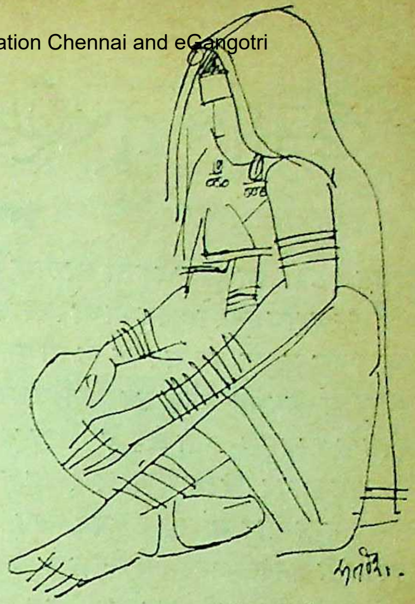

चित्र : सतीश चव्हाण

दो-चार दिन बाद विनोद ने मेरे सामने ही अपने घर वालों को असली बात बतायी, तो वे लोग हंसते हुए लोट-पोट हो गये।

—जगदीश गौड़ 'बेचैन', देहरादून

★

हमारे दूरस्थ सगे बांधव

कृष्णकुमार गुप्त

बात १८३८ की है। कलकत्ता बंदरगाह से एक जहाज सुदूर पश्चिम की ओर रवाना हुआ। इस जहाज पर लगभग दो सौ पुरुष सवार थे—लगभग सबके-सब पूर्वी उत्तर-प्रदेश के भोजपुरी-भाषी क्षेत्र के थे। जहाज का नाम शायद 'बिटवाई' था और उस पर सवार सभी लोग जा रहे थे अपने वतन से दूर किसी अनदेखे-अनसुने गैरमुल्क में गिरमिटिया मजदूर बनने। छह आने रोज पर उन्हें गौरांग महाप्रभुओं ने इस काम के लिए चुना था। गरीबी और गुलामी से अभिशप्त जो ठहरे!

कष्टपूर्ण और यातनाओं से भरी लंबी समुद्री यात्रा के बाद ये लोग अटलांटिक महासागर के उस पार दक्षिण अमरीका के उत्तरपूर्वी आंचल में स्थित एक छोटे-से भूखंड पर उतरे, जिसे तब ब्रिटिश गायना कहा जाता था। ब्रिटिश गायना अब गुयाना बन गया है और एक स्वतंत्र देश है। भारत-मूल के निवासियों का वहां प्राधान्य है।

डायरी में लिखी छोटी-छोटी टिप्पणियों के सहारे जब मैं इन पंक्तियों को कलमबंद कर रहा हूं, पंडित रामलाल का भावभीना चेहरा, संभल-संभलकर हवा में शब्द तैराता हुआ उनका रुंधा हुआ कंठ, कुछ-कुछ गीली-सी आंखें, पास ही मेज पर रखा हुआ भगवान कृष्ण का एक चित्र और सामने सुलगती हुई अगरबत्ती से उठते और निरंतर फैलते हुए खुशबूदार धुएं के छल्ले अनायास मेरी आंखों में तैर-तैर जाते हैं।

पं. रामलाल गुयाना के निवासी हैं। केंद्रीय शिक्षा-मंत्रालय के अंतर्गत केंद्रीय हिंदी संस्थान (नयी दिल्ली) में भारत सरकार की छात्रवृत्ति पर हिंदी के अध्ययन के लिए भारत आये हैं। यह उनकी पहली भारत-यात्रा है। भारतभूमि उनके पूर्वजों की जन्मस्थली है, उनके लिए एक तीर्थ।

उस दिन भारत और वेस्ट-इंडीज की क्रिकेट टेस्ट शृंखला चल रही थी। चारों तरफ सुबह से शाम तक चर्चा का विषय था—टेस्ट मैच। अपने संमान में आयोजित एक सभा में पं. रामलाल कहने लगे—'भगवान आपके देश को मैच में विजयी बनाये।' मैं कुछ भौंचक्का हो उठा—'परंतु पंडित रामलालजी! क्या आप अपने देश की हार की कीमत पर इस देश की जीत चाहते हैं?' गीले-से गले से उत्तर निकला—'हां! मेरे देश की विजय मेरे शरीर की विजय होगी, पर आपके देश की विजय मेरी आत्मा की।' भारत की आत्मा से ऐसा लगाव भारत में जनमे व जी रहे हममें से कितनों को होगा!

जब उन दो सौ अभागों को भारत से ले

जाया गया था, वे सब अकेले थे। जीवन-संगिनी कही जाने वाली एक अदद नारी भी उनके लिए दुर्लभ चीज थी। गायना ले जाकर उन्हें दूर-दूर फैले चाय के बागानों में तैनात कर दिया गया और तब इन अकेले लोगों के लिए बची-खुची दुनिया भी सुनसान होकर रह गयी। कड़ी मेहनत, सख्त सजाएं, पाशविक व्यवहार, रोज-रोज की जलालत और महज छह आने रोज की मजदूरी– इसी में उन निरीह प्राणियों की जिंदगी सिमटकर रह गयी थी। यों अब ये सिर्फ दो सौ नहीं रह गये थे। उनके बाद हजारों लोगों को भारत से ढोकर वहां पहुंचा दिया गया था।

साल-छह महीने में एक-दो बार किसी तीज-त्योहार के बहाने ये परस्पर अपरिचित लोग उस बेगाने माहौल में जब आपस में मिलते तो गले लिपटकर एक दूसरे का स्वागत करते, कुछ क्षण आंसुओं के प्रवाह को थामने के प्रयास में मूक रहते, फिर चर्चा में खो जाते–चर्चा दूर भारत में बिछुड़े सगे-संबंधियों की, भूले-बिसरे आत्मीय जनों की, अपनी दुःख-तकलीफों की, गोरे मालिकों के जुल्मों की......। एक जहाज से आये लोग अपने को 'जहाजी' कहते और सभी भारतीय उस गैरमुल्क में एक दूसरे को 'मुल्की' कहते। हर मुल्की दूसरे मुल्की को सगा भाई समझता-मानता।

सत्ता-संपत्ति, शक्ति-सामर्थ्य और सुरा-सौंदर्य के नशे में व्यक्ति सदा ही निर्बल और कमजोर पर जुल्म ढाता रहा है। गायना में अंग्रेज बागान-मालिकों द्वारा इन असमर्थ भारतीयों पर किये गये अत्याचार इसी शृंखला की कड़ी थे। इससे पूर्व मजदूरी का काम अफ्रीकी हब्शियों से लिया जाता था। उन बेचारों की स्थिति तो और भी खराब थी। तब गुलाम-प्रथा का प्रचलन जोरों पर

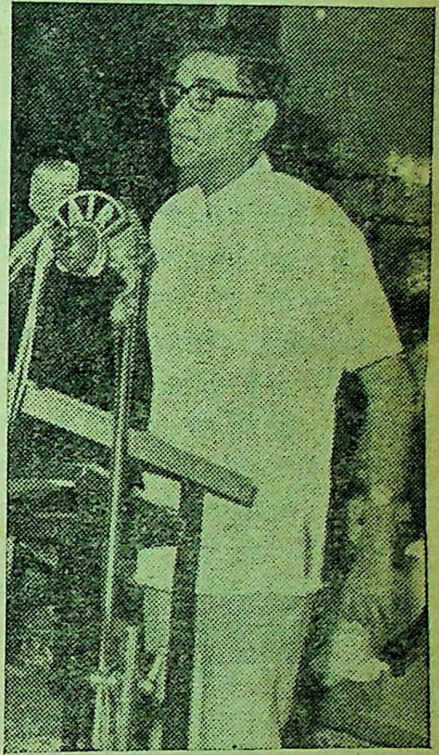

पंडित रामलाल प्रथम विश्व हिंदी संमेलन में भाषण करते हुए। गुयाना में हिंदी-प्रचार लिए उनकी ठोस सेवाओं के उपलक्ष्य में उन्हें दिल्ली में आयोजित श्यामसुंदर दास शताब्दी महोत्सव पर ताम्रपत्र दिया गया।

था। फिर १८३४ में गुलाम-प्रथा खत्म हुई। बागान-मालिकों को मजदूरों का दूसरा स्रोत ढूंढ़ना पड़ा। उनकी नजर भारत पर पड़ी।

भारत से जो लोग वहां गये, वे मजदूरों के रूप में गये थे। शुरू में स्त्रियां साथ नहीं गयी थीं और वातावरण और व्यवस्था प्रतिकूल थी, सो उनमें से काफी लोगों की वहां मृत्यु हो गयी। कुछ करार की शर्त के अनुसार पांच वर्ष बाद भारत लौट आये और काफी लोग वहीं स्थायी तौर पर बस गये। अंग्रेजी समाज और मूल निवासियों से अलग रहते हुए ये लोग अपने धर्म, रीति-रिवाज और सामाजिक पर्वों-त्योहारों को अपनी मातृभूमि के ढंग से मनाते रहे।

अब तक धीरे-धीरे वहां भारतीय परिवार बसने लगे थे। अठन्नी-रुपया जोड़-जोड़कर कुछ लोगों ने जमीन, जायदाद, बाग-बागान खरीदने भी शुरू कर दिये थे, और वहां का वातावरण उन्हें रास आने लगा था। इसी बीच महात्मा गांधी ने १९१४ में भारतीयों को ठेके पर मजदूर के रूप में भारत से बाहर भेजने की प्रथा का कसकर विरोध किया, प्रथम महायुद्ध के अंतिम दौर में १९१७ में यह प्रथा बंद कर दी गयी।

यह वह समय था, जब भारत में राजनैतिक चेतना पल्लवित होने लगी थी। स्वाभाविक था कि उस समय दूर-दराज देश में फैले प्रवासी भारतीयों पर इसका प्रभाव पड़े। अनेक भारतीय नेताओं ने समय-समय पर गायना का दौरा किया। उन्होंने वहां के प्रवासी भारतीयों की स्थिति का अध्ययन तो किया ही, उनका पथप्रदर्शन भी किया। इनमें भाई परमानंद (१९१०), मेहता जैमिनी (१९२१), सी.एफ. एन्ड्रूज (१९२९), पं. अयोध्याप्रसाद (१९३३) और पंडित हृदयनाथ कुंजरू (१९४४) के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

सन १९२५-२६ के दौरान गायना में 'इंडियन एसोसिएशन' नाम से एक पार्टी स्थापित हुई और वहां के भारतीय राजनैतिक रूप से संघटित होकर उस देश की राजनीति में भाग लेने लगे।

भारत-मूल के ही एक गायनावासी डा. जंगबहादुर सिंह ने १९२५ से लेकर १९५३ तक ब्रिटेन की पार्लमेंट में अपने देश का प्रतिनिधित्व किया। १९५० में भारत-मूल के एक दूसरे गायनावासी डा. छेदी जगन ने पीपल्स प्रोग्रेसिव पार्टी के नाम से एक नयी राजनैतिक पार्टी की स्थापना की। मजदूरों का प्रतिनिधित्व करने वाली यह अकेली पार्टी थी, जिसे गायना में काम करने वाली सभी जातियों के मजदूरों का विश्वास प्राप्त था।

२३ फरवरी १९७० को गुयाना स्वतंत्र हुआ। लगभग आठ लाख की जनसंख्या वाले देश में ५० प्रतिशत भारतीय, ३१ प्रतिशत अफ्रीकी, ९ प्रतिशत मिश्रित यूरोपीय, ४।। प्रतिशत अमेरिंडियन, १ प्रतिशत पुर्तगाली और १ प्रतिशत से कुछ कम चीनी हैं। मूल आदिम जातियों के लोग प्रायः भीतरी जंगली भागों में रहते हैं।

पं. रामलाल ने भारत के कई नगरों का दौरा करने के पश्चात् अपने अनुभव के

आधार पर बताया कि भारत में लोगों के जीवन-स्तर में जितना अधिक अंतर दिखाई पड़ता है, उतना गुयाना में नहीं है। जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं वहां अधिकांश लोगों को प्राप्त हैं। सड़क के सहारे पटरी पर पड़े अधनंगे-मैले लोग वहां आपको देखने को नहीं मिलेंगे। भीख मांगने की मजबूरी भी वहां किसी के सामने नहीं है। जातिप्रथा नाम की कोई चीज वहां नहीं है। सभी भारतीय वहां एक वर्ग के हो गये हैं। अफ्रीकी मूल आदि के नागरिकों से वहां कोई विशेष वैमनस्य नहीं है, हां राजनैतिक स्पर्धा थोड़ी-बहुत जरूर है। परस्पर विवाह भी हो जाते हैं, मगर कम। अब इस दिशा में भी दृष्टिकोण उदार होता जा रहा है।

भारत-मूल के जो लोग वहां रहते हैं, उनमें से अधिकांश के मन में भारत के दर्शन की उत्कंठा रहती है। वे दीपावली एवं जन्माष्टमी आदि पर्व बड़े उत्साह से मनाते हैं। बहुत-से लोग अपने मकानों को हनुमानजी की लाल-झंडियों से सजाते हैं। धार्मिक कार्यों में हिंदी और संस्कृत का व्यवहार किया जाता है। आर्यसमाज और सनातन धर्मसभाएं वहां बाकायदा काम करती हैं। शादी पर हवन किया जाता है। बच्चे का मुंडन हर भारतीय परिवार में आम बात है। राम, कृष्ण, शिव, हनुमान आदि के चित्र घरों में श्रद्धा के साथ रखे जाते हैं और उनके सामने अगरबत्ती जलाकर भजन गाये जाते हैं। बहुत-से लोग हिंदी नहीं भी समझते, मगर भजन हिंदी में कंठस्थ कर लेते हैं।

पं. रामलाल कहते हैं—'भारत की हर चीज से हमें गहरा लगाव है। एक बार भारत के त्रिवेणी कला संगम ने जब वहां विभिन्न भारतीय शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुत किये थे, वहां का सारा भारतीय समाज समुद्र की तरह उमड़ पड़ा था। इसी तरह जब मुहम्मद रफी वहां आये थे, लोग उन्हें सुनने के लिए कम, देखने के लिए अधिक लालायित थे; क्योंकि किसी भी भारतीय में हमें भारत के दर्शन होते हैं। हिंदी फिल्में देखने के लिए वहां लोग टूट-टूट पड़ते हैं। १९७३-७४ में आपके टेस्ट-खिलाड़ी गावसकर ने त्रिनिदाद में शतक मारा, तो लोगों ने खुशी में उसे कंधों पर उठा लिया, फूलों से लाद दिया।

'बेशक हमारी स्त्रियां सामान्यतया स्कर्ट पहनती हैं, मगर किसी भी शुभकार्य के समय सिर पर ओढ़नी रखती हैं; बच्चे हिंदी पढ़ सकें, इसकी वे पूरी कोशिश करती हैं। पूजा-पाठ में उनकी विशेष रुचि रहती है।

'भारत-मूल के गुयानावासी भारत के दर्शन की लालसा को जीवन-भर मन में संजोये रहते हैं और मैं यहां भारत में रहकर भारत की आत्मा का प्रत्यक्ष दर्शन करके अपने को कुछ द्रवित-सा अनुभव कर रहा हूं।'

पं. रामलालजी ने अपनी बातचीत उस प्रार्थना के साथ खत्म की, जो गुयाना में उनके दैनिक जीवन का नियमित अंश है :

सुखी बसे संसार सब,
दुखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी,
मेरे भगवान पूरी होय॥

★

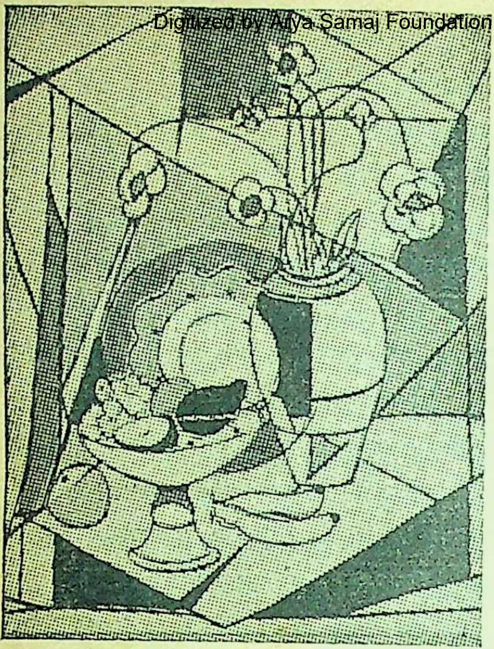

अनुभव न हो तो अच्छी कृति सिरजी नहीं जा सकती। अभ्यास कम हो मगर अनुभव अधिक हो तो कलाकार अच्छा और ज्यादा काम कर सकता है। भ्रमण से बहुत कुछ देखने, समझने और सीखने को मिलता है। ग्रहण-शक्ति अच्छी हो तो काम में नयापन भी आता है। नयापन कलाकार की प्रगति का और उसके अगले चरण का सूचक होता है। मैं सन १९६१ में फ्रांस और बल्गारिया की सरकारों के निमंत्रण पर उन देशों में गया था। वहां बहुत घूमा और बहुत देखा। पिछली शताब्दी के वानगो और मातीस की कलाकृतियों से मैं परिचित था, मगर मुद्रित प्रतिकृतियों के जरिये—मूल कृतियों को प्रत्यक्ष देखने का संयोग कभी नहीं मिला था। ये मेरी पसंद के चित्रकार हैं। विदेश-यात्रा के दौरान इनकी कृतियों को प्रत्यक्ष देखा। एक-एक कलाकार का काम मैं आठ-आठ दिन तक बैठकर देखता था। इससे मुझे बहुत लाभ हुआ। उनके तूलिकाघात (स्ट्रोक), रंग-रचना, बड़े कैनवास पर संयोजन का तरीका आदि को प्रत्यक्ष देखने से पहचान गहरी हो गयी, अनुभव और ज्ञान का परिपाक हुआ।

बल्गारिया में मैं चाहे जहां बैठकर दृश्य-चित्र बनाया करता था। वहां के लोग बड़े जिज्ञासु और कलाप्रेमी हैं। वे मेरा काम देखते, मुझे अपने संग घर ले जाते, खूब खिलाते-पिलाते। इसमें उन्हें आनंद आता था और मुझे एक नया अनुभव मिलता था।

दृश्यचित्र (लैंडस्केप) और व्यक्तिचित्र (पोर्ट्रेट) के लिए प्रख्यात प्रो. डब्लू. लैंगहैमर से मैंने बहुत कुछ सीखा। उनका अनुभव प्रगाढ़ था। कैसा स्ट्रोक लगाने से वांछित प्रभाव आता है, इसमें वे माहिर थे। एक बार मुझसे बोले कि तुममें बहुत-सी कमजोरियां हैं। सुनकर मैं हतप्रभ रह गया; क्योंकि मैं तो खूब पुरस्कार जीत रहा था और मेरी तस्वीरें धड़ल्ले से बिक रही थीं। इसका मुझे गरूर था। मगर यह सब विचार छोड़कर मैं उनके पास गया। उनका स्टूडियो बंबई में नेपियनसी रोड पर था।

सृजन के

वहां मैं एक साल तक चारकोल घिसता रहा; क्योंकि उनसे अपनी पहली मुलाकात में ही मुझे अपनी कमजोरियां पता चल गयीं। उनसे मुझे रंगों की सूक्ष्म जानकारी मिली। शुरू-शुरू में मैंने ढेरों दृश्यचित्र बनाये। तब बंबई में ऐसी भीड़-भाड़ नहीं होती थी।

धर्म के प्रति शुरू से ही मुझमें आस्था रही है। ३५-४० की उम्र तक मैं शुद्ध शाकाहारी रहा। हैदराबाद में ड्राइंग-मास्टर श्री महादेवसिंह के साथ रहा, जो ब्राह्मण थे। जब तीन साल की उम्र में मैं मातृहीन हो गया, उन्होंने मेरी बहुत मदद की। मरते समय मां ने मुझसे कहा था कि बेटा अच्छे आदमी बनना और अच्छे काम करना। जीवन में उसी को निभाने का यत्न कर रहा हूं।

फूल-फल मुझे सदा लुभाते रहे हैं। अपने स्टिल-लाइफ चित्रों में मैंने उन्हें कई रूपों और दृष्टिकोणों से चित्रित किया है। एक बार एक सज्जन ने मुझसे कहा कि 'बैचलर' होने के कारण तुम 'स्टिल' (जीवनहीन) हो। मुझे गुस्सा आया और मैंने मनुष्य-जाति और फल-फूल का तुलनात्मक दृष्टि से चित्रण किया। जिस प्रकार स्टिल-लाइफ के वन-मैन शो किये थे, उसी प्रकार नग्न नारी-चित्रों के वन-मैन शो किये। इनसे भी मुझे पर्याप्त ख्याति मिली।

* के. एच. आरा *

प्रस्तुतकर्ता : डा. विष्णु भटनागर

'न्यूड' चित्रों में मैंने कुदरत की खूबसूरती का चित्रण किया सेक्स के उभार का नहीं। मैंने कई विशाल न्यूड चित्र बनाये। इनमें भी मैंने फूल-फल वाली दृष्टि रखी—विविध रूप और भाव-सौंदर्य। मेरा अनुभव है कि फल-फूल में जो खूबसूरती है, वही 'न्यूड' में होती है।

फूल ऐसी चीज है जो जन्म, जीवन, मरण

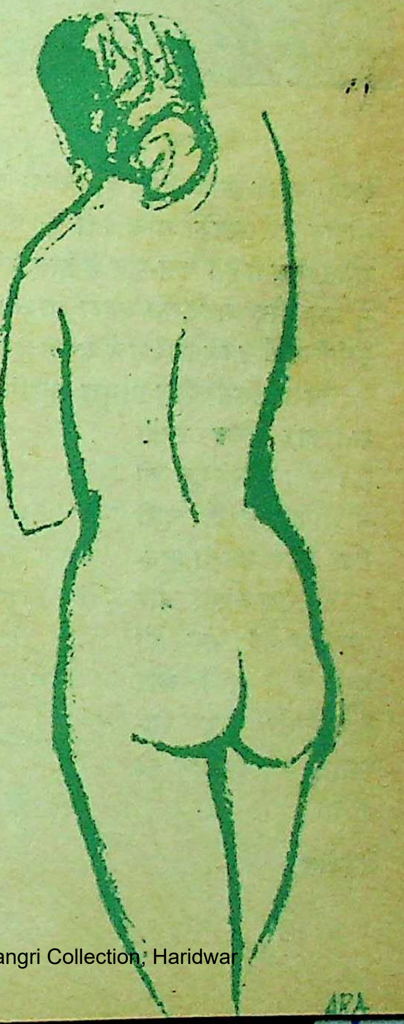

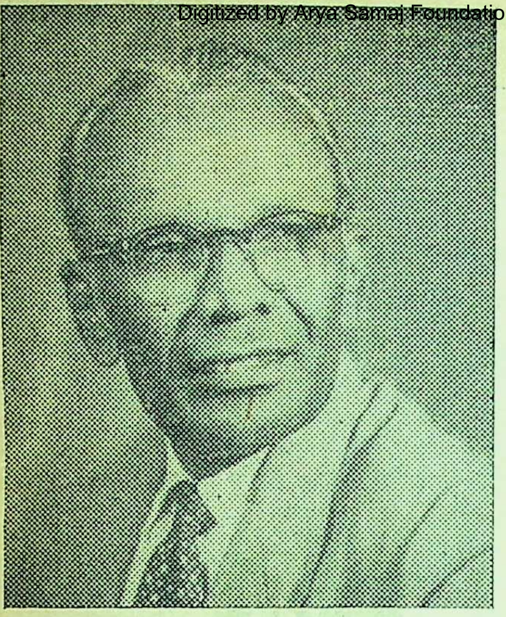

के. एच. आरा

सबमें आपके काम आती है, जिंदगी के हर सोपान पर आपका साथ देती है। फूल से शांति मिलती है। फल-फूल के लिए मेरे मन में प्रेम और आदर की गहरी भावना है; इसीलिए मैं उनके चित्रण में सफल हुआ हूं।

जब तक किसी चीज का मूल नहीं मिलता, कलाकार बेचैन रहता है। फूल और न्यूड को मैं अंकित करता चला गया और उनकी खूबसूरती, सुकुमारता और नजाकत मेरे मन को छूती चली गयीं और कैनवास पर रंग-रेखाओं में विलीन हो गयीं।

मेरी सृजन-यात्रा का तीसरा दौर अमूर्त (एब्स्ट्रैक्ट) चित्रण का रहा। भक्तिरस के प्रति प्रारंभ से ही मेरा झुकाव रहा है। तुकाराम, कबीर, मीर, गालिब आदि हिंदू-मुस्लिम कवियों की रचनाओं पर मैंने 'कट पेंटिंग' बनाये, जिनमें रंग नही हैं। ब्लेड से कैनवास को काव्यगत भावों के अनुरूप 'कट' किया गया है। अभिव्यक्ति प्रकट करने का यह मैंने सर्वथा नया और प्रयोगवादी तरीका अपनाया था, जो काफी चर्चित हुआ।

आजादी आने से पूर्व सन १९४७ में हमने आधुनिक चित्रकारों का एक दल बनाया था–प्रोग्रेसिव ग्रुप। इसमें रज़ा, हुसेन, सूजा, बाकरे, गाडे और मैं थे। हमारे दल का संघटन और काम अब भारतीय कला के इतिहास में एक ऐतिहासिक घटना हो गयी है। वे दिन भुलाये नहीं भूलते। हमारा होली मनाने का ढंग भी निराला था। उस दिन सब मेरे यहां जुटते और एक बड़े कैनवास को जमीन पर बिछाकर चित्र बनाते। सबसे पहले मैं उस पर चित्रण

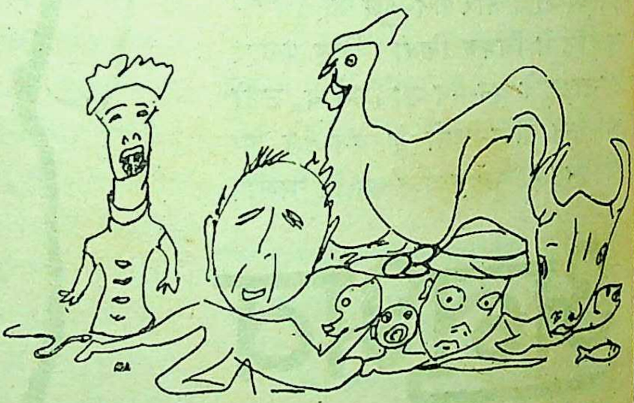

करता (शायद इसलिए कि आयोजन मेरे घर पर होता था), फिर बाकी सब। बाद में सब तितर-बितर हो गये।

जो मनुष्य गुलाम होता है, वह सृजनात्मक कार्य नहीं कर सकता। साठ बरस पूर्व कला-जगत् में जो काम हुआ ईमानदारी से, वह आज देखने में नहीं आता। आज की स्थिति तब की अपेक्षा कहीं निम्न है। एब्स्ट्रैक्ट के नाम पर बेईमानी अधिक आयी है। पहले के कलाकारों ने अनुभव ग्रहण करके और भूखे रहकर काम किया। महल में बैठकर झोपड़ी में रहने वालों का चित्रण करना सर्वथा बेमानी है।

पेंटिंग में कलाकार की अपनी पहचान होनी चाहिये। कलाकार के लिए एक समय ऐसा आता है, जब वह एक जगह जाकर ठहर जाता है। आज हमारे यहां जो हो रहा है, उसमें पहचान खो गयी है। क्योंकि अधिकांश नये कलाकार आयातित प्रभाव पर कोशिश कर रहे हैं। यदि वे अपनी पहचान रखें, तो अच्छा हो। इसका दोष कला-शिक्षण की संस्थाओं को भी है। आज का शिक्षण अनुभव और अभ्यास पर आधारित नहीं है। प्रयोग के नाम पर कुछ भी करना कला का अपमान है। ट्रिक्स अपनाने के कारण शैली विलुप्त हो गयी है।

★

श्रद्धा के अधिकारी

श्रद्धेय पुरुषोत्तम दास टंडन का 'चंचल मनोरंजन क्लब' की ओर से अभिनंदन करने गये थे हम लोग। उस समय वे बीमार थे। अभिनंदन के समय उनके नेत्रों में आंसू छलछला आये और वे बोले—'अब मैं रोगग्रस्त हूं.....बहुत कम उपयोगी रह गया हूं ... मेरी हार्दिक इच्छा है कि मेरे दुर्बल हाथों से वे लोग हिंदी का झंडा ले लें, जो नैतिक एवं सांस्कृतिक भावना से राष्ट्रभाषा की सेवा करना चाहते हैं ...।' यह सुनकर सबकी आंखों में आंसू छलछला आये।

इससे भी अधिक हृदयस्पर्शी घटना तो तीसरे दिन घटी, जब हम अभिनंदन के अवसर पर खींचे गये फोटोग्राफ को फ्रेम कराकर बाबूजी को अर्पित करने गये। जब फोटोग्राफ उन्हें दिया, वे बोल उठे—'क्या, "चंचल मनोरंजन क्लब!"...भाई "क्लब" नहीं, इसे "गोष्ठी" करो...... और हां, इस तस्वीर का कितना पैसा ...... ?'

'कुछ नहीं बाबूजी...आपका आशीर्वाद...'

'तो मैं यह तस्वीर ले न सकूंगा ...... दुकानदार ने तो आखिर ...... ?'

इच्छा न होते हुए भी हमें तस्वीर के पैसे लेने ही पड़े। —रमाशंकर 'चंचल'

स्वप्न-संयोग

उच्छल महातृप्ति का सागर
सोख रहा हूं, सोख न पाता;
सांसों की सकरी झोली में
सौरभ का नभ नहीं समाता।

दिव्य सलोनेपन की आभा,
नयनों का निर्वाह नहीं है;
मुक्त तरल अमृत की धारा
श्रवणों के उस पार बही है।

बाहों को झकझोर गयी हैं
गुंफित अंधकार की अलकें;
विह्वल आंखों की पुतली को
बांध नहीं पायी हैं पलकें।

बेबिजली की एक तड़प से
तड़क गयी नस-नस की बाती;
शून्य चेतना की धड़कन से
धड़क गयी जागृति की छाती।

कितनी लघुता में गुरुता का
वैभव भरे अनूठी दुनिया।
कितनी सगी लगी अंतर को
सच दुनिया से झूठी दुनिया।

रामावतार चेतन

८१, सुनीता, १४ वां माला, कफ परेड, बंबई–५

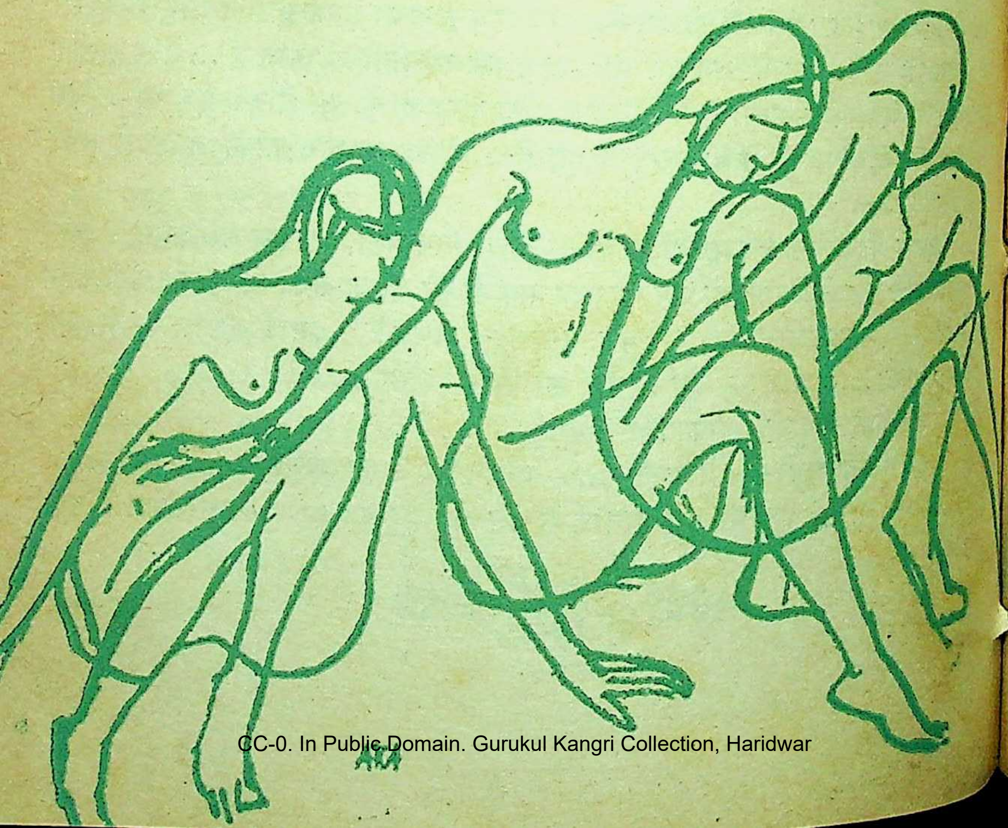

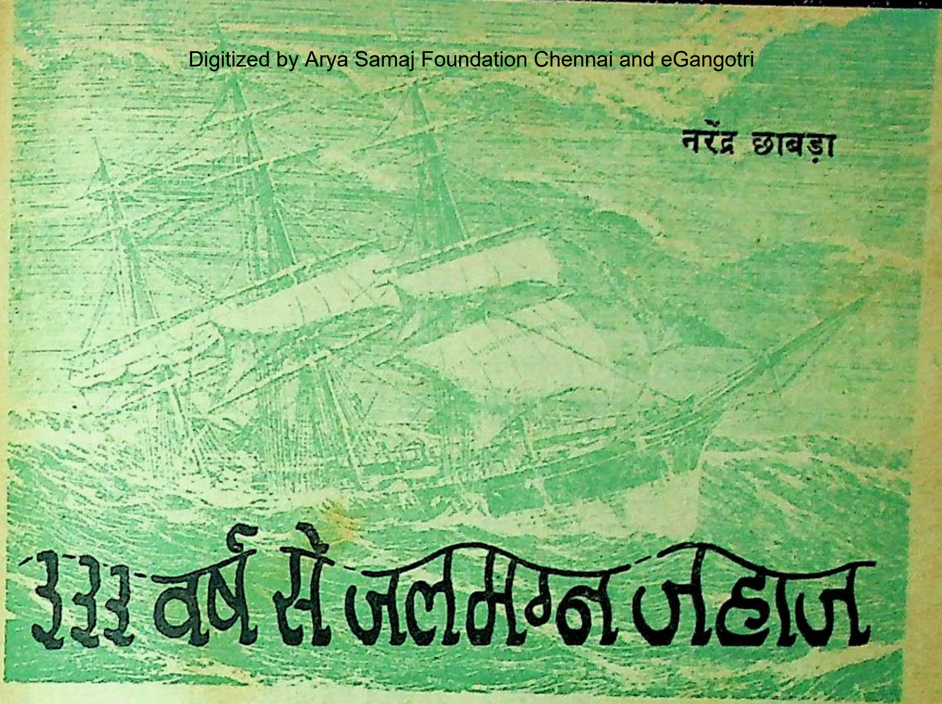

नरेंद्र छाबड़ा

३३३ वर्ष से जलमग्न जहाज

उस दिन यानी २० अगस्त १९६१ को एकाएक सागर-गर्भ में सत्रहवीं सदी का एक 'टुकड़ा' बुलबुला बनकर उभर आया। ३३३ वर्ष से ११० फुट गहरे सागर जल में डूबे पड़े स्वीडन के जलपोत 'वासा' को उस दिन बाहर निकाला गया था।

यह जहाज सन १६२८ में स्टाकहोम के निकट समुद्र में डूबा था। मगर आश्चर्य कि इतने वर्षों बाद भी वह बिलकुल अच्छी हालत में था। इसमें पड़ी सैकड़ों चीजें—जस्ते के 'मग' (लोटे), पकी मिट्टी के हुक्के, बंदूकें, जहाजरानी के औजार, चमड़े के बूट, यहां तक कि बंद डिब्बों में पड़ा मक्खन भी सर्वथा सुरक्षित अवस्था में था। इन चीजों से स्वीडन को तीन शताब्दी पूर्व के अपने इतिहास की एक झलक पाने का मौका भी मिला।

इस खोज का श्रेय आधुनिक 'सागर गर्भ पुरातत्त्व शास्त्र' को है, जिसकी सहायता से पुरातत्त्ववेत्ता समुद्र में गोता लगाकर उसकी तली पर पड़ी ऐतिहासिक वस्तुओं को खोजकर निकाल रहे हैं।

खोज का यह काम पहले-पहल सन १९४२ में जाक कास्त्यू नामक एक फ्रांसीसी ने शुरू किया। खोजी गोताखोर समुद्र-सतह से १५० फुट तक नीचे पानी में उतर जाते हैं और समुद्र-तल में ऐसी सरलता से विचरते हैं, मानो धरती पर विचर रहे हों। वहां उन्हें पत्थर के बने चाकू-छूरियां, बरतन, मूर्तियां, तांबे की घंटियां, मिट्टी के कलश तथा विभिन्न धातुओं के बने आभूषण आदि प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार के खोजकार्य का मुख्य केंद्र

अभी तक भूमध्य सागर ही है, जिसे 'सागर-गर्भ-पुरातत्त्ववेत्ताओं को भगवान द्वारा प्रदत्त विशेष खजाना' कहा जाता है। भूमध्य सागर का जल अपेक्षतया स्वच्छ, उष्ण व ज्वार-भाटे से मुक्त है, तथा उसके तटवर्ती क्षेत्र पश्चिमी सभ्यता के महान पुरखे मिस्रियों, यूनानियों और रोमनों की निवास-भूमि रही है और उनके आवागमन के मुख्य स्थल भी।

समुद्री खोजियों को इस सागर में जिन शत्रुओं का सामना करना पड़ता है, वे न तो आक्टोपस हैं, न शार्क मछलियां; बल्कि वे हैं अवैध रूप से समुद्र में उतरकर वहां पड़ी चीजों को लूटने वाले। इन तस्करों का विशेष लक्ष्य होता है 'एंफोरे' प्राप्त करना। एंफोरे छोटे मुंह वाले सुंदर मिट्टी के बरतन होते हैं, जिनमें प्राचीन रोम या यूनान के लोग शराब, इत्र आदि रखते थे। ये ऐसे मजबूत बने होते थे कि बाकायदा फोड़े न जायें, तो सदियों तक फूटते नहीं थे।

कुछ एंफोरे ऐसे भी पाये गये हैं, जिनमें दो हजार साल पुरानी शराब बंद थी। ये बढ़िया सजावटी फूलदानों का काम देते हैं। मगर इनका ऐतिहासिक महत्त्व यह है कि इनके रंग, रूप, हत्थे, मुख के आकार तथा मिट्टी आदि विश्लेषण से प्राचीन काल के समुद्री-व्यापार-मार्गों के इतिहास का पता चलता है।

सागर-तल से प्राप्त एक प्राचीन जलपोत के कीलों की बनावट और उन पर मढ़े सीसे के लेप की जांच से पता चलता है कि रोम के जहाजरान यह अनुभव करते थे कि समुद्र म जहाज के कीलों और पानी के बीच कुछ ऐसी हरकत अवश्य होती है, जो नुक्सान पहुंचाती है। अतः उन्होंने तांबे के कीलों के सिरों पर सीसे का लेप लगाना शुरू कर दिया था। लेप लग जाने से धातु और पानी के घर्षण से विद्युत करेंट बनना रुक जाता था।

हम ऊपर कह आये हैं कि सागर के गर्भ में छिपे खजाने की खोज का मुख्य लक्ष्य प्राचीन इतिहास की खोज करना है। वर्तमान शताब्दी के आरंभिक वर्षों में तीन अद्भुत खोजें की गयीं। पहली १९०० में, दूसरी १९२८ में और तीसरी १९०७ में। पहली दो खोजें यूनान के समुद्रों में की गयीं। इन खोजों में प्राप्त अवशेषों से पता चलता है कि करीब २,००० वर्ष पहले रोमनों ने यूनान को जमकर लूटा था। तांबे की सैकड़ों बड़ी-बड़ी मूर्तियां व अन्य कलात्मक वस्तुएं लूट-कर जहाजों में भरकर वे रोम ले जा रहे थे कि रास्ते में उनके तीन जहाज डूब गये और २,००० वर्ष तक ये सब चीजें समुद्रतल पर पड़ी रहीं और अंततः खोजियों को प्राप्त हुईं।

समुद्री 'खुदाई' का काम पृथ्वी की खुदाई की अपेक्षा अधिक कठिन है और इसमें १० गुना अधिक समय और धन लगता है। १०० फुट लंबे और ५० फुट चौड़े समुद्र-तल की छानबीन करने में ८ से १० तक ग्रीष्मकाल लग जाते हैं। असल में समुद्र में १५० फुट की गहराई पर गोताखोर एक दिन में

मुश्किल से ३१ मिनिट तक काम कर पाता है, सो भी एक साथ नहीं। प्रायः वह सुबह १२ मिनिट और मध्याह्न में १९-२० मिनिट तल पर रहकर काम कर सकता है। अधिक समय तक जल में डूबे रहने से जल के दबाव से उसके रक्त और धमनियों में नाइट्रोजन प्रवेश कर जाता है और उसके अंग जुड़ने लगते हैं, जिससे मृत्यु भी हो जाती है।

सागर-गर्भ में पड़ी वस्तुओं को निकालने के अनेक तरीके अपनाये गये। इनमें एक है 'एयरलिफ्ट'। इसमें एक बृहत् 'वैक्यूम क्लीनर' काम में लाया जाता है, वह रेती, दलदल व अन्य छोटी-छोटी चीजें को सोखकर सतह पर ले आता है। इनमें से कीमती, उपयोगी चीजें छांट ली जाती हैं और कूड़ा-करकट पुनः समुद्र में डाल दिया जाता है। यह तरीका खर्चीला है; क्योंकि इसके द्वारा सिर्फ छोटी चीजें ही ऊपर लायी जा सकती हैं। बड़ी और वजनदार चीजों को निकालने के लिए प्लास्टिक के विशाल बोरे इस्तेमाल किये जाते हैं। समुद्र-तल पर बोरों में सामान डालकर वायुटैंकों द्वारा बोरों को हवा से भर देते हैं। तब गुब्बारों की तरह ये बोरे पानी की सतह पर तैर आते हैं, और उन्हें पानी से बाहर लाकर उनमें से चीजें निकाल ली जाती हैं।

खोजियों को एक विचित्र समस्या से जूझना पड़ा है। हजारों सालों से समुद्र-तल पर ठीक हालत में पड़ी हुई अनेक वस्तुएं पानी से निकालने पर नष्ट हो जाती हैं। शीशे की बोतलें सतह पर आते ही चटक जाती हैं; टिन की चीजें हवा के स्पर्श से ही सफेद पाउडर मात्र रह जाती हैं, जहाजों के लंगर डालने के प्राचीन रस्से लुगदी बन जाते हैं और लकड़ी की चीजें सिकुड़कर अपने मूल आकार की एक तिहाई-भर रह जाती हैं।

इन्हें टूटने-फूटने, सिकुड़ने व चटकने से बचाने के लिए कई प्रकार के प्लास्टिक-पेंट प्रयोग में लाये जाते हैं। अनेक वस्तुओं को समुद्र-तल पर ही चूने व एनामल से बनी पक्की वाटर-प्रूफ पेंट से ६ से ८ इंच मोटा पोतकर फिर ऊपर लाया जाता है। बाद में पेंट को सफाई से अलग कर दिया जाता है। इन उपायों के बावजूद भी वस्तुओं को बचाने में विशेष सफलता नहीं मिली है।

शार्क, बाराकूटा या आक्टोपस जैसे खतरनाक जलजंतुओं से खोजियों को हानि पहुंचने की वारदातें बहुत कम ही हुई हैं। बल्कि यही देखा गया है कि प्रायः मछलियां इन गोताखोरों और खोजियों से मित्रता का व्यवहार करती हैं और गहरी दिलचस्पी से इनके कामों को देखती हैं। एक खोजी फोटोग्राफर समुद्र-तल में फोटो खींचने के बाद फ्लैश-बल्बों को आक्टोपस की तरफ फेंक देता था, वे इनसे ऐसी प्रसन्नता से खेलते थे, जैसे बच्चे तैरने वाले खिलौनों से खेलते हैं। प्रायः यह भी देखा गया कि आक्टोपस 'एंफोरे' को घर बनाकर उनमें रहते हैं।

इटली, फ्रांस और स्पेन के समुद्र-पुरातत्ववेत्ता मिलकर एक विशाल चार्ट तैयार कर रहे हैं, इसमें पश्चिम भूमध्य सागर के

तल के उन स्थलों का ब्यौरा होगा, जिनमें ऐतिहासिक सामग्री के मिलने की संभावना हो। संभव है भूमध्य सागर का पूर्वी भाग और भी अधिक कीमती चीजों से भरा पड़ा हो।

अब तक की खोजों में मिली प्राचीनतम वस्तुओं में ३,०००वर्ष पुराना एक जहाज भी है। जिसके अवशेष तुर्की में मिले। इस जहाज को खोजने और इसे समुद्र-तल से बाहर लाने में काफी धन और श्रम का व्यय हुआ। इसमें हलों के फाल, कुदालियां, कुल्हाड़ियां, चाकू-छुरियां, फावड़े और लोहे के बसूले आदि अनेक धातुनिर्मित वस्तुएं पायी गयीं; जिनका वजन एक टन से भी अधिक है। गोताखोरों को सैकड़ों वर्ष पुराने जैतून के फलों की गुठलियां और मछलियों की हड्डियां मिली हैं जो शायद नाविकों ने समुद्र में फेंकी थीं।

समुद्री 'खुदाई' के काम में दिनों-दिन प्रगति हो रही है। इस विषय पर अब तक तीन अंतरराष्ट्रीय संमेलन हो चुके हैं, जिनमें बारह से अधिक देशों के विशेषज्ञों ने भाग लिया है। नये-नये तरीके और उपकरणों का आविष्कार किया जा रहा है। अनेक स्वयंचलित यंत्र बनाये गये हैं जो समुद्र-गर्भ में रख दिये जाने पर वहां पड़ी चीजों के बारे में ऊपर सूचनाएं भेजते रहते हैं। कई यंत्र तो नीचे स्वयं ही यह निर्धारित कर देते हैं कि कौन-सी वस्तु उपयोगी है और कौन-सी नहीं, ताकि केवल उपयोगी वस्तु को ही जल से निकाला जाये। गोताखोरों की पोशाक, उपकरण तथा अन्य साजो-सामान के बारे में भी प्रतिदिन नयी खोजें हो रही हैं। आज समुद्र के गर्भ में ३०० से ५०० फुट तक गहरा भी उतरा जा सकता है और वहां के जीवन का अध्ययन किया जा सकता है।

—३६/१३ ईस्ट पटेल नगर, नयी दिल्ली-८

गलत जगह

ओसुना का ड्यूक बार्सीलोना (स्पेन) के मुआयने के दौरान कैदियों से भरा एक जहाज देखने गये ! प्रायः हर कैदी से उन्होंने पूछा—'तुम्हें यह सजा क्यों मिली ?'

जवाब में हर कैदी ने अपनी निर्दोषता की दुहाई दी और कहा कि मुझे गलत सजा दी गयी है।

मगर एक कैदी ने कहा—'श्रीमन्, मुझे सजा गलत नहीं मिली है। मुझे पैसों की सख्त जरूरत थी, और मैंने मजबूर होकर चोरी की। सो सजा तो मिलनी ही थी।'

ड्यूक कुछ क्षण चुपचाप उसकी ओर देखते रहे, फिर बोले—'तुम ऐसे चोर हो कि इन सब निर्दोष आदमियों के बीच में तुम्हारा रहना ठीक नहीं है। सो, इसी वक्त यह जगह छोड़ दो।' और उन्होंने उसे रिहा कर दिया।

* * *

रिश्ते

नरेंद्र चतुर्वेदी की हिंदी कहानी

मुझे लग रहा था कि शब्द नहीं चाकू है, जो मेरी तरफ रह-रहकर उछल रहे हैं। उफ! मुझे पहले ही मालूम होता तो क्या मैं यहां आती? पर मेरी तो अक्ल पर ही जैसे पाला पड़ गया हो। उन्होंने समझाया भी था—'सुनो! इस तरह बार-बार वहां जाना अच्छा नहीं लगता ......' पर मैंने उन्हें बीच में ही टोक दिया था—'तुम क्या जानोगे भाई-बहन का प्यार। ...... यह जो साड़ी है, जिसे तुम्हारे सामने पहने बैठी हूं, भैया ने ही तो दी है। ...... मैं कोई भिखारिन हूं? ...... पर वह मानता ही नहीं है। ...... और बहू-बच्चे, एक दिन को जाओ तो महीने-भर को रोक लेते हैं।' ......और तब वे चुप रह जाते थे।

मेरा एक पांव वहां तो एक पांव यहां, यही तो क्रम था। उधर जीतू भी नाराज हो गया था—'मां! तुम तो यहां ठहरती ही नहीं। जब देखो जयपुर, यह भी कोई बात हुई? मेरे इम्तहान इधर शुरू हो रहे हैं, उधर तुम्हारा मन फिर मचल रहा है!' उन्होंने भी जीतू का ही पक्ष लिया था—'मेरी नहीं तो बच्चों की ही सुनो। इस तरह से किसी के भी यहां बार-बार जाना अच्छा नहीं लगता।' ...... 'पर मैं कोई अपने मन से जा रही हूं? बहू की चिट्ठी आयी है।' और फिर तमककर वहां से उठकर मैं चौके में चली गयी थी।

सुधीर के यहां सचमुच ही अच्छा लगता था। कहां यह घर, कहां उसकी वह कोठी। नौकरों की रेल-पेल, दरवाजे खड़ी जीप, भरा हुआ फ्रिज। उस दिन सुमी कह तो रही थी—'जीजी, तुम्हारे भैया की तो यह जिद है कि दिल्ली डेप्युटेशन पर जाया जाये ...... वहां टी. वी. है।' ...... 'तो

कपड़ों की उजली
धुलाई के लिये !

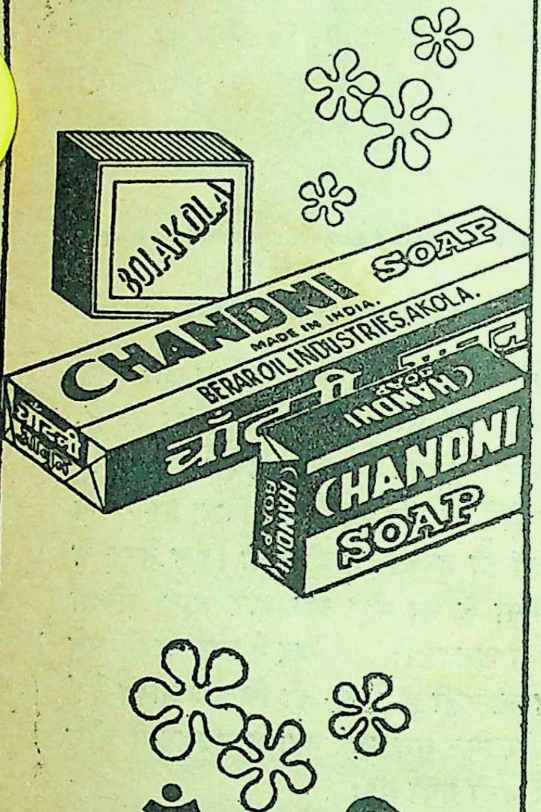

30 AKOLA
CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA
BERAR OIL INDUSTRIES, AKOLA.
चाँदनी साबुन
CHANDNI
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता-
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

Zenlon

विविध किस्मों के
प्राकृतिक, रासायनिक व
मानव-निर्मित
बुनाई के सूत

परदे, गद्दियां व कवर बनाने के लि
मुलायम और बहुरंगी • क्रोशेसेटों के
लिए सुंदर और चमकदार • वस्त
में लचीले और नमीसोख

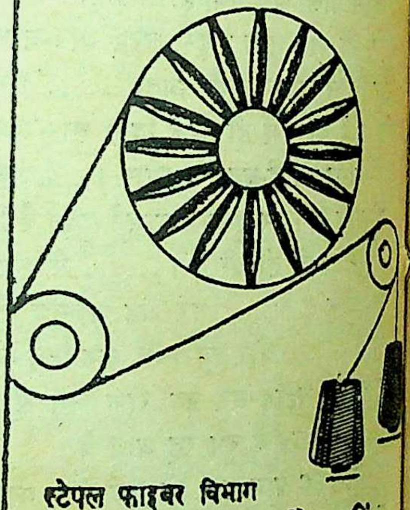

स्टेपल फाइबर विभाग
बिरला ज्यूट मैन्युफैक्चरिंग
कं. लि.
९/१ आर. एन. मुकर्जी रोड
कलकत्ता-७०० ००१

यहां भी कुछ ही साल में आ जायेगा.....' मैंने बात काटते हुए कहा था।

सुधीर के यहां मन सहज ही लग जाता है। क्या कहूं, पांव अपने घर पर तो टिकते ही नहीं हैं ...... दीपावली पर भाईदूज का तिलक करने आयी थी यही सोचकर कि दो-चार दिन ही रुकूंगी, पर महीना-भर रुकना पड़ गया। उधर बच्चे परेशान, आशा बेचारी के कंधे पर सारा घर। फिर उनकी चिट्ठी आयी, अंत में जीतू आ ही धमका। कितना नाराज था वह।

वैसे वे चाहते तो बहुत हैं ...... पर क्या करूं जब से ब्याहकर गयी हूं, मन यहीं भटकता रहता है। जब तक बाबूजी थे, इसी बहाने चली आती थी–'मां-बाप तो तीर्थ होते हैं, क्या पता आज हैं कल नहीं।'...... चित्रा ...... वह तो इसी बात से ही नाराज रहती है। ...... पिछली बार तो कह ही बैठी थी कि मैं हमेशा अपना डेरा डाले यहां पड़ी रहती हूं। हां, याद आया मनोज की ही शादी थी ...... कितना लड़ी थी वह। राम, राम! ऐसी भी कोई बहन होगी, बहन से ही जलन! बोली–'हम तो बरसों में आ पाते हैं, और तुम हो हर महीने यहां। ...... क्या बच्चों का भी मोह टूट गया? कितना बड़ा हो गया है जीतू। मेरे अजय से तो बड़ा ही होगा, पर अभी तो वह इंटर में ही है। कुछ तो सोचो ...... अपने मौज-मजे के लिए तुम अपनी गृहस्थी में क्यों आग लगा रही हो?'

मौज-मजा! सच तब जी में तो आया था कि उसकी चोटी उखाड़ दूं। पर चुप ही रही। छोटी बहन होकर बड़ी बहन से यह बात। बाबूजी से कहा, तो वे भी चुप ही रहे। चित्रा तो उनकी लाड़ली ही थी। बहू ही कहती थी कि चोरी-छिपे वे चित्रा को कुछ न कुछ दिया ही करते थे। तभी तो उसके मुंह में तब मिर्चें लग गयी थीं। जब बोलती तब कांय ...... कांय ...... अरे, भाई का घर भी कभी पराया होता है?

पर भैया तो विमल भी है। विमल की याद आते ही लगा, जैसे कीचड़ में पांव रख दिया हो। उफ! छोटे-छोटे बच्चे हैं कि पूरे भुक्खड़, जब देखो तब खाना ...... खाना ...... और वह पिंकी तो दिन-भर कटोरा लिये मारी-मारी फिरती है। विमल ने भी अच्छी नौकरी की। ...... न चपरासी, न फोन, न फ्रिज, न जीप, और तो और किसी सिनेमा-विनेमा का पास भी नहीं! मास्टर की नौकरी भी कोई नौकरी है। इतना पढ़-लिखकर बना भी तो मास्टर।...... बाबूजी ने कितना समझाया था। पर थानेदारी छोड़कर मास्टर बना। ...... सब अपने-अपने करम हैं। वैसे विमल चाहता तो बहुत है, पर उसके यहां जाने का मन होता ही नहीं है। दरिद्दर में पांव देने से क्या फायदा! आग लगे ऐसे लाड़-प्यार में। सुधीर के यहां यह सब नहीं। व्रत के दिन चाय, शरबत, फल-फ्रूट, कोई कमी नहीं। नहाकर आओ तो कपड़े सब बाथरूम में ही छोड़ आओ। उस दिन की ही तो बात है, कपड़े धो रही थी तो सुधीर ने कितना बुरा

यांत्रिक प्रगति का अनुपम प्रतीक

लोहे में गोल छेद बनाना आसान है, पर उसे विभिन्न प्रकार का बनाने के लिए विशेष प्रकार के टूल 'ब्रोच' की जरूरत होती है। जिन-जिन देशों में मोटर, लारी, स्कूटर, मशीन टूल, इत्यादि इंजीनियरिंग उत्पादन होते हैं, वहां 'ब्रोच' उत्पादन परमावश्यक होता है। डॅगर-फोर्स्ट टूल लिमिटेड ने इस आवश्यकता की पूर्ति की है। उनके बनाये 'ब्रोच से लोहे या अन्य धातु के भीतर व बाहर के भाग को आसानी से विविध स्वरूप दीजिये।

DF

डॅगर-फोर्स्ट टूल्स लि.,
पहला पोखरण रास्ता,
थाना (बंबई)

माना था—'क्यों जीजी यह क्या ? तुम्हारी एक धोती हरचरन धो देता तो क्या उसके हाथ टूट जाते ? क्यों जलील करती हो !' और तब मैं मन ही मन चंदनी हवाओं में नहा गयी थी।

वैसे यहां आते ही पांव अपने आप चौके की तरफ उठ जाते हैं। सुमी तो फिर चौके में कभी-कभी ही आती है। सुधीर भी तो यही कहता है—'जीजी के तो हाथों में जादू है ! ऐसी सब्जियां बनाती हो कि और कहीं देखने को भी नसीब न हो।' और फिर सचमुच दो-चार दिन बाद यह भी याद नहीं रहता कि मैं कब आयी थी। अक्सर यही होता है ...... 'अरे जीजी, जब आ गयी हो तो अचार भी डालती ही जाओ ......आपके भैया को तो आपके ही हाथ का अचार अच्छा लगता है।...... जरा पापड़ भी बना जाओ ...... इनको तो मूंग की दाल के पापड़ बेहद पसंद हैं !' सुमी के ये वाक्य फिर आंगन में गूंजते ही रहते हैं। और फिर अंत में वही होता है, जीतू को आना ही पड़ता है.....तब जाना हो पाता है।

पर इस बार सच मैं भी कैसी बावली हो गयी थी ! चलो अच्छा हुआ, सारे परदे आंखों के सामने से हट ही गये। राम जाने कौन-सा बुखार है, ट्रेन में ही आ गया था। घर तक तांगे में भी बड़ी ही मुश्किल से पहुंच पायी। सुधीर ने आते ही डाक्टर को बुलवाया। दवा लाया। पर तब से बहू का मिजाज ही नहीं ठीक हुआ। 'कहीं सबको न हो जाये ...... पता नहीं कैसा इन्फेक्शन है !' पहले इंजेक्शन तो सुना था..... पर इन्फेक्शन ! ...... क्या पता क्या हो ...... थोड़ी पढ़ी-लिखी है, गिटर-पिटर ज्यादा ही करती है। खुद एक बार भी देखने नहीं आयी। बस, सुधीर दिन-भर में एक बार आकर पूछ जाता है। बच्चे तो उस दिन से इधर आये ही नहीं। कहां तो बुआ-बुआ कहकर लिपट जाते थे, पर इस बार तो उनकी शक्ल ही दिखाई नहीं दी। कितना बदन दुख रहा है।...... वहां होती तो यह सब होता ? सबकी ही याद आ रही है, आंखों ही आंखों में चेहरे घूम रहे हैं।

और क्या कहूं ...... अभी झपकी लगी ही थी कि नींद खुल गयी। सुमी की ही आवाज थी—'मैंने तो यह सोचकर लिखा था कि ये यहां आ जायेंगी तो हम लोग बाहर घूम आयेंगे। ...... बच्चों के एग्ज़ाम जो हैं, ये देख लेतीं। अब तो बैठे बिठाये गले में हड्डी फंस गयी है। सुनो, तुम महेश को तार दे दो, वे आकर ले जायेंगे। हम कब तक तीमारदारी करते रहेंगे ?'

'हिश्श ! धीरे बोलो,' सुधीर की आवाज थी—'सुन लिया तो फील करेगी।'

'फील ? ......तुमने खूब कही। दो-चार महीने बाद फिर अपने आप आ जायेंगी। उनका मन तो यहीं बंधा है।'

और लगा सचमुच ये शब्द नहीं चाकू हैं, जो मेरे जिस्म को छीलते चले जा रहे हैं। जब तक मिसरानी रही, इनकी चाकरी में रही, जीजी बहुत अच्छी हैं ! और एक

मन लुभावने रंगों में दमकते
एकदम गर्म शीत से सुरक्षित
हंसा"
कम्बल
आपकी रंगीली
रातों की
शुरुआत
अमृतसर स्वदेशी वूलन मिल्स
राम तीर्थ रोड, अमृतसर
INTERADS

दिन में ही सब [illegible] आ गया। [illegible] तो चित्रा कहती थी—'तुम सुधीर की चमक-दमक में डूबी हुई हो जीजी। वैभव में भोग तो है, पर प्रेम नहीं। कभी विमल के यहां भी रह आना।' और तब सचमुच मुंह कसैला हो जाता था।

तभी कमरे में सुधीर आया—'कैसी तबीयत है?'

'ठीक है, पहले से तो अच्छी है।' किसी तरह जी को कड़ा करते हुए कहा।

'हूं, मैं भी यही सोच रहा था। जल्दी अच्छी हो जाये तो ठीक। हमें भी जाना है। सुमी की ही जिद है, मनाली जाने की...... रिजर्वेशन करवा लिया है......पर तुम्हें......'

'नहीं-नहीं, तुम मेरी बात रहने दो। मेरा क्या? उन्हें तार दे दो, कल आ जायेंगे।'

'हूं, तो मैं चलूं। जरा एक पार्टी में जाना है। तुम खा लेना।' वह धीरे-से बोला। बाहर से आती हुई तेज इत्र की भीनी-भीनी गंध मुझे छू ही गयी। 'हूं सुमी बाहर ही है......' मैं बड़बड़ायी। तभी ध्यान आया, उसे भी डर है, कहीं बुखार-वुखार आ गया तो मनाली यहीं धरी रह जायेगी। बरबस चेहरे पर हंसी आ ही गयी।

'सुनो, देर हो रही है।'

'आया,' सुधीर तेजी से लौटा।

जीप से आती हुई खिलखिलाहट से जाना कि बच्चे भी साथ ही जा रहे हैं। फिर कहां लेटा जाता? ...... उठी, बाहर आयी। बरामदे में वाश-बेसिन पर आकर मुंह धोया। रूखे-रूखे बाल, जरा कंघा ही लगाया था कि [illegible] गये।

तभी बाहर किसी की आवाज सुनाई दी। जैसे विमल ही हो। खिड़की से देखा। ...... वही था, हरचरना को बुला रहा था। जी तो हुआ, उठकर बाहर चलूं और उससे कहूं, मुझे साथ ले चल। पर जीभ भीतर ही भीतर खुद से ही लड़ रही थी। तभी वह अंदर ही आ गया। 'अरे..... यह क्या हो गया। ...... तुम्हें तो तेज बुखार है।' उसने मेरा हाथ छुआ। 'अरे, इतना तेज! कहां गये सब?' मैं क्या कहती। बस, चुप ही रही। आंखें नम थीं।

'मुझे कहला देतीं।......कल ही जीतू का पत्र आया था कि तुम यहां हो। ...... तुम्हारी बहू तुम्हारी बहुत याद कर रही थी, बोली, स्कूल से लौटते समय जीजी से मिलकर आना......और साथ ले ही आना।'

मुझसे अब और अधिक रुका नहीं गया। 'तुम तो मेरा बस एक काम कर दो ...... फुरसत हो तो बयाना छोड़ आओ।' रुलाई रोकते हुए बस मैं यही कह पायी थी।

'चली जाना ...... छोड़ आऊंगा। ...... पहले तबीयत तो ठीक हो जाये। लाओ तुम्हारा सामान कहां है?......मैं लगा दूं। फिर तांगा लेकर आता हूं। तुम तब तक लेटो।' वह मुझे बांहों का सहारा देते हुए अंदर कमरे तक ले आया। मैं चुप थी...... पर भीतर ही भीतर आंखें रिश्तों की किताब को दुबारा पढ़ना चाह रही थीं कि कोई गलती तो नहीं रह गयी है। **—गोयल भवन,**
मामा-भानजा, झालावाड़, राजस्थान

★

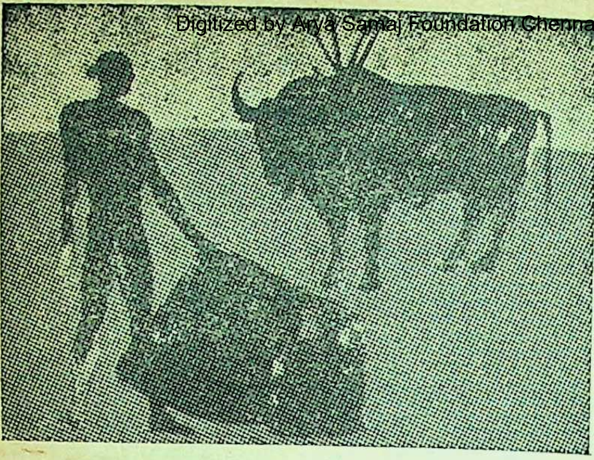

हुडसन स्ट्रोड

दो सांड दो योद्धा

हम प्रतीक्षा में बेकरार बैठे थे। कुछ ही देर में एक घुड़सवार अखाड़े में दिखाई दिया। गोल चक्कर में घोड़े को दौड़ाता हुआ वह एक जगह रुका और वह दरवाजा खोल दिया, जिसके पीछे सांड बंद था।

तमाम दर्शक एकाएक चुप हो गये और चारों ओर स्तब्धता छा गयी। फिर तुरही की आवाज गूंजी और तभी चमचमाते काले रंग का एक सांड गोली की तरह निकलकर अखाड़े में आया। फिर किसी घबराहट और हैरानी से वह रुक गया, जैसे भांप गया हो कि चारों ओर हजारों आंखें उसकी मौत का तमाशा देखने के लिए बेताब हैं। चार-पांच साल तक उसकी परवरिश पर खूब खर्च हुआ था और अब पंद्रह मिनिट में वह मार डाला जाने वाला था।

उस समय 'बेंडेरिल्लरो' (सांड से लड़ने-वाले 'मैटाडोर' के सहायक) अपने 'केप' (सांड़ का ध्यान बंटाने के लिए पहना जाने वाला रंगीन कपड़ा) हिला-हिलाकर उसे उत्तेजित कर रहे थे, ताकि 'मैटाडोर' यह देख सके कि सांड अपनी किस आंख का अधिक उपयोग करता है और किस सींग से अपने दुश्मन को मारना चाहता है।

बेंडेरिल्लरो केप हिलाते, सांड दौड़कर उन पर हमला करता, वे चुस्ती से घूम जाते और भागता हुआ सांड तीर की तरह सीधा आगे निकल जाता। खेल का यह भाग भी काफी दिलचस्प था।

मैटाडोर देखने में खास प्रभावशाली नहीं था। औसत से कुछ छोटा कद था उसका। उम्र थी लगभग पैंतीस वर्ष, जो कि मैटाडोर के लिए काफी ज्यादा थी।

फिर हाथ में भाला लिये एक घुड़सवार सांड की ओर बढ़ा। उसका घोड़ा बेहद डरा हुआ था; पर वह खुद मुस्करा रहा था। सांड ने घुड़सवार पर हमला किया और घुड़सवार ने सांड के कंधे पर भाले का भरपूर वार किया। सांड एकबारगी तड़पा और दूसरे ही क्षण उसने घोड़े पर भयानक हमला

शीर्षक के साथ पैट गिलमोर का ग्राफिक

किया। पर घुड़सवार दांव बचाकर निकल भागा, कुछ आगे जाकर मुड़ा, फिर सांड पर भाले का ऐसा भरपूर वार किया कि खून का फव्वारा फूट निकला।

मेरे पास बैठे दर्शक चिल्लाये—'अरे मूर्ख इस तरह तो तू सांड को तबाह कर देगा।'

तीसरी मुठभेड़ में घुड़सवार सांड की चपेट में आ गया। सांड के हमला करते ही वह उछला और एक ओर को लुढ़क गया। उसकी टोपी दूर जा गिरी। वह खुद तो बच गया; मगर उसका घोड़ा सांड़ के सींग का शिकार बन गया। घुड़सवार को बचाने के लिए मैटाडोर और उसके सहायक अपने केप हिला-हिलाकर सांड को अपनी ओर आकर्षित करने लगे।

फिर एक बेंडेरिल्लरो आगे बढ़ा। उसके हाथ में दो तीर थे। उसने सांड का ध्यान अपनी ओर खींचा और जब सांड उसकी ओर लपका, तो वह भी भागता हुआ उसकी ओर बढ़ा। जब दोनों पास आये, बेंडेरिल्लरो ने दोनों तीर सांड के कंधे में गाड़ दिये। इस नयी चोट से सांड पागल हो उठा और गुर्राने लगा।

अब हाथ में तीर लिये दूसरा बेंडेरिल्लरो सांड का सामना करने आया। सांड ने हमला किया और उसका सींग बेंडेरिल्लरो की जैकेट को चीरता हुआ निकल गया। लोग चीख उठे। बेंडेरिल्लरो बच गया था और उसने अपने तीर सांड के कंधे में गाड़ दिये थे। अब वह सांड की ओर पीठ करके ऐसे चलने लगा, मानो उसे अपनी जान की कोई परवाह न हो। दर्शकों ने खुशी में तालियां बजायीं।

सांड़ बहुत ज्यादा लहू-लुहान हो चुका था। उसके काले रंग पर खून और भी सुर्ख लग रहा था। उसके कंधे में गड़े हुए चारों तीर हिल रहे थे। अभी तो दो तीर और उसके कंधे में गाड़े जाने थे। मैटाडोर और बेंडेरिल्लरो ने अपने केप हिलाकर उसका ध्यान बंटाना चाहा, पर वह एक ही जगह जम-सा गया था, जैसे उसे पता चल गया हो कि वह बुरी तरह फंस गया है और अब उसके बच पाने की कोई आशा नहीं है।

लेकिन अंत में सिर झटककर वह आगे बढ़ा। तभी तीसरे बेंडेरिल्लरो ने दो तीर उसके कंधे में गाड़ दिये।

अब खेल का तीसरा और आखिरी दौर शुरू हुआ, जिसमें मैटाडोर और सांड का सीधा सामना होना था।

मैटाडोर ने आगे बढ़ते-बढ़ते अपने सहायकों से कोई बात कही। उसमें विजेता का आत्मविश्वास नहीं दिखाई दे रहा था। पसीने से लथपथ था वह। उसे 'मुलेटा' (छड़ी पर बंधी हुई लाल कपड़े की झंडी) और तलवार पकड़ायी गयी।

मैटाडोर ने मुलेटा की सहायता से सांड को काबू में करना चाहा, पर विफल रहा। दर्शक शोर मचाने लगे। आखिर मैटाडोर ने सांड पर तलवार का वार किया। पर तलवार आठ इंच से ज्यादा नहीं धंसी और सांड ने अपना सिर झटककर तलवार को हवा में उछाल दिया। अब निहत्था मैटाडोर

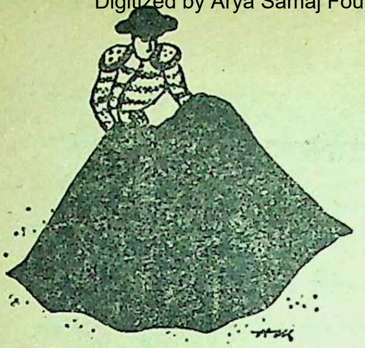

सांड की दया का पात्र बना खड़ा था। उसी समय दो बेंडेरिल्लरो अपने केप हिलाते हुए उसकी सहायता के लिए आये। तीसरे बेंडेरिल्लरो ने नयी तलवार लाकर उसे दी। मैटाडोर ने फिर सांड पर हमला किया। मगर इस बार निशाना ठीक न बैठा। उसने पांच बार और कोशिश की।

दर्शक गुस्से में शोर मचा रहे थे; क्योंकि मैटाडोर एक ही वार से सांड को मार नहीं पाया था। उसके चेहरे पर डर और असफलता की छाया थी। उसके ओंठ नीले पड़ गये थे और वह कांप रहा था। उसके जीवन का यह सबसे दुर्भाग्यपूर्ण क्षण था। शायद वह सोच रहा था—अगर इस पेशे से रुखसत होना पड़ा, तो मैं अपने परिवार के लिए रोटी कहां से जुटाऊंगा ?

दोनों हारे हुए प्राणी—मैटाडोर और सांड—अब फिर आमने-सामने थे। अपनी हार के एहसास से मैटाडोर में नया साहस जागा। सांड की हत्या के लिए नियत अवधि में से कुछ ही सेकेंड अब बाकी रह गये थे। अगर वह उतने समय में सांड को मार न सका, तो सांड़ को बाहर ले जाकर खत्म कर दिया जायेगा। उस हालत में मैटाडोर की हार होगी। सो मुलेटा का उपयोग न करते हुए वह सीधा सांड के सींगों की ओर बढ़ा। हांफते हुए सांड़ ने सिर झुका लिया, जैसे अपनी मौत कबूल कर रहा हो। मैटाडोर ने अंतिम वार किया और पीछे हट गया—विजेता की तरह नहीं, बल्कि जैसे सांड से उसका कोई संबंध न हो इस तरह। सांड घुटनों के बल गिर पड़ा। वह ढेर हो गया।

मैटाडोर ने मृत सांड को एक नजर देखा और पराजित योद्धा की तरह एक ओर को चल दिया। फिर चार छोटे-छोटे खच्चर अखाड़े में लाये गये। उनके गले में पड़ी घंटियां बज रही थीं। सांड की लाश को घसीटकर वे बाहर ले गये।

× × ×

थोड़ी देर बाद दूसरा सांड अखाड़े में आया। उससे लड़ने वाला मैटाडोर औसत से कुछ ऊंचे कद का था। इकहरे शरीर और चौड़े कंधे वाला बहुत ही सुंदर युवक था। उम्र बाईस-तेईस की होगी। उसमें ऐसा आत्मविश्वास था कि लोगों ने उसे देखते ही विजेता के रूप में स्वीकार कर लिया।

कुछ देर तक वह सांड को देखता रहा, जिसे बेंडेरिल्लरो केप दिखा-दिखाकर इधर-उधर भगा रहे थे। उसने सांड के स्वभाव और आदतों का अध्ययन किया। फिर दौड़कर उसकी ओर बढ़ा और एक जगह रुक गया। जैसे ही भागता हुआ सांड उसकी ओर आया, वह अपने पैरों पर घूम गया। सांड सीधा आगे बढ़ गया। फिर सांड पलटा और

पुनः उसकी ओर दौड़ पड़ा। उसने सांड को अपने बिलकुल पास ही रोक लिया। ऐसा लगा, जैसे सांड के सींग उसकी कमर को छू रहे हैं। मगर सांड उसे छू न सका। वह लयपूर्ण गति से घूमकर एक तरफ को चला गया दर्शकों ने खुशी से तालियां बजायीं।

बहुत सुंदर दृश्य था। मैटाडोर लय, फुर्ती और बहादुरी का अद्भुत संगम बना हुआ था। दर्शक सहमे हुए थे, और आश्चर्य-चकित भी। अब बेंडेरिल्लरों ने सांड की गरदन में तीर गाड़ने शुरू किये। अंतिम दो तीर मैटाडोर ने खुद गाड़े।

खेल के अंतिम दौर में जब मैटाडोर और सांड का सामना हुआ, तो दर्शकों की उत्तेजना एकदम बढ़ गयी। सांड की शक्ति तो कुछ घट गयी थी, पर उसका जोश और गुस्सा जरा भी कम नहीं हुआ था। वह टांगें फैलाये खड़ा था और हांफ रहा था। उसकी आंखों में प्रतिहिंसा की भावना थी।

बायें हाथ में पकड़े हुए मुलेटा को हिलाता हुआ मैटाडोर सांड को अपने काबू में करने का प्रयत्न कर रहा था। उसके दायें हाथ में तलवार थी।

एकाएक दर्शकों के दिलों की धड़कनें बंद-सी हो गयीं। मैटाडोर और सांड जैसे एक हो गये थे—मैटाडोर बीच में था और सांड उसके गिर्द घूम रहा था। मैटाडोर मुलेटा घुमाकर पूरे दायरे में घूम गया था।

मेरे माथे पर ठंडा पसीना छलक आया; मेरा दिल जोर-जोर से धड़कने लगा।

अब मैटाडोर सांड से कुछ ही दूरी पर था। वह बचेगा नहीं, किसी दर्शक ने कहा—'अब सांड उसे दबोच लेगा।'

लेकिन मैटाडोर एक खास अंदाज में खड़ा था। उसके ओंठों पर मुस्कराहट नहीं थी। बायें हाथ में पकड़ा हुआ मुलेटा उसने थोड़ा-सा नीचे झुका लिया था। उसका बायां कंधा सांड की ओर था। दायें हाथ में पकड़ी हुई तलवार भी नीचे की ओर झुकी हुई थी।

वह दो कदम पीछे हटा और फिर दौड़कर आगे बढ़ा। दूसरे ही क्षण वह सांड के दोनों सींगों के बीच में उसके सिर पर झुका हुआ था और उसकी तलवार सांड़ के शरीर में पूरी तरह घुस चुकी थी। फिर वह फुर्ती से उछलकर सीधा खड़ा हो गया। तभी सांड ने अपना सिर उठाकर हवा में झटका अगले ही क्षण वह उछला, घुटनों के बल गिरा, और रेत पर ढह गया। उसकी टांगें ऊपर उठ गयीं।

एकाएक तालियां बजने लगीं। दर्शक खड़े हो गये थे और खुशी में चीख रहे थे। बैंड बजने लगा था। लोग अपने हैट उछाल-उछालकर अखाड़े में फेंक रहे थे। हजारों रूमाल हवा में फड़-फड़ा रहे थे। एक बेंडरिल्लरो दौड़ता हुआ सांड के पास आया और उसका एक कान काटकर लौट गया। वह कान उसने मैटाडोर को उपहार के रूप में दिया। मैटाडोर ने उसे स्वीकार करते हुए धन्यवाद में सिर झुकाया। फिर, वह उस कान को हाथ में लिये पूरे अखाड़े में घूमा। तालियां बजाते, चीखते-चिल्लाते हुए दर्शक अपना उल्लास प्रकट कर रहे थे।

★

धूल

इस बिखरी धूल को
याद है कि वह गुलाब थी
औ' एक औरत के जूड़े में
सजी थी !

इस बिखरी धूल को
याद है कि वह एक औरत थी
औ' उसके जूड़े में गुलाब
टंगा था !

चीजें जो कभी धूल थीं
अब क्या हैं !
ज़रा सोचो और
बीते कल के
सपने याद करो !

—कार्ल सैंडबर्ग
रूपांतर : केदारनाथ कोमल

पावस गीत !

मेघों पर धरे मेघ ! —
भोर हुआ भादों
सांझ हुई सावन,
केका रव गुंजित
अनुगुंजित वन वन,
गरजे, फिर डरे मेघ !
क्षितिजों के द्वारे
सुरधनों के तोरण,
अंबर के माथे
चपला का चंदन,
ढुलके फिर भरे मेघ !
झरती है फूली—
निशिगंधा अनुक्षण
पगली पुरवाई
गंधाकुल उन्मन
डूबे, फिर तिरे मेघ !

—कन्हैयालाल सेठिया

तुमको क्या मालूम

गांव से बाहर
सन्नाटों की अंगड़ाई में
बूढ़ा बरगद
जो सदियों से
अपने पत्तों के साये में
खड़ा हुआ है
उसके कितने हाथ हैं
तुमको क्या मालूम !

—एमन जाफरी

✱

जिलास की जेल-डायरी

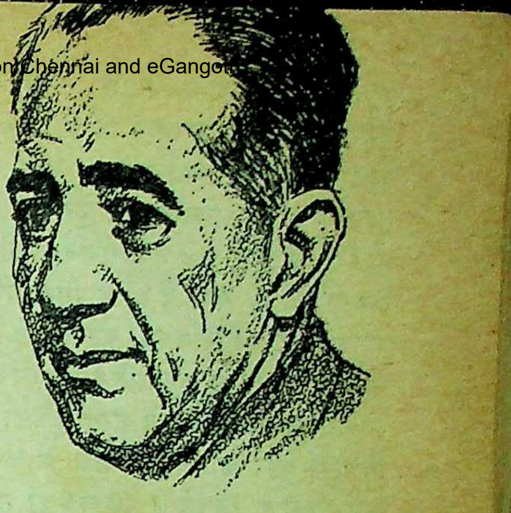

मिलोवान जिलास जब युगोस्लाविया के उपराष्ट्रपति थे, उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि देश में समाजवादी विचारों के लोगों को दूसरा राजनैतिक दल बनाने की छूट दी जाये तथा साम्यवादी दल की अधिनायकता समाप्त की जाये। इस पर उन्हें उपराष्ट्रपति-निवास से सीधे जेल भेज दिया गया। तब से उनका जीवन यातनाओं और यंत्रणाओं की गाथा रहा है; मगर उससे भी बढ़कर, एक सत्यनिष्ठ मनीषा की अपराजेयता की गाथा भी।

जिलास अब बेलग्रेड में एक छोटे से फ्लैट में जीवन बिता रहे हैं। जेल में उन्होंने जो डायरी लिखी थी, उसके कुछ अंश इस वर्ष गरमियों में पश्चिमी देशों में छपे थे। उन्हीं में से यह सामग्री नेमिशरण मित्तल ने प्रस्तुत की है।

★

हम साम्यवादियों ने सैद्धांतिक तथा अन्य प्रयोजनों से यह घोषणा की कि सामान्य मानवीय न्याय की धारणाएं तथा नैतिक मूल्य पतित बुर्जुआ धारणाएं एवं मूल्य हैं। इस घोषणा द्वारा हमने दो परस्पर असंगत सृष्टियों का निर्माण शुरू कर दिया—जितनी अधिक सैद्धांतिकता, उतनी ही कम स्वतंत्रता; हम अंतिम लक्ष्य की जितनी अधिक चर्चा करते चले जायेंगे, स्वतंत्रता की मात्रा उतनी ही कम होती चली जायेगी।

आज के मार्क्सवाद का वास्तविक मार्क्स और उसके चिंतन से दूर का भी नाता नहीं रहा है, जैसे कि आधुनिक चर्च का बाइबल से कोई नाता नहीं रहा है। यदि मार्क्सवाद मार्क्स के चिंतन का तर्कसंगत विस्तार हो, तो भी उसे प्रतिक्रियावाद मानकर अस्वी-

कार कर दिया जाना चाहिये। उसने अपने सैद्धांतिक एकाधिकारवाद के द्वारा मानवीय आत्मा की स्वतंत्रता का गला घोंट लिया है। इस मार्क्सवाद में कुछ भी नया नहीं है, न इसमें कुछ नया सृजन करने की क्षमता ही रह गयी है। वह सिवा निम्न कोटि की राजनीति अथवा कूटनीति के कुछ नहीं रह गया है। यह कूटनीति नंगी सत्ता और स्वेच्छाचारिता का बचाव करती है तथा ऐसे विचारों और आदर्शों को छद्म के रूप में ओढ़े रहती है, जिनमें से कुछ सच हो सकते हैं।...... [चिंतन की डायरी, १९५०-५२]

३० जनवरी १९५८

जाड़ा चल रहा है। सूरज दिन में कुहरे को तो छांट देता है, मगर रास्ते पर जमी बर्फ को नहीं पिघला पाता। रोज शाम को वे (जेल-अधिकारी) पंद्रह मिनिट के लिए हीटर चला देते हैं। उससे कोई बहुत मदद तो नहीं मिलती, हां सोते समय थोड़ी सुविधा महसूस होती है।

मेरा दिन कुछ इस तरह बीतता है–५.३० पर सोकर उठना, ६.३० पर पाखाने के बरतन की सफाई, १०.३० पर घूमने जाना, १.३० पर भोजन, ३.३० पर फिर घूमना, ७ बजे शाम को ब्यालू।

सोने का सरकारी समय ९ बजे है, घंटी १५ मिनिट पहले बज जाती है। मैं प्राय: ब्यालू नहीं करता और उसी समय सो जाता हूं। मुझे सर्दी बहुत लगती है। मैं प्राय: नाश्ता भी नहीं लेता–चिकोरी-काफी का एक कप ही तो होता है! दिन-भर मैं पूरे कपड़े पहने, तीन कंबल ओढ़े पड़ा रहता हूं और हाथों में दस्ताने पहनकर पुस्तक पकड़ता हूं।

९ फरवरी १९५८

मैं एकांत कोठरी में जीने का अभ्यस्त हो गया हूं। क्या इसे ही अनुकूलन की क्षमता कहते हैं? या मुझमें कुछ बदल रहा है? ...... कभी-कभी मैं अपने आपको पहले की अपेक्षा अधिक मुक्त महसूस करने लगता हूं–मेरा चिंतन मुक्त है, मेरा अंत:करण शांत।

यह फर्श को बुहारने का समय है। दिन थोड़ा गरम हुआ है। मैंने जाड़ों-भर अपनी कोठरी की उपेक्षा की है।

१३ फरवरी १९५८

रोजमर्रा की व्यावहारिक राजनीति में मानवतावाद अव्यावहारिक और अयथार्थ प्रतीत होता है। किंतु वह महानतम आत्माओं का सत्य है–अधिकाधिक मनुष्यत्व की प्राप्ति के लिए मनुष्य की अतृप्त आकांक्षा।

अच्छाई के पाने के लिए और बुराई के खिलाफ संघर्ष में, मनुष्य खोटे साधनों का परित्याग करने की हिम्मत नहीं कर पाता। यह तर्क दिया जाता है कि भेड़ियों के बीच फंस जाने पर अधिक पैने और सशक्त दांतों की आवश्यकता होती है; किंतु दूसरे लोग अपनी शक्ति और अपने प्रभुत्व को सुदृढ़ बनाने के लिए जिन साधनों का प्रयोग करते हैं, उन्हें हम अनैतिक कहने लगते हैं।

१४ फरवरी १९५८

दमन और दुष्टता प्राय: मानवतावाद

और सज्जनता को पराजित कर देते हैं। लेकिन मानवतावाद और सज्जनता स्वयंभू (आत्मजनित) हैं, उनका फिर से जन्म हो जाता है। संसार में जो कुछ महान और सुंदर है, उसका सृजन उन्हींने किया है। तब भी, जब वे पराजित हो जाते हैं, वे इतिहास को बदल डालते हैं। वे मनुष्य का श्रेष्ठतम सत्त्व हैं। उन्हें बूट के तले कुचला जा सकता है और उन्हें त्रासदी झेलनी पड़ सकती है; किंतु वे अविनाशी, पवित्र और समुज्ज्वल हैं।

१७ फरवरी १९५८

समाजवादियों को एकमेव और एकाधिकारपूर्ण दल के दर्शन का विरोध करना चाहिये। एकाधिकारवादी दर्शन शक्ति के केंद्रीकरण और एक छोटे-से गुट के शासन को जन्म देता है। मनुष्यों को व्यावहारिक और यथार्थ आदर्शों की सिद्धि के लिए संघटित होना चाहिये, न कि असंभव, अमूर्त और दुराग्रहपूर्ण काल्पनिक आदर्शों के लिए।

१ मार्च १९५८

यह एकदम झूठ है कि जेल में और विशेषतः एकांत कोठरी में, बंदी की चेतना प्रखर हो उठती है। फांसी के कैदी को कुछ ऐसा आभास होता है। कभी-कभी मुझे भी होता है। मगर असली बात यह है कि यहां चेतना को आकर्षित करने के लिए कुछ है ही नहीं। ऐसी स्थिति में जब कोई असामान्य पदार्थ या विचार चेतना को आकर्षित करता है, तो ऐसा लगता है कि चेतना बहुत प्रखर हो गयी है।

१७ मार्च १९५८

मेरा बेटा अलेक्स मुझसे कल कह रहा था कि मैं आपको जेल से छुड़ाने की कल्पनाओं में डूबा रहता हूं। उसने मुझसे पूछा था—'अधिक शक्तिशाली कौन है, टैंक या विमान ?' मेरे उत्तर के बाद उसने कहा—'आपको मालूम है न कि मेरे पास टैंक (खिलौने) हैं। इसलिए मैं आपको छुड़वा सकता हूं।' कल्पना में शायद उसने मुझे मुक्त करा लिया है। उसकी अचरज-भरी दुनिया में बुराई का एक कंकर पड़ गया है—पिताजी जेल में हैं...... उन्हें मुक्त कराने के लिए संघर्ष ही संघर्ष रह गये हैं।......

२३ मार्च १९५८

पीछे मुड़कर सोचता हूं—मेरा सारा जीवन सरदी में बीत गया। प्राइमरी स्कूल में पढ़ता था, तब पहनने को पूरे कपड़े न थे। हाई स्कूल में भी यही स्थिति रही। विश्वविद्यालय में कोई भी जाड़ा ऐसा न बीता, जब कमरे को गरम करने की व्यवस्था रही हो, सिवा आखिरी साल के जब मैं भाप से गरम रहने वाले रसोईघर में सीमेंट के फर्श पर सोता था। पहला कारावास सरदी में ही बीता। फिर युद्ध आ गया, तब भी सरदी बनी रही। युद्ध के बाद अगले जाड़ों में हमने अपने पहले वाले घर को गरम करने की कोई व्यवस्था नहीं की थी। दूसरे घर में गरमी की व्यवस्था थी, लेकिन मैंने तो १९५०-५१ के जाड़े शहर की सरदी में ही बिताये। जब मैं घर लौटा तो वहां बिजली की व्यवस्था होते भी हुए हम उसका उपयोग

न कर सके; बहुत महंगी थी बिजली। सिर्फ सोने के कमरे में लकड़ी जला पाते थे हम।

वहां से फिर हमें सरदी में धकेल दिया गया। इतनी सरदी होती थी कि दिन में सीधे बैठना तक मुश्किल होता था और आग हमें शाम को ही नसीब होती थी। कभी-कभी मैं सवेरे तीन बजे तक काम करता रहता था।......

और अब, अब जेल की यह एकांत कोठरी है। मैं सरदी का अभ्यस्त हो गया हूं। अब मुझे उससे परेशानी नहीं होती। फिर भी मैं सोचता रहता हूं कि यदि मैं अपने को जेल से जिंदा बचा पाया और कहीं से कुछ पैसा भी बच गया, तो मैं उस पैसे को अपना शेष जीवन गरमी में गुजारने में खर्च करूंगा। जीवन में एक यही कामना बची है।

२४ अप्रैल १९५८

मेरे समकालीन लोग 'सत्ता की प्रशंसा' करते हैं। ...... यह भावना सबमें है, भले ही वे कितने भी शिक्षित या बुद्धिमान क्यों न हों।

मैं इसे पूरी तरह समझ नहीं पा रहा हूं। भय, भौतिक आश्रय, चापलूसी और अंध-पूजा, ये उसके कुछ कारण तो हैं; परंतु ये ही काफी नहीं हैं। मुझे लगता है कि 'सत्ता की प्रशंसा' के कुछ विशेष और गहरे कारण हैं। शायद मानवीय समुदाय सत्ता के बिना जिंदा रह ही नहीं सकता ...... आदिम समाजों में सरकार की सत्ता की जगह पुरोहितों की आध्यात्मिक सत्ता होती थी। .....

आधुनिक राज्य का मूल लक्षण सत्ता यानी शक्ति है। लेकिन उसका एक और लक्षण भी है—समाज की आम सहमति को व्यक्त करना। ये दो तत्त्व—शक्ति और सहमति—साथ-साथ चलते हैं।

सत्ता चाहे व्यक्ति की हो या संस्था की, शीघ्र ही मिथक का रूप ले लेती है।...... मिथकों की जड़ें किसी भौतिक, सामाजिक अथवा आध्यात्मिक आवश्यकता में होती हैं। यह आवश्यकता समाप्त होते ही मिथक काफूर हो जाते हैं।

२९ अप्रैल १९५८

कल मुझे नया कैदी-नंबर मिला है-१७३२। अब तक मैं ६८८० था।

...... पार्टी-कांग्रेस में मेरा जो अपमान किया गया, उससे मेरे भीतर रोष और उत्तेजना का उदय हो गया था। कल उसमें कुछ कमी हो गयी। सरदी और बारिश के बावजूद अब मैं पहले की अपेक्षा खुश हूं।

मैं देख रहा हूं, आखिरकार इस एकांत ने मुझे अत्यधिक संवेदनशील बना दिया है। यह कष्टकर स्थिति है। यह संवेदनशीलता कहां तक जायेगी? तीन-पांच-सात साल बाद मैं किस किस्म का इंसान बन जाऊंगा?

मैं अपने भीतर एक खास बात देख रहा हूं। यह मुझमें अचानक ही आ गयी है। मेरे रास्ते में कोई कीड़ा-मकोड़ा आ जाता है, तो मैं उस पर पांव रखने से बचता हूं। बहुत सावधानी के साथ चलता हूं। अपनी कोठरी में मैं उन्हें टीन के टुकड़ों

पर उठाकर कूड़े की टोकरी में डाल देता हूं। सिर्फ मकड़ी को कहीं भी घूमने और मेरे चारों तरफ जाल बुनने की छूट है। इसके पीछे कोई दर्शन नहीं है, मेरे मन में जीवन के प्रति संमान जाग गया है। यह एक मनःस्थिति बन गयी है, हर जीवित वस्तु के प्रति।......

ऐसा लगता है कि जीवन का प्रत्येक रूप अंततः मनुष्य की दिशा में उठता हुआ एक कदम है, तथा मनुष्य का उदय इन्हीं जीवों में से विकास के द्वारा हुआ है। कभी-कभी ऐसा लगता है कि मुझमें और रास्ते में मिलने वाले कीड़े-मकोड़े में बहुत मामूली-सा अंतर रह गया है।

वे भी अपने ढंग से सोचते हैं और जगत में संघर्ष करते हैं, तथा तब तक जिंदा रहते हैं, जब तक उन्हें जीने दिया जाता है। जीवन न सुंदर है, न घिनौना; न प्रसन्न है, न उदास......।

२२ मई १९५८

मुझे बताया गया है कि मुझे कोई भी विदेशी पुस्तक नहीं मिल सकेगी। उन्होंने (अधिकारियों ने) 'न्यूयार्क टाइम्स' में छपी 'लैंड विदआउट जस्टिस' की समीक्षा भी रोक ली है। मैंने तुरंत आक्रोशपूर्ण प्रतिरोध में उन्हें लिखा। जाहिर है कि यह एक तरह का ओंछापन है—मुझे 'कसने' की कोशिश हो रही है। आखिर प्रयोजन क्या है? इस पर भी मुझे गुस्सा आता है......और मैं अपने आध्यात्मिक जीवन तथा लेखन के घोंघे में लौट जाता हूं।

४ जून १९५८

उन्होंने मिल्का (बहन) का पत्र जब्त कर लिया है। कितना घिनौना है यह सब! जितना कष्ट वे मुझे पहुंचा सकते हैं, उससे अधिक झेलने की सामर्थ्य मुझमें है। मुझे असंतुलित करने की कोशिश की जा रही है। मैं प्रतिरोध कर रहा हूं, मानो युगोस्लाविया रूस को प्रतिरोध में पत्र भेज रहा हो।

१५ जून १९५८

मैं सूरज की किरणें न पा सकूं, इसलिए मेरे घूमने का समय सुबह ९·३० के बजाय ७·३० कर दिया गया है। क्या कोई भी प्रतिक्रिया व्यक्त न करूं?

कल 'पोलितिका' में इमरे नाज तथा अन्य साथियों के गोली से उड़ाये जाने की खबर छपी है। मुझे इनके लिए बहुत अफसोस है। कभी-कभी सोचता हूं कि मेरा भी यही अंत होगा। मैं हमेशा महसूस करता रहा हूं कि इमरे नाज और मैं एक ही तरह के तो आदमी हैं, केवल इतना-सा अंतर है कि मैं लिखता हूं। शायद उसने भी यही किया होता, मगर उसे मौका ही नहीं मिला......। नाज ने ईमानदारीपूर्ण मौत पायी और उसका अर्थ बहुत व्यापक है। मुझे विश्वास है कि वह हंगरी के इतिहास में हमेशा एक महापुरुष माना जायेगा, हालांकि उसे बहुत कुछ करने का मौका नहीं मिला। उसने सिद्ध कर दिया कि साम्यवादियों में भी लोकतंत्रवादी और सच्चे समाजवादी लोग हैं......भले ही उनका अंत नाज की तरह हो।

......मैं उसके प्रति श्रद्धा अर्पित करता

ग्वालियर रेयन के

२६

गौरवशाली वर्ष

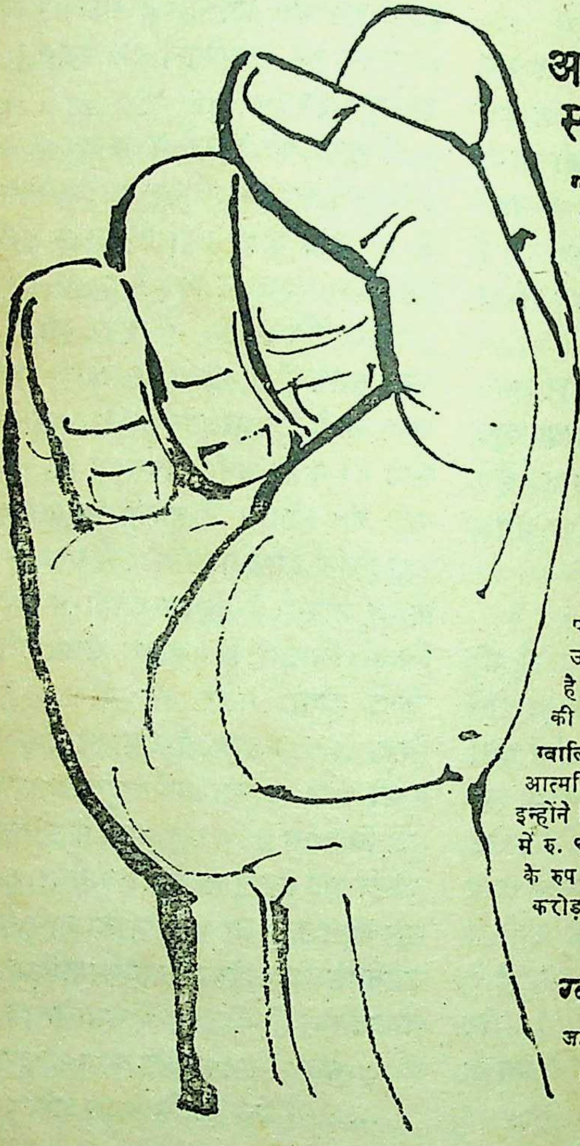

आत्मनिर्भरता का स्वप्न साकार

ग्वालियर रेयन ने देश के आजाद होने के साथ ही साथ रेयन वस्त्र, स्टेपल रेशे, रेयन-ग्रेड पल्प और रेयन स्टेपल रेशे बनानेवाले प्लांट की मशीनों का निर्माण शुरू कर दिया.

ग्वालियर रेयन, बांस व अन्य सस्ती लकड़ियों से रेयन-ग्रेड के घुलनशील पल्प तथा रेयन, पल्प व संबंधित प्लांटों की आधुनिक मशीनों के अग्रगण्य निर्माता हैं तथा रेयन उद्योग के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयत्नशील है.

आज ग्वालियर रेयन के स्टेपल रेशों का उत्पादन, ५ करोड़ २० लाख देशवासियों की वस्त्र की जरूरतें पूरी करने के लिए पर्याप्त है. लकड़ी के पल्प का वार्षिक उत्पादन, एक लाख टन से भी ज्यादा का है जो सेल्यूलोस के रेशों की दृष्टि से रुई की ५.२ लाख गांठों के बराबर है.

ग्वालियर रेयन ने देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है. इन्होंने पिछले दस वर्षों में, राष्ट्रीय अधिकोष में रु. ९० करोड़ से भी ज्यादा धनराशि टैक्स के रुप में दी और इसी दौरान रु. ३६० करोड़ की विदेशी-मुद्रा भी बचायी।

ग्वालियर रेयन

जहां राष्ट्र की प्रगति ही
एकमात्र उद्देश्य है

Soubhagya GR 74-3-HI

दि ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यु. (वीविंग) कं. लि. बिरलाग्राम, नागदा (म. प्र.)

हूं, क्योंकि प्रत्येक ईमानदार व्यक्ति को शहीदों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करनी ही चाहिये।

२१ अगस्त १९५८

जीवन का सौंदर्य उसकी विविधता में है, यानी उसके लगातार होते रहने में है। इसी कारण जेल से ऊब होती है। वह जीवन के मूर्त सौंदर्य तथा परिवर्तन की अनुभूति छीन लेती है। घटनाविहीन जीवन तो अपंग है, परिवर्तन के बिना ज़ीवन मृत्यु जैसा है।...... यह धीमी और मुलायम मौत है।

३ दिसंबर १९५८

...... मेरा दृढ़ विश्वास है कि व्यक्ति अपने भीतर किसी विशेष तत्त्व पर नियंत्रण लगाये बिना 'अच्छा आदमी' नहीं बन सकता। क्या उस दुष्टतापूर्ण 'स्व' पर काबू पाना संभव है? मुझे कुछ मालूम नहीं। पर हां, धर्म इन प्रश्नों पर गहराई से चिंतन करता है, हमें धर्म से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।...... इतना तो जाहिर ही है कि वर्तमान व्यवस्था अच्छी नहीं है।

३ मार्च १९५९ (तीसरा पहर)

...... बुनियादी बात यह है कि कानून तोड़ने वालों और उनके कार्यों को समझने की कोशिश की जाये तथा लोकतांत्रिक दृष्टि गहराई के साथ अपनायी जाये। राजनैतिक सत्याग्रही वास्तव में अपराधी नहीं हैं, वे शासकों के विचार और कार्यक्रम के विरोधी होते हैं। यह समझना बहुत जरूरी है कि किसी भी व्यवस्था के अंतर्गत कोई भी विचार पूर्णतया हितकारी नहीं होता तथा उसे अबाध शक्ति प्राप्त नहीं होनी चाहिये।

...... मैं सोचता हूं कि मेरे साथ कितना अन्याय हुआ है। मुझे सिर्फ इसलिए जेल में फेंक दिया गया कि मैं अपने विचार प्रकट करने से बाज नहीं आया। जिन्होंने मेरे साथ यह व्यवहार किया है, शायद वे सोचते हों कि उन्होंने कोई बड़ा भारी मानवतावादी काम किया है, क्योंकि उन्होंने मुझे फांसी न लगाकर नौ वर्ष के लिए जेल में डाल दिया है। उस घोर अपमान और आरोपों के थपेड़ों का तो जिक्र ही क्या, जो मुझे झेलने पड़े हैं।......

...... वे कितने नीचे उतर आये! मुझे अपनी सफाई तक का मौका नहीं मिला। ...... खैर। सूरज फिर चमकेगा। समय सब कुछ ठीक कर लेगा। जब हम इस धरती पर नहीं रहेंगे, तब इस बात का कोई महत्त्व नहीं रहेगा कि हम कैसे जिये—लेकिन हमारा वह जीना हमारे पीछे जीवित रहने वाले लोगों के लिए एक पाठ बन जायेगा।

२४ मार्च १९५९

गयी रात को मैंने एक सपना देखा। उसका एक वाक्य मुझे शब्दशः याद है—'बुराई तब पैदा होती है, जब किसी देश का प्रधान रसोइया अपने बनाये हुए व्यंजनों को चखकर नहीं देखता।'

कितने जुझार हैं आप?

जीवन विकट समरांगण भले न हो, मगर फूलों की सेज भी नहीं है। लोगों के स्वार्थ आपस में टकराते हैं, इसलिए अपने लक्ष्य और अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए लड़ना-जूझना पड़ता है। मगर लड़ाका होना अलग चीज है और आक्रामक होना अलग चीज। आक्रामकता आ बैल मेरे सींग मार कहकर दूसरों से झगड़ा, लड़ाई मोल-लेती है। लड़ाकापन विषम परिस्थितियों का धीरतापूर्वक सामना करने और उन पर विजय पाने की शक्ति देता है। वह दूसरों में आपके प्रति प्रशंसा-भाव जगाता है, जिससे वे आपके साथ सहयोग करने को उन्मुख होते हैं।

आइये, इस प्रश्नावली द्वारा अपने लड़ाकापन को नापिये। इन बीस सवालों को पढ़िये। ईमानदारी से इनका उत्तर 'हां' या 'ना' में दीजिये। कुंजी को उसके बाद ही देखिये।

१. क्या अड़चनें और कठिनाइयां आपको और अधिक परिश्रम करने की प्रेरणा देती हैं?

२. क्या विफलता से आप दुगुने जोश से नया प्रयत्न शुरू करते हैं?

३. जब काम ठीक से न चल रहा हो और सफलता के कोई आसार नजर न आते हों, तब भी क्या आप हार मानने से इन्कार कर देते हैं?

४. क्या आलोचना और विरोध से आपका सफल होने का संकल्प और पक्का हो जाता है।

५. क्या जब लोग आपके काम में कोई दिलचस्पी नहीं लेते, तब भी आप चुपचाप अपना काम जारी रख सकते हैं?

६. जब लोग आपकी नाक में दम किये हुए हों, तब भी क्या आप अपना काम चुपचाप जारी रख सकते हैं?

७. जो लोग अटपटे स्वभाव के हैं, जिनके साथ मिलकर काम करना कठिन है, उनके साथ पटरी बैठाने का आप लगातार प्रयत्न करते रहते हैं?

८. क्या आपकी यह कोशिश होती है कि हारी-बीमारी में भी प्रसन्न वदन रहूं और अपनी चिंता व व्यग्रता से दूसरों को परेशान न करूं?

९. जब आपकी दिलचस्पियों में आपके दोस्त जरा भी दिलचस्पी न लें तब भी क्या आप अपनी राह चलते रहेंगे?

१०. क्या आप दूसरों के दबाव में आये बिना स्वयं फैसले कर सकते हैं?

११. क्या चर्चा और बहस में अपने दृष्टिकोण का समर्थन कर सकतें हैं?

१२. क्या आप अपने सिद्धांतों पर स्थिर रह सकते हैं, भले वे सिद्धांत लोकप्रिय न हों और आपके साथी व स्वजन उसे स्वीकार न करते हों?

१३. क्या आप ऐसे मित्र का साथ देते

हैं; जो लोकप्रिय नहीं है?

१४. क्या आप निराशावादी बातें सुनकर किसी प्रयत्न या कदम से मुंह मोड़ने से इन्कार कर देते हैं?

१५. क्या दूसरों पर हावी होने की कोशिश करने वालों के आगे आप बिना झुके रह पाते हैं?

१६. क्या किसी नयी विद्या या हुनर को हस्तगत करने के लिए आप अपने से छोटी उम्र वालों के साथ शिक्षणालय जाने को तैयार हो जाते हैं?

१७. क्या अपनी हालत सुधारने के लिए या नया अनुभव पाने के लिए आप नौकरी, मकान, शहर बदलने को तैयार रहते हैं?

१८. क्या बहुत बड़ी विफलता या दुःख शोक के बाद आप अपने को संभालकर फिर काम में जुट जाते हैं?

१९. जब चारों ओर हो रहे परिवर्तन आपको पसंद न हों, तब भी क्या आप परिस्थितियों का अच्छा उपयोग कर लेते हैं?

२०. क्या आप भविष्य के प्रति आशावादी हैं और कैसी भी परिस्थितियां आयें, भविष्य का यथाशक्ति लाभ उठाने को कृतसंकल्प हैं?

कुंजी : प्रत्येक 'हां' के पांच अंक दीजिये। यदि आपके कुल प्राप्तांक ७० हैं तो आपकी स्थिति बहुत अच्छी है। ६० से ७० तक स्थिति संतोषजनक है। ५० से ६० तक भी ठीक है। प्राप्तांक ५० से कम हैं तो स्थिति अच्छी नहीं है। लड़ने की शक्ति अपने में विकसित कीजिये। मगर हां इसके लिए लोगों को दुश्मन समझने की जरूरत नहीं। बल्कि उलटी बात है। यदि आप लोगों से प्रेम करते हैं, यदि आप अपने सामने ऊंचे ध्येय रखते हैं, तो आप अपने प्रियजनों के हित के लिए, अपने ऊंचे ध्येयों के लिए लड़ना सीखेंगे।

—के. यू. ऊर्मि

एक व्यापारी के पास जब भी कोई आदमी अपनी बदकिस्मती का रोना रोता और कहता कि मुझे बहुत बड़ा नुक्सान हुआ, तो वह उसे अपने कमरे में दीवार पर टंगा फ्रेम किया हुआ एक कागज दिखाता, जिस पर लिखा हुआ था :

व्यापार में असफल रहा	**१०३१**
विधान सभा के चुनाव में हारा	**'३२**
व्यापार में फिर असफल रहा	**'३३**
विधान सभा के लिए चुना गया	**'३४**
प्रमिका का निधन	**'३५**
बहुत सख्त बीमार हुआ	**'३६**
स्पीकर के चुनाव में हारा	**'३८**
कांग्रेस के चुनाव में हारा	**'४३**
कांग्रेस के चुनाव में हारा	**'४६**
कांग्रेस के चुनाव में हारा	**'४८**
सीनेट के चुनाव में हारा	**'५५**
वाइस प्रेसीडेंट के चुनाव में हारा	**'५६**
सीनेट के चुनाव में हारा	**'५८**
अमरीका का प्रेसीडेंट चुना गया	**'६०**

उपरोक्त विवरण के नीचे लिखा हुआ नाम था : अब्राहम लिंकन।

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

'निर्मल,' तीसरी मंजिल, २४१ बैकबे रिक्लेमेशन,
नरीमन पाइंट, बंबई ४०० ०२१

तार : SODACHEM
फोन : २९२४०७–२९३२९४
२९३२३५–२९३३३०

भारत में हैवी केमिकल्स के क्षेत्र में अग्रणी
अब अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी प्रस्तुत :

* अपग्रेडेड इलमनाइट *

(सिथेटिक रूटाइल ९०-९२ TiO_2

हमारे बनाये हुए रसायन :

* कास्टिक सोडा
* सोडा एश
* सोडियम बाइकार्बोनेट
* अमोनियम बाइकार्बोनेट
* केल्शियम क्लोराइड
* ट्राइक्लोरो एथिलीन
* लिक्विड क्लोरीन
* हाइड्रोक्लोरिक एसिड

* साल्ट *

सोलटेक्स
सोलटेक्स
• खाज,
• चमडी फटने,
• खरोच तथा
• फुन्सीयो के
लिये
दाद का मलहम
फार्मा-केमीको (इण्डीया) प्रा. ली. बंबई-४०

बवासीर

की पीड़ा
और जलन से,
बिना ऑपरेशन के,
शीघ्र आराम पाने
के लिए

हडेन्सा

मरहम

इस्तेमाल कीजिए !

OBM: 2670 HIN

[पृष्ठ ५१ का शेष]

वाले सर्जन ने पिछले दिन मुझे बताया था कि आपरेशन के दौरान पत्नी के शरीर की परीक्षा करने पर उसके एक अंग के कैन्सर-ग्रस्त होने की बात पता चली है। जैसा कि स्वाभाविक था, इस खबर से मैं बहुत ही दुःखी था और यह बात मैंने सबसे पहले श्रीगोपालजी को ही बतायी। भयंकर परिणाम की संभावना से उनका प्रेमल हृदय भी एकदम अकुला गया। थोड़ी देर बाद मन के कुछ स्वस्थ होने पर मैंने कहा कि श्रीगोपालजी, अब मैं चलूं। उन्हें पता था कि अपनी कार मैं स्वयं चलाता हूं। उन्होंने मुझे जरा ठहरने को कहा और अपने ड्राइवर को बुलवाकर मुझे घर छोड़ आने की आज्ञा दी। उन्हें इसकी चिंता थी कि ऐसी अस्वस्थ मनोदशा में मेरा कार चलाना सुरक्षित नहीं होगा।

इसके बाद काफी समय तक जब भी हम मिलते, वे मेरा मन बहलाने के लिए किसी न किसी नये विषय की चर्चा छेड़ते। सचमुच ऐसी उदात्तता, दूसरों की तकलीफ की ऐसी गहरी समझ बहुत कम लोगों में देखने को मिलती है।

'सलटाना' उनका प्रिय शब्द था। काम को कितनी शीघ्रता और तत्परता से वे 'सलटाते' थे, इसका एक उदाहरण देता हूं।

तीन-चार वर्ष पहले एक रात को बिरला मातुश्री सभागार के घूमने वाले रंगमंच पर किसी के जलती सिगरेट का टुर्रा फेंक देने से आग लग गयी। सभागार का उपयोग कुछ समय के लिए बंद कर देना पड़ा, जिससे बंबई अस्पताल को रोजाना बारह-एक सौ रुपये का नुक्सान होने लगा। आग का बीमा राष्ट्रीयकृत बीमा-कंपनियों के हाथ में होने के कारण चटपट मरम्मत कराने में गंभीर अड़चनें थीं। अपनी व्यावहारिक कुशलता से श्रीगोपालजी ने बीमा-कंपनियों के अधिकारियों को समझा लिया और चंद सप्ताह के भीतर मरम्मत कराकर सभागार को कार्यक्रमों के लायक बना दिया। इस अवसर पर उन्होंने सभागार को नया रूप भी दिया।

सरकारी तंत्र को अथवा और किसी व्यक्ति को यह काम कराने में शायद सात-आठ महीने लग जाते। किंतु अस्पताल की आय की उन्हें चिंता थी; सो असाधारण तत्परता और स्फूर्ति से उन्होंने इस कठिनाई का निवारण किया।

अन्याय के प्रति श्रीगोपालजी बहुत असहिष्णु थे। एक बार उनके कहने पर मैं कोई चीज; जिसकी उस समय बाजार में बड़ी मांग थी, उनके एक मित्र को बेचने को तैयार हुआ। उन्होंने मेरी ओर से सौदा तय किया और कहा कि उस दिन उस चीज का अधिक से अधिक जो बाजार-भाव होगा, वह मुझे दिया जायेगा। बाद में उस दिन का उच्चतम बाजार-भाव भी उन्होंने मुझे बता दिया। सौदा मुझे मंजूर था। मगर दो दिन बाद उन्होंने स्वयं ही मुझे फोन करके बताया—'गांधीजी, मुझे निश्चित रूप से पता चला है कि मेरे उन मित्र ने हमारे साथ न्याय नहीं

किया है, क्योंकि उस दिन उन्होंने इसी माल के इससे भी ऊंचे दाम किसी और को दिये हैं। मैं नहीं चाहता कि आपको कम भाव पर चीज बेचनी पड़े। सो आप माल की डिलिवरी न कीजिये और उन सज्जन से कह दीजिये कि श्रीगोपाल ने मना किया है।' साथ ही उन्होंने मुझे यह सलाह दी कि जो भी अधिक से अधिक दाम दे, उसे चीज बेच दीजिये।

उनके किसी परिचित परिवार की एक युवती के पति का सड़क-दुर्घटना में देहांत हो गया। युवती के श्वसुर-कुल के लोगों ने उसे न्यायोचित उत्तराधिकार से वंचित रखने की कोशिश की। श्रीगोपालजी को यह बात बहुत अखर गयी। वे उस युवती की ओर से लड़े। उन्होंने अदालत तक जाने की धमकी दी और जब मामला समझौते से सुलझा और लड़की को समुचित उत्तराधिकार मिल गया, तभी उन्होंने चैन की सांस ली।

दूसरों की सहायता करने की उनकी इस प्रवृत्ति के जाने कितने उदाहरण मैंने अपनी आंखों से देखे हैं। यदि कभी मैं इस बात का उनसे जिक्र करता, तो वे बड़े सहजभाव से कहते थे—'गांधीजी, जिंदगी में यही तो सबसे अच्छा है।' ऐसे अवसरों पर मुझे अंग्रेजी का सुप्रसिद्ध उद्धरण याद आ जाता था :

'इस संसार में से मैं बस एक ही बार तो गुजरूंगा। इसलिए किसी मनुष्य का जो भी भला कर सकूं अभी कर दूं, जो भी करुणा बरत सकूं अभी बरत दूं। इसे मैं मुल्तवी न करूं, नजर-अंदाज न करूं; क्योंकि मैं फिर इस राह से नहीं गुजरूंगा।'

लंबे और अतिघनिष्ठ स्नेह-संबंध के कारण कई बार हम आपसे इस बात की भी चर्चा किया करते थे कि भगवान हमें यहां कितने समय रखेगा और किस प्रकार की मृत्यु हमें नसीब होगी। (वे ६८ वर्ष के थे और मैं ७४ का हूं।) मैं कहता कि उत्तम तो यह होगा कि सुबह के पहर में बिना कष्ट के आदमी चल बसे, और सवेरे उसकी चाय लाने पर पता चले कि वह तो चिरनिद्रा में सो गया है। वे मेरी इस बात से पूर्णतः सहमत थे।

ठीक ऐसी तो नहीं, मगर काफी हद तक दुःखरहित मृत्यु उन्होंने पायी। वे आत्मीय जनों के बीच आनंद से बैठे हुए थे कि उनके मस्तिष्क की नस फट गयी और वे बेहोश हो गये। उसी बेहोशी में वे शांतिपूर्वक मृत्यु की गोद में चले गये। मुझे लगता है यह केवल योगायोग नहीं था, अपितु उनकी प्रार्थना का ईश्वरीय उत्तर था।

देहांत से दो मास पूर्व उन्होंने मृत्यु के विषय में संस्कृत का एक अत्यंत सुंदर श्लोक मुझे सुनाया था :

अनायासेन मरणं विना दैन्येन जीवनम्।
देहान्ते तव सान्निध्यं देहि मे मधुसूदन॥

(कष्टरहित मृत्यु, दैन्यरहित जीवन और देहांत के बाद तुम्हारा सान्निध्य—ये तीन चीजें मुझे दो हे प्रभु!)

ऐसा ही जीवन और ऐसा ही मरण उन्होंने पाया। मुझे उनसे रश्क-सा होता है।

★

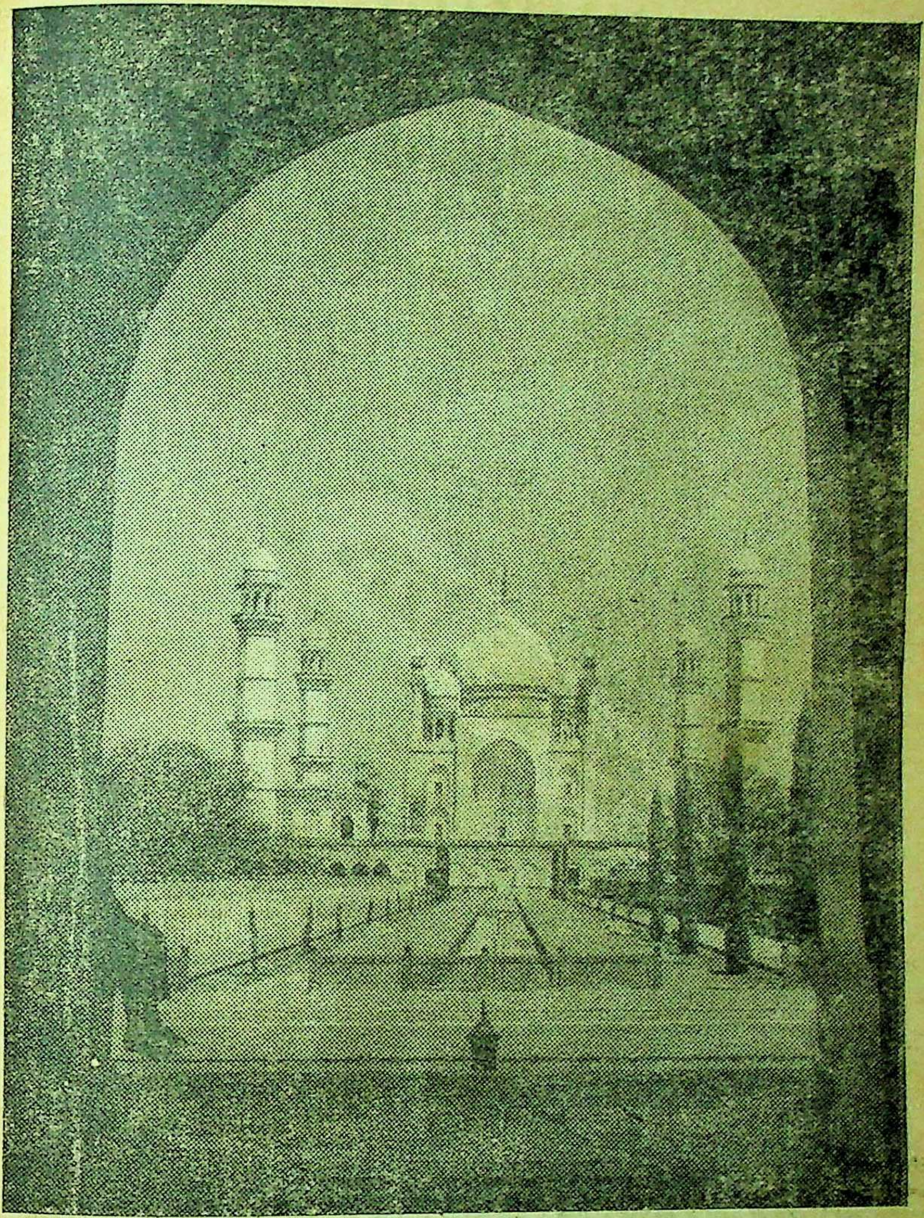

चित्रप्रश्न-५

क्या आप इस इमारत को पहचानते हैं ? [फोटो : स्व. श्रीगोपाल नेवटिया]

अब
आधी क़ीमत में
जगमग सफ़ेदी
स्वस्तिक
डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर

जब भी
'स्वस्तिक'
ख़रीदें,
६ रु.
बचायें

ऑप्टिकल व्हाइटनर युक्त नया स्वस्तिक डिटर्जेण्ट धुलाई का पाउडर आपके कपड़ों को जगमग साफ़-सफ़ेद धोता है. महँगे उत्तम डिटर्जेण्ट धुलाई के पाउडरों की तरह 'स्प्रे-ड्राइड' होने के कारण यह पानी में बहुत जल्दी घुल जाता है. और धुलाई के बाद कपड़े जगमगाने चमचमाने लगते हैं. इससे हर प्रकार के वस्त्र धोये जा सकते हैं. और फिर भी हर १ कि. ग्रा. पैक पर ६ रु. की बचत! यह १ कि. ग्रा. और ½ कि. ग्रा. के पॉलिपैक में मिलता है.

कम से कम दाम... ज़्यादा से ज़्यादा काम

Shilpi-DM 9A/75 hin

[पृष्ठ ५५ का शेष]

सहारे लेटे हुए थे। लोग बैठे, राजकुमारीजी ने बात चलायी। सरदार ने कहा—'राजकुमारी, तुमने जो सुना है, ठीक सुना है।' मौलाना ने चौंककर कहा—'इससे तो बड़ा अनर्थ होगा। राष्ट्रवादी मुसलमानों की स्थिति बिगड़ेगी और सारे देश में दंगे हो जायेंगे।' सरदार शरारती आंखों से देख रहे थे। मसनद पर थोड़ा सिर ऊंचा किया, फिर बोले—'मौलाना साहब, जो दंगे करेगा या सिर उठायेगा, कुचल दिया जायेगा।' और बस भेंट खत्म हो गयी।

और लोगों ने देखा कि चंद दिनों के अंदर हैदराबाद सर कर लिया गया और बाद में जब सरदार हैदराबाद गये तो निजाम बेचारे खुद हवाई अड्डे पर आये और उनका स्वागत किया। धीरे-धीरे सभी देशी राज्य संप्रभु भारत राष्ट्र में मिलाकर प्रांतीय इकाइयों में परिवर्तित कर दिये गये। हैदराबाद की तरह ही जूनागढ़ पर भी कब्जा कर लिया गया। बहुत बाद में १९६१ में जवाहरलालजी को गोवा, दमण और दीव के मामले में वही नीति अपनानी पड़ी।

सर्वविदित है कि यदि सरदार पर बात छोड़ दी जाती तो कश्मीर तथा कच्छ का रण भी अन्य प्रादेशिक इकाइयों की भांति आज भारत के भाग होते और अंतरराष्ट्रीय शतरंज की गंदी चालें समाप्त हो गयी होतीं। सरदार खीझ में कहते थे—'जवाहरलालजी सज्जन, सरल आदमी हैं। वे इन मक्कारों की भाषा और चाल नहीं समझते। इनसे तो मैं ही निबट सकता हूं।' इतिहास साक्षी है कि उनकी बात में कितना तथ्य था और उसे न मानकर हमने कितना दर्देसिर मोल ले रखा है।

भारत का एकीकरण और दृढ़ीकरण उनका महत् कार्य है। घोर श्रम के कारण उनका शरीर तो टूट ही गया था, परंतु अपने देवता व गुरु गांधीजी की हत्या ने उन्हें बिलकुल निढाल करके रख दिया। उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी कि एक हिंदू के हाथ गांधीजी मारे जा सकते हैं; इसलिए उन्हें गहरी चोट लगी और वे पड़ गये।

अंतिम दिनों में उन्होंने जवाहरलालजी व साथियों से कहा था—'कांग्रेस ने किसी समय भाषावार प्रदेशों का जो स्वप्न देखा था, वही अब हमारे लिए घातक हो गया है। कृपया अगले पंद्रह वर्षों में कोई नया भाषा-राज्य न बनाइयेगा और केवल एक भारत तथा उसके निवासी होने के गौरव का भाव सबमें प्रचारित कीजियेगा।' जवाहरलाल ने आश्वासन दिया था, किंतु आंध्र के आतंकवादियों के तूफान तथा हिंसा में वह उड़ गया। फिर तो एक के बाद एक नये-नये भाषा-राज्य बनते गये। परिणाम यह है कि एक ही दल की राज्य-सरकारों में घोर प्रतिद्वंद्व, दुश्मनी और झगड़े हैं तथा प्रांतीयता की भावनाएं और दृढ़ हो गयी हैं।

व्यक्तित्व

स्वभाव तथा जन्मजात प्रतिभा से सरदार एक योद्धा थे। उनमें योद्धा का साहस था, कष्ट-सहिष्णुता थी, वीर की क्षमा थी।

जिन्हें अपना लिया, उन पर पूर्ण विश्वास करते थे और उनके योगक्षेम का हमेशा पूरा ध्यान रखते थे। अन्याय के प्रति प्रबल रोष और किसानों के प्रति मृदुल भावना, ये दो बातें उनके जीवन की धुरी थीं। युद्ध में, संघर्ष में वे जैसे चौगुने हो जाते थे; मध्ययुगीन राजपूत की नाईं उनका जीवन ऐसे समय हंस पड़ता था। युद्ध के समय वल्लभभाई में बिजलियों का नर्तन होता था। छाती में आंधी का साहस, भुजाएं फड़कती हुई, दिल उमंगों के सुरूर पर चढ़ा हुआ, वाणी आग उगलने वाली—एक आदमी जो अपनी हर सांस के साथ खतरे को प्यार करता था।

परंतु युद्ध-निपुणता के साथ उनमें अपूर्व शासन-क्षमता, बड़े-बड़े संघटनों को स्थापित करने और चलाने की शक्ति भी थी। एक ओर उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता के स्वप्न को सिद्ध करने में जहां बेजोड़ श्रम किया, वहीं स्वतंत्र भारत के निर्माण और उसे शक्तिसंपन्न बनाने का भी प्रायः असंभव-सा काम किया।

यह ठीक है कि उनमें जवाहरलालजी का संस्कृति का लोच और पालिश नहीं थी; परंतु जटिल प्रश्नों को सुलझाने और चक्रव्यूह को तोड़ने तथा व्यावहारिक बुद्धि का आरोपण करने में उनके जोड़ का कोई कांग्रेस में नहीं था।

यदि वे दस-पांच साल और जीवित रह गये होते, तो भारत का नक्शा शायद दूसरा होता। परंतु गांधीजी को न बचा सकने का दर्द उन्हें इतना था कि दिन-दिन उसी में घुलते गये और १५ दिसंबर १९५० को बंबई के बिड़ला-भवन में सदा के लिए सो गये।

इतिहास इस भारत-निर्माता के चरणों में प्रणत है।

—७७/१५६, लूकरगंज, इलाहाबाद-१

★

क्षमा वीरस्य भूषणम्

कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष डा. अंसारी मरीजों की देखभाल भी करते थे और देशसेवा के कार्य भी। यह वह समय था जब स्वतंत्रता-आंदोलन तेजी से चल रहा था। उनका एक निजी नौकर खुफिया पुलिस में चला गया और उसने बहुत-सी राजनैतिक जानकारियां सरकार को दीं। अंसारी साहब ने उसे नौकरी से हटा दिया।

एक दिन उसी नौकर की औरत अंसारी साहब के पास पहुंची और रोती हुई बोली—'साहब, मेरे घर वाले बहुत बीमार हैं। सब डाक्टरों ने जवाब दे दिया है। बस आप ही उनकी जान बचा सकते हैं।'

अंसारी साहब ने दवा का बैग हाथ में लिया और चुपचाप उस औरत के साथ चल दिये। कई दिन तक उन्होंने रोगी की चिकित्सा की और उसे अच्छा कर दिया। उस आदमी ने उनके पैरों पर गिरकर क्षमा मांगी और खुफिया पुलिस की नौकरी छोड़ दी।

—डा. गोपालप्रसाद 'वंशी'

★

हंसी के बुलबुले

सत्यनारायण नाटे

एक बैंक-मैनेजर की पत्नी मैके से एकाएक लौट आयी और पति से बोली–'मैं तो घबरा गयी थी। तुमने मेरे पांच-पांच पत्रों का कोई उत्तर ही नहीं दिया।'

'पर तुम्हारे पत्र तो मुझे मिले ही नहीं।' मैनेजर ने कहा–'हां, तुम्हारे नाम से किसी ने कुछ जाली पत्र जरूर लिखे हैं।' और उसने पांचों चिट्ठियां सामने रख दीं।

'कमाल के हो तुम भी! ये सब तो मैंने ही लिखी थीं।' पत्नी बोली।

'तुमने?' आश्चर्य से मैनेजर पति बोला–'पर तुम तो अपने दस्तखतों में नाम के नीचे एक लाइन खींचकर दो बिंदियां रखती हो। इन सबमें एक-एक ही बिंदी है।'

ooo

मालकिन (नौकरानी से) : रधिया, तूने रेफ्रिजेरेटर साफ कर दिया न?

रधिया : हां मालकिन, बिलकुल साफ कर दिया है। मिठाइयां तो बहुत ही स्वादिष्ट थीं।

ooo

प्रश्न : वकील कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : दो प्रकार के; एक तो जो कानून जानते हैं, और दूसरे जो जज को जानते हैं।

ooo

'क्या तुम्हारे बचपन की कोई आशा जीवन में फलित हुई?'

'हां, जब मेरे शिक्षक मेरे बाल खींचते थे तो मैं चाहा करता था कि मेरे बाल न रहें तो अच्छा। आज मैं गंजा हूं।'

ooo

शशि (उम्र चार वर्ष) : अम्मा, जब

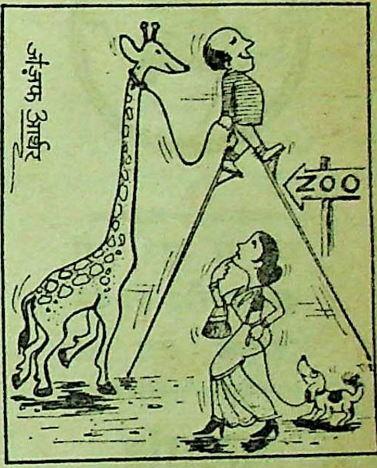

व्यंग्यचित्र : जोज़फ आर्थर

पुलगांव

मिल्स का कपड़ा हर नागरिक के लिए, हर प्रसंग पर उपलब्ध है।

आकर्षक रंगों की पॉपलीन, बढ़िया किस्म की शर्टिंग, दफ्तर में पहनने के लिए कोटिंग्ज, पेन्टों के लिए टिकाऊ ड्रिल्स, हर किस्म की धोतियां, सुंदरियों की मनमोहक साड़ियां, इसके अतिरिक्त लांग क्लॉथ और मारकीन्स

जब भी आप सूती वस्त्र खरीदें तो यह ट्रेडमार्क देख लें

पुलगांव

काटन मिल्स

लिंक चेन

*

जिसकी एक-एक कड़ी मजबूत, परखी हुई और पूर्णतः विश्वसनीय है

*

सभी उद्योगों व वाहनों में उपयुक्त

*

एलोय स्टील चेन एक विशेषता

*

इण्डियन लिंक चेन मैन्यु. लि.
भाण्डुप; बंबई-७८

मैं पैदा हुई तब तू घर पर ही थी न ?

मां : ना बेटी, मैं तेरी नानी के यहां थी।

शशि : तो अम्मा, मुझे देखकर तुझे ताज्जुब हुआ होगा न।

○ ○ ○

पिता : बेवकूफों के सवालों का जवाब तो बड़े-बड़े अक्लमंद भी नहीं दे पाते।

पुत्र : इसीलिए तो मैं पिछले इम्तहान में फेल हो गया।

○ ○ ○

एक धनी बुढ़िया ने सुनने का उपकरण (श्रवण-यंत्र) खरीदा, जो इतना छोटा था कि दूसरों को दिखाई ही नहीं देता था। एक सप्ताह बाद वह बुढ़िया दुकानदार को धन्यवाद देने आयी। दुकानदार ने पूछा—'आपके परिवार वालों को भी पसंद आया ?'

'अरे, वे तो जानते भी नहीं कि अब मैं सुन सकती हूं। उनकी बकवास मेरे सामने भी चलती रहती है और एक सप्ताह में मैं उनकी बातें सुनकर तीन बार अपनी वसीयत बदल चुकी हूं।' बुढ़िया ने बताया।

○ ○ ○

एक समाचार-पत्र के कार्यालय में जाकर एक आदमी ने विज्ञापन-अधिकारी से पूछा—'मृत्यु-संबंधी विज्ञापन देने में कितना खर्च पड़ेगा ?'

'पांच रुपये प्रति इंच।'

'फिर तो मेरे बस के बाहर की बात है, काफी खर्चा पड़ जायेगा। मरने वाला आदमी पांच फुट छह इंच लंबा है।' उस आदमी ने दरवाजे की ओर बढ़ते हुए कहा।

—नावाटोली, डालटनगंज, बिहार

* * *

मेरे मित्र गोपाल वेदालंकार और जगन्नाथ दो भाई हैं। जगन्नाथ छोटे हैं। उनके पिता बड़े जमींदार थे। जिन दिनों भूदान यज्ञ जोरों पर था, एक भूदान कैलेंडर छपा था, जिसमें विनोबाजी का चित्र था और नीचे छपा था—'सबै भूमि गोपाल की।' एक दिन जगन्नाथ वह कैलेंडर देखकर मुझसे बोला—'भाईजी ये भूदान वाले कब से झूठ बोलने लगे ?' आशय न समझते हुए मैंने पूछा—'क्यों क्या हुआ ?' जगन्नाथ बोला—'देखिये ना, वहां लिखा है, सबै भूमि गोपाल की। मैं कहता हूं, आधी भूमि जगन्नाथ की भी तो है।' **—वेदकुमार वेदालंकार**

○ ○ ○

'नसरुद्दीन बेटे, सवेरे जल्दी उठना चाहिये।'

'क्यों अब्बा ?'

'अच्छी आदत है यह। एक रोज मैं पौ फटने से पहले उठकर घूमने निकला। रास्ते में मुझे अशरफियों से भरा थैला पड़ा मिला।'

'अब्बा, शायद रात को किसी ने गिरा दिया होगा।'

'नहीं बेटे, रात को मैं उधर से निकला, तब तो वहां नहीं था वह।'

'तो फिर सवेरे जो आपसे पहले उठा, उसने गिरा दिया होगा।'

* * *

देश - विदेश में

विख्यात, श्रेष्ठतम

पान मसाला

ASHOK & COMPANY
KANPUR
PAN BAHAR ®

पान बहार

पान में या ऐसे ही खाने के लिये सर्वप्रिय

१०० ग्राम, २५० ग्राम, ५०० ग्राम तथा एक किलो के पैकिंग में उपलब्ध

अशोक एण्ड कं. ५२/३४ नयागंज, कानपुर

अपनी-अपनी दृष्टि

उपाध्याय अमरमुनि

कहानी उस समय की है, जब विद्यार्जन का एकमात्र केंद्र गुरुकुल ही हुआ करते थे, जहां आचार्य द्वारा बच्चों को जीवन-निर्माण एवं जीवन-विकास का व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक दोनों प्रकार का प्रशिक्षण बिना किसी भेदभाव के दिया जाता था।

एक गुरुकुल में दो राजकुमार भी पढ़ते थे, जो सगे भाई थे। दोनों के मनोभावों एवं वृत्तियों में जमीन-आसमान का अंतर था। दोनों भिन्न-भिन्न प्रकृति के थे। दोनों की दृष्टि पृथक्-पृथक् थी।

एक दिन आचार्य दोनों राजकुमारों को साथ लेकर घूमने निकल पड़े। गुरु-शिष्य मुक्तभाव से जा रहे थे प्रकृति के प्रांगण में। प्राकृतिक दृश्य मन में अनोखे आनंद का संचार कर रहे थे।

कुछ प्रकृति-छटा निहारते तथा कुछ पारस्परिक विचार-चर्चा करते हुए तीनों चले जा रहे थे। आचार्य की दृष्टि सामने के आमवृक्षों के झुरमुट की ओर गयी, उन्होंने देखा कि एक बालक डंडा मारकर आम के वृक्ष पर से पके हुए आम तोड़ रहा है। प्रत्येक मार पर आम टूट-टूटकर नीचे गिर रहे हैं।

आचार्य ने शिष्यों को भी यह दृश्य दिखलाया। फिर बड़े भाई से पूछा–'बेटा ! तुम क्या देख रहे हो ? इस दृश्य के प्रति तुम्हारा क्या चिंतन है ?'

शिष्य ने प्रश्न सुना और बोला–'गुरुजी! मैं देख रहा हूं कि जिस प्रकार से यह वृक्ष डंडे खाकर भी मारने वाले को मीठे-मधुर आम दे रहा है, इसी प्रकार आदमी को भी स्वयं दुःख झेलकर भी दूसरों को सुख देना चाहिये। स्वयं कष्ट उठाकर भी दूसरों की सुख-सुविधा के साधन जुटाना सज्जनों का काम होता है।'

फिर आचार्य ने छोटे भाई के संमुख भी वही प्रश्न रखा–'बेटा ! तुम क्या देख रहे हो ? कहो इस दृश्य के प्रति तुम्हारा चिंतन क्या है ?'

प्रश्न सुनकर वह बोला– 'गुरुदेव ! मैं देख और सोच रहा हूं कि जब यह जड़ वृक्ष भी बिना डंडा खाये आम नहीं देता, तब भला आदमी से बिना डंडे कैसे काम निकाला जा सकता है? जो दूसरों पर डंडे के जोर से अपना रोब तथा दबदबा जमाकर रखते हैं, वही लोग सुखी रह सकते हैं।'

दोनों की बातें सुनीं और आचार्य आगे बढ़ गये। दोनों के विचारों में, चिंतन में, कार्यपद्धति में कितना अंतर! यह सब दृष्टि का ही भेद है। एक ही प्रश्न के उत्तर में दोनों की पृथक्-पृथक् कल्पना और विचार-श्रेणी काम कर रही है। यह अपनी-अपनी दृष्टि ही तो है। [**'श्री अमरभारती' से**]

★

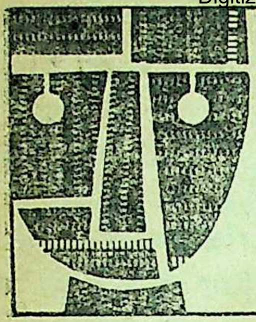

कुछ इधर से कुछ उधर से

मित्र

विज्ञान के नियमों का उपयोग करके जनता को मूर्ख बनाने का काम कोई नया नहीं है। प्राचीन काल से यह काम होता रहा है। आज के इस वैज्ञानिक युग में भी अनेक जनों की आस्था चमत्कारों में बनी हुई है।

प्राचीन मिस्र के पुजारियों द्वारा लोहे के भारी-भरकम दरवाजों का बिना हाथ लगाये खोला जाना, भूमि फाड़कर शिवलिंग का बाहर निकलना इत्यादि ऐसे कई चमत्कारों के बारे में आपने सुना ही होगा! इतिहास में टायर के मंदिर में ऐसे खंभे का उल्लेख है, जो रात के अंधेरे में चमकता था। हो सकता है कि यह स्तंभ फ्लोआरस्पार का बना हुआ हो, जिसे नकली पन्ना भी कहते हैं और जो एक स्फुरदीप्त (फास्फोरेसेंट) पदार्थ है। यह पदार्थ सूर्य की किरणों को सोखकर उसे लाल रंग के प्रकाश के रूप में छोड़ता रहता है। इसी प्रकार का उल्लेख साइप्रस में स्थित हरमोस की कब्र के पास रखी शेर की प्रतिमा के बारे में है। उसकी आंखों में भी शायद ये पन्ने जड़े हुए थे जिससे उसकी आंखों से रात के अंधेरे में मीलों दूर तक तीव्र रोशनी दिखाई देती थी। उसी शेर के डर के मारे सदियों तक साइप्रस पर हमला नहीं हुआ।

हम यह नहीं जानते कि इन्हें बनाने वालों को विज्ञान की जानकारी थी या नहीं। परंतु इतना तो कह ही सकते हैं कि उन्होंने वैज्ञानिक तथ्यों का काफी अच्छा उपयोग किया। इसी प्रकार का एक खेल कुतुबनुमा (कंपास) की सहायता से जादूगर करते हैं।

१. जैसा कि आप जानते हैं, कुतुबनुमा (कंपास) की सूई का एक कोना उत्तर दिशा की ओर रहता है और दूसरा दक्षिण की ओर। सूई कील (पिवट) के ऊपर झूलती हुई लगी होती है। सूई के एक कोने पर किसी सुंदरी की छोटी-सी मूर्ति लगी होती है और उत्तर एवं दक्षिण दिशाओं में दो तस्वीरें जड़ दी जाती हैं। इनमें से एक तो किसी सुंदर पुरुष या जाने-पहचाने फिल्मी हीरो की होती है और दूसरी किसी कुरूप पुरुष या फिल्मी विलन की। जादूगर दर्शकों से कहता है कि आइये देखें कि यह सुंदरी किसे प्यार करती है। उसके बाद वह सूई को घुमाकर छोड़ देता है और सूई-सुंदरी हीरो

के सामने रुक जाती है। इस क्रिया को चाहे कितनी बार दुहरा लें, वह हमेशा हीरो के सामने ही रुकेगी। इसी प्रकार सीताजी, रामचंद्रजी और रावण की तस्वीरों का उपयोग करके भक्त लोगों की भावना से भी खेला जाता है।

२. जादूगर दर्शक के सामने एक मेज पर बैठ जाता है और ताश की गड्डी में किन्हीं बीस पत्तों को उलटा रख देता है—यानी खोल देता है। इसके बाद वह गड्डी दर्शक को दे देता है और उसे फेंटने को कहता है। दर्शक गड्डी को फेंटता है, फिर मेज के नीचे ले जाता है और बीस पत्ते ऊपर से गिनकर एक छोटी गड्डी जादूगर के हाथ में थमा देता है! जादूगर वह गड्डी मेज के नीचे ही हाथ में रखता है और कहता है—'मेहरबानो, न तो आपको मालूम है और न मुझे कि इस गड्डी में कितने पत्ते सीधे हैं और कितने उलटे। मैं अब अपनी गड्डी में कुछ उलट-पुलट करूंगा। और यह कोशिश करूंगा कि मेरी गड्डी में उलटे पत्तों की संख्या दूसरी गड्डी के—जो कि दर्शक के हाथ में है—उलटे पत्तों जितनी ही हो।' फिर वह मेज के नीचे कुछ हेर-फेर करता है, उसके बाद अपनी गड्डी दर्शक को थमा देता है। पत्तों की गिनती की जाती है तो पता लगता है कि दोनों गड्डियों में उलटे पत्तों की संख्या बराबर है।

खेल के शुरू में जादूगर ने बीस पत्ते उलटे थे। बाद में जब वह बीस पत्तों की गड्डी दर्शक से लेता है, तो उस गड्डी में सीधे रखे पत्तों की संख्या बाकी बची गड्डी में उलटे रखे पत्तों की संख्या के बराबर होगी। यह सिद्धांत इस खेल पर लागू होता है।...... जादूगर जब उलट-पुलट की बात कहता है तो असल में वह पत्तों में कोई हेर-फेर नहीं करता, केवल पूरी गड्डी को उलट देता है। यानी जो पत्ते पहले सीधे थे वे उलटे हो गये और जो उलटे थे वे सीधे हो गये। इस तरह अब उलटे पत्तों की संख्या दोनों गड्डियों में बराबर हो गयी। आइये देखें कि आप में से कोई इस ट्रिक की सही व्याख्या लिखकर हमें भेजता है। उत्तर संपादक—नवनीत, ३४१, ताडदेव, बंबई-३४ के पते पर भेजें।

—११ सी, धवलगिरि, अणुशक्तिनगर,
बंबई-४०००९४

★

पश्चिम जर्मनी के डूसलडार्फ नगर की 'एड्वाइजरी इंस्टिटयूट फार लिविंग' ने वयस्क शिक्षण का एक खास पाठ्यक्रम चालू किया है, जिसमें सिखाया जाता है कि बुढ़ापे में मनोविनोद, खान-पान, मकान-किराया, बुढ़ापे की पेंशन, उत्तराधिकार आदि से संबंधित प्रश्नों से कैसे निबटा जाये। सितंबर के मध्य तक ३४ स्त्री-पुरुष इस कोर्स में भरती हो चुके थे। ये सभी शिक्षार्थी या तो निवृत्त हैं या शीघ्र निवृत्त होने वाले हैं। संस्था की योजना है कि कुछ औद्योगिक-व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में काम के घंटों के बाद यह पाठ्यक्रम चलाया जाये।

—चंचल

★

ग्रंथ-लोक

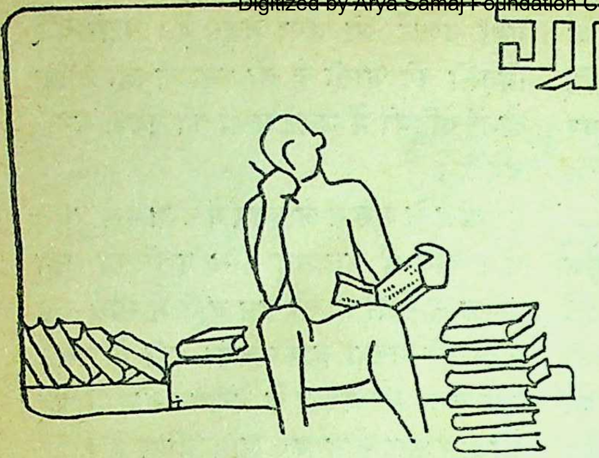

- * उत्कल-दर्शन
- * श्रीजुगलपद-बंदन
- * अनाम
- * विकल्प के पक्ष में
- * शंख-सिंदूर
- * पश्चिम के तीन रंग

*** उत्कल-दर्शन (दो भाग) * संपादक : लक्ष्मणस्वरूप माहेश्वरी; प्रकाशक: साहित्य-संगम, ब्रजराज नगर, उड़ीसा; पृष्ठ-संख्या : ४८७ + ४२३; मूल्य : ३० रुपये प्रति भाग।**

उड़िया साहित्य की चुनिंदा चीजों का अनुवाद हिंदी में प्रकाशित करने का एक अच्छा प्रयास १९६९-७० में कुछ अनुवादकों ने आरंभ किया और यह बड़े आनंद की बात है कि वह सिलसिला अव्याहत रूप से चल रहा है। इस क्रम में उड़ीसा और उड़िया भाषा की अस्मिता को उसकी समग्रता में अभिव्यक्ति देने का सबसे सुघटित प्रयास हुआ है दो भागों में प्रकाशित 'उत्कल-दर्शन' के माध्यम से।

इसका प्रथम भाग 'धर्म एवं संस्कृति', 'लोक जीवन', 'कला', 'भाषा एवं लिपि' और 'विविध' नामक उपभागों में विभक्त है और द्वितीय भाग के उपभाग हैं—'साहित्य की विविध विधाएं', 'सृजनशील उड़ीसा की साहित्यिक गरिमाएं', 'मौलिक रचनाएं' तथा 'विविध'।

प्रथम भाग के लेखों में 'उड़ीसा में धर्म और दर्शन का प्रवाह तथा अंतःप्रवाह', 'उड़ीसा के धर्म, साहित्य और स्थापत्य पर तंत्र का प्रभाव', 'उड़ीसा में तंत्र और मंत्र' (श्रीगणेश प्रसाद परिजा), 'ओड़िया स्थापत्य' (डा. कृष्णचंद्र पाणिग्राही), 'उड़ीसा की तालपत्री पोथियां' (श्री नीलमणि मिश्र), 'ओड़िसी संगीत और चंपू', 'ओड़िसी नृत्यशैली' (कविचंद्र कालीचरण पट्टनायक), 'उड़िया लिपि का विकास और देवनागरी से उसका संबंध' (डा. खगेश्वर महापात्र) आदि लेख महत्त्वपूर्ण हैं और अपने-अपने विषय को समग्र रूप से प्रस्तुत करते हैं।

दूसरे भाग में श्री सीताकांत महापात्र का लेख 'अर्थ की वक्ररेखा : आधुनिक उड़िया

कविता के कतिपय पहलू बहुत ही सुंदर और महत्त्वपूर्ण हैं। कविचंद्र कालीचरण पट्टनायक ने अपने लेख 'गीतगोविंद के अमर गायक कवि जयदेव और उनकी जन्मभूमि' में ऐसे ठोस प्रमाण दिये हैं कि बंगाल के केंदुली ग्राम को जयदेव की जन्मस्थली मानने वालों को पुनर्विचार करने के लिए बाध्य होना पड़े। इस लेख का इतिहासज्ञों के बीच प्रचार होना चाहिये।

जाने क्यों, दूसरे भाग के संयोजन में अस्तव्यस्तता आ गयी है। उड़िया कथा-साहित्य और उपन्यास-साहित्य के परिचय में अस्पष्टता है। 'सांप्रतिक उड़िया कथा-साहित्य की धारा : एक अभिव्यक्ति' (श्रीनिवास उद्‌गाता) परिचयात्मक लेख होने के बजाय केवल एक अप्रासंगिक वक्तव्य है। उड़िया उपन्यास विधा पर डा. कृष्णचरण बेहेरा का लेख 'उड़िया उपन्यास' अध्यापकीय हो गया है। सब कहीं उन्होंने तथाकथित 'रुचिपूर्ण' और 'सरस' को अच्छे उपन्यास का पर्याय मानकर सारा 'परिचय-पत्र' दे डाला है। इसी तरह श्री प्राणबंधु कर के नाटक 'स्नायुसंहार' को व्यर्थ ही ५८ पृष्ठ दे दिये गये हैं।

'मौलिक रचनाएं' उपखंड में जिन प्रतिनिधि लेखकों की रचनाएं हैं, वे प्रतिनिधि रचनाएं नहीं है। शायद जो प्राप्त हो सकीं, वही प्रकाशित कर दी गयीं। संयोजन का यह कच्चापन सालता है। काव्य और कथा विभागों में क्रमश: श्री सौभाग्य मिश्र और श्री अखिलमोहन पट्टनायक जैसे लेखकों की रचनाओं को और ललित निबंध विधा को छोड़ देना भी कुछ छूट जाने का अहसास कराता है। 'उड़िया काव्य कविता की क्रम-परिणति' और इसी तरह के एक-दो लेखों को छोड़कर अनुवाद का स्तर सामान्य है। 'उड़िया', 'ओड़िआ' 'ओडिया' तीन रूपों में एक ही नाम का छपना (द्रष्टव्य : द्वितीय भाग की सूची) अखरने वाली चीज है।

किंतु सब मिलाकर, 'फ्लैप' पर छपी श्री नामवरसिंह की टिप्पणी 'उत्कल-दर्शन हिंदी में अपने ढंग का पहला प्रयास है। जहां तक मेरी जानकारी है, अभी तक किसी प्रदेश या जाति के विषय में ऐसा सांगोपांग संग्रह कम से कम हिंदी में तो सुलभ नहीं' सही लगती है। संपादक और संयोजक बधाई के हकदार हैं। 'उत्कल-दर्शन' बहुप्रसारित हो, यही कामना है। **—महेंद्र शर्मा**

ooo

श्रीजुगलपद-बंदन (पद-संग्रह); कवयित्री : कृष्णा मां; प्रकाशक : जनहित प्रकाशन, श्रीभवन, मंडी रामदास, मथुरा, उ. प्र.; मूल्य : पांच रुपये।

स्वर्गीय जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के बाद भी ब्रजभाषा की मधुर-ललित रचना प्रकट होगी, ऐसी आशा लुप्तप्राय थी। अत: यह पद-संग्रह सुखद विस्मय की अनुभूति कराता है। ब्रजभाषा के १३२ पदों का यह संग्रह ५ भागों में विभक्त है—१. विनय (१२ पद) २. चेतावनी (४०), ३. विरह (२४), ४. रूपमाधुरी (२४) तथा ५. समर्पण (३२)। ये पद तन्मय आत्मानुभूति की

'औरमो'
छाप
अमोनिया
कागज़

(पैरा-डाइजो टाइप)

- चमकदार और सुन्दर छपाई
- बरतने और रखने में टिकाऊ
- जल्दी और अच्छे परिणाम
- कम खर्च और सस्ता.

स्टैंडर्ड साइज के रोल और शीटस हर प्रकार की मीडियम फास्ट और सूपर फास्ट की स्पीड्स में मिलते हैं. रोशनी और नमी से बचाव के लिये पोलीथीन के ट्यूब और रैपरों में पेक किया हुआ होता है. यह देर तक खराब न होने वाला अच्छी क्वालिटी की छपाई के लिये गारन्टी किया हुआ है, क्योंकि औरमो का बेस पेपर भी ओरियंट पेपर मिल्स का बनाया हुआ है।

ओरियंट पेपर मिल्स लिमिटेड
ब्रजराज नगर, उड़ीसा

कपड़ों की उजली धुलाई के लिये!

CHANDNI SOAP
MADE IN INDIA
BERAR OIL INDUSTRIES AKOLA
CHANDNI SOAP

चाँदनी
साबुन

निर्माता -
बरार ऑयल इंडस्ट्रीज
अकोला (महाराष्ट्र)

सहज अभिव्यक्ति है। मीरा की वही प्रेम-वेदना, सूर का वही लालित्य, कबीर का वही उद्बोधन, तुलसी का वही दैन्य—सब एक साथ इन पदों में परिलक्षित होते हैं। कहीं-कहीं श्रीराधा-कृष्ण की छवि के वर्णन में जयदेव की शृंगारिकता भी झलकती है।

निश्चय ही कृष्णा मां ने ब्रज-साहित्य का भरपूर अध्ययन किया है; इसीलिए भाषा में प्रांजलता आ सकी है। श्रीराधा-कृष्ण में अभेद-भावना के कारण ही उन्होंने कभी राधा को तो कभी कृष्ण को इष्ट माना है; यथा—**मो मन माधव ही सौं हारौ** (पद ६३), **इष्ट हम राधा जू हैं मानी** (पद १०९)।

भाषा में प्रवाह और प्रसाद गुण तो है, किंतु उपमान वही परंपरागत प्राचीन ही हैं। शब्दों का तोड़-मरोड़ भी कहीं-कहीं अधिक है, जैसे पद ७ में 'लख पाती' के लिए 'लखाती' और पद ५८ में 'आज' के लिए 'आजी'। पद ७६ में 'मोर मन माधव नाहिं तजै' में यदि अवधी 'मोर' के स्थान पर ब्रज का 'मेरो' होता, तो अधिक अच्छा होता। पता नहीं, प्रधान संपादक तथा सह-संपादिका ने संग्रह में कौन-सी भूमिका निभायी है। कागज-छपाई सुंदर है। यत्र-तत्र श्रीराधा-कृष्ण के चित्ताकर्षक चित्र हैं।

—चंद्रशेखर पांडेय

०००

*** अनाम * लेखक : कन्हैयालाल सेठिया; प्रकाशक : तारा बैद, १६० महात्मा गांधी रोड, कलकत्ता-७; पृष्ठसंख्या : ८२; मूल्य : १० रुपये।**

एक समय अनुभवजन्य अनुभूति थोड़े में ज्यादा व्यक्त करने की क्षमता पाकर ठहर जाती है। मनके का अपना अस्तित्व होता है और माला में गुंथकर भी। ऐसे ही सारभूत विचारों के सूत्रबद्ध मनकों से अवगुंथित है यह कविता-संकलन। इसमें कम से कम दो पंक्तियों की कविता है और अधिक से अधिक चौदह की। इन कविताओं के संदर्भ में कवि की यह कविता बूझ लें: निरर्थक/शब्द / कर सकते हैं/ दिव्य मंत्रों की रचना/क्योंकि / नहीं है/उनके अर्थ के बारे में/कोई मतभेद! आवरण-मुद्रण साफ-सुथरा और आकर्षक है।

०००

*** विकल्प के पक्ष में * लेखक : सोहन शर्मा; प्रकाशक : साहित्य संपर्क प्रकाशन, पाम व्यू, पापड़ी नाका, पश्चिम वसई, थाना, महाराष्ट्र; पृष्ठसंख्या : ७२, मूल्य : ८ रुपये।**

वर्तमान परिवेश से उत्पन्न ऊब, घुटन, विद्रोह, नकार और तनाव का ताना-बाना इस संग्रह की कविताओं में बुना हुआ है। कवि वास्तविकता को पहचानने की मांग करता है। वह तनाव की मुद्रा में कुछ कर गुजरने की तल्खी लिये हुए है। संकल्प और योजनाएं महज आश्वासन हैं। राजनीति से अलग कविताओं में कुछ परिभाषाएं, सूक्तियां और चलताऊ मुहावरे हैं और बड़बोलापन भी। रूढ़ि और वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ तिलमिलाकर लिखी क्षुब्ध कविताओं में फिकरेबाजी अधिक है; समकालीन परिवेश की समझ अधूरी और एकांगी है।

रैकोल्ड

वाटर हीटर्स

सबकी पहली पसंद

- केवल रेकोल्ड ही दो, चौकोर और गोल आकारों और रंगों में.
- पश्चिम जर्मन तकनीकी जानकारी से बने विशेष हीटिंग एलीमेंट से युक्त.
- ताप से स्वतः नियंत्रण के लिए इंगलैंड के प्रासकान द्वारा निर्मित सर्वश्रेष्ठ थर्मोस्टेट.
- अंदर की टंकी तांबे की, और दोनों तरफ टिन का मुलम्मा.
- उत्पादन दोष की एक साल की गारंटी.

रजि० डिजाइन
नं. ११४८५२

वाशिंग मशीन

हीट कांवैक्टर

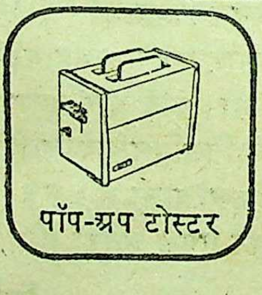

पॉप-अप टोस्टर

डिलक्स
माडल
डी.जी.एस.एंड.
डी. रेट कांट्रेक्ट
पर उपलब्ध

Racold

APPLIANCES PVT. LTD.
POONA • NEW DELHI • BOMBAY

graphisads

'मेरा/छापामार/मन/चुप है!' कविताओं का स्थायी भाव है। आवरण-मुद्रण ठीक है।

०००

*** शंख-सिंदूर *** लेखक : डा. रमानाथ त्रिपाठी; प्रकाशक : राजपाल एंड संज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली; पृष्ठसंख्या : ११२; मूल्य : ७ रुपये।

बाङला देश के चार लोकगाथा-गीतों पर आधारित यह उपन्यास असफल प्रेम की कथा है। बचपन का सहज संग युवावस्था में प्रेम में परिणत हुआ, मगर ठीक शादी के दिनों में नायक विजातीय सुंदरी पर मुग्ध होकर धर्म-परिवर्तन कर लेता है। परंतु अपने मूल संस्कारों से मुक्त नहीं हो पाता और विजातीय संस्कार अपनाने को राजी नहीं होता—इससे समस्या उठती है। उधर सजातीय प्रेमिका आजीवन कौमार्यव्रत लेकर काव्य-सृजन में समर्पित हो जाती है।

आखिर वस्तुस्थिति का पता चलने पर नायक पछतावे में भरा लौटता है नायिका के द्वार पर। मगर वह ध्यान-विचलित नहीं होती। इस पर नायक जल-समाधि ले लेता है। नायिका यह आघात सह नहीं पाती और सृजन को अधूरा छोड़कर, लांछित सीता की व्यथा लिये पद्मासन लगाकर चिर-समाधि में लीन हो जाती है।

इस नायिका-प्रधान उपन्यास में लेखक ने बंगला लोकगीतों का अनुवाद गूंथा है। (मूल गीत पाद-टिप्पणी में हैं।) शोध और श्रम के लिए लेखक साधुवाद का अधिकारी है। शैली संवादात्मक और भाषा सरस है। मुखपृष्ठ आकर्षक है।

०००

*** पश्चिम के तीन रंग * लेखक : दयानंद वर्मा; प्रकाशक : पंजाबी पुस्तक भंडार: दरीबा कलां, दिल्ली-६; पृष्ठसंख्या : १२०; मूल्य : १५ रुपये।**

यूरोपीय देशों की पचीस दिन की सपत्नीक यात्रा के संस्मरणात्मक निबंधों (या नोट्स) के इस संग्रह में पेरिस, कोपनहैगन और बर्लिन के कुछ दृश्य प्रतिबिंबित हुए हैं—मगर चित्र की नाईं सुस्पष्ट नहीं। शायद यह बताने के लिए कि हर शहर का अपना ही रंग है, हर शहर का वर्णन अलग रंग के कागज पर छापा गया है। विवरण की अपेक्षा अनुभूति के चित्रण पर जोर है, इससे रोचकता बनी रही है।

पेरिस का संस्मरण अधिकांशतः ज्यां पाल सार्त्र की भेंट चढ़ गया है। सामाजिक और सेक्स जीवन के बारे में ज्ञान बढ़ाने का लेखक का उत्साह सर्वत्र हावी है। व्यंग्य का पुट भी है। फिर भी सिर्फ तीन शहरों की यात्रा १५ रुपये में कुछ महंगी है।

—डा. विष्णु भटनागर

★

विश्वबैंक के अध्यक्ष श्री मैक्नमारा के अनुसार नीची आय वाले देशों में वार्षिक पूंजी विनियोजन प्रतिव्यक्ति के पीछे केवल १६ डालर है, जबकि मध्यम आय वाले देशों में वह ८५ डालर और तेल-निर्यातक देशों में ८३५ डालर है।

★

उर्वर मस्तिष्क का रहस्य

• बलवीर •

औपचारिक भोजों व पार्टियों में जाना प्रसिद्ध वैज्ञानिक टामस एडिसन को कतई पसंद नहीं था। वहां उन्हें बड़ी उकताहट होती थी।

एक बार वे ऐसी किसी पार्टी में फंस गये। उनकी इच्छा हुई कि सबकी नजर बचाकर चुपके-से चला जाऊं और अपनी प्रयोगशाला में जाकर काम करूं।

वे दरवाजे के पास टहलते हुए बाहर निकलने का मौका ढूंढ़ ही रहे थे कि उनका मेजबान वहां आया और कहने लगा—'माफ कीजिये, मैं आपसे कुछ भी बातें नहीं कर पाया। आजकल आप किस विषय में सोच रहे हैं?'

'यहां से खिसकने के विषय में।' एडिसन ने उत्तर दिया।

× × ×

एडिसन बिजली के बल्ब का आविष्कार करने के बाद उसका व्यापारिक उत्पादन करके चालीस सेंट प्रतिबल्ब के हिसाब से बेचने लगे, जबकि उसकी लागत १ डालर १० सेंट पड़ रही थी। लागत घटकर अस्सी सेंट हो गयी। एडिसन तब भी उसे चालीस सेंट में ही बेचते रहे। तीसरे साल लागत पचास सेंट रह गयी और घाटा सिर्फ दस सेंट प्रति बल्ब रह गया। लेकिन बल्बों की बिक्री एकदम बढ़ गयी, जिससे नुक्सान की रकम कई गुना बढ़ गयी। तो भी उन्होंने बल्ब की कीमत चालीस सेंट ही रहने दी। चौथे साल लागत सैंतीस सेंट बैठने लगी। बिक्री बढ़ती ही गयी और पिछला घाटा पूरा होने लगा।

अगर उन्होंने शुरू में ही मुनाफा कमाने की बात सोची होती और बल्ब की कीमत उसकी लागत से ज्यादा रखी होती, तो शायद लागत कम करने की ओर उनका इतना ध्यान न जाता और आम जनता म बिजली का शायद इतनी जल्दी प्रचार भी न हो पाता।

× × ×

किसी सज्जन को उन्होंने बातचीत के दौरान में बताया—'मैं प्रतिदिन बीस घंटे काम करता हूं।'

इस पर वे सज्जन बोले—'तभी तो आपने इतनी जबर्दस्त सफलता प्राप्त की है। वास्तव में हर सफलता के पीछे सख्त मेहनत छिपी होती है।'

एडिसन ने कहा—'बेशक!' और तभी उनकी नजर सड़क के किनारे खड़े एक दुबले-पतले, कमजोर, बूढ़े आदमी की

ओर गयी, जो खोमचा लगाये कुछ बेच रहा था। देखने में वह बहुत ही गरीब लग रहा था। एडिसन ने उसकी ओर संकेत करते हुए कहा—'मगर असफलता के पीछे और भी सख्त मेहनत छिपी होती है।'

× × ×

एक दिन वे उत्तर कारोलिना राज्य के गवर्नर के साथ बात कर रहे थे। गवर्नर ने कहा—'आप सचमुच महान वैज्ञानिक हैं; आपने एक हजार से ज्यादा आविष्कार किये हैं।'

'नहीं, मैं महान वैज्ञानिक नहीं हूं', एडिसन बोले—'सच पूछा जाये तो मैंने सिर्फ एक चीज बनायी है, जो वास्तव में मौलिक कही जा सकती है। वह चीज है फोनोग्राफ।'

'और बाकी चीजें ?'

'असल में बात यह है कि मैं बढ़िया स्पंज की तरह हूं। हर क्षेत्र से मैं नये विचार सीखता हूं और उन्हें व्यावहारिक रूप देता हूं। फिर मैं उन चीजों में तब तक सुधार करता जाता हूं, जब तक कि वे महत्त्वपूर्ण नहीं बन जातीं। सो अधिकांशत: मैं दूसरे लोगों के ऐसे विचारों को काम में लाता रहा हूं, जो उनके हाथों पूरी तरह विकसित नहीं हो सके थे।'

× × ×

हद दर्जे की लगन थी एडिसन में। जो भी काम वे हाथ में लेते थे, उसे पूरा करने में जी-जान से जुट जाते थे। एक बार लंबी कोशिशों के बाद बिजली संबंधी किसी आविष्कार में वे सफल हुए और उस आविष्कार को उन्होंने पेटेंट कराया।

बाद में उस पेटेंट के बारे में किसी ने उन पर कानूनी कार्रवाई की, और उन्हें अदालत में पेश होना पड़ा। अदालत ने प्रसिद्ध वैज्ञानिक टिंडाल को इस मामले में गवाही देने के लिए बुलाया था।

टिंडाल ने अदालत में कहा—'मैं भी मिस्टर एडिसन के रास्ते पर ही प्रयोग करता हुआ आगे बढ़ रहा था; मगर एक जगह आकर अटक गया। सफलता प्राप्त करने के लिए बस एक कदम और उठाने की जरूरत थी; परंतु मैंने निराश होकर प्रयोग करने छोड़ दिये। आज लगता है कि वह आखिरी एक कदम बहुत ही आसान काम था।'

इस पर वकील ने उनसे सवाल किया—'जब एक ही कदम बाकी था, तो आपने हार क्यों मान ली ?'

उत्तर मिला—'इसलिए कि मैं एडिसन नहीं हूं, जिनकी लगन उन्हें आखिरी हद तक पहुंचाकर ही दम लेती है।'

× × ×

एक बार आधी रात को प्रयोगशाला में एक सहायक ने एडिसन को लगातार मुस्कराते देखा। उसने सोचा कि वर्षों से वे एक आविष्कार के लिए प्रयोग कर रहे थे, शायद उसमें सफल हो गये होंगे। सो वह पूछ बैठा—'आपको हल मिल गया ? सुलझ गयी न समस्या ?'

'नहीं भाई, यह अंतिम प्रयोग भी समस्या को सुलझा नहीं पाया। अब मैं उसे नये सिरे से सुलझाने में जुट सकता हूं।'

★

ताक़त
मर्द की शान मर्द की पहचान

इस ताक़त को बनाये रखने के लिए, सदाबहार चुस्ती, फुर्ती और नौजवानी की सी उमंग के लिए ओकासा स्वास्थ्यदायक टॉनिक टिकियाँ लीजिये। ओकासा टॉनिक टिकियों की अनोखी शक्ति से आपके शरीर और दिमाग को लगातार नयी ताक़त मिलती है।
ओकासा की टिकियों पर चांदी चढ़ी रहती है।

ओकासा
टॉनिक टिकियाँ
के लिए चांदी वाली
हॉर्मो-फार्मा लिमिटेड लंदन-बर्लिन का उत्पादन
तथा बड़े-बड़े केमिस्टों के यहां मिलता है।

OKASA CO. PVT. LTD., 12A Gunbow
Street, P. B. No. 398, Bombay-40000

OKASA
THE 20TH CENTURY TONIC
RESTORATIVE
OKASA CO. PVT. LTD. BOMBAY
HORMO-PHARMA LTD.
LONDON-BERLIN

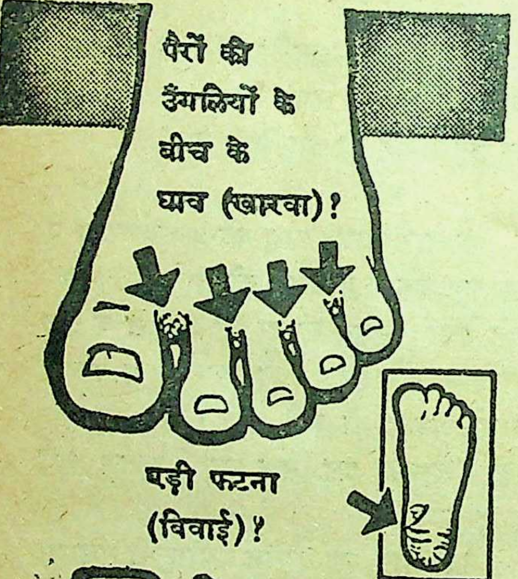
पैरों की
उँगलियों के
बीच के
घाव (खारवा)?

एड़ी फटना
(बिवाई)?

लिचेन्सा
इस्तेमाल कीजिये।

सफेद दाग
का इलाज

सतत् प्रयत्न से हमारी निर्माणित 'साधना बूटी' सुपरीक्षित महौषधि सफेद दाग को मिटाकर त्वचा के रंग में मिलाने में अपूर्व लाभ पहुंचाती है। हजारों ने इससे आराम पाकर प्रशंसा-पत्र भेजे हैं। प्रचारार्थ एक फायल लगाने की दवा प्रत्येक रोगी को मुफ्त दी जायेगी। रोग विवरण लिखकर दवा शीघ्र मंगा लें।

पता :--साधना भवन (K.K.)
पो. :-कतरीसराय (गया) बिहार

कितनी जमीन

कितने शेयर

रवींद्र जैन

ब्रिटेन में श्री विल्सन की मजदूर-दलीय सरकार संपत्ति-कर लगाने का विचार कर रही है। इस सिलसिले में ब्रिटिश पत्र 'संडे टाइम्स' ने जमीन और शेयर रूपी संपत्ति के कुछ दिलचस्प आंकड़े प्रकाशित किये हैं। ब्रिटेन में ६ करोड़ एकड़ जमीन है। भूस्वामित्व संबंधी पिछला विस्तृत सर्वेक्षण वहां सन १८७३ में हुआ था। तब वहां पर कुल १० लाख भूस्वामी थे; मगर जमीन का चार बटा पांच हिस्सा ७,००० भूस्वामियों के कब्जे में था। ७५ लाख एकड़ यानी कुल जमीन के दसवें हिस्से से ज्यादा पर तो केवल ३५ आदमियों का स्वामित्व था। सौ साल पहले ब्रिटेन के तमाम ड्यूकों के पास कुल ३९ लाख ४३ हजार एकड़ जमीन थी; १९६८ तक वह घटकर १० लाख ८२॥ हजार एकड़ के लगभग रह गयी। अब भी १९ ड्यूक ऐसे हैं, जिनके पास १० हजार एकड़ से अधिक जमीन है।

ब्रिटिश ताज की भूसंपत्ति ४,७७,७३५ एकड़। (रानी एलिजाबेथ की निजी जमीन सिर्फ ४७ हजार एकड़ है।) ब्रिटिश विश्वविद्यालयों के कब्जे में २,०७,७३२ एकड़ जमीन है, जिसमें से १,७०,४०० एकड़ केम्ब्रिज और आक्सफर्ड विश्वविद्यालयों के हाथ में है। गिरजों के कब्जे में १,६४,६९२ एकड़, बैंकों आदि वित्तीय संस्थाओं के अधीन १,२०,००० एकड़ और भूमि-संरक्षण संस्थाओं के अधीन ४,६०,४६२ एकड़ है। राष्ट्रीयकृत उद्योगों और स्वायत्त-शासन संघटनों के हाथ में ७३,०३,४७९ एकड़ है। यह सब मिलकर कुल जमीन का १५ प्रतिशत होता है। अर्थात् शेष ८५ प्रतिशत निजी संपत्ति है।

ब्रिटेन में सिर्फ सात व्यक्ति ऐसे हैं, [illegible] पास १ लाख एकड़ से अधिक जमीन [illegible] सबसे बड़े भूस्वामी हैं इन्वरकाल्ड के मि. एल्विन फर्कुहरसन, जो ३॥ लाख एकड़ जमीन के मालिक हैं। दूसरे भूस्वामी हैं—बकक्लूच के ड्यूक (२ लाख २० हजार), लार्ड सीफील्ड (२ लाख १३ हजार), लार्ड लोवाट (१ लाख ९० हजार), सदरलैंड की काउंटेस (१ लाख ५० हजार), वेस्टमिंस्टर के ड्यूक (१ लाख ३८ हजार) एटहोल के ड्यूक (१ लाख २० हजार)।

संपत्ति का दूसरा मुख्य रूप है शेयर। १९७१-७२ में ब्रिटेन में कुल शेयरों की कीमत ६० अरब पौंड थी। इनमें से १२ अरब ८० करोड़ पौंड कीमत के शेयर २० लाख नागरिकों के हाथ में थे। इनके अलावा कोई २.२५ करोड़ व्यक्तियों ने बैंक आदि के जरिये पूंजी लगा रखी थी। विभिन्न आधारों पर यह कूता गया है कि तमाम वैयक्तिक शेयरों की कीमत २१ अरब रुपये

111286

111286

आज मैं फ़ाइनल इन्टरव्यू दूँ तो कैसे ! सर बुरी तरह दुख रहा है।
मेरी मानो तो एनासिन ले लो।

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन लीजिए

तेज़ असर–एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय–एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd. A/2/8-74

इनका साथ कभी न छुटे....

बस, जियाजी के सूटिंग्स
पहन लेने के बाद आपको
भी ऐसा ही महसूस होता है...
रोबदार व्यक्तित्व
और तन संवारनेवाले ये
सूटिंग्स जिसने भी पहने,
यही कहा — इनका साथ
कभी न छूटे...

J
जियाजी
सूटिंग
एवं ड्रैस-मटीरियल

जियाजीराव कॉटन मिल्स लिमिटेड,
बिरलानगर (म. प्र.)

MAPP-JSU-751

(मूल्य रु. २-५०

वार्षिक मूल्य रु. २४)

संबर (१-१२-१९७५) मूल्य रु. २-५० Regd. No. BYW 3

हर मौसम,
हर अवसर के लिए
लाजवाब साड़ियाँ
सचमुच, मफतलाल ग्रुप के व
अनुपम होते हैं!
MAFATLAL
GROUP

Compiled
1999-2000